THE RASAYOGASAGARA

BY

VAIDYA PANDIT HARIPRAPANNAJI

रसयोगसागरः ।



भाषाटीकोपेतः

(गहनस्थलेषु संस्कृतविवरणोपेत)

स च

वैद्य पण्डित हरिप्रपन्नशर्मभि-

निर्मितः ।

तस्य

पकारादिज्ञपर्यन्तः परिशिष्टेन सहितो द्वितीयो भागः ।

निर्मात्रैव प्रकाशित

विक्रमीयवत्सर १९८७ सन् १९३०

मूल्यम्—१० रूप्यका ।

(पृष्ठ १-६०८ तक गुजरातीप्रिन्टिंगप्रेस प्रिन्टर मणिलाल इच्छाराम देशाईके यहां और पृष्ठ ६०९-७०४
तक प्रिन्टर नटवरलाल इच्छाराम देशाई, सासून बिल्डींग, एलफिन्स्टन सर्कल, फोर्ट मुंबई.
और सूची पृष्ठ १ से ५२ निर्णयसागरमे छपाहै)

पब्लिशरः-वै० पं० हरिप्रपन्नजी, श्रीभास्कर-औषधालय, तीसरा भोईवाडा, मुंबई. पो० नं० २

प्रिन्टरः-रामचंद्र येसू शेडगे "निर्णयसागर" छापखाना,
२६-२८ कोलभाट लेन, मुंबई.

जल्दीकरो अलभ्यलाभसे वंचित न रहो

रसयोगसागर—काद्वितीयभागभी छपगया रसचिकित्साकेलिये इससे बढकर दूसरा कोईभी ग्रन्थ नहींहै—कारण कि इसमे दुष्प्राप्य और प्रामाणिक हस्तलिखित ५८ और मुद्रित ५३ ग्रन्थोंके रसोंका सङ्ग्रहहै इसके अतिरिक्त जगहजगह ग्रन्थकर्ताने अपना अनुभव प्रकट किया है-वर्तमानसमयके अनुकूल मात्राओंके निर्धारणपर विशेष विवेचन कियागयाहै बहुतसे रस सङ्केतमे लिखेहुयेथे जैसे कि कासीसादिरसप्रभृतिहैं उनका कुछभी अर्थ न लगनेसे निकम्मे पडे हुयेथे उनपर भाष्यकरके उनका आशय सुल्झाकरदियाहै। ग्रन्थलेखकोंने जहांजहा कुछ गुरुगम्यता रक्खीथी उसेभी यथाशक्य विसष्ट कर दीहै। ग्रन्थाशय न समझकर टीकाकारोंने जहांजहा कुछ गलतिया कीहैं उन्हें सप्रमाण दिखाकर यथार्थसिद्धान्तका आविष्कार कियागयाहै। एकहि रसमे पद्यविशेपरचनाके कारण आयेहुए औषधोंके नामान्तरोंको देखकर रसान्तरता समझ-कर जो पृथक् २ नामरखकर एकभारी जाल फैलाया हुआथा उसे एकान्तत दूर करदियागयाहै। वस्तु और फल समान होनेपरभी यत्किंचित् क्रियाभेदसे जो रसान्तरता लिखीहुईथी उसे सप्रमाण लिखकर लोगोंकीवुद्धिको उत्तेजितकीहै जैसे कि रविताण्डवप्रभृतिमेहै। दशवीशरसोंके मौलिकपदार्थ और प्रमाणों को एकत्रितकर योग्यताऽनुसार उनको एकदोही रसोंमे समाविष्ट करनेकी युक्ति प्रदर्शितकीहै जैसे कि हिरण्यगर्भपोट्टलीप्रभृति इनयुक्तियोंसे ग्रन्थस्थरसोंहिके बनानेकी कुशलतामात्र प्राप्त नहीं होतीहै किन्तु योग्यतानुसार नवीनरसोंके निर्माणकरनेकीभी बुद्धिमे जागृति होतीहै। अकारादिमातृकानुसार रसोंको लिखनेसे विशेषअनुकूलता यह होगई है कि किसीकी इच्छा होवे कि अग्निकुमारनामके कितने रस हैं, तब मातृकाक्रमसे प्रथम अग्निकुमारसेलेकर अन्त्यतक देखजावें बाजार भरा नजर पडेगा सख्याजाननेकी जरुरत हो तो अखीरकी संख्यादेख-नेसे संख्या अनायाससे माल्लमहो सकेगी इसीतरह तमाम रसनामोंमे समझलीजिये, इसतरह अकारादितवर्गान्त प्रथमभागहै इसमे करीबन् १८०० रसोंका सङ्ग्रह है। इसेछपे ३।४ वर्षहोगयेहैं इसकामूल्य १२) रुपयेहैं। इसके आदिमे अंग्रेजी और संस्कृतमे दो विस्तृत भूमिकायें लिखीगईहैं उनमे दिखायागयाहैकि आयुर्वेदका अखिल वेदोंसे लेकर आजतक अविच्छिन्न चला आरहा है—इसको देखकर यह सप्रमाण सिद्ध होजाताहै कि आजतक जितनीभी पद्धतियां (पैथिया) दुनियामे चलीहुई देखनेमे आतीहैं उन सबका मूल आयुर्वेदहै। सङ्कोचविकासकीचर्चातो स्वतन्त्रहै पीज प्राय सङ्कुचितभावहीमे मिलाकरताहै। इसमेदियेहुये **त्रिदोषविवरण**को अच्छीतरह मनन करनेसे त्रिदोषसिद्धान्तकितना उपयोगी और सत्यहै इसका अनायाससे पता चलजाताहै। उससे आजतकके आयुर्वेदसिद्धान्ताऽनभिज्ञलोगोंसे कियेहुये आक्षेपोंका निराकरण होजाताहै और भवि-ष्यकेलिये किसीभी व्यक्तिका आयुर्वेदकी नींव मन कल्पितसिद्धान्तपरहै ऐसा कहनेका साहस न होगा। बौद्धसमयमे यज्ञ, और शस्त्रचिकित्सापर एकान्तत अङ्कुश होनेके कारण **क्लोमादि** शारीराऽवयवोंमे छायेहुये घोरान्धकारका एकान्तत. नाशहोजाताहै कारण कि सन्दिग्धावयवोंका सप्रमाण वेद तथा ब्राह्मण और आयुर्वेदीयसहिताओंके सूत्र तथा मन्त्रोंके दिये हुये उद्धरणोंसे सशय विच्छिन्न होजाताहै। डाक्तरी तथा आयुर्वेदीय शारीरज्ञानजिज्ञासुओंकेलिये आर्षशारीरतत्त्व नामक प्रकरण तो एक अलभ्यरत्नहै, इसरत्नका रसयोगसागरको छोडकर अन्यत्र मिलनेका अभाव हि नहिं किन्तु असम्भवहै इसमे कईतरहकी विशेपतायेंहैं उनका रहस्यज्ञान विना मननके नहिं होसक्ताहै इसतरह इसकी भूमिका वैद्य हकीम डाक्तर याज्ञिक तथा सशोधकोंकेलिये बहुतही सहारेकी वस्तुहै।

रसयोगसागरके द्वितीयभागमे पकारादिज्ञपर्यन्त २०८२ रसहैं इसतरह इनदोभागोंमे यह ग्रन्थ समाप्त हुआहै। इसकेबाद अर्थात् पृ० ६१२ से-६२३ तक सिद्धसम्प्रदाय अर्थात् अगस्त्य और व्यासप्रोक्तरसप्रकरण दियाहै यह बहुतही महत्वका है। इसकेबाद पृष्ठ ६२५ तक आन्ध्रादिदेशप्रसिद्ध कृष्णभूपालीयप्रभृतिग्रन्थोंके प्रयोग दियेगयेहैं। इसकेबाद कईकारणोंसे सङ्ग्रहकरनेकेसमय दोनोंभागोंके छूटेहुये रसोंका पृष्ठ ६४३ तक सङ्ग्रहहै। इसकेबाद सङ्ग्रहकरनेमे छूटेहुये ग्रन्थोंके नाम तत्तद्रसोंमे दाखिलकरनेकी सूचना पृष्ठ ६६१ तक दीगईहै। इसके बाद आपातत प्रतीयमान विभिन्नरसोंके एकीकरणका दिग्दर्शन करायाहै। ६६३ पृष्ठसे आगे ग्रन्थान्तरमे नामान्तरसे आयेहुये रसोंकी सूची दीगईहै-जिसरसका दोनों-भागोंमे पता न चले और देखनेवालेको दूसरे नाम यादहोवें उनलोगोंसे प्रार्थनाहै कि वेलोग इससूचीको देखनेका कष्टकरें इसमे उन्हें यह पता चल जायगा कि इसरसका यथार्थनाम यह है उसे देखकर आइन्दहकेलिये उसीनामसे उसका व्यव हारकरें इसकेउदाहरणार्थ अमरसुन्दरी अन्त स्थ ५०४ मे इसकानाम विजयभैरव आयाहै सो वहापर देखनेसे इसके ग्रन्थभेदोंसे कितनेनामहैं और क्या २ विशेषहैं इसकापता अनायाससे चलजायगा इसीतरह अन्य २ रसोंकोभी देखनेका कष्टकरें प्रथमभागके छपनेपर बहुतसे वैद्यमहानुभावोंके आक्षेपसूचक पत्र आयेथे कि रसयोगसागरमे इतनाप्रसिद्धभी रस छूटगया सो उनसज्जनोंके लिये यह सूची दीगईहै जिससेकि उनका वह भ्रम दूरहोजाय, देखिये इसीरसकी टिप्पणीमे इसके ८।१० नामआयेहैं उनमेसे जो आदमी इसे चन्द्रप्रभाके नामसे जानता होगा वह चन्द्रप्रभाकेपाठोंमे इसे न देखकर मनमे जरूर कहेगा कि इसमें सङ्ग्रहकर्ताकीभूलहै परन्तु वहां ऐसा मनमे न लाकर इससूचीको देखनेका कष्टकरें इससे

उनके मनको अभीष्ट सन्तोष होयजायगा. हां इसमे वेनाम जरूर न मिलेंगे जोकी हालके कल्पितहैं । कल्पितनामोंका प्रतिष्ठित ग्रन्थोंमे उल्लेखकहांसे आवेगा इसबातको विद्वान् व्यक्ति स्वयं समझसकीहै इसमे विशेष विवरणकरनेकी आवश्यकताही क्या है. द्वितीयभागमे सब मिलकर करीबन् २४०० रसहैं। ६७१ और ६७२ मे अंग्रेजी उपोद्घातके विषयोंकी सूचीहै. पृष्ठ ६७३ और ६७४ मे संस्कृत उपोद्घातके विषयकी सूचीहै। पृष्ठ ६८० तक प्रथमभागका शुद्धिपत्रकहै। ६८१ मे रोगानुसारिणी और अधिकारपरत्वसूचीरहस्यहै यद्यपि यहविषय द्विविधसूचीके अव्यवहित आदि अथवा अन्त्यमे आना उचितथा परन्तु ३ प्रेसोंमे छपवानेकेकारण स्थानान्तर होगयाहै इसकेलिये पाठक' क्षमाकरें द्वितीयावृत्तिमे यह यथास्थान पर चलाजायगा। पृष्ठ ६८२ के आधेसे ७८३ के आधेतक दक्षिणदेशप्रसिद्ध **स्यानवातादिरोगविशेषोंके** लक्षण दियेहैं ६८३ के आधेसे लेकर ६९१ तक **मान (तोल)** विवरण दियाहै यह प्रकरण इतना गहन है कि दशवीशवार सावधानीसे बांचकर मनन कियेविना इसका याथातथ्य अच्छेअच्छोंकेभी चित्तमें आरूढहोना दुस्तरहै–इसमे सुश्रुत चरक कृष्णात्रेयके मानोंके आपाततः आयेहुये अन्तरके कारणको दिखलाकर एकता करनेकी युक्तिदिखलाईहै इसजगह डल्लण और चक्रपाणिदत्त प्रभृति टीकाकारोंके स्खलनका दिग्दर्शन करायागयाहै यहांपर मननकरनेसे विशिष्ट विद्वानोंकोही ज्ञानहोगा कि यह कितने दिनसे भ्रष्टहुवाहै और कितने २ लोगोंको इसने धोकेमे डालाहै ?। इसकेबीचमे कालिङ्ग और मागधतोलका रहस्य खोलागयाहै. वर्तमानसमयमे कालिङ्ग तथा मागधमानकी क्या दुर्दशाहुईहै. इसअन्धेरीकोठड़ीमेसे निकलनेके बाद आयुर्वेदमें इस विप्लवकेहोनेसे स्कूलोंमेंभी क्या दुर्दशा होरहीहै इसका अच्छी तरह अभिज्ञान होगा, इसका कुछ दिग्दर्शन करायाभीगयाहै यूनानीवजनमे सबसे ज्यादह विप्लव दिखाईदेताहै जितनीकिताबैंहैं एकदूसरीकेसाथ मेल नहिं खातीहैं पीछेके लोगोंनेभी अमुक साहब ऐसा फर्मातेहैं और दूसरे ऐसा कहतेहैं बस इसकेसिवाय निर्णयकी बात ही नहींहै. इसी कारणसे उनके नुसखोंमे आयुर्वेदकी तरह सीधा हिसाब नहिं आताहै यह सब मूलमानकी भ्रष्टतासे हुवाहै इसका भ्रम अच्छीतरह विचारनेसे दूरहोजायगा. सबलोगोंको उचितहै कि दुराग्रहको छोडकर मानको सुधारलेवैं यूनानीप्रभृतिपद्धतियोंका जन्मदाता आयुर्वेदहि है इसमे किसीको संदेह हो तो इसके उपोद्घातको देखनेका कष्ट करें।

मानवधर्मशास्त्रीयमानका उल्लेखभी इसमे आयाहै परन्तु उसका आयुर्वेदके मानकेसाथ सम्बन्धनहिं है वह केवल दण्डविधानार्थसाङ्केतिक नियमहै। यदि वह मन्तव्य होता तो आयुर्वेदमे स्वतन्त्रमानकेलिए प्रयत्न न कियाजाता। संसारमें जुदे २ व्यवहारोंकेलिये जुदे २ मान प्रचलितये इस बातका पता वैजयन्तीकोषके मानकोष्ठकको देखनेसे अनायास लगजायगा. यह कोष्ठक पृष्ठ ६९० और ६९१ मेंहै इसकोष्ठकमें कई अज्ञातसङ्केतोंकाभिपता दियाहुआहै इससे यह निर्धारितहोताहै कि मानकी भिन्नता व्यवहारपरत्वे अवश्यथी, पृष्ठ ६८९ मे सुश्रुतादि मानबोधककोष्ठकदियाहुआहै उससे ग्रन्थपरत्वेन किस २ जगह क्या भेदहै इसका हस्ताऽऽमलकवत् ज्ञान होजायगा, इस मानपरिभाषामे बहुतकुछ ज्ञातव्यांश भराहुआहै उसके लिये हम उसे मनन करनेकी सलाहदेतेहैं। पृष्ठ ६९२ से लेकर पृष्ठ ७०४ तक स्नेह और आसवोंका विधानहै इसमें "आर्द्रद्रव्याणां च द्विगुणम्" इस सुश्रुतीयवाक्यमें लेखकप्रमादसे वकारस्थ यकारके निकल जानेसे अज्ञतावश पीछेके लोगोंने बनाईहुई द्रवद्वैगुण्यपरिभाषाका सप्रमाण विस्तृत रूपसे खण्डनकियागयाहै। इसीतरह पृ० ६९९ मे "**क्वाथसिद्धमरिष्टं तद्भिन्न आसवः**" **अपिधानमुखे** पात्रे जलं दुर्जरतां भजेत्। तस्मादावर्णं स्यन्त्ता क्वाथार्दीनां विनिश्चयः। पृ० ७०४ मे द्रव्यादष्टगुणं क्षीरं क्षीरात्तीरं चतुर्गुणम्० इनमेभी परिभाषालका खण्डन कियाहै। पृ० ७०२ से ७०४ तक नखमानाकेविप्लवको दूरकियाहै। इसके आगे क्वाथादिककीनिरुक्ति दीहै। इसकेबाद रोगपरत्व और अधिकारपरत्व दोप्रकारकी सूची दीहैं इनके देनेसे चिकित्सकोंको बहुतही सरलता होगईहै उसकेबाद रत्न १ सुवर्ण २ ताम्र ३ नाग ४ कान्तलोह ५ लोह ६ माक्षिक ७ अभ्रक ८ ताल ९ रजत १० वङ्ग ११ यशद १२ पित्तलकांस्य १३,१४ कासीस १५ तुत्थ १६ इनका शोधन और मारण दियाहै। इसके समनन्तर पारद १ गन्धक २ मनःशिला ३ वत्सनाभ ४ विषमुष्टि (कुचिला) ५ मुद्दारशङ्ख ६ भल्लातक ७ धत्तूर ८ करिहारी ९ करवीरमूल १० शिलाजतु ११ इनकी शुद्धि दीहै। अब इस अकेलेग्रन्थके सङ्ग्रहकरनेसे अन्य रसग्रन्थोंकी पासमेरखनेकी कोईभी आवश्यकता अवशिष्ट नहिं रहजातीहै। देखो इसके अन्त्यमे विशिष्टविद्वानोंके अभिप्राय। इसद्वितीयभागकी कीमत् १०) रुपया रक्खीहै दोनोंभागसाथमे लेनेवालेको १८) रुपयेमे दोनों भाग दिये जांयगे डाकखर्च लेनेवालेको देना होगा। समग्र ग्रन्थमंगवानेवालेको ५) और १ भागकेलिये ३) रु० पेशगी भेजना चाहिये जवाबकेलिये जवाबीकार्डदेना उचितहै।

पुस्तकमिलनेका पता–

वैद्य पं० हरिप्रपन्नजी

श्रीभास्कर औषधालय तीसरा भोईवाडा पोष्ट नं० २ मुम्बई.

रसयोगसागरः

(द्वितीयोभागः)

अथ मङ्गलाचरणम् ।

यदाऽऽकाशेऽकाशे परिसृतविकाशे परिवृतौ,
यदस्थूलेस्थूले स्थितिमति भृशङ्गन्तरि विधौ ।
रवावृक्षे नक्तन्दिनभिदि कलाकालकलने,
रसस्सोऽहंसोऽहं वितरतु सदा सिद्धिमतुलाम् ॥

यत्–अनिर्वचनीय वस्तु, **आकाशे**–सर्वतेजसामाकर्षणक-त्तरि, **काशे**–तेजसि "काशृ" दीप्तावित्यस्मात्पचाद्यचि प्रकाशार्थे पर्यवसानं भवति, आङुपसर्गस्याऽऽकर्षणाऽर्थद्योतने शक्ति र्बोध्या, उपसर्गाणामनेकार्थत्वादत एव कृषधातुसमभिव्याहारे तवैरपि तथात्वमवगम्यते । **कदाचित्** सोऽर्थ कर्षधातोरे-वाऽस्त्वुपसर्गाणां वैयाकरणनिकाये द्योतकत्वस्वीकृतत्वादिति वाच्यम् ? तथात्वे येनकेनाऽप्युपसर्गेण सम्बन्धे तस्यार्थस्या (आकर्षणरूपस्य)ऽभिव्यक्ति स्वीकरणीया स्यादतस्तत्तदुपसर्ग समभिव्याहारे एवाऽर्थविशेषस्याऽभिव्यक्ति र्भवतीति नियमा न्वयव्यतिरेकाभ्या वैयाकरणैरप्यगत्या स्वीकरणीय एवाऽस्ति। अत एव "**विनापि** प्रत्यय पूर्वोत्तरपदयोर्लोपो वा वक्तव्य" इति वार्तिक निरमिमीत वार्तिककार । अथ वार्तिक तिरोहिता अर्था प्रकरणविशेषवशादूहनीया इत्यर्थ समभिव्यनक्ति, न तूच्छृ ङ्खलतया सर्वत्र पूर्वपदादिलोपेनाऽनर्था उपस्थापयितव्या इत्यर्थ बोधयति, तथात्वे सति नियतार्ऽथस्य क्वचिदप्यसद्भावे महाननर्थ प्रसज्ज्येत । महाप्रलये सर्वाण्यपि तेजासि परमात्मनि लीयन्ते सर्वजगता मूलकारणत्वात् । अथ च अकाशे=तमोरूपे जगति, आसीदिद तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणमिति मनुना सूचि तरूपे । **परिसृतविकाशे**–परित सर्वतो विकाशे महदादिमहा भूतान्तकार्यनिर्माणे पुनरपि सृष्टिप्रादुर्भावे इति यावत् । **परि-वृतौ**–परितस्सर्वतो वृतौ विविधव्यापारे स्थितावित्यर्थ । जगत स्थितौ भवति जीवाना परिवृति । "वृङ् सम्भक्तौ" क्र्यादि, "वृञ् वरणे" स्वादि, "वृञ् आवरणे" चुरादि, इत्यादिभ्य स्तन्नैकशेषादिना परिवृतिशब्दस्य निष्पन्नत्वात् । तस्मिन् समये जीवाना भवति नानाविधो व्यापार, कश्चिन्म्रियते कश्चिज्जायते कश्चित्किञ्चिद्याचते कश्चित्किञ्चिज्जहाति किञ्चिद्गृह्णाति कश्चित्क स्याञ्चियोनावावृतो भवति इति कृत्वा यथार्थत साऽवस्था परि वृतिस्तत्र । **अस्थूले**–सूक्ष्माऽतिसूक्ष्मपरिमाणयुक्ते । अथ च **स्थूले**–तद्विपरीते महामहीधरादिषु । **स्थितिमति**–स्थावरस-ञ्ज्ञके वृक्षादौ **भृशङ्गन्तरि**–जङ्गमे इत्यर्थ, स्थितिशील स्थावरो भृशङ्गन्ता हि जङ्गम इति भाष्यम् । वृक्षादयोऽपि मूलादिप्रसरण रूपेण गच्छन्ति परन्तु तदपेक्षया योऽत्य भृशङ्गन्ता स जङ्गम इति भाष्यकारेण निरधारि । **विधौ**–चन्द्रे, **रवौ**–सूर्ये, **ऋक्षे**–नक्षत्र समूहे । **नक्तन्दिनभिदीति**–समस्तं पदम्, रात्रिभेदे दिनभेदे चेत्यर्थ, ब्रह्मादीना मनुष्यान्ताना जीवाना नक्तन्दिन-भेदस्याऽसङ्ख्यरूपत्वात् । **कलाकालकलने**–कलाश्चतुष्षष्टि र्विद्या, अथ च गर्भाऽनुकूलशुक्रशोणितादिसयोगाऽनन्तर यावत्कृता-ऽसङ्ख्यविभागाना यथास्थितिस्थापकाऽऽवरणरचनाविशिष्टाऽऽवर-णानि तेषु, अस्य विशेषविवरणमुपोद्घाते कलाटिप्पण्या द्रष्टव्यम् । **कालः**–काल्यन्ते विभक्तीक्रियन्ते सृज्यन्ते वा, सर्वे पदार्था अनेनेति काल । "कल" सङ्ख्याने चुरादि, करणाधिकरण योश्चेति घञ् । **सुश्रुते** तु स सूक्ष्मामपि कला न लीयते इति काल इति निरुक्तप्रक्रियया साधुत्व प्रदर्श्य सङ्कलयति कालयति वा भूतानीति काल इति पचाद्यचि साधित (सु सू ६।३)। तत्र लघ्वक्षरोच्चारणमात्रोऽक्षिनिमेष इत्यादिना परमस्थूलस्वरूप प्रदर्शितम्, सूक्ष्मस्वरूपविवरण सस्कृतोपोद्घाते सप्तचत्वारिं-शति पृष्ठे द्रष्टव्यम् । कलाना कालस्य च कलने सम्पादने सङ्ख्याने चेत्यर्थ । एतस्मिनेतस्मिन् किङ्कारणमिति सन्देहे श्वासोच्छ्वा साभ्या सोऽह सोऽहमित्युत्तरयति **तद्रसः** सर्वसारभूतं परमे श्वररूप (रस शब्दस्यविशेषविवरण पूर्वार्द्धमङ्गलाचरणटीकाया द्रष्टव्यम्) सदा निरन्तर स्वभक्तानामित्यध्याहार ग्रन्थकर्तुर्, रिति वा । **अतुलां**–अनुपमा मोक्षरूपा ग्रन्थपरिसमाप्तिरूपा वा सिद्धि **वितरतु** ददातु । अस्य मन्त्रस्यार्थविचारपुर सर तल्लीनताया एव ब्रह्मविद्यारूपत्वात्, ब्रह्मविदश्च सर्वा सिद्धयो दासीभवन्तीत्यविवादम् । इय ब्रह्मविद्या परमगोप्यरूपेणोप निषदादावाख्यायिकादिभिर्व्यज्यते न तु साक्षान्निर्दिश्यते साक्षात्कारस्तु गुरुमुखादेवाऽवगन्तव्य "इम विवस्वते योग प्रोक्तवानहमव्ययम् । विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्र वीत् ॥ एवं परम्पराप्राप्तमिम राजर्षयो विदु । स काले-नेह महता योगो नष्ट परन्तप ॥ स एवाऽय मया तेऽद्य योग प्रोक्त पुरातन । भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्य ह्येतदुत्तमम्" (भगवद्गीता अ ४) भगवताप्याख्यायिकयैव सूचिताऽस्ति । न च वाच्य ? प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाऽ भ्यन्तरचारिणावित्यादिना प्रकटीकृताऽस्तीति, तत्राऽपि गुरु-गम्य एव मार्गोऽस्ति, अत एव "तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया । उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञान ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन । येन भूता न्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि" (भगवद्गीता अ ४।३४) इत्यनेन स्पष्टतया ब्रह्मविद्याया गोप्यत्वमुक्तम् । एतन्मन्त्रार्थ प्रदर्शनरूपस्य तत्सवितुर्वरेण्यमिति मन्त्रस्य महागायत्र्यर्थरू पत्वाद्गायत्रीति सञ्ज्ञा शास्त्रे कृताऽस्ति, महागायत्र्या परम गोप्यत्वेन सर्वत्राऽप्रकाश्यत्वम्, तत्स्मरणमन्तरा च लौकि कसमस्तकर्मणा निष्फलत्वञ्चेति समीक्ष्य ऋषिभि परमं तप अधिष्ठाय महागायत्र्यर्थरूपो तत्सवितुरित्यादिवर्णाऽनुपूर्वी

ससारकल्याणाय दिव्यध्यानेन दृष्ट्वा लोके गायत्रीनाम्नैव प्राचारीति गूढ रहस्यमत एवोपनयनसमये एव सर्वसाधारण्येन महागायत्र्यर्थरूपो मन्त्र उपदिश्यते । महागायत्री तु काम-क्रोधादीना सर्वत शान्तोद्रेके सति सत्त्वगुणसमभ्युदयान्निर्म लान्त करणे कोऽह कस्मादागत किञ्चाऽनुष्ठेयमितिजिज्ञासोदये सति ब्रह्मविद्यानिधान सद्गुरु गवेषयते गुरुश्च त सम्यक् परी-क्ष्योपदिशति । अत एव ऋग्वेदे गायत्रीमन्त्र साक्षान्निर्दिष्टो यथा "तत्सवितुर्वरेण्यम्० (ऋ वे ३।६२।१०) सायणभा०— य सविता देव नोऽस्माक धिय कर्माणि धर्मादिविषया वा बुद्धी प्रचोदयात् प्रेरयेत् । तत्तस्य सर्वासु श्रुतिषु प्रसिद्धस्य देवस्य द्योतमानस्य सवितु सर्वान्तर्यामितया प्रेरकस्य जग त्स्रष्टु परमेश्वरस्य आत्मभूत वरेण्य सर्वैरुपास्यतया ज्ञेयतया च सभजनीय भर्ग —अविद्यातत्कार्ययोर्भर्जनाद्भर्ग स्वयज्योति परमब्रह्मात्मकं तेजो धीमहि तयोहमोऽसौ योऽसौ सोऽहमिति वयं ध्यायेम । यद्वा तदितिभर्गोविशेषण सवितुर्देवस्य तत्तादृश भर्ग धीमहि, किं तदित्यपेक्षायामाह—य इति लिङ्गव्यत्यय यद्भर्गो धिय प्रचोदयात् तद्ध्यायेमेति समन्वय । यद्वा य सविता सूर्य धिय कर्माणि प्रचोदयात् प्रेरयति तस्य सवितु सर्वस्य प्रसवितुर्देवस्य द्योतमानस्य सूर्यस्य तत्सर्वैर्दृश्यमानतया प्रसिद्ध वरेण्य सर्वै सभजनीय भर्ग पापाना तापक तेजोमण्डल धीमहि ध्येयतया मनसा धारयेम । यद्वा भर्ग शब्देनान्नमभि धीयते य सविता दवो धिय प्रचोदयति तस्य प्रसादादन्न-गोऽऽदिलक्षण फल धीमहि धारयाम तस्याऽऽधारभूता भवे मेत्यर्थ । भर्गशब्दस्यान्नपरत्वे धीशब्दस्य कर्मपरत्वे च आथ-र्वण—वेदा छन्दासि सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य कवयोऽन्नमाहु । कर्माणि धियस्तदुते प्रब्रवीमि प्रचोदयन्त्सविताऽऽयाभिरेतीति । टी०—अत्र च महागायत्रीगततच्छब्दस्यार्थ किमस्तीतिशङ्कायां **सवितु**—लोकान प्रसावयितु **देवस्य**—महाप्रलयेऽपि द्योत मानस्य सर्वमूलकारणत्वात **वरेण्यं**—वरणीय **भर्ग.** सर्वपाप भर्जनसमर्थन्तेज **धीमहि**—ध्यायम । किमर्थ तद्ध्यानमित्यु त्थिताऽऽकाङ्क्षा शान्तयितुमाह य —यत् भर्गो **नः**—अस्माकं **धियः**—बुद्धी अन्त करणानीति यावत् । **प्रचोदयात्**—शुभक र्मसु नियुञ्ज्यात् । इति महागायत्रीरूपसमुदायस्यैकाक्षरमात्र स्याऽर्थ प्रदर्शित । समन्नाऽर्थस्य० "हस शुचिषद्वसुरन्तरि क्षसद्धोता वदिषदतिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम् ॥ ऋ ४।४०।५ ॥ (सा० भा०) अनया सौर्यर्चा य एषान्तरादित्य हिरण्मय पुरुषो दृश्यते हिरण्यश्मश्रुरित्यादिश्रुत्योक्तो मण्डलाभिमानी देवोऽस्ति, यश्च सर्वप्राणिहृदि चिद्रूप स्थित परमात्मा यश्च निरस्तसम स्तोपाधिक पर ब्रह्म तत्सर्वमेकमेवेति प्रतिपाद्यते **हंसः**—हन्ति गत्यर्थ सर्वत्र सर्वदा गन्ता यो हसः शुचिषदित्युक्तप्रकार मंडीकृत्योपन्य , परमात्मत्वप्रतिपाद आदित्य स च शुचौ दीप्ते द्युलोके सीदतीति शुचिषत् । अथ यदन परोदिवो ज्योतिर्दीप्यत इत्यादिश्रुते । अनेन द्युस्था आदित्य प्रति

पादित , स एव मध्यस्थानो वायुरित्याह **वसु**—सर्वस्य वास-यिता वायु स **चान्तरिक्षसत्** अन्तरिक्षसञ्चारी । अथ तस्यैव क्षितिस्थानवैदिकाग्निरूपतामाह **होता**—देवानामाहाता होमनि-ष्पादको वा **वेदिषत्**—वेद्या गार्हपत्यादिरूपेण स्थित **अति-थिरिति**थिवत्सर्वदा पूज्योऽग्नि **दुरोणसत्**—दुरोणं गृहनाम तत्र पाकादिसाधनत्वेन स्थित अनेन लौकिकाग्न्यात्मकत्वमुक्तम् । **नृषत्**—नृषु मनुष्येषु चैतन्यरूपेण सीदतीति नृषत् अनेन परमा-त्मरूपत्वमुक्तम् । पुनरप्यादित्यात्मतामाह—**वरसत्**—वरे वरणीये मण्डले सीदतीति वरसत् आदित्य वर वा एतन्मण्डला यस्मि-न्नेष आसनस्तपतीति हि श्रूयते ऋत सत्य ब्रह्म यज्ञो वा तत्र सीदतीत्यृतसत् अग्नि व्योमान्तरिक्ष तत्र सीदतीति व्योमस-द्वायु । इदानीमादित्यतोच्यते **अब्जा**.—उदकेषु जात उदक-मध्ये यल्लय जायते **गोजा**. गोषु रश्मिषु जात ऋत सत्य सर्वैर्दृश्यत्वेन सत्याज्जात न ह्यमाविन्द्रादिवत्परोक्षो भवति । यद्वोदकेषु वैद्युतरूपेण वा वाडवरूपेण वा जात **अद्रिजा.**— अद्रावुदयाचले जात एव महानुभाव आदित्य **ऋतं**—सत्यम-बाध्य सर्वाधिष्ठान ब्रह्म तत्त्व तद्रूपोऽयमावेवादित्यरयोत्तरूपत्व हस शुचिषदित्येष वै हस शुचिषदित्यादिना ब्राह्मणे समाम्ना-तम् इति । यत्तु सायणादिभिरयम्मन्त्र सूर्यपरत्वेन व्याख्या तस्तदपि ब्रह्मविद्यायास्स्वरूपाच्छादनार्थ कृतमिति वा स्यात्पूर्व व्याख्यातृपथोवाऽनुसृतस्स्यादित्यनुमीयते । महागायत्रीमन्त्र साक्षात्क्वाऽपि निर्दिष्टो व्याख्यातो वा नोपलभ्यत इति तस्य परमगोप्यत्वम् ।

केचित्तु बालिशास्तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादिमन्त्रमेव ब्रह्म-विद्यां वदन्ति तन्न सम्यक् ? एकाक्षरमात्रस्यार्थरूपत्वात्, प्रश्न च्छार्थमानसातरि प्रजापतिना दार्थोऽभिहितत्वकथनवदुपपत्तेस्त स्मात्सम्प्रमहामन्त्रार्थज्ञानेनैव यथार्थब्रह्मविलम् । तन्त्रशास्त्रे देवप्रतिमायन्त्रादीना प्राणप्रतिष्ठापने सर्वेषु सम्प्रदायेषु पाशा-ङ्कुशगर्भितमायाबीजमुच्चार्य वायुवह्निजलरसोष्मादिबीजोच्चारण पुरस्सर महामन्त्र एव विन्यस्यते न तु क्वचिदपि ॐ तत्सवि वरेण्यमित्यादिमन्त्र समुपन्यस्तो दृश्यते । किञ्च तत्सवितुरि तिमन्त्राऽऽराधनेऽन्यजपाजपनिवेदनमन्तरा स्वस्यागिरेस्यमा वात्यन्तन्मन्त्रे ब्रह्मविद्यात्वम् । ब्रह्मविद्याप्राप्तौ तु गर्भेऽपि हेय समाप्यते इति सर्वैरपि स्वीकार्यमतो न तत्सवितुर्वरेण्यमित्या दिमन्त्रार्थज्ञाने समग्रतया ब्रह्मविद्ये समाप्या इति शान्तान्त करणै स्सहृदयैराकलनीयमिति प्रपञ्चोऽयं ॥ १ ॥

द्वितीये तु—यत्र—अनिर्वचनीयात्मरूप यत्तु आकाशे, आकाशमन अवकाशे तत्र तत्प्रदेश अवकाशरहित शरीरा न्त प्रवेश वा । **परिसृतविशाले**—पुष्टीकरणपुरणविभागदान धारणमारणादिरूपसमूहकारेणोद्ध्वसरप्राणादुर्धे । **परिसृती**—गा लोकचतुरस्यादामित्यादिरूक्त इति यावत्, अपिच्या पिता दा पारद बयादिरल्पार्ह्नान्ना गच्छन्ना प्राद्युर्भूतावापार्थं स्यात्त्यराया परिष्कृत्य भवति तस्या परितो **अखण्डे**—**र्ग**, **स्फूर्ते**—भेद भीषणि, **स्थितिमिति**—स्थापा, भृगावत्तरि—

जङ्गमे, **विधौ**–चन्द्रक्रियाया (रजतीकरणे), **रवौ**–सूर्यक्रियाया, क्ष्वेडे दलसिद्धौ (इमे धातुवादप्रसिद्धास्सङ्केता) **नक्तंदिनभिदि**–लाक्षणिकावेतौ शब्दौ वर्णवाचकतायां पर्यवसनौ तेन कृष्णरक्तादिवर्णभेदने अन्यथाकरणे इति यावत्। **कला कालकलने**–कलानां विद्यानां कलने सम्पादने कालस्य दीर्घमित्युक्तस्य कलने सङ्ख्याने चेत्यर्थः. दीर्घाऽऽयुस्सिद्धावेतद् द्वयमपि सम्भवति। एतस्मिन्नेतस्मिन् किं समर्थं भवतीत्यपेक्षायामुत्तरयति-**रसः**–पारदः कथम्भूतः सन्नित्यपेक्षायामाह **हंसो हंस**–इति एकोहंसशब्द उत्कृष्टगुणयुक्तताबोधकः। द्वितीयस्तु सञ्ज्ञापरिचायकः उत्कृष्टगुणयुक्तो हंसो यथा आकाशगमनादौ समर्थो भवति तद्वच्छुद्धस्वरूपतामापादितः पारदोऽपि खेचरी सिद्ध्यादिप्रदाने समर्थो भवति, तथाविधः पारदः परिशीलितः साधकानाम्–**अतुलां**–अनुपमां **सिद्धिं वितरतु**–ददातु। महामन्त्राऽऽराधकस्य रससिद्धिर्भवतीति ध्वनिः। महामन्त्रेणैवाऽलौकिकसामर्थ्योदयात् रसविद्या योगिनामेव सिद्ध्यतीति दृढ निश्चयस्तदभावादेवेदानीं खेचरीसिद्धिप्रदगुटिकादयः शास्त्रे लिखिता अपि न सिद्ध्यन्ति इति रहस्यम्। न च योगिनान्तु स्वयमेव सिद्धय उदयन्ते किन्तेषु (योगिषु) पारदेन प्रयोजनमिति वाच्यम्? योगसिद्ध्युदये यथा बहुकालाऽपेक्षत्वं न तथा पारदे इति बह्वन्तरम्। योगमार्गाऽवलम्बने महामन्त्राऽऽराधनवत्सिद्धपारदोपि सेवनीय इति रहस्यम्। पारदे सिद्धे योगसिद्धिरपि सुकरा भवति अत एव "स्थिरदेहेऽभ्यासवशात्प्राप्य ज्ञानं गुणाऽष्टकोपेतं। प्राप्नोति ब्रह्मपदं न पुनर्भववासजन्मदुःखानि" इति रसहृदयतन्त्रादौ समाहितम्। अन्यार्थानामप्रासङ्गिकतया नोपन्यास इति सुहृद्भिः क्षमणीयम्।

अथ पकारादिरसाः

१ पक्तिशूलहरो रसः

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं यवक्षारं समं ततः।
चूर्णितं भक्षयेन्माषं मधुना पक्तिशूलनुत् ॥ १॥

र क, र क ल, पक्तिशूले। र क ल (टङ्कणसूत)

भाषा–भुनासुहागा, रससिन्दूर, यवक्षार, सब समभाग लेकर १–२ रोज खरलकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा मधुके साथ चाटनेसे पक्तिशूल नष्टहोता है ॥ १ ॥

२ पञ्चगर्भकम्

हेमाऽर्कगन्धाऽभ्ररसेन्द्रमेघाः
समीकृता मन्दहुताशसिद्धाः।
मधुप्लुतेनाऽऽज्यलवेन लीढा
प्रोक्ता. समासादखिलाऽऽमयघ्ना ॥ २॥

लो प, (स.) समस्तरोगाऽधिकारे।

भाषा–सुवर्ण, ताम्र, अभ्रक, इनकी भस्में, शुद्धगन्धक और पारा ये सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर बहुतमन्द आचसे गलाकर पर्पटी बनाले अथवा आतशी शीशीमें रखकर मन्दआचसे यहातक पकावे कि एकदम द्रव हो जाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर शीशीको फोड़कर निकालले। इसमेंसे घी और मधुके साथ ३-३ रत्तीकी मात्रा लेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्ट करताहै ॥ २ ॥

३ पञ्चगुञ्ज रसः

जातीद्वयं कणा विश्वं मरिचं गन्धकं रसम्।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं गगनञ्च समांशकम् ॥ ३ ॥
मरिचं सर्वमेकत्र युक्त्या सञ्चूर्ण्य भावितम्।
ताम्बूलपत्रस्वरसैस्तथैवाऽऽर्द्रकजै रसैः ॥ ४ ॥
पञ्चगुञ्ज इति ख्यातो देयः पर्णेन वाऽऽर्द्रकैः।
अग्निमान्द्ये त्वजीर्णे च सामे श्लेष्माऽनिले तथा ॥ ५ ॥
आमज्वरे त्रिदोषोत्थे ज्वरे मेहे विशेषतः।
कासे श्वासे तथाऽऽनाहे गुल्मेऽर्शसि विशेषतः ॥६॥

यो म, अग्निमान्द्ये।

भाषा–जायफल, जावित्री, त्रिकटु शुद्ध गन्धक और पारा, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचों नमक, अभ्रकभस्म, सब समभाग, इन सबकी बराबर मरिच लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पान, अदरख इनके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर ५–५ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली नागरबेलके पान अथवा अदरखके रसके साथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, सामवातश्लेष्म, आमज्वर, त्रिदोषज्वर, प्रमेह, कास, श्वास, आनाह, गुल्म, विशेषकर बवासीर इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ३ ॥

४ पञ्चगुल्महरो रसः

चित्रमूलहरीतक्यौ वज्रदन्ती च सैन्धवम्।
अजमोदं व्योषमर्कं शुद्धिकां समभागतः ॥ ७ ॥
कुबेराक्षमितां कुर्यात्पञ्चगुल्मनिवृत्तये।
निहन्यात्सर्वरोगांश्च ज्ञानज्योतेर्मुनेर्वचः ॥ ८ ॥

र ज्ञा, सर्वरोगे।

भाषा–चित्रकमूल, हर्रे, वज्रदन्ती (काश्मीरकी तरफ प्रसिद्ध है–उसके अभावमें मराठी) सेंधानमक, अजमोद, त्रिकटु, आककीजडकी छाल, ताम्रभस्म ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर अदरख वगैरहके रससे करञ्जबीजके बराबर गोलियें बनाकर रख छोडे। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करता है विशेषतया गुल्मको मिटाता है।

टि०–मूल श्लोकमें अर्क शब्द आया है सो भी व्योषके आगे होनेसे आककी जड का बोध करता है परन्तु सर्वरोगहरत्व गुणहोनेसे ताम्र और आक दोनों दिये जाय तो अच्छा है ॥ ४ ॥

५ पञ्चनिम्बादिचूर्णम्

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वचं निम्बात्समाहरेत्।
सूक्ष्मचूर्णमिदं कुर्यात्पलैः पञ्चदशोन्मितैः ॥ ९ ॥

लोहभस्महरीतक्यौ चक्रमर्दकचित्रकौ ।
भल्लातकं विडङ्गानि शर्कराऽऽमलकं निशा ॥ १० ॥
पिप्पली मरिचं शुण्ठी बाकुची कृतमालकः ।
गोक्षुरश्च पलोन्मानमेकैकं कारयेद्बुधः ॥ ११ ॥
सर्वमेकीकृतं चूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।
अष्टभागाऽवशिष्टेन खदिराऽसनवारिणा ॥ १२ ॥
भावयित्वा च संशुष्कं कर्षमात्रं ततः पिबेत् ।
खदिराऽसनतोयेन सर्पिषा पयसाऽथवा ॥ १३ ॥
मासेन सर्वकुष्ठानि विनिहन्ति रसायनम् ।
पञ्चनिम्बमिदं चूर्णं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥ १४ ॥

शा. सं., ना. वि , यो. चि., वृ. यो. त., ग. नि., वै. र., रसायनसं , वै. चि., नि. र , कुष्ठे ।

टि०–रसायनसङ्ग्रहे कुष्ठविशीतक्षवधिकतया नियोजितौ तयोरनापि प्रक्षेपे गुणवृद्धिरेव । नि र, वै र वैद्यचिन्तामणीषु निम्बपञ्चाङ्गे एव खदिरासनक्वाथभावना प्रदाय समस्तवस्तूनि नियोज्याऽन्ते भृङ्गभावना प्रदत्ताऽस्ति, निम्बभावनापेक्षया समस्तद्रव्ये भावना ज्यायसी ।

भाषा–अपनेअपने समयमें मूल, पत्र, फल, पुष्प और त्वक् ये प्रत्येक ३ पल निम्बके लेवे और लोहभस्म, हर्रे, चकवड, चित्रकमूल, भिलावे, विडङ्ग, शक्कर, आंवले, हल्दी, पीपल, मरिच, सोंठ, बाकुची, अमिलतास, गोखरू १–१ पल लेकर सबका चूर्णकर भांगरेके रस और सर्वद्रव्यकी बराबर खदिर तथा असनकी छालके अष्टमांशावशिष्ट काढ़ेसे १–१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला खदिर और असनके काढेसे अथवा घी या दूधके साथ लेनेसे यह समस्त कुष्ठोंको दूर करता है और रसायन है–अर्थात् समस्त रोगोंको दूरकर आयुको बढ़ाता है ॥ ५ ॥

६ पञ्चनिम्बाऽवलेहः

रसायनं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा यदुदाहृतम् ।
मार्कण्डेयप्रभृतिभिर्यत्प्रागुक्तं महर्षिभिः ॥ १५ ॥
पुष्पकाले तु पुष्पाणि फलकाले फलानि च ।
सङ्गृह्य पिचुमर्दस्य त्वङ्मूलानि दलानि च ॥ १६ ॥
द्विरंशानि समाहृत्य भागिकानि प्रकल्पयेत् ।
त्रिफला त्र्यूषणं ब्राह्मी श्वदंष्ट्राऽरुष्कराऽग्नयः ॥ १७ ॥
विडङ्गसारो वाराही लोहचूर्णं स्मृताः समाः ।
निशाद्वयाऽवल्गुजकं व्याधिघातः सशर्करः ॥ १८ ॥
कुष्ठमिन्द्रयवाः पाठा चूर्णमेषान्तु संयुतम् ।
खदिराऽसननिम्बानां घनक्वाथेन भावयेत् ॥ १९ ॥
सप्तधा पञ्चनिम्बन्तु मार्कवस्य रसेन च ।
स्निग्धः शुद्धतनुर्धीमान् योजयेत्तच्छुभे दिने ॥२०॥
मधुना तिक्तहविषा खदिराऽसनवारिणा ।
लेह्यमुष्णाम्भसा वापि कोलवृद्ध्या पलं भवेत् ।
जीर्णे तस्मिन् समश्नीयात्स्निग्धं लघु हितञ्च यत्॥२१॥
विचर्चिकोदुम्बरपुण्डरीक-
कपालदद्रूकिटिभालसादि ।
शतारुविस्फोटविसर्पमालाः
कफप्रकोपं त्रिविधं किलासम् ॥ २२ ॥
भगन्दरश्लीपदवातरक्त-
जडान्ध्यनाडीव्रणशीर्षरोगान् ।
सर्वान् प्रमेहान् प्रदरांश्च सर्वान्
दंष्ट्राविषं मूलविषं निहन्ति ॥ २३ ॥
स्थूलोदरः सिंहकृशोदरः स्या-
त्सुश्लिष्टसन्धिर्मधुनोपयोगात् ।
सदोपयोगादपि ये दशन्ति
सर्पादयो यान्ति विनाशमाशु ।
जीवेच्चिरं व्याधिजराविमुक्तः
शुभेतरश्चन्द्रसमानकान्तिः ॥ २४ ॥

भा. प्र., च. द., ग. नि., र र , वृ. मा., कुष्ठादिरोगे । चक्रदत्ते कुष्ठहरचूर्णमिति नाम ।

भाषा–अपने अपने समयसे निम्बके पञ्चाङ्गोंका सङ्ग्रहकर २–२ भाग लेकर त्रिफला, त्रिकटु, ब्राह्मी, गोखरू, भिलांवा चित्रक, विडङ्गतण्डुल, वाराहीकन्द, लोहभस्म, हल्दी, दारुहल्दी, बाकुची, अमिलतास, शक्कर, कुठ, इन्द्रजव, पाठा ये सब १–१ भाग लेकर कूटकपड़छानकर सबके बराबर खदिर, असन और नीमके अष्टभागावशिष्टक्वाथोंसे और भंगरेके रससे ७–७ वार भावनाएं देकर रखछोडे । इसमेंसे पञ्चकर्मकर शुभमुहूर्तमें मधु और तिक्तघृत अथवा खदिर और असनके क्वाथ, अथवा गरमपानी से आधे तोलेसे प्रारम्भ कर एक तोले तक बढाकर लेवे । जीर्णहोनेपर स्निग्ध और हितकारक भोजन करनेसे विचर्चिका, उदुम्बर, पुण्डरीक, कपाल, दद्रु, किटिभ, अलस, शतारुक, विस्फोटक, विसर्प, गण्डमाला, कफप्रकोप, तीन प्रकारका श्वित्र, भगन्दर, श्लीपद, वातरक्त, जड़त्व, अन्धत्व, नाडीव्रण, शीर्षरोग, समस्तप्रमेह, प्रदर, दंष्ट्राविष, मूलविष, मेद इन सबको यह नष्ट करता है । इसके अधिकदिन सेवनकरनेवालेको यदि सर्पकाटगया हो तो सर्प ही मरजाताहै और मनुष्य अधिक दिन जीता है ॥ ६ ॥

७ पञ्चपञ्चामृतरसः

पञ्च पञ्चाऽमृतं प्रोक्तं पञ्चधा पञ्चधा कृतम् ।
पञ्चानाञ्चापि धातूनां पञ्चरोगहरं परम् ॥ २५ ॥
पञ्चानुपानयोगेन पञ्चानां पाचनान्वितम् ।
पञ्चपातकिपापघ्नं पञ्चरोगहरं परम् ॥ २६ ॥
सुवर्णं रजतं ताम्रं नागं वङ्गसमन्वितम् ।
सुवर्णं कान्तलोहञ्च रजतं ताम्रमभ्रकम् ॥ २७ ॥
समौक्तिकं हेमवज्रं रसाभ्रकसमन्वितम् ।
नागं वङ्गं घनं लोहं नेपालं पञ्चमं स्मृतम् ॥ २८ ॥

पारदं रजतं ताम्रं साऽभ्रकं हेमपञ्चमम्।
पञ्चपञ्चामृतान्याहुः सर्वरोगहराणि च ॥ २९ ॥
स्वानुपानविशेषेण वेदनाशमनानि च।
बहुवर्षोत्थविषमं कुष्ठं घोरतरं क्षयम् ॥ ३० ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नात्र विचारयेत्।
यथारोगानुपानेन पाचनं वापि कारयेत् ॥ ३१ ॥

टो०, सर्वरोगे।

भाषा-भस्मकियेहुए सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वङ्ग (१) सुवर्ण, कान्तलोह, रजत ताम्र, अभ्रक (२) मोती, सुवर्ण, हीरा, शुद्धपारा, अभ्रक, (३) नाग, वङ्ग, अभ्रक, लोह, और ताम्र, (४) शुद्धपारा, रजत, ताम्र, अभ्रक, सुवर्ण (५) ये पांच पञ्चामृत हैं। इनमेंसे किसीएकको उचितानुपानके साथ उचितमात्रामें देनेसे बहुतपुराना और विषम कुष्ठ, भय ङ्करक्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इन सबको ये नष्ट करते हैं ॥ ७ ॥

८ पञ्चवलोरसः

तीक्ष्णहिङ्गुलनागानां तारहेमरसान्वितम्।
क्रमवृद्धया तु सङ्गृह्य चाङ्गेर्या मर्दनं कुरु ॥ ३२ ॥
सर्वार्द्धं गन्धकं दत्त्वा रसस्य त्रिगुणीकृतम्।
बृहद्भाण्डे विनिक्षिप्य वालुकायां प्रयोजयेत् ॥ ३३ ॥
अग्निं प्रज्वालयेच्चण्डं प्रमाणं युगसङ्ख्यया।
रसः पञ्चवली नाम वल्लः क्षौद्रघृतान्वितः ॥ ३४ ॥
वीर्यस्तम्भं तीक्ष्णमात्रं गात्रसङ्कोचनं तथा।
आलस्यं बहुनिद्राञ्च वेदना सर्वसन्धिषु ॥ ३५ ॥
कास श्वास प्रसक्तिञ्च निशायां तप्तगात्रताम्।
आध्मानमग्निमान्द्यञ्च यक्ष्माणञ्चापि नाशयेत् ॥ ३६ ॥

र श, वानीकरणे।

भाषा-फोलाद, शिगरिफ, नाग, रजत, सुवर्ण, पारा इन सबकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर खट्टीतिपतियाके रससे १-२ रोज मर्दनकर सबसे आधा शुद्धगन्धक मिलाकर बडी आतशी शीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी तीक्ष्ण आंच दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३-३ रत्ती घृत और मधुके साथ देनेसे वीर्यका अत्यन्त स्तम्भन करता है औरशरीरकी शिथिलता दूरकर दृढ बनाता है। आलस्य, अति निद्रा, सन्धियोंकी पीडा, कास, श्वास, प्रसेक, रात्रिज्वर, आध्मान, मन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरता है ॥ ८ ॥

९ पञ्चबाणोरसः (प्रथमः)

रसाऽभ्रनागाऽयसगन्धवङ्गं
कापर्दिकं तत्समभागयुक्तम्।
रसेन हेम द्विगुणं प्रदद्यात्
क्षीरेण भाव्यञ्च गवां त्रिवारम् ॥३७॥
त्रिः सप्तकृत्वो विजयारसेऽस्य
ततश्च दद्यात्कनकस्य सप्त।
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमैश्च
कङ्कोलकाऽऽकल्लगजेन्द्रकैश्च ॥३८॥
कृष्णाहरेश्चन्दनतोयभाव्या
प्रत्येकमेकस्य च सप्तसप्त।
दर्पेण चैकाञ्च ददीत भावना
सिद्धो रसः स्यादिति पञ्चबाणः ॥३९॥
वीर्यस्य वृद्धिञ्च करोति पुस्त्वं
नष्टेन्द्रियाणां हि शुभावहश्च।
यदीयगेहेऽगणिता रमण्य-
स्तेनैव कार्यो रसराज एषः।
कान्ताप्रियत्वं बहुशुक्रताञ्च
शोफाऽभिवृद्धिं वितनोति सद्यः ॥ ४० ॥

वृ यो त, र सु, यो र, र बो, वानीकरणे। र सु, रसकपञ्चबाण।

भाषा-शुद्धपारा, अभ्रक, नाग, लोह इनकी भस्में, शुद्ध-गन्धक, वङ्ग और कौडीभस्म ये सब १-१ भाग, सुवर्णभस्म २ भाग, लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर गायके दूध से ३, भांगरेके रससे २१, धतूरा, लौंग, जायफल, केसर, शीतलचीनी, अकलकरा, गजपीपल, पीपल सफेदचन्दन इनप्रत्येकके रसोंसे सात, कस्तूरीसे एक भावनादेनेसे यह पञ्च-बाणरस सिद्धहोगा। इसकी ३ ३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख छोडे। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे वीर्य वृद्धि, इन्द्रियोंकी खराबी, इन सबको नष्टकर बहुतसी स्त्रियोंको तृप्तकरनेकी शक्ति देता है ॥ ९ ॥

१० पञ्चबाणो रसः (द्वितीय)

कनकं रसभूतिञ्च निरस्य लोहमभ्रकम्।
कस्तूरीं नागवङ्गौ च मर्दयेच्छ्लक्ष्णताऽवधिम् ॥ ४१ ॥
धात्रीफलं दारुयुग्मं लवङ्गं कुङ्कुमं तथा।
शुण्ठी भल्लातकञ्चैव विजया कनकं मधु ॥ ४२ ॥
एतैर्द्रव्यैः क्रमेणैव भावयेत्सप्तवारतः।
पञ्चबाणरसो नाम्ना सुसिद्धो जायते ध्रुवम् ॥ ४३ ॥
दिनान्ते भक्षयेद्यस्तु स गच्छेत्प्रमदाशतम्।
अतिस्तम्भं हरेच्छीघ्रं व्योषजम्बीरनीरयुक् ॥ ४४ ॥

र श, वानीकरणे।

भाषा—सुवर्ण, पारा, लोह और अभ्रक इनकी भस्में, कस्तूरी, नाग-वङ्गभस्म सब समभागलेकर बारीकपीस आवला, देवदारु, दारुहल्दी, लौंग, केसर, सोंठ, भिलावे, भांग, धतूरा इन प्रत्येकके रसोंकी क्रमसे ७-७ भावनाएं देकर ३ ३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानु पानके साथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूर करता है। सन्ध्या कालमें दूधके साथलेनेसे अत्यन्तस्तम्भन होता है। उसको दूर करना हो तो त्रिकुटु और जम्भीरीकारस पीवै ॥ १० ॥

११ पञ्चबाणो रसः (तृतीयः)

नागं वङ्गञ्च कान्तञ्च हेमताराऽर्करौप्यकम् ।
सूतं क्रमाद्भागवृद्धं वैकान्तं सूतभागिकम् ॥ ४५ ॥
विशुद्धगन्धं सर्वांशं पर्पटीं पातयेच्छनैः ।
कामिप्रियोक्तविधिना भावितं भावनौषधैः ॥ ४६ ॥
माषपूरणसंयावे पाचितं घृतमध्यतः ।
यथाशास्त्योत्सवं कृत्वा ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥
पञ्चबाण इति ख्यातो रमयेत्कामिनीशतम् ॥ ४७ ॥

र. शं , ना. वि., वाजीकरणे ।

भाषा—नाग १ भा., वङ्ग २ भा., कान्तलोह ३ भा , सुवर्ण ४ भा , मोती ५ भा , ताम्र ६ भा , चादी ७ भा , पारा ८ भा., वैक्रान्त ८ भाग इन सबकी भस्में और शुद्ध गन्धक सबकीबराबर मिलाकर पर्पटीके विधानसे पर्पटी बनाकर कामवर्धक गणसे भावना देकर गोलाबनाय ३–४ पानों में लपेटकर उड़दके आटेकी बाटीमें कवलितकर घीके अन्दर धीमीआचसे पकावे। जब बाटी सिककर जलने को हो तब नीचे उतार दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर अन्दरसे रसको निकालकर कुमारिका प्रभृतिका पूजनकर रखछोड़े। इसमें से ३-३ रत्ती तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे यह तमामरोगों को दूर करता है और स्तम्भन की दवाओंके साथ सेवन करने से बहुतसी स्त्रियोंको खुश करसक्ता है ॥ ११ ॥

१२ पञ्चबाणो रसः (चतुर्थः)

म्लेच्छं सूतविवेष्टितं पलमितं माषस्य पिण्डे क्षिपेत्
प्रस्थे धूर्तजतैलजे हुतवहे सम्पाच्य पिण्डान्नयेत् ॥
मुक्ताविद्रुमसूतभस्म रविजं स्वर्णञ्च वङ्गं समं
तारं ताप्यककान्तभस्म सुभगंचाऽभ्रं द्विभागं ततः ॥
अहिबलिमपि वज्रं नागफेनन्तु भागं,
करहटरसघृष्टं कोकिलाक्षस्य बीजैः ॥
फणिफलजभयाद्भिः केसरैर्देवपुष्पैः,
त्रिकटुघनजटाभ्यां भावयेच्छाल्मलीभिः ॥ ४९ ॥
मधुरमुशलिकन्दैर्मर्कटीकोलजाती–,
फलनलदसुजातीपत्रिकाहस्तिकन्दैः ।
त्रिफलजलगुडूची साऽश्ववाराहकन्दै–,
र्दहनमृगमदाभ्यां भावयेद्वह्निसह्यम् ॥ ५० ॥
रमयति बहुकान्तास्तीव्रमेहाऽपहारी,
समधुघृतसिताभ्यां पञ्चबाणोऽद्विवल्लः ।
बहुतरमपि वीर्यं कुर्वतः क्षीरपानं,
गुरुतरमपि सेव्यं स्वादुमिष्टञ्च भोज्यम् ॥५१॥

र. सं , वाजीकरणे ।

भाषा—रूमीशिंगरिफ ४ तोले लेकर चौगुना वस्त्र सूत-लपेटकर गेंद जैसा गोला बनावे ऊपर दो २ अंगुल मोटा उड़दके आटे का लेप देकर गहरे पेंदकी कड़ाही में रखके एक सेर धतूरे के बीजोंका तेल डालके मन्दाग्नि से पकावे। आटा लाल होकर काला होने लगे तब नीचे उतार ले। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरज से निकालके रखछोड़े। वाजीकरण योगों में इसी का प्रयोगकरे। खासकर इस योगमें इसी को डालना। मोती, प्रवाल, पारा, नीलम अथवा ताम्र, सुवर्ण, वङ्ग इन-सबकी भस्में १–१ भाग, चादी, सोनामाखी, कान्तलोह, शिंगरिफ, अभ्रकभस्म ये सब २–२ भाग, गन्धक, हीराभस्म और अफीम १–१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अक्लकरा, तालमखाना, खसखस, केशर, लौंग, त्रिकटु, नागरमोथा, सेमलका मुसला, मुलहठी, मुसली, केवाच, वेर, जायफल, खस, जावित्री, हाथीकन्द, त्रिफला, तगर, गिलोय, असगन्ध, वाराहीकन्द, चित्रक, कस्तूरी, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु, घृत और शक्करकेसाथ लेकर दूधपीनेसे बहुतसीस्त्रियोंके साथ रमणकरसक्ताहै इसकेसेवनसे अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै, कि कितनाही दुर्जरपदार्थ खायाहो सब जीर्ण होजाताहै ॥ १२ ॥

१३ पञ्चबाणो रसः (पञ्चमः)

गन्धकाऽभ्रकधत्तूरगरलानां चतुष्टयम् ।
पूर्वोक्ततैलात्सम्मर्द्य दोलायन्त्रे विपाचयेत् ॥ ५२ ॥
गुटिकां तिलजाते च तैले प्रस्थप्रमाणके ।
तैले निःशेषिते पक्त्वा वस्तगोखरवाजिनाम् ॥५३॥
मूत्रैश्च पूर्ववत्पक्त्वा मातुलुङ्गफले क्षिपेत् ।
तद्द्वारमन्धितं कृत्वा पुटयेल्लघुमात्रकम् ॥ ५४ ॥
पश्चादुद्धृत्य तद्भस्म सर्षपं विनियोजयेत् ।
सर्षपद्वयमात्रन्तु ब्रह्मरन्ध्रे विलेपयेत् ॥ ५५ ॥
त्रिदोषजानि सर्वाणि सर्वसर्पविषाणि च ।
भूतप्रेतपिशाचादिग्रहण्यादिशिरोगदान् ॥ ५६ ॥
कर्णाक्षिरोगानन्यांश्च नाशयेत्क्षणमात्रतः ।
पादाङ्गुष्ठे च लेपेन सर्वरोगान्विनाशयेत् ॥ ५७ ॥
सूचीमुखप्रमाणन्तु नागवल्लीदलान्वितम् ।
भेदयेन्मलजालानि गुल्मांश्च विविधानपि ॥ ५८ ॥
कुक्षिरोगानशेषांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
महिषीदधिसंयुक्तं पाण्डुजालं विनाशयेत् ॥ ५९ ॥
कदलीफलसंयुक्तं भक्षयेच्च पिबेत्पयः ।
सर्वाङ्गं लेपयेद्गन्धैः कर्पूरेण च संयुतैः ॥ ६० ॥
मदनोद्रेकसंयुक्तो महामत्तगजेन्द्रवत् ।
निरन्तरमहाराग्दरतिं कुर्वन्मदोद्धतः ॥ ६१ ॥
यामत्रयं भवेत्स्तम्भः स्त्रीषु वाजीव गच्छति ।
मुहुर्मुहुः पिबेद्द्रव्य शर्करासंयुतं पयः ॥ ६२ ॥
नारिकेलोदकञ्चैव पिबेच्छैत्योपचारवान् ।
कर्पूरान्वितताम्बूलं कुरुते सत्यवाक्परः ॥ ६३ ॥
वृद्धिश्च स्तम्भनश्चैव कुरुते च निरन्तरम् ।

जम्बीरफलबीजानां चूर्णमुष्णेन वारिणा ॥ ६४ ॥
पिबेत्तत्क्षणमात्रेण तदुद्रेकं विनाशयेत्।
सर्वेषामपि रोगाणामनुपानविशेषतः ॥ ६५ ॥
तदौषधप्रयोगेऽस्मिन्नप्रमत्तः प्रयोजयेत्।
पञ्चबाणरसः ख्यातस्सर्वलोकोपकारकः ॥ ६६ ॥

र. कौ. (ह्र) वाजीकरणे.

भाषा—शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, धतूरेके बीज और वत्सनाग इनचारोंका बारीक चूर्ण कर सहिजन डंडाथूहर करञ्ज, आकंकी जड़कीछाल, भुंइआवला, वत्सनाग, लाल और सफेदघुंघा इन सबके यथासम्भवबीज और जड अथवा जडकी छाल लेकर जवकुटकर पातालयन्त्रसे तैल निकाल इसमें गोलीबंधनेतक घोटकर गोलीबनाकर कपडेमें बांधकर इसी तैलमें दोलायन्त्रसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर सेरभर तिलके तैलमें यहांतक पकावे कि समस्ततैल समाप्त होजाय फिर इसमेंसे निकालकर बकरा, गाय, गधा, घोड़ा, इनके खुरोंके तैलमें पकावे फिर इन प्रत्येकके मूत्रमें ४–४ पहर पकाकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर बिजोरेके फलमें रखकर उसीकी डाटसे बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर सुखाकर इतनी आंचदे कि बिजोरानीबू जलजाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमें से १ सर्षपभरमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ खिलावे और मद्य रन्ध्रपर पाछदेकर २ सरसों के बराबर घिसे तो निर्दोषजरोग समस्तसर्पविष, भूत, प्रेत, पिशाचादि, ग्रहणी, शिरोरोग, कान और आंखके रोगोंको यह क्षणमात्रमें दूरकरताहै। पैरके अगूंठेपर पाछदेकर मालिशकरने से समस्त वातविकारों को नष्ट करता है। सूईके अग्रभागजितना पके पानमें खानेसे समस्त मल, नानातरहके गुल्म, और कुक्षिरोग नष्ट होवें। भैंसके दही केसाथ पाण्डुरोग नष्ट होता है केलेके फलके साथ खाकर दूध पीनेसे और कपूर मिले हुए गन्धरा अन्नमें लेपकरनेसे महामत्तहाथीकीतरह कामसे व्याकुलहोकर ३ पहर तक स्तम्भनहोकर स्त्रियोंमें अश्वकीतरह रतिको करता है। इसमें शक्करमिलाहुआ गायकादूध बारम्बार पीवे, अधिक दाह होने, पर नारियलका जल वगैरह शीतोपचार करे। कपूरयुक्त पान खावे। इसके सेवनसे वीर्यकीवृद्धि और अत्यन्तस्तम्भन होता है। जमीरीके बीजोंका चूर्ण गरमपानीसेलेनेसे तत्क्षण वीर्यस्खलन होताहै। इसका यथार्थप्रयोगकरनेसे समस्तरोग नष्ट होते है। पर इसकाप्रयोग वैद्य सावधान होकर अपने समक्षमें करावे ॥ १३ ॥

१४ पञ्चभद्रकम्

हेमाम्बुदायोऽभ्ररसेन्द्रकाञ्चन
  सम निवाते पुटितं लघीयसा।
पुटेन भृङ्गद्वयवारिणाऽऽप्लुत
  जयेद्विलीढं मधुना ससर्पिषा ॥ ६७ ॥
गुदामयं पाण्डुगदं सकामलं
  प्रमेहमर्शांसि च ह्याममारुतम्।
गदं ग्रहण्याः प्रदराऽस्रपित्त-
  मुखानतीसारमतीव दुस्तरम् ॥ ६८ ॥

रो प. (स), अर्शसि।

भाषा—शुद्ध धतूरे के बीज, नागरमोथा, लोह, अभ्रक, पारा, सुवर्णभस्म ये सब समभाग लेकर दोनों भंगरों के रससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर सुखाकर लघुपुटकी आंच दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती मधु और घीकेसाथ मिलाकर चटानेसे गुदरोग, पाण्डुरोग, कामला, प्रमेह, बवासीर, आमवात, ग्रहणी, प्रदर, रक्तपित्त, अतिसार इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ १४ ॥

१५ पञ्चमूर्ति रसः

नेपालं भूपपाषाणं द्वितुत्थं तालकं समम्।
गृहकन्यारसे मर्द्य द्वियामं च प्रयत्नतः ॥ ६९ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तद्वत्त्वा मत्स्यपित्तके।
भावित क्षणमात्रञ्च देयं दुग्धाऽनुपानतः ॥ ७० ॥
ज्याहिकाऽस्थिगतं शीतं हन्ति सत्यं न संशयः।
पञ्चमूर्तिरसो नाम प्राणिनां हितकारकः ॥ ७१ ॥

वै चि, बा, ज्वरे।

टि०–क्वचित् दुग्धानुपानत इत्यस्य स्थाने गुडानुपानत इति पाठ, तत्र गुडशब्देन तन्मूल पत्रमूलस्वरसौ वा ग्रहीतव्यौ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्धसोमल, तुत्थक और खर्पर, हरिताल भस्म अथवा रसमाणिक्य ये सब समभाग लेकर घीकुवार के रसमें दोपहरतक मर्दनकर गोला बनाय चारतह कपडे में बांधकर दोलायन्त्र बनाय घीकुवारकेरसमें एकपहर स्वेदनकर निकालकर सुखाकर रोहूमछलीके पित्तसे भावनादेकर ज्वारके बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ देनेसे ज्याहिक और अस्थिगत शीतज्वर इनको यह नष्ट करता है ॥ १५ ॥

१६ पञ्चलोहभूपतिरसः

पलं रसं गन्धकवत्सनाभौ
  शुल्बञ्च तीक्ष्ण रविताराकञ्च।
ताप्यं ह्ययस्कान्तसुचारुपुष्पं
  सर्वं विमर्द्य धृतराष्ट्रतोये ॥ ७२ ॥
तच्छोषयेदातपवर्जितञ्च
  वटीकृतं काचघटे निदध्यात्।
मृद्भाण्डमध्ये सिकताऽऽख्ययन्त्रे
  क्रमाऽग्निना षोडश याममेतत् ॥ ७३ ॥
गाढाऽग्निमुद्दीप्य यथाक्रमेण
  तदौषधं वह्निसमानवर्णम्।
सघर्षणाद्यत्र च रक्तरेखा
  पूर्वार्धयुक्तं द्दढवत्सनाभम्।
पलं मरीचस्य सुमर्दितं तत्
  ताम्बूलवल्लीदलकं समानम् ॥ ७४ ॥

गुञ्जमात्रां वटीं कृत्वा सम्यक् छायासुशोषिताम् ।
पिबेद्युक्ताऽनुपानेन विषमज्वरनाशनम् ॥ ७५ ॥
सर्वाऽऽमयहरं सद्यः सदा विजयवर्धनम् ।
वाताऽर्दितं वातमेहं श्वासकासादिरोगनुत् ॥ ७६ ॥
क्षतक्षयं कफोत्थञ्च पाण्डुकामलशूलनुत् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु चाऽम्लपित्तं नियच्छति ॥७७॥
अजीर्णमामवातञ्च ह्यर्शांसि ग्रहणीगदम् ।
अरुच्युपमुदावर्तमाध्मानं सोमरोगकम् ।
पञ्चलोहक्षितीशश्च विंशतिक्षयरोगनुत् ॥ ७८ ॥

रसायन सं., सर्वाऽऽमये ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, और बछनाग, ताम्र, लोह, माणिक्य, रजत, सोनामाखी, कान्तलोह, शुद्ध कसीस ये सब समभाग लेकर हंसराज के रस से १–२ रोज़ छायामें मर्दनकर गोलियें बनाय छायाशुष्ककर ४–५ कपड़मिट्टी कीहुई आतशी शीशीमें डालकर मुंह बन्दकर मिट्टी की नादमें वालुकायन्त्र बनाय १६ प्रहरकी क्रमाग्नि देकर अख़ीरमें प्रचण्डाऽग्निकरे । स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरज से निकालकर देखे, इसका रंग मयूरकी गर्दन के समान होगा और कसौटी वगैरहपर घर्षण करने से लालरेखा निकले तब समझना कि यह यथार्थ सिद्ध हुआ है । इसमें पहिले से आधे प्रमाणमें पका हुआ शुद्ध बछनाग और इससे दूनी मरिच तथा सबकी बराबर पके पान मिलाकर २–२ रोज़ घोटकर १–१ रत्ती की गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे विषमज्वर, वातरोग, वातमेह, श्वास, कास, क्षत, क्षय, कफरोग, पाण्डु, कामला, शूल, सन्निपात, अम्लपित्त, अजीर्ण, आमवात, अर्श, ग्रहणी, अरुचि, उदावर्त, आध्मान, सोमरोग, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १६ ॥

१७ पञ्चलोहरसायनम्

मृताऽभ्रं कान्तलोहञ्च नागवङ्गौ सुमारितौ ।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥७९॥
तलपोटेन धाराद्या शतावर्या हिमाम्बुना ।
भावनाऽत्र प्रकर्तव्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥ ८० ॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा नवनीतेन सेवयेत् ।
प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलान्तकम् ॥ ८१ ॥
शाल्यन्नं सपटोलञ्च तन्दुलीयकवास्तुकम् ।
मत्स्याक्षीं मुद्गयूषञ्च ह्यपक्वं कदलीफलम् ॥ ८२ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्राऽश्मरीं हरेत् ।
कामलापाण्डुशोफांश्च ह्यपस्मारक्षतक्षयान् ।
रक्तकासं विशेषेण पञ्चलोहरसायनम् ॥ ८३ ॥

नि. र., वै. चि., व. रा., प्रमेहे ।

भाषा—अभ्रक १ भा., कान्तलोह २ भा., नाग ३ भा., वङ्ग ४ भा., इनकी भस्में लेकर मुसली की जड़, शतावरी, इनके क्वाथरस से १–१ पहर घोटकर चने प्रमाण गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखलेवे । इनमें से १–१ गोली मक्खन के साथ सुबह में खानेसे समस्तप्रमेह, अर्श, ग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, कामला, पाण्डु, शोथ, अपस्मार, क्षत, क्षय, रक्तकास इनसबको यह नष्टकरता है । इसमें सफेद चावल, परवल, चौलाई, बथुवा, मछेछी, मूंग, कच्चाकेला, इनका शाक पथ्य है ॥ १७ ॥

१८ पञ्चवक्त्रो रसः (मृत्युञ्जयः) १

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मरिचं टङ्कणं कणा ।
मर्दयेद्धूर्तजद्रावैर्दिनमेकन्तु शोषयेत् ॥ ८४ ॥
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्निपातहा ।
अर्कमूलकषायं तु सत्र्यूषमनुपाययेत् ॥ ८५ ॥
युक्तं दध्योदनं पथ्यं जलयोगञ्च कारयेत् ।
रसेनाऽनेन शाम्यन्ति सक्षौद्रेण कफादयः ॥ ८६ ॥
भक्षाऽऽर्द्रकरसञ्चानु पिबेदग्निविवृद्धये ।
यथेष्टं घृतमांसाशी शक्तो भवति पावकः ॥ ८७ ॥

र. सं., र. चि., र. चं., वृ. प्र., वृ. यो. त., र. क. यो., भा. प्र., वै. र., टो., भै. र., र. र. स., यो. म., चि. र., र. र. दी., नि. र., र. सु., वै. चि., रसायन सं., भै. सा., र. प्र. सु., शा. सं., व. रा., र. सि., र. मु., र. क. ल., यो.-च., र. प्र., धा., चि. क., र. को., यो. र., र. का., र. त., ज्वरे । रसायनमे. पञ्चानन ।

टि०—र. स., भै. र., र. सु., र. च., यो. र., व. रा., र. त., ग्रन्थेषु मृत्युञ्जय रस इति नाम स्थापितम्, परमाश्चर्यमेतदेतेषु पाठद्वय स्यापि नानयो केवलोऽनुपाने विशेषोऽस्ति तज्ज्ञानार्थं मृत्युञ्जयस्य पाठोऽस्माद्धृतोऽस्ति यथा—

अव्यक्तलिङ्गिन शुद्धो रसश्च कीर्तिवर्धन ।
यस्य प्रद शिव साक्षान्मृत्युञ्जयरस स्मृत ॥
विषस्यैकस्तथा भागो मरिच पिप्पलीयुगा ।
गन्धकस्य तथा भागो भाग स्याट्टङ्कणस्य च ॥
सर्वं च समभाग स्याद्धिङ्गुलन्तु द्विभागिकम् ।
चूर्णयेत्खल्वमध्ये तु गुञ्जमाना वटीश्चरेत् ॥
जम्बीरस्य रसेनाऽत्र कार्यं हिङ्गुलशोधनम् ।
रसश्चैलसमभाग स्याद्धिङ्गुल लेप्यते तदा ॥
[illegible] विष मौरविशोधितम् ।
मृत्युरूप ज्वर हन्ति मृत्युञ्जयरस स्मृत ॥
मृत्युर्विनिर्जितो यस्मात्तेन मृत्युञ्जयो रस ।
मधुना लेहन प्रोक्त सर्वज्वरनिवृत्तये ॥
दध्युदकानुपानेन वातज्वरनिवर्हण ।
आर्द्रकस्य रसे [illegible] ॥
जम्बीरद्रवयोगेन [illegible] ।
[illegible] विषमज्वरनाशन ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥

मध्यज्वरं तथा जीर्णं त्रिरात्राद्यादयेद्ध्रुवम् ।
सप्ताहात्सन्निपातोत्थं ज्वरानीणैरसञ्ज्ञकम् ॥ इति ॥

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, मरिच, भुना-सुहागा, पीपल ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर धतूरेके पत्तोंके रससे एक रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमें से १–१ गोली अदरखवगैरह के रस के साथ देकर ऊपर से ३ माशे आककी जडकी छाल के काढेमें ३ माशे त्रिकटु का चूर्ण मिलाकर पिलावे, ऊपर से दहीभात खानेको दे । अधिक दाह मालूम होनेपर मस्तकपर जलधाराका प्रयोग करे, तो इससे घोरसन्निपात नष्ट होता है । मधुके साथ देनेसे कफरोग निवृत्त होते हैं । मन्दाऽग्निमें मधु और अदरखके रसकेसाथ देनेसे अग्नि प्रबल होता है ॥ १८ ॥

१९ पञ्चवक्त्रो रसः (द्वितीय.)

सूतं गन्धं कर्षयुग्मप्रमाणं,
तत्पादांशां कारयेद्वै शिलाख्याम्
व्योषं ताप्यं पिप्पलीं तत्समानां,
प्रत्येकं वै भेषजं चूर्णयेच्च ॥ ८८ ॥
भाव्यं पित्तैर्मत्स्यमायूरजैर्वै,
घर्मे कृत्वा सप्तवारं हि सम्यक् ।
गुञ्जायुग्मं भक्षितं पञ्चवक्त्रो
मूर्च्छां हन्यात्सन्निपातोद्भवां वै ॥ ८९ ॥

र. प्र सु, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २–२ कर्ष, शुद्धमैनसिल, त्रिकटु, सोनामाखी और पीपल ये सब आधाआधा कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मछली और मोरके पित्तोंसे धूपमें ७–७ भावनाएं दकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे सन्निपात हराऽनुपान के साथ १–१ गोली देनेसे यह सन्निपातजमूर्च्छाको दूरकरताहै ॥ १९ ॥

२० पञ्चवक्त्रो रसः (तृतीयः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं हिङ्गु पुष्करमूलकम् ।
सैन्धवं गन्धकं तालं कटुकीं चूर्णयेत्समम् ॥ ९० ॥
पुनर्नवादेवदाल्योर्निर्गुण्डीमेघनादयोः ।
तिक्तकोषातकीद्रावैर्दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ॥ ९१ ॥
माषमात्रं लिहेत्क्षौद्रैः पञ्चवक्त्रो रस. स्मृत. ।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ९२ ॥

रसायन स रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, भुनाहींग, पोहकरमूल, सेंधा नमक, शुद्धगन्धक, रसमाणिक्य, कुटकी सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पुनर्नवा, वदाल, निर्गुण्डी, कानेवाली चोलाई, कडवीतरोई, इनके स्वरसोंसे १–१ रोज मर्दनकर १–१ माश की गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुके साथ देनेसे यह रक्तपित्तको इसतरह नष्ट करता है जैसे कि सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है ॥ २० ॥

२१ पञ्चवक्त्रो रसः (चतुर्थः)

सूतगन्धाऽमृतं स्वर्णबीजं तुल्यं समाहरेत् ।
त्र्यूषणं सर्वतुल्यं स्यान्मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ९३ ॥
पञ्चवक्त्रा भवेत्सूतो गुञ्जामात्रो ज्वरापहः ।
सिताऽऽर्द्रकरसेनैव भुक्तो मुद्गरसाशिनाम् ॥ ९४ ॥
समांश्च विषमान्हन्ति निम्बुनीरसितायुतः ।
अतिसारं महाघोरं रात्रिजागरणं परम् ॥ ९५ ॥

र, अतिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग और धतूरे के बीज ये सब समभाग, त्रिकटु सब के बराबर लेकर बारीक चूर्णकर दो रोज सूखा अथवा पानीसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और अदरख के रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको दूरकरता है । इसमें पथ्य मूंग-का यूष लेवे । नींबूके रस और शक्करके साथ लेनेसे यह सम और विषमज्वर, घोरअतिसार और रात्रिजागरणसे होनेवाले दोषोंको दूर करता है ॥ २१ ॥

२२ पञ्चवक्त्रो रसः (पञ्चम.)

रसं गन्धकं तित्तिरीकं वराटं,
विषं टङ्कणं सर्वमेकत्र तुल्यम् ।
ततस्त्रैफलव्योषचूर्णेन युक्त,
समं मर्दयेद्भृङ्गराजद्रवेण ॥ ९६ ॥
रसः पञ्चवक्त्राऽभिधानोऽयमेको-
ऽजयेत्सन्निपातानशेषान् प्रयुक्तः ।
ततो वल्लमात्रं प्रयुञ्जीत युक्त्या,
ज्वरे वातिके श्लेष्मिके रक्तजे वा ॥९७॥

र श, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोटा, कौडीभस्म, शुद्धवछनाग, भुनासुहागा सब समभाग, इनसबकी बराबर त्रिफला और त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर भंगरेके रससे १–२ रोज मर्दन कर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात, वातिक, श्लैष्मिक और रक्तविकारज ज्वर इनसबको यह नष्ट करता है ॥ २२ ॥

२३ पञ्चवक्त्रो रसः (षष्ठ.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धपादश्च टङ्कणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्या मर्दयेद्द्रवैः ॥ ९८ ॥
तिलपर्णी तथा जाती पिप्पलीमूलपत्रकम् ।
द्रवैरेषाञ्च सप्ताहं पेष्यं शोष्यं पुनः पुनः ॥ ९९ ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गोलं विशोषयेत् ।
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्निपातजित् ॥१००॥

अर्कमूलकषायश्च सत्र्यूषमनुपाययेत् ।
सक्षीरं दापयेत्पथ्यं जलयोगश्च कारयेत् ॥ १०१ ॥

र का , र को , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला, भुनासुहागा ३ मासे लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर तांबेकी खरल अथवा कडाहीमें डालकर जैत, हुरहुर, चमेली, पिपलामूल, पत्रज, इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे सातरोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमें से १–१ गोली तत द्रोगहरानुपानके साथ अथवा त्रिकटु मिलेहुए आककी जडकी-छालकेकाढेकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहे। इसकेदेनेसे अधिक दाह मालूम होनेपर सिरपर जलकी धारा देना ॥ २३ ॥

२४ पञ्चवक्त्रो रसः (सप्तम)

सूतं गन्धं विषं तुल्यं नागं वङ्गं द्वयं द्वयम् ।
पञ्चवक्त्ररसो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥ १०२ ॥

र क यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वच्छनाग १–१ भाग, नाग और वङ्गभस्म २–२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अदरखवगैरहके रससे १–२ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमें से १–१ गोली सन्निपातहरानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहे ॥ २४ ॥

२५ पञ्चशरो रसः

रसेन युक्तं शाल्मलिजेन सूतं
त्रिसप्तवाराणि बलिं विमर्द्य ।
पृथक् तयोः कज्जलिकां विपक्त्वां
घृते रस पञ्चशरोऽयमुक्तः ॥ १०३ ॥
वल्लोऽहिवल्लीदलसम्प्रयुक्तो-
वीर्यातिवृद्धिं कुरुतेऽस्य नूनम् ।
मांसान्नमद्य गुरुपायसञ्च
पयः पिबेन्माहिषमत्र सिद्धम् ॥ १०४ ॥

भै र , र र दी , र सु , रसायनस , स्त्री वि , यो म , र क ल (ना), रसायने वाजीकरणे च।रसायनस (अनङ्गसुन्दरः)

भाषा—शुद्धपारे और गन्धकको अलग २ सेमरकेकन्दके रससे इकीस २१ दिन मर्दनकर सुखाकर दोनोंकी कज्जली बनाकर कडाहीमें थोडासा घी डालकर कज्जलीको गलाकर पर्पटी बनाले, फिर इस पर्पटीको सेमलकेरससे २१ बार भावना देकर रख छोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती पके पानके साथ देकर ऊपर अधौटा भैंसका दूध पिलानेसे और मांसयुक्त अन्न, मद्य, खीर वगैरह देनेसे यह कामकी वृद्धिको करता है और आयुको बढाता है॥२५॥

२६ पञ्चसायकः

मृत सूतं मृतं चाभ्रं सुशुद्धं दरदं तथा ।
अब्धिशोषमहः फेनं जातीपत्री च तत्फलम् ॥१०५॥
करहाटं तथा गोधा वानरी कोकिलाक्षकः ।
एतानि समभागानि खल्वे चूर्णीकृतानि च ॥ १०६ ॥
विजयाशाल्मलीमूलैरसितस्वर्णबीजकैः ।
शताह्वापोस्तमधुकनागवल्लीदलद्रवैः ॥ १०७ ॥
भागांशकर्पूरयुतो रसोऽयं पञ्चसायकः ।
मात्रा वल्लद्वयी चाऽस्य मधुना त्रिफलायुता ॥ १०८ ॥
पथ्यं क्षीरं यथासात्म्यं गच्छेच्च प्रमदाशतम् ।
निशामुखे रसो ग्राह्यो ह्यम्लवर्गश्च वर्जयेत् ॥ १०९ ॥

रसायन स , वृ यो त , रसायने वाजीकरणे च ।

टि०—गोधास्यवनस्पतेरप्रसिद्धत्वात्प्रकरणौचितीमनुसृत्य यथाकथंचिद् तिलपर्ण्येषु गोधापदसादृश्यात्तन्मूलमत्र नियोजनीयत्वनोक्तमिति सुधीभि विभावनीयम्

भाषा—पारद और अभ्रककी भस्म, शुद्धशिंगरिफ, समुद्र शोष, शुद्धअफीम, जावित्री, जायफल, अकलकरा, अतिबला, (गुलसिकरीहि) केवाच के बीज, तालमखाना, ये सब समभाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर भाग, सेमर, कालेधतूरे के बीज, सोंफ, पोस्तकेडोडे, मुलहठी, पान इनके रसोंमे १–१ भावना देकर सुखाकर सोलहवा हिस्सा शुद्धकपूर मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा मधु और त्रिफलाके साथ देकर ऊपरसे दूध पिलानेसे सैकडों स्त्रियोंके साथ रमण कर सकाहे । इसका सेवन सन्ध्याकेसमय करना उचित है। इसमें अम्लवर्ग का सेवन निषिद्ध है ॥ २६ ॥

२७ पञ्चसारो रसः (पञ्चानन) १

शुद्ध सूत सम गन्धं धात्रीपत्रद्रवैर्दिनम् ।
यष्टिखर्जूरद्राक्षाणां क्वाथेन मर्दयेद्दिनम् ॥ ११० ॥
पञ्चसाररसो नाम भक्षयेन्माषमात्रकम् ।
धात्रीचूर्णं सितां चानु पिबेद्धृद्रोगजिद्भवेत् ॥ १११ ॥

र र , व रा , र का , र च , चि क , र सि , र स , र कौ , ध , र सु , रसायनस , र चि , र क , यो म , हृद्रोगे । र स इत्यादिषु पञ्चाननेति नाम । र का , पञ्चाऽमृतेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर ताजे आंवलेके पत्तोंका रस, मुलहठी, खजूर और द्राक्षके क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर १–१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली खाकर ऊपरसे आंवलेका चूर्ण और शक्कर खाकर दूध पीनेसे यह हृदयके रोगोंको दूरकरताहे ॥ २७ ॥

२८ पञ्चसारो रसः (द्वितीयः)

रसेन्द्रहेमाऽनललोहगन्धकं
समंसमं भृङ्गरसेन मूर्च्छितम्
लघौ पुटे सिद्धिमुपैत्ययाऽऽज्यम-
ग्मधुप्लुत पथ्यभुजा निषेवितम् ॥ ११२ ॥
जयेज्ज्वरं पाण्डुगदप्रमेहा-
नष्टोदरार्शोग्रहणीविकारान् ।
यक्ष्माणमुग्र परिणामशूल
हृद्रोगमाध्मानमुरःक्षतञ्च ॥ ११३ ॥

लो प (स), प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, चित्रक, लोहभस्म, शुद्ध-गन्धक ये सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेके रससे २–३ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिटीकर एकवालिस्तभरके खड्डेमें आंचदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीके साथ खिलानेसे ज्वर, पाण्डु, प्रमेह, आठ प्रकार के उदर, बवासीर, संग्रहणी, राजयक्ष्मा परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८ ॥

२९ पञ्चाङ्गलोहम्

अथ जलप्लुतमद्रिजमायसे
विनिहितं मृदितं घृतमातपे ।
तदनु भानुमयूखविशोषणाद्
दधिसराभमुपस्थितमूर्ध्वतः ॥ ११४ ॥
तदभिगृह्य खरांशुखराननाः
दनु विशोष्य विशोष्य मुहुर्मुहुः ।
दलितकज्जलकोज्ज्वलमादरा-
चपलधीर्विदधीत घनं रजः ॥ ११५ ॥
तदपरं पुनरन्यजलप्लुतं
तपनतापवशाद्धनताकृतम् ।
तदभिगृह्य च पूर्ववदर्यम-
त्विषि विशोष्य तदप्यथ चूर्णयेत् ॥ ११६ ॥
इति पुन पुनरत्र शिलोद्भवे
विधिमुदारमतिर्विदधीत च ।
भवति यावदिदं जलसङ्गमा-
द्विगतरोगपरिग्रहविग्रहम् ॥ ११७ ॥
सुतमिदं यदि वा सलिलप्लुतं
घनपटे परिपूतमनेकधा ।
पुनरिदं मृदुपाकदशावशा-
त्कठिनतां गतमेव विचूर्णयेत् ॥ ११८ ॥
अथ तदर्कसुवर्णघनायसं
सममिदं ननु चूर्णमनेकधा ।
कथितवीरतरादिवरीवरा-
जलपरिप्लुतमातपशोषितम् ॥ ११९ ॥
पुनरिदं परिचूर्णितमादरान्-
मधुघृतान्वितमेव निषेवितम् ।
जयति शूलमथाऽनलमार्दवं
क्षयमुरःक्षतपाण्डुगुदाऽङ्कुरान् ॥ १२० ॥

लो.प (स.), उर क्षते।

भाषा—शिलाजतुको लोहेकी कढाहीमें उबलते हुए पानीमें डालकर ग्रीष्मर्तुकी धूपमें छत वगैरह पर रख दे जहा कि सूर्यो-दयसे सूर्यास्त तक कड़ी धूप लगे। एक दो दिन बाद इसको खुब मसलडाले जिसमें कि कोई कक्ड़ी बाकी न रह जाय, हाथोंको गरम पानीसे उसीमें धो डाले, उस पानीपर मलाई के सदृश तह जमजायगी उसको धीरेसे निकालकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखले और उस पानीको फिरसे खूब चलादे। दो चार दिन बाद फिर आईहुई पपड़ीको निकालकर चलादे, जब देखे कि पानी गाढ़ा-होगया तो फिर उसमें वही उबलता हुआ पानी डाल दे। ऐसे लगातार २ महीने तक करनेसे शिलाजतुका तमामहिस्सा पपड़ी होकर निकल आवेगा। उस पानीके नीचे नि सार धूल रह जायगी उसको फेंक देना और निकाली हुई पपड़ियोंको धूपमें सुखालेना। कदाचित् अधिक पानी रहगयाहो तो बहुतमन्द आंचसे गाढा कर लेना यह शुद्ध शिलाजतु तैयार हुआ। इस विधिके करनेमें असमर्थ हो तो गरमपानीमें उबालकर गाढेवस्त्र अथवा फिल्टरिंगपेपर (Filtering paper) में कईबार छानकर अग्निपर पकाकर कठिन कर लेना। फिर शुद्धशिलाजतु, ताम्र, सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर वीरत-वरिशिण, शतावर, त्रिफला इनके क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर रखछोड़े। इसमें से ४–४ रत्तीकी मात्रा मधु और घीके साथ मिलाकर खानेसे शूल, मन्दाग्नि, क्षय, उर क्षत, पाण्डु, बवासीर, श्वास, कास और प्रमेह इनसबको यह नष्ट करता है। वाजीकर और रसायन है ॥ २९ ॥

३० पञ्चात्मको रसः (सूताभ्रयोगः)

मृतसूताऽभ्रकं ताम्रं गन्धकञ्चाऽम्लवेतसम् ।
विषं फलत्रयं तुल्यं चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ १२१ ॥
विषमुष्टिजयावासाविजयारकशालिनी-।
बृहतीजैर्महाराष्ट्रीधत्तूरपत्रपत्रजैः ॥ १२२ ॥
नन्द्यावर्ताऽमृताजम्बूक्वाथैर्नीलोत्पलद्रवैः ।
समांशं पञ्चलवणं दत्वाऽऽर्द्रकरसेन च ॥ १२३ ॥
करञ्जेन्द्रयवास्तुल्यं पाययेदुष्णवारिणा ।
कर्षैकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥ १२४ ॥

यो. म, र. सं, र. सु, ध., शूले।

टि०—अत्र चातुर्थं पद्म, १ अम्लवेतसादिर्द्वितीय । विषमुष्ट्यादिभिर्भा-वनात्मकस्तृतीय । समादापञ्चलवणमिश्रणरूपश्चतुर्थ । सर्वस्याऽऽर्द्रकरसेन भावनाऽऽत्मक पञ्चम । इत्थं येन केन प्रकारेण पञ्चात्मकत्व निर्वोढ व्यम। रसेन्द्रसारसङ्ग्रहादौ अर्द्धांश पञ्चलवणमिति पाठो दृश्यते । पर शूले समांशलवणमागस्यैव ज्यायस्त्वम्।

भाषा—पारद, अभ्रक, ताम्र इनकी भस्में, शुद्धगन्धक, अम्लवेत, शुद्धबछनाग, त्रिफला ये सब समभाग लेकर कपडछान चूर्णकर कुचिला, जैत, अडूसा, भाग, गोरखमुण्डी, भटकटैया, महाराष्ट्री (मराठी), धतूरा, पद्मपत्र, पीपल, गुडूची, जामुन, नीलोफर, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर सुखाकर सबकी बराबर पाचोंनमक मिलाकर अद-रखके रसकी २–३ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली लेकर करञ्ज और इन्द्रजवका समभाग चूर्ण १ तोला गरम पानीके साथ पिलानेसे यह वातशूलको दूरकरताहै ॥ ३० ॥

३१ पञ्चाननकल्पः

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तं चाऽभ्रकमेव च।
ताम्रभस्म मृतं कर्षं निष्कार्धं शिशितुल्यकम् ॥१२५॥
सिन्दुवारस्य भृङ्गस्य पत्रचूर्णं पलत्रयम्।
खादिरं द्विपलञ्चैव सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥ १२६ ॥
स्निग्धभाण्डे विनिःक्षिप्य द्विकाल भक्षयेत्सुधीः।
निष्कार्धमात्रं सेवेत पथ्यं तक्रोदनं हितम् ॥ १२७ ॥
लवणक्षारकाऽम्लानि वर्जयित्वा निषेवयेत् ॥
चिरकालसमुद्भूतं हन्ति स्नायुकसञ्ज्ञिकम् ॥ १२८ ॥

व रा, वै चि, स्नायुवाते।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, कान्तलोह, अभ्रक और ताम्रभस्म ये प्रत्येक १ कर्ष, शुद्धतुत्थक २ माशे, सभालु और भंगरेकेपत्तोंका चूर्ण ३–३ पल, खैरसार २ पल, इनसबका बारीक चूर्णकर चिकने बर्तनमें रखछोडे। इसमेंसे २–२ माशे दोनों वक्त पानीवगैरहके साथ खानेसे और छाछभात पथ्यसेवनकरनेसे बहुतदिनका भयाहुआ स्नायुकवात नष्टहोताहै। इसमें लवण,क्षार और अम्लपदार्थका परित्याग करदेना चाहिये ॥३१॥

३२ पञ्चाननज्वराङ्कुशो रसः

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्ररक्तं रविः,
पक्षौ सागरलोचनं शशियुतं भागाऽर्कसंख्यान्वितम्।
खल्वे तत्किल मर्दितं रविजलैर्गुञ्जैकमात्रं भजेत्,
सिद्धोऽयं ज्वरदन्तिदर्पदलनः पञ्चाननाऽऽख्यो रसः ॥
पथ्यञ्च देयं दधितक्रभक्तं,
सिन्धूत्थमौद्गं सितया समेतम्।
गन्धाऽनुलेपो हिमतोयपानं,
दुग्धञ्च देयं त्वथ दाडिमाम्भः ॥ १३० ॥

र. मं, रससारसङ्ग्रह, रसायनम, र का, यो चि, र सु, र को, र स, यो म, भै र, यो स, र दी, र, र क ल, र. क, ज्वरे।

भाषा—शुद्धबछनाग २ भा०, मरिच ४ भा०, शुद्ध गन्धक २ भा०, सिंगरिफ १ भा०, ताम्रभस्म १२ भाग, लेकर बारीक चूर्णकर आकके अकस्वरसमें एकरोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचिताऽनुपानके साथदेकर दही, छाछ, भात, सेंधानमक, मूंग, शक्कर, इनका भोजन करानेसे यह समस्तज्वरोंको नष्ट करता है। इसके देनेके बाद अधिकदाह मालूमहोतो चन्दनवगैरहकालेप, ठंडा पानी, दूध, अनार, ये देने चाहियें ॥ ३२ ॥

३३ पञ्चाननो रसः (प्रथम.)

सूत गन्धकचित्रकं त्रिकटुकं मुस्ता विषं त्रैफलं,
चैतेभ्यो द्विगुणैर्गुडैश्च गुटिका वल्लप्रमाणा कृता।
कुष्ठाऽष्टादशगुल्मशूलमुदरं शोथप्रमेहादिकं,
रोगानीकरीन्द्रदर्पदलने ख्यातो हि पञ्चाननः ॥१३१॥

वै र, र म, चि र, र को, यो चि, र क ल, र. (मा), र श, र सु, यो म, र का, र क यो, रसायनस, ना वि, कुष्ठे।

टि०—कुत्रचिन्मुस्तात्रिषचित्रकाणि नैव दृश्यन्ते, चित्रकस्थाने यत्र कुत्रचित् गुडूची प्रक्षिप्ता यथा चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्या, तत्र नाम च गजचर्मपञ्चानन इति स्थापितं, तदेव रसकामधेन्वामपि स्थितम्। चिकित्साक्रमार, रसायनम, र सु, एषु वातगजसिंह इति नाम, तत्र गुडस्थाने द्विगुणमार्कवरसेन भावना प्रदत्ता। रसकामधेन्वां विषाऽभाव, गुडूच्या सर्ववस्तुसमता, गुडस्य द्विगुणभाव इति विशेषो दृश्यते। तथापि तत्र न रसान्तरता, तत्र पाठभ्रंशादिदं मतं निष्पन्नमिति प्रतिभाति, कुष्ठे विषस्यावश्यकत्वात्, किन्च विषरहितश्चेद्योग स्यात्तर्हि द्विगुञ्जिकी मात्रा न स्यादिति गूढ रहस्यम्। र चि, र ल, र सु, रसायनम, र क, र सि, एषु रसाह्लन इति नाम। र कौ, र व ए, र को, एतेषु मेहरत्नवटीति नाम। र सि, शाम्भवीवटीति नाम, अहो कौतुकमेतत् यदेकस्मिन्नेव पुस्तके एकस्यैव योगस्य विविधनामानि स्थापितानि, सर्वमेतदज्ञानविलसितमस्ति इति दिक्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रकमूल, त्रिकटु, नागरमोथा, शुद्धबछनाग, त्रिफला, ये सब समभाग लेकर सबसे दूना गुड मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, गुल्म, शूल, उदररोग, शोथ और प्रमेहादिक रोगसमुदाय इनसबको यह नष्ट करता है ॥ ३३ ॥

३४ पञ्चाननो रसः (द्वितीय.)

मृतं कान्तं सुवर्णञ्च शुल्वताराऽभ्रभस्मकम्।
पृथगक्षमितं सर्वं पटचूर्णं कृतं मृदु ॥ १३२ ॥
रसगन्धककज्जल्या तुल्यया सह मर्दितम्।
सार्धद्विपलमानेन ताप्यचूर्णेन मर्दयेत् ॥ १३३ ॥
द्विपलं मूषिकामध्ये विनिक्षिप्याऽऽलचूर्णकम्।
ततस्तु कज्जलीं क्षिप्त्वा मनोह्वां तावतीं क्षिपेत् ॥१३४॥
ततो निरुद्ध्य यत्नेन परिशोष्य पुटेद्गिरौ।
पुटेन गजसञ्ज्ञेन स्वतःशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३५ ॥
चतुर्गुणेन गन्धेन निर्मितां रसकज्जलीम्।
क्षिप्त्वा पूर्वरसे लुङ्गवारिणा परिमर्दयेत् ॥ १३६ ॥
पचेत्क्रोडपुटेनैव दशवारमतः परम्।
एवं तालककज्जल्या दशवारं पुनः पुनः ॥ १३७ ॥
ततश्च मृतवैक्रान्तभस्मना च पलादात।
ततो विचूर्ण्य यत्नेन करण्डान्तर्विनिक्षिपेत् ॥१३८॥
इमं पञ्चाननरसं गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत्।
श्रेष्ठः सर्वरसेन्द्रेषु महारससमो गुणैः ॥ १३९ ॥
पथ्यासूरणशुण्ठीभिः सघृताभिर्निषेवितः।
सर्वान् पाण्डुगदान्हन्ति कृतघ्न इव सत्कृतिम् ॥१४०॥
यक्ष्माणं जठरं हलीमककजं वातार्तिविड्बन्धनं,
कुष्ठञ्च ग्रहणीं ज्वरातिसरणं श्वासञ्च कासाऽरुची।
श्लेष्मव्याधिमशेषतो गलगदान् दुर्नाम मन्दाऽग्निता,
मेदगुल्मगदं च किं बहुगिरा हन्याद्गदान्दुस्तरान् ॥१४१

सेव्यमाने रसे चाऽस्मिन् विल्वमेकञ्च वर्जयेत् ।
स्वस्थः सर्वं समश्नीयाद्वदी पथ्यं गदापहम् ॥१४२॥

र. र. स., र को, उदराधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, सुवर्ण, ताम्र, रजत और अभ्रक इनसबकी भस्में १-१ कर्ष, इनसबकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली मिलाकर अच्छीतरह मर्दनकर २॥ पल शुद्ध-सोनामाखी मिलाकर सबकी कज्जली बनाले, फिर वज्रमूषामें २ पल हरितालका चूर्ण बिछाकर इसकज्जलीको ऊपर बिछादे। इसपर २ पल शुद्ध मैनसिलका बारीकचूर्ण बिछाकर कपडमिट्टी कर अच्छीतरह सुखाकर रात्रिमें गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्ग-शीतल होनेपर १ कर्ष शुद्धपारेमें ४ कर्ष शुद्धगन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर पूर्वरसमें मिलाकर बिजोरेके रससे एकरोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर अच्छीतरह कपड़मिट्टी देकर सुखाकर वराहपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् कज्जली मिलाकर मर्दनकर वराहपुटमें आंचदे। ऐसे दस-बार आंचदेकर १ कर्ष पारे और ४ कर्ष हरितालकी कज्जली बनाकर पूर्वकी तरह १० आंचें दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर इसमें सोलहवां हिस्सा वैकान्तभस्म मिलाकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा हरें, सूरण और सोंठ इनके ३ माशे चूर्ण और घीके साथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ मिला-कर देनेसे समस्त पाण्डुरोग, यक्ष्मा, उदररोग, हलीमक, वात-रोग, विड्विबन्ध, कुष्ठ, ग्रहणी, ज्वर, अतिसार, श्वास, कास, अरुचि, श्लेष्मरोग, गलरोग, बवासीर, मन्दाग्नि, प्रमेह, गुल्म इत्यादि समस्तरोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे कृतघ्नआ-दमी कृतोपकारको नष्टकरताहै। इसके सेवनमें केवल बेल नहीं खाना। विशेषकर वर्तमान रोगोंको दूरकरनेवाली चीजों का सेवन करना चाहिये ॥ ३४ ॥

३५ पञ्चाननो रसः (तृतीयः)

लोहाऽभ्रगन्धाऽरुणपारदानां
समं रजो वर्तुलपर्णिकायाः ।
द्रवेण सिक्तं लघुना पुटेन
प्रसाधितं क्षौद्रघृताऽवगाढम् ॥ १४३ ॥
निषेवितं तद्विधिना नराणां
निहन्ति पाण्डूदरशोथमेहान् ।
हलीमकं कामलिकाऽतिसार-
मर्शांसि कुष्ठानि च वह्निमान्द्यम् ॥ १४४ ॥

लो. प (स) पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, शिंगरिफ और पारद ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर वर्तुल पर्णिका (इसका पत्ता ब्राह्मीके आकारका गोल छतरी जैसा होता है और पीला फूल आता है प्राय जलके किनारे रहती है पत्तेका रंग पीला रहता है दूरसे देखनेसे ग्रीष्मऋतुकी ब्राह्मीका सन्देह होता है पर यह स्वतन्त्रचीज है ब्राह्मीका पत्ता कटाहुआ रहता है इसका समग्र गोल और अक्षत रहता है, ब्राह्मीकी लता चलतीहै इसके पत्ते खड़े रहते हैं लता नहीं होती) के रससे मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंच देकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा घी और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे पाण्डु, उदर, शोथ, प्रमेह, हलीमक, कामला, अतिसार, बवासीर, कुष्ठ और मन्दाग्नि ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ३५ ॥

३६ पञ्चाननो रसः (चतुर्थः)

गौरं म्लेच्छं रसं गन्धं गोलाञ्च सुपवीरसैः ।
मर्दनं त्रिदिनं कार्यं शुल्वपत्रेषु लेपयेत् ॥ १४५ ॥
वालुकाऽऽख्ये पचेद्यन्त्रे सम्यग्यामचतुष्टयम् ।
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य सताम्रं परिमर्दयेत् ॥ १४६ ॥
गुञ्जाद्वयमितः सूतः ससितो विषमज्वरम् ।
शीतोष्णपूर्वं सहसा जयेत्पञ्चाननो रसः ॥ १४७ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च तथा त्रिदिवसज्वरम् ।
चातुर्थिकं महाघोरं दुग्धभक्ताशिनां द्रुतम् ॥ १४८ ॥

र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सोमल, शिंगरिफ, पारा, गन्धक और मैन-सिल सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंगलीकरेलेके रससे ३ रोज मर्दनकर सबके बराबर शुद्ध तांबेके कण्टकवेधी पत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्नि देकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निका-लकर तांबेसहित मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा शक्करके साथ देनेसे विषमज्वर, शीत और उष्णपूर्वक-ज्वर, एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक इनसबको यह दूर करता है। पथ्य दूध और भातदे ॥ ३६ ॥

३७ पञ्चाननो रसः (पञ्चमः)

प्रत्येकं पिचुरीशगन्धतपनाऽयश्चूर्णं सैन्धवं,
तुत्थं तीक्ष्णहलाहलाथ पले वैश्वानरश्रेष्ठयो ।
शुद्धो गुग्गुलुरञ्जलिर्घृतयुजामेषां द्विमाषा वटी,
सा श्रेष्ठा कथिताऽऽमवातपवनाऽऽतङ्केभपञ्चाननः ॥

रसायनस , आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, लोहभस्म, भुनासुहागा, सैन्धव, शुद्धतुत्थ, फौलादभस्म, सर्पविष अथवा शुद्धवच्छनाग ये सब १-१ कर्ष, चित्रक और त्रिफला १-१ पल लेकर बारीकचूर्ण कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलावे, फिर १६ तोले गुग्गुलुको थोड़ासा घी देकर कूटे, जब इसका द्रव हो जाय तब पूर्वोक्तचूर्ण थोड़ा थोड़ा डालकर कूटे, जब सबचीजें मिलजाय तब २-२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह आमवात और वातव्याधियोंको नष्ट करता है ॥ ३७ ॥

३८ पञ्चाननो रसः (षष्ठः)

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमभ्रं समांशिकम् ।
सर्वेषां द्विगुणं वङ्गं मधुना मर्दयेद्दिनम् ॥ १५० ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शीततोयं पिबेदनु ।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्राघातांस्तथाऽश्मरीम् ॥
मूत्रकृच्छ्रं हरेदुग्रमयं पञ्चाननो रसः ॥ १५१ ॥

भै. र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सबसे दूनी वङ्गभस्म डालकर एकरोज़ मधुमें मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकालमें ठंडे पानीके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८ ॥

३९ पञ्चाननो रसः (सप्तमः)

रौप्यलोहवियद्वज्राऽऽकल्कं समभागिकम् ।
वरीविदारीमुशलीद्रावैः पञ्चाननो भवेत् ॥ १५२ ॥
सर्वरोगविनिर्णाशी रामाऽऽह्लादनतत्परः ।
प्रमदाशतमभ्येति जरादोषविवर्जितः ॥ १५३ ॥

रसावतार (मा०), वाजीकरणे ।

भाषा—रजत, लोह, अभ्रक, हीरा इनसबकीभस्में और अरलकरा समभागलेकर शतावर, विदारी और मुसली इनके स्वरसोंसे क्रमसेक्रम २१ रोज़ मर्दनकर आधी आधी रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानमेंरखमें खानेसे समस्तरोग और वलीपलितको दूरकर सैकड़ों स्त्रियोंके साथ सम्भोगकरनेकी शक्तिको देताहै ॥ ३९ ॥

४० पञ्चाननवटी (प्रथमा)

स्वर्णताराऽर्ककान्तञ्च तीक्ष्णचूर्णं समंसमम् ।
द्वन्द्वमेलापलिप्तायां मूषायां चाऽन्धितं धमेत् ॥१५४॥
तत्खोटं चूर्णितं कृत्वा चाऽभिषिक्तं तु पूर्ववत् ।
समुखे जारयेत्सूते यावत्पञ्चगुणं क्रमात् ॥ १५५ ॥
दिव्यौषधद्रवैस्तं तु मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
अन्धमूषागतं ध्मातं जायते गुटिका शुभा ॥ १५६ ॥
नाम्ना पञ्चानना धार्या वक्त्रे संवत्सरावधि ।
वलीपलितनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ १५७ ॥
हस्तिकर्ण्याः समूलायाश्चूर्णं मध्वाज्यसंयुतम् ।
स्निग्धभाण्डे तु तद्धृत्वा धान्यराशौ निवेशयेत् ॥
त्रिसप्ताहात्समुद्धृत्य पलैकं भक्षयेदनु ॥ १५८ ॥

र. मं., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्तलोह, फौलाद, इन सबका वारीक चूर्ण समभाग लेकर नागवङ्गलिप्तमूषामें बन्दकर ४ पहर धमन करानेसे यह खोट तैयार होगा, फिर इसे दिव्यौषधियोंके क्वाथ अथवा स्वरसमें ७–८ दिनतक मर्दनकर बुभुक्षित पारदमें क्रमसे पञ्चगुण जारणकर पारदको दिव्यौषधियोंके द्रावमें ३ दिन मर्दनकर स्वाभीष्ट आकारकी गोली बनाय अन्धमूषामें धमनकरानेसे यह गोली तैयार होगी । इसको एकसालभर रोज़ाना २–४ घंटे मुंहमें रखकर हस्तिकर्णपलाशके पञ्चाङ्गका चूर्णकर इसमें मधु और घृत अन्दाज़माफिक डालकर घृतके भाण्डमें बन्दकर धान्यराशिमें २१ रोज़तक रखकर गोली रखनेके बाद १–१ पल भक्षण करनेसे वलीपलितसे निर्मुक्त होकर दीर्घजीवी होता है ॥ ४० ॥

४१ पञ्चाननवटी (द्वितीया)

शुद्धं सूतं पलार्धञ्च तत्समं शुद्धगन्धकम् ।
तयोः समं ताम्रपत्रं लिप्त्वा मूषान्तरे क्षिपेत् ॥१५९॥
आच्छाद्य पञ्चलवणैर्लिप्त्वा गजपुटे पचेत् ।
सिद्धं ताम्रं समादाय पलमेकं विमर्दयेत् ॥ १६० ॥
पारदस्य पलञ्चैव गन्धकस्य पलन्तथा ।
पुटदग्धस्य लोहस्य गगनस्य पलंपलम् ॥ १६१ ॥
यमानी शतपुष्पा च त्रिकटु त्रिफलाऽपि च ।
त्रिवृता चविका दन्ती शिखरी जीरकद्वयम् ॥ १६२ ॥
एतेषां पलिकैर्भागैर्घण्टकर्णकमानकम् ।
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चैव कुलिशानां पलार्धकम् ॥ १६३ ॥
आर्द्रकस्वरसैः पिष्ट्वा गुटिकां माषकोन्मिताम् ।
पञ्चाननवटी ख्याता सर्वरोगविनाशिनी ॥ १६४ ॥
अम्लपित्तमहाव्याधिनाशिनी च रसायनी ।
महाऽग्निकारिका चैषा परिणामव्यथापहा ॥ १६५ ॥
शोथपाण्ड्वामयाऽनाहप्लीहगुल्मोदरापहा ।
गुरुवृष्याऽन्नपानानि पयोमांसरसा हिताः ॥ १६६ ॥

भै. र., र. र., अम्लपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक आधा आधापल लेकर बिजौरे वगैरहके रसमें मर्दनकर एकपल शुद्धताम्बेके पत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें लवणके बीचमें बन्दकर शरावपर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर गजपुटकी आंच दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्ध पारा, और गन्धक, लोह, अभ्रक, इनकी भस्में १–१ पल लेकर अजवाइन, सौंफ, त्रिकटु, त्रिफला, निशोत, चव्य, दन्तीमूल, अपामार्ग, दोनोंजीरे इनका चूर्ण १–१ पल, घण्टकर्ण (पहाडीभाषामें घनेली नाम ल्ना प्रसिद्ध है अभावमें हेंस अथवा व्याघ्रनखी) मानकन्द, गठिवन (अभावमें पिपलामूल), चित्रक, हड़जोड़, ये प्रत्येक २ तोले लेकर सबके वारीकचूर्णको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखके रसमें १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गनयोचितानुपानकेसाथ देनेसे भयकर अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणामशूल, शोथ, पाण्डु, आनाह, प्लीह, गुल्म और उदररोग इनको दूरकर रसायनका काम करती है । इसमें भारी गरिष्ठ तथा वाजीकर अन्नपान, दूध और मांसरस ये पथ्य है ॥ ४१ ॥

४२ पञ्चामृतचूर्णम्

पारदं गन्धकं लोहं ताम्रमभ्रकमेव च ।
एषां माषकमेकैकं जम्बीरद्रवभावितम् ॥ १६७ ॥
देयं त्रिकटुना तुल्यं सम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
तत्ततोयानुपानेन वह्निमान्द्यहरं परम् ॥ १६८ ॥

र र, र चो, अजीर्णे ।

भाषा—शुद्ध पारा तथा गन्धक, लोह, ताम्र और अभ्रक भस्म सबसमभागलेकर जंभीरीके रससे मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुके चूर्णकेसाथ मिलाकर देवे और ऊपरसे गरमपानी पिलावे तो उससे मन्दाग्नि, शूल, श्वास, कास और वातरोग दूरहोवें ॥ ४२ ॥

४३ पञ्चामृतपर्पटी (प्रथमा)

अष्टौ गन्धकमाषका रसदल लोह तदर्धं शुभं,
लोहार्धञ्च घराऽभ्रकं सुविमलं ताम्रं तथाऽभ्रार्धकम् ।
पात्रे लोहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो,
दर्व्यां बादरवह्निनाऽतिमृदुना पाकं विदित्वा दले१६९
रम्भाया लघु ढालयेन्मृदुरियं पञ्चामृता पर्पटी,
ख्याता क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयाद्वर्धिता ।
लोहे मर्दनयोगतः सुविमलं भक्ष्यक्रिया लोहवत्,
गुञ्जाष्टावथवा त्रिक त्रिगुणित सप्ताहमेव भजेत् १७०
नानावर्णग्रहण्यामरुचिसमुदये दुष्टदुर्नामकाऽऽदौ,
छर्द्यां दीर्घाऽतिसारे ज्वरभरकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि ।
वृष्याणां वृष्यराशी वलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री,
तुन्दं दीप्तस्थिराग्निं पुनरपि नवकं रोगिदेहं करोति
पाकोऽस्यास्त्रिविधः प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥ १७२ ॥
मृदौ न सम्यग् भङ्गोऽस्ति मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् ।
खरेऽलघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणच्छविः ॥
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः १७३

र स, र च, भै र, र चि, र सु, वै क, र र, रससारसं, रसायनस, र क, र का, यो म, ग्रहण्यधिकारे । रससारसङ्ग्रहे लोहाऽभ्राऽर्करसान् समान्भागानियोज्य गन्धको द्विगुणो नियोजित इति विशेष ।

भाषा—शुद्ध गन्धक ८ मासे, शुद्ध पारा ४ मा, लोह २ मा, अभ्रक १ मा, ताम्रभस्म ४ रत्ती लेकर लोहेके पात्रमें लोहेके डंडेसे मर्दनकर नीलवर्ण कज्जली तैयारकरे । फिरलोहेकी कडाहीमें थोडा घी लगाकर बेरके कोयलों पर गलावे, गलनेपर ताजे गोबर पर रक्खेहुए ताजे केलेके पत्तेपर ढालकर ऊपर दूसरा पत्ता रख गोवरसे दबादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे घी और मधुकेसाथ २–२ रत्ती लोहेके वर्तनमें घोटकर खावे और रोजाना २–२ रत्ती बढावे । ४–८ अथवा २१ रत्ती तक सातरोजमें मात्रा पूरीकरनेसे नानातरहकी ग्रहणी, अरुचि दुष्ट बवासीर, छर्दि, बहुतदिनका अतिसार, ज्वरसमुदाय, रक्तपित्त, क्षय, वली पलित, नेत्ररोग, मन्दाग्नि, मेद इनसबको दूरकर रोगीके शरीरको नया बनादेतीहै । इस पर्पटीका मृदु, मध्य और खर तीनतरहका पाकहोताहै, मृदुमें अच्छीतरह भङ्गनहीं होता, मध्यमें चांदीकीतरह चमकदार टुकडे होतेहे, खरमें रूक्ष, चिकने और ललाईलियेहुए टुकडे होते हें । मृदु और मध्यमें पारा नजर आताहै खरपाकमें नजर नहीं आता । मृदु और मध्य खाने चाहियें, खरपाकको जहरकी तरह छोडदेना चाहिये ॥ ४३ ॥

४४ पञ्चामृतपर्पटी (द्वितीया)

पलपरिमितशुद्धं पारदं कर्षमेकं,
बलिमपि परिशुद्धं सूततुल्यञ्च सूर्यम् ।
मृतमथ शिवबीजं कण्ठगं तस्य तुल्यं,
परिमृदितमशेषं तद्दिनैकं ततश्च ॥ १७४ ॥
बलिमथ सकलांशं मर्दयेद्वा दिनैकं,
पुनरथ परिशुष्कं घर्ममध्ये विशोष्य ।
अपि घृतपरिलिप्ते लोहपात्रे विपाच्य,
द्रुतमखिलमदस्तन्माचिकापत्रखण्डे ॥ १७५ ॥
प्रपतितमथ पत्रोत्थापितं पर्पटी सा,
हरति च गजचर्माऽऽतङ्कमेवंप्रभावा ।
अखिलगदगणानां नाशिनी नित्यमुक्ता,
द्रवमनुपरिसेवेद्वाकुचीनाञ्च तस्याः ॥१७६॥

चि म, कुष्ठे ।

टि०—अस्मिन्योगे मर्दनशोषणस्याऽऽगतत्वा मर्दनद्रवस्याऽकथितत्वाच्च कन द्रवेण मर्दन कर्तव्यमित्याकाङ्क्षाया उत्थितत्वात् पर्पटीपातन माचिकापत्रके कृतम् । अनुपाने बाकुचीद्रवो नियोजित इति प्रकरणपर्यालोचनेन सन्निहितत्वात् द्रवद्वयमत्र मर्दने नियोजितमिति सुधीभिराकलनीयम् । चर्मभेदिरसेन साकमापाततोऽस्य साम्य प्रतीयते परन्तु गन्धकादीना प्रमाणस्य वैचित्र्याद्भावनाया विशेषत्वाच्चर्मभेदिरसे पारदभस्मनोऽनागतत्वाच्च स्वतन्त्र एवाऽयं रस इति ज्ञातव्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, शुद्धगन्धक १ कर्ष, ताम्रभस्म, पारदभस्म और शुद्धवच्छनाग १–१ पल लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर मकोय और बाकुचीकेरससे १–१ रोज मर्दनकर धूपमें सुखाय कज्जलीकी बराबर शुद्धगन्धक देकर १–१ रोज द्रवोंसे मर्दनकर धूपमें अच्छीतरह सुखालेवे । फिर लोहेकी कडाहीमें थोडा घी डालकर बेरके कोयलोंपर कज्जलीको गरमकरे, घीकी तरह द्रवहोनेपर ताजे गोवरपर रक्खे हुए मकोयके पत्तोंकी राशिपर इसे ढालकर ऊपरसे मकोयके बहुतसे पत्तोंकी तह जमाय ताजे गोबरसे दबादे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती घी और मधुकेसाथ सेवनकर ऊपरसे बाकुचीका काथ पीवे । रोजाना २–२ रत्ती बढाता जाय । ऐसे २१ रोजतक बढाकर वैसेही कम करे और कुष्ठोक्त पथ्यका पालनकरे तो यह गजचर्मको दूरकरतीहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे अन्य तमामरोगोंको नष्टकरती है ॥४४॥

४५ पञ्चामृतपर्पटी (तृतीया)

सूतकं भागमेकन्तु द्वौ भागौ गन्धकस्य च।
भागमेकं क्षिपेल्लोहं भागैकं ताम्रमेव च ॥ १७७ ॥
द्विभागं गगनं दद्यान्मर्द्यं कज्जलसन्निभम्।
आयसे पाचयेत्पात्रे रम्भापत्रे विनिःक्षिपेत् ॥१७८॥
ऊर्ध्वाऽधो गोमयं दत्त्वा पर्पटीरससिद्धये।
कासातिसारज्वरनुत्कामलापाण्डुमेहजित् ॥ १७९ ॥

चि. र., र. बो., कासेऽतिसारे च।

भाषा—शुद्धगन्धक और अभ्रकभस्म २–२ भा., शुद्धपारा लोह और ताम्रभस्म १–१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर लोहेके पात्रमें प्रथमपर्पटीकी तरह तैयारकर उसीतरह २–२ रत्तीसे अथवा रोगीकी शक्तिके अनुसार २१ रोज़तक बढ़ावे और वैसेही कमकरे तो कास, अतिसार, ज्वर, कामला, पाण्डु और प्रमेह इनको यह नष्ट करती है ॥ ४५ ॥

४६ पञ्चामृतपर्पटी (चतुर्थी)

सुवर्णं रजतं ताम्रं सत्त्वाऽभ्रं कान्तलोहकम्।
क्रमवृद्धमिदं सर्वं शाणेयौ नागवङ्गकौ ॥ १८० ॥
द्रावयित्वैकतः सर्वं रेतयित्वा ततश्चरेत्।
पृथक् पलमितं गन्धं शिलाऽऽलं विनिधाय च॥१८१॥
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य मर्दयेदम्लवर्गतः।
ताप्यं नीलाञ्जनं तालं शिलां गन्धञ्च चूर्णितम्॥१८२॥
दत्त्वा दत्त्वा पुटेत्तावद्यावद्विंशतिवारकम्।
लोहाद् द्विगुणसूतेन ततो द्विगुणगन्धतः ॥ १८३ ॥
विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां क्षिप्त्वा तां लोहपात्रके।
द्रावयेद्बदराङ्गारैर्मृदुभिश्चाऽथ निक्षिपेत् ॥ १८४ ॥
हेमादिपञ्चलोहानां भस्म चाऽथ विलोडयेत्।
अथ तत्कदलीपत्रे गोमयस्थे विनिक्षिपेत् ॥ १८५ ॥
पत्रेणाऽन्येन संच्छाद्य कुर्याद्यत्नेन पर्पटीम्।
तस्योपरि क्षिपेत्सद्यो गोमयं स्तोकमेव च ॥१८६॥
ततः शीतं समाहृत्य पटपूतं विधाय च।
निक्षिपेद्दूर्ध्वदण्डायां पालिकायां ततः परम् ॥१८७॥
पूर्ववद्बदराङ्गारैर्मृदुभिर्द्रावयेच्छनैः।
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलार्धविषभावितम् ॥१८८॥
पूर्वपर्पटिकातुल्यं तस्मादल्पं मुहुर्मुहुः।
जारयेत्पालिकामध्ये दद्यात च न पर्पटी ॥ १८९ ॥
पालिकेतिविनिर्दिष्टा स्नेहक्षेपणयन्त्रिका।
जीर्णे तालादिके चूर्णं पटपूतं विधीयताम् ॥ १९० ॥
पूतीकरञ्जपट्टकोलव्याघ्रीशोभाञ्जनाद्रिभिः।
एतैः पञ्चपलैः क्वाथं षोडशांशाऽवशेषितम् ॥१९१॥
तेन क्वाथेन संस्वेद्य शोषयेत्सप्तधा हि ताम्।
विषतिन्दुफलोद्भूते रसैर्निर्गुण्डिकोत्थितैः ॥ १९२ ॥
विभाव्य पलिकामध्ये क्षिप्त्वा बदरपावके।
ईषत्प्रस्वेदनं कृत्वा स्थापयेदतियत्नतः ॥ १९३ ॥
उक्ता भैरवनाथेन स्यात्पञ्चामृतपर्पटी।
व्योषाऽऽज्यसहिता लीढा गुञ्जावीजेन सम्मिता १९४
सर्वलक्षणसम्पूर्णं विनिहन्ति क्षयाऽऽमयम्।
श्वासं कासं विसूचीञ्च प्रमेहमुदराऽऽमयान् ॥१९५॥
अरोचकञ्च दुःसाध्यं प्रसेकं छर्दिहृद्रुदम्।
सर्वजं गुदरोगञ्च शूलकुष्ठान्यशेषतः ॥ १९६ ॥
वातज्वरञ्च विड्बन्धं ग्रहणीं कफजान्गदान्।
एकद्वन्द्वत्रिदोषोत्थान् रोगानन्यान्महागदान् ॥१९७॥
अग्निमान्द्यं विशेषेण हन्तीयं पर्पटी ध्रुवम्।
एवं समूह्य दातव्या रोगेषु भिषगुत्तमैः ॥ १९८ ॥
तत्तद्रोगहरैर्योगैस्तत्तद्रोगाऽनुपानतः।
क्षयादिसर्वरोगघ्नी स्यात्पञ्चामृतपर्पटी ॥ १९९ ॥
तैलसर्षपविल्वाऽम्लकारवेल्लकुसुम्भकम्।
त्यजेत्पारायतं मांसं वृन्ताकं कुक्कुटं तथा ॥ २०० ॥

र. र. स., र. सु., र. को., राजयक्ष्मणि।

टि०—रसराजसुन्दरे शाणेयौ नागवङ्गकावित्यारभ्य सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य इत्यन्तस्त्रुटितः पाठोऽस्ति। अत्र ताप्य नीलाञ्जन ताल शिला गन्धञ्च चूर्णितमित्यत्र प्रमाणाऽभावोऽस्ति, अत्र पृथक् पलमिति पूर्ववाक्यमेव परामर्शनीयं, ततश्च प्रत्येकं पलपरिमिताना ताप्यादिपञ्चद्रव्याणां विंशतिकर्षकाणि द्रव्याणि भवन्ति, एषाञ्च विंशतिभागान् प्रकल्प्य प्रत्येकपुटं कर्षं द्रव्यं प्रक्षिप्य पुटानि देयानीति व्यवस्था करणीया। तुल्याऽऽलकशिलागन्ध पलार्धविषभावितमित्यत्राऽपि तदेव प्रमाणमनुसरणीयम्, अयमेवार्थं विस्पष्टयितुं पूर्वपर्पटिकातुल्यमिति दत्तमस्ति। केश्चिन्महार्थैस्तु पलार्धमिति छेद विधाय प्रत्येकं पलार्धमित्यर्थः कृतोऽस्ति, परन्तु तथाकरणे पूर्वपर्पटिकातुल्यमित्यस्याऽसङ्गतिः स्यादिति प्रत्यक्षविरोध इति सहृदयैराकलनीयम्।

भाषा—सुवर्ण १ कर्ष, रजत २ क., ताम्र ३ क., अभ्रक सत्त्व ४ क., कान्तलोह ५ क., नाग और वङ्ग ४–४ मासे लेकर सबको इकट्ठे गलाकर बारीकरेता करले, फिर शुद्धगन्धक मैनसिल और हरिताल ४–४ कर्ष मिलाकर सबको इकट्ठे मिलाय अम्लवर्गमें १–२ रोज़ मर्दनकर सोनामाखी, सुरमा, हरिताल, मैनसिल और गन्धक ४–४ कर्षका मिलकर चूर्ण एक कर्ष डाल कर अम्लवर्गमें मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया बनाकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ५ सेर कण्डोंकी आंचदे, ऐसे सातपुट देनेके बाद १–१ सेर प्रत्येक पुटमें कण्डे बढ़ाता जाय ऐसे ताप्यादिकोंका प्रक्षेप देदेकर २० पुटें देवे, फिर १० कर्ष शुद्धपारा और २० कर्ष शुद्ध गन्धक की नीलवर्णकज्जलीको लोहेकेपात्रमें घी लगाकर बेरके कोयलोंपर रखकर गलावे, इसकी द्रुति होजानेपर पूर्वसिद्धकिये हुए रसको इसमें डालकर चलावे, एकजीवहोनेपर गोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर डालकर दूसरा केलेकापत्ता ऊपरसे रखगोबरसे ढकदे। स्वाङ्गशीत होनेपर निकालकर कपड़छानचूर्णकर तेल, घी निकालनेकी ऐसे डण्डेकी पलीमें इसचूर्णको डालकर बेरकेकोयलोंपर रखकर गलावे और हरिताल, मैनसिल तथा गन्धक १–१ पल लेकर बारीक चूर्णकर आधेपल बच्छनागके काढ़ेसे मर्दनकर सुखाकर

इसमेंसे थोड़ा थोड़ा द्रुतकज्जलीमें डालकर चलाताजाय पर यह ध्यान रक्खे कि पलीवालीपर्पटी न जलने पावे। जब तालादिचूर्ण समग्र समाप्त होजाय तब इसको ठंढाकर कपड़छानचूर्ण करले, फिर घुड़कराश्च, पद्मपण, भटकटैया और सहिजनकी जड़की छाल, ये प्रत्येक ५-५ पललेकर १६ सेर पानीमें षोडशांशावशेष क्वाथकर इस क्वाथकेसात विभागकर पलीमें १-१ भागको सुखाकर दवाको धूपमें सुखादेवे। फिर मर्दनकर दूसराभागक्वाथका डालकर सुखावे, इसीतरह सातों भागोंको सुखावे, फिर कुचिला और निर्गुण्डीके पत्तोंका रस डालकर १-१ बार पलीमें स्वेदनकरके सुखाकर कपडछान चूर्णकर शीशीमें रखछोड़े। यह भैरवनाथकी कही हुई पञ्चामृतपर्पटी है। इसमेंसे १-१ रत्तीलेकर ३ मासे त्रिकटु-के चूर्ण और घृतकेसाथ रोजलेनेसे समस्तलक्षणयुक्त राज-यक्ष्मा, श्वास, कास, विसूचिका, प्रमेह, उदररोग, अरुचि, दु साध्यप्रसेक, छर्दि, हृद्रोग, सन्निपातजगुदरोग, शूल, समस्त-कुष्ठ, वातज्वर, विड्विबन्ध, ग्रहणी, कफरोग, एकज द्विज और त्रिदोषज तथा अन्यसमस्तरोग विशेषकर मन्दाग्नि नष्ट होतेहैं। यक्ष्मातिरिक्त रोगोंकेलिये तत्तत्सामयिक अवस्थाको देखकर अनुपानोंका योगकरना और सरसों, तेल, अम्ल, करेला, कुसुम्भ, कबूतरका मांस, वृन्ताक, कुक्कुट इनको छोडदेवे॥४६॥

४७ पञ्चामृतपर्पटी (पञ्चमी)

ताप्यार्कलोहेशभुजगन्धकाः समाः
प्राक् पर्पटीवद्विपचेच्च भावयेत्।
सेयञ्च पञ्चामृतपर्पटीक्षये
वल्लोन्मिता सा सकलाऽऽमयाञ्जयेत्॥ २०१॥

र (मा) ना. वि., कासे श्वासे च। ना वि, अर्कस्थाने अभ्र नियोजितम् तथा च इयं पर्पटी त्वरूपत्रभातिकुसुमलवङ्गै-रनुयोजिता।

भाषा—सोनामाखी, तांबा, लोह इनकी भस्में, शुद्धपारद और गन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी बनाय ३-३ रत्तीकी मात्रा समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह क्षय तथा समस्तरोगोंको नष्टकरती है॥ ४७॥

४८ पञ्चामृतपर्पटी (षष्ठी)

रसगन्धकताम्राऽभ्रैः समैर्द्विगुणलोहकैः।
लोहपात्रे खादिराऽग्नौ मृदुपाको भवेद्रस॰॥ २०२॥
पञ्चामृतपर्पटिका महत्यग्निप्रदीपिका।
अर्शोऽतिसारग्रहणीकामलापाण्डुकुष्ठनुत्॥ २०३॥
प्लीहाऽऽमगुल्मशूलाऽऽमवातघ्नी च त्रिदोषहा।
जलोदरमम्लपित्तं भगरोगञ्च नाशयेत्॥
मुद्गौदनौ घृतं क्षीरं रोगार्तः पथ्यमाचरेत्॥ २०४॥

र. (मा), अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भाग, लेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रथम पर्पटीकी तरह खैरके कोयलोंपर पर्पटी बनाकर रखछोडे। इसका मृदुपाकलेवे। इसकी ३-३ रत्ती समयोचितानुपानके साथ लेनेसे मन्दाग्नि, बवासीर, अतिसार, ग्रहणी, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, प्लीहा, आम, गुल्म, शूल, आमवात, सन्निपात, जलोदर, अम्लपित्त, भगरोग, इनसबको यह नष्ट करती है। मूंग, चावल, घी, दूध इत्यादि रोगोचित पथ्य देवे॥ ४८॥

४९ पञ्चामृतपर्पटी (सप्तमी)

सूतायसी च ताम्राभ्रं समं द्विगुणगन्धकम्।
लोहपात्रे बादराग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः॥ २०५॥
ढालयेत्कदलीपत्रे कर्तव्या रसपर्पटी।
पञ्चामृता पर्पटी च रसो वह्निप्रदीपनः॥ २०६॥
ज्वरातिसारकासघ्नी कामलापाण्डुमेहजित्।
अनुपानं मले बद्धे ज्वरे जीर्णे च मूत्रकम्॥
पलं पथ्यं तु तैलाम्लवर्ज्यमन्यच्च युक्तितः॥ २०७॥

लि र, रसामृत, र. सु, नै. र, र. कौ., र म.-मा, र. प्र, र. शं, वै चि, वै जी, र. सु., यो. च., र. प, र पा, अतिसारे।

भाषा—शुद्धपारा, लोह-ताम्र और अभ्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी बनाकर रखछोडे। इसमेंसे ३-३ रत्ती रोगो-चितानुपानके साथ देनेसे ज्वर, अतिसार, कास, कामला, पाण्डु, प्रमेह इनको यह नष्ट करती है। मलविबन्ध और जीर्ण-ज्वरमें गोमूत्रकेसाथदेवा और तैल तथा खटाईको छोड़कर पथ्य देना॥ ४९॥

५० पञ्चामृतपर्पटी (अष्टमी)

रविरसभुजगायोवङ्गतो गन्धकस्य,
द्विगुणरचितभागं द्रावयेल्लोह उष्णम्।
समविनिहितपङ्कस्थायिरम्भादलस्थं,
तदितरदलयोगात्प्रद्रुतं यत्नमन्तात्॥ २०८॥
तदा तु पञ्चामृतपर्पटीति
स्मृतं ज्वराशेषविशेषहारि।
कासक्षयाऽर्शोग्रहणीगदघ्नं
वल्लद्वय क्षौद्रकणाऽवलीढम्॥ २०९॥

वै र, र, र का, र बो, यो. च, कासक्षये। रसाव-तारे पर्पटीसूतः।

भाषा—ताम्र, नाग, लोह और वङ्ग इनकी भस्में और शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक सबसे दूना लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर घीपुतेहुए लोहेके पात्रमें प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी तैयार करके रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा पीपलके चूर्ण और मधुके साथ खानेसे कास, क्षय, बवासीर, ग्रहणीरोग, इनको यह नष्ट करती है॥ ५०॥

५१ पञ्चामृतपर्पटी (नवमी)

मृतं ताम्रं मृतञ्चाभ्रं कुटिलं तुल्यगन्धकम्।
रसभस्मसमायुक्ता पर्पटी मेहनाशिनी॥ २१०॥

र क, प्रमेहे।

भाषा—ताम्र, अभ्रक, शङ्ख, पारद इनकी भस्में समभाग, शुद्धगन्धक सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटी बनाकर १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूर करती है ॥ ५१ ॥

५२ पञ्चामृतपोट्टलीरसः

प्रत्येकमेकगद्याणं शुद्धसूतसुवर्णयोः।
खल्वे पिष्ट्वा त्र्यहं कार्या पिष्टिः सूक्ष्मा सुवर्णजा २११
वस्त्रे क्षिप्त्वाऽथ तां पिष्टिं ग्रन्थिं बद्ध्वा दृढं ततः।
मृन्मयी गोस्तनाकारा मूषा कार्या दृढा ततः ॥२१२॥
स्थालिका वालुकापूर्णा मूषां तत्रान्तरे क्षिपेत्।
चुल्ल्यामारोप्य तां स्थालीं हठाग्निं ज्वालयेदधः २१३
शुद्धगन्धकगद्याणानष्टौ मूषान्तरे क्षिपेत्।
गलिते गन्धके जाते तिलतैलेन सन्निभे ॥ २१४ ॥
प्रक्षिपेद्धेमजां पिष्टिं ग्रन्थिबद्धाञ्च गन्धके।
क्षेप्यो गन्धकगद्याणो मुहुर्दग्धे च गन्धके ॥ २१५ ॥
एवमेवमहोरात्रं स्वेद्या पिष्टिश्च हेमजा।
शुद्धगन्धकगद्याणद्वययुक्तां दिनद्वयम् ॥ २१६ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्पेष्य प्रक्षिपेच्च शरावके।
भूमावेव पुटो देयो लावकः पुटसप्तकम् ॥ २१७ ॥
युक्त्याऽनया मृतं हेम चूर्णं कृत्वा सुसूक्ष्मकम्।
पीतानाञ्च कपर्दीनां गद्याणा वेदसङ्ख्यका. ॥ २१८ ॥
शङ्खस्याऽपीह चत्वारो द्याणानां सूक्ष्मचूर्णकम्।
द्व्यहं सेहुण्डदुग्धेन ह्यर्कदुग्धेन च द्व्यहम् ॥ २१९ ॥
चित्रकाऽऽर्द्ररसेनैव द्व्यहं खल्वे प्रमर्दयेत्।
एवं षड्वासरान्पिष्ट्वा गद्याणान्यष्टसङ्ख्यकान् ॥२२०॥
मृतकान्ताद्रसाद्धेदा गद्याणो मृतहेमजः।
गद्याणान्सप्तदद्यात्कानार्द्रचित्ररसेन च ॥ २२१ ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे गुटीः कृत्वाऽथ शोषयेत्।
तास्ता दग्धाऽश्मचूर्णाक्ताः पक्वकुड्मलकान्तरम्२२२
लिप्त्वा शुष्के घटीः क्षेप्याश्चूर्णलिप्तपिधानकम्।
दत्त्वा वस्त्रमृदा लिप्त्वा देयं गर्ते पुटद्वयम् ॥ २२३ ॥
पेषयेच्च समाकृष्य शीतकुड्मलकाद्वटीः।
रसोऽसौ जायते श्रेष्ठः पञ्चाऽमृतसुपोट्टली ॥ २२४ ॥
वल्लाः पञ्च रसस्याऽस्य द्वात्रिंशन्मरिचैः समम्।
घृतमिश्राः प्रदातव्या ह्यतिसारे ज्वरं विना ॥ २२५ ॥
देयः सर्वातिसारेषु शूलेषु विविधेषु च।
बलक्षीणेषु मन्दाग्नौ वातव्याधिषु रोगिषु ॥ २२६ ॥
अष्टादशसु मेहेषु ह्यजीर्णे च विशेषतः।
चत्वारः शर्करावल्ला रसवल्लैश्च पञ्चभिः ॥ २२७ ॥
मधुना च समं देया ह्यतिसारे च रक्तजे।
सत्त्वं गुडूच्याश्चत्वारो रसवल्लैश्च पञ्चभिः ॥ २२८ ॥
मिश्रिता मधुना देया [illegible]तिसारे ज्वरोद्भवे।
एते रोगाः प्रलीयन्ते प्रमात्संसेविते रसे ॥ २२९ ॥
कांस्यपात्रे न भोक्तव्यं क्षाराम्लं वर्जयेत्सदा।
शाल्यो दधिदुग्धादि गोल्यं मिष्टाऽन्नभोजनम् २३०

र. कं., रसचि., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध सुवर्ण और पारा ६–६ माश लेकर तीनरोज़ मर्दनकर गोली बनाकर वस्त्रमें कड़ीग्रन्थि बाधले, फिर मिट्टीकी गोस्तनाकार मज़बूत मूषा बनाय वालुकाभरेहुए पात्रमें मूषाको रख हठाग्नि जलावे। मूषा गर्म होनेके बाद ४ तोले शुद्धगन्धक मूषामें डालदे, जब गन्धक गलकर तिलतैलके सदृश हो जाय तब पूर्वोक्त सूतपिष्टीको उसमें रखदे और ऊपरसे आधातोला गन्धक डालदे। जब ऊपरवाला गन्धक जलकर पिष्टी उघड़ने लगे तब आधा तोला गन्धक और डालदे। इसतरह वारम्वार गन्धक देता हुआ एक अहोरात्र पिष्टीका स्वेदन करे। एक अहोरात्रके बाद १–१ तोला गन्धक देकर दोदिनतक पूर्ववत् स्वेदन करे। चौथेरोज़ पिष्टीको मूषामेंसे निकालकर गन्धकको छुड़ाकर अलग करदे और थूहरके दूधसे अच्छी तरह मर्दनकर गोली बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर खुले प्रदेशमें लावपुट दे। इसतरह सातपुटें देकर सुवर्णकी भस्म बनाले। फिर पीलीकौड़ी २ तो, शुद्धशंखचूर्ण २ तो., लेकर दोनोंको थूहर और आकके दूधमें २–२ रोज़ मर्दनकर चित्रक और अदरकके रससे १–१ रोज़ मर्दन कर ६ रोजके बाद कान्तलोहभस्म और शुद्धपारा २–२ तो, और पूर्व कीहुई सुवर्णभस्म ६ मा, इसतरह सब मिलकर ८॥ तोलेको अदरख और चित्रकके रससे १–१ रोज मर्दनकर इसकी छोटी २ गोलियें बनाकर सुखाले फिर पत्थरके चूनेमें रखकर हिलादे, जिसमेंकि गोलियोंपर चूना चढ़जाय। फिर मिट्टीके पके हुए कुल्हड़को चूनेसे भीतरकी तरफ पोतकर सुखादे, उसमें इन गोलियोंको रख ऊपर चूनापुते हुए दीवेसे ढककर समस्तपर ३–४ कपड़मिट्टी करके सुखाकर खड्डेमें लघुपुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर दूसरा पुटदे। सम्पुट टूटा न होतो खोलनेकी ज़ुरूरत नहीं, दैववशात् सम्पुट फटगया हो तो दूसरा बदल देवे। दूसरे पुट देनेके बाद स्वाङ्गशीतल होनेपर कुल्हड़मेंसे गोलियें निकालकर रखछोड़े। यह पञ्चामृत पोट्टली रस तैयार हुआ। इसरसकी १५ रत्ती लेकर ३२ कालीमिर्चोंके साथ मिलाकर घीके साथ देनेसे ज्वररहित समस्त अतिसार, समस्त शूल, बलकी क्षीणता, मन्दाग्नि, वातव्याधि, १८ प्रकारके प्रमेह, अजीर्ण ये सब नष्ट होते हैं। १५ रत्ती रसको १२ रत्ती शक्करकेसाथ मधुमिलाकर रक्तातिसारमें देवे। गिलोयसत्व १२ रत्ती, रस १५ रत्ती मधुमें मिलाकर अतिसारज ज्वरमें दे। इसमें पथ्य पुराने चावल, दही, दूध, मक्खन, गुलगुले वग़ैरह मिष्टान्न भोजन करे। कांस्यके पात्रमें भोजन, क्षार और अम्लका परित्याग करे ॥ ५२ ॥

५३ पञ्चामृतमण्डूरम्

लौहं ताम्रं गन्धमभ्रं पारदञ्च समांशकम्।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकन्तथा ॥ २३१ ॥

किरातं देवकाष्ठञ्च हरिद्राद्वयपुष्करम्।
यमानी जीरयुग्मञ्च शटीधान्यकचव्यकम् ॥ २३२ ॥
प्रत्येकलोहभागञ्च श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत्।
सर्वचूर्णस्य चार्द्धांश सुशुद्धं लोहकिट्टकम् ॥२३३॥
गोमूत्रे पाचयेद्वैद्यो लोहकिट्टं चतुर्गुणे।
पौनर्नवाऽष्टगुणितं क्वाथं तत्र प्रदापयेत् ॥ २३४ ॥
सिद्धेऽवतारिते चूर्णं मधुनः पलमानकम्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षाऽनुपानतः ॥ २३५ ॥
ग्रहणीं चिरजां हन्ति सशोथां पाण्डुकामले।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥ २३६ ॥
प्लीहगुल्मौ यकृच्चैवमुदरञ्च विशेषतः।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं कान्तिपुष्टिविवर्धनम् ॥२३७॥

भै र, र चं, र. सु, वै क, पाण्डुरोगे।

भाषा—लोह, ताम्र, और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और पारद निरुद्ध, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक, चिरायता, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, पोहकरमूल, अजवाइन, दोनोंजीरे, कचूर, धनिया, चव्य येसब १–१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर सबसे आधी मण्डूरभस्म मिलाकर समस्तसे चतुर्गुणित गोमूत्र और अष्टगुणित पुनर्नवाका क्वाथ कड़ाहीमें डालकर लोह और मण्डूरभस्म डालकर पकावे। जबपककर गोलियें बधने लायक होजाय तब अन्यसबचीजें डालकर उतारकर स्वाङ्गशीतल-होनेपर ८ तोले मधु मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ माशेकी मात्रा तालमखानेके क्वाथके साथ देनेसे शोथयुक्त पुरानीसङ्ग्रहणी पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, प्लीहा, गुल्म, यकृत्, उदर रोग, कास, श्वास, और प्रतिश्याय इनसबको नष्टकर कान्ति और पुष्टिको बढाताहै ॥ ५३ ॥

५४ पञ्चामृतयोगः

पारदं रजतं ताम्रं साभ्रकं हेम पञ्चकम्।
पञ्चामृतकमित्याहुः सर्वरोगनिवारणम् ॥ २३८ ॥
अनुपानविभेदेन वेदनानाशकं परम्।
बहुवर्षञ्च विषमं कुष्ठञ्चोरःक्षतक्षयम् ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नाऽत्र विचारणा ॥ २३९ ॥

ना वि, ज्वराधिकारे।

भाषा—पारद, रजत, ताम्र, अभ्रक और सुवर्ण इनकीभस्में समभागमें मिलानेसे यह पञ्चामृतयोगकहलाताहै इसको वयो-बलके अनुसार मात्राका निर्धारणकर तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोग, नानातरहकीबेचैनी, पुराना विषमज्वर, कुष्ठ उर क्षत, क्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५४॥

५५ पञ्चामृतरसः (प्रथम)

शुद्धं सूतं समादाय गन्धकं भागतः समम्।
त्रिभागं टङ्कणं देयं विषभागत्रयं तथा ॥ २४० ॥
भागत्रयं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः।
चूर्णीकृत जलेनापि पिष्ट्वा रक्तिमितां वटीम् ॥२४१॥
शृङ्गवेररसेनैव भक्षयेद्वटिकामिमाम्।
जलदोषोद्भवे शोथे घोरेऽत्युग्रे जलोदरे ॥ २४२ ॥
सन्निपातेषु घोरेषु सर्वस्मिञ्श्लैष्मिके गदे।
ज्वरातिसारसंयुक्ते शोथे चैव गलग्रहे ॥ २४३ ॥
शिरःशूलगदे घोरे नासारोगे सपीनसे।
पञ्चामृतरसो ह्येष सर्वरोगोपशान्तिकृत् ॥ २४४ ॥

भै र, र सं, र. च, वै क, र सु, र स, नासारोगे।

टि॰–कुत्रचित्तन्निर्तोल्यमित विष वदन्ति। यत्रस्मिन्पाठेऽपि शुद्ध विषेण न कापि हानिर्दरीदृश्यते प्रत्युत गुणे शीघ्रकारित्वमुपलभ्यते।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १–१ भाग, भुनासुहागा, शुद्धवत्सनाग और मरिच ३–३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर जलकेसाथ घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनायं सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे जलदोषसे भयहुए शोथ, अत्युग्र-जलोदर, घोरसन्निपात, समस्तश्लेष्मरोग, ज्वरातिसारयुक्तशोथ, गलग्रह, घोरशिर शूल, नासारोग, पीनस इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ५५ ॥

५६ पञ्चामृतरसः (द्वितीयः)

कृष्णाभ्रकान्तकुलिशं सरसं सहेम
सम्मर्दितं कनकपत्ररसेन गाढम्।
तद्गोलकं कमठयन्त्रगतं विपक्वं
मूषागतं नियमकृद्विविधौषधीभिः ॥ २४५ ॥
पञ्चाऽमृतोऽस्य घृतमाक्षिकसम्प्रयुक्ता.
गुञ्जा गदान्हरति देहगदांश्च मासात्।
आरोग्यसौख्यबलपुष्टिकरी नराणां
संसेविता भगवतीव महेशकान्ता ॥ २४६ ॥

र ल, र सा, रसायनस, वै वि, क्षये। रसायनसं धातु-पञ्चामृत.। सर्वरोगहराधिकारे च।

भाषा—कृष्णाभ्रक, कान्तलोह, हीरा, पारा, सुवर्ण इन-प्रत्येककीभस्म समभागलेकर धतूरेके पत्तोंकेरसमें १–२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ४ तह मोमजामेमें लपेटकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखाकर सोलहगुनी बालूभरेहुए यन्त्रके बीचमें रख ४ पहरकी मध्यमाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशी तलहोनेपर निकालकर नियामकवर्गकी औषधियोंसे यथालाभ मर्दनकर मिट्टीकी मूषामें बन्दकर लघुपुटकी यथाशक्ति आंच देकर रखछोडे। इसकी १–१ रत्ती घी और मधुकेसाथ देनेसे एकमहीनेमें समस्तशरीरके रोगोंको दूरकर आरोग्य, सुख और पुष्टिको करताहै ॥ ५६ ॥

५७ पञ्चामृतरसः (तृतीयः)

समसूताऽभ्रलोहाना शिलाजतु विषं सम
गुडूचीत्रिफलाक्वाथै सप्ततं
मृत नेपालताम्रञ्च सूतस्थाने

एकीकृत्य नियोज्यन्तद्विगुञ्जं राजयक्ष्मनुत् ॥
पञ्चामृतरसो ह्येष चानुपानञ्च पूर्ववत् ॥ २४८ ॥

र.र., र.चं., र.र.स., नि.र., र.को., र.का., र.क.यो., वै. चि., र.क.ल., राजयक्ष्मणि।

भाषा—पारा, अभ्रक, औरलोहभस्म १–१ तोला, शिलाजतु, शुद्धवच्छनाग, गिलोय और त्रिफलाके क्वाथसे शोधनकियाहुआगुग्गुल ३–३ तोले लेकर सबको इकट्ठेकर १–२ रोज मर्दनकर थोडासा घीकाहाथदेकर कूटे फिर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म दूरहोताहै। यदिपारदभस्म न मिलेतो नेपाली ताम्रभस्मसे कामचलालेना ॥ ५७ ॥

५८ पञ्चामृतरसः (चतुर्थः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम्।
पञ्चामृतमिदं ख्यातं सर्वरोगहरं परम् ॥ २४९ ॥
शास्त्रे सौख्यप्रदं नृणां भुवि रोगनिवारणम्।
पथ्यापथ्यविनिर्मुक्तं विष्णुना परिकीर्तितम् ॥२५०॥
सूतकान्तरविव्योम्नां शुद्धानां भस्मकं शुभम्।
मारितं माक्षिकञ्चैव प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥२५१॥
गन्धं पञ्चपलं दत्वा श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
आर्द्रकस्य रसं दत्वा त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २५२ ॥
क्वाथे च दशमूलस्य वह्निमूलरसेन वा।
युक्त्या तु क्वथितेनापि मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥२५३॥
शोषयित्वा ततो घर्मे चूर्णयेत्तदनन्तरम्।
त्रिवर्गत्रितयाम्भोदतिन्दुतुम्बुरुरेणुकम् ॥ २५४ ॥
भार्ङ्गीभूनिम्बतिक्ताश्च जातीफलकशेरुकम्।
पलार्धमानं सर्वाणि प्रत्येकैकं भवन्ति च ॥ २५५ ॥
निधाय श्लक्ष्णचूर्णानि रसेन सह मेलयेत्।
काकमाची च निर्गुण्डीवर्षाभूर्मुण्डिका तथा ॥२५६॥
कषायेणाऽऽर्द्रकाम्भोभिर्भावनाः परिकल्पयेत्।
कषायेण गुडूच्याश्च शिग्रुमूलरसेन वा ॥ २५७ ॥
पुनरार्द्रकतोयेन भावयित्वा विमर्दयेत्।
बदरास्थिप्रमाणेन कर्तव्या गुटिका ततः ॥ २५८ ॥
मरिचानान्तु विंशत्या वटीमेकान्तु भक्षयेत्।
तत्तद्रोगहरो योगः सर्वरोगं विनाशयेत् ॥ २५९ ॥

हन्यात्सर्वविधं ज्वरक्षयकरं
पाण्डुञ्च शूलाऽऽमयं,
मन्दाग्निं ग्रहणीं गदांश्च कफजान्
वातोद्भवांश्चाऽऽमयान्।
गुल्मव्यात्यरुची च पित्तजनितान्
द्वन्द्वोद्भवान् स्रोतजान्,
कासश्वासवयासमांश्च विविधान्
पञ्चामृतो देहिनाम् ॥ २६० ॥

यस्य रोगानुरूपेण पेयमत्र भिषग्वरैः।
तक्रभक्तं प्रदातव्यं पथ्याय परिनिर्मितम् ॥
देयः स्तनन्धयस्यापि सोऽयं पञ्चामृतो रसः ॥२६१॥

र.र., ध., रससागर, रसायने।

भाषा—पारा, कान्तलोह, ताम्र, अभ्रक, और सोनामाखी इनप्रत्येककी भस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक ५ पल लेकर अदरखके रस, दशमूल और चित्रकमूलके क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात, नागरमोथा, कुचिला, तुम्बुल, रेणुका, भारङ्गी, चिरायता, कुटकी, जायफल, कसेरू, ये प्रत्येक २ तोले लेकर बारीकचूर्णकर रसकेसाथ मिलाकर मकोय, निर्गुण्डी, पुनर्नवा, गोरखमुण्डी इनप्रत्येकके क्वाथोंसे १–१ भावना देकर अदरखकारस, गुडूचीकाथ, सहिजनकी जड़कारस, अदरखकारस इनक्रीकमसे १–१ भावनादेकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली २० कालीमिर्चोके चूर्णकेसाथ मिलाकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथलेनेसे समस्तज्वर, पाण्डु, शूल, मन्दाग्नि, ग्रहणी, कफरोग, वातरोग, गुल्म, अरुचि, पित्तरोग, द्वन्द्वज, स्रोतोज, कास, श्वास, नानातरहके विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै। खानेको छाछभात देना। दूधपीनेवाले बचोंकेलिये यह बहुतहितकरहै ॥५८॥

५९ पञ्चामृतरसः (पञ्चमः)

सूतं मृतं तथा चाभ्रं वङ्गं ताम्रञ्च कान्तकम्।
मेलयित्वा समांशेन मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ २६२ ॥
घर्षितं जलयोगेन घटीमेकाञ्च चूर्णयेत्।
भक्षितो वल्लमात्रो हि कृष्णाक्षौद्रेण संयुतः ॥
कासश्वासाग्निहन्त्याशु तमः सूर्योदये यथा ॥ २६३ ॥

र.प्र.सु., र.चं., कासेश्वासे च।

भाषा—पारा, अभ्रक, वङ्ग, ताम्र और कान्त इनप्रत्येककीभस्म समभागमें लेकर घीकुंवारके रससे १–२ रोजमर्दनकर इसकीबराबर सुगन्धवाला (हिबेर सं., तगरगंठोला गु.)काचूर्ण मिलाकर एकघड़ीतकमर्दनकर सुखाकर चूर्णकरके रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा चौंसठपहरी पीपल और मधुकेसाथ देनेसे कास, श्वास, पीनस, हस्तपादादिदाह, स्वरभेद, अरुचि, जीर्णज्वर इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसेकि सूर्यकाउदय अंधेरेको नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० पञ्चामृतरसः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागैकं भागौ द्वौ गन्धकस्य च।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ २६४ ॥
मृताभ्रञ्च चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत्।
अम्लेन मर्दयेत्सर्वं माषिकं वातकासनुत् ॥
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्विभीतकफलत्वचम् ॥ २६५ ॥

भै.र., वै.क., कासाधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., गन्धक २ भा., ताम्रभस्म २ भा., मरिच १० भा., अभ्रकभस्म ४ भा., शुद्धवच्छनाग १ भा., ऐसे

सबका काढउन चूर्णकर अम्लवर्गसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली बहेडेकी छालके चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसे वातरक्त निवृत्तहोताहै और अनुपानविशेषसे देनेसे प्रायः सभीरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६० ॥

६१ पथ्यामृतरसः (सप्तमः)

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्सूताभ्रमत्तैः क्रमात्,
संवृद्धैस्त्रिफलायपथिकिमिद्दरास्भोदैर्युतः कट्फलैः।
निर्गुण्डीदशमूलवह्निरजनीव्योषाऽऽर्द्रकैर्भावितो,
गोलीकृत्य विशोषितो निगदितः पथ्यामृताख्यो रसः॥
मानेन सदृशः कोऽपि रसोऽस्ति भुवनत्रये।
निहन्ति सकलान्रोगान् भवरोगमिवाऽच्युतः ॥२६७॥
सर्वरोगहरः सुनस्तत्तद्रोगाऽनुपानतः।
अयं पथ्यामृतो नृणां त्रिदशानामिवाऽमृतम् ॥२६८॥

यो.र., नि.र., र.चं., बृ.यो.त.,७, रसायन सं., यो त., र. का., र.र., ग्रंथे।

भाषा—सुवर्ण १ भा., रजत २ भा., ताम्र ३ भा., पारद ४ भा., अभ्रकभस्म ५ भा., त्रिफला, त्रिकटु, त्रिजात, विडङ्ग, नागरमोथा ये सब १-१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वरसोंमें मिलाकर १-२ पहर खूब मर्दनकर कायफल, निर्गुण्डी, दशमूल, चित्रक, हल्दी, सोंठ, मिर्च, पीपल, और अदरख इनके क्वाथोंमें १-१ भावनादेकर १-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर अच्छीतरह सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे भवरोगको परमेश्वर नष्टकरताहै । देवताओंकेलिये जैसे अमृत उपकारकहै वैसेही यह रोगियोंको उपकारकहै ॥ ६१ ॥

६२ पथ्यामृतरसः (अष्टमः)

स्वर्णरौप्यरविपन्नगलोहं
 चन्द्रवृद्धिविचतुःशरभागम्।
मर्दितं तनुतरं दिनमेकं
 भावितं मकरपित्तरसेन ॥
वल्लमात्रमखिलज्वरशान्त्ये
 शर्कराऽऽर्द्रकरसेन दद्यीत ॥ २६९ ॥

नि.र., र.स., र.सं., रसायनस., र.का., वै.वि., टो., ज्वराधिकारे।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भा., रजतभस्म २ भा., ताम्रभस्म ३ भा., नागभस्म ४ भा., लोहभस्म ५ भा., लेकर एकदिनखूबी मर्दनकर मकरके पित्तसे यथालाभभावितकर २-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली खांड और अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ६२ ॥

६३ पथ्यामृतरसः (नवम.)

पारदश्च क्रियाशुद्धं तुल्यं शुद्धश्च गन्धकम्।
अभ्रकन्तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः॥२७०॥
सर्वासाममृतासत्त्वं भावयेदौषधैः पृथक्।
निर्गुण्डीगोक्षुरच्छिन्नाकोकिलाख्याद्रजै रसैः २७१
सप्तधारं ततो शुष्काऽऽग्नानरतेः त्रिवल्लकम्।
कोकिलाऽऽख्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ।२७२।

नि.र., रसायनसं., यो.र., वै.वि., वातरक्ते।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १-१ भा., अभ्रकभस्म २भा., शुद्धगुग्गुल ४ भा., शुद्धगिलोय सबकी बराबर लेकर निर्गुण्डी, गोखरू, गिलोय, तालमखानेकीजड इनसबके रसोंसे ७-७ बारमर्दनकर १५-१५ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली तालमखानेकी जडके पानीकेसाथ देनेसे यह वातरक्तको दूरकरताहै ॥ ६३ ॥

६४ पथ्यामृतरसः (दशमः)

हेममारितवज्राऽऽभ्रकान्तभस्म प्रवेशयेत्।
रसे सहेऽपि सताह्नं मूलिकारसमर्दिताम् ॥ २७३ ॥
तां पिष्टिं यन्त्रयोगेन पचेत्पथ्यामृताह्वयः।
रसोऽयं मधुसर्पिर्भ्यां युक्तः सर्वरुजाहरः ॥ २७४ ॥

र.र.स., रसायने।

भाषा—एकभाग शुद्धपारेको गलाकर किसी छोटेमुंहके पात्रमें डालकर उसमें १ भाग शुद्धपारा डाले फिर सोनामाखी, कान्तलोह, वज्राभ्रकभस्म १-१ भाग मिलाकर दिव्यमूलिकाओंके रससे (दिव्यमूलिकाएं रसेन्द्रचूडामणिप्रभृतिसे देखलेना) यथालाभ ७-७ रोज मर्दनकर पिट्ठीबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिट्टी देकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख ४पहरकीमन्दीआंचसे पकावे, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १-२ रत्ती अथवा योग्यमात्रामें मधु और घीकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६४ ॥

६५ पथ्यामृतरसः (एकादशः)

पूर्वोक्तं शुद्धमादाय पातितं स्वेदितं रसम्।
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य मर्दयेदौषधद्रवैः ॥ २७५ ॥
तुलसीद्रवैः शाखोटद्रवैर्वकेतकद्रवैः।
चन्द्रवल्लीचाऽऽखुकर्णीकृष्णधत्तूरकद्रवैः ॥ २७६ ॥
एतैः समस्तैर्व्यस्तैश्च मर्दयेत्तं दिनत्रयम्।
ततश्च पीतवेणीजैश्चन्द्रवल्लीरसेन च ॥ २७७ ॥
एवमेतैश्च सम्मर्द्य नष्टपिष्टं रसं चरेत्।
दिनषट्कं प्रमृद्यैवं यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ॥ २७८ ॥
त्रिदिनं तं पचेद्यन्त्रे पुनरुद्धृत्य मर्दयेत्।
पातनं मर्दनं त्वेवं यावद्व्रजति भस्मताम् ॥ २७९ ॥
तावदेवं चरेद्धीमानित्थं भस्म जायते।
पलं भस्मीकृतात्सूतालोहभस्म पलन्तथा ॥ २८० ॥
कृष्णाभ्रसत्त्वभस्मैकं पलं ग्राह्यं शिलाजतु।
एकं पलं किशोरस्य गुग्गुलोश्च पलन्तथा ॥ २८१ ॥
एतत्सर्वं खल्वमध्ये मर्दयेदतियत्नतः।
शिलाजतुरसेनैव करण्डे विनिवेशयेत् ॥ २८२ ॥

वल्लपञ्चकमानेन मधुसर्पिर्युतो रसः।
प्रयोज्यो रोगराजस्य मूलच्छेदचिकीर्षुणा ॥ २८३ ॥
एवं संसेव्यमानोऽयं रसेन्द्रो रोगराजजित्।
त्रिभिर्मासैर्न सन्देहः षड्भिः स्यान्न पुनर्भयम् २८४
वर्षद्वयप्रयोगेण वलीपलितहा भवेत्।
एष पञ्चामृतो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ २८५ ॥
पथ्यं मृगाङ्कवज्ज्ञेयमुपचारोऽपि तादृशः।
स्वसंवेद्यादिशास्त्रोक्तरीत्या सोऽय प्रकीर्तितः ॥२८६॥
रोगराजप्रणाशार्थं सम्प्रदायप्रयोगतः।
गुडूचीत्रिफलाक्काथैर्दशमूलभवैस्तथा ॥ २८७ ॥
संस्कृतो गुग्गुलुः प्रोक्तः किशोर इति वैद्यके।
ज्ञायतां सम्प्रदायेन सर्ववातनिवारणः ॥ २८८ ॥

रसाल ,क्षयाधिकारे।

भाषा—शुभुक्षान्तसंस्कारकियेहुए पारेको खरलमें डाल थुवरक, शाखोट (सीहोर) और आक इन प्रत्येकका दूध सोमलता (थोरवेल, पोरबंदर ; Sarcostemma Brevistigma, इ.) मूषाकर्णी, कालाधतूरा इनके अलग २ और मिलेहुए द्रवोंसे ३-३ रोज़ मर्दनकर पीलेबन्दालकेफल और सोमलताके रसोंसे ३-३ रोज मर्दनकर नष्टपिष्टी बनाकर डमरूयन्त्रमें रस तीनरोजकी अग्नि देकर ऊर्ध्वपातनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर यन्त्रको उघाड़कर ऊपर लगेहुएऔर नीचे बचेहुए पारेको इकट्ठा मिलाय पूर्ववत् मर्दनकर उड़ावे। इसतरह जबतक सम्पूर्णपारा तलस्थ न होजाय तबतक करताजाये। फिर यह पारदभस्म, लोहभस्म, कृष्णाभ्रकसत्त्वभस्म शिलाजतु, कैशोरगुग्गुलु ये प्रत्येक १-१ पल लेकर खरलमें इकट्ठे मर्दनकरे, जबगोली बधनेलायकहोजाय तब १०-१५ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली मधु और घीकेसाथ लेनेसे तीनमहीनेमें रोगराज (राजयक्ष्म) नष्टहोताहै और ६ महीनेके सेवनकरनेसे पुनरुत्थानकाभय चलाजाताहै। दोवर्षके प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोजाताहै इसमें पथ्य और उपचार सब मृगाङ्ककीतरह समझना। यह स्वसंवेद्यादिरचितग्रन्थोंकी रीतिसे और सम्प्रदायके क्रमसे कहागयाहै। गुडूची त्रिफला और दशमूल के क्काथसे शुद्धकियेहुए गुग्गुलको किशोरगुग्गुलु कहतेहैं इसमें वातनाशकशक्ति अधिक होजातीहै ॥ ६५ ॥

६६ पञ्चामृतोरसः (द्वादश)

गन्धकः पारदः शुद्धो मृतं नागं विषं तथा।
मरिचं शङ्खनाभिश्च समानेतान् विचूर्णयेत् ॥२८९॥
गुञ्जाद्वयमितो देयो नासाकर्णप्रपूरणे।
शृङ्गवेररसेनाऽयं त्रिदोषक्षयकासनुत् ॥ २९० ॥
ज्वरितस्य हितः सूतो रोगघ्नः स्तम्भनाशकः।
रसः पञ्चामृतो नाम सर्वरोगहरो भवेत् ॥ २९१ ॥

र.का ,राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, नागभस्म शुद्धवछनाग, मरिच, शङ्खनाभि ये सब समभाग लेकर १-२ पहर खरलकर रखछोडे। इसमेंसे अदरखके रसकेसाथ २-२ रत्ती नाक तथा कानमें डालनेसे त्रिदोषजक्षय, कास, ज्वर, स्तम्भ इनका नाश करताहै ॥ ६६ ॥

६७ पञ्चामृतरसः (त्रयोदशः)

मृतरसपलमेकं सत्त्वमेकं गुडूच्या-
स्त्रिकटुकपलयुग्मं रक्तचित्रस्य चैव।
त्रिफलपुरकटूकीनेत्रसङ्ख्यापलानि
इति मिलितसमस्तं सौरसारेण घृष्टम् ॥ २९२ ॥
घृतमधुसितमिश्रं मर्दितश्चैकरात्र
प्रतिदिनमिह खादेन्माषकाणां दशैव।
हरति विविधरोगान् राजरोगञ्च पाण्डु-
हृदयजठरशूलं श्वासकासाऽग्निमान्द्यम् ॥ २९३ ॥
शिरसिजगुदरोगाऽर्शांसि गुल्मोदराणि
हरति किल चिरोत्थान्याशुकुष्ठादिकानि
वलिपलितविनाशो वज्रकायो बलिष्ठो
रविशशिसमकालं चाऽऽयुराप्नोति विद्वान् ।२९४।

रसेन्द्रम ,सर्वरोगे।

भाषा—पारदभस्म १ पल, गुडूचीसत्त्व १ पल, त्रिकटु, रक्तचित्रक, त्रिफला, गुग्गुलु और कुटकी २-२ पल लेकर सबको कूटकपड़छानकर शिलाजतुकेसाथ १-२ रोज मर्दनकर सुखाकर इसकी बराबर घृत, मधु और शक्कर मिलाकर स्निग्धभाण्डमें रखछोडे। इसमेंसे १०-१० माशे तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे राजरोग, पाण्डु, हृद्रोग, जठर, शूल, श्वास, कास, मन्दाग्नि, शिरोरोग, गुदरोग, अर्श, गुल्म, उदर, चिरोत्थकुष्ठ, वलीपलित इत्यादि दुस्तररोगोंको यह नष्टकर दीर्घायुको देताहै ॥ ६७ ॥

६८ पञ्चामृतरसः (चतुर्दश)

शुद्धगन्धकसूतौ च माक्षिकं कान्तलोहकम्।
अभ्रकञ्च समांशञ्च वह्निकाथेन पेषयेत् ॥ २९५ ॥
पथ्यं क्षीरौदनं देयं तापे दध्यीक्षुशर्कराः।
पञ्चामृतरसो नाम सर्वज्वरनिषूदनः ॥ २९६ ॥

बा ,ज्वरे।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक, सोनामाखी, कान्तलोह, अभ्रक इनकोभस्म समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिला कर चित्रकके काथसे १-२ रोजमर्दनकर ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। अत्यन्तदाह मालूमहोनेपर दही, ईख और शक्करका प्रयोगकरे पथ्यमें दूध चावल देवे ॥ ६८ ॥

६९ पञ्चामृतरसः (पञ्चदशः)

मृतसूताऽभ्रलोहानि वत्सनागौ समं पृथक्।
सर्वतुल्यं बलिं दत्त्वा मर्दयेदारनालकैः ॥ २९७ ॥

तालमूलीशतावर्योर्गोक्षीरेण विदारिका
वाराह्याजाश्वगन्धानां मर्दयेत्सप्तधा पुनः ॥ २९८ ॥
भूधरे च पचेत्पश्चात्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
द्विगुञ्जो रसराजेन्द्रः सर्वरोगक्षयान्तकृत् ॥ २९९ ॥
वलीपलितनिर्मोची सेवितः सन् जराञ्जयेत् ।
प्रमेहं ग्रहणीश्चार्शः क्षयं कुष्ठं हलीमकम् ॥ ३०० ॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ।
शतवर्षाधिकस्यापि पुंसो रेतो विवर्धनः ॥
आमवाताऽस्थिशूलञ्च रसः पञ्चामृतो हरेत् ॥३०१॥

रससागर, रसायने।

भाषा—पारद, अभ्रक, लोह, वङ्ग और नाग इनकी भस्में सम-भाग, इनसबकी बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर काञ्जी, कालीमुसली, शतावरी, गोदुग्ध, विदारी, वाराही, अजगन्धा (बनई), असगन्ध, इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ बारमर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें ४ पहरकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादि समस्तरोगोंको नष्टकरता-है। वली, पलित, प्रमेह, ग्रहणी, अर्श, क्षय, कुष्ठ, हलीमक, आमवात, अस्थिशूल इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करताहै॥६९॥

७० पञ्चामृतरसः (चक्रादि) १६

शुद्धसूतस्य गन्धस्य तोलं तोलं सतैलकम् ।
सम्मर्द्य लोहपात्रे च निक्षिपेदम्लकाञ्जिकम् ॥ ३०२ ॥
तयोः समञ्च कैदारं ताम्रभस्माऽखिलैः समम् ।
व्योषैश्चतुष्पलैः सार्धं कृत्वा भृङ्गजलैः सह ॥३०३॥
मरिचप्रमिता कार्या वटी घर्मेण शोषयेत् ।
सन्निपाते च वाते च प्रतिश्याये च पीनसे ॥ ३०४ ॥
कफवातभवे रोगे शूले मन्दानले तथा ।
अतिसारे ग्रहण्याञ्च सर्वश्लेष्मगदार्दिते ॥
चक्रपञ्चामृतो नाम हितो नृणामिमेश्वरः ॥ ३०५ ॥

रससागर, रसायने।

भाषा—शुद्धपारा, और गन्धक १–१ तोला लेकर लोहेके-पात्रमें नीलवर्णकज्जलीकर कडुतेलसे एकरोज़मर्दनकर अम्लकाञ्जीसे १ रोज़मर्दनकरे फिर कालीमिट्टी २ तो, ताम्रभस्म ४ तो और त्रिकटुकाचूर्ण ४ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय भंगरेके रससे २–३ रोजमर्दनकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर धूपमें सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपात, वातरोग, प्रतिश्याय, पीनस, कफवातरोग, शूल, मन्दाग्नि, अतिसार, ग्रहणी, श्लेष्मवातरोग इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ७० ॥

७१ पञ्चामृतरसः (सप्तदशः)

पूर्वं यानि विशोधितानि च पुनः
कान्ताऽभ्रशुल्वानि च,
पक्कान्येव हरेच्च गन्धकसमा-
न्येतानि सम्मेलयेत् ।
तच्चूर्णं सघृतञ्च शोधितरसं
शास्त्रक्रमाद्दै भिषक्,
तस्मिंश्च स्थिरमानसः सुविधिना
यथार्थं सुतप्तं क्षिपेत् ॥ ३०६ ॥
पञ्चामृतमूलेन दशमूलेनाऽष्टवर्गमूलेन ।
मधुसञ्जीवनीमार्कवविदारिमूलेन च क्वाथः ॥ ३०७ ॥
गुडूची हस्तिकर्णी च मुशली श्रावणी तथा ।
शतावरी च पञ्चैताः क्वाथः पञ्चामृतो मतः ॥ ३०८ ॥
ऋषभकजीवकयुक्तं मेदायुग्मञ्च ऋद्धिवृद्धी च ।
काकोलीद्वयसहितं क्वाथः कथितोऽष्टवर्गस्य ॥ ३०९ ॥
श्रीपर्णिका च बृहती च वसन्तदूती,
व्याडाग्निमन्थशुकनासकशालपर्ण्यः ।
बिल्वश्च गोक्षुरकमेव सुपृश्निपर्णी,
क्वाथो बुधैश्च कथितो दशमूलसञ्ज्ञः ॥३१०॥
ज्वलनस्थं तत्सर्वं शनैः शनैरेव पचनीयम् ।
प्रभाततश्चाऽऽरभितमस्तं याति दिवाकरे यावत् ३११
पाकाऽवसानसमयं ज्ञात्वा तत्रैव चित्रकं शृङ्गीम् ।
त्रिकटुकचूर्णञ्च तथा रसमानं तद्विनिक्षिपेत्प्राज्ञः ३१२
गुडपाकसमानेन च वह्निस्थे तान्यौषधानि भिषक् ।
उत्तारणीयमग्नेर्भूमौ संस्थापनीयञ्च ॥ ३१३ ॥

रसेन्द्रम, र, रसायने।

टि०–पूर्वं ग्रन्थारम्भे यानि साम्प्रतमेव वर्णयिष्यमाणानि विशोधितानि मर्दनादिभिर्विशुद्धिमापादितानि पुटैश्च पुन विशोधितानि भस्मीकृतानी-त्यर्थः । एतदर्थस्य स्पष्टीकरणार्थं पक्कान्येवेति विशेषणं दत्तम् । तानि कानी त्यपेक्षाया कान्ताऽभ्रशुल्वानि इति त्रीणि, चतुर्थो गन्धकः, शोधितरसश्च पञ्चम, एतेषां शास्त्रोद्दिष्टक्रमेण पर्पटीं सम्पाद्य पुनर्भावना दातव्येति रह-स्यमवगन्तव्यम् । रसावतारे तु "रसगन्धकवज्राभ्रैस्तुल्यं लोहं विमर्दयेत् । पञ्चामृताऽष्टवर्गाभ्यां दशमूलेन वा पुन ॥ क्वाथं कृत्वा यथालाभं स्वेदनीयं मुहुर्मुहुः सर्वरात्रिं दीपकेन निक्षिप्याऽऽयसपात्रके । रसतुल्यं त्रिकटुकं चित्रकं चापि क्षिपेत् ॥ गुडतुल्यो जातपाकः सिद्धस्तस्तदाभवेत् ।" इति पाठेन विलक्षणता प्रदर्शिता सा ज्ञानपूर्वा वा स्यादज्ञानपूर्वा वा स्यादिति सुधीभिर्विभावनीयम् ॥

भाषा—कान्तलोह, अभ्रक और ताम्रभस्म १–१ तोला, गन्धक ३ तो, शुद्धपारा ३ तो, लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें सबको मिलाकर घृताक्तलोहेकी कड़ाहीमें बेरके कोय-लोंपर गलाकर ताजे गोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर डालकर दूसरे केलेके पत्तेसे दबाकर गोबरसेदबादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर लोहेकी कड़ाहीमें डालकर अग्निपर चढावे फिर पञ्चामृतमूलक्वाथ, दशमूलक्वाथ, अष्टवर्गमूलक्वाथ, मीठीडोडी, भंगरा, विदारीमूल इनका अष्टमांशावशिष्ट उष्णक्वाथ थोड़ा २ देकर प्रत्येकसे १–१ पहरपकावे, एकके बाद दूसरा क्वाथडाले। सूर्योदयमे आरम्भकर सूर्यास्ततक सबके क्वाथोंमें पकालेवे फिर चित्रक, काकड़ासींगी, त्रिकटु इन सबसमभागलेकर

कपड़छानचूर्णकर ९ तोले कड़ाहीमें डालकर पकावे, यहध्यान रक्खेकि कड़ाहीमें नीचे लगने न पावे, जबगुडकी चाशनीके सदृश होजाय तब नीचे उतारले, स्वाङ्गशीतलहोनेपर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक कुष्ठघ्नाऽनुपानकेसाथदेनेसे ऋष्यजिह्वकादि समस्तकुष्ठ दूरहोतेहैं। गिलोय, हस्तिकर्णपलाश, मुशली, गोरखमुण्डी, शतावरी यह पञ्चामृत क्वाथहै। बेलगिरी, सोनापाठा, गंभारी, पाटला, अरणी, शालपर्णी, पृश्नपर्णी, गोखरू, दोनोंकटेरी यह दशमूलहै। काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि यह अष्टवर्गहै ॥ ७१ ॥

७२ पञ्चामृतरसः (अष्टादशः)

रसगन्धकवङ्गाऽभ्रं लोहभागं समांशकम्।
पञ्चवक्त्रेण सम्प्रोक्तः पञ्चामृतरसोत्तमः ॥ ३१४ ॥
पञ्चवल्लमिमं खादेत्कणाक्षौद्रेण संयुतम्।
धातुक्षयाऽग्निमान्द्ये च कासं पञ्चविधन्तथा ॥३१५॥
जीर्णज्वरमजीर्णञ्च शोफपाण्डुहलीमकम्।
अनुपानाऽनुयोगेन नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ३१६ ॥

रसायनसं., क्षये।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, वङ्ग, अभ्रक, लोह इनकीभस्में सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहरघोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १५–१५ रत्तीकीमात्रा मधुपीपल अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ खानेसे धातुक्षय, अग्निमान्द्य, ५ प्रकारका कास, जीर्णज्वर, अजीर्ण, शोफ, पाण्डु, हलीमक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

७३ पञ्चामृतरसः (ऊनविंशः)

मृतं शुल्वं मृतं तीक्ष्णं मृतं स्वर्णञ्च तुल्यकम्।
सर्वतुल्यं गन्धकञ्च शुद्धं तद्वत्प्रमर्दयेत् ॥ ३१७ ॥
पुटेद्गजपुटे वारमेकं सिद्धो भवेद्रसः।
एष पञ्चामृतो नाम्ना मुखरोगनिवारणः ॥ ३१८ ॥
ओष्ठताल्वादिशमनो वलीपलितनाशनः।
मुखरोगी त्यजेन्नित्यं लवणञ्चोष्णभोजनम् ॥
कफकारि च यत्सर्वं मिष्टान्नञ्च दधीनि च ॥ ३१९ ॥

र.म.मा., ना. वि., मुखरोगे।

भाषा—तांबा, लोहा, सोना, तुल्य इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा., लेकर पानकेपेरहके रससे १–२ रोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानके साथ देनेसे ओष्ठ और तालुकेरोग, वलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै। पथ्यमें लवण, उष्ण, कफकारी, मिष्टान्न और दहीको छोड़कर उचितवस्तुका सेवनकरे ॥ ७३ ॥

७४ पञ्चामृतरसः (विंशः)

जातीफलं जातिपत्रं लवङ्गं केशरन्तथा।
चातुर्जातकशुण्ठ्यौ च पिप्पली मरिचानि च ॥३२०॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं वरी मूलन्तु वंशजम्।
सर्वं पिष्ट्वा सुसूक्ष्मञ्च वाससा परिशोधयेत् ॥ ३२१ ॥
लोहचूर्णमथाऽभ्रं वा ताम्रभस्म च वङ्गकम्।
रसराजञ्च नागञ्च चूर्णस्याऽर्धं प्रयोजयेत् ॥ ३२२ ॥
नागवल्लीरसेनैव ह्यथवा माक्षिकेण च।
गुटिका तस्य कर्तव्या माषद्वयप्रमाणिका ॥ ३२३ ॥
दोषमग्निं बलं वीक्ष्य यथोक्तं भक्षयेद्बुधः।
गोदुग्धस्याऽनुपानञ्च कोष्णञ्चैव विशेषतः ॥ ३२४ ॥
वर्धनं सर्वधातूनां वीर्यबुद्धिबलप्रदम्।
वलभाकान्तिरुचिदमग्नेः सुदीप्तिकारकम् ॥ ३२५ ॥
कफरोगहरञ्चैव बुद्धिज्ञानादिकारणम्।
वन्ध्या च लभते गर्भं षण्ढोऽपि पुरुषायते ॥ ३२६ ॥
नपुंसको याति पुंस्त्वं रामाः कामयते शतम्।
वज्रकायः शुद्धधातुर्दिव्यदृष्टिस्तु जायते ॥
जराव्याधिविनिर्मुक्तो वर्षसेवी यदा भवेत् ॥ ३२७ ॥

धं. से., रसायने।

भाषा—जायफल, जावित्री, लौंग, केसर, चातुर्जात, सोंठ, पीपल, मरिच, चित्रक, पिपलामूल, शतावर, वंशलोचन सब सम भागलेकर कपड़छानचूर्णकर रखले फिर लोहभस्म अथवा अभ्रक-भस्म, ताम्र, वङ्ग, पारद और नागभस्म, ये पाचों मिलकर पूर्व चूर्णसे आधेप्रमाणमें मिलाकर पानकेरस अथवा मधुसे १–२ दिन घोटकर २–२ माशेकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अथवा दोष और अग्निबल देखकर मात्रा कायम-कर उष्णगोदुग्धकेसाथ देनेसे धातु, वीर्य, बुद्धि, बल और रुचिइनकाह्रास, मन्दाग्नि, कफरोग, बुद्धिमान्द्य, वन्ध्यात्वदोष, षण्ढत्व, दृष्टिदौर्बल्य इनसबको दूरकर बुढ़ापेको दूरकरताहै॥७४॥

७५ पञ्चामृतरसः (एकविंशः)

कर्षं रसाद्गन्धकतश्च कर्षं
विमर्द्य खल्वेऽभ्रकमेव तावत्।
क्षेप्यं तथा ताप्यमयोरजश्च
गव्येन चाऽऽज्येन विमिश्र्य किञ्चित् ॥३२८॥
शरावयुग्मस्थमतो मृतं तत्
समुद्धृत सर्वमपि प्रयत्नात्।
पांशुप्रपूर्णे च निधाय पात्रे
तदेव पात्रं सुमृदा प्रलिम्पेत् ॥ ३२९ ॥
मन्दंमन्दं वह्निना क्वाथयेत्-
यावद्यामानां त्रयं स्वाङ्गशीतम्।
ग्राह्यं देयं रक्तिकैकप्रवृद्ध्या
यावन्माषो नाऽधिकं मानवेभ्यः ॥ ३३० ॥
कृत्वा वह्नेर्दीपनं हन्ति रोगान्
पाण्डुप्लीहोन्माददुर्नाममहान्।
पित्तं साऽम्लं साऽतिसारं ज्वरञ्च
सद्यः शूलान् ग्रहण्यामयांश्च ॥ ३३१ ॥

अयं हि पञ्चामृतनामधेयो
रसेन्द्रयोगः क्षयरोगहारी ।
वाताऽस्रकुष्ठं श्वयथुं च हन्यात्
स्वयोगयुक्तः सकलान् विकारान् ॥ ३३२ ॥
र. म. क्षयादौ

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक अभ्रक सोनामाखी और लोहभस्म ये सब समभाग लेकर पारे गन्धक की नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर थोड़े गायके घी का प्रक्षेप देकर मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्द कर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सूखनेपर लावपुटकी अग्नि दे फिर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर तुलसी प्रभृतिके स्वरसमें एकदोरोज मर्दन कर सुखाकर पुनः कज्जली कर आतशी शीशीमें भरकर वालुका यन्त्र में बन्द कर तीन प्रहरकी मन्दाग्निमें पकावे स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल रखछोड़े इसमेंसे १ एक रत्ती उचिताऽनुपानके साथ आरम्भकरे और रोज एकएक रत्ती बढाकर एक माशेकी मात्रा कायमकर उचितसमयतक खानेसे मन्दाग्नि, पाण्डु, लीहा, उन्माद, बवासीर, अम्लपित्त, ज्वराऽतिसार, सब शूल, संग्रहणी, वातरक्त, शोथ, इत्यादि समस्तरोगोंको यह बहुत शीघ्र नष्टकरता है ॥ ७५ ॥

७६ पञ्चामृतरसायनम्

भस्मसूताऽभ्रवङ्गाऽयोयुक्तं द्विघ्नं शिलाजतु ।
तद्वरामधुना सेव्यं द्विमाषं सर्वमेहजित् ॥ ३३३ ॥
पञ्चामृतमिदं वृष्यं सुभगश्च रसायनम् ।
स्वयोगयुक्त्या कृच्छ्राऽश्मशुष्कपाण्डुक्षयापहम् ।३३४।
वरास्थाने भवेद्धात्री कुर्याद्वा गुणसत्तमाम् ।
केवलं वाऽथ मधुना मेहघ्नी बलवर्धिनी ॥ ३३५ ॥
र सि., मेहे ।

भाषा—पारद, अभ्रक, वङ्ग, लोह इनसबकीभस्में समभाग, इनसबसे द्विगुणशुद्ध शिलाजतु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ या २ माशे लेकर त्रिफलाकेचूर्ण औरमधुके साथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे मूत्रकृच्छ्र, पथरी, शुष्कपाण्डु और क्षय नष्टहोतेहैं । अनुपानमें त्रिफलाके स्थानमें आवले अथवा हर्रे वा केवलमधुसे कामलेसकेहै । यह रसायन धातु औरबलको बढ़ानेवालीहै और खानेमें कष्टप्रद नहींहै ॥ ७६ ॥

७७ पञ्चामृतलोहगुग्गुलुः

रसगन्धकताराऽभ्रमाक्षिकाणां पलंपलम् ।
लोहस्य द्विपलञ्चापि गुग्गुलोः पलसप्तकम् ॥३३६॥
मर्दयेदायसे पात्रे दण्डेनाऽप्यायसेन च ।
कटुतैलसमायोगाद्यामद्वयमतन्द्रितः ॥ ३३७ ॥
माषमात्रप्रयोगेण गदा मस्तिष्कसम्भवाः ।
स्नायुजा वातजाश्चापि विनश्यन्ति न संशयः ॥३३८॥
यं पञ्चामृतलौहाख्यो गुग्गुलुर्न हरेदिदम् ।
नासौ सञ्जायते देहे मनुजानां कदाचन ॥ ३३९ ॥
भै. र., परिशिष्टे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, रजत, अभ्रक, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में प्रत्येक १ पल, लोहभस्म २ पल, गुग्गुलु ७ पल लेकर लोहेके बर्तनमें लोहेके डंडेसे थोड़ासाकड़वातैल डालकर दोपहरतक लगातार मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मस्तिष्करोग, स्नायु, वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै । शरीरमें ऐसाकोईरोगनहींहै जिसको यह (पञ्चामृतगुग्गुलु) नष्टनहींकरसकाहो ॥ ७७ ॥

७८ पञ्चामृतलोहम्

कनकभास्करताप्यघनायसां
यदि रजस्त्रिफलाम्बुपरिप्लुतम् ।
खरमयूखविशोषितशोषितं
दलितमाज्यसितामधुयोजितम् ॥ ३४० ॥
हरति हृद्रुजमामसमीरणं
क्षयमुदारमुरःक्षतपीनसम् ।
प्रकुरुते रमणीरमणीयतां
हतहृदां सुहृदां रतिपाटवम् ॥ ३४१ ॥
लो. प(स.), ना. वि., क्षये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, सोनामाखी, अभ्रक, लोह इनसबकी भस्में समभागलेकर त्रिफलाके काढेसे कड़ीधूपमें कईभावनाएं देकर कपड़छान चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा घी, शक्कर और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे हृद्रोग, आमवात, क्षय, अत्यन्तबढ़ाहुआ उर:क्षत, पीनस, नपुंसकता इनसबको यह दूरकरताहै । स्त्रियोके सौन्दर्यको बढ़ाताहै । शृङ्गार रससे शून्य हृदयोंकोभी रतितत्पर करताहै ॥ ७८ ॥

७९ पञ्चामृतवटी

पारदं गन्धकं ताम्रमभ्रकं मरिचानि च ।
सममागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमर्दितम् ॥ ३४२ ॥
मर्दितं हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः ।
भावनाऽपि च कर्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥ ३४३ ॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्रस्तिस्र एव धा-।
वह्निमान्द्ये प्रदातव्या वटयः पञ्चाऽमृताः शुभाः ३४४
र सं., र.सु., र. क., र.र., अजीर्णे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, ताम्र, अभ्रकभस्म, मरिच ये सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली में मिलाकर खट्टी तिपतियाके रससे २–४ रोज़ मर्दनकर जैत और निर्गुण्डीके स्वरसकी १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ अथवा ४ गोलियें गरमजलके साथ देनेसे मन्दाग्नि, गुल्म, यकृत्, प्लीह जीर्णज्वर इत्यादि रोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ७९ ॥

८० पत्रवासकपाकः

पत्रवासः प्रस्थमेकं क्षीरे द्रोणमिते पचेत् ।
घृतप्रस्थसमायुक्तं विपचेन्मृदुवह्निना ॥ ३४५ ॥

खण्डं शुद्धं तुलार्धञ्च प्रस्थार्धञ्च मधु क्षिपेत् ।
स्निग्धभाण्डे विनिक्षिप्य स्थाप्यं सर्वं प्रयत्नतः ३४६
चातुर्जातं लवङ्गानि पिप्पली च पुनर्नवा ।
नागार्जुनी स्वगुप्ता च गोक्षुरं पिचुमात्रया ॥ ३४७ ॥
मञ्जिष्ठा चाऽश्वगन्धा च हाक्षमात्रं तथैव च ।
नागवल्लीसमुद्भूतं वङ्गाभ्रकसमं तथा ॥ ३४८ ॥
लोहं शुल्वं तथैकैकं शाणकद्वयमानकम् ।
धीरासत्वं तवक्षीरं पलार्धञ्च प्रकल्पयेत् ॥ ३४९ ॥
वालकं चन्दनं मांसी कर्पूरं वंशलोचनम् ।
जातीफलं जातिपत्री केशरं तगरं तथा ॥ ३५० ॥
पलमात्रं प्रदातव्यं महाव्याधिनिवारणम् ।
कासं श्वासं तथा पाण्डुं प्रमेहस्य विनाशनम् ॥३५१॥
पित्तोद्भवं महादोषं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम् ।
ये चान्ये शुक्रजा दोषा एव सर्वान्विनाशयेत् ॥
बलवीर्यकरः पुंसां पञ्चवासाऽवलेहकः ॥ ३५२ ॥

चि र. भ., पा. व., महाव्याधौ ।

टि०—अत्र पञ्चवास शब्देन शारिरण्टो ग्रहीतव्य , गुर्जरभाषाया शारिरण्डस्यैव पञ्चवासेति नाम्ना प्रसिद्धे ।

भाषा—एकसेर मार्ईकेचूर्णको १६ सेरगोदुग्धमें पकावे, उसमें १ सेर गोघृत डाले, जब मावा तैयारहोजाय तब ५० पल खाड डालकर चाशनीकरले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ८ पल मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े । इसमें चातुर्जात, लौंग, पीपल, पुनर्नवा, छोटीदुधी, केवांचकेबीज, गोखरू, मजीठ, असगन्ध येसब १–१ तोला, पानकीजड, वङ्ग, अभ्रक, लोह-ताम्रभस्म ६–६ मासे, गिलोयसत्त्व, तीखुर २–२ तोले, सुगन्धवाला, चन्दन, जटामांसी, कपूर, वंसलोचन, जायफल, जावित्री, केसर, तगर ये सब १–१ पल डालकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला अथवा अग्निबल देखकर मात्रा लेनेसे कास, श्वास, पाण्डु, प्रमेह, पित्तरोग, भयंकर मूत्रकृच्छ्र, शुक्रसम्बन्धीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ८० ॥

८१ पथ्यादिलोहम् (प्रथमम्)

पथ्या लोहरजः शुण्ठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।
परिणामोद्भवं शूलं सद्यो हन्ति त्रिदोषजम् ॥ ३५३ ॥

र र., र.प्र., वृ यो त., टो , रसायनसं , नि. र , र. चि., यो म , च. द., भा. प्र., यो. र., वै द , र का , वृ मा , ग. नि , परिणामशूले । शुद्धचिन्त्यकणा अधिकतया दृश्यते ।

भाषा—हर्रे, लोहभस्म सोंठ, सबसमभागलेकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ लेनेसे त्रिदोषज परिणामशूल नष्टहोताहै ॥ ८१ ॥

८२ पथ्यादिलोहम् (द्वितीयम्)

तुल्या अयोरजः पथ्या हरिद्रा क्षौद्रसर्पिषा ।
चूर्णिताः कामली लिह्याद्गुडक्षौद्रेण वाऽभयाम् ।३५४।

च. सं., नि. र , च. द , वै चि., टो , कामलायाम् । वै चि , अयोरजः प्रभृति चूर्णम् ।

भाषा—लोहभस्म, हर्रे, हल्दी येसब समभागलेकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा अथवा वयोबलानुसार मात्रा मधु और घीकेसाथ लेनेसे कामलारोग नष्टहोवे अथवा इसके अभावमें गुड और मधुके साथ हर्रेका चूर्ण देवे ॥ ८२ ॥

८३ पथ्यादिलोहम् (तृतीयम्)

पथ्यारजः सममयोरजसा विपक्वं
गोमूत्रके समगुडं विधिवत्प्रयुक्तम् ।
शूलं निहन्ति परिणामसमुद्भवंत-
द्भागीरथीजलमिवातिविवृद्धमेनः ॥ ३५५ ॥

लो. प. (स.), परिणामशूले ।

भाषा—हर्रे और लोहचूर्ण समभागलेकर अठगुने गोमूत्रमें धीरे २ पकावे, पाकहोनेपर इसकेबराबर पुरानागुडमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक समयोचितानुपानके साथ लेनेसे परिणामशूलको यह इसतरह नष्टकरताहै जिसतरह गङ्गोदक बढ़ेहुये पापको नष्टकरताहै ॥ ८३ ॥

८४ परमेश्वरो रसः

रसं वज्रं स्वर्णकान्ते मुण्डञ्च मारितं समम् ।
माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ ३५६ ॥
सप्ताहं मर्दयेत्सर्वं तद्गोलं चाऽन्वितं पुटेत् ।
भूधरे दिनमेकन्तु स्यातः सिद्धरसः परः ॥ ३५७ ॥
गुञ्जैकं मधुना लेह्यं वर्षान्मृत्युजरापहम् ।
दिव्यकायो नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः ॥ ३५८ ॥
श्वेतपौनर्नवं मूलं क्षीरपिष्टं सदा पिबेत् ।
भक्षयेद्वा सितासार्धं क्रामरुं परमे रसे ॥ ३५९ ॥

र. मं , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, सुवर्ण, कान्त, मुण्ड इनकी भस्में, शुद्धसोनामाखी और गन्धक समभागलेकर इकट्ठे करलेकर जंभीरीके रसमें ७ रोजमर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें पकानेसे यह रस सिद्धहोगा । इसमेंसे १–१ रत्ती मधुकेसाथ १ वर्षतक खानेसे दिव्यकाय होताहै इसरसके खानेकेबाद सफेद पुनर्नवाकीजड़ १ तोला दूधमें पीसकरपीवे अथवा शक्करकेसाथ क्रामरुचीजोंका सेवनकरे ॥ ८४ ॥

८५ परशुरामकुठारो रसः

नागगन्धरसञ्चैव कर्परी तु द्विभागतः ।
वेदभागं विषकञ्च जम्बीररसमर्दितम् ॥ ३६० ॥
गुञ्जामात्रां तु वटिकां रसानुपानेन सेवयेत् ।
सन्निपातकुलं हन्ति जामदग्न्यकुठारकः ॥ ३६१ ॥

वै चि., ज्वराधिकारे ।

भाषा—नागभस्म, शुद्धगन्धक और पारा १–१ भाग, खर्पर २ भा., विषक ४ भा., सबका कपड़छान चूर्णकर जंभीरीके रसमें १ रोजमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१

गोली तत्तत्समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातके कुलको नष्टकरतीहै ॥ ८५ ॥

८६ परहितरसः

श्वेतां पाठां जटां श्वेतां श्वेतां चैव पुनर्नवाम् ।
पिष्ट्वा जलेन ताः कल्कैः प्रकुर्यान्मल्लमूषिकाम् ॥३६२॥
स्थालीमध्ये च तां क्षिप्त्वा क्षिपेत्संशोधितं रसम् ।
क्षिपेदुपरि सम्पेष्य द्व्यङ्गुलिप्रमितं पटुम् ॥ ३६३ ॥
पिधानं तन्मुखे दत्त्वा सन्निरुध्याऽतियत्नतः ।
अधस्ताज्ज्वालयेद्वह्निं पिधान्यामम्बुनिक्षिपेत् ॥३६४॥
यामद्वितयपर्यन्तं जातेऽथ शिशिरे ततः ।
क्रोडकेशैः समाकृष्य मृतं पारदमाहरेत् ॥
नचेदेतावता भस्म पुनरेव पुटेद्रसम् ॥ ३६५ ॥
तद्भस्मातिविषं विषं कृमिहरं व्योषोत्तमा गन्धजं,
चूर्णं द्वादशशाटक खलु गुडो द्वात्रिंशदंशोन्मितः ।
तत्सर्वं परिचूर्णितं प्रतिदिनं वल्लैश्चतुर्भिर्मितं,
चैवं हन्ति समस्तरोगनिवहं नागं गरुत्मानिव ॥३६६॥
विशेषात्सर्वकुष्ठघ्नो रसोऽयं परिकीर्तितः ।
ख्यातः परहितो नाम्ना भानुना भूरिभानुना ॥३६७॥

र र स, कुष्ठे।

टि०—श्वेतादीनां पारदस्यच प्रत्येकं पलमानम् ।

भाषा—सफेदफूलकीकोयल, पाठाकीजड़, वच, सफेदपुनर्नवा, इनसबको जलमें पीस मूषाबनाय अन्दर शोधनक्रियाहुआ पाराडालकर मूषाको हडीमें रखदे, मूषाके ऊपर बारीकपिसा हुआ ३२ तोले सैंधानमकडालकर हडीकामुहबदकर चूल्हेपर रख ऊपरके ढकनमें पानीभरदे फिर तीनपहरतक वह्नीआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे सम्पुटखोलकर सुअरके बालोंके कूंचेसे हडीमेंसे पारेको निकाललें । यदि इतनेमें भस्म न हुईहो तो फिर दुबारापूर्ववत्करे । फिर यह पारदभस्म २ तोला अतीस, शुद्धवछनाग, विडङ्ग, त्रिकटु त्रिफला और गन्धक १–१ तोले, पुरानागुड़ ३२ तो, लेकर सबचीजोंका कपड़छानचूर्णकर गुड़में १२–१२ रत्तीकी गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको इसतरह नष्टकरताहै जैसेकि गरुड़ सर्पोंका नाशकरताहै विशेषकर कुष्ठ और उपदंशको दूरकरताहै यह सूर्यका कहाहुआहै ॥ ८६ ॥

८७ परानन्दो रसः

मृतसूताऽभ्रकं गन्धं तुल्यं सप्तदिनावधि ।
शिग्रुमूलदलैर्मर्द्यं तद्गोलं भाण्डमध्यगम् ॥ ३६८ ॥
रुद्ध्वा पक्त्वा लघुत्वेन शाककाष्ठैर्दिनावधि ।
परानन्दो रसो नाम घृतैर्वल्लं सदा लिहेत् ॥३६९॥
दिनैकं त्रिफलाक्वाथैः कुष्ठं सम्यग्विपाचयेत् ।
तच्चुर्णकं चूर्णितं कर्षं मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥
सवत्सरप्रयोगेण जीवेद्रोगविवर्जितः ॥ ३७० ॥

र रा , रसायनम , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, गन्धक सबसमभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ७ दिनतक सहिजनकीजड़ और पत्तोंकेरससे मर्दनकर कपड़मिट्टीदीहुईहडीमें बन्दकर सागकीलकड़ीसे ४ पहरपकाकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती घीकेसाथ खाकर त्रिफलाकेक्वाथमें पकायेहुए कुठके चूर्णको १ कर्ष मधु और घीकेसाथ ऊपरसे चाटे । ऐसे एकवर्षतक इसका प्रयोगकरनेसे मनुष्य रोगरहितहोकर दीर्घजीवी होताहै ॥ ८७ ॥

८८ परिकररसः (माणाद्यगुटी)

नागरं तालवङ्गौ च प्रत्येकन्तु त्रिकार्षिकम् ।
विडसौवर्चलक्षारपिप्पल्यश्चापि कार्षिकाः ॥३७१॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं गोमूत्रस्याढके पचेत् ।
सान्द्रीभूतं गुटीः कुर्याद्दत्त्वा त्रिपलमाक्षिकम् ॥३७२॥
यकृत्प्लीहोदरहरो गुल्मार्शोग्रहणीहरः ।
योगः परिकरो नाम्ना वह्निसन्दीपनः परः ॥३७३॥

यो म ,उदरे।

भाषा—सोंठ, हरिताल, वङ्गभस्म, विडनोंन, सचल, यवक्षार,पीपल ३–३ तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर ४ सेरगोमूत्रमें पकावे, गाढाहोनेपर उतारकर रखदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ३ पल शहद डालकर ३–३ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यकृत्, प्लीह, उदर, गुल्म, बवासीर, ग्रहणी, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ८८ ॥

८९ परिस्राव्युदरहरो रसः

नभोलोहगन्ध शिलाताम्रकुष्ठं,
रसव्योषनिम्बाग्निदीप्ताग्नियुक्तम् ।
विषं शर्वरी तालमूल्या च पिष्टं,
परिस्राविणं हन्ति माक्षीकयुक्तम् ॥३७४॥

चि क ,उदरे।

भाषा—अभ्रक, लोह, ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, पारा, मैनसिल, कुठ, त्रिकटु, नीमकीछाल, चित्रक, भिलावा, शुद्धबछनाग, हल्दी, येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर तालमूलीके रससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा मण्डानुपानकेसाथ देनेसे यह परिस्राव्युदरको नष्ट करताहै ॥ ८९ ॥

९० पर्पटीरसः (मल्लपर्पटी)

राले चतु.पलमिते द्रविते ऽग्नियोगा-
त्सम्मेल्य शुक्लविषमर्धपलप्रमाणम् ।
खल्वे क्षिपेत्सपदि पर्पटिका रसोऽयं,
हन्यात्कफानिलमतिभ्रमवान्तिवेगान् ॥३७५॥

सि भे म ज्वराधिकारे।

भाषा—४ पल सफेदरालको गलाकर आधापलसफेदसोमलका बारीकचूर्णमिलाकर उसकीपर्पटी बनाकर खरलमें डाल

दोतीनरोज़तकमर्दनकर रसछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे कफवातरोग, मतिभ्रम, वमन इत्यादिरोगोंको यह तत्क्षण दूरकरताहै इसको बहुतसंभालकर वर्तना उचितहै, वैद्यको चाहियेकि ऐसी दवाइया रोगीको अपनेसामने खिलावे, दसवीसपुड़िया इकट्ठी बनाकर न दे ॥ ९० ॥

९१ पलितारिरसः

रसगन्धाऽभ्रताम्रञ्च कान्तलोहयुतन्तथा ।
त्रिफलाभृङ्गनिर्गुण्डीपत्रै मर्द्यं दिन पृथक् ॥ ३७६ ॥
ततः सुमर्दयेदेभिः सिद्धोऽसौ पलितापहः ।
त्रिफलाभृङ्गराजाभ्यां माषः पलितनाशनः ॥ ३७७ ॥
मुखकक्षादिलेपेन व्यङ्गच कण्ड्वहिपूतनम् ।
जयेत्कासीसतुल्थाऽऽलरोचनाताक्ष्यशैलकम् ॥३७८॥
रक्तपत्राधरानार्क्ष्यशिलापक्वमजाघृतम् ।
तत्राऽहिपूतनां हन्ति चिरोत्थामपि दुष्कराम् ॥३७९॥
र.; पलिते ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रक, ताम्र, कान्तलोह, इनकीभस्में समभागलेकर त्रिफला, भागरा औरनिर्गुण्डीकेपत्ते इनप्रत्येकके रस अथवा क्वाथसे १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और भंगराकेरसकेसाथलेनेसे पलितको नष्टकरताहै । मुख, कक्षा प्रभृतिस्थानोंमें त्रिफला और भंगरेके रससे लेपकरनेसे व्यङ्ग, कण्डू, अहिपूतन इनको यह नष्टकरताहै तथा कासीस, तुत्थ, हरिताल, गोरोचन, रसाञ्जन, मैनसिल इनका त्रिफला और भंगराके रसमें लेपकरनेसे पूर्वोक्तकार्यहोताहै । अथवा मेंहदी, त्रिफला, रसौत, मैनसिलइनके कल्क, क्वाथादिसे पकायाहुआ बकरीका घी बहुतदिनकी दु साध्य अहिपूतनाको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

९२ पशुपतिचूर्णम्

सुरतरुहतमालौ व्यालदारू वरा च,
तपनकनकपुष्प्यौ चापि गौरी विशाला ।
समकृतशशिरसं सूतभस्म प्रयुक्तम्,
पशुपतिकृतचूर्णं श्वेतकुष्ठं निहन्ति ॥ ३८० ॥
वै चि , श्वित्रे ।

भाषा—देवदारु, अमिलतास, चित्रकमूल, दारुहल्दी त्रिफला, आककीजड़कीछाल, सत्यानाशीकीजड़ अथवा रेवनचीनी, हल्दी, इन्द्रायण, पारदभस्म येसब समभाग, इनसबकीबराबर बावुचीकेबीजोंका चूर्ण मिलाकररखछोड़े। इसमेंसे २–२ माशकी मात्रा सुखदानुपानकेसाथ देनेमे यह श्वेतकुष्ठको दूरकरताहै । इसका काथोके साथलेपकरना चाहिये ॥ ९२ ॥

९३ पाञ्चजन्यरसः

लोहार्काऽभ्रं हरजभुजगं कासमर्दाऽम्बुपृष्ठं,
शुष्कं गोल पुटय सुदृढं सूरणान्तस्त्रिगुञ्जम् ।
व्योषश्रेष्ठागुडबलियुतं भक्षयेन्मासमात्रं,
सर्वान् रोगाञ्जयति जनयेद्दीपनं पाञ्चजन्यः ॥३८१॥
र.र शि , सर्वरोगे ।

भाषा—लोह, ताम्र, अभ्रक, पारा, नाग, इनकीभस्में समभागलेकर कसोंजीके रससे १–२ रोज़मर्दनकर गोलाबनाय पकेहुए सुरणकन्दमें भीतररख उसीकी डाटसेबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर गजपुटकीआचदे, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती त्रिकटु, त्रिफला, गुड औरगन्धक समभागके ३ माशेचूर्णमें मिलाकर खानेसे १ महीनेमें समस्तरोगोंको दूरकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै ॥ ९३ ॥

९४ पाणिजङ्कुकरसः (प्रथमः)

नागवङ्गौ समौ शुद्धौ द्रावयेत्खर्परोपरि ।
भागमेकं रसं दत्त्वा वद्धं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ३८२ ॥
हालाहलं द्विभागञ्च पित्तैश्च परिमर्दयेत् ।
स्नुहीचित्रकतोयेन शुष्कोऽयं पाणिजङ्कुकः ॥ ३८३ ॥
र.क यो , सन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्धनागवङ्गको खपड़ेमें गलाकर एकभाग शुद्धपारा डालकर उतारले फिर १ रोज़मर्दनकर दोभाग शुद्धवछनाग मिलाकर पञ्चपित्त, थूहरकेदूध और चित्रकके क्वाथसे १–१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूर करताहै ॥ ९४ ॥

९५ पाणिजङ्कुकरसः (द्वितीयः)

शुद्धनागं शुद्धवङ्गं द्रावितं खर्परोपरि ।
शुद्धसूतन्तु संयोज्य मत्स्यपित्तेन मर्दयेत् ॥ ३८४ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।
शम्भुना कथितः पूर्वं रसोऽयं पाणिजङ्कुकः ॥ ३८५ ॥
र क यो , सन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्ध नागवङ्गको गलाकर १ भाग शुद्धपारा मिलाकर मछलीके पित्तसे १ रोज़मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ९५ ॥

९६ पाणिवद्धरसः (वडवाग्निः)

गन्धकं पारदञ्चैव भस्मलोहाष्टकं समम् ।
जीरकस्य कषायेण मर्दितं याममात्रकम् ॥ ३८६ ॥
कूपिकायां विनिक्षिप्य वालुकाग्निप्रयोजितम् ।
गाढाग्नौ त्रिदिनञ्चैव स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ ३८७ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं पैत्ये पादयुते स्मृतम् ।
निहन्यात्सर्वपित्तार्तिं योगोऽयं पाणिवद्धकः ॥३८८॥
वै चि , व रा , पित्तरोगे ।

टि०—[illegible] कुमारीस्वरसेन [illegible] विना च [illegible] नाम च वडवाग्निरिति [illegible] । [illegible] कुमारीस्वरस [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] सर्वेण [illegible] ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, आठोंलोहोंकी भस्म समभाग लेकर इकट्ठे मिलाय जीरेके काढेसे १ पहर मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी शीशीमें डालकर बालुका यन्त्रमें तीनदिन खराग्नि देकर पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती हाथपैरोंकी जलन तथा तमाम पित्तके विकारोंमें देनेसे सबको नष्ट करता है ॥९६॥

९७ पाणिवुडो रसः

पूर्वशुद्धो रसो ग्राह्यो भस्मीभूतः पलात्मकः ।
तावन्मानो गन्धकः स्याद्भागावेकत्र मर्दयेत् ॥३८९॥
चित्रकस्य कषायेण भावयेदेकवासरम् ।
दिनत्रयं प्रमृद्नीयान्मुशालीरसतस्तथा ॥ ३९० ॥
दिनानि सप्त सम्मर्द्य पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।
माहिषैः सप्तधा भाव्य काकपित्तैस्तथैव च ॥३९१॥
सौकरैश्च तथा पित्तैः सप्तधा भावयेद्भिषक् ॥
रसस्य षोडशांशेन शृङ्गिकञ्च विषं क्षिपेत् ॥३९२॥
तदभावेन हारिद्रमष्टमांशेन योजयेत् ॥
मेषशृङ्गिकसञ्ज्ञं वा चतुर्थांशेन योजयेत् ॥३९३॥
सक्तुकं स्वर्धमानेन वत्सनाभं समं क्षिपेत् ॥
निष्पिष्य मध्ये निक्षिप्य दद्यात्पश्चाच्च भावनाः ॥३९४॥
मारिचैः सलिलैः सप्त पिप्पलीसलिलैस्तथा ॥
शुण्ठीजीराऽऽर्द्रकरसैश्चित्रकस्य रसैस्तथा ॥३९५॥
एवं विभाव्य तं सूतं पूर्ववत्सूमपानकम् ॥
कृत्वा सम्मर्द्य वटिकामार्द्रकस्य रसैः कुरु ॥ ३९६ ॥
वल्लप्रमाणा वटिका सन्निपाते प्रदीयताम् ॥
आर्द्रकस्याऽनुपानन्तु कुर्वीताऽत्रापि पूर्ववत् ॥३९७॥
यावच्छीतं भवेत्तावदुदकं ढालयेत्तथा ॥
सम्यक् शैत्ये समापन्ने शरीरे रोगिणस्तदा ॥३९८॥
दधिभक्तं भोजयेत्तं खण्डशर्करया युतम् ॥
अतिश्लेष्मोत्तरश्चेत्स्याद्दुग्धभक्तं प्रयोजयेत् ॥३९९॥
शाकार्थमार्द्रकं दद्यात्कुस्तुम्बुरुजपल्लवम् ॥
मातुलुङ्गरसाऽऽप्लावं सैन्धवं तत्र निक्षिपेत् ॥४००॥
वृन्ताकं भर्जितं कृत्वा शाकार्थे सम्प्रयोजयेत् ॥
कर्पूरं चन्दनोशीरं निष्पिष्याङ्गं प्रलेपयेत् ॥ ४०१ ॥
कर्पूरं दापयेच्छश्वद्रोगिणस्तापशान्तये ॥
शीतोदकेन सस्नाप्य सर्वमुष्णं विवर्जयेत् ॥ ४०२ ॥
अयं पाणिवुडो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ॥
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ४०३ ॥

रसालं, ज्वराधिकारे ।

टि०—अस्मात्पूर्ववर्ती प्रतापलङ्केश्वरोऽस्ति तत्र निर्दिष्टक्रियावदत्राऽपि सर्वमनुप्रेयम् ।

भाषा—शुद्धकरके भस्मकियाहुआ पारा, शुद्धगन्धक दोनों सममात्रा मिलाकर चित्रकके काढेसे १, मुसलीके रससे ३ दिन और ७ दिन मर्दनकर भैंसा, कौआ और सूअरके पित्तोंसे ७–७ भावनाए देकर इससे १६ वा हिस्सा शुद्धशृङ्गिकविष मिलावे, उसके अभावमें आठवा हिस्सा हारिद्रविष मिलावे । इसकेभी अभावमें मेषशृङ्गिकविष चतुर्थांश मिलावे । इसके अभावमें सक्तुकविष अर्धभागमें मिलावे । सक्तुकके अभावमें बछनाग समभागमें मिलावे । फिर इन सबको इकट्ठेकर मरिच, पीपल, सोंठ, जीरा, अदरख, चित्रक, इन प्रत्येकके रस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाए देकर वल्कका ऊपरके घडेके भीतर लेप देकर नीचेके घडेमें दशांश बछनागका चूर्ण पानीमें पीसकर लेप लगा दे । फिर दोनोंका मुह बन्दकर चूल्हेपर रख दोपहरकी मन्द आच दे जिसमें कि नीचेका विष जलकर तमाम धुआ रसमें व्याप्त हो जाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर अदरखके रसमें ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली इससे पूर्व कहे हुए लघुप्रतापलङ्केश्वर की तरह काममें ले अथवा अदरखके रससे १–१ गोली देकर मत्थेपर पानीकी धारा दे । जब एकदम शरीर ठंडा पडजाय तब शक्कर डालकर दहीभात भोजन दे । यदि कफका अत्यन्त ज़ोर हो तो दहीके स्थानपर दूध देवे, शाकोंमें अदरख और धनिया देवे । खटाईमें बिजोरा, नमकमें सैन्धव तथा भुनाहुआबेंगन देवे । कपूर, चन्दन और खसका शरीरपर लेप करे । ज्वर उतारनेके लिये बारम्बार कपूर खिलावे । स्नान शीतोदकसे करावे । इसमें उष्णक्रिया सब वर्जितकरे, यह रस देवीशास्त्रके अनुसार बहुत सभालकर बनाया है । इसके प्रयोगसे तमाम सन्निपात नष्ट होते है ॥ ९७ ॥

९८ पाण्डुकथाशेषरसः

तुत्थताम्राऽभ्रलोहानां वस्त्रपूतेषु भस्मसु ।
तुल्यहारिद्रचूर्णेन गोमूत्रं षड्गुणं पचेत् ॥ ४०४ ॥
हंसमण्डूरतुल्यं तद्व्यस्त्रकेण चेद्भजेत् ।
पाण्डुर्हलीमकश्चापि कथामात्रेण शिष्यते ॥ ४०५ ॥

रसायनसार, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तुत्थ, ताम्र, अभ्र, लोह इनप्रत्येककी भस्मको कपडेमें छानकर समभागमें हल्दीका चूर्ण मिलाय ६ गुना गोमूत्र डालकर पकावे । यह हंसमण्डूरके समान । तैयारहोगा । इसको गायकी छाछकेसाथ उचितमात्रामें देनेसे पाण्डु, और हलीमक, इनकी केवल कथामात्र शेषरहजातीहै ॥ ९८ ॥

९९ पाण्डुगजकेसरीरसः

रविभागन्तु मण्डूरं तत्समं लोहभस्मकम् ।
शिलाजतु तदर्धं स्याद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ ४०६ ॥
पञ्चकोलं देवदारु मुस्ता व्योषं फलत्रयम् ।
पृथगर्द्धं विडङ्गञ्च पाकान्ते चूर्णितं क्षिपेत् ॥ ४०७ ॥
पाययेदक्षमात्रन्तु तक्रेणाऽल्पाशनो भवेत् ।
पाण्डुग्रहणिमन्दाग्निशोथार्शांसि हलीमकम् ॥
ऊरुस्तम्भक्रिमिप्लीहगलरोगान्विनाशयेत् ॥ ४०८ ॥

र चि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तारा, मण्डूर, लोहभस्म येसब समभागलेकर सबसे आधा शिलाजतु मिलाकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । जब पाक तैयार होजाय तब पञ्चकोल, देवदारु, नागरमोथा, त्रिकटु, त्रिफला, विडङ्ग ये प्रत्येक आधाआधाभाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला छाछकेसाथ देवे और हल्का भोजनकरे तो पाण्डु, सङ्ग्रहणी, मन्दाग्नि, शोथ, बवासीर, हलीमक, ऊरुस्तम्भ, क्रिमि, प्लीहा, गलरोग, येसब नष्टहोतेहैं ॥ ९९ ॥

१०० पाण्डुदलनरसः

हेमरौप्यरविसूतगन्धका-
　स्तुल्यभागमिलिता विमर्दिताः ।
धातुमाक्षिकयुता द्विलोहका
　देवदारुशिखिसितोयभाविताः ॥ ४०९ ॥
पाचिताः कमठयन्त्रके क्षणं
　पाण्डुरोगदलनः प्रजायते ।
वल्लमात्रमदितो मरिचाऽऽज्यैः
　पिप्पलीमधुयुतः श्वयथुघ्नः ॥ ४१० ॥

र., पाण्डुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र इनकी भस्में, शुद्धपारा, गन्धक और सोनामाखी सब १–१ भाग, लोहभस्म २ भा , लेकर सबको पाँचगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर देवदारु और अपामार्गके क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर सुखाकर आतशी-शीशीमें भरकर एकपहरकी अग्निमें पकानेसे पाण्डुदलनरस तैयारहोगा । इसमेंसे २–३ रत्ती मरिच और घीकेसाथदेनेसे पाण्डु, पीपल और मधुकेसाथ देनेसे शोथ नष्टहोताहै ॥ १०० ॥

१०१ पाण्डुनाशनरसः (प्रथमः)

स्वर्णरौप्यमथ शाणमात्रकं
　शुद्धताम्रमथ तत्समं कुरु ।
रसवरं सकलेन समन्ततः
　पिष्टिकां कुरु विमर्द्य गोलकम् ॥ ४११ ॥
गन्धकेन परिवेष्ट्य गोलकं
　पाचयेच्च मतिमान् भिषक् सदा ।
भूमिमध्यनिहितं नियन्त्रितं
　यामषट्कमधराऽग्निकं ततः ॥ ४१२ ॥
तत्त्वयमन्यमपि निक्षिपेत्पुटं
　पञ्चमत्र परिजारयेद्बुधः ।
निम्बुजेन परिपिष्य चूर्णं
　गन्धचूर्णमथ लोहचूर्णकम् ॥ ४१३ ॥
योजयेच्च पलमानतस्ततः
　लोहपात्रकुहरे पुटत्रयैः ।
पाचयेच्च निरवित्ययह्निना
　पाण्डुनाशनरसस्ततो भवेत् ॥
वल्लमस्य मधुपिप्पलीयुतं
　लेहितं सकलपाण्डुनाशकम् ॥ ४१४ ॥

र.प्र.सु ,र चं , पाण्डुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र इनकी भस्में ३–३ माशे, शुद्धपारा सबकीबराबर मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय सबकी बराबर गन्धकको किसी अम्लद्रवरसमें पीसकर इस-पर लपेटकर १–२ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाकर भूधरयन्त्रमें बन्दकर ६ अथवा ८ पहरकी आंचदे जिसमेंकि गन्धक जलजाय। बादमें निकालकर इसीतरह फिर गन्धकमें लपेटकर पूर्ववत् पकावे । इसतरह गोलेमें पञ्चगुणगन्धक जारणकर शुद्धगन्धक और लोहचूर्ण १–१ पल मिलाकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर साधारण-पुटदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर १ पलगन्धक मिलाकर नीबूके रससे मर्दनकर फिर वही लघुपुटदे । ऐसे ३ पुटदेकर स्वाङ्गशीतल होनेपर घुइरकन्द और चित्रकके रसोंसे गन्धकयुक्त घोटकर दोपुट अलग २ दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे यह समस्त पाण्डुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १०१ ॥

१०२ पाण्डुनाशनरसः (द्वितीयः)

सूक्ष्मं ताम्रदलं विलिप्य बलिना सूतेन गाढन्तथा,
स्थालीमध्यगतं सुसाधितमिदं यामद्वयं वह्निना ।
नागं गन्धकसंयुतञ्च पुटितं चित्राऽऽर्द्रसम्मर्दितं,
चूर्णीकृत्य समं सुशोभनरसं संयोजयेच्छास्त्रवित्॥४१
　शोथपाण्डुकफवातनाशनो
　　रक्तिकैकपरिमाणतस्त्वयम् ।
　सेवयेच्च लघु चान्नभोजनं
　　तैलमम्ललवणाऽऽमिषं विना ॥ ४१६ ॥

र.प्र.सु , पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्धतांबेके बारीकपत्रोंको बराबरके शुद्धपारे साथ नीबूके रसमें मर्दनकरे । जबपारा पत्रोंपर चढ़जाय त पारेकी बराबर गन्धक नीबूके रसमें पीसकर पत्रोंपर लेपकर तह जमावे । सूखनेपर पत्रोंको हंडीमें रख ऊपरसे बराबरके टक फिर गुड़चूनेसे सन्धिबन्दकर ऊपर एकबालिश्त खरेट रा अथवा पिसाहुआनमक भरे २ पहरकी कड़ी आंचदे । स्वा शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसीतरह शुद्धनागको ग चका चूर्णदेकर भस्मकरले फिर बराबरका गन्धक देकरचि अदरखकेसाथ घोटकर छोटी २ टिकिया बनाय गुरु सम्पुटमें बंदकर ३–४ सेर कण्डोंकी आंचदेकर [illegible] होनेपर निकालकर फिरपूर्ववत् घोटकर पुटदे ऐसे [illegible] न हो तबतक करे फिर पूर्वोक्त ताम्र और यह नाग [illegible] कोमिलाकर चित्रक और अदरखके रसमें १–१ रो[illegible] रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती नमककोमिलानुसारदेनेसे [illegible] शोथ, पाण्डु, कफ, वायु इनसबको यह नष्टकरताहै पथ्य भोजनदे । तेल, अम्ल, लवण औरमांस भक्षण नकरे ॥ [illegible]

१०३ पाण्डुपञ्चाननरसः

लोहाऽभ्रकञ्च ताम्रञ्च पलिकानि पृथक् पृथक् । [illegible]
त्रिकटु त्रिफला दन्ती चविका [illegible]

चित्रकञ्च निशे द्वे च त्रिवृता मानमूलकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता देवदारु वचा घनम् ॥ ४१८ ॥
प्रत्येकमेषां कर्षन्तु निक्षिपेत्पाकविद्भिषक् ।
सर्वस्य द्विगुणं देयं शुद्धमण्डूरचूर्णकम् ॥ ४१९ ॥
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा सिद्धशीते प्रदापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय चोष्णतोयाऽनुपानत. ॥ ४२० ॥
हलीमकं शोथपाण्डुमूरुस्तम्भञ्च नाशयेत् ।
रसायनवरश्चैव बलवर्णाऽग्निकारक. ॥
यकृतं प्लीहगुल्मञ्च सर्वरोगहरः परः ॥ ४२१ ॥

भै. र , र च , पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह, अभ्रक, ताम्र इनकीभस्में १—१ पल, निरड त्रिफला, दन्तीमूल, चव्य, कालीजीरी, चित्रकमूल, हल्दी, दारुहल्दी, निशोत, मानकन्द, इन्द्रजव, कुटकी, देवदारु, वच, नागरमोथा येप्रत्येक १—१ तोला लेकर कपडछानचूर्णकर रखछोडे फिर सबसेदूनी मण्डूरभस्ममें अठगुणित गोमूत्र डालकर पकावे, जब घनहोनेलगे तब उतारकर रखदे ठढा होनेपर पूर्वोक्तचूर्ण मिलाकर १ माशेसे २ माशेतककी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १—१ गोली गरमपानीकेसाथ प्रात काल देनेसे यह हलीमक, शोथ, पाण्डु, ऊरुस्तम्भ, बल वर्णाग्निनाश, यकृत्, प्लीह और गुल्म इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करता है ॥ १०३ ॥

१०४ पाण्डुरोगविध्वंसनो रसः

तारं ताम्रसुहेमसूतकसम कृत्वा पृथग्गोलकं,
ताप्य तुत्थककान्तमभ्रकरजो वैक्रान्तमेभिर्युतम् ।
कृत्वा खल्वतले सुमर्दितरसे व्याघ्रीसुवर्णाभवे,
नागिन्या घननादजेन मतिमान् कृत्वा पुनर्गोलकम् ॥
तं पक्व बदरीरसेन सहसा यत्नेन सक्षालये,-
धावद्भस्म भवेद्विपाच्य च ततश्चुल्यास्समुत्तारयेत्,
तद्दद्याद्दशमांशसक्तुकविष गन्धाऽश्मचूर्णान्वित,
शकृष्ट छुकरसेन चेतसयुत तत्पाण्डुरोगापहम् ॥४२३॥

मा. गु. म , रसेन्द्र म , पाण्डुरोगे ।

पुस्तभाषा—रजत, ताम्र, सुवर्ण इनका बारीकचूर्ण और शुद्ध कर्पूर समभागलेकर १—२ दिन मर्दनकर इसकी पिट्ठी बनाले कर्पूर हाथमाखी, तुत्थ, कान्तलोह, अभ्रक, वैक्रान्त, इनप्रत्येक शीतोदके पारेकी बराबर डालकर भरकटया, इटसिट, पान, अय पाँचोलाई इनप्रत्येककेरसोंसे १—१ रोजमर्दनकर गोला देवीशाखाकर लघुपुटमें आचदे । ऐसे चारआचें देनकेबाद रसा कड़ाहीमें रखकर चूल्हेपर चढावे और नीचे बेरकील दि० आचदे गरमहोनेकेबाद बेरके पत्तोंका रस देकर चलाता सर्वमुद्दे इसकी चमकरहित भस्म होजाय तब नीच उतारले । भा तिलहोनेपर इसतमामसे दशवा हिस्सा शुद्धबच्छनाग और समभा मिलाकर रखछोडे । इनमेंसे १—१ रत्ती विजोरा अथवा त्रिलोकेरसके साथ देनेसे यह पाण्डुरोगका नाशकरताहै १०४

१०५ पाण्डुरोगान्तकरसः (लोहरस.)

लोहभस्म द्विपलिकं पलमेकञ्च पारदम् ।
पलार्धं गन्धकस्याऽपि प्रथमेकत्र मर्दयेत् ॥ ४२४ ॥
श्वेताङ्गभावनाः सप्त जम्बीराद्भावनात्रयम् ।
चित्रकस्य द्रवैर्भाव्य सप्तवारं पुनः पुनः ॥ ४२५ ॥
शृङ्गबेररसेनैकमेकं निर्गुण्डिकारसैः ।
शिग्रुमूलरसैर्भाव्यं कासमर्दरसेन च ॥ ४२६ ॥
वातारिमूलतोयेन दशमूलेन च त्रिधा ।
पाण्डुरोगान्तको नाम सर्वशोफनिवारणः ॥ ४२७ ॥
कासं श्वास क्षय हन्ति वह्निमान्द्यं हरेद्ध्रुवम् ।
पिप्पलीमधुना योज्यं पड्गुञ्जाश्चाऽस्य दापयेत् ॥
सर्वरोगनिवृत्त्यर्थमश्विनीदेवभाषितः ॥ ४२८ ॥

रसायनस , पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोहभस्म २ पल, शुद्धपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर तीनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर अर्जुनके रससे ७, जमीरीसे ३, चित्रककेक्वाथसे ७, अदरख, निर्गुण्डी, सहिजनकी जडकीछाल, कसोंजी, एरण्डकी जडकी छाल, इन प्रत्येकके स्वरसोंसे १—१, दशमूलके स्वरसस ३ भावनाए देकर १ या २ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १—१ गोली पीपल और मधुकेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे पाण्डु, शोफ, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १०५ ॥

१०६ पाण्डुसूदनरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलुम् ।
समांशमाज्यसयुक्तां गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ४२९ ॥
पक्वैकां भक्षयेन्नित्य पाण्डुशोथप्रशान्तये ।
शीतलञ्च जलं चाम्लं वर्जयेत्पाण्डुसूदने ॥ ४३० ॥

र, स, र चि, भै र, र सु, र का, ध, नि र, वै चि, र च, भै सा, र कौ, यो म, र को, रसायनस, र सि, र क, र र स, र श, र (मा), पाण्डुरोग । र स, ध, भै र, र सु, र क ल, र र, र का, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने पञ्चाननवटी इति नाम । र र स, र को, एतयो ग्रन्थयो जयपालरस. इति । र क ल, **त्रिनेत्ररस** इति । र श, **पाण्डुहरेति** नाम ।

टि०—पञ्चाननवट्या मधकमधिकतया नियोजितम् । जयपालरसे तु "दैवदाल्यास्तु पञ्चाङ्ग चूर्णं क्षीरैश्च वा जलै । निष्कमात्र पिबेन्नित्य मामा ताण्डुगदापहम् ॥" इत्यधिक पाठ ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा और गुग्गुलु ताम्रभस्म यसब समभाग लेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर थोडा घी डालकर घोटकर १—१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १—१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु और शोथ इनको यह नष्टकरताहै । इसके प्रयोगमें ठंढा पानी और अम्ल छोड़दे ॥ १०६ ॥

१०७ पाण्डुसूदनरसः (द्वितीय)

सूतं तीक्ष्णकमेव गन्धसहितं भागेन संवर्धितं,
पश्चात्खल्वतले विमर्द्य विधिना चूर्णीकृतं गोलकम्।
कूप्यां संविनिवेश्य वै सुमृदुना सलेपितायां पचेत्,
यामद्वादशमात्रक हि सिकतायन्त्रेण वैद्यः सदा॥४३१
प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलीरसं
त्रैफलञ्च गुडचलिकाद्रवम्।
पाचयेच्च मृदुवह्निना दिनं
स्वाङ्गशीतलतमं प्रगृह्य च ॥ ४३२ ॥
त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत्
पाण्डुसूदनरसोऽयमीरितः।
शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिदायको
रोगराजहरणः प्रकीर्तितः ॥ ४३३ ॥

र प्र. सु, र च, र म मा, पाण्डुरोगे। र म मा, लोहसुन्दरेति नाम।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, लोहभस्म २ भा०, शुद्धगन्धक ३ भा० लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर ३–४ कपड़मिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें १२ पहरतक पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर सेमल, त्रिफला, गिलोय इनप्रत्येकके रसमें घोटकर वालुकायन्त्रकी १ दिनआंचदे फिर निकालकर त्रिकटु और अदरखके रसोंसे १–१ भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह पाण्ड रोगको नष्टकरता है ॥ १०७ ॥

१०८ पाण्डुरीरसः

रसगन्धाऽभ्रलोहानि मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः।
तद्गोलकञ्च संरुद्ध्य पुटेदेव पुटैस्त्रिभिः ॥ ४३४ ॥
चतुर्वल्लो रसो भुक्तो हन्ति पाण्डुञ्च कामलाम्।
शोथं हलीमकञ्चैव वह्नेर्वृद्धिं करोति च ॥ ४३५ ॥

भै सा, र (मा), नि र, रसचि, र प्र, र सु, वि सा, रसायनस, र चि, र का, यो म, वै वि, पाण्डुरोगे। योगमहार्णवे कुमारीस्वरसोऽनुपानत्वेन गृहीत।

भाषा—शुद्धपारा ओरगन्धक, अभ्रक, लोहभस्म सब सम भागलेकर घीकुवारके रसमें १–२ रोज मर्दनकर सुखाकर शरा वसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे। इसतरहतीनपुटें देकर रखछोडे। इसमेंसे १२ रतीकीमात्रा समयोचितानुपानके साथ देनेसे पाण्ड, कामला, शोथ हलीमक मन्दाग्नि येसब नष्टहोतेहैं ॥ १०८ ॥

१०९ पानीयभक्तवटी (प्रथमा)

त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफला त्र्यूषणन्तथा।
प्रत्येकन्तु पलं भागं तदर्धौ रसगन्धकौ ॥ ४३६ ॥
लोहाऽभ्रकविडङ्गानां प्रत्येकञ्च पलद्वयम्।
एतत्सकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षण ॥४३७॥
त्रिफलाया कषायेण वटिकां कारयेद्भिषक्।
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्तक्रञ्चापि पिबेदनु ॥ ४३८ ॥
हन्ति शूलं पार्श्वशूलं कुक्षिवस्तिगुदे रुजम्।
श्वासं कासं तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषनाशिनी ॥४३९॥

र स, र चि, ध, व से, र का, र च, र सु, भै र, चि क, र र, र क, अम्लपित्ते। चि क भक्तवारीतिनाम।

भाषा—निशोत, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकटु १–१ पल, शुद्धपारा औरगन्धक आधाआधापल, लोहभस्म, अभ्रभस्म और विडङ्ग २–२ पललेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्ध ककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर त्रिफलाकेकाढेमें १–२ रोज घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली छाछकेसाथ देनेसेउदरशूल पार्श्वशूल, कुक्षि वस्ति और गुदाकी पीडा, श्वास, कास कुष्ठ और ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ १०९ ॥

११० पानीयभक्तवटी (द्वितीया)

कृष्णाऽभ्रलोहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं,
प्रत्येकमेकपलिकं विधिवद्विधाय।
चव्य कटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलाऽनलघण्टकर्णाः ॥ ४४० ॥
मानोल्वकन्दबृहतीत्रिवृता. ससूर्या-
वर्ता पुनर्नविकया सहितास्त्वमीषाम्।
मूलं प्रतिप्रति विशोधितमक्षमेकं,
चूर्णं तदर्धरसगन्धकमेकसस्थम् ॥ ४४१ ॥
कृत्वाऽऽर्द्रकीयरससवलितञ्च भूयः,
सम्पिष्य तस्य वटिका विधिनद्विधेयाः।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां,
दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥ ४४२ ॥
शूलञ्च पारुजनितं सततांऽग्निमान्द्य
सद्यः करोत्युपचितिं चिरणष्टवह्नेः।
कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च वलिं प्रवृद्धां
श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥४४३॥
वार्यन्नमांसदधिकाञ्जिकतक्रमत्स्य-
धृक्षाम्लतैलपरिपक्वभुजोयथेष्टम्।
शृङ्गाटविल्वगुडकञ्चटनालिकेर-
दुग्धानि सर्वविदलानि विवर्जयेत्तु ॥ ४४४ ॥

र स, र र, भै र, र क, र का, र चि, रसायनस ग्रहण्याम् ॥

भाषा—कालाअभ्रक, लोह, मण्डूर इनकीभस्में अं विडङ्गतण्डुल येप्रत्येक ४ तोले लेकर कपड़छानचूर्णकर चव त्रिकटु त्रिफला, भंगरा, दन्तीमूल, नागरमोथा, पीपल, चि कमूल, घण्टकर्ण (हँस अथवा बनतद्दा), मानकन्द, जमीं सूरण वनभाग, निशोत हुरहुर या सूर्यमुखी, पुनर्नवा इ प्रत्येकका चूर्ण १–१ तोला, इनसबसे आधी पारेगन्धक

कज्जली मिलाकर अदरखकेरसमें १–२ रोज घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्त द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य ग्रहणी, बवासीर, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, शूल, परिणामशूल, मन्दाग्नि, कुष्ठ, वलीपलित, श्वास, कास, पाण्डुरोग, इनसबको यह दूरकरतीहै । इसके सेवनके समय जलमें रक्खाहुआ भात (पखाल च), मास, दही, काञ्जी, छाछ, मछली, कोकम, और तैल इनका सेवनकरे । सिंघाड़े, बेल, गुड़, मरसा, नारियल, दूध, सबतरहकीदाल इनका त्यागकरे ॥ ११० ॥

१११ पानीयभक्तवटी (तृतीया)

विडङ्गकृष्णाभ्रकलोहचूर्णं
पलंपल व्योषफलत्रयाऽब्दम् ।
सवह्निमाषाऽष्टकसख्यमेत-
त्पानीयभक्तस्य जलेन पिष्टम् ॥ ४४५ ॥
सार्धं चतुर्माषकमोदकाम्लं
पानीयमस्यग्निबलानुकारि ।
अर्शांसि निर्णाशयति प्रसह्य
क्षिप्रं जरानाशमुपैति चित्रम् ॥ ४४६ ॥

टो , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—विडङ्ग, कृष्णाभ्रक और लोहभस्म १–१ पल, त्रिकुटु ,त्रिफला, नागरमोथा, चित्रकमूल येप्रत्येक ८ माशे लेकर कपड़छान चूर्णकर भातकी काञ्जीसे बारीक पीसकर ४॥ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली भातकी काञ्जीकसाथ लेनेसे अग्निके अत्यन्त बलको करतीहै अर्श और बुढापेको दूर करतीहै ॥ १११ ॥

११२ पानीयभक्तवटी (चतुर्थी)

रसोऽर्धभागिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽभ्रकाः ।
भक्तोदकेन सम्मर्द्य कुर्याद्गुञ्जासमां वटीम् ॥ ४४७ ॥
भक्तोदकानुपानेन सेव्या वह्निप्रदीपिनी ।
वार्यन्नभोजनश्चाऽत्र प्रयोगे सात्म्यमिष्यते ॥ ४४८ ॥

च द , नि र , र चि , रसायनस , यो म , अग्निमान्द्ये । र का , शूलाधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, मिरच और अभ्रक समभाग, इनसबसे आधी पारदभस्म अथवा रससिन्दूर लेकर चावलोंकी काञ्जी अथवा माडमें दोतीनरोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाय सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्तिके अनुसार भातके पानीके साथ देकर पकाकर पानीमें रक्खेहुए भातका पथ्य देनेसे शूल और मन्दाग्नि नष्ट होवेहै ॥ ११२ ॥

११३ पानीयभक्तवटी (पञ्चमी)

त्रिफलात्रिकटुकमुस्तकविडङ्गभल्लातककेशराजानाम्
करिवर्तच्छददन्त्यस्तण्डुलिका पुनर्नवा त्रिवृता ॥४४९॥
चित्रद्विजीरचूर्णान्येकत्र कर्षमितानि कार्याणि ।
गन्धशिलाकर्षार्धं गगनपलं मारितं विधिवत् ॥४५०॥
अम्लशुक्तभक्तपयसि पक्त्वा कुर्यादर्धमाषिकां वटिकाम्
अम्लं वार्यनुपेयं कार्यं तदनु–निर्दिष्टं पथ्यम् ॥४५१॥
कफातिदुष्टग्रहणीनां परमत्र भेषजं दृष्टम् ।
हन्यात्तदामवातं ग्रहणीगदगुल्मशूलरुजः ॥ ४५२ ॥

व से रसायनाधिकारे, र का शूलाधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु नागरमोथा, विडङ्ग, भिलावा, काला भगरा, गजपीपल, पत्रज, दन्तीमूल, कटिवालीचौलाईकी जड, पुनर्नवाकी जड, निशोत, चित्रक, दोनोजीरे ये प्रत्येक १ कर्ष शुद्धगन्धक ८ माशे, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म ४ कर्ष लेकर अच्छीतरह कपड़छान चूर्णकर खट्टासिरका अथवा भातकी काञ्जी सब दवासे अठगुनी डालकर पकावे । जबगोलीबधने लायक होजाय तब आधे आधे माशेकी गोलियें बनाय सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली खट्टी काञ्जीकेसाथ लेनेसे और काञ्जीभातखानेसे कफातिदुष्ट अग्नि प्रदीप्त होताहै । इसके बराबर कफदुष्ट ग्रहणीका । दूसरा औषध नहीं है इसके सेवनसे आमवात, ग्रहणीरोग, गुल्म, शूल और पीडा ये सब दूर होतेहै ॥ ११३ ॥

११४ पानीयभक्तवटी (षष्ठी)

विडङ्गं पिप्पलीमूलं त्रिफला मुनिजं फलम् ।
लोहकं गन्धकं चित्रं पलार्धं चूर्णितं पृथक् ॥ ४५३ ॥
त्र्यूषणं चूर्णितं ग्राह्यं सार्धं द्विपलिकं पृथक् ।
अम्लमारिताऽभ्रपलं कर्षार्धं पारदस्य च ॥ ४५४ ॥
अस्थिसंहारनिर्गुण्डीनागवल्ल्यार्द्रकैः शुभैः ।
रसैश्चतुष्पलैरेव भावयित्वा पृथक्पृथक् ॥ ४५५ ॥
यथाऽग्नि भक्षयेदेनां वटीमनुपिबेज्जलम् ।
वारिभक्तञ्च भुञ्जीत कुर्यात्पूर्वोक्तकान्गुणान् ॥४५६॥

व से , रसायनाधिकारे । र का शूलाधिकार

भाषा—विडङ्ग, पिपलामूल, त्रिफला, हिंगोटनकीगिरी, लोहभस्म, शुद्धगन्धक, चित्रकमूल, ये प्रत्येक २ कर्ष सोंठ, मिर्च, पीपल २॥–२॥ पल, अम्लवर्गसे माराहुआ अभ्रक १ पल, शुद्धपारा ८ माशे, इन प्रत्येकका अलग २ चूर्णकर हडजोड, निर्गुण्डी, नागवला, अदरख इन प्रत्येकका १–१ पल रस डालकर क्रमसे घोटकर १–१ माशकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अथवा यथाग्निबल मात्रा देकर काञ्जी अथवा भक्ताऽधिवासित जल पिलावे । भूखलगनेपर जलाधिवासित भात खिलावे तो आमवात, ग्रहणी, गुल्म, शूल ये सब नष्टहोतेहै ॥ ११४ ॥

११५ पानीयभक्तवटी (सप्तमी)

ग्रन्थिकं त्रिफला चित्रं त्रिवृल्लोहितकुम्भकम् ।
एषां कर्षार्धकं चूर्णं प्रत्येकं तावदुन्मितम् ॥ ४५७ ॥
त्र्यूषणं लवणं पाक्यं विडङ्गं कार्षिकं पृथक् ।
पलं कृष्णाऽभ्रकञ्चैव मन्तर्दग्ध्वा विनि. क्षिपेत् ४५८

शिलायां पेषणं कृत्वा सर्वमेकत्र योजयेत् ।
शिग्रयार्द्रकनिर्गुण्डीनागवल्ल्यस्थिसंहृता ॥ ४५९ ॥
रसैर्द्विपलिकैरेषां भावयित्वाऽक्षसम्मिताम् ।
कृत्वैकां भक्षयेत्प्रातरम्लवारि पिबेदनु ॥ ४६० ॥
वातश्लेष्माऽऽमयान्हन्ति वह्निसादं ज्वरं वमिम् ।
आमवातं जरत्पित्तं वारिभक्तवटी मता ॥ ४६१ ॥

वं. से. रसायनाधिकारे। र. का. शूलाधिकारे।

भाषा—साराहीके फल अथवा पिपलामूल, त्रिफला, चित्रक, निशोत, भैंसागूगल ये प्रत्येक ८ माशे, त्रिकटु ३॥ कर्ष सैंधानमक, सचलनमक, विडङ्ग १–१ कर्ष पुटपाकसेमारा-हुआ काला अभ्रक १ पल, ऐसेकर सबका चूर्णकर इकट्ठे मिलाकर अपामार्ग, अदरख, निर्गुण्डी, नागरवेल, हडजोड इनप्रत्येकका रस २–२ पल लेकर अलग २ भावना देकर साधारणरुद्राक्षके बराबर (१ माशा) की गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल काञ्जीकेसाथ लेनेसे वातश्लेष्मरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, वमन, आमवात, परिणामशूल इनसबको यह तत्कालनष्टकरतीहै । इसमें पथ्य जलाधिवासित भात देना-चाहिये ॥ ११५ ॥

११६ पानीयभक्तवटी (अष्टमी)

शुद्धौ गंधरसौ कर्षौ विडङ्गमरिचाऽऽर्द्रकाः ।
त्रिवृता त्रिफला वह्निः कणा दन्ती पुनर्नवा ॥ ४६२ ॥
स्नुक्क्षीरं मानकुलिशयावाग्ररोगदण्डिकाः ।
प्रत्येकैकं पलं चूर्णमम्लपानीयकं हविः ॥ ४६३॥
आभ्रं चतुष्पल भस्म चैकीकृत्याऽऽर्द्रकाम्बुना ।
त्रिफलापयसा भाव्या कोलार्धमानका वटी ॥४६४॥
भक्तोदकाऽनुपानेन सेव्या वह्निप्रदीपनी ।
अम्लपित्ताऽऽमवातादीन् हन्याद्दुग्धान्नभोजनात् ५६५

व. से. रसायनाऽधिकारे । र. का. शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा १–१ कर्ष विडङ्ग, मिरच, अदरख त्रिफला, निशोत, चित्रकमूल, पीपल दन्तीमूल, पुनर्नवा, थूहरकादूध, मानकद, जगलीसूरण, यवक्षार, कुष्ठ, खाड, चाव लछीकाञ्जी, पुरानाघी, येसब १–१ पल, अभ्रकभस्म ४ पल, लेकर सबको इकट्ठेकर अदरख, त्रिफला और दूध इनकी १–१ भावना देकर ३–३ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली भक्ताधिवासित पानीके साथ देनेसे और दूधभात खानेसे मन्दाग्नि, अम्लपित्त और आमवातप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ११६ ॥

११७ पानीयभक्तवटी (नवमी)

मानकन्दोऽश्वकर्णश्च त्रिवृता मुस्तक तुणिः ।
त्रिकटु त्रिफला भृङ्गमपामार्गश्च दाडिमम् ॥ ४६६ ॥
तुम्बी बृहतिका जातीद्वयञ्च शतपुष्पिका ।
सूर्यावर्तस्तालमूली चूर्णमेषाञ्च कार्षिकम् ॥ ४६७ ॥
कर्षद्वयं विडङ्गानां बलेः पादोनकर्षकम् ।
गुडूच्यभ्रकमण्डूरान् प्रत्येकं वेदकार्षिकान् ॥ ४६८ ॥
सुचूर्णमाभ्रकं वस्त्रपातितं काञ्जिके क्षिपेत् ।
अम्ले पयसि वा पश्चादुद्धरेत्पञ्चमेऽहनि ॥ ४६९ ॥
निर्वापयेच्च मण्डूरं त्रिफलाया रसे शुभे ।
सूर्यावर्तरसे वाऽथ चोभयत्र च वा भिषक् ॥ ४७० ॥
तत्तु सञ्चूर्णितं वस्त्रशोधितं योजयेद्भिषक् ।
मण्डूरेण समं पेष्यं वंशपत्ररसेन तु ॥ ४७१ ॥
ततः पुटानि देयानि वक्ष्यमाणैर्महौषधैः ।
वंशपत्ररसैः पूर्वं पुटयेदातपे भिषक् ॥ ४७२ ॥
मण्डूकपर्णी चित्रश्च दन्तीमूलपुनर्नवे ।
पटोलंस्त्रिवृतावालमस्थिसंहार एव च ॥ ४७३ ॥
आर्द्रकं तालमूली च सूर्यावर्तश्च शिग्निका ।
केशराजो भृङ्गराजः शतमूली च मुस्तकम् ॥ ४७४ ॥
प्रक्षिपेत्पूर्वचूर्णानि हिङ्गु कर्षचतुष्टयम् ।
सप्तधा पेषयेच्चार्द्रं त्रिफलाक्वाथवारिणा ॥ ४७५ ॥
तेनैव गुटिकां कुर्यान्माषैकैकप्रमाणिकाम् ।
वटिकाद्वितयं भक्ष्य मम्लवार्यनुपानतः ॥ ४७६ ॥
वयोऽवस्थामग्निबलं व्याधिं प्रकृतिमेव च ।
दृष्ट्वा मात्रां प्रयुञ्जीत यथाक्षेपं प्रदीयते ॥ ४७७ ॥
ग्रहणीमम्लपित्तञ्च पित्तश्लेष्माणमेव च ।
अर्शांसि वह्निसादश्च प्लीहानमरुचिंस्तथा ।
वटिकेयं निहन्त्याशु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥४७८॥

व. से. रसायनाधिकारे, र. का. शूलाधिकारे।

टि०—अत्र वटिकाविधानम् पेऽभ्रमस्कारस्य समागतत्वाद्भमात्पर जनैर्व्यत्यासिता प्रापित मोऽस्माभिर्यथास्थान निवेशित । रसकामधेनु रचयिता मण्डूरसंस्कारस्य किम्प्रयोजननिति मत्वा तत्पाठमेव तत्याजेति बोध्यम् । बृहतिकाजातीद्वयमिति समस्तमेकपद क्रियते तर्हि बृहतिकाद्वय जातीद्वयमेति प्रत्युपतिष्ठते द्वयशब्दस्य द्वन्द्वान्तपातित्वात् । जातीद्वयमि त्यत्र च जात्याद्वयमिति समासेन जात्या अवयवद्वय ग्राह्यमिति साधा रणोपस्थितावपि प्रकरणबलेन जात्या पत्र फलञ्च ग्रहीतव्यमिति निश्चेतव्यम्

भाषा—मानकन्द, अश्वकर्ण (सखुआकीछाल), निसोत, नागरमोथा, तून, त्रिकटु, त्रिफला, भंगरा, अपामार्ग, अनार दाना, तुम्बी, भटकटैया, वनभाटा, जायफल, जावित्री, सौंफ, हुरहुर, तालमूली इनप्रत्येकका चूर्ण १–१ कर्ष, विडङ्गतण्डुल २ कर्ष, शुद्धगन्धक १२ माशे, गिलोय, शुद्धअभ्रक औरमण्डूर चार ४ कर्ष लेकर गिलोयतक समस्तचीजों का बारीकचूर्णकर रखलेवे । अभ्रकका धान्याभ्रक बनाकर कपड़छानकर खट्टीकाञ्जी अथवा दूधमें डालदे, पांचवें रोजनिकाले । १०० वर्षसे ऊपरके मण्डूरको बहेड़ेके कोयलोंमें तपा तपाकर त्रिफला अथवा हुरहुर या दोनोंके रसमें जबतक शीर्ण न हो तबतक बुझावे । शीर्ण होनेपर चूर्णकर वस्त्रसे छानकर खट्टीकाञ्जीकी यथाशक्तिभावना देकर रखछोड़े । यह मण्डूर उस अभ्रकको बराबर मिलाकर वशपत्रीके रसमें दोतीन रोज मर्दनकर बारीक करले, फिर वंश

पत्री, ब्राह्मी, चित्रक, दन्तीमूल, पुनर्नवा, पटोल, निशोत, वाला, हड़जोड़, अदरख, तालमूली, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, सेम, कालाभगरा, भगरा, शतावर, नागरमोथा इनप्रत्येकके रस अथवा क्वाथोंकी सूर्यके कड़े धूपमें भावना देकर सुखालेवे, यह अभ्रक और मण्डूरकी विशेषशुद्धिहै । इसीतरह शुद्धकरके पूर्वचूर्णमें डालकर ४ तोले भुनाहुआ उत्तम हींग मिलाकर ७ रोजतक त्रिफलाके क्वाथसे धूपमें मर्दनकरावे और आठवेंरोज १–१ माशेकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककरले । इसमेंसे २–२ गोली अथवा, रोगीकी अवस्थासमय, अग्नि, व्याधि और प्रकृति इनका बलाबल देखकर न्यूनाधिक मात्रासे छाछपानीके साथ देवे । कामपड़नेपर अनुपान तथा प्रक्षेपविशेषकी योजनाकरे । इसके सेवनसे ग्रहणी, अम्लपित्त, श्लेष्मपित्त, सबप्रकारके बवासीर, मन्दाग्नि, प्लीहा, अरुचि येसब नष्ट होतेहैं इसमें किसीतरहका सन्देह नहीं ॥ ११७ ॥

११८ पानीयवटिका (प्रथमा)

अनाथनाथो जगदेकनाथः
श्रीलोकनाथः प्रथमः प्रसिद्धः ।
जगाद पानीयवटीं प्रसिद्धां
तामेव वक्ष्यामि गुरुप्रसादात् ॥ ४७९ ॥
जयार्कसुरसांश्चैव निर्गुण्डीं वासक तथा ।
वाट्यालकं करञ्जञ्च सूर्यावर्तकचित्रकौ ॥ ४८० ॥
ब्राह्मीं च सर्षपश्चैव भृङ्गराजं विचूर्णयेत् ।
दन्ती च त्रिवृता चैव तथाऽऽरग्वधपत्रकम् ॥४८१॥
सहदेवाऽमरं भण्डी तथा त्रिपुटभण्डिके ।
शाल्मली पिप्पली चैव द्रोणपुष्पी च वायसी ॥४८२॥
गजाङ्किनी केशराजस्तथा योजनवल्लिका ।
असारनेति विख्यातं धत्तूरकनकास्तथा ॥ ४८३ ॥
त्रैलोक्यविजया चैव तथा श्वेताऽपराजिता ।
प्रत्येक कार्षिकश्चैव स्वरसन्तत्र दापयेत् ॥ ४८४ ॥
स्नुहा दुग्ध चार्कदुग्ध वटदुग्धन्तथैव च ।
प्रत्येकं कार्षिकं क्षीरं पुनर्दत्वा विमर्दयेत् ॥ ४८५ ॥
नूनं सुमर्दितं ज्ञात्वा यदा पिण्डत्वमागतम् ।
द्रव्याण्येतानि सञ्चूर्ण्य वस्त्रपूतानि निक्षिपेत् ॥४८६॥
दुग्धहीरं चातिविष विषतिन्दुकमभ्रकम् ।
शोधितं पारदश्चैव गन्धकं विषमाह्वयम् ॥ ४८७ ॥
माक्षिक शोधितश्चैव प्रत्येकं माषकद्वयम् ।
नूनं सुमर्दित दत्त्वा चाङ्गेरीस्वरसेन च ॥ ४८८ ॥
गुटिकां सुदृढाश्चैव तिलमात्रां प्रकल्पयेत् ।
लङ्घनैर्वालुकास्वेदैः क्लान्तोऽति दीनदर्शनः ॥४८९॥
प्रपूज्य करुणाधानं प्रणम्य नाथसर्पणम् ।
शरावे वारिणा घृष्ट्वा विंशत्येकां पिबेन्नरः ॥ ४९० ॥
पाययित्वौषध पश्चाद्वस्त्रेणाच्छादयेन्नरम् ।
दसदाह समाज्ञाय दद्याद्वारि सुशीतलम् ॥ ४९१ ॥
शरावेण मितं वारि पातव्यञ्च पुनः पुनः ।
सन्निपातज्वरश्चैव दाहं हन्ति सुदुस्तरम् ॥ ४९२ ॥
कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां प्रमेहञ्चाश्मरीन्तथा ।
कफपित्तकृतश्चैव दाहं हन्ति न संशयः ॥ ४९३ ॥
मूत्रवेगविबन्धे तु पातव्यं क्षीरसंयुतम् ।
तृणपञ्चकृतं क्वाथ पातव्यञ्च पुनः पुनः ॥ ४९४ ॥
पानीयवटिका ह्येषा लोकनाथेन निर्मिता ।
लोकानामुपकाराय वटिका कथिता पुरा ॥ ४९५ ॥

र र ,र सु ,भै र , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—अय योगो लोकनाथनाम्ना गोरक्षनाथसम्प्रदायवर्तिना केनचि त्साधुना कस्मैचित्कृपालवे स्वशिष्याय निर्दिष्टस्तेन यथाकथञ्चित्संस्कृते निबद्धोऽतएवाऽस्मिन् पद्यग्रथनायां संस्कृतनामनियोजने च शैथिल्य लक्ष्य तमनएव विषमाह्वयमित्यादिना यवनवैद्यकीयनामान्यपि निवेशितानि तानि च द्रष्टार भ्रमगह्वरे निवेशयन्ति तत एव टीकाकारैर्नानाऽऽकारतया पाठा प्रकल्पिता यथा असारुनेतिपदस्थानेऽर्थाऽज्ञानात्कैश्चिदासारणेति पाठ प्रकल्प्य असनवृक्षो निरधारि । अन्यैर्नवपाल्वीजानि नियोजितानि । केषुचित्पु स्तकेषु असारमेति पाठो दृश्यते तत्सर्वमप्यभिप्रायाऽज्ञानमूलकम् ।

भाषा—अरणी, आक, तुलसी, सभालू, अड़ूसा, नाग बला, करञ्ज, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, चित्रक, ब्राह्मी, पीली सरसों, भगरा ये सब १–१ कर्षलेकर बारीककपडछान चूर्ण करके दन्तीमूल, सफेदनिसोत, अमलतास, पत्रज, सहदेवी, अमरकन्द, सिरस, गोखरू, वनभाटा, सेंमलकामुसला, पीपल, गूमा, मकोय, गुञ्जा, कालाभंगरा, मजीठ, असारुनसफेद, धतूरा, कसोंदी, भांग, सफेद अपराजिता, इन प्रत्येकका १–१ कर्ष स्वरस पूर्वचूर्णमें मिलाकर मर्दनकरे, फिर सेहुण्ड, आक और बड़का दूध १–१ कर्ष डालकर यहांतकमर्दन करेकि उसका गोला बनजाय फिर हीरेकीभस्म अथवा अकीकभस्म, अतीस, शुद्धकुचिला, अभ्रकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, विदमा, (यूनानी) शुद्धसोनामाखी, येप्रत्येक २–२ माशे डालकर अमलोनियाकेरससे १–२ रोज मर्दनकर तिलप्रमाण गोलियें बनाकर छायाशुष्क कर रखछोडे । असाध्यरोगग्रस्त आदमीको लङ्घन तथा बालुकास्वेदोंसे शुद्धकर शङ्करकीपूजाकर सर्पणनाथको नमस्कारकर मिट्टीके कोरे शरावमें पानीसे २१ गोली घिसकर रोगीको पिलावे और बन्द मकानमें खटियापर सुलाकर कप- ड़ेसेढकदे । जिसवक्त शरीरमें दाहमालूमहो उससमय ठंढाजल उसी मिट्टीके शरावको भरकर वारवार पिलावे । इसके सेवनसे सन्निपात ज्वर, दुस्तरदाह, कास, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्रमेह, पथरी और कफपित्तजनित दाह नष्टहोताहै । मूत्राघातमें इनगोलियों- को । दूधकेसाथ देवे और तृणपञ्चमूलका क्वाथ वारवार पिलावे । इसप्रयोगका पानीयवटी नामहै और लोगोंके उपकारके- लिये लोकनाथ सिद्धने बनाईहै ॥ ११८ ॥

११९ पानीयवटिका (द्वितीया)

रसमाषकचत्वारि सम्यक् शुद्धानि कारयेत् ।
राजिकार्द्रकपानीयैर्मर्दयेद्बहुशो भिषक् ॥ ४९६ ॥

स्वर्णधत्तूरजैर्द्राग्वैर्वृद्धदारुद्रवैस्तथा।
कन्यकोत्थद्रवैस्तद्वद्रसशोधनमाचरेत् ॥ ४९७ ॥
गन्धकं रसतुल्यन्तु प्रक्षाल्य तण्डुलाम्बुना।
कृत्वा तैलसमं दर्व्यां निर्वाप्य चित्रकद्रवे ॥ ४९८ ॥
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा लोहचूर्णस्य माषकम्।
सुवर्णमाक्षिकमपि तत्र लोहसमं कुरु ॥ ४९९ ॥
घर्मयन्त्रादिसंयोगात्ताम्रपत्रं मृतिं व्रजेत्।
एकीकृत्य तु तत्सर्वं ततः प्रस्तरभाजने ॥ ५०० ॥
मर्दयेत्ताम्रदण्डेन दत्त्वा चैषां निजं द्रवम्।
प्रथमे केशराजश्च द्वितीये ग्रीष्मसुन्दरः ॥ ५०१ ॥
तृतीये भृङ्गराजश्च चतुर्थे भेकपर्णिका।
पञ्चमे चन्द्रसूरश्च षष्ठे च रसपूतिका ॥ ५०२ ॥
सप्तमे पारिभद्रः स्यादष्टमे रक्तचित्रकः।
शकाशनश्च नवमे दशमे काकमाचिका ॥ ५०३ ॥
एकादशे तथा नीली द्वादशे हस्तिशुण्डिका।
अमीषामौषधीनान्तु प्रत्येकन्तु पलं द्रवम् ॥ ५०४ ॥
मर्दयेत्तु प्रयत्नेन द्वादशाहैस्तु साधकः।
ततः पारदमानन्तु दत्त्वा त्रिकटुचूर्णकम् ॥ ५०५ ॥
वटिकां राजिकातुल्यां छायाशुष्कां समाचरेत्।
ततः शम्बूकजे पात्रे कर्त्तव्या वटिका त्वियम् ॥५०६॥
शरावे शङ्खपात्रे वा कृत्वा सलिलगालितम्।
अत्यन्तदोषदुष्टाय ज्ञानशून्याय रोगिणे ॥ ५०७ ॥
ऊर्ध्वयोनिं समभ्यर्च्य प्रदद्याद्वटिकाद्वयम्।
ढक्कयेत्तं ततः पश्चाद्गुरुस्थूलपटादिभिः ॥ ५०८ ॥
मलमूत्रागमात्तस्य यः स साध्यो भवति द्रुतम्।
दध्यन्नन्तु ततो दद्यात्पिबेद्वारि यथेच्छिकम् ॥ ५०९ ॥
दद्याद्वातहरं तैलमभ्यङ्गाय सदैव हि।
चिरज्वरे पिबेद्वारि पञ्चमूलीप्रसाधितम् ॥ ५१० ॥
ग्रहण्यां रक्तपाते च पिबेदतिविषां गदी।
पिबेत्पर्पटजं वारि घोरे कम्पज्वरे तथा ॥ ५११ ॥
तथा ज्वराऽतिसारे च जीरकस्य जलं पिबेत्।
मन्दाग्नौ कामलायाञ्च सङ्ग्रहग्रहणीगदे ॥
कासे श्वासे सदा देया पानीयवटिका शुभा ॥ ५१२ ॥

भै र, र सु, ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्धकिये हुए ४ माशे पारेको राई और अदरखके स्वरससे कईवार मर्दनकरके फिर कमोदी, धतूरा, विधारा, घीकु आर इनके रसोंमें अलग २ मर्दनकरके ऊर्ध्वपातनसे पारेको साफ करके रखले। पारेकेबराबर शुद्धगन्धकको चावलोंकेधोवनसे धोकर धूपमें सुखाकर लोहकीकडछीमें अग्निके संयोगसे तेलके समान द्रव बनाकर चित्रकके पञ्चाङ्गके अथवा सर्वाङ्गकाथमें बुझादे, फिर दोनोंको ४ पहरमर्दनकर नीलवर्णकज्जली बनाकर १ माशालोहका वारीकचूर्ण और स्वर्णमाक्षिकमिलादे। इसमें नीबूका स्वरस अथवा कुमारीका रस मिलाकर लेपके योग्य बनाले, फिर कटे कटेथी शुद्धताम्रके ४ माशे पत्र पर लेपकरके एरण्डपत्रमें लपेट ताम्बेके पात्रमें रखकर कड़ीधूपमें रखदे। चारपहरकेबाद धूपमेंसे उठाकर कच्चासूत लपेटकर धान्यराशिमें रखदे। तीनरोज़केबाद निकालकर पत्थरकी खरलमें डालकर ताम्बेकेडंडेसे सबको मर्दनकरडाले, यह ताम्बेकेपत्रकीभस्म होजायगी। इसमें कालेभंगरेका रस डालकर एकरोजमर्दनकरे। दूसरेदिन हरमल, तीसरेदिन भंगरा, चौथेदिनब्राह्मी, पांचवेंदिन चंमुर, छठेदिन चिरपोटन, सातवें दिन करहद, आठवेंदिन लालचित्रक, नवेंदिन गाषा, दसवेंदिन मकोय, ग्यारहवेंदिन नील, वारहवेंदिन हाथीशुण्डी इन प्रत्येक औषधोंका रसडालकर मर्दनकरे। प्रत्येकदिन पूर्वोक्तक्रमसे प्रत्येक औषधिकारस १-१ पलसेकम न सुखावे, ऐसे १२ दिनमें इसेमर्दनकर तेरहवेंदिन ४ माशे त्रिकटुका वारीकचूर्ण मिलाकर राईके बराबर गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर कावकी शीशीमें रखछोड़े। ज्वरकी त्रिदोषप्रकोपाऽवस्थामें जब संहारहितरोगीहो उससमय सीपला, शङ्ख अथवा मिट्टीके कोरेपात्रमें २ गोली पानीकेसाथ घिसकर ब्रह्मा और महादेवकी पूजाकर रोगीको पिलाकर रजाईवगैरह गर्मकपड़ा ओढ़ादे। इसके देनेके वाद दस्त और पेशाव होजावें तो रोगीको साध्य समझना अन्यथा असाध्य, है. मलमूत्रत्यागकेबाद ज्वररोगीको अत्यन्त भूखलगे तो दहीभात खिलाकर गरम या ठंढा जैसी रोगीकी इच्छाहो वैसापानी पिलाना। कोईभी वातहर तैल अभ्यङ्गकरनेको देना। ज्वर अगर बहुतदिनका होतो बृहत्पञ्चमूलमें पकाया हुआ पानी देना। ग्रहणीमें जिससमय रक्तयुक्तदस्त होतेहों उससमय अतीसका काढा देना। अत्यन्त कम्पज्वरमें पित्तपापड़ेका क्वाथ और ज्वराऽतिसारमें जीरेका पानी देना इसीतरह मन्दाग्नि, कामला, सङ्ग्रहग्रहणी, कास, श्वास इत्यादि रोगोंमें उचिताऽनुपानकेसाथ इस गोलीका प्रयोग करना ॥ ११९ ॥

१२० पापरोगान्तको रसः

अथ शुद्धस्य सूतस्य मृतस्य मूर्च्छितस्य च।
धवला पिप्पली धात्री रुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ॥ ५१३ ॥
पापरोगान्तको योगः पृथिव्यामेव दुर्लभः।
वल्लश्चाऽस्य प्रयोक्तव्यो वासुचीक्वाथसंयुतः ॥५१४॥

र चि, रसायनसं., र.र, र चं, र सि, र को, यो. म, र का, र.स, र सु, मसूरिकायाम्। र का. पापाङ्कयोगः। र.स, र सु, एतयोर्मन्थयो दुर्लभरस इति नाम स्थापितम्। तथा ■ धवलापिप्पलीस्थाने द्विचला पिप्पलीतिपाठः।

टि०—योगमहार्णवे मनुजनविंशे मसूर्यां मूर्च्छितरसस्य योग इत्येतस्मिन् पाठेहि-"त्रिवासमेनैव मूर्च्छितः पारदोरस। द्विजोपभीतो पीनो हन्ति मसूरिकस्तु ॥ मसूरी सर्वा संप्रमर्दितं सरित जम् ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धकियेहुएपारेकीभस्मकेग्रास पत्र, अथवा धावल्कवडआ, पीपल, आमले, रुद्राक्ष, घी और शहदका योगकरके उचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे मसूरिकारोगका नाशहोताहै। अगर पारेकी भस्म न मिलेतो रसशिन्दूरप्रभृतिमूर्च्छितपारेका

उपयोगकरना । इसकी ३ रत्तीकीमात्रा वाकुचीके काढेकेसाथ देना । घी और मधुको छोडकर तमामका प्रमाण समभाग लेना उसकी तीनरत्तीकीमात्रा समझनी चाहिये । घृत तथा मधु योग्यताप्रमाणदे, जहां रससिन्दूरप्रभृतिकाभी अभावहो वहां कज्जली देसकेहै ॥ १२० ॥

१२१ पारङ्गयादि रसायनम् (गन्धकरसायनम्)

निशरपलानि वृद्धदारु वातारेस्तन्मितानि च
हिंस्राद्वयं चित्रमूलमिङ्गुदीमूलकन्तथा ॥ ५१५ ॥
मरीचकाण्डं मूलञ्च शरपुङ्खी च पूतिका ।
अश्वगन्धा च वरुणः प्रत्येकं पलषोडशम् ॥ ५१६ ॥
तदष्टगुणकं शुद्धं जलमादाय निक्षिपेत् ।
शनैर्मृद्वग्निना सम्यक् पाचयेत्सप्तरात्रकम् ॥ ५१७ ॥
चतुर्भागाऽवशेषे तु कषाये सुपरिस्रुते ।
पुराणस्य गुडस्याऽपि तुलां कल्कानि दापयेत् ॥५१८॥
कषायद्रव्यमूलानि चूर्णीकृत्य प्रयत्नतः ।
प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं त्रिशद्भल्लातजानि च ॥ ५१९ ॥
वृद्धदारुपलञ्चैव वातारेश्च चतुष्पलम् ।
कट्त्रयञ्च खदिर रास्नाकुष्ठविडङ्गकम् ॥ ५२० ॥
दीप्यद्वयं जातिपत्रं तत्फलं त्रुटिकेसरम् ।
मार्ङ्गीटङ्कणमांसीनां प्रत्येकं पलमात्रकम् ॥ ५२१ ॥
गन्धं चाऽष्टपलञ्चैव चूर्णीकृत्य यथाविधि ।
योजयेद्रससिन्दूरमष्टनिष्कप्रमाणकम् ॥ ५२२ ॥
क्षौद्रं तुलार्द्धकञ्चैव तदर्धं घृतमेव च ।
लेह्यं पाकं तथा कृत्वा सुपक्वमपि कारयेत् ॥ ५२३ ॥
विष्वक्सेनं समभ्यर्च्य धन्वन्तरिमथाऽर्चयेत् ।
देवब्राह्मणपूजां च वैद्यभागं प्रदापयेत् ॥ ५२४ ॥
प्रत्यहं प्रातरुत्थाय भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ।
तदर्धं चैव सायाह्ने सेवयेन्मण्डलं क्रमात् ॥५२५॥
मेहव्रणांश्च सर्वांश्च मेहरोगांश्च सर्वशः ।
भगन्दरञ्चपिडिकां कासश्वासाऽरुचीस्तथा ॥५२६॥
सर्ववातान्हरेच्चाशु सर्वव्रणनिवारकम् ।
पारङ्गयादिकनामेदमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥ ५२७ ॥

वै चि,

भाषा—विधारेकीजड ३० पल, एरण्डकीजड ३० पल, काला और सफेदहैंस, चित्रक और हिङ्गोटकीजड, मिर्चेकी शाखा और जड, शरपुङ्खकी जड, पुडकरञ्जीकी छाल अथवा गन्धप्रसार, असगन्ध, वरुणकी छाल ये प्रत्येक १६ पललेकर सबको जोकुटकर अष्टगुणितपानीमें बहुतमन्दआंचसे सातदिनरात पकावे और चतुर्थांश बाकीरहनेपर छानकर ४०० कर्ष पुराना गुड डालदे । जिनद्रव्योंका काढा बनायाहै उनकीजड २–२ पल, मिलावे ३० नग विधारेकीजड १ पल एरंडकीजड ४ पल त्रिकटु, खैरसार, रास्ना, कुठ, विडङ्ग, देशी और खुरासानी अजवाइन, जावित्री, जायफल, इलायची, केसर, भारङ्गी, सुहागा, जटामासी येप्रत्येक १–१ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, इनसबका कपडछानचूर्णकर उसमें डाले । रससिन्दूर ८ टङ्क (३२ माशे), मधु २०० कर्ष, घी १०० कर्ष, इनसबको इकट्ठा चढाकर मन्दआँचसे पकावे । जब लेह जैसा तैयारहोजाय तब विश्वक्सेन तथा धन्वन्तरि और देव तथा ब्राह्मणोंकी पूजाकर वैद्यका भाग (११ वा अंश) देवे । दररोज प्रात काल १–१ तोलालेवे और शामको ६ माशेलेवे । इसतरह १ मण्डल सेवनकरनेसे प्रमेहपिडिका समस्तमेहरोग, भगन्दर, कास, श्वास, अरुचि, समस्तवात समस्तव्रण येसब नष्ट होतेहैं ॥ १२१ ॥

१२२ पारदद्रुतिः

यूनो नरस्य केशांस्तु विमृद्योपलया धिया ।
निर्मलीकृत्य नीरेण सूक्ष्मसूक्ष्माऽतिखण्डकान् ५२८
कृत्वा शरावमध्ये च स्थापयेदेकरात्रकम् ।
नीहारे सम्पुटीकृत्य मृदाऽधश्छिद्रसंयुतम् ॥ ५२९ ॥
आकाशयन्त्रके वह्नि कुक्कुटेन पुटेन [illegible] ।
दत्त्वा तच्छिद्रतो बिन्दूंश्श्वेतपीतसुलोहितान् ॥५३०॥
गृह्णीयाच्च च तान् कृष्णान् केशतैलमितीरितम् ।
तत्तैलमर्धसेहुण्डक्षीरेण परिमृद्य च ॥ ५३१ ॥
तद्यन्त्रेणैव सङ्गृह्य तुर्यांशं नवसादरम् ।
सम्मर्द्य तेन संलिप्य काचसम्पुटकान्तरम् ॥ ५३२ ॥
पारदञ्च विमृद्नीयाद्यामद्वितयकावधि ।
रुद्ध्वा सम्पुटके तस्मिन्स्थापयेद्गर्भगर्तके ॥ ५३३ ॥
सद्यो युवाश्वमलके संरुद्ध्य दिवसत्रयम् ।
सञ्चित्याऽजशकृत्सप्त दिनान्येवं स्थितिर्भवेत् ॥५३४॥
अष्टमे दिवसे तत्तु गृह्णीयाद्द्विजवरः ।
स्वच्छा सलिलरूपा सा पारदस्य द्रुतिर्भवेत् ॥५३५॥
गुञ्जातुरीयभागेन यथारोगाऽनुपानत ।
सर्वरोगहरी ख्याता शूलगुल्मादिकान् गदान् ॥
क्षिप्रं विनाशयत्येव शङ्करोक्तमितीरितम् ॥ ५३६ ॥

र का. गुल्माधिकारे ।

भाषा—जवान आदमीके काले केशोंको (यदि गर्भमेंसे आये हुए मिलसकें तो अत्युत्तमहैं) शक्करकेसाथ एकदो घण्टे मसलकर स्वच्छपानीसे धोकर साफ करले जिसमेंकि मलका अंश न रहजाय, फिर इन्हें कपडेसे पोंछकर साफकरके कैंचीसे जहांतक होसके बारीक काटडाले । तदनन्तर मजबूत तथाकोरे दो शराव लेकर एकमें ३–४ बारीक छिद्रकरके उसमें उनकेशोंको रखकर ओसमें एकरातभर रखदे, फिर दूसरा शराव ढककर दोनोंका कपडमिट्टीसे छिद्रबन्दकरदे, फिर आकाशयन्त्रमें (चूल्हेपर छिद्रसहितठीकरेको रखकर छिद्रपर शरावको रखकर मिट्टीसे दोनोंका अन्तर बन्दकरदे जिसमें कि नीचे राखवगैरह न जाय फिर मुद्राको सुखाले यही आकाशयन्त्रहै) कुक्कुट पुट देवे । नीचेके छिद्रोंमेंसे सफद, पीले और लालरङ्गके क्रमसे बिन्दु गिरेंगे इनसबको लेलेवे जब काले बिन्दु आने लगें तब न

ले यह केश तैल तैयार हुआ। इसकेशतैलसे आधा सेहुण्डका दूध डालकर मर्दनकरे जब गोला बनजाय तब पूर्वोक्त यन्त्रसे इसकातैल निकाले, फिर उसतैलमें चतुर्थांश नवसादर मिला कर मर्दनकरले यह एकतरहका मरहमके सदृश तैयारहोजायगा इसको काचकी खरलमें लेपकरदे और लेपकीबराबर पारा डाल कर दोपहरतक काचकी मूसलीसे मर्दनकरे। फिर उसखरलका सम्पुट बनाय कमरभर खड्डा खोदकर आधेमें जवान घोडोंकी ताजी लीद भरदे। उसपर इससम्पुटको रखकर ऊपरसे दूसरी लीद भरदे चौथेरोज लीद निकालदे और बकरोंकी ताजी मींगणी पूर्ववत् भरदे। यदि बकरोंकी इतनी ताजी मींगणी मिलनेका सयोग न हो तो पूर्वगर्तमे आधा या चौथाई गर्तकरे और सातदिनतक रहने दे। आठवेंरोज़ बहुत धीरजसे शरावसम्पुटको निकालकर मुद्राको खोलदे, उसखरलमें पानीके सदृश स्वच्छ द्रुति मिलेगी इसको काचकी शीशीमें रखछोडे। इसमेंसे एकरत्तीका चतुर्थभाग यथोचित रोगानुपानकेसाथ देनेसे शूल, गुल्मप्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ १२२ ॥

१२३ पारदवटी (प्रथमा द्वितीया च)

पारावताण्डमध्ये सूतं टङ्कद्वयं क्षिपेद्युक्त्या।
तैरेव तावदण्डं सेव्यं यावत्तु शावकोत्पत्तिः ॥५३७॥
तं सूतं गुटिकाभं सम्यग्योगेषु योजयेन्मतिमान्।
अथवाऽसितधत्तूरशाखास्कन्धे निवेशयेद्विधिना ॥
सूतं यावन्मासं भवति च गुटिकाप्रभो नियतम् ५३८
यो. म, रसायने।

भाषा—कबूतरी जिसवक्त अण्डा दे उसीसमय उसके परोक्ष एक अण्डेमें सुईसे छिद्रकरके ८ मासे पारा भरदेवे परन्तु यह ध्यान रक्खे कि यह बात कबूतरीको मालूम न हो नहींतो वह उसको सेवेगी नहीं, क्रिया व्यर्थ जायगी। जब औरोंमेंसे फोडकरबह बच्चेरा निकालले तब वहांपर पारेकी बनी हुई गोली मिलेगी। अथवा कालेधतूरेकी शाखामें पारेको भर कर छोडदे ऊपरसे गोबर अथवा आटेसे छिद्रको बन्दकरदे और उसपर भिगोकर कपड़ा बांधदे तो एकमहीनेबाद इसकी गोली बंध जायगी। इन गोलियोंको दूधमें उबालकर पीनेसे शुक्रकी वृद्धि होतीहै कमरमें बांधनेसे स्वप्नदोष और प्रमेह निवृत्त होताहै और बद्धपारदका योग जहां आयाहो वहांपर इनसे कामले सकेहैं ॥ १२३ ॥

१२४ पारदवटी (तृतीया)

रसं खल्वे विनिक्षिप्य धुत्तूररसमर्दितम्।
रजतेन विमर्द्याऽथ गुटिकाः कारयेद्बुध. ॥ ५३९ ॥
धुत्तूरभृङ्गराजोत्थरसेन वचया सह।
पाचयेद्दोलिकायन्त्रे गुटिकां वस्त्रसञ्जिताम् ॥५४०॥
वदने धारयेत्तेन वीर्यस्तम्भनमुत्तमम्।
वशीकरञ्च लोकानां स्त्रीणाञ्चाऽपि शतं भजेत् ॥५४१॥
र क यो, रसायने।

भाषा—शुद्धपारेमें चांदीकीभस्म अथवा रेता इतना मिलवे कि पारा मूर्च्छित होजाय फिर धतूरेके रसकेसाथ मर्दन करे जब मक्खनके सदृश होजाय तब इसकीगोलिया बनाकर सुखाले। फिर धतूरा और भगरेका रस समभाग मिलाकर अष्टमांश बचका चूर्ण मिलाकर गोलियोंको अलग २ कपड़ेमें बांधकर दोलायन्त्रसे स्वेदन करनेसे गोली कड़ी होजायगी। इनको मुंहमें रखनेसे वीर्यस्तम्भन और वशीकरण होताहै ॥ १२४ ॥

१२५ पारदादि चूर्णम्

रसबलिघनसारकोलमज्जाऽ-
मरकुसुमाम्बुधरः प्रियङ्गुजञ्च।
मलयजमगधात्वगिन्द्रयवं
दलितमिदं परिभाव्य चन्दनाद्भिः ॥
मधुमरिचयुतं रजोऽस्य माषं
जयति वमिं प्रबलां विलिह्य मर्त्यः ॥ ५४२ ॥
र कौ, ट यो. त, रसायनसं, र सु, नि र, छर्दिरोगे।

टि०—अत्र योगे घनोऽभ्रकम्, सारो लोहम्। केचित्तु घनसारशब्देन कर्पूरं नियोजयन्ति, परन्तु स लोहाऽभ्रकयोगान्न्यूनबलो योगो भवतीति बोध्यम्।

भाषा—पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली, अभ्रक और लोह- भस्म, बेरकी मज्जा, लौंग, नागरमोथा, फूलप्रियङ्गु (अभावमें मालकांगनी), सफेदचन्दन पीपल, तज, इन्द्रयव, येसब सम भाग लेकर बारीकचूर्णकर सफेदचन्दनके काढेकी ६—७ भावनायें देकर सुखाकर रखछोडे। इसमेंसे १ मासे चूर्णमें ७ या २१ मरिच मिलाकर मधुकेसाथ चटानेसे असाध्य भी वमन निवृत्त होतीहै ॥ १२५ ॥

१२६ पारदादिधूपः

रसं वङ्गञ्च खदिरं हरीतक्याश्च भस्मकम्।
तरुणीरुद्दलीभस्म पूगस्य फलजन्तथा ॥ ५४३ ॥
एकतोलकमानं स्याद्धिङ्गुल हरितालकम्।
गन्धकं तुल्यकञ्चाऽपि पद्मकं सरलन्तथा ॥ ५४४ ॥
द्वे चन्दने देवदारु वकमं काष्ठमेव च।
तथा केशरकाष्ठञ्च माषमानं प्रकल्पयेत् ॥ ५४५ ॥
एकीकृत्य विचूर्ण्याऽथ सर्वं चाङ्गेरिकाद्रवैः।
तुलसीपत्रजरसैः पुरातनगुडेन च ॥ ५४६ ॥
घृतेन सह षट् कार्या वर्तिका मन्त्ररक्षिताः।
वेदनायामुत्कटायां चतुर्भिः शुद्धवस्त्रकैः ॥ ५४७ ॥
वेष्टयित्वा च निर्धूमाऽङ्गारोपरि प्रदापयेत्।
तं धूमं प्रतिगृह्णीयान्नरो वस्त्राद्विवेष्टित ॥ ५४८ ॥
मुखनासाकर्णवर्हिनि श्वासस्य निरोधनात्।
स्वेदे जातेऽस्य नैरुज्यं सायं प्रातर्दिनत्रयम् ॥ ५४९ ॥
मासमानन्तु पथ्याशी शाकाम्लदधिवर्जनम्।
गुर्वन्नपायसादीनि चाऽपथ्यानि विवर्जयेत् ॥ ५५० ॥
दिनत्रये व्यतीते तु स्नानमुष्णाम्बुना चरेत्।
एवं धूमे कृते शान्ति मेणाश्च पिडिका अपि ५५१

तथा शोथश्चामवातः खञ्जता पङ्गुताऽपि च।
कुष्ठोपदंशशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकीर्तितः॥ ५५२॥

ध., भै. र, उपदंशे।

भाषा—पारा, वङ्गभस्म, कत्था, हर्रेकीभस्म, केलेके कोमलपत्तोंकीभस्म, सुपारीकीभस्म, येसब १–१ तोला; हिङ्गुल, हरिताल, गन्धक, तुत्थ, पद्मकाठ, सरल, दोनोंचन्दन देवदारु, वङ्कमकोलकड़ी, केशरकाष्ठ (यु हळदरवो) की जड़ येसब १–१ माशा लेकर सबका बारीक चूर्णकर अमलोनिया, तुलसीकेपत्ते, पुरानागुड़ और घृत, ये अन्दाज़से डालकर ६ गोलियें बनावे। जिससमय उपदंशीको किसीतरह कल न पड़तीहो उससमय चारतह सफेद कपड़ेसे ढककर निर्धूम अङ्गारोंपर एक गोली रखकर धूंआं देवे और तमामअङ्गमें धुंए को लगने देवे। धुंआ लेते समय मुंह, नाक, कान सबके ढकेरहनेसे और श्वासके बन्दकरनेसे पसीनाहोगा उसीरास्तेसे शरीरका तमामविष बाहरनिकल जायगा इसतरह सुबहशामलेवे। गेहूं, चना, घी और शक्कर इनको चाहे जिसतरह खाय। इनके अतिरिक्त कोई चीज़ न खाय और यह पथ्य एकमहीने तक चलावे। जबतक धुंआले तबतक स्नान न करे, चौथेदिन गरमपानीसे स्नानकरे। केवल धुंएके ग्रहणसे घाव, फुंसी, शोथ, आमवात, खञ्जता, पङ्गुता, कुष्ठ और उपदंश येसब शान्त होतेहैं॥ १२६॥

१२७ पारदादि मलहरम् (प्रथमम्)

रसगन्धकयोश्चूर्णं तत्समं मर्दशृङ्गकम्।
सर्वतुल्यन्तु कम्पिल्लं किञ्चित्तुत्थसमन्वितम्॥५५३॥
सर्वं सम्मेलयेद्दत्वा घृतं सर्वचतुर्गुणम्।
पिचुप्लोतं प्रदातव्यं दुष्टव्रणविशोधनम्॥ ५५४॥
नाडीव्रणहरश्चैव सर्वव्रणनिषूदनम्।
ये व्रणा न प्रशाम्यन्ति भेपजानां शतेन च।
अनेन ते प्रशाम्यन्ति सर्पिषा स्वल्पकालतः॥५५५॥

वृ. यो. त., र. कौ., रसायनसं, व्रणे।

भाषा—पाराऔरगन्धक समभागलेकर नीलवर्ण कज्जली करना। इनदोनोंकी बराबर मुर्दासङ्ग और सबकी बराबर कमीला तथा षोडशांश नीलाथोथा लेकर सबका बारीकचूर्णकर सबसे चौगुना घृत डालकर एकदो पहरघोटकर इसतरहका मरहम बनावेकि सब एकजीवहोजायं। इसको कपड़ेपरलगाकर घावपर रखना चाहिये। गम्भीर अथवा नाडीव्रण होतो इसीकी बत्तीभी रक्खे। इसके उपयोगसे दुष्टव्रण शुद्धहोकर अच्छाहोजाताहै नाडीव्रण भरजाताहै। जो व्रण सैकड़ों दवाओंके करनेसे शान्त न हुएहों वे इस मरहमसे बहुतथोड़ेही कालमें शान्तहो जातेहै। इसको चाहे जिस व्रणमें लगासक्तेहैं॥ १२७॥

१२८ पारदादि मलहरम् (द्वितीयम्)

रसगन्धकसिन्दूरराळकम्पिल्लमार्दिकम्।
तुत्थं खदिरजं चूर्णं घृतं देयं चतुर्गुणम्॥ ५५६॥
युक्त्या सम्मेल्य पिचुना व्रणे देयं विजानता।
सर्वव्रणप्रशमनं घृतमेतन्न संशयः॥ ५५७॥

वृ यो. त, र. कौ., यो. र., रसायनसं., व्रणे।

भाषा—पारा, गन्धक, सिन्दूर, राल, कमीला, मुर्दासङ्ग, नीलाथोथा, कत्था, येसब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर दूसरी चीजोंका कपड़छान चूर्णकर सबसे चौगुना घी मिलाकर मरहम बनावे। इसको कपड़ेपर लगाकर सबतरहके व्रणोंपर लगावे। इसके लगानेसे सबप्रकारके व्रण शान्त होतेहैं॥ १२८॥

१२९ पारदादि योगः

सूतं सवर्णं व्योमसत्वं तारं ताम्रञ्च रोचनम्।
वीजञ्च शरपुङ्खोत्थं कृष्णधत्तूरवीजकम्॥ ५५८॥
सर्वं मर्द्य वटक्षीरैः कुबेराक्षस्य वीजकैः।
तत्क्षिप्त्वा धारयेद्वक्त्रे वीर्यस्तम्भकरं चिरम्॥५५९॥

र खं., वीर्यस्तंभे।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, अभ्रकसत्व, रजतभस्म, ताम्रभस्म, गोरोचन, सरफोंका और कालेधतूरेके बीज येसब समभाग लेकर पारे और रजत की जलका बनाकर सबचीजोंको मिलादे फिर इसमें वटका दूध डालकर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली करञ्जकी गुठलीमें डालकर मुंहमें रखनेसे वीर्यस्तम्भन होताहै और यथारोगानुपानकेसाथ खिलानेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै १२९

१३० पारदादि लेपः (प्रथमः)

श्वेतस्य करवीरस्य मूलस्य त्वक्पलार्धकम्।
रक्तस्याऽपि च तन्मानं हरितालं पलार्धकम्॥५६०॥
धूर्तवीजं पलार्धं स्यात् पलार्धं गन्धकं मतम्।
रसं पलार्धं कथितं तिलतैलं ततः परम्॥ ५६१॥
कथितं पञ्चपलिकं औषधीनाञ्च चूर्णकम्।
कर्तव्यं सूक्ष्मकं चाऽथ रसस्य वलिना सह॥ ५६२॥
कज्जलिं सूक्ष्मिकां कृत्वा तस्मिन्दद्यात्सुचूर्णकम्।
तैले सम्मिश्रितं कृत्वा धस्रार्धे संप्रलेपयेत्॥ ५६३॥
वर्तिं कृत्वा प्रज्वलितां रक्षणीया जलोपरि।
अधोमुखीतः पतितं जले तैलं समाहरेत्॥ ५६४॥
तत्तैलं मर्दयेल्लिङ्गे उपरिस्थं ततः परम्।
श्लेष्मातकस्य पत्रं तु मृदु लिङ्गोपरि न्यसेत्॥५६५॥
सूत्रेण वेष्टयित्वा च सूक्ष्मवस्त्रेणतत्परम्।
द्विवारं सप्तदिवसं हस्तकर्मकृतञ्जयेत्॥ ५६६॥

र कु

भाषा—सफेद और लालकनेरकी जड़की छाल, हरिताल, धतूरेके बीज, गन्धक, पारा येप्रत्येक २ कर्ष, तिलका तैल ५ पललेकर सबका कपड़छानचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलायधीरे२ तैलडालकर खरलकरे। मरहमकेसदृशहोनेपर एकहाथलम्बाचौड़ा खादीकाकपड़ालेकर आधेपर इसका

लेपकर बीचमें लोहेकी शलाका रखकर वत्तीकी तरह लपेटदे और वत्तीको बीचमें चीमटेवगैरहसे पकड़कर दोनों तर्फ आग-लगादे । वत्तीकेनीचे चौड़ेपात्रमें पानीभरकर रखदे जिसमें कि वत्तीमेंसे टपकाहुआ तैल पानीमें गिरकर ठंटाहोजाय । वत्तीके गुलको तोड़कर फेंकताजाय नहींतो तैलनहीं निकलेगा। तमामवत्तीजलजानेके बाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर तैलको निकाल-कर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १-२ बूंद तैल लेकर सीवन और सुपारीको छोड़कर इन्द्रियपर लेपकरे और बहुत कोमल लिसोड़ेकापत्ता लगाकर कच्चेसूतसे लपेटकर वारीकरूपड़ावांधदे, लंगोट न लगावे । इसतरह करनेसे ७ दिनमें हस्तकर्मकृतदो-पसे निर्मुक्तहोताहै इसतैलको खानेके काममें लेनाहो तो हरि-ताल, पारा, गन्धक इनको शुद्धकरके डाले । इसतैलकी एकएक शलाका पानमें रखकर खिलावे और ऊपरसे दूधपिलावे ॥१३०॥

१३१ पारदादिलेपः (द्वितीयः)

पारदं मरिचं कुष्ठं तगरं कण्टकारिका।
अश्वगन्धा तिलाः क्षौद्रं सैन्धवं श्वेतसर्षपाः ॥ ५६७॥
अपामार्गो यवा माषाः पिप्पली च समं जलैः।
पिष्ट्वा विमर्दयेत्तेन लिङ्गं मासमहर्निशम् ॥ ५६८ ॥
वर्धते हस्तमात्रन्तरस्थौल्येन मुशलोपमम्।
वराहवसयाक्षौद्रैर्लिङ्गं मासं विलेपयेत्।
अतिदीर्घं दृढं स्थूलं जायतेनाऽत्र संशयः ॥ ५६९ ॥

र. सं., ध्वजवृद्धौ।

भाषा—शुद्धपारा, मरिच, कुठ, तगर, भटकटैया, अस-गन्ध, तिल, मधु, सेंधानमक, पीलीसरसों, अपामार्ग, जव, उड़द और पीपल येसब समभागलेकर जलमें पीसकर लिङ्गपर लेपकरके मर्दनकरे । एकमहीनेतक इसीतरह प्रयोगकरनेसे स्थूलता और कठिनता यथेष्ट प्राप्तहोतीहै । वराहकी वसा और मधुको मिलाकर लेप करनेसे एकमहीनेमें ध्वजकी लम्बाई और स्थूलता यथेष्टहोजातीहै ॥ १३१ ॥

१३२ पारदादि वटी (प्रथमा)

सुवर्णं रसभस्माऽथ माक्षिकं चाऽभ्रसत्त्वकम्।
मुक्ताफलसमायुक्तं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ५७० ॥
जम्बीरफलजैर्द्रावैर्मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक्।
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्द्यं यामचतुष्टयम् ॥ ५७१ ॥
चित्रमूलकषायेण मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक्।
हंसपादीरसे चैव मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ५७२ ॥
आतपे शोषयित्वाऽथ कूपिकायां निवेशयेत्।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वालुकायन्त्रमार्गतः ॥ ५७३ ॥
पचेद्विंशतियामन्तु स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
वाराह्या च शतावर्या गोक्षुरेण च मर्दयेत् ॥ ५७४ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पूर्ववत्परिपाचयेत्।
गुञ्जाद्वयं सदा खादेदनुपानविशेषतः ॥ ५७५ ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो दृढदीपनपाचनः।
वृद्धेषु सेवयेन्नित्यं पूर्णचन्द्रोदयो यथा ॥ ५७६ ॥
वीर्यवृद्धिर्दण्डवृद्धिः षण्ढोऽपि पौरुषं भजेत्।
अस्य सेवनमात्रेण बहुस्त्रीवल्लभो भवेत् ॥ ५७७ ॥

र. क. यो., वाजीकरणे।

भाषा—सोनेकीभस्म अथवा वर्क, पारेकीभस्म, माक्षि-कभस्म, अभ्रकसत्त्वभस्म और मोती सब समभाग लेकर जंभीरी नीबूके रससे ३ रोज़, अदरखके रससे ४ पहर, चित्र-कमूलके काढ़ेसे ३ रोज़ और हंसपदीके रससे ३ रोज़ मर्दनकर गोली बनाय धूपमें सुखाकर सातकपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें डालकर मुखबन्दकर वालुका यन्त्रमें २० पहर आंच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वाराहीकन्द, शतावरी, गोखरू, इन प्रत्येकके स्वरससे मर्दनकर पूर्ववत् बीस २० पह-रकी आच देवे, बस यह रस तैयार होगया । इसमेंसे २-२ रत्ती यथोचितानुपानके साथ सेवन करनेसे समस्तव्याधिया दूर होकर अग्नि दीप्त होताहै । पाचनशक्ति एकदम बढ़कर वृद्धभी पूर्णचन्द्रकी तरह जवान हो जावेहै । षण्ढभी वीर्यवृद्धिको प्राप्त होकर बहुत स्त्रियोंका पति हो सकताहै ॥ १३२ ॥

१३३ पारदादिवटी (द्वितीया)

पारदः पञ्चमाषः स्याल्लवङ्गं पञ्चमाषकम्।
पुराणमिष्टकाचूर्णं माषद्वयमितं भवेत् ॥ ५७८ ॥
द्रोणपुष्पीरसेनैव कांस्यपात्रे विमर्दयेत्।
वटिकासप्तकं कृत्वा प्रातरेकाञ्च भक्षयेत् ॥
फिरङ्गव्याधिनाशाय भोजनन्तु यथेच्छया ॥ ५७९ ॥

यो. म., उपदंशे।

भाषा—शुद्धपारा और लवङ्ग ५-५ माशे पुरानीईटका चूर्ण २ माशेलेकर यहांतक मर्दनकरे कि पारा अदृश्य होजाय फिर गूमाके रससे कांसीके पात्रमें मर्दनकरे । गोली बंधने-लायक होनेपर इसकी सात गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहमें पानीके साथ निगलजादेवे तो फिरङ्गरोग नष्टहो । इसमें भोजन इच्छानुसार करें ॥ १३३ ॥

१३४ पारदादिवटी (तृतीया)

निष्कत्रयमितो गन्धः पारदस्तत्समांशकः।
पट्टाणं श्वेतखदिरं गुडं द्वादशशाणिकम् ॥ ५८० ॥
तुलसीस्वरसेनैव लोहपात्रे विमर्दयेत्।
निम्बकाष्ठेन तत्सर्वं द्वियामं गुटिकास्ततः ॥ ५८१ ॥
कार्याश्च सप्तसङ्ख्याका एकैकां भक्षयेत्ततः।
ताम्बूलं भक्षयेच्चाऽनु पानीयं स्वल्पसेवयेत् ॥ ५८२ ॥
भोजनञ्च यथाकामं त्यजेत्तृङ्गर्गोचरः।
दुःसाध्यव्रणपीडाभ्यां युक्तास्तस्य मसूरिकाः ॥
वेगेनप्रशमं यान्ति योगेनाऽनेन नाऽन्यथा ॥ ५८३ ॥

यो. म., मसूरिकायाम्।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ३–३ टङ्क, सफेदकत्था ६ टङ्क, पुरानागुड १२ टङ्क लेकर तुलसीके स्वरससे लोहके पात्रमें नीमके डंडेसे दोपहरतक मर्दनकर सबकी सात गोलियें बनालेवे। इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल पानीकेसाथ निगलजाय, उपरसे एक पानका बीडा खाकर थोड़ासा पानी पीवे। भोजन यथेच्छितकरे, वायुरहित घरमेंरहे। इसके सेवनसे दुःसाध्य व्रण और पीडायुक्तमसूरिकाए बहुतजल्दी शान्त हो जातीहै ॥१३४॥

१३५ पारदादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं शिवांशमेकांशमेकांशं फणिफेनकम्।
द्वयंशं गन्धमिति त्रीणि पिष्ट्वा कुर्वीत पर्पटीम् ॥५८४॥
विषमुष्टिकधत्तूरबीजजातीफलान्यपि।
एकांशानि पृथक्तत्र दत्त्वा मसृणतां नयेत् ॥ ५८५ ॥
दाडिमीतिन्तिडीतोयैर्भावयेत्सप्तधा पृथक्।
घटीर्यप्नीत जरणक्षौद्रैस्ता ग्रहणीच्छिदः ॥ ५८६ ॥

सि भे म, ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा और अफीम १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर बेरके कोयलोंपर लोहकी कड़छीमें गलाकर अफीमडालदे। मिलजानेपर भैंसके ताजे गोबरपर रक्खेहुए कोमल केलेके पत्तेपर डालकर ऊपरसे दूसरा पत्ता रखकर दूसरे गोबरसे दबादे। चार पहरके बाद धीरेसे पर्पटीको निकालकर फिरसे कज्जली बनाकर शुद्धकुचिला, धतूरबीज और जायफल ये प्रत्येक पारेकी बराबर बारीक पीसकर पर्पटीमें मिलाकर १–२ पहर खरलकरके अनारके स्वरसकी सातभावना देकर पकीहुई इमलीका घोल बनाकर उसकी सातभावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाय सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे एक अथवा दोदो गोलिया योग्यतानुसार १ माशा जीरेकेसाथ गोलियोंको पीसकर मधुमें चटानेसे ग्रहणीरोग नष्ट होताहै ॥ १३५ ॥

१३६ पारदादिवटी (पञ्चमी)

पारदं गन्धकं तारममृतं चानु शुल्वकम्।
त्रिफला त्रिसुगन्धञ्च चित्रकोशीररेणुकाः ॥ ५८७ ॥
रजनीद्वयसंयुक्तं सम्पेष्य वटकीकृतम्।
ग्रहणीं विविधं शूलं शोथाऽतिसारकञ्जयेत् ॥ ५८८ ॥

नि. र, र सु, वै चि, ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बत्सनाग, रजत और ताम्र भस्म, त्रिफला त्रिसुगन्ध (तज, पत्रज, इलायची), चित्रकमूल, खस, रेणुकबीज, हल्दी, दारुहल्दी ये सब समभागलेकर पारगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर अन्य वस्तुओंको बारीक पीसकर कुटजकीछालप्रभृति सङ्ग्राहक द्रव्योंके स्वरसकेसाथ, मधु अथवा जलकेसाथ ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली योग्यतानुकूल अनुपानकेसाथ देनेसे ग्रहणी, नानाप्रकारकेशूल, शोथ और अतिसार ये सब नष्ट होतेहैं।

टि०—रेणुका नामक औषधि आजकल वैद्योंके परिचयसे बाहर निकलगईहै इसके अभावमें संभालूके बीज लिये जातेहैं परन्तु यह भूलहै रेणुकाके गुण शीतप्रधानहैं उष्णताशामकहै, संभालूके बीज अत्यन्त गरमहैं इसलिये इनको डालना उचित नहीं, हरिद्वारसे लेकर बदरिकाश्रमतक एक वृक्षहोताहै जिसकी शकल कम्पिल्लकसे बहुतअंशोंमें मिलती जुलतीहै। दूरसे देखनेमें इसका फलभी कम्पिल्लकके सदृशही मालूमपड़ताहै भेद इतनाहीहै कि कम्पिल्लकका फल पकजानेपर स्वयं फूट जाताहै और उसमेंसे लाल रज निकल पडताहै उसेही कम्पिल्लकके व्यवहारमें लाते है। रेणुकका बीज अत्यन्त पत्थरके सदृश कठिन होताहै फोड़ने पर प्रयत्नसे फूटताहै काष्ठप्राय होताहै। पहाड़में इसवृक्षको रोण के नामसे वहाके तमामवाशिंदे जानतेहैं हरिद्वार और हृषीकेशके अनभिज्ञलोग वायविडङ्गके नामसे पुकारतेहैं पर जैसेही पहाड़के ऊपर जाओ कि बच्चोंसे लेकर बुड्ढोंतक 'रोण, नाम प्रसिद्धहै। यह नाम रेणुक अथवा रेणु शब्दसे अपभ्रंश हुआ मालूम पडताहै इसकी दातन करनेका बहुत रिवाजहै मुखपाकमें इससे बहुत लाभ होताहै हमेशहके अभ्याससे दांतों पर कुछ ललाई आजातीहै। वृक्षके तोडनेसे कुछलाल रङ्गका द्रव निकलता मालूम होताहै इसीको रेणुका शब्दसे ग्रहण किया जाय तो रेणुका युक्त योगोंमें विशेष लाभ होनेका सम्भवहै ॥१३६॥

१३७ पारदादिवटी (षष्ठी)

पारदं गन्धकं नागं ताम्रं व्योषाऽनलैः समम्।
स्वर्जीरसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भावना दश ॥ ५८९ ॥
पुनः पर्णरसैः सम्यक् चार्द्रकस्य रसैस्तथा।
सम्मर्द्य वटिका कार्या कफरोगनिकृन्तनी ॥ ५९० ॥
मन्दाग्निकफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः।
आध्मानप्रतिनाहेषु प्रदेया सुखकारिणी ॥ ५९१ ॥

नि र, रसायनम, वै. चि, आमाधिकारे।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जली, नाग और ताम्रभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रकमूल ये सब समभाग लेकर काष्ठौषधियोंका चूर्ण बनाकर २–३ पहर मर्दनकर बड़ी लोनी, पके पान और अदरकके रसकी १०–१० भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे कफरोग, मन्दाग्नि, श्वास, कास, पेटका फूलना और गुड़गुड़ाहट येसब नष्ट होतेहैं ॥१३७॥

१३८ पारदादिवटी (विजयवटी) (सप्तमी)

समौ रसाऽभ्रकौ रत्नवर्गेण परिभूषितौ।
गुटिका करसंस्था तु मुखस्था युद्धवारणी ॥ ५९२ ॥

र, रसेन्द्रम, र क, रसगन्धाऽधिकारे। रसेन्द्रमङ्गलव्योम गुटीतिनाम।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकसत्त्व और रत्नवर्ग (पन्ना, पुखराज, माणिक्य, पद्मराग?, नीलम, मरकत, गोमेद, मोती और मूंगा) समभाग लेना। प्रथम पारेको अभ्रकभागमें बुभुक्षितकर

रत्नोंका ग्रास देनेसे गुटिकाका आकार हो जायगा । इस गुटिकाको मुखमें रखनेसे शस्त्रवगैरह का घाव नहीं लगता और युद्धमें विजय होताहै । इसीलिये बहुतसे ग्रन्थोंमें इसका विजयवटीभी नाम रक्खाहै । दूसरे लोग पारद वगैरहकी भस्म लेकर तुलसी वगैरहके रसमें इकट्ठी खरलकर पोट्लीके प्रकारसे इसकी गोली पकाना लिखतेहैं । पर वह गोली रसायन व वाजीकरण का कामकरेगी किन्तु " मुखस्था युद्धवारणी" यह अर्थ सिद्ध नहीं करसक्ती । कदाचित् मुखस्थाको लाक्षणिक समझकर खाना अर्थ करें और उससे ताक्त आनेपर शत्रुओंका सामना करके जीतना अर्थ रक्खें तो यथाकथञ्चित् हो सक्ताहै पर यथावस्थित अर्थसिद्धि नहीं हो सक्ती, इस तरहकी गोलियों का बनना आजकल असम्भव जैसा मालूम होताहै यह सब सम्प्रदायविच्छेदका कारणहै । राजतरङ्गिणीके समयमें यह सम्प्रदाय चालू था इसको पुनरुज्जीवित करनेके लिये वैद्यसमुदायको ध्यान देना चाहिये ॥ १३८ ॥

१३९ पारदादिवटी (अष्टमी)

पारदं गन्धकन्तालं हिङ्गुलञ्च मनःशिलाम् ।
मोदारश्टङ्गकं शाहजीरकञ्च समंसमम् ॥ ५९३ ॥
सुरसापल्लवरसैर्भाव्यं छायाविशोषितम् ।
धत्तूरपल्लवरसैर्मर्दयेत्पुनरेव च ॥ ५९४ ॥
गुञ्जाभा वटिका कार्या गोघृतेन नियोजयेत् ।
पथ्यं सघृतगोधूममन्यत्सर्वं विवर्जयेत् ॥
पारदाद्या गुटी नाम ह्युपदंशविनाशिनी ॥ ५९५ ॥

रसायनसं., उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिंगरफ, मैनसिल, मुर्दासिंग और शाहजीरा येसब समभाग लेकर तुलसीके रसमें एकदिन मर्दनकर छायाशुष्क करे फिर धतूरेके पत्तोंके रसमें मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ अथवा २ गोलियां गायकेघीमें लपेटकर निगलजाय । घी और गेहूंकी रोटी खानेकोदे, इसके सिवाय सब चीज़का त्यागकरे तो उपदंश नष्टहो ॥ १३९ ॥

१४० पारदादिवटी (नवमी)

पारदस्य पलञ्चैव यशदं नागवङ्गके ।
पृथक् पलमितं प्रोक्तं त्रयाणाञ्च विशेषतः ॥ ५९६ ॥
सम्यक् शुद्धान् समानीय द्रावं कुर्याद्यथाविधि ।
सूतञ्च प्रक्षिपेत्तत्र पुनर्भूम्यान्तु निक्षिपेत् ॥ ५९७ ॥
खल्वे धृत्वा मर्दयेत्तु कज्जलीं कारयेद्बुधः ।
शुद्धामृतं पलमितं मरिचस्य पलाष्टकम् ॥ ५९८ ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायाऽथ यत्नपूतं समाचरेत् ।
शिग्रुत्वचो रसैर्मर्द्य पुटानि त्रीणि दापयेत् ॥ ५९९ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव त्रिपुटं दापयेद्भिषक् ।
कलायसदृशी कार्या वटिका कासनाशिनी ॥ ६०० ॥
श्वासकासौ निहन्त्याशु शीतवातन्तथैव च ।
शूलरोगहरी प्रोक्ता रसादिवटिका त्वियम् ॥ ६०१ ॥

र.सु., कासे ।

भाषा—शुद्धपारा, जस्त, नाग और वङ्ग येप्रत्येक १ पललेकर जस्त, नाग और वङ्गको अग्निपर गलाकर मिट्टीके बर्तनमें रक्खेहुए पारेमें डालदेवे, यह एकजातिकी नरमधातु होजायगी । इसको खरलमें डालकर कज्जली बनालेवे फिर शुद्धवछनाग १ पल और मरिच ८ पल का बारीक चूर्णकर उसमें मिलाकर एकदो पहर घोटकर सहजनकीछाल और अदरखके रससे ३–३ भावनाएं देकर मटरबराबर गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली यथोचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे कफ, श्वास, कास, शीतवात, शूलरोग इन सबका नाश होताहै ॥ १४० ॥

१४१ पारदादिवटी (दशमी)

पारदं सैन्धवं गन्धं नागं व्योषाऽनलैः समम् ।
शिग्रुरसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भावना दृढा ॥ ६०२ ॥
पुनः पत्ररसैः सम्यक् चाऽऽर्द्रकस्य रसैस्तथा ।
मरिचप्रमाणा कफजित्कार्या सा गुटिकोत्तमा ६०३
मन्दाग्निकफरोगेषु कासश्वासे विशेषतः ।
आध्मानपवनार्तौ च प्रदेया सुखकारिणी ॥ ६०४ ॥

रसायनसं., कफरोगे ।

भाषा—पारा और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, सैन्धव, नागभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल और चित्रकमूल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सहिजन और अदरखके रसकी १०–१० भावनाऐं देकर मरिच बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे योग्यतानुसार २–३ गोली देनेसे मन्दाग्नि, कफरोग, कास श्वास, आध्मान और वातव्याधि ये सब नष्ट होतेहैं ॥ १४१ ॥

१४२ पारिजातटङ्कणम् (तालकेश्वरः)

दिनैकं कदलीद्रावैष्टङ्कणं मर्दयेद्दिनम् ।
हरिद्रायाः द्रवे द्रावे निशापामार्गभस्मजे ॥ ६०५ ॥
तृतीयांशञ्च तालञ्च दत्त्वा पालाशपुष्पजे ।
सप्ताहञ्च रविक्षीरैः श्वेतैरण्डस्य बीजतः ॥ ६०६ ॥
यामद्वादशकं वह्निः काचकूप्यां गतस्य च ।
तत्त्रिधा जायते सत्त्वमूर्ध्वोऽधो मेदतः पुनः ॥ ६०७ ॥
ऊर्ध्वं सत्त्वमधः किट्टं पुष्पितञ्च प्रजायते ।
पुष्पितञ्चोर्ध्वसत्त्वञ्च पूर्वोक्तविधिना पुनः ॥ ६०८ ॥
विमृद्य काचकूप्याञ्च निक्षिप्याऽग्निं प्रदापयेत् ।
त्रिवारमेवं हि कृते तत्सत्त्वं तत्प्रयोजयेत् ॥ ६०९ ॥
अथ तस्य चतुर्थांशं दरदं न्यस्य मर्दयेत् ।
भृङ्गामार्कवदुःस्पर्शाधत्तूरकपलाशजैः ॥ ६१० ॥
प्रत्येकञ्च शिवाम्भोभिः सप्ताहं मर्दयेद्दृढम् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वह्निं यामांस्तु षोडश ॥ ६११ ॥
दत्त्वैवं हि त्रिवारञ्च पलाण्डुस्वरसैस्ततः ।
रसोनमानरसतः प्रत्यहं मर्दयेद् दृढम् ॥ ६१२ ॥

एकोनविंशतिविधाः शङ्खद्रावस्य भावनाः ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामद्वादशकं पचेत् ॥ ६१३ ॥
त्रिवारमेवं हि कृते दिव्यं तलगतं भवेत् ।
रक्तिका सर्वरोगघ्नी स्वरभेदक्षयादयः ॥
दत्तमात्रेण नश्यन्ति तूलराशिरिवाऽग्निना ॥ ६१४ ॥

र. का स्वरभेदे ।

भाषा—केलेकी जडके रससे सुहागेको १ दिन, हल्दीके स्वरससे १ दिन, हलदीऔर अपामार्गके क्षारके पानीसे एक २ दिन मर्दनकर तृतीयांश हरितालका सुरमासदृश बारीक चूर्ण डालकर पलाशके पुष्पोंके रस, आकके दूध और सफेद एरण्डके बीज स्वरससे ७–७ दिन मर्दन करे । फिर ७ कपडमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर १२ पहरकी क्रमवृद्ध अग्निदेना, इसकी डाट बन्दकरदेनी चाहिये । स्वाङ्गशीतल होनेपर कपडमिट्टीको अलगकर तैलमें एक डोरीको भिगोकर शीशीके मुहपर लगादे और अग्नि जलादे । जब डोरी जलजाय तब भीगेहुए कपडेसे पोंछदे तो अनायास शीशी फूट जायगी । इसमें ऊपर सत्व, बीचमें पुष्प और नीचे किट्ट इसतरह तीनविभाग मिलेंगे । इसमेंसे किट्टको छोडकर बाकी (सत्त्व और पुष्प) को लेकर पूर्वोक्त रीतिसे मर्दन करे और काचकूपीमें अग्निदेव । इसतरह तीनबार करने के बाद तलस्थ को भी शामिल करले । फिर इससे चतुर्थांश शिंगरिफ देकर भाग, भंगरा, जवास, धतूरा, पलाशपुष्प और इर्दै इन प्रत्येकके स्वरसोंमें ७–७ रोज मर्दनकर काचकूपीमें डालकर १६ पहरकी अग्निदे । इसतरह ३ बार करके प्याज मानकन्द और लहसुनके स्वरसमें ७–७ रोज मर्दनकर १९ भावनाएं शङ्खद्रावकी देकर १२ पहरकी अग्निदे। इसतरह तीनबार करनेके बाद तलस्थजो पदार्थहै उसको लेकर रखछोडे । यह **पारिजात** रत्न तैयार हुआ । इसकी १–१ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे स्वरभेद, क्षयप्रभृति समस्तरोग इस तरह नष्ट होतेहैं जैसे अग्निस्पर्शसे कपासका पुंज नष्ट होताहै ॥ १४२ ॥

१४३ पारिभद्रो रसः

मूर्च्छितं पारदं धात्रीफलं निम्बस्य चाहरेत् ।
तुल्यांशं खादिरैः क्वाथैर्दिनं मर्द्यञ्च भक्षयेत् ॥
निष्कैकं दद्रुकुष्ठघ्नः पारिभद्राह्वयोरसः ॥ ६१५ ॥

र स, वै चि, र चि, र सु, र म, रसायनस, यो म, ध. रा, र का, र र को, कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—मूर्च्छितपारा, आंवले और नीमकी निंबोलीकीमज्जा समभागलेकर कूटछानकर खैरके क्वाथमें एकदिन मर्दनकर ४–४ मासकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली खैरके काढे अथवा महामञ्जिष्ठादिक्वाथसे देनेसे यह दद्रुऔर कुष्ठको नष्टकरताहै ॥ १४३ ॥

१४४ पार्वतीरसः

पार्वती काशिसम्भूतो दरदो मधुपुष्पकम् ।
गुडूची शाल्मली द्राक्षाधान्यभूनिम्बमार्कवम् ॥६१६॥
तिलमुद्गपटोलञ्च कूष्माण्डं लवणद्वयम् ।
यष्टिकाधान्यजं भस्म चान्तर्दग्धं समंसमम् ॥ ६१७ ॥
मुखरोगं निहन्त्याशु पार्वतीरस उत्तमः ।
चिरजं पैत्तिकं हन्ति तिमिरञ्च तृषामपि ॥ ६१८ ॥

र.स, र सु, र चि, मुखरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और शिंगरिफ, महुआके फूल, गिलोय, सेंमलका मुसला, द्राक्ष, धनिया, चिरायता, भंगरा, तिल, मूंग, पटोल, कोंहडा, सेंधा, सांभर, मुल्हटी, धनियेकी अन्तर्धूमविदग्धभस्म येसब चीजें समभागलेकर बारीकपीसकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ मासा मधुकेसाथ अथवा पित्तपापडे-केकाढेकेसाथ देनेसे मुखरोग, बहुतदिनका पित्तज्वर, तिमिर और प्यास इनसबको यह बहुतजल्दी नष्ट करताहै ॥ १४४ ॥

१४५ पाशुपतास्त्रो रसः (प्रथमः)

पारदं म्लेच्छभस्माऽथ गन्धकञ्च मनःशिला ।
पाषाणद्वितयञ्चाऽथ भृङ्गीनीरेण मर्दयेत् ॥ ६१९ ॥
द्विदिनं वालुकायन्त्रे चण्डाग्नौ च द्वियामकम् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यमार्द्रकञ्चाऽनुपानकम् ॥
पाशुपताऽस्त्रनामाऽयं सर्वाऽहिकं ज्वरं हरेत् ॥६२०॥

व रा, रसायनस, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और मैनसिल, ताम्रभस्म, काला और सफेद शुद्धसंखिया येसब समभागलेकर भांगरेके रससे दोरोज मर्दनकर बालुकायन्त्रमें तीक्ष्ण अग्निसे दोपहरतक पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २ रत्ती अदरखके रसके साथ देनेसे सार्वाह्रिकज्वर नष्टहोताहै ॥ १४५ ॥

१४६ पाशुपतास्त्रो रसः (द्वितीयः)

द्विपाषाणं द्वितुत्थञ्च नेपालं तालकं विषम् ।
सर्वतुल्यं शुद्धसूतमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥ ६२१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
भावितं फणिपित्तेन गुञ्जामात्रं भिषग्वरः ॥ ६२२ ॥
लशुनस्य च तैलेन मस्तकोरं विलेपयेत् ।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
रसः पाशुपतास्त्रोऽयं शङ्करेण प्रकल्पितः ॥ ६२३ ॥

वै चि, वा, सन्निपाते ।

भाषा—काला और सफेद शुद्धसंखिया, दानेफिरङ्ग और तूतिया, शुद्धजमालगोटा, हरिताल और बच्छनाग येसब समभाग लेकर इनकी बराबर शुद्धपारा डालकर कज्जली बनाकर आकके दूधके साथ मर्दनकर गोलायनाय आकके दूधसे दोला यन्त्रमें १ पहर स्वेदनकरके निकालकर घोटकर सुखाले । इसमें काले सांपके पित्तेकी दो अथवा एक भावना देकर १–१ रत्ती लहसुनके तैलमें मिलाकर तालुएके बाल निकालकर लगानेसे तेरहप्रकारके सन्निपातोंको यह तत्क्षण नष्टकरताहै ॥ १४६ ॥

१४७ पाशुपताऽस्त्रो रसः (महान्) (तृतीयः)

द्विभागं श्वेतपाषाणं म्लेच्छनेपालपारदम् ।
प्रत्येकमेकभागन्तु खल्वमध्ये विमर्दयेत् ॥ ६२४ ॥
कृष्णधत्तूरतोयेन मर्दितं याममात्रकम् ।
मुद्गप्रमाणमात्रेण त्वार्द्रकश्चाऽनुपानकम् ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकं नाशयेज्ज्वरम् ॥६२५॥

र रा , र म मा., वै. चि , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धसफेदसंखिया २ भाग, शुद्धशिंगरफ, जमालगोटा और पारा १–१ भाग लेकर सबकी कज्जली बनाय काले धतूरेके रसमें १ पहर मर्दनकर मूंगबराबर गोलिया बनाकर अदरखके साथ देनेसे अन्तरदेकर आनेवाले त्र्याहिक चातुर्थिकादि समस्त विषमज्वरोंको यह नष्ट करताहै ॥ १४७ ॥

१४८ पाशुपतो रसः

कर्षं सूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम् ।
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रकक्वाथभावितम् ॥ ६२६ ॥
धूर्तबीजस्य भस्माऽपि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ।
कटुत्रयं त्रिभागं स्याल्लवङ्गैले च तत्समे ॥ ६२७ ॥
जातीफलन्तथा कोषमर्द्धभागं नियोजयेत् ।
तथाऽर्द्धं लवणं पञ्च स्नुह्यर्कैरण्डतिन्तिडी-॥ ६२८ ॥
अपामार्गाश्वत्थजञ्च क्षारं दद्याद्विचक्षणः ।
हरीतकी यवक्षारं सर्जिका हिङ्गु जीरकम् ॥ ६२९ ॥
टङ्कणं सूततुल्यञ्च ह्यम्लयोगेन मर्दयेत् ।
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥ ६३० ॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ।
दीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विसूचिकाम् ६३१
तालमूलीरसेनैवमुदरामयनाशनः ।
अतिसारं मोचरसैर्ग्रहणीं तक्रसैन्धवैः ॥ ६३२ ॥
सौवर्चलकणाशुण्ठीयुतः शूलं विनाशयेत् ।
अर्शो हन्ति च तक्रेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम् ६३३
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्चलान्वितः ।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोगं निहन्त्ययम् ॥ ६३४ ॥
पिप्पलीक्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात् ।
अस्मात्परतरो नाऽस्ति धन्वन्तरिमतो रसः ॥६३५॥

र रा , रसायनस , यो.र , र क ल , नि र , र सु , र प्र., र.का यो त., वै. चि , अजीर्णाऽधिकारे ।

टि०—अस्य योगस्य प्रतिपुस्तकं पाठभेदा दृश्यन्ते यथा वर्तमानपाठे धूर्तबीजस्य भस्माऽपि द्वात्रिंशद्भागसंयुतमिति । अन्यग्रन्थेषु "धूर्तबीजस्य वै भस्म मरीं समभागतः,, इत्यादयः पाठाः सन्ति निर्दिष्टाः । कटुत्रय त्रिभाग स्यादित्यस्य स्थाने द्विधा त्रिकटुकं योज्यमित्यादीत्यादि । पर तत्कज्जलनाऽनन्तरं धूर्तबीजभस्मनो योगो न युक्तिसह । भावनायां प्रथम तत्र सर्वेषां उचितं प्रतिभाति, भस्मत्वेनाऽपि द्वात्रिंशत्तम मात्रया मारणी इयती, अजीर्णनामकत्वस्य धूर्तभस्मान्यथासिद्धत्वात् । तत्त्वज्ञा मि रसेन्द्रसारसङ्ग्रहीतपाठस्य सहृदैः । परस्परं निष्पक्षानुभूतय ।

भाषा—शुद्धपारा १ कर्ष, शुद्धगन्धक २ क , लोह-भस्म ३ क. लेकर तीनोंकी बराबर शुद्धबछनागमिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकके काढेकी एकभावनादेकर धतूरेकेबीजोंकी भस्म ३२ भाग, त्रिकुटु, लवङ्ग और इलायची ३–३ कर्ष, जायफल, जावित्री और पाचों नमक प्रत्येक ८ माशे, सेहुण्ड, एरण्ड, इमली, अपामार्ग और पीपल इनका क्षार, हर्रे, यवक्षार, सज्जी, हींग, जीरा, भुनासुहागा ये प्रत्येक १ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वपिण्डमें मिलाकर नींबूके रससे १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे अग्नि प्रदीप्तहोकर खायाहुआ पचताहै हृदयकेरोगोंको नष्ट करताहै और हैजेको तत्काल निरस्तकरताहै । उदरकेरोगोंमें तालमूलीके रससे, अतिसारमें मोचरससे, ग्रहणीमें तक्र और सैन्धवसे, शूलमें सचल, पीपल और सोंठके चूर्णसे, अर्शमें तक्रसे, राजयक्ष्ममें ६४ पहरी पीपलसे, वातरोगमें सोंठ और सचलसे, पित्तरोगमें धनिया और शक्करसे, श्लेष्मरोगमें पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह तत्तद्रोगोंको बहुत शीघ्रताके साथ नष्टकरताहै । वैद्य और रोगीको तत्क्षण परिचय देताहै ॥ १४८ ॥

१४९ पाषाणभेदः

रसेन तुल्यं गगनं द्विगन्धं
स्वर्णं रसांशं कुटिलञ्च तद्वत् ।
विमर्दयेत्तस्करसेन शुण्ठी-
गोक्षुरजेन द्विजयष्टिकाद्भिः ॥ ६३६ ॥
विभावितः सिद्धिमुपैति सूतः
पाषाणभिद्ध्रमितः प्रयत्नात् ।
शतावरी काशकुशश्वदंष्ट्रा-
कशेरुशालीक्षुरसैः प्रयोज्यः ॥ ६३७ ॥
तीव्रामश्मरीं नाशयति प्रसह्य
क्षीराशिनो मासचतुष्टयेन ।
तथोपकादिप्रतिवापकेन
क्वाथं पिबेत्सेतुहतं घृतोक्तम् ॥ ६३८ ॥

र , अश्मरीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और अभ्रकभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा , सुवर्ण और नागभस्म छटा ⅙ भाग लेकर एक जगह मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर तस्करपानी, सोंठ, गोखरू और ब्रह्मदण्डीके स्वरससे १–१ रोज मर्दन करनेसे पाषाणभेद नामक रस तैयार होगा । इसमेंसे ३–३ रत्ती शतावर, काश, कुश, गोखरू, कसेरू, धानकीजड़, और ईख इनके रसोंके साथ सेवा करनेसे असाध्यसे असाध्य पथरीरोग नष्ट होताहै । इसमें केवल दूध पिलाना अथवा इसके ऊपर वरुणका काढ़ा बनाकर ऊषकादिगणका चूर्ण ३ माशे और घी डालकर पिलावे तो चार महीनेमें असाध्यसे असाध्य पथरीरोग दूरहो । रेह, सैन्धव, शिलाजीत, कसीस, हीराकसीस, हींग, तूतिया यह ऊषकादिगणहै ॥ १४९ ॥

१५० पाषाणभेदी रसः (प्रथमः)

शुद्ध सूतं द्विधा गन्धं शिखितुल्यरसान्वितम् ।
श्वेतापुनर्नवावासारसैः श्वेतवचाद्रवैः ॥ ६३९ ॥
प्रतिद्राव्यैरथहं मर्द्य शुष्कं तद्‌द्रावसंयुतम् ।
स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे दिनैकं तं विचूर्णयेत् ॥ ६४० ॥
रसः पाषाणभिन्नाम द्विगुञ्जश्चाश्मरीहरः ।
गोपालकर्कटीदोग्ध्रीभूधात्रीमूलचूर्णकम् ॥ ६४१ ॥
कुलत्थक्काथसंयुक्तमनुपानं प्रशस्यते ।
सघृतं गोक्षुरक्काथं रात्रौ तस्मै प्रदापयेत् ॥ ६४२ ॥

रसायनस , र र , वै. क , ध., र. चं , र को , चि. र म , र दी., व रा., वै. चि , भै र , अश्मर्यधिकारे । कुत्रचिच्छिखितुल्यस्थाने शिलाजतु गृहीतम्, भावनाया श्वेतवचाद्रवस्थाने श्वेताऽपराजिता गृहीता ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा , शुद्धतुतिया और रसौत १–१ भा., लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर सफेदपुनर्नवा, अड़ूसा, श्वेतवच इन प्रत्येकके स्वरससे ३–३ रोज़ मर्दनकरे परन्तु प्रत्येक भावनाके बाद गोलाबनाकर जिसकी भावनी दीहो उसीके रसमें १–१ रोज दोलायन्त्रसे स्वेदनकर सुखादे फिर दूसरे रसकी भावना देकर स्वेदन दे । अन्तीमें इसकी २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली एरण्डककड़ी, छोटीदूधी, भूधात्री इनकी जड़का चूर्ण कुलथीके काथमें मिलाकर इसके साथ लेनेसे पथरीरोग दूर होताहै रात्रीको सोतेसमय गोखरूके काथमें घी डालकर पिलाना ॥ १५० ॥

१५१ पाषाणभेदीरसः (द्वितीयः)

रसेन सितवर्णाभ्या रसं द्विगुणगन्धकम् ।
घृष्टं पचेच्च मूषायां द्वौ माषौ तस्य भक्षयेत् ॥६४३॥
गोपालकर्कटीमूलं कुलत्थोदे पिबेदनु ।
गोकण्टकसदाभद्रामूलक्वाथं पिबेन्निशि ॥
अयं पाषाणभिन्नाम्ना रसः पाषाणभेदकः ॥ ६४४ ॥

र र स , अश्मर्यधिकारे ।

टि०—चिरकालात् गोपालकर्कटी १ गोरक्षकर्कटीति च शब्दौ स्वार्थबोधनाऽसमर्थौ सञ्जातौ दृश्येते टीकाकारैश्च तत्तत्स्थाने स्वस्वमनीषिभातापि, तत्तन्नामनिर्देशनषायुर्वेदशानज्योतिषोनिर्वाणता प्रकल्पयिष्यतीतिकृत्वा मौनाऽऽलम्बनमेव श्रेयस्करम्, ताभ्यां शब्दाभ्यां किं वस्तु ग्रहीतव्यमिति विचार तु एरण्डककड़ी इं० पोपैयू गु० इतिप्रसिद्धमेव द्रव्य ग्रहणीयमिति वदाम "गोपालकर्कटीमूलं पिष्टं पर्य्युषिताम्भसा । पीयमानं त्रिरात्रेण पातयत्यश्मरीं हठात्" इति राजमार्तण्डीयपद्यभाषानुवादने जयपुरपत्तनाऽधिपतिमहाराजैर्नियुक्तभिषक्‌समित्योपरिनिर्दिष्ट एवाऽर्थो निरधारि, तथाचाय राजमार्तण्डीय प्रयोगो बहुधाऽस्माभीरोगिषु नियुज्याऽऽशीर्वादो गृहीतो गृह्यते च अन्यैरपि भिषग्वर्यैं रेतत्प्रयोगे प्रयन्तिव्यमिति नम्रनिवेदनम् इन्द्रवारुण्या कर्कट्या चैतादृशी शक्तिर्नास्त्येवेति निश्चयेन ब्रूम । तृतीयपाषाणभेदि रसे गोपालकर्कटी दुग्धमितिपाठेन चाऽस्मत्सिद्धान्तस्य दृढा पुष्टिरस्ति कर्कटीनातावन्यत्र कुत्रचिदपि दुग्धत्वाऽभावात् । यत्रतत्राऽर्थाऽज्ञानाद्गोपालकर्कटीस्थाने पातालकर्कटीति पाठः कृतोऽस्ति पातालतुम्बिकेत्यपरपर्य्यायाया पातालकर्कट्यामप्यश्मरीभेदनशक्तेरभावात्स पाठो निरासुपेक्ष्य इत्यलमतिविस्तरेण ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा लेकर दोनोंकी नीलवर्ण कज्जलीकर सफेद इटसिट (पंजाबी) के रससे १–२ रोज़ मर्दनकर शरावसम्पुटकर लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इसमेंसे २ माशे फाक्कर एरण्डककड़ीकी १ तोला जड़को ५ तोले कुलथीके अष्टावशेष काढ़ेमें मिलाकर पीवे । रातको सोते समय गोखरू और गंभारीकी जड़का काढापीवे इससे पथरीके टुकड़े टुकड़े होकर निकल जातेहैं ॥ १५१ ॥

१५२ पाषाणभेदीरसः (तृतीय)

रसं द्विगुणगन्धेन मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
वसुः पुनर्नवा वासा श्वेता ग्राह्या प्रयत्नतः ॥ ६४५ ॥
तद्द्रवैर्भावयेदेनं प्रत्येकन्तु दिनत्रयम् ।
पक्वं मूषागतं शुष्कं स्वेदयेज्जलयन्त्रतः ॥ ६४६ ॥
पाषाणभेदी नामाऽयं नियुञ्जीताऽस्य वल्लकम् ।
गोपालकर्कटीदुग्धैं भूम्यामलकमूलिकाम् ॥
कुलत्थक्वाथतोयेन पिष्ट्वा तदनु पाययेत् ॥ ६४७ ॥

र र स , र क , यो. स , र मृ , अश्मर्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा , शुद्ध गन्धक २ भा., दोनोंकी नीलवर्णकज्जली कर सफेदपुनर्नवा, लालपुनर्नवा, अड़ूसा, वच अथवा सफेदकोयल इन प्रत्येकके रसोंसे ३–३ रोज मर्दनकर गोला बनाय मूषामें रखकर सुखाले और जलयन्त्रसे १ दिन स्वेदन कर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती एरण्डककड़ीके दूधमें मिलाकर खिलावे और ऊपरसे भुंईआवलेकी जड़का चूर्ण आधातोला कुलथीके काढेमें मिलाके पिलानेसे पथरी दूर होतीहै ॥ १५२ ॥

१५३ पाषाणवज्ररसः (प्रथमः)

शुद्ध सूतं द्विधा गन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः ।
मर्दयित्वा दिनं खल्वे रुद्ध्वा तद्भूधरे पचेत् ॥ ६४८ ॥
दिनान्ते तत्समुद्धृत्य मर्दयेद्गुडसंयुतम् ।
अश्मरीं बस्तिशूलञ्च हन्ति पाषाणवज्रकः ॥ ६४९ ॥
गोरक्षकर्कटीमूलक्काथं कौलत्थकन्तथा ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥ ६५० ॥

र चि , र सं , वै चि , र सु , र च , ध , यो म , र कौ , चि क , र र , रसायनसं , ना वि , अश्मर्यधिकारे ।

टि०—यो म , वै चि , गुडस्थाने पाषाणभेदचूर्णं गृहीतम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा , शुद्धगन्धक २ भा , लेकर नीलवर्णकज्जलीकर श्वेतपुनर्नवाके रससे एकरोज मर्दनकर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें बन्दकर दिनभरकी अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १ माशेकी मात्रा बराबरके पुराने गुडकेसाथ देकर एरण्डककड़ीकीजड २ तोलेका अथवा कुलथीका अष्टावशेषक्वाथ पिलावे अथवा दोषबलाबल देखकर कामकरे ॥ १५३ ॥

१५४ पाषाणवज्ररसः (द्वितीयः)

द्विगन्धसूतस्त्रिदिनं विमृद्य
पुनर्नवाश्वेतयसुद्रवेण।
पुटेन मूषाकुहरे निवेश्य
कालक्षमानच्छगणैः प्रयत्नात् ॥ ६५१ ॥
समूलतरुस्य रसेन मर्द्यो
गोक्षूरतोयेन दिनत्रयञ्च।
पाषाणभिच्छर्करया च वल्ल-
द्वयोन्मितश्चाश्मरिरोगनुत्स्यात् ॥ ६५२ ॥

र., अश्मरीरोगे।

टि०—भावनाया मनुपाने च विशेषाल्पप्रयोगात् पृथक् पाठ-श्चैतदस्मि, अत्र समूलतरुस्य रसेनेति पद मत्संग्रहम्, तत्राऽऽरव्यानुप-स्याऽप्रसिद्धत्वात्। परन्तु तत्स्थाने गोपाल्कर्कटया (एरण्डककड़ी हिं०) मूल व्यवहरणीयम्। अश्मरीभेदने निष्कमने चाऽकृतशक्तिमत्त्वात्।

भाषा—प्रथमपाषाणवज्रकी चीजोंको पूर्ववत् मूषरयन्त्रमें पाकरर एरण्डककड़ी और गोखरूके रससे ३–३ रोज़ मर्दनकर ६ रत्तीकीमात्रा शक्करके साथदेनेसे अश्मरीरोग दूरहोताहै। इस-योगमें तरु नामकी वनस्पति आईहै वह प्रसिद्धनहींहै इसलिये एरण्डककड़ीसे कामलेना यह उससेकम काम नहीं करती ॥१५४॥

१५५ पाषाणवज्ररसः (तृतीयः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं श्वेतपौनर्नवद्रवैः।
भावनात्रितयं देयं रुद्ध्वा तं भूधरे पुटेत् ॥ ६५३ ॥
पाषाणभेदचूर्णन्तु समं संयोज्य मर्दयेत्।
निष्कमश्मरिकां हन्ति पूर्वोक्तादनुपानतः॥
योगवाहान् प्रयुञ्जीत रसानश्मरिशान्तये ॥ ६५४ ॥

र. नि., चि. सा, र. को, नि. र, यो. र., र. र., व. रा., रसायनसं., अश्मर्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना शुद्धगन्धक लेकर नीलवर्णकज्जली-कर सफेदपुनर्नवाके रससे ३ भावनाएं देकर भूधरयन्त्रमें पकाकर उसकी बराबर पाषाणभेदका चूर्ण मिलादे। इसमेंसे २ माशेकी मात्रा देकर एरण्डककड़ी की जड़कादिसे अथवा कुल्थीका क्वाथ पिलानेसे अश्मरीरोग नष्ट होताहै ॥ १५५ ॥

१५६ पिङ्गलेश्वररसः

भस्मसूतं विषं शुण्ठी वचा वह्निः फलत्रिकम्।
प्रसर्वाजं विडङ्गानि भृङ्गिभल्लातगन्धकम् ॥ ६५५ ॥
शिरित्तुल्यं कणातुल्यं सर्वमेकत्र मर्दयेत्।
त्रिफलाक्वाथसंयुक्तं कान्तपात्रे स्थितं निशि ॥६५६॥
कर्षमात्रं लिहेत्प्रातः सर्वकुष्ठनिवृत्तये।
षण्मासात्पलितं हन्ति रसोऽयं पिङ्गलेश्वरः ॥६५७॥

र. मु., चि. क., र., का, र. को, कुष्ठे।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धवत्सनाग, सोंठ, वच, चित्रकमूल, त्रिफला, पलासबीज, विडङ्ग, भंगरा, शुद्धभिलावां और गन्धक, ताम्रभस्म, पीपल ये सब समभाग लेकर चूर्णकर रक्खे। इस-मेंसे १ तोला दवाको २ तोले त्रिफलाके काढ़ेमें मिलाकर कान्तलोहके पात्रमें रखकर रातभर रहनेदे सुबहमें खावे। ऐसा ६ महीनेतक करनेसे समस्तकुष्ठ और वलीपलित नष्ट होतेहैं ॥१५६॥

१५७ पित्तकन्तनो रसः

सूतकञ्च मृततारभस्मकं
गन्धकेन सहितं समांशकम्।
मर्दितं हि खलु भृङ्गवारिणा
चाऽर्धयाममपि कुक्कुटे पुटे ॥ ६५८ ॥
पाचितं हि सकलं विचूर्णितं
लेहितं हि मधुशर्करायुतम्।
पित्तदोषशमनं मयोदितं
पित्तकन्तनमिदं प्रशस्यते ॥ ६५९ ॥

र.प्र.सु., र.म.मा., र.चं., पित्तरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, चांदीकीभस्म, शुद्धगन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेके रसमें १–२ रोज़ मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोने-पर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा शक्करमधुके साथ देनेसे पित्तोत्पन्न दोष शान्तहोताहै ॥ १५७ ॥

१५८ पित्तगजाऽङ्कुशो रसः

शुद्धगन्धकटङ्कञ्च तालकञ्च मनःशिला।
सर्वं हंसपदीद्रावैर्दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ ६६० ॥
वालुकायन्त्रके पाच्यं पट्यामान्तं निरुध्य च।
देया गुञ्जानुपानेन मधुपित्तं विनाशयेत् ॥ ६६१ ॥

व.रा., वै.चि., मधुपित्ते।

भाषा—शुद्धगन्धकऔर टङ्कण, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर हंसराजके रससे एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें ६ पहर पाककर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानके साथ देनेसे मधुपित्त नष्टहोताहै। मधुपित्तका लक्षण बसवराजीयमें देखलेना ॥१५८॥

१५९ पित्तप्रभञ्जनो रसः

प्रवालं माक्षिकं तुल्यं त्रिवारमार्द्रकवारिणा।
मर्दितं दुग्धसितया सेव्यं पित्तनिवारणे ॥ ६६२ ॥
मध्वाज्येन सितायुक्तं सेवितं वातपित्तनुत्।
पित्तप्रभञ्जनो योगः पित्तं नाशयति क्षणात् ॥ ६६३ ॥

र. च., पित्तरोगे।

भाषा—प्रवालभस्म और माक्षिकभस्म समभागलेकर अदरखकेरससे तीनभावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीकी-मात्रा शक्करमिलाहुए दूधकेसाथ देनेसे पित्तरोग नष्टहोताहै। मधु, घी और शक्करकेसाथ देनेसे वातपित्त नष्टहोताहै ॥१५९॥

१६० पित्तभञ्जनरसः

पारदं गन्धकं ताम्रं मुसलीरसमर्दितम्।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रके तथा ॥६६४॥

पचेद्विपक्कं च सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं हिङ्गुगुग्गुलुकुष्ठकम् ॥ ६६५ ॥
कटुत्रयञ्च त्रिफला गान्धारी जातिकाद्वयम् ।
दीप्यत्रयं त्रिफेनञ्च मूपाम्लं विषवत्सकम् ॥ ६६६ ॥
एलाद्वयञ्च सौभाग्यं कुबेरो वह्निमूलकम् ।
तिन्तिडीफलग्रन्थी च चूतं च दाडिमीफलम् ॥६६७॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
भावयेत्सप्तवारांश्च शृङ्गवेररसेन च ॥ ६६८ ॥
गुञ्जैकं मधुना लेह्यं यामे यामे च भक्षयेत् ।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु ग्रहणीं दुस्तरां तथा ॥६६९॥

व. रा, वै. चि., अम्लपित्ते । अस्मिन्योगे मानाया निष्का-र्धमितिमूले दृश्यते परन्तु *वस्तुयोगस्यातितीक्ष्णत्वान्निष्कार्ध-*स्थाने गुञ्जैकमिति पाठ कृतोऽस्ति

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, तांबेकाचूरा समभागलेकर मुसलीकेरससे २–३ रोजमर्दनकर सुखाकर सातकपड़मिट्टीकीहुई आतशी शीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पांचोंनमक, भुनाहींग, गूगल, कूठ, त्रिकटु, त्रिफला, भटकटैया, जायफल, जावित्री, दीप्यत्रय (अजवाइन देशी, खुरासानी और खरजवाइन), त्रिफेन (अहिफेन, समुद्रफेन और अम्बर) शुद्धसोमल, शुद्धवच्छनाग और इन्द्रजव, छोटी तथा बड़ी इलायची, सुहागा, करञ्जकेबीज, चित्रककी जड़, इमलीके फल, पिपलामूल, आमकी मज्जा, अनारदाना येसब समभाग लेकर कपडछान चूर्णकर अदरखके रससे ७ भावनाए देकर *सुखाकर रखछोड़े* । इसमेंसे १ रत्ती मधुकेसाथ पहर २ के अन्तर पर लेनेसे अम्लपित्त और दुस्तरग्रहणीरोग नष्टहोतेहैं ॥ १६० ॥

१६१ पित्तभञ्जीज्वराङ्कुशः

मृताऽभ्रके भूमिनिम्बक्वाथे देयात्सुभावनाः ।
सप्ताहं कृतमालस्य गुडूच्याश्च दिनत्रयम् ॥ ६७० ॥
तिक्तायां विंशतिदिनं ततो गजपुटे पचेत् ।
सप्तवारान् गजपुटे पाचनीयं भिषक्तमैः ॥ ६७१ ॥
रक्तिकापञ्चकं देयं पिप्पल्या ज्वरिताय वै ।
एष पित्तज्वरं हन्ति विषमाख्यं महाबलम् ॥ ६७२ ॥
जीर्णज्वरं बहुविधं चातुर्थादिज्वरं तथा ।
क्षीणानां बलकृच्चैव बालानां रोगनाशनः ॥ ६७३ ॥
गर्भिणीनां ज्वरहरः पित्तभञ्जी ज्वराङ्कुशः ।
पथ्यं दध्योदनं देयं ससितं मुद्गजं तथा ॥ ६७४ ॥
यूषो मांसरसो वाऽथ गोदुग्धमथवा भवेत् ।
सर्वपित्तविकाराणां विषमाणां निवारणः ॥ ६७५ ॥

र. म. मा , ना वि , ज्वराधिकारे ।

भाषा—अभ्रकभस्ममें चिरायतके काथकी ७ दिन, अमलतास और गिलोयकी ३–३ दिन, कुटकीके काथकी २० दिन भावनाए देकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटकर गजपुटकी आचदे । इसीतरह सात गजपुट देकर रखछोड़े । इसमेसे ५ रत्ती पीपलकेसाथ देनेसे पित्तप्रधान विषमज्वर नानाप्रकारका जीर्णज्वर, और चातुर्थकादि वारीकाज्वर नष्ट होताहै । क्षीणोंको बल देताहै बालकोंके तमामरोगोंको दूर करताहै । गर्भिणीके ज्वरको दूर करताहै । इसपर पथ्य शक्कर, दही, भात दूध अथवा मूंगका यूष अथवा मांसरस या केवल गोदुग्ध रोगीकी अव-स्थानुसार देना। समस्त पित्तविकारोंके लिये और विषमरोगोंके लिये यह अत्युत्तम औषध है ॥ १६१ ॥

१६२ पित्तभञ्जीरसः

व्योमपारदगन्धाश्मजयपालकटङ्कणान् ।
षड्विचन्द्ररसद्विद्विभागाञ्जम्भाम्भसा त्र्यहम् ॥६७६ ॥
कलायप्रमिताः कृत्वा गुटिकाः पित्तभञ्जिकाः ।
वितरेदामशूलादौ क्रिमिशूले विशेषतः ॥
पथ्यं तक्रौदनं चाऽत्र स्तम्भार्थे शीतला क्रिया ॥६७७॥

रसायनस , र चि , र. क , वै चि , नि र., र का , शूला-धिकारे। नि. र , वै चि , **पीडारीति नाम** । र. का , **शूल-भञ्जीति नाम** । क्वचिद् व्योमस्थाने व्योष गृहीतम् ।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा और सुहागा ये क्रमश ३–१–६–२–२ भाग लेकर नीलवर्णकज्ज-लीकर जभीरीके रससे ३ रोज मर्दनकर मटरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली योग्यताऽनुसार आमशूल और क्रिमिशूलोंमें देना इससे दस्तहोंगे, मात्रासे अधिकरेचन होनेपर छाछभात खानेको देकर तमाम शीतल-क्रिया करना ॥ १६२ ॥

१६३ पित्तमुद्गररसः

पारदं हिङ्गुलोत्थञ्च ह्यूर्ध्वपातनतो नयेत् ।
कुक्कुटाण्डरसाङ्गारटङ्कणक्षारमेव च ॥ ६७८ ॥
गन्धकस्य तथा भागो घृतेन परिमर्दयेत् ।
सिद्धं रसं समादाय जीरतोयेन दापयेत् ॥ ६७९ ॥
माषत्रयं प्रतिदिनं ग्रहणीरक्तदोषनुत् ।
ज्वरदाहविनाशश्च रक्तपित्तं नियच्छति ॥ ६८० ॥

र रा , रक्तपित्ते ।

भाषा—ऊर्ध्वपातनयन्त्रसे शिंगरिफमेंसे निकालाहुआपारा, कुक्कुटाण्डकीजर्दी, सुहागा और शुद्धगन्धक ये सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर अन्यचीजोंको मिलाकर थोड़ीदेर मर्दनकरे । गाढा होनेपर अन्दाजसे गायका घी डाल-कर फिर मर्दनकरे । गोलिया बनानेलायक हो तब गोलिया बनाकर रखछोड़े अथवा अवलेहरूपमें रक्खे । इसमेंसे ३ माशेकी मात्रा जीरेके पानीकेसाथ देनेसे ग्रहणीदोष, रक्तदोष, ज्वर, दाह और रक्तपित्त ये सब नष्ट होतेहैं ॥ १६३ ॥

१६४ पित्तलरसायनम्

रीतिकान्ताऽभ्रतालानि विडङ्गं त्र्यूषणं तिलाः ।
दीप्यचित्रकभल्लातमज्जानः सहदेविका ॥ ६८१ ॥

ब्रह्मवृक्षफलं विष्णुप्रियाया मूलमुत्तमम् ।
भ्रामराज्यसमायुक्तं निष्कमात्रं प्रयोजयेत् ॥ ६८२ ॥
दुग्धाशी सूर्यमाराध्य श्वित्रञ्जयति मण्डलात् ।
कासश्वासादिशमनं पित्तलस्य रसायनम् ॥ ६८३ ॥

नृ क , रसायने ।

भाषा—पीतल, कान्तलोह, अभ्रक, हरिताल इनकीभस्में, विडङ्ग, निसुन्डु, तिल, अजवाइन, चित्रकमूल, मिलावेकीमज्जा, सहदेवी, पलाशबीज, तुलसीकीजड, येसव समभाग लेकर कूट कपड़छानकर मधु और घीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशेकीमात्रालवे और केवल दूधपीकर सूर्यनारायणकी आराधना करे तो ४९ दिनमें श्वेतकुष्ठ और कासश्वासादि दूरहों ॥ १६४ ॥

१६५ पित्तविध्वंसनरसः
(भद्रकालीरस , वातसम्मोहन)

शुद्धं सूतं विषञ्चाऽभ्रं त्र्यूषणं गन्धटङ्कणम् ।
धूर्तबीजं सैन्धवञ्च तुल्यं तुल्यं विचूर्णितम् ॥ ६८४ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य कदलिद्रवमर्दितम् ।
वज्रमूषागतं कृत्वा वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ६८५ ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य माषमेवाऽनुपानतः ।
भक्षयेद्धर्मपित्ते तु सर्वपित्तनिवारणम् ॥ ६८६ ॥

व रा , वै चि , चर्मपित्ते ।

टि०—अस्य रसस्य वैद्यचिन्तामणौ ज्वर पाठे विन्यस्य कदलिद्रव स्थाने मत्स्यपित्तं निहितं तस्य नाम च भद्रकालीरस इति स्थापितं तत्राऽयं विचारः–पित्तशमनार्थं चेदयं सम्पादनीयस्तर्हि कारवल्लीद्रवभावना दातव्या, ज्वरार्थं नैतद्दाभ्यामपि भावनाया न काऽपि दोषः वातसम्मोहनमोऽपि इतरेवद्भ्यै तत्रैव विलासवात पठितः ।

भाषा—शुद्धपारा और बछनाग, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्धगन्धक, सुहागा और धतूरकेबीज, सैंधानमक येसब समभाग लेकर पाराणन्धककी कजलीकर तब चीजें बारीककरके मिलाकर जङ्गलीकरलोंके रससे मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें सम्पुटकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें दाप हर पाकहो पर वालू अधिक न दे केवल २–२ अङ्गुलही चारों तरफ वालूसे टकारहे अन्यथा दोपहरमें पाक न होगा । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा समयोचितानुपानके साथ देनेसे चर्मपित्तादि समस्तपित्तविकार नष्टहोतेहैं ॥ १६६ ॥

१६६ पित्ताऽग्निवारिदरसः

अयोमहेशोद्भववज्ररस्म
विभावयेद्दाडिमगोस्तनीजैः ।
रसैस्त्रिधाऽय युगवल्लमात्र-
सितापयोभिर्विनिहन्ति पित्तम् ॥ ६८७ ॥

रस स , पित्तरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्धपारा, वज्रभस्म, सुवर्णभस्म यसब समभागलेकर १–२ पहर मर्दनकर अनार और दाखकरससे ३–३ भावनाए देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करके पानीके साथदेनेसे समस्तपित्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १६६ ॥

१६७ पित्ताऽङ्कुशरसः

शुद्धपारदगन्धञ्च टङ्कणञ्चाऽभ्रभस्मकम् ।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥६८८॥
भद्रमुस्तकषायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पुटमेकन्तु भूधरम् ॥ ६८९ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
मूर्च्छापित्तविनाशाय सर्वपैत्त्यनिवारणम् ॥६९० ॥

वै चि , पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक औरसुहागा, अभ्रकभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर नागरमोथेके काढेकी ३ रोज भावना देकर सुखाकर अच्छीतरह कपडमिट्टीकीहुई आतशीशी शीशीमें भरके भूधरयन्त्रमें पुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर १ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे मूर्च्छापित्त प्रभृति समस्त पित्तविकारोंको यह नष्ट करताहै ॥ १६७ ॥

१६८ पित्तान्तकरसः (प्रथमः)

जातीकोषफले मांसी कुष्ठं तालीसपत्रकम् ।
माक्षिकं मृतलोहञ्च अभ्रं दिव्यं समांशिकम् ॥६९१॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं सम निष्पिष्य वारिणा ।
द्विगुञ्जाभा वटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी ॥ ६९२ ॥
कोष्ठाश्रितञ्च यत्पित्तं शाखाश्रितमथाऽपि वा ।
शूलञ्चैवाऽम्लपित्तञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ ६९३ ॥
दुर्नामभ्रान्तिवान्तीश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत् ।
रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः ॥६९४॥

र स , र सु , पित्तरोगे ।

भाषा—जायफल, जाविन्त्री, जटामासी, कूठ, तालीसपत्र, सोनामाखी, लोह और अभ्रकभस्म सब समभाग लेकर इनकी बराबर रजतभस्म डालकर पानीकेसाथ पीसकर दोदो रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे कोष्ठ अथवा शाखाश्रित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, बवासीर, वान्ति, भ्रान्ति, इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १६८ ॥

१६९ पित्तान्तकरसः (वातपित्तान्तक) (द्वितीय)

मृतसूताभ्रमुण्डार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गन्धकं मर्दयेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृताद्रवैः ॥ ६९५ ॥
जलमण्डपजे पाठाद्रवे क्षीरविदारिजे ।
मर्दयेच्च दिनं खल्वे सिताक्षौद्रयुता वटी ॥ ६९६ ॥
वल्लमात्रा निहन्त्याशु पित्तं पित्तज्वरं क्षयम् ।
दाहतृष्णाभ्रमांश्चोषं हन्ति पित्तान्तको रसः ॥६९७॥

सिताक्षीरं पिबेच्चानु यष्टिकाथं सिताऽन्वितम् ।
पिबेद्वा पित्तशान्त्यर्थं शीततोयेन चालकम् ॥ ६९८ ॥

व. रा., र. र. कौ , र. क , र. सं , र. र , र. चं , र. क. ल., र. र. स., र. को., वै चि , चि. क , पित्तरोगे ।

टि०-र सं , र र , स्तयोर्ग्रन्थयोस्तथा च रसचन्द्रांशौ द्वितीयस्थाने वातपित्तान्तक इति नाम । र. र. कौ , र. र. स , एतयो ग्रन्थयो रस-सारपित्तान्तक नामेति । मनपित्तान्तकनाम्नि अत्मष्टपने द्राक्षैरित्यस्य स्थाने धात्रीस्वरसविदार्यैरिनिदृश्यते । मुनमुष्टाभ्रमुण्डार्कइत्यत्र मुण्डस्थाने मुस्ता निहिता दृश्यते, अनत्स्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव समुचित । धात्रीस्वना वर्योर्भावनाविशेषे मूलद्रव्ये च मुस्तानिर्देशनेनाऽपि नाऽस्ति विप्रनिपत्ति ।

भाषा—पारा, अभ्रक, मुण्ड, ताम्र, लोह, माक्षिक, हरिताल इनसबकी भस्में और शुद्धगन्धक समभाग लेकर बारीक पीसकर मुलहटी, द्राक्ष, गिलोय, सेवाल, पाठा, क्षीरविदारी, इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंमे १-१ रोज़ मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और शहदकेसाथ मिलाकर खानेसे पित्त, पित्तज्वर, क्षय, दाह, तृषा ये सब नष्ट होतेहैं । इसको खानेकेबाद शक्कर डालाहुआ दूध अथवा मुलहठीका क्वाथ पीवे अथवा ठंढे पानीकेसाथ सुगन्धवाला मिलाकर पीवे ॥ १६९ ॥

१७० पित्तान्तकरसः (सर्वपित्तविनाशकः) (तृतीयः)

रसेन्द्रो वत्सनाभश्च गगनं दरदं बलिः ।
तालं तुल्यानि सर्वाणि खल्वे कज्जलिकां कुरु ॥६९९॥
दिनैकं भृङ्गनीरेण मर्दयेच्च ततो भिषक् ।
कूपिकोदरमध्यस्थं दिनमेकं विपाचयेत् ॥ ७०० ॥
मात्रा चणोन्मिता योज्या पित्तजेषु गदेषु च ।
रसः पित्तान्तको नाम पित्तरोगनिकृन्तनः ॥ ७०१ ॥

रसायनसं , वै. चि , व. रा., पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और बछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धशिंगरिफ, गन्धक और हरिताल सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें ये सब चीजें मिलाकर भंगरके रसमें एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें भरके १ रोज वालुकायन्त्रमें पकाकर रखछोड़े । इसमेंसे चनेप्रमाणमात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे समस्तपित्तरोग दूर होतेहैं ॥ १७० ॥

१७१ पिनाकपाणिरसः

वङ्गताप्यं सूतगन्धं नागांशाष्टङ्कणः शिला ।
शिलाजतु द्वितीयांशा विंशतिश्चाऽऽयस रविः ॥७०२॥
तृतीयांशस्तिन्तिडीजं त्रिशांशैश्च विचूर्णयेत् ।
कपित्थकाञ्चनरसैर्भावितो वल्लमात्रकः ॥ ७०३ ॥
यष्ट्या पाण्डूदरप्लीहगुल्मकृच्छ्रविनाशनः ।
पिनाकपाणिनामाऽयं रसो योगीन्द्रसूचित. ॥ ७०४ ॥

र श , पाण्डुरोगे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्धसोनामाखी, पारा और गन्धक १-१ भाग, शुद्धसुहागा और मैनसिल $\frac{1}{8}$ आठवा भाग, शिलाजीत २ भा , लोहभस्म बीसवा $\frac{1}{20}$ भा, ताम्रभस्म तीसरा $\frac{1}{3}$ भाग, इमली तीसवा $\frac{1}{30}$ भाग लेकर सबको इकट्ठा मिलाय कैथ और कचनारके रससे भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुलहठीकेसाथ लेनेसे पाण्डु, आठप्रकारके उदररोग, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १७१ ॥

१७२ पिप्पलीखण्डः

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ।
अर्द्धाऽऽढकं घृतं गव्यं शुद्धं खण्डाऽऽढकं तथा ॥७०५॥
विपचेत्पाकवद्वैद्यः पश्चाच्चैतानि दापयेत् ।
चातुर्जातं त्रयं व्योषं श्रीखण्डं नलदाऽम्बुदे ॥ ७०६ ॥
कर्पूरं जातिपत्रञ्च कुङ्कुमं मधुकं नतम् ।
पृथक् शुक्तिमितं सर्वं चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत् ॥७०७॥
मृताऽभ्रं कुडवोन्मानं मधुनः कुडवं तथा ।
विमिश्र्य नित्यसेवेत बल्यं वाजीकरं परम् ॥ ७०८ ॥
दाहं तृष्णां भ्रमं छर्दिं मूर्च्छामग्निवधञ्जयेत् ।
कासं श्वासं क्षयं पाण्डुं प्रमेहं विषमज्वरम् ।
जयेदोजो बलं कुर्यादश्विभ्यां चाऽतिपूजितम् ॥७०९॥

ना. वि , श्वासे ।

भाषा—एकसेर पीपल लेकर चारसेर दूधमें, पकावे, मावा होजानेपर गायका घी २ सेर और शक्कर ४ सेर डालकर चाशनी तैयारकरे फिर तज, पत्रज, इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल, नारियल, खस, नागरमोथा, शुद्धकपूर, जाविन्री, केशर, मुलहटी और तगर २-२ कर्ष, अभ्रकभस्म १६ कर्ष, मधु १६ कर्ष येसब उसमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबलानुसार एकएक अथवा दोदो तोलेकी मात्रा लेकर दूध पीनेसे यह बलको बढाताहै वाजीकरहै दाह, तृषा, भ्रम, वमन, मूर्च्छा मन्दाग्नि, कास, श्वास, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, विषमज्वर, और ओज क्षय इनसबको दूरकरताहै ॥ १७२ ॥

१७३ पिप्पलीपाकः (बृहन्) (प्रथमः)

प्रस्थन्तु पिप्पलीचूर्णं क्षीरे पलशतद्वये ।
पचेन्मन्दाग्निना धीमान् घृतप्रस्थेन संयुतम् ॥७१०॥
घनीभूते मधुनिभे सुगन्धीनि विनिःक्षिपेत् ।
खण्डप्रस्थत्रयं तस्मिन्मधुप्रस्थाऽर्द्धमेव च ॥ ७११ ॥
सुनिष्पन्नेऽवलेहे तु द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
चातुर्जातं पञ्चकोलं मरिचं तगरं तथा ॥ ७१२ ॥
जातीफलं जातिपत्री देवपुष्पं कुबेरदृक् ।
आकल्लकाऽग्निशोपञ्च तगरं जीरकद्वयम् ॥ ७१३ ॥
शतपुष्पा शटी धान्यं विडङ्गं ताम्रमेव च ।
सुवर्णमाक्षिकं लोहं प्रत्येकन्तु पलार्धकम् ॥ ७१४ ॥
तुगाकर्पूरयोः शुक्तिश्चूर्णमेषां विनिक्षिपेत् ।
सुनिष्पन्नोऽवलेहस्तु स्थाप्योऽयं शुभभाजने ॥७१५॥
सदा सेव्यो नरैस्त्वेष आयुर्मेधाऽभिकाङ्क्षिभिः ।
शुक्रवृद्धिं करोत्याशु वाजीकरणमुत्तमम् ॥ ७१६ ॥

वलीपलितनिर्मुक्तः पूर्णधातुः प्रजायते ।
अनेन सेव्यमानेन स्त्रीशतं रमयेन्नरः ॥ ७१७ ॥
सर्वरोगविनिर्मुक्तो दृढकायो महाबली ।
तेजोवृद्धिं करोत्याशु कन्दर्पाऽऽक्रान्तरूपकः ॥ ६१८ ॥
यथाबलं नरैः सेव्यः स्त्रीपुंभिर्बालवृद्धकैः ।
अशीतिं वातजान्रोगान्नाशयत्येव वेगतः ॥ ७१९ ॥
तथाऽष्टादश कुष्ठानि विंशन्मेहमरोचकम् ।
गुल्मं प्लीहं तथा श्वासं कासञ्च तमकादिकम् ७२०
वातरक्तं रक्तपित्तं तथाऽष्टावुदराणि च ।
महाव्याधिमपस्मारमुन्मादं नाशयत्यपि ॥ ७२१ ॥
गुणानन्यांश्च कुर्याद्धि रोगानीकं विनाशयेत् ।
नराणाममृतं ह्येष देवानाञ्च यथा सुधा ॥ ७२२ ॥

पा. व., वीर्यवृद्धौ ।

भाषा—एकसेर पीपलके चूर्णको ८०० तोले दूधमें मन्द आंचसे पकावे, पाक होतेसमय १ सेर घी डालदेवे । मधुकी तरह गाढा होनेपर शक्कर ३ सेर और मधु ½ सेर डालकर पकावे । चासनी तैयार होनेपर तज, पत्रज, इलायची, पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ), मरिच, तगर, जायफल, जाविनी, लौंग, करञ्ज, अकलकरा, समुद्रशोष, तगर, स्याहसफेदजीरा, सौंफ, कचूर, धनिया, विडङ्ग, ताम्रभस्म, सोनामाखी, लोहभस्म, शुद्धकपूर और वंसलोचन ये सब २–२ तोले बारीक चूर्णकर चासनीमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े । सातदिन बीतनेके बाद अग्निबल देखकर १–१ अथवा २–२ तोले खाकर दूध पीनेमें आयु, मेधा, शुक्र इनकी वृद्धि और उत्तम वाजीकरण होताहै । वलीपलितसे निर्मुक्त होकर समस्त धातुओंसे शरीर परिपूर्ण हो जाताहै इसके सेवनसे ८० वातरोग, १८ प्रकारके कुष्ठ, २० प्रकारके प्रमेह, अरुचि, गुल्म, प्लीहा, तमकादिश्वास, कास, वातरक्त, रक्तपित्त, ८ उदररोग, अपस्मार, उन्माद, इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १७३ ॥

१७४ पिप्पलीपाकः (द्वितीयः)

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ।
प्रस्थार्द्धकं घृतं दिव्यं शुद्धखण्डाढकं तथा ॥ ७२३ ॥
लेहं पचेद्धनं तावद्यावत्पाकं सुपाचितम् ।
ततो द्रव्याणि चैतानि सुश्लक्ष्णानि प्रयोजयेत् ॥ ७२४ ॥
एलात्वक्नागपुष्पञ्च लवङ्गं नलदं तथा ।
नागरं पिप्पली मुस्ता श्रीखण्डं मरिचं नतम् ॥ ७२५ ॥
कटुत्रिकं जातिपत्री कुङ्कुमं मधुकं तिलाः ।
प्रत्येकं चाऽक्षमात्राणि रसभस्मयुतानि च ॥ ७२६ ॥
सर्वैः समांशं तच्चूर्णं लेहयन्साधु साधयेत् ।
मधुनः कुडवं दत्त्वा खादेदग्निबलं यथा ॥ ७२७ ॥
वृष्यं पुष्टिकरं बल्यं चक्षुष्यश्चाऽग्निवर्धनम् ।
बल्यं दार्ढ्यकरश्चैव छर्दिमूर्च्छाभ्रमापहम् ॥ ७२८ ॥
दाहतृष्णाप्रशमनमोजस्यं धातुवर्धनम् ।
बोधनं चेन्द्रियाणां वै प्रमेहान्हन्ति विंशतिम् ॥ ७२९ ॥
दोषत्रयप्रशमनं क्षयरोगविनाशनम् ।
वीर्यस्तम्भकरश्चैव तथा वाजीकरं परम् ॥
वातान्तकरणं बल्यं पिप्पलीपाकसञ्ज्ञकम् ॥ ७३० ॥

पा. व , वाजीकरणे ।

भाषा—१ सेरपीपलके चूर्णको चौगुने दूधमें पकावे । मावाहोनेपर घी आधासेर, शक्कर ४ सेर डालकर चासनीहोनेतक पकाकर इलायची, तज, नागकेसर, लौंग, खस, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, नारियल, मरिच, तगर, त्रिकटु, जाविनी, केशर, मुलहठी, तिल और पारदभस्म येसब १–१ तोला डालकर २॥ तारकी चासनी बनाकर उतारले । ठंढाहोनेपर पावभर शहद मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल देखकर मात्रा खाकर ऊपरसे दूधपीनेसे तृप्ता, पुष्टि, रुचि, नेत्रज्योति और अग्निको बढ़ाताहै । बल और दृढ़ताको करताहै छर्दि, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, तृष्णा, धातुक्षीणता इन्द्रियदौर्बल्य, २० प्रकारके प्रमेह, क्षय, धातुका पतलापन, वातवृद्धि इनसबको यह नष्टकर शरीरको मजबूत बनाताहै ॥ १७४ ॥

१७५ पिप्पलीपाकः (तृतीयः)

अर्द्धद्रोणं शुभं दुग्धं कणाप्रस्थार्द्धमेव च ।
दर्वीसंघट्टसान्द्रे तु खण्डप्रस्थद्वयान्वितम् ॥ ७३१ ॥
वानरीमुसलीकन्दं चातुर्जातकरोचना ।
करभो देवकुसुमं मस्तकी करहाटकम् ॥ ७३२ ॥
ग्रन्थिकं नागरं धान्यं शटी खदिरसारकम् ।
लोहं प्रत्येककर्षकमेतान्येव विचूर्णयेत् ॥ ७३३ ॥
घनसारोऽर्द्धकर्षेण शीतले क्षौद्रकौडवम् ।
क्षिपेत्कणाऽवलेहोऽयं प्रमेहार्शोबलक्षयान् ॥
कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां छर्दिं मूर्च्छाक्षयञ्जयेत् ७३४

चि. र. भ ,

भाषा—आठसेर दूधमें ½ सेर पीपल डालकर पकावे, जब कड़छीमें लपनेलगे तब खांड २ सेर, छिलकेरहित केवाचकेबीज, दोनोंमुसली, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, गोरोचन, ऊंटकटालेबीज, लौंग, मस्तगी, अकरकरा, पिपलामूल, सोंठ, धनियां, कचूर, कत्था, लोहभस्म ये प्रत्येक १–१ तोला मिलाकर आधातोला शुद्धकपूरमिलादे । एकदम ठंढाहोजानेपर १६ तोले शहद मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल देखकर १–२ तोलेकी मात्रा लेकर दूध पीनेसे प्रमेह, बवासीर, धातुक्षय, ओज क्षय, कास, श्वास, क्षय, हिक्का, छर्दि, और मूर्च्छा येसब नष्टहोतेहैं १७५

१७६ पिप्पलीलोहयोगः

पिप्पलीलोहचूर्णञ्च पयसा प्लीहनाशनम् ।
मन्दाग्निगुल्मयातांश्च जयेन्नित्यनिषेवणात् ॥ ७३५ ॥

ग नि., उदररोगे ।

भाषा—दो बड़ीपीपलको पीसकर ३ रत्ती लोहभस्म मिलाकर दूधकेसाथ पीजावे। ऐसा २१ रोजतक करनेसे जीर्णज्वर, असाध्यप्लीहा और अरुचि नष्टहोतेहैं। प्रतिदिन सेवन रखनेसे मन्दाग्नि, गुल्म, वातरोग, येसब दूरहोतेहैं ॥ १७६ ॥

१७७ पिप्पल्यादिरसायनम् ।

पिप्पल्या दश षट् पलं मरिचजं भार्ङ्गीविडङ्गाह्वयम्,
विश्वाजाजिचतुष्पलं दहनकं भृङ्गीरजश्चव्यकम् ।
लोहग्रन्थि पलद्वयं सितपलातोऽष्टौ मधुमस्यकौ,
तत्सर्वं परियोज्य धान्यपुटके पक्षस्थितं सेवयेत् ७३६
कासश्वासौ च मन्दाग्निं क्षयं पाण्डुमरोचकम् ।
हन्याद्दुःस्वप्नविषमं पिप्पल्यादिरसायनम् ॥ ७३७ ॥

वै चि, श्वासश्वासे।

भाषा—पीपल १० पल, मिर्चे ६ पल, भारङ्गी, विडङ्ग, सोंठ और जीरा ४-४ पल चित्रकमूल, भंगरा चव्य, लोहभस्म, पिपलामूल २-२ पल, मिश्री ८ पल, मधु ३२ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय मुहर-कर अनाजकी राशिमें रखदे। १५ दिनके बाद निकालकर अभियल देखकर एकएकतोला खानेसे काम, श्वास, मन्दाग्नि, क्षय, पाण्डु, अरुचि, और खराबस्वप्न का आना येसब नष्टहोतेहैं ॥ १७७ ॥

१७८ पिप्पल्यादिलोहम् (प्रथमम्)

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलाऽस्थिमधुशर्करा-
विडङ्गपुष्करै र्युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणाम् ॥
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः ॥७३८॥

र स, नि र, ध, र र, भै र, र सु, र च, र कौ, र. को, र चि, र सि, र क, हिक्काश्वासे।

भाषा—पीपल, आवला, द्राक्ष, बेरकीगिरी, मधु, शक्कर विडङ्ग, पोहकरमूल, लोहभस्म येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ मासे मधु अथवा दूधके साथ लेनेसे भयङ्कर छर्दि, हिचकी और प्यास ये ३ रात्रिमें नष्टहोतेहैं ॥ १७८ ॥

१७९ पिप्पल्यादिलोहम् (द्वितीयम्)

पिप्पलीमूलचित्राऽभ्रत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवम् ।
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम् ॥ ७३९ ॥

र स, र सु, र चि, र र, उदराऽधिकारे।

भाषा—पीपलामूल, चित्रक, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्चे, पीपल, त्रिफला, तज, पत्रज, इलायची, शुद्धकपूर और सेंधव येसब समभाग, लेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ३ या ४ रत्तीकी मात्रा योग्यतानुसार मधु अथवा दूधके साथ देनेसे समस्त उदररोग दूरहोतेहैं ॥ १७९ ॥

१८० पिप्पल्यादिवटी (मधुवातारि·)

पिप्पली पिप्पलीमूलं हिङ्गुलश्च शिलाजतु ।
गुग्गुलु वर्धमानश्च माक्षिकेण गुडेन वा ॥ ७४० ॥
पथ्याशुण्ठ्यमृताकाथे पिप्पलीचूर्णमिश्रितम् ।
भक्षयेन्निष्कमात्रन्तु मधुवातं विनाशयेत् ॥ ७४१ ॥

वै चि, व रा, मधुवाते।

भाषा—पीपल, पिपलामूल, शुद्धशिंगरिफ, शिलाजतु, गूगल, एरण्डकी जड ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर मधु अथवा गुडके साथ ४-४ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली हर्र, सोंठ, गिलोय, इनकेकाढेमें पीपलके चूर्णका प्रक्षेप देकर ऊपर पीनेसे मधुवात नष्ट होताहै ॥१८०॥

१८१ पीतकं चूर्णम् (प्रथमम्)

पटोलदार्वीमधुकं प्रियङ्ग्वतिविषाघनम् ।
सनागपुष्पं त्रायन्ती भूनिम्बं तिक्तरोहिणी ॥ ७४२ ॥
बिभीतकं दाडिमत्वग्धरितालं मनःशिला ।
समांशानि त्रिभागांशं सशैलेय रसाञ्जनम् ॥ ७४३ ॥
पीतकं चूर्णमेतद्धि मधुनाक्तं प्रतिसारणम् ।
दन्तमूलगतास्योष्ठजिह्वातालुविकारनुत् ॥ ७४४ ॥

न नि, दन्तरोगे।

टि०-यद्यप्ययं योगो ग्रन्थकारेण प्रतिसारणे नियुक्तस्तथाऽपि मधुनैऽस्य प्रयोगाज्जीर्णज्वरग्रहणीप्रतिश्यायाऽतिसारकासश्वासादयश्शीघ्रमुपशान्तिं यास्यन्तीति रहस्य न विस्मरणीयम्।

भाषा—पटोलपत्र, मुलहठी, प्रियङ्गु, अतीस, नागरमोथा, नागकेसर, त्रायमाण, चिरायता, कुटकी, बहेडे और अनारकी छाल, हरिताल, मैनसिल ये सब १-१ भाग, शिलाजीत, छड़ीला और रसौत तीसरा भाग मिलाकर रखछोडे। इसका मधुमें मिलाकर मञ्जन करनेसे दन्तमूल, मुह, ओष्ठ, जिह्वा, तालु इनके विकारोंको यह नष्ट करताहै। यद्यपि यहयोग ग्रन्थकारने दन्तमञ्जनरूपसे लिखाहै परन्तु इसको समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह जीर्णज्वर, सङ्ग्रहणी, प्रतिश्याय, अतिसार, श्वास कास इत्यादिरोगोंको नष्ट करेगा। खानेके लिये इसको बनाना हो तो हरिताल और मैनशिलकी भस्म डालना। भस्म न मिलसके तो शुद्धकरके देना ॥ १८१ ॥

१८२ पीतकं चूर्णम् (द्वितीयम्)

मनःशिला यवक्षारं हरितालं ससैन्धवम् ।
दार्वी त्वक् चेति तच्चूर्णं माक्षिकेण समायुतम् ७४५
मूर्छितं घृतमण्डेन कण्ठरोगेषु धारयेत् ।
मुखरोगेषु च श्रेष्ठं पीतकं नाम कीर्तितम् ॥ ७४६ ॥

यो म, वृ मा, र का, भै र, ध, र र, टो, च स, यो त, मुखरोगे।

भाषा—मैनसिल, यवक्षार, हरिताल, सैन्धव, दारुहल्दीकी छाल, इन सबका बारीकचूर्णकर घी और मधुमें मिलाकर मुखमें रखनेसे मुखके समस्तरोग दूर होतेहैं ॥ १८२ ॥

१८२½ पीतकं चूर्णम्

कुष्ठं दार्वी रोध्रमन्द समङ्गा ।
पाठा तिक्ता तेजिनी पीतिका च ॥

न्चूर्ण शस्तं घर्षणं तद् द्विजानां।
रक्तस्रावं हन्तिकण्डूं रुजञ्च ॥

ग नि.,

भाषा—कुठ, दारुहल्दी, लोध, नागरमोथा, मजीठ, पाठा, कुटकी तेजबल्की छाल अथवा तुम्बुल शुद्ध मैनशिल और हरताल सब समभाग लेकर चूर्ण बना रक्खे सुबह साम इसके मञ्जनसे दांतोंसे लोहिका जाना खुजली और पीडा ये सब नष्ट होतेहैं।

१८३ पीतमृगाङ्करसः (मस्कमृगाङ्कः)

संशुद्धं पारदञ्चैव सुशुद्धं गन्धकं भवेत्।
वङ्गं शुद्धं समादाय नवसागरमेव च ॥ ७४७ ॥
समभागानि सर्वाणि मर्दयित्वा सुखल्वके।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य पावकेस्थापयेद्बुधः॥ ७४८ ॥
मुखे मुद्रा च नो देया धूमं संलक्षयेत्ततः।
निर्धूमे जायमाने तु सिद्धः पीतमृगाङ्कः ॥ ७४९ ॥
मधुमेहन्तु मेहानां गणं नाशयते ध्रुवम्।
मधुना भक्षयेच्चैव सूक्ष्मैलाचूर्णकेन च ॥
रससागरसिद्धान्ते सुश्रेष्ठं स्वर्णभस्म तत् ॥ ७५० ॥

र च, प्रमेहे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक वङ्ग और नवसादर समभाग लेकर वङ्गको गलाकर पारेमें डालदे समभागसेन्धानमक और नीबूरस डालके खरल करे काला होनेपर पानी फेंकदे और दूसरानमक और नीबूका रस डालके घोटे काला होनेपर फेंकदे एसे वारंवार करे जब कालापन दूर हो जाय तो पिष्टि का पानी सुखाकर सबचीजोंकेसाथ चारपहर मर्दनकर आतशी शीशीमें भरके चूल्हेपर रखदे, मुंहको खुला रहनेदे, भीतरसे गन्धक तथा नवसादरका धूआ निकलना बन्दहोजाय तभी अग्नि निकाललें अथवा वैसेही अङ्गारोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीको फोड़कर अन्दरसे रसको निकालले यह एकदम सुवर्णके रङ्गका निकलेगा। इसकी २-२ रत्ती मधुकेसाथ अथवा इलायचीके चूर्णकेसाथ देनेसे यह मधुमेहको नष्ट करताहै । इसको लोग सुवर्णभस्म कहकर अज्ञलोगोंको दियाकरतेहैं कितनेही लोग स्वर्णमृगाङ्कके नामसे व्यवहार करतेहैं ॥ १८३ ॥

१८४ पीयूषघनरसः (प्रथमः)

हेमाऽभ्रताराणि मृतानि सूते
दत्त्वा तु सूतेन समं च गन्धम्।
गन्धेन तुल्यं दरदञ्च दत्त्वाऽ-
मृतारसेनैकदिनं विमर्द्य ॥ ७५१ ॥
कौरण्टभृङ्गाऽग्निविषैः दिनैकं
.सूतेन तुल्येऽथ विनिक्षिपेत्तु।
पुटे सुताम्रस्य मृदा च लिप्त्वा
सामुद्रपूर्णेऽथ पुटेत भाण्डे ॥ ७५२ ॥
ससम्पुटं तच्च विमर्द्य यामं
गुडूचिकात्र्यूषणभृङ्गवेरैः।
ददीत वल्लं गदिताऽनुपाने
ज्वरेषु पीयूषघनो रसेन्द्रः ॥ ७५३ ॥

र.दी.,र चं., ज्वराधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक,रजत इनकीभस्म, शुद्ध पारा, गन्धक और शिंगरिफ सब सममागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर सब चीजें मिलाकर गिलोयके स्वरस अथवा क्वाथसे एकरोज़ मर्दनकर कटसरैया, पीतकटसरैया, भंगरा, चित्रकमूल और बछनाग इनप्रत्येकके स्वरस अथवा काढेमें १-१ रोज़ मर्दनकर पारेकीबराबरके तांबेके सम्पुटमें रखकर ३-४ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रखकर ४ पहरकी आंच देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती गिलोय, त्रिकटु, अदरख यथोचित इनकेसाथ अथवा जैसी ज्वरचूडामणिरसमें कहेहुए अनुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ १८४ ॥

१८५ पीयूषघनरसः (द्वितीय)

गन्धं रसेन्द्रं दरदञ्च मुक्तां
विमर्द्य ताम्रस्य पुटे पुटेत।
पूर्वप्रकारेण गतौषधीभि-
र्विमर्दितस्याऽथ ददीत वल्लम् ॥ ७५४ ॥
ज्वरेषु सर्वेषु यथाऽनुपानैः
शूलेषु सर्वेष्वपि मान्द्यकार्श्ये।
शीतज्वरे श्रीतुलसीरसेन
पिष्ट्वा मरीचानि ददीत वल्लम् ॥ ७५५ ॥
नीरस्य पादेन नियोज्य दुग्धं
कुस्तुम्बुरीनीरयुतं पचेत।
दुग्धाऽवशेषं कणया युतञ्च
ददीत चोष्णज्वरनाशनाय ॥ ७५६ ॥
ऐकाहिके तण्डुलवारिपिष्टं
ददीत मेघध्वनिमूलचूर्णम्।
चातुर्थिकादौ विजयां स्वशक्ति-
प्रमाणयुक्तांश्च कटुत्रयेण ॥ ७५७ ॥
पित्तोत्तरे चामलशर्कराभ्यां
गव्येन दुग्धेन घृतेन पक्वम्।
धत्तूरबीजं मृतशुभ्रमभ्रं
ददीत वा तण्डुलवारिणा वा ॥ ७५८ ॥
गोजिह्विकामूलरसैर्मृतस्य
ताम्रस्य गुञ्जा च विरेचनाय।
शुण्ठीगुडूचीन्द्रयवाम्बुवाह-
भूनिम्बधान्यातिविषाकषायम् ॥
सर्वाऽतिसारेषु नियोजयेच्च
ज्वरेषु सर्वेष्वपि चारनालैः ॥ ७५९ ॥

र.च, र.दी., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, शिंगरिफ और मोती समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पूर्वोक्तरसकी तरह औषधोंके स्वरसोंमें मर्दनकर पारेकी बराबरके ताम्रसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देकर निकालले। इसमेंसे २–२ रत्ती पूर्वोक्तानुपानसे देनेसे समस्तज्वर, शूल, अग्निमान्द्य इनको यह नष्ट करताहै। शीतज्वरमें तुलसीके रससे १ माशा मरिचकेसाथ ३ रत्ती मिलाकर देवे। पानीमें चतुर्थांश दूध मिलाकर उसमें आधातोला धनिया डालकर पकावे। जब पानी जलकर दूधमात्र रहजाय तब पीपल डालकर देनेसे उष्णज्वरका नाश होताहै। ऐकाहिक ज्वरमें तुलसीके रसकेसाथ इसको देकर ऊपरसे चावलके पानीमें १ तोला कटेवाली चौलाईकी जड़ पीसकर देवे। चातुर्थिकादिज्वरोंमें रोगीकी शक्तिके अनुसार त्रिकटु और भांगकेसाथ देवे। पित्तप्रधानज्वरमें आवलेके चूर्ण औरशक्करकेसाथ देकर ऊपरसे घृतयुक्त पकाया हुआ दूध दे, अथवा शुद्ध धतूरेके बीजोंके ३ रत्ती चूर्णकेसाथ ३ रत्ती अभ्रकको देकर ऊपरसे चावलोंका धोवन पिलावे। गोभीकी जड़के रससे मरेहुए तांबेकी १ रत्ती देनेसे रेचन होताहै। सोंठ, गिलोय, इन्द्रजव, नागरमोथा, चिरायता, धनिया, अतीस, इनके काढेके साथ देनेसे समस्त अतीसार नष्ट होतेहैं। समस्तज्वरोंमें खट्टी काजीकेसाथ देनेसे भी लाभ होताहै ॥ १८५ ॥

१८६ पीयूषवल्लीरसः

सूतमभ्रं गन्धकञ्च तारं लौहं सटङ्कणम्।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक्पृथक् ॥ ७६० ॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठाजीरकधान्यकम्।
समङ्गाऽतिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥ ७६१ ॥
जातीफलं विश्वबिल्वं कनकं दाडिमीच्छदम्।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥ ७६२ ॥
भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः।
चणकाभा वटी कार्या छागीदुग्धेन पेषिता ॥ ७६३ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं दुग्धबिल्वं समं गुडैः।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरजामपि ॥ ७६४॥
आमसम्पाचनो सम्यग्वह्निवृद्धिकरस्तथा।
पीयूषवल्ली नामाऽयं ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ७६५ ॥

र स. मै. र, र. इ, ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अभ्रक, रजत औरलोहभस्म, भुनासुहागा, रसाञ्जन और माक्षिक ४–४ माशे, लवङ्ग, लालचन्दन, नागरमोथा, पाठा, जीरा, धनिया, मजीठ, अतीस, लोध, कुटज, इन्द्रजव, तज, जायफल, सोंठ, बेल, शुद्ध धतूरेकेबीज, अनारकीछाल, लज्जालु, धावड़ीके फूल और कुठ येप्रत्येक पारेकी बराबर डालकर काले भंगरेके रससे मर्दनकर सुखाले। फिर बकरीके दूधसे पीसकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली देकर बेलकी गिरी समभाग गुडकेसाथ मिलाकर ३ माशे देनेसे सबप्रकारके अतीसार और पुरानी संग्रहणी नष्टहोतेहैं। इसके देनेसे आमका परिपाक होताहै और अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ १८६ ॥

१८७ पीयूषसागररसः

नागं वङ्गञ्च कान्तञ्च गगनं हेम सूतकम्।
दरदं टङ्कणं ताम्रं समं सर्वं विमर्दयेत् ॥ ७६६ ॥
निशाकन्याघनोशीरत्वक्वसलिलैः पृथक्।
त्रिवारं भावयेत्सिद्धो रसः पीयूषसागरः ॥ ७६७ ॥
वल्लमात्रः सिताक्षौद्रयुक्तो हरति शुक्रजान्।
विकारानाशयेत्सद्यो वन्ध्यानां नष्टरेतसाम् ॥७६८॥
शुक्रक्षयवतां शीघ्रद्राविणां पूयरेतसाम्।
अबीजधर्मिणां छिन्नशुक्राणां क्षतशोषिणाम् ॥७६९॥
बालानाञ्चैव वृद्धानां षण्ढानां शुक्रशोषिणाम्।
सेवनात्पुत्रदः शीघ्रं जायते नाऽत्र संशयः ॥ ७७० ॥

रसायनसं, पाण्डयचिकित्सिते।

भाषा—सीसा, वङ्ग, कान्तपाषाण तथा कान्तलोह, अभ्रक, सुवर्ण, पारा, शिंगरिफ, सुहागा और ताम्र इनसबकीभस्में समभाग लेकर हल्दी, घीकुआर, नागरमोथा, खस और लौंग इनके यथालाभ स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएंदेनेसे यह **पीयूषसागर** नामकारस तैयारहोगा। इसमेंसे ३ रत्ती शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे यह समस्तशुक्रदोषोंको नष्टकरताहै। *वन्ध्या, नष्टशुक्र, शुक्रक्षीण, शीघ्रद्रावी, अबीजधर्मी, छिन्नशुक्र,* क्षती और शोषी, इनसबकेलिये यह उपकारकहै और पुत्रोत्पत्तिको देनेवालाहै ॥ १८७ ॥

१८८ पीयूषसिन्धुरसः (प्रथमः)

शुद्धः सूतो मौक्तिकं तुत्थगन्धौ
कान्तं ताम्रं कांस्यरौप्यं सुनीलम्।
स्वर्णं वज्रं ताप्यमाणिक्यतार्क्ष्यं
राजावर्तो रीतिका वङ्गनागौ ॥ ७७१ ॥
सर्वं मर्द्यं रुष्कककोलद्रवेण
वज्रीपाठाग्रन्थिजैः सूरणस्य।
दन्तीमुण्डी काकमाचो हलाख्या-
भृङ्गाऽर्काऽग्निव्योपलीक्ष्णाभिरेवम् ॥ ७७२ ॥
शुष्कं कृत्वा कूपिकां पूरयित्वा
सम्यग्योगे योगिनीं पूजयित्वा।
माषं दद्यादार्द्रसिन्धूत्थयुक्तं
सूतेन्द्रोऽसौ हन्ति पीयूषनामा ॥ ७७३ ॥
अर्शस्ताप मूत्रकृच्छ्रं प्रमेह
शूलं पाण्डुं वह्निमान्द्यं क्षयञ्च।
वातं गुल्मं विद्रधिं प्लीहहिक्के
शोफं तूनीं चोदरं पीनसञ्च ॥ ७७४ ॥
श्वासं कासं रक्तपित्ताऽम्लपित्तं
कुष्ठं मेदः कामलायां ग्रहण्याम्।

सर्वां तन्द्रीं नाड्यवाताऽद्भुतश्च
भूताऽऽवेशं नाशयेदाशु सत्यम् ॥
पथ्यं सात्म्यश्चाऽम्लवर्ज्यश्च सर्वे
नाद्याद्वर्ज्यं सर्वरोगप्रशान्त्यै ॥ ७७५ ॥

र.श , अर्श सु ।

भाषा—शुद्ध पारा, मोती, तूतिया और गन्धक, कान्तपाषाण तथा लोह, ताम्र, कांसा, रजत, नीलम, सुवर्ण, हीरा, सोनामाखी, माणिक्य, पन्ना, राजावर्त, पीतल, वङ्ग और नाग इनसबकीभस्में समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भिलावा, बेर, डंडाथूहर, पाठा पिपलामूल, सूरण, दन्तीमूल, गोरखमुण्डी, मकोय, कलिहारी, भागरा, आक, चित्रकमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और राई इनप्रत्येकके स्वरस अथवा काढेकी १–१ दिन भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। अच्छे मुहूर्तमें योगिनीकी पूजाकरके १ माशाकी मात्रा अदरख, सैंधव, चित्रकमूल इनकेसाथ देनेसे बवासीर, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, शूल, पाण्डु, अग्निमान्द्य, क्षय, वायु, गुल्म, विद्रधि, प्लीह, हिचकी, शोथ, तूनी, उदररोग, पीनस, श्वास, कास, रक्तपित्त, अम्लपित्त, कुष्ठ, मेदोवृद्धि, कामला, ग्रहणी, सबप्रकारकीतन्द्रा, नाड्यवात, भूताऽऽवेश इनसबको यहशीघ्र नष्टकरताहै। खटाईको छोड़कर जो रोगीकेलिये सात्म्यहो वह सब पथ्यहै। जिस २ रोगमेंजिस २ पदार्थका निषेधहै उसको न खाय १८८

१८९ पीयूषसिन्धुरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं षड्गुणं जीर्णगन्धं
काचे पात्रे वालुकायन्त्रयोगात्।
भस्मीभूतं योजयेदत्र हेम
तत्तुल्यांशं भस्म लोहाऽभ्रयोश्च ॥ ७७६ ॥
सूतात्तुल्यं गन्धकं मेलयित्वा
खल्वे मर्द्य सूरणस्य द्रवेण।
दन्तीमुण्डीकाकमाचीहलाख्या
भृङ्गाऽर्काणामग्निजातं द्रवञ्च ॥७७७॥
क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ निधत्त
चूर्णीभूतं माषमात्रं ददीत।
अर्शोरोगे दारुणे च ग्रहण्यां
शूले पाण्डावम्लपित्ते क्षये च ॥ ७७८ ॥
श्रेष्ठं क्षौद्रं चाऽनुपानं प्रशस्तं
रोगोक्तं वा मासषट्कप्रयोगात्।
सर्वे रोगा यान्ति नाशं जरायां
वर्षद्वन्द्वं सेवनीयं प्रयत्नात् ॥ ७७९ ॥
पथ्यं दद्यादम्लतैलादियोपि
द्वर्ज्यं देयं सर्वरोगप्रशान्त्यै।
पुष्टिं कान्तिं वीर्यवृद्धिं सुदार्ढ्यं
सेवायुक्तो मानवः सलभेत ॥ ७८० ॥

र. चि., र चं रसायनख., र. सु , र को , नि र , र धा , यो म , र का , रसपारिजात, अर्श सु।

भाषा—आतशीशीशीमें षड्गुणगन्धकजारण किया हुआ शुद्धपारा, सुवर्ण, लोह और अभ्रकभस्म शुद्धगन्धक सब समभाग लेकर सूरण, दन्ती, गोरखमुण्डी, मकोय, करिहारी, भंगरा, चित्रकमूल इन सातोंके रसोंसे १–१ भावना देकर गोलाबनाय एरण्डपत्र वगैरहमें लपेटकर अनाजकी राशिमें ३ रोज रखकर सुखाय चूर्णकर रखलेवे, अथवा १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ गोली मधु अथवा रोगाऽनुकूल द्रव्यके साथ देनेसे भयङ्कर बवासीर, ग्रहणी, शूल, पाण्डु, अम्लपित्त, क्षय इनसबको यह नष्ट करताहै। छ महीने लगातार इसका प्रयोग करनेसे समस्तरोग नष्ट होतेहैं। दोवर्ष सेवन करनेसे बुढापा दूर होताहै। खटाई, तैल, स्त्रीसङ्ग इनको छोड़कर यथेष्ट आहार विहार करे। यथार्थ सेवन करनेसे पुष्टि, कान्ति और वीर्य इनकी वृद्धी होकर शरीरकी दृढताको प्राप्त होताहै ॥ १८९ ॥

१९० पीयूषसुन्दररसः

सूतटङ्कणगन्धाश्मवल्लिजानां समांशकाः।
तत्तुल्यसितया युक्ताः सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ॥ ७८१ ॥
ताम्राक्षमत्स्यपित्तेन भावयेच्च निवारकम्।
पीयूषसुन्दरं देयं गुटिकावल्लसम्मिता ॥ ७८२ ॥
देयाऽऽर्द्रकरसेनाऽथ नवज्वरविनाशिनी।
वार्ताकसहितं दद्यात्तक्रभक्तं हितं ततः ॥
शीतोपचारता सद्यः विदध्याज्ज्वरशान्तये ॥ ७८३ ॥

र.क.यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और गन्धक तथा मरिच सम भाग लेकर सबकी बराबर शकर डालकर ३–४ पहर मर्दनकर भैंसा और मछलीके पित्तोंकी ३–३ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रससे देनेसे नवज्वरका नाश होताहै। वृन्ताकके साथ छाछभात खानेको देना और शीतोपचार करना ॥ १९० ॥

१९१ पीयूषादि वटी (भृगुवटी)

वत्सनाभं विषं शुद्धमाकल्लकपटूषणम्।
लवङ्गं कुङ्कुमं जातीफलं जातीदलं समम् ॥ ७८४ ॥
तुर्यांशं प्रथमाच्छुद्धं भर्जितं टङ्कणं क्षिपेत्।
षष्ठांशा द्वादशांशा वा कस्तूरी प्रथमाच्छुभा॥७८५॥
सम्मर्द्याऽऽर्द्रकजद्रावैः वटी माषनिभा कृता।
भक्षिता मधुना किं वा ताम्बूलेन सुसात्म्यतः ७८६
पीयूषाख्या वटी हन्यादभ्यासाद्वातजान्गदान्।
पित्ताऽविरोधिनी चैषा बलधातुविवर्धिनी ॥ ७८७ ॥
शैत्यापनोदिनी रम्या मुखसौरभ्यकारिणी।
भृगुणा ज्ञानशीलेन ऋषिणा निर्मिता वटी ॥७८८॥
अस्याः संसेवनात्तस्य शीताम्भोभिः सदा मुनेः।
न पीडा ज्ञानतः काचिदभवच्छ्रेयसी ततः ॥ ७८९ ॥

रसायनसं., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धबच्छनाग, अकरकरा, षड्षण (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च), लौंग, केसर, जायफल, जावित्री, सब १–१ तोला, भुनासुहागा ३ माशे और उत्तम कस्तूरी २ माशे अथवा १ माशा लेकर बारीक चूर्णकर अदरखके रससे मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा पानके रससे देनेसे वातजन्यरोगोंको दूर करतीहै पित्तको भडकाती नहीं । बल और धातुओंको बढातीहै शीतको दूर करतीहै मुखमें सुगन्धि देतीहै। अधिक स्नानकरनेके अभ्यासी भृगुऋषिने इसको बनायाहै। इसके सेवनसे उनको अधिकस्नानजन्य कोई पीडा नहीं होतीथी ॥ १९१ ॥

१९२ पुत्रप्रदरसः

शुद्धसूतं त्र्यहं स्वेद्यं मन्दाग्नौ दध्नि माहिषे ।
शुष्किते शुष्किते दद्याद्दधि तुर्येऽह्नि चोद्धरेत् ॥ ७९० ॥
तस्मिन् स्वर्णं क्षिपेत्प्राज्ञश्चतुःषष्टितमांशकम् ।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण यावदैक्यं हि जायते ॥ ७९१ ॥
पुनः संस्वेद्य तं सूतं बद्ध्वा पुटेऽह्निवल्लिजैः ।
काकमाच्या च जीवन्त्या रसः स्याद्यामयुग्मकात् ७९२
दिनं शीताम्बुकुम्भस्थं दिनैकं दध्नि माहिषे ।
एवं सिद्धरसाद्वल्लं प्रत्यहं ब्रह्मचर्यधृक् ॥ ७९३ ॥
मासैकं सेवते भर्त्ता सितादुग्धौदनप्रियः ।
त्रिफलानिम्बकार्पासीरसे नारी क्रमात्पृथक् ॥ ७९४॥
सप्त सप्तदिनं पीत्वा पश्चादृतुसमागमे ।
रसं वल्लं त्र्यहं चैकं कार्पासस्यम्बुसितायुतम् ॥ ७९५ ॥
टङ्कणः स्फटिका सूतः पक्वाम्लिकरसान्वितः ।
त्रिदिनं मधुना योनौ लेपः शुद्धिकरः परः ॥ ७९६ ॥
महिष्या दधिमध्यस्थं दिवा सूत त्रिमाषकम् ।
स्त्रीसेवासमये रात्रौ भक्षयेद्दधिसंयुतम् ॥ ७९७ ॥
सम्भोगाऽन्ते तथा स्थेयं यामार्धं सम्पुटेन च ।
सर्वलक्षणसम्पन्नं सुतं जनयते वरम् ॥ ७९८ ॥
तापादिके समुत्पन्ने देयं द्राक्षासितादिकम् ।
कार्यः शीतोपचारश्च युवत्या भिषजा सदा ॥७९९॥
आयुर्वृद्धिं बलं कान्ति नष्टवीर्यविवर्धनम् ।
श्वयोद्रोगहरः पुत्रप्रदो रुद्रविनिर्मितः ॥ ८०० ॥

र. स. क, रसायनसं., र को, स्त्री वि, पुत्रप्रासये ।

भाषा—शुद्धपारेको भैंसके दहीमें दोलायन्त्रसे मन्दाग्निपर ३ रोज स्वेदनकरे, दही समाप्त होनेपर नया डालताजाय। चौथेरोज निकालकर उसपारेसे चौंसठवा हिस्सा सुवर्ण मिलाकर नीबूकारस डालकर जबतक दोनों एक न होजाय तबतक मर्दन करे। फिर इसकी पोटली बनाय घटके दसे और पान, मकोय, अर्कपुष्पी (अभावमें डोडी) इनप्रत्येकके रस अथवा क्वाथोंसे अलग अलग १–१ रोज़ स्वेदन करके कोरे घडेमें ठंढा पानीभर उसमें एकरोज पोटलीको रक्खे फिर एकरोज भैंसके दहीमें रक्खे इसतरह यह रस तैयार होगा। इसमेंसे ब्रह्मचर्यका पालन करता हुआ १–३ रत्ती यथोचितानुपानके साथ १ महीनेतक देवे। शक्कर, दूध और चावलके सिवाय कुछ न खाय, इसतरह पुरुष सेवनकरे। स्त्रीको ऋतु आगमनके सातरोज़ पहिले त्रिफला, नीम और कपासके रसकेसाथ १–१ गोली रोज़ाना देवे। अखीरमें कपासके रससे ३ रोजतक ३–३ रत्ती पूर्वोक्तरसकी देवे। फिर सुहागा, फिटकरी और पारा समभाग लेकर पकी इमलीकेरससे घोटकर मधु मिलाकर तीनदिन तक योनिमें लेप करे इससे योनि शुद्ध होजायगी। भैंसके दहीमें सूर्योदयके समय ३ माशे क्रमसे पारा डालकर रात्रिमें स्त्रीसम्भोगके समय दहीकेसाथ उसपारेको खावे। सम्भोगके अन्तमें स्त्रीपुरुष दोनों यथाऽवस्थित आधे पहरतक रहें। इसतरह करनेसे समस्त शुभलक्षण युक्त पुत्रको पैदा करताहै। अगर ज्वर वगैरह होजायतो द्राक्ष और शक्कर का शरबत देना तथा शीतोपचार करे। इसके निरन्तरसेवन करनेसे आयु, बल, कान्ति और शुक्रकी वृद्धि होती है ॥ १९२ ॥

१९३ पुत्रवर्धमानरसः

पलार्धप्रमिते स्वर्णे ताम्रं दत्त्वाऽक्षमात्रया ।
निर्वापयेच्छतं धारान्निक्षिप्य शुकपिच्छकम् ॥८०१॥
ततश्च सारणायन्त्रे सूत्रस्थाने प्रकाशिते ।
सारणातैलसंयुक्ते जीर्णषड्गुणगन्धकम् ॥ ८०२ ॥
रसं हि द्विपलं क्षिप्त्वा सारणाविधियोगतः ।
सारयित्वा ततः पश्चात्पिष्टीभूतं शनैःशनैः ॥ ८०३ ॥
तस्माद्यन्त्रात्तु निष्कास्य गालयित्वा च वाससा ।
मातुलुङ्गरसैः पिष्टं चतुर्निष्कमितं ह्यनु ॥ ८०४ ॥
गन्धकं विधिना यावज्जारयित्वा चतुर्गुणम् ।
तमादाय रसं सम्यग्विचूर्ण्य परिगाल्य च ॥ ८०५ ॥
षष्ठांशेन मृतं वज्रं समवैक्रान्तकं मृतम् ।
निक्षिप्य मातुलुङ्गस्य रसैः पिष्ट्वा च वासरम् ॥८०६॥
पुटेद् द्वादश वाराणि रक्ता द्वादशकोत्पलैः ।
बन्धुजीवरसेनाऽथ लक्ष्मणारसेन च ॥ ८०७ ॥
पुनः सञ्चूर्ण्य सम्पूज्य योगिनीः पितृदेवताः ।
पुत्रिण्या पुत्रनाथाश्च पूजितव्या विधानतः ॥ ८०८ ॥
इति सा प्राप्नुयाद्गर्भं रामा संवत्सराऽन्तरे ।
आदिवन्ध्यादिदोषा या याश्चान्या दुष्टयोनयः ॥८०९॥
प्राप्नुयुर्जीवितं पुत्रं भाग्यसौभाग्यसंयुतम् ।
पुंसामपि च वन्ध्यत्वं स्वल्परेतस्त्वमेव च ॥ ८१० ॥
बीजदोषा विचित्राश्च विनश्यन्ति न संशयः ।
एवं यः सेवयेत्सूतं वर्धमानः सपुत्रकैः ॥ ८११ ॥

स्त्री वि, पुत्रप्रासये ।

भाषा—आधेपल शुद्धसुवर्णको गलाकर शुद्धताबा १ कर्ष मिलावे और बिजोरेके रसमें षोडशांश गन्धक मिलाकर बुझावे, ऐसे १०० बार बुझावे यह सुवर्णताम्र बीज तैयार हुआ। इसके बाद षड्गुणगन्धकजारित २ पल शुद्धपारेको सारणायन्त्रमें रखकर मूषाका अर्धभाग सारणातैलसे भरदे। फिर केंचुओंकी

मिट्टी, मधु, काकविष्टा, आक परकी टिड्डी, जवानभैंसों के दोनोंकानोंका मल, येसब समभाग लेकर खरलकर कपड़छानचूर्णकरले। इसचूर्णका बिजोरेके रसमें कल्क बनाय सारणा तैलमें चतुर्थांश देकर पकावे। पकनेपर छानकर रखलेवे (मछली, कछुआ, पीलामेंढक, जहरीजोंक, मेंढा, सूअर इन सबकी चर्बीको समभाग मिलाना। इसका सारणतैल सांकेतिक नामहै) प्रथमोक्त बीजमें चतुर्थांश मूनागादिचूर्ण डालकर बिजोरेके-रससे २–३ पहर मर्दनकर गोली बनाकर सारणातैलमें भीगे हुए चारतहकपड़ेमें पोटली बनाय मध्यच्छिद्रयुक्त ढक्नीपर रखकर मूषाके ऊपर ढकदे और सारणातैलमें एककपडे को भिगोकर दोनोंके मुंहपर लपेटकर नमक अथवा राखको बिजोरेके रसमें भिगोकर सन्धि बन्द करदे। फिर मूषाके तृतीयाशप्रमाणका गर्त बनाकर मूषाको उसमें रखकर मिट्टीसे गर्तको जमीन बराबर करदे। मूषाके मुंहपर खदिर वगैरहके सारिष्ठ कोयले रखकर धौंकनीसे धौंके। जब देखे कि बीज गलकर भीतर चलागया तब धौंकना बन्दकरदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कपडेमें छानले जितना हिस्सा बीज का न मिलाहो उसको फिर इसीतरह करके मिलावे। जब नि शेष बीज पारेमें प्रविष्ट होजाय और छाननेसे कुछभी न निकले तब इसपर बिजोरेके रसमें पीसाहुआ गन्धक १ कर्ष देकर कच्छपयन्त्र वगैरहमें जारणकर। ऐसे पारेसे चौगुना गन्धक जल जाय तब इसको घोटकर कपड़छानकरले फिर पारेसे षष्ठांश हीरा और समभाग वैकान्तभस्म मिलाकर बिजोरे का रसदेकर एकदिनभर मर्दनकर गोला बनाय शराव सम्पुटकर १२ जङ्गली कण्डोंकी आंचदे। इसीतरह दुपहरियाके रसमें मर्दनकर आंच देनेके बाद लक्ष्मणाके स्वरससे मर्दनकर आंचदे। यह **पुत्रवर्धमानरस** तैयार हुआ। इसको शीशीमें रख योगिनी, पितृदेव, और बालग्रहोंकी विधिपूर्वक पूजाकर सुमुहूर्तमें एक सर्षप प्रमाण मात्रा नागकेसर प्रभृति पुंसवन द्रव्यके साथ सेवन करे और ककाराष्टक तथा तीक्ष्ण पदार्थोंसे परहेज करेतो एकवर्षके भीतर स्त्री गर्भको धारणकर। जिनको गर्भधारणके पहिले या मध्यमें या अन्तमें कुछ खरा बिया होतीहो किंवा जिनकी योनि दूषित हो वेभी इसके सेवनसे दीर्घायु और सौभाग्ययुक्त पुत्रको प्राप्त होतीहैं। पुरुषोंकोभी वन्ध्यत्व, स्वल्परेतस्त्व प्रभृति विचित्र २ दोषहुआकरतेहैं वे सब इसके सेवनसे नष्टहोजातेहैं। जिसको पुत्रप्राप्तिकी उत्कट इच्छाहो व स्त्रीपुरुष दोनों इसका सेवनकरें। परन्तु इसरसको बनाकर तुरतही किसीको नहीं खिलाना चाहिये नहींतो इससे महा अनर्थ होनेकी सम्भावनाहै कमसे कम एकसालभरके बाद देना। इसमें गलती करनेसे लोक परलोक दोनों बिगड़ेंगे १९३

१९४ पुनर्नवागुग्गुलुः

पुनर्नवामूलशतं विशुद्ध
रुबूकमूलञ्च तथा प्रयोज्यम्।
दत्त्वा पल षोडशकञ्च शुण्ठ्या-
सङ्कुट्य सम्यग्विपचेत्सुपात्रे ॥ ८१२ ॥
पलानि चाऽष्टादश कौशिकस्य
तेनाष्टशेषेण पुनः पचेच्च।
एरण्डतैलं कुडवञ्च दद्या-
द्दत्त्वा त्रिवृच्चूर्णपलानि पञ्च ॥ ८१३ ॥
निकुम्भचूर्णस्य पलं गुडूच्याः
पलद्वयञ्च द्विपलं प्रतीह।
फलत्रयं त्र्यूषणचित्रकाणि
सिन्धूत्थभल्लातविडङ्गकानि ॥ ८१४ ॥
कर्षं तथा माक्षिकधातुचूर्णं
पुनर्नवाचूर्णपलं तथैकम्।
चूर्णानि दत्त्वाप्यवतार्य शीत
खादेन्नरो निष्कसमप्रमाणम् ॥ ८१५ ॥
वाताऽसृजं वृद्धिगदांश्च सप्त
जयत्यवश्यं त्वथ गृध्रसीञ्च।
जङ्घोरुपृष्ठत्रिकबस्तिजञ्च
तथाऽऽमवातस्य बलं निहन्ति ॥ ८१६ ॥

र का, वातरक्ताऽधिकारे।

भाषा—पुनर्नवा और एरण्डकी ताजी साफकीहुईजड़ सौ १०० कर्ष, सोंठ १६ पल लेकर सबको कूटकर मिट्टीके नवीन पात्रमें अठगुना पानी डालकर पकावे। अष्टाऽवशेष रहनेपर छानकर उसमें १८ पल भैंसागुग्गुलु डालकर पकावे। फिर इसमें एरण्डतैल पावभर, निशोतका चूर्ण ५ पल, शुद्ध जमालगोटा अथवा इसकी जड़ १ पल, गिलोय, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, सैंधव, भिलावा और विडङ्ग ये प्रत्येक २ पल, शुद्ध सोनामाखी १ कर्ष और पुनर्नवाका चूर्ण ४ कर्ष डालदे। जब गोलीबधने लायक होजाय तब उतारकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशेकी गोलियां बनाकर खानेसे वातरक्त, सातप्रकारकी अण्डवृद्धि, गृध्रसी, जांघ, ऊरु, पृष्ठ, त्रिक और बस्तिवात, आमवात इनके बलको यह नष्टकरताहै ॥ १९४ ॥

१९५ पुनर्नवादियोगः

पुनर्नवा नागबला वाजिगन्धा शतावरी।
गोक्षुरं मुसलीकन्दं मृतं सूत समंसमम् ॥ ८१७ ॥
चूर्णं मध्वाज्यसंयुक्तं निष्कं भुक्त्वा पिबेत्पयः।
तण्डुलं वानरीबीजं चूर्णयेत्सितया समम् ॥ ८१८ ॥
आलोडयेद्गवां क्षीरैस्तेनकुर्यादपूपिकाम्।
तां घृते भक्षयेच्चाऽनु रमयेत्कामिनीकुलम् ॥ ८१९ ॥

र स, वाजीकरणे।

भाषा—पुनर्नवा, नागबला, असगन्ध, शतावर, गोखरू, मुसली, पारदभस्म, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर १–२ पहर खरलकरके रखछोड़े। इसमेंसे ४ माशे चूर्ण मधु और घीकेसाथ चाटकर दूधपीवे। चावल, छिल्केरहित केवांचके बीज इनका बारीकचूर्णकर बराबरकी शक्कर डालकर गायके दूधमें सानकर पूड़ी बनावे। इनपूड़ियोंको घीकेसाथ खानेसे बहुतसी-स्त्रियोंका सङ्गकरसकताहै ॥ १९५ ॥

१९६ पुनर्नवादिलेहः

पुनर्नवाया मूलानां तुलामानं पचेत्ततः ।
हस्तिकर्णी चाश्वगन्धा शैलेयं शिग्रुमूलकम् ॥८२०॥
कुनिम्बाऽऽरग्वधौ नीली धरा दारु द्विकुण्डली ।
निर्गुण्डी *नीलिनी शिम्बी नागरं वह्निरूपिके* ॥८२१॥
अग्निमन्थो द्वितुलसी सुनिषण्णश्च गोक्षुरम् ।
एतानि समभागानि पृथग्दशपलानि च ॥ ८२२ ॥
द्रोणे पादाऽवशेषेऽस्मिन् कषाये च परिस्रुते ।
त्रिशत्पलं गुडं दत्वा पुराणं च विपाचयेत् ॥ ८२३ ॥
त्रिकटु त्रिफला रास्ना नतचव्याऽग्निग्रन्थिकम् ।
तालीसं जातिका पत्रं वराटं धनिका निशा ॥ ८२४॥
विडङ्गश्चाजमोदश्च चातुर्जातश्च रामठम् ।
तक्कोलं माषकं भार्ङ्गी कान्तलोहश्च पुष्करम् ॥८२५॥
जीरद्वयञ्च मण्डूरं सैन्धवं हस्तिपिप्पली ।
सर्वमेतत्समश्चैव पृथक्कर्षं विचूर्णयेत् ॥ ८२६ ॥
सान्द्रपाकं भवेत्तस्याः युक्त्या पुष्परसं क्षिपेत् ।
लेहराजं धावतायं द्विकालं सेवयेत्ततः ॥ ८२७ ॥
कामलापाण्डुरोगघ्नं कासं श्वासं हलीमकम् ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं च पुराणं श्वयथुं हरेत् ॥ ८२८ ॥
स्वरसादक्षयहरं रक्तपित्तञ्च विद्रधिम् ।
नाशयेन्नाऽत्र सन्देहः कश्यपो मुनिरब्रवीत् ॥ ८२९ ॥

वै चि, पाण्डुकामलयो ।

भाषा—पुनर्नवाकी जड़ १०० पल लेकर अष्टगुणित पानीमें पकावे, चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर अलग धरदे । फिर हस्तिकर्णपलाश, असगन्ध, छडीला, सहिजनकी जड, चिरायता, अमिलतासका गूदा, नीलकीजड़, निफला, देवदारु, विधारा, गिलोय, सभालू, कालादाना, सेम, सोंठ, चित्रकमूल, नीला आक, अरणी, स्याह और सफेद तुलसी, सुरवारी, गोखरू, ये प्रत्येक १० पल लेकर जवकुटकर ३२ सेर पानीमें काढा बनावे। चतुर्थांशाऽवशेष रहनेपर छानले फिर दोनोंकाढे इकट्ठे मिलाय ३० पल पुरानागुड डालकर पकावे । दर्वीलेप होनेपर त्रिकुटु, त्रिफला, रास्ना, तगर, चव्य, चित्रकमूल, पिपलामूल, तालीसपत्र, जावित्री, कौडीभस्म, धनिया, हल्दी, विडङ्ग, अजमोद, चातुर्जात, भुनाहींग, शीतलचीनी, माषपर्णी, भारङ्गी, कान्तलोह भस्म, पोहकरमूल, स्याह औरसफेद जीरा, मण्डूरभस्म, सैन्धव, गजपीपल ये सब १–१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर डालदे । गोली बधने लायक होनेपर उतारकर ठंढा होनेपर इतना मधु डाले कि चाटने लायक हो जाय । इसमेंसे १–१ तोला दोनों समय रोजाना खानेसे कामला, पाण्डु कास, श्वास, हलीमक, रोजाना अथवा तीसरे दिन आनेवाला ज्वर, जीर्णज्वर, शोथ, स्वरभङ्ग, क्षय, रक्तपित्त, विद्रधि, येसव नष्ट होतेहैं ॥ १९६ ॥

१९७ पुनर्नवामण्डूरम् (प्रथमम्)

पुनर्नवा त्रिवृद् व्योषं विडङ्ग दारु चित्रकम् ।
कुष्ठं हरिद्रे त्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकाः ॥ ८३०॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मुस्तश्चेति पलोन्मितम् ।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णात् गोमूत्रे ह्याढके पचेत् ॥८३१॥
कोलवद्गुटिकाः कृत्वा तक्रेणाऽऽलोड्य ना पिबेत् ।
ताः पाण्डुरोगान् प्लीहानमर्शांसि विषमज्वरम् ॥
श्वयथुं ग्रहणीदोषं हन्युः कुष्ठं क्रिमींस्तथा ॥ ८३२ ॥

च सं, भा प्र, ग नि, नि. र, च द, वै. चि., वृ मा, भै र., चि र, र. र, रससागर, टो, यो म, पाण्डुधिकारे । गदनिग्रहस्य प्रथमपुस्तके पिप्पलीस्थाने तिक्ता गृहीता ।

भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुठ, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, दन्ती, चव्य, इन्द्रजव, पीपल, पिपलामूल, नागरमोथा, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूरभस्म सबसे दूनी लेकर सबको आठसेर गोमूत्रमें पकावे । गोली बधने लायक हो जाय तब बेर बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे अग्निबलके अनुसार १–१ अथवा २–२गोली तक्रमें मिलाकर पीनेसे पाण्डुरोग, प्लीहा, अर्श, विषमज्वर, शोथ, ग्रहणीदोष, कुष्ठ और क्रिमि इन सबको यह नष्ट करताहै ॥१९७॥

१९८ पुनर्नवामण्डूरम् (द्वितीयम्)

पुनर्नवा त्रिवृद्व्योषं विडङ्गं दारु चित्रकम् ।
कुष्ठं हरिद्रात्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकम् ॥८३३॥
कटुका पिप्पलीमूलं मुस्तं शृङ्गी च कारवी ।
यवानी कट्फलश्चेति पृथक् पलमितं समम् ॥८३४॥
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
गुडेन वटकान् कृत्वा तक्रेणाऽऽलोड्य तान् पिबेत् ८३५
पुनर्नवादिमण्डूरवटकोऽत्रिविनिर्मितः ।
पाण्डुरोगं निहन्त्याशु कामलाञ्च हलीमकम् ॥८३६॥
श्वासं कासञ्च यक्ष्माणं ज्वरं शोथं तथोदरम् ।
शूलं प्लीहानमाध्मानमर्शांसि ग्रहणीं क्रिमीन् ॥
वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च सेवनान्नाशयेद् ध्रुवम् ॥ ८३७ ॥

भा प्र, नि. र, र सु, र. कि, चि क, पाण्डुरोगे । चि. क, *पुनर्नवादिवटकोऽति नाम ।*

भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुठ, हल्दी, त्रिफला, दन्तीमूल, चव्य, इन्द्रजव, कुटकी, पिपलामूल, नागरमोथा, काकडासींगी, कारवी (अभावमें मगरैल,) अजवाइन, कायफल, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूर सबसे दूना लेकर सबको अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गोमूत्र क्षीण होनेपर मण्डूरके बराबर गुड डालकर पकावे । चासनी होनेपर वेर बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली छाछमें मिलाकर पीनेसे पाण्डु, कामला, हलीमक, श्वास, कास, यक्ष्मा, ज्वर, शोथ, उदरशूल, प्लीहा, अर्श, ग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कुष्ठ इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ १९८ ॥

१९९ पुनर्नवामण्डूरम् (तृतीयम्)

वर्षाभू धरणो मानो लोहकिट्टं मयूरकम्
भार्ङ्गी च समभागानि मूत्रे दशगुणे पचेत् ॥८३८॥

अन्तर्धूमविपक्वेन मधुसर्पिर्युतश्च तत्।
एतत्रिदोषजं हन्ति शूलञ्च परिणामजम्॥ ८३९॥
र. का., शूलाधिकारे।

भाषा—टटसिट (पंजाबी), वरुण, मानकन्द, लोहकिट्ट, शुद्धतूतिया, भारङ्गी येसब समभाग लेकर दशगुने गोमूत्रमें डालकर मुंहबन्दकरके पकावे जब गोमूत्र जल जाय तब उतारकर शीतल करके रखछोड़े। इसमेंसे एकमाशा मधु और घीके साथ लेनेसे यह त्रिदोषज परिणाम शूलको नष्टकरताहै॥ १९९॥

२०० पुरन्दरवटी

सूतकाद्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम्
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम्॥ ८४०॥
अजाक्षीरेण सम्भाव्य वटिकां कारयेत्ततः।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीततोयं पिबेदनु॥८४१॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्धिनी।
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका॥
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते॥ ८४२॥
र. सं., र. चं, ध, र. सु, कासाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारेसे द्विगुण शुद्धगन्धक लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर त्रिकटु, त्रिफला ये प्रत्येक पारेकी बराबर डालकर एकदिन बकरीके दूधकी भावना देकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसमें मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे १–२ चुल्लू ठंढा पानी पीवे तो इससे कास, श्वास, मन्दाग्नि ये सब नष्टहोवे हैं। यह वटी योगवाहिका है। इसके निरन्तरसेवनकरनेसे बुड्ढा भी जवान होजाताहै॥ २००॥

२०१ पुष्पधन्वारसः (प्रथमः)

हरजभुजगलौहञ्चाऽभ्रकं वङ्गभस्म,
कनकविजययष्ट्यः शाल्मलीनागवल्ल्यौ।
घृतमधुसितदुग्धं पुष्पधन्वा रसेन्द्रो,
रमयति शतरामा दीर्घमायु र्बलञ्च॥८४३॥
भै र, रसायनसं, क्षा वि, वृ यो त, र क, र. सु, यो. त, यो र, रसपारिजात, ध्वजभङ्गे वाजीकरणे च। योगतरङ्गिण्यां सूतवङ्गौ न दृश्येते।

भाषा—पारा, सीसा, लोह, अभ्रक, वङ्ग इनसबकी भस्में, शुद्ध धतूरेके बीज, विजयसार, मुलहठी, सेमरका मुसला, पानकी जड़ सब समभाग लेकर खरलकरके रखछोड़े। अथवा पानके रसमें घोटकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर घी, मधु और शक्कर युक्त दूध पीनेसे सेकड़ों स्त्रियोंको सन्तुष्ट करसकाहै। इसके सेवनसे शरीरमें बल और आयु बढ़तेहैं॥ २०१॥

२०२ पुष्पधन्वारसः (द्वितीयः)

मृतरसरविवङ्गं हैमभस्म प्रयुक्त,
दरदगगनचन्द्रं ताप्यकं कान्तभस्म।
अहिबलिशुभवज्रं सर्वमेतत्समानं
करभिसुरसमृष्टं कोकिलाक्षस्य बीजैः॥८४४
रसजलनिधिशोषरत्नगन्धासुयष्टि-
त्रिकटुघनसिताभि र्भावयेच्छाल्मलीभिः।
मुसलिमधुकरञ्जै र्मर्कटीकालजाती-
फलसरलसुजातीपत्रिकाहस्तिकन्दैः॥८४५॥
त्रिफलजलगुडूचीसत्त्ववाराहिकन्दैः
खसफलमृगजाभ्यां भावयेत्त्रिस्त्रिवारम्।
बहुतरमपि वीर्यं यच्छति क्षीरपाना-
द्रुततरमपि सेव्यं स्वादु वृष्यञ्च भोज्यम्॥
रमयति बहुकान्तास्तीव्रमानाऽपहारी
समधुघृतसिताभिः पुष्पधन्वा द्विवल्लः॥८४६॥
धा., वाजीकरणे।

भाषा—पारा, ताम्र, वङ्ग, सुवर्ण, शिंगरिफ, अभ्रक, चांदी, सोनामाखी, कान्तपाषाण, लोह, नाग इनसबकी भस्में, शुद्ध गन्धक, हीराभस्म, सब समभाग लेकर ४ पहर मर्दनकरके श्वेतापराजिता(सफेद कोयल) तालमखाना, खस, समुद्रशोष, असगन्ध, मुलहठी, त्रिकटु, नागरमोथा, शक्कर, सेमलकामुसला, दोनों मुसली, मधु, करञ्ज, केंवाच, अगर, जायफल, चीढ, जावित्री, हस्तिकन्द, त्रिफला, सुगन्धवाला, गिलोयका सत्त्व, वाराहीकन्द, पोस्त और कस्तूरी इन प्रत्येककी क्रमश ३–३ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर मधु, घृत और शक्करयुक्त दूध पीनेसे बहुतसी स्त्रियोंके तीव्रमानको दूर करताहै और वीर्यसेपरिपूर्ण रहताहै। इसपर स्वादु और वृष्य भोजन करना उचितहै॥२०२॥

२०३ पुष्पधन्वारसः (तृतीयः)

रम्भाकन्दे हेमताराऽर्कपिष्टिं
पक्त्वा यन्त्रे भूधरे तां पचेत।
गन्धं दत्त्वा षड्गुणार्द्धं क्रमेण
पश्चात्कान्तं तेन तुल्यं क्रमेण॥ ८४७॥
दत्त्वा खल्वे शाल्मलीयष्टितोयैः
पत्रैकं तन्मर्दयेन्नागवल्ल्याः।
नीरै र्यामं पुष्पधन्वा रसःस्या
द्वल्लं दद्यादस्य पूर्वोक्तयुक्त्या॥
पुष्टिं वीर्यं दीपनं सोऽत्र दद्या-
दन्याद्रोगाद्रोगयोग्याऽनुपानैः॥ ८४८॥
र र स, र च, र. दी, वाजीकरणे। र. दी, पूर्णेन्दुरस इति नाम।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्ध सुवर्ण, रजत और ताम्र इनका बारीक चूर्ण डालकर पिट्ठी बनाले। इसपिट्ठीको केलेके कन्दमें रखकर भूधरयन्त्रमें पकाकर सबसे तिगुना शुद्धगन्धक कच्छप यन्त्र वगैरहमें जारणकरे। फिर इसकी बराबर कान्तलोहभस्म मिलाकर सेमल और मुलहठी के स्वरस अथवा क्वाथमें ७–७

दिन मर्दनकर अन्तमें पनेपानके रसमें एक पहर मर्दनकरनेसे यह पुष्पधन्वा रस तैयार होगा । इसकी २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली घृत, मधु और शकर युक्त दूधके साथ पीनेसे अनेक स्त्रियोंकी तृप्ति करता हुआ भी वीर्यसे परिपूर्ण रहताहै । तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे यह तत्तद्रोगका नाश करताहै ॥ २०३ ॥

२०४ पुष्पधन्वारसः द्वाद्यः (चतुर्थः)

कनकहरजकान्तं ताप्यकं वृद्धिभागं,
द्विजकुचलययष्टीशाल्मलीनागिनीभिः ।
घृतमधुपयखण्डैः पुष्पधन्वा द्विवल्लो,
रमयति बहुकान्ता दीर्घमायुर्विधत्ते ॥८४९॥

यो. र., र. सं , र. सि , वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, पारा २ भा , कान्तलोह ३ भा , सुवर्णमाक्षिक ४ भा , इनसबकी भस्में इकट्ठी मिलाय १-१ पहर खरलकर पलाशकीछाल, कौंईके फूल, मुलहटी, सेमलका मुसला, पान इनके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घी, मधु और शकरयुक्त दूधके साथ सेवनकरनेसे बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमणकरता हुआभी दीर्घायु और बलको प्राप्त होताहै ॥२०४॥

२०५ पुष्पधन्वारसः (पञ्चमः)

रसभस्मत्रयो भागाः षड्भागा गन्धकस्य तु ।
चतुर्थं मौक्तिकं हाटं द्विभागं तालकं शिला ॥८५०॥
तारमभ्रकलोहौ च वङ्गमाक्षिकनागकम् ।
अयश्चाऽष्टौ प्रवालश्च सर्वं खल्वे विमिश्रयेत् ॥८५१॥
त्रिदिनं मर्दयेत्प्राढं शुद्धं द्रव्यं विमर्दयेत् ।
भावना गव्यदुग्धेन नलदं केतकी जया ॥ ८५२ ॥
क्वाथै मर्कटिबीजानां पौण्ड्रकेक्षुजभावितम् ।
फलऽश्वगन्धमाषाणां कषायं पृथक् पृथक् ॥८५३॥
लवङ्गेक्षुरजातीनां सिद्धार्थं चन्चु मर्कटी ।
जातीकोषः पुनर्भूश्च त्वगेलागोक्षुरास्तथा ॥ ८५४ ॥
वहुबीजं वरा शृङ्ग्योऽशोकबीज शतावरी ।
मुशली धूर्तबीजानि क्षीरीमोचरसौ तथा ॥ ८५५ ॥
यवानीद्वयकं रम्भा खर्जूरंवह्निबीजकम् ।
प्रियङ्गुश्च जटामांसी अक्षबीजश्च गोस्तनी ॥ ८५६ ॥
आकल्लकश्च कङ्कोलं कर्पूर धान्यपञ्चकम् ।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ८५७॥
भाण्डे च द्विपलं स्थाप्यं द्विभागे वारिषोडशे ।
मृद्वग्निना पचेत्सम्यग्द्विपलं शेषयेत्तत. ॥ ८५८ ॥
मर्दयेत्तेन कल्केन दिनानां द्वादशाऽवधिम् ।
अहिजं स्वेदयेद्दुग्धे द्विपादं साधयेत्ततः ॥ ८५९ ॥
सप्तराश्रं दृढं मर्द्य दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ।
अनेन भावना देयाः सप्तषष्टिमिता बुधैः ॥ ८६० ॥
रसः सिद्धोऽयमाख्यातो वल्लमानं प्रयोजयेत् ।
अनुपानयुतं लेह्यं मधुशर्करया सह ॥ ८६१ ॥
गोदुग्धमोदनं भुञ्ज्यात्सर्पिः शर्करया सह ।
मैथुने दृढलिङ्गः स्यादङ्गनानां शतत्रयम् ॥ ८६२ ॥
प्रत्यहं रमते सेवी स्त्रीणाञ्च प्राणवल्लभः ।
प्रातरुत्थाय सेवेत सद्यो द्रवति कामिनी ॥ ८६३ ॥
नष्टेन्द्रियतां मेहं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽश्मरीम् ।
योनिशूलं शिरःशूलं सर्वांश्च ग्रहणी जयेत् ॥ ८६४ ॥
सर्वाऽतिसारशोफश्च सर्वदाहांश्च निश्चितम् ।
अयं धन्वन्तरिख्यातो रसोऽयं रतिवल्लभः ॥८६५॥
पुष्पधन्वा रसः पूज्यो लोकानन्दकरस्तथा ।
नारीणां रक्षयेत्प्राणान्नराणां सिद्धिदायकः ॥
पूज्यः साक्षाद्रतिपति वैद्यानां भुक्तिदायकः ॥ ८६६ ॥

रसपारिजाते, वाजीकरणे ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा , मोती ४ भा , सुवर्णभस्म २ भा , हरिताल, मैनसिल, रजत, अभ्रक, वङ्ग, सोनामाखी, सीसा इनसबकीभस्में २-२ भाग, लोह और प्रवालभस्म आठ ८ भाग लेकर सबको ३ रोज़ मर्दनकर गोदुग्धकी भावना देकर खस, केवड़ा, भाग, केंवाचकेबीज, ईख इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथकी १-१ भावना देकर बला, असगन्ध और उड़दके क्वाथोंकी १०-१० भावनाएं देवे । फिर लौंग, तालमखाना, जावित्री, सरसों, ऐंठ (काकलहरी हिं.) केवांच, जायफल, इलायची, दालचीनी, गोखरू, पवाड़केबीज, त्रिफला, काकड़ासींगी और मेंढासींगी, अशोकबीज, शतावर, दोनोंमुसली, शुद्धधतूरेके बीज, बंसलोचन, मोचरस, देशी तथा खुरासानी अजवाइन, केलेकाकन्द, छुआरा, चित्रकमूल, विजयसारकीछाल, प्रियङ्गु, जटामांसी, बहेड़ाके बीज, दाख, अकलकरा, शीतलचीनी, कपूर, धान्यपञ्चक(धनियां, सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धबाला और बेलगिरी) येसब १-१ भाग लेकर सूक्ष्म चूर्णकरके इसके ५ भागकरे । एकभागको १३ कर्ष पानीमें मन्द अग्निपर पकावे जब २ पल जल बाकी रहजाय तब उतारकर इसक्वाथको मिलाकर आठवाली दवाओंको १२ दिनतक मर्दनकरे । १२ दिनकेबाद सुखादे फिर उसीतरह दोपल जो दूसराभागहै उसको ३२ कर्ष पानीमें पकाकर २ पल शेषरहनेपर १२ रोजतक मर्दनकरे । इसतरह ६० दिन तक मर्दनहोगा । फिर एकभाग अफीमको सेरभर दूधमें स्वेदनकरे । जब दूध आधा बाकी रहजाय और सब अफीम दूधमें घुलजाय तब उस दूधको दवामें डालकर दिनभर मर्दनकरे । दूसरे रोज़ सुखाकर फिर इसीतरह मर्दनकरे, ऐसी सातभावनाएं दूधकी दे । ये सब मिलकर ६७ भावनाएं हुई । इसकी १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और शकरके साथ अथवा मधु शकरयुक्त दूधके साथ सेवनकरे और गोदुग्ध, भात, शकर तथा घी भोजनमें खावे । इसके सेवनसे लिङ्गकी शिथिलता बिना बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसकताहै । इस रसके सेवन करनेसे

वैसीभी दशाहाना हो वह तत्काल द्रावित होजाती है इसलिये वह पुरुष स्त्रियोंका प्राणवल्लभ होताहै। वाजीकरणार्थ इसको सेवन करनाहोतो मैथुनसे एक घण्टा पहिले सेवनकरे। शरीरसम्पत्त्यर्थं सेवन करनाहोतो प्रातःकाल इसका समयहै। इसके सेवनसे इन्द्रियोंकी अशक्ति, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, योनिशूल, शिरःशूल, सबप्रकारकी सङ्ग्रहणी, अतिसार, शोथ और दाह नष्टहोते हैं। स्त्रियोंके प्राणोंकी रक्षा करताहै और पुरुषोंको सिद्धि देताहै। यह रस साक्षात् कामदेवहै, वैद्योंको यश देनेवालाहै इसलिये वैद्योंको इसे हमेशा तैयार रखना चाहिये ॥ २०५ ॥

२०६ पुष्पधन्वारसः (पञ्चः)

शिलाऽऽलताप्याऽभ्रभुजङ्गवङ्ग
प्रवालवैदूर्यशशिद्विभागम्।
सूतस्त्रिधाऽष्टाऽऽयसभस्मयुक्तं
सुवर्णपत्रोद्भवतो विमर्द्य ॥ ८६७ ॥
विभावयेत्स्तन्यकवालधूर्त-
जयाम्बुभिर्वानरिजाम्भसा च।
माषाऽश्वगन्धोरगवल्लितोयै-
र्भाव्यं पृथग्दिग्दिनकं तथैव ॥ ८६८ ॥
लवङ्गजातीफलपत्रकश्री
सिद्धार्थचश्चिक्षुरगोक्षुरैला-
विश्वैः पुनर्भूत्वगिभाऽब्धिशोष-
कङ्कोलदद्रूफलत्वगुडूच्या ॥ ८६९ ॥
पलाण्डुशिग्रुद्वयभीरुताली-
दीप्यद्वयाऽरुष्करखदिरसारैः।
खर्जूरमोचारसमोचकन्द
प्रियङ्गुमांसीशटिधान्यपञ्च ॥ ८७० ॥
द्राक्षा तुगावल्कलनारिकेलाऽ-
गुरुं समानं द्विपलं विचूर्ण्य।
भाण्डे पचेदष्टपले च तोये
मृद्वग्निना तद्विपलाऽवशेषम् ॥ ८७१ ॥
विभावयेत्तेन जलेन घर्मे
पुनः पुनस्तं मुनिवासराणि।
पलद्वयं याममफेनमस्मै
मृदौ विपक्वं पयसा तथैनम् ॥ ८७२ ॥
कल्केन भाव्यं शरवासराणि
विभावयेत्तं शतपत्रनीरैः।
शुष्कं विमर्द्य विधिवत्प्रयोज्यो
वल्लः सितानागलतादलाभ्याम् ॥ ८७३ ॥
पथ्यं सुदुग्धं मधुरं प्रदद्या-
त्प्रमेहवाते क्षयमूत्रकृच्छ्रे।
शोफातिसारे ग्रहणीप्रलापे
प्रवाहयोनीष्वखिलाऽऽमयेषु ॥ ८७४ ॥
धन्वन्तरिप्रेरितपुष्पधन्वा
पूज्यो नृणां द्रावयतेऽङ्गनानाम्।
लिङ्गे दृढत्वं युवतिप्रियत्वं
नष्टाऽल्पवीर्यो रतिवल्लभः स्यात् ॥ ८७५ ॥

र. शं., टो, र. म. मा, र. क यो., वाजीकरणे।

टि०—रसपारिजातीयपाठेन बहुधा साम्यमावहन्नपि मूलद्रव्ये भावनायां च विशेषात्पृथगेव पाठो न्यस्त इति विभावनीयम्।

भाषा—मैनसिल, हरताल, सोनामाखी, अभ्रक, नाग, वङ्ग, प्रवाल, लहसुनिया, रजत और मोती इन सबकीभस्म २-२ भाग, पारेकीभस्म ३ भाग, लोहभस्म ८ भाग इनसबको इकट्ठाकर दो तीन पहर मर्दनकर धतूरेके पत्रस्व रस, स्त्रीदुग्ध, सुगन्धवाला, धतूरेकेबीज, भाग, केवाच उड़द, असगन्ध, नागरवेल, इनप्रत्येकके रसोंसे १०-१० दिन मर्दनकर सुखाले। फिर लौंग, जायफल, जावित्री, फा[illegible] पीलीसरसों, घुंघ (हिं. कागलहरी), समुद्रशोष, शीतलचीनी पवाड़केबीज, तज, गिलोय, प्याज, कडवा और मीठा सहिजन लज्जालु दोनों मुसली, देशी और खुरासानी अजवाइन भिलावाँ, बीजकसार (बीवला म), छुहारे, मोचरस, केलाकन्द प्रियङ्गु, जटामासी, कचूर, धान्यपञ्चक (धनिया, सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धवाला, बेलगिरी), द्राक्ष, वसलोचन, भोजपत्र, नारियल और अगर ये सब १-१ भाग लेकर जवकुटकर दो २ पलकी पांच पुड़िया बनालेना। इनमेंसे एक पुड़ियाको १६ पल पानीमें उबाले, जब २ पल पानी रहजाय तब छानकर इस पानीसे उपर्युक्तरसको भिगोकर सुखावे, ऐसे इसकी सातरोज़ भावनाएं देकर सुखाकर २ पल शुद्ध अफीमको ८ पल गोदुग्धमें डालकर मन्द आंचसे १ प्रहरतक पकावे और इसको धीरे २ मिलाकर पाँचरोज़ घोटकर सुखालेवे फिर कमलपत्रके रसकी १ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखलेवे। इनमेंसे १-१ गोली पकेपानमें मिश्री डालकर उसके साथ खानेसे प्रमेह, वातविकार, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, शोथ, अतिसार, सङ्ग्रहणी, प्रलाप, प्रवाह (झड़ी), समस्त योनिरोग, लिङ्गशैथिल्य, अल्पशुक्रता और नष्टशुक्रता इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै और स्त्रियोंका द्रावणकरताहै। यद्यपि यह पाठ पञ्चम पाठसे बहुत अंशोंमें मिलताहै परन्तु द्रव्य और भावनाओंमें बहुत अन्तरहोनेसे स्वतन्त्र रक्खागयाहै ॥ २०६ ॥

२०७ पुष्परागरसायनम्

पुष्परागोद्भवं भस्म पलार्धप्रमितं शुभम्।
तदर्द्धं पीतकं वज्रं तदर्धं ताम्रभस्मकम् ॥ ८७६ ॥
ताम्रस्यार्द्धञ्च रजतं जातरूपं तदर्द्धकम्।
वज्रभस्म तदर्धञ्च सर्वतुल्यं मृताऽभ्रकम् ॥ ८७७ ॥
तत्समं सूर्यकान्तञ्च मारितं वह्निना सह।
तुल्येन वह्निना सार्द्धं दशवारं पुटेत्खलु ॥ ८७८ ॥
नीलाञ्जनाऽऽलताप्यानां पृथक्कृतानि पुटानि च।
इति सिद्धमिदं प्रोक्तं पुष्परागरसायनम् ॥ ८७९ ॥

क्षयादि सर्वरोगघ्नं शुक्रव्याधिहरं परम् ।
गुदगुल्मार्तिशमनं पुत्रीयं वृष्यमुत्तमम् ॥ ८८० ॥
क्षिप्रं गुल्महरं स्त्रीणां नानाव्याधिनिषूदनम् ।
दीपनं परमं प्रोक्तं कामलापाण्डुनाशनम् ॥
बहुनाऽत्र किमुक्तेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ ८८१ ॥

र. यू, रसायने ।

भाषा—योगराजरसभस्म २ तोले, पीतल और वङ्गभस्म १–१ तोला, ताम्रभस्म ६ माशे, रजतभस्म ३ माशे, सुवर्णभस्म १॥ माशा, गुरगैंसे आधी हीरेकीभस्म और इनसबकी बराबर अभ्रकभस्म तथा समगन्धक देकर मारक द्रव्यस्वरसकेसाथ घोटकर दश गजपुट देकर भस्म कियाहुआ सूर्यकान्त अभ्रककी बराबर डालदेना । फिर सबचीजोंको मिलाकर सबकी बराबर गन्धक देकर उसीतरह मारकद्रवमें घोटकर १० गजपुटदे । फिर नीलाञ्जनभस्म, हरिताल और सोनामाखी इनप्रत्येकको अलग २ समभाग मिलाकर पूर्ववत् मर्दनकर १–१ गजपुट देनेसे यह पुष्पराजरसायन सिद्धहुआ । इसको बनाकर एकरंगमें रखदेना । इसके बाद एकएक अथवा आधी आधी रत्तीकी मात्रा तत्तद्रोगोचितानुपानके साथ देनेसे क्षय, कुष्ठ, शुक्रव्याधि, गुल्म, वन्ध्यात्व, नपुंसकत्व, रक्तगुल्म, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि, इन सब रोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ पुष्पाऽङ्कुशरसः

सूतं साऽभ्रविषं लोहं व्योषञ्च यवक्षारकम् ।
मर्दयेत्तुलसीचित्रभृङ्गद्रावैर्दिनत्रयम् ॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत स्थौल्यादौ स्याऽनुपानतः ॥८८२॥

रसायनम्,, मेदोरोगे ।

भाषा—पारद और अभ्रकभस्म, शुद्धवत्सनाग, लोहभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, यवक्षार इन समभाग लेकर तुलसी, चित्रक, भंगरा, इनके स्वरसोंसे ३–३ रोज भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखलेवे । इनमेंसे १–१ गोली मेदोवृद्धिप्रभृतिरोगोंमें अपने २ अनुपानकेसाथ देनेसे यह तत्तद्रोगोंको दूरकरताहै ॥ २०८ ॥

२०९ पूगपाकः (रतिवल्लभः) (प्रथमः)

पूगं दक्षिणदेशजं दशपलोन्मानं भृशं कर्तयेत्,
तस्मिन्नं जलयोगतो मृदुतरं संकुट्य चूर्णीकृतम् ।
तच्चूर्णं पटशोधितं वसुगुणे गोदुग्धदुग्धे पचेत्,
गव्याज्याञ्जलिसंयुतेऽतिनिबिडे दद्यात्तुलार्धां सिताम् ।
पक्वं तज्ज्वलनात्क्षितिं प्रतिनयेत्तस्मिन्पुनः प्रक्षिपेत्,
दद्यात्तत्तदुदीरयामि बहुला द्रव्याऽऽदरात्संहिताः ।
एला नागवला बला सचपला जातीफलं लिङ्गिनी,
जातीपत्रकपत्रपत्रकयुगं तच्च त्वचासंयुतम् ॥ ८८४ ॥
चिञ्चा वीरणवारिवारिदवरा वांशी वरी वानरी,
द्राक्षासेक्षुरगोक्षुराथ महती खर्जूरिका क्षीरिका ।
धान्याकं सकसेरुकं समधुकं शृङ्गाटकं जीरकम्,
पृथ्वीकाऽथ यवानिका वरटिका मांसीमिसी मेथिका ।
कन्देऽप्यत्र विदारिकाथ मुशली गन्धर्वगन्धा तथा,
कर्चूरं करिकेसरं समरिचं चारस्य बीजं नवम् ।
बीजं शाल्मलिसम्भवं करिकणाबीजञ्च राजीवजम्,
श्वेतंचन्दनमत्र रक्तमपि च बीमंशुपुष्पैःसमम् ॥८८६॥
सर्वञ्चेति पृथक् पृथक् पलमितं सञ्चूर्ण्य तत्र क्षिपेत्,
सूतं वङ्गभुजङ्गलोहगगनं सन्मारितं स्वेच्छया ।
कस्तूरीघनसारचूर्णमपि च प्रासं तथा प्रक्षिपेत्,
पश्चादस्य तु मोदकान्विरचयेद्बिल्वप्रमाणानथ ८८७
तान्भुक्त्वाऽतिसत्त्वं यथाऽनलबलं भुञ्जीत नाऽम्लं रसं,
पूर्वस्मिन्प्रदिते गते परिणतिं प्राग्भोजनाद्भक्षयेत् ।
नित्यं श्रीरतिवल्लभाऽऽह्वयकमिमं यः पूगपाकं भजेत्,
स स्याद्वीर्यविवृद्धिपुष्टमदनो वाजीव शक्तो रतौ८८८
दीप्ताऽग्निर्बलयान्वलीविहरते हृष्टः सुपुष्टः सदा,
वृद्धो योऽपि युवेव सोऽपि सुचिरः पूर्णेन्दुवत्सुन्दरः ।
एतस्मिन्प्रतिवल्लभे यदि पुनः सम्यक् सुरासानिका,
धत्तूरस्य च बीजमर्ककरभः पाथोधिशोषस्तथा ।८८९।
सन्माजूफलकं तथा खसफलं त्वक् चाऽपि निक्षिप्यते,
चूर्णाऽर्धा विजया तथा सहि भवेत्कामेश्वरो मोदकः

यो. र., भा. प्र , वृ. यो. त , र. कि , पा. य., यो. म , द्वो , वाजीकरणे । यो. म. कामेश्वरमोदकेति नाम । रतिवल्लभे कियद्द्रव्यनामधिक्यतया प्रोक्तान्महाकामेश्वर ॥

भाषा—चिकनीसुपारी १० पल लेकर सरोतेसे बारीक टुकड़ेकर दोलायन्त्र बनाय पानीकी भापसे स्वेदनकरे । जब एकदम कोमलहोजाय तब कूटकर कपड़छान चूर्णकरले । इस चूर्णको अठगुने गायकेदूधमें (द्रवहोनेकेकारण १६ गुनाभी लेसके हैं) पकावे । अग्निमन्दरक्खे और धीरे २ चलातारहे, कड़ाहीके पेंदेमें न लगनेपावे । मावा होजानेपर आधसेर घी डालकर खूबभूने । अच्छीतरह सिकजानेपर ५० पल शक्करकी एकतारचाशनी होनेपर मिलादे और चलातारहे । दोतारी चाशनी होनेपर अग्निपरसे उतारकर छोटीइलायची, नागबला, खरेटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गीके बीज, जावित्री, पत्रज, तालीसपत्र, तज, सोंठ, खस, सुगन्धवाला, नागरमोथा, त्रिफला, वंसलोचन, शतावर, छिलकेरहित केवाचके बीज, बीजरहित द्राक्ष, तालमखाना, गोखरू, छुहारा, खिरनी, धनियां, कसेरू, मुलहटी, सिंघाड़ा, जीरा, बड़ीइलायची, देशी अजवाइन, कौड़ीभस्म, जटामांसी, सोंफ, मेथी, विदारीकन्द, स्याह व सफेद मुस्ली, असगन्ध, कचूर, नागकेसर, सफेद मरिच, चिरोंजी, सेमलके बीज, गजपीपल, कमलगट्टा, सफेद तथा लालचन्दन और लवङ्ग इनका बारीकचूर्ण १–१ पल, पारा, वङ्ग, नाग, लोह और अभ्रक इनकीभस्में १–१ कर्षसे २–२ कर्षतक, कस्तूरी २ कर्ष, कपूर १ कर्ष मिलाकर एकएक पलके लड्डू बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अग्निबल देखकर आधा अथवा एक लड्डू

खाकर ऊपरसे दूधपीवे । पचजानेपर पथ्यभोजनकरे । इसके सेवनसे वीर्यकीवृद्धि, वाजीकरण, अग्निकी दीप्ति, बल, पुष्टि इनसबको प्राप्तहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै । इस योगमें खुरासानी अजवाइन, शुद्ध धतूरेके बीज, अक्लकरा, समुद्रशोष, माजूफल, खसखस और तज १–१ पल और सबसे आधी भुनीहुई भाग डालनेसे यह महाकामेश्वरमोदक कहलाताहै २०९

२१० पूगपाकः (बृहन्) (द्वितीयः)

पाच्यं पूगरजो दशाऽभ्रममलं मार्दे कटाहेऽग्निना,
स्विन्नश्चाऽष्टगुणे पयस्यपि घृतप्रस्थाऽर्द्धकेऽस्मिन्धने।
जातीकोषफले च षट्कटुशटी द्राक्षा वरा वानरी,
चातुर्जाततुगाऽब्दधान्यमुसलीदीप्याजयष्टीक्षुरम् ॥
अश्वा शीतवलात्रयं कारिकणा मांसी वरी मेथिका,
शृङ्गाटं मिशिजीरवारिविजया गोक्षूरखर्जूरकम्
धात्री शाल्मलिकोलचोरकनकं कुम्भत्रिजेलाऽभ्रकं,
पृथ्वीकाऽभयवङ्गदेवकुसुमं दद्यात्पृथक्कार्षिकम् ८९१
पञ्चाशत्पलखण्डपाकललितः स्यात्पूगपाकः पृथु–,
र्वृष्यः पाण्डुज्वरहरः प्रमेहदलनो रेतो विवृद्धिप्रदः ।
पित्ताऽस्रे प्रदरे क्षये करपदे दाहेऽम्लपित्ते वपु–,
र्दाहे पाण्डुगदे हुताशनहतावेतेषु शस्तो मतः ॥८९२॥

वृ यो त, प्रमेहे ।

भाषा—१० पल चिकनी सुपारीका बारीक चूर्णकर मिट्टीकी कड़ाहीमें अठगुना गायका दूध डालकर पकावे । मावा होनेपर आधसेर घी डालकर भूनले फिर ५० पल शक्करकी दोतारकी चाशनी मिलाकर जायफल, जावित्री, षट्कटु (सोंठ, मिर्च, पीपल, चव्य, चित्रक, पिपलामूल), कचूर, द्राक्ष, त्रिफला, छिलके रहित केवाचके बीज, तज, पत्रज, इलायची, वंसलोचन, नागरमोथा, धनिया, स्याह और सफेद मुसली, देशी व खुरासानी अजवाइन, अजमोद, मुल्हठी, तालमखाना, असगन्ध, शुद्ध कपूर, बला, नागबला, अतिबला (गुलसिकरी), गजपीपल, जटामासी, शतावर, मेथी, सिंघाड़े, सौंफ, जीरा, सुगन्धवाला, भाग, गोखरू, छुहारे, आंवले, सेमल का मुसला, बेरकी मज्जा, चोरक (ररजवाइन), शुद्धधतूरेके बीज, दन्ती, सफेद निसोतकी जड़कीछाल, रुद्राक्ष, अभ्रकभस्म, बड़ी इलायची, खस, वङ्गभस्म, लौंग येसब १–१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर मिलाकर रखदे । इसमेंसे, २–२ तोले खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे पण्ढत्व, धातुक्षीणता, प्रमेह रक्तपित्त, प्रदर, क्षय, हाथपैरोंकीजलन, अम्लपित्त, तमाम शरीरका दाह, पाण्डुरोग और मन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ २१० ॥

२११ पूर्णकलावटी

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पबिल्वकम् ।
विषं कुटजबीजञ्च पाठाजीरकधान्यकम् ॥ ८९३ ॥
रसाञ्जन टङ्कणञ्च शिलाजतु पलं तथा ।
पलं जातीफलं मुस्ता प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥ ८९४ ॥
भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकञ्चरुदाडिमम् ।
शृङ्गाट केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका ॥ ८९५ ॥
केशराजो भृङ्गराजः प्रत्येकं तोलकद्वयम् ।
द्विमाषा वटिका कार्या तक्रेण परिपेषिता ॥ ८९६ ॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी ।
शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी ॥
भ्रमच्छर्दिच्छेदकरी सङ्ग्रहग्रहणीञ्जयेत् ॥ ८९७ ॥

र. स, र. क., ग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म, धावड़ीके फूल, बेलगिरी, शुद्धबछनाग, इन्द्रजव, पाठा, जीरा, धनिया, रसौत, भुनासुहागा येसब ३–३ तोले, शिलाजीत, *जायफल, नागरमोथा ये प्रत्येक १–१ पल, ब्राह्मी, लघुपञ्चमूल* (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, भटकटैया, बनभाटा और गोखरू), बला, चौलाईकी जड़, अनारकाछिल्का, सिंघाड़े, केशर, जामुनकी छाल, दहीका पानी, जैत, स्याह और सफेद भगरा, येप्रत्येक २–२ तोले लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर छाछसे ४ पहर घोटकर २–२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली छाछकेसाथ लेनेसे ग्रहणी, शूल, दाह, मन्दाग्नि, ज्वर, भ्रम, वमन येसब नष्टहोते है ॥ २११ ॥

२१२ पूर्णचन्द्रोदयरसः (प्रथमः)

शुद्धञ्च तालकं लौहं गगनञ्च पलंपलम् ।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥ ८९८ ॥
जातीकोषो मुरा पत्रं शटी तालीसकेशरम् ।
व्योषं चोचं कणामूलं लवङ्गं पिचुसम्मितम् ॥ ८९९ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥ ९०० ॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।
रसायनवरश्चाऽयं वाजीकरण उत्तमः ॥ ९०१ ॥

र स, र च, अतिसारे ।

भाषा—रसमाणिक्य, लोह और अभ्रकभस्म १–१ पल, शुद्धकपूर, पारा और गन्धक १–१ कर्ष, जायफल, जावित्री, मुरामासी, पत्रज, कचूर, तालीसपत्र, केशर, सोंठ, मिर्च, पीपल, तज, पिपलामूल, लौंग, ये प्रत्येक एककर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारका अतिसार, सङ्ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल, ये सब नष्टहोतेहैं । यह रसायनहै और उत्तम वाजीकरणहै ॥ २१२ ॥

२१३ पूर्णचन्द्रोदयरसः (द्वितीयः)

गन्धताम्ररसटङ्कणनाग
तारकाञ्चनतुमाक्षिकयुग्मम् ।
कान्तविद्रुमसुवङ्गमौक्तिक
तीक्ष्णलोहमृगनाभिरभ्रकम् ॥ ९०२ ॥

कुङ्कुमतारजचन्दनचन्द्र-
मालतीपुष्पसुमर्दितयामम्।
वल्लमात्ररसयोजितयुक्ति-
रार्द्रकस्वरसपानविशेषम् ॥ ९०३ ॥
श्वासकासमथपीनसरोगं
मेहकुष्ठरुधिराऽऽमयनाशम्।
राजयक्ष्महरदेहसुवर्ण-
दीप्तिकारकमिदं हि सुवृष्यम् ॥ ९०४ ॥
पूर्णचन्द्रोदयो नाम रसः सर्वार्थसिद्धिदः।
युक्त्या सुयोजितः पुंसां नानाऽऽतङ्कविनाशनः॥९०५॥

रसायन स , वै. चि. (ल) सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और सुहागा, ताम्र, नाग, रजत, सुवर्ण, सोनामाखी, कासामाखी, कान्तलोह, मूगा, वङ्ग, मोती, फोलाद, अभ्रक इनसबकीभस्में, कस्तूरी, केशर, रूपामाखी, सफेदचन्दन, शुद्धकपूर येसब समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर मालतीपुष्परससे एक पहर मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखवगैरह उचिताऽनुपानकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, पीनस, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तविकार, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता इनसबको नष्टकर शरीरमें सुवर्णके सदृश कान्तिको पैदा करताहै। अनुपानादि युक्तिविशेषसे यदि इसका प्रयोग कियाजायतो यह नानाप्रकारके रोगोंको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ पूर्णचन्द्रोदयसिन्दूरम्

तुल्यं तुल्यं रसं गन्धं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
कपित्थमूलसारेण मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ ९०६ ॥
वटिकां छायया शुष्कां भाण्डमध्ये विनिःक्षिपेत्।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥९०७॥
दीप्ताऽग्नौ च द्विपड्यामं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
कपित्थमूलसारेण त्रिदिनं मर्दयेत्क्रमात् ॥ ९०८ ॥
बिल्वमूलकषायेण मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः।
चातुर्जातककर्पूरलवङ्गकुसुमान्वितम् ॥ ९०९ ॥
सर्वं रससमञ्चैव मेलयित्वाऽथ चूर्णकम्।
लाजचूर्णं सितामिश्रं मधुना सह सेवयेत् ॥ ९१० ॥
वल्लद्वयमितः सूतो वमनस्तम्भनस्तथा।
कासादिपञ्चछर्दीनामरुचेर्नाशकः परः ॥ ९११ ॥
हृद्रोगं स्वरभङ्गञ्च मन्दाग्निञ्च निवारयेत्।
पूर्णचन्द्रोदयो नाम निर्मितः शूलपाणिना ॥ ९१२ ॥

व रा., वै. चि , छर्द्याम्।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कैथकी जड़की छालके रससे ३ रोज मर्दनकर छोटी छोटी गोलिया बनाकर सुखाले और ६–७ कपडमिट्टीकीहुई आतशी शीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी तेज अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कैथकीजडकी छाल और बेलकी जड़ इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज मर्दनकर तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, शुद्धकपूर, लौंग इनसबका बारीक चूर्णकर रसकी बराबर मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा लाजचूर्ण, मिश्री और मधुकेसाथ सेवन करनेसे वमन, कास, सब प्रकारकी छर्दि, अरुचि, हृद्रोग, स्वरभङ्ग, मन्दाग्नि इन सब रोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २१४ ॥

२१५ पूर्णचन्द्रोरसः (बृहन्) (प्रथमः)

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम्।
लोहभस्म पलञ्चाऽभ्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥९१३॥
द्वितोलं रजतञ्चैव वङ्गभस्म द्विकार्षिकम्।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ९१४ ॥
जातीफलञ्चेन्द्रपुष्पमेलाभृङ्गञ्च जीरकम्।
कर्पूरं वनिता मुस्तं कर्षकर्षं पृथक् पृथक् ॥ ९१५ ॥
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम्।
भावयित्वा वरातोयैः केवुकानां रसेन च ॥ ९१६ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्ये रात्रिदिनोषितम्।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्मिताम् ॥९१७॥
खादेच्च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम्।
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥ ९१८ ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत्।
बल्यो रसायनो वृष्यो वाजीकरण उत्तमः ॥ ९१९ ॥
अयमष्टीलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम्।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ९२० ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि।
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ९२१ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम्।
नातः परतरः श्रेष्ठोविद्यते वाजिकर्मणि ॥ ९२२ ॥
रसस्याऽस्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः।
मेधाञ्च लभते वाग्मी तुष्टिपुष्टिसमन्वितः ॥ ९२३ ॥
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं बलम्।
भीयते मदनेनैव मदनस्य समं वपुः ॥ ९२४ ॥
प्रियाश्च मदनप्रायाः पश्यन्ति मदनाऽऽकुलम्।
स्त्रीणां तथाऽनपत्यानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम् ॥९२५॥
क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वातरेतसाम्।
ओजस्तेजस्करश्चाऽयं स्त्रीषु कामविवर्धनः ॥ ९२६ ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वामयध्वंसकः,
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे।
नित्यानन्दकरः सुखाऽतिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते,
ह्यष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः ९२७

र स, भै र, र र, ध, र मु, र च, व रा, वाजीकरणे।

टि०—केवुकनिशब्दो धनाऽन्धकारे पतितोऽस्ति, कचित्नालीशाक वद न्त्यन्ये कसुकमित्यादीत्यादि भ्रमजनकानि वचनानि लिखितवन्त। परन्तु कसुकनामसु नालीनामसु च केवुकेति नाम न दृश्यतेऽत तद्रसो न हृदयङ्गमतामादधाति। भावप्रकाशेन कन्देषु कसेरुकन्दात्पूर्वं दत्तमतो

विशायने चलवर्तिपदार्थोऽयम्। गुणदृष्टया स्वल्पकमलाकारपत्र्यां जलवदृर्श वर्तते यत्फल मुकुलाकार तदन्तर्वर्तीनि सममदृशानि असंख्येयानि बीजानि परिपूरितानि भवन्ति तानिचाऽऽस्वादे मधुराण्यति स्निग्धानि च भवन्ति। अत एव गुर्जरदेशे तत्फलानां धीतेल्नि नाम प्रसिद्धम्। तदेव वस्तु ग्रहीतव्यमित्यस्माक सम्मति।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २–२ तोले, लोह और अभ्रकभस्म ४–४ तोले, चादी और वङ्ग भस्म दो २ तोले, सुवर्ण, ताम्र, कांस्य इनसबकी भस्में, जायफल, लौंग, इलायची, भगरा, जीरा, कपूर, वनिता (प्रियङ्गु अथवा अनन्तमूल), नागरमोथा ये प्रत्येक १–१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर पारगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर घीकुआर, त्रिफला और केवुक (धीतेला गु०) के रस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर एरण्डपत्रोंमें लपेटकर धान्यराशिमें रखदे। चौथेरोज निकालकर एरण्डपत्रोंको फेंकदे और गोलेको मर्दनकर चने बराबर गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पानके साथ खानेसे अष्ठीलिका, कास, श्वास, अरुचि, आमशूल, कटिशूल, हृच्छूल, पित्तशूल, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, पुरानी सङ्ग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर, कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह, वातरक्त इत्यादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै। यह उत्तमद्रव्य, वाजीकरण और रसायनहै वन्ध्यास्त्रियोंको पुत्र पैदा करताहै। दुर्वल, क्षीण, अल्पशुक्र, वातशुक्र इनसबको दूरकरताहै। खानेसे बहुतही शीघ्र अपना प्रभाव दिखाताहै इसलिय यह राजालोगोंके सेवन करने योग्यहै॥ २१५॥

२१६ पूर्णचन्द्रोरसः (द्वितीय)

मृतसूताऽभ्रलोहं वै शिलाजतुविडङ्गकम्।
ताप्यं क्षौद्रघृतं तुल्यमेकीकृत्य विमर्दयेत्॥ ९२८॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम्ना माषिक भक्षयेत्सदा।
शाल्मलीपुष्पचूर्णञ्च क्षौद्रैः कर्षं पिबेदनु॥ ९२९॥
दुर्वलो वलमाप्नोति मासैकेन यथा शशी।
कृशानां बृंहणं देयं सर्वं पानाशभेषजम्॥
निद्रा चैव दिवा रात्रौ छागमांसाशनं तथा॥ ९३०॥

र र स, र सं, र सु, र क, भै र, रसायनस, र च, चि क्र, व रा, र र दी, र कौ, ना वि, रसपारिजात, र क ल (ना) रसायनाऽधिकारे।

भाषा—पारा, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, शिलाजीत, विडङ्ग, शुद्धसोनामाखी, मधु और घी सब समभाग लेकर मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा खाकर सेमलके फूलोंका चूर्ण १ तोला मधुके साथ चाटनेसे एक महीने में जिसतरह चन्द्रमा बढताहै उसीतरह दुर्वल आदमी वलवान् होजाताहै। कृश आदमियोंके लिये बृंहण अन्नपान देना और बकरेका मांस खानेको देना, रातदिन सोनेकी छुट्टी रखनी चाहिये॥ २१६॥

२१७ पूर्णचन्द्रोरसः (तृतीयः)

सूत गन्धञ्चाऽश्वगन्धां गुडूचीं
यष्टीतोयै मर्दयेदेकघस्रम्।
शुद्ध शङ्खं मौक्तिकं लोहकिट्टं
भस्मीभूतं सूततुल्यञ्च दद्यात्॥ ९३१॥
भूकूष्माण्डे वासरं तद्विमर्द्य
गोलं कृत्वा भूधरे तं पुटेत्तु।
चूर्णं कृत्वा नागवल्लीरसेन
दद्यादेव मर्दयित्वैकयामम्॥ ९३२॥
मध्वाज्याभ्यां पूर्णचन्द्रो रसेन्द्रः
पुष्टिं वीर्यं दीपनञ्चैव कुर्यात्।
प्रायो योज्यः पित्तरोगे ग्रहण्या-
मर्शोरोगे पित्तजे येलयुक्तः॥ ९३३॥
स्त्रीणां रोगे शाल्मलीनीरयुक्तो
शैलेय वा शर्करातुल्यभागम्।
शुद्धं गन्धं वाजिगन्धाञ्च यष्टीं
पक्त्वा दुग्धे तच्च कार्ष्यं ददीत॥ ९३४॥
पयश्चाऽऽज्यं पाचयित्वा प्रदद्या-
द्यद्वा यष्टी मागधी चाऽश्वगन्धा।
मध्वाज्याभ्यां शाल्मलीसत्त्वमुक्ताः
शम्बूकैर्वा भर्जितैराज्यमिश्रैः॥ ९३५॥

र दी, र चि, र सु, ध, यो म, रसायनस, र क, र र, र र स, र च, नि र, वै चि, र का, वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, असगन्ध और गिलोय समभाग लकर चूर्णकर मुलहठीके क्वाथसे १ रोज मर्दनकर सखला, मोती और मण्डूरकी भस्म, प्रत्येक पारेकी बराबर डालकर भुईंकोहळाके रससे एकदिन मर्दनकर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें पुटदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर चूर्णकर पानके रससे एकरोज मर्दनकर भूधरयन्त्रमें पकावे फिर एक पहर मधु और घीमें मर्दनकर १ माशेसे २ माशेतककी मात्रा देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको बढाताहै अग्निको दीप्त करताहै। पित्तके रोग, ग्रहणी, पित्तज बवासीर इन सबको नष्ट करताहै। प्राय पित्तप्रधान रोगमें एलुआ (मुसब्बर) के साथ देना। स्त्रीरोगोंमें सेमलकी छालके रसके साथ अथवा पाषाणभेद और शक्कर समभागके साथ देना। कृश आदमीको यह रस देनेके बाद शुद्ध गन्धक, असगन्ध, मुलहठी ये आधे आधे तोले दूधमें पकाकर पिलाना अथवा इनमें घी पकाकर पिलाना अथवा मुलहठी, पीपल, असगन्ध समभागका चूर्ण १ तोला मधु और घीके साथ ऊपरसे चटाना। अथवा सेमलका मुसला, गिलोयसत्त्व और मोती ३ माशे दूधके साथ देना अथवा घोंघेके कौडेको घीमें भूनकर घी सहित खिलाना॥२१७॥

२१८ पूर्णचन्द्रोरसः (चतुर्थः)

हैमी भूतिः सूतभूत्या समाना
तद्वद्धाला गन्धकं मौक्तिकञ्च।
घस्रैकं तं भृङ्गबेराऽग्नितोयै-
र्मर्द्यःशोष्यो वज्रमूद्भयां प्रवेश्य॥ ९३६॥

भाण्डके सलवणके क्षिपेच्च त-
द्गोमयेन परिवेष्ट्य भाजनम् ।
शोषयेच्च पुटयेत्तृणाऽग्निना
पूर्णचन्द्र इति जायते रसः ॥ ९३७ ॥
यक्ष्माणं जयति प्रसह्य चपलाक्षौद्राऽन्वितः शूलनुत्,
सामुद्रेण ससर्पिषा ससितया धात्र्याऽम्लपित्ताऽपहः।
कुण्डल्यम्बुयुतो जयत्यपि महातापश्च पित्तोद्भवं,
शाल्मल्यम्बुगुडूचिकाम्बुसहितः पाण्डुं सितासंयुतः॥
पुष्टिदृष्टिबलवीर्यवर्धनो
जायतेऽखिलगदाऽपहारकः ।
स्त्रीगदापहरण शिशुरक्षा-
कारकः स्वगदजानुपानकैः ॥ ९३९ ॥

र, र श, र प्र सु, र दी, र च, वाजीकरणे। रसचण्डांशुरसप्रकाशसुधाकरयो र्विष मौक्तिकञ्च न दृश्यते तत्स्थाने नागो दृश्यते, भावनाया केवल चित्रकेण मर्दनम्।

भाषा—सुवर्ण, पारा इनकी भस्में, शुद्धवत्सनाग और गन्धक, मोतीभस्म सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अदरख और चित्रकमूलके रस अथवा क्वाथसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय सुखाकर ४ तह कपडा लपेटकर ऊपरसे १-२ कपड़मिट्टी करके खूब सुखाले फिर लवणके भीतर बन्दकर गोबरसे वर्तनके मुहको बन्दकरके सुखाले और निर्वात स्थानमें इतने घासकी अग्नि दे कि वह नमक गरम होकर कपडा जलजाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रख छोडे। इसमेंसे १ अथवा २ रत्तीकी मात्रा पीपल और मधुके साथ देनेसे यह यक्ष्माको दूर करताहै। सैन्धव, घी और शक्करके साथ देनेसे शूलको मिटाता है, आवलेके रससे अम्लपित्तको दूर करताहै। गिलोयके हिम अथवा क्वाथके साथ देनेसे पित्त जनित घोर दाहको शान्त करताहै। सेमलकी छाल और गिलोयके काढेके साथ देनेसे पाण्डुको दूर करताहै। शक्करके साथ देनेसे पुष्टि, नेत्रज्योति, बल, वीर्य इनको बढाताहै। अपने २ अनुपानके साथ देनेसे स्त्री और बालकोंके रोगोंको दूर करताहै ॥ २१८ ॥

२१९ पूर्णचन्द्रोरसः (पञ्चमः)

चपला पर्पटीयुक्ता जम्बीररसमर्दिता ।
तयो र्द्विगुणमामिश्र्य शुक्तिचूर्णं विचक्षणैः ॥९४०॥
कुक्कुटीपुटपाकेन तद्रसम् वल्लमात्रकम् ।
प्रयोगो ज्वरनाशाय पूर्णचन्द्रोयमीरितः ॥ ९४१ ॥

र क यो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पीपल और रसपर्पटी दोनों समभाग लेकर कज्जली बनाय जमीरीके रससे मर्दनकर दोनोंसे दूना मोतीकी सीपका चूना मिलाकर खरलकर गोला बनाय कुक्कुटीपुटसे पाक करकर ३ रत्तीकी मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे यह ज्वरको दूरकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० पूर्णाऽभ्रकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धमभ्रकञ्च मन.शिलाम् ।
चूर्णितं वरुणद्रावे मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ९४२ ॥
काचकूप्यां निवेश्याऽथ वालुकायन्त्रके पचेत् ।
षड्यामान्ते समुद्धृत्य सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं शीतपैत्यनिवारकम् ॥ ९४३ ॥

वै चि, ध रा, पित्तरोगे।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक बराबरलेकर नीलवर्णकज्जलीकरले । फिर अभ्रकभस्म और शुद्ध मैनसिल बराबर २ मिलाकर वरुणके अङ्गस्वरससे दोदिन मर्दनकर गोला बनाय आतशी शीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें रक्खे और ६ पहरकी अग्नि देकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालले । इसकी २ रत्तीकी मात्रा उचिताऽनुपानके साथ देनेसे शीतपित्त निवृत्त होताहै ॥ २२० ॥

२२१ पूर्णप्रतिज्ञरसः

सूतं गन्धकतालकं मणिशिला शुल्वं मृतं हिङ्गुलं,
मार्गेर्कं निखिलं समांशरसकं खल्वे विमर्द्याऽम्भसा ।
निर्गुण्डीसुरसाम्भसाऽऽर्द्रकरसै र्देयं द्विगुञ्जोन्मितं,
तारुण्याऽखिलतापजे च विषमे जीर्णज्वरे धातुगे ॥
दोषे चैव हि सन्निपातबहुले सामे निरामे सति
हन्याद्वै घटिकाऽर्द्धकेन सकलान् पूर्णप्रतिज्ञो रसः ९४४

रसायनस., रससागर, ज्वराऽधिकारे । रससागरे वृद्ध-वसन्तमालतीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत अथवा मैनसिल, ताम्र और शिंगरिफभस्म १-१ भाग लेकर सनकी बराबर शुद्ध खपरिया डालकर पानीसे घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे २-२ गोली निर्गुण्डी, तुलसी और अदरखके रसोंके साथ देनेसे तरुणज्वर, विषम, जीर्ण, धातुग, सन्निपात, साम और निराम ज्वर इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ २२१ ॥

२२२ पूर्णेन्दुरसः (प्रथमः)

शाल्मल्युत्थे द्रवे मर्द्यं पक्षैकं शुद्धपारदम् ।
यामद्वयं पचेच्चाऽपि वस्त्रे बद्ध्वाऽथ मर्दयेत् ॥ ९४५ ॥
दिनैकं शाल्मलीद्रावै र्मर्दयित्वा वटीकृतम् ।
वेष्टयेन्नागवल्ल्याऽथ निक्षिपेत्काचभाजने ॥ ९४६ ॥
भाजन शाल्मलीद्रावै. पूर्णं यामद्वयं पचेत् ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थ द्रवे जीर्णे समुद्धरेत् ॥ ९४७ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रात र्नागवल्लीदलान्तरे ।
मुसलीं ससितां क्षीरं पलैकं पाययेदनु ॥ ९४८ ॥
रसः पूर्णेन्दुनामाऽयं सम्यग्वीर्यकरो भवेत् ।
कामिनीनां सहस्रैकं नर कामयते ध्रुवम् ॥ ९४९ ॥

यो र, वृ यो त, र म, ध, र कौ, रसायनस, र र, वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धपारेको सेमलकीछालके पानीसे १५ दिन तक मर्दनकर गोली बनाय वस्त्रमें बांधकर २ पहर सेमलकी छालके-रसमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकरे। फिर सेमलके रससे मर्दनकर गोलीबनाय पानमें लपेटकर आतशी शीशीमें रखकर सेमलका-रस भरदेवे और बालुकायन्त्रमें रखकर दोपहरतक पकावे, द्रव-जीर्ण होनेपर निकालले। इसमेंसे २ रत्ती पानके रसके साथ देकर मुशली, शक्कर और दूध १ पल ऊपरसे पिलावे। इसके सेवनसे वीर्य स्थिर होताहै और बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसक्ताहै ॥ २२२ ॥

२२३ पूर्णेन्दुरसः (द्वितीयः)

क्षारैश्च लवणै र्वह्निराजिकाभ्यांश्च काञ्जिकम्।
दत्त्वा दत्त्वा दिनं सम्यक् पारदं मर्दयेत्ततः॥ ९५० ॥
क्षालयेत्काञ्जिकेरेव मर्दयेत्कटुकैरपि।
क्षालयेत् श्लक्ष्णसंपिष्टराजिकाविषहिङ्गुजाम् ॥९५१॥
मूषां कृत्वा तदन्तःस्थं सूतं तं वस्त्रवेष्टितम्।
स्वेदयेत्काञ्जिके दोलायन्त्रे तं क्षालयेत्पुनः ॥ ९५२ ॥
गुरुदृष्टाऽनुमार्गेण शिवादिकृतपूजनः।
अङ्घ्रिणा तारपत्रेण रसपिष्टिं विधाय च ॥ ९५३ ॥
तां पिष्टिं स्वेदयेद्रम्भागर्भे स्वल्पेन वह्निना।
ततस्तां स्वेदयेदेतै र्दोलायन्त्रगतां पुनः ॥ ९५४ ॥
गुडूचीदुग्धशम्बूकच्छागरक्तैश्च गोक्षुरैः।
रम्भाफलवरीहस्तिपिप्पलीकोकिलाक्षकैः ॥ ९५५ ॥
धत्तूरपत्रमूलोत्थैः क्वाथः खासवल्कलैः।
अहिफेनजयानीरैः क्वाथैरग्निसमुद्भवैः ॥ ९५६ ॥
अपामार्गद्वयक्वाथे र्वाट्यालकभवैरपि।
गोकर्णीतिलपर्णी च निर्गुण्डी काकमाचिका ॥९५७॥
राजिका छिक्किका गुञ्जा खुरासानी तदुद्भवैः।
अम्बाऽग्निभृङ्गमण्डूकीजयन्तीमुनिवासकैः ॥ ९५८ ॥
नागार्जुनीकासमर्दीब्राह्मीतुलसिकारसैः।
दशमूलभवैः क्वाथैरर्कमूलदलोद्भवैः ॥ ९५९ ॥
पञ्चकोलभवैः क्वाथैस्तथा ज्योतिष्मतीभवैः।
अर्कपुष्पीशङ्खपुष्पीधातकीभार्ङ्गिकोद्भवैः ॥ ९६० ॥
मातुलोद्भवतैलेन मर्दनं सप्तवासरान्।
दृढेन वाससा गोलं बद्ध्वा सम्पीडयेद् दृढम् ॥९६१॥
गतस्नेहं विमुच्याऽथ पूर्ववत्स्वेदनं चरेत्।
पुरन्दरभवैः पुष्पैः सोपर्णे जातिजातकैः ॥ ९६२ ॥
चातुर्जाते जातिपत्रैराकारकरभैरपि।
वानरीशर्करामाषैः पूर्णेन्दुः स्याद्रसोत्तमः ॥ ९६३ ॥
कार्पासमज्जया सेव्यो वल्लोऽस्य सितया सह।
यस्य सन्ति गृहे लक्षं पीनोन्मत्तपयोधराः ॥ ९६४ ॥

रसायनसं, र र दी., र क, वाजीकरणे।

भाषा—क्षार, लवण, चित्रक, राई और कांजी डालकर पारेको मर्दनकर कांजीसे धोकर साफ करले फिर त्रिकुटसे मर्दनकर धोडाले। इसके बाद खुब बारीक पिसीहुईराई, वछनाग और हींगकी मूषामें रखकर वस्त्रसे वेष्टित करके काञ्जिकपूर्ण दोलायन्त्रमें ४ पहर स्वेदनकर साफकरले फिर सम्प्रदाय विधिसे शिवादिकोंका पूजनकर पारेसे चतुर्थांश चांदीके वर्क डालकर पिष्टी बनाले फिर इस पिष्टीको केलेकेकन्दमें रखकर बहुतमन्द अग्निसे स्वेदन करे अर्थात् बहुत थोडी अग्नि देवे जिसमें कि केलेका कन्द भुनजाय पर जले नहीं। फिर गिलोय, दूध, सखलेके कीडोंका मास और बकरेका रक्त, गोखरू, केलेका फल, शतावरी, गजपीपल, तालमखाना, धतूरेके पत्ते और जड, पोस्त, अफीम, भाग, चित्रक, दोनों अपामार्ग, खरेटी, गोकर्ण, हुरहुरके पत्ते, निर्गुण्डी, मकोय, राई, नकछिकनी, सफेदगुञ्जा, खुरासानी अजवाइन, कनेर, भगरा, ब्राह्मी, जैंत, अगस्त्य, अड्सा, छोटी दूधी, कसौंदी, ब्राह्मी, तुलसी, दशमूल, आकके जड़ और पत्ते, पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ), मालकांगनी, अर्कपुष्पी, शङ्खपुष्पी, धावड़ी, भारङ्गी, इनके यथासम्भव अङ्गस्वरस अथवा क्वाथोंसे दोलायन्त्रमें क्रमसे १–१ रोज स्वेदनकर धतूरेके बीजोंके तैलमें ७ रोज लगातार मर्दनकरे फिर ४ तह कपड़ेमें उठाकर खुब ज़ोरसे दबाकर तैल निकाल दे और साफकरले। इसके बाद सफेद अर्जुन (सारङोल) कोरइयाके फूल, मरिच, जायफल, तज, पत्रज, इलायची, जाविञी, अकलकरा, कैंनाच, शक्कर, मानकन्द अथवा उड़द इनके १६ गुने कल्कमें उस गोलेको बन्दकर भूधरयन्त्रमें स्वेदन करे। यह पूर्णेन्दुरस तैयार हुआ। इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा ३ माश कपासकी मज्जाके साथ सेवन करनेसे बहुतसी स्त्रियोंको सन्तुष्ट कर सक्ताहै। तत्तद्रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह तमाम रोगोंको दूर करताहै ॥ २२३ ॥

२२४ पूर्णेन्दुरसः (तृतीयः)

शुद्धसूतत्रयो भागा भागैकं ताम्रचूर्णकम्।
कृत्वा पिष्टीं निरुद्ध्याऽथ रम्भाकन्दोदरे पुनः ॥९६५॥
मृल्लिप्तं शोषितं पक्त्वा दिनैकं करिषाऽग्निना।
एवं सप्तदिनं पक्त्वा कन्देकन्दे दिनंदिनम् ॥ ९६६ ॥
उद्धृत्य बन्धयेद्वस्त्रे दृढे चैव चतुर्गुणे।
क्षुद्रशम्बूकमांसाक्तं छागरक्तगतं पचेत् ॥ ९६७ ॥
दोलायन्त्रे त्र्यहं यावद्देयं रक्तं पुनःपुनः।
गुडूच्या गजपिप्पल्या कदल्या कोकिलाक्षकैः ॥९६८॥
गोक्षुरीवानरीमूलजातीमूलभवैर्द्रवैः।
पाचयेत्तत्कषायैर्वा दोलायन्त्रे दिनत्रयम् ॥ ९६९ ॥
ततः क्षीरे सितायुक्ते तद्वत्पक्त्वा दिनावधि।
उद्धृत्य मुशलीक्वाथे मर्द्यं यामचतुष्टयम् ॥ ९७० ॥
रसः पूर्णेन्दुनामाऽयं खादेन्मांससितायुतम्।
गोक्षुरो वानरीबीजं गुडूची गजपिप्पली ॥ ९७१ ॥
कोकिलाक्षस्य बीजानि मज्जा कार्पासबीजजा।
शतावरी च रम्भायाः फलं सर्वं समं भवेत् ॥९७२॥

सर्वतुल्या सिता योज्या मधुना लोडितं लिहेत् ।
पलार्द्धमनुपान स्यात्ततः पेयं गवां पयः ॥
कामिनीनां सहस्रैकं रमते कामदेववत् ॥ ९७३ ॥

र. ख , भै सा , यो म , र सि , रसायने वाजीकरणेच ।

टि०—अन्यग्रन्थेषु तारे पिष्टि सम्पादिता, रसायनखण्डे तु तारस्थाने ताम्र दृश्यते तल्लेखकप्रमादाद्वा स्याज्ज्ञानपूर्वकं वा स्यादिति न निश्चीयते । परन्तु ताम्रेण सम्पादितेऽन्दान्तिभ्रान्त्यादिपर भविष्यति, अतस्तारेणैव सम्पादनीयमिति युक्त प्रतिभाति । र सि अस्मिन् विच्छिन्न पाठ ।

भाषा—शुद्धपारेके तीनभागोंमें १ भाग शुद्धताम्रका बारीक चूर्ण डालकर पिट्ठी बनाकर केलेके कन्दमें रखकर उसीकी डाटसे बन्दकर २–३ कपड़मिट्टी करके सुखाले और एकदिन करीपकी अग्निमें पकावे । इसतरह ७ दिन नये नये कन्दोंमें रखकर स्वेदनकरे । फिर ४ तह मोटेवस्त्रमें बांधकर पोटली बनाय घोंघेका मांस मिलेहुए बकरेके रक्तमें दोलायन्त्रसे ३ रोज तक पकावे, रक्त बारम्बार देताजाय । इसके बाद गिलोय, गजपीपल, केला, तालमखाना, गोखरू, केवाचकी जड़, चमेलीकी जड़, शक्करडालाहुआ दूध इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवाक्वाथोंसे १–१ रोज स्वेदनकर मुसलीके क्वाथसे १ रोज मर्दन करनेसे पूर्णेन्दुरस तैयार होगा । इसमेंसे १ या २ रत्तीकी मात्रा मास और शक्करके साथ खाकर गोखरू, केवाचके बीज, गिलोय, गजपीपल, तालमखाना, कपासकी मज्जा, शतावर, पका केला सब समभागलेकर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर मधुसे चाटन बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ तोले खाकर ऊपरसे गायका दूधपीवे । इसके सेवनसे हजारों स्त्रियोंको कामदेवकी तरह सन्तुष्ट करसक्ताहै । टि०—इसकी पिष्टी बनानेमें रसायनखण्डने यद्यपि ताम्र दियाहै परन्तु और ग्रन्थोंमें ताम्रकी जगह तार (चांदी) मिलताहै । इसलिये तारके स्थानमें ताम्र होना लेखक प्रमादसेभी होसक्ताहै । कदाचित् ज्ञानपूर्वक लिया होतो ताम्रका चूर्ण नहीं किन्तु ताम्रकी श्वेतभस्मका प्रयोग करना ॥ २२४ ॥

२२५ पूर्णेन्दुरसः (चतुर्थः)

पिष्टो रसः सहेमाऽङ्घ्रिः स्वेद्यो रम्भाऽङ्घ्रिजे रसैः ।
तत्पिष्टं वस्त्रदोलायां यन्त्रे पाच्यं पृथग्दिनम् ॥९७४॥
केतकीशाल्मलीदुग्धमुशलीक्षौद्रजै र्द्रवैः ।
वानरीगोक्षुरच्छिन्नाशिवाकदलिधात्रिजे. ॥ ९७५ ॥
पूर्णेन्दु. स्यान्निगुञ्जोऽयं कुर्यात्स्वास्थ्यन्तु वल्लयुक् ।
पुष्टिदस्तुष्टिदः कामवृद्धिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ ९७६ ॥
सेव्य तालीं वरीं कच्छू वाजिगन्धां पुनर्नवाम् ।
श्वदंष्ट्रां शर्करां रात्रौ शृतक्षीरेण पाययेत् ॥ ९७७ ॥

ना वि , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्धसुवर्णका चतुर्थांश चूर्ण या वर्क मिलाकर पिष्टी बनाकर केलेके कन्दक रसमें स्वेदनकरे । इसके बाद केवड़ा, सेमल, गोदुग्ध, मुसली, मधु केवाच, गोखरू, गिलोय, हर्रे, केला, आवला इनके रसोंमें १–१ रोज़ स्वेदन करनेसे यह रस तैयारहोगा । इसमेंसे २–३ रत्ती खस, मुसली, शतावर, केवाच, असगन्ध, पुनर्नवा, गोखरू, शक्कर इनको डालकर पकाए हुए दूधके साथ देनेसे पुष्टि, हर्ष, काम और कान्ति बढ़तेहै ॥ २२५ ॥

२२६ प्रचण्डखेचरी गुटिका

चूर्णमश्वखुरस्यैव बुभुक्षुते समं क्षिपेत् ।
त्रिदिनं मातुलुङ्गाऽम्लैस्तत्सर्वं मर्दयेद् दृढम् ॥९७८॥
सूततुल्यं मृतं वज्रं तस्मिन् क्षिप्त्वाऽथ मर्दयेत् ।
तप्तखल्वे दिनं चाऽम्लैस्तद्गोलं चाऽन्धितं पुटेत्॥९७९॥
द्विनैकं भूधरे यन्त्रे भागैकं पूर्वपारदम् ।
क्षिप्त्वा तस्मिन् दृढं मर्द्यं मातुलुङ्गद्रवे दिनम् ॥९८०॥
रुद्ध्वाऽथ पूर्ववत्पक्त्वा पुनर्देयश्च पारदः ।
मर्द्यं पाच्यं यथापूर्वमेवं कुर्याच्च सप्तधा ॥ ९८१ ॥
रसं पुनःपुनर्दत्त्वा स्यादेव भस्मसूतकः ।
योजयेत्सर्वरोगेषु जरामृत्युहरो भवेत् ॥ ९८२ ॥
भागैकं नागचूर्णस्य भागैकं पूर्वभस्मनः ।
द्रुतसूतस्य भागेकं खोटं कुर्याच्च पूर्ववत् ॥ ९८३ ॥
तद्ध्माम्य गते नागे द्रावित जारयेत्पुनः ।
पूर्ववल्लोहरत्नान्तं जीर्णे बद्धा स्थिता मुखे ॥ ९८४ ॥
प्रचण्डखेचरी नाम्नी गुटिका खे गतिप्रदा ।
पूर्ववल्लभते वीर्यं फलमत्यन्तदुर्लभम् ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्षं तक्रैः पिबेदनु ॥ ९८५ ॥

र ध , रसायने ।

भाषा—बुभुक्षित पारेमें घोड़ेके खुरका चूर्ण समभाग डालकर बिजोरेके रससे तीनरोज मर्दनकरके चौथे रोज पारेके बराबर हीरेकी भस्म तप्तखरलमें डालकर बिजोरेके रससे १ रोज मर्दनकर गोला बनाय अन्धमूषामें बन्दकर १ दिन भूधरयन्त्रमें पकाकर एकभाग बुभुक्षित पारेका देकर एकदिन पूर्ववत् मर्दनकर गोला बनाकर एकदिन भूधरयन्त्रमें पकावे । ऐसे ७ बार करनेसे यह प्रचण्डखेचरी गुटिका तैयार होगी । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर जरा और मृत्युको हटातीहै । शुद्ध सीसेका चूर्ण शुद्ध द्रुतपारा और यह भस्म सब समभाग लेकर अन्धमूषामें रखकर धमन करनेसे खोट तैयार होगा । फिर इसको धमनकरके इसमेंसे नागको जलादेना । इसके बाद इसे गलाकर इसमें यथासम्भव लोह और रत्नोंका जारणकर गोली बनाकर मुहमें रखनेसे आकाशगामी होताहै और अत्यन्त दुर्लभ जो वीर्यवृद्ध्यादि गुणहै उनको प्राप्तहोताहै । गोलीको एक घण्टेके बाद मुहमेंसे निकालकर निर्गुण्डीकी जडका एकतोला चूर्ण छाछके साथ पीवे ॥ २२६ ॥

२२७ प्रचण्डभैरवोरसः (प्रथम)

कासीस गन्धकं सूत दरदं मधुपुष्पकम् ।
गुडूची शाल्मली धान्य भूनिम्बोऽमरतुम्बुरू ॥९८६॥

तिलमुद्गपटोलानि द्राक्षां कूष्माण्डभस्म च ।
शिण्टिका कन्यका भार्ङ्गी बलाह्वयसमायुतम् ॥९८७॥
सर्वमेतत्समाहृत्य मध्वाज्ये गुटिकाः शुभाः ।
छर्द्यपस्मारमुन्मादवातरोगांश्च दुस्तरान् ॥ ९८८ ॥
कासं श्वासं क्षयं हिक्कां दुर्नामञ्च प्रमेहकम् ।
पित्तज्वराऽरुचिश्चैव तिमिरं चक्षुरामयम् ॥
गलरोगेषु सर्वेषु कर्णस्तम्भं हरेद्ध्रुवम् ॥ ९८९ ॥

र र , अपस्मारे ।

भाषा—शुद्धकसीस, गन्धक, पारा और शिंगरफ, महुआ, गिलोय, सेमलका मुसल, धनिया, चिरायता, देवदारु, तुम्बुरु, तिल, मूग, पटोल, द्राक्ष, पेठेकीभस्म, पीला कटसरैया, घीकुआर, भारङ्गी, बला, नागबला, सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें शिंगरफ और कसीसको मिलाकर १ पहर घोटकर दूसरी चीज़ोंका बारीक चूर्ण मिलाकर ४ पहर घोटे। फिर मधु और घी मिलाकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली यथारोगाऽनुपानसे देनेसे छर्दि, अपस्मार, उन्माद, दुस्तर वातरोग, कास, श्वास, क्षय, हिचकी, बवासीर, प्रमेह, पित्तज्वर, अरुचि, तिमिर, चक्षुरोग, गलरोग, कर्णस्तम्भ, इनसबरोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २२७ ॥

२२८ प्रचण्डभैरवोरसः (द्वितीयः)

शुद्धौ सूतेन्द्रगन्धौ च ताम्रभस्म समांशकम् ।
जम्बीरनागवल्ल्युत्थै रसैः सम्यग्विमर्दितम् ॥ ९९० ॥
ताम्रसम्पुटके रुद्ध्वा कुक्कुटाख्ये पुटे पचेत् ।
अर्धाङ्गकम्पवातार्तो भक्षयेत्तु द्विगुञ्जकम् ॥
दाहसन्तापमूर्च्छासु वायौ पित्तसमन्विते ॥ ९९१ ॥

प रा , मूर्च्छायाम् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, ताम्रभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जम्भीरी और पानके रसोंसे एकदिन मर्दनकर गोला बनाय उसी प्रमाणके ताम्रसम्पुटमें बंदकर कुक्कुटपुटमे पाचन करना । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखलेना । इसमेंसे २-२ रत्ती तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे अर्धाङ्ग और कम्पवात, दाह, सन्ताप, मूर्च्छा, वातपित्तयुक्त तमामरोग नष्ट होतेहैं ॥ २२८ ॥

२२९ प्रचण्डरसः

अमृतं पारदं गन्धं मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
सिन्धुवाररसैः पश्चाद्भावयेदेकविंशतिम् ॥ ९९२ ॥
तिलप्रमाणं दातव्यं नवज्वरविनाशनम् ।
उद्वेगे मस्तके तैलं तक्रं चाऽस्ति प्रदापयेत् ॥
अनुपिबेदार्द्ररसं प्रचण्डसञ्ज्ञके रसे ॥ ९९३ ॥

भै.र ,रसचि , र. सु ,र क (प्रथमः), वै क , ज्वराऽधिकारे। वै क नवज्वरविनाश इति नाम ।

टि०—भै र., र सु., र क., षु त्रिंशद्भावने, यो म षु पञ्च गुञ्जेव [illegible] नाम, [illegible] प्रक्षिप्य निर्गुण्डीशृङ्गवेररसाभ्यां निःस्त्रिंशो भावना प्रदत्ता । अत्र तु शृङ्गवेररसोऽनुपानत्वेन नियोजित । अस्मिन्नेव रसे शिला प्रक्षिप्य निष्पादनामैक एव रस ।

भाषा—शुद्धवत्सनाग, पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जली कर संभालुकेरससे २१ भावनाए देकर तिलप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रससे देनेसे नवज्वर नष्ट होताहै । यदि घबराहट मालूमहो तो मस्तकमें ताज़ा तिलकातेल लगावे और छाछपीनेको देवे॥२२९॥

२३० प्रतापतपनोरसः

गन्धकं गरलं तालं सूतकं लोहटङ्कणम् ।
खर्परं स्वर्जिकाक्षारं मञ्जिष्ठां हिङ्गुलं समम् ॥ ९९४ ॥
रसेन मर्दितं पिण्डं निर्गुण्डीहस्तिशुण्डयोः ।
अष्टयामं पचेत्कूप्यां निरुद्ध्य सिकताह्वये ॥ ९९५ ॥
ततः सिद्धं समादाय रक्तिकामार्द्रकेण तु ।
सन्निपातविनाशाय प्रतापतपनो रसः ॥
दधिभक्तं तथा दुग्धं छागमांसञ्च योजयेत् ॥ ९९६ ॥

भै. र , र. सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, गरल, पारा और सुहागा, हरिताल, लोह, खपरिया इनकीभस्में, सज्जी, मजीठ, शुद्धहिङ्गुल ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी और हाथीशुण्डीके रसमे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर आतशी शीशीमें भरकर बालुका यन्त्रमें ८ पहरतक पकावे, स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रत्ती अदरखके रसके साथ देनेसे सन्निपात नष्ट होताहै । भूख लगनेपर दहीभात, दूध अथवा बकरेका मास देवे ॥ २३० ॥

२३१ प्रतापमार्तण्डरसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं हतं शुल्वं विषं हिङ्गुलयुग्मकम् ।
निर्गुण्डीशृङ्गवेराऽद्भि र्दत्त हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥९९७॥
तैलाऽभ्यङ्गं जलस्नानं तृष्णाऽऽर्ते तक्रसेचनम् ।
गात्रे चन्दनमालेप्यं पश्चात्ताम्बूलभक्षणम् ॥
इक्षुमोदफलेनैव देयं हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥ ९९८ ॥

र क यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्ध बच्छनाग और दोनों शिंगरिफ (हंसपाद और शुकतुण्ड) समभाग लेकर बारीक पीस पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर निर्गुण्डी और अदरखके रसमे एकरोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली निर्गुण्डी अथवा अदरखके रसके साथ देनेसे यह नवज्वर को तत्काल नष्ट करताहै । अधिक गर्मी लगे तो तैलकी मालिश कराके स्नान करावे । प्यास अधिक हो तो छाछकी धारा शिरपर डाले । सर्वाङ्गमें दाह हो तो चन्दनका लेप करे और ताम्बूल खानेको दे । इक्षुरस और पके आमके रसमें देनेसे ज्वर तत्काल उतर जाताहै ॥ २३१ ॥

२३२ प्रतापमार्तण्डरसः (द्वितीयः)

रसहिङ्गुलनेपालमर्कक्षीरं समानकम् ।
दन्तित्वचा च संयुक्तं याममात्रं तु मर्दयेत् ॥९९९॥
गुञ्जामात्रांस्तु वटकान् गुडेन सह सेवयेत् ।
पथ्यं दध्योदनं देयं चतुर्यामज्वरं हरेत् ॥
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००० ॥

र क यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पारा, शिंगरिफ और ताम्रभस्म, आकका दूध, दन्ती, दालचीनी ये सब समभाग लेकर एक पहर आकके दूधमें मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली गुडके साथ देनेसे ४ पहरके ज्वरको नष्ट करताहै, पथ्यमें दहीभात देना ॥ २३२ ॥

२३३ प्रतापमार्तण्डरसः (तृतीय)

विषं टङ्कणनेपालं हिङ्गुलं समघर्षितम् ।
जम्बीरफलजद्रावै मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ १००१ ॥
मरिचप्रमाणवटिका श्छायाशुष्कास्तु कारयेत् ।
रस' प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००२ ॥

र क यो , र सं , भै र , ना वि , र सु , रससारसङ्ग्रह, धा , रसायनप , ज्वराऽधिकारे। ना वि (मार्तण्डोदयभास्करः), ना. विलासे टङ्कणस्थाने हिङ्गुल हिङ्गुलस्थाने टङ्कण दृश्यते । अनुपाने गुडाऽम्लिकाभि सह इति विशेष ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, सुहागा, जमालगोटा और शिंगरिफ क्रमवृद्ध भागमें लेकर बारीक चूर्ण कर जम्बीरीके रससे २ पहर घोटकर मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली रोगावस्थोचित अनुपानके साथ खानेसे तमाम ज्वर दूर होतेहैं ॥ २३३ ॥

२३४ प्रतापमार्तण्डरसः (चतुर्थः)

रसहिङ्गुलजेपालं पृथ्वीदन्त्यम्बुमर्दितम् ।
दिनाऽर्धेन ज्वरं हन्याद्गुडेन सितया सह ॥
चतुर्वल्लमितं खादेत्सर्वज्वरप्रशान्तये ॥ १००३ ॥

व रा , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ और जमालगोटा समभाग लेकर कालीजीरी और दन्तीके स्वरस अथवा क्वाथसे दोपहर मर्दनकर डेढ १॥ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली गुड अथवा शक्करके साथ लेनेसे समस्तज्वर नष्ट होतेहैं ॥ २३४ ॥

२३५ प्रतापलङ्केश्वररसः (प्रथमः)

अपामार्गस्य मूलानां चूर्णं चित्रकमूलजैः ।
वल्कलैर्मर्दयित्वाऽथ रसं निष्पीड्य रक्षयेत् ॥१००४॥
तेन सूतसमं गन्धमभ्रकं दरदं विषम् ।
टङ्कणं तालकञ्चैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ १००५ ॥
त्रिदिनं मुशलीतोये भावयेद्घर्मरक्षितम् ।
मूषाञ्च गोस्तनाकारामापूर्य परिरक्षितम् ॥ १००६ ॥
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रै र्वेष्टयित्वा पुटेल्लघु ।
रसतुल्यं लोहवङ्गं रजतं ताम्रकं तथा ॥ १००७ ॥
मधूकसारजलदौ रेणुका गुग्गुलुः शिला ।
चाम्पेयञ्च समांशं स्याद्भागार्धं शोधितं विषम् १००८
तत्सर्वं मर्दयेत्खल्वे भावयेद्विपनीरतः ।
आतपे सप्तधा तीव्रे मर्दयेद्घटिकाद्वयम् ॥ १००९ ॥
कटुत्रयकषायेण कनकस्य रसेन च ।
समुद्रफलनीरेण विजयावारिणा तथा ॥ १०१० ॥
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्या रसेन च ।
प्रत्येकं सप्तधा भाव्यं तद्वत्पित्तैश्च पञ्चभिः ॥ १०११ ॥
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ।
गुञ्जैकं वह्निचूर्णेन शृङ्गवेररसेन च ॥ १०१२ ॥
दद्यात् रोगिणं तीव्रमौढ्यविस्मृतिशान्तये ।
क्षुरेण तालुन्याहत्याऽऽर्द्रकनीरेण मर्दयेत् ॥ १०१३ ॥
नोद्धाट्यन्ते यदा दन्तास्तदा कुर्यादमुं विधिम् ।
सेचयेन्मन्त्रविद्भिश्च धाराकुम्भशतै र्नरम् ॥ १०१४ ॥
भोजनेच्छा यदा तस्य जायते रोगिणः परम् ।
दध्योदनं सितायुक्तं दद्यात्तक्रं सजीरकम् ॥ १०१५ ॥
पाने पानं सिताजातं यदीच्छेत्सप्तदन्तिकम् ।
एवं कृतेन शान्तिः स्यात्तापस्य रसजस्य च ॥१०१६॥
सचन्द्रचन्दनरसाऽऽलेपनं कुरु शीतलम् ।
तूलिकामल्लिकाजाती पुन्नागबकुलाऽऽवृताम् ॥१०१७
विधाय शय्यां तत्रस्थं लेपयेच्चन्दनै र्मुहुः ।
हावभावविलासोक्तिकटाक्षैश्चाऽवलोकनैः ॥ १०१८ ॥
पीनोत्तुङ्गकुचोत्पीडैः कामिनी परिरम्भणैः ।
रम्यवीणानिनादाद्यै र्गायनै. श्रवणाऽमृतैः ॥ १०१९ ॥
पुण्यश्लोककथाभिश्च सन्तापहरणं कुरु ।
एभिः प्रकारैस्तापस्य जायते शमनं परम् ॥ १०२० ॥
वर्जयेन्मैथुनं तावद्यावन्न बलवान्भवेत् ।
दद्यात्सर्वेषु धातेषु सिद्धगुग्गुलुवह्निभिः ॥ १०२१ ॥
दद्यात्कणाभाक्षिकाभ्यां कामलाक्षयपाण्डुषु ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
अयं प्रतापलङ्केशः सन्निपातनिकृन्तनः ॥ १०२२ ॥

रसायनस , र म , र श , र क , र का , भै र , यो म , र सु , सन्निपाते ज्वरे च ।

भाषा—अपामार्गकी जडके चूर्णको चित्रकमूलके स्वरससे मर्दनकर कल्क बनाले, फिर इसकी बराबर शुद्ध पारा डालकर ४ पहर मर्दनकर पारेकी बराबर शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध शिंगरिफ बछनाग, सुहागा और हरिताल डालकर ७ रोज मर्दनकरे फिर ३ रोज मुसलीके स्वरससे धूपमें मर्दनकरे। इसके बाद गोस्तनाकार मूषामें रखकर ७ कपडमिट्टी देकर सुखाकर लघुपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर लोह, वङ्ग, रजत और ताम्र, महुएकासार, नागरमोथा, रेणुका, गूगल, मैनसिल, चम्पाके फूल, ये प्रत्येक पारेकी बराबर और

पारेसे आधा शुद्ध वछनाग लेकर वछनाग के स्वरस अथवा काढ़ेकी सात भावनाएं देकर कड़े धूपमें २ घण्टेतक रक्खे फिर निम्बु, धतूरा, समुद्रफल, भांग, चित्रकमूल, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर पञ्चपित्तोंसे १-१ भावना देकर सब दवाके बराबरके वछनागकी धूनी देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूलके चूर्ण अथवा अदरखके रसके साथ देनेमे तीव्रसञ्ज्ञा-नाश और विस्मृतिको नष्टकरताहै । खानेसे दवा काम न करे तो तालुमें छुरेसे पाछ देकर अदरखके रसमें दवाको मिला-कर उसजगह मर्दनकरे तो होश आजायगा । यदि इसपर भी होश न आवे और दांत न खुलें तो मन्त्रशास्त्र कुशल आदमी पानीके १०० घड़ोंकी मत्थे पर धारादे । होश आने पर अगर रोगीको तीव्र भूख लगी हो तो दही, भात, शक्कर अथवा जीरा मिलीहुई छाछदेवे । प्यास अधिक हो तो शक्करका शरबत दे, अधिक कहनेसे क्या जो वह मागे सो देवे । अगर इसतरह करने परभी ज्वर शान्त न होतो कपूरके साथ चन्दनको घिसकर ठंटा लेपकरे । रुई, मोगरा, चमेली पुन्नाग और मौलश्रीके पुष्पोंमे शय्या बनाकर उसपर बैठालकर बारम्बार चन्दनका लेप करे । हावभावके साथ कटाक्ष युक्त अवलोकन करती हुई नवयुवतियोंका आलिङ्गन करावे । वीणा वगैरहकी मधुर आवाज़ और श्रवणप्रिय गायन, परमेश्वरकी कथा इत्यादि प्रकारोंसे तापका शीघ्र शमन हो जाताहै । मैथुन तवतक वर्जन करे जब तक कि बलवान् न हो । वातविकारोंमें वातहर योगराजादि गूगल और चित्रकमूलके साथ देवे । कामला, क्षय और पाण्डुमें पीपल और शहदसे दे । तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करताहै और सन्निपातकी खास औषध है ॥ २३५ ॥

२३६ प्रतापलङ्केश्वररसः (द्वितीयः)

प्रत्येकं रसगन्धयो द्विपलयोः कृत्वा शुभां कज्जलीं,
तस्यां म्लेच्छलुलायलोचनमनोधात्रीप्रकुञ्चत्रयम् ।
पथ्याया यद्रत्रिकं त्रिकटु षड्ग्राणं वचा धर्मिणी,
चैलाम्भोधरपत्रकद्विरदकिञ्जल्काऽश्वगन्धाह्वयम् १०२३
पिष्टैतत्समधूकसारमखिलं कर्षोन्मितं न्यस्य तत्,
प्रोन्मर्याऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतयुतं सागस्तिकत्र्यूषणैः ।
भूधात्रीविजयासरित्पतिफलै र्ज्वालामुखीभृङ्गजैः,
प्रत्येकं विदधीत निश्चलमतिः सप्त क्रमाद्भावनाः १०२४

पित्तैरथो पञ्च विधाय पञ्चभिः
करञ्जमात्राऽमृतधूपनं ततः ।
दत्वाऽऽर्द्रकस्य स्वरसेन तन्दुलाऽऽ-
कृतिं विदध्याद्गुटिकां भिषग्वरः ॥ १०२५ ॥

देयेका सन्निपाले प्रतिहतकरणे मोहनेऽप्रसुप्त्योः,
स्याद्गुल्मे साऽजमोदाप्यनविकृतिषु त्र्यूषणेन ग्रहण्याम्।
दातव्या जीरकेण द्विपतुरगनृणां प्राणसंरक्षणाय,
कारुण्याऽम्भोधिरेतममृतसमरसं वैद्यनाथोऽप्यवोचत्॥

र. र. स , र., र. को., र. सु , र. शं., र. का., र. मृ. ज्वराऽधिकारे । र. को. प्राणेश्वर इति नाम । र. का कारुण्याम्भोधिरिति नाम ।

टि०—प्रोन्मर्द्याऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतयुतमित्यत्र ग्रन्थकारस्याऽभिप्रायमज्ञाय नानाव्यामोहस्थानानि घटितानि, द्वितीयान्तविभक्तिकतया न भावनोपस्थिति र्भवति । रसराजसुन्दरे प्रमाणे व्यत्यास कृतोऽस्ति तदनुसारेण रसो न निष्पादनीय इति विशेषसूचना ।

भाषा—दो २ पल शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर ताम्रभस्म, शुद्ध गुग्गुलु और मैनसिल ३-३ पल, हर्रे, सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, अनन्तमूल अथवा रेणुका, विडङ्ग, नागरमोथा, पत्रज, नागकेशर, कमल, असगन्ध ये प्रत्येक १॥ कर्ष महुएकाहीर १ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर एक दो पहर शुष्कखरलकर सब योगसे आधा करञ्ज और शुद्ध वछनाग मिलाकर अगस्त्य, सोंठ, मिर्च, पीपल, भुईआंवला, भांग, समुद्रफल, ज्वालामुखी (अग्निशिखा) और भंगरेके यथा सम्भव स्वरस अथवा क्वाथों से ७-७ भावनाएं देकर पाँच-पित्तों (मछली, भैंसा, सूअर, बकरा और मोर इनके पित्तों) की १-१ भावना देकर करञ्ज फलकी बराबर वछनागकी धूनी देकर अदरखके रससे घोटकर १-१ चावल भरकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली देनेमे घोर सन्निपात निवृत्त होताहै । गुल्ममें अजमोदके साथ, धातविकारोंमें त्र्यूषणके साथ, ग्रहणीमें जीरेके साथ देनेसे इन सबका नाश होताहै । हाथी, घोड़ा और मनुष्य वगैरहके प्राणोंकी इससे रक्षा होतीहै इसलिये इसका प्राणेश्वर नाम रक्खा गयाहै ॥ २३६ ॥

२३७ प्रतापलङ्केश्वररसः (तृतीयः)

विपादिकाघ्नं रसगन्धटङ्कणं
सताम्रकुष्ठायसपिप्पलीरजः ।
विमर्दितं काञ्चनपत्रधारिणा
प्रतापलङ्केश्वरसञ्ज्ञको रसः ॥ १०२७ ॥

र. र स , र. र. कौ., र. क , चि. क , रसेन्द्रमं., कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, ताम्रभस्म, कुठ, लोहभस्म, पीपल सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सबचीजें मिलाकर कचनारके पत्तोंके रससे २-२ रोज़ मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके साथ खानेसे वैपादिककुष्ठ नष्टहोताहै ॥ २३७ ॥

२३८ प्रतापलङ्केश्वररसः (चतुर्थः)

एकेन्दुचन्द्राऽनलवार्धिकाग्नि-
फलैकभागैः क्रमशो विमिश्रम् ।
सूताऽभ्रगन्धोषणलोहशङ्ख-
वन्योत्पलाभस्म विषं सुपिष्टम् ॥ १०२८ ॥
प्रसूतिवापाऽनिलदन्तबन्ध-
मार्द्राम्बुना घोरसुसन्निपातान् ।

पुरामृताऽऽर्द्रत्रिफलायुतोऽयं
गुदाऽङ्कुरान् वल्लमितो निहन्ति ॥ १०२९ ॥
निजाऽनुपाने निजपथ्ययुक्त्या
सर्वाऽतिसारग्रहणीगदांश्च ।
प्रतापलङ्केश्वरनामधेयः
सूतः प्रयुक्तो गिरिराजपुत्र्या ॥ १०३० ॥

र ल, रसायनस, र श, र क्तौ, वै र, र को, र च, वृ यो त, व से, वै वि, यो स, यो म, वै चि, र, टो, चि र भ, भै सा, र सु, यो र, र का, र बो, र क यो, रस पारिजात, सूतिकारोगे ।

टि०—अत्र नानाप्रकारेण सङ्ख्या सङ्केता लिखिता सन्ति परन्तु रस राजलक्ष्मीस्थ सङ्केतो युक्तियुक्तो दृश्यतेऽत स एवाऽस्माभि स्थापित । वन्योत्पलेति स्थाने विश्रोत्पलेति पाठस्तु प्रमादिक तथाकृते सङ्ख्याया न्यूनत्वापत्ति गुणाऽपकर्षश्चेति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, अभ्रकभस्म १ भा, शुद्ध गन्धक १ भा, मरिच ३ भा, लोहभस्म ४ भा, शङ्खभस्म ८ भाग, जङ्गलीकण्डोंकी भस्म १६ भा, शुद्धवछनाग १ भाग लेकर सबको बारीक पीसकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर २–२ रोज घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती अदरखके रसकेसाथ देनेसे प्रसूतिवात, धनुर्वात, दन्तवन्ध, घोरसन्निपात इनको यह नष्टकरताहै । शुद्धगूगल, गिलोय, अद रख और त्रिफलाके साथ देनेसे यह बवासीरको नष्टकरताहै । अपने अपने अनुपान और पथ्योंके सेवनके साथ लेनेसे समस्त अतिसार और ग्रहणी प्रभृति रोग नष्टहोतेहैं ॥ २३८ ॥

२३९ प्रतापलङ्केश्वररसः (पञ्चमः)

आदौ प्रतापलङ्केशस्तत्क्रमोऽयं निरूप्यते ।
दशधा शुद्धियोगेन पातितं सुमुखीकृतम् ॥ १०३१ ॥
जीर्णबीज कलांशेन षाड्गुण्याजीर्णगन्धकम् ।
पलद्वयं समादाय भानुदुग्धेन मर्दयेत् ॥ १०३२ ॥
त्रिदिनं वज्रदुग्धेन इन्द्रपर्णीक्वाथवारिणा ।
वत्सनाभेन तत्पश्चाज्ज्वालामुख्या रसेन च ॥१०३३॥
त्र्यहंत्र्यहं मर्दयित्वा चैकैकेन यथाक्रमम् ।
तत. सोमाऽनले यन्त्रे मर्दितं स्थापयेद्रसम् ॥१०३४॥
दत्त्वाऽथ सुदृढं लेपं चुल्ल्यामारोपयेद्बुध. ।
जलपूर्णं ततः कृत्वा ह्यधस्ताज्ज्वालयेत्क्रमात् ॥१०३५॥
मृदुमध्योत्तमं वह्निं सप्तसप्तदिनावधि ।
एकविंशदिने पूर्णे यन्त्रादुत्तारयेद्रसम् ॥ १०३६ ॥
भस्मीभूत रस कृत्वा शुद्ध तत्र बलिं क्षिपेत् ।
पदं च साम्येन लोहानि भस्मीभूतानि नि.क्षिपेत्१०३७
अभ्रसत्वं कान्तसत्वं भस्मीभूत नियोजयेत् ।
कल्पयेद्भावनामानं रससाम्येन बुद्धिमान् ॥ १०३८ ॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र काकमाचीरसेन च ।
खल्वे दत्त्वा दिनैकन्तु कृष्णधत्तूरकद्रवैः ॥ १०३९ ॥
एरण्डनीरै र्भृङ्गराजीरसैस्त्रिकटुकद्रवैः ।
आर्द्रकस्य रसै र्ज्वालामुखीनीरै र्जयारसैः ॥१०४०॥
भृङ्गीरसै र्वैजयन्तीरसैस्तिलदलारसैः ।
अम्लवेतसनीरेण जम्बीरोद्भववारिणा ॥ १०४१ ॥
मण्डूकपर्णिकातोये रसतुल्यै रसैः क्रमात् ।
मर्दयित्वा तत्र दद्याच्छृङ्गीविषमनुत्तमम् ॥१०४२ ॥
रसाच्च दशमं भागं हारिद्रं तदभावतः ।
तदभावे सक्तुकं स्यात्सर्वाऽभावेऽमृत क्षिपेत्॥१०४३॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र विजयारसयोगतः ।
दिनमेकं ततो देया भावना पित्तसम्भवा ॥ १०४४ ॥
मायूरं मत्स्यजं पित्तं शौकर छागसम्भवम् ।
माहिष रौहिषं काकं द्विधाभौतभवं तत ॥ १०४५ ॥
हारिणं व्याघ्रजश्चैति पित्तान्येतानि निर्हरेत् ।
सप्तसप्त प्रदातव्या भावनाः पित्तसम्भवाः ॥१०४६॥
तिसॄणांऽभावे प्रदातव्यास्ततोन्यूना न कारयेत् ।
आदौ तु कृष्णसर्पस्य गरलेन च भावना ॥ १०४७ ॥
धन्वनागस्य गरलै र्भावयेदेकवारकम् ।
पारावतस्य पित्तेन सर्वस्याऽन्ते विमर्दयेत् ॥१०४८॥
गृहीत्वा सिद्धसूतं तमूर्ध्वभाण्डे विलेपयेत् ।
अधोभाण्डे वत्सनाभं रसतुल्यं विमर्दितम् ॥१०४९॥
निक्षिप्य सुदृढं क्षिप्त्वा यन्त्र चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
मन्दवह्निमधः कुर्यात्प्रहरद्वयमादृत. ॥ १०५० ॥
एवं कृते रसः सिद्धो भवत्येव न चाऽन्यथा ।
योगिनीभैरवान् सिद्धान् क्षेत्रपालं गुरूंस्तथा॥१०५१॥
गन्धपुष्पादिनैवेद्यै र्बलिदाने र्यथोचितैः ।
पूजयित्वा स्वर्णकूप्यां रसेन्द्रं स्थापयेद्बुधः ॥१०५२॥
महाप्रतापलङ्केशनामाऽयं रसभूपतिः ।
सन्निपातं महाघोरं दण्डाऽऽलसकमेव च ॥ १०५३ ॥
अपस्मार धनुर्वातं कण्ठकुब्जकमेव च ।
क्षयादिकांस्तथा रोगान् रोगयोगोक्तयुक्तितः॥१०५४॥
रसेन्द्रो हरति व्याधीन्वरकुञ्जरघातिनाम् ।
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ सन्निपाते नियोजयेत् ॥१०५५॥
पित्तोत्तरे तथा देयः कर्पूरेण रसेश्वर. ।
श्लेष्मोत्तरे त्रिकटुना रक्तिकामानयोगत. ॥ १०५६ ॥
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्रसंशयः ।
रसवीर्यविवृद्ध्यर्थमुदकं ढालयेत्ततः ॥ १०५७ ॥
यावद्देहे भवेत्कम्पः सर्वथा दु.सहस्त्वत. ।
चन्दन चाऽथ कर्पूरं द्वादशांशं विनि.क्षिपेत् ॥१०५८॥
इक्षवश्च तथा देया द्राक्षाखर्जूरदाडिकाः ।
तवराज शर्करां वा योजयेद्वीर्यवृद्धये ॥ १०५९ ॥
श्लेष्मोत्तरे सन्निपाते दुग्धभक्तं प्रयोजयेत् ।
अन्यत्र दधिभक्तं स्यात्खण्डशर्करया युतम् ॥१०६०॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन पथ्यं भोजयेद्भिषक् ।
रसवीर्यविघाताय कारवेल्लं न योजयेत् ॥ १०६१ ॥

स्वर्णं रौप्यं रविस्तीक्ष्णं त्रपुसीसाऽभ्रकान्तजम् ।
सत्त्वमित्यष्टलोहानि कथितानि रसाऽऽगमे ॥१०६२॥
एतेषां मारणं वक्ष्ये शिवचोदितवर्त्मना ।
जम्बीरवारिणा पिष्ट्वा रसभस्माऽथ पूरजैः ॥१०६३॥
निम्बुकीवारिणा वाऽथ स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ।
समभागेन सूतेन सम्पुटं रचयेद् दृढम् ॥ १०६४ ॥
पुटित्वाऽऽरण्यजैश्छाणै भस्मीभूतं समाहरेत् ।
पुटेनैकेन भस्म स्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा १०६५
एवं सर्वाणि लौहानि भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ।
रसभस्म यदा न स्याद्धेममाक्षिकयोगतः ॥ १०६६ ॥
पूर्वोक्तैश्च रसैः पिष्ट्वा लोहपत्राणि लेपयेत् ।
पुटयेद्भस्मतां यान्ति निरुत्थान्यपि तथा कृते ॥१०६७॥
एवमेतानि लोहानि मारयित्वा ततः परम् ।
पुटा वक्ष्यमाणेन क्रमेण च यथाक्रमम् ॥ १०६८ ॥
अर्कक्षीरेण पुटयेदष्टोत्तरशतं बुधः ।
वज्रीक्षीरेण पुटयेच्चाराष्टकमतः परम् ॥ १०६९ ॥
हयारसेन पुटयेद्वत्सनाभेन यत्नतः ।
पुनश्चार्कपयोभिस्तद्भावयेदेकविंशतिम् ॥ १०७० ॥
एवं सिद्धानि लोहानि रसेन्द्रे निक्षिपेद्बुधः ।
अन्यथा नैव योज्यानि सन्निपातादिभेषजे ॥ १०७१ ॥

रसालं , सन्निपाते ।

भाषा—शोधनद्रव्योंमें १० वार मर्दनकरके पातनकरनेपर बुभुक्षित बनाकर षोडशांश बीज और षड्गुणगन्धक जारण-क्रियाहो ऐसा शुद्धपारा २ पल लेकर आकका दूध, ढंडाथूहरका दूध, अमलोनियां, वच्छनाग, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके द्रवसे ३–३ रोज़ क्रमसे मर्दनकर सोमाऽनलयन्त्रमें स्थापनकर मज़बूत कपड़मिट्टीसे सन्धि बन्दकर सुखाकर चूल्हेपर रख ऊपरकी हंडीमें जल भरदे और नीचे मृदु, मध्य तथा तीक्ष्ण ऐसेक्रमसे ७–७ दिन अर्थात् २१ दिन तक अग्नि देकर अखीरमें कोयलोंपर रहनेदे । इससमय भैरवादिकोंको बलिदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर यन्त्रमेंसे पारेको निकालकर शुद्धगन्धक, षड्लोह (सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वङ्ग और लोह) की भस्में, अभ्रक सत्त्व और कान्तसत्त्वकी भस्म सब समभाग लेकर पारे गन्धककी कज्जलीकर शेषचीज़ोंको मिलाकर मकोय, कालाधतूरा, एरण्ड, भूधात्री, निर्गुण्डी, अदरख, ज्वालामुखी, भांग, भंगरा, वैजयन्ती, हुरहुर, अम्लवेत, जम्भीरी, ब्राह्मी, इन प्रत्येकका यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथ रसकी बराबर डालकर १–१ रोज़ मर्दनकरके रससे दसवां हिस्सा शुद्ध शङ्खविष, अभावमें दारुविष, तदभावमें सातुष, इनसबके अभावमें शुद्ध वच्छनाग मिलाकर भांगके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर मोर, मछली, सूअर, बकरा, भैंसा, रोहू, कौआ, उल्लू, हरिण, कांच इन प्रत्येकके पित्तकी क्रमसे ७–७ भावनाएं देवे । अधिकपित्तके अभावमें ३–३ भावना देवे इससे न्यून न देवे । इसके बाद कान्योपका ज़हर, भामिन सांपका ज़हर, बकुनकापित्त, इनकी क्रमसे १–१ भावना देवे । फिर मुंहघिसकर बराबर कीहुई दोहंडी लेकर एकमें इस रसका लेपकरदे और एकमें पारेकी बराबर शुद्ध-वच्छनागको पानीमें पीसकर लेपकरदे । फिर इनदोनोंका डमरू-यन्त्र बनाय ६–७ कपड़मिट्टीसे सन्धिबन्दकर धूपमें सुखाकर चूल्हेपररक्खे । यह ध्यान रहे कि रसवाली हंडी ऊपर और विषवाली नीचेरहे । नीचे दोपहर तक मन्दाग्नि जलावे, स्वाङ्ग-शीतल होनेपर निकालकर योगिनी, भैरव, रससिद्ध, क्षेत्रपाल और गुरुलोगोंकी विधिपूर्वक गन्ध–पुष्प–नैवेद्य और बलिदानसे पूजाकर सोनेकी डिब्बीमें इसको रखदे । इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा अदरखके रससे देनेसे महाघोरसन्निपात, दण्डाऽलसक, अपस्मार, धनुर्वात और कण्ठकुब्जकको यह नष्टकरताहै । तत्-द्रोगहरानुपानके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़ोंके क्षयादिक रोगोंको नष्टकरताहै । पित्तप्रधानव्याधिमें कपूरकेसाथ, कफप्रधानव्याधिमें त्रिकटुके चूर्ण अथवा क्वाथकेसाथ देवे । इस-रसमें पित्तोंकी भावना आईहै और पित्तयुक्तरसोंमें जबतक पानी सिरपर न डालाजाय तबतक उनकी शक्ति प्रकट नहीं होती, इसलिये परमेश्वर का नाम लेकर सन्देहको छोड़कर जबतक रोगीको कम्पपैदा न हो तबतक सिरपर पानी डाले । रसकीगर्मी किसीतरह सहन न होसकीहो तो ऐसे स्थानपर सफेदचन्दन और शुद्धकपूर बारहवें हिस्सेका रसमें मिलाकरदे । ईख, द्राक्ष, खजूर, वंशलोचन, शक्कर इनका प्रयोगकरे । श्लेष्मप्रधान सन्नि-पातमें दूधभातदे अन्य रोगावस्थामें दही, भात और शक्करदे । इसके बाद ३ रोज़तक इच्छानुसार खानेकोदे । रसवीर्यका नाश न हो इसलिये करेले खानेमें न दे ।

सुवर्ण, चान्दी, ताम्र, फोलाद, रांगा, सीसा, अभ्रक और कान्तकासत्त्व ये रसतन्त्रमें लोह शब्दसे कहेजातेहैं । इनका मारण शिवजीके कहेहुए प्रकारसे मैं लिखताहूं । इसीतरहसे मारणकर इस रसमें इनका योग करना तब यथावत् फल होगा अन्यथा नहीं । पारेकी भस्मको जम्भीरी अथवा बिजौरे या साधारण नीबूके रसमें मर्दनकर सुवर्णके बारीक पत्रोंपर लेपकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २० कण्डोंकी आंचदे । इसमें पारेको सुवर्णकी बराबरलेना इससे एकही पुटमें भस्म होगी । इसीतरह तमामलोहोंकी भस्म करले । जहांपर पारेकी भस्म न हो वहांपर सुवर्णमाक्षिकको शुद्धपारेके साथ घोटकर लोहके पत्रोंपर लेपकरे, घोटनेके लिये पूर्वोक्त नीबुओंका रसदे । इसतरह करनेसे पूर्वोक्त तमामलोहोंकी निरुत्थ भस्म होगी । इनभस्मोंको समभाग मिलाकर आकके दूधकी १०८ पुट, ढंडाथूहरके दूध, अमलो-निया और वच्छनागके द्रवोंकी ८–८ भावनाएं देकर आकके दूधकी २१ भावनाएं देनेसे यह लोह सिद्ध होंगे । इन्हींको योगोंमें देना अन्यथा नहीं ॥ २३९ ॥

२४० प्रतापलङ्केश्वररसः (लघुः) (पद्यः)

शुद्धं भस्मीकृतं सूतमाहरेद् द्विपलं बलिम् ।
तावन्मात्रन्तु सङ्गृह्य मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ १०७२ ॥

नष्टपिष्टत्वमापन्नं ग्राहयेद्रसराजकम् ।
माहिषाऽक्षपुरादर्द्धं हलपर्णी तावती स्मृता ॥१०७३॥
गद्याणत्रितयं व्योषं पङ्गद्याणा हरीतकी ।
वचाकर्षं भद्रमुस्ता कर्षमेकं विडङ्गजम् ॥ १०७४ ॥
अश्वगन्धा कर्षकं स्याच्चित्रमूलत्वचस्तथा ।
पत्रकं कर्षमेकं स्याद्रेणुका कर्षकं तथा ॥ १०७५ ॥
मधुसारस्य कर्षः स्यान्नागकेसरकर्षकम् ।
वत्सनाभं पलं प्रोक्तं भृङ्गी गद्याणकं भवेत् ॥१०७६॥
सर्वमेतच्छ्लक्ष्णचूर्णं सूतचूर्णेन मेलयेत् ।
ततः प्रमर्दयेत्त्रीणि दिनान्यथ विभावयेत् ॥१०७७॥
भृङ्गराजरसैः सप्तवारान् मुनिरसैस्तथा ।
समुद्रफेनजैस्तद्वद्धलपर्णीभावना तथा ॥ १०७८ ॥
ज्वालामुखीरसेनैव त्रिकटो विजयारसैः ।
वाराहपित्तेन तथा पित्तै रोहितमत्स्यजैः ॥ १०८९ ॥
माहिषै रौहितैः पित्तै र्मायूरैश्छागलैस्तथा ।
कृष्णसर्पस्य पित्तेन गरलेन च भावना ॥ १०८० ॥
पारावतस्य पित्तेन हरिणस्य च पित्ततः ।
भावयित्वा ततः कल्कं सम्पुटस्योर्ध्वपात्रगम् ॥१०८१॥
विलिप्य चाऽधोभाण्डस्य चूर्णितं निक्षिपेद्विषम् ।
पूर्ववत्सम्पुटीकृत्य चुल्ह्यामुपरि धारयेत् ॥ १०८२ ॥
मन्दाग्निं ज्वालयेत्पश्चात्प्रहरद्वयमाहतः ।
चुल्ह्या यन्त्रं समुत्तार्य स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥१०८३॥
उद्धृत्य यन्त्रात्सूतेन्द्रं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयित्वाऽऽर्द्रकरसै र्वटिकास्तण्डुलोपमाः ॥ १०८४ ॥
कृत्वा करण्डके स्थाप्याः शीतं वायुं विवर्जयेत् ।
सन्निपाते द्वदोतैकां निःसञ्ज्ञत्वमुपागते ॥ १०८५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैवाऽनुपानं चार्द्रजं रसम् ।
रसेश्वरप्रदानेन दन्तांत्कीलस्तदाभवेत् ॥ १०८६ ॥
सर्वथा ग्रहणाऽशक्ते निःसंज्ञत्वेऽथवा तथा ।
आर्द्रकस्य रसेनैव सूतं सम्मर्द्य कर्णयोः ॥ १०८७ ॥
नाल्यां सम्भृत्य प्रधमेन्नासाविवरयोस्तथा ।
लिङ्गद्वारेऽथवा कुर्याद्भ्रूमध्यं वा विदार्य च ॥१०८८॥
रसं निक्षिप्य मृद्नीयाद्घटिकार्धं प्रयत्नतः ।
मलद्वारेतथा कुर्यात्सूतयोगं भिषग्वरः ॥ १०८९ ॥
रसप्रयोगमात्रेण नेत्रमुद्घाटयेत्क्रमात् ।
कर्णाभ्यां संश्रुणोत्येवं दन्ता उत्कीलिताः क्षणात् १०९०
सावधानस्ततो दद्याद्रसेन्द्रं तण्डुलाऽवधिम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्मुद्गरसं ततः ॥ १०९१ ॥
वमनं यदि जायेत जीवत्येव न संशयः ।
वान्तिश्च नैव जायेत म्रियते च विनिश्चयः ॥१०९२॥
जातायामथ वान्त्यान्तु पानीयं ढालयेद्बहु ।
यावच्छैत्यं स्वभावेन शरीरे सम्प्रजायते ॥ १०९३ ॥
दाधिकं भोजयेत्पश्चाच्छर्करासहितं हितम् ।
घटिकाभिश्च तिसृभिः सन्निपातो निवर्तते ॥१०९४॥
ताम्बूलपत्रेण समं वटीमेकां ततोऽर्पयेत् ।
क्षयरोगेषु योक्तव्यो नागवल्लीदलेन वै ॥ १०९५ ॥
क्षयरोगं निहन्त्येव ग्रहणीरोगमुत्कटम् ।
जीरकेण समं दद्याद्गुल्मे चैवाऽजमोदकैः ॥ १०९६ ॥
अम्लश्च राजिकाशाकं राजिकासंयुतं तथा ।
तैलं वृन्ताककारीर कर्कोटीकारवेल्लकौ ॥ १०९७ ॥
कलिङ्गमथ कूष्माण्डं यत्किञ्चिद्विधिर्भटात्मकम् ।
वर्जयेदम्लसेवाञ्च दिवा स्वापं तथैव च ॥ १०९८ ॥
रसस्योपद्रवेऽत्यर्थं खण्डजीरन्तु भक्षयेत् ।
अथवा चणकाम्लेन जीरकं खण्डसंयुतम् ॥ १०९९ ॥
कलम्बं श्वेतसञ्ज्ञश्च अश्वगन्धामथापि वा ।
सर्वथोपद्रवश्चेत्स्याद्वमनं कारयेद्भिषक् ॥ ११०० ॥
शर्करां दधिसंयुक्तां खादयेदथवा पयः ।
तवराजेन संयुक्तमाकण्ठं पाययेद्भिषक् ॥ ११०१ ॥
शीतोदकेन च स्नानं सर्वदा कारयेत्तथा ।
श्रीखण्डेन प्रलिम्पेत्तं निर्वाते स्वापयेत्ततः ॥ ११०२ ॥
वितरेद्दार्द्रवस्त्राणि व्यञ्जनानि च वर्जयेत् ।
एवं प्रयोगमात्रेण सर्वे रोगाः प्रयान्ति वै ॥ ११०३ ॥
यस्य रोगस्य यो योगस्तेनैव सहयोगतः ।
रसेन्द्रो हरति व्याधिं नरकुञ्जरवाजिनाम् ॥ ११०४ ॥
इत्येष सूतकः प्रोक्तो देवीशास्त्राऽनुसारतः ।
सन्निपातादिरोगाणां विनाशकरणे क्षमः ।
लघुः प्रतापलङ्केशः कथितोऽयं महारसः ॥ ११०५ ॥

रसाले, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध करके भस्म किया हुआ पारा और शुद्ध गन्धक २–२ पल लेकर दोरोज़ मर्दनकरे फिर नष्टपिष्टी किया हुआ पारा २ पल इसमें मिलाकर मर्दनकरदे । फिर भैंसागूगल और अमलोनिया १–१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल ६–६ माशे, हर्रे ३ तोला, वच, नागरमोथा, विडङ्ग, असगन्ध, चित्रकमूलकीछाल, पत्रज, रेणुका, महुएकाहीर अथवा मुलहठी का सत्त्व, ये प्रत्येक १ कर्ष, शुद्ध मछनाग १ पल, भंगरा ६ माशे, इनसबका बारीक चूर्णकर पूर्वेकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरसमें ३ दिन, अगस्त्य, समुद्रफेन, अमलोनियां, ज्वालामुखी, त्रिकटु, भांग इनकेरस अथवा क्वाथोंकी ७-७ भावनाएं देकर सूअर, रोहूमछली, भैंसा, रोझ, मोर, बकरा, कालासांप इनके पित्तोंकी ७–७ भावनाएं और काले सांपका ज़हर, कबूतर तथा हरिणकेपित्तोंकी १–१ भावना देकर एकहण्डीमें लेपनकरदे । दूसरी हण्डीमें पूर्ववत् कहेहुए विषोंमेंसे किसीएकका चूर्णकर पारेकी भस्मके बराबर रखदे । फिर इनका डमरूयन्त्र बनाय चूल्हेपर विषवाली हण्डीको रखदे और दोपहरतक मन्दाग्नि जलावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर रसको निकालकर अदरखके रससे १ रोज़ मर्दनकर १–१ चावलभरकी गोलियां बनाकर शीशीमें रखदे । यह ध्यान रक्खे कि यन्त्रमेंसे रसको ऐसे निर्वातस्थानमें निकाले कि जहां वायुका अधिक स्पर्श न हो ।

शीशीको हमेशा शीत और वायुसे बचावे । इनमेंसे १–१ गोली सन्निपातमें रोगीको सञ्ज्ञारहितहोनेपर अदरखके रसके-साथ देकर ऊपरसे अदरखकाही रस थोड़ासा और पिलावे। यदि अत्यन्त बेहोशी होनेकी वजहसे मुंहमें दवा न जासकीहो तो अदरखके रसमें एकगोली मिलाकर कानोंमें डाले और एक दुमुही नली नाकोंमें लगाकर रसको मुंहमें भरकर नलीद्वारा नाकोंमें फूंकदे । अथवा लिङ्गके रास्तेसे पिचकारी द्वारा दवाको चढावे अथवा भ्रूके मध्यमें पाछदेकर १ गोलीको बारीक पीस उसजगह पर आधी घड़ी तक घर्षण करे, इसीतरह तालु पर भी प्रयोगकरे। रसप्रयोगप्रभावसे चेतना आकर नेत्रोंको उघाड़ेगा, और कानोंसे सुनने लगेगा और दांत खुलजायगे । इसतरह सञ्ज्ञा प्राप्तहोनेके बाद १ गोली अदरखके साथ खिलाकर मूंगका यूष देना उससे यदि वमन हो जाय तो समझना कि रोगी बच जायगा यदि वमन न हो तो वह नहीं जीवेगा इसतरह निश्चय ही समझलेना। वान्ति होनेपर मस्तकपर ठंढा पानी डाले । जब असह्य होकर शरीर कांपनेलगे तब पानीका डालना बन्दकर शक्करके साथ दहीभात दे । इसतरह ३ गोलीसे सन्निपात दूर हो जाताहै। अजीर्णमें ताम्बूलके साथ १ गोली देकर बन्दकरदे । इसीतरह ताम्बूलमें १–१ गोली देनेसे क्षय निवृत्त होताहै। सङ्ग्रहणीमें जीरा, गुल्ममें अजमोद अनुपान समझना। पथ्य अन्न देना। राईका शाक अथवा राईकी चीजें, तैल, बेंगन, करीर, ककोड़ा, करेला, ताम्बूल, कोहळा, छोटी बड़ी सब तरहकी ककड़ी, खटाई, दिनका सोना इनको छोड़ देवे। इस रसके खानेसे वान्ति प्रभृति उपद्रव हों तो जीरेका चूर्ण शकर मिलाकर देवे अथवा खाड और जीरेके ऊपर चनेका खार देवे। कडम्ब (कश्मीरी) का शाक, बच अथवा असगन्ध देवे। अगर किसीतरह वमन शान्त न हो तो वमनकारक पदार्थ देकर पेटको साफ करे। उसके बाद शक्कर और दही खानेको दे अथवा दूधमें जवास की शक्कर डालकर कण्ठतक भरपेट पिलावे। इसमें स्नान हमेशा ठंढे पानीसे कराना चाहिये । दाह होनेपर सफेद चन्दनका लेपकर निर्वात स्थानमें सुलावे और भीगेकपड़े पहिनावे। इसतरह प्रयोग करनेसे समस्तरोग दूर होते हैं। जिसरोगका जो अनुपानहै उसके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़े वगैरह के सब रोग अच्छे होते हैं। देवीशास्त्रके अनुसार यहरस कहा गयाहै ॥२४०॥

२४१ प्रतापलङ्केश्वररसः (सप्तमः)

गन्धेशकट्फलव्योषजातीफलदलानि च ।
अभ्रमाराऽऽकल्ककञ्च समं सर्वं विचूर्णितम् ॥११०६॥
चित्राऽऽर्द्रकजलैस्त्रिस्त्रि भावितं गुटिकीकृतम् ।
वल्लमात्रं निहन्त्याशु पाण्डुवातभगन्दरान् ॥ ११०७॥

र.का, पाण्डुरोगे।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कायफल, सोंठ, मिर्च, पीपल, जायफल, जावित्री, दूधमें स्वेदन कीहुई सफेद कनेरकी जड़ और अक्लकरा समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर चित्रकमूल और अदरख के क्वाथ और द्रवसे ३–३ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु, वातव्याधि, और भगन्दर नष्ट होतेहैं ॥ २४१ ॥

२४२ प्रतापलङ्केश्वररसः (अष्टमः)

गन्धं ताप्यजतालकञ्च गगनं तीक्ष्णं समांशीकृतं,
ताम्रं चूर्णितभागमिश्रितगरं सर्वैर्द्विनिघ्नं रसम् ।
एकीकृत्य सुसिन्धुवारहुतभुग्यावासकर्कोटिका-
शिग्रूसूरणवह्निमान्द्यहरणीकृष्णारसै र्मर्दयेत् ॥११०८॥
कृत्वा तद्वरगोलकं सुशिशिरं गन्धाश्मसिद्धार्थजै-,
स्तैलै र्मध्यविपाचित च सुधिया युक्त्या च बद्धा वटीः
भूतोन्मादसुसन्निपातजगदान् शूलानुदावर्तकान् ।
गुल्माऽपस्मृतिजांरुजश्च सकलान् हन्याद्बुधै र्योजितः॥

रसेन्द्रम ,

भाषा—शुद्ध गन्धक, सोनामाखी और हरिताल, अभ्रक और फोलादकी भस्म १–१ भाग, ताम्रभस्म और शुद्ध बछनाग चतुर्थ ¼ भाग, पारा सबसे दूनालेकर कज्जलीकरले फिर संभालु, चित्रक, जवासा, ककोड़ा, सहिजन, सूरण, हर्रे, पीपल इन सबके स्वरस अथवा क्वाथोंकी १–१ भावना देकर गोला बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंच दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर शुद्ध गन्धक और पीली सरसोंका तैल इनमें पोटलीके प्रकारसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर मधु वगैरहके साथ २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े अथवा वैसेही रहनेदे । इसमेंसे १ मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे भूतोन्माद, सन्निपात, शूल, उदावर्त, गुल्म, अपस्मार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ प्रतापलङ्केश्वररसः (नवम.)

रसगन्धाऽमृतं नागं वङ्गं चेक्षुकटुत्रयम् ।
जम्बीराऽऽर्द्रकसंयुक्तं माषमात्रन्तु दापयेत् ॥१११०॥
मागध्या वचया युक्तं सर्ववातनिकृन्तनम् ।
सर्वज्वरहरं श्रेष्ठमन्यैश्च विषमीकृतम् ॥ ११११ ॥
सूतिकावातसम्भूतं हन्ति शीघ्रं न संशयः ।
प्रतापादिकलङ्केशः सर्वरोगनिवारणः ॥ १११२ ॥

र. क यो.,

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, सीसे और रांगेकी भस्म, इक्षुमूल, त्रिकुटु, येसब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर अन्य सबचीजोंको मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१माशा जंभीरी अथवा अदरखके रसके साथ अथवा पीपल और वचके साथ देनेसे समस्तवातविकार, अन्यदवाओंसे विषमताको प्राप्तहुआज्वर, सूतिकावात प्रभृति नष्टहोतेहैं २४३

२४४ प्रतापलङ्केश्वरोरसः (दशमः)

द्विपलं रसश्च गन्धं
मृदितं कज्जलयेच्च चतुःपलन्तत् ।
दरदस्य पलं पुरस्य
त्रिकटूनां निदधीत सार्द्धकर्षम् ॥ १११३॥
हीरामणेरथ पलञ्च शिवाञ्च मुस्ता
मेथी विडङ्गघनचित्रकपत्रकौन्तीः ।
मधूकसारगजकेशरवाजिगन्धाः
कर्षोन्मिताः पृथगमू विदधीत चूर्णम् ॥१११४॥
विषं विघृष्याऽम्बुभिरर्द्धनिष्कं
तत्सिक्तमेतत्सकलं विमृद्य ।
भृङ्गेन सामुद्रकफेनकार्पा-
सजैर्मुनिर्त्र्यूषणभार्गवीभिः ॥ १११५ ॥
ज्वालामुखीभार्ग्यनलाऽऽर्द्रकैश्च
पृथक् पृथक् सप्त विभावनाः स्युः ।
मयूरमत्स्याऽऽजवराहवाह-
द्विपाञ्च पित्तैः पृथगेकवारम् ॥ १११६ ॥
भाण्डद्वयं सम्पुटितं निधाय
रसं विलिम्पेदुपरिस्थभाण्डे ।
विषञ्च गद्याणमितं विघृष्टं
मध्यस्थभाण्डे विनिधाय रुद्धा ॥ १११७ ॥
चुल्ल्यां विपाच्य शिखिना मृदुनाऽह्नरेकं
शीतं समाधिकृतमर्दितमार्द्रकेण ।
कुर्वीत तण्डुलमितान्वटकान्प्रताप-
लङ्केश्वरो भजति सिद्धिमयं रसेन्द्रः ॥१११८॥
तन्नैकं वटकमुपास्य वैद्यवर्यो-
ऽप्युज्जीवेज्जगति विजित्य सन्निपातम् ।
नासायामथ विधमेदमुष्य चूर्णं
व्याघाते करणगतेहनुग्रहे च ॥ १११९ ॥
कृत्वा तण्डुलमात्रमन्तविवशो मौद्गन्तु यूषं पिबेत्,
वान्तौ जीवति शीतलेन पयसा सिक्तः प्रकम्पाऽवधि ।
कृष्णेक्षावथ भक्षिते दधिसितामक्तं मुहूर्तद्वया-,
भुञ्जानः सुखमेति रोगहरणादुल्लाघफुल्लाननः ॥११२०॥
प्रत्यहं च वटफैकमिहाश्नन्यक्ष्मकुष्ठवनसुप्तिजयी स्यात् ।
क्षुद्यदा भवति यत्र न काले क्षेपतोऽप्यनहरेत रुजार्थम् ॥
व्योषेण वातरोगेऽस्याद्ग्रहण्यां जीरसंयुतम् ।
नोष्णं भजेद्रसन्यासौ वचां जीरञ्च भक्षयेत् ॥११२२॥
मूलं वा वाजिगन्धायाः पाण्डुरं वा कदम्बकम् ।
चणकाऽम्लपटोलाऽम्भो जीरजातीफलैः पिबेत् ॥११२३॥
अतिव्याप्तौ वामतश्च दुग्धं शर्करया पिबेत् ।
मधुराऽऽहारमश्नीयात्संसिक्तः शीतलाऽम्भसा ११२४
मलयजरससिक्तो मालतीमल्लिकाभिः
परिमिलितसुशीतवासमध्यास्य शीतम् ।
गलकलितमरालोदारकर्पूरहारः,
सितमृदुपरिधानं सन्दधानो जलाऽऽर्द्रः ॥
समणिवलयहस्ताच्चालमञ्जीकराग्रात्,
कलितसलिलयन्त्रात्प्रोच्छलच्छीकरार्द्रः ।
किसलयशयनीये कीर्णपुष्पे शयानः,
परिहरति रसातिमात्रजं देहदाहम् ॥११२६॥

१. मृ., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल, गन्धक ४ पल, शुद्ध शिंगरिफ और गूगल १–१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल डेढ १॥ कर्ष, हीरा, भस्म १ पल, हर्रे, नागरमोथा, मेथी विडङ्ग, चन्दाल, चित्रक, पत्रज, रेणुका (रोण पहाड़ी), महुएकाक्षीर, नागकेसर, असगन्ध १–१ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर पानीमें पिसेहुए २ माशे बच्छनागके द्रवसे एक भावना देवे। फिर भंगरा, समुद्रफेन, लाल कपासके फूल, अगस्त्य, त्रिकटु, सफेददूब, अग्निशिखा, भारङ्गी, चित्रक और अदरखके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर मोर, मछली, बकरा, सुअर और भैंसे के पित्तोंकी १–१ भावना देकर एक घड़ेके भीतर तमामका लेप करदे। दूसरे घड़ेमें ६ माशे पिसाहुआ शुद्ध बच्छनाग बिछाकर पूर्वघड़ेको ऊपर रखकर डमरूयन्त्र बनाय ६–७ कपड़मिट्टीसे सन्धिको बन्दकर सुखाकर चूल्हेपर रख एक दिनकी बहुतमन्द आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अदरखके रसकी एक भावना देकर १–१ चावलभरकी गोलियां बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बारीक पीसकर सन्निपातमें नस्य देवे तो कानोंमे सुनने लगे और हनुग्रहसे निवृत्त हो। कण्ठ खुलनेपर १ गोली अदरख वगैरहके रसकेसाथ देकर मूंगका यूष पिलावे। यदि वमन हो जाय तो समझना कि जीवेगा, अन्यथा नहीं। दाह मालूम होनेपर कम्प होनेतक सिरपर ठंढे पानीकी धारादेवे। कालागन्ना चुसाके दो घड़ीकेबाद दही शक्कर और भात खानेको देवे। इसके खिलानेसे सन्निपाती रोगरहित होजाताहै। इस रसकी रोज् एकएक गोली खिलानेसे राजयक्ष्म, कुष्ठ, सुप्तगात्रता प्रभृति नष्ट होतेहैं। इसके देनेके बाद जबतक भूख न मालूम हो तबतक न खाय। वातरोगमें त्रिकटुके साथ, ग्रहणीमें जीरेके साथ देवे। रसप्रयोगके बाद गरमचीजें न खाय। रसको शरीरमें फैलानेके लिये बच, जीरा, असगन्धकी जड़, सफेद कदम्बकी छाल, इनमेंसे किसी एकके २ माशे चूर्णको चनेके क्षार, परवलके स्वरस, जीरा तथा जायफलके काथ प्रभृतिके, साथ पीवे। यदि रसका अधिक असर होनेसे वमन होने लगा हो तो शक्कर मिला हुआ दूध पिलावे, मधुर आहार देवे, शीतल जलकी शिरपर धारा छोड़े, चन्दनकालेपकरे। मालती और मोगरे प्रभृतिसे सुगन्धित और मगरी ढंग वगैरहसे ठंढ किये हुए मकानमें बैठे। कपूरकी माला, सफेद और बारीक कपड़े पहिने। गुलाब जल वगैरहमें कपड़ोंको तर रखे। मणियुक्त कङ्कणकी आवाज् और उछलते हुए फव्वारोंके फुंवारोंके सुगं-

वाली स्त्रियोंके हाथों में लिये हुए गुलावजलवगैरहके फहुहारोंसे उड़ते हुए जलकणोंसे भीगता हुआ नवीन पल्लवोंसे निर्मित, सुगन्धितपुष्पोंसे आच्छादित बिछौनेमें सोनेसे रसकी अतिव्याप्तिसे पैदा हुआ देहका दाह दूरहोताहै ॥ २४४ ॥

२४५ प्रतिज्ञावाचकोरसः

सूतं शुद्धं भागमेकञ्च तालाद्
द्वौ भागौ चेद्वेदसङ्ख्या शिलायाः ।
ताम्रस्यैवं भागयुग्मं प्रकुर्या-
द्भल्लातं वै वेदभागं तथैव ॥ ११२७ ॥
अर्कक्षीरे भावयेच्च त्रिवारं
कृत्वा चूर्णं कारयेद्गोलकं तत् ।
स्थालीमध्ये स्थापितं तच्च गोलं
दत्त्वा मुद्रां भस्मना सैन्धवेन ॥ ११२८ ॥
भूमस्यैवं रोधनञ्च प्रकुर्या-
च्छाणौ दद्यात्स्वेदनं मन्दवह्नौ ।
पश्चात्तोयेनैव भाव्यञ्च चूर्णं
गोलं कृत्वा मन्दवह्नौ विपाच्य ॥ ११२९ ॥
पश्चादेनं भक्षयेद्वै रसेन्द्रं
वल्लश्चैकं शर्कराचूर्णमिश्रम् ।
तद्वत्कृष्णामाक्षिकेणैव जूर्तिं
हन्यादेतत्सर्वदोषोत्थितां वै ॥ ११३० ॥

र. प्र. सु., र. (मा.) ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हरिताल २ भा., मैनसिल ४ भा., ताम्रभस्म २ भा., भिलावां ४ भा. लेकर भिलांवोंको बारीक कूटले और पारे प्रभृतिकी कज्जलीकरके मिलादे। फिर इसमें आकका दूध डालकर ३ दिनतक धूपमें मर्दनकरे और गोला बनाकर ६–७ कपड़मिट्टीकीहुई हंडीमें रखकर गोलेको एक ढक्कनीसे बन्दकर उसपर छनीहुई राखभरदे। राखपर बारीक पीसाहुआ सेंधानमक रखकर जङ्गलीकण्डोंकी ४ पहरतक मन्द आंच देवे। धूंआ न निकलने पावे, कहींसे निकलता हो तो नमक अथवा भस्मसे बन्दकरदे स्वाङ्गशीतल होनेपर गोलेको निकालकर केवल पानीसे घोटकर पूर्ववत् गोला बनावे और ४ पहरकी मन्दाग्निमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती शक्कर, पीपल अथवा शहदके साथ देनेसे यह सब प्रकारके ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ २४५ ॥

२४६ प्रतिश्यायहरोरसः (गन्धमर्दनः)

सुलभासमगन्धकसूतवरं
गिरिकर्णिरसे कृतमर्दनकम् ।
चपलारसशुण्ठिरसैस्त्रिदिनं
मृदितं घनघोणरुजार्तिहरम् ॥ ११३१ ॥

रसेन्द्रसं., प्रतिश्याये ।

भाषा—तुलसी, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर तुलसी का बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कोयल, पीपल और सोंठ के स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरम दूधके साथ लेनेसे प्रतिश्याय (जुकाम) दूरहोताहै । नाकमें कीड़े पड़ेहों अथवा घाव होगयाहो तो इसगोलीको कोयलके रसमें घिसकर नस्यदे और घावपर लगावे, शोथ हो तो ऊपरसे लेपकरे ॥ २४६ ॥

२४७ प्रदरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

लोहभस्म द्विकर्षं स्याद्वङ्गं कर्षमितं भवेत् ।
खर्परं कैरवाख्यञ्च गैरिकं घृतपाचितम् ॥ ११३२ ॥
शाल्मलीशालनिर्यासौ कर्षमानौ पृथक्पृथक् ।
दूर्वादाडिमधात्रीणां स्वरसैः सप्त भावयेत् ॥ ११३३ ॥
पाषाणभेदमापैस्त्रि वल्लं वल्लं प्रयोजयेत् ।
विविधे प्रदरे घोरे वैद्यवृन्दविवर्जिते ॥ ११३४ ॥

वृ. क. प्रदरे ।

भाषा—लोहभस्म दोकर्ष, वङ्गभस्म और खपरिया, अभावमें जस्तकी भस्म, कहरवा, घीमें पकायाहुआ सोनागेरू, मोचरस, राल, ये प्रत्येक १ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर दूब, अनार और आवलेके स्वरसोंकी ७–७ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती पाषाणभेदके चूर्णके साथ देकर शकर मिलाकर दूध पिलानेसे और केवल दूधभातका भोजनमें उपयोगकरनेसे नानाप्रकारके प्रदर जिनको कि वैद्योंने असाध्य कहकर छोड़दियाहो उनको यह नष्टकरताहै । पाषाणभेद देशभेदसे बहुततरहका आताहै परन्तु जो कि हिमाद्रि प्रभृति ठंडे प्रदेशोंमें वटपत्रके सदृश पत्रवाली छोटीलता पत्थरोंमें सटीहुई रहतीहै उसका नाम पहाड़ीलोग 'पाखनभेद, कहते है प्राय सभीलोग जानतेहैं। वचा के सदृशटुकड़े लालरङ्गके बाज़ारमें मिलतेहैं इसीका प्रयोगकरनेसे इसमें यथार्थ लाभ होगा । यह रस तैयार नहो तो ३ रत्ती मुर्दासङ्ग शकरमें मिलाकर फकादे और पाषाणभेदके चूर्णमें बराबरकी शक्कर मिलाकर ३ मासे ऊपरसे फंकाकर दूध पिलादे । इस प्रयोगसे बहुतही विलक्षण फायदा होताहै परन्तु कच्चा मुर्दासङ्ग अधिक दिन तक नहीं देना,, अधिक देनेसे वान्ति होतीहै और शरीरमें एकतरहकी ऐंठन पैदाहोतीहै इसलिये शुद्धकरके देना चतुर्थांश सेंधानमक मिलाके चौगुना पानी देकर १ प्रहर घोटके रखदे दूसरे दिन पानी को निकालदे और नवीन सेंधानमक मिलाकर घोटके रखदे ऐसे २१ रोज़ करनेसे यह सफेद होजाताहै और तमाम दुर्गुणोंसे रहितहो जाताहै यह औपदंशिक विकारों की परमौषध है ॥ २४७ ॥

२४८ प्रदरान्तकलोहम् (द्वितीयम्)

हरितालं लोहताम्रे वङ्गमभ्रं वराटिका ।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ॥ ११३५ ॥
चविका पिप्पली शङ्खं वचा हपुषपाकलम् ।
शटी पाठा देवदारु द्राविडी वृद्धदारकम् ॥ ११३६ ॥

एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।
शर्करामधुसंयुक्तं घृतेन भक्षयेत्पुनः ॥ ११३७ ॥
रक्तञ्च प्रदरं हन्याच्छ्वेतपीतञ्च नीलकम् ।
योनिशूलं कुक्षिशूलं कटिशूलञ्च सर्वजम् ॥ ११३८ ॥
मन्दाग्निमरुचिं पाण्डुं कृच्छ्रश्वासञ्च कासकम् ।
आयुःपुष्टिकरं बल्यं रजोवर्णप्रसादनम् ॥ ११३९ ॥

र सं, र क, र सु, प्रदरे।

भाषा—हरिताल, लोह, ताम्र, वङ्ग, अभ्रक, पीलीकौड़ी इनकीभस्में, त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, विडङ्ग, पाचोनमक, चव्य, पीपल, शङ्खभस्म, वच, हाउबेर, कुठ, कचूर, पाठा, देवदारु, छोटी इलायची और विधारा सब समभागलेकर एक जगह मिलाकर आवलेके रससे १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोलीकाचूर्ण शक्कर, मधु और घृतमें मिलाकर खानेसे रक्त, श्वेत, पीत और नील प्रदर, योनिशूल, कुक्षिशूल, कटिशूल और साधारणतया समस्त शूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, श्वास, कास इन सबको नष्टकर आयु और पुष्टिको बढाताहै रजको साफ करताहै और शरीरके वर्णको अच्छा करताहै ॥ २४८ ॥

२४९ प्रदरान्तकोरसः

शुद्धः सूतस्तथा गन्धो वङ्गभस्म च रौप्यकम् ।
खर्परञ्च वराटञ्च शाणमानं पृथक् पृथक् ॥ ११४० ॥
तोलकत्रितयञ्चैव लोहचूर्णं क्षिपेद् बुधः ।
दिनैकं कन्यकानीरे मर्दयेच्च भिषग्वरः॥
असाध्यं प्रदरं हन्ति भक्षणात्ऽत्रसंशयः ॥ ११४१ ॥

र स, र सु, ध, र चि, र मं, र र, व रा, भै र, प्रदरे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वङ्ग, चादी, खपरिया, पीलीकौडी इनसबकी भस्में ४-४ मासे और ३ तोले लोहभस्म लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १ दिन घीकुंआरके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूधवगैरहके साथ देनेसे असाध्यभी प्रदर दूरहोताहै ॥ २४९ ॥

२५० प्रदरारिरसः (प्रथमः)

रस गन्धं सीसं मृतमिति समस्तैस्तु रसजं,
समानं सर्वैः स्यात्तुलितमपि लोध्रं धृपरसैः ।
दिनं पिष्टं नाम्ना प्रदररिपुरेषोऽपहरति,
द्विवल्लः क्षौद्रेण प्रदरमतिदुःसाध्यमपि च ॥ ११४२ ॥

धृ यो त, बै. र, र च, र कौ, बै क, नि र., रसायनस, यो र, प्रदरे। रसायनस. प्रदररिपुरिति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा नागभस्म १-१ भाग, रसौत ३ भा, लोध ६ भा, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अडूसाके रसमें १-२ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली मधुके साथ देनेसे दुःसाध्यभी प्रदर नष्ट होताहै ॥२५०॥

२५१ प्रदरारिरसः (द्वितीयः)

पारदगन्धकटङ्कानेकैकभागसमिश्रितान् ।
चतुरो भागान्रसकाद्दोद्रवेण विभावितान् ॥ ११४३ ॥
मधुना सुभावितं तत् स्त्रीपुरुषाणाञ्च गुह्यजान्रोगान् ।
हन्याद्वल्लप्रमितं दुग्धाऽनुपानतो नियमात् ॥ ११४४ ॥

र सं, प्रदरे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा १-१ भाग, खपरिया ४ भाग, लेकर सबकी कज्जलीकर गायके दूधसे १-२ रोज मर्दनकर मधुमें ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली दूधके साथ देनेसे स्त्री और पुरुषोंके गुप्तरोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २५१ ॥

२५२ प्रदरारिरसः (तृतीयः)

मोचं निशां मधुकखर्परवङ्गभस्मा-
न्यादाय चूर्णमिह सूक्ष्मतमं विधाय ।
पक्वाऽर्कपत्रजजलेन समं गृहीतः सर्वा-
ण्यसौ रसवरो प्रदराणि हन्ति ॥ ११४५ ॥

र सु, र. स, प्रदरे। र सं मधुकादिचूर्णमिति नाम।

भाषा—मोचरस, हल्दी, दारुहल्दी, मुलहठी, खपरिया और वङ्गभस्म समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे १ माशा चूर्ण आकके पकेहुए पत्तोंके जलके साथ देनेसे यह समस्त प्रदरोंको दूर करताहै ॥ २५२ ॥

२५३ प्रदरारिलोहम्

वत्सकस्य तुलां सम्यग्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
अष्टभागाऽवशेषन्तु कषायमवतारयेत् ॥ ११४६ ॥
घनत्पूते घनीभूते द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
समङ्गां शाल्मलं पाठां बिल्वं मुस्तञ्च धातकीम् ।११४७।
अरुणां व्योमकं लोहं प्रत्येकन्तु पलंपलम् ।
वल्लमानं प्रयुञ्जीत कुशमूलपयो ह्यनु ॥ ११४८ ॥
श्वेतं रक्तं तथा नीलं पीतं प्रदरमुत्कटम् ।
कटिशूलं कुक्षिशूलं देहशूलञ्च सर्वगम् ॥ ११४९ ॥
प्रदरारिरयं लोहो हन्ति रोगान् सुदुस्तरान् ।
आयुःपुष्टिकरश्चैव बलवर्णाऽग्निवर्धनः ॥ ११५० ॥

भै र, ध, प्रदरे।

भाषा—कुडाकी छाल ४०० तोले लेकर १६ सेर पानीमें पकावे । अष्टमांशाऽवशेष रहनेपर उतारकर छानले और अग्निपर चढाकर पकावे । जब गाढा होजाय तब मजीठ, लज्जावती, मोचरस, पाठा, बेलगिरी, नागरमोथा, धावडीके फूल, अतीस, अभ्रक और लोहभस्म ये प्रत्येक १ पल मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ अथवा २ गोली कुशाकी जड़के काढेके साथ देनेसे सफेद, लाल, नीला और पीला दुस्तर प्रदररोग, कटिशूल, कुक्षिशूल और समस्त देहमें फैलनेवाला शूल इत्यादि प्रदरोपद्रवभूत समस्त दुस्तररोगोंको यह नष्टकर आयु, पुष्टि, बल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ २५३ ॥

२५४ प्रभाकरवटी

माक्षिकं लोहमभ्रञ्च तुगाक्षीरीं शिलाजतु ।
क्षिप्त्वा खल्वोदरे पश्चाद्भावयेत्पार्थवारिणा ॥११५१॥
वल्लद्वयमितां कुर्याद्वटीं छायाविशोषिताम् ।
प्रभाकरवटी सेयं हृद्रोगानखिलाञ्जयेत् ॥ ११५२ ॥

भै र, हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्ध सोनामाखी, लोह और अभ्रकभस्म, वंश-लोचन, शिलाजीत, सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर अर्जुनकी छालके स्वरस अथवा क्वाथसे १ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अर्जुनकी छालके काढेके साथ देनेसे यह हृदयके तमाम रोगोंको दूर करती है ॥ २५४ ॥

२५५ प्रभावतीवटी (प्रथमा)

हेमाऽभ्राऽऽलकतीक्ष्णताप्यकमलान्येषां समं सूतकं,
सूतश्च द्विगुण विशोधनयधूस्नुग्वह्निशोभाञ्जनम् ।
पाठासूरणसिन्धुवारविजयैरण्डद्रवे मर्दितं,
तैले कङ्गुणिगन्धके पटुभवे कल्कद्वटीं कल्पयेत् ११५३
प्रभावतीति कथिताऽऽर्द्रकद्रावे निपेविता ।
ततश्चाऽनुपिवेत्तोयं दशमूलप्रसाधितम् ॥ ११५४ ॥
सपिप्पलीकं पिबतो जलजये-
न्मरुद्विकाराण्युदराण्यपस्मृतिम् ॥
गुल्मानुदावर्तचयं चलाऽचलं
शूल विसूचीप्रभवं धनुश्चलम् ॥ ११५५ ॥

र र. स, वातव्याधौ ।

टि०—तैले कङ्गुणिगन्धके पटुभवे कल्कद्वटीं कल्पयेदिति पद स्वार्थाऽवबोधेऽसमर्थं प्रतिभाति, तत्र छन्दोनुरोधार्थं पदगुम्फनस्य दोषोऽस्ति । तिलतैले ज्योतिष्मतीगन्धकौ समानौ निक्षिप्य सम्पुटं कृत्वा वन्योत्पलैर्दीपयेत् । स्वाङ्गशीतलत्वात्तद्गते श्वेत भस्म निष्कास्य तेन प्रतिमारणीय क्षार कृत्वा तेन वटीं प्रकल्पयेदिति ग्रन्थरचयितुरभिप्राय । सोऽयमेवास्मिन् पद्ये न समाविष्टस्तस्यैपद्यपाठोऽस्तीति विद्वद्भि विभावनीयम् ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, हरिताल, फौलाद सोनामाखी, और ताम्र, इनकीभस्में १–१ भाग, पारदभस्म २ भा, लेकर सबका बारीक चूर्णकर दन्ती, प्रियङ्गु अथवा अनन्तमूल, थूहरका दूध, चित्रकमूल, सहिजनकी छाल, पाठा, सूरण, सभालू भाग और एरण्डकी जड इन प्रत्येकके यथालाभ स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर सुखाले । और तिलकेतैलमें माल कागनी तथा गन्धक समभाग डालकर शरावसम्पुटकरके १० सेर जङ्गली कण्डोंमें फूकदे जिसमें कि जलकर सबकी सफेद राख हो जाय । फिर इस सफेदभस्मको लेकर १६ गुने पानीमें खूब मसलदे । दो रोजके बाद ऊपरका पानी नितारले और उसको कडाहीमें औटाकर गुडकी एकतारी चाशनीके सदृश कल्क बनाकर इसीके साथ पूर्वोक्त रसकी ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ अथवा २ गोली खिलाकर १ माशा पीपलका प्रक्षेप दिया हुआ दशमूलका काढापीवे तो इससे जलोदर वातविकार, उदरविकार, अपस्मार गुल्म, समस्त उदावर्त, चल अथवा अचल हैजेका शूल, और धनुर्वात ये सब नष्ट होजातेहैं ॥ २५५ ॥

२५६ प्रभावतीवटी (द्वितीया)

भागमेकन्तु कर्पूरं तदर्धं शुद्धगन्धकम् ।
तत्समानि विडङ्गानि जातीपत्रलवङ्गकम् ॥ ११५६ ॥
जातीफल तथा चैला व्योषञ्चाऽपि समंसमम् ।
श्लक्ष्णचूर्णमिदं सर्वं मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ ११५७ ॥
गुडेन मापमानान्तु वटिकां कारयेद्बुधः ।
इयं प्रभावती नाम्ना ह्याढ्यवातविनाशकृत् ॥११५८॥

व. रा, आढ्यवाते ।

भाषा—शुद्ध कपूर १ तोला, शुद्ध गन्धक, विडङ्ग, जावित्री, लौंग, जायफल, इलायची, सोंठ, मिर्च और पीपल ६–६ माशे लेकर बारीक पीस १–२ पहर सूखा मर्दनकर बराबरका पुराना गुड मिलाकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली दूध वगैरहके साथ लेनेसे ऊरुस्तम्भ नष्ट होताहै ॥ २५६ ॥

२५७ प्रमदानन्दोरसः

अयो रौप्यं तथा हेम रसं गन्धं शिलाजतु ।
वह्निद्रवेण सम्मर्द्य रक्तिमाना वटीश्चरेत् ॥ ११५९ ॥
नाम्नाऽसौ प्रमदानन्दो रसो ह्याशु विनाशयेत् ।
त्रिफलातोययोगेन सर्वाञ्जरायुजान्गदान् ॥ ११६० ॥
जरायुरोगिणीनारी नच सेवेत पूरुषम् ।
न खादेदुग्रवीर्याणि नाऽपि कुर्यादतिश्रमम् ॥११६१॥

आ वि, जरायुरोगे ।

भाषा—लोह, चादी, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सब चीजोंको मिलाकर चित्रककी जडके काढेसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली त्रिफलाके काढेसे देनेसे जेरके अटकनेसे जितने उपद्रव होतेहैं उनसबको यह नष्ट करताहै । जरायुरोगिणी स्त्री पुरुषका सङ्ग न करे, उग्रवीर्यचीजें न खाय और अत्यन्त परिश्रम न करे ॥ २५७ ॥

२५८ प्रमदेभाऽङ्कुशोरसः

विशुद्धो रसो मासमुन्मत्ततैले
दशाऽहानि तैले तथोपर्बुधस्य ।
विपाच्योऽष्टयामैः क्षति बैल्वतैली
मृदुस्वर्णपत्राणि सूताऽष्टमांशात् ॥ ११६२ ॥
दिनं पेपयेत्तत्समं गन्धकं हि
कृतां कज्जलीं तां विपाच्यार्कयामम् ।
यथा त्यक्तगन्धोर्द्ध्वकूप्यां प्रयाति
स्वशीतं समादाय सिन्दूरकल्पम् ॥११६३॥

त्र्यहं रसालसत्वक्कषाये विमर्द्य
　त्र्यहं वैजये जातिसारे दिनैकम् ।
तथा कोकिलाक्षस्य घस्रं कषाये-
　विदार्याऽथ भूमौ क्षिपेद्गोलकं तम् ॥११६४॥
मृदा द्व्यङ्गुलोन्मानयाऽऽच्छाद्य पश्चा-
　दरण्योपलद्वन्द्ववर्ह्नि विधाय ।
सुशीतं मृदुस्वेदमात्तं रसेन्द्रं
　गृहीत्वा ततो भागमानं वदामः ॥ ११६५ ॥
रसाद्वयोमवैकान्तजातीप्रसूनं
　लवङ्गं द्विभागं त्रिभागं भुजङ्गम् ।
सितं कान्तसञ्ज्ञं विषं केशराख्यं
　शिजातं तथा वङ्गभस्म द्विभागम् ॥११६६॥
अहेःफेनतापीजयोरर्द्धभागं
　विमर्द्याऽथ यामं मरुङ्गप्रसूनैः ।
विदारीवरावासकै र्नागवल्ली-
　बलाशाल्मलीमर्कटीमूलजातैः ॥ ११६७ ॥
पयोभिश्च गोधाऽद्रिरम्भासमुत्थैः
　शताह्वासहादेव्यमुण्डीसमुत्थैः ।
महापत्रिकायष्टिहस्तिद्रवैश्च
　त्रिभाव्यं त्रिवारं ततो गोलमस्य ॥ ११६८ ॥
दिनं स्वेदयेत्सारसत्वक्कषाये-
　निबध्याऽम्बरे दोलिकायन्त्रमध्ये ।
अकूपारशोषस्य तैलेन भाव्यो
　द्विवारं तथा स्वर्णबीजस्य तैलैः ॥ ११६९ ॥
तथा वैजये जातिसारस्य तैले-
　र्द्विवारं विभाव्योऽथ गोलं निबध्य ।
ततो मृत्पटैस्त्रिर्धराधारयन्त्रे
　पचेत्पूर्ववत्स्वाङ्गशीतं ततस्त्रिः ॥ ११७० ॥
उशीरेण भाव्यः सुगन्धेन तद्व-
　त्तथाऽऽज्ञाङ्गकेनाऽथ कस्तूरिकाद्भिः ।
विभाव्यं शिवब्रिट्कुचाख्रिः शिफाली-
　द्रवैः शातपत्राद्रवैः सिद्ध एषः ॥११७१॥
तमेनं स्वतुर्याशकर्पूरयुक्तं
　निषेवेत वल्लद्वयं वाऽस्य मात्रा ।
लवङ्गं सिता पुष्पसारोऽनुपानं
　हितं क्षीरपानं विवर्ज्योऽम्लवर्गः ॥ ११७२ ॥
पठित्वा च पश्चाऽक्षरं राजमन्त्रं
　कुमारीश्च यन्त्राणि सम्पूज्य यत्नात् ।
निषेवेत पूर्वोक्तरीत्या रसेन्द्रं
　निषेवेदसौ कामिनीसङ्गमञ्च ॥ ११७३ ॥
त्रिदोषघ्न एषोऽबलागर्वहारी
　वशीकार्यकारी महास्तम्भकारी ।
सदा पुंध्वजोत्थानकारी नराणां
　तथा पातकारी न चाशंक च कारी ॥७४॥

यामेकवारं भजते नवाऽङ्गनां
　साऽऽजन्मदास्यं भजते विनिश्चला ।
बहुप्रकारं भजतोऽपि सङ्गमं
　तेजो बलं नैव जहाति किञ्चित् ॥ ११७५ ॥
रसमेनं सेवयित्वा न सेवेत स्त्रियं यदि ।
निर्गच्छेन्नेत्रयो र्वीर्यं नेत्रनाशस्तथा भवेत् ॥ ११७६ ॥
　नाऽङ्गं शैथिल्यभावं व्रजति न च कटि-
　　स्त्रुट्यते तस्य कान्ति-,
　हेमाभा जायतेऽप्यष्टदशविधमतुलं
　　नाशमेति प्रमेहम् ।
　नष्टं वीर्यं प्रपन्नं भवति यदि पुमान्
　　सेवते रम्यकान्तां,
　षण्ढो वा वाजितुल्यो जनयति तनयान्
　　सिंहतुल्यप्रतापान् ॥ ११७७ ॥
　एवं रसश्च प्रमदा भजेत
　　कुमारिकातुल्यवपुष्मती स्यात् ।
　एतद्रसास्वादमतः पुमांस्तां
　　युवाऽपि यातुं न समर्थ एव ॥ ११७८ ॥
गर्भाशयगतान्दोषान्हन्ति वातकफोद्भवान् ।
प्रमदेभाङ्कुशोनाम रसराजः सुसिद्धिदः ॥ ११७९ ॥

वृ.यो.त., र. म. मा., दो , र. मु., रसपारिजात, रसाय-नप., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारेको एकमहीनेतक धतूरेकेतैलमें पकावे फिर १०रोजतक चित्रकके तैलमें पकावे । पकातेसमय अग्नि इतनी देनी चाहिये कि रातदिनमें १ पल तेल जले इसतरह पारेका शोधनकर सोनेके शब्दस्वेधी पत्र पारेमें आठवां हिस्सा डालकर घोटे, जब सुवर्ण अदृश्य होजाय तब पारेकी बराबर शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्ण कज्जली कर ६–७ कपड़मिट्टी कीहुई आतशी शीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १२ पहर तीक्ष्ण अग्निदे । शीशीका मुंह खुला रहनेदे । जब गन्धक शीशीका मुह रोकले तब लोहेकी गरमशलाकासे उसे जलादे, ऐसे ३–४ पहरतक करतारहे फिर शलाकाको शीशीके पेंदे तक डालकर देखे, जब धूमरहित शलाकामें लगाहुआ भाग लाल वर्णका होजाय तब शीशीके मुंहमें खड़ियामिट्टी अथवा ईटकी डाट लगाकर कपड़मिट्टी करदे, कांच थोड़े समयतक बन्दकरदे, कपड़मिट्टी सूखनेपर फिर अग्निदेकरदे । इसतरह १२ पहरकी आंच देकर लकड़ी लगाना बन्दकरदे और उन्हीं कोयलों पर रहने दे । यन्त्रके स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीकी कपड़मिट्टी हटाकर सावधानीसे शीशीको फोड़कर सिन्दूरके रसके स्थानसे खाइमें धुसाले । फिर इसे आमके कायमें ३ रोज मर्दनकर कुलींके अगेकी जड़ अथवा आमके बीजोंके रसमें १ रोज मर्दनकर जायफलके तैलमें १ रोज मर्दनकरे । तदनन्तर इस-मखाने के काढ़ेमें एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय गोलेमें रखकर जमीनमें दोअंगुल मिट्टीमें दबाकर दो आरने कण्डोंकी आंचदे ।

स्वाङ्गशीतल होनेपर स्वेदित पारेको निकालकर अभ्रक और वैक्रान्तभस्म, जावित्री और लौंग ये पारेसे २ भाग, नागभस्म ३ भाग, चादी और कान्तलोहकीभस्म, शुद्ध वच्छनाग केसर, तज, पत्रज, इलायची और वङ्गभस्म ये प्रत्येक २ भाग, अफीम और सोनामाखी आधा ½ भाग मिलाकर शङ्खपुष्पीके फूलोंसे १ पहर मर्दनकर विदारी, त्रिफला, अड्सा, पान, बला, सेमलका मुसला, केवाचकीजड, गोदुग्ध, रतालु, केलाकंद, सौंफ, माषपर्णी और मुद्गपर्णी अजमोद, गोरखमुण्डी, कची, मुलहठी, हाथीका मद अथवा हस्तिकर्ण पलाशकी छाल इन सबके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ बार भावना देकर गोला बनाय कपडेमें बाधकर दोलायन्त्रमें पोस्तका क्वाथ भरकर १ रोज स्वेदनकर समुद्रशोषके तैलसे दो भावनाएं देकर धतूरेका तैल, मुर्गीके अण्डेकी जर्दी अथवा गाजेके बीजोंका तैल, जायफलका तैल इन प्रत्येककी २-२ भावनाएं देकर गोला बनाय तीन-कपडे लपेटकर भूधरयन्त्रमें पूर्वोक्त प्रकारसे दो जङ्गली कण्डोंकी आच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर खस, एलादिगण, अगर, कस्तूरी, केवडेकीजड हारसिंगार और कमल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काढेकी ३-३ भावनाएं देनेसे यह प्रमदेभाङ्कुशरस तैयार हुआ। इसमेंसे ६ रत्तीकी मात्रा लेकर १॥ रत्ती शुद्धकपूर, लौंग २ नग, मिश्री और मधु मिलाकर खावे और ऊपरसे दूधपीवे। इसमें अधिक दुग्धका सेवन हितकारकहै अम्लवर्गका त्यागकरे। लेनेके पहिले ॐनम शिवाय इस पञ्चाक्षर मन्त्रका जपकरे, कुमारी और यन्त्रकी पूजाकरे। इसके सेवनमें स्त्रीप्रसङ्ग करना उचितहै, यह त्रिदोषघ्नहै स्त्रियोंके गर्वको हरण करताहै वशीकरणहै और अत्यन्त स्तम्भनकारकहै पुरुषोंकी नपुसकताको दूर करता है। जिस स्त्रीकेसाथ एकबारभी इसरसका सेवन करनेवाला सङ्ग करे तो वह जीने तक अन्य पुरुषोंकी तरफ मनोवृत्तिको न दौडाती हुई अनन्यभक्ता होतीहै यह पुरुषभी अनेक प्रकारोंके वन्धोंके साथ रमणकरता हुआभी तेज और बलकी किसीतरहकी हानिको नहीं प्राप्त होता। इस रसका सेवनकरके अगर स्त्रीसङ्ग न करे तो नेत्रोंका वीर्य कम होजाताहै अथवा नेत्र ही नष्ट हो जाते हैं। क्रमपूर्वक यदि इस रसका सेवनकरे तो कोईभी अवयव शिथिल नहीं होता। बुढापेमें प्राय मनुष्योंकीकमर झुकजाया करतीहै सो इसरसके सेवन करनेवालेकी नहीं होती और सुवर्ण सदृश कान्ति बनी रहतीहै। अठारह प्रकारके प्रमेह, शुक्रदोष, नपुसकता, इन सबको यह दूर करताहै। इसरसको यदि बुड्ढी औरत खावे तो कन्यासदृश अवयव हो जातेहैं युवावस्थापन्नभी पुरुष इसके सन्तोष देनेके लिये समर्थ नहीं होता। स्त्रियोंके वात और कफसे उत्पन्न होनेवाले गर्भाशयके रोगभी इससे नष्ट हो जातेहैं॥ २५८॥

२५९ प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः (प्रथमः)

रसगन्धकताम्राऽभ्रजयावङ्गात्कमोत्तरम्।
भागाःस्युस्तुलितास्तत्र गुडूचीसत्त्वसम्भवाः।।११८०।
विमर्द्य मुशलीरम्भाशाल्मलीगोक्षुरद्रवैः।
द्विमाषं ससितं खादेन्मेहकुञ्जरकेसरी॥ ११८१॥

र. को, र क ल, प्रमेहाऽधिकारे।

टि०—रसकल्पलतायां मुशलीरम्भागोक्षुराणां भावना न दृश्यते, दृश्यते त्वभ्रकभावना। भवत्वप्यभ्रकस्य भावनया न कोऽपि दोष।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, भाग, वङ्गभस्म ये सब क्रमवृद्धभागसे लेवे और सबकी बराबर गिलोयका सत्त्व मिलाकर मुसली, केलेकाकन्द, सेमलकी छाल और गोखरू इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली शक्करके साथ खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे सब प्रकारके प्रमेह नष्टहोतेहैं॥ २५९॥

२६० प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः (द्वितीयः)

रसगन्धाऽऽयसाऽभ्राणि नागवङ्गौ सुवर्णकम्।
वज्रकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत्॥ ११८२॥
शतावरीरसेनैव गोलकं शुष्कमातपे।
मुद्रा शुष्कं समुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत्॥११८३॥
सन्धिलेपं मृदा कुर्याद्गर्ते च गोमयाऽग्निना।
पुटेद्यावच्चतुर्यामं चोद्धृत्य स्वाङ्गशीतलम्॥ ११८४॥
श्लक्ष्णं खल्वे विनिक्षिप्य गोलञ्च मर्दयेद्दृढम्।
देवब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वा धृत्वा करण्डके॥ ११८५॥
खादेद्रक्तिमितं प्रातः शीतं दुग्धं पिबेदनु।
अष्टादश प्रमेहांश्च जयेन्मासप्रयोगतः॥ ११८६॥
तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिमनुत्तमाम्।
अग्ने बेल वितनुते मेहकुञ्जरकेसरी॥
दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नाऽत्र कार्या विचारणा॥११८७॥

नि र, र च, र ८कौ, व. रा, वै चि, रसपारिजात, प्रमेहे

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, नाग, वङ्ग, सुवर्ण, हीरा और मोती इन सबकीभस्में समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १-२ पहर शता वरीके रससे घोटकर गोला बनाय धूपमें सुखावे। सूखनेपर सम्पुटमें रखकर ६-७ कपडमिट्टीसे बन्दकर गडेमें इतने कण्डोंकी आचदे कि ४ पहरमें ठंडी होजाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर बारीक पीसकर देवता और ब्राह्मणोंका पूजनकर शीशीमें भरदे। इसमेंसे १-१ रत्तीको मात्रा लेकर ठढा दूध पीवे। इसतरह १ महीने तक करनेसे यह १८ प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट कर उत्साह, तेज, बल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अग्निबल इन सबको करके वलीपलितादिकोंसे रहित करताहै॥ २६०॥

२६१ प्रमेहकुञ्जरकेसरी रसः (तृतीयः)
(हेमकुञ्जरकेसरी)

हेमखर्परकाऽयोऽभ्रवङ्गाश्च भागवर्द्धिताः।
पारद· पञ्चभागः स्याद्गुडूच्या. सत्वकन्तथा॥११८८॥

मर्दयेन्मुसलीरम्भाशाल्मलीगोक्षुरद्रवैः ।
सिद्धो वल्लद्वयमितो मेहकुञ्जरकेसरी ॥ ११८९ ॥
सेवितो मधुना सार्द्धं धात्रीगोक्षुरतस्तथा ।
क्वाथं मधुसमायुक्तमनुपानाय दापयेत् ॥ ११९० ॥
पिबेन्मधुसमायुक्तं रात्रौ पेयः शिवारसः ।
मासत्रयप्रयोगेण मेहान् सर्वान् व्यपोहति ॥ ११९१ ॥
अश्मर्यां मातुलुङ्गस्य मूलं पर्युषिताऽम्बुना ।
वेल्लाश्मभिल्लयुता मूत्रकृच्छ्रनिवारणः ॥ ११९२ ॥
गर्भिणीशूलविष्टम्भे ज्वराऽतीसारयोस्तथा ।
पयोक्तेनाऽनुपानेन दातव्यो भिषजा सदा ॥११९३॥

र. शं., र. सु., रसपारिजात, प्रमेहे । रसपारिजाते मेहेभके-सरीति नाम ।

भाषा—सुवर्ण, खपरिया अथवा जस्त, लोह, अभ्रक, वङ्ग इनसबकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेना । पारदभस्म और गिलोयका सत्त्व ५–५ भाग लेकर सबको १–२ पहर शुष्क-मर्दनकर मुशली, केलेका कंद, सेमलकी छाल और गोखरू इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देकर आंवले और गोखरूके काढ़ेमें मधु डालकर ऊपरसे पिला-नेसे यह समस्त प्रमेहोंको ३ महीनेमें नष्टकरताहै । रातको सोतेसमय हर्रैकाकाढ़ा मधु मिलाकर पिलाना चाहिये । पथरीमें बिजौरेकी जड़ बासीपानीमें घिसकर देवे । मूत्रकृच्छ्र और गर्भिणीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर तथा अतिसारमें बिडङ्ग और पाषाणभेद के चूर्णके साथदेवे ॥ २६१ ॥

२६२ प्रमेहकुलान्तकोरसः (प्रथमः)

सूतं वङ्गं मृतं तुल्यं मृताऽभ्रं सूतकात्त्रिधा ।
लशुनं सर्वतुल्यांशं सर्वमेकत्र पेषयेत् ॥ ११९४ ॥
बदराभां वटीं कुर्यात्प्रमेहस्य कुलान्तकः ।
लशुनं छागमूत्रेण वसामेही पिबेदनु ॥ ११९५ ॥

र. र., र. को., र. क. ल., रसायनसं., व. रा., र. का., यो. म., प्रमेहे ।

भाषा—पारा और वङ्गभस्म १–१ भाग, अभ्रकभस्म ३ भाग, लशुन ५ भाग लेकर १–२ रोज मर्दनकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर बकरेके मूत्रमें लशुनमिलाकर पीनेसे वसामेह निवृत्तहोताहै ॥ २६२ ॥

२६३ प्रमेहकुलान्तकोरसः(मेहकुलान्तकः)(द्वितीयः)

मृतं वङ्गं मृतञ्चाऽभ्रं शुद्धं पारदगन्धकम् ।
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥११९६॥
रसाञ्जनं विडङ्गाब्दबिल्वगोक्षुरदाडिमम् ।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं शुद्धमश्मजतोः पलम् ॥११९७॥
गोपालकर्कटीमूलस्वरसै र्वटिकां कुरु ।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥११९८॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं छागीदुग्धं पयोऽथवा ॥
धात्रीफलस्य निर्यासं क्वाथं कौलत्थजं पिबेत् ॥११९९

भै., र., ध., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग और अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, चिरायता, पिप्पलामूल, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, रसौत, विडङ्ग, नागरमोथा, बेलगिरी, गोखरू, अनारके छिलके ये सब १–१ तोला, शुद्ध शिलाजीत १ पल लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर एरण्डखरबूजेकी जड़के रसमें घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली बकरी अथवा गायके दूध, आंवलेकेरस अथवा कुलथीके क्वाथकेसाथ रोगकी अवस्था देखकर देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अश्मरी, कामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अरुचि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

२६४ प्रमेहकेतूरसः (प्रमेहसेतुः)

सूतमभ्रं वटक्षीरे मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
विशोष्य पक्वं मूषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥१२००॥
विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।
युञ्जीत वल्लमेकन्तु रसेन्द्रस्याऽस्य वैद्यराट् ॥१२०१॥

र.चं., र.का., रसायनसं., र. सि., र. सं., र. चि., र. सु., प्रमेहे । र.चं., र.का., एतौ द्वौ ग्रन्थौ विहाय सर्वेषु ग्रन्थेषु प्रमेहसेतुरितिनाम्ना व्यवहृतः ।

भाषा—पारे और अभ्रककी भस्मको २ पहर बड़के दूधमें मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें पानके अन्दर स्वेदनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचि-ताऽनुपानके साथ देनेसे यह सबरोगोंको नष्टकरताहै । प्रमेहोंमें मधु और त्रिफलाके साथ देना ॥ २६४ ॥

२६५ प्रमेहगजकेसरीरसः (प्रथमः)

मृताऽभ्रकान्ततीक्ष्णानि सूतभस्माऽब्धिशोषकम् ।
मृतं नागं मृतं वङ्गं मृतमण्डूरमेव च ॥ १२०२ ॥
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याऽथ मेहारे र्बीजकन्तया ।
दिनन्तु त्रिफलाद्रावे पञ्चाङ्गैराकुलीरसैः ॥ १२०३ ॥
कतकस्य च सारेण भावयेच्चूर्णयेद्भिषक् ।
त्रिवल्लसेवनाच्चैव गोतक्रेण दिनेदिने ॥ १२०४ ॥
मेहानां विंशतिं चैव मूत्राऽऽघातञ्च नाशयेत् ।
मेहकेसरिनामाऽयं हरपादेन निर्मितः ॥ १२०५ ॥

वै. चि., प्रमेहे ।

भाषा—अभ्रक, कान्तलोह, फौलाद, पारा, नाग, वङ्ग, मण्डूर इनसबकी भस्में और समुद्रशोष, समभाग लेकर सबकी बराबर चकायनके बीज लेकर बारीक चूर्णकर सबको इकट्ठा मिलाय त्रिफला, अङ्कोलका पञ्चाङ्ग, निर्मलीकाहीर इनके यथालाभ स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली

गोतकके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और मूत्राऽऽघात नष्ट होतेहैं ॥ २६५ ॥

२६६ प्रमेहगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृतं वङ्गं सुवर्णञ्च कान्तलोहञ्च पारदम् ।
मुक्तां गुडत्वचञ्चैव सूक्ष्मैलां पद्मकेसरम् ॥ १२०६ ॥
समभागं विचूर्ण्याऽथ कन्यानीरेण भावयेत् ।
द्विमाषां वटिकां खादेद्दुग्धाऽन्नं प्रपिबेत्ततः ॥१२०७॥
प्रमेहं नाशयत्याशु केसरी करिणं यथा ।
शुक्रप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्रान्नाऽत्र संशयः ॥
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥ १२०८ ॥

र. चि., र. च., र. सु., र. स., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्ग, सुवर्ण, कान्तलोह, पारा और मोती इनकी भस्में, दालचीनी, छोटी इलायची, पदमाख, नागकेसर, सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर घीकुआरके रसमें १–२ रोज़ मर्दनकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर दूधभात खानेसे यह शुक्रके प्रवाहको ३ दिनमें नष्ट करताहै। इसीतरह बहुतदिनके प्रमेह और मधुमेहको नष्ट करताहै ॥ २६६ ॥

२६७ प्रमेहगजसिंहोरसः (मेहद्विरदसिंहः) (प्रथमः)

पारदाऽभ्रकयो र्भस्म मृतं लोहाऽष्टकं समम् ।
टङ्कणञ्चैव मध्वाज्यं प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ १२०९ ॥
चाण्डालीराक्षसीपुष्पे दिनं मर्द्य निरुद्ध्य च ।
मूषायां भूधरे पक्वं दिनैकं तच्च चूर्णयेत् ॥ १२१० ॥
मेहद्विरदसिंहोऽयं रसः क्षौद्रे द्विरक्तिकम् ।
लिहेद्धाऽनुपिबेत्तक्रे निष्कैकं टङ्कणं सदा ॥ १२११ ॥

र. र., व. रा., यो. म., र. क यो , र को., प्रमेहे।

भाषा—पारा, अभ्रक, अष्टलोहों (सुवर्ण, चांदी, तांबा, फोलाद, वङ्ग, नाग, अभ्रक और कान्तका सत्व) कीभस्में, भुनासुहागा, मधु और घृत सब समभाग लेकर सेंमल और कपासके फूलोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें एकदिन स्वेदनकर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ चाटकर ४ माशे भुनासुहागा छाछमें डालकर पिलानेसे तमाम प्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ २६७ ॥

२६८ प्रमेहगजसिंहोरसः (द्वितीयः)

चाण्डालीराक्षसीपुष्परसमध्वाज्यटङ्कणम् ।
रसं समांशोपरसं समं हेम्ना विमर्दितम् ॥ १२१२ ॥
समांशं पूतिलोहं वा मूषायां विपचेत्क्रमात् ।
प्रमेहगजसिंहोऽयं रसः क्षौद्रे द्विरक्तिकः ॥ १२१३ ॥

र. र स , र. सु., र. को , र का., प्रमेहे ।

भाषा—सेमल और लालकपासके फूलोंकारस, मधु, घी, सुहागा, पारा और उपरस (हरिताल, फिटकरी, गन्धक, मुर्दासङ्ग, मैनसिल, सोनागेरू, सफेद सुरमा और कसीस) येसब समभाग, इनसबकीबराबर सुवर्ण अथवा नाग–वङ्गभस्म लेकर मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ चाटनेसे सबप्रकारके प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै २६८

२६९ प्रमेहगजाङ्कुशोरसः (मेहगजाङ्कुशः)

रसेनतुल्यं कनकस्य भस्म
पुनर्नवामूलरसेन मर्द्यम् ।
तच्छाल्मलीमूलरसेन वाऽपि
दिनत्रयं चामलकीरसेन ॥ १२१४ ॥
तदभ्रकेणैवसमानभागं
विमर्दयेद्रोस्तनिकारसेन ।
सिद्धो भवेन्मेहगजाङ्कुशाख्योऽ-
प्यशेषमेहाञ्जयति प्रसह्य ॥ १२१५ ॥
सितामधुभ्यां सकणामधुभ्यां
या पिप्पली शर्करया समेतः ।
वल्लो जयत्याशु यथाऽनुपाने-
रशुक्लं पथ्यमिहोपदिष्टम् ॥ १२१६ ॥
विवर्जयेन्मेहगदाऽभिभूतः
क्षीरं दधिक्षौद्रगुडाऽम्लमद्यम् ।
सामुद्रनिद्रा लशुनाऽम्लतीक्ष्ण-
वार्ताकयोषिद्बृहतीफलञ्च ॥ १२१७ ॥

र , रसपारिजात, प्रमेहे ।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म बराबर लेकर पुनर्नवा अथवा सेंमलकी जड़के रससे ३ रोज मर्दनकर ३ रोज़ आवलेके रससे मर्दनकरे । फिर इसमें समान अभ्रकभस्म मिलाकर दाखके रसकी भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर, मधु अथवा पीपल, मधु अथवा पीपल और शक्करके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै । शुक्रको ■ बढ़ानेवाली जो चीजेंहै वे खानेकोदे। दूध, दही, मधु, गुड़, खटाई, मद्य, समुद्रतटपरसोना, लहसन, तीक्ष्णपदार्थ, बेंगन,स्त्री,भटकटैया इन सबका त्याग करे ॥२६९॥

२७० प्रमेहदावानलरसः

शैवभीमवलयः समांशका-
स्ताम्रभस्म कुरु तत्समांशकम् ।
तच्च गव्यपयसा विमर्दितं
वासरत्रितयकं निरन्तरम् ॥ १२१८ ॥
ततः शिवामर्कटिवीजयष्टि
द्राक्षेक्षुगोक्षुरकखर्जुरीभिः ।
मांसीशिवाखण्डसितामराल-
पादोदधित्थाऽम्बुरसेनवाऽपि ॥ १२१९॥
जम्बीरनारङ्गरसेन कृत्वा
गुडूचिकासत्वरसेन चाऽपि ।
विभावितः सिद्धिमुपैति सूतो
द्विवल्लमात्रो जयति प्रमेहान् ॥ १२२०॥

स्वीयाऽनुपाने मधुना शिवाया
नीरेण वा शर्करया समेतः।
मोचाऽङ्घ्रिनीरेण तथा प्रसूता-
नीरेण वा गोपयसा प्रदेयः॥ १२२१॥
मधुप्लुतो हन्त्यखिलान्गुदाऽङ्कुरां-
स्तथाऽश्मरीं कृच्छ्ररुजं प्रसह्य।
प्रमेहदावानल एप सूतः
सर्वप्रमेहेपु नियोजनीयः॥ १२२२॥

र., प्रमेहे।

भाषा—पारा, सीसाभस्म और शुद्धगन्धक ये सब सम-भाग और ताम्रभस्म सबकी बराबर लेकर गायके दूधसे लगातार २ रोज़तक मर्दनकर हर्रे, केवाचके बीज, मुलहठी, द्राक्ष, ईख, गोखरू, खजूर, जटामासी, हर्रे, खांड, मिश्री, हंसराज, बैर, सुगन्धवाला, जंभीरी, नारङ्गी, गिलोयका सत्व इनके यथा-सम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु, हर्रे, शक्कर, केलेकाकंद, स्त्रीदुग्ध, गोदुग्ध इनसबमेंसे रोगोचितको देखकर किसी एकके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै। मधुके साथ देनेसे बवासीर, पथरी और मूत्रकृच्छ्रको दूर करताहै॥ २७०॥

२७१ प्रमेहध्वान्तभास्करोरसः

शम्भो र्बीजं रौप्यतुर्यांशयुक्तं
लोहं ताम्रं खञ्च सूतेन तुल्यम्।
मर्द्यं कन्यारात्रिपथ्याशिवाम्बु-
कृष्णाऽनन्तापाटलानां रसेन॥ १२२३॥
सिद्धः सूतो रक्तियुग्मप्रमाणो
हन्यान्मेहं शर्करारात्रियुक्तः।
पथ्याऽङ्कोलक्षौद्रयुक्तोऽपिनूनं
मेहध्वान्तध्वंसने भास्करोऽयम्॥१२२४॥
बृंहणं शीतलं वृष्यमनुपानादिकञ्च यत्।
तत्सर्वं वर्जयेद्यत्नात्प्रमेही धर्ममाचरेत्॥ १२२५॥

र., प्रमेहे।

भाषा—रजतभस्म ४ तो., पारा, लोहा, ताम्र, अभ्रक इनसबकी भस्मे १–१ तोला लेकर २–२ पहर तुरी खरलकर घीकुंआर, हल्दी, हर्रे, आंवला, सुगन्धवाला, पीपल, अनन्त-मूल, पाढर, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और हल्दीके चूर्णके साथ अथवा हर्रे, अङ्कोलकीछाल और मधुके साथ देनेसे यह समस्त प्रमे-होंको नष्टकरताहै। धातुओंको बढ़ानेवाली, ठंडी, वृष्यचीजें अनुपानादिकोंमें प्रमेही न ले और धर्मका सेवनकरे॥ २७१॥

२७२ प्रमेहध्वान्तविवस्वान्रसः

रसाऽभ्रकौ तुल्यसमानभागौ
जम्बीरनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य।
कुर्वीत मूषाकुहरे निवेश्य
वह्नौ ततस्तस्य पुटानि सप्त॥ १२२६॥
बीजाह्वपुष्काऽक्षयुगैश्च तत्वः
स्युर्भावना द्वे ककुभात्त्रिवारम्।
यष्टीसिताकेतकजीररम्भा-
खर्जूरिकाजातिदलैः प्रतिस्वम्॥ १२२७॥
एवं हि सिद्धस्य रसस्य वल्लो
मधुप्रयुक्तः सहसा शिशूनाम्।
सन्तापशोषौ बलहीनताञ्च
तृषाञ्च वासासलिलैः प्रमेहान्॥ १२२८॥
निवर्तयेद्वासरसप्तकेन
दुग्धौदनं स्यादिह भोजनाय।
नीरेण सत्तूलनवप्रवाला-
न्निपेष्य तैः शर्करया समेतैः॥ १२२९॥
सर्वप्रमेहानिनिहन्ति दत्तो
दिनत्रयं विंशतिवत्सरस्य।
अभ्रं ससर्पिः ससितं प्रयोज्यं
दिनानि सप्तत्रिगुणानि चाऽत्र॥ १२३०॥
वरामधुभ्यां सहितञ्च यस्य
पश्चाऽधिका वत्सरविंशतिः स्यात्।
हैयङ्गवीनेन गवाञ्च पथ्यं
त्रिःसप्तसङ्ख्यानि दिनानि कार्यम्॥१२३१॥
प्रस्निग्धगोधूमरसेन हन्ति
सर्पिर्दद्रुस्य दिनत्रयेण।
अभ्रं ससर्पिः सगुडञ्च देयं
मधिक्षुदण्डैस्त्रिदिनं विधातुम्॥ १२३२॥
अङ्गानि सम्यग्गिनिदाघसङ्ग-
गतानि रात्रौ स्फुटनं दधीत।
विश्वागुडाभ्यां युतमभ्रमग्नि-
न्द्राक्षादिनीरेण विमिश्रितं सत्॥
दिनत्रयं लङ्घनजं विशीर्णं
विनाशयेद्गोस्तनिकासिताभ्याम्॥ १२३३॥
पथ्यं देयमुमाशम्भुवासुदेवे विनिर्मिते।
पातुं जगन्ति कृपया मेहध्वान्तविवस्वति॥

र.र.स., र.को., र.र.कौ., र.क., र.क.यो., प्रमेहे।

टि०—र. र. कौ. हरगौरीरस इति नाम। र. क. प्रमेहहर इति नाम। र. क. यो. उमामहेश्वरेति नाम, स [illegible], तत [illegible] विशेषता नियोजित [illegible] इति [illegible]। नीरेण [illegible] मेव, प्रमेहहरेण [illegible] वल्लम्यनुचितम्।

भाषा—पारा और अभ्रकभस्म आधा ½ भाग, [illegible] १ भाग, लेकर जंभीरीके रसमें ३ रोज़ मर्दनकर [illegible] शरावसम्पुटमें बन्दकर १० सेर कण्डोंकी आंचदे। ऐसे ७ [illegible]

देकर बीजक(बीवला म) अभावमें असन, मोखा, बहेड़ा, द्राक्ष इनके क्वाथोंकी ४-४ भावनाए देकर कदुएकी छालका काढे कीर, मुलहठी, शक्कर, केवड़ा, जीरा, केलेकाकन्द, खजूरकी ताड़ी, जाविनी इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इन मेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ देनेसे वर्चोकाज्वर, शोप, कृशता और प्यास दूरहोतीहै। अडूसेके रसकेसाथ देनेसे ७ रोजमें प्रमेहोंको नष्टकरताहै इसमें भोजन दूधचावलदेना। बबूलकी नईपत्तियोंके रसमें शक्कर डालकर देनेसे २० वर्षके आदमीके प्रमेहोंको ३ दिनमें नष्टकरताहै। यहापर अन्नको घी और शक्करके-साथ देना, पथ्य २१ दिनतक कराना। २५ वर्षके आदमीको त्रिफला और मधुकेसाथ देना और गायके मक्खनकेसाथ २१ दिन तक पथ्य देना। ३० वर्षके आदमीको गेहूके काढेके-साथ देना यहापर तीनरोज तक घी, गुड, मधु, ईख इनकेसाथ अन्नदेना। एसा न करनेसे अङ्गोंमें दाह होकर सूक्ष्मच्छिद्रोंसे रक्तपि त्तनिकलने लगेगा। एसीहालत होजाय तो इमली और गुड़केसाथ अन्नदेना और द्राक्षा वगैरहका रस पिलाना। द्राक्ष और शक्कर केसाथ ३ रोजतक देनेसे लङ्घनकृत शोपको दूरकरताहै ॥ २७२ ॥

२७३ प्रमेहनाशनोरसः (मेहनाशन)

लोहभस्म रसभस्म ताप्यकं
गन्धकेन सहितं समांशकम्।
धत्तबीजकरसेन भावितं
लेहितं सकलमेहनाशनम् ॥ १२३५ ॥

र प्र सु, प्रमेहे।

भाषा—लोह, पारा, सोनामाखी इनकीभस्मे और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर ४ पहरतक सूखा मर्दनकर इन्द्र जवके रससे १-२ दिन भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानक साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २७३ ॥

२७४ प्रमेहनिकृन्तनोरसः (मेहनिकृन्तन.)

पारदस्य पले द्वे च चत्वारि गन्धकस्य च।
लोहाऽभ्रस्वर्णमाक्षीणां नागं वङ्गं पलोन्मितम्॥१२३६॥
सर्वं तद्वालुकायन्त्रे पचेन्मृद्वग्निना क्षणम्।
ब्राह्मीकुमारीमाण्डूकीभृङ्गराजरसैः सह ॥ १२३७ ॥
पुनरालोड्य यत्नेन पचेद्गोमयवह्निना।
एष सिद्धो रसो ज्ञेयः सर्वान्मेहान्निकृन्तति ॥१२३८॥

र को, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल शुद्ध गन्धक ४ पल, लोह, अभ्रक, सोनामाखी, नाग और वङ्ग इनकीभस्में १-१ पल लेकर बारीक चूर्णकर वालुकायन्त्रमें थोड़ीदेर पकाकर स्वाङ्गशीतल होनेपर ब्राह्मी, घीकुआर, हुरहुर, भंगरा इन प्रत्येकके रसोंमें १-१ रोज मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ७ कपड़मिट्टी देकर २ सेर कण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै ॥ २७४ ॥

२७५ प्रमेहबद्धोरसः

सूतभस्म मृतं कान्तं मुण्डभस्म शिलाजतु।
शुद्धं ताप्यं शिलां व्योषं त्रिफलाऽङ्कोलबीजकम् १२३९
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत्।
त्रिंशद्वारं विशोष्याऽथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥१२४०॥
माषमात्रो हरेन्मेहान्मेहबद्धरसो महान्।
महानिम्बस्य बीजानि पिष्ट्वा षट्सङ्ख्यकानि च १२४१
पलं तण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च।
एकीकृत्य पिबेच्चाऽनु हन्तिमेहं चिरन्तनम् ॥ १२४२ ॥

शा स, र र की, र र स, नि र, वै चि, र क यो, यो त यो म, र का, र प्र सु, र सु, चि र भ, रसा यनस, रसचि, भै सा, ध रा, प्रमेहे।

टि०—र स, र चि, ध, र म, एषु प्रमेहबद्धेति नाम तत्र मुण्ड स्थाने लोह गृहीतम्। भल्लातबीजस्थाने विनिर्दिष्ट क्रमम्। महानिम्ब बीजानि पञ्चिकमितानि गृहीतानि, मानामात्रविशेष। र स, र चि, र क ल, र सु, नि र, वृ यो त, यो त, या र, दो, र को, र र दी, एषु मेहबद्धेति नाम, मुण्डस्थानेऽभ्रं गृहीतम्, भल्लातकस्था नेऽङ्कोठबीजक क्रमम्। कपित्थरजनीचूर्णमित्यस्य स्थाने कार्पासबीज रज नीनिक्षेप, भावनाया भृङ्गस्थाने चित्रकगृहीतमेतावान्विशेष। रसरत्नाकरे मेहबद्धेति नामेदानीं दृश्यते तत्तु छेदकत्वमादायाध्यम्। वैद्यचिन्तामणौ गन्धकमधिकतया प्रक्षिप्य मेहवज्रेति नाम्ना द्वितीयो योग कृतोऽस्ति इतिविशेष। सूतभस्मग भस्मुण्डतीक्ष्णाऽभ्रभस्मशिलाजतुताप्यव्योषत्रिफ लाऽङ्कोल्लबीजबिल्वनीरकपित्थकार्पासबीजरजनीनां समभागान् गृहीत्वा भृङ्गचित्रकभावनया रसम्पादने भवति सर्वेषां समावेशो गुणाऽधिक्यच। अत सर्वे योगा अस्मिन्यागऽन्तर्भावनीया इत्यस्माक सम्मति। माणिक्य चन्द्रजैनीयरसावतारे रसराजसुन्दरस्य तृतीयस्थाने इमबद्धेति नाम तत्र सर्वेभ्योऽधिको रसराजसुन्दरऽज्ञानविलास।

भाषा—पारा, कान्त, मुण्ड, इनकी भस्में शिलाजतु, शुद्ध सोनामाखी, और मैनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, त्रिफला अङ्कोलबीज, कैथ और हल्दी सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर भंगरेके रससे ३० बार भावनाएं देकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ खाकर बकायनके बीज ६ नग चावलके धोवनमें पीसकर उसमें ६ माशे घी डालकर पीनेसे बहुत पुराने प्रमेह नष्ट होतेहैं। मूलमें इसकी मात्रा निष्कमात्र कीथी यह आजकलके जमानेमें सहन नहीं होसकी इसलिये माषमात्र यह पाठ कर दिया है ॥ २७५ ॥

२७६ प्रमेहभैरवोरसः (मेहभैरव)

रसं गन्धं विषं लोहं जातीपत्रञ्च तत्फलम्।
अब्धिशोषाऽहिफेनञ्च पारसीकञ्च चित्रकम् ॥१२४३॥
देवपुष्पं समं सर्वं सर्वैस्तुल्यं मृताऽभ्रकम्।
भावयेत्सप्तधा सर्वं चित्रमूलकषायकैः ॥ १२४४ ॥

यथासात्म्येन संयोज्यं सर्वमेहापनुत्तये।
अर्शांसि ग्रहणीं शोथं पाण्डुं शुक्रक्षयं नृणाम्॥
यथाऽनुपानतो हन्ति सिद्धः श्रीमेहभैरवः॥ १२४५॥

र सु, टो, र र दी, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, लोहभस्म, जावित्री, जायफल, समुद्रशोष, शुद्ध अफीम और खुरासानी अजवाइन, चित्रकमूल, लौंग ये सब समभाग इन सबकी बराबर अभ्रकभस्म डालकर सबका बारीक चूर्णकर चित्रकी जड़के काढेसे भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे समस्त प्रमेह, अर्श, संग्रहणी, शोथ, पाण्डु, शुक्रक्षय इनको यह अपने अपने अनुपानसे दूर करताहै॥ २७६॥

२७७ प्रमेहमर्दनोरसः (मेहमर्दनः)

शुद्धसीसोद्भवं भस्म निर्व्यूढं व्योम्नि सप्तधा।
ततो विचूर्ण्य तन्मध्ये कान्तभस्म समं क्षिपेत्॥१२४६
गोमूत्रकशिलाधातुद्रवेण परिमर्दयेत्।
शोषयित्वा विमर्द्याऽथ क्षिपेन्नागकरण्डके॥१२४७॥
मेहमर्दननामाऽयं दिष्टो भालुकिना खलु।
गुञ्जाद्वयमितो देयो निम्बाऽऽमलकसंयुतः॥ १२४८॥
निहन्ति सकलान्मेहान् सर्वोपद्रवसंयुतान्।
तत्तद्रोगहरैर्द्रव्यैः सर्वरोगनिवर्हणः॥
रोगाऽनुरूपं दातव्य पथ्यमन्न यथोचितम्॥ १२४९॥

र र स, र सु, र को, र क. ल, र र कौ, प्रमेहे। रस रत्नकौमुद्या "व्योम्नि सप्तधा" इत्यस्य स्थाने "हेम्नि सप्तधा" इति पाठ।

भाषा—शुद्ध नागभस्मको मित्रपञ्चकके साथ मिलाकर अभ्रकसत्वमें डालकर धोंके। इसतरह इसे ७ बार करनेसे यह भस्मरूपमें होजायगा। इसमें कान्तलोहभस्म बराबरकी डालकर समस्तसे पोडशांश शुद्ध मैनसिलको गोमूत्रमें मिलाकर उससे ३-४ पहर मर्दनकर सुखाकर सीसेकी डिब्बीमें रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्ती बकायन और आवलेके चूर्णकेसाथ देनेसे समस्त उपद्रवयुक्त असाध्य प्रमेह नष्टहोतेहैं। तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे अन्य समस्तरोगोंको दूरकरताहै। इसमें पथ्य रोगाऽनुकूल देना॥ २७७॥

२७८ प्रमेहमुद्गरोरसः (मेहमुद्गरः)

रसाञ्जनं विडं दारु विल्वं गोक्षुरदाडिमम्।
भूनिम्बपिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत्॥१२५०॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लोहचूर्णन्तु तत्समम्।
पलैकं गुग्गुलु दत्त्वा घृतेन वटिकां कुरु॥ १२५१॥
माषैका निर्मिता चेयं मेहमुद्गरसञ्ज्ञिका।
श्रीमद्गहननाथेन लोकनिस्तारकारिणा॥ १२५२॥
अनुपानं प्रकर्तव्यं छागीदुग्धं जलञ्च वा।
मेहानां विंशतिं हन्यान्मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम्॥१२५३॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम्
अर्शांसि व्रणकुष्ठञ्च वातरक्तं भगन्दरम्॥ १२५४॥

र स, र सु, र.च, र चि, भै.र, र र, प्रमेहे।

भाषा—रसौत, विड (जो कि बीजोंके जारणमें काम आतेहै), विडनमक, देवदारु, बेलगिरी, गोखरू, अनारके छिलके, चिरायता, पिपलामूल, त्रिकटु, त्रिफला और निसोत येसब १-१ तोला, लोहभस्म सबकी बराबर, शुद्ध गुगल १ पल लेकर सबका कपडछान चूर्णकर ३-४ पहर गोघृत देकर कुटेहुए गुगलमें धीरे २ मिलावे। थोड़ा २ घृत डालता जाय। जब एकजीव होजाय तब १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली बकरीके दूध अथवा जलके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथरी, कामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अरुचि, बवासीर, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त और भगन्दर इनसबको यह नष्ट करताहै॥ २७८॥

२७९ प्रमेहमृगाङ्को रसः (मेहमृगाङ्कः)

पारदो गन्धकं वङ्गं मृगनाभिश्च हिङ्गुलम्।
धान्यकं कुङ्कुमं चैव धात्री चैवेलवालुकम्॥ १२५५॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्ता कर्पूरश्च समंसमम्।
श्रीगन्धवारिणा चापि मर्दयेद्यामयुग्मकम्॥ १२५६॥
रक्तमूत्रविकारांश्च हन्ति मेहकुलानि च।
शर्कराज्याऽनुपानेन महादाहञ्च नाशयेत्॥
ख्यातो मेहमृगाङ्कोऽयं काश्यपेन विनिर्मितः॥१२५७॥

वै चि, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वङ्गभस्म, कस्तूरी, हिङ्गुलभस्म, धनिया, केसर, आवला, गेंहुला, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, कपूर येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर सफेद चन्दनके काढेसे २ पहर मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और घीके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और महादाह मिटतेहैं॥ २७९॥

२८० प्रमेहरसायनम् (मेहरसायनम्)

रजतश्चैकभागः स्याद्गन्धकश्च द्विभागिकः।
वङ्गभस्म त्रयो भागाश्चत्वारो नागभस्मनः॥१२५८॥
पञ्चभागो भवेत्सूतो हिङ्गुलो रसभागिकः।
खल्वे निधाय कदलीस्वरसेन विमर्दयेत्॥ १२५९॥
दिनत्रयञ्च खर्जूरीकषायेण विमर्दयेत्।
माषोन्मितां भस्ममात्रां युञ्ज्याद्युक्ताऽनुपानतः॥१२६०
पाददाह हस्तदाह गुल्मं लालाप्रमेहकम्।
बहुमूत्रं मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं पित्तसम्भवम्॥ १२६१॥
श्वास कासं पीनसञ्च पाण्डुं यक्ष्माणमेव च।
अतीसारं वीर्यहानिं धातांश्च विविधाञ्जयेत्॥१२६२॥
शूलमष्टविधं हन्ति सर्वज्वरहरं परम्।

सर्वाङ्गसौन्दर्यकरं सर्व मेहघ्नमुत्तमम् ॥
इदं रसायनवरं सर्वरोगनिबर्हणम् ॥ १२६३ ॥

रसायनस , प्रमेहे ।

भाषा—रजतभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा , वङ्गभस्म ३ भा , नागभस्म ४ भा , पारदभस्म ५ भाग, हिङ्गुलभस्म ६ भाग, लेकर सबको बारीक पीसकर २ पहर सूखा मर्दनकर केला और खजूरके स्वरस अथवा काढेसे ३–३ रोज मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे हस्तपाददाह, गुल्म, लालाप्रमेह और बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, पित्तप्रमेह, श्वास, कास, पीनस, पाण्डु, राजयक्ष्म, अतीसार, वीर्यहानि, नानाप्रकारके वायु, आठ प्रकारका शूल, समस्तज्वर ये सब दूरहोतेहै ॥ २८० ॥

२८१ प्रमेहशत्रुरसः

कान्ताऽभ्रमण्डूरहरीतकीनां
विचूर्णितानां क्रमशः शरांशम्।
रसांशभूतांशमथो शरांशं
द्वात्रिंशदष्टोत्तरमुत्तमायाः ॥ १२६४ ॥
श्लक्ष्णं मृदित्वा गुटिकां विधाय
तक्रेण पीतं तलपोटकस्य।
बीजञ्च तेषां द्विगुणं प्रकल्प्य
मेहामयानाशु जयेत्प्रमेही ॥ १२६५ ॥

र र स , र र. को , प्रमेहे।

भाषा—कान्तलोहभस्म ५ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, मण्डूरभस्म और हर्र ५–५ भाग, त्रिफला ४० भाग, लेकर बारीक चूर्णकर पानीसे ३–४ पहर मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली ४ माश तुवरकके बीजोंको छाछमें पीसकर इसके साथ लेनेसे सबप्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २८१ ॥

२८२ प्रमेहसेतुरसः

एकः सूतो द्विधा वङ्गो द्वाभ्यां द्विगुणगन्धकः।
कूपीपक्वो महासेतु वङ्गस्थानेऽथवा विधुः ॥१२६६॥

र चि , रसायनस , र को , र च , र का , प्रमेहे। र का , रसायनस , र को , एषु महासेतुरिति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, वङ्गभस्म २ भा , शुद्धगन्धक ६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर गन्धक जारण तक वालुकायन्त्रमें पकाकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालले । यहापर वङ्गकीजगह चादीका विकल्पहै चाहे वङ्ग डाले चाहे चादी डाले इसमें आच अधिक नहीं देना । क्योंकि वङ्ग अथवा चादीका जो योगहै वह केवल संस्कारार्थ नहींहै किन्तु सहयोगार्थहै। अधिक आचदेनेसे पारा ऊपर चला जायगा और गन्धक जल जायगा इसलिये गन्धक जारण तकही आचदेना। अथवा गन्धक की द्रुतिहोकर कुछ दिखा गन्धक का जलने लगे उससमय आच बन्दकरदेना । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल लेना। यह पाक प्राय दोपहरमें होजायगा इसमें गन्धक भी शामिल रहेगा ॥ २८२ ॥

२८३ प्रमेहसिन्धुतारकोरसः

निष्काऽष्टादशकस्सूतो गन्धकस्य च विंशतिः।
तालसत्त्वाच्च दश द्वौ तद्वत्सोममलस्य च ॥१२६७॥
वङ्गस्य षट् षड्रसकात्सीसकादथ चाऽभ्रकात्।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य पुटेद्गजपुटेन च ॥ १२६८ ॥
निरुध्यौ द्वादश तथा द्वात्रिंशत्प्रहरं पुन ।
वह्निस्त्रिधाऽर्कक्षीरेण भावयित्वा पुन.पुन. ॥१२६९॥
एवं पुटैस्त्रिभि. सिद्धः कपोतग्रीवसन्निभः।
मेहरोगहरोऽयं स्याद्रसो मेहाऽब्धितारक. ॥१२७०॥

र का , प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४॥ कर्ष , शुद्धगन्धक ५कर्ष, हरितालसत्त्व और सोमल ३–३ कर्ष, शुद्ध वङ्ग, खर्पर, सीसा और धान्याऽभ्रक डेढ २ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर ३–४ दिन आकके दूधमें मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटमें १ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर ८ पहरकी आचदे। तीसरी बार १२ पहरकी, चौथीबार ३२ पहरकी आचदे । इसके बाद आकके दूधमें ३ भावनाए देकर गोलाबनाय पूर्ववत् ३–८ और १२ पहरकी तीन आचेंदे । येसब मिलकर सात आचें हुईं, यह कबूतरकी गर्दनके रङ्गका रस सिद्धहोगा । इस जगह कपोतग्रीव सन्निभ रसकामधेनुवालेने लिखाहै पर इसका रग लालहोगा । जिस धातुको आकके दूधकी अधिक भावनाए दीजातीहैं उसका रङ्ग प्राय करके लाल हुआकरताहै। इसरसकी १ अथवा २ रत्ती बलाबल देखकर मलाई वगैरहके साथ देनेसे यह असाध्य प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ प्रमेहहरो रसः (प्रथमः)

वीर्यं पुरारे र्वैलिमभ्रसञ्ज्ञं
जम्बीरनीरेण विमर्द्य भस्म ।
रसाऽर्धभागेन ददीत तुल्यं
सर्वं ततो गोपयसा विमर्द्य ॥ १२७१ ॥
खर्जूरमत्स्यण्डिकहंसपादी-
द्रावेण सत्त्वेन गुडूचिकायाः।
मांसीशिवामर्कटरुप्यदन्ती
बीजैस्तदीयैः सलिले विभाव्य ॥ १२७२ ॥
ततो रसः सिद्ध्यति वल्लमस्य
शुक्रप्रमेहे सति शाल्मलीनाम्।
मूलाऽम्बुना वा कुसुमाऽम्बुना वा
दद्यात्पयोभक्तकमत्र योज्यम् ॥
क्षौद्रेण दुर्नाम्नि तथाऽश्मरीषु
गवां पयोभि र्निखिलप्रमेहे ॥ १२७३ ॥

र र. स , र को , प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, धान्याऽभ्रक तीनों सम-भाग लेकर जंभीरीके रसमें मर्दनकर टिकियाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । ऐसे पारा और गन्धक बारबार देता जाय । जब सिन्दूरभस्म होजाय तब इसभस्मसे आधी ताम्रभस्म मिलाकर गोखुरू, खजूरकी दाढ़ी, रास, हंसराज, गुडूचीसत्त्व, जटामासी, हर्रे, कैवांच, जमालगोटा, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली सेमलकी जड़ अथवा फूलके रसके साथ देनेसे शुक्रप्रमेह नष्टहोताहै । गायके दूधके साथ देनेसे तमाम प्रमेह नष्ट होतेहैं । बहुमीर और पथरीमें मधुके साथ देना । इसके प्रयोगमें दूधभातके सिवाय और कुछ नहीं देना ॥ २८४ ॥

२८५ प्रमेहहरोरसः (मेहहरः) (द्वितीयः)

गन्धेन सूतं द्विगुणं प्रगृह्य
विमर्दयेत्तोऽम्बुरुहोर्स्युक्तम् ।
शुष्कञ्च कृत्वाऽथ सुतप्तताम्र-
चक्रञ्च तस्योपरि विन्यसेच्च ॥ १२७४ ॥
चक्रे विलग्नञ्च ततः प्रगृह्य
मूषोदरे ध्मापय टङ्कणेन ।
हेम्नः सुतारस्य रसेन पिष्टिं
ताम्रस्य चाऽस्मिन् सततं क्षिपेच्च ॥१२७५॥
संसेवयेत्तन्नयुतञ्च पलं
त्रिसप्तकान्मेहविमुक्तये तत् ।
नानाप्रमेहा विलयं प्रयान्ति
पथ्याशिनः क्षारादिविवर्जितस्य ॥ १२७६ ॥

र.दी., र.चि , र मु , र.का.र.को, प्रमेहे। र को इरगौर इति नाम । र. दी.हेमतारसः ।

टि०—नम्बरचुरुस्थनानपुन्नकेवलिनि साद्देकोरसुटिलोऽस्ति स इत्यस्लिनिरसदीपिकायामस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भा , शुद्ध पारा २ भाग लेकर गोखरूके रससे मर्दनकरे । जब पारेकी चमक मिटजाय तब इसकी टिकिया बनाकर सुखाले । इस टिकियाको मिट्टीके बर्तनमें रखकर टिकियाकी बराबर शुद्धतांबेकी टिकिया बनाकर अग्निमें डालकरके पारेगन्धककी टिकियापर रखदेवे । इसमेंसे गन्धक जलजायगा और पारा तांबेकी टिकियापर लगजायगा । इस चक्रिकाको मूषामें रख सुहागा डालकर धमनकरे तो इसका खोट तैयार होगा । इस खोटमें सुवर्ण तथा तारपिष्टीको खोटकी बराबर डालकर टङ्कणके योगसे धमनकरे । जब इसकी भस्म होजाय तब निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती छाछके साथ सेवन करनेसे २१ रोजमें नानाप्रकारके प्रमेहनष्टहोंगे। इसके प्रयोगमें क्षारादिगण और प्रमेहवर्धक चीजें वर्जितहै॥२८५॥

२८६ प्रमेहहरोरस (मेहहरः) (तृतीयः)

रसस्य कर्षमादाय खल्वे निःक्षिप्य बुद्धिमान् ।
रक्ताऽगस्त्यप्रसूनानां स्वरसेन विमर्दयेत् ॥ १२७७ ॥
सप्तरात्रं तथा साधु श्वेतदूर्वारसेन च ।
निष्कद्वयं टङ्कणकं दत्त्वा खदिरसारतः ॥ १२७८ ॥
कर्पूरं रसतुल्यञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
यावच्चिक्कणतां याति युक्त्या चन्दनवारिणा ॥१२७९॥
हरेणुमात्रान्वटकांश्छायायां परिशोषयेत् ।
प्रातर्निशायां मध्याह्ने सेवनीयः प्रयत्नतः ॥ १२८० ॥
अयं मेहहरः प्रोक्तस्तथा शोषहरः परः ।
रसो मेहहरः सर्वपिडिकानाशनः परः ॥ १२८१ ॥

र क , प्रमेह ।

भाषा—एकतोला शुद्ध पारा लेकर लाल अगस्त्यके रससे ७ रोज़ मर्दनकर सफेद दूबके रससे ७ रोज़ मर्दनकर सुखावे । फिर इसमें सुहागा और खैरसार ८-८ माशे, शुद्ध कपूर १ तोला डालकर मर्दन करे । जब एकदम बारीक हो जाय तब सफेदचन्दनके काढ़ेमे मटर बराबर गोलियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानके साथ रोज़ाना तीनों समय देनेसे पिडिका सहित समस्तप्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २८६ ॥

२८७ प्रमेहहरोरसः (मेहसूदनः) (चतुर्थः)

समांशकौ सूतबली विमृद्य
ताभ्याञ्च लोहात्रितयं समानम् ।
श्वदंष्ट्रया मर्द्य च भूधराख्ये
दत्त्वा पुटं मेहहरो रसः स्यात् ॥ १२८२ ॥
वल्लैकमात्रञ्च सितामधुभ्यां
धात्रीरसक्षौद्रयुतं प्रयुक्तम् ।
वरामधुभ्यामपि मेहयोगै-
र्विनाशयत्येव समस्तमेहान् ॥ १२८३ ॥

रसायनस , प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, सोना, चांदी और लोहभस्म २-२ तोले लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर गोखरूके रससे मर्दनकर गोला बनाय भूधर पुटमें आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती शक्कर, मधु, अथवा आंवलेका रस और मधु अथवा त्रिफला और मधु अथवा अन्य प्रमेहनाशक अनुपानोंके साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥२८७॥

२८८ प्रमेहहरोरसः (मेहहरः) (पञ्चमः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तारभस्म च हाटकम् ।
हंसपादीरसेनैव समभागञ्च खल्वके ॥ १२८४ ॥
दिनैकं मर्दयेद्गोलं काचकूप्यां निवेशयेत् ।
वालुकायन्त्रके चैव द्वियामं परिपाचयेत् ॥ १२८५ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
पश्चाद्वै निम्बतुल्यानां कषायमनुपाययेत् ॥
हन्ति हारिद्रकं मेहं सर्वमेहकुलान्तकः ॥ १२८६ ॥

र रा , प्रमेहे ।

भाषा—पारा, तांबा, चांदी और सुवर्ण इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रससे १ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय काचकी शीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा नीमके सदश तिक्तवृक्षोंके पञ्चाङ्गके काढेके साथ देनेसे यह हारिद्रक प्रमेहको नष्ट करताहै। साधारणतया प्रमेहहर योगोंके साथ देनेसे साधारण प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥२८८॥

२८९ प्रमेहहरोरसः (षष्ठः)

रससौम्यशिलाताम्रं मर्दयेद्दिवसयामकम्।
कुमार्या च कदल्या च छिक्काकूष्माण्डजैः रसैः ॥१२८७॥
तद्रसैरेव संस्वेद्य मर्दयेद्रजनीद्रवैः।
पुटेद्गजपुटेऽश्वत्थपलाशोदुम्बरेन्धनैः ॥
चिञ्चाक्षारान्तरेऽयं तु रसो मेहहरो भवेत् ॥१२८८॥

र का., प्रमेहे।

भाषा—पारा, चांदी, तांबा इनकी भस्में, शुद्ध मैनसिल सब समभाग लेकर घीकुंआर, केलेका कन्द, नकछिकनी, सफेद कोंहडा इनके रसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोला बनाय ४ पहरतक इन्हींके रसमें स्वेदनकर इमलीके क्षारमें बन्दकर गज पुटमें पीपल, पलाश अथवा गूलर इनकी लकड़ियोंकी आंचदे। ऐसे प्रत्येक भावनामें अलग २ मर्दन, स्वेदन और पुट देता जाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती प्रमेहहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २८९ ॥

२९० प्रमेहहरोरसः (सप्तमः)

राजावर्तस्य रत्नस्य भस्म गन्धकसाधितम्।
तुल्यञ्च भस्मना तेन घनसत्त्वञ्च काञ्चनम् ॥ १२८९ ॥
मर्दयेत्तुल्यसूतञ्च तत्तन्मारणकैर्द्रवैः।
सत्त्वतुल्येन सूतेन तावता गन्धकेन च ॥ १२९० ॥
कज्जल्या कृतया सार्धं पूर्वभस्मानि मेलयेत्।
त्रिदिनं मर्दयित्वा तु मूषायां विनिरुध्य च ॥१२९१॥
पश्चाढकमितैः शालितुषैश्च पुटमाचरेत्।
स्वतःशीतं समाहृत्य भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १२९२ ॥
आकुलीमूलबब्बूलबीजगुञ्जाजटोद्भवैः।
कषायैरष्टवारान्हि तच्चूर्णं विधाय च ॥ १२९३ ॥
विनिःक्षिपेत्करण्डान्ते यत्नेन स्थापयेत्तत।
तत्तन्मेहहरैर्द्रव्यैः संयुक्तो रसराडयम् ॥ १२९४ ॥
निहन्ति सकलान्मेहान् दुरात्मानं विवर्जयेत्।
अयं हि सर्वमेहघ्नो भेषजेषु प्रशस्यते ॥ १२९५ ॥
देयो धर्मवतामेषं मानवानां विशेषतः।
रसोऽयं नन्दिनाऽऽदिष्टः प्रकृष्टो मेहनाशनः ॥१२९६॥

र. को., र. र. स, मेहाऽधिकारे।

भाषा—गन्धकयोगसे सिद्धकी हुई राजवर्तकी भस्म, अभ्रकसत्त्व, सुवर्णभस्म और शुद्ध पारा सब समभाग लेकर सबको इकट्ठा मर्दनकर यथालाभ मारकवर्गोंके स्वरससे मर्दनकरे फिर अभ्रकसत्त्वकी बराबर शुद्ध पारा और गन्धककी नीलवर्ण कज्जली मिलाकर मारकद्रव्योंके स्वरससे ३ रोज़ मर्दनकर मूषामें बन्दकर ५ सेर धानके छिलकोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अङ्कोलमूल, बब्बूलबीज, सफेद गुञ्जाकीजड़ इन प्रत्येकके क्वाथोंसे ८-८ बार भावना देकर सुखाकर वस्त्रमें छानकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मेहहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै। इसे दुरात्माको नहीं देना ॥ २९० ॥

२९१ प्रमेहहरोरसः

वङ्गस्य भस्म भागैकं कर्पूरो भाग एव च।
द्वौ भागौ जातिपत्र्याश्च द्विभागं करहाटकम् ॥१२९७॥
विदार्याश्चतुरो भागा धात्रीतालीसकास्समाः।
षड्भागा सिकता प्रोक्ता सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
गोदुग्धाद्यनुपानेन सर्वमेहहरो भवेत् ॥ १२९८ ॥

र यो, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्धकपूर १-१ भाग, जावित्री, अकरकरा २-२ भाग, विदारीकन्द, आंवले और तालीसपत्र ४-४ भाग, शक्कर ६ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर रखछोड़े इसमेंसे ३-३ माशे गोदुग्ध वगैरहके साथ लेनेसे समस्तप्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २९१ ॥

२९२ प्रमेहान्तकोरसः (लघु) (प्रथमः)

हाटकञ्चैकभागञ्च रजतञ्च द्विभागिकम्।
वङ्गभस्म त्रिभागं स्यान्नागभस्म चतुर्गुणम् ॥ १२९९
रसभस्म बाणभागं षड्भागं हिङ्गुलं तथा।
सर्वं खर्जूरतोयेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ १३००
मेहान्तको रसो नाम्ना सर्वमेहनिवारणः।
सिताक्षौद्रयुतं दद्यान्मात्रां वल्लमितां भिषक् ॥१३०१॥

रसायनस, प्रमेहे।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भाग, वङ्ग ३ भाग, नाग ४ भाग, पारा ५ भाग, हिङ्गुल ६ भाग इन सबकी भस्में लेकर सबको एकजगह मर्दनकर खजूरकी ताड़ीसे ३ रोज़ मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और मधुके साथ मिलाकर चटानेसे यह सब प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २९२ ॥

२९३ प्रमेहान्तकोरसः (महान्) (द्वितीयः)

स्वर्णं रौप्यञ्च गगनं रसभस्म तथैव च।
कान्तलोहं ताम्रभस्म नागं विद्रुममौक्तिकम् ॥१३०२॥
शङ्खभस्म च सर्वेषां चैकैको भाग ईरितः।
वङ्गस्य रसभागाः स्युः बलिश्च रसभागिकः ॥१३०३॥
कान्तभस्म चतुर्भागं सम्यक् शुद्धं समाहरेत्।
भाव्यञ्च त्रिफलाक्वाथैश्चित्रमूलरसेन च ॥ १३०४ ॥

चन्दनस्य कषायेण वाजिदन्तरसेन च ।
मर्दयेत्सप्तदिवसान्मात्रावल्लद्वयोन्मिता ॥ १३०५ ॥
बहुमूत्रं चेक्षुमेहं लालामेहं क्षयन्तथा ।
पाण्डुरोगं श्वासकासौ तिमिरं वातजं हरेत् ॥१३०६॥
हस्तदाहं पाददाहं नष्टवीर्यत्वमेव च ।
वन्ध्या स्त्री पुत्रसम्पन्ना भवेदेव न संशयः ॥
महामेहाऽन्तको नाम रसो लब्धो महागुरोः ॥१३०७॥

रसायनस , प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, ताम्र, नाग, विद्रुम, मोती, शङ्ख इन सबकी भस्में १-१ भाग, वङ्ग-भस्म और गन्धक ६-६ भाग, कान्तभस्म ४ भाग, लेकर सबको बारीक पीस त्रिफला, चित्रकमूल, सफेदचन्दन, बडी दन्ती इनसबके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे बहुमूत्र, इक्षुमेह, लालामेह, क्षय, पाण्डुरोग, श्वास, कास, वाततिमिर, हाथपैरका दाह, नष्टशुक्रता, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसरसको वन्ध्या खाय तो पुत्रवती होय ॥ २९३ ॥

२९४ प्रमेहान्तकोरसः (तृतीयः)

स्वर्णञ्च ताराऽभ्रसूतमभ्रं
मण्डूरतीक्ष्णं रविनागभस्म ।
प्रवालवैक्रान्तकमौक्तिकानि
कान्तं वलिं वङ्गमथ द्विभागम् ॥ १३०८ ॥
खल्वे विनिक्षिप्य सुमर्दितं तत्
फलत्रयेणाऽथ दिनत्रयञ्च ।
तद्गोलकीकृत्य पुटं प्रदाय
पुनर्विमर्द्याऽथ सुगाढमेतत् ॥ १३०९ ॥
तद्द्रव्यजाताच्च चतुर्थभागं
शिलोद्भवं सूतवियं तदर्द्धम् ।
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमञ्च
कस्तूरिका निष्कमितं पृथक् पृथक् ॥१३१०॥
सपिप्पलीकं मधुनाऽवलीढं
कोलप्रमाणं पयसाऽथवाऽद्यात् ।
घृताक्तया शर्करया युतं वा
युक्ताऽनुपानै र्विनिहन्ति रोगान् ॥ १३११ ॥
प्रमेहधातुक्षयधातुजान्मदा-
न्मूत्रस्य कृच्छ्राणि विवृद्धदाहम् ।
श्वासञ्च कासं विनिहन्ति पूर्ण
जीर्णज्वराऽरोचकगुल्मरोगान् ॥ १३१२ ॥
वन्ध्या च सम्यग् भजते च गर्भ
नष्टेन्द्रिये वीर्यविवर्धनं स्यात् ।
मेहान्तको नाम रसोत्तमः स्या-
च्छुद्धे च काये विनियोजनीयः ॥ १३१३ ॥

वै. चि. (ल), प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म, शुद्ध वछनाग, पारा, अभ्रक, मण्डूर, फोलाद, तावा, नाग, प्रवाल, वैक्रान्त, मोती, कान्तलोह और वङ्ग इनकीभस्में शुद्धगन्धक २-२ भाग लेकर १-२ पहर इकट्ठे मर्दनकर त्रिफलाके क्वाथसे ३ रोज़ घोटकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २० सेर कण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर त्रिफलाके काढ़ेसे ३ रोज मर्दनकर आधेमन कण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर तोलकर चतुर्थांश शुद्ध मैनसिल और मैनसिलसे आधी पारदभस्म और शुद्धवछनाग, तथा लौंग जायफल, केसर, कस्तूरी, येसब ४-४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पूर्वचूर्णमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और पीपल केसाथ अथवा दूधकेसाथ अथवा घी, शक्करके साथ अथवा तत्तद्रोगहराऽनुपानोंके साथ देनेसे प्रमेह, धातुक्षय, धातुगतरोग, मूत्रकृच्छ्र, बढीहुई जलन, श्वास, कास, जीर्णज्वर, अरोचक, गुल्म, वन्ध्यत्व, नष्टेन्द्रियत्व इन सबको यह नष्टकरताहै । इसका प्रयोग करते समय वमन विरेचनादिकसे रोगीको शुद्धकरलेना ॥ २९४ ॥

२९५ प्रमेहान्तकोरसः (चतुर्थः)

वङ्गं नागं चाऽभ्रकञ्च लोहं कान्तञ्च पारदम् ।
ताम्रञ्च तीक्ष्णदरदं गन्धकं टङ्कणन्तथा ॥ १३१४ ॥
रसकञ्च समांशानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
हंसपादीरसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ १३१५ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य बालुकायन्त्रमध्यगम् ।
यामद्वयेन सम्पक्व स्वाङ्गशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३१६ ॥
कर्पूरं कुङ्कुमञ्चैव चातुर्जातञ्च चन्दनम् ।
जातीफलं जातिपत्रं चूर्णांशं सकलं क्षिपेत् ॥१३१७॥
विल्वीपत्ररसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ।
पुनस्तु गोलकं कृत्वा छायाशुष्कं सुपेषयेत् ॥१३१८॥
शर्करानवनीताभ्यां हन्ति मेहांश्चिरोत्थितान् ।
मेहान्तकरसो नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ १३१९ ॥

वै चि., (ल), मेहे ।

भाषा—वङ्ग, नाग, अभ्रक, लोह, कान्तलोह, पारा, ताम्र, फोलाद इनसबकीभस्में, शुद्ध शिंगरिफ, गन्धक और सुहागा, खर्परभस्म येसब १-१ तोले लेकर हंसराजके रससे ३ रोज मर्दनकर सुखाकर काचकी शीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें दोपहर पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पीसकर शुद्धकपूर, केसर, तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, सफेदचन्दन, जायफल, जावित्री सब डेढ १॥ तोले लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वोक्तरसमें मिलाकर कुदुरूक पत्रस्वरससे ३ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मक्खन और मिश्रीकेसाथ देनेसे बहुतदिनके प्रमेहोंको यह नष्ट करताहै । और तत्तद्रोगहराऽनुपानोंकेसाथ देनेसे सभीरोगोंको दूरकरताहै ॥ २९५ ॥

२९६ प्रमेहान्तकोरसः (पञ्चमः)

रसभस्मत्रयो भागाश्चतुर्थांशन्तु हाटकम् ।
रौप्यं तीक्ष्णं ताम्रकञ्च नागं वैक्रान्तमभ्रकम् ॥१३२०॥
शिलागन्धकचूर्णञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ।
सुमुहूर्ते क्षिपेत्खल्वे त्रिफलाद्रवमर्दितम् ॥ १३२१ ॥
मोदकांश्छायया शुष्कांस्त्रिःपुटेत्स्वाङ्गशीतलम् ।
उशीरचन्दनरसे चतस्रो भावनास्तथा ॥ १३२२ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन शर्करामधुसंयुतम् ।
मधुमेहं चेक्षुमेहं दाहतापौ च नाशयेत् ॥ १३२३ ॥
उदकं शुक्रमेहञ्च लालासन्तुविनाशनम् ।
क्षयमेहं वातभेदं कासश्वासान्निहन्ति च ॥ १३२४ ॥
अङ्गदाहं शिरोदाहं नानारोगान्निवारयेत् ।
वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्यः प्रसन्नताम् ॥१३२५॥
बलपुष्टिकरं ह्येतद् भक्षणादमृतं भवेत् ।
मेहान्तकरसो नाम्ना मूत्ररोगनिवारणः ॥ १३२६ ॥

वै चि, प्रमेहे ।

भाषा—पारदभस्म ३ भा, सुवर्णभस्म १ भा, चांदी, फोलाद, तांबा, सीसा, वैक्रान्त, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्ध मैनसिल और गन्धक ३–३ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अच्छे मुहूर्तमें त्रिफलाके काढेसे १–१ रोज मर्दनकर बेर बराबर गोलिया बनाकर छायामें सुखाय शरावसम्पुटमें धरकर ५ सेर कण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर १ रोज त्रिफलाके काढेमें मर्दनकर आंचदे । इसप्रकार ३ आंचें देकर खस और सफेद चन्दनके काढेकी २–२ भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मधुके साथदेनेसे मधुमेह, इक्षुमेह, दाह,ताप,उदकमेह, शुक्रमेह, लालामेह, तन्तुमेह, क्षयजन्यमेह, वातमेह, कास, श्वास, अङ्गदाह, शिरोदाह, इनरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसके सेवनसे वन्ध्या पुत्रको प्राप्त होतीहै । नष्टवीर्य प्रसन्नताको प्राप्त होताहै बल और पुष्टिको करताहै ॥ २९६ ॥

२९७ प्रमेहान्तकोरसः (षष्ठः)

स्वर्णञ्च तारं मृतमभ्रसूतं
कान्तञ्च तीक्ष्णं रविनागभस्म ।
प्रवालमुक्ताभसितेन युक्तं
प्रत्येकमेतच्च चतुःप्रमाणम् ॥ १३२७ ॥
वैक्रान्तभस्म त्रपुगन्धकौ च
तथैकभागेन नियोजयेत ।
मुहूर्तमात्रं विनिपिष्य यत्ना-
त्पलत्रयं वा रविचूर्णयुक्तम् ॥ १३२८ ॥
लामज्जकैश्चन्दनवालकाभ्यां
वसन्तदूत्या कमलस्य कन्दैः ।
विभाव्य सम्यक् स्वरसैश्च सप्त
सर्वैः समा चाऽत्र सिता प्रयोज्या ॥१३२९॥
माषैकमानेन निषेवणीयः
सितामधुभ्यां कणया समेतः ।
मुहुःप्रयुक्तः करपाददाहं
लालेक्षुमेहं बहुमूत्रजातम् ॥ १३३० ॥
निहन्ति शीघ्रं क्षयमेहपाण्डून्
श्वासञ्च कासं तिमिरं निहन्ति ।
अर्शांसि कुष्ठं ह्युदरं दरञ्च
काकादिवन्ध्या लभते च गर्भम् ॥
नष्टेन्द्रियो वीर्यभरश्च शीघ्रं
मेहान्तको नाम रसोत्तमोऽयम् ॥ १३३१ ॥

र. क यो, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, फोलाद, तांबा, सीसा, प्रवाल, मोती इनकी भस्में प्रत्येक ४ तोले, वैक्रान्त और वङ्गभस्म, शुद्ध गन्धक १–१ तोला लेकर सबका बारीक चूर्णकर ३ पल आककी जडकी छालका चूर्ण मिलावे। फिर पतलीखस, चन्दन, सुगन्धवाला, पाढर, कमलकन्द इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्काथोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा शक्कर, मधु और पीपलके साथ सेवन करनेसे हाथपैरोंकी जलन, लालामेह, इक्षुमेह, बहुमूत्र, क्षयप्रमेह, पाण्डु, श्वास, कास, तिमिर, बवासीर, उदररोग, प्रदर, काकवन्ध्यादि दोष, नष्टेन्द्रियत्व और मूर्च्छादिरोग इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ २९७ ॥

२९८ प्रमेहारिरसः (प्रथमः)

सूतस्ताम्रमयोऽभ्रकञ्च कुटिलं सर्वं समांशीकृतं,
तच्छ्रेष्ठाजलदद्रवेण दिवसं सम्मर्दयेद्यत्नतः ।
सक्षौद्रो जयति प्रसह्य सितया वा मेहवृन्दं महा,-
मूत्राघातमपि प्ररूढगुदजान् वल्लोन्मितो मेहहा॥१३३२॥

र, र था. प्रमेहे। रसपारिजाते प्रमेहप्रभञ्जनेति नाम।

भाषा—पारा, तांबा, लोहा, अभ्रक, हीरा इनकीभस्में बराबर लेकर बारीक चूर्णकर त्रिफला और नागरमोथेके काढेमें १–१ रोज भावना देकर सुखाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु अथवा शक्करके साथ सेवन करनेसे प्रमेह, मूत्राऽऽघात, बवासीर इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ २९८ ॥

२९९ प्रमेहारिरसः (द्वितीय.)

सूतखर्परकासीसं मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
एला जातीफलं यष्टिमधुकं हिमवालकम् ॥ १३३३ ॥
मधूकपुष्पं खदिरः शिवा गोक्षुरकस्तथा ।
कर्पूरं जटिलाऽङ्कोलौ तेन तुल्यं विमिश्रयेत् ॥१३३४॥
लाङ्गली तुम्बिनी दुग्धं दधिमुद्गरसैः पृथक् ।
मर्दयेत्त्रिदिनं सिद्धस्ततो मेहगणाऽपहः ॥
मधुना निष्कमात्रोऽयं भवेत्क्षीरोदनाशिनाम् ॥१३३५॥

र, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, रसकपूर और कर्पूर १–१ तोला लेकर ३ रोज़ शुष्क मर्दनकर कज्जली बनाले फिर इलायची, जायफल, मुलहठी, सफेदचन्दन, सुगन्धवाला, महुआ, खैर, हर्रे, गोखरू, भीमसेनीकपूर, जटामांसी, अङ्कोलबीजमज्जा, ये सब १–१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वयोगमें मिलाकर कलिहारी, कड़वीतूंबी, दही और मूंग इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमें ३–३ रोज़ मर्दनकर १–१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ खानेसे तमाम प्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २९९ ॥

३०० प्रमेहारिरसः (तृतीयः)

रसकर्पूरकाल्कर्षं कर्षं बलिरसायनम् ।
तैलटङ्कणतः कर्षं मरिचं शुक्तिमात्रकम् ॥ १३३६ ॥
कज्जलीं कारयेदेषां मर्दयेन्निम्बुजै रसैः ।
पादपालिकैस्ततो वटयः कार्याश्चणकमात्रिकाः १३३७
सशर्करं ततः खादेच्चत्वारिंशद्दिनावधि ।
प्रमेहारिरसं नाम्ना पथ्यहीनोऽपि शीलयेत् ॥१३३८॥

रसायनसं., उपदंशे ।

भाषा—रसकपूर, गन्धकरसायन, तेल और सुहागा १–१ तोला, मरिच २ तोला इनसबकी कज्जलीकर ६ पल नीबूके रसमें मर्दनकर चने प्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्करके साथ खानेसे यह ४० दिनमें उपदंश-जन्य व्याधि और तमाम प्रमेहोंको नष्टकरताहै । इसे पथ्य हीन आदमीभी खाकर लाभ उठासकताहै ॥ ३०० ॥

३०१ प्रमेहारिरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ मरिचं कणजीरं सूतकरसभस्मकम् ।
मायाफलं लवङ्गं च भस्मितं वटपत्रजम् ॥ १३३९ ॥
सितपूगस्य भस्मितं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
माषो भस्मिततुत्थस्य कांस्ये ताम्रेण मर्दयेत् ॥१३४०॥
ततो घृतं मेलयित्वा स्थापयेत्कूपिकोदरे ।
शर्करापूतमिश्रं तत्खादेन्नागवल्लैः सह ॥ १३४१ ॥
वल्लप्रमाणं पथ्यार्थे गोधूमं चूर्णतूवरी ।
घृतं सितां पटोलञ्च कोशातक्यथ मेथिका ॥१३४२॥
आर्द्रकं शूर्पमत्रा च शुण्ठी च जीरकस्तथा ।
जीर्णं फैरकञ्च देयमुपदंशकुलाङ्गम् ॥
गुणं तच्छमयेच्चाशु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१३४३॥

रसायनसं., उपदंशे ।

भाषा—रसकपूर, मरिच, स्याहजीरा, मुरदासंग, मायफल, लौंग, बड़के और सफेद सुपारीकी भस्म ये सब १–१ तोला, तुत्थभस्म १ मासा, लेकर सबको कांसीकीथालीमें तांबेके मूसलसे घोटकर घीकेसाथ ३–३ रोज़ मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–२ रत्ती शक्कर और घीमें मिलाकर पानकेसाथ खानेसे पुरानेसे पुराना उपदंश और फिरंगरोग नष्टहोतेहैं । गेहूं, ज्वार, अरहर, घी, शक्कर, परवल, तुरई, मेथी, अदरख, हुरहुर, सोंठ, जीरा ये सब इसमें पथ्यहैं ॥ ३०१ ॥

३०२ प्रमेहारिरसः (पञ्चमः)

टङ्कणञ्च रसराजगन्धकं सीसकञ्च रसकेन संयुतम् ।
नागवल्लिजरसेन मर्दितं सर्वमेहरुतरोगनाशनम् ॥१३४४

र. प्र. सु., र. चं., नि. र., र. क. ल., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, पारा और गन्धक, सीसा और खपरिया भस्म समभाग लेकर पानके रसमें दोतीन रोज मर्दनकर १–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मक्खन वगैरहमें कवलित करके खानेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ ३०२ ॥

३०३ प्रमेहारिरसः (षष्ठः)

पारदभस्म शिलाजतु कृष्णा
लोहमलं त्रिफलाऽङ्कुलबीजम् ।
ताप्यनिशारजतोपलकान्त-
व्योषरजः खपुरञ्च कपित्थात् ॥ १३४५ ॥
सर्वमिदं परिचूर्ण्य समांशं
भृङ्गरसेन विभाव्य सुधीभिः ।
विंशतिवारमिदं मधुलीढं
विंशतिमेहहरं शतवर्षम् ॥ १३४६ ॥

र. र. स., प्रमेहे ।

भाषा—पारदभस्म, शिलाजीत, पीपल, मण्डूरभस्म, त्रिफला, अङ्कोलके बीज, सोनामाखी, हल्दी, चांदीभस्म, कान्तपाषाणभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, गूगल, और कैथ, सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर भांगरेके रसमें २० बार भावनाएं देकर १–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुके साथ लेनेसे यह २० प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै। यह सैकड़ों बारका अजमाया हुआहै ॥ ३०३ ॥

३०४ प्रमेहारिरसः (सप्तमः)

सूतहेमाऽभ्रकान्तानि गव्यां क्षीरेण मर्दयेत् ।
त्रिदिनं क्षीरकाकोली मर्दितं दिवसत्रयम् ॥१३४७॥
ततो लघुपुटं दद्यात्गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत् ।
सितामधुभ्यामथवा त्रिफलाक्षौद्रतोऽपि वा ॥१३४८॥
वीर्यवृद्धिं बलं पुष्टिं कान्तिञ्चाऽपि प्रयच्छति ।
मेहानां नाशनं श्रेष्ठं परं वृष्यं रसायनम् ॥ १३४९ ॥

र० चा०, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—पारा, सोना, अभ्रक, कान्तलोह इनचीजोंकी भस्म समभाग लेकर बारीक चूर्णकर गोदुग्ध और क्षीरकाकोलीके रसमें ३–३ रोज़ मर्दनकर सम्पुटमें बन्दकर ३–४ सेर कण्डोंकी आंच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती शक्कर, मधु अथवा त्रिफला और मधुके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै । वीर्य, बल, पुष्टि, कान्ति और स्वस्थताको देनेवाला रसायनहै ॥ ३०४ ॥

३०५ प्रमेहारिरसः (अष्टमः)

सूतं वाहुमितं वलिं शशिमितं सम्मर्द्य तत्कज्जलीं,
कृत्वा मागधिकाशिवोत्थसलिलैः सम्मर्द्य घस्रं पुनः।
कूप्यां पारदकालिकां सुविहितां मृत्स्नांशुकैः सप्तभिः,
संवेष्ट्य त्रिदिनं विशोष्य लवणाऽऽपूर्णे क्षिपेद्भाण्डके॥
पक्त्वायामचतुष्टयं तु शिशिरां भित्त्वा च तां कूपिकां,
तं सूतं द्विलवं लवञ्च गगनं लोहं लवं मर्दयेत्।
सिद्धो वल्लमितः सितासुमधुना वत्सादनीसत्त्वतो,
नोचेत्क्षौद्रकणायुतश्च तरसा सर्वप्रमेहाञ्जयेत् ॥
रोगाधीश्वरपाण्डुकामलहरिद्राभत्वपित्तोद्भवान्,
सर्वांश्च प्रदरामयाञ्विजयते मेहारिनामा रसः।१३५१।

र. रा. सु., प्रमेहे।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, गन्धक १ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पीपल और हर्रेके काढ़ेसे १–१ पहर मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें भरके मुहपर कपड़मिट्टी देवे। सूखनेपर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी मध्यम अग्निदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीमेंसे रसको निकालकर इसमेंसे २ भाग लेकर अभ्रक और लोह भस्म १–१ भाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती खाकर, मधु अथवा गिलोयके सत्व अथवा पीपल और मधुके साथ देनेसे सम्पूर्ण प्रमेह, राजयक्ष्म, पाण्डु, कामला, पीलापन पित्ताधिक्य, प्रदर, इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ ३०५ ॥

३०६ प्रमेहेभकण्ठीरवोरसः (मेहेभकण्ठीरवः)

पिष्टौ गन्धकसूतकौ समलवौ लद्दङ्गभूत्या युतौ,
मर्द्यौ श्रीफलकारवीबहुफलीब्राह्मीवराऽग्निद्रवैः।
प्रत्येकं दिवसत्रयं सुरकृतासत्त्वेन वल्लोन्मितो,
हन्यान्मेहगणं भवेद्रसवरो मेहेभकण्ठीरवः॥ १३५२॥

र. र पा, र ■ सु. प्रमेहे।

टि०—रसप्रकाशसुधाकरे अस्य योगस्य धातकीस्वरसेन मर्दनं विधाय वल्लयुग्ममानया मध्वनुपानेन प्रमेहाऽतिसारयो र्नियोग कृतोऽस्ति, नाम च मेहाङ्कुश इति स्थापितम्। परन्तु स योगोऽस्मादभिन्न । धातकी स्वरसभावनाया भक्तिश्चेत् सा भवैवाऽनुष्ठेया। गुडूचीसत्त्वयोगस्त्वनुक्त्वामेवाऽऽवहति सामयिककारणवशात्कदाचित्तत्र प्रतिकूलता भासेत तर्हि तद्योगो न करणीय इति सर्वं समञ्जसम्।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और वङ्गभस्म समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर नारियल, मगरैल, बहुफली, ब्राह्मी, त्रिफला और चित्रक इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंकी ३–३ रोज भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गिलोयके सत्वके साथ लेनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३०६ ॥

३०७ प्रमेहेभकेसरीरसः (वसन्तकुसुमाकरः)

हेमसूतौ च लोहाऽभ्रं वङ्गभस्म क्रमाद्वहु।
पञ्चभागाऽमृतं सप्त मालतीगोक्षुरोद्भवैः ॥ १३५३ ॥
मेहेभकेसरी नाम धात्रीचूर्णं भवेद्दनु।
अनुपानविशेषेण मधुना सर्वमेहजित् ॥ १३५४ ॥

र क यो, प्रमेहे।

भाषा—सुवर्ण १, पारा २, लोह ३, अभ्रक ४ और वङ्ग ५ इनसबकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर शुद्धवत्सनाग ५ भाग डाल कर सबका बारीक चूर्णकर मालती और गोखरूके रसकी ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली आवलेके चूर्ण और मधुके साथ अथवा तत्तद्रोगहराऽनुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३०७ ॥

३०८ प्रलयानलोरसः

पारदं वत्सनाभञ्च हिङ्गुलं टङ्कणं समम्।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं दीप्यकं कृष्णजीरकम् ॥ १३५५ ॥
मृतं तीक्ष्णं मृतं ताम्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
कटुत्रयकषायेण वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ १३५६ ॥
पड्यामान्ते समुद्धृत्य फणिपित्तेन भावयेत्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम्॥
अनुपानविशेषेण रसोऽयं प्रलयानलः॥ १३५७॥

वै चि, सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, बच्छनाग, शिंगरफ, और सुहागा, सज्जी, यवक्षार, पलाशक्षार, पाचोंनमक, अजवाइन, कालीजीरी, लोह और ताम्रभस्म सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर त्रिकुटके काढ़ेमें एकदिन मर्दनकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें ६ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कालेसर्पके पित्तकी १ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख छोड़े। इसमेंसे १–१ गोली अनुपानविशेषसे देनेसे यह समस्त सन्निपातों को दूरकरताहै ॥ ३०८ ॥

३०९ प्रलयानलरुद्ररसः
(प्रसन्नभैरवः, कालाग्निभैरवः)

हिङ्गुलोत्थरसाद्भागौ द्वौ भागौ गन्धकस्य च।
बाणभागौ खगोदन्तौ कालभागा मनःशिला॥१३५८॥
टङ्कणं नेत्रभागञ्च रसकाद्युतभागकाः।
एकभागन्तु नेपालं नेत्रभागं हलाहलम्॥ १३५९ ॥
दरदं चाऽग्निभागञ्च द्वौद्वौ च ताम्रलोहयोः।
खल्वे रसैरशेषन्तु क्षीरेणाऽर्कस्य मर्दयेत् ॥१३६०॥
सिन्धुवाराऽग्निधत्तूरजम्बीरैः कारवेल्लकैः।
विपचेत्ताम्रपात्रान्ते द्वियामं वालुकाऽग्निना ॥१३६१॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खल्वमध्ये विमर्दयेत्।
गन्धतालं विषं स्लेच्छं भागार्धं निक्षिपेत्ततः ॥१३६२॥
दशमूलकषायेण मर्दयेद्यामयुग्मकम्।
पिप्पलीबृहतीपक्वफलनीरेण मर्दयेत् ॥ १३६३ ॥
पञ्चकोलकषायेण मर्दयेद्यामयुग्मकम्।
वल्लमात्रप्रमाणेन शृङ्गवेररसेन च ॥ १३६४ ॥

योजयेत्तरुणे पित्तश्लेष्मवातज्वरेऽपि च ।
द्व्याहिके तरुणे चाऽपि चातुर्थिकत्रिरात्रिके ॥१३६५॥
प्रत्यहान्तरिते चाऽपि धातुगे चाऽस्थिगेऽपि वा ।
अन्येष्व विविधे दोषे जनिते रुजि योजयेत् ॥१३६६॥
दाहस्वेदोल्वणे जाते मुहुर्मुहुरुपागते ।
पयः शाल्योदनं पथ्यं दधिनवसमन्वितम् ॥ १३६७ ॥
सितयामिश्रतोयेन नारिकेलाम्बुना तथा ।
कदलीफलपक्वानि सर्वे च मधुरा रसाः ॥ १३६८ ॥
ताम्बूलं चन्द्रसंयुक्तं देयं तत्र भिषग्वरैः ।
वापीकूपतडागादिस्नानं कुर्याद्यथेच्छया ॥ १३६९ ॥
प्रलयानलरुद्राऽऽख्यो रसः कालाऽग्निभैरवः ।
प्रसन्नभैरवो नाम्ना कथ्यते प्राणिनां हितः ॥
शिवेन वलिनाऽचिन्त्यकिरातेनोदितः पुरा ॥१३७०॥

र. क. यो., धा., व रा, वै. चि, रसायनसं., र. प. ज्वराधिकारे।

टि०—रसायनसं प्रलयकालाग्निरुद्ररस इति नाम । रसकल्पे मृत्युञ्जय इति नाम अभिधायाऽनन्तर विशिष्टश्लोकस्तत्र न दृश्यते । बहुग्रन्थसम्वादाद्मसद्धनिरोधेन त्रुटित पाठ समस्मादिन इति प्रतीयते ।

भाषा—हिङ्गुलोत्थ पारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, अभ्रक और गोदन्तीहरिताल ५–५ भाग, शुद्धमैनसिल ३ भाग, भुनासुहागा ७ भाग, शुद्धखर्पर अथवा जस्तभस्म ६ भाग, शुद्धजमालगोटा १ भाग, संखिया विष अथवा शुद्ध बछनाग २ भाग, शुद्धशिंगरफ ३ भाग, ताम्र और लोहभस्म २–२ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारदगन्धककी नीलागं कज्जलीमें मिलाकर आकका दूध, सभालू, चित्रकमूल, धतूरा, जंभीरी, करेला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोला बनाय ताम्रपात्रमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें २ पहर की आंच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्ध गन्धक, हरिताल, बछनाग और शिंगरफ आधा आधा भाग मिलाकर दशमूल, पीपल, वनभंटेके फल, पटोल इनके क्वाथोंसे २–२ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके स्वरससे देनेसे तरुण पित्तश्लेष्मज्वर, वातज्वर, द्व्याहिक, चातुर्थिक, त्रिरात्र, सतत, धातुग, अस्थिग, नानातरहके दोषोंसे होनेवाला ज्वर, दाह और स्वेद युक्त ज्वर इन सबको दूर करताहै पथ्यमें दही, चावल भात अथवा दूधभात देना, मिश्रीका शरबत, नारियलका पानी, पकेकेले, सब तरहके मधुरपदार्थ, कपूरयुक्त ताम्बूल, ये सब देना । बावड़ी, कूआ, तालाव वगैरहमें यथेष्ट स्नान करे । इसको कहीं प्रलयाऽनलरुद्र, कहीं कालाऽग्निभैरव और कहीं प्रसन्नभैरव नामसे पुकारतेहैं ॥ ३०९ ॥

३१० प्रलापान्तकरसः

सौभाग्यमागधीशुण्ठीमरिचानां पृथक् पिचून् ।
शुद्धधत्तूरजं बीज नवमापकसम्मितम् ॥ १३७१ ॥
लवङ्गत्रिफलागन्धपारदान्प्रतिकोल्दकान् ।
नलजम्बूकजद्रावैः पिष्ट्वा गुञ्जाद्वयोन्मिताम् ॥१३७२॥
अष्टादशाङ्गक्वाथेन व्याघ्र्यादिजनितेन वा ।
वृहद्द्राव्यादिजातेन वटीं दद्यात्प्रलापके ॥ १३७३ ॥

नृ क, सन्निपाते ।

भाषा—भुनासुहागा, पीपल, सोंठ और मरिच १–१ तोला, शुद्धधतूरेके बीज ९ माशे, लौंग, त्रिफला, शुद्ध गन्धक और पारा ६–६ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर नलसर और सोनापाठाके क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अष्टादशाङ्ग अथवा व्याघ्र्यादि अथवा वृहद्द्राव्यादिक्वाथके साथ देनेसे प्रलापक सन्निपातदूरहोताहै ॥ ३१० ॥

३११ प्रवालपथ्यामृतोरसः

प्रवालमुक्ताफलताम्रशुक्ति-
कपर्दिकानाञ्च समांशभागम् ।
प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोज्यं
सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥ १३७४ ॥
एकीकृतं तत्खलु भाण्डमध्ये
क्षिप्त्वा मुखे बन्धनमत्र योज्यम् ।
पुटं विदध्यादतिशीतले च
उद्धृत्य तद्भस्म भरेत्करण्डे ॥ १३७५ ॥
नित्यं द्विवारं प्रतिरोगयोगैः
वल्लप्रमाणेन प्रयोज्यमेव ।
गुल्मोदरप्लीहविबद्धकास-
श्वासाऽग्निमान्द्यान्कफमारुतोत्थान् ॥
अजीर्णमुग्राढ्यदामयञ्च
बालग्रहार्तौ परमं प्रशस्तम् ॥ १३७६ ॥
मेहामयं मूत्ररोगं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽश्मरीम् ।
नाशयेदत्र सन्देहः सत्यं गुरुवचो यथा ॥१३७७॥
पथ्याश्रितं भोजनमादरेण
समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या ।
प्रवालपथ्यामृतनामधेयो
योगोत्तमः सर्वगदाऽपहारी ॥ १३७८ ॥

यो.र., रसायनसं., नि र., र.प., गुल्मे ।

भाषा—मूंगा २ भाग, मोती, शङ्ख, मोतीकीसीप, पीलीकौडी इनकी भस्म १–१ भाग लेकर सबकी बराबर आकका दूध डालकर मिट्टीके बर्तनमें भर मुखमुद्राकरके गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शीशीमें रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती सुबह शाम मधु अथवा रोगोंके अनुपानोंके साथ देनेसे गुल्म, उदर, प्लीहा, बद्धोदर, कास, श्वास, मन्दाग्नि, कफवातरोग, अजीर्ण, उग्र, दर्द, बालग्रह, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, इत्यादि रोगोंको दूर करताहै । पथ्य सेवनपूर्वक करना । इसको प्रवालपथ्यामृतरस कहते हैं यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ३११ ॥

३१२ प्रवालयोगः (प्रथमः)

पिबेत्तथा तण्डुलधावनेन
प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ।

च. सं., ग. नि., मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—चावलोंके धोवनसे प्रवालकी पिष्टी कररक्खे । इसमेंसे १–१ मासा चावलोंके धोवनकेसाथ देनेसे कफमूत्रकृच्छ्र निवृत्तहोताहै ॥ ३१२ ॥

३१३ प्रवालयोगः (द्वितीयः)

प्रवालमुक्ताञ्जनशङ्खचूर्णं
लिह्यात्तथा काञ्चनगैरिकोत्थम् ॥ १३७९ ॥

सु. सं., पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—मूंगा, मोती, सफेदसुरमा और शङ्खभस्म इनको गोमूत्रके साथ देनेसे अथवा सोनागेरूकीभस्म गोमूत्रकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग निवृत्त होताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ प्रवालयोगः

एला प्रवालकं हिङ्गु लवणञ्च समं भवेत् ।
मद्येनोष्णेन तत्पीतं मेहं ससिकतञ्जयेत् ॥ १३८० ॥

भै. सं., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—इलायची, प्रवालभस्म, भुनाहींग, सेंधानमक येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर १–१ मासेकी मात्रा उष्ण मद्यके साथ लेनेसे यह सिक्तासहित प्रमेहोंको नष्टकरताहै ३१४

३१५ प्रवालरसायनम्

चतुःपलं प्रवालस्य भस्मनो मृततारकम् ।
तत्समं द्विगुणं ताम्रं प्रवालमर्द्धभागिकम् ॥ १३८१ ॥
त्रिंशद्विभागिकं वज्रं षोडशांशञ्च नीलकम् ।
व्योमसत्त्वं समं सर्वैस्तालकं सर्वतः समम् ॥ १३८२ ॥
विमर्द्य लिङ्गिनीतोये यावद्दिनचतुष्टयम् ।
सर्वार्द्धशुद्धसूतेन तस्माद्द्विगुणगन्धकैः ॥ १३८३ ॥
विहितां कज्जलीं सम्यग्द्रावयित्वा यथापुरा ।
प्रवालादीनि भस्मानि विनिक्षिप्य विमिश्र्य च ॥१३८४
निर्वाप्य गोघृतैः सम्यग्द्वादशाऽब्दपुरातनैः ।
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा घृताक्तं स्वेदयेच्छनैः ॥ १३८५ ॥
विचूर्ण्य भावयेद्भृङ्गरसे वारांश्च सप्त च ।
व्योषाऽऽज्यसहितं हन्ति जूर्तिरोगं दिनैस्त्रिभिः१३८६
क्षयञ्च मण्डलार्धेन ग्रहणीं पाण्डुकामले ।
कुन्तकामलिकारोगमुदावर्तं महोदरम् ॥ १३८७ ॥
प्रमेहं मेदसो वृद्धिं वातव्याधिं कफाऽऽमयम् ।
गुदरोगञ्च मन्दाग्निं मूत्रवातमशेषतः ॥ १३८८ ॥
स्मरमन्दिरजं व्याधिं वन्ध्यारोगांश्च गात्रजान् ।
व्योषाऽऽज्यचित्रतोयैश्च मद्यपानमशेषतः ॥ १३८९ ॥
भूयोभूयो विसूच्यर्ति देहिनो यस्य जायते ।
रसोऽयं तस्य दातव्यो मण्डलानां त्रयं खलु ॥
आमरोगे च दातव्यो भिषग्भि र्वत्सरावधि ॥१३९०॥

र. चू., रसायने ।

भाषा—प्रवाल और रजतभस्म ४–४ पल, ताम्रभस्म ८ पल, ताम्रसे आधी प्रवालपिष्टी और ३० वां भाग, हीरेकीभस्म तथा षोडशांश नीलमभस्म और सबको बराबर अभ्रकसत्त्व, इनसबचीज़ोंके बराबर शुद्धहरिताल लेकर सबका बारीक चूर्णकर शिवलिङ्गीके अङ्गस्वरससे ४ रोज़ मर्दनकरे । सब पिण्डसे आधा शुद्ध पारा और पारेसे दूंना शुद्ध गन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर बेरके कोयलों पर इसको पिघलाकर प्रवालादिक समस्त द्रव्य धीरे २ मिलावे । कुछकसर रहजायतो १२ वर्षका पुराना गायका घी डालकर एकजीवकरे । फिर इसको गोघृतसे चिकनेकियेहुए शरावमें डालकर शरावसम्पुटकर भूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर भंगरेके रससे ७ दिन मर्दनकर १–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटु और घीके साथ देनेसे ३ रोज़में यह ज्वरको नष्टकरता है । आधे मण्डलमें क्षय, ग्रहणी, पाण्डु, कामला, कुन्तकामला (कुम्भकामला), उदावर्त, महोदर (जलोदर), प्रमेह, मेदोवृद्धि, वातव्याधि, कफरोग, गुदरोग, मन्दाग्नि, मूत्रवात, योनिरोग, वन्ध्यारोग, शारीरजरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै । त्रिकटु, घी और चित्रकक्काथ इनके साथ देनेसे समस्त मद्यपानज रोगोंको नष्टकरताहै । जिस आदमीको बारम्बार हैज़ा हुआ करताहै उस आदमीको ३ मण्डलतक देना । आमरोगमें १ वर्षतक देना ॥ ३१५ ॥

३१६ प्राचेतसं चूर्णम्

त्वक् सप्तपर्णात्कुटजात्सनिम्बा-
दब्दामयोशीरनतानि ताप्यम् ।
रोध्रं विदध्यान्नवमं नवाङ्गं
प्राचेतसं चूर्णमुदाहरन्ति ॥ १३९१ ॥
लौहेऽथ हैमे त्वथ राजते वा
पात्रे स्थितं सद्मनि भूपतीनाम् ।
क्षौद्रेण लीढं सचराचराणि
विषाणि हन्याद्भुवि मानुषाणाम् ॥ १३९२ ॥

चि. क., विषाधिकारे ।

टि०—अत्र नवम=नवमद्रव्य लोध्र तत् नवाङ्ग नव अङ्गानि अर्थाद्द्रव्याणि यस्य तत्तथाङ्गमिति व्याख्येयम् । केचित्तु नवाङ्ग प्राचेतस विदध्यादिति नियोजित तन्न सम्यक् ? नवम नवाङ्ग विदध्यादित्यनर्थकं स्यादिति सहृदयैराकलनीयम् ।

भाषा—सप्तपर्ण, कुटज, नीम, नागरमोथा, कुठ, खस, तगर, शुद्ध सोनामाखी येसब १–१ भाग और लोध ९ भाग लेकर सबका इकट्ठा चूर्णकर लोह अथवा सुवर्ण अथवा चांदीके पात्रमें रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ मासे मधुके साथ चाटनेसे स्थावर और जङ्गम दोनों विषोंको यह नष्टकरताहै । राजालोगोंके घरमें इसका हमेशा रहना अत्यावश्यक है ॥ ३१६ ॥

३१७ प्राणदापर्पटी

सूताऽभ्राऽयोहिवङ्गोषणविषमखिलां-
शेन गन्धेन लोहां,
कोलाग्नौ विद्रुतेन क्षणमथ मिलितं
ढालितं गोमयस्थे।
रम्भापत्रेऽमुनाऽन्येन च दृढपिहितं
प्राणदा पर्पटीस्या-
त्पाण्डौ रक्ते ग्रहण्यां ज्वररुजि कसने
यक्ष्ममेहाऽग्निमान्द्ये ॥ १३९३ ॥
प्राणदा पर्पटी सैषा भाषिता शम्भुना स्वयम्।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥ १३९४ ॥

वृ यो.त , नि र , र च , यो र , क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रक, लोह, नाग, बङ्ग इनकीभस्में, कालीमिर्चें, शुद्ध बछनाग, येसब समभाग और सबकी बराबर शुद्ध गन्धक लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली कर बेरके कोयलोंपर लोहेकी कड़ाहीमें घृतयोगसे गलाकर बाकी चीज़ोंको मिलादे। एकदम गलजानेपर ताज़े गोबरपर रक्खे हुये केलेके पत्तेपर डालकर दूसरे पत्तेसे ढककर गोबरसे दबादे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे पीपलप्रभृतिकेसाथ आधीरत्तीसे ५ रत्तीतक मात्रा बढाकर खावे और उसीक्रमसे कमकरे। ऐसे जबतक पूर्ण आरोग्यलाभ न हो तबतक इसीक्रमको जारी रक्खे । एकदम आराम होनेपर आधी रत्तीकी मात्रा पर लाकर छोड़दे । इसके सेवनसे पाण्डु, प्रवाहिका, ग्रहणी, ज्वर, कास, यक्ष्म, प्रमेह और अग्निमान्द्य नष्ट होतेहैं। तत्तद्रोगोचिताऽनुपानके साथ देकर रोगोचित पथ्य पालन करनेसे यह सभीरोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ३१७ ॥

३१८ प्राणनाथरसः (प्रथमः)

लोहभस्म पलैकन्तु द्विपलं भृङ्गजद्रवम्।
वराभार्ङ्गीभवं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥ १३९५ ॥
पलैकस्मिस्त्रिफलोत्थे सर्वं भर्ज्यश्च खर्परे।
लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्य पूर्वोदितै द्रवैः ॥ १३९६ ॥
दद्यात्रिभिः पुटैः पाच्यं द्रवै मर्द्य पुनः पुनः।
मृतं सूतं मृतं वङ्गं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥१३९७॥
द्वौ निष्कौ शुद्धगन्धस्य चतुर्निष्का वराटिका।
एकीकृत्य पुटे पाच्यं पूर्वलोहविमिश्रितम् ॥ १३९८ ॥
पूर्वोक्तैस्तु द्रवै मर्द्य पुटेनैकेन पाचयेत्।
सप्तनिष्कान्मरीचानां तुल्यटङ्कणयोः दश ॥ १३९९ ॥
मेलयेच्च पृथक् सर्वं प्राणनाथाऽऽह्वयो रसः।
भक्षयेन्निष्कपादार्धमसाध्यं राजयक्ष्मनुत् ॥
शोफोदराऽर्शोग्रहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥ १४०० ॥

नि.र , र को , र का., र र , क्षयाऽधिकारे। र र प्राणनाथरस इतिनाम । तथाच "वराभार्ङ्गीभव द्राव पलैकैकं नियोजयेत्।" इति पाठो न दृश्यते, तथा च वङ्गस्थाने नागं नियोजितम्।

भाषा—लोहभस्म १ पल, भंगरेका रस २ पल, त्रिफला और भार्ङ्गीका रस १–१ पल लेकर पहिले त्रिफलाका रस मिट्टीके खपड़ेमें डालकर उसमें लोहेको मिलाकर सेके । रस सूखजानेपर लोहकी बराबर शुद्ध सोनामाखी डालकर भंगरा और भारङ्गीके रसोंसे क्रमसे मर्दनकरे । रससूखजानेपर गोला बनाय मूषरयन्त्रमें रखकर २ सेर कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर दोनों रसोंसे मर्दनकर पुटदे। ऐसे तीनवार करके चौथीबार पारद और वङ्गभस्म ४–४ माशे मिलाकर शुद्धगन्धक ८ माशे, पीलीकौड़ीकी भस्म १ कर्ष मिलाकर पूर्वोक्तरसोंसे मर्दनकर १ पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मिर्चे १॥ कर्ष, शुद्धसुहागा २॥ कर्ष मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा उचिताऽनुपानके साथ देनेसे असाध्यराजयक्ष्म, शोथ, उदर, बवासीर, ग्रहणी, ज्वर और गुल्म इनसबको यह नष्ट करता है ॥ ३१८ ॥

३१९ प्राणनाथरसः (द्वितीयः)

अयोरजो विंशतिनिष्कमानं
विभावितं भृङ्गरसाऽऽढकेन।
धत्तूरभार्ङ्गीत्रिफलारसैश्च
तुल्यांशताप्यं विपचेत्पुटेषु ॥ १४०१ ॥
सूतञ्च निष्कं सममागतुर्थं
गन्धोपलाद्धौ चतुरो वराटान्।
पक्त्वा पुटाऽग्नौ समलोहचूर्णा-
त्पचेत्तथा पूर्वरसेन मिश्रान् ॥ १४०२ ॥
चूर्णेऽस्मिन्मरिचान्सप्त तौल्यटङ्कणकान्दश।
संसृजेत्तत्पृथङ्निष्कान् प्राणनाथाऽऽह्वयोदितः॥१४०३॥
अर्द्धपादो रसाद्भक्ष्यः केवलाद्राजयक्ष्मिभिः।
शोफोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्माद्युपद्रुतैः ॥१४०४॥

र.र.स , रसचि , राजयक्ष्मणि।

टि०—प्रथमप्राणनाथाद्द्रव्येषु साम्यभावेऽपि प्रक्रियायामन्तरत्वात्पृथक् पाठो गृहीत इति विभावनीयम्।

भाषा—शुद्धलोहेका बारीकचूरा ५ कर्ष लेकर भंगरा, धतूरा, भारङ्गी, और त्रिफलाके ४–४ प्रस्थ रसोंकी भावना देकर सुखाले फिर ५ कर्ष शुद्धसोनामाखी डालकर भंगरेके रसमें घोट टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकी आचदे फिर धतूरा, भारङ्गी और त्रिफलाके रसोंमें घोटघोटकर गजपुटकी आंचदे। ऐसे ४ गजपुट देनेकेबाद शुद्धपारा और तुत्थ ४–४ माशे, शुद्धगन्धक ८ माशे, पीली कौड़ी १ कर्ष लेकर सब चीजें पारे गन्धक की नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर पूर्वरसोंसे टिकिया बनाय गजपुटकी आंच दव । इसकेबाद लोहभस्म ५ कर्ष, मरिच १॥ कर्ष, शुद्ध तूतिया और सुहागा ढाई २॥ कर्ष मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती उचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, शोथ, उदररोग, बवासीर, ग्रहणी, ज्वर और गुल्मादिक सब नष्ट होतेहैं ॥ ३१९ ॥

३२० प्राणवल्लभोरसः (प्रथमः)

दरदादुत्थितं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धकौ ।
लौहं ताम्रं वराटश्च तुत्थं हिङ्गुफलत्रिकम् ॥१४०५॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारो जैपालो दन्तिका त्रिवृत् ।
प्रत्येकं शाणभागन्तु छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥१४०६॥
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुना सह ।
प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ॥१४०७॥
श्लेष्मदोषं समाऽऽलोक्य युक्त्या च त्रुटिवर्धनम् ।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा ॥१४०८॥
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम् ।
ऊरुस्तम्भं शूलशोथौ सङ्ग्रहग्रहणीञ्जयेत् ॥१४०९॥
वान्तिं मूर्च्छां श्रमं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम् ।
असाध्यं सन्निपातञ्च रक्तगुल्ममरोचकम् ॥१४१०॥
वातरक्तं तथा शोथं कण्डूं विस्फोटकाऽपचीम् ।
नाऽतःपरतरं किञ्चित्कामलाऽर्तिरुजापहम् ॥१४११॥

र. सं., ध., र. चि., भै. र., र. क., र. सु., र. चं., पाण्डुरोगे ।

टि०—केषुचिद्ग्रन्थेषु अयं पाठो गुल्मेऽपि पठितस्तत्र पूर्वाऽपरज्ञानविस्मृति मूलम् । उपरितनाऽर्द्धश्लोकोऽपि लेखकप्रमादात्पतत इति तु केनाऽपि न विचारितम् ।

भाषा—शिंगरिफसे निकालाहुआ पारा, केशर, शुद्ध गन्धक, लोह, ताम्र, पीलीकौड़ी और तुत्थ इनकीभस्में, भुनाहींग, त्रिफला, थूहरकादूध, यवक्षार, शुद्ध जमालगोटा, दन्ती और निशोत ये प्रत्येक ४–४ माशे लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर बकरीके दूधमें २–३ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा जलके साथ देना । श्लेष्मकी न्यूनाऽधिकता देखकर मात्रामें न्यूनाऽऽधिक्य करलेना । इसके सेवनसे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, ऊरुस्तम्भ, शूल, शोथ, सङ्ग्रहग्रहणी, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, कास, श्वास, गलग्रह, असाध्यसन्निपात, रक्तगुल्म, अरोचक, वातरक्त, शोथ, खुजली, विस्फोटक, अपची इनसबको यह नष्टकरताहै । कामलाको दूरकरनेमें इसके सदृश अन्ययोग नहींहै ॥ ३२० ॥

३२१ प्राणवल्लभोरसः (द्वितीयः)

रसं विषं मल्लमभ्रं गन्धकञ्च मनःशिलाम् ।
मर्दितं पर्पटद्रावे वज्रमूषाऽन्तरे क्षिपेत् ॥१४१२॥
विपाच्य भूधरे यन्त्रे स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मत्स्याजशिखिपित्तकैः १४१३
पाचितं याममात्रन्तु गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
गुल्मवातं निहन्त्याशु सर्ववातविकारनुत् ॥१४१४॥

व. रा., वै. चि., गुल्मवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वत्सनाग, सोमल, अभ्रकभस्म, गन्धक और मैनसिल सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पित्तपापड़ेके रससे १–२ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय वज्रमूषामें बन्दकर भूधरयन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मछली, बकरी और मोरके पित्तोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली वातहरानुपानके साथ देनेसे गुल्मवात किंवा समस्त वातविकारोंको यह नष्टकरता है ॥ ३२१ ॥

३२२ प्राणिकल्पद्रुमोरसः

सूतं गन्धं कान्तपाषाणमिश्रं
 ब्राह्मी बीजै मर्दयेदेकघस्रम् ।
गोलं कृत्वा टङ्कणेन प्रवेष्ट्य
 पश्चान्मृत्स्नागोमयाभ्यां धमेत्तम् ॥१४१५॥
शुष्के यन्त्रे सत्त्वपातप्रधाने
 किट्टे सूतो बद्धतामेति नूनम् ।
शुद्धं पश्चात्क्षारकाचप्रयोगा-
 द्धेम्नातुल्यं सूतमावर्तयेत्तत् ॥ १४१६ ॥
वक्त्रे गोलः स्थापितोवत्सरार्धं
 रोगान्सर्वान् हन्ति सौख्यं करोति ।
यद्वा दुग्धे गोलकं पाचयित्वा
 दद्याद् दुग्धं पिप्पलीभिः क्षये तु॥१४१७॥
लौहे पात्रे पाचयित्वा तु देयं
 शुष्के पाण्डौ कामले पित्तरोगे ।
वाते गोलं व्योषवातारितैलं
 पक्त्वा तैलं गन्धतैलं ददीत ॥ १४१८ ॥
भार्ङ्गीमुण्डीकासमर्दाऽऽटरूष-
 द्रावे गोलं पाचयेच्छ्लेष्मतुल्ये ।
कासे श्वासे तच्च दद्यात्कषायं
 माक्षीकाक्तं पिप्पलीचूर्णयुक्तम् ॥१४१९॥
यस्मिन्रोगे यःकषायोऽस्ति चोक्त-
 स्तस्मिन्गोलं पाचयित्वाकषायम् ।
दद्यात्तद्रोगनाशाय पथ्य-
 मुक्तोगोलः प्राणिकल्पद्रुमोऽयम् ॥ १४२० ॥

यो. म., रसायनसं., आ. प्र., र. दी., रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, कान्तपाषाण और पलाशके बीज समभाग लेकर १ रोज़ मर्दनकर पानीके संयोगसे गोलाबनाय ऊपर सुहागेकालेप करदेना । सूखनेपर मिट्टी और गोबरका लेपकरदेना फिर सत्त्वपातनयन्त्रमें रखकर धमनकरना । इससे पारा किट्टरूपहोकर बन्धको प्राप्त हो जायगा । इसरो सुहागा और काचकेसाथ गलाकर साफ करके बराबरके सुवर्णके साथ गोलीरूपमें डाललेना। इसगोलीको वर्षभर मुखमें रखनेसे समस्तरोग दूरहोकर आदमी सुखी होताहै। अथवा इसगोलीको दूधमें डालकर थोड़ा गरमकर पिप्पलीका थोड़ासा चूर्ण डालकर पिलानेसे क्षय दूर होताहै। लोहेके पात्रमें दूधके साथ पकाकर पिलानेसे शुष्कपाण्डु, कामला और पित्तरोग नष्टहोते हैं। त्रिकुटेके क्वाथसे एरण्डीका तैल पकाकर उसतैलमें इसगोलीको थोड़ी देर पकाकर निकालले और

उसतैलमें गन्धकका तैल मिलाकर देनेसे वातव्याधि दूरहोताहै। भारङ्गी, गोरखमुण्डी, कसौंदी, अड्स इनके रसोंमें इसगोलीको पकाकर देनेसे श्लेष्मरोग दूरहोतेहैं। कासश्वासमें भारङ्गयादिक्वाथमें महुएका आसव और पीपलका चूर्ण डालकर देना। जिसरोगका जो काढ़ाहै उस उसमें इसगोलीको पकाकर देनेसे तत्तत् समस्त रोगोंको दूरकरतीहै ॥ ३२२ ॥

३२३ प्राणेश्वररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽभ्रं विषसंयुतम्।
समं तन्मर्दयेत्तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः ॥ १४२१ ॥
पूरयेत्कूपिकां तेन मुद्रयित्वा विशोषयेत्।
सप्तभिः मृत्तिकावस्त्रै वेष्टयित्वाऽथ शोषयेत् ॥१४२२॥
पुटेत्कुम्भप्रमाणेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
गृहीत्वा कूपिकामध्यान्मर्दयेच्च दिनं ततः ॥ १४२३ ॥
अजाजी चित्रक हिङ्गु स्वर्जिका टङ्कणं जगत्।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारो यवानिका ॥ १४२४ ॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समानतः।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत्सप्तधाऽऽतपे ॥ १४२५ ॥
नागवल्लीदलयुतः पञ्चगुञ्जो रसेश्वरः।
दद्यान्नवज्वरे तीव्रे कोष्णं वारि पिबेदनु ॥ १४२६ ॥
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित्।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥ १४२७ ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात्कुर्याच्चन्दनलेपनम्।
तापोद्रेकप्रशमनो नानाऽतीसारनाशनः॥
भवेच्च नाऽत्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥१४२८॥

र.स, र म, भै र, र कौ, यो म, र मु., र का, रसायन स, ज्वरे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा, गन्धक २ भा, अभ्रकभस्म और शुद्धवछनाग १–१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर तालमूलीके स्वरससे ३ रोज मर्दन कर सुखाकर ७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर कपड़मिट्टीसे मुंहबन्दकर कुम्भपुटकी आंच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीमेंसे निकालकर एकरोज मर्दनकर जीरा, चित्रकमूल, भुनाहींग, सज्जी, सुहागा, फिटकड़ी, गूगल, पांचों नमक, यवक्षार, अजवाइन, मरिच और पीपल ये प्रत्येक इसयोगकी बराबर लेकर सबका क्वाथ बनाकर ७ वार धूपमें भावना देकर ५–५ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानमें रखकर नवज्वरोंमें देवे। यदि ज्वर बहुततीव्र मात्रामें होतो थोड़ा ऊपरसे गरमपानी पिलादे। इसके सेवनसे सन्निपात, शीतज्वर, दाहज्वर, त्रिदोषजगुल्म और शूल येसब नष्ट होतेहैं। इसके देनेके बाद रोगीकी जिस चीज़पर इच्छाहो वह खानेको देना। चन्दनप्रभृति शीतवस्तुओंका लेपकरना। यह ज्वरकी उत्कटताको दूरकरताहै। और अतिसारका नाश करताहै ॥ ३२३ ॥

३२४ प्राणेश्वररसः (सर्वाङ्गसुन्दरः) (द्वितीयः)

अभ्रसत्त्वं पातयित्वा भस्मीकुर्याद्विचक्षणः।
त्रिफलातालमूलीजै रसैः सम्मर्द्य सम्पुटेत् ॥१४२९॥
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा वाराहेण ततः परम्।
यावद्भस्मीभवेत्सर्वं मर्दयित्वा पुटेत्क्रमात् ॥ १४३० ॥
इत्थं भस्मीकृतं व्योम समं सूतं मृतं तथा।
गन्धकं शोधितं कृत्वा प्रत्येकञ्च पलंपलम् ॥ १४३१ ॥
खल्वे निक्षिप्य मुशलीनीरैः सम्मर्दयेद् दृढम्।
दिनत्रयं प्रयत्नेन कल्कं सम्पादयेत्ततः ॥ १४३२ ॥
सनालायां काचकूप्यां तं कल्कं निक्षिपेद् बुधः।
काचकूप्या मुखं रुन्ध्यात्खटिन्या यत्नतो भिषक्॥१४३३
कूपिकां लेपयेत्पश्चान्मृदा कर्पटयुक्तया।
सर्वाङ्गं शोषयेत्पश्चादातपेऽतिखरे बुधः ॥ १४३४ ॥
क्षिपेद् भूधरके यन्त्रे कूपिकां तां त्रिभागिकाम्।
कुक्कुटाख्यपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥१४३५॥
निर्धूय कर्पटमृदं खटिनीरससंयुताम्।
कूपिस्थं मर्दयेत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥ १४३६ ॥
तन्मध्ये प्रक्षिपेदेतदौषधं चूर्णितं भृशम्।
क्षारत्रयं पञ्चपटु त्रिकटु त्रिफला पुरम् ॥ १४३७ ॥
वाह्लीकञ्च भद्रयवं त्रिजगद्विजयादलम्।
वैश्वानरश्चाजमोदो यवानी च समांशतः ॥ १४३८ ॥
पारदस्य प्रमाणेन ग्राह्यं सर्वमिदं ध्रुवम्।
सूक्ष्मचूर्णं विधायैतत्सर्वं सूते विनिःक्षिपेत् ॥१४३९॥
शुष्कमर्दनयोगेन सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
एवं सिध्यति सूतेन्द्रः सर्वरोगहृते पटुः ॥ १४४० ॥
नागवल्लीदलेनैनं सूतं युञ्जीत बुद्धिमान्।
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन सूतेन्द्रः सर्वरोगहा ॥ १४४१ ॥
अहर्मुखे समुत्थाय सूतेन्द्रं भक्षयेद्बुधः।
अनुपाने प्रयुञ्जीत कवोष्णं सलिलं सदा ॥ १४४२ ॥
चुलुकद्वयमानञ्च नाऽधिकं सम्प्रपाययेत्।
तृड्भावे वारमेकं शीतं वारि पिबेद्दिने ॥ १४४३ ॥
क्षाराऽम्लविदलं वर्ज्यं भोजनं तैलसम्भवम्।
तैलाभ्यङ्गं शाकजातं वर्जयेच्छयनं दिवा ॥ १४४४ ॥
आचरेद्ब्रह्मचर्यञ्च हितसेवी सदा भवेत्।
अहितं वर्जयेद्यत्नाद्रससेवाविधौ नरः ॥ १४४५ ॥
एवं संसेव्यमानोऽयं रसो रोगान्निवर्तयेत्।
निश्चेतनत्वं यो याति सन्निपातात्कथञ्चन ॥ १४४६ ॥
प्राणेश्वरं रसं दद्यात्तस्याऽपि भिषगुत्तमः।
पूजयित्वा देवविप्रकुमारी योगिनी रसम् ॥ १४४७ ॥
निजशक्त्यनुसारेण रसेन्द्रं योजयेत्ततः।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्याद्रसेन्द्रे सेवितेऽपि च ॥१४४८॥
सन्निपातं निहन्त्येष रसो युक्त्या निषेवितः।
ज्वरान् सर्वांश्च प्लीहानं गुल्मं पञ्चविधं हरेत् ॥१४४९॥

विकारान् वातजांश्छूलं परिणामभवं हरेत् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च मन्दाग्निं ग्रहणीमपि ॥१४५०॥
शिववत्सेवितो हन्ति रसः प्राणेश्वरो रुजः ।
इति प्राणेश्वरो नाम्ना रसः सर्वगदाऽपहः ॥१४५१॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥१४५२॥

रसाल , र र स , रससागर, र मृ., गुल्मे ।

टि०—रसाऽलङ्कारे गजाऽङ्कुिनी शब्दाऽज्ञानात्तत्स्थाने त्रिनगद्विजयादल नियोजितम् । गजाङ्किनीशब्देन कुक्कुलबिल्लविन्नेति यूनानी वैद्यके प्रसिद्ध बीज योज्यम् । केचित्तु गुञ्जाविनीति पाठ मत्वा गुञ्जा नियोजयन्ति तत्तु न सम्यग्गुञ्जायामेतद्द्रव्यभावात् । गुञ्जावद्वृते सादृश्य गच्छतीति गुञ्जा किनी अनाऽपि ■ एवाऽर्थे प्रकरीभवति गुञ्जाफलेन तत्माय सादृश्यमाव इति । अतएवाऽज्ञा कृष्णगुञ्जया तद्व्यवहार कुर्वन्तीति विभावनीयम् ।

भाषा—अभ्रकका सत्व निकालकर त्रिफला ओर ताल मूलीके रससे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर वराहपुटकी आचदे जबतक भस्म न हो तबतक पूर्वोक्तरसोंमें मर्दनकरके पुट देता जाय । जब भस्म होजाय तब उसमें पारेकीभस्म और शुद्ध गन्धक १–१ पल मिलाकर तीनरोज मुशलीके रससे मर्दनकर कल्कबनाले । उसकल्कको आतशी शीशीमें भरके खड़ियामिट्टी की डाट लगादे और ऊपरसे ६–७ कपड़मिट्टीकर अच्छीतरह सुखाकर खड्डेमें ३ भागतक गाड़कर कुक्कुटके बराबर ऊंचा जङ्गलीकण्डोंका पुटदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर कपड़मिट्टी और डाटको हटाकर शीशीको साफकरके रसको निकालले । फिर उसमें सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, त्रिकटु, त्रिफला, गूगल, भुनीहींग, इन्द्रजव, भांग, चित्रकमूल, अजमोद, अजवायन इनसबको समभाग लेकर बारीक चूर्ण करके पारेके बराबर मिलाकर १–२ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ५–५ रत्ती पके पानके रसमें खाकर दो कुल्ल थोड़ागरम जल पीवे, प्यास न हो तो एकही कुल्ल पीवे । क्षार, अम्ल, दाल, तैलके पदार्थ, तैलाभ्यङ्ग, सम्पूर्ण शाक, दिनका शयन, इनको छोड़कर हितकारक पदार्थ और ब्रह्मचर्य का सेवनकरे । सन्निपातकी निश्चितनावस्थामें देव, ब्राह्मण, कुमारी और योगिनीका शक्त्यनुसार पूजनकर इनरसका योगकरे, पूजनके विना फल नहीं होता । इसरसके देनेसे सन्निपातादिकज्वर, प्लीहा, पांचप्रकारका गुल्म, वातजविकार, शूल, परिणामशूल, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि और ग्रहणी येसब नष्ट होतेहैं । यह कईबारका परीक्षितहै ॥ ३२४ ॥

३२५ प्राणेश्वररसः (सिद्धाद्यः) (तृतीयः)

गन्धेशाऽभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम् ।
स्वर्जीटङ्कयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥ १४५३ ॥
वराव्योपेन्द्रबीजानि द्विजीराऽग्नियवानिकाः ।
सहिङ्गुबीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥ १४५४ ॥
सिद्धप्राणेश्वरः सूत प्राणिनां प्राणदायकः ।
माषैकं भक्षयेदस्य नागवल्लीदलै र्युतम् ॥ १४५५ ॥
उष्णोदकाऽनुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम् ।
ज्वराऽतिसारेऽतिसृतौ केवले वा ज्वरेऽपि वा १४५६
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदेऽपि च ।
वातरोगे तथा शूले शूले च परिणामजे ॥ १४५७ ॥

र स , र च , र क , भै र , र. चि , रसायनस , र. सु , र का , यो म , र सि , ज्वराऽतिसारे ।

टि०—र स , र च एतयोर्ग्रन्थयोर्द्वितीयस्थाने भागे व्यत्यास कृत्वा सर्जरसश्चाऽधिकतया प्रक्षिप्य पाठान्तर स्थापित स नोचित , सर्जरसस्तु नैव निवेशनीय इति सुधीभिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अभ्रकभस्म ४–४ भाग, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पांचोंनमक, त्रिफला, त्रिकटु, इन्द्रजव, सफेदजीरा, स्याहजीरा, चित्रक, अजवाइन, भुनाहींग, विड्ङ्गतण्डुल और सौंफ येसब १–१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा पानमें रखकर खाकर ऊपरसे गरमजल पीनेसे ज्वरातिसार, अतिसारकी अधिकता, साधारण ज्वर, त्रिदोषज ज्वर, ग्रहणी, वातरोग, शूल, परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२५ ॥

३२६ प्राणेश्वररसः (चतुर्थः)

शम्बूकतुल्यं रसगन्धकल्कं
पित्तैर्विमर्द्याऽथ पुटं ददीत ।
जयारसेनैकदिनं विमर्द्य
वल्लाष्टकं वातभवे ददीत ॥ १४७८ ॥
मरीचचूर्णेन घृतान्वितेन
प्राणेश्वरः सप्तदिनं त्रिसप्त ।
मरीचमाज्येन युतं निशायां
जयां निषेवेत ततः सुखी स्यात् ॥१४५९॥

र द्दी , र मृ. अतिसारे ।

टि०—कपुचित्पुस्तकपु शम्बूकतुर्यमिति पाठो दृश्यते, तत्र शम्बूकभस्मनश्चत्वारो भागा ग्राह्या पारदगन्धयोस्त्वेकैक इति विशेष ।

भाषा—घोंघाकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर यथालाभ पञ्चपित्तोंसे मर्दनकर गोला बनाय भूधरपुटमें आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर एकदिन भांगके रससे मर्दनकर ३–३ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ गोली घृत और कालीमिर्चोंके साथ ७ अथवा २१ दिनतक देनेसे वातजअतिसार निवृत्त होता है । रातमें सोतेसमय शक्त्यनुसार मिर्च, घी और भांगका सेवन करे ॥ ३२६ ॥

३२७ प्राणेश्वररसः (पञ्चमः)

रस गन्ध समं शुद्धं मृतं ताम्र मृतं रसम् ।
दिनैकं तालमूल्याश्च वाराहा रसमर्दितम् ॥१४६०॥
मुसल्या वा द्रवे मर्द्य यथालाभं दिनं ततः ।
निरुद्धं काचकूप्यां तु वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥१४६१॥

२

दिनं वा भूधरे पक्त्वा समादाय विचूर्णयेत्।
त्रिक्षार पञ्चलवणं त्रिफलाव्योषचित्रकैः ॥ १४६२॥
सजीरकैः सेन्द्रयवै हिङ्गुगुग्गुलुदीप्यकैः।
सर्वैः समैः पूर्वसमं चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ॥ १४६३॥
माषमात्रं प्रदातव्यं किञ्चिदुष्णोदकं पिबेत्।
सन्निपाताऽचले वज्रं सज्वरग्रहणीप्रणुत् ॥
कुर्यात्प्राणपरित्राणमतः प्राणेश्वरो रसः ॥ १४६४॥

नि र., र. सु, र. का., र क यो, र. को, सु प्र, सन्निपाते।

टि०-र र. म, र म मा, यो, र. श्री, व रा, र पा, एषु ग्रन्थेषु अस्मिन्नेव पाठे ताम्रस्थानेऽभ्रक नियोज्य रसान्तरता स्वीकृता।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और पारदभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर तालमूली, वाराहीकन्द और मुसलीके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें पकावे अथवा एकरोज भूधरयन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतल होने- पर निकालकर सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, जीरा, इन्द्रजव, हींग, गूगल और अजवाइन सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वसमें बराबर प्रमाणसे मिलाकर एक पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ मासा गरमपानीके साथ देनेसे सन्निपात और ज्वरसहित ग्रहणी नष्ट होती है ॥ ३२७ ॥

३२८ प्राणेश्वररसः (लघुः) (षष्ठः)

त्रिक्षारं ग्रन्थिकं व्योषद्विजीरकयवानिकाः।
तेजोवती धूर्तबीजलवङ्गाऽर्ककराऽनलम् ॥ १४६५॥
रसगन्धौ विषं शिग्रु निर्गुण्ड्यार्द्रकधूर्तजैः।
विधाय भावना गुञ्जाद्वयं द्विगुणशर्करम् ॥ १४६६॥
सद्यो जलाऽनुपानेन रसः शीतज्वराऽपहः।
लघुःप्राणेश्वरः सोऽयं रसो गुप्तो ज्वरे मतः ॥ १४६७॥

र. का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पिपलामूल, त्रिकटु, दोनोंजीरे, अजवाइन, तेजवलकी छाल, शुद्ध धतूरेकेबीज, लौंग, अकलकरा, चित्रकमूल, शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, और सहिजनकीछाल, येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर संभालू, अदरख और धतूरेकी १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करके साथ देकर ताजा पानी पिलानेसे यह शीतज्वरको नष्टकरता है ॥ ३२८ ॥

३२९ प्राणेश्वररसः (सप्तमः)

पुनर्नवाहाटकयोणिकानां
पाठासुदुग्धाकलहप्रियाणाम्।
शुद्धद्रवैः सूतवरः सुपिष्टः
स्विन्नश्च गन्धेन चतुर्गुणेन ॥ १४६८॥
योज्योऽथ मर्द्यो हलिनीजलेन
ब्राह्मीसदास्वर्णपुनर्नवानाम्।
कासघ्नमाचीहरिवल्लभानां
दिनत्रयं गोलमथो विधाय ॥ १४६९ ॥
स्थाल्यां पचेत्तत्सिकताख्ययन्त्रे
रसैर्विमर्द्यो दिवसं रसः स्यात्।
प्राणेश्वरः शुष्कतमेऽल्पभृष्टे
कटुत्रयं टङ्कणयुक्कलांशम् ॥ १४७० ॥
अस्मिन् प्रयुञ्ज्याद्बलवर्णकान्ति-
पुष्टिप्रदे वृद्धसुखोद्गते च।
आदौ तथाऽन्ते ससितो द्विमाषः
प्रवक्ष्यमाणेषु गदेषु देयः ॥ १४७१ ॥
ज्वरे त्रिदोषप्रभवे क्षये च
श्वासे सकासे ग्रहणीविकारे।
गुल्मेऽथ पित्ताऽसृजि पाण्डुरोगे
तथाऽतिसारेऽतिकृशेऽतिरूक्षे ॥ १४७२ ॥
ततस्तु तैलेन विमर्द्य देहं
मूर्ध्न्यसृग्मेऽङ्घ्रियुगस्य सन्धौ।
सीमन्तिनीनां करपल्लवस्थैः
सुवर्णकुम्भैः सलिलप्रयोगम् ॥ १४७३ ॥
विण्मूत्ररेकाऽवधि सन्निपाते
ज्वरे त्वजीर्णे कुशले विदध्यात्।
कण्ठाऽवगाहे ग्रहणीगदेषु
गुल्मेष्वतीसारनिपीडितेषु ॥ १४७४ ॥
पाण्डौ क्षये सेचनमेव शस्तं
पित्ताऽधिके क्षीणबले जरत्सु।
अन्येषु रोगेषु विचार्य शक्तिं
कार्योऽम्बुयोगः सकलाऽऽमयघ्नः ॥ १४७५॥
देयो न कुष्ठे न च भूतदोषे
हृत्यर्दिते नैष रसः कदाचित्।
अन्यान् जयत्येष गदान् स्वशक्त्या
सम्यक् प्रयुक्तः सलिलप्रयोगात् ॥ १४७६ ॥
दध्योदनं शर्करया समेतं
पथ्यञ्च मुद्गाम्बु हितं करोऽल्पे।
वृन्ताकवल्लीफलजीरकाणि
सदाऽहितान्यत्र च वारयेत्तम् ॥ १४७७॥

रसायनम, र.का, र र.दी., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पुनर्नवा, अकलकरा, बन्दाल, पाठा, चमारदूधी, करिहारी, इनके रसोंसे १-१ दिन पारेको मर्दनकर गोला बनाय चतुर्गुणित गन्धकको गलाकर बीचमें रखदे, दो पहरतक गन्धकको मन्दाग्निपर रहनेदे फिर नीचे उतारदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर गन्धकको खुरचकर निकालदे और पारेको करिहारी, ब्राह्मी, सुदर्शनी, मायपर्णी, धतूरा, पुनर्नवा, कसौंदी, मकोय, तुलसी इनप्रत्येकके रसोंसे ३ रोज मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें पकावे। स्वाङ्ग

शीतल होनेपर निकालकर १-१ रोज़ पूर्वोक्त रसोंसे मर्दनकर सुखादे फिर अग्निपर थोडासेककर त्रिकटु और सुनासुहागा सम-भागका चूर्ण सोलहवा हिस्सा मिलादे और १-२ पहर घोटकर रखले। यह बल, वर्ण, कान्ति और पुष्टिको करताहै, इसमेंसे २-२ माशेकी मात्रा शक्करके साथ देनेसे त्रिदोषज ज्वर, क्षय, श्वास, कास, ग्रहणी, गुल्म, रक्तपित्त, पाण्डु, अतिसार, अत्य-न्तक्षुधाता और अत्यन्तरूक्षता इनसबको यह दूरकरताहै। दवा लेनेके बाद तैलसे मालिशकर मत्था, स्कन्ध और पैरोंकीसन्धि योंपर ठंढेपानीकी धारादे। जब असह्य ठंड लगने लगे तब बन्दकरदे। ग्रहणी, गुल्म और अतिसारमें कण्ठपर्यन्त पानीमें प्रवेशकरावे। पित्ताऽधिकव्याधि और अत्यन्त क्षीणताप्रभृति रोगोंमें रोगीकी शक्ति देखकर जलप्रयोगकरना। कुष्ठ, मूत्रदोष, कृमिदोष इनमें जलप्रयोग नहीं करना। जलप्रयोगके बाद दही, शक्कर के साथ भातदेना, कृश और अल्पप्राण आदमीको मुद्गका यूष देना। बैंगन, कोंहड़ा, जीरा और करेले सर्वदा अहितकर रहते इसलिये इसप्राणेश्वरके प्रयोगमें भूलकरभी न देवे ॥३२९॥

३३० प्राणेश्वररसः (अष्टम)

दुग्धिकानान्तु मध्ये यां वेष्टयन्ति पिपीलिकाः।
सञ्जाते तां करस्पर्शे त्यक्त्वा गच्छन्ति दूरतः १४७८
मधुसञ्जीवनी नाम पञ्चाङ्गां तां समानयेत्।
वर्तितां खरमूत्रेण स्थापयेद्दिनसप्तकम् ॥ १४७९ ॥
गालयित्वा च वस्त्रेण ग्रहीतव्यं पलद्वयम्।
चुल्ल्यां खर्परमारोप्य वह्निं संज्वालयेदधः ॥१४८०॥
शुद्धसूतस्य गद्याणान् विंशतिं खर्परे क्षिपेत्।
आरग्वधककाष्ठेन परेणाऽगस्त्यजेन वा ॥ १४८१ ॥
काष्ठाभ्यां चालयेत्सूत क्षिप्त्वा मूत्रं मुहुर्मुहुः।
वस्त्रपूते शनैः क्षिप्ते निक्षिपेद्दुग्धिकारसे ॥ १४८२ ॥
ध्मातो रीत्याऽनया सूतो मृतः स्याद्भस्मसन्निभः।
रौप्यं वङ्गं तथा ताम्रं स्वर्णञ्च तत्तिवर्णजम् ॥१४८३॥
कान्तायसं तथा नागं षण्णां पत्राणि वै पृथक्।
कृत्वा कण्टकवेध्यानि स्वच्छान्येकाङ्गुलानि च १४८४
निम्बुकस्य रसे क्षिप्त्वा विन्यसेन्मृतपारदम्।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा सूताभ्यक्तदलानि च ॥१४८५॥
छाणकानाञ्च विंशत्या लोहं लोहे क्रमात्पुटम्।
एवं दिनाऽष्टकं स्वेद्यं सूतेन हेमजानि च ॥ १४८६ ॥
स्वाङ्गशीतं क्षिपेत्खल्वे दुग्धगन्धकसंयुतम्।
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मर्दयेच्च तम् ॥ १४८७ ॥
काञ्चनारतरो र्मूलं त्वचा श्रीखण्डमर्दितम्।
वज्रीक्षीरेण चैकाहमर्कक्षीरेण वासरम् ॥ १४८८ ॥
एवं चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यो वर्तुलगोलकः।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा चतुर्भिश्छाणकैः पुटम् ॥१४८९॥
दह्यते गन्धको यावत्तावद्देयं मुहुर्मुहुः।
मृतश्वेताभ्रकं चूर्णं तावत्स्यान्मृतताम्रजम् ॥१४९०॥
चूर्णं पीतकपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम्।
प्रत्येकं षट् च गद्याणान् क्षिपेत्पीठीञ्च हेमजाम् १४९१
सूक्ष्मां खल्वे कृतां पिष्टीं वज्रीक्षीरेण वासरम्।
एकाहं चाऽर्कदुग्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ॥१४९२॥
वृपान् कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटे च तान्।
वस्त्रमृत्तिकया लिप्त्वा देयं गर्तान्तरे पुटम् ॥१४९३॥
स्वाङ्गशीतं क्षिपेत्कूप्यां खल्वे सञ्चूर्णयेद् दृढम्।
तच्चूर्णं कुम्पके क्षेप्यं सञ्जातः सत्वरो रसः।१४९४।
साज्यं वल्लत्रयं ग्राह्यं द्वात्रिंशन्मरिचैः सह।
अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयो र्वातरक्तयोः ॥ १४९५ ॥
बद्धकोष्ठे च मन्दाग्नौ क्षये शूले त्रिदोषजे।
कामहीने बलक्षीणे श्लेष्मरोगिषु वायुषु ॥ १४९६ ॥
मरीचाऽऽज्यैरजीर्णेऽपि ज्वरेपूर्णोदकेन च।
मरिच्याज्यादिकं नैव देयं सर्वज्वरेषु च ॥ १४९७ ॥
तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरभोजनम्।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते मासैकानन्तरं ध्रुवम् ॥
रसं गृह्णाति यो नित्यं स भवेद्धेमकान्तिभः ॥१४९८॥

र कं ली, रसचि,

भाषा—दूधीके भेदोंमें जिसपर चीडियां लदीरहतीहैं और हाथके लगतेही उसे छोड़कर दूर भगजातीहैं उस जड़ीका नाम मधुसञ्जीवनीहै। इसके पञ्चाङ्गको लाकर सिलपर पीस अवानगधेके चतुर्गुणित मूत्रमें घोलकर हडीमें बन्दकर ७ दिन तक एकान्तमें रखदे, आठवें दिन कपड़ेसे छानकर रखले। इसकेबाद १० तोले शुद्धपारेको मिट्टीके नये खपड़ेमें डालकर चूल्हेपर चढ़ादे और नीचे बेर वगैरहकी सारिष्ठलकड़ीकी आच जलावे। उसमें २ पल मधुसञ्जीवनीका बनाया हुआ द्रव डालकर अड़ूसा और अगस्त्यकी दो लकड़ियोंसे चलावे। द्रव जलजानेपर दूसरा डालता जाय। इसतरह करते २ पारा जब मूर्च्छित होजाय तब इसको मूषामें डालकर कोयलोंपर रखकर धमन करे और द्रव डालता जाय तो यह एकदम सफेद राखकी तरह होजायगा। फिर चादी, वङ्ग, ताम्र, उत्तमसुवर्ण, कान्तलोह और सीसा इन छ धातुओंके बारीक २ कण्टकवेधी १-१ अङ्गुलके १०-१० तोले पत्र बनाकर सुवर्णके पत्र और पारेकीभस्मको नीबूके रसमें डालदे। फिर शरावसम्पुटकरके २० जङ्गलीकण्डोंकी आचदे, ऐसे आठ आचें देवे। फिर इसमें दूधमें शोधाहुआ १० तोले गन्धक डालकर भंगरा, कचनारकी छाल, सफेद चन्दन, थूहर और आकका दूध इनप्रत्येकमें १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४ कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् रसोंमें घोटकर आचदे। जब गन्धक सारा जलजाय तब आचदेना बन्द करदे। फिर चांदीके पत्रोंको डालकर पूर्ववत् आचेंदे और उसीतरहसे वङ्ग, तावा, कान्तलोह और सीसेके पत्रोंको डालकर जारण करे। पूर्वलोहकेभस्मजानेपर दूसरेको डाले। फिर सफेद अभ्रक, तावा, पीलीकौडी और शङ्खकी ३-२ तोले भस्में पूर्व

भस्ममें मिलाकर धूहर, आक इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर छोटी २ टिकड़ियां बनाकर छायाशुष्ककर शरावसम्पुट में बन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल कर धूहर और आकके दूधमें १-१ रोज़ मर्दनकर आतशी शीशीमें भरके १ दिनरातकी बालुकायन्त्रमें आंचदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर खरलकर शीशीमें भरदे। इसमेंसे ९-९ रत्ती २२ कालीमिर्चोंकेसाथ देनेसे १८ प्रमेह, दोनोंतरहके गुल्म, वात रक्त, बद्धकोष्ठ, मन्दाग्नि, क्षय, त्रिदोषजशूल, शुक्रक्षीणता, श्लेष्म और वायुरोग इनसबको यह दूरकरताहै। मरिच और घीके साथ देनेसे जीर्णज्वरनष्टहोताहै। साधारणज्वरमें गरमपानीके साथ देना। मरिच, घी, तैल, क्षार और अम्ल येसब ज्वरोंमें न देवे, मधुर-भोजनकरावे। इसतरहकरनेसे एकमहीनेमें असाध्यसे असाध्य-रोग नष्टहोतेहैं और सुवर्णके सदृश कान्ति होतीहै ॥ ३३० ॥

३३१ प्राणेश्वररसः (नवमः)

सूतं गन्धकमभ्रकं सममहस्तालीद्रवे मर्दितं,
कूपिस्थं खटिकानिरुद्धवदनं मृद्वस्त्रबद्धं पुटेत्।
पीतो भृङ्गिकया युतो रसनृपः प्राणेश्वरः सोऽमृतो,
व्योषक्षारजयायुतोऽथ मधुना सर्वातिसाराञ्जयेत् ॥

र. रा., अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर एकरोज़ तालमूलीके रससे मर्दनकर आतशीशीशीमें कल्हकोमरके खड़ियामिट्टीसे डाट लगाकर समस्तपर २-३ कपड़मिट्टी देकर सुखावे। शीशीको ३ भागतक खड्डेमें बन्दकर कुक्कुटपुट पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ५-५ रत्तीकी मात्रा भंगरे अथवा भिलोयके रसके साथ अथवा त्रिकटु, तीनोंक्षार और भागके साथ अथवा मधुकेसाथ औचिनी देकर देनेसे यह समस्त अतिसारोंको दूरकरताहै ॥ ३३१ ॥

३३२ प्राणेश्वररसः (दशमः)

रसाऽभ्रगन्धान्सविषान्समानान्
सुशुद्धियुक्तान्निपुणः प्रगृह्य।
पुनर्नवालाङ्गलिदेवदाली-
सुवर्णदुग्धीजरसेन वृक्ष्याः ॥ १५०० ॥
दिनं दिनं घर्मविभावितं त-
च्चतुष्कं विधायाऽथ पुनश्च तथ।
धत्तूरकासघ्नसुकाकमाची-
ब्राह्मीसहादेव्यपराजितानाम् ॥ १५०१ ॥
सर्वोत्थयाभिश्च विमर्द्य सम्यक्
मृत्कर्पटैः सम्पुटके निरुद्ध्य।
भाण्डे पचेद्वालुकसम्भृते त-
मूर्द्धपुटेत्त्र्यूषणटङ्कणाढ्यैः ॥१५०२॥
कलांशकं तत्र विषं नियोज्य
प्राणेश्वरोऽयं शिव एव साक्षात्।
पात्रेऽष्टकोणे विरचय्य पद्मं
मध्ये रसं सर्वदले दिगीशान् ॥१५०३॥
सम्पूज्य वह्नं सहनागवल्ली-
दलेन सिद्धं सिकताऽनुपानम्।
ज्वरग्रहण्योरतिसारगुल्म
क्षयेष्वजीर्णे सहकासपाण्डौ।
जीरेण देयं न तु पौत्रिकाणि
मांसानि शस्तोऽत्र जलाभियोगः ॥१५०४॥

र. सं., अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, अभ्रकभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पुनर्नवा, करिहारी, बन्दाल धतूरा, दूधी और पाठाके रसोंमें १-१ दिन भावना देकर सुखाले। फिर धतूरा, कसोंदी, मकोय, ब्राह्मी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मूर्वा, अपराजिता इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिट्टी देकर सुखाकर बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होने पर निकालकर इसमें सोलहवां हिस्सा त्रिकटु, सुहागा और शुद्ध बछनागका चूर्ण मिलाकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े। अष्टकोण पात्रमें अष्टदल पद्म बनाय बीचमें रसको रक्खे, आठों दलोंमें दिक्पालोंको स्थापनकर पूजाकरे। फिर इसमेंसे ३ रत्ती पानमें रखकर देवे और ऊपरसे शक्करका पानी पिलावे तो ज्वर, ग्रहणी ये नष्टहों। अतिसार, गुल्म, क्षय, अजीर्ण, कास, पाण्डु, इनमें जीरेकेसाथ देवे। सुअरकामांस भूलकरभी न दे। जलयोग इसमें प्रशस्तहै ॥ ३३२ ॥

३३३ प्राणेश्वररसः (महान्) (एकादशः)

गन्धकाऽभ्रं समं सूतं वाराहीरसमर्दितम्।
हंसपादीरसेनाऽपि मर्दयेत्रिदिनं मृदु ॥ १५०५ ॥
काचकूप्यन्तरे क्षिप्त्वा मुखं तस्य निरुद्ध्य च।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे तथा यामचतुष्टयम् ॥ १५०६ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय मर्दयेदेभिरौषधैः।
पञ्चकोलञ्च त्रिक्षारं जीरकद्वयदीप्यकम् ॥ १५०७ ॥
मरिचं पञ्चलवणं गुग्गुलुञ्च विषद्वयम्।
त्रिजातकं लवङ्गञ्च वरारास्नाऽश्वगन्धिका ॥१५०८॥
जम्बीराऽऽर्द्रकभृङ्गाणां रसैः सम्मर्दयेत्पृथक्।
सप्तरात्रं ततो गुञ्जाप्रमाणं वटकीकृतम् ॥ १५०९ ॥
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सेवयेत्सर्वरोगजित्।
सन्निपातमभिन्यासं धनुर्वातञ्च तान्द्रिकम् ॥१५१०॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यञ्च पाण्डुकामलपीनसान्।
शोफं गुल्मं तथाऽर्शांसि क्षयञ्च ग्रहणीगदान् ।१५११।
ज्वरं कुष्ठ प्रमेहञ्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः।
सर्वेषां वातरोगाणां महाप्राणेश्वरो रसः ॥ १५१२ ॥

व. रा., वै. चि., वातव्याधौ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अभ्रकभस्म समभाग लेकर वाराही और हंसराजकेरससे ३-३ दिन मर्दनकर आतशी

शीशीमें भरकर मुंहपर खड़ियामिट्टीकी डाटदेकर समस्तपर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखादे। सूखनेपर ४ पहरतक वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पञ्चकोल, त्रिक्षार,, दोनोंजीरे, अजवाइन, मरिच, पञ्चलवण, गूगल, सर्पविष, बच्छनाग, त्रिजात, लौंग, त्रिफला, रास्ना, असगन्ध, जंभीरी, अदरख, भंगरा, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे सन्निपात, अभिन्यास, धनुर्वात, तान्द्रिक, कास, श्वास, अग्निमान्द्य, पाण्डु, कामला, पीनस, शोथ, गुल्म, बवासीर, क्षय, ग्रहणी, ज्वर, कुष्ठ, प्रमेह, वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ३३३

३३४ प्लीहशार्दूलरसः

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक् पृथक्।
एभिः समं ताम्रभस्म योजयेच्चैव बुद्धिमान् ॥१५१३॥
मनःशिला वराटञ्च तुत्थं रामठलोहकम्।
जयन्ती रोहितञ्चैव क्षारटङ्कणसैन्धवम् ॥ १५१४ ॥
विडं चित्रं कानकञ्च रसतुल्यं पृथक् पृथक्।
भावयेत्त्रिदिनं यावत्त्रिवृच्चित्रकणाऽऽर्द्रकैः ॥१५१५॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत्सद्यः प्लीहविनाशिनीम्।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत् ॥१५१६॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृद्गुल्मं सुदुस्तरम्।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रधौ ॥ १५१७ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव प्लीहि सर्वज्वरेषु च।
श्रीमद्गहननाथेन प्लीहशार्दूल ईरितः ॥ १५१८ ॥

र. सं., र चि., र. सु., प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, ये प्रत्येक १ तो० ताम्रभस्म ५ तो०, शुद्धमैनसिल, पीलीकौड़ी, तुत्थ और लोह इनकी भस्में, भुनाहींग, जैत, रोहिड़ा, यवक्षार, सुहागा, सैन्धव, बिड्क्षार अथवा बिड़नमक, चित्रकमूल, धतूरेके बीज, येसब एक १ तोला लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलादे। फिर निसोत, चित्रक, पीपल और अदरखके रसोंसे ३–३ रोज़ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली पीपल और मधुके साथ देनेसे प्लीहा, अग्रमांस (हृदयादिकोंके रक्तवहादिस्रोतोंमें मांसवृद्धि), यकृत्, गुल्म, आमाशयकेरोग, उदररोग, शोथ, विद्रधि, अग्निमान्द्य, ज्वर, सम्पूर्णज्वर येसब नष्टहोते हैं ॥ ३३४ ॥

३३५ प्लीहान्तकोरसः

हतं शुल्वञ्च तारञ्च गगनाऽऽयसशुक्तिकाः।
दरदं पुष्करं सूतं गन्धकं नवमं तथा ॥ १५१९ ॥
गुग्गुलुं त्रिकटु रास्ना तथा जैपालबीजकम्।
त्रिफलां कटुकीं दन्तीं देवदालीं तु सैन्धवम् ॥१५२०॥
त्रिवृतां तु यवक्षारं वातारितैलमर्दितम्।
अष्टोदराणि पाण्डुत्वमानाहं विषमज्वरम् ॥ १५२१ ॥
अजीर्णमामं पित्तञ्च कफञ्च सर्वशूलकम्।
कासं श्वासञ्च शोथञ्च सर्वमाशु व्यपोहति ॥
प्लीहान्तको रसो नाम प्लीहोदरविनाशनः ॥१५२२॥

वै. क , भै., र., ध., प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—ताम्र, चांदी, अभ्रक, लोह, मोतीकीसीप और सिंगरफ इनकीभस्में, पोहकरमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, गूगल, त्रिकटु, रास्ना, शुद्ध जमालगोटेकेबीज, त्रिफला, कुटकी, दन्तीमूल, बन्दाल, सैन्धव, निसोत और यवक्षार समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकरे। फिर एरण्डके तैलमें मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे 1–1 गोली उचितानुपानके साथ देनेसे ८ प्रकारके उदररोग, पाण्डु, आनाह, विषमज्वर, अजीर्ण, आम, पित्त और कफकेरोग, समस्तशूल, कास, श्वास, शोथ येसब नष्टहोते हैं ॥ ३३५ ॥

३३६ प्लीहारिरसः (प्रथमः)

कर्षैकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम्।
पलार्द्धं मृतताम्रञ्च तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥ १५२३ ॥
मृगाऽजिनस्य भस्माऽपि कर्षमत्र प्रदापयेत।
लिम्पाकाऽङ्घ्रित्वचस्तद्वत्सर्वमेकत्र कारयेत् ॥१५२४॥
अस्य गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः।
मधुना वह्निचूर्णेन खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ १५२५ ॥
असाध्यमपि प्लीहानं हन्त्ययदर्थं न संशयः।
याकृतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकभगन्दरान् ॥ १५२६ ॥

र.मं., र.सु ,प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धहरिताल १ तोला, सुवर्णभस्म ३ माशे, ताम्र और अभ्रकभस्म २–२ तोले, मृगचर्मभस्म तथा अमिलतासकी जड़की छाल १–१ तोला लेकर सबका बारीकचूर्णकर अमिलतासकीजड़कीछालके रसमे ३–३ रोज़ मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली चित्रकमूलके चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसे असाध्यप्लीहा, यकृत, पाण्डु, गुल्म और भगन्दर येसब नष्टहोतेहैं ॥ ३३६ ॥

३३७ प्लीहारिरसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं टङ्कं विषं व्योषं फलत्रिकम्।
तोलैकैकं समादाय जैपालञ्च तदर्द्धकम् ॥ १५२७ ॥
चिञ्चुकस्य रसेनैव याममात्रन्तु मर्दयेत्।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ॥१५२८॥
वटिका प्रदातव्या भक्षयेदरसेन च।
गुदाऽङ्कुरे गुल्मशूले प्लीहशोथे कफात्मके ॥ १५२९ ॥
उदावर्ते वातशूले श्वासकासज्वरेषु च।
रसः प्लीहारिनामाऽयं कोष्ठामयविनाशनः ॥
आमवातगदच्छेदी श्लेष्माऽऽमयविनाशनः ॥१५३०॥

भै.र.,वै.क.,प्लीहयकृदधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और बछनाग, त्रिकुटु, त्रिफला, ये सब १–१ तोला, शुद्धजमालगोटा सबसे आधा लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पलाशकेरससे १ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसके साथ देनेसे बवासीर, गुल्म, शूल, प्लीहा, कफात्मकशोथ, उदावर्त, वातशूल, श्वास, कास, आमाशयकेरोग, आमवात, श्लेष्मविकार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३३७ ॥

३३८ प्लीहार्णवरसः

हिङ्गुलं गन्धकं टङ्कमभ्रकं विषमेव च।
प्रत्येकं पलिकं भागं चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥१५३१॥
पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलार्द्धकम्।
मर्दयित्वा वटीं कुर्याद्वल्लमानां प्रयत्नतः ॥१५३२॥
सेव्या शेफालिदलजै र्वटी माक्षिकसंयुता।
प्लीहानं पञ्चप्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥१५३३॥
ज्वरं मन्दानलञ्चैव कासं श्वासं वमिं भ्रमम्।
प्लीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्दभाषितः ॥१५३४॥

र स, र चि, र च, र. सु, प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धशिंगरफ, गन्धक और सुहागा, अभ्रकभस्म और शुद्धबछनाग १–१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर घोटकर कज्जलसमानकरके पीपल और मिर्च २–२ तोले लेकर बारीकचूर्णकर मिलादे। फिर खस और हारसिंगारके पत्तोंकेरससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देनेसे ५ प्रकारकी प्लीहवृद्धि, ज्वर, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन और भ्रम नष्टहोतेहैं ॥ ३३८ ॥

३३९ प्लीहोदरगुल्महरोरसः

क्षमागुणौ सूतकवज्रौ विमर्दितौ पक्वसूर्यपत्ररसे।
कृत्वा गोलं पुटयेत्सद्रसस्नुक्सलिलेन मर्दयेत्त्रिदिनम्॥
प्लीहोदरहृत्सूतो रोहितक्वाथयुग्वल्लः।
सैन्धवयुक्तो गुल्मे स्नुग्रसयुक्तोऽपि मण्डलत्रितयात्॥
प्लैहेयपृष्ठे रुधिरं विस्राव्याऽर्कपयः क्षिपेत्।
प्लीहोपशान्तिस्तेन स्याद्वासवप्रमिते दिनैः ॥१५३७॥
दारु कुष्ठं हैमवती शताह्वाहिङ्गुसैन्धवाः।
अर्कक्षीरयुतो लेपः सर्वोदरगदापहः ॥ १५३८ ॥

र, प्लीहोदरे।

टि०—अस्य रसस्यापाततो द्वितीयवद्धेश्वरण साम्य प्रतीयत परभावना दावनिविरोधत्वात्स्वतन्त्रत्वाऽय स्थापित इति विद्वद्भिराकलनीयम्।

भाषा—पारा १ भाग और वज्रभस्म ३ भाग लेकर पके-हुए आकके पत्तोंके रससे मर्दनकर गोलाबनाय वराहपुटकी आच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर थूहरके दूधसे ३ रोजमर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली रोहिपकेक्वाथसे देनेसे प्लीहा नष्टहोताहै। सैन्धव अथवा थूहरके रसकेसाथ २१ रोज़तक देनेसे गुल्म नष्टहोताहै। प्लीहाकी पीठपरसे जोंकवगैरहसे रक्त निकलवाकर आककादूध डालदे। इससे ८ रोज़में प्लीहाकी शान्ति होजातीहै। देवदारु, कुष्ठ, रेवंचीनी, सौंफ, हींग और सैन्धव सब समभागलेकर आककेदूधमें घोटकर लेपकरनेसे उदररोग नष्टहोतेहैं ॥३३९॥

३४० फणिपतीरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं चाऽभ्रकं लोहभस्मकम्।
ताम्रभस्म समं मर्द्य जम्भनीरेण संयुतम् ॥१५३९॥
द्विदिनं गुटिका कार्या काचकूप्यां विनिक्षिपेत्।
विलिप्य मृत्तिकावस्त्रं वालुकायन्त्रके पचेत् ॥१५४०॥
षड्यामान्ते समुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
अनुपानविशेषेण शुक्रघातं निहन्ति च ॥ १५४१ ॥

व. रा, शुक्रघाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, लोह और ताम्र भस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जंभीरीनीबूके रसमें २ रोज़ घोटकर छोटी छोटी गोलियें बनाय सुखाकर आतशी शीशीमें भरके समस्तपर ३–४ कपड़मिट्टी देकर अच्छी-तरह सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर ६ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती अनुपान विशेषसे देनेसे शुक्रघात (शुक्रपात) नष्टहोताहै ॥३४०॥

३४१ फणिभूषणरसः

पारदं दरदं वङ्गं मृतनागं मृताऽभ्रकम्।
सर्वैःसमं शुद्धताल मर्द्यो निर्गुण्डिजे रसे ॥ १५४२ ॥
पाचितो वालुकायन्त्रे द्वियामं मन्दवह्निना।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मात्स्यमाहिषकच्छपैः ॥१५४३॥
वाराहशिखिजैः पित्तै र्भावितश्च पृथक्पृथक्।
अनुपानविशेषेण देयो वल्लद्वयो हितः॥ १५४४ ॥
सन्निपातान्निहन्त्याशु त्विच्छापथ्यं समाचरेत्।
शम्भुना कथितः पूर्वं रसोऽयं फणिभूषणः ॥१५४५॥

वै चि, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और शिंगरिफ, वङ्ग, नाग और अभ्रक भस्म सबसमभाग लेकर इनसबकी बराबर शुद्धहरिताल डालकर एकदोदिन मर्दनकर संभालूके रससे एकदिन घोटकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर दो पहर वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकालकर मछली, भैंसा, कछुआ, सूअर और मोरके पित्तोंसे एक एक भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अनुपान विशेषसे देनेसे यह सन्निपातोंको नष्टकरताहै। भूखलगनेपर इच्छानुसार पथ्य-देना ॥ ३४१ ॥

३४२ फणियोगः

मृतस्य कृष्णसर्पस्य दोर्षपुच्छान्त्रवर्जितम्।
अन्तर्धूमपुटे दग्धं तद्भस्म त्र्यूषसंयुतम् ॥ १५४६ ॥

वचा चाऽतिविषा कुष्ठमभ्रभस्म समं भवेत्।
भक्षयेत्कर्षियोगोऽयं वल्लैकं गलिताऽपहः ॥१५४७॥
वाकुचीबीजचूर्णञ्च निम्बपञ्चाङ्गसंयुतम्।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षं कुष्ठघ्नमनुपानकम् ॥१५४८॥

र.क.ल., गलितकुष्ठे।

भाषा—तत्काल मरेहुए कालेसांपका शिर, पुच्छ और अन्तड़िया निकालकर हंडीमें बन्दकर अन्तर्धूम दग्धकरे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर त्रिकटु, वच, अतीस, कुठ और अभ्रकभस्म सब समभाग लेकर एकजगह खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती लेकर बाकुचीकेबीज और निम्बपञ्चाङ्गके ३ माशे चूर्ण और मधु तथा घृतमें मिलाकर खानेसे गलितकुष्ठ दूरहो ३४२

३४३ फिरङ्गकुठारोरसः (प्रथमः)

खादिरं रसकर्पूरं त्रिफला कुष्ठकं मधु।
कौशिकञ्च लवङ्गैला समं सर्वं नियोजयेत् ॥१५४९॥
चतुर्विधा यवानी च गन्धकं शुद्धसूतकम्।
भल्लातकं गुडञ्चैव कर्षकर्षं विचूर्णयेत् ॥ १५५० ॥
कर्षमात्रं निषेवेत बलवर्णविवर्जितः।
सप्तके तु व्यतिक्रान्ते गच्छेत्पक्वं फिरङ्गकम् ॥१५५१॥

र.र कौ., फिरङ्गे।

भाषा—खैर, रसकपूर, त्रिफला, कुठ, मधु, गूगल, लौंग, इलायची, देशी तथा खुरासानी अजवाइन, अजमोद, खरजवाइन, शुद्ध गन्धक, पारा और भिलावे तथा गुड़ १-१ तोला लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर अन्य वस्तुओंके चूर्णमें मिलाकर एकजीव होनेतक कूटे। इसमेंसे १-१ तोला दही भंगरहके साथ निगलवावे और खानेको घी तथा गेहूंचनेकी रोटी देवे। इसप्रकार ७ दिन बीतनेपर अर्धस्रावस्थापन्न फिरङ्गरोग नष्ट होता है ॥ ३४३ ॥

३४४ फिरङ्गकुठारोरसः (द्वितीयः)

आकारकरभो दन्तीबीजञ्चैव समांशकम्।
रसं कुरण्टजे द्रावे मर्दयित्वा नियोजयेत् ॥ १५५२ ॥
फिरङ्गारण्यदावाग्निः कुष्ठव्रणकुठारकः।
यथेष्टं भोजनं कुर्यात्कटुतैलगुडांस्त्यजेत् ॥ १५५३ ॥

र.र.कौ., फिरङ्गरोगे।

भाषा—कटसरैयाके रसमें २-३ दिन घोटाहुआ पारा अकलकरा और जमालगोटा समभाग लेकर १-२ पहर मर्दनकर रखछोड़े। अथवा कटसरैयाके रसमें १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ देनेसे फिरङ्ग, कुष्ठ और व्रण नष्ट होते हैं। कड़वातेल और गुड़को छोड़कर यथेष्ट भोजन करे ॥ ३४४ ॥

३४५ फिरङ्गनाशनचूर्णम्

नागञ्च पारदञ्चैव प्रत्येकं निष्कमात्रकम्।
तयोस्तुल्यं भृष्टहिङ्गु तदर्धमहिफेनकम् ॥१५५४॥
एकीकृत्याऽखिलञ्चूर्णं माषैकं भक्षयेन्नरः।
क्षाराऽम्लं वर्जयेत्तावद्यावत्स्यादिति भेषजम् ॥
इत्येवं नाशयेत्क्षिप्रं फिरङ्गाऽऽमयमुद्धतम् ॥१५५५॥

र.र.कौ., फिरङ्गरोगे।

टि०—अस्मिन्योगे निष्कपरिमिता मात्राऽतिभयावहा आसीदनोऽस्य स्थाने माषैकमिति पाठ कृतोऽस्ति।

भाषा—नाग और पारदभस्म (अभावमें रससिंदूर) समभाग, इनदोनोंकी बराबर भुनाहींग और आधा अफीम लेकर सबको इकट्ठा मर्दनकर कज्जली बनाले। इसमेंसे १-१ माशा जलकेसाथ देनेसे यह भयङ्करफिरङ्गरोगको नष्टकरताहै। दवाका प्रयोग चले तबतक क्षार और खटाई न खाय ॥३४५॥

३४६ फिरङ्गनाशिनीवटी (प्रथमः)

आकारकरभञ्चैव दीप्यं जातीफलन्तथा।
दरदं निष्कमात्रांश्च विचूर्ण्य गुटिकाञ्चरेत् ॥
नागवल्लीरसेनैव सेव्या नित्यं फिरङ्गजित् ॥ १५५६ ॥

र. र. कौ., फिरङ्गरोगे।

भाषा—अकलकरा, अजवाइन, जायफल और शिंगरिफ समभागलेकर पानकेरसमें मर्दनकर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ देनेसे फिरङ्ग रोग नष्टहोताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ फिरङ्गनाशिनीवटी (द्वितीयः)

दरदं सूतकञ्चैव निष्कमात्रं पृथक्पृथक्।
जीर्णं गुडं पलं दत्वा लोहपात्रे विमर्दयेत् ॥१५५७॥
तुलसीस्वरसेनैव निम्बदण्डाद्दिनत्रयम्।
निम्बपत्रञ्च खदिरं सूर्यभक्तां पलंपलम् ॥ १५५८॥
फणिफेनं त्रिशाणञ्च सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
सायं प्रातश्च भोक्तव्यं माषैकं स्याऽनुपानतः ॥
दुग्धौदनं चरेत्पथ्यं सप्ताहेन फिरङ्गजित् ॥१५५९॥

र.र.कौ., फिरङ्गरोगे।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और पारा ४-४ माशे, पुरानागुड़ ४ कर्ष लेकर लोहेकेपात्रमें तुलसीके रसकेसाथ नीमके डण्डेसे ३ दिन मर्दनकर नीमकेपत्ते, खैर और हुरहुर १-१ पल, अफीम १२ माशे डालकर सबको एकजगह घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशे उचितानुपानके साथ देवे। पथ्यमें दूधभात खिलानेसे फिरङ्गरोगनष्टहोता है ॥ ३४७ ॥

३४८ फिरङ्गनाशिनीवटी (तृतीयः)

लवङ्गजातीफलहिङ्गुलं स्या-
दाकारचन्द्रं विडकं समांशम्।
कर्पोन्मितं सर्वमयोहिकुर्या-
द्दपिप्रमाणान्वटकान् प्रभाते ॥
भुक्त्वा च दुग्धौदलपथ्यमश्न-
न्निघ्नन्ति रोगं प्रबलं फिरङ्गम् ॥ १५६० ॥

र.र.कौ., फिरङ्गरोगे।

भाषा—लौंग, जायफल, शिंगरफ, अकलकरा, रसकपूर, विडङ्ग येसव १–१ तोलालेकर पानीकेसाथ ७ गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल ७ रोजतक लेनेसे प्रबलफिरङ्गरोग नष्टहोताहै । इसमें पथ्य दूधभात देना ॥३४८॥

३४९ फिरङ्गविध्वंसनोरसः

पारदश्च लवङ्गश्च मस्तकी जातिपत्रिका ।
समभागानि सर्वाणि रसार्द्धं गन्धकं शुभम् ॥१५६१॥
गन्धकस्य दशांशं तु शुद्धं फेनाश्म निक्षिपेत् ।
नागवल्यारसेनैव गुटिका मुद्गसन्निभा ॥ १५६२ ॥
देया प्रभातसायाह्ने गोधूमसघृताशने ।
सप्तरात्रेण हन्त्याशु रसः फिरङ्गनाशनः ॥ १५६३ ॥

चि र भ , फिरङ्गरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, लौंग, मस्तगी और जाविन्नी १–१ भाग, शुद्धगन्धक ½ भाग, शुद्धसोमल $\frac{1}{20}$ भाग लेकर सबकी कजली कर पानके रसमें घोटकर मूंगबराबर गोलिया बनावे । इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम पानीकेसाथ खानेसे सातदिनमें फिरङ्ग रोग नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० फिरङ्गशमनीवटी (प्रथमा)

गैरिकं रसकर्पूरमुपलाश्च पृथक् पृथक् ।
टङ्कमानं विनिष्पिष्य ताम्बूलीदलजैः रसैः ॥ १५६४ ॥
वटाश्चतुर्दश ज्ञेयाः फिरङ्गगदघातिकाः ।
सायं प्रातः समश्नीयादेकैकां दिनसप्तकम् ॥ १५६५ ॥
गोधूमविकृतीं दद्याद् घृतेन सितया सह ।
फिरङ्गव्याधिनाशाय वटिकेयमनुत्तमा ॥ १५६६ ॥

र प्र , फिरङ्गरोगे ।

भाषा—गेरू, रसकपूर, मिश्री ४–४ मासे लेकर पानके रसमें पीसकर १४ गोलिया बनावे । इनमेंसे १–१ गोली, सुबहशाम पानीकेसाथ खानेसे सातरोजमें फिरङ्गरोग नष्ट होताहै ॥ ३५० ॥

३५१ फिरङ्गशमनीवटी (द्वितीया)

टङ्कैकपारदमितं खदिरद्विटङ्क-
माकारकादिकरमश्च विघृष्य सप्त ।
कृत्वा वटीश्च खलु माक्षिकरामटङ्कै
प्रातः फिरङ्गशमनाय गिलेच नित्यम् १५६७
कट्वम्ले च परित्याज्ये भोज्यं रूक्षं विशेषतः ।
सप्तभिर्दिवसैर्नॄणां फिरङ्गो नश्यति ध्रुवम् ॥१५६८॥

चि क , भै र (परिशिष्टे) फिरङ्गरोगे ।

भाषा—४ मासे शुद्धपारा लेकर १२ मासे मधुमें मिलने तक घोटकर खैर और अकलकरा ८–८ मासे डालकर एक जीवहोनेपर ७ गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल पानीकेसाथ निगलनेसे ७दिनमें फिरङ्गरोग नष्टहोताहै । कटु अम्ल और रूक्षभोजन न करे ॥ ३५१ ॥

३५२ फिरङ्गशमनीवटी (तृतीया)

कर्षद्वयं श्वोशिवयोश्च वीर्य-
मक्षप्रमाणानि च तण्डुलानि ।
पिष्ट्वा वलायाः स्वरसैश्च सप्त
त्रिघ्ना वटीः सप्तदिनैर्नियोज्याः ॥१५६९॥
वटीत्रयस्याऽपि निषेव्य नित्यं
धूमश्च यो बाह्यफिरङ्गरोगी ।
स सप्तभिर्वा दिवसैश्च तस्मा-
द्विमुच्यतेऽम्लं लवणं त्यजेच्चेत् ॥ १५७० ॥

चि क , भै र , फिरङ्गरोगे । भैषज्यरत्नावल्या परिशिष्टे धूमप्रयोगेति नाम्ना व्यवहृत ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चावल १–१ कर्ष लेकर चावलोंको बारीक पीसकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्ज लीमें मिलाकर बलाके अङ्गस्वरसमें घोटकर २१ गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे रोजाना तीन वक्त निवातस्थानमें १–१ गोलीका धूआले । अम्ल और लवण छोड़दे तो ७ रोजमें बाह्यफिरङ्गव्याधिसे निर्मुक्त होजाता है ॥ ३५२ ॥

३५३ फिरङ्गशमनीवटी (चतुर्थी)

मुशल्याकुलकृष्णाऽपि पारसीकयवानिका ।
भल्लातकफलश्चाऽपि पलमानं पृथक्पृथक् ॥१५७१ ॥
पलार्द्धमानः सूतः स्यात् षट्पलोऽत्र गुडः स्मृतः ।
एकीकृत्याऽखिलं कुर्याद्वटीं कर्षप्रमाणतः ॥१५७२॥
खादेदेकां वटीं प्रातः यावदारोग्यदर्शनम् ।
गोदध्नश्चाऽनुपानेन फिरङ्गाऽऽमयनाशिनीम् ॥
निम्बुकेन विना सेव वर्जनीयमिहाऽपरम् ॥ १५७३ ॥

र प्र फिरङ्गे ।

भाषा—मुसली, अकलकरा, खुरासानीअजवाइन, भिलावा ये सब ४–४ कर्ष शुद्धपारा २ कर्ष, पुरानागुड ६ पल लेकर पहिले गुड़में मिलनतक पारेको घोटकर दूसरी चीजें डालकर एकजीव होनेतक कूटकर मिलावे और इसकी १–१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गायके दहीके साथ निगले जबतक कि पूरा आरोग्य प्राप्त न हो । इसमें नीबूको छोड़कर और सबचीजें खावे ॥ ३५३ ॥

३५४ फिरङ्गशमनीवटी (पञ्चमी)

यवानी द्विपला ग्राह्या खदिरश्चाऽष्टटङ्कः ।
पलङ्कयाऽष्टटङ्का स्यात्तत्र सूतं विनिक्षिपेत् ॥ १५७४॥
सपादटङ्कतुलितं दरदात्थमनुत्तमम् ।
भल्लातकफलान्यत्र नवसङ्ख्यमितानि च ॥ १५७५ ॥
पञ्चकर्षाऽऽज्यसंयुक्ताः कार्या वटयश्चतुर्दश ।
तास्वेका भक्षयेत्प्रातः सायङ्काले च बुद्धिमान् ॥१५७६॥
उपदशान् समस्तांश्च तद्भवा पिडिका अपि ।
सशोथं ग्रन्थिरातञ्च पूयस्रावादिकं जयेत् ॥ १५७७ ॥

उपदंशसमुद्भूतां पीडाश्चाशु व्यपोहति।
यस्येन्द्रियस्य मांसानि शीर्यन्ते प्रतिवासरम् ॥
तदुद्भवान् कृमींश्चाऽपि शीघ्रमेव विनाशयेत् ।१५७८।

र. प्र., फिरङ्गरोगे।

भाषा—अजवाइन२ पल, खैर २ कर्ष, गूगल २ कर्ष, शिंगरिफमे निकालाहुआ शुद्धपारा ५ मासे, मिलावां ९ नग लेकर गूगलमें पावकर्षघीमिलाकर नरम होनेतक कूटे फिर इसमें पारा डालकर एकजीव होनेतक घोटकर और चीज़ोंका बारीक चूर्ण मिलाकर १४ गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम खानेसे सबप्रकारके उपदंश, फुंसी, शोथ, गठिया, पूयस्राव और पीडा येसब शान्त होतेहैं। जिसकी इन्द्रियकामास दररोज़ गिरताहो उसकोभी इसकेप्रयोगसे तमाम कीडे मरकर आराम होजायगा ॥ ३५४ ॥

३५५ फिरङ्गारियोगः

मार्कवस्त्रिफला दन्ती ताम्रचूर्णमयोरजः।
उपदंशं निहन्त्येष वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ १५७९ ॥

यु सं., उपदंशे।

भाषा—भंगरा, त्रिफला, दन्ती अथवा जमालगोटा, तांबा और लोहेकी भस्म सब समभाग लेकर तांबे और लोहेकी भस्मको भंगरा और त्रिफलाके रसकेसाथ १–२ रोज़ मर्दनकर सबचीजोंका बारीक चूर्णकर मिलाकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे एक अथवा दोगोली जलप्रभृति उचितानुपानके साथ देनेसे समस्त उपदंशोंको यह नष्टकरताहै ३५५

३५६ फिरङ्गारिरसः (प्रथमः)

रसकर्पूरमरिचं लवङ्गं बृहदेलिका।
समभागानि सर्वाणि नागवल्ल्या दलद्रवैः ॥१५८०॥
गुटिका कोलमात्रा स्यात्प्रातः सायं प्रदापयेत्।
गोधूमं सघृतं पथ्यं फिरङ्गारीरसो वरः ॥ १५८१ ॥

चि र भ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—रसकपूर, मरिच, लौंग, बड़ी इलायची सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पानके रससे बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जलप्रभृतिकेसाथ सुबहशाम देनेसे फिरङ्गरोग नष्टहोताहै। घीकेसाथ गेंहूंकीरोटी पथ्यमें देना ॥ ३५६ ॥

३५७ फिरङ्गारिरसः (द्वितीयः)

रसकर्पूरतुल्यञ्च राला हिङ्गुलकं त्रुटिः।
खदिरश्चैव सौभाग्यं पूगं कङ्कोलकन्तथा ॥१५८२॥
तुल्यंतुल्यं समादाय नागवल्ल्या गुटी कृता।
देया कोलप्रमाणेन द्वे सन्ध्येऽलवणाऽम्लिकम् १५८३
फिरङ्गारी रसः ख्यातो सर्वोपद्रवनाशनः।
सप्तकेन न सन्देहो गोधूमं मुद्गतण्डुलैः ॥ १५८४ ॥

चि र भ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, शुद्धतुल्य अथवा भस्म, राल, शिंगरिफ, इलायची, खैर, सुनामुहागा, सुपारी, शीतलचीनी सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पानके रसमें घोटकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम देनेसे समस्त उपद्रवसहित फिरङ्गरोग ७ दिनमें नष्टहोताहै। खानेको मूंग, चावल और गेंहूं देना ॥ ३५७ ॥

३५८ फिरङ्गारिलेपः (प्रथमः)

सौराष्ट्रीं गैरिकं तुत्थं पुष्पकासीससैन्धवम्।
रोध्रं रसाञ्जनं दार्वी हरितालं मनःशिलाम् ॥१५८५॥
हरेणुकैले च तथा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
तच्चूर्णं क्षौद्रसंयुक्तमुपदंशेषु पूजितम् ॥ १५८६ ॥

यु सं, उपदंशे।

भाषा—फिटकड़ी और मगमाटी (फचड़ी), गेरू, तुत्थ, पुष्पाञ्जन (कज्जल), हीराकसीस, सेंधन, लोध, रसौत, दारुहल्दी, हरिताल, मैनसिल, हरेणुक (रोण, पहाड़ी) इलायची सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर घीमें मिलाकर लगानेसे सबप्रकारके उपदंश निवृत्तहोतेहैं ॥ ३५८ ॥

३५९ फिरङ्गारिलेपः (द्वितीयः)

स्वर्जिका तुत्थकासीसं शैलेयञ्च रसाञ्जनम्।
मनःशिलासमैश्चूर्णं व्रणवीसर्पनाशनम् ॥१५८७॥

यु सं., उपदंशे।

भाषा—सज्जी, तुत्थ, कसीस, छड़ीला, रसौत और मैनसिल समभागलेकर बहुतबारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसको सौबार धोएहुए घीवगैरहके साथ मिलाकर लगानेसे सबप्रकारके व्रण और विसर्प नष्टहोतेहैं ॥ ३५९ ॥

३६० बदरीपाकः

कुबेरप्रस्थमादाय क्षिप्त्वा रात्रौ चतुर्गुणे।
क्षीरे प्रातः पचेत्सम्यग्घृतार्द्धप्रस्थसंयुतम् ॥१५८८॥
खण्डं वर्णकृतं कृत्वा सुगन्धं सुविनिक्षिपेत्।
कर्पूरवासिते पात्रे मृन्मयेऽगुरुधूपिते ॥ १५८९ ॥
तस्मिन् सङ्कुट्य चूर्णानि दापयेद्भिषगुत्तमः।
चातुर्जातं त्रिकटुकं जातीपत्रफलन्तथा ॥ १५९० ॥
देवपुष्पं विडङ्गञ्च मिशि नागबला घनम्।
निशाद्वयं तथा लोहं शुल्वं वङ्गं पलार्द्धकम् ॥१५९१॥
प्रत्येकं चूर्णितं कृत्वा भक्षयेच्च पलं बुधः।
सर्वान् वाताऽऽमयांश्छूलानग्निमान्द्यं बलक्षयम्१५९२
प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रञ्च शर्कराऽश्मरिपाण्डुतुत्।
पीनसं ग्रहणीरोगमतीसारमरोचकम् ॥ १५९३ ॥

चि.र.भ, वातादौ।

टि०—अत्र क्षीरशब्देन जल ग्राह्यम्, रात्रौ क्षीरे बदरीफलप्रक्षेपे तद्विकृतिभावात्ताकाऽयोग्यत्वात्। क्षीरप्रक्षेपे दुराग्रहश्चेत्प्रातर्बदरीफलकार्थं कृत्वा घृतेन साकमत्युष्णं विधाय तत्र दुग्ध नियोजनीयम्, विकृतिभावाऽऽशङ्काविरहात्।

भाषा—एकसेर सूखे पकेहुएबेर लेकर रातमें ४ सेर पानीमें डालकर सवेरे पकावे । सेरभर पानी रहनेपर मसलकर छानले फिर आधसेर घी और एकसेर शक्कर डालकर पकावे । खौलनेपर ४ सेर दूध डालकर दोतारकी चाशनी बनाकर उतारले । फिर चातुर्जात, त्रिकटु, जावित्री, जायफल, लौंग, विडङ्ग, सौंफ, नागवला, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, लोह, ताम्र और वङ्ग-भस्म ये प्रत्येक २ कर्ष लेकर कपड़छान चूर्णकरके चाशनीमें मिलाकर अगरसे धूप देकर कपूरसे वासित कियेहुए मिट्टीके बर्तनमें रखदे । ६–७ दिनके बाद ४–४ तोले दूध वगैरहके साथ लेनेसे सब प्रकारके वातव्याधि, शूल, मन्दाग्नि, बलक्षय, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शक्कर, पथरी, पाण्डु, पीनस, ग्रहणी, अतिसार और अरुचि इनको यह नष्टकरता है ॥ ३६० ॥

३६१ बलादिमण्डूरम्

बला शतावरीमूलं यवैरण्डं पलद्वयम् ।
गुडस्य द्विपलं दत्त्वा पचेत्सान्द्रत्वमागतम् ॥१५९४॥
जीरकस्य पलश्चैव पिप्पल्याश्च पलन्तथा ।
चातुर्जातकचूर्णन्तु प्रत्येकं द्व्यष्टकं क्षिपेत् ॥ १५९५ ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं तथा ।
गोमूत्रे त्रिफलाक्वाथे निषिक्तं श्लक्ष्णचूर्णितम् १५९६
एतद्बलादिकं नाम मण्डूरं हन्ति दुस्तरम् ।
अम्लपित्तं सुदुर्धारं शूलं तीव्रं नियच्छति ॥१५९७॥

र. का, अम्लपित्ते ।

भाषा—बला, शतावरीकेमूल, जव, एरण्डबीजके और गुड़ २–२ पल लेकर सबसे चौगुना पानी डालकर पकावे । चाशनी होनेपर जीरा, पीपल १–१ पल, चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची और नागकेसर) ८–८ मासे, गोमूत्र और त्रिफलाके क्वाथमें बुझाकर फूंकाहुआमण्डूर २० तोले डालकर खूबमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ मासा उचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य अम्लपित्त और तीव्रशूल नष्टहोताहै ॥ ३६१ ॥

३६२ बस्त्यामयान्तकं चूर्णम्

निजातकं त्रिपुष्पञ्च चन्दनोशीरवालुकम् ।
घनसारं शिलासारं कर्पूरकतकोत्पलम् ॥१५९८॥
सितनामा कृष्णरम्भा धान्यकाऽमृतशर्करा ।
गोक्षुरञ्च मृणालञ्च पद्मकं पद्मकेसरम् ॥ १५९९ ॥
सर्वेषाञ्च समंकुर्यान्मृद्वीकां त्रिफलां सिताम् ।
घृतेन मधुना वाऽपि पिबेत्सर्वन मेहनुत् ॥ १६०० ॥
मूत्राऽऽमयान्मूत्रकृच्छ्रान् सोमरोगान्निहन्ति तत् ।
बस्त्यामयान्तकं चूर्णं शम्भुना निर्मितं पुरा ॥१६०१॥

वै. चि, मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—निजात, त्रिपुष्प (बला), सफेदचन्दन, खस गेंहुला, अभ्रक और लोहभस्म, कपूर, निर्मली, कमलगट्टा, सफेद कोयल, नील, केलेका कन्द, धनिया, गिलोय, शक्कर, गोखरू, भसींड, पद्माक, पद्मकेसर ये सब समभाग, इन सबकी बराबर मुनक्का, त्रिफला और शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे रोगीका बलाबल देखकर घी और मधुकेसाथ ६–६ मासे देनेसे मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग और बस्तिके तमामरोग नष्टहोतेहैं ॥३६२॥

३६३ बहुमूत्रघ्नवटी

बीजबन्धेक्षुरक्लीतं वांशी सिल्हकसालिमम् ।
शुक्तिविद्रुमयोर्भूती मल्लानागवक्षपथ्ययोः ॥ १६०२ ॥
शिलाजतु त्रुटिर्वङ्गः सर्वं सञ्चूर्ण्य माक्षिकैः ।
वटीं वधान सुखदां बहुमूत्रप्रमेहिणाम् ॥ १६०३ ॥

सि. भै. म, बहुमूत्रप्रमेहे ।

भाषा—बीजबन्द, तालमखाना, मुलहठी, वंसलोचन, सेरजा, सालिममिश्री, मोतीकीसीप और मूंगेकीभस्म, बहेड़ा और हरेंकी मज्जा, शिलाजीत, इलायची, वङ्गभस्म सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर विरोजा, शिलाजीत और मधुमें मिलाकर २–२ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबह शाम अनुपान विशेषसे देनेसे यह बहुमूत्रप्रमेहको दूरकरतीहै ॥ ३६३ ॥

३६४ बहुमूत्रान्तकोरसः (प्रथमः)

रसं गन्धमयोऽभ्रञ्च वङ्गं सर्वं समंसमम् ।
रसस्य पादिकं हेमरम्भापुष्परसेन च ॥ १६०४ ॥
मर्दयित्वा वटी कार्या चणकाभाऽनुपानतः ।
रसो गुडूच्या दातव्यो बहुमूत्रान्तकाभिधः ॥१६०५॥

श्रा. वि, बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक और वङ्गभस्म येसब १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म ४ मासे लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर केलेके पुष्पके रससे घोटकर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गिलोयके रसकेसाथ देनेसे बहुमूत्र नष्टहोताहै ॥ ३६४ ॥

३६५ बहुमूत्रान्तकोरसः (द्वितीयः)

सिन्दूरञ्च तथा लौहं वङ्गाऽहिफेनसारकौ ।
उदुम्बरभवं बीजं बिल्वमूलं सुरप्रिया ॥ १६०६ ॥
सर्वं समं जन्तुफलरसैः सम्मर्दितं भवेत् ।
रक्तिद्वयमितां खादेद्वटिकामनुपानतः ॥ १६०७ ॥
औदुम्बरफलद्रावं दद्यान्मेहप्रशान्तये ।
मांसप्रधानं मत्स्यञ्च तथा गोधूमपिष्टकम् ॥ १६०८ ॥
बहुमूत्रं तथा चाऽन्यान्रोगांश्चैव तदुद्भवान् ।
बहुमूत्रान्तकरसो नाशयेदधिकल्पतः ॥ १६०९ ॥
तृष्णाऽधिक्ये प्रदातव्यं शृतशीतमिदं शुभम् ।
सारिवा मधुकं द्राक्षा दर्भः सरलचन्दने ॥ १६१० ॥
पथ्या मधूकपुष्पञ्च सर्वञ्च समभागिकम् ।
जले संस्थाप्य रजनीं पराह्णे वस्त्रगालितम् ॥
प्रोक्तो गहननाथेन सद्यस्तृष्णाहरः परः ॥ १६११ ॥

र च, बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—रससिन्दूर, लोह और वंग भस्म, शुद्ध अफीम जमालगोटा, गूलरकेबीज, वेलकीजड़, तुलसी सब समभाग लेकर बारीकपीस गूलरके फलोंकेरसके साथ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गूलरके फलके रसकेसाथ देनेसे वहुमूत्र और तदुद्भव उपद्रव इनसवको यह नष्ट करता है। प्यास ज्यादा लगनेपर सारिवा, मुलहठी, द्राक्ष, दर्भ, चीढ, चन्दन, हरें,और महुएके फूल समभाग लेकर काढा बनाकर ठढाकरके पिलावे। इन्हीं चीजोंको रातमें जलमें भिगोकर सुबहमें वस्त्रसे छानकर देसकेहै खानेको मासप्रधानभक्ष्य और गेहूकी रोटी देना॥ ३६५॥

३६६ वाकुची वटी

द्वात्रिंशत्पलवाकुचीं शुभजलद्रोण्यां विशुष्कां पुनः-
र्विंशांशेनपुरस्य कान्तरसयो निष्कैः पृथक् पञ्चभिः।
ताम्बूलीरसमर्दितैस्तिलदलाऽद्रकस्याऽमृते लेपितं,
पक्वं धाऽथ विधानतोऽथ भजनात्कुष्ठामयध्वंसकः॥

र.र कौ ,कुष्ठे।

भाषा—३२ पल वाकुचीको १६ सेर पानीमें उवालदे। जब सब पानी जलजाय तब उतारकर ६॥ कर्ष शुद्ध गूगल कान्तलोह और पारेकीभस्म सवा १॥ कर्ष मिलाकर पान और हुरहुरकारस डालकर १–२ रोज मर्दनकर मिट्टीके पात्रमें लेपनकर फिर इसीका मुद्रवन्दकर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाले। फिर इसे भूधरयन्त्रमें कुक्कुटपुटसे स्वेदितकरे। इसमेंसे ३–३ मासे जलवगैरहके साथ देनेसे यह कुष्ठोंको दूर करताहै ॥३६६॥

३६७ वाकुच्यादिचूर्णम्

पलानि सङ्गृह्य दशेन्दुराज्याः
फलत्रयस्याऽपि समानमेतत्।
विडङ्गसारस्य पलानि सप्त
शिलाजतोऽर्द्धञ्च पुरस्य चैकम् ॥ १६१३॥
शतञ्च भल्लातकसत्फलानां
पलं तथा पुष्करमूलनाम्नः।
पलत्रयं लोहमयं सुचूर्णं
तुरी पलार्द्धा ह्यथ कर्षभागाः ॥१६१४॥
सपत्रमुस्ताकणयष्टिकानां
सचित्रकग्रन्थिककेशराणाम्।
न्यग्रोधमूलोपणतुङ्कुमाना-
मेकत्र सञ्चूर्ण्य समं तु खण्डम् ॥१६१५॥
खादेद्यथाग्नि प्रयतस्तु मात्रां
कुष्ठान्यशेषाण्यपयान्ति नाशम्।
अर्शोविकाराः षडपि प्रवृद्धा-
श्चित्राणि चित्राण्युदराणि चाऽष्टौ ॥१६१६॥
क्षयाश्च कृच्छ्रं खलु पाण्डुरोगाः
कण्ठामया विंशतिरेव मेहाः।
उन्मादरोगज्वरनेत्ररोगा
नासोद्भवाः पञ्चविधाश्च गुल्माः ॥ १६१७॥
वातमशीतिविकारं चत्वारिंशत्प्रभेदजं पित्तम्।
श्लेष्माणं विंशतिकं विनाशमायाति दुष्टमपि ॥१६१८॥
भवति रुचिरदीप्तिर्गौरवर्णो मनुष्यः,
समधिकशतवर्षं जीवतीह प्रगल्भम्।
विघटितघनरोगो वह्निमासप्रयोगा,-
द्युवतितपनहारी हृष्टपुष्टो वृषश्च ॥ १६१९॥

ग नि ,कुष्ठाधिकारे।

भाषा—वाकुची और त्रिफला १०–१० पल, विडङ्ग तण्डुल ७ पल, शिलाजीत ३॥ पल, शुद्ध गूगल १ पल, भिलावे १०० नग, पोहकरमूल १ पल, लोहभस्म ३ पल, भुनी फिटकड़ी २ तो, जड़पत्तेसहित नागरमोथा, पीपल, मुलहठी, चित्रक, पिपलामूल, नागकेसर, वटकीजड़की छाल, मरिच और केसर १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे अग्निबल देखकर आधा अथवा १ तोला खानेसे समस्तकुष्ठ, ६ प्रकारके अर्श, श्वित्र, चित्र, आठों उदररोग, क्षय, कृच्छ्र, पाण्डु, कण्ठविकार, २० प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्र तथा नासिकाकेरोग, पाचप्रकारकेगुल्म, ८० वातव्याधि, ४० पित्तरोग, २० कफरोग येसब नष्टहोतेहैं। इसके सेवनसे उत्तमकान्ति और गौरवर्ण होजाताहै। १०० वर्षतक निरामयहोकर जीताहै जटिलरोगमें ३ महीनेके प्रयोगसे निरामय होकर हृष्टपुष्ट होजाताहै ॥ ३६७॥

३६८ वाकुच्यादि लेहः

शशाङ्कलेखा सविडङ्गसारा
सपिप्पलीका सहुताशमूला।
सायोमला सामलका सतैला
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति लीढा ॥ १६२०॥

ग.नि ,कुष्ठे।

भाषा—वाकुची, विडङ्गतण्डुल, पीपल, चित्रमूल, मण्डूर, आवले और तिलका तैल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर तैल मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निबल खानेसे समस्तकुष्ठ दूरहोतेहैं ॥ ३६८॥

३६९ वाकुच्यादि लोहम्

वाकुची त्रिफला कृष्णा विडङ्गं सुरसाऽमृता।
अयोमधुस्थितं पक्वं जरामृत्युविषापहम् ॥ १६२१॥

ग नि ,रसायने।

भाषा—वाकुची, त्रिफला, पीपल, विडङ्ग, तुलसी, गिलोय और लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निबल खानेसे यह बुढापा, मृत्यु और विषको दूरकरताहै ॥ ३६९॥

३७० बालचन्द्र रसः

चन्द्रवह्न्यर्कभागांश्च स्वर्णगैरिकचन्द्रजान् ।
मर्दयेद्वल्लमात्रेण बालचन्द्रो नियोजितः ॥ १६२२ ॥
वमिक्षयाऽतिसारार्ति हृल्लासाऽरुचिपीनसान् ।
गरदूषीविषश्वासाञ्जरक्तपित्तं निहन्त्यलम् ॥ १६२३ ॥

र. रा., र. शि., क्षये ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, सोनागेरू ३ भाग, मोती १२ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती यथारोगानुपानकेसाथ लेनेसे वमन, क्षय, अतिसार, जी मिचलाना, अरुचि, पीनस, कृत्रिमजहर, दूषीविष, श्वास, रक्तपित्त इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ३७० ॥

३७१ बालयकृदरिलोहम्

सहस्रपुटितञ्चाऽभ्रं लोहश्चैव तथा रसः ।
जम्बीरबीजातिविषे मूलं प्लीहारिसम्भवम् ॥१६२४॥
रक्तचन्दनमश्मघ्नः प्रत्येकञ्च समांशकम् ।
गुडूचीस्वरसेनैव धान्यद्वयमिता वटी ॥ १६२५ ॥
बालानां याकृतं घोरं ज्वरं प्लीहानमेव च ।
शोथं विबन्धं पाण्डुञ्च कासं मुखगदं तथा ॥१६२६॥
उदरं नाशयेदाशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
बालयकृदरि नाम लौहः श्रीशिवभाषितः ॥१६२७॥

आ. वि., यकृद्रोगे ।

भाषा—सहस्रपुटी अभ्रक, लोह और पारेकी भस्म, जंभीरीके बीज, अतीस, शरपुङ्खकी जड़, लालचन्दन, पाषाणभेद सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर गिलोयके स्वरस अथवा क्वाथसे मर्दनकर २–२ चावलकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे एक अथवा दो गोलिया औचिती देखकर अवस्थोचितअनुपानके साथ देनेसे बच्चोंका घोर यकृत्, ज्वर, प्लीहा, शोथ, विबन्ध, पाण्डु, कास, मुखकेरोग और उदररोग नष्ट होतेहैं ॥ ३७१ ॥

३७२ बालरोगान्तको रसः (वैद्यनाथवटी)

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्याऽपि चार्द्धभागं नियोजयेत् १६२८
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लोहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः पर्णसम्भवम् १६२९
स्वरसं काकमाच्याश्च भ्रीष्मसुन्दरकस्य च ।
सूर्यावर्तकवर्षाभूभेकपर्णीरसैस्तथा ॥ १६३० ॥
श्वेताऽपराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ १६३१ ॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत् ।
शुष्कमातपसंयोगाद्गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १६३२ ॥
प्रमाणे सर्षपाकारां बालानाञ्च प्रयोजयेत् ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ १६३३ ॥
कासं पञ्चविधञ्चाऽपि सर्वरोगं निहन्ति च ।
शिशूनां रोगनाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥१६३४॥

र. सं., भै र, र. सु, र र, र. च., ध, र क, बालरोगे । र.सु, र र., र.चं., ध, एषुग्रन्थेषु बालरस इति नाम ।

टि०—र र, ध, र सु, र च, भै र, र स, एषु द्वितीयस्थाने रसकल्पद्रुमे च ग्रहणीरोगे वैद्यनाथवटीति नाम्ना एषो रसो निहितो ऽस्ति तत्र माक्षिकमरिचयोरभावोऽस्ति, भावनासु कुचेलाजयन्तीन्द्राशनोक्तया विशेषतया निहिता सन्ति, काकमाचीवर्षाभूसूर्यावर्तकाना ञ्चाऽभावोऽस्ति, इत्यापाततो विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्कर, माक्षिकमरिचसंयोगेन गुणाऽधिक्यात् । कुचेलाजयन्तीन्द्राशनोक्तयानां भावनास्त्वप्यनुष्ठेया इति सर्वस्याऽपि सामञ्जस्यात् । एवं रससर्पण-वृत्या अप्यत्रैवाऽन्तर्भावः करणीयः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, सोनामाखी ½ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर लोहेके पात्रमें स्याह सफेद भंगरा, निर्गुण्डीके पत्ते, मकोय, हरमल, हुरहुर, इटसिट, माह्नी, सफेद कोयल इनके स्वरसोंकी १–१ भावना देकर इससे आधा मरिचका चूर्ण मिलाकर पत्थरके खरलमें एकपहर घोट-कर सर्पपप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषज्वर, पाचप्रकारकी खासी इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ बालसुन्दररसः

सुशुद्धं श्वेतवैक्रान्तं सप्ताहं भाव्यमातपे ।
अम्लवेतससम्पिष्टं तेनैव द्रुतिमाप्नुयात् ॥ १६३५ ॥
एतां द्रुतिं शुद्धसूतं समं क्षौद्रे दिनत्रयम् ।
मर्दितं लेहयेन्मासं मासाद्बालो भवेज्वरः ॥ १६३६ ॥
वत्सराद्ब्रह्मतुल्यः स्याद्रसोऽयं बालसुन्दरः ।
बाकुचीबीजकर्षैकं मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ १६३७ ॥

र. रा., रसायन सं., रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकिये हुए सफेद वैक्रान्तको अम्लवेतके रसमें कड़ीधूपमें ७ रोजतक रक्खे तो इसका द्रवहोजाताहै । इसकी बराबर शुद्ध पारा मिलाकर शहदकेसाथ ३ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे सरसोंसे लेकर मरिच प्रमाण तक मात्रा लेकर बाकुचीके बीजोंका चूर्ण, मधु और घीकेसाथ चटानेसे बालक निरोग होकर हृष्टपुष्ट होजाताहै यदि इसका वर्षभर लगातार प्रयोग किया जायतो बच्चा निरामय होकर दीर्घायु होजाताहै । टि० इस प्रयोगमें बाकुचीके १ कर्ष बीजोंका चूर्ण अनुपानमें लिखाहै तथा १ महीनेमें जवान और १ वर्षमें ब्रह्मसमान होना समझमें नहीं आता । इसके अनुसार इसकी मात्रा अधिकसे अधिक ३ माशेकी होनी चाहिये, परन्तु यह मालूम होताहै कि ग्रन्थकारने केवल अनुमानसे इसप्रयोगको लिखदियाहै किसीको खिलाया नहीं और स्वयं तो खायाही क्यों ? इससे यह सिद्ध होताहै कि इसमें प्रशमार्थवादसे अधिक काम लियागयाहै । इसलिये बच्चोंको सर्षपमात्रासे देना और बाकुचीके बीजोंका चूर्ण ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक देना ॥ ३७३ ॥

३७४ वालसूर्योदयोरसः (प्रथमः)

एकभागं रसं दद्याद्द्विभागं हिङ्गुलन्तथा।
त्रिभागं गन्धकञ्चैव वसुभागा च खर्परी ॥ १६३८॥
नागं विंशतिभागञ्च जीर्णं व्योम चतुर्गुणम्।
पुटानां शतसङ्ख्या च कुमारीरसमर्दितम् ॥ १६३९॥
मर्दयेदार्द्रकरसैः भावना परिसंयुतम्।
मापमात्रमिदं सेव्यं क्षीराऽऽज्यमधुसंयुतम् ॥१६४०॥
जीर्णज्वरं सन्निपातं पाण्डुज्वरमरोचकम्।
भगन्दराख्यञ्चाऽर्शांसि मूत्रसन्तापदाहकम् ॥१६४१॥
अपस्मारञ्च भ्रमणमुन्मादं कामलां तथा।
पुराणं द्वन्द्वजं छर्दिं सर्वरूपं क्षयं तथा ॥ १६४२ ॥
सर्वधातुज्वरञ्चैव सन्निपातांस्त्रयोदश।
अशीतिं वातसम्भूतां विंशतिं श्लेष्मसम्भवाम् ॥
सर्वरोगं हरेच्छीघ्रं वालसूर्योदयो रसः ॥ १६४३ ॥

वै. चि (उ.), सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धसिंगरिफ २ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, शुद्धखपरिया ८ भाग, नागभस्म २० भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, लेकर सबका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर घीकुंवार और अदरखके रसोंकी क्रमसे भावना देताहुआ वराहपुटकी आंचदे। ऐसे १०० पुट पूरे होनेपर दोनोंके रसोंकी ७-७ भावनाएं देकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली दूध, घी और मधुके साथ देनेसे जीर्णज्वर, सन्निपात, पाण्डु, अरोचक, भगन्दर, ववासीर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, अपस्मार, भ्रम, उन्माद, कामला, पुराना द्वन्द्वज ज्वर, वमन, सर्वरूप क्षय, धातुगतज्वर, ८० वातरोग २० कफरोग इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३७४॥

३७५ वालसूर्योदयोरसः (द्वितीयः)

सूतात्त्रैगुण्यगन्धं विषकनकयुगं भानुतीक्ष्णे च नेत्रे,
तालाख्यं तच्चतुर्थं गगनशरमितं कान्तमभ्रेण तुल्यम्।
मारीचञ्चाऽष्टभागं त्रिचतुरकयुतौ नागवङ्गौ क्रमेण,
तारे द्वे सूक्ष्मचूर्णं मुनिदिवसमितं धात्रकेशोरसेन॥
एतं दद्याद्धन्तं ज्वरवनदहनंश्वासकासादि छर्दिं,
पाण्डुं शूलप्रमेहाञ्जयति गुदरुजःप्लीहगुल्मानशेषान्।
वातव्याधेः कुठारः क्षयमुदररुजःपीनसांश्चैव सर्वान्,
हिक्कादीन्रक्तपित्तश्वसनकफरुजान्-
लिङ्गदोषांश्च सर्वान् ॥
योषाणांयोनिदोषानपहरति तथा मूत्रकृच्छ्रांश्च सर्वान्,
नाम्नाऽयं वालसूर्यः सकलगदहरः-
स्थापितोऽयं मुनीन्द्रैः ॥ १६४५ ॥

र. क यो., बा., व रा, सर्वरोगे।

टि०—[illegible]
[illegible]
[illegible]

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक ३ भाग, शुद्धवछनाग और धतूरेकेवीज, ताम्र और लोहभस्म २-२ भाग, हरितालभस्म ४ भाग, अभ्रक और कान्तलोहभस्म ५-५ भाग, मरिच ८ भाग, नागभस्म ३ भाग, वङ्गभस्म ४ भाग, रजतभस्म २ भाग, लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अडूसा और ईसके रसोंसे ७-७ रोजभावना देकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाह, ज्वर, श्वास, कास, वमन, पाण्डु, शूल, प्रमेह, ववासीर, प्लीहा, गुल्म, वातव्याधि, क्षय, उदररोग, पीनस, हिचकी, रक्तपित्त, वात और कफके रोग, लिङ्गदोष, योनिदोष, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह नष्टकरताहै ३७५

३७६ वालार्करसः

रसकञ्च प्रवालञ्च शृङ्गभस्म च हिङ्गुलम्।
कर्पूरकर्चूरकेणाऽऽढ्यं केशरन्तु समांशकम् ॥१६४६॥
मर्दयेज्जलयोगेन जलेनैनं प्रदापयेत्।
वातश्लेष्मातिसारेषु क्रिमिकासज्वरार्तिहृत् ॥१६४७॥

रसायनसं., बालरोगे।

भाषा—खपरिया, प्रवाल, मृगशृङ्ग, शिंगरिफ इनकीभस्में और कचूर १-१ तोला, केशर सबकी बराबर लेकर पानीमें घोटकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली जल अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मविकार, अतिसार, क्रिमि, कास और ज्वर नष्टहोताहै ॥ ३७६ ॥

३७७ विभीतकाद्योवटकः

विभीतकाऽयोमलनागराणां
चूर्णं तिलानाञ्च गुडञ्च तुल्यम्।
तक्रानुपानो वटकः प्रयोज्यः
क्षिणोति घोरानपि पाण्डुरोगान् ॥ १६४८॥

ग नि, यु. सं, पाण्डुरोगे।

भाषा—बहेडेकीछाल, मण्डूरभस्म, सोंठ और तिल समभाग लेकर सबकी बराबर पुराना गुड मिलाकर ३-३ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली छाछकेसाथ देनेसे घोर पाण्डुरोग दूरहोवेहैं ॥ ३७७ ॥

३७८ विल्वादिलेहः

तुलार्द्धं विल्वमूलञ्च तदर्द्धं सरसीरुहम्।
द्रोणे द्रोणार्द्धसलिलमष्टभागाऽवशेषितम् ॥ १६४९॥
आर्द्रकस्य रसं प्रस्थं प्रस्थार्द्धं भृङ्गजं रसम्।
कार्पासफलमज्जा च कपित्थफलसारकम् ॥ १६५० ॥
आमलक्या रसश्चैव प्रस्थार्द्धञ्च पृथक्पृथक्।
तुलार्द्धशर्करायुक्तं स्निग्धभाण्डे विनिःक्षिपेत् ।१६५१।
त्रिजातकं त्रिकटुकं धान्यं मुस्ता यवानिका।
जीरकद्वयसिन्धूत्थं मधुकञ्चाऽयसो रजः ॥ १६५२॥
प्रत्येकं पलमात्रञ्च लवङ्गञ्च पलद्वयम्।
सूक्ष्मचूर्णमिदं सर्वं गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ॥ १६५३ ॥

गोघृतं कुडवश्चैव माक्षिकं कुडवद्वयम् ।
धान्यराशिषु दातव्यं पक्षं वा मासमेव वा ॥१६५४॥
अनुपानविशेषेण यथारोगं यथाबलम् ।
अरोचकञ्च वमनमुद्गारश्चाऽग्निमन्दताम् ॥ १६५५ ॥
शोथमाध्मानहृच्छूले श्वासकासौ च गुल्मकम् ।
ऊर्ध्वश्वासञ्च भ्रान्तिञ्च क्षयच्छर्दिविनाशनः ॥१६५६॥
मेहपाण्डुहरश्चैव पैत्याऽसृग्दरनाशनः ।
एष बिल्वादिको लोहश्चन्द्रचारुचन्द्रभाषितः ॥१६५७॥

या ,सर्वरोगे ।

भाषा—बेलकीजड़ ५० पल, कमल २५ पल लेकर जवकुट चूर्णकर ३२ अथवा १६ सेर पानीमें पकावे । अष्टभागावशेष रहनेपर उतारकर छानले । इसमें अदरखकारस १ सेर, भंगरेका रस, कपास और कैथकी मज्जा, आंवलेका रस आधा ई सेर, शक्कर ५० पल मिलाकर चिकने बर्तनमें रखकर त्रिजात, त्रिकटु, धनिया, नागरमोथा, अजवाइन, स्याहसफेदजीरा, सेंधानमक, मुलहठी और लोहभस्म १-१ पल, लौंग २ पल इनसबका बारीक चूर्णकर मिलादे । फिर गोघृत ४ पल, मधु ८ पल डालकर मुंहबन्दकर धान्यराशिमें १ महीना अथवा १५ दिन तक रखकर निकालले । इसमेंसे अनुपानविशेषसे शरीर और रोगबलको देखकर उचितमात्रा कायमकरके देवे । साधारणमात्रा १ तोले तककी है । इसके सेवनसे अरुचि, वमन, उद्गार, अग्निमान्द्य, शोथ, आध्मान, हृदयशूल, श्वास, कास, गुल्म, ऊर्ध्वश्वास, भ्रान्ति, क्षयकीवमन, प्रमेह, पाण्डु, रक्तपित्त इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७८ ॥

३७९ बुभुक्षुवल्लभोरसः (प्रथम)

सूतगन्धकसिन्दूरशङ्खशुक्तिवराटिकाः
भर्जिते स्फटिकाटङ्के तत्समं पञ्चकोलकम् ॥ १५८ ॥
बीजपूराऽम्बुना कृत्वा वटीः सेवेत प्रत्यहम् ।
बुभुक्षार्थी मिताहारैरजीर्णं नाऽभिभूयते ॥ १६५९ ॥

रसायनसार, अजीर्णे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, रससिंदूर, शङ्ख, सीप और पीली कौड़ी इनकी भस्में, भुनी फिटकड़ी और सुहागा ये सब समभाग इनसबकी बराबर पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ) लेकर सबका बारीक चूर्णकर बिजौरेकी नींबूके रसमें मिलाकर बिजौरेकेरसमें १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर मिताहार रखनेसे बुभुक्षार्थी अजीर्णसे पीड़ित नहीं होता ॥ ३७९ ॥

३८० बुभुक्षुवल्लभोरसः (द्वितीयः)

यद्वा भल्लाततैलेन गालितं परिवापितम् ।
बीजपूराम्बु गन्धकं शिरःशोद्रेण भुक्तये ॥ १६६० ॥

रसायनसार, अजीर्णे ।

भाषा—भिलावे के तेलके साथ गन्धकका गलाकर बिजौरे के रसमें बुझाकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ मासे मधुकेसाथ खानेसे अत्यधिकभोजन करनेपरभी अजीर्ण नहीं होता ॥३८०॥

३८१ बुभुक्षुवल्लभो रसः (तृतीयः)

ईश्वराऽनुगृहीतश्चेच्छतगन्धेन रञ्जितम् ।
स्वर्णसिन्दूरमेवाद्यादजीर्णादिरुजापहम् ॥ १६६१ ॥

रसायनसार, अजीर्णे ।

भाषा—ईश्वरानुग्रहसे यदि शतगुणगन्धक जारणकिये हुए पारेका स्वर्णसिन्दूर बनाकर एक अथवा दो रत्तीकी मात्रामें खायाजाय तो अजीर्णकी शङ्का नहीं रहती ॥ ३८१ ॥

३८२ बृहत्यादिलोहम्

बृहतीशर्करानागतिलसारसमन्वितम् ।
लोहं कुष्ठं निहन्त्याशु सर्वरोगहरो हि सः ॥ १६६२ ॥

र.र ,कुष्ठे ।

भाषा—भटकटैया, शक्कर, नागकेशर, शाकफिलेहुएतिल ये सब समभाग लेकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती शहदकेसाथ खानेसे यह कुष्ठको दूरकरता है । और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्त रोगोंको दूरकरता है ॥ ३८२ ॥

३८३ बोलपर्पटी रसः

सूतगन्धकशुकञ्जलिकायाः
पर्पटी समयुता समभागम् ।
बोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं
स्याद्रसोऽयमसृगामयहारी ॥ १६६३ ॥
वल्लयुग्मयुगलं प्रतिदेयं
शर्करामधुयुतः किल दत्तः ।
रक्तपित्तगुदजस्रुतियोनि-
स्रावमाशु विनिवारयतीशः ॥ १६६४ ॥

यो.र ,रसायनम.,र.चं.,र.सि.,र.सु ,र.को.,र.,वा नि.र., र क ल ,र.का.,र.रा ,र.ल ,र.प्र ,यो.त ,रक्तपित्ते।र. सि. बोलपद्धरसादिः । रसकामधेनौ सिद्धोऽयमिति नाम, द्वितीयस्थाने वायगीचित्रगाऽम्लनीरैर्विचार्य भावना प्रदाय पश्चात्पर्पटी कार्येति विशेष । नाम च बोलपद्धरस इति, अतिसाराऽधिकारे स्थापितम् । र धा ,र. अ ,र.प्र [illegible] रक्तारिरस इति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलाञ्जनमली कर लोहेकीकड़छीमें बेरके कोयलों पर गलाकर कज्जलीके बराबर हीराकसीसका चूर्ण डालकर एकजीवहोनेपर गोबरपर रखे हुए केलेके पत्तेपर डालकर पर्पटी बनाले । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । अथवा कज्जलीकी पर्पटी बनाकर उसकी बराबर हीराकसीसका चूर्णमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ६ रत्तीकीमात्रा शक्कर और मधुके साथ देनेसे रक्तपित्त खूनी बवासीर, योनिस्राव इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ३८३ ॥

३८४ बोलबद्धरसः (प्रथमः)

गुडूचिकासत्त्वसमं रसेन्द्रं
गन्धं समांशं निखिलेन बर्बरः ।
विमर्दयेच्छाल्मलिकामवाङ्घ्रिः
स्याद्बोलबद्धो मधुयुक् त्रिमाषः ॥१६६५॥
रक्तार्शसां नाशकृदेष सूतः
पित्तार्शसां पित्तजविद्रधेश्च ।
रक्तप्रमेहस्य खुडस्य चाऽपि
स्त्रीणां प्रवाहस्य भगन्दरस्य ॥ १६६६ ॥

नि.र.,वै.र.,बृ यो.त.,रसायन सं., र.चं.,र.प्र.,र.,चि. र.भ , र.कौ.,र.सि., र.मा., अर्शोऽधिकारे। र. शुक्रप्रमेहाऽधिकारे, रसेश इति नाम ।

टि०—"गोल बद्धरसेशायो. शुरक्ता सत्त्वाशको बोल्क, दत्त्वा तुर्यविभागिक दिवसक श्लेष्मानमूलद्रवैः । कृत्वावेष्टय पुटदद्यीन तुपनः शीत समाकृष्य तद्, दद्याद्वल्लमितश्च बीजपरसैः शुक्रप्रमेहे रस ॥" इति शुक्रमेहे रसायनोर पाठोऽस्ति तत्र बोल चतुर्थांशेन नियोजितम्, शाल्मलीस्थाने श्लेष्मानमूल नियोजितम् । तुषाग्निना पाकश्च कृतोऽस्ति परन्तु पाककरणादेर्गुडूचीसत्त्वयोर्भस्मीभावात्मा प्रक्रियाऽनुचितैव प्रतिभाति, बीजपरसैः शुक्रप्रमेहेऽनुपानन्तु समीचीनमेवाऽस्ति, अतस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

भाषा—गिलोयकासत्त्व, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग तथा हीरादक्खन सबके बराबर लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सबको मिलाकर सेमलकेमुसले के स्वरस अथवा छालके काढ़ेमें मर्दनकर ३-३ मासेकी गोलियां बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहदके अनुपानकेसाथ देनेसे खूनी और पित्तज बवासीर, पित्तज विद्रधि, रक्तप्रमेह, वातरक्त, प्रदर और भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८४ ॥

३८५ बोलबद्धरसः (द्वितीयः)

रसभस्म विषं तुल्यं गन्धकं द्विगुणं मतम् ।
बोलतालकबाह्लीककर्कोटीमाक्षिकं निशा ॥ १६६७॥
कण्टकारी यवक्षारं लाङ्गली जीरसैन्धवम् ।
मधूकसारं सञ्चूर्ण्य ससाहं चाऽऽर्द्रकद्रवैः ॥१६६८॥
गुटिकां बदराकारां श्लेष्मकासापनुत्तये ।
भक्षयेद्बोलबद्धोऽयं रसः सश्वासपाण्डुजित् ॥१६६९॥

र र.रा.,र.सु ,र.चो.,नि.र., बृ.रा., र. क. ल., र. का., कासाऽधिकारे । र.का. बाह्लीकस्थाने पाठाऽमी दृश्यते ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धबच्छनाग १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, हीरा दक्खन, हरितालभस्म, भुनाहींग, मेढासिंगी जड़, सोनामाखी, हल्दी, भटकटैया, यवक्षार, शुद्धकलिहारी, सफेदजीरा, सेंधानमक, महुएका हीर येसब १-१ भागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर ७ रोज़तक अदरखके रसमें घोटकर बेर बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथारोगानुपानके साथ देनेसे श्लेष्मरोग, खांसी, श्वास, पाण्डु [illegible] सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८५ ॥

३८६ बोलबद्धरसः (महान्) (तृतीयः)

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं चन्द्रकं पृथक् ।
एतानि कर्षमात्राणि द्विभागं धूर्तबीजकम् ॥१६७०॥
त्रिभागा विजया प्रोक्ताऽहिफेनं त्रुटिरेव च ।
वेदभागास्ततो नागवङ्गयोश्च रसाह्वयाः ॥ १६७१ ॥
बोलस्य मुनिभागाः स्युरेकीकृत्य विमर्दयेत् ।
भावनात्रितयं दद्यात्कतककाथवारिणा ॥ १६७२ ॥
गुञ्जाभां वटिकां कृत्वा यष्टीमधुकजीरकैः ।
दद्यात्सितामधुभ्यां वाऽसृग्दरे ह्यतिसारके ॥१६७३॥
सोमरोगे क्षये पाण्डौ प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रके ।
रक्तमूत्रे मूत्रदाहे मूत्राघाते प्रयोजयेत् ॥
बोलबद्ध इति ख्यातो महापूर्वपदानुगः ॥ १६७४ ॥

रसायन सं., असमदादी ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और कपूर ये प्रत्येक १-१ भाग, शुद्धधतूरेके बीज २ भाग, भांग ३ भाग, अफ़ीम और इलायची ४-४ भाग, नाग और बङ्गभस्म ६-६ भाग, हीरादक्खन ७ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर निर्मलीके काढ़ेकी ३ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली मुलहठी और जीरेकेसाथ, अथवा शक्कर और मधुकेसाथ देनेसे अतिसार, सोमरोग, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, रक्तमूत्र, मूत्रदाह, मूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८६ ॥

३८७ बोलबद्धरसः (चतुर्थः)

रसेन बोलं द्विगुणं दिनैकं
विमर्दयेच्छाल्मलिकारसेन ।
पुटेत्ततो भूधरयन्त्रमध्ये
गुडूचिकाशाल्मलिकोत्थनीरैः ॥१६७५॥
तं भावयित्वाऽथ ददीत वल्ल-
चतुष्टयं तद्द्विगुणं तु वल्लम् ।
बब्बूलजं क्वाथमिहानुदद्या-
द्भल्लातकं वा त्रिफलातिलैश्च ॥
क्वाथं पिबेद्वा कुटजस्य रात्रौ
क्षौद्रेण संयोज्य फलत्रयेण ॥ १६७६ ॥

र.दी., अर्शोऽधिकारे ।

भाषा—हीरादक्खनसे दूना शुद्धपारालेकर १ रोज़ सेमलकी छालकेकाढ़ेमें मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें कुक्कुटपुट दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर गिलोय और सेमलके क्वाथोंकी १-१ रोज़ भावना देकर ४ या १॥ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बबूलके क्वाथकेसाथ दे । अथवा भिलावां त्रिफला और तिलके क्वाथके साथ देनेसे सब प्रकारके बवासीर नष्टहोते हैं । रात्रिमें कुड़ेकी छालका काढा त्रिफला और मधु मिलाकर देवे ॥ ३८७ ॥

३८८ बोलादिवटी

बोलं सुगन्धेन समं गुडूची-
सत्त्वेन तुल्यं त्रिफलाजलेन ।
विमर्दयेच्छाल्मलिकारसेन
दिनत्रयं चाऽथ निषेवयेत ॥
गद्याणयुग्मं मधुना तु मासं
पित्तोद्भवाऽर्शांसि लयं प्रयान्ति ॥ १६७७॥
र दी , पित्तार्शांसि ।

भाषा—शुद्धगन्धक, हीरादक्खन और गिलोयका सत्त्व समभाग लेकर त्रिफला और सेमलकी छालके काढसे ३–३ रोज मर्दनकर १–१ तोला मधुके साथ १ महीने तक खानेसे पित्तज बवासीर नष्टहोता है ॥ ३८८ ॥

३८९ ब्रह्मपञ्जर रसः

चतुःपलं शुद्धसूतं पलैकं मृतहाटकम् ।
पलाशकुड्मलद्रावैस्तत्तैलैश्च दिनत्रयम् ॥ १६७८ ॥
मर्दयेत्तत्खल्वे तु सर्वतुल्यश्च गन्धकम् ।
शोधितं निक्षिपेत्तस्मिन्पूर्वोक्तैः मर्दयेद्दिनम् ॥१६७९॥
माषमात्रां वटीं खादेद्वत्सरान्मृत्युजिद्भवेत् ।
जीवेद्ब्रह्मदिनं धीरो रसोऽयं ब्रह्मपञ्जरः ॥ १६८० ॥
धानरीकाकतुण्डयुत्थबीजचूर्णं समसमम् ।
शाल्मलीत्वग्दलद्रावैः भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ १६८१ ॥
ज्यहश्च भृङ्गजे द्रावे भावितं चूर्णयेत्ततः ।
पुरातनगुडैस्तुल्यं कर्षैकमनुभक्षयेत् ॥ १६८२ ॥
र ख , रसायनम , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा ४ पल, सुवर्णभस्म १ पल लेकर पलाशकी कलियोंके स्वरस और पलाशबीजोंके तैलमें ३–३ दिन मर्दनकर सुनहरीरंगका शुद्ध गन्धक सबकी बराबर मिलाकर कज्जलीकर पूर्वोक्तद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर केवाच और काकनासिकाके बीज समभाग लेकर सेमलकी छाल और भांगरेके रसमें ३–३ रोज मर्दनकर सुखाय बारीकपीसकर इसमेंसे १–१ तोला पुराने गुड़के साथ मिलाकर खानेसे एक वर्षभरमें वलीपलितसे रहितहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै ॥३८९॥

३९० ब्रह्मरन्ध्ररसः

रसाऽभ्रगन्धकं तालं हिङ्गुलं मरिचं तथा ।
टङ्कणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा ॥ १६८३ ॥
सर्वपादसमोपेतमहिषीपित्तमर्दितम् ।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं सन्यासज्ञानविभ्रमे ॥ १६८४ ॥
सहस्रकलशैः स्नानं लेपनं चन्दनादिभिः ।
इक्षुमुद्गरसं भोज्यं तक्रंभक्तं यथेप्सितम् ॥ १६८५ ॥
भै र , र.सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और हिङ्गुल, अभ्रकभस्म, मरिच, भुनासुहागा और सेंधानमक समभाग, शुद्धवच्छनाग सबकीबराबर लेकर सबसे चतुर्थांश भैंसेके पित्तकी भावना देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे सन्यास और ज्ञानविभ्रम सन्निपातमें ब्रह्मरन्ध्रमें पाछलगाकर मसले तो इससे सन्निपाती चेतनामें आजाता है । उससमय एकहजार ठंढे पानीके घड़े सिरपर डाले और चन्दन वगैरहकालेपकरे । ईख, मूग, तक्र और भात यथेष्ट खावे ॥ ३९० ॥

३९१ ब्रह्मरसः (प्रथमः)

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धावल्गुजचित्रकाम् ।
चूर्णन्तु ब्रह्मबीजानां प्रतिद्वादशभागिकम् ॥१६८६॥
भागांस्त्रिंशद्गुडस्याऽपि क्षौद्रेण गुटिका कृता ।
अयं ब्रह्मरसो नाम्ना ब्रह्महत्याविनाशनः ॥ १६८७ ॥
द्विनिष्कं भक्षणाद्धन्ति प्रसुप्तिकुष्ठमण्डलम् ।
पातालगारुडीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिबेदनु ॥१६८८॥
र स , र चि , र म , र.र कौ , रसायनस , र सु , र.च , र का , यो म , र सि , कुष्ठे ।

भाषा—मूर्च्छितपारा १ भाग, शुद्धगन्धक, बाकुची, चित्रक और पलाशकेबीज १२–१२ भाग, पुरानागुड़ ३० भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर मधुमें ८–८ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पातालगारुड़ीकी जड़ १ तोला पानीमें पीसकर इसकेसाथ लेनेसे सुनबहरी और मण्डल इत्यादि कुष्ठों को यह नष्टकरताहै ॥ ३९१ ॥

३९२ ब्रह्मरसः (द्वितीयः)

सूतगन्धकमाक्षिकलौहं पिष्टं फलत्रयकाथे ।
प्रहरचतुष्कं भूधरगर्भे पाकं विधाय शुद्धैकम् ॥१६८९॥
सघरात्रीरः सूतो ब्रह्माख्यो रक्तपित्तादीन् ।
जयति हितौषधयोगैः पथ्याक्षौद्रेण चाऽम्लपित्तादीन्
र.ल , अम्लपित्तादिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी और लोहभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर ४ पहर त्रिफलाके काढेमें घोटकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें एक पुटदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती त्रिफलाके काढेकेसाथ अथवा हर्रे और मधुकेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह रक्तपित्त और अम्लपित्त प्रभृतिको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

३९३ ब्रह्मरसः (तृतीयः)

रसं ब्रह्म प्रवक्ष्यामि पारदं गन्धकं समम् ।
किंशुकस्य च बीजानि टङ्कणञ्च मनःशिला ॥१६९१॥
अपामार्गस्य बीजानि केदारशनकस्य च ।
जम्बीरस्य रसे सर्वं दिनानां पञ्च मर्दयेत् ॥१६९२॥

शुल्कं कुर्यात्पुनः सर्वं मर्दयेन्मत्स्यमेदसा ।
दिनत्रयं पचेदेवं कटुत्रयविमिश्रितम् ॥ १६९३ ॥
मेदसा तिमिजातेन मर्दयेच्च दिनद्वयम् ।
आर्द्रकस्य रसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥
श्लेष्मज्वरविनाशः स्यादेकविंशतिवासरैः ॥१६९४॥

सू. म., ज्वरे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, पलाशके बीज, शुद्ध सुहागा और मैनसिल अपामार्ग और भाँगरेके बीज समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर जंभीरीके रसमें ५ दिन मर्दनकर सुखाकर मछलीकी चर्बीसे दो ३ रोज मर्दन कर समभाग त्रिकुटा चूर्ण मिलाकर मछलीकी चर्बीसे २ दिन और अदरखके रससे ५ दिन मर्दनकरके १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली अद० रसके रसवगैरहके साथ २१ रोजतक देनेमें कफज्वर नष्टहोजाता है ॥ ३९३ ॥

३९४ ब्रह्मराक्षसरसः

वेदकर्षो रसः प्रोक्तो नवसारस्तु कर्षकः ।
सूततुल्यं गन्धकं स्यात्तदर्धं तालकं मतम् ॥ १६९५ ॥
तालतुल्यो यवक्षारो नागः कर्षमितो भवेत् ।
काकमाच्या रसैः भाव्यं सप्तवारं प्रयत्नतः ॥ १६९६ ॥
उन्मत्तस्य रसेनाऽपि सप्तवारन्तु भावयेत् ।
पचेत्तं वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरावधि ॥ १६९७ ॥
पुनस्तत्र क्षिपेद्गन्धं वेदकर्षञ्च भावयेत् ।
पूर्वोक्तैस्तु द्रवै यन्त्रे वालुकाख्ये पचेत्ततः ॥ १६९८ ॥
अधःस्थो भस्मतामेति तावत्कूपीषु योजयेत् ।
सप्तमि भस्मतामेति ब्रह्मराक्षसपारदः ॥ १६९९ ॥
नानाऽनुपानमात्रेण सर्वरोगान्निकृन्तति ।
मर्णकं भुज्यते नित्यं नरैरेतत्समासतः ॥ १७०० ॥

र कौ, रसायनसं, सर्वरोगे ।

टि०—अयरमी रससिंदूरादभिन्नोऽस्ति तथाऽपि प्रक्रियाविशेषेण तत स्वनाऽऽस्वदनात्सिन्दूरस्य पृथङ्लिखित, सिन्दूरता तस्याहैवाऽस्ति मर्णकं भुज्यते नित्य नरणेति फलभागे यत्किञ्चिद्दोऽर्थवादस्याऽस्तीति बोद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ तोले, नवसादर १ तो, शुद्धगन्धक ४ तो, शुद्धहरिताल और यवक्षार २-२ तोले, शुद्धनाग १ तोला लेकर शीशेको गलाकर पाराछोडदे । फिर गन्धकमिलाकर कज्जलीकर हरितालका बारीकचूर्णमिलाकर ४ पहर मर्दनकरके यवक्षार मिलादे । फिर मकोय और धतूरेकेरससे ७-७ भावनाएं देकर सुखाकर ६-७ कपडमिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें भरकर मुखमुंद रखकर १२ पहरकी आंचदे । इसतरह करनेसे जिससमय पारेका उडना बन्दहोजाय तब सिद्धसमझना चाहिये । इसमें प्रायः सातवीं शीशीमें तत्त्वस्य पारा होजायगा । मालपरवाह कहीं आंच न लगनेसे कमर रहजानेसे कुछ भाग पारेका ऊपर उडा हो ऐसे १-२ शीशिया और लगाईजाय ।

इसमें यह ध्यान रखना कि कहीं आंच अधिक लगनेसे पारा अधिक उडजायगा तो शीशीमें नीचे बैठा हुआ केवल क्षार मिलेगा, यह क्षार निकम्माहै केवल श्वास कासपर काम करेगा। इसलिये बहुत संभलकर इतनी आंचदेकि गन्धकजलकर सिन्दूर तैयार होजाय । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै । इसके खानेसे बहुतज्यादा भूख लगने लगेगी । कुछदिनके अभ्याससे वलीपलितादिकसे निर्मुक्त होजायगा ॥ ३९४ ॥

३९५ ब्रह्मवटी

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं रसतुल्यं विषं क्षिपेत् ।
कृष्णाभ्रताम्रलोहञ्च मर्दयेत्यूषणद्रवैः ॥ १७०१ ॥
आर्द्रकस्य द्रवैः पश्चात्क्रमाद्भाव्ये दिनं दिनम् ।
कृष्णजीरकपञ्चाङ्गमजमोदा जयन्तिका ॥ १७०२ ॥
यवानी तिलपर्णी च ब्राह्मी धत्तूरभृङ्गिराट् ।
यवान्यश्चार्द्रकर्णीको शिग्रुहस्तिकशुण्डिके ॥ १७०३ ॥
श्वेतापराजिता वासा चित्रकश्चेतिकाथतः ।
भावयेद्वटिका कार्या बदरास्थिसमा शुभा ॥ १७०४ ॥
योज्येयं यामयामान्ते मरिचैरार्द्रकद्रवैः ।
इयं ब्रह्मवटी नाम सन्निपातकुलान्तिका ॥
पथ्यं स्यान्मुद्गयूषेण दिवास्वापञ्च वर्जयेत् ॥ १७०५ ॥

र.सु., र.का., र. कौ., ज्वराऽधिकारे । र. कौ. प्रभावती वटीति नाम ।

टि०—अत्र कर्णीकशब्देन कर्णिकाराऽपरपर्याय आरग्वधो ग्रहीतव्य । शिरोलीकन्दमिति केचिद्व्याख्यानन्तत्वमूल्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्ध बछनाग, कृष्णाभ्रक, ताम्र, लोह इनकीभस्में १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जली बनाय त्रिकुटु, अदरख, कालाजीरा, पञ्च, अजमोद, जैंत, खुरासानीअजवाइन, हुरहुर, ब्राह्मी, धतूरा, भंगरा, अजवाइन, अदरख, अमिलतास, सहिंजन, हाथीशुण्डी, सफेद कोयल, अडूसा और चित्रक इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज़ भावना देकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मरिच और अदरखके रसके साथ १-१ पहरबाद देनेसे यह तमामसन्निपातोंको नष्ट करतीहै । मूंगके यूषकेसाथ चावल पथ्यमें देवे । दिनमें सोना वर्जितहै ॥ ३९५ ॥

३९६ ब्रह्माण्डगुटिका

नागवल्लीदलद्रावैः सप्ताहं शुद्धपारदम् ।
मर्दयेत्तप्तखल्वे तु क्षालयेत्काञ्जिकैस्ततः ॥ १७०६ ॥
तत्क्षिपेद्दीपिकन्दस्य गर्भे निष्कचतुष्टयम् ।
विषेण तन्मुखं रुन्ध्या स्थूलधाराद्यमांसजे ॥१७०७॥
पिण्डगर्भे निरुध्याथ मुखं सूत्रेण सीवयेत् ।
सन्ध्याकाले बलिं दत्त्वा कुक्कुटं मदिरायुतम् ॥१७०८॥
ततश्चुल्लयां लोहपात्रे तैले धत्तूरसम्भवे ।
तं पचेद्वह्निनिपक्वं सुपिण्डं मन्दवह्निना ॥ १७०९ ॥

सन्ध्यामारभ्य यत्नेन यावत्सूर्योदयं तथा ।
हठाज्जागरणं कुर्यादन्यथा तन्न सिद्ध्यति ॥१७१०॥
प्रातरुद्धृत्य गुटिकां क्षीरभाण्डे विनिःक्षिपेत् ।
तत्क्षीरं शुष्यति क्षिप्रमेतत्प्रत्ययमद्भुतम् ॥ १७११ ॥
दृष्ट्वा तां धारयेद्वक्त्रे वीर्यस्तम्भकरीं रतौ ।
क्षीरं पीत्वा रमेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः ।१७१२।
मुखाद्धस्तं यदा प्राप्ता तदा वीर्यं पतत्यलम् ।
ब्रह्माण्डगुटिका नाम शोषयन्ती महोदधिम् ॥१७१३॥

र ख , र (मा) र सु , र , र मे , र. र , बृ यो त , र सि , टो., यो. म , र क ल (ना) वीर्यस्तम्भने। र म , बृ यो त , र. का एषु वीर्यरोधिनीति नाम ।

टि०—माणिक्यचन्द्रजैनीयरसावतारे " विषजटास्थितशोभनपारदो वनवराहवसा परिवेष्टित । धनकबीजजतैलविपाचितो भजति यामयुगेन सुबद्धताम् ॥ एष सुबद्धा गुटिका मुखान्तर्धृता यदा स्यान्मधुराम्रभोक्तु । वीर्यं निरुन्ध्यात्सुरतप्रसङ्गे शत स भुञ्जीतमनोऽनुकूला ॥ " इत्याकारक स्वतन्त्रतया पाठ प्रकल्पित, परन्तु स न रसान्तर, इति सुधीभि र्विभावनीयम् । बृहद्योगतरङ्गिण्या द्वितीयस्थाने " रसं कनकतैलेन सार्द्धगद्याणकत्रयम् । दिनानि सप्त सम्मर्द्य विषग्रन्थौ समाक्षिपेत् ॥ हेम तलञ्च निक्षिप्य तन्मुख रोधयेद्विधान् । मसृणि मृत्तिकामिश्र वेष्टयित्वा विशोषयेत् ॥ माहिषे मासपिण्डे तु स्थूले क्षिप्त्वाऽथ सीवयेत् । मासस्य पोट्टलीं कृत्वा दृढ कर्मेण वेष्टयेत् ॥ तत्क्षण वेष्टयेत्सम्यक्सूत्रावर्पम्मञ्चकै । गोमयेन च संलिप्य गोल सत्पूजयेद्भिषक् ॥ हस्तत्रयमितो गर्तो गोशकृ त्पिण्डपूरित । तन्मध्ये निक्षिपेद्गोल दग्ध्वा शीत समुद्धरेत् ॥ ततस्था गुटिका ग्राह्या दिव्यकौतुकदायिनी । सा मुखे येन निक्षिप्ता रमयेत्सोऽ ङ्गनाशतम् ॥ यावत्सा गुटिका वक्त्रे तावन्न द्रवते नर ॥" अय पाठो वीर्यरोधिनीनाम्ना निहिताऽस्ति, अत्राऽपि विषकन्दे निधान तत्समानमेव केवलमभिधाने विशेष । हस्तत्रयमितगर्तोक्तौ पारद स्थास्यति नवेति सुतरा सन्देह । तदपेक्षया सपक्वतैलपरिपाको विश्वासार्ह प्रतीयतेऽत स्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । गतपाकस्तु कृत्वा परीक्षणीय । अग्निस्थायितैवाऽभिलषणीयाऽस्ति सा केनाऽपि प्रकारेण करणीयैवाऽस्ति इत्यत्र नास्ति केषाञ्चिदपि विवाद ।

भाषा—४ माशे शुद्धपारेको पके पानके रससे ७ दिनतक तप्तखल्वमें मर्दनकर काञ्जीसे धोकर साफकरले फिर बछनागके गोलेकन्दमें रखकर उसीकी चकतीसे कन्दका मुह बन्दकर जंगली सुअरकी मासपेशीमें रखकर डोरेसे सींदे । फिर सन्ध्या कालके अच्छे मुहूर्तमें कुक्कुट और मद्यकी रसराजको बलि देकर लोहेकी कड़ाहीमें मासपेशीको रखकर धतूरेका तैल ८० तोले डालकर मन्दाग्निसे सन्ध्यासमयसे आरम्भकर सूर्योदयतक पकावे । इसमें जागरण हठसे करना चाहिये । अगर निद्रा आ जायगी तो यह सिद्धि नहीं होगी । प्रात स्वाङ्गशीतल होनेपर उसगोलीको निकालकर गोदुग्धके घड़ेमें डाले, डालतेही दूध सूखजायतो समझना कि यह सिद्ध होगई । इस गोलीको मुहमें रख दूध पीकर बहुतसी स्त्रियोंके साथ प्रसङ्ग करनेपरभी मुहमेंसे इसे हाथमें न लेलें तबतक वीर्य स्खलित नहीं होता है ॥३९६॥

३९७ ब्रह्मास्त्ररसः (प्रथम.)

ब्रह्मास्त्रमथवक्ष्यामि सद्यः प्रत्ययकारकम् ।
सूतभस्म त्रिगन्धञ्च तत्समं गरलं स्वदेः ॥ १७१४ ॥
त्रिभिः समं विषं योज्य मरिचं सर्वतुल्यकम् ।
वराहकेकिमहिषपित्तैः सप्त विभावितम् ॥ १७१५ ॥
लाङ्गल्या देवदाल्या च ज्वालामुख्यार्द्रकद्रवैः ।
एकविंशतिधा भाव्यं प्रत्येकं घर्मशोषितम् ॥ १७१६ ॥
द्विगुञ्जामात्रनस्येन मृतमुत्थापयेद्ध्रुवम् ।
दध्यन्नं ससितं पथ्यमुपचाराश्च शीतलाः ॥ १७१७ ॥
सर्वोदरगदघ्नोऽयमसाध्यमपि साधयेत् ।
अस्थिशूलानि सर्वाणि नाशयत्येव सर्वथा ॥१७१८॥

बृ यो त , रसायनसं , चि क्र , र का , र. म भा , यो त , ज्वराऽधिकारे।

टि०—अत्र त्रिगन्धशब्देन गन्धकमहदशद्रव्यत्रयसमूहोऽभिप्रेत स च गन्धकहरितालमन शिलात्मको भवितुमर्हति, तद्गणना तु त्रिगन्धेन एकात्मिकेव कृताऽस्ति अनयाभि ममभिति न विरुध्यते । चिकित्साक्र मकल्पवल्लीकारेण तु त्रिभिरितिलिङ्गात्त्रित्वसङ्ख्याविशिष्टो गन्ध इति मत्वा गौरीरत्न शुद्धमिह नियोग मित्यप्यधि । रसकामधेनौ तु त्रिग न्धानीति पाठ विधाय शङ्का निरामीति ज्ञातव्यम् ।

भाषा—पारदभस्म, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल १-१ तोले सर्पविष ४ तोले, शुद्ध बछनाग ८ तोले, मरिच १६ तोले लेकर सबका बारीक चूर्णकर २-२ पहर सूखा मर्दनकर सूअर मोर और भैंसाके पित्तोंकी ७-७ भावनाए देकर सुखाले फिर करिहारी, बन्दाल, हुरहुर और अदरखके रसोंकी २१-२१ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । प्रत्येक भावना सुखासुखाकर देनी चाहिये । इसमेंसे २ रत्ती नस्य देनेसे मृतावस्थभी सन्निपाती होशमें आजायगा । भूखलगनेपर शक्कर, दही, भात देना और शीतो- पचार करना । इससे समस्त उदररोग और सब प्रकारके शूल नष्ट होते है ॥ ३९७ ॥

३९८ ब्रह्मास्त्ररसः (द्वितीयः)

हिङ्गुलथञ्च त्रिपापाणं गन्धकश्च शिला विषम् ।
नेपालं दरदं चाऽभ्रं सैन्धवं मरिचं विडम् ॥१७१९॥
त्रिक्षारं टङ्कणं हिङ्गु सर्वतुल्यन्तु पारदम् ।
ज्योतिष्मत्यास्तु तैलेन मर्दयेद्दिनपञ्चकम् ॥ १७२० ॥
दोलायन्त्रे दिनं पक्त्वा तत खल्वे विमर्दयेत् ।
मयूरमहिषीमत्स्यवाराहच्छागपन्नगा ॥ १७२१ ॥
शशका जम्बुकाः श्वान एषां पित्तैस्तु भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं क्षुरैर्भित्त्वा ब्रह्मद्वारे विनिक्षिपेत् ॥१७२२॥
मद्यन्ति तत्क्षणेनैव सन्निपाताः सुदारुणाः ।
मूकतापस्मृतिर्हिक्का बाधिर्यश्वासकासकाः ।
ब्रह्मास्त्रोऽयं रसः स्यात सन्निपातकुलान्तक.१७२३

च रा , र क यो सन्निपाते ।

टि०—आपातत पाशुपताऽस्त्रेणापि एतत्समानता प्रतीयते परन्तु द्रव्य प्रमाणयोर्भावनायाश्च महदन्तरत्वात्स्वतन्त्र एवाऽयं पाठोऽस्ति । अत्र धातुवादोक्ता वडवामुखाग्निप्रभृतयो विडशब्देन ग्राह्या अथवा नरसा राऽऽस्य ग्रहीतव्यम् । चूलिका गन्धपाषाण कान्तस्य च मुख प्रिये । एवंक्रमेव पर्याप्तं लोहचूर्णस्य जारणे ॥ रसार्णवे ९ प० । इति ॥

भाषा—शुद्ध तूतिया, दाने फिरङ्ग, स्याह-सफेद और पीला सोमल, गन्धक, मैनसिल, बछनाग, जमालगोटा, शिंगरिफ, अभ्रकभस्म, सेंधानमक, मरिच, यथासम्भव धातुवादोक्त विड अथवा नवसादर, तीनोंक्षार (सज्जी, अपामार्ग और यवक्षार), भुनासुहागा और हींग समभाग, इनसबकी बराबर शुद्ध-पारा लेकर सबकी नीलवर्णकज्जली बनाय मालकांगनीके तैलसे ५ रोज़ मर्दनकर दोलायन्त्रमें एकरोज़ इसी तैलमें स्वेदनकर मोर, भैंसा, मछली, सूअर, बकरा, सांप, खरगोश, गीदड़ और कुत्तेके पित्तोंकी १-१ भावना देकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्ती लेकर ब्रह्मरन्ध्रमें पाछलगाकर मसलनेसे दारुणसन्निपात, मूर्च्छा, अपस्मार, हिचकी, बधिरता, श्वास, कास येसब नष्ट-होते हैं ॥ ३९८ ॥

३९९ ब्रह्मास्त्ररसः (मृत्युञ्जयः) ३

सूतं गन्धं शिला तालं वत्सनाभेन संयुतम्।
गिरिकर्णीजबीजैश्च कटुत्रयसमन्वितम ॥ १७२४ ॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा कङ्गुणीतैलमर्दितम्।
नष्टपिष्टीकृतं पश्चात्क्षिपेद्द्रव्यकरण्डके ॥ १७२५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्माषार्धमात्रकम्।
सन्निपातो महाघोरस्तत्क्षणादेव नश्यति ॥ १७२६ ॥
अर्द्धरक्तिकमात्रन्तु नस्य देयं क्षुताऽवधि।
क्षुतश्च वमनश्चैव यदि योज्यो रसोत्तमः ॥ १७२७ ॥
ततो न जायते मृत्यु र्न स्याद्धेतो यमालयम्।
भिषजा तद्दिनं त्याज्यं भैषज्यं नैव दापयेत् ॥१७२८॥
र क. यो., र. प. सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, हरिताल और बछ-नाग, कोयलके बीज और त्रिकटु समभागलेकर पारे वगैरहकी नीलवर्णकज्जलीकर बछनाग वगैरहके बारीकचूर्णमें मिलाकर २-३ पहर खूब घोटकर मालकांगनीके तेलसे ४ पहर मर्दनकर काचकी शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे आधेआधे मासेकी खुराक अदरखके रसकेसाथ देनेसे महाघोर सन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै। इसमेंसे आधीरत्तीका नस्यदेना। अगर एकबारके देनेसे छींक न आवे तो दूसरीबारदेना। इसके देनेसे छींक और वमन होजायतो दूसरीबार मात्रादेना, वहरोगी बचेगा। यदि दोनों न होंतो उसमें यत्न नहीं करना वह उसीदिन मरजायगा। इसलिये-लोगोंके दुराग्रह करनेपरभी उसरोज़ दूसरी मात्रा न देनी ३९९

४०० ब्रह्मास्त्ररसः (चतुर्थः)

कृष्णचित्रकमूलञ्च कृष्णामलकमेव च।
कृष्णनिर्गुण्डिकामूलं कृष्णश्च तुलसीदलम् ॥२७२९॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा पटपूतं विधाय च।
कृष्णवर्णं सूतभस्म लोहवङ्गाऽहिभस्म च ॥ १७३० ॥
चतुर्भस्म समङ्कृत्वा तदर्द्धं कृष्णपारदम्।
तदेकांशं गन्धकञ्च तालकञ्च मनःशिला ॥ १७३१ ॥
नेपालं त्रिफला व्योषं रामठं माक्षिकं तथा।
एतत्सर्वं समं पूर्वं पटपूतंविधाय च ॥ १७३२ ॥
तत्सर्वं निक्षिपेत्खल्वे कृष्णोन्मत्तरसेन च।
भृङ्गनिम्बार्द्रकरसै र्जम्बीरस्वरसेन च ॥ १७३३ ॥
मर्दयेद्दशवारांश्च सम्यगञ्जनतुल्यकम्।
मरीचबीजमात्रेण वटकान् कारयेद्भिषक् ॥१७३४॥
एवमुष्णाम्बुना युक्तं नासायाञ्च प्रयोजयेत्।
नागवल्ल्यमृतेन्द्राणीरसै र्युक्तं प्रयोजयेत् ॥ १७३५ ॥
अर्धमण्डलमात्रेण वातजालं विनाशयेत्।
सप्तवारं त्रिवारं वा वातानेतान्विनाशयेत् ॥ १७३६॥
हरीतक्याऽथ गोमूत्रे मधुना भृङ्गजाम्भसा।
ईदृग्विधानुपानैश्च कुष्ठानाञ्च प्रयोजयेत् ॥ १७३७ ॥
सर्वे कुष्ठा विलीयन्ते श्वेतकुष्ठं विशेषतः।
षण्मासं सेवयेन्नित्यं कुष्ठवर्जं वपु र्भवेत् ॥ १७३८ ॥
पुनष्षण्माससेवायां रक्तवर्णं भवेद्वपुः।
त्रिमासं सेवयेत्पश्चात्कृष्णं भवति तद्वपुः ॥ १७३९ ॥
देहसिद्धि र्भवेत्तस्य जीवेदाचन्द्रतारकम्।
अनुपानविशेषेण ज्वरादीन्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ १७४० ॥
र. क. यो., र. कौ. (ग्रा) कुष्ठे।

भाषा—कालेचित्रककी जड़, पुराने आंवले, काले संभालू की जड़, कालीतुलसीकीजड़ सब १-१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर पारेकी कालीभस्म, लोह, बङ्ग, नाग इनकीभस्में १-१ तोला, कालापारा २ तोले, शुद्धगन्धक, हरिताल, मैनसिल, जमालगोटा, त्रिफला, त्रिकटु, भुनीहींग, सोनामाखी, ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर सबको इकट्ठे मिलाय कालाधतूरा, भंगरा नीम, अदरख, जंभीरी इन प्रत्येकके रसोंसे १०-१० बार मर्दनकर कज्जलसदृश होनेपर मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथ देवे और पके-पान, गिलोय, महर इनके रसोंमें मिलाकर नस्य देवे। सात-दिनके प्रयोगसे यह समस्तवातविकारोंको दूरकरताहै। हर्रे, गोमूत्र, मधु तथा भंगरा इनमेंसे किसीएकके साथ ७ बार अथवा ३ बार देनेसे सम्पूर्णकुष्ठोंको दूरकरताहै विशेषकर श्वेत-कुष्ठमें लाभदायकहै। ६ महीनेतक सेवनकरनेसे शरीर कुष्ठ-रहितहोजाताहै उसकेबाद ६ महीनेतक सेवन करनेसे रक्तवर्ण होजाताहै। एकवर्षके सेवनके बाद ३ महीने सेवनकरनेसे शरीर काला होजाताहै और देहसिद्धिको प्राप्तहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ ४०० ॥

४०१ ब्राह्मीवटी

त्वग्जातीफलदेवपुष्पमरिचाऽयोभस्मजातीच्छदाः,
विश्वाऽऽकल्लकधान्यकेसरकणाश्रिशाऽजमोदावचाः
कुष्ठं तुम्बुरुभूमिनिम्बदरदाऽगुरुश्च गन्धाऽम्बरं,
मुक्तावंशजकृष्णजीरककणामूलं विडङ्गानिच ॥१७४१॥
माणिक्यं शतपुष्पिका मलयजं चन्द्रोदयः पौष्करं,
कस्तूरी शतमूलिनी तृणमणि र्नीलं त्रिवृद्विद्रुमम्।

दीर्घ्यं यावनदेशजं यशभकं निष्कैकमेषां पृथक्,
ब्राह्मयाश्चाऽर्द्धपलं सुवर्णमसितचिष्कञ्च तन्मर्दयेत् ॥
ब्राह्म्यद्भिः मधुना विधाय च वटीः
सम्यक् त्रिगुञ्जाभिताः,
श्वासाऽपस्मृतिसन्निपातक
सनोन्मादापतन्त्राऽपह्वाः ।
बुद्धिभ्रंशधनुःसमीरणगदौ
यक्ष्माणमुग्रं बल-,
क्षीणत्वं ग्रहणीं हरन्त्यथ गदा-
न्योग्यानुपाने लघु ॥ १७४३ ॥

वृ. क , अपस्मारादौ ।

भाषा—तज, जायफल, लौंग, मरिच, लोहभस्म, जाविनी, सोंठ, अकलकरा, धनिया, गजपीपल, चित्रकमूल, अजमोद, बच, मीठीकुठ, तुम्बुल, चिरायता, शुद्धहिंगरिफ, अगर, असगन्ध, अम्बर, मोती, नीलकण्ठीवसलोचन, स्याहजीरा, पिपलामूल, विडङ्ग, माणिक्यभस्म, सौंफ, सफेदचन्दन, चन्द्रोदय, पोहकरमूल, कस्तूरी, शतावर, कहरवा, नीलमकीभस्म, सफेद निसोत, मूंगेकीभस्म, अजवाइन देशी, खुरासानी अजवाइन, संगेयशवकीभस्म ४–४ मासे, ब्राह्मी २ तोले, सुवर्णभस्म ४ मासे लेकर ब्राह्मीके रसकी एकभावना देकर सुखाकर मधुसे ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, अपस्मार, सन्निपात, खांसी, उन्माद, अपतन्त्रक (हिस्टीरिया), बुद्धिभ्रंश, धनुर्वात और समस्तवायुरोग, उग्रवेग यक्ष्मा, बलक्षीणता, ग्रहणी, इनसबको नष्टकरतीहै ॥ ४०१ ॥

४०२ ब्राह्मयरसायनम्

पञ्चानां पञ्चमूलानां भागान्दशपलोन्मितान् ।
हरीतकीसहस्रञ्च त्रिगुणामलकं नवम् ॥ १७४४ ॥
विदारिगन्धां बृहतीं पृश्निपर्णीं निदिग्धिकाम् ।
विद्याद्विदारिगन्धाद्यं श्वदंष्ट्रापञ्चमं गणम् ॥ १७४५ ॥
बिल्वाऽग्निमन्थश्योनाकं काश्मर्यमथ पाटलीम् ।
पुनर्नवाशूर्पपर्ण्यौ बलामैरण्डमेव च ॥ १७४६ ॥
जीवकर्षभकौ मेदां जीवन्तीं सशतावरीम् ।
शरेक्षुदर्भकाशानां शालीनां मूलमेव च ॥ १७४७ ॥
इत्येष पञ्चमूलानां पञ्चानामुपकल्पयेत् ।
भागान्यथोक्तांस्तत्सर्वं साध्यं दशगुणेऽम्भसि १७४८
दशभागावशेषन्तु पूतं तद्ग्राहयेद्रसम् ।
हरीतकीश्च ताः सर्वाः सर्वाण्यामलकानि च ।१७४९।
तानि सर्वाण्यनस्थीनि फलान्यापोथ्य कूर्चनैः ।
विनीय तस्मिन् निर्यूहे चूर्णानीमानि दापयेत् १७५०
मण्डूकपर्ण्याः पिप्पल्याः शङ्खपुष्प्याः प्लवस्य च ।
मुस्तानां सविडङ्गानां चन्दनाऽगुरुणोस्तथा ॥१७५१॥
मधुकस्य हरिद्राया वचायाः कनकस्य च ।
भागांश्चतुष्पलान् कृत्वा सूक्ष्मैलायास्त्वचस्तथा १७५२
सितोपलासहस्रञ्च चूर्णितं तुलयाऽधिकम् ।
तैलस्य द्व्याढकं तत्र दद्यात्त्रीणि च सर्पिषः॥१७५३॥
साध्यमौदुम्बरे पात्रे तत्सर्वं मृदुनाऽग्निना ।
ज्ञात्वा लेह्यमदग्धञ्च शीतं क्षौद्रेण संसृजेत् ॥१७५४॥
क्षौद्रप्रमाणं स्नेहार्द्धं तत्सर्वं घृतभाजने ।
तिष्ठेत्सम्मूर्च्छितं तस्य मात्रां काले प्रयोजयेत् १७५५
यानोपरुन्ध्यादाहारमेवं मात्रां जरां प्रति ।
षष्टिकः पयसा चाऽत्र जीर्णे भोजनमिष्यते ॥१७५६॥
वैखानसा वालखिल्यास्तथा चान्ये तपोधनाः ।
रसायनमिदं प्राप्य बभूवुरमिताऽऽयुषः ॥ १७५७ ॥
मुक्त्वा जीर्णं वपुश्चाऽग्र्यमवापुस्तरुणं वयः ।
वीततन्द्राक्लमश्वासा निरातङ्काः समाहिताः ।१७५८।
मेधास्मृतिवलोपेताश्चिरात्रं तपोधनाः ।
ब्राह्मं तपो ब्रह्मचर्यं चेरुश्चात्यन्तनिष्ठया ॥ १७५९ ॥
रसायनमिदं ब्राह्ममायुष्कामः प्रयोजयेत् ।
दीर्घमायुर्वयश्चाऽग्र्यं कामांश्चेष्टान् समश्नुते ॥१७६०॥

च स , रसायने।

भाषा—शालपर्णी, वनभाटा, पृश्निपर्णी, भटकटैया, गोखरू यह विदारिगन्धादि १ पञ्चमूल है। बिल्व, अरणी, सोनापाठा, गभारी, पाटला, यह बिल्वादि पञ्चमूल २ है। पुनर्नवा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, बला, एरण्ड यह पुनर्नवादि ३ पञ्चमूल है। जीवक, ऋषभक, मेदा, जीवन्ती (अर्कपुष्पी), शतावरी यह जीवकादि ४ पञ्चमूल है। नरकट, ईख, डाभ, कास, धान यह शरादि ५ पञ्चमूल है। इन प्रत्येक पञ्चमूलके १० पल लेकर जवकुटकर दशगुना पानी डालकर मिट्टीके पात्रमें क्वाथ करें और उसमें एकहजार नग हरें, तीनहजार नग आवले डालदे। जब हरें और आवले पकजावें तब इनको अलग निकाले और मसलकर कपडेमें छानले। दशमभागावशिष्ट क्वाथको छानकर कड़ाहीके आकारके बनाए हुए गीले गूलरके पात्रमें डाले। पात्रपर ६–७ कपडमिट्टी लगावे अथवा २–३ अङ्गुल कीचड़ लगाकर चढावे और उसीमें हरें तथा आवलोंके कल्कको डालकर मिलादे। फिर ब्राह्मी, पीपल, शङ्खपुष्पी, नागरमोथा, मोथा, विडङ्ग, सफेदचन्दन, अगर, मुलहठी, हल्दी, बच, सुवर्णभस्म और छोटी इलायचीके छिलके ४–४ पल, शकर १००० पल, लेकर बारीक पीसकर उसीमें डालदे। इसकेबाद तिलका तैल ॥ सेर, घी १२ सेर डालकर बहुत मन्द आंचसे पकावे। परन्तु यह ध्यान रक्खे कि अवलेह जल न जाय, गूलरकेही कड़छेसे चलाता रहे। जब अवलेहकी गोली बंधने लगे तब उतारकर रखले। एकदम ठंढा होनेपर १० सेर मधु मिलाकर घीके बर्तनमें रखकर १५–२० दिनबाद इतनीमात्राले जोकि अन्नके समयमें बाधा न पहुंचावे। दवाके अच्छीतरह पचजानेपर साठी चावल दूधकेसाथ खावे। इसके सेवनसे वैखानस, बालखिल्य प्रभृति ऋषिलोग नवीन शरीरको प्राप्त होकर तन्द्रा, क्लम, श्वास वगैरह समस्त रोगोंसे निर्मुक्त हुए और मेधा,

स्मृति, बलसे युक्त होकर ब्रह्मचर्यसे रहकर ब्राह्म्य तपकिया। यह ब्राह्मरसायन सेवन करता हुआ मनुष्यभी दीर्घायु, उत्तम शरीर और इष्टमनोरथको प्राप्तकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ भक्तभस्मवटी

चूर्णीकृतं पञ्चपलं तुषाऽम्ले
स्विन्नं शिवायुग्मिपतिन्दुवीजम्।
हिङ्गु क्रिमिघ्नं त्रिपटु त्रिदीप्यं
पलं पृथक् त्र्यूषणगन्धयुक्तम् ॥ १७६१ ॥
चूर्णीकृतं निम्बुरसेन भाव्यं
कोलास्थिमात्रा वटिका विधेया।
संसेविता हन्ति नृणामजीर्णं
हृद्रोगगुल्मं क्षतजोत्थगुल्मम् ॥ १७६२ ॥
प्लीहाऽग्निमान्द्यार्तिमथाऽऽमवातं
शूलातिसारं ग्रहणीगदञ्च।
जलोदरार्शःक्रिमिजांश्च रोगा-
न्हन्याद्बहून्वातकफोद्भवांश्च ॥ १७६३ ॥

१ [illegible] अजीर्णाऽधिकारे।

टि०—अस्य योगस्य मूलग्रन्थनिर्दिष्टा यद्यपि सदीयरुठस्य जाति-स्वातरमत्र्यत्रयाऽत्र पाठ ग्रुगन स्यादिति बुद्ध्या स्वनन्यपथे बद्ध परन्तु सरमासारद निष्कास्य शिवद्वूनि दत्तानि तेन तस्मयोगस्य स्वनन्य इव मन्निमानि, परन्त्वस्य मीन स एव योग। पारदनिष्कासनेन तम्मयोगाद्धीनवर्यकारीति सुधीभि विभावनीयम्। मूलयोगस्य प्रमाणे च वैचित्र्य मत्वानिति भेद दर्शयितुमेवाऽस्माभि स्वनन्त्रतया पथे गृहीत।

भाषा—गाव ५ पल कुचिला और हर्रेको तुषाऽम्लमें ४ पहर स्वेदितकर छीलडाले और भीतरका अङ्कुरभी निकालदे। उसी- तरह हर्रेके बीजोंको निकालदे और दोनोंकी चटनीसी बना कर भुनाहींग, विडङ्ग, सेंधा, संचल छाभरनमक, तीनों अजवाइन (देशी, खुरासानी और राजयावन), सोंठ, मिर्च, पीपल और शुद्धगन्धक १–१ पल लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्क मर्दनकर नीबूके रसमें १ दिन घोटकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली रुग्णके प्रकृतिकेसाथ सेवनेसे अजीर्ण, हृद्रोग, गुल्म, रक्तगुल्म, प्लीह अग्निमान्द्य, आमवात, शूल, अतिसार, ग्रहणी जलोदर, बवासीर, क्रिमिरोग और कफवातरोग इनसबको यह दूरकरतीहै ॥ ४०३ ॥

४०४ भक्तविपाकवटी

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिला।
गगनं कान्तलोहञ्च यथायोग्यं समाहरेत् ॥ १७६४ ॥
त्रिवृद्दन्ती वारियादं चित्रकञ्च महौषधम्।
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम् ॥१७६५॥
रामठं कटुका पाठा सैन्धवं साऽजमोदकम्।
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ॥ १७६६ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन तु।
सूर्यावर्तरसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ १७६७ ॥
आतपे भावयेद्वैद्यः खल्वपात्रे च निर्मले।
पेषयित्वा वटीं कुर्यान्मुद्गाफलसमप्रभाम् ॥
भक्षयेच्छाणमानेन लवङ्गस्य च योगतः ॥ १७६८ ॥

१ र.,र चं,र.सु,रसं,अजीर्णे।

टि०—रसरत्नाकरे रसायनाधिकारे पाठ। र सु, भुक्तोत्तरीया वटीति नाम।

भाषा—शुद्ध सोनामाखी, पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, अभ्रक और कान्तलोहभस्म सब समभाग, निसोत, दन्तीमूल, नागरमोथा, चित्रकमूल, सोंठ, पीपल, मरिच, हर्रें, अजवाइन, स्याहजीरा, भुनाहींग, कुटकी, पाठा, सेंधानमक, अजमोद, जायफल, यवक्षार, सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्कघोट- कर अदरख, निर्गुण्डी, हुरहुर, मालकांगनी इनप्रत्येकके यथा- सम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली ४ माशे लौंगकेचूर्णकेसाथ खानेसे अग्नि एकदमप्रदीप्त होजाताहै अजीर्णकी शङ्काभी नहीं रहती ॥ ४०४ ॥

४०५ भक्तोत्तरचूर्णम्।

अभ्रकं गन्धकञ्चैव पिप्पली लवणानि च।
त्रिक्षारं त्रिफला चैव हरितालं मनःशिला ॥१७६९॥
पारदश्चाऽजमोदा च यमानी शतपुष्पिका।
जीरकं हिङ्गु मेथी च चित्रकं चविका तथा ॥१७७०॥
दन्ती शैलेयकं मुस्ता त्रिवृता मृतलोहकम्।
अञ्जनं निम्बबीजानि पटोलं धूस्तूरबीजकम् ॥ १७७१ ॥
सर्वाणि चाऽक्षमात्राणि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
शतं धनकबीजानि शोधितानि प्रयोजयेत् ॥ १७७२ ॥
सर्वमेकीकृतं युक्त्या यथाशक्त्या प्रदापयेत्।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थमृषिभिः परिकीर्तितम् ॥ १७७३ ॥
श्लीपदान्यन्त्रवृद्धिञ्च वातवृद्धिञ्च दारुणाम्।
अरुचिश्चाऽऽमवातञ्च शूलं श्वासमुद्भवम् ॥१७७४॥
गुल्मञ्चैवोदरव्याधीन्नाशयत्याशु तत्क्षणात्।
भक्तोत्तरमिदं चूर्णमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥१७७५॥

वै क,भै र,अन्त्रवृद्ध्यधिकारे।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, पीपल, पांचोंनमक, तीनोंखार, त्रिफला, हरिताल और मैनसिलकी भस्म, शुद्धपारा, अजमोद, अजवाइन, सोंफ जीरा, भुनाहींग, मेथी, चित्रकमूल, चव्य, घर दन्तीमूल, छरीला, मोथा, निसोत, लोहभस्म, सफेद सुरमा, नीमकेबीजोंकी गिरी, परवल, त्रिफला देकर १–१ तोला और शुद्ध धतूरेके बीज १०० नग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ माशा दधिअनुपानकेसाथ

देनेसे मन्दाग्नि, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, भयङ्करवातवृद्धि, अरुचि, आमवात, वातजशूल, गुल्म, उदररोग इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ ४०५ ॥

४०६ भगन्दरहरोरसः (व्याधिहरण॰)

सूतस्य द्विगुणं गन्धं तथैव रसचन्द्रकम् ।
प्रसारिण्या रसैः पश्चान्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ १७७६ ॥
घर्मे विशोष्य तत्सर्वं काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
मुद्रयित्वा मुखं तस्यास्ताञ्च भूमौ निधापयेत् ।१७७७।
ऊर्ध्वाऽधश्च मलं दत्त्वा घोटकस्य विचक्षणः ।
त्रिमासाऽन्ते समुद्धृत्य खादेद्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥
भगन्दरं निहन्त्येष साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥१७७८॥

वै र, र.प्र, भगन्दरे ।

टि०–नि र, वै क, र च, व रा, वै नि, एषुग्रन्थेषुपरस्ताऽधिकार व्याधिहरणनाम्ना एक पाठो निहिताऽस्ति स च बहुलाशोऽनेनसमा न केवल पाक विशेष ■ यथा—"हिङ्गुलोत्थ रस भाग द्विभाग रसचन्द्रयम् । रसतुल्य बलिं दद्यात्सर्वमध्ये तु मञ्जरीम् ॥ पञ्चसृत्वा पुटे रुद्ध दक्षाण्डे बालुकागनम् । दिनैकन्तुरमाद्गमि स्वाङ्गशीन समुद्धरेत् ॥ पूर्नयेत्कुलविप्रादीन्यथाराग प्रयोनयेत् । गुञ्जाचतुष्य खादस्नागत क्षीदर्लैर्नुनम् ॥ षण्ढोऽपि लभत पुस्त्व वाजीकरणमुत्तमम् । अपुत्र पुत्र माप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥ वलीपलितहृच्छूलवातश्लेष्म निवर्हणम् । भय व्याधिहर स्त पूज्यपादेन निर्मित ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और रसकपूर २–२ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रसारिणीके रससे ७ दिनतक मर्दनकर धूपमें सुखाकर आतशीशीशीमें भरके मुँहवन्दकरदे और कमरबराबर खोदेहुए गड्ढेमें घोड़ेकी ताजीलीदमें दबावे । तीन महीनेके बाद निकालकर इसमेंसे ४–४ रत्ती उचितानुपानके-साथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य भगन्दर नष्टहोताहै ॥४०६॥

४०७ भगन्दरारी रसः

सूतं गन्धं मृतं ताम्रमभ्रकं दरदं समम् ।
मरिचं द्विगुणं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाऽम्बुना ॥१७७९॥
त्रिदिनं भावयित्वाऽथ भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
भगन्दरं पञ्चविधं जयेच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥१७८०॥

र म.मा., र का भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, अभ्रकभस्म शुद्धहिंगरफ समभाग और सबसे दूनी मरिच लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर चित्रकमूलक क्वाथसे ३ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली महामञ्जिष्ठादिकाथ प्रभृतिके साथ देनेसे यह भगन्दरको जल्दी नष्टकरताहै ॥४०७॥

४०८ भगन्दरोपदंशारीरसः

रससोरककासीसतुवरीटङ्कणं विषम् ।
विपचेद्डमरूयन्त्रे वेदयामान्भिषग्वरः ॥ १७८१ ॥
त्वक्प्रपिहितं दद्याद्गुञ्जायुग्ममितं रसम् ।
भगन्दरोपदंशानां नाशकं श्रेष्ठमौषधम् ॥ १७८२ ॥

र.का, उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा, शोरा, कसीस, फिटकड़ी, सुहागा और बछनाग सब समभागलेकर कज्जलीकर डमरूयन्त्रमें ४ पहरकी चूल्हेपर अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती लवङ्गके कल्कमें कवलितकर निगलवादे और नमकरहित भोजन देवे तो भगन्दर तथा उपदंश नष्टहोवें ॥४०८॥

४०९ भङ्गादिगुटिका

भङ्गाऽष्टपलिका ग्राह्या तथा ज्योतिष्मती मता ।
द्वादशप्रमिता ग्राह्या पारसीकयवानिका ॥ १७८३ ॥
नवटङ्कमितो ग्राह्यो ह्यजमोदस्तथा मतः ।
टङ्काऽष्टदशकस्तद्वद्दर्जितं धूर्तबीजकम् ॥ १७८४ ॥
टङ्कषट्कमिता ग्राह्या जातिपत्री तथैव च ।
नवटङ्कमितं प्रोक्तं फलं जात्याश्च तत्समम् ॥ १७८५ ॥
अहिफेनं तथैव स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णितम् ।
गुडश्च द्विगुणस्तस्मात्रसभस्माऽर्द्धकर्षकम् ॥१७८६॥
लेहवत्साधयेत्तेषु कृतं चूर्णं विनिःक्षिपेत् ।
गुटीं निष्कमितां दद्यात्पिबेद्दुग्धमहर्निशम् ॥ १७८७ ॥
षण्ढः पौरुषमासाद्य मोदेन रमते स्त्रियम् ।
दुर्बलोऽपि बलं प्राप्य हठेन रमते स्त्रियम् ॥१७८८॥
एकवारं रतिसहश्चतुर्वारं स्त्रियं भजेत् ।
हस्तकर्मकृतं दोषं नाशमायाति निश्चितम् ॥
नष्टवीर्यविवृद्धिःस्याद्बृंहणत्वंप्रपद्यते ॥ १७८९ ॥

र.कृ वाजीकरणे ।

भाषा—भाग और मालकांगनी ८–८ पल, खुरासानी अजवाइन (जोकि कालेरङ्गकीनहो) १२ पल, अजमोद ९ टङ्क, भुनेहुए धतूरेके बीज १८ टङ्क, जावित्री ६ टङ्क, जायफल, और शुद्ध अफीम ९–९ टङ्क लेकर बारीकचूर्णकर अफीमकेसाथ थोड़ाथोड़ा मिलाकर घोटदे जिससेकि अफीम ठीक तौरपर मिलजाय । फिर इसचूर्णसे दूने पुरानेगुड़की २॥ तारकी चाशनी बनाकर धीरेधीरे सब दवाइयां मिलाकर पारेकीभस्म आधाकर्ष मिलावे और ४–४ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ देकर केवल दूधही पीनेसे षण्ढत्व, दौर्बल्य, हस्तकृतदोष, नष्टवीर्यत्व इनसबको दूरकरके हृष्टपुष्ट बनातीहै और आयुको बढातीहै ॥ ४०९ ॥

४१० भल्लातकपाकः (प्रथम)

भल्लातान् परिगृह्य वृन्तरहितान्प्रस्थोन्मितालम्भसि,
प्रस्थे विंशतिमानके हुतभुजि ध्मातान् पयस्याढके ।
फल्कीभावमुपागते च कुडये घातें पुन भर्जितान्,
खल्वे सूक्ष्मतया विमर्दिततनून् कृत्वा भिषग् दापयेत्
यक्षं पारदमूर्तिकां कनकजां कर्षार्द्धमानं पृथक्,
त्वक्क्षीरी मदयन्तिका मणिशिलां कर्षप्रमाणाः क्षिपेत्
रत्नज्योतिलवङ्गकेशरमिदिलाग्जातिपत्र पृथक्,
कर्षार्द्धप्रमितं सुचन्दनफलं कर्षार्द्धकस्तूरिकाम् १७९१

एलां वल्कलपत्रविश्वमगधाः शृङ्गीं शिवायुग्मकम्,
धात्रीं जीरयुगोपकुञ्चिमरिचं धान्यं तिलान् कार्षिकान्
प्रस्थे फेनविवर्जिते मधुभवे सम्मिश्र्य सर्वं सुधी,
सौवर्णेऽप्यथ राजते मणिभवे मार्तेऽपि वा स्थापयेत्
कर्षाऽर्द्धं विनियुज्य प्रातरस्माद्युक्ताऽनुपाने क्षणाद्,
वाताऽस्रं गलिताऽस्थिपादकरजं त्वग्दाहपिडकाचितं
पामस्फोटविचर्चिकाः किटिभकं कण्डूग्रतापाऽन्वितम्,
शुक्रर्तुत्रुटिवातरोगनिवहं हन्त्यक्षिमूर्धादिजान् १७९३

वृ क ,कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—छिल्करहित ताजे और मोटे एकप्रस्थ भिलावोंको २० प्रस्थ पानीमें डालकर मन्द आंचमें पकावे। चतुर्थांश रहनेपर भिलावोंको निकालकर पानीको फेंकदे। फिर १ आढक गोदुग्धमें डालकर पकावे। चतुर्थांश दूध बाकी रहनेपर भिलावोंको निकालकर दूधको फेंकदे फिर पावभर गोघृतमें इन्हें मन्द आंचसेभूने। अच्छीतरह सिकजानेपर उतारकर ठण्डाहोनेपर मक्खनके सदृश बारीक पीसे फिर वङ्ग, पारा, सुवर्ण इनकी-भस्में आधाआधाकर्ष, तज, वंसलोचन, मेंहदीके फूल, २१ बार गोमूत्रमें बुझाईहुई मैनसिल येसब १-१ कर्ष, रतनजोत, लौंग, केशर, सौंफ, कलमीतज, जावित्री, येसब २-२ कर्ष, सफेद-चन्दनकाचूर्ण १ पल, अच्छीकस्तूरी आधाकर्ष, इलायची, भोजपत्र, तमालपत्र, सोंठ, पीपल, काकडासींगी, मेंढासींगी, दोनोंहरें आंवला, स्याह-सफेदजीर, मगरैल, मरिच, धनिया और तिल १-१ कर्ष इनसबको इकट्ठे मिलावे और गरमकर फेननिकालेहुए १ प्रस्थ ठण्डेमधुमें मिलाकर सुवर्ण, चान्दी, मणि अथवा मिट्टीकेबर्तनमें रखछोड़े। इसको ७ दिन धान्यकीराशिमें रखकर निकालले फिर ७ दिनबाद आधा २ तोला तत्तद्रोग हरानुपानकेसाथ प्रातःकालमें देनेसे वातरक्त, गलितकुष्ठ जिसमेंकि हड्डी, पैर नख गलने लगेहों दाह और पिडकाओंसयुक्तहो। पामा, स्फोट, विचर्चिका, किटिभ, कण्डू, प्रचण्डदाहयुक्त कुष्ठ, शुक्र और ऋतुदोष, भयङ्कर वातरोग, आंख और मस्तकके रोग, श्वास, कास, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१० ॥

४११ भल्लातकपाकः (द्वितीयः)

भल्लातकानां द्वौ प्रस्थौ द्रोणे दुग्धे विपाचयेत्।
द्विप्रस्थञ्च घृतं दद्यात्प्रस्थं शुद्धाञ्च शर्कराम् ॥१७९४॥
त्रिफलां त्रिपलां मुस्तां मञ्जिष्ठां धान्यजीरके।
चातुर्जातकह्रीवेरयष्टीपत्रककेसरान् ॥ १७९५ ॥
लवङ्गजातीकङ्कोलं विदारीकन्दमुत्पलम्।
वंशजं लोहताम्रे च कर्पूरं खदिरसमम् ॥ १७९६ ॥
प्रस्थार्द्धं निक्षिपेच्चूर्णं भक्षयेत्कर्षमात्रकम्।
रक्तपित्तञ्च कुष्ठञ्च दद्रुपामाविचर्चिकाः ॥ १७९७ ॥
चक्रितं वातरक्तञ्च प्रवहत्पूयशोणितम्।
अङ्गस्फुरणबाधिर्यं शैथिल्यञ्च कुलोद्भवम् ॥
वातव्याधिमशेषञ्च पित्तकृन्ति परित्यजेत् ॥१७९८॥

पा व ,

भाषा—दोसेर टोपीनिकाले हुए भिलावोंके टुकडेकर १६ सेर गायके दूधमें पकावे। मावा होनेपर भिलावोंको निकाल कर फेंकदे और मावेमें घी २ सेर, शक्कर १ सेर डालकर इतना पकावे कि माव का पानी जलजाय और शक्कर गलकर मावे के साथ एक जीव होजाय। फिर नीचे उतारकर त्रिफला ३ पल, नागरमोथा, मजीठ, धनिया, दोनोंजीरे, चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची और नागकेसर,) हाऊबेर, मुलहठी, पत्रज, केसर, लौंग, जायफल, शीतलचीनी, विदारीकन्द, कमलगट्टा, वंसलोचन, लोह और ताम्रभस्म, शुद्धकपूर और खैरसार येसब डेढ १॥ कर्ष, लेकर बारीक चूर्णकर पाकमें मिलाकर घीके बर्तनमें रखछोड़े। ६-७ दिनकेबाद इसमेंसे १-१ तोला खानेसे रक्तपित्त, कुष्ठ, दद्रु, पामा, विचर्चिका, चकत्ते, पीव और लोहू निकलता हुआ वातरक्त, अङ्गोंका फड़कना, बधिरता, कुलपर-म्परागत शिथिलता और तमाम वातव्याधि नष्टहोतेहैं। पित्त कारक पदार्थोंकात्याग करे ॥ ४१२ ॥

४१२ भल्लातकरसायनम् (प्रथमम्)

भल्लातकी शतपला तदर्द्धं बिल्वमूलकम्।
काश्मरी कण्टकारी च व्याघ्री तुण्डा च पाटला १७९९
गोक्षुरद्वयनिर्गुण्ड्यौ शतमूली सुगन्धकः।
मरीचानि यवासाश्च पटोली रेणुकण्टकौ ॥ १८००
पुनर्नवा वंशमूलं शरपुङ्खी त्रिवृद्बला।
वज्रवल्ली यष्टिमधु लामज्जो झिण्टिकुण्डलम् ॥१८०१
चित्रमूलं हस्तिकर्णी बलमूलमयोश्वरी।
मूर्वा च पद्मकन्दश्च हार्द्रकं निम्बमूलकम् ॥१८०२॥
चतुस्त्रिंशच्च मूलानि बिल्वमूलार्द्धकं क्षिपेत्।
अष्टद्रोणजले पाच्यमष्टभागाऽवशेषितम् ॥१८०३॥
आदाय स्वरसांश्चाऽस्मिन् भृङ्गी मत्स्याक्षिका तथा
हंसपदी काकमाची तुलसी नागकारिका ॥१८०४॥
एतेषां स्वरसञ्चैव प्रस्थं प्रस्थं विनिःक्षिपेत्।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं रास्ना भार्ङ्गी मधुस्नुही ॥१८०५
ग्रन्थिकञ्च विडङ्गानि कणामूलञ्च रेणुकम्।
जीरद्वयञ्च कुष्ठञ्च धान्यकं कटुरोहिणी ॥ १८०६ ॥
लाक्षा च रजनी मांसी मुस्ता श्रीगन्धचोरकम्।
हयगन्धिमरालञ्च शिलाजतु शिलाफलम् ॥१८०७॥
जातीफलञ्च तत्पत्रं कुङ्कुमं नागकेसरम्।
द्राक्षोशीरञ्च खर्जूरमुदीच्यं रोचनं तथा ॥१८०८॥
गन्धकं वृद्धदारञ्च लोहभस्म च वङ्गकम्।
अभ्रकं नागभस्माऽथ श्रीगन्धवंशरोचनाः ॥१८०९॥
जटामांसी गजकणा वाराही च शतावरी।
तालीसपत्रं तक्कोलं मिसी धान्यं लवङ्गकम् ॥१८१०
कृष्णाऽगुरु तुगाक्षीरी मुसली तगरं तथा।
एतानि समभागानि प्रत्येकं पलमानकम् ॥१८११॥
नारिकेलजलञ्चैव नारिकेलफलन्तथा।
आर्द्रकस्याऽपि स्वरसः स्नुग्जम्बीररसौ तथा ॥१८१२

गोक्षीरं प्रस्थमादाय गोघृतं प्रस्थमात्रकम्।
पुराणं तालजगुडं मधुप्रस्थद्वयं क्षिपेत् ॥ १८१३ ॥
धन्वन्तरिं पूजयित्वा कर्षमात्रं तु सेवयेत्।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि गुल्मशूलनिवारणम् ॥ १८१४ ॥
सर्ववातमपस्मारमुदरं श्वासरोगकम्।
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं वातरोगं हरेत्तथा ॥ १८१५ ॥
रक्तमेहं तन्तुमेहं व्रणञ्च मधुमेहकम्।
हस्तिमेहं सुरामेहं पुराणज्वरनाशकम् ॥१८१६॥
अशीतिं वातजान्रोगान् सर्वशूलं व्यपोहति।
तुरङ्गजवसंयुक्तो मत्तङ्गबलविक्रमः ॥ १८१७ ॥
गच्छेद्धन्धर्वदर्पाङ्गः कन्दर्प इव मूर्तिमान्।
शतं वाऽपि सहस्रं वा रमयेद्वनिताः पुमान् ॥१८१८॥
सोमरोगं ग्रन्थिवातं शुक्लरोगं विनाशयेत्।
वीर्यवृद्धिकरं पुंसां चर्मदोषनिवारणम् ॥१८१९॥
सर्वं कुष्ठं क्षयं हन्ति सर्वान् मेहान् व्यपोहति।
महाभल्लातको नाम ह्यश्विनोदेवनिर्मितः ॥ १८२० ॥

वै. चि., रसायने।

भाषा—टोपीनिकालेहुए भिलावे १०० पल, वेलकीजड़ ५० पल, गंभारी, भटकटैया, वनभाटा, काकनासिका, पाढर, दोनों गोखरू, दोनों संभालू, शतावर, कुकरोंधा, मरिच, जवासा, परवल, रेणुका (रोण पहाडी), मैनफल (मॉंढोळ गु), पुनर्नवा, वासकी जड़, शरपुङ्ख, निसोत, बला, हड़जोड़, मुलहठी, वारीकखस, कटसरैया, महर, चित्रककीजड़, हस्तिकर्णपलाश, नागरमोथा, इसरोड़, मरोडफली, पद्मकन्द, अदरख, नीमकी जड़, इन चौंतीस चीजोंकी जड़ २५–२५ पल लेकर सबका जवकुट चूर्णकर १६ द्रोण पानीमें उबाले। अष्टभागावशेषरहनेपर छानले फिर भंगरा, मछेछी, हसराज, मकोय, तुलसी, अरणी, इनप्रत्येकका अङ्गस्वरस १–१ सेर, त्रिकुटु, त्रिफला, चव्य, रास्ना, भारङ्गी, ढंडायूहर, गठिवन, विडङ्ग, पिपलामूल, रेणुका (रोण पहाडी), दोनोंजीरे, कुठ, धनिया, कुटकी, पीपलकीलाख, हल्दी, रोहण, नागरमोथा, विरोजा, खरजवाइन असगन्ध, हसराज, शिलाजीत, हजरतयहूद, जायफल, जावित्री, केसर, नागकेसर, द्राक्ष, खस, छुआरे, सुगन्धवाला, गोरोचन, शुद्धगन्धक, विधारा, लोह, वङ्ग, अभ्रक, और सीसेकीभस्म, सफेदचन्दन, वंसलोचन, जटामासी, गजपीपल, वाराहीकन्द, शतावर, तालीसपत्र, शीतलचीनी, सोंफ, धनिया, लौंग, कालाअगर, तीखुर, स्याह सफेद मुसली और तगर १–१ पल, नारियलका जल तथा गिरी, अदरख, डंडा थूहर और जभीरीकारस, गायका दूध ये प्रत्येक १–१ सेर गोघृत १ सेर, पुराना ताड़का गुड़ और मधु २–२ सेर लेवे। इनमेंसे सूखीदवाओंको अलग निकालकर कपड़छान चूर्णकरले। फिर पूर्वमें किया हुआ क्वाथ और पीछेके स्वरस, घी, दूध तथा गुड़ इनसबको इकट्ठा मिलाकर पकावे। जब कड़ढेमें चल्क लगने लगे उससमय चूर्णको डालकर चलावे। जब गोली बधने लगे और हाथके न लगे उससमय उतारकर रखले। ठंढाहोनेपर मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े। ६–७ दिन बीतजानेपर इसमेंसे १–१ तोला उचितानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, गुल्म, शूल, समस्त वातव्याधि, मृगी, उदररोग, श्वास, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, रक्तमेह, तन्तुमेह, व्रण, मधुमेह, हस्तिमेह, सुरामेह, पुरानाज्वर, समस्तशूल, सोमरोग, ग्रन्थिवात, शुक्ररोग, वीर्यनाश इनसबको दूरकर आदमीको वल, वीर्य, वर्णयुक्त बनाकर कन्दर्पसदृश बनादेता है ॥ ४१२ ॥

४१३ भल्लातकरसायनम् (द्वितीयम्)

विडङ्गलौहभल्लातशुण्ठीराज्यमधुप्लुताः।
सेवेत नियतो नित्यं ब्रह्मचारी व्रते स्थितः ॥१८२१॥
रक्ताऽल्पत्वकृता रोगा नाशमायान्ति सत्वरम्।
वलीपलितनिर्मुक्तो मासत्रितयसेवनात् ॥ १८२२ ॥

वृ. क. रसायने।

भाषा—विडङ्ग, लोहभस्म, शुद्धभिलावे और सोंठ समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे मधु और घीमें मिलाकर प्रातःकाल सेवन करनेसे पाण्डु, वलीपलित, अशक्ति और तमाम धातुओंके अभावको दूरकर मनुष्यको दीर्घायु बनाता है। इसका प्रयोग कमसेकम ३ महीनेतक करना चाहिये ॥ ४१३ ॥

४१४ भल्लातकलोहम्

चित्रकं त्रिफला मुस्तं ग्रन्थिकं चविकाऽमृता।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गदण्डोत्पलकुठेरकाः ॥ १८२३ ॥
एषां चतुष्पलान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत्।
भल्लातकसहस्रे द्वे छित्वा तत्रैव दापयेत् ॥ १८२४ ॥
तेन पादाऽवशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिषक्।
तुलार्द्धं तीक्ष्णलोहस्य घृतस्य कुडवद्वयम् ॥ १८२५ ॥
त्र्यूषणं त्रिफलां वह्निं सैन्धवं बिडमौद्भिदम्।
सौवर्चलं विडङ्गञ्च पलिकांशं प्रकल्पयेत् ॥ १८२६ ॥
कुडवं वृद्धदारस्य तालमूल्यास्तथैव च।
सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥१८२७॥
सिद्धे शीते प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम्।
प्रातर्भोजनकाले वा ततः खादेद्यथाबलम् ॥ १८२८ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं पाण्डुरोगमरोचकम्।
क्रिमिगुल्माश्मरीमेहांश्छूलश्चाशु व्यपोहति ॥१८२९॥
करोति शुक्रोपचयं वलीपलितनाशनम्।
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥ १८३० ॥

वृ. मा., र. चि., रसायनस., लो. प., र. क., रससागर, टो., हा. स., यो. म., र. का., अर्शोरोगे।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, नागरमोथा, गठिवन, चव्य, गिलोय, गजपीपल, अपामार्ग, भद्रदण्डी, जंगलीतुलसी, इनप्रत्येकके ४ पल लेकर जवकुटकर एकद्रोण (१६ सेर) पानीमें लोहेके पात्रमें पकावे और पकातेसमय २००० भिलावे कूटकर डालदे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर सीठीफेंकदे। फिर

फोलादभस्म ५० पल, घी आधसेर, त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, सेंधानमक, नवसादर, खारियानमक, संचल, विडङ्ग येसब १-१ पल, विधारा, तालमूली ४-४ पल, सूरण ८ पल इनसबका बारीकचूर्णकर उसीमें डालकर पकावे। सिद्धहोजानेपर उतारकर एकदम ठंढाहोनेपर आधसेर मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखछोडे। ३-४ दिनबाद इसमेंसे ६-६ माशे सुबह अथवा भोजनके समय खानेसे बवासीर, ग्रहणी, पाण्डु, अरुचि, क्रिमि, गुल्म, पथरी, प्रमेह, शूल, वलीपलित, इनसबको नष्टकर आदमीको जवान बनाता है॥ ४१४॥

४१५ भल्लातकाऽमृतम्

भल्लातकचतुष्पष्टिपलं दुग्धश्च तत्समम्।
दुग्धाच्चतुर्गुणं वारि पाच्यं दुग्धाऽवशेषितम्॥१८३१॥
दुग्धतुल्यं घृतं योज्यं घृतपादां सितां क्षिपेत्।
मधुधात्र्यौ सितातुल्ये सिताऽर्द्धमभयारजः॥१८३२॥
मृतलोहं गुडूच्याश्च प्रत्येकमभयाऽर्द्धकम्।
क्षिपेत्स्निग्धघटे सर्वं धान्यराशौ निवेशयेत्॥१८३३॥
सप्ताहादुद्धृतं तत्तु खादेन्निष्कमयं क्रमम्।
भल्लातकाऽमृतं नाम हन्ति रक्तार्शसां बलम्॥
क्षारं तीक्ष्णं न भोक्तव्यं तैलाभ्यङ्गश्च वर्जयेत्॥१८३४॥

भ.रा., वै.चि., र.को., अर्शोधिकारे।

भाषा—६४ पलदूधमें टोपीउतारकर टुकडे किये हुए भिलावे ६४ पल डालकर चौगुना पानी मिलाकर पकावे। दुग्धमात्र अवशेष रहनेपर भिलावोंको निकालकर घृत ६४ पल और शक्कर, मधु तथा आवले १६-१६ पल, हर्रेकाचूर्ण ८ पल, लोहभस्म, गिलोयका सत्व ये प्रत्येक ४-४ पल लेकर बारीक चूर्णकर पहिले दूधमें घी डालकर मावा बनाकर सेकले फिर नीचे उतारकर सबचीजें मिलादे। एकदम ठंढाहोनेपर मधुमिलाकर चिकने वर्तनमें बन्दकर अनाजके ढेरमें दबादे। सातदिनबाद निकालकर १-१ तोला रोजाना खानेसे यह खूनीबवासीर के बलको नष्टकरताहै। क्षार और तीक्ष्णपदार्थ न खाय, तैलाभ्यङ्ग न करावे॥ ४१५॥

४१६ भस्मामृतरसः (प्रथम)

धान्याऽभ्रं सूतकं तुल्यं मर्दयेन्मारकद्रवैः।
दिनैकं तिलकल्केन पटं लिप्त्वाऽथ वर्तिकाम् १८३५
कृत्वैव तस्य तैलेन विलिप्य च पुनः पुनः।
प्रज्वाल्य तामधः पात्रे सतैलं पारदं पचेत्॥१८३६॥
स दिनं भूधरे पक्वो भस्मीभवति नाऽन्यथा।
योजितो रसयोगैस्तत्तद्रोगहरो भवेत्॥ १८३७॥
मर्दनं तप्तखल्वेऽस्य विशेषादग्निकारकः।
अत्र प्रकरणे वक्ष्ये शुद्धसूतस्य मारिकाः॥ १८३८॥
औषधी याः समस्ता वा व्यस्ताऽव्यस्ता दशोत्तराः।
योजिता घ्नन्ति देवेशि सूतं गन्धं विनाऽपि ताः॥
मेघनादो वज्रवल्ली देवदाली च चित्रकम्।
बला शुण्ठी जयन्ती च कर्कोटी तुम्बिका तथा१८४०
कटुतुम्बीकन्दरम्भाकन्दवारणशुण्डिकाः।
कोपातक्यमृताकन्दं कन्यका चक्रमर्दकम्॥ १८४१॥
सूर्यावर्तः काकमाची गुञ्जानिर्गुण्डिका तथा।
लाङ्गली सहदेवी च गोक्षुरः काकतुण्डिका॥१८४२॥
जातीलज्जालुकटुकाहंसपादङ्गराजकम्।
ब्रह्मबीजश्च भूधात्री नागवल्ली वरी तथा॥ १८४३॥
स्नुह्यर्कदुग्धं तुलसी धुस्तूरो गिरिकर्णिका।
गोपाली पट्टरेताभिर्वज्रमूषागतं पचेत्॥ १८४४॥
ग्रावाणश्च तुषा दग्धा दग्धा वल्मीकमृत्तिका।
लोहकिट्टश्च घस्रार्द्धमजाक्षीरेण मर्दयेत्॥
नृकेशशाणसंयुक्ता वज्रमूषा प्रकीर्तिता॥ १८४५॥

र.चि., रसायने।

भाषा—धान्याभ्रक और शुद्धपारा समभागलेकर मारकगणोक्त औषधियोंके रस और तिलके कल्कसे एकदिन मर्दनकर साफकपडेपर लेपकरके बत्ती बनाय तिलके तैलमें वारम्वार डुबाकर बीचमेंसे चीमटेसे पकडकर पात्रमें रखकर आग लगावे, बत्ती जलती जायगी और पारेसहित तैल टपकता जायगा। इसपारे सहित तैलको मूषामें बन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें अग्नि देनेसे भस्महोगी। इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरता है। इसपारेको तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे अग्निवर्धक गुण अधिक होजाताहै। प्रकरणानुरोधसे पारेको मारनेवाली दवाओंका नाम लिखा जाताहै ये गन्धकके विनाही पारेकीभस्मको करदेतीहैं। काटेवालीचौलाई, तिधारीहडजोड, बन्दाल, चित्रक, बला, सोंठ, जैंत, खेखसा, कड़वीतूंबी, तूंबीकीजड, केलेकाकन्द, हाथीशुण्डी, कड़वीतोरई, गुडूचीकन्द, घीकुंआर, चकवड, हुरहुर, मकोय, गुञ्जा, निर्गुण्डी, करिहारी, सहदेवी, गोखरू, काकनासिका, जाती, लज्जालु, राई, हंसराज, भागरा, ब्रह्मबीज, भूधात्री, पान, शतावरी, सेहुण्ड, आकदूध, तुलसी, धतूरा, कोयल, गोपालीलता, (गोवाली० म०) और नमक इनमें घोटकर वज्रमूषामें रख पकानेसे पारेकी भस्म होती है। पत्थर, जलेतुषतुष, जलीहुईविम्बीकी मिट्टी, लोहकिट्ट सब समभागलेकर आधेपहर बकरीके दूधमें मर्दनकर मनुष्यके केश और शणको बारीक कतरके उसमिट्टीमें कूटकूटकर एकजीव करदे। इससे बनाईहुई मूषाको वज्रमूषा कहतेहैं॥ ४१६॥

४१७ भस्मामृतरसः (द्वितीयः)

अप्रसूतगवां मूत्रैः पेषयेद्रक्तमूलिकाः।
तद्द्रवै मर्दयेत्सूतं तुल्यगन्धकसंयुतम्॥ १८४६॥
तप्तखल्वे चतुर्याममविच्छिन्नं विमर्दयेत्।
तत्पिण्डं पाचयेद्यन्त्रे त्रिसंघट्टे महापुटे॥१८४७॥
एवं दशपुटैश्चैव मर्द्य पाच्यं पुनः पुनः।
तदुद्धृत्य पुन मर्द्य वज्रमूषां निरोधयेत्॥ १८४८॥

भूधराख्ये पचेद्यन्त्रे दशधा भस्मतां व्रजेत् ।
द्रवैः पुन पुनर्मर्द्य सिद्धोऽयं भस्मसूतक ॥१८४९॥
मूलिकामारितः सूतो जारणाक्रमवर्जित.।
न क्रमेद्देहलौहेषु रोगहर्ता भवेद्ध्रुवम् ॥ १८५० ॥

र चि , यो म सर्वरोगे।

टि०—"गर्ते बाह्ये भवेद्दर्तो मध्ये गर्ते रस कुरु । चक्रयन्त्रमिदं सिद्ध बाह्ये गर्ते बृहत्पुटम्" इति चक्रयन्त्रलक्षणम् । चक्रयन्त्रादन्यत्राऽस्ति किञ्चिदपि निमद्दृष्टास्यन्त्राम । योगमहार्णवे रससिन्दूरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर रतनजोत वगैरह लालमूलिकाए वछड़ीके मूत्रमें पीसकर इसरससे ४ पहर निरन्तर मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर चक्रयन्त्रमें महापुटदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर इसीतरह मर्दनकर लगावे । इसतरह दशपुटके बाद मर्दनकर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें १० पुट देनेसे भस्म होजाता है। इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समामरोगोंको दूर करताहै । जारणाक्रमबिना मूलिकाओंसे माराहुआ पारा देह और लोहमें वेधन नहीं करताहै केवल रोगोंको दूरकरताहै । इस लिये प्रथम बीजादिका जारणकर पारेकी भस्मकरनी अच्छी है॥

४१८ भस्मेश्वररसः

भस्म षोडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम् ।
निष्कत्रयञ्च मरिचं विषनिष्कञ्च चूर्णयेत् ॥१८५१॥
अयं भस्मेश्वरो नाम सन्निपातनिकृन्तन.।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन तु ॥ १८५२ ॥

र स , वृ यो त , नि र , भा प्र. र सु , टो र म र र-दी , रसायनस , र चि , र क ल र धा योम , र क यो र सि , सन्निपाते । यो म आमवाते । रसकामधेनौ अरण्योपलभस्माऽर्द्धमरिचं नियोजितम् ।

भाषा—जङ्गलीकण्डोंकीभस्म ४ कर्ष, मरिच १२ माशे शुद्धवछनाग ४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५ रत्ती अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ४१८ ॥

४१९ भागोत्तरवटी

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत् ।
त्रिभागा पिप्पली पथ्या चतुर्भागो बिभीतक ॥१८५३
पञ्च भागस्तथा वासा षड्गुणा सप्तभागिका ।
भार्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्य बब्बूलजै र्द्रवे ॥१८५४॥
एकविंशतिवारांस्तु मधुना गुटिका कृता ।
विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥
कास श्वास हरेत्क्षुद्राक्वाथस्तदनु तृष्णया ॥१८५५॥

भै र , र म मा , र को , र क ल , वै चि यो र रसायनसं , र सु , नि र , र का , यो चि , र च , टो , व रा , र र दी र स , ध र क , र श , र र स , चि क , र स क , यो त , र को , र , वै मृ , वृ यो त , वै र , र पा , र मृ , श्वासे कासे च ।

टि०—चि क , र स क , र को , र पा , वृ यो त , वै र , एतेषु ग्रन्थेषु तथाच नि र , र का , यो त , र को रसायनस, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने कासकर्तरीति नाम स्थापितम् । सर्वं समान यदि रसार्चूणमधिकं दृश्यते । र सुन्दरे एकस्थाने सप्तोत्तरावटीति नाम स्थापितम् । व रा विजयभैरव रस इति । र स , ध र क , एषु ग्रन्थेषु र सु , द्वितीयस्थाने च रसगुटीति नामस्थापितं । र श श्वास कासारीति नाम। र को बब्बूलादिवटी । र च , सप्तामृतवटी वैद्यामृते भार्गीस्थाने विषयष्टिका दृश्यते नाम च कासश्वासारीति स्थापितम् । रसावतारे भार्ङ्गीस्थाने यष्टिका नियोज्य भूताङ्कुशेति नाम स्थापितम् । र का , र क ल , र र स , नि र , र यो एषु ग्रन्थेषु भार्गीं निष्कास्य अग्निरस इति नाम दत्त तेन किममाधारण फल प्रकटितमिति न ज्ञायते पाठाधिक्यञ्च वैपरीत्य सु न्यस्तमिति स्पष्टमेव भवन्त्वत्राऽन्यानावश्यतैयाऽन्तीति सहृदयैराकलनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भा , शुद्धगन्धक २ भा , पीपल ३ भा , हर्र ४ भा , वहेड़ेकी छाल ५ भा , अड्सकी जड़की छाल अथवा पत्ते ६ भा भारङ्गी ७ भा , लेकर सबका बारीकचूर्ण कर बबूलकी छालकेकाढेसे २१ भावनाए देकर सुखाकर मधुके साथ वहेड़ेकी गुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इन मेंसे १-१ गोली भटकटैयाके रस और पीपलके क्वाथके साथ देनेसे यह कासश्वासको नष्टकरतीहै ॥ ४१९ ॥

४२० भाण्डयरसः

रसकर्पूरकं धृत्वा फले वन्तशठस्य वै ।
आरण्योपलसम्भूते निर्धूमेऽङ्गारके पचेत् ॥१८५६ ॥
द्रव शुष्क भवेद्यावत्तावत्पाच्य प्रयत्नत ।
एवमेव प्रकारेण वसुसङ्ख्ये फले पचेत् ॥ १८५७ ॥
गृहीत्वा तु ततस्तस्मिन् तुर्यांशं दरदं क्षिपेत् ।
खल्वे खलु विमर्द्याऽथ काचपात्रे निधापयेत् ॥१८५८॥
ततो निम्बूफलार्द्धे च क्षिप्त्वा गुञ्जाद्वय बुधः ।
विधायोष्ण चोषयित्वा पुनर्निम्बूफलत्रयम् ॥ १८५९ ॥
चोषयेत्तत्क्षण तञ्च घटिकार्द्धञ्च स्वापयेत् ।
एवं सप्तदिनाभ्यासादुपदंशान्निहन्ति वै ॥ १८६० ॥
वातरक्त निहन्त्याशु नाम्ना भाण्डयरसस्त्वयम् ।
किञ्चित्सिताविमिश्रञ्च पथ्य केवलमोदनम् ॥१८६१॥

र क ल , फिरङ्गे ।

भाषा—रसकर्पूरको ककड़ी कमरखके फलमें रखकर जङ्गली कण्डोंकी निधूम आंचमें रखले । द्रवसूखनेपर निकालकर दूसरे फलमें रखकर रससुखावे । इसतरह ८ फलोंमें पकानेके बाद चतुर्थांश सिंगरफ मिलाकर बारीक घोटकर कांचकी शीशीमें रखदे । इसमेंसे २ रत्ती दवा लेकर आधेनीबूके फलमें रखकर गरमकरके चुसवादे । फिर तीन नीबुओंको गरमकरके चुसवा कर आधीघड़ी सुलादे । इसतरह ७ दिनतक करनेसे उपदंश और वातरक्तको यह नष्टकरताहै । थोड़ी शक्कर मिलाकर केवल भात खानेको देवे और कुछ न खाय ॥ ४२० ॥

४२१ भानुचूडामणिरसः

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च।
लोहं ताम्रं पनजञ्च यमानीं विश्वभेषजम्॥ १८६२॥
सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं रजनीद्वयम्।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत्॥ १८६३॥
वारिणा वटिका कार्या रक्तिद्वयप्रमाणतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वज्वरकुलान्तिकाम्॥ १८६४॥

र. सं., ज्वराधिकारे।

भाषा—सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, प्रवाल, वङ्ग, लोह और ताम्रभस्म, पनज, अजवाइन, सोंठ, सेंधानमक, मरिच, कुष्ठ, खैर, दोनोंहल्दी, रसौत, शुद्धसोनामाखी, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर जलसे ४ पहर घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके-साथ देनेसे यह समस्त ज्वरोंको दूरकरताहै॥ ४२१॥

४२२ भारतीरसः

वचा पारदगन्धाऽभ्रं वत्सनाभं समं समम्।
मुण्डीद्रावे दिनं मर्द्य मूषायां भूधरे पुटे॥ १८६५॥
पाच्यं चटकपित्तेन भावितं दिवसद्वयम्।
अनुपानविशेषेण देयं गुञ्जाप्रमाणकम्॥
सर्वज्वरान्निहन्त्येव नाम्नाऽयं भारतीरसः॥१८६६॥

वै चि, सर्वज्वरे।

भाषा—वच, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध-वछनाग सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील-वर्णकज्जलीमें मिलाकर गोरखमुण्डीके रससे १ दिन मर्दनकर गोलेको मूषामें बन्दकरके भूधरपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर चिडेके पित्तकी दोदिन तक भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषमें देनेसे सबप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ४२२

४२३ भास्कराऽमृताभ्रम्

वासाऽमृताकेशराजपर्पटीनिम्बभृङ्गकम्।
मुस्तं वृश्चीरबृहतीबलामूलं शतावरी॥ १८६७॥
एषां सत्वे मलोन्मुक्तं मर्दितं विमलाऽभ्रकम्।
सहस्रपुटितं तत्र शतावर्या रसं क्षिपेत्॥ १८६८॥
धात्र्यादद्वाक दत्त्वा वटिकां कारयेद्भिषक्।
भास्कराऽमृतनामेदमम्लपित्तं नियच्छति॥ १८६९॥
शूलमष्टविधं शूलं शूलञ्च परिणामजम्।
छर्दिहिक्कासमरुचिं तृष्णां कासञ्च दुर्जयम्॥ १८७०॥
हृद्ग्रहं कामलां रक्तपित्तं यक्ष्माणमेव च।
दाहं शोथं भ्रमं तन्द्रां विस्फोटं कुष्ठमेव च॥
श्वासं मूर्च्छाञ्च मन्दाग्निं यकृत्प्लीहोदरं तथा॥१८७१॥

भै र., अम्लपित्ताऽधिकारे।

भाषा—अडूस, गिलोय, कालाभंगरा, पित्तपापड़ा, नीमकी-छाल, सफेदभंगरा, नागरमोथा, सफेदपुनर्नवा, बनभांटा, बला-मूल, शतावरी, इनप्रत्येकके शुद्धरससे सहस्रपुटी बनायेहुए अभ्रकको मर्दनकर अखीरमें शतावरीके रसकी १२ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, शूल, अन्न-द्रवशूल, परिणामशूल, वमन, हिचकी, अरुचि, तृषा, दुर्जेय खांसी, हृदयका जकड़ना, कामला, रक्तपित्त, राजयक्ष्म, दाह, शोथ, भ्रम, तन्द्रा, विस्फोट, कुष्ठ, श्वास, मूर्च्छा, मन्दाग्नि, यकृत्, प्लीहा, उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ४२३॥

४२४ भास्करोत्कीर्तिरसः

अलरसबलिताप्यं टङ्कणं म्लेच्छगोलं,
मुनिसमहृतताम्रं सैन्धवेनाऽथ युक्तम्।
रसदलविषमिश्रं मर्दयेन्निम्बुनीरै-
र्जयति सकलवातं भास्करोत्कीर्तिनामा॥
व्योषाऽऽर्द्रके गुञ्जमितं प्रयोज्यं
दुर्नामपाण्डामयशूलकुष्ठे।
अपित्तजे योऽखिलसन्निपाते
रामाय दत्तः सुखदः शिवेन॥ १८७३॥

र. शि. अर्शसि।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, गन्धक, सोनामाखी, सुहागा, सिंगरिफ और मैनसिल सब समभाग लेकर नीबूप्रभृतिके रसमें मर्दनकर सबकीबराबरके शुद्धतांबेके पत्रेपरलेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतल होने परनिकालकर पूर्ववत् हरिताल प्रभृतिमिलाकर नीबू वगैरहके रससे घोटकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर पूर्व-वत् लवणयन्त्रमें पकावे। इसप्रकार ॥ बार पुटदेकर इससे आधा शुद्धवछनाग मिलाकर नीबूकेरससे ८ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु और अदरखके रसके साथ देनेसे अर्श, पाण्डु, शूल, कुष्ठ, पित्तरहित सन्निपात इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ४२४॥

४२५ भास्कररसः (प्रथमः)

सूतमाक्षिकशिलाऽऽलगन्धकाः
खर्परञ्च कुरु तुल्यभागिकम्।
निम्बुनीरपरिमर्दितं दृढं
स्वेदितं लवणमूत्रके दिनम्॥ १८७४॥
तुल्यहेमरविसम्पुटावृतं
लेप्य कर्पटमृदा पुटेत्ततः।
पूर्ववद्भवति यन्निमर्दितः
शूलगुल्मकृमिमान्द्यनाशनः॥ १८७५॥

र., क्षये।

भाषा—शुद्धपारा, सोनामाखी, मैनसिल, हरिताल, गन्धक और खपरिया सब समभाग लेकर कज्जली बनाय नीबूकेरससे ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय लवणयुक्तमूत्रमें १ दिन स्वेदनकर इसकी बराबर सुवर्णका पत्रा मिलाकर गोला बनाय सबकी

बराबर तांबेके सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखावे। फिर इसे लवण अथवा भस्ममें दबाकर ४ पहरकी अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर नीबुके रससे मर्दनकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर पकावे। ऐसे ७ पुट देनेके बाद निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचिता-नुपानकेसाथ देनेसे शूल, गुल्म, कृमि और अग्निमान्द्य येसब-नष्टहोतेहैं ॥ ४२५ ॥

४२६ भास्करोरसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च ।
टङ्कणश्चेति तुल्यानि जैपालं सकलैः समम् ॥ १८७६ ॥
भावना बीजपूरस्य शुष्कं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ।
सङ्ग्राह्य रक्तिकायुग्ममामवातविनाशनम् ॥ १८७७ ॥
गोदुग्धं केवलं पथ्यं देयमुष्ट्रीपयोऽथवा ।
अन्नञ्च वर्जयेत्तावद्यावच्छोफं निवारयेत् ॥ १८७८ ॥

चि.र.,आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, सज्जी, जवाखार, पांचोंनमक, भुनासुहागा सब समभाग, शुद्ध जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर बिजोरेके रसकी एकभावना देकर सूखनेपर चूर्णबनाकर अथवा २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाथ देनेसे आमवात नष्टहोताहै। पथ्यमें गाय अथवा ऊंटनीका दूध देवे। जबतक सूजन न उतरजाय तबतक अन्न न देवे ॥ ४२६ ॥

४२७ भास्करोरसः (तृतीयः)

तालं ताप्यं गन्धकं सूतकञ्च शैलाह्वं वै खेचरं चेत्समं हि ।
चूर्णं कृत्वा चाऽऽर्द्ररूपेण मर्द्य सार्द्रेणेरं सौरसेयै रसैश्च।
मर्दितं हि तदनु ताम्रनिर्मिते धारयेच्च सकलं हि सम्पुटे।
मृत्स्नया च परिलेप्य सम्पुटं पाचयेच्च सततं दृढाऽग्निना
यामयुग्ममितमेव मात्रया यन्त्रके हि पुटशीतलं स्वयम्
जायतेऽतिरुचिरो महारसो पूर्ववद्भवति भास्करोदयः
चित्रकार्द्रकरसेन योजितो राजयक्ष्मकफवातनाशनः॥

र.प्र.सु ,र.दी., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धहरिताल, सोनामाखी गन्धक, पारा, मैनसिल, कसीस सब समभागलेकर सबकी कज्जली बनाय अड़ूसा, अदरख और तुलसी इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोला बनाय तांबेके सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें बन्दकर २ पहरकी कड़ी आंचदे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर ताम्रसम्पुटमेंसे निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १ अथवा २ रत्ती चित्रक और अदरखके रसमें देनेसे राजयक्ष्म, कफ और वायुको यह नष्टकरताहै ॥ ४२७ ॥

४२८ भास्करोरसः (चतुर्थः)

विषं सूतं फलं गन्धं व्यूषणं टङ्कजीरकम् ।
एकैकं द्विगुणं लोहं शङ्खमभ्रवराटकम् ॥ १८८२ ॥
सर्वतुल्यं लवङ्गञ्च जम्बीरै र्भावयेद्भिषक् ।
सप्तवासरपर्यन्तं ततः स्याद्भास्करो रसः ॥ १८८३ ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटीं कुर्याद्विचक्षणः ।
ताम्बूलीदलयोगेन वटीं सञ्चर्व्य भक्षयेत् ॥१८८४॥
शूलरोगेषु सर्वेषु विसूच्यामग्निमान्द्यके ।
सद्यो वह्निकरो ह्येष तन्त्रनाथेन भाषितः ॥१८८५॥

भै.र ,र सु ,अग्निमान्द्याधिकारे ।

भाषा—शुद्धबछनाग, पारा, त्रिफला, शुद्धगन्धक, त्रिकटु, भुनासुहागा, जीरा येप्रत्येक १ भाग, लोह, शङ्ख, अभ्रक और कौडीभस्म २–२ भाग लेकर सबकी बराबर लौंग मिलाकर जंभीरीके रसकी ७ दिनतक भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ खानेसे समस्तशूल, हैज़ा, अग्निमान्द्य इनसबको यह नष्टकरताहै ॥४२८॥

४२९ भीमपराक्रमोरसः

तुल्याभ्यां रसगन्धाभ्यां कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम् ।
द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे मृदुना बदराऽग्निना ॥१८८६॥
निष्कयमष्टमांशेन सीसभस्म विनिक्षिपेत् ।
सम्मिश्र्य कदलीपत्रे निक्षिप्य तदनन्तरम् ॥१८८७॥
आकृष्य परिपेष्याऽथ सीसभस्मप्रमाणतः ।
कान्ताऽभ्रसत्वयो र्भस्म राजावर्तकभस्म च ॥१८८८॥
परिसिद्धं सगोमूत्रं शिलाधातुं निधाय च ।
खल्वे निक्षिप्य तत्सर्वं यत्नेन परिमर्दयेत् ॥१८८९॥
तुल्यगुञ्जाऽङ्कुलीबीजचूर्णरुद्रकोरण्यवारिणा ।
कतकाऽङ्घ्रिकषायेण निम्बपत्ररसेन च ॥ १८९० ॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिप्त्वा लोहस्य भाजने ।
त्रिफलानां कषायेण सप्तधा परिभावयेत् ॥१८९१॥
अङ्कुलीबीजवर्बूरनिर्यासौ भृष्टचूर्णितौ ।
समौ रससमौ कृत्वा रसेन सह मर्दयेत् ॥ १८९२ ॥
इति सिद्धरसः सोऽयं भवेद्भीमपराक्रमः ।
नामतः सर्वमेहघ्नो दृष्टप्रत्ययकारकः ॥ १८९३ ॥
वल्लद्वयमितो ग्राह्यो जलैः पर्युषितैः सह ।
पथ्यं मेहोचितं देयं वर्ज्यं सर्वं विवर्जयेत् ॥ १८९४ ॥

र र.स ,र.सु ,र.को.,र र.कौ.,प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धककी ३ रोजतक घोटकर कज्जलीकर बेरके कोयलोंपर लोहेकी कढ़ाईमें पिघलाकर कज्ज लीसे अष्टमांश निष्क्य सीसेकीभस्म डालकर ताजे गोबरपर रक्खे हुए केलेके पत्तेपर डालकर ऊपरसे एक गोबरसे दबावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर कान्तलोह, अभ्रकसत्व, लाजवर्द, गोमूत्रमें शुद्धकिया हुआ मैनसिल ये प्रत्येक नागभस्मकी बराबर डालकर शुद्ध गोरखमुण्डी और अङ्कोलकीमज्जाकेकल्ककेरसमें ३–४ पहर मर्दनकर निर्मलीकी जड़काक्वाथ, नीमकेपत्तोंका-रस इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर सुखाकर लोहेके बर्तनमें

डालकर त्रिफलाके काढ़ेकी ७ भावनाएं दे । अङ्कोलकेबीज, बबूलका गोंद, दोनोंको भूनकर पूर्वरसकी बराबर डालकर मर्दनकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती ठंढेपानीकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेहोंको यह नष्टकरताहै । प्रमेहोक्त पथ्य देना और तद्विरुद्धका निषेध करना ॥ ४२९ ॥

४३० भीममण्डूरम्

यवक्षारः कणा शुण्ठी कोलं ग्रन्थिकचित्रकौ ।
प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ १८९५॥
शनैः पचेदयःपात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम् ।
दत्त्वाऽष्टगुणगोमूत्रं किट्टाच्छुद्धाद्विचक्षणः ॥१८९६॥
ततोऽक्षमात्रान्वटकान्योजयेत्ससराग्रतः ।
आदिमध्याऽवसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ॥१८९७॥
स भीमवटको ह्येष परिणामरुगन्तकः ।
रससर्पिर्यूषपयोमांसैरक्षग्वरो निवारयति ॥
अन्नविवर्तनमन्ते शुल्मं प्लीहाऽग्निसादांश्च ॥१८९८॥

नि.र., वृ.यो.त., यो.र., र.का., च.द., टो., रससागर., वृ मा., र., यो.म., ग.नि., परिणामशूलाऽधिकारे। क्वचित् चित्रकस्याऽभावो दृश्यते ।

टि०—कोलादिमण्डूर, चविकादिमण्डूर, भीममण्डूरश्चेति त्रयो मण्डूरवटका सन्ति, तेषु सर्वेष्वपि एकतानीयानि द्रव्याणि सन्ति। केवल मण्डूरप्रमाणे विशेषोऽस्ति स यथा कोलादिके मण्डूरस्यैतद्द्रव्यसमताऽस्ति। चविकादिमण्डूरेऽष्टपलानि मण्डूरस्य निक्षिप्तानि तत्र क्षारशब्देन यवक्षारमात्रस्य ग्रहण क्रियेत चेद् द्रव्याणा पञ्च पलानि भवन्ति, क्षारशब्देन साधारणतया क्षारत्रयं गृह्येत तर्हि द्रव्येभ्य मण्डूरस्यैक पलमधिक भवतीति, भीममण्डूरे च प्रस्थमात्र मण्डूरस्य नियोजित तेनेतरद्रव्येभ्यो द्विगुणमपि मानामतिक्रामति, इममेवभेद ग्वीटस्य स्थानत्रये विनामभिन्नय पाठा दत्ता सन्ति, तत्र रोगिण प्रकृत्यादिक समीक्ष्य यद्युक्त योग भिषङ्मन्येत त प्रयोजयेत् सङ्क्षेपत मृदुकोष्ठे कोलादि मण्डूरं प्रयोजयेत् साधारणे चविकादि मण्डूर, प्रकृष्यावस्थायान्तु भीममण्डूरमिति विवेचना ।

भाषा—यवक्षार, पीपल, सोंठ, बेर, गठिवन, चित्रक १–१ पल, मण्डूर १ प्रस्थ लेकर दवाओंका बारीक चूर्णकर मण्डूरसे अठगुने गोमूत्रमें सबचीजें मिलाकर लोहेकी कढ़ाहीमें मन्द आंचसे पकावे। जब कड़छीमें दवा लगनेलगे तब १–१ तोलेके गोले बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे दोषविशेषप्रकोपकी औचिती समझकर भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें १–१ गोलेका ७ दिनतक योगकरनेसे परिणामजशूलको यह नष्ट करताहै ४३०

४३१ भीमरुद्ररसः

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च ।
अभ्रात्कर्ष ततो देयं तोलैकं कान्तलोहकम् ॥१८९९॥
परंकिनीपर्णैनैव भावयेच्च पृथक्पृथक् ।
विशालावृहतीब्राह्मीसौगन्धिकसुदाडिमैः ॥ १९०० ॥
मर्कट्याघ्याटमगुभायाः स्वरसेन पृथक्पृथक् ।
माषकैकप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥१९०१॥
वटीमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतं जलं ततः।
भीमरुद्रो रसो नाम चाऽसाध्यमपि साधयेत् ॥
कुक्कुरस्य शृगालस्य विषंहन्तिसुदुस्तरम् ॥१९०२॥

र.सं., र.सु., ध., र.र., र.चं., विषाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक तथा कान्तलोहभस्म १–१ तोला लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर महर, बनभांटा, ब्राह्मी, कुकरोंधा, अनार, अपामार्ग, केवाच, इनप्रत्येकके स्वरससे १–१ दिन भावना देकर १–१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंडे पानीके साथ देनेसे यह बावले कुत्ते और शृगालके दुस्तर विषको दूरकरताहै ॥४३१॥

४३२ भीमवटी

सिन्दूरं विषमुष्टिकं धनमितं लोहस्य भागास्त्रयः,
हिङ्गोरब्धिमिता मरीचनिकराद्बाणाः कुमारीधनात् ।
षट् स्युः गुग्गुलुकस्य सप्त मिलितं चित्रद्रवे मर्दितं,
गुञ्जायुग्ममिता वटी कवलिता भीमाख्यया भ्राजते ॥
अग्निमान्द्यकृतान्दोषानपतन्त्रसमुद्भवान् ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्यादामवातसमुद्भवान् ॥ १९०४ ॥
श्वासकासौ च हिक्कांश्च वातरक्तकृतान्गदान् ।
शूलगुल्मौ स्वानुपानैस्तत्तद्रोगहरी हरेत् ॥१९०५॥

वृ.क. अग्निमान्द्ये ।

भाषा—रससिन्दूर और शुद्धकुचिला २–२ तोले, लोहभस्म ३ तो., भुनाहींग ४ तो., मिर्च ५ तो., एलुआ ६ तो., गूगल ७ तो. लेकर सबका बारीक चूर्णकर चित्रकके काढ़ेसे तीनरोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूध अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, हिस्टीरिया, सङ्ग्रहग्रहणी, आमवात, श्वास, कास, हिचकी, वातरक्त, शूल, गुल्म, इनसबको यह नष्टकरतीहै। यह मन्दाग्निके लिये उत्तमयोगहै ॥ ४३२ ॥

४३३ भुक्तपाकरसः (प्रथमः)

गन्धकं सूतकञ्चैव भृङ्गराजेन मर्दयेत् ।
हिङ्गुभागो विडङ्गानि रोहिणी च दशांशकम् ॥१९०६॥
वचा त्रिफटुका युक्ता भागमेकं द्वि सैन्धवम् ।
निर्गुण्डीरसतो मर्द्य गुटी चामलकीफला ॥ १९०७॥
भोजनान्ते च तद्भुक्तं भुक्तपाको महारसः ।
सर्वव्याधीन् हरेत्ऽस्य बलवीर्यविवर्धनः॥ १९०८ ॥

र.सा., अग्निमान्द्यादिसर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १–१ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर सुखादे। फिर हींग १ भा., विडङ्ग और कुटकी दसवां ⅒ भाग, वच, त्रिकटु और सेंधानमक १–१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर संभालूके रससे एकदिन मर्दनकर आंवलेके फलके बराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १–१ गोली भोजनके अन्तमें देनेसे यह खाएहुएको पाचनकरके बल और वीर्यको बढाताहै ॥ ४३३ ॥

४३४ भुक्तपाकरसः (द्वितीयः)

वज्रमृत्स्नासमालिप्तकाचकूप्यां रसं क्षिपेत् ।
चित्रमूलं समानीय विल्वपर्णेन पेषयेत् ॥ १९०९ ॥
समभागं ततः क्षिप्त्वा कूपीमध्ये च मेलयेत् ।
निर्धूमवह्नौ तद्धार्यमर्द्धार्द्धे च पुनः क्षिपेत् ॥१९१०॥
स्थाप्यं यामद्वयं पश्चात्प्रयत्नेन समुद्धरेत् ।
जातीफलं त्रिकटुकमेलां मुस्तां विशेषतः ॥१९११॥
मेलयेत्सर्वरोगांश्च भुक्तपाको विनाशयेत् ।
ज्ञानज्योतिस्तु कृपया कौतुकार्थमभाषत ॥ १९१२ ॥

र. ज्ञा., सर्वरोगे ।

टि०—यद्यप्यत्र साधारणतया समबिल्वपत्रेण चित्रमूलपेषण कृत्वा काचकूप्यां स्थितस्य पारदस्योपरि निक्षेप उक्तस्तथापि यथास्थित पारद कूप्या न निक्षेप्य किन्तु षोडशांश चित्रकमूलचूर्णं दत्त्वा बिल्वपत्ररसेन साकं द्विनिदिनावधि पारदं सम्मर्द्य कूप्यां निक्षेपणीय इति रहस्यम् ।

भाषा—षोडशांश चित्रकमूलका चूर्णमिलाकर पुटपाकसे निकालेहुए अथवा खूब कूटकर वस्त्रसे निकालेहुए बिल्वके पत्र रससे २ तीन रोज़ घोटाहुआ शुद्धपारा वज्रमिट्टीलगाईहुई काचकी शीशीमें डालकर चित्रकमूल और बेलकेपत्ते समभागलेकर बारीकपीसकर दोभागवनावे । एकभागको शीशीमें डालकर चलाकर पारेमें मिलादे और निर्धूम अग्निपर रखदे । जब रस जलजाय तब दूसराभागभी दवाका डालदे । इसको दोपहरतक अङ्गारोंपर रक्खे । इतनेमें पत्ते जलजायगे और पारा उन्हींमें अदृश्य होजायगा । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर जायफल, त्रिकटु, इलायची, नागरमोथा ये प्रत्येक पारेकी बराबर मिलाकेर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ मासा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भोजनको पचाकर समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ भुक्तपाकवटी

अभ्रं गन्धकपारदौ सदरदौ ताम्रं सतालं शिला,
चव्यञ्च त्रिफला विषञ्च कुनटी भाव्याश्च दन्त्यम्बुना ।
शृङ्गी व्योषयवानिचित्रकजलं द्वे जीरके टङ्कणं,
एला पत्रलवङ्गहिङ्गु कुनटी जातीफलं सैन्धवम्१९१३
एतान्यार्द्रकचित्रदन्तिसुरसामूर्वारसैर्विल्वजैः,
प्रत्येकं दिनसप्तकयाऽथ सकलं गाढं विमर्द्याऽन्यतः ।
खादेद्गुञ्जमितं तथा च सकलव्याधौ प्रयुञ्ज्याद्बुधः,
विड्बन्धे कफजे त्रिदोषजनिते शामानुबन्धेऽपि च ॥
मन्दाग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले त्रिदोषोद्भवे,
हन्त्याधीनपि भुक्तपाकवटिका भूयश्च सम्भोजयेत् ॥

र मु., र सं., अजीर्णाऽधिकारे । र सं भुक्तपाकवटीति नाम ।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, पारा और सिंगरफ, तांबा, हरिताल, दन्तीकी भावना दियाहुआ मैनसिल, वच, वीभस्में, त्रिफला, शुद्ध वच्छनाग, काकड़ासींगी, त्रिकटु, अजवाइन, चित्रककी जड़, सुगन्धवाला, दोनोजीरे, भुनासुहागा, इलायची, पत्रज, लौंग, भुनाहींग, कुटकी, जायफल, सेंधानमक ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अदरख, चित्रक, दन्ती, तुलसी, मरोड़फली, बेल, इन प्रत्येकके स्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरतीहै । विशेषकर विड्विबन्ध, कफप्रधान सन्निपात, आम, मन्दाग्नि, विषमज्वर, समस्तशूल इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३५ ॥

४३६ भूतनाथभैरवोरसः

आकाशवल्लीरसतो रसं पोढा विभावयेत् ।
बृहतीफलजै र्द्रावैस्तालो मुनिविभावितः ॥ १९१५ ॥
पड्भागप्रमितं सौम्यं धूर्तारपञ्चदशद्रवैः ।
चतुरंशाष्टङ्कणस्य शिवाक्षेणविभावनाः ॥ १९१६ ॥
पड्जैपालाऽहिफेनांशा लवङ्गमरिचानि च ।
शिवनेत्रपुटस्त्रेधा वचा ब्राह्मी च वाकुची ॥ १९१७ ॥
त्रिव्यंशा भृङ्गराजस्य दद्याद्द्वादश भावनाः ।
निम्बकाष्ठेन घृष्टोऽयं भूतनाथादिभैरवः ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वज्वरहरोमतः ॥ १९१८ ॥

र. का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—आकाशबेलके रससे ६ रोज पारेको मर्दनकरे और वनभटेके फलोंके रससे पारेकी बराबर हरितालको घोटे । पारेसे ६ भाग रसिंगेको लेकर १५ गुने धतूरेके रसमें मर्दन कर सुखावे । सुहागा ४ भाग लेकर रुद्राक्षकी भावनादे । जमालगोटा और अफीम ये ६–६ भाग, लौंग और मिर्च ३–३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर वच, ब्राह्मी और बाकुचीकी ३–३ भावनाएं देकर सबको इकट्ठा मिलाय भंगरेके रसकी १२ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इसके घोटनेमें नीमका ताज़ा डण्डा काममें लेना चाहिये । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४३६ ॥

४३७ भूतनाथरसः

सूतं ताम्रमयोऽभ्रकं समलयं सर्वैः समं गन्धकं,
हेमार्काऽग्निहयारिपुष्कररसैर्मर्द्यः पृथग्वासरम् ।
कूप्यन्ते विनिवेशितं लवणमृद्वारैः समाचेष्ट्य तत्,
यन्त्रे सैकतके निवेश्य विपचेत्पत्वा गणेशं दिने १९१९
स्वाङ्गे शीतलतामुपागतमपि त्यक्त्वा च कूप्यादिकं,
भूयांशेन विषेण खल्लतलगं सम्मर्दयेद्यत्नतः ।
गुञ्जा स्पर्शवलापनोदनकरी रुक्शर्करासंयुता,
भूतेशस्य सुलेपनं हितकरं स्यात्स्नानलाभिः एतम् ॥

र.,र. दी., र. मृ., र. दी. सर्वेश्वर इति नाम । रसदीपिकायां भावनाया पुष्करस्थाने वासा दृश्यते । रसामृते तु एतस्मादेव वस्तुनो द्विगुणो गन्धो नियोजित, अन्यत्सर्वं सम इति विशेष ।

भाषा—शुद्धपारा, तांबा, लोहा, अभ्रक इनकी भस्में सब समभाग, सबकी बराबर शुद्धगन्धक देकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरा, आक, चित्रक, सफेद कनेर, पोहकरमूल इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर शुष्कज्जलीकर काचकीशीशीमें भरके नमक और मिट्टीमें कपड़ेको भिगोकर ६–७ कपड़मिट्टीकरे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर षोडशांश शुद्धवच्छनागका चूर्णमिलाकर २–३ पहर मर्दनकर रखछोड़े। इसकी १–१ रत्ती कुठ और शक्करके साथ मिलाकर देनेसे स्पर्शवातको नष्टकरतीहै। वेदनास्थानमें गुञ्जाके चूर्णके साथ गोमूत्रवर्गरहमें पीसकर लेपकरना ॥ ४३७ ॥

४३८ भूतभैरवरसः (प्रथमः)

रसः सतालः सशिलः सलोहः
स्रोतोऽञ्जनं सार्कमिदं हि गन्धम्।
पिष्टं नृमूत्रेण समं समन्ता-
द्देयोद्विभागोऽथ बलिः पचेच्च ॥ १९२१ ॥
लीढे क्षणं हन्ति घृतेन माषोऽ-
पस्मारमप्युन्मदमानसत्वम्।
पिबेदनुच्यूपणहिङ्गुयुक्तं
सर्पिर्नृमूत्रं रुचकेन सार्धम् ॥ १९२२ ॥
भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोऽयं भूतभैरवः।
स्वर्णजैः पंचभि र्वीजै र्देयः सर्पिर्विमिश्रितः ॥१९२३॥

यो. र., भा. प्र., र. सं., र. र., ध., र. सु., र. को., र. यो. त., र. क. ल., र. क., नि. र., चि. र. म., र. र. दी., रसायनसं., यो., वै चि., व. रा., र. का., यो. म., भै. र., यो. त., अपस्मारे। भैषज्यरत्नावल्या धन्वन्तरे द्वितीयस्थाने च चण्डभैरव इति नाम दृश्यते। अत्र गोमूत्रेण भावना दृश्यते. अनुपाने च "हिङ्गु सौवर्चलं शुण्ठं मधा मूत्रेण सर्पिषा। कर्षमात्रं पिबेच्चानु रसेऽस्मिंश्चण्डभैरवे,, इत्यधिकः।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल और मैनसिल, लोहभस्म, सफेदसुरमा, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक येसब १–१ भाग लेकर मनुष्यके मूत्रसे २–३ रोज मर्दनकरफिरसे शुद्धगन्धक १२ भाग मिलाकर सबकी नीलवर्णकज्जली बनाय पर्पटीके प्रकारसे पर्पटी बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथ मिलाकर चटावे और ऊपरसे त्रिकटु, हींग, घी, मनुष्यकामूत्र और कालानमक मिलाकर पिलानेसे अपस्मार और उन्माद नष्ट होतेहैं। भूतोन्मादोंमें धतूरेके बीज ५ नग घीमें मिलाकर इसके साथ मात्रा देनी चाहिये ॥ ४३८ ॥

४३९ भूतभैरवरसः (द्वितीयः)

नं. १-पातः स्वेदो मुखं स्वर्णजारणं गन्धजारणम्।
कृत्वा प्रागुक्तमार्गेण सङ्ग्राह्य प्रोक्तक्रमेण च ॥१९२४॥
रसेन्द्रस्य समादाय पलमेकं प्रमर्दयेत्।
कृष्णधत्तूरतैलेन दिनत्रयमतन्द्रितः ॥ १९२५ ॥
यन्त्रेऽथ कच्छपे दत्त्वा कृष्णधत्तूरतैलतः।
गन्धकं भावयेत्पश्चाच्छोधितं प्रोक्तयुक्तितः ॥१९२६॥
ऊर्ध्वाऽधो गन्धकं दत्त्वा पादांशेन पुटेद्रसम्।
पुटाष्टकं प्रदातव्यमेवमुक्तक्रमेण वै ॥ १९२७ ॥
अयं रसेन्द्रो म्रियते तैलगन्धकयोगतः।
भस्मीभूतं तमादाय रसेन्द्रं रोगनाशनम् ॥ १९२८ ॥
गुञ्जामानेन संदद्यात् त्रिदोषविषमज्वरे।
कासे श्वासे पीनसे च मारुते च भगन्दरे ॥१९२९॥
कुष्ठे प्रमेहेऽग्निमान्द्ये क्षयरोगोदरामये।
पाण्डुरोगे सन्निपाते भूतभैरवनामकम् ॥ १९३० ॥
नं. २-व्योषार्द्रवीजपूरेण पटुभिः कोष्णवारिणा।
रसेन्द्रं वितरेत्सन्निपातोत्थश्लेष्मभेदने ॥ १९३१ ॥
देवदालीफलोत्थेन चूर्णेन सह योजितः।
रसेन्द्रो नस्यतो हन्ति मूर्च्छायं सन्निपातजम् १९३२
यद्वा शुण्ठी च मरिचं गोमूत्रं सैन्धवं समम्।
शिरीषवीजं सूतेन्द्रं मर्दयित्वाऽञ्जयेद् दृशि ॥१९३३॥
गाढां मूर्च्छां सन्निपातोत्थां प्रहरति क्षणात्।
नं. ३-तालं क्षारं समाक्षीकक्षीरकं गन्धकं तथा १९३४
वन्ध्याकन्दं लाङ्गलीयं पीतं शुण्ठीञ्च सार्द्रिकाम्।
मधूकवीजममृतं सर्वं सञ्चूर्णयेत्समम् ॥ १९३५ ॥
प्रत्येकं तत्समं कृत्वा रसेन्द्रं मर्दयेत्ततः।
निर्गुण्डी निजतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ १९३६
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कृत्वा दद्याज्ज्वरादिते।
सद्यो ज्वरं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः॥१९३७
नं. ४-विषं ताप्यं त्रिकटुकं सूतेन्द्रं योजयेत्समम्।
रीतिभूति नागभस्म मृतताम्रं समांशतः ॥ १९३८
मर्दयित्वा माहिषजै रौहितैः शिखिसम्भवैः।
सम्भाव्य पित्तैस्त्रीन्वारान् गुञ्जामाना वटीः किरेत्।
सन्निपाते महाघोरे सर्वसञ्ज्ञाविवर्जिते।
दद्यात वटिकामेकां सद्य उत्थापयेद्बुधः ॥ १९४० ॥
नं ५-तालञ्च वत्सनामञ्च गुणान् षोडश संहरेत्।
रसेन्द्रं विषमानेन मेलयेन्मर्दयेत्ततः ॥ १९४१ ॥
उदग्वारुणिकादुग्धै निर्गुण्डीवारिणा ततः।
त्रिजगद्विजयानीरै र्बहुशो भावयेद्रसम् ॥ १९४२ ॥
यद्वा तालं समं ग्राह्यं रसेन्द्रेणाऽमृतेन च।
मायूरै र्भावयेत्पित्तै रौहिपित्तैश्च छागजैः ॥ १९४३ ॥
आरण्यमाहिषोत्थैश्च त्रींस्त्रीन्वारान्विभावयेत्।
वटीः कृत्वा ततो दद्यात्सन्निपातार्दिताय वै ॥१९४४॥
आर्द्रकस्य रसेनैव सन्निपातं क्षणाद्धरेत्।
नं ६-भस्म सूतं वलिवसां समभागं समाहरेत्॥१९४५॥
तैले गन्धं गालयित्वा ढालयेच्चित्रजे रसे।
उक्तमूत्रैस्ततः कुर्यात्कज्जलीं पारदेन वै ॥ १९४६ ॥
कज्जलीपादभागेन लौहभस्म नियोजयेत्।
गुडं ताप्यं नटदलं गन्धकं सर्वमेकतः ॥ १९४७ ॥

गुडेन मर्दयेत्सर्वं ताम्रपत्राणि लेपयेत् ।
तत्समानि ततो ध्मात्वा भास्करं भस्मतां नयेत् १९४८
मेलयित्वा सन्निपातभूतभैरवपारदे ।
मर्दयेत्सिन्दुवाराद्भिः भृङ्गराजरसैस्तथा ॥ १९४९ ॥
मण्डूकिनीरसैश्छिन्नर्नारैश्च पिचुमन्दजैः ।
तरुणीजैः काकमाचीरसैः शकासनोद्भवैः ॥ १९५० ॥
मर्दयेत्ताम्रदण्डेन पात्रे ताम्रभवे ततः ।
पश्चात्प्रभावयेत्पित्तैः प्रागुक्तैस्त्रिस्त्रिवारकम् ॥१९५१॥
राजिकामात्रगुटिकाः कुर्यात्सूतवरस्य वै ।
सन्निपाते महाघोरे तिस्रो दद्याद्गुटी बुधः ॥ १९५२ ॥
घटीप्रदानतो पश्चान्निर्याति मलमूत्रके ।
जीवेत्सद्यस्तदा रोगी ह्यन्यथा तं परित्यजेत् ॥१९५३॥
भोजयेद्दधिकं भक्तं सलिलं ढालयेत्ततः ।
यथेष्टमशनं दद्यात्सन्निपातचिकित्सने ॥ १९५४ ॥
ज्वरे वातमये कुर्यात्क्वाथश्च दशमूलजम् ।
अनुपानाय वातारितैलेनाऽङ्गं प्रमर्दयेत् ॥ १९५५ ॥
कम्पज्वरे पर्पटजं क्वाथं दद्याद्विचक्षणः ।
ग्रहण्यां जीरकमयं ज्वरेऽथ विषमेऽपि च ॥ १९५६ ॥
अतीसारे च मन्दाग्नौ क्षयरोगे च कामले ।
शुण्ठीश्वदंष्ट्रयोः क्वाथं कासश्वासगुदामये ॥१९५७॥
आमवाते घटी देया प्रागुक्तक्वाथयोगतः ।
इति प्रोक्तः सन्निपातभूतभैरवसञ्ज्ञकः ॥ १९५८ ॥

रसाल , ज्वरे ।

भाषा—(न. १) पातन, स्वेदन, शुद्धकरण, स्वर्णजारण और गन्धकजारण ये संस्कार पारेके करके एकपल लेकर काले धतूरेके बीजोंके तैलसे ३ दिनतक मर्दनकरे । शुद्धगन्धक १ तोला लेकर बारीकचूर्णकर कच्छपयन्त्रमें आधा नीचे बिछाकर ऊपर पारेको रख ऊपरसे आधातोला गन्धक रखकर काले धतूरेकातैल इतना डाले कि पारा और गन्धक डूबजाय । फिर यन्त्रपर कपड़मिट्टीकर भूधरपुटदेवे । ऐसे ८ पुट देनेसे पारेकी भस्महोजायगी । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोष, विषमज्वर, कास, श्वास, पीनस, वातरोग, भगन्दर, कुष्ठ, प्रमेह, मन्दाग्नि, क्षय, उदररोग, पाण्डु, येसब नष्टहोतेहैं ।

२—त्रिकटु, अदरख, बिजोरा, पाचों नमक और गरमजलकेसाथ देनेसे वात और श्लेष्मप्रधानसन्निपातको नष्टकरताहै । चन्दालके बीजोंके चूर्णकेसाथ नस्य देनेसे सन्निपातजमूर्च्छाको दूरकरताहै । अथवा सोंठ, मिर्च, सेंधानमक, गोमूत्र, सिरसके बीज सब समभागके चूर्णकेसाथ इसपारेको मिलाकर अञ्जन करनेसे सन्निपातज गाढमूर्च्छा दूरहोतीहै ।

३—शुद्धहरिताल, तीनोंक्षार, सोनामाखी, जीरा, शुद्ध गन्धक, बाङ्गखेखसा और कलिहारीका पुटकन्द, सोंठ, अदरख, महुएकेबीज, शुद्धवच्छनाग, ऊपरकहीहुई पारेकी भस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सभालूके कन्द अथवा जड़के रससे १ रोज निरन्तर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तत्काल आयेहुए ज्वरको नष्टकरतीहै ॥

४—शुद्धवच्छनाग, सोनामाखी, त्रिकटु, पारद, पीतल, नाग और ताम्र इनकी भस्में येसब समभाग लेकर १–२ पहर मर्दनकर भैंसा, रोहू, मोरके पित्तोंसे ३–३ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सञ्ज्ञारहित महाघोरसन्निपातमें देनेसे यह उसको नष्टकरताहै ।

५—शुद्ध हरिताल ३ भा , वच्छनाग और पारदभस्म सोलह १६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर चमारदूधीके दूध, निर्गुण्डी और भांगके स्वरससे ७–७ भावनाएं देकर तैयारकरे अथवा हरिताल, वच्छनाग और पारदभस्म समभाग लेकर मोर, रोहू, बकरा और जङ्गलीभैंसेके पित्तोंसे ३–३ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रस अथवा समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको एकक्षणमें दूरकरताहै ।

६—पारदभस्म, शुद्ध गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर संभालू, भंगरा, ब्राह्मी, चित्रक, नीम, कपास, मकोय, गांजा इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे तांबेके पात्रमें तांबेके डण्डेसे १–१ रोज़ मर्दनकर पूर्वोक्तपित्तोंसे ३–३ भावनाएं देकर राईके बराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३–३ गोलियां उचितानुपानकेसाथ मूर्च्छायुक्त सन्निपातमें देनेसे यदि मलमूत्रत्यागहोजाय तो साध्य समझना अन्यथा असाध्यहै, उसकेलिये यत्न नहीं करना । सञ्ज्ञा आनेपर दहीभात खानेको देना और शिरपर पानीकी धारा छोड़ना । एकदम अच्छाहोनेपर यथेष्ट भोजनकराना । वातज्वरमें दशमूलका काढा देना, और एरण्डके तैलकी मालिशकराना । कम्पज्वरमें पित्तपापड़ेका काढ़ा और ग्रहणी तथा विषमज्वरमें जीरेकाक्वाथदेना । अतिसार, मन्दाग्नि, क्षय और कामलामें सोंठ और गोखरूका क्वाथ देना । कास, श्वास, बवासीर, आमवात इनमें दशमूलका क्वाथ देना । इस छठे भूतभैरवमें धतूरेके तैलमें गन्धकको गलाकर चित्रकके क्वाथ और तैलकेमूत्रमें बुझाना । गुड़, सोनामाखी, मैनसिल और गन्धक सबको गुड़केसाथ मर्दनकर इसकी बराबरके तांबेके पत्रोंपर लेपकर धमनकरनेसे भस्महोगी यह भस्म काममें लाना दूसरी नहीं ॥ ४३९ ॥

४४० भूतभैरवरसः (तृतीय.)

अंशाः पञ्चदशाऽत्र तालकभवाः शुद्धाश्च सद्गन्धकात्,
सप्ताऽष्टौ नव तिन्तिडीफलभवा बिल्वाद्दश द्वौ घटा ।
हेमाह्वा त्रय एव सप्त कथिता चित्रस्य पथ्याश्च षट्,
षट् सूतस्य विशोधितस्य महतां भल्लातकानां दश ॥
सेहुण्डार्कपयोभिरेभिरभितः सञ्चूर्ण्य तद्भाव्यते,
रोहीतस्य जटाजलेन मृदितं सूक्ष्मं कृतं खल्वगम् ।
एकीकृत्य समस्तमेतदमृतं भागैकमत्र क्षिपेत्,
ताम्बूलोद्भववारिणा सुमृदितं हस्त्याम्भसा वा ततः ॥

मिश्रं चायसपात्रकेऽथ सकलं रुद्धा च धान्याऽऽकरे,
धार्यं तत्खलु चैकविंशतिदिनं चोद्धृत्य मात्रां शुभाम्
दद्याच्छागलमूत्रकञ्च नियतं तच्चाऽनुपाने हितं,
प्राज्ञो व्याधियुताय नित्यमनया रीत्या ददीतौषधम्॥
नीलं दोषभवं तथा बहुरुजं धातौ गतश्चाऽरुणं,
श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशरुजं कुष्ठञ्च तूर्णं हरेत्।
कुष्ठाऽष्टादश भूतभैरवरसो हन्याच्च तूर्णं क्षितौ,
वातव्याधिनिकृन्तनस्तनुभवान्दोषानयं नाशयेत्॥
एवं समासात्खलु सर्वकुष्ठानयं रसो वै क्षपयेद्धि तूर्णम्
निराकरोत्येव च धातुदोषान्भवत्यवश्यं सुभगं शरीरम्
भुञ्जीतभक्तं सततं न शाकं घृतञ्च गोधूमयुतं भजेत।
कौर्ण्यंश्रृतंदुग्धमवश्यमत्रापथ्यार्थमेतत्प्रदिशन्तिसन्त

रसचि, र सु, र स, र वि, र च, र का, कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध हरिताल और गन्धक १५–१५ भाग, इमली ९ भाग, बेलगिरी १० भा, त्रिफला २ भा, सत्यानासीकी जड़ ३ भा, चित्रक ७ भा, हर्रे और शुद्ध पारा ६–६ भाग, सबै मिलावे १० भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे, गन्धक, और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सेहुण्ड और आकके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर रोहिडेकी जडकी छालके पानीसे एकदिन मर्दनकर नवमें चतुर्थांश शुद्ध बच्छनाग डालकर पान अथवा दूबके रससे एकदिन घोटकर लोहेके पात्रमें रख मुद्रबन्दकर अनाजकी रासीमें दबादे इक्कीसवें दिन निकालकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बकरेके मूत्रकेसाथ देनेसे नील, अधिकपीडायुक्त, धातुगत, लाल, सफेद, फैलाहुआ, ये सब कुष्ठ नष्टहोतेहैं। तत्तद्रोगो चितानुपानक साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टकरताहै। इसके सेवनसे आदमीका दिव्यशरीर होजाताहै। धातुगत जितने दोषहैं उनसबको दूरकरताहै चावल, गेहूं, घी, गरमदूध, खानेको दे, शाक किसीभी चीजका नदे॥ ४४०॥

४४१ भूतभैरवरसः (चतुर्थ)

आखुहा गरुडनागरसञ्ज्ञा हारगौरसकलं क्रमवृद्धम्।
कारवल्लिरसमर्दितं पचेत्ताम्रजे शिरसि लाजपाकत॥
भूतभैरवरसो गुडान्वितो वल्लिजैः सह निषेवितश्चिरम्
शीतपूर्वलशुनं समन्वितं हन्ति शीतमतिमात्रमाशितः

र रा, टो, र शि, र यो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सोमल १ भा, सोनामाखी २ भा सोंठ ३ भा, पारा ४ भा, गन्धक ५ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर करेलेके रससे ३ रोज मर्दनकर गोला बनाय तांबेके सम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़ मिट्टी करके सुखाले फिर स्वांग अथवा भस्म या बालूमें रख कर नीचे मन्दमन्द आंचदे। जब ऊपर धान डालनेसे फूलजाय तब आंच देना बन्द करदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कपड़ मिट्टीको हटादे और तांबेके सम्पुटमहित घोटकर रखले। तांबेके सम्पुटका जो कच्चाभाग रहाहो उसे निकालदे। इसमेंसे १–१ रत्ती गुड़ और कालीमिर्चके साथ सेवन करके दही, भातकेसाथ लशुन खिलानेसे शीतपूर्वक आनेवाले ज्वरको यह नष्टकरताहै ४४१

४४२ भूतभैरवरसः (पञ्चम)

सूतसूर्यविषटङ्कगन्धैः कृष्णधूर्तभवतैलनिबन्धैः।
भूतभैरवरसः शशियुक्तः सन्निपातमुपहन्त्युपभुक्तः॥

र (मा), रससारसङ्ग्रह, सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, ताम्रभस्म, शुद्धबच्छनाग, सुहागा, गन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर काले धतूरेकेतैलसे १–२ रोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै४४२

४४३ भूतभैरवरसः (षष्ठ)

पारदं गन्धकं ताम्रं मर्द्य वह्निकषायके।
वज्रमूषान्तरे पाच्य वालुकायन्त्रके दिनम्॥ १९६८॥
मार्जारजम्बुकैः पित्तैर्भावितं प्रहरद्वयम्।
गुञ्जामात्रं चानुपाने देयं शीतोदकेन च॥ १९६९॥
सन्धिकं तत्क्षणं हन्ति दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
नारिकेलोदकं दाहे रसोऽयं भूतभैरवः॥ १९७०॥

वै चि, र प, वा, सन्धिकसन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभागलेकर कज्जली बनाकर चित्रकके क्वाथमें एकरोज मर्दनकर वज्रमूषामें रखकर बालुकायन्त्रमें एकदिनरातकी अग्नि देकर बिल्ली और गीदड़केपित्तोंसे २–२ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंडे पानीकेसाथ देनेसे सन्धिकसन्निपातको यह तत्क्षणदूरकरताहै। भूखलगनेपर दहीभात देना। दाहहोनेपर नारियलका जल पिलाना॥४४३॥

४४४ भूताङ्कुशोरसः (प्रथम.)

सूतायस्ताम्रमभ्रञ्च मुक्ताश्चाऽपि समं समम्।
सूतपादोत्तमं वज्रं शिलागन्धकतालकम्॥ १९७१॥
तुल्यं रसाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं शिलाजतुम्।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम्॥१९७२॥
भृङ्गचित्रकवज्रीणां दुग्धेश्चाऽपि विमर्दयेत्।
दिनान्ते पिण्डिकां कृत्वा रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्॥१९७३॥
भूताङ्कुशरसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत्।
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि भूतोन्मादनिवारणम्॥१९७४॥
पिप्पल्याद्यं पिबेच्चाऽनु दशमूलकषायकम्।
स्वेदयेत्कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षञ्च वर्जयेत्॥१९७५॥
माहिषञ्च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भक्षयेत्।
अभ्यङ्गं कटुतैलेन हितो भूताङ्कुशो रसः॥ १९७६॥

र स, र च, र मु, ध, र र, रसायनम, र को, भै र, चि र भ, र का, र र री, उन्माद। र र कौमुदी प्रायो शुद्ध पाठ।

भाषा—शुद्धपारा, लोह, ताम्र, अभ्रक और मोती इनकी भस्में १–१ तोला, हीराभस्म ३ माशे, शुद्धमैनसिल, गन्धक, हरिताल, तूतिया और रसौत, समुद्रफेन, काले सुरमे की भस्म ये प्रत्येक ६–६ भाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरा और चित्रकके स्वरस तथा सेहुण्डके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती अदरकके रससे देकर पीपलके प्रक्षेपयुक्त दशमूलका काढ़ा पिलानेसे और कड़वीतूंबीके स्वरस का स्वेद देनेसे भूतोन्माद नष्टहोता है । तीक्ष्ण और रूक्ष पदार्थोंका त्यागकरे । भैंसकाघी, दूध और भारी अन्न इनका भक्षणकरे। कड़वे तैलकी मालिश इसमें हितकरहै ॥ ४४४ ॥

४४५ भूताङ्कुशोरसः (द्वितीयः)

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम्।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ १९७७ ॥
मृताऽभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत्।
भूताऽङ्कुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन भावयेत् ॥१९७८॥
सोऽयं भूताङ्कुशो नाम यामैकं वातकासजित्।
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्बिभीतकफलत्वचम् ॥ १९७९ ॥

र र, र.सु, र.क ल, नि र, वै चि, यो. चि, मि र भ, र.को, र म.मा, व रा., र र स, र.का, यो.म, कासाऽधिकारे। र.र स स्वयमग्निरस इति नाम। योगमहार्णवे त्रिभाग ताम्रं योजितम्।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म २–२ भाग, मरिच १० भा., अभ्रकभस्म ४ भा, शुद्ध बछनाग और धतूरेकेबीज १–१ भाग लेकर नीबूके रससे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर ऊपरसे बहेड़ेकीछालकाचूर्ण मधुसे चाटनेसे वातजखासी निवृत्त होतीहै ॥ ४४५ ॥

४४६ भूतेश्वररसः (प्रथमः)

ताम्राऽभ्रलोहानि रसोऽमृतञ्च
फलत्रयं गुग्गुलुकः शिलाजतु।
करञ्जबीजं विषतिन्दुबीजं
सर्वाणि चैतानि समानि पिष्ट्वा ॥ १९८० ॥
निक्षिप्य तत्सप्तदिनञ्च भाण्डे
गद्याणमेकं मधुना च साज्यम्।
सेवेत दुग्धेन युतञ्च पथ्यं
नीरेण वा स्त्री [illegible] विवर्जनीया ॥ १९८१ ॥

र दी., कुष्ठे।

टि०—अयं प्रथमकुष्ठकुठारेण बहुधा साम्यमावहति परन्तु द्रव्यप्रमाणे विरोधत्वात्पृथक्तया पाठो गृहीतः। अतएव रसदीपिकायामुभयस्योल्लेखोऽस्ति। अस्मिन्योगे उग्रद्रव्ययोगत्वाद्गद्याणिकी मात्रा न समीचीनाऽस्ति कदाचिल्लुप्तिपु नैनरयोगत्वमनुभूयेत तथाऽपि प्रथमतो माषादारभ्य शनैर्मात्रा वर्द्धनीयेति सुहृत्सु विज्ञप्तिः।

भाषा—ताम्र, अभ्रक, लोह और पारा इनकीभस्में, शुद्धबछनाग, त्रिफला, शुद्धगूगल और शिलाजतु, पूतीकरञ्जबीज, कुचिला इन समभाग लेकर १–२ पहर मर्दनकर शीशीमें भरले। सातदिनकेबाद इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर धीरे २ छ माशेतककी मात्रा घी और शहदकेसाथ देवे। जहां मात्रा असह्य मालूमपड़े वहां रुकजानाचाहिये। इसके सेवनसे समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहैं। इसमें दूध अथवा जलकेसाथ पथ्य देना और स्त्रीसङ्ग वर्जितकरना ॥ ४४६ ॥

४४७ भूतेश्वररसः (द्वितीयः)

विश्वोषणं टङ्कणपारदञ्च
सगन्धकं चूर्णसमांशयुक्तम्।
नेपालबीजं त्रिवृता च गुञ्जा
गुञ्जाप्रमाणा गुटिका प्रसिद्धा ॥१९८२॥
विरेचनी मूत्रविकारशोधिनी
अग्नेर्हिता दीपनपाचनी च।
जलोदरे प्लीहि गुदाऽङ्कुरे च
संशोधिनी शीतजलेन पीता ॥
सङ्ग्राहिणी चूर्णजलेन सत्यं
भूतेश्वरो नाम च सुप्रसिद्धः ॥१९८३॥

र क यो, उदररोगे

भाषा—सोंठ, मिर्च, भुनासुहागा, शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा, निसोत और सफेदगुञ्जा समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पानीके योगसे गुञ्जाप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढे जलकेसाथ देनेसे मलावरोध, मूत्रविकार, मन्दाग्नि, जलोदर, प्लीहा, बवासीर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४४७ ॥

४४८ भूतेश्वररसः (तृतीयः) (पित्तकालान्तक'—नाराच.—लक्ष्मीविलासः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं नेपालं दरदं समम्।
मर्द्यं वह्निकषायेण दोलायन्त्रे दिनं पचेत् १९८४ ॥
मत्स्यपित्तस्नुहीक्षीरैर्द्वियामं खल्वमध्यके।
माषैकमार्द्रकैर्देयं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ १९८५ ॥
अर्कमूलकषायेण सन्निपातं निहन्ति च।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषि तक्रं पिबेत्तु ॥
भूतेश्वररसो नाम भूतेश्वरविनिर्मितः ॥ १९८६ ॥

वै चि, ज्वराऽधिकारे।

टि०—वसवराजीयवैद्यचिन्तामण्यो शिर पित्ताऽधिकारे द्विरावृत्त पाठ लिखित्वा तस्य पित्तकुलान्तक इति नाम स्थापित, तत्राऽनुपानादी नामभावोऽस्ति केवल शिर पित्त नियच्छतीति कृत्वा समापितम्, तत्र छिन्नावाधादिक योजनीयम्। जङ्गवाने पुनर्लक्ष्मीविलास इति लिखित्वा इममेव पाठ कियस्य मूले नाराचोऽय महारस इति लिखित तत्र पित्तकुलान्तके मत्स्यपित्तेन भावना नाऽस्ति, अन्यत्र तु सर्वत्र मत्स्यपित्तस्नुहीक्षीराभ्यामुभाभ्यां भावनाऽस्तीति विशेषोऽवधाय ।

भाषा—शुद्धपारा, बछनाग, गन्धक, जमालगोटा और शिंगरिफ सब समभाग लेकर कज्जलीकर चित्रकके काढेसे मर्दनकर गोलाबनाय चित्रकके क्वाथमें दोलायन्त्रसे १ दिन पकाकर मत्स्यपित्त और सेहुण्डके दूधसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरता है। आककी जडकेकाढेसे देनेसे सन्निपातको नष्टकरताहै। पथ्य दहीभात है, प्यासलगनेपर छाछ पिलाना ॥ ४४८ ॥

४४९ भृङ्गादिचूर्णम्

भृङ्गी ब्राह्मी च शुण्ठी त्रिफलकणवचा-
बाकुचीकुष्ठयुक्तं,
भल्लातं चाऽश्वगन्धा शिखिगरलनिशा-
षोडशं भस्मसूतम्।
कांस्ये पात्रे रजश्च त्रिफलजलयुतं
प्रातरुत्थाय पीतं,
षण्मासाद्रोगहारी पलितवलिहृ-
रस्वर्णदेही शरीरी ॥ १९८७ ॥

वै चि, रसायने।

भाषा—भंगरा, ब्राह्मी, सोंठ, त्रिफला, पीपल, वच, बाकुची कुठ, शुद्धभिलावे, असगन्ध, चित्रक और अपामार्ग, शुद्धबछनाग, हल्दी और पारेकीभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ माशा कासेके पात्रमें त्रिफलाके काढेके साथ प्रातःकाल पीनेसे ६ महीनेके प्रयोगसे समस्तरोगदूरहोकर वलीपलितरहित होजाताहै ॥ ४४९ ॥

४५० भेदकमञ्जरीरसः

समांशमरिचैः सार्धं तालकं टङ्कणो बलिः।
मत्स्यपित्तं तृतीयांशं शर्करा सकलैः समा ॥१९८८॥
शृङ्गबेररसेनाऽत्र द्विगुञ्जतुलितो रसः।
दत्तो नवज्वरं हन्याज्जलयोगश्च कारयेत् ॥ १९८९ ॥

र.सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—मरिच, शुद्धहरिताल, सुहागा और गन्धक सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर इससे तृतीयांश मछलीका पित्त और बराबरकी शकर मिलाकर अदरखके रससे मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली देकर मत्थेपर जलकी धारा देनेसे नवज्वर दूरहोताहै ॥ ४५० ॥

४५१ भेदीज्वराङ्कुशोरसः

पारदं वत्सनाभश्च प्रत्येकं निष्कसम्मितम्।
द्विनिष्कं गन्धकञ्चैव टङ्कणञ्च द्विनिष्ककम् ॥१९९०॥
मरिचं पञ्चनिष्कं स्यात् षण्निष्कं दन्तिबीजकम्।
सिंहीफलरसैर्मर्द्य द्वियामं श्लक्ष्णतां नयेत् ॥१९९१॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कांश्च कारयेत्।
आर्द्रकद्रवसंयुक्तां ज्वरे जीर्णे प्रयोजयेत् ॥
सर्वज्वरहरा शीघ्रं नाम्ना भेदी ज्वराङ्कुशः ॥१९९२॥

व.रा., वै. चि, ज्वराऽधिकारे। वैद्यचिन्तामणौ हिङ्गुलमधिक नियोजितम्।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग ४-४ माशे, शुद्धगन्धक और भुनासुहागा ८-८ माशे, मरिच २० माशे, शुद्धजमालगोटा २४ माशे, लेकर सबकी कज्जलीकर भटकटैयाके फलोंके रससे २ पहर मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामें सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह जीर्णज्वरको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ भैरवगुग्गुलुः

एरण्डमूलस्य लघोर्गुडूच्याः
पुनर्नवायाः सफलत्रयस्य।
प्रत्येकशः प्रस्थमथार्द्धप्रस्थं
शुण्ठ्या जलद्रोणयुगे पचेत्तत् ॥ १९९३ ॥
अष्टाऽवशिष्टेन पुरस्य प्रस्थं
पचेत्कषायाद्भवति स्म सान्द्रम्।
त्रिवृत्कणाशुण्ठिमरीचकानां
पलं पलं माक्षिकधातुकर्षौ ॥ १९९४ ॥
सद्गन्धकस्य द्विपलं यवानी
कृमिघ्नकुष्ठे लवणञ्च दन्ती।
फलत्रयं कार्षिकमानमुच्चै-
राचूर्ण्य सन्निक्षिपति स्म शीते ॥ १९९५ ॥
श्रीभैरवो गुग्गुलुरेष रोगा-
न्निहन्ति वृद्धांश्वयथूनशेषान्।
क्षयं प्रवृद्धं गलगण्डयुक्तम्
कुष्ठौघजातं कसनान्समस्तान् ॥
वाताऽस्रमार्गं यदि दुस्तरञ्च
श्रीशम्भुना कीर्तित एष योगः ॥ १९९६ ॥

र क, कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—छोटे एरण्डकीजड, गिलोय, पुनर्नवा, त्रिफला १-१ सेर और सोंठ आधासेर लेकर अवकुट चूर्णकर ३२ सेर पानीमें औटावे। अष्टमाश शेषरहनेपर छानकर १ सेर शुद्धगूगल डालकर पकावे। जब गूगल गलकर रावके सदृशहोजाय तब निसोत, पीपल, सोंठ, मिर्च १-१ पल, शुद्ध सोनामाखी २ कर्ष, शुद्धगन्धक २ पल, अजवाइन, विडङ्ग, कुठ, सेंधानमक, दन्तीमूल, त्रिफला ये १-१कर्ष लेकर इनका बारीक चूर्ण डालकर पकावे। जब गोली बननेलायक होजाय तब उतारकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बढेहुए शोथ, क्षय, गण्डमाला, कुष्ठसमुदाय, सम्पूर्णखासी, दुस्तर वातरक्त इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ४५२ ॥

४५३ भैरवरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य वटिकां ततः ॥ १९९७ ॥
गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत्तोयाऽनुपानतः।
स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम् ॥१९९८॥

र. सं., ध, र चं, र. सु, भै. र, स्वरभेदे।

टि०—भैषज्यरत्नावल्यादौ बहुषु स्थानेषु टङ्कणस्थाने व्योषमिति दृश्यते, तत्तु न सम्यक् प्रतिभाति मरिचस्य पृथक् सर्वत्रोपल्ये भासादौ टङ्कणस्याऽतिमहत्वाच्च, तथा च श्वासभैरव इति नाम स्थापित विकाश्वासाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, बछनाग और सुहागा, मरिच, चव्य, चित्रक सबसमभाग लेकर बारीक चूर्णकर अदरखके रससे एकरोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जलकेसाथ लेनेसे स्वरभेद, दुस्तरश्वास, कास येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४५३ ॥

४५४ भैरवरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं ग्रहीतव्यं टङ्किकाशतमात्रकम्।
त्रिगुणां शर्करां लौहे निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥ १९९९ ॥
याममात्रं ततो दद्याच्छ्वेतखादिरचूर्णकम्।
सूततुल्यं ततः कुर्यान्मर्दनात्कज्जलोपमम् ॥ २००० ॥
विंशति वटिकाः कार्याः स्थाप्या गोधूमचूर्णके।
निःदोषनिःस्पृता ज्ञात्वा पिडिकास्ताः कलेवरे २००१
भैरवं देवमभ्यर्च्य बलिं तस्मै प्रदाय च।
विधाय योगिनीपूजां दुर्गामभ्यर्च्य यत्नतः ॥ २००२ ॥
वटिकास्ताः प्रयोक्तव्या भिषजा जानता क्रियाम्।
दिवसत्रितयं दद्यात्तिस्रस्तिस्रो विजानता ॥ २००३ ॥
चतुर्थाच्च समारभ्य एकामेकां प्रयोजयेत्।
एवं चतुर्दशदिने नीरोगो जायते नरः ॥ २००४ ॥
पथ्यं शर्करया सार्द्धमुष्णान्नं घृतान्वितं च।
कुर्यात्ताकाङ्क्षमुत्थानं सकृद्भोजनमिष्यते ॥ २००५ ॥
जलपानं जलस्पर्शं कदाचन न कारयेत्।
दुःसहायान्तु तृष्णायामिक्षुदाडिमकादिकम् ॥२००६॥
शौचकार्येऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं द्रुतम्।
वाताऽऽतपाऽग्निसम्पर्कान् दूरतः परिवर्जयेत् ॥२००७॥
मेघाऽऽगमे वा शीते वा कार्यमेतद्विजानता।
मुखरोगे तु सञ्जाते मुखरोगहरी क्रिया ॥ २००८ ॥
श्रमाऽध्वभाराध्ययनस्वप्नालस्यानि वर्जयेत्।
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कर्पूरादिसुवासितम् ॥ २००९ ॥
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता वातपित्ताऽविरोधिनी।
लवणं वर्जयेदम्लं दिवा निद्रां तथैव च ॥ २०१० ॥
रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोकनन्तथा।
सप्ताहद्वयमुत्क्रम्य स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥२०११॥
पथ्यं कुर्याद्धितमिदं जाङ्गलानां रसादिभिः।
व्यायामाद्यं वर्जनीयं यावन्न प्रकृतिं भजेत् ॥२०१२॥
एवं कृतविधानस्तु यः करोत्येतदौषधम्।
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ॥ २०१३ ॥
पिडका विलयं यान्ति बलं तेजश्च वर्धते।
रुजा च प्रशमं याति ग्रन्थिशोथश्च शाम्यति ॥२०१४॥
अस्थ्नां भवति दार्ढ्यञ्च आमवातश्च शाम्यति।
भैरवेण समाख्यातो रसोऽयं भैरवाभिधः ॥२०१५॥

र. सं., भै. र, उपदंशे।

भाषा—शुद्धपारा १०० रत्ती, शक्कर ३०० रत्ती लेकर लोहेकेपात्रमें नीमके डंडेसे १ पहर मर्दनकर पारेकी बराबर सफेदखैरकाचूर्ण डालकर कज्जली बनावे, इसकी २० गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३–३ गोली सनेहुएगेहूंके आटेमें वचलितकर भैरवको बलिदेकर योगिनी और दुर्गाकी पूजाकर निगलवादे। तमामशरीर फूटगयाहो तथा पिडकाओंसे व्याप्त होगयाहो तो तीनरोजतक ३–३ गोलियादे, चौथे दिनसे १–१ गोली ११ दिनतकदे। ऐसे १४ दिनमें मनुष्य नीरोग होजायगा। पथ्यमें थोड़ाघी और शक्करकेसाथ गरमभत्त देवे। एकदम भूख लगे उसवक्त एकबार भोजनदेवे, जलपान और जलस्पर्श भूलकरभी न करे। यदि असह्यतृष्णाहो तो ईख और अनार-प्रभृतिकारसदेवे। शौचकार्यमेंभी गरमपानीसे प्रक्षालनकेनाद तुर्त कपड़ेसे पोंछडाले। वायु, धूप और अग्निका दूरसे परित्याग करे। वर्षा अथवा शीतकालमें इसप्रयोगका करना उचितहै। मुंह आकर तु सहहोनेपर मुखरोगको दूरकरनेवाली क्रियाकरनी। परिश्रम, मार्गचलना, भार उठाना, दिनका सोना, रात्रिजागरण और आलस्य इनको छोड़दे। मुखका स्वाद खराबहोनेपर कपूरवगैरहसे वासित पान खावे। वातपित्तकी अविरोधक श्लेष्म हर क्रियाकरनी, नमक और खटाईको छोड़दे स्त्रीके मुखतकको न देखे। चौदहदिनकेबाद गरमजलसे स्नानकरे और जङ्गली जानवरोंके मांसरससे हितकारकपथ्यले। जबतक प्रकृतिस्थ न हो तबतक परिश्रम न करे। जो इसतरह पथ्यकरता-हुआ इस औषधिका सेवनकरेगा वही जितेन्द्रिय इसपापरोगसे छूटेगा। इसके सेवनसे फुड़िया नष्टहोजातीहै बल और तेज बढ़ताहै। पीड़ा, गाठें और सूजन तथा आमवात नष्टहोजातेहै हड्डिया मजबूत होजातीहै ॥ ४५४ ॥

४५५ भैरवरसः (तृतीयः)

द्विगुणितशुचिगन्धं पारदं कन्यकाद्भि-,
दिनमृदितमशेषं विन्यसेत्कूपिकायाम्।
वसनमृदवलिप्तं सप्तशः सैकते त-,
द्विपच तरणियामं वह्निवृद्ध्या क्रमेण ॥ २०१६ ॥
तदनु दरदतुल्यं कूपिकानाललग्नं,
रसममलमतन्द्रो मूर्च्छितं चाददीत।
हरिदलविजयाम्भोमर्दितं चातपे तत्,
त्रिगुणितमुनिवारान् सप्तकृत्वो विमर्द्य ॥ २०१७ ॥

क्षितितलगतयन्त्रे सह्यवह्नात्सजाती,–
फलगलितसुतैलाद्भैर्योऽयं द्विवल्लः।
निशि सह सितया यैः सेवितो दुग्धभोज्यै,–
र्दयति बहुशुक्रं नान्यथा यावदुक्तिः ॥ २०१८॥

र.रा ,टी.,वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धपारा१ भा ,गन्धक २ भा लेकर नीलवर्णकज्जली-कर घीकुंआरके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़ मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें १२ पहरकी क्रमवृद्ध अग्निदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर रसको निकालकर तुलसी और भागके रसोंसे २१ रोज मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें स्वेदितकर लौंग और जायफलसे निकालेहुए तैलमें २–४ भावनाए देकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्ती शक्करकेसाथ सेवनकरके ऊपर दूधपीनेसे धातुगतसमस्तविकार दूरहोतेहैं। रात्रिमें विषयसे २ घडे पहिले लेनेसे यह शुक्रस्तम्भन करता है पर विषयकी अभिलाषासे इसका सेवन किया जायतो उसदिन केवल दूध लेनाचाहिये। इसका हमेशा सेवन रखनेसे समस्तरोग दूरहोतेहैं ॥ ४५५॥

४५६ भैरवरसः (चतुर्थः)

सुवर्णं पारदं कान्तं मृतं सर्वं समं भवेत्।
शतावर्याः शिफाद्रावैः भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०१९ ॥
त्रिदिनं त्रिफलाक्वाथे भृङ्गद्रावैः दिनत्रयम्।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां भक्षयेद्भैरवं रसम् ॥ २०२० ॥
माषैकैकं वर्षमात्रं जीवेचन्द्रार्कतारकम्।
मूलचूर्णं शतावर्याः कृष्णाजपयसा युतम् ॥
पलैकैकं पिबेचानु क्रामकं परमं हितम् ॥ २०२१ ॥

र रा ,रसायनस ,रसायने।

भाषा—सुवर्ण, पारा, कान्तलोह इनकीभस्में समभागलेकर शतावरी, त्रिफला और भंगराके अलगरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ मासा मधु और घीकेसाथ १ वर्षतक निरन्तर सेवनकरनेसे दीर्घायु होताहै शतावरीका चूर्ण ४ तोले कालीबकरीके दूधके साथ ऊपरसे लेनेसे शरीरमें इसका क्रामण होताहै ॥ ४५६ ॥

४५७ भैरवरसः (पञ्चमः)

शुद्धं रसं समाहृत्य वेदमात्रपलं शुभम्।
अभ्रकं गन्धकञ्चैव तावन्मात्रं प्रदापयेत् ॥ २०२२ ॥
श्वेतं सौवीरकञ्चापि चतुर्थांशञ्च सैन्धवम्।
जम्बीरस्य च नीरेण मर्दयेत्सर्वमेकतः ॥ २०२३ ॥
निक्षिप्य काचकूप्यां तन्निरुध्य चाऽतियत्नतः।
वालुकाभिः समापूर्य याममात्रं ततः परम् ॥ २०२४ ॥
अग्निञ्च मध्यमं कुर्यात्ततः शीतं समुद्धरेत्।
कनकस्य पलात्पत्रधारपत्रं सूक्ष्मं विधाय च ॥२०२५॥
माक्षिकस्य पलञ्चाऽथ गन्धकस्य चतुष्टयम्।
एषमेकत्र तत्कृत्वा गन्धकः माक्षिकन्तथा ॥ २०२६ ॥
हेम्न' पत्रञ्च तन्मध्ये धृत्वा रुद्ध्वा शरावके।
उपर्यपि भवेचाऽन्यः शरावः सन्धिमुद्रितः॥२०२७॥
कुञ्जराख्यः पुटो मुख्यस्तत्र देयः सुसंयतः।
स्वाङ्गशीतं तमादाय भस्मीभूतञ्च काञ्चनम्॥२०२८॥
सूक्ष्मं तचाऽपि सञ्चूर्ण्य पूर्वसूतेन मेलयेत्।
ज्वालामुखीरसै' सूतं मर्दयेदेकतोऽखिलम् ॥२०२९॥
ततो गन्धेन हविषा रसञ्च मर्दयेद् दृढम्।
कृत्वा तद्गोलकं सर्वं मृन्मूशान्तर्गतञ्च तत् ॥ २०३० ॥
विमुद्र्य सकलं भाण्डे मृन्मये तत्र दीयते।
अग्निं हि वालुकाभिस्तं दिनसप्तावधि यथा॥२०३१॥
अग्निं तत्र शनैः कुर्याच्छीतमादाय पारदम्।
विचूर्ण्य रक्ष्यते भाण्डे राजते वाऽथ काञ्चने॥२०३२॥
गुञ्जामेकामतो दद्यात्प्रतिवासरमुत्तमम्।
कासे श्वासे ज्वरे मेहे गुल्मे दुष्टक्षये तथा ॥२०३३॥
व्योषेण मधुना सार्कं रसं गुग्गुलुनाऽथवा।
घृतेन सह दातव्यः कुष्ठे क्वाथं वराभवम् ॥
अग्निमान्द्ये च दातव्यो रक्तरोगे महारसः ॥ २०३४॥

रसचि , रक्तरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और सफेद सुरमा ४–४ पल, सैंधानमक १ पल लेकर सबकी कज्जलीकर जमीरीके रससे १–२ रोज मर्दनकर २–३ कपडमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुंहबन्दकरदे । फिर वालुकायन्त्रमें रख एकपहरकी मध्यम अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर रखछोड़े। एकपल सोनेके वारीकपत्रकराके शुद्धसोनामाखी १ पल और गन्धक ४ पल लेकर बारीक चूर्णकर शरावसम्पुटमें सोनेकेपत्रोंके कतरीके रखकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर सोनेकी भस्मको निकालकर पहिलेरसमें मिलाकर हुरहुर और गायकेघीसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय मिट्टीकी मूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर ७ दिनकी मन्द आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सोने अथवा चांदीके पात्रमें रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती रोजाना त्रिकटु और मधुकेसाथ अथवा गुग्गलकेसाथ अथवा घीकेसाथ देनेसे खास, श्वास, ज्वर, प्रमेह, गुल्म, दुष्टक्षय और मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै। कुष्ठमें घीकेसाथ देकर त्रिफलाका क्वाथ देना। इससे रक्ताश्रित तमामरोग दूरहोंगे ॥ ४५७ ॥

४५८ भैरवरसः (षष्ठः)

पीतेन गन्धकेनैव तुल्यः स्याच्छुद्धपारदः।
लाङ्गल्यफेनकासीससूताच्चूर्णन्तु षड्गुणम् ॥२०३५॥
कृष्णोन्मत्तरसेनैतद्भावयेच दिनत्रयम्।
वल्लयुग्मप्रमाणेन वन्धनीया सुधैर्वटी ॥ २०३६ ॥
नागकाऽऽर्द्ररसैर्देया सन्निपातविमुक्तये।
स्नानं जलेन शीतेन भोजनं दधिभक्तकम्॥
सन्निपातमसाध्यन्तु हन्त्यसौ भैरवो रसः ॥२०३७॥

यो.स ,सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १-१ तोला, शुद्ध करि हारी, अफीम और कमीस २-२ तोले लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कालेधतूरेके रससे ३ दिन भावना देकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली नारङ्गी और अदरख के रससे देनेसे और शीतजलसे स्नानकराकर दहीभात खिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको दूरकरताहे ॥ ४५८ ॥

४५९ भैरवरसः (सप्तमः)

पीतेन गन्धेन समश्च सूतः
सत्त्वं गुडूच्या अपि तत्समानम्।
शिलाविषं चाऽप्यपराजिता च
भागस्त्वमीषां द्विगुणो नियोज्यः ॥ २०३८ ॥
कटुत्रिकाऽङ्कोलकदेवदारुत्रिभागिकाः स्युः परिचूर्ण्य सर्वम्।
तथा रसैः शिग्रुवलोद्भवैश्च
सम्मर्द्य सार्द्धं गुटिका विधेया ॥
वल्लप्रमाणा विषमे त्रिदोषे
कर्पूरसार्द्धं भिषजा प्रदेया ॥ २०३९ ॥

यो स,सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, गिलोयसत्त्व १-१ भाग, शुद्ध अथवा भस्मकियाहुआ सोमल, कोयल २-२ भाग, त्रिकुटु, अङ्कोलकीछाल और वन्दाल ३-३ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सहिजनकी जड़कीछालके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे त्रिदोष और विषमज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४५९ ॥

४६० भैरवरसः (अष्टमः)

सूतं गन्धं लोहमण्डूरकिट्टं
सर्वैस्तुल्यो वत्सनाभो नियोज्यः।
आर्द्रं भृङ्ग बीजपूरं जयन्ती
निर्गुण्ड्येषां वस्त्रपूतैर्द्रवैश्च ॥ २०४० ॥
युक्त्या वैद्यो भावयित्वा विधेया
गुञ्जाऽर्द्धाऽर्द्धाः सन्निपातस्य नुत्यै।
शीते नीरे निर्मलैः स्नानमत्र
पथ्ये दुग्धं शर्कराभिर्हितञ्च ॥ २०४१ ॥

यो सं.,सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और मण्डूरभस्म समभाग, सबकी वरावर शुद्धबछनाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अदरख, भंगरा, बिजोरा, जैत, निर्गुण्डी इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात नष्ट होता है ठंढेजलसे रोगीको स्नानकराना और पथ्यमें शकर, दूध और भात देना ॥ ४६० ॥

४६१ भैरवरसः (नवमः)

आदौ नागरसस्य योगविधया गद्याणकं निःक्षिपेत्,
पश्चैकं विषशुल्वलोहगगनं तालञ्च गद्याणकम्।
खल्वे जातिदलस्य वासकरसैर्भृङ्गोद्भवैः सप्तधा,
सिद्धः सिद्धरसस्त्रिदोषशमनः स्वामी रसो भैरवः॥
किं क्वाथैः क्वथितैश्च किंशुकभवैः किंवाऽग्निदाहे घनैः,
किंवा मद्यविभूषणैः किमखिलैरन्यैरुपायैरपि।
हेलानिर्जितसर्वरोगनिवहप्रागल्भ्यलब्धध्वजः,
प्राप्तोऽयं यदि सन्निपातशमनः स्वामी रसो भैरवः॥
मुक्तैः सर्वचिकित्सकैः किमखिले जाते त्रिदोषे ज्वरे।
वल्लद्वन्द्वमितं हि भैरवममुं सम्यङ्नियुज्याऽऽदरात्,
पश्चाच्चेदनुपानकल्पनमदो जातीफलं सज्जलं,
स्नानं भक्तमशालिकं दधिसितामिश्रश्च दद्याद्बुधः॥

र.को ,र का.,र (मा), सन्निपाते। र (मा) सन्निपातभैरव इति नाम।

टि०-रसेभविषशुल्वाऽभ्र ओर्ध्वर्वामारमान्वितैः । सप्तकृत्वस्त्रिदोषान्तकरोऽयं भैरवो भवेदिति भैरवनाम्ना रसकामधेनु रसावतार (माणिक्यचन्द्र) यो स्वतन्त्र पाठ कल्पित, परन्त्वस्मादयूनगुणोऽस्ति हरितालरहितत्वाच्यूनद्रव्यभावनावस्त्वाच्चाऽसौ न पृथक्तया सङ्गृहीत इति विद्वद्भिर्विभावनीयम्।

भाषा—निश्चय नागभस्म, शुद्धबछनाग, ताबा, लोह, अभ्रक और हरितालभस्म ६-६ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर जावित्री, अडूसा, भंगरा इनकेरसोंसे ७-७ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे यह तमाम व्याधियोंको नष्टकरताहै। इसरसके रहतेहुए क्वथित (क्वाथ), ढेसूप्रभृतिका सेक, अग्निप्रभृतिसे दाह, मद्य अथवा, आभूषण इनसमस्त उपायोंकी क्या जुरूरतहै क्योंकि यह अकेलाही सबरोगोंको दूरकरदेताहै फिर अधिक तकलीफ उठानेकी क्या आवश्यकताहै जिससमय वैद्योंने रोगीको छोड दियाहो तब त्रिदोषज्वरमें ६-६ रत्तीकी मात्रादेकर जायफल और थोड़ागरमजल देवे। स्नानकराके लाल चावल दही और शक्कर मिलाकर देवे ॥ ४६१ ॥

४६२ भैरवीवटी (प्रथमा)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्दयेदिक्षुकद्रवैः।
दिनं भाव्यञ्च मर्द्यश्च शोषयित्वा तु भृङ्गिजैः॥२०४५॥
चतुर्धा भावयेद्रावैस्तिलपर्ण्या द्रवैस्तथा।
भावितञ्च विशोष्याऽथ चूर्णयेद्वस्त्रगालितम् ॥२०४६॥
चूर्णतुल्यं मृतं ताम्रं ताम्रादष्टांशकं विषम्।
कृष्णाशीतविडङ्गानि कृष्णाजीरकऽसनं वला ॥२०४७॥
ताम्राऽर्द्धं प्रतिचूर्णं स्यात्सर्वमेकत्र कारयेत्।
यामैकं भृङ्गजद्रावे मर्दयेत्कल्कतां गतम् ॥ २०४८ ॥
स्निग्धभाण्डगतं पाच्यं पिण्डं यामं कृशाऽग्निना।
चणमात्रा वटी योज्या चित्रकाऽऽर्द्रकसैन्धवैः॥२०४९॥

सम्यक् त्रिदोपजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
भैरवी गुटिका ख्याता दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्॥२०५०॥

नि.र., र.सु., र.को., र.का., र.क. यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा., गन्धक २ भागलेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर ईखकेरससे १ दिन मर्दनकर सुखाय भंगरा और हुरहुरकेरसकी ४–४ दिन भावनाएंदेकर सुखाले। फिर बराबरकी ताम्रभस्म और अष्टमांश शुद्धवछनाग, पीपल, कपूर, विडङ्ग, कालीजीरी, असन, धला ये प्रत्येक ताम्रसे आधे मिलाकर १–२ पहर घोटकर भंगरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर चिकने बर्तनमें डालकर मन्दाग्निमें १ प्रहर पकावे। गोलीबननेलायक होनेपर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली चित्रक और सेंधानमककेसाथ देनेसे दारुणसन्निपातको यह नष्टकरतीहै इसमें पथ्य दहीभात देना॥ ४६२॥

४६३ भैरवीवटी (द्वितीया)

पाठापारदगन्धकाऽमृतलतामाक्षीकतालाऽनलैः,
काश्मीरीविषतिन्दुलाङ्गलिजटायष्टीसवोलौषधैः।
कर्कोट्याऽपि च मोचया बृहतिकानिर्गुण्डिवाराः पृथक्,
भाव्यं, सप्तदिनं जयेत्सविषमान्बाज्वरान्कोलिका॥

र.प., ज्वरे।

भाषा—पाठा, शुद्ध पारा और गन्धक, गिलोय, सोना-माखी, हरिताल, चित्रक, गंभार, शुद्ध कुचिला और कलिहारीकी जड़, मुलहटी, हीराबोल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर खेखसा, पाटर, वन-भाटा, संभालू इनप्रत्येककेरसोंसे ७–७ रोज़ भावनाएंदेकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दहीकेसाथ देनेसे सद्योज्वर और विषमज्वर नष्टहोतेहै॥४६३॥

४६४ भैरवीवटी (तृतीया)

पिप्पली मरिचञ्चैव टङ्कणं दरदं तथा।
शुद्धं मनःशिलागन्धं हरितालं तथैव च॥ २०५२॥
विशुद्धं पारदं प्रोक्तं तथा शुद्धं विषं स्मृतम्।
रौप्यभूतिश्चाऽभ्रकञ्च पलमानं पृथक्पृथक्॥२०५३॥
चूर्णं सूक्ष्मं विधायाऽथ भावयेत्तु रसैः पुनः।
कदलीमूलकं चित्रं धत्तूरस्य च मूलकम्॥ २०५४॥
पृथक्पृथक् पलमितं कुट्टयित्वा जले क्षिपेत्।
षोडशांशे क्वाथयित्वा वस्त्रपूतं समाचरेत्॥२०५५॥
खल्वे क्षिप्त्वा भावयेत्तु कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम्।
भैरवाख्या वटी ख्याता रसशङ्करसञ्ज्ञिता।
कासश्वासौ निहन्त्येषा सर्वव्याधिविनाशिनी २०५६

र.सु., श्वासे।

भाषा—पीपल, मरिच, शुद्ध सुहागा, शिंगरिफ, मैनसिल, गन्धक, हरिताल, पारा और वछनाग, चांदी और अभ्रकभस्म १–१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर केलाकन्द, चित्रक, धतूरेकीजड़ १–१ पल लेकर अलग २ कूटकर १६ गुने पानीमें क्वाथकरे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानले फिर इसक्वाथसे पूर्वोक्तरसको मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे कास श्वासादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ४६४

४६५ भैरवीवटी (चतुर्थी)

तिन्तिडीकं विषं शुद्धं दग्धशङ्खं नियोजितम्।
जातीफलं त्रुटियुतं सर्वमेकत्र कारयेत्॥ २०५७॥
रसं गन्धं समरिचं निम्बूरसविमर्दितम्।
चित्रकेण तु वारैकं वटिका माषमात्रिका॥ २०५८॥
देया यत्नेन सततं नाम्ना मन्दाग्निभैरवी।
कासे श्वासे प्रतिश्याये विषरोगादिके ज्वरे॥
सर्वरोगेषु विख्याता वटी भैरवसञ्ज्ञिता॥ २०५९।

र.सु., अजीर्णे।

भाषा—तिन्तिडीक (समाक यूनानी), शुद्धवछनाग, शङ्ख भस्म, जायफल, इलायची, शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच सब समभाग लेकर नीबू और चित्रकके रससे १–१ भावना देकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे मन्दाग्नि, कास, श्वास, प्रतिश्याय, विष, ज्वर इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै॥ ४६५॥

४६६ भोगसुन्दरीवटी

हिङ्गुलञ्च चतुर्जातं लवङ्गौषधचन्दनम्।
जातिजं केशरं कृष्णा त्वाकल्लमहिफेनकम्॥ २०६०॥
कस्तूरीन्दु समं सर्वं तत्समे विजयासिते।
क्षुद्रकोलमिता कार्या वटिका भोगसुन्दरी॥ २०६१॥

रसायनसं., र.कौ., वृ यो. त., वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, चातुर्जात, लौंग, सोंठ, सफेदचन्दन, जायफल, केसर, पीपल, अकलकरा, अफीम, कस्तूरी, कपूर सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर इसकी बराबर भांग और खांड मिलाकर छोटेबेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ खानेसे यह वीर्यका स्तम्भन करतीहै और मन्दाग्नि, संग्रहणी तथा श्वास कास को नष्टकरतीहै ४६६

४६७ भोगपुरन्दरीवटी

आकारकरभं ग्राह्यं पलैकं केशरन्तथा।
छिन्द्यञ्च फलं जात्याः पञ्चटङ्कप्रमाणकम्॥ २०६२॥
त्रिटङ्कं देवकुसुमं टङ्कैकं दरदं मतम्।
तन्मानमहिफेनञ्च जलेनैव विमर्दयेत्॥ २०६३॥
सूक्ष्मकोलफलोन्मानां गुटिकां रचयेद्बुधः।
एकैकां भक्षयेद्रात्रौ पयः पेयं यथेप्सितम्॥ २०६४॥
किञ्चिदुष्णं बलं कृत्वा गुटी भोगपुरन्दरी।
वीर्यस्तम्भकरी नृणां स्त्रीणां सौख्यप्रदायिनी॥२०६५॥

र कु., वीर्यस्तम्भे।

भाषा—अम्बररा १ पल, केशर २ टंक, जायफल ५ टंक, लौंग ३ टंक, शुद्धहिंगरिफ और अफीम १–१ टंक लेकर सबका बारीकचूर्णकर जलकेसाथ १–२ पहर घोटकर छोटेबेर बराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रतिसमयसे २ घंटेपहिले दूधकेसाथ लेनेसे शरीरमें तेजी लाकर वीर्यका स्तम्भनकरतीहै और स्त्रियोंको आनन्ददेतीहै ४६७

४६८ भ्रमनाशिनीवटी

रसं विषं गन्धकनन्दशुक्री समांश सर्वे त्रिगुणोपणञ्च। सम्भृङ्गवेरेण सम विमर्द्य वटीश्च कुर्यान्मरिचप्रमाणाम्॥ कृष्णा शताह्वा शुण्ठी च पथ्या यासा पलंपलम्। षट्पलो गुडश्चात्र गुटिका भ्रमनाशिनी॥२०६७॥

ब्राह्मीरसेनाष्टगुणेन हैय-
ङ्गवीनमेभिः परिपाचनीयम्।
ब्राह्मीवचापिप्पलिकुष्ठविश्वा-
नीलोत्पलैः सैन्धवमिश्रितैश्च॥२०६८॥

यो. सं, रसायन स, रससारसङ्ग्रह, र. सि, भ्रमरोगे।

टि०—रसायन स, रससारसग्रह, र सि, एषु नागार्जुनीति नाम्ना एको योगोऽस्ति सोऽस्मिन्नेवान्तर्भवति। नागरवाने टङ्कणन्तु भ्रमात्सञ्जातमिति बोद्धव्यम्।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, नागभस्म १–१ तोला, मरिच ३ तोले लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील वर्णकजलीमें मिलाकर अदरखके रसमें मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। यह प्रथमगुटिका तैयारहुई। पीपल, सोंफ, सोंठ, हर्रे, धमासा १–१ पल, पुरानागुड़ ६ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर गुडमिलाकर ३–३ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े, यह द्वितीयगुटिका तैयारहुई। ब्राह्मी, बच, पीपल, कुठ, सोंठ, नीलोफर और सैंधानमक इनका कल्क डालकर ८ सेर ब्राह्मीके रसमें १ सेर मक्खन पकाकर रखछोड़े। फिर भ्रमरोगीको वमनविरेचनादिसे शुद्धकर प्रात कालमें १ गोली प्रथम रसमेंसे ब्राह्मीरसके साथदे। मध्याह्नमें द्वितीय गोली दे और रात्रिको दूधके साथ यथाशक्ति ब्राह्मीघृत दे। इसप्रयोगसे समस्तप्रकारके भ्रम, अपस्मार, श्वास, कास और वातगुल्म नष्टहोते हैं॥ ४६८॥

४६९ मकरध्वजरसः (प्रथमः)

स्वर्णभागौ च वज्रञ्च मौक्तिकं कान्तलोहकम्। जातीकोषफले रूप्यं सिन्दूररसकांस्यकम्॥२०६९॥ कस्तूरी विद्रुमं चन्द्रमभ्रकञ्चैकभागिकम्। स्वर्णसिंदूरतो भागांश्चत्वारः कल्पयेद्बुधः॥२०७०॥ गुञ्जा द्विगुञ्जं वलं वा सम्यग्वीक्ष्य वलाऽवलम्। यथासात्म्याऽनुपानेन सर्वरोगेषु दापयेत्॥२०७१॥ नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिषूदनः। सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्तितः॥२०७२॥

र. सं, र. सु, रसायने वाजीकरणे च।

भाषा—सोनेकीभस्म २ भाग, वज्र, मोती, कान्तलोह, जावित्री, जायफल, चांदी और कास्यभस्म, रससिन्दूर, कस्तूरी, प्रवालभस्म, कपूर, अभ्रकभस्म १–१ भाग, स्वर्णसिन्दूर ४ भाग लेकर सबको मिलाकर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककी मात्रा बलाबल देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। इसकी बराबर सर्वरोगहर दूसरी औषधि नहींहै॥ ४६९॥

४७० मकरध्वजरसः (द्वितीयः)

सिन्दूरं हेमलोहञ्च देवपुष्पं सचन्द्रकम्। जातीफलं मृगमदञ्चैकत्र परिमर्दयेत्॥२०७३॥ पर्णाम्भसा ततः कुर्याद्वटिकां वल्लसम्मिताम्। सेविता छागपयसा प्रमेहांस्तत्क्षताम्नादान्॥२०७४॥ क्लैब्यं धातुक्षयं कासं जीर्णञ्च विषमज्वरम्। रसोऽयं क्षपयेत्तूर्णं मकरध्वजसञ्ज्ञकः॥२०७५॥

भै. र, प्रमेहपिडिकाऽधिकारे।

टि०—"जातीफल लवङ्गञ्च कर्पूरं मरिचं तथा। प्रत्येकं शाणकं दत्वा सुवर्णस्य च माषकम्॥ अण्डज माषमानञ्च सर्वतुल्यमथेश्वरम्। धत्तूरा मर्दयेत्तन्वे चतुर्गुञ्जा वटी चरेत्॥ एष चन्द्रोदयो नाम रसो वाजीकर परः। हन्तिरोगानशेषांश्च बलवीर्याऽभिवर्धनः॥" इति भैषज्यरत्नावल्यां ध्वजभङ्गाऽधिकारे पाठो दृश्यते सोऽस्मिन्नेवान्तर्भावनीय पृथक् पाठस्याऽनावश्यकत्वात्। प्रमाणवैभिन्न्यस्याऽप्यनावश्यकत्व समप्रमाणेनाऽप्युत कार्यकरत्वात्।

भाषा—रससिन्दूर, सुवर्ण और लोहभस्म, लोंग, शुद्धकपूर, जायफल, कस्तूरी समभाग लेकर पानकेरससे एकरोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे बकरीके दूधसे १–१ गोली सेवनकरनेसे समस्तप्रमेह, षण्ढता, धातुक्षय, कास,जीर्ण और विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरता है॥४७०॥

४७१ मकरध्वजरसः (तृतीयः)

वज्रहेमार्कसूताऽभ्रलोहभस्म क्रमोत्तरम्। सर्वं कन्याद्रवे मर्द्य शाल्मल्याश्च द्रवैस्त्र्यहम्॥२०७६॥ तद्गुडा काचकूप्यन्त वालुकायां त्र्यहं पचेत्। तत्कल्कं मुशलीक्वाथे वंशाक्षीरसंयुतैः॥२०७७॥ दिनैकं मर्दयेत्खल्वे रुद्धाऽन्तर्भूधरे पुटेत्। यामादुद्धृत्य सञ्चूर्ण्य सिताकृष्णात्रिजातकैः॥२०७८॥ समैः समं विमिश्याऽथ गुञ्जैकं भक्षयेत्सदा। मागधी मुशली यष्टी वानरीबीजकं समम्॥२०७९॥ चूर्णं सिताऽऽज्यगोक्षीरैः पलार्द्धं पाययेदनु। कामिनीनां सहस्रैकं रममाणो न मुह्यति॥ सेवनाद् दृढकायः स्याद्रसोऽयं मकरध्वजः॥२०८०॥

रसायन स, रसायने।

टि०—चतुर्थकालखिण्डे उपादानद्रव्याणि वज्रसूताऽभ्रवर्णार्क-तारतीक्ष्णानि क्रमवृद्धानि सन्ति, द्वितीयकालखण्डके च वज्रसूताऽभ्रहे-माक्तीक्ष्णमुण्डानि क्रमवृद्धानि सन्ति एव पञ्चममदनकामदेवेऽपि, तृतीय-मकरध्वजस्य च वज्रहेमार्कसूताऽभ्रलोहभस्मानि सन्ति इत्यत्र आपाततो

बहन्तरं न प्रतीयते परन्तु प्रमाणे भावनासु पाठाऽभावो निक्षेपद्रव्येषु च महदन्तरत्वात्स्वतन्त्रा एव चत्वारः पाठाः स्थापिता इति बोद्धव्यम्।

भाषा—हीरा १ भा , सोना २ भा , तावा ३ भा , पारा ४ भा , अभ्रक ५ भा , लोह ६ भा , इनसबकीभस्मे लेकर १–२ पहर मर्दनकर घीकुमार और सेमलकीछालके रसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरकर ३ रोजतक वालुकायन्त्रमें पाककरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुरालीबेकाढे, सेहुण्ड और आकके दूधसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमेंरख १ पहरकी आच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसके बराबर शक्कर, पीपल और त्रिजात मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती खाकर पीपल, मुसली, मुलहठी, केवाचकेबीज सब समभागका चूर्णकर शक्कर, घी और गायके दूधकसाथ २ तोले लेनेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरताहुआभी स्खलित नहींहोता । चिरकालतक सेवनकरनेसे दीर्घायु होता है ॥४७१॥

४७२ मकरध्वजरसः (चतुर्थ)

लोहं बलिः पारदभस्म सर्वं
तुल्यं घनं गोक्षुरमोचताल्य.।
चतुर्भवं गोस्तनिकाश्वगन्धा-
रसेरिकामर्कटिकावरीभि. ॥ २०८१ ॥
एषां लवान्सर्वसमांश्च खण्डं
स्यात्पञ्चभागं सिकताऽथवाऽपि।
सर्वं वरात्र्यायजलेन घृष्टं
वारान्दश द्वा च तथेक्षुवारि ॥२०८२॥
कर्षप्रमाणं वटकश्च खादे-
दुग्धं ततो विंशतिकर्षमानम्।
पिबेद्बलं स्याद्वनिताशतस्को
विवर्जनीयं मकरध्वजेन ॥ २०८३ ॥

र रा , वाजीकरणे।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारदभस्म १–१ तोला, अभ्रकभस्म, गोखरू, मोचरस, तालमूली, चातुर्जात, बड़ीदाख, असगन्ध, छुहारे, केवाचकेबीज, शतावर ये सब ३–३ माशा लेकर सबका बारीक चूर्णकर इसचूर्णसे पचगुनी खाड मिलाकर त्रिफलाके क्वाथसे आठ, और ईखके रससे बारह भावनाए देकर १–१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर पावभरदूध पीवता बहुतसी स्त्रियोंके साथ यथेष्टरमणकरसकाहै और चिरकालतक वनितासुपानकेसाथ सेवन करनेसे समस्तरोगोंसे मुक्त होसकाहै ॥ ४७२ ॥

४७३ मञ्जिष्ठादियोगः

मञ्जिष्ठा त्रापुषं बीजं जीरकं शतपुष्पिका।
धात्रीफलञ्च दरदं गन्धकञ्च मनःशिला ॥ २०८४ ॥
एतेषां समभागानां चूर्णं टङ्कमितं नरः।
भक्षयेन्मधुना सार्धं पतेत्तस्याऽश्मरी ध्रुवम् ॥२०८५॥

र प्र , अश्मरीरोग।

भाषा—मजीठ, खीरेकेबीज, जीरा, सौंफ, आंवले, शुद्ध शिंगरिफ, गन्धक और मनसिल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशे मधुकेसाथ खानेसे पथरी गिरपड़तीहै ४७३

४७४ मणिपर्पटी

वज्रं मरकतं पुष्पमिन्द्रनीलं सुचूर्णितम्।
रसं द्विगुणगन्धञ्च कज्जलीं कारयेद्बुधः ॥ २०८६ ॥
द्रावितां लोहपात्रे तु पर्पटयाकारतां नयेत्।
निर्गुण्डी तुलसीशिग्रुधत्तूररविवह्निभिः ॥ २०८७ ॥
रसैर्व्योपवरारम्भासुरसैरपि भावयेत्।
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि सप्तधा परिभावयेत् ॥२०८८॥
एवं सिद्धो रसो नाम्ना विख्याता मणिपर्पटी।
कासश्वासक्षयोन्मादपाण्डुमौढ्यतमोभ्रमान् ॥२०८९॥
सन्निपातज्वराऽजीर्णवातव्याधिभगन्दरान्।
नासिकागलजान्रोगानपतन्त्रविसूचिका. ॥
गुञ्जाप्रमाणतो हन्ति तत्तद्रोगानुपानकैः ॥ २०९० ॥

र र स , र र को , र क ल र को , नासारोगे।

भाषा—हीरा, पन्ना, पुखराज और नीलमकीभस्में, शुद्ध पारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर बेरकीलकड़ीकेकोयलोंपर लोहेके पात्रमें गलाकर भस्मोंको मिलादे । फिर ताजेगोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर डालकर दूसरेकेलेकेपत्तेसे ढककर तानेगोबरसे दबादे स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर टुकड़ा कज्जलीबनाय सम्भालू, तुलसी, सहिंजन, धतूरा, आक, चित्रक, त्रिकटु, त्रिफला, केलाकन्द इनके स्वरसोंसे १–१ भावना देनेकेबाद अदरखके रसकी ७ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, उन्माद, नपुंसकता, जड़ता, तम, भ्रम, सन्निपात, ज्वर, अजीर्ण, वातव्याधि, भगन्दर, नासिका और गलेकेरोग, अपतन्त्रक, हैजा, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ४७४

४७५ मण्डूरचूर्णम्

श्लक्ष्णचूर्णञ्च मण्डूरं गोमूत्रे पाचयेद्दिनम्।
वज्रवल्ल्या रसे. पेष्यं चित्रकुड्मलसंयुतम् ॥
भक्षितं टङ्कमात्रञ्च ह्रासाख्यं क्षयथुञ्जयेत् ॥२०९१॥

र र , ध रा , वै चि , शोथाऽधिकारे।

टि०—ध रा , वै चि वज्रवल्लमण्डूरमिति नाम, चित्रकुड्मलयुत मित्यस्य स्थाने त्रिफलाक्वाथमनुशृण्वित पाठ दृश्यत तत्र कुड्मल क्षर न क्वापि हानि ।

भाषा—मण्डूरभस्मको एकदिन गोमूत्रमें पकाकर हड़जोड़के रससे १ रोज मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४माशेकी मात्रा १ तोला चित्रकके दूधके साथ देनेसे यह अशोथको दूरकरताहै ॥ ४७५ ॥

४७६ मण्डूरपाकः

पुरातनं वर्षशते व्यतीते
किट्टं समानीय पलानि चाऽष्टौ ।
त्रि.सप्तवेलं ज्वलनेऽतितप्तं
मूत्रे गवां सिक्तमथो विचूर्ण्य ॥ २०९२ ॥
प्रस्थार्द्धमानेन गवां जलेन
सार्द्धं ततः पक्कमतीव गाढम् ।
भाण्डात्समुत्तार्य कटाहकान्ते
संस्थाप्य तापे परिशोषणीयम् ॥ २०९३ ॥
मध्ये प्रदेया त्रिफला समाना
तस्मिन् कृते सूक्ष्मपरागरूपे ।
मूत्रेण पिण्डं विपुले शरावे
युग्मे विनिर्माय विमोचनीयम् ॥ २०९४ ॥
द्रव्यं ततः कर्पटमृत्तिकाभ्यां
संवेष्ट्य सन्धौ छगणैः कृतेऽग्नौ ।
यामत्रयञ्च ज्वलमानवह्नौ
क्वाथेन तेन त्रिफलोद्भवेन ॥ २०९५ ॥
संसिच्य संसिच्य तथा विधेयं
धूमो यथा गच्छति याति शोषम् ।
पश्चात् समाकृष्य विचूर्ण्य मध्ये
क्षेप्यं चतुर्थांशविनष्टलोहम् ॥ २०९६ ॥
पलैकमात्रां त्रिफलाजलेन
ततोऽप्सु निष्क्वाथ्य चतुर्गुणासु ।
क्वाथं समादाय जलार्द्धभागं
किट्टं कटाहे परिमोचनीयम् ॥ २०९७ ॥
चूर्णीकृतं तं परिभावनीयं
रसेन भूपस्य दिनं समग्रम् ।
मुण्ड्या द्वितीये दिवसे रसेन
शार्दूलनीरेण दिने तृतीये ॥ २०९८ ॥
पाकादमुष्मात्प्रथमप्रपाको
मण्डूरनाम्ना प्रथितो धरायाम् ।
नागार्जुनेन प्रकटीकृतोऽयं
हिताय लोकस्य निपीडितस्य ॥ २०९९ ॥
शोफामपाण्ड्वानलमन्दतायां
भगन्दरे कृच्छ्रगुदार्त्तिशूले ।
प्लीहाभिवृद्धौ क्रिमिकण्ठरोगे,
मण्डूरपाकः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ २१०० ॥

र.(मा), पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—कमसेकम १०० वर्षपुराना मण्डूर ८ पल लेकर बहेड़ेके कोयलोंमें गरमकर २१ बार गोमूत्रमें बुझाकर बारीकचूर्ण कर आधसेर गोमूत्रके गाढ़ाकरके और गाढाहोनेपर कान्तलोहकी कढ़ाहीमें डालकर धूपमें सुखाले फिर इसके बराबर त्रिफलाका-चूर्ण मिलाकर गोमूत्रमें मर्दनकर गोलाबनाय बोचसावोंमें बन्द कर कपड़मिटी देकर ३ पहर कण्डोंकी अग्निमें गरमकर त्रिफलाके काढ़ेमें बुझादे । इसतरह कईबार करके इसमें चौथाभाग लोह भस्म मिलाकर एकपलत्रिफलाके अर्द्धावशेष काढेमें डालदे और अग्निपर घटाकर क्वाथको जलादे । फिर अमिलतास, गोरख-मुण्डी, और चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज़ भावनादेकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे ९ रत्तीतककी-मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे शोफ, आम, पाण्डु, मन्दाग्नि, मूत्रकृच्छ्र, शूल, बवासीर, भगन्दर, प्लीहा, क्रिमि और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

४७७ मण्डूरयोगः (प्रथमः)

शतवर्षं समादाय लोहसिङ्घाणकं शुभम् ।
पलानि पञ्च तच्चूर्णं तुल्यक्षौद्रसमन्वितम् ॥ २१०१ ॥
भल्लातकाऽस्थ्यष्टशतं विनिक्षिप्य विदाहयेत् ।
तदक्षमात्रं तक्रेण पीत्वा जीर्णे च तक्रभुक् ॥
एवं लभेत सप्ताहात्पाण्डुरोगी सुखं परम् ॥ २१०२ ॥

ग.नि., पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षका पुराना लोहेकाकिट्ट ५ पल लेकर कूट डाले फिर इसकी बराबर मधु और भिलावे ८०० नग डालकर जलादे । स्वाङ्गशीतल्होनेपर कूटछानकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ तोला छाछकेसाथ पीकर छाछहीपर रहनेसे सातदिनमें पाण्डुरोग नष्टहोताहै ॥ ४७७ ॥

४७८ मण्डूरयोगः (द्वितीयः)

क्षुद्राद्वयञ्च निर्गुण्डी भूगन्धी चिञ्चिका तथा ।
अर्ककार्पासभृङ्गाह्वभृङ्गराजविषाणि च ॥ २१०३ ॥
तोयं पर्पटकं ब्राह्मी सूर्यमूर्वे च कारवी ।
एरण्डोऽतिविषा शुण्ठी चित्राऽपामार्गमत्स्यदृक् ॥
एकैकपलमात्रेण गोमूत्राऽऽढकपाचितम् ।
मण्डूरं जीर्णपाकञ्च क्षिपेद्रम्यकरण्डके ॥ २१०५ ॥
भुक्तोत्तरमिदं खादेत्कामलापाण्डुशोफजित् ।
श्वासकासक्षयहरं मण्डूरं सर्वरोगजित् ॥ २१०६ ॥

र. क. यो., पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—दोनों कटेरिया, निर्गुण्डी, मुलहठी, कुंदरू, सफेदआक, कपास, भंगरा, कालाभंगरा, समस्तविष, सुगन्धबाला, पित्तपापड़ा, ब्राह्मी, कालमाक, मरोड़फली, कलौंजीरी, एरण्ड, अतीस, सोंठ, चित्रक, अपामार्ग, मछेछी ये सब १-१ पल लेकर जवकुटकर ४ सेर गोमूत्रमें चतुर्थांशावशेष काढाकरे, फिर छानकर उसमें १०० वर्षपुराने मण्डूरका चूर्ण १ पल डालकर पकावे । [illegible] जलजानेपर मण्डूरका बारीकचूर्णकर रखले । भोजनकेपश्चात् २-२ माशे खानेसे कामला, पाण्डु, सूजन, श्वास, कास, क्षय वगैरह समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

४७९ मण्डूरयोगः (महान्) (विजयानन्दमण्डूरम्) ३

कुण्डलीचित्रकाऽऽर्कमूलं शुभसुनर्नवाम् ।
त्रिफला लोहकिट्टञ्च पृथग्दशपलं भवेत् ॥ २१०७ ॥

गोमूत्रद्रोणसंयुक्तं पचेत्पादावशेषितम्।
भृङ्गराजरसप्रस्थं मोरटस्वरसं तथा॥ २१०८॥
हरिद्राऽऽर्द्रकयोश्चापि गोमयस्वरसन्तथा।
त्र्यूषणञ्च विडङ्गानि त्रिफला चित्रकं तथा॥ २१०९॥
देवदारु हरिद्रे द्वे पिप्पलीमूलमेव च॥
हिङ्गुचव्यवचाः पाठा कालजीरकमेव च॥ २११०॥
एषां हि कार्षिकान्भागांश्चूर्णं कुर्यात्पृथक्पृथक्
मण्डूरं पेषितं श्लक्ष्णं शुद्धमञ्जनसन्निभम्॥ २१११॥
एतद्गोमूत्रसंयुक्तं शनैः मृद्वग्निना पचेत्।
समान् प्रकुर्याद्वटकान् प्रभाते देवतापरः॥ २११२॥
उपयुञ्जीत तक्रेण पाण्डुरोगं भगन्दरम्।
पञ्चकासाभिहन्त्याशु मुखदन्तरुजो हरेत्॥ २११३॥
अर्शांसि कामलां शोफमुदरञ्च विनाशयेत्।
महामण्डूरकं ह्येतदात्रेयानुमतं शुभम्॥ २११४॥

र.क.यो., वै चि, पाण्डुरोगे।

भाषा—गिलोय, चित्रक, आक और पुनर्नवाकी जड, त्रिफला, पुरानामण्डूर, ये सब १०–१० पल लेकर जवकुटचूर्णकर १६ सेर गोमूत्रमें पकावे। चतुर्थांश काढा रहनेपर छानले परन्तु मण्डूरके टुकडोंको अलग छाटकर रखले। फिर काढेको कढाही-में डालकर मण्डूरको सुरमेकेसदृश बारीककर उसमें डालकर भंगरा, लताकरंज, हल्दी, अदरख और गोबरस १–१ सेर रस, त्रिकटु, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, देवदारु, दोनोंहल्दी, पिपलामूल, हींग, चव्य, वच, पाठा, कालाजीरा ये प्रत्येक १–१ तोले लेकर अलग २ चूर्णकर पूर्वकाढेमें डालदे ओर मन्दाग्निसे पकाकर जलको जलादे। फिर नीचे उतारकर १–२ दिन मर्दनकर शीशीमें रखले अथवा गोमूत्रमें घोटकर ३–३ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल इष्टदेवताका स्मरणकर छाछकेसाथ लेनेसे पाण्डु, भगन्दर, पांचप्रकारके कास, मुखदन्तरोग, कामला, शोथ और उदररोग ये सब नष्टहोतेहैं॥ ४७९॥

४८० मण्डूरयोगः (चतुर्थः)

मण्डूरस्य रजो लोहं भृङ्गराजरसाऽऽप्लुतम्।
लोहघृष्टं रजो यावत् कृष्णाचूर्णाऽर्द्धसंयुतम्॥ २११५॥
द्वाभ्यां तुल्यगुणोपेतं सद्यग्रहणीहरम्।
आमशूलाऽम्लपित्तघ्नं बलपुष्टग्निकारकम्॥ २११६॥
कामलापाण्डुरोगघ्नं पथ्यं पाचनदीपनम्।
भेषजं चामवातेषु हितं तक्रेण केवलम्॥ २११७॥

र क, शूले।

भाषा—मण्डूर और लोहभस्म समभाग लेकर भंगरेके स्वरसमे १–२ दिन लोहेके वर्तनमें लोहेकेडण्डेसे रगडकर सुखावे। फिर इससे आधा पीपलका चूर्ण और सबकी बराबर पुरानागुड मिलाकर आधे आधे तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तक्र वगैरहके साथ देनेसे, सद्यग्रहणी, आम, शूल, अम्लपित्त, मदाग्नि, कामला, पाण्डु, आमवात इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै। आमवातमें केवल छाछपर रखना॥ ४८०॥

४८१ मण्डूरयोगः (पंचः)

अतिरक्तं यदाऽर्शोभ्यो निपतत्यतिपीडनात्।
दृश्यते रक्तमत्यन्तं लोहकिट्टं तदाऽऽनयेत्॥ २११८॥
गवां मूत्रेण तत्पक्त्वा ततस्तत्सूक्ष्मचूर्णितम्।
अतिसूक्ष्माञ्चसम्पिष्य त्रिफलां कटुकान्विताम्॥२११९
किट्टस्याऽर्द्धेन सम्मिश्र्य चूर्णं शर्करया युतम्।
दीयते त्रिदिनादूर्द्धं रक्तं तिष्ठति नाऽन्यथा॥ २१२०॥
मुद्गान्नञ्च मसूरान्नं दीयते पथ्यभोजनम्।
अर्शांसि प्रशमं यान्ति कार्श्यं चैवाऽतिवेगतः॥
अत्यन्तं बलमाप्नोति परमां रतिमश्नुते॥ २१२१॥

र का, अर्शोऽधिकारे।

भाषा—रक्तार्शमें दवजाने या कटजानेकी वजहसे जब अत्यन्तरक्तआनेलगे तब गोमूत्रमें शुद्धकियेहुए मण्डूरका अत्यन्त बारीकचूर्णकर त्रिफला और कुटकीकाचूर्ण मण्डूरसे आधेप्रमाणमें मिलाकर सबकीबराबर शक्कर मिलाय रखछोडे। इसमेंसे ३–३ माशेकी मात्रा वनगोभीके स्वरस, रसौत अथवा छाछके साथ देनेमें और केवल छाछपर रखनेसे ३ दिनमें रक्त बन्द होजाताहै। मूंग, मसूर खानेको देना। इसके सेवनसे सबतरहके बवासीर और कृशता नष्टहोतीहै॥ ४८१॥

४८२ मण्डूरयोगः (सप्तमः)

दग्ध्वाऽक्षकाष्ठे र्मलमायसन्तु
गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान्।
विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण
कुम्भाह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति॥ २१२२॥

मु स, यो.म, वै चि, वृ मा, ग नि, नि. र, भा प्र, कुम्भकामलायाम्।

टि०—यो म, च द, एतयो " मण्डूर शाधित पत्रीं लेहना वा गुडेन तु। भक्षयन्मुच्यते शूलात्परिणामसमुद्भवात्॥ " इति पाठो दृश्यते सोऽस्यैवयोगस्य प्रपञ्चोऽस्ति। योगमहार्णवीयगोमूत्रमण्डूरस्याऽप्यत्रै वान्तर्भाव।

भाषा—सौवर्षके पुराने मण्डूरको बहेडेकीलकडीके कोयलोंमें लालकरके आठवार गोमूत्रमें बुझाकर बारीक चूर्णकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ चाटनेसे बहुतशीघ्र कुम्भकामला और पाण्डुरोगको यह दूरकरताहै॥ ४८२॥

४८३ मण्डूरयोगः (अष्टम)

मण्डूरचूर्णमधुपिप्पलीना-
मेलासितापत्रजगोस्तनीनाम्।
चूर्णं समांशं मधुदुग्धयुक्तं-
क्षीणत्वजीर्णज्वरदाहहन्तृ॥ २१२३॥

रसायनस., जीर्णज्वरादौ।

भाषा—मण्डूरभस्म, मुलहठी, पीपल, इलायची, शक्कर, पत्रज, दाख, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे। इसमेंसे

२–३ मासे मधु और दूधकेसाथ सेवनकरनेसे कृशता, जीर्ण ज्वर और दाह इनको यह नष्टकरताहै ॥ ४८३ ॥

४८४ मण्डूररसायनम्

मण्डूरं शाम्बुकं भस्म गन्धं खण्डघृतान्वितम् ।
रोगान्हन्ति बलं धत्ते शलक्ष्णं दीपनं परम् ॥ २१२४ ॥

र शि, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—मण्डूर और घोंघाकीभस्म, शुद्धगन्धक सब समभाग मिलाकर घोटकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा लेकर १–१ तोले घी और शक्करकेसाथ मिलाकरखानेसे यह शूल और मन्दाग्निको नष्टकर बलको उत्पन्नकरताहै ॥ ४८४ ॥

४८५ मण्डूरलवणम्

कृत्वाऽग्निवर्णं मलमायसन्तु
मूत्रेऽभिषिञ्चेद्बहुशो गवाञ्च ।
तत्रैव सिन्धूत्थसमं विपाच्यं
निरुद्धधूमञ्च विभीतकाग्नौ ॥ २१२५ ॥
तक्रेण पीतं मधुनाऽथवाऽपि
मण्डूरमिश्रं लवणं प्रयुक्तम् ।
पाण्ड्वामयिभ्यो हितमेतदस्मा-
त्पाण्ड्वामयघ्नं नहि किञ्चिदन्यत् ॥२१२६॥

नि र, र (मा), वृ यो त, चि क, यो र, टो, वै चि, सु स., पाण्डुरोगे ।

टि०—सुश्रुते विभीतकवह्निनिर्वापितगोमूत्रे मण्डूरस्य निर्वापो विहितः, अत्र तु मण्डूरनिर्वापिते गोमूत्रे विभीतकवह्निनिर्वाप इति विशेषः, तत्र सुश्रुतीयशैली भद्रतरा प्रतिभाति क्षारयुक्तगोमूत्रे निर्वापेण मण्डूरस्य शीघ्रं भस्मीभावात् । चिकित्सावल्यिाया विभीतकलवणमिति नाम स्थापितम् ।

भाषा—सौ वर्षके पुराने मण्डूरको बहेडेकेकोयलोंमें लालकर गायकेमूत्रमें चूर्णहोनेतक बुझावे । फिर इसकी बराबर सेंधा नमकमिलाय सबसे चौगुना गोमूत्र डालकर हंडीमें बन्दकर बहेडेकी लकडीसे ४ पहरकी अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ माशा छाछ अथवा मधुकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै । पाण्डुरोगियोंकेलिये इससे उत्तम अन्य औषधि नहींहै ॥ ४८५ ॥

४८६ मण्डूरवटकः (प्रथम.)

त्र्यूषणं त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकौ ।
दार्वी त्वङ्माक्षिकोधातु ग्रन्थिकं देवदारु च ॥२१२७॥
एषा द्विपलिकान्भागाश्चूर्णं कृत्वा पृथक्पृथक् ।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाच्छुद्धमञ्जनसन्निभम् ॥ २१२८ ॥
मूत्रे चाऽष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तु प्रक्षिपेत्ततः ।
उदुम्बरसमान्कुर्याद्वटकास्तान्यथाऽग्नि च ॥ २१२९ ॥
उपयुञ्जीत तक्रेण सात्म्यं जीर्णे च भोजयेत् ।
मण्डूरवटका ह्येते प्राणदाः पाण्डुरोगिणाम् ॥२१३०॥
कुष्ठान्यजरकं शोफमूरुस्तम्भकफामयान् ।
अर्शांसि कामलां मेहं प्लीहानं नाशयन्ति च ॥२१३१॥

च स, शृ मा, र का, ध, भे र, रससागर, भा प्र, टो, वै चि, र क यो, च द, वृ यो त, ग नि चि र, र प्र, रसायनस, अ हृ, नि र, र ग दी, वै द, र को, अ स, र का, ध रा, र म मा, र र स, चि सा, र र, र स, यो र, वै. र, र को, र सु, र चं, ग नि, वै वि, चि र भ, वै क, यो म, चि क, पाण्ड्वधिकारे ।

टि०—अस्य मण्डूरवटकस्य मण्डूरवटक मण्डूरप्रथमवटक हस्तमण्डूर, त्र्यूषणादिमण्डूर इति नामानि गृहीतानि । तत्र मण्डूरवटक, मण्डूरप्रथमवटक, त्र्यूषणादिमण्डूरेषु मण्डूर समस्तद्रव्याद् द्विगुण, हस्तमण्डूरे च समम् । मण्डूरवटके माक्षिकस्य योगोऽस्ति । हस्तमण्डूरमण्डूरवटकवद् कथं माक्षिक न दृश्यते, माक्षिकनिष्कासनस्य प्रयोजनं न प्रतिभाति ।

भाषा—त्रिकुटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चव्य, चित्रक, दारुहल्दी, तज, सोनामाखी, पिपलामूल, देवदारु, य सब २–२ पल लेकर सबका अलग २ चूर्णकररक्खे । फिर एकदम सुरमाके सदृश पीसेहुए सबसे द्विगुणमण्डूरको अठगुने गोमूत्रमें पकाकर ऊपरके चूर्णको डाल १–१ तोलेके गोले बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोला छाछकेसाथ देनेसे और जीर्णहोनेपर सात्म्यभोजनकरानेसे पाण्डु, कुष्ठ, अजीर्ण, शोथ, ऊरुस्तम्भ, कफविकार बवासीर, कामला, प्रमेह और प्लीहा इनसबको ये नष्टकरतेहैं ॥ ४८६ ॥

४८७ मण्डूरवटकः (द्वितीय.)

लोहस्य किट्टं त्रिफलानिषिक्तं
पुटेश्च पक्वं त्रिफलोदकेन ।
कटुत्रयं चव्यफलत्रयञ्च
तत्तुल्यमानञ्च गुडं पुराणम् ॥ २१३२ ॥
गोमूत्रकञ्च द्विगुणं प्रगृह्य
कृशानुतोयेन विपाचयेच्च ।
पिण्डत्वमायाति हि यावदेव
ततस्तु सास्नं विनिवेश्य भाण्डे ॥२१३३॥
ततोऽक्षमात्रं परिसेवणीयं
निहन्ति शूलं परिणामजञ्च ।
दुर्नामरोगञ्च कफञ्च मेहं
श्वासञ्च कासं ग्रहणीं निहन्ति ॥२१३४॥

र दी, पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षसे पुराने मण्डूरको बहेडेके कोयलोंमें तपाकर त्रिफलाके काढेमें बुझाबुझाकर चूर्णकरके त्रिफलाके काढेमें घोटकर अवतकभस्म न होजाय तवतक पुटदे, फिर त्रिकटु, चव्य, त्रिफला समभाग, इनसबकी बराबर मण्डूरभस्म और पुरानागुड डालकर सबसे दूने गोमूत्र और चित्रककेक्वाथमें डालकर पकावे जब गाढाहोजाय तब उतारकर चिकनेबर्तनमें रखछोडे । एक महीनेके बाद इसमेंसे १–१ तोला खानेसे परिणामशूल, बवासीर, कफप्रमेह, श्वास, कास, और सङ्ग्रहणी येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४८७ ॥

४८८ मण्डूरवटी

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ताखदिरमूलकम् ॥
कणा शुण्ठी यवक्षारं पञ्चानां चूर्णितं समम ॥२१३५॥
चूर्णतुल्यन्तु मण्डूरं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
तत्तुल्ये च गवां क्षीरे पचेन्मृद्वग्निना शनैः ॥ २१३६ ॥
पिण्डितं कोलमात्रं तद्भक्षयेच्छूलनुद्भवेत् ।
प्रातर्मध्यन्दिने रात्रौ भक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥ २१३७ ॥

यो. म., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—नागरमोथा, खैरकीजड़, पीपल, सोंठ, यवखार, ये सब समभाग, मण्डूरभस्म सबके बराबर लेकर सबका बारीक-चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । घनहोजानेपर बराबरके दूधमें डालकरपकावे । जब गोलीबनानेलायक होजाय तब ६-६ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबह, शाम और मध्याह्नमें खानेसे समस्तशूल नष्टहोतेहैं ॥ ४८८ ॥

४८९ मण्डूराद्यवलेहः

मण्डूरलोहाऽग्निविडङ्गपथ्या
व्योषांशकः सर्वसमानताप्यः ।
मूत्रे भृतोऽयं मधुनाऽवलेहो
पाण्ड्वामयं हन्त्यचिरेण घोरम् ॥ २१३८ ॥

ग. नि , यो. म , सु सं., पाण्डुरोगे।

भाषा—मण्डूर और लोहभस्म, चित्रकमूल, विडङ्ग, हर्रे, त्रिकटु सब समभाग, सोनामाखी सबकी बराबर लेकर सबका बारीक चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकाकर अवलेह तैयार करे । इसमेंसे ३-३ माशेकी गोलियां बनाकर उचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह बहुतहीशीघ्र पाण्डुरोगको नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

४९० मण्डूरारिष्टम्

मण्डूरस्य तु शुद्धस्य तुलाऽर्द्धं परिकल्पितम् ।
तद्वल्लोहस्य पत्राणि तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ २१३९ ॥
गुडाज्जीर्णात्तु पञ्चाशत्कोलप्रस्थत्रयं तथा ।
त्रिकुम्भचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥२१४०॥
पिप्पलीनां विडङ्गानां कुडवं कुडवं पृथक् ।
शाठ्याऽपि त्रिफलाप्रस्थान् जलद्रोणे विपाचयेत २१४१
अर्द्धमासस्थितो धान्ये पेयोऽरिष्टः प्रमाणतः ।
दोषानुभयतो न्यस्य पाण्डुरोगं नियच्छति ॥ २१४२ ॥
क्रिमीनर्शांसि कुष्ठञ्च कासश्वासकफामयान् ।
मण्डूरारिष्टको ह्येषः शोफपाण्ड्वामयापहः ॥२१४३॥

ग नि , यो र , शोफपाण्ड्वामये ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, लोहके पत्र अथवा बारीकचूर्ण और पुरानागुड़ ५०-५० पल, जङ्गलीबेर ३ सेर, दन्तीमूल और चित्रकका चूर्ण २-२ पल, पीपल और विडङ्ग ४-४ पल, त्रिफला ३ सेर लेकर १६ सेर जलमें पकावे । चतुर्थांश जल-जानेपर उतारकर चिकनेबर्तनमें बन्दकरके अनाजकी राशिमें दबादे । १५ दिनबाद यह अरिष्ट तैयार होजायगा । इसमेंसे १-१ अथवा २-२ तोले सुबहशाम अथवा भोजनकेबाद पीनेसे पाण्डु, क्रिमि, अर्श, कुष्ठ, कास, श्वास, कफरोग और सूजन ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ४९० ॥

४९१ मदनकरीगुटिका

त्वक् पत्रं केशरञ्चैला चन्द्रभा जातिपत्रिका ।
कणा गोक्षुरकं जातीफलञ्चाऽभ्रकवङ्गकौ ॥ २१४४ ॥
लोहचूर्णन्तु टङ्कं प्रत्येकं कारयेद्बुधः ।
चतुःपलं मधु प्रोक्तं तथा चाऽन्यानि निःक्षिपेत् २१४५
आकारकरभश्चैव रोचनां कपिकच्छुजम् ।
गुन्द्रा मस्तङ्गिकश्चैव मुशली मरिचानि च ॥ २१४६ ॥
लवङ्गसहितं ह्येतन्सर्वं टङ्कैकसम्मितम् ।
भृङ्गा सार्धपला प्रोक्ता सम्यग्धौताऽर्द्धभर्जिता २१४७
सिता पञ्चपला प्रोक्ता काल्पेया प्रकीर्तिता ।
सर्वेषाञ्च सुजात्यानां सूक्ष्मचूर्णं विधाय च ॥२१४८॥
मधृष्णं कारयेत्तेषु सर्वं चूर्णं विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेद्विजपात्रं यदा गन्धः प्रजायते ॥ २१४९ ॥
शतपत्रीयपानीयं जातीतैलं समं क्षिपेत् ।
मानमात्रं प्रदातव्यं मङ्गां सम्मर्दयेत्ततः ॥ २१५० ॥
लेह्ये च दरदं देयं पुनश्चूर्णं सितां ततः ।
कर्पूरमृगनाभिभ्यां प्रतिवापं प्रदापयेत् ॥ २१५१ ॥
एतन्मदनकरी रम्या विशेषाद्धातुवर्द्धिनी ।
कामिनां कामदा नित्यं विशेषाद्गुणदायिनी ॥ २१५२ ॥

र. कु , वाजीकरणे

भाषा—तज, पत्रज, नागकेसर, इलायची, कचूर, जाविती, पीपल, गोखरू, जायफल, अभ्रक, वङ्ग और लोहभस्म ४-४ माशे, मधु ४ पल, अकलकरा, गोरोचन, कैंचाके बीज, बबूलका गोंद, मस्तगी, मुसली, मरिच, लौंग १-१ टङ्क, धोई अधभुनी भांग १॥ पल, कालपीमिश्री ५ पल लेकर सबका कपड़छान चूर्णकरे । गोंदको घीमें मन्द आंचपर सेककरचूर्णकरे । मस्तगीको कपड़ेमें बांध अत्युष्णपानीमें २-२ गोते देकर निकालकर चूर्णकरके मिलादे । फिर सब दवाओंके बराबर गुलाबजल और जायफल या जावित्री का तेलदेवे । पहिले मिश्री, शहद और गुलाबजलकी दोतारकी चाशनीकरे और शुद्धकियाहुआ शिंगरफ १ टंक बारीकचूर्णकर मिलादे । इसकेबाद तेलको मिलाकर अन्य औषधोंको मिलादेवे । ठंढाहोनेपर शुद्धकपूर और कस्तूरी ३-३ माशे मिलाकर ३-३ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूध और शक्करकेसाथ लेनेसे श्वास, काम, सङ्ग्रहणी, मन्दाग्नि, धातुक्षीणता, उन्माद, नपुंसकत्व येसब नष्टहोतेहैं । रतिसमयसे २ घण्टे पहिले लेकर दुर्वानेसे वीर्यस्तम्भन और वीर्यवृद्धि होतीहै । यदि गोली स्तम्भनार्थ ली हो तो उसवक्त दूधके सिवाय कोई चीज न खावे ॥ ४९१ ॥

४९२ मदनकामदेवरसः (प्रथम)

अथाऽन्य सम्प्रवक्ष्यामि कामवृद्धिकर परम् ।
रागराजप्रशमन बलपुष्टिविवर्धनम् ॥ २८०३ ॥
अक्षीणशुक्रकरण वाजीकरणमुत्तमम् ।
प्रागुक्तेन विधानेन दशधा पातित रसम् ॥ २१५४ ॥
स्वेदितं प्राप्त्युक्त्यैव तस्य चापादयेत्सुरसम् ।
खल्वे लोहमये स्थाप्यो रसेन्द्रो वह्नितापिते ॥ २१०० ॥
तप्तेन स्नाहजेनैव मर्दक्न प्रमर्दयेत् ।
सिंही नियासयोगेन तथा फेञ्जुलिके समम् ॥ २१०६ ॥
एकविंशदिन यावद्द्वारायमतन्द्रित ।
खल्व तप्त सदा कार्यं शीते दोषस्य दर्शनात् ॥ २१०७ ॥
सर्वदोषा रस कार्या रसाद्गुणमभीप्सुना ।
एव जातमुखे सूते बीजं दद्यात्कलांशकम् ॥ २१०८ ॥
सौवर्णं स्वेदयेद्दोलायन्त्रे च त्रिदिनं रसम् ।
पटुक्षाराम्लवर्गैर्लिप्त पत्रेऽथ भूर्जके ॥ २१०९ ॥
रस दत्वा बहिर्दद्याद् दृढं वस्त्र चतु पुनः ।
सूत्रेण पोट्टला बद्धा दोलायाञ्च नियोजयेत् ॥ २१६० ॥
अम्लकाञ्जिकयोगेन स्वेदयेद्दिवसत्रयम् ।
सक्षारमूत्रज चाऽथ चतुर्थऽह्नि समुद्धरेत् ॥ २१६१ ॥
ग्रासस्तु जायते सर्वोऽप्यथ स्वेदनमर्दने ।
पूर्वनष्टिर्धीनाऽन्न यावद्ग्रास सुनायति ॥ २१६२ ॥
तत सूत निषेद्याऽथ यन्त्रे क्ष्माधरसञ्ज्ञके ।
पूर्वोक्तयुक्त्या दैर्येत जारयेत् षड्गुण बुध ॥ २१६३ ॥
॥ सूत मर्दयेत्खल्वे काकमाचीरसे बुध ।
तारबीज पादभाग दत्वा किञ्जुल्के रसे ॥ २१६४ ॥
यावत्पिष्टि र्भवेत्सूते मर्दयेत्तमनारतम् ।
सवाताया तथा पिष्ट्या दिनपञ्चकमर्दनम् ॥ २१६० ॥
काकाकिञ्जुल्के नीरेस्तत कुर्वीत गोलकम् ।
काकाकिञ्जुल्कान् पिष्ट्वा गोल सम्यक् प्रवेष्टयेत् २१६६
विन्यसेद्गोलकं मूषामध्ये तद्वक्त्ररोधनम् ।
कृत्वा भूधरयन्त्रस्य मूषा सम्पाचयेत्तत ॥ २१६७ ॥
करीषाग्नि तता दद्यात्त्रिदिन स्वेदमाचरेत् ।
उद्धृत्य मूषा तत्र ग्राह्यसेन्द्रं तारपत्रक ॥ २१६८ ॥
तवराजस्य मध्ये तं रसेन्द्रं विनिवेशयेत् ।
तत सूतं प्रयुञ्जीत तवराजेन संयुतम् ॥ २१६९ ॥
विचूर्ण्य पयसाऽर्द्धन्या गर्भिण्या वल्लकद्वयम् ।
अनुपानञ्च तदूर्ध्वं पिबेच्छर्करया समम् ॥ २१७० ॥
अम्ले वर्ज्यञ्च सक्षार स्नानञ्च विदाहि यत ।
कटुकञ्च कषायञ्च सर्वमव विवर्जयेत् ॥ २१७१ ॥
भुञ्जीत मधुर शाल्यन्नाराय वदरीफलम् ।
पालस्य नारिकेलस्य मज्जान सम्प्रभक्षयेत् ॥ २१७० ॥
रण्डयुत नारिकेलीजलं पयश्च पानसम् ।
एवं पक्वमपक वा रसायाविवृद्धिदम् ॥ २१७२ ॥
इत्येवमादि यद्द्रव्यं तत्सर्वं भक्षयेद्बुध ।
एव ससेव्यमानस्य रसेन्द्रस्य गुणाञ्छृणु ॥ २१७३ ॥
क्षयरोग क्षय याति नष्टशुक्रश्च शुक्रवान् ।
अशीतिवर्षदेश्यो वा जराजर्जरितोऽपि वा ॥ २१७० ॥
ऊर्ध्वलिङ्ग सदा तिष्ठेद् द्रावयेद्वनिताशतम् ।
अप्रहीणबला ग्लानिवर्जित सम्प्रहर्षवान् ॥ २१७६ ॥
अस्याऽनुपान वक्ष्यामि शास्त्रोक्तं कामवर्धनम् ।
वल्लद्वय शर्करया स्वीकृत्याऽऽदौ रसं तत ॥ २१७७ ॥
विदारीकन्दचूर्णञ्च मधुयुक्तं च मापकम् ।
तवराजयुतानेतान् गोदुग्धेन सम पिबेत् ॥ २१७८ ॥
अक्षीणरेता जायेत यदि स्त्रीणा शतं व्रजेत् ।
शतावरीगोक्षुरश्चाद्विस्तुष मापचूर्णकम् ॥ २१७९ ॥
निस्तुषास्तु तिलान्खण्ड सुवर्णेक्षुरस तथा ।
रात्रौ पिबेद्य सूतेन्द्रमेतै द्रव्यै सम तत ॥ २१८० ॥
कर्पूरं लेहतो दत्वा स्यात्स्त्रीशतकामुक ।
मध्याज्ययुक्त स्वरसे भावितञ्च विदारिजम् ॥ २१८१ ॥
शतश कपिकच्छूजं बीजञ्च समभागिकम् ।
समशर्करया युक्त गोदुग्धेन सम पिबेत् ॥ २१८२ ॥
अक्षीणरता स पुमान् जायते नाऽत्र संशय ।
मातुलुङ्गस्य बीजानि गोक्षुरेण विभावयेत् ॥ २१८३ ॥
एकविंशतिवारास्तु निष्पाद्याऽथ रसेश्वरम् ।
विनिष्पिष्य सुखोष्णेन गोदुग्धेन समं पिबेत् ॥ २१८४ ॥
एकविंशद्दिन यावज्जायेत पूर्णवीर्यवान् ।
जायते नाऽत्र सन्देहा रसेन्द्रस्य प्रभावत ॥ २१८० ॥
सूतेन्द्रं सेवते यस्तु न स्यात्तस्याऽङ्गनाशनम् ।
न कामेन महाव्याधे र्नरो योऽपि पीड्यते ॥ २१८६ ॥
एष सूतवर भाक्त शुक्रवृद्धिकर पर ।
मदनाय कामदेवो रस परमदुर्लभ ॥ २१८७ ॥
रसार्ण वाजीकरणे ।

भाषा—अपथ्यानुयोगरहित अथवा निगरिका निकाला हुआ पारा लेकर हल्दी ईट घृतकुमार सब समभाग लेकर पारे पारके इसमें फारसीके सैघेमें ... मिलाकर विचार करके रस १-२ रोज मन्दकर घुमाकर इमरुयन्त्रमें डाल तियर् अथवा अथ पातनकर । ए । दशवारकरके खराने ४ पहर स्वनकर गाढ्य तप्तखल्वमें रखकर इसके बराबरके बैंचुओंको डालकर १-२ पहर घुटन्तकर अम्लर्थ्याके रसस २१ रोज दिनरात मर्दन कर खाचमें गरम ठंडा न हो । २२ वें रोज ऊष्णजलमें अथवा गरमकाञ्जी धोकर सारकरले । इसमें पारदांश खानेके वस्तकर थाहा थोड़ा लवणान्वने डालकर मर्दन करके मारदार मन्द एकतापहोजावगा फिर गंधानमक छावा सुहागा और यवक्षार नौसादर गुड़ और आकका दूध मिलाकर पेन विदकुन चारलेपादान लगाकर ऊपर ४ टर मन्दक करामें मूत्रसयुक्त रस ...जन्दन बनाद गोकाडी अथवा धारदुग्ध साथ । तीनदिन ... । प दिन निकालकर

तोलकर देखे, ग्रास समस्त जीर्ण न होगयाहो तो फिर इसीतरह स्वेदन और मर्दनकरे। जब ग्रासजीर्ण होजाय और पारेका असली वज़न आजाय तब भूधरयन्त्रमें रखकर षड्गुणगन्धक जारणकरे। फिर मकोयके रससे तप्तखल्वमें एकरोज़ मर्दनकर अष्टमाश चांदीकेवर्क मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर केंचुओंका रस डालकर मर्दनकरे। पिष्टीरूप होजानेपर काक और केंचुओंके रससे ५–५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय काक और केंचुओंके क्वाथमें गोलेको रखकर मूषामें रखदे और मुंहबन्दकर भूधरयन्त्रमें रखकर करीषकी अग्निसे तीनदिन स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती की मात्रा चांदीकेवर्क और तीखुरकी गोली बनाय उसके अन्दर कवलितकर खावे। तीखुरकेसाथ ६ रत्ती मिलाकर छोटीदूधीके रसकेसाथ गर्भिणीगायको देवे, जब उसकाबच्चा पैदाहो तब उसका शक्करमिला हुआ दूध अनुपानमें रक्खे। अम्ल, क्षार, लवण, विदाहि, कटु, कषाय इनसबका परित्यागकरे, मधुरान्न खावे। केलेके फलका शाक, कच्चे नारियलकी गिरी और शक्कर मिलाहुआ नारियलका जल, केलेका पका या कच्चाफल इत्यादि जो जो वृष्य पदार्थहैं उनका सेवनकरे। इसप्रयोगसे क्षय, नष्टधुरना येसब नष्टहोकर अस्सीवर्षका जर्जरित बुड्ढाभी फिरसे शुक्रपूर्णहोकर ग्लानिरहितहोकर बहुतसीस्त्रियोंकसाथ उत्साहपूर्वक रमणकरसक्ताहै। शास्त्रोक्त कामवर्धन इसका अनुपान इसतरहहै कि ६–६ रत्ती इसरसको शक्करके साथ खाकर विदारी, मुलहठी और तीखुर ये प्रत्येक १–१ माशा गोदुग्धकेसाथ पीनेसे अक्षीणशुक्र होताहै अथवा शतावर, गोखरू, धुलीहुई उड़दकीदाल, तिल, खाड, शुद्धकपूर, पीली ईखकारस इनकेसाथ रातमें इसरसराजको लेनेसे अक्षीण शुक्रहोताहै। अथवा विदारीकन्दके चूर्णको विदारीकन्द स्वरससे कईबार भावितकर बराबरका केंवाचके बीजोंका चूर्ण डालकर दोनोंकी बराबर शक्कर मिलावे। इसकेसाथ रसराजको देकर गोदुग्ध पिलावे। अथवा बिजौरेके बीजोंको २१ दिनतक गोमूत्रमें भिगोकर सुखाकर चूर्णकरले। इसकेसाथ रसकोलेकर ऊपर गोदुग्धपीनेसे २१ दिनमें वीर्यसे पूर्णहोजाताहै इसके सेवन करनेसे बुढापा और रोग आक्रमण नहीं करते॥ ४९२॥

४९३ मदनकामदेवरसः (द्वितीयः)

एरण्डशृङ्गवेराऽम्बुकाकमाचीद्रवे रसः।
प्रत्येकमर्दनाच्छुद्धो जायते दोषवर्जितः॥ २१८८॥
श्वेताऽङ्घ्रिकल्कमूषायां सप्तकृत्वोऽथ शोषयेत्।
क्षिप्त्वा मृतं साऽग्निचूर्णं मूषायामेवमेव हि॥२१८९॥
एवं शुद्धं रसं कृत्वा समगन्धेन योजयेत्।
काकमाच्याः शुभैस्तोयै र्मर्दयित्वा द्वयं शनैः॥२१९०॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये मृदा कर्पटसञ्चया।
काचपात्रीमुखं गल्वा दत्त्वा पचेऽथ चषिकाम् २१९१
मृल्लिप्तकर्पटे बद्धा काचपात्रमधो मुखम्।
लिम्पेद्वलमृदा गाढमङ्गुलद्वयमुत्थितम्॥ २१९२॥
शोषयित्वा क्षिपेद्भाण्डे वालुकाभिः प्रपूरिते।
अधोमुखं काचपात्रं पचेद्यामत्रयं शनैः॥ २१९३॥
स्वाङ्गशीतं समादाय योजयेद्रोगशान्तये।
गुञ्जाद्वयं क्रमेणैव पर्णखण्डेन संयुतम्॥ २१९४॥
शतावरी गोक्षुरश्च बीजञ्च कपिकच्छुजम्।
गाङ्गेरुकी चातिबला बीजमिक्षुरकोद्भवम्॥ २१९५॥
अनुपानं पिबेदुग्धमस्य चूर्णस्य कर्षकम्।
सतिलं भक्षयेन्नित्यं कादलं शर्करान्वितम्॥ २१९६॥
हृद्यं वृष्यं श्रमहरं रसं मांसं पयो घृतम्।
शाल्यन्नं माषगोधूमं पायसं सेवयेन्निशि॥ २१९७॥
यत्किञ्चिच्छीतलं द्रव्यं तत्सर्वमविचारतः।
अत्र देयं प्रयत्नेन रसवीर्यविवृद्धये॥
अनेनाऽशीतिवर्षोऽपि युवेव सुरतं चरेत्॥ २१९८॥
र.क, रसायने।

भाषा—एरण्डबीजड, अदरख और मकोयके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर शुद्धकियेहुए पारेको लेकर सफेदपुनर्नवाकी चौगुनी जड़केकल्ककी मूषाबनाय पारेकी बराबर चित्रकमूलका बारीकचूर्ण बीचमें डालकर उसपर पारेको रख इसी चूर्णसे दबाकर कल्कसे मूषाका मुह बन्दकरदे, और १–२ कपड़मिट्टी देकर सुखादे। फिर जङ्गलीकण्डोंकी निर्धूम अग्निपर लौटपौटकर सुखावे। जब कपड़मिट्टी जलजाय तब निकालकर नीचे रखले। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरेसे पारेको निकालकर पूर्ववत् द्रवोंमें मर्दनकर मूषामें बन्दकर अग्निपर सुखावे। ऐसे ७ बार सुखाकर बराबरकी गन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर मकोयके रससे १–२ रोज़ मर्दनकर आतशीशीशीमें भर ईंट अथवा खड़ियामिट्टीकी डाट लगाकर ३–४ कपड़मिट्टी समस्तकर लगाकर रुई डालकर कूटीहुई मिट्टीका दो अङ्गुल मोटा लेप चढाकर धूपमें सुखादे। सूखनेपर अधोमुख वालुकायन्त्रमें रखकर ३ पहरकी मध्यम अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती पानमें रखकर खिलादे और ऊपरसे शतावर, गोखरू, केंवाचकेबीज, गंगेरन (गुलसकरी), कङ्घी, तालमखाना सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर, इसमेंसे १ तोला दूधकेसाथ अनुपानके तौरपर देना चाहिये। तिल और शक्करकेसाथ पकाकेला हमेशा खिलावे। इससे हृदय और धातुओंकी निर्बलता, ग्लानि, राजयक्ष्म, वन्ध्यत्व, नपुंसकत्व प्रभृति असाध्य रोग दूरहोतेहैं। रात्रिमें सम्भोगके पहिले सेवन करनेसे यथेष्ट स्तम्भन होताहै। इसमें मांसरस, मांस, दूध, घी, उत्तमचावल, उड़द, गेहूं, खीर तथा जो कुछभी ठंडी चीजें हैं उनका प्रयोगकरनेसे रसकेवीर्यकी वृद्धि होतीहै। इसके हमेशा सेवनसे ८० वर्षका बुड्ढाभी जवानकीतरह रति करसक्ताहै॥ ४९३॥

४९४ मदनकामदेवरसः

प्रत्येकं चतुरंशकौ रसबली तारं मृतं चांऽशकं,
तावद्धेम ततश्च शाल्मलिरसात्तत्सर्वमामर्दयेत्।

काकोल्याऽथ सुदुग्धयाऽप्यपरया त्रिस्त्रिर्विदार्याशता-,
वर्या त्रिस्त्रिरथो विभाव्य सकलं काचस्य कूप्यां क्षिपेत्
पक्वं यामचतुष्टयं सिकतिका-
यन्त्रात्स्वतः शीतलं,
प्रोद्धृत्याऽत्र विभावना वितनुया-
त्सप्ताऽथ वारान् क्रमात् ।
रक्तादुत्पलतः क्षुरेण च शता-
वर्या विदार्या रसैः,
तालीजातरसेन नागबलया
पश्चाद्रसैश्शाल्मलेः ॥ २२०० ॥
पद्मकन्दरसतोऽथ गोस्तनी-
शर्करेक्षुरसतोऽश्वगन्धया ।
आमलक्युदककोलकन्दतो
हस्तिकन्दरसतश्च भावयेत् ॥ २२०१ ॥
पृथगेभिरौषधगणै र्विभावितो
रस एष सिद्धिमुपयाति रोगिणाम् ।
अनुपागदो मदनकामदेव इत्य-
भिविश्रुतो रतिविशेषफलदायकः ॥ २२०२॥
गुञ्जाचतुष्टयमितं सितया समेतं
द्राक्षान्वितं समुपयुज्य कलाविलासी ।
क्षीरेण वेक्षुकरसेन कृताऽनुपानः
शाल्यन्नमुद्गवटकामिषमाषभुक् स्यात् २२०३
कलमाश्च भुञ्जानः
फलरयपललेन जाङ्गलेनाऽपि ।
मदन इव कामदेवो
महिषीशतशो मनोरमा रमयेत् ॥ २२०४ ॥
वृद्धमिह कामदेवं जग्धवतो ह्यश्वगन्धरसाढ्यस्य ।
सुरतं भवति वधूभिः सुरतरुणीभि र्यथा सुरेन्द्रस्य ॥
चाम्पेयगौर्यश्चपलायताक्ष्यः
कल्हारगन्धाः कमनीयवेषाः ।
काञ्चीरणत्कारवरणाश्रितस्या
बिम्बाधरास्तं रमयन्ति कान्ताः ॥ २२०६ ॥
अर्धोन्मीलितलोचनान्तसुभगा निर्धूतमानग्रहा,
धम्मिल्लोग्रहणोपदर्शितभुजामूलाः सलीलाङ्गनाः ।
हाराऽलङ्कृतकन्धरा युवतयः स्मेराननास्तं सदा,
श्लिष्यन्त्या रससेविनं शिथिलतक्रोधा रतिं कुर्वते ॥
किमत्र मलयाऽनिलैः किमिह सान्द्रचन्द्राऽऽतपैः,
किमङ्गधृतचन्दनैः किमरविन्दसौगन्धिकैः ।
मनांसि हरिणीदृशां मदयतीह संसेवितो,
मनोजरतिवल्लभो मदनकामदेवो रसः ॥ २२०८ ॥
बलेन नारी परितोषमेति
न हीनवीर्यस्य कदापि सौख्यम् ।
अतो बलार्थे रतिलम्पटस्य
वीर्याऽभिवृद्धिं प्रथमं विदध्यात् ॥ २२०९ ॥

र. मृ, र. क, स्त्रीविलास, वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ भाग, रजत और सुवर्णभस्म १-१ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर सेंमलकीजड़, काकोली, छोटी और बड़ी दूधी, विदारीकन्द, शतावर इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ रोज़ मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहबन्दकर ४ पहर बालुकायन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर लालकमल, तालमखाना, शतावरी, विदारी, मुसली, नागबला, सेमल, पद्मकन्द, द्राक्ष, शक्कर, ईख, असगन्ध, आंवले, सुगन्धवाला, वाराही, हस्तिकन्द इनप्रत्येकके यथालाभस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे ४-४ रत्ती शक्कर अथवा द्राक्षकेसाथ लेकर दूध अथवा ईखकारस पीवे । पुराने चावल, मूग, बड़े, मास, उड़द, कोयल, जंगली जानवरोंकामास अथवा मांसरस सेवनकरनेसे अकथनीय रतिसुखको प्राप्तहोताहै । असगन्धकेसाथ सेवनकरनेसे वृद्धमनुष्यभी बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रति करसक्ता है । कामशास्त्रोक्त सर्वलक्षणसम्पन्न स्फुटभावोंकेसाथ क्रोधयुक्तस्त्रियोंका भी क्रोध इसरसके सेवकको देखकर नष्टहोजाता है । मलयानिल प्रभृति कामोद्दीपक सामग्रीकी कोई ज़रूरत नहीं पड़ती क्योंकि यथेष्टशक्ति न रहनेपर उद्दीपकभावोंका आश्रयण कियाजाता है । इसरसके सेवनकरनेवालेके लिये उद्दीपकभावोंकी कोई अन्यावश्यकता नहीं रहती । रतिके विषयमें वीर्यकी दृढता मुख्य है और इसरसके सेवनसे वह नितान्त पुष्ट होजाताहै । हमेशा ब्रह्मचर्यपूर्वक यदि इसकासेवन किया जायतो समस्त धातुक्षय, राजयक्ष्म, समस्तप्रमेह, अपस्मार, उन्माद, पुरुष तथा स्त्रीका वन्ध्यत्व दोष इत्यादि असाध्यरोगोंको नष्टकर यह आदमीको रोगरहित चिरजीवी बनाता है ॥ ४९४ ॥

४९५ मदनकामदेवरसः (चतुर्थ.)

गोलं गन्धकसूतयोस्त्रिकटुककाथेन बद्धाऽथ भू-
कूष्माण्डान्तरवस्थितं विपिहितं तेनैव लिप्त्वोपरि ।
मापे हैयङ्गुलमाज्यपक्वमथ तत्कूष्माण्डमभ्याङ्गरे-,
सच्चूर्णेन च संयुतः सुरकृताचूर्णस्य मुष्टिद्वयम् २२१०
जया शतावरी कृष्णा कपिकच्छुफलं तिलाः ।
प्रत्येकं पलसम्माना यवाः पञ्चपलोन्मिताः ॥२२११॥
तावन्मोचफलं द्वे च यष्टीं मुष्टिद्वयां शुभाम् ।
निक्षिप्य सप्त सप्ताऽत्र भावनाः क्रमशश्चरेत् ॥२२१२॥
महाबलाबलानागबलाभि द्राक्षयाऽपि च ।
कृष्णाधात्रीक्षुभिश्चाऽपि दन्तपात्रे निवेश्य च २२१३
मत्स्यण्डिकायुतं वल्लद्वयमानं भजेन्निशि ।
अनुपानमिहप्रोक्तं धारोष्णं सुरभेः पयः ॥२२१४ ॥
दोषमार्तवजं हत्वा कुर्याद्वीर्यविवर्धनम् ।
ध्वजोत्साहं तथा स्त्रीषु वाजीकरणमुत्तमम् ॥२२१५॥
अलं मलयवायुना कुमुदबान्धवेनाऽप्यलं,
मधुव्रतसहायका. कलितपञ्चमाः के पिकाः ।

अमुं भज विशङ्कितं रतिसरोजिनीभास्करं,
मनोजपरिदैवतं मदनकामदेवं रसम् ॥ २२१६ ॥

र.र.स., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर त्रिकटुके क्वाथसे एकरोज् मर्दनकर गोलाबनाय भुंई-कोंहलेके भीतर रखकर उसीको डाटलगाकर भुंईकोंहलेकेरससे उड़दके आटेको भिगोकर दोअङ्गुलमोटा लेपचढ़ादे । फिर धीमें मन्दअग्निसे पकावे, जब आटा जलनेलगे तब उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतल होनेपर भुंईकोंहलेमेंसे कज्जलीके गोलेको निकालले। फिर तुलसीकाचूर्ण २ पल, भांग, शतावर, पीपल, छिलकेरहित केवांचकेबीजऔरतिल १–१ पल, जब और केलेका सूखाफल ५–५ पल, दोनों प्रकारकी मुलहठी २–२ पल लेकर बारीक-चूर्णकर १–२ पहर इकट्ठे मर्दनकर कङ्घी, खरेंटी, नागबला, दाख, पीपल, आंवला और ईख इनके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर हाथीदांतके पात्रमें रखदे । इसमेंसे ६–६ रत्ती रावके साथ रात्रिको खाकर गायका धारोष्णदूध पीवे । इसके सेवनसे रज और वीर्यके दोष, ध्वजभङ्ग प्रभृति नष्टहोकर उत्तमवाजीकरण-होताहै । इसरसकेसेवनकरनेपर मलयाद्रिका वायु, चन्द्रमा, भौंरे और कमलप्रभृति कामको जाग्रतकरनेवालोंकी कोई आवश्यकता नहीं, इसके खानेमात्र हीसे मनुष्य कामान्ध होजाताहै ॥४९५॥

४९६ मदनकामदेव रसः (पञ्चमः)

तारं वज्रं सुवर्णञ्च ताम्रं सूतकगन्धकम् ।
लोहं क्रमविवृद्धानि कुर्यादेतानि मात्रया ॥ २२१७ ॥
विमर्द्य कन्यकाद्रावै न्यसेत्काचमये घटे ।
विमुच्य पिठरीमध्ये धारयेत्सैन्धवाऽऽवृते ॥ २२१८ ॥
पिठरीं मुद्रयेत्सम्यक् ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
वह्निं शनैः शनैः कुर्याद्दिनैकं तत उद्धरेत् ॥ २२१९ ॥
स्वाङ्गशीतञ्च सञ्चूर्ण्य भावयेदर्कदुग्धकैः ।
अश्वगन्धा च काकोली वानरी मुसली क्षुरा॥२२२०॥
त्रिस्त्रिवेलं रसैरेषां शतावर्याश्च भावयेत् ।
पद्मकन्दकसेरूणां रसैः काशस्य भावयेत् ॥ २२२१ ॥
रक्तिकैकां रसस्याऽस्य चूर्णेनैतेन योजयेत् ।
कस्तूरीव्योषकर्पूर कङ्कोलैलालवङ्गकम् ॥ २२२२ ॥
प्रति रक्तिद्वयञ्चैतच्छर्करासमकं भजेत् ।
गोदुग्धद्विपलेनैव मधुराहारसेवकः ॥ २२२३ ॥
अस्य प्रभावात्सौन्दर्यं लभेताऽत्र न संशयः ।
तरुणी रमयेद्बह्वीः शुक्रहानि र्न जायते ॥ २२२४ ॥

शा.सं., र.सु., रसायनसं., र.कौ., र.क., र.मं., यो. र., चि. र. भ., भै.सा., वृ. यो. त., र.क., वाजीकरणे । वृ.यो.त. मदनकामेश्वर इति नाम ।

भाषा—चांदी १ भा., हीरा२ भा., सोना ३ भा., तांबा ४ भा. इनकी भस्में, शुद्धपारा ५ भा , शुद्ध गन्धक ६ भा., लोहभस्म ७ भाग लेकर पारागन्धककी नीलरंगकज्जलीमें सब-चीज़ोंको मिलाकर १–२ दिन घीकुंआरके रससे मर्दनकर सुखा-कर आतशीशीशीमें भरके मिट्टीकेपात्रमें रक्खे । शीशीके चारों तरफ़ बारीकपीसाहुआ सेंधानमक ऊपरतकभरदे । फिरधीरे २ एकरोज् अग्निदेकर अङ्गारोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर आककादूध, असगन्ध, काकोली, केवांच, मुशली, तालमखाना, शतावर, पद्मकन्द, कसेरू और कास इनप्रत्येकके रसोंसे ३–३ वार भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीलेकर कस्तूरी, त्रिकटु, शुद्धकपूर, शीतलचीनी, इला-यची और लौंग २–२ रत्ती लेकर बारीकचूर्णकर बराबरकी शक्कर मिलाकर २ पल गायके दूधकेसाथ सेवनकरनेसे और मधुर आहार खानेसे सौन्दर्यको प्राप्तहोकर बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमणकरनेपरभी शुक्रकीहानि नहींहोती ॥ ४९६ ॥

४९७ मदनकामदेवरसः (षष्ठः)

रौप्यभस्म शुभं ग्राह्यं दशगद्याणसम्मितम् ।
पारदेन हतञ्चैव पूर्वप्रोक्तविधानतः ॥ २२२५ ॥
दशकं तुल्यपाषाणात्तारमाक्षिकतो दश ।
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य सूक्ष्मं कार्यं प्रयत्नतः ॥२२२६॥
वाससा गालयेच्चूर्णमर्कदुग्धेन पेषयेत् ।
दिनैकं दिनमेकञ्च धत्तूरस्य रसेन च ॥ २२२७ ॥
दिनैकं वत्सनाभस्य श्रीखण्डेन च वासरम् ।
करवीरस्य मूलेन पुनः श्रीखण्डवारिणा ॥ २२२८ ॥
सर्वौषधैरेवमेवं शुष्कं शुष्कं विमर्दयेत् ।
गोलं कृत्वा शरावस्थं वस्त्रमृत्तिकया ततः ॥२२२९॥
गर्ते हस्तप्रमाणेऽथ क्षिप्त्वाऽग्निं ज्वालयेदधः ।
स्वाङ्गशीतञ्च तच्चूर्णं कृत्वा कुम्भे क्षिपेत्सुधीः २२३०
मदने कामदेवोऽयं जायते वीर्यकृद्रसः ।
गुञ्जामात्रस्तु दातव्यः सेव्योऽयं पौष्टिकौषधैः २२३१
अवीर्ये शुष्कवीर्ये च द्रववीर्ये तथैव च ।
अनुत्थानेऽपि लिङ्गस्य निष्कामेऽस्वच्छवीर्यके २२३२
बलक्षीणे तथा षण्ढे देयोऽयं वीर्यकृद्रसः ।
स्थातव्यं ब्रह्मचर्येण यावद्याति पूर्णताम् ॥२२३३॥
रसो निरन्तरं ग्राह्यो हस्तलघञ्च भोजनम् ।
सेव्यमानेप्रतिदिनं प्रकारेणाऽमुना रसे ॥ २२३४ ॥
भवेत्षोडशवर्षीयः कामदेवसमो नरः ।
मदहानिकरः स्त्रीणां भवेद्याऽत्यन्तवल्लभः॥ २२३५॥

रसचि , वाजीकरणे ।

भाषा—उदयचन्द्ररसमें कहेहुए प्रकारसे पारदयुक्तभस्म-कीहुई चांदी, दानेफिरङ्ग और रूपामाखीकीभस्म ५–५ तोले लेकर सबको खरलमें डालकर आकका दूध, धतूरा, बछनाग, चन्दन, सफेदकनेरकी जड़कीछाल और सफेदचन्दन इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन पीसकर गोला बनावे । इसमें प्रत्येक भावना सुखासुखाकर देनीचाहिये। फिर गोलेको शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ करपमिट्टी देकर

सुखाकर एकहाथगहरे खड्डेमें पहिले अग्निरस आधेतकखण्डेभरके सम्पुटको रख ऊपर तक कण्डोंसे भरदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शीशीमें रखलेवे । इसमें १–१ रत्ती पौष्टिक अनुपानोंके साथ देनेसे वीर्यकाअभाव, शुक्रवीर्यता, शीघ्रपात, लिङ्गानुत्थान, इच्छाराहित्य, अस्वच्छवीर्य, वलक्षीणता, षण्ढता येसब नष्टहोकर कामरूपी वनजाताहै । जबतक वीर्यसे परिपूर्ण न होजाय तबतक ब्रह्मचर्य रक्खे । इससका सेवनकरनेवाला स्त्रियोंके दर्पको दूरकर उनका अत्यन्तप्रिय होताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ मदनकामदेववटी

आकल्लकं केशरदेवपुष्पं
जातीफलोटिङ्कणहंसपाकम् ।
एतानि चूर्णानि समानि कृत्वा
मूलार्द्धमात्रं कुरु नागफेनम् ॥ २२३६ ॥
क्षीरेण फेनं परिपाच्य यद्वं
मूलात्सिता षड्गुणमानयोज्या ।
विमर्द्य चूर्णं गुटिकां निशायां
मुखे स्थिता कामयते शतानि ॥ २२३७ ॥

र. (मा.) वाजीकरणे ।

टि०–केचिदिमां वटिकां भिन्नरीत्या निष्पादयन्ति तद्यथा–आकल्लक, केसर, लवङ्ग, जातीफल, खन्दरदानि प्रति टङ्कत्रितयप्रमाणानि । सङ्कोलीटिङ्कणे प्रति टङ्कचतुष्के, खाखसातिफेने च प्रति टङ्कद्वय गृहीत्वा सकमचूर्णं विधाय अहिफेनमार्द्रकरसे घृष्ट्वौषधराशौ मेलयेत् । अर्द्धाढक पौस्तानि कुट्टयित्वा त्रिसेरप्रमाणे क्वाथयित्वा पादावशिष्टेन क्वाथेन अर्द्ध प्रस्थशर्करां मेलयित्वा सार्द्धद्वयतन्तुलिका विधाय सर्वं वस्तुजात तत्र निक्षिप्य घर्षणेनैकरसता सम्पाद्य बदरीफलप्रमाणा वटिका विधाय रक्षेदेत् । तास्वेकैका रतिसमयादर्द्धघटिकाद्यात्पूर्वम् दुग्धेन निपेव्य सोत्साहो रमणीषु रमते, इति ।

भाषा—अकल्करा, केसर, लौंग, जायफल, उटिङ्गन और सिंगरफभस्म समभाग, सबसे आधी दूधमें पकाईहुई अफीम और ६ गुनी शक्कर लेकर काष्ठौषधियोंका चूर्णकर अफीमकेसाथ घोटकर एकजीव करदे फिर शक्कर मिलाकर चूर्णरूपमें रखछोड़े, अथवा शक्करकी चाशनीमें १–१माशेकी गोलियां वनाकर रक्खे । इनमेंसे १–१गोली मुहमें रखकर रतिकरनेसे बहुतदेरतक स्तम्भन होताहै । ब्रह्मचर्यपूर्वक दूधकेसाथ सेवनकरनेसे श्वास, कास, मन्दाग्नि, ग्रहणी, अरुचि, नपुंसकत्व प्रभृतिरोग नष्टहोतेहैं ॥४९८॥

४९९ मदनकामरसः

पद्मबीजं कसेरुञ्च कन्दं नालञ्च कर्णिकाम् ।
मुशलीभृङ्गराड् द्राक्षा पक्वं श्लेष्मातकं फलम् २२३८
विजयामर्कटीमाषाः शणर्बीजानि वै तिलाः ।
कोकिलाक्षस्य बीजानि भूकुष्माण्डी शतावरी २२३९
शृङ्गाटं चिर्भटं फञ्जीबीजानि चाऽश्वगन्धिका ।
एतत्सर्वं समं पिष्ट्वा पादांशं चाहरेत्पृथक् ॥ २२४० ॥
पादांशस्याऽष्टमांशेन शुद्धं सूतं विमिश्रयेत् ।
पारदादष्टमांशञ्च कर्पूरं तत्र निःक्षिपेत् ॥ २२४१ ॥
चातुर्जातकमेकैकं कर्पूराद्द्विगुणं भवेत् ।
सूततुल्या सिता योज्या मर्द्यं रम्भाद्रवे दिनम् २२४२
तद्गोलं डमरौ यन्त्रे क्रमवृद्धयाऽग्निना पचेत् ।
दिनान्ते चोर्द्धलग्नं तद्ग्राह्यं रम्भाद्रवे दृढम् ॥ २२४३ ॥
मर्दितं सितया तुल्यं माषैकं भक्षयेत्सदा ।
रसो मदनकामोऽयं बलवीर्यविवर्धनः ॥ २२४४ ॥
दिव्यरूपा भजेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः ।
भागत्रयन्तु यत्पूर्वं पृथक् चूर्णं सुरक्षितम् ॥ २२४५ ॥
कुलीरमांसच्छागाण्डचटकाण्डानि वै पृथक् ।
प्रत्येकं चूर्णयेत्तुल्यं सर्वतुल्यं गवां पयः ॥ २२४६ ॥
तत्सर्वं चालयन्दर्व्या पचेद्यावत्सुपिण्डताम् ।
प्रसार्य काष्ठपात्रान्तश्छायाशुष्कं विचूर्णयेत् ॥२२४७॥
अस्य चूर्णस्य कर्पूरं चतुःषष्ठ्यंशकं क्षिपेत् ।
चातुर्जातकचूर्णन्तु क्षिपेद्द्वात्रिंशदंशतः ॥ २२४८ ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या रक्षयेन्नूतने घटे ।
कर्षद्वयं गवां क्षीरैरनुपानैः सदा पिबेत् ॥ २२४९ ॥

र ख, वाजीकरणे ।

भाषा—कमलगट्टा, कसेरू, कमलकंद, कमलनाल और कर्णिका, मुसली, भंगरा, द्राक्ष, लसोड़ेके पकेफल, भाग, केवाचके बीज, उड़द, शणकेबीज, तिल, तालमखाना, भुंई-कोंहला, शतावर, सिंघाड़े, ककरी, फागकेबीज, असगन्ध येसब १–१ तोले लेकर चूर्णकरले । इसमेंसे चतुर्थांश लेवे और पारा $\frac{?}{?}$ माशा, कपूर $\frac{?}{?}$ रत्ती, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर १–१ रत्ती, शक्कर $\frac{1}{?}$ माशा डालकर केलेकेकन्देरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय डमरूयन्त्रमें रखकर क्रमवृद्धाग्निसे दिनभरपकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कदलीकन्दके रससे मर्दनकर सुखाय बराबरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा खाकर दूध पीनेसे बल और वीर्य बढ़ताहै और दिव्यरूप स्त्रियों-केसाथ रमणकरनेमें समर्थ होताहै । पूर्वोक्त औषधियोंका ३ भाग अवशिष्ट चूर्णलेकर केकड़ेकामांस, बकरे और चिड़ेके अण्ड, येसब समभाग लेकर बारीक पीसकर सबकी बराबर गायके दूधमें डालकर कढ़ीसे चलाताहुआ पकावे । जब पिण्ड होजाय तब काठके पटेपर बिछाकर छायासुखाकर चूर्णकरले । इसचूर्णसे ६४ वा हिस्सा शुद्धकपूर और ३२ वा हिस्सा चातुर्जात छोड़कर सबकी बराबर शक्कर मिलाय नये वर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे २–२ तोले गायकेदूध अथवा पौष्टिक अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे उत्तम वाजीकरण होताहै ॥ ४९९ ॥

५०० मदनगोलकः

शुद्धसूतसमं गन्धं माक्षिकं तत्समं कुरु ।
मर्दयेन्मातुलुङ्गाम्लैः स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ॥ २२५० ॥
मारयेत्पुटयोगेन यावता भस्मतां व्रजेत् ।
तद्भस्म तारवङ्गञ्च प्रवालं मौक्तिकाऽभ्रकम् ॥२२५१॥
कान्तं वैक्रान्तमुण्डञ्च रसभस्म च मूर्च्छितः ।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दगोजिह्वास्वरसैस्तथा ॥२२५२॥

भावयेत्सप्तवाराणि रवितापेन शोषयेत्।
गोलं मृत्कर्पटे योज्यं त्रिधा वेष्ट्य विशोषयेत्॥२२५३
लवङ्गं पूरयेद्भाण्डे तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत्।
भाण्डवक्त्रं निरुन्ध्याऽथ चतुर्यामं विपाचयेत् २२५४
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य भावयेत्तदनन्तरम्।
शाल्मल्या च विदार्या च हलिन्या शतवीर्यया २२५५
कपिकच्छुनिकुण्टेन केतकीस्तनवारिणा।
रुदन्त्या च मुसल्या च गौर्या धात्र्या विशालया २२५६
वासातगरकास्य मालत्या शतपत्रकैः।
कुडमेन ततो भाव्यो रसो मदनगोलकः॥ २२५७॥
वल्लत्रयरता मात्रा गोक्षुरेक्षुरकेण च।
शिलाजतुसमायुक्तो कर्कोटीरसतोऽपि वा॥ २२५८॥
अश्मरीं शर्करां भित्त्वा शतखण्डान् करोति यः।
बलं पुष्टिं तथा तुष्टिं कान्तिञ्च कुरुतेऽनलम् ॥२२५९॥
सप्तधातुगतं शोषं जयेत्कासं सुदारुणम्।
क्षीणानां व्याधिभिश्चैव षण्ढानां क्षीणरेतसाम् २२६०
रामा यस्य गृहे सन्ति तेन सेव्यो रसोत्तमः।
मैथुनात्कामसम्प्राप्तिः कामिनीदर्पहारकः॥ २२६१॥

रसायन सं., र. सु., रसायनेवाजीकरणेच।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सोनामाखी १-१ तोला लेकर नीलकण्ठकबलीके बिजौरेकेरससे मर्दनकर २ तोले सुवर्णके बारीक पत्तोंपर लेपकरे। फिर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १५ सेर कण्डोंकी आंचदे। इसतरह भस्म होनेतक बारम्बार करताजाय। यही सुवर्णभस्म, रजत, वङ्ग, प्रवाल, मोती, अभ्रक, कान्तलोह, वैक्रान्त, तांबा, पारदभस्म येसब समानभागले लेकर थाली... और जङ्गलीगोभीके रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर गोलाबनाय धूपमें सुखाले। गोलेकर सुखासुखाकर तीन कपड़मिट्टी देवे। फिर एकहंडीमें आधेतक लौंग भरकर गोलेको रखकर ऊपरतक लौंगोंसे भरकर कपड़मिट्टी करदे और सूखनेपर ४ पहरकी चूल्हेपर अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सेमल, बिदारीकन्द, कलिहारी, शतावर, केवांच, गोखरू, केवड़ेके कोमलडंठे, रुदन्ती, मुसली, हल्दी, आंवले, इन्द्रायण, अडूसा, तगर, [illegible], मालती, गुलाब और केशरके यथायोग्य स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर ६-६ रत्तीकी मात्रा गोखरू, तालमखाना, शिलाजीत, इनके साथ अथवा ककड़ीकेसाथ देनेसे [illegible] अश्मरीके भेदको दूरके करताहै बल, पुष्टि, उत्साह, कान्ति और अग्निको बढ़ाताहै। सप्तधातुओंमें प्राप्तहुए शोष और भीषण खांसीको नष्टकरताहै। रोगोंसे क्षीण, रतिन्दुक, इसप्रकारके लिये उत्तम औषध है जिनके घरमें बहुतसी स्त्रियें हों उनको इसरसका सेवन करनाचाहिये ५००

५०१ मदनजनकोरसः

सूतं कान्तं घनरजतं ताम्रकीभस्म तुल्यं,
यामं मर्द्यं मदकजलतः कूपिकाभाण्डपक्वम्।
जीर्णे नीरे पुनरपि तथा शाल्मलीताम्रवल्ली-,
कूष्माण्डीमदनजनकं सेवयेद्वल्लयुग्मम्॥ २२६२॥
धात्रीखण्डं मुसलितुरगीक्षौद्रसर्पिर्युतञ्च,
दुग्धं पीत्वा रमयति शतं कामिनीकामदाता।
दीर्घं जह्याद्वलितपलितं सायमिष्टञ्च भोज्यं,
सर्वान्योगाञ्जयति जनयेत्कीर्तिवीर्यस्य पुष्टिम्॥२२६३॥

र धं., र. शि., वाजीकरणे। र. शि. पुस्तकान्तरेऽत्र।

भाषा—पारा, कान्तलोह, सोना, अभ्रक, सोनामाखी और रजतभस्म सब समभागलेकर मदकके जलसे एकप्रहर मर्दनकर सुखाय कांचकी कूपीमें भरके वालुकायन्त्रमें रखकर आंचदे। पानी जलजानेपर दुबारा डालदे। फिर सेमल, मजीठ, भुंई कोंहड़ा इनके स्वरस अथवा क्वाथसे १-१ भावना देकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली आंवला, मुसली, असगन्ध, मधु और घीकेसाथ देकर दूध पिलानेसे सैकड़ोंस्त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरनेपरभी शुक्र क्षीणनहींहोता। बहुतदिनतक सेवनकरनेसे बलीपलितको दूरकर पुष्टि और बलको बढ़ाकर मनुष्यको युवावस्थापन्न करताहै। इसके सेवनमें मिठाईपदार्थ और खीका त्यागकरना॥ ५०१॥

५०२ मदनभैरवोरसः

रसं मणिशिलां गन्धं सैन्धवं मृतताम्रकम्।
बृहतीफलजद्रावे मर्दितं गुटिकीकृतम्॥ २२६४॥
मूषायां भूपुटे यामं वालुकायन्त्रके पचेत्।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गव्यपित्तेन भावयेत् ॥२२६५॥
चणमात्रं प्रदातव्यं नारिकेलजलेन च।
अथवा त्रिकटुद्रावे नाशयेच्चित्तविभ्रमम्॥
कृष्यन्तं दापयेत्पथ्यं रसो मदनभैरवः॥ २२६६॥

वै चि., वा., रसायन प., चित्तविभ्रमे।

भाषा—शुद्धपारा, मैनसिल और गन्धक, सैंधानमक, ताम्रभस्म सब समभाग लेकर सबको नीलकण्ठकबलीकर कटेरीके फलोंके रसमें एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें १ पहर स्वेदनकर वालुकायन्त्रमें एकपहरकी आंच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर गायकेपित्तमें एक भावना देकर चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखलेवे। इसमेंसे १-१ गोली नारियलके जल अथवा त्रिकटुके क्वाथमें देनेसे यह चित्तविभ्रम को नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दहीभात देना॥ ५०२॥

५०३ मदनमुरारिवटिका

रसपारो व्योमभागास्त्रयनु निगदितं भागयुग्मञ्च...
भागैकं शम्भुबीजं त्रितयमपि मृतं तन्समा सिद्धमूली।
धातुश्रीते सजातीफलममृतवरा भागकं देवपुष्पं,
जातीपत्रञ्च भागद्वितयमस्य पृथक् सर्वमेतत्तु चूर्णम्॥
सर्पिर्द्धा सिता स्याज्जलमधु-
मर्दिता मोदकीकृत्य धीमान्,

खादेदग्निं समीक्ष्य प्रसभ-
मभिनवानन्दसंवर्धनाय ।
योगो वाजीकराख्योऽयमिह
निगदितो भैरवानन्दनाम्ना,
नि.शेषव्याधिहन्ता दलित-
बहुधद्दामकन्दर्पदर्पः ॥ २२६८ ॥

वृ यो त , मा प्र , वै र , नि.र.म , रसायनस , वाजीकरणे। रसायनसङ्ग्रहे भैरवानन्द इति नाम ।

भाषा—अभ्रकभस्म ४ भाग, वङ्गभस्म २ भा , पारद भस्म १ भाग, शतावर ७ भा , चातुर्जात, जायफल, मरिच, पीपल, सोंठ, लौंग और जावित्री २–२ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर सबसेदूनी शक्कर मिलाकर घी और मधु अन्दाजसे देकर ३–३ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दुग्ध प्रभृति उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, धातुक्षय, प्रमेह और क्लीवताको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको करताहै ॥ ५०३ ॥

५०४ मदनमोदकः (प्रथमः)

उन्मत्तस्याऽर्द्धभागेन मृता घ्र सह भर्जितम् ।
कणाऽऽकराहिसिन्धूत्थं सकुष्ठं चाऽद्रिसंयुतम् ॥
कङ्कोलकं बलायुग्मं हिंस्रामोचाऽश्वगोक्षुरम् ।
क्षुरं मर्कटी क्रौञ्चं जात्याः पत्रं फलन्तथा ॥२२७०॥
चन्दनं देवकुसुमं चारं सारुष्कराऽन्तकम् ।
वरी शुभ्रविदारीस्यौ मुशली सुपवी जलम् ॥२२७१॥
वांशीमधुसमुद्रशोषस्संयुक्तः सफलफाणितम् ।
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावती विजया मता ॥२२७२॥
सर्वतुल्या सिता ग्राह्या यावदायाति बन्धनम् ।
घृतेन मधुना मिश्रं मोदकान् कारयेद्भिषक् ॥२२७३॥
त्रिसुगन्धिसमायुक्तं कर्पूरेणाऽधिवासितम् ।
स्थापयेत्स्निग्धभाण्डे च श्रीमन्मदनमोदकम् २२७४
सर्वरोगहरं ह्येतद्विशेषाद्ग्रहणीहरम् ।
मेधायुः कान्तिधैर्यञ्च बलपुष्टिविवर्धनम् ॥ २२७५ ॥
दृढदेहकरं नृणां वलीपलितनाशनम् ।
वर्षत्रयं सदा सेव्यं चिरजीवी भवेत्तदा ॥ २२७६ ॥

र. शि , वाजीकरणे।

भाषा—धतूरेके शुद्धबीजोंका चूर्ण १ तोला, अभ्रकभस्म ६ माशे, लेकर दोनोंको एकपहर मर्दनकर कड़ाहीमें रखकर मन्द अग्निसे सेके, फिर पीपल, अकलकरा, नागभस्म, सेंधानमक, कुठ, शीतलचीनी, बला, नागबला, हैंसकीजड़, केलेकाकन्द, असगन्ध, गोखरू, तालमखाना, केवाचकेबीज, कसेरू, जायफल, जावित्री, सफेदचन्दन, लौंग, चिरौंजी, भिलावे, लाल कचनार, शतावर, क्षीरविदारी चित्रककीजड़, वाराहीकन्द, मुसली, स्याहजीरा, सुगन्धवाला, वसलोचन, महुआ, समुद्रशोष, विधारा, राककीपापड़ी येसब ३–३ माशे इन सबकी बराबर भांग लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय एक पहर खरलकर सबकी बराबर शक्कर डालकर त्रिसुगन्धि १–१ तोला, शुद्धकपूर ३ माशे मिलाकर घी और मधुसे ३–३ माशेकी गोलिया बनाकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानके साथ देनेसे समस्तरोग नष्ट होतेहैं । विशेषतया ग्रहणी, निर्बुद्धिता, कान्ति-धैर्य और बल तथा पुष्टिका ह्रास, वलीपलित येसब नष्टहोतेहैं । तीनवर्षतक लगातार इसका सेवनकरनेसे चिरजीवी होजाताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ मदनमोदकः (द्वितीयः)

स्वर्णसिन्दूरलोहाभ्रवङ्गयानीरचीनजाः ।
शाल्मलीधन्वकाश्मीरजीरजातीलवङ्गकान् ॥२२७७॥
शोषव्योषत्वगार्क्षार्यैः पृथक् कोलमितान्क्षिपेत् ।
जातीपत्ररीद्राक्षावलार्कटश्रृङ्गिकाः ॥२२७८॥
एलात्मगुप्ताकुष्ठाऽब्दविदारीद्वयकेशरान् ।
मांसीकर्पूरकङ्कोलगोक्षुराणां पिचुद्वयम् ॥२२७९॥
सर्वस्मादर्धभागेन मातुलान्या सुभर्जिताम् ।
सर्वस्माद्द्विभागेन सितां दद्याद्विशोधिताम् ॥२२८०॥
निर्माय तन्तुलीं तस्याः क्षिपेत्सर्वमनुक्रमात् ।
शाणमात्रमनुक्रम्य वर्धयेद्दर्द्धकर्षकम् ॥२२८१॥
उष्णं पयः पिबेच्चाऽनु वर्धयेदन्यपेक्षया ।
नष्टेन्द्रिया नष्टशुक्रा वलीपलितजर्जराः ॥ २२८२ ॥
सेवनादस्य जायन्ते युवान इव हर्षिताः ।
स्त्रीणां मदनमूढानां भवन्ति प्राणवल्लभाः ॥२२८३॥
ग्रहणीश्वासकासार्श.प्रमेहमधुमेहजाः ।
व्याधयो विनिवर्तन्ते हृद्यो वृष्यो रसायनः ॥२२८४॥

नृ क , वाजीकरणे ।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, लोह, अभ्रक और वङ्गभस्म, बेतके बीज, चोपचीनी, सेमलका मुसला, धामनकीछाल, केशर, जीरा, जायफल, लौंग, समुद्रशोष, त्रिकटु, वसलोचन अथवा तीखुर ४–४ माशे, जावित्री, शतावर, द्राक्ष, बला, काकड़ासींगी, इलायची, केवाचकेबीज, कुठ, नागरमोथा, क्षीरविदारी और काष्ठविदारी (भुईकोंहला), नागकेशर, जटामासी, शुद्धकपूर, शीतलचीनी और गोखरू २–२ तोले, इनसबसे आधी भुनीभाग और सबसे दूनी स्वच्छशक्करकी तीनतारी चाशनीलेकर ऊपरकी चीजोंका बारीकचूर्ण क्रमसे मिलाकर ४–४ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे आरम्भकर क्रमश दो गोलीतक बढाकर गरमदूधकेसाथ सेवनकरे, पाचनशक्ति बढ़ने पर दूधको बढाताजाय । इसकेसेवनसे नष्टेन्द्रिय, नष्टशुक्र और वलीपलितव्याप्तजर्जरितभी जवानोंकी तरह हर्षयुक्तहोकर मदोन्मत्तस्त्रियोंके प्राणवल्लभ होतेहैं और ग्रहणी, श्वास, कास, बवासीर, प्रमेह, मधुमेह इनसबको नष्टकर मनुष्यको हृष्टपुष्ट बनाकर पुन युवावस्थामें लाताहै ॥ ५०५ ॥

५०६ मदनसञ्जीवनरसः

त्रिपलं पारदं शुद्धं गन्धकञ्च चतुष्पलम् ।
मृतमभ्रकसत्त्वञ्च स्वर्णं कान्तञ्च कार्षिकम् ॥ २२८५ ॥

द्विपलं हेमविमलं भूनागायः पलत्रयम् ।
एभिः सर्वैश्च सम्पेष्य प्रकुर्यान्नष्टपिष्टिकाम् ॥२२८६॥
वालुकायन्त्रविन्यस्तलोहपात्रे क्षिपेत्तदा ।
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं मर्दयेत्तदनन्तरम् ॥ २२८७ ॥
मण्डूक्या ब्राह्मिकायाश्च मुशल्याश्चित्रकस्य च ।
हस्तिशुण्ड्यास्तथा कृष्णानिर्गुण्ड्या गोक्षुरस्य च २२८८
रसं कुडवमानेन क्षिपेत्खल्वे मुहुर्मुहुः ।
तत आकृष्य सम्पिष्य मधुना सह यत्नतः ॥२२८९॥
मल्लमूषोदरे क्षिप्त्वा विनिरुद्ध्य विशोष्य च ।
दशभिश्छगणै देयं पुटं सम्पूज्य भैरवम् ॥
करण्डे क्षेपयेत्पिष्ट्वा समभ्यर्चितकन्यकः ॥ २२९० ॥
रसः ख्यातो नाम्ना भुवि मदनसञ्जीवन इति,
द्विवल्लाभ्यां तुल्यो घृतमधुसितादुग्धसहितः ।
निपीतः सप्ताहं प्रचुरमधुराहारसहितो,
नरं कुर्यान्नारीशतसुरतसुप्रीतहृदयम् ॥ २२९१ ॥
हन्यादुन्मादमुग्रं क्षयगदमरुचिं कामलामम्लपित्तं,
सर्वान्पित्तोर्द्धरोगाञ्छ्रुधिरभवगदान् रक्तपित्तज्वरांश्च ।
रक्तार्शः पित्तगुल्मं सततमतिमहानाहमन्तर्विदाहं,
पाण्डुं मेहांश्च मोहं प्रदरगदमपि स्त्रीजनस्योग्रमाशु ॥
र.र.स., र.को., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा ३ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण और कान्तलोहभस्म १–१ कर्ष, सुवर्णमाक्षिक २ पल, नमकके पानीमें शान्तिकरायेहुए केंचुए और लोहभस्म ३–३ पल लेकर पारे और केंचुओंको ४ पहर मर्दनकरनेसे नष्टपिष्टिका होजायगी । इसकेबाद सुवर्ण, अभ्रकसत्त्व, सोनामाखी, लोहभस्म और गन्धक इनको क्रमसे डालकर २–२ पहर लोहेके खरलमें मर्दनकर वालुकायन्त्रपर इसखरलको अथवा दूसरे लोहेके पात्रको रखकर इसकज्जलीको डालदे और नीचे अग्नि जलावे । गरमहोनेपर छोटी और बड़ी ब्राह्मी, मुशली चित्रक, हाथीशुण्डी, कालासम्भालू, गोखरू, इन प्रत्येकका १–१ पाव क्रमसे रस सुखावे । सबकारस एकदम सूखजानेपर निकालकर मधुमें खरलकर गोला बनाय सोमलकी मूषामें रखकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर सुखादे । फिर दश जङ्गलीकण्डोंकी आंच देकर निकालकर भैरव और कन्याओंका पूजनकर पीसकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्ती घी, मधु, शकर और दूधकेसाथ लेनेसे और मधुरआहारकरनेसे बहुतसी स्त्रियोंको सुख करसकाहै और यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे भयंकर उन्माद, क्षय, अरुचि, कामला, अम्लपित्तादि समस्तपित्तोपद्रव, रुधिर और रक्तपित्तजविकार, रक्तार्श, पित्तगुल्म, आनाह, भीतरकीजलन, पाण्डु, प्रमेह, मोह, प्रदर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५०६ ॥

५०७ मदनसन्दीपनचूर्णम्

गोक्षुरः क्षुरको मेथी मर्कटी शतपुत्रिका ।
मधुकं क्षीरकाकोली तालमूल्यमृताऽम्बु च ॥ २२९३ ॥
शाल्मलीलोहगगने विदारी तालमस्तकम् ।
हस्तिकर्णो बला धात्री जातीफलकसेरुकम् ॥ २२९४ ॥
शृङ्गाटको माषपर्णी भृङ्गराट् कुङ्कुमं वचा ।
शिलाजतु शितावीजं पारदं धातुमाक्षिकम् ॥ २२९५ ॥
वटस्य कोमलाः पादा एलायष्टिकतण्डुलाः ।
रक्तशालिश्च गोधूममाषका यवकास्तथा ॥ २२९६ ॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं सितशर्करया समम् ।
विडालपदकं खादेत्सर्पिषा मधुना सह ॥ २२९७ ॥
शीतं पयोऽनुपानञ्च कामिनीं कामयेन्नरः ।
वीर्यहीनो भवेद्यस्तु जीर्णो व्याधिप्रपीडितः ॥२२९८॥
प्रमेही मूत्रकृच्छ्री च स्त्रीदोषात्पतितध्वजः ।
सोऽशीतिवार्षिको वृद्धो युवेव रमतेऽङ्गनाः ॥ २२९९ ॥
पुत्रञ्च जनयेद्वीरमरोगं दीर्घजीविनम् ।
भेषजैर्विविधैः किं स्यादन्यैश्च शतसहस्रकैः ॥२३००॥
फलं न किञ्चित्तत्राऽस्ति केवलं गौरवं बहु ।
बालसस्यं यथातोयं वर्धते च दिनेदिने ॥ २३०१ ॥
तथाऽनेन नृणां देहः पुष्टो भवति नान्यथा ।
योऽस्ति षण्डस्सपुत्रन्तु स गच्छेत्प्रमदाशतम् ।
जगतस्तु हितार्थाय चूर्णं मदनदीपनम् ॥२३०२॥
च., र.र., वाजीकरणे ।

भाषा—गोखरू, तालमखाना, नागरमोथा, केवाचकेबीज, शतावर, मुलहठी, क्षीरकाकोली, तालमूली, गिलोय, सुगन्धवाला, सेमलकामुसला, लोह और अभ्रकभस्म, विदारीकन्द, ताड़फलकी मज्जा, हस्तिकर्णपलाशकी छाल, बला, आंवले, जायफल, कसेरु, सिंघाड़े, माषपर्णी, भृङ्गराज, केसर, वच, शिलाजीत, इंदकी सींगी, पारा और सोनामाखीकीभस्म, वटकीजटा, इलायची, मुलेठी, सुगंधिचावल, साठीचावल, गेहूंकासत, उड़दकीदाल, छिलकेरहित जव, सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सबकीबराबर शकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला मधु और घीके साथ खाकर धारोष्ण दूध पीनेसे असक्षम आदमी यथेष्ट स्त्रीगमन करसकाहै । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे वीर्यहानि, व्याधिसेजीर्णता, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, योनिदोषसे पतितध्वज, वन्ध्यत्व, इनसब दोषोंको यह दूरकरताहै ॥५०७॥

५०८ मदनसुन्दररसः (प्रथमः)

माक्षीकं धातुमाक्षीकं लोहचूर्णं शिलाजतु ।
पारदञ्च वराञ्चैव गन्धकञ्च समं समम् ॥२३०३॥
घृतेन भावयित्वा तु पात्रे कृत्वा तु चाऽऽयसे ।
निष्कमात्रप्रमाणन्तु भक्षयेत्प्रत्यहं नरः ॥२३०४॥
मत्स्याण्डं तिलपिष्टञ्च घृतेन च परिप्लुतम् ।
क्षीरेणाऽनुपिबेद्रात्रौ शर्करामधुमिश्रितम् ॥२३०५॥
मासमात्रं पिबेन्नित्यं वीर्यवृद्ध्यै दिनेदिने ।
स पुमान्रमयेन्नारीमजस्रं चटको यथा ॥२३०६॥
र.र., च., वाजीकरणे ।

भाषा—रूपामाखी, सोनामाखी, लोहभस्म, शिलाजीत, शुद्धपारा त्रिफला और गन्धक समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें सबचीजें मिलाकर घीसे लोहेके पात्रमें १-२ रोज मर्दनकर लोहेकपात्रमें रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ मासे रोज खाकर मछलीकाअंडा, तिलकन्क और घी मिलाकर दूधकेसाथ रात्रिमें पीनेसे वीर्यकीवृद्धि और वाजीकरण होताहै । शक्कर और मधुकेसाथ एकमहीनेतक खानेसे स्त्रियोंको चटककी तरह रमणकरताहुआभी वीर्यकी हानिको नहीं प्राप्तहोता ॥ ५०८ ॥

५०९ मदनसुन्दररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं गन्धकं देवपुष्प-
मेला मस्तिः स्याद्वराङ्गं तथैव ।
अब्धेः शोषः कलकङ्कोलमभ्रं
जातीपत्री खाखसीयं फलञ्च ॥२३०७॥
सर्वं समं म्लेच्छयवानिका च
तत्केसरं कुङ्कुमयष्टिजञ्च ।
जातीफलं हिङ्गुलकं पिपञ्च
योज्यं त्रिभागं त्वहिफेनकञ्च ॥ २३०८॥
एतत्समानं कनकस्य बीजं
भाव्यं जयाह्वि मुनिसंख्यया च ।
मात्रां पिबेदात्मबलानुरूपां
घृतं सुदुग्धं ससितं प्रपेयम् ॥
शुक्रं च्युतं नैव भवेद्व्यवाये
निम्बूफलास्वादनतोऽन्तरेण ॥२३०९॥

टो., र. पा. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लौंग, इलायची, मस्तगी, तज, समुद्रशोष, अक्लकरा, शीतलचीनी, अभ्रकभस्म, जावित्री और पोस्त १-१ तोला, खुरासानी अजवाइन, नागकेशर, केशर, मरिच, जायफल, शुद्ध शिंगरफ, वछनाग और अफीम ३-३ तोले, इनसबके बराबर शुद्धधतूरेके बीज लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भांगके स्वरससे ७ दिनतक मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे लेकर ३ गोलीतक आत्मशक्त्यनुसार लेकर दूधमें घी और शक्कर डालकर पीनेसे रतिसमयमें नींबूकेचूसेबिना शुक्र स्खलितनहींहोता । इसे उचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, संग्रहणी, उन्माद, गठिया येसब नष्टहोतेहैं॥

५१० मदनाङ्कुशरसः

टङ्कणात्तुतृतीयांशं सैन्धवं लवणं न्यसेत् ।
पञ्चमांशं सोममलं षडंशं हरितालकम् ॥२३१०॥
एकादशांशं सूतञ्च मर्दयेच्च दिवाम्बुना ।
रसोनभल्लातरसे वातदारिरसे पुनः ॥ २३११ ॥
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य वह्निं यामांस्तु षोडश ।
दत्त्वा तथातसीयर्णं टङ्कणं मदनाङ्कुशम् ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन स्वरभेदादिनाशनम् ॥२३१२॥

र. का , स्वरभेदे ।

भाषा—सुहागा १ भा , सेंधानमक $\frac{1}{3}$ भा., सफेदसोमल $\frac{1}{5}$ भा , शुद्धहरिताल $\frac{1}{6}$ भा., शुद्धपारा $\frac{1}{11}$ भाग लेकर सबको हरेकाथसे, लहसनकास्वरस, भिलावेकातैल, एरण्डकाम्बरस इनमें क्रमसे १-१ दिन मर्दनकर सुखाकर कपड़मिट्टीदीहुई आतशी-शीशीमें वालुकायन्त्रमें १६ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे स्वरभेद, श्वास, कास, आनाह, आध्मान इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१० ॥

५११ मदनोदयरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोत्पलदलद्रवैः ।
यामं मर्द्यं पुनर्गन्धं सार्धं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥२३१३॥
पूर्वद्रवैर्दिनं मर्द्यं रसार्द्धं गन्धकं पुनः ।
दत्त्वा तद्वद्दिनं मर्द्यं काचकूप्यां निरोधयेत् ॥ २३१४ ॥
दिनैकं वालुकायन्त्रे पक्वमुद्धृत्य चूर्णयेत् ।
भूकूष्माण्डीकषायेण भावयेद्दिनसप्तकम् ॥ २३१५ ॥
छायायां तत्सितातुल्यं निष्कैकं भक्षयेत्सदा ।
शणमूलं सबीजञ्च मुशली शर्करा समम् ॥ २३१६ ॥
गवां क्षीरैः पलार्द्धं तु अनु रात्रौ सदा पिबेत् ।
अनन्तं वर्धते वीर्यं रसोऽयं मदनोदयः ॥ २३१७ ॥

र रा., ध , र.र , रसमञ्जरी, र कौ.,रसायनगं , र.क , रस- सागर, रसायने ।

टि०—रसेन्द्रचिन्तामणौ रसराजसुन्दरे अभिनवरसमन्दिरे नाम्नान्यमेव पाठ उद्धृतोऽस्ति, तत्र रक्तोत्पलदलद्रवैरित्यस्य भर्वने भवतीत्यत्र तु पार्वतीस्तर भूकूष्माण्डीभावनाऽस्ति, अनुपाने च शणबीजमूले परित्यक्ते इति विशेषो दृश्यते परन्तु भोऽस्मिन्निरूपितः यद्गिरिभावनयाऽस्य रसस्योत्पादने सर्वत्र मामश्रस्य भविष्यति, पाठद्वयस्यापि मदनोदयमिति बोद्धव्यम् । अथ पाठेऽनङ्गसुन्दरेणाऽऽपातत सादृश्यमवहति परन्तु पाठभेदमादाय पृथक् पाठ स्वीकृतोऽस्तीति विद्वद्भिरालोचनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी समानभागमें नीलवर्ण-कज्जलीकर लालकमलकेफूलोंकेरससे एकपहर मर्दनकर कज्जलीमें आधी गन्धक मिलाकर पूर्वद्रवसे एकदिन मर्दनकर पारेमें आधी शुद्धगन्धक फिर डालकर एकरोज मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें एकदिनरात पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर भुईंकोंहडेकेरसमें ७ रोज भावना देकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ मासेकी मात्रा बराबरकी शक्कर मिलाकर खावे और ऊपरसे शणबीज और बीज, मुशली तथा शक्कर सब समभागका चूर्ण २ तोले फांककर गायका दूध पीवे तो वीर्यकी अत्यन्तवृद्धिहोतीहै ॥५११॥

५१२ मदनोदयरसः (द्वितीयः)

वैक्रान्तकान्तगगनं रसहेमतुल्यं
नागं त्रयं तदनु चार्द्रपयं विमर्द्य ।
धात्रीवरीमुसलिशाल्मलिमर्कटीभि-
र्मिश्र्य दुग्धसितया मदनोदयाख्यः ॥ २३१८ ॥

५१६ मधुपक्वहरीतकी योगः (प्रथमः)

सुपक्वपथ्यापलपञ्चकञ्च
मूत्रे गवां प्रस्थमिते विपाच्य ।
प्रस्थे पुनः काञ्जिकदुग्धतक्रे
पक्त्वा ततो निष्कुलिका विधाय ॥२३२९॥
व्योषं यवानी कुटजस्य बीजं
मुस्ता जलं दाडिममम्लवेतम ।
सुधातकीपुष्पमजाजियुग्मं
कणाजटा मोचरसं सुबिल्वम् ॥ २३३० ॥
सौवर्चलं सैन्धवमश्मभेदं
जम्ब्वाम्रमज्जाऽतिविषाऽतिपाठाः ।
लवङ्गजातीफलतुर्यजाता-
न्येतानि तुल्यानि च तत्र जातम् ॥ २३३१ ॥
कपित्थमण्डूरमयो दशांशं
समस्तचूर्णार्द्धमिता सिता च ।
अनेन पथ्याः परिपूरणीयाः
सूत्रेण युक्त्या परिवेष्टनीयाः ॥ २३३२ ॥
स्थाल्यां ततस्ताः क्रमशो निधाय
तृणानि मुक्त्वा परितो विमुच्य ।
मन्दाग्निना याममथो विमुच्य
विधाय शीता मधु निक्षिपेच्च ॥
ताः सेव्यमाना ग्रहणीप्रमेह-
श्वासापहा वह्निकराः सुखाप्याः ॥ २३३३ ॥

पा. व., ग्रहण्यादौ ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई काबुली हर्रें ५ पलको एक-१ सेर गोमूत्र, काञ्जी, दूध और छाछमें क्रमसे पकाकर गुठली निकाल निकाल त्रिकटु, अजवाइन, इन्द्रजव, नागरमोथा, सुगन्धवाला, अनारदाना, अम्लवेत, धावड़ीके फूल, दोनोंजीरे, पीपल, जटामांसी, मोचरस, बेलगिरी, संचल, सेंधानमक, पाषाणभेद, जामुन और आमकीगिरी, अतीस, बड़ीपाठा, लौंग, जायफल, तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, कैथकीमज्जा, मण्डूर और लोहभस्म ये प्रत्येक सबसे दशवा भाग और सबसे आधी शक्कर लेकर बारीक चूर्णकर हर्रोंमें भरकर कचेसूतसे बांधदे फिर एकहण्डीमें घास बिछाकर बहुतसंभालकर चुनकर रखदे और ऊपरसे घाससे दबाकर बहुतही मन्द अग्निसे एकपहरतक पकाकर नीचेउतारले । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मधुमें डालकर रखदे । इनमेंसे यथाग्निबल सेवन करनेसे ग्रहणी, प्रमेह श्वास, मन्दाग्नि, धातुक्षीणता येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५१६ ॥

५१७ मधुपक्वहरीतकीयोगः (द्वितीयः)

हरीतक्याः शतं द्रोणे पयसः परिपाचयेत् ।
कृताधशेषमुत्तार्य निष्कुलीकृत्य च क्षणात् ॥२३३४॥
रसगन्धकलोहानां पलेनापूर्य वेष्टयेत् ।
सूत्रेण मासमेकन्तु मधुमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ २३३५ ॥
पथ्याशी भक्षयेदेकां सर्वरोगविमुक्तये ।
क्षयपाण्ड्वाममन्दाग्निमेहग्लानी व्यपोहति ॥ २३३६ ॥

रसायनम., क्षये ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई मोटीहर्रें १०० नग लेकर १६ सेर दूधमें पकावे । खोआ होजानेपर उतारकर हर्रोंकी गुठली निकाल शुद्धपारा और गन्धक तथा लोहभस्म १-१ पलकी कज्जलीकर हर्रोंमें भरकर कचेसूतसे बांधकर मधुमें डालदे । ६-७ दिनके बाद इनमेंसे १-१ हर्रे खानेसे क्षय, पाण्डु, आम, मन्दाग्नि, प्रमेह और ग्लानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५१७॥

५१८ मधुमण्डूरम्

गृहीत्वा भिषक् प्रस्थमण्डूरभागं
शृते त्रैफले मर्दयित्वा च यामम् ।
पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ
पुटानीह देयानि चन्द्राश्विवारम् ॥ २३३७ ॥
तथा धेनुमूत्रे कुमारीरसे च
विधेयश्च पञ्चामृते योगराजः ।
भवेत्सिन्धुनागैः पुटैः सिद्धिदोऽय-
मचिन्त्यप्रभावश्च मण्डूर एषः ॥ २३३८ ॥
मधुमण्डुर एष कणामधुना
चिरपाण्डुगदं ननु हेममितः ।
जनको रुधिरस्य परं बलदो
विविधार्तिहरस्त्वनुपानबलैः ॥ २३३९ ॥

रसायनसं., वै. वि., नि. र., र. सु., यो. र., वै. चि., पाण्डुरोगे।

भाषा—एकसेर पुराना मण्डूर लेकर त्रिफलाके काढ़ेमें मर्दनकर साफ़कर दोपहर अग्निमें गरमकर गोमूत्रमें बुझावे । इसतरह २१ भावनाएं देकर गोमूत्र, घीकुंआर और पञ्चामृतमें २१-२१ भावनाएं देवे । प्रत्येकभावनाकेअन्तमें २-२ पहरकी आंच देनीचाहिये । इसतरह ८४ भावनाएं तथा पुट देनेसे यह अचिन्त्यप्रभाव मण्डूर तैयार होगा । इसमेंसे १-१ मासाकी मात्रा पीपल और मधुके साथ देनेसे पाण्डुरोग मिटताहै और नया रुधिर पैदाहोकर बलबढ़ताहै । अनुपानविशेषसे यह सबरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ मधुमालिनीवसन्तः

दृढमथ खर्गे वै भावयेन्नाससारं,
लकुचफलभवाद्भिश्छायया शोषयेद्वै ।
तदनु मृदुकृशानौ धारयेल्लोहपात्रे,
दृढदविमुकुलैस्ताम्रचूडाण्डगोलैः २३४०
जनितसकलतोयं ढालयेत्तस्य चोर्द्ध्वं,
असकृदयोदर्व्या घर्षयेत्तावदाशम् ।
गुलिकगमनमात्रं शुष्कतां च प्रयातम्,
भवति तु यत्प्रमाणं कर्चुरं स्यात्तदर्धम्२३४१
मरिचनिभमथैवं गौरवह्नीजचूर्णं,
लकुचजनिततोयैर्मर्दयेत्याससारम् ।

कृतमरिचसमानं दापयेदाज्यखण्डे,-
हरति शिशिरतापं जीर्णज्वरं समीरम्२३४२
मधुमालिनिनामाऽयं वसन्तो वैद्यपूजितः ।
अनुपानविशेषेण बलपुष्टिप्रदायकः ॥ २३४३ ॥
गर्भवृद्धिकरश्चाऽसौ गर्भिणीनां सुखावहः ।
रोगनाशात्परं दद्याद्बलवृद्धिविवर्धनम् ॥ २३४४ ॥

र. चं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शिंगरिफ और खपरियाको चक्रदरके रससे ७-७ बार घोटकर छायामें सुखाय बेरकीलकड़ीके कोयलोंपर लोहेकी कढ़ाहीमें रख जितनेतोले शिंगरिफहो उतनेही मुर्गीके अण्डे लेकर उनकी सफेदी और जर्दी धीरे २ डालकर सुखावे और लोहेकीकड़छीसे वारम्वार चलाताजाय, जब गोलिया फूलजाय और शुष्कहोजाय तब दवासे आधे कचूरके मिर्चबराबर टुकड़े करके डाले और उतनाही सफेदमिर्चका चूर्ण डालकर सबको चक्रदरके फलके रसकी ७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घी और शक्करकेसाथ देनेसे शीत तथा जीर्णज्वर और वायुको यह दूरकरताहै । अनुपानविशेषसे बल, पुष्टि, गर्भवृद्धि, अग्नि इनसबको बढ़ाताहै ॥

५२० मधुसूदनरसः (प्रथमः)

मृताऽभ्रगन्धं लवणानि पञ्च
ताप्यञ्च सर्वन्तु समानमागम् ।
विचूर्ण्य ताम्रस्य पुटे निवेश्य
सूतेन तुल्येन पुटं दद्यात् ॥ २३४५ ॥
सर्वं विचूर्ण्याऽथ पुटेत नीरै-
र्जयन्तिकामर्कहरिद्रावरीयैः ।
उन्मत्तवासाविपतिन्दुचित्र-
र्विषेण पश्चात्परिपाचयेत ॥ २३४६ ॥
लौहस्य पात्रे घटिकाद्वयञ्च
रसस्ततः स्यान्मधुसूदनोऽयम् ।
वल्लप्रमाणेन दद्यात चामुं
शुण्ठीघृताक्तं द्विदलं विवर्ज्यम् ॥२३४७॥

र. दी., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, पांचोंनमक और सुवर्णमाक्षिक १-१ तोला लेकर कज्जलीकर एकतोले तांबेके सम्पुटमें रख कपड़मिट्टी देकर ५ सेर कण्डोंकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर भस्महुये सम्पुटसहित खरलकर जैंत, चेंवाच, हल्दी, धतूरा, कुचिला, चित्रक, वच्छनाग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर सुखाकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर दो घड़ीकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३-३ रत्ती सोंठ और घीमें मिलाकरदेनेसे समस्त शूल नष्टहोतेहैं ॥५२०॥

५२१ मधुसूदनरसः (तृतीयः)

वङ्गेशाभ्रं दिनं मर्द्यं मधुना मधुसूदनः ।
पक्वोदुम्बरमध्यात्स्यस्तन्माषोबहुमूत्रजित् ॥ २३४८ ॥

रसायनसं., बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग, पारा, अभ्रक इनकी भस्में समभाग लेकर एकदिन मधुकेसाथ मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पक्केगूलरकेफल और मधुकेसाथ देनेसे यह बहुमूत्रको नष्टकरताहै ॥ ५२१ ॥

५२२ मनोभैरवरसः

त्रिक्षारं पञ्चलवणं मृतताम्रं रसं समम् ।
अर्कमूलकषायेण दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ २३४९ ॥
संशोष्य वालुकायन्त्रे दिनैकं वज्रमूषया ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खरपित्तेन भावयेत् ॥ २३५० ॥
दातव्यं माषमात्रञ्च मधुकस्याऽनुपानतः ।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु तान्द्रिकः सन्निपातकः ॥
मनोभैरवनामाऽयं रसः सर्वत्र पूज्यते ॥ २३५१ ॥

वै.चि. (सन्धिके), वा. तन्द्रिके ।

भाषा—तीनोंक्षार, पांचोंनमक, ताम्र और पारदभस्म सब समभाग लेकर आककीजड़कीछालके काढ़ेसे तीनदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर बज्रमूषामें रख वालुकायन्त्रमें एकदिन पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गधेकेपित्तसे १ भावना देकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुलहठीकेकाढ़ेकेसाथ देनेसे तन्द्रिक और सन्धिक सन्निपात नष्टहोताहै ॥ ५२२ ॥

५२३ मनःशिलादियोगः (प्रथमः)

मनःशिलायाः फलपूरकस्य
रसैः कपित्थस्य च पिप्पलीनाम् ।
क्षौद्रेण चूर्णं मरिचैश्च युक्तं
लिहञ्जयेच्छर्दिमुदीर्णवेगाम् ॥ २३५२ ॥

च.सं., छर्दिरोगे ।

भाषा—शुद्धमैनसिलको बिजोरा, कैथ और पीपलके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी मात्रा लेकर २१ मरिचोंके चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसे असाध्य वमन बन्दहोताहै ॥५२३॥

५२४ मनःशिलादियोगः (द्वितीयः)

चन्दनं तगरं कुष्ठं हरिद्रे द्वे त्वगेव च ।
मनःशिला तमालश्च रसः केशर पद्म च ॥ २३५३ ॥
शार्दूलस्य नखश्चैव सुपिष्टं तण्डुलाम्बुना ।
हन्ति सर्वविषाण्येव वज्रिवज्रमिवासुरान् ॥ २३५४ ॥

च.सं., विषाऽधिकारे ।

भाषा—सफेदचन्दन, तगर, कुठ, दोनोंहल्दी, सज, मैनसिल, तमालपत्र, पारदभस्म, केशर और शेरका नाखुन सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे चावलकेधोवनकेसाथ १-१ मासा देनेसे असुरोंको इन्द्रके वज्रकीतरह यह समस्त विषोंको दूरकरताहै ॥ ५२४ ॥

५२५ मनःशिलादियोगः (तृतीयः)

मनःशिला व्याघ्रनखसुरसैरम्बुपेषितैः ।
पाननस्याञ्जनालेपाः सर्वदाष्यविषापहाः ॥ २३५५ ॥

च.सं., विषाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, बाघकानख और तुलसी समभाग लेकर पानीमें पीसकर पिलाने, नस्यदेने, अञ्जन और लेपकरनेसे समस्त शोथ और विषोंको यह दूरकरताहै ॥ ५२५ ॥

५२६ मनःशिलादिवटी

मनःशिलाकुष्ठकरञ्जबीज-
शिरीषकाश्मीरभवैः समांशैः ।
विनिर्मिता वृश्चिकसम्भवस्य
संहारिणी स्याद्गुटिका विषस्य ॥ २३५६ ॥

रा मा , वृश्चिकविषे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, कुठ, करञ्ज और सिरसकेबीज, केशर येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पानीसे गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाथ खिलावे और दश स्थानपर लगावे तो बिच्छूकाविष दूरहो ॥ ५२६ ॥

५२७ मन्थानभैरवरसः (प्रथम.)

तृतीयपञ्चवक्त्रोद्दृष्यः

र म , र को , शा स , र प्र सु , र चि , र र स , र सु , चि, र भ , र च , चि क , र क , र का , र सि , टो , र म भा , रसायन स , श्वासकासाधिकारे ।

टि०—र का , टङ्कणस्थाने कटुफलीनियोजिता । रसायनसङ्ग्रहका रेणाऽस्य नाम पञ्चवक्त्रेति ज्ञानाद्वाऽज्ञानाद्वा स्थापित तदेकान्ततोऽनुचित, बहुग्रन्थेषु मन्थानभैरवेति नाम्ना प्रसिद्धस्य योगस्य नामान्तरक रणाप्योग्यत्वात् । किञ्च अन्तिमश्लोके रक्तपित्त निहन्त्याशु भास्कर स्तिमिर यथेति पाठपरिवर्तनस्याऽपि फल न ज्ञायते इष्टसामर्थ्या रक्त पित्तनाशकत्वस्याऽयोग्यत्वात् । दैववशादुपद्रवभूतरक्तपित्तनाशकत्वेनाऽनुभूय तथा कृत स्यादित्यनुमीयते परन्तु सर्वत्र तथाल्लेखकरणस्याऽयोग्यत्वात् ।

५२८ मन्थानभैरवरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं गन्धकं ताम्रभस्म
सर्वं पिष्ट्वा चाऽथ जम्बीरमध्ये ।
दोलायन्त्रे पाचयेत्तद्दिनैकं
पक्वं पिष्ट्वा चाऽपि जम्बीरमध्यात् ॥ २३५७ ॥
नीत्वा भाव्यं वक्ष्यमाणद्रवैस्त-
त्पिष्ट्वा पिष्ट्वा खल्वमध्ये यथावत् ।
हिङ्गुद्रावैश्चाटरूपेन्द्रनिम्ब-
जातै द्रावैः सर्पनेत्र्या रसैश्च ॥ २३५८ ॥
ब्राह्मीद्रावै मीननेत्रीरसैश्च
द्रावैस्तद्वद्धंसपाद्या रसैश्च ।
हस्तीशुण्डीरुद्रपादीसुवर्ण-
द्रावैस्तद्वद्वातशत्रोः क्रमेण ॥ २३५९ ॥
द्रावैस्तद्वद्वायसीसम्भवैश्च
नित्यं नित्यं चैकमेकं दिनं तत ।
सर्वं पिष्ट्वा लोहपात्रे विमुद्रय
पक्त्वा यन्त्रे वालुकायां दिनैकम् ॥ २३६० ॥
विशालिकाचित्रकदीप्यजीर-
कटुत्रयाणां सविषैरजोभिः ।
समं विमिश्रं खलु सन्निपाते
रक्तित्रयं मुद्गजयूषभोक्त्रे ॥ २३६१ ॥

चि क सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरसमें गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेट पकेजम्बीरकेबीचमेंरख उसीके रसमें दोलायन्त्रसे एकदिन पकाकर हींग, अडूसा, इन्द्रजव, नीमकीछाल, सर्पाक्षी, ब्राह्मी, मत्स्याक्षी, हंसराज, हस्तिशुण्डी, रुद्रजटा, धतूरा, एरण्डके पत्ते और मकोयके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज भावना देकर गोलाबनाय लोहेकेसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें एकदिन पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर इन्द्रायण, चित्रक अजवायन, जीरा, त्रिकटु, शुद्ध बछनाग, इन-सबका समभागका चूर्ण इसरसकी बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती मूंगके यूष और भातकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात नष्टहोवेहैं ॥ ५२८ ॥

५२९ मन्थानभैरवरसः (तृतीयः)

सूतं शुल्वशिलालकाऽभ्रवर्लि सद्गन्ध्य मिश्रीकृतं,
कुष्ठं नागवलाविदारिकवरीगोकण्टकैरण्डकम् ।
दत्त्वा खल्वतले विमर्दितदृढं यत्नाद्भुवः स्वे रसे
वल्लैकैकमिता निबद्धगुटिका वातञ्च पित्तञ्जयेत् ॥

र म , र , वातपित्तयो ।

टि०—अत्र द्वितीयपादे विदारि च वरी पाठो दृश्यते तत्र समीचीन दृश्येति वक्तव्येन सह सम्बन्धात् । अत उन्मीयते छन्दो भङ्गभिया विदा रिकाशब्दस्थाने विदारि इति प्रयुक्तमुन्मीयते, अथवा विदारीति कन्दार्थे विदारिकन्दम् । कवरी इति शब्देन लघुवल्लिका ग्राह्या, अथवा बर्बरी अभिप्रेता स्यादिति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्ध मैनसिल और हरिताल, अभ्रक, शुद्धगन्धक येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर कुठ, नागवला, विदारी, बबई अथवा बबूलकीफली, गोखरू, एरण्डकी जड़, इनसब इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानसे देनेसे वात और पित्तकेरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५२९ ॥

५३० मन्थानभैरवरस (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं लोहं ताम्रञ्च सीसकम् ।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं समभागानि चूर्णयेत् ॥ २३६३ ॥
अर्द्धभागं विषं दद्यान्मर्दयेद्वासरद्वयम् ।
शृङ्गवेराऽनुपानेन दद्याद्गुञ्जाद्वयोन्मितम् ॥ २३६४ ॥
नवज्वरे महाघोरे सन्निपाते सुदारुणे ।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥
धान्चितं भोजनं दद्यात्तु यञ्चन्दनलेपनम् ॥ २३६५ ॥

र सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र और नागभस्म, मरिच, पीपल, सोंठ, येसव १–१ तोला, शुद्ध बछनाग ६ माशे लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखके रससे दोरोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नवज्वर, महाघोर सन्निपात, दारुण शीतज्वर, दाहपूर्वज्वर, गुल्म और त्रिदोषजशूल इनसबको यह नष्टकरताहै। त्रिदोषजव्याधिमें इच्छानुसार भोजन देना। दाह अधिकहो तो चन्दनका लेप करना ॥५३०॥

५३१ मन्मथरसः

मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरुकैः।
मर्दितं हेमसूताऽभ्रं मूषास्थं पुटपाचितम् ॥ २३६६ ॥
गन्धकेन रसः पिष्टः कल्हाररसमर्दितः।
विपक्वो वालुकायन्त्रे चतुर्यामैः क्रमाऽग्निना॥२३६७॥
शाल्मलीचूर्णसंयुक्तं माषराण्येकविंशतिम्।
भक्षयित्वा चतुर्गुञ्जं गव्यं क्षीरं पिबेदनु ॥ २३६८ ॥
सर्वाङ्गोद्वर्तनं कुर्यात्सयवैः शाल्मलीरसैः।
अन्वहं मधुराहारः रमेत स्त्रीसहस्रकम् ॥ २३६९ ॥

र को, र र स, वाजीकरणे।

टि०-हेमसूताऽभ्राणां गन्धकरसयोश्च पृथक् पाकं कृत्वा एकत्र मिश्रय्य मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरुकल्हाराणां रसैः क्रमशः एकैकदिनं मर्दयित्वा व्यवहारः कर्तव्य इति रहस्यम्। स्त्रैणशैलीशैथिल्यादि हरि मतयाप्रतिभानाद् द्वौ रसौ स्यातिनौ, वस्तुतस्त्वेक एव रसः। द्वयो सयोगेनैव मूलस्थफलश्रुतिरुदेति न पृथक्त्वेति सहृदयैर्विभावनीयम्।

भाषा—सुवर्ण, पारा और अभ्रकभस्म समभाग लेकर मुसली, केलेका कन्द, असगन्ध, कसेरु इनके रसोंमें १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४ पहर क्रमाग्निसे वालुकायन्त्रमें पकावे, फिर समभाग शुद्धगन्धक और पारेकी कज्जलीको सफेदकमलके रससे मर्दनकर गोलाबनाय वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर पूर्वरसकीबराबर इसका मिश्रणकर मुसली, केलेकाकन्द, असगन्ध, कसेरु और सफेदकमलके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सेमलके मुसलेके ४ माशेचूर्णके साथ खाकर ऊपरसे गायकादूध पीवे। ऐसे ब्रह्मचर्यपूर्वक २१ दिनतक करनेसे बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसकाहै इसमें मधुराहारका सेवनकरनाचाहिये ॥५३१॥

५३२ मन्मथाभ्ररसः

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं पलमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणः ॥ २३७० ॥
कर्पूरं तोलकं दद्याद्वङ्गञ्च कोलसम्मितम्।
ताम्रं तोलार्द्धकं तत्र निःशेषं मारितं पुनः ॥ २३७१ ॥
लोहकर्षं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकजीरकम्।
विदारीं शतमूलीञ्चेक्षुरबीजं बलान्तथा ॥ २३७२॥
मर्कट्यतिविषाञ्चैव जातीकोषफले तथा।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जं यमानिकाम् ॥ २३७३ ॥
शाणभागान् गृहीत्वैतानेकीकृत्यैव पेषयेत्।
गुञ्जाद्वयन्तु कर्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिबेदनु ॥ २३७४ ॥
गृहे यस्य शतं नार्यो विद्यन्तेऽतिमदायिनः।
न तस्य लिङ्गशैथिल्यमौषधस्याऽस्यसेवनात्॥२३७५॥
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासमाव्रजेत्।
कामरूपी भवेन्नित्यं वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ २३७६ ॥
रसः श्रीमन्मथाऽभ्रोऽयं महेशेन प्रकाशितः।
अस्य भक्षणमात्रेण काष्ठं जीर्यति तत्क्षणात् ॥
नाशयेद् ध्वजभङ्गादीन् रोगान्योगकृतानपि ॥२३७७॥

भै र., र सु, र स, रसायने।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म २ कर्ष, शुद्धरसकपूर १ तोला, वङ्गभस्म ४ माशे, ताम्रभस्म ६ माशे, लोहभस्म १ कर्ष, विधारा, सफेदजीरा, क्षीरविदारी, काष्ठविदारी, शतावर, तालमखाना, बला, केवाच, अतीस, जावित्री, जायफल, लौंग, भाङ्गेकेबीज, सफेदराल, अजवाइन सब ४–४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ रोज मर्दनकर रखछोड़े। अथवा ऊपरकहीहुई दवाओंके अन्यरससे भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमदूधकेसाथ सेवनकरनेसे अव्याहतवेगहोकर बहुतसी स्त्रियोंका सङ्गकरताहुआभी शुक्र और बलको क्षीणताको प्राप्त नहीं होताहै। वृद्ध आदमी भी १६ वर्षके सदृश दिखाई देताहै। अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै कि काष्ठको भी हजम करसकाहै टोटकादिकसे कियेहुए ध्वजभङ्ग वगैरहको यह नष्टकरताहै ५३२

५३३ मलदारणगुटिका

सपारदं गन्धकलोहचूर्णं
नेपालताम्रं त्रिकटो. समेतम्।
अफेनकं चित्रकवत्सनाभ
सटङ्कणाऽङ्कोलयुतं समानम् ॥ २३७८ ॥
आकल्लकं भृङ्गरसेन वह्न्या
देवालिकाभावनया प्रसिद्धः।
कासे ज्वरेऽजीर्णविसूचिकायां
श्वासोदरे चैवमरोचके च ॥
जीर्णज्वरोग्रे मलदोषिवृन्दे
मूर्च्छायवालग्रहसन्निपाते ॥ २३७९ ॥

र (मा) ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म, शुद्धनेपाल गोटा, ताम्रभस्म, त्रिकुटु, अफीम, चित्रकमूल, बछनाग, भुना सुहागा, अङ्कोल्कीजड़ और अकल्करा समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरा, ऊंगा धूहर और नागकेसरके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, ज्वर,

अजीर्ण विसूचिका श्वास उदररोग अरोचक, जीर्णज्वर मन्दाग्नि आदि रोग और सन्निपात नष्ट होतेहैं ॥ ५३३ ॥

५३४ मन्दारणसुन्दररसः

आमादपारदरसद्रुतिगन्धकानां
भागा समं द्विगुणमेलितताम्रनाम ।
गीर्वाणदालिरसभावनया निरुद्ध
सिद्धा रसा हि मन्दारणसुन्दरोऽयम् ॥ २३८० ॥
र (मा) विविधे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा ताम्रभस्म शुद्धगुग्गुल सब समभाग लेकर सबसे दूने शुद्धजमालगोटे डालकर ४ पहर घोटकर मन्दारके रसमें मर्दन करनेपर चनप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे शक्ति अथवा कायानुसार १ से २ गोली तक ठंढे पानीके साथ देनेसे यथाहुआ मल जुलाबद्वारा निकल जाताहै और मलजनित जितनी विकारें हैं वे सब निवृत्त होजातीहै ॥ ५३४ ॥

५३५ मल्लचूर्णम्

सामक्षारस्य चूर्णं वै कपालान्तरसंस्थितम् ।
धारयेद्गुदतोऽङ्कुर विभिन्नं तत्र यत्नजम् ॥ २३८१ ॥
पक्वानि स्रावयित्वाऽऽशु तथाऽपक्वानि नाशयेत् ।
न पीडा जायते तत्र न व्यथाऽपि भवेद्गुद ॥
न दाहति पुनर्नैव गुदपार्श्वपरिस्थिते ॥ २३८२ ॥
र का, अर्शोऽधिकार ।

भाषा—संखियाको बहुत बारीक चूर्णकरके कपालके बीचमें रखकर गुदाके भीतर मस्सोंके पास रखे तो मिलाता रहनेसे पक हुए मस्सेका गिरजातेहैं न उत्पन्न नहींहोते और किसीतरहकी विषम पीडा भी नहींहोती ॥ ५३५ ॥

५३६ महापञ्चशरलरस

रसाग्निका घनरसौ स्वतामा कृष्णाभीतकौ ।
एलाद्यं पञ्चगुणपाषाणानां गृहीत्वा समभागिकान् ॥ २३८३ ॥
सर्व त्रिफलात्रिपुष्पाद्य पिबेदुमत्य तक ।
रसायन्द्ररसमेव प्रतिवर्ष चतुर्गुणम् ॥ २३८४ ॥
दापयत्समस्मैव निर्गुण्डीस्वरसं तथा ।
सन्धिलेप तत कृत्वा मुखापरि निधापयेत् ॥ २३८५ ॥
मन्दाग्नौ पाचयेद्याम स्तुष्णपिधानतः ।
मर्दितस्याऽऽदर्शनं तु स्यादर्शान् समुन्नत ॥ २३८६ ॥
मद्यपानविकारेषु पानात्ययगदे तथा ।
श्वास कासेऽश विषमज्वर एव विद्रधौ ॥ २३८७ ॥
दर्पे गुञ्जाऽर्धगुञ्जा वा पथ्य तत्रादन हितम् ।
घृतशाकया दध्य समपातगदेषु च ।
पथ शाताद्यक्षाऽत्र पभृगलसभाषम ॥ २३८८ ॥
र स सार ।

भाषा—पारा हड गन्धक अभ्रक सूखे मुनक्का कजर दि। सब दवा और पीसे हुए पाषाणभेद निर्गुण्डीके रस

भागमें लेकर रसमें छोटी २ कड़ाहियाकर एक घड़ेमें डालकर सोम रस चौगुना कल्कलमदका रस और उतनाही निर्गुण्डीका रस डालकर दोनों घड़ोंके मुहपर कपडमिट्टी कर सन्धि बन्दकरे । थोड़ा सुखानेपर चूल्हेपर रखकर ४ पहरकी आंच दे । फेरी २ उपरके घड़ेपर ४ तह भीगाहुआ कपड़ा रखदे । जार पहरकेबाद बायमेंपर रखकर गरडी लगाना बन्द करे । स्वाङ्गशीतल होनेपर ऊपरके घड़ेमें लगेहुए फूल निकाल । इन्हे भरेमें उतारकर रखछोड़ । इसमेंसे आधी अथवा १ रत्ती या और वेदरके साथ मिलाकर देनेसे समस्त वातविकार नष्ट होते । प्यासलगनेपर ठंडा पानीपीवें । पथ्यमें छाछभात देना चाहिये ।

विशेष सूचना—यद्यपि सूक्ष्म मात्राही उत्तम है तथापि परन्तु इसका बारम्बारके अभ्याससे समस्त रोग नष्ट न होजाय । यह १० या १२ बार विशुद्ध कर स्थायी होजायगा इसलिये इसकी १ रत्तीकी मात्राए करनी चाहियें । अब स्थायी करने इसमें कपेरी अधिक तीक्ष्णता आजातीहै ॥ ५३६ ॥

५३७ महायोगः

दशा पूरितरम्भि शतमल्लयुता द्विदोषाश्रुषेन ।
दत्ताय गुञ्जमिदं श्वास कास ज्वर प्रसिद्धोऽयम् ॥
नि भ म आमाऽधिकारे ।

भाषा—जायफलोटाईमें ५ तोले संखिया पीसकर डालकर और आकडेका भरके आकके पत्तोंसे मुंहको बंदकर मुलतानीमिट्टीके साथ कुमीइस करके मजबूत करके मिट्टी करके हांडीमें रखदे । ईंधनपर साधारणरूपमें पकाकर उसकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़ । इसमें १-१ रत्ती उचितानुसार नागकेसरके साथ देनेसे श्वास कास और शीतज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ महासिन्दूररस (प्रथम)

नवकर्षमितं सूता स्वर्णाब्धकं तत्समम् ।
चतुःकर्षमिता मल्ल गन्धकपाषाणसंमितम् ॥ २३९० ॥
गन्धकधातुं समयं काचकूप्यां निधापयेत् ।
क्रमवृद्धाग्निना बालुकायन्त्रे पचेत् ॥ २३९१ ॥
यदि गाढ्यामध्ये कृत्वा शीतं समुद्धरेत् ।
स्यात्ततो महासिन्दूर सर्वरोगनिवारकम् ॥
युक्त्यनुपानतो स्याद्सन्निपातादिकान्गदान् ॥ २३९२ ॥
ताम्बूल नि भ म रसायन ।

भाषा—शुद्ध पारा और कपूर ९-९ कर्ष शुद्ध गन्धक ४ तोल शुद्धसंखिया ७ कर्ष मन्द गन्धक और पाषाणभेद कर ४-७ कर्षमें दीघ्र अग्निसे मन्द करके कांचकी आतशी शीशी और सब गलाकर ८६ पहर अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर उपरके कण्ठमें लगे सिन्दूरको निकालकर रखछोड़ । इसमेंसे १-१ रत्ती उचित अनुपानके साथ देनेसे सन्निपात श्वास कास और अनेक रोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५३८ ॥

५३९ मल्लसिन्दूररसः (मल्लचन्द्रोदयः) (द्वितीयः)

नैम्बूकनीरेण दिनत्रयन्तु
श्वेतादिरूपांश्चतुरोऽपि मल्लान् ।
यथोत्तरं तूग्रबलान्मिथस्तान्
समांशसूतेन विमर्दयेत ॥ २३९३ ॥
ताभ्यां समानेन सुगन्धकेन
कृत्वा मसीं कूपिकया पचेत ।
सर्वार्थकर्यां खलु कोष्ठिकायां
यामत्रयं शीतलमुद्धरेत ॥ २३९४ ॥
मल्लादिचन्द्रोदयमामनन्ति
सर्वौषधेभ्योऽपि प्रधानवीर्यम् ।
विसूचिकासन्निपतत्त्रिदोषान्
व्याधीनपाकर्तुमनन्यशस्त्रम् ॥ २३९५ ॥

रसायनसार., सन्निपाते ।

भाषा—श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण सोमल समभाग लेकर सबकी बराबर पारा डालकर यहांतक मर्दनकरे कि पारा मि जाय फिर इसकी बराबर शुद्ध गन्धक डालकर वालुकायन्त्रमें रख सर्वार्थकरी भट्टीमें ३ पहरकी अग्निदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े ।इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे हैज़ा, सन्निपात और त्रिदोषजव्याधियां नष्टहोतीहै ५३९

५४० मल्लसिन्दूररसः (मल्लचन्द्रोदयः) (तृतीयः)

स्नुहीपयस्स्वर्कपयस्सु मल्लं
त्रिर्भावितं मर्दनशुष्करूपम् ।
बुभुक्षुसूतद्विगुणेन शुद्ध-
गन्धेन घृष्ट्वा च मसिं विदध्यात् ॥ २३९६ ॥
तां कूपिकास्थां सिकताऽऽख्ययन्त्रे
यथा वहिर्धूमविधि प्रयोद्धा ।
पिपक्षुरह्नोऽर्द्धमतो ददीत
शीशीमुखे मृत्कवलीं सुरुद्धाम ॥ २३९७ ॥
अर्द्धद्वितीयं दिनमग्नितापं
वर्बूरकाष्ठस्य ददीत तीव्रम् ।
कृत्वा स्वयं शीतमयोर्द्धशीशी-
गलस्थचन्द्रोदयमाददीत ॥ २३९८ ॥
कर्पूरजातीफलदेवपुष्प-
कस्तूरिकानक्रमदेलिकाभिः ।
लिह्यादिमं मासमशक्तशुक्र
आरोग्यहेतो मधुना मनुष्यः ॥ २३९९ ॥

रसायनसार., सर्वरोगे ।

भाषा—डंडाथूहर और आकके दूधमें ३ रोज़ सोमलको घोटकर सुखादेवे । इसकी बराबर बुभुक्षितपारा और दूना शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख आंचदे । दोपहरतक शीशीका मुंह खुला रक्खे धुंएको बाहरजानेदे । जबगन्धक जलजाय तब शीशीका मुहबन्दकर डेढ़दिनकी बब्बूलकेकाष्ठसे तीक्ष्ण अग्नि देवे स्वाङ्गशीतल होनेपर युक्तिसे शीशीको फोड़कर गलेमें लगेहुए सिन्दूरको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती शुद्धकपूर जायफल, लौंग, कस्तूरी, अम्बर और इलायचीके साथ मिलाकर मधुसे एकमहीनेतक सेवनकरनेसे तमामरोगोंसे मुक्तहोताहै ५४०

५४१ मल्लसिन्दूररसः (मल्लचन्द्रोदयः) (चतुर्थः)

मनःशिलालाऽसितप्रस्तराणां
मन्दारदुग्धेन सुभावितानाम् ।
दिनानि चत्वारि विधाय गोलं
छायासु शुष्कं च पयोभिरार्कैः ॥ २४०० ॥
समन्ततो द्व्यङ्गुलमुच्छ्रयं त-
च्चाऽऽच्छाद्य शुष्कं निखनेत्पृथिव्याम् ।
त्रिंशद्दिनान्येव ततो बुभुक्षु-
सूतेन तुल्येन विमर्दयेत ॥ २४०१ ॥
ताभ्यां समानेन च गन्धकेन
दुग्धाज्यशुद्धेन मसिं विदध्यात् ।
चन्द्रोदयप्रोक्तक्रिया पचेत
दिनानि चत्वार्यवधानचेताः ॥ २४०२ ॥
घटीश्चतस्रोऽनलके तु गत्वा
रुन्ध्यात्प्रवेगं प्रसितान्निकेतुम् ।
स्वयञ्च शीते सिकताख्ययन्त्रे
कूपीगलस्थं रसमाहरेत ॥ २४०३ ॥
अत्यन्तमुग्रं यदि तं विधित्सु-
र्नलीडमर्वाख्यविधे तु पूर्वम् ।
षट्सप्तविंशाधिकजीर्णगन्धं
सूतं नियुञ्ज्यादिह कर्मसिद्धौ ॥ २४०४ ॥

रसायनसार., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, हरिताल और कालासोमल स भाग लेकर ४ दिनतक आकके दूधसे घोटकर गोला बन छायामें सुखाकर आकके दूधमें डुबाकर रखदे । दूध सूखजा पर फिर डुबादे । इसतरह जबतक गोलेके चारोंतरफ दो अङ्गुल दूध न चढ़जाय तबतक करतारहे । फिर उसपर कप मिट्टी लपेटकर ३० दिनतक ज़मीनमें गाड़दे । इकतीसवें दि निकालकर सुवर्णग्रासदिये हुए बुभुक्षित पारेको समभाग मिलावे और सबकी बराबर शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्णकज्जली आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें चढ़ाकर ४ घड़ीतक शीशी मुंह खुलारक्खे । बादमें डाटलगाकर कपड़मिट्टी करदे और रोज़तक अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल रखछोड़े । इसे अत्यन्त उग्रवीर्य बनानाहो तो नलीडमरूयन्त्र ६, ७, २० अथवा जहांतक इच्छाहो उतनेगुण गन्धकजारण पारा डालनाचाहिये तो वैसाही उग्रता आजायगी ॥ ५४१ ॥

५४२ मल्लादिवटी (प्रथमा)

शतमल्लं पीतवर्णं पञ्चशाणमितं तथा ।
दशपञ्चमितं शाणं खादिरं तत्र निक्षिपेत् ॥ २४०५ ॥

यमयोः कज्जलीं कृत्वा नागवल्लीरसेन च ।
पिष्ट्वा कुर्याच्च वटिकां गुञ्जिकाद्वयमानतः ॥ २४०६ ॥
सायं प्रातश्च भोक्तव्या मासैकं पर्णखण्डकैः ।
गोदुग्धं केवलं पथ्यं फिरङ्गञ्चोद्धतं जयेत् ॥ २४०७ ॥
र र कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—पीतवर्ण शुद्धसोमल १। कर्षं, कत्था ४॥। कर्ष डालकर कज्जलीकर पानकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर सुबहशाम पानमें खानेसे १ महीनेमें बढ़ाहुआ फिरङ्गरोग दूरहोताहै। इसमें गोदुधके सिवाय और कुछ खानेको न देना ॥ ५४२ ॥

५४३ मल्लादिवटी (द्वितीया)

सितं सोमलं तालकञ्चाऽपि तुल्यं
ह्यहङ्कारवेल्या रसेन प्रमर्द्य ।
वटी क्षुद्रमुद्गप्रमाणा निहन्त्या-
ज्ज्वरांश्छीतपूर्वान् क्षणेनैव सर्वान् ॥२४०८॥
र प्र., वै द, बा, ज्वराऽधिकारे। बाहट शिलाक्षारो द्विगु णितो योजित नाम च शीतज्वरनिवारणेति स्थापितम्।

भाषा—शुद्ध सफेद सोमल और हरिताल समभाग लेकर दोनोंका अत्यन्तसूक्ष्मचूर्णकर तीनरोज करेलेके रसमें मर्दनकर छोटे मूंग बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ज्वर आनेसे एकघण्टा पहिले तुलसीकेपत्ते अथवा भाग १ रत्ती, भटकटैया १॥ माशा और धतूरेका आधापत्ता इसके साथ देकर २, ३ घंटे पानी पीनेको न देनेसे रोजका, तृतीयक, चातुर्थिक और तमाम विषमज्वर नष्टहोतेहैं। टि०—यद्यपि मूलमें करेलेका रस बताया हुआहै परन्तु उसकी जगह ककोड़ेका रस दिया जायतो अधिक काम करताहै यह हमारा निजी अनुभवहै। बिगड़ेहुए प्रतिश्यायमें १–१ गोली गायके धारोष्ण दूधसे देनेसे बहुत अल्पसमयमें तमाम दोषोंसे निर्मुक्त होजाताहै। परन्तु पहिले मलशुद्धि करलेना और ताजे प्रतिश्यायमें न देना उससमय उष्ण औषध देनेसे कफरुकजानेकेकारण आधासीसी अथवा अर्धावभेदसे आदमी पीडितहोताहै। कदाचित् भूलसे ऐसा होगयाहो तो मुलहटी, बीदाना, गावजुबां, बनपसा, रेशाखतमी, द्राक्ष, और लसोड़ा १–१ तोलेलेकर जवकुटकर इसकी ७ पुड़िया बनाना। एकपुड़िया १० तोले पानीमें रातको भिगोदेना सुबहमें थोड़ा मसलकर छानकर शकर डालकर पिलादेना और दूसरी पुड़िया भिगोदेना उसे सायंकालमें पिलाना। ऐसे ७ पुड़ियोंके समाप्तकरनेसे नवीन प्रतिश्यायमें उष्णोपचारसे पैदाहुई तमामशिकायतें दूर होजातीहैं उसी हिमको प्रभापात (तुलगना) मेंभी देनेसे अद्भुत गुण होताहै॥ किसीको स्वाभाविक श्वास कास हो और शीतो पचार प्रतिकूल हो तो इसका क्वाथ करके देना ॥ ५४३ ॥

५४४ मल्लादिवटी (तृतीया)

गायत्रीशौ बलिमलैः पृथग्वल्लचतुष्टयम् ।
समुद्रान्तारसैः कार्या गुडाः सर्षपसोदरा ॥२४०९॥
सन्धिवातगलत्कुष्ठदुष्टनाडीव्रणज्वरान् ।
फिरङ्गशोथपवनकफमान्द्योदरापहा ॥ २४१० ॥
कासश्वसनहिक्कादीन्निघ्नन्त्येव न संशयः ।
अनुपानं जलं शीतं तैलाम्लादि विवर्जयेत् ॥२४११॥
सि भे. म , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—कत्था, शुद्धपारा, गन्धक और सोमल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जवासेके रससे १–२ रोज़ घोटकर सरसोंके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढेजलकेसाथ देनेसे सन्धिवात, गलितकुष्ठ, दुष्टनाडीव्रण, घावसे उत्पन्नहुआ ज्वर, उपदंश, सूजन, वायु, कफ, मन्दाग्नि, जलोदर, कास, श्वास, हिचकी वगैरहको यह नष्टकरतीहैं इसके प्रयोगमें तैल, खटाई वगैरह न खाय ॥ ५४४॥

५४५ मसूरिकारी रसः (मूर्च्छितरसः)

बिल्वपत्ररसेनैव मूर्च्छितः पारदेश्वरः ।
हिलमोचीरसेनैव पीतो मधुसमायुतः ।
मसूरीं सर्वजां हन्ति ह्यस्थिजां सर्वदेहजाम् ॥२४१२॥
र बा, मसूरिकाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको बेलपत्रके रससे यहांतक मर्दनकरे कि मूर्च्छित होजाय। इसमेंसे १–१ रत्ती बथुआ अथवा हुरहुरके रस और मधुके साथ देनेसे अस्थिपर्यन्त धातुओंमें व्याप्त मसूरिका को यह नष्टकरताहै ॥ ५४५ ॥

५४६ महाकल्पः

रसगन्धकयो मार्गी गन्धमूलीरसं तथा ।
तत्समं मर्दयेत्प्राज्ञो भाण्डे यत्नेन धारयेत् ॥ २४१३ ॥
भूमौ निधापयेन्मासं ततः पश्चात्समुद्धरेत् ।
गुटिका मुद्गमानेन भक्षणीया दिनेदिने ॥
षण्मण्डलानि सेवेत महाकल्पो भवेद्ध्रुवम् ॥ २४१४ ॥
र.शा ,रसायने।

टि०—अत्र गन्धमूलीत्यभिधा मन्यताम्स्य का वा अभिप्रेतेति न निश्चयसाधनम्, टीकायामुत्तरन्यासादिगन्धप्रसारणेत्येतेऽपरस्यानुमानिक इतोऽस्ति ।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर अनन्तमूल अथवा कपूरकाचरीके रसमें दोतीनरोज मर्दनकर चिनीपात्रमेंडालकर एकहाथ गहरे गढ्ढेमें दबादे। एकमहीनेकेबाद निकालकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधवगैरहकेसाथ ६ मण्डल(२९४ दिन) तक खानेसे वली-पलितादिकसे निर्मुक्तहोकर युवावस्थाको प्राप्तहोताहै ॥५४६॥

५४७ महागन्धकः

रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं सुशोधितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥२४१५॥
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गाऽरिष्टपत्रके ।
सिन्धुवारदलञ्चैव मेलायीजं तथैव च ॥ २४१६ ॥

एषाञ्च कर्षमात्रेण तोयेनाऽथ विमर्दयेत् ।
मुकागृहे पुनः स्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २४१७ ॥
घनपङ्कं बहिर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २४१८ ॥
एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम् ।
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव बलवर्णप्रसाधनम् ॥ २४१९ ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ।
सूतिकाञ्च जयेदेतद्रक्तार्शो रक्तसम्भवम् ॥ २४२० ॥
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां विघ्नकारकाः ।
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां न यान्ति ते ॥ २४२१ ॥
बालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ।
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिषूदनम् ॥ २४२२ ॥

र स , भै र , र मु , र च , अतिसारे ।

टि०—अथ रसो बकुलत्वगर्भकषेण सह मापोन्मित्या दत्तो रक्तप्रदरे ऽतिकार्यकारी भवति, माय मध्याह्ने पूर्वाह्णे चेति प्रयोग कर्तव्य । द्वित्रिदिनाऽभ्यन्तरे एव महाप्रवाह रुणद्धीति सुधीभिराकल्नीयम् ।

भाषा—१–१ कर्ष पारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर मृदुपाककी पर्पटी बनाले फिर जायफल, जावित्री, लौंग, नीम तथा सभालूकेपत्ते, इलायची इनप्रत्येकका चूर्ण १–१ तोला लेकर पर्पटी मिलाय पानीसे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मोती-कीसीपमें भरके सम्पुटकर दो २ अङ्गुल कालीमिट्टी लगाकर जलतेहुए कण्डोमें रखद । जब गोला लालहोजाय तब निकालकर रखले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ज्वर, झडी (प्रवाहिका), दुर्निवार ग्रहणी, सूतिकारोग, रक्तार्श इत्यादि समस्त व्याधियोंको दूरकरताहै । और बच्चोंके तमामरोगोंको नष्टकरताहै । जिसघरमें यह औषध रहताहै वहा बालग्रहोंका तथा अन्य भूतादिकोंका बच्चोंपर असर नहींहोता इसीतरह स्त्रियोंके प्रदरादि समस्तव्याधियोंमें यह अत्यन्त उपकारीहै ॥ ५४७ ॥

५४८ महाज्वालमरीचिप्रयोगः

मरिचानि समानीय महिषीपित्तमध्यत. ।
शोषयित्वा तत. पश्चाद्भावयित्वा समुद्धरेत् ॥२४२३॥
अश्वगन्धावत्सनाभरसे दद्यात्पुटं बुध. ।
तच्चूर्णं वारिणा पिष्ट्वा ततो दद्यात्तथाऽऽतपे ॥२४२४॥
हरितालं तथा दत्त्वा दिनान्ते शोषयेद्भृशम् ।
गन्धकञ्च तथा देयं चित्रमूलं तथैव च ॥ २४२५ ॥
जयपालं तथा दत्त्वा धुत्तूरस्य फलं तथा ।
भृङ्गीरसं तथा दत्त्वा शोषयेदातपे सुधी. ॥ २४२६ ॥
मधुनाऽपि तथा शोष्यं सर्वं यामचतुष्टयम् ।
शोषयेन्महिषीपित्तमध्ये सप्ताहमादरात् ॥ २४२७ ॥
चतुर्दिनं वराहस्य मत्स्यपित्ते दिनद्वयम् ।
एवं सुविधिना कृत्वा शुष्कीभूतानि कारयेत् ॥२४२८॥
एकैकं दापयेद्धीमान् रोगाणां तत्त्वविद्भिषक् ।
असाध्ये मानवे दद्यात्सन्निपातसमाकुले ॥ २४२९ ॥
महाज्वरे शैत्यशून्ये महीभूते च तिष्ठति ।
अरिष्टसन्निपाते च जलोदरमहारुजि ॥ २४३० ॥
पादे पादभवे शोफे महाहिमसमागमे ।
दिगम्बरे तथाकाशवासिनेऽपि प्रशस्यते ॥ २४३१ ॥
जले प्रपतिते चाऽथ कुशासनमहीगते ।
रोगिणां रोगशान्तिः स्यादेकैकस्य च भक्षणात्२४३२
कालञ्च वञ्चयत्येषः कुटिलेषु न दापयेत् ।
इति प्रकाशितो योगो ज्ञानज्योतिर्यतीश्वरैः ॥२४३३॥

र झा , सन्निपाते ।

भाषा—धोईहुई मिर्चें लेकर भैंसके पित्तमें डालकर सुखाले। इसीतरह असगन्ध और बछनागके क्वाथसे १–१ पुट देकर इसको बराबर सुहागेको पानीमें घोलकर एक पुट देवे । फिर मिरचोंसे दशवाभाग पानीमें पीसेहुए हरिताल और गन्धककी १–१ भावना देकर चित्रकमूल, जमालगोटा, धतूरेकेफल, भगरा, मधु इनप्रत्येककी १–१ रोज भावना देकर सुखावे । इसके बाद भैंसके पित्तेकी ७ रोज, सूअरके पित्तेकी ४ रोज और मछलीके पित्तेकी २ रोज भावनाए देकर अच्छीतरह सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ मरिच प्रमाण असाध्य सन्निपात, महाज्वर, सर्वाङ्गशीतता, बेहोशी, अरिष्टयुक्तसन्निपात, जलोदर, पादरोग, पादशोथ येसब नष्टहोतेहैं । अत्यन्तशीत हिमालय आदि प्रदेश अथवा ऋतुमें, जलमें डूबेहुएको तथा मरणासन्नको देनेसे तत्काल सञ्ज्ञाहोतीहै । यह कालको वञ्चित करताहै इसे कुटिल आदमियों को न बताना ॥ ५४८ ॥

५४९ महाबलविधानाभ्रम्

गगनं कज्जलसदृशं स्निग्धमशेषदोषरहितञ्च ।
बहुशोऽर्वाऽलरुपमूले शुर्कं वस्त्रे नियद्धञ्च ॥२४३४॥
दत्त्वा सलिलं तावत्करेण घर्षञ्च पङ्कतां नीतम् ।
निपुणं गृहीतमुदकादञ्जनपुञ्जप्रतीभूतम् ॥ २४३५ ॥
द्वित्रिवारपरिपुटितं रवितरमथिताऽल्पदुग्धकादिरसे।
चूर्णितमिदं शिलायां कुडवमेकं तदादाय ॥ २४३६ ॥
प्रथमं चतुर्गुणे गोमूत्रे वा पचेन्मृदुज्वालम् ।
निपुणोवन्हि दत्त्वा समुद्रयामं तथा दुग्धे ॥ २४३७ ॥
श्लक्ष्णं विडङ्गचूर्णं गगनार्धं त्रिकटुसम्भवञ्च रज. ।
त्रिकटुसमं त्रिफलोत्थं पृथक् तदर्द्धञ्च वन्ध्याया.२४३८
नतकरिकर्णी वृद्धरकानलनीलिकानाञ्च ।
मूलस्य तालमूल्या रक्ताश्वमारहपुषाणाम् ॥ २४३९ ॥
पत्रकसुवाजिगन्धाशतावरीमूलसम्भवञ्चाऽपि ।
अमलिनपुनर्नवार्कतर्कारीवलामूलानाम् ॥ २४४० ॥
चूर्णं कण्टकपर्णीभवं साऽमृतभृङ्गराजस्य ।
निवृतार्यायास्त्रिभुवनविजयस्य केशराजस्य २४४१
सुविदितपाकं शीतं गगनचूर्णञ्च भाजने सर्वम् ।
समधुसितैरनुरूपैः सम्मिश्र्यसर्पिषोऽप्यखिलेन २४४२

पिष्ट तदनुशिलाया सुस्निग्धभाण्डे निधाय सुविधिज्ञ
सात्साह सुविनाता गृह्णायाद्धराऽभ्रक कल्पम २४४३
मृदुकृतवमनविरेक वैद्यप्रदेष्टेन सात्म्ययोगेन ।
याति शरीरविशुद्धिं दीपितदेहानला नीरुक् २४४४
पूजितगुरुदेवाऽनलवितिथिसिद्धसाधुमान्यजन ।
स्निग्धौदनपरितृप्त दीनग्लानिसहित सत्कृत्य २४४०
स्थिरसङ्कल्पचिनात प्रशा तसर्वेन्द्रिय सर्वात्मा च ।
परिकृतपरोपकार परिहितग्रासा समुज्झितक्रोध ॥
श्रद्धावानश्नायाद्धेपजराजस्य मायकानर्णी ।
पुण्ये दिवसे कृत्वा गुटिका तथा भक्षयेत्प्रात ॥२४४७॥
अनुपान शीतजलं सततमत्यतिभोजन नाऽश्र ।
हिताहिताद्य सुखद शाकाम्लदधिपरिहाणञ्च २४४८
अतितिक्तकटुकषायक्षाराऽभिष्यन्दितीक्ष्णरूक्षाणि ।
वातलविदाहिदुर्जरगुरूण्यसत्म्यानि वस्तूनि ॥२४४९॥
पान दूरात्ध्ययन रतिमतिशातल दिवास्वप्नम् ।
प्रत्युपदेशं द्वेषं वातातपजागरणोद्भूतान् ॥ २४५० ॥
चिन्ताशाकविषादव्यायाममदप्रदमादकरान् ।
पिशितञ्चानूपदेशं वातलं वर्जयेदनिशम् ॥ २४५१ ॥
एकरमयूरकलायकतित्तिरिशशशजमपसारङ्गम् ।
जाङ्गलपिशित श्यामं माष पगलञ्च वाताकम् २४५२
कुष्मात पिशितरस सैन्धव सघृतस सधान्याकम् ।
स्वस्तिकपष्टिकलोहितशालीनतिनिस्तुपान्मुद्गान् ॥
मधुकफलानि द्राक्षा पनसाम्रफलानि चैव शस्तानि ।
स्वादु च परिणतिमधुर केलिकरञ्चाऽपि वासव तायम
प्रतिसप्ताह क्रमतत्व माद्य मनर्द्धयेद्धामान् ।
युक्तिविचाराऽभिज्ञा भेषजस्य पर्यन्त भवति ॥२४० ॥
रसायनराज कुर्वं मनुजो मनाऽभिलाप प्राप्नोति ।
नागार्जुनोपदिष्ट पण्मासापविहितविधिना चा॥२४ ॥
अपगतसकलव्याधि वलिपलितवर्जिताऽतिमहातजा
शूर प्राशो वाग्मा निर्गफ्ज्मोजनो दक्ष ॥२४ ७॥
मदमत्तकुञ्जरबल सौकुमार्योत्साहसम्पन्न ।
पाऽडरावपवपा स्याद् वहुप्रसूत सुचिरजावनायेत ॥
जावेद्वर्पसहस्र सतताभ्यासाच्च सवसपन्न ।
चन्द्रकमनायकाति पवनवला धामसमधामा २४ ९
यद्दतिसारग्रहाऽपस्मारसिध्मयन्मशाषान् ।
कासश्वासविसर्पग्रहणागुल्मोदरीशोथान् ॥ २४६०॥
प्रदरजलोदरभस्मकवमिपामाश्लीपदप्रमेहाद्य ।
विषभगन्दरदुष्टविषम ज्वरपाण्डुरागाश्च ॥२४६१॥
श्रुतिवदनादरलोचनमस्तकरोगान्समूत्रकृच्छ्राश्च ॥
आशु रसायनराज शमयति मुक्त्वा प्रयुक्त्स्तु २४ २
साम समीरमुपहन्ति कर्फ सपित्त
साम्रञ्च पित्तमथ जाठरवह्निमान्द्यम् ।
यातप्रकोपजनितान् कफजाश्च सर्वान्
पित्ताश्रयांश्च निखिलान्स गदास्तथैव२४६३
व स रसायनाऽधिकार ।

भाषा—धान्याभ्रकको कदलीके रसमें बारीक पीस दूब और गोरखमुण्डीको रस साथमें डालकर वस्त्रमें पोटली बनाय पानीमें मसलकर निकाले । पानीको १–२ रात रखकर नितारकर अलगकरद और नीचे जमेहुए अभ्रकको धूपमें सुखादे। फिर आकके दूधमें २–३ दिन घोटकर टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकी आंच दे । एस २–३ आंच देकर सिद्ध कियाहुआ अभ्रक ४ पल लेकर इसमें चौगुना अथवा अठगुना गोमूत्र देकर मन्द आंचमें सुखावे। इसीतरह गोदुग्ध डालकर ४ पहरकी मृदु अग्नि पकावे । इसके बाद अभ्रकसे आधा आधा विडङ्ग त्रिकुटु और त्रिफलाका चूर्ण डाले फिर वानरेखसेका ज[illegible] तगर हस्तिकर्णपलाश विधारा रक्तचित्रक कालादाना तालमली शालकनेरकेफूल झाऊ पनज असगन्ध शतावर निमलीकेबीज पुनर्नवा आक अरणी, बलामूल भटकटैया गिलोय भंगरा निसोत भाग कालाभगरा, इनका बीजैमिल कर ५ पल उसीपाकमें मिलाके पकावे । पाकहोनेपर उतारकर ठण्डाहोनेपर इलायचीयराबर शकर और १२ तोला घी तथा गोली बंधनेलायक मधु डालकर २–३ पहर घोटकर एकजीव होनेपर चिकनेबर्तनमें रखछोड़ । निपुणवैद्यकीसलाहसे सात्म्य द्रव्यसे मृदुवमनविरेचन लेकर कोष्ठकी शुद्धिकरके अग्निको प्रदीप्त कर गुरु देव अग्नि अतिथि सिद्ध साधु और मान्यजनोंका सत्कारकर श्रद्धा रखताहुआ इसमेंसे आठमाशे दवा खावे । दवा पचनेपर घतयुक्त चावल और दूधप्रभृति सात्त्विक भोजन कर । दीनोंपर दयारखकर मुक्तामोंस [illegible] । सकल्प स्थिर रखकर इन्द्रियोंको काबूमकरे सबमें अपना आत्माको देखता हुआ यथाशक्ति परोपकार करे और क्रोधका छोड़दे । दवाके ऊपर प्यास लगनेपर ठण्डा जलपीवे भोजन नियमसे करे । शाक अम्ल दही इनसे रहित और हिताहितका विचार करताहुआ पथ्यका पालनकरे । अत्यन्तचरपरा कड़ुआ कसैला खार, अभिष्यन्दि तीक्ष्ण रूखा वातल विदाही दुर्जर और भारी पदार्थोंका सेवन न करे । मद्यपान जोरसे पढ़ना अत्यन्तविष योमें लीनहोना अधिक ठण्डापन दिनकासोना जवाबदेना द्वेष अत्यन्तवायु और धूपका सेवन जागरण चिन्ता शाक विषाद कसरत मद और उन्मादकारकपदार्थ पशुमांस देशाजमांस शीतप्रकृति मद्यप्रभृति पीनेकपदार्थ इनसबको छोड़दे । कुक्कर मयूर लवा तीतर खरगोश बकरा मृग सारङ्ग और तमाम जङ्गलीमांस कालेउड़द परवल बैंगन मांस मांसरस सेंधानमक धी धनियां मुरवाहीनाक साठी, लाल और सफेद चावल मूंगकी धुलीहुईदाल मुलहटी द्राक्ष पके और मीठे आमकेफल सबजैसे म्वास्थ्य और पाकमें मधुर पदार्थ उत्साहजनक पदार्थ क्रीड़ाकारकद्रव्य वासीत पानी इनसब प्राप्तहैं । इस दवाकी मात्रा प्रतिदिन अथवा प्रतिसप्ताह बढ़ाकर अथवा जैसा योग्य हो वैद्यकहनेसे ६ महीने तक पूर्वोक्त समस्त दवाको सेवन करनाचाहिये । यह नागार्जुन का कहाहुआ रसायनहै । इसका यथाविधि [illegible]

सेवन करनेसे समस्तव्याधि और वलीपलितसे रहित होजाताहै। अत्यन्त तेजस्वी, शूरवीर, विद्वान्, वाचाल, त्रिवर्गकासाधन करनेवाला, बलसे परिपूर्ण, सुकुमारता और उत्साहसे सम्पन्न, १६ वर्षकी आकृतियुक्त बहुतसी प्रजावाला होकर हज़ारवर्षकी आयुको भोगताहै पूर्णमासीके चन्द्रमाकीतरह दिव्यकान्ति और पवनकेसदृशवेगवाला होजाताहै। यकृत्, अतिसार, प्लीहा, अपस्मार, सिध्म, राजयक्ष्म, शोप, कास, श्वास, विसर्प, ग्रहणी, गुल्म, पथरी, शोथ, प्रदर, जलोदर, भस्मक, वमन, पामा, श्लीपद, प्रमेह, विद्रध, भगन्दर, कुष्ठ, विषमज्वर, कान, मुह, उदर, नेत्र और मस्तकके समस्तरोग, मूत्रकृच्छ्र, वायु, कफ, पित्त, रक्तपित्त, मन्दाग्नि, वात, पित्त और कफके प्रकोपसे होनेवाले समस्त उपद्रव, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४९ ॥

५५० महारसः

भस्म मृतस्य तीक्ष्णस्य मरिचाज्यं समंसमम् ।
स्नुक्क्षीरकाकमाचीभ्यां मर्दयेद्यामसात्रकम् ॥२४६४॥
निरुध्य भूधरे पाच्यं दिनैकेन महारसम् ।
निष्कार्द्धं भावयेद्वालु पाययेद्दधिसंयुतम् ॥
सर्पाक्षीं कर्षमात्रान्तु पीत्वा वातातिसारनुत्॥२४६५॥

नि. र., र. को., र. सु., वै. चि., चि. र. म., अतिसारे।

भाषा—पारद और फौलादकीभस्म, मरिच और घी समभाग लेकर थूहरकेदूध और मकोयकेरससे १–१ पहर मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें एकदिनपकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ माशे दहीकेसाथ मिलाकर १ कर्ष सर्पाक्षीका चूर्ण डालकर पीनेसे वातातिसार नष्टहोताहै ॥ ५५० ॥

५५१ महार्णवरसः

विषं सूतं गन्धकञ्च तालकञ्च विमर्दयेत् ।
घन्नदन्तीरसे मर्द्यं गुटिका माषमात्रिकाः ॥ २४६६ ॥
एकैकां भक्षयेद्यस्तु मलज्वरविनाशिनीम् ।
हरते सर्वरोगांश्च महार्णवरसो मतः ॥ २४६७ ॥

र. सा., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध बछनाग, पारा, गन्धक और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मराठीके रससे १ रोज़ मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे मलज्वरप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

५५२ महाभैरवरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतंलोहं मृताऽभ्रकम् ।
मृतं कान्तं समं खल्वे मर्द्यं हंसपदीरसे ॥ २४६८ ॥
विशोष्य धालुकायन्त्रे पाचयेत्प्यन्तरं दिनम् ।
पश्चं विचूर्णयेत्खल्वे कोलपित्तेन मर्दयेत् ॥ २४६९ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वथा सन्निपातजित् ।
महाभैरवनामाऽयं रसो भैरवनामतः ॥ २४७० ॥

वै. चि., ज्वरे।

भाषा—पारा, तांबा, लोहा, अभ्रक और कान्तलोह इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रसमें एकदिन मर्दनकर सुखाय आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें १ दिनकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर जङ्गलीसुअरके पित्तेसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातादिकोंको नष्ट करता है ॥ ५५२ ॥

५५३ महेन्द्ररसः (प्रथमः)

संशुद्धं गरलं सूतं तालकञ्च मनःशिला ।
गौरीपाषाणकं तुल्यं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ॥ २४७१ ॥
धत्तूरपत्त्रजरसे दिनैकं मन्दवह्निना ।
दोलायन्त्रे विपाच्याऽथ श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत् २४७२
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानविशेषतः ।
सन्निपाताग्निहन्त्याशु महेन्द्रः स रसोत्तमः ॥२४७३॥

वै. चि., ज्वरे।

भाषा—शुद्ध बछनाग, पारा, हरिताल, मैनसिल और संखिया समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेपत्तोंकेरससे १ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय कपडेमें बांधकर दोलायन्त्रमें धतूरेके रसमें १ दिन मन्दअग्निसे स्वेदितकरे। फिर सुखाकर चूर्णकर शीशीमें रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात और सम्पूर्णवातव्याधियां नष्ट होतीहैं ॥५५३॥

५५४ महेन्द्ररसः (द्वितीयः)

एकभागं रसं शुद्धं हेमभागसमन्वितम् ।
द्विगुणं गन्धकं दद्याद्दिव्यौषधिविभावितम् ॥ २४७४ ॥
चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेव स्थिरायते ।
भृङ्गराजेन सम्भाव्य वध्नीयाद्वटिकां शुभाम् २४७५
महेन्द्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहम् ।
निहन्ति सकलान्रोगान् क्रमेण समन्वितः ॥२४७६॥

र. का., पाण्डुरोगाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेके वर्क १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर पारेमें १–१ सोनेकावर्क डालकर घोटता जाय, जब इसकी पिष्टिका होजाय तब थोड़ा २ गन्धक देकर नीलवर्णकज्जलीहोनेतक घोटकर दिव्यौषधियों (रसेन्द्रचूडामणिमें सोमदेवने सोमवल्लीप्रभृति ६४ वनस्पतियां गिनाई हैं उनमेंसे १–२ अथवा जितनी मिलसकें उनके) के रसमें इस कज्जलीको १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय चक्रयन्त्रमें पारा अग्निस्थायी होनेतक पकावे, फिर भंगरेकेरसकी भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक अग्निबलानुसार देकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कामलादि समस्तरोगोंको यह नष्ट करताहै। टि०—गोलेके बीचमें एकबालिस्त समपुट आनेलायक गर्त्त बनाकर नीचे दो अङ्गुल बालू रखकर गन्धकको रख पारेको भर और उसके मध्यमें आंचदे। यह चक्रयन्त्र कहलाता है ॥५५४॥

५५५ महोदधिवटी (प्रथमा)

एकैकं विषसूतश्च जातीटङ्कं द्विकं द्विकम् ।
कृष्णात्रिकं विश्वषट्कं द्विकं गन्धं कपर्दकम् ॥२४७७॥
देवपुष्पं बाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
नाम्ना महोदधिवटी नष्टमग्निं प्रदीपयेत् २४७८ ॥

र. सं., रसायनसं., र. सु., ना. वि., भै. र., यो. म., र. क., र. चं., नि. र., र. मं., र. चि., र. का., अग्निमान्द्ये। रसकामधेनौ द्वितीयस्थाने अग्निकुमारेति नाम दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध बछनाग और पारा १–१ भाग, गन्धक, कौड़ीभस्म, जायफल और सुहागा २–२ भाग, पीपल ३ भाग., सोंठ ६ भाग., लौंग ५ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रकमूलक्वाथ, पान, अथवा अदरखके रससे ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह नष्टाग्निको प्रदीप्त करतीहै ॥ ५५५ ॥

५५६ महोदधिवटी (बृहती) (द्वितीया)

दन्तीबीजमकल्मषं सदहनं शुण्ठीलवङ्गं समं,
गन्धं पारदटङ्कणञ्च मरिचं श्रीवृद्धदारं विषम् ।
खल्वे दण्डयुगं विमर्द्य विधिना दन्तीद्रवे भावनाः,
देयाः पञ्चदशानुनिम्बुकजलैस्त्रेधा त्रिधा चित्रकैः ॥
त्रेधा चाऽऽर्द्रकजैरसैः शुभधिया सप्तैव चाऽऽर्द्रकजैः,
पश्चाच्छुष्ककलायसम्मितवटी कार्या भिषक्सम्मता ।
क्षुद्बोधं जनयेत् त्रिशूलशमनी जीर्णज्वरध्वंसिनी,
कासारोचकपाण्डुतोदरगदस्तोमामकट्वादिनी ॥
वल्म्याटोपहलीमकाऽऽमयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी,
सिद्धेयं तु महोदधिप्रकटिता सर्वामयघ्नी सदा२४८१

रसायनसं., र. सु., वृ. यो. त., नि. र., यो. र., र. का., र. सं., अग्निमान्द्ये । र. का. शूलारीतिनाम ॥

टि०—रसेन्द्रसारसंग्रहेऽस्मिन्पाठो लिखितोऽस्ति तत्र भावनायां निम्बुरसस्थाने वृद्धदारमूलस्याप्युक्त मद्रस* न कोऽपि हानि भवीयते पाठस्त्वेकएव स्थापनीयः ।

भाषा—शुद्धजमालगोटा, चित्रकमूल, सोंठ, लौंग, शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, मरिच, विधारा, शुद्धबछनाग सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर दोपहर खाली घोटकर दन्तीमूलके रसकी १५ भावनाएं देवें, फिर नीबू, चित्रक और अदरख इनप्रत्येककी क्रमसे तीन ३ भावनाएं देकर अभिलाषाके गूदेको पानीमें घोलकर ७ भावनाएं देकर सुखेमटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इन मेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, शूल, जीर्णज्वर, खांसी, अरुचि, पाण्डु, उदररोग, आमवात, वस्तिशोथ, हलीमक, इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ५५६

५५७ महोदधिवटी (चतुर्थी)

रसं गन्धं तथा हेम वज्रविद्रुममौक्तिकम् ।
गृहीत्वा समभागेन मर्दयेत्त्रिफलाम्बुना ॥२४८२॥
ततो रक्तिमिताः कुर्याद्वटीश्छायाप्रशोषिताः ।
एकैकां दापयेदासां यथादोषानुपानतः ॥ २४८३ ॥
रुद्धान्त्रत्वमन्त्रवृद्धिं तथाऽन्यानन्त्रजान्गदान् ।
वातपित्तकफोत्थांश्च सर्वान्हन्ति महोदधिः ॥२४८४॥

भै., र., अन्त्रवृद्ध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोना, हीरा, मूंगा इनकी भस्में और मोतीकी पिष्टी समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिफलाके रसमें २–३ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे अन्त्रावरोध और अन्त्रवृद्धिप्रभृति समस्त आंतोंकेरोग तथा वात, पित्त, कफोत्थ समस्तरोग नष्ट होतेहैं ५५७

५५८ महोदयप्रत्ययसारः

रसप्रस्तसमुद्दीर्णगन्धकस्य पलत्रयम् ।
मृतसूताऽभ्रताम्राऽयः कर्षं कर्षं पृथक् पृथक्॥२४८५॥
पलं हिङ्गुलचूर्णस्य माक्षिकस्य पलत्रयम् ।
पलं काम्पिल्लकस्याऽपि विषस्याऽर्द्धपलं तथा॥२४८६॥
समाहं मर्दयेत्सर्वं दत्त्वा चूर्णोदकं मुहुः ।
ततस्तद्गोलकं कृत्वा समाहं चातपे क्षिपेत् ॥ २४८७ ॥
गुडचूर्णं शिलाचूर्णं लिप्त्वेद्वङ्गुलिकायनम् ।
त्रिपलं गन्धकं दत्त्वा कौड्यामथ च गोलकम् २४८८
गोलकस्योपरिष्टाच्च क्षिपेत्तालपलत्रयम् ।
संरुद्ध्याऽतिप्रयत्नेन दद्याद्गजपुटं खलु ॥ २४८९ ॥
स्वाङ्गशीतलमाहृत्य गोलकं लेपनैः सह ।
विचूर्ण्य सप्तवारं हि विषतिन्दुफलाम्बुभिः ॥ २४९० ॥
दृषत्याऽऽतपे शुष्कं क्षिपेद्रम्ये करण्डके ।
त्रिशदंशेन वैक्रान्तभस्म तस्मिन् विनिक्षिपेत् २४९१
अयं हि नन्दीश्वरसम्प्रदिष्टो
रसो विशिष्टः खलु रोगहन्ता ।
निःशेषरोगेष्वहतप्रतापो
महोदयप्रत्ययसारनामा ॥ २४९२ ॥
हन्यात्सर्वगुदामयान्क्षयगदं कुष्ठञ्च मन्दाग्नितां,
शूलाध्मानगदं कफं श्वसनकामुन्मादकापस्मृती ।
सर्वा वातरुजो महाज्वरगदाश्चानाप्रकारांस्तथा,
वातश्लेष्मभवं महामयचयं दुष्टग्रहण्यामयम् ॥२४९३॥

र. र. स., अर्शोरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभागकी कज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके अथवा अन्यप्रकारसे गन्धकको भस्म करले। इसतरहका गन्धक ३ पल, पारा, अभ्रक, ताम्र और लोह इनकीभस्में १–१ कर्ष, शुद्धहिंगुल १ पल, माक्षिकभस्म ३ पल, कबीला १ पल, शुद्धबछनाग २ कर्ष, लेकर बारीकचूर्णकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर चूनेके पानीसे ७ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय कड़ीधूपमें सुखाकर गुड़, मैनशिल और पत्थरका चूना लेकर थोड़ापानी डालकर कूटे और दो अङ्गुलमोटा लेपकर धूपमेंरखकर

सुखाले। फिर एक कुठालीमें शुद्धगन्धक ३ पल बिछाकर गोलेको रख ऊपरसे ३ पल शुद्धहरितालका बारीकचूर्ण रखकर ढकदे फिर वज्रमिट्टीसे ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मिट्टीमात्र निकालकर लेपसहित घोटकर कुचिलेके फलके रससे ७ भावनाए देकर धूपमें सुखाले और ३० वा भाग वैक्रान्तभस्म मिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके अर्श, क्षय, कुष्ठ, मन्दाग्नि, शूल, अफारा, कफ, श्वास, उन्माद, अपस्मार, समस्तवातविकार, सम्पूर्णज्वर, वातश्लेष्मोद्भवविकार, राजयक्ष्म, दुष्टग्रहणीरोग इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ महोदयावटी

प्रागुक्तेन प्रकारेण सूतं सम्यङ्निपातयेत् ।
निपातितश्च तं सूतं खल्वमध्ये निवेशयेत् ॥ २४९४ ॥
पञ्चभि र्लवणै र्मर्द्यस्त्रिभिः क्षारैस्तथैव च ।
व्योषैरार्द्रकनिर्यासैः सर्वैरम्लैस्ततः परम् ॥ २४९५ ॥
मर्दयित्वाऽथ तं सूतं प्रत्येकञ्च दिनत्रयम् ।
अम्लैः प्रक्षालयेत्सूतं पादांशं वर्जयेज्जलम् ॥ २४९६ ॥
रामठं श्वेतमरिचं क्षाराणाञ्च चतुष्टयम् ।
लवणानि तथा पञ्च व्योषमार्द्रकमेव च ॥ २४९७ ॥
राजिका चित्रमूलत्वङ् मूलकं कटुरोहिणी ।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याऽथ मर्दयेत्पूर्वजैर्जलैः ॥ २४९८ ॥
तत्पिण्डमध्ये तं सूतं विदधीत विचक्षणः ।
दोलायन्त्रेऽथ तं बद्धा धान्याम्लैः स्वेदयेत्ततः २४९९
दिनानि सप्त यत्नेन स्वेदयेद् दृढवह्निना ।
यथा न क्षीयते काञ्जी तथा कुर्याद्विचक्षणः ॥२५००॥
एवं संस्वेद्य सूतेन्द्रं यन्त्रादुत्तार्य बुद्धिमान् ।
अम्लेन क्षालयित्वाऽथ भेषजैरेतै विमर्दयेत् ॥२५०१॥
गिरिकर्णीरसैः पूर्वं भृङ्गिनीरैस्ततः परम् ।
निर्गुण्डिकारसैः पश्चाज्जयन्तीशृङ्गवेरयोः ॥ २५०२ ॥
मण्डूकीतिलपर्ण्योश्च काकमाचीपुरुयूकयोः ।
धत्तूरविजयाभ्यां रसतुल्यै रसैः क्रमात् ॥ २५०३ ॥
मर्दयित्वा प्रयत्नेन तथा पित्तै र्विभावयेत् ।
पूर्वोक्तै र्दशभिः सूतं सूततुल्यै र्यथाक्रमम् ॥ २५०४ ॥
धूपयेच्च ततः पश्चात्पूर्वोक्तविधिमार्गतः ।
मरीचमाना गुटिकाः कर्तव्या रससम्भवाः॥ २५०५ ॥
सन्निपातनिवृत्त्यर्थं प्रयुञ्जीत विचक्षणः ।
इयं श्रीलोकनाथेन प्राणिनां करुणावशात् ॥ २५०६ ॥
वटिका सम्प्रदिष्टा हि दृष्टप्रत्ययकारिणी ।
इमां प्राप्य वटीं कश्चित्सन्निपातान्न नश्यति ॥२५०७॥
वटीं दत्त्वाऽऽर्द्रनिर्यासैस्त्रिकटोरनुपानकम् ।
कुर्वीत ढालयेत्तत्र सुशीतानि जलानि वै ॥ २५०८ ॥
व्यञ्जनानि प्रयुञ्जीत श्रीखण्डै र्लेपयेत्तनुम् ।
पथ्यञ्च दधिभक्तं स्यात्तदानीमेव दीयते ॥ २५०९ ॥
इक्षवश्च तथा योज्या रसवीर्यविवृद्धये ।
शर्करा खण्डकारीका द्राक्षा योज्या विशेषतः २५१०
शीतद्रव्यैर्भवेद्वीर्यं पित्तवृद्धीरसोत्तमे ।
लोकनाथमतेनेयं वटी प्रोक्ता महोदया ॥ २५११ ॥

रसाल०, सन्निपाते ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियेहुए पारेको तीनप्रकार पातन कर खरलमें डालकर पाचोंनमक, तीनोंक्षार, त्रिकटु, अदरख, यथालाभ समस्त अम्ल इनप्रत्येकमें ३–३ रोज़ मर्दनकर खटाई के पानीसे साफकरले । मर्दनकरतेसमय प्रत्येक चीजें पारेसे चतुर्थांश देना केवल जलका स्पर्श न होनेदेना । हींग, सफेद-मरिच, चारों क्षार (सज्जी, सुहागा, यवक्षार और नवसादर), पाचोंनमक, त्रिकटु, अदरख, राई, चित्रकमूल, मूली, कुटकी इनसबका बारीक चूर्णकर पूर्वद्रवोंसे गोला बनाय उसके बीचमें पूर्वोक्त पारेको रखकर दोलायन्त्र बनाय धान्याम्लोंसे ७ रोज तक तीक्ष्णाग्निसे स्वेदनकरे। काञ्जी सूखने न पावे इसका ध्यान रक्खे । इसतरह स्वेदनकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर काञ्जीप्रभृति अम्लद्रवमें धोकर कोयल, भंगरा, निर्गुण्डी, जैन, अदरख, ब्राह्मी, कुकुर, मकोय, एरण्ड, धतूरा, भाग ये प्रत्येक पारेकी बराबर देकर १–१ रोज मर्दनकर सुखादे फिर यथा लाभ पित्तोंसे भावना देकर कोयलको छोड़कर पूर्वोक्त दस चीजें पारेकीबराबर अग्निपर डालकर पारेको धूपदे । इसके बाद मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे किसीभी सन्निपातसे आदमी नहीं मरता । गोलीको अदरखके रससे देकर त्रिकटुकाक्वाथ मिलाकर ठंडेजलकी धारादे । भूख लगनेपर इच्छानुसार भोजन दे । दाह मालूमपड़नेपर चन्दनका लेप दें । ज्वर उतरनेकेबाद तुर्त दहीभात खानेको दे । रसकी शक्ति बढ़ानेकेलिये ईख, शकर, छुहारे और दाख देवे । इसरसमें शीतद्रव्योंमें शक्ति और पित्तकी वृद्धिहोतीहै ॥ ५५९ ॥

५६० माणिक्यरसायनम् (प्रथमम्)

सुजातिगुणमाणिक्यभस्म कर्षमितं शुभम् ।
कनकाऽभ्रकताम्राणां कान्तस्य भसितं पृथक् ॥२५१२॥
त्रिगुणत्वेन संवृद्धं मर्दयेत्समगन्धकैः ।
पुटेद्वनगिरिण्डैश्च पञ्च वाराणि यत्नतः ॥ २५१३ ॥
एवं शिलालकाभ्याञ्च पुटेर्द्वालाञ्जनेन च ।
तुल्यगन्धाश्मसूताभ्यां विहितां कज्जलीं शुभाम्२५१४
लौहे पात्रे परिद्राव्य बादरेणाल्पवह्निना ।
माणिक्यादीनि भस्मानि क्षिप्त्वा तत्र विमिश्रयेत् ॥
अथाऽऽर्द्रकरसैस्तां [illegible] मस्याह्नि घोऽथ कज्जलीम् ।
सम्यक कृत्वा विचूर्ण्याथ क्षिपेद्रम्यकरण्डके॥२५१६॥
व्योषाज्यसहितं ह्येतन्माणिक्याद्यं रसायनम ।
व्योषाऽऽज्यसहितं लीढं षण्मासं पथ्यभोजिना२५१७

निहन्ति सकलान्रोगान् जरापलितसंयुतान् ।
जीवेद्वर्षशतञ्चैव त्रियाम्लभोजनः ॥
श्यामादिजात्यादास्यगतत्त्वरोगानुपानतः ॥ २०१८ ॥

र. चू , रसायने ।

भाषा—उत्तमजातिके माणिक्यकीभस्म १ कर्ष, सुवर्णभस्म ३ कर्ष, अभ्रकभस्म ९ कर्ष, ताम्रभस्म २७ कर्ष, कान्तभस्म ८१ कर्ष, इनसबको मिलाकर शुद्धगन्धक डालकर २–३ पहर सुगा मर्दनकर अदरकके रसमें १–२ रोज घोटकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । इसतरह ७ आंचदें और सम्पुट बारम्बार दैताजाय । इसीतरह शुद्ध मैनसिल, हरिताल और नीलाञ्जन लेकर रसके बराबर मिलावे और सब रसोंके रसमें घोटकर शरावसम्पुटकर १–१ पुट देव । स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकालकर इसकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलाकंठमयीकर लोहेकी कड़ाईमें डालकर अथवा बाद लोंकी मन्द आंचपर गलाकर माणिक्य आदि सब भस्मोंको मिलाकर उतारकर पर्पटी बनाले । स्वाङ्गशीतल होनेपर बारीक चूर्णकर अदरख अथवा दूधकेरसमें १–२ रोज मर्दनकर गुंजाके बराबर गोली बनाकर रखे । इसमेंसे १–२ रत्तीमात्रा ३ मासे त्रिकटुचूर्ण मिलाकर घीमें डालकर पथ्यपूर्वक ६ महीने तक सेवनकरनेसे जरा और पलितआदि समस्तरोगोंको नष्ट करताहै । इससे अति इतना प्रदीप होताहै कि तीनबारभोजन करना पड़ताहै । सन्निपातहरानुपानभेदसे देनेसे यह श्यामादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै । इसको ६ महीनेतक सेवनकरनेसे १०० वर्षकी आयु होतीहै ॥ ५६० ॥

५६१ माणिक्यरसायनम् (द्वितीयम्)

माणिक्यमौक्तिकप्रवालवैक्रान्तवज्रादिभस्माणि
तार्क्ष्यस्य भस्म मृगनाभिनिभा पिष्टानि ।
तुल्यानि तानि मृतकान्तकया पिष्टानि
आज्याज्य भानुदिवसे सुवर्णनामभिः २०१९
मासद्वयं मासपर्याप्तिनिषेविता
सर्वत्र पाने भवतेऽङ्गनाऽङ्गनाभे ।
सा सर्वथा बालकालाङ्गवपुर्धरा
[illegible] मनुष्यो न स्पृशेत् ॥ २०२० ॥

नृ क , चर्मरोगे ।

भाषा—माणिक्य, सुवर्ण, चांदी, मूंगा, वज्र इनसबको भस्म, कस्तूरी, [illegible] सब समान भाग लेकर [illegible] और [illegible] १२–१२ दिन भावना देकर सुखाकर रखलेवे । इसमेंसे १–२ माशे दूधकेसाथ सेवनकरनेसे और [illegible] इसके सेवनसे [illegible] करनेसे मनुष्य भी [illegible] । [illegible], [illegible], अंगूर, केला और [illegible] ॥ ५६१ ॥

५६२ माणिक्यरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं [illegible] ।
[illegible] ॥ २०२१ ॥

एतेषां कोलमात्रञ्च पञ्चाङ्गेन मर्दयेत् ।
ततो दिनत्रयं धर्मे निम्बकषायेन भावयेत् ॥ २०२२ ॥
गुडूच्याश्च त्रिफलायाश्च [illegible] ।
[illegible] ॥ २०२३ ॥
एषां काथमितं चूर्णमेकीकृत्य मर्दयेत् ।
मृत्पात्रे कठिने कृत्वा मृत्कर्पटयुते दृढे ॥ २०२४ ॥
एकाशीति पाकविधिना ततः [illegible] ।
पचेद्यत्नतो गाढं यथा [illegible] ॥ २०२५ ॥
ततो [illegible] प्रहरद्वयम् ।
प्रातः [illegible] ॥ २०२६ ॥
यदि [illegible] माणिक्याभं शुभं भवेत् ।
तस्मिन् जानीहि भैरवं सर्वकुष्ठविनाशनम् ॥ २०२७ ॥
सर्पिषा मधुना लीढ्वाथ [illegible] ।
त्रिगुणं सर्वकुष्ठानां नाशनं बलवर्द्धनम् ॥ २०२८ ॥
शीतलं [illegible] दुग्धं वा [illegible] ।
[illegible] ॥ २०२९ ॥
[illegible] ।
[illegible] पाण्डुं [illegible] ।
[illegible] निर्मितो बहुयत्नतः ॥ २०३० ॥

र. रा , र. प , र. चि , र. चू , कुष्ठचिकित्सा ।

भाषा—शुद्ध हिंगुल और गन्धक १–१ तो, शुद्धमैन सिल २ कर्ष, [illegible], ताम्र, लोह, अभ्रक और [illegible] सबको बराबर लेकर [illegible] सबको १ दिन मर्दनकर पुनः [illegible] करके १ रोज घोटकर सुखावे फिर [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], नीम, त्रिफला, [illegible], [illegible], निर्गुण्डी और [illegible] लेकर ४–४ मा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥ ५६२ ॥

५६३ माणिक्यरसः (द्वितीयः)

[illegible] ।
[illegible] ॥ २०३१ ॥

[illegible]

भाषा—सफेद अभ्रकके पत्रेपर हरितालका चूर्ण बिछाकर अग्निपर धरे जब हरिताल गलकर उड़नेलगे तब दूसरापत्र अभ्रक का रखकर दबादे और थोड़ीदेरतक उसे अग्निपर रहनेदे। जब देखेकि हरितालगलगया तब उतारकर नीचे रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर चाकूसे इस माणिक्यरसको निकालकर रखछोड़े। यह माणिक्यके सदृश चमकताहुआ रस तैयारहोगा। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक पान अथवा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मज्वर और सन्निपात नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

५६४ माणिक्यरसः (कुमुदः) (तृतीयः)

तालं कुट्टितमभ्रपत्रपुटगं संस्थाप्य मृत्खर्परे,
तद्रन्ध्राणि नवीनकोलदलजैः कल्कीकृतैः पूरयेत् ।
आकण्ठं महिषीमलं तदुपरि प्रोत्कीर्य यामार्धतः,
कुर्याद्वह्निमयं हिनस्ति कुमुदः सर्वज्वरान् दुस्तरान्

सि भे म, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध तबकी हरितालका बारीकचूर्णकर सफेद अभ्रकके दो टुकड़ोंके बीचमें दबावे और उनकी सन्धिको बेरके कोमलपत्तोंके कल्कसे बन्दकर मिट्टीके खपड़ेमें रखकर ऊपरसे ताजेगोबरसे सम्पूर्णको भरके आधे पहरतक मध्यम आंचदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे सम्पुटको निकाल साफकरके अन्दरसे माणिक्यके रङ्गके रसको निकालकर कज्जलके सदृश बारीक घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ माणिक्यरसः (चतुर्थ)

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि दध्नाऽम्लेन तथैव च २५३३
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति ।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक् ॥२५३४॥
बदरीपत्रकल्केन सन्धिलेपश्च कारयेत् ।
अरुणाभं ह्यधःपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ २५३५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं हरेद्रसम् ।
तद्रक्तिद्वितयं स्याद्घृतग्रामरमर्दितम् ॥ २५३६ ॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते ।
स्फुटितं गलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥ २५३७ ॥
नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम् ।
नासाऽऽस्यसम्भवान्रोगान् क्षतान्हन्ति सुदारुणान् ॥
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ २५३८ ॥

र स, भै. र, र र को, ध, र चि, र सु, र च, वै क, र त, कुष्ठे।

टि०—सिद्धभेषजमणिमालारसधातुरसयोरपि माणिक्यरसया रसमत्र मूलमिति विद्वद्भिर्विभावनीयम्।

भाषा—शुद्ध तबकीहरितालको सफेदकोंहड़ेकेरस और दही अथवा अन्य किसी खटाईमें दोलायन्त्रसे ७ अथवा ३ दिन स्वेदनकर सुखाकर तण्डुलोंके सदृश चूर्णकर शरावमें रख दूसरे शरावसे ढकदे। और बेरकेकोमलपत्रोंके कल्कसे सन्धि बन्दकर चूल्हेपर रख आंचदे। जबनीचेका ढकन एकदम लाल होजाय तब आंचदेना बन्दकरदे फिर मुद्रा खोलकर देखे उसमें माणिक्यकी तरह नीचे जमाहुआ रस मिलेगा। इसकीमात्रा १ से २ रत्तीतक घी और भौंरेके मधुके साथ खानेसे फूटाहुआ और गलित कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाड़ीव्रण, दुष्टव्रण, उपदंश, विचर्चिका, नासिका और मुखके समस्तरोग, पुण्डरीक, चर्मदल, विस्फोटक और मण्डलकुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै ५६५

५६६ माणिक्यरसः (पञ्चमः)

शुद्धं सूतं पलान्यष्टौ कुनटीं तालकं समम् ।
नागपत्रं चाष्टपलमष्टौ भागाश्च गन्धतः ॥ २५३९॥
एकत्र कज्जलीं कृत्वा काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रमध्ये तु वह्निः षोडशयामकम् ॥ २५४० ॥
भवेन्माणिक्यवर्णोऽयं शुक्रस्तम्भं करोति च ।
जराव्याधिविनाशाय राजरोगकुलान्तकृत ॥ २५४१ ॥
दशरात्रप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ।
रक्तिकार्द्धं सदा पथ्यं वृद्धः संयाति यौवनम्॥२५४२॥

र च, र सु, यो. म, र. म मा, राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, हरिताल, सीसेके बारीक पत्र, प्रत्येक ८—८ पल लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती उचितानुपानसे देनेसे यह शुक्रस्तम्भन करताहै और बुढ़ापा, राजरोगका समूह, महाव्याधि (कुष्ठादि), इन सबको नष्टकरताहै ॥ ५६६ ॥

५६७ माणिक्यरसः (षष्ठ)

शुद्धसूतसमं गन्धं कज्जलीं कारयेद्बुध ।
षोडशांशं सुवर्णञ्च माणिक्यञ्च तदर्द्धकम् ॥ २५४३ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य कन्यानीरेण भावयेत् ।
काचकूप्यां सप्तमृद्भिर्लिप्तायां तन्निवेशयेत् ॥२५४४॥
धारयेत्सिकतायन्त्रे वह्निं प्रज्वालयेच्छनैः ।
यामषोडशपर्यन्तं शलाकाञ्च ददीत वै ॥ २५४५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सूतं माणिक्यसन्निभम् ।
गन्धकञ्च पुनर्दत्त्वा पुनर्माणिक्यहेमके ॥ २५४६ ॥
पूर्ववन्मर्दयेत्तञ्च पाचयेत्तद्वदेव हि ।
एवं षड्गुणकं कार्यं सर्वयोगोपकारकम् ॥ २५४७ ॥
जायते सिद्धिदं देहे सर्वप्रत्ययकारकम् ।
सेवयेद्रोगनाशाय तत्तद्रोगाऽनुपानतः ॥ २५४८ ॥
वल्लं वा वल्लयुग्मं वा मधुना कणया सह ।
सेविते कामिनीं यामं दर्शयेद्रतिकौतुकम् ॥
वीर्यबन्धकरश्चायं योगामदविनाशनम् ॥ २५४९ ॥

रसायनस, सर्वरोग।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्ज लीकर षोडशांश सोनेकेवर्कोंसे आधी माणिक्यभस्म डालकर कज्जलीमें मिलाकर घीकुंआरके रससे एकभावना देवे। सूखनेपर सातस्पड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रस १६ पहरकी अग्निदेवे। शीशीका मुंह खुला रखनेके लिय बीचबीचमें लोहेकी गरमशलाका भीतर डालकर गन्धक जारण करे। गन्धकजारण होनेपर मुहबन्दकरदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पूर्वके बराबर गन्धक, सुवर्ण और माणिक्यभस्म डालकर पूर्ववत् मर्दनकर बालुकायन्त्रमें पकावे। इसतरह षड्गुणगन्धकजारणकरनेसे यह रस सिद्धहोताहै। इसको रोगनिवृत्त्यर्थ देनेमें सबतरहके विश्वासको पैदाकरताहै। इसमेंसे ३ अथवा ६ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे १ पहरतक शुक्रस्तम्भन होताहै रतिमें कौतुकको दिखाताहै वीर्यको जल्दी बांधताहै और स्त्रियोंके मदको नष्टकरताहै ॥ ५६७ ॥

५६८ माणिक्यरसः (बृहद्दिव्यादि) (सप्तम)

शुद्धं सूतं पञ्चपलं कुनटी तत्समां क्षिपेत् ।
हाटकन्तु पलं पञ्च माणिक्यन्तु चतु.पलम् ॥२५५०॥
मुक्ताञ्च विद्रुमञ्चैव प्रत्येकं द्विपलन्तथा ।
नागपत्रं पलञ्चैकं शुद्धगन्धकमष्टकम् ॥ २५५१ ॥
एकत्र कज्जलीकृत्य काचकूप्यां विनि.क्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रगं चाग्निं यामषट्त्रिंशकं हठात् ॥२५५२॥
भवेन्माणिक्यदिव्योऽयं कामाग्निबलवर्धनः ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा बलमांसाऽग्निवर्जिताः ॥२५५३॥
व्यवायरहितानाञ्च धातुपुष्टिकरः परः ।
वातिकाः श्लैष्मिकाश्चैव व्याधयः सम्भवन्ति ये २५५४
अस्य प्रभावाद्ग्रहणी कासश्वासाऽरुचिक्षयाः ।
वातश्लेष्मप्रतिश्यायाः प्रशमं यान्ति वेगतः ॥२५५५॥
तिमिरं पटलं काचं पिल्लं नक्तान्ध्यमर्जुनम् ।
आसन्नतिमिरं यश्च शशिनः पश्यति द्वयम् ॥२५५६॥
जराव्याधिविनाशाय राजरोगविनाशनम् ।
क्षुद्राग्रप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ॥
रक्तिकार्द्धं सदा सेव्यो वृद्धस्तरुणतां भजेत् ॥२५५७॥

रसायनसं , सर्वामये ।

भाषा—शुद्ध पारा, मैनसिल और सुवर्णभस्म ५-५ पल, माणिक्यभस्म ४ पल, मोती और मूंगेकीभस्म २-२ पल, शुद्ध नागपत्र १ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, लेकर पहिले पारेमें नागपत्र डालकर घोट फिर गन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर सबचीजों को मिलाकर आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें ३६ पहरकी तीव्रअग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे कामाग्नि और बलको बढाताहै। क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, बल, मांस और अग्निरहित, रतिकरनेमेंअसमर्थ और धातुक्षीणपुरुषोंको यह रोगरहित बनाताहै। वातिक तथा श्लैष्मिक व्याधियोंको अन्धकारको सूर्यकी तरह नष्टकरताहै। ग्रहणी, कास, श्वास, अरुचि, क्षय, वातश्लेष्मप्रधानप्रतिश्याय, इनको नष्ट करताहै। तिमिर, जाला, मोतियाबिंद, सील, रतोंधी, अर्जुन, एकवस्तुकी दो दीखना इनसबको खाने तथा लगानेसे नष्टकरताहै। लगानाहोतो मधुमें प्रयोग करना। इसके दशरोज लगातारसेवनसे असाध्यव्याधि नष्टहोताहै। बुढापा और राजरोग कुछदिनोंके सेवनसे नष्टहोतेहै ॥ ५६८ ॥

५६९ मानसूरणाद्यं लोहम्

मानसूरणभल्लातत्रिवृद्दन्तीसमन्वितम् ।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लोहं दुर्नामनाशकम् ॥ २५५८ ॥

र.सं , र सु., भै.र , र [illegible] अर्शोऽधिकारे ।

टि०—रसरत्नाकरीयत्रिकत्रयादिलोहेनाऽस्य समाननामायद्यपि केवल मानसूरणौ वाकुचीस्थाने निहितौ स्त । अरिमन्नेव योगे वाकुचीं मिश्रय्य निष्पादिते सति द्वयोरपि समावेश सुकुलया भविष्यति, अधिकारभेदोऽप्यविच्छिन्न मिश्रितयोगस्योभयकार्यकरणक्षमत्वात्। रसरत्नाकरे तु रसायनाधिकार ।

भाषा—मानकंद, सूरण, भिलावें, निसोत, दन्तीमूल, तज, पत्रज, इलायची, अथवा–नागरमोथा, चित्रक, विडङ्ग, त्रिकटु और त्रिफला येसब समभाग, इनसबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा रक्तार्शमें पाषाणभेद और शक्करकेसाथ, अथवा १ माशा रसौतके साथ अथवा वन गोभीके रसकेसाथ, शुष्कार्शमें दूध अथवा चित्रककीजड़के क्वाथके साथ देवे। इससे सबतरहके बवासीर और मेदोवृद्धि अच्छी होतीहै ॥ ५६९ ॥

५७० मानिनीमानभञ्जनरसः

सूतस्यैको विषस्यैकः पञ्च कृष्णाभ्रभस्मनः ।
शुद्धगन्धस्यैकपलं पलञ्च रसभस्मनः ॥ २५५९ ॥
खल्वे च मुनिसंख्यातं मोचासत्त्वेन भावयेत ।
चिञ्चायाः स्वरसैस्तद्वन्मुशल्या दशधा तथा ॥२५६०॥
कोकिलाक्षकतोयेन गोक्षीरेण ससधा ।
सप्त धत्तूरतोयेन सर्पवल्लीरसात्तथा ॥ २५६१ ॥
अहिफेनञ्च सप्तैव चातुर्जातफलत्रयम् ।
जातीफलं जातिपत्री सुराह्वकुसुमानि च ॥ २५६२ ॥
प्रत्येकं पलमेतेषां शाणः कर्पूरकेसरात् ।
कस्तूरिकाञ्च निक्षिप्य तत्सर्वं परिमर्दयेत् ॥ २५६३ ॥
नागवल्लीरसेनैव गुटिका चणकोपमा ।
कृत्वैकां भक्षयेद्धाऽहिपर्णैः क्षीरं पिबेत्तु ॥ २५६४ ॥
वीर्यं प्रचुरतां याति कामिनी सुरतार्थिनाम् ।
ध्वजोत्थानञ्च कुरुते स्त्रीयोनिद्रलनक्षमः ॥ २५६५ ॥
रममाणो न तृप्येत्तु स्त्रीणामानन्दवर्धनः ।
रसो हि दिष्टिराख्यातो मानिनीमानभञ्जनः ॥२५६६॥

रसायनसं , र सु , वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग १–१ पल, कृष्णाभ्रकभस्म ५ पल, पारदभस्म १ पल, लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर केलेका रस और इमलीका पत्ता इनकी ७-७

भावनाएं देकर मुशलीके स्वरस अथवा क्वाथकी १०, तथा तालमखानेका क्वाथ, दूध, धतूरा और पानकारस, अफीमका द्रव इनकी ७-७ भावनाएं देकर सुखाले फिर चातुर्जात, त्रिफला, जायफल, जावित्री, लौंग १-१ पल, शुद्धकपूर, केशर और कस्तूरी ४-४ माशे मिलाकर पानकेरससे १-२ रोजमर्दनकर चनेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ खाकर दूध पीनेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रतिकरने-परभी शुक्रक्षीण नहीं होता इन्द्रियभी शिथिल नहीं होतीहै ५७०

५७१ मार्कण्डेयचूर्णम्

शुद्धं सूतञ्च गन्धञ्च हिङ्गुलं टङ्कणन्तथा ।
व्योषं जातीफलञ्चैव तमालं देवपुष्पकम् ॥ २५६७ ॥
एलाबीजं चित्रकञ्च मुस्तकं गजपिप्पली ।
तगरं सजलञ्चाऽभ्रं धातक्यतिविषा तथा ॥ २५६८ ॥
शिग्रुबीजं शाल्मलञ्च विशुद्धं नागफेनकम् ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ २५६९ ॥
खादेदस्मात्प्रतिदिनं माषकं सितया सह ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति मन्दाग्नित्वञ्च नाशयेत् ॥ २५७० ॥
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलपुष्टिं करोत्यपि ।
मार्कण्डेयनामेदं महादेवेन निर्मितम् ॥ २५७१ ॥

वै क, भै र, ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ और सुहागा, त्रिकुटु, जायफल, पत्रज, लौंग, इलायचीकेबीज, चित्रकमूल, नागरमोथा, गजपीपल, तगर, सुगन्धवाला, अभ्रकभस्म, धावडी केफूल, अतीस, सहिजनकेबीज, मोचरस, अफीम, येसब सम भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीरवर्णकज्जलीमें मिला कर १-२ रोज घोटकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा शक्कर केसाथ देनेसे सङ्ग्रहग्रहणी, मन्दाग्नि, धातुक्षय, बुढापा, बल हानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५७१ ॥

५७२ मार्तण्डभैरवरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धात्पादांशटङ्कणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्यालोडयेद्द्रवे ॥ २५७२ ॥
शिग्रुमूलरसेनाऽथ भावयेच्च खरातपे ।
कटुत्रयस्य वासाया वह्निरुद्रजटाद्रवैः ॥ २५७३ ॥
तिलपर्ण्या तथा जातीपिप्पलीपत्रमूलकैः ।
द्रवैरेव तु सप्ताहं शोष्यं शोष्यं विभावयेत् ॥ २५७४ ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गोलं विशोषयेत् ।
बद्ध्वा वस्त्रमृदा चाऽथ भूधरे स्वेदयेत्पुटे ॥ २५७५ ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेदौषधैः सह ।
विषकर्पूरजात्येला रसस्य दशमांशतः ॥ २५७६ ॥
भावयेद्विजयाद्रावे दिनमेकञ्च भक्षयेत् ।
चतुर्गुञ्जं सकर्पूरमधुना सन्निपातजित् ॥ २५७७ ॥
मार्तण्डभैरवो नाम रसोऽसाध्यञ्च साधयेत् ।
दशमूलं पिबेच्चानु पथ्यं स्यान्मुद्गयूषकम् ॥ २५७८ ॥

रसचि, नि र, र मु, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, सुहागा ३ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ताम्रके विशुद्धपात्रमें डाल-कर जैंतका रसभरकर धूपमें रखदे । सूखनेपर सहिजनकी जड़की-छालका स्वरस डालकर कड़ीधूपमें सुखावे । इसीतरह त्रिकुटु, अडूसा, चित्रकमूल, रुद्रजटा (ईसरजटा म० अभावमें अमर-बेल), हुरहुर, जावित्री, पीपलकेपत्ते और जड़, इनप्रत्येकके रसोंसे ७-७ रोज भावनाएं देकर गोलाबनाय सुखाले । फिर ३-४ तह कपड़े लपेटकर २-३ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर दोप हरतक भूधरयन्त्रमें आंच देकर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर बछनाग, कपूर, जावित्री, इलायची, समभागलेकर बारीक चूर्ण कर परिपक्वरससे दशांश मिलाकर भांगके स्वरस अथवा क्वाथकी २-४ भावनाएं देकर ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली आधीरत्ती कपूर और मधुकेसाथ देकर दशमूलका काढा पिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको नष्टकर-ताहै । भूखलगने पर मूंगकायूष देना ॥ ५७२ ॥

५७३ मार्तण्डरसः

रसञ्च गन्धकं म्लेच्छं विषं नेपालकं तथा ।
फलत्रयं त्रिकटुकं जीरकं चित्रकं तथा ॥ २५७९ ॥
समभागानि चैतानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गस्य रसकैर्मर्द्य गुटिका गुञ्जमात्रिका ॥ २५८० ॥
षट्कान्भक्षयेन्नित्यं मरिचैश्च समन्वितान् ।
सर्वज्वरहरं नित्यं सदा शीतज्वरं हरेत् ॥ २५८१ ॥
हृद्रोगञ्च कफं प्रोक्तमम्लपित्तं सुदारुणम् ।
सर्वशूलं तथा गुल्मं क्षयपाण्ड्वोश्च नाशनः ॥ २५८२ ॥
दीपनं पाचनञ्चैव समीरपित्तरोगजित् ।
रोगाग्निर्मूलयेत्सत्यं मूलरोगविनाशनः ॥
आधिव्याधिहरश्चैव सर्वव्याधिनिवारणः ॥ २५८३ ॥

र क यो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ, बछनाग और जमा लगोटा, त्रिफला, त्रिकुटु, जीरा, चित्रकमूल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर भंगरेके रससे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु पानकेसाथ देनेसे शीतज्वर, हृद्रोग, कफ, अम्लपित, समस्तशूल, गुल्म, क्षय, पाण्डु, मन्दाग्नि, वात और पित्तकेरोग, अर्श प्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ५७३ ॥

५७४ मार्तण्डीगुटिका

शुद्धसूतसमं गन्धं मर्दनात्कज्जलीकृतम् ।
तत्ताम्रसम्पुटे रुद्ध्वा लवणेन मृदा दृढम् ॥ २५८४ ॥
पचेद्दीपाग्निना शुष्कं यामैकं भस्मयन्त्रके ।
सम्पुटस्यार्द्धलग्नं तत्समुद्धृत्याऽथ मर्दयेत् ॥ २५८५ ॥
तुल्यपारदसंयुक्तं पूर्ववत्सम्पुटे पचेत् ।
उद्धृत्य तुल्यसूतेन संयुक्तं मर्दितं पचेत् ॥ २५८६ ॥

इत्येवं सप्तधा कुर्यात्पुनः पारदटङ्कणम् ।
तुल्यं तुल्यं क्षिपेत्तस्मिन्दिने सर्वं विमर्दयेत् ॥ २५८७॥
वज्रमूषागतं रुद्ध्वा ध्माते खोटो भवेद्रसः ।
मार्तण्डी गुटिका ह्येषा वर्षैकं यस्य वक्त्रगा ॥२५८८॥
वलीपलितमुक्तोऽसौ जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
पलाशबीजजं तैलं पलैकं क्षीरतुल्यकम् ॥ २५८९ ॥
कामर्णं प्रपिबेन्नित्यं तत्क्षणान्मूर्च्छितो भवेत् ।
तस्य वक्त्रे गवां क्षीरं स्तोकं स्तोकं निषेचयेत् २५९०
प्रबुद्धे क्षीरभक्तं स्याद्भोजने परमं हितम् ।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां ताम्रं भवति काञ्चनम् ॥
वायुवेगो महासिद्धश्छिद्रां पश्यति मेदिनीम् ॥२५९१॥

र ख , र का , रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर ताम्रकेसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखादे। सूखने पर भस्मयन्त्रमें रख एकपहर दीपाग्निकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर ऊपरके सम्पुटमें लगेहुए पदार्थको खुरचकर उसकी बराबर कच्चा पारा मिलाकर पहिलेकी तरह सम्पुटमें बन्दकर पकावे। इसतरह ७ बारकरनेकेबाद आठवींबार सम्पुटसे निकाले हुए पदार्थकी बराबर पारा और सुहागा मिलाकर एकदिनभर मर्दनकर वज्रमूषामें बन्दकर धोंकनेसे खोट तैयारहोगा। इसको एकपहर मुहमें रखकर पलाशके बीजोंके एकपल तैलमें बराबरका गोदुग्ध मिलाकर पीनेसे तत्क्षण मूर्च्छा होगी। मूर्च्छितसाधकके मुहमें ताजा गायकादूध डाले, होश आनेपर दूधभात खानेको देवे। इसप्रकार एकवर्षतक प्रयोग करनेपर इसके मलमूत्रसे तावा सुवर्णहोगा। वायुके सदृश वेग बढेगा और सिद्धियोंको प्राप्तहोगा। इसकेलिये आकाश पातालमें कोईभी जगह जानेकी रुकावट नहीं होगी। और जिमीनमें गड़ाहुआ निधि प्रत्यक्ष दिखाई देगा ५७४

५७५ मार्तण्डेश्वररसः

समताप्ययुतं शुद्धं पलविंशतिमानकम् ।
प्रध्माते हि चतुर्वारं खण्डयित्वा ततश्चरेत् ॥ २५९२॥
तत्तुल्यमाक्षिकोपेतं पुटेद्विंशतिवारकम् ।
गन्धकेन पुटेत्तावद्यावत्पलमितं भवेत् ॥ २५९३ ॥
क्षिपेत्पलमितं तत्र गन्धकेन हतं रसम् ।
शाणमात्रं मृतं वज्रं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २५९४॥
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं मार्तण्डेश्वरनामवान् ।
कीर्तितो लोकनाथेन लोकानां हितकाम्यया ॥२५९५॥
मरीचघृतसंयुक्तः सेवितो मण्डलार्द्धतः ।
वाताद्यष्टमहारोगांश्छ्वासकासयुतं क्षयम् ॥ २५९६ ॥
हलीमकञ्च पाण्डुञ्च ज्वरानपि सुदुस्तरान् ।
इत्यादिकगदान्सर्वान्विनाशयति निश्चितम् ॥ २५९७॥
करोति दीपनं तीव्रं दीप्तानलशतोपमम् ।
सन्निपाते जयत्याशु दत्तश्चाऽऽर्द्रकसमन्वितः ॥
सर्वसौख्यकरो नृणां स्त्रीणां वन्ध्यत्वनाशनः ॥२५९८॥

र र स , र. मु , र न , र भ मा वान्त्याम्याधिकार ।

भाषा—२० पल सोनामाखीका चूर्णकर नीबू वगैरहमें घोटकर उसके बराबरके तांबेकेपत्रपर लेपकरके मूषामें रख धमनकरनेसे पिण्ड सदृश बनजायगा। इसमें बराबरकी सोना माखी डालकर २० पुट देवे। इसकेबाद बराबरका गन्धक देकर वारम्वार धमनकरे। जब १ पल ताम्र रहजाय तब पुटदेना बन्द करदे। फिर इसकी बराबर केवल गन्धकसे माराहुआ पारा १ पल, हीरेकीभस्म ४ माशे लेकर सबको एकत्र मर्दनकर रख छोडे। इसमेंसे दो चावलकी मात्रा मिर्च और घीके साथ सात दिनतकखानेसे वातादि आठ महारोग, श्वास कास, क्षय, हलीमक, पाण्डु, दुस्तरज्वर, मन्दाग्नि, प्रभृति रोगोंको दूरकरताहै। त्रिकटु और अदरखकेसाथ देनेसे सबप्रकारके सन्निपात और स्त्रियोंका बांझपना नष्टहोताहै ॥ ५७५ ॥

५७६ माहेश्वररसः (प्रथमः)

रसं भस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम् ।
लौहं कर्षद्वयं ताम्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥ २५९९ ॥
सुवर्णं जारितं दद्याच्छाणार्द्धं चन्द्रभस्मकम् ।
अभ्रं कर्षद्वयं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणः ॥ २६०० ॥
श्यामाबीजं वरीश्चैव बलामतिबलान्तथा ।
पलाश्च शङ्खपुष्पश्च शाणमानं विनिक्षिपेत् ॥ २६०१ ॥
जलेन वटिका कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत् ।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ २६०२ ॥
सहस्रं याति नारीणामुत्साहो जायतेऽधिकः ।
नित्यं स्त्रीसेवनाद्यस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ २६०३॥
पूर्णशुक्रो भवेत्सोऽपि सेवनादस्य नाऽन्यथा ।
महाबलो महाबुद्धिर्जायते नाऽत्र संशयः ॥ २६०४ ॥
स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः ।
रसो विनाशयेद्रोगान् सप्तसप्ताहभक्षणात् ॥ २६०५ ॥

र स , र [illegible] , रसायनवाजीकरणयो ।

भाषा—पारदभस्म और शुद्धगन्धक आधाआधाकर्ष, लोहभस्म २ कर्ष, ताम्रभस्म ४ माशे, सुवर्णभस्म २ माशे, अभ्रक और रजतभस्म २–२ कर्ष, कालादाना २ माशे, शतावर, खरैटी, गंगेरन, इलायचीकेबीज, शङ्खपुष्पी ये ४–४ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर जलकेसाथ एकरोज घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियांबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रतिकरने परभी शुक्रका क्षय नहीं होता। जो अत्यन्त स्त्रीप्रसङ्गकरनेसे क्षीणशुक्ररोगग्रस्त हो वहभी इसके सेवन करनेसे शुक्रसे परिपूर्ण होजाताहै। इसके सेवनसे बल और बुद्धि बढ़तीहै स्थूलोंको कृश और कृशोंको स्थूल बनाताहै असाध्यरोगोंको ७ सप्ताहमें नष्टकरताहै ॥५७६॥

५७७ माक्षिकबद्धगुटी

व्योममाक्षिकसत्त्वञ्च तारं ताम्रं सुरायसम् ।
मृतेन समायुक्तं रक्तादिगुणभाविता ॥ २६०६ ॥

गुटी वद्धा वरारोहे मधुरत्रयसंयुता।
वक्त्रस्था नाशयेत्साक्षात्पलितं नाऽत्र संशयः २६०७
रसेन्द्रमं., रसायने।

भाषा—अभ्रक तथा स्वर्णमाक्षिकसत्व, शुद्धचांदी, तांबा, सुवर्ण और पारा समभाग लेकर गलाकर किसी सांचेमें छिद्रयुक्त गोली बनाले। उसमें लाल अथवा काला डोरा डालकर मुंहमें रक्खे और ध्यानरहे कि गलेमें न उतरजाय, इसीलिये डोरेका विधान कियागयाहै। इसके बाद शक्कर, घी और मधु तीनों समभाग मिलाकर मुंहमें भररक्खे और थोड़ा २ गलेमें उतरने दे जिसमें कि मुंहमें १–२ घंटा गोली पड़ीरहे इसतरहका यत्न करे। इसप्रयोगसे सफेदकेश फिरसे काले होजायंगे॥ ५७७॥

५७८ माक्षिकयोगः

एवञ्च माक्षिकं धातुं तापीजममृतोपमम्।
मधुरं काञ्चनाभासमम्लं वा रजतप्रभम्॥ २६०८॥
पिबन् हन्ति जराकुष्ठमेहपाण्ड्वामयक्षयान्।
तद्भावितः कपोतांश्च कुलत्थांश्च विवर्जयेत्॥२६०९॥
सु. सं., वै. क., यो. र., वै. चि., प्रमेहाऽधिकारे।

टि०—वैद्यकल्पद्रुमादौ "माक्षिक धातुना लीढ मेह हरति सर्वथा" इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्यनैवान्तर्भावोऽस्ति यो. र., वै. चि., एतयोः "गुडूचीसत्त्वसंयुक्तं पित्तमेहं व्यपोहति" इत्यधिक पाठः।

भाषा—तापीतटोद्भव सुवर्णमाक्षिक मधुरहोताहै और कञ्चनकेसदृश कान्तिहोतीहै तथा रजतमाक्षिक अम्लहोताहै। इनदोनोंकी भस्में समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतककी मात्रा दूधकेसाथलेनेसे बुढ़ापा, कुष्ठ, प्रमेह, पाण्डु और क्षय इनसबको यह नष्टकरताहै। इसका सेवन करनेवाला कबूतर और कुलथीका परित्याग करे॥ ५७८॥

५७९ माक्षिकवटकः

माक्षिकं तालकमितं तदर्द्धं गन्धकं रसम्।
तथाऽभ्रञ्च समादाय मुक्तास्वर्णौ च पादिकौ २६१०
काकमाचीपत्ररसैस्त्रिधा सम्भाव्य यत्नतः।
रक्तिद्वयमिता कार्या माक्षिकादिवटीशुभा॥ २६११॥
वेष्टिता पद्मपत्रेण धान्यराशौ निधापिता।
यथायोग्याऽनुपानेन सेविता संहरेन्नृणाम्॥
नेत्ररोगांश्च निखिलान्नानोपद्रवसंयुतान्॥ २६१२॥
आ. वि., नेत्ररोगाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक और हरितालभस्म १–१ तोला, शुद्धपारा, गन्धक और अभ्रकभस्म ६–६ माशे, मोती तथा सुवर्णभस्म ३–३ माशे लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मकोयकेपत्तोंकेरससे तीनदिनमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें अर्द्धशुष्ककर कमलके ताज़ेपत्तेमें लपेटकर सूतसे बांधकर धान्यकीरादिमें ७ दिनतक रखकरनिकालले और अच्छीतरह सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे नानातरहकेउपद्रवोंकेसाथ नेत्रोंके समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै॥ ५७९॥

५८० माक्षिकादिचूर्णम्

माक्षिकं पारदं गन्धं खर्परं गिरिमृत्तिकाम्।
शिलाजत्वभ्रलोहानि शाल्मल्याः कुसुमं त्वचम् २६१३
विदारीं गोक्षुरं बीजं चैकत्र परिमर्दयेत्।
माषमात्रं प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनिवृत्तये॥ २६१४॥
भै. र., शुक्रमेहे।

भाषा—माक्षिकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, खपरिया, गेरू, शिलाजतु, अभ्रक और लोहभस्म, सेमलकेफूल तथा छाल, बिदारीकन्द, गोखरू, हीरादक्खन, सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ रोज़ खरलमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा दूध वगैरहकेसाथ देनेसे यह शुक्रप्रमेहको नष्टकरताहै॥ ५८०॥

५८१ मांसजारणरसः

नागवल्लीदलोद्भूतवारिसाधितपारदः।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दपुटितो म्रियते क्षणात्॥ २६१५॥
सूतं नागं विषं व्योषं सैन्धवञ्च सुवर्चलम्।
समांशं भक्षितं चूर्णं मांसाहारविनाशनम्॥ २६१६॥
अजीर्णशूलमाध्मानच्छर्दिमारुतनाशनम्।
विसूचिकागुल्मकासानूर्द्धवातं तथैव च॥ २६१७॥
र. (मा.), र. चो., अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—पके नागरबेलके पानोंकेरससे शुद्धपारेको पिष्टी होनेतक घोटकर गोलीबनाय बांझखेखसाके कन्दमें रखकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर दोसेर कण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकरदेखे यदि भस्म होनेमें कुछ कसररहीहो तो दुबारा करे। इसतरह कीहुई पारदभस्म, नागभस्म, शुद्धबछनाग, त्रिकुटु, सेंधा और संचल नमक येसब समभाग लेकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे अत्यधिकखायाहुआमांस जल्दी पचजाताहै। अजीर्ण, शूल, आध्मान, वमन, वातप्रकोप, हैज़ा, गुल्म, कास, ऊर्द्ध्ववात इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ५८१॥

५८२ मिहिरोदयरसः

माक्षिकं रजतं लोहं सिन्दूरं वह्निवारिणा।
भावयित्वा विमर्द्याऽथ कृत्वा रक्तिमिता वटीः २६१८
एकैकां खादयेदासां त्रिफलाक्कथितमुखे।
मिहिरोदयनामाऽयं स्नायुमूलं रसो हरेत्॥ २६१९॥
आ. वि., स्नायुरोगे।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक, चांदी और लोहभस्म, रससिन्दूर सब समभागलेकर चित्रकमूलकेक्वाथसे २–३ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफलाकेक्वाथसे प्रातःकालसेवनसे यह नहरुवेको जड़से खोताहै॥

५८३ मिहिरोदयवटी

लौहमभ्रं सुवर्णञ्च विद्रुमं राजपट्टकम्।
सर्वं समं प्रदातव्यं सिन्दूरञ्च द्विभागिकम्॥ २६२०॥

एरण्डमूलजेनैव रसेन परिभावयेत् ।
क्काथैस्तथा जटामांस्या वटी रक्तिद्वयात्मिका २६२१
पथ्यापयोऽनुपानेन वटीयं मिहिरोदया ।
अर्द्धावभेदकं हन्ति पीता वातमनन्तकम् ॥ २६२२ ॥
सूर्यावर्तं तथा शङ्खकैजञ्च द्विदोषजम् ।
त्रिदोषजं शिरोरोगं साध्यासाध्यं न संशयः ॥२६२३॥

आ. वि , शिरोरोगे ।

भाषा—लोह, अभ्रक, सुवर्ण, मूंगा, राजावर्त इनकीभस्में १–१ भाग, रससिन्दूर २ भाग लेकर सबको बारीकपीस एरण्डमूल और जटामासीके क्काथसे १–१ रोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली हरेंके काढेकेसाथ लेनेसे अर्धावभेद, अनन्तवात, सूर्यावर्त, शङ्खक, एकदोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज साध्य अथवा असाध्य शिररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५८३ ॥

५८४ मुक्तागर्भपोट्टलीरसः (प्रथमः)

मौक्तिकं कनकसूतगन्धकं चूर्णितोऽग्निपयसा विमर्दयेत्
धारसं पृथुवराटकांस्ततः पूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत् ॥
मुक्तगर्भयरपोट्टलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः ।
रक्तिकात्रयमितं रसं पिबेद्वल्लपट्कमरिचै घृतप्लुतैः ॥
सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेन्न कुरु तत्र संशयम् ।
रोगजालरहितेऽपि योजयेत्पुष्टिदीप्तिधृतिवीर्यवृद्धये ॥

र. चिं , र दी., क्षये ।

भाषा—मोतीकीभस्म १ भाग, सुवर्णभस्म २ भा , शुद्धपारा ३ भा और गन्धक ४ भाग लेकर चित्रकमूलके क्काथसे एक-रोज़ मर्दनकर बडेकौडोंमें भरके गुड, सुहागा और चूनेसे मुंह-बन्दकर हंडीमें रख ढकनलगाकर ३–४ कपडमिटी करदे । सूखनेपर एकमन कण्डोंकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल-कर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा १८ रत्ती काली-मिर्चोंके चूर्णकेसाथ घीमें मिलाकर खानेसे यह समस्तरोगोंको निवृत्तकरताहै । इसको रोगरहितमनुष्य खाय तो पुष्टि, अग्नि-दीप्ति, धैर्य और वीर्यकीवृद्धि होतीहै ॥ ५८४ ॥

५८५ मुक्तागर्भपोट्टलीरसः (द्वितीयः)

सूतं स्वर्णं मुक्ता विषपचपलमंशं समवलिं,
　द्विघस्रं सम्मर्द्य ज्वलनपयसा गोलकमिदम् ।
समुद्रस्त्रैवेष्ट्यं मुनिमितमथो रोपय पुटे,
　सुमाण्डस्थं भाण्डे विपच दिनमेकं हिममिदम् ॥
तथा शुक्रे पाण्डौ ज्वररुजि समेहे गदपतौ,
　विशुक्रे मुक्तापोट्टलिरथ मरीचाज्यविहिता ॥

र. शं , क्षये ।

भाषा—सुवर्ण और मोतीभस्म, शुद्ध बच्छनाग और पारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेगन्धककी कज्जली कज्जलीमें सबचीज़ें मिलाकर चित्रकमूलकेक्काथसे दोरोज मर्दन कर गोलाबनाय १–१ तह मलमलके कपडेमें लपेटकर ७ कपड-मिटी देकर सुखावे । फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवण अथवा भस्म अथवा बालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी मध्यम अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती मरिच और घीकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, प्रमेह, राजरोग, शुक्र-क्षय, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५८५ ॥

५८६ मुक्तादिचूर्णम्

मुक्ताप्रवालवैदूर्यशङ्खस्फटिकमञ्जनम् ।
ससारगन्धकाचाऽर्क सूक्ष्मैला लवणद्वयम् ॥ २६२८ ॥
ताम्राऽयोरजसी रूप्यं ससौगन्धि कशेरुकम् ।
जातीफलं शणाद्बीजमपामार्गस्य तण्डुलाः ॥ २६२९ ॥
एषां पाणितलं चूर्णं तुल्यानां क्षौद्रसर्पिषा ।
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च लीढमाशु नियच्छति॥२६३०
अञ्जनात्तिमिरं काचं नीलिकं पुष्पकं तमः ।
पैल्यं कण्डुमभिष्यन्दं मन्दञ्च तत्प्रणाशयेत् ॥ २६३१ ॥

च स., अ सं., हिक्काश्वासकासेषु ।

टि०—"शङ्खस्य समुद्रफेनस्य मण्डूकीञ्च समुद्रजाम् । स्फटिकं कुरु-विन्दञ्च प्रवालाश्मन्तकन्तथा ॥ वैदूर्यपुलक मुक्तामयस्ताम्ररजांसि च । समभागानि सम्पिष्य सार्द्धं स्रोतोऽञ्जनेन तु ॥ चूर्णाऽञ्जन कारयित्वा भाजने मेषशृङ्गजे । संस्थाप्योमयतः कालमञ्जयेत्ततस्तु शुभ ॥ अर्माणि पिल्का हन्यात् सिराजालानि तेन वै ॥ सु [illegible] , उ अ १८।२५–२८,, इति सुश्रुतीयप्रयोगे प्राय प्रधानानि द्रव्याणि समागतानि परन्तु स अञ्जनतया विन्यस्त , अग्निवेशेन तु द्विनवस्तुषु व्यत्यय कृत्वा तद्भक्षणे प्रयुक्तमिति सुधीभिर्विभावनीयम् । सुश्रुतीयप्रयोगोऽपि भक्षणे प्रयुक्तश्चे-चरकोक्तगुणानप्यतिशयिष्यत इत्यस्माकमभिप्राय । एव—"मष्टौ भागा नञ्जनस्य नीलोत्पलसमद्युते । औदुम्बर शातकुम्भ राजतञ्च समासत ॥ एषामर्द्धैनाम्भागांस्तु योजयेत्कुशलो भिषक । मूषाक्षिप्त तद्धाप्मातमावृत्त जातवेदसि ॥ खदिराऽश्मन्तवाकादि गोशकृद्भिरथापि वा । गवां शकृद्रसे मूत्रे दध्नि सर्पिषि माक्षिके ॥ तैलमधवसामज्जसर्वगन्धोदकेषु च । द्राक्षारसेक्षुत्रिफलारसेषु शुक्तिषु च ॥ सारिवादिकषाये च पयाये चोत्प-लादिके । निषेचयेत्पृथक् चैन ध्मात ध्मात पुन पुन ॥ ततोऽन्तरीक्षे सप्ताह स्रोतबद्ध स्थित जले । विशोष्य चूर्णयेन्मुक्ता स्फटिक विद्रुम तथा ॥ कार्ष्णानुसार्यञ्च तथा शुचिरावाप्य योगत । एतच्चूर्णाञ्जन श्रेष्ठ निहित भाजने शुभे ॥ दन्तस्फटिकवैदूर्यशङ्खशैलासमुद्भवे । शातकुम्भेऽथ शार्ङ्गे वा राजते वा सुसस्कृते ॥ सहस्रपाकतरपूर्वं कृत्वा राज्ञ प्रयोजयेत् । तेनाऽञ्जिताक्षो नृपति भवेत्सर्वजनप्रिय ॥ अधृष्य सर्वभूताना दृष्टि-रोगविवर्जित [illegible] सु स उ १८।८५,, अयमपि योगो भक्षणे चरकोक्त योगगुणानतिशयिष्यते प्रधानतया प्रमेह, ग्रहणी, पाण्डु, भगन्दर, क्षयादिक शीघ्र शमयिष्यति इति रहस्यम् ।

भाषा—मोती, मूंगा, लसनिया, शङ्ख, स्फटिक, श्वेताञ्जन, सुवर्ण इनकी भस्में, शुद्ध गन्धक, श्वेतकाचभस्म, सूर्यकान्तभस्म अथवा आककी जडकी छाल, छोटीइलायची, सेंधा और सांभर-नमक, ताम्र, लोह और चान्दीभस्म, सहस्रदलकमल (श्रीकमल नामक सुगन्ध की तर्क होताहै), कसेरू, जायफल, शणकेबीज, अपामार्गके चावल येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक प्रकृति, देश और कालादिकको विचारकर मधु और घीकेसाथ देनेसे हिचकी, श्वास, कास, इनसबको यह नष्टकरताहै । अञ्जनकरनेसे तिमिर, मोतिया,

नीलिका, पुष्प और तम, रतौंधी, खुजली, आंखोंका दुखना, मन्ददृष्टि इनसबको नष्टकरताहै। यहापर यह विशेषकर ध्यानमें रखना उचितहै कि जब इसयोगको अञ्जनकेनिमित्त बनानाहो तब धातुओंकीभस्में न लेकर शुद्धरसके बहुत बारीकरेता करके भंगरा-वगैरहवेरससे यहातक घोटे कि धातुओंकेकण नाबूद होजायं॥

५८७ मुक्तापञ्चामृतरसः

मुक्ताप्रवालखुरवङ्गककम्बुशुक्ति-
भूर्ति वसुद्धिदिगिन्दुसुधांशुभागाम्।
इक्षो रसेन सुरभेः पयसा विदारी-
कन्याधरीसुरसहंसपदीरसैश्च॥ २६३२॥
सम्मर्द्य यामयुगलञ्च घनोपलाभि-
र्दद्यात्पुटानि मृदुलानि च पञ्चपञ्च।
पञ्चामृतं रसमिमं भिषजा प्रयोज्यं
गुञ्जाचतुष्टयमितं चपलारजश्च॥ २६३३॥
पात्रे निधाय चिरसूतपयस्विनीनां
दुग्धेन च प्रपिवतः खलु चाल्पमोक्तुः।
जीर्णज्वरः क्षयमियादथ सर्वरोगाः
स्वीयानुपानकलिताश्च शमं प्रयान्ति २६३४

यो. र, नि. र, र. स, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—मोती ८ भाग, मूंगेकीपिटी ४ भाग, हिरणखुरीरागारी भस्म २ भा, शङ्ख और मोतीसीपभस्म १–१ भा, लेकर बारीकपीसकर ईखकारस, गायकादूध, विदारीकन्द, घीकुंआर, शतावर, तुलसी, हंसराज, इनसबकेरसोंसे २–२ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर दो सेर जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीतरह आचदे। ऐसे प्रत्येक औषधिकी ५–५ पुटें देकर पञ्चामृतकी पाचआंचें देवे। इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा पीपलके-चूर्णकेसाथ मधुमें मिलाकर खावे ऊपरसे बहुतदिनकी ब्यायीहुई-गायका दूधलेकर थोड़ाभोजनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षयप्रभृति समस्तरोग अपने २ अनुपानोंकेसाथ लेनेसे शान्त होतेहैं॥५८७॥

५८८ मुक्ताभस्मयोगः

कटुकागैरिकाभ्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम्॥ २६३५॥

यो र, र सु, र चं, रसायनसं, र क ■ हिक्कायाम्।

टि०–हिक्काश्वासनिवर्हणमिति पूर्वस्मादधिकमिति।

भाषा—कुटकी, सोनागेरू और मोतीभस्म समभाग लेकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशेकीमात्रा बिजोरेकेरससे लेनेसे हिचकी और श्वास नष्टहोते हैं। इसीतरह ताम्र और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभागमिलाकर २रत्तीकी मात्रा बिजोरेके-रसकेसाथलेनेसे श्वास और हिचकी नष्टहोते हैं॥ ५८८॥

५८९ मुक्तामृगाङ्करसः

स्वर्णं तीक्ष्णञ्च कान्तं रजतरसमयं भस्म वङ्गाहि तुल्यं,
मुक्ता सर्वैः समाना द्विगुणमथ रसाद्गन्धकं टङ्कणञ्च।
पादांशं सर्वमेतत्तुपमवमृदितं पूर्ववद्यन्त्रपक्वं
स्वाङ्गे शीतं मृगाङ्कं मृगमदतुलितं यक्ष्मरोगे प्रशस्तम्॥

र प, राजयक्ष्माऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, फौलाद, कान्तलोह, चांदी और पारा इनकीभस्में १–१ भाग, वङ्ग और नागभस्म ढाई २॥ भाग, मोतीकीभस्म १० भा, शुद्धगन्धक २ भा., भुनासुहागा ५॥ भा, लेकर सबको बारीकचूर्णकर तुषाम्लमें ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय मैनफलके पत्तोंसे लपेटकर ३–४ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाले। सूखनेपर नई हंडीमें पिसेहुए समुद्रके नमकमें गोलेको दबाकर ४ पहरकी मृदुआंच देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर धतूरा, भाग, खसखस, तिल और घीकुंआर इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ४–४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सेंधानमक बारीकपीसकर गोलेपर बुरकाय फिर धतूरेप्रभृतिके रसमें उड़दके आटेको सानकर गोलेपर चढाय लवणयन्त्रमें रख ३ पहर मन्दअग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा बराबरकीकस्तूरीकेसाथ मिलाकर देनेसे उपद्रवोंसहितराजयक्ष्मका यह नष्टकरताहै ५८९

५९० मुखरोगहरीवटी (प्रथमा)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु।
गोमूत्रेण विमर्द्याऽथ ससधाऽऽर्द्रद्रवेण च॥ २६३७॥
जातीनिम्बमहाराष्ट्रीरसैः सिद्धयति पाकहा।
कणामधुयुता हन्ति मुखरोगं सुदारुणम्॥ २६३८॥
गुञ्जाऽष्टकमिता तालुगलौष्ठदन्तरोगनुत्।
महाराष्ट्रयश्वगन्धाभ्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत्॥२६३९॥
धारणात्सेवनाच्चैव हन्ति सर्वान्मुखामयान्।
सर्वास्यामयजित्सेव्यो मधुना पर्पटीरसः॥ २६४०॥

र सं, र. सु, र चि, रसायन सं, र. कौ, भै र, र का, र सि, र. क मुखरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, शुद्धशिलाजीत ४ भा., लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर शिलाजीतमें मिलाकर गोमूत्र, अदरख, चमेली और नीमकीछाल तथा महाराष्ट्री (मराठी) इनके रसोंकी ७–७ भावनाएं देकर ८–८ रत्तीकीगोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ खानेसे यह मुखके समस्तरोगोंको दूरकरतीहै। मुखमेंरखनेसे गले, ओष्ठ और दांतोंके रोगोंको नष्टकरतीहै। मराठी और असगन्धके चूर्णसे दन्तमञ्जन करना-चाहिये। इसगोलीको खानेमें तथा दांतोंमें घिसनेकेकाममें लानाचाहिये। इसीतरह मधुकेसाथ पर्पटीरसके लेनेसे भी समस्त मुखरोग नष्टहोतेहैं॥ ५९०॥

५९१ मुखरोगहरीवटी (द्वितीया)

अभ्रककम्बुकमयजयुतं
त्रिफलात्रिपलादाफलैस्त्रिदिनम्।
पमरङ्गणकेन विमर्द्य तं
वटिकां कुरु तां तु सुवेष्टय मृदा॥२६४१॥

गुडगुग्गुलुगोमयटङ्कणकैः
क्रमतश्च सुवेष्ट्य विशोषय ताम् ।
धमयेत दृढानलयन्त्रचरे
ध्रुवबन्धनमेति सकिट्टयुतः ॥ २६४२ ॥
सितकाचसुटङ्कणकाज्ययुतं
निपुणं धमयेच्च मलं सकलम् ।
विजहाति स तेन समं कनकं
वरतारसुशुल्बदलं यदि वा ॥ २६४३ ॥
रसराजसमं कुरु तत्त्रितयं
धमयेत रसेन तु लेपय तम् ।
सुदिने गुरुसंयुतमान्यनरा-
नुपचारगणैरुपपूज्य ततः ॥ २६४४ ॥
वदने गुटिका प्रणयेत धृता
दशने दृढदा मुखरोगहरा ।
अनिलादिगदानपहन्ति सदा
किल मासधुधारणयाऽथ भवेत् ॥
वरबुद्धिकरा बलदा प्रबला
पलितादिहरा च समायुगले ॥ २६४५ ॥

र दी. मुखरोगे ।

भाषा—अभ्रकसत्व अथवा धान्याभ्रक, शङ्ख, शुद्धपारा, समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेमें मिलाकर एकदिन सुखामर्दनकर त्रिफला, चित्रक, पलाशकेबीज इनके काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर सबकी बराबर सुहागा मिलाकर तीनोंकेइकट्ठेकाथसे एकदिन मर्दनकर गोली बनाय पुराने वस्त्रके कतरन और मिट्टीको कूटकर एकजीव होनेपर एकलेपदेकर सुखावे । फिर गुड, गूगल, गोबर और सुहागा इनका १-१ लेपदेकर सुखाकर कुठालीमें रख दृढाग्निसे धमनकरनेसे खोट (किट्टसदृशपदार्थ) तैयार होगा। इससमस्तको इकट्ठाकर सफेदकाच, सुहागा और घी मिलाकर कुठालीमें रखकर धमनकरनेसे मल अलग होकर रस पृथक् होजायगा । फिर सुवर्ण, चांदी और तांबा इनका बारीकरेता अथवा वर्क रसकीबराबर मिलाय गलाकर पत्र बनावे और पूर्वरसके ऊपर लपेटकर गोलीकेसदृश बनाले। शुभमुहूर्तमें गुरु और पूज्यलोगोंकी पूजाकर इसगोलीको मुहमें रखनेसे दन्तरोग, मुखरोग, वात, पित्त तथा कफरोग एकमहीनेमें दूरहोतेहैं । बुद्धिकी मन्दता, धातुओंकी कमजोरी, वली और पलित दोवर्षमें नष्टहोतेहैं ॥ ५९१ ॥

५९२ मुखरोगहरीवटी (तृतीया, चतुर्थी)

कनकार्कसुतारयुतं भवजं
यदि वा कुरु सं वदने निहितम् ।
यदि वाऽर्कजचक्रनिबद्धरसं
घनकान्तयुतं वदने सुखदम् ॥ २६४६ ॥

र दी , मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध सोना, तांबा, चांदी और अग्निस्थायी पारा इनसबको गलाकर गोलीबनाय मुखमें रखनेसे मुख और दांतोंके रोग दूरहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । अथवा अनलरस (सं. १२५) में कहेहुए प्रकारसे पारको बांध अभ्रकसत्व और कान्तसत्वको मिलाकर नियामकगणसे २-३ दिन घोटकर कुठालीमें रखकर गलावे और गोलीके आकारमें बनाकर रखले। इसगोलीको मुहमेंरखनेसे तमाम मुखरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५९२ ॥

५९३ मुद्राघोटक रसः

पारदो गन्धकश्चैव त्रिक्षारं लवणत्रयम् ।
गुग्गुलुर्वत्सनाभश्च प्रत्येकन्तु द्विमाषकम् ॥ २६४७ ॥
कृष्णोन्मत्तजटानीरै भावयेत्सप्तवारकम् ।
गोक्षुरेन्द्रकुमारीवकरञ्जचित्रतेजिकाः ॥ २६४८ ॥
भूकुरवकलताभिश्च त्रिफलाबृहतीरसे. ।
मर्दिता वटिका कार्या कृष्णलाफलसन्निभा ॥२६४९॥
ततो वटीद्वयं दत्त्वा यत्नात्पाठादिभिर्युतः ।
रसः सर्वज्वरं हन्ति क्षणमात्रान्न संशयः ॥ २६५० ॥

भै र , र सु , ज्वराऽधिकारे ।

टी०—अत्र रसे भूकुरवकलताभिश्चति पाठे केनचिद् भूमिझिण्टीति व्याख्यात तन्न सम्यक्' भूमिझिण्टेरप्रसिद्धत्वात् । तस्माद्भूरिति पृथग्वस्तु तच्च पृथ्वीकाशब्देन सुश्रुतादौ व्यवहृत, लोके तस्य काली जीरीति नाम। यद्यपि डल्हणादिभि तत्स्थाने बहुप्रकार स्वाऽज्ञानमुद्भावि परन्तु तन्न वैमाचार्यस्य नाऽभिप्रेत प्रकरणानुरोधा-द्वनस्पतिविवरणे एतद्विस्तरेण विवेचयिष्याम । अमरप्रभृतिभि र्वनस्पतिविधान रसातलमनाप्य तस्तदर्वाचीनै पृथ्वीशब्दो बृहदेलिकाया सङ्केतित , तदनुसारेण चेदत्र भूशब्दस्य व्याख्या क्रियेत तर्हि बृहदेलिका प्रतीतव्या । कुरवकेन सहचरी प्राची रक्तवर्णाद्यन्यतर., लताशब्देन मञ्जिष्ठा ग्राह्या प्रकरणानुरोधात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तीनोंक्षार (सज्जी सुहागा और यवक्षार)' तीनोंनमक (सेंधा, साभर और सचल), गूगल, शुद्धबछनाग ये प्रत्येक २-२ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कालेधतूरेकी जडकेरससे सातवार भावनाएं देकर गोखरू, कुवैया, मरसा, करञ्ज, चित्रक, तेजबल अथवा तुलसी, कालीजीरी, पियावासा, मजीठ, त्रिफला, बनभाटा, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे १-१ रोज मर्दनकर गुञ्जाप्रमाण गोलियाबनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इसमेंसे २-२ गोली पाठा, खस, सुगन्धवालाकेसाथ अथवा हिमकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेज्वर क्षणमात्रमें नष्टहोजातेहैं ॥ ५९३ ॥

५९४ मुशलीपाकः

मुशलीकन्दचूर्णन्तु क्षीरेऽष्टगुणिते पचेत् ।
प्रस्थमात्रं प्रदातव्यं चूर्णमेषां पृथक् पलम् ॥ २६५१ ॥
व्योषं त्रिजातं हपुषा शताह्वा शतमूलिका ।
अजाजी दीप्यकश्चैव चित्रको गजपिप्पली ॥ २६५२ ॥
यवानी ग्रन्थिकं धात्री शटी गोक्षुरधान्यकम् ।
अश्वगन्धाऽभयामेधा· सिन्धुशोषो लवङ्गकम्॥२६५३॥
जातीफलं जातिपत्री नागकेसरकं क्षुर. ।
बला चातिबला नागबला मर्कटबीजकम् ॥ २६५४ ॥

यष्टी शाल्मलिनिर्यासः शृङ्गाटाऽम्बुजबीजकम् ।
त्वक्क्षीरिका वालकश्च कङ्कोलाऽऽफलकं हिमम् २६५५
लुञ्चितानां तिलानान्तु प्रस्थाऽर्द्धमिह योजयेत् ।
भस्मसूतपलाऽर्द्धन्तु पलमभ्रकलोहयोः ॥ २६५६ ॥
सर्वद्विगुणखण्डस्य पाकं कृत्वाऽत्र योजयेत् ।
भैषज्यानां गणं सर्वं यत्नैः कुर्याद्विचक्षणः ॥ २६५७ ॥
अर्धमुष्टिमितास्तास्तु शुभेऽहनि विचक्षण ।
इष्टदेवं समभ्यर्च्य खादेदेकामहर्मुखे ॥ २६५८ ॥
ततः किञ्चित्पयः पेयं खादेद्वदकमुत्तमम् ।
मन्दाग्निगुल्ममेहार्शःश्वासकासव्रणक्षयान् ॥ २६५९ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च शुक्रक्षैण्यञ्च दृक्क्षयम् ।
वातरोगं पित्तरोगं कफरोगं तथैव च ॥ २६६० ॥
पाण्ढ्यञ्च प्रदरं स्त्रीणां शुक्रदोषमुर क्षतम् ।
रजोदोषं मूत्रकृच्छ्रं मूत्राघातं तथाऽश्मरीम् ॥ २६६१ ॥
मलदोषं तथाऽऽनाहं कार्श्यप्राबल्यमुल्बणम् ।
वातरक्तञ्च हन्त्येष मुशलीकन्दलेहकः ॥ २६६२ ॥
अग्निकृत्कान्तिकृत्तेजोवृद्धिकृत्कामवृद्धिकृत् ।
अश्विभ्यां निर्मितो योगो वलीपलितनाशनः ॥ २६६३ ॥
क्षीणशुक्राश्चरान्दक्षा नारीश्च क्षीणवीर्यकाः ।
तालमूल्यवलेहोऽयं निर्मितो धरणीतले ॥
नास्त्यनेन समो योगो विशेषाच्छुक्रवृद्धये ॥ २६६४ ॥

रसायन स , श्व यो त , रसायने ।

भाषा—एकसेर मुशलीकाचूर्ण लेकर ८ सेर दूधमें मन्द आंचसे पकावे । मावाहोजानेपर त्रिकटु, तज, पत्रज, इलायची, हाउवेर, सौंफ, शतावर, जीरा, अजमोद, चित्रक, गजपीपल, अजवाइन, गठिवन, आंवला, नरकचूर, गोखरू, धनिया, असगन्ध, हरें, नागरमोथा, समुद्रशोष, लौंग, जायफल, जावित्री, नागकेसर, तालमखाना, बला गंगेरन, कंघी, नागवला, केवाच, मुलहठी, मोचरस, सिंघाड़े, कमलगट्टा, खीलुर, सुगन्धवाला, शीतलचीनी, अकलकरा, सफेदचन्दन, येसब १–१ पल, छिलकेरहित तिल आधसेर, पारदभस्म आधापल, अभ्रक और लोहभस्म १–१ पल लेकर सबसे दूनी शकरकी चाशनीकर मावेको डालकर कुछपानीकाअंशहोतो सुखादेना । फिर सबचीजें मिलाकर २–२ तोलेके मोदकबनालेना । इनमेंसे १–१ मोदक शुभमुहूर्तमें इष्टदेवकापूजनकर प्रातःकालखाकर थोड़ा गरमदूध पीवे । इसकेसेवनसे मन्दाग्नि, गुल्म, प्रमेह, अर्श, श्वास, कास, व्रण, क्षय, कामला, पाण्डु, शुक्रकी क्षीणता, दृष्टिकीकमजोरी, वात, पित्त तथा कफकेरोग, नपुंसकत्व, प्रदर, शुक्रदोष, उर क्षत, रजोदोष, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, पथरी, मलदोष, आनाह, कृशता, बढ़ाहुआवातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै । हमेशा सेवनकरनेसे तमामरोगोंसे निर्मुक्तहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ५९४ ॥

५९५ मुस्तादिमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ता भद्रमूलकम् ।
कणा शुण्ठी यवक्षारं पञ्चानां समचूर्णकम् ॥ २६६५ ॥
चूर्णतुल्यञ्च मण्डूरं गोमूत्राऽष्टगुणं भवेत् ।
तत्तुल्यञ्च गवां क्षीरं पचेन्मृद्वग्निना शनैः ॥ २६६६ ॥
पिण्डितं कोलमात्रन्तु भक्षयेच्छूलनुद्भवेत् ।
प्रातर्मध्याह्नरात्रीषु भक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥
मांसं पिष्टञ्च गुर्वन्नं माषादींश्च विवर्जयेत् ॥ २६६७ ॥

व रा , शूले ।

भाषा—१०० वर्षपुरानेमण्डूरकीभस्म और नागरमोथा, झरबेरीकीजड़कीछाल, पीपल, सोंठ, यवक्षार सबसमभागका चूर्ण मण्डूरकीबराबर लेकर अठगुना गोमूत्र और दूध डालकर लोहेकी कड़ाहीमें मन्दाग्निसे पकावे । गुड़कीतरह चाशनीहोनेपर उतारकर चिकनेबर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे सुबह, मध्याह्न और रात्रिमें आधेआधे तोलेकी दो अथवा तीन गोलियां खावे । मांस, पिष्टमयपदार्थ, उड़द और भारीचीजें न खाय । इसके सेवनसे समस्तशूल, पाण्डु और कामला प्रभृति रोग नष्टहोतेहैं ५९५

५९६ मूत्रकृच्छ्रहररसः

विदारीं गोक्षुरं यष्टीं केशरञ्च समं पचेत् ।
तत्कषायं पिबेत्क्षौद्रैः रसभस्मयुतं पुनः ॥
मूत्रकृच्छ्रं हरेत्सर्वं सप्ताहात्पित्तसम्भवम् ॥ २६६८ ॥

भै र , ध , मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—विदारी, गोखरू, मुलहठी, नागकेसर, सब समभाग लेकर दो तोलेका चौगुने पानीमें काढ़ाबनावे । चतुर्थांश बशेष रहनेपर छानकर मधुका प्रक्षेपदेकर एकरत्ती पारदभस्म मधुमें चाटकर काढ़ा पीवे तो सातदिनकेसेवनसे पित्तोत्थ मूत्रकृच्छ्र नष्टहोवे ॥ ५९६ ॥

५९७ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (प्रथमः)

शतावरीरसैः पिष्ट्वा मृतं सूतञ्च तालकम् ।
शिखितुत्थञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ॥ २६६९ ॥
कङ्कोलं सार्षपे तैले याम्यं सम्यक्च चूर्णयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चाऽस्य क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ २६७० ॥
भक्षणान्नाऽत्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्यलम् ।
तुलसीं तिलपिण्याकं बिल्वमूलं तुषाम्बुना ॥
कर्षैकं वाऽनुपानेन सुरया वा सुवर्चले ॥ २६७१ ॥

र स , ध , र र , यो म , र मु , र चि , र क , र चं , र र कौ , चि क , र र स , र का , व रा , र क ल , र को , मूत्रकृच्छ्रे । र क शिखितुत्थस्थाने गन्धक नियोजितम् । कुत्र चित्तालस्थाने ताम्र नियोजितम् । र का. मूत्रकृच्छ्रारिः । यो म मृतसूत. ।

भाषा—पारद, हरिताल और तुत्थभस्म समभाग लेकर शतावरीके अङ्गस्वरससे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय सरसोंके तैलमें एकपहर मध्याग्निसे पाचनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती मधुकेसाथ देकर तुलसी, तिलकीखली, बेलकीजड़कीछाल सब समभाग लेकर १ तोला तुषाम्बु अथवा मद्य अथवा सञ्चलकेजलकेसाथ लेनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ ५९७ ॥

५९८ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (द्वितीयः)

रसगन्धयवक्षारं सितातन्वयुतं पिबेत्।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि निहन्ति नियतं नृणाम्॥२६७२॥

र. सं., र. का., र. चं., र. र. दी., रसायनसं., मूत्रकृच्छ्रे। र. का., र. र. दी., गन्धो न दृश्यते नाम च मूत्रभस्मप्रयोगः।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, यवक्षार और शक्कर सब समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे छाछकेसाथ लेनेसे सबप्रकारके मूत्रकृच्छ्र नष्टहोतेहैं॥ ५९८॥

५९९ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (तृतीयः)

पारदाभ्रकवैक्रान्तहेमकान्तानि गन्धकम्।
मौक्तिकं विद्रुमञ्चैव प्रत्येकं स्यात्समं समम॥२६७३॥
जम्भारसेन सम्मर्द्य मूषायां सन्निरोधयेत्।
पञ्चविंशत्पुटं दत्त्वा ततः सूतं विचूर्णयेत्॥ २६७४॥
माषमात्रं रसं दद्यान्नवनीतसितायुतम्।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीमेहवातपित्तकफामयान्॥
क्षयानिलरोगांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः॥ २६७५॥

वै. चि., मूत्रकृच्छ्रे।

टि०—यद्यप्यत्र पुटविनिर्देशनाम न निर्दिष्टम् तथाऽपि गजपुट उक्तेर। पारदगन्धकौ च वारम्वार दत्त्वा जम्भाम्भःसम्मर्द्य पुटान्तर देयमिति विद्भिरावकल्पनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, वैक्रान्त, सुवर्ण, कान्तलोह, मोती, प्रवाल इनकीभस्में सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सबको मिलाय जंभीरीकेरससे ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववीबराबर पारेगन्धककी कज्जली मिलाय जंभीरीकेरससे गोलाबनाय गजपुटकी आंचदे। ऐसे २५ आंचे देनेकेबाद निकालकर एकरोज मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मक्खन और शक्करकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र, पथरी, प्रमेह, वात पित्त और कफके तमामविकार तथा क्षयादि समस्तरोग इससे नष्टहोतेहैं॥ ५९९॥

६०० मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (चतुर्थः)

स्थाल्यर्द्धमम्भसाऽऽपूर्य पिधाय तनुयाम्बरा।
पश्चात् सूत्रेण तद्वध्वा धीयासश्च प्रसारयेत्॥ २६७६॥
पचेन्मन्दाग्निना तावद्यावत्स्त्वा जले पतेत्।
धीयासः स्याद्गतोऽत्र शिल्यापानीयमाहरेत २६७७
तत्स्वर्ण घनमस्यांशो चाऽष्टमो मकरध्वजम्।
षड्गुणे गन्धकं जीर्णं सिन्दूरं रसमुत्तमम्॥ २६७८॥
दद्यात् माषद्वयीं मात्रां मूत्रकृच्छ्रान्तकाद्भुतम्।
धीयासः केवलो वा रसतः सितया युतः॥२६७९॥

रसायनसार., मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—बर्तनमें आधेतक पानीभरके ऊपर बारीककपड़ा रखकर सूतसे बनकर बांधदे। ऊपर गाढ़ाविरोजा फैलाकर चीनीकेप्यालेसे ढकदे। उसहंडीको चूल्हेपर रख मन्द अग्नि जलावे, बीचबीचमें देखता रहे जब विरोजा गलकर तमाम पानीमें पड़जाय तब नीचे उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पानीको फेंकदे और विरोजेको किसी शीशीमेंभरके रखले। इसमें अष्टमांश मकरध्वज अथवा षड्गुणगन्धकजारित रससिन्दूर मिलाकर १–२ पहर घोटकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली प्रातः और सायंकाल देनेसे सब तरहके मूत्रकृच्छ्र दूरहोतेहैं। केवल शुद्धकियाहुआविरोजाभी शक्करकेसाथ देनेसे काम करताहै॥

विशेष सूचना—यद्यपि इसमें केवल पानीमें इसका पातनलिखाहुआहै पर १ सेर गेंहूमें १६ सेर पानी डालकर कोरे मिट्टीके बर्तनमें कपड़ाबांधकर २० तोले विरोजारक्खे और धीरे २ गेंहुओंको पकावे ऊपर वाला विरोजेमें लगे, उफान आकर पानीका सम्बन्ध न हो। गेंहू पकनेतक ऊपरका विरोजा पिघलकर नीचे बर्तनके पेंदेमें जा लगेगा। पानी ठंडा होनेपर धीरेसे गेंहुओंको निकालकर पशुओंको खानेको देदेना और पानीको फेंककर विरोजेको निकाल लेना इसेही विरोजेका सत्व कहतेहैं। जहां दवामें इसका उपयोग हो वहां इसीको काममें लेना॥ ६००॥

६०१ मूत्रदोषाङ्कुशरसः

अभ्रकं पारदं स्वर्णं लोहं यवं शिलाजतु।
समभागानि चैतानि वस्तुनीरे विमर्दयेत्॥ २६८०॥
त्रिदिनं मुशलीतोयैरिक्षुकण्टकरसेन च।
मूत्ररोगाऽश्मरीभ्याऽस्य वल्लयुग्मं प्रदापयेत्॥२६८१॥
वातकुण्डलिका नाम मूत्रमूत्राश्मरीगदान्।
वातोल्वणान् जयेद्रोगान् वह्निसन्दीपनः परः॥२६८२॥

र. म मा., मूत्राघाते।

भाषा—अभ्रक, पारा, सुवर्ण, लोह और बङ्ग इनकीभस्में, शिलाजीत इनको समभाग लेकर बकरीके, मुसली और गोखरूके क्वाथमें अथवा काथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे वातकुण्डलिका, मूत्रघात, पथरी और वातप्रबलरोग नष्टहोतेहैं तथा अग्निभी प्रदीप्तहोतीहै ६०१

६०२ मूर्च्छासूदनरसः

सूतं सूतं सूतं ताम्रं तुल्यभागं प्रकल्पयेत्।
अस्य गुञ्जाद्वयं दद्यान्मधुना मरिचैः सह॥ २६८३॥
पिबेत्तदनुपानार्थं क्वाथं कर्कटशृङ्गिजम्।
जीर्णज्वरकफश्वासी कासश्वासविनाशनः॥ २६८४॥
अग्निमान्द्यविबन्धघ्नो वातपित्तविमर्दनः।
धातुपुष्टिकरश्चैव बल्यः कान्तिकारकः॥
मूर्च्छायाश्च प्रयोगोऽयं दृष्टप्रत्ययकारकः॥ २६८५॥

वै र., मूर्च्छायाम्।

भाषा—पारा और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभागलेकर १-२ पहर मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्तीको मात्रा मधु और ७-१४ अथवा २१ कालीमिर्चोंकेचूर्णकेसाथ लेकर ऊपरसे शङ्खाहूलीका १ तोलारस पीनेसे जीर्णज्वर, कफ, कास, श्वास, अग्निमान्द्य, मलमूत्रविबन्ध, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता, बल तथा कान्तिका ह्रास और मूर्च्छा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥६०२॥

६०३ मृगजरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं तीक्ष्णं तुल्यं वासाद्रवे दिनम्।
मर्दितं माषमात्रन्तु भक्षयेन्मृगजं रसम् ॥
सर्पाक्षीमधुना लेह्यमनुस्याद्रक्तपित्तके ॥ २६८६ ॥

र र.रसायन स , यो म., रक्तपित्ते।

भाषा—पारा और लोहभस्म समभाग लेकर अडूसेके पत्तोंकेरससे एकरोज मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली खाकर अन्धाहूलीका १ तोला रस ३ माशे मधु मिलाकर ऊपरपीनेसे रक्तपित्त नष्टहोताहै ६०३

६०४ मृगजरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं टङ्कणञ्च मनःशिला।
पलात्यकोलजाजी च समभागञ्च खल्वके॥ २६८७॥
शतावरीकषायेण दिवसं मर्दयेद् दृढम्।
शर्करामधुसंयुक्तं सूर्यावर्तं निहन्ति च ॥ २६८८ ॥

व.रा , वै चि., शिरोरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और मैनसिल, इलायची, तज, बेरकीमज्जा, सफेदजीरा, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर शतावरीके स्वरससे एकदिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली खाकर और मधुकेसाथ मिलाकर देनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै ॥ ६०४ ॥

६०५ मृगमालारसः

मार्कण्डी त्रपुसं शीर्षं सुदग्धं मृगशृङ्गकम्।
कार्पासबीजमज्जाञ्च तुल्यमङ्कोलबीजकम्। ॥२६८९॥
पेषयेन्महिषीतक्रैः दिनैकं वटकीकृतम्।
माषद्वयं सदा खादेन्मृगमाला प्रमेहजित् ॥ २६९० ॥
अक्षपाठाऽभयादार्वीकषायमनुपाययेत्।
मासमात्रप्रयोगेण प्रमेहगणनाशनम् ॥ २६९१ ॥

र. र., र को , व रा , यो म , रसायनस , र सु , प्रमेहाधिकारे। र सु. नागभस्मादियोगः।

टि०—अत्रार्षाऽज्ञानान्मार्कण्डीस्थाने मारितमितिपाठे नियोजित। मार्कण्डीशब्देन भूम्याहुली ग्राह्या।

भाषा—आंवल (गु) का पञ्चाङ्ग, वङ्ग, नाग और मृगशृङ्ग इनकी भस्में, कपासकेबीजोंकीमज्जा सब समभाग, सबकी बराबर अङ्कोलकीमज्जा लेकर भैंसकेमठ्ठेसे एकरोज मर्दनकर २-२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली खाकर ऊपरसे बहेडा, पाठा, हर्र और दारुहल्दी का क्वाथ पीनेमे एकमहीनेमें सबप्रकारके प्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ६०५ ॥

६०६ मृगाङ्कपोट्टलीरसः

भूर्जपत्त्रनुपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत्।
तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत्॥२६९२
काञ्चनाररसेनैव ज्वालामुख्या रसेन वा।
लाङ्गल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥२६९३॥
ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत्।
पिष्टमौक्तिकचूर्णञ्च हेमद्विगुणमावपेत् ॥ २६९४ ॥
तेषु सर्वसमं गन्धं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत्।
लेपं कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥२६९५॥
पश्चान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत्।
शरावसम्पुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥ २६९६ ॥
लवणापूरिते भाण्डे धारयेत्तञ्च सम्पुटम्।
मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा बहुभिर्गोमयैः पुटेत् ॥२६९७॥
ततः शीते समाहृत्य गन्धं सूतसमं क्षिपेत्।
घृष्ट्वा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्गजपुटेन च ॥ २६९८ ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा गुञ्जायुग्मं प्रकल्पयेत्।
अष्टभि र्मरिचै र्युक्तः कृष्णात्रययुतोऽथ वा ॥२६९९॥
विलोक्य देया दोषादीनेकैका रसरक्तिका।
सर्पिषा मधुना वाऽपि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥ २७०० ॥
लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः।
श्लेष्माणं ग्रहणीं कासं श्वासं क्षयमरोचकम् ॥२७०१॥
अग्निमान्द्यं धातुशोषं प्रबलान् कफजान्गदान्।
मृगाङ्कोऽयं रसो हन्यात्क्षतार्त्तं बलहीनताम् ॥२७०२॥

शा.सं , नि र , रसायनस , रस स , भै सा , ना वि , र प्र , र (मा), चि र भ , वै ह , र प्र सु , ढो , यो म र का , राजयक्ष्मणि। योगमहार्णवे ज्वालामुखीस्थाने कार्पासकुसुमभावना दृश्यते।

भाषा—यथासम्भव बुभुक्षान्तसंस्कारकियाहुआ पारा खरल में डालकर सुवर्णकेवर्क १-१ करके डालताजाय, एकवर्क मिल जानेपर दूसराडाले। इसतरह बराबरके वर्कोंको मिलाकर पिट्ठी बनाले फिर कचनार, हुरहुर, करिहारी, इनमेंप्रत्येकके अङ्गस्वरससे १-१ रोज मर्दनकर सुवर्णसे चतुर्थांश सुहागा और द्विगुण मोतीकीपिष्टी और सबकीबराबर शुद्धगन्धक डालकर १-१ रोज पूर्वोक्तरसोंसे मर्दनकर गोलाबनाय बारतह मलमलके कपड़ेमें बांधकर ऊपरसे १-१ अङ्गुल कपडेकेसाथ कुटीहुईमिट्टीका लेपदेकर सुखादे। फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाकर इतने कण्डोंकी आंचदे कि गन्धकमात्र जले। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पारेकी बराबर गन्धक देकर पूर्वरसोंमें १-१ रोज मर्दनकर पूर्ववत् लवणयन्त्रमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से २ रत्तीतककी मात्रा आठकालीमिर्च अथवा तीनपीपलके चूर्णकेसाथ देवे अथवा घी और मधुकेसाथ देवे। लोकनाथरसमें कहेहुएके अनुसार पथ्यकरावे।

इसके सेवनसे कफ, ग्रहणी, कास, श्वास, क्षय, अरुचि, मन्दाग्नि, धातुशोष, उत्कटकफरोग, कृशता, निर्बलता, इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ मृगाङ्करसः (प्रथम)

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् ।
गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु टङ्कणम् ॥ २७०३ ॥
तत्सर्वं मृदितं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २७०४ ॥
मृगाङ्कसञ्ज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तन. ।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचैः सह भक्षयेत् ॥ २७०५ ॥
पिप्पलीदशकैर्वाऽपि मधुना सह लेहयेत् ।
पथ्यन्तु लघुभि र्मांसैः प्रयोगेऽस्मिन् प्रयोजयेत् २७०६
व्यञ्जनै र्घृतपक्वैश्च नातिक्षारैरहिङ्गुभि. ।
एलाजाजीमरीचैस्तु संस्कृतैरविदाहिभिः ॥ २७०७ ॥
वृन्ताकबिल्वतैलानि कारवेल्लञ्च वर्जयेत् ।
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चाऽपि विवर्जयेत् ॥ २७०८ ॥

र स, र म, वृ यो त, र सि, र र, नि र, र सु, भै र, चि र भ, यो र, रसायनस, र क ल, र च, र द्य, र को., र र दी, टो, र शि, वै द, र (मा), र चि, र, र कौ, र प्र, र का, यो म, वै चि, र को, रस स, र प, र या राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णभस्म १–१ भाग, मोती और गन्धक २–२ भाग, भुनासुहागा १ भा, लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर काञ्जीकेसाथ १–२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर चार पहरतक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा ७, १४ अथवा २१ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ अथवा १० पीपल और मधुकेसाथ लेव । लघुमांसका भोजनकरे । इलायची, जीरा, मरिच, इनसेसंयुक्त और अविदाही, अत्यन्तहींग और क्षारोंसे रहित घीमें पकाए हुए व्यञ्जनोंका सेवनकरे। बेंगन, बेल, तैल, करेला, स्त्री और क्रोधको बिल्कुल छोड़देवे । ॥ ६०७ ॥

६०८ मृगाङ्करसः (द्वितीय)

सूतं शङ्खं वराटं रविमपि निखिलं तुल्यगन्धञ्च मुक्तां,
मुक्तार्द्धं लोकनाथं विषमपि तुलितं भूपभागेन तस्य।
अम्लाम्भोभि र्दिनैकं दिनकरपयसा वासरैकं सुघृष्टं,
गोलं कृत्वा सुवेष्ट्यं लवणरसनमृत्पागवल्लीदलाद्यैः ॥
पाच्योसौ पिष्टयन्त्रेक्षयगदहरण स्यान्मृगाङ्काभिधान
तुल्य पथ्यानुपानैः प्रभवति च महाव्याधिसङ्घापनुत्यै

र, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, शङ्ख कौडी, तांबा इनकीभस्में सम भाग, इनसबकी बराबर शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी, मोतीसे आधा लोकनाथरस, इनसबसे सोलहवां हिस्सा बच्छनाग डालकर चित्रकके क्वाथ और आकके दूधसे १–१ रोज मर्दनकर गोला-बनाय चारतह मलमलके कपड़ेमें पोटलीबनाय लवण, चिपटे और मिट्टीसे १–१ लेप देकर इसगोलेके बराबर नाग रवेलके पत्तोंमें लपेटकर सूतसे वेष्टितकर उड़द अथवा गेंहूके आटेकी बाटीमें रवलितकर घीमें पकावे । आटा कालाहोनेलगे तब उतारलेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर इसमेंसे बहुत धीरजसे मिट्टीवगैरहके सम्पुटको हटाकर रसको रखले । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा बराबरके हरेंके चूर्णकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति सम्पूर्ण महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०८ ॥

६०९ मृगाङ्करसः (तृतीयः)

हैमी भूति र्द्विगुणिता सूतभूत्या द्विमौक्तिका ।
चतुर्गन्धा सूतपादटङ्कणा दृढमर्दिता ॥ २७१० ॥
निम्बम्बुना पिष्टयन्त्रे पक्वो यामचतुष्टयम् ।
सर्वं मृगाङ्कवज्ज्ञेयं मृगाङ्को रोगनाशन. ॥ २७११ ॥

र, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, सुवर्णभस्म और मोती २–२ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेसे चतुर्थांश सुहागा डालकर एकरोज नीबूकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमलके कपड़ेमेंलपेटकर उड़द अथवा गेंहूकी बाटीमें बन्दकर ४ पहर घीमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती मरिच, पीपल और मधुकेसाथ देनेसे राजयक्ष्मादि महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०९ ॥

६१० मृगाङ्करसः (चतुर्थ)

नरसारं सैन्धवञ्च पञ्चबिल्वमितं पृथक् ।
निधाय डमरूयन्त्रे वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ २७१२ ॥
प्रज्वालयेदूर्ध्वभाण्डलग्नं सत्त्वं समाहरेत् ।
तत्सत्त्वं चूर्णितं रङ्गं समं गन्धं तयो. समम् ॥२७१३॥
विचूर्ण्यैकत्र काचोत्थकूपिकायां विनि क्षिपेत् ।
मृल्लिप्तवालुकायन्त्रस्थितायां दिवसद्वयम् ॥ २७१४ ॥
चुल्ल्यामग्निमधो दत्वा यामान् द्वादश वा पचेत् ।
कूपीतलस्थं तद्भस्म स्वर्णाभं स्वाङ्गशीतलम् ॥२७१५॥
गृह्णीयान्मारितात्स्वर्णाद्भवेद्गुणशताऽधिकम् ।
वृष्यमायु प्रदं सर्वमेहानाञ्च विनाशनम् ॥ २७१६ ॥
काम्य परममेतद्धि मृगाङ्को गुह्यगोपित. ।
प्रमेहापशमे धातुवर्धने निश्चितं हि तत् ॥ २७१७ ॥

र कौ, सि भे म, क्षये ।

भाषा—नौसादर और सेंधानमक ५–५ पल लेकर बारीक पीस डमरूयन्त्रमें रख ४ पहरकी अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे हंडीकामुह उघाडकर ऊपर उड़ेहुए नौसादरकेफूलोंको निकालले फिर इसकी बराबर अपामार्गके पञ्चाङ्गप्रभृतिमें किया हुआ रांगकाचूरा और दोनोंकीबराबर गन्धक डालकर बारीकचूर्ण कर कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें दोरोज अथवा १२ पहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर शीशीमेंसे

सुवर्णकेसदृश भस्मको निकालकर रखछोड़े। यहभस्म सुवर्णभस्मसे सौगुनी गुणकारकहोतीहै। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानके साथदेनेसे यह प्रमेहमात्रको निश्चितरूपसे नष्टकर धातुओंको बढ़ाताहै; रूपना, आयु तथा कामकीवृद्धि करताहै ॥ ६१० ॥

६११ मृगाङ्करसः (पञ्चमः)

श्वेतमल्लस्तु भागैको तत्समं तालकं शिला ।
काङ्क्षिका मल्लभागा तु सर्वं खल्वे विचूर्णयेत् ॥२७१८॥
पञ्चरत्नस्य विधिना पाचयेन्मन्दवह्निना ।
स्वर्णाभो ह्यूर्ध्वगो ग्राह्यो मृगाङ्को रस उत्तमः॥२७१९॥
सर्ववातगदे चैव हिक्कायां कुष्ठरोगिणि ।
घृतशर्करया देयो दुग्धान्नं पथ्यमुत्तमम् ॥
तक्रान्नं वा शीतवारि उष्णद्रव्यं विवर्जयेत् ॥ २७२० ॥

र. चं., वातरोगे।

भाषा—शुद्धसफेदसोमल, हरिताल, मैनसिल, फिटकरी, इन समभाग लेकर बारीक चूर्णकर मल्लपञ्चरत्नरसमें कहेहुए प्रकारसे बहुतमन्द आंचसे ४ पहर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरके पात्रमें सुवर्णकेरंगके फूल मिलेंगे इन्हें निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधी अथवा १ रत्ती घी और शक्करकेसाथ देकर दूधभात अथवा छाछभात खानेकोदे। ठंढापानी पीवे, गरमचीज़ोंसे परहेज़ रक्खे। इसके सेवनसे सबप्रकारके वातरोग, हिचकी, कुष्ठ, कास, श्वास प्रभृति तमामरोग नष्टहोतेहैं ॥६११॥

६१२ मृगाङ्करसः (षष्ठः)

नागभस्म रसभस्मना समं
माक्षिकञ्च शुद्ध तत्समानकम् ।
मौक्तिकं निखिलतस्समांशकं
पोट्टली च समभागिकाऽखिलैः ॥ २६२१ ॥
गन्धकं समलयं निखिलांशैः
सूततुर्यलवभागटङ्कणम् ।
मर्दितं तुषजलेन दिनान्तं
वर्तकैः सलवणैः समृत्तिकैः ॥ २७२२ ॥
वर्तुलञ्च विदधीत गोलकं
वेष्टयेच्च परिशोष्य चाऽऽतपे ।
पाचितो भवति सैष मृगाङ्कः
कामठे लवणयन्त्रके तथा ॥ २७२३ ॥
पूर्ववत्क्षयविनाशहेतुकः
सर्वरोगविनिवारणक्षमः ।
दीपनोऽथ बलपुष्टिवर्धनः
सूतिकागदविनाशकारणम् ॥ २७२४ ॥
पथ्यानुपानप्रभृति सर्वं पूर्वमृगाङ्कवत् ।
निर्योजनीयं प्रयत्नेन भिषजा सिद्धिमिच्छता ॥२७२५॥

र., राजवल्लभ।

भाषा—नाग और पारद १–१ भाग, सुवर्णमाक्षिक २ भाग, मोती ४ भाग, मृगाङ्कपोटली ८ भाग, शुद्धगन्धक १६ भाग, सुहागा ¼ भागलेकर तुषाम्लमें एकरोज़ मर्दनकर गोला बनाय चारतहकपड़ेमें बांधकर नमक और मिट्टीसे अलग २ क्रमशः कपड़ेको भिगोकर कपड़मिट्टी लगाय सुखाकर भूधर अथवा लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, बलराहित्य, कृशता, सूतिकारोगप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। पथ्य और अनुपानप्रभृति महामृगाङ्ककीतरह देवे। अवान्तरउपद्रवोंको बहुतसंभालकर निवृत्तकरे ॥६१२॥

६१३ मृगाङ्करसः (सप्तमः)

सुवर्णताम्रयोर्भस्म कर्षं कर्षं पृथक्पृथक् ।
गन्धश्च द्विगुणं दत्त्वा कुमारीस्वरसेन वै ॥ २७२६ ॥
विमर्द्य मृगशृङ्गान्ते कृत्वा रुद्ध्वं ततो मुखम् ।
टङ्कणेनार्कदुग्धेन मर्दयित्वा पुटेत्पुनः ॥ २७२७ ॥
पुटेन कुञ्जराख्येन स्वाङ्गशीतञ्च भक्षयेत् ।
हरीतकीमधुयुतं माषमात्रं प्रयत्नतः ॥ २७२८ ॥
सगुडां घृतसम्मिश्रां भक्षयेद्वा हरीतकीम् ।
विड्वाय्वोश्चाऽनुलोम्यार्थं वेदनायाश्च शान्तये॥२७२९॥
पक्तिशूलप्रशमनो दाहं मन्दानलञ्जयेत् ।
पार्श्वशूलं तथाऽऽध्मानं प्रस्वेदञ्च जयेद्ध्रुवम्॥२७३०॥

ना. वि., र. म. मा., शूले।

टि०—"माषयेन्मृगशृङ्गमध्यगताङ्गुलभिन्न नवम्।"

भाषा—सुवर्ण और ताम्रभस्म १–१ कर्ष, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर नीलवर्णकरलीकर घीकुंआरकेरसमें १–२ रोज़मर्दनकर मृगशृङ्गके आठअङ्गुलप्रमभागमें भरके शृङ्गकेभीतर निकली हुई हड्डीकोडाटसे बन्दकर सुहागेको आकके दूधमें मर्दनकर कपड़ेपर इसकालेप चढ़ाकर कपड़ेको समस्तशृंगपर लपेटकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर खूब सुखाले और गजपुटकी अग्निदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर कपड़मिट्टीको हटाकर सींगसहित पीसकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ मासा हर्रे और मधुकेसाथ अथवा गुड़, घृत और हर्रेकेसाथ लेनेसे मलमूत्रविबन्ध, शरीरपीड़ा, पक्तिशूल, दाह, मन्दाग्नि, पार्श्वशूल, आध्मान, अतिस्वेद इत्यादि नष्टहोतेहैं ॥ ६१३ ॥

६१४ मृगाङ्करसः (अष्टमः)

रसवलितपनांशं योजयेत्तुल्यभागं,
तदनु युगलभागं मौक्तिकानां शुभानाम् ।
प्रवरचरणभागं मर्दयेत्सर्वमेतद्-
दिनमपि तुषवारा गोलकं लम्बमत्रे ॥२७३१॥
निधाय मुद्रां विदधीत भाण्डे
स्थाल्यां समुद्रे लवणेन पूर्णे ।
दिनं पचेद्यातमृगाङ्कनामा
रसोऽग्निमान्द्ये ग्रहणीविकारे ॥ २७३२ ॥
योज्यः सदा वह्निजपिप्पलीभ्यां
कृष्णामधुभ्यां सततं त्रिगुञ्ज-

वर्ज्यं सदा पित्तकर हि वस्तु
लोकेशवत्पथ्यविधि निरुक्त ॥ २७३३ ॥
वै वि क्षये ।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक और सुवर्णभस्म सब समभाग मोती २ भाग सुवाखार ½ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जली कर तुपाम्लसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखादे । इसगोलेको दो शरावोंमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रख मन्द मध्य और खराग्निसे दिनभर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा २१ या २९ काली मिर्च और घीकेसाथ अथवा ३ या ७ पीपल और मधुकेसाथ देनेसे क्षय मन्दाग्नि सङ्ग्रहणी प्रभृति रोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पित्तकारकवस्तुओंका परहेजकरे ॥ ६१४ ॥

६१५ मृगाङ्करसः (नवरत्न राजमृगाङ्क रत्नगर्भमृगाङ्क)

माणिक्य वज्रमेक गरुडयमिमथ नीलक पुष्परागं
गोमेद विद्रुम द्विविदुरमणिमथो भस्म शङ्खस्य शुक्तेः ।
ताप्य नागश्च वङ्ग दरदशिखिगल टङ्कण राजपर्त,
गन्ध त्रिर्हेमतार रविघनममल तालक हर्चिछला च ॥
वैक्रान्त का तलोह रसकयुगलक वेदभागा सुमुक्ताः
सूत सर्वाऽष्टमांशं त्रिदिनमविरत मर्दनीय सुयत्नात् ।
त्रिर्मार्ग्य कन्यकाग्नि चिपवहनयलायारिणा सप्तवारं,
गाल मृत्कर्पटैर्या लवणविरचिते पाचयित्वा दिनैकम्
सम्मर्द्य स्वाङ्गशीत मृगमदसलिलै पिप्पलीक्षौद्रयुक्त
हन्याच्छ्वासश्च कास क्षयतमकगदान्रत्नगर्भो मृगाङ्कः ॥
र प क्षये ।

भाषा—माणिक्य हीरा पन्ना नीलम, पुखराज गोमेद प्रवाल लहसनिया शङ्ख सीप सोनामाखी नाग वङ्ग शिंगरिफ तूतिया सुहागा लाजवर्द इनप्रत्येककीभस्में १–१ भाग शुद्धगन्धक ३ भाग सुवर्ण रजत ताम्र अभ्रक हरिताल मैनसिल वैकान्त कान्तलोह, खपरिया दानेफिरङ्ग इनसबकीभस्में १–१ भाग मोती ४ भाग पारदभस्म सबसे अष्टमांशलेकर इकट्ठ मिलाय तीनरोज निरन्तर गुक्तमर्दनकर घीकुमार चक्र नाग चित्रक बला इनप्रत्येककेरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाए देकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपट २–३ कपड़मिट्टी देवे । सुखनेपर लघुशरावमें लवणकेबीच रखकर एक रोज भूधर अथवा लवणयन्त्रमे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कस्तूरीकजलसे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ लेनेसे श्वास कास क्षय तमकश्वास इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१५ ॥

६१६ मृगाङ्करसः (नागादि) (दशम)

कनकपत्रसम शुचि पारद
विमलखल्वतले पिषितैः शनै ।
दृढतरं सततं दिवसत्रय
शुभमुहूर्तदिने परिमर्दयेत् ॥ २७३६ ॥
पारदाद्द्विगुणमौक्तिक रजो
मौक्तिकाद्द्विगुणगन्धकोऽमल ।
पारदाऽर्धशुचिटङ्कणस्ततोऽ-
प्येवमेव विधिना प्रकल्पयेत् ॥ २७३७ ॥
काञ्चनाररसकेन चूर्णक मर्दयेत्परिविधाय गोलकम् ।
सङ्क्षिपेत्तदनु गर्भमुमके वहिरप्यथ दिनं समुज्ज्वल ॥
इति च शिशुमृगाङ्क सम्भवेद्राजयोग्यो
मधुसहितकणाभि र्वा मरीचाज्यकेन ।
सकलरुजि गृहीत शीघ्रमारोग्यदायी,
हिमकरसमकान्ति यस्तनौ सन्तनोति२७३९
र मु क्षये ।

भाषा—सोनेकवर्क, शुद्धपारा समभागलेकर शुभमुहूर्त देखकर खरल वगैरहके मासमे तीनरोज मर्दनकर पारेसे दूना मोतीकीपिष्टी और पिष्टीसे दूनागन्धक तथा पारेस आधासुहागा देकर कचनारकेरससे ३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट में बन्दकर भूधरयन्त्रम रखकर एकदिनकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़ । इसमेंस ३–३ रत्तीकी मात्रा मधु और पीपल अथवा मिर्च और घीकसाथ लेनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टकर चन्द्रमाकसदृश शरीरकीकान्तिको बढ़ाताहै ६१६

६१७ मृगाङ्करसः (बालादि) (एकादश)

रसभस्म पल सुशुद्धमेव
पलकं वै शुचिहाटकस्य भस्म ।
शुचिगन्धपलद्वयं सुशुद्ध
पलकाद्धि शुचिमालतीभवश्च ॥ २७४० ॥
सकलस्य विचूर्णक विधेय
शुभभागविमलाविशालमुक्ता ।
सह चामलकीफलोद्भवे वा
यवजे धान्यरसे विमर्दयेद्वा ॥ २७४१ ॥
परिमर्द्य दिनानि सप्त खल्वे
शुभगोल परिसविधाय तस्य ।
दृढमूषयुगं विधाय पश्चा
त्तनुमध्ये परिपाचनीय एव ॥ २७४२ ॥
अपि मूषयुगं निरुध्य पश्चा
त्परिमुञ्चेच्छुभवालुकाख्ययन्त्रे ।
अपि यन्त्रवर विमुच्य चुल्या
दिनमेकं ज्वलने शनैर्विधेय ॥ २७४३ ॥
सकले कथिते प्रकारवर्ये
रचनेशस्य भवेत्सुभद्रनैन ।
ननु बालमृगाङ्क सुरम्य
क्षयहारी सुखदायका गदारि ॥ २७४४ ॥
हैम पात्रे रौप्यक वा विशाल
मन्द मन्द पाचनीयो मृगाङ्क ।

चूर्णं कृत्वा खल्वमध्ये सुरम्ये
कष्टे रोगे सेवनीयो हि राज्ञा ॥ २७४५ ॥

र. मु, क्षये।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, भुनासुहागा १ तोला, रूपामाखी, हीराबोल और मोती २-२ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पकेआवलेकेस्वरस अथवा धान्यकेस्वरससे सातरोज मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमल के कपड़ेमें पोटली बनाय शरावसम्पुटमें रख ६-६ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रखकर एक अहोरात्रकी आंच देवे स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण अथवा चांदीकी डिब्बीमें रखलेवे। इसमेंसे एकसे तीनरत्ती तक तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१७ ॥

६१८ मृगाङ्करसः (बालादिः) (द्वादशः)

सौभाग्यसिद्धिरथ मौक्तिकहेमगन्ध,
कल्कः ससूनयनभूयुगतुल्यभागः।
धान्याम्लपीडितवपु.परिशोषितस्य,
भाण्डे ततः परिभृतः पुटितो दिनान्त.२७४६
क्षयं विषं हेमरजं भ्रमाद्यं गुल्मं ज्वरं सङ्ग्रहणीञ्च कुष्ठम्
श्वासञ्च कासञ्च गुदामयं वै निहन्ति वै बालमृगाङ्क एषः

र. मु, क्षये।

भाषा—सुहागा १ भाग, पीलीसरसों २ भाग, मोती १ भाग, सुवर्ण भस्म ४ भाग, गन्धक ८ भाग लेकर सबको पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर धान्याम्लसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें पोटली बनाय शरावसम्पुटमें रख ३-४ कपड़मिट्टी देवे। सूखनेपर भस्म, लवण अथवा बालुकायन्त्रमें रखकर ४ पहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा योग्यतादेखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, स्थावर तथा जङ्गमविष, कामला, भ्रम, गुल्म, ज्वर, सङ्ग्रहणी, कुष्ठ, श्वास, कास, गुदरोग, इत्यादिकोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ मृगाङ्करसः (बालादिः) (त्रयोदश)

विषभागो भवेदेको द्विभागं गैरिकं मतम्।
भूमुक्तानां त्रयो भागा सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २७४८ ॥
वल्लोमधुकणायुक्त पथ्यं दुग्धौदनं हितम्।
वातरोगेषु सर्वेषु कासेषु ग्रहणीषु च ॥ २७४९ ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान् गुणान्।
रसो बालमृगाङ्कोऽयं जीर्णज्वरहरः पर. ॥ २७५० ॥

रसायनस, वातरोगे।

भाषा—शुद्धबछनाग १ भाग, शुद्धसोनागेरू २ भाग, श्रेष्ठ मोती ३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और पीपलकेसाथ देनेसे समस्त वातरोग, खांसी, ग्रहणी, जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूधभात देना ॥ ६१९ ॥

६२० मृगाङ्करसः (बालादिः) (चतुर्दशः)

पूर्ववत्पातितं सूतं दशवारांश्च शुल्वतः।
अभ्रपिण्डीं ततः कृत्वा दशवारांश्च पातयेत् ॥२७५१॥
अधःपातं ततः कुर्यात् त्रिफलाशिग्रुवह्निभिः।
पञ्चभि लवणैः क्षारै राजिकाव्योपभानुभिः ॥२७५२॥
वज्रीदुग्धै वत्सनाभै र्नष्टपिष्टं रसं चरेत्।
अम्लवर्गेण सम्मर्द्य विलिम्पेत्पात्रमूर्द्धगम् ॥ २७५३ ॥
तेन कल्केन संरुध्य सम्पुटं दीप्तवह्निना।
उपरिष्टात्प्रदत्तेन ज्वलद्भिश्छाणकैः पुटेत् ॥ २७५४ ॥
अधः पतति सूतेन्द्रस्त्यक्त्वा दोषानशेषतः।
जम्बीरं बीजपूरञ्च नारङ्गं चाम्लवेतसम् । २७५५ ॥
चाङ्गेरीमम्लिकाञ्चैव बदरं चणकाम्लकम्।
शिग्रुञ्च वज्रकन्दञ्च सूरणं मीनलोचनम् ॥ २७५६ ॥
वर्हि घनरवां वर्षाभुवं वसुभटं तथा।
हलिनी विषनाल्यौ च यवचिञ्चीं कटुत्रयम् ॥२७५७॥
पटूनि पञ्च क्षारांश्च नवसारञ्च रामठम्।
चर्मारं नाम क्षारं स्यात्पुक्षारं समाहरेत् ॥ २७५८ ॥
एतत्सर्वन्तु सञ्चूर्ण्य सन्दध्यात्ताम्रभाण्डके।
दिनानि सप्त संस्थाप्य ततस्तेनं प्रमर्दयेत् ॥२७५९॥
दिनानि सप्त संक्षाल्य तप्तकाञ्जिकयोगतः।
तप्तखल्वे रसं दत्त्वा भूलताभिः प्रमर्दयेत् ॥ २७६० ॥
गृहकन्यारसे युक्तं दिनत्रयमनारतम्।
आयते पारदः सोऽयं जारणे चरणे क्षमः ॥ २७६१ ॥
चतु.षष्ट्यंशभागेन हेमबीजञ्च चारयेत्।
द्वात्रिंशद्भागत. पश्चाद्विंशतिं षोडशं तथा ॥ २७६२ ॥
चारयित्वा जारयित्वा यन्त्रे भूधरके क्षिपेत्।
गन्धकं जारयेत्पश्चात् स्तोकं स्तोकं यथाक्रमम्२७६३
आदौ तु राजिकामानं पश्चात्सर्षपमात्रया।
यवमानं द्वियवकं नियवञ्च चतुर्यवम् ॥ २७६४ ॥
पञ्च षट् सप्त नव च दशैकादशसङ्ख्यया।
क्रमवृद्ध्या च गद्याणमानं भवति यावता ॥ २७६५ ॥
पश्चाद्गद्याणकं जार्यं रसेन्द्रे च पुटे पुटे।
एवञ्च षड्गुणं यावद्गन्धकं जारयेद्बुधः ॥ २७६६ ॥
अधिकञ्जारयेच्च गुणाश्चेत्ताऽधिको भवेत्।
षड्गुणे गन्धके जीर्णे रसो भवति रोगहा ॥ २७६७ ॥
एवं संस्कृतसूतेन्द्रं पुनः खल्वे निवेशयेत्।
कृष्णधत्तूरकद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत्तत. ॥ २७६८ ॥
यन्त्रे सोमानले क्षिप्त्वा ज्वालयेच्च दिनत्रयम्।
मर्दनञ्च पुनस्तद्वत्पुनर्यन्त्रे विपाचयेत् ॥ २७६९. ॥
एवं रसेश्वरं कुर्यात्संस्कारेण समन्वितम्।
तावत्कार्या क्रिया चैवं यावद्भस्मीभवेद्रस ॥ २७७०॥
रसभस्म पलैकं स्याद्धेमभस्म पलं तथा।
शुद्धस्य दानवेन्द्रस्य पलद्वयमुदाहृतम् ॥ २७७१ ॥

मौक्तिकं द्विपलं दद्यात्पादांशो मालतीभवः ।
तत्सर्वं मर्दयेत्खल्वे चाम्लवेतसयोगतः ॥ २७७२ ॥
तदभावे तु यवजकाञ्जिकेन प्रमर्दयेत् ।
दिनानि सप्त सम्मर्द्य तत्कल्कं गोलकं चरेत् ॥२७७३॥
छायायां शोषयेत्तञ्च मूषायां गोस्तनाकृतौ ।
निक्षिप्य चाऽन्धयेन्मूषां तां मूषां सागराह्वये २७७४
यन्त्रे विनिक्षिपेद्धीमांश्चुल्लीमारोपयेत्तु तत् ।
चतुःप्रहरमात्रं तं रसेन्द्रं स्वेदयेद्बुधः ॥ २७७५ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसेन्द्रं यत्नतः क्षिपेत् ।
विचूर्ण्य स्वर्णजे पात्रे शीतवातविवर्जितम् ॥२७७६॥
स्वर्णाऽभावे रौप्यपात्रे नाऽन्यस्मिन् स्थापयेद्रसम् ।
अयं वालमृगाङ्काख्यो रोगराजस्य घातकः ॥२७७७॥
स्वयमनाद्यनुभूतोऽयं कथ्यते शास्त्रवर्त्मना ।
भैरवं योगिनीचक्रं सम्पूज्य सुरयातिनम् ॥ २७७८ ॥
अग्निं विप्रांस्तोषयित्वा कृतपापविनिष्कृतिम् ।
यथाशास्त्रोक्तमार्गेण शुद्धात्मानं द्विजोत्तितः ॥२७७९॥
रसेशं सम्प्रपूज्याऽथ नमस्कार्य रसं गुरून् ।
वृद्धान्देवान् द्विजान् पश्चात्कृतमाङ्गलिकं भिषक् २७८०
रसेन्द्रं सेवयेन्नित्यं चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
आज्येन मरिचैः सार्धं सेवयेच्च रसेश्वरम् ॥ २७८१ ॥
दशभिः पिप्पलीभिर्वा मधुना सह सेवयेत् ।
घृतपक्वानि शाकानि रामठे वर्जितानि च ॥ २७८२ ॥
सैन्धवं मणिमन्थञ्च लवणार्थं नियोजयेत् ।
एलामजाजीं मरिचं संस्कारे धान्यकं भवेत् ॥२७८३॥
अविदाहीनि शाकानि तथा संस्कृत्य योजयेत् ।
वृन्ताकभेदं सर्वन्तु वर्जयेत्कारवेल्लकम् ॥ २७८४ ॥
श्रीफलं चिर्भटीजातिं सर्वामत्र विवर्जयेत् ।
अङ्गनासङ्गतिर्वर्ज्या कोपं यत्नाद्विवर्जयेत् ॥ २७८५ ॥
न स्वप्याद्दिवसे धीमान् रात्रौ नैव प्रजागरः ।
वर्जयेत्तिलसम्भूतं विकारं तैलमेव च ॥ २७८६ ॥
सर्षपादीनि तैलानि सर्वाणि परिवर्जयेत् ।
अभ्यङ्गञ्च घृतेनैव शिरःस्नानं समाचरेत् ॥ २७८७ ॥
नात्युष्णैरम्बुभिः स्नानं नातिशीतैः समाचरेत् ।
क्वाथं पिबेत्त्रिशीथिन्यां त्रिकटोश्चूर्णसंयुतम् ॥ २७८८ ॥
वल्लीतुवरिकामूलं पलमष्टाऽवशेषितम् ।
त्रिशूलीमूलमथवा क्वाथयेत्पलमात्रकम् ॥ २७८९ ॥
कासनाशाय योक्तव्यो व्योषयुक्तो निदागमे ।
भक्षयेत्काकिनीमूलं रामठेन समायुतम् ॥ २७९० ॥
सर्ववान्तिप्रशान्त्यर्थं भक्षयेच्चेषु सर्वदा ।
क्ष्मावर्तकीपत्रचूर्णं गुटिकां मधुना कृताम् ॥ २७९१ ॥
मुखे सन्धारयेच्छ्वासकासकन्दविनाशिनीम् ।
कोविदारत्वचं दध्ना जीरकेण च भोजयेत् ॥८७९२॥
सर्वाऽरुचिप्रशान्त्यर्थं भृष्टजीरकमेव वा ।
कोकिलाक्षस्य बीजानि जीरकेण गुडेन च ॥२७९३॥
ईषत्कर्पूरसंयुक्तं रसतापे प्रयोजयेत् ।
जातीफलं वक्त्रशुद्धौ योजयेत्सततं बुधः ॥ २७९४ ॥
वक्त्रशोषो यदा तु स्यात्पाटलामेघनादयोः ।
मत्स्याक्ष्या मूलमथवा धारयेद्वदने बुधः ॥ २७९५ ॥
सद्यः शोषो निवर्तेत प्रत्येकं मिलितैरथ ।
रक्तं वमेद्यदा रोगी कुर्यात्तत्र चिकित्सितम् ॥२७९६॥
लवङ्गमथ कङ्कोलं श्रीखण्डं रक्तचन्दनम् ।
उशीरं तगरं शुण्ठी पिप्पलीं नागकेशरम् ॥ २७९७ ॥
एलां कालाऽगुरुं मुस्तां कर्पूरमथ पत्रकम् ।
जातीफलं त्वक्क्षीरं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २७९८ ॥
अष्टौ भागास्तथा ग्राह्यास्तवराजस्य धीमता ।
विचूर्ण्य सर्वमेकत्र योजयेद्रक्तवान्तिहृत् ॥ २७९९ ॥
हृत्तापश्च निवर्तेत चूर्णेनाऽनेन निश्चितम् ।
एवं प्रयोगान् कुर्वीत क्षयरोगस्य शान्तये ॥ २८०० ॥
भिषग्दक्षः सदा भूयाच्चिकित्सासु सुजागृतिः ।
ये ये विकारा जायन्ते तांस्तान् यत्नान्निवर्तयेत् ॥२८०१॥
चिरप्रवृद्धरोगश्च शक्तिशून्यश्च भोजने ।
भग्नगात्रमुपेक्षेत रहस्यं भिषजामिदम् ॥ २८०२ ॥
कथञ्चिद्बलसम्पत्तौ कृत्वा वान्तिविरेचने ।
रसेश्वरं प्रयुञ्जीत नान्यथा सम्प्रयोजयेत् ॥ २८०३ ॥
सामुद्रकं सुसञ्चूर्ण्य मातुदुग्धेन भावयेत् ।
पाययेद्गव्यदुग्धेन कण्ठस्थमलशुद्धये ॥ २८०४ ॥
यवचिञ्चाञ्च सम्पिष्य खादयेच्छर्करायुताम् ।
अतितापस्य शोषस्य कर्तनी रेचनी तथा ॥
स्वसंवेद्यप्रकारेण रसेशःसम्प्रकीर्तितः ॥ २८०५ ॥

रमालं., क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पातनान्तसंस्कारकियेहुए पारेमें चतुर्थांश अथवा समभाग शुद्धतांबेका चूरा डालकर जंभीरीप्रभृतिकेरससे पिष्टी-होनेतक मर्दनकर मुसाके दसवार पातनकरे । इसीतरह अभ्रक-सत्वकेसाथ दसवार पातनकरे । फिर त्रिफला, सहिजन, चित्रकमूल, पांचोंनमक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, राई, त्रिकटु, आक और सेहुण्डकादूध, बछनाग इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर अम्लवर्गमें मर्दनकर पिष्टीबनाय घडेके भीतर लेपकर दूसरे घडे-पर इसको उल्टा रखकर ६–७ कपडमिट्टी से सन्धिबन्दकर सुखाले और खाली घडेको खड्डेमें रख ऊपरके घडेपर जलतेहुए कण्डे इसअन्दाजसे रक्खे कि कन्कसे पारा अलगहोकर नीचेके बर्तनमें चलाजाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर पारेको निकालकर जंभीरी, बिजोरा, नारङ्गी, अम्लवेत, अम्लोनिया, इमली, बेर, चनेकाखार, सहिजन, जहरी और साधारण सूरण, मकोई, चित्रक, बन्दाल, इन्द्रायन, पुनर्नवा, कलिहारी, बछनाग, नाडी, तिल्ली, त्रिकटु, पांचोंनमक, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, छोरा, नवसादर, हींग, सफेद गोमल, टङ्कनक्षार (तुम्ब और हीराक-सीस) येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर तांबेकी गरड अथवा कढाईमें शुद्धपारेके बराबर नीचे ऊपर रख बीचमें पारेको दृढ-

कर तांबेके वर्तनसे ढकदे । सातदिनकेबाद ७ दिनतक तांबेके डण्डेसे मर्दनकर गरमकाञ्जीसे धोकर पारेको अलगकरले । फिर तप्तखल्वमें रख केंचुए और घीकुआरके द्रवोंसे ३–३ दिन निरन्तरमर्दनकरनेसे पारा धातुओंके खाने और जारणकरनेमें समर्थ होजाताहै । चौंसठ, बत्तीस और षोडशांश सुवर्णकाबीज पारेमें क्रमसे ग्रासदेकर जारणकरे फिर थोड़ा २ गन्धकडालकर भूधरयन्त्रमें जारणकरे । एकतोलेमें राई, सरसों, एकयव, दोयव, तीन, चार, पांच, छः, सात, नव, दश और ग्यारह यव,इस क्रमसे ६ माशे तक प्रमाण बढ़ावे । इसतरह कमसेकम षड्गुण गन्धक जारणकरे । षड्गुणसे अधिक जारणकरनेसे अधिक गुण होताहै।इसतरह पारेका संस्कारकर काले धतूरेके रससे तीनरोज मर्दनकर सोमानल (डमरू) यन्त्रमें तीनदिनकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन और पातनकरे । जब तक पारदभस्म तुल्य न होजाय तबतक इसक्रमको बारम्बार करतारहे । यह पारदभस्म और सुवर्णभस्म १–१ पल, शुद्ध गन्धक और मोती २–२ पल, सुहागा १ कर्ष लेकर सबको कज्जलीकर अम्लवेतकेरससे ७ रोजतकमर्दनकर गोला बनाय छायामें सुखावे । अम्लवेतके अभावमें जवकीकाञ्जीमें मर्दनकरे। फिर गोलेको गोस्तनाकृतिमूषामें रख स्वेदनयन्त्रमें चूल्हेपर चढ़ाकर ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णके पात्रमें रक्खे, शीत और वायु न लगे । सुवर्णपात्रके अभावमें चांदीके पात्रमें रक्खे, इनके अतिरिक्त अन्यपात्रमें न रक्खे । यह रोगराजका नाशकरनेवाला बालमृगाङ्करस तैयार हुआ । इसका च्यवनादिकोंने अनुभवकियाहै । भैरव,योगिनीचक्र, मुरारि, अग्नि, ब्राह्मण, इनका पूजनकर प्रायश्चित्त करे और शास्त्रोक्तमार्गसे आत्माको शुद्धकर रसेश,रस,गुरु,वृद्ध देव,द्विज,इनका यथाशक्ति पूजनकर स्वस्तिवाचन और नान्दीश्राद्धका अनुष्ठान करके ४रत्ती कोमाना घी और मरिचके साथ अथवा १० पीपल और मधुकेसाथ सेवनकरे । हींगरहित घीमें पकेहुए शाक, सेंधानमक, इलायची, जीरा, मरिच, धनिया येसब मसालेमें डाले । दाह करनेवाले शाकोंको न खाय, सबतरहके बैंगन, करेला, नारियल, ककड़ी, स्त्रीप्रसङ्ग, कोप, दिनकीनिद्रा, रात्रिजागरण, तिलयुक्तपदार्थ, तैल, सरसों, उबटन, शिरस्नान, अत्यन्तगरम या ठंढे जलसे स्नान, इनसबको छोड़देवे । रात्रिको प्यास लगे तो त्रिकटुका काढा बनाकर थोड़ासा त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर पीवे । शुद्रपर्णी अथवा निर्गुण्डी (सम्हालू) कीजड़ १–१ पलका अष्टावशेष क्वाथ बनाकर त्रिकटुका चूर्ण डालकर रात्रिमें पीनेसे खांसी नष्टहोतीहै । गुञ्जाकीजड़ हींगके साथ लनेसे सबप्रकारकी वमन बन्दहोतीहै । आवळ अथवा सनायके पत्तोंकचूर्णकी मधुमें गोली बनाकर मुहमें रखनेसे सबतरहकी खांसी नष्टहोती है । सबतरहकी अरुचिको नष्टकरनेके लिये सफेदफूलके कचनारकीछालकाचूर्ण दही अथवा जीरेके साथ देवे अथवा केवल भुनाहुआजीरा देवे । अथवा मछेछीकीजड़ मुहमें रक्खे । अथवा पाटर, कटिवाली चौलाई, मछछी इनसबकीजड़की गोलियें बनाय मुहमें रखनेसे तत्काल मुखशोष मिटताहै । अगर रससेवनसे रक्तकी वमन हो तो लौंग, शीतलचीनी, सफेद और लालचन्दन, खस, *तगरगण्ठोडा* (गुजराती), सोंठ, पीपल, नागकेसर, इलायची, काला अगर, नागरमोथा, कपूर, पत्रज, जायफल, वीखुर ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चूर्णसे अठगुणा वंसलोचन डालकर एकरोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे रक्तकीवमन बदहोतीहै और हृदयका ताप निश्चितरूपसे निवृत्तहोताहै इसतरह उपद्रवोंको सम्भालताहुआ क्षयरोगकी चिकित्सा करे इनके अतिरिक्त और उपद्रव उपस्थित हों तो उनको यत्नसे दूरकरे। जिसकारोग बहुत बढ़गयाहो और भोजनकरनेकी शक्ति जातीरहीहो, गात्र सूखगयेहों । नेत्र भीतर उतरगयेहों उसे मरणासन्न समझकर छोड़दे । जिसका शरीर फूटगया हो उसकीभी चिकित्सा न करे। शरीरमें बलसम्पत्ति अच्छीहोनेपर वमन विरेचन कराके प्रस्तुत रसको दे । समुद्रनामक आकके दूधमें भिगोकर ३–३ रत्ती गायके दूधकेसाथ लेनेसे कण्ठकेमलकी शुद्धि होगी तितलीके पीसकर शक्करकेसाथ १ माशा खिलानेसे अत्यन्तज्वरको दूर करती है और मलको रेचनकरतीहै ॥ ६२० ॥

६२१ मृगाङ्करसः (महदाद्य) (पञ्चदशः)

शुद्धं सूतं स्वर्णभस्म जम्बीरे मर्दयेद्दिनम् ।
तयोर्द्विगुणितं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यन्तु गन्धकम् २८०६
टङ्कणं गन्धकाऽर्द्धञ्च सर्वं जम्बीरजै द्रवैः ।
मर्द्य यामैश्चतुर्भिस्तद्वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत् ॥ २८०७
दोलायन्त्रे सारनाले यामादुद्धृत्य शोषयेत् ।
ततो मृन्मयभाण्डान्तर्लवणञ्चाऽङ्गुलद्वयम् ॥ २८०८ ॥
ऊर्द्ध्वाऽधः पृष्ठतः कृत्वा गालकं वस्त्रवेष्टितम् ।
लवणे पूरयेद्भाण्डमन्धयित्वा दिनं पचेत् ॥ २८०९ ॥
चुल्ल्यां क्रमाग्निसिद्धः स्याद्रसो महामृगाङ्कक. ।
अनेनैव प्रकारेण मृगाङ्कान् पाचयेद्रसान् ॥ २८१० ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थं देयं गुञ्जामितं घृते. ।
दशभिर्मरिचै. सार्द्धं पिप्पलीमधुनाऽपि वा ॥२८११॥

र र, चि र भ, र का, र क यो, र को, राजयक्ष्मणि।

टि०–चिकित्सारत्नाभरणे तयोर्द्विगुणितं ताम्रमित्यस्य स्थाने तयोर्द्विगुणिता मुक्तामिति पाठोऽस्ति । स्वर्णभस्मस्थाने स्वर्णपत्रमिति पाठोऽस्ति।

भाषा–शुद्धपारा और सुवर्णभस्म समभागलेकर जमीरीके रसमें एकरोज मर्दनकर दोनोंसे दूनी ताम्रभस्म, तथा तीनोंकी बराबर शुद्धगन्धक और गन्धकसे आधासुहागा डालकर सबको जमीरीके रससे चारपहर मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर दोलायन्त्रमें एकपहरकाञ्जीसे स्वेदनकर मिट्टीकेवर्तनमें दोअङ्गुल पिसाहुआ नमकबिछाकर गोलेको रख नमकसे वर्तनको भरदे और मुखमुद्राकर एकदिनकी क्रमाग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्ती तक घीकेसाथ अथवा दशमरिच और मधुकेसाथ अथवा तीन पीपलऔर मधुकेसाथ देनेसे यह राजरोगको निवृत्त करताहै ६२१

६२२ मृगाङ्करसः (महदाद्य.) षोडश.)

निरुत्थं भस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्म सूतकम् ।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपिच्छं चतुर्गुणम् ॥२८१२॥
मृतताप्यं पञ्चभागं तारभस्म चतुर्गुणम् ।
सप्तभागं प्रवालञ्च रसतुल्यञ्च टङ्कणम् ॥ २८१३ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥ २८१४ ॥
लवणैः पात्रमापूर्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत् ।
तन्मुखन्तु मृदा रुद्ध्वा पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २८१५ ॥
आकृष्य चूर्णयेच्छुद्धं चतुःषष्टिविभागतः ।
वज्रं वा तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशिकम् ॥२८१६॥
महामृगाङ्कः खलु एष सिद्धः
श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम् ।
वल्लोऽस्य सेव्यो मरिचाऽऽज्ययुक्तः
सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः ॥ २८१७ ॥
तत्रोपचाराः कर्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः ।
पथ्यं पूप्यञ्च भोक्तव्यं त्यजेत्सूतविरोधि यत् ॥२८१८॥
यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वरगणं गुल्मं तथा विद्रधिम् ।
मन्दाग्निं स्वरभेदकासमरुचिं वान्तिञ्च मूर्च्छां भ्रमम्॥
अष्टायेन महागदान् गरगदान् पाण्ड्वामयान् कामलाः।
पित्तोत्थांश्च समप्रकान् बहुविधानन्यांस्तथा नाशयेत्॥

र सं , र सु , र च , भै र , र पा , र.क , र क यो., रान-यक्ष्मणि । रसपारिजाते ताप्यस्थाने ताम्रं नियोजितम् ।

भाषा—निरुत्थ सुवर्णभस्म १ भाग, पारदभस्म २ भाग, मोतीभस्म ३ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म ५ भा., रजतभस्म ४ भा , प्रवालभस्म ७ भा , सुहागा २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर १–२ पहर केवल मर्दनकर बिजोर-केरससे तीनदिनतक मर्दनकरे। फिर गोलाबनाय कड़ीधूपमें सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रख मुखमुद्राकर चारपहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकालकर बारीक पीसकर इसमें ६४ वां हिस्सा हीरेकीभस्म अभावमें सोलहवां हिस्सा वैक्रान्तभस्म मिलाकर रखछोड़े। यह नन्दिकेश्वरका कहाहुआ मृगाङ्करसहै। इसमेंसे १–३ रत्ती मरिच और घी अथवा पीपल और घीकेसाथलेनेमे सब उपद्रवयुक्त यक्ष्मा, ज्वरसमुदाय, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, कास, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, आठमहारोग, बनावटी ज़हर, पाण्डुरोग, कामला, पित्तोत्पन्नरोग, इत्यादिकोंको यह अनुपानभेदसे नष्टकरताहै ॥ ६२२ ॥

६२३ मृगाङ्करसः (महदाद्यः) (सप्तदशः)

स्वर्णं तारं समुक्तं प्रततिविमलयं माक्षिकं वज्रमूर्त्तं,
लोहं चाभ्रञ्च शुल्वं मृतममलतरं नागवङ्गौ च गन्धम्
भार्गवृद्धं दिनैकं घनतरघटनं मर्दयेत्त्रियामं,
कन्याधात्र्यादिदारीमुसलिविजयाशाल्मलीभृङ्गमूले॥
गोले वेष्ट्य पलाशमदनतरुभवैर्मृत्स्नया चाऽग्निशुष्कं,
गर्ते सामुद्रपूर्णे लघुतरदहने पाचितं वेदयामम् ।
दत्त्वा तत्षोडशांशं विषमतिविमलं गन्धकं तेन तुल्यं,
मर्द्य धूर्तजयाभिःखसखसतिलजैर्वारिभिः कन्यकान्यैः
पिण्डं सिन्धूद्भवेन प्रविलुलितमथो वेष्टितं माषपिष्टैः।
स्थाप्यं यन्त्रे त्रियामं लवणविरचिते पाचयेदग्निना [illegible]
स्वाङ्गं शीतं कुमारीरदुकचलियुतं पूजितं वल्लमात्रं,
कृष्णाक्षौद्रैः मृगाङ्कः क्षयतिमिररविर्भावितो जीर्णरोगैः

र.प., क्षयरोगे ।

टि०—“हेम तार तथा मुक्ता विद्रुम माक्षिक वज्रि । रस लोहाभ्रक शुल्व वङ्गनागौ च गन्धकम् ॥ आदाय भागवृद्ध्यैनस्तुल्य टङ्कण शिंतः। मर्दयेद्द्रावयेद्धीमानेकैकेन दिनत्रयम् ॥ कुमारी चाऽमृता धात्री विदारी शाल्मली वरी । मुशली विजया रैमद्व खरामवल्लजम् ॥ बब्बूले-विन्यारैमकुमारीणां पृथग्द्रवम् । सिन्धुचूर्णान्वितं माषकल्कान्याम्र लेपयेत् ॥ स्थाप्य लवणयन्त्रे तु त्रियामं पाचयेन्मृदु । स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पूजयेत्कुन्देवतम् ॥ वल्लिपूर्वविधिना समुद्धृत्य विचूर्णयेत् । महामृगाङ्कः रोगे तीक्ष्णक्षयनाशनि ॥ पिप्पलीमधुसंयुक्तं वल्लमात्रं प्रयुज्यते ।” इतिपाठो रसायनसङ्ग्रहे नागवङ्गीयप्रमाणे व्यत्यय कृत्वा वल्लनाभ निष्कास्य सर्वमसङ्गत नियुज्य पठान्तरं स्थापितोऽस्ति परन्तु तीक्ष्ण विहितु रसंयेविधानात् टङ्कणस्याऽनुक्तत्वात्तस्य त्यागेन कृत्वा शुद्धौ भूर्यन्त्रम्यरसाभ्यां यथारथ्यनमधिकभावनया निष्पादिते योगे सुवर्णयोग-योगकल्पसमानदां भविष्यति गुणाऽभिव्यक्तिरपि स्पष्टतरैव ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा., मोती ३ भा, प्रवाल ४ भा., सोनामाखी ५ भा , हीरा ६ भा., पारा ७ भा., लोह ८ भा , अभ्रक ९ भा., तांबा १० भा , सीसा ११ भा, रांगा १२ भा , इनसबकीभस्में और शुद्धगन्धक १३ भा , लेकर १–२ पहर घुटो घोटकर घीकुंआर, आंवला, विदारीकन्द, मुसली, शतावर, भांग, सेमरका मुसला, धतूरकी जड़, इनप्रत्येकके स्वरससे १–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मदनाढके पत्तोंमें लपेटकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर सुखावे । सुखानेपर एकबालिश्त लंबेचौड़े गढ़ेके बीचमें आधामहुवाखड़ा और गोलेके आनेलायक दूसरागढ़ा खोदकर नीचेघोड़ागा लेन्धव बिछाकर गोलेको रख ऊपरसे सेंधानमक भरदे । इसके गढ़ेमें थोड़े २ कण्डोंकी ४ पहरतक आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर औषधसे सोलहवां हिस्सा शुद्धबच्छनाग और गन्धक मिलाकर धतूरा, भांग, खसखस, तिल, घीकुंआर इनप्रत्येकके रसोंमें १–१ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय इन्हीं रसोंमें उड़दके सेंधेनमकको पीस-कर गोलेपर आधामहुवामोटा लेपकर सुखाकर उसके आटेमें बन्दकर लवणयन्त्रमें ३ पहर कोमलोंकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । फिर कुमारी, और वड़की पूजा और भैरवकी बलि निवेदनकर इसमेंसे ३ रत्तीकीमात्रा ३ मा पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह क्षयरोगको नष्टकरताहै ६२३

६२४ मृगाङ्करसः (महाराजादि) (अष्टादशः)

रसभस्म त्रिभागञ्च भागैकं तारभस्मकम् ।
मुक्ताफलञ्च स्वर्णं च कार्दमांश्च त्रिभागिकम् ॥२८२४॥
गामेदकञ्च द्विगुणं कार्दमांशं नियोजयेत् ।
पद्मरागेन्द्रनीले च राजावर्तञ्च भागिकम् ॥ २८२५ ॥

गरुडोद्गारवैक्रान्तं प्रवालं हेममाक्षिकम्।
शङ्खशुक्तिवराटानां पृथग्भागान्वियोजयेत् ॥ २८२६ ॥
सुवर्णं रसतुल्यं स्यात्ताम्रं हेमसमांशकम्।
कांस्यञ्च ऋतुभागञ्च रीतिकाभागमात्रकम् ॥
मण्डूरं भागमात्रं स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
सुवर्णं रसतुल्यञ्च तीक्ष्णं कान्ताऽभ्रगन्धकम् ॥२८२८॥
वङ्गं भुजङ्गं भागञ्च रसपाकश्च पूर्ववत्।
एष राजमृगाङ्कः स्यात्सर्वरोगविनाशनः ॥ २८२९ ॥
क्षये प्रयोज्यो मधुपिप्पलीभ्यां
श्वासे च भार्ङ्गीमधुनागरैश्च।
मध्वाज्यतैलेन मरीचकैश्च
पाण्डौ गदे नीरमधुप्लुतोऽसौ ॥ २८३० ॥
शतावरीशर्करया समेतो
वीर्यस्य वृद्धिं कुरुतेऽवलीढः।
वासारसक्षौद्रयुतो निहन्या-
त्पित्तं सरक्तं सितयाऽम्लपित्तम् ॥ २८३१ ॥

र.क.यो., सर्वरोगे।

टि०—"रसभस्मत्रयो भागा पञ्चाग हेमभस्मकम्। मृततारञ्च भागैक वज्रमेक चतुर्गुणम्॥ गोमेदकञ्च द्विगुण काश्मीर सप्त मौक्तिकम्। पद्मरागेन्द्रनीलञ्च राजावर्त तथैव च॥ गरुडोद्गारवैक्रान्त प्रवाल हेम माक्षिकम्। वैदूर्यं पुष्परागञ्च नागवङ्ग तथैव च॥ तीक्ष्ण कान्त व्योम-गन्ध त्रिफलाचित्रकाम्भसा। भावना गन्धदुग्धेन सेहुण्डासागरेन च॥ उशीरद्वयनीरेण पृथक् सप्तसप्तधा। पश्चान्मृगमदै भाव्य सुसिद्धो रसराड्भवेत्॥ वल्लमात्र प्रयुञ्जीत मधुना मेहनाशनम्। वलीपलितहृत्सम्य कामद सुखवर्धनम्॥ वसन्तकुसुमाख्यातो वसन्तपदपूर्वक॥" इति पाठोऽपि रत्नाकरौषधयोगे एव वसन्तकुसुमाकरनाम्ना लिखितोऽस्ति परन्तु पाठद्वयकल्पने गौरवाद्भमोत्पादकत्वादधिकारसाम्याचैक एव पाठ कल्पनीय॥

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजतभस्म १ भा, मुक्तापिष्टी, स्फटिक और केशर ३–३ भाग, गोमेद ६ भा, माणिक्य, नीलम और लाजवर्द १–१ भा., पन्ना, वैक्रान्त, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, शङ्ख, सीप, पीलीकौड़ी इनसबकीभस्में १–१ भाग, सुवर्ण और ताम्रभस्म ३–३ भा, कांस्यभस्म ६ भा, पीतल और मण्डूरभस्म १–१ भा, कहरवा ३ भा, फौलाद और कान्तलोहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, वङ्ग और नागभस्म, येसब १–१ भाग लेकर ३–४ पहर शुष्कमर्दनकर हींगके पानीसे ४ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कड़ीधूपमें सुखाय ४ तह कपड़ेमें पोटली बनाय २–४ कपड़मिट्टी लगाकर सुखादे। फिर सज्जीखार, जवाखार और पाचोंनमक समभागमें मिलेहुए ४ सेरको बारीक पीसकर उसकेबीचमें गोलेकोरख मुहबन्दकर ४ पहरकी मध्यम अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा मधु और पीपलके साथ क्षयमें, भारङ्गी, सोंठ और मधुके साथ अथवा मधु, घी, तैल और मरिचकेसाथ श्वासमें दे। पाण्डुमें मधुके शरबतकेसाथ दे। वीर्यवृद्धिके लिये शतावर और शक्करकेसाथदे। अडूसेकेरस और मधुकेसाथ रक्तपित्तमें और शक्करके साथ अम्लपित्तमें देवे। इसतरह यह ऊपरकहे हुएरोगोंको और अनुपानभेदसे अन्यरोगोंको भी नष्टकरताहै॥ ६२४॥

६२५ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (ऊनविंशः)

अथाऽपरं प्रवक्ष्यामि रोगराजस्य भेदनम्।
प्रागुक्तेन प्रकारेण सूतेन्द्रं शोधयेद्बुधः ॥ २७३२ ॥
मुखमुत्पादयेत्तद्वद्रसेऽग्निस्थायितां नयेत्।
पूर्वोक्तेन प्रकारेण दद्याद्ग्रासचतुष्टयम् ॥ २८३३ ॥
पूर्वोक्तेन प्रकारेण जारयेद्गन्धकाच्छतम्।
गुणानभ्रकसत्त्वस्य षड्गुणं जारयेद्रसे ॥ २८३४ ॥
ताप्यसत्त्वसमायुक्तं ताप्यचूर्णप्रवापितम्।
शुद्धसौवर्णबीजन्तु चारयेच्च समांशतः ॥ २८३५ ॥
एवं जीर्णे रसे वज्रं जारयेच्च शतांशत.।
मूलागसत्त्वं हेम्ना च समावृत्तं तु कारितम् ॥२८३६॥
ततः कृत्वा वज्रभस्म वक्ष्यमाणक्रमेण तु।
भस्मना तेन वज्रस्य मारयेत्तं रसेश्वरम् ॥ २५३७ ॥
चतुःषष्टिगुणे सूते वज्रभस्म विनिःक्षिपेत्।
मर्दयेदम्लवर्गेण नानाधत्तूरकद्रवैः ॥ २८३८ ॥
एकविंशदिनं यावन्मर्दयेच्च निरन्तरम्।
यन्त्रे सोमानले क्षिप्त्वा दिनान्यधिकविंशतिम् ॥२८३९
ज्वालयित्वा वीतिहोत्रं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत्।
गृह्णीयाद्भस्मतां यातं रसेन्द्रं घञ्चयोगतः ॥ २८४० ॥
पश्चात्तद्भस्मना हेम भस्मी कुर्वीत बुद्धिमान्।
तद्भस्मनैव रजतं भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ॥ २८४१ ॥
ताम्रं तीक्ष्णं षड्नागावभ्रकान्तं प्रमारयेत्।
सूततास्येन सर्वेषां लोहानां भागमाहरेत् ॥ २८४२ ॥
मुक्ताचूर्णन्तु सर्वेषां समानं परिगृह्य च।
रसाच्च द्विगुणं गन्धं टङ्कणं पादतः क्षिपेत् ॥ २८४३ ॥
तत्सर्वं मर्दयेद्यत्नात्काञ्जिकैश्च पयोद्भवैः।
दिनत्रयं प्रयत्नेन पश्चाद्गोलकमाचरेत् ॥ २८४४ ॥
छायाशुष्कञ्च तं गोलं पक्वमूषागतं कृतम्।
सागरं यन्त्रराजे तं दत्त्वा पाकं समाचरेत् ॥ २८४५ ॥
चतुर्यामप्रमाणेन मध्ये वह्निं विधाय वै।
ततः सिद्धं रसेन्द्रं तं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २८४६ ॥
समभ्यर्च्य ब्रह्मविष्ण्वीशान् योगिनीभैरवादिकान्।
बलिं दत्त्वा भूतवर्गे पावकं तर्पयेद्धुतैः ॥ २८४७ ॥
सहस्रादधिकं हुत्वा गुरुविप्रान् प्रपूज्य च।
एवं कृत्वा रसेन्द्रो वै ग्राह्यो नैवान्यथा बुधैः ॥२८४८॥
विचूर्ण्य स्थापयेत्पात्रे सौवर्णे राजतेऽथवा।
नित्यं सम्पूजयेद्देवं रसेन्द्रं सिद्धिकामुकः ॥ २८४९ ॥
अन्यथाऽपहरेद्देवो भैरवो रसमुत्तमम्।
ततो रसेश्वरं दद्याद्रोगराजनिवृत्तये ॥ २८५० ॥
राजसर्षपमात्रन्तु नाधिकं योजयेद्बुधः।
घृतेन मधुना सार्कं व्योषचूर्णेन संयुतम् ॥ २८५१ ॥

अनुपानञ्च धारोष्णं गव्यं दुग्धं प्रयोजयेत् ।
तवराजेन संयुक्तमजादुग्धमथापि वा ॥ २८५२ ॥
पथ्यञ्च पूर्ववत्कुर्याच्चिकित्सा तद्वदेव हि ।
एकमण्डलयोगेन रोगराजं निहन्त्यसौ ॥ २८५३ ॥
रसेन्द्रो नाऽन्यथा चिन्त्य एतदीश्वरभाषितम् ।
षण्मासस्य प्रयोगेण छिद्रं पश्यति मेदिनीम् ॥२८५४॥
ब्रह्मलोकावधि जगत्पश्येत्करतलाम्बुवत् ।
संवत्सरप्रयोगेण खेचरो जायते नरः ॥ २८५५ ॥
अदृश्यः सर्वभूतेषु बलवान् स्यान्मुरारिवत् ।
स्वच्छन्दचरितो गौरीकान्तवज्जायते नरः ॥ २८५६ ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां शुल्वं भवति काञ्चनम् ।
सर्वान् रोगान्निहन्त्येष रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥२८५७॥
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगोक्तयोगतः ।
अयं राजमृगाङ्काख्यो रसेन्द्रः सम्प्रकाशितः ॥२८५८॥
यत्कीर्तनात्सर्वरोगा विनश्यन्ति न संशयः ।
यद्दर्शनाच्च पापानि विलयं यान्ति तत्क्षणात् ॥
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥२८५९॥

रसालं, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—पूर्वोक्तप्रकारसे अग्निस्थायी संस्कारपर्यन्त क्रिया कर पूर्ववत् चारग्रास देकर शतगुणित गन्धक और षड्गुण अभ्रकसत्व जारणकर सुवर्णमाक्षिकसत्वका ग्रास देकर शुद्धसुवर्ण माक्षिकके चूर्णका अग्निपर प्रक्षेप देवे । सुवर्णमाक्षिकसत्व मि शेषनया जारितहोनेपर शुद्धसुवर्णबीज बराबरके हिस्सेका जारणकरे फिर सौवा हिस्सा हीरा जारणकरे । केंचुओंके सत्वको सुवर्णके बराबर लेकर गलावे और इसमें शुद्धहीरेको लपेटकर व्याघ्रीकन्दप्रभृतिमें बन्दकर भस्म बनावे । इसभस्मका एक-हिस्सा ६४ गुने पारेमें मिलाकर यथासम्भव अम्लवर्गको एकत्रितकर उनके रसोंसे मर्दनकर नियमी धतूरेकीजाति मिलाकै उनप्रत्येकके रसोंसे २१ दिनतक निरन्तर मर्दनकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर २१ दिनकी क्रमवृद्ध अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर वज्रकेयोगसे मरेहुएपारेको निकालकर रखछोडे । इस मेंसे एकहिस्सा ६४ गुने सुवर्णमें डालकर पूर्ववत् अम्ल और धतूरवर्गसे २१ रोज मर्दनकर डमरूयन्त्रमें २१ रोजकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमें ६४ गुनी रजत मिलाकर पूर्ववत् मर्दन और पाचनकरे । इसरजतभस्ममें ६४ गुना तांबेका चूरा मिलाकर पूर्ववत् भस्मकरे । इस ताम्रभस्मसे फौलाद और फौलादसे वङ्ग, वङ्गसे नाग, नागसे अभ्रक और अभ्रकसे कान्त लोहकी भस्म करे । पारदभस्मके बराबर आठों लोहोंकी भस्म लेवे और इनसबकी बराबर मोतीकाचूर्ण, रससे दूना शुद्धगन्धक, रससे चतुर्थांश सुहागा मिलाकर सबको कांजी और यवके सत्तसे ३–३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर पक्कीहुई मूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें ४ पहर मध्यम अग्निमे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ब्रह्मा, विष्णु, ईश, महादेव, योगिनी, भैरव प्रभृतिको बलि देकर अग्निको सहस्राहुतिमे तर्पणकर गुरु, ब्राह्मण इनकी यथाशक्ति पूजाकर पारेको खरलकर सुवर्ण अथवा चांदीके वर्तनमें रखकर विधिपूर्वक रोजपूजाकरे अन्यथा दवाके गुणको भैरव हरणकरलेंगे । इसतरह सुरक्षितक्रियेहुए रसको मोटी-राईके प्रमाण लेकर घी, मधु और त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ मिलाकर खिलादे कपरसे धारोष्णदुग्ध पिलावे अथवा वंशलोचनकाचूर्ण डालकर बकरीका दूध पिलावे । पथ्य वृहद्राजमृगाङ्ककीतरह करे । उपद्रवोंकी प्रतिक्रियाभी वैसेहीकरे । इसतरह एकमण्डल तक करनेसे यह रोगराजको नष्टकरताहै । ६ महीनेतक प्रयोग-करनेसे पृथ्वीमें ऐसाकोईहिस्सा नजर नहीं पड़ता कि ज्हासे उसे जानेका रास्ता न मिले । ब्रह्मलोकतक संसारको हस्तगत आम-लकवत् देखेगा । एकवर्षके प्रयोगसे आकाशगामिता सिद्धहो-तीहै । समस्तभूतोंसे अदृश्य होताहुआ दिव्यबलयुक्त होताहै । स्वच्छन्दगतिको प्राप्तहोकर महादेवके सदृश गुणोंको प्राप्तकर ताहै । उसकेमूत्र और पुरीषसे तांबा सुवर्णहोजाताहै । तरहरो गहरानुपानकेसाथ यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । उसमनुष्यके दर्शनकरनेसे समस्त पाप नष्टहोतेहै ॥ ६२५ ॥

६२६ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (विश.)

एकैकभागेन सुवर्णसूत-
वैक्रान्तभस्मान्यथ गन्धकञ्च ।
भागद्वयं मौक्तिकभस्म देयं
तुर्यांशतो हीरकभस्महेम्नः ॥ २८६० ॥
ततः परं टङ्कणकञ्च सूत-
तुर्यांशकं सन्निपजा प्रदेयम् ।
सर्वाणि चैकत्र निधाय खल्वे
जम्बीरनीरेण दिनं विमर्दयेत् ॥ २८६१ ॥
तद्गोलकं शुष्कमनातपे च
मृत्कर्पटेनाऽपि च वेष्टयित्वा ।
ततो वितस्तिप्रमिते च भाण्डे
दशाङ्गुलायामयुतेसमं तत् ॥ २८६२ ॥
विस्तीर्णवक्त्रे चतुरङ्गुलीभिः
किट्टं क्षिपेत्तत्र षडङ्गुलीकम् ।
तस्योपरिष्टादथ गोलकं तं
निधाय भाण्डे पृथुचुल्लिकायाम् ॥२८६३॥
दीपाग्निनाऽऽदौ प्रहरं पचेच्च
मध्याग्निनाऽथप्रहरद्वयञ्च ।
चण्डाग्निना चाऽपि समुद्रयाम-
मेवंपुटो वासर एक एव ॥ २८६४ ॥
तं स्वाङ्गशीतं स्वत उद्धरेत
तद्योजयेद्भैरवमत्र वह्निम् ।
कुमारिकाणामथ योगिनीनां
तृप्तिं यद्वनामपि सद्द्विजानाम् ॥ २८६५ ॥
सम्पूज्य सिद्धेश्वरसिद्धराजं
खल्वे च चूर्णं निदधीत तस्य ।

उदीरितो राजमृगाङ्क एष-
स्ततो भवानीं प्रति शम्भुनाऽसौ॥२८६६॥
क्षौद्रेण सेव्यो दशपिप्पलीभि-
श्चूर्णेन साकं भिषजां समीपे ।
क्षयं निहन्त्याशु च वह्निदार्यं
पाण्डुं प्रमेहं ग्रहणीं पिनष्टि ॥ २८६७ ॥
शूलं समूलं सकलं निहन्ति
चार्शांसि सर्वज्वरसन्निपातान् ।
रोगान् ग्रहघ्नान् प्रसभं पिनष्टि
हरिं यथा पातकसङ्घमाशु ॥ २८६८ ॥

र. मु , र. रां , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सोना, पारा, वैक्रान्तभस्म और शुद्धगन्धक १–१ भाग, मोतीकी पिष्टी अथवा भस्म २ भा , हीरेकीभस्म $\frac{1}{4}$ भा , सुहागा $\frac{1}{4}$ भा , लेकर सबको ३–४ पहर सूखा मर्दनकर जमीरीकेरससे एकदिन घोटकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर चारतह मलमलके कपडेमें लपेटकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाय एक बालिस्तलम्बा दशअङ्गुलचौडा और चारअङ्गुलचौडे मुहका गर्तलेकर उसमें ६ अङ्गुलतक लोहेकेकिट्टका चूरा बिछाकर ऊपर गोलेकोरख किट्टके चूर्ण सही ऊपरतक भरदे फिर बालुका अथवा लवणयन्त्रमें रखकर बड़े चूल्हेपर रख एकपहर दीपाग्नि, फिर दोपहर मध्यमाग्नि अखीरमें ४ पहर चण्डाग्नि देकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । भैरव, अग्नि, कुमारी, योगिनी, सुपात्रब्राह्मण इनकी अच्छीतरह तृप्तिकर गणेशका पूजनकर भवानी और शङ्करको प्रणामकर दशपीपल और मधुकेसाथ इसरसकी १ से ४ रत्तीतककी मात्रा देनेसे क्षय, अग्निमान्द्य, पाण्डु, प्रमेह, ग्रहणी, शूल, अर्श, ज्वर, सन्निपात इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे परमेश्वरका स्मरण पापसङ्घातको नष्टकरताहै ॥ ६२६ ॥

६२७ मृगाङ्करसः (नवरत्नाद्यः राजाद्यः) २१

सूतं गन्धकहेमताररसकं वैक्रान्तवज्राऽऽयसं,
वङ्गं नागजविद्रुमं सुविमलं माणिक्यगारुत्मजम् ।
ताप्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैडूर्यकं शुल्वकं,
शुक्तीतालकमभ्रहिङ्गुलशिला गोमेदनीलं समम्२८६९
गोक्षूरैः फणिवल्लिसिन्धुवदरीमुण्डीकणाचित्रकैः,
शोफघ्नीशतपुष्पिकामधुकजैः भङ्गेक्षुकङ्कोलजैः ।
छिन्नानागबलात्रिजातकघनैः विष्णुप्रियावालकैः,
अम्लघ्नाऽतिविषाऽऽटरूषमुशलीवन्ध्याविदारीवरी–
कन्याजैः स्वरसैः विभाव्य सकलं कृत्वाऽथ तद्गोलकं,
यन्त्रे सागरराजजे पुटयुगे यामद्वयं पाचयेत् ।
पश्चात्स्वाङ्गसुशीतलं सुमृदितं गोक्षीरसम्भावितं,
सर्वैश्चेक्षुरसैश्च मालतिसुमैः कर्पूरकस्तूरिजैः॥२८७१॥
सिद्धं दन्तकरण्डके सुनिहितं गुञ्जाद्वयं योजयेत्,
सर्वव्याधिषु चाऽनुपानकभिदा तं वक्ष्यमाणेषु च ।
सर्वांशेषु च पिप्पलीमधुयुतं भल्लातयुक्तं क्षयं,
श्यामाभिर्दशभिः घृतेनमधुना चैकोनविंशोषणैः २८७२
पित्तं चेन्दुकचेन चाऽम्लविजये श्रीखण्डखण्डायुतः,
स्थौल्ये चाऽऽर्द्रमधुप्लुतं ग्रहणिकां जीरेण शोथं जयेत्
शूले रामठजासवेन सहितं श्वासे च कासे तथा,
व्याघ्रीभार्ङ्गियुतश्च गुल्मविषये द्राक्षाशिवासंयुतम् ॥
मेहे शर्करया तथा च तुवरैरम्लास्रपित्ते सिता,
क्षौद्राभ्यां ज्वरदोषशान्तिषु हितं जीरेण धान्येन च ।
इत्थं राजमृगाङ्कमेनमखिलं व्याधौ प्रयुञ्ज्याद्भिषक्,
यस्याऽऽकर्णनमात्रतोऽपि सकला रोगाः प्रणश्यन्ति हि

र. मु (राजयक्ष्मणि), नि. र , र मु , र. चो., रसायनसं , यो. र , एषु नवरत्नराजमृगाङ्क इति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, चान्दी, खपरिया, वैकान्त, हीरा, लोहा, वङ्ग, नाग, प्रवाल, रूपामाखी, माणिक, पन्ना, सोनामाखी, मोती, पुखराज, शङ्ख, लसनिया, ताम्र, मोतीकीसीप, हरिताल, अभ्रक, शिंगरिफ, मैनसिल, गोमेद, नीलम, इनसबकी भस्में समभाग लेकर दोपहर शुष्कमर्दनकर गोखरू, नागरवेल, विधारा, वेर, गोरखमुण्डी, पीपल, चित्रक, पुनर्नवा, सोंफ, मुलहठी, भाग, ईख, शीतलचीनी, गिलोय, नागबला, तज, पत्रज, इलायची, नागरमोथा, तुलसी, तगरगण्ठोला (गुजराती) , पाठा, अतीस, अडूसा, मुसली, बाझखेखसा, विदारीकन्द, शतावर, घीकुआर इन प्रत्येकके रसोंसे १–१भावना देकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर चारतह मलमलके कपड़ेमें बांधकर ऊपरसे २–३ कपड़मिट्टी देकर छायाशुष्ककर दोशरावोंमें लवणकेबीच गोलेकोरख सन्धि बन्दकर दे । सूखनेपर दोपहरकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गोदुग्धकी भावना देकर पूर्वोक्तवस्तुओंकी क्रमसे १–१ भावना देकर तमाम जातिकीईख, मालतीकेफूल कपूर और कस्तूरीकी क्रमसे भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियाबनाकर छायामेंसुखाय हाथीदांतकी डिब्बीमें बन्दकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै । साधारणतया पीपल, मधु और भिलावेकेसाथ क्षयको नष्टकरताहै । १० पीपल, घी और मधु अथवा १९ मरिच, घृत और मधुकेसाथ पित्तको नष्टकरताहै । शुद्धकपूर और तगरगण्ठोला अथवा सफेद चन्दन और खाडकेसाथ अम्लपित्तको, तथा अदरख और मधुकेसाथ स्थूलताको नष्टकरताहै । जीरेकेसाथ ग्रहणी और शोथको नष्टकरताहै । हिङ्ग्वासवकेसाथ शूलको नष्टकरताहै । भटकटैया और भारङ्गीकेसाथ श्वासकासको, द्राक्ष और हर्रकेसाथ प्रमेहको नष्टकरताहै । शक्कर और मधुकेसाथ अम्लपित्त और रक्तपित्तको एव जीरे और धनियेकेसाथ ज्वरोंकेउपद्रवोंको नष्टकरताहै । इसतरह तत्तदनुपानविशेषकेसाथ समस्तरोगोंमें इसका प्रयोग अव्याहतवीर्य होताहै ॥ ६२७ ॥

६२८ मृगाङ्करसः (राजाद्य:) (द्वाविंशः)

मृतं सूतं मृतं ताप्यं तुल्यभागं प्रकल्पयेत् ।
अस्य गुञ्जाद्वयं दद्यान्मधुना मरिचैः सह ॥ २८७३ ॥

तदनु स्वरसो योज्यस्तुलस्याः कर्पसम्मितः ।
जीर्णज्वरकफध्वंसी श्वासकासविनाशनः ॥ २८७६ ॥
अग्निमान्द्यविबन्धघ्नो राजयक्ष्मविमर्दनः ।
धातुपुष्टिकरश्चैव बलदः कान्तिकारकः ॥ २८७७ ॥
वै द , जीर्णज्वरे ।

टि०—मृगाङ्केषु प्रायशः पाकः समानानि परन्त्वत्र तदभावेऽपि मृगाङ्क इति नामदाने ग्रन्थकार प्रष्टव्य ।

भाषा—पारेकीभस्म (अभावमें चन्द्रोदय) और सुवर्ण माक्षिकभस्म समभाग लेकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–२ रत्तीकीमात्रा मधु और २१ कालीमिर्चोंकेसाथ लेकर ऊपरसे एकतोला तुलसीकारस पिलावे । इससे जीर्णज्वर, कफ, श्वास, कास, अग्निमान्द्य, मलमूत्रविबन्ध, राजयक्ष्म, धातु, बल और कान्तिकाह्रास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ मृगाङ्करसः (रानाद्यः) (त्रयोविंशः)

मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं मृतं लोहं सवैक्रान्तम् ।
प्रत्येकं पलमानञ्च द्विगुणञ्च शिलाजतु ॥ २८७८ ॥
प्रवालं मौक्तिकं शुद्धं कर्षं कर्षञ्च चूर्णयेत् ।
खल्वे निम्बुक तत्सर्वं वरुणस्य रसेन वै ॥ २८७९ ॥
साधयेत्सप्तदिवसात्तच्चतुष्कं भक्षयेन्नरः ।
गुञ्जामात्रं द्विगुञ्जं वा यथाबलमथाऽपि वा ॥ २८८० ॥
सूक्ष्मैलाचूर्णसंयुक्तं मधुना तद्दिनेदिने ।
मूत्रसादं वीर्यनाशं प्रमेहं राजरोगकम् ॥
प्रणश्यति न सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ॥ २८८१ ॥
ना वि , वाजीकरणे ।

भाषा—तांबा, सुवर्ण, लोह और वैक्रान्त १–१ पल, शुद्धशिलाजीत २ पल, प्रवाल और मोतीकीपिष्टी १–१ कर्ष लेकर १–२ पहर खालीमर्दनकर सातदिनतक वरुणेरसमे मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टी चढ़ाय सुखाकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे एकरत्तीसे दोरत्तीतक औषिधी दवाकर छोटीइलायचीकेचूर्ण और मधुके साथदेनेसे मूत्राघात, शुक्रनाश, प्रमेह, राजरोग प्रभृति रोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्योदय अंधेरेको नष्टकरताहै ६२९

६३० मृगाङ्करसः (रानाद्यः) (चतुर्विंशः)

स्वर्णं तारं तरनत्रुटिलं नागवैक्रान्तवृद्धया,
सर्वैस्तुल्यो रस इति पृथक् गन्धकं सूततुल्यम् ।
दत्त्वा दत्त्वा मदकसलिलं मर्दयेद्वारंवारं,
मूषास्थेयो पुटनविधिना भूधराख्ये रसेन्द्रः ॥ २८८२ ॥
इमं रसेन्द्रं निखिलाऽऽमयघ्नं
वल्लैकमानं त्वनुपानयोगात् ।
श्रीशङ्करेणोक्तमिदं भवान्यै
रसो वरो राजमृगाङ्कनामा ॥ २८८३ ॥
ककारादिवर्ज्यं रसे योगवाहे
सदग्नं वल्लं जाङ्गलं योजनीयम् ।
विशेषः परो यो यथोक्तः स कार्यो
मुनीनां मतं वेत्ति कः पण्डितोऽपि ॥ २८८४ ॥
र शि , सर्वरोगे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा , ताम्र ३ भा , शङ्ख ४ भा , नाग ५ भा , वैक्रान्त ६ भा , इनसबकीभस्में लेकर सबकी बराबर २ शुद्धपारा और गन्धक डालकर सबकोनीलरंग कज्जलीकर मुलका (कृत्रिमद्रव्य) कादर थोड़ा २ डालकर आठ पहरतक मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर १–२ कपड़मिट्टी चढ़ाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें चारपहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–३ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्मादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै इसमें ककारादिवर्गका निषेधकरना ॥ ६३० ॥

६३१ मृगाङ्करसः (रानाद्य.) (पञ्चविंशः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं मृताऽभ्रकम् ।
नवरत्नजभस्मानि कान्तसिन्दूरवैक्रान्तकम् ॥ २८८५ ॥
समांशं चित्रकद्रावैः कुमारीहंसपादजैः ।
घृष्ट्वा तन्मूषिकामध्ये वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २८८६ ॥
त्रिदिनं पाचयेदेतत्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
वाराहीकन्दधात्र्यक्षकिंशुकाऽऽद्यग्निमर्दितम् ॥ २८८७ ॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं नागार्जुनविभावितः ।
तच्चूर्णं वल्लमात्रेण रोगजालं निहन्ति च ॥ २८८८ ॥
र. क यो , सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तांबा, फौलाद, अभ्रक, नवरत्न इनसबकी भस्में, कान्तसिन्दूर और वैक्रान्तभस्म समभाग लेकर १–२ पहर सूखा मर्दनकर चित्रकमूल, घीकुमार, हंसराज इनके यथासम्भव स्वरस अथवा कषायोंमें १–२ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी चढ़ाकर कड़ीधूपमें सुखाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें ३ दिनतक क्रमवृद्ध अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वाराहीकन्द, आंवले, बहेड़े पलाशकेफूल और जड़, इनप्रत्येकके स्वरसोंमें १–१ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥

६३२ मृगाङ्करसः (रानादिः) (षड्विंशः)

समरसरसके द्वे मौक्तिकं गन्धकञ्च,
निखिलदलकलांशैः काञ्चनीयैरुपेतम् ।
पचनमतिसुयुक्त्या लावणे यन्त्रके च,
जयति सकलरोगं राजरोगं विशेषात् ॥ २८८९ ॥
र ० यो , यक्ष्माऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और सागरिया १–१ भाग, मुक्तापिष्टी और शुद्धगन्धक २–२ भाग, सुवर्णभस्म सबसे १२ वांभाग लेकर सबकी कज्जलीकर चित्रक, घीकुमार और हंसराजकेस्वरस अथवा क्वाथोंमें १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर कड़ीधूपमें

मुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें चारपहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्म-प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (सप्तविंश)

शुद्धस्य पलमादाय पारदस्य शुभेऽहनि।
हेमरौप्यं पृथक्कान्तं दीनारद्वयसम्मितम् ॥ २८९० ॥
गन्धकश्च छिनिष्कं स्याच्चतुर्निष्कं तु माक्षिकम्।
तन्मात्रं लोहभस्म स्यादेकीकृत्याऽखिलं रसैः॥२८९१॥
वाकुच्याः खल्वयेद्वस्त्रितयं पाचयेत्पुनः।
कुमार्याः स्वरसेनैव सप्तवारांस्तु मार्कवैः ॥ २८९२ ॥
त्रिवारं नागवल्ल्यास्तु पञ्चवाराग्रसैस्तथा।
रेणुकाक्वाथतस्त्रिः स्युरेका जातिफलद्रवैः ॥२८९३॥
पञ्च धात्र्याश्च तोयेन वास्तुलोणीरसैस्तथा।
निर्गुण्डयाः स्वरसैः कार्यं पञ्चाङ्गप्रभवै नरैः॥२८९४॥
मूषिकायां निरुद्धयाऽथ सप्तधा पुटमाचरेत्।
पञ्चाङ्गप्रभवैस्त्वेवं मुण्डयाश्च स्वरसैस्तथा ॥२८९५॥
द्विवारं विश्वजनितैस्त्रिधा कूष्माण्डकादिभिः।
विडङ्गशारिवानयाथै भावयित्वा पुनः पुटेत् ॥२८९६॥
सप्तधा मत्स्यभूनागभेकककंडकोद्भवैः।
पित्तैः सम्मर्दयेत्तद्वाऽसृजा कुक्कुटकस्य च ॥ २८९७॥
छागरक्तेन सम्मर्द्य सप्तधा पुटयेद्भिषक्।
श्लक्ष्णं कृत्वा तु तं सतं शुभे कारण्डके क्षिपेत् ॥२८९८॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत वातक्षयनिवृत्तये।
घृतौदनं भवेत्पथ्यं सिद्धार्थस्नेहलेपनम् ॥ २८९९ ॥
समुद्रफलभार्ङ्गीभ्यां श्लेष्मक्षयनिबर्हणम्।
घृतौदनं समरिचं पथ्यमभ्यङ्गकर्मणि ॥ २९०० ॥
शुण्ठीघृतविमिश्रं हि तक्रैः सप्ताहमाचरेत्।
भार्ङ्गीसिताऽनुपानेन पित्तश्लेष्मक्षयापहम् ॥२९०१॥
पथ्यं सक्षीरमरिचं घृतं गव्यं हितं भवेत्।
अभ्यङ्गे घृततैलं स्यात्पिप्पलीशर्कराऽन्वितम् ॥२९०२॥
वातपित्तक्षयं हन्ति भोजनं सघृतौदनम्।
भार्ङ्गीक्षुस्वरसै र्युक्तं श्लेष्मवातक्षयापहम् ॥ २९०३ ॥
शीतं घृतौदनं पथ्यमभ्यङ्गं तिलतैलतः।
निर्गुण्डीकाकमाचीभ्यां क्षयं हन्ति त्रिदोषजम्॥२९०४॥
शर्करापिप्पलीसर्पि मिश्रमन्नं हितं भवेत्।
दधिसर्पिर्युतं कुर्यादभ्यङ्गं सप्तधा परम् ॥ २९०५ ॥
रहस्यं कथितं सम्यग्रसेन्द्रो राजयक्ष्मणि।
मृगाङ्क इति विख्यातः प्राणिनां धातुपोषक॥२९०६॥

र. क. यो., राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुभमुहूर्तमें शुद्धपारा १ पल, सुवर्ण, रजत, कान्त-लोहभस्म और शुद्धगन्धक २-२ तोले, सुवर्णमाक्षिक और लोह-भस्म ४-४ तोले लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर एकरोज़ शुष्कमर्दनकर बाकुचीके स्वरस अथव क्वाथमें तीनरोज़ मर्दनकर सुखादे फिर कुमारीके स्वरसमें ७ दिन, भंगरेकेरससे ३ दिन, पानकेरससे ५ दिन, रेणुकाक्वाथसे ३ दिन, जायफलकेक्वाथसे १ दिन, आवला, बथुआ, लूणी और निर्गुण्डीकापञ्चाङ्ग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ५-५ दिन भावनाएं देकर गोलाबनायसुखाकर ४ तहकपड़ेमें लपेटकर ४-५ कपड़मिट्टी लगाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टी लगादे। सुखनेपर भूधरयन्त्रमें ५-५ सेरकण्डोंकी सात आंचेंदे। औषधको सम्पुटमेंसे न निकाले। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर गोरखमुण्डीके पञ्चाङ्गकेस्वरससे २, सोंठकेकाढ़ेसे ३, कूष्माण्डादिगण (कूष्माण्ड, कटुक, कालशाक, ककंटी, कर्कन्धु, कर्कोटक, कलिङ्ग, करमर्द, करीर, कतक, करोरु, काञ्जिक), विडङ्ग और शारिवाके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ भावनाएं देकर पूर्ववत् शरावसम्पुटान्त क्रियाकर सात आंचें दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर मछलीकापित्त, केंचुओंका स्वरस, मेंड कक्रापित्त, केंकड़ेका स्वरस, पाचोंपित्त, कुक्कुट और बकरेका रक्त इनप्रत्येककी १-१ भावनादेकर गोला बनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २-३ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर शरावसम्पुट में बन्दकर पूर्ववत् ५-५ सेर कण्डोंकी भूधरयन्त्रमें ७ आंचें दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पीसकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा घी, मलाई, मक्खन प्रभृति वातहरानुपान केसाथ वातक्षयमेंदे। घी और चावल पथ्यमें द, कटुतैलका अभ्यङ्गकरे। समुद्रफल और भारङ्गीकेसाथ श्लेष्मक्षयमेंदे। घी, चावल और मिर्च पथ्यमेंदे, सोंठ घी और छाछका ७ दिनतक अभ्यङ्ग करावे। भारङ्गी और शक्करकेसाथ पित्तश्लेष्मक्षयमेंदे, गायकाघी, दूध, और मरिच पथ्यमेंदे, घी, तैल और पीपलका अभ्यङ्गकरावे। पीपल और शक्करकेसाथ वातपित्तक्षयमेंदे, घी और चावल पथ्यमेंदे, भारङ्गी और ईखकेरसकेसाथ श्लेष्मवात क्षयमेंदे, ठंढे चावल और घी पथ्यमेंदे, तिलकेतैलसे अभ्यङ्ग करावे। संभालु और मकोयके रससे त्रिदोषक्षयमेंदेकर शक्कर, पीपलऔरघीमिश्रित अन्न पथ्यमेंदे। घीमिलेहुए दहीसे अभ्यङ्ग करावे। इसतरह तत्तद्रोगहरानुपान, पथ्य और अभ्यङ्गकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६३३ ॥

६३४ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (अष्टाविंशः)

स्याद्रसेन समं तीक्ष्णं तुत्थश्च द्विगुणं तयोः।
गन्धकं तैः समं प्रोक्तं रसपादश्च टङ्कणम् ॥ २९०७ ॥
शुक्तिकन्दरसैः पिष्ट्वा तत्सर्वं गुलिकीकृतम्।
भाण्डे लवणपूर्णे तत्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २९०८ ॥
मापकत्रितयेनाऽथ माहिषाऽऽज्येन संयुतम्।
दशमागधिकायुक्तं देयश्च मधुनाऽथवा ॥ २९०९ ॥
गुञ्जोन्मितं मरीचैश्च नागवल्लीदलान्वितम्।
मृगाङ्कनामयोगोऽयं राजयक्ष्मनिवर्तकः ॥ २९१० ॥

र. क. यो., राजयक्ष्मणि।

भाषा—पारा और लोहभस्म १-१ भाग, तुत्थभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ४ भा, सुहागा ¼ भाग लेकर सबका बारीक

चूर्णकर लहसनकेरसस १–२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेटकर ३–४ कपडमिट्टीदेवे । सुखनेपर शराव सम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रख चारपहरकी मध्यम अग्नि देव । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीभरमात्रा ३ मास भेसरे घीकेसाथ अथवा १० पीपल और मधुके साथ अथवा १० मरिच ओर पानकेरसकसाथ दनेस यह सवप्रकारके राज यक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

६३५ मृगाङ्करसः (राजय) (ऊर्नविंश)

नीलवज्राऽहिवैदूर्यं महानील प्रवालकम् ।
गोमेदं मौक्तिकञ्चैव माणिक्य पुष्परागकम् ॥२९८८॥
ताम्रं तीक्ष्णाऽभ्रकं किट्ट कान्तसिंहरहाटकम् ।
गन्धसूत विषं ताल समाश चित्रकद्रवे ॥ २९८९ ॥
तन्मूलिकारसे मर्द्य घालुकायन्त्रके पचेत् ।
दिनार्ध लवणैर्युक्तं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २९९३ ॥
वाराहीदङ्कणद्राक्षाकिंशुकैश्च सुभावित ।
मृगाङ्को योगराजोऽयं दृष्ट प्रत्ययकारक ॥
भक्षयेद्रक्तिकामात्र क्षयरोगादिनाशन ॥ २९९४ ॥

र क यो, राजयक्ष्माधिकारे ।

भाषा—नीलम, हीरेकीभस्म सपका नहरमोहरा (सर्पका नहरमोहरा न मिलनेपर चाहे जिसका डालदकहे) लसनिया कथेदर्जेकानीलम प्रवाल, गोमेद मोती, माणिक्य पुखराज, ताम्र फोलाद अभ्रक और मण्डूर इनसबकी भस्में कान्तलोह कीसालभस्म सुवर्णभस्म शुद्धगन्धक, पारा बछनाग और हरिताल सबसमभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी कोजलीकरखलीमें मिलाकर १–२ रोज मर्दनकर चित्रकमूलके क्वाथसे ७ रोजमर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपडेमें लपेट ३–४ कपड़मिट्टी देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर १–२ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर लवणयन्त्रमें दोपहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वाराहीकन्द, सुहागा दाख और ढाक इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती सहतदोगदरानुपानकेसाथ देनस क्षयप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

६३६ मृगाङ्करसः (राजय) (त्रिंश)

भागाऽष्टौ मारितात्सूतादेकोऽशो हेमभस्मत ।
एकोऽशो मृतताम्रस्य शिलागन्धश्च तालकम् ॥२९९५॥
प्रत्येकं भागयुग्मं स्याद्देतत्सर्वं विचूर्णयेत् ।
वराटी पूरयेत्तेन छागीक्षीरेण टङ्कणम् ॥ २९९६ ॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृद्भाण्डे ताश्च धारयेत् ।
मुद्रा पचेद्गजपुटे स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ॥ २९९७ ॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं चतुर्गुञ्जः क्षयापह ।
मरिचैस्सघृतैर्दद्यात् पिप्पलीभिस्तथा ॥ २९९८ ॥
मधुना सर्पिषा चाऽपि दद्यादेतं रसं भिषक् ।
अनेन नश्यति क्षिप्रं वातश्लेष्मभवः क्षयः ॥ २९९९ ॥

भा प्र र स, वृ यो त, र मु र र स, र र, वै र, भै र, ध, र क, चि सा, र चि, रसचि वा र म, र र दी नि र, शा स यो त र प्र सु, रसायनसार, र म मा, र च, र को रसायनम, चि र म, र प्र, नि र, र स क, यो र, र का यो म र क यो, वै चि, रस स, र क ल, टो, र पा, राजयक्ष्मणि ।

टि०—वै चि वा भयमृगाङ्कति नाम । कुत्रचिताम्रस्थाने तार नियोजितम् । रसामृत्या नाम टिप्पणिकायाम् 'गनभस्म त्रिभाग पुनर्णि भवमथा हमभैत कृदमिति पाठ नूतनतया मन्ये परन्तु ... मूलपाठेनैरसैर्निर्दिष्टत्वात् ... भस्मनश्च त्रिभागत्वं समाचर्तितत्वात् ... एकस्त्रत्र हेमभस्मानि पञ्चभाग हेमभस्मनि ... पञ्चभाग व प्रयुज्यतानम् परन्तु अत्र पथ्यरसेषुत्वैनाऽन्तैनदत्तम् । अस्य पाठस्य मूलन्तु उपरिनिर्दिष्ट पाठ एवाऽस्ति ... । रसराजनिरिधाना प्रयुक्तभिन्नस्त्वम यत् सवन पूर्ववर्णितान्नस्याभ रसस्य एकभागञ्च हेममस्मनश्च त्रिभागश्च मनसि सकल्पित प्रतिभाति । ... दशांशभागयुगलं ... प्रतिपादितम् तथा दर्शणीयम् । हमभस्मनो द्विगुणत्वं चीनस्तु न निश्चितमिति इति विद्व द्विर्विमावनीयम् । बाताबाश्लेष्मजित क्षयश्लेष्मलमहाश्वासपाण्डुप्रमेह ... शान्त्यस्मारोत प्रतिनिवृत्तिनी... इति पदस्या विशेषलिखा एव ॥

भाषा—पारदभस्म ८ भाग स्वर्णभस्म १ भा, ताम्रभस्म १ भा, शुद्धमनसिल, गन्धक और हरिताल २–२ भाग लेकर सबकोखरलकर पीलीकौडियोंमेंभरदे । फिर सुहागको बकरी के दूधमें पीसकर कौड़ियोंका मुखबन्दकर मिट्टीकेवर्तनमें भरे सम्पुटकर सुखाकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा १९ कालीमिर्च अथवा १० पीपल और मधु तथा घीकेसाथ देनेसे वातश्लेष्म प्रधानक्षय नष्टहोताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ मृगाङ्करसः (राजय) (एकत्रिंश)

हेमसूते द्रुमुताना गन्धस्य रविभस्मन ।
रजतस्य प्रवालस्य भागयुक् क्रमाद्भवत ॥ ३००० ॥
सर्वमेतत्तु सम्पिष्य वाराहीकन्दवारिणा ।
त्रिदिनं गोलकं कृत्वा मूषायां सन्निरोधयेत् ॥३००१॥
भाण्डे लवणपूर्णे तु पचेद्यामचतुष्टयम् ।
उद्धृत्य तस्मिन् शीते च स्वियमुद्रितं क्षिपेत् ३००२
निस्त्वं निहित यत्नमलाभे पाड्दशाशत ।
येनान्तमस्य क्षेत्रस्य राजे मधुगालायुतम् ॥ ३००३ ॥
क्षयं मात्र श्वासकासावर्तपित्तमरोचकम् ।
गुल्म ग्रहादर्द महं मसाद वातान् सवमलान् ३००४
एतन्सवामयान् हन्ति समूलं चाऽहसरोगहम् ।
दिव्यतेजाश्च कान्तिमायु प्रमायशाऽर्पयेत् ३००५

रसादर्श, राजयक्ष्मणि ।

टि०—... [illegible]

पूर्वस्मिन्स नास्ति पूर्वस्मिन्नस्तुल्य टङ्कणमस्ति अत्र तु तन्नाऽस्ति इति महान्विशेषोऽस्ति, वस्तुतस्तु पूर्वरसस्यैवाऽयमपभ्रंशोऽस्तीति गूढरहस्यम्।

भाषा—सुवर्ण, पारा, मोती इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म, रजत और प्रवालभस्म येसब नमवृद्धभागसे लेकर कज्जलीकर वाराहीकन्दके स्वरससे तीनदिनतक मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी कर सुखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिट्टीलगाकर सुखादे फिर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १०० नग शुद्धकुचिलेका चूर्ण और निस्त्य हीरेकीभस्म सोलहवां भाग मिलावे। हीरेके अभावमें वैकान्तभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती मधु और पीपलकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अम्लपित्त, अरुचि, गुल्म, प्लीहा, उदररोग, प्रमेह, समस्तवातविकार, कामला, शूल, पथरी इनसबको नष्टकर तेज, कान्ति, आयु, बुद्धि और यशको बढ़ाताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ मृगाङ्करसः (राजाद्य.) (द्वात्रिंशः)

रसभस्म त्रिभागं स्यात् षड्भागं हेमभस्मकम्।
मृततारञ्च भागैकं वज्रञ्चैव चतुर्गुणम् ॥ २९२६ ॥
गोमेदकं द्विगुणकं काश्मीरं सप्त मौक्तिकम्।
पद्मरागञ्च नीलञ्च राजावर्तं तथैव च ॥ २९२७ ॥
तार्क्ष्यं सुवर्णवैक्रान्तौ प्रवालं हेममाक्षिकम्।
वैदूर्यं पुष्परागञ्च नागवङ्गौ च तीक्ष्णकम् ॥२९२८॥
कान्तं गन्धं व्योमसत्त्वं पञ्चभागं पृथक्पृथक्।
शतपत्ररसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ २९२९ ॥
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य यन्त्रे विद्याधरे पचेत्।
कुङ्कुमाऽगुरुकस्तूरिमर्दितश्च पृथक्पृथक् ॥ २९३० ॥
ख्यातो राजमृगाङ्कोऽयं रोगराजं निवारयेत्।
पीनसं श्वासकासौ च पाण्डुकामलशीतलम्॥२९३१॥
शोफोदरार्शोग्रहणीवातपित्तहलीमकान्।
दीपनं वृष्यमायुष्यं श्रीकान्तिबलवर्धनम् ॥ २९३२ ॥
योजयेदनुकूलैश्चाऽथवाक्षौद्रकणान्वितम्।
वातघ्नैरेव तत्पीतं कान्तिशीतनिवारणम् ॥
भोजनं हेमपात्रे स्यादथवा कदलीदले ॥ २९३३ ॥

वै चि, र.क यो, बा, र पा, क्षये।

टि०—र.क यो. सुवर्णमृगाङ्क, बा महाक्षयमृगाङ्क इति नाम। रसपारिजाते एकभाग स्वर्णभस्म निर्दोषित नाम च नवरत्नराजमृगाङ्केति स्थापितम्।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, सुवर्णभस्म ६ भा, रजतभस्म १ भा., हीराभस्म ४ भा, गोमेदभस्म २ भा, केसर और मोती ७–७ भा, माणिक्य नीलम, लाजवर्द, पन्ना, कहरवा, वैक्रान्त, मूंगा, सुवर्णमाक्षिक, लसनियां, पुखराज, नाग, वङ्ग, फोलाद, कान्तलोह और अभ्रकसत्त्व इनसबकी भस्में तथा शुद्ध गन्धक ५–५ भाग लेकर सबकी कज्जलीकर कमलकेफूलोंके रससे तीनदिनमर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर केसर, अगर, कस्तूरी इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। विशेषतः पीनस, श्वास, कास, पाण्डु, कामला, शीतपित्त, सूजन, आठ उदररोग, बवासीर, सङ्ग्रहणी, वातपित्त, हलीमक, इनसबको नष्टकरताहै। पीपल और मधुकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, नपुंसकता, अल्पायु, श्री, कान्ति और बलके अभावको दूरकरताहै वातघ्न अनुपानोंकेसाथ देनेसे कान्ति और शीतको निरत करताहै। इसका सेवनकरनेवालेको सुवर्णपात्र अथवा केलेके पत्तेमें भोजन देना चाहिये ६३८

६३९ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (त्रयस्त्रिंशः)

मुक्तातारपविप्रवालशिलजं स्वर्णं निरुत्थं पुनः,
गन्धं पारदटङ्कणे विपयुते सम्मर्दयेदार्द्रकैः।
माच्या नागलतादलाद्यथवृषानीरेण गोलं पचे–,
द्यन्त्रे लावणिके दिनं रसवरः सिद्धो मृगाङ्काऽभिधः ॥
मान्द्ये चोपणसर्पिषा मधुकणा मेदःक्षये गुल्महृत्,
शुण्ठ्याऽजाजियुतोऽधिवल्ल-
मशितः सोऽयं त्रिदोषज्वरे।
देयो मोहतृषासु शोफजठरे चातुर्थिकादौ ज्वरे,
मेहप्लीहमरुद्गुदाऽङ्कुरगदे श्वासे च पाण्डौ क्षये २९३५
पाण्ड्येऽपस्मृतिपीनसे ज्वरुजां भूतेषु बालामये,
रोगानेकविधाऽनुपानवशतस्तत्सौख्यदोऽयं रसः।
आयुः पुष्टिबलप्रसादकरणो लावण्यकान्तिप्रदो–,
नित्याऽभ्यासवशादनन्तफलदो भूपैः सदा सेव्यताम् ॥

र.शं., राजयक्ष्मणि।

भाषा—मोती, रजत, हीरा, मूंगा, मैनसिल, सुवर्णइनकीभस्में, शुद्धगन्धक, पारा, सुहागा और बछनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरख, मकोय, पान और अडूसाके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर ऊपरसे २–३ कपड़मिट्टी देकर लवणयन्त्रमें एकदिनको मध्यम अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक औचिती देखकर मरिच और घीकेसाथदे। मधु और पीपलकेसाथ मेदोजनितक्षयमेंदे। सोंठ और जीरकेसाथ गुल्ममें दे। त्रिदोषजज्वर, मोह, प्यास, शोफ, उदररोग, चातुर्थिकादि विषमज्वर, प्रमेह, प्लीहा, वायु, बवासीर, श्वास, पाण्डु, धातुक्षय, नपुंसकता, अपस्मार, पीनस, साधारणज्वर, भूतबाधा, बालरोग, इत्यादि समस्तरोगोंको यह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे नष्टकरताहै। इसके रोजाना सेवनसे आयु, पुष्टि, बल, लावण्य और कान्ति बढ़तीहै ॥ ६३९ ॥

६४० मृगाङ्करसः (रामाद्यः) (चतुस्त्रिंशः)

सूतं गन्धं दरदकुनटी तालकं ताम्रभस्म,
स्वर्णं नागं गगनरसकं मौक्तिकं ताप्यवज्रम्।

पतत्सर्वं त्रिदिनमृदितं रक्तमालाद्रवेण,
गुञ्जा चैका हरति सकलान्रोगराजादिरोगान् ॥

र. शं, राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, शिंगरफ, मैनसिल और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण, नाग, अभ्रक, खपरिया, मोती, सोनामाखी और हीरा इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रतनजोतके स्वरससे तीनरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें बांधकर १–२ कपड़मिट्टी लगाकर सुखादे। फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें दोसेर कण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयप्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ मृगाङ्करसः (राजाद्य) (पञ्चत्रिंशः)

सूताऽहिवज्रकनकं गन्धमौक्तिकविद्रुमम्।
लोहताराऽर्कतापीजं शङ्खं चित्रकवारिणा ॥ २९३८ ॥
मर्दयित्वा विचूर्ण्याऽथ तेनाऽऽपूर्य वराटकान्।
टङ्कणेनाऽर्कपयसा लिम्पेत्तेषां मुखानि तु ॥ २९३९ ॥
चूर्णाक्तभाण्डनिहितान्मुद्रा गजपुटे पचेत्।
निर्गुण्ड्यार्द्राऽग्निपयसा भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥२९४०॥
रक्तिकाप्रमितं त्वेतत्पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम्।
घृतोषणकयुक्तो वा रोगराजं निकृन्तति ॥
सर्वरोगेषु वा दद्यादेवं राजमृगाङ्ककम् ॥ २९४१ ॥

र शं, र क यो, राजयक्ष्मणि।

भाषा—पारा, नाग, हीरा, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी, मूंगा, लोह, रजत, तांबा, सोनामाखी और शङ्ख इनकीभस्में सब समभाग लेकर कज्जली बनाय १–२ रोज़ चित्रकमूलके क्वाथसे मर्दनकर बड़ेकौड़ोंमें भरके आकके दूधमें पीसे हुए सुहागेसे इनका मुंह बन्दकर सुखाकर चूनापुतेहुए शरावोंमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी चढाकर सुखानेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर निर्गुण्डी, अदरख और चित्रक केरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा पीपल और मधु अथवा घी और मरिचकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४१ ॥

६४२ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (षट्त्रिंशः)

माणिक्यं नीलपुष्पञ्च लशुनं स्फटिकं बलिम्।
गोमेदकं मरकतं शुक्तिशङ्खकपर्दकम् ॥ २९४२ ॥
परिचेरं शङ्खनाभिं क्षुल्लकैकस्थाणकम्।
तुत्थकञ्च शिलां तालं रीतिकाधातुपञ्चकम् ॥२९४३॥
ताम्रमण्डूरकान्ताऽयस्तारं ताप्यं भुजङ्गमम्।
वङ्गं काञ्चनताप्यञ्च रसकस्य च सत्त्वकम् ॥ २९४४ ॥
अघोरसकरौप्यञ्च मुक्ता च विद्रुमन्ततः।
वैक्रान्तः सूतजं भस्म तुल्यं मापोत्तरं भवेत् ॥२९४५॥
हेम सर्वांशकं सर्वसमानं गगनं वरम्।
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेदातपे खरे ॥ २९४६ ॥
गव्यक्षीरेक्षुरजनीशाल्मलिद्वय मुस्तकम्।
शतावरीकुमार्यग्निवासापाठाफलत्रिकम् ॥ २९४७ ॥
तामलक्यमृता शृङ्गी भार्ङ्गी कर्टी कटुत्रिकम्।
विदारी कदलीकन्दं कसेरु मधुयष्टिका ॥ २९४८ ॥
काश्मर्यगोक्षुरं पद्मं जयन्ती भृङ्गराजकम्।
अगस्त्यो लाङ्गली तालमूली मुण्डी च जीरकम् ॥२९४९॥
पञ्चमूली मोचरसः पलाशार्द्रि बलाद्वयम्।
श्रीमूलं वटशृङ्गाणि पद्मकन्दञ्च पारकम् ॥ २९५० ॥
चातुर्जातशटीमांसीकुष्ठजातीफलोद्भवैः।
शतपत्रैः पृथक् सप्त हिमकुङ्कुमयोः क्रमात् ॥२९५१॥
कर्पूरमृगनाभिभ्यां रसराजोत्तमो भवेत्।
वल्लद्वयञ्चपलया सितया मधुसर्पिषा ॥ २९५२ ॥
मेहाऽर्शः क्षयगुल्मोष्णवातव्याध्युदराणि च।
ग्रहणीदीपकुष्ठानि पाण्डुशूलाऽम्लपित्तकम् ॥२९५३॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यञ्च रक्तपित्तं भगन्दरम्।
मोहाऽतिसारहिक्काश्च वातरक्तञ्च ज्वरान् ॥ २९५४ ॥
वलिं जरां स्थौल्यचैव रोगानन्यांश्चयेत्परम्।
अमितायु बलं पुष्टिं वीर्यवृद्धिं दृढां दृशम् ॥२९५५॥
स्त्रीपुंसपुत्रदश्चैव श्रियं प्रज्ञां स्मृतिं शुभाम्।
रसो राजमृगाङ्कोऽयं परं प्रोक्तं रसायनम् ॥ २९५६ ॥

र श, र. यो, राजयक्ष्मणि।

भाषा—माणिक्य, नीलम, पुखराज, लहसनिया, स्फटिकमणि, गोमेद, पन्ना, सीप, शङ्ख, पीलीकौड़ी, गोमतीचक्र, शङ्खनाभि, छोटे सराले इनसबकी भस्में और शुद्धगन्धक ४–४ माशे, शुद्धतूतिया १ मा, मैनसिल २ मा., हरिताल ३ मा., पीतलभस्म ४ मा., हीराभस्म ५ मा, तांबा ६ मा, मण्डूर ७ मा., कान्तलोह ८ मा, रूपामाखी ९ मा., नाग १० मा, वङ्ग ११ मा, सोनामाखी १२ मा, खर्परसत्व १३ मा, लोह १४ मा, खर्पर १५ मा, चांदी १६ मा, मोती १७ मा, मूंगा १८ मा, वैक्रान्त १९ मा, पारा २० मा, तुत्थ २१ माशे इनसबकी भस्में तथा सुवर्णभस्म सबसे चतुर्थांश और अभ्रकभस्म सबकी बराबर लेकर सबको एकदिन शुद्धमर्दनकर गोदुग्ध, ईखका रस, हल्दी, तगरपाटोला, नागरमोथा, मोथा, शतावर, घीकुआर, चित्रक अड़ूसा, पाठा, त्रिफला, भुंईआंवला अथवा इलायची, गिलोय, काकड़ासींगी, भारङ्गी, कुटकी, त्रिकुटा, विदारी, कदलीकन्द, कसेरू, मुलहठी, गम्भारी, गोखरू, लाल और सफेद कमल, जैन, भंगरा, अगस्त्य, करिहारी तालमूली, गोरखमुण्डी, जीरा, पञ्चमूली (मोरसेवा म०), मोचरस, पलाशकी अड़की दोनों खरैंटी, बेलगिरी, वटकेभूंगे, पद्मकन्द, मिलावां, चातुर्जात, कचूर, जटामांसी, कुठ, जायफल, गुलाब इनसबकेके स्वरस अथवा क्वाथोंसे और सफेदचन्दन, केशर, कपूर, कस्तूरी इनसबकेके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े।

इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतककीमात्रा औचिती देकर पीपल, शक्कर, मधु और घीकेसाथ देनेसे प्रमेह, बवासीर, क्षय, गुल्म, उष्णवात, उदररोग, सङ्ग्रहणी, कुष्ठ, पाण्डु, शूल, अम्लपित्त, कास, श्वास, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, भगन्दर, प्लीहा, अतिसार, हिचकी, वातरक्त, सबतरहकेव्रण, ज्वर, वलीपलित, बुढ़ापा इनसबको यह दूरकरताहै । हमेशा सेवनकरनेसे आयु, बल, पुष्टि, वीर्य, दृष्टि, कान्ति, बुद्धि, स्मृति येसब बढ़तेहैं ॥६४२॥

६४३ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (सप्तत्रिंशः)

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रं त्रपुससीसकम् ।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमवृद्ध्या कृतांशकम् ॥२९५७॥
व्योमसत्त्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशिकाम् ॥ २९५८ ॥
प्रद्राव्य लोहपात्रेऽथ पूर्वभस्मचयं क्षिपेत् ।
काष्ठेनाऽऽलोड्य तत्सर्वं सद्रवं हि समाहरेत् ॥२९५९॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तवारं विभावयेत् ।
आकुलीबीजसम्भूतस्याथलेहेन यत्नतः ॥ २९६० ॥
रुद्धं तन्मल्लमूषायां मन्दं संस्वेदयेच्छनैः ।
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पटगालितः ॥२९६१॥
कान्तपात्रस्थितो रात्रौ जलैस्त्रिफलसंयुतः ।
गुञ्जात्रयमितः प्रातर्दातव्यो मेहरोगिणाम् ॥ २९६२ ॥
मृगचारिमुनीन्द्रेण मेहव्यूहविनाशनः ।
निर्दिष्टोऽयं रसो राजमृगाङ्क इति कीर्तितः ॥ २९६३ ॥
दीपनः पाचनो वृष्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः ।
तापघ्नो रुचिकृत्सर्वरोगघ्नो योगसंवृतः ॥ २९६४ ॥

र र. स , र को , र. सु , प्रमेहे । र को सिंहशार्दूल इति नाम ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा , कान्तलोह ३ भा., ताम्र ४ भा , बङ्ग ५ भा., नाग ६ भा., इनसबकीभस्में, अभ्रकसत्वभस्म २१ भाग, शुद्धपारे और गन्धककीकज्जली ४२ भाग लेकर लोहके कड़छेमें कज्जलीको गलाकर पूर्वकी समस्तभस्मोंको डालकर काष्ठसे चलाकर एकजीवकरदे । इसको पर्पटी विधानसे उतारकर बारीक पीसकर अङ्कोलबीजोंके घनसे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर बारतह सफेदकपड़ेमें बांधकर १-२ कपड़मिट्टी करदे । सूखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टीकरके सुखाकर भूधरयन्त्रमें दोपहर मन्दाग्नि आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीकीमात्रा मधुमें मिलाकर कान्तलोहके पात्रमें रातभर रहनेदे । सुबहमें त्रिफलेके जलकेसाथ इसको देनेसे यह तमाम प्रमेहोंका नाशकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, नपुंसकता, ग्रहणी, पाण्डु, ज्वर, अरुचि इत्यादिरोगोंको नष्टकरताहै ६४३

६४४ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (अष्टत्रिंशः)

मृताऽभ्रांश हिरण्यतारकनिकान्ताऽयस्सुधागकान्,
शीतस्विद्रुमयष्टिरत्नमुमार्तण्डांस्समानान्हरेत् ।
एकीकृत्य सुगाढमेव खल्वके सम्मर्द्य तद्भावये,-
च्चातुर्जातविदारिगोक्षुरगुडूचीव्यालरम्भाजलैः ॥
कार्च्यैः सुरसाहशीतवृषकैः गोक्षीरतः सप्तधा,
भाव्यो भृङ्गशतावरीमुशलिकानीरैः कृतं गोलकम् ।
शुष्कं सम्पुटयोगतो लवणजे यन्त्रे पचेद्यामकं,
मन्दं मन्दमथोऽवतार्य सुहिमं सिद्धांस्ततः पूजयेत् ॥
कस्तूर्या स च भावितश्च रसराण्नाम्ना मृगाङ्को भवेत्,
सेव्यो वल्लमितः कणामधुयुतः सर्वान्निहन्याद्गदान् ।
यक्ष्माणं ग्रहणीं प्रमेहनिचयं शोफोदरं क्षीणतां,
अर्शोऽरोचकवातरोगनिवहाञ्जीर्णज्वरान्धातुगान् ॥
र. यो , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, रजत, सूर्यकान्त, फौलाद, बङ्ग, नाग, सीप, प्रवाल, हीरा, वैक्रान्त और ताम्र इनसबकी भस्में समभाग लेकर एकदिन खाली मर्दनकर चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर), विदारीकन्द, गोखरू, गिलोय, चित्रक, केलेकाकन्द, कचूर, तुलसी, सफेदचन्दन, अडूसा, गायकादूध, भंगरा, शतावर और मूसली इनद्रव्योंके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाए देकर गोला बनाय सुखाकर बारतह कपड़ेमें लपेट २-३ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर एकपहर लवणयन्त्रमें मन्द आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सिद्ध और साधुओंका पूजनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा १० पीपल और मधुके साथ देनेसे राजयक्ष्म, सङ्ग्रहणी, प्रमेह, सूजन, उदररोग, क्षीणता, अर्श, अरुचि, वातरोग, जीर्णज्वर, धातुगतज्वर, इन सबको यह नष्टकरताहै । इसके अतिरिक्त तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ मृगाङ्करसः (राजाद्य.) (ऊनचत्वारिंश)

कर्षैकमानौ रसगन्धकौ हि
स्याद्धेमभस्मप्रभवः पिचुश्च ।
शुद्धस्य वङ्गस्य पिचुश्च तद्व-
त्तथा च मुक्तां द्विपिचुप्रमाणाम् ॥ २९६८ ॥
पादांशतष्टङ्कणकं प्रदद्या-
त्सर्वं विमर्द्याऽथ महाऽम्लयेत्तम् ।
तद्भावयेद्वै यवकाम्भसेन
प्रमर्द्य सर्वं दिनसप्तकेन ॥ २९६९ ॥
गोलं विधायाऽर्ककरैर्विशोष्य
मूषागतं तं खलु पाचयेद्धि ।
शीतं समुद्धृत्य तदा रसेन्द्रो
विचूर्ण्य धार्यो वरहेमपात्रे ॥
हेमस्त्वभावे रजतस्य पात्रे
नाऽन्यस्य पात्रेषु निधेयमीयः ॥ २९७० ॥
अयं राजमृगाङ्कोऽऽख्यो रोगराजस्य घातकः ।
पथ्यं पूर्वानिविधिना कारयेन्मतिमान्भिषक् ॥२९७१॥
र प्र सु , रस में र. क यो , राजयक्ष्मणि ।

टि०—रसप्रसादपरः वहन्यन्ते स्वर्णं निर्दिशन्ति, मन्दतया मस्तीरसाय गृहीतम् । अग्निजेव पदे यन्तिरम्यचधिकतया प्रयुक्त न भवति हानिर्गुणवृद्धिश्च भवितव्या इति भाव । एतन्योगरस ते बहुगदरियो दुर्वारव्यमात्रेणैव येन प्रशमनन्ति, तस्मान्मृगाङ्कोऽन्वर्थाभिधानम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण और वज्रभस्म १-१ कर्ष, मुक्ताशिष्टी २ कर्ष, सुहागा १ टङ्क, लेकर सबकी नीलवर्ण कमलीदल बिजोरे अथवा जम्भीरीकेरस और याकी काञ्जीमें ७-७ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारकर छरैमें लपेट २-२ कपड़मिट्टी देकर सुखावे । फिर इसका सम्पुटमें बन्दकर लवण अथवा भूधरयन्त्रमें एकदिनकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर बारीक पीसकर सुवर्णकी डिब्बीमें रक्खे । सुवर्ण न हो तो चांदीके पात्रमें रक्खे अन्यमें नहीं । इसमेंसे १-१ रत्तीमात्रा २९ मरिच और पीपलसाथ सुवर्ण अथवा चांदीकेपात्रमें सेवनकरनेसे श्वास, कास, क्षय, पाण्डु, शिरार, मन्दाग्नि, गुल्मादि प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

६४६ मृगाङ्करसः (राजाधः, चन्द्रप्रभ)४२

त्रयो विभागा मृतपारदस्या-

स्त्वेको विभागो मृतहाटकस्य ।

एको विभागो मृतताररक्षा-

स्त्वेको विभागो सुमृताऽभ्रकस्य ॥ २०,७२ ॥

अर्द्धो विभागो मृततुत्थकस्या-

प्यर्द्धो विभागो मृतवङ्गकस्य ।

अर्द्धो विभागो मृतनागराजो-

त्वेको विभागः शुचिप्रवकस्य॥ २०,७३॥

भागद्वयं शोधितमौक्तिकाना-

मैकोऽर्द्धभागः शुचिटङ्कणस्य ।

चतुर्विभागाः शुचिगन्धकस्य

भागद्वयं स्याच्छुनटीशुचूर्णम् ॥ २०,७४ ॥

भागद्वयं ताम्रकभस्मनः स्या-

त्सर्वस्य चूर्णञ्च विधेयमेव ।

सुनालिकेरस्य रसस्य सिक्त

स्निग्धास ताम्बूलरसस्य यत्न ॥ २०,७५ ॥

स्वरसेन रसस्य मद्द-

मर्द्धाम्बुपूरस्य रसस्य यत्न ।

विमर्द्य चूर्णं सुरसञ्च कृत्वा

विपेत्ततः सुन्दरकाचकूप्याम् ॥ २०,७६ ॥

दृढा मृदं कर्पटकेन यत्न

विलेपिता सालुकपत्रमध्ये ।

सुवह्निना वालुकयन्त्रमध्ये

दिनानि चाऽष्टौ किल मन्दमन्दम् ॥ २०,७७ ॥

एवं प्रकर्तव्य भवेत् सिद्धः

सुराधिपो गर्भमृगाङ्कराजः ।

उद्धृत्य पश्चाच्च किल दीपनस्य

विपेत्ततः सुन्दरहेमपात्रे ॥ २०,७८ ॥

१०

गुञ्जाचतुष्टयमितो मरिचाऽऽज्ययुक्तो,

युक्तोऽथवा मधुकणैः किल खादयेत् पथ्यम् ।

छागं पयो दधि घृतं लघु भोज्यमेव,

चन्द्रप्रभोऽयमुदितो क्षयरोगनाशः॥२०,७९॥

१.सु .र.सं ,र (मा.), रसचन्द्रिका ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, सुवर्ण, चांदी और अभ्रकभस्म १-१ भा., ताम्र, वङ्ग और नागभस्म आधा ½ भाग, हीरकभस्म ½ भा , शुद्धमोती २ भा., शुद्धसुहागा ½ भा., शुद्धगन्धक ४ भा , शुद्धमैनशिल और सोनामाखी २-२ भा , लेकर सबको कपड़छनकर नारियलकेजल और पानके १-१, भृङ्गरा और बिजोरेके स्वरसमें ७-७ भावना देकर सुखाकर चूर्ण बनाय १-७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुखमें डाटलगाकर १-४ कपड़मिट्टी करके आठदिनकी मृदु आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सुवर्णके पात्रमें रखलेवे । इसमेंसे ४-४ रत्तीमात्रा मरिच और घी अथवा मधु और पीपल केसाथ देनेसे यह राजयक्ष्माको दूरकरताहै । पथ्यमें बकरीका दूध, दही, घृत और लघुभोजन देवे ॥ १४९ ॥

६४७ मृगाङ्करसः (हेमाद्यः) (निघण्टाविद्याः)

रसभस्म स्वर्णभस्म पृथक्‌निष्कं प्रकल्पयेत् ।

शाङ्गन्धकमुक्तानां द्वौ द्वौ निष्कौ च चूर्णितम् ॥२० ८०॥

मुक्तासर्दं सुवर्णसं रसरावञ्च टङ्कणम् ।

पक्वरम्भाकषायेन मर्द्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ २०,८१ ॥

तद्गोलं चिक्कणाऽस्य भाण्डे लवणपूरिते ।

पचेद्यामचतुष्कञ्च मृगाङ्कोऽयं रसोत्तमः ॥

राजरोगनिवृत्त्यर्थं चतुर्गुञ्जामितो भवेत् ॥ २०,८२ ॥

१ र यो., रसचन्द्रिका ।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म १-१ भाग, गन्धक, मोती और सोंठी २-२ भाग, सैंधवनमक आधाभाग, सुहागा ½ भाग लेकर सबको कच्चीकेलेके रसमें अथवा काञ्जी संयोगकर मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर कपड़ेमें लपेटकर २-३ कपड़मिट्टी करके । सुखाकर लवणयन्त्रमें बन्दकर आठपहरकी मन्द आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखलेवे । इसमेंसे ४-४ रत्तीमात्रा पीपलसाथ देनेसे यह राजयक्ष्माको नष्टकरताहै ॥ १५० ॥

६४८ मृतकजीवनरसः

गन्धकारविषमगन्धकमर्दं मारितं गन्धकमेव मिश्रयेत् ।

कनकसारसम भागमेव शिलाजत्वात पारदं मृतसुवर्णकम्

गन्धकादि हरितालः स्यात्-

कल्पयत्पादि विमलिकं क्रमात् ।

तामिस्रनाम मन्दघृतेन

नं दापयेत् सूत ईश्वरसं मन ॥ २०,८४ ॥

वत्सनाभमपि विधिविधिना पारदेश्वरं मर्दयेच्चतुर्

भृङ्गराजेन किल हेमारितया वह्निरोहणादेव सुवर्ण ।

चूर्णयेत्तदनु हेमपत्रिकां सूतभस्म विषगन्धमौक्तिकम्।
चुद्धितश्च परिमर्दयेत्ततश्चित्रकाऽऽर्द्रकरसेन यत्नतः॥
पूर्णचन्द्रवदयं विपाचितो जायते मृतकजीवनो रसः।
पूर्णचन्द्रवदयश्च योजितो रोगहा भवति वीर्यपुष्टिदः॥

र.दी., र., सर्वरोगे।

टि०—अस्य पाठस्याऽऽशयमवुद्ध्वा रसाऽर्णवोरे स्वकपोलकल्पनयाऽन्य. पाठो ग्रथितस्स सुहृद्भिरनादेय इति रहस्यम्।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, कौड़ी और नागभस्म, सब समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकके काथसे १–२ रोज़ मर्दनकर कल्क बनाकर चारभागकरे। एकभागको शरावमें बिछाकर ऊपरसे कल्कके बराबरवज़नका सुवर्णका बारीक पत्र रख दूसरे शरावसम्पुटसे बन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर किसी ठीकरेमें रखदे। ऊपरसे चारअङ्गुल ताज़ी राखको जमाय एक पहरकी साधारण आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरेसे मुद्रा उघाड़कर कल्कका दूसराभाग पूर्ववत् जमाकर दूसरी आंचदे। ऐसेही तीसरी और चौथी आंचदे। ऐसाकरनेसे सुवर्णपत्रकी भस्म होजायगी और शरावमें सफेदकणोंकी पारदभस्म मिलेगी उसे खुरचकर अलग रखले फिर सुवर्णभस्म १ भा, पारदभस्म २ भा., शुद्धबछनाग ३ भा, शुद्धगन्धक ४ भा, मौक्तिकपिष्टी ५ भाग लेकर चित्रकके रससे १–२ रोज मर्दनकर पूर्णचन्द्ररसकी तरह पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसको पूर्णचन्द्ररसकी तरह देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वीर्यकी पुष्टिकरताहै॥ ६४८॥

६४९ मृतकन्दर्पजीवनरसः

रसभस्माऽभ्रकं वङ्गं तीक्ष्णं कस्तूरिकाञ्चनम्।
आकल्लकं लवङ्गञ्च दरदं जातिपत्रिका॥ २९८८॥
जातीफलं धूर्तबीजं सममेकत्र मर्दयेत्।
ताम्बूलीस्वरसेनैव तथाऽऽर्द्रकरसेन वै॥ २९८९॥
वल्लकप्रमिता मात्रा लेहयेन्मधुसर्पिषा।
शृतशीतं पयः पीत्वा ताम्बूलं भक्षयेत्सुधीः॥२९९०॥
मासमात्रप्रयोगेण मृतकन्दर्पजीवनम्।
रमेद्रामाशतं नित्यं कामतुल्यो नरो भवेत्॥ २९९१॥
सतताऽभ्यासयोगेन वृद्धोऽपि तरुणायते।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितवर्जितः॥ २९९२॥
सर्वान् रोगान्निहन्त्याशु नाऽत्र कार्या विचारणा।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत्॥
स्निग्धाऽन्नं भोजयेन्नित्यं तैलाऽम्लं वर्जयेत्सुधीः॥

र. चं., वाजीकरणे।

भाषा—पारा, अभ्रक, वङ्ग और फोलादभस्म, कस्तूरी, सुवर्णभस्म, अकलकरा, लौंग, शिंगरिफभस्म अथवा विशेषशुद्धियुक्त, जावित्री, जायफल, शुद्धधतूरेकेबीज सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पान तथा अदरखकेरसमें १–१ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथलेकर अधौटा दूध पीकर ताम्बूलभक्षणकरे। इसतरह एकमहीनेके प्रयोगसे नामर्दभी मर्दहोकर अनेक स्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेकी शक्तियुक्त होजाताहै। इसके निरन्तर अभ्यासकरनेसे बुड्ढाभी वलीपलितसे निर्मुक्त तथा सबरोगोंसे रहितहोकर १०० वर्षतकजीताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै। इसमें स्निग्धअन्नका भोजन और तैल खटाईसे परहेज़ करे॥ ६४९॥

६५० मृतकजीवनी गुटिका

पारदं सारलौहञ्च कान्तलोहसमन्वितम्।
माक्षिकस्याऽपि सत्वञ्च सत्त्वं गगनसम्भवम् २९९४
एतानि समभागानि मर्दयेच्च प्रयत्नतः।
निचुलोद्भवतोयेन गोलकं कारयेत्ततः॥ २९९५॥
नवाङ्गुलप्रमाणे च मूषागर्भेऽथ तं न्यसेत्।
निर्गुण्डीं काकमाचीञ्च गोजिह्वां दुग्धिकान्तथा॥
गृहकन्यांमधूकञ्च सैन्धवञ्चोपरि न्यसेत्।
स्वेदयेत्पुटयोगेन सा पिण्डी दृढतां भजेत्॥
स्थापिता मुखमध्ये तु वीर्यस्थैर्यकरी भवेत्॥२९९७॥

र. र., ध., वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा, फोलाद, कान्तलोह, माक्षिक और अभ्रकसत्व येसब शुद्ध और समभाग लेकर जलवेतसेरससे मर्दनकर गोलाबनाय ९ अङ्गुल प्रमाणकी मूषामें इसे रख निर्गुण्डी, मकोय, बनगोभी, दूधी, घीकुंआर, महुआ, सैन्धव, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर टिकियाके ऊपर रख मूषाका सम्पुट बनाकर भूधरयन्त्रमें वालुकासे दबाकर कुक्कुटपुटसे स्वेदनकरनेसे वह गोली दृढ होजायगी। इसे मुंहमेंरखनेसे वीर्य स्थिरहोताहै॥

६५१ मृतप्राणदायीरसः

रसं गन्धकं टङ्कणं वत्सनाभं
समं मर्दयेद्धूर्तबीजेन यामम्।
ततो वत्सनाभेन हैमेन बीजे
रसे भावयेच्च त्रिवारं त्रिवारम्॥ २९९८॥
कटुत्र्यादिजैः पञ्चवारं ततः स्या-
दयं सूतराजो मृतप्राणदायी।
ज्वरे सन्निपाते ज्वरे नूतने वा
महाश्लेष्मरोगे च गुञ्जाप्रमाणम्॥ २९९९॥
पयः पायसं दाधिकं तक्रभक्तं
सिता वा नवे हि ज्वरे चाऽऽर्द्रनीरैः।
ज्वरे चाऽतिसारे घनद्रावयुक्तं
ग्रहण्यर्शसां क्षौद्रयुक्तं सिताऽऽढ्यम् ३०००
चले वायुगे त्रिकटुभिर्युतं
प्रकम्पेऽपबाहुक पक्षाहृताते।
अपस्मारमुन्मादवातं निहन्ति
प्रयुक्तः सितापञ्चभि धूर्तबीजैः॥ ३००१॥

चि. सा, नि र., रसायनस, र. र. दी, र. यो., टी. (मृतसञ्जीवनी), रसायनसं., र. चं, वै. चि, र. पा, एषु ग्रन्थेष्विति

नाम तत्र त्रिवारं त्रिवारमित्यस्य स्थाने दन्तिवारा त्रिवारमिति पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बच्छनाग समभाग, धतूरेकेबीज सबकीबराबर, सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर बच्छनाग, और धतूरेकेबीज इनकेरसोंसे ३-३ रोज़ मर्दनकर त्रिकटुके रससे ५ दिनतक मर्दन करनेसे यहरस (मृतप्राणदायी) तैयार-होताहै। इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानसे लेनेमे ज्वर, सन्नि-पात, नवीनज्वर, महाश्लेष्मरोग येसब नष्टहोतेहैं। दूध, खीर, घृतोकेपदार्थ, छाछ, चावल, शक्कर येसबपथ्यमेंदे। नवीनज्वरमें अदरखकेरससे, ज्वर और अतिसारमें नागरमोथेकेक्वाडेसे, ग्रहणी और बवासीरमें मधु तथा शक्करकेसाथदे। वातज्वरमें त्रिकटु और चित्रककेसाथ, प्रकम्प, अपतानक, एकाङ्गवात, अप स्मार, उन्माद इनमें शक्कर और ५ नग धतूरेकेबीजोंकेसाथदेनेसे इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६५१ ॥

६५२ मृतसञ्जीवनरसः (प्रथमः)

गरलाऽमृतसौभाग्यशिलातापीजतालकम् ।
नतेशाजातिपत्राणि गन्धहिङ्गुलमागधीः ॥ ३००२ ॥
ऋक्षाऽजकिरिचूडालशिखिमत्स्योत्थमायुभिः ।
भावयित्वा वटीः कुर्याल्लघुसर्षपसन्निभाः ॥ ३००३ ॥
नागवल्लीदलद्रावैस्तुलसीपत्रसम्भवैः ।
शृङ्गवेररसे वाऽपि सन्निपाते प्रदापयेत् ॥ ३००४ ॥
श्वासाद्युपद्रवाऽऽविष्टे गतसञ्ज्ञेऽल्पचेतने ।
मृतसञ्जीवनः सोऽयं सञ्जीवयति मानवम् ॥ ३००५ ॥

वृ क., सन्निपाते ।

भाषा—कालेसांपकाजहर, शुद्धबच्छनाग, सुहागा, मैनसिल सोनामाखी, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, तगर, पारद भस्म अथवा रससिन्दूर, जावित्री, शुद्धगन्धक और शिंगरिफ, पीपल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रीछ, बकरा, सुअर, मुर्गा, मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देकर छोटे सरसोंके बराबर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली पान, तुलसी और अदरख इनमेंसे किसी-एकके रससे देनेसे श्वासादि उपद्रवयुक्त होकर सञ्ज्ञानष्टहोगईहो और यत्किञ्चित् प्राणवायु बाकी रहगयाहो इसतरहके सन्निपातको नष्टकर मनुष्यको फिरसे जीवनदेताहै ॥ ६५२ ॥

६५३ मृतसञ्जीवनरसः (द्वितीयः)

गन्धकं गगनं तालं माक्षिकञ्च मनःशिला ।
पारदश्चाऽश्वगन्धा च नेपालं टङ्कणं तथा ॥ ३००६ ॥
मुषली रोहिणी चैव कटुकाऽलाबुबीजकम् ।
मरिचं मागधी चैव मधूकस्य च बीजकम् ॥ ३००७ ॥
वङ्गताम्रविभीतञ्च हरिद्रा धत्तूरफलम् ।
पञ्चक्षारयुतं चैव समभागानि योजयेत् ॥ ३००८ ॥
खल्वोदरे विनिःक्षिप्य कारवल्लीरसद्रवैः ।
निम्बजम्बीरधत्तूरमातुलुङ्गरसेन च ॥ ३००९ ॥
कटुकाऽर्करसैश्चिञ्चाताम्बूलोत्थैं रसैर्मुहुः ।
वह्निना सैन्धुवारैश्च रसे धीमान् विमर्दयेत् ॥ ३०१० ॥
श्लक्ष्णभाण्डे विनिःक्षिप्य वालुकाग्नौ विपाचयेत् ।
बलिमन्त्रविधानैश्च ग्राहयेत्स्वाङ्गशीतलम् ॥ ३०११ ॥
करण्डशीशके स्थाप्यं रक्षयेन्मृत्युमृत्युदम् ।
कालसंहरणं नाम पूजयेदीश्वरं शिवम् ॥ ३०१२ ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं भैरवोदितः ॥ ३०१३ ॥
प्रलयानिलसंहारे यथा मेघाऽनिलेन च ।
तथैव सन्निपातश्च नष्टो भवति तत्क्षणात् ॥ ३०१४ ॥
मृतवत्काष्ठतुल्योऽपि बोध्यते शीघ्रमद्भुतम् ।
प्राणानेव प्रसुप्तेभ्यः पुनरावर्तयेद्ध्रुवम् ॥ ३०१५ ॥
विषोपविषसङ्घातैरभिन्यासादिदोषकैः ।
उन्मादभ्रान्तिसम्भूते मूर्च्छातेस्य प्रयोजयेत् ॥ ३०१६ ॥
कासे श्वासे महाशूले पक्षाघाते जलोदरे ।
अनुपानविशेषैश्च सर्वान्नाशयति क्षणात् ॥ ३०१७ ॥

र.क.यो. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, अभ्रक, हरिताल और सोनामाखी-कीभस्म, शुद्ध मैनसिल और पारा, असगन्ध, जमालगोटा, भुनासुहागा, मूसलीयच, रोहण, कुटकी, कड्वीतूम्बीकेबीज मरिच, पीपल, महुआकेबीज, बङ्ग और ताम्रभस्म, बहडा और हरेंकीछाल धतूरेकेडोडा, यव, तिल, पलाश, अपामार्ग, सेहुण्ड इन-पांचोंकेक्षार, येसब चीजें समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर करेला, नीम, जम्भीरी, धतूरा, बिजोरा, कुटकी, आक, इमली, पान, चित्रक, संभालू इनप्रत्येकके रसोंकी ३-३ भावनाएं देकर ६-७ कपडमिट्टी-दीहुई आतशीशीशीमें भर मुहबन्दकर बालुकायन्त्रमें रखकर ४ पहरकी क्रमाग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर भैरवको बलि देकर निकालकर कांचकी शीशीमें रखछोडे। शिवजीका पूजनकर इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा अदरखके रसकेसाथ देनेसे सन्नि-पात तत्क्षण नष्टहोताहै। जो सन्निपाती मुर्देकीतरह निश्चेष्ट और अकडकर काष्ठकीतरहहोगयाहो वहभी इसके देनेसे शीघ्र सञ्ज्ञाको प्राप्तहोजाताहै। विष, उपविष अथवा अभिन्यास, उन्माद, भ्रान्ति प्रभृतिसे मूर्च्छितको देनेसे सोएहुओंकी तरह फिरसे सञ्ज्ञाको प्राप्तकराताहै। अनुपानविशेषसे काम, श्वास, महाशूल, पक्षाघात, जलोदरप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ६५३

६५४ मृतसञ्जीवनरसः (तृतीयः)

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो नैपालस्य त्रयो मताः ।
द्वौ भागौ टङ्कणस्यैव भागैकममृतस्य च ॥ ३०१८ ॥
तन्मयं मर्दयेच्चूर्णं शुष्कं यामं भिषग्वरः ।
शृङ्गबेराऽम्बुना देयो मोचचित्रकपञ्चधा ॥ ३०१९ ॥
गुञ्जाद्वयमितस्तापं हरत्येव विनिश्चयः ।
घनसारेण मारिच चन्दनेन विलेपनम् ॥ ३०२० ॥

विदध्यात्कांस्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं भिषक्।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिक्षुसंयुतम् ॥ ३०२१ ॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे।
आमवाते वातशूले गुल्मे प्लीह्नि जलोदरे ॥ ३०२२ ॥
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सततज्वरे।
अग्निमान्द्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः।
मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातश्च रसायने ॥ ३०२३ ॥

र सं, वै क, नि. र, र. चं, रसायनसं, र. सु., भै र., र.म, व.रा., र.(मा.), टो., र.का., यो. म., ना वि., रसायनप., ज्वराऽधिकारे।

टि०—अत्र म्लेच्छशब्देन केश्चित्ताम्रं गृहीतं केश्चिच्च हिङ्गुलं गृहीतं।

भाषा—ताम्रभस्म ४ भाग, शुद्धजमालगोटा ३ भा, भुनासुहागा २ भा., शुद्धबच्छनाग १ भाग लेकर सबको एकपहर तक इकट्ठे मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा अदरखके रसमें त्रिकटु, चित्रक और सेन्धवका चूर्ण डालकर लेनेसे यह ज्वरको तत्क्षण नष्टकरताहै। सन्निपाती मृतप्राय होगयाहोतो एक अथवा दोमाशेकी मात्रा देना। दाहमालूम-होनेपर सफेदचन्दन, कपूर और मक्खनका लेपकरना, कांसेकी कटोरीसे हाथपैरोंको घिसवाना, सिरपर ठंढेजलकी धारा देना। भूख लगनेपर पुरानेचावलोंकाभात छाछकेसाथ देना। प्यास लगनेपर ईखकारसप्रभृति शीतद्रवदेना। महाघोरसन्निपात, त्रिदोषोत्थरोग, विषमज्वर, आमवात, वातशूल, गुल्म, प्लीहा, जलोदर, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व विषमज्वर, सततज्वर, मन्दाग्नि, असाध्य वातरोग इनसवमें इसरसका प्रयोग संभालकर करना ६५४

६५५ मृतसञ्जीवनरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत्।
सर्वतुल्यं मृतञ्चाऽभ्रं मर्द्यं धुस्तूरजै द्रवैः ॥ ३०२४ ॥
सर्पाक्ष्याश्च द्रवे यामं कषायेणाऽथ भावयेत्।
धातक्यतिविषा मुस्तं शुण्ठीजीरकवालकम् ३०२५
यमानी धान्यकं बिल्वं पाठा पथ्या कणान्विता।
कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं दाडिमं बलाम् ॥३०२६॥
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्कुट्टितं क्वाथयेज्जलैः।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादाऽवशेषितम् ॥ ३०२७ ॥
अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम्।
रुद्धा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ३०२८ ॥
मृतसञ्जीवनो नाम चाऽस्य गुञ्जाचतुष्टयम्।
दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ३०२९ ॥
षट्प्रकारमतीसारं साध्याऽसाध्यं जयेद्ध्रुवम्।
नागराऽतिविषामुस्तं देवदारुकणा वचा ॥ ३०३० ॥
यमानी बालकं धान्यं कुटजत्वग्घरीतकी।
धातकीन्द्रयवौ बिल्वं पाठा मोचरसं समम् ॥
चूर्णितं मधुना लेहमनुपानं सुखावहम् ॥ ३०३१ ॥

र.सं., र. चि .र.र, १ यो.त ,नि.र , रसायनसं., यो.र., र को., टो ,र.र दी., र.क., चि. र , चि. र. भ , र. का , यो. म., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला, शुद्धबच्छनाग ३ माशे, अभ्रकभस्म सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर धतूरा और गन्धाहूलीके स्वरससे १–१ पहर मर्दनकर धावड़ी, अतीस मोथा, सोंठ, जीरा, सुगन्धवाला, अजवाइन, धनिया, बेलगिरी, पाठा, हर्रे, पीपल, कुटजकीछाल और बीज, कैथ, अनार, बला येसब १–१ कर्ष लेकर अधकुटकर चौगुने पानीमें डालकर चतुर्थांशावशेष क्वाथकर छानकर रक्खे, इससे तीनदिन-तक मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें द्रुतहोनेतक पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ४–४ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे ६ प्रकारके साध्य अथवा असाध्य अतिसारोंको यह नष्टकरताहै। सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, वच, अजवाइन, सुगन्धवाला, धनिया, कुड़ैयाकीछाल, हर्रे, धावड़ी, इन्द्रजव, बेलगिरी, पाठा, मोचरस सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर ६ माशे मधुकेसाथ ऊपरसे चटानाचाहिये ॥ ६५५ ॥

६५६ मृतसञ्जीवनरसः (विसूचीविध्वंसः) (पञ्चम)

टङ्कणं माक्षिकं शुण्ठी पारदं गन्धकं विषम्।
गरलं समभागेन सर्षपा हिङ्गुलं समम् ॥ ३०३२ ॥
मर्दयेज्जम्भजै द्रावै वटी कार्या प्रयत्नतः।
श्वेतसर्षपतुल्या च मृतसञ्जीवनो रसः ॥ ३०३३ ॥
विसूचीं नाशयत्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
त्रिदोषोत्थमतीसारं हन्त्युपद्रवसंयुतम् ॥ ३०३४ ॥

भै.र.,र सु , विसूच्यधिकारे।

भाषा—भुनासुहागा, सोनामाखी, सोंठ, शुद्ध पारा, गन्धक, और बच्छनाग, सर्पका ज़हर येसब समभाग, शुद्ध हिंगुल, सबकीबराबर लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जंभीरीके रसमें मर्दनकर सफेदसरसोंकीबराबर गोलियाबनाकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे हैज़ा, उपद्रवसहित त्रिदोषातिसारको यह नष्टकरताहै भूखलगनेपर पथ्य दहीभात देना ६५६

६५७ मृतसञ्जीवनरसः (षष्ठः)

रसनागौ समभागौ सम्मर्द्य समेन शिलाजतुना।
निक्षिप्य पञ्चमूत्रे जारयेत्स्वेदयेत्पुटत्रय्या ॥ ३०३५ ॥
एकत्र तच्च सर्वं मृद्वीयाज्जाङ्गलाऽम्भसा त्रिदिनं।
पश्चात्सामान्यपुटं दग्ध्वा बहु भावयेच्च क्रमात्॥
कन्याभृङ्गमयूरकमागधिकानागरं विडङ्गैश्च।
मधुकापलाशबीजं वाजिभजलाङ्गलमुशलिकाद्रैः।
स हि सर्वसन्निपाते लकुचाम्भसा सैन्धवं देयं।
वल्लत्रयमात्रोऽसौ दिनत्रयेणैव निर्जयेद्रोगम् ॥ ३०३८
तत्तत्स्यादनुपानं चतुरोऽशीतिञ्च निर्जयेद्वायून्।
अष्टज्वरान्निहन्यात्सर्वाण्यपि हरति गुल्मजातानि।

त्रिफलाक्वाथेन युतो विष्टम्भं कामलां पुनर्नवया ।
गोपयसा विष्टम्भं शूलञ्चैरण्डजं जयति ॥ ३०४० ॥
स्वेदं चित्रकरसतः फटुकार्द्रातयाऽश्मपमेहरुजः ।
कफवातक्रिमिदोषं हरति कुमारीरसेन रसराजः॥३०४१

र.मृ.,वातरोगे ।

भाषा—पारा और नागभस्म समभाग, दोनोंकीबराबर शिलाजीत मिलाकर पञ्चमूत्र (गाय, भैंस, बकरी, बकरी और भेड़कामूत्र) से मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत मूत्रडालकर मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरपुटमें स्वेदनकरे । ऐसे तीनपुटदेकर जङ्गली जानवरोंके मूतसे तीनरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटमें आंचदे । तीनआंचें देनेकेबाद नीचेलिखे अगदोंकीभावनाएं दे । यथा—घीकुंआर, भंगरा, अपामार्ग, पीपल और सोंठ (१) विडङ्ग, मुलहठी, काकवेबीज (२) अजगन्ध, कलिहारी, मुशली (३) इनकी क्रमसे १–१ भावना देनेके बाद ९–९ रत्ती बड़हलकेजल और सेंधेनमकके साथ देनेसे तीनरोज़केभीतर रोगोंको दूरकरताहै । वातघ्न अनुपानकेसाथ देनेसे ८४ प्रकारके वातरोगोंको दूरकरताहै । त्रिफलाकेक्वाथके साथदेनेसे आठप्रकारके ज्वर, गुल्मसमूह और विष्टम्भप्रभृतिको नष्टकरताहै । पुनर्नवाकेसाथ कामलाको, गायकेदूधसे विष्टम्भको और एरण्डकीजड़केक्वाथकेसाथ शूलको नष्टकरताहै । चित्रक केस्वरसकेसाथ स्वेदको कुटकी और मिश्रीकेसाथ पथरी तथा प्रमेहको नष्टकरताहै । घीकुंआरकेरससे कफवात और क्रमिदोषको नष्टकरताहै ॥ ६५७ ॥

६५८ मृत सञ्जीवनरसः (सप्तमः)

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणोमतः ।
विषतालकफट्फलशिलाहिङ्गुललोहकम् ॥ ३०४२ ॥
वह्निविश्वभृङ्गाह्वहेममाक्षिकमभ्रकम् ।
हस्तिशुण्डी विषं कुम्भी तन्दुलीयकतामकौ॥३०४३॥
एषां प्रत्येकमेकैकं भागमादाय चूर्णयेत् ।
आर्द्रकस्य द्रवेणैव मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ ३०४० ॥
जम्बीरस्य रसो ग्राह्यः पलत्रयपरीक्षितः ।
त्रिफलायाश्च निर्गुण्ड्या प्रत्येकञ्च पलत्रयम्॥३०४५॥
रसस्य पलमानन्तु चाक्षेयाः परिकीर्तितम् ।
काचकूप्यां विनि क्षिप्य यन्त्रे क्षिप्त्वा प्रयत्नवान्३०४६
उद्धृत्याऽऽर्द्रकनिर्यासै मर्दयित्वा विशोषयेत् ।
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं विदितो भुवि ॥
गुञ्जाद्वयं ददीताऽस्य सन्निपातापनुत्तये ॥ ३०४७ ॥

र.र स,नि र,र सु,वि क,रसादन,र का,र क यो,यु प्र,र.को,र र दी और र च,र सं,व रा ज्वराऽधिकारे ।

टि०–र क.यो बालुकायन्त्र अनुपानविशेषश्चविधिनियम्य इति, अत्र पुनर्विषकफ्कस्थले अग्नी शुद्धिम्.. .. अवतरणं शिलाजनकस्य विनया गृहीता । अत्रैवाऽधिकरसतुना प्रयोगेण रसमम्पादने न बाधा इति । रसाऽयोऽन्योऽयकृदुकेत्यादिना रसोऽस्तुचये द्वितीय. पाठ. कृतोऽस्मिनोऽपर्यन्तशाऽस्तभावनीय । रसरत्नदीपिकायामस्य मर्जीवनरस इति नामस्थापितम्, सर्वमनुपा रसराजसुन्दर स्वतन्त्र एव पाठ मह गृहीतस्तन्मूलमाधानमेव ।

भाषा—शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्धपारा, हरा (बछनागभेद), हरिताल, कट्फल, (मुर्दासङ्ग), मैनसिल और सिंगरिफ, लोहभस्म, चित्रक, त्रिरङ्ग, भंगरा, सुवर्णमाक्षिक और अभ्रकभस्म, हाथीशुण्डी, शुद्धबछनाग, निसोत, कटिवाली चौलाईकीजड़, ताम्रभस्म येसब १–१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी मीलकर्जलीमें मिलाकर अदरखकेरसमें तीनरोज़ मर्दनकर जम्बीरी, त्रिफला, निर्गुण्डी इनकास्वरस ३–३ पल, अमलोनियाकारस १ पल लेकर सबको ॥ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके ईंटकी डाटमें मुंहबन्दकर ७–८ कपड़मिट्टीलगादे । सूखनेपर बालुकायन्त्रमें रख क्रमशः तीनपहरकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अदरखके रससे २–३ रोज़ घोटकर २–२ रत्तीकीगोलियां बनाकर रख छोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपातादि समस्त दुर्धररोग निवृत्तहोतेहैं ॥ ६५८ ॥

६५९ मृतसञ्जीवनरसः (अष्टमः)

नागं सुद्रावितं कृत्वा शुद्धं सूतं समं क्षिपेत् ।
सूताद्द्विगुणगन्धञ्च चूर्णीकृत्य शनैः शनैः ॥ ३०४८ ॥
निक्षिप्य चालयेद्दण्डैः मार्कनिर्गुण्डिसम्भवैः ।
नागं सूतं मृतं ज्ञात्वा हिमज्वालानिवर्तितम् ॥३०४९॥
चुल्ल्या उत्तार्य यत्नेन क्षारं धवलनामिजम् ।
चूर्णितं सूततुल्यञ्च निक्षिपेन्मर्दयेत्तथा ॥ ३०५० ॥
दरदं पारदं तुल्यं योजयेत्सम्प्रदायवित् ।
यवनेष्टमलं चूर्णं तुल्यं संयोज्य यत्नतः ॥ ३०५१ ॥
विमुच्य वस्त्रपूतञ्च कृत्वा रक्षेत्सुभाजने ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा ह्यार्द्रकस्वरसेन च ॥ ३०५२ ॥
जिह्वके सन्निपाते च प्रयुञ्ज्यात्प्रतिसारणम् ।
प्रकृतिञ्चाऽऽनयेज्जिह्वास्तम्भञ्चापि हनुग्रहम् ३०५३
तथा च पिच्छिलास्यञ्च मन्यास्तम्भं शिरोग्रहम् ।
अर्दितञ्च जयेदाशु धीमन्नेऽस्यरसाग्नानात् ॥ ३०५४ ॥
गुञ्जामात्रञ्च दातव्यं यदुदोषे धृते सति ।
शुष्कां विचेष्टितां जिह्वां शुकजिह्वोपमां तथा ॥३०५५॥
प्रकृतिञ्चानयेत्क्षिप्रं नाऽत्र कार्या विचारणा ।
मृतसञ्जीवनो ह्येष सम्प्रदायसमागतः ॥
नागादिद्रावणार्थेषु लोहपात्रं प्रवर्तयेत् ॥ ३०५६ ॥

र.मु.,टो ,ज्वराऽधिकारे ।

टी०—रसराजसुन्दर धवलनामिजस्य ... . नाम ... ... निरवकाशम् ।

भाषा—शुद्धसीसेको लोहेकी कड़ाहीमें रखकर बलबरबर बुहकरा गलावे । पारेमें पूर्व ... ... कर ... ... चूर्णकर ...

२ डालताजाय और संभालुके ताजेडण्डेसे चलाताजाय। इन दोनोंकीसफेदभस्महोनेपर चूल्हेसे उतार पारेकी बराबर दाडूनाभिकीभस्म डालकर एकपहर मर्दनकर शुद्धसिंगरिफ और पारा १–१ भाग क्या डालकर सबकी बराबर ल्हसनकाकल्क मिलाकर यहातक मर्दनकरे कि सूखजाय, फिर कपड़ेमें छानकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १ या २ रत्ती की मात्रा अदरखके रसमें मिलाकर जिह्वकसन्निपातमें जीभपर मलनेसे जिह्वास्तम्भ, हनुग्रह, मुहकी चिपचिपाहट, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, शिरका जकड़ना, लक्वा येसब नष्टहोतेहैं। यदिरोगकीप्रबलताहो तो एकरत्ती अदरखकेरसमेंमिलाकर खानेकोदेनेसे सूखी, चेष्टारहित और शुककी जिह्वाकेसदृश रंगवाली जीभ प्रकृत्यापन्न होजातीहै ॥ ६५९ ॥

६६० मृतसञ्जीवनरसः (नवमः)

पारदं सुमृतं ताम्रं ताप्यं मौक्तिकमेव च।
हेमवज्रप्रवालञ्च सर्वमेकत्रचूर्णयेत् ॥ ३०५७ ॥
चतुर्थांशं शुद्धगन्धं दत्त्वा कूप्यां सुधीः पचेत्।
रक्तिद्वयञ्चाऽस्य यथाबलमथाऽपि वा॥३०५८॥
पिप्पलीमधुना चैवं पिप्पलीखण्डकेन वा।
गुडशुण्ठिकया वाऽपि पञ्चकोलेन वाऽथवा॥३०५९॥
मृतसञ्जीवनो नाम शिरोरोगं निहन्ति।
अनुपानप्रभेदेन सर्वशीर्षामयापहः ॥ ३०६० ॥

र.म मा.,ना.वि ,शिरोरोगे।

भाषा—पारा, तावा, सोनामाखी, मोती, सोना, हीरा, मूंगा इनकीभस्में समभाग, शुद्धगन्धकसबसे चतुर्थांश डालकर कज्जलीकर आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २ रत्ती अथवा योग्यतानुसार पीपल, मधु अथवा पीपल, शक्कर अथवा गुड, सोंठ अथवा पञ्चकोलकेसाथ देनेसे तमाम शिरोरोग दूरहोतेहैं। और अनुपानभेदसे यह अवान्तर शिरोरोगोंकोभी नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

६६१ मृतसञ्जीवनरसः (दशमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणीम्।
भृङ्गराजस्य नीरेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३०६१ ॥
माषमात्रां वटीं कुर्यादार्द्रकस्याऽनुपानतः।
देयो हि मृतसञ्जीवी रसोऽयं सन्निपातनुत् ॥३०६२॥

व.रा ,वै चि ,वा ,सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, वच्छनाग, गन्धक और शिंगरिफ, कुटकी सब समभागलेकर कज्जलीकर भंगरेकेरसमें ३ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख के रसकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ६६१ ॥

६६२ मृतसञ्जीवनरसः (एकादशः)

मरिचं टङ्कणं सूतं माक्षिकं कान्तलोहकम्।
अभ्रकञ्च समांशानि वह्निस्वाथेन मर्दयेत ॥ ३०६३ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रपाचितम्।
मरीचाऽऽर्द्रकसंयुक्तं द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ३०६४ ॥
पथ्यं क्षीरोदनञ्चैव तापे दद्यात्सशर्करम्।
प्रात:काले तु सेवेत सद्यः स्वेदं विमुञ्चति ॥३०६५॥

व.रा ,स्वेदपित्ते।

भाषा—मरिच, शुद्ध सुहागा और पारा, सोनामाखी, कान्तलोह और अभ्रकभस्म येसब समभागलेकर बारीककज्जली बनाकर चित्रकके क्वाथसे १–२ रोजमर्दनकर सुखाकर कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें ४ पहरपकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मरिच और अदरखकेसाथ देनेसे अत्यन्त पसीनेका निकलना बन्दहोताहै। दाहहोनेपर दूधभात दे। ज्वरहोनेपर शक्करकेसाथ दूधभात दे इसकाप्रयोग सुबहमें करे ॥ ६६२ ॥

६६३ मृतसञ्जीवनीकल्पः

चित्रकेण तथा पूर्वस्तथा शुण्ठीविडङ्गतः।
लोहेन भृङ्गराजेन वलया निम्बपञ्चकैः ॥ ३०६६ ॥
खादिरेण च निर्गुण्ड्या कण्टकार्याऽथ वासकात्।
घर्षांशुना तत्रसैर्वा भावितो घटिकीकृतः ॥ ३०६७ ॥
चूर्णं घृतैर्वा मधुना गुडाद्यैर्वारिणा तथा।
ओं हूं स इतिमन्त्रेण मन्त्रितो योगराजकः ॥
मृतसञ्जीवनी कल्पो रोगे मृत्युञ्जयो भवेत् ॥ ३०६८ ॥

आ.पु ,रसायनाऽधिकारे।

भाषा—चित्रक, सोंठ, विडङ्ग, लोहभस्म, भंगरा, बला, निम्बपञ्चाङ्ग, खैरकीछाल, संभालु, भटकटैया, अडूसा, इनसिब येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर ३–३ माशेकी गोलिया बनाकर अथवा चूर्णरूपसे रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशेकीमात्रा मधु, गुड अथवा जलप्रभृति अनुपानकेसाथ "ॐ हूं स" इसमन्त्रसे १०८ बार अभिमन्त्रितकर लेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै और आयुको बढाताहै इसीलिये इसका मृतसञ्जीवनी कल्प नाम रक्खागयाहै ॥ ६६३ ॥

६६४ मृतसञ्जीवनीवटी (प्रथमा)

कटुतुम्बी काकमाची निर्गुण्डी च कुमारिका।
गोजिह्वा सैन्धवं गुञ्जा हार्द्रकञ्च समंसमम् ॥३०६९॥
पिष्ट्वा तेन प्रलेसव्या मूषा सर्वाऽङ्गुलावधि।
पारदं व्योमसत्त्वञ्च कान्तं तीक्ष्णञ्च मुण्डकम् ३०७०
ताप्यसत्त्वञ्च तुल्यांशं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत्।
दिनं जम्बीरजैर्द्रावैस्तन्मूषायां विनिःक्षिपेत्॥३०७१॥
आच्छाद्याऽऽलेप्य कल्केन चान्धयित्वा विशोषयेत्।
करीषाग्नौ दिवारात्रं पुटे पक्त्वा समुद्धरेत् ॥३०७२ ॥
पुनः प्रलिप्तमूषायां क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पुटेत्ततः।
इत्येवं दशमूषासु प्रलिप्तासु विपाचयेत् ॥ ३०७३ ॥

जायते गुटिका दिव्या मृतसञ्जीवनी परा ।
वक्त्रे शिरसि कण्ठे वा कर्णे वा धारिता करे ३०७४
हेम्ना सुवेष्टिता सम्यग्वय:स्तम्भकरी परा ।
वलीपलितखालित्ये मृत्युशङ्काविनाशिनी ॥ ३०७५ ॥
वर्षमात्रान्न सन्देहो जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
शुद्धगन्धपलैकन्तु गवां क्षीरैः पिबेत्सदा ॥
अनेन त्वनुपानेन देहे सङ्क्रमते रसः ॥ ३०७६ ॥

र रा.,र म.मा ,र.का ,रसायने ।

भाषा—कड़वीतूंबी, मकोय, निर्गुण्डी, घीकुवार, वनगोभी, सेंधानमक, सफेदगुञ्जा और अदरख येसब समभाग लेकर बारीकपीस मूषाकेभीतर चारोंतरफ १–१ अङ्गुल मोटा लेपकरके शुद्धपारा, अभ्रकसत्त्व, कान्तलोह, पोलाद, मुण्डलोह, स्वर्णमाक्षिकसत्त्व सबसमभागका बारीकचूर्णकर पारमें मिलाय एकरोज़ घोटकर जभीरीकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय उसीमूषेमें डाल ढकन देकर पूर्वोक्तकल्कसे सन्धिबन्दकर कल्कर्हीं १ अङ्गुलमोटी खोल चढ़ादे । खोलपर २–३ कपड़मिट्टी चढ़ाकर सुखनेपर करसीकी अग्नि इसप्रमाणसे देवे कि एकदिनरातमें शान्त होजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दन लेपनकर अग्निदेवे । इसतरह दश मूषाओंमें पकानेसे गुटिका तैयारहोगी । इसमें पारा हरवक्त नया देताजाय । इस गोलीको सुवर्णमें मढवाकर मुंह, सिर, कण्ठ, कान, हाथ इनमेंसे किसीभी स्थानमें धारण करनेसे अवस्थाके ह्रासको टिकातीहै । वली, पलित और खालित्यको दूरकर मृत्युकी शङ्काको दूरकरतीहै । एकवर्षभरके निरन्तर प्रयोगसे ३०० वर्षकी आयु होतीहै । शुद्ध गन्धक ४ तोले लेकर गायकेदूधसे रोज़ पीना चाहिये । इससे शरीरमें गोलीकाप्रभाव व्याप्तहोताहै ॥ ६६४ ॥

६६५ मृतसञ्जीवनीवटी (द्वितीया)

शुद्धसूतं वज्रभस्म सत्त्वमभ्रकताप्ययोः ।
कान्तलोहसमं हेम जम्बीरैर्मर्दयेद् दृढम् ॥ ३०७७ ॥
सप्ताहं सर्वतुल्यांशो गोलं कृत्वा समुद्धरेत् ।
गोजिह्वाद्यायसीवन्ध्यानिर्गुण्डीमधुसैन्धवैः ॥३०७८॥
लेपयेद्वज्रमूषान्ते गोलकं तत्र निक्षिपेत् ।
तत्कल्कच्छादितं कृत्वा पक्षैकं भूधरे पचेत् ॥ ३०७९ ॥
यामं यामं समुद्धृत्य लिप्त्वा मूषां पुनः पुनः ।
रुद्ध्वाऽथ पूर्ववत्पाच्यमेवं पक्षात्समुद्धरेत् ॥ ३०८० ॥
यवचिञ्चापलाशाख्यराजीकार्पासतण्डुलैः ।
एतैः प्रलेपयेन्मूषां गुटिकां तत्र निक्षिपेत् ॥ ३०८१ ॥
टङ्कणं श्वेतकाचञ्च दत्त्वा यामे दृढंदृढम् ।
खदिराङ्गारयोगेन द्रुतोऽयं जायते रसः ॥ ३०८२ ॥
मूषायां विडयोगेन समं हेम च जारयेत् ।
ततस्त्रियामकैः मर्द्य सगोमूत्रं दिनैकतः ॥ ३०८३ ॥
अन्धमूषागतो ध्मातो बद्धो भवति वज्रवत् ।
मृतसञ्जीवनी नाम गुटिका वक्त्रमध्यगा ॥ ३०८४ ॥
वर्षमात्राज्जरां मृत्युं हन्ति सत्यं शिवोदितम् ।
शस्त्रस्तम्भञ्च कुरुते ब्रह्मायुर्जायते नरः ॥ ३०८५ ॥

र. मं., रसायनसं., र र स., र.का , रसायने । रसायनसङ्ग्रहे ताप्यस्थाने तालं दृश्यते ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अभ्रक और सुवर्णमाक्षिकसत्त्व, कान्तलोह और सुवर्ण इनसबकीभस्में समभाग लेकर जभीरीके रससे ७ रोज मर्दनकर गोलाबनाय वनगोभी, मकोय, बाझ खेखसा, निर्गुण्डी, मधु और सेंधानमक सबसमभागलेकर बारीकपीस वज्रमूषामें चारोंतरफ १–१ अङ्गुलमोटा लेप लगाकर उसमें गोलेको रख ढकनलगाय उसीकल्कसे सन्धिबन्दकर १–१ अङ्गुलमोटी खोल चढाकर ३–४ कपड़मिट्टी मुल्तानी और रुईको कूटकरलगादे । सुखनेपर एक पहर भूधरपुटकी अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन, लेपन तथा अग्निका विधानकरे । इसतरह १५ दिनतककरनेकेबाद तिलली, ढाक, राई, बिनौले, इनके कल्कसे मूषेको पूर्ववत् लेपदेकर जभीरीके रसमें पूर्ववत् घोटकर गोलीकोरख सुहागा, सफेदकाच, थोड़ाथा मूषेमें डालकर औषधकल्कसे सन्धिबन्दकर उसीकी खोल चढाकर ३–४ कपड़मिट्टीदेवे । सुखनेपर खैरकी आचसे दृढ धमनकरनेसे इसरसकी द्रुतिहोजायगी । मूषेका ढकन हटाकर गोलीकी बराबर सुवर्णका चूर्ण थोड़ा २ देवे । मिलजानेपर बिडोंका प्रक्षेप करे जिससे कि पहिले दियाहुआ सुवर्ण जलजाय । जलजानेपर दूसरा सुवर्ण दे और बिडोंका प्रक्षेपकरे । इसतरह समान सुवर्णका जारण होनेपर अग्निसे निकाल खरलमें डालकर १ पहर गोमूत्रसे मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे वज्रकीतरह कठिनहोजाता है । इसगोलीको एकवर्षभर मुंहमें रखनेसे जरा और मृत्युरहितहोकर बहुत दिनतक जीता है और उसके शरीरको कोईभी शस्त्र क्षति नहीं पहुचासक्ता ॥ ६६५ ॥

६६६ मृतसञ्जीवनीवटी (तृतीया)

यः पूर्वोक्तः सूतो लक्षावृद्ध्या वेधते लोहान् ।
बद्धः सारणयोगे मुखरुद्धश्च जारयेद्रत्नम् ॥ ३०८६ ॥
युक्तः समांशनागैः सुरलोहायस्कान्तताप्यसत्त्वैश्च ।
अभ्रकसत्त्वसमेता गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ३०८७
हेमयुता गुलुच्छके मुकुटे वा कण्ठसूत्रकर्णे वा ।
मृत्युभयशोकरोगविषशस्त्रजरासततदुःखसङ्घातम् ॥
यस्याऽङ्गे निहितेयं गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ।
सोऽसुरयक्षकिन्नरपूज्यतमः सिद्धयोगीन्द्रैः ॥ ३०८९ ॥
प्रक्षाल्य तोयमध्ये गुटिका घटिकाद्वयं ततः क्षिप्त्वा ।
तच्चेयं वदनगता मृतकस्योत्थापनं कुरुते ॥ ३०९० ॥
तोयं तदेव पिबति स्वस्थं पथ्यान्वितस्ततः पुरुषः ।
लभते दिव्यं स वपु र्मृत्युजरावर्जितः सुदृढम् ३०९१

र इ , रसायने ।

भाषा—पहिले शुद्धकियाहुआ पारा जो कि लक्षसे ऊपर धातुओंका वेधन करसकाहो उसमें डालेहुए रत्नोंको सारणा

तैलोंसे जो जारण करसकाहो ऐसा गुटिकारूप पारद लेकर नाग, सुवर्ण, लोह, कान्तलोह सुवर्णमाक्षिक और अभ्रकसत्व, येसब समभाग लेकर बद्धपारेमें बराबर प्रमाणसे मिलाकर गोलीबनाय सुवर्णसे वेष्टितकर चोटी, मुकुट, माला, कान इनमें रखनेसे मृत्यु, भय, शोक, रोग, विष, शस्त्र, बुढ़ापा और निरन्तर दु:ख सङ्घात इनसबको नष्टकरती है। जिसकिसीके शरीरपर इसगुटिकाको रखदे वह असुर, यक्ष, किन्नर, सिद्ध और योगियोंसे सम्मानित होताहै। इसगोलीको धोकर दो घण्टे पानीमें रख उसपानीको सन्न्यास रोगादिकोंमें मृतप्राय होगयाहो उसके मुंहमें डालकर इस गोलीको रखनेसे सञ्ज्ञाको प्राप्तहोकर उसपानीको पीजाताहै। भूखलगनेपर पथ्यदेना उससे मृत्यु, बुढ़ापा प्रभृतिसे-रहित सुदृढ दिव्य शरीरको प्राप्तहोताहै ॥ ६६६ ॥

६६७ मृतसञ्जीवनीवटी (चतुर्थी)

कर्पूरं रसगन्धकञ्च दरदं तीक्ष्णोद्भवं भस्मकं,
कालेयेन्द्रयवाऽजमोदहुतभुक् चिञ्चास्थिकं धातकी।
एला मांसिलवङ्गशाल्मलिमलं जातीफलं टङ्कणं,
नीली सिन्धुभवं विषं सममिदं प्रत्येकनिष्कान्वितम्॥
सर्वेषां सदृशञ्च बिल्वफलकं कान्ताऽभ्रसिन्दूरकं,
सिन्दूरञ्च सफेनकं सुविमलं धुस्तूरबीजं नवम्।
भङ्गापत्रककोकिलाक्षसहितं निष्कप्रमाणं पृथक्,
धुस्तूरस्वरसेन सन्ततमिदं सम्मर्दयेद्यामकम्॥३०९३॥
जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणा वटी,
सेव्या चेन्मधुना जयेद्ध्रुवमिमं रक्तातिसारं परम्।
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु विविधेष्वामातिसारेषु च,
तद्वच्छूलयुतांश्च दुस्तरतरान्नानाऽतिसारव्रजान्॥

व. रा., ग्रहण्यतिसारयोः।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और शिंगरिफ, फौलादभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े। इसमें केशर, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रक, इमलीकेबीजोंकीगिरी, हडजोड, धावडीकेफूल, इलायची, जटामांसी, लौंग, मोचरस, जायफल, भुनासुहागा, नील, सेंधानमक, शुद्धवच्छनाग येसब ४-४ माशे, बेलगिरी सबकेबराबर, कान्तसिन्दूर, अभ्रसिन्दूर, रससिन्दूर, समुद्रफेन, शुद्धरूपामाखी और धतूरेकेबीज, भांगकेपत्ते, तालमखाना, येसब ४-४ माशेलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरा और जंभीरीकेस्वरसमें १-१ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथदेनेसे रक्तातिसार, समस्तग्रहणीरोग, नानातरहके आमातिसार, शूलयुक्तदुस्तर अतिसार, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६६७ ॥

६६८ मृतसञ्जीवनीवटी (पञ्चमी)

रसराजगुल्यगन्धकसुरतिक्तैः पीतभृङ्गमरिचैश्च।
ब्राह्मीत्रितयरसाढ्या गुटिकाः कार्याश्च चणकामाः॥
एका देया प्रथमं त्रिदोषविकलस्य मूर्च्छितस्याऽपि।
अन्या मुहूर्तपरतः प्रहरादन्याऽपरा नैव॥ ३०९६ ॥
जीवति मृतोऽपि पुरुषस्त्रिदोषजान्विततन्द्रिकायुक्तः।
श्रीनागार्जुनगदिता गुटिका मृतसञ्जीवनी ख्याता॥

र. स. क., र. का., रसायनसं., सन्निपाते।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, सुवर्णभस्म, चिरायता, पीलाभंगरा, मरिच सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर मण्डूकपर्णी और ब्राह्मीके रसकी ३-३ भावनाएं देकर चने-प्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे तान्द्रिकसन्निपात-प्रभृतिमूर्च्छिताऽवस्थामें एकगोली दोनोंब्राह्मीके रसोंकेसाथदेना, थोड़े समयकेबाद दूसरी गोली देना। यदि दोनोंकेदेनेमें मूर्च्छा जाग्रत न हो तो एकपहरकेबाद तीसरीगोली देना। इसके देनेसे मूर्च्छासे विमुक्त होजाताहै। यदि तीसरीगोली देनेसभी दैववशात् मूर्च्छा जाग्रत न हो तो उसकीचिकित्सा गतायु समझकर न करना ॥ ६६८ ॥

६६९ मृतसञ्जीवनीवटी (षष्ठी)

मधुयष्टि लवङ्गञ्च शिलाजतु त्रुटिस्तथा।
सुघस्रे भावना कार्या नवतण्डुलवारिणा॥ ३०९८॥
याममात्रं दृढं मर्द्य वटी कोलसमा स्मृता।
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वराञ्जयेत्॥ ३०९९॥
मूर्च्छाद्युग्ररोगञ्च वातपित्तञ्च नाशयेत्।
मृतसञ्जीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता॥ ३१००॥

वै. चि., दाहाऽधिकारे।

टि०—सुघस्रे इत्यस्य स्थाने सहस्रमिति वर्तमानमस्ये पाठे दृश्यते परन्तु इयता दीर्घपरिश्रमेण साधारणवटिकानिर्माणस्याऽकिञ्चित्करत्वात् तत्स्थाने सुघस्रे इत्येव पाठोऽस्माभिः प्रकल्पित इति विद्वद्भिः क्षमणीयम्। किञ्च सप्तमवट्यां सहस्रशब्देन सहस्रवेधिपाषाणौ गृहीतो न तु सहस्रभावना दत्ता अतोऽत्र वैद्यचिन्तामणिकारस्य भ्रमजनित एव तथाविधपाठोऽस्तीत्यवगन्तव्यम्।

भाषा—मुलहटी, लौंग, शिलाजीत, इलायची सब समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर नवीनचावलोंके धोवनसे एकपहरतक दृढ-मर्दनकर बेरबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली कालेकपासके पानीकेसाथ देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छादिभयङ्कररोग और वातपित्त इनको यह नष्टकरतीहै ६६९

६७० मृतसञ्जीवनी वटी (सप्तमी)

यष्टीमधुलवङ्गञ्च शिवाचलं त्रुटिस्तथा।
सहस्रवेधी कतकबीजं तण्डुलवारिणा॥ ३१०१॥
यामत्रयं दृढं मर्द्यं वटिका कोलसम्मिता।
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वराञ्जयेत्॥ ३१०२॥
मूर्च्छाभ्रमादिरोगांश्च वातपित्तञ्च नाशयेत्।
सुधासञ्जीवनी नाम पूज्यपादैरुदीरिता॥ ३१०३॥

र. र. कौ., र. पा., तृष्णायाम्।

भाषा—मुलहटी, लौंग, हरडेकीछाल, छोटीइलायची, सहस्रवेधीपाषाणकीभस्म, निर्मलीकेबीज सबसमभागलेकर बारीक-

चूर्णकर नवीन चावलोंके धोवनसे तीनपहर मर्दनकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कालीकपासके स्वरससे देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छा, भ्रम, वातपित्तादिजनिततमामरोग, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६७० ॥

६७१ मृतोत्थापनरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं शिला च विषहिङ्गुलम् ।
मृतकान्ताऽभ्रताम्राऽयस्तालकं माक्षिकं समम् ॥३१०४॥
अम्लवेतसजम्बीरचाङ्गेरीणां रसेन च ।
निर्गुण्डीहस्तिशुण्डयोश्च द्रवै मर्द्यं दिनत्रयम् ॥३१०५॥
रुद्ध्वा तु भूधरे पाच्यं दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ।
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ३१०६ ॥
माषमात्रं प्रदातव्यं हिङ्गुव्योषार्द्रकद्रवैः ।
सकर्पूरानुपानं स्यान्मृतस्योत्थापने रसे ॥ ३१०७ ॥
पीडितं सन्निपातेन गतं याऽपि यमालयम् ।
तत्क्षणाज्जीवयत्येष पथ्यं क्षीरैः प्रयोजयेत् ॥३१०८॥

भै र., र.च., र सु., नि. र., व रा., र. को., र प्र., सु. प्र., सन्निपाते । र. को. आनन्दभैरवः ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्धपारा, मैनसिल, बछनाग और शिंगरिफ, कान्तलोह, अभ्रक, ताम्र, लोह, हरिताल और सोनामाखीभस्म सब १-१ भाग, लेकर कजलीबनाय बिजोरा, जमीरी, अमलोनिया, सभालू, हाथीशुण्डी इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४ पहरतक भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चित्रकके काढ़ेसे दोपहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हींग, त्रिकुटु, अदरखका रस और शुद्धकपूर इनकेसाथ देनेसे मृतावस्थापन्न सन्निपाती तत्क्षण उठकर बैठजाता है । भूखलगनेपर दूधभात खाने को देना ६७१

६७२ मृतोत्थापनरसः (द्वितीयः)

अभ्रं ताम्रं तथा लोहं प्रत्येकं संस्कृतं पलम् ।
सर्वमेतत्समाहृत्य गृह्णीयात्कुशलो भिषक् ॥ ३१०९ ॥
आज्ये पलद्वादशके दुग्धे तत्स्वरसञ्ज्ञके ।
क्षिप्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनतन्तुना ॥ ३११० ॥
विडङ्गत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च ।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतान्यथासम्मिश्रतां नयेत् ॥३१११॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेत्तद्विचक्षणः ।
आत्मनः शोभने चाऽह्नि पूजयित्वा गुरुं रविम् ३११२
घृतेन मधुना मद्यै. पाययेन्माषकाऽधिकम् ।
अष्टौ माषान् क्रमेणैव वर्धयेत्तु समाहितः ॥ ३११३ ॥
अनुपानञ्च दुग्धेन नारिकेलोदकेन वा ।
जीर्णे देयञ्च शाल्यन्नं मुद्गमांसरसादयः ॥ ३११४ ॥
रसपानाऽविरुद्धानि द्रव्याण्यन्यानि योजयेत् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च आमवातं कटिग्रहम् ॥ ३११५ ॥
गुल्मशूलं शिर.शूलं यकृत्प्लीहादिकं तथा ।

अग्निमान्द्यं क्षयं कुष्ठं कासं श्वासं विचर्चिकाम् ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च योगेनाऽनेन साधयेत् ॥३११६॥

र. र स., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—अभ्रक, ताम्र और लोहभस्म ४-४ तोले, गायका घी ४८ तोले, गायकादूध २८ तोले लेकर सबको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर मधुर आंचसे यहातक पकावे कि दूध, घी तमाम जलजाँय । फिर इसको कपड़छानकर विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, त्रिकुटु, ये प्रत्येक ४-४ तोले का बारीक चूर्णकर परिपक्व रसमें मिलाकर ३-४ पहर मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे रोगी और वैद्यके शुभनक्षत्रमें गुरु और सूर्यकी पूजाकर घृत, मधु अथवा मद्यकेसाथ १ माशेके लगभग देवे और प्रकृतिकी औचिती देखकर क्रमसे आठमाशे तक बढावे । पूर्वाऽनुपान अनुकूल न पड़ेतो दूध अथवा नारियलके जलकेसाथ दे । इसके पचजानेपर पुराने चावल, मूंगकायूष, मांसरस और रसके अविरुद्ध द्रव्योंको दे । इसके सेवनसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्मशूल, शिर शूल, यकृत् प्लीहादि उदररोग, मन्दाग्नि, क्षय, कुष्ठ, कास, श्वास, विचर्चिका, पथरी, मूत्रकृच्छ्र येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६७२ ॥

६७३ मृतोत्थापनरसः (तृतीय')

क्षारत्रयं शम्भुवीर्यं दरदं देवपुष्पकम् ।
पञ्चटङ्कमितानेतान् द्विटङ्कांश्चाऽप्यतः परम् ॥ ३११७॥
शिला शुद्धा प्रयोक्तव्या तालकं गन्धकं वचा ।
मस्तकी गरलं कुष्ठं मृतताम्राऽभ्रटङ्कणम् ॥ ३११८ ॥
लोहभस्म च सम्मेल्य कटुतैलेन मर्दयेत् ।
कूपिकां वालुकायन्त्रे विपचेद्यामयुग्मकम् ॥ ३११९ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खल्वमध्ये विनि.क्षिपेत् ।
लशुनस्याऽथ तैलेन नेपालबीजतैलतः ॥ ३१२० ॥
चित्रकस्य कषायेण ह्यार्द्रकस्य जलेन वा ।
सन्निपातं निहन्त्याशु गुञ्जामात्रप्रमाणतः ॥ ३१२१ ॥
मृतः सोऽपि पुनर्जीवेद्रोगमृत्युभयापहः ।
मिष्टान्नं पायसं दद्यादुपचारैश्च शीतलैः ॥ ३१२२ ॥
राजोपचारैः कुर्वीत गात्रलेपंसुचन्दनैः ।
मृतोत्थापनको नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ ३१२३ ॥

र.रा., वा., र क यो., सन्निपाते ।

भाषा—यवक्षार, सज्जी, सुहागा, शुद्धपारा, शिंगरिफ और लौंग येसब ५-५ टङ्क, शुद्धमैनसिल, हरिताल और गन्धक, बच, मस्तगी, सर्पकाजहर, कुठ, ताम्र और अभ्रकभस्म, भुनासुहागा, लोहभस्म येसब २-२ टङ्क लेकर कजली बनाय ४ पहर कटुतैलसे मर्दनकर कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लशुन और जमालगोटे का तैल, चित्रककी जड़काकाढा, अदरखका स्वरस इनसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-

पानकेसाथ देनेसे मृतकल्पभी सन्निपाती फिरसे जीवित और तमाम उपद्रवोंसे रहित होजाता है। भूखलगनेपर मिष्टान्न और खीर देवे। दाहहोनेपर शीतोपचारकरे, चन्दनलेपनादि तमाम राजोचित उपचारकरे ॥ ६७३ ॥

६७४ मृत्युञ्जयभैरवोरसः

रसवली मधुपद्रवपट्टपुटै
रविपुटैरपि वायसितो विषम् ।
तिथिपुटै वचया जयपालकं
दितिगलाद्रवकैश्च हिडिम्बिकाम् ॥ ३१२४ ॥
क्रमविवृद्धयतीः सुविभाव्य ताः
सकलतुल्यकणामपि पट्टपुटैः ।
धिटरसस्य च निम्बुरसैः समं
युतिफलेन समः स च मृत्युजित् ॥ ३१२५ ॥
ततास्बुना पिप्पलीभिः सर्वज्वरहरो मतः ।
सर्वत्र पुटशब्दोऽत्र भावनार्थेऽभिधीयते ॥
कणातताऽम्बुयोगेन सर्वरोगेषु शस्यते ॥ ३१२६ ॥

र.का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी कज्जलीको मधुरी ६ भावनाए देवे। शुद्ध वछनागको मकोयकेरसकी १२ भावनाएं देवे। शुद्ध जमालगोटे को वचके स्वरस अथवा क्वाथकी १५ भावनाएं देवे। मैनसिलको नीलीके रसकी १५ भावनाएं दे और इन सबकीबराबर पीपलका चूर्णमिलाय खदिर, नीबू और बिजुआके अक्षस्वरससे ६—६ भावनाएं देकर १ से २ रत्तीतककी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली गरमजल अथवा पीपलकेसाथदेनेसे सबप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै। अन्नन-धरलेसे तमामविषोंको दूरकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६७४ ॥

६७५ मृत्युञ्जयरसः (प्रथमः)

विषं सूतकगन्धौ च पित्तं मत्स्यवराहयोः ।
आजमायूरपित्ते च महिषस्याऽपि योजयेत् ॥ ३१२७ ॥
हरितालश्च सव्योषं वानरीबीजसंयुतम् ।
अपामार्गं चित्रमूलं जयपालश्च कल्कयेत् ॥ ३१२८ ॥
एतत्सर्वं समांशेन अजामूत्रेण मर्दयेत् ।
माषेण सदृशी कार्या वटिका सद्भिषग्वरैः ॥ ३१२९ ॥
महाज्वरे महाशीते महाशीतज्वरेऽपि च ।
मज्जागते सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ॥ ३१३० ॥
असाध्ये मानवे युन्त्यादेकाहाऽऽग्निनाशिनी ।
जलोदरेऽङ्गशैथिल्ये नासास्रावे च पीनसे ॥ ३१३१ ॥
अजीर्णे मूर्च्छनोत्थाने श्लेष्मोत्थानेऽतिदुर्जये ।
शोथकामलपाण्ड्वादिसर्वरोगापहारकः ॥ ३१३२ ॥
मृत्युञ्जयो रसो नाम ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः ।
भृङ्गराजरसेनाऽयं रसराजः प्रदीयते ॥ ३१३३ ॥
निर्वातनिर्जनस्थाने बहुवस्त्रसमावृते ।
प्रस्वेदः क्षणमात्रेण जायते निर्मलोदकम् ॥ ३१३४ ॥
मूर्च्छितः पतितो भूमौ दह्यमानः पुनः पुनः ।
एवं चिह्नं समालोक्य वदेद्वैद्यमातुरे ॥ ३१३५ ॥
पथ्यं यद्याचते रोगी तद्दातव्यं प्रयत्नतः ।
दध्योदनं शीतजलं दातव्यं तद्विचक्षणैः ॥ ३१३६ ॥
एवं महारसः श्रेष्ठः शम्भुना प्रेरितो भुवि ।
कृपया सर्वभूतानां ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः ॥ ३१३७ ॥

र. ज्ञा., भै. र., र. सु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध वछनाग, पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर मछली, सूअर, बकरा, मोर, भैंसा इनके पित्त, शुद्धहरिताल, त्रिकुटु, केवाचकेबीज, अपामार्ग, चित्रक-बीजड़, शुद्धजमालगोटा, येसब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बकरीकेमूत्रमें २—३ रोज़ मर्दनकर उड़द बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली भंगरेके रसकेसाथदेनेसे भीषणज्वर, शीताग्र, अत्यन्त ठंडदेकर आनेवालाज्वर, मज्जाप्रभृति धातुगत तथा सन्निपातज्वर, हैज़ा, विषमज्वर, जलोदर, अङ्गशैथिल्य, नासास्राव(ज़ुकाम), पीनस, अजीर्ण, मूर्च्छाकाप्रारम्भ, अतिदुर्जयश्लेष्मकाउभार, शोथ, कामला, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै। इसकाप्रयोग निर्जन और निर्वातस्थानमें करके बहुतसे वस्त्र ओढ़ानेसे थोड़े समयमें सर्वाङ्गमें पसीना शुरूहोजायगा और दाहकेमारे चिरानें लगेगा तब समझना कि यह रोगसे निर्मुक्तहोचुका। यदि दवाके देनेसे वैसाही मृतप्राय पड़ा रहेतो उसपर किसीभी दवाका प्रयोग न करना वह अवश्य यमालयको जायगा। होशमें आकर खानेको मांगे तो दहीभात और ठंडा जल देना ॥ ६७५ ॥

६७६ मृत्युञ्जयरसः (द्वितीयः)

सूतं गन्धकटङ्कणं शुभविषं धुस्तूरबीजं कटुं,
नीत्वा भागमथोत्तरं द्विगुणितं चोन्मत्तमूलाम्बुना ।
कुर्यान्माषवटीं सुखाऽतिसुखदां सर्वान्ज्वराञ्नाशये,-
देष श्रीशिवशासनात्प्रजनितः सूतश्च मृत्युञ्जयः ३१३८
नारिकेलसितायुक्तं वातपित्तज्वरञ्जयेत् ।
मधुना श्लेष्मपित्तोत्थं ज्वरं निर्णाशयेद्ध्रुवम् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं नाशयेदार्द्रनीरतः ॥ ३१३९ ॥

भै.र., र.सु., ध., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा., सुहागा ३ भा. वछनाग ४ भा., धतूरेकेबीज ५ भा., सुठरी ६ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर धतूरेकेरससे १—२ रोज़ मर्दनकर उड़द बराबर गोलियें बनाकररखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली नारियलकेजल और मिश्रीकेसाथदेनेसे वातपितज्वर नष्टहोवै। मधुकेसाथदेनेसे श्लेष्मपित्तज्वर, अदरखकेरससे साधारण और सन्निपातज्वर नष्टहोताहै ॥ ६७६ ॥

६७७ मृत्युञ्जयरसः (तृतीयः)

रसविषदितिपुत्रान्योषयामृतस्लोत्थैं,-
मिहिरतुरगतारान्मापयेत्तुल्यमानान् ।

दश च तदनु देया भावनाः सिन्दुवारे-,
स्त्रिरथ हृदमयाऽऽर्द्रै र्वहिमत्स्याऽऽजपित्तैः॥३१४०॥
गुञ्जामात्रः प्रयोक्तव्यः सद्यः सर्वज्वरापहः।
सिद्धो मृत्युञ्जयो नाम रसोऽयं भुवि दुर्लभः॥३१४१॥
र शि ,ज्वरे।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटुकेक्वाथकी १०,बदालकेफलोंकेरसकी ७, संभालूके रसकी १०, अमलोनिया, हर्रे, अदरख, मोर, मछली और बकरेके पित्तसे ३-३ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको तत्क्षण नष्टकरताहै६७७

६७८ मृत्युञ्जयरसः (चतुर्थ)

मृतताम्राऽभ्रकं तालं हरवीर्यञ्च गन्धकम्।
समुद्रफेनञ्च समं खल्वमध्ये विनि क्षिपेत्॥ ३१४२॥
लाङ्गलीद्रावकै मर्द्यं कृत्वा गजपुटे पचेत्।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शिखिच्छागाऽहिमत्स्यजैः ३१४३
पित्तै र्भाव्यं चतुर्यामं देयं वल्लेकमानकम्।
अनुपानविशेषेण सर्वथा सन्निपातनुत्॥
रोगमृत्युभयं हन्ति मृत्युञ्जयरसो हित ॥ ३१४४॥
वै चि ,ज्वरे।

भाषा—ताम्र और अभ्रकभस्म, रसमाणिक्य, शुद्ध पारा और गन्धक, समुद्रफेन येसब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करिहारीके अङ्गस्वरससे मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मोर, बकरा, सर्प, मछली इनप्रत्येकके पित्तोंकी ४-४ पहर भावनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषसे सन्निपातको दूरकर रोग और मृत्युके भयको नष्टकरतीहै ॥ ६७८॥

६७९ मृत्युञ्जयरसः (पञ्चम)

पारदभस्म शिलाजतुयुक्तं
तीक्ष्णजभस्म सुमेलय तावत्।
दानवभस्म विभागयुतं वै
भस्मयुतं जलजातकपर्दात्॥ ३१४५॥
सर्वमिदं परिमृद्य समांशं
नागलतादलतोययुतञ्च।
चित्रकमूलजलै परिमृद्य
माषसमानवटीं परिकुर्यात्॥ ३१४६॥
आर्द्रकजेन रसेन वटीं वै
दायय नित्यमतन्द्रितबुद्धिः।
दोषसमूहभवज्वरवेगं
यत्र याति परिपक्वकषायात्॥
मृत्युविजेतरि नामरसेऽस्मिन्
व्याधिगणा न गदा गणनीया ॥ ३१४७॥
र क यो ज्वरे।

भाषा—पारदभस्म, शिलाजीत, फौलादभस्म, गन्धकभस्म (अभावमें ताम्रभस्म), शङ्ख और कौडीभस्म सब समभाग-लेकर एकपहर शुष्कमर्दनकर पान और चित्रककी जड़के स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे जो कि काथ वगैरहसे काबूमें न आताहो ऐसे त्रिदोषज्वरको यह तत्क्षण नष्टकरताहै और अनुपानविशेषसे तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६७९॥

६८० मृत्युञ्जयरसः (सिद्धाद्य) (षष्ठः)

गन्धाऽश्मा वत्सनाभो
रसवरसहित सप्तधा भावनीयो,
व्योषाम्भोराशिबीजे-
स्त्रिदशसुरसजे र्भार्गिचित्राऽऽर्द्रजैश्च।
पित्तैरानेय पित्तै-
रजतिमिशिखिजैश्छायया शोषयित्वा,
दत्तो गुञ्जाप्रमाणो मरणभयहर,
सिद्धमृत्युञ्जयोऽयम्॥ ३१४८॥
र क यो ,ज्वरे।

भाषा—शुद्ध गन्धक, वछनाग और पारा समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर त्रिकटु बदालकेबीज, तुलसी, भारङ्गी चित्रक और अदरख, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे सात ७ भावनाए देकर बकरा, मछली और मोर अथवा कुक्कुट इनकेपित्तोसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै६८०

६८१ मृत्युञ्जयरसः (सप्तमः)

बलिः सूतो निम्बूरसलमरसो भस्मसिकता-,
हये यन्त्रे कृत्वा समरविकृणाद्भूणरजः।
त्रिधस्य गुञ्जाम्भोलवकदलित, क्षौद्रहविषा-,
ऽवलीढोवल्लैकं दरयति समस्तं गदगणम्॥
जरां वर्षैकेण क्षपयति च पुष्टिं वितनुते,
तनौ तेज स्फारं रमयति वधूनामपि शतम्।
रस श्रीमान्मृत्युञ्जय इति गिरीशेन गदित ,
प्रभावं का वाऽन्य कथयितुमपारं प्रभवति॥
वृ यो त ,र चो ,र चि ,र ल ,यो म ,आ [illegible] ,रसायने।
टि० अस्य रससिन्दूरत्वेपि प्रयोगदानारम्भनन्त्वना स्वीकृताऽस्ति।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारेकीनीलवर्णकज्जलीकर नीबूके रससे यहातक मर्दनकरे कि सूखनेपर धूपमेंभी चमक न मालुम पड़े। फिर कपड़मिट्टीदीहुई आनशीशीशीमें भरके भस्म अथवा वालुकायन्त्रमें रख अन्तर्धूमविदग्धक्रियासे रससिन्दूर बनावे (अन्तर्धूमविदग्धकी क्रिया चन्द्रोदयप्रथमकी टीकामें देखो)। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकीबराबर ताम्रभस्म, पीपल और भुनासुहागा मिलाकर तोनतोनतक त्रिओरेरेरससे मर्दनकर

सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और घीकेसाथ मिलाकर खानेसे समस्तरोगदूरहोकर शरीर पुष्टहोताहै शरीरमें तेजको बढ़ाताहै, नपुंसकताको दूरकरताहै एकवर्षतक लगातार प्रयोगकरनेसे बुढ़ापेको दूरकरताहै ॥ ६८१ ॥

६८२ मृत्युञ्जयरसः (अष्टमः)

द्विक्षारं त्र्यूषणं पञ्चलवणं शतपुष्पिकाम्।
समभागमिदं सर्वं पटचूर्णं समाचरेत् ॥ ३१५१ ॥
तत्समौ रसगन्धौ च कृत्वा कज्जलिकां शुभाम्।
सर्वमेकत्र सम्मेल्य मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥३१५२ ॥
अयं मृत्युञ्जयो नाम्ना रसः शीघ्रफलप्रदः।
कथितो मण्यलार्येण सन्निपातहरः परः ॥ ३१५३ ॥
सन्निपाते प्रयोक्तव्यो रक्तिकापञ्चमात्रकः।
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूत्थकटुभिर्वा समन्वितः॥३१५४॥
पीततोयं त्रिदोषार्तं निर्वाते शाययेत्ततः।
पथ्यं दध्योदनं देयं याचमानाय नाऽन्यथा ॥
गुणो न जायते यस्य तस्य देयो रसः पुनः ॥३१५५॥
हन्याद्वातगदं तथा कफगदं मन्दानलत्वं ज्वरं,
शूलं सर्वमहामयाञ्जठरजां पीडां यकृत्पाण्डुताम्।
शोफं गुल्मरुजं तथा ग्रहणिकां प्लीहामयं विड्ग्रहं,
वान्तिं गुल्मकृतां सकासमभितःश्वासञ्चहिक्कामपि ॥
आदौ सर्वोदराणाञ्च देयमुक्तं विरेचनम्।
गोमूत्रे वाऽथ गोक्षीरे योज्यमैरण्डतैलकम् ॥
कर्षमात्रं प्रयत्नेन शुद्धे देयो रसः पुनः ॥ ३१५७ ॥

र.र.स., र.सु., र.को., र.प्र., र.म.मा., उदराऽधिकारे।

भाषा—सज्जी, यवक्षार, त्रिकटु, पांचोंनमक, सोंफ, सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सबसे दूनी शुद्धपारद और गन्धककी नीलवर्णकज्जली मिलाकर तीनरोज शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ५-५ रत्ती चित्रक, अदरख, सेंधानमक और कुटकी इनकेसाथ देकर थोड़ाजलपिलाकर निर्वात स्थानमें सुलादेना। पसीना आनेपर पथ्यमांगे तो दहीभात देना अन्यथा नहीं। इसके देनेसे कुछ असर न मालूम हो तो एक घण्टे बाद दूसरी मात्रा देना। इसके प्रयोगसे त्रिदोषजनितव्याधि, वातरोग, कफरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, शूल, समस्त महारोग, उदररोग, यकृत्, पाण्डु, शोथ, गुल्म, ग्रहणी, प्लीहा, मलावरोध, गुल्मजनितवान्ति, कास, श्वास, हिक्का इनसबको यह नष्टकरताहै। उदररोगोंमें देनेकेपहिले गोमूत्र अथवा गोदुग्धकेसाथ एरण्डतैलका विरेचन देना। कोष्ठशुद्धहोनेपर रसका प्रयोग करना ६८२

६८३ मृत्युञ्जयरसः (नवमः)

त्रिकटु त्रिफला सूतगन्धकौ टङ्कणं विषम्।
यष्टी निशा कुबेराक्षो दन्तिबीजमथाऽपि च ॥३१५८॥
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेत्रिदिनं भिषक् ॥ ३१५९ ॥
गुटिका माषमात्रास्तु छायाशुष्काश्च कारयेत्।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
मृत्युञ्जयो रसो नाम सर्वरोगविदारणः ॥ ३१६० ॥

यो. र क्षये।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्ध पारा, गन्धक, टंकण और बछनाग, मुलहठी, हल्दी, करंजकेबीज, शुद्धजमालगोटा येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे ३ रोज मर्दनकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥६८३॥

६८४ मृत्युञ्जयरसः (दशमः)

वज्रभस्म रसभस्म मौक्तिकं
मर्दितञ्च खलु निम्बुवारिणा।
तच्च कुक्कुटपुटेन पाचितं
चूर्णयेन्मधुयुतं हि वल्लकम् ॥
वर्षमात्रमपि सेवितं जये-
न्मृत्युमेव सकला रुजा अपि ॥ ३१६१ ॥

र. प्र. सु. रसायने।

भाषा—हीरा, पारा और मोतीभस्म समभाग लेकर नीबूकेरसमें १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर २-३ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर कुक्कुटपुटमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती मधुकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे बुढ़ापा और समस्तरोग दूरहोतेहैं ॥ ६८४ ॥

६८५ मृत्युञ्जयरसः (एकादशः)

प्रवालमुक्ताफलवज्रतारा:
सुवर्णताम्राऽभ्रकनागसाराः।
यथोत्तरा वङ्गशिलाऽऽलगन्धाः
पलोन्मिताः सूतकसमभागाः ॥ ३१६२ ॥
चतुश्चतुः शङ्खकपर्दकानां
सुतिक्तजम्बीरविमर्दितानाम्।
अफेनमाक्षीकविषत्रयाणां
पलं पलं दन्तिफलान्वितानाम् ॥ ३१६३ ॥
समस्तमेकीकृतमत्र चूर्णं
दिनद्वयं चित्रकवारिपूर्णम्।
विशुष्कमङ्गारककाकतुण्डयो
स्नुगर्कधूर्ताऽमरनागशुण्ड्यः ॥ ३१६४ ॥
किरातभल्लातनिकुम्भकुम्भाः
कुठेरवीराकरवीररम्भाः।
बलात्रिवृद्भागबलाऽऽखुकर्णी
कटुत्रिकं शीतशिवाऽऽर्द्रकर्णयः॥ ३१६५॥
नताऽमृते काण्डरुहा सलज्जा
विषं वृषाक्षा भृगुजा सगुञ्जा।

अमीभिरुर्वीभुजगार्तियुक्तै-
वराहगोधाशिखिमीनपित्तैः ॥ ३१६६ ॥
पृथक्पृथक्साधितमन्तरस्थं
दृढे पुटे ताम्रमये विपक्वम् ।
सुशीतमुद्धृत्य कृतं रजश्च
रसो हि मृत्युञ्जयनामधेयः ॥ ३१६७ ॥
प्रणम्य मृत्युञ्जयमीशमर्क-
मुपेन्द्रवज्राऽधिपकाशिराजान् ।
प्रपूज्य विप्रान्भिषजश्च सम्य-
ग्रसं प्रयुञ्जीत यवप्रमाणम् ॥ ३१६८ ॥
सितोपलारक्तियुगेन मिश्रं
नराय दद्यात्कृतमङ्गलाय ।
सितादिसर्वं मधुरं फलानि
सुदाडिमादीनि च मांसवर्गम् ॥ ३१६९ ॥
बलं विदित्वा सकलं विदध्या
द्यत्राऽप्रकिञ्चित्परिहार्यमस्ति ।
विहाय कर्कारुककङ्कुकोल-
कपित्थकर्कोटककारवेल्लम् ॥ ३१७० ॥
करीरकोशातकिकाकमाची-
सबिल्ववृन्ताकतिलादिकं स्यात् ।
विजित्य मृत्युं बहुदोषमुग्रं
रोगी पुनर्जीवति तत्प्रभावात् ॥
अशेषदोषान्तकरो रसोऽय-
मतस्तु मृत्युञ्जयनामधेय ॥ ३१७१ ॥

टो, यो चि. ज्वराधिकारे।

भाषा—प्रवाल १ तो, मोती २ तो, हीरा ३ तो, रजत ४ तो, सुवर्ण ५ तो, ताम्र ६ तो, अभ्रक ७ तो, नाग ८ तो, फोलाद ९ तो, (इनसबरीभस्मैं) वज्रभस्म, शुद्ध मैनसिल, हरिताल और गन्धक ये सब ४-४ तोला, शुद्धपारा ७ तो, शङ्ख और कौडीकीभस्म ४-४ तोले लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चिरायता, और जभीरीके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर अफीम, सोनामाखी, शुद्ध बछनाग, सालुक और हारिद्रक, शुद्ध जमालगोटा १-१ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पूर्वपिण्डमें मिलाकर दोरोज चित्रकके रससे मर्दनकर सुखाकर पीयावासा, कावनासिका, धुअर, आक, धतूरा, देवदारु, करिहारी, सोंठ, चिरायता, भिलावा, जमालगोटा, विधारा, जगलीतुलसी, शतावर, कनेर, केला, वला, निसोत, नागबला, मूषाकर्णी, त्रिकटु, सफेदचन्दन, बद रस, गोकर्ण, तगर, गिलोय, दुब, लजालु, बछनाग, अडूसा, इन्द्रायण, भारङ्गी, सफेदगुञ्जा, कचरी, पान, कुठ, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर सुअर, गोह, कुक्कुट अथवा मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देकर गोलावनाय समस्तपिण्डकेबरावर तांबके सम्पुटमें भरके ६-७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे जवप्रमाण मात्रा महादेव, सूर्य, उपेन्द्र, इन्द्र, धन्वन्तरि इनसबकी पूजाकर ब्राह्मण और वैद्योंको सन्तुष्टकर दो तोले शक्करके साथ मिलाकर कृतमङ्गलरोगीको देना। शक्कर वगैरह मधुरपदार्थ, अनारवगैरहफल, मांसवर्ग रोगीके बलानुसार देना। ककड़ी, आडू, कागनी, बेर, कैथ, ककोड़ा, करेला, करीर, तरोई, मकोय, बेल, बेंगन, तिल इनको छोड़कर सबचीज खाय। इसकेसेवनसे समस्तसन्निपात और असाध्यरोग नष्ट होकर मनुष्यफिरसे जी उठताहै। समस्तदोषोंका नाश करनेसे इसका नाम मृत्युञ्जयहै ॥ ६८५ ॥

६८६ मृत्युञ्जयरसः (द्वादशः)

भार्गार्क मरिचञ्च लोहमपि सद्गन्धाश्म भागद्वयं,
लौहे न्यस्य गवां घृतेन घटिकामेकां पचेत्पावके।
तालं वह्निलवं समुद्रलवणं म्लेच्छं शरांशं विषं,
सर्वांशं जयपालकश्च कटुकीकाथास्तथा चित्रकात् ॥
भाव्यं राममितं तथाऽऽर्द्रकरसात्त्रिः सत्कृत्यो दृढं,
सम्मर्द्याऽऽतपशोषितं शतदलैः पुष्पैः समभ्यर्चितम्।
गुञ्ज्याद्गुञ्जमितं ज्वरे तु सहसा सामे निरामे नवे,
जीर्णे वा विषमे समीरणभवे पित्तोत्थिते श्लेष्मजे ॥
द्वन्द्वोत्थे घनसन्निपातजनिते सोपद्रवेऽप्युल्बणे,
शैत्ये स्वेदयुतेऽपि मान्द्यजठराऽऽनाहेषु सर्वार्तिषु।
शुष्के शोफयुतेऽपि पाण्डुगदके विष्टम्भजत्वादिषु,
व्योषाऽऽर्द्रेण ससैन्धवेन च सदाजीराऽम्बुना पित्तजे॥
पित्ते क्षौद्रसितादिना तदनु वा वार्यं भवेच्छीतलं,
सोष्णं वा तिलतैललेपिततनुः तापाऽनुरूपं पुनः।
रेके जीवति नाऽन्यथाऽप्यतिरुचौ मुद्गाम्बु सच्छर्करं,
पथ्यं भक्तमरिष्टदुग्धदधियुक् द्राक्षेक्षुसद्दाडिमम् ॥
खर्जूरं ससितञ्च लेपनमहो कर्पूरकस्तूरिका,
काश्मीरं शितनीपजं तदनु वा रम्भादलैः संस्तरः।
पीनोद्गसकुचस्थलीसुललनास्वालिङ्गनं चुम्बनं,
पथ्यं मृत्युजये रसे समुचितं सत्तालवृन्तानिलः॥

र श, र प, र यो, ज्वराधिकारे।

टि०—रसपद्धत्यां जयपाल षड्भागो नियोजित। रसबोधचन्द्रोदये ग बाऽऽज्यभागद्वयमित्यस्य स्थाने दुग्धाऽश्मभागद्वयमिति नियोजित तत्र दुग्धाश्मशब्देन श्वेतमहो ग्रहीतव्य, तन्नियोजनमपि साधु प्रति भाति परन्तु तन्मात्रा मुद्गसमा कर्तव्या, मल्लयोजनेन तीक्ष्णवीर्यत्वात्। रसबोधचन्द्रोदयरसपद्धत्यो र्भाव्य राममितमित्यस्य स्थाने सप्तमिति पाठोऽस्ति, अन्यत्सर्वं समानम्।

भाषा—मरिच और लोहभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, लेकर लोहेकेवर्तनमें डालकर सबकी बराबर गायका घी डालकर एकघड़ी पकावे। घीसूखनेपर उतारकर हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य ३ भा, ताम्रभस्म ४ भा, शुद्धबछनाग ५ भा. शुद्धजमालगोटा सबकीबराबर मिलाकर कुटकी, चित्रक, इनके स्वरस अथवा क्वाथसे ३-३ भावनाएं देकर अदरखकेरसकी

ऊर्द्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेल्ललनासु प्रियो भवेत् ।
तप्तहाटकसंकाशः श्रीधीमेधाविभूषितः ॥ ३१८७ ॥
हयवेगो मयूराक्षो वाराहश्रुतिरेव सः ।
अपरः कामदेवो वा मानिनीमानमर्दनः ॥ ३१८८ ॥
शाल्यन्नं गोपयः खण्डं सिता जाङ्गलमामिषम् ।
गोधूमजान्विकारांश्च मापान्नं कदलीफलम् ॥३१८९॥
पनसञ्चाऽपि खर्जूरं वातामं नारिकेलकम् ।
मधुरञ्च भजेत्प्राशी वर्षमात्रमतन्द्रितः ॥
मात्राऽस्य मापप्रमिता सदा सेव्या नरोत्तमैः ॥३१९०॥

र. सु., रसायनस., र. सं क, र म मा, र प्र, प्रमेहाऽधिकारे

भाषा—सुवर्ण, रजत, हीरा इनकीभस्में समभाग लेकर मुशली, मूषाकर्णी, विजोरा, मोचरस, केवाच इनके रसोंसे ३–३ दिन भावना देकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, सबप्रकारके प्रमेह, जीर्णज्वर, अतिसार, ग्रहणी, बहुमूत्रता, धातुक्षीणता, नपुंसकता, इनसबको यह दूरकरताहै। बुढ़ापेको हटाकर बुद्धि और कान्तिको बढ़ाताहै। स्त्रियोंके मानको भङ्ग करताहै। चावल, गायकादूध, शकर, जाङ्गलमास, गेहूं और उड़दके पदार्थ, केला, कटहर, खजूर, बादाम, नारियल, समस्त मधुरपदार्थ इसमें सेवनकरनेयोग्यहै ॥ ६९० ॥

६९१ मृत्युञ्जयरसः (लघुः) (सप्तदशः)

कर्षं शम्भुद्रवस्यैकं कर्षं स्याद्दरदस्य च ।
जैपालस्य च शुद्धस्य त्रयमेतद्दिनद्वयम् ॥ ३१९१ ॥
वृद्धदारकनीरेण खल्वे कृत्वा विमर्दयेत् ।
अथोदुम्बरपर्णानां स्वरसेन विभावयेत् ॥ ३१९२ ॥
शृङ्गवेररसेनाऽमुं दिवारं विमर्दयेत् ।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा सितया सह भक्षयेत् ॥
मृत्युञ्जयरसो नाम नवज्वरहरः परः ॥ ३१९३ ॥

र. प्र, र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पारदभस्म, शुद्ध शिंगरिफ और जमालगोटा समभाग लेकर एकपहर सुखामर्दनकर विधारा, गूलर, इनके रसोंसे २–२ दिन और अदरखके रससे १ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शकरकेसाथ खानेसे नवज्वरका नाश होताहै ॥ ६९१ ॥

६९२ मृत्युञ्जयरसः (महान्) (अष्टादश.)

सूतकञ्च विषं नागं गन्धकञ्च चतुष्टयम् ।
समं सर्वं विघृष्टव्यं शिखिना तद्दिनद्वयम् ॥ ३१९४ ॥
तस्य कल्कस्य पादैकं मृन्मये दृढभाजने ।
क्षिप्त्वा हेम्नोऽपि कर्तव्या पत्रेण समपत्रिका ॥३१९५॥
दातव्या तस्य कल्कस्य ह्युपरिष्टाद् दृढायसी ।
पुनः शरावके दत्त्वा कुर्यात्सन्धिनिरोधनम् ॥ ३१९६ ॥
विशोष्य वालुकां दद्यादुपरिष्टात्समन्ततः ।
याममेकमथो चुल्ल्यां पाचयेन्मन्दवह्निना ॥ ३१९७ ॥
अनेनैव विधानेन पत्रिकां मारयेत्क्रमात् ।
समाप्यैवञ्च सकलं हेमचूर्णं रसस्य च ॥ ३१९८ ॥
विषं भागैकमेकञ्च चतुर्भागञ्च मौक्तिकम् ।
गन्धकं भागमेकं स्यात्पश्चात्सर्वं तदौषधम् ॥३१९९॥
मर्दयेदेकतः कृत्वा चित्रकस्य रसेन च ।
पुटित्वा किञ्चिदेवैतत्पिण्डरूपं तदुद्धरेत् ॥ ३२०० ॥
क्षये कासेऽम्लपित्ते च श्वासे कण्ठामयेषु च ।
शाल्मलीद्रवसंमिश्रं पुष्टिहेतोः प्रयोजयेत् ॥ ३२०१ ॥
मरिचेन समं देयो कफरोगेषु पारदः ।
शूले च परिणामे च घृताक्तमधुमिश्रितः ॥ ३२०२ ॥
गुडूचीजीरकै युक्तः स्वरभङ्गे प्रदापयेत् ।
पित्ताऽधिकेषु रोगेषु शाल्मलीद्रवमिश्रितः ॥३२०३॥
अन्यान् सर्वानयं रोगान्रोगयोग्याऽनुपानतः ।
नाशयत्यचिरेणाऽयं दुस्तरानतिवेगतः ॥ ३२०४ ॥
तैलं राजीवबिल्वञ्च वर्जयेदम्लसेवनम् ।
अयं मृत्युञ्जयो नाम रसो रोगारिरुत्तमः ॥ ३२०५ ॥
वारणप्रमितं कुर्याच्छरीरमजराऽमरम् ।
न शक्यन्ते गुणा वक्तुं रसस्याऽस्य नरैः ध्रुवम् ॥३२०६॥

रसचि., र. सु., र प्र, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, नागभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकके रससे दोरोज़ मर्दनकर चार विभाग करदे। कल्कसे चतुर्थांश सुवर्णलेकर पत्तेके सदृश बारीकपत्र बनाकर उसपर एकभाग कल्कको लपेटकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखाय बालुकायन्त्रमें १ पहर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसीतरह से लेपनकर पकावे। ऐसे चारपुटोंमें कल्कको समाप्तकरनेपर सुवर्णकीभस्म होजायगी। परन्तु क्रमसे अग्निको १–१ पहर बढ़ावे, चौथीआग ४ पहरकी देनी चाहिये नहींतो कच्चा रहेगा। यह सुवर्णभस्म, पारदभस्म, शुद्धबछनाग और गन्धक १–१ भाग, मोतीकीपिष्टी अथवा भस्म ४ भाग लेकर सबको एकदिन चित्रकके रससे इकट्ठे घोटकर गोलाबनाय पानोंमें अच्छीतरह लपेटकर कच्चेसूतसे बांधदे। फिर एकबालिस्तका खड्डा खोद बीचमें दूसरा खड्डा गोलाआनेलायक खोदकर ऊपर ४ अङ्गुल बालूसे ढकदे। बाकीके खड्डेमें जङ्गलीकण्डोंके टुकड़ेभरके आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पानरहित घोटकर १ से २ रत्तीतककीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ क्षय, कास, अम्लपित्त, श्वास और गुल्मरोगमें दे। पुष्टिकेलिये मोचरसकेसाथ दे। कफरोगोंमें ७–१४ अथवा २१ मरिचोंकेसाथ, शूल और परिणामशूलमें घी और मधुकेसाथदे। स्वरभङ्गमें गिलोय और जीरेकेसाथ, पित्ताधिकरोगोंमें मोचरसकेसाथ दे। इसप्रकार अन्यन्न दुस्तररोगोंको यह योग्यानुपानसे देनेसे नष्टकरताहै। तैल, कमल, बेल, अम्लपदार्थोंको छोड़दे। इसके हमेशा सेवनकरनेसे समस्तरोगोंसे मुक्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९२ ॥

६९३ मृत्युञ्जयरसः. (ऊनविंशः)

गायत्रिकामन्त्रितमामलक्या
रसेन लीढं कनकस्य चूर्णम् ।
धात्रीरजस्तुल्यमिदं नराणां
रिष्टं समुत्पन्नमपाकरोति ॥ ३२०७ ॥

लो. प. (स.) अरिष्टनाशे ।

टि०—यद्यप्यस्मिन्योगे रिष्टं समुत्पन्नमपाकरोतीति सामान्यतया सरलरीतिरुद्दिष्टा परन्तु नैतावता उत्पन्नरिष्टस्य निरसनं बुद्धयारूढं भवति। अनयैव सरलरीत्या चेदरिष्टं नाशमायास्यत् तर्हि इदानीमपि योगकारेण साकमस्मदादीनाम् सम्भाषणादिकमपि समुदयिष्यत । तेन रोचकार्थमात्रमिदं वाक्यं प्रतिभाति अतः पूर्वं कृतगायत्रीपुरश्चरणः सुश्रुतीयमेधायुष्कामीयरसायनोपदेशविधानेन बिल्वकल्पेन तुल्यमस्य पुरश्चरणस्यैव तदरिष्टोपशान्तिः सम्भावनीया । यथा "अग्नौषधमायुष्कं सम्वत्सरफलप्रदम् । बिल्वस्य चूर्णं पुष्ये तु हुत्वा वारान् सहस्रशः । श्रीसूक्तेन नरः कल्ये ससुवर्णं दिने दिने। समश्नियंधुयुत स्थिरादलक्ष्मीनाशनं परम् ।" इत्यादीत्यादि सुश्रुत चि., २८।८।१० पुरश्चरणमन्तराप्यनेन योगेन शुभावाप्त्यवश्य भविष्यतीति मत्वा प्रयोगकरणे धात्रीरजसोऽर्धं कर्षं कर्षं वा यथाभिबलं गृहीत्वा सुवर्णभस्मनो रत्तिमेकं निक्षिप्य घनमधुना समालोड्य लीढ्वा यथाशक्ति यथोचितं वा धात्रीरसानुपानं कर्तव्यम् शनैः शनैः कनकभस्मप्रमाणं रक्तिचतुर्थभागादारभ्य रक्तिमितपर्यन्तं वर्धनं कर्तव्यमिति कल्परहस्य मधुघृतसमावापस्तु यथोचितं कर्तव्य इति दिक् ।

भाषा—परिपक्व और छायाशुष्क किये हुए आंवलोंके चूर्णकी बराबर आंवलोंके रससे निरुत्थभस्म किया हुआ सुवर्ण, ये दोनों समभाग मिलाकर रखछोडे इसमेंसे दो रत्तीसे चार रत्तीतककीमात्रा लेकर परिपक्व आंवलोंका आधेतोले से एकतोलेतक रस मिलाके "अजपा" गायत्री अथवा ब्रह्मगायत्रीसे एक हजार अभिमन्त्रितकर चाटनेसे उत्पन्नारिष्टभी दीर्घायुको प्राप्त होताहै ।

६९४ मृत्युञ्जय लोहम् (प्रथमम्)

त्रिफला लोहजं चूर्णं रक्तचित्रकजा जटा ।
भूतकेशाम्रजं बीजं पलाशं क्षुद्रदुग्धिका ॥ ३२०८ ॥
एतदष्टकमादाय पृथक् पञ्चपलोन्मितम् ।
मिश्रयित्वा पलाशस्य सर्वाङ्गरससमावितम् ॥ ३२०९ ॥
महाकालजबीजानां भागत्रयमथाऽऽहरेत् ।
भागं कृष्णतिलस्यैकं मिश्रयित्वा निपीडयेत् ॥ ३२१० ॥
तेन तैलेन तच्चूर्णं पिण्डीकार्यं विमर्दनात् ।
स्निग्धे भाण्डे तदाधाय शरावेण निरोधयेत् ॥ ३२११ ॥
लिप्त्वा तदा सुधान्यस्य पलालौघे निधापयेत् ।
मासमात्रात्समाहृत्य पूजयित्वा शिवां शिवम् ३२१२
तोलकं भक्षयेत्प्रातस्तोलकं भोजनोपरि ।
एवं मासत्रयाऽभ्यासात्पलितं हन्त्यसंशयम् ॥
वर्षेकेण जरां हत्वा मृत्युं जयति मानवः ॥ ३२१३ ॥

यो. म., रसायनाधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, लोहेकावारीकरेता, लालचित्रकीजड, आम और जङ्गलीआमकी गुठली, पलाशपापडा, छोटीदूधी ५-५ पल लेकर बारीकचूर्णकर पलाशके पञ्चाङ्गके रससे ३-४ भावनाएं देकर बराबरकेकालेतिल और तिगुना महर (महावारुणी)केबीजोंका तैल डालकर एकदिनमर्दनकर चिकनेवर्तनमें रखकर शरावसे ढक कपड़मिट्टीकर जव या गेहूंकी राशि अथवा पयारमें दबादे । एक महीनेकेबाद निकालकर रखछोडे । फिर शिव और गौरीका पूजनकर अच्छे मुहूर्तमें इसमेंसे १-१ तोला सुबह और भोजनके ऊपर खावे, भोजनमें दूध, भातकेसिवाय कुछ न ले । इसतरह ३ महीनेतककरनेसे बाल कालेहोजातेहैं । एकवर्षतक प्रयोगकरनेसे बुढ़ापेको दूरकर मनुष्य मृत्युको जीतता है । टि०—लोहेकेरेतेमें त्रिफलाकाचूर्ण और पलाशके पञ्चाङ्गकास्वरस डालकर यहांतक मर्दनकरे कि लोहेकीभस्म होजाय इसमें त्रिफलाकाचूर्ण थोड़ा २ देना चाहिये । इसतरह लोहभस्मतैयारहोनेपर सबचीज़ें मिलावे ॥ ६९४ ॥

६९५ मृत्युञ्जयलोहम् (द्वितीयम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं जारिताऽभ्रं तथा समम् ।
गन्धकाद्द्विगुणं लौहं मृतताम्रं चतुर्गुणम् ॥ ३२१४ ॥
क्षिक्षारं टङ्कणविडं वराटमथ शङ्खकम् ।
चित्रकं कुनटी तालं कटुकीं रामठं तथा ॥ ३२१५ ॥
रोहीतकं त्रिवृच्चिञ्चे विशाला धवलाङ्कठम् ।
अपामार्गस्ताललिण्डमल्लिका च निशायुगम् ३२१६
कानकं तुत्थकञ्चैव वक्रम्मर्दं रसाञ्जनम् ।
एतानि क्षितिभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३२१७ ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च ।
मधुनः कुडवाद्वाढ्यं वटिका माषमात्रतः ॥ ३२१८ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषानुसारतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३२१९ ॥
प्लीहानं ज्वरमुग्रञ्च कासञ्च विषमज्वरम् ।
चिरजं कुलजञ्चैव श्लीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३२२० ॥
रोगानीकविनाशाय धन्वन्तरिकृतं पुरा ।
मृत्युञ्जयमिदं लोहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३२२१ ॥

र. सं., र. सु., भै. र., ध., र. चि., उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भा., ताम्रभस्म ४ भा., यवक्षार, सज्जीखार, सुनागुहागा, नवसादर, पीलीकौड़ी तथा शङ्खभस्म, चित्रक, शुद्ध मैनसिल और हरिताल, कुटकी, भुनाहींग, मारवाडी रोहिडेकीछाल, निसोत, इमली, इन्द्रायण, सफेद अड्डोळचीजड, अपामार्ग, ताड़वाली, अमलोनियां, हल्दी, दारुहल्दी, धतूरेके बीज, शुद्धतूतिया, चक्रपुड, रसौत येसब १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी कजलीमें मिलाकर अदरख और गिलोयके स्वरससे १-१ रोज़ मर्दनकर १६ तोले मधुमें घोटकर १-१ माशेकीगोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ प्रातःकाल देनेसे प्लीहा, उग्रज्वर, भीषणकास, विषमज्वर, बहुतदिनका तथा वंशपरम्पराका फीलपांव, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६९५ ॥

६९६ मृत्युहारीरसः

अयः पत्रं तिलोत्सेधं प्रतप्तं चतुरङ्गुलम् ।
एकविंशतिपर्यायं धात्र्या निर्वापयेद्रसे ॥ ३२२२ ॥
ततः शतपलं स्थाल्यां क्षिप्त्वा धात्रीरसोत्तमम् ।
कृत्वा तत. सुपिहितं भस्मराशौ विनि.क्षिपेत् ३२२३
मासिमासि समुद्धृत्य लोहदण्डेन घट्टयेत् ।
तस्मिन्विशुष्यति प्राग्वद्रसं धात्र्या विनि क्षिपेत् ३२२४
द्रवीभवति तत्सर्वं वत्सरात्पत्रमायसम् ।
ततः समन्ततोऽङ्गुष्ठपर्वमात्रमुखेन तु ॥ ३२२५ ॥
आयसेन स्रुवेणाऽय.पात्रे कल्कीकृतं ततः ।
शृतं पृथक् समांशेन सेवेत मधुसर्पिषा ॥ ३२२६ ॥
जीर्णे साऽऽज्यं रसक्षीरयूपान्यतममिश्रितम् ।
षष्टिकोदनमश्नीयादुपयुञ्जीत वत्सरम् ॥ ३२२७ ॥
धर्ममन्यच्च शिष्टानां यन्त्रितात्मा कुटी वसेत् ॥
अगम्यो रुजरामृत्युशस्त्राऽग्निविषतोऽरिभिः ।
जीवेद्वर्षसहस्रं वै सर्वमाप्स्यतीन्द्रियः ॥ ३२२८ ॥

र र स, रसायने ।

भाषा—तिलसदृशमोटे और ४-४ अङ्गुल चौड़े लोहेके पत्र बनवाकर गरमकरके पकेहुएआवलोंके स्वरसमें २१ बार बुझावे । इसप्रकार १०० पल लोहेको बुझाय किसी मजबूत मिट्टीकी हंडीमें भरदे । हडीमें उतनाही आवलोंकारस भरके ढक्कन लगाय अच्छीतरह कपड़मिट्टीदेकर मनुष्यकेबराबर ऊंची भस्मकी ढेरीमें दबादे । १-१ महीनेकेबाद निकालकर लोहेके डण्डेसे मर्दनकर फिर रसभरकर दबादे । ऐसे १ वर्षबाद निकालकर अगूठेके प्रथमपर्वके बराबरमोटे लोहेके डण्डे अथवा कड़छीसे घोटकर कल्क बनाले । इसमेंसे १-१ तोला कल्क लेकर अग्निपर रख पकाकर सुखाले, इसमें मधु और घी मिलाकर सेवनकरे । पाचन होनेपर घीकेसाथ मासरस, दूध और मूगकेयूपकेसाथ साठीचावल खाय और एकवर्षतक उत्तम अन्नका सेवनकरे । इसका सेवन कुटीप्रवेशविधिसे जितेन्द्रियहोकर करनेसे व्याधि, बुढापा, मृत्यु, शस्त्र, अग्नि, विष और शत्रुओंसे अगम्य होकर एकहजारवर्षकी आयुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९६ ॥

६९७ मृद्दारभस्मयोगः

खण्डं मृदारशृङ्गस्य निक्षिपेन्निम्बुजे त्र्यहम् ।
शरावसम्पुटे न्यस्य पुटं दद्यात्प्रयत्नतः ॥ ३२२९ ॥
जायते शोभनं भस्म भावयेत्त्रिफलाऽम्बुभिः ।
कुमारीमूत्रजम्बीरैस्त्र्येकैकं त्रिक्रमेण च ॥ ३२३० ॥
सिद्धं भस्म ततो जातं योज्यं मेहोपदंशयोः ।
हरिद्रामधुसंयुक्तं मेहे गुञ्जामितं लिहेत् ॥ ३२३१ ॥
देवपुष्पमरीचाभ्यामुपदंशेऽथवा घृते. ।
अथवा शर्करामिश्रं सेवयेद्रोगमुक्तये ॥ ३२३२ ॥

रसायन स, मेहाधिकारे ।

भाषा—मुर्दासङ्कके टुकड़ेकर नीबुकेरसमें ३ रोज भिगोकर शरावसम्पुटमें बन्दकर १० सेर कण्डोंकी आंच देनेसे उत्तमभस्म होजातीहै । इसको त्रिफला, घीकुआर, गोमूत्र और जमीरीके स्वरसोंकी ३, १, १, ३ इसक्रमसे भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा हल्दी और मधुकेसाथ प्रमेहमेंदे । लौंग और मरिचकेचूर्ण अथवा घृत अथवाशक्करकेसाथ उपदंशमें देवे तो इनरोगोंसे निवृत्त होजाताहै ॥ ६९७ ॥

६९८ मृद्विरेचनम्

इन्दुलोचननेत्राणि शिखिभागञ्च योजयेत् ।
त्रुटिगन्धकमृद्दारशतपुष्पाविचूर्णितम् ॥ ३२३३ ॥
माषद्वयं गवां दुग्धैः सेवयेद्दिनपञ्चकम् ।
रेचयेन्मृत्तिकां शुद्धां शिशूनां हितमौषधम् ॥ ३२३४ ॥

र च, पाण्डुरोग ।

भाषा—इलायची १ भाग, गन्धक २ भा, मुर्दासङ्ग २ भा, सौंफ ३ भा, लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-२ माशे गोदुग्धकेसाथ देनेसे ५ दिनमें बच्चोंकी खाईहुईमिट्टी दस्तमें निकलजातीहै ॥ ६९८ ॥

६९९ मेघडम्बररसः

तण्डुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यञ्च गन्धकम् ।
वज्रमूषागतं कृत्वा भूधरे भस्मतां नयेत् ॥ ३२३५ ॥
दशमूलकषायेण भावयेत्प्रहरद्वयम् ।
गुञ्जाद्वयं जयत्याशु हिक्काश्वासव्रणज्वरान् ॥ ३२३६ ॥
अनुपानेन दातव्यो रसोऽयं मेघडम्बरः ।
अभया पिप्पली भार्ङ्गी पुष्करं कर्कटी शटी ॥
शर्कराऽष्टगुणे योज्यमनुपानं सुखावहम् ॥ ३२३७ ॥

र र, र को, नि र, रसायनस, र सु, र को, वै चि, र चि, र च, भै सा, र सि, र (मा) र म., र का, यो म., व रा, र क ल, टी, हिक्काश्वासयो । बलवराजीये अनुपाने अभयास्थाने नागरं स्मयते ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर कांटेवालीचौलाईके रससे २-३ दिनमर्दनकर गोलीबनाय मुर्गी अथवा बतखके अण्डेमें छोटीअङ्गुली आनेलायक गोलछिद्रकर अन्दरका पदार्थ निकालकर गोलीकोरख चौलाईका रसभरके दूसरे अण्डेकी खोल चढाय सफेदअभ्रक और चूनेकोपानीमें बारीक पीस आधा अङ्गुलमोटा लेपचढादे । सूखनेपर पुरानीरुई और मुलतानीमिट्टीको बारीककूटकर एकखोल और चढादे । सूखजानेपर भूधरयन्त्रमें रख कुक्कुटपुटकी अग्निदे । ऐसे ४-५ अग्नियें देकर पारेको भस्म बनाले । अथवा वज्रमूषामें गोलेको रख रसभरकर सम्पुटपर्यन्त मिलाकर आंचदेकर भस्म बनावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दशमूलके काढेसे २ पहरतक घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हर्रे पीपल, भारङ्गी, पोहकरमूल, काकड़ाशृंगी, और कचूर समभाग लेकर अठगुनी शक्करमिलाकर इसकेसाथ देनेसे हिचकी, श्वास, ज्वर, और व्रणमात्रको यह दूरकरताहै ॥ ६९९ ॥

७१० मेघनादरसः (एकादशः)

तारं ताप्यं बलिरससहितं मर्दितं वासरैकं,
कन्याऽनन्तासुरतरुजलैः वालकाऽङ्घ्रि विभाव्यम्।
देयं तृष्णाश्रमविषमथिते भ्रान्तचित्ते व्यथार्ते,
सिद्धस्तृष्णादवगणदलने मेघनादो रसेशः॥३२६६॥

र., तृष्णायाम्।

भाषा—रजत और सोनामाखीकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुँवार, जवास, देवदारु, सुगन्धवाला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोजमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे तृष्णा, श्रम, विषम ज्वर, चित्तविक्षेप, और तमाम पीडाओंको यह नष्टकरताहै७१०

७११ मेघनादरसः (द्वादशः)

दरदं टङ्कणञ्चैव सैन्धवञ्च कटुत्रयम्।
त्रिफला हारहूरा च कृमिघ्नं रामठं तथा॥ ३२६७॥
दस्युर्दीप्यं समानञ्च दन्ती सर्वार्द्धभागिका।
जम्बीरधारा सम्मर्द्य चणकस्य प्रमाणतः॥ ३२६८॥
उष्णोदकानुपानेन कुर्य्यामान्तं विरेचनम्।
तस्योपरि हितं देयं पथ्यं दध्योदनं परम्॥ ३२६९॥
उदरे पाण्डुशोफे च शोफोदरजलोदरे।
सर्वज्वरे च विषमे मेघनादः प्रशस्यते॥ ३२७०॥

र.च, र रा, यो.र, रेचनाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, सुहागा, सेंधानमक, त्रिकटु, त्रिफला, हुरहुर, विडङ्ग, हींग, चोरक, अजवाइन येसब समभाग, शुद्ध-जमालगोटा सबसे आधा लेकर सबका बारीक चूर्णकर जंभीरी-केरससे १–२ रोज मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियां बनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे कृमि और आम निकलनेतक विरेचनहोताहै। भूखलगनेपर दही और चावल देना। इसकेदेनेसे उदर, पाण्डु, शोथोदर, जलोदर, समस्त विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ७११॥

७१२ मेघनादरसः (त्रयोदशः)

कारयेच्छोधनैः शुद्धताम्रगन्धकपारदान्।
गन्धकं द्विगुणं ताम्रात्खल्वे दुग्धेन पेषयेत्॥३२७१॥
तस्य पूपाढ्यस्यान्तस्ताम्रपत्रं क्षिपेद्बुध.।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा वस्त्रमृद्भ्याञ्च वेष्टयेत् ३२७२
उत्पलैः पूर्णगर्तायामग्र्ये प्रक्षिप्य दीपयेत्।
तन्मध्यात्ताम्रमाकृष्य खल्वे नीरेण पेषयेत्॥३२७३॥
तच्च मृत्स्नान्धमूषायां ध्मातं दोषैः प्रमुच्यते।
ताम्रतुल्यं चतुर्थांशं स्वंस्वं गन्धकसूतयोः॥ ३२७४॥
सम्पेष्य कज्जलीं कृत्वा ताम्रचूर्णे क्षिपेत्सुधीः।
ताम्राद्द्विगुणं चूर्णमतो मार्चारसं क्षिपेत्॥ ३२७५॥
मिश्रचूर्णं समं चूर्णं मरीचानां क्षिपेत्ततः।
ताम्रस्याऽर्द्धं वत्सनाभं विषखण्डेन भावयेत् ३२७६
मेघनादरसो नाम्ना निष्पन्नः सर्वरोगहा।
वल्लमात्रो जलसमं मरिचस्य क्रमेण वै॥ ३२७७॥
स गद्याणैकमात्रो हि दातव्यो दृढरोगिषु।
पित्तक्षयाऽबलाऽजीर्णाऽतीसारांश्च वर्जयेत्॥३२७८॥

र.कं.ली, सर्वरोगे।

टि०—अत्र काकमाचीशब्दस्थाने अन्त्यपूर्वाक्षरलोपेन माचीशब्द सन्निवेशित इति बोद्धव्यम्।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग, शुद्धताम्रपत्र १ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर दूधकेसाथ कज्जलीको पीसकर तावेके पत्रपर रोटीकी तरह चढ़ादे फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीलपेटदे। सूखनेपर पूरे गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मिट्टीकी अन्धमूषामें धमनकरके गलानेसे यह समस्तदोषोंसे रहितहोजा यगा। फिर तांवेकी बराबर गन्धक और चतुर्थांश पारा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तांवेकेसाथ मिलाकर तांवेसे अठगुना पत्थर चाचूना और चुनेसे अठगुना मकोयकारस. इस समस्तपिण्डकी बराबर मरिचकाचूर्ण, तांवेसे आधा शुद्धवछनाग मिलाकर वछ-नागकेरस अथवा क्वाथसे एकरोज़ घोटकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ मरिच प्रमाणसे ३ रत्तीतक धीरे २ बढ़ावे और ३ रत्तीपर मात्रा कायमकरे। इसतरह ६ मासेतक सेवनकरनेसे बहुतपुराने और हठीले मूलबद्धरोगोंको यह दूरकरताहै। पित्तक्षयी, कृश, अजीर्णी और अतिसारी पर इसप्रयोगको न करना॥ ७१२॥

७१३ मेथीपाकः

मेथीपलचतुष्कञ्च कणा द्विपलमानतः।
सञ्चूर्ण्य षट्दुग्धेन पाचयेद्वह्निना ततः॥ ३२७९॥
प्रस्थद्वयमितं खण्डं मुच्यते चूर्णकं तदा।
सूतं लवङ्गं त्रिगुडं लोहं केशरमभ्रकम्॥ ३२८०॥
पुष्पं जातीफलं जातीपत्री नागकुबेरकैः।
एतेषां पलमानेन सर्वमेकत्र कारयेत्॥ ३२८१॥
प्रभाते पलमानेन योजयेद्वाग्ययोगतः।
तस्य सर्वशिरोत्पन्नं रोगजालं ध्रुवं हरेत्॥ ३२८२॥
सर्ववातसमूहञ्च भ्रमच्छर्दिकफव्यथाम्।
मेथिकापाकनामाऽयं वृद्धानां प्राणदायकः॥ ३२८३॥

रसायनसं, वातरोगे।

भाषा—मेथी ४ पल, पीपल २ पल लेकर बारीकचूर्णकर १६ सेर दूध डालकर मावा बनावे। तैयारहोनेपर २ सेर शक्कर डालकर चाशनीकरले फिर पारदभस्म अथवा रससिन्दूर, लौंग, खजूर, ताड और ईखकागुड़, लोहभस्म केशर, अभ्रक-भस्म, नागकेशर, जायफल, जावित्री, नागभस्म, करंजके बीजोंकी गिरी, येसब १–१ पल मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे १–१ पल दूधकेसाथलेनेसे समस्तशिरोरोग, वातविकार, भ्रम, छर्दि, कफरोग, इनसबको यह नष्टकर बुड्ढोंको फिरसे जवानी देताहै॥ ७१३॥

७१४ मेदिनीसाररसः

पलत्रयमितं लोहं मृतं शुल्वं पलत्रयम् ।
भृङ्गराजाऽम्बुगोमूत्रत्रिफलाक्वथितैः पृथक् ॥३२८४॥
पुटेत्त्रिवारं यत्नेन ततस्तस्मिन्विनि.क्षिपेत् ।
अत्यम्लकाञ्जिकं पश्चात्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ३२८५ ॥
पुनश्च तुल्यगन्धेन दद्याच्च पुटविंशतिम् ।
पलमात्रं मृतं सूतं रुद्रांशममृतं तथा ॥ ३२८६ ॥
कटुत्रयं समं सर्वैः पिष्ट्वा सम्यग्विधारयेत् ।
रसोऽयं मेदिनीसारो नन्दिना परिकीर्तित. ॥३२८७॥
सेवितो वल्लमानेन घृतत्रिकटुकान्वितः ।
हन्ति कुष्ठानि सर्वाणि चित्राणि विविधानि च ॥३२८८॥
गुल्मप्लीहामयं हिक्कां शूलरोगं हरेत्तथा ।
उदावर्तं महारोगं कफं मन्दानलन्तथा ॥ ३२८९ ॥
गलग्रहं मदोन्मादं कर्णदन्तव्यथां तथा ।
सर्पादिजं विषं घोरं व्रणं लूतां भगन्दरम् ॥ ३२९० ॥
विद्रधिश्चाऽन्त्रवृद्धिश्च शिरस्तोदश्च नाशयेत् ।
दधिमूलकमाषान्नविदाहीनि गुरूणि च ॥
पापकर्माणि सर्वाणि कुष्ठयुक्ता विवर्जयेत् ॥ ३२९१ ॥

र म मा , र को., र र स , र र कौ , कुष्ठे।

भाषा—लोह और ताम्रभस्म ३–३ पललेकर भंगरा, गोमूत्र और त्रिफलाकेक्वाथसे ३–३ भावनाए देकर एकदमखट्टी काञ्जी मिलाकर ४ पहर मन्द अग्निसे पकावे । फिर अग्निपरसे उतारकर ठढाहोनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाकर पूर्वोक्तद्रवोंकी २० पुटें देकर पारदभस्म १ पल, शुद्धवछनाग पलका ११ वा भाग, त्रिकटु सबकीबराबर मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्तीकी- मात्रा घी और त्रिकटुकेसाथ लेनेसे चित्रविचित्र समस्तकुष्ठ, गुल्म, प्लीहा, हिक्का, शूल, उदावर्त, महारोग, कफरोग, मन्दाग्नि, गलग्रह, मद, उन्माद, कान और दातोंकीपीडा, सर्पादिकोंका जङ्गमविष, व्रण, मकड़ीकाविष, भगन्दर, विद्रधि, अन्त्रवृद्धि (सारनगाठ), शिरकीवेदना, इनसबको यह नष्टकरताहै । दही, मूली, उड़द, विदाही और गरिष्ठ पदार्थ, समस्तपापकर्म इन सबका कुष्ठी त्यागकरे ॥ ७१४ ॥

७१५ मेदोध्वंसीरसः

रसगन्धकतालानां शुद्धानां भागमुत्तमम् ।
दन्तीबीजञ्च मतिमान्निक्षिप्यैकत्र मर्दयेत् ॥ ३२९२ ॥
त्रिदिनं कटुकीद्रावै. कृतमालद्रवैस्तथा ।
पुनर्नवायाः सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ३२९३ ॥
एवं कृत्वा त्रिवारं तु तत. सिद्धो भवेद्रस ।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्क्षौद्रतोयं पिबेत्पुन. ॥
मेदस. सप्तरात्रेण निवृत्तिर्जायते ध्रुवम् ॥ ३२९४ ॥

र म मा , ना वि , मेदारोग । ना वि मेदोहर इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल और जमालगोटा समभागलेकर कज्जलीबनाय कुटकी और अमिलतासके क्वाथोंकी ३–३ दिन, पुनर्नवाके स्वरसकी ७ दिन भावना देकर गोला बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिट्टीकरदे । सूखने पर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीक्रमसे मर्दनकर आचदे । इसप्रकार ३ बार करनेसे यहरस तैयार होगा । इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ खाकर मधुका शरबत पीनेसे ७ दिनमें मेदोवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ७१५ ॥

७१६ मोहाद्रिवज्रपातरसः

कर्षैकं रसकं व्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम् ।
पलं नागाऽभ्रयोः सर्वं सञ्चूर्ण्य सिकताघटे ॥३२९५॥
पक्वं मूषागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन्द्रवम् ।
केतकाऽऽस्फलनिर्गुण्डीशिग्रुग्रन्थिकचित्रकम् ॥३२९६॥
वन्ध्याऽहिवल्लीकर्णालिव्याघ्रीलुङ्गरसोद्भवम् ।
अश्वगन्धामयं वारान्द्विधा द्वित्रिप्रसागरान् ॥३२९७॥
षड्भैः ससवसुदिक्द्विभिर्मुनत क्रमात् ।
कुमार्या पुटयेत्प्रौढो रसो मोहाद्रिवज्रकः ॥ ३२९८ ॥
भुक्तो माषो निहन्त्याशु सर्वाऽर्शाऽरोचकग्रहान् ।
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽर्बुदाऽपचीः ॥
क्षुद्ररोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानिव ॥ ३२९९ ॥

र कौ , अर्शोरोगे।

भाषा—शुद्धखपरिया और पारा १–१ कर्ष, गन्धक २ पल, नाग और अभ्रकभस्म १–१ पल लेकर बालुकायन्त्रमें स्वेदनकर निकालकर फिरसे कज्जली बनाय केवडेकेस्वरसकी २, अकलकरावी २, निर्गुण्डी ३, सहिजन ४, पिपलामूल ६, चित्रक ६, बाझखेखसा ७, पान ८, गोरखमुण्डी १०, भटकटैया २, बिजोरा ३ और असगन्धकी १४ इनसबके स्वरस अथवा क्वाथोंसे उक्तसङ्ख्यामें क्रमश भावनाए देकर घीकुवारकेरसमें १–२ रोज घोटकर १–१ माशकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सम्पूर्ण बवासीर, अरुचि, गलग्रह, मन्दाग्नि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्बुद, अपची, क्षुद्ररोग इनसबकोयह सांपोंको गरुडकी तरह नष्ट- करताहै ॥ ७१६ ॥

७१७ मोहान्धसूर्यरसः

गन्धेशौ लशुनाऽम्भोभिः मर्दयेद्याममात्रकम् ।
तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतिबोधकृत् ॥
मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्द्रा प्रलापकम् ॥ ३३०० ॥

र चि , र क , रसायनस , चि र म , र सु , टो , भै र , र दी , र का , यो म , र सि , र स , व रा., वै क., सन्निपाते। र स अञ्जनरसः,व ॥ महागन्धसूर्यरसः,वै क ज्वरा- कुंश इति नाम।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली- कर एकगांठवाले लहसनके रससे १ पहर घोटकर रखछोडे । इसको लहसनके रसमें मरिचके साथ घोटकर नस्यदेनेसे तन्द्रा और प्रलापको यह दूरकरताहै ॥ ७१७ ॥

७१८ मौक्तिकभस्मप्रयोगः

कटुकीगैरिकाभ्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम्॥ ३३०१॥

र का., र. सु, हिक्काश्वासयो.।

भाषा—कुटकी और गेरूकेसाथ मोतीकीभस्म तथा बिजोरेके रसकेसाथ सोनामाखी और ताम्रभस्म देनेसे हिक्का और श्वास नष्टहोतेहैं॥ ७१८॥

७१९ मौक्तिकरसायनम्

जयन्तीरससम्पिष्टं शुकपिच्छेन मारितम्।
मौक्तिकं रसमानं हि द्विगुणं स्वर्णभस्मकम्॥३३०२॥
त्रिगुणं कान्तजं भस्म व्योमसत्त्वं चतुर्गुणम्।
दत्त्वा च गन्धसौभाग्यं भृङ्गवेरेण भावितम्॥३३०३॥
पुटेर्द्विंशतिवाराणि विद्राव्य पटगालितम्।
सर्वतुल्येन बलिना रसेन कृतकज्जलीम्॥ ३३०४॥
विद्राव्य पूर्ववद्भस्म मुक्तादीनां विनिःक्षिपेत्।
विमिश्र्य निक्षिपेत्तत्र क्षीरं छागीसमुद्भवम्॥३३०५॥
संशोषितं विचूर्ण्याऽथ काचकूप्यां विनिःक्षिपेत्।
पिप्पलीमधुना सार्द्धं सेवितं वल्लमात्रया॥ ३३०६॥
रसायनविधानेन कुरुते वत्सरेण हि।
वलीपलितनिर्मुक्तं वार्द्धकेन विवर्जितम्॥ ३३०७॥
नयनद्वयसम्पन्नं शतायु ज्ञानशालिनम्।
दिव्यश्रवणसम्पन्नं मत्तदन्तिबलावृतम्॥ ३३०८॥
विवादे जयदं नित्यं धीधैर्यविनयान्वितम्।
लीढं मध्वाज्यतैलैश्च कणोपेताश्वगन्धया॥ ३३०९॥
क्षयरोगं निहन्त्येव मण्डलार्द्धेन निश्चितम्।
तत्तद्रोगानुपानैश्च निहन्ति सकलामयान्॥ ३३१०॥
वन्ध्यापुत्रप्रदं ह्येतत्सूतिकामयनाशनम्।
बालानां परमं पथ्यं वृष्यमायुष्यमुत्तमम्॥ ३३११॥
नागोदरोपविष्टञ्च हन्ति स्त्रीणाञ्च वेगतः।
हैयङ्गवीनसंयुक्तं तवराजेन संयुतम्॥
गर्भिणीसर्वरोगेषु प्रशस्तं परिकीर्तितम्॥ ३३१२॥

र चू, रसायने।

भाषा—जैंतकेरसमेंपिसेहुएशुद्धगन्धकके योगसे मारीहुई मोतीकीभस्म ६ भाग और उसीतरह मारीहुई स्वर्णभस्म २ भाग, कान्तलोहभस्म ३ भाग, अभ्रकसत्त्वभस्म ४ भाग, शुद्धगन्धक और सुहागा ४–४ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर अदरख केरसकी २० भावनाएं देवे। सुखाकर आतशीशीशीमें अथवा लोहेकी कड़छीमें गलाकर पर्पटीबनाय कपड़छानचूर्णकरे। फिर सबकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटीबनाय कपड़छान चूर्णकर पूर्वराशिमें मिलावे। इनदोनोंको मिलाकर १–२ पहर सूखा मर्दनकर बकरीके दूधसे १–२ रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर अथवा चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ गोली अथवा ३ रत्तीचूर्णको रसायनविधिसे एकवर्षभर खानेसे वली, पलित और बुढापेका नाशहोताहै। दोनों नेत्रोंकी ज्योति फिरसे आतीहै सौवर्षकी आयु होतीहै। दिव्यज्ञान, श्रवण, बल, बुद्धि, धैर्य, विनय, इनसे युक्त होताहै। विवादमें अजेय होताहै। रोगप्रशमनार्थ प्रयोगकरना हो तो मधु, घी, तैल अथवा पीपल और अश्वगन्धाकेसाथ खानेसे २५ दिनमें क्षयरोगको दूरकरतीहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै। वन्ध्या पुत्रको प्राप्तकरतीहै। सूतिका रोगोंसे निर्मुक्तहोतीहै। बालकोंके लिये बहुतगुणकारकहै उत्तमवृष्य और आयुष्यहै। स्त्रियोंके नागोदर और उपविष्टकको बहुतजल्दी दूरकरताहै। मक्खन और वंशलोचनकेसाथ देनेसे गर्भिणियोंके समस्तरोग दूरहोतेहैं॥ ७१९॥

सर्वेशानदयालवेन रसयोगाऽब्धौ निरस्याऽजनि,
नानादेशविदेशजायुभिषजां विज्ञानराश्याऽऽश्रयम्।
श्रित्वा विघ्नभरेण मध्यसमये किङ्कृत्यताशून्यतां,
यातामाशु हरिप्रपन्नरचिते ग्रन्थः पवर्गाऽवधिः॥

अथ यकारादिरसाः॥

१ यकृत्प्लीहारि लोहम्

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं लौहमभ्रकम्।
तुल्यं द्विगुणताम्रन्तु शिला च रजनी तथा॥ १॥
जयपालं टङ्कणञ्च शिलाजतुसमं रसात्।
एतत्सर्वं समाहृत्य चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत्॥ २॥
दन्ती त्रिवृच्चित्रकश्च निर्गुण्डी त्र्यूषणं तथा।
आर्द्रकं भृङ्गराजश्च रसैरेषां पृथक्पृथक्॥ ३॥
भावयित्वा वटीं कुर्याद्बदराऽस्थिमितां भिषक्।
प्लीहानं यकृतञ्चैव चिरकालानुबन्धिनम्॥ ४॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सर्वदोषभवं तथा।
हन्यादष्टोदराणीह ज्वरं पाण्डुञ्च कामलाम्॥ ५॥
शोथं हलीमकं हन्ति मन्दाग्नित्वमरोचकम्।
यकृत्प्लीहारिनामेदं लौहं जगति दुर्लभम्॥ ६॥

भै. र, ध, उदराऽधिकारे।

भाषा—हिङ्गुलसे निकालाहुआ पारा, शुद्धगन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, मैनसिल, हल्दी, शुद्ध जमालगोटा, भुना सुहागा और शिलाजीत १–१ भाग, ताम्रभस्म २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दन्तीमूल, निशोत, चित्रक, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अदरख, भागरा इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर बेरकीगुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बहुतदिनके, एकज, द्वन्द्वज, और सर्वदोपज प्लीहा और यकृत्, उदररोग, ज्वर, पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, मन्दाग्नि, अरोचक इनसबको यह नष्टकरताहै॥ १॥

२ यकृत्प्लीहोदरहरलोहम्

दिव्यौषधिहतं लौहं पुटितं पुटनौषधे. ।
प्लीहोदरविनाशाय दद्याद् द्वे द्वे पुटे पृथक् ॥ ७ ॥
माणेन घण्टकर्णेन सूरणेनाऽधिकं पुन. ।
अभ्रकं निहतं कृष्णं सूतकं विधिमूर्च्छितम् ॥ ८ ॥
लौहाऽर्द्धमभ्रकं शुद्धं सूतमभ्राऽर्द्धभागिकम् ।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात्त्रिफलामभ्रसंयुतात् ॥ ९ ॥
द्विरष्टवारिणो भागमष्टशेषन्तु कारयेत् ।
तेन चाऽष्टाऽवशेषेण समेनाऽऽज्येन यत्नतः ॥ १० ॥
रसेन शतपुत्राया द्विगुणक्षीरसम्मितम् ।
अयसश्चाऽर्द्धभागं तु पूर्वं पाके विनि क्षिपेत् ॥ ११ ॥
लौहमय्या पचेद्दर्व्या पात्रे चायसि मृण्मये ।
पचेत्पाकविधिज्ञस्तु वह्निना मृदुना शनै. ॥ १२ ॥
कन्दकार्पासिका चव्यं विडङ्गं सबृहद्दलम् ।
शरपुङ्खाश्च पाठाश्च चित्रकश्च महौषधम् ॥ १३ ॥
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं सुरदारुकम् ।
दीप्यकश्च तथा शीधुमायसाऽभ्रसमं क्षिपेत् ॥ १४ ॥
प्लीहोदरयकृद्गुल्मान्हन्ति शस्त्राऽग्निभि विना ।
प्रयोज्योऽयं महावीर्यो लोहो लौहविदां वरै. ॥ १५ ॥

भै र , ध , र र , र क , उदराऽधिकारे ।

भाषा—मैनसिल और अमलोनियाके योगसे मारित कियाहुआ और मानकन्द, हँस अथवा वयनहा, और सूरणके रसकी १–१ भावना दियाहुआ लोह २ तो , निश्चन्द्र कृष्णाऽभ्रकभस्म १ तो , विधिपूर्वकमूर्च्छितकियाहुआ पारा आधा तोला (रससिन्दूर) लेवै। फिर अभ्रक और लोहभस्मसे तिगुनी त्रिफलाको १६ गुनेपानीमें उबाले । अष्टभागावशेष रहनेपर छानकर सीठीकोफेंकदे । क्वाथकी बराबर घी और शतावरीका रस और क्वाथसे दूना गायकादूध, लोहभस्ममेंसे आधीलोह भस्म, डालकर मन्दअग्निसे पकावे । मावेका पानीजलजानेपर कल्ककी गोली बनने लगे तब उतारकर पहिली अवशिष्टभस्में और सूरण, जगलीकपास, चव्य, विडङ्ग, एरण्डमूल, शरपुङ्ख, पाठा, चित्रकमूल, सोंठ, तमाम नमक और क्षार, विधारेकी जड़, अजवाइन, थूहरकादूध, य प्रत्येक अवशिष्ट लोह और अभ्रकके बराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर पूर्वपाकमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २ माशसे ४ माशेतककी मात्रा गरमजल वगैरह समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, उदररोग, यकृत, गुल्मइत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २ ॥

३ यकृदरिलोहम् (प्लीहारि)

द्विकर्षं लोहचूर्णस्य चाऽभ्रकस्य पलाऽर्द्धकम् ।
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्रं लिम्पाकाऽह्विल्वचं पलम् ॥१६॥
मृगाऽजिनभस्म पलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
नवगुञ्जा प्रमाणेन वटिका कारयेद्भिषक् ॥ १७ ॥
यावत्प्लीहोदरञ्चैव कामलाञ्च हलीमकम् ।
कासं श्वासं ज्वरं हन्याद्बलवर्णाऽग्निकारकम् ॥
यकृदरि त्विदं लौहं वातगुल्मविनाशनम् ॥ १८ ॥

र स , र चि , र च , भै र , र सु , उदररोगे।

टि०—अत्र द्विकर्षं लोहचूर्णस्य चाऽभ्रकस्य पलाऽर्द्धकमिति पाठेन साधारणतया लोहचूर्णं शुद्धमभ्रकमिति प्रतीतिर्भवति परन्तु उभयो र्भस्मैव ग्रहीतव्यम् । र स , र चि , र सु , एषु ग्रन्थेषु प्लीहारिनाम्ना स्वतन्त्र पाठो दृश्यते तत्र अभ्रकस्थाने पारदगन्धकौ नियोजितौ अन्य त्सर्वं समानमस्तीत्यतोऽत्रैव पारदगन्धककज्जलीं प्रदाय एक एव रसो निष्पादनीय । पारदगन्धकक नल्या अधिकलेन दाने क्षत्यभावो गुण वृद्धिस्तु सुतरामेवाऽस्ति, एकपाठहासश्च महल्लम् ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म २–२ कर्ष, ताम्रभस्म १ कर्ष, अमलतासकी अड़कीछाल १ पल, मृगचर्मकीभस्म १ पल लेकर सबको इकट्ठेकर अमिल्तासकीजड़की छालके काढ़ेसे १–२ रोज मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे प्लीहा, यकृत्, कामला, हलीमक, कास, श्वास, ज्वर, बलवर्णाग्निनाश, वातगुल्म इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३ ॥

४ यकृद्दारणसिंहरसः

सिन्दूरमभ्रकं तालं लौहं कर्षप्रमाणतः ।
माक्षिकञ्चाऽभयाक्वाथे मर्दयेदतियत्नतः ॥ १९ ॥
वल्लमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कां समाचरेत् ।
यकृद्दारणसिंहोऽसौ रसो यकृन्निरन्तनः ॥ २० ॥

आ वि, उदराऽधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक हरिताल, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनसबकी भस्में १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर हरेंकेकाढ़ेसे १–२ रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रख छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह यकृत् रोगको दूरकरताहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कासश्वासादिकको नष्टकरताहै ॥ ४ ॥

५ यक्ष्मदावाऽग्निरसः

सूतगन्धरविमौक्तिकं समं
शृङ्गवेरदहनाऽग्निमर्दितम् ।
सूततुल्यरविसम्पुटाऽऽवृतं
पूर्ववद्धयति यक्ष्मिणां हितम् ॥ २१ ॥

र , क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मौक्तिकपिष्टी सबसमभाग लेकर अदरख तथा चित्रककेस्वरस और भिलावेके तैलसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय पारेकीबराबर शुद्धतांबेके सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल्होनेपर निकालकर तांबक सम्पुटकी जितनी भस्म होगईहो उससबको मिलाकर पूर्वक बराबर शुद्धपारा और गन्धक मिलाकर अदरख वगैरहके रसोंसे पूर्ववत् मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर पूर्व गजपुटकी आचद । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े ।

इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह राज-यक्ष्मको दूरकरताहै ॥ ५ ॥

६ यक्ष्मशत्रुरसः (महदग्निकुमारः)

स्वर्णं ताम्रं पारदं चाऽष्टभागं
गन्धाद्भागाः षोडश स्युश्च शुद्धात् ।
सर्वं खल्वे न्यस्य भाव्यं दिनैकं
पार्थक्येन व्योषलुङ्गाऽऽर्द्रकाऽद्भिः ॥ २२ ॥
वह्निद्रावैस्त्रैफले भृङ्गवारा
कन्याम्भोभिः शोणकार्पासपुष्पैः ।
ब्राह्मीमुण्डीन्द्रवारुणितालीसगुप्ता-
भूकूष्माण्डीन्दीवरीवारिणा च ॥ २३ ॥
गुञ्जाबीजैः कज्जलीं काचकूप्यां
क्षिप्त्वा किञ्चिट्टङ्कणञ्चाऽत्र देयम् ।
पाच्यं यामान् षोडशैवं प्रयत्ना-
त्सिद्धः सूतो जायते यक्ष्मशत्रुः ॥ २४ ॥
ताम्बूलीनां पत्रयुग्मे लवङ्गैः
सायं प्रातः सप्तभिः सेवनीयः ।
अग्नौ मन्दे मारुते क्षीणदेहे
कासे श्वासे रोगराजे प्रशस्तः ॥ २५ ॥
वर्ज्यश्चाऽस्मिन् प्रायशो भोज्यमाषा-
स्तैलं तीक्ष्णं राजिकामत्स्यमांसम् ।
अश्विभ्यां यै षण्मुखे चोपदिष्ट-
स्ताभ्यामुक्तस्तारकानायकार्थे ॥ २६ ॥

रसायनस , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—सुवर्ण और ताम्रभस्म, शुद्धपारा ८-८ भाग, शुद्ध-गन्धक १६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटु, बिजोरा, अदरख, चित्रक, त्रिफला, भंगरा, घीकुंआर, लाल-कपासकेफूल, ब्राह्मी, गोरखमुण्डी, इन्द्रायण, तालीसपत्र, केवाच, काष्ठविदारी, शतावर, सफेदगुञ्जाकेबीज इनप्रत्येकके यथासम्भव-स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज़ भावना देकर सुखाकर फिरसे कज्जलीबनाय ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ऊपरसे पिसाहुआसुहागा १६ वा हिस्सा डालकर वालुकायन्त्रमें रखकर १६ पहरकी मन्द आंचसे पकावे । शीशीकामुह एकदम बन्दहोजाय तो गरम शलाकासे खोलदे पर हरवक्त शलाका न डालें क्योंकि गन्धक जारणकरना अभीष्ट नहींहै । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा दो पान और ७ लवङ्गके बीड़ेमें रखकरदे । ऐसे सायं प्रात. दोनोंवक्त देनेसे मन्दाग्नि, धातुक्षीणता, कास, श्वास, राजयक्ष्म इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें उड़द, तैल, तीक्ष्ण-पदार्थ, राई, मछली और मांससे परहेज़ करे ॥ ६ ॥

७ यक्ष्महररसः

शुद्धसूतविषके च हाटकं गन्धकेन सहितं समांशकम् ।
मर्द्य चाऽऽर्द्रकरसेन चित्रकैः प्रक्षिपेच्च सुदृढे सुभाजने ।
ताम्रभाजनमथोपरिस्थितं रोधयेत्पटुमृदा सदैव हि ।
याममात्र पुटितं शनैःशनैः निक्षिपेच्च जलमूर्द्धभाजने ॥
ताम्रपात्रकुहरे रसो भवेद्रोगराजविनिवर्हणक्षमः ॥२८॥

र.प्र सु , र.चं , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और बच्छनाग, सुवर्णभस्म, शुद्धगन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरख और चित्रकके स्वरसों-से १-१ रोज मर्दनकर मजबूत मिट्टीके घड़ेमें डालकर ऊपर-तावेका बर्तन रख दोनोंकी सन्धि बन्दकर चूल्हेपर चढ़ाय एक पहरकी मन्द आचदे । ऊपरके बर्तनमें पानीभरदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर सम्पुटको खोलकर रसको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह उपद्रवसहित राज यक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ७ ॥

८ युवतिलीलारसः

एकभागस्तुशुद्धसूतो माक्षिकं गन्धकस्तथा ।
विषं ताम्रं नेत्रसङ्ख्यं द्विगुणं शुद्धमभ्रकम् ॥ २९ ॥
द्वौ भागौ नागवङ्गाभ्यां तारभस्म त्रिभागिकम् ।
जातीफलस्य भागौ द्वौ तदर्द्धा जातिपत्रिका ॥ ३०
त्रिकटोश्च त्रयोभागाश्चातुर्जातं च तुल्यकम् ।
ज्योतिष्मत्याश्च द्वौ भागौ त्रिगुणं हेमबीजकम् ॥ ३१
मर्कटयशोकबीजञ्च विडङ्गं मूर्तिभागिकम् ।
कुष्ठञ्च शिग्रुबीजानि भृङ्गबीजञ्च तत्समम् ॥ ३२ ॥
चन्द्रसङ्ख्यं चाजमोदं दीप्यकश्चैकभागिकम् ।
प्रियालं बदरीजीरौ कदम्बं नारिकेलजम् ॥ ३३ ॥
चन्दनं मधुकोशीरं दशभागं पृथक्पृथक् ।
गुडूचीसारभागैकं विदारी मुशलीक्षुरम् ॥ ३४ ॥
मधुयष्टिश्चाऽश्वगन्धा कोकिलाक्षाणि धान्यकम् ।
शतावरी च कदली शैरीयं शाल्मलीभवम् ॥ ३५ ॥
टङ्कणं रविपुष्पाणि खर्जूरोर्वारुबीजकम् ।
रक्ताऽश्वमारपुष्पाणि दशषट्षोडशांशकम् ॥ ३६ ॥
अपामार्गस्यैकभागस्त्रिफला च त्रिभागिका ।
सर्वं सूक्ष्मीकृतं चूर्णं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ३७
भावना गव्यदुग्धेन विदारीद्रवकेण च ।
नारिकेलोदकैर्भाव्यं शाल्मलीसारभावितम् ॥ ३८ ॥
रम्भासारेणेक्षुरसैः कृष्णोन्मत्तरसैः क्रमात् ।
अलर्कं पलमात्रन्तु छायाशुष्कञ्च मेलयेत् ॥ ३९ ॥
शर्करासर्पिषा शुक्रमपराह्णे च भक्षयेत् ।
पथ्यञ्च क्षीरमाज्यञ्च शर्करा कदलीफलम् ॥ ४० ॥
नारिकेलं प्रियालञ्च खर्जूरं पनसन्तथा ।
एतानि पथ्यान्याहारे स्वजोत्क्रायः प्रजायते ॥ ४१ ॥
शुक्रवृद्धिकरं श्रेष्ठं युवतीशतसङ्गदम् ।
महामोहकरं वश्यं रतिदं मदकारकम् ॥ ४२ ॥
अश्ववेगयुतं कृत्वा महारतिसुखप्रदम् ।
रामारञ्जनकारित्वात्स्त्रीणामत्यन्तसौख्यदम् ॥ ४३ ॥

नष्टेन्द्रियत्वं मेहत्वं मूत्राघाताऽश्मरीरुजम् ।
योनिदोषं रजोदोषं लिङ्गसङ्कुचितोद्यतिम् ॥ ४४ ॥
क्षयञ्च रक्तपित्तञ्च वातरक्तमसृग्दरम् ।
हन्ति पाण्डुञ्च ग्रहणीं शूलं सर्वाऽतिसारकम् ॥ ४५ ॥
नराणां तनुते पुष्टिं सर्वव्याधिविनाशकः ।
नाम्ना युवतिलीलाख्यो रसः पुष्टिकरः परः ॥ ४६ ॥

र.क.यो वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनामाखी और गन्धक १-१ भाग, शुद्धबछनाग, ताम्र, अभ्रक, नाग और वङ्गभस्म २-२ भाग, रजतभस्म ३ भा , जायफल २ भा , जावित्री १ भा , त्रिकुटु ३ भा , चातुर्जात, तुत्थभस्म, मालकांगनी २-२ भाग, शुद्ध धतूरेकेबीज ३ भा , केंवाच और अशोककेबीज, विडङ्ग, कुठ, सहिजन और भंगरेकेबीज, अजमोद, अनवाइन १-१ भाग, चिरौंजी, बेरकीमज्जा, जीरा, कदम्ब, नारियल, सफेदचन्दन, देशीमुलहठी, खस ये प्रत्येक १० भाग, गिलोयसत्व, विदारीकन्द, मुसली, गोखरू, मुलहठी (ईरानी), असगन्ध, तालमखाना, धनिया, शतावर, केला, खिरस और सेंमल के बीज, भुनासुहागा १-१ भाग, आकनेफूल १० भा , छुआरा और ककड़ीकेबीज ६-६ भाग, लालकनेरकेफूल १६ वा हिस्सा, अपामार्ग १ भा , त्रिफला ३ भा , लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर गायकादूध, क्षीरविदारी और काष्ठविदारी, नारियल, मोचरस, केलेकाकन्द, ईख, कालाधतूरा, इनकेयथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर सफेद आककीजड़कीछाल १ पल मिलाकर डेढ़ १॥ माशा कीमात्रा शक्कर और घीकेसाथ शामको खाय । पथ्यमेंदूध, घी, शक्कर, केले, नारियल, चिरौंजी, छुहारे और कटहलखावे । इसकेसेवनसे ध्वज और शुक्रकीवृद्धिहोतीहै । उत्तम वाजीकरणहै । मोह और वशयको करनेवालाहै । रति और मदको करताहै । नष्टेन्द्रियत्व प्रमेह, मूत्राघात, पथरी, योनिरोग, रजोदोष, लिङ्गसङ्कोच, क्षय, रक्तपित्त, वातरक्त, रक्तप्रदर, पाण्डु, ग्रहणी, शूल, समस्त अतिसार इत्यादि समस्त रोगोंको दूरकर स्त्रियोंको अत्यन्त आनन्ददायक होताहै । स्तम्भनार्थप्रयोगकरना हो तो उसरात्रिको अन्न न खावे ।

९ योगराजगुग्गुलुः (प्रथमः)

नागरं पिप्पली चव्यं पिप्पलीमूलचित्रकौ ।
भृष्टं हिङ्ग्वजमोदञ्च सर्षपा जीरकद्वयम् ॥ ४७ ॥
रेणुकेन्द्रयवाः पाठा विडङ्गं गजपिप्पली ।
कटुकाऽतिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वेतिभागतः ॥ ४८ ॥
प्रत्येकं शाणिकानि स्युर्द्रव्याणीमानि विंशति. ।
द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ ४९ ॥
एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु गुग्गुलुः ।
वङ्गं रौप्यञ्च नागञ्च लोहं सारं तथाऽभ्रकम् ॥ ५० ॥
मण्डूरं रससिन्दूरं प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
गुडपाकसमं कुर्यादिमं द्रव्यं यथोचितम् ॥ ५१ ॥

पक्वपिण्डं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने ।
गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः ५२
गुग्गुलु र्योगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ।
मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नैवाऽत्र विद्यते ॥ ५३ ॥
सर्वान्वातामयान्कुष्ठान्यर्शांसि ग्रहणीगदम् ।
प्रमेहं वातरक्तञ्च नाभिशूलं भगन्दरम् ॥ ५४ ॥
उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ।
मन्दाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ ५५ ॥
रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाम् ।
पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥ ५६ ॥
रास्नादिकाथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ।
काकोल्यादिशृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ ५७ ॥
दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पाण्डुताम् ।
मेदोवृद्धिञ्च मधुना कुष्ठं निम्बशृतेन वा ॥ ५८ ॥
छिन्नाकाथेन वाताऽस्त्रं शोथं शूलं कणाशृतात् ।
पाटलाकाथसहितो विषं मूषिकजं जयेत् ॥ ५९ ॥
त्रिफलाकाथसहितो नेत्राऽर्तिं हन्ति दारुणाम् ।
पुनर्नवादेः काथेन हन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥ ६० ॥

शा.सं , रसायन सं ,ना वि , भ , र कि , वृ मा , यो. त , वातादिरोगे ।

टि०—ना रि ,भ ,र कि , वृ मा ,या त इत्यादिषु ग्रन्थेषु भातुर हित पाठोऽस्ति । रसकिशोरे भाग्यां अग्रे "वचा मूर्वा च पत्रकम् । देवदारुकणे कुष्ठ रास्ना मुस्ता च सैन्धवम् ॥ फल त्रिकण्टक पथ्या धान्यकञ्च विभीतकम् । धात्री त्वचमुशीरञ्च यवक्षारोऽग्निमन्थरि ॥ एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । यावन्त्येतानि चूर्णानि तावदेवाऽत्र गुग्गुलु" इतिपाठो दृश्यते तत्र फलशब्देन मदनफलं ग्रहणम् । पथ्या विभीतकधात्रीणां शृङ्गीप्राडविकन्यायेन त्रमन्तनामग्रहणाभावादि सङ्घाते सन्निविष्टत्वाञ्च सर्वसङ्घातद्रव्य किं वा सङ्घातमना भवति, केवलगुग्गुलुनैव सर्वसमताऽस्ति इति विशेषत्वात् पृथगेव योग स्वीकरणीय । नागरादीनां प्रत्येक पञ्चतोल्यपरिमितानां सङ्घाते कर्षि कारपत्लमज्जा, पुनर्नवमूल, सिन्धुवारपत्राणि, मेषशृङ्गीमूल, निम्बत्वक, मायफिका, हरिद्रा इति सप्तवस्तूनि प्रत्येक दशतोल्यपरिमितानि । इन्द्रवारुणिकामूल वरुणत्वक् च प्रत्येक विंशतितोल्यपरिमित दत्वा स्वानुभवाद् वय योगराज निर्माणयाम इत्यपि पृथग्धग । अयञ्च योगोऽन्ययोगाऽपेक्षयाऽधिकतरगुणवत्तरोऽस्ति, अतएव युक्त्या सर्वेऽपि यशोऽभिलाषिणो वैद्या इम योग निर्माणयन्त्विति विनीताऽस्मा क प्रार्थना । अस्मिन्योगे मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नैवाऽत्र विद्यते इति लिखितं दृश्यते परन्तु धातुवृद्धियोगे इद न सङ्गच्छते, एतासेवन करणात्मक सेवायां विघ्ने अल्पप्रदत्वात्, तस्मात् कल्पात्मककारविधेर्नसतार्य करणीयम् । धातुवृद्धियोग तु यथाविधि रसायनवद्भक्ष्यते, इति भिषग्भिर्धातुवृद्ध्यर्थ प्रयोग करणीय ।

भाषा—सोंठ, पीपल, चव्य, पिपलामूल, चित्रक, भुनाहींग, अजमोद, पीलीसरसों, दोनोंप्रकारकेजीरा, रेणुका (रोग पहाड़ी), इन्द्रजव, पाठा, विडङ्ग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारङ्गी, वच, मूर्वा (मरोड़फली), १-१ टङ्क, इनसे दूनी त्रिफला, इनसबकी बराबर शुद्धगूगल, वङ्ग, रजत, नाग, लोह, फौलाद, अभ्रक, मण्डूर इनकीभस्में तथा रससिन्दूर १-१ पल

लेकर गिलोय अथवा दशमूलकेक्काथमें गूगलको पकाकर छानले और फिरसे गुड़की चाशनीके सदृश पकाकर सबचीज़ें मिलाकर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर घीके वर्तनमें रखछोड़े, यह शार्ङ्गधरका सिद्धान्तहै । परन्तु रसकिन्नरप्रभृतिग्रन्थोंमें विशुद्ध गूगलको ऊखलप्रभृतिमें गोघृतकेसाथ यहांतक कुटवाना कि उसका द्रवहोजाय फिर इसमें ऊपरके चूर्णको धीरे २ डालकर कूटताजाय । समस्तवस्तु मिलजानेपर पूर्ववत् गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसतरह इसका विधान मिलताहै पर इतनीहीविधिसे इसे तैयार न समझना । सबचीजें मिलजानेपर लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे ६-७ रोज़ मर्दनकराना जिसमें कि गूगल और दवाओंका जुदापन कोशिशकरनेपरभी मालूम न हो । इसमें मात्रा ४ माशेकी लिखी हुई है सो धातुरहितकी समझनी । शार्ङ्गधरने इसका खुलासा नहीं किया यह उनकी भारी भूलहै क्योंकि उनके लिखे मुताबिक पाठसे गूगल वगैरह द्रव्य और धातुएं लगभग समप्रमाण होजातीहैं । इसकी ४ माशेकी मात्रा आजकलके ज़मानेमें धातुयुक्तगूगलकी तो दरकिनार केवल गूगलकी इतनीमात्राको कोई सहन नहीं कर सकता । इसलिये इसकी अधिकसे अधिक १ माशेकी गोली होसकतीहै इसेभी सबलोग सहन नहीं करसके अतः २-२ रत्तीकी गोलिया बाधनी चाहियें और धातुरहित गूगलकी २ माशेकी गोलीसे अधिक नहीं बाधना । अपवादरूपसे कोई ४ माशेकी गोली कदाचित् हज़मकरसके पर इससे सबके लिये ४ माशेकी गोलीका प्रमाण बाधना अनुचितहै । इसके सेवनमें मैथुन, आहारपानादिकके परहेज़ करनेकी आवश्यकता नहीं बताईहै परन्तु यह धातुरहितके प्रयोगमें समझना । धातुसहितके सेवनमें कमसेकम ककारादिवर्ग का त्यागकरना अत्यावश्यक समझना । इसकी १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे समस्तवातविकार, कुष्ठ, अर्श, ग्रहणी, प्रमेह, वातरक्त, नाभिशूल, भगन्दर, उदावर्त, क्षय, गुल्म, अपस्मार, ऊरुस्तम्भ, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि, शुक्र और रजोदोष, स्त्री तथा पुरुषका वन्ध्यत्वदोष, इनसबको यह नष्टकरताहै । दिग्दर्शनार्थ अनुपानोंकीकल्पना नीचेलिखे प्रकारोंसे करना । रास्नादिकाथके साथ नानातरहके वातविकार, काकोल्यादिसे पित्तविकार, आरग्वधादिसे कफविकार, दारुहल्दीके काढेमें प्रमेह, गोमूत्रमें पाण्डुता, मधुमें मेदोवृद्धि, निम्बपञ्चाङ्गके क्वाथसे कुष्ठ, गुडूचीके क्वाथसे वातरक्त, पीपलके काढ़ेसे शोफ और शूल, पाडरकेक्वाथसे चूहेकाविष, त्रिफलाके क्वाथसे नेत्रोंकी भयंकरपीडा, पुनर्नवादिक्वाथसे समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै । इसतरह जहा जैसी औचिती हो वहांपर अनुपानकायोग वैद्य अपनीबुद्धिसेकरे ॥ ९ ॥

१० योगराजगुग्गुलुः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला पाठा शताह्वा रजनीद्वयम् ।
अजमोदा वचा हिङ्गु हपुषा हस्तिपिप्पली ॥ ६१ ॥
उपकुञ्चिका शटी धान्यं विडं सौवर्चलन्तथा ।
सैन्धवं पिप्पलीमूलं त्वगेला पत्रकेसरम् ॥ ६२ ॥
फणिज्झकञ्च लौहञ्च सर्जकञ्च त्रिकण्टकम् ।
रास्ना चाऽतिविषा शुण्ठी यवक्षाराऽम्लवेतसम् ॥ ६३ ॥
चित्रकं पुष्करञ्चव्यं वृक्षाम्लं दाडिमं त्वचः ।
अश्वगन्धा त्रिवृद्दन्ती वदरं देवदारु च ॥ ६४ ॥
हरिद्रा कटुका मूर्वा त्रायमाणा दुरालभा ।
विडङ्गं मृतवङ्गञ्च यमानी वासकोऽभ्रकम् ॥ ६५ ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
शोधितं गुग्गुलुञ्चैव सर्वचूर्णसमं नयेत् ॥ ६६ ॥
घृतेन कुट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः ॥ ६७ ॥
एकाङ्गं शुष्यते येषां कुष्ठं वाऽपि क्षतोत्तरम् ।
पादौ विस्तारितौ येषां येषां वा गृध्रसीग्रहः ॥ ६८ ॥
सन्धिवातं क्रोष्टुशीर्षं वातं सर्वशरीरगम् ।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशश्च पैत्तिकान् ॥ ६९ ॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः ।
अयं वृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा ॥ ७० ॥

भै. र , आमवाताऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, छोटी और बड़ी पाठा, सौंफ देशी और रूमी, हल्दी, दारुहल्दी, अजमोद, वच, भुनीहींग, झाऊकीपत्ती या फल, गजपीपल, कालीजीरी, मगरैल, कचूर, धनिया, विडनमक, संचल, सैन्धव, पिपलामूल, तज, इलायची, पत्रज, केशर, मरवा, लोहभस्म, राल, गोखरू, रास्ना, अतीस, सोंठ, यवक्षार, अमलवेत, चित्रक, पोहकरमूल, चव्य, कोकम, अनार, एरण्डकीजड़, असगन्ध, निसोत, दन्तीमूल, बेरकीछाल, देवदारु, हल्दी, कुटकी, मरोड़फली, त्रायमाण, जवासा, बिडंग, वङ्गभस्म, अजवाइन, अड्सा, अभ्रकभस्म ये प्रत्येक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर ऊखलवगैरहमें शुद्धगूगलको डालकर गोघृत देकर द्रवहोनेतक कुटवाकर सबचीज़ोंके चूर्णको थोड़ा थोड़ा मिलाकर कुटवावे । अन्तमें २-३ रोज़ मर्दनकराके चिकने वर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसेलेकर २ माशेतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे आमवात, कटिवात, एकाङ्गशोष, कुष्ठ, उर क्षत, खञ्जता, गृध्रसी, सन्धिवात, क्रोष्टुशीर्ष, समस्तशरीरस्थवातविकार, ८० प्रकारकी वातव्याधि, ४० पित्तरोग और २० कफरोगोंको यह नष्टकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १० ॥

११ योगराजरसः

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटुकस्य च ।
भागाश्चित्रकमूलस्य विडङ्गानां तथैव च ॥ ७१ ॥
पञ्चाऽश्मजतुनोभागास्तथा रूप्यमलस्य च ।
माक्षिकस्य च शुद्धस्य लौहस्य रजसस्तथा ॥ ७२ ॥
अष्टौ भागाः सितायाश्च तत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णितम् ।
माक्षिकेणाऽऽप्लुतं स्थाप्यमायसे भाजने शुभे ॥ ७३ ॥
उदुम्बरसमां मात्रां ततः खादेयथाऽग्निना ।
दिनेदिने प्रयुञ्जीत जीर्णे भोज्यं यथेप्सितम् ॥ ७४ ॥

वर्जयित्वा कुलत्थानि काकमाची कपोतकम् ।
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥ ७५ ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं शिवम् ।
पाण्डुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमज्वरम् ॥ ७६ ॥
कुष्ठान्यजीर्णकं मेहं शोषं श्वासमरोचकम् ।
विशेषाद्धन्त्यपस्मारं कामलां गुदजानि च ॥ ७७ ॥

च स, अ ह, र प्र, ग नि, टो, वै द, वै चि, र र यो र, भ स, र च, वृ यो त, वै क, लो. प, ई॰ का, नि र, र सु, यो म, ना वि., पाण्डुकामलाऽधिकारे।

टि०—गदनिग्रहे "मुस्ताकम्पिल्लयोर्भागो देयश्चाऽपि पृथक्पृथक्, इत्यधिक पाठो दृश्यते। लो प अश्मजतुस्थाने मण्डूरं नियोजितम्। चरके "ताप्याऽद्रिजतुरौप्याऽयोमला पञ्चपला पृथक्। चित्रकत्रिफला व्योषविडङ्गैः पालिकैः सह ॥ शर्कराऽष्टपलोन्मिश्रा चूर्णिता मधुना प्लुता।" इत्याकारक योग विलिख्य त्रिफलायास्त्रयो भागा इत्यधस्ता लिखितम्। तत्र पाठान्तरतया न भ्रमितव्यं उपरिष्टान्निर्दिष्टस्यैव त्रिफलायास्त्रयो भागा इत्यादिना विवरण कृतमस्ति। र च ताप्यादियोग।

भाषा—त्रिफला, त्रिकुटु, चित्रक, विडङ्ग ३–३ भाग, शुद्धशिलाजीत, रूपामाखी, सोनामाखी, लोहभस्म ५–५ भाग, शक्कर ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर मधुमें मिलाकर लोहेकेपात्रमें रखकर ६–७ रोज धान्यराशिमें रखछोड़े। इसमेंसे अग्निबल देखकर ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्रा प्रतिदिन सेवनकरे। जीर्णहोनेपर कुलथी, मकोय और कबूतरको छोड कर इच्छानुसार भोजनकरे। यह अमृतसदृशयोगहै समस्त रोगोंको नष्टकर रसायनकेफलको देताहै। पाण्डु, विष, कास, राजयक्ष्म, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, शोष, श्वास, अरुचि, कामला, बवासीर इनको यह नष्टकरताहै विशेषतया अपस्मारको दूरकरताहै ॥ ११ ॥

१२ योगराजलोहम्

त्रिफला वाकुचीबीजं भृङ्गराजकटुत्रिकम् ।
गुडूच्यैडगजाबीजं केशराजं समुस्तकम् ॥ ७८ ॥
धात्रीखदिरसिन्धूत्थं यमानी जीरकद्वयम् ।
कान्तभस्म विडङ्गानि सर्वचूर्णानि कारयेत् ॥ ७९ ॥
लोहं सर्वसमं होप योगराज इतिस्मृत ।
सर्वकुष्ठविकारेषु विहितो लोहकोविदैः ॥ ८० ॥

र र, र क, कुष्ठे।

भाषा—त्रिफला, बाकुचीकेबीज, भंगरा, त्रिकुटु, गिलोय, पवाड़केबीज, कालाभंगरा, नागरमोथा, आवला, खैरसार, सेंधानमक, अजवाइन देशी तथा खुरासानी, स्याह और सफेदजीरा, कान्तलोहभस्म, विडङ्ग, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। अथवा इसयोगमें कहीहुई त्रिफला वौरहवनस्पतियोंके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली कुष्ठरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ १२ ॥

१३ योगवाहक रसः (प्रथम)

गन्धकं चूर्णयित्वा च नवनीतेन संयुतम् ।
वस्त्रे वेष्ट्वा प्रदीपस्य शिखायाः सन्निधिं कुरु ॥ ८१ ॥
तदुद्भूतेन तैलेन रसपिण्डं सटङ्कणम् ।
बद्ध्वा चूर्णेन वस्त्रेण गौरीयन्त्रे विनिःक्षिपेत् ॥ ८२ ॥
तदूर्द्धं गन्धकं दत्त्वा पिधायाऽग्निं शनैः शनै. ।
षड्गुणे गन्धके जीर्णे रसो भवति रोगहा ॥ ८३ ॥
रसस्य तुर्यभागेन ताम्रपिष्टिं प्रकल्पयेत् ।
इष्टिकायां तथा क्षिप्त्वा षड्गुणं गन्धकं क्षिपेत् ॥ ८४ ॥
पिष्टिं तां तु समुद्धृत्य मत्स्याक्षीद्रवमध्यगाम् ।
शिलाभेदद्रवे युक्तां स्वेदयेन्मृदुवह्निना ॥
योगवाहकसञ्ज्ञोऽयं योज्यो योगेषु निर्भयः ॥ ८५ ॥

र मृ सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धकका बारीकचूर्णकर मक्खनमें मिलाकर खादीकेकपड़ेपर लेपकरके बीचमलोहेकीशलाका डालकर शिथिलबत्तीबनाय दोनोंओर आग लगादे और नीचे कासेकी थाली रखदे। इसमेंसे जितना तैल टपके उसको किसीशीशीमेंभरले, यह गन्धकद्रुति तैयार हुई। शुद्धपारेमें चतुर्थांश सुहागा देकर इसतैलसे यहांतक मर्दनकरे कि चमकरहित होकर गोली बंधजाय। इसगोलीको चूनापुतेहुए वस्त्रमें पोटलीके आकारमें बांधकर चूनापुतेहुए गौरीयन्त्र (योगवाहक—न ३ में कहेहुए) में पारेकी बराबर नीचे ऊपर गन्धक देकर बीचमें पोटलीको रख ऊपरसे अभ्रकाकार ठीकरा रखकर ऊपर जङ्गलीकण्डोंके छोटे २ टुकडे जमाय निर्वातस्थानमें अग्नि लगादे। पर यह ध्यान रक्खे कि गन्धकमात्र जलजाय, पारा न उड़े। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्ववत् दूसरागन्धक रखकर आंचदे। ऐसे षड्गुणगन्धक जारणकरके पारेसे चतुर्थांश शुद्धताम्रका चूर्णमिलाकर गन्धक तैलके सहारेसे पिष्टी बनाय पूर्ववत् षड्गुणगन्धकजारणकर मत्स्याक्षी और पाषाणभेदकेस्वरस अथवा क्वाथमें दोलायन्त्रबनाय ४–४ पहर पकानेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै। निडरहोकर इसका तमामरोगोंमें प्रयोगकरे ॥ १३ ॥

१४ योगवाहकरसः (द्वितीयः)

मेघनादवचाहिङ्गुरसोनानां हि गोलकम् ।
कृत्वा तन्मध्यगं सीसं लवणेऽथ निवेशयेत् ॥ ८६ ॥
संरुद्ध्य सम्पुटं सम्यगूर्द्ध्वं देहि सुगोमयम् ।
चुल्ल्यां यन्त्रं समारोप्य धर्हि यामचतुष्टयम् ॥ ८७ ॥
मध्यज्वालं समुज्ज्वाल्य स्वाङ्गशीतलतां नयेत् ।
ऊर्द्ध्वलग्नं समादाय वस्त्रे बद्ध्वा च गन्धकम् ॥ ८८ ॥
मध्यगं पारदं कृत्वा सोमानलेन तापये. ।
ऊर्द्ध्वगेशस्य चत्वारो गन्धकस्याऽष्टभागकाः ॥ ८९ ॥
सैन्धवस्य च भागौ द्वौ श्वेताजयन्तिकाद्रवे ।
मर्दयित्रीण्यहानि त्वं गोलकं तं विशोषये· ॥ ९० ॥
तप्तां मूषां जले क्षिप्त्वा गृहाण रसभस्मकम् ।
संस्कृत्य कष्टकार्योघे यथेष्टं विनियोजये. ॥ ९१ ॥

तत्तद्रोगहरैर्द्रव्यैः सम्यग्युक्त्या नियोजितः ।
निहन्ति रोगसङ्घातं स्वस्वान्ययकारकः ॥ ९२ ॥

र.मृ ,सर्वरोगे ।

भाषा—कांटेवालीचौलाई, घव, ऊलमहीप और एक-अंडियालहसन सममागलेकर कल्कबनाले । उसकल्कके गोलेमें पूर्वोक्त (योगवाहक नं. १ मेंकहीहुई) गोलीको बन्दकर गोला-बनाय डमरूयन्त्रमें लगाके भीतर रख ४–५ कपड़मिट्टी देकर मुंह इसतरह बन्दकरे कि सन्धिमेंसे पारा न निकलने पावे । फिर यन्त्रको चूल्हेपर रख ऊपरके घड़ेके पेंदेपर गोबर रक्खे । चूल्हेमें ४ पहरकी मध्यमाग्नि दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर यन्त्रको उघाड़ ऊपरके घड़ेमें लगेहुए पारेको निकालकर इसके सममाग गन्धकको नीचे ऊपर रख पहिलेकी तरह डमरूयन्त्र बनाय ४ पहर की आंच देकर पारेको उड़ावे । इसपारेके ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., कांचकीतरह चमकदार सैन्धव २ भाग लेकर नीलकण्ठ कचलीबनाय सफेदकोयल और तिलोंके रसोंमें ३–३ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय धारायन्त्रमें बन्दकर बर्तनमें डालकर इन्हींके रसोंमें घुलावे । इसीप्रकार भटकटैया वगैरह मारकगणोंके रसोंमें घुलावे और मर्दनकर गरमकरे । ऐसे जबतक पारा अग्निस्थायी न होजाय तबतककरे । अग्निस्थायी होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसको तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १४ ॥

✓१५ योगवाहकरसः (तृतीयः)

रसस्य तुर्यभागेन ताम्रचूर्णं प्रकल्पयेत् ।
जम्बीरोत्थद्रवै मर्द्यं दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ॥ ९३ ॥
घस्रे घटेऽपिकायन्त्रे तुल्यं गन्धेन पाचयेत् ।
एवन्तु षड्गुणं यावत्कार्यं गन्धकजारणम् ॥ ९४ ॥
पाषाणभेदिमत्स्याक्षीद्रवैः पिष्टन्तु मर्दयेत् ।
तद्गोलं वेष्टयेद्वस्त्रे पत्रैः पाषाणभेदजैः ॥ ९५ ॥
मत्स्याक्ष्याश्च घनालेपं दत्त्वा पातनयन्त्रके ।
स्वेदयेद्यामसप्तन्तु रसोऽयं योगवाहकः ॥ ९६ ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं हिमवायिस्थकासजित् ।
दशमूलं पिबेच्चाऽनु सकुलत्थं कषायकम् ॥ ९७ ॥

र को ,र.क ,र.मु ,र.का ,व.रा , यो म , हिक्कादौ ।

टी०—[illegible]

भाषा—[illegible] चौथाई [illegible] मर्दनकर [illegible] और १ [illegible]

इतनाबड़ा खड़ा बनावे कि जिसमें पारदपिटीकी पोटली आधा-नीचे रहसके और नीचे ऊपर चतुर्थांश गन्धकचूर्णभी रहसके । फिर इसखड़ेको चोप अथवा पत्थरकेचूनेसे पोतकर सुखावे और पोटलीसे चतुर्थांश गन्धक नीचे तथा ऊपर देकर पोटलीको रखदे । इसगर्तके ऊपर घोड़ेकेखुरके आकारका लम्बा ठीकरा रखकर छोटे २ जङ्गलीकण्डोंके टुकड़े जमाकर इतनी आंचदे जिसमें कि ईंटके अन्दरका गन्धक जलजाय पर पारा न उड़े । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े इसतरह १२ बार आंच देकर षड्गुणगन्धकजारणकरके पाषाणभेद और मत्स्याक्षीके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलीबनाय पूर्ववत् धारायन्त्र करनेमें रख पत्थरचटोंसे लपेटकर गोली बनाले । इस गोलीपर पाषाणभेदके बल्कका आधाअङ्गुल लेपदेकर एकराता रक्खे फिर मत्स्याक्षीकालेप देकर सुखाय डमरूयन्त्रमें रखकर ६–७ कपड़मिट्टीसे मुंह बन्दकर एकअहरतक मन्दाग्नि देकर स्वेदितकरे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा कुलथीमिलेहुए दशमूलकेकाढ़ेकेसाथ देनेसे हिचकी स्वर-भङ्ग और खांसको यह नष्टकरताहै तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १५ ॥

✓१६ योगवाहकरसः (चतुर्थः)

मृतं ताम्रं कान्तपाषाणगन्धं
कार्पासास्थिचायतो धान्यकम् ।
पर्यटस्याध्यतपाचनाद्ये च यन्त्रे
द्वौस्थेयपात्रे यततः पाचयेद्य ॥ ९८ ॥
ताम्रे लसं नागवल्लीगुडूची-
नीरे सूतं मर्दयेद्वासरैकम् ।
उक्तः सूतो योगवाहोऽस्य वल्लं
दद्याद्रोगेषूक्तमानेन सूतम् ॥ ९९ ॥

र.दी., सर्वरोगाऽधिकारे

भाषा—शुद्धपारा, ताम्र और कान्तपाषाणभस्म, शुद्ध-गन्धक सब सममाग लेकर नीलकण्ठकचलीकर [illegible] काढ़ेमें १ रोज़ मर्दनकर गोलीबनाय इसकेबाद [illegible] [illegible] बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर सुखानेपर [illegible] एकरोज़ [illegible] अग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर [illegible] [illegible] और गिलोयके स्वरसमें १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ गोली तत्त-द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरती है ॥ १६ ॥

१७ योगसाररसः

[illegible] ताम्रगन्धं समानं
[illegible] ।
[illegible] लिप्तं [illegible]
[illegible] ॥ १०० ॥

महावातहारी क्षुधादीप्तिकारी
समस्ताऽऽमये योगवाही प्रदिः।
प्रसूतस्त्रियां बालकानां कृशानां
महाव्याधिविध्वंसनोऽयं रसः स्यात् ॥१०१॥

र. सि., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा, हरिताल और गन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर खौलताहुआपानी देताहुआ २२ रोजतक निरन्तर मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भयङ्कर व्याधियोंको नष्टकरताहै। प्रसुता स्त्री, बालक और कृश इनके भयङ्कररोगोंको दूरकरताहै ॥ १७ ॥

१८ योगसारचूर्णम्

द्राक्षाऽभयात्रुटिकणाशटिविश्वभार्गी-
शृङ्गीनिदिग्धिकयुताः पृथगेकभागाः।
भागद्वयं सुमृततीक्ष्णभवञ्च चूर्णं
चत्वार एव जतुनोऽद्रिभवस्य भागाः॥१०२॥
सर्वं विचूर्ण्य मधुना धरणोन्मितं त-
त्खादेन्निहन्ति खलु पञ्चविधञ्च कासम्।
श्वासं क्षयं कफसमीरणसम्भवांश्च
रोगांस्तमांसि सवितेव सुदृष्टमेतत् ॥१०३॥

यो. म., हिक्कायाम्।

भाषा—दाख, हर्रे, इलायची, पीपल, कचूर, सोंठ, भारङ्गी, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, भटकटैया येसब १–१ भाग, लोह भस्म २ भा., शिलाजीत ४ भागलेकर बारीकपीसकर ४–४ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ सुबहशाम देनेसे पांचप्रकारकी खासी, श्वास, क्षय, कफरोग और हिक्काप्रभृति दुःसाध्य वातरोग इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्य अन्धकारको। यह कईबारका अनुभूतहै ॥ १८ ॥

✓१९ योगसाररसः

सूतं गन्धं विषं ताम्रभस्म नेपालतालके।
क्षारत्रयं पटोलञ्च पञ्चकोलं सटामठम् ॥ १०४ ॥
शङ्खचूर्णं समालोड्य जम्बीराम्लेन मर्दयेत्।
लशुनस्य कषायेणाप्यक्षजेन रसेन च ॥ १०५ ॥
ताम्बूलवल्लीनिर्गुण्डीमातुलुङ्गार्द्रकद्रवैः।
ततश्च वटिकां माषमात्रां कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ १०६ ॥
सर्वगुल्मेषु शूलेषु श्वासकासोदरेषु च।
आनाहे चाऽप्युदावर्ते सन्निपाते च दारुणे ॥ १०७ ॥
योगसाररसो ह्येष जातुकर्णेन निर्मितः।
उदावर्ते समभ्यज्य स्विन्नगात्रमुपाचरेत् ॥
आनाहे च तथा कार्यं वस्त्या वर्त्याश्च कर्मणा ॥१०८॥

र. रा., गुल्मे शूले च।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, ताम्रभस्म, शुद्धजमाल्गोटा, रसमाणिक्य, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पटोलपत्र, पञ्चकोल, भुनाहींग, शङ्खभस्म सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर जम्भीरी, लहसन, बहेड़ा, पान, संभालू, बिजोरा, अदरख इनके रसोंसे १–१ भावना देकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके गुल्म, शूल, श्वास, कास, उदररोग, आनाह, उदावर्त, प्रचण्डसन्निपात इनको यह नष्टकरताहै। उदावर्तमें वातहरतैलोंसे समस्तअङ्गमें मालिशकराके स्वेदनकरे। आनाहमें वस्ति और वर्तियोंका प्रयोगकरे ॥ १९ ॥

२० योगसाराऽभ्रकम्

कणाशिलोद्भेदसमानमभ्रं
विलीढमाज्येन पयोऽनुपानम्।
निहन्ति यक्ष्माणमपि प्रवृद्धं
ससैन्यमेवाऽत्र न चित्रमस्ति ॥ १०९ ॥

लो. प., यक्ष्मरोगे।

भाषा—पीपल और शिलाजीत १–१ भाग, अभ्रकभस्म २ भागलेकर सबको इकट्ठा घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती घीके साथ सेवनकर गरमदूधपीनेसे अत्यन्तबढ़ाहुआ उपद्रवसहित राजयक्ष्म नष्टहोताहै। इसमें सशय नहीं करना २०

२१ योगामृतोरसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धं ताम्रं पलद्वयम्।
चूर्णितं सूतकं मर्द्य कुर्यात्तत्राष्टपिष्टिकाम् ॥ ११० ॥
शुद्धं गन्धं द्विद्विपलं तत्तुल्यं कटुतैलकम्।
तयो मध्ये ताम्रपिष्टीं लोहपात्रेऽल्पवह्निना ॥ १११ ॥
पचेद्यावद्द्रवं जीर्णं समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
विषं वचा त्र्यूषणञ्च तुल्यं मुस्ताविडङ्गकम् ॥ ११२ ॥
विषस्य त्रिगुणं योज्यं सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
सर्वं सूतसमं चूर्णं क्षौद्रमिश्रं वटीकृतम् ॥ ११३ ॥
द्विगुञ्जं भक्षितं हन्ति प्रसुप्तिं मण्डलं तथा।
गुडेन भक्षितो हन्ति सर्वकुष्ठनिकृन्तनः ॥ ११४ ॥

र. का., कुष्ठाधिकारे।

भाषा—८ पल शुद्धपारेमें २ पल शुद्धतांबेका चूर्ण मिलाकर ४ पहर मर्दनकर बहुत बारीक कपड़ेमें रखकर गोलीबनाले। फिर शुद्धगन्धक २ पल कड़ाहीमें बिछाकर पोट्टलीरस २ पल गन्धक उपर रखकर दबादे। ऊपरसे कडुवातैल ४ पल डालकर बहुतमन्दआंचसे पकावे। द्रवसूखजानेपर उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरसे गन्धकको खुरचकर ताम्रपिष्टीका बारीकचूर्णकर शुद्धबछनाग, वच, त्रिकटु १–१ भाग, नागरमोथा और विडङ्ग ३–३ भागलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तपिष्टीमें समभागमें मिलाकर मधुकेसाथ घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़केसाथ लेनेसे चुन्यगात्रता और मण्डलादि समस्तकुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१ ॥

२२ योगीरसः (त्रिमूर्त्यादिः) (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं चतुर्भागं मृताऽभ्रकम् ।
निर्गुण्डीकारवल्लीभ्यां धुत्तूराऽऽर्द्रकचित्रकैः ॥ ११५ ॥
गिरिकर्णीजयन्तीभ्यां तिलपर्ण्या भृङ्गराजकैः ।
कार्पासीकाञ्चनीदन्तीकदम्बकेशराजकैः ॥ ११६ ॥
मर्दयित्वा तु तच्चुष्कं कटुतैलेन सेचयेत् ।
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ११७ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय हेमभस्म तु तारकम् ।
नागवङ्गौ पञ्चपटु त्रिक्षारं हिङ्गुलं समम् ॥ ११८ ॥
पूरयेद्वालुकायन्त्रे त्रियामं पाचयेद् दृढम् ।
स्वाङ्गशीतलमाकृष्य विषं पादमितं क्षिपेत् ॥ ११९ ॥
वल्लीजपञ्चभागांश्च पञ्चपित्तैर्विभावयेत् ।
नानाऽनुपानैः संयुक्तं रेणुमात्रं प्रयोजितम् ॥ १२० ॥
साध्याऽसाध्यांश्च दोषांश्च सर्वरोगान्विनाशयेत् ।
सर्वशास्त्राऽनुसारेण योगीरस उदाहृतः ॥ १२१ ॥

र. क. यो., सर्वरोगेषु ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., अभ्रकभस्म ४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर संभालू, करेला, धतूरा, अदरख, चित्रक, कोयल, जैंती, हुरहुर, भंगरा, कपासकेफूल, हल्दी, दन्तीमूल, कदमकेफूल, कालाभंगरा इनप्रत्येककेरसोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर कटुतैलसे मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपडेमें पोटली बनाय ३-४ कपडमिट्टी लगावे। सूखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपडमिट्टी लगाकर सुखाय बालुकायन्त्रमेंरख ४ पहरकी मन्द अग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण, रजत, नाग और वङ्ग इनकीभस्में, पांचोंनमक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, शिंगरिफ येसब मिलकर समभागमें मिलाकर पूर्वद्रवोंसे १-१ रोज मर्दनकर तैलसे पूर्ववत् गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें तीनपहरकी कडीआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे चतुर्थांश शुद्धवत्सनाग और ५ भाग मरिच मिलाकर ५ पित्तोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर रखछोडे। इसमेंसे रोगकेर्बीजबराबर मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह साध्य अथवा असाध्य समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२ ॥

२३ योगेन्द्ररसः

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्द्धं शुद्धहाटकम् ।
तत्समं कान्तलौहञ्च तत्सममभ्राभ्रमेव च ॥ १२२ ॥
विशुद्धं मौक्तिकञ्चैव वङ्गञ्च तत्समं मतम् ।
कुमारिकारसे मर्द्यं धान्यराशौ दिनत्रयम् ॥ १२३ ॥
ततो रक्तिद्वयमितां वटीं कुर्याद्विचक्षणः ।
योगवाही रसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥ १२४ ॥
वातपित्तभवान् रोगान् प्रमेहान्बहुमूत्रताम् ।
मूत्राघातमपस्मारं भगन्दरगुदामयम् ॥ १२५ ॥
उन्मादमूर्च्छे यक्ष्माणं पक्षाघातं हतेन्द्रियम् ।
शूलाऽम्लपित्तकं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १२६ ॥
त्रिफलारसयोगेन शुभया सितयापि वा ।
भक्षयित्वा भवेद्रोगी कामरूपी सुदर्शनः ॥ १२७ ॥
रात्रौ सेव्यं गवां क्षीरं कृशानाञ्च विशेषतः ।
योगेन्द्राख्यो रसो नाम्ना कृष्णात्रेयविनिर्मितः ॥ १२८ ॥

भै. र., ध., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर १ भाग, सुवर्ण, कान्तलोह, अभ्रक, मोती और वङ्ग इनकीभस्में आधा आधाभाग लेकर एकरोज़ घीकुंआरके रसमें मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डके पत्तोंमें लपेटकर कच्चे डोरेसे बांधकर धान्यराशिमें तीनरोज़तक रक्खे। चौथेरोज़ निकालकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली रोगावस्थोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातपित्तजरोग, प्रमेह, बहुमूत्रता, मूत्राघात, अपस्मार, भगन्दर, गुदरोग, उन्माद, मूर्च्छा, राजयक्ष्म, पक्षाघात, इन्द्रियोंकी कमज़ोरी, शूल, अम्लपित्त इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। त्रिफलास्वरस अथवा शक्करकेसाथ इसका सेवन करनेसे मनुष्य कामरूपी होजाताहै। कमज़ोरोंको रात्रिमें एक गोली देकर गायकादूध पिलानाचाहिये ॥ २३ ॥

२४ योगेश्वररसः

सूतकं गन्धकं लौहं नागञ्चापि वराटिकाम् ।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम् ॥ १२९ ॥
सूक्ष्मैलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेसरम् ।
रेणुकाऽऽमलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ १३० ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
भावना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ १३१ ॥
मात्रा चणकतुल्या च गुटिकेयं प्रकीर्तिता ।
अश्मरीं बहुमूत्रञ्च प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ १३२ ॥
व्रणं हन्ति महाकुष्ठमर्शांसि च भगन्दरम् ।
योगेश्वरो रसो नाम महादेवेन भाषितः ॥ १३३ ॥

र. चि., र. मं., र. सु., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, नाग, पीलीकौडी, ताम्र, वङ्ग और अभ्रक इनकीभस्में १-१ भाग, छोटीइलायची, पत्रज, नागरमोथा, विडङ्ग, नागकेसर, रेणुका (रोन-पहाडी), आंवले, पिपरामूल, येसब २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आंवलेके रसकी ३-४ भावनाएं देकर चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे पथरी, बहुमूत्र, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, नानाप्रकारकेव्रण, महाकुष्ठ, बवासीर और भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ योगोत्तमावटी

त्र्यूषणं त्रिफला क्षारौ लवणान्यथ चित्रकम् ।
मार्कवं चविकं भृङ्गी निशे द्वे गजपिप्पली ॥ १३४ ॥

एला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम् ।
ताप्यं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥१३५॥
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमयोरजः ।
तावच्छिलाजतु देयः सर्वैस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥१३६॥
सङ्कुट्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः ।
खादेन्मधुना युक्त्या तोयक्षीररसाशनः ॥ १३७ ॥
निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वर्तुषु निरत्ययम् ।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥१३८॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ।
उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयथुं पवनात्मकम् ॥ १३९ ॥
विंशतिं मूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीव्रणानि च ।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥ १४० ॥
कासं श्वासं तथा हिक्कां हृच्छूलं छर्द्यरोचकम् ।
गुल्मांश्च पाण्डुरोगञ्च जयेत्पञ्चप्रकारजम् ॥ १४१ ॥
चत्वारो ग्रहणीदोषाः षडर्शांसि तथैव च ।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु तमः सूर्योदयो यथा ॥ १४२ ॥
तथाऽर्बुदं गण्डमालां विद्रधिं सभगन्दरम् ।
हरते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
योगोत्तमेति विख्याता गुटिका वैद्यपूजिता ॥ १४३॥

ग नि., यो. म., सर्वरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, सज्जी, यवक्षार, पाचोंनमक, चित्रकमूल, तालीसपत्र, चव्य, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, हल्दी, दारुहल्दी, गजपीपल, इलायची, तज, विडङ्ग, पोहकरमूल, नागकेशर, शुद्धसोनामाखी, अजमोद, नागरमोथा येसब समभाग, इनसबकीबराबर लोहभस्म और शिलाजीत, इनसबकीबराबर शुद्धगूगललेकर योगराजगूगलकीविधिसे १–१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ खाकर जल, दूध, अथवा मांसरसलेवे। भूखलगनेपर यथेष्ट भोजन करे। यह सब ऋतुओंमें अनुकूल पड़ताहै। इसकीमात्रा मूलमें १ तोलेकी लिखीहै परन्तु वह सबकेलिये अनुकूल नहीं होसक्ती। इसलिये ४ मासेकी गोलियें बनाकर मुश्किलसे इस ज़मानेमें चलसकेगी इसलिये २–२ मासेकी गोलियें बनाकररक्खें। इसकेसेवनसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, २० प्रमेह, ८ उदररोग, वातप्रधानसूजन, २० मूत्रकृच्छ्र (मूत्राघातको मिलाकर), दुष्टनाडीव्रण, १८ कुष्ठ, ७ धातुक्षय, ५–५ प्रकारकेकास, श्वास, हिचकी, हृच्छूल, वमन, अरुचि, गुल्म, पाण्डुरोग, ४ प्रकारकीग्रहणी, ६ बवासीर, अर्बुद, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्योदय तमको और इन्द्रकावज्र वृक्षोंको ॥ २५ ॥

२६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कांस्यं मृतञ्चाऽभ्रं गन्धतुल्यं पुटैः पचेत् ।
सिद्धं गुञ्जात्रयं खादेद्योनिदोषं व्यपोहति ॥ १४४ ॥

ना. वि., योनिरोगे ।

भाषा—कांस्य और अभ्रकभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर रक्तशोधक महामञ्जिष्ठादिप्रभृतिकाथोंसे १०–२० पुटदेकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती योनिदोषहरानुपानकेसाथदेनेमें और निम्बकल्कमें मिलाकर अन्दरलेपकरनेसे योनि कन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहैं ॥ २६ ॥

२७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारताम्रे वा कृत्वाऽऽदौ भस्मसूतकम् ।
युक्त्या क्रमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥ १४५॥

यो. म., रसेन्द्रसं., स्त्रीरोगाधिकारे ।

टि०—"मृत रस मृत ताम्र चिञ्चाक्षाराम्बुनादिनम् । भावयेत्कृष्ण्येन्माष गुञ्जीवाऽऽर्द्रकद्रवैः ॥ अनुपान स्त्रियेन्नित्य कफशूलप्रशान्तये ।" इति योगमहार्णवे शूलाधिकारे पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव वर णीय । विशेषभावनाऽनुष्ठानन्तु कृतमपि गुणावहमेव सम्पत्स्यते, अनुपानानि तु सर्वत्रैवाऽनियतानि भवन्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजत और ताम्रभस्म इन एकएकमें अथवा सबमें समभाग पारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानकेसाथ देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै। इसमें यदि गन्धककेसाथ पारदभस्म मिलाई हो तो ३ रत्तीतककीमात्रा देसक्तेहैं यदि रजत अथवा ताम्रभस्मकेसाथ मिलाई हो तो २ रत्तीकी मात्रा समझनी। निम्बकल्ककेसाथ मिलाकर लेपभी करसक्तेहैं २७

२८ योषिद्वल्लभरसः

सिन्दूरमभ्रं रौप्यञ्च वैकान्तं हेमटङ्कणम् ।
घराम्भसा भावयित्वा वल्लमात्रा वटीश्चरेत् ॥ १४६॥
योषिद्वल्लभनामाऽयं रसोऽण्डाधारसम्भवान् ।
निहन्ति निखिलान्रोगान् हर्यक्षो हरिणानिव ॥ १४७॥

आ. वि., अण्डाधारगदाधिकारे ।

टि०—अण्डाधारगदस्य लक्षणानि—"उदराल्पथा कृच्छ्रा मूत्रस्यालत्वरक्तने। ज्वराऽरोचकइच्छाता भवति मैन्दसाश्रय ॥ धमनी वेगिनी क्षुद्रा जिह्वा रक्तोऽम्लता तथाऽण्डाधारगदस्यैता प्रोक्ता भावत्रयी बुधैः॥"

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, रजत, वैक्रान्त और सुवर्णभस्म, शुद्धसुहागा सब समभाग मिलाकर २–३ रोज घिग्वारकेरसमें भावनादेकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे स्त्रियोंके समस्तरोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सिंह मृगोंको ॥ २८ ॥

२९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तकुठारः)

शुद्धपारदबलिप्रवालकं हेममाक्षिकभुजङ्गपत्रकम् ।
मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च पृथगथ द्रवैस्त्रिशः ॥
चन्दनस्य कमलस्य मालतीकोरकस्य वृषपल्लवस्य च ।
धान्यवारणकणाशतावरीशाल्मलीवटजटागुडूचिभिः

रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो
जायते रसवराऽस्रपित्तिनाम् ।
प्राणदो मधुघृतद्वयेरयं
मेथिनस्तु मसूरतो मतः ॥

एला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम्।
ताप्यकं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥१३५॥
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमयोरजः।
तावच्छिलाजतु देयः सर्वैस्तुल्यस्तु गुग्गुलु ॥१३६॥
सङ्कुट्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः।
खादेत्ता मधुना युक्त्या तोयक्षीररसाशनः ॥ १३७ ॥
निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वर्तुषु निरत्ययम्।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥१३८॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विंशतिम्।
उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयथुं पवनात्मकम् ॥ १३९ ॥
विंशतिं मूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीव्रणानि च।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥ १४० ॥
कासं श्वासं तथा हिक्कां हृच्छूलं छर्द्यरोचकम्।
गुल्मांश्च पाण्डुरोगश्च जयेत्पञ्चप्रकारजम् ॥ १४१ ॥
चत्वारो ग्रहणीदोषाः षडर्शांसि तथैव च।
सर्वास्ताञ्नाशयत्याशु तमः सूर्योदयो यथा ॥ १४२ ॥
तथाऽर्बुदं गण्डमालां विद्रधिं सभगन्दरम्।
हरते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनि यथा ॥
योगोत्तमेति विख्याता गुटिका वैद्यपूजिता ॥ १४३॥

न नि, यो म, सर्वरोगे।

भाषा—त्रिकुटु, त्रिफला, सज्जी, यवक्षार, पाचोंनमक चित्रकमूल, तालीसपत्र, चव्य, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, हल्दी दारुहल्दी, गजपीपल, इलायची, तज, विडङ्ग, पोहकरमूल नागकेशर, शुद्धसोनामाखी, अजमोद, नागरमोथा येसब सम भाग, इनसबकीबराबर लोहभस्म और शिलाजीत, इनसबकी बराबर शुद्धगूगललेकर योगराजगूगलकीविधिसे १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ खाकर जल, दूध, अथवा मांसरसलेवे। भूखलगनेपर यथा भोजन करे। यह सब ऋतुओंमें अनुकूल पड़ताहै। इसकीमात्रा मूलमें १ तोलेकी लिखीहै परन्तु वह सबकेलिये अनुकूल नहीं होसक्ती। इसलिये ४ माशेकी गोलियें बनाकर मुश्किलसे इस जमानेमें चलसकेगी इसलिये २-२ माशेकी गोलियें बनाकररक्खे। इसकेसेवनसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, २० प्रमेह, ८ उदररोग, वातप्रधानसूजन, २० मूत्रकृच्छ्र (मूत्राघातको मिलाकर), दुष्टनाडीव्रण, १८ कुष्ठ, धातुक्षय, ५-५ प्रकारकेकास, श्वास, हिचकी, हृच्छूल, वमन, अरुचि, गुल्म, पाण्डुरोग, ४ प्रकारकीग्रहणी, ६ बवासीर, अर्बुद, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसबको यह इसतरह नष्टकरती जैसे सूर्योदय तमको और इन्द्रकावज्र वृक्षोंको ॥ २५ ॥

२६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कास्यं मृतञ्चाऽभ्रं गन्धतुल्यं पुटे...चेत्।
सिद्धं गुञ्जात्रयं खादेद्योनिदोषं व्यपोहति ॥ [illegible]॥

ना. वि, योनिरोगे।

भाषा—कास्य और अभ्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर रक्तशोधक महामञ्जिष्ठादिप्रभृतिक्वाथोंसे १०-२० पुटदेकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती योनिदोषहरानुपानके साथदेनेसे और निम्बकल्कमें मिलाकर अन्दरलेपकरनेसे योनिकन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ २६ ॥

२७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारताम्रे वा कृत्वाऽऽदौ भस्मसूतकम्।
युक्त्या क्रमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥ १४५॥

यो म, रसेन्द्रस, स्त्रीरोगाधिकारे।

टि०—"मृत सूत मृत ताम्र चिञ्चाक्षाराम्बुनादिनम्। भावयद्भक्षयेन्माष मुशलीचाऽऽर्द्रकद्रवै ॥ अनुपान लिहेन्नित्य कफशूलप्रशान्तये।" इति योगमहार्णवे शूलाधिकारे पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव स्वरणीय। विशेषभावनाऽनुष्ठानन्तु कृतमपि गुणावहमेव सम्पत्स्यते, अनुपानानि तु सर्वैरेवाऽनिरूप्यतानि भवन्ति।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजत और ताम्रभस्म इन एकएकमें अथवा सबमें समभाग पारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानके साथ देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै। इसमें यदि गन्धककेसाथ पारदभस्म मिलाई हो तो ३ रत्तीतककीमात्रा देसक्तेहै यदि रजत अथवा ताम्रभस्मकेसाथ मिलाई हो तो २ रत्तीकी मात्रा समझनी। निम्बकल्ककेसाथ मिलाकर लेपभी करसक्तेहै २७

२८ योषिद्वल्लभरसः

सिन्दूरमभ्रं रौप्यञ्च वैक्रान्तं हेमटङ्कणम्।
वराम्भसा भावयित्वा वल्लमात्रा वटीश्चरेत् ॥ १४६॥
योषिद्वल्लभनामाऽयं रसोऽण्डाधारसम्भवान्।
निहन्ति निखिलान्रोगान् हर्यक्षो हरिणानिव ॥ १४७॥

आ वि, अण्डाधारगदाधिकारे।

टि०—अण्डाधारगदस्य लक्षणानि—"उदरोरुव्यथा कृच्छ्रा मूत्रस्यालस्वरत्वते। ज्वराऽरोचकहल्लासा भरति बैल्सक्षय ॥ धमनी वेगिनी शुद्धा जिह्वा रक्तोऽज्ज्वला तथा॥अण्डाधारगदस्यैता मोक्ता आकृतयो बुधै॥"

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, रजत, वैक्रान्त और सुवर्णभस्म, शुद्धसुहागा सब समभाग मिलाकर २-३ रोज त्रिफलाकेक्वाथसे भावनादेकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे स्त्रियोंके समस्त रोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सिंह मृगोंको ॥ २८ ॥

२९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तकुठारः)

शुद्धपारदवलिप्रवालकं हेममाक्षिकभुजङ्गरञ्जकम्।
मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च पृथगथ द्रवैस्त्रिशः॥
चन्दनस्य कमलस्य मालतीकोरकस्य वृषपल्लवस्य च।
धान्यवारणकणाशतावरीशाल्मलीवटजटागुडूचिभिः
रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो
जायते रसवरोऽस्रपित्तिनाम्।
प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं
सेवितस्तु वसुकृष्णलो मतः॥

नाऽस्त्यनेन सममत्र भूतले
भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥ १५० ॥

नि.र., बृ. यो.त., र. सु., र.क. ल., रसायनसं., र. चं., र. कौ., यो. त., यो. र., चि. क्र, र.का, वै चि, रक्तपित्ते। वै. चि, यो. र., र.सु., नि.र. रक्तपित्तकुठारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, नाग और वङ्ग इनकीभस्में समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सफेदचन्दन, कमल और मालतीकेफूल, अडूसेकेपत्ते, धनियां, गजपीपल, शतावर, सेमलकामुसला, बडकीजटा और गिलोयके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ भावनाएं देकर ८-८ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अडूसेकेरस और मधुकेसाथ देनेसे यह रक्तपित्तको जड़से नष्टकरताहै । रक्तपित्तकेलिये इसकी बराबर और कोई दवा नहींहै इसलिये रक्तपित्तकेरोगियोंकेलिये यह प्राणप्रदहै ॥ २९ ॥

३० रक्तपित्तप्रमेहहारीरसः ।

खल्वे समादाय विशुद्धसूत-
कर्षञ्च रक्तस्य घटोद्भवस्य ।
प्रसूननीरेण च सप्त वारा-
न्वासारसेनाऽपि च तावदेव ॥१५१॥
दूर्वारसेनाऽपि च तद्वदेव
धारान्विमर्द्याऽप्यथ टङ्कणञ्च ।
द्विनिष्कमात्रं खदिरस्य सारः
कर्षप्रमाणञ्च शिवञ्च चन्द्रः ॥ १५२ ॥
तुल्यः पुनश्चन्दनवारिणाऽपि
सम्मर्द्य कुर्याच्च हरेणुतुल्यान् ।
छायाविशुष्कांश्च वटीं मनुष्य-
मेहाञ्जयेदार्द्रकनीरकर्षैः ॥
स्रक्तपित्तं पिटिकाश्च हन्या-
त्प्रमेहजान् मासदलं मनुष्यः ॥ १५३ ॥

वि. र., रक्तपित्ते प्रमेहे च ।

भाषा—एककर्ष शुद्धपारालेकर अगस्त्यके फूल, अडूसेकेपत्ते, सफेददूब इनके रसोंसे ७-७ बार मर्दनकर सुहागा ८ माशे, खैरसार, सफेदचन्दन और कपूर १-१ कर्ष डालकर चन्दनकेक्वाथसे ७ दिन मर्दनकर मटर बराबर गोलियां बनाकर छायामेंसुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरस और शहदकेसाथ मिलाकर प्रातःकाल खानेसे फुंसियोंसहित रक्तपित्त और प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३० ॥

३१ रक्तपित्तदामकरसः

षड्गन्धजीर्णेन रसेन हेम-
माक्षीकभस्म द्विगुणं प्रयुक्तम् ।
पित्ताऽस्ररोगोपशमाय सेव्यं
वासाऽम्बुना माक्षिकमिश्रितेन ॥ १५४ ॥

रसायनसार, रक्तपित्ते ।

भाषा—षड्गुणगन्धकजारितपारा (रससिन्दूर) १ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म २ भाग लेकर अडूसेकेपत्तोंकेरससे २-४ दिन घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककीमात्रा अडूसेकेपत्तोंकेरस और शहदकेसाथदेनेसे यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै ।३१।

३२ रक्तपित्तहरोरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तीक्ष्णं वासारसे दिनम् ।
मर्दितं मासमात्रन्तु भक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥ १५५ ॥
वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम् ।
पिवेत्तेन शमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥ १५६ ॥

र.म.मा , र.सु , ना वि., रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा, तांबा और लोहा इनकीभस्में समभाग लेकर अडूसेके पत्तोंकेरससे एकरोज़ मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर एकतोले अडूसेके रसमें ३-३ माशे मधु और शक्कर मिलाकर पीनेसे १ महीनेमें घोररक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ३२ ॥

३३ रक्तपित्तहरोरसः (मृगाङ्करसः) (द्वितीय.)

कडारमायसं चूर्णं सूतेन्द्रे समचारितम् ।
लोहारिवर्गसंयुक्तं रक्तपित्तहरं परम् ॥ १५७ ॥

रसेन्द्रमं०, र. सु , रक्तपित्ते ।

टि०—रसराजसुन्दरे "पटोलमायसम्चूर्णं सूतेन्द्रसमचारितम् । लोहारिमृगसंयुक्त रक्तपित्तहर परम् ॥" इत्याकारेण महाभ्रष्टतया विचारमकृत्वैव पाठो विन्यस्त ॥ लोहारिवर्गो यथा—त्रिफला त्रिवृता दन्ती कटुकी तालमूलिका । वृद्धदारश्च मुश्लीरवृषपत्रकचित्रका ॥ श्वाबेरविटश्री च भृङ्गभल्लातकौषधम् । दाडिमस्य च पत्राणि शतपुष्पी पुनर्नवा ॥ कुठारक्रामकी कन्दस्तन्त्री भेकस्य पर्णिका । हस्तिकर्णपलाशश्च कुलिश केशराजक ॥ माण खण्डितकर्णश्च गोजिह्वा लोहमारका ॥" यथाप्राप्त्येभिरौषधैरिम रस मर्दयित्वा प्रयोग करणीय इति रहस्यम् ॥

भाषा—बुभुक्षित पारेमें समभागसे कडारलोहके चूर्णको चारितकर लोहारिवर्गमें २-४ दिन घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती रक्तपित्तहरानुपानकेसाथ लेनेसे यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै ॥ ३३ ॥

३४ रक्तपित्ताङ्कुशोरसः (पित्तमुद्गरः)

पित्तमुद्गरो द्रष्टव्यः

र.च , र.र.स., र. मु , व.रा., रक्तपित्ते ।

टि०—वसवराजीये पित्तमुद्गरनाम्नाऽय रसो निर्दिष्टोऽस्ति तत्र प्रथमश्लोकपूर्वार्द्धे पारद विद्रुमलोहाभ्र द्वर्द्धभातननो नयेदिति क्रमस्ति तदेषा पारद दरदश्चैव पूर्व यन्त्रेण मेलयेदिति पाठ. समीचीन ।

३५ रक्तपित्तान्तकोरसः

सूतद्विभागे बलिमाक्षिके च
शिलाजमेतत्त्रयतुल्यमस्य ।
तुल्या गुडूची हिमधान्यधात्र्यो
द्राक्षाकिरातेन्द्रयवद्रुमत्वक् ॥ १५८ ॥

धासारसोद्भावितशुष्कपिष्टं
नीतं सितायष्टिमधुप्रमाणम् ।
धारोष्णदुग्धेन निषेवणीयं
पित्ताऽस्नरोगं नयतेऽन्तमेतत् ॥ १५९ ॥

रसायनसार , रक्तपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, शुद्धगन्धक, सुवर्णमाक्षिक और शिलाजीत येतीनों पारेकी बराबर, गिलोय, सफेदचन्दन, धनिया, आवला, मुनक्का, चिरायता, इन्द्रजव और कुरैयाकी-छाल येसब मिलकर पूर्वगणकी बराबर लेकर बारीक चूर्णकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर अडूसेकेपत्तोंके रससे १-१ रोज मर्दन-कर १ से २ माशेतककी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर, मुलहठी और मधुकेसाथ खाकर ऊपरसे धारोष्णदूधपीनेसे उपद्रवोंकेसहित यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै ॥

३६ रक्तमाहेश्वरोरसः

सूतं गन्धं मृतं स्वर्णं रससिन्दूरकान्तकम् ।
सर्वेद्विगुणमभ्रञ्च ताम्रभस्म द्विभागकम् ॥ १६० ॥
वङ्गं नागं तथा रौप्यं प्रत्येकं सूतसाम्यकम् ।
लोहभस्म त्रिभागञ्च मुण्डसिन्दूरकन्तथा ॥ १६१ ॥
सर्वं खल्वे विनिःक्षिप्य मर्दयेदतियत्नतः ।
खर्जूरं यष्टिका द्राक्षा मधुपुष्पं शतावरी ॥ १६२ ॥
लोध्रकाश्मर्यहीबेरपद्मकेसरपद्मकम् ।
मृणालचन्दनाशीरनीलोत्पलघनं समम् ॥ १६३ ॥
श्रीगन्धं बालकं कुष्ठं बलाशाल्मलिमूलकम् ।
रम्भाकन्दं गोक्षुरकं माधवी सहदेविका ॥ १६४ ॥
परूषककषायेण भावयेच्छतवारकम् ।
वल्लप्रमाणश्चैव शर्करामृतमाक्षिकैः ॥ १६५ ॥
भक्षयेद्धृतमिश्रन्तु रक्तपित्तहरं परम् ।
सर्वपैत्तहरो नृणां रक्तमाहेश्वरोरस ॥ १६६ ॥

व रा , पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्णभस्म, रससिन्दूर और कान्तभस्म १-१ भाग, अभ्रकभस्म १० भा , ताम्रभस्म २ भा , वङ्ग, नाग, रजतभस्म १-१ भाग, लोहभस्म और मुण्डसिन्दूर ३-३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धक की नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर छुहारा, ब्रह्मदण्डी, मुलहठी, द्राक्ष, महुआ, शतावर, लोध, गभारीकेफल, हाऊबेर, पद्म केसर, कमलगट्टा, भसींड, सफेदचन्दन, खस, नीलोफर, नाग रमोथ, बिरोजा, गेंहुला, कुठ, खरेटी, सेमलकामुसला, केलेका कन्द, गोखरू, माधवीलता, सहदेवी और फालसा येसब २६-२६ तोले लेकर जवकुटकर इसके १०० भाग बनाकर रखले । इनमेंसे १-१ भागका अठगुने जलमें चतुर्थभागावशिष्टक्काथकरे । इसकाथसे ऊपरकेरसको सुखनेतक मर्दनकरे । फिर दूसरे भागको पूर्ववत् उबालकर काढाबनाय उसमें मर्दनकरसुखावे । ऐसे १०० भावनाए देकर इसरसको तैयारकरे । यद्यपि इस रसकेतैयार करनेमें बहुतदिनलगेंगे परन्तु यथार्थगुणतभीहोगा । अनुकल्पसे तैयार करनाहो तो तप्तखल्वमें दवाको रखकर पूर्वोक्तद्रव्योंको शोषणकरता जाय तो इसतरह अधिकसेअधिक एक-सप्ताहमें यह रस तैयारहोजायगा । इसकी २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर, घी और मधुके-साथ लेनेसे रक्तपित्त और समस्त रक्तविकारोंको यह नष्टकरता है । इसमें घृतयुक्त पथ्य देना ॥ ३६ ॥

३७ रक्तवातान्तकरसः

शुद्धं सूतं विषञ्चाभ्रं गन्धं त्रिकटुकं समम् ।
चित्रमूलकषायेण दिनं मर्द्यञ्च धासया ॥ १६७ ॥
अर्कमूलकषायेण दिनं जम्बीरनीरकैः ।
दोलायन्त्रे पचेद्यामं माषमात्रञ्च भक्षयेत् ॥
क्षीणवातं निहन्त्याशु रक्तवातं विनाशयेत् ॥ १६८ ॥

व. रा., वै नि , क्षीणवाते ।

टि०—भावनाविशेषस्यलोहभस्मनश्चाऽभावाद्द्वितीयेकामधेनौ नाऽन्तर्भवति ।

भाषा—शुद्ध पारा और वच्छनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, त्रिकटु सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील-वर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रककीजड, अडूसा, आकबीजडकी-छाल, जम्भीरी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्काथोंसे १-१ रोज़मर्दनकरनेकेबाद उन्हींद्रवोंमें १-१ पहर स्वेदनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचि तानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षीणवात और रक्तवातको नष्टकरताहै । क्षीणवात और रक्तवातकेलक्षण वसवराजीयमें देखलेना ॥ ३७ ॥

३८ रक्तारिरसः

रसं गन्धं समं मर्देत्कज्जलीं लिङ्गिकारसैः ।
काकिनीरससंयुक्तं भागैकं बोलचूर्णकम् ॥ १६९ ॥
पर्पटीकदलीपत्रे पात्याऽस्याश्चूर्णकं लिहेत् ।
रक्तपित्तकमर्शांसि रक्तप्रदरनुत्स्त्रियाः ॥ १७० ॥

र श , रक्तपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर १ भागहीरादक्खनका चूर्णमिलाय शिवलिङ्गी और सफेदगुञ्जाकीपत्तीके रसोंसे १-१ रोजमर्दनकर पर्पटीविधानसे पर्पटीबनाकर रखछोडे । इसमेंसे २ रत्तीसे १ माशेतक क्रम-वृद्धिसे चढावे और ह्रासकरे । अनुपान रोगावस्थाको देख कर युक्तकरे । इसकेसेवनसे रक्तपित्त, खूनीबवासीर और रक्तप्र-दर नष्टहोतेहैं । यद्यपि बोलको लोगोंने हीराबोललिखाहै परन्तु उसके डालनेसे योगोक्तगुण नहींहोगा इसलिये जहांजहां रक्तको बन्दकरनेकेलिये खानेमें आताहै वहा सबजगह बीजकनिर्यासका ग्रहणकरना । यह आकारसाम्यहोनेसे भ्रम होगयाहै ॥ ३८ ॥

३९ रजतादिलोहम्

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं,
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं साय आज्येन युक्तम् ।

लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥१७१
र.सं., र.चं., र.क., र.मु., यक्ष्मणि ।

भाषा—चांदी और अभ्रक भस्म १-१ भाग, त्रिकटु, त्रिफला और लोहभस्म २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर एकरोज़ घोटकर रखछोडे । इसमेंसे २ रत्तीसे १ माशेतक घीकेसाथ प्रातःकाललेनेसे राजयक्ष्म, पाण्डु, उदररोग, बवासीर, श्वास, कास, नेत्ररोग और तमामपित्तरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ३९

४० रजतादिवटी (महदादिः)

कर्षप्रमाणं रजतं मौक्तिकं स्वर्णगैरिकम् ।
कालमानन्तु वैकान्तं सिन्दूरं सशिलाजतु ॥ १७२ ॥
लौहमभ्रप्रवालञ्च त्रिधा चित्रकवारिणा ।
काकमाचीरसेनापि सप्तधा च विभावयेत् ॥ १७३ ॥
गुञ्जाद्वयमितां कृत्वा वटिकां पयसा सह ।
प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत स्नायुरोगनिवृत्तये ॥ १७४ ॥
भै.र., स्नायुरोगे ।

भाषा—रजत और मोतीभस्म, सोनागेरू १-१ कर्ष, वैकान्तभस्म, रससिन्दूर, शुद्धशिलाजीत, लोह, अभ्रक और प्रवालभस्म ३-३ कर्ष लेकर बारीक घोटकर चित्रकेकाढ़ेसे ३, और मकोयके रससे ७ भावनाए देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली हमेशा प्रातःकाल दूधकेसाथलेनेसे यह स्नायुरोगको नष्टकरताहै ॥ ४० ॥

४१ रतिकान्तसुन्दररसः (मदनसुन्दरः)

रौप्यवङ्गरसलोहहेमकं वैक्रान्ताऽभ्रमपि सप्तभावितम् ।
मोचजेन रतिकान्तसुन्दरः स्याद्दिहप्रबलवीर्यवृद्धये ॥
क्षीरमोचरसशोधशर्करासंयुतो द्विगुणरक्तिकामितः ।
स्पृष्टसात्म्यहितबल्यभोजनाद्योगवाहि परमं रसायनम्
र.शे., वाजीकरणे ।

भाषा—रजत, बंग, पारा, लोह, सुवर्ण, वैकान्त, अभ्रक इनसबकी भस्में समभाग लेकर मोचरसके ७ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मोचरस, शतुद्धशोध और शक्करमिलेहुएदूधकेसाथ सेवनकरनेसे स्तम्भनकर रतिसुखको देताहै और अत्यन्त वीर्यकी वृद्धिको-करताहै । शुद्ध और सात्म्य, हितकारक, बल्य भोजनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर अत्यन्तरसायनका कामकरताहै ४१

४२ रतिकामरसः

प्रारम्भजलसा स्वर्णानां मर्दयेत्सूतकम् ।
मृतं ताम्रञ्च ताम्रञ्च गन्धकञ्च समं दिनम् ॥ १७७ ॥
सितामध्वाज्यसंयुक्तं वटीं भुक्त्वा पिबेत्पयः ।
रतिकामरसो नाम कामिनीरमणे हितः ॥ १७८ ॥
वानरीमूलगोधूमं कोकिलाक्षस्य बीजकम् ।
माषाश्वगन्धामुसली सर्वं स्तोकिते पानसेवनैः ॥ १७९ ॥
तेनैव वटकाः कार्या नित्यं खादेद् द्वयंद्वयम् ।
अनुपानमिदं सिद्धं सेवनाद्रमयेच्छतम् ॥ १८० ॥
र.सं., रसायने ।

टि०—मूलपाठे नैर्बीजमात्र्ऽऽमीत्तस्थाने बहूनिनि कृतमस्ति । अत्र प्रारम्भरजसा स्त्रीणां मर्दयेत्सूतकमिति सन्दर्भेण मृतताम्रताम्रभस्मानि शुद्धगन्धकञ्च समभाग गृहीत्वा प्रारम्भरजसा दिनैकं मर्दयित्वा निष्पद्यमाना वटिकाः कृत्वा भक्षयेदित्यर्थः प्रतीयते । परन्तु " स्त्रियोऽशरण नरस्त्रोमसूत्रविडार्तवैः शुक्रमन्माधुवृता. । यस्मै प्रयच्छन्त्यरयो गराश्च दुष्टान्नदूषीविषसेवनाद्वा ॥ तेनाशु रक्त कुपिताश्च दोषाः कुर्वन्ति घोरं जठरं त्रिलिङ्गम् ॥ सु. नि. ७ । ११-१२,, इत्यादिना रजोभक्षणाद्दूष्योदरोत्पत्तिकथनाद्धर्मशास्त्रविरुद्धत्वाच्च स्त्रीणां प्रारम्भरजसा मर्दनं विधाय भस्म सम्पादयेदिति क्रियाऽध्याहारेण अन्यसङ्गतिः करणीया । भगवद्दत्त-रस्तु टीकायां मर्दयितोऽस्ति, मर्दनानन्तरं पलाशमूलद्रवैः मर्दनीयं इति बोद्धव्यम् ।

भाषा—सुसुशान्तसंस्कारकियेहुए पारेको प्रथमार्त्तवमें घुट-वाकर गोलीबनाय वज्रमूषा अथवा कुक्कुटाण्डमें बन्दकर खड़िया और सफेद अभ्रकको बारीक घुटवाकर लेपकर ईंटोंकी एक-खोलचढ़ाकर ४-५ कपड़मिट्टी देकर सुखाले । सूखनेपर लघु-पुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालले । कुछ कसररहे तो दुबारा इसीतरहकरनेसे भस्महोगी । यहभस्म, रजत और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर नवीनपलाशकी जड़केद्रवमें एकरोज़ मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ रतिसमयसे २ घंटा-पूर्वलेनेसे वीर्यस्तम्भन होताहै । विशेषस्तम्भनकी इच्छा हो तो केवांचकी तालीजड़, निशास्ता, तालमखाना और उड़द समभाग लेकर ईखकेरसमेंसानकर १-१ तोलेके बड़ेबनाकर घीसे पकावे, अधिकदिन रखनेहों तो चाशनीमें डालदे । इन-मेंसे २-२ बड़े रोज़ अनुपानरूपसे खानेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रमणकरसक्ताहै खटाई अथवा नमक खानेसे स्खलन होगा ॥४२॥

४३ रत्नकरण्डोरसः

भूनागाऽभ्रकयोः सत्त्वं कान्तहेमाभ्ररूप्यकम् ।
मुक्ताफलानि रत्नानि ताप्यं वैक्रान्तमेव च ॥ १८१ ॥
भस्मीकृतमिदं सर्वं पृथङ्निष्कमितं मतम् ।
निष्कमात्रमितं शुद्धं राजावर्तरजस्तथा ॥ १८२ ॥
एतत्सर्वं समं योज्यं मर्दयित्वाऽन्वयेतमैः ।
कृत्वा मूषोदरे कोष्ठ्यां धमेद्वाकाशदर्शनम् ॥ १८३ ॥
शतवारं धमेदेवं मर्दयित्वाऽम्लयेतमैः ।
ततः सञ्चूर्णिते चास्मिन्मुक्ताभस्म द्विशाणकम् १८४
मरिचं पञ्चशाणेयं क्षिप्त्वा सम्मर्द्य यत्नतः ।
रम्ये करण्डके क्षिप्त्वा स्थापयेत्तदनन्तरम् ॥ १८५ ॥
सोऽयं रत्नकरण्डको रसवरो मण्डल्यगद्यानलं,
हन्याच्छ्वासगदं ज्वरं ग्रहणिकां कासञ्च हिक्काऽऽमयम्
शूलं लोहमहोदरं बहुविधं गुल्मञ्च हन्याद्द्रुतम्,
पथ्यो गुल्मकरः प्रदीपनकरः स्वर्णाभिकां रोगहा ॥
र.र.स., र.का., आमवाते ।

भाषा—मैंनुए और अभ्रककासत्त, कान्तपाषाण और कान्तलोह, सुवर्ण, अभ्रक, रजत, मोती, नवरत्न (हीरा, पन्ना, माणिक्य, पुखराज, नीलम, लहसुनियां, गोमेद, मोती औरमूंगा) सुवर्णमाक्षिक, वैक्रान्त, साजरदे इनसबकीभस्में ४–४ मासे लेकर अमलवेत अथवा बिजोरेकेरसमे १–२ रोज़ मर्दनकर कुठालीमें रखकर धमन करावे। धूमरहितरक्तवर्णहोनेकेबाद बाहरनिकालकर ठंडाकरले। फिर पूर्ववत् १–२ पहर बिजोरेमें मर्दनकर धमनकरे। इसतरह सौवार करनेकेबाद मोतीभस्म ८ मासे, मरिच २० मासे डालकर एकरोजमर्दनकर शीशीमेंभरदे। इसमेंसे १ चावल-सेलेकर २ चावलतककीमात्रा मधु और घीकेसाथ देनेसे श्वास, ज्वर, सङ्ग्रहणी, कास, हिचकी, शूल, शोष, उदररोग, नाना-प्रकारकेकुष्ठ, धातुओंकीक्षीणता, पण्ढत्व, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै। स्वस्थ आदमीके सेवनकरनेमें आयुकी वृद्धि होकरतीहै ॥ ४३ ॥

४४ रत्नगर्भपोट्टली

रसं वज्रं हेमतारं नागं लोहञ्च ताम्रकम्।
तुल्यांशं मरिचं देयं मुक्ताविद्रुममाक्षिकम् ॥ १८७ ॥
शङ्खं तुत्थञ्च तुल्यांशं सताहं चित्रकद्रवैः।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याऽथ तेनपूर्या वराटिकाः ॥ १८८ ॥
टङ्कणं रविदुग्धेन मुखं लिप्त्वा निरोधयेत्।
मृद्भाण्डे ता निरुध्याऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् १८९
आदाय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्या सप्त भावयेत्।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः ॥ १९० ॥
द्रवै र्भाव्यं ततः शोष्यं देयं गुञ्जाप्रमाणकम्।
क्षयरोगं निहन्त्याशु साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥१९१॥
योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतै र्मरिचैस्तथा।
महारोगाऽष्टके कासे श्वासे चैवाऽतिसारके ॥
पोट्टली रत्नगर्भेयं सर्वरोगकुलान्तिका ॥ १९२ ॥

र स, र र, चि क, र च, र सु, यो र, वृ यो त, र चि, र म, नि र, र. को, रसायनस, भै र, र क, यो म, र. प्र, टो, र. (मा), मै.सा., र को, र का, र क यो, यक्ष्मणि।

टि०—केषुकेषु पुस्तकेषु "रसावर्तञ्च वैक्रान्तं गोमेद पुष्परागकम्।" इति पद्य दृश्यते, ताम्रस्थाने प्रचुरपुस्तकेषु अभ्रकं गृहीतम्। "तुल्यांशं मरिच" इत्यस्य स्थाने तुल्यांश मारितमिति पाठ।

भाषा—पारा, हीरा, सुवर्ण, चांदी, नाग, लोह, तांबा, मोती, प्रवाल, सोनामाखी, शङ्ख और तुत्थ इनसबकीभस्में १–१ तोला, सफेदमिर्च ■ तोले लेकर बारीकचूर्णकर चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथसे ७ रोज मर्दनकर सुखाकर रसकेबराबर पीली कौड़ियोंमें भरके सुहागेको आकके दूधमें मर्दनकर कौड़ियोंका अच्छीतरह मुहबन्दकर मिट्टीकी मजबूतकुल्हड़ीमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीकरदे। अच्छीतरह सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर निर्गुण्डी और अदरखकेरससे ७–७ भावनाए देकर सुखाकर चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथकी २१ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपल, मधु अथवा घी और मिर्चोंकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य क्षयरोग, आठप्रकारके महारोग (वातव्याधि, प्रमेह, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर, अश्मरी, मूढगर्भ और उदर) कास, श्वास और अतिसार इनसबको वशकरके यह नष्टकरताहै। ततदोषहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४ ॥

४५ रत्नगिरीरसः (प्रथमः)

सूताऽभ्रस्वर्णताम्राणि गन्धं चार्द्धांशलोहकम्।
लोहार्द्धं मृतवैक्रान्तं मर्दयेद्भृङ्गजद्रवैः ॥ १९३ ॥
पर्पटीरसवत्पाच्यं चूर्णितं भावयेत्पृथक्।
शिग्रुवासकनिर्गुण्डीगुडूच्युमाऽग्निभृङ्गजैः ॥ १९४ ॥
क्षुद्रामुण्डीजयन्तीभि र्मुनिब्राह्मीसुतिक्तजैः।
कन्यायाश्च द्रवै र्भाव्यं त्रिस्त्रिवारं पृथक्पृथक् ॥१९५॥
ततो लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
वल्लं दद्यात्कणाधान्ययुक्तं चाऽभिनवज्वरे ॥ १९६ ॥
मुद्गाद्यं मुद्गयूषं वा सनीरं तक्रभक्तकम्।
रसे चोक्त पथ्यमस्मिन् शाकं सर्वज्वरोदितम् ॥१९७॥

र.चि, र मं, भै.र, रसायनस, र शि, नि र, र को, र सं, यो.म, व रा, टो., र सु, र का, र क.यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्में, शुद्धगन्धक १–१ भाग, इनसबसेआधी लोहभस्म, लोहसे आधी वैक्रान्तभस्म लेकर सबको एकजगह भंगरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर २–३ कपडमिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें रखकर २–३ पहर अग्निपर पकावे और शलाका डालकर देखतारहे। एकजीव होनेपर ताजेगोबरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर डालकर दो तीन केलेके पत्तोंसे ढककर गोबरसे दबादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर सहिजन, अडूसा, निर्गुण्डी, गिलोय, वच, चित्रक, भंगरा, भट-कटैया, गोरखमुण्डी, जैंती, अगस्त्य, ब्राह्मी, चिरायता, घीकुं-वार इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भाव-नाएं देकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ७–७ कपडमिट्टीदेकर ५ सेरकण्डोंकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा पीपल और धनियेंकेसाथ मधुकेगैरहमें मिलाकर देनेसे यह तत्काल नवज्वरको नष्टकरताहै। ज्वर उतरनेपर अच्छीतरह भूखलगेतो मूंगकायूष अथवा दाल अथवा उचित हो तो छाछ, भात और ज्वरोक्त-शाक देवे ॥ ४५ ॥

४६ रत्नगिरीरसः (द्वितीयः)

रसाऽभ्रहेमं रवितारहेम-
गन्धं द्विनिघ्नं सकलं विमृद्य।
भृङ्गेत्थनीरैः कदलीदले च
पाच्यं ततो रत्नगिरि र्भवेत्सः ॥ १९८ ॥
श्वासे च कासेऽप्यनिवारितेऽन्यैः
क्षतोद्भवे यक्ष्मणि पीनसे च।

पाण्डौ सशोथे पवने सरक्ते
घल्लः प्रयोज्यो मधुपिप्पलीभ्याम् ॥१९९॥

र. चं., श्वासे कासे च।

भाषा—पारा, अभ्रक, स्वर्णमाक्षिक, तांबा, चांदी और सुवर्ण इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर सबको कज्जलकीतरह घोटकर भंगरेकेरससे एकरोज् मर्दनकर अच्छीतरह सुखाकर घृताक्तलोहेकीकड़छीमें गलाकर गोबरपरस्खेहुए केलेके पत्तेपर ढालकर दूसरेपत्तेसे ढक गोबरसे दबादे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और पीपलकेसाथ देनेसे अन्यग्रोगोंसे असाध्य क्षतोद्भव श्वास और कास, राजयक्ष्म, शोथयुक्तपाण्डु, वातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै ४६

४७ रत्नप्रभारसः

स्वर्णमौक्तिकमभ्रञ्च नागवङ्गौ च पित्तलम्।
माक्षिकं रजतं वज्रं लौहं तालञ्च खर्परम् ॥ २०० ॥
कदल्याः काकमाच्याश्च वासकस्योत्पलस्य च।
स्वरसेन जयन्त्याश्च कर्पूरसलिलेन च ॥ २०१ ॥
भावयित्वा यथाशास्त्रमहोरात्रमतः परम्।
सम्मर्द्याऽतन्द्रितः कुर्यात्त्रिपरगुञ्जामिता वटीः ॥२०२॥
एकैकाञ्च प्रयुञ्जीत प्रातरासां बलाम्बुना।
उष्णेन पयसा वाऽपि केशराजरसेन वा ॥ २०३ ॥
इयं रत्नप्रभा नाम्नी वटिका सर्वसिद्धिदा।
सर्वस्त्रीरोगहन्त्री च बल्या वृष्या रसायनी ॥ २०४ ॥

भै र., परिशिष्टे (रसायने)

भाषा—सुवर्ण, मोती, अभ्रक, नाग, वङ्ग, पीतल, सोनामाखी, चांदी, हीरा, लोह, हरिताल और खपरिया इनसबकी भस्में समभागलेकर केलेकाकन्द, मकोय, अडूसा, कमल, जैंती और कपूर इनसबके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ अहोरात्र मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खरैटीकेस्वरस अथवा गरमदूध अथवा भंगरेकेरससे देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर बल और वृष्यताको देकर दीर्घायुको करतीहै और खासकर स्त्रीरोगोंकी परमौषधहै ॥ ४७ ॥

४८ रत्नभागोत्तररसः

वज्रं मरकतं पद्मरागं पुष्पञ्च नीलकम्।
वैदूर्य वाऽथ गोमेदं मौक्तिकं विद्रुमं तथा ॥ २०५ ॥
क्रमवृद्धमिदं सर्वं वैक्रान्ते चाऽष्टभागकम्।
तत्तुल्यं ताप्यजं भस्म तदर्द्धमिमलभस्म च ॥ २०६ ॥
सर्वतस्त्रिगुणां तुल्यरसगन्धककज्जलीम्।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य छागीदुग्धेन तद् द्व्यहम् ॥ २०७ ॥
विधाय पर्पटीं यत्नात्परिपूर्य प्रयत्नतः।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दरसेन परिमर्दयेत् ॥ २०८ ॥
काननोत्पलविदान्या पुटेत्सोऽद्भुतदायकम्।
एवं रसोविनिष्पन्नो रत्नभागोत्तराभिधः ॥ २०९ ॥
महावन्ध्यादिवन्ध्यानां सर्वासां सन्ततिप्रदः।
देयोऽयं विनिर्दिष्टः पुंसां वन्ध्यत्वरोगनुत् ॥ २१० ॥

सोऽयं पाचनदीपनोगदहरो वृष्यस्तथा गर्भिणी,-
सर्वव्याधिविनाशनो रतिकरः पाण्डुप्रचण्डार्तिनुत्।
धन्यो बुद्धिकरश्च पुत्रजननः सौभाग्यकृद्योषितां,
योन्यातङ्कमपाकरोति महसा पुंसामशेषार्तिनुत् २११

र. र. स., र. चं., स्त्री. वि., र. को., र. र. कौ., सन्तानार्थे।

भाषा—हीरा, पन्ना, माणिक्य, पुखराज, नीलम, लहसुनिया, गोमेद, मोती, प्रवाल, इनसबकी शास्त्रोक्तविधानसे बनीहुईभस्में क्रमवृद्धभागसे लेवे। फिर वैक्रान्त, सुवर्णमाक्षिक और रौप्यमाक्षिक इनप्रत्येककीभस्में पूर्वद्रव्योंसे अठगुनी और सबसे तिगुनी शुद्धपारेगन्धककीकज्जली मिलाकर सबको दोरोज् बकरीकेदूधमें मर्दनकर सुखाकर फिरसे कज्जलीबनाय घृताक्त लोहेकीकड़छीमें बेरकीलकड़ीके कोयलोंपर गलाकर गोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्रपर ढालकर दूसरे केलेके पत्तेसे ढककर गोबरसे दबादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कज्जलीबनाय बांझककोड़ेके कन्दकेरससे १–१ रोज् मर्दनकर गोरखमुण्डीके स्वरसकी १६ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे स्त्री और पुरुषोंके महावन्ध्यत्वादि समस्तदोषोंको दूरकर शुभगन्तति को पैदाकरताहै। मन्दाग्नि, षण्ढत्व, पाण्डु, बुद्धिनाश, योनिज और पुरुषोंके षण्डत्वादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ४८ ॥

४९ रत्नाकरचिन्तामणीरसः

अष्टसत्त्वञ्च हेमाद्यं ताप्याद्यष्टद्रुतिस्तथा।
सर्वतुल्यं रसं क्षिप्त्वा तदर्द्धमभ्रकद्रुतिम् ॥ २१२ ॥
मीनाक्षी चैव सर्पाक्षी व्याघ्रीकन्दं पुनर्नवा।
सिंहनेत्री तथाऽऽवर्ता काकमाची तुला मषी ॥२१३॥
पीतपर्णी घुणा कुम्भी विशाला च रुदन्तिका।
सोमवल्ली भृङ्गी हंसी द्राविका द्रविकास्तथा ॥२१४॥
एतासामौषधीनाञ्च प्रत्येकं सप्तधा पुटेत्।
काचकूप्यां तथा क्षिप्त्वा पचेत्कञ्च हठाग्निना ॥ २१५ ॥
धूमवेधी रसो दिव्यः षड्धातून् वेधयेद्ध्रुवम्।
एवमेव प्रकर्तव्यं सप्तधा च प्रयत्नतः ॥
स्पर्शवेधी रसो दिव्यो नाम्ना रत्नाकरो रसः ॥२१६॥

रसागार, रसायने।

भाषा—सुवर्णादि अष्टधातुओंकी निरुत्थभस्म बनाय यथा शास्त्र सबका सत्व निकाले और सुवर्णादिधातु तथा इनके उपधातुओं (उपधातु) की द्रुतियां समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्धपारा, पारेसे आधी अभ्रकद्रुति मिलाकर ७–८ कपरमिट्टीकी हुई आतशीशीशीमें डालकर मत्स्याक्षी, सर्पाक्षी, व्याघ्रीकन्द, पुनर्नवा, सिंहनेत्री ?, आवर्तकी ([illegible]) मकोय, [illegible] [illegible] ([illegible]), पीतपर्णी, [illegible], जलकुम्भी, इन्द्रायण, रुदन्ती, सोमवल्ली, भृङ्गी, हंसी, [illegible] ओंको द्रुतकरनेवाली और [illegible] [illegible] [illegible] औषधियां हैं उन प्रत्येकका [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible]

७-७ पुन्देकर काचकीकूपीमें डालकर १५ दिनतक हठाग्निसे धमन करनेपर यह धूमवेधी रस तैयार होगा और सातोंधातु ओंको स्वकीयधूमसे सुवर्ण बनावेगा । इसकेस्पर्शसे महाव्याधि योंसे निवृत्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ४९ ॥

५० रत्नाकररसः

हेमहीरकवैकान्तवज्राऽभ्ररसगन्धका. ।
समभागमिता योज्या.सर्वतुल्यमयो मतम् ॥ २१७ ॥
खल्वे नि.क्षिप्य सर्वाणि भावयेत्कुमाम्भसा ।
गोधूमस्य यवस्यापि क्वाथेन सप्तधा पृथक् ॥२१८॥
ततः कन्याऽमुना प्राज्ञस्त्रीन्वारान् परिपेचयेत् ।
रक्तशाल्यन्तरे पिण्डं निशाः सप्त च धापयेत् ॥२१९॥
समुद्धृत्य वटीश्चाऽथ कुर्यात्स्विन्नकलायवत् ।
अर्जुनस्य कषायेण काञ्जिकेनाऽऽसवेन वा ॥ २२० ॥
गोधूमस्य यवस्यापि क्वाथेन हविषाऽपि वा ।
यथादोपालुपानैर्वा प्रदद्यात्परमौषधम् ॥ २२१ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चाऽपि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
क्रिमिजं द्वृद्रदञ्चाऽपि कौष्ठिकं पृथुकं तथा ॥ २२२ ॥
तथा वरणिकं घोरं गदं विक्षेपकाभिधम् ।
मेद.सूत्राभिधञ्चाऽपि परिक्षयगदं तथा ॥ २२३ ॥
आयामिकाञ्च यक्ष्माणं वातपित्तकफामयान् ।
हन्त्ययं निखिलान्रोगान् वृक्षानिन्द्राशनि र्यथा ॥२२४॥

आ वि , हृद्रोगाऽधिकारे ।

टि०—कौष्ठिकादीना लक्षणानि आयुर्वेदविज्ञाने निहितानि तानि च यथा—आमवातादभीघातात्तथाऽऽवरणिकाद्गदात् । हृत्कोष्ठे जायते शोथो गद एप हि कौष्ठिक ॥ १ ॥ ज्वरो दाहोऽरुचि कम्पो वैवर्ण्यं वह्निनक्षय । श्वास कासो राजयक्ष्मा कोष्ठे पूयस्य सञ्चय ॥ २ ॥ मूर्च्छाऽऽक्षेप भ्रला पश्च नाडीविषमवाहिनी । गदाव घोरतरादस्माद् भाग्यात्कोऽपि प्रमु च्यते ॥ ३ ॥ इति कौष्ठिक ॥ शोणितस्य गतौ कोष्ठे व्याहतायामना रमन । तत्पेशी पृथुता याति मिथ्याऽऽहारविहारत ॥ ४ ॥ हृद्वेपथु र्व्यथा तत्र दौर्बल्य श्वासकृच्छ्रता । अरति भ्रममोहौ च चिह्नानि पृथुकेगदे ॥ ५ ॥ इति पृथुक ॥ आमवाताद् वृक्कदोषाद् शीतार्द्रत्वनिषेवणात् । हृत्को ष्ठावरणी क्षिप्र पीड्यते शकला मन ॥ ६ ॥ तत्र दाहोष्णता शोफोगौरव महती व्यथा । कोष्ठसंवेपन कासो दौर्बल्य श्वासकृच्छ्रता ॥ ७ ॥ नासा मार्गेण रक्तस्य स्रुति वह्नेश्च मन्दता । शाखासु शोथो धमनी भवेद्विषम गामिनी ॥ ८ ॥ नाम्ना वरणिको ह्येष व्याधि विद्भिरुच्यते । जातमात्र श्चिकित्स्योऽय नैवोपेक्ष्य कदाचन ॥ ९ ॥ इति वरणिक ॥ हृत्कोष्ठा- क्षेपको व्याधि नाम्ना विक्षेपिका मता । जातेऽस्मिन् महति व्याधौ कोष्ठ देशेऽप्युरोऽस्यथ ॥ १० ॥ सव्यासास्थिन सव्यबाहौ ग्रीवाया पृष्ठदे शत । वेदना जायते तीव्रा मर्मप्राणप्रपीडनी ॥ ११ ॥ तोदभेदौ समा कर्णो दाहस्तत्र च जायते । मुहुर्मुहु श्वासरोध शीता त्वक स्वेदनिर्गम ॥ १२ ॥ आध्मानानाहमोहाश्च वैवर्ण्य कृशताऽरुचि । क्रमादिन्द्रिय विध्वसो मरणञ्चाऽप्यनात्मन ॥ १३ ॥ इति विक्षेपिका ॥ हृत्कोष्ठपद्दी सूत्रेषु मेद कणचयो गद । मेद सूत्राख्यया प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्वे दिभि ॥ १४ ॥ मन्द मन्द व्रजेन्नाडी भवेद्धृदयवेपथु । अवमादो भ्रमो मूर्च्छा स्नायूना बलमथय ॥ १५ ॥ हृदकूने वापि सभेदान्मृत्युश्च सहसा भवेत् । जातमात्रश्चिकित्स्योऽय व्याधि परमदारुण ॥ १६ ॥ इति मेद सूत्रम् ॥ क्षयात्सञ्जायते घोरो व्याधि नाम्ना परिक्षय । कोष्ठपेश्या क्षय श्वासो दौर्बल्य सदन भ्रम ॥ १७ ॥ हृद्वेपथु वह्निमान्द्य क्रमाच्छोफश्च जायते । एतैरन्यैश्च विज्ञेयश्चिह्नै र्व्याधि परिक्षय ॥ १८ ॥ इति परि- क्षय ॥ हृत्कोष्ठप्रसृति नाम्ना व्याधिरायामिको मत । श्वास शोथो भ्रमो मूर्च्छा हृत्कम्पो वह्निमन्दता ॥ १९ ॥ जलोदरमनिद्रत्व बलमांसपरिक्षय । एभिरन्यैश्च विज्ञेयश्चिह्नैरायामिको गद ॥ २० ॥ इत्यायामिका ॥

भाषा—सुवर्ण, हीरा, वैकान्त, वज्र, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धपारा और गन्धक सब समभाग और सबकीबराबर लोहभस्म लेकर कहुआ, गेंहू, जव इनप्रत्येकके काथोंसे ७-७ भावनाएं देकर घीकुआरकेरसमें ३ भावनाएं देवे फिर गोला बनाय एरण्ड- पत्रमें लपेटकर डोरेसे बांधकर लालचावलोंकीराशिमें ७ रोजतक दबादे । आठवेंरोज निकालकर उबलेहुए मटरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अर्जुनकाकाढा, काञ्जी, आसव, गेंहू तथा जवका काढा, घी इनमेंसे किसी एककेसाथ अथवा दोषानुसार अनुपानोंकेसाथ देनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, क्रिमिज, कौष्ठिक, पृथुक, आवरणिक, विक्षेपक, मेद-सूत्र, परिक्षय, आयामिका प्रभृति समस्त हृदयके रोग और यक्ष्माको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे कि इन्द्रका वज्र वृक्षोंका नाशकरताहै ॥ ५० ॥

५१ रत्नेश्वररसः (प्रथमः)

वज्रं वैकान्तमभ्रञ्च सिन्दूरमपि माक्षिकम् ।
मौक्तिकं हेमरौप्यञ्च सममिक्षुजधारिणा ॥ २२५ ॥
शतावरीरसेनाऽपि विदार्याः स्वरसेन च ।
विभाव्य घटिकाः कुर्याद्रत्तिकाप्रमिता भिषक् ॥२२६॥
त्रिफलाजलयोगेन रसो रत्नेश्वरो हरेत् ।
मस्तिष्कस्नायुजान्व्याधीनंशुघातं विशेषतः ॥
अंशुघाते प्रकर्तव्यो विधि र्मूर्च्छानिषूदनः ॥ २२७ ॥

आ वि अंशुघाते ।

टि०—अंशुघातलक्षण यथा—“चण्डांशोरंशुना शीर्ष्णि तप्ते चण्डेन जायते । अंशुघाताऽभिधो व्याधि प्राणिना प्राणपीडन ॥ १ ॥ तृष्णाऽ तिघोरा स्वप्नभ्रमो नेत्रस्य रक्तता । मूत्रवेगश्च मूर्च्छायो ह्रासो विष- माऽथवा ॥ २ ॥ श्वासकृच्छ्र स्पर्शहानिराक्षेपश्चात सम्भवेत् । प्राय काराऽवरुद्धाना प्रथमा जायते च स ॥ ३ ॥ इति,

भाषा—हीरा, वैक्रान्त, अभ्रक, रससिन्दूर, सोनामाखी, मोती, सुवर्ण, चांदी इनकीभस्में समभागलेकर ईख, शतावर और विदारीके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके पानीकेसाथ देनेसे मस्तिष्क, स्नायु, अंशुघातादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । अंशुघातमें विशेषकर मूर्च्छाको दूरकरनेवाले उपाय करने चाहियें ॥ ५१ ॥

५२ रत्नेश्वररसः (द्वितीय)

अर्द्धभागेन सूतेन तारं ताम्रेण मेलयेत् ।
मारयेत्सिकतायन्त्रे शिलाहिङ्गुलगन्धकैः ॥ २२८ ॥
अयं रत्नेश्वरः सूतः सर्वरोगनिकृन्तनः ।
अलं ज्ञात्वा चतु.षष्टिरोगांस्तैस्तैश्च लक्षणैः ॥ २२९ ॥

एप रत्नेश्वरः सूतः सर्वरोगेषु युज्यते ।
हेम्नोऽन्तर्योजितो ह्येषो हेमतां प्रतिपद्यते ॥ २३० ॥
शेषोऽर्कश्चेद्गन्धके वा कुनस्या वा हतद्विपैः ।
शोधयेत्कनकं सम्यगन्यै र्वा कालिकापहैः ॥
वर्णह्रासे तु ताप्येन कारयेद्वर्णमुत्तमम् ॥ २३१ ॥

रसायनस ,यो म.,रसायने ।

टि०—योगमहार्णवे अर्धपादोनतुल्येन तारं ताम्रेण योजयेदिति पाठो दृश्यते परन्तु तत्र श्रद्धास्पदं पारदरहिते वर्णान्तरापादकत्वाऽभावात् ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, चादी और तावेका वारीकचूरा १–१ भागलेकर १–२ रोज इकट्ठा मर्दनकर तीनोंकी वरावर मैनसिल मिलाकर घीकुआरके रसमें १–२ रोज मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर अच्छी॰ तरह सुखनेपर वालुकायन्त्रमें एकरोज पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह क्रमसे हिङ्गुल और गन्धक देकर पाककरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । दोषोंके ६४ भेदोंको तदीयलक्षणोंसे अच्छीतरह समझकर अथवा वैसेही इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै । इसभस्मकी वरावर सुवर्णमिलाकर धोंकनेसे सव सुवर्णहोजाताहै यदि धोंकनेसे तावा अलग होजायतो गन्धक अथवा मैनसिल अथवा नागभस्म देकर धमनकरे । मिलानेपर सोनेमें कालिमा आजायतो कालिकाको दूरकरनेवाली चीजोंका योगकर धमनकरे । रगकी न्यूनता होनेपर सोनामाखीकेसाथ गलानेसे उत्तमवर्णहोजाताहै ॥ ५२ ॥

५३ रत्नेश्वरवटी

कान्तंशुल्वं समं चूर्ण्यं वज्रमूषान्धितं धमेत् ।
तत्खोटसिद्धचूर्णन्तु गन्धकाम्लेन मर्दयेत् ॥ २३२ ॥
रुद्ध्वा सम्यक् पुटे पक्त्वा समुद्धृत्याऽथ मर्दयेत् ।
पूर्ववत्क्रमयोगेन पुटेद्वारांश्चतुर्दश ॥ २३३ ॥
वज्रेण द्रुन्द्वितं स्वर्णमनेनैव तु रञ्जयेत् ।
मूषामध्ये धमन्नेवं सप्तवारं समं क्षिपेत् ॥ २३४ ॥
तत्खोटं चूर्णितं भाव्यं स्त्रीपुष्पेण दिनावधि ।
तत्तुल्यं द्रुतसूतन्तु सर्वं यामं विमर्दयेत् ॥ २३५ ॥
वेष्टयेद्भूर्जपत्रेण वस्त्रेवद्ध्वा पचेत्त्र्यहम् ।
दोलायन्त्रे सारनाले जातं गोलं समुद्धरेत् ॥ २३६ ॥
गान्धारी जीवनी चैव लाङ्गली चेन्द्रवारुणी ।
एतासां पिण्डकल्केन वेष्टयेत्पूर्वगोलकम् ॥ २३७ ॥
अन्धयित्वा दिनं पक्त्वा भूधरे तं समुद्धरेत् ।
पुनर्लेप्यं पुनः पाच्यं चतुर्दश दिनावधि ॥ २३८ ॥
गुटिका जायते दिव्या नाम्ना रत्नेश्वरी तथा ।
वक्त्रस्था वर्षमात्रन्तु नन्दितुल्यो भवेन्नरः ॥ २३९ ॥
जीवेद्वर्षसहस्राणि दिव्यतेजा महाबलः ।
वर्षद्वादशपर्यन्तं यस्य वक्त्रे स्थिता तु सा ॥ २४० ॥
तस्य संस्वेदसम्पर्काद्ष्टलोहानि काञ्चनम् ।
जायन्ते नात्र सन्देहः सत्यमीश्वरभाषितम् ॥
पश्चाङ्कचूर्णं मध्वाज्यैः स्वदन्त्युत्थं लिहेदनु ॥ २४१ ॥

र. रा ,रसायने ।

भाषा—शुद्धकान्तलोह और ताम्रसमभागलेकर वज्रमूषामें वन्दकर धमनकरे । गलजानेपर अग्नि वन्दकरदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर खोटको निकालकर गन्धकके तेजावसे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिर पूर्ववत् करे, ऐसे १४ वार पुटदेनेके वाद शीशीमें भरकर रखछोड़े । हीराकी द्रुतिकेसाथ मिलायेहुए सुवर्णको गलाकर वरावरके हिस्सेमें इसे डालनेसे असलीरङ्ग आजायगा । इसमें वरावरके चूर्णसे डालकर वज्रमूषामें वन्दकर ४ पहर धमनकरे, ऐसे सातवार करनेकेवाद यह खोट तैयार होगा फिर इसका चूर्णकर स्त्रीपुष्पसे एकदिन भावनादेकर उसकी वरावर द्रुतपारद डालकर फिर एकदिन स्त्रीपुष्पसे मर्दन कर गोलीवनाय भोजपत्रमें लपेट चारतहकपड़ेमें वाधकर काञ्जीमें दोलायन्त्रसे तीनदिनतक पकावे फिर गान्धारी ? जीवनी ? करिहारी और इन्द्रायणके कल्कसे पूर्वोक्त गोलेको लपेटकर वज्रमूषामें वन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् पाककरे । ऐसे १४ दिनकर नेकेवाद रत्नेश्वरी गुटिका तैयारहोगी । इसे एकवर्ष मुहमें रखनेसे नन्दिकेश्वरकेवरावर दिव्यतेज और वलयुक्तहोकर १००० वर्षतक जीताहै । वारहवर्षतक जिसके मुहमें यह गोली रहजाय उसके पसीनेके छूनेसे आठोंलोह कञ्चन होजातेहैं । इसगोलीको मुहमें रखनेवाला स्वदन्तीके पञ्चाङ्गके चूर्णको मधुघृ मिलाकर खावे, यह इसका अनुक्रमण है ॥ ५३ ॥

५४ रविताण्डवरसः (प्रथम)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम् ।
त्र्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥ २४२ ॥
तयोः समं ताम्रपत्रं हण्डिकान्तर्निवेशयेत् ।
तद्भाण्डं भस्मनाऽऽपूर्य चुल्यां तीव्राग्निना पचेत् २४३
द्विदिनान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ।
जम्बीरस्य रसैः पिष्ट्वा रुद्ध्वा सप्तपुटैः पचेत् ॥ २४४॥
गुञ्जैकं मधुनाऽऽज्येन लिह्याद्धन्ति भगन्दरम् ।
मुशलीं लवणञ्चानु क्षारनालयुतं पिबेत् ॥ २४५ ॥
भुञ्जीत मधुराहारं दिवास्वापञ्च मैथुनम् ।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेऽस्मिन्रवितांडवे ॥ २४६ ॥

र. स ,र त ,र च ,वै चि ,र क ,र र ग ,भै सा ,र र ,व रा ,यो त ,र क ,गे ,र क यो ,र.र की , भगन्दरे ।

टि०—र स ,र त ,र च ,वै चि ,र क ,र र म ,भै सा, र र ,व रा ,र का ,र क यो ,टो ,र र की ,पु रविताण्डव इति नाम । ताण्डवभैरव इति रसायन [illegible] । र चि र गु ,र क. ल ,र र दी पु नारिताण्डव इति नाम । भै र, ५, [illegible] विभाण्डेति । र गी, भगन्दरज इति । र [illegible] पिनाकशाणिरिति । [illegible] इति । र स र [illegible]

चि र म, र नि, र कौ, र या, र सु, र पा, र म (मा) एषु भगन्दरहर इति । र र, र दी, अनयास्त्रिगुणाख्य इति । र र कौ, र नि, या म, एषु भगन्दरकेसरीति नाम । र सं, द्विस्थाने पाठोऽस्ति । रसतरङ्गिण्यामेकस्थाने । र च एकस्थाने । वै चि एकस्थाने । र क एकस्थाने । र र स एकस्थाने । भै सा एकस्थाने । र र एकस्थाने । ब रा एकस्थाने । र का द्विस्थाने । र क या एक स्थाने । टा एकस्थाने । र र कौ द्विस्थाने । र चि द्विस्थाने । र सु द्विस्थाने । र ब स द्विस्थाने । र र दी एकस्थाने । भै र एकस्थाने । ध एकस्थाने । र दी द्विस्थाने । र यो एकस्थाने । र एकस्थाने । र म एकस्थाने । चि र भ एकस्थाने । र नि एकस्थाने । र कौ एक स्थाने । र कौ एकस्थाने । र म (मा) एकस्थाने । र र एकस्थाने । यो म एकस्थाने । एकस्यव योगस्य दशनामस्थापने महाव्यामोहकरत्व मत सर्वेषां रविनामेन्द्र एवाऽन्तर्भाव कृतोऽस्ति ।

रसेन्द्ररत्नकोशे रसायनाऽधिकार **उदयादित्यनाम्ना** "आवर्तिते रस पल क्षिप्त्वा द्विगुणगन्धक । आर्द्रकद्रवसुर्दाला विंशत्या मर्दित पचेत् ॥ गृह्णन् ताम्रमूषाया त शुभामसित रसम् । सगर्पिनागर भुक्त्वा तथाम्बु प्रसन पिबत् ॥ रसोऽयमुदयादित्य स्यान्नरारनर्नीहर ॥" अथ योगो रसायनाऽधिकार निहितोऽस्ति ।

र चि, र सु, भै र, र का, एषु ज्वराऽधिकार **ज्वरशूलहरनाम्ना** "रसगन्धकयो कृत्वा कज्जलीं भाण्डमध्यगाम् । तत्राऽधावरता ताम्र पात्रीं मन्द्रय शोषयेत् ॥ पादाङ्गुष्ठप्रमाणन चुल्ल्या काष्ठेन तां पचेत् । यामद्वय ततस्तस्य रसपात्र समाहरेत् ॥ सञ्चूर्ण्य गुञ्जायुगल त्रिनय वा विचक्षण । ताम्बूलदलयोगेन दद्यात्सर्वज्वरप्रणुम् ॥ जीरसैन्धवमन्थित्व क्वाथ ज्वरिणे हितम् । स्वदाद्भवा भवत्येव देवि सर्वेषु पाप्मसु ॥ चातुर्थिकादीन्विषमाश्चवमागामिन ज्वरम् । साधारण सन्निपात नयत्येव न संशय ॥" अथ योगो निहितोऽस्ति ।

दा, च द एतयोर्ग्रन्थयो ग्रहण्यधिकार **ताम्रयोग** इति नाम्ना "स्थाल्यां सन्मथ दास्त्वीं मापिनौ रसगन्धकौ । नवक्षुण्ण तदुपरि तण्डु लीय द्विमापिकम् ॥ ततो नैपालताम्रस्य विधाय सुकपालकम् । चूर्णे पूरयेद्दूर्ध्व सर्वां स्थालीं ततोऽनल ॥ स्थाल्यधो नालिका यावद्देयस्तेन मृतस्य च । रक्तिकैका समादाय त्रिफलाचूर्णरक्तिकाम् ॥ रक्तिमेवा त्र्यूप णस्य विडङ्गस्य च रक्तिकाम् । घृतन मधुनाऽऽलोड्य प्रथमे दिवस लिहेत् ॥ रक्तिवृद्धि प्रतिदिन कुर्यात्साप्तादिषु त्रिषु । स्थिराविडङ्गरक्तिस्तु यदा भेदाऽविवक्षित ॥ रक्तदुष्टौ विडङ्गस्य भेदोऽय सम्प्रदर्शित । तदा विडङ्ग त्वधिकमन्यथा रक्तिकाद्वयम् ॥ द्वादशाह यावद्वृद्धिस्ततो ह्रासक्र माऽप्ययम् । ग्रहणीमम्लपित्तञ्च क्षय शूलञ्च सर्वथा ॥ ताम्रयोगा नयत्येष बलवर्णाग्निवर्धन ॥" अथ योगो निहितोऽस्ति ।

र र स, र च, र कौ, र सु, र र कौ, र म मा एषु ग्रन्थेषु "विमर्दिताभ्यां रसगन्धकाभ्यां नीरेण कुर्यादिह गोलक तम् । भाण्डे नवीने विनिवेश्य पश्चात्तद्गोलकस्योपरि ताम्रपात्रम् ॥ सार्धं मुहूर्तं विनिरुद्ध्य धीमानुद्दीपयेद्दीप्तकृशानुनाऽस्य । अधस्तात सिद्ध्यति पर्पटीय नवज्वरारण्यकृशानुमेघ ॥ विलिप्य पूर्व रसनाञ्च तालुदेशञ्च सिन्धूद्भव नीरकार्द्रं । वह्नीभिना चाऽऽर्द्रकतायमिश्रामना नियोज्य स्वगयेप टेन ॥ घर्मोद्गमो यावदत परञ्च तक्रौदन पथ्यमिह प्रयोज्यम् । कुर्याद्दि नानां त्रिनय यदास्य ज्वरस्य शङ्काऽपि तदा भवेत्किम् ॥" अथ योगो नवज्वराऽधिकारेऽस्ति तत्र र र स, र कौ, र र कौ र म मा एषु **नवज्वरारण्यकृशानुमेघेति** नाम, र च **ज्वराङ्कुशेति** र सु **पर्पटीरस** इति नाम स्थापितम् । र र स र र कोशयोर्द्वितीयस्थाने **नवज्वरारीति** नाम ।

रसामृते **भगन्दरनाशनरस** इति नाम्ना भगन्दराऽधिकारे "रस द्विगुणगन्धेन कुमारीद्रवसंयुतम् । दिनत्रय विमृद्नीयात्ततो गोलकमानयेत् ॥ ताम्रस्य पुटक कृत्वा तत्समांशमथ क्षिपेत् । सम्यङ्निरुद्ध्य यत्नेन भस्मना परिपूरयेत् ॥ अग्नि प्रज्वालयेच्चण्ड प्रहरद्वयमात्रत । सञ्चूर्ण्य पुटयेत्पश्चाज्जम्बीरद्रवसंयुतम् ॥ गुञ्जामात्र समं शीयाकृतेन मधुना युतम् । भगन्दरादिनुत्यर्थमाहार मधुर चरेत् ॥" अथ योगो निहितोऽस्ति ।

निघण्टुरत्नाकरे सन्निपाताऽधिकार माहेश्वर (मोरेश्वर) नाम्ना 'शुद्ध सूत द्विधा गन्ध दिनैकमाऽऽर्द्रकद्रवै । मर्दयित्वा च त गोल गोलार्द्धं ताम्रसम्पुटे ॥ क्षिप्त्वा निरुद्ध्य तत्सन्धि मृन्मूषाया निरुद्ध्य च । रात्रौ गजपुटे पाच्य प्रातरादाय चूर्णयेत् ॥ गुञ्जैक नागरसम सघृत सन्नि पातनुत् । अनुपान पिबेत्पश्चात्तप्त वारि पलद्वयम् ॥ दध्यन्न दापयेत्पथ्य तृषायां शीतल जलम् । कृशाश्च कुरुते स्थूल नर माहेश्वरो रस " अथ योगो निहितोऽस्ति ।

र सु, र कौ, र का, र क क एषु ग्रन्थेषु ज्वराऽधिकार **रक्त माहेश्वरेति** नाम्ना "शुद्ध सूत द्विधागन्ध दिनैकमाऽऽर्द्रकद्रवै । मर्द यित्वा तु तद्गोल गोलार्ध ताम्रसम्पुटे ॥ क्षिप्त्वा निरुद्ध्य तत्सन्धि मूषान्ते च निरुद्ध्य च । रात्रौ गजपुटे पाच्य प्रातरादाय चूर्णयेत् ॥ गुञ्जैक नागरै सार्धं सघृत सन्निपातनुत् । अनुपान पिबेत्पश्चात्तप्तवारि पलत्रयम् ॥ दध्यन्न दापयेत्पथ्य तृषार्ते शीतल जलम् । कृशाश्च कुरुते स्थूल रक्तमाहे श्वरो रस ॥" अथ योगो निहितोऽस्ति ।

र र स, र म मा, र र, यो, र प, र क, र म, चि सा, र कौ, ध, शा स, यो म, र स, इ यो त, र र, र सु, र चि, भै र, चि क, र च, नि र, भै सा, र कौ, रसायनस, र म सु, नि र भ, र म, वै र, र का, ना. वि, ब रा, र पा एषु ग्रन्थेषु **शूलगजकेसरीति** नाम्ना 'शुद्ध सूत द्विधा गन्ध यामैक मर्दयेद् दृढम् । द्वयातुल्ये शुद्धताम्रसम्पुटे तन्निरोधयेत् ॥ ऊर्ध्वाऽधो लवण दत्त्वा मृद्भाण्डे धारयेद्भिषक् । रुद्ध्वा गजपुट पाच्य स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ॥ सम्पुट चूर्णयेत्सूक्ष्म पर्णखण्डे द्विगुञ्जकम् । भक्षयेत्सर्वशूलार्तो हिङ्गुशुण्ठी च जीरकम् ॥ वचामरिचज चूर्णं कर्षमुष्णजलै पिबेत् । असाध्य नाशयच्छूल रस स्याच्छूलकेसरी ॥" अथ योग शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

ब रा, वै चि, एतयो **शोफाङ्कुशेति** नाम्ना 'ताम्रपत्र त्रिभागेन रसगन्धेन लेपयेत् । निम्बद्रवण सयोज्य सर्वतोप विनिक्षिपेत् ॥ ऊर्ध्वाऽधो गन्धक दत्त्वा पाचयेदतियत्नत । मत्स्याक्षीमर्दित कृत्वा मृद्भाण्डे वालु कान्विते ॥ याममात्रञ्च पक्त्वैव स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् । गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा ह्यभयागुडसंयुताम् ॥ आर्द्रकस्य रसेनाऽपि शोफपाण्डुविभेदनम् । शोफाङ्कुशरसो नाम्ना ह्यकाना हितकारक ॥" अथ योग शोफाऽधि कार निहितोऽस्ति ।

रसावतारे **श्लेष्मोदरारण्यकृशानुमेघ** इति नाम्ना "गन्धकेन तुल्यि शिवबीज मर्दयेत्कनकपत्ररसेन । ताम्रपात्रकुहरे निवेश्य सवालुकान्तरगत पुटनीयम् ॥ पाठार्कधत्तूरवशाशुनाङ्गलीविचारसै र्भावय सप्तसप्त । श्लेष्मो दरारण्यकृशानुरेष वह्नाभिन श्लेष्मजगुल्मनुत्स्यात् ॥ शुण्ठीगुडाभ्याञ्च गुडार्द्रकाभ्यामार्द्रद्रवेणाऽपि गुडान्वितेन । वल्लद्वयमुना सैन्धवसंयुतेन घृतार्पणैर्वातजगुल्मशान्त्यै ॥ बीजस्य क्वाथेन सवाल्कन रक्तोत्थगुल्मस्य विनाशनाय । नि सार्य रक्त स्वय गुल्मदेशे पत्थारिवागैन्धवशिग्रुष्म" ॥ अथ योग उदराऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रससुक्तावल्यां **श्वासकासारिरस** इति नाम्ना "गन्धचन्द्रमित रस यममित याम कुमारीद्रवैर्मर्द्य वह्निमिनार्कपत्रमनल तत्कल्कमाच्छादितम् । भाण्डे यामचतुष्टय पच दृढ सुस्वाङ्गशीतो रस, श्वासध्वान्तरवि ररासुगुणद वास द्विगुञ्जो जयेत् ॥ चूर्णं तालुग द्वारणिजदाव्याघ्याम लानां कृत, दद्यादे तमकादिकासदहन सुप्यादनु प्रत्यहम् । गोप्याद्गो प्यतर सुखेन सुलभ सर्वत्र सिद्ध सदा, स्यादेव प्रतिभासुयागिसुरद श्रीशम्भुना निर्मित ॥" अथ योग श्वासकासाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

नि र, या च एतयो **श्वासजेतारस** इति नाम्ना "सूताऽर्द्ध वह्निमेव यामयमित कन्याद्रवैर्मर्दयेत्-चन्द्रदेन समतु शुल्वदल लिप्त्वा

घटीयन्त्रके । क्षिप्त्वा वालुकयन्त्रतोऽग्निममिनो दद्याद्दिषग्बुद्धिमान् । पक्त्वैकाहमथाहरेन्निगदितो वटोऽन्मिनः श्वासजित् ॥" अय योगः श्वासाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र. चि., र. च., नि. र., वै. चि., एषु ग्रन्थेषु श्वासहेमाद्रिरस इति नाम्ना "आच्छादितशिला ताम्री द्विगुणा वालुकाह्वये । पक्त्वा सञ्चूर्ण्य गन्धेशौ दिनार्द्धं ता पुन. पचेत् ॥ श्वासहेमाद्रिनामाऽय महाश्वासविनाशनः । वर्णवृद्धिकरो ह्येष सुवर्णस्य न संशयः ॥" अय योगः श्वासकासाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र. स., र. र. स., शा. स., र. र., र. क.,ध., भै. र.,नि र., वै. र.,र. सु., र. प्र. सु., र. च., र. प्र., र. चि., र. रा., रसायनम्., भै.सा., यो. म., र. (मा.), र. कौ., चि. र. भ., यो. च., व. रा., र. वो , र. सि., र. को., र. का., र. क. यो., वै. चि., र. क. ल., र. त., चि. क. एषुग्रन्थेषु श्वासाऽधिकारे सूर्यावर्तनाम्ना "गन्धक सूतक मर्द्य यामैक कन्यकाद्रवैः । द्वयोस्तुल्य ताम्रपत्र पूर्वकल्केन लेपयेत् ॥ दिनैक हण्डिकायन्त्रे पचेच्छीत समुद्धरेत् । सूर्यावर्तरसोनाम द्विगुञ्जः श्वासकासनुत् ॥ इन्द्रवारुणिकामूल देवदारुकटुत्रयम् । शर्करासहित खादेदूर्ध्वश्वासनिवृत्तये ॥" अय पाठो निहितोऽस्ति । रसराजशङ्करे अस्यैवयोगस्य श्वासकुठारेति नाम । चिकित्सामकल्पवल्ल्यां ताम्रपाकनाम्नाऽय रसो विन्यस्तः, विशेषे गन्धको द्विगुण इति बोद्धव्यम् । अनुपानादौ विशेषो यथा—"वमनमथविरेक कारयित्वा च पश्चात्समधुकमधुयुक्त रक्तिकैकप्रमाणम् । सघृतमथ च तक्र वाऽनुधान्याम्लकञ्च, भिषगिदमनुपान जीर्णधान्यस्य पथ्यम् ॥ यदि कथमपि दद्यादम्लपित्तञ्चकास श्वसनमपि च शोष कामलापाण्डुरोगम् । अपहरति च कुष्ठान्रक्तपित्त तथार्शो, गदमथ रुधिर वा वातपूर्वं निहन्यात् ॥ खाल्वित्यमेहनिमिराश्च विजित्य वृद्धदेहोऽपि ताम्रनरुराशुभवेन्मनुष्य । यो ताम्रपाकरसमत्ति समस्तरोगैर्मुक्तास्समास्सनमल परिजीवतीह ॥" यत्रकुत्रचित्सूताऽर्द्धं गन्धकमिति पाठो लभ्यते तत्प्रयोजन तु न प्रतिभाति, गन्धकाऽधिक्ये तु सम्यक् ताम्रमारणमिति प्रत्यक्षफलम् ।

रसचि., र. का., एतयोः स्वच्छन्दभैरव इति नाम्ना ज्वराधिकारे "वेदकर्षो रसो भाव्यो गन्धो द्वादशकर्षकः । कृत्वा कज्जलिकामादौ क्षिपेत्ताम्रस्य सम्पुटे ॥ अष्टकर्षप्रमाणेऽस्मिन् धृत्वा सूत्र विलेपयेत् । सन्धिलेप विधायाऽय स्थालिकायन्त्रके क्षिपेत् ॥ शरावेण पिधायाऽय मृदा सम्यग्विलेपयेत् । अहोरात्रं विपेदः स्यादहिलस्न च पारदे ॥ उत्तार्य शीतलं तत्र मधुना सम्प्रदापयेत् । श्लेष्मिके च ज्वरे देयस्त्रिगुञ्जो मरिचैः सह ॥ वातिकेऽय ज्वरे दद्याद्द्विगुञ्जः पिप्पलीयुतम् । रोगयोग्यानुपानेन देयः स्वच्छन्दभैरव. ॥ त्रिफलारसम्युक्त सर्वरोगे प्रयुज्यते ॥" अय योगो ज्वराऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

न्यूनाऽधिकप्रमाणेन गन्धेशयोः कज्जलीं विधाय केवलया येनकेनाऽपि स्वरसेन भावितया वा तया ताम्रपात्रस्योपरिष्टान्मध्यतो वा लेप दत्वा रोम्न विधाय तस्या उपरि ताम्रपात्रनाच्छाद्य वा यत्राऽग्नि प्रदत्तेन च यावतीभागस्य ताम्रपात्रस्य पक्वता वा भस्म सञ्जात तेन केवलेन मधुटितेन भावितेन वा नानाऽनुपानैर्विविधेषु रोगेषु प्रयोग कृतोऽस्ति तेषां योगानां प्रयोगमीहवाय इतिनामर्ध महमहः कृतोऽस्ति । अस्मिन्योगे वाग्निविरचने अभ्यभिने इति गूढ रहस्यम् । दोषनिस्सारतायाऽन्योऽपि प्रयोगसतो ने दोषावाहस्यनिति सुधीभिर्हृदि विमर्शनीयम् । ते च योगा यथा—इरपादित्यः, १ ज्वरसूर्य्यरः, २ ताम्रयोग ३ नाज्वरारय्यइसानुलेपः, ४ भगन्दरनाशन. ५ मर्द्देश्वरः, ६ रत्नमांश्वरः, ६ सूल्यगजकेसरी, ७ लोहाङ्कुश , ८ श्लेष्मरारण्यवदानुलेप , ९ आमकासादि, १० अर्जवेनाशन , ११ धर्मंमादि , १२ मयर्वत. १३ स्वच्छन्दभैरव १४ इति ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग और गन्धक २ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंआरके रसमें ३ दिन मर्दनकर ३ भाग ताम्रकेपत्रोंपर लेपलगाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई हण्डीमेंरख पिण्डको शरावसे ढककर सन्धिबन्दकर छनीहुई किसीभी राखको हण्डीके मुंहतक दबादबाकर भरके दोअङ्गुल सेंधानमक बारीकपीसकर राखपर दबाके थोड़ेसे पानीके छींटे लगाय ढकनरख सन्धि बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाकर दो दिनरातकी कड़ीआंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर जंभीरीकेरससे एकरोज़ मर्दनकर छोटी २ टिकियां बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ७ गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती मधु और घीकेसाथ देनेसे यह भगन्दरको नष्टकरताहै । मुराली, और सेंधेनमकको काञ्जीकेसाथमिलाकर अनुपानकी जगहलेवे । मधुराहार सेवनकरे । दिनका सोना और ठंढाभोजन छोड़देवे ५४

५५ रवितांण्डवरसः (द्वितीयः)

दशभागं ताम्रभस्म दरदो दशभागिकः ।
उभयोः कज्जलीं कृत्वा लुङ्गनीरेण मर्दयेत् ॥ २४७ ॥
पत्रीकृतस्य नागस्य दशभागान् प्रकल्पयेत् ।
कूप्यां निधाय वै पश्चात्क्रमवृद्धाऽग्निना दिनम् ॥२४८॥
एवं कुर्वीत नवधा वर्हि दद्याद्यथाविधि ।
रसः कुङ्कुमवर्णः स्यात्प्रोक्तोऽयमनुभूतितः ॥ २४९ ॥

रसायनसं., रसायने ।

टि०—द्वितीयनागसिन्दूरेणाऽय बहुष्वंशेषु साम्यमावहत्यपितिभेद स्यात्स्वतन्त्रतया निहितोऽस्ति वस्तुतस्तु ताम्रदरदयोरुभयोर्निर्भेदं विधायैवरसस्ये बाधकाऽभावोऽस्ति ।

भाषा—ताम्रभस्म और शिंगरिफ १०–१० भागलेकर दोनोंको बिजौरेकेरससे एकदोरोज़ मर्दनकर १० भाग शुद्धकियेहुए सीसेकेपत्रोंपर लेपदेकर आतशीशीमेंभरदे । फिर अच्छीतरहमुखमुद्रादेकर क्रमसह आगसे एकदिन पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शिंगरिफका लेपदेकर एक एक दिन पकावे । इसतरह ९ आंचें देनेसे यह कुङ्कुमकेसदृश तैयारहोगा । इसमेंसे १–१ रत्ती अथवा अग्निबलदेखकर देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५५ ॥

५६ रविप्रभोरसः

रवीभेशं त्र्यहं भाव्यं कपित्थाङ्घ्रिरसैप्रमः ।
वल्लो मेहे सिताक्षौद्रैः प्रातः सायं सिताज्ययुक् ॥२५०॥

रसायनसं., मेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धतांबा, नाग और पारेकीभस्मोंको इकट्ठामिलाय कैथकेरसमें ३ रोज़ मर्दनकर रसछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीमाशा खाण्ड और मधु अथवा खाण्ड और घीकेसाथ सुबहशाम देनेसे यह प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ ५६ ॥

५७ रविसुन्दरोरसः

ससिन्धुजं चित्रकपञ्चसवर्णं
मरीचयुक्तं पिप्पलीगतुल्यम् ।

दन्तीरसे भावनया त्रियुक्तं
रसः प्रसिद्धो रविसुन्दरोऽयम् ॥ २५१ ॥
धातज्वरार्ति सकलाऽऽमयत्वं
मन्दाऽनलत्वं शिरसो गुरुत्वम् ।
सर्वं निहन्त्युग्रतरं विकारं
गुञ्जाप्रमाणा वटकीकृता वा ॥ २५२ ॥
कुलत्थयूषं त्वथवा तु कृष्ण-
शाल्युत्थमण्डं प्रपिबेद्धितेन ।
कोष्ठाऽग्निवृद्धिं विदधाति रूपं
निहन्ति वातज्वरवातदोषम् ॥ २५३ ॥

र च , र सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—सैंधानमक, चित्रकबीज, शङ्खभस्म, मरिच, शुद्ध-बछनाग सब समभाग लेकर दन्तीकेस्वरससे ३ भावनाए वेनेसे यह रस तैयारहोगा । इसकी १–१ रत्तीकीमात्रा कुलथीके यूप अथवा शाहजीरा चावलोंके मांडकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, वात ज्वर तथा अन्य वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५७ ॥

५८ रविसुन्दरीवटी (प्रथमा)

विषं गन्धो रसः शुण्ठी मरीचाऽऽमलवेतसम् ।
पिप्पलीधूर्तबीजानि समं स्नुक्क्षीरभावितम् ॥२५४॥
भावना च त्रिधा देया दन्तीमूलस्य सप्तधा ।
चित्रकस्याऽपि हेम्नश्च त्रिवृतश्चार्द्रकस्य च ॥ २५५ ॥
मुद्गप्रमाणा वटिका रविसुन्दरसञ्ज्ञिका ।
करोत्यग्निबलं पुंसां ज्वरं कासं व्यपोहति ॥ २५६ ॥
वातश्लेष्मभवान्रोगानन्यांश्च श्लेष्मसम्भवान् ।
अजीर्णं षड्विधं जित्वा कोष्ठाग्निं वर्धयेत्सदा ॥ २५७॥

र. सु , अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धबछनाग, गन्धक और पारा, सोंठ, मिरच, अम्लवेत, पीपल, शुद्धधतूरेकेबीज सबसमभाग लेकर बारीकचूर्ण-कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर थूहरके दूधसे ३ भावनाए देकर दन्तीमूल, चित्रक, धतूरा, निसोत और अदरख के यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी ७–७ भावनाए देकर मूगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, कास, वातश्लेष्मजरोग, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै ५८

५९ रविसुन्दरीवटी (द्वितीया)

वृश्चीत्थरसगन्धांश्च मल्लाद्विगुणता नयेत् ।
पिचुमन्दरसे धौतैरर्कस्नुग्दलजाम्भसा ॥ २५८ ॥
भावयेदेकविंशत्या वटिका राजिकाऽऽकृतिः ।
धातुगे सन्निपातोत्थे जीर्णे चोपद्रवै र्युते ॥
निहन्ति च ज्वरं सर्वं रविस्तिमिरकं यथा ॥ २५९ ॥

चि र , ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, पारा और गन्धक २–२ भाग, शुद्धसोमल १भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर नीम, धतूरा, आक और थूहरके पत्ते इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे २१–२१ बार भावनाए देकर राईके बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे धातुग, सन्निपातज और उपद्रवोंकेसाथ जीर्णज्वरोंको यह अन्धकारको सूर्यकीतरह नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० रसकन्दर्परसः

सूतभस्माऽहिवङ्गञ्च ताम्रं वलिसुवर्णकम् ।
रौप्यकान्तप्रवालाऽभ्रं कर्षञ्च पृथगीरितम् ॥ २६० ॥
मौक्तिकञ्च द्विभागं स्यात्सर्वमेकत्र कारयेत् ।
भावनाश्च पृथग्दद्याद्धंसपाद्यग्निकन्यका- ॥ २६१ ॥
तालमूलीविदारीभूशर्कराशाल्मलीद्रवैः ।
कूप्यां पुनर्द्रवैरेभि र्विपचेद्ध शलाकया ॥ २६२ ॥
कूपीमध्यात्समाहृत्य सूक्ष्मतां प्रतिपादयेत् ।
भावयेत्तत्पुनः सर्वं निर्गुण्डीभृङ्गजैस्तथा ॥ २६३ ॥
चन्द्रकस्तूरिकाभ्याञ्च सुसिद्धो रसराड् भवेत् ।
गुरून्वृद्धांश्च सिद्धांश्च कुमारीयोगिनीगणान् ॥ २६४॥
पूजयित्वा यथाऽध्यायं ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
ध्यात्वा शिवं शिवां देवीं देवं धन्वन्तरिं तथा ॥२६५॥
रसः कन्दर्पनामाऽयं कामिनामर्थसाधकः ।
नवपञ्चाक्षरे र्देवीं जपेदयुतसङ्ख्यया ॥ २६६ ॥
हुत्वाऽग्नौ भोजयेद्विप्रान् देय. सर्वार्थसिद्धये ।
सिताकृष्णामधुयुतो वल्लोऽस्य जयति ध्रुवम् ॥२६७॥
क्षयमेहादिकान्सर्वान् रसौषधैश्च प्रयोजितः ।
वन्ध्या प्रसूयते पुत्रं वृद्धोऽपि तरुणो भवेत् ॥ २६८ ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो रमते स्त्रीसहस्रकम् ।
रस. कन्दर्पनामाऽयं शम्भुनाथेन निर्मितः ॥ २६९ ॥

र श , क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, नाग, वङ्ग, ताम्र, सुवर्ण, चादी, कान्तलोह, कान्तपाषाण, प्रवाल, अभ्रक इनकीभस्में और शुद्धगन्धक १–१ कर्ष, मुक्तापिष्टी २ कर्षलेकर बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर हंसराज, चित्रक, घीकुआर, तालमूली, विदारीकन्द, दीमकका मुखर, सेंमलका मुसला इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें डालकर बालु-कायन्त्रमें रख पूर्वोक्तद्रव क्रमसे डालकर पकावे और लोहेकी शलाकासे चलातारहे । द्रव समाप्तहोनेपर शीशीमेंसे निकालकर सुखनेपर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तद्रवोंसे १–१ भावना देकर निर्गुण्डी, भगरा, कपूर और कस्तूरी, इनकी १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े । गुरु, वृद्ध, सिद्ध, कुमारी, योगिनी, वेदपारगब्राह्मण, शिव, उमा और धन्वन्तरिका यथासम्प्रदाय पूजनकर नवार्ण (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) और पञ्चाक्षर (ॐनमः शिवाय) मन्त्रोंका दश–दशहजार जपकरे । जपका दशांश हवनकर ब्राह्मणभोजन-कराय इसरसकी १–१ गोली शक्कर, पीपल और मधुकेसाथ

देनेसे क्षय, प्रमेह, वन्ध्यत्व, षण्टत्वप्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ६० ॥

६१ रसगन्धकयोगः

पलाशाऽस्थ्यजमोदाभ्यां क्षाराभ्यां रसगन्धकौ ।
कृमिशूलहरौ तद्वदाखुपर्ण्यम्भसा सह ॥ २७० ॥

चि.क., क्रिमिशूले।

भाषा—पलाशकेबीजोंकीमज्जा, अजमोद, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, शुद्ध पारा और गन्धक सब समभाग लेकर एकजगह घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ माशेकीमात्रा मूषाकर्णीकेरसकेसाथ देनेसे यह क्रिमि और शूलको नष्टकरताहै ॥ ६१ ॥

६२ रसगर्भापसलोहम्

इष्टासुरीमन्दिरधूमधान्य-
  वराग्निसिन्धूत्थजयाह्विभृङ्गैः ।
भेकाऽऽर्द्रकव्यूषणतिक्तकाण्ड-
  स्यन्दार्कभक्तासितसिन्दुवारैः ॥ २७१ ॥
शुद्धेन कर्षोन्मितसूतकेन
  गन्धाश्मना भृङ्गविशोधितेन ।
कर्षोन्मितेनाक्षमितश्च लोहं
  पुटेन सिद्धं मृदुना यथावत् ॥ २७२ ॥
तद्भक्षितं व्यूषणतुल्यभागं
  जयत्यतीसारमतिप्रवृद्धम् ।
दुर्नामकाऽग्निग्रहणीविकारं
  शोथञ्च शूलं परिणामजातम् ॥ २७३ ॥

लो.प., अतिसारे।

भाषा—ईंट, राई, गृहधूम, धनिया, त्रिफला, चित्रक, सेन्धव, भांग, स्याहसफेदभंगरे, ब्राह्मी, अदरख, त्रिकटु, चिरायता, हलदियासाहकाहीर, हुरहुर, कालीनिर्गुण्डी इनप्रत्येकके-साथ पारेको १–१ रोज़ तप्तखरलमें घोटकर गरमकाञ्जीसे वार वार साफकर ईंट और सेंधेको छोड़कर सबकेस्वरसोंमें दोलायन्त्रमें १–१ रोजपकाकर शुद्धकियाहुआपारा १ कर्ष, गलाकर भंगरेकेरसमें ६–७ बार डालकर उसीकेरससे ६–७ बार मर्दनकर सुखायाहुआ गन्धक १ कर्ष और लोहभस्म १ कर्ष लेकर सबकीनीलवर्णकज्जलीकर गोलायनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिरसे पारे और गन्धककायोगकरे। ऐसे ६ ७ पुट देनेकेबाद इसे रखछोड़े। इसकी १–१ रत्ती समभाग त्रिकटुकेसाथ देनेसे अत्यन्त बढ़ाहुआ अतिसार, बवासीर, मन्दाग्नि, ग्रहणी, शोथ, परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२ ॥

६३ रसगुग्गुलुः (प्रथमः)

ग्राह्यः पातनयन्त्रेण शुद्धश्चन्द्रसमो रसः ।
रक्तिकाशतमेतस्य शर्करा त्रिगुणा मता ॥ २७४ ॥
ततश्चतुर्गुणो ग्राह्यो गुग्गुलु महिषाक्षकः ।
घृतं रससमं दद्यान्मर्दयेच्च प्रयत्नतः ॥ २७५ ॥
विंशति वटिकाः कार्यास्तिस्रस्तिस्रो दिनत्रयम् ।
एकादशदिनैरन्या देया एकादशैव ताः ॥ २७६ ॥
समाहृद्यमेवञ्च कारयेद्भिषजांवरः ।
लवणं वर्जयेत्पथ्ये पादाऽऽंशनमिष्यते ॥ २७७ ॥
दिनद्वये व्यतीते तु पादेन पथ्यमाचरेत् ।
मसूरसूपं सगुडं व्यञ्जनं चाऽथ कल्पयेत् ॥ २७८ ॥
पुनर्नवा पटोलानि तिक्तपत्री च गोक्षुरम् ।
पद्मपत्री कोकिलाक्षं शाकार्थे घृतभर्जितम् ॥ २७९ ॥
शर्करा लवणस्थाने वेशवारे धनीयकम् ।
लवङ्गाऽजाजिहिङ्गूनि धान्यकं जीरकाणि च ॥ २८० ॥
पाकार्थे सम्प्रदातव्यं संस्कारार्थं भिषग्वरैः ।
भैरवस्य रसस्यान्याः क्रिया अत्र प्रयोजयेत् ॥ २८१ ॥
रसगुग्गुलुरेवं हि सर्वाञ्जित्वाऽऽमयानयम् ।
कुष्ठोपदंशनामानं व्रणं वातादिसंयुतम् ॥
कामदेवप्रतीकाशश्चिरजीवी भवेन्नरः ॥ २८२ ॥

भै.र., ध., उपदंशे।

भाषा—एकदमशुद्धकियेहुए पारेकी १०० रत्ती और शक्कर ३०० रत्ती, इनदोनोंसे चौगुना भैंसागूगल लेकर पारेकीबराबर घी डालकर ३–४ पहर खूब कूटे। एकजीवहोनेपर सबकी २० गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३–३ गोलिया तीनदिनतकदेकर फिर ११ दिन तक १–१ गोली देवे ऐसे १४ दिनतक दवाका प्रयोगकरे। नमक छोड़दे, भोजन अष्टमांश करे। दो दिन बीतनेपर चौथाहिस्सा भोजनकरे, ऐसे प्रतिदिन एक एक अंश बढ़ाताजाय। मसूरकीदालको पीसकर गुड़मिलाकर गुलगुलेबनावे। पुनर्नवा, परवल, गिलोय, गोखरू, दूर्वा, तालमखाना, इनसबके पत्तोंको घीमें सेककर नमकरहित शाक बनावे, नमककी जगह शक्करसे कामले। मसालेमें धनियां, लौंग, जीरा, हींगदेवे। अजीर्ण मालूम होनेपर धनिया और भुनेजीरेका चूर्ण देवे। अन्यपथ्यवगैरह भैरवरस (नं. १) कीतरहकरे। इसके सेवनसे कुष्ठ, उपदंश और वातादिदोषोंसे उत्पन्नहुए व्रणोंसे निवृत्तहोकर कामदेवसदृश कान्तियुक्त होकर चिरजीवी होताहै ॥ ६३ ॥

६४ रसगुग्गुलुः (द्वितीयः)

पलं कुष्ठं पुरोः पञ्च त्रिफला त्रिपला मता ।
ततः मृतपलं चास्य कर्षः सर्वव्रणापहः ॥ २८३ ॥

यो म., रसायनमें, व्रणाऽधिकारे।

टि०—रसायनमहृदये कुष्ठस्थाने कृष्णा दृश्यते, मृतस्थाने [illegible] नियोजितम्, परन्तु [illegible] न [illegible] बलिना कर्तव्या।

भाषा—कुठ १ पल, शुद्धगूगल ५ पल, त्रिफला ३ पल, शुद्धपारद १ पल लेकर सबको एकजगह घोटकर १–१ तोलेके गोलेबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोला रोजाना खाकर नमकरहित घी और चनेका सेवनकरनेसे सबप्रकारके व्रण दूर जातेहैं ॥ ६४ ॥

६५ रसगुटिका (प्रथमा)

सूतमभ्रकसत्त्वञ्च दृढं स्थाल्यां निधापयेत् ।
सूतकं शिखिपित्तस्य मध्ये मुक्त्वा प्रयत्नतः ॥ २८४ ॥
दोलिकायन्त्ररूपेण सरन्ध्रं स्थाल्यां हि मुच्यते ।
तां स्थालीं स्थापयेद्धर्मे यावत्सप्तदिनं भवेत् ॥२८५॥
तत उद्धृत्य तद्द्वन्द्वमम्लवल्लीरसे दृढम् ।
पाचयेद्वह्नियोगेन सप्तवारान्समास्तथा ॥ २८६ ॥
तत उद्धृत्य सूतं तं द्वितीये शिखिपित्तके ।
मुक्त्वाऽथ काचकूप्यां तत्क्रियते मुखमुद्रणम् ॥२८७॥
गर्तायां वालुकां भृत्वा प्रथमं ह्यङ्गुलद्वयाम् ।
तस्योपरि कौक्कुटाख्यं दीयते वह्निना पुटम् ॥२८८॥
तत उद्धृत्य वह्न्याख्ये स्थापयेच्छिखिपित्तके ।
ततः कूप्यां तथा कृत्वा द्वितीये ह्यङ्गुलद्वयाम् ॥२८९॥
एवं तच्च तथाकृत्वा तृतीयेऽङ्गुलमात्रतः ।
एवं वह्निप्रयोगेण गुटिका वज्रवद्भवेत् ॥
पाठामत्स्यस्य पिशितखण्डमध्येऽथ सेव्यते ॥२९०॥

र. ह्रा., स्तम्भने ।

भाषा—पारा और अभ्रकसत्त्व १–१ कर्षलेकर मोरके दो पित्तोंमें अलग २ रखकर पित्तोंका मुहबन्दकर किसीहण्डीमें दोला यन्त्रकी तरह अलग २ लटकाकर धूपमें सुरक्षितस्थानमें रखदे जहां कि सूर्योदयसे सूर्यास्ततक धूपपड़े । ध्यान रहे कि कोई जीवजन्तु उठा न लेजाय । इसतरह ७ दिनकेबाद दोनोंपित्तोंको एकसाथ अमलोनियाकेरससे ७ रोज स्वेदनकर दवानिकालकर दूसरे मोरकेपित्तेमें इकट्ठेभरदे । फिर पित्तेका मुंह बांधकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुईकाचकी शीशीमें डालकर डाटलगाय ३–४ कपड़मिट्टीकरदे । सूखनेपर शीशीको खड्डेमें रखके ऊपरसे २ अङ्गुल बालूसे आच्छादितकर कुक्कुटपुटकीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिर तीसरे पित्तेमें रख एकअङ्गुलबालूसे ढककर आंचदे । इस तरहकरनेसे इसकी कड़ी गोली तैयारहोगी । इसगोलीको पाठा मछलीकामांस और शक्करकेबीचमें रखकर मुहमेंरखनेसे स्तम्भन नहोताहै ॥ ६५ ॥

६६ रसगुटिका (द्वितीया)

रसस्तु पादिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽभ्रकाः ।
गङ्गापालङ्कजरसे मर्दयित्वा पुनःपुनः ॥ २९१ ॥
रक्तिमात्रागुदार्शोघ्नी वह्नेरत्यर्थदीपनी ।
कण्टकिफलान्तर्मुखक्षारो गोरोचनाजलम् ॥ २९२ ॥
लेपमात्रेण विस्राव्य हठाद्धन्ति गुदाङ्कुरान् ।
भावितं रजनीचूर्णं स्नुहीक्षीरे पुनःपुनः ॥
बन्धनात्सुदृढं यामश्छिनत्यर्शो न संशयः ॥२९३ ॥

भै र , यो म. अर्शोरोग ।

भाषा—विडङ्ग, मरिच और अभ्रक १–१ तोला, शुद्धपारा ३ मासे लेकर सबका बारीकचूर्णकर गङ्गामेंहोनेवाले जङ्गली पालकके रसमें ६–७ रोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अर्शरोगको दूरकरतीहै और अग्निको प्रदीप्तकरतीहै । कटहरकेफलकेमुसलेकाक्षार गोरोचनकेपानीमें मिलाकर लेपकरनेसे अङ्कुरोंको पकाकर नष्टकरदेताहै अथवा थूहरकेदूधमें बारम्बार भिगोयाहुआ हल्दीकाचूर्ण मस्सोंपर लगानेसे उन्हें काट डालताहै । पूर्वोक्त गोलीका प्रयोगकरतेसमय इनदोनोंमेंसे किसीएकका प्रयोगकरना आवश्यकहै ॥ ६६ ॥

६७ रसचन्द्रिकावटी

त्रैलोक्यविजयाबीजं बीजमुन्मत्तकस्य च ।
कण्टकारीबीजकञ्च हैज्जलं बीजमेव च ॥ २९४ ॥
बीजञ्च वृद्धदारस्य समौ गन्धकपारदौ ।
आर्द्रके वटिका कार्या कलायपरिमाणतः ॥ २९५ ॥
एषा तोयाऽनुपानेन प्रातः खाद्या हिताशिना ।
चिरजं सर्वजञ्चैव शिरोरोगं सुदारुणम् ॥ २९६ ॥
आमवातं श्लेष्मरोगं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ।
ग्रहणी श्लीपदं हन्यादन्त्रवृद्धिं भगन्दरम् ॥ २९७ ॥
कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसार्शो गुदामयान् ।
वासुदेवेन कथिता वटिका रसचन्द्रिका ॥ २९८ ॥

र स , र सु , र च , शिरोरोगे ।

भाषा—गांजा, धतूरा, भटकटैया, जलवेत, विधारा इनसबकेबीज, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जली कर अदरखकेरससे १–२ रोज मर्दनकर मटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम जलकेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ लेकर हितभोजनकरनेसे बहुत दिनका और त्रिदोषज भीषण शिरोरोग, आमवात, श्लेष्मरोग, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, सङ्ग्रहणी, फीलपाव, अन्त्रवृद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पाण्डु, पीनस, बवासीर, गुदाकेरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६७ ॥

६८ रसचन्द्रोदयः

चन्द्रं सूतं गन्धकञ्च तालकं विषसंयुतम् ।
भागार्द्धं टङ्कणं दद्याज्जयपालं तथैव च ॥ २९९ ॥
कटुत्रयं तदर्धञ्च त्रिफलामूलमूलकम् ।
मर्द्यं तत्समभागेन गव्यमूत्रेण कोविदैः ॥ ३०० ॥
कुष्ठादीन्हरते व्याधीन् प्रमेहांश्च क्षयं तथा ।
गुल्मशूलमलाजीर्णं भ्रामिकं कण्ठशूलकम् ॥ ३०१ ॥
ज्वरञ्च सन्निपातञ्च विसूचीं विषमज्वरम् ।
ज्ञानज्योतिर्निरुक्तोऽसौ रसश्चन्द्रोदयाऽभिधः ॥३०२॥

र ह्रा , कुष्ठादौ ।

भाषा—रसकपूर, शुद्धगन्धक, हरिताल और बछनाग १–१ तोला, शुद्धसुहागा और जमालगोटा ६–६ मासे, त्रिकटु, त्रिफला, सूखीमूली ३–३ मासे लेकर बारीकचूर्णकर सबकेबराबरके गोमूत्रसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे

भयङ्करकुष्ठ, प्रमेह, क्षय, गुल्म, शूल, मलाजीर्ण, भ्रम, कण्ठशूल, ज्वर, सन्निपात, हैजा, विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ६८

६९ रसचूडामणीरसः

सूतभस्म विषं ताम्रं जयपालं सुगन्धकम् ।
हेमतैलेन सम्मर्थ ततो लघुपुटं ददेत् ॥ ३०३ ॥
भावयेत्कनकद्रावैरजामहिषमीनजैः ।
पित्तैः पृथक् सप्तमितं विषधूमेन शोषयेत् ॥ ३०४ ॥
सप्तवारं त्रिवारं वा पश्चादार्द्रेण भावयेत् ।
रसचूडामणिः सिद्धःसाक्षाच्छम्भोरेवं महः ॥ ३०५ ॥
ततोऽस्य रक्तिकां युग्माद्गुञ्जार्द्रं चाऽऽर्द्रनिम्बुयुक् ।
महारोगे सन्निपाते नवे वाऽप्यनवे ज्वरे ॥ ३०६ ॥
जलाऽवगाहनं कुर्यात्सेचनं व्यजनाऽनिलम् ।
तत्क्षणाम्मृदुलस्नानं कुङ्कुमं चन्द्रचन्दनम् ॥ ३०७ ॥
पथ्ये यथेप्सितं खाद्यं स्वादुद्राक्षेक्षुदाडिमम् ।
सितां समुद्गकरसां काञ्जिकं स्नानमेव वा ॥ ३०८ ॥
शूले गुल्मेऽग्निमान्द्यादौ ग्रहण्युदरपाप्मसु ।
वाते सर्वाङ्गकैकाङ्गगते वाऽप्यनिले तथा ॥ ३०९ ॥
प्रसूतिवाते सामे वा स्वानुपानैः प्रयोजयेत् ।
रक्तदोषं विना चैनं योजयेद्वर्जयेदिह ॥ ३१० ॥
तैलाऽम्लराजिकामीनक्रोधशोकाऽध्वचङ्क्रमम् ।
विल्वारनालसुपवीफलवृन्ताकमैथुनम् ॥ ३११ ॥

२ यो.त, रसायनस, र क, र सु, र चि, र.स, यो म, र का, टो, ज्वरे सन्निपाते च।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धवच्छनाग, ताम्रभस्म, शुद्धजमालगोटा और गन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकलौकर धतूरेके-तैलसे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर धतूरेकारस, बकरा, भैंसा और मछलीकेपित्तोंसे ७–७ भावनाएं देकर इस रसकीबराबर बछनागकीधूनी ७ बार या ३ बार देकर अदरखके रससे १ रोज भावनादेकर आधीआधीरतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ गोलीसे २ गोलीतक अदरख और नीबूके-रसकेसाथ देनेसे महारोग, सन्निपात, नया या पुराना ज्वर येसब नष्टहोतेहैं। इसरसको देकर जलमें बैठावे या जलकी सिरपर धारादे। पङ्खेकी हवाकरे। असयशीत माल्मदहोनेपर जलसे अलगकर केसर, कपूर और चन्दनका शरीरमें लेपकरे। भूख माल्महोनेपर यथेच्छ भोजनदे। मीठीदाक्ष, ईख, अनार, शक्कर, और मूँगकायूष यथेष्टदेवे, काञ्जीसे स्नानकरावे। शूल, गुल्म, अग्निमान्द्य, ग्रहणी, उदररोग, एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गवात, प्रसूतिवात, आमवात, इन रोगोंमें अपनेअपने अनुपानोंकेसाथ देनेसे सबको नष्टकरताहै। रक्तदोषवालेको छोड़कर अन्यसब रोगोंमें इसे देसक्तेहैं। इसमें तैल, खटाई, राई, मछली, क्रोध, शोक, रास्ता, वेग, काञ्जी, करेला, बैंगन और मैथुनका त्यागकरे ॥ ६९ ॥

७० रसनायकद्वयम् (रत्नगर्भेश्वरः)

स्वर्णरौप्यरविवङ्गनागकाः
कान्तविद्रुमपविमुक्तमाक्षिकाः ।
सर्वमेकसममभ्रसूतकाः
धूर्तभृङ्गहलिभानुभाविताः ॥ ३१२ ॥
अञ्जयन्त्रविहितो रसराजो
वल्लमात्रमशितो गदहन्ता ।
रत्नगर्भ इति कीर्तिमुपेतः
शम्भुना निगदितः प्रभुणाऽसौ ॥ ३१३ ॥
सूतवज्रकनकाभ्रककान्ता-
धूर्तवज्रिरविदुग्धमर्दिताः ।
जायते पुटितमर्दनयोगा-
त्सर्वरोगहरणे समर्थकः ॥ ३१४ ॥

२ शि, राजयक्ष्मणि।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, ताम्र, वङ्ग, नाग, कान्तलोह, कान्त-पाषाण, प्रवाल, हीरा, मोती, सोनामाखी, अभ्रक, पारा इनकी भस्में समभागलेकर धतूरा, भंगरा, कलिहारी, आक इनकेरसोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमेंबन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेवे। सूखनेपर बालू, राख अथवा नमक इनमेंसे किसीएकमें हण्डीमें दबाकरऊपर शरावसम्पुटदेकर ४पहरकी तीक्ष्ण अग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। अथवा पारा, हीरा, सोना, अभ्रक कान्तलोह इनकीभस्म समभागलेकर धतूरेकेरस, सेहुण्ड और आककेदूधमें १–१ रोज मर्दनकर गोला-बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर पहिलेकीतरह भस्म, लवण अथवा वालुकायन्त्रमें पकाकर रखछोड़े। येदोनों रसनायकरस तैयार होंगे। इनकी आधीआधीरत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ये समस्तरोगोंको दूरकरतेहैं ॥ ७० ॥

७१ रसपर्पटी (प्रथमा)

जयापत्ररसेनाऽपि वर्धमानरसेन च ।
भृङ्गराजरसेनाऽपि काकमाच्या रसेन च ॥ ३१५ ॥
रसं संशोध्य यत्नेन तत्समं शोधयेद्बलिम् ।
भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा शोषयेदर्करश्मिभिः ॥ ३१६ ॥
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चाच्चूर्णञ्च कारयेत् ।
चूर्णयित्वा समं तेन रसेन सह मर्दयेत् ॥ ३१७ ॥
नष्टसूतं यदा चूर्णं भवेत्कज्जलसन्निभम् ।
निर्धूमे बदराङ्गारे द्रवीकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ३१८ ॥
महिषीमलविन्यस्ते तत्र तत् कदलीदले ।
निक्षिप्य तदुपर्यन्यत्पत्रं दत्त्वा प्रपीडयेत् ॥ ३१९ ॥
शीतलत्वं गते पश्चात्समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
एवं सिद्धा भवेद् व्याधिघातिनी रसपर्पटी ॥ ३२० ॥
ज्वरादिव्याधिभिर्व्याप्तं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः ।
चकार कृपया युक्तः सुधावद्रसपर्पटीम् ॥ ३२१ ॥

रक्तिकासम्मितां तावद्भृष्टजीरकसंयुताम् ।
गुञ्जाऽर्द्धभ्रष्टहिङ्ग्वाढ्यां भक्षयेद्रसपर्पटीम् ॥ ३२२ ॥
रोगानुरूपभैषज्यैरपि तां भक्षयेद्बुधः ।
पिबेत्तदनु पानीयं शीतलं चुलुकत्रयम् ॥ ३२३ ॥
प्रत्यहं वर्धयेत्तस्या एकैकां रक्तिकां भिषक् ।
नाऽधिकां दशगुञ्जातो भक्षयेत्तां कदाचन ॥ ३२४ ॥
एकादशदिनाऽऽरम्भात्तां तथैवाऽपकर्षयेत् ।
एवमेनां समश्नीयान्नरो विंशतिवासरान् ॥ ३२५ ॥
शिवं गुरुं तथा विप्रान् पूजयित्वा प्रणम्य च ।
श्रद्धया भक्षयेदेतां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ३२६ ॥
ज्वरञ्च ग्रहणीञ्चाऽपि तथाऽतीसारमेव च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शूलप्लीहजलोदरम् ॥ ३२७ ॥
एवमादीन्गदान्हत्वा हृष्टः पुष्टश्च वीर्यवान् ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितवर्जितः ॥ ३२८ ॥

भा प्र , चि क , र सु , र क ल , नि र , यो म , र त , भै र , र सु , रससागर , र.प्र सु , र मृ , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—"हाटक रजत ताम्र यत्पत्र परिदीयते । विषयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिषूदनी ॥" इति रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे दृश्यते परन्तु त्रयाणामधिक तया योगे पञ्चामृतपर्पटीति नाम स्थापयितुमुचित न तु विजयपर्पटीति । रसमागरे गिरिकर्णीनिर्धमानकाकमाचीशृङ्गवेररसै पारदस्य स्वेदनादिक विहितम् । भैषज्यरत्नावल्याञ्च जयन्त्येरण्डाऽऽर्द्रककाकमाचीभी रस शोधन विहितम् । र.प्र सु , र मृ एतयोरेरण्टमूलाद्रिकर्णीकाकमाची दाडिमबीनरसै प्रत्येक पारदस्य मर्दन विहितमतो दाडिमीबीजस्वर साऽत्रैव नियोजनीय । भावप्रकाशादौ स्वेदन विहितम् । रससागरे निर्वि शेष शोधन विहितम् । एव भैषज्यरत्नावल्यामपि मर्दनशोषणरूपण शोधन निदर्शितम् । अधिक तु न तद्वानिरितिन्यायानुकूल्येन जयान्त्यौ गिरिकर्ण्यैरण्डभृङ्गकाकमाची दाडिमीबीजानीति सर्वौषधद्रवै मर्दन स्वेदनादिभी रसशोधन विधाय सर्वेषां ग्रन्थाना सामञ्जस्य सम्पादयेक एव पाठ सम्पादनीय इत्यस्माक सम्मति । र चि , यो र , वृ यो त , ना वि , र च , रसायनम , र मि , नि र , र का , यो म , ट , र स , र क ल , ध , र र दी , र सु , चि र भ , चि क , र र स , र कौ , वै. र , र सू , ग्रहण्यधिकारे । एषु ग्रन्थेषु ' गन्धकज्जलीं लौहे द्रुता बादर वह्निना । गोमयोपरिविन्यस्तकदलीदलपातनात् ॥ कुर्यात्पर्पटिकाकारामस्या रक्तिद्वय क्रमात् । दशकृष्णलक यावत्प्रयोग सहराद्रत ॥ तदूर्द्ध बहुपूगस्य भक्षण दिवसे पुन । तृतीय एव सामान्यदुग्धमत्र विधीयते ॥ वर्ज्य विदाहिक्षीररम्भामूल तैलञ्च सार्षपम् । ग्रहणीक्षयतृष्णार्श शोथाजीर्णादि नाशिनी ॥" ईदृश पाठो दृश्यते, तत्र पारदगन्धकयो शुद्धिनिष्कास नाऽतिरिक्तो विशेषो न दृश्यतेऽतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । कार्याऽत्यधिकताया शुद्धयवकाशाऽभावे तु गौणकल्पोपदेशाऽभावेऽपि जनाना स्वाभाविकी प्रवृत्तिर्भवतीति कृत्वा तदर्थं स्वतन्त्रपाठकल्पनस्याऽन्याय्यत्वमिति सुधीभिर्विभावनीयम् । साधारणपाठे च टोडरानन्दे द्वितीय स्थाने जीरकशाल्मलिवेष्टचूर्णमधूनि ह्यनुपानत्वेन विहितानि सङ्ग्रहण्या तदतिप्रशस्ततरम् । कुत्रचित् "इन्द्रवारुणिकामूल सत्वच क्षीरपाचितम् । पर्पटीरससयुक्त सप्ताहादश्मरीप्रणुत् ॥" इति पाठोऽश्मरीरोगे अनुपानत्वेन गृहीत । कुत्रचित् "कृष्णधत्तूरजै बीजै पञ्चभि पर्पटीरस । सम्प्रयोज्य प्रशमयेदुन्माद भूतसम्भवम्" इति पाठ उन्मादे अनुपानत्वेन गृहीत । चि त्र एकविंशतिवाराणि पर्पटीं रसपूर्विकाम् । स्नुहीदुग्धेन सम्भाव्य क्रिम्याध्माने प्रदापयेदितिविशेष । र कौ , वै र एतयो "पर्पट्या द्विगुणो जीरस्तुर्यांशो रामठस्य च । दीयते मधुना चैषा शिशोर्गुञ्जाचतु ष्टयम् ॥ श्लेष्मपित्ताऽनिलश्वासकासपीनसपाण्डुता । प्लीहहृत्सादशूलानि हन्यादश्मज्वर नवम् ॥" इत्यधिकतया पाठो दृश्यते । तत्राऽनुपानाना मनियतत्वान्न तद्भेदेन पाठभिन्नता भवितुमर्हत्यत सोऽपि पाठोऽत्रैवाऽन्तर्भवतीति बोध्यम् । भैषज्यरत्नावल्याञ्च पर्पटीसेवनप्रपञ्चविस्तरो निरूपित सोऽधस्तात्प्रस्तोद्रष्टव्य । स यथा—

श्रीविन्ध्यवासिपादौ नत्वा धन्वन्तरिञ्च सुरभिषजम् ।
रसगन्धकपर्पटिकापरिपाटीपाद्य वक्ष्ये ॥
मन्न रसे जयन्त्या पश्चादेरण्डसम्भूते ।
आर्द्रकरसे च मत धनरसे काकमाच्याश्च ॥
मममुदिताऽनुपूर्व्या मदनशुष्क करण गृह्णीयात् ।
प्रस्तरभाजनमध्ये शुद्धिरिय पारदस्योक्ता ॥
शुकपिच्छसमच्छायो नवनीतसमद्युति ।
मसृण कठिन स्निग्ध श्रेष्ठो गन्धक इष्यते ॥
कृत्वा भद्र गन्धकमतिकुशल क्षुद्रतण्डुलाकारम् ।
तद्भृङ्गराजरसैरनन्तर भावयेत्पात्रे ॥
तदनु च शुष्क कुर्याद्वह्निसमानञ्च सप्तधा रौद्रे ।
तदनु च शुष्क चूर्ण कृत्वा विन्यस्य लौहिकामध्ये ॥
निर्धूमबदरकाष्ठाङ्गारे न्यस्त विलाप्य तैलसमम् ।
पात्रस्थितभृङ्गराजरसमध्ये ढालयेन्निपुण ॥
तस्मिन् प्रविष्टमात्र कठिनत्व याति गन्धकचूर्णम् ।
पुनरपि रौद्रे शुष्क केतकरजसा समानता नीतम् ॥
शुद्धे सूते शोधितगन्धकचूर्णेन तुल्यता कार्या ।
तावन्मर्दनमनयो र्यावन्न कणोऽपि दृश्यते सूत ॥
पश्चात्कज्जलसदृश चूर्णं लौहीस्थित यत्नेन ।
निर्धूमबदरकाष्ठाऽङ्गारे न्यस्त विलाप्य तैलसमम् ॥
सद्यो गोमयनिहिते कदलिदले ढालयेन्मृदुनि ।
लौहीस्थितमवशिष्ट कठिन तत्र ग्रहीतव्यम् ॥
पश्चात्सपरूपा पर्पटिका वीर्यवत्युक्ते ।
मयूरचन्द्रिकाकार लिङ्ग यत्र तु दृश्यते ॥
तत्र सिद्धि विजानीयाद्बुधा नैवाऽत्र सशय ।
समुदितदिवसे कार्या रक्षा च पर्पटी मनुजै ॥
जीरकयुग्मे हिङ्गोरर्द्धं स्यादेवं वातल जठरे ।
जीरकहिङ्गुरसेन स्वनुपान सलिलधारया कार्यम् ॥
रसगन्धकपर्पटिका भक्षणमात्रे तु नाम्भस पानम् ।
प्रथम गुञ्जायुगल प्रतिदिनमेकैकवृद्धितो भक्ष्यम् ॥
दशगुञ्जापरिमाणान्नाऽधिकमदनीयमेकविंशतिदिनानि ।
वाताऽऽतपवर्षोपमलक्षिन्नतमाहारमसमवैषम्यम् ॥
व्यायामश्चाऽऽयास स्नान व्याख्यामहितमत्यन्तम् ।
पाक स्तोक सर्पिर्जीरकधान्याकवेशवारैश्च ॥
सिन्धूद्भवेन रन्धनमोदनधान्यानि शाल्या भक्ष्या ।
कृष्ण वार्ताकुफलमविद्धकर्णी च वास्तूकम् ॥
अक्षतमुद्गसमेत कदलीदलमहिष पटोलञ्च ।
मधुकफलशृङ्गवेरौ भक्ष्यौ शाकेषु काकमाची च ॥
लावकवर्तकतित्तिरि मयूरमासञ्च हितकर भवति ।
मद्गुररोहितमीनौ वाऽदनीयौ कृष्णमत्स्याश्च ॥
नीरक्षीर व्यञ्जनमदनीय पक्वकदली च ।
रम्भाफलदलवल्कलमूलाना वर्जन कार्यम् ॥
तिक्त निम्बादिकमपि नाद्य नोष्ण तथाऽन्नञ्च ।
आनूपमासजलचरपतत्रिपललञ्च सर्वथा त्याज्यम् ॥
स्त्रीणा सम्भाषणमपि गन्धश्च कृष्णमत्स्येषु ।
नाऽम्ल न दधिशाक पथ्या भक्षणे भक्ष्यम् ॥

गुडखण्डशर्करादिक इक्षुविकारो न भक्ष्य इक्षुश्च ।
न दल न फल न लताप्यदनीया कारवेल्लस्य ॥
स्तोक घृतमिह भक्ष्य पथ्ये मा काङ्क्षमुत्थानम् ।
क्षुत्पीडाया भोजनमवश्यमेव महानिशायाञ्च ॥
समजलमिश्र पेय क्षीर यदाऽधिरनल्पकञ्च ।
कथमपि भोजनसमयातिक्रम जाते ज्वर विरेक च ॥
वमने च नारिकेलसलिल दुग्धञ्च पातव्यम् ।
स्वप्ने जाते रमिते विरेचन क्षीरमेव पातव्यम् ॥
न ज्ञायते बुभुक्षा लक्ष्याऽलक्ष्या प्रतीयते यदि वा ।
अशक्तिझिनिझिनिमस्तकशूलाद्यै नूनमवधार्या ॥
किं बहु वाच्य रोगी यदा यदा भवति साकाङ्क्ष ।
पाययितव्य दुग्ध तदा तदा निर्भयीभूय ॥
विहिताकरणे चास्यामविहितकरणे च रोगाद्यज्ञानाम् ।
व्यापत्तयाऽपि बहुधा दृष्टा प्रामाणिके वैद्यैश्च ॥
तस्मादवधातव्य भवितव्य भोजने निपुणै ।
एवमिय क्रियमाणा भवति श्रेयस्करी नियतम् ॥
अर्शोरोग ग्रहणी सामा शूलाऽग्निमान्द्ये च ।
कामलपाण्डुव्याधीन्प्लीहानञ्चाऽतिदारुण हन्ति ॥
गुल्मजलोदरभस्मकरोग हन्त्यामवातांश्च ।
अष्टाष्टैव कुष्ठान्यशेषशोथादिरोगांश्च ॥
इयमम्लपित्तशमनी त्रिदोषदमनी क्षुधाविवर्धनीया ।
अग्नि निमग्नमुदर ज्वालाजटिल करोत्याशु ॥
रसगन्धकपर्पटिका खपवाय व्याधिसङ्घानाम् ।
वलीपलितशून्य पुरुष दीर्घायुष कुरुते ॥
व्याधिप्रभावहरणादपमृत्युनाशनात्मकरणाच्च ।
मर्त्यानाममृतघटी रसगन्धकपर्पटी जयति ॥
शम्भु प्रणम्य भक्त्या पूजा कृत्वा च विष्णुचरणाभ्याम् ।
रसगन्धकपर्पट्या भक्ष्या ननाऽतिसिद्धिदा भवति ॥
नृणां मन्ना ध्रुवमियमाराध्य मतनशालिना कुरुते ।
श्रावत्माद्भुविनिर्मिता सम्यग्रसपर्पटी श्रेष्ठा ॥
उत्तमैव हि वनव्य नानारोगनया तथा ।
औषधनियमैवाऽन वक्तव्या ग्रासरविया ॥
प्रत्यवायविनाशार्थं शिवपादार्चने न्यसेत् ।
कृतमङ्गल्य प्राप योगिनीनाममृत परम् ॥ इति ॥

विशेषसूचनम

" प्रथम गुञ्जायुगल प्रतिदिनमेकैकवृद्धितो भक्ष्यम् । दश गुञ्जापरिमाणान्नाऽधिकमदनीयमेकविंशतिदिनानि ॥" इति विन्ध्यवासिप्रयोगे गुञ्जाद्वयात्प्रथममारम्भ कृत्वा प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाप्रमाण वर्धयित्वा नवमदिने दशगुञ्जापरिमाण भविष्यति ततोऽनन्तर द्वादशदिनानि यावत् तत्प्रमाण स्थिर भवति द्वाविंशतितम दिनमारभ्य प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाया ह्रास कर्तव्य इत्थ त्रिंशद्दिने प्रयोग समाप्यते । भावमिश्रादिमते प्रथम गुञ्जात आरभ्य प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाया वृद्धि , एकादशदिनादारभ्य प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाया ह्रास इत्थं विंशतिदिनैरेव प्रयोग समाप्यते । एतावता कालेन रोगस्य दैववशादपि शान्ति सम्पद्यते तर्हि द्वितीयप्रयोगाऽऽरम्भो निरर्थकोऽस्ति । दैववशात्प्रथमप्रयोगेणोपशान्ति न दृश्येत तर्हि द्वितीयतृतीयादिप्रयोगा अपि समादरणीया । विन्ध्यवासिमते द्वितीय प्रयोगो मासद्वय समाप्यते । भावमिश्रादिमते तु चत्वारिंशता दिनैरिति विशेष । एतस्मिन्नुभयविधप्रयोगे जलनिषेधमत्यावश्यक मन्यन्ते चिकित्सका । केचित्तु गुदप्रक्षालनादिकमपि दुग्धादिना कारयन्ति । जलस्पर्शनमात्रेणाऽपि मृत्यु सम्पत्स्यते इत्यादीत्यादिविभीषिका प्रदर्श्य रोगिणमर्द्धप्राणायित कुर्वन्ति तत्र कीदृग्याथातथ्यमिति विचारे–प्रथमतो जलतत्त्वगवेषणाऽऽत्यावश्यकी प्रतिभाति । अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजदिति मनुवाक्येन स्थूलसृष्टिनिर्माणे जलस्य प्रधानत्वमायाति । प्रत्यक्षतोऽपि स्त्रीपुंससंयोगे च्युतयो रज शुक्रयो गर्भोपादानकारणत्वादन्यतत्त्वाऽपेक्षया शरीरे जलीयभागस्याऽत्यधिकत्वादेकान्ततो जलवर्जन न युक्तिसहम्, दुग्धादावपि प्रचुरजलीयभागत्वादुत्कटतृष्णोद्गमाऽभावाद् दुष्टजलेन मन्दाग्न्यादिरोगसङ्करोदयाच्च जलवर्जने तात्पर्येण तथाविधवचनान्युपलभ्यन्ते, उत्कटतृष्णोद्गमे तु स्वच्छजलग्रहणे दोषाऽभावोऽस्तीति बोध्यम् । यत्र स्वच्छजलाऽभावोऽस्ति तत्र कृत्रिमरीत्यापि तत्स्वच्छता सम्पादनीया । फलीयस्वरसन्तु पौरस्त्यपाश्चात्यवैद्या ऐकमत्येन व्यापारयन्त्येव तत्र न कश्चित्प्रत्यवायो दृश्यत इति प्रत्यक्षविषय' । " तृतीय एव मासाऽऽज्यदुग्धमत्र विधीयते " इत्यादिवाक्यस्य केनाऽभिप्रायेण निहितमस्तीति न ज्ञायते, ग्रहणीरोगाऽभिभूतस्य तृतीय एव दिवसे तादृशाग्रहणुदयाऽभावात् । पर्पटीसेवने मार्गद्वयम् दुग्धतक्रफलसेवनेनैको, स्वल्पप्रसेवनेन द्वितीय । तत्र प्रथमो मुख्यकल्पो द्वितीयस्तु बालभीरुवृद्धभारस्त्रीक्षीणानामगत्योपयोगित्वान्निकृष्ट । प्रथमकल्पे स्वस्वप्रकृत्यानुकूल्येन तक्रदुग्धयो निर्णय करणीय । केवलतक्रप्रयोगे रात्रावपि तत्सेवायां दोषाऽभावोऽस्ति । यत्र तु द्वयोरपि समयपरत्वेनोपयोग क्रियते तत्र तु रात्रौ दुग्धस्यैवोपयोग करणीयो न तक्रस्य । तक्रस्य सम्यक् पाकोत्तरं दुग्धस्य प्रयोगे दुग्धपाकोत्तरं तक्रस्योपयोग च न कश्चित्प्रत्यवायोपस्थान भवति । यत्र तु द्वयो मध्ये जन्मप्रभृत्यन्यस्य विरुद्धताऽस्ति तत्र तत्सेवने दुराग्रहो न करणीय । फलेषु मधुरसुपक्वतुंगामफल सर्वोत्तमाऽस्ति । मिष्टनिम्बुकसेवाऽपि लाभदाऽस्ति । पक्वो छाया गोपालकर्कटी सेवनीया, वेगाऽधिक्ये कर्कटिकायाश्च सा नोपयोज्या, अन्यानि स्पृहि मधुराण्यनम्लानि फलानि यान्युपलभ्यन्ते तानि प्रकृत्यनुकूलानि चेत्प्रयोज्यानि । प्रयोगसमाप्तावप्येवं विरेचनकल्पनं करणीयमिति रहस्यम् ।

भाषा—भांग, एरण्ड, भगरा और मकोयकरसोंसे १-१ दिनपारको स्वेदनकर । भांगके रसमें शुद्धगन्धकको पार ? मर्दनकर धूपमें ३ बार या ७ बार सुखावे । फिर इसकदके पार और गन्धकको समभागलेकर नीलांगरसमें घोटकर धीपुर्दु ईलोहकीकढाईमें निर्धूम बेरकेकोयलेपर गलाकर ताजे भैंसके गोबरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर डालकर ऊपरसे दूसरा केलेकापत्ता रख गोबरसे दबावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखले । शिव, गुरु तथा ब्राह्मणोंकी पूजाकर इसमेंसे १-१ रत्ती मात्रा १ मासा भुनेहुएजीरे और आधीरत्तीभुनीहींगके साथ अथवा केवल आधीरत्तीहींगके साथ अथवा सन्दोषदशानुसार

साथ खाकर ३ चुल्लू छाछपानीपीवे । इसकीमात्रा रोज १–१ रत्ती बढावे और १० रत्तीतकबढाकर ग्यारहवें दिनसे १–१ रत्तीकमकरे । इसतरह श्रद्धापूर्वक इसकासेवनकरनेसे ज्वर, सङ्ग्रहणी, अतिसार, कामला, पाण्डु, शूल, प्लीहा, जलोदर इत्यादि समस्त रोगोंको दूरकर आदमीको हृष्टपुष्ट और वीर्ययुक्त बनाकर वली पलितादिकको दूरकर सौ वर्षसे अधिक आयुको करतीहै ॥७१॥

७२ रसपर्पटी (द्वितीया)

विमृद्य बलिपारदं तुलसिजेन कृत्वा वटीम् ।
निधाय नवभाजने तदनु गोलकस्योपरि ॥ ३२९ ॥
निधाय दृढशुल्वजं त्रिघटिकं निरुद्धं पचेत् ।
प्रदीपदहनेन सिद्ध्यति ततोऽधरे पर्पटी ॥ ३३० ॥
विघृष्य जरणादिना तु रसनामथो काकुदम् ।
तथाऽऽर्द्रकरसान्वितं तुलितवल्लमेषाऽश्नतः ॥ ३३१ ॥
पटावृतशरीरमास्थितवतश्च घर्मोद्गमा- ।
दधि प्रति समश्नत सुनवतक्रशाल्योदनम् ॥ ३३२ ॥
दिनत्रयेण निश्चितं नवज्वरानानेकशः ।
शमं प्रजन्ति यानल न जेतुमोषधीबलम् ॥ ३३३ ॥

यो च , रसायनस , र सि , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली कर तुलसीकेरससे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय मिट्टीके नये वर्तनमें रखकर ऊपरसे तांबेकीकटोरीसे ढककर दृढसन्धिबन्दकरदे और कटोरीको बालूसेढककर दीपाग्निसे ३ घडीतक आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर थारीकपीसकर रखछोडे । इसमेंसे १–२ रत्ती कीमात्रा अदरखकेरसकेसाथ मिलाकर खिलावे । खावेसेपहिले जीरेप्रभृतिकेचूर्णसे जीभ और तालुवगैरहको साफकरले । दवा-देनेकेबाद गर्मकपडा ओढाकर सुलादे । एकखुराकमे यदि पसीना न हो तो आधेघण्टेकेबाद दूसरीखुराकदेदे । खूबपसीनाहोनेके बाद अच्छीतरह शरीरको पोंछडाले । भूखलगनेपर ताजीछाछ और पुरानेचावलदे । इसतरह तीनरोजकरनेसे अन्य औषधियोंसे जो नवज्वर शान्त नहींहोतेहैं उनको यह पर्पटी नष्टकरतीहै ७२

७३ रसपर्पटी (तृतीया)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्द्यं भृङ्गीरसैः क्षणम् ।
पाचयेल्लोहपात्रस्थं चाल्यं लघुपुटेन च ॥ ३३४ ॥
लोहभस्माऽथवा ताम्रं पादांशेन विनि क्षिपेत् ।
पाच्यं प्रचाल्यन्नेव यामार्द्धं मृदुवह्निना ॥ ३३५ ॥
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयस्योपरि स्थिते ।
तत्पत्रं धारयेदूर्द्ध्वं तदूर्ध्वं गोमयं क्षिपेत् ॥ ३३६ ॥
तत सञ्चूर्णयेत्खल्वे निर्गुण्ड्या भावयेद्दिनम् ।
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभार्ङ्गीकटुत्रयै ॥ ३३७ ॥
भृङ्गवह्निमुनिमुण्डीभि र्भावयेत्प्रत्यहं पृथक् ।
आर्द्रकस्य द्रवै पश्चाद्भावयेद्दिनसप्तकम् ॥ ३३८ ॥
अङ्गारे स्वेदयेत्पश्चात्पर्पटाख्यो महारसः ।
अष्टगुञ्जं प्रदातव्यं शुष्कान्नं पथ्यमाचरेत् ॥ ३३९ ॥
वरुणस्य त्वचो मूलं क्वाथयित्वा पिबेदनु ।
त्रिसप्ताहप्रयोगेण चान्त:स्थां विद्रधिं जयेत् ॥ ३४० ॥
चतुर्गुञ्जामितो देयः सम्यक् श्लेष्माऽधिके ज्वरे ।
वासाशुण्ठ्यभयाक्वाथमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥
चव्यकस्य रसै र्वाऽथ पेया श्लेष्मज्वरापहा ॥ ३४१ ॥

र सु , र दी , चि र भ , नि र , सु प्र , र को , र शि , यो म , यो.त , यो स , र का , र (मा) श्लेष्मज्वरे ।

टि०—र का , र (मा) एतयो र्मृतसञ्जीविनीति नाम । र (मा) लोहताम्रवङ्गमतारांभ्यामपि विकल्प प्रदर्शित , भावनायाञ्च सुरसा-महद्दण्डीभ्यामधिका प्रदत्ता इति विशेष । रसदीपिकायां लोहस्थाने स्वर्णं विकल्पित भावनायाञ्च मुनिचित्रकस्थाने सुरसामेघनादौ नियोजितौ इति विशेष । र स , र च , र र , ध , वै क , र सु , भै र , र क ली , रसचि , र श , टो एषु हिक्काश्वासाऽधिकार नाम च लोहपर्पटीति यथा—"भागो रसस्य गन्धस्य द्वावेको लोहभस्मन । एतद्घृष्ट द्रवीभूत मृद्वग्नौ कदलीदले॥ पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् । तत पिष्ट्वा द्रवैरभि सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥ भार्ङ्गी मुण्डी मुनिवर जया निर्गुण्डिका तथा । व्योषवासककन्याद्रवैस्तस्मात्पुटे पचेत् ॥ आगन्ध पर्पटे ताम्रे पपट्याख्यो रसो भवेत् ॥" इति ॥ र चि , नि र , वै चि , यो र , र क ल , रसायनम , भै सा , र का , र र दी एषु ग्रन्थेषु क्षयाऽधिकारे भार्ङ्गीमुण्डीचाऽतिबलारसैश्च विजयाद्रवै । कन्याद्रवैश्च घोषाजे शुष्क शुष्क पुटेल्लघु ॥" इत्येक श्लोक भावनावैलक्षण्यबोधक विन्यस्त तस्याऽप्यत्र सङ्ग्रहे क्षत्यभावात्सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावनीय । कुत्रचिद्रसगन्धयो समानयो कज्जलीं कृत्वा भावना निष्काश्य ग्रहण्यधिकारे प्रयोगो योजितो यथा र च , भै र , वै क इत्यादिषु ग्रन्थेषु । तथा च बहुषु स्थानेषु लोहस्थाने ताम्र प्रक्षिप्य ताम्रपर्पटिका कृता । रसकामधेनौ तु तुल्याभ्या रसगन्धाभ्या द्विगुण ताम्र प्रक्षिप्य नवे वातश्लेष्मज्वरे सार्धं वल्लद्वय गुडार्द्रकरसाभ्यां नियोजितम् भावनाश्च न दृश्यन्ते नाम च **मृतसञ्जीवनी**ति स्थापितम् । "काच पारदतुल्य गन्धक मर्दयेत्खल्वे । वासाकृष्णापथ्यास्वरसैर्भाव्य सप्तवार तु ॥ सिद्धो भवति रसेन्द्रो हन्या त्पित्त सरक्तञ्च । वासकरसपरिभावितो हरीतकीचूर्णसंयुक्त ॥ मधुयुक्त क्षमिता वा वासारसमधुयुतो वापि । कुरुते पुष्टिं परमां सास्रपित्त भये दाशु ॥" इति पाठो रक्तपित्ताऽधिकार रसावतारे **रसेन्द्ररस** इति नाम्ना दृश्यते सोऽप्यत्राऽन्तर्भावनीय । पर्पटीकरणेन गुणान्तरवृद्धिर्भविष्यति । र प्र सु , र म मा , रससागर, र का , एषु ग्रन्थेषु तु लोहताम्रयोर भयोरपि योग विधाय एक पाठो निहितोऽस्ति यथा—

रसवर पल्लयुग्ममित शुभ रुचिरताम्रमय समभागिकम् ।
बलिवसाञ्च घृतेन विमर्दयेदतिकृशाग्निकृते द्रवति स्वयम् ॥
तदनुताम्रमयो विनिवेशयतां त्रयमिद सरसञ्च विमूर्च्छितम् ।
विघट्येदथ लोहसुदर्विणा तदनु माचदलोपरि ढाल्यते ॥
भवति सारतमा रसपर्पटी सकलरोगविघातकरी हि सा ।
कुरु समानकटुत्रयसंयुता मरिचसप्तमिता सुखदा भजेत् ॥
अनुपाने प्रयोक्तव्या त्रिफला क्षौद्रसंयुता ।
पर्पटीं भक्षये प्रातस्तथा त्र्यूषणमधुनाम् ॥
सन्निपातहरा सा तु पञ्चकोलेन संयुता ।
भक्षिता मधुना सार्धं सर्वज्वरविनाशिनी ॥
कणाक्षौद्रेण सहिता सर्वशोफान्निकृन्तति ।
श्यामात्रिकटुकेनाऽपि वातजा ग्रहणीं जयेत् ॥
गुग्गुलुत्रिफलायुक्ता वातरक्त विनाशयेत् ।
वातशूलहरा सम्यग्घिङ्गुपुष्करसंयुता ॥

व्योपै. कन्यारसे वाऽपि कफामयविनाशिनी ।
दशमूलशृतेनाऽपि वातज्वरनिवर्हणी ॥
वाकुचीवीजकल्केन कण्डुपामे विनाशयेत् ।
आरग्वधेण सहिता सा तु सिध्मविनाशिनी ॥
गोमूत्रेणाऽनुपानेन चार्शांसि हि विनाशिनी ।
नक्तमालोऽर्जुनश्चैव चित्रको भृङ्गराजक ॥
शाल्मली निम्बपञ्चाङ्ग कल्हारश्च गुडूचिका ।
निर्गुण्डी च समांशानि कारयेद्भिषगुत्तमः ॥
चूर्णीकृत्य च तत्सर्वं पर्पट्याश्चाऽनुपानकम् ।
अष्टादश च कुष्ठानि निहन्त्येव न संशयः ॥
पर्पटी रसराजस्य रोगान्हन्त्यनुपानतः ।
अपथ्य नैव चाश्नीयाद्दोषदूष्यव्यपेक्षया ॥" इति

सोऽप्यत्रैवान्तर्भावनीयः । अनुपानवुभुत्सया समग्र. पाठस्तु लिखित एवाऽस्ति । अस्मिन्योगे रसभागेर त्रिकट्वादिमेलन विनैव पर्पटीस्वरूपेण स्थापयित्वा तत्तद्रोगपरत्वेन त्रिकट्वादीना योगः कृत., पञ्चपा रोगा अनुपानपरत्वे अधिकाश्च परिगणिता नाम च विजयपर्पटीति स्थापितमिति विशेष । र. का अमृतपर्पटीरसायनमिति नाम । अत्र पारदगन्धकयोर्योगे प्रधानत्व स्वीकृत्य रसपर्पटीति नाम्ना व्यवहारः सुष्ठुतर', तदङ्गभूतत्वेनोपरिनिर्दिष्टदिशा लोहताम्रस्वर्णादीनि समायान्ति तत्र प्रधानबुद्धया रसपर्पटीति नाम सर्वेषु योगेष्वाधिपत्यमावहति । कैश्चित्तु एत विशेषमनालोच्याऽप्रधाने एव प्रधानता स्वीकृत्य लोहयोगे लोहपर्पटी, ताम्रयोगे ताम्रपर्पटी, हेमयोगे हेमपर्पटी, तारयोगे तारपर्पटीति नामानि दत्तानि परन्तु असमञ्जसतया रसपर्पटीति नाम प्रधानतयोपतिष्ठते अत उपरिनिर्दिष्टाः सर्वेऽपि रसा रसपर्पट्यामेवाऽन्तर्भावनीया. । यत्रकुत्रचिद्भावनाया विशेषो लभ्येत सोऽप्यत्रैवाऽनुप्रेयः, तदनुष्ठाने न काऽपि हानिरिति दिक् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे एकरोज् मर्दनकर सुखाकर घी पुतीहुई लोहेकीकड़छीमें डालकर वेरकेकोयलोंपर पकावे । गलनेपर इसपर्पटीकाचतुर्थांश लोह अथवा ताम्रभस्म मिलाकर चलातारहे । एकजीवहोनेपर प्रथमपर्पटीकीतरह ढालदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर प्रथमकीतरह कज्जलीबनाय निर्गुण्डी, जैंत, त्रिफला, घीकुंवार, अड़ूसा, भारङ्गी, त्रिकटु, भंगरा, चित्रक, अगस्त्य, गोरखमुण्डी इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर अदरखके रससे ७ भावनाएं देकर प्रथमपर्पटीकीतरह स्वेदन देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती अड़ूसा, सोंठ और हींगके क्वाथकेसाथ देनेसे श्लेष्माऽधिकसन्निपात और वच्यके क्वाथकेसाथ देनेसे श्लेष्मज्वर नष्टहोताहै ॥ ७३ ॥

७४ रसपर्पटी (चतुर्थी)

भागमेकमिह सूतभस्मनो
　　भागयुग्ममिह गन्धकस्य च ।
सूतपादमपि हेमभस्मकं
　　तालभस्म यदिवाऽभ्रभस्मकम् ॥ ३४२ ॥
लोहभस्म यदि वाऽर्कजं क्षिपे-
　　ल्लोहपात्रजठरे प्रपाचयेत् ।
द्रावितं भवति तद्यदा तदा
　　निःक्षिपेच्च कदलीदले ततः ॥ ३४३ ॥
आटरूषसुरसाजयन्तिका-
　　क्षुद्रिकात्रिफलिकासुभृङ्गिका ।
मेघनादकटुकन्यकारसैः
　　प्रत्यहञ्च परिमर्दयेद्रसम् ॥ ३४४ ॥
वत्सनाभजरसैस्ततस्त्विमं
　　लोहपात्रनिचितं पचेत्क्षणम् ।
जायते स रसपर्पटी रसः
　　शृङ्गवेरकनकै नियोजितः ॥ ३४५ ॥
वल्लयुग्मपरिमाणकस्त्वयं
　　श्वासकासविनिवृत्तिदायकः ।
पिप्पलीभिरनुपाययेत्ततः
　　क्वाथमत्र सुरसाऽऽटरूषजम् ॥ ३४६ ॥

र.क.,र.मृ.,कासश्वासयोः ।

भाषा—पारदभस्मसे दूने शुद्धगन्धकको गलाकर पारेसे चतुर्थांश सुवर्ण, हरिताल अभ्रक, लोह और ताम्र इनकीभस्मोंमेंसे किसीएकको डाले । अथवा जैसी योग्यता समझे वैसाकरे । इसको प्रथमपर्पटीकीतरह तैयारकर बारीकचूर्णकर अड़ूसा, तुलसी, जैंती, भटकटैया, त्रिफला, भंगरा, कांटेवालीचौलाई, कड़वा घीकुंवार और बछनागकेरसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर लोहेके पात्रमें रखकर थोड़ीदेर पकाकर पीसकररखछोड़े । इसको ६–६ रत्तीकीमात्रा अदरख और धतूरेकेरसकेसाथ देकर तुलसी और अड़ूसेकेक्वाथमें पीपलकाप्रक्षेपकरके पिलानेसे श्वासकासको यह निवृत्तकरतीहै ॥ ७४ ॥

७५ रसपर्पटी (महा) (पञ्चमी)

वेदमाषो रसो ग्राह्यो गन्धस्तत्समाद्विभागिकः ।
कृत्वा कज्जलिकां सूक्ष्मां घृताक्तां वह्निनाऽऽद्रवात् ३४७
लोहपात्रे स्थिता तावत्पर्पटी क्रियते रसः ।
जया द्वादशमाषा स्याच्छुण्ठी षण्माषिका भवेद् ३४८
पिप्पली मरिचं चैव सैन्धवं ससुवर्चलम् ।
स्वर्जिकाविडमेतानि प्रत्येकञ्च चतुष्टयम् ॥ ३४९ ॥
माषाणां गृह्यते सर्वं पिष्टं प्रत्येकशस्तथा ।
तदेकीक्रियते सूक्ष्मं मिश्र्यते युज्यतेतराम् ॥ ३५० ॥
गन्धयुक्ते शुभेभाण्डे तच्च सर्वं निधीयते ।
खादेदग्निबलापेक्षी काञ्जिकेनाऽम्भसाऽथवा ॥३५१॥
अर्शःसु गुदपीडासु प्रदरेषु प्रशस्यते ।
कामलायां ग्रहण्याञ्च मन्दाग्नौ च प्रयुज्यते ॥
महापर्पटिकाऽऽख्योऽयं रसो योगस्य ग्राहकः ॥३५२॥

र.का. (प्रदराऽधिकारे), यो. र. रसायने । योगरत्नाकरे त्रुटितः पाठोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा ४ माशे, शुद्धगन्धक ८ माशे लेकर दोनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकीतरह पर्पटी तैयारकर भांग १२ माशे, सोंठ ६ माशे, पीपल, मरिच, सैन्धव, संचर, सज्जी और विड़नमक ४–४ माशे लेकर सबको अलग २ पीसकर एकजगह मिलाकर सुगन्धयुक्तपात्रमें डालकर रखछोड़े । इसमेंसे १



मासेसे २ मासेतककी मात्रा कांजी अथवा जलकेसाथ देनेसे बवासीर, गुदाकीपीडा, प्रदर, कामला, ग्रहणी और मन्दाग्निको यह नष्टकरतीहै । तत्तद्रोगोचितानुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ७५ ॥

७६ रसपर्पटी (लक्ष्मीविलासः) (पष्ठी)

रसमक्षितमयोऽभ्रगन्धमेतान्
दृढमुदकेन विमर्दयेत्कुमार्याः ।
क्षिप खुफदलेपु मध्यलब्धं
विरजनि धान्यचये च पुष्पिताग्रा ॥ ३५३ ॥

र. शि., दीर्घरोगे ।

भाषा—पारा, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर घीकुंवारकेरससे १-२ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेटकर ३ दिन धानकीराशिमें रखदे । चौथेरोज़ निकालकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादि-समस्तरोगोंको नष्टकरती है ॥ ७६ ॥

७७ रसपर्पटी (सप्तमी)

लोहपात्रेऽथवा ताम्रे पलैकं शुद्धगन्धकम् ।
मृद्वग्निना द्रुते तस्मिन् शुद्धसूतपलत्रयम् ॥ ३५४ ॥
क्षिप्त्वाऽथ चालयेत्किञ्चिल्लोहमुष्ट्यातत.पुनः ।
ढालयेत्कदलीपत्रेऽथवा स्विन्नपटे क्षितौ ॥
इत्येयं पर्पटीवद्धं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३५५ ॥

यो. म., रसायने ।

टि०—पारदस्य प्रमाणाधिक्यर्थापनाय पृथक्पाठ कृताऽस्ति ।

भाषा—लोहे अथवा तांबेकेपात्रमें १ पल शुद्धगन्धकको गलाकर ३ पल शुद्धपारेको डालकर लोहेकीकडछीसे घर्षणकरे । एकजीवहोनेपर गोबरपररक्खेहुए केलेकेपत्तेपर अथवा भीगेहुए कपडेपर डालकर पर्पटीतैयारकरले । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ७७

७८ रसपर्पटी (अष्टमी)

लोहस्य पात्रे तु रसेन गन्धं
धत्तूरतोयेन दिने विमर्द्य ।
किञ्चित्क्षिपेत्तैलमतश्च वह्नौ
प्रद्राव्य ताम्रस्य तु भाजने तत ॥
चित्रार्द्रतोयेन विमर्दयेच्च
शूलाग्निमान्द्याऽरुचिहा रसः स्यात् ॥३५६॥

र. दी., शूलाग्निमान्द्ययो ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी कजली बनाय लोहेकेपात्रमें धतूरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर तांबेकेपात्रमें थोड़ा तैल पोतकर प्रथमपर्पटीकीतरह तैयारकर चित्रक और अदरखके रससे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह शूल, मन्दाग्नि और अरुचि इत्यादिकोंको नष्टकरतीहै ॥७८॥

७९ रसपिष्टिका

सूतहेमरविपिष्टिका कृता
द्विग्धिभागविषसंयुता शुभा ।
सूतभागनयनाञ्जनोपगा
शूलिनीरसविमर्दिता दिनम् ॥ ३५७ ॥
जालिनीरसविमर्दिता तथा
याममेव ससिताऽऽर्द्रजे रसैः ।
सेविता द्विगुणरक्तिकामितोन्मा-
दरोगमखिलं धुनोति सा ॥ ३५८ ॥
अपस्मारविधिश्चात्र वातव्याधिहरस्तथा ।
नारायणं नाम तैलं महापैशाचिकं घृतम् ॥ ३५९ ॥
कल्याणकं तथा सर्पिरदन्तसर्पदंशनम् ।
त्रासनं तु कषाघातैं धैर्येण राजसेवकैः ॥ ३६० ॥
आश्वासनं मित्रजनैं धनदानैः प्रियादिभिः ।
बुद्ध्वा हेतुप्रतीकारं कुर्यात्तस्योपमर्दनम् ॥ ३६१ ॥

र., उन्मादे ।

टि०—शूलिनीलक्षण रसेन्द्रचूडामणौ-त्रिशूलाकारपत्रा या शम्या करलवत्फला । त्रिशूलिनि समाख्याता प्रसिद्धा रसबन्धने ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण, ताम्र समभागलेकर सुवर्ण और ताम्रका बारीकचूराकरले अथवा वर्कबनाकर पारेमें थोड़ा २ डालकर घोंटे । मिलजानेपर पारेसे दशवा हिस्सा शुद्धबछनाग और पारेसे दूनी सुरमेकीभस्म मिलाय त्रिशूलिनी और जालिनी बूटीकेरससे १-१ रोज़ मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और अदरखके रसकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त उन्माद, अपस्मार और वातव्याधियोंको यह नष्टकरतीहै । इनतीनों रोगवालोंको नारायणतैल, महापैशाचघृत, कल्याणघृत तथा बहुतपुराना घृत खिलाना । उन्मादवालेको खासकर दांततोड़ेहुए सर्पसे कटवाना, राजपुरुषोंसे डराना, कोड़ेलगवाना, मित्र धनदान और प्रियस्त्रियोंसे आश्वासन देना । कारणको समझकर उसका प्रतीकार करना इत्यादि उपायोंसे उन्मादी प्रकृतिस्थ होजातेहैं ॥ ७९ ॥

८० रसप्रयोगः

पारदं दरदं गन्धं वत्सनाभञ्च तालकम् ।
टङ्कणं त्रिकटुश्चैव समभागानि कारयेत् ॥ ३६२ ॥
आर्द्रकस्याऽम्भसा भाव्यं शिग्रुमूलस्य वारिणा ।
पुनर्नवाचित्रकयो र्भावयेदातपे खरे ॥ ३६३ ॥
द्विगुञ्जं वटकं कुर्याद्धान्यराशौ निधापयेत् ।
अग्निमान्द्यादिकान्दोषांश्छीघ्रमुन्मूलयेद्बलात् ॥३६४॥

र. क यो., अजीर्णाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, गन्धक, बछनाग, हरिताल या रसमाणिक्य, सुहागा और त्रिकटु येसब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरख, सहिजन, पुनर्नवा और चित्रकके रसोंसे कड़ीधूपमें १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाय छायाशुष्ककर एरण्डकेपत्तेमें रख/पोटलीबनाय धानराशिमें ७

रोज़तक रखदे । इसमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अग्निमान्द्यप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ८० ॥

८१ रसभस्म

शरावनिहितं सूतं द्विघ्नवङ्गं मुहुर्मुहुः ।
दत्त्वाऽग्निं सूर्ययामान्तं निम्बकाष्ठेन घर्षयेत् ॥ ३६५ ॥
एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भूतिका ।
यथाऽनुपानं रोगेषु प्रदद्याद्भिषगुत्तमः ॥ ३६६ ॥
अर्जितं विविधोपायै जङ्गमाद्भिषजोमया ।
इदं तत्त्वं प्रलब्धन्तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥ ३६७ ॥

वै. मृ., रसायनसं., र. कौ., ब. रा., र. सि., नि. र., वातव्याधौ, मेदोऽधिकारे च ।

भाषा—मिट्टीके मज़बूतपात्रमें दोभागशुद्धवङ्गको गलाय एकभाग पारेको छोड़कर नीमकेताज़े सोटेसे घर्षणकरताहुआ १२ पहर की अग्निदेवे । इसतरह पीतवर्णकी पारदभस्म तैयार होगी । स्वाङ्गशीतलहोनेपर इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ८१ ॥

८२ रसमण्डूरम्

कुडवं पथ्याचूर्णं द्विपलं गन्धाश्म लौहकिट्टञ्च ।
शुद्धरसस्याऽर्धपलं भृङ्गस्य रसं सकेशराजस्य ३६८
प्रस्थोन्मितञ्च दत्त्वा पात्रे लौहेऽथ दण्डसङ्घृष्टम् ।
शुष्कं घृतमधुयुक्तं मृदितं स्थाप्यञ्च भाजने स्निग्धे ॥
उपयुक्तमेतदचिरान्निहन्ति कफपित्तजान्रोगान् ।
शूलं तथाऽम्लपित्तं ग्रहणीञ्च कामलामुग्राम् ॥ ३७० ॥

भै. र., र र., यो. म., र. चं., च. द, र. क., टो. शूलाऽधिकारे

भाषा—हर्रे ४ पल, शुद्ध गन्धक और मण्डूर २–२ पल, शुद्धपारा आधापल लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर हर्रेका चूर्ण मिलादे । फिर स्याह और सफेद भंगरेके १६–१६ पल रसमें मिलाकर लोहेकेपात्रमें अग्निपर चढ़ाय लोहेकी कड़छीसे घोटताहुआ पकावे । रससूखजानेपर उतारकर ठंढाहोनेपर १–१ पल घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे २–२ माशे उचितानुपानोंकेसाथ देनेसे कफपित्तजरोग, शूल, अम्लपित्त, सङ्ग्रहणी और कामलाको यह नष्टकरताहै ॥ ८२ ॥

८३ रसमाता

हेमाऽभ्रकरसाः शुद्धाः सिन्दूरञ्च चतुष्टयम् ।
कूष्माण्डफलनीरेण भावयेदेकविंशतिम् ॥ ३७१ ॥
मेथिकाक्वाथतः पूर्वमश्वगन्धारसेन च ।
कृष्णागोक्षीरसहितै र्हरिणीक्षीरपूरकैः ॥ ३७२ ॥
बहुशो भावयेत्तस्य तवक्षीरी चतुर्गुणा ।
द्राक्षा खर्जूरफलकमुस्तकैलाक्षचूर्णकम् ॥ ३७३ ॥
श्रीचन्दनाब्जकक्कोलजातीचूर्णं तथैव च ।
क्षिप्त्वा पश्चान्नारिकेलफलनीरेण भावयेत् ॥ ३७४ ॥
कृष्णागोक्षीरसंयुक्तं निष्कमात्रं तु सेवयेत् ।
शर्करानवनीताभ्यां सेवयेदेकमण्डलम् ॥ ३७५ ॥
क्षाराम्ललवणं तैलं वर्जयेत्स्त्रीषु सङ्गमम् ।
मधुरेणान्नपानानि भोजयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३७६ ॥
अतिशुष्कस्य कायस्य पुष्टिं वितनुतेतराम् ।
स्त्रीणाञ्च पुरुषाणाञ्च कुरुते कायवर्धनम् ॥ ३७७ ॥
आयुष्करी वश्यकरी सत्त्वसन्तानकारिणी ।
रसमातेति विख्याता नाम्ना लोके महीयते ॥ ३७८ ॥

र. कौ. (ह्ना.), रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक और पारा इनकीभस्में तथा रससिन्दूर १–१ तोला लेकर सफेद कोंहड़ेकेरसकी २१ भावनाएं देकर मेथीकाक्वाथ, असगन्धकारस, कालीगाय और हरिणीका दूध, बिजोरेकारस इनकी १४–१४ भावनाएं देकर सुखाकर इससे चतुर्गुणित तीखुर अथवा वंशलोचन मिलाकर द्राक्ष, छुहारे, नागरमोथा, इलायची, बहेड़ा, सफेद चन्दन, कमलगट्टा, कबावचीनी, जावित्री इनसबका १–१ तोलाचूर्णमिलाकर नारियलकेजलसे ६–६ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशेकीमात्रा कालीगायके दूधकेसाथ अथवा शक्कर और मक्खनकेसाथ ४९ दिनतक देनेसे यह सबतरहके शोषोंको दूरकर पुरुष तथा स्त्रियोंके समस्तदोषोंको नष्टकर आयु और सन्तानको देतीहै । इसके प्रारम्भमें ३ रोज़तक मधुर और [illegible] अन्नपान देवे और क्षार, अम्ल, लवण, तैल इनको प्रयोगसमाप्तितक छोड़देवे और ब्रह्मचर्यसे रहे ॥ ८३ ॥

८४ रसराजरसः (प्रथमः)

गोमये तैलमास्थाप्य त्रिवारं शोधयेत्त्रपु ।
द्रावयित्वा समं सूतमेकीकृत्य विचक्षणः ॥ ३७९ ॥
धृत्वाऽपामार्गमूलन्तु मुखे चर्वणमाचरेत् ।
गण्डूषं तत्र निःक्षिप्य तैलं त्रिः शोधयेद्बुधः ॥ ३८० ॥
ताम्बूलचर्वणं कृत्वा गण्डूषं निक्षिपेद्बुधः ।
दार्ढ्यमायाति तत्सद्यःपेषयित्वा तु गोलकम् ॥ ३८१ ॥
नागवल्लीदलेनैव योज्यं गुञ्जाचतुष्टयम् ।
उपदंशे च दुःसाध्ये रसोऽयं दिनसप्तकम् ॥ ३८२ ॥
ताम्बूलचर्वणं कार्यं विशेषाच्च गदार्तिभिः ।
पथ्यं शाल्योदनं देयं घृताक्तं मुद्गसंयुतम् ॥ ३८३ ॥
प्रशस्तं मेथिकाशाकं मुखपाको न जायते ।
रसराजइति ख्यात. सुखदः सर्वदा नृणाम् ॥ ३८४ ॥

रसायनसं, वै वि, उपदंशे ।

भाषा—ताज़ेगोबरमें गर्मकर तिलकातैलभर वङ्गको पिघलाकर तीनवार बुझावे । और समभाग शुद्धपारेको उसमें मिलाकर तैलमें बुझाकर खरलमें डाले । फिर अपामार्गकी ताज़ी जड़को मुखमें रखकर चबावे । लुआबसे मुखभरजानेपर लुआबको खरलमें डालकर मिलेहुए वङ्ग और पारेको घोटे । सूखजानेपर फिर उसीतरहलुआबकरके सुखावे । ऐसे तीनवार करके पारेमेंसे तैलकी

चिकनाईको साफकरदे । इसीतरहसे कत्था, चूना लगेहुए पानको चवाकर पारेमें कुछे डालकर पारेको तीनवार मर्दनकरके सुखावे। ऐसाकरनेसे गोली कड़ी होजायगी । इसमेंसे ४-४ रत्ती पानमें रखकर ७ दिनतक खिलावे । जी मिचलाने पर पान खिलावे। भूखलगनेपर पुरानेचावलोंको घी और मूंगकेसाथ दे। मेथीका शाक खिलावे तो इससे मुखपाक नहींहोताहै और उपदंशके तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहैं ॥ ८४ ॥

८५ रसराज रसः (द्वितीयः)

भागा रसस्य चत्वारो ह्यष्टौ गन्धकभागकाः ।
मनःशिला द्विभागा स्याद्धरिद्रा त्रिफला तथा ॥३८५॥
अग्नयो जयपालाश्च त्रिवृता च त्रिभागिका ।
दन्ती च तुवरं व्योषं पृथगंशकं मतम् ॥ ३८६ ॥
एतेषां चूर्णमादाय दापयेत्सप्त भावनाः ।
जयन्त्या वज्रदुग्धस्य चालारिभृङ्गराजयोः ॥ ३८७ ॥
जलोदरमपाकुर्याद्वारि तत्र न पाययेत् ।
नाभेरुत्तरभागे हि जलस्रावश्च कारयेत् ॥ ३८८ ॥

र रा , जलोदरे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा , मैनसिल २ भा , हल्दी, त्रिफला, शुद्धभिलावेऔरजमालगोटा तथा निशोत ३-३ भाग, दन्तीमूल, तुवरक, सोंठ, मिर्च, पीपल येसव ८-८ भागलेकर सबका वारीकचूर्णकर जैंती, सेहुण्डकादूध, एरण्ड और भंगरा इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७-७ भावनाए देकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। जलोदरीकेनाभिके उत्तरभागकी तर्फ जलस्रावकर इनमेंसे १-१ गोली प्रतिदिन देनेसे फिर पानी नहीं भरताहै। खानेकेलिये दूधभात देवे ८५

८६ रसराजरसः (तृतीय.)

पलैकं शुद्धसूतस्य व्योमसत्त्वञ्च कार्षिकम् ।
तदर्द्धं काञ्चनं देयं कन्यारसविमर्दितम् ॥ ३८९ ॥
लौहं रौप्यं मृतं वङ्गं वाजिगन्धा लवङ्गकम् ।
जातीकोषं तथा क्षीरकाकोलीञ्च तदर्द्धतः ॥३९० ॥
काकमाचीरसैः पिष्ट्वा पञ्चगुञ्जामिता वटी ।
क्षीरञ्च शर्करातोयमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३९१ ॥
पक्षाघातेऽर्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतन्त्रके ।
धनु.स्तम्भेऽपताने च वाधिर्ये मस्तकभ्रमे ॥ ३९२ ॥
सर्ववातविकारेषु रसराजः प्रकीर्तितः ।
बल्यो वृष्यश्च भोग्यश्च वाजीकरण उत्तमः ॥ ३९३ ॥

भै.र , ध , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ पल, अभ्रकसत्त्व १ कर्ष, स्वर्णभस्म आधाकर्ष मिलाकर कुमारीकेरससे १ रोज मर्दनकर लोह, चादी और वङ्गभस्म, असगन्ध, लौंग, जावित्री, क्षीरकाकोली येसव ४-४ माशेलेकर सबको इकट्ठे मिलाय मकोयकेरससे २-२ रोजमर्दनकर ५-५ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करमिलेहुए दूध अथवा पानीकेसाथ देनेसे पक्षाघात, लकवा, हनुस्तम्भ, हिस्टीरिया, धनुर्वात, खींचतान, बधिरता, सिरकाघूमना, और समस्तवातविकारोंको नष्टकर बल, वृष्यता और वाजीकरणकोकरताहै ॥ ८६ ॥

८७ रसराजरसः (चतुर्थः)

कस्तूरी हिमरश्मि कुङ्कुमसिते
जातीफलं हाटकं,
चाम्पेयं वृषहेमवीजविजया
यष्टी जयन्ती विषम् ।
प्रत्येकं समभागमानविधृत
वल्लं घृतक्षौद्रयुक्,
लीढं तत्क्षणमूर्च्छनं वितनुते
पौण्ड्रादिजैस्तज्जयेत् ॥ ३९४ ॥
स्त्रीणां गर्वाधिकत्वं गमयति सकलं
वीर्यपातं न याति,
लिङ्गान्तो याति वृद्धिं स्थिरतरवपुषां
स्तम्भकृद्योनिभग्नम् ।
सर्वाङ्गं सन्धिवातं व्रणविविधगतिं
ग्रन्थिलताः स्फुटन्ति,
पूयं दुर्गन्धलुता स्रवति च बहुलं
तीव्रदुःखेन युक्तम् ॥
दाहं मोहञ्च तृष्णां क्षयकृमिकृशतां
पीनसं पाण्डुरोगान्,
गुल्माऽऽध्माने च शूलं ग्रहणिगुदरुजं
कुष्ठरोगान्निहन्ति ॥ ३९५ ॥

व रा , व्रणेषु ।

भाषा—कस्तूरी, शुद्धकपूर, केशर, शक्कर, जायफल, अकलकरा, चम्पा, अडूसा, धतूरेके बीज, भांग, मुलहठी, जैंती और शुद्धवछनाग येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और घृतकेसाथ देनेसे सर्वाङ्गसन्धिवात, समस्त व्रण, गाठ, पैलाहुआसफ्रेदीका विष, दाह, मोह, प्यास, क्षय, कृमि, कृशता, पीनस, पाण्डु, गुल्म, आध्मान, शूल, ग्रहणी, गुदरोग, कुष्ठ, पण्ढत्व, ध्वजभङ्ग, इनसवको यह नष्टकर स्त्रियोंके गर्वको दूरकरताहै और सवप्रकारके शुक्रदोषोंका नाशकरताहै । इसे वाजीकरणार्थ सेवनकरना हो तो सन्ध्यासमयमें सेवनकरे इसके सेवनसे यत्किञ्चित् मूर्च्छा जैसी प्रतीतहो तो उससमय ईख चूसनेको दे ॥ ८७ ॥

८८ रसराजरसः (पञ्चम)

मुक्ताप्रवालरसहेमसिताऽभ्रकान्तं
वङ्गं मृतं सकलमेतदलं विभाव्य ।
छिन्नारसेन च वटी सलिलेन सप्त
पश्चाद्देन्मधुहविर्मरिचेन साकम् ॥
लिह्यादुरःक्षतहरं रसराजकाख्यं
माषप्रमाणमतनूद्भवहेतुमेनम् ॥ ३९६ ॥

नि.र., वै.क., र.सु , चि क , वृ. यो. त , र चं , यो. र , उर.क्षतक्षयादौ ।

भाषा—मोती, मूंगा, पारा, सुवर्ण, सफेद अभ्रक, कान्त लोह, कान्तपाषाण, वज्र, इनकीभस्में सब सममागलेकर बारीक चूर्णकर इकट्ठे मिलाय गिलोय और शतावरके रसकी ६–७ भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु, घी और ७ मिर्चोकेसाथ देनेसे यह उर क्षतको नष्टकरताहै और कामकी पूर्णवृद्धिको करताहै ॥८८॥

८९ रसराजरसः (षष्ठ)

भृङ्गाऽहिफेनफलिनीविषमुष्टिविलेपिते ।
खल्वे निबध्य विधिवद्रसगन्धकखर्परम् ॥ ३९७ ॥
गौर्या पचेल्लावपुटे शतेन च नियोज्य तु ।
ऊर्ध्वाऽधोहेमबीजानि पेषयेच्छतशः क्रमात् ॥ ३९८ ॥
तेषां तोयैः पुनः कृत्वा पूपिकामर्कशोषिताम् ।
तत्कर्दमैः प्रतिपुटं दिग्धां कृत्वा पुटेच्छतम् ॥ ३९९ ॥
रसराजो भवत्येष सर्वरोगहरो रसः ।
जम्बूवर्णोऽतिकठिनो रूक्षो वीर्यबली भवेत् ॥ ४०० ॥
जातीफललवङ्गाभ्यां रतौ वीर्यं निरोधयेत् ।
पटुदीप्यशिवाविश्वै वैश्वानरविवर्द्धनः ॥ ४०१ ॥
क्षयघ्नस्तु तथाऽर्शोघ्नस्तक्रकृष्णाऽभयान्वितः ।
ग्रहण्यां जातिकोशेन रेके कुटजवारिणा ॥ ४०२ ॥
प्रमेहे शाल्मलीद्रावे बदर्याऽक्षिगदे हितः ।
सामे वाऽपि निरामे वा समे वा विषमज्वरे ॥ ४०३ ॥
देयो नताब्दकटुकाकारविश्वशृतेन वै ।
रास्नाऽम्भसा वातरोगे पित्तरोगे सिता युतिः ॥४०४॥
अक्षत्वचा कफव्याधौ पाण्डुरोगेऽजमूत्रकैः ।
अश्मर्यामश्मभेदेन कुष्ठे वल्गुजवायसैः ॥ ४०५ ॥
भगन्दरे गुडेनैव व्रणे पौनर्नवायुतः ।
मेदोरोगेऽम्बुमधुना प्रदरेऽशोकवारिणा ॥ ४०६ ॥
शूले हिङ्गुकरञ्जाभ्यामरुचौ रुचकेन वा ।
छर्द्यां धात्रीरसेनैव क्षैण्ये पर्णेन दापयेत् ॥ ४०७ ॥
द्राक्षारसेन शोषे च सञ्ज्ञानाशे किराततैः ।
मूर्च्छायां चन्दनाम्भोभिर्विद्रधौ वरुणाऽम्बुना ॥
सर्वेष्वन्येषु रोगेषु ताम्बूलीदलयोगतः ॥ ४०८ ॥

वृ.यो.त , र कौ , वाजीकरणाऽधिकारे ।

भाषा—भंगरा, अफीम, मालकांगनी, शुद्धकुचिला ६–६ माशेलेकर पानीमें पीस खापरलमलके टुकडेपर लेपकरके सुखाले। फिर पारा, गन्धक और खपरिया १–१ तोला, धतूरेकेबीज १० नग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ऊपरकहीहुई औषधियोंके द्रवोंसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय ऊपरकेहुएकपडेमें रख कचेसूतसे खूब लपेटदे। फिर उपर्युक्तद्रव्योंकेरसोंसे पुतीहुई कुल्हडीमें बन्द कर शरावसम्पुटदेकर ३–४ जङ्गलीकण्डोंके टुकडोंसे ढककर आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २० नग धतूरेकेबीज मिलाकर पूर्वोक्तद्रवोंसे मर्दनकर गोलाबनाय उन्हींके कल्कमें बन्दकर पूर्ववत् शरावसम्पुटकर आंचदे। ऐसेप्रतिपुटमें १०–१० धतूरेकेबीज बढाताहुआ आंचदे। ऐसे १०० आंचें देनेसे यह रसराज जामुनके रङ्गका अत्यन्तकठिन और रूक्ष तैयारहोगा। इसमेंसे आधी-रत्तीसे १ रत्तीतक जायफल और लवङ्गकेसाथ देनेसे वीर्यका अवरोधहोताहै। सेंधव, अजवाइन, हर्रे और सोंठकेसाथदेनेसे अग्नि कोवढाताहै। पीपल और हर्रेमिलीहुई छाछकेसाथ देनेसे क्षय और बवासीरको नष्टकरताहै। जावित्रीकेसाथ ग्रहणी, कुरैयाके-काढेकेसाथ विरेचन, सेमलके द्रवकेसाथ प्रमेह, बदरीद्रवसे अक्षिरोग, तगर, नागरमोथा, कुटकी, अकलकरा और सोंठ इनकेकाढेसे साम अथवा निराम और सम अथवा विषमज्वर, रास्नाके क्वाथसे वातरोग, इलायची और शक्करकेसाथ पित्तरोग, बहेडेकीछालसे कफरोग, बकरेकेमूत्रसे पाण्डुरोग, पाषाणभेदसे पथरी, बाकुची और मकोयकेसाथ कुष्ठ, गुडसे भगन्दर, पुनर्नवासे व्रण, मधुके शर्बतसे मेदोरोग, अशोकके काढेसे प्रदर, हींग और करञ्जसे शूल, सञ्चलनमकसे अरुचि, आंवलेके स्वरससे वमन, नागरबेलसे क्षीणता, द्राक्षारससे शोष, चिरायतेसे सञ्ज्ञानाश, सफेदचन्दनकेकल्कसे मूर्च्छा, वरुणकेक्वाथसे विद्रधिरोगको नष्टकरताहै। इनके अतिरिक्त अन्यव्याधियोंमें नागरबेलकेसाथ देना॥ ८९ ॥

९० रसराजरसः (सप्तमः)

पारदं गन्धकाङ्कोल्लमूलवल्कलमाक्षिकम् ।
विषतिन्दुकतालञ्च समङ्गा वृश्चिका तथा ॥ ४०९ ॥
अर्को गन्धर्वहस्तश्च जयन्ती कटुचिञ्चिका ।
पलंपलं समादाय पलमात्रा च पिप्पली ॥ ४१० ॥
अर्कसेहुण्डमेषीणां दुग्धैः कुर्याच्च भावनाः ।
तिस्रो वापि चतस्रो वा चूर्णे सूक्ष्मे विचक्षणः ।४११।
देवदालीरसैः पश्चात्तिस्रो देयास्तु भावनाः ।
सर्वं विमर्द्य संशोष्य छागीमूत्रेण गोलकम् ॥ ४१२ ॥
कारयेन्मूषिकामध्ये कुक्कुटाख्यपुटे पुटेत् ।
रक्तिकैका प्रदातव्या गुडेन परिवेष्टिता ॥ ४१३ ॥
भिद्यते तेन भवेयुश्च विस्फोटास्तदनन्तरम् ।
स्फुटन्ति स्फोटास्ते सर्वे बिन्दवस्तिलसन्निभाः ४१४
निष्पद्यन्तेऽथ कृष्णास्ते रसराजप्रभावतः ।
माषास्तिला प्रयोगेऽत्र भोक्तव्यास्तिलभोजनम् ४१५
कुलत्थश्चाऽपि वार्ताकं पुण्डरीकं प्रयोजयेत् ।
सूरणं कारवेल्लञ्च कर्कोटीं छागसम्भवम् ॥ ४१६ ॥
मांसं सर्वसवाञ्च सतैलबृहतीफलम् ।
नश्यन्ति सर्वकुष्ठानि सद्यस्त्यष्टादशैव हि ॥ ४१७ ॥
यकृद्गुल्मोदरप्लीहविद्रधीनपि नाशयेत् ।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं वृद्धिं तेजोबलस्य च ॥ ४१८ ॥

रसचि , र का , कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अङ्कोलकीजडकीछाल, सोनामाखी, शुद्धकुचिला, हरितालभस्म, मजीठ, छोटीदूधी, आक और एरण्डकी जडकीछाल, जैंती, कुटकी, इमलीकेफल

और पीपल येसब १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पोरमन्यककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आक, सेहुण्ड और मेडकेदूधोंसे ३-३ अथवा ४-४ भावनाएं देकर सुखाकर कन्दालकेपत्राङ्गके स्वरसकी ३ भावनाएं देकर सुखाकर बकरीकेमूत्रमें पीसकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपडमिट्टीदेकर कुक्कुट पुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्ती गुडमें कवलितकर निगलवादेवे। कुछदिनके प्रयोगसे शिरमें फोले उत्पन्न होंगे उन्हें फोड़देना। उसके अन्दर चमडीमें कालेतिलके सदृश जगह २ चिह्न उत्पन्नहोंगे। इसके प्रयोगमें उडद, तिल, कुलथी, बेंगन, कमल, सूरण, करेला, ककडी, बकरेकामास, बेसन, तैल, बनभटा येसब खानेको देने चाहियें। इससे १८ प्रकारकेकुष्ठ, यकृत्, गुल्म, उदररोग, प्लीहा, जड़ताद, मन्दाग्नि, तेज और मलका अभाव, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ९० ॥

९१ रसराजरसः (अष्टम)

शङ्खशुक्तिकयोः कर्षौ द्वौ कर्षौ गन्धकस्य च।
पिष्ट्वाऽर्कदुग्धैस्तद्गोलं सम्पुटेऽग्नौ दिनाऽर्धकम् ४१९
स्वाङ्गशीतं रक्तिकाऽस्य वेदवेदोषणैः सह।
गोघृतेन समं लिह्यात्क्षयकासनिकृन्तनः ॥ ४२० ॥

चि र भ, क्षयकासे।

भाषा—शङ्ख, मोतीकीसीप १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर सबकाबारीकचूर्णकर आकके दूधमें १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा ४-४ रत्ती कालीमिर्चोंके चूर्ण और घीकेसाथ देनेसे यह क्षयजकासको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

९२ रसराजरसः (नवमः)

मृतसूताऽभ्रकं कान्तं विषं तार्प्यं शिलाजतु।
तुल्यांशं मधुसर्पिर्भ्यां लिहेद्गुञ्जाऽष्टकं सदा ॥ ४२१ ॥
षण्मासेन जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम्।
अश्वगन्धामूलचूर्णं सप्तभागं घृतैः समम् ॥ ४२२ ॥
भागाऽष्टकं गुडं तस्मिन् पिप्पलीं तत्समां क्षिपेत्।
मृद्वग्निना तु तत्सर्वं पिण्डितं भक्षयेत्पलम् ॥ ४२३ ॥

रसायनस, रसायने।

भाषा—पारा, अभ्रक, कान्तलोह और सोनामाखी इनकी-भस्में, शुद्ध बछनाग और शिलाजतु सबसमभाग लेकर सबको इकट्ठे घोटकर चूर्णकररक्खे। इसमेंसे ८-८ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ खावे और असगन्धकीजडका चूर्ण ७ भाग, पुरानागुड और पीपल ८-८ भाग लेकर गुडको अग्निपर गलाकर असगन्ध और पीपलकेचूर्णको मिलाकर ४-४ तोलेके मोदक बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ मोदक अनुपानके तौरपर ६ महीनेतक खानेसे बुढापेसे रहित होकर स्वाभाविक आयुसे तिगुनी आयुको भोगसकाहै ॥ ९२ ॥

९३ रसराजरसः (दशमः)

पातितं स्वेदितं सूतं पूर्वोक्तविधिना हरेत्।
खल्वे निक्षिप्य तं सूतं पीतवेणीभवै रसैः ॥ ४२४ ॥
मर्दयेत्त्रिदिनं पश्चाद्यन्त्रे सोमानले क्षिपेत्।
सम्यङ्निरुद्ध्य तद्यन्त्रं चुल्ह्यामारोपयेद्बुधः ॥ ४२५ ॥
ज्वालयेत्त्रिदिनं पश्चात्पुनर्वेणीभवै रसैः।
मर्दयेत्सम्पचेदेवं सप्तवारानतन्द्रितः ॥ ४२६ ॥
निरुत्थं जायते भस्म रसेन्द्रे नाऽत्र संशयः।
स्वाङ्गशीतमुद्धृत्य भावयेद्धूर्तजै रसैः ॥ ४२७ ॥
त्रिजगद्विजयानीरैर्वत्सनाभद्रवैस्ततः।
भूनिम्बनीरैः सर्वान्ते भावयेत्पारदेश्वरम् ॥ ४२८ ॥
पञ्चविंशतिवारांस्तमेकैकेन विभावयेत्।
एवं विभावितं सूतं ज्वरे नूत्ने प्रयोजयेत् ॥ ४२९ ॥
मुस्तापर्पटयोः क्वाथे ज्वरः सद्यो विनश्यति।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन नाऽधिकं वितरेद्बुधः ॥ ४३० ॥
यथेष्टं भोजयेत्पश्चात्सर्वाचं चाम्लवर्जितम्।
तापाऽधिक्यं यदा कुर्यादुदकं ढालयेद्बहु ॥ ४३१ ॥
अयं रसेश्वरो देयः सर्वरोगेषु युक्तितः।
गुडूचीसत्त्वसंयुक्तमजादुग्धेन योजितम् ॥ ४३२ ॥
तवराजयुतं दद्यात्क्षयरोगे सुदारुणे।
लोहचूर्णेन संयुक्तं गवां मथितसंयुतम् ॥ ४३३ ॥
पाण्डुरोगे प्रयुञ्जीत ग्रहण्यां तक्रसंयुतम्।
धात्रीनीरेण मधुना प्रमेहान् विंशतिं जयेत् ॥ ४३४ ॥
वत्सकाऽरुष्करक्वाथे जयेदर्शांसि सर्वशः।
खदिरक्वाथवल्लिना सर्वं कुष्ठं निवारयेत् ॥ ४३५ ॥
हन्ति पञ्चविधं वायुमेरण्डस्नेहसंयुतम्।
वातव्याधींश्च तेनैव वरीतोयेन वा जयेत् ॥ ४३६ ॥
पाषाणभेदक्वाथेन कौलत्थक्वाथसंयुतम्।
अश्मरीं हन्ति यद्वाऽथ विष्णुकान्तायुतं हरेत् ॥ ४३७ ॥
गोक्षुरक्वाथयोगाद्वा चैकपत्र्याश्रृतं तु वा।
मूत्रकृच्छ्रेषु युञ्जीत कर्पूरं मेलयेद्भिषक् ॥ ४३८ ॥
शिलाजतुसमायुक्तो भगन्दरनिवारणः।
उष्ट्रीक्षीरेण संयुक्तो हन्त्युदराणि [illegible] ॥ ४३९ ॥
सर्वे. क्षारैश्च लवणैरुपसारे समयुक्[illegible]।
हिङ्गुचित्रकुबेराक्षीयुतस्तु परिणामज[illegible] ॥ ४४० ॥
शूलं निहन्ति निःशेषं सामान्यं [illegible]।
षड्लोहभस्मसंयुक्तः [illegible] ॥ ४४१ ॥
शृङ्गीरिपेण संयुक्तो हारिद्र[illegible]।
धनुर्वातं निहन्त्येव [illegible] ॥ ४४२ ॥
सन्धौ सन्धौ प्रवाहस्तु [illegible]
पृष्ठतो कन्धराया [illegible]
तैलाऽवगाहं कुर्वीत सेव्यं [illegible]
दशमूलभवं पश्चात्[illegible]

एवं हि बहुरोगेषु सूतेन्द्रं युक्तिवित्तमः।
प्रयुञ्जीताऽप्रमत्तस्तु शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥ ४४५ ॥
रसराज इति ख्यातो भस्मनामा सुविस्तरात्।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ४४६ ॥

रसालं, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—इष्टिकाप्रभृतिद्रव्योंमें पारेको घोटकर ऊर्ध्व, अध और तिर्यक्पातनसे शुद्धकर पीलेफूलकी बन्दाल्के फूलोंकेरससे ३ रोज़ मर्दनकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर ३ दिनकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् मर्दन और पाचन करे। इसतरह ७ वारकरनेसे पारेकी निरुत्थ भस्म होजायगी फिर धतूरा, भांग, बछनाग, चिरायता, इनप्रत्येकके स्वरसोंसे २५-२५ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा नागरमोथा और पित्तपापड़ेके क्वाथसे देनेसे यह नवज्वरको नष्टकरताहै। ज्वर उतरनेपर अम्लवर्जित यथेष्टभोजनकरावे। अधिकदाहहोनेपर सिरपर जलकी धारादे। गिलोयसत्व, तीखुर अथवा वंशलोचनकेसाथ देकर बकरीका दूध पिलानेसे भयङ्कर क्षयरोगको नष्टकरताहै। लोहभस्मकेसाथ देकर तक्रपिलानेसे पाण्डुरोग; केवल छाछसे ग्रहणी; आंवलेकेरस और मधुसे २० प्रकारके प्रमेह; कुरैया और भिलावेके क्वाथसे सबप्रकारके बवासीर, खदिरकेक्वाथ और गन्धकसे समस्तकुष्ठ, ऐरण्डतैलसे अथवा हातावरके क्वाथसे समस्तवायुरोग, पाषाणभेदके क्वाथमें कुलथी अथवा कोयलका क्वाथ मिलाकर देनेसे पथरी; पानकेसाथदेकर गोखरूके क्वाथमें कपूर और चन्दन मिलाकर देनेसे मूत्रकृच्छ्र; शिलाजीतके साथ भगन्दर, ऊंटनीके दूधकेसाथ समस्त उदररोग; समस्तक्षार, उपक्षार, हींग, चित्रक और वरुणकेसाथ देनेसे परिणामशूल, क्षारकेसाथ देनेसे सामान्यशूल, ६ लोहोंकी भस्म और अभ्रककेसाथ अथवा बछनागकेसाथ अथवा हलदियाज़हरकेसाथ देनेसे धनुर्वातको यह नष्टकरताहै। इसके देनेसे यदि धनुर्वात शान्त न हो तो तमामसन्धियां, सिर, पृष्ठवंश तथा कन्धोंमें दम्भदेवे और तैलमें बैठावे। कड़वीतूंबीसे रक्तनिकाले फिर एकखुराक पारदकी देकर दशमूलका काढ़ा देवे। इसीतरह युक्तिमें निपुण वैद्य शास्त्रसहिततर्कसे इसरसका समस्तरोगोंमें प्रयोगकरे ॥ ९३ ॥

९४ रसराजरसः (एकादशः)

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ ताभ्यां द्विगुणमञ्जनम्।
ईषत्कर्पूरसंयुक्तं दशांशं सक्तुकं विषम् ॥ ४४७ ॥
बलानागबलाकृष्णामालतीपार्थजै रसैः।
ताम्रपात्रस्य मध्यस्थं मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ४४८॥
युक्त्या नयनमध्यस्थं सन्निपातरुजापहम्।
विख्यातो रसराजोऽयं सर्वनेत्ररुजापहः ॥ ४४९ ॥

रसेन्द्रमं, नेत्ररोगे।

भाषा—पारद और नागभस्म समभाग, शुद्ध सुर्मा इनदोनोंसे दूना, सक्तुकविष और कपूर दशवां हिस्सा लेकर बला, नागबला (गुलसिकरी), पीपल, मालती और अर्जुनकेरसोंसे ताम्रके वर्तनमें ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसका अञ्जनकरनेसे सन्निपात दूरहोताहै और नेत्रके समस्तरोगमिटतेहैं ॥ ९४ ॥

९५ रसराजरसः (द्वादशः)

हरजकनकताप्यं लोहकान्ताऽभ्रतुल्यं
जलजरसविभाव्यं वासराणां त्रयं तत्।
हरति च रसराजो वल्लयुग्मः सिताढ्यः
क्षयभवमतितापं रक्तपित्तं स्वपथ्यैः ॥४५०॥

र., रक्तपित्ते।

भाषा—पारा, सुवर्ण, सोनामाखी, लोह, कान्तपाषाण और अभ्रक इनकीभस्में १-१ पललेकर बारीक चूर्णकर कमलके फूलोंकेरसमें ३ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथ देनेसे क्षयजज्वर और रक्तपित्तको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य रोगानुकूल करे ॥ ९५ ॥

९६ रसराजेन्द्ररसः (प्रथमः)

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा।
अभ्रं नागं पलं वङ्गं पलं गन्धकतालकम् ॥ ४५१ ॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत्।
मर्दयेत्काकमाच्याश्च शृङ्गवेररसेन च ॥ ४५२ ॥
मत्स्यवाराहमायूरच्छागमाहिषपित्तकैः।
मर्दयेद्भिषभिषश्च त्रिकटोरम्बुभिस्तथा ॥ ४५३ ॥
सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंस्कृतः।
गुञ्जामात्रं रसं दद्यात्सुरसारससंयुतम् ॥ ४५४ ॥
मेघवारिप्रवाहेण धारितं वारिमस्तके।
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ॥ ४५५
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेकन्तु दापयेत्।
ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः ॥
पावकेन यथा शीतमनेन च तथा ज्वरः ॥ ४५६ ॥

र.सं., र.सु.,यो.सं., र.च., भै र., व.रा., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्र, लोह, अभ्रक, नाग, व इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, हरिताल और बछनाग १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मकोय अदरख इनकेरस और मछली, सुअर, मोर, बकरा, भैंसा इनके पित्त और त्रिकटुकेक्वाथसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली तुलसीके रसकेसाथ देकर मस्तकपर अखण्ड जलधारादेवे। इससे दाह शान्त न हो तो शक्कर और दहीमिलाहुआ भात देवे। इससे साध्यासाध्य समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ९६ ॥

९७ रसराजेन्द्ररसः (द्वितीयः)

हिङ्गुलोत्थं रसं गन्धं केशराजाम्बुशोधितम्।
रसार्द्धं हेमताराभ्रं नागं हेमार्द्धकन्तथा ॥ ४५७ ॥
क्षिप्त्वा खल्वतले पश्चाद्वासाक्वाथेन भावयेत्।
काकमाच्याश्चित्रकस्य निर्गुण्ड्याः कुटजस्य च॥४५८॥

स्थलपद्मस्योत्पलस्य सप्तकृत्वो द्रवैः पृथक् ।
ततो रक्तिमिताः कुर्याद्वटीश्छण्डांशुशोषिताः ॥ ४५९ ॥
अन्नजाग्निखिलान्रोगान् सर्वदोषोद्भवांस्तथा ।
हन्त्ययं रसराजेन्द्रो मृगराजो यथा मृगान् ॥ ४६० ॥

भै. र , अन्नद्रवधिकारे ।

भाषा—शिंगरिफसे निकालाहुआपारा और भंगरेके रसमें शोधाहुआ गन्धक १–१ तोला, सुवर्ण और चांदीभस्म ६–६ माशे, नागभस्म ३ माशे लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर अड्सा, मकोय, चित्रक, निर्गुण्डी, धुरैयाकी छाल, गोरख मुण्डी, कमल इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर धूपमें सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सब-प्रकारके अन्नद्रवियोंकेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ९७ ॥

९८ रसराजेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं भागं भागैकं शुद्धतालकम् ।
भागार्द्धं स्फटिकीं दद्यात्खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ४६१
स्नुहीक्षीरे दृढं भाव्यं त्रिदिनं मर्दयेत्तथा ।
अर्कक्षीरे दिनं त्रीणि कुमारीरसतस्तथा ॥ ४६२ ॥
धुस्तूररसकेनैव क्रमाद्भाव्यं पृथक् पृथक् ।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य वालुकायन्त्रके पचेत् ॥४६३॥
चतुर्यामन्तु पक्वञ्च स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
रसराजमिदं भस्म पूर्णचन्द्रसमानकम् ॥ ४६४ ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तये ।
व्रीहिमात्रप्रमाणेन सर्वव्याधिनिवारणम् ॥ ४६५ ॥
ज्वरे च जीरकृष्णाभ्यां निर्गुंड्याः सन्निपातके ।
नागरेण सितायुक्तं रक्तपित्ते च योजयेत् ॥ ४६६ ॥
गुडूच्या राजरोगेषु लाजचूर्णेन छर्दिषु ।
मन्दाग्नौ जम्भनीरेण सितायुक्तेन तापजित् ॥ ४६७ ॥
नालिकेराम्बुना युक्तं मूर्च्छा कल्याणकाह्वयैः ।
वैदेहीरससंयुक्तं श्वासकासनिवारणम् ॥ ४६८ ॥
पिचुमन्दस्य निर्यासैः शर्कराघृतसंयुतैः ।
प्रमेहविंशतिं हन्यान्मूत्रकृच्छ्राणि सर्वशः ॥ ४६९ ॥
तण्डुलोदकसंयुक्तं मेहतापनिवारणम् ।
शतावरीरसे युक्तं पित्तक्षयनिवारणम् ॥ ४७० ॥
व्याघ्रीनागरसंयुक्तं कासक्षयनिवारणम् ।
कार्पासीरससंयुक्तं शुक्रमेहनिवारणम् ॥ ४७१ ॥
केशरे घृतसंयुक्तैः पीनसांस्त्रिविधान्हरेत् ।
वाकुचीतैलसंयुक्तं सर्वकुष्ठनिवारणम् ॥ ४७२ ॥
अक्षचूर्णसमायुक्तं शूलानां त्रिशतं हरेत् ।
कन्यागोपीसमायुक्तं महातीसारनाशनम् ॥ ४७३ ॥
मधुयीजसमायुक्तं शिरोबाधानिवारणम् ।
एते रोगा विनश्यन्ति रसराजप्रभावतः ॥ ४७४ ॥

वै चि (ल), रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा, और हरिताल १–१ भाग, फटकड़ी आधा भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सेहुण्ड और आक्कादूध, घीकुंआर, धतूरा इनके द्रवोंसे ३–३ दिनमर्दनकर सुखाकर फिरसे-कज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमेंभरके बालुका-यन्त्रमें पकावे । गन्धकजारणहोनेकेबाद डाटलगाकर ३–४ कपड़-मिट्टी देकर सुखाकर क्रमवृद्ध ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर चन्द्रोदयविधानसे शीशीको फोडकर रसनिकालकर रख-छोडे । इसमेंसे १–१ चावलभरकी मात्रा जीरा और पीपलके-साथ देनेसे ज्वरको और निर्गुण्डीके क्वाथसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै । सोंठ और शक्करकेसाथ देनेसे रक्तपित्त, गुडूचीसे राजरोग, लाजचूर्णसे वमन, जंभीरीकेरससे मन्दाग्नि, शक्करसे दाह, नारियलकेजल अथवा पित्तपापड़ेकेक्वाथसे मूर्च्छा, पीपलकेरससे श्वास, कास, नीमकेगोंद, शक्कर और घीकेसाथ सबप्रकारकेप्रमेह; चावलोंके पानीसे सबप्रकारके मूत्रकृच्छ्र और प्रमेहजनितदाह, शतावरीकेरससे पित्तक्षय, भटकटैयाकेरसऔर सोंठकेसाथ कासज-नितक्षय, कपासकेपत्तोंकेरसकेसाथ शुक्रमेह, घी और केशरकेसाथ ३ प्रकारके पीनस, बाकुचीकेतैलसे सबप्रकारके कुष्ठ, बहेड़ेके-चूर्णसे ३०० प्रकारकेशूल, घीकुवार और गोपीचन्दनसे महाति-सार, अनारकेरससे शिरोरोग नष्टहोतेहैं ॥ ९८ ॥

९९ रसराक्षसरसः (प्रथमः)

गन्धकं पलमानेन पारदं कर्षसम्मितम् ।
कुनटी नवसारञ्च रसकं कर्षकर्षकम् ॥ ४७५ ॥
कारवल्लीरसे मर्द्य लेपयेत्सम्पुटोदरे ।
कण्टवेधिप्रकर्तव्यं पलैकं ताम्रसम्पुटम् ॥ ४७६ ॥
सूक्ष्मलेपं बहिः कुर्यात्ततो मृन्मयसम्पुटे ।
कृत्वा मृत्कर्पटान्सप्त वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ ४७७ ॥
यामाष्टकं प्रयत्नेन ज्वलिते खादिरेऽनले ।
क्षुधां बहुतरां कुर्यात्सुसिद्धो रसराक्षसः ॥ ४७८ ॥
नागवल्लीदले युक्तं वल्लमानेन दापयेत् ।
ज्ञातव्यो गुरुमार्गेण पक्वाऽपक्वस्य निर्णयः ॥४७९ ॥

र सि , रसायने ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ पल, पारा, मैनसिल, नवसादर, और खपरिया १–१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जङ्गलीकरे-लेकेरससे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय एकपलताम्रके कण्टक-वेधी सम्पुटमें रक्खे और ऊपरसेभी पतला लेपकरदे । इससम्पु-टको शरावसम्पुटमें बन्दकर सात कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाले । सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर ८ पहर खैरकी लकड़ीकी आंचदे और वालूके ऊपर धान अथवा ज्वार रखदे । जबवह फूलजाय तब समझना चाहिये कि सिद्धहोगया । सम्पुटको वैसेहीभ्रोयलेपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सम्पुट सहितखरलकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा पानमें रखकर खानेसे अत्यन्तक्षुधाको करताहै । वात और कफज समस्तव्याधियोंको नष्टकरताहै ॥ ९९ ॥

१०० रसराक्षसरसः (द्वितीयः)

सूतं खल्वे विमृद्याऽथ लशुनेन दिनाऽष्टकम् ।
शोभाञ्जनरसे तावद्राजिकायां दिनाऽष्टकम् ॥ ४८० ॥
काकमाचीरसैस्तावल्लोहद्रावे दिनाऽष्टकम् ।
जलयन्त्रेऽग्निना सिद्धो भवेत्षोडशयामतः ॥ ४८१ ॥
रसराक्षसनामाऽयं कुर्याद्बहुतरां क्षुधाम् ।
एतद्रसप्रभावेण राजमान्यो भिषग्भवेत् ॥ ४८२ ॥

र. सि., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्धपारेको तप्तखरलमें डालकर लहसन, सहिजन, राई, मकोय और लोहद्राव (लोहको गलानेवाला तेज़ाब) में क्रमसे ८–८ रोज़ मर्दनकर लोहेकीकड़ाहीकेबीचमें गोलेको रख लोहेकीकटोरीसे ढककर जलमुद्रासे बन्दकर बहुतमन्द अग्निजलावे। मुद्रा बिगलकर अच्छीतरह कटोरीको पकड़ले उससमय उसमें धीरजसे पानी भरदे । पानीभरनेके पहिले कटोरीपर कोई वज़नदार चीज़ रखदे जिसमें कि मुद्रा फट न जाय । फिर धीरे २ आंच लगावे ऐसे १६ पहर आंच देनेसे यह रस तैयारहोगा। स्वाङ्गशीतलहोनेपर जलको कपड़ेवग़ैरहसे निकालले और मुद्राको धीरजसे खोलकर रसको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ चावल से १ रत्ती तक उचितानुपानकेसाथ खानेसे यह अत्यन्त क्षुधाको बढ़ाताहै । इसके प्रभावसे वैद्य राजमान्य होताहै ॥ १०० ॥

१०१ रसराक्षसः (राक्षसरसः) (तृतीयः)

ताम्रं पारदगन्धकौ त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलं,
खल्वे मर्दनकं विधाय सिकताकुम्भेऽष्टयामं ततः ।
स्विन्नं तस्य च रक्तशाकिनिभवं क्षारं समं मेलयेत्,
लुङ्गाऽम्लोत्थरसे विभाव्य सकलं नाम्ना रसो राक्षसः
मन्दाग्नौ सततं ददीत हुतभुक्कायेन संयोजितं,
व्याधिग्रस्तकलेवराय नितरां भुक्तोत्तरं शूलिने ।
श्रीसूर्याय महेश्वराय गुरवे कृत्वा नतिं चादरात्,
रुग्णानां क्रमतोऽस्य दानसमये गुञ्जाऽष्टकं वर्धयेत् ॥

र. र. स., र. को., चि. क., र. क. ल., र. सं., र क. अग्निमान्द्ये ।

भाषा—ताम्र और फौलादभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, त्रिकटु, संचल, सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें ८ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर समभागमें लालगुञ्जाके क्षारको मिलाकर बिजौरेकेरससे २–३ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसके प्रारम्भमें सूर्य, महेश्वर और गुरुको प्रणामकर एकगुञ्जाकीमात्रा चित्रककेकाढ़ेसे देनेसे मन्दाग्नि नष्टहोता है। इसकी १–१ रत्ती ८ दिनतक बढ़ावे और वैसेही ह्रासकरे । परिणामशूलीको भोजनकेबाद देवे १०१

१०२ रसराक्षसः (चतुर्थः)

पलद्वयं रुद्रभवं सुशोधितं
शाखोटतोयेन पुनर्विभावितम् ।
दिनत्रयं तच्च विमर्द्य गाढं
समानगन्धेन पुनर्विचूर्ण्य ॥ ४८५ ॥
यदा भवेदञ्जनसन्निकाशं
पूर्वोक्ततोयेन पुनर्विभाव्यम् ।
तत्कालसम्मारितछागमांसे
संक्षिप्य संलोहितचित्रकस्य ॥ ४८६ ॥
रसेन पूर्णं खलुतालमूली-
निर्यासयुक्तं च विमर्द्य गाढम् ।
तन्मांसपिण्डे त्वपरे निवेश्य
माषस्य पिष्टेन निरुद्ध्य यत्नात् ॥ ४८७ ॥
तत्तप्ततैले विनिवेश्य चूल्यां
मन्दाग्निनैवं विपचेत्प्रयत्नात् ।
पञ्चाऽक्षरीं चात्र जपेद्विधिज्ञो
देवीमिमां सिद्धरसेश्वरीं वै ॥ ४८८ ॥
ऐंक्लींऐंह्रींजपेद्देवीं पच्यमाने रसेश्वरे ।
बलिं दत्त्वा समभ्यर्च्य कुमारीः सर्वसिद्धिदाः॥४८९॥
ततः सिन्दूरवर्णाभं वटकन्तं समुद्धरेत् ।
अष्टोत्तरसहस्रन्तु जप्त्वा पञ्चाक्षरीमिमाम् ॥ ४९० ॥
तस्माद्यत्नात्समुद्धृत्य मुहूर्ते शोभने तिथौ ।
भिषक् सन्तोष्य विप्रादीन्रक्तिकैकन्तु भक्षयेत्॥४९१॥
मधुसर्पिर्युतं भक्तं पश्चाद्भोजनमाचरेत् ।
अनुपानं पिबेद्दुग्धं रसायनमतानुगम् ॥ ४९२ ॥
यथेष्टं भोजनं कार्यं कषायकटुवर्जितम् ।
अनेन विधिना कृत्वा नरः स्यात्कामदेववत् ॥४९३॥
योषिच्छतं भजेन्नित्यं सहस्रं काममोहितः ।
अकृत्वा मैथुनं रेतस्स्फुटित्वा लोचनं व्रजेत् ॥४९४॥
सदैव मन्मथाकारो नाऽत्र कार्या विचारणा ।
रसराक्षसनामाऽयं राजयोग्यं रसायनम् ॥ ४९५ ॥

र. कौ., टो., र. प्र., र. सु., वाजीकरणे ।

टि०—रसराजसुन्दरे रसराक्ष इति नामकरणन्तु भ्रमोत्पादकत्वादनुचित, मूले रसराक्षसनामाऽयमिति स्पष्टतया तन्नामकरणात् ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियाहुआ पारा २ पल लेकर सीहोरके दूधमें ३ रोज़ मर्दनकर शुद्धकियेहुए बराबरके गन्धकमें मिलाकर सीहोरके रससे मर्दनकरे अञ्जनके सदृश होनेपर गोला-बनाय तत्कालमारेहुए बकरेके मांसमें रखकर गोलासा बनाले और उसमें लालचित्रक तथा तालमूलीकारस भरके सुईडोरेसे सींकर एकदूसरे मांसपिण्डमें रख उड़दके आटेमें बाटी बनाय गोलाडूबनेलायक तिलकेतैलमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे । पकाते समय ॐ ऐं क्लीं ऐं ह्रीं इसमन्त्रका जप करतारहे । इसकेप्रारम्भमें भैरवको बलिदे और कुमारीकन्याओंको भोजन-करावे । जब गोला सिन्दूरवर्णहोजाय तब तैलसे बाहर निका-लकर रखले । उसीस्थानपर अष्टोत्तरसहस्र १००८ पूर्वोक्त पञ्चाक्षरीकाकरके गोलेमेंसे धीरजसे रसराजको निकालकर रखले। अच्छे मुहूर्त, तिथि, नक्षत्रादिकमें ब्राह्मणभोजन वग़ैरह कराके १–१ रत्तीकी मात्रा मधु और घीकेसाथ खाकर दूध पीवे। कषाय और कटुको छोड़कर यथेष्टभोजनकरे । इसतरहकरनेसे

मनुष्य साक्षात् कामदेवके सदृश होजाताहै और बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ उत्साहपूर्वक रमणकरसक्ताहै । मूलसे इसकासेवन-कर स्त्रीसङ्ग न करनेसे तमामशरीरमें शुक्र फूटनिकलताहै और गर्मीकेमारे आखें चलीजातीहैं इसलिये यह राजालोगोंके योग्य है गरीबलोगोंको नहीं देना ॥ १०२ ॥

१०३ रसराक्षसरसः (पञ्चमः)

सूतं विषं त्रिकटुकारगफेनयुक्तं
मर्द्यं चतुर्गुणमितं मलमागयुक्तम् ।
आर्कैः पयोभिरथ पिष्टतमं दिनैकं
निक्षिप्य पिष्टममलं सितकाचकूप्याम् ॥४९६॥
मुद्रां विधाय सुदृढां भिषगग्र्यामं
पक्त्वा पुनर्दिनचतुष्टयवह्निवृद्ध्या ।
द्वात्रिंशदूर्द्ध्वमधरे विपरिक्रमेण
कुर्याद्दिनानि दश सायहितो हितार्थी ॥४९७॥
गुञ्जार्द्धकं तु सितया सह नागवल्ल्या
भक्षो यथा विधुतमांसचयोऽजमस्यात् ।
स्यादिन्द्रियादिषु वृपश्च यथेष्टभोज्ये
तृप्तः कदापि न पुमानपि मन्दवह्निः ॥४९८॥

र.का , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग, त्रिकटु, अफीम येसब १–१ भाग, शुद्धसोमल ४ भाग, लेकर बारीक चूर्णकर आकके दूधसे १ रोज मर्दनकर सुखाकर ७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी-शीशीमें भरके मुहपर डाट लगाय ६–७ कपड़मिट्टीसे मुद्रादे मन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर क्रमवृद्धाग्निसे ८ पहरकी आचदे । ठढाहोनेपर निकालकर आकके दूधसे ४ पहर मर्दनकर पूर्ववत् क्रमवृद्धाग्निसे १–१ रोज़ पकावे इसतरह चाररोज़ पकानेके बाद मर्दनकर ७ पहरकी क्रमाग्निसे पकावे इसतरह १–१ पहर कम करताहुआ ५ दिनतक अग्निसे पकावे । कुल १० दिनकी अग्नि देवे । पहिलीबारजो ऊपर उड़ाहुआ भागहै उसे लेकर नीचेका कचरा फेंकदे । दूसरे दिनसे नीचे ऊपरका सबभाग निकालकर मर्दनकर आचदेताजाय । इसतरहकरनेसे १० वें दिन वस्तु बिल्कुल तलस्थ होगी इसे निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधी आधी रत्तीकीमात्रा खाकर और पानकेसाथ खाकर ककारादि-गणको छोड़कर यथेष्टभोजन करनेसे अत्यन्त कृशमनुष्यभी भालूकीतरह माससेपरिपूर्ण होजाताहै । इन्द्रिया भी प्रबलहो-जातीहैं । अत्यन्तमन्दाग्नि भी इसके सेवनकेबाद कमीभोजनसे तृप्त नहींहोताहै ॥ १०३ ॥

१०४ रसवरोरसः

आदौ सूतवरं विमर्द्य सलिले वासामवे वासरं,
पश्चाद्गन्धकताम्रभस्मसहितं खल्वे दृढं मर्दयेत् ।
भार्ग्यग्नित्रिफलाऽऽटरूषककणाकन्याविषावारिभिः,
प्रत्येकं दिवसत्रयं रसवरः सञ्जायते कासहा ॥४९९॥
गुञ्जापञ्चकसम्मितो मधुकणायुक्तोऽथवा वासकं,
द्राक्षायुङ्नु शृङ्गवेरचपलाशृङ्गीशिवाक्षौद्रयुक् ।
वाभार्गी चपलाऽरुणाग्निविजयाक्षौद्रान्वितः पायितः,
काथे वाब्बुलिके शिवामधुयुतः कासं जयेद्द्रुतम् ॥
वा कृष्णामधुयुक् शिवामधुयुतो वा नागवल्लीरस-
क्षुद्रातोयसुसैन्धवाऽग्निरसयुग्भार्ग्यम्बुविश्वायुतः ॥

र , कासे ।

टि०—र र स , ध , एतयोर्ग्रन्थयोरुदयभास्करनाम्ना "कर्ष मेकं रस शुद्ध गन्धक तच्चतुर्गुणम् । विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णा ततो निम्बु कतारिणा ॥ कल्क कुर्वीत खल्वेन यावद्यामचतुष्टयम् । द्विकर्षमथ ताम्रस्य तनुपत्राणि सर्वश ॥ कल्केन तेन निम्बूकरसेनाऽऽप्लाव्य खल्वके । स्थापयेदातप तीव्रे पिण्डीकृत्य तत परम् ॥ मूषामध्ये निरुद्धयाऽथ कुक्कुटाख्यैस्त्रिभि पुटै । पचेच्चुल्ल्या विनि क्षिप्य शुष्कैरारण्यकोपलै ॥ तत आकृष्य सम्मर्द्य करण्डे त विनि क्षिपेत् । रसोऽयं सर्वरोगघ्नो नृणा मुदयभास्कर ॥ हन्ति सर्वाणि शूलानि तमासीव दिवाकर । पर्णखण्डि-कया सार्धं देयश्चेत्यपरे जगु ॥ पथ्य रोगोचित देय रसस्यानुचित त्यजेत् ॥" अय योग शूलाऽधिकारे निहिताऽस्ति ।

र.र , ध , व से एषु ताम्रपर्पटीनाम्ना "रसगन्धकताम्राणा चूर्णं कृत्वा समाशकम् । पुटपाकविधौ पक्त्वा मधुनाऽऽलोड्य सल्लिहेत् ॥ सर्वरोगहरश्चैतत्पर्पटाख्य रसायनम् ॥" अय योग सर्वरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र र , ध , अनयोर्ग्रन्थयोस्ताम्रयोगेति नाम्ना "काकमाचीशृङ्गवेर-जयारुबूकजे पृथक् । सप्तधा मूर्च्छित शैले रस निर्मलताङ्गतम् ॥ सूक्ष्म-पत्रीकृत ताम्र गन्धचूर्णेन योजितम् । पुटेत्तदन्धमूषाया चूर्णं तत्क्रेण कार-येत् ॥ तच्चूर्णं त्रिकटूपेत योजयेन्मधुसर्पिषा । ग्रहणीक्षयरोगेषु हित सोपद्रवेषु च ॥ अम्लपित्ते च कुष्ठे च ज्वरे मेहे च कामले ॥" अय योगो ग्रहणीरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

भैषज्यरत्नावल्या ताम्रयोगेति नाम्ना "ताम्रपत्र रवे क्षीरे निर्गु-ण्डीस्वरसे तथा । त्रिकण्टजे स्नुहीक्षीरे ताम्र दग्ध्वा क्षिपेत्तत ॥ रस स्यादर्द्धपल शुद्ध गन्धकस्य पलन्तथा । कज्जल्यर्द्धेन जम्बीररसेन ताम्रक पलम् ॥ परिलिप्याऽन्धमूषाया दद्यात्सप्तपुटाह्वयून् । सम्मर्द्य मधुसर्पिर्भ्यां ततो रक्तिमिन लिहेत् ॥ भगन्दरे सर्वमेहे खाच सर्वव्रणेषु च ॥" अय योगो भगन्दराऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रससारे, रसकामधेनौ च ताम्रेन्द्ररस इति नाम्ना "शुद्धशुल्बमन सूत गन्धश्च क्रमपाचितम् । सम्भाव्य खदिरक्काथे मंजिष्ठादिगणेन च ॥ शृङ्गजेन वटीं बद्धा कुष्ठाण्डदरनाशिनी । ताम्रेन्द्रो नाम विख्यात कफ-वातहर स्मृत ॥ एव रसो भक्तव्यो वक्रेन्द्रस्नेहसुन्दरी ॥" अय योग कुष्ठाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसायनम , र चि , र वी , बा म , [illegible], एषु [illegible]-धिकारे त्रिनेत्ररस इति नाम्ना "[illegible] निम्बुरसे [illegible] दिनम् । मर्दयेदातप पश्चाद्[illegible] ॥ [illegible] अय तीव्राऽग्निना पचेत् । [illegible] ॥ गुञ्जामित देहसिद्ध्यै पुष्टिवीर्यबलाय च । [illegible] कथनि कन्यया ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

रससारसङ्ग्रह[illegible] त्रिनेत्ररस इति नाम्ना [illegible] धिकारे "[illegible] । [illegible] ताना [illegible] ॥ [illegible] । [illegible] ॥ [illegible] तत्तद्समान्वित [illegible] । [illegible] सहित [illegible] ॥ [illegible] । [illegible] त्रिनेत्ररस ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

र म क., र. श , रसायनम , र. प्र , र. (मा.), र का , र. नि , एषु ग्रन्थेषु रक्तपित्ताऽधिकारे [illegible] नाम्ना "सूत गन्ध तथा शुद्ध

क्रमादेकद्विभागिकम् । तुल्यार्कं भावयेदार्द्ररसैश्चाऽपि त्रिधाऽथवा ॥ गोलं कृत्वाऽन्धमूषायां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् । घृतशुण्ठ्या च गुञ्जैकं शीतोदं समितं ध्वनु ॥ त्रिदोषं नाशयेच्छीघ्रं क्रियां शीता प्रयोजयेत् । स्थूलं कृशं कृशं स्थूलं करोत्यग्निप्रदीपनम् ॥ त्रिदोषोत्पन्निं रक्तं व्रणनाड्यभिघातजम् । यकृत्प्लीहोत्थितं यच्च यच्च कुष्ठकरं त्वसृक् ॥ शोषयेद्दुष्टरक्तं तद्रसो रक्तारिसञ्ज्ञकः ॥" अयं योगोऽस्ति । रसावतारे ताम्रसम्पुटे रसं निवेश्य तत्सम्पुटञ्च मृन्मूषायां निवेश्य पुटं दद्यादिति विशेषः ॥

र. र. स., रसेन्द्रम., अनयो रसपिष्टिकेति नाम्ना "पक्वताम्रे रसः पिष्टो वलिना हिध्मिना हितः ।" अयं योगो हिध्माऽधिकारे निहितोऽस्ति।

भै. र., वै. क. अनयोः रसराजेति नाम्ना "गन्धकेन मृतं ताम्रं शुद्धगन्धेन तुल्यकम् । द्वयोः पादं शुद्धरसं मर्दयेच्चूरणद्रवैः ॥ पुटेद्गजपुटे विद्वान्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् । गुञ्जाद्वयं लिहेत्क्षौद्रैः प्लीहगुल्मविनाशनम् ॥ यकृच्छूलं ज्वरं हन्ति कान्तिपुष्टिविवर्धनः । रसराज इति ख्यातो रोगवारणकेसरी ॥" अयं योगः शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसावतारे रसेश इति नाम्ना कामाऽधिकारे "सूतगन्धरवयः समांशका धान्यकार्द्रकरसेन मर्दिताः । जायते निदिवसं प्रयत्नतो क्षालने हरिकथेव रसेशः ॥ वल्लयुग्ममशितोऽग्निपिप्पलीप्राणदामधुयुतोऽपनाशनः । पञ्चकासविनिवर्तनक्षमः स्वीयपथ्यसहितो मृगाङ्कवत् ।" अयं योगो निहितोऽस्ति ।

बृ. यो. त., रसायनम., र. क., र. मि., यो. र., र. चि., नि. र., र. कौ., र. का., र. म., यो. म., चि. र. भ., र. र. कौ., एषु ग्रन्थेषु कुष्ठाऽधिकारे **शशिलेखावटीति** नाम्ना "शुद्धसूतं समं गन्धं तुल्यञ्च मृतताम्रकम् । मर्दितं बाकुचीक्वाथे दिनैकं वटीकृतम् ॥ निष्कमात्रां सदा खादेच्छित्रघ्नीं शशिलेखिकाम् । बाकुचीतैलकर्षैकं सक्षौद्रमनुपाययेत् ॥" अयं योगो निहितोऽस्ति । तत्र र. म., यो. म., चि. र. भ., एषु ग्रन्थेषु **शशिधररस** इति नाम, र. र. कौ., **कुष्ठारिरस** इति नाम । केषुचित्पुस्तकेषु "तुल्यञ्च मृतताम्रकम्" इत्यस्य स्थाने तुल्यञ्च मृतताम्रकमिति पाठो दृश्यते ॥

रसकामधेनौ शूलाऽधिकारे **शूलगजकेसरीति** नाम्ना "रसं पलद्वयं गन्धाऽष्टपलं निम्बुकाद्रवैः । विमर्द्य शुद्धताम्रस्य पत्राणि स्थापयेत्ततः ॥ निम्बूरसे च पक्षैकं क्षिपेत्कज्जलिकाञ्च ताम् । शरावसम्पुटे धृत्वा शोषिते मुद्रिते भृशम् ॥ लोहचूर्णं सटीचूर्णं शङ्खचूर्णं गुडैः सह । मृत्कर्पटविलिप्ते च शुष्केऽग्नि वैदयामकम् ॥ स्वाङ्गशीतस्मादाय रसः स्याच्छूलकेसरी । अनुपानवशात्सर्वरोगाञ्छूलञ्च नाशयेत् ॥" अयं योगो निहितोऽस्ति ।

एते योगाः पृथक्पृथङ्नाम्ना विभिन्नविभिन्नग्रन्थेषु नानाऽधिकारेषु निहिताः सन्ति, केषुचिद्ग्रन्थेषु तु द्वित्रिचतुरादिस्थानेष्वपि पुनः पुनरवस्थापिताः सन्ति तत्राऽयमावश्यको विचारः समापतितो यद्ग्रन्थसङ्ग्रहयितैव भ्रमगह्वरे निपत्य नाऽज्ञासीद्यत्कस्मिन्नधिकारे कस्को योगो निहितोऽस्ति । पूर्वोक्तयोगाच्चाऽस्य कथं भिन्नता सञ्जातेति विचारं न कृतवानीदृशोऽज्ञानाऽन्धकारनिरुद्धज्ञानज्योतिषि विषये साधारणवैद्यानामधिकतया छात्राणां का कथेति सुतरां विदुषां हृदि विचारः समुदेति । भ्रमपतनकारणन्तु एकस्याऽपि योगस्य नाना नामकरणं १ छन्दोऽनुरोधेन मूलद्रव्यनामान्तरनियोजनं २ भावनाविशेषाः ३ विविधान्यनुपानानि च ४ । एतद्भ्रमनिरावरणाय मूलतत्त्वं गवेषणीयमत्यावश्यकं तद्यथा-गन्धेशार्कसंयोगेन घटितयोगस्य नानाव्याधिषु कार्यकरणक्षमत्वाद्येन येन भिषजा यत्र यत्र रोगे यो यो योगः परीक्षितः स तत्र तत्र लिखितः, मुख्यन्त्वत्र कारणं प्रकृतिसमयदोषादिविचार एव तन्मूलैव भिषजां सिद्धिरस्तीत्यतो येनकेनाऽपि प्रकारेण गन्धेशसंयोगेन वा ताम्रभस्म निष्पाद्य यत्र योगः कृतोऽस्ति तेषां भ्रमनिराकरणाय प्रयोगसौष्ठवाय चोपरिनिर्दिष्टरसाः रसवरनाम्नाऽवबोद्धव्याः प्रयोक्तव्याश्च । भावना श्चानुपानानि तु स्वबुद्ध्या न्यूनाऽधिकान्यपि समानुष्ठीयमानानि न दोषावहाणि, इति सुधीभिर्विभावनीयम् । अत्र क्रमेणाऽधोलिखितयोगा एकेनैव योगेन बुद्ध्या रुद्धा भविष्यन्तीति महल्लाघवम् । एतद्विवरणं हृदि सम्यगाकलय्य एतेषु योगेषु निर्दिष्टसरण्या ते ते रोगा उपक्रमितुं सरला भविष्यन्ति । अन्तर्भाविनयोगानां नामानि यथा-उदयभास्कर. १, ताम्रपर्पटी २, ताम्रयोग ३, ताम्रयोगो द्वितीय ४, ताम्रेन्द्ररसः ५, त्रिनेत्ररसः ६, द्वितीयश्चापि त्रिनेत्रः ७, रक्तारि ८, रसपिष्टिका ९, रसराजः १०, रसेशः ११, शशिलेखा वटी १२, शूलगजकेसरीति १३ ।

भाषा—अडूसेकेरससे एकरोज़ शुद्धपारेको घोटकर इसकी बरावर शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर भारङ्गी, चित्रक, त्रिफला, अडूस, पीपल, घीकुंवार, अतीस सुगन्धवाला इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ रोज़ मर्दनकर ५-५ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, पीपल; अथवा अडूस; अथवा द्राक्ष अथवा अदरख, पीपल, काकडासींगी, अतीस और मधु; अथवा भारङ्गी, पीपल, अतीस, चित्रक, भाग और मधु; अथवा बबूल की छालका काढा, हर्रे और मधु; अथवा पीपल और मधु; अथवा आंवला, मधु, अथवा पान, भटकटैया, चित्रकका रस और सैन्धव; अथवा भारङ्गी, सुगन्धवाला और सोंठकेसाथ देनेसे यह दुस्तरकासको नष्टकरता है । इन अनुपानोंमें से जहां जिसकी योग्यता हो वहां उसका योगकरे ॥ १०४ ॥

१०५ रसवीररसः

त्रिगुणं शुद्धसूतस्य योजयेच्छुद्धगन्धकम् ।
लोहपर्पटिकाचूर्णं सूततुल्यं विनिःक्षिपेत् ॥ ५०२ ॥
स्नुह्यर्कपयसा मर्द्यं तत्सर्वं दिवसत्रयम् ।
तच्छुष्कं चाऽन्धितं पक्त्वा करीषाग्नौ दिवानिशम् ॥
ततश्च टङ्कणं काचं दत्त्वा रुद्ध्वा धमेद् दृढम् ।
गुञ्जैकं मधुना खादेद्रसवीरो महारसः ॥ ५०३ ॥
अब्देकेन जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
मुशलीमूलचूर्णन्तु गुञ्जापत्रद्रवैः पिबेत् ॥
छागीमूत्रेण वा तं वै वर्षैकं कामकं परम् ॥ ५०४ ॥

र. सं., रसायनसं., रसायने । रसायनसं करवीररसेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग और गन्धक ३ भाग, लोहपर्पटी १ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर सेहुण्ड और आकके दूधसे ३-३ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर अन्धमूषामें बन्दकर ४-५ कपडमिट्टी देकर करीषकी अग्निमें एक दिनरात पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भुनासुहागा और काच समभागमें देकर तीव्र धमनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ खाकर सफेदगुञ्जाके रससे मुशलीका चूर्ण एकवर्ष पीवे अथवा बकरीके मूत्रसे पीवे । इसरसके सेवनसे एकवर्षमें बुढापेको जीतकर दीर्घायुको प्राप्तहोता है ॥ १०५ ॥

१०६ रसशार्दूलरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद्दिनम् ।
प्रतिलौहं सूततुल्यमष्टलौहं मृतं क्षिपेत् ॥ ५०५ ॥

ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी यष्टीमधु पुनर्नवा ।
नलिकागिरिकर्ण्यर्ककृष्णधूर्तदुरालभाः ॥ ५०६ ॥
आटरूषः काकमाची द्रवैरेषां विमर्दयेत् ।
गुञ्जात्रयं चतुर्गुञ्जं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
रोगोक्तमनुपानं वा कवोष्णं वा जलं पिबेत् ॥ ५०७ ॥

र.स.,र चि ,र सु ,रसायनस.,यो म ,सूतिकारोगे ।

टि०—यद्यप्यूनचत्वारिंशताऽग्निकुमारेणाऽस्य मूलद्रव्येषु साम्यमात्र इति परन्तु भावनास्वत्यधिकविशेषत्वात्स्वतन्त्रतयैव पाठो निहितोऽस्ति, इति न विस्मरणीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, आठोंलोह (सोना, चांदी, तांबा, रांगा, सीसा, कान्तलोह, कांसा और पीतल) १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मी, जैंती, निर्गुण्डी, मुलहठी, पुनर्नवा, नालीशाक, कोयल, आक, कालाधतूरा, जवासा, अडूसा, मकोय, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ अथवा ४-४ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्त द्रोगहरानुपानकेसाथ अथवा कदुष्णजलकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १०६ ॥

१०७ रसशार्दूलरसः

अभ्रं ताम्रं तथा लोहं राजपट्टं रसं तथा ।
ऊषणं टङ्कणञ्चैव यवक्षारं समांशकम् ॥ ५०८ ॥
तथाऽस्र तालकञ्चैव त्रिफलायाश्च तोलकम् ।
तोलकञ्चाऽमृतञ्चैव पञ्चगुञ्जप्रमिता वटी ॥ ५०९ ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याऽपि नागवल्लीरसेन च ।
भावयेत्सप्तधा हन्ति ज्वरं कासाङ्गसङ्ग्रहम् ॥
सूतिकाऽऽतङ्कशोथादिस्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥५१०॥

र सं ,र चि ,र सु सूतिकारोगे । र चि गन्धकमधिकतया नियोजितम् ॥

भाषा—अभ्रक, ताम्र, लोह, राजावर्त (लाजवर्द) और पारा इनकीभस्में, मरिच, सुहागा, यवक्षार, हरितालभस्म, त्रिफला और शुद्धवत्सनाग १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर हरमल और पानके रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ज्वर, कास, अङ्गग्रह, सूतिकारोग, शोथ और स्त्रियोंके तमामरोग नष्टहोतेहैं ॥ १०७ ॥

१०८ रसशार्दूलरसः (महान्) (तृतीयः)

अभ्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धश्च पारदः ।
शिला टङ्कं यवक्षारः त्रिफलायाः पलंपलम् ॥ ५११ ॥
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धकर्षकसम्मितम् ।
त्वगेलापत्रकञ्चैव जातीकोपलवङ्गकम् ॥ ५१२ ॥
मांसी तालीसपत्रञ्च माक्षिकञ्च रसाञ्जनम् ।
एषां द्विकार्षिकं भागं देयञ्चाऽपि विचक्षणैः ॥५१३॥
द्रवे किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।
भावना च प्रदातव्या पूर्वोक्तेन रसेन च ॥ ५१४ ॥
निहन्ति विविधान्रोगाञ्ज्वरान्दाहान्वमिं भ्रमम् ।
तथाऽतिसारकञ्चैव वह्निमान्द्यमरोचकम् ॥
विशेषाद्गर्भिणीरोगं नाशयेदचिरेण च ॥ ५१५ ॥

र स ,र.सु ,र क. सूतिकारोगे ।

भाषा—अभ्रक, ताम्र, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, सुहागा, यवक्षार और त्रिफला १-१ पल, शुद्धवत्सनाग ॥ माशे, तज, इलायची, पत्रज, जावित्री, लवङ्ग, जटामासी, तालीसपत्र, सोनामाखी, रसौत २-२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर हरमल और पानकेरसोंसे ७-७भावनाएं देकर कुछ द्रव रहनेपर एकपल मरिचका बारीकचूर्ण डालकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ज्वर, दाह, वमन, अतिसार, मन्दाग्नि अरुचि, तथा खासकर गर्भिणीकेरोगोंको यह नष्ट करताहै १०८

१०९ रसशेखररसः

पारदञ्चाहिफेनञ्च द्विद्वादशकरत्तिकम् ।
अयःपात्रे निम्बकाष्ठे मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ५१६ ॥
तस्मिन् सम्मूर्च्छिते दद्याद्दरदं रससम्मितम् ।
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत् ॥ ५१७ ॥
जातीकोषफले चैव पारसीकयवानिकाम् ।
आकारकरभञ्चैव द्वात्रिंशद्रत्तिकाः प्रति ॥ ५१८ ॥
मर्दयेत्तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम् ।
दद्यात्खदिरसत्त्वञ्च वटिका चणकप्रभा ॥ ५१९ ॥
सायं प्रातः प्रयोज्ये च लवणाऽम्लञ्च वर्जयेत् ।
गलत्कुष्ठं तथास्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि ॥५२०॥
ये स्युः व्रणा नृणामन्ये उपदंशपुरःसराः ।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु सिद्धोऽयं रसशेखरः ॥ ५२१ ॥

र स ,भ.,भै.र ,र.क., उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा २ रत्ती, अफीम १२ रत्ती लेकर लोहेके पात्रमें तुलसीकेरसकेसाथ नीमके ताज़े डण्डेसे घोटे । पारद अच्छीतरह मिलजानेपर पारेकी बराबर शिंगरफ डालकर घोटे । एकजीव होनेपर जावित्री, जायफल, खुरासानी और देशी अजवाइन, अकलकरा ३२-३२ रत्ती मिलाकर एकरोज़ मर्दनकर इनसबकी बराबर उत्तमकत्था मिलाकर चनेप्रमाण गोलियें बना कर रखछोड़े । इनमेंसे २-२ गोली सुबहशाम देकर नमक और खटाई से परहेजकरनेसे गलितकुष्ठ, फोड़े, दुष्टव्रण, गर्दभिका, उपदंशजनित तमामघाव येसब नष्टहोतेहैं ॥ १०९ ॥

११० रससिन्दूरम् (प्रथमम्)

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम् ।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा न्यग्रोधाऽङ्कुरवारिभिः ॥५२२॥
भावनात्रितयं दत्त्वा स्थालीमध्ये निधापयेत् ।
विरच्य कवचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ५२३ ॥
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम् ।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम् ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान्गुणान् ॥ ५२४ ॥

र. सं., नि र, र. क, र. चं, र को., आ प्र, यो. र., यो. म., र. क. यो, वै. चि., वै चि. (ल.), र. पा, सर्वरोगाधिकारे।

टि०—र मो पारदाद्द्विगुणेन गन्धकेन कज्जलीं कृत्वा महाविंशति भिर्यामैरग्नि प्रदाय स्वाङ्गशीत समाकृष्य द्विगुण गन्ध निधाय पाक कुर्यादेव वारत्रय कुर्यादित्यभिहितम्, नाम च हरगौरीति स्थापितम्। कुत्रचित् त्रिगुण गन्ध नियुज्य कूपीपाको विहित ।

"गन्धक पारद तुल्य जम्बीररसमर्दितम्। कुमारीचित्रकश्चैव तुल्मी त्रिफला मधु॥ हमपादी सहादेवी पारिभद्र कुरण्टक । एतेषा स्वरसै सम्यक भावयेत्कुशलोभिषक् ॥ काचकूप्यां विनि क्षिप्य वालुकायन्त्र मध्यत । त्रिदिन पाचयेदेतत्स्वाङ्गशीतत्समुद्धरेत् ॥ इन्द्रगोपसमच्छाय सिन्दूर सर्वसिद्धिदम्॥" इत्याकारक पाठो रसायनपरीक्षायां रत्ना करौषधयोगे च निहितोऽस्ति। "पारदश्चैवभागन्तु द्विभाग गन्धकन्तथा। खल्वे हसपदीद्रावै कुमार्याश्च विमर्दितम्॥ दिनार्द्ध वालुकायन्त्रे सिन्दूर सर्वरोगजित्।" इति रत्नाकरौषधयोगे द्वितीय पाठोऽस्ति॥

"तुल्य गन्ध रस शुद्ध खल्वमध्ये विनि क्षिपेत् । हसपादीरसै मर्द्य दिनमेकञ्च कज्जलीम् ॥ गुटिका कारयित्वाऽथ काचकूप्यन्तरे क्षिपेत्। कूप्यन्तरद्वारमिन कृत्वा रजतपत्रकम्॥ तद्भाण्डान्ते काचकूप्या क्षिपेन्मृद्‌लवणयुतम् । लवण मापमात्रञ्च दद्यात्कूप्योदरे क्षिपेत् ॥ वालुकाभि पूरयित्वा भाण्डवक्त्र निरोधयेत् । द्वियामं पचेद्दैव स्वाङ्गशीतल मुद्धरेत्॥ पटशाञ्च मृद क्षिप्त्वा तत्तुल्यमरिचान्वितम्। चूर्णीकृत्य मर्द्दयित्वा गुञ्जामात्र प्रदापयेत् । सर्वे रोगा विनश्यन्ति ह्यनुपानविशेषत । मनुष्याणा हितकर रससिन्दूरमुत्तमम्॥" इत्याकारक पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति॥ "गन्धक पारद तुल्य क्षिप्त्वा तन्मूलिकारसै । रक्तमण्डूकपर्णीरसै सम्यक् नि क्षिपेत्॥ वालुकायन्त्रमार्गेण काचकूप्याञ्च पाचयेत्। दिनार्धे नयनानन्द सिन्दूर भवति ध्रुवम्॥" इत्याकारक पाठो रत्नाकरौषधयोगे बसवराजीये वैद्यचिन्तामणौ च निहितोऽस्ति।

"पारदाद्द्विगुण गन्ध जम्बीररसमर्दितम्। नागवल्लीरसै मर्द्य दाडिमी कुसुमोद्भवै ॥ रसै सम्मर्द्य गुटिका कारयेत्कूपिकान्तरे। क्षिप्त्वा सन्धि विलिप्याऽथ पचेद् द्वादशयामकम्॥ बालसूर्यप्रतीकाश सिन्दूर जायते रस॥" इत्याकारको रत्नाकरौषधयोगे पाठोऽस्ति॥ "कुरण्टवास्तुकैरण्ड हसपादीपुनर्नवै। मण्डूकपर्णीब्राह्मीभ्या किंशुकद्वयपुष्पकै॥ वासाकार्पास पुष्पाभ्या रसै सम्यक् प्रमर्दयेत्। पातनादितय कार्य तत उद्धारयेद्रसम्॥ चतुर्भाग गन्धकञ्च दत्त्वा चैव प्रमर्दयेत्। काचकूप्यां विनि क्षिप्य मृद्वस्त्रैर्वेष्टयेद् दृढम्॥ वालुकाख्येन यन्त्रेण पाचयेद्दिवसत्रयम्। सिन्दूर जायते शीघ्रमिन्द्रगोपसमप्रभम्॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगापहारकम्॥" इत्याकारक पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति॥ "गन्धक धूमसारञ्च शुद्ध सूत समं समम्। यामैक चूर्णयेत्खल्वे काचकूप्या विनिक्षिपेत्॥ रुद्ध्वा द्वादश यामास्तु वालुकायन्त्रपाचनात्। स्फोटयेत्स्वाङ्गशैत्ये तु पूर्वस्थ गन्धक त्यजेत्॥ अथ स्य रससिन्दूर सर्वयोगेषु योजयेत्।" इत्याकारक पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति॥ "पलमेक रसेन्द्रस्य शुद्धगन्ध चतुष्पलम्। हसपादीरसेनैव मर्दयेद्याममात्रकम्॥ अर्कमूलकषायेण कुमारीचित्रकवा रिणा। मधुनाऽऽर्द्रकनीरेण प्रत्येक याममात्रकम्॥ वटकान् कारयेच्छु ष्कान् काचकूप्यन्तरे क्षिपेत्। मुखप्रमिते वस्त्रे मृदा युक्तैश्च वेष्टयेत्॥ वालुकायन्त्रविधिना पाचयेद्दिवसत्रयम्। पद्मरागप्रभ भाति सिन्दूर भवति ध्रुवम्॥" इत्याकारक पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति॥

"रसविदाऽपि रस परिशोधितो विगतदोषकृतोऽपि हि गन्धक । विमललोहमये कृतखर्परे ह्यमलसाररज परिमुच्यताम्॥ अनिकृशाऽग्नि युते द्रवति स्वय तदनु तत्र रस परिमुच्यताम् । विशदलोहमयेन च दर्विणा विघटयेत्प्रहरत्रयमग्नितम्॥ तदनु काचघटे विनिवेश्य वै सिकतयान्तरेण हि पाचित । द्विदशयाममथ ज्वलवह्निना भवति रक्तरसस्त लभरसता॥ गतवल्लेन नरेण हि सेवितो भवति वाजिवर सुरद सदा। क्षय च वर्धापस्मितानि च नाशयेच्छतशतस्तु निरामयकृत्परम्॥" इत्याकारक पाठो रसप्रकाशसुधाकरेऽस्ति॥

"पारद पलमेक स्याद् द्विपल शुद्धगन्धकम्। रक्तकार्पासतोयेन घृष्ट्वा काचस्य कूपके॥ निक्षिप्य टङ्कणेनैव मुख तस्य निरोधयेत्। वालुका यन्त्रमध्यस्था कूपीञ्च मुखता दृढाम्॥ अहोरात्र पचेदग्नौ शास्त्रविकुशलो भिषक्। शीतमादाय पात्रस्थ कूपिकान्तरलग्नितम्॥ दरदेन सम रक्त मोज्ज्वल भस्म यद्भवेत्। भक्षयेन्मापमेकञ्च घृतेन मधुना सह॥ पश्चा द्दुग्ध गुड चाज्य कुष्णेक्षुमपि शर्कराम्। द्राक्षाखर्जूरमधुकप्रभृतीनथ भक्षयेत्॥ त्रिफलामधुना शान्ति याति पित्त चिरोत्थितम्। निर्गुण्डिका रसेनाऽन्न दुर्वारा वातवेदना॥ प्रशम याति वेगेन नूतनञ्च वपुर्भवेत्। अर्धाऽऽवर्तितदुग्धेन गृह्यते यदय रस ॥ वन्ध्याऽपि च भवत्येव जीव वत्सा सुपुत्रिका॥" इत्याकारक पाठो र च, र त, नि र, र स, र सु, रसपारिजातेचाऽस्ति। र त, नि र एतयो द्विगुणगन्धक जीर्णसिन्दूर इति नाम। रसपारिजाते भावनाया रक्तकार्पासतोयस्थाने वन्यकार्पासतोय दृश्यते ।

"पारदस्य त्रयो भागा भागैक गन्धकस्य च। सन्यवाकाकमाच्यौश्च तुलसीतण्डुलीयजै॥ कण्टकार्या पलाशस्य द्रवै मर्द्य दिनत्रयम्। बदरास्थि प्रमाणेन वटी कुर्यात्प्रयत्नत॥ कूपिकां पूरयेत्ताभि वस्त्रमृत्तिकया बहि। पु मुखे प्रदातव्य वस्त्रमृत्तिकया पुन ॥ एव ससकृद्दद्यान्मृत्तिका वस्त्रज पुन । शुष्का काचघटीं दत्त्वा वालुकायन्त्रमध्यत ॥ पचेद् द्वादश यामास्तु स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत्। सिन्दूराभ भवेद्रस गृहीत्वाऽद्य प्रयत्नत॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगहर परम्॥" इति पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति॥ र म ध, र स सा, रसायनस एषु ग्रन्थेषु "पारदाद्द्विगुण गन्ध दत्त्वा कार्पासिकाद्रवै । पूर्ववत्साधितो ज्ञेय तदा मदनकामद ॥" इति पाठो मदनकामदेवरस इति नाम्ना निहितोऽस्ति। कुत्रचित्समम गन्ध नियोज्य भावनाया सर्पाक्ष्या द्रवै मर्दयित्वा वालुकायन्त्रे पाचित । "सततुल्य घृत जीर्ण दाव्या तुल्यञ्च गन्धकम्। रविक्षीरै दिन मर्दनश्च यित्वा तु भूधरे॥ पुटकेन भवेत्सिद्धो रसो हैरण्यगर्भक ।" इति रस रत्नाकर पाठोऽस्ति, परन्तु तत्र रससिन्दूरत्वाऽभावाद्यथाकथञ्चित् पर्प टयामन्तर्भावो भवितुमर्हति। भूधरे पुटदानमयेऽधिकाऽग्नियोगेऽश्लेषात्तर्हि श्रम एव हस्तगतो भविष्यति तदपेक्षया रविक्षीरै विमृद्य पर्पटीं निष्पाद्य नागवल्लीद्रवे मर्दयित्वा भूधरे प्रस्वेद्य श्वासकासादौ नियोजनीय इत्य स्माक सम्मति ।

एते पाठा प्रथमरससिन्दूरेऽन्तर्भावनीया । द्विगुणत्रिगुणचतुर्गुण गन्धकजारणस्य तु चतुर्गुणगन्धकयोगेन रसस्य सम्पादनालम्बन्तर्भावो भविष्यति । अधिकन्तु न तद्धानिरितिन्यायेन गुणवृद्धिरपि क्रमाधा भविष्यति, भावनाना विशेषश्चाभीष्टश्चेत् तदधोनिर्दिष्टक्रमेण भावना प्रदाय रससम्पादने सर्वासां भावनानामन्तर्भावोऽलौकिकी गुणसम्पच सम्पत्स्यते। एवैतभावनामपेक्ष्य पाठान्तरकल्पने गौरवात्, विशेषगुणाऽ लाभाच। सम्यक् सुशोधिते रसे रसपाकसमये गृहधूमादिदानस्य तु नात्यन्तौचिती इति प्रतिभाति, अतोद्धाऽथसिर्यक्पातनानि रसे विधाय गन्धकञ्च भावनाद्रवेषु निर्वाप्य कज्जलीं कृत्वा अधोनिर्दिष्टद्रवै क्रमेण यावच्छक्यवारान् भावयित्वा रस सम्पादनीय इत्यस्माक सम्मति । भावनाद्रव्याणि यथा—अर्कमूलक्षीराऽऽर्द्रक-गृहधूम-तण्डुलीयक-वण्ट कारी-जम्बीर-कुमारी चित्रक तुलसी त्रिफला-मधु हसपादी-महादेवी-पारि-भद्र-कुरण्टक-रक्तमारिष-धत्तूरनागवल्ली-दाडिमीकुसुम-वास्तुकैरण्ड पुनर्न वा मण्डूकपर्णी ब्राह्मी किंशुकद्वयपुष्प-वासा-कार्पासपुष्प-पलाशाद्रवा । एताभि भावनाभिश्चन्द्रोदयकज्जलीं भावयित्वा चन्द्रोदय निष्पाद्य रस सिन्दूरस्थाने व्यापारितश्च महान् गुणलाभ । साम्प्रतिकसमये यथाऽ- बुभुक्षितपारदेन चन्द्रोदय जना निष्पादयन्ति तथा करणे तु वैद्यानां क्षतिरपि नाऽस्ति तत्स्थलर्णस्य मित्रप्रक्षेपेन पुनरुत्थान कृत्वा यथा-

रिक्तमूल्लाभोऽपि भविष्यति जनानामधिकगुणलाभादायुवृद्धकीर्तिरधिका भविष्यति, स्वर्णक्रियाऽपेक्षा न चेत्तर्हि स्वर्णस्य मयूरशिखाद्रवे कल्के वा कृष्णतुलसीद्रवे कल्के वा पञ्चपदिनानि चन्द्रिकाऽऽगमनाऽवधि विमृद्य पूर्वौषधचतुर्गुणकल्कमध्ये शुष्कचक्रिका पिधाय शरावसम्पुटञ्च कृत्वा पूर्णगजपुटदानेनैकस्मिन्नेव पुटे स्वर्णं भस्मतामेष्यति तन्मूल्यञ्च स्वर्णाऽपेक्षयाऽत्यधिकमात्रया लप्स्यते इति सहृदयै र्हेयावलम्ब्योभयश्रेय स्कर यथास्यात्तथाऽनुष्ठेयमित्यस्माक विनीता प्रार्थना। स्वर्णरहितमिन्दूरप्रयोगास्तु धनाऽभावमूलका सन्तीति स्पष्टतया प्रतिभाति। कृपापरै रसवैद्यैस्तथाविधप्रयोगा धनिकदरिद्रजनोभयसाधारण्येन सुलभा भवेयु रिति बुद्धया दर्शिता। तत्राऽपीदानीमभिज्ञानमन्तरा वैद्युतयन्त्रादिसाहाय्येन योऽय चन्द्रोदयादीना प्रकारश्चलितस्तत्र शास्त्रनिर्दिष्टमार्गाऽपेक्षयाऽत्यन्तैव गुणहीनताऽस्ति, इति प्रत्यक्षप्रयोग कृत्वा पश्चे विवेचनीयमिति साम्प्रत ब्रूम। अतश्शास्त्रनिर्दिष्टमार्गेणैव रसोत्पादन कृत्वा शास्त्रनिर्दिष्टगुणाऽऽशा तेषु तेषु कर्तव्या नाऽन्यथा। एतत्प्रामाण्यगवेषणेच्छा यस्य कस्यापि हृदि विस्फुरति तर्हि पाश्चात्यवैद्युतादियन्त्रद्वारा निर्मितानि लोहादिभस्मानि व्यवहृत्य प्रत्यक्षीकुर्वन्त्वित्यलमतिविस्तरेण॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पललेकर नीलवर्ण कज्जलीकर वटाङ्कुरोंके स्वरससे तीनदिनमर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भर बालुकायन्त्रमें रख अग्नि देवे। गन्धकजारणहोनेकेबाद खड़ियामिट्टी और गुड़ अथवा मुलतानीमिट्टीसे मुख बन्दकर ४-५ कपड़मिट्टीदेकर ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै॥ ११०॥

१११ रससिन्दूरम् (द्वितीयम्)

शुद्धं सूतं शुभं गन्धं प्रत्येकं तु चतुष्पलम्।
द्विपलं नवसारञ्च फेनश्चापि पलं तत ॥ ५२५॥
पलार्द्धं वत्सनाभञ्च वत्सनाभसमा खटि.।
शुण्ठीमरिचपिप्पल्य· पृथक्कर्षं नियोजयेत्॥ ५२६॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे यावत्कज्जलसन्निभम्।
विजयाधूर्तशुण्ठीनां जातसारेण सप्तधा॥ ५२७॥
प्रत्येकं मर्दयेत्खल्वे काचकूप्यां विनि.क्षिपेत्।
सप्तभि र्मृत्तिकावस्त्रै र्वालुकायन्त्रके पचेत्॥ ५२८॥
क्रमाऽग्निना सप्तदिनं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम्॥
परं वृष्यतमं पुंसां रमयेत्स्त्रीशतं मुदा॥ ५२९॥

र क यो, सर्वरोगेषु।

टि०—"शुद्धसूतस्य भागैक चूर्णिकालवण तथा। रसतुल्य वत्सनाभ शुकपिच्छ त्रिभागिकम्॥ त्रिदिन मर्दयेत्खल्वे यावत्कज्जलसन्निभम्। कुसुम्भपुष्पसारेण मर्दयेत्त्रिदिन तत॥ रक्तकार्पासपुष्पोत्थरसै रञ्जिकाद्रवै। ह्रीवेररक्तकह्लारैरुशीरपद्मकेशरै॥ रसै सम्मर्द्य यत्नेन पृथगेवैकशः क्रमात्। विजयाधूर्ताऽशोकाना जातसारेण सप्तधा॥ प्रत्येक मर्दयेत्तेन काचकूप्यां विनि क्षिपेत्। सप्तभि र्मृत्तिकावस्त्रै र्वालुकायन्त्रग पचेत्॥ क्रमाग्निना सप्तदिनै स्वाङ्गशीत समुद्धरेत्। इन्द्रगोपसमच्छाय सिन्दूर सर्वसिद्धिदम्॥ गुञ्जैक सितया सर्पिर्मधुयुक्त निषेवितम्। पर वृष्यतम पुंसां स्त्रीशत रमयेन्मुदा॥ अभ्यासादिति निर्दिष्ट नाम्ना विजयसुन्दरम्। नृपाणां कौतुकार्थाय वैद्यजीवनहेतवे॥" इति पाठोऽधस्तनग्रन्थयो र क यो, रसायनम, निहितोऽस्ति तत्र पारदादीना समभागत्व गन्धकस्य त्रिभागताऽस्ति, भावनायाञ्च किञ्चिद्विशेषोऽस्ति तत्र पूर्वस्मिन्नेव योगे त्रिगुणगन्धकप्रदान कृत्वा कुसुम्भरक्तकार्पासपुष्पाऽञ्जलिकाह्रीवेररक्तकह्लारोशीरपद्मकेशराऽशोकाना रसैरधिका भावना प्रदाय एक एव रस सम्पादनीय इत्यस्माक सम्मति।

"पारदो दशभागश्च तत्समानश्च गन्धक। नवसारस्तदर्धं स्यात्कज्जलीं कारयेत्तत॥ वह्निधूर्तनयकन्यारसेन परिभावयेत्। काचकूप्यां विनि क्षिप्य दापयेत्ताम्रिका मुखे॥ मृत्कर्पटैस्त्रिभि लिप्त्वा रात्रौ याम चतुष्टयम्। अग्नि प्रज्वालयेन्मन्द रसभस्म प्रजायते॥" इत्याकारक पाठो वैद्यविलासयोगमहार्णवयोरुद्धृतोऽस्ति। योगमहार्णवे च रसपर्पटिकेति नाम्ना व्यवहारस्तु प्रमादादेव सञ्जात इति प्रतिभाति॥ "रस गन्धकयो कृत्वा कज्जलीं तुल्यभागयो। नरसार समामिश्र्य किञ्चिज्जम्बीरवारिणा॥ त्रिदिन मर्दयेत्तेन काचकूप्या निवेशयेत्। काचकूप्या अभावे तु वालुकायन्त्रग पचेत्॥ समुद्धरेत्तात्स्थमिन्द्रगोपेन सन्निभम्॥" इति रत्नाकरौषधयोगे पाठोऽस्ति॥ "सूत क्षिप्त्वा समांशेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत्। पृथक् पृथक् सम कृत्वा पारद गन्धक तथा॥ नरसार धूमसार पट्टक याममात्रकम्। निम्बूरसेन सम्मर्द्य काचकूप्यां विनि क्षिपेत्॥ मुखे पाषाणगुटिका दत्त्वा मृत्स्ना प्रलेपयेत्। सप्तभि र्मृत्तिकावस्त्रै पृथक् प्रशोष्य वेष्टयेत्॥ सच्छिद्राया स्थूर स्थाल्यां काचकूपीं निवेशयेत्। पूरयेत्सिकताचूर्णैरागलान्मतिमान्भिषक्॥ निवेश्य चुल्ल्या दहन मन्द मध्य खर क्रमात्। प्रज्वाल्यार्कमितान्यामान् स्वाङ्गशीत समुद्धरेत्॥ स्फोटयित्वाऽथ युक्त्या तामूर्ध्वलग्न वर्जि त्यजेत्। अध स्थ रससिन्दूर सर्वरोगेषु योजयेत्॥" इति पाठो रत्नाकरौषधयोगे टोडरानन्दे चाऽस्ति।

"पारदाच्च तृतीयांश गन्ध दत्त्वा तु मर्दयेत्। दशांशनवसारेण शुनचोन्मत्तवारिणा॥ खल्वे सम्मर्द्य तत्सर्वं काचकूप्या निवेशयेत्। गुरूक्त सम्प्रदायेन वालुकायन्त्रमध्यगम्॥ पचेत्षोडशयामांश्च मन्दमध्यहठाग्निभि। सुपक्व शीतले ग्राह्यो हरगौरी रसो भवेत्॥" इति पाठो र म. क, र म भा, रसायनम, र क, र त, र का, एषु पुस्तकेषु निहितोऽस्ति। तत्र र त पारदाच्चतुर्थांशगन्धक, अष्टमांशनरसार नियुज्य मातुलुङ्गभावनया सम्पादित। अन्य कश्चिद्विशेषो नास्ति नाम च चतुर्थांशगन्धकजीर्णसिन्दूरमिति।

"सूत पञ्चपल स्वदोषरहितस्तत्तुल्यभागो बलि, द्वौ टङ्कौ नवसादरस्य तुवरीक्लृप्तश्च सम्मर्दित। कूप्या काचभुवि स्थितश्च सिकतायन्त्रे त्रिभि र्वासरै, पक्वो वह्निभिरुद्यदरुणभा सिन्दूरनामा रस॥" इति पाठ आ प्र, र स, व रा., भै सा, वै क, र (भा), र मु, नि. र, रसायनम, वृ यो त, र त, वै चि (ल), यो र एषु पुस्तकेष्वस्ति। र स, भै सा एतयो सर्वेषां समभागत्व कृतम्, टङ्कणञ्च न दृश्यते इति विशेष। रसतरङ्गिण्यां नरसार चतुर्थांश नियुज्य केचिद्रसान्तर वदन्तीत्यभिहितम्॥ "कूपी सप्तमृदम्बरै परिवृता शुष्काऽथ गन्धेश्वरौ, तुल्यौ तौ नरसारपादरचितौ सम्मर्द्य तस्यां न्यसेत्। तद्यन्त्रे सिकताख्यके तलबिले पक्त्वाऽर्कयाम द्विम, भित्त्वा कुङ्कुमपिञ्जर रसवर मस्माऽऽददेद्वैद्यराट्॥" इति पाठ आ प्र, व रा, र मु, नि र, रसायनस, र त, वै चि (ल), वै चि, र प्र, एषु पुस्तकेष्वस्ति। वैद्यचिन्तामणौ जम्बीररसेन भावना प्रदत्ता। रसप्रदीपे समभागेन नरसार नियुज्य तलभस्मेति नाम स्थापितम् तदज्ञानात्। स्फोटयेत्स्वाङ्गशीत तदूर्ध्वग गन्धक त्यजेत्। तलभस्मरसो योगवाही स्यात्सर्वरोगजिदिति श्लोके ऊर्ध्वग गन्धक त्यजेत्तलभस्म रसो ग्राह्य इत्यत्र तु गन्धकापेक्षया तलस्थत्व बोद्धव्य न तु कूप्यपेक्षया तलस्थत्वम्। कदाचिदीदृशमेव तलस्थत्वमभिप्रेत चेत्तर्हि भवतु नाम रससिन्दूरादीना कूपीपक्वौषधानां सर्वेषां तलस्थत्वम्, परन्तु रसग्रन्थसङ्केतविप्लवभयान्नैतादृश तलस्थत्व स्वीकर्तुमुचितम्, उपरिनिर्दिष्टयोगेषु भावनासु मूलद्रव्येषु च

यत्किञ्चिद्विशेषमादाय यत्रतत्र ग्रन्थेषु स्वतन्त्रतया पाठाः प्रकल्पिताः सन्ति परन्तु उपरिनिर्दिष्टग्रन्थेषु या निर्दिष्टा भावनास्तासां सर्वासामपि एकतमप्रदानेनाऽपि क्षत्यभावादिदानमसमयस्याऽप्यधिककाल्यर्धन्ताऽनुष्ठानेऽपि गुणवृद्धेरेव सत्त्वात् । तथा कृत्वा एकस्यैव रसस्य सम्पादनेन स्वल्पश्रमे विशेषगुणलाभात्तथैवाऽनुष्ठेयमित्यस्माकं सम्मतिः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ पल, नवसादर २ पल, अफीम १ पल, शुद्ध बछनाग और खड़ियामिट्टी आधा-आधापल, सोंठ-मिर्च और पीपल १-१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भांग, धतूरा, सोंठ, कुसुम्भ और लालकपासके फूल, कुम्हाड़ अथवा हाथाजोड़ी, हाऊबेर, लालकमल, खस, पद्मकेसर और अशोक इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर सुखाकर ७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें क्रमवृद्धाग्निसे ३ दिनकी आंचदे । गन्धकजारणके बाद शीशीका मुंह बन्दकरदेनाचाहिये नहीं तो कुछ न मिलेगा, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसलेडे । इसमेंसे १-१ रत्ती शक्कर, घी और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै और बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेपरभी शुक्रस्खलित नहीं होताहै ॥१११॥

११२ रससिन्दूरम् (तृतीयम्)

भागो रसस्य त्रय एव भागा
गन्धस्य माषः पवनाशनस्य ।
सम्मर्द्य गाढं सकलं सुभाण्डे
तां कज्जलीं काचघटे निदध्यात् ॥ ५३० ॥
संरुद्ध्य मृत्कर्पटकै र्घटीं तां
मुखे सचूर्णां खटिकाञ्च दत्त्वा ।
क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा
तां वालुकायन्त्रगतां ततः स्यात् ॥ ५३१ ॥
बन्धूकपुष्पारुणमीशजस्य
भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ।
निजानुपाने मरणं जराञ्च
हन्त्यस्य वल्लः क्रमसेवनेन ॥ ५३२ ॥

र. सं., नि र., र. क., रसायनसार., यो. र., भै. सा., र. (मा.), वै. द , र प्र., आ. प्र., र. प्र सु , वै. चि., र. कौ., वै. क., वै. चि (ल.), रसायनसं., यो. म., र. त , ना. वि , र. मं., वृ. यो. त., गदरोगे ।

टि०—रसप्रकाशसुधाकरे मातुलुङ्गभावना प्रदाय काचघटे पाचनं त्रिदिनम् नाम च उदयभास्कर इति स्थापितम् । कुत्रचित् षड्गुणगन्धक जारणे नियोजितम् । रसप्रदीपे एक वैद्यदर्पणे च त्रयोदशप्रकाराः चन्द्रोदयस्य नाम्ना भरतैः प्राक्तैः न लिखिता. परं ते न चन्द्रोदयस्य प्रकाराः अपि तु रससिन्दूरनिर्माणप्रकाराः, चन्द्रोदयशब्दस्य स्वर्णपक्षिरससिन्दूर एव व्यवहार प्रयोगात्, पारद सम्बन्धं ते प्रकाराः प्रथमतः शिशिक्षूणां सिषाधिना कृते उदाहरणम् इति बोद्धव्यम् ।

" भुजङ्ग पारद युग्म शुद्ध गन्धक तत्समम् । मत्स्याक्षीचित्रकद्रावैर्हंसपदीपुनर्नवैः ॥ कुमारीशाकमार्कावै र्भावयित्वा पुनः पुनः । काचकूप्यां विनि क्षिप्य वालुकायन्त्रकप्यगम् ॥ क्रमाग्नि त्रिरूपा यमे-सिन्दूर भवति ध्रुवम् । अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरं परम् ॥" इति वाग्भटे पाठोऽस्ति ॥ " शुद्ध रस पञ्चपलप्रमाण सुगन्धक पञ्चपलद्वयञ्च । शृङ्गीविष पञ्चपलप्रमाण नाग तथा शुद्धपरैकमेव ॥ कुमारिकाद्भिः पुटितं त्रिधैव ततोऽग्निमूलस्वरसैस्त्रिवार । शुष्क पुनः काचघटे न्यसेत्तत्क्रमाग्निना यामरपञ्चकञ्च ॥ पचेत्प्रयत्नाल्लिकाख्ययन्त्रे बन्धूककुसुमारुणसन्निभ स्यात् । सेवेत गुञ्जैकमिहार्द्रकेण ज्वरादिपाण्डूदरकुष्ठमेहम् ॥ निजानुपाने ग्रहणीं निहन्ति रसामृतो वाडवतुल्यवीर्य ।" इति रसेन्द्रकल्पद्रुमे पाठोऽस्ति ॥ " रसराजपलान्यष्टौ गन्धक द्विगुण ततः । शुद्धनागस्य चाष्टाणि माक्षिक पलमेन च । सर्वं कज्जलिकां कृत्वा भावयेज्जलमर्दनैः । वटाङ्कुरैस्तथा निम्बैः समष्टलोऽथ भावयेत् ॥ वीरपुष्पी विश्वदेवा क्वाथैस्त्रिमथथा । सम्यक् शुष्क तत्काचे सिकतायां विपाचयेत् ॥ यामद्वादशक यावत्सर्वरोगहरो रसः ॥" इतिरसेन्द्रकल्पद्रुमे पाठोऽस्ति ॥ "विमलनागवरैकत्रिभागिक हरजभागचतुष्टयमिश्रितम् । सततमेव विशृष्य शिलातले बलिभागसमा कुरु तद्विपक ॥ दिनमितञ्च सुविमृश च कन्यकारसरम ऐनकेऽतिविशोषयेत् । तदनु सत्वरस्य तु कज्जलीं गनिरकाचघटे विनिवेशय ॥ दिवसयुग्मनथः कृतवह्निना स च भवेदरुणः कमलच्छविः । सकलरोगविनाशनवह्निकृद् बलकर परमोऽपि हि कान्तिकृत् ॥ नयनरोगविनाशकरो भवेत्सकलकामुकविभ्रमकारकः । स गतु कर्मविपाकजरोगहा निशदनागयुतः खलु पारदः ॥" इति र. प्र. सु , र. क यो , वा., एषु ग्रन्थेषु पाठोऽस्ति, र क. यो. नाग मतममी नियोजित ॥

" एकभाग रस कुर्याद् द्विभाग हिङ्गुल तथा । त्रिभाग गन्धकञ्चैव रविबीजं चतुर्गुणम् ॥ नागो विंशतिभागश्च चित्रकेमरमर्दितम् । काचकूप्यां विनि क्षिप्य ग्निना पाचित क्रमात् ॥ इन्द्रगोपसमं वर्णसूक्ष्मं रसमुत्तमम् । तत्स्थश्च भवेद्भस्म रानवल्लभमन्त्रकम् ॥" इति पाठो रत्नाकरौषधयोगवाग्भटयो दृश्यते । परन्तु नागताम्रयोरथ स्थलेन सिन्दूरे ग्रथि द्विशेषाऽभावात् सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्मानीयः । सिन्दूरपाके पारद शुध्धुता सम्पादनसनरा कस्यचिदपि धातोः प्रक्षेपे विशेषविशेषाऽनुत्पत्तेः । बुभुक्षितपारदसयोगेन रससम्पादनपक्षे नागताम्रयोगस्य देहे निषिद्धत्वात् तत्प्रक्षेपणवाऽयोग्यः । नागसयुक्तपाठास्तु देहलोहविवरणमर्थैव सङ्ग्रथिता इति प्रतीयते स्वतन्त्रतया भस्मीकृत्य प्रयोगकरणे तु नाऽस्ति प्रत्यवायस्तथाविधयोगानां सहस्रशो दृष्टचरत्वात् । सिन्दूरसम्पादने नागताम्ररहिताऽन्यधातुसयोग कृत्वा पञ्चपनादि पारदस्योर्ध्वपातनं कृते तत्स्थभागनासुत्तमा भूति भवत्यूर्ध्वगपारदसिन्दूरका विपुष्कापेक्षी सेव तीनि चिकित्सकै नै विस्मरणीयम् । एका क्रिया द्व्यर्थकारी स्यादिति न्यायेन प्रमाणत्वञ्च प्रत्यक्षमेव । अत सर्वोऽधिकाऽसिद्ध्यस्युक्त शास्त्रोपादने 'सर्वं पद हस्तिपदे निमग्न', मिति न्यायेनाऽत्र नागयुक्तपाठा एकत्रैवाऽन्तर्भाविता इति विबुधैराकलनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ कर्ष, शुद्धगन्धक ३ कर्ष, नाग १ माशा लेकर पहिलेनागको गलाकर पारेसे मिलादे फिर गन्धक देकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके पूर्ववत् वालुकायन्त्रमें रस गन्धकजारणकर ३ दिनकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसलेडे । इसका रंग दुपहरियाके फूलकेसदृश होगा । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सबरोगोंको दूरकर जरा और मरणसे रहित करताहै ॥ ११२ ॥

११३ रससिन्दूरम् (चतुर्थम्)

पलद्वयं शुद्धरसं गन्धकञ्च तदर्धकम् ।
स्नुह्यर्कजरसेनैव भावना दिनसप्तकम् ॥ ५३३ ॥

सर्पस्य गरलेनैवं काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
कूप्या दृढं मुखं रोध्यं धृत्वा सैकतयन्त्रके ॥ ५३४ ॥
यामषोडशकं वह्निं ज्वालयेत् क्रमसंस्थितम् ।
कूपिकागलसम्बद्धं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ५३५ ॥
अयं सूतवरः ख्यातो देवै विजयदायकः ।
गुञ्जार्द्धं रोगहृत्सर्वक्षुधार्तो जायते शिवः ॥ ५३६ ॥

नि. र., ।

टि०—अयमपि रस प्रथमरससिन्दूरेऽन्तर्भवितुमर्हति, परन्तु न तथा कृत सर्पगरलभावनयाऽस्य रसस्याऽतितीक्ष्णत्वात् । अतोऽस्य स्वतन्त्र तथैव पाठ स्थापित इति सुधीभि विमर्शनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा २ पल, शुद्धगन्धक १ पलकी नीलवर्ण कज्जलीकर थूहर और आकके दूधसे ७–७ रोज़ मर्दनकर सर्पके जहरसे भावना देकर सुखाकर प्रथमरससिन्दूरकी तरह १६ पहरकी क्रमवृद्ध अग्निदेकर पकानेसे यह रक्तवर्णरस तैयार होगा । इसमें से आधीआधीरत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमाम रोगोंको नष्टकरताहै और इसके खानेसे अत्यन्तभूख जागृतहोतीहै ॥ ११३ ॥

११४ रससिन्दूरम् (पञ्चमम्)

गन्धकं सुदृढं स्थूलं निर्व्रणं जात्यमद्भुतम् ।
वर्तुलं छिद्रितं कृत्वा मध्ये शुद्धं रसं क्षिपेत् ॥ ५३७ ॥
उपरिष्टात्पुनर्गन्धं दत्त्वा कुर्याच्च मुद्रणम् ।
अधः शलाकया पश्चात्तप्तया सन्धिरोधनम् ॥ ५३८ ॥
सूत्रेण वेष्टयेद्गन्धं भिद्यते न यथाऽम्भसा ।
दोलासु स्वेदयेद्गन्धं वेदप्रहरमात्रया ॥ ५३९ ॥
रसं गन्धान्यपाषाणे पुनरेव निधापयेत् ।
दिनसप्ताऽवधि यावत्तावत्सोऽपि क्रमो भवेत् ॥५४०॥
एवं निष्पद्यते स्वच्छः पद्मरागमणिप्रभः ।
अद्भुतः सर्वकार्याणि वाञ्छितानि च साधयेत् ॥५४१॥
एतस्माज्जायते सूतभस्मकं नृपवल्लभम् ।
सर्वरोगहरं श्रीदं सन्मनःकामितप्रदम् ॥ ५४२ ॥
श्वेतं पीतं तथा रक्तं श्यामं कृष्णञ्च कर्बुरम् ।
जायते नाऽत्र सन्देह एवं वर्णक्रमेण वै ॥ ५४३ ॥
सर्वेषां चोत्तमं कृष्णं विज्ञातव्यं प्रयत्नतः ।
पीतगन्धकसंयुक्तं कुमारीरससंयुतम् ॥ ५४४ ॥
कृष्णवर्णं भवेद्रस्म देवानामपि दुर्लभम् ।
निर्गुण्डीरससंयुक्तं चपलेन समन्वितम् ॥
रक्तवर्णं भवेत्सूतं वलीपलितनाशनम् ॥ ५४५ ॥

यो. म , रसायने ।

भाषा—पीतवर्णगन्धकका गोल ढेला लेकर सभालकर बीचमें छिद्रकरे । उसमें शुद्धपारेको भरके गन्धककी डलीकी डाटदेकर लोहेकी गरमशलाकासे दोनोंकी सन्धि बन्दकरदे और कचेसूतसे लपेटकर गेंद जैसा बनाले जिसमें कि पानीसे गन्धक घुल न जाय । फिर पारदको रञ्जनकरनेवाली दिव्यौषधियोंका रसभरकर ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् दूसरे गन्धकके ढेलेमें पारेको बन्दकर ४ पहरकी आचदे इसतरह ७ रोज़तक आचदेनेसे माणिक्यकेसदृश पारेका रङ्गहोजायगा । इसपारेसे तमाम अभीष्टकार्य सिद्धहोते है यह राजालोगोंके काममें लानेयोग्य होताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसकी १–१ रत्ती देनेसे असाध्यसे असाध्य सवरोग निवृत्तहोते है और लक्ष्मीको देताहै । इसीतरह श्वेत, पीत, श्याम, कृष्ण, कर्बुर इन रङ्गोंको पैदाकरनेवाली दवाओंमेंसे जिसका रसभराजायगा वहीरङ्ग पारेका होगा । दैवसंयोगसे इन २ रङ्गोंका गन्धक भी मिलसके तो बहुत आसानी से काम होगा । सब रङ्गोंमेंसे कृष्णरङ्गका पारद उत्तमकाम करताहै । पीले गन्धकमें पारेको रखकर घीकुवारके रससे काले रङ्गका पारद होगा यह देवताओंकोभी दुर्लभ है । निर्गुण्डीकेरसमें चपलयुक्त पारेको स्वेदनकरनेसे रक्तवर्णहोताहै । इसके खानेसे वलीपलितका नाशहोताहै ॥ ११४ ॥

११५ रससिन्दूरम् (षष्ठम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं तयोः कज्जलिकां कृताम् ।
महेन्द्रीरससम्पिष्टां सार्द्रां काचघटे न्यसेत् ॥ ५४६ ॥
पलाण्डुस्वरसं तत्र क्षिपेद्दद्याच्चूलिकापटुम् ।
रसात्पूर्वेञ्च विधिना सद्धटं वालुकाख्यके ॥ ५४७ ॥
यन्त्रे सम्पाचयेद्यावत्प्रहरद्वादशं यथा ।
क्रमाग्निना ततः सम्यग्रसः स्यात्तलसंस्थितः ॥५४८॥
एवं वारत्रयं कुर्यादुत्तमोऽसौ भवेद्रसः ।
निर्गुण्डीस्वरसैरेवं सिद्धो भवति नाऽन्यथा ॥ ५४९ ॥

यो. म , रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर महरके रससे २–३ रोज़ मर्दनकर आतशीशीशीमें पारेकी बराबर नवसादर डालकर इसे गीलाही भरके ऊपरसे प्याजका रस भरदे । प्रथमरससिन्दूरकीतरह वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी क्रमाग्निसे आच देनेसे यह तलस्थ भस्महोगी । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्वोक्तप्रकारसे मर्दनादि करके आचदे । ऐसे ३ वारकरनेसे यह उत्तम प्रकारका रस तैयार होगा । इसीतरह निर्गुण्डीके रससेभी तैयारहोताहै ॥ ११५ ॥

११६ रससिन्दूरम् (सप्तमम्)

सूतद्विगुणितं गन्धं सूतार्धसैन्धवं खल्वे ।
श्वेतजयन्त्या नीरैस्त्रिदिनं सम्मर्द्य गोलकं कृत्वा ५५०
शुष्के तस्मिन् क्षिप्त्वा मूषायां सन्धिमालिप्य ।
शुष्के च सन्धिलेपे मूषास्थं यावदेकतां याति ॥५५१॥
तावद्वह्नौ किञ्चिद्धृत्वा वा भूधरे पक्त्वा ।
उपलभ्य गन्धकगन्धं क्षिपेज्जले तदिति तां मूषाम् ५५२
तस्मादुद्धृत्य तं रसं त्रिकण्टकरसेन भावितं भूयः ।
सर्वगदेषु नियुञ्ज्यात्सम्मूर्च्छितं तत्तदनुपानैः ५५३

र क , सर्वरोगेषु ।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना गन्धक और आधा सैन्धव लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर सफेदजैंतीके स्वरससे ३ रोज मर्दनकर गोला बनाय मुखाकर मूषामें रख सन्धिबन्दकर सुखाकर इतनी अग्नि देवे कि अन्दरका पदार्थ गलजाय अथवा भूधरयन्त्रकी अग्निदेवे जब गन्धकका गन्ध आनेलगे तब मूषाको निकालकर पानीमें बुझादे। शीतलहोनेपर मूषामेंसे निकालकर गोखरूके रससे ६–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह सब-रोगोंको दूरकरताहै ॥ ११६ ॥

११७ रससिन्दूरम् (अष्टमम्)

भागाश्चाऽष्टौ पारदस्य द्वादशैव घले मताः।
तदर्धं तालकं प्रोक्तं तालकार्धा मनःशिला ॥ ५५४ ॥
शुद्धं ताम्रं शिलातुल्यं रसकं ताम्रतुल्यकम्।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य कुमारीदाडिमीद्रवैः ॥ ५५५ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्सम्यक् काचकूप्यां विनिःक्षिपेत्।
निश्छिद्रं वेष्टयेत्पश्चाद्वस्त्रखण्डैः समृत्तिकैः ॥ ५५६ ॥
शोषयित्वा क्षिपेद्भाण्डे वालुकासहिते भिषक्।
त्रिदिनं पाचयेच्चुल्यां मृदुमध्योत्तमक्रमैः ॥ ५५७ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य सिन्दूरं रक्तवर्णकम्।
सिद्धं भवति सिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ५५८ ॥
सन्निपाते ज्वरे घोरे क्षयकासे तथैव च।
विशेषाद्वातरक्तञ्च कुष्ठान्यष्टौ दशाऽपि च ॥ ५५९ ॥
उदराणि च सर्वाणि वातरोगान्विनाशयेत्।
सतताऽभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ ५६० ॥
गुञ्जाद्वयं प्रयुञ्जीत तत्तद्रोगानुपानकैः।
नाशयिष्यति तत्सर्वं शिवेन परिभाषितम् ॥
महाविक्रमरसो नाम भिषगाश्चर्यकारकम् ॥ ५६१ ॥

र. क., यो., ।

टि०—अथ योग पञ्चमतालसिन्दूरेणाऽऽज्ञानत समान प्रतीयते। परन्तु तत्र ताम्रखर्परयोरभावाद्धावनाद्रव्याणाञ्च विशेषत्वात्स्वतन्त्र एवाऽयं योग। तन्मूलादय निष्पादितश्चेत्तर्हि भवतु नाम तन्मूलकोऽयं योग परन्तु साम्प्रतिकमङ्कनया स्वतन्त्र एव प्रतिभाति॥ रत्नाकरौषध-योगे एव वीरविक्रमरसनाम्ना द्वितीयस्थलेऽयमेव रसो निर्दिष्टोऽस्ति तत्र प्रमादादन्यत् किञ्चिदपि फल न पश्याम। "शुद्धस्वर्णशिलातालम्रत गन्धश्च योजयेत्। इन्दुवेदाष्टबुद्धेव क्रमशो भागतस्तथा" इत्यादिना द्वितीयो वीरविक्रमो निष्पादित। अत्र स्वर्णस्याऽधिकतया प्रक्षेप, ताम्र-खर्परयोरभाव इति स्थूलदृष्ट्या विशेष प्रतीयते परन्तु सूक्ष्मविचारे नाऽस्ति कश्चिद्विशेष। ताम्रस्वर्णयोस्तुल्यगुणत्वात्खर्परयोगस्य गुणवृद्धिकरत्वात्सौऽप्यपि रससिन्दूरेषु स्वर्णदानेन क्षत्यभावाच्च नाऽयं योगान्तरता-मार्हतुमुचित। एव "निर्मलञ्च शुद्धाष्टक निगदित निष्काष्टक तालक, निष्कद्वादशसम्मिता मनःशिला शुद्धश्च सूत पलम्। सम्यग्गन्धकसम्भव शुचिवृत दाडिमिकापुष्पज-,र्गौरीकन्दज निर्मलं सुदृढ काचे घटे निक्षि-पेत्॥ मन्दाग्नौ तु दिनत्रय सचितापञ्चे क्षितिस्थापयेत्-,दुःसाध्याम्र गुरी रविक्रमरसो दोषान्तरेऽपन्हरेत्॥" इति तृतीयो वीरविक्रमरस, अत्राऽपि भागव्यत्ययत्वात् नाऽस्ति कश्चिद्विशेष। भागविपर्यासोऽपि स्ववैन्द्र-कल्पितोऽस्ति। एव "स्वर्णकर्षं पारदस्य चतुष्क द्वादशमाद्र। शिलातालकगन्धाना भागमङ्क्षया प्रकीर्तिता॥ सुवर्णं भागमेकञ्च दाडि-मीपुष्पजद्रवैः–"इति चतुर्थो वीरविक्रम। अत्र तु स्फुटैव मद्यहकारस्य ज्ञानशून्यता प्रतीयते। रसायनम्, वृ. यो. त. एतयोर्ग्रन्थयोरप्ययमेव पाठो वीरविक्रमनाम्ना निर्दिष्टोऽस्ति तत्राऽपि पूर्वनिर्दिष्ट पन्था माश्र-यणीय इति दिक्।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, शुद्धगन्धक १२ भा., शुद्धह-रिताल ६ भा, मैनसिल-ताम्र और खपरिया ३–३ भाग लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर घीकुँवार और अनारकेरसोंसे ३–३ रोज मर्दनकर सुखाकर प्रथम रससिन्दूरकीतरह आत-शीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें मृदु, मध्य और तीक्ष्ण इस-क्रमसे ३ रोज़की अग्निदेवे। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा तत्त-द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, महाघोरज्वर, क्षयजकास, वातरक्त, १८ कुष्ठ, सम्पूर्णउदररोग, वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। हमेशाके अभ्याससे वलीपलितादिकोंको नष्टकर दीर्घायुषी करताहै। अनुपानविशेषसे अन्य भयङ्कररोगोंकोभी नष्टकरताहै ॥ ११७ ॥

११८ रससिन्दूरम् (नवमम्)

पारदस्य पलं ग्राह्यं शुद्धस्य विधिपूर्वकम्।
पिष्टं बद्धाऽथ यत्नेन पूर्वं सम्यग्यथाक्रमम् ॥ ५६२ ॥
अधरोत्तरगन्धेन निक्षिपेन्मूषिकोदरे।
श्वेतकुक्कुटरसेन टङ्कणक्षारवारिणा ॥ ५६३ ॥
लिप्त्वा पश्चाद्विशोष्याऽथ रुद्धा कर्पटमृत्स्नया।
वालुकापूर्णभाण्डे तु चुल्ल्यग्नौ पाचयेच्छनैः ॥ ५६४ ॥
यामानष्टौ जायते तत्सिन्दूरारुणसन्निभम्।
स्वाङ्गशीतलमादाय करण्डे विनिवेशयेत् ॥ ५६५ ॥

र. क. यो., ।

टि०—यथाऽस्थितपाठाऽनुष्ठाने किञ्चिदपि नाऽवशिष्टं भविष्यति अत अममावस्य यथा भवेत्तथा निर्माण क्रमोऽस्ति इति विदग्धैर्भावनीयम् ॥

भाषा—एकपल शुद्धपारा लेकर अरणी अथवा तिपतियाके रसमें २–३ रोज घोटकर गोला बनाय मुर्गके अण्डेमें रख दूसरे अण्डेकी खोलसे ढककर गुड़ और सुहागेसे सन्धिबन्दकर १–२ कपड़मिट्टी गुड़सुहागेहीकी करदे। फिर पारेसे चतुर्गुणगन्धक लेकर वारीकपीस शरावमें आधा बिछाय ऊपर अण्डेको रख ऊपरसे आधे गन्धकसे ढककर शरावसम्पुटमें बन्दकर अण्डेकी-सफेदी, सुहागा और जल इनसे कपड़मिट्टीकर ऊपरसे मुल्तानी वगैरहसे २–३ कपड़मिट्टीकरदे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें बन्दकर ८ पहरकी अग्निदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरो-गोंको दूरकरताहै ॥ ११८ ॥

११९ रससिन्दूरम् (दशमम्)

अथ वक्ष्ये रसेन्द्रस्य सिन्दूरकमनुत्तमम्।
सूतं पलं समं गन्धं मर्दितं कज्जलीकृतम् ॥ ५६६ ॥
कुमार्याः स्वरसेनैव यामद्वयविमर्दनात्।
शिलाहिङ्गुलमेघानां विमलादितुल्यं क्रमात् ॥ ५६७ ॥

प्रत्येकं गन्धकाश्चैव षेदसहृयतुलं तथा ।
कुमारीस्वरसेनैव द्वियामं मर्दयेत्समम् ॥ ५६८ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वस्त्रमृत्तिकया युतम् ।
वल्मीकमृत्तिकामध्ये कुक्कुटाण्डरसं क्षिपेत् ॥ ५६९ ॥
माषयूषसमायुक्तं मर्दयेत्कज्जलोपमम् ।
वस्त्रं संलिप्य तालानां पत्रमानदलान्वितम् ॥ ५७० ॥
सप्तवस्त्रैः समालिप्य पूर्वमृल्लवणान्वितम् ।
तालपत्रोच्छ्रयं कृत्वा कूपिकां लेपयेन्मृदा ॥ ५७१ ॥
सिन्दूरमारणे चैव रसकर्मणि शस्यते ।
तस्यां पूर्वरसं क्षिप्त्वा घटिकां यत्नतो न्यसेत् ॥ ५७२ ॥
मृदा मृल्लवणैः सन्धिं वालुकायन्त्रके क्षिपेत् ।
क्रमाऽग्निनाऽर्कयामं तु सिन्दूरं भवति ध्रुवम् ॥ ५७३ ॥
षड्गुणे गन्धके जीर्णे रसो व्याधिहरो भवेत् ।
अथ सिन्दूरवर्णाढ्यं कारयिष्ये समासतः ॥ ५७४ ॥
सर्वरोगहरं नृणां वलीपलितनाशनम् ।
उपपातकसम्भूतकुष्ठादीनां विनाशनम् ॥
महासुखकरश्चैव देवानामपि दुर्लभम् ॥ ५७५ ॥

र. क. यो., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग लेकर नील-वर्णकज्जलीकर २ पहर घीकुँवारकेरसमे मर्दनकर मैनसिल, शिंग-रिफ और धान्याभ्रक ४–४ भाग, रूपामाखी २ भाग लेकर प्रत्येकको क्रमसे मिलाकर कुमारीकेरससे २ पहरमर्दनकर सुखा कर फिरसे कज्जलीकर आतशीशीशीमें डालदे परन्तु दीमककी मिट्टी, मुर्गीके अण्डेकी सफेदी, उड़दका यूष मिलाकर मोमके-समान पीसकर कपड़ेपर लेपदेकर आतशीशीशीपर कपड़मिट्टीक-रके सुखावे ऐसे ७ कपड़मिट्टी देकर सुखाईहुई आतशीशीशी-होनीचाहिये । रससिन्दूर बनानेमें इसीतरह शीशीपर कपड़-मिट्टी करनेसे बहुत मजबूत शीशीतैयारहोतीहै टूटनेकी शङ्का नहीं रहती । फिर शीशीको वालुकायन्त्रमें चढ़ाकर गन्धकजीर्ण होनेपर खड़ियामिट्टी अथवा पुरानी ईंटकी डाटलगाकर पूर्वोक्त मिट्टीमें सेंधानमक मिलाकर डाटकीसन्धि बन्दकरदे और इसीका कपड़ेपर लेपदेकर मुँहपर ७ कपड़मिट्टी देकर महादेव जैसा बनादे । सूखनेपर मन्द, मध्य और खर इसप्रकारसे १२ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर नीचे और ऊपरका तमामरस निकालकर पूर्वप्रमाणमें गन्धक डालकर दो अथवा चार पहरतक घीकुँवारकेरससे मर्दनकर सुखाकर पहिलेकीतरह १२ पहर पकावे। इसतरह सातशीशिया उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमाम-रोगोंको नष्टकरताहै । प्रायश्चित्तकरके पथ्यपूर्वक इसकासेवनकरनेसे स्वभावत दु साध्य कुष्ठादिकरोगभी नाशहोताहै सातवींशीशीमें जो नीचेका भागहै उसे फेंकनहीं देना उसमें अभ्रक और रूपा-माखीकी तैयारभस्ममिलेगी । इसकी ३–३ रत्तीकीमात्रा उचि तानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, षण्ढत्व प्रभृतिनष्टहोतेहैं ११९

१२० रससिन्दूराऽनुपानानि

शुभेऽह्नि वल्लमात्रस्य सेवनात्सकलामयान् ।
जयेदाशु प्रयुक्तोऽयं विष्णुचक्रमिवाऽसुरान् ॥ ५७६ ॥
भूयो रोगविशेषेषु ह्यनुपानविधिं यथा ।
ज्वरेषु जीरकृष्णाभ्यां निर्गुण्ड्या सन्निपातके ॥ ५७७ ॥
मृद्वीकया सितायुक्तं रक्तपित्तेषु योजयेत् ।
पिप्पल्या मधुना वाऽपि श्वासकासेषु योजयेत् ॥ ५७८ ॥
घृतेन राजयक्ष्माणमुष्णेषु शीतवारिणा ।
अरुच्यां मातुलुङ्गेन लाजाचूर्णेन छर्दिषु ॥ ५७९ ॥
मदात्यये निम्बनीरैः सितायुक्तश्च दापयेत् ।
नारिकेलजलेनैव मूर्च्छा कल्याणकाह्वयैः ॥ ५८० ॥
अपस्मारे च सश्वासे भृङ्गनीरेण योजयेत् ।
चतुःसमेन युक्तश्च ज्वरे च सन्निपातके ॥ ५८१ ॥
शुण्ठीजीरकजातीभिर्विमूच्याश्च विशेषतः ।
धान्यनागरनिर्यूहैरजीर्णे पर्वभेदके ॥ ५८२ ॥
चाङ्गेर्या ग्रहणीदोषे सात्म्ये भृष्टा हरीतकी ।
अथवा भृष्टशुण्ठ्या च तार्क्ष्यैः क्षीणे च पीनसे ॥ ५८३ ॥
वाकुचीचक्रमर्दाभ्यां कुष्ठेषु खदिरेण वा ।
मांसयूषैश्च वातेषु तैले वा लशुनेन वा ॥ ५८४ ॥
आस्यास्फोटे चन्दनेन वाताश्रे कोकिलाक्षजैः ।
दन्तधावनसारेण दन्तरोगे विशेषतः ॥ ५८५ ॥
पैलेयेन विप्रश्लेषु हिध्माऽऽध्माने कुलत्थजैः ।
कासघ्नाऽऽर्द्रककषायेण क्षयरोगं विनश्यति ॥ ५८६ ॥
कदलीक्षुरसेनैव शुक्रवृद्धिः प्रजायते ।
मेधावृद्धिर्बलं पुंसां कान्तिपुष्टिविवर्धनम् ॥ ५८७ ॥
आयुःप्रवर्धनश्चैव वलीपलितनाशनम् ।
सततोऽभ्यासयोगेन जीवेद्वर्षशतं नरः ॥
मधुराहारयुक्तस्य देहसिद्धिकरं परम् ॥ ५८८ ॥

र. क यो ।

टि०—"हरीतकीदरनुष बल क्षौद्राईकलब्रमनुमसेन्द्र । विदा-णिकाक्षीरसुतम्र पथ्य मुद्रौदन वा घृतवर्जितव ॥" इति रसाऽवतारे दश्यते ॥

भाषा—अनुकूलचन्द्रनक्षत्रादिकोंमें २–३ रत्तीके प्रयोग-करनेसे स्वर्णसिन्दूर किंवा रससिन्दूर समस्तरोगोंको इसतरह नष्टकरताहै जैसे विष्णुभगवानका चक्र असुरोंका नाशकरता है । विशेषरोगोंमें अधोलिखितप्रकारसे अनुपान समझना । ज्वरोंमें जीरा और पीपल, सन्निपातमें निर्गुण्डी; रक्तपित्तमें शक्करयुक्त दाख, श्वास और कासमें मधु तथा पीपल, राजयक्ष्ममें घृत, उष्णरोगोंमें ठंढाजल, अरुचिमें बिजोरा, वमनमें लाजचूर्ण, मदात्ययमें नीमकाजल अथवा शक्कर, मूर्च्छामें नारियलका जल अथवा पित्तपापड़ा या कल्याणघृत, श्वास और अपस्मारमें भंगरा, ज्वर और सन्निपातोंमें औचिती देखकर चतुसमचू-र्णकेसाथ देना । (हरड़, लौंग, सैन्धव, अजवाइन (१) चन्दन, अगर, कस्तूरी और केशर (२) जायफल, लवङ्ग,

जीरा, सुहागा (३) ये चतुःसम कहलाते हैं)। हैज़ेमें सोंठ, जीरा, जावित्री, अजीर्ण और पर्वभेदमें धनियां तथा सोंठका काथ; ग्रहणीमें तिपतिया अथवा भुनीहर्रे अथवा भुनीसोंठ; पीनसमें कालीमिर्च; कुष्ठमें वाकुची और पवांडकेबीज अथवा खेरका क्वाथ; वातव्याधियोंमें मांसरस, तैल अथवा लहसुन; मुखपाकमें सफेदचन्दन; वातरक्तमें तालमखाना; दन्तरोगोंमें दन्तधावनवृक्षोंका रस; विवन्धोंमें एलवा; हिचकी और आध्मानमें कुलथीकाक्काथ; क्षयरोगमें कसोंजी और अदरखका स्वरस; शुक्रक्षयमें केला और ईखका रस; इसतरह यथोचिति रोग और रोगीकी अवस्था देखकर अनुपानोंको करनेसे यह तमामरोगोंको दूरकरताहै। अर्जुनकी छालकेरस और मधुकेसाथ रससिन्दूरको ३-३ रत्ती देनेसे हृद्रोग, रक्तस्रुति और उदररोग नष्टहोतेहैं। मेंढासींगीयुक्त दूधकेसाथ पथ्यदेना अथवा मूंगकीदाल और भात देना, घी बिलकुल न देना ॥ १२० ॥

१२१ रससिन्दूरवटी

रससिन्दूरटङ्कैकं टङ्कैकं गन्धकस्य च।
टङ्कणत्रिकटुनाञ्च टङ्ककञ्च प्रदापयेत् ॥ ५८९ ॥
रक्तिकाद्वितयं तुत्थं योजयेद्वैद्यसत्तमः।
भृङ्गराजरसे भाव्यं वटीं कुर्याद्विचक्षणः ॥ ५९० ॥
आर्द्रकस्याऽनुपानेन प्रदेयं रक्तिकाद्वयम्।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा चातुर्थिकतृतीयकौ ॥
विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ५९१ ॥

र. सु., विषमज्वरे।

भाषा—रससिन्दूर, शुद्धगन्धक, भुनासुहागा और त्रिकटु ४-४ माशे, भुना तूतिया २ रत्ती लेकर १-२ दिन भंगरेके रससे मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली २-२ घण्टेके अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, त्रिदोषज विषमज्वर, इनको यह नष्टकरताहै ॥ १२१ ॥

१२२ रसादिगुटिका (प्रथमा)

रसयलिघनसारचन्दनानां
सनलदसेव्यपयोदजीवनानाम्।
अपहरति गुटी मुखस्थितेयं
सकलसमुत्थितदाहमाशु वाऽति ॥५९२॥

वृ. यो. त., रसायन स., बं. र., वै. चि., र. सु., चि. र. भ., नि. र., व. रा., यो. र., दाहाऽधिकारे।

टि०—अत्र रसशब्देन पारदो ग्राह्यः, स च भस्मरूपः स्यात्तर्हि सर्वोत्तमः, तदभावे रससिन्दूरादिरूपो मूर्च्छितो ग्राह्यः, तदभावे विशुद्धो द्रुतिरूपः। बलिर्गन्धकः, घनोऽभ्रकः स च मृतरूपः। सारो लोहः, केचित्तु घनसारेतिसमस्तैरपदतां स्वीकृत्य कर्पूरमिति व्याख्यानयन्ति। चन्दनं शुभ्रं, नलदमुशीरं, सेव्यञ्च तदेव गन्धरूपं कृष्णवर्णं वा, पयोदो मुस्ता, जीवनानि जीवनीयगणोक्तानि औषधानि तान्यथा—काकोलीक्षीरकाकोलीजीवकर्षभकमुद्गपर्णीमाषपर्णीमेदामहामेदाच्छिन्नरुहाकर्कटश्रृङ्गीतुगाक्षीरीपद्मकप्रपौण्डरीकर्द्धिवृद्धिमृद्वीकाजीवन्त्यो मधुकञ्चेति ॥ काकोल्यादिरयं पित्तशोणितानिलनाशनः। जीवनो बृंहणो वृष्यः स्तन्यश्लेष्मकरस्तथा ॥ इति सुश्रुते सू. अ. ३८।३५-३६ निर्दिष्टान्यष्टादशौषधानि। चरके तु "जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा काकोली क्षीरकाकोली मुद्गमाषपर्ण्यौजीवन्ती मधुकञ्चेति दशेमानि जीवनीयानि भवन्ति" इति दशकमध्यपातित्वात् दशैव गृहीतानि। एषु यथालाभमौषधानि ग्रहीतव्यानि, सर्वेषां सूक्ष्मचूर्णं विधाय जीवनीयगणक्वाथेन जलेन वा वटिकाः कृत्वा मुखे धारणीया इति तत्त्वम्। साम्प्रतिकवैद्यास्तु जीवनशब्देन केचिज्जलं घृतमन्ये नियोजयन्ति, परन्तु परिनिर्दिष्टसमग्रौषधैर्निष्पादिता चेद्वटी तर्हि अत्यन्तमीमाक्रान्तं ज्वरं दाहं शीघ्रमेव ज्वरेण सह शमयति जीवनीयद्रव्याणाञ्चेदभावस्तर्हि छिन्नरुहाया मधुयष्ट्याश्चाऽवश्य योगः कर्तव्यः वटिकास्तु पूर्वप्रकारेणैव बन्धनीया न तु घृतेन, सन्ततादिज्वरे घृतदानस्याऽनुचितत्वादिति दिक्।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर अथवा शुद्धपारद, जीवनीयगणक्वाथमें निर्वापित कियाहुआ शुद्धगन्धक, जीवनीयगणकेयोगसे कीहुई अभ्रक और लोहभस्म (अभावमें चाहे जिस योगसे की हो पर सोमलप्रभृति तीक्ष्णवस्तुओंके योगसे निष्पादित न हो), सफेदचन्दन, मोटी-बारीक और काली खस (कालावाला शु०), नागरमोथा और यथालाभ जीवनीयगणकी औषधियां (यदि कोईभी न मिले तो गिलोय और मुलहठी अवश्य लेवें) लेकर सबका बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर यथालाभ जीवनीयगणके क्वाथसे १-२ रोज़ मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मुंहमें रखनेसे त्रिदोषजदाह और पिपासाको यह शान्तकरतीहै। रक्तपित्त और गर्मीसे जायमान श्वास और कासको समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे तत्काल नष्टकरतीहै। पारदभस्मके योगसे बनीहुई हो तो सर्वोपद्रवयुक्त क्षयरोगकी रा[illegible] औषधहै। इसमें घनसारशब्दसे बहुतसेलोग केवलकपूर[illegible] कामचलातेहैं और जीवनशब्दमें घी अथवा पानीका यो[illegible] इसतरहकरना अच्छा नहीं क्योंकि जीवनीयगणका [illegible] अथवा जल नहीं करसकताहै घृतयोगसे वटी बनानेमें [illegible] कज्वरोंमें उपद्रवहोनेका सम्भवहै ॥ १२२ ॥

१२३ रसादिगुटिका (द्वितीया)

रसरजतगुटीं पटीयसीं
यो वदनसरोरुहमध्यगां दधाति।
स जयति तृषितस्तृषं
भृशमथमिव त्रिमार्गगा॥

र. कौ., र., यो. त., यो. र., वै. [illegible]

भाषा—शुद्ध पारा (जिसमें [illegible] दिकमें कालिमा न आतीहो) [illegible] लेकर इकट्ठा मर्दनकर मूर्च्छि[illegible] रोज़ मर्दनकरे। बीचबीचमें [illegible] करे फिर गोली बनाकर [illegible] २-२ रोज़ स्वेदनकरने[illegible] रखछोड़े। पहिले गो[illegible] देना चाहिये जिस[illegible]

तिपतियाके गणडेमें रस निघबन्दकर गुणगन्धक गो रस अण्डकी- ट्म बन्दकर मिट्टीकर ऊपरसे गुलतानी सनेपर वाउशयग्रमें बन्दकर तलिहोनेपर निकालकर रखछोड़े। द्रसानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरो- [illegible]८ ॥

रससिन्दूरम् (दशमम्)

[illegible]स्य सिन्दूररसमुत्तमम्।
[illegible]गन्धं मर्दितं कज्जलीकृतम् ॥ ५६६ ॥
[illegible]सिनैव यामद्वयविमर्दनात्।
[illegible]मेघानां विमलाच्छितुलं क्रमात् ॥ ५६७ ॥

चौंकी गर्मीसे जिससमय अत्यन्त प्यासलगे और किसीसे शान्त न होती हो उससमय इसगोलीको मुहमें रखनेको देनेसे बहुतशीघ्र प्यास चलीजातीहै । इसे अग्निस्थायीकरना हो तो रीठेके वल्कलमें डालकर तिपतियाकारस भरकर तिपतिया और वनगोभीके चतुर्गुणितवल्कमें वन्दकर इतनी आंचदेवे कि वल्क मात्रहीजले । ऐसे जबतक अग्निस्थायी न हो तबतक करता जाय । अग्निस्थायी होनेपर अधिकआंचलगनेसे गोलीका स्वरूप बिगड़नेका सम्भवहै । इसतरह अग्निस्थायी होनेकेबाद इसे दूधमें उबालकर पीनेसे शुक्रदोष निवृत्त होकर तमामधातुओंकी शुद्धिहोतीहै और मन्दाग्नि नष्टहोताहै ॥ १२३ ॥

१२४ रसादिगुटिका (तृतीया)

पारदस्तालको गन्धस्त्रय. शुद्धा समा. स्मृता ।
जातीफलं जातिकोपं भङ्गार्याजं लवङ्गकम् ॥ ५९४ ॥
यवानी तुत्थकं शुद्धं शुद्धं द्व्यं समं पृथक् ।
नागवल्लीदलरसै मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ५९५ ॥
अरुपहानिसोशनस्य नीरैरपि तथाविधम् ।
अष्टगुञ्जामिता कार्या गुटिका च भिपग्वरै ॥ ५९६ ॥
प्रभाते चैव सायाह्ने वटी देया विशेषत ।
मधुना नीरयुक्तेन गिलेत्ता वै वटी शुभाम् ॥ ५९७ ॥
पक्षाघातं निहन्त्याशु रसादिगुटिका त्वियम् ।
चन्द्रटेन समाख्याता योगरत्नसमुच्चये ॥ ५९८ ॥

र सु , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और रसमाणिक्य, जायफल,
कर ।वित्री, गाजेकेबीज, लौंग, अजवाइन, तुत्थभस्म, सोंठ,
मिर्च, पीपल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे, गन्धक
सन्श पी रितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पान और सोशन
रके सुखा नी (यूनानी) कीजड़केस्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२
होनीचा लकर ८–८ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे
मिटी कर गोली सुबहशाम मधुकेशर्वतकेसाथ निगलनेसे यह पक्षा-
नहीं रहे नष्टकरतीहै ॥ १२४ ॥

होनेपर १२५ रसादिचूर्णम् (पारदादिचूर्णम्)

मिर्चमें न्धककर्पूरैः शैलोशीरमरीचकै ।
इसीका —दैश्च सूक्ष्मं चूर्णमहर्मुखे ॥ ५९९ ॥
जैसा बनादे । सूखने भादेत्पिवेत्पर्युपिताम्बु च ।
पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशी ताश्विनेयप्रकाशितम् ॥ ६०० ॥
निकालकर पूर्वप्रमाणसे गन्ध , व रा , र प्र , यो र , र च , र
घीकुवारकेरससे मर्दनकर सुखाकर , तृष्णायाम् । र च , र ■ , एव
इसतरह सातशोशिया उतारकर रने शैलेयोशीरचित्रकै इति पथ
/३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपान , र सु , रसायनस , र का
/ रोगोंको नष्टकरताहै । प्रायश्चित्तकरके फ
स्वभावत दु साध्य कुष्ठादिककामी नाकपूर, छड़ीला, खस और
जो नीचेका भागहै उसे फेंकनहीं देना उसचूर्णकर पारेगन्धककी
मात्रोकी तैयारभस्ममिलेगी । इसकी ३–३ मर्दनकर बराबरकी
तानुपानकेसाथ देनेसे श्वास कास, षण्ढत्व असृ

शक्करकेसाथ ३–३ रत्ती प्रातकाललेकर वासीपानी पीनेसे अत्यन्तबढ़ीहुई तृषाको यह नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

१२६ रसाऽभ्रकम्

भुवने विप्रगेहेपु पत्रिका देवकन्दली ।
पवित्रा सर्वदेवानां मस्तकादिमनोहरी ॥ ६०१ ॥
शुद्धसूतन्मानीय सममभ्रेण मेलयेत् ।
तस्या रसं विनिक्षिप्य मर्दयेत्सूतमभ्रकम् ॥ ६०२ ॥
याममात्रेण तत्सर्वं मिलत्येकत्र निश्चितम् ।
पिण्डरूपमिदं सर्वं घृष्यते दिवसत्रयम् ॥ ६०३ ॥
काचकूप्ये विनि क्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ।
देवकन्दलयष्टीनां ज्वालयेद्याममात्रकम् ॥ ६०४ ॥
पश्चादपरकाष्ठानि ज्वालनीयानि यत्नत. ॥
द्वादशप्रहरस्यान्ते शीतीभूतं तदुद्धरेत् ॥ ६०५ ॥
रक्तिकात्रितयं दत्वा मधुना सह भक्षणे ॥
अत्यग्निं कुरुते दीप्तमतिपाकं करोति च ॥ ६०६ ॥
अक्षीणाङ्गश्च जायेत कल्पजीवी भवेन्नर. ॥
जराजर्जरदेहानां पलितानि विनाशयेत् ।
यामादपि भवेच्छ्रीमान्मतिमांश्च भवेद्ध्रुवम् ॥६०७॥

रसचि , रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और अभ्रक समभागलेकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर देवकदलीके कन्दके रससे मर्दनकरनेसे १ पहरमें येसब मिलकर गोला जैसा बनजायगा पर इसको तीनरोजतक उसीरसकेसाथ अखण्डमर्दनकरते रहना, अखीरमें यह चूर्णके रूपमें होजायगा । इसे सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई सफेद आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख देवकदलीके सूखे डण्ठलोंसे एकपहर अग्नि देकर फिर किसीभी सारिष्ठकाष्ठकी क्रमवृद्ध १२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ देनेसे यह जठराग्निको अत्यन्तप्रदीप्तकर अत्यधिकभोजनको पचाताहै । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे वलीपलितोंकेसाथ बुढापा दूरहोकर सर्वाङ्गपरिपूर्ण होताहुआ दीर्घायुको प्राप्तहोजाताहै ॥ १२६ ॥

१२७ रसाऽभ्रगुग्गुलुः

कर्पद्वयं पारदस्य लौहं गन्धश्च तत्समम् ।
लोहगन्धसमश्चाऽभ्रं गुग्गुलुं कुडवद्वयम् ॥ ६०८ ॥
अमृताया रसप्रस्थे रसप्रस्थे फलत्रिकात् ।
सान्द्रीभूते रसे तस्मिन् क्षेपं दत्वा विचक्षण. ॥६०९॥
त्रिकटु त्रिफला दन्ती गुडूची चेन्द्रवारुणी ।
विडङ्गं नागपुष्पञ्च त्रिवृता च सुचूर्णितम् ॥ ६१० ॥
प्रत्येकं कर्षमादाय सर्वमेकत्र कारयेत् ।
भक्षयेत्कोलमात्रन्तु छिन्नाकाथाऽनुपानत ॥ ६११ ॥
वातरक्तं महाघोरं स्फुटितं गलितञ्जयेत् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं कृमिरोगाऽश्मरीं तथा ॥ ६१२ ॥
भगन्दरं गुदभ्रंशं श्वेतकुष्ठं सकामलम् ।
अपची गण्डमालाश्च पामाकण्डूविचर्चिका ॥६१३॥

चर्मकीलं महादद्रुं नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
वातरक्तविनाशाय धन्वन्तरिकृतः पुरा ॥
रसाऽभ्रगुग्गुलुः ख्यातो वातरक्तेऽमृतोपमः ॥६१४॥
भै. र., वातरक्ते ।

भाषा—शुद्धपारा, लोहभस्म और शुद्धगन्धक २–२ कर्ष, अभ्रकभस्म ४ कर्ष, शुद्धगूगल ८ पल लेकर गिलोय और त्रिफलाके चतुर्भागावशिष्ट १–१ प्रस्थ क्वाथमें गूगल और अन्यचीजोंको डालकर मन्दाग्निमें पकावे । चाशनीके सदृश होनेपर त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, गिलोय, इन्द्रायणकीजड़, विडङ्ग, नागकेसर, निसोत, इनका चूर्ण १–१ कर्ष क्रमसे मिलाकर घोटे । एकजीवहोनेपर झरबेर बरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गिलोयके क्वाथकेसाथ खानेसे तमाम बदनमें फूटकर गलितावस्थाको प्राप्तहुआ वातरक्त, अठारहकुष्ठ, क्रिमि, पथरी, भगन्दर, गुदभ्रंश, सफेदकुष्ठ, कामला, अपची, गण्डमाला, पामा, खुजली, विचर्चिका, मस्से, महादद्रु इनसबको यह नष्टकरताहै इसके सेवनमें क्षारका त्यागकरना उचित है ॥ १२७॥

१२८ रसाऽभ्रगुटी

सहदेवी बला चैव सूर्यावर्तोऽथ मारिषः ।
अपामार्गोऽमृता चैव सम्यक् सम्पादयेद्भिषक् ६१५
एषां पलानि चत्वारि प्रत्येकं कुट्टयेत्ततः ।
अत ऊर्द्धश्च तद्दत्त्वा मण्डूरं यत्पुरातनम् ॥ ६१६ ॥
गोमूत्रेण पचेत्तावद्यावद्गोमूत्रशोषणम् ।
तस्मादुद्धृत्य तच्चूर्णं कुर्यात्पलचतुष्टयम् ॥ ६१७ ॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं गुडूची चित्रकं त्रिवृत् ।
दन्ती विडङ्गमेकैकं कर्षमेषान्तु चूर्णयेत् ॥ ६१८ ॥
धान्यभ्रीकृतस्याऽथ वज्रकाभ्रस्य यत्पलम् ।
वार्यम्लाऽम्भस्त्रिरात्रस्थं वारिपर्णीरसाप्लुतम् ॥६१९॥
आतपे शोषयेत्तीक्ष्णे दिनमेकं सुरक्षया ।
सूरणस्य रसैः पिष्ट्वा तत्र टङ्कणकस्य च ॥ ६२० ॥
दत्त्वाऽष्टौ माषकांस्तत्र पुटपाकेन पाचयेत् ।
मृन्मये सुदृढे पात्रे मृदुना गोमयाऽग्निना ॥ ६२१ ॥
रसाद्द्वादशमाषांश्च कर्षं गन्धकतः पृथक् ।
रसे मण्डूकपर्ण्याश्च मूर्च्छितौ कज्जलीकृतौ ॥ ६२२ ॥
घृतस्य मधुनश्चाऽपि पृथक् पलचतुष्टयम् ।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥६२३॥
ततोऽष्टौ माषकान् खादेदथवा द्वादशैव च ।
कर्षं वाऽपि तथा कुर्याद् बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥६२४॥
दुग्धञ्चापि पिबेद्रोगी वह्नौ मन्दत्वमागते ।
तप्तोदकानुपानञ्च सेवेत ग्रहणीगदे ॥
अजाक्षीराऽनुपानञ्च श्वासे कासे प्रयोजयेत् ॥६२५॥
भ , र. र., रसायने ।

भाषा—सहदेवी, खरेंटी, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, मर्सा, अपामार्ग, गिलोय इनसबोंका स्वरस ४–४ पल लेकर १०० वर्षसे पुरानेमण्डूरको बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तरसोंको डालकर लोहेकी खरलमें पीसे । मक्खनजैसा होनेपर १६ अथवा ८ गुने गोमूत्रमें पल ४ डालकर पकावे और बीच २ में चलाताजाय । गोमूत्र सूखजानेपर उतारकर त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, चित्रकमूल, निशोत, दन्तीमूल और विडङ्ग १–१ कर्ष, धान्याभ्रककियाहुआ वज्राभ्रक १ पल लेकर भातडालकर रक्खेहुए अत्यन्तखट्टे पानी और सेवारकेरसमें भिगोभिगोकर कड़ीधूपमें १–१ रोजसुखावे । इसमें ८ माशे सुहागादेकर जङ्गलीसूरणकेरससे पीस गोलाबनाय जङ्गलीसूरणके अन्दर रखकर ६–७ कपड़मिट्टीकर सुखाकर जङ्गलीकण्डोंका हलका पुटदे जिसमें कि सूरणकारस जलकर गोलेका रससूखजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रक्खे । फिर शुद्धपारा १२ माशे, शुद्धगन्धक १ कर्ष लेकर मीण्डूकपर्णी(ब्राह्मी)केरससे १–२ रोज घोटकर कज्जलीबनाय पुराना घी और मधु ४–४ पल, कज्जली और पुटदियाहुआ मण्डूर सबको इकट्ठे मिलाय चिकनेबर्तनमें रखछोड़े । ७–८ रोजकेबाद इसमेंसे रोगी और रोगकाबलाबल देखकर ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्राखिलाकर ऊपरसे दूधपिलानेसे मन्दाग्नि नष्टहोताहै । ग्रहणीमें गरमजलकेसाथ और श्वास, कासमें बकरीके दूधकेसाथ देवे ॥ १२८ ॥

१२९ रसाऽभ्रमण्डूरम्

गन्धकाभ्ररसूतानां प्रत्येकं शुक्तिमानकम् ।
संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरं मुष्टिकद्वयम् ॥ ६२६ ॥
प्रसृतञ्च हरीतक्याः पाषाणजतुनः पिचुन् ।
कर्षकं कान्तलोहस्य सर्वं रौद्रे विभावयेत् ॥ ६२७ ॥
भृङ्गराजरसप्रस्थे केशराजरसे तथा ।
निर्गुण्डीमानकन्दानामार्द्रकस्य रसेष्वपि ॥ ६२८ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचव्यमुस्तकानां पृथक्पृथक् ।
कर्षंकर्षं क्षिपेच्चूर्णं मर्दयेन्मधुसर्पिषा ॥ ६२९ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय मात्रया युक्तितः पुमान् ।
निहन्ति सर्वजं शोथं सर्वाङ्गिकाङ्गसंश्रयम् ॥ ६३० ॥
कासश्वासतृषादाहमोहच्छर्दियुतं तथा ।
अम्लपित्तं निहन्त्येव शूलमष्टविधञ्जयेत् ॥ ६३१ ॥
अग्निवृद्धिकरं वृष्यं हृद्यं वातानुलोमनम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्लेष्मकुष्ठाऽरुचिस्वरम् ॥
प्लीहगुल्मोदरं हन्ति ग्रहणीं समराहिकाम् ॥ ६३२ ॥
भै. र., शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अभ्रकभस्म २–२ कर्ष, बारीक पिसाहुआ शुद्धमण्डूर और हर्रे २–२ पल, शिलाजतु ३ कर्ष, कान्तलोहभस्म १ कर्ष लेकर सबको भीमसेनीकपूरकर भंगरा, कालाभंगरा, निर्गुण्डी, मानकन्द और अदरखके १–१ प्रस्थरसोंमें डालकर तीक्ष्णधूपमें सुखावे । फिर त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, नागरमोथा इनसबोंका १–१ कर्ष चूर्णडालकर अच्छीतरह घोटकर कपड़छानकरले और मधु तथा घी अन्दाजसे मिलाकर मर्दनकर चिकनेबर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक मुखमें खानेसे एकाङ्ग त्रिदोषजशोथ, कास, श्वास,

तृषा, दाह, मोह, वमन, अम्लपित्त, आठप्रकारका शूल, मन्दाग्नि, धातुक्षय, हृद्रोग, उदावर्त, कामला, पाण्डु, श्लेष्मकुष्ठ, अरुचि, ज्वर, प्लीह, गुल्म, उदररोग, ग्रहणी, प्रवाहिका इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १२९ ॥

१३० रसामृतरसः (प्रथम.)

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु।
गुडूचीं चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥ ६३३ ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकीं निम्बपत्रकम्।
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयान्वितम् ॥ ६३४ ॥
विधिना मर्दयित्वा तु कर्षमात्रन्तु भक्षयेत्।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ ६३५ ॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः।
निहन्ति सर्वदोषञ्च ज्वरं सर्वं न संशयः ॥
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ ६३६ ॥

र. सं., र. क., र. सु., भ., र. चं., रक्तपित्ते।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., सोनामाखी, शिलाजीत, गिलोय, सफेदचन्दन, द्राक्ष, महुएकेफूल, धनिया, कुरैयाकीछाल और बीज, धावडीकेफूल, नीमकेपत्ते, मुलहठी १-१ भाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १-२ दिन घोटकर शिलाजीत वगैरहको एकजीव करदे फिर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर मधुमें आधे आधे तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रातःकाल खाकर धारोष्ण दूध पीनेसे पित्त, अम्लपित्त, रक्तपित्त, त्रिदोषजज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १३० ॥

१३१ रसामृतरसः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता विडङ्गश्चित्रकं तथा।
एषां सञ्चूर्णितानान्तु प्रत्येकन्तु पलं भवेत् ॥ ६३७ ॥
कर्षद्वयं गन्धकस्य तदर्धं पारदस्य च।
बिडालपदमात्रन्तु लिह्यात्तन्मधुसर्पिषा ॥ ६३८ ॥
शीतोदकं चानुपिबेत्क्रमाद्गव्यं पयस्तथा।
अम्लपित्ताऽग्निमान्द्यञ्च परिणामरुजं तथा ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्यादेतद्रसायनम् ॥ ६३९ ॥

यो. र., वृ. यो. त., र. कौ., र. क. ल., नि. र., रसायनसं., टो., र. का., वै. चि., चि. क., अम्लपित्ते।

भाषा—त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग और चित्रकमूल १-१ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष और पारा १ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सबकीबराबर शक्कर, और मधु मिलाकर रखछोडे। इनमेंसे आधेतोलेसे एकतोलेतक खाकर ठंढापानी अथवा दूध पीवे तो इससे अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणामशूल, कामला, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकर आयुको बढाताहै ॥ १३१ ॥

१३२ रसामृतरसः (तृतीयः)

मातुलुङ्गद्रवैः सूतं भावितं वासरावधि।
गन्धकञ्च पलान्यष्टौ नागं तत्पादसंयुतम् ॥ ६४० ॥
एकीकृत्याऽथ सम्भाव्य हस्तिशुण्डीरसैस्तथा।
धूमसारैस्त्र्यहं भाव्यं रामठेन त्र्यहं त्र्यहम् ॥ ६४१ ॥
शुष्कं काचघटे न्यस्य यामानष्टौ प्रदीपयेत्।
सिकताख्येन यन्त्रेण वैद्यो बुद्धिविशारदः ॥ ६४२ ॥
रक्तिकाद्वितयं सेव्यं मदात्ययनिवृत्तये।
मधुनाऽऽमलके नित्यं राजार्हन्तु रसामृतम् ॥ ६४३ ॥

र. सु., र. प्र., र. क., मूर्च्छाऽधिकारे।

भाषा—८ पल शुद्धपारेको एकरोज़ बिजोरेकेरससे मर्दनकर शुद्धगन्धक ८ पल और नागभस्म २ पल लेकर सबको इकट्ठे मर्दनकर हस्तिशुण्डी, गृहधूम, और हींगके यथासम्भर स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ दिन भावनाएं देकर सुखाकर आतशीशीशीमें रख वालुकायन्त्रमें ८ पहरकी अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्ती मधु और आंवलेकेचूर्णकेसाथ लेनेसे मदात्ययरोग दूर होताहै।

१३३ रसायनवटी

क्षारं मल्लजमीशजं शुभतरं संशोध्य वस्त्रे घनैः,
कृत्वा पोट्टलिकां सुतन्तुखचितां तां काञ्जिके निम्बुजे।
दोलायन्त्रगतां पचेच्च सलिले कूष्माण्डजे निर्मले,
नोचेत्तत्सपुटे विमर्दितममुं तुर्येण गन्धेन च ॥ ६४४ ॥
तुर्येणैव सुटङ्कणेन विपचेत्त्रिर्यातके खातके,
पश्चाच्छीतलमुद्धृतं शुभतरैश्छिन्नारसे मर्दितम्।
अष्टाविंशतिवारकं वृलरसैः श्रीद्रोणपुष्पीभवैः,
ताम्बूलीदलसम्भवैः शुभतरैस्तुर्येण सम्मेलयेत् ६४५
छायायां खदिरोत्थपत्रजनितैः श्रीकारवेल्यारसै,-
रेवं विंशतिवारकं सुवटिकां सिद्धार्थतथाऽधिकाम्।
खादेत्प्रातरुदयाद् द्रवैर्दिनमनु श्लेष्मोत्थरोगे ज्वरे,
यक्ष्माणं रुधिरादिसम्भवयुतं रोगं तथाऽऽमादिकम्,
अस्थित्वग्विहितं शिरोगतरुजं पादादिजातां रुजं,
विस्फोटादिरुजं रसायनवटी सा नाशयेन्निश्चितम्।
श्रीधन्वन्तरिणेयमाशु रचिता देवादता तत्क्षणात्,
खाद्या तत्करणैः सदा मतिमता राज्ञां सदा सम्मता ॥

र. प्र., श्लेष्मरोगे।

भाषा—शोधनक्रियेहुए पारेको १०८ बार मोटेकपड़ेमें रगड २ कर छानले जिसमें कि उसकी तमामकालिमा कपडेपर आजाय फिर दूधमें शोधन कियाहुआसोमल और पारा ४-४ तोले लेकर एक जगह शुष्कमर्दनकर नीबूकारस अथवा काञ्जी थोडी २ डालकर इसतरह मर्दनकरे कि गोलीहोजाय फिर इसगोलीको गाढे मलमलके टुकडेमें बांधकर दोलायन्त्र बनावे और काञ्जी, नीबू तथा सफेदपेठेके रसोंमें डालकर ४-४ पहर स्वेदनकरे परन्तु यह ध्यानरक्खे कि पोटली द्रवोंसे ४ अङ्गुल

ऊंचीरहे और उफान खाकर द्रवभी उसको स्पर्श न करसके केवल वाष्पहीलगे। फिर इसगोलीसे चतुर्थांशगन्धक और सुहागा मिलाय पूर्ववत् एकदिन खरलकर शरावसम्पुटमें बन्दकर निर्वातस्थानमें एकनालिस्तका गढ़ा बनाकर सेरभर जङ्गली-कण्डोंके टुकड़ोंसे ढककर आंचलगावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गिलोयकेस्वरससे १ रोज़ मर्दनकर पूर्ववत् सम्पुटकर आंचदे। ऐसे २८ आंचें देकर पूर्ववत् चतुर्थांश गन्धक और सुहागा मिलाकर घीकुंवारकीकन्दलसे मर्दनकर पूर्ववत् २८ आचें दे फिर गूमा और पानकेरसोंसे मर्दनकर २८–२८ आंचें दे। यहध्यानरहे किदूसरे-द्रवमें जब मर्दनकरनाशुरूकरें उससमय प्रथमवार मूलद्रव्यसेचतुर्थांश गन्धक और सुहागा मिलालियाकरें फिर २७ वार वैसेही आंच देवें। तदनन्तर खैर और करेलेकेरससे २१–२१ दिन केवल-मर्दनकर कुछ सरसोंसेवड़ी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे श्लेष्मरोग, ज्वर, राजयक्ष्म, रुधिरविकार, आमवात, अस्थि और त्वग्दोष, शिरोरोग, हस्तपादादिगतरोग, विस्फोटप्रभृति समस्तरोगोंको यह निश्चयरूपसे नष्टकरतीहै॥ १३३॥

१३४ रसायनामृतलोहम्

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं जीरकद्वयम्।
यमानीद्वयभूनिम्बं त्रिवृद्दन्ती च निम्बकम्॥ ६४८॥
सर्वेषां कार्षिकं भागं सैन्धवं कर्षमभ्रकम्।
खण्डं षोडशपलं प्रस्थञ्च त्रिफलाजलम्॥ ६४९॥
जम्बीराणां रसं दद्यात्पलषोडशकं तथा।
पाचयेत् सर्वं प्रयत्नेन लौहं दत्त्वा पलद्वयम्॥ ६५०॥
सिद्धे पाके पुनर्देयं घृतं पलचतुष्टयम्।
सर्वरोगेषु संयोज्यं महामृतरसायनम्॥ ६५१॥
गुल्मं पञ्चविधं हन्ति यकृत्प्लीहोदराणि च।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं जीर्णज्वरं तथा।
रोगान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥६५२॥

भै. र, ध., गुल्मे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, दोनोंजीरे, दोनों अजवाइन, चिरायता, निसोत, दन्तीमूल, नीमकीछाल, सेंधानमक, अभ्रकभस्म, येसब १–१ कर्ष, शक्कर १६ पल, त्रिफलाकाक्वाथ १ प्रस्थ, जंभीरीकारस १६ पल, लोहभस्म २ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाकर धीमीआंचसे पकावे। लड्डूकी चाशनीहोनेपर ४ पल पुराना घी डालकर उतारले। ६–७ दिन बीतजानेपर ३ माशेसे ६ माशेतक यथाऽभिबल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ५ प्रकारके गुल्म, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, कामला, पाण्डु, शोथ और जीर्णज्वरप्रभृति समस्त-रोगोंको यह दूरकरताहै॥ १३४॥

१३५ रसेन्द्रगुटिका (वृहती) (प्रथमा)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याऽभ्रकस्य च।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च त्रिरस्य च॥ ६५३॥
मनःशिलायाः क्षाराणां बीजस्य कनकस्य च।
मरिचस्य च सर्वेषां समं चूर्णं प्रकल्पयेत्॥ ६५४॥
जयन्ती चित्रकं माणं खण्डकर्णोऽथ मण्डुकी।
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजं तथाऽऽर्द्रकम्॥ ६५५॥
निर्गुण्डीस्वरसेनाऽपि घस्रमात्रेण मर्दयेत्।
कलायपरिमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्॥ ६५६॥
आर्द्रकस्वरसेनैव पञ्चकासान् व्यपोहति।
हन्ति हिक्कां तथा श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम्॥६५७॥
अग्निमान्द्यारुचिं शोथमुदरं पाण्डुकामलाम्।
रसायनी च वृष्या च बलवर्णप्रसादनी॥ ६५८॥
बृंहणं मधुरं स्निग्धं मत्स्यं मांसञ्च जाङ्गलम्।
घृतपक्वं सदा भक्ष्यं रूक्षं तीक्ष्णं विवर्जयेत्॥ ६५९॥

र. सं., र. चं, नि. र., ध, र. र., भै. र., र. सु., र. चि, र. क. कासाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, ताम्र, हरिताल, लोह इनकीभस्में, शुद्धवच्छनाग और मैनसिल, सज्जी, सुहागा, यवक्षार धतूरेकेबीज और मरिच १–१ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर जैंती, चित्रक, मानकन्द, जङ्गलीसूरण, ब्राह्मी, भाग अथवा गांजा, भंगरा, कालाभंगरा, अदरख और निर्गुण्डी इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रससे देनेसे ५ प्रकारकेकास, हिचकी, श्वास, राजयक्ष्म, भगन्दर, मन्दाग्नि, अरुचि, शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला इनसबको नष्टकर धातु और बल तथा वर्णकी वृद्धिको करतीहै। धातुओंको बढ़ानेवाला मधुर और स्निग्ध भोजन, घीमें भुनीहुईमछलियां और जङ्गलीमांस इनका भोजनकरे। तीक्ष्ण और रूक्षपदार्थोंका त्यागकरे॥ १३५॥

१३६ रसेन्द्रगुटिका (द्वितीया)

माक्षिकञ्च शिलिग्रीवमभ्रकं तालकं तथा।
एतांस्तु मिलितान्सर्वान्भावयेदार्द्रकद्रवैः॥ ६६०॥
रक्तिद्वयप्रमाणान्तु कल्पयेद्गुटिकां भिषक्।
जीर्णान्ने भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः॥ ६६१॥
पञ्चकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनाशयेत्।
पाण्डुक्रिमिज्वरहरी कृशानां पुष्टिवर्धनी॥ ६६२॥
शुक्रवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी।
वह्निसन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरोचकविनाशिनी॥ ६६३॥

र. मं., र. चं., ध, र. र, र. सु, भै. र, कासाऽधिकारे। भै. र., यक्ष्मरोगे।

भाषा—सोनामाखी, तूतिया, अभ्रक और हरिताल इनकीभस्में सब समभाग लेकर अदरखकेरससे १–२ रोज़ घोटकर २–२ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। भोजनके पचजानेपर १–१ गोली देकर दूध और मांसरस पिलावे तो ५ प्रकारकेकास, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डु, क्रिमि, ज्वर, कृशता, शुक्रक्षय, अम्लपित्त, मन्दाग्नि और अरुचि इनको यह नष्टकरतीहै १३६

१३७ रसेन्द्रगुटिका (तृतीया)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य स्वरसेन जयाऽऽर्द्रयोः ।
शिलायां खल्लयेत्तावद्यावत्पिण्डं घनं भवेत् ॥ ६६४ ॥
अम्भःकणाकाकमाचीवासाभि र्भावयेत्पुनः ।
सौगन्धिकमलै र्भृङ्गस्वरसेन सुभावितम् ॥ ६६५ ॥
चूर्णितं रससंयुक्तमजाक्षीरपलद्वये ।
खल्वितं घनपिण्डन्तु गुटिः स्विन्नकलायवत् ॥६६६॥
कृत्वाऽऽदौ शिवमभ्यर्च्य द्विजातीन्परितोष्य च ।
जीर्णान्नो भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६७ ॥
सर्वरूपं क्षयं कासं रक्तपित्तमरोचकम् ।
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति ॥ ६६८ ॥

भै र, च द, वै द, यो म, टो, राजयक्ष्मणि।

भाषा—एकतोले शुद्धपारेको भाग और अदरखकेरसमे यहांतक घोटे कि गोलीबंधनेलायकहोजाय । फिर जलपीपल, मकोय, अडूसा, पीलाकमल, भंगरा इनके रसोंमे १–१ दिन मर्दनकर २ पल बकरीकेदूधसे मर्दनकरे । गाढाहोनेपर फूलेहुए मटरकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोडे । भोजन पचजानेके बाद १–१ गोली दूध अथवा मांसरसकेसाथ देनेसे सबप्रकारका क्षय, कास, रक्तपित्त, अरुचि और सैकडों वैद्योंसे छोडाहुआ अम्लपित्त, इनसबरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ १३७ ॥

१३८ रसेन्द्रगुटिका (चतुर्थी)

रसेन्द्रगन्धाश्मजतुप्रवाल-
 लौहानि वैद्यः समभागकानि ।
रसेन्द्रपादप्रमितञ्च हेम
 विभाव्य निम्बाशनवह्नितोयैः ॥ ६६९ ॥
ततो वटी वल्लमिता विमर्द्य
 विधाय शुद्धा बहुवारवारा ।
फलत्रिकक्वाथजलेन वाऽपि
 प्रातः प्रयुञ्ज्यात्प्रकराम्बुना वा ॥ ६७० ॥
रसेन्द्रवट्यास्यगदान्निहन्ति
 वातामयान्मेहगणाञ्ज्वरांश्च ।
करोति वह्ने र्बलवीर्ययोश्च
 वृद्धिं विशेषेण रसायनीयम् ॥ ६७१ ॥

भै. र, मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत, प्रवाल और लोह भस्म, सब समभाग लेकर पारेके चतुर्थांश सुवर्णभस्म मिलाकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर नीम, असन, चित्रककी जड, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोजमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली जंगलीलसोडा, त्रिफला अथवा अगर इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकेसाथ लेनेसे वातरोग, प्रमेहगण, समस्तज्वर मन्दाग्नि, बलवीर्यहानि इनसबको दूरकर आयुको बढातीहै १३८

१३९ रसेन्द्रचूडामणीरसः (बृहत्तालकेश्वरः) १

कूष्माण्डस्वरसे वराकथितके नीरे तथा निम्बुजे,
नीरे शुक्तिजचूर्णजे वटजटाक्वाथे ततः काञ्जिके ।
छिन्नायाः स्वरसे रसे मुनिभवे पुन्नागजले स्वेदितं,
गुञ्जावल्गुजतैलकेन मिलितं स्वेद्यञ्च तालं ततः ६७२
एवं शुद्धतमं सकाञ्जिकभरैः खल्वे शुभे मर्दयेत,
सेहुण्डार्कजदुग्धमेलनपरः शुष्कं रहः सप्तशः ।
कन्यामातुलशुद्धपत्रजरसै र्दुग्धैरजासम्भवै-,
स्तैलैः प्रागुदितै र्मनाक् समकृतं तच्चक्रिका निर्मिता ॥
मध्ये भस्म पलाशजं शुभतरे यन्त्रे सुमन्थानके,
धृत्वा तत्र च तां ततस्तदुपरि द्वात्रिंशयामं पचेत् ।
पालाशस्य हठाग्निना खदिरजै र्वैश्वानरैरन्वहं,
निर्धूमं सुपरीक्षितं च वलिना तुर्येण सूतेन च ६७४
पिष्टं खल्ववरे स्नुगादिसकलैस्तुर्येण वङ्गेन च,
सम्यक् सम्पुटयन्त्रके सुविधृतं तद्वालुकायन्त्रगम् ।
यामं द्वादशकं सुखं सुविपचेद्गुञ्जामितं दापयेत,
तस्मात्तुर्यदिनात्परं दिनमनु ज्ञात्वा तथा वर्धयेत् ६७५
यावद्भक्तिचतुष्टयं न सहते जीर्णे गुडं भक्षयेत,
द्वात्रिंशन्मरिचैः समं समशनं पथ्यं जलेनोद्धृतम् ।
रोगे भीषणके सुपञ्चकृतिकः साधु भवेन्द्रक्षणे,
व्याख्यातैर्विहितं कफादिजनितं रोगं व्यथादिं हरेत् ॥
दद्रुं सर्वविधं सुमण्डलयुतं सुश्विञ्च वातासृजं,
कुष्ठाऽष्टादशहृद्रसायनमिदं खल्वापहृत्क्षुत्समम् ।
पथ्यं चाऽम्लविवर्जितं त्वलवणं रूक्षं मकुष्ठं शुभ-,
माढक्याश्च कुलत्थकः सुचणको रोगान्तकालावधिम्

र. का, कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धतबकीहरितालको सफेदकौहडा, त्रिफला, नीबू, सीपके चूनेका पानी, बडकी जटा, कांजी, गिलोय, अगस्त्य, शरपुंख, सफेदगुञ्जा और बाकुचीकातेल इनप्रत्येकके यथासम्भव-द्रवोंसे १–१ दिन स्वेदनकर खरलमें बारीक कपडछानचूर्णकर सेहुण्ड और आकके दूधसे ७–७ दिन मर्दनकर घीकुंवार और धतूरेकारस, बकरीकादूध तथा गुञ्जा और बाकुचीकातेल इन प्रत्येकसे १–१ दिन मर्दनकर टिकडीबनाय पलाशपञ्चाङ्गकी सफेदराखको छानकर एक मजबूत हण्डीमें भरके बीचमें टिकडियोंको थोडे २ अन्तरपर जमाय बीचमें अभ्रकके टुकडे लगादे जिसमें कि एकसे दूसरी टिकडी मिल न जाय । ऊपरसे पलाशक्षारसे भरके थोडीसी दबादे फिर चूल्हेपर चढाय पलाश, खैर और चित्रककी लकडियोंकी तेज आंचसे ३२ पहर क्रमसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अग्निपर रखकर परीक्षाकरे । अगर निर्धूम मालूम हो तो इससे चतुर्थांश पारा और गन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मिलावे और चतुर्थांश वङ्गभस्म मिलाकर सेहुण्डवर्गोक्तद्रव्योंमें १–१ रोज मर्दनकर टिकडियां बनाय सुगावर सानमम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टी लगाय बालुकायन्त्रमें रख

१२ पहरकी अग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपान के साथ ४ रोजतक देवे। पांचवेंरोज़से १ रत्ती मात्रा बढ़ावे फिर ४ दिनबाद १ रत्ती बढ़ावे। इसप्रकार ४ रत्तीतक अथवा जितनी सहन करसके उतनी बढ़ावे पर ४ रत्तीसे अधिक न देवे। इसके ऊपर ३२ काली-मिर्च पुरानेगुड़में मिलाकर खिलावे। जलकेसाथ भात खानेको दे। अत्यन्तभीषण रोग हो तो वमन विरेचनादिपञ्चकर्मकरके समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे कफादिजनितरोग, दद्रु, मण्डल-कुष्ठ, सुप्ति, वातरक्त, अठारहप्रकारके कुष्ठ, खजी (हायपैरोंकी ऐंठन) इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य अम्ल और लवणको छोड़कर रूक्ष, मोठ, अरहर, कुलथी और चने देना जबतक कि रोग निवृत्त न होजाय ॥ १३९ ॥

१४०. रसेन्द्रचूडामणीरसः (द्वितीयः)

सूतहेमभुजगाभ्रवङ्गकाःकान्तताप्यविमलासमाक्षिकाः
भागवृद्धिमिलिता विमर्दिता धूर्तपत्रविजयाभवै रसैः
सप्तसप्त चपलामृतवल्लीभार्गिकासुरलताजलतोयैः
वारिवाहमृतयष्टिकावरीवानरीभुजगदृष्टिसम्भवैः ॥
अर्धभागमहिफेनकन्यसेन्मर्दयेत्सुरसपुष्पसम्भवैः।
चन्दनार्ककरहाटपिप्पलीश्रावणीद्वयसमुद्भवैरसैः ॥
कुङ्कुमेन च ततो विभावयेन्नाभिजद्रवयुतं विभावयेत्
सिद्धिमेति रसराडयं शुभः कामिनीमदविधूननःपरः
शर्करामधुयुतो द्विरक्तिकः स्तम्भकृन्निधुवनेचरेत्ततः।
संसेव्य सूतं नचरात्रिभोज्यं कुर्वीत पेयं पय एव केवलम्

तृतीययामे रसमेवनन्तु
कृत्वा निशायाः प्रहरे व्यतीते।
मेवेत कान्तां कमनीयगात्रां
घनस्तनीमुज्ज्वलचारुवस्त्राम् ॥
रत्युत्सुकां कातरलोलनेत्रां
विलोलहारावलिमादधानाम् ॥ ६८३ ॥
किं कामे तनुकामिनां मलयजे-
नाऽप्यद्यकेनाशु किम्,
किं चन्द्रेण परोपतापजनिना
पुंस्कोकिलेनाऽपि किम्।
सहस्रशः सन्ति यदा तरुण्यो
मदालसाः पीनपयोधरा दृढाः ॥
तदा रसेन्द्रः परिपेवणीयो-
विकारकारी च भवेत्ततोऽन्यथा ॥ ६८४ ॥

र.र.स., र.चं., वाजीकरणे।

भाषा—पारा, सुवर्ण, नाग, अभ्रक, वङ्ग, कान्तलोह, कांस्यमाक्षिक, रजतमाक्षिक और सुवर्णमाक्षिक इनको क्रमवृद्धभागसे लेकर धतूरा, भाग, पीपल, गिलोय, भारङ्गी, अमरबेल, नागरमोथा, पद्माग, मुलहठी, शतावरी, केवाच, सरांकी इनोरस अथवा काथोंमें ७–७ रोज़ मर्दनकर सबमस्तकडिनमें आधा शुद्ध अफीम डालकर तुलसीकीमञ्जरी, चन्दन, आक, अकलकरा, पीपल, दोनोंगोरखमुण्डी, कुङ्कुम और कस्तूरी इन-प्रत्येकके द्रवोंसे १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। इसको स्तम्भनार्थ लेना हो तो शामहोनेसे पहिले १ गोली दूधके साथ लेवे और भोजन न करे केवल दूध पीवे। एकपहर रात्रि जानेके बाद मनोभिलषित रत्युत्सुका स्त्रीकेसाथ सम्भोग करनेपर यथेष्ट स्तम्भन होता है। इसरसकेसेवनकरनेकेबाद कामोद्दीपक तमाम हावभावोंकी जुरूरत नहीं रहतीहै। इसरसकासेवन वहीकरे जिसके घरमें कामातुर बहु-तसीस्त्रियां मौजूदहों नहीं तो यह विकार पैदा करेगा ॥१४० ॥

१४१ रसेन्द्रनागरसः

नागं कपालमध्ये क्षिप्त्वा चाग्निं निधापयेत्क्रमशः।
चिञ्चाकवचक्षारं स्वल्पं स्वल्पं विकीर्य कुन्तलेन ६८५
नागं पारदसीसं घृष्ट्वा घृष्ट्वा विचूर्णितं सम्यक्।
तिलमानं जग्धि मधुना तरवटबीजेन मिश्रितं क्रमशः
पिडिकासहितविशेषां प्रमेहगणार्तिं कुष्ठमनिलञ्च।
हन्त्यल्पदिनाभ्यासात्सुपथ्ययोगाद्रसेन्द्रनागोऽयम

र. चं., र. र. स., र. सु., र. को, र. र. सौ. प्रमेहे।

टि०—अयं प्रयोगो यथावस्थितो न सेवनीयः, अपरिपक्वनागनयोगा-दायनाशुसद्रवजनकं भविष्यत्यतोऽस्मिन्नरणीरसम् दत्ता चतुर्यंत्रमर्दनं विधाय कुक्कुटाण्डे भृत्वा पञ्चमृत्तिकावस्त्रै वेष्टयित्वा शरावसम्पुटे निधाय वालुकायन्त्रे द्वित्रदिनानि पक्त्वा स्वाङ्गशीतलमयो परीक्षणीय। निरुत्थना यातश्चेन्निषेवणीयोऽन्यथा द्विवाऽस्मयो ऽन्ये सदानम्भा इति तत्र न विस्मरणीयम्।

भाषा—शुद्धनागको मिट्टीकेठीकरेमें डालकर अग्निपर रखके गलजानेपर उसकी बराबरके शुद्धपारेको डालकर इमलीके पके फलोंके छिल्केका क्षार थोड़ा थोड़ा डालकर घोटताजाय। इस तरह ४ पहर घोटनेसे उसपारेकेसाथ नागकीभस्म होजायगी। इसमेंसे एकतिलभरमात्रा तुवरकके बीजोंकेसाथ सेवनकरनेसे पिडकासहितप्रमेह, कुष्ठ और वातरोगनष्टहोतेहैं ॥ १४१ ॥

१४२ रसेन्द्रमङ्गलरसः

तालसत्त्वं मृतं ताम्रं मृतं लोहं मृतं रसम्।
हतमभ्रं हतं तारं गन्धं तुत्थं मनःशिला ॥ ६८८ ॥
सौवीराञ्जनकासीसं नीली भल्लातकानि च।
शिलाजत्वर्कमूलन्तु कदलीकन्दचित्रकम् ॥ ६८९ ॥
त्वचमङ्कोलजां कृष्णां कृष्णधत्तूरमूलकम्।
आवल्गुजानि बीजानि गौरीमार्याफलानि च॥६९०॥
हेमाह्वां फनमाहेयं फलिनीं विषतिन्दुकम्।
तेजिन्यो लोहकिट्टञ्च पुराणमस्तुनश्च तत ॥ ६९१ ॥
त्वचञ्च भीलकाक्षस्य पुनस्तत्पलं पृथक्।
तैलिन्यां घटकास्तासु मर्येमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ६९२ ॥
सर्वं निधाय दातव्या पुनर्भाव्य भावनाः
प्रावृषण्डी शिग्रुः पुत्रा मेघदान्ती च नीलिका ॥६९३॥

वाणद्रोणा नृपतरु निम्बसारो विभीतकः ।
करञ्जो भृङ्गराजश्च गायत्री तिन्तिडीफलम् ॥ ६९४ ॥
मलयूमूलमेतेषां तिस्रस्तिस्रस्तु भावनाः ।
दातव्या कुप्पिकां कृत्वा सम्यक् संशोष्य चातपे ६९५
भाण्डे तद्धारयेद्भाण्डं मुद्रितं चाथ कारयेत् ।
यामं मन्दाग्निना पक्वो पुटमध्ये ह्यसौ रसः ॥ ६९६ ॥
पुण्डरीकं निहन्त्येव नात्र कार्या विचारणा ।
द्विमासाभ्यन्तरे पुंसामपथ्यं न तु भोजयेत् ॥ ६९७ ॥
रोगाः सर्वे विलीयन्ते कुष्ठानि सकलानि च ।
भानुभक्तिप्रवृत्तानां गुरुभक्तिरतां सदा ॥ ६९८ ॥
रसेन्द्रमङ्गलो नाम्ना रसोऽयं प्रकटीकृतः ।
अनुग्रहाय भक्तानां शिवेन करुणात्मना ॥ ६९९ ॥

रसायनसं, र. म, र. का, कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—हरितालसत्त्व, ताम्र, लोह, पारा, अभ्रक और चांदी इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, तूतिया, मैनसिल, सौवीराञ्जन, कसीस, नीलकीपत्ती, पकेहुए भिलावे और शिलाजीत, आककी जड़कीछाल, केलेकाकन्द, चित्रकमूलजड़, अङ्कोलकीछाल, पीपल, कालेधतूरेकीजड़, बाकुची, प्रियङ्गु और माधवीलताकेबीज, सत्यानाशी, अफीम, मालकांगण, कुचिला, तरहतेजक, तेजबल, गुग्गुल, पुरानामण्डूर, सफेदकनेरकीजड़कीछाल २–२ पल, तिल, सफेदसरसों, राई, कुसुम्भ, अलसी ८–८ मासे लेकर सबका कपड़छान चूर्णकर १ पहर तक खरलकर भ्रङ्गदण्डी, मयूरशिखा, शरपुङ्ख, बन्दाल, नील, लालकटसरैया, लालकपासकेफूल, अभिलास, नीमकामद, बहेड़ा, करञ्ज, भंगरा, खैर, इमलीकेफल, कठूमरकीजड़ इनप्रत्येकके रसोंसे ३–३ भावनाएं देकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख मुहबन्दकर एकपहर मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ मासा उचितानुपानकेसाथ देनेसे दो महीनेमें यह पुण्डरीककुष्ठको नष्टकरताहै । कुष्ठादिसमस्तरोगोंकेलिये यह परमौषधहै । इसके सेवनकरनेवालेको सूर्य और गुरुकी सेवाकरनी उचितहै ॥ १४२ ॥

१४३ रसेन्द्ररसः (प्रथमः)

वङ्गं रसं ताम्रमयश्च भस्म
सर्वैः समानं गगनं विमर्द्य ।
गोक्षुररम्भाऽऽमलकीगवाक्षी-
रसैः पृथग्वासरकं रसेन्द्रः ॥ ७०० ॥
निष्कार्द्धमात्रो मधुना निपीतो
जयेत्प्रमेहं रुधिरस्रुतिञ्च ।
कूष्माण्डनीरं ससितञ्च पेयं
कूष्माण्डखण्डेन युतञ्च शाकम् ॥ ७०१ ॥

र, प्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग, पारा, ताम्र और लोह इनकीभस्में १–१ भाग, अभ्रकभस्म सबकी बराबर लेकर गोखरू, केलेकाकन्द, आंवला, इन्द्रायण इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमें १–१ रोज़मर्दनकर २–२ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देकर सफेदपेठेका रस, शक्करडालकर पिलानेसे प्रमेह और रुधिरस्रावको यह नष्टकरताहै । इसमें सफेदकोंहड़ेकाशाक देना पथ्यहै ॥ १४३ ॥

१४४ रसेन्द्ररसः (तृतीयः)

शुद्धं सूतं समञ्चाऽभ्रं मृतताम्रं विषं समम् ।
गन्धकञ्च समं पिष्ट्वा सूर्यमूलकषायके ॥ ७०२ ॥
मूषान्ते वालुकायन्त्रे दिनैकं मन्दवह्निना ।
पाच्यं चूर्णीकृतं सूक्ष्मं माषं चैवाऽनुपानतः ॥ ७०३ ॥
खादेद्दोषज्वरं हन्ति सन्निपातनिकृन्तनः ।
रसेन्द्ररसनामाऽयं शम्भुना परिकीर्तितः ॥ ७०४ ॥

वै. चि, ज्वराऽधिकारे

भाषा—शुद्धपारा, वत्सनाग और गन्धक, अभ्रक और ताम्रभस्म येसब समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर आककीजड़कीछालके काढ़ेसे १ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर वालुकायन्त्रमेंरख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह दोषीयुज्वार और सन्निपातको नष्टकरताहै

१४५ रसेन्द्ररसः (चतुर्थः)

सूतो गन्धो गगनतपनौ द्व्यब्धिनागक्षमांशा,
निम्बूतोयम्भ.सलितमसकृत्सूर्यतापात्रिगुञ्जः ।
वातं गुल्मं ग्रहणिमुदरं कासशूलं ज्वरार्शः,
कुष्ठं पाण्डुं हरति झटिति स्याऽनुपानाद्रसेन्द्रः ७०५

र शि, सर्वरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा., अभ्रकभस्म ८ भा., ताम्रभस्म १ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर नीबू और चित्रकके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वायु, गुल्म, ग्रहणी, उदर, कास, शूल, ज्वर, बवासीर, कुष्ठ और पाण्डु इनको यह शीघ्र नष्टकरताहै ॥ १४५ ॥

१४६ रसेशरसः

सूतगन्धौ समौ मर्द्यौ धन्वयासरसैस्त्र्यहम् ।
ततो लोहाऽभ्रसंयुक्तौ चन्दनाम्बुविमर्दितौ ॥
सिद्धो रसेशो वल्लैको मूर्च्छां क्षौद्रकणायुतः ॥७०६॥

र, मूर्च्छायाम् ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर जवासेके रसमें ३ रोज़ मर्दनकर पारदके बराबर लोह और अभ्रककी भस्म मिलाकर चन्दनकेरसमें ३ रोज़मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथ देनेसे यह मूर्च्छाको दूरकरताहै ॥ १४६ ॥

१४७ रसेश्वररसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं गैरिकं तुल्यभागं मर्द्यं घर्मे कद्रुतोयेन पश्चात्
शुद्ध्यानीय वासरैकं गुडूचीतोयैस्तावच्छृङ्गवेराम्बुना च

सप्ताहं कटुफारसेन खुरसानीरेण तावद्दिनं,
विश्वायाः स्वरसेन वासरयुगं धात्रीरसे मर्दितः।
सिद्धि यानि रसेश्वरो ससितयुक् सच्छृङ्गवेराम्बुना,
तापं हन्त्यचिरेण वल्लयुगलो मुद्राम्बुमक्ताद्दिनाम ७०८

र, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और गेरू समभाग लेकर मालकांगनी, भटकटैया, गिलोय और अदरखके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर कुटकीके रससे ७ दिन, तुलसीके रससे १ दिन, सोंठ और आंवलोंके रसोंसे २–२ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शकरमिलेहुए अदरखकेरसकेसाथ देनेसे ज्वर शीघ्र नष्टहोताहै। भूखलगनेपर मूंगकायूष और भातदेना॥ १४७॥

१४८ रसेश्वररसः (द्वितीयः)

सूतो गन्धकभागिको दिवसयुक् सम्मर्दितो भूशिवा,-
धाभिः सूतदलाऽहिफेनसहितो विश्वाविषाक्षौद्रयुक्।
बालाश्रीफलधातकीगुडयुतो स्वीयाऽनुपानैरपि,
सिद्धः खल्वतिसारनामहरणः श्रीसूतनामाभिधः ७०९

र, अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भुईआंवलेकेरससे एकदिन मर्दनकर पारेसे आधी अफीम मिलाकर १–२ दिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली सोंठ, अनीस और मधुकेसाथ अथवा सुगन्धवाला, बेलगिरी, धावडीकेफूल और गुडकेसाथ अथवा तन्द्रोगहरानुपानोंकेसाथदेनेसे यह अतिसारको दूरकरताहै॥१४८॥

१४९ रसेश्वररसः (तृतीयः)

रसोऽश्वगन्धा मुशली शतावरी
मुस्ता गुडूची मधुकर्कटी च।
गोक्षुरकं कोकिलबीजचूर्णं
केतक्यकन्दस्वरसे दिनैस्त्रिः॥ ७१०॥
त्रिधारभृङ्गेण च भावयेत्त-
द्गुञ्जाऽष्टकं दुग्धसितायुतश्च।
गोधूमपथ्यं निशि सर्वमेह
रसेश्वरोऽयं स तु कामुकानाम्॥ ७११॥

रसायनस, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—पारदभस्म, असगन्ध, मुसली, शतावर, नागरमोथा, गिलोयसत्व, चकोतरे की जड, गोखरू, तालमखाना समभाग लेकर बारीक चूर्णकर केतकीकन्द और भंगराके रससे ३–३ रोज भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै। इसमें रात्रिकेसमय गेंहू खानेकोदेवे। यह कामियों केलिये उत्तम वाजीकरणहै॥ १४९॥

१५० रसेश्वररसः (चतुर्थ.)

गन्धत्रययुतं सूतं मारयेत्पुटयोगतः।
पचेत्तं चक्रयन्त्रे च गन्धकेन समन्वितम्॥ ७१२॥
विषं फलांशकं दत्त्वा दीपनौषधिभावितम्।
पित्तैश्चोपविषे भाव्यं वटी माषप्रमाणिका॥ ७१३॥
ख्यातो रसेश्वरः सूतः सन्निपातविनाशन.।
भिषग्भिश्च प्रदातव्यं शीतस्नानञ्च रोगिणे॥ ७१४॥
अगदः सर्पदष्टस्य मृतसञ्जीवनः परः।
कामणेन समायुक्तः सर्वव्याधिविनाशनः॥ ७१५॥

रससार, रसायने।

भाषा—एककर्षपारेमें गन्धक, हरिताल, और मैनसिल १–१ कर्षका बारीकचूर्ण थोडाथोडा डालकर मूर्च्छितकरे। कुछ बाकीरहनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाकर कज्जलीकर चक. यन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेसे १६ वा हिस्सा शुद्धवछनाग मिलाकर दीपन औषध, पित्त और उप. विषोंके यथालाभस्वरस अथवा क्वाथोंकी भावनाएं देकर उडद बराबर गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै। रसकी तीव्रताकेलिये ठंढेपानीसेस्नानकराना। सर्पदष्टको ३–३ घण्टेके अन्तरसे खिलाना और लेपकरना, नाक–आंख और कानोंमें डालना। कामण औषधियोंकेसाथ देनेसे यह सब बीमारियोंको नष्टकरताहै॥ १५०॥

१५१ राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरीरसः

वत्सनाभरसगन्धमौक्तिकं
चित्रकाऽऽर्द्रकरसेन पेषितम्।
निक्षिपेद्द्विजसम्पुटे ततो
लेपितश्च लवणाद्यमृत्स्नया॥ ७१६॥
पूर्ववच्च परिपाचितो भवे-
द्राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरी।
त्र्यूषणार्द्रकरसैः सुभावितं
योजयेच्च सुकणैर्मधुप्लुतैः॥
शृङ्गवेरकणचूर्णितोऽथवा
मागधीमधुगुडूचिकान्वित.॥ ७१७॥

र दी, र प्र. सु, र च, राजयक्ष्मणि।

टि०–र प्र सु, र च, एतयो वैद्यमहरनाम्ना पाठोऽस्ति तस्मिन् सर्वाण्येव वस्तूनि भावनाश्चाप्यनेन रसेन समाना सन्ति, केवल तस्मिन् रसे मुक्तास्थाने सुवर्णमस्ति इतिविशेषो दृश्यते। परन्त्वस्मिन् रसे सुवर्ण भिकतया नियुज्य द्वयो पाठयोरकपाठ सम्पत्स्यते गुणवृद्धिरपि महती सम्पत्स्यते, अतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव कर्णीय।

भाषा—शुद्धवछनाग, पारा और गन्धक, मोती और सुवर्णभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकमूल और अदरखकेरससे १–१ रोज मर्दनकर औषधके बराबरके ताम्र सम्पुटमें रखकर सन्धिबन्दकर बाबीकीमिटी और नमकसे कपड मिट्टीकर सुखाकर कपडछनकीहुई सफेदराख ४–४ अङ्गुल ऊपर नीचे देकर हंडीमेंरख चूल्हेपर एकपहर मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरखकेरसकी १–१ दिन भावनादेकर पीपल और मधु अथवा अदरख और पीपल

अथवा पीपल, मधु और गिलोयकेसाथ देनेसे यह राजय क्ष्मको नष्टकरताहै ॥ १५१ ॥

१५२ राजयक्ष्महररसः

रसेन्द्रदाङ्गिणौ तुल्यौ ग्राह्यौ तिन्दुकमानकौ ।
खल्वयेन्मतिमान्वैद्यो प्रहरे नागनेत्रकैः ॥ ७१८ ॥
ततस्तत्सिद्धिमायाति दद्यात्तण्डुलसम्मितम् ।
मधुना वा सिताऽऽज्येन लिह्याच्छोषस्य शान्तये ७१९
कुलित्थसूपभक्तञ्च शोभाञ्जनदलोद्भवम् ।
शाकं त्वलाबुसम्भूतं मरिचं तुण्डिकेरिकम् ॥ ७२० ॥
दिनसप्ताहं भजेद्यक्ष्मी जीवितुं रोगमुक्तये ।
अनुभूतः प्रयोगोऽयं स्वयं प्रोक्तो पिनाकिना ॥७२१॥

रसायनसं , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारेकीभस्म अथवा रससिन्दूरादि मूर्छितपारा और शुद्ध बछनाग दोनों समभाग लेकर २८ पहरतक खरलकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ चावलकीमात्रा मधु अथवा घी, शकर के साथ देनेसे राजयक्ष्मी अच्छा होजाताहै इसमें कुलथीकीदाल और सहिजनकीफली, लौकी, कुंदरू, कालीमिर्चे इनका सेवन करावे । चौदहदिनकेसेवनसे रोगीको अद्भुत फायदा नजर आनेलगताहै ॥ १५२ ॥

१५३ राजयक्ष्महरयोगः

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो
यदस्तो हेममयः क्षयं क्षिणोति ।
वितथ.प्रभवेदयं प्रयोगो
यदि तन्मे शपथःसदा शिवस्य ॥ ७२२ ॥

वै म , रसायनस , नि र , र च , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सोनेकावर्क एकमा लेकर मक्खन, मिश्री और शहद उचितमात्रामें शामिलकर रोजाना एकबक्तखानेको देवे तो इससे क्षयनष्टहोजाताहै यहप्रयोग जिनको रक्तगिरताहो उनपर अच्छाकामकरताहै ॥ १५३ ॥

१५४ राजराजेश्वररसः (प्रथमः)

आतपे मर्दयेत्सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२३ ॥
भृङ्गराजद्रवं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।
त्रिफला ग्वादिरसारममृता वाकुचीफलम् ॥ ७२४ ॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षं भक्षयेत्सदा ॥ ७२५ ॥
दद्रुकिटिभकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुञ्जेन निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२६ ॥

र स , र मु र चि , यो म , र क , कुष्ठरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, स्वमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल सब समभागलेकर धूपमें बैठकर नीलवर्ण कज्जलीकर भंगरेकेरससे एकरोजमर्दनकर त्रिफला, खैरसार, गिलोय, बाकुची ये प्रत्येक पारेकेबराबरलेकर बारीकचूर्णकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे २ रत्तीकीमात्रा १–१ तोले मधु और घीकेसाथ मिलाकर खानेसे दाद, किटिभ और मण्डलकुष्ठ नष्टहोते हैं ॥ १५४ ॥

१५५ राजराजेश्वररसः (द्वितीय.)

हरवीर्यं शुद्धगन्धं तालकं माक्षिकं समम् ।
त्रिक्षारं दीप्यकं हिङ्गु मर्दितं दिवसद्वयम् ॥ ७२७ ॥
चित्रमूलकषायेण वालुकायन्त्रके पचेत् ।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥ ७२८॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।
अनुपानविशेषेण राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२९ ॥

वै चि , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामाखी, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, अजवाइन, भुनीहींग सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रमूलके काढेसे दोरोजमर्दनकर २–३ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर यथालाभ मछलीके पित्तकी भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सबप्रकारके सन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

१५६ राजलीलागुटिका

शिलायाः शुद्धसूतस्य चत्वारिंशच्च रक्तिकाः ।
कणाख्यगुग्गुलोस्तद्वत्तथा सौगन्धिकस्य च ॥७३०॥
रक्तिकाविंशतिर्ग्राह्या अलकामाजयात्वचाम् ।
अशीति दन्तिबीजस्य पयसा शोधितस्य च ॥७३१॥
चूर्णयित्वा तत. सर्वं फलक्वाथेन मर्दयेत् ।
निकुम्भस्य कषायेण कृमिघ्नस्वरसेन च ॥ ७३२ ॥
कारयेद्राजलीलाख्याः षट्त्रिंशद्गुटिकास्ततः ।
एकैकां शीलयेत्प्रातः शीतेनाऽऽलोड्य वारिणा॥७३३॥
यातादिमुच्यते प्राणी यावदुष्णं न शीलयेत् ।
पाण्डुज्वरार्शः शोफार्दीन्नियच्छति गदान्हठात्॥७३४॥

ढ. मृ , पाण्डुधिकारे ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, पारा, कणागूगल और गन्धक ४०–४० रत्ती, अम्बाहली, भाग और तज २०–२० रत्ती, दूधसे शोधाहुआजमालगोटा ८० रत्ती लेकर सबका बारीकचूर्ण कर मैनसिल, पारा और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिफला, दन्तीमूल और विडङ्ग इनके स्वरस अथवा काढेसे ए दिन घोटकर ३६ गोलिया बनावे इनमेंसे १–१ गोली सुबह ठंढे पानी के साथ सेवनकर । इससे दस्तहोंग, जबतक ठंढापानी पीतारहेगा तबतक दस्तहोवेंगे और गरमपानीपीनेसे बन्द होवेंगे । इसके सेवनसे पाण्डु, ज्वर, बवासीर और शोथ प्रभृति रोग नष्ट होते हैं ॥ १५६ ॥

१५७ राजलीलारसः

अथाऽपरं प्र[illegible] व्यामि जलोदरनिवृत्तये ।
शुद्धताम्रोत्थ[illegible] यथाऽनुभवयोगत ॥ ७३५ ॥

तोलकांश्चतुरः सूताच्छुद्धाद्गन्धकतस्तथा ।
कणागुग्गुलुतस्तद्वत्क्षीरिण्याश्चतुरस्त्वथ ॥ ७३६ ॥
कट्फलतश्च चतुरस्तित्तिरीफलतस्तथा ।
देवदालीरसैः पूर्वं दन्तीक्वाथेन तत्तथा ॥ ७३७ ॥
त्रिदिनं त्रिदिनं मर्द्यस्त्रिवृताक्वाथतस्ततः ।
भावनाश्च ततो देयाः पञ्चविंशतिसङ्ख्यया ॥ ७३८ ॥
एतैरेवौषधैः सूते वटीः पश्चात्प्रबन्धयेत् ।
मरिचस्य प्रमाणेन छायायां शोषयेद्बुधः ॥ ७३९ ॥
एवं संसाध्य वटिका रोगिणे सम्प्रयोजयेत् ।
आषाढपूर्वपक्षे च पाचनं सम्प्रदापयेत् ॥ ७४० ॥
सैन्धवं मणिमन्थाख्यं घृतेन सह पाययेत् ।
दिनत्रयं प्रयत्नेन केतकीस्तनवारि च ॥ ७४१ ॥
मुद्गक्वाथो भवेत्पथ्ये विलेपी शालिजाऽथवा ।
त्रिकटुत्रिफलाक्वाथमेकतः पाययेत्त्रिपक् ॥ ७४२ ॥
त्रिदिनं पूर्ववत्पथ्यं प्रयुञ्जीत विचक्षणः ।
एवं संस्वेदितं पश्चाद्रेचयेत्तं रसेश्वरम् ॥ ७४३ ॥
शीतोदकेन वटिकामेकां दद्याच्च रोगिणे ।
पलद्वयञ्च पानीयं नाऽऽधिक्यं न च हीनता ॥७४४॥
पाययित्वा रसयुतं ताम्बूलं सम्प्रदापयेत् ।
यावद्भिरिच्यते जन्तुस्तावद्वारांश्च वारिपः ॥ ७४५ ॥
रेचनानि च तावन्ति न हीनान्यधिकानि वा ।
मलाश्च प्रथमं यान्ति तत आमानि यान्त्यधः ॥७४६॥
यावच्छीतोपचारः स्यात्तावद्रेचो भवेद्ध्रुवम् ।
आतपस्य च सेवायां विरेको विनिवर्तते ॥ ७४७ ॥
कराङ्घ्री तापयेदग्नौ स्तम्भनं तत्क्षणाद्भवेत् ।
शाल्यन्नं गोघृतं पथ्यं क्षैरेयमथवा भवेत् ॥ ७४८ ॥
दुग्धोदनं वा भुञ्जीत तवराजेन संयुतम् ।
एकवारं दिने देयं पथ्यं रात्रौ न दीयते ॥ ७४९ ॥
निशीथिन्यां प्रयुञ्जीत मधुना पिप्पली दश ।
एवञ्च कार्तिकं यावत्क्रिया कार्या विचक्षणैः ॥ ७५० ॥
पाचनं शुक्लपक्षे स्यात्कृष्णपक्षे विरेचनम् ।
एवं क्रियायां सिद्धायामुदरं विनिवर्तते ॥ ७५१ ॥
गुल्मप्लीहामवाताश्च पक्तिशूलं भगन्दरम् ।
अर्शांसि ग्रहणीदोषानश्मरीं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ ७५२ ॥
निवर्तयेन्न सन्देहः पाक्षिकाष्टकयोगतः ।
राजलीलाभिधो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ ७५३ ॥
जलोदरादिशान्त्यर्थं सम्प्रदायात्प्रकाशितः ।
दृष्टप्रभावः स्पष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ॥
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ।

रसालङ्कारे, उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कणागूगल, जड, रेवनचीनी, शुद्धजमालगोटा सब ४-४ तो ... के यथासम्भवस्वरस ... ७१२ ॥ ... क्योंकि ... ह्रौंको ... ऊँमियों ...

...दकर मरिचप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े । इसरसका प्रयोग करना हो तो आषाढकृष्णपक्षमें ३ दिनतक घीमें मिलाकर १-१ तोला सीसानमक देवे ऊपर से केतकीकीजड़का पानी ४-४ तोले पिलावे । मूगखानेपर मूंगकायूष अथवा चावलकी काञ्जी देवे फिर तीनदिनतक त्रिकटु और त्रिफलाक्वाथ पिलावे, पथ्य पूर्ववत् देवे । इसतरह पाचनदेकर स्वेदनक्रियाके रेचनदेवे । उसके लिये पूर्वोक्त १ गोली देकर २ पल ठंढापानी पिलावे फिर १ गोलीपानमें रखकर देवे । इसकेलेनेसे पहिले मल फिर आम निकलताहै । जबतक शीतोपचार करतारहेगा तबतक दस्तहोते रहेंगे, धूपमें बैठने तथा गरमपानी पीनेसे विरेचन बन्द हो जायगा । यदि इससे बन्द न हो तो हाथपैर अग्निसे सेकने चाहियें । मूगखानेपर गायकाघी, चावल अथवा खीर अथवा दूधचावल अथवा तीवुरकीखीर बनाकर देवे । दिनमें एकबार पथ्यदेनाचाहिये रात्रिमें नहीं । रात्रिमें १० पीपलकाचूर्ण मधुकेसाथदेवे । इसतरह जबतक कार्तिक न आवे तबतक क्रिया करे । शुक्लपक्षमें पाचन और कृष्णपक्षमें विरेचन देवे । इसतरह करनेसे उदररोग, गुल्म, प्लीहा, आमवात, पक्तिशूल, भगन्दर, बवासीर, ग्रहणी, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह ८ पक्षमें निवृत्तकरताहै ॥ १५७ ॥

१५८ राजवटी (महदाद्या)

रसगन्धकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥ ७५५ ॥
स्वर्णं ताम्रञ्च कर्पूरं प्रत्येकं कर्षपादिकम् ।
शाकाशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥ ७५६ ॥
कोकिलाक्षं विदारी च मुशली शुकशिम्बिकम् ।
जातीफलं तथा कोपं बला नागबला तथा ॥ ७५७ ॥
माषद्वयेन संयुक्तस्तालमूल्या रसेन च ।
पिष्ट्वा च वटिका कार्या चतुर्गुञ्जा प्रमाणतः ॥ ७५८ ॥
मधुना भक्षयेत्प्रात विषमज्वरशान्तये ।
धातुस्थांश्च ... मधुगुड्चिकान्वितः ॥ ७५९ ॥ ... ॥
वातिकं ... प्र. सु., र. चं , राजयक्ष्मणि ।
ज्वरं ...

... सु , र च , एतयो र्यक्ष्महरनाम्ना पाठोऽस्ति तस्मिन् ... वस्तूनि भावनाश्चाप्यनेन रसेन समाना सन्ति, केवलं तस्मिन् ... स्थाने सुवर्णमस्ति इति विशेषो दृश्यते। परन्त्वस्मिन् रसे सुवर्णम ... भिकतया नियुज्य द्वयो पाठयोरेकपाठ सम्पत्स्यते गुणवृद्धिरपि महती सम्पत्स्यते, अतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावः करणीय ।

भाषा—शुद्धवच्छनाग, पारा और गन्धक, मोती और सुवर्णभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकमूल और अदरखकेरससे १-१ रोज मर्दनकर औषधके बराबरके ताम्रसम्पुटमें रखकर सन्धिबन्दकर बाबीकीमिट्टी और नमकसे कपड़मिट्टीकर सुखाकर कपड़छनकीहुई सफेदराख ४-४ अङ्गुल ऊपर नीचे देकर हंडीमेंरख चूल्हेपर एकपहर मन्दाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरखकेरसकी १-१ दिन भावनादेकर पीपल और मधु अथवा अदरख और पीपल

तोन घोटकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इस मेंसे १–१ गोली मधुकसाथ खानेसे विषम, धातुस्थ, वातिक, पैत्तिक, सान्निपातिक इत्यादि समस्तज्वर, कास, श्वास, क्षय, कृशता, बलहानि, शुक्रनाश, ऊर्द्ध्वश्लेष्मरोग, दारुणसन्निपात, कामला, पाण्डु, प्रमेह, रक्तपित्त इनसबको यह नष्टकरतीहै १५८

१५९ राजवल्लभरसः (प्रथम)

रसगन्धौ पृथङ्निष्को निष्कमात्र. प्रदीपन. ।
सार्द्धं पलं प्रदातव्यं चूलिकालवणं भिषक् ॥ ७६३ ॥
खल्वे सम्मर्दयेत्सत्तु शुष्कवस्त्रेण गालयेत् ।
माषमात्रः प्रदातव्यो भुक्तमांसादिजारकः ॥
अजीर्णेषु त्रिदोषेषु देयोऽयं राजवल्लभ ॥ ७६४ ॥

र म, रसायनस, र च, यो म, र सु र चि, नि र, भै सा, ना वि, र का, र स, अजीर्ण। र स प्रदीपन-रसेति नाम।

टि०—सर्वेण साक दत्तश्चेदर्थेविरसासामक ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग ४–४ मासा, शुद्धनवसादर ६ कर्ष लेकर पारा–गन्धक और बछनागकी नीलवर्ण कज्जलीकर नवसादरको मिलाकर कपड़ेसे छानकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ मासा तक्रप्रभृति समयो चितानुपानकेसाथ लेनेसे यह मांसादि गरिष्ठपदार्थोंको तत्क्षण जीर्णकरताहै। अजीर्ण और त्रिदोषजन्यव्याधियोंमें यह अत्यन्त उपकारकहै ॥ १५९ ॥

१६० राजवल्लभरसः (तालकेश्वर) (द्वितीय)

पारदं मौक्तिकं वज्रं गगनं हेमनागकम् ।
बलिवज्रश्च शुल्वश्च वैक्रान्तं तालकं शिला ॥ ७६५ ॥
अमृतं म्लेच्छलोहानि प्रवालं चन्द्रभूतिका ।
समभागेन तत्खल्वे शुष्कं मर्द्यं दिनद्वयम् ॥ ७६६ ॥
कूष्माण्डकल्कतोयेन भावयेद्दिवसत्रयम् ।
मार्कवस्वरसैः भृङ्गराजराजेश्वररसः (अध्या०७ ॥
भस्मातैले मर्दयेत्सूतं गन्धकं मृततास्रकम् ।
मुहुस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२०
भृङ्गराजद्रवं दत्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।
त्रिफला खादिरंसारममृता वाकुचीफलम् ॥ ७२४ ॥
प्रत्येकं सततुल्यं स्याच्चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षं भक्षयेत्सदा ॥ ७२० ॥
दद्रुकिटिमकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुञ्जेन निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रस ॥ ७२६ ॥

र स, र सु र चि, यो म, र क, कुष्ठरोगाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ताम्रभस्म, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल सब समभागलेकर धूपमें बैठकर नीलवर्ण कज्जलीकर भंगरेकेरससे एकरोजमर्दनकर त्रिफला, खैरसार, गिलोय, बाकुची ये प्रत्येक पारेकेबराबरलेकर बारीकचूर्णकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे २ रत्तीकीमात्रा १–१

वल्लमात्र. प्रदातव्या दोषाणामनुपानत ।
सर्षपा बाकुची कुष्ठमजाजी च हरीतकी ॥ ७७५ ॥
वराटी मरिचं शुभ्रं रजनीद्वयवालुकम् ।
एतत्खल्वे विनि.क्षिप्य वस्त्रमूत्रेण योजयेत् ॥ ७७६ ॥
दिनत्रयं ततो ज्ञात्वा चूर्णं कृत्वा पुनस्तत. ।
ग्रहण्यामतिसारे च वराटी जरण जया ॥ ७७७ ॥
राजवल्लभविख्यात पूज्यो गोप्यतमः सदा ।
पथ्य रोगानुसारं स्यात्सर्वकुष्ठकुलान्तक ॥ ७७८ ॥

र स, कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध पारा और मोती, वज्र, अभ्रक, सुवर्ण और नागभस्म, शुद्धगन्धक, हीरा, तावा, वैक्रान्त और हरितालभस्म शुद्धमैनसिल, बछनाग और शिंगरिफ, लोह, प्रवाल और चादी कीभस्म सममागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सूखादोरोज मर्दनकर सफेदकोंहड़ा, भंगरा, अडूस, भिलावेका तैल, अदरख, खैर, नीम, कपूर, पद्मकाठ, गिलोय, अजवाइन, बाकुची, त्रिजात मरवा, सहदेवी, पुनर्नवा, त्रिफला, गोखरू, इनप्रत्येकके द्रवोंसे १२–१२ घड़ीमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर हाथभरके खड्डेमें कण्डोंकीआंचदे। स्वांग शीतलहोनेपर निकालकर दूसरे द्रवमें घोटकर आचदे। इसतरह सबमें पुटदेनेकेबाद दो कर्ष शुद्धबछनागकाबारीकचूर्ण मिलाय अभीरीनीबूकेरससे दोरोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे। १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे मण्डल, श्वित्र, दद्रु, कण्डु, औदुम्बर, श्याम वेसव कुष्ठ, रात्रिमें पित्तप्रकोप, सबप्रकारकीग्रहणी, रक्तपित्त, कण्ठ और छातीकाअवरोध, पाण्डु गुल्म, जलोदर, रक्तदोष, समस्तशूल, वेसबरोग नष्टहोतेहैं। कुष्ठोंमें सफेदसरसों, बावची, कूठ, जीरा, हर्रे, पीलीकौड़ीकीभस्म, सफेदमिर्च, हल्दी, दारुहल्दी, गेंहुला, येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर अवान बकरेकेमूत्रमें ३ दिन तकमर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे कुष्ठप्रधानव्याधियोंमें अनुपानरूपसेदेवे। पीलीकौड़ी, जीरा और भाग इनकेसाथ ग्रहणी और अतिसारमें देवे। इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥१६०॥

१६१ राजवल्लभरसः (तृतीयः)

लोहभस्मविडङ्गानि त्रिफला च शिलाजतु ।
पर्णं पिप्पलीमूलं चव्यं कृष्णतिला. समम् ॥७७९॥
...स्य त्रिगुणो वह्नि लोहाङ्गल्लातकी तथा ।
एक...तश्च लोहांशं सर्वस्य द्विगुणो गुड. ॥ ७८० ॥
...निहन्त्याशु ह्यर्शोमन्दाग्निपाण्डुताम् ।
...दर्दं कास श्वयथुश्च विनाशयेत् ॥ ७८१ ॥
...न्द होजायं मु ।

शोथ प्रभृति ...भस्म, विडङ्ग त्रिफला, शिलाजीत, त्रिकुटु, ...कालेतिल और चातुर्जात समभागलेकर लोह अथाऽपरं प्रवक्ष्ये मिलावे मिलाकर बारीकचूर्णकर सबसे गुरुशास्त्रोक्तमार्गे.१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े।

१७३ रामबाणरसः (पञ्चमः)

द्विनिष्कं रसकञ्चैव मयूरं चैकनिष्ककम् ।
निष्कार्धं मूषिकारिश्च कारयह्यारसैर्दिनम् ॥ ८२९ ॥
मर्दयेद्वटिकीकृत्य भक्षयेद्गुडसंयुतम् ।
मुद्गमात्रप्रमाणेन ह्यपक्वमतिघोरकम् ॥ ८३० ॥
चातुर्थिकज्वरं हन्ति रामबाणश्च नामतः ।
क्षीरान्नमेव पथ्यं स्यादन्यथा विकृतिं भवेत् ॥
मत्स्येन्द्रभाषितं गुप्तं पुत्रायाऽपि न कथ्यते ॥ ८३१ ॥

रसायनस , र का ज्वराऽधिकारे ।

टि०—शिखितुत्थं सोममलं हराशं मर्दयेत्यहम् । कृष्णधत्तूरतोयेन मर्दनाच्च ज्वराङ्कुश ॥ साध्याऽसाध्यान्निहन्त्याशु ज्वरांश्च विषमाँस्तु ॥" इति रसशास्त्रेनो ज्वराङ्कुशनाम्ना पाठोऽस्ति तत्र खर्परस्थाने पारदो दृश्यते तद्रसमनोऽत्रैव प्रक्षेपं दत्वा धत्तूरकारवल्लीभ्यां भावना प्रदाय एक एव रसो निष्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध खपरिया ८ माशे, तूतिया ४ माशे, सोमल २ माशे लेकर बारीकचूर्णकर एकदिनकरेलेकेरससे मर्दनकर मूंग बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़के-साथ देनेसे यह अपक्व घोरचातुर्थिकज्वरको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य खीर खिलाना अन्यथा उपद्रव करेगा ॥ १७३ ॥

१७४ रामबाणरसः (षष्ठः)

श्वेतं क्षारं च पीतं च पारदं मृतसिंहकम् ।
मनःशिला बलिश्चैषामेकभागं पृथक्पृथक् ॥ ८३२ ॥
त्रिभागं श्वेतखदिरं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।
नागवल्लीदलरसैश्चतुर्याम भिषग्वरः ॥ ८३३ ॥
मुद्गमाना वटी कार्या पकान्तां भक्षयेन्नर. ।
पथ्यं मुद्गाढकीयूषं लवणेन विना हृतम् ॥ ८३४ ॥
चतुर्दशदिनान्येवमुपदंशी चरेन्नर. ।
सोपदंशं सर्ववातं साध्याऽसाध्यञ्च नाशयेत् ॥
रामबाणरसो नाम्ना कथितो रससागरे ॥ ८३५ ॥

र सु , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल, पारद और बङ्गभस्म, शुद्धमैनसिल और गन्धक १–१ भाग, सफेदकत्था ३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे ४ पहरमर्दनकर मूंगबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे १४ दिनकेभीतर उपदंशसहित साध्य अथवा असाध्य वातरोग नष्टहोताहै । इसमें मूंग और अरहर-कीदाल, गेंहूका आटा ओर घी खानेको देना । नमक भूलकर भी नहीं देना ॥ १७४ ॥

१७५ रामबाणरसः (सप्तमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं तत्समं चन्द्रपुष्पकम् ।
जातीफलं त्रिकटुकं यवक्षारञ्च तत्समम् ॥ ८३६ ॥
विषं सूतसमं दद्यात्सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
नागवल्लीदलयुतं रामबाणो महारस. ॥ ८३७ ॥

रक्तिकैकप्रमाणेन सन्निपातेऽतिदारुणे ।
विषमेषु च सर्वेषु प्रयोक्तव्यो महारस. ॥ ८३८ ॥

र प्र , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १–१ भाग, रसकपूर, जायफल, त्रिकटु, यवक्षार २–२ भाग, शुद्धबछनाग, एक भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर एकरोज पानके रससे घोटकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दारुणसन्निपात, विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै ॥ १७५ ॥

१७६ रामबाणरसः (अष्टमः)

सूतं टङ्कणमभ्रकञ्च दरदं तीक्ष्णं रविं कान्तजं,
स्वर्णं मौक्तिकविद्रुमं बलिवसां तारं त्रपुं माक्षिकम् ।
भूमिश्चन्द्रकलाब्धिनेत्रमनयः पक्षावृतुः कालपो,
युग्मं नेत्रमिषुप्रमाण क्षतधस्त्वेतानि भागैः क्रमात्८३९
कस्तूरी घनसारजातिफलजात्यम्पत्रदिव्यं तथा,
सर्वं पूर्वतनाच्च माननिचयाद्योज्यञ्च येदैर्मितम् ।
श्रीखण्डत्रिफलाम्बुकजलजैः पुन्नागजम्बीरवा-,
ह्रींबेरोत्पलमल्लिकाकुमुदजैर्द्रावैर्भृशं भावयेत् ॥८४०॥
माषार्द्धं मधुशर्करात्कपयसा कालद्वयं सेवये-,
द्गुल्मप्लीहभगन्दरज्वरमुखान्दोषाञ्जयेत्सत्त्वरम् ।
मेहान्मूत्रभवा रजश्च शमयेत्कृच्छ्रांश्च दोषाञ्जये-,
देतद्वैद्यमनेकरोगहरणं विश्वेश्वरैर्निर्मितम् ॥ ८४१ ॥

वै चि (ल), रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, सुनासुहागा १ भा, अभ्रक १६ भा , सिंगरिफ ४ भा , फोलाद ३ भा , ताम्र १४ भा , कान्तलोह २ भा , सुवर्ण ६ भा , मोती १२ भा , मूगा २ भा , इनसबकीभस्मे, शुद्धगन्धक २ भा ,चांदीभस्म ५ भा.,बङ्गभस्म ६ भा , सोनामाखी ६ भा , कस्तूरी, शुद्धकपूर, जायफल,जावित्री, पत्रज और लवङ्ग ४–४ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सफेदचन्दन, त्रिफला, एरण्डमूल, कमल, पुनाग, जम्भीरी, सुगन्धवाला, ह्रीबेर, सफेद कमल और मोगरा तथा कुमुदकेफूल इनप्रत्येकके द्रवोंसे यथाशक्ति भावनाए देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम मधु और शक्कर मिलेहुए दूधकेसाथ अथवा यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, प्लीहा, भगन्दर, ज्वर, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै॥१७६॥

१७७ रामबाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी)९

जातीं लवङ्गं तालञ्च द्विनिष्कन्तु पृथक्पृथक् ।
निष्कं मूषिकपाषाणं धत्तूरेण विमर्दयेत् ॥ ८४२ ॥
गुञ्जामात्रा वटी. कुर्याच्छायायां शोषयेत्तत. ।
शर्करामरिचैर्योज्यं शीतं चातुर्थिकं जयेत् ॥ ८४३ ॥
मुद्गसारेण पयसा योजयेद्वा समाहित. ।
रामबाणरसो नाम शीतमातङ्गकेसरी ॥ ८४४ ॥

भाषा—जायफल, लवङ्ग और रसमाणिक्य ८-८ माशे, शुद्धसोमल ४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे १-२ रोज़ मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामेंसुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर, मरिच अथवा मूंगकेयूषकेसाथ देनेसे यह चातुर्थिकज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

१७८ रामबाणरसः (दशमः)

नीलाञ्जनञ्च तुत्थञ्च गौरीपाषाणमेव च।
धुत्तूरपत्रस्वरसे पेषितं गुटिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥
क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्तिडिकाकृति।
रामबाण इति ख्यातो भिषगाश्चर्यकारकः ॥ ८४६ ॥
र. क. यो., ज्वरे।

भाषा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतुतिया, सोमल समभागलेकर बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली शक्करयुक्त दूधकेसाथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और बारीसे आनेवाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य करवाताहै ॥ १७८ ॥

१७९ रामबाणरसः (एकादशः)

रसं तुत्थं शिलां तालं खर्परं मरिचं समम्।
मर्दयेज्जम्भनीरेण रसोऽयं रामबाणकः ॥ ८४७ ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, तुत्थ, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली जंभीरीकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० रामबाणरसः (शीतकुलान्तकः) १२

नीलाञ्जनञ्च तुत्थञ्च गौरीपाषाणमेव च।
खर्परं श्वेतपाषाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य जम्बीरेण विमर्दयेत्।
वटकान् माषमात्रांश्च शर्कराजीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥
अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम्।
रामबाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—नीलाञ्जन, तुत्थ, सोमल, खपरिया, गोदन्तीहरिताल, मैनसिल और हरिताल इनकीभस्में, (नीलाञ्जनको छोडकर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके डालना) सब समभागलेकर जमीरीकेरससे १-२ रोज़ मर्दनकर उडदबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और जीरेकेसाथ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

१८१ रामबाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी) १३

गौरीपाषाणकं शुद्धं क्षीरतुत्थं तथैव च।
सुधा सर्वसमा योज्या जम्बीरेण विमृद्य च ॥ ८५१ ॥
चणप्रमाणवटकांश्छायायां शोषयेद्बुधः।
रामबाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेसरी ॥ ८५२ ॥
र. क. यो., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्धसोमल और तुतिया समभागलेकर दोनोंके बराबर पत्थरकाचूना मिलाकर जंभीरीके रससे १ रोज़ मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरका नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

१८२ रामबाणरसः (अमोघादिः) १४

शुद्धं द्वयं टङ्कणतालसञ्ज्ञकम्
नीलाञ्जनं सूतविषे बलेर्वसाम्।
द्वयञ्च पाषाणरसाञ्जनं शिला
पृथक् समं जम्भरसैस्त्रिमर्दितम् ॥८५३॥
निर्गुण्डिकापत्ररसैस्त्रिमर्दितं
पुटं ततः कुक्कुटकप्रमाणकम्।
अमोघकं विश्रुतरामबाणकम्
वल्लद्वयं क्षौद्रसितादिभेचितम् ॥ ८५४ ॥
ऐकाहिकं द्वित्रिचतुर्थकञ्च
शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च।
पथ्यञ्च शाल्योदनमुद्गसूपं
दध्ना च तक्रेण रसैश्च जाङ्गलैः ॥ ८५५ ॥
भुक्त्वा चेक्षुरसादिकञ्च कदली खर्जूरिकादाडिमं,
कापित्थं तनुलेपनं मलयजैः प्रौढाङ्गनाऽऽलिङ्गनम् ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सुहागा, हरिताल, सुरमा, शुद्धपारा, बच्छनाग, गन्धक, सफेद और पीलासोमल, रसौत, मैनसिल येसब समभाग लेकर बारीकपीस पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर जंभीरी और निर्गुण्डीकेपत्रस्वरससे ३-३ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा शक्कर और मधु वगैरह केसाथ देनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेचावल और मूंगकीदाल अथवा दही छाछ अथवा जंगलीपशुपक्षियोंका मांसरस, ईखकारस, केला, खजूर, अनार, कैथ येसब देवे। चन्दनका लेपकर प्रौढस्त्रियोंका आलिङ्गन करावे ॥ १८२ ॥

१८३ रामबाणरसः (पञ्चदशः)

रसगन्धकताम्राणि टङ्कणं त्रिफला विषम्।
एतानि समभागानि नेपालं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥
कारवल्लीरसैर्मर्द्यं मर्दयेद्याममात्रकम्।
गुञ्जाप्रमाणवटिकां भक्षयेदार्द्रकाम्बुना ॥
रामबाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिषूदनः ॥ ८५८ ॥
र. क. यो., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और वछनाग, ताम्रभस्म और त्रिफला समभाग, जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करेलेकेरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त शीत और विषमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८३॥

१८४ रामबाणरसः (षोडशः)

हिङ्गूलं रसकं रसेन्द्रशिखितुल्याऽऽलं शिला गन्धकं,
ताप्यं गौरशिला विशुद्धिसहितं सर्वं समं भागतः।
कृष्णोन्मत्तरसेन मर्दितमिदं माषप्रमाणा वटी
भुक्त्वा शीतसमर्पितं ज्वरगणं निर्वासयेत्तत्क्षणात्॥८५९

र र कौ, र. मा, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध शिंगरफ, खपरिया, पारा, तुत्थ, हरिताल, मैनसिल, गन्धक, सोनामाखी और सोमल सबसमभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कालेधतूरेकेरससे १–२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८४॥

१८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम्।
बीजं नैकुम्भकं मर्द्यं दन्तीकायेन यामकम् ॥
छिगुञ्जः शूलविष्टम्भाऽनिलं सामज्वरं जयेत् ॥८६०॥

भै र, र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्ध-जमालगोटा सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेकाथसे एकपहर घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे शूल, विष्टम्भ, वायु और आमज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ १८५ ॥

१८६ रास्नादिलोहम्

रास्नाऽश्वगन्धाकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तैः लौहं यस्मान्तकन्मतम् ॥ ८६१ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम्।
हन्ति कासं स्वराऽऽयातं राजयक्ष्मक्षतक्षयम् ॥
बलवर्णाऽग्निपुष्टीनां वर्धनं दोषनाशनम् ॥ ८६२ ॥

र स, र सु, ध., र. च, र. क, र र, यो र, ना वि, नि र., लो प, भै र, वृ यो. त राजयक्ष्मणि।

टि०—र सु द्वितीयस्थाने दशाङ्गलोहमिति नामस्थानिनम्। यो र, वृ यो त, ना वि, एतेषु चतुर्दशाङ्गलोहमिति नाम। लो प चतुर्दशायस इतिनाम। भै र यक्ष्मान्तकलोहमिति नामअत्र त्रिवयशब्देन त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमदा भाषा, योगरत्नाकरीयपाठे अभ्रगन्धस्थाने तालीस नियोनिनमिति विशेष, नाम च चतुर्दशाङ्गलोहमिति।

भाषा—रास्ना, असगन्ध, कपूर, ब्राह्मी, मैनसिल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद (विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक) सब समभाग, इनसबकीबराबर लोहभस्म डालकर रास्नादिद्रव्योंके क्वाथोंसे १–१ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। यद्यपि बहुतसेलोग केवल चूर्णबनाकर रखलेतेहैं लेकिन रास्नादिकी भावना दियेहुएके बराबर काममहींकरताहै। इसमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वैद्योंसे त्यागेहुए सर्वोपद्रवयुक्त राजयक्ष्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरभङ्ग, उर-क्षत, धातुक्षय, बलवर्णनाश, मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर पुष्टि कोकरताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

१८७ राक्षसरसः

समांशं योजयेच्छुद्धं पारदं गन्धकं तथा।
नागार्जुनीरसैर्मर्द्यं सुरसावाकुचीभवैः ॥ ८६३ ॥
मयूरपर्णीकौमारीमधुयष्टिसमुत्थितैः।
वाराहकर्णीस्वरसे बहुफल्यास्तथैव च ॥ ८६४ ॥
एतासां रसमादाय भावनायां पृथक्पृथक्।
कुक्कुटाण्डं तत्र गृह्य छिद्रयुक्तं समाचरेत् ॥ ८६५ ॥
तत्रास्थितञ्च निष्कास्य तत्र भृत्वा महारसम्।
वस्त्रमृत्तिकयाऽऽलिप्य कौक्कुटञ्च पुटं चरेत् ॥८६६॥
पक्वं नीतं पुनर्मर्द्यं पुनः पक्वं पुनस्तथा।
एवं त्रिवारसंस्कारे रसरक्षोऽमृतोपमम् ॥
क्षुधाकरं वीर्यकरं बलवर्णाऽग्निवर्धनम् ॥ ८६७ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर छोटी दूधी, तुलसी, बाकुची, मोरशिखा, घीकुवार, मुलहटी, असगन्ध, बहुफली इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मुर्गीका अण्डा (जिसमें बच्चा न पड़ा हो) लेकर युक्तिसे छिद्रकर भीतरकाद्रव निकालकर उसमें गोलेकोरख दूसरे अण्डेकी खोलसे ढक्कर गुड़चूनेसे बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आवदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरहकरे। ऐसे ३ बार करनेसे यह अमृतके सदृश होजाताहै। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षुधा, वीर्य, बल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ १८७ ॥

१८८ रुद्रपर्पटी

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं सम्मर्द्यैषां द्रवैः पुनः।
धातारिराद्रकं भृङ्गी काकमाच्यार्द्रिकर्णिका ॥ ८६८ ॥
दिनैकं मर्दयेत्सल्वे पाचयेत्पर्पटीं तथा।
द्वयोः पादं मृतं ताम्रं क्षिप्त्वा मृद्वग्निना पचेत् ॥८६९॥
रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत्।
प्रक्षिपेत्कदलीपत्रे स्थाप्यं स्निग्धपुटं पुनः ॥ ८७० ॥
आच्छाद्य तेन योगेन हाथश्चोर्द्धञ्च गोमयम्।
दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विषं क्षिपेत् ॥ ८७१ ॥
रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुञ्जाद्वयं द्वयम्।
चूर्णितं कटुनिर्गुण्ड्या मूलं निष्कद्वयं पिबेत् ॥ ८७२ ॥

भाषा—जायफल, खङ्ग और रसमाणिक्य ८–८ माशे, शुद्धसोमल ४ माशे लेकर वारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे १–२ रोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामेंसुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, मरिच अथवा मूंगकेयूपकेसाथ देनेसे यह चातुर्थिकज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

१७८ रामबाणरसः (दशमः)

नीलाञ्जनञ्च तुत्थञ्च गौरीपाषाणमेव च।
धुत्तूरपत्रस्वरसे पेपितं गुटिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥
क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्तिडिकाकृति।
रामबाण इति ख्यातो भिषगाश्चर्यकारकः ॥ ८४६ ॥
र. क. यो., ज्वरे।

भाषा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतुतिया, सोमल समभागलेकर वारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करयुक्त दूधकेसाथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और वारीसे आनेवाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य करताहै ॥ १७८ ॥

१७९ रामबाणरसः (एकादशः)

रसं तुत्थं शिलां तालं खर्परं मरिचं समम्।
मर्दयेज्जम्भनीरेण रसोऽयं रामबाणकः ॥ ८४७ ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, तुत्थ, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर वारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जंभीरीकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० रामबाणरसः (शीतकुलान्तकः) १२

नीलाञ्जनञ्च तुत्थञ्च गौरीपाषाणमेव च।
खर्परी श्वेतपाषाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥
खल्वमध्ये विनि.क्षिप्य जम्बीरेण विमर्दयेत्।
वल्कान् माषमानांश्च शर्कराजीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥
अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम्।
रामबाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥
र क यो , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—नीलाञ्जन,तुत्थ,सोमल, खपरिया,गोदन्तीहरिताल, मैनसिल और हरिताल इनकीभस्में,(नीलाञ्जनको छोड़कर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके डालना) सब समभागलेकर जंभीरीकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और जीरेकेसाथ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

१८१ रामबाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी) १३

गौरीपाषाणकं शुद्धं खर्परतुत्थं तथैव च।
सुधा सर्वसमा योज्या जम्बीरेण विमृद्य च ॥ ८५१ ॥
चणप्रमाणवटकांश्छायायां शोपयेद्बुधः।
रामबाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेसरी ॥ ८५२ ॥
र. क. यो., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्धसोमल और तुतिया समभागलेकर दोनोंके बराबर पत्थरकाचूना मिलाकर जंभीरीके रससे १ रोज़ मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरका नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

१८२ रामबाणरसः (अमोघादि.) १४

शुद्धं द्वयं टङ्कणतालसञ्ज्ञकम्
नीलाञ्जनं सूतविपे बलेर्वसाम्।
द्वयञ्च पाषाणरसाञ्जनं शिला
पृथक् समं जम्भरसैस्त्रिमर्दितम् ॥८५३॥
निर्गुण्डिकापत्ररसैस्त्रिमर्दितं
पुटं ततः कुक्कुटकप्रमाणकम्।
अमोघकं विश्रुतरामबाणकम्
वल्लद्वयं क्षौद्रसितादिसेवितम् ॥ ८५४ ॥
ऐकाहिकं द्वित्रिचतुर्थकञ्च
शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च।
पथ्यञ्च शाल्योदनमुद्गयूषं
दध्ना च तक्रेण रसैश्च जाङ्गलैः ॥ ८५५ ॥
भुक्त्वा चेक्षुरसादिकञ्च कदली खर्जूरिकादाडिमं,
कापित्थं तनुलेपनं मलयजैः प्रौढाङ्गनाऽऽलिङ्गनम् ॥
र. क यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सुहागा, हरिताल, सुरमा, शुद्धपारा, वछनाग, गन्धक, सफेद और पीलासोमल, रसौत, मैनसिल येसब समभाग लेकर वारीकपीस पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर जंभीरी और निर्गुण्डीकेपत्रस्वरससे १–३ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा शक्कर और मधु वगैरह केसाथ देनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेचावल और मूंगकीदाल अथवा दही छाछ अथवा जंगलीपशुपक्षिओंका मांसरस, ईखकारस, केला, खजूर, अनार, कैथ येसब देवें। चन्दनका लेपकर प्रौढस्त्रियोंका आलिङ्गन करावें ॥ १८२ ॥

१८३ रामबाणरसः (पञ्चदशः)

रसगन्धकताम्राणि टङ्कणं त्रिफला विषम्।
एतानि समभागानि नेपालं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥
कारवल्लीरसेनैव मर्दयेद्याममात्रकम्।
गुञ्जाप्रमाणवटिकां भक्षयेदार्द्रकाम्बुना ॥
रामबाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिषूदनः ॥ ८५८ ॥
र. क यो., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बछनाग, ताम्रभस्म और त्रिफला समभाग, जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करेलेकेरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त शीत और विषमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८३॥

१८४ रामबाणरसः (षोडशः)

हिङ्गुलं रसकं रसेन्द्रशिशितुल्थाऽऽलं शिला गन्धकं,
ताप्यं गौरशिला विशुद्धिसहितं सर्वं समं भागतः।
कृष्णोन्मत्तरसेन मर्दितमिदं माषप्रमाणा वटी
भुक्त्वा शीतसमर्पितं ज्वरगणं निर्यासयेत्तत्क्षणात्८५९

र र कौ, र पा, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, खपरिया, पारा, तुत्थ, हरिताल, मैनसिल, गन्धक, सोनामाखी और सोमल सबसमभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कालेधतूरेकेरसमे १–२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८४॥

१८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम्।
बीजं नेपुरुभकं मर्द्यं दन्तीक्वाथेन यामकम् ॥
त्रिगुञ्ज. शूलविष्टम्भाऽनिलं सामज्वरं जयेत् ॥८६०॥

भै र, र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्ध-जमालगोटा सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेक्वाथमे एकपहर घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे शूल, विष्टम्भ, वायु और आमज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ १८५ ॥

१८६ रास्नादिलोहम्

रास्नाऽश्वगन्धाकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लौहं यक्ष्मान्तकृन्मतम् ॥ ८६१ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम्।
हन्ति कासं स्वराऽऽघातं राजयक्ष्मक्षतक्षयम् ॥
बलवर्णाऽग्निपुष्टीना वर्धनं दोषनाशनम् ॥ ८६२ ॥

र म, र सु, ध., र च, र क, र र, यो र, ना नि, नि र, लो प, भै र, वृ यो त राजयक्ष्मणि।

टि०—र सु टिप्पणस्थाने दशाङ्गलोहमिति नामान्तरम्। या र, वृ यो त, ना वि, ग्रन्थेषु चतुर्दशाङ्गलोहमिति नाम। लो प चतुर्दशायस इतिनाम। भै र पु.मा तक्रलोहमिति नामभत्र त्रिक त्रयशब्देन त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमदा ग्राह्या योगरत्नाकरीयपाठे अश्वगन्धास्थाने कर्पूरं नियामितमिति विशेष, नाम च चतुर्दशाङ्गलो हमिति।

भाषा—रास्ना, असगन्ध, कपूर, ब्राह्मी, मैनसिल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद (विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक) सब समभाग, इनसबकीबराबर लोहभस्म डालकर रास्नादिकद्रव्योंके क्वाथोंसे १–१ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। यद्यपि बहुतसेलोग केवल चूर्णबनाकर रखलेतेहैं लेकिन रास्नादिकी भावना दियेहुएके बराबर कामनहींकरताहै। इसमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वैद्योंसे त्यागेहुए सर्वोपद्रवयुक्त राजयक्ष्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरभङ्ग, उरःक्षत, धातुक्षय, बलवर्णनाश, मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर पुष्टिकोकरताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

१८७ राक्षसरसः

समांशं योजयेच्छुद्धं पारदं गन्धकं तथा।
नागार्जुनीरसै मर्द्यं सुरसायाकुमारीभवैः ॥ ८६३ ॥
मयूरपर्णीकौमारीमधुयष्टिमुस्थितैः।
वाराहकर्णीस्वरसै वहुफल्यास्तथैव च ॥ ८६४ ॥
एतासां रसमादाय भावनायां पृथक्पृथक्।
कुकुटाण्डं तत्र गृह्य छिद्रयुक्तं समाचरेत् ॥ ८६५ ॥
तत्रास्थितञ्च निष्कास्य तत्र भृत्वा महारसम्।
घस्रमृत्तिकयाऽऽलिप्य कौक्कुटञ्च पुटं चरेत् ॥८६६॥
पक्वं नीतं पुनर्मर्द्यं पुनः पक्वं पुनस्तथा।
एवं त्रिवारसंस्कारैः रसराक्षोऽमृतोपमम् ॥
क्षुधाकरं वीर्यकरं बलवर्णाऽग्निवर्धनम् ॥ ८६७ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर छोटी दूधी, तुलसी, ग्वारपाठा, मोरशिखा, घीकुंवार, मुलहटी, असगन्ध, बहुफली इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मुर्गीका अण्डा (जिसमें बच्चा न पड़ा हो) लेकर युक्तिसे छिद्रकर भीतरकाद्रव निकालकर उसमें गोलेकोरख दूसरे अण्डेकी खोलसे ढककर गुड़चूनेसे बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीतरहकरे। ऐसे ३ बार करनेसे यह अमृतके सदृश होजाताहै। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षुधा वीर्य, बल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ १८७ ॥

१८८ रुद्रपर्पटी

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं सम्मर्द्यैषां द्रवैः पुनः।
वातारिराद्रकं भृङ्गी काकमाच्यग्निकर्णिका ॥ ८६८ ॥
दिनैकं मर्दयेन्पश्चात् पाचयेत्पर्पटी तथा।
द्वयोः पादं मृतं ताम्रं क्षिप्त्वा मृद्वग्निना पचेत् ॥८६९॥
रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत्।
प्रक्षिपेत्कदलीपत्रे स्थाप्यं स्निग्धपुटे पुनः ॥ ८७० ॥
आच्छाद्य तेन योगेन हाधश्चोर्द्ध्वञ्च गोमयम्।
दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विषं क्षिपेत् ॥ ८७१ ॥
रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुञ्जाद्वयं द्वयम्।
चर्णितं कटुनिर्गुण्ड्या मूलं निष्कद्वय पिबेत् ॥८७२॥

भृङ्गराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह।
वातिकान्संनिहन्त्याशु सर्वथैव न संशयः॥ ८७३॥

नि. र., र. को., र. र., व. रा, र. का., वै चि, कासश्वासे।

टि०—द्वितीयताम्रपर्पट्या साकमस्या आपाततः साम्यं प्रतीयते परन्तु ताम्रपर्पट्यपेक्षयाऽस्य योगस्याऽतिभीषणत्वात्स्वतन्त्र एवाऽयं योगोऽतएवाऽस्य योगस्य रुद्रपर्पटीति नाम करणं सार्थकम्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २–२ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर एरण्ड, अदरख, भंगरा, मकोय, कोयल इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर अच्छीतरह सुखाकर घीपुतीहुई कड़ाहीमें डालकर बदराङ्गारकी मृदुअग्निसे पकावे। द्रव होनेपर चतुर्थांश ताम्रभस्म डालकर चलाताहुआ पकावे। जब पर्पटीका रंग गन्धक न जलकर कुछ ललाईपरहोजाय तबपर्पटीविधानसे पर्पटी तैयारकर सबसेचतुर्थांश शुद्धवछनागका बारीकचूर्ण मिलाकर १–२ पहर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा भंगरेकेरस अथवा मधुकेसाथ खाकर कटेपत्तोंवाली निर्गुण्डीकी जड़का चूर्ण ८ माशे मधुकेसाथ ऊपरसे चाटनेसे यह वातजन्य कासको नष्टकरताहै॥ १८८॥

१८९ रुद्ररसः

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णञ्च मरिचं पृथक्।
एकद्वित्रिचतुष्पञ्च सप्तषट्शुद्धसूतकम्॥ ८७४॥
चाङ्गेरीद्रवकैर्मर्द्यं दिनैकं तच्च गोलकम्।
गोलकं लेपयेत्तेन ततो वस्त्रेण वेष्टयेत्॥ ८७५॥
मृगाङ्कवत्पचेत्स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरयेत्।
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हरतुल्यो रसोत्तमः॥
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तथा मात्राऽनुपानकम्॥८७६॥

र. सु. क्षयाधिकारे।

भाषा—फौलादभस्म १ भाग, ताम्रभस्म २ भा., नागभस्म ३ भा., रजतभस्म ४ भा., सुवर्णभस्म ५ भा., मरिच ७ भा. और रससिन्दूर ६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर तिपतियाकेरससे एकरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३–४ तह मलमलके कपडेमें रस चारोंओर कपासूत लपेटकर गेंदकेसदृश बनाले फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिटीदेकर हंडीमें ४–४ अङ्गुल ऊपरनीचे वालुमें दबाकर ४ प्रहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे उचितमात्रामें यथारोगानुपानकेसाथ देनेसे यह सबतरहके क्षयोंको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य और अनुपान मृगाङ्कवीतरह देना॥ १८९॥

१९० रुद्रवटी (प्रथमा)

शुद्धपारदकृशानुमरीचैः
पारदाद्विगुणगन्धकमत्र।
यत्नसम्भवमुदुम्बरदुग्धं
वाकुचीभवकषायचये वा॥ ८७७॥
मर्दयिमाव्य परिपेष्य दिनैक-
मक्षमानवटिकाः परिकल्प्य।
माक्षिकैः समशिताऽखिलपामा-
हन्ति रुद्रवटिकाख्यरसोऽयम्॥ ८७८॥

चि. क्र., कुष्ठे।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कुटज, गूलरकादूध, वाकुची इनके यथासम्भव द्रव अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६ माशेसे १ तोलेतककी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ खिलानेसे यह सबप्रकारकी पामाओंको नष्टकरताहै॥ १९०॥

१९१ रुद्रवटी (द्वितीया)

कान्तलोहं मृतञ्चाऽभ्रं सूतं ताप्यं सतालकम्।
गन्धकं गुग्गुलुं शुद्धं विडङ्गं त्रिफलाकुलम्॥ ८७९॥
व्योषाऽग्निदेवदार्व्युदधिफेननिशाद्वयम्।
गिरिकर्णीपुनर्नव्यामूलचूर्णं समं समम्॥ ८८०॥
भृङ्गराजद्रवे मर्द्यं त्रिनैकं वटकीकृतम्।
सर्वकुष्ठानि हन्त्याशु वटीयं रुद्रनामिका॥
मासमात्रान्निहन्त्याशु मसूरीं सर्वधातुजाम्॥ ८८१॥

रसायनसं., यो. म., र. का., कुष्ठाधिकारे।

भाषा—कान्तलोह, अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा, सोनामाखी, रसमाणिक्य, गन्धक, गूगल, विडङ्ग, त्रिफला, बेर, त्रिकुट, चित्रक, देवदारु, समुद्रफेन, दोनोंहल्दी, कोयल, पुनर्नवाकीजड़ येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे एकरोज़मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामप्रकारकेकुष्ठोंको नष्टकरतीहै॥१९१॥

१९२ रुद्रेश्वररसः (वातशूलहा) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृताऽभ्रार्कमनःशिलाः।
सैन्धवं माक्षिकन्तालं धुत्तूरं हिङ्गु सूरणम्॥ ८८२॥
महाराष्ट्र्या च निर्गुण्ड्या वासैरण्डद्रवे दिनम्।
मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पाच्यं कुक्कुटाण्डोदरे भिषक्॥ ८८३॥
वल्लमात्रं लिहेत्क्षौद्रैः रुद्रेशो वातशूलजित्।
हिङ्गु सौवर्चलं शुण्ठीमक्षमुष्णाम्बुना पिबेत्॥८८४॥

ना. वि., र. को., यो. म., र. क. ल., र. र., शूले।

टि०—रुद्ध्वा मृत्पुटे पक्त्वा कुक्कुटाण्डोदरे इति पाठान्तरं दृश्यते परन्तु कुक्कुटाण्डोदरे इति पाठः समीचीनतामावहति [illegible] [illegible] स्थिरीकरणात्।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रक तथा ताम्रभस्म, शुद्ध मैनसिल, सैन्धव, सोनामाखी, हरिताल धतूरेकेबीज, हींग और सूरणकन्द समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मराठी, निर्गुण्डी, अडूसा और एरण्डके रसोंमें १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मुर्गीके अण्डेमेंभरके दूसरेअण्डेकोगोल चढाय गुडचूनेसे सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिटी देकर बन्द अथवा गजपुटमें ४ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशेकी मात्रा मधुकेसाथ

कर हींग, सचल और सोंठकाचूर्ण १ तोला गरमपानीके साथ लेनेसे सवप्रकारके शूलोको यह नष्टकरताहै ॥ १९२ ॥

१९३ रुद्रेश्वररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तं व्योम च मारितम्।
मण्डूरं वाकुचीबीजं निशा श्लेष्मातबीजकम् ॥ ८८५ ॥
चेडङ्गं त्रिफला वह्नि भृङ्गं कृष्णा तिलाऽमये।
श्योनाककुसुमं तुल्यं चूर्णयेच्च सितायुतम् ॥ ८८६ ॥
कांस्यपात्रस्थितं भक्षेत्कर्षैकं मधुसर्पिषा।
सर्वकुष्ठहरः सोऽयं महारुद्रेश्वरो रसः ॥ ८८७ ॥

रसायनस., यो. म , र,का , कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कान्तलोह, अभ्रक, मण्डूर इनकीभस्में, वाकुची, हल्दी, लसोड़ेकेवीज, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, भंगरा, पीपल, तिल, हर्रे, सोनापाठाकेफूल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर बराबरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इस मेंसे १–१ तोला कांसेकेवर्तनमें बराबरके घी और मधुकेसाथ खानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै ॥ १९३ ॥

१९४ रेतोरोधनपोट्टलीरसः

आकल्लजातीफलजातिकैला-
कस्तूरिकाकुङ्कुमहिङ्गुलानाम्।
पटे पटुः पोट्टलिकां प्रणीय
निक्षिप्य दुग्धे विपचेत्प्रसन्ना ॥ ८८८ ॥
ज्ञात्वाऽर्धशेषं ससितं पयस्त-
न्निष्कास्य तां पोट्टलिकां पिबेद्यः।
भवन्ति भोगाय न तस्य शक्ताः
प्रचण्डकामाः शतशोऽपि रामाः ॥ ८८९ ॥

सि. भे. म., वाजीकरणे।

भाषा—अकलकरा, जायफल, जावित्री, इलायची, कस्तूरी, केशर और शिंगरफ सबसमभागलेकर ४ रत्तीसे १ माशेतक मलमलकेधोयेहुएटुकड़ेमें पोटलीबनाय दूधमें छोड़देवे और चूल्हे-पर चढ़ादे। जब अधौटा दूधहोजाय तब पोटलीको निकालकर उस दूधको पीकर सम्भोगमें प्रवृत्त हो तो मदोन्मत्त बहुतसी स्त्रियां उसके तृप्तकरनेके लिये समर्थ नहीं होती हैं ॥ १९४ ॥

१९५ रेतोरोधिनीगुटिका (प्रथमा)

जातीफलस्य फणिफेनभृतोदरस्य
लिप्तस्य सत्पुटमृदा परिपाचितस्य।
एलाकुरङ्गसुमकुङ्कुमहिङ्गुलाढ्या
रेतो रुणद्धि गुटिका पयसा निपीता ॥८९०॥

सि भे म., वाजीकरणे।

भाषा—जायफलमें छेदकर एकमाशा अफीम डालकर गेहूंके आटेके अन्दर बन्दकर पुटपाककरे। शीतलहोनेपर निकालकर इसमें इलायची, कस्तूरी, लौंग, केशर और शुद्धशिंगरफ ये प्रत्येक अफीमकेबराबर मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ लेनेसे यह वीर्यको रोक्तीहै ॥ १९५ ॥

१९६ रेतोरोधिनी गुटिका (द्वितीया)

धत्तूरबीजविषमुष्टिकगन्धसूत-
जातीफलानि सलिलेन पृदाकुवल्याः।
पिष्ट्वा विशिष्य मसृणं गुटिकीकृतानि
रुन्धन्तिधातुमधिमन्मथकेलि यूनाम् ॥८९१॥

सि भे. म , वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध धतूरेकेबीज, कुचिला, गन्धक और पारा, जायफल सब समभागलेकर पकेपानोंकेरससे एकदिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सम्भो-गसे १ घटा पहिले दूधकेसाथलेनेसे वीर्यका स्तम्भन होताहै १९६

१९७ रेतःस्तम्भकपारदः

शुद्धं सूतमिषुप्रतोलकमितं गन्धं तथाशोधितं,
पश्चार्धं परिगृह्य संयुतमुखां शुक्तिं समुद्घाट्यताम्।
तत्कीटं परिहृत्य शुक्तिजठरादन्तः क्षिपेद्गन्धकं,
प्रोक्तस्याऽर्द्धमथान्तरे विनिहितं सूतं समस्तं ततः ॥
सूतस्योपरि शेषगन्धकरजः संक्षिप्य तन्मध्यगं,
सूतं शुक्तिकयान्ययोपरिगया सम्मुद्र्य मृद्वस्त्रकैः।
तां शुक्तिं परिशोष्य सूर्यकिरणात्सन्दीप्यतेऽग्निस्तुषै-,
र्धान्यानां गजसञ्ज्ञके वरपुटे तत्स्वाङ्गसंशीतलम् ॥
सञ्चूर्ण्यानुकगालितं किल भवेद्गुञ्जोन्मितं पुष्टिकृ-,
द्रेतःस्तम्भनकृत्पयोऽनु च पिबेत्सायं सितासंयुतम्

ध , चि र भ , रसायनस , र. सु , वाजीकरणे। रसा-यनसङ्ग्रहे स्तम्भनरस इति नाम।

टि०—अत्र योगे शुक्तौ गन्धकमध्ये पारदस्थापनमुद्दिष्टम्। परन्तु प्रथमतस्तस्य यथास्थितिरेव दुस्तरा अतिचञ्चलत्वात्। ततोऽनन्तर तुष पुटे अग्नौ स्थितिरपि दुर्वारा, केवला शुक्तिरेवाऽवशेषता भविष्यति। अत प्रथम येनकेनापि प्रकारेण पारदस्य नियमनं विधाय शुक्तौ स्थाप नीयं इति गूढ रहस्यम्। अन्योपायाऽभावेऽरणिपत्रे चुक्रे वा नष्टपिष्टता विधाय शुक्तौ स्थापयित्वा शुक्तिश्च शरावसम्पुटान्तर्गर्भिता कृत्वा पुट प्रदेय इत्यस्माकं सम्मतिः।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ५–५ तोलेलेकर गन्धकका बारीकचूर्णकर जीतीहुई सीपका मुह खोलकर जीवको बाहर निकालकर आधा गन्धक उसमें बिछाकर ऊपर पारेकोरखकर बचेहुऐगन्धकसे ढकदे। फिर दूसरी सीपसे ढककर चूना और गुड़से सन्धिको बन्दकर ६–७कपड़मिट्टी देकर सुखाकर चावलकी भूसीकी गजपुटमें आंच देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सीपसहित चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा शक्कर-डालेहुए दूधकेसाथ लेनेसे यह वीर्यका स्तम्भनकरताहै ॥१९७॥

१९८ रोगनाथरसः

अर्धार्धतुल्यौ रसनागनिष्कौ
पृथक्पृथग्गन्धकटङ्कणौ च।

शङ्खस्य निष्कौ मृतताम्रतो द्वौ
वराटिकानां नवसम्पुटानाम् ॥ ८९४ ॥
मध्ये च पक्त्वा कदलीद्रवार्द्रौ
भूयोऽर्द्धभागेन गजोपकुल्या।
तदर्द्धपादं मरिचं प्रदद्या-
द्गन्धात्तुनिष्कं च घृतेन लिह्यात् ॥८९५॥
अश्नीयात्पूर्ववत्पथ्यं वासराण्येकविंशतिम्।
रोगनाथो रसो नाम्ना रोगराजनिकृन्तकः॥ ८९६ ॥

र.को., र.र.स., राजयक्ष्मणि।

टि०—रसेन्द्ररत्नकोषे द्वितीयस्थाने अस्य लोकनाथेतिनाम,तच्छा-नाव, समानयोगस्य द्विनामदानस्याऽनौचित्यात्।

भाषा—शुद्धतूतिया २ माशे, शुद्धपारा, नागभस्म, गन्धक और सुहागा ४-४ माशे, शङ्ख और ताम्रभस्म ८-८ माशे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पीली ९ कौड़ियोंमें भरकर आकके-दूधमें पिसेहुए सुहागेसे सन्धि बन्दकर कौड़ियोंको शरावसम्पुटमें रख ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर समस्तसे आधीगजपीपल और उससे आधीमरिच तथा ४ माशे शुद्धगन्धक मिलाकर केलेकेकन्दकेरससे १-२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथ सेवनकरनेसे २१ दिनमें यह राजरोगको नष्टकरताहै ॥ १९८ ॥

१९९ रोगपञ्चाननरसः

सूतटङ्कौ वरागन्धकत्र्यूषणं
वत्सनाभो घनस्तुल्यतो मर्दयेत्।
भृङ्गनीरेण तद्वल्लमवातोदरं
रक्तिकाभा वटी रोगपञ्चाननः ॥ ८९७ ॥

रसायनसं., वै. वि., गुल्मे।

भाषा—शुद्धपारा, सुहागा, त्रिफला, गन्धक, त्रिकुटु, बछनाग और अभ्रकभस्म येसब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म और वातोदर नष्टहोताहै॥१९९॥

२०० रोगभञ्जनरसः

मृतं सूतं मृताऽभ्रञ्च मृतं ताम्रं विषं समम्।
जम्बीरफलजद्रावे मर्दितं प्रहरत्रयम् ॥ ८९८ ॥
दोलायन्त्रेण तत्पाच्यं शिखिपित्तेन भावयेत्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम्॥
सर्वे रोगा विनश्यन्ति रसोऽयं रोगभञ्जनः ॥ ८९९ ॥

वै. चि., सन्निपाते।

भाषा—पारा, अभ्रक, ताम्र इनकीभस्में और शुद्धबछनाग समभागलेकर जंभीरीकेरससे ३ पहर मर्दनकर गोलाबनाय जंभीरी केही रससे ३ पहर स्वेदनकर मोरकेपित्तसे १-२ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै। रसव्याप्तिकेलिये जलधारादेना अत्यावश्यकहै ॥ २०० ॥

२०१ रोगमुद्दलनरसः

स्वर्णं रूप्यञ्च ताम्रं सममथहरजं
वार्धिभागञ्च गन्ध-,
स्याऽष्टौ भागान्विमर्द्य त्रिदिन-
मनलजोत्थेन धाराकंधर्मे।
संयोज्याऽजादिपित्तं विषमपि
हरजात्षोडशांशञ्च दत्त्वा,
देयो वल्लद्वयोऽयं गदमुर-
द्दलनः पावकत्र्यूषणेन ॥ ९०० ॥
तैलाभ्यक्ताय कुर्यात्सलिलविधि-
मथो रोगिणे दध्युपेतं,
भक्तं खण्डं मरीचं यदि भवति
मनोवासना पथ्यभुक्तौ।
उद्वृत्तं सन्निपातं जयति लघुतरं
शैत्यतन्द्राविमोहं,
वातव्याधींश्च सर्वान् कफजनित-
महारोगनाशे प्रसिद्धः ॥ ९०१ ॥

र. ल., र. धं., सन्निपाते।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रभस्म १-१ भाग, शुद्ध पारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर बारीकपीस पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रकमूलकेकाढ़ेसे ३ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर पाचोंपित्तोंकी १-१ भावनादेकर पारेसे षोडशांश शुद्धबछनाग डालकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और त्रिकुटुकेसाथ देनेसे घोरसन्निपात, शीत, तन्द्रा, मोह, वातव्याधियां और कफरोग नष्टहोतेहैं। इसकासेवनकरनेवालेको तैलाभ्यङ्गकराके मस्तकपर जलकी धारादेना। भूखलगनेपर दही, भात, खांड, मरिच, येसब देनेचाहियें ॥ २०१ ॥

२०२ रोगविघ्नगणेशरसः

रसत्र्यूषणं गन्धतुल्याऽऽयसञ्च
भुजङ्गः समा वत्सनाभोऽभ्रकश्च।
समं चूर्णितं वल्लरुक्चाऽनुपाने-
रशेषैः सदा रोगविघ्नो गणेशः ॥ ९०२ ॥

रसायनसं, वै. वि, र.ल, र. धं.,र.का., टी, र.को., सर्व-रोगे। र.का.,टी., विघ्नगणेश इतिनाम। वै. वि. अभ्रकस्थाने अनलो दश्यते। र का. अभ्रकस्याऽभावः।

भाषा—शुद्धपारा, त्रिकुटु, गन्धक, ताम्र, लोह और नाग इनकीभस्में, शुद्धबछनाग, अभ्रकभस्म सब समभागलेकर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०२ ॥

२०३ रोगविदारणरसः

हरवीर्यं वत्सनाभं टङ्कणं माक्षिकं कणाम् ।
तालकं गन्धकं चाभ्रं त्रिपाषाणञ्च सैन्धवम् ॥ ९०३ ॥
सर्वं भृङ्गस्य नीरेण मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ ९०४ ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृष्णार्थं शीतलं जलम् ।
अयं धन्वन्तरिप्रोक्तो रसो रोगविदारणः ॥ ९०५ ॥

वै चि, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, सुहागा, सोनामाखी, पीपल, रसमाणिक्य, शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, स्याह, सफेद और पीलासोमल, सैंधानमक समभाग लेकर बारीकपीसकर पारेगन्धकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे ३ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त सन्निपातोंको नष्टकरताहै। इसमें दही, भात और ठढाजल पथ्य देना ॥ २०३ ॥

२०४ रोगान्तकोरसः

दशधा पातितं सूतं स्विन्नं प्रागुक्तयुक्तितः ।
रसेश्वरं समादाय प्रखरीसलिले भृशम् ॥ ९०६ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मर्दयेदुपविंशकान् ।
दिवसांस्तद्रवैर्मूलैश्चक्रिकां रचयेद् दृढाम् ॥ ९०७ ॥
चक्रिकां दृढभाण्डस्य सन्दध्यान्मध्यभाण्डके ।
उपरिष्टात्सूतकल्कं मर्दितं विनिवेशयेत् ॥ ९०८ ॥
तस्योपरिष्टात्प्रखरीमूलचक्रीं निवेशयेत् ।
दद्यं शरावं सन्दध्याद् दृढो लेप. क्रमेण वै ॥ ९०९ ॥
जलपूर्णं विधायाऽथ चुल्ल्यां यन्त्रं निवेशयेत् ।
दिनानि त्रीणि संक्वाथ्य रसं यन्त्रात्समुद्धरेत् ॥९१०॥
अन्यं भाण्डं समादाय वत्सनाभस्य चूर्णकम् ।
भाण्डमध्ये विनि.क्षिप्य तस्योपरि रसं क्षिपेत् ॥९११॥
उपरिष्टाद्वत्सनाभचूर्णं रससमं क्षिपेत् ।
पूर्ववत्सन्धिलेपञ्च कृत्वा यन्त्रं जलोषितम् ॥ ९१२ ॥
चुल्ल्यामारोपयेद्वह्निं ज्वालयेदुपविंशकान् ।
दिवसान् पारदः साऽयं भस्मीभवति नाऽन्यथा ९१३
गृहीत्वा भस्मसूतं तं निम्बुद्रावेण मर्दयेत् ।
स्तोकमात्रं तेन लिम्पेद्धेमपत्राणि बुद्धिमान् ॥९१४॥
ऊर्ध्वाऽधो माक्षिकं दत्त्वा पुटयेद्वन्यगोमयैः ।
भस्मीभूतं भवेद्धेम तद्वद्रजतमारणम् ॥ ९१५ ॥
ताम्रं तीक्ष्णं वङ्गनागौ तथा युक्त्यैव मारयेत् ।
मृतानि तानि लोहानि गृह्णीयात्सूतपादत· ॥ ९१६ ॥
माक्षीकं गन्धकं तालं मनोह्वा हिङ्गुलं तथा ।
तुत्थञ्च रसकञ्चैव सूतपादांशत. क्षिपेत् ॥ ९१७ ॥
एकीकृत्य रसै. सार्धं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
शुष्कमर्दनयोगेन दिनमेकं विचक्षण. ॥ ९१८ ॥
वाते त्रिकटुना देयः श्लेष्मण्यपि तथैव हि ।
पैत्तिकेषु विकारेषु गुडूचीसत्वयुक्तया ॥ ९१९ ॥
युक्तो योज्यः शर्करया मूलजे शिखिवन्त्रया ।
कुष्ठेषु खदिरक्वाथं वाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ ९२० ॥
प्रयुञ्जीत रसं वैद्यस्तत्तद्योगोक्तयोगतः ।
रोगान्तक इति ख्यातः सर्वव्याधिविनाशन. ॥९२१॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ९२२ ॥

रसाल, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—नियामक औषधियोंमें मर्दनकरके दशवार ऊर्द्ध्वपातितक्रियाहुआ शुद्धपारा लेकर कुकरौंधेकीजड़केरससे २० रोजतकमर्दनकर चकी बनाय मजबूत घड़ेकेबीचमें रखकर कुकरौंधेकेमूलके कल्ककीटिकड़ी पारेसे चौगुनेवजनकी ऊपर ढककर मिट्टीकेमजबूतढक्कनसे ढककर जलमुद्रासे बन्दकर घड़ेमें पानीभरदे और चूल्हेपरचढ़ाय ३ दिनतक निरन्तर अग्निदेवे । ठढाहोनेपर यत्नपूर्वक पारेको निकालकर फिरसे पूर्वोक्त औषधिकेरससे घोटकर टिकियाबनाय दूसरे नवीनघड़ेमें पारेकी बराबर बछनागका चूर्ण बिछाकर ऊपर रसचक्रिकाकोरख उसीकेबराबर दूसरे बछनागकेचूर्णसे ढकदे और मजबूत शरावसे ढककर जलमुद्रा करपानीसे भरकर चूल्हेपर चढाय २० दिनकी अग्निदेवे । पानीकम होनेपर दूसरा डालताजाय । बीसवेंरोज़ पानी बिल्कुल सुखादे । १–२ अङ्गुलपानी बाकीरहनेपर आचबन्दकरदे और यन्त्रको चूल्हेपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे मुद्राको खोल भीतरसे पारेकीभस्मको निकालकर थोड़ासा नीबूकारस डालकर मर्दनकर सुवर्णके बारीकपत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें नीचेऊपर सोनामाखीकाचूर्ण देकर सुवर्णपत्रोंको बन्दकर २–४ कपड़मिट्टीकरदे । सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सुवर्णभस्मको निकालकर रखछोड़े। इसीतरह चादी, तावा, फोलाद, बङ्ग और नागकी भस्मकरे । येसबभस्में १–१ भाग, पारदभस्म ४ भा, शुद्ध सोनामाखी, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिंगरफ, तुत्थ और खपरिया १–१ भाग लेकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा वायु और श्लेष्मामें त्रिकटुकेसाथ, पित्तमें शक्करयुक्त गिलोयसत्त्व, बवासीरमें मोरशिखा और कुष्ठमें बाकुचीकाचूर्ण डालेहुए खैरके क्वाथकेसाथ देनेसे यसब नष्टहोतेहैं । इसीतरह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०४ ॥

२०५ रोगेभसिंहरसः (श्रीखण्डवटी)

सूतद्वयीघनवराऽनलवेल्लभार्ङ्गी-
तिक्ताकटुत्रयविषैः सचवैः समांशैः ।
रोगेभसिंह इति वातकफामयघ्नः
सान्द्रोऽयमल्पपुटितो विहितो द्विगुञ्जः ॥९२३॥
एतै गुंडप्रमृदितै रसवर्जितैः स्या-
च्छ्रीखण्डनामगुटिका विहिता द्विगुञ्जा ।

शैत्याद्यजीर्णकफवातभवान्विकारा-
न्हन्त्यार्द्रकद्रवयुताऽप्यथ केवला वा ॥ ९२४ ॥

र.स., ध., टो., र र.दी., रसायनसं., र. का., वातव्याध्यधिकारे । रसायनसङ्ग्रहे व्याधिगजकेसरीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, त्रिफला, चित्रक, विडङ्ग, भारङ्गी, कुटकी, त्रिकटु, वच और शुद्धवछनाग समभागलेकर विषको छोड़कर इसयोगमें आईहुई वनस्पतिओंकेकाटेमे १–१ भावना देकर गोलाबनाय पकेपानोंमेंरख सुतमेलपेटकर एकवालिस्तकेगढ्ढेमें रखकर ऊपरसे थालूभर वराहपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामवातव्याधियोंको दूरकरताहै । इसमेंसे धातुओंको निकालकर गोली बनाईजायतो उसकानाम श्रीखण्डवटीहै और उसको अदरखकेरस अथवा केवलपानीकेसाथ देनेसे कफ और वातविकार दूरहोतेहैं २०५

२०६ रोमवेधरसः

शृङ्गीविषं सर्पमहाविषञ्च
शुद्धं समं सूतकगन्धकञ्च ।
एकाऽधिकं विंशतिवासराणि
निधाप्य यत्रे सजलप्रदेशे ॥ ९२५ ॥
गुञ्जैकमात्रं सघृतं प्रपिष्ट
नवज्वरे चाऽष्टविधज्वरार्ते ।
अभ्यङ्गमात्रेण निहन्ति सर्वा-
न्यथा भुजङ्गं गरुडो गरीयान् ॥ ९२६ ॥
रोमवेध इति ख्यातो रसराजश्चिकित्सकैः ।
कौतुकार्थं नरेन्द्राणां धन्वन्तरिविनिर्मितः ॥ ९२७ ॥

रसायनसं., र.सु., भै सा., टो., र.का., यो.म., र (मा.) ज्वराऽधिकारे । रसायनसङ्ग्रहे सर्वरोगाऽधिकारे । र (मा.) मर्दनज्वरारि ।

भाषा—शुद्धवछनाग, सर्पविष, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें विषोको मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर शीशीमें भरके मुहपर मोमवगैरहसे इसतरहबन्दकरे कि पानी जानेकी शङ्का न रहे । फिर इसे जहां हमेशा पानी भरारहताहो अथवा फिरता हो उसजगह हाथभर खड्डा खोदकर नीचे गाड़दे और २१ रोजतक रहनेदे । इसकेबाद इसमेंसे १ रत्तीलेकर घीमेंमिलाय तमाम शरीरपर मालिशकर कपड़ा ओटाकर सुलादे । इससे पसीनाहोकर तत्काल आठ्प्रकारका ज्वर निकलजाताहै ॥ २०६ ॥

२०७ रोहीतकलोहम्

रोहीतकत्र्यमायुक्तं त्रिफलत्रययुतं त्वयः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ ९२८ ॥

र. सं., र. चि., ध., र क., भै र., र.सु., र.चं., र र., र शा., रसायनसं., यकृत्प्लीहाऽधिकारे ।

भाषा—रोहिड़ेकीछाल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद (विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक) सब समभाग, इनसबकी बराबर लोह भस्म मिलाकर इन्हींकेकाथोंसे २–४ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शरपुङ्खमूलवगैरहके क्वाथसे लेनेसे प्लीहा, अग्रमास, यकृत, इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ रौप्यरसवटी

पारदं राजतं चूर्णं समं शुद्धं विमर्दयेत् ।
गोलं कृत्वा च संस्थाप्य दिनमेकं करण्डके ॥ ९२९ ॥
द्वितीये दिवसेऽङ्गारे लोहपात्रे विनिःक्षिपेत् ।
लोहदण्डेन सङ्घृष्य शुभ्रं भस्म च कारयेत् ॥ ९३० ॥
तद्रौप्यभस्म निष्कैकं द्विनिष्कं कुङ्कुमं शुभम् ।
जातीकोषफले चैव लवङ्गं शाहजीरकम् ॥ ९३१ ॥
प्रतिकर्षं तथा नारीकेलमज्जा च भूफला ।
भल्लातकाच निर्बीजात्पलं ग्राह्यं प्रयत्नतः ॥ ९३२ ॥
तिन्तिडीफलमांसञ्च योजयेत्पलपञ्चकम् ।
विधिवत्सर्वमेकत्र मर्दयेत्सुदृढं भिषक् ॥ ९३३ ॥
कोलमाना च वटिका तिलतैलेन योजयेत् ।
किं वा कौसुम्भतैलेन सद्यो निष्कासितेन वा ॥ ९३४ ॥
धेनुदध्नाऽथवाऽऽज्येन सायं प्रातः प्रयोजयेत् ।
आम्रशुक्तादिसम्भूतं रसं कर्षञ्च पाययेत् ॥ ९३५ ॥
वटी रौप्यरसा नाम सर्वमेहविनाशिनी ।
पूतिमेहे विशेषेण पथ्यं सामान्यमाचरेत् ॥ ९३६ ॥
वर्जयेद्वर्षपर्यन्तं पनसं तुम्बिजं फलम् ।
अन्या च वटिका नास्ति पूतिमेहविनाशिनी ॥ ९३७ ॥

र चं., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और चांदीका बारीकरेता समभाग लेकर एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शीशीमें बन्दकर रखछोडे । दूसरेदिन लोहेकी कड़ाहीमें डालकर नीचे बेरकीलकड़ीकी आंच जलावे और लोहेके डंडेसे घर्षणकरताजाय । ऐसे ४ पहर रगड़नेसे जब एकदम श्वेतवर्णहोजाय तब उतारकर रखले । फिर चांदीभस्म ८ माशे, केशर ८ माशे, जावित्री, जायफल, लवङ्ग, सहजराहत १–१ कर्ष, नारियलकीमज्जा, बीजनिकालेहुए भिलावे और इमलीकीमज्जा १–१ पल लेकर सबको बारीकपीस बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली तत्काल निकालेहुए तिल अथवा कुसुम्भके तैलकेसाथ अथवा गायकी दही अथवा घीकेसाथ सुबहशाम देकर ऊपरसे आमप्रभृतिके अचारका १ तोलारस पिलावे । इसकेसेवनसे पूतिप्रमेह नष्ट होताहै इसमें पथ्य साधारण रक्खाजाताहै विशेषकी जरूरत नहीं, पर कटहर और तुम्बी एकवर्षतक नखाय । इसकेसदृश सुजाकको नष्टकरनेकेलिये दूसरी दवा नहींहै ॥ २०८ ॥

२०९ रौप्यराजरसः

रसेन्द्रभागद्वितयं म्लेच्छसारं चतुर्गुणम् ।
काकजङ्घारसे मर्द्यं रसस्ते दिवसपञ्चकम् ॥ ९३८ ॥
ताम्रसम्पुटके बद्ध्वा सच्छिद्रे दण्डिकान्तरे ।
निवेश्य पादुकां कृत्वा देयोऽग्निः प्रहराष्टकम् ॥ ९३९ ॥

स्याद्गशीतं समुद्धृत्य मधुटङ्कणसंयुतम् ।
धमेन्मूषागतं तावद्यावदुन्नमति तारवत् ॥ ९४० ॥
रौप्यराजरसः सोऽयं भगन्दरकुलान्तकः ।
वल्लमात्रममुं लीढ्वा मधुना सह पथ्यभुक् ॥ ९४१ ॥
त्रिफलायाः पिबेत्क्वाथं पश्चात्पथ्यं हितञ्चरेत् ।
मुक्तः स्वल्पैरहोभिः स्याद्भगन्दरमहागदात् ॥ ९४२ ॥

बृ.यो.त, टो, र.का, वै र, र.क ल, र.कौ, रसायनसं., चि.र.भ, भगन्दर।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, सगरास्क ४ भागलेकर बारीकचूर्णकर काकजङ्घाकेरसमें ५ रोज मर्दनकर तापसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर छिद्ररहित हंडीकेबीचमें रख ऊपरसे बालुकासे ढककर ८ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मधु और सुहागा मिलाकर मूषामें धमन करावे। जब चांदीकीतरह चकचकानेलगे तब डालकर रखछोड़े। फिर इसका बारीकचूर्णकर ३–३ रत्ती मधुकेसाथ खाकर त्रिफलाकाक्वाथ पीकर हितभोजन करनेसे थोड़ेहीदिनमें भगन्दररोगसे निवृत्ति होतीहै ॥ २०९ ॥

२१० लङ्केश्वरोरसः (प्रथमः)

सूताऽभ्रशुल्वानि च मारितानि
सगन्धकं तालशिलाद्रयो च ।
विषाऽम्लवेतौ च समं समस्तं
दिनत्रयं चाम्लरसे विपेष्यम् ॥ ९४३ ॥
समाक्षिकेणैव मृतेन कुर्या-
द्वटींद्विगुञ्जाञ्च शतारहर्त्रीम् ।
लङ्काऽधिपाख्यस्तु रसः प्रसिद्धो
निहन्ति कुष्ठांश्च शतारकादीन् ॥ ९४४ ॥
फलत्रयं निम्बवचाऽरणे च
पटोलमूलं कटुका निशाख्या ।
क्वाथीकृतं चानुपिबेच्च नित्यं
लङ्काधिपाख्यं तु रसं निषेव्य ॥ ९४५ ॥

चि क, र म, र चि., र मु, र र, र., व रा, र का, वै चि, रसेन्द्र, यो म, र र कौ, शतारकुष्ठे। यो म रसादिगुटी। र र कौ कुष्टश्लनेति नाम।

भाषा—पारा, अभ्रक, ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक, हरिताल, शिलाजीत और वत्सनाभ, अमलबेत, सोनामाखीकी भस्म समभाग लेकर बारीकचूर्णकर जमीरीप्रभृतिकरससे ३ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला, नीमकीछाल, वच, मजीठ, परवलकीजड़, कुटकी और हल्दी समभागका क्वाथकेसाथ लेनेसे यह शतारुष्क प्रभृतिकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ २१० ॥

२११ लङ्केश्वरोरसः (द्वितीयः)

भस्म मृताऽर्कलोहानां कृष्णागन्धकटङ्कणम् ।
कुष्ठं तुत्थञ्च तुल्यांशं मर्द्यं धुत्तूरजैर्द्रवैः ॥ ९४६ ॥
दिनैकं तद्वटीं कुर्यान्माषमात्राञ्च भक्षयेत् ।
रसो लङ्केश्वरो नाम्ना प्रसूतिमण्डलप्रणुत् ॥ ९४७ ॥
गन्धकं त्रिफलाचूर्णं निर्विषीं गुग्गुलुं समम् ।
लिहेदेरण्डतैलेन कर्षैकमनुपानकम् ॥ ९४८ ॥

र र., र, र.का, कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—पारा, तांबा और लोह इनकीभस्में, पीपल, शुद्धगन्धक, सुहागा, कुठ और तूतिया समभागलेकर बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे एकदिन मर्दनकर १–१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर शुद्धगन्धक, त्रिफला, निर्विषी और गूगल समभागलेकर १ तोला ऊपरसेएरण्डतैलकेसाथखिलानेसे सुसवात और मण्डलप्रभृति कुष्ठोंको यह दूरकरताहै ॥

२१२ लङ्केश्वरोरसः (तृतीयः)

तालकं माक्षिकं तुत्थं हरबीजं सगन्धकम् ।
कर्कोटीकन्दतोयेन मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ ९४९ ॥
चुल्ल्यां पाच्यं चतुर्यामं सितया च ज्वरापहः ।
अयं लङ्केश्वरो नाम शीतमातङ्गकेसरी ॥ ९५० ॥

र.मु., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध हरिताल, सोनामाखी, तुत्थ, पारा और गन्धक समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर खेखसेकेकन्देकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीहुई आतशीशीशीमें डालकर बालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल्होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक शक्करकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरकानाशकरताहै॥

२१३ लङ्केश्वरोरसः (चतुर्थः)

शिवशिरोषणलोहनभोद्भवा-
न्द्विजलसूर्पलभस्मनिमान् क्रमात् ।
शशिशरदीन्दुकृशानुधनेशकै-
रपि मितानथ षोडशभूमितान् ॥ ९५१ ॥
परिविमृद्य तथाम्बुधरीरसै-
र्भवति रावणरासपुरीश्वरः ।
हरति सूतिगदांश्चिभवज्वरं
निजधियार्द्रकनारसिताद्वियुक् ॥ ९५२ ॥

चि क, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, हर्रे और मरिच १–१ भाग, लोहभस्म ३ मा, अभ्रकभस्म २ मा., शङ्खभस्म ११ मा, मोती १६ मा, अजवर्द १ भागलेकर सबको बारीकपीस नारियलकेपानीसे २–३ रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना कर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली औचिती देखकर अदरखकेरस अथवा शक्करप्रभृति केसाथदेनेसे यह प्रसूतिरोग और सन्निपातको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ ललितनाथोरसः

ग्राह्या बुभुक्षितः सूतः सर्वदोषविवर्जितः ।
महादेवी च मुशली कर्कटी च कुमारिका ॥ ९५३ ॥

मुण्डी भृङ्गी रसैरेषां प्रत्येकं सप्त भावनाः ।
दुग्धाऽम्भणे पलद्वन्द्वं स्वेदयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ९५४ ॥
सूरणान्तर्विनिक्षिप्य मृत्कर्पटविलेपिते ।
शरावयन्त्रे वह्निञ्च दद्याद् द्वादशयामकम् ॥ ९५५ ॥
मृत्कूपिकायां निक्षिप्य वह्नावाकाशयन्त्रतः ।
मदिरापुष्पविप्रुड्भिः पाचयेद्दिनसप्तकम् ॥ ९५६ ॥
तत एरण्डतैलेन ज्योतिर्यन्त्रे विपाचयेत् ।
पुनः शीतं गृहीत्वा तत्तैलेनाऽनेन मर्दयेत् ॥ ९५७ ॥
विषतिन्दुकभल्लातनिम्बस्तुर्य्याजपञ्चकम् ।
ऋषिज्योतिष्मतीधूर्तनाकुलीकरवीरकम् ॥ ९५८ ॥
अजमोदाफले रेषां तैलं पातालयन्त्रजे ।
विषं विभाव्य तत्तैले गन्धं तालं विमर्दयेत् ॥ ९५९ ॥
जैपालं सर्वतुल्यञ्च गन्धतुल्यं लवङ्गकम् ।
जातीपत्रफले कृष्णामेतेषां तैलमाहरेत् ॥ ९६० ॥
तत्तैले मर्दयेत्सूतं तच्च जातीफलान्तरे ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वह्निं द्वादशयामकम् ॥ ९६१ ॥
सुसिद्धोऽयं रसः प्रोक्तो नाथस्तु ललिताह्वयः ।
रक्तिकापादमानेन हन्ति सर्वाऽऽमयाञ्जवात् ॥
मदात्ययक्षयश्वासोन्मादकासादिकान्गदान् ॥ ९६२ ॥

र.का., मदात्ययाऽधिकारे ।

भाषा—समस्तदोषोंसेनिर्मुक्त और शुभुक्षित पारा लेकर सहदेवी, मुशली, ककड़ी, घीकुवार, गोरखमुण्डी और भंगरेके रसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर गरमकाञ्जीसे साफकरले फिर इसमेंसे २ पल पारेको एकद्रोणदूधमें तीनदिनतक स्वेदनकर पकेहुए मोटे सूरणके कन्दमें खोदकर रखदे और ऊपरसे उसीकी डाटलगाय सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेवे । सूखनेपर किसीमिट्टीकेनादकेअन्दर रखकर दूसरीनादसे बन्दकर चूल्हेपर रख १२ पहर की साधारण अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर ४ तह मलमलके कपड़ेमें बांधकर मिट्टीकेघड़ेमें मद्यभर नालके मुंहपर इसे लटकादे और नीचे मिट्टीकाही घड़ालगाकर मुंहबन्दकरदे और धीरे २ मद्यकेघड़ेमें नीचे आंचदे जिसमें कि मद्यनेफुहारे उसपोटलीपर लगातार पडतेरहें । यन्त्र इसतरहका बनावे कि अगाड़ीकेकरावेमेंसे मद्यभरनेपर स्वयं निकलजाय और पीछेकेघड़ेमें समाप्तहोनेपर दूसरीभरसकें, आचबीचमें बन्द न करनी पड़े । ऐसे ७ दिनतक स्वेदितकर स्वाङ्गशीतल्होनेपर निकालकर एरण्डतैलमें डालकर बहुतमन्दाग्निसे सातरोजतक आंचदे पर यह ध्यानरहेकि तैलमें आग न लगनेपावे । आठवेंरोज स्वाङ्गशीतल होनेपर पारेकोतैलसे निकालकर खरलमें डाल कुचिला, भिलावा, निबौली, थूहरकादूध, पिस्ता, बादाम, चिरोंजी, अखरोट, चिलगोजा, गोरोचन, मालकांगनी, धतूरकेबीज, नाकुली ?, सफेदकनेरकीजड़, अजमोद, मैनफल, इनका पातालयन्त्रसे तैलनिकाल उसमें ७ दिनतक पारेको घोट । बचेहुएतैलमें पारेकेबराबर वछनाग, गन्धक और हरितालको भावना देवे । फिर लौंग, जाविन्नी, जायफल, पीपल तथा शुद्धजमालगोटा ३–३ भाग, इनसबको भावना देकर पातालयन्त्रसे तैल निकालकर पूर्वोक्तपारदको इसतैलमें ७ रोज मर्दनकर बराबरके जायफलकेसाथ घोटकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर बालुकायन्त्रमेंरख १२ पहरकी समाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ चावल समयोचित अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह मदात्यय, क्षय, श्वास, उन्माद और कासप्रभृतिरोगोंको नष्टकरताहै २१४

२१५ लवङ्गपाकः

प्रस्थमेकं लवङ्गस्य पिष्ट्वा दुग्धाऽऽढके क्षिपेत् ।
घनीभूते च तस्मिंस्तु शर्कराप्रस्थमात्रकम् ॥ ९६३ ॥
जातीफलञ्च कङ्कोलं कृष्णा शुण्ठी मरीचकम् ।
त्रिफला रजनीयुग्मं त्रुटी तगरकेशरम् ॥ ९६४ ॥
जातीपत्र्यश्वगन्धा च पौष्करं ग्रन्थिकं बलाम् ।
अहिफेनं लवङ्गञ्च विषं गोक्षुरकं तथा ॥ ९६५ ॥
कर्पूरं खुरसानञ्च चव्यकं नागकेशरम् ।
एतानि कर्षमात्राणि चूर्णीकृत्य विनिःक्षिपेत् ॥९६६॥
मृतं सूतं तथा ताम्रं शाणमात्रं क्षिपेत्सुधीः ।
भक्षयेच्छुक्तिमात्रन्तु गव्यं दुग्धं पिबेदनु ॥ ९६७ ॥
तुष्टिदः पुष्टिदः प्रोक्तो वीर्यस्तम्भकरो मतः ।
पञ्चकासं तथा पाण्डुं श्वासं गुल्मं प्रमेहकम् ॥ ९६८ ॥
अश्मरी मूत्रकृच्छ्रञ्च वातं हन्ति तथाऽर्बुदम् ।
पित्तं प्रदरकुष्ठञ्च हिक्कानेत्रशिरोव्यथाः ॥ ९६९ ॥

रसायनस., चि.र.म., र.को., रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ लवङ्गको ४ प्रस्थ दूधमें डालकर पकावे । गाढा होनेपर एकप्रस्थ शकर डालकर चाशनी तैयारकरे । फिर जायफल, शीतलचीनी, पीपल, सोंठ, मरिच, त्रिफला, हल्दी, दारुहल्दी, इलायची, तगर, केशर, जाविन्नी, असगन्ध, पोहकरमूल, पिपलामूल, बला, अफीम, लौंग, शुद्धबच्छनाग, गोखरू, शुद्धकपूर और खुरासानी अजवाइन, चव्य और नागकेशर १–१ कर्षका बारीकचूर्ण तथा पारद और ताम्रभस्म ४–४ माशेलेकर पूर्वोक्त चाशनीमें मिलाकर जमादे । इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलेतक यथाग्निबलाबल गायकादूध पीनेसे तुष्टि, पुष्टि और वीर्यका स्तम्भन करताहै । पांचप्रकारकी खांसी, पाण्डु, श्वास, गुल्म, प्रमेह, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, वायु, अर्बुद, पित्त, प्रदर, कुष्ठ, हिचकी, नेत्र और शिरकेरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१५ ॥

२१६ लवङ्गादिचूर्णम् (बृहत्) (प्रथमम्)

लवङ्गं जीरकं कौन्ती सैन्धवं त्रिसुगन्धकम् ।
अजमोदा यमानी च मुस्तकं सकटुत्रयम् ॥ ९७० ॥
त्रिफला शतपुष्पा च पाठा भूनिम्बगोक्षुरम् ।
जातीकोषफले दार्वी नलदं चन्दनं मुरा ॥ ९७१ ॥
शटी मधुरिका मेथी टङ्कणं कृष्णजीरकम् ।
क्षारद्वयं वालकञ्च त्रिवृत्तं पौष्करकन्तथा ॥ ९७२ ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं सधनीयकम्।
रसाऽभ्रगन्धकं लोहं समं सर्वं विचूर्णितम् ॥ ९७३ ॥
उष्णोदकानुपानेन मन्दाग्ने दीपनं परम्।
शीततोयाऽनुपाने वा बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥९७४॥
आमातिसारग्रहणीं चिरकालोत्थितामपि।
शूलं विष्टम्भमानाहं विसूचीं शोथकामले ॥ ९७५ ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं हन्ति कासं विशेषतः।
लवङ्गाद्यं महच्चूर्णं शर्करासहितं पिबेत् ॥ ९७६ ॥
आध्मानं शमयेच्छीघ्रं लवङ्गस्याऽनुपानतः।
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतल्लोकाऽनुग्रहहेतवे ॥ ९७७ ॥

भै र, ग्रहण्याम्।

भाषा—लौंग, जीरा, रोण (पहाड़ी), सेंधानमक, तज, पत्रज, इलायची, अजमोद, अजवाइन, नागरमोथा, त्रिकटु, त्रिफला, सौंफ, पाठा, चिरायता, गोखरू, जाविनी, जायफल, दारुहल्दी, खस, चन्दन, मुरामासी, कचूर, सोआ, मेथी, सुनासुहागा, स्याहजीरा, सज्जी, यवक्षार, सुगन्धवाला (तगरगण्ठोला), बेलगिरी, पोहकरमूल, चित्रककीजड़, पिपलामूल, विडङ्ग, धनिया, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशेकीमात्रा शकरकेसाथ लेकर गरमपानी पीनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै। पित्तप्रधानरोगोंमें ठंढापानी पिलावे। इसके निरन्तरसेवनसे आमातिसार, पुरानी ग्रहणी, शूल, विष्टम्भ, आनाह, हैजा, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डु, कास, आध्मानप्रभृति समस्तरोग नष्टहोतेहैं। लवङ्गके अनुपानकेसाथ यह आध्मानको बहुत शीघ्र नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ लवङ्गादिचूर्णम् (बृहत्) (द्वितीयम्)

लवङ्गातिविषा मुस्तं पिप्पली मरिचानि च।
सैन्धवं हपुषा धान्यं कट्फलं पुष्करं तथा ॥ ९७८ ॥
जातीकोषफलाऽजाजी सौवर्चलरसाञ्जनम्।
धातकी मोचकं पाठा पत्रं तालीसकेशरम् ॥ ९७९ ॥
चित्रकश्च विडङ्गश्चैव तुम्बुरु बिल्वमेव च।
त्वगेला पिप्पलीमूलमजमोदा यमानिका ॥ ९८० ॥
समङ्गा वत्सकं शुण्ठी दाडिमं यावशूकजम्।
निम्बं सर्जरसं क्षारं सामुद्रं टङ्कणन्तथा ॥ ९८१ ॥
ह्रीवेरं कुटजश्चैव जम्ब्वाम्रं कटुरोहिणी।
अभ्रकं पुटितं लोहं शुद्धगन्धकपारदम् ॥ ९८२ ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
मधुना वा लिहेच्चूर्णं पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ ९८३ ॥
सर्वदोषहरश्चैव ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम्।
वातिकीं पैत्तिकीश्चैव श्लैष्मिकीं साम्निपातिकीम् ९८४
पक्वाऽपक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम्।
कृष्णाऽरुणश्च पीतश्च मांसधावनसन्निभम् ॥ ९८५ ॥
ज्वराऽरोचकमन्दाग्निं कासं श्वासं वमिं तथा।
अम्लपित्तं तथा हिक्कां प्रमेहश्च हलीमकम् ॥ ९८६ ॥
पाण्डुरोगश्च विष्टम्भमर्शांसि विविधानि च।
प्लीहगुल्मोदरानाहशोथाऽतीसारपीनसान् ॥ ९८७ ॥
आमवातं तथा जीर्णं सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत्।
उदरं प्रदरश्चैव लवङ्गाद्यमिदं शुभम् ॥ ९८८ ॥

भै. र, ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—लौंग, अतीस, नागरमोथा, पीपल, मरिच, सैंधानमक, झाऊ, धनिया, कायफल, पोहकरमूल, जाविनी, जायफल, जीरा, संचल, रसौत, धायडीकेफूल, मोचरस, पाठा, तेजपात, तालीसपत्र, नागकेसर, चित्रकमूल, विडनमक, तुम्बुल, बेलगिरी, तज, इलायची, पिपलामूल, अजमोद, अजवाइन, मजीठ, कुरैयाकीछाल, सोंठ, अनारदाना, यवक्षार, नीमकीछाल, राल, सज्जीखार, समुद्रनमक, सुनासुहागा, तगरगण्ठोला, इन्द्रजव, जामुन और आमकीगिरी अथवा छाल, कुटकी, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतककीमात्रा मधुकेसाथ चाटकर ऊपरसे चावलोंके धोवनकापानी पीनेसे दुस्तरसङ्ग्रहणी, सबतरहका अतिसार, ज्वर, अरुचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन, अम्लपित्त, हिचकी, प्रमेह, हलीमक, पाण्डु, विष्टम्भ, "नानातरहके बवासीर, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, शोथातिसार, पीनस, आमवात, अजीर्ण, सङ्ग्रहग्रहणी, प्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१७ ॥

२१८ लवङ्गादिचूर्णम् (तृतीयम्)

लवङ्गं टङ्कणं मुस्तं धातकी बिल्वधान्यकम्।
जातीफलं सर्जकश्च शताह्वा दाडिमन्तथा ॥ ९८९ ॥
जीरकं सैन्धवं मोचं नीलोत्पलरसाञ्जनम्।
अभ्रकं वङ्गकश्चैव समङ्गा रक्तचन्दनम् ॥ ९९० ॥
विश्वश्चाऽतिविषा शृङ्गी खदिरं वाल्कं समम्।
एतच्चूर्णं प्रदातव्यं सङ्ग्रहग्रहणीहरम् ॥ ९९१ ॥
नानावर्णमतीसारं ज्वरश्चैव नियच्छति।
आमरक्ताऽतिसारघ्नं शूलशोथनिषूदनम् ॥ ९९२ ॥
भृङ्गराजरसैः साव्यं भावयित्वा दिनत्रयम्।
छागीदुग्धेन मतिमान्गर्भिणीमनुपानतः ॥ ९९३ ॥

भै र, गर्भिणीरोगाऽधिकारे।

भाषा—लौंग, सुनासुहागा, नागरमोथा, धावडीकेफूल, बेलगिरी, धनिया, जायफल, सफेदराल, सौंफ, अनारदाना, जीरा, सैंधानमक, मोचरस, नीलोफर, रसौत, अभ्रक और वङ्गभस्म, लज्जालु, रालचन्दन, सोंठ, अतीस, काकड़ासींगी, खैर, सुगन्धवाला सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक अग्निबल देखकर उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबतरहके अतिसार, ज्वर, शूल, शोथ, इनसबको

यह नष्टकरताहै । इसको भंगरेकेरससे ३ रोज़ भावनादेकर बकरी-केदूधकेसाथ देनेसे गर्भिणीके तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ २१८ ॥

२१९ लवङ्गादिवटी

लवङ्गजातीफलधान्यकुष्ठं जीरद्वयं त्र्यूषणत्रैफलञ्च ।
एलात्वचं टङ्कवराटमुस्तं वचाऽजमोदं विडसैन्धवञ्च
तदर्द्धकं पारदगन्धमभ्रं लोहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम् ।
तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं वल्लप्रमाणा वटिकाश्च कृत्वा
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोये
रियं निहन्याद्ग्रहणीविकारम् ।
आमाऽनुबन्धं सरुजं प्रवाहं
ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम् ॥
कुष्ठाऽम्लपित्तं प्रबलं समीरं
मन्दानलं कोष्ठगतञ्च वातम् ॥ ९९६ ॥

र. सं., अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—लौंग, जायफल, धनियां, कुठ, स्याह-सफेदजीरा, त्रिकटु, त्रिफला, इलायची, तज, भुनासुहागा, कौडीभस्म, नागरमोथा, वच, अजमोद, विडनमक, सेंधानमक येसब सम-भाग, इनसबसेआधी शुद्धपारेगन्धककीनीछवर्णकज्जली और अभ्रकभस्म तथा सबकीबराबर लोहभस्म डालकर अच्छीतरह मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे २–३ रत्तीकीमात्रा उचितानुपान-केसाथ अथवा गरमपानीसे देनेसे ग्रहणी, पुरानाआम, पीडा-युक्तप्रवाहिका, कफ औरशूलयुक्त ज्वर, कुष्ठ, अम्लपित्त, प्रबल-वात, मन्दाग्नि, कोष्ठवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० लशुनपाकः (प्रथमः)

रसोनकं प्रस्थमितं विमृद्य
दुग्धार्मणेनापि विपाच्यमानम् ।
तुल्याऽभ्रकं लोहरसं लवङ्ग-
कर्पूरमाकल्लकमश्वगन्धा ॥ ९९७ ॥
छिन्निशा नागरं नागकेसरं त्रिफला समम् ।
जातिपत्री जातिफलं मागधी मरिचं समम् ॥९९८॥
प्रस्थैकखण्डसहितं हरते समीरं,
गुल्मव्यथां विषमसर्वसमीरणार्तिम् ।
मन्दाग्निशूलकफहृद्गदनाशकारी,
पाकः स्मृतः सुकविना च रसोनकस्य ॥९९९॥

रसायनसं, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—एकप्रस्थ एकपोती छिलेहुए लशुनके बारीकटुकडे-कर १ द्रोणदूधमें पकावे । मावाहोनेपर ताम्र, अभ्रक, लोह और पारा इनकीभस्में, लौंग, शुद्धकपूर, अकलकरा, असगन्ध, हलदी, दारुहलदी, सोंठ, नागकेशर, त्रिफला, जावित्री, जायफल, पीपल और मरिच १–१ तोला और खांड १ प्रस्थ लेकर मावेमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ तोला अथवा यथा-प्रिवत सेवनकरनेसे प्रबलवात, गुल्म, विषमवात, मन्दाग्नि, शूल, कफ, हृद्रोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २२० ॥

२२१ लशुनपाकः (द्वितीयः)

निस्तुषं लशुनं कृत्वा रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत् ।
तदुग्रगन्धनाशाय प्रातर्धौतं जलाप्लुतम् ॥ १००० ॥
प्रस्थमात्रन्तु तत्पिष्ट्वा क्षीरप्रस्थचतुष्टये ।
विपाच्य सान्द्रीभूतेऽस्मिन् सर्पिषः कुडवं क्षिपेत् ॥
रास्ना सहचरी छिन्ना शटी विश्वा सुरद्रुमम् ।
वृद्धदारकदीप्याग्निशताह्वासुपुनर्नवाः ॥ १००२ ॥
फलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्षसम्मितम् ।
विचूर्ण्य कुडवं शीते मधुनस्तत्र योजयेत् ॥ १००३ ॥
सिताप्रस्थचतुष्कञ्च पञ्चलोहरसेन्द्रकम् ।
कर्पूरं मृगनाभिञ्च यथालाभं विमिश्रयेत् ॥ १००४ ॥
पालिकीं भक्षयेन्मात्रामाढ्यवातहनुग्रहे ।
आक्षेपकादिमङ्गेषु कटयूरुस्तम्भकुब्जके ॥ १००५ ॥
सर्वाङ्गे सन्धिभङ्गे च प्रबले मारुते हितः ।
लशुनस्य सुपाकोऽयं वर्णायुःपुष्टिकारकः ॥ १००६ ॥

पा. ध., रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ एकपोतीछिलेहुए लशुनको रातको छाछमें डालकर रखदे । सुबहमें धोकर अन्दरका अङ्कुर निकाल बारीकपीसकर ४ प्रस्थदूधमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे । गाढा-होनेपर ४ प्रस्थ शक्कर और पावभर घी डालकर पाककरे। लड्डूकी चाशनी होनेपर उतारकर रखले। उसमें रास्ना, पियाबांसा, गिलोय, कचूर, सोंठ, देवदारु, विधारा, अजवाइन, चित्रकमूल, सौंफ, पुनर्नवा, त्रिफला, पीपल, विडङ्ग, पांचोंलोह और पारदभस्मका कपड़छानकियाहुआ १–१ कर्ष चूर्ण मिलावे । एकदम ठंडाहोनेपर पावभर शहद तथा शुद्धकपूर और कस्तूरी यथारुचि मिलाकर रखले । इसमेंसे १ तोलेसेलेकर ४ तोलेतक औषधि देकर खानेसे ऊरुस्तम्भ, हनुग्रह, आक्षेप, कुबड़ा, दुःसाध्यकटियुक्त ऊरुस्तम्भ, सर्वाङ्गवात, सन्धिभङ्ग और प्रबल वातवेदना इनसबको यह नष्टकर वर्ण और पुष्टिको करताहै २२१

२२२ लहरीतरङ्गरसः

मृताभ्राऽयोऽर्कवङ्गानां शुद्धपारदगन्धयोः ।
पञ्चविंशतिभागाः स्युः पृथक् पञ्च विषस्य च १००७
नवसारकनाः पञ्च भागा द्वादश टङ्कणात् ।
मानवो द्राक्षमूल्याश्च भावयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ १००८ ॥
एकविंशतिवारांश्च तावदार्द्रकजै रसैः ।
सप्तधा धूर्तनैर्वेन तथा कन्यारसेन च ॥ १००९ ॥
काचकूप्याञ्च संरुध्य वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
यामद्वादशकं यावत्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १०१० ॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वापि यथायोग्यञ्च भक्षयेत् ।
सपिगातज्वरान्हन्ति राजयक्ष्माणमुत्तमम् ॥
योगो महाराजलहरीतरङ्गोऽयं महारसः ॥ १०११ ॥

र. सु., भै. मा., यो. र., मधिकारे ।

भाषा—अभ्रक, लोह, ताम्र, वङ्ग, इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक २५–२५ भाग, शुद्ध वच्छनाग और नवसादर ५–५ भाग, सुहागा और दालचिकना १२–१२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर घीकुंवार और अदरखके रसोंसे २१–२१, धतूरेकेतैल और घीकुंवारके रससे ७–७ भावनाएं देकर अच्छीतरह सुखाकर ६–७ कपडमिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख मुंहबन्दकर १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोडे। इसमेंसे २ से ३ रत्तीतककी मात्रा औचिती देखकर खिलानेसे सन्निपात,धनुर्वात,राजयक्ष्म,इनसबको यह नष्टकरताहै २२२

२२३ लक्ष्मणालोहम् (प्रथमम्)

लक्ष्मणायाः पलशतं क्वाथयित्वा यथाविधि ।
क्वाथे पूते पुनः पक्के घनीभूते च निःक्षिपेत् ॥१०१२॥
अशोकं कुशमूलञ्च मधूकं मधुकं बलाम् ।
पाठां विल्वं पलोन्मानं लौहं सर्वसमं तथा ॥ १०१३॥
लक्ष्मणालोहनामेदं भेषजं स्त्रीगदापहम् ।
जगतामुपकाराय दस्राभ्यां परिनिर्मितम् ॥ १०१४॥

भै. र., स्त्रीरोगाऽधिकारे।

भाषा—लक्ष्मणाकापञ्चाङ्ग १०० पल लेकर चतुर्गुणितपानीमें क्वाथकरे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर मसलकर छानकर फिरसे पकावे। घन तैयारहोनेपर अशोककीछाल, कुशाकीजड़, महुएकाहीर, मुलहठी, बला, पाठा और वेलगिरी १–१ पलका बारीक चूर्णकर इसकीबराबर लोहभस्म लेकर सबको सिद्धकियेहुए घनमें मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ४ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह स्त्रियोंके समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२३ ॥

२२४ लक्ष्मणालोहम् (द्वितीयम्)

लक्ष्मणाहस्तिकर्णाभ्यां त्रिकत्रयसमन्वयात् ।
अश्वगन्धासमायोगाल्लौहं पुंसवनं स्मृतम् ॥१०१५॥
पुत्रोत्पत्तिकरं वृष्यं कन्याहतिनिवर्तकम् ।
कृशस्य बलदं श्रेष्ठं सर्वामयहरं परम् ॥ १०१६ ॥

भै. र., र. ॥, वृष्याधिकारे, वाजीकरणे

भाषा—लक्ष्मणा, हस्तिकर्णपलाश, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात और असगन्ध समभाग लेकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह प्रसूतिरोगको दूरकरताहै। कृशको बलिष्ठ बनाताहै और समस्तरोगोंको नष्टकरताहै। इसकेसेवनसेकन्याओंकी उत्पत्ति बन्दहोकर पुत्रोत्पत्तिहोतीहै ॥ २२४ ॥

२२५ लक्ष्मीकान्तरसः (प्रथमः)

कान्तं सूतं ताप्यपाषाणगन्धं
ग्राह्ये बीजे मर्दयित्वा धमेत ।
गोलान् कृत्वा वेष्टयित्वा मृदाद्यै-
र्ध्मापेत्पश्चाच्छोधयेत्क्षारकाद्यैः॥१०१७॥
कान्ताश्माश्मं वज्रमूषां प्रलिप्य
सूतं दद्यात्षोडशांशश्च हेम ।
ध्मापेद्गाढं सूतराजे तु दद्या-
ज्जीर्णे ग्रासे ग्रासमन्यं तथैव ॥ १०१८ ॥
एवं तुल्यं षड्गुणश्चाऽपि जार्यं
सूते बीजं ताप्यसत्त्वेन तुल्यम् ।
तं सूतेन्द्रं कच्छपे यन्त्रराजे
शुद्धे सूतं जारयेत्तुर्यभागम् ॥ १०१९ ॥
तं सूतेन्द्रं जारयेद्धेमगर्भे
लक्ष्मीकान्तः सूतराजोऽथ सिद्धः ।
तुष्टे शम्भौ जायते लक्षवेधी
चन्द्राऽर्कोऽसौ ताप्यसत्त्वेन युक्तः ॥
वक्त्रे गोलं धारयेद्वत्सरैकं
तुष्टे शम्भौ देहसिद्धिर्ध्रुवा स्यात् १०२०

र. दी., वाजीकरणे।

भाषा—कान्तलोह, पारा, सोनामाखी, गन्धक सब समभागलेकर पलाशकी फलियोंकेरस अथवा क्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर गोलिया बनाय ऊपर कालीमिट्टी पोतकर सुखादे। सुखनेपर सत्त्वपातनयत्रमें रखकर धमनकराके सत्त्वपातनकरे। सत्त्वको सुहागावगैरह देकर मलसे रहितकरले। फिर इसका चूर्ण बहेड़ेकेसाथ मिलाकर पानीमें खरलकर वज्रमूषामें लेपदेकर बुभुक्षितपारा डालकर १६ वा हिस्सा सुवर्णबीजदेकर गाढ़धमनकरावे। सुवर्णजीर्णहोनेपर दूसरा ग्रास देकर जीर्णकरे। इसतरह बराबर अथवा षड्गुण पारेमें बीजका जारणकर बराबरका सुवर्णमाक्षिकसत्त्व मिलाकर रखले। फिर कच्छपयत्रमें अग्निस्थायी और बुभुक्षित शुद्धपारेको रख ऊपर रक्खेहुए ताप्ययुक्तपारेका चतुर्थांश जारणकरे और इसपारेको हेमगर्भपारेमें जारण करे यह लक्ष्मीकान्तपारद तैयारहुआ। यह क्रिया शिवजीके प्रसन्न होनेपर होसकतीहै अन्यथा नहीं। यह रस माक्षिकसत्त्वकेसाथ देनेसे चन्द्रक्रिया अथवा सूर्यक्रियामें लक्षगुणितधातुको रूपान्तरमें परिणतकरताहै। ऊपरकहेहुए लक्ष्मीकान्तरसके पिण्डको एकवर्षभर लगातार मुंहमें रखनेसे देहसिद्धि होतीहै।

२२६ लक्ष्मीकान्तरसः (द्वितीयः)

मूर्छितायां पूरयेत्सूतराजं पिष्टीभूतं वज्रगर्भेण हेम्ना ।
मासाद्धेधो यत्रतत्र द्विमासादूर्ध्वं यत्नात्सूतराजं प्रगृह्य
ध्मापेत्पश्चान्निर्मलः शुकतुल्यः
सूतः खोटो जायते लक्षणोकः ।
उत्क्रान्मार्गान्मारितो जारितोऽसौ
सूते बीजे सारितः पूर्वतुल्यः ॥ १०२२ ॥

र. दी., वाजीकरणे।

भाषा—पूर्ववत् पारा, सुवर्णमाक्षिक, गन्धक, हीरा और सुवर्ण समभाग मिलाकर पलाशबीजोंके स्वरस अथवा क्वाथसे

एकदोदिन मर्दनकर छोटी २ गोलिया बनाय सुखाकर काली-मिट्टीसे पोतदे। सुखनेपर हठधमन कराके सत्त्वनिकाले। इस-सत्त्वको सुहागे वगैरहसे शुद्धकर इसके बराबर बहेडेका चूर्ण मिलाय वज्रमूषामें लेपकर हीरेकासत्त्व और सुवर्णमिलानेसे-पिष्टीभूत अग्निस्थायी और बुभुक्षितपारेको डालकर एक या दो महीनेतक प्रतीक्षाकरे। दियेहुए आगकी एकताहोनेपर धमनकरावे। ताव आनेपर यह शुनके सदृश शुभ्रहोजायगा इसपारेका चौथा हिस्सा शुद्धबुभुक्षित और अग्निस्थायी पारेमें जारणकरे फिर इसपारेको पूर्वपरिच्छिन्नपारेमें जारणकरनेसे सारणातैलसे सारणसंस्कार देनेपर यह सूर्य और चन्द्रक्रियामें लक्षवेधी होताहै। माक्षिकरसकेसाथ इसकागोलाबनाय एकापंतर निरन्तर मुंहमेंरखनेसे इससे देहसिद्धि होतीहै॥ २२६॥

२२७ लक्ष्मीकान्तरसः (तृतीयः)

ताप्यं गन्धं क्षारकान्ताऽश्मतालं
निम्बूतोये मर्दयित्वा विलिप्य।
तद्वद् १मापाद्भस्मतामेति सूतं
गन्धं तुल्यं तेन कृत्वाऽम्लयुक्तम्॥
हेम्नः पत्रं लेपयित्वा पुटेत
भस्मीभूतं जायते तारमेवम्॥ १०२३॥

र. दी., वाजीकरणे।

भाषा—सोनामाखी, गन्धक, सुहागा, सज्जी, यवक्षार, कान्तपाषाण और हरिताल सबसमभागलेकर नीबूकेरसमे १-२ रोजमर्दनकर वज्रमूषामें लेपकर शुद्ध और अग्निस्थायी सुवर्णादिबीजसे पिष्टीकृतपारेको डालकर हठधमनकरानेसे पारदभस्म होतीहै। इसभस्मकीबराबर शुद्ध गन्धकको नीबूप्रभृति अम्लमे मर्दनकर सुवर्ण अथवा रजतकेपत्रपर लेपदेकर शरावसम्पुटकर गजपुटकी आंचदेनेसे उत्तमभस्म होतीहै। इसमेंसे आधीरत्तीसे एकरत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै॥ २२७॥

२२८ लक्ष्मीनारायणरसः (प्रथमः)

शुद्धगन्धकमेतच्च टङ्कणं विषहिङ्गुलम्।
रोहिण्यतिविषा कृष्णा वत्सकाऽभ्रकसैन्धवम् १०२४
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
दन्तीद्रावैः फलद्रावै मर्दयेच्च दिनत्रयम्॥ १०२५॥
वल्लद्वयां वटीं कृत्वा आर्द्रकस्य जले ददेत्।
दुष्टज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे॥ १०२६॥
अतिसारे ग्रहण्याञ्च रक्ताभे मेहशूलजित्।
सूतिकावातदोषांश्च लङ्केशमिव राघवः॥ १०२७॥
इष्टान्नं भोजयेत्पथ्यमभ्यङ्गं स्नानमाचरेत्।
कर्पूरयुक्तताम्बूलं प्रसूनं हरिचन्दनम्॥ १०२८॥
नारिकेलोदकं पीत्वा नारीणां सङ्गमेव च।
लक्ष्मीनारायणो नाम रसानामुत्तमो रस॥ १०२९॥

यो. र, र च., वातरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धक, सुहागा, बछनाग और शिंगरिफ, कुटकी, अतीस, पीपल, इन्द्रजव, अभ्रकभस्म, सैंधानमक सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर दन्तीमूल और त्रिफलाके क्वाथमे ३-३ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेसाथ देनेसे दुष्टज्वर, सन्निपात, हैजा, विषमज्वर, अतिसार, ग्रहणी, रक्तातिसार, प्रमेह, शूल, सूतिकारोग वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै। भूखलगनेपर इष्ट और पथ्य भोजन देवे। ठंडेजलसे स्नान, कपूरयुक्तताम्बूल, फूलोंकीमाला, चन्दनलेप, नारियलकापानी, स्त्रीसहवास इनका सेवनकरे॥ २२८॥

२२९ लक्ष्मीनारायणरसः (द्वितीयः)

पलानां त्रिशतं सूतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत।
शाल्मलीरसमांशेन द्वौ मासौ मर्दयेच्छनैः॥ १०३०॥
अथ प्रक्षालयेत्सूतं तोयैस्त्रिशतवारकम्।
तत्सूतं चामृतसमं सर्वकञ्चुकवर्जितम्॥ १०३१॥
अष्टादशास्वसंस्कारैः शोधितं शास्त्रमार्गतः।
तं रसेन्द्रं भाण्डमध्ये निक्षिप्याऽथ पचेद्भिषक् १०३२
निरन्तरमहोरात्रं मन्दमध्यखराग्निना।
मासान् पञ्च विधानेन,गन्धकं ग्रासमर्पयन्॥ १०३३॥
गन्धकं शुद्धिमापन्नं सूक्ष्मचूर्णं विधाय च।
भारमानन्तु सङ्गृह्य जीर्णे जीर्णे मुहुः क्षिपेत्॥ १०३४॥
अथ तत्स्वाङ्गसंशीतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
षोडशैरुपचारैश्च पूजयित्वा जनार्दनम्॥ १०३५॥
शतावरीभृङ्गरसे मर्दयित्वाऽथ भावयेत्।
मणिश्च गारुडं नीलं वैदूर्यं वज्रमौक्तिकम्॥ १०३६॥
गोमेदकं पुष्परागं राजावर्तं प्रवालकम्।
चन्द्रकान्तं सूर्यकान्तं नीलाञ्जनरसाञ्जने॥ १०३७॥
वराटशङ्खशुक्तीश्च विमलां माक्षिकद्वयम्।
चतुर्विधञ्च पाषाणं तुत्थं टङ्कणत्रयम्॥ १०३८॥
विषत्रयं सुवर्णञ्च वैकान्तं कान्तलोहकम्।
अभ्रकं रजतं वङ्गं नागं कांस्यं सुरीतिकाम्॥ १०३९॥
खर्परं कान्तपाषाणं शोधितं विधिपूर्वकम्।
तत्सर्वं भस्मसात्कृत्वा गन्धकं तालकं शिलाम्॥ १०४०॥
मृगनाभिञ्च कर्पूरं काश्मीरं गोमती क्षिपेत्।
प्रत्येकं मानिकायुग्मं द्वौ मासौ तद्विमर्दयेत्॥ १०४१॥
ह्रीवेरोदुम्बरोशीरकदलीचन्दनद्रवैः।
हिमाम्बुभिश्च प्रत्येकं प्रस्थमात्रे विमर्दयेत्॥ १०४२॥
अक्षमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कांश्च कारयेत्।
सर्वमेकत्र संयोज्य ताम्रपात्रे सवस्त्रके॥ १०४३॥
पूजयेदुपचारैश्च लक्ष्मीनारायणं स्मरन्।
धूपदीपैश्च नैवेद्यैस्ताम्बूलै दक्षिणादिभिः॥ १०४४॥
वैष्णवेन विधानेन होमं तत्र च कारयेत्।
वेदघोषं प्रकुर्वीत स्वस्तिवाचनपूर्वकम्॥ १०४५॥

दद्याद्दानानि विप्रेभ्यो यथाविभवमाचरेत् ।
धत्रं शय्यां मणिं छत्रं कपिलां धेनुमेव च ॥ १०४६ ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ।
तत्कर्तारश्च भिषजः पूजनीया विशेषतः ॥ १०४७ ॥
एतद्धान्यपुटे स्थाप्यं मासमात्रात्समुद्धरेत् ।
पूर्ववत्पूजयित्वाऽथ सेवयेत्सुमुहूर्तके ॥ १०४८ ॥
एककालं द्विकालं वा चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
एतस्य चाऽनुपानन्तु लक्ष्मीनारायणे घृतम् ॥१०४९॥
अथवा तु यथासात्म्यमनुपानं प्रकल्पयेत् ।
एतदेवि महालक्ष्मीनारायणरसो मतः ॥ १०५० ॥
चिरस्त्रीपुंसवन्ध्यत्वं नष्टौजस्त्वञ्च नाशयेत् ।
पुत्रोत्पत्तिकरं नृणां जरामरणनाशनम् ॥ १०५१ ॥
मेहान्विंशतिसङ्ख्याकानदमरीपिष्टिकाव्रणान् ।
विंशति कुष्ठरोगाणां राजयक्ष्मादिकान् क्षयान् १०५२
पित्तजानखिलान्रोगान् व्रणान्वै सर्वसन्धिजान् ।
श्लेष्मजांश्चाखिलकासादीन् गुल्मानां पञ्चकं तथा१०५३
अर्शांसि षट्प्रकाराणि जलोदरमहोदरम् ।
अशीतिं वातरोगाणां ज्वरांश्च विविधानपि ॥१०५४॥
मूर्च्छारोगमपस्मारं प्रमेकञ्च भगन्दरम् ।
जिह्वारोगांश्च विषजानन्यांश्च ग्रहजान्गदान् ॥ १०५५ ॥
इत्येतानखिलान्रोगान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
वृण्डवृद्धिकरं नृणां वीर्यवृद्धिकरं तथा ॥ १०५६ ॥
लक्ष्मीनारायणो नाम रसोऽयं लोकपूजितः ।
पूर्वं शिवेन कथितं पार्वत्यै तद्रसायनम् ॥ १०५७ ॥

र. क. यो. वाजीकरणे।

भाषा—२०० पल पारेको मजबूतपत्थरकी खरलमें डालकर बराबरका तीक्ष्णशहद्राव देकर दोमहीनेतक मर्दनकर १०० वार गरमपानीसे धोवे । इसतरहकरनेसे यह पारा समस्तमलक्रियोंसे दूरहोकर अग्नि सहशहोजाताहै । जहांपर पारदके विशेष संस्कार न करसके वहांपर इसपारेसे कामलेवे अथवा अष्टादशसंस्कारकर शास्त्रमार्गसे शुद्धकियाहुआपारा लेकर मजबूतमिट्टीकेपात्रमें डालकर निरन्तर मन्द, मध्य और खर अग्निसे पांचमहीनेतकपकावे । इसमें शुद्धकियेहुए गन्धकका चूर्ण २००० पल लेकर थोड़ा २ डालताजाय । एसे समस्तगन्धक जारणहोनेकेबाद पारेको स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । फिर षोडशोपचारसे जनार्दनभगवानका पूजनकर दातारीके स्वच्छरससे एकरोज मर्दनकर पन्ना, नीलम, लहसुनियां, हीरा, मोती, गोमेद, पुखराज, लाजवर्द, प्रवाल, चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, नीलाञ्जन, रसाञ्जन, कौड़ी, शङ्ख, सीप, रौप्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, कास्यमाक्षिक, माणिक, स्फटिक, माजराश, पीरोजा, तूतिया, दानेफिरङ्ग, कसीस, दोनोंसुहागा, तीनप्रकारकेविष, मुरमे, वैकान्त कान्तलोह, अभ्रक, रजत, बङ्ग, नाग, कांस्य, पीतल, खपरिया, कान्तपाषाण इनसबकी भस्में, शुद्धगन्धक, रसमाणिक्य, मैनसिल, कस्तूरी, कपूर, केसर, गोरोचन येसब १०–१० मासेलेकर बारीकचूर्णकर पारा–गन्धक, हरिताल और मैनसिलकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सुगन्धवाला, खूलञ्जीठाल, राम, केलेकाकन्द, चन्दन और कपूर इनके १–१ प्रस्थ द्रवोंमें मर्दनकर छोटेमटरकेबराबर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर ताम्रेकेपात्रमें मुंहबन्दकर रख छोड़े । इसकेसेवनकेसमय लक्ष्मीनारायणका ध्यानकरताहुआ धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल और दक्षिणाओंसे पूजनकर वैष्णव विधिसे होमकर वेदध्वनि और स्वस्तिवाचनकराके अपनी शक्त्यनुसार ब्राह्मणोंको वस्त्र, शय्या, मणि, छत्र और गौवेंग रह दक्षिणादे । इसरसके बनानेवाले वैद्योंका पूजनकर इस ताम्रसम्पुटको धान्यराशिमें रखदे । एकमहीनेकेबाद निकालकर पूर्ववत् पूजनकर फिर उसताम्रसम्पुटको धान्यराशिमें रखदे । एकमहीनेबादनिकालकर पूर्ववत् पूजनकर अच्छेमुहूर्तमें प्रारम्भकर दिनमें एकसमय या दोवार ४–४ रत्तीकीमात्रा लक्ष्मीनारायणघृत अथवा समयोचितानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे बहुतदिनका स्त्री और पुरुषोंका बांझपन, ओजका अभाव, बुढ़ापा, बीसप्रकारके प्रमेह, पथरी, प्रमेहपिडिका, २० प्रकारके कुष्ठ, राजयक्ष्म, क्षय, समस्त पित्तरोग, समस्तसन्धिजव्रण, कासश्वासादिक कफजरोग, पांचगुल्म, ६ प्रकारके अर्श, जलोदर, ८० वातरोग, समस्तज्वर, मूर्च्छा, अपस्मार, प्रमेक, भगन्दर, जिह्वारोग, विषज, ग्रहज, अण्डवृद्धि इनसबरोगोंको यह नष्टकर पुत्रोत्पत्तिको पैदाकरताहै२२९

२३० लक्ष्मीनारायणरसः (तृतीयः)

लक्ष्मीनारायणं वक्ष्ये दुर्लभं त्रिदशैरपि ।
सर्वरोगोपशमनं देहसिद्धिकरं परम् ॥ १०५८ ॥
ज्ञात्वैवं पुरुषो लोके ह्यमरत्वाय कल्पते ।
जरामरणनिर्मुक्त आधिव्याधिविवर्जितः ॥ १०५९ ॥
रसभस्मपलैकन्तु गन्धकात्तु पलत्रयम् ।
अभ्रलोहसुवर्णानां भस्म चैकैकशः पलम् ॥ १०६० ॥
वज्रकान्तप्रवालानां भस्म त्वेकं पलं पृथक् ।
शिलावराटमुक्तानां पृथग् भस्म पलं पृथक् ॥१०६१॥
पलंपलं पृथग्रौप्यं भुजङ्गवङ्गजं रजः ।
दरदात्पलमेकन्तु विषं त्रिपलसम्मितम् ॥ १०६२ ॥
एवं भस्मानि सङ्गृह्य सर्वाण्येकत्र कारयेत् ।
शाकवृक्षस्य निर्यासे मर्दयित्वा दिनत्रयम् ॥ १०६३ ॥
पुनश्चैवं पुटं दद्यात्पुटसङ्ख्यैकविंशतिः ।
चित्रकार्द्रकनिर्गुण्डीसुवर्णशिग्रुमार्कवैः ॥ १०६४ ॥
किराततन्दमिकटुत्रयकाढ़े भावयेत्रिधा ।
मत्स्यमाहिषमायूरकोलकुक्कुटपित्तकैः ॥ १०६५ ॥
गरलेनाऽर्कपयसा प्रत्येकं भावयेत्रिशः ।
ततः कच्छपयन्त्रे तु विरचूर्णमधो न्यसेत ॥ १०६६ ॥
ऊर्ध्वपात्रं प्रयत्नेन न्यसेनाऽनेन लेपयेत ।
सन्धिलेपः प्रकर्तव्यो मृदा कर्पटकेन च ॥ १०६७ ॥
ततस्तु पूजयेद्यन्त्रं वकपुष्पैः सुशोभनैः ।
गणेशाम्बजनन्यादीन्दुर्गां विष्णुञ्च पूजयेत ॥ १०६८ ॥

कुमारीं पूजयेत्पश्चात्पायसे मधुसर्पिषा।
ततो यन्त्रं समारोप्य चुल्लिकोपरि यत्नतः॥ १०६९॥
दीपाग्निस्तत्र कर्तव्यो याममेकं विचक्षणैः।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य तद्यन्त्रं चोल्लिखेत्पुनः॥१०७०॥
अनेन विधिना सम्यक् प्रयुक्तो रसकोविदैः।
वैद्यानाञ्च नृपाणाञ्च रसज्ञानां कलाविदाम्॥१०७१॥
सर्वेषाञ्च मनुष्याणां चमत्कारी भवेत्क्षणात्।
गुञ्जामात्रमयं दत्तो ह्यनुपानविशेषत.॥ १०७२॥
अनेन विधिना सम्यप्रसो भवति सिद्धिदः।
जलयोगः प्रकर्तव्यो यावत्कम्प. प्रजायते॥ १०७३॥
ततः पथ्यं प्रदातव्यं शर्करादधिभक्तकम्।
चन्दनं लेपयेदङ्गं कर्पूराऽऽगुरुमिश्रितैः॥ १०७४॥
तालवृन्ताऽनिलो देयो यावद्भवति विज्वरः।
उन्मादं दन्तबन्धञ्च मोहदाऽपस्मारतन्द्रिकम्॥१०७५॥
गात्राणाञ्च तथा शैत्यं तत्क्षणाच्छमयेद्रस.।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्॥१०७६॥
विंशतिं श्लेष्मजांश्चैव द्वन्द्वजांश्च विशेषतः।
अष्टादशैव कुष्ठानि तथा कासक्षयावपि॥ १०७७॥
श्वासकासौ तथा शाकं कामलाञ्चैव पाण्डुताम्।
प्रमेहविंशतिश्चाऽपि व्रणानां विंशतिं तथा॥ १०७८॥
एवं पञ्चविधान्शोषानुलमस्याऽपि तथैव च।
षड्विधान्यपि चार्शांसि ग्रहणीनां चतुष्टयम्॥ १०७९॥
अर्बुदं गण्डमालाञ्च विद्रधिञ्च भगन्दरम्।
एतेन षड्विधा रोगा विनश्यन्ति रसेन वै॥ १०८०॥
लक्ष्मीनारायणो नाम रसो लोकोत्तरः स्मृतः।
यथा सर्वेषु देवेषु देवो नारायणः स्मृतः॥ १०८१॥
तथा रसेषु सर्वेषु लक्ष्मीनारायणो मतः।
कृपया परया देवि कथितस्तव पार्वति॥ १०८२॥
न चाऽस्य शक्यते वक्तुं प्रभावस्त्रिदशैरपि।
जानाति य इमं लोके स एव परमेश्वरः॥ १०८३॥
ये पूजयन्ति सततं रसराजमेनं
सद्भावभक्तिसहितास्त्वथ भावयुक्ताः।
तेषां कदाचिदपि न ज्वरदाहपीडा
चाऽन्येऽपि केऽपि न भवन्ति शरीरदोषाः॥

र श., रसायनाऽधिकार।

भाषा—पारदभस्म १ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, अभ्रक, लोह, सुवर्ण, हीरा, कान्त, प्रवाल, मैनसिल, कौडी, मोती, रजत, नाग और वङ्ग इनकीभस्में १–१ पल, शुद्धहिंगरिफ १ पल, शुद्धवछनाग ३ पल, लेकर सबका बारीकचूर्णकर सागकी छालकेस्वरस अथवा क्वाथसे २१ दिन मर्दनकर चित्रक, अदरख निर्गुण्डी, धतूरा, सहिजन, भंगरा, चिरायता, सूरण, त्रिकुटु, गूगल, अदरख इनकेस्वरस, मछली, भैंसा, मोर, सूअर, और मुर्गा इनकेपित्त, सापराचदर, आकवादूध इनप्रत्येकवसे ३–३ भावनाए देकर एकमिट्टीकीकडाहीमें भीतरकीतर्फ इसे पोतद और दूसरीकडाहीमें इसकीबराबर वछनागकाचूर्ण विछाकर दोनोंकीसन्धिबन्दकर २–४ कपडमिट्टी देकर यन्त्र, गणेश, दुर्गा, विष्णु, कुमारीकन्या इन प्रत्येककी लालपुष्पोंसे पूजाकर अशीरमें कुमारीकन्याका पूजनकर खीर, मधु और घीसे कुमारीकन्याको सन्तुष्टकर यन्त्रको चूल्हेपर चढाय वछनागवाली कड़ाहीके नीचे १ पहर दीपाग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे यन्त्रको खोल ऊपरकी कड़ाहीमें लगेहुए रसको रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर मस्तकपर जलकी धारा डाले। भूसलगनेपर शक्कर, दही और भात खानेको देवे। चन्दन, कपूर और अगरका शरीरपर लेपकरावे। जबतक दाहमालूमहो तबतक ताडके पङ्खेसे हवाकरे। इसप्रयोगसे उन्माद, दन्तबन्ध, बेहोशी, अपस्मार, तान्द्रिक सन्निपात, शरीरशैत्य, ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्म रोग, द्वन्द्वजरोग, १८ प्रकारकेकुष्ठ, कास, क्षय, श्वास, शोथ, कामला, पाण्डु, २० प्रकारकेप्रमेह और व्रण, गुल्म, ६ प्रकारका बवासीर, ४ प्रकारकीग्रहणी, अर्बुद, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै। जिसतरह देवताओंमें लक्ष्मीनारायण श्रेष्ठहै वैसेही रसोंमें यह श्रेष्ठहै। जो लोग इस रसको भक्तिपूर्वक जानतेहैं उनको ज्वर, दाहादिजन्य शरीरपीडा कभी भी नहीं होती॥ २३०॥

२३१ लक्ष्मीनारायणरसः (चतुर्थ)

श्रीखण्डं शिखितुत्थञ्च टङ्कणं तालकं समम्।
पुनर्नवामूलरसे मर्दितं प्रहरत्रयम्॥ १०८५॥
विपचेद्याममानञ्च दोलायन्त्रेण बुद्धिमान्।
गुञ्जाद्वयं पिबेच्चाऽनुपानैः सर्वज्वरापहैः॥
दोषज्वरं हरेत्शीघ्रं लक्ष्मीनारायणो रसः॥ १०८६॥

वै. चि., ज्वराधिकारे।

भाषा—चन्दन, शुद्ध तुत्थ, सुहागा और हरिताल सम भागलेकर बारीकचूर्णकर पुनर्नवाकीजड़केस्वरस अथवा क्वाथसे ३पहर मर्दनकर पुनर्नवाके रसमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरकेउपद्रवोंको नष्टकरताहै॥ २३१॥

२३२ लक्ष्मीविलासमोदकः

त्र्यूषणं त्रिफला वह्निं श्चातुर्जातककेसरम्।
यवानीं नखजातीजं मुशलीं कपिकच्छुजम्॥१०८७॥
उच्चटाधूर्तबीजानि पर्णमूलाऽहिफेनकम्।
ज्योतिष्मती विडङ्गानि शृङ्गाटकरहाटकम्॥ १०८८॥
कुरण्डशोषणायसीलोहवङ्गाऽभ्रभस्मकम्।
वह्न्यष्टादशवाणैश्च विंशत्या भागमाहरेत्॥ १०८९॥
चतुर्थांशां मातुलानीं सितां द्विगुणभागिकाम्।
कर्षमात्रा वटी भुक्त्वा स्तम्भनं परमं भवेत्॥१०९०॥

कासश्वासप्रतिश्यायनाशनं कान्तिवर्धनम् ।
सतताऽभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ १०९१ ॥

टी.,वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, चातुर्जात, केशर ३–३ भाग, अजवाइन, दोनोनख, जावित्री, जायफल, मुशली, केवांचकेबीज ८–८ भाग; उटिंगन, धतूरेकेबीज, पानकीजड़, अफीम १०–१० भाग, मालकागनी, विडङ्ग, सिंघाड़े, अक्ल-करा ५–५ भाग; बहुफली, समुद्रशोष, खैर, लोह–वङ्ग और अभ्रकभस्म २०–२० भाग; भांग सबसे चतुर्थांश तथा शक्कर सबसे दूनी लेकर शक्करकी चाशनीमें सबका बारीकचूर्ण मिलाकर १–१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे आधी अथवा १ गोली दूधकेसाथ लेनेसे अत्यन्त स्तम्भनहोताहै । और श्वास, कास, प्रतिश्याय ये सब नष्टहोतेहैं हमेशाके सेवनसे वलीपलितसे रहितहोकर युवावस्थापन्न होताहै ॥ २३२ ॥

२३३ लक्ष्मीविलासरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतञ्च तालञ्च तालार्द्धं रसखर्परम् ।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पलंपलम् ॥ १०९२ ॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ।
कुलत्थस्य रसेनैव भावयेच्च पुनःपुनः ॥ १०९३ ॥
एलाजातीफलाख्यञ्च तेजःपत्रं लवङ्गकम् ।
यवानी जीरकञ्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥ १०९४ ॥
नतं भृङ्गं वंशगर्भं कर्षमात्रञ्च कारयेत् ।
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमौषधम् ॥ १०९५ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता शुभा ।
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये ॥१०९६॥
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पथ्यं स्यात्स्निग्धभोजनम् ।
क्षयं कासं तथा श्वासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम्१०९७
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ।
अर्शोनाशं करोत्येव बलवृद्धिञ्च कारयेत् ॥
वर्जयेच्छाकमम्लञ्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥ १०९८ ॥

र.सं.,भ ,र.सु.,भै र ,कासाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और हरिताल १–१ कर्ष, खपरिया ॥ माशे, वङ्ग, ताम्र, अभ्रक, कान्तलोह, कास्य इनकीभस्में, शुद्धगन्धक १–१ पल लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर काला-भंगरा और कुलथीके स्वरसोंसे ३–३ रोज़ भावनाएं देकर इलायची, जायफल, पत्रज, लौंग, अजवाइन, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला, तगर, भंगरा, वंसलोचन येसब १–१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर प्रथम औषधमें मिलाय पूर्वद्रवोंसे १–१ रोज़ मर्दन-कर चनेबराबर गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े । इन-मेंसे १–१ गोली ठंढेपानीकेसाथ लेनेसे सबप्रकारके कासनिवृत्त होतेहैं । इसमें मछली, मास और दूध प्रभृति स्निग्धभोजन पथ्यहैं । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ज्वरसहित अथवा रहित क्षय, कास और श्वास, हलीमक, पाण्डु, शोथ, शूल, प्रमेह, अर्श, निर्बलता इनसबको यह नष्टकरताहै इसमें शाक, खटाई, भुनेहुएद्रव्य और अग्निका परित्याग करे ॥ २३३ ॥

२३४ लक्ष्मीविलासरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं दिनं शुष्कं विमर्दयेत् ।
जम्बीरनीरेण दिनं मर्दयेन्मतिमान् भिषक् ॥१०९९॥
निःक्षिपेद् दृढमूषायां वासोभि र्मुनिसंख्यकैः ।
वेष्टयेत्सिकतायन्त्रे यामै र्द्वादशभिः पचेत् ॥ ११०० ॥
स्वभावशीतमुद्धृत्य श्लक्ष्णे खल्वे विमर्दयेत् ।
ताम्रभस्म कणा कुष्ठं प्रत्येकं सूतभागतः ॥ ११०१ ॥
प्रक्षिप्य मर्दयेद्गाढं त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
प्रदद्यादस्य सूतस्य शृङ्गवेरसितायुतम् ॥ ११०२ ॥
वल्लयुग्मं दीर्घतापे वातरोगे महत्यपि ।
निरामं नाशयेदाशु पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ ११०३ ॥
विषमज्वरजीर्णाऽर्शःक्षयमेहहलीमकाः ।
स्यानुपानाच्छमं यान्ति रसराजप्रभावतः ॥ ११०४ ॥
सेवितो मधुसर्पिभ्यां वर्षमेकं जितेन्द्रियैः ।
जरामरणरोगादीन् कुष्ठरोगान् सुदारुणान् ॥
लक्ष्मीविलासनामाऽयं शङ्करेण कृतो हरेत् ॥ ११०५ ॥

र.का ,ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर कज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकरोज मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी शीशीमें डालकर मुंहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर ताम्रभस्म, पीपल और कुठ १–१ भाग मिलाकर बिजोरेकेरससे ३ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अद्-रख और शक्करकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर तथा प्रचण्डवातरोग नष्टहोतेहैं । पीपल और मधुकेसाथ निरामज्वर, और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे विषम तथा जीर्णज्वर, बवासीर, क्षय, प्रमेह, हलीमक येसब नष्टहोतेहैं । जितेन्द्रियहोकर मधु और घृतकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे भयङ्करकुष्ठप्रभृतिरोगोंसे निवृत्त होकर बुढ़ापेसे रहित होताहै ॥ २३४ ॥

२३५ लक्ष्मीविलासरसः (तृतीयः)

पलं वज्राभ्रचूर्णस्य तदर्द्धं गन्धकं भवेत् ।
तदर्द्धं वङ्गभस्माऽपि तदर्द्धं पारदं तथा ॥ ११०६ ॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्धं ताम्रभस्मकम् ।
रससाम्येन कर्पूरं जातीकोषफले तथा ॥ ११०७ ॥
वृद्धदारकवीजञ्च बीजं स्वर्णफलस्य च ।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं सूतस्वर्णञ्च शाणिकम् ॥ ११०८ ॥
निष्पिष्य वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान्घोरान् सुदारुणान्११०९
गलोत्थानन्त्रवृद्धिञ्च तथाऽतीसारमेव च ।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान्विंशतिं तथा ॥ १११० ॥

श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजं तथा।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदरोगं भगन्दरम् ॥ ११११ ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शः स्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तनुत्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ १११२ ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैरस्यमेव च।
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ १११३ ॥
वटिकां प्रातरेकैकां मांसं पिष्टं पयो दधि ॥ १११४ ॥
वारिभक्तं सुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक्।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रक्षयो भवेत् ॥१११५॥

र चि, र, सु, रसचि., र. स., र क, कफरोग।

भाषा—वज्राभ्रकभस्म १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष, वङ्गभस्म १ कर्ष, पारद और हरितालभस्म ८–८ माशे, ताम्रभस्म ४ माशे, शुद्धकपूर ८ माशे, जावित्री, जायफल, विधारा और धतूरेकेबीज १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म ४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पानवगैरहकेरससे घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपातज और गलजरोग, अन्त्रवृद्धि, अतिसार, ११ प्रकारकाकुष्ठ, २० प्रकारके प्रमेह, चिरज अथवा कुलज कफवातजश्लीपद, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, गुदरोग, भगन्दर, कास, पीनस, राजयक्ष्म, बवासीर, स्थूलता, दौर्गन्ध्य, रक्तदोष, सबप्रकारकाआमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कान, नाक, आख और मुंहकाबिगाड़, सबप्रकारकाशूल, शिर शूल, स्त्रियोंकेरोग ये सब नष्टहोतेहैं। इसका निरन्तर अभ्यासकरनेसे और मास तथा आटेके बनाए हुए पदार्थ, दूध, दही, भक्ताऽधिवासितजल, मद्य, ताड़ी इत्यादि पदार्थोंकासेवनकरनेसे शुक्रसे परिपूर्णहोकर वृद्ध आदमीभी जवानोंकी बराबरी करने लगताहै ॥ २३५ ॥

२३६ लक्ष्मीविलासरसः (चतुर्थः)

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ।
तदर्द्धं चन्द्रसञ्ज्ञस्य जातीकोषफले तथा ॥ १११६ ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं धुस्तूरकस्य च।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूलमेव च ॥ १११७ ॥
नारायणी तथा नागबला चातिबला तथा।
बीजं गोक्षुरकस्याऽपि नैचुलं बीजमेव च ॥ १११८ ॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसैः पुनः।
निष्पिष्य वटिकाकार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥१११९॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान् घोरांश्चतुर्विधान्।
वातोत्थान् पैत्तिकांश्चैव नाऽस्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥
कुष्ठमष्टादशाख्यञ्च प्रमेहान्विंशतिं तथा।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥ ११२१ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसाश्रितञ्च यत्।
मेदोगतं धातुगदं चिरजं कुलसम्भवम् ॥ ११२२ ॥
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ ११२३ ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैकृतमेव च।
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यदौर्गन्ध्यनाशनः ॥११२४॥
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिषूदनम्।
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ ११२५ ॥
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसपिष्टं पयो दधि।
वारिभक्तसुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक् ॥ ११२६ ॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः।
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् ११२७

भै र, र सु, र. स, र. चं, ध, र म मा, वृ यो त, र चि, र र., रसायनप्र., र. क, यो म, र सि, ज्वराऽधिकार।

भाषा—वज्राभ्रकभस्म १ पल, शुद्ध पारा और गन्धक २–२ कर्ष, रजतभस्म, जावित्री, जायफल, विधारा, धतूरा और गाजेकेबीज, विदारीकन्द, शतावर, नागबला, अतिबला (गुलसिकरी), गोखरू और बेतकेबीज १–१ कर्षलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पानकेरससे ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे चार प्रकारका सन्निपात, वात और पित्तज्वर, १८ कुष्ठ, २० प्रमेह, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, गुदरोग, भगन्दर, कफवातोत्थ अथवा रक्तमासाश्रित श्लीपद, मेद अथवा धातुगत, चिरज अथवा कुलागत गलशोथ, अन्त्रवृद्धि, दारुणअतिसार, सर्वरूप आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदर रोग, कान आख और मुंहका बिगाड़, कास, पीनस, यक्ष्म, बवासीर, स्थूलता, दौर्गन्ध्य, सबप्रकारके शूल, शिर शूल, स्त्रियोंके रोग, ध्वजभङ्गादि पुरुषोंके रोग इनसबको यह नष्ट करताहै। इसमें मासमिश्रित आटेकेबनेहुए पदार्थ, दूध, दही और भक्ताधिवासितपानी, मद्य, ताड़ी, इनकेसेवनकरनेसे वृद्धभी पुरुषत्वसे परिपूर्णहोकर जवानोंकी बराबरीकरताहै। निरन्तर सेवन करनेसे लिङ्गकी शिथिलता और केशोंकी सफेदी नहीं होती २३६

२३७ लक्ष्मीविलासरसः (पञ्चमः)

कान्ताऽयोऽभ्रकसत्त्वताम्रकनकं वङ्गञ्च तारहिङ्गुलं,
तीक्ष्णं विद्रुममौक्तिकं समलवं चैतैः समः पारदः।
सम्मर्द्य मधुना त्र्यहं तदखिलं निक्षिप्य भूपान्तरे,
पाच्यं तार्क्ष्यपुटे ततोऽनलजलैर्यामाष्टकं भावयेत्
शतावरी भूमिसिता विदारी गोक्षुरेक्षुकम्।
बला नागबला चातिबला शाल्मलि कर्कटी ॥११२९॥
पोटाऽमृतोद्भवा यष्टी शुण्ठी द्राक्षेष्टिका जया।
उद्भिणोदुम्बरञ्च त्वाक्सं सारिवाद्वयम् ॥ ११३० ॥
एषां रसैः सप्तवारं भावयेच्च पृथक् पृथक्।
पश्चान्मृगमदे भाव्यः सुसिद्धो रसराड्भवेत् ॥११३१॥
गुञ्जात्रयमितः सेव्य. परं वृष्यो रसायन।
अष्टौ महागदान् मेहं क्षयं पाण्डुञ्च कामलाम् ॥११३२॥
नष्टेन्द्रियं क्षीणशुक्रमतिसारं चिरन्तनम्।
मूत्रकृच्छ्रं गरं शोथं वलीपलितमेव च ॥ ११३३ ॥

हन्यात्कान्तिं वीर्यवृद्धिं पुष्टिञ्च विपुलं बलम् ।
दत्ते लक्ष्मीविलासोऽयं पुंसां लक्ष्मीप्रदायकः ॥११३४॥

र.पा., नि. र, र.चं., र.सु., रसायनसं, र प., यो.र, र.क.यो., राजयक्ष्मणि ।

टि०—निघण्टुरत्नाकरादौ त्रुटित. पाठोऽस्ति, तदत्रुट्या जनै पाठद्वयी स्थापिता तदज्ञानविजृम्भितमिति विद्भिर्विमर्शनीयम् ॥

भाषा—कान्तलोह, लोह, अभ्रकसत्त्व, ताम्र, सुवर्ण, वङ्ग, रजत, नाग, फोलाद, प्रवाल और मोती इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर ३ दिनतक मधुमें खरलकर वज्रमूषामें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर चित्रकमूलकेक्वाथसे दोरोज़ भावना देकर शतावर, दीमकका मलघर, (कामेश्वरवत्सरसमें विवरणदेखो) विदारीकन्द, गोखरू, ईख, बला, नागबला, गुलसिकरी, सेमलकामुसला, ककड़ी, तिपतिया, गिलोय, मुलहठी, सोंठ, ब्राह्मी, ब्रह्मदण्डी, भांग, उटिंगन, गूलर, पोस्त, अनन्तमूल, घोटवेल (मराठी), इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर यथाशक्ति कस्तूरीकी भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे आठमहारोग, प्रमेह, क्षय, पाण्डु, कामला, इन्द्रिय तथा शुक्रकी कमज़ोरी, पुराना अतिसार, मूत्रकृच्छ्र, गर, शोथ, वलीपलित, हृल्लास, वीर्यकीहानि इनसबको नष्टकर यह मनुष्यको फिरसे विपुलबलयुक्त बनाताहै २३७

२३८ लक्ष्मीविलासरसः (महान्) (षष्ठः)

लौहमभ्रं विषं मुस्तां फलत्रयकटुत्रयम् ।
धुस्तूरं वृद्धदारञ्च बीजमिन्द्राशनस्य च ॥ ११३५ ॥
गोक्षुरद्वयकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
एतत्सर्वं समं ग्राह्यं रसैर्धुस्तूरकस्य च ॥ ११३६ ॥
भावयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
महालक्ष्मीविलासोऽयं सन्निपातनिवारकः ॥ ११३७ ॥

र सं, र.बृ, व.रा., र र, शिरोरोगे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धवच्छनाग, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकटु और धतूरा–विधारा–गाजा इनकेबीज, दोनोंगोखरू, पिपलामूल, येसब समभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके त्रिदोषजरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३८ ॥

२३९ लक्ष्मीविलासरसः (सप्तमः)

सुवर्णमुक्ताफलमभ्रकञ्च
रसेन्द्रभस्मायसविद्रुमञ्च ।
कस्तूरिकाकुङ्कुमजातिपत्री-
लवङ्गमेलात्वकतुल्यभागिकम् ॥ ११३८ ॥
सम्मर्दयेन्नागलतारसेन
घृष्ट्वा त्र्यहं वल्लमितञ्च दद्यात् ।
सितामधुभ्यां सह सेवनीयः
सर्वामयं हन्ति न संशयोऽत्र ॥ ११३९ ॥
कामस्य वृद्धिं नितरां करोति
नारीशतं गच्छति नित्यमेव ।
षण्ढोऽल्पवीर्यो बहुमूत्रमेही
यथाऽनुपानेन च सेवयेत ॥
क्षयापहं धातुविवर्धनञ्च
लक्ष्मीविलासो रसराज एषः ॥ ११४० ॥

र.चं., वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण, मोती, अभ्रक, पारा, लोह और प्रवाल इनकी भस्में, कस्तूरी, केशर, जावित्री, लौंग, इलायची, दाल, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरसमे ३ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । निरन्तरसेवनकरनेसे शुक्रकीवृद्धिहोकर नपुंसकभी मर्द होजाताहै । मधुमेहम अनुपानकेसाथ देनेसे बहुमूत्र नष्टहोताहै ॥ २३९ ॥

२४० लक्ष्मीविलासरसः (अष्टमः)

हेमभस्म च भागैकं रौप्यभस्म द्विभागिकम् ।
शुल्वभस्म त्रिभागञ्च कान्तभस्म चतुर्गुणम् ॥ ११४१ ॥
पञ्चभागञ्च तीक्ष्णं स्यान्मण्डूरं षड्विभागिकम् ।
निश्चन्द्रव्योमकञ्चैव भस्म स्यात्सप्तभागिकम् ॥ ११४२ ॥
अष्टभागञ्च वङ्गं स्यान्नागं स्यान्नवभागिकम् ।
दशैकादशभागे च प्रवालमौक्तिके मृते ॥ ११४३ ॥
खल्वमध्ये निधायाऽथ तत्तुल्यं सूतभस्मकम् ।
मर्दयेत्स्राविते द्रव्ये भावयेज्जातिपत्रकैः ॥ ११४४ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचातुर्जातक्वाथैश्च कौङ्कुमैः ।
मृगनाभिरसैश्चैव मुनिधारान् पृथक्पृथक् ॥ ११४५ ॥
गुञ्जामात्रं लिहेत्सम्यक् सिताऽऽज्यमधुसंयुतम् ।
राजरोगं निहन्त्याशु पाण्डुरोगविनाशनम् ॥ ११४६ ॥
द्वन्द्वजं छर्दिरोगञ्च श्वासं कासञ्च कामलाम् ।
दीर्घवातं पञ्चगुल्मान् सर्वशूलं विनाशयेत् ॥ ११४७ ॥
उन्मादञ्च मतिभ्रंशमष्टोदरमहागदान् ।
मेहानां विंशतिञ्चैव षण्ढत्वञ्च क्षयं नयेत् ॥ ११४८ ॥
अरोचकमग्निमान्द्यं ग्रहणीदोषनाशनम् ।
वलीपलितविध्वंसि नाशयेत्कुम्भकामलाम् ॥ ११४९ ॥
दृष्टिपुष्टिकरं बल्यं कम्पवातञ्च नाशयेत् ।
असाध्यरोगनाशाय साध्यो लक्ष्मीविलासकः ११५०

वै. चि. (ल.), र.म.मा., रसायने ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, रजतभस्म २ भा, ताम्रभस्म ३ भा., कान्तभस्म ४ भा, फोलादभस्म ५ भा., मण्डूरभस्म ६ भा, निश्चन्द्रअभ्रकभस्म ७ भा., वङ्गभस्म ८ भा., नागभस्म ९ भा., प्रवाल १० भा., और मोती ११ भाग, लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, चातुर्जात, केशर, कस्तूरी, इनप्रत्येककेद्रवोंसे ७–७

भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोलीतक अग्निबल देखकर शक्कर, घी और मधुकेसाथ देनेसे राजरोग, पाण्डु, द्वन्द्वज, छर्दिरोग, श्वास, कास, कामला, दीर्घकालीन वातरोग, पांचप्रकारकेगुल्म, सबप्रकारके शूल, उन्माद, मतिभ्रंश (विक्षिप्तता), अष्टोदरीयमहारोग, २० प्रकारकेप्रमेह, षण्ढता, अरुचि, मन्दाग्नि, ग्रहणी, वली; पलित, दृष्टिकी कमजोरी, कम्पवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४० ॥

२४१ लक्ष्मीविलासरसः (नवमः)

रसकनकपविप्रवालमुक्ता
गगनाहिवपुकान्तताम्रमेतत् ।
तनुतरमखिलं विभावितं त्रिः
कनकरसैः स्नुहिजैः सुकासमर्दैः ॥ ११५१ ॥
कन्येक्षुवज्रोत्थरसं विमर्द्य
पत्रैश्च गन्धर्वदले विवस्य ।
निधाय धान्ये त्रिदिनं गृहीत्वा
क्षुण्णं वराक्षौद्रयुतञ्च दद्यात् ॥ ११५२ ॥
प्रमेहञ्च कासं व्रणं पाण्डुहिक्के
महाशूलमन्दानलश्लेष्मवातान् ।
अपस्मारकुष्ठे हलीमज्वरञ्च
निहन्याच्च लक्ष्मीविलासोरसोऽयम्॥११५३॥

रसायनसं., वै. वि., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, प्रवाल, मोती, अभ्रक, नाग, वङ्ग, कान्त और ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर धतूरा, थूहर, कसोंजी, घीकुंवार, ईख, थोहर इनकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोला बनाय एरण्डकेपत्तोंमेंलपेट कचे सूतसे बांधकर धान्यराशिमें गाड़दे । चौथेरोज निकालकर खरलकर रखछोडे । इनमेंसे आधीरत्तीसे १ रत्तीतक त्रिफला और मधुकेसाथ देनेसे प्रमेह, खांसी, व्रण, पाण्डु, हिचकी, महाशूल, मन्दाग्नि, श्लेष्मवात, अपस्मार, कुष्ठ, हलीमक, ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४१ ॥

२४२ लक्ष्मीविलासरसः (दशमः)

सूताऽयोऽभ्रकगन्धकं समलवं सूताद्वितुल्यं सितं,
स्वर्णं मूसितया वृषेण वरया वर्षा विदार्या पृथक् ।
मर्द्यं कन्यकया तथैव सितया ज्येष्ठाह्वया मोचया,
तद्गोलं परिरुद्ध्य यक्षकरजैः पत्रैस्त्रिघर्मन्यसेत् ११५४
राशौ तण्डुलजेऽथवा सुमनजे तुर्ये दिने चोद्धरेत्,
दत्तं गुञ्जचतुष्टयं विजयते मेहादिकानामयान् ।
क्षौद्रेण त्रिफलायुतेन मधुना कृष्णायुतेन क्षयं,
कासं पञ्चविधं तथा तदनुजं पाण्डुञ्च हिक्कामयान् ॥
यक्ष्माणं पवनान्हलीमकमहापस्मारमुख्याञ्जयेत्,
प्रोक्तोऽयं शशिशेखरेण च मुदा लक्ष्मीविलासाभिधः

रसायनसं., र. प., र.पा., रसायने ।

भाषा—पारा, लोह, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धगन्धक समभाग लेकर पारेसेचतुर्थांश रजत और स्वर्णभस्म मिलाकर दीमकका मूलकर (कामेश्वरसमें विवरणदेखो), अडूसा, त्रिफला, शतावर, विदारी, घीकुंवार, शक्कर, केलेकाकन्द, मोचरस इनके द्रवोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेट कचे सूतसे बांधकर चावल अथवा फूलोंकी ढेरीमें ३ दिनतक दबादे । चौथेदिननिकालकर खरलकर रखछोडे । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा त्रिफला-मधु अथवा पीपल मधुकेसाथ देनेसे ५ प्रकारकाकास, पाण्डु, हिक्का, राजयक्ष्म, वायु, हलीमक, अपस्मार प्रभृति सबरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ लक्ष्मीविलासरसः (एकादशः)

वेदेन्दुनेत्राङ्गरसाङ्गभागा
भूसूतगन्धोषणतिन्दुटङ्काः ।
भृङ्गार्द्रगुञ्जायवनीनवागमि-
र्भाव्यं त्रिशः स्वेद्यमर्कोऽर्कपत्रे ॥
लक्ष्मीविलासः स विशाललक्ष्मीं
तनौ तनोति क्षयिणः प्रयोगैः ॥ ११५६ ॥

र. र. स., रसायने ।

भाषा—अभ्रकभस्म ४ भाग, शुद्ध पारा १ भाग., गन्धक २ भा., मरिच, कुचिला और भुनासुहागा ६–६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरा, अदरख, सफेदघुंघा, खुरासानी अजवाइन और पुनर्नवा इनके स्वरसोंसे ३–३ भावनाएं देवे । प्रत्येक भावनाके पीछे आकके पत्तोंके दोनेमें रख दो दो अङ्गुल मिट्टीकालेपदेकर जलते हुए कण्डोंमें रक्खे । गोला लालहोनेपर बाहर निकालकर फिर दूसरेस्वरससे भावनादेकर आकके पत्तोंमें रख पूर्ववत् स्वेदनकरे । इसतरह स्वेदनकरनेकेबाद ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारका क्षय निवृत्त होकर क्षयग्रस्त रोगीके शरीरमें कान्ति और बल प्रकटहोतेहैं ॥ २४३ ॥

२४४ लक्ष्मीविलासरसः (द्वादशः)

वङ्गनागौ च भागौ द्वौ भागैकं रसभस्मनः ।
गगनस्य च भागैकं हेमरौप्यं द्विभागिकम् ॥ ११५७ ॥
वैक्रान्तकान्तभागौ द्वौ मेलयित्वा विमर्दयेत् ।
भावनाः खलु दातव्याः कुमारीरसतः शुभाः ११५८
एकविंशद्वरालीरैः सप्तधा भावयेद्भिषक् ।
योजितो रसवर्योऽयं महालक्ष्मीविलासकः ॥११५९॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्याद्वातपित्तकफोद्भवान् ।
यक्ष्माणं पाण्डुरोगञ्च सोमरोगं तथाऽश्मरीम् ११६०
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं झटित्येव विनाशयेत् ।
वर्जयेत्स्नानमभ्यङ्गं प्रमेहजनकं गणम् ॥ ११६१ ॥

र. पा., प्रमेहाधिकारे ।

कानूर्ण अच्छीतरह मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशेकी-मात्रा गुड अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, कास, बवासीर, प्लीहा, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह, शोथ, विष्टम्भ, सङ्ग्रहग्रहणी, सर्वातिसार, समस्तशूल, आमवात, सूतिकारोग, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसका निरन्तर सेवनकरनेवालेको वात पित्तकफज व्याधियां नहीं होतीहैं । काष्ठभी खाया हुआ भस्म होजाताहै । भारीअन्न, मैथुन, स्नान, मांस, काञ्जी, खटाई, दूध, मछली और दही येसब सात्म्यहोतेहैं ॥ २४७ ॥

२४८ लाईचूर्णम् (चतुर्थम्)

शाणं शाणं रसं गन्धं तयोः कुर्याच्च कज्जलीम् ।
मृताऽभ्रं भृष्टयाह्लीकं त्रिसुगन्धञ्च वालकम् ॥११७८॥
जातीफलं लवङ्गञ्च कुष्ठं जीरं कुलिञ्जनम् ।
व्योषं मोचरसं विल्वं कारवीं पटुपञ्चकम् ॥ ११७९ ॥
एतानि शाणमात्राणि भृष्टा भङ्गाऽखिलैः समा ।
लाईचूर्णमिति ख्यातं रुच्यं दीपनपाचनम् ॥ ११८० ॥
प्रातस्तक्रेण शाणं तद्देयं शाणार्द्धकं निशि ।
सतक्रं हन्त्यतीसारं ग्रहणीञ्च प्रवाहिकाम् ॥
कुर्यान्निद्राबलं पुष्टिं यथार्हं बालके पुनः ॥ ११८१ ॥

र.(मा.), र.सु., अतीसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ माशेकी नीलवर्णकज्जली, अभ्रकभस्म, भुनीहींग, तज, पत्रज, इलायची, सुगन्धवाला, जायफल, लौंग, कुठ, जीरा, कुलिंजन, त्रिकटु, मोचरस, बेलगिरी, कलोंजी, पांचोंनमक, येसब ४-४ माशे, भुनीभांग सवकीबरावर लेकर वारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ माशा प्रातःकाल और १॥-१॥ माशा रात्रिको छाछकेसाथ देनेसे ग्रहणी, प्रवाहिकाइत्यादिकोंको नष्टकर सुखकीनिद्रा और पुष्टिको बढाताहै ॥ २४८ ॥

२४९ लाईचूर्णम् (पञ्चमम्)

पञ्चलवणं त्रिशाणं स्यात्प्रत्येकं त्र्यूषणं पिचुः ।
गन्धकान्मापका ह्यष्टौ चतुरो मापका रसात् ११८२
इन्द्राशनात्पलं शाणत्रितयाऽधिकमिष्यते ।
खादेन्मिश्रीकृताच्छाणमनुपेयञ्च काञ्जिकम् ॥११८३॥
मापकादिक्रमेणैव मनुयोज्यं रसायनम् ।
अत्यन्ताऽग्निकरश्चाऽत्र भोजनं सार्वकामिकम् ॥
प्रसिद्धयोगिनीलाईप्रोक्तं चूर्णं रसायनम् ॥ ११८४ ॥

यो.म., र. का., र. चि., भै र , अतिसारे । र. चि., भै.र. नायिकाचूर्णमितिनाम ।

भाषा—पांचोंनमक १२-१२ माशे, सोंठ, मिर्च, पीपल १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ माशे, शुद्धपारा ४ माशे, और भुनीभांग १ पल १२ माशे लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशेसे शुरूकर ४ माशेतक बढावे ऊपरसे काञ्जी पीवे, भोजन यथेष्ट करे। इसकेसेवनसे अग्नि अत्यन्त प्रदीप्तहोकर अतिसारादिकोंका नाश होताहै ॥ २४९ ॥

२५० लाईचूर्णम् (लघु) (षष्ठम्)

कर्षं गन्धकमर्द्धपारदमुभौ कुर्याच्छुभां कज्जलीं,
त्र्यक्षं त्र्यूषणतश्च पञ्चलवणं स्यादर्द्धकर्षं पृथक् ।
तच्छक्राशनचूर्णतुल्यनिहितं तत्सर्वमेकीकृतं,
खादेच्छाणमितं सकाञ्जिकपलं मन्दाग्न्यतीसारनुत्॥

र.कौ., र.क. ल., चि.र.भ., वै. चि., वै.र., वृ.यो.त., यो.त., र.सु., यो., नि.र., र.का., यो. म., र.र., र. चं., अतिसाराऽधिकारे । र. चि.नायिकाचूर्णेतिनाम ।

टि०—रसराजसुन्दरे निघण्टुरत्नाकरे च भृष्टहिङ्गुजीरकद्वयञ्च यथारुचि निक्षिप्तम् । रसकामधेनौ केवल जीरकद्वयमधिकतया न्यस्तम् पारदगन्धकयोश्च समानौ भागौ गृहीतौ । बहुषु स्थानेषु सार्ऽद्धं कर्षं पृथगितिपाठो दृश्यते पर स्यादर्द्धकर्षं पृथगित्येव पाठः साधुः प्रतिभाति, सार्द्धकर्षेतिपाठे लवणाऽतियोगःस्यात् । र. र., र. च., एतयो रसायनामृतमिति नाम, फलमाधश्च विशेषतया निर्दिष्टोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ कर्ष, शुद्धपारा ८ माशेकी नीलवर्ण कज्जली, त्रिकटु ३ कर्ष, पांचोंनमक ८-८ माशे, भुनीभांग सवकीबरावर लेकर सबका बारीकचूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ४-४ माशे लेकर काञ्जीपीनेसे मन्दाग्नि और अतिसारप्रभृतिरोग नष्टहोतेहैं ॥ २५० ॥

२५१ लाईचूर्णम् (लघु) (सप्तमम्)

सूतं गन्धं त्रिकटुकं दीप्यकं जीरकद्वयम् ।
सौवर्चलं सैन्धवञ्च रामठं विडमेव च ॥ ११८६ ॥
शक्राह्वयस्य चूर्णन्तु चूर्णतुल्यं प्रदापयेत् ।
सङ्ग्रहं शूलमानाहं हन्याच्चानाऽतिसारकम् ॥ ११८७ ॥

यो. र., वै. चि., नि. र., र. चं., र.का., यो. त., अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, अजवाइन, दोनोंजीरे, सञ्चल, सैन्धव, भुनीहींग, विडनमक येसब समभाग लेकर सबकीबराबर भुनीभांगका चूर्णमिलाकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे १ माशेसे ४ माशेतक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहग्रहणी, शूल, आनाह और अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २५१ ॥

२५२ लाङ्गल्यादिगुटिका

लाङ्गली त्रिवृता लोहचूर्णं दशपलं पृथक् ।
त्रिंशत्तु गुटिकाः पथ्याः कुर्याद्भृङ्गरसाप्लुताः॥११८८॥
छायाशुष्काश्च तत्राऽर्द्धां गुटिकां भक्षयेत्ततः ।
जीर्णे रसेन रूक्षेण पेया पूर्वं न भोजयेत् ॥ ११८९ ॥
यन्त्रितो ब्रह्मचर्याद्यैः क्रमेण गुटिकामपि ।
खादेत्प्रातस्तु मासैकं भवेत्कामचरः क्रमात्॥ ११९०॥
एवं सर्वाणि कुष्ठानि जयत्यतिबलान्यपि ।
धीमेधास्मृतियुक्तस्तु नित्यं जीवेत्समाः शतम् ११९१

ग. नि., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध करिहारी, निशोत, लोहभस्म १०-१० पल लेकर बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे १-२ रोजघोटकर ३० गोलियां

बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे आधीआधीगोली खावे। जीर्णहोनेपर रूक्षमासरससे पेया बनाकरदे। पहिले भोजन न दे। इसके सेवनमें ब्रह्मचर्यका पालनकरे। धीरे २ सात्म्यहोने पर प्रतिदिन १-१ गोली भी खासकाहै। एकमहीने बाद यथेष्टभोजनकरे। इसकेसेवनसे समस्तकुष्ठोंसे रहित और बुद्धि, मेधा, स्मृतियुक्तहोकर १०० वर्षतक जीताहै ॥ २५२ ॥

२५३ लाङ्गल्यादिलोहम्

विशुद्धलाङ्गलीमूलकटुत्रयफलत्रये।
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत्॥११९२॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च।
विमृद्य यत्नतः पश्चाद्गुटिकाऽङ्कोलसम्मिताम्॥११९३॥
भक्षयेन्मधुना सार्द्धं करोति शृणु यान् गुणान्।
आजानु स्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा ॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्याऽसाध्यञ्च शोणितम् ११९४

र.स , र.इ , ध , र.र , वातरक्ते।

भाषा—विशुद्ध करिहारी, त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, गूगल येसब समभाग, लोहभस्म सबकीबराबर लेकर बिजोरा और त्रिफलाके- रससे १-१ रोज मर्दनकर ८-८ माशेकी गोलिया बनाकर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथलेनेसे घुटनोंतक तथा सर्वाङ्गमें फूटे हुए साध्य अथवा असाध्य वातरक्तो यह नष्टकरताहै॥

२५४ लिङ्गमाहेश्वररसः

शार्वं वीर्यञ्च दैत्यं दरदकुनटिका खर्परं तालकञ्च, कङ्कुष्ठञ्चाद्रमजातं रसशशिसकलं तुल्यभागेन ग्राह्यम्। जात्याख्यं देवपुष्पाङ्कुलकरमरिचं शुण्ठिपाश्चालिके द्वौ भागौ मर्द्यौ च रविपदजलयो भावयेत्सप्त वारान् ११९५
तद्वद्भाव्यञ्च भार्ग्या कथमपि सुरसाकासमर्दद्रवैश्च, घर्मे भाव्यं द्वियल्लामनक्तगुटिकं सेवनीयं पयोभिः। हन्यात्सर्वोपदंशं व्रणमपि विविधं गण्डमालां भगघ्नं, पथ्यं गोधूमयुक्तं बहुलघृतयुतं कोष्णनीरञ्च पाने ११९६

रसायनस , उपदंशे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ, मैनसिल, खपरिया, हरिताल, मुर्दासङ्ग, शिलाजीत, और रसकपूर सबसमभाग, जावित्री, लौंग, अकलकरा, मरिच, सोंठ, पीपल, २-२ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आकवीजड़कीछालके स्वरस और दूधसे ७-७ भावनाए दकर भारङ्गी, तुलसी, कसोंजी, इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ सेवनकरनेसे सबतरहके उपदंश, नानातरहकेव्रण, गण्डमाला, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें गेंहू, घी और गरमपानी पथ्यहै ॥ २५४ ॥

२५५ लीलाविलासरसः (प्रथम)

शुद्धसूतस्य भागो द्वौ द्वौ भागौ गन्धकस्य च।
मुक्ता वैक्रान्तकान्ताऽभ्रं हेमभस्म दशांशकम् ॥११९७॥
षोडशांशं ताम्रभस्म भागैकं रौप्यभस्मकम्।
सम्मर्द्य भावयेत्खल्वे त्रिफलाभृङ्गजै द्रवैः ॥ ११९८ ॥
एकविंशतिवाराणि भावयेच्छोषयेत्पुनः।
द्राक्षादाडिमपुष्पोत्थनारिकेलाम्बुमर्दितम् ॥ ११९९॥
त्रिगुञ्जं वा चतुर्गुञ्जं मधुना संयुतं लिहेत्।
पित्तयुक्ते ज्वरे द्वन्द्वे ह्यम्लपित्ते सपित्तके ॥ १२०० ॥
चत्वारिंशत्पित्तदोषे शूले पक्तिसमुद्भवे।
योनिशूले गुल्मशूले प्रदरे रक्तदोषजे ॥
महालीलाविलासोऽयं पित्तरोगे प्रशस्यते ॥ १२०१॥

र.पा , पित्तरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भाग, मोती, वैक्रान्त, कान्त, अभ्रक और सुवर्णभस्म ये प्रत्येक १० वाभाग, ताम्रभस्म १६ वा भाग, रजतभस्म १ भागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिफला और भंगरेकेरससे २१-२१ भावनाए देकर मर्दन और शोषणकरे। इसकेबाद द्राक्ष, अनारकेफूल, नारियल इनकेस्वरसोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३ अथवा ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिलाकर चाटनेसे पित्तयुक्तद्वन्द्वज्वर, अम्लपित्त, ४० प्रकारके पित्तदोष, पक्तिशूल, योनिशूल, गुल्मशूल, प्रदर, रक्तदोष इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २५५ ॥

२५६ लीलाविलासरसः (द्वितीयः)

रसा बलि र्व्योम रविश्च लौहं
धात्र्यक्षनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य।
तदल्पपुटं मृदु मार्कवेण
सम्मर्दयेदस्य च वल्लयुग्मम् ॥ १२०२ ॥
हन्त्यम्लपित्तं मधुनाऽवलीढं
लीलाविलासो रसराज एषः।
सुधैः सुकूष्माण्डरसैः सुधात्र्या
पक्त्रं शनैस्तत्ससितं भजेद्वा ॥
छर्दिं सशूलं हृदयस्य दाहं
निवारयेदेष न संशयोऽस्ति ॥ १२०३ ॥

र.स , र चि , वै चि , या र , भै सा , र र.स , र रा , र.सु., नि र भ , चि.क , र च , वृ यो त., यो.म , नि र., टो , र म , र क ल , रसायनम , र र.कौ , र कौ , र को , र र.दी, भै र , यो त , र.म मा , ना वि , र क , व.रा , र का , र पा , अम्लपित्ते ॥

टि०—कुत्रचिद्व्योमस्थाने रौप्य दृश्यते, राचनमपि कुत्रचिद् दृश्यत भावनायाञ्च हरीतक्या मर्दनमधिकतया दृश्यते। रसपारिजाते भाव नाया "पञ्चविंशतिवाराञ्च तावद्धि वैद्धिनद्रवै" इत्यर्द्धश्लोको विशेषण दृश्यते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, ताम्र और लोहभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आवले और बहेड़े केरससे ३-३ रोजमर्दनकर भंगरेकेरससे थोड़ीदेरमर्दनकर ६-६ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली

मधुकेसाथलेनेसे अम्लपित्त, वमन, शूलयुक्तहृदयकादाह, इनसब-को यह नष्टकरताहै। दूधमें सफेद कोंहला अथवा कचे आवलोंका रस डालकर पकावे। फटजानेपर इसकापानी अनुपानमें देवे २५६

२५७ लोकनाथपोट्टलीरसः

पारदभूति हेमभूत्या कार्या समानांशा।
द्वाभ्यां समानगन्धः पयसा गव्येन मर्दयेद्दिवसम् १२०४
चित्रकनीरेण ततस्त्रिदिनं पयसाऽथ सूर्यस्य।
त्रिगुणितपीतवराटकगर्भे क्षिप्तं निरोधितं यत्नात् १२०५
कार्पासटङ्कणाभ्यां चूर्णलिप्तेऽथ भाण्डके क्षिप्तम्।
रुद्धं गजपुटसञ्ज्ञे विपाचितं तत् त्रियामायाम् १२०६
इष्ट्वा भैरववटुकान् कुमारिकावृद्धवैद्ययोगीशान्।
प्रातःकाले स्नात्वा दृष्ट्वा पूर्वाश्च लेपनमुद्धृत्य ॥१२०७॥
खल्वतले निक्षिप्य सचराचरं मर्दयेद्यत्नात्।
सर्वोपद्रवनुत्यै सिद्धा स्यात्पोट्टली रम्या ॥ १२०८ ॥
वल्लद्वयोन्मितैषा मरिचैः घृतान्वितैश्च संसेव्य।
अनेकज्वराश्च रोगाः सर्वे नाशं प्रयान्त्येव ॥ १२०९ ॥
मुखं विलेप्याऽथ घृतेन पूर्वं
सम्पूज्य गोविप्रभिषक्कुमारीः।
दत्त्वा घृतं स्वर्णयुतं द्विजेभ्यः
संसेवयेन्माङ्गलिकं विधाय ॥ १२१० ॥
शुभे दिने सुनक्षत्रे लब्ध्वा चन्द्रबलं सुधीः।
वस्त्रालङ्करणैः पूज्य प्राणाचार्यं कृतादरः ॥ १२११ ॥
कृत्वा स्वस्त्ययनं पूर्वं सर्वतोभद्रसञ्ज्ञके।
लोकेशं पूर्वमभ्यर्च्य प्राङ्मुखोदङ्मुखोऽपि या १२१२
प्राणाचार्यं नमस्कृत्य लब्धानुज्ञश्चरेद्रसम्।
हाटके राजते पात्रे काचके वाऽपि शौक्तिके॥१२१३॥
इमं मन्त्रं समुच्चार्य प्राङ्मुखोदङ्मुखस्तथा।
भेषजं सेवयेत्प्राज्ञः स्थित्वा चोत्कटकासनः ॥१२१४॥
" ब्रह्मा दक्षश्च रुद्रेन्द्रभूचन्द्रार्कोऽनलाऽनिलाः।
ऋषयस्सौषधिग्रामा भूतसङ्घाश्च पान्तु मे १२१५ ॥
रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा।
सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदमस्तु मे ॥" १२१६ ॥
एवं संसेव्यमाने तु रसे बहुद्रवो भवेत्।
वमि विरेकौ दाहोऽस्रशिरोरुग्गात्रगौरवम् ॥ १२१७ ॥
अरोचकाग्निनिर्नाशमत्यशुक्रोत्कादयस्तथा।
मुखपाकोऽप्यनिद्रत्वं रसव्यापत्तदुच्यते ॥ १२१८ ॥
प्रतिकार्या पृथगिमे चाऽन्यथा बलहानिदाः।
वमौ शुद्धचिञ्चातोयं मधुना वान्तिनाशनम् ॥१२१९॥
मातुलुङ्गाद्भितोयं वा मधुना वर्हिपत्रकम्।
लाजाः कणामधुयुता नाभिदाघ्नी जलैःस्पृशेत्॥१२२०॥
दाडिमखण्डस्तु मधुना दध्ना वा विजया तथा।
विरेकोपद्रवहरा सूपार्थी तण्डुलाम्बुना ॥ १२२१ ॥
दाघे सुधाजलं शस्तं शीततोयाऽवगाहनम्।
सकुष्ठेन घृतेनाऽऽलेपनं तद्वद्व्यथापहम् ॥ १२२२ ॥
शिरोरुक्शमनः शस्यफलालेपस्तुपाम्बुना।
घृतेन मर्दनं देहजाड्यापहरणं तथा ॥ १२२३ ॥
मातुलुङ्गफलकेशरं हितं
सैन्धवेन मरिचैश्च संयुतम्।
धान्यकं सगुडशर्करं घृतैः
पाचितं त्वरुचिसङ्गनाशनम् ॥ १२२४ ॥
मोचाफलं घृतसितासहितञ्च तीव्र-
वह्नेः सुशान्तिकरणं घृतमेव शस्तम्।
शुक्रच्युतौ ससितमोचफलाम्बु शस्तं
वा शुक्रपानमथवा सघृतं पयो वा ॥१२२५॥
गुडार्द्रकं वा कफकोपनाशनं
मोचाफलस्यैव च भस्मकं वा।
पलाशबीजं मधुना च वेल्ल-
स्तथा कृमीन्नाशयति प्रसह्य ॥ १२२६ ॥
काथः खदिरमूलत्वक्साधितो मुखपाकहा।
खदिरादिवटी शस्ता या च पूर्वं प्रकीर्तिता ॥
उन्निद्रहरणं सर्पिः पानकं तु मुहुर्मुहुः ॥ १२२७ ॥
एते यदा स्यु र्बहवोऽप्युपद्रवा-
स्तदा रसः कर्मकरः स्फुटं भवेत्।
दिनान्तरेणैव रसः प्रदेयो
मरीचचूर्णं सघृतं दिनेन ॥ १२२८ ॥
शाणद्वयाऽऽसुवृद्ध्या रसाऽनुपाने घृतं देयम्।
प्रथमदिवसादारभ्य त्रिसप्तकी भवेद्यावत् ॥ १२२९ ॥
पथ्यं तण्डुलमुद्गमाषतुवरीजातं हितं पूर्वतः,
सप्ताहं घृतपूरितं सुमनसां संयावपिष्टोद्भवम्।
शाकं वास्तुकमेघनादसुरसाचुक्राशिवावार्हतं,
नैष्पन्नं करमर्दकं सुरभितं हिङ्ग्वादिभिः साधितम् १२३०
वमि विरेको दिवसे तृतीये षष्ठेऽथवा सप्तदिनान्तरे वा।
यदा रसेशः परिवर्जनीयो दिनानि तावन्ति परिक्रमाय
हृद्यं वृष्यं सुरूप्यं दधिघृतबहलं पाययेद्भूरि दुग्धं,
क्षीरं पादाऽवशिष्टं कलमघृतसितापिप्पलीयुक्तञ्च शीतम्।
सेव्यं युक्त्या द्वितीये बहुगुणसहितं सप्तके पुष्टिकामी,
भूमौ चोत्तानशायी मृदुतरशयने रात्रिशेषे न सुप्यात्
तृतीये सप्तकेऽप्येवं ससितं घृतपाचितम्।
नारिकेलाम्बुसंसिद्धं क्षैरेयं चानिसेवयेत् ॥ १२३३ ॥
सर्पिषा मर्दनं शस्तं स्नानमुष्णाम्बुना हितम्।
क्षुधोद्गमे हितं पथ्यं त्रिचतुःपञ्चवारकम् ॥ १२३४ ॥
पूर्णे त्रिसप्तके रोगी रोगमुक्तः प्रजायते।
पूर्णदेहः पुष्टियुक्तश्चतुर्थे सप्तके भवेत् ॥ १२३५ ॥
सप्तकत्रितये स्वस्थः सेवते पूर्वमायतः।
पुष्टिवीर्यबलाऽऽरोग्यं प्रयाति वपुषि श्रियम् ॥१२३६॥
केचिदिच्छन्ति संक्लिन्नं जातरूपं रसेश्वरम्।
अहिमिच्छेद् द्विधा सम्यग्जातरूपं महीतले ॥१२३७॥

र, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—पारद और सुवर्णभस्म समभाग, शुद्धगन्धक दोनोंकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर एकरोज गायकेदूधसे मर्दनकर चित्रककीजड़केस्वरस और आकके दूधसे ३–३ रोज मर्दनकर सबसे तिगुनी पीलीकौड़ियोंमें भरके कपास और सुहागेको कूटकर इससे कौड़ियोंकी सन्धि बन्दकर चूनेसे पुतेहुए बर्तनमें रखकर शरावसम्पुटकर समस्तपर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखने पर रात्रिमें गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भैरव, वटुक, कुमारिका, वृद्धवैद्य और योगिराजोंका पूजनकर प्रात काल स्नानपूजनादि करके शरावसम्पुटमेंसे निकालकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती १९ मरिच और घीकेसाथ रोजाना सेवनकरनेसे अनेकप्रकारके ज्वर नष्टहोतेहैं। इसके सेवनके पहिले गौ, ब्राह्मण, वैद्य, कुमारिका इनकी पूजाकर घी और सुवर्णकी दक्षिणा देवे। स्वस्तिवाचनप्रभृति कराके शुभ वार, नक्षत्रयुक्त मुहूर्तमें चन्द्रबलको विचारकर वस्त्र और अलङ्कारोंसे प्राणाचार्यकी पूजाकर सर्वतोभद्र मण्डलमें लोकेशोंकी पूजा पूर्व या उत्तरमुखहोकरकरे। प्राणाचार्यकी आज्ञा मिलनेपर सुवर्ण, रजत, कांच अथवा शुक्तिके पात्रमें औषधको रख आगे कहेहुए मन्त्रको बोलताहुआ वीरासनसेबैठ औषधका सेवनकरे। " ब्रह्मा यक्षश्च रुद्रेन्द्रभूचन्द्रार्कानिलानलाः । ऋषयस्सौषधीग्रामा भूतसङ्घाश्च पान्तु मे ॥ रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा। सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदमस्तु मे ॥ " इसमन्त्रको बोलकर सेवनकरे। इसतरह इसरसके सेवनकरनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै। इसके बीचमें कर्मवशात् उपद्रवरूप वमन, विरेचन, दाह, भ्रम और शिरकीपीड़ा, आंखोंकीलाली, शरीरकाभारीपन, अरुचि, भस्मक, शुक्रक्षरण, मुखपाक, निद्रानाश ये विपत्तियां उपस्थित होतीहैं इनका तत्काल प्रतीकार करना उचितहै नहींतो ये बलकी हानिको करके अनर्थ पैदाकरतीहैं। वमनमें मधुकेसाथ गिलोयका पानी, बिजौरेकीजड़कारस, मधुयुक्त मयूरपिच्छभस्म पीपल और मधुयुक्तलाजचूर्ण, नाभि और छातीपर जलका पोता देवे। विरेचनमें मधुयुक्त छोटीमाईका चूर्ण, दहीकेसाथ भांगका चूर्ण अथवा चावलकेधोवनकेसाथ मूषाकर्णीकाचूर्णदेवे। दाहमें चूनेकापानी, ठंडेजलका तैरना, कुठकाचूर्ण मिलेहुए घीका अङ्गोंपर लेप, इनसब उपचारोंको करे। तुम्बुसे पिसीहुईबेलगिरीका मस्तकपरलेपनेसे मस्तकपीड़ा शान्तहोतीहै। घृताभ्यङ्ग करनेसे देहका भारीपनजाताहै। सैन्धव और मरिचकेसाथ बिजौरेकीमज्जा अथवा गुड़ और शक्करकेसाथ घीमें भुना हुआ धनियां देनेसे अरुचि नष्टहोतीहै। घी और शक्करकेसाथ केलेकाफल अथवा केवल घी देनेसे भस्मकरोग शान्त होताहै। शुक्रविरेकमें शक्करकेसाथ केलेकेफलका पानी अथवा सिरका अथवा घृतयुक्तदूध देना। गुड़युक्त अदरख अथवा केलेकीभस्म गुड़केसाथ देनेसे कफप्रकोप नष्ट होताहै। मधुकेसाथ पलाशबीज अथवा विडङ्ग देनेसे क्रिमियोंका नाशहोताहै। खदिरकी जड़कीछालका क्वाथ अथवा खदिरादिवटीका सेवन मुखपाकको दूरकरताहै। बारम्बार घीके पीनेसे निद्रानाश दूरहोताहै। ऊपर कहेहुए उपद्रव जिसमनुष्यको उपस्थितहों तो समझना चाहिये कि इसे रस बहुतजल्दी काम करेगा और उसे एकदिनके अन्तरसे औषधदेना। बीचके दिनमें मरिचकाचूर्ण डालकर केवल घी देना। अनुपानमें प्रथमदिन ४ मासे अथवा ८ मासे घीसे आरम्भकरना और २१ दिनतक प्रतिदिन बलप्रमाणकरतेजाना। पहिलेसप्ताहमें चावल, मूंग, उड़द और अरहरकी दाल देना फिर गेहूंके आटेका हलवा और घेवर, बथुआ, चौलाई, तुलसी, तिपतिया, आंवले, बनभाटा, करीर, करौंदा इनका हींगवगैरहसे छोंकाहुआ शाकदेना। तीसरे, छठे अथवा सातवें दिनकेबाद अब वमन या विरेचन होनेलगें तो उतनेहीदिन रसका अन्तर करदेना। हृद्य, वृष्य, भारी और गरम तथा जिसमें दही, दूध और घी अधिकआवे वह पदार्थ देना। मावा, बासमतीचावल, घी, शक्करयुक्तसाठीचावल ये दूसरे सप्ताहमें सेवनकरे। जिसको पुष्टिकी इच्छाहो वह जमीनमें कोमल शय्यापर चित्त सोवे और ब्राह्ममुहूर्तमें उठजाय। इसीतरह तृतीयसप्ताहमेंभी करे और शक्करकेसाथ घीमें पकाएहुए पदार्थ और नारियलकेजलमें पकायाहुआ दूधपाक खावे तथा घीसे अभ्यङ्ग और गरमजलसे स्नानकरे। भूखलगनेपर ३–४ अथवा ५ बार हित और पथ्य भोजनकरे। तीनसप्ताह पूरे होनेपर रोगी रोगसे रहित होजाताहै चौथे सप्तकमें शरीरसम्पत् से पूर्णहोताहै। तीनसप्ताहमें स्वस्थ होनेकेबाद आगे यदि अधिकसेवनकरनेकी इच्छा हो तो पूर्वक्रमसे सेवनकरे। कितनेहीलोग इसमें पारेसे कीहुई सुवर्णभस्मका योग चाहतेहैं और सुवर्णके अभावमें पारदयोगसे कीहुई नागभस्म द्विगुण डालाकरतेहैं ॥

टि०—इसमें मुखपाकको शमनकरनेकेलिये खदिरादिवटीका सेवन कहाहै उसका विधान अधोलिखितहै। "गायत्रीत्वक् तुला सार्द्धा द्वयी विट्खदिरस्य च। सप्तद्रोणमिते तोये पाच्यं पादावशेषितम् ॥ पनीभूतं वस्त्रपूतं तस्मिन् द्रव्याणि निक्षिपेत्। प्रत्येकं कर्षमात्राणि पुनरावर्तिते शनैः ॥ एलामृणालकलचन्दनरक्तकाष्ठं श्यामा तमाल विकसापनलोहयष्टयः। लक्ष्माफलत्रयरसाञ्जनधातकीश्रीपुष्पगैरिककटङ्कटिकट्फलानि ॥ पत्रैरोध्रवटस्तयवासमागी श्यामानिशातिफलकोपलबालकानि। चूर्णीकृत फलचतुष्टयचन्द्रयुक्तं तस्मिन्क्षिपेत् पलमितं पृथगेव सर्वम् ॥ कङ्कोलजातिफलपुष्पमिदं समस्तमेकीकृतं बहुगुणं भवति प्रशस्तम्। जिह्वौष्ठतालुरदनागलदन्तरोगानन्तर्गतानपि जयेद्गुटिमात्रयाति ॥ शीतीकृतस्य गुटिका चणकोन्मिता स्याद्दौर्गन्ध्यदन्तमलमाशुचिरोगनुत् ॥"

भाषा—खैरकीछाल १५० पल और विट्खदिरकीछाल २०० पल लेकर जवकुटकर ७ द्रोण पानीमें उबाले। चतुर्थांशजलशेषरहनेपर कपड़ेसे छानले। फिर इसमें इलायची, भसींड, खस, सफेदचन्दन, लालचन्दन, अनन्तमूल, पत्रज, मजीठ, नागरमोथा, अगर, मुलहठी, लजवन्ती, त्रिफला, रसौत, धावड़ीकीछाल (अभावमें पुष्प), पद्माख, सोनागेरू, दारुहल्दी,

जायफलकीछाल, तालीसपत्र, पठानीलोध, बड़ेवेर्द्से, जवासा, जटामासी, तज, हल्दी, जायफल, जावित्री, लौंग इनसबका चूर्ण १–१ कर्ष डालकर मन्दाग्निसे पकावे । गोलीवंधनेलायक होनेपर उतारकर चार मगज़ (बादाम, खीरा, ककड़ी, कद्दू इनके मगज़) शुद्धकपूर, शीतलचीनी, जायफल येसब ४–४ कर्ष मिलाकर रहने दे । ठंढाहोनेपर चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मुहमें रखकर चूंसनेसे जीभ, ओष्ठ, तालु, मुख, गला, दन्त, अन्न तथा श्वासनलिकाकेरोग, मुखकीदुर्गन्ध, दन्तमल और अरुचि इनको नष्टकर रुचिको पैदाकरतीहै । यहपाठ प्राचीन रसावतारकाहीहै परन्तु कईजगह क्लिष्ट पाठ होनेकीवजहसे चक्रदत्तने जगह २ पाठमें फेरफारकर-दियाहै और उसीको भैषज्यरत्नावलीवालेने यथावस्थित लेलियाहै । चक्रदत्तकी हिन्दीटीकावालेने औरभी दुर्दशा करडालीहै जैसे कि जायफल, कोशफल इत्यादि । इसलिये रसावतारके पाठके अनुसार इसगोलीको तैयारकरनाचाहिये । फलचतुष्टयकीजगह ग्रन्थकारके आशयको न समझकर फलचतुष्टयकपूरका योग करदियाहै वह अत्यधिक योगहोगयाहै । ग्रन्थकारने यूनानीमें प्रसिद्ध चारमगज़के स्थानमें फलचतुष्टय शब्दसे कामलियाहै सो पाठकोंको ध्यानमें रखनाचाहिये । यह गोली शुष्ककासकेलियेभी खास उपयोगी वस्तुहै ॥ २५७ ॥

२५८ लोकनाथपोट्टली (हेमगर्भादिः) २

मृतरसयुगभागो हाटकं चन्द्रभागं,
वसुगुणशुकपर्दं टङ्कणाद्भागमेकम् ।
सितविषशशिभागं सर्वतुल्यं सुगन्धं,
तिथिदिनमनलाङ्घ्रि वज्रदुग्धेन घृष्ट्वा १२३८
तदनु च कृतगोलं पक्वभाण्डे च धृत्वा,
गजपुटविधिपक्वं पोट्टलीलोकनाथम् ।
घृतमरिचसमेतं वल्लमात्रं प्रदद्या-,
द्रदपतिभयहारी श्वासहारी चिरान्नात्१२३९
वहुकृततनुपुष्टि वह्निदीप्तिश्च कुर्या-,
त्कटुकृतिलजबिल्वं वर्जयेच्चाऽम्लवर्गम् ।
घृतमधुरसुशाकं भोजयेद्युक्तपथ्यं,
मधुकणमनुपानं योजनीयं भिषग्भिः १२४०
यवक्षाराऽऽज्यविश्वश्च कथितं पोट्टलीक्रमे ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं मान्द्यहृद्गलदोषनुत् ॥ १२४१ ॥
वमनशमनमुक्तं मातुलिङ्गस्यास्तु मूलं-,
मधुसहितकणा वा दग्धवृन्ताकमज्जा ।
स्वरसमपि गुडूच्या लाजचूर्णं ससिन्धु,
शिशिरसलिलधारा मूर्ध्नि देया क्रमेण १२४२
कफविकृतिनिवृत्त्यै क्षौद्रयुक् शृङ्गवेर-
मरिचसहितभक्ष्यं भृष्टरम्भाफलं वा ।
तुषविरहितधाना हन्त्यसृक्खण्डयुक्त्या,
त्रुटिमरिचघृतेनाऽरोचकघ्नः सदैव ॥१२४३॥
र. सं., र. का., क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पारदभस्म २ भाग, सुवर्णभस्म १ भा, पीलीकौड़ी ■ भा, सुहागा १ भा, शुद्धसफेदसोमल १ भा., शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकमूलकेक्वाथ और सेहुण्डकेदूधसे ५–५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर पकेहुएमिट्टीकेवर्तनमें धरके ६–७कपड़मिटीकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मात्रा प्रकृतिसात्म्य देखकर घी और मरिचकेसाथ देनेसे ३ दिनमें यक्ष्मा, श्वास, मन्दाग्नि इनसबको नष्टकरताहै । तीक्ष्ण, तिलकेपदार्थ, बेलगिरी और खटाईका त्यागकरे । घीमें पकायाहुआ शाक पथ्यदे । यह मधु, पीपल, यवक्षार, घी और सोंठ इन अनुपानोंसे अग्निमान्द्य, हृदय और गलेके दोषोंको दूरकरताहै । वमनमें बिजौरेकीजड़ अथवा मधु–पीपल, अथवा भुनेहुए बैंगनकी मज्जा, अथवा गुडूचीस्वरस अथवा सैन्धवसहित लाजचूर्णकेसाथ देवे और सिरपर ठंढेजलकी धारा देवे । कफविकारमें मधु, अदरख अथवा भुनाहुआ केलेकाफल मरिचकेसाथदेवे । धनियेके चावल शक्करमें मिलाकर देनेसे रक्तपित्त, तथा इलायची, मरिच और घीसे अरुचि नष्टहोतीहै २५८

२५९ लोकनाथरसः (प्रथमः)

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत् ।
तथा गन्धस्य भागौ द्वौ कुर्यात्कज्जलिकां तयोः१२४४
सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिःक्षिपेत् ।
भागैकं टङ्कणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ १२४५ ॥
तथा शङ्खस्य खण्डानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् ।
क्षिपेत्सर्वं पुटस्यान्तश्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥ १२४६ ॥
गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पचेद्गजपुटेन च ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ १२४७ ॥
षड्गुञ्जासम्मितं चूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः ।
घृतेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ॥ १२४८ ॥
क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारे क्षये तथा ।
अरुचौ ग्रहणीरोगे कार्श्ये मन्दानले तथा ॥ १२४९ ॥
कासश्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः ।
तस्योपरि घृताक्तञ्च भुञ्जीत कवलत्रयम् ॥ १२५० ॥
मञ्च क्षणंस्युत्तानः शयीताऽनुपधानके ।
अनम्लमन्नं सघृतं भुञ्जीत मधुरं दधि ॥ १२५१ ॥
प्रायेण जाङ्गलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ।
सदुग्धभक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ साम्यभोजने ॥१२५२॥
सघृतान्मुद्गवटकान्व्यञ्जनेष्ववचारयेत् ।
तिलाऽऽमलककल्केन सघृतेन विमर्दयेत् ॥ १२५३ ॥
अभ्यञ्जयेत्सर्पिषा च स्नानं कोष्णोदकेन च ।
कश्चित्तैलं न गृह्णीयाच्च बिल्वं कारवेल्लकम् ॥ १२५४ ॥
वार्ताकं शफरीं चिञ्चां त्यजेद्व्यायाममैथुने ।
मद्यं सन्धानकं हिङ्गु शुण्ठीं माषान्मसूरकान् ॥१२५५॥
कूष्माण्डं राजिकां कोपं काञ्जिकं चैव वर्जयेत् ।
त्यजेदयुक्तनिद्राञ्च कांस्यपात्रे च भोजनम् ॥ १२५६ ॥

ककारादियुतं सर्वं त्यजेच्छाकफलादिकम् ।
पथ्यादिलोकनाथस्य शुभनक्षत्रवासरे ॥ १२५७ ॥
पूर्णातिथौ शुक्लपक्षे जाते चन्द्रबले तथा ।
पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीर्भोजयेत्ततः ॥ १२५८ ॥
दानं दद्यात् द्विपदिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ।
रसात्सञ्जायते तापस्तदा शर्करया युतम् ॥ १२५९ ॥
सत्त्वं गुडूच्या गृह्णीयाद्वंशरोचनया युतम् ।
खर्जूरं दाडिमं द्राक्षामिक्षुखण्डानि चारयेत् ॥१२६०॥
अरुचौ निस्तुषं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ।
दद्यात्तथा ज्वरे धान्यं गुडूचीक्वाथमाहरेत् ॥ १२६१ ॥
उशीरवासकक्वाथं दद्यात्समधुशर्करम् ।
रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये ॥ १२६२ ॥
अग्निभृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ।
निद्रानाशेऽतिसारे च ग्रहण्यां मन्दपावके ॥ १२६३ ॥
सौवर्चलाऽभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलैः पिबेत् ।
शूलेऽजीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता॥१२६४॥
प्लीहोदरे वातरक्ते छर्द्यां चैव गुदाङ्कुरे ।
नासिकादिषु रक्तेषु रसं दाडिमपुष्पजम् ॥ १२६५ ॥
दूर्वायाः स्वरसं नस्ये प्रदद्याच्छर्करायुतम् ।
कोलमज्जा कणा वर्हिपक्षभस्म सशर्करम् ॥ १२६६ ॥
मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्य शान्तये ।
विधिरेष प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन् पोट्टलीरसे ॥ १२६७ ॥
मृगाङ्के हेमगर्भे च मौक्तिकाख्ये रसेषु च ।
इत्ययं लोकनाथाख्यो रसः सर्वरुजा जयेत् ॥ १२६८ ॥

धा स, र च, वै क, धा चि, नि र, वै चि र का, र प्र गु, भै सा, धा म, र (मा.), र भ मा, रसायनप, चि र भ, दो, र मृ, राजयक्ष्मधि । र का लोकेश्वरपोट्टलीति नाम । रसामृते शङ्खो न दृश्यते तत्रयागस्य कारणाऽभावात्सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति ।

भाषा—शुद्ध और बुभुक्षित पारा, शुद्धगन्धक १—१ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पारेसे चौगुनी पीलीकौड़ियोंमें भरके एक-भाग सुहागेको गायके दूधमें पीसकर कौड़ियोंका मुख बन्दकरे । फिर शङ्खके टुकड़े ८ भाग लेकर चूनालगेहुए शरावोंके अन्दर शङ्खखण्डोंके बीचमें कौड़ियोंको जमाकर सन्धिबन्दकर ६—७ कपड़मिट्टीदेकर सुखानेपर एकहाथके गर्तमें गजपुटदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६ रत्तीकीमात्रा २९ कालीमिर्च और घीकसाथ वातरोगमें दे । पित्तरोगोंमें मक्खन और कफरोगोंमें मधुकेसाथ दे । इसतरह रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे अतीसार, क्षय, अरुचि ग्रहणी, तृष्णा, मन्दाग्नि, कास, श्वास, गुल्म, इनसबको यह नष्टकरताहै । रसकासेवनकरके ३ मासे घी और भात देकर थोड़ीदेरतक तकियारहितशय्यापर चित्त सुलावे । अस्वस्थहित घृतयुक्त अन्न, मधुरदही, घृतमें पकायाहुआ जंगलीपशुपक्षियोंकामांस और दूधभातदे । अग्नि प्रदीप्तहोनेपर सन्ध्यासमय घीमें तलेहुए मूगके बड़ेदे । घृतयुक्त तिल और आवलेकेकल्क अथवा केवल घीसे अभ्य-ङ्गकर कदुष्णजलसे स्नानकरे । तैल, बेल, करेला, बैंगन, मछली, इमली, कसरत, मैथुन, मद्य, अचारवगैरह, हींग, सोठ, उड़द, मसूर, कोंहड़ा, राई, क्रोध, काञ्जी, अयोग्यनिद्रा, कांस्यपात्रमें भोजन, ककारादिशाक और फल इनका परित्यागकरे । इसका सेवनकरतेसमय शुभ नक्षत्र, वार, पूर्णातिथि, शुक्लपक्ष और चन्द्रबल देखकर लोकनाथकी पूजाकर कुमारियोंको भोजनकराके दानदे । रसकेदेनेसे यदि ताप हो तो शक्कर और वंशलोचन मिलाहुआ गिलोयकासत्त्व, छुहारे, अनार, द्राक्ष और ईखका उपचारकरे । अरुचिमें घीमें भुनेहुए शक्करयुक्त धनियेके चावल. ज्वरमें धनिया और गिलोयका क्वाथ, रक्तपित्तमें मधु और शक्कर मिलाहुआ खस और अडूसेकाक्वाथ, कफ, श्वास, कास और स्वरभङ्गमें मधुकेसाथ भुनीभाङ्गकाचूर्ण, निद्रानाश, अतिसार ग्रहणी तथा मन्दाग्निमें गरमजलकेसाथ सञ्चल, हर्रे और पीपलकाचूर्ण; शूल, अजीर्ण और ज्वरमें मधुयुक्तपीपल, प्लीहोदर, वातरक्त, वमन, ववासीर और नासिकादिकोंके रक्तस्रावमें अनारके फूलोंका रस अथवा शक्कर डालकर श्वेतदूर्वाके रससे नस्य दे । वमन और हिचकीके प्रकोपमें शक्करयुक्त बेरकीगिरी, अथवा मयूरपि-च्छभस्म मधुकेसाथ चटावे । यहप्रकार, मृगाङ्क, हेमगर्भ और मौक्तिकप्रभृति पोट्टलीरसोंमें करना उचितहै ॥ २५९ ॥

२६० लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) (द्वितीयः)

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।
मापश्च टङ्कणस्यैकं जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ १२६९ ॥
पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथो रसोत्तमः ।
प्रसूते कुष्ठं रक्तपित्तमन्यान्रोगान् बलाज्जयेत् ॥ १२७० ॥
पुष्टिवीर्यप्रसादौज:कान्तिलावण्यदः परः ।
काऽस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शम्भुमुखोद्गतात् ॥१२७१॥
पथ्यं शाल्योदनं सर्पि दधि शाकं सहिङ्गुकम् ।
नित्यं यामद्वयादूर्ध्वं कार्यं वारत्रयं दिवा ॥ १२७२ ॥
त्यक्ताद्वात्पेऽरुचौ वाऽपि ज्वरः सूतो न चेत्पुनः ।
अष्टमेऽह्नि प्रदातव्यः पूर्ववत्कार्यसिद्धये ॥ १२७३ ॥
प्रथमे सप्तमे देयाः लावमूरणमुद्गकाः ।
द्वितीये मापगोधूमा मत्स्याः पूर्वोदितञ्च यत् ॥१२७४॥
देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम् ।
तैलविल्वाऽऽरनालानि कोपक्रोधस्त्रमजागरान् १२७५
त्यजेत्कार्दीनि द्रव्याणि हृद्यं स्वादु च शीलयेत् ।
वायौ सेव्यं पयः कोष्णं पित्ते तु ससितं हितम् १२७६
अत्यन्तं चोरवीजानि तिलेक्षुकदलीफलम् ।
खर्जूरमांसमृद्वीकासितादि सकलं भजेत् ॥ १२७७ ॥
वीर्यच्युतौ नारिकेलजलं तालफलानि च ।
आनाहाऽरुचिमूर्च्छाऽतिभ्रमोद्गारविसूचिकाः १२७८
पतेषु लघुशाल्यन्नं केवलं सघृतं हितम् ।
अतिसारी पिबेच्छिन्नारसं सौद्रेण संयुतम् ॥१२७९॥

सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्ते रुचिविपर्यये ।
भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम् ॥ १२८० ॥
यवाम्नं मधुसंयुक्तं पिवेद्वा माहिषं दधि ।
घृताऽन्नं भक्षयेन्नित्यं सुखोष्णेन च वारिणा ॥१२८१॥
छिन्नाऽम्बुसहितं देयं दाहेऽजीर्णे सुधाजलम् ।
आर्द्रकं सर्षपं रम्भाफलं भृङ्गं कफोल्वणे ॥ १२८२ ॥
अन्येऽप्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्यै यथौषधम् ।
द्वात्रिंशद्दिवसे कार्यं स्नानमामलकैस्तिलैः ॥
युक्तं सेव्यं वले जाते शनैरग्निबलादनु ॥ १२८३ ॥

र.स, नि र, र. ल, ध, टो., भै सा, र र दी, र कौ, र म, वृ यो त, र चि, र सु, रसायनस., र (मा), यो र, यो.म, र का, र शि, राजयक्ष्मणि। बहुषु स्थानेष्वय पाठो लोकेश्वरनाम्ना पोट्टली वेति नाम्ना व्यवहृतः ॥

भाषा—कौडीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, सुहागा १ माशा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय थोडासुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । कुष्ठ और रक्तपित्तको छोडकर अन्यसबरोगोंको यह दूरकरताहै । पुष्टि, वीर्य, प्रसाद, ओज, कान्ति और लावण्यको देताहै । इसमें पथ्य सफेदचावल, घी और दही, हींगसे छोंकाहुआशाक, दो दो पहरकेबाद अत्यन्त भूखलगनेपर दिनमें ३ वार देनाचाहिये । तीनदिनकेबाद वान्ति अथवा अरुचि मालूम पडे तो समझना चाहिये कि रस अनुकूल नहीं पडा, तब ७ दिनका अन्तरकर आठवेंदिनसे फिर शुरूकर । पहिले सप्तकमें लवा, सूरण और मूग देवे । द्वितीयसप्तकमें उडद, गेंहू और पूर्वोक्तपदार्थ, तृतीयमें मछली और मास अधिकतया देवे और अभ्यङ्ग करावे । तैल, बेल, काञ्जी कोप, स्त्री, दिनमें शयन, रात्रिजागरण, ककाराष्टक इनका त्यागकरे । हृद्य और स्वादुका सेवनकरे । वातप्रकोपमें केवल दूध और पित्तप्रकोपमें शक्कर डालाहुआ कदुष्ण दूध पीवे । भस्मकमें चिरोंजी तिल, ईख, केलेकाफल, खजूर, आम, किसमिस और मिठान्नका सेवनकरे । वायंलावमें नारियलका जल और तालफल; आनाह, अरुचि, मूर्च्छा धूमोद्गार और हैजा इनमें हलके सफेदचावल केवल घीकेसाथ देवे । अत्यन्तवान्तिमें मधुमिलाकर गिलोयका स्वरसदे । रक्तपित्तमें मधुकेसाथ अडूसकारस, अरुचिमें शक्करयुक्त भुनाधनियां अथवा मधुकेसाथ जवकेपदार्थ अथवा मधुमिलाहुआ भैंसका दहीदेवे । दाहमें गिलोयका स्वरसकेसाथ घृतयुक्त अन्नदे । अजीर्णमें चूनेका पानी, कफप्रधानव्याधिमें अदरख, सरसों केलेकाफल और भंगरा देवे । इसीतरह अन्यभी उपद्रव यदि अन्तरायभूत उपस्थित हों तो उनकी शान्तिकेलिये तत्तदौषध देवे । ३२ वेंदिन आंवले और तिलकाकल्क लगाकर स्नानकरावे । शारीरिक और अग्निबल होजानेकेबाद उचितवस्तुओंका सेवनकरे ॥ २६० ॥

२६१ लोकनाथरसः (लोकेश्वर.) ३

भस्म सूतस्य भागैकं चतुर. शुद्धगन्धकात् ।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टङ्कणेन निरुन्ध्य च ॥ १२८४॥
भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १२८५ ॥
नागरातिविषामुस्तं देवदारुवचान्वितम् ।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनम् ॥ १२८६ ॥
चतुर्गुञ्जो घृतै र्देयो विंशद्भि र्मरिचैस्तथा ।
जातीमूलपलैकन्तु छागीक्षीरेण पाचयेत् ॥
शर्कराम्भोयुतश्चाऽनु पीत्वा कृच्छ्रहरं ध्रुवम् ॥१२८७॥

र स, चि क, चि र भ, र.र.स, ना वि, नि र., रस स, र.र, वै चि, र सु, र क ल, रसायनसार, र को, यो म, र कौ, चि र, ध, टो, व रा, र चि, रसायनस, र चं, चि सा, र क, वै र, र का, र र कौ, र म. मा, अतिसारे मूत्रकृच्छ्रे च । मूत्रकृच्छ्राऽधिकारे अस्मिन् पाठे शुद्ध सूतो नियोजित ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेसे चौगुनी पीलीकौडियोंमें भरकर आक अथवा गौकेदूधमें पिसेहुए सुहागेसे कौडियोंकामुंह बन्दकर शरावसम्पुटमेंरख कपडमिट्टीदेकर सुखाकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा घी और २० कालीमिर्चोंकेसाथ अथवा केवल मधुकेसाथ देकर सोंठ, अतीस, नागरमोथा देवदारु और बचकाकाढा पिलानेसे समस्त अतिसारोंको यह नष्टकरताहै । एकपल चमेलीकी जडको बकरीके दूधमें पकाकर शक्कर डालकर पिलानेसे मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ २६१ ॥

२६२ लोकनाथरसः (चतुर्थ)

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत् ।
मृताऽभ्रं रसतुल्यञ्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत् ॥ १२८८ ॥
रसाद्द्विगुणलौहञ्च लौहतुल्यञ्च ताम्रकम् ।
भूतिं वराटिकायाश्च ताम्रतस्त्रिगुणां कुरु ॥ १२८९ ॥
नागवल्लीरसेनैव मर्दयेत्ततो भिषक् ।
पुटेद्गजपुटे विद्वान्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १२९० ॥
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत् ।
पिप्पलीं मधुसंयुक्तां सगुडां वा हरीतकीम् ॥
गोमूत्रञ्च पिवेच्चाऽनु गुडं वा जीरकान्वितम् ॥१२९१॥

र स, ध., वै क, र च, भै र, र चि, र सु, र का, यो म, लोहाऽधिकारे। केषुचिदन्येषु ताम्रलोहयोर्भागे त्रैगुण्य दृश्यते। यो म कन्यकाम्बुना मर्दन कृत, गजपुटपाकश्च न दृश्यते।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, अभ्रकभस्म पारेकीबराबर, पारेसे दूनी लोह और ताम्रभस्म, ताम्रसे तिगुनी कौडीभस्म लेकर सबको पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर सुखानेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा मधुपिप्पलीके अथवा गुडयुक्त हरीतकीकेसाथ देकर गोमूत्र अथवा जीरायुक्तगुड

देनेसे यकृत्, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६२ ॥

२६३ लोकनाथरसः (लघुः) ६

वराटभस्म मण्डूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत् ।
तत्समं मारिचं चूर्णं नागवल्ल्या विभावितम् ॥१२९२॥
तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः ।
माषमात्रं क्षयं हन्ति यामे यामे च भक्षितम् ॥
लोकनाथरसो ह्येष मण्डलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ १२९३ ॥

शा. सं., र. र., वै. र., रसायनस., र. को., नि. र., यो. म., र. क यो., र. क. ल., ना. वि., क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—कौडी और मण्डूरभस्म समभागलेकर बारीक-चूर्णकर चतुर्गुणित घीमें पकावे । घृतसूखजानेपर समभागमरिचकाचूर्णमिलाय पानकेरससे १–२ दिन घोटकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा मधु अथवा मक्खनकेसाथ १–१ पहरबाद देनेसे यह एकमण्डलमें राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

२६४ लोकनाथरसः (पंचः)

वराटतुल्यं मण्डूरं तदर्धं तीक्ष्णलोहकम् ।
तत्पादांशं मृतं सूतं सूताद्द्विगुणगन्धकम् ॥ १२९४ ॥
खल्वोदरे विनिःक्षिप्य मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
वर्षाभूमूलस्वारेण यत्रवल्लीरसेन च ॥ १२९५ ॥
वासाख्यया तालमूल्या चित्रमूलेन मर्दयेत् ।
तद्गोलं चातपे शोष्यं दिनान्ते तत उद्धरेत् ॥ १२९६ ॥
शरावे मूद्रये स्थाप्य कुक्कुटाख्ये पुटे पचेत् ।
सूक्ष्मं चूर्णं ततः कृत्वा तत्समं मारिचं रजः ॥ १२९७ ॥
भावनाऽनन्तरं द्रव्यं नागवल्लीरसार्द्रकम् ।
भृङ्गराजश्च निर्गुण्डी मुण्डी शिग्रुरसस्तथा ॥ १२९८ ॥
फलत्रयकषायेण छायाशुष्कञ्च कारयेत् ।
निष्कार्द्धं मधुना लेह्यं यामेयामे च भक्षयेत् ॥१२९९॥
क्षयक्षयकृतं व्याधिं वातपित्तकफोद्भवम् ।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं शोफपाण्डुगुदामयान् १३००
हलीमकं चाऽस्थिगतं विनिहन्ति च सत्वरम् ।
दीपनं वीर्यकृत्पथ्यं सर्वरोगनिबर्हणम् ॥
लोकनाथरसो नाम शम्भुदेवेन निर्मितः ॥ १३०१ ॥

वै. चि (ल.), व, रा, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—कौडी और मण्डूरभस्म १–१ भाग, फौलादभस्म आधाभाग, फौलादसे चतुर्थांशपारदभस्म, पारदसेदूना शुद्ध-गन्धक लेकर बारीकपीसकर इन्द्रायणकीजड़, सेंहुण्डकादूध, अडूसा, तालमूली और चित्रकमूल इनके स्वरसोंसे १–३ दिनमर्दनकर गोला बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपडमिटी देकर सुखनेपर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकेबराबर मरिचका चूर्णमिलाय पान, अदरख, भंगरा, निर्गुण्डी, गोरखमुण्डी, सहिजन और त्रिफला इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिलाकर १–१ पहरके अन्तरमें देनेसे क्षय, वात–पित्त–कफजव्याधियां, कास, श्वास, प्रतिश्याय, शोफ, पाण्डु, बवासीर, अस्थिगत हलीमक, मन्दाग्नि वीर्यनाश प्रभृति सबरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २६४ ॥

२६५ लोकनाथरसः (बृहन्) ७

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं खल्वे कृत्वा तु कज्जलीम् ।
सूततुल्यं जारिताऽभ्रं मर्दयेत्कन्यकाऽम्बुना ॥१३०२ ॥
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लौहं प्रयत्नतः ॥
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥ १३०३ ॥
सूताच्च द्विगुणं गन्धं वराटीसम्भवं रजः ।
पिष्ट्वा जम्बीरनीरेण मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ १३०४ ॥
तन्मध्ये गोलकं क्षिप्त्वा यत्नेनच्छादयेत्क्षिपक् ।
शरावसम्पुटं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥ १३०५ ॥
शरावसन्धिमालिप्य चातपे शोषयेत्क्षणम् ।
ततो गजपुटं दत्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १३०६ ॥
पिष्ट्वा तु सर्वमेकत्र स्थापयेद्भाजने शुभे ।
खादेद्वल्लद्वयञ्चाऽस्य मूत्रं चाऽनु पिबेन्नरः ॥ १३०७॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुडां वा हरीतकीम् ।
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेत्तुल्ययोगतः ॥ १३०८ ॥
यकृत्प्लीहोदरांतथा श्वयथुञ्च विनाशयेत् ।
वाताष्ठीलाञ्च कमठीं प्रत्यष्ठीलां तथैव च ॥ १३०९ ॥
कांस्यक्रोडाऽग्रमांसञ्च शूलञ्चैव भगन्दरम् ।
वह्निमान्द्यञ्च कासञ्च लोकनाथरसोत्तमः ॥ १३१० ॥

र. स., भै. र, र. चि, र मु, प्लीहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्ण-कज्जली और अभ्रकभस्म १ भागलेकर घीकुंवारकेरसमें एकदिन-मर्दनकर, ताम्र और लोहभस्म २–२ भाग मिलाकर मकोयके रससे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय शुद्धगन्धक और कौडीभस्म २–२ भागलेकर जंभीरीकेरसमें १ दिन मर्दनकर दोमूषाबनावे । उसमें गोलेकोरख शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपडमिटी देकर धूपमें सुखाकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल-कर रखछोडे । इसमेंसे ६–६ रत्तीलेकर गोमूत्र अथवा मधुयुक्त-पीपल अथवा गुडयुक्तहर्रे या गुडऔरजीरा समभाग मिलाकर अनुपानरूपमें लेनेसे यकृत्, प्लीहा, उदर, शोथ, वाताष्ठीला, कमठी, प्रत्यष्ठीला, कांस्यक्रोड, अग्रमांस, शूल, भगन्दर, मन्दाग्नि, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६५ ॥

२६६ लोकनाथरसः (अष्टमः)

भागाः सप्त कपर्दभस्म मरिचं पादाधिकांशं विषं,
चैकांशं रसभस्म विंशतिमिताः स्यु र्गन्धकांशा दश ।
चत्वारो ह्यहिफेनकस्य कनकः पादेन भाग.स्मृतः
चूर्णं तन्मृदितञ्च सर्वगददा स्याल्लोकनाथो रसः ॥१३११

ग्रहण्यां कफजे व्याधौ वातोद्रेके च पैत्तिके।
प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रे च कासे श्वासे भ्रमे तथा॥
सिताऽऽज्यमोचामरिचैः संयुतो दीयते रसः १३१२

क्रोधं न कुर्याच्च च तैलमेवां
न राजिकां पित्तकरं न किञ्चित्।
न मैथुनं जागरणं न रात्रौ
न कामचारः क्रियते कदाचित्॥ १३१३॥

रसचि, ग्रहण्याम्।

भाषा—कौड़ीभस्म ७ भाग, मरिच ९॥ भाग, शुद्धवत्सनाग १ भाग, पारदभस्म २० भाग, शुद्धगन्धक १० भा, अफीम ४ भा., सुवर्णभस्म $\frac{3}{4}$ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक शक्कर, घी, मोचरस और मरिचकेसाथ देनेसे ग्रहणी, कफजव्याधि, वात और पित्त प्रधानव्याधियां, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कास, श्वास और भ्रम इनसबको यह नष्टकरताहै। क्रोध, तैल, राई, पित्तकारकपदार्थ, मैथुन, रात्रिजागरण, स्वच्छन्दगमन इनसबका त्यागकरे॥२६६

२६७ लोकनाथरसः (नवमः)

पञ्चभि र्लवणैः सूतं त्रिभिः क्षारैस्तथैव च।
मर्दयेद्दोषनाशाय गुणाधिक्यविधित्सया॥ १३१४॥
एवं संशोध्य सूतेन्द्रं राजिकाहिङ्गुशुण्ठिभिः।
चूर्णितैः पिण्डिकां कृत्वा तन्मध्ये सूतकं क्षिपेत्॥१३१५॥
ततस्तां स्वेदयेत्पिण्डीं वस्त्रे बद्ध्वा तु काञ्जिके।
दोलायन्त्रगतां यत्नाद्वैद्यो यामचतुष्टयम्॥ १३१६॥
एवं शुद्धं रसं कृत्वा क्रमेणाऽनेन मर्दयेत्।
गिरिकर्णी तथा भृङ्गराजनिर्गुण्डिके तथा॥ १३१७॥
जयन्ती शृङ्गवेरञ्च मण्डूकी चपलच्छदः।
काकमाची तथोन्मत्तो वसुकश्च ततः परम्॥ १३१८॥
एतासामौषधीनाञ्च रसतुल्यै रसैः क्रमात्।
ततस्तत्सूतराजस्य कार्या मरिचमात्रिका॥ १३१९॥
वटिका सन्निपातस्य निवृत्त्यर्थं भिषग्वरैः।
इयं श्रीलोकनाथेन सन्निपातनिवृत्तये॥ १३२०॥
कीर्तिता गुटिका पुण्या दृष्टप्रत्ययकारिणी।
इमां प्राप्य वटीं यस्मात्सन्निपाताद्विमुच्यते॥१३२१॥
मयूरमीनवाराहच्छागमाहिषसम्भवैः।
प्रत्येकेनाऽस्य पित्तैर्वा भाविता चेद्वटी भवेत्॥ १३२२॥
पातयेत्तत्र तोयानि सुशीतानि बहूनि च।
तक्रं दधिसंयुक्तं भक्तमस्मिन् प्रदापयेत्॥ १३२३॥
इक्षवश्च तथा योज्या रसवीर्यविवृद्धये।
शीतद्रव्यं भक्षणार्थं पित्तवद्धे महाभये॥ १३२४॥

१. नि, २. र म, ३ मु, ४ शी, रसायनम., ५ का ६ दो. ७, रत्नाकर, ८. दो, शो म, तु ब, र मृ क्षयाऽधिकारे। ग्रहण्यां सुवर्णलोकनाथ इति नाम॥

भाषा—पाचोंनमक और तीनोंक्षारोंसे १-१ रोज पारेको मर्दनकर गरमकाञ्जीसे साफकरले फिर राई, हींग, सोंठका काञ्जीमें गोला बनाय उसके भीतर पारेको रख दोलायन्त्रसे ४ पहर काञ्जीमें स्वेदनकर निकालले फिर गोकर्णी, भंगरा, निर्गुण्डी, जैनी, अदरख, ब्राह्मी, पीपलकीछाल, मकोय, धतूरा, एरण्ड इनसबके पारेकेबराबररसोंमें क्रमश मर्दनकर मिर्च बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली रोज अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको निवृत्तकरताहै। इसमें मोर, मछली, सूअर, बकरा और भैंसेके पित्तोंसे भावना देकर गोली बनाई हो तो मस्तेपर ठंडेजलकी धारा देना। छाछ और दहीयुक्तभात, ईखवगैरह ठंडे पदार्थ खानेको देना इससे यह बहुतही चमत्कृतिको दिखलाताहै॥ २६७॥

२६८ लोकनाथरसः (दशमः)

स्वर्णं सूतसमानकं दृढतरं निम्बाम्बुना मर्दितं,
पिष्टिः क्ष्मागुणसम्मिताऽभ्रकमृदा मृषान्विता भूधरे
पक्वा यश्चतुष्टयं शुभतरं स्याद्भस्म गन्धाश्मना,
तुल्यं चित्रकवह्निवर्यैरसलिले घस्त्रत्रयं मर्दितम्॥१३२५॥
तद्वाराट्रिकपर्दकोदरगतं लालागुडाम्लकृतो,
रुद्धं चूर्णविलिप्तभाण्डतलगं संरुध्य चास्यं पुटेत्।
मर्द्यं तत्सकपर्दकं दृढतरं वल्लद्वयं सर्पिषा,
युक्तः सन्मरिचैश्च सूतकवरः श्रीलोकनाथाभिधः।
मृगाङ्कवद्राजयक्ष्महारी सूतवरो भवेत्।
पथ्यादि पूर्ववत्तस्य सेवनं समुदाहृतम्॥ १३२६॥

१, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—सोनेकेवरक अथवा बारीकचूर्ण और पारा समभाग लेकर नीमकेरससे १-२ रोज मर्दनकर सब कालापन निकालदे। दो दो घण्टेबाद रस बदलताजाय फिर इनदोनोंके बराबर शुद्धगन्धकमिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय कपोलमध्यके समकोठे दोमूषाबनाय उसके भीतर गोलेको रख सन्धिबन्दकर ३-४ कपड़मिट्टी देकर सुखानेपर भूधरयन्त्रमें ४ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाय ३ रोज चित्रक और अदरखके रसोंसे मर्दनकर पारेसे चतुर्गुण पीलीकौड़ियोंके अन्दर भरे सब बन्दकर और सुभरने इसे सुहागाबन्दकर चूनेसे पुतेहुए भाण्डमें बन्दकर गजपुटदेकर ३-४ कपड़मिट्टी लगाकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-८ रत्तीकीमात्रा घी और मरिचकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मादिरोगोंको दूर करताहै। इसमें पथ्यवगैरह मृगाङ्ककी तरह समझना २६८

२६९ लोकनाथरसः (एकादश)

घनविभागा रसगन्धनाला
स्थितश्चित्रकाट्कुशमादिकाः स्युः।
ताम्रं वराटं दिनगम्भकल्प-
जम्बीरनीरैः परिमर्द्य गोलम्॥ १३२७॥

निधाय सम्पुटवरेऽधियामं
पुटं प्रदद्याल्लघु शीतलन्तत् ।
पिबेत्त्रिगुञ्जं मधुपिप्पलीयुतं
प्लीहज्वरे धातुगते क्षयादौ ॥ १३२९ ॥
सगर्भयोषित्सुकुमारदुर्बलानां
सुखावहोऽयं कथितो गुणाढ्यः ।
स्याल्लोकनाथोऽखिलरोगहर्ता
दोषानुरूपञ्च भजेत पथ्यम् ॥ १३३० ॥

र. शं, क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, सुहागा और सुवर्णमाक्षिक १०-१० भाग, ताम्रभस्म ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे ७ रोज मर्दनकर गोला-बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर १ प्रहर लघुपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और १० पीपलके-साथदेनेमे प्लीहा, धातुगतज्वर, क्षयादिरोग, गर्भवती स्त्री और दुर्बलबच्चोंके समामरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दोषा-नुरूप देना ॥ २६९ ॥

२७० लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) (द्वादशः)

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥ १३३१ ॥
वराटिकांश्च सम्पूर्य टङ्कणेन निरुध्य तु ।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा सन्धाय मृत्स्नया१३३२
शोषयित्वा पुटेद्गर्तेऽरत्निमात्रेऽपराह्णके ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ॥१३३३॥
एष लोकेश्वरो नाम्ना पुष्टिवीर्यविवर्धनः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ १३३४ ॥
खादयेत्परया भक्त्या लोकेशं सर्वरोगहम् ।
अङ्गकार्श्येऽग्निमान्द्ये च कासे पित्ते रसक्षये ॥१३३५॥
मरिचैर्घृतसंयुक्तैः प्रदातव्यो दिनत्रयम् ।
लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं सदधि भोजनम् ॥ १३३६ ॥
एकविंशद्दिनं यावन्मरिचं सघृतं पिबेत् ।
पथ्यं मृगाङ्कवद्देयं शयीतोत्तानपादयः ॥ १३३७ ॥
वमने सम्प्रवृत्ते तु गुडूचीद्रवमाहरेत् ।
मातुलुङ्गस्य मूलं वा लाजाचूर्णं ससैन्धवम् ॥१३३८॥
पिप्पलीं मधुसंयुक्तां खादयेद्वान्तिशान्तये ।
स्नानं शीतलतोयेन मूर्ध्नि धारां विनिःक्षिपेत् ॥१३३९॥
पैत्ते विकारे सञ्जाते कदलीफलमाहरेत् ।
भृष्ट्वा तन्मरिचैः सार्धं भोजयेत्कफनुत्तये ॥ १३४० ॥
आर्द्रिकां गुडयुक्तां वा गुडार्द्रकमथापि वा ।
भृष्ट्वा कुस्तुम्बरीं जीरं व्योषाद्यं चूर्णयेत्ततः ॥ १३४१ ॥
शर्करागुडमिश्रं वा दद्यातोऽरुचिशान्तये ।
अजमोदा विडङ्गानि पिष्ट्वा तक्रेण पाययेत् ॥ १३४२ ॥
कृमिकोपप्रशान्त्यर्थं कार्यं वातप्रमुक्तयोः ।
संस्कृत्य दुग्धेन दध्ना विरेके सम्प्रयोजयेत् ॥१३४३॥
ईषद्भृष्ट्वा जयाचूर्णं मधुना खादयेन्निशि ।
अङ्गतोदे घृतेनाऽङ्गं मर्दयित्वोष्णवारिणा ॥
स्नापयेद्रोगिणं वैद्यो लोकनाथमनुस्मरन् ॥ १३४४ ॥

र. शं., ध., र. ल., रसायनसं., वृ. यो. त., र. चि., नि. र., र. र. स., र. म. मा., र. को., र. चं., यो. र., र मु, र. सं., र. म, यो. म., ना. वि., टो., वै. चि, र. क. यो., र. का, र. क. ल., चि. र. म, र. (मा.), र. र. क्षये ।

टि०—रसरत्नसमुच्चये द्वितीयस्थाने मृताऽर्द्धभागेन स्वर्णं नियुज्य मृगाङ्कपोट्टलीति नाम स्थापितम् । माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे द्वौ पाठौ प्रकल्पितौ, एकस्मिन् पाठे साधारण कनकभस्म नियो-जित, द्वितीये षड्गुणगन्धकमारित कनक योजितम् । हेमपारद गन्धाना एकस्त्रय षट इतिभागे विशेष । रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थाने अग्निदीपनीगुटिकेति नाम स्थापित तत्र गन्धकस्याष्टौ भागा कल्पिता जीरकच्छम्बूके चाऽवरोध कृत इतिविशेष । रसरत्न-दीपिकायां टङ्कणेन वराटमुद्रणमस्ति अत्र तु मध्ये प्रक्षिप्तमिति विशेषो दृश्यते परन्तु स गणनायोग्यो नाऽस्ति उभयथाऽपि रसमात्रमेव तन्मेलन क्षीरिण्यर्कमर्दनन्तु विशेषतायामेव पर्यवस्यति, तस्याऽत्राप्यनुष्ठाने क्षत्य-भावोऽस्तीति सुधीभिराकलनीयम् । रसरामधेनौ टोडरानन्दे रसायन-सङ्ग्रहे च उभयोरपि सङ्ग्रहस्त्वखानतामेव पोतयति । रसरत्नाकरे"सूत मृत चतुर्भाग मार्गैक मृतहेमकम् । अष्टभाग शुद्धगन्ध दिनैक चित्रजै द्रवै–"रित्यादिना वैरोचननाम्ना एको रसोऽस्ति सोऽप्यनैवाऽन्तर्भवति । गन्धकमात्रे भागाऽधिक्यात्तैतावता रसान्तरतां प्राप्तुमर्हति वह्निदानेन गन्धकस्योड्डीयमानत्वात् ॥

भाषा—पारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म १ भा, शुद्धग-न्धक ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकके रससे एकरोज मर्दनकर पारेसे चौगुनी कौड़ियोंमें भरके सुहागेसे मुखबन्दकर चूनापुतेहुए भाण्डमें रखकर शरावसम्पुटसे बन्दकर ४-५ कपड़मिट्टी देवे । सूखनेपर हाथभरके खड्डेमें दोपहरकेबाद इतनी आंचदेवे कि सवेरे तक ठंढीहोजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको बढ़ाताहै । कृशता, मन्दाग्नि, कास, पित्तप्रकोप और रसक्षय इनरोगोंमें ३ रोजतक मरिच और घीकेसाथदे । इसमें नमकछोड़दे घृत और दधियुक्त भोजनदे । चारदिनकेबाद २१ दिनतक घी और मरिच पीवे, पथ्य मृगाङ्ककीतरह दे जमीनपर चित्तसोवे । रसातिव्याप्तिके-कारण वमनहोनेपर गिलोय अथवा बिजौरेकीजड़कास्वरस अथवा सैन्धवयुक्तलाजचूर्ण, अथवा रात्रिमें मधुयुक्तपीपल देवे । पित्त-विकारमें शीतलजलसे स्नान, मस्तेपर शीतलजलकी धारा और केले देना । कफविकारमें मरिच कच्चाकेला अथवा गुड़युक्त आर्दीचक (आसामी जंजवील यू०) अथवा गुड़युक्त अदरखदेना । अरुचिमें भुनाधनियां, जीरा और त्रिकटुकेसाथ अथवा शक्कर या गुड़केसाथ देना । क्रिमिप्रकोपमें अजमोद और विडङ्ग छाछमें पीसकर देना । विरेचनमें एरण्डमूल और नागरमोथेकाक्वाथ देना और इसीतरह

क्षीरपाककरके देना अथवा सुनीभागकाचूर्ण रात्रिमें देना। हस्फूटनमें घीसे अभ्यङ्गकरायगरमजलसेस्नानकराना ॥ २७० ॥

२७१ लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) १३

द्वौ भागौ गन्धकस्याऽष्टौ शङ्खचूर्णस्य योजयेत्।
एकमेव रसस्यांशमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥ १३४५ ॥
चित्रकस्य द्रवेणैव शोषयित्वा पुनःपुनः।
एकीकृत्य रसेनाऽथ क्षारं दत्त्वा तदर्द्धकम् ॥ १३४६ ॥
अर्कक्षीरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत्।
निरुद्ध्य चूर्णलिप्तेऽथ भाण्डे दद्यात्पुटं तथा ॥ १३४७ ॥
लोकनाथरसो ह्येष ग्रहणीरोगहन्तनः।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिचाऽऽज्यसमन्वितम् ॥
दद्यात् दधिभक्तञ्च ग्रहण्याञ्च विशेषतः ॥ १३४८ ॥

र. र. स., र. सु., ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शङ्खचूर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागलेकर शङ्खका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर आककेदूध और चित्रककेक्वाथकी पुटदेदेकर ३-३ अथवा ७-७ भावनाएं देकर सबसे आधेप्रमाणमें सुहागा मिलाकर १-२ दिन आककेदूधमें घोटकर बेरबराबर गोलियें बनाकर अच्छीतरहसुखाकर चूनापुतेहुए बर्तनमें बन्दकर २-४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ रत्ती मरिच और घीकेसाथ देनेसे और दहीभात खिलानेसे ग्रहणीरोग निवृत्तहोताहै ॥ २७१ ॥

२७२ लोकनाथरसः (लोकेश्वरपोट्टली) १४

प्रत्येकं दश गद्याणाः शुद्धगन्धकसूतयोः।
कज्जलीमर्कदुग्धेन पेषयेच्च दिनद्वयम् ॥ १३४९ ॥
द्वयर्द्धं सेहुण्डदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम्।
वराटेषु च तत्क्षिप्त्वा पेषयेद्वज्रमृत्स्नया ॥ १३५० ॥
पुटान्पुटपलकैर्दद्यात्क्रमेणोत्तरवर्धितैः।
दहते गन्धको यावत्तावदस्तिष्ठेच्चिरस्थयः ॥ १३५१ ॥
कृत्वा ततः कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविंशतिम्।
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मध्ये दशगद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥
आर्द्रचित्रकमूलानां स्वरसेन च भावयेत्।
मूलस्रुतञ्च तन्मध्ये क्षिप्त्वा पूगप्रमाणिकाः ॥ १३५३ ॥
गुटीः कृत्वाऽऽतपे शुष्कास्ततो ग्राह्या च कुम्भिका।
चूर्णं लिप्त्वाऽऽतपे शुष्कां तन्मध्ये गुटिकाः क्षिपेत् ॥
शुष्किकाया मुखे पश्चात् दृढं देयं पिधानकम्।
सन्धि वस्त्रमृदा लिप्त्वा गर्तमध्ये क्षिपेत्ततः ॥ १३५५ ॥
ज्वलिता शीतलीभूता देया युक्त्याऽपरः पुटः।
कृत्वा चूर्णं गुटीनाञ्च संरक्षेत्कूपिकागतम् ॥ १३५६ ॥
सञ्जातोऽयं रसः सम्यक् सिद्धो लोकेश्वरपोट्टली।
उक्तौषधैः समं देयो रसो वल्लचतुष्टयम् ॥ १३५७ ॥
सङ्ग्रहण्यामतीसारे शामे च सहजे तथा।
दार्वीशान्तर्निशं मिश्रं घृतयुक्तोऽथवा रसः ॥ १३५८ ॥
गुडूचीसत्त्वसहितः परं ज्वरविनाशनः
षष्टिकातण्डुला माषा गोधूमा यवशालयः ॥ १३५९ ॥
दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो वरम्।
नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वर्ज्यं क्षाराऽम्लतैलकम् ॥ १३६० ॥

रसचि., र. कं. ली., ग्रहणीरोगे।

टि०—रसरत्नावलीधृतलोकनाथपोट्टलीशङ्खपोट्टल्योश्च पाठः सदृशः प्रतिभाति परन्तु पाके भावनासु च विशेषत्वात् पाठद्वयकर्तुः एककालयोगिन एकत्वात् द्वयोरपि स्वतन्त्रतया पाठः स्थापित इति विद्वद्भिर्विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५-५ तोले लेकर नीलवर्णकज्जलीकर आक और सेहुण्डकेदूधमें ३-३ दिन मर्दनकर १० तोले पीलीकौड़ियोंमें भरके वज्रमिट्टीसे सन्धिबन्दकर चूनापुतेहुए भाण्डमें बन्दकर २-४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर इतनी आंचदे कि केवल गन्धकही जले पारा न उड़े। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पारेकीबराबर गन्धकदेकर पूर्वद्रवोंसे मर्दनकर आंचदे, ऐसे बहुतगन्धकजारणकर अलगरखदे। फिर कौड़ीभस्म १० तोले और शङ्खभस्म ५ तोलेका बारीकचूर्णकर अदरख और चित्रकमूलकेक्वाथमें १-१ रोज मर्दनकर पूर्वोक्तभस्म मिलाकर १-२ पहरमर्दनकर सुपारीकेबराबर गोलियें बनाय धूपमें सुखाकर चूनापोतकर सुखाईहुईकुल्हड़ीमें भरके शरावसम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपड़मिट्टी समस्तपर लगाय गजपुटकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर सुखाकर दूसरापुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे डेड़ १॥ मासेकीमात्रा घृतयुक्त ३२ कालीमिर्चोंकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहणी, आम अथवा सहज अतिसार, नष्टहोताहै। गुडूचीसत्त्वकेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरताहै। साठीचावल, उड़द, गेहूं, जव, सफेद चावल दही, दूध, घृत और मधुरप्रभृति तमामआहार, नारङ्गी, शक्कर येसब इसमें पथ्यहैं। क्षार, अम्ल और तेल नहीं खाने चाहियें ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनाथरसः (पोट्टली)

गोलं जम्भरसेन गन्धरसयोस्तत्तुल्यताम्राऽऽहृतं,
गोलं लावणयन्त्रगर्भनिहितं बद्ध्वा पचेत्तं शनैः।
यामानष्ट कपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्भस्मना,
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत् ॥ १३६१ ॥
संशुद्धामिति पोट्टलीं सहविषां मारीचचूर्णेन ता-,
मश्नीयाद्दिति लोकनाथविधिना दीर्घस्थकासादिषु।
शोफामाऽनिलगुल्मशूलसहजश्वासग्रहण्यर्शसि,
प्रौढे यक्ष्मणि पाण्डुरोगसहिते मन्दाग्निमान्द्याऽरुचौ ॥

नि र., वै. चि., र. पा., कासाधिकारे।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीको जंभीरीकेरसमें मर्दनकर गोलाबनाय बराबरकेताम्बेके सम्पुटमें बन्दकर १-७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर लवणयन्त्रमें बन्दकर ८ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकी

बराबरकी पीलीकौडियोंकीभस्म मिलाय चित्रकमूलकेकाडसे १–२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु पुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीस और मिर्चोंके चूर्णके साथ मिलाकर समयोचितानुपानकेसाथ लेकर द्वितीयलोकनाथमें कहेहुए पथ्यके अनुसार चलनेसे दुर्बलता, कास, श्वास, शोफ, काम, वातप्रकोप, गुल्म, शूल, सहजश्वास, ग्रहणी, बवासीर, पूर्णरूपराजयक्ष्म, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७३ ॥

२७४ लोकनायकरसः

पीतस्थूलकपर्दानां ग्राह्यं विंशोत्तरं शतम् ।
तक्रे द्रोणमिते क्वाथ्यं मथिते द्विगुणोदके ॥ १३६३ ॥
तक्रजीर्णे च नि.सारं गृह्णीयात्तत्पुनः पचेत् ।
वारत्रयञ्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम् ॥ १३६४ ॥
लेलीतकस्य शुद्धस्य सार्धसप्ताऽक्षकं द्वयोः ।
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा पूरयित्वा विमुद्रयेत् ॥१३६५॥
टङ्कणेनाऽर्कदुग्धेन भावितेन चतुर्दश ।
वारान् कुमारिकाद्भिश्च शोषयित्वा पुनः पुटेत्१३६६
विमुद्रय त्रिपुटं दत्वा स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
गुञ्जापञ्चोन्मितं दद्यात्षड्गुञ्जात्समितोषणैः ॥ १३६७॥
तत. पलमितं पश्चात्पिबेद्बाङ्गेरिकाघृतम् ।
पथ्यं दुग्धोदनं कुर्यात्त्यजेद्व्यायामजागरम् ॥
सिद्धोऽयं सिद्धनाथेन कथितो लोकनायक. ॥१३६८॥

जयेत्सर्वरोगानशेषानसाध्यान्
विशेषाद्ग्रहण्यामतीसाररोगे ।
रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे
महायह्निकृद्योगवाही प्रदिष्ट ॥ १३६९ ॥

१ का ,अतीसाराऽधिकारे।

भाषा—पीली और मोटीकौडी १२० लेकर दूनापानी-डालकर बनाईहुई एकद्रोणछाछमें डालकर धीरे २ पकावे । जब छाछका तमामपानी जलजाय तब कौडियोंको निकालकर फिर उसीतरह पकावे । ऐसे ३ बार पकाकर कौडियोंको साफकर शुद्धबुभुक्षितपारा ५ कर्ष, शुद्धगन्धक ७॥ कर्षलेकर दोनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर कौडियोंमेंभर आकके दूध और घीकुवारके स्वरससे १४–१४ भावनाए दियेहुए सुहागसे मुह बन्दकर सुखा कर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर आकके दूध और कुमारीकेरससे १४–१४ भावनाए देकर टिकडीबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे। ऐसे ३ आचें देनेकेबाद स्वाङ्गशीतलको निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा मरिचकेचूर्णकेसाथ लेकर एकपल चाङ्गेरीघृतपीवे, पथ्यमें दूधभात खाय कसरत और रात्रिजागरणको छोडे तो समस्त असाध्यरोग, ग्रहणी, अतीसार, राजयक्ष्म, कास, शूल, शोथ, अत्यन्तमन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै और योगवाहीहै २७४

२७५ लोकेश्वररसः

तालकं दरदं वत्सनाभं सर्वं समं समम् ।
सर्वं भूनिम्बनीरेण मर्दयेद्गोलकीकृतम् ॥ १३७० ॥
वज्रमूषान्तरे क्षिप्त्वा लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका ।
वालुकायन्त्रके पाच्यं द्वियामं मन्दवह्निना ॥ १३७१ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य च्छागपित्तेन भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातान्निहन्ति च ॥
लोकेश्वररसो नाम्ना शम्भुना परिकीर्तितः ॥१३७२॥

वै चि ,ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धहरिताल, शिंगरिफ और बछनाग समभाग लेकर चिरायतकेक्वाथसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टीदेकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी मन्दाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बकरेके-पित्तसे १–२ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबना-कर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामसन्निपातोंको दूरकरताहै ॥ २७५ ॥

२७६ लोहगर्भरसः (पित्तपाण्डुरिः)

रसभस्म चतुर्भागं लोहभस्माऽष्टभागिकम् ।
वह्निर्मुस्ता विडङ्गञ्च त्रिफला कुटजत्वचः ॥ १३७३ ॥
कटुत्रयञ्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेककम् ।
मधुना वल्लमानञ्च लीढं पाण्डुहरं परम् ॥ १३७४ ॥
रसोऽयं लोहगर्भाख्यः पथ्यं देयं मृगाङ्कवत् ।
त्रिफलावृषभूनिम्बतिक्तादार्व्यमृताहृत. ॥
क्वाथो मधुसमायुक्त कामलापाण्डुरोगजित् ॥१३७५॥

रसायनस , चि क ,र सु ,र का ,ना धि ,र र स ,र क ल ,र को ,र क पाण्डुरोग।र क ल पाण्डुरोगघ्न ।र र स ,र को ,र क एतेषु ग्रन्थेषु पित्तपाण्डुरीतिनाम । पित्तपाण्डुरित्यत्र लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ ॥

भाषा—पारदभस्म४ भा ,लोहभस्म ८ भा , चित्रककीजड, नागरमोथा, विडङ्ग, त्रिफला, कुडाकीछाल और त्रिकुटु १–१ भाग मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधुके साथदेकर त्रिफला, अडूस, चिरायता, कुटकी, दारुहल्दी और गिलोय इनकाक्वाथ मधुयुक्तपिलानेसे कामला और पाण्डु नष्ट होतेहैं । इसमें पथ्य मृगाङ्ककीतरह देना ॥ २७६ ॥

२७७ लोहगुग्गुलुः (प्रथमः)

स्नुहीत्वक् खादिरं काष्ठं काष्ठोदुम्बरजं फलम् ।
वल्कलानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले ॥ १३७६ ॥
पक्त्वा पादावशेषेण लोहं पञ्चपलं पचेत् ।
पिण्डीभावे द्रवे किञ्चिदवशिष्टे तु नि क्षिपेत् १३७७
शोभाञ्जनकमूलस्य वल्केनावृत्य पाचितम् ।
करीषाग्नौ समुद्धृत्य हरितालं पलद्वयम् ॥ १३७८ ॥
चूर्णितं द्विपलं तथ गुग्गुलो घृतकल्कितम् ।
पर्योष्ट्य पचेद्भूयो यावल्लेहत्वमागतम् ॥ १३७९ ॥

क्षीरपाककरके देना अथवा मुनीभागकाचूर्ण रात्रिमें देना। हडफूटनमें घीसे अभ्यङ्गकरायगरमजलसेस्नानकराना ॥ २७० ॥

२७१ लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) १३

द्वौ भागौ गन्धकस्याऽष्टौ शङ्खचूर्णस्य योजयेत् ।
एकमेव रसस्यांशमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥ १३४५ ॥
चित्रकस्य द्रवेणैव शोषयित्वा पुनःपुनः ।
एकीकृत्य रसेनाऽथ क्षारं दत्त्वा तदर्द्धकम् ॥ १३४६॥
अर्कक्षीरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत् ।
निरुद्ध्य चूर्णलिप्तेऽथ भाण्डे दद्यात्पुटं तथा॥१३४७॥
लोकनाथरसो ह्येष ग्रहणीरोगकृन्तनः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिचाऽऽज्यसमन्वितम् ॥
दद्यीत दधिभक्तञ्च ग्रहण्याञ्च विशेषतः ॥ १३४८ ॥

र. र. स., र. सु., ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शङ्खचूर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागलेकर शङ्खका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर आकके दूध और चित्रकके क्वाथकी सुखासुखाकर ३–३ अथवा ७–७ भावनाएं देकर सबसे आधेप्रमाणमें सुहागा मिलाकर १–२ दिन आकके दूधमें घोटकर बेरबराबर गोलियें बनाकर अच्छीतरहसुखाकर चूनापुतेहुए बर्तनमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती मरिच और घीकेसाथ देनेसे और दहीभात खिलानेसे ग्रहणीरोग निवृत्तहोताहै ॥ २७१ ॥

२७२ लोकनाथरसः (लोकेश्वरपोट्टली) १४

प्रत्येकं दश गद्याणाः शुद्धगन्धकसूतयोः ।
कज्जलीमर्कदुग्धेन पेषयेच्च दिनद्वयम् ॥ १३४९ ॥
द्वयहं सेहुण्डदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम् ।
वराटेषु च तत्क्षिप्त्वा वेष्टयेद्वज्रमृत्स्नया ॥ १३५० ॥
पुटान्युत्पलकैर्दद्यात्क्रमेणोत्तरवर्धितैः ।
दह्यते गन्धको यावत्सूतस्तिष्ठेन्निरत्ययः ॥ १३५१ ॥
कृत्वा ततः कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविंशतिम् ।
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मध्ये दशगद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥
आर्द्रचित्रकमूलानां स्वरसेन च भावयेत् ।
मृतसूतञ्च तन्मध्ये क्षिप्त्वा पूगप्रमाणिकाः ॥ १३५३ ॥
गुटीः कृत्वाऽऽतपे शुष्कास्ततो ग्राह्या च कुम्भिका ।
चूर्णं लिप्त्वाऽऽतपे शुष्कां तन्मध्ये गुटिकाः क्षिपेत् ॥
मूषिकाया मुखे पश्चाद् दृढं देयं पिधानकम् ।
सन्धिं वस्त्रमृदा लिप्त्वा गर्तमध्ये क्षिपेत्ततः ॥१३५४॥
ज्वलिता शीतलीभूता देयाः युक्त्याऽपरः पुटः ।
कृत्वा चूर्णं गुटीनाञ्च मर्दयेत्पिककागतम् ॥ १३५६ ॥
सञ्जातोऽयं रसः सम्यक् सिद्धो लोकेशपोट्टली ।
उक्तौषधैः समं देयो रसो वल्लचतुष्टयम् ॥ १३५७ ॥
सङ्ग्रहण्यामतीसारे हामे च सहजे तथा ।
द्वात्रिंशन्मरिचैः मिश्रो घृतयुक्तोऽथवा रसः ॥१३५८॥
गुडूचीसत्त्वसहितः परं ज्वरविनाशनः
षष्टिकातण्डुला माषा गोधूमा यवशालयः ॥ १३५९ ॥
दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो वरम् ।
नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वर्ज्यं क्षाराऽम्लतैलकम् ॥१३६०॥

रसचि., र. कं. ली., ग्रहणीरोगे ।

टि०—रसकङ्कालीयलोकनाथपोट्टलीशङ्खपोट्टल्योश्च पाठ. सदृशः प्रतिभाति परन्तु पाके भावनासु च विशेषत्वात् पाठद्वयकर्तुः कङ्कालयोगिन एकत्वाद् द्वयोरपि स्वतन्त्रतया पाठः स्थापित इति विद्वद्भिः विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५–५ तोले लेकर नीलवर्णकज्जलीकर आक और सेहुण्डकेदूधसे २–२ दिन मर्दनकर १० तोले पीलीकौड़ियोंमें भरके वज्रमिट्टीसे सन्धिबन्दकर चूनापुतेहुए भाण्डमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर इतनी आंचदे कि केवल गन्धकही जले पारा न उड़े । स्वाङ्ग. शीतलहोनेपर निकालकर फिर पारेकेबराबर गन्धकदेकर पूर्वद्रवोंसे मर्दनकर आंचदे, ऐसे षड्गुणगन्धकजारणकर अलगरखदे । फिर कौड़ीभस्म १० तोले और शङ्खभस्म ५ तोलेका बारीकचूर्णकर अदरख और चित्रकमूलकेक्वाथमें १–१ रोज मर्दनकर पूर्वोक्तभस्म मिलाकर १–२ पहरमर्दनकर सुपारीकेसदृश गोलियें बनाय धूपमें सुखाकर चूनापोतकर सुखाईहुईकुल्हड़ीमें भरके शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी समस्तपर लगाय गजपुटकी आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर सुखाकर दूसरापुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे डेढ़ १॥ माशेकीमात्रा घृतयुक्त ३२ कालीमिर्चोंकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहणी, आम अथवा सहज अतिसार, नष्टहोताहै । गुडूचीसत्वकेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरताहै । साठीचावल. उड़द. गेहूं. जव. सफेद चावल दही, दूध, घृत और मधुरप्रकृति तमामआहार, नारङ्गी, शक्कर दाख इसमें पथ्यहै । क्षार, अम्ल और तेल नहीं खाने चाहियें ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनाथरसः (पोट्टली)

गोलं जम्भरसेन गन्धरसयोस्तत्तुल्यताम्राऽऽवृतं,
गोलं लावणयन्त्रगर्भनिहितं रुद्ध्वा पचेत्तं शनैः ।
यामानष्ट कपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्भस्मना.
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत्१३६१
संशुद्धामिति पोट्टलीं सहधियां मारीचचूर्णेन ता-,
मश्नीयादिति लोकनाथविधिना दौर्बल्यकासादिषु ।
शोफामाऽनिलगुल्मशूलसहजश्वासग्रहण्यर्शसि,
प्रौढे यक्ष्मणि पाण्डुरोगसहिते सन्तापमान्द्याऽरुचौ॥

नि र., वै चि., र. पा., कासाधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीको जंभीरीकेरसमें मर्दनकर गोलाबनाय बराबरकेताम्बेके सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखानेपर लवणयन्त्रमें बन्दकर ८ पहरकी क्रमाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकी

बराबरकी पीलीकौडियोंकीभस्म मिलाय चित्रकमूलकेकाढ़ेसे १–२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु पुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीस और मिर्चोंके चूर्णकेसाथ मिलाकर समयोचितानुपानकेसाथ लेकर द्वितीयलोकनाथमें कहेहुए पथ्यके अनुसार चलनेसे दुर्बलता, कास, श्वास, शोफ, काम, वातप्रकोप, गुल्म, शूल, सहजश्वास, ग्रहणी, ववासीर, पूर्णरूपराजयक्ष्म, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७३ ॥

२७४ लोकनायकरसः

पीतस्थूलकपर्दानां ग्राह्यं विंशोत्तरं शतम् ।
तक्रे द्रोणमिते क्वाथ्यं मथिते द्विगुणोदके ॥ १३६३ ॥
तक्रजीर्णे च निःसारे गृह्णीयात्तत्पुनः पचेत् ।
वारत्रयञ्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम् ॥ १३६४॥
लेलीतकस्य शुद्धस्य सार्धसप्ताऽक्षकं द्वयोः ।
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा पूरयित्वा विमुद्रयेत् ॥१३६५॥
टङ्कणेनाऽर्कदुग्धेन भावितेन चतुर्दश ।
वारान् कुमारिकाद्भिश्च शोषयित्वा पुनः पुटेत्१३६६
विमुद्रय निपुटं दत्वा स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
गुञ्जापञ्चोन्मितं दद्यात्षड्गुञ्जासम्मितोषणैः ॥ १३६७॥
ततः पलमितं पश्चात्पिबेच्चाङ्गेरिकाघृतम् ।
पथ्यं दुग्धौदनं कुर्यात्त्यजेद्व्यायाममजागरम्॥
सिद्धोऽयं सिद्धनाथेन कथितो लोकनायकः ॥१३६८॥
जयेत्सर्वरोगानशेषानसाध्यान्
विशेषाद्ग्रहण्यामतीसाररोगे ।
रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे
महावह्निकृद्योगवाही प्रदिष्टः ॥ १३६९ ॥

र का ,अतीसाराऽधिकारे ।

भाषा—पीली और मोटीकौड़ी १२० लेकर दूनापानीडालकर बनाईहुई एकद्रोणछाछमें डालकर धीरे २ पकावे । जब छाछका तमामपानी जलजाय तब कौडियोंको निकालकर फिर उसीतरह पकावे । ऐसे ३ बार पकाकर कौडियोंको साफकर शुद्धबुभुक्षितपारा ५ कर्ष, शुद्धगन्धक ७॥ कर्षलेकर दोनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर कौडियोंमेंभर आकके दूध और घीकुवारके स्वरससे १४–१४ भावनाए दियेहुए सुहागेसे मुद्र बन्दकर सुखाकर लघुपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर आकके दूध और कुमारीकेरससे १४–१४ भावनाए देकर टिकड़ीबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे । ऐसे ३ आचें देनेकेबाद स्वाङ्गशीतलको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा मरिचकेचूर्णकेसाथ लेकर एकपल चाङ्गेरीघृतपीवे, पथ्यमें दूधभात खाय कसरत और रात्रिजागरणको छोड़े तो समस्त असाध्यरोग, ग्रहणी, अतीसार, राजयक्ष्म, कास, शूल, शोथ, अत्यन्तमन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै और योगवाहीहै २७४

२७५ लोकेश्वररसः

तालकं दरदं वत्सनाभं सर्वं समं समम् ।
सर्वं भूनिम्बनीरेण मर्दयेद्गोलकीकृतम् ॥ १३७० ॥
वज्रमूषान्तरे क्षिप्त्वा लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका ।
वालुकायन्त्रके पाच्यं द्वियामं मन्दवह्निना ॥ १३७१ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य च्छागपित्तेन भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातान्निहन्ति च ॥
लोकेश्वररसो नाम्ना शम्भुना परिकीर्तितः ॥१३७२॥

वै. चि ,ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, शिंगरफ और बछनाग समभाग लेकर चिरायतेकेकाथसे एकरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी मन्दाग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बकरेकेपित्तसे १–२ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामसन्निपातोंको दूरकरताहै ॥ २७५ ॥

२७६ लोहगर्भरसः (पित्तपाण्डुरिः)

रसभस्म चतुर्भागं लोहभस्माऽष्टभागिकम् ।
वह्निर्मुस्ता विडङ्गञ्च त्रिफला कुटजत्वचः ॥ १३७३ ॥
कटुत्रयञ्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेककम् ।
मधुना पलमात्रञ्च लीढं पाण्डुहरं परम् ॥ १३७४ ॥
रसोऽयं लोहगर्भाख्यः पथ्यं देयं मृगाङ्कवत् ।
त्रिफलावृषभूनिम्बतिक्तादार्व्यमृताकृतः ॥
क्वाथो मधुसमायुक्तः कामलापाण्डुरोगजित् ॥१३७५॥

रसायनसं , चि क ,र सु ,र.का ,ना बि ,र र स ,र क. ल ,र.को ,र क.पाण्डुरोगे।र क.ल पाण्डुरोगघ्नः।र र स.,र. बो ,र क एतेषु ग्रन्थेषु पित्तपाण्डुरीतिनाम । पित्तपाण्डुरिख्या लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ ॥

भाषा—पारदभस्म४ भा ,लोहभस्म ८ भा , चित्रककीजड़, नागरमोथा, विडङ्ग, त्रिफला, कुरैयाकीछाल और त्रिकटु १–१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेकर त्रिफला, अडूस, चिरायता, कुटकी, दारुहल्दी और गिलोय इनकाक्वाथ मधुयुक्तपिलानेसे कामला और पाण्डु नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य मृगाङ्ककीतरह देना ॥ २७६ ॥

२७७ लोहगुग्गुलुः (प्रथमः)

स्नुहीत्वक् खादिरं काष्ठं काष्ठोदुम्बरजं फलम् ।
वल्कलानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले ॥ १३७६ ॥
पक्त्वा पादावशेषेण लोहं पञ्चपलं पचेत् ।
पिण्डीभावे द्रवे किञ्चिदवशिष्टे तु निःक्षिपेत् १३७७
शोभाञ्जनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम् ।
करीषाग्नौ समुद्धृत्य हरितालं पलद्वयम् ॥ १३७८ ॥
चूर्णितं द्विपलं तच्च गुग्गुलो घृतकल्कितम् ।
पक्कीकृत्य पचेद्भूयो यावल्लेहत्वमागतम् ॥ १३७९ ॥

गुल्मे कुष्ठे क्षये स्थौल्ये शोथे शूले च पाकजे।
पाण्डुरोगे प्रमेहे च वातरोगे तथैव च ॥
सिद्धमेतत्प्रयुञ्जीत वलीपलितनाशनम् ॥ १३८० ॥

र. र., गुल्माऽधिकारे।

भाषा—सेहुण्डकादूध, तज, खैरकाहीर, कठूमरकाफल, वट, पीपल, गूलर, पाकर और बेतकी छाल १-१ पल लेकर अठगुने पानीमें पकावे। चतुर्थांशरहजानेपर छानले फिर इसमें ५ पल लोहभस्म डालकर पकावे। थोड़ापानी बाकीरहनेपर सहिजनकीजड़कीछालकावल्क १ पल डालकर करीपाग्निपर रखदे। इसमें रसमाणिक्य और घीमें कुटाहुआगूगल २-२ पल मिलाकर चलाताहुआ पकावे। अवलेहकेसदृशहोनेपर उतारकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशेकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, कुष्ठ, क्षय, स्थूलता, शोथ, परिणामशूल, पाण्डु, प्रमेह, वातरोग, इनसबको यह नष्टकर वलीपलितका नाशकरताहै ॥ २७७ ॥

२७८ लोहगुग्गुलुः (द्वितीयः)

अयःपलं स्यात्त्रिपलं पुरस्य
व्योषस्य योज्यानि पलानि पञ्च।
पलानि चाऽष्टौ त्रिफलारजस्तः
कर्षं प्रदेयं ह्यमरत्वसिद्ध्यै ॥ १३८१ ॥

रसायन सं., यो. र., भा. प्र., रसायने।

भाषा—लोहभस्म १ पल, घीमें कुटाहुआगूगल ३ पल, त्रिकटु ५ पल, त्रिफला ८ पल इनसबका बारीक चूर्णकर गूगलको घी देकर दोदिनतक घनसेकूटे। द्रवहोनेपर चूर्ण थोड़ाथोड़ा मिलाताजाय, जितना चूर्णमिलसके उतना कूटकूटकर मिलावे। बाकीबचेहुएचूर्णको घीकीमददसे मिश्रितकरे इसमेंसे ३ माशेसे शुरूकर १ कर्षतककीमात्रा धीरे २ बढ़ावे। औषधपाक होनेकेबाद पथ्यदेवे। इससे तमाम वातविकार नष्टहोकर आयु बढ़तीहै२७८

२७९ लोहगुटिका

लोहस्य रजसो भागास्त्रिफलायास्तथा त्रयः।
गुडस्याऽष्टौ तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् १३८२
एतत्सर्वञ्च विपचेद्गुडपाकविधानवित्।
लिह्याद्यथाशक्ति क्षये शूलेऽन्नपाकजे ॥ १३८३ ॥

च. द., र. र., र. का., टो., यो. म. अन्नद्रवशूले। यो. म. मण्डूरवटकेतिनाम ॥

भाषा—लोहभस्म, त्रिफला ३-३ भाग, गुड ८ भा. गोमूत्र ३२ भागलेकर गुड़केसदृश चाशनीबनाय रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ माशेकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, और परिणामशूलको यह नष्टकरताहै ॥ २७९ ॥

२८० लोहपञ्चकम् (विडङ्गादिलोहम्)

अयोरजो व्योषविडङ्गचूर्णं
समं पिबेन्माक्षिकसर्पिषाऽल्पम्।
प्रमेहशोथोदरकामलार्शो-
गुल्मग्रहण्यामयपाण्डुरोगी ॥ १३८४ ॥

लो. प. (स.) पाण्ड्वधिकारे।

भाषा—लोहभस्म, त्रिकटु, विडङ्ग येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा घी और मधुकेसाथलेनेसे प्रमेह, शोथ, उदर, कामला, बवासीर, गुल्म, ग्रहणी और पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८० ॥

२८१ लोहपर्पटी (शट्यादिः)

पलैः षोडशभिः शट्याः कषायं विधिना चरेत्।
वस्त्रपूते कषायेऽस्मिन् पुराणं गुडमावपेत् ॥ १३८५ ॥
पलैः षोडशभिस्तुल्यं गुडपाकं पचेत्ततः।
त्रिफला व्यूषणं क्षारं त्रिजातं चित्रमूलकम् ॥ १३८६ ॥
दीप्यकं मुस्तकं भार्गी शुष्ककन्दं कलिङ्गकम्।
अक्षमानेन सञ्चूर्ण्य लोहं पलचतुष्टयम् ॥ १३८७ ॥
उत्तार्याऽथ गुडे क्षिप्त्वा दद्यात्सम्यक् प्रचालनम्।
घृताक्ते भाजने कृत्वा प्रस्तीर्य तदनन्तरम् ॥ १३८८ ॥
ततः खण्डानि कुर्वीत मानमालोच्य यत्नतः।
वयोऽवस्थां बलं वह्निं ज्ञात्वा मात्रां प्रकल्पयेत् १३८९
हन्ति क्षयांश्च सर्वांश्च पाण्डुरोगं सकामलम्।
प्लीहाष्ठीले विशेषेण गुल्मशूलाऽऽमयांस्तथा १३९०
सर्वानुदररोगांश्च ग्रहणीञ्च कफामयान्।
सर्वान् वातविकारांश्च मन्दाग्निकमयद्रवान् ॥ १३९१ ॥
ततो भक्षण मात्रेण बलं वह्निं विवर्धयेत्।
पित्ताऽधिके न दातव्या शटी लोहस्य पर्पटी॥१३९२॥
तैलञ्च कारवेल्लञ्च सर्वमेतत्परित्यजेत्।
इक्षुसारञ्च खर्जूरं नारिकेलोदकं तथा ॥ १३९३ ॥
द्राक्षादाडिमकं पथ्यं कल्पयेद्भिषगुत्तमः।
अस्योद्रेके समुत्पन्ने सितादुग्धञ्च पाययेत् ॥ १३९४ ॥

रससागर, सर्वरोगे।

भाषा—१६ पल कचूरका अठगुनितजलमें क्वाथकर चतुर्थांशशेष रहनेपर छानकर १६ पल पुरानागुड डालकर पकावे। गुडकीचाशनी होनेपर उतारकर त्रिफला, त्रिकटु, सज्जी, यवक्षार, मुनामुदाग्रा, त्रिजात, चित्रकमूल, अजवाइन, नागरमोथा भारङ्गी, सूरण, इन्द्रजव, येसब १-१ कर्ष और लोहभस्म ४ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर उतारले। थालीवगैरहमें घीलगाकर टालकर ठंडाकरले। इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतककीमात्रा अवस्था, बल तथा अग्निका विचारकर देनेसे समस्तक्षय, पाण्डु, कामला, प्लीहा, अष्ठीला, विशेषतया गुल्म, शूल, समस्तउदररोग, ग्रहणी, समस्त वात और कफविकार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै। पित्ताधिक्यमें इसे न देवे। तैल और करलेका परित्यागकरे। ईखकेरस, छुहारे, नारियलकाजल, दाख, अनार येसब पथ्य हैं। इसमें पनगढ़ट मालूमपड़नेपर खांडमिलाहुआ दूध देवे ॥ २८१ ॥

२८२ लोहभास्कररसः

नीलनीरजसमुत्थकेशरा-
स्पद्मकात्सहकसेरुकाद्रजः।
तुल्यमेभिरखिलैः समांशकं
लोहभास्कररजः सितासमम्॥ १३९५॥
तण्डुलोदमनुपायिनां नृणां
रक्तपित्तमतिदारुणञ्जयेत्।
पायुजानि रुधिरात्मकानि वा
यक्ष्मपीनसमसृग्दरन्तथा॥ १३९६॥

लो प (स), रक्तपित्ते।

भाषा—नीलोफरकीकेशर, पद्मकेशर और कसेरू समभाग इनसबकीबराबर लोहभस्म लेकर सबको इकट्ठे मिलाकर रखछोड़े, इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककीमात्रा बराबरकी शक्कर मिलाय फाककर शक्करमिलाहुआ चावलका धोवन पीनेसे अत्यन्तभीषण-रक्तपित्त, खूनीबवासीर, राजयक्ष्म, पीनस, रक्तप्रदर, इनसबको यह नष्टकरताहै॥ २८२॥

२८३ लोहमृत्युञ्जयरसः (मृत्युञ्जयः)

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटी मृततास्त्रकम्।
विषमुष्टिं वराटञ्च तुल्यं शाङ्खं रसाञ्जनम्॥ १३९७॥
जातीफलञ्च कटुकीं क्षिक्षारं कानकं तथा।
हिङ्गु व्योषं सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम्॥ १३९८॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वमेकत्र परिभावयेत्।
सूर्यावर्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च॥ १३९९॥
सूर्यावर्तेन मतिमान् वटिकां कारयेत्ततः।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममष्ठीलाञ्च विनाशयेत्॥ १४००॥
अग्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वोदराणि च।
वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रधिमेव च॥ १४०१॥

र स, र सु, ध, र चि, प्लीहाऽधिकारे।

टि०—कानकन केचिज्जयपालफलमिच्छन्ति तन्मते धुत्तूरस्थाने जैपालफल नियोज्यम्, अयमत्र निष्कर्ष यत्र रेचनस्याऽऽवश्यकता प्रतीयेत तत्र जयपालफलं नियोज्यं यत्र तु ज्वरादीनां विशेषतयोपस्थानं तत्र धत्तूरबीजान्येव योज्यानि। धत्तूरबीजदानपक्षे उक्तग्रन्थीयमृत्युञ्जयरसस्य स्वतन्त्रतया पाठो न करणीयः किन्तूभयपाठयोरुक्तानि वस्तूनि सर्वाण्यप्येकीकृत्य सूर्यावर्तबिल्वपत्रार्द्रकगुडूचीनां भावनाभिरेक एव रसो निष्पाद्य इति विज्ञेषु विज्ञापनम्॥

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धमैनसिल, ताम्रभस्म, शुद्धकुचिला, कौड़ी-तुत्थ और शङ्खभस्म, रसौत, जायफल, कुटकी, सज्जी, सुहागा, शुद्धधतूरेकेबीज, भुनीहींग, त्रिकटु, सेंधानमक, यसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय हुरहुर अथवा सूर्यमुखी और बेलपत्रकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर हुरहुरकेरससे ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयअथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अष्ठीला, अग्रमास, शोथ, समस्तउदर, वातरक्त, कछुई और अन्तर्विद्रधि इनसबको यह नष्टकरताहै॥ २८३॥

२८४ लोहयोगः (प्रथमः)

सप्तरात्रं गवां मूत्रे भावितं वाऽप्ययोरजः।
पाण्डुरोगप्रशान्त्यर्थं पयसा प्रपिबेन्नरः॥ १४०२॥

ग.नि, टो, भा.प्र, पाण्डुरोगे।

भाषा—लोहका बारीकचूर्ण अथवा भस्म ७ दिनतक गोमूत्रमें खरलकर ३-३ रत्तीकीमात्रा दूधकेसाथ लेनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै॥ २८४॥

२८५ लोहयोगः (द्वितीयः)

धात्रीफलं शर्करया समानं
पञ्चाङ्गनिम्बेन युतं त्रिसप्त।
लोहस्य पादेन युतं तु भुक्तं
कण्डूर्तिकां हन्ति च मण्डलानि॥ १४०३॥

र दी., कुष्ठे।

भाषा—आमले, शक्कर और नीमकापञ्चाङ्ग समभाग लेकर सबसे चतुर्थांश लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे एकमाशेसे ३ माशेतककी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ २१ दिनतक खानेसे खुजली और मण्डलकुष्ठको यह नष्टकरताहै॥ २८५॥

२८६ लोहयोगः (तृतीय)

पुटितं भावितं लोहं पृथक्क्वाथैरनेकशः।
उदावर्तहरं युञ्ज्यात् ससितं वा यथामलम्॥१४०४॥

र क, र चि, उदावर्ते।

भाषा—उदावर्तहर योगोंसे मारकर उन्हींसे भावनादियाहुआ लोह शक्करकेसाथ अथवा यथा दोषहरानुपानकेसाथ देनेसे यह उदावर्तको नष्टकरताहै॥ २८६॥

२८७ लोहयोगः (चतुर्थः)

सिद्धं शम्बूकजं भस्म लोहयुक्तं पिबेन्नरः।
उष्णोदकेन तत्क्षिप्रं हन्ति शूलं द्विधा स्थितम् १४०५

रससागर, शूले।

भाषा—लोहभस्मयुक्तखलेकीभस्म ६ रत्ती गरमपानीकेसाथ लेनेसे एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गशूलको यह नष्टकरताहै॥२८७॥

२८८ लोहयोगः (पञ्चमः)

चूर्णानि लोहत्रिफलाशिलानां
क्षौद्रेण लीढानि पृथक् समं वा।
मेहान्समस्तानपि नाशयन्ति
पीतः कदाचित्स्वरसो गुडूच्याः १४०६

रा मा, ग नि., प्रमेहाधिकारे। मदनिग्रहे शिलानामित्यस्य स्थाने शिवानामितिपाठ।

भाषा—लोहभस्म, त्रिफला और शुद्धमैनसिल समभाग लेकर बारीकचूर्णकर आधेमाशेसे १ माशेतककीमात्रा मधुकेसाथलेकर गिलोयकाक्वाथ पीनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं। त्रिफलादि चार चीजोंमेंसे एकएककेसाथ लोहकायोगकरके देनेसेभी प्रमेह नष्टहोतेहैं। मैनसिलकेसाथ लोहकीमात्रा १ से ३ रत्तीतकदेना॥ २८८॥

२८९ लोहयोगः (षष्ठः)

श्वाविधः शकृतश्चूर्णं सप्तकृत्वः सुभावितम् ।
विडङ्गानां कषायेण त्रैफलेन तथैव च ॥ १४०७ ॥
क्षौद्रेण लीढ्वाऽनुपिबेद्रसमामलकोद्भवम् ।
अक्षाऽभयारसश्चाऽपि विधिरेषोऽयसामपि ॥१४०८॥

सु.सं , क्रिमिरोगे ।

टि०—अत्र अयसामिति बहुवचनेन सुवर्णाद्योऽष्टौ लोहा ग्रहीतव्याः, तेषां भस्म चेद्भवति तर्हि विडङ्गानां त्रैफलेन च कषायेण प्रत्येकं सप्तभावना दत्त्वा यथाबलं मात्रां प्रकल्प्य क्षौद्रेण लेहयित्वा आमलकस्य अभयाया वा रसं पाययेत् । यथावस्थितरूपाश्चेद्भवन्ति तर्हि तेषां सूक्ष्माणि पत्राण्यग्निमात्कृत्वा विडङ्गानां कषाये त्रैफले च कषाये प्रत्येकं सप्तकृत्वो निर्वापयेदेव कृते यच्चूर्णं निष्पद्यते तस्मिन्पूर्वोक्ताभ्यां क्वाथाभ्यां सप्तसप्त भावना दत्त्वा अयस्कृतयो निष्पाद्यास्तां यथाबलं मात्रां निर्णीय प्रयोजयेत् ।

भाषा—जरककी विष्ठाको विडङ्ग और त्रिफलाके काढ़ेसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ माशे मधुमें मिलाकर लेवे और ऊपरसे आमले, बहेड़े अथवा हर्रेका रस पीवे तो इससे क्रिमिरोग नष्टहोताहै । अथवा जरककीविष्ठा, विडङ्ग, त्रिफला इन प्रत्येकके क्वाथमें किसी अन्यतम लोहको सातसातवार बुझावे । बारीकचूर्णहोजानेपर उसीकाकल्क और क्वाथ देकर मर्दनकर आचदेकर भस्मबनावे । अथवा अयस्कृतियोंके विधानसे केवल चूर्णलेकर उसकी यथाबल मात्रा कायमकर सेवनकर ऊपरसे आंवला, विडङ्ग अथवा त्रिफलाकारस पिलावे । इससे समस्त क्रिमिरोग नष्टहोताहै ॥ २८९ ॥

२९० लोहयोगः (सप्तमः)

मूत्रान्तःपाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम् ।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशान्तये ॥ १४०९ ॥

वं , चि , र. चि , शूले ।

भाषा—गोमूत्रमें पकाकर सुखाईहुई हर्रेका चूर्ण और लोहभस्म समभाग लेकर बराबरके गुड़में मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ माशेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे सबप्रकारकेशूल शान्तहोतेहैं ॥ २९० ॥

२९१ लोहरसायनम् (प्रथमम्)

त्रिफलाया रसे मूत्रे गवां क्षीरे च लावणे ।
क्रमेण चेङ्गुदीक्षारे किंशुकक्षार एव च ॥ १४१० ॥
तीक्ष्णायसस्य पत्राणि वह्निवर्णानि दापयेत् ।
चतुरङ्गुलदीर्घाणि तिलोत्सेधसमानि च ॥ १४११ ॥
ज्ञात्वा तान्यञ्जनाभानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
तानि चूर्णानि मधुना रसेनामलकस्य च ॥ १४१२ ॥
युक्तानि लेहवत्कुम्भे स्थितानि घृतभाविते ।
संवत्सरं निधेयानि यवपल्ये तथैव च ॥ १४१३ ॥
दद्यादालोडनं मासे सर्वत्रालोडयन्बुधः ।
संवत्सरान्यये तस्य प्रयोगो मधुसर्पिषा ॥ १४१४ ॥
प्रातः प्रातर्बलापेक्षी सात्म्यं जीर्णे च भोजनम् ।
एष एव च लोहानां प्रयोगः सम्प्रकीर्तितः ॥ १४१५ ॥
अनेनैव विधानेन हेम्नश्च रजतस्य च ।
आयुःप्रकर्षकृत्सिद्धः प्रयोगः सर्वरोगनुत् ॥ १४१६ ॥
अभिघाते न चातङ्के जरया न च मृत्युना ।
अधृष्यः स्याद्गजप्राणः सदा चातिबलेन्द्रियः ॥१४१७॥
धीमान् यशस्वी वाक्सिद्धः श्रुतधारी महाबलः ।
भवेत्समां प्रयुञ्जानो नरो लौहरसायनम् ॥ १४१८ ॥

चं सं.रसायने ।

भाषा—फौलादके तिलके बराबर मोटे और ४–४ अङ्गुल लम्बे पत्रबनाय अग्निमें लालवर्णकर त्रिफला, गोमूत्र, गोदुग्ध, लवण, इंगोरन और पलाशकेक्षारमेंबुझावे । जब वे जलकर सुरमाके सदृशहोजांय तबउनका बारीकचूर्णकर आवलोंकेरससे ६–७ रोज़ मर्दनकर कपड़छानचूर्णकरके मधु और आमलेकारस मिलाय अवलेहकेसदृश बनाकर घीके बर्तनमें डालकर एकवर्षतक जवकी खत्तीमें रखछोड़े । प्रतिमास अवलेहको अच्छीतरह चलादियाकरे । एकवर्षबाद इसमेंसे अग्निबल देखकर ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्रालेवे । जीर्णहोनेपर सात्म्य भोजनकरे । इसीतरह तमामलोहोंकी रसायन तैयारकरे । खासकर सुवर्ण और रजतकीरसायनको तैयारकर काममें लावे । इससे हठीले और पुराने तमामरोग नष्टहोकर आयुकी वृद्धिहोतीहै । अभिघात, रोग, बुढ़ापा और मृत्यु इनके डरसे निर्मुक्तहोकर बल, इन्द्रिय और बुद्धिसे परिपूर्णहोजाताहै तथा एकहाथीके बराबर पराक्रमहोकर यशस्विता, वाक्सिद्धि और श्रुतिधरता प्राप्तहोतीहै २९१

२९२ लोहरसायनम् २

गुग्गुलुस्तालमूली च त्रिफला खदिरं वृषम् ।
त्रिवृताऽलम्बुषा चैव निर्गुण्डी चित्रकं स्नुही १४१९
एषां दशपलान्भागांस्तोये पञ्चाढके पचेत् ।
पादशेषन्ततः कृत्वा कषायमवतारयेत् ॥ १४२० ॥
पलद्वादशकं देयं तीक्ष्णलोहस्य चूर्णितम् ।
पुराणसर्पिषः प्रस्थं शर्कराष्टपलानि च ॥ १४२१ ॥
पचेत्ताम्रमये पात्रे सुशीते चावतारिते ।
प्रस्थार्द्धं माक्षिकं देयं शिलाजतु पलद्वयम् ॥ १४२२ ॥
पलार्द्धं त्वचोः पलार्द्धश्च विडङ्गानि पलद्वयम् ।
मरिचश्चाञ्जनं कृष्णा द्विपलं त्रिफलान्वितम् ॥१४२३॥
पलद्वयन्तु कासीसं श्लक्ष्णचूर्णीकृतं बुधैः ।
चूर्णं दत्त्वाऽथ मथितं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्१४२४
ततः संशुद्धदेहस्तु भक्षयेदक्षमात्रकम् ।
अनुपानं पिबेत्क्षीरं जाङ्गलानां रसन्तथा ॥ १४२५ ॥
वातश्लेष्महरं श्रेष्ठं कुष्ठमेहज्वरापहम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्वयथुं सभगन्दरम् ॥ १४२६ ॥
मूर्च्छामोहविषोन्मादगराणि विविधानि च ।
स्थूलानां कर्षणं श्रेष्ठं मेदुरे परमौषधम् ॥ १४२७ ॥

कर्पयेच्चातिमात्रेण कुक्षिं पातालसन्निभम् ।
वल्यं रसायनं मेध्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥ १४२८ ॥
श्रीकरं पुत्रजननं वलीपलितनाशनम् ।
नाशीयात्कदलीकन्दं काञ्जिकं करमर्दकम् ॥
करीरं कारवेल्लञ्च पट्ककारादि वर्जयेत् ॥ १४२९ ॥

भै.र., र.र., र.को., भा. प्र., टो., च. द., वै द., वै.क. र.प्र., यो.म., र.का., स्थौल्याधिकारे । अजूस

भापा—शुद्धगूगल, तालमूली, त्रिफला, खैरसार, शुद्धवछनाग, निसोत, गोरखमुण्डी, सिंगुण्डीकन्द अथवा संभालकीछाल, चित्रकमूल, थूहरकाडूथ, येसव १०—१० पल लेकर २० प्रस्थ पानीमें पकावे । चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर फोलादका वारीकरेता १२ पल, पुरानाघी १ प्रस्थ, शक्कर ८ पल डालकर विनाकलई कियेहुए तांबेके पात्रमें पकावे । अवलेहतैयारहोनेपर उतारले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मधु आधाप्रस्थ, शिलाजीत २ पल, इलायची और तज २—२ कर्प, विडङ्ग मरिच, सुरमेकीभस्म, पीपल, त्रिफला, और कसीस भस्म येसव २—२ पललेकर कपड़छानचूर्णकर अवलेहमें मिलाकर घीके चिकनेवर्तनमें रख ४० रोज़तक धान्यराशिमें रखदे। इसकेबाद वमन विरेचनादिकोंसे शरीरकोशुद्धकर इसमेंसे १—१ कर्ष अथवा अग्निवल देखकर मात्रा कायमकर ऊपरसे गोदुग्ध अथवा जंगलीपशुपक्षियोंका मांसरस-पिलावे । इससे वात, श्लेष्म, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर, कामला, पाण्डु, शोफ, भगन्दर, मूर्च्छा, मोह, विप, उन्माद, नानातरहके बनावटी ज़हर इनसवको यह नष्टकरताहै। स्थूल और मेदस्वियोंको पतला-करनेकेलिये यह उत्तम औषधि है। अत्यन्त वढ़ेहुए पेटको यह पातालजैसा बनादेताहै। वल, रसायन, मेधा, सम्भोगशक्ति, शरीरकान्ति, पुत्रोत्पादनशक्ति इनसवको देताहै । वलीपलितका नाशकरताहै । इसमें केलाकन्द, काञ्जी, करोंदा, करीर, करेला इन छः ककारोंका यत्नसे वर्जनकरे ॥ २९२ ॥

२९३ लोहरसायनम् (तृतीयम्)

विडङ्गसारो मेघाख्यो रक्तचहिररुष्करः ।
हस्तिकर्णः सितार्कस्तु श्वेतवर्पासमुद्भवम् ॥ १४३० ॥
वाकुची मुण्डिका भृङ्गो राजको वृद्धदारकः ।
गुडूच्यतिवला रास्ना तालमूली शतावरी ॥ १४३१ ॥
पिण्डारकश्चैडगजो वैडालः केशराजकः ।
एकैकं पलमेतेपां ग्राह्यं सुमधुकं पलम् ॥ १४३२ ॥
रसस्यैकं पलं ग्राह्यं लोहस्य पलविंशतिः ।
चत्वारिंशत्तथाऽभ्रस्य शुल्वस्यापि चतुष्पलम्१४३३
गन्धकस्य पलान्यष्टौ पट्पलानि मनःशिला ।
स्वर्णमाक्षिकचत्वारि पट्पलानि शिलाजतोः १४३४
त्रिफला त्रिकटूनाञ्च प्रत्येकञ्च पलत्रयम् ।
सर्वाण्येतानि सञ्चूर्ण्य घृतेन मधुना सह ॥ १४३५ ॥
स्निग्धे भाण्डे समालोड्य स्थापयित्वा विचक्षणः ।
भक्षयेत्क्रमयोगेन लोहं सर्वरसायनम् ॥ १४३६ ॥

वं.से, ध., र.र., रसायने। ध., र.र एतयोरभ्रकस्याभावोदृश्यते

भापा—विडङ्गतण्डुल, नागरमोथा, लालचित्रक, भिलांवे, हस्तिकर्णपलाश, सफेदआककीजड़कीछाल, सफेदपुनर्नवा, वाकुची गोरखमुण्डी; भंगरा, अमिलतासका गूदा, विधारेकीजड़, गिलोय, अतिवला (गुलसिकरी) रास्ना, तालमूली, शतावर, पिंडार, पंवाड़, विलाईलोटन, कालाभंगरा, मुलहठी, शुद्धपारा येसव १—१ पल, लोहभस्म २० पल, अभ्रकभस्म ४० पल, ताम्रभस्म ४ पल, शुद्धगन्धक ■ पल, मैनसिल ६ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म ४ पल, शिलाजीत ६ पल, त्रिफला और त्रिकटु ३—३ पल लेकर सबका वारीकचूर्णकर घी और मधु सबकीवरावरलेकर सबको एकजगह मिलाकर घीकेवर्तनमें रखदेवे। ४० दिन-वीतनेकेवाद इसमेंसे यथोचित मात्रामें खानेसे यह तमाम रोगोंको नष्टकर दीर्घायुको करताहै ॥ २९३ ॥

२९४ लोहरसायनम् (दासरसायनम्) ४

पारदं विधिना शुद्धं पलद्वितयसम्मितम् ।
चतुष्पलं लोहचूर्णं चतुर्विंशपला सिता ॥ १४३७ ॥
मनोह्वा गन्धपापाणं हरितालञ्च शुद्धकम् ।
कासीसं हिङ्गु कुष्ठञ्च वचोशीररसाञ्जनम् ॥ १४३८ ॥
सारं खदिरवृक्षस्य जातीफलसमन्वितम् ।
द्विपलं सूक्ष्मचूर्णन्तु सर्वेपां परिकीर्तितम् १४३९ ॥
गगनाद्विपलं कृष्णाल्लोहवत्पुटितं श्रुतात् ।
शास्त्रोक्तपृथगुद्दिष्टैः संयुज्य विधिनोचितम् ॥१४४० ॥
त्रिंशति त्रैफले तोये प्रस्थेन सह सर्पिपा ।
शृङ्गवेररसप्रस्थं निष्काथ्यं वक्ष्यमाणकैः ॥ १४४१ ॥
त्रिवर्णादितचित्रञ्च चास्थिसंहारसूरणम् ।
वर्गाजातं सगोधूमभूमिकूष्माण्डतण्डुलाः ॥ १४४२ ॥
शोभाञ्जनं तालमूली मोरटं शङ्खपुष्पिका ।
पृथगष्टपलञ्चैपां वारिद्रोणे विपाचयेत् ॥ १४४३ ॥
अष्टभागावशिष्टेन कपाये कारयेत्सुधीः ।
मधुनः पलानि द्वात्रिंशत्क्षिपेत्तत्र सुशीतले ॥१४४४॥
त्रिकटु त्रिफला सिन्धु विडं सौवर्चलन्तथा ।
टङ्कणो यावशूकश्च सुरदारुपरम्पराः ॥ १४४५ ॥
अम्लवेतसमृद्वीका महार्द्रमधुयष्टिकाः ।
शृङ्गी दुरालभा मुस्तं विडङ्गं रक्तचन्दनम् ॥ १४४६ ॥
जीरकञ्च संधान्याकं पलार्द्धं चूर्णकं पृथक् ।
दासेनेदं पुरा प्रोक्तं नराणां हितकाम्यया ॥ १४४७ ॥
न चाऽत्र परिहारोऽस्ति विहाराहारयन्त्रणे ।
अन्नपानानि सर्वाणि भक्ष्यभोज्यानि यानि च ॥१४४८॥
तानि प्रकृतिभेदज्ञो बुद्धिपूर्वं प्रदापयेत् ।
सर्वव्याधिहरञ्चैतत्स्वस्थाऽस्वस्थहितं सदा ॥१४४९॥

वं.से.रसायने।

भापा—विधिपूर्वकशुद्धकियाहुआपारा २ पल, लोहभस्म ४ पल, शक्कर २४ पल; शुद्धमैनसिल, गन्धक और हरिताल, कसीसभस्म, भुनीहींग, कुठ, वच, खस, रसौत, खैरसार, जाय-

फल २–२ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्ज-लीमें मिलावे। लोहेकेप्रकारसे बनीहुई कालेअभ्रककीभस्म २ पल; त्रिफलाकाकाढा ३० पल, पुरानाघी, और अदरखकारस १–१ प्रस्थ, स्याह–सफेद और लालचित्रक, हड्जोड़, सूरण, इटसिट, गेंहू, भुईकोंहळा, साठीचावल, सहिजनकीछाल, तालमूली, मोरट (लताकरंज या मोरवेल), शङ्खपुष्पी येसब ८–८ पल लेकर सबको जवकुटकर एकद्रोणपानीमें पकावे। अष्टमागावशेष रह नेपर छानकर पूर्वद्रवमें मिलाकर पकावे। लेह तैयारहोनेपर उतारकर त्रिकटु, त्रिफला, सैन्धव, विड, सञ्चल, भुनासुहागा, यवक्षार, देवदारुकेफल, अम्लवेत, द्राक्ष, सोंठ, मुलहठी, काक-ड़ासींगी, जवास, नागरमोथा, विडङ्ग, लालचन्दन, जीरा, धनिया येसब २–२ कर्षलेकर मिलावे। एकदम ठंडाहोनेपर ३२ पल मधुमिलाकर ४० दिनतक धान्यराशिमें रख निकाल कर रखछोड़े। इसमेंसे यथाभिरुचि मात्रा कायमकर खानेसे यह समस्तव्याधियोंको नष्टकर बुढ़ापेको दूरकरताहै। रोगी और निरोगी दोनोंकेलिये हितकारकहै ॥ २९४ ॥

२९५ लोहरसायनम् (पञ्चमम्)

तत्सिद्धं सिद्धनाथेन निर्मितं सत्यहेतुना।
आमवातादिनाशाय लिख्यते चाधुनेरितम् ॥१४५०॥
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडूचीं जीरकद्वयम्।
पलाशवीजं कोलञ्च पिप्पलीं मुस्तकन्तथा ॥ १४५१ ॥
त्रिवृच्च त्रिफला दन्ती रालकं बृहतीद्वयम्।
चविका ग्रन्थिकं चित्रं सवचं वृद्धदारकम् ॥ १४५२ ॥
पञ्चायसां मृतानाञ्च प्रत्येकं तद्द्विकार्षिकम्।
आमवातघ्नचूर्णञ्च यथाविधि निषेवितम् ॥ १४५३ ॥
२ तस्मिन्नेव पाठे श्वासादिरोगे द्वितीयः प्रक्षेपः—
शिरः शूलमुखश्वासकफपित्तापनुत्तये।
लिख्यते चाधुना दिव्यं रसायनमनुत्तमम् ॥ १४५४ ॥
शर्करा मधुकं द्राक्षा मुशली त्रायमाणकम्।
वासा गुडूची कालिङ्गं व्योषञ्च त्रिफला त्रिवृत् १४५५
दन्ती क्रिमिहरं चूर्णं वृद्धदारं द्विकार्षिकम्।
मृदुपाके विनिःक्षिप्य सम्यक् सिद्धं समाचरेत् १४५६
सेवितं हरते नित्यं रक्तपित्तं सुदारुणम्।
३ पूर्वस्मिन्पाठे प्लीहादिरोगे तृतीयः प्रक्षेपः—
प्लीहोदरं यकृद्गुल्मं शस्त्रक्षाराग्निभि विना ॥ १४५७ ॥
विनाशाय प्रयाज्यानि चूर्णानीमानि देहिनाम् ॥
कन्दं कापालिका चव्यं विडङ्गं सबृहद्दलम् ॥ १४५८ ॥
शरपुङ्खा च पाठा च चित्रकं समहौषधम् ॥
पृथगर्द्धपलं मात्रां क्षिपेल्लोहरसायने ॥ १४५९ ॥
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदारकम् ॥
दीप्यकञ्च प्रयुञ्जीत पाकार्थमभयासुरी ॥ १४६० ॥
प्लीहोदरविनाशाय कर्षकर्षं पृथक्पृथक् ॥
मानेन खण्डकर्णेन सूरणेनाऽधिकं पुनः ॥ १४६१ ॥

४ पूर्वस्मिन्नेव पाठे राजयक्ष्मणि चतुर्थः प्रक्षेपः—
राजयक्ष्मणि श्वासे च कासे रक्तोल्वणे हितम् ॥
महौषधं सतालीसं काकणं नागकेशरम् ॥ १४६२ ॥
जीवन्तीमभयां मूर्द्वां सर्वाभ्यो द्विगुणान्तथा।
शर्कराञ्च क्षिपेत्तत्र गुडूचीसत्त्वमेव च ॥ १४६३ ॥

व से., र का , उदररोग। रसकामधेनौ तृतीय एव प्रक्षेपो-ऽस्ति सम्पूर्णपाठो नाऽस्ति।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, धनिया, गिलोय, स्याहसफेदजीरा, पलाशकेबीज, पकेबेर, पीपल, नागरमोथा, निसोत, त्रिफला, दन्तीमूल, सफेदराल, भटकटैया, वनभाटा, चव्य, पिपलामूल, चित्रकमूल, वच, विधारेकीजड़ येसब १–१ पललेकर जवकुटकर अठगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टरहनेपर छानकर ३६ कर्ष शक्कर मिलाकर पाककरे। चाशनी तैयारहोनेपर कान्त, फौलाद, सुवर्ण, चांदी और ताम्रभस्म तथा अलम्बुषादिचूर्ण (गोरखमुण्डी, गोखरु, गिलोय, विधारा, पीपल, निसोत, नागरमोथा, वरुण, पुननवा, त्रिफला और, सोंठ समभागकाचूर्ण) येसब २–२ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े। ४० दिनवीतनेकेवाद इसमेंसे अग्निवलदेखकर ३ माशेसे आधेतोलेतक लेवे। औषधजीर्णहोनेपर रोगोचित पथ्यकेसेवन-करनेसे आमवात नष्टहोताहै ॥ १ ॥ इसीहिसाबसे लेह बनाकर शक्कर, मुलहठी, द्राक्ष, मुसली, त्रायमाण, अडूसा, गिलोय, इन्द्रजव, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, दन्तीमूल, विडङ्ग, विधारा पञ्चलोहभस्म २–२ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर लेहमें मिलाकर पूर्ववत् ४० दिनवीतनेकेबाद यथाभिवलमात्रालेकर पथ्य सेवनक-रनेसे शिर शूल, मुखरोग श्वास, कफ और पित्तहतव्याधिया तथा भयङ्कररक्तपित नष्टहोताहै ॥ २ ॥ इसीतरह पूर्वलेहमें सूरण, कपूरकाचरी, चव्य, विडङ्ग, कायफल, शरपुङ्खकीजड़, पाढामूल चित्रक, सोंठ और पाचोंलोहोंकीभस्म ३–३ कर्ष, पाचोंनमक, सज्जी, यवक्षार, सुहागा, विधारेकीजड़, अजवाइन, हर्रे, सरसों, मानकन्द, खण्डकर्ण (खण्डोकाकन्द म०) येसब १–१ कर्ष मिलाकर रखछोड़े। चालीसदिनकेबाद मात्राकायमकर खानेसे और उचितपथ्यपालनसे प्लीहा, उदर, यकृत्, औरगुल्मरोग येसब शस्त्र–क्षार और अग्निकर्मकेविना अच्छेहोतेहैं ॥ ३ ॥ इसीतरह पूर्वलेहको द्विगुणशक्करसे तैयारकर सोंठ, तालीसपत्र, काकनज यू०, नागकेशर, जीवन्ती, हर्र, आवजोश येसब २–२ कर्ष और गिलोयसत्त्व २८ कर्ष मिलाकर ४० रोज़तक रखकर यथाभिवलमात्रा कायमकर सेवनकरनेसे तथा योग्यपथ्य पाल नेसे श्वास, कास, रक्तागमनऔर बढाहुआ राजयक्ष्म दूरहोताहै २९५

२९६ लोहरसायनम् (षष्ठम्)

त्रिफलायाः प्रकुर्वीत प्रत्येकं पलसप्तकम्।
वारिण्यष्टगुणे पक्त्वा पञ्चमागेन शेषयेत् ॥ १४६४ ॥
पदद्मावास्तु दुग्धस्य हविषः पलपञ्चकम्।
पुटितात्रायसः पञ्च शुद्धाऽभ्रस्य पलद्वयम् ॥ १४६५ ॥

विडङ्गं त्रिफलाजीरद्वयं त्रिकटु चूर्णितम् ।
लोहचूर्णसमं ग्राह्यं क्रमवृद्धं तत. पचेत् ॥
ग्रहणीगदमत्युग्रं हन्त्येतद्वातसम्भवम् ॥ १४६६ ॥

व से , र का , वातग्रहण्याम् ।

भाषा—हरड, बहेडा, आवला ७ पल लेकर अठगुने पानीमें पकावे। पञ्चभागावशिष्टको छानकर दूध ३ प्रस्थ, घी ५ पल, लोहभस्म ५ पल, अभ्रकभस्म २ पल, विडङ्ग ५ पल, त्रिफला ६ पल, स्याहसफेदजीरा ७ पल, त्रिकटु ८ पल लेकर सबकाबारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय पकावे । लेहतैयार होनेपर किसी चिकनेवर्तनमें रखछोडे । इसमेंसे अग्निबल देखकर मात्रा कायमकर सेवनकरनेसे यह वातजसङ्ग्रहणीको नष्टकरताहै २९६

२९७ लोहरसायनम् (सप्तमम्)

विभीतकाऽभये धात्री प्रत्येकन्तु पलाष्टकम् ।
वारिण्यष्टगुणे साध्यं षडङ्गेनाऽवतारिते ॥ १४६७ ॥
अय.पलानि पञ्चैव पयसोऽष्टौ शरावकान् ।
सर्पिषो दशपलान्यत्र दद्याल्लोहं विपाचयेत् ॥१४६८॥
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकन्तु द्विकार्षिकम् ।
विडङ्गं भद्रमुस्तञ्च जीरकद्वयमेव च ॥ १४६९ ॥
पृथगर्धपलं ग्राह्यं कुर्यात्पाकन्तु मध्यमम् ।
पैत्तिके ग्रहणीरोगे याजयेन्मतिमान्भिषक् ॥ १४७० ॥

वं से , र का , पित्तग्रहण्याम् ।

भाषा—हरड, बहेडा, आवला ८–८ पल लेकर जवकुटकर अठगुने जलमें पकावे । छठाभाग बाकीरहनेपर उतारकर छानले फिर इसमें लोहभस्म ५ पल दूध ४ प्रस्थ, घी १० पल, त्रिकटु, त्रिफला, विडङ्ग, नागरमोथा, स्याहसफेदजीरा येसब २–२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पूर्ववर्त्में मिलाकर मध्यमपाक करे । ४० दिनबाद प्रकृतिके अनुसार मात्रा कायमकर सेवन करनेसे पित्तजसङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै ॥ २९७ ॥

२९८ लोहरसायनम् (अष्टमम्)

प्रत्येकं षट्पलं धात्री शिवा बिभीतकत्वचम् ।
उदकानां शरावैस्तु षड्विंशत्या विपाचयेत् ॥ १४७१ ॥
पञ्चभागावशिष्टेन लोहं पञ्च पलानि च ।
दधि दत्वा च तन्मान खरपाकं विपाचयेत् ॥ १४७२ ॥
त्रिकटु त्रिफला वह्नि विडङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
चूर्णं लोहसमञ्चाऽत्र प्रक्षिपेदवतारिते ॥
श्लैष्मिकं ग्रहणीरोगं हन्यादेतद्रसायनम् ॥ १४७३ ॥

व से , र का , श्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—आवले, हर्र और बहेडे ६–६ पल लेकर १३ प्रस्थ पानीमें पकावे । पञ्चभागावशिष्ट रहनेपर छानकर लोहभस्म और दही ५–५ पल डालकर खरपाककरे । ठण्ढाहोनेपर इसमें त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, विडङ्ग नागरमोथा इनका बारीक चूर्ण लोहकी बराबर डालकर रखछोडे । इसमेंसे अग्निबल देखकर उचितमात्रासे खानेसे यह श्लैष्मिक ग्रहणीरोगको नष्टकरताहै ॥

२९९ लोहरसायनम् (नवमम्)

लोहं पूर्वं पुटेच्छुद्धं गृहीत्वा पलपञ्चकम् ।
पुनर्नवावरीमूलं त्रिफला पुटितं पुनः ॥ १४७४ ॥
वराचतुर्गुणं लोहात्पचेदष्टगुणे जले ।
सप्तमागावशेषेण द्विशरावं पयः क्षिपेत् ॥ १४७५ ॥
शतावरीरसञ्चाऽपि लोहतुल्यं प्रदापयेत् ।
पलानि दश चाज्यस्य मृदुपाकेऽवतारिते ॥ १४७६ ॥
द्विजीरकं विडङ्गञ्च पलाशबीजमेव च ।
त्र्यूषणं त्रिफला चव्यं चूर्णमेषां पय समम् ॥
वातपित्तोत्तरं हन्ति ग्रहणीगदमुत्कटम् ॥ १४७७ ॥

व. से , र का , वातपित्तग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्धकरकेभस्मकियाहुआ लोह ५ पललेकर पुनर्नवा, शतावर, त्रिफला इनप्रत्येककेस्वरसोंसे मर्दनकर १–१ पुट दे । फिर २० पल त्रिफलाको अठगुनेपानीमें डाल सप्तभागावशिष्टकायकर छानकर पूर्वोक्त लोहभस्म ५ पल, दूध १ प्रस्थ, शतावरीकास्वरस ५ पल, घी १० पल डालकर मृदुअग्निसे पकावे । कल्ककीचिकनगोलिया बननेलगें तब उतारले । फिर उसमें स्याहसफेदजीरा, विडङ्ग, पलाशकेबीज, त्रिकटु, त्रिफला और चव्य इनकाचूर्ण १ प्रस्थ मिलाकर रखछोडे । ४० दिन बीतनेकेबाद यथोचित मात्रा नियतकर खानेसे वातपित्तप्रधान भयङ्करग्रहणीरोग दूरहोताहै ॥ २९९ ॥

३०० लोहरसायनम् (दशमम्)

अष्टादश पलान्यत्र त्रिफलाया विपाचयेत् ।
सलिले द्व्याढके चास्मिन्नवभागाऽवशेषितम्१४७८
विपचेत्पूर्वगलोहं पुटितं वक्ष्यमाणकैः ।
वराया. केशराजस्य चार्द्रकस्य रसेन च ॥ १४७९ ॥
एतत्पञ्चपलं ग्राह्यं सर्पिर्दशपलानि च ।
शतावरीरसस्याऽष्टौ नारिकेलोदकस्य च ॥ १४८० ॥
पलार्द्धं मरिचं कृष्णा नागरं पलसम्मितम् ।
षड्विंशमापकं चूर्णं त्रिफलाया.प्रकल्पयेत् ॥ १४८१ ॥
त्रिचत्वारिंशता मापैरधिकं चूर्णितं पलम् ।
चित्रकस्य विडङ्गस्य पचेत्पाकवरं ततः ॥
वातश्लेष्मोत्तरे चैव कुक्षिरोगे तथा हितम् ॥ १४८२ ॥

व. से , र का , वातश्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—दोआढकपानीमें १८ पल त्रिफलाको पकाकर नवभागावशिष्टकर छानले फिर त्रिफला, कालाभंगरा, अदरख इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे भावनादीहुईलोहभस्म ५ पल, घी १० पल, शतावरकारस और नारियलकाजल ८–८ पल, मरिच और पीपल २–२ कर्ष, सोंठ १ पल, त्रिफला २६ मासे, चित्रककीजड ४३ मासे, विडङ्ग १ पल इनसबका कपडछानचूर्ण डालकर खरपाककरे । ४० दिनबीतनेकेबाद यथाग्निबलमात्रा नियतकर खानेसे वात और श्लेष्माधिक उदररोग नष्टहोताहै ॥ ३०० ॥

३०१ लोहरसायनम् (दासरसायनम्) ११

मूर्च्छितं पुटितं शुद्धमयसः पलपञ्चकम्।
शतावरीरसे सम्यक् पुटितं पञ्चधा पुनः ॥१४८३॥
अष्टौ पलानि गृह्णीयात्त्रिफलायाः पृथक्पृथक्।
सलिलस्यार्मणे पक्त्वा पादशिष्टेऽवतारिते ॥ १४८४॥
द्वात्रिंशच्च पलान्यत्र पयसः सर्पिषो दश।
मध्यपाकं ततः पक्त्वा चैषां कर्षद्वयं पृथक् ॥१४८५॥
त्रिकटुं त्रिफलां वह्निं विडङ्गं भद्रमुस्तकम्।
पलाशस्य च बीजानि क्षिप्त्वा कुर्याद्रसायनम् ॥
पित्तश्लेष्माधिकञ्चैव निहन्याद्ग्रहणीगदम् ॥ १४८६ ॥

वं.से., र.का., पित्तश्लेष्मग्रहण्याम्।

भाषा—अयस्कृतिके प्रकारसे मारेहुए ५ पलशुद्धलोहमें शतावरीके अङ्गस्वरससे ५ भावनाएं देवे। फिर हर्रे, बहेड़ा, आंवला ८-८ पल लेकर एकद्रोणपानीमें पकावे। चतुर्थांशावशेषरहनेपर छानकर दूध ३२ पल, घी १० पल और पूर्वोक्त-लोहभस्म ५ पल डालकर पकावे। मध्यपाकहोनेपर त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रमूल, विडङ्ग, नागरमोथा और पलाशकेबीज २-२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े। ४० दिनबीतनेकेबाद यथाबिलमात्रा निर्धारितकर सेवनकरनेसे पित्त और श्लेष्मप्रधानग्रहणीरोग नष्टहोताहै ॥ ३०१ ॥

३०२ लोहरसायनम् (अयोरजीयम्) १२

त्रिफलायास्तु कुडवं पिप्पलीकुडवं तथा।
विडङ्गमरिचानान्तु द्वे द्वे चैव पले स्मृते ॥ १४८७ ॥
पलं पलञ्च कुर्वीत दन्तीचित्रकयोरपि।
पलातः पिप्पलीमूलादष्टावष्टौ पलानि च ॥ १४८८ ॥
शृङ्गवेरपले द्वे च गव्यात्पञ्च पलानि च।
शेषाण्यर्द्धपलानि स्यु र्यानि तानि निबोध मे १४८९
रास्ना बला गोक्षुरकं मधुकं देवदारु च।
वचा सातिविषा पाठा मुस्ता कटुकरोहिणी ॥१४९०॥
कट्फलं शारिवे द्वे च श्यामा भल्लातकानि च।
पुनर्नवं सतेजोह्वं त्वक् च पत्रं शतावरी ॥ १४९१ ॥
निदिग्धिकाव्याघ्रनखं मञ्जिष्ठा कुशकं बला।
त्रिफला त्रिवृता भार्गी कुटजस्य फलत्वचः ॥१४९२॥
एतदाहृत्य संभारं द्विस्तावत्स्यादयोरजः।
तदैकध्यांकृतं युक्त्या लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥ १४९३ ॥
क्षीरञ्चाऽनु पिबेद्युक्त्या निरन्नं सेवयेत्सदा।
अयोरजीयमित्येतत्ख्यातं सिद्धरसायनम् ॥ १४९४ ॥
संवत्सरप्रयोगेण शतवर्षाणि जीवति।
वर्षद्वयेन मनुजो द्वे जीवेच्छरदां शतम् ॥ १४९५ ॥
निहन्याच्छ्वयथुं घोरं सूक्ष्मभिन्द्राशनि र्यथा।
पाण्डुरोगमयार्शांसि मन्दमग्निं क्रिमीनपि ॥ १४९६ ॥
भगन्दरं कामलाञ्च कुष्ठानि जठराणि च।
सप्लीहानमपस्मारं शूलानि परिकर्तिकाम् ॥ १४९७ ॥
अतिसारं प्रमेहांश्च क्षतं श्वासं क्षयन्तथा।
यस्मिन्यस्मिन्विकारे तु योगोऽयं सम्प्रयुज्यते॥१४९८॥
तं तं निहन्ति वै रोगं दैत्यारीन् केशवो यथा।
अनुप्रयोगो लाजानां सक्तुतो मधुना सह ॥ १४९९ ॥
क्षीराऽनुपानलेह्योऽयं दिवसान् सप्त पञ्च वा।
अर्शःश्वामातिसारेषु विधिस्स्यात्परिकर्तने ॥१५००॥
ततः क्षीणेषु कासेषु ज्वरेषु विषमेषु च।
वर्षात्तश्चितः श्वयथुरस्मान्मासेन शाम्यति १५०१
रसायनप्रयोगाच्च पूर्वोद्दिष्टाद्यथाविधि।
शालीन् सषष्टिकांश्चैव रसाम्रविकृतीस्तथा ॥१५०२॥
क्षाराम्ललवणांश्चाऽपि गोधूमांश्च विवर्जयेत्।
आगन्तुश्वयथुर्वाऽपि यो वा स्याद्दोषसम्भवः १५०३
लङ्घनैश्च विलेपैश्च क्षीरसेकैः प्रशाम्यति।
अविपाको ज्वरश्छर्दी दौर्बल्यं परिकर्तिका ॥
श्वासातिसारौ हिक्का च ह्यनस्योपद्रवाः स्मृताः१५०४

मे. सं , श्वयथौ।

भाषा—त्रिफला और पीपल ४-४ पल, विडङ्ग और मरिच २-२ पल; दन्ती और चित्रकमूल १-१ पल, इलायची और पिपलामूल ८-८ पल, अदरख २ पल, गायकाघृत ५ पल, रास्ना, बला, गोखरू, मुलहठी, देवदारु, वच, अतीस, पाठा, नागरमोथा, कुटकी, कायफल, स्याहसफेदसारिवा, अनन्तमूल, भिलावे, पुनर्नवा, तेजबल, तज, पत्रज, शतावर, भटकटैया, बघनहा, मजीठ, कुशकीजड़ और बला २-२ कर्ष; निसोत, भारङ्गी, कुरैयाकीछाल और बीज १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर लोह अयस्कृति सबसे दूनीमिलाय १-२ दिन रखकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाबिल मात्रा कायमकर मधु और घीकेसाथ लेकर दूधपीवे। परिपाकहोकर भूखलगनेपर केवलदूधलेवे। इसका १ वर्षतक प्रयोगकरनेसे १०० वर्षतक निरामयहोकरजीताहै। दोवर्षके सेवनसे २०० वर्षकी आयु होतीहै। रोगनिहरणार्थ सेवनकरनेसे भयङ्करशोथ, पाण्डु, अश्मरी, मन्दाग्नि, क्रिमि, भगन्दर, कामला, कुष्ठ, उदर, प्लीहा, अपस्मार, शूल, पेटका कटाव, अतिसार, प्रमेह, उर क्षत, श्वास, क्षय इनसबको यह नष्टकरताहै। इनके अतिरिक्त जिसकिसीरोगमें इसका प्रयोग कियाजाय उसे यह शीघ्रनष्टकरताहै। लाजाके सत्तू, मधु और दूध इसके सेवनकेसाथ ७ या ५ रोज़तक लेनेसे अर्श, आमातिसार, पेटकाकटाव, क्षीणता, कास और विषमज्वर नष्टहोतेहैं। एक-वर्षका सञ्चितशोथ एकमहीनेमें अच्छाहोताहै। रसायनप्रयोगमें चावल, साठी, रस, आमको बनावटें, क्षार, अम्ल, लवण और गेहूं इनको छोड़दे। इसमें दैववशात् आगन्तु शोथ आजायतो लङ्घन, लेप और दूधकेसेकसे निवृत्तहोताहै। रोगी आदमीको अविपाक, ज्वर, वमन, दुर्बलता, पेटकाकटाव, श्वास, अतिसार, हिक्का ये उपद्रव होतेहैं ॥ ३०२ ॥

३०३ लोहरसायनम् (त्रयोदशम्)

निरग्निमारितं कान्तं त्रिभिर्येलं विभावयेत्।
छिन्ना व्यापं निदाघासा निर्गुण्डी कदलीश्वरी १५०५

दाडिमी विषभूनागो पलाशालम्बुषे वरी।
कुरण्टी कदलीकन्दयवभूलफलगोक्षुराः॥ १५०६॥
गाङ्गेरुकी च पातालगरुडस्तद्रसः पृथक्।
लोहपात्रे च सञ्चूर्ण्य तल्लोहं मधुसर्पिषा॥ १५०७॥
लीढ्वा पिबेद्वराक्वाथमनुपानं सुखावहम्।
मासत्रयं तथा क्षौद्रपिप्पलीसंयुतं लिहेत्॥ १५०८॥
कासं श्वासञ्च मन्दाग्निं शोथं घातञ्च कामलाम्।
छिन्नासत्त्वमधून्मिश्रं ग्रहणीं तापजां रुजम्॥ १५०९॥
अण्डवृद्धिञ्च रक्तास्रं मूत्ररोगान्विशेषतः।
सेवितं सर्वरोगघ्नमिदं लोहरसायनम्॥
पुत्रपौत्रप्रदमायुष्यं बलवर्णप्रसादनम्॥ १५१०॥

वै, द्र रसायने।

टि०—अत्र पाठे स्वयमग्निरमास्सदृशोऽस्ति परन्तु निशौषधीविष-भूनागगाङ्गेरुकीणां विशिष्टभावनायुक्तत्वात्पृथक्त्वेन सङ्गृहीतं, निशा गाङ्गेरुकीश्चयोऽन्नभावयोग्यतामावहन्त्योऽपि विषभूनागयो र्विजातीय द्रव्यत्वाचदन्तर्भावोऽनुचित इति विद्वद्भि र्विभावनीयम्॥

भाषा—स्वयमग्निलोहकी प्रक्रियासे मारेहुए कान्तलोहको गिलोय, निरहु, हल्दी, अडूसा, निर्गुण्डी, बेला, इसरोल, अनार, बछनाग, केंचुए, पलाशका अङ्गलवरस, गोरखमुण्डी, शतावर, पियावासा, कदलीकन्द, यवूलकीफली, गोखरू, गुल-सिकरी, पातालगारुडी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ बार भावनाए देकर रखछोडे। इसमेंसे यथाग्निबल माता नियतकर मधु और घीकेसाथ सेवनकर त्रिफलाक्वाथ पीवे तथा पथ्यपालनेसे ३ महीनेमें कास, श्वास, मन्दाग्नि, शोथ, वातविकार और कामला इनसबको यह नष्टकरताहै। जिसे मधु और घीका अनुपान अनुकूल न हो वह पीपल और मधुके-साथ सेवनकर। गिलोयसत्त्व और मधुकेसाथसेवनकरनेसे ग्रहणी और ज्वरकादाह शान्तहोताहै। चिरकालतक सेवनकरनेसे अण्डवृद्धि, रक्तपित्त और मूत्ररोग येसब नष्टहोकर बल, वर्ण प्रसाद और पुत्र पौत्र तथा आयुष्यको देताहै॥ ३०३॥

३०४ लोहरसायनम् (चतुर्दशम्)

लोहाऽभ्रसूतकशिलाजतुकान्तलोह-
घकाङ्कचूर्णसहितं विषचूर्णमस्ति।
यः सन्ततं घृतमधूपहितं मनुष्यः
स स्याज्जरामरणरोगभयैर्विमुक्तः १५११

र. (मा.) रसायने।

भाषा—लोह, अभ्रक, और पारदभस्म, शुद्धशिलाजीत, कान्त-लोहभस्म, गिलोय, शुद्धवछनाग येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्ती तक मात्रा घी और मधुकेसाथ मिलाकर निरन्तर सेवनकरनेसे बुढापा, मृत्यु और रोग इनकेभयसे निर्मुक्तहोताहै॥ ३०४॥

३०५ लोहसत्त्वम्

श्वेतं काचञ्च सौभाग्यं माध्वीकं मधु सिक्थकम्।
सावनं सर्षपखलि पुराणगुडमित्यपि॥ १५१२॥
कुडवानि दशादद्यात्प्रत्येकं तानि सर्वशः।
द्विगुणेऽम्बुनि निःक्वाथ्य लेपयोग्यञ्च साधयेत् १५१३
निरङ्गसारस्यादाय कुडवानि च सप्ततिम्।
तप्ततप्तानि पत्राणि तेन लिप्तानि सन्धमेत्॥ १५१४॥
तावद्धमेयावदेतल्लोहलेपः समाप्यते।
चत्वारिंशत्कुडवकं श्वेतसर्जीभवं रजः॥ १५१५॥
क्वाथ्यं दशगुणे तोये पट्टक्षेपेणाऽवतारयेत्।
तथैव नवसारस्य क्षारमेवञ्च साधयेत्॥ १५१६॥
सर्वं संसाधितं वस्त्रपूतं सूक्ष्मं पृथक् पुनः।
अथ तत्पक्वकूष्माण्डशकलेऽर्द्धे सुकोरिते॥ १५१७॥
क्षारन्तु सर्वशः क्षिप्त्वा तत्तुल्यघटमध्यगम्।
कृत्वाऽभ्रमलमध्ये तन्निसन्याद्गलपूरणात्॥ १५१८॥
पिधानार्थञ्च तद्दत्तं भिन्नमेव प्रकल्पयेत्।
सपादकुडवं सोमक्षारचूर्णं विनिक्षिपेत्॥ १५१९॥
मुखं पिधाय मृत्स्नेन दिनानामेकविंशतिम्।
घर्मे संस्थापयेत्तावत्स्वकाकपक्षः सितो भवेत्॥१५२०॥
सिद्धं विज्ञाय गम्भीरमृत्पात्रे विनिधाय च।
आतपे शोषयेत्सप्त दिनान्यभ्रमलान्तरे॥ १५२१॥
संस्थाप्य मासषट्कं तु उद्धृत्य स्थापयेत्पुनः।
षड्विंशदिनान्येव मुखमुद्धाटयेत्ततः॥ १५२२॥
सप्त लोहस्य पत्राणामुत्तरोत्तरतः स्थितौ।
यदा तच्छ्रेदयेद्बिन्दुस्तदा सिद्धं भवेदिति॥ १५२३॥
न चेत्तदैकविंशत्या दिनानाञ्च पुनस्तथा।
विमुद्रय स्थापयेद्युक्त्या सम्यगभ्रमलान्तरे॥१५२४॥
सिद्धे खलु च तल्लोहं निक्षिप्याऽतिखरातपे।
विमुद्रय मासत्रितयं स्थापयेत्सावधानतः॥ १५२५॥
प्रतिमासं तन्मुखं तु समुद्घाट्याऽवलोकयेत्।
ततो मयूरपुच्छाभां भाजनं सम्प्रकल्पयेत्॥ १५२६॥
तत्राऽयः स्थापयित्वा तु तथापि घटमध्यगम्।
यवक्षारकृतः पूर्णं तत्पात्रञ्च पिधापयेत्॥ १५२७॥
मासत्रयं स्थापयित्वा सूक्ष्मखण्डं भवेदयः।
सौवीरेणैव सम्भाव्य बहुशोऽतिखरातपे॥ १५२८॥
पाचयेद्भूमरूयन्त्रे सत्त्वमारक्तमग्निना।
षोडशप्रहरं यावद्भवेद्यावच्छीतलञ्च तत्॥ १५२९॥
तत्सत्त्वमर्धं तस्मिंस्तु द्रवसत्त्वे विमर्द्य च।
मासत्रयं पूर्ववच्च स्थाप्यमभ्रमलान्तरे॥ १५३०॥
गृहीत्वा कान्तलोहस्य पात्रे दृढतरे शुभे।
पिष्टं निम्बूद्रवे सत्त्वं लिप्तं पलमितं पुनः॥ १५३१॥
श्वेतमृत्तिकया वद्धं मुद्रितं सम्पुटञ्च तत्।
विशोष्य पञ्चकुडवशैवालस्थमुपर्यधः॥ १५३२॥
इष्टिकायन्त्रतः पक्वं द्वात्रिंशत्प्रहरं क्रमात्।
लाजाकारञ्च तत्सत्त्वं सर्वरोगहरं भवेत्॥ १५३३॥
अष्टमांशस्तु गुञ्जायाः सर्वगुल्मोदरापहः।
सद्यो राक्षसवज्जुष्टे सर्वव्याधिनिवर्हणः॥ १५३४॥

र का, उदराधिकारे।

भाषा—सफेदकाच, सुहागा, महुएकामद्य, मधु, मोम, साबुन, सरसोंकी खली, पुरानागुड़ येसब ४०-४० पललेकर दूना पानीदेकर औटावे। लेपकीतरह गाढाहोनेपर उतारकर रखले। फिर १७॥ प्रस्थ निरङ्गलोह (मुण्डभेद) के बारीकपत्र बनवाकर उनपर पूर्वोक्तलेपलगाय धमनकरावे, जबतक कि वहलेप समाप्त न होजाय। फिर १० प्रस्थ सफेदसज्जीको १० गुने पानीमें औटावे, छठाहिस्सा बाकीरहनेपर उतारले। इसीतरहसे १० प्रस्थ नौसादरकोभी पकाकर उतारले और दोनोंको अलग २ छानकर इनका क्षार बनाकर पकेहुए सफेदकोंहलेमें छेदकरके सबक्षार डालदे। ऊपरसे ५ पल सफेदमोमलकाचूर्ण डालकर छेदमेंसे निकालीहुई चक्तीसे बन्दकर खूबमजबूत मिट्टीकेवर्तनमें कोंहलेको रख मनुष्यकेगलेतक गहरे खड्डेमें घोड़ेकी ताजीलीद केबीचमें गाड़दे, वहखड्डा ऐसे ठिकानेपर होनाचाहिये कि दिनभर धूपलगतीरहे। २२ वें दिन निकालकर उसमें कौएका पङ्ख डुबावे, वह सफेद होजायतो सिद्धसमझे। फिर दूसरे गहरे मिट्टीकेपात्रमें रखकर कपड़मिट्टीकर सातदिन धूपमें सुखाकर पहिलेकीतरह गलेप्रमाण गहरे खड्डेमें घोड़ेकी लीदमें दबावे। ▪ महीनेकेबाद निकालकर फिर ताज़ीलीदमें दबावे। २१ दिनबाद मुंह उघाड़कर लोहेकेबारीक ७ पत्रोंकी तहजमाकर ऊपर एकबिन्दु इसक्षारका डाले यदि सातोंपत्रोंमें छेदहोजाय तो सिद्धसमझनाचाहिये। कसररहनेपर फिर २१ रोज मुखमुद्रणकर ताज़ीलीदमें दबावे और फिर परीक्षणकरे। जब सिद्ध होजाय तब मुखमुद्रणकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखकर पूर्ववत् सावधानीकेसाथ ३ महीनेतक लीदमें गाड़दे। प्रतिमहीने उसका मुंह उघाड़कर देखले कहीं वर्तनमें नुकसान न हुआहो और इसका वाष्पभी निकलजाय। तीन महीनेबाद निकालकर रखले यह द्रवसत्व तैयारहुआ। मोरकेपङ्खोंकी छबड़ीमें पूर्वोक्त लोहेके पत्रोंको रखकर मजबूत घड़ेमें रखदे और जबतीकाञ्जीसे घड़ेको भर मुंहबन्दकर ३ महीनेतकलीदमें गाड़दे तो इसलोहका बारीकचूर्ण होजायगा। इसचूर्णको निकालकर सौवीर (काञ्जीविशेष) की अत्यन्तकड़ेधूपमें बहुतसी भावनाएं देकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर १६ पहरकी कड़ी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वोक्तद्रवसत्वमेंसे आधाभाग मिलाकर मर्दनकर घड़ेमें भर ३ महीनेतक घोड़ेकी लीदमें दबादे। तीनमहीनेकेबाद निकालकर रखले। इसमेंसे १ पलभाग निकाल कान्तलोहके मजबूत पात्रमें डालकर नीबूकारस मिलाय इक्कीसबार समस्त पात्रपर लेपकरदे और इसपात्रको चीनीकेपात्रमें रखकर शरावसम्पुटकर अच्छीतरह सुखाकर पुरानी मोटी ईंटमें खड्डा खोद सवासेर सिवालके बीचमें इससम्पुटको रख नीचे ३२ पहरकी अग्नि दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे संपुटको खोलकर निकाले। इसमेंसे धानकी खीलोंकी तरह कान्तभस्म निकलेगी। इसमेंसे एकरत्तीका आठवां हिस्सा देनेसे यक्ष्मा, गुल्म और उदररोग नष्टहोसकें और राक्षसकीतरह जठराग्नि प्रदीप्त होजाताहै। असाध्य वात और कफ व्याधियोंको यह तत्काल नष्टकरताहै। कान्तलोहकीतरह इससे समस्तधातुओंकीभस्म होतीहै और वह अद्भुतकाम करतीहै॥ ३०५॥

३०६ लोहसारकल्पः

आलिप्य तापीरुरवीरकाभ्यां
वैश्वानरे प्रज्वलिते निधाय।
तप्तं सुतप्तं विनियोज्य तक्रे
निर्वाप्य वारान् बहुशः सुलोहम्॥ १५३५॥
एभिः प्रकारैः सुमृताच्च लोहा-
च्चूर्णीकृताच्चाऽपि पलानि चाऽष्टौ।
सर्पिःपलं तैलपलं पलानि
चत्वारि चाष्टौ हि वरारसस्य॥ १५३६॥
तक्रस्य चाम्लस्य चतुःपलानि
कर्षञ्च कर्षं पृथगौषधानाम्।
व्योषाऽजमोदाचविकाऽनलानां-
मूलं प्रदद्यादपि पिप्पलीनाम्॥ १५३७॥
सिन्धुप्रसूतं सविडङ्गचूर्णं
तक्रेण हन्याद्ग्रहणीं समस्ताम्।
अर्शांसि शोथं परिणामशूलं
शूलञ्च दीप्तं ▪ करोति वह्निम्॥ १५३८॥

र. का., ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—फौलादके बारीकपत्रोंपर सोनामाखी और सफेदकनेरकीजड़को पानीमें पीसकर लेपकरे। सूखनेपर खट्टीछाछमें बुझावे। ऐसे जबतक पत्रोंका चूरा न होजाय तबतक करे। यहलोहचूर्ण ८ पल, घी १ पल, तैल १ पल, त्रिफलाका स्वरस १२ पल, खट्टीछाछ ४ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, चव्य, चित्रककीजड़, पिपलामूल, सैन्धव, बिडङ्ग इनसबका बारीकचूर्ण १-१ कर्ष लेकर सबको मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाशक्ति मात्रालेकर छाछकीनेसे सबप्रकारकी ग्रहणी, बवासीर, शोथ, परिणामशूल, साधारणशूल, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३०६॥

३०७ लोहसिन्दूरम् (लोहमेवसिन्दूरम्) १

सूताऽभ्रकं विशुद्धञ्च हयमारैः सुमर्दितम्।
त्रीणि पत्राणि नागस्य तत्पिष्टं लेपयेच्छुभम्॥१५३९॥
पुटितं म्रियते तद्वट्टङ्कणं मधु योजितम्।
लेपयेत्तारपत्राणि तिन्तिडीतवराम्भसा॥ १५४०॥
इदाजारेण सिन्दूरं जायते सर्वरोगजित्।
हंसपादी जपापुष्पं ताम्बूलं खदिरान्वितम्॥ १५४१॥
खरैः शृङ्गके चूर्णे रेतैः शुद्धरसं क्रमात्।
गन्धद्विगुणसंयुक्तं दोर्द्धी यावत् प्रमर्दयेत॥ १५४२॥
निक्षिप्य काचकूप्याञ्च तन्मुखं सन्निरोधयेत्।
पर्कर्धिदाति यामेषु वालुकायन्त्रपाचनात्॥
शुद्धं भवति सिन्दूरं सर्वलोहेषु वेधयेत्॥ १५४३॥

र. क. यो., सर्वांग।

भाषा—शुद्धपारा और अभ्रकसमभाग लेकर लालकनेरके पुष्पस्वरससे मर्दनकर इसकी बराबरके तांबेके तीन पत्रबनाकर उनपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे तो इसकीभस्महोजायगी । इसभस्ममें बराबरका सुहागा और मधुदेकर इमली और तमरकेपानीसे पीसकर भस्मकेबराबर चांदीकेपत्रोंपर दशमांश लेपकर सुखाकरगजपुटकी आंचदे । इसतरह १० बारलेपदेदेकर आंचदेनेसे सिन्दूरसदृशभस्म होगी । फिर इसकी बराबर शुद्धपारा डालकर लालडंडीका पकाहुआ हुसराज, ओड्हुलकेफूल, कन्याचूना लगाहुआपान, चव्य और लालकनेरकेफूल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर उससे द्विगुण शुद्ध गन्धक मिलाकर हंसराजकी रहके स्वरससे २–२ दिन मर्दनकर सुखाय नीलवर्णकज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुद्रबन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर २१ पहरकी मन्दाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर रखछोड़े । यह रोगोचित अथवा समयोचि तानुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै । धातुवार-सम्प्रदायसे समस्तलोहोंके रसको कहसकताहै ॥ ३०७ ॥

३०८ लोहसिन्दूरम् (लोहसुन्दरः) २

सूतभस्म मृतलोहगन्धकौ
भागवर्द्धितमिदं घिनि.क्षिपेत् ।
दीर्घनालदृढकूपिकोदरे
मृत्स्नया च परिवेष्टय तां क्षिपेत्॥१५४४॥
चुल्लिकोपरि च कूपिकामुखे
प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलीद्रवम् ।
त्रैफलञ्च सगुडूचिकारसं
पाचयेत्तु मृदुवह्निना दिनम् ॥ १५४५ ॥
स्वाङ्गशीतलमिदं प्रगृह्य च
त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत् ।
लोहसिन्दुररसोऽयमीरितः
शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिदः परः ॥ १५४६ ॥

१ चि, ति १, रसायनसं, १ सु, १ क, १ दो, १ का, शो. म, वै चि, र मृ, पाण्डुधिकारे। र दी त्रियोनिरितिनाम।

भाषा—पारद और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक क्रमवृद्धभागसे लेकर एकदिन शुष्क मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई लम्बी-नालकी आतशीशीशीमें डालकर आधेतक सेमलकाद्रव भरदे और वालुकायन्त्रमें रख बहुतमन्द आंचसे पकावे । सेमलकाद्रव सूख नेपर त्रिफला और गिलोयकारस भरके पकावे । समाप्तद्रव सूखजानेपर आंचबन्दकरदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरखकेरससे १–१ रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शुष्कपाण्डुरो दूरकरताहै ३०८

३०९ लोहमुन्दररसः

गन्धसूतफलवङ्गदलैलात्वङ्गवायसकणाद्विविषाणाम् ।
गोलिका गुडकृता कफहन्त्री क्षुत्प्रबोधजननी कमयुका॥
कूष्माण्डं काञ्जिकं तैलं शाकं लावणिकं चणाः ।
वर्जनीया रसेऽमुष्मिन् गुटिका चणकाकृतिः ॥१५४८॥

१ (मा), अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लौंग, पत्रज, इलायची, तज, नवायस, पिप्पलामूल, शुद्धवछनाग सब समभाग लेकर बराबरकेगुड़में मिलाय चनेकीबराबर गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली लेनेसे यह कफजनितरोगोंकोनष्टकर अग्निप्रदीप्तकरताहै । इसकेसेवनमें पेठा, काञ्जी, तैल, शाक, नमकके पदार्थ, चने येसब त्याज्यहै ॥ ३०९ ॥

३१० लोहादिमोदकः

मृतलोहमिन्द्रयवं शुण्ठी भल्लातचित्रकम् ।
विल्वमज्जा विडङ्गानि पथ्या तुल्यं विचूर्णयेत् ॥
सर्वतुल्यो गुडो योज्यः कर्षं भुक्त्वाऽर्शसां जयेत् १५४९

नि र, र र स, अर्शोरोगे।

भाषा—लोहभस्म, इन्द्रयव, सोंठ, शुद्धभिलावे, चित्रक-बीजड़, बेलगिरी, विडङ्ग, हर्रेकीछाल येसब समभागलेकर सबकी बराबर गुड़मिलाकर १–१ तोला खानेसे बवासीर नष्टहोताहै ॥ ३१० ॥

३११ लोहादियोगः

लोहं ताम्राऽभ्रसूतं सुरकुसुमजलं चन्द्रसज्जातिपत्रं,
पत्रज्ञातीफलैला समरिचकरहाटाऽजमोदाऽहिफेनम् ।
सामुद्रं सिन्धुशोषानपि घृतमधुना मर्दयित्वाऽस्य टङ्कं,
खादेद्द्रव्येऽतिजीर्णे नियतमिह रतौ
स्तम्भनं रेतसः स्यात् ॥ १५५० ॥

१ यो त., र.का, वाजीकरणे।

भाषा—लोह, ताम्र, अभ्रक और पारदभस्म, लौंग, खस, शुद्धकपूर अथवा रसकपूर, जावित्री, पत्रज, जायफल, इलायची, मरिच, अकलकरा, अजमोद, अफीम, नारियल, विधारेकीजड़ और समुद्रशोष सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर मधु और घीमें एकरोज मर्दनकर १ माशेसे ३ माशेतक सम्भोगसमयसे दो घण्टेपहिले खानेसे पूर्णस्तम्भन होताहै ॥ ३११ ॥

३१२ लोहाऽभ्रकरसायनम्

आज्यं चतुष्पलं शुद्धं घनं लोहञ्च विश्रुतम् ।
शुद्धार्द्रांरिपुवृश्चीवमधुकपर्णिकादिभिः ॥ १५५१ ॥
तिग्मांशुकरसंपक्वं पुटितञ्च चतुष्पलम् ।
प्रस्थार्द्धं पयसो दद्यान्नारिकेलोदकस्य च ॥ १५५२ ॥
पचेत्पाकविधानज्ञो वह्निना मृदुना शनैः ।
त्रिफलात्रिकटु वह्नि विडङ्गं जीरकद्वयम् ॥ १५५३ ॥
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
कङ्कोलकञ्च सञ्चूर्ण्य शाणमात्रं क्षिपेत्पृथक् ॥१५५४॥
पाकं ज्ञात्वा समुद्धृत्य भ्रामराऽष्टपलान्वितम् ।
माषकादिविधानेन खादेन्माषाष्टकं पुनः ॥ १५५५ ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी ।

नागार्जुनेन रचितं रसायनमिदमुत्तमम् ॥
विनापि परिहाराद्यै र्लोहोदितफलप्रदम् ॥ १५५६ ॥

वं. से., रसायनाऽधिकारे।

भाषा—पुरानाघी ४ पल, भटकटैया, अदरख, नीम, सफेदपुनर्नवा, महुआ, लघुपञ्चमूल इनके स्वरसोंमें घोटघोटकर सूर्यके तीक्ष्णतापमें सुखाकर गजपुटकी ७–७ आंचें देकर सिद्ध-कियाहुआ अभ्रक और फोलाद ४–४ पल, दूध और नारियल कापानी ८–८ पल डालकर मन्द आंचसे पकावे। पानी जल-जानेपर त्रिफला, त्रिकटु, चित्रकमूल, विडङ्ग, स्याहसफेदजीरा, जायफल, जाविश्री, लौंग, नागरमोथा, शीतलचीनी इनका-चूर्ण ४–४ माशे डालकर मावेको लालहोनेतकसेकदे। ठंडा-होनेपर ८ पल भौरोंकामधु मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशासे प्रारम्भकर क्रमसे ८ माशेतक मात्रा बढ़ावे। जीर्ण होनेपर हल्का पथ्य लेवे। इसके एकवर्षके प्रयोगसे समस्तव्या-धियोंसे निवृत्तहोकर १०० वर्षकी आयुको भोगताहै। लोहो-क्तपथ्य नहीं करनेसेभी यह गुणकरताहै॥ ३१२ ॥

३१३ लोहामृतम् (प्रथमम्)

चित्रकं त्रिफलां दन्तीं विदारीं मार्कवं बलाम्।
पीवरीं तालमूलञ्च पृथगष्टपलोन्मितान् ॥ १५५७ ॥
अक्षधात्रीशिवानाञ्च प्रस्थंप्रस्थं सुकुट्टितम्।
विपाच्य सलिलद्रोणे सुपूतेऽष्टांशशेषिते ॥ १५५८ ॥
प्रस्थं चायोरजः शुद्धं गन्धकञ्च तदर्द्धकम्।
खण्डस्य कुडवं दत्त्वा नारिकेलपयस्तथा ॥ १५५९ ॥
एकीकृत्य पचेल्लोहं रसेन सर्पिषा सह।
अवतार्य ततः शीते मधुनोऽष्टपलं क्षिपेत् ॥ १५६० ॥
त्रिकटुं त्रिफलां दन्तीं विडङ्गं नागकेशरम्।
पलाशबीजं त्रिवृतां हपुषां जीरकद्वयम् ॥ १५६१ ॥
तालीसपत्रधान्याकं वराङ्गं वंशलोचनम्।
भागतः पलिकं चूर्णं माक्षिकञ्च पलद्वयम् ॥ १५६२ ॥
शिलाजतुरजस्तद्वत्क्षिप्त्वा भाण्डे निधापयेत्।
लौहे लौहेन सङ्घृष्य मधु दत्त्वा घृताऽर्द्धकम्॥१५६३॥
कृत्वा चानु पिबेत्क्षीरं जलं वा नारिकेलजम्।
त्र्यहं माषमितं कृत्वा वर्धयेद्रक्तिकाक्रमात् ॥ १५६४ ॥
गुरुवृष्यान्नपानानि पयोमांसरसाः शुभाः।
सेवनीयाः प्रयत्नेन पावकं वीक्ष्य चात्मनः ॥ १५६५ ॥
उत्थिताग्निश्च भुञ्जीत कर्तव्यापेक्षया बलात्।
एवं कुर्वन्नवं कान्तं प्राप्नुयाद्देहमात्मनः ॥ १५६६ ॥
तेजस्वी बलवान् वाग्मी निर्व्याधिर्भाति देववत्।
अस्योपयोगात्सततं सुखेन परिद्रक्ष्यति ॥ १५६७ ॥
अम्लपित्तं तथा शूलमग्निमान्द्यं क्षयं ज्वरम्।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च परिणाममवरोत्तजम् ॥ १५६८ ॥
ये च कुक्षिगता रोगा मन्दानलभवाश्च ये।
तान् सर्वान्नाशयेद्रोगान् लोहामृतरसायनम् ॥१५६९॥

र. र., र. क., अम्लपित्ते।

भाषा—चित्रक, त्रिफला, दन्तीमूल, विदारीकन्द, भंगरा, बला, शतावर, तालमूली, येसव ८–८ पल, बहेड़ा, आवले और हर्रे १–१ प्रस्थ लेकर अच्छीतरह कूटकर १ द्रोण पानीमें पकावे। अष्टांशावशेष रहनेपर छानकर लोहभस्म १ प्रस्थ, शुद्धगन्धक आधाप्रस्थ, खांड और नारियलकाजल ४–४ पल, घी १ प्रस्थ डालकर मन्दआंचसे पकावे। लेह तैयारहोनेपर उतारकर एकदम ठंडाहोनेपर मधु ८ पल, त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, विडङ्ग, नागकेशर, पलाशकेबीज, निशोत, हाऊ, स्याहसफेदजीरे, तालीशपत्र, धनिया, तज, वंसलोचन, इनका बारीकचूर्ण १–१ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म और शिलाजीत २–२ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय चिकने बर्तनमें भरके रखछोड़े। इसमेंसे ॥ माशेसे १ तोलेतककीमात्रा लोहेकेबर्तनमें डालकर ४ माशे घी और ८ माशे मधु मिलाकर लोहेके डंडेसे थोड़ी-देर मर्दनकर चाटे और ऊपरसे दूध अथवा नारियलकाजल पीवे। आरम्भमें ३ रोज़तक १–१ माशेकी मात्रा लेकर प्रकृ-तिके सात्म्यकरे फिर रोज़ाना १–१ रत्तीकी मात्रा बढ़ाकर १ तोलेतक मात्रा बढ़ावे। भारी और वृष्य, दूध, मांसरस, ये हितकारकहैं, परन्तु अपनी जठराग्निकाबल देखकर सेवनकरे। जैसेजैसे अग्निवढ़ताजाय वैसेवैसे गरिष्ठ अन्नका सेवनकरे। इसतरह प्रयोगकरनेसे नवीन और सुन्दर तेज, बल, वाणी इनसेयुक्त शरीरको प्राप्तहोताहै। निरोगहोकर देवताकेसदृश हृष्टपुष्टरहताहै। अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि, क्षय, ज्वर, ग्रहणी, पाण्डु, परिणामशूल, कुक्षिरोग, और मन्दाग्निसेजायमान समस्त उपद्रव इनसबको यह शीघ्रही नष्टकरताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ लोहामृतम् (द्वितीयम्)

मुस्ताऽमृताकणा यष्टि वह्निः शुण्ठी फलत्रयम्।
विडङ्गञ्च समं चूर्णं सर्वेषां सृतलोहकम् ॥ १५७० ॥
मधुना भक्षयेन्मापं पाण्डुरोगहरं परम्।
इदं लोहामृतं नाम स्वयमग्निरसोऽपि वा ॥ १५७१ ॥

र. र., ना वि, चि क, पाण्डुरोगे।

टि०—अयं रसो द्वितीयनवायसेन तुल्योऽस्ति परन्तु तत्र भागाना वैलक्षण्यादत्र पृथगेव स्थापितः। अयं योगश्चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्यां पाण्डुधिकारे मुस्तादिलोहनाम्ना निर्दिष्टोऽस्ति तत्र यष्टित्रिफलयोरभावो-ऽस्ति नैतावता तत्र योगान्तरता सम्भावनीया इति विद्वत्सु विज्ञप्तिः।

भाषा—नागरमोथा, गिलोय, पीपल, मुलहठी, चित्रक-मूल, सोंठ, त्रिफला और विडङ्ग सब समभाग लेकर बारीक-चूर्णकर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ खानेसे यह पाण्डुरोगको दूरकरताहै यह उपस्थित न हो तो स्वयमग्निरससे कामलेसकेहैं ॥ ३१४ ॥

३१५ लोहामृतम् (तृतीयम्)

माक्षीकमाक्षिकशिलाजतुपारदानां
चूर्णं सलोहकविडङ्गहरिनासितानाम्।

साज्यश्च विंशतिदिनानि भजेत्प्रकाम
योऽशीतिकोऽपि वनितानिकरे युवेव १५७२

चि क र र स र र कौ ओ प चि र भ यो चि र र दी यो म ग नि र म मा नि र ना वि वृ स र च रसार्णव, रसायनस भै र, र क ल च द र को र का र र रसायनाऽधिकारे।

टि०—चि क्र वाजीकरणे। यो म भै र र क ल च द र को र वा र र एतेषु पारदरहित पाठ। भै र यक्ष्मारिलोहम् र र कौ पूर्णचन्द्र नि र ग नि शिलाजत्वादिलोहम् र च चि र भ शिलाजतुयोग यो म माक्षिकयोग (वाजीकरणे) रसायनसङ्ग्रहे च माक्षिकाद्यवलेह इति नाम स्थापितम्

भाषा—शुद्धसोनामाखी मधु शिलाजतु पारद और लोहभस्म विडङ्ग हर्रे ठाकर समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबको इकट्ठे मिलाकर रखछोडे इसमेंसे यथाग्निबल मात्रा नियतकर घीकेसाथ २० दिनतक सेवनकरनेसे अस्सीवरसका बुड्ढाभी जवानकेसदृश स्त्रियोंके समूहको खुशकरताहै ॥ ३१५ ॥

३१६ लोहामृतम् (चतुर्थम्)

तनूनि लोहपत्राणि तिलोत्सेधसमानि च।
कपिकामूलकल्केन सलिप्य सार्षपेण वा ॥ १५७३ ॥
विशोष्य सूर्यकिरणे पुनरेवाऽवलेपयेत्।
त्रिफलाया जले धमात वापयेच्च पुन पुन ॥ १५७४ ॥
तत सञ्चूर्णितं कृत्वा कर्पटेन तु गालयेत्।
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यां यथाग्न्येतत्प्रयोगत ॥ १५७५ ॥
माषक त्रिगुण वाऽथ चतुर्गुणमथापि वा।
छागस्य पयस कुर्यादनुपानमभावत ॥ १५७६ ॥
गवा घृतेन दुग्धेन चतु षष्टिगुणेन च।
पक्तिशूलं निहन्त्येष मासेनैकेन निश्चितम् ॥ १५७७ ॥
लोहामृतमिदं श्रेष्ठ ब्रह्मणा निर्मित पुरा।
ककारपूर्वक यच्च यच्चाऽम्लं परिकीर्तितम् ॥
सेव्य तन्न भवेदत्र मास चानूपसम्भवम् ॥ १५७८ ॥
च द, यो म शूले।

भाषा—फोलादके तिलप्रमाण मोटे पत्र बनवाकर आवढ वीछालकेवल्क अथवा सफेदसरसोंकेकल्कसे पत्रोंपर लेपदेकर धूपमें सुखाकर फिरसे लेपकरके धमनकराय त्रिफलाकेक्वाथमें बुझावे इसतरह जबतक पत्रोंका चूर्ण न हो जाय तबतक करतारहे। फिर क्वाथको हटाकर लोहचूर्णको घरलकरके कपड़छानकर रखलेवे। इसमेंसे अग्निबलानुसार मात्रा कायमकर मधु और घीकेसाथ १ माशेसे ४ माशेतक खाकर बकरीका अभावमें गायकादूध ६४ गुना पीनेसे एकमहीनेमें निश्चितरूपसे यह पक्तिशूलको नष्टकरताहै। इसमें ककारादिगण अम्ल और आनूपमांस वर्जितहै ३१६

३१७ लोहामृतम् (पञ्चमम्)

गुडूची हंसपादी च रत्नमाला फलत्रयम्।
गोपालिका गोरसना तुम्बुरु लोहनिम्बकौ ॥१५७९॥
एषां रसे दोलयेत्तद्गिरिदोषनिवृत्तये।
पलद्वादशकं कृत्वा कृष्णलोहस्य खण्डश ॥ १५८० ॥
मर्दयित्वाऽष्टदश गण्डीरमूले पिण्ड प्रकल्पयेत्।
धृत्वा प्रधमयेत्तावद्यावत्सर्वं मृतं भवेत् ॥ १५८१ ॥
सिद्धे रात्र्युषिते बीज सूर्यावर्तस्य दापयेत्।
कर्षं त्रिकटुकस्याऽपि त्रिकर्षं चूर्णसयुतम् ॥ १५८२ ॥
मधुत्रिपलसयुक्त यथाग्नि चोपयोजयेत्।
अर्शांसि कामला कुष्ठ पाण्डुरोग कृमींस्तथा ॥ १५८३ ॥
वह्निं गुल्मोदरं शूल विशेषात्परिणामजम्।
शोथाग्निहन्ति सर्वांश्च विस्तराभाऽत्र सशय ॥
एतल्लोहामृत नाम सर्वव्याधिषु पूजितम् ॥ १५८४ ॥
र का अर्शोऽधिकारे।

भाषा—पर्वतकादोष दूरकरनेके लिये १२ पल फोलादके बारीकपत्रोंको गिलोय हंसराज रत्नमाला (रतननोत), त्रिफला ग्वालीलता (मराठी) गाजुबा तुम्बुल नगर नीम कौछाउ इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमें स्वेदितकर १८ टुकड़ बनाय गण्डीर (कोड़गन्दल प) कीजड़केकल्कसे लेपकर धूपमें सुखाकर अग्निमें लालकरके कोड़गन्दलकेहीरसमें बुझावे। इसीतरह जबतकबारीकचूर्ण न होजाय तबतककरे। एकरात्रिकेबाद रसमेंसे चूरेको निकालकर बारीकपीसकर उसमें हुरहुर १ कर्ष और त्रिकटु ३ कर्ष तथा मधु ३ पल मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे अग्निबलके अनुसार १ माशेकीमात्रा खानेसे बवासीर कामला कुष्ठ पाण्डु क्रिमि मन्दाग्नि गुल्म उदर शूल परिणामशूल और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥३१७॥

३१८ लोहेश्वरोरसः

ताम्राऽऽरवङ्गरसकनागलोहाऽऽलसोमकम्।
गन्ध शिला चैकभागा सार्धभागस्तु सूतक ॥१५८५॥
सम्यक् चूर्णीकृत मर्दयेद्दशदिन भृशम्।
एरण्डभृङ्गनिर्गुण्डीभृङ्गाधुस्तूरकन्यका ॥ १५८६ ॥
शिवनेत्र तुण्डी द्रेका पाटली मुसली रवि।
अध पुष्पी शङ्खपुष्पी गान्धारी गजशुण्डिका ॥१५८७॥
गोमी तेजोवती नीलकण्ठी च बर्बरी तथा।
काकमाची काकतुण्डी कर्कारी ताम्बूलिका ॥१५८८॥
सहदेवी हंसपादी त्रिपर्णी च त्रिनेत्रकम्।
रत्नमाला च गोरक्षी चर्मरङ्गारसैस्त ॥ १५८९ ॥
शोषयित्वा पाचयेत्तद् द्वात्रिंश प्रहराग्निना।
पुन सर्वं समादाय तदेकादशमानकम् ॥ १५९० ॥
तालसत्त्व सोमसत्त्वं शिलासत्त्वश्च तत्समम्।
तृतीयाशकगन्धेन रसैरेषां विमर्दयेत् ॥ १५९१ ॥
मार्कवस्तुलसी कण्टकारी च सहदेविका।
अर्कक्षीरैस्त्रियाम तु शोषयित्वा निपाचयेत् ॥१५९२॥
याममोडशक काचकूप्या वाप्ययं तथा।
लोहेश्वररसाऽय स्यात्सर्वव्याधिहर पर ॥ १५९३ ॥
र का, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—ताम्र, पीतल, वङ्ग, खपरिया, नाग, लोह, हरिताल, सोमल इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक और मैनसिल १–१ भाग, पारदभस्म १॥ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर ११ दिनतक खूबमर्दनकर एरण्ड, भंगरा, निर्गुण्डी, भांग, धतूरा, घीकुंवार, रुद्राक्ष, तृण, बकायन, पाटला, मुशली, आक, अन्धाहूली, शङ्खाहूली, कुकरौंधा, हाथीशुण्डी, वनगोभी, तेजबल, नीलकण्ठी, बबई, मकोय, काकनासिका, बांझखेखसा, तालमूली, सहदेवी, काकजङ्घा, मोरबेल, त्रिनेत्र (हब्बुलक्लिकिल), रत्नमाला (रतनजोत पं.), गोरखमुण्डी, आवळ इनसबके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें डाल ३२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर समस्तको निकालले । फिर इसमेंसे ११ भाग, हरिताल, सोमल और मैनसिलसत्त्व येतीनों ११ भाग और शुद्धगन्धक सबसे तृतीयांश मिलाकर भंगरा, तुलसी, भटकटैया, सहदेवी, आकका दूध इनसबमें ३–३ पहर मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें रख शीशीकामुंह बन्दकर १६ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर भंगरे वगैरहकेरसमे मर्दनकर १६ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ चावलकी मात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरताहै ॥ ३१८ ॥

३१९ वङ्गबद्धपारदगुटिका

वङ्गतीक्ष्णौ समौ कृत्वा ध्माप्यते वज्रमूषया ।
वङ्गमुत्तारयेत्सम्यक् तीव्राऽङ्गारैः प्रयत्नतः ॥ १५९४ ॥
अनेनैव प्रकारेण त्रिगुणं वाहयेत्ततः ।
बीजं पाषाणगं कृत्वा सूतं पलमितं भवेत् ॥ १५९५ ॥
मर्दयेत्कन्यकाद्रावे मर्दमेवं विशोषयेत् ।
गोलस्थस्वेदनं कार्यमहोभिः सप्तभिस्तथा ॥ १५९६ ॥
त्रिफलाक्वाथमध्ये तु त्रियामैः स्वेदयेत्सुधीः ।
कुमार्याः स्वरसेनैव भृङ्गराजरसेन हि ॥ १५९७ ॥
भृङ्गीरसेन च तथा त्रिदिनं स्वेदयेद्बुधः ।
पकैकेनौषधेनैव काचकूप्यां निवेशयेत् ॥ १५९८ ॥
भूमिस्थं मासयुग्मेन पश्चादेनं समुद्धरेत् ।
बद्धं सूतवरं ग्राह्यं शुभचन्द्रसमानभम् ॥ १५९९ ॥
मुखस्था कुरुते सम्यग्दृढवज्रनिभं वपुः ।
कामिनीनां शतं गच्छेद्वलीपलितवर्जितः ॥ १६०० ॥

र.मु., रसायने ।

भाषा—वङ्ग और फौलाद समभागलेकर वज्रमूषामें रख धमनकरे । वङ्गकेजलजानेपर उतनाही दूसरा डालकर जलावे । इसतरह तिगुनी वङ्गको जलानेसे यह तीक्ष्ण वङ्गबीज तैयार हुआ । इसमेंसे १ पल बीज और १ पल शुद्धशिंगरफ खरलमें डालकर घीकुंवारकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलाबनाय ४ तह मलमलकेकपड़ेमें पोटली बनाय घीकुंवारके रसमें ७ दिनतक स्वेदनकरे । फिर ३ पहर त्रिफलाकेक्वाथमें स्वेदनकर घीकुंवार, भंगरा और भांगकेरसोंसे ३–३ दिन स्वेदनकर कांचकीशीशीमें डालकर १–१ औषधिकारसभरके २–२ महीने ज़मीनमें गाड़दे । ऐसा करनेपर यह निर्मलचन्द्रमाकीतरह बद्धहोजायगा । इसको मुंहमें रखनेसे शरीर बलीपलितोंसे रहितहोकर वज्रके समान मज़बूत होजाताहै । और बहुतसीस्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेपरभी किसीतरहकाविकारनहींहोता ॥ ३१९ ॥

३२० वङ्गयोगः (प्रथमः)

पूतीकस्वरसं वाऽपि पिबेद्वा मधुना सह ।
पिबेद्वा पिप्पलीमूलमजामूत्रेण संयुतम् ॥
सप्तरात्रं पिबेद्धृष्टं त्रपु वा दधिमस्तुना ॥ १६०१ ॥

* सु.सं., क्रिमिरोगे ।

टि०—अत्र घृष्टमित्यनेन न केवलं घर्षयित्वा दापयेत्, किन्तु वङ्गं मूषायां द्रावयित्वा अत्यल्पदधिप्रक्षेपं कृत्वा निम्बकाष्ठादिना घर्षयेत् । पूर्वदत्ते दध्नि क्षीणे त्रपुणि च शुष्कतां याते पुनरपि दधि दत्त्वा घर्षयेदिति निरन्तर सप्तरात्रमर्थात्सप्ताहोरात्र घर्षणेन भस्म निष्पाद्य दधिमस्तुना यथाबलं दद्यादित्यभिसन्धि ॥

भाषा—तैलादिकमें शुद्धकियेहुए वङ्गको गलाकर दही अथवा दहीकापानी देकर नीमके ताज़े डण्डेसे ७ दिनरातमर्दनकर भस्म बनाले । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेकर पुड़करञ्जकारस अथवा पिपलामूलको बकरीकेमूत्रकेसाथ अथवा दहीकातोड़ पीनेसे तमाम क्रिमिरोग नष्टहोताहै ॥ ३२० ॥

३२१ वङ्गयोगः (द्वितीयः)

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।
वङ्गभस्म हरेन्मेहान् पञ्चानन इव द्विपान् ॥ १६०२ ॥

रसायनसं., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—मोचरस अथवा सेमलकी छालकारस, हल्दीकाचूर्ण और वङ्गभस्म ३ रत्ती मिलाकर शहदमें लेनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३२१ ॥

३२२ वङ्गयोगः (तृतीयः)

वङ्गभस्मसमं शुद्धं शिलाजत्वमृतोद्भवम् ।
सत्त्वं सितोपलेनाऽथ मधुना सह मर्दयेत् ॥
त्रिमाषं भक्षयेन्नित्यं मूत्राघातनिवृत्तये ॥ १६०३ ॥

र.प्र., मूत्राघाते ।

भाषा—वङ्गभस्म, शिलाजीत, गिलोयसत्त्व समभाग लेकर सबसे दूनी मिश्रीमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त मूत्राघात निवृत्तहोतेहैं ॥ ३२२ ॥

३२३ वङ्गयोगः (चतुर्थः)

वङ्गाऽभ्रमथनागाऽभ्रं नागं वङ्गञ्च केवलम् ।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम् ॥ १६०४ ॥

र.मं., र.च., र.क., र.मु., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्गऔर अभ्रकभस्म अथवा नाग और अभ्रकभस्म अथवा पृथक् २ नाग और वङ्गभस्म समभागशिलाजीतकेसाथ लेनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३२३ ॥

३२४ वङ्गरसायनम्

वङ्गभस्मसमं कान्तं व्योमभस्म च माक्षिकम् ।
मर्दयेत्कन्यकाम्भोभि र्निम्बपत्ररसैरपि ॥ १६०५ ॥
भूपालावर्तभस्माऽथ विनिःक्षिप्य समांशकम् ।
गोमूत्रकशिलाधातुजलैः सम्यग्विमर्दयेत् ॥ १६०६ ॥
ततो गुग्गुलुतोयेन मर्दयित्वा दिनाऽष्टकम् ।
विशोष्य परिचूर्ण्याऽथ समभागेन योजयेत् ॥१६०७॥
भृष्टबब्बूलनिर्यासे वाकुचीबीजचूर्णकैः ।
ततः क्षिपेत्करण्डान्त विधाय पटगालितम् ॥१६०८॥
गोतक्रपिष्टरजनीसारेण सह पाययेत् ।
चतुर्भिर्वल्लकैस्तुल्यं रम्यं वङ्गरसायनम् ॥ १६०९ ॥
निश्चितं तेन नश्यन्ति मेहा विंशतिभेदकाः ।
शालयो मुद्गयूपश्च नवनीतं तिलोद्भवम् ॥
पटोलं तिक्ततुण्डीरं तक्रं पथ्या प्रशस्यते ॥ १६१० ॥

र. चू., रसायने ।

भाषा—वङ्ग, कान्त, अभ्रक, और स्वर्णमाक्षिकभस्म समभागलेकर घीकुंवार और निम्बपत्रस्वरससे १–१ रोज़ मर्दनकर तीनोंकी बराबर लाजवर्दकीभस्म मिलाकर गोमूत्र और शिलाजीतकेद्रवसे १–१ रोज मर्दनकर गिलोयवगैरहकेसाथ क्वाथकर द्रववनाएहुएगूगलसे ८ दिन मर्दनकर सुखाकर घीमें सिकाहुआ बबूलका गोंद और बाकुची समभागमें मिलाकर शीशीमें रख छोड़े । इसमेंसे १२–१२ रत्तीकीमात्रा गायकीछाछसे पिसीहुईहल्दीकेसाथ लेनेसे अवश्यही २० प्रकारके प्रमेह नष्टहोते हैं । चावल, मूंगकीदाल, मक्खन, तिलका तैल, परवल, कड़वी कुन्दरू, छाछ येसब हितकरहैं ॥ ३२४ ॥

३२५ वङ्गाऽवलेहः (प्रथमः)

वङ्गभस्म द्विवल्लश्च लेहयेन्मधुना सह ।
ततो गुडसमं गन्धं भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ १६११ ॥
गुडूचीसत्त्वमथवा शर्करासहितं तथा ।
सर्वमेहहरो वङ्गाऽवलेह उत्तमः स्मृतः ॥ १६१२ ॥

र स., र. वि., र सि., रसायनसं., र. का., र. मु., ध., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—वङ्गभस्म ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक मधुकेसाथ लेकर शुद्धगन्धक और पुरानागुड़ समभाग अथवा गिलोयकासत्व बराबरकीखाण्डकेसाथ मिलाकर १ तोला लेनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३२५ ॥

३२६ वङ्गावलेहः (द्वितीय.)

मारितं त्रपुसं सीसं हारिणं शृङ्गमातुलम् ।
कार्पासवाकुचीतक्रं माहिषञ्च प्रमेहजित् ॥ १६१३ ॥
पिचुमन्दस्य निर्यासं धात्रीक्वाथेन पेषितम् ।
शिलाधातुसमायुक्तं शुक्रमेहविनाशनम् ॥ १६१४ ॥

य रा., शुक्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग, नाग, हरिणशृङ्ग इनकीभस्मे, धतूरेकेबीज, बिनौलेकीमींगी, बाकुची, भैंसकीछाछ अथवा आमलेकेक्वाथसे पिसाहुआ नीमकागोंद और शिलाजीत इनयोगोंमेंसे १–१ अथवा समस्त एकत्रितकर लेनेसे सम्पूर्णप्रमेह तथाखासकर शुक्रप्रमेह नष्टहोताहै ॥ ३२६ ॥

३२७ वङ्गाष्टकम्

रसं गन्धं मृतं लौहं मृतरूप्यञ्च खर्परम् ।
मृताभ्रकं मृतं ताम्रं सर्वतुल्यञ्च वङ्गकम् ॥ १६१५ ॥
पुटेद्गजपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
रक्तिद्वयप्रमाणेन मधुना लेहयेन्नरम् ॥ १६१६ ॥
निशाचूर्णं क्षौद्रयुतं पिबेद्धात्रीरसं ह्यनु ।
वङ्गाष्टकमिदं ख्यातं महादेवप्रकाशितम् ॥ १६१७ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्यादामदोषं विसूचिकाम् ।
विषमज्वरगुल्मार्शोमूत्रातीसारपित्तजित् ॥
वीर्यवृद्धिं करोत्याशु सोमरोगनिबर्हणम् ॥ १६१८ ॥

भै.र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, लोह, रजत, खपरिया, अभ्रक और ताम्रभस्म येसब समभाग, इनसबकीबराबर वङ्गभस्म लेकर पारेगन्धक की नीलवर्ण कज्जलीकर सब एकजगह शुद्धकमर्दनकर प्रमेह और ज्वरहर औषधोंमें ६–७ रोज मर्दन कर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथलेकर १ माशेसे ३ माशेतक हल्दीकाचूर्ण और मधु मिलाकर १ या २ तोले आमलेका स्वरसपीवे । इससे २० प्रकारकेप्रमेह, आमदोष, हैज़ा, विषमज्वर, गुल्म, बवासीर, मूत्राघात, अतिसार, पित्तविकार, वीर्यह्रास, सोमरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२७ ॥

३२८ वङ्गेश्वररसः (प्रथमः)

चिञ्चाक्षारेण संस्विन्नं वङ्गं सार्धचतुष्पलम् ।
तद्भस्मान्तं तालकस्य पलार्द्धैः पुनः पुनः ॥१६१९॥
कन्याद्रवैश्चक्रिकां शुष्कां पुटेद्गजपुटेन च ।
निगुञ्जं सेवितं युक्त्या सर्वमेहहरं परम् ॥ १६२० ॥

र. का., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्गको तैलतकादिमें शुद्धकर कड़ाहीमें गलाकर इमलीके क्षारका प्रक्षेपदेकर नीम अथवा बब्बूलकी ताजीलकड़ीसे रगड़ताजाय । जब तमाम वङ्गका चूर्णहोजाय उससमय क्षार डालना बन्दकरदे और एकपहरतक कड़ी आंचदेताहुआ डण्डेसे चलाताजाय । फिर तमामभस्मको इकट्ठाकर ऊपरसे लोहेकेकटोरेसे ढककर ४ पहरकी कड़ी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पानीडालकर चलादे स्थिर होनेपर पानीको नितारकर दूसरापानीभरदे । इसतरह ३–४ बारकरनेसे इमलीका क्षार तमाम निकलजायगा फिर धूपमें सुखाकर एककर्ष शुद्धहरितालका बारीकचूर्ण डालकर घीकुंवारकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआंचदे । इसप्रकारजबतक वङ्गकी मक्खनकेसदृशभस्म न होजाय तबतक बारम्बार

करताजाय। जब विशुद्धभस्म तैयार होजाय तब उसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककी मात्रा मधुकेसाथ खिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै ३२८

३२९ वङ्गेश्वररसः (द्वितीयः)

रसभस्मसमायुक्तं वङ्गभस्म प्रकल्पयेत्।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति मेहान्क्षौद्रसमन्वितम्॥
गुञ्जामूलं पिबेत्क्षीरैस्तु तस्य प्रशान्तये॥ १६२१॥

र. सं., र. चि., बृ. यो. त., र. क. ल., ध., भै. र., र. सु., र. र., रसायनसं., ढो., र. क., र. चं., चि. र. म., वै. र. वृ. द., यो. म., वै. चि., र. र दी., चि. क, यो. र., नि. र., यो. त, व. रा., र. र., भै. सा., र. (मा.), र. पा., चि. सा., र. र. यो., र. प्र. सु., र. मृ प्रमेहाधिकारे।

टि०—यो. र., नि. र, व. रा., वै. नि. एषु तथा र. र, रसायनम. एतयोर्द्वितीयस्थाने प्रमेहारिरस इति नाम। भैषज्यसारामृतसंहितायां माणिक्यचन्द्रीयरसायनोर च अस्य प्रयोगस्य प्रातर्निषेवणम् साथ तु मृतायसद्वं निषेव्य विहितमित्यधिक। रसामृते "मुद्गामलकयूषेण पथ्य देय सतक्रकम्। निलपिण्डीश्च तक्रेण पक्त्वा दद्यात् हिङ्गुकम्॥ घृत बहु न दद्याच्च निलतैलञ्च भोजयेत्। मार्कव चूर्णमादाय सगुड स्वादयेन्निशि॥" इत्यधिक पाठोऽस्ति। र., र. बो. एतयो. "वङ्गभस्म रसभस्मना सम मर्दित ककुभतोयतो दिनम्। क्षौद्रयुक्तमधुमेहनाशन वल्लयुग्ममशित निमक्षकम्॥ शाल्मल मधुयुत पयः पिबन्भोजन मधुरम मधुरकम्। कुण्डलीरसयुत मधु पेय रात्रिचूर्णमथवा मधुना वा॥" इति पाठोऽस्ति तस्याऽप्यनेनैवाऽन्तर्भावः करणीय' ककुभतोयमर्दनस्याऽत्राऽप्यनुष्ठाने क्षत्यभाव', द्विनाऽनुपानानामपि तथैव स्थितिरिति सुधीभि विभावनीयम्। "शुद्धस्य रसराजस्य भस्म वङ्गस्य भस्म च। अर्जुनस्य त्वच सर्वमम शाल्मल्यै रसै.॥ मर्दयेद्यामर घर्मे कुर्याद्गुञ्जामितां वटीम्। भक्षयेत्तु मक्षौद्र निशिघ्यासमन्वित रसम्॥" इति पाठो वेदविद्यार्यनाम्ना रसकामधेनावस्ति स च रसावतारस्थवोधचन्द्रोदयपठितेन पाठेन बहुलांशे समानः केवल तयोरर्जुनस्य भावनाऽस्ति रसकामधेनौ तु सर्वसममर्जुनत्वक्चूर्णं मिश्रय्य शाल्मलिजै भावनाऽस्ति तयोस्तु शाल्मलिरसोऽनुपानत्वेन गृहीत इत्यपि बहुलांशे समता, अतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावः करणीयः। अनेनप्रकारेण रससम्पादने गुणाधिक्ये नाऽस्ति पाठान्तरस्तु न करणीय एव भ्रमोत्पादकत्वात्। रसमुक्तावल्यामुपादाने वातमेहान्तकनाम्ना एषो रसो निर्दिष्टोऽस्ति तत्र जयारसेन भावना अधिकाऽस्ति अत्र वर्तमानरसे जयारसस्य भावनायामनुष्ठितायां क्षत्यभावात्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावोऽस्तु। रसचण्डांशुमहार्णवे तु पाठद्वयमपि स्वतन्त्रतया स्थापित न तु प्रमाद एवाऽस्ति॥

भाषा—पारद और वङ्गभस्म समभाग मिलाकर अथवा वङ्गयुक्त पारदभस्म करके रक्खे। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै। सायंकाल १ माशेमें २ माशेतक घुँघचीकी जड दूधमें पीसकर ऊपरसे पिलानेसे विशेषलाभहोताहै॥ ३२९॥

३३० वङ्गेश्वररसः (तृतीयः)

वङ्गभस्म रसं गन्धं रौप्यं कर्पूरमभ्रकम्।
कर्षकर्षं मानमेषां मुक्ताब्धि हेममौक्तिकम्॥ १६२२॥
केशराजरसैर्भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव साध्याऽसाध्यमथापि वा॥१६२३॥
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्थञ्च ज्वरञ्जयेत्।
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम्॥ १६२४॥
ग्रहणीमामदोषञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम्।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा॥ १६२५॥
वृहद्वङ्गेश्वरो नाम सोमरोगं निहन्त्यलम्।
बहुमूत्रं बहुविधं मूत्रमेहं सुदारुणम्॥ १६२६॥
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्धनः।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्यग्वृषायते॥१६२७॥
बलवर्णकरो रुच्यः शुक्रसञ्जननः परः।
छागं वा यदि वा गव्यं पयो वा दधि निर्मलम् १६२८
अनुपानं प्रयुञ्जीत बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक्।
दद्याच्च बाले प्रौढे च सेवनार्थं रसायनम्॥ १६२९॥

र. सं., र. चि., ध., भै. र., र. सु., र. च., र. को., प्रमेहे।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, रजतभस्म, रसकपूर और अभ्रकभस्म १–१ कर्ष, सुवर्ण और मोतीभस्म ४–४ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय कालेभंगरेकेरसमे १–२ रोज़मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुस्थज्वर, हलीमक, रक्तपित्त, वात, पित्त और कफोद्भव ग्रहणीदोष, आमदोष, मन्दाग्नि, अरुचि, सोमरोग, बहुमूत्र, नानातरहका भयंकरमूत्रमेह, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र धातुक्षीणता, ओज क्षय, स्तम्भनाभाव, बलवर्णनाश, अरुचि, शुक्रक्षय इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें बकरी अथवा गायकादूध अथवा दही दोषगतिको समझकर देवे। बालक और बुड्ढोंको देनेसे यह रसायनका काम करताहै॥ ३३०॥

३३१ वङ्गेश्वररसः(चतुर्थः)

वङ्गेश्वरं प्रवक्ष्यामि रसं प्लीहोदरापहम्।
मन्दाग्निघातने शस्तमन्त्रवृद्धिविवर्जनम्॥ १६३०॥
अनूक्तेन प्रकारेण रसभस्मान्तिकीः क्रियाः।
कृत्वा सूतं समादाय खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्॥१६३१॥
साधारणोक्तमार्गेण कुटिलं भस्मयेद्बुधः।
पश्चात्तत्र प्रदेयानि पुटानि दश सङ्ख्यया॥ १६३२॥
क्षीरेण मानोः सम्मर्द्य कुक्कुटाख्यानि यत्नतः।
पलमाने मृतभस्मन्येतन्मानञ्च वङ्गजम्॥ १६३३॥
पलञ्च द्वे पले ताम्रात्साधारणमृताद्भवेत।
सामान्यशुद्धं गन्धञ्च द्वे पले सर्वमेकतः॥ १६३४॥
मर्दयेद्भास्करस्यैवः पयोभि र्दिवसत्रयम्।
तं मृतं पुटयेत्पश्चाद्दशवाजिरथोपलैः॥ १६३५॥
मूषायां तं रसं क्षिप्त्वा कुक्कुटाख्यं पुटं ददेत्।
एष वङ्गेश्वरो नाम्ना रसेन्द्रः सम्प्रकाशितः॥ १६३६॥

गुल्मप्लीहोदरच्छेदशीघ्रकारीश्रुतो भुवि ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ १६३७ ॥
वसोर्भद्रस्य चूर्णेन घृतेन सुरभीभुवा ।
पथ्यञ्च पूर्ववत्कुर्यात्प्लीहगुल्मोदरच्छिदे ॥ १६३८ ॥

रसाल , टो , उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धकरके भस्मकियाहुआ पारा और साधारण शङ्खभस्म समभागलेकर बारीक चूर्णकर आकके दूधसे मर्दनकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । ऐसे १० आंचें देनेकेबाद एक पल शङ्खयुक्तपारदभस्ममें वङ्गभस्म १ पल, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक २–२ पल मिलाकर बारीकचूर्णकर आकके दूधसे ३ रोज मर्दनकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर वट और कमलके फलोंकेरससे मर्दनकर १०–१० कुक्कुटपुटदे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा पुनर्नवाके चूर्ण और गोघृतकेसाथ देनेसे यह मन्दाग्नि, अन्त्रवृद्धि, गुल्म, प्लीहा और उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३१ ॥

३३२ वङ्गेश्वररसः (पञ्चमः)

तुल्यांशं रसतारहेमगगनं नागञ्च लोहं तथा,
तार्प्यं विद्रुममौक्तिकञ्च रसकं वङ्गं समं नि.क्षिपेत् ।
सर्वं गोक्षुरवानरीसमुशलीरम्भाविदारीवरी-,
गोदुग्धे मुशलीक्षुवारिमृदितं स्यात्सप्त वारान्पृथक् ॥
विंशन्मेहगणं निहन्ति सहसा वङ्गेश्वरोऽयं महान्,
सद्यो वैद्यहिताय भैरवसमः श्रीपूज्यनाम्नोदित. १६३९

र.पा , प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, रजत, सुवर्ण, अभ्रक, नाग, लोह, सोनामाखी, विद्रुम, मोती, खपरिया और वङ्ग इनकीभस्में समभागलेकर गोखरू, केवाच, सफेद मुशली, केलाकन्द, विदारी, शतावर, गोदुग्ध, काली मुशली, ईख इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ भावनाए देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समय अथवा उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह तमामप्रमेहोंको नष्टकरताहै॥३३२

३३३ वङ्गेश्वररसः (वासुकिभूषण) ६

सूतभस्म वङ्गभस्म भागैकं सम्प्रकल्पयेत् ।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुष्पलम् ॥ १६४० ॥
अर्कक्षीरे दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम् ।
रुद्ध्वा तद्भूधरे पक्त्वा पुटेकेन समुद्धरेत् ॥ १६४१ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदराञ्जयेत् ।
घृते गुञ्जाद्वयं लेह्यं निष्का श्वेतपुनर्नवाम ॥
गवां मूत्रे. पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ १६४२ ॥

र सं ,र क ल ,र.र स ,र को ,र चि ,र यो त ,नि र , ध ,र सु ,र र ,र कौ ,र म ,चि सा , रसायनम ,टो ,र क ,भै सा ,र (मा),व रा ,र का ,यो म ,वै चि ,र.र- कौ ,ना वि ,र म मा , र पा ,भै र ,रसचि , र.दी.,र.मृ , यकृत्प्लीहाऽधिकारे ।

टि०—यो म "पुष्परोगे रक्तगुल्मे प्लीहसु दद्यादमु रसम्,, इत्यधिक पाठ । र र ,र क ,यो म ,भै र ,रसचि ,र दी ,र मृ ,एषु ग्रन्थेषु उदराधिकारे "सूतेन वङ्ग तु सम नियोज्य तत्तुल्यशुल्वेन च गन्धकेन । विमर्दयेदर्करसेन याम मृदा च सलिप्य पुट ददीत ॥ वासारसैस्त परिभावयेच्च रसो भवेद्वासुकिभूषणोऽयम् । प्लीहश्च गुल्मस्य च शान्तयेऽस्य वल्लञ्च दद्यादसुचूर्णयुक्तम् ॥ अर्कस्य पत्राणि ससैन्धवानि लिप्त्वा पुटित्वा ह्यनुपाययेत ॥,, इति रसो निहितोऽस्ति सोऽस्मरशोऽस्मिन्नन्तर्भवति । पृथक् पाठस्थापनस्य कारणे तु उक्तग्रन्थकारा एव प्रष्टव्या ।

भाषा—पारे और वङ्गकीभस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म ४–४ पल लेकर बारीकचूर्णकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथ लेकर ४ माशे सफेदपुनर्नवाकीजड़ अथवा हल्दी गोमूत्रकेसाथ पीनेसे प्लीहा, गुल्म और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ३३३

३३४ वङ्गेश्वररसः (सप्तमः)

वङ्गमूतकयोः कृत्वा सारणां कन्यकाद्रवैः ।
सम्मर्द्य वटिकाः कृत्वा पाचयेत्काचभाजने ॥१६४३॥
यावच्चन्द्रनिभः शुभ्रो वङ्गेश्वरसमो गुणै. ।
पाण्डुप्रमेहदौर्बल्यकामलादिकनाशन. ॥ १६४४ ॥

नि र ,र चि ,र च , वै चि ,पाण्डुरोगे ।

टि०—यद्यपि रसशास्त्रे प्रकारविशेषेण धातुविशेषसम्मेलनप्रकारस्य सारणाशब्देन व्यवहारस्तथाऽप्यत्र यौगशब्देन सम्मेलनमात्रत्वमभिप्रेतम् ।

भाषा—हरितालकेयोगसे मारेहुए वङ्ग और शुद्धपारेको मिलाय घीकुंवारकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलियां बनाय सुखाकर आतशीशीशीमें डालकर मुंहबन्दकर बालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर देखे इसकारग एकदम सफेदहोजाय तो सिद्ध समझे नहीं तो फिर पूर्ववत् मर्दनकरे । जब मक्खनकीतरह सफेद पारेकीभस्म होजाय तब निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह पाण्डु, प्रमेह, दुर्बलता, कामलाप्रभृति रोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३४ ॥

३३५ वङ्गेश्वररसः (महान्) ८

वङ्गं कान्तञ्च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ।
कुमारीरसतो भाव्यं सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ १६४५ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्रमेहान्विंशतिं जयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पाण्डुरोगं महाश्मरीम् ।
रसायनवरः श्रेष्ठो नागार्जुनविनिर्मितः ॥ १६४६ ॥

नि र ,व रा ,रसायनसं , यो र ,वै चि ,प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्ग, कान्तलोह और अभ्रकभस्म, धतूरेकेफूल समभागलेकर बारीकचूर्णकर घीकुंवारकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर १–१रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग, पाण्डु, असाध्य पथरीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३३५ ॥

३३६ वङ्गेश्वररसः (बृहन्) ९

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमभ्रं समांशिकम् ।
हेमवङ्गश्च मुक्ता च ताप्यमेवं समंसमम् ॥ १६४७ ॥
सर्वेषां चूर्णितं कृत्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ॥ १६४८ ॥
बृहद्वङ्गेश्वरो ह्येय रक्तमूत्रे प्रशस्यते ।
श्वेतमेहं हस्तिमेहं कृच्छ्रमूत्रं तथैव च ॥ १६४९ ॥
सर्वप्रकारमेहांस्तु नाशयेद्‌विकल्पतः ।
अग्निवृद्धिं वयोवृद्धिं कान्तिवृद्धिं करोति च॥१६५०॥
क्षयरोगं निहन्त्याशु कासं पञ्चविधं तथा ।
कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ १६५१ ॥
शूलं श्वासं ज्वरं हिक्कां मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
क्रमेण शीलितो हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥१६५२॥

भै. र., र सु , प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, सुवर्ण, वङ्ग, मोती, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर घीकुंवारकेरससे १–२ रोजमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे रक्तमूत्र, श्वेतमेह, हस्तिमेह, मूत्रकृच्छ्र प्रभृति समस्तमेह, मन्दाग्नि, क्षय, पांचप्रकारका कास और श्वास, १८ प्रकारकाकुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, शूल, ज्वर, हिचकी, अरुचि, इनसबको यह नष्टकर कान्ति और आयुकीवृद्धिको करताहै ॥ ३३६ ॥

३३७ वङ्गेश्वररसः (दशमः)

रसेन वङ्गं द्विगुणं प्रगृह्य
विद्राव्य निक्षिप्य समुद्रजश्च ।
विमर्दयेदम्लजलेन गोलं
कृत्वा सुसंवेष्ट्य पुटेत तीव्रम् ॥ १६५३ ॥
ततः क्षिपेत्तज्जलपात्रमध्ये
नीरं तु सन्त्यज्य गृहाण सूतम् ।
सद्रक्तियुग्मं मधुना समेतं
ददीत पथ्यं मधुरं समुद्रम् ॥ १६५४ ॥
तिलोत्थपिण्डीञ्च विपाच्य तक्रे
ददीत हिङ्गुं दधि वर्जयेच्च ।
मार्कण्डिकाचूर्णमपि प्रदेयं
रात्रौ गुडेनाऽपि घृतेन देय. ॥ १६५५ ॥

र दी., र. चि , र. क , र सि , र का , र. मृ , वै मृ., र. च , रसायनस., प्रमेहे ।

टि०—"समानभागे शुचिताम्रवङ्गे तथा समान लवण प्रसिद्धम् । शरावयो र्धेहि विधाय मुद्रां ददत्पुट तस्य गजाऽभिधम ॥ ततो भवे द्भस्म विशेषसौम्य यथानुपान ननु सेवनीयम् । समस्तमेहान्तकमग्निदायि कासापहारि श्वसनापहारि ॥ शुक्रस्य दार्ढ्यप्रविधानदक्ष प्रमत्त नारीसुरतदानबीजम् । इद हि तत्त्व जटिलस्य सेवां विधाय वैद्येन मया प्रलब्धम् ॥" इति पाठो वै मृ , र च , रसायनस , र. सि , एषु ग्रन्थेषु निहितोऽस्ति परन्तु स मोरश्वरेण परीक्षामकृत्वैव साधुवाक्यं विश्वस्य निहित प्रतीयते, तन्निर्दिष्टदिशा मया स्वयमेव द्वित्रवार निरर्थक कष्टमन्वभावि, अतोऽन्येन जनेन कष्ट न करणीयमिति विज्ञप्ति । ताम्रनिक्षेपस्याऽत्यावश्यता प्रतीयते चेन्मृत ताम्र नियुज्य रसो निष्पादनीय इति सर्व समञ्जस भविष्यति ।

भाषा—शुद्धवङ्गको गलाकर वङ्गसे आधा शुद्धपारा मिलाकर सेंधेनमकका पूर्ववत् प्रक्षेपदेकर भस्म तैयारकर जमीरीप्रभृतिके रससे एकदिनमर्दनकर टिकडीबनाय सुखाकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर देखे यदि विशुद्धभस्म तैयार होगईहो तो रखलेवे नहीं तो फिर अम्लद्रवमें मर्दनकर आंचदे। इसमें नमक मिलाहुआ है इसलिये पानीमें घोलकर रखदे। स्वच्छपानीको नितारकर फेंकदे। इसतरह २–३ बारकरनेसे विशुद्धभस्म अलगहोजायगी। इसे सुखाकर शीशीमें भररक्खे। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ देकर तिलकल्कको छाछमें पकाकर ऊपरसे दे, रात्रिमें आवलकीजड़कीछाल अथवा मुण्डकाचूर्ण गुड अथवा घृतकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरता है। इसमें हींग और दहीका निषेध है ॥ ३३७ ॥

३३८ वङ्गेश्वररसः (द्वादशः)

सूताच्च गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य
गन्धेन वङ्गञ्च समं विमर्द्य ।
मूषोदरे भूधरयन्त्रमध्ये
विपाचयेत्तत्र समानभागम् ॥ १६५६
लोहस्य भस्माऽपि नियोजनीयं
विमर्दयेद्गोक्षुरवारिणा तत् ।
गुञ्जाद्वयं शर्करया समेतं
गुडूचिकासत्त्वयुतञ्च दद्यात् ॥ १६५७ ॥
मेहान्निहन्यात्सकलान्समूला-
न्विवर्धयेद्धातुगणं नितान्तम् ।
स्तम्भञ्च कुर्याद्वनिताविलासे
निजानुपानैः सकलामयघ्नम् ॥ १६५८ ॥

र. ध , र क , र दी , प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १भाग, शुद्धगन्धक और वङ्गभस्म २–२ भाग, लोहभस्म ५ भाग लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिन गोखरूकेक्वाथसे मर्दनकर सुखाकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा शक्कर और गिलोयसत्वकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह, धातुक्षय, शीघ्रशुक्रपतन इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ वङ्गेश्वररसः (त्रयोदश.)

शुद्धं वङ्गरजोऽथ गन्धरसकौ स्याणूद्रवं तुल्यकं
ध्वाङ्क्षस्याऽर्द्धपिचुं हि ताप्यकनकौ सौवीरकं मर्दयेत्।
आर्द्राद्भिः पिचुमन्दजातपयसा सम्भावयेद्विंशति,
गोलीकृत्य शुभेऽहि तच्च पुटयेच्छीतं समाकर्षयेत् ॥

वङ्गश्चामलकीप्रवालमधुना कृष्णामधुभ्यां त्वथो,
पीतः क्षौद्रयुतामलैः फलरसैर्योज्यो भिषग्जानता ।
विंशन्मेहसुदारुणाऽश्मरिभयान्दुर्मूत्रकृच्छ्राश्रयेत्,
सद्योऽयं हरते वली सपलितां वङ्गेश्वरो रोगहा १६६०

र. ■ , प्रमेहे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्ध गन्धक, खपरिया, पारा और तूतिया १–१ कर्ष, कालासुरमा ८ माशे, सोनामाखी, सुवर्ण, सफेदसुरमा इनकीभस्में १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख और नीमके-स्वरसोंसे २०–२० भावनाए देकर टिकडियां बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआंचदे । स्वाङ्गशी-तलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा आमलोंकेपत्तोंके स्वरस और मधु अथवा पीपल मधु अथवा आवले और मधु या अन्य अनुकूल फलरसकेसाथ देनेसे दारुण २० प्रकारकेप्रमेह, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और वलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

३४० वङ्गेश्वररसः (चतुर्दशः)

रसमेकं त्रयो वङ्गं वङ्गसाम्येन गन्धकम् ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥ १६६१ ॥
संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रोधयेत्सुदृढं सुखम् ।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ १६६२ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सम्पूज्य द्विजदेवताः ।
पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ १६६३ ॥
क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमम्लक्षारविवर्जितम् ।
रसो वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तनः ॥ १६६४ ॥

नि र , वै चि (ल), वै वि , रसायनस , र च , वै क , यो. र , वै चि , र पा , प्रमेहाधिकारे ।

टि०—र च रसचण्डांशुरितिनाम । वै क , नि र , वै चि ण्डु द्वितीयस्थाने चिकित्सासार प्रथमस्थाने "शुद्धसूतसम गन्ध वङ्गञ्च द्विगुण भवेत् । एकत्र मर्दयेत्सर्वं वङ्गमेक प्रमेहिणाम् ॥ शर्कराम धुसयुक्त पथ्यञ्च क्षारवर्जितम् । एष वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तन ॥" इति पाठो दृश्यते परन्तु स त्रुटित प्रतिभाति, स्वतन्त्रो वाऽस्तु परन्तु तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । पाककरणेन कुमार्युदे ध्यन्तीति विद्वद्भि विमर्शनीयम् । रसायनसङ्ग्रहे द्वितीयस्थाने रससा म्येन नवसारमधिकतया नियोज्य षोडशप्रहराऽग्निना पक्वो योगो निष्पादितस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । गन्धकजारणेन साक नर सारस्याऽपि सुतरा जारण भविष्यति । नरसारजारणेन क्षतेरप्यभाव ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धवङ्ग और गन्धक ३–३ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर टिकडी बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर वालुकायन्त्रमें एकदिनकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ब्राह्मण और देवताओंका पूजनकर पीपल और मधुकेसाथ १ रत्तीसे ३ रत्तीतक देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । खीर इसमें पथ्यहै सबतरहके क्षारोंसे परहेजकरे । इसका निरन्तरसेवनकरनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३४० ॥

३४१ वङ्गेश्वररसः (पञ्चदशः)

शुद्धं तालं शुद्धसूतं वङ्गं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
ग्राहयेत्समभागेन सूर्यक्षीरे विमर्दयेत् ॥ १६६५ ॥
दिनसप्तकपर्यन्तं मर्दयेच्च निरन्तरम् ।
काचकूप्यां क्षिपेन्मुद्रां दत्त्वा चैव भिषग्वरः ॥ १६६६ ॥
द्वादशप्रहरं दद्यान्मन्दाग्निश्च न संशयः ।
पुनरेव प्रकर्तव्यो विधिरेष न संशयः ॥ १६६७ ॥
रसो ग्राह्यः प्रयत्नेन रक्तिकाऽर्द्धं प्रदीयते ।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं वातव्याधिं विनाशयेत् ॥ १६६८ ॥
उन्मादे नष्टशुक्रे च वह्निहीने च दीयते ।
कुष्ठं व्रणं ज्वरञ्चैव नाशयेच्च किमद्भुतम् ॥ १६६९ ॥

र सु , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, वङ्ग और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर आकके दूधसे ■ रोज मर्दनकर सुखा-कर ६–७ कपडमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख बारहपहरकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दनकर आंच दे । जबतक भस्म सिद्ध न होजाय तबतक इसीतरह आंचें दे । सिद्धहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे आधीआधी रत्ती सुबहशाम पानमें रखकर देनेसे समस्तवातव्याधि, उन्माद, शुक्रक्षय, मन्दाग्नि, कुष्ठ, व्रण और ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३४१ ॥

३४२ वङ्गेश्वररसः (वृद्धाद्यः) १६

वङ्गं रसं ताम्रमयोजभस्म
सर्वैः समानं गगनं विमृद्य ।
गोक्षुररम्भाऽऽमलकीगवाक्षी-
रसैः पृथग्वासरकं रसेन्द्रः ॥ १६७० ॥
माषार्द्धमात्रो मधुना गृहीतो
जयेत्प्रमेहं रुधिरस्रुतिञ्च ।
कूष्माण्डनीरं ससितञ्च पेयं
कूष्माण्डखण्डेन युतश्च शाकम् ॥१६७१॥
प्रमेहं क्षयकासञ्च कृच्छ्रं प्रदरजं रुजः ।
सर्वांश्चरोगान्हरत्येष वलीपलितनाशनः ॥ १६७२ ॥
वीर्यं तेजो बलोत्साहौ रमयेद्रमणीशतम् ।
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥ १६७३ ॥
वङ्गेश्वराऽनुपानानि लिख्यन्ते कानिचिन्मया ।
श्वासे विश्वमतीसारे जातीफलसुजीरके ॥ १६७४ ॥
मरिचं शिग्रुमूलानां स्वरसेन समन्वितम् ।
शैत्ये दीप्योभये प्रोक्ते करहाटकिरातकौ ॥ १६७५ ॥
अजीर्णे रुचकं शुण्ठी प्लीह्नि गोमूत्रटङ्कणम् ।
सगुडं धातुहानौ च सुरसाधातुखाखसैः ॥
नागवल्लीदलसमं सम्प्रोक्तं ह्यनुपानकम् ॥ १६७६ ॥

रसायनसं , क्षये ।

भाषा—वङ्ग, पारा, ताम्र, लोह इनकीभस्में समभाग, अभ्रकभस्म सबकीबराबर लेकर गोखरू, केलेकाकन्द, आवले और इन्द्रायणके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २ से ४ रत्ती-तककी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुके-साथ लेकर शक्करमिलाहुआ सफेदकोंहलेकारस पीनेसे समस्तप्रमेह, रुधिरस्राव, क्षयजकास, मूत्रकृच्छ्र, रक्तप्रदर, वली, पलित, वीर्य–तेज और बलकाह्रास, नपुंसकत्व इनसबको यह नष्टकरता है। श्वासमें सोंठ, अतिसारमें जायफलऔर जीरा, शीतप्रधान-व्याधिमें मरिच और सहिजनकीजड़कारस अथवा देशी और खुरासानी अजवाइन, अकल्करा और चिरायता, अजीर्णमें सचल और सोंठ, प्लीहामें गोमूत्र और सुहागा, धातुक्षीणतामें गुड़ ,अथवा तुलसी, शिलाजीत और पोस्तकेडोडे अथवा पानकेरसकेसाथ देवे ॥ ३४२ ॥

३४३ वङ्गेश्वररसः (सप्तदशः)

वङ्गभस्म त्रयोभागा वङ्गपादं रसं क्षिपेत्।
रसतुल्यं विषं योज्यं त्रिभिस्तुल्यं मृतायसम्॥१६७७॥
गन्धकं विषतुल्यं स्यान्मर्दयेद्भृङ्गजद्रवैः।
कूपिकायां विनिक्षिप्य तेजोयन्त्रे तु पाचयेत्॥१६७८॥
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
देवपुष्पं सकर्पूरं चातुर्जातं फलत्रिकम् ॥ १६७९ ॥
जातीफलत्रिकं सर्वमेतदेकत्र चूर्णयेत्।
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा भृङ्गद्रावैर्दिनत्रयम् ॥ १६८० ॥
मर्दयेन्मधुना गाढं नाम्ना वङ्गेश्वरो रसः।
प्रमेहेषु च सर्वेषु मूत्रकृच्छ्रे क्षये तथा ॥
मूत्रोत्थवातरोगेषु गुल्मे सर्वहरः स्मृतः ॥ १६८१ ॥

रसायनस., प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—वङ्गभस्म १२ माशे, पारदभस्म और शुद्धवछ-नाग ३–३ माशे, लोहभस्म १८ माशे, शुद्धगन्धक ३ माशे लेकर सबको मिलाय बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दन कर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लौंग, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, हर्रे, बहेड़ा, आवला, जायफल, विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक येसब ३–३ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वरसमें मिलाय भंगरे-केरससे ३ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख छोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त-प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, मूत्राशयोत्थवातरोग और गुल्म इन-सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३४३ ॥

३४४ वङ्गेश्वररसः (अष्टादशः)

रसं वङ्गं समं कृत्वा चतुर्भागं तु गन्धकम्।
कुमारीरससंयुक्तं दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ १६८२ ॥
फलत्रयकषायेण त्रिदिनं मर्दयेद्दृढम्।
मृदुदीपमध्यतीव्राग्नौ वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १६८३ ॥
स्वाङ्गशीतं समादाय चूर्णयेद्भिषगुत्तमः।
अश्वगन्धाऽमृतासारमोचारसशतावरी- ॥ १६८४ ॥
गोक्षुरधात्रीकूष्माण्डीवाराहीपत्रमागधी-।
त्रिफलामर्कटीमुस्तायष्टीमधुसमन्वितम् ॥ १६८५ ॥
सर्वसाम्यसितायुक्तं चूर्णं पलार्द्धसंयुतम्।
गुञ्जाचतुष्टयं मात्रा गोक्षीरस्याऽनुपानतः ॥ १६८६ ॥
प्रातरुत्थाय सेवेत लवणाम्लौ विवर्जयेत्।
बहुमूत्रं मूत्रकृच्छ्रं रक्तशुक्रप्रमेहकम् ॥ १६८७ ॥
मधुमेहं नष्टशुक्रं नष्टलिङ्गञ्च नाशयेत्।
सर्वप्रमेहशमनो वङ्गेश्वर इति स्मृतः ॥ १६८८ ॥

रसायनस ,वै. चि ,यो र ,र पा. प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा और वङ्गभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारकेरससे एकदिन-मर्दनकर ३ दिन त्रिफलाकेकाढ़ेसे मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़-मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख दीप, मध्य और तीव्र इसक्रमसे १२पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। फिर असगन्ध, गिलोयसत्त्व, मोचरस, शतावर, गोखरू, आवले, भुईकोंहला, वाराही, पत्रज, पीपल, त्रिफला केवाच नागरमोथा, मुलहठी, सबसमभागके चूर्णमें बरा-बरकी शक्करमिलावे। इसमेंसे २ कर्ष चूर्ण और पूर्वरसकी ४ रत्ती मिलाकर गोदुग्धकेसाथ रोजाना सुबहमेंलेनेसे बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, रक्तशुक्र, शुक्रप्रमेह, मधुमेह, शुक्रक्षय, ध्वजभङ्ग, इनसबको यह नष्टकरताहै। इसके प्रयोगमें लवण और अम्ल वर्जितकरना ॥ ३४४ ॥

३४५ वङ्गेश्वररसः (ऊनविंश.)

सूतं गन्धकतालसाऽभ्रसशिलं प्रोक्तं तथा माक्षिकं,
सर्वं तुल्यमथापि वङ्गममलं चाऽर्द्धाऽर्द्धभागं नयेत्।
तत्सम्मर्द्य च दुग्धिकाभवरसैस्तद्धंसपादीद्रवै-,
स्तद्धारिद्रहरीतकीभवरसे यावत्त्रयो वासराः ॥
एवं यत्नविधौ परेशकृपया जायेत वङ्गेश्वरः,
सर्वान्मेहगदान्निहन्ति सततं मूत्राद्विदोषाञ्जयेत् १६८९

र. सु , प्रमेहे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, रसमाणिक्य, अभ्रकभस्म, शुद्ध-मैनसिल और सोनामाखी समभाग और वङ्गभस्म सबसेचतुर्थांश लेकर नीलवर्णकज्जलीकर छोटीदूधी, हंसराज, हल्दी, हर्रे इनके रसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रख-छोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह और मूत्राशयकेदोष नष्टहोतेहैं ॥ ३४५ ॥

३४६ वङ्गेश्वररसः (विंशः)

भागचतुष्कं वङ्गं मृतं हि शुद्धं रसं त्रिभागैकम्।
पृथग्द्विकं हरितालं काञ्जिकपिष्टं शरावसम्पुटके१६९०
पुटेद्गजाख्ये यन्त्रे वङ्गेश्वरनामतः प्रसिद्धरसः।
वङ्गेश्वरोऽयमबले बलदो नृणां हि रसिकानाम् १६९१

रसचि , वाजीकरणे।

भाषा—वङ्गभस्म ४ भाग शङ्खभस्म और पारा १–१ भाग रसमाणिक्य अथवा हरितालभस्म और गोदन्तीभस्म १–२ भाग लेकर एकदिन काञ्जीमें मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़। इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतक अग्निबलानुसारमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेस यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर नपुंसकत्वको दूरकरताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ वङ्गेश्वररसः (एकविंश)

रसयङ्गखहेतिभिस्समान
 जतु चाश्मप्रभव मधुप्रयुक्तम्।
सितयाऽखिलमेहनाशनाय
 खलु माषत्रयसम्मित निषेवेत ॥१६९२॥

चि क, प्रमेहाऽधिकार।

भाषा—पारद वङ्ग, अभ्रक ताम्रभस्म समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्ध शिलाजीत मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा मधु और शकर मिलाकर देनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥

३४८ वङ्गेश्वरादिवटी

मृत वङ्ग मृत लाह मृगनाभिश्च कुङ्कुमम्।
अभ्रक पारदश्चैव हिङ्गुलु गन्धकस्तथा ॥ १६९३ ॥
मस्तकी नागफेनश्च कङ्कोल जातिपत्रकम्।
जातीफलं प्रियाल त्वक् शुण्ठी मर्कटीयीजकम् १६९४
यला तुगा च कर्पूरा लवङ्गं गजपिप्पली।
आकल्लकरभश्चैव नागा भुजगवल्लरी ॥ १६९५ ॥
नागकेशरमुस्ताग्निचन्दन चव्यक शटी।
मरिच पत्रकं यष्टी शाल्मलीत्वक्च कट्फलम् १६९६
वर्षाभूर्मुशली चैव क्षीरकन्द शतावरी।
कृष्णाऽश्वगन्धा कनकं मासीमोचरसौ यला॥१६९७॥
भृङ्गराजश्च गोकण्ट कुन्दुरु सयवानिक।
समुद्रशापबीजानि त्रिपञ्चाशन्मित गणम् ॥ १६९८ ॥
योजयेत्समभागश्च सूक्ष्मचूर्णीकृत भिषक्।
अष्टांशा विजया शुद्धा सिता सर्वसमा क्षिपेत् १६९९
गुटिका मधुसर्पिर्भ्यां कर्षमात्रा विधीयते।
प्रभाते वाऽथ मध्याह्ने सन्ध्याया या विशेषत १७००
पक्का खादेदनुपिबेत्पय शर्करया युतम्।
यलवृद्धिमवाप्नोति रेतावृद्धि विशेषत ॥ १७०१ ॥
रेत स्तम्भ वय स्तम्भ वलीपलितनाशनम्।
क्षैण्यज्वरातिसाराश्च ग्रहणीं नाशयेदपि ॥ १७०२ ॥
नारीद्रवकरश्चैव नारीद्रवकरन्तथा।
कान्तिद प्रतिभादश्च बुद्धिमेधाविवर्धनम् ॥
संवत्सरप्रयोगेण सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १७०३ ॥

वृ यो त वाजीकरणे।

भाषा—वङ्ग और लोहभस्म कस्तूरी केशर अभ्रक पारा और हिङ्गुलभस्म, शुद्धगन्धक, मस्तगी, अफीम, शीतलचीनी, जावित्री, जायफल, चिरोंजी, तज सोंठ, केवाचकी गिरी, बला, वंशलोचन, शुद्धकपूर, लौंग, गजपीपल अकलकरा, नागभस्म, कुलिंजन, नागकेशर नागरमोथा, चित्रक, लाल और सफेद चन्दन, चव्य कचूर, मरिच पत्रज, मुलहठी सेंमलकीछाल कायफल पुनर्नवा मुशली, क्षीरविदारी अथवा दूधियाकन्द, शतावर, पीपल असगन्ध धतूरकेबीज, नग मासी, मोचरस महाबला स्याहम्फेदभंगरा, गोखरू, कुंदरू, अजवाइन, समुद्रशोषकेबीज, येसब समभाग आठवांहिस्सा भाग, शक्कर सबकीबराबर मिलाकर मधु और घीमें १–१ तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल, मध्याह्न अथवा सन्ध्याकालमें लेकर दूध पीनेसे बल और शुक्रकीवृद्धिहोतीहै शुक्र और अवस्थाकास्तम्भनहोताहै। वली, पलित, क्षय ज्वर, अतिसार ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै। कान्ति प्रतिभा, बुद्धि मेधा, इनसबको बढाताहै। वर्षभरखातार प्रयोगकरनेस समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३४८ ॥

३४९ वचालोहम्

वचामयैस्तुल्यमयोमयं रजा
 विलीढमाज्येन मधुस्वणेन तत्।
निहन्ति शूलं परिणामसम्भव
 यलोद्धत कसमिवासुरं हरि ॥ १७०४ ॥

लो प, टो, शूलाधिकार। टोडरानन्दे आमय न दृश्यते।

भाषा—वच और कुठ समभाग लेकर दोनोंकी बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा घी और मधुकेसाथ लेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० वज्रकायवटी

भ्रामकं माक्षिकश्चैव लोहत्रयसमन्वितम्।
शक्तिबीजसमायुक्त बीजत्रयसमन्वितम् ॥ १७०५ ॥
त्रिदण्डीमर्दित सूतमेकीकृत्य च गोलकम्।
अन्धमूषागतं ध्मातं समावर्तं तु कारयेत् ॥ १७०६ ॥
पूजा कृत्वा क्षिपेद्वक्त्रे षण्मासात्स भवेत्प्रिय।
अभय सर्वशत्रूणा वज्रकायो महाबल ॥ १७०७ ॥

रसार्णवे, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—भ्रामकलोह सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, रजत ताम्र, शुद्धगन्धक, सुवर्ण–रजत और ताम्रबीज तथा त्रिदण्डी (दिव्यौषधि) के रसमें मर्दनकरके गोलीबनायाहुआ पारा, यसब समभाग लेकर अन्धमूषामें बन्दकर धमनकराके गोलीबांधे। फिर कुमारीवगैरहको पूजाकर इसगोलीको ६ महीनेतक मुखमें रखनेसे और रसायनोक्त विधिसे रहनेसे वज्रकाय और महाबल होकर समस्तशत्रुओंके भयसे रहित होजाताहै ॥ ३५० ॥

३५१ वज्रखेचरीगुटिका (प्रथमा)

शुद्ध सूत मृत वज्र व्योमसत्त्वं सहाटकम्।
अम्लवर्गे समं सर्वं मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ १७०८ ॥

तद्गोलकं दृढं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ।
गोजिह्वा ब्रह्मकार्पासी राजिका यवचिञ्चिका॥१७०९॥
वन्ध्या सर्वं समं पिष्ट्वा पूर्वगोलं प्रलेपयेत् ।
रुद्ध्वा गजपुटे पक्त्वा समुद्धृत्याऽथ लेपयेत् ॥१७१०॥
रुद्ध्वा मूष्यां धमेद्गाढं गुटिका वज्रखेचरी ।
जायते धारिता वक्त्रे वत्सरान्मृत्युनाशिनी ॥ १७११॥
भूताङ्कवटचूर्णन्तु पलैकं सितया युतम् ।
भक्षयेत्कामणार्थन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः ॥ १७१२ ॥

र. खं , र. का., रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अभ्रकसत्व, सुवर्ण इनकीभस्में समभागलेकर जभीरीवगैरह अम्लवर्गसे ३ रोज़ मर्दनकर गोला-बनाय छायामें सुखाकर वनगोभी, लालकपासकेबीज, राई, तितली, बांझखेरसा येसब गोलेकी बराबरलेकर अच्छीतरह-पीस गोलेपर लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । फिर दूसरा लेपदेकर वज्रमूषामें बन्दकर दृढधमनकरानेसे गुटिका तैयारहोगी इसे एकवर्षतकमुहमें रक्खे और कालीमुसली तथा पाषाणभेद समभागलेकर बराबरकीशक्करमिलाय एकपल लेकर दूधपीनेसे समस्तरोगोंसे निर्मुक्तहोकर पूर्णायुको प्राप्तहोताहै॥

३५२ वज्रखेचरीगुटिका (द्वितीया)

वज्रभस्म समं सूतं हंसपाद्या द्रवैस्त्र्यहम् ।
मर्दितं ह्यन्धलिप्तायां मूषायां चान्धितं पुटेत् ॥१७१३॥
भूधराख्ये दिवारात्रौ समुद्धृत्याऽथ तस्य वै ।
पूर्वाद्धं पारदं दत्त्वा हंसपाद्या द्रवैस्त्र्यहम् ॥ १७१४ ॥
मर्दितं ह्यन्धलिप्तायां मूषायां चान्धितं धमेत् ।
तत्खोटं धमनाच्छोध्यं काचटङ्कणयोगतः ॥ १७१५ ॥
नक्षत्राभं भवेद्यावत्तावद्धाम्यं पुनःपुनः ।
तद्रसं व्योमसत्त्वञ्च काञ्चनञ्च समं समम् ॥ १७१६ ॥
समावर्त्य ततः कार्या गुटिका वक्त्रमध्यगा ।
वज्रखेचरिका नाम वत्सरान्मृत्युनाशिनी ॥ १७१७ ॥
वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकायो भवेन्नरः ।
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्षमाज्यैः पिबेदनु ॥ १७१८ ॥

र. खं, रसायने ।

भाषा—हीराभस्म और अग्निस्थायी शुद्धित पारा सम-भागलेकर हंसराजकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय नागवज्र भस्मलिप्त अन्धमूषामें बन्दकर एकदिनरात भूधरयन्त्रमें अग्नि-देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वप्रमाणमें नयापारा मिला-कर हंसराजके रससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धलिप्तमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे खोटतैयारहोगा। इसखोटको प्रकाशमूषामें रखकर धमनकरे और सुहागा तथा काचनमककी चुटकी देता जाय, इससे तमाममल जलकर एकदमसफेद चमकदार वस्तु जुदी होजायगी फिर उसकीबराबर अभ्रकसत्व और शुद्धसुवर्ण मिलाकर एकजगह गलाकर गोलीबनाय मुहमें रक्खे ऊपरसे निर्गुण्डीके कन्दअथवाजडका एककर्षचूर्ण घीमें मिलाकर लेवे। इसतरह एक-वर्षभर प्रयोगकरनेसे वलीपलितसे निर्मुक्तहोकर वज्रकायहोताहै॥

३५३ वज्रगर्भपोट्टलीरसः

वज्रहेमरसभस्मगन्धकान्वृद्धितश्च परिमर्दयेद्दिनम् ।
चित्रकार्द्रकरसे वराटकान्पूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत्
वज्रगर्भवरपोट्टलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः ।
रक्तिकात्रयमितं रसं ददेद्वल्लपट्कमरिचैर्घृतप्लुतैः१७२०
सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेच्च कुरु नाऽत्र संशयम्
रोगलेशरहितोऽपि योजयेत्पुष्टिवुद्धिवलवीर्यवृद्धये ॥

र. दी., क्षयादिरोगे ।

भाषा—हीरा, सुवर्ण, पारदभस्म, शुद्धगन्धक, ये क्रमवृद्ध-भागलेकर अच्छीतरह शुष्कमर्दनकर चित्रक और अदरखकेरससे एकदिन मर्दनकर समभाग पीलीकौड़ियोंमें भर गाय अथवा आकके दूधमें पिसेहुए सुहागेसे कौड़ियोंका मुंहबन्दकर जंभीरी अथवा बिजोरेके अन्दर कौड़ियोंको डालकर ४ तह मलमल वगैरहके कपड़ेसे लपेटकर कच्चेसूतसे गेंदकेसदृश बनाय ऊपर ६–७ कपडमिट्टी लगाकर अच्छीतरह सुखाय हाथभर लम्बेचौडे गड्ढेमें जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा १८ रत्ती-मरिचकेचूर्णकेसाथ घीमेंमिलाकरदेनेसे क्षयादिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै रोगरहितमनुष्यको देनेसे शरीर, बुद्धि, बल और वीर्यकी वृद्धिहोतीहै ॥ ३५३ ॥

३५४ वज्रगर्भरसः

सूतं गन्धं हेमभस्मार्द्धकेन
घृष्ट्वा यामं कान्तमूषासुगर्भे ।
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा भूधरे तं पुटेत
सूतः सिद्धो जायते वज्रगर्भः ॥ १७२२ ॥
घर्षेदभ्रं नागवल्लीरसेन
मध्वाज्याभ्यां रक्तिकां तस्य दद्यात् ।
दिव्यो देहो जायते वत्सराऽर्द्धे
रोगाः सर्वे मासतो यान्ति नाशम् १७२३
क्षारं तीक्ष्णं भूरि चाऽम्लञ्च वर्ज्यं
सूताऽजीर्णं जायते तेन यस्मात् ।
सूताऽजीर्णे नाभिदेशे [illegible] शूलं
दाहो मान्द्यं जाड्यमालस्यनिद्रे ॥१७२४॥
सत्त्वत्यागो जायते वुद्धिनाश-
स्तत्त्यागार्थं कन्यकाकन्दमाज्यम् ।
दद्याद्वद्धा खण्डमाध्वीकयुक्तं
प्रातःकाले त्रैफलं चूर्णमत्र ॥ १७२५ ॥
व्योषं यद्वा वीजपूरस्य नीरैः
पथ्यं यद्वा शुण्ठिखण्डप्रयुक्तम् ।
जीर्णे पश्चात्खण्डमासेवयेत
रात्रौ दुग्धं प्रातराज्यं सभक्तम् ॥ १७२६॥
दध्याज्यं वा सन्ततं वाऽपि गोजं
त्वेलाजाजीसैन्धवैर्वा मरीचैः ।

पथ्यं ग्राह्यं गौल्यबाहुल्ययुक्तं
स्नानं कोष्णेनैव नीरेण कार्यम् ॥ १७२७ ॥
पाने नीरैः शीतलै र्वासयुक्तै-
र्ध्यानं कुर्यात्पार्वतीवल्लभस्य ।
शक्त्यादानं योगिनीतर्पणञ्च
हिंसा वर्ज्या प्राणिमात्रे च नित्यम्॥१७२८॥
भक्तिं कुर्याद्ब्राह्मणानां गुरूणां
तैलाभ्यङ्गं वर्जयेच्चाऽतिशीतम् ।
वातं घर्मं रम्यदेहप्रसिद्ध्यै
कुर्यादेतत्सर्वमेव प्रयत्नात् ॥ १७२९ ॥

र. दी., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, सुवर्णभस्म आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कान्तपाषाणकीमूषामें बन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदेनेसे यह वज्रगर्भरस तैयारहोताहै। पानकेरसमें १ रत्ती अभ्रकभस्म और १ रत्ती वज्रगर्भरस मिलाकर मधु और घीकेसाथ देनेसे ६ महीनेमें दिव्यदेह होजाताहै। एकमहीनेके सेवनसे समस्तरोग दूरहोतेहैं। क्षार, तीक्ष्ण, खटाई इनसे पारेका अजीर्णहोजाताहै इसलिये इन्हें न देवे। दैवसंयोगसे सूताऽजीर्णहोगयाहो तो नाभिमेंशूल, दाह, अग्निमान्द्य, जड़ता, आलस्य और निद्रा होतीहै। शरीर सत्त्वहीन होजाता है। बुद्धिभ्रंश हो तो उसकी निवृत्तिकेलिये घीकुंवारका रस घीकेसाथ अथवा शक्कर या मध्वासवके साथ, अथवा प्रातःकाल त्रिफला या त्रिकटुकाचूर्ण बिजौरेके रससे देवे। अथवा सोंठ और शक्करकेसाथ देवे। जीर्णहोनेपर रात्रिमें शक्कर और दूध देवे। प्रातःकाल घीकेसाथभातदेवे। अथवा गायका दही और घी देवे। इलायची, जीरा, सैन्धव और मरिचकेसाथ पथ्य देवे। अथवा गुड़से बनेहुए पदार्थ पथ्यमें देवे। थोड़े गरमजलसे स्नानकरावे सुगन्धद्रव्याधिवासित ठंढाजलपीवे। परमेश्वरकाध्यानकरे और यथाशक्ति दानदेवे। योगिनियोंका तर्पणकरे। प्राणीमात्रकी हिंसासे परहेजकरे। ब्राह्मण और गुरुजनोंमें भक्तिरक्खे। तैलाभ्यङ्ग, अतिशीतवात, धूप इनसबका त्यागकरे ॥ ३५४ ॥

३५५ वज्रगुग्गुलुः

त्रिकटु त्रिफला दन्ती चित्रकं त्रिवृता शटी ।
विडङ्गं मुस्तकं रात्रि र्वाकुचीन्द्रयवं वचा ॥ १७३० ॥
अङ्कोठमूलं कुष्ठञ्च राजवृक्षस्य मूलकम् ।
एतेषां पलिकं ग्राह्यं तत्समं गुग्गुलं शुभम् ॥ १७३१॥
भल्लाततैलं द्विपलं गोघृतेन जर्डीकृतम् ।
तत्र ताम्रं हरीतालं द्वयोः कुर्यात्पलद्वयम् ॥ १७३२ ॥
सर्वमेकीकृतं यत्नात्पेषयित्वा सुपिण्डकम् ।
घृतभाण्डे तु संस्थाप्य खादेन्माषचतुष्टयम् ॥१७३३॥
गुग्गुलु र्वज्रनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ।
देशं कालं वयो वह्निं दृष्ट्वा या वृद्धिवर्धनम् ॥१७३४॥
वातरक्तं निहन्त्याशु नानादोषसमुद्भवम् ।
श्लीपदं शोथशूलानि मेहमेदोगलामयान् ॥ १७३५ ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाकासश्वासमरोचकम् ।
जीर्णज्वरञ्च सानाहं बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥
सद्ग्रहग्रहणी दुष्टां पाण्ड्वादित्रितयं जयेत् ॥ १७३६ ॥

र. र., वातरक्ते ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, दन्ती, चित्रक, निशोत, कचूर, विडङ्ग, नागरमोथा, हल्दी, बाकुची, इन्द्रजव, वच, अङ्कोलकीजड़, कुठ और अमिलतासकीजड़ १-१ पल, शुद्धगूगल सबकी बराबर, भिलावेकातैल २ पल, ताम्र और हरितालभस्म १-१ पल लेकर बारीक पीस गूगलको घीकीसहायतासे कूटकर दवाओंको एकजीव मिलाकर घीके बर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ माशेकी मात्रामें देश, काल, अवस्था और अग्निबल देखकर कमी अथवा वृद्धिकरके उपयोगकरे। इसके सेवनकरनेसे वातरक्त, श्लीपद, शोथ, शूल, मेह, मेद, गलेकेरोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, कास, श्वास, अरुचि, जीर्णज्वर, आनाह, बल-वर्णाग्निनाश, दुष्टसङ्ग्रहणी, पाण्डु, कामला, हलीमक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ वज्रगुटिका (प्रथमा)

शैलस्य धातो रजसां शिलाभ्यः
सूर्यप्रतापाज्जतुसन्निकाशम् ।
कृष्णं स्रवेन्मूत्रसमानगन्धि-
शिलाजतु प्राकृतमास्तदाहुः ॥ १७३७ ॥
रूप्यादिधातो र्गलितं द्वपञ्चप-
स्तेभ्यः प्रशस्तं प्रवदन्ति पूर्वम् ।
विशोधयेत्तत्सुदिने सुपूते
द्विपञ्चमूलीसलिले कटाहे ॥ १७३८ ॥
लौहे समालोड्य दिवाकरस्य
सन्तापनं रश्मिभिरेव कुर्यात् ।
प्रणीततापात्सरवद्गृहीत्वा
पुनःपुनस्तत्समयोद्धरेच ॥ १७३९ ॥
तावत्प्रदेयं सलिलं क्रमेण
गाढस्य सन्दर्शनमेव यावत् ।
तावच्छिलाजत्वभिसन्निविष्टं
समुद्धृतं यावदशेषतश्च ॥ १७४० ॥
अष्टौ पलान्यस्य विशोधितस्य
ततः क्रमाद्भावयितुं यतेत ।
द्विपञ्चमूल्यौ चिरविल्वमुस्तौ
पटोलनिम्बत्रिफलाः पलांशाः ॥ १७४१ ॥
सुपिप्पली रोहिणि जीरकञ्च
द्रोणेऽम्भसस्ताद्विपलान्यथोक्तान् ।
प्रक्वाथ्य चैवाष्टमभागशेषं
तस्मात्सृजेद्भावनमल्पमल्पम् ॥ १७४२ ॥
याथेऽथ लौहे परिशोषयेत्त-
त्पुनःपुनर्भावितमेव यावत् ।

पलद्वये मागधिकर्कटाख्ये
चूर्णीकृते लोहरजःसमांशे ॥ १७४३ ॥
पलं बृहत्याः सनिदिग्धिकायाः
सितोपलामष्टपलोन्मितां तु ।
पलत्रयं वेणुजरोचनाया-
मधुत्रयं तद्विनिवेश्य कृत्वा ॥ १७४४ ॥
त्रिषष्टिसंख्यान्वटकान्विधिज्ञः
खादेत्सुरावारिपयोऽनुपानात् ।
रसेन वा लावकपिञ्जलानां
तोयेन वा दाडिमसंस्कृतेन ॥ १७४५ ॥
भुक्तैस्तथाऽभुक्तवति प्रदेया
रोगार्दिते निष्परिहारिणी च ।
कुष्ठोदरश्वासगलामयांश्च
भगन्दरान्मूत्रविबन्धगुल्मान् ॥ १७४६ ॥
यक्ष्माणमर्शांसि सकासहिक्कां
प्लीहाऽग्रमांसं विषमज्वरांश्च ।
वह्नेश्च दीप्तिं परमां करोति
वलींश्च हन्यात्पलितानि चैव ॥ १७४७ ॥
सेव्या त्वियं वज्रकनामधेया
मुनिप्रदिष्टा वटकप्रधाना ।
वर्ज्याः कुलत्थाश्च सकाकमाच्यः
कपोतमांसश्च सदा प्रयोगे ॥ १७४८ ॥

ग. नि कुष्ठाऽधिकारे ।

टि०—शिलाजतुशोधन पञ्चाङ्गलोहेऽपीदृशमस्ति परन्तु तत्रार्कादिपञ्चधातुसंयोगेन योगस्य सम्पादनमस्त्यत्र तु केवले शिलाजतुनि काष्ठौषधिनिषेकेण योगसम्पादनमिति विशेष ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, लोह इनधातुओंका सूक्ष्मांश पर्वतोंमेंसे सूर्यके प्रखरतापसे द्रुतहोकर लाखकीतरह बाहर निकलताहै और उसमें गोमूत्रका गन्धहोताहै उसे जाननेवाले शिलाजतु कहतेहैं। इनमेंसे कृष्णवर्ण जो लोहयुक्तहवे वह सबसे श्रेष्ठ मानाजाताहै। इनरहव स्वकीयधातुकेरगका हुआ करताहै। बाहर आकर उसमें वालरमिट्टयादि इतर मल मिश्रित होजातेहैं। मूलसे ये खालियेजाय तो नानातरहके उपद्रवोंको करतेहैं। इसलिये उनको शुद्धकरके काममें लेनाचाहिये। दशमूलके गरमक्वाथको कड़ाहीमें डालकर अशुद्धशिलाजीतको अच्छीतरह घोलकर कड़ीधूपमें रक्खे और रोज उसे हिलाताहै। जब तमामद्रव पानीमें मिलजाय तब उसे हिलाना बन्दकरके उसीजगह पड़ारहनेदे। इसद्रवके ऊपर मलाईकी तरह एक थर (पटल) जमजायगा उसे धीरजसे निकालकर दूसरे पात्रमें रक्खे और उसद्रवको अच्छीतरह चलादेवे। क्वाथ सूखकर द्रवके गाढ़े होजानेपर दूसरा क्वाथ डालदियाकरे। इसक्रियाको ग्रीष्म ऋतुके प्रारम्भमें शुरूकरे। जब शिलाजीत निकलआवेगा और केवल मल नीचे रहजायगा तब थर जमना बन्दहोजायगा। उसे मल समझकर फेंकदेवे। निकालेहुए शिलाजीतको सुखाकर रखछोड़े इसका चाहे जिस योगमें उपयोगकरे। वर्तमानसमयमें व्यापारीलोग इस प्रक्रियासे तैयार नहीं करतेहैं किन्तु जहांपर अधिकप्रमाणसे यह निकलताहै वहांपर खोदकर खानें बनालीहैं और वहांकी मिट्टी तथा पत्थर खोदकर उसे गरमपानीमें औटाकर छानलेतेहैं उसपानीको फिर आगपर गाढ़ाकरके बेच देतेहैं। इसमें खराबी यह होतीहै कि प्रथमतो इनमेंसे समस्त मल जुदा नहीं होता दूसरे यह कड़ाहीमें संभालरखनेपरभी पेंदेमें लगकर जलनेलगताहै उससमय इसमें रहेहुए स्नेहादिक बहुतसे पदार्थ जलकर भस्महोजातेहैं और इसका जो असलीस्वादहै वहभी खराबहोजाताहै। इसीलिये व्यापारियोंसे लियेहुए शिलाजीतमें शास्त्रोक्तगुण नहीं मिलतेहैं। मधुमेहादिकमें जो सुश्रुतचरकहने इसके गुण लिखेहैं वे शुद्ध शिलाजीतकेहैं और वे सचेहैं। अस्तु।

पूर्वोक्तप्रकारसे शोधेहुए ८ पल शिलाजीतको लोहेके खरलमें डालकर दशमूल, गुड़रूच, नागरमोथा, परवल, नीम, त्रिफला १-१ पल, पीपल, रोहण, दोनोंजीरे २-२ पल लेकर १६ सेर पानीमें क्वाथकरे आठवाभाग शेष रहनेपर छानकर धूपमें रक्खे जिसमेंकि क्वाथ बिगड़ने न पावे इसमेंसे थोड़ा २ क्वाथ शिलाजीतमें डालकर धूपमें रखकरघोंटे (धूपमें द्रव जल्दी सूखजायगा नहीं तो बहुत समय लगेगा) तमामक्वाथ सूखजानेपर पीपल, काकड़ासींगी १-१ पल, लोहभस्म, २ पल, वनभाटा, भटकटैया १-१ पल, मिश्री ८ पल, वंसलोचन ३ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पूर्वोक्त शिलाजीतमें मिलाकर घी, शक्कर और मधु इतना मिलावे कि गोलिया बनजायं। इसकी ६३ गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मद्य, जल, दूध अथवा लवा और सफेदतितिरोंकामांसरस, अथवा अनारका शरबत तथा भोजन इनमेंसे जैसी योग्यताहो उसकेसाथ देनेसे कुष्ठ, उदर, श्वास, गलरोग, भगन्दर, मूत्रविबन्ध, गुल्म, राजयक्ष्म, बवासीर, कास, हिचकी, प्लीहा, अग्रमांस, विषमज्वर, मन्दाग्नि, वलीपलित, इनसबको यहयोग नष्टकरताहै। कुष्ठातिरिक्तरोगोंमें इतनी मोटी मात्राकी जुरूरत नहीं। अग्निबल देखकर मात्राका निर्धारणकरे। कुष्ठरोगमें प्राय कर अत्यधिकमात्राका उपयोग हुआकरताहै। उसी अधिकारमें इसे ग्रन्थकारने लिखाहैइसलिये उसकी इतनी अधिकमात्रा बनाईहै। इसप्रयोगमें कुलथी, मकोय और कपोतमांसको छोड़कर कोईविशेष परहेज़ नहीं ॥ ३५६ ॥

३५७ वज्रगुटिका (द्वितीया)

कान्तं वज्रं हिङ्गुलाभ्रे रसेन्द्रं
कृत्वा खोटं भूधरेपञ्चमेषम् ।
मन्दं मन्दं पाचितं स्याद्गुटीयं
दाक्षाखोर्यं धारयेचास्य वक्त्रे ॥ १७४९ ॥

र. ल., टो., र. पा., रसायने ।

भाषा—कान्तलोह, हीरा, हिङ्गुल, अभ्रक, शुद्धसिंगरफ, इनका खोट बनाय १५ दिनतक भूधरयन्त्रमें मन्दमन्द अग्निपर पकानेसे गोली तैयारहोगी। इसगोलीको मुंहमेंरखनेसे क्षय आर अर्शोक समुदायका निवारणहोताहै ॥ ३५७ ॥

३५८ वज्रगुटिका (तृतीया)

रोहिणीं चिरविल्वञ्च कुटजञ्च फलत्रिकम् ।
मुस्तञ्च पिप्पलीमूलं यष्ट्याह्वं निम्बनागरम् ॥१७५०॥
एतत्कषायै विधिवद्भावनाश्च पृथक्पृथक् ।
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥ १७५१ ॥
यांद्याः कर्कटशृङ्ग्याश्च मागध्याश्च पलं पलम् ।
धात्री दशपलार्द्धञ्च व्याघ्रीमूलत्वचं तथा ॥ १७५२ ॥
पत्रं त्वगेलां गन्धार्थं दत्वा चूर्णानि कारयेत् ।
तं विमृद्य यथान्यायं दद्यान्मधु पलत्रयम् ॥ १७५३ ॥
वर्तयेद्वटकान्धीमानुदुम्बरफलोपमान् ।
तत्रैकं भक्षयेत्काले सानुपानं यथाबलम् ॥ १७५४ ॥
विडङ्गक्काथयूषाम्बुसुरारिष्टरसादिभिः ।
क्षीरैर्वा दाडिमाम्लैर्वा पथ्यभोजी भवेन्नरः ॥१७५५॥
स जयेत्पाण्डुरोगार्शः कुष्ठमेहगलग्रहान् ।
वज्राचोऽयं समाख्यातो वटको हि महागुणः ॥
नित्यमाश्रमिणां योज्यमेतत्स्याच्च रसायनम् ॥१७५६॥

र.का., पाण्डुरोगे ।

भाषा—रोहण, करञ्ज, कुरैयाकीछाल, त्रिफला, नागरमोथा, पिपलामूल, मुलहठी, नीमकीछाल और सोंठ इनकेक्वाथोंसे यथाक्रम ८ पल शिलाजीतको भावनादेकर ८ पल शक्कर, वंशलोचन, काकड़ासींगी और पीपल १–१ पल; आवले और बनभांटेकी जड़कीछाल ५–५ पल, पत्रज, तज और इलायची १–१ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर शिलाजीतमें मिलावे। और पूर्वेक्वाथोंसे १–१ भावना देकर सूखनेपर ३ पल मधुदेकर १–१ तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अथवा अग्निबल देखकर मात्रानियतकर विडङ्गकाक्काथ, मुद्गयूप, मद्य, अरिष्ट, मांसरस, दूध, अनारकारस इनमेंसे किसीएक अनुपानकेसाथ सेवनकरनेसे तथा पथ्यभोजनकरनेसे पाण्डु, बवासीर, कुष्ठ, प्रमेह, गलग्रह इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। इसके निरन्तरसेवनकरनेसे यह रसायनका कामकरताहै॥३५८॥

३५९ वज्रघनोरसः

कण्टकारीरसैः सप्तदिनं भाव्यन्तु सोमलम् ।
एवं वारत्रयं काचकूप्यां सत्वं तु पातयेत् ॥ १७५७ ॥
एतत्सत्वे पादसूतं सगन्धं कज्जलीकृतम् ।
कण्टकारी मूषिकायां शरावे पाचयेत्पुनः ॥
यामाष्टकं वज्रघनो रसः सर्वोदरार्तिजित् ॥ १७५८ ॥

र.का., उदराधिकारे ।

भाषा—भटकटैयाके अङ्गस्वरससे ७ दिन सोमलको मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी क्रमाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् ७ दिनमर्दनकर सत्त्वपातनकरे। इसतरह ३ वारकरके इससे चतुर्थांश शुद्धपारा और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैयाके कल्ककी मूषामें बन्दकर शराव सम्पुटमें रख ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रख ८ पहरकी क्रमाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधे आधे चावलभरकी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त उदररोगोंको नष्टकरताहै॥३५९॥

३६० वज्रतुण्डावटी (प्रथमा)

स्वर्णताराऽर्कमुण्डञ्च वङ्गं नागाऽभ्रसत्वकम् ।
एतत्सर्वसमं चूर्णं चूर्णांशं मृतवज्रकम् ॥ १७५९ ॥
सर्वतुल्यं शुद्धसूतं सर्वं दिव्यौषधीद्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु वज्रमूषान्धितं धमेत् ॥ १७६० ॥
गुटिका वज्रतुण्डेयं जायते धारिता मुखे ।
जरामृत्युशस्त्रसङ्घं नाशयेद्वत्सरात्किल ॥ १७६१ ॥
वज्रकायो महावीरो जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
कुमार्याः स्वरसं ग्राह्यं गुडेन सह लोडयेत् ॥
पलैकं क्रामकं लेह्यमनुपानं सदैव हि ॥ १७६२ ॥

र.स., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड, वङ्ग, नाग, अभ्रकसत्त्व, इनसबका बारीकचूर्ण समभाग लेकर सबसे चतुर्थांश हीराभस्म और सबकीबराबर शुद्धपारा मिलाकर एकदोदिन शुष्क मर्दनकर दिव्यौषधियोंके द्रवसे एकरोज़ मर्दनकर वज्रमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे गोली तैयारहोगी। इसगोलीको एकवर्षतक निरन्तर मुखमें धारणकरनेसे वज्रकाय तथा अत्यन्त पुरुषार्थयुक्त होकर ३०० वर्षतकजीताहै। बुढापा, मृत्यु और शस्त्रसमुदायके डरसे रहितहोजाताहै। घीकुवारका स्वरस गुड़केसाथ मिलाकर १ पलपीनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै॥ ३६०॥

३६१ वज्रतुण्डावटी (द्वितीया)

कान्तपाषाणमाक्षीकं टङ्कणं कर्कटास्थि च ।
स्नुह्यर्कक्षीरभूनागं सर्वमेतत्समं भवेत् ॥ १७६३ ॥
स्त्रीस्तन्येन दिनं मर्द्य तेन मूषां प्रलेपयेत् ।
तन्मध्ये द्रुतसूतन्तु वज्रभस्म समं समम् ॥ १७६४ ॥
क्षिप्त्वा रुद्धा पुटे पाच्यं गजाख्ये याममात्रकम् ।
ततः प्रलिप्तमूषायां क्षिप्त्वा रुद्धा धमेद्दृढाम्॥१७६५॥
एवं पुनःपुनः कार्यं वज्रसूतं मिलत्यलम् ।
ततस्तस्यैव दातव्यं समं काचं सटङ्कणम् ॥ १७६६ ॥
एवं मूषाशते देयं तुल्यं तुल्यं धमन्धमन् ।
तेजःपुञ्जो रसेन्द्रोऽसौ भवेन्मार्तण्डसन्निभः॥१७६७॥
गुटिका वज्रतुण्डेयं वक्त्रस्था मृत्युनाशिनी ।
वर्षमात्रान्न सन्देहो रुद्रतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७६८ ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां पूर्ववत्काञ्चनं भवेत् ।
पश्चाद्भक्षयेत्कर्षं रदन्त्या मधुसर्पिषा ॥ १७६९ ॥

र.सं., रसायने ।

भाषा—कान्तपाषाण, सुवर्णमाक्षिक, सुहागा, केंकड़ेकीहड्डी, थूहर और आकका दूध तथा केंचुए समभागलेकर स्त्रीके दूधसे एकरोज़ मर्दनकर इसकल्कका वज्रमूषामें लेपकर सुखाकर

कल्ककी बराबर शुद्ध हुतपारा और वज्रभस्म डालकर मुंहबन्द-कर २-४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटमें एकपहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर उसीतरह मूषामें रख धमनकरावे। ऐसे बारम्बार करनेसे वज्र और पारा मिलजायगा फिर उसकी बराबर काच और सुहागा डालकर धमनकरावे ऐसे १०० बार धमनकरनेसे सूर्यकेसदृश तेज पुञ्जयुक्त रस तैयारहोगा। इस गुटिकाको एकवर्षतक मुंहमें रखनेसे रुद्रसदृश पराक्रमवाला होताहै। इसके मूत्र तथा पुरीषसे धातुओंका रंग बदलजाताहै। रुदन्तीका पञ्चाङ्ग १ कर्ष मधु और घीमें मिलाकर रोज़ खावे ३६१

३६२ वज्रधररसः (प्रथमः)

रसगन्धकताम्राऽभ्रं क्षारांस्त्रीन्वरुणो धूरम।
अपामार्गस्य च क्षारं लवणं द्विद्विमाषिकम् ॥१७७०॥
चाङ्गेर्या हस्तिशुण्डयाश्च रसैः पिष्टं पचेत्पुटे।
भक्षयित्वा ततो गुञ्जां ग्रहण्यां काञ्जिकं पिबेत् १७७१
पक्तिशूले च कासे च मन्दाग्नावार्द्रकद्रवम्।
अम्लपित्ते च धारोष्णं क्षीरं वज्रधरो ह्ययम्॥१७७२॥

र. र.स., र. रा. कौ., ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, वरुण, अड़ूसा, अपामार्गक्षार, सैन्धव, येसब २-२ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अम्लोनिया और हाथीशुण्डीके रसोंसे १-१ रोज़ मर्दन-कर टिकिया बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टी-देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा काञ्जीकेसाथ देनेसे ग्रहणीरोग नष्टहोताहै। पक्तिशूल, कास और मन्दाग्निमें अद-रखके रसकेसाथ देना। अम्लपित्तमें धारोष्णदूधकेसाथ देना ३६२

३६३ वज्रधररसः (द्वितीयः)

वज्रसूताऽभ्रहेमाश्च भस्म योज्यं समंसमम्।
सर्वैश्च तालकं तुल्यं शिग्रुधत्तूरजे द्रवैः ॥ १७७३ ॥
मर्द्यः स्नुह्यर्कजैः क्षीरे दिनैकश्चाऽथ भावयेत्।
सप्ताहं बाकुचीतैलैस्तन्माषकन्तु भक्षयेत् ॥
रसो वज्रधरः ख्यातः सर्वकुष्ठनिकृन्तनः ॥ १७७४ ॥

र. र. स, रसायनसं., र र कौ, र. चं, र का, र र दी., कुष्ठाधिकारे।

टि०—रसायनसंग्रह रसरत्नदीपिकायाश्च मुशलीदूर्वामहानिर्गुण्डयोऽनुपाने विशिष्टतयोपन्यस्ता सन्त्योऽपि ■ रसान्तरतायोतिका समदरत्वेन रोगपरत्वेन चाऽनुपानानामनियतत्वात्।

भाषा—हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर हरितालमिलाकर सहिजन और धतूरेकारस थूहर और आकदूध इनप्रत्येकद्रवोंमें १-१ दिन मर्दनकर ७ दिन बाकुचीके तेलमें मर्दनकरे। इसमेंसे उड़दबराबरमात्रा बाकुचीके तेलकेसाथ खानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै ॥ ३६३ ॥

३६४ वज्रधररसः (तृतीयः)

वज्रसूताऽभ्रहेम्नान्तु भस्म शुद्धं तु माक्षिकम्।
तुल्यं सप्तदिनं मर्द्यं दिव्यौषधिरसैर्दृढम् ॥ १७७५ ॥
रुद्ध्वा तत्त्रिदिनं पाच्यं वालुकायन्त्रगं पुनः।
उद्धृत्य त्रिदिनं भाव्यं भृङ्गसर्पाक्षिजैर्द्रवैः ॥ १७७६ ॥
माषैकं मधुसर्पिर्भ्यां वज्रधाररसं लिहेत्।
मासषट्कप्रयोगेण रुद्रतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७७७ ॥
वलीपलितनिर्मुक्तो वायुवेगो महाबलः।
पुनर्नवाभृङ्गतिलवाजिगन्धाः समांशकाः ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या चूर्णितं भक्षयेत्पलम् ॥१७७८॥

रसायनसं., र. खं., रसायने।

भाषा—हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर सुवर्णमाक्षिकभस्म मिलाकर ७ दिन दिव्यौषधियोंके रसोंसे मर्दनकर टिकिया बनाय सुखाकर शराबसम्पुटमें बन्दकर ३ दिनतक वालुकायन्त्रकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भंगरा और अन्धाहूलीकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधु और घीकेसाथ ६ महीनेतक लगातार सेवन-करनेसे वलीपलितसेरहितहोकर वायुवेग और महाबलयुक्त होताहै। पुनर्नवा, भंगरा, तिल और असगन्ध समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सबकीबराबर शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ पल खानेसे रसका सङ्क्रमणहोताहै ॥ ३६४ ॥

३६५ वज्रपञ्जररसः

वज्रपारदयो भस्म समभागं प्रकल्पयेत्।
सूतपादं मृतं स्वर्णं सर्वं मर्द्यं दिनावधि ॥ १७७९ ॥
हंसपाद्या द्रवैरेवं तद्गोलं चान्धिते पुटेत्।
अर्कक्षीरैः पुनर्मर्द्यं तद्वद्गजपुटे पचेत् ॥ १७८० ॥
भक्षयेत्सर्षपं वृद्धं यावन्माषं विवर्धयेत्।
शरण्यः साधकानान्तु रसोऽयं वज्रपञ्जरः ॥ १७८१ ॥
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूत्थैर्मृतं तीक्ष्णं सुवर्चलम्।
समं सर्वं सदा चानु भक्ष्यं स्यात्कामणे हितम् १७८२
मासषट्कप्रयोगेण जीवेदाचन्द्रतारकम्।
वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकायो महाबलः ॥ १७८३ ॥

र. मं., रसायनस., रसायने।

टि०—"हंसपादीरसे पिष्टं रिषेत पुनर्नवे। तुल्यमथ तत पूर्वं वन्मर्दितं पचेत्॥ चन्द्रकलाय चतुर्थांशनानेनाऽनेन भस्मना। अन्लपित्तेन मौतर्ग पत्रमाश्वपि मारयेत्॥ रात्रिकाऽद्धांऽर्द्धमारभ्य यावन्माषं विवर्धिनं। चित्रकार्द्रकसिन्धूत्थैर्वचीवर्चने सह॥ सेवितं पन्य-यंन्तो ग्मोऽयं वज्रपञ्जर। शरण्यं परिभूतानां व्याधिनापंसयमृत्युभिः॥" इति पाठं रसरत्नसमुच्चये निहितं परन्तु तस्य मूलं न ज्ञायते कस्मादुद्धृत्याहृतं। मुम्ब्याहृतं रसायनसङ्ग्रहेऽप्येवं प्रतिभाति, तत्र च वज्र-पारदरसानां मारणविशेषेण अनयारपि यथा स्पष्टतया प्रतिपादितं। रसरत्नसमुच्चयकरेणाहृतपाठे तु वज्रपारदभस्मना ■१ विषय भस्मी-

कृतस्वर्णपत्रस्योपयोगो वर्णित स कपोल्कल्पित इव प्रतिभाति, अतो रसायनखण्डीय एव पाठ साधुरिति सुधीभिर्विमर्शनीयम्।

भाषा—हीरे और पारदकीभस्म १–१ तोला, स्वर्णभस्म ३ मासे लेकर घोटकर हसराजकेरससे एक दिनरात मर्दनकर गोलिया बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् पुटदे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर रखले । इसमेंसे १–१ सर्षपकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ सेवनकरे और प्रतिदिन १–१ सर्षपका प्रमाण बढाताजाय । उड़दबराबर मात्रा पूर्णहोनेपर उसेही नियतकर सेवनकरे । इसको ६ महीनेतक लगातार सेवन करनेसे वलीपलितादिकोंसे रहितहोकर महाबल और दिव्य-शरीरयुक्त बनकर दीर्घजीवी होताहै । चित्रक, अदरख, सैन्धव, लोहभस्म, सबल समभाग लेकर २ मासेसे १ तोलेतक अनु पानरूपसे सेवनकरनेसे रसका शरीरमें भ्रामण होता है । यह प्रयोग बहुतसभालकर करना उचितहै नहीं जल्दी गुण लानेके लिये उड़द बराबर खुराक शुरूमें सेवनकरजायगा तो 'आच-न्द्रतारकम्, का यही अर्थ होगा कि दिनमें खायाहो तो राततक और रातको खायाहोतो सुबहतक आयुको भोगकर यमपुरका वासी बनजाय । ऐसे भीषण प्रयोगोंको सभालकर काममें लानाचाहिये ॥ ३६५ ॥

३६६ वज्रबद्धगुटिका (प्रथमा)

वज्रंव्योमजसत्त्वकं सकनकं चन्द्रं रविं कान्तकं,
नागं वङ्गमथायसं दृढतरं सूतं कृतं तत्समम्।
वक्त्रस्थं रसगोलकं रतिकरं सर्वार्थदं तापहं,
वर्षैकेण निहन्ति दोषनिचयं कल्पायुषा युज्यते १७८४

रसार्णव, र. को, र का रसायने। र को नागार्जुनी वटीति नाम। र का वज्रादिगुटीति नाम।

भाषा—हीरा और अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्तलोह, नाग, वङ्ग और फौलाद येसब समभाग, दिव्यौष धियोंके योगसे अग्निस्थायी कियाहुआपारा सबकी बराबर लेकर इकट्ठे गलाय गोलीबनाकर मुहमें रखनेसे दिव्यस्तम्भन होताहै। एकवर्षतक निरन्तर मुंहमें रखनेसे समस्तरोगोंसे रहितहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ वज्रबद्धगुटिका (द्वितीया)

सुभगं माक्षिकञ्चैव वज्रमभ्रकमेव च।
हेम शुल्वं तथा तारं समभागानि कारयेत् ॥
वज्रबद्धा तु गुटिका वक्त्रस्था सर्वसिद्धिदा ॥१७८५॥

रसार्णव, रसेन्द्रम रसायनाधिकारे।

टि०—रसेन्द्रमङ्गले माक्षिक न दृश्यते तत्केन कारणेन निष्कासित मिति न ज्ञायते।

भाषा—दिव्यौषधियोंसे बाधाहुआपारा, माक्षिक, हीरा और अभ्रक इनकासत्त्व, सुवर्ण, ताम्र, रजत सबसमभागलेकर गोलीबनाय मुहमें रखनेसे यह समस्तसिद्धियोंको देतीहै ३६७

३६८ वज्रबद्धरसः

वज्रभस्मावृते हेमपिष्टिके षड्गुणं बलिम्।
पूर्ववद्भूधरे पक्त्वा बद्धोऽयं योगवाहकः ॥ १७८६ ॥

र. शि, सर्वरोगे।

भाषा—सोलहवें अथवा बत्तीसवें हिस्से सुवर्णके ग्राससे पिष्टीबनाएहुएपारेमें चतुर्थांश हीरेकीभस्म डालकर दिव्यौषधि-योंके स्वरससे १–२ रोज मर्दनकर टिकियाबनायछुखाकर बराबरका गन्धक नीचेऊपर रख शरावसम्पुटकर भूधरयन्त्रकी इतनी आचदेवे कि गन्धकमात्र जलजाय पर पारा न उड़े। इस तरह षड्गुणगन्धक जारणकरनेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै। इसमेंसे १ सर्षपमरसे शुरूकर रोजाना १–१ सरसों बढाकर १ रत्तीतक मात्रा बढानेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै ॥३६८॥

३६९ वज्रमूर्तिरसः

कान्ताश्माऽक्षाङ्गारमूषां प्रलिप्य
वज्रं क्षिप्तं ध्मापयेट्टङ्कणेन।
चूर्णं तत्स्याद्वेष्टयित्वा सुहेम्ना
लिप्त्वा ध्मापेत्तेन मूषात्रयं तु ॥ १७८७ ॥
एवं वज्रं पातयेद्धेमगर्भे
तुल्यं यद्वा पादभागक्रमेण।
मूत्रे तक्रे चारनाले कुलत्थे
गव्ये पक्त्वा धासरैकं प्रयत्नात् ॥ १७८८ ॥
निम्बूतोये पेषयित्वा पचेत्त-
त्स्थालीपाके रक्ततामेति यावत्।
लौहे पात्रे निक्षिपेत्तत्र किञ्चि-
न्निम्बूतोयं सूतकं सैन्धवञ्च ॥ १७८९ ॥
घर्षेत्पश्चाल्लोहदण्डेन यत्ना-
त्स्तोकं चाम्यग्निक्षिपेत्तत्क्रमेण।
ज्ञात्वा हस्ते मन्थरत्वं क्षिपेत
सोष्णं तस्मिन् काञ्जिके क्षालयेत ॥१७९०॥
पिष्टिं वस्त्रे बन्धयित्वा निपात्य
पात्रे तं वै गोलकं स्थापयेत।
एवं ग्राह्यं पक्वताप्यस्य सत्त्वं
यद्वा क्षिप्तं माहिषे पञ्चके तत् ॥ १७९१ ॥
क्षारं दत्त्वा गोलकं ध्मापयित्वा
सत्त्वं ताप्यस्येन्द्रगोपप्रभं स्यात्।
श्लक्ष्ण तीक्ष्णं तुल्यकं भागवृद्ध्या
मूषामध्ये ध्मापयेट्टङ्कणेन ॥ १७९२ ॥
किट्टजातं ध्मापयित्वाऽतियत्ना-
त्कन्यात्तोये निक्षिपेत्सप्तवारम्।
सत्त्वं तस्याऽपीन्द्रगोपप्रभं
स्याद्भागं किञ्चिद्वाहयेन्मार्दवाय ॥ १७९३ ॥
श्लक्ष्णं त्यम्र काञ्जिकक्षीरपक्वं
क्षारं लाक्षां माहिषं पञ्चपञ्च।

पिष्ट्वा गोलान् बन्धयित्वा धमेत
गाढं सत्त्वं द्विस्त्रिवारं पतेत ॥ १७९४॥
एतत्सर्वं वज्रगर्भं सुवर्णं
तौल्यं सत्त्वं माक्षिकस्याऽपि तुल्यम् ।
कृत्वा सूतं दापयेत्पादभागं
निम्बूतोयैः पिष्टिकां तस्य कृत्वा ॥ १७९५॥
वस्त्रे बद्ध्वा क्षारसामुद्रजाद्यैः
सम्यग्रुद्ध्वा स्वेदयेत्सप्तरात्रम् ।
यन्त्रे वाप्पे काञ्जिकेनातियत्ना-
द्बद्ध्वा पिष्टिं मापकैः वेष्टयित्वा ॥ १७९६ ॥
तैले यत्नात्पाचयेद्याममेकं
कूप्यां पित्ते वार्हिणे निक्षिपेत ।
शुद्धे सूते कान्तपाषाणमूषा-
गर्भे प्राप्ते पिष्टिकां तां कलांशाम् ॥ १७९७॥
दत्त्वा गन्धं निक्षिपेत्पादभागं
रुद्ध्वा मूषां भूधरे तां पुटेत ।
यन्त्रे वाप्पे पिष्टिकां तां विपाच्य
यद्वा यन्त्रे कच्छपे पादभागम् ॥ १७९८ ॥
पश्चाद्गन्धं कान्तपाषाणमूषा-
कोष्ठ्यां शुद्धं षड्गुणं जारयेत ।
गुञ्जामानं सर्वरोगेषु दद्या-
द्योगैस्तैस्तैर्वज्रमूर्तीरसेन्द्रः ॥ १७९९ ॥

र दी, वाजीकरणे।

भाषा—कान्तपाषाण और बहेडेके कोयलोंकी मूषावनाय कईवार इसीमिट्टीकालेप देदेकर सुखाकर चिकनी बनाकर हीरेको डालकर धमनकरे और वारम्वार थोडा थोडा सुहागा डालताजाय। हीरेका चूर्ण होजानेपर निकालकर शुद्धसुवर्णके पत्रेमें लपेटकर उसीमूषामें रखकर धमनकरे। इसतरह ३ वारकरनेसे यह हीरा सुवर्णकेसाथ मिलजायगा। प्रतिवार सुहागा डालकर जितना हीरा सुवर्णमें मिलानाहो उतना मिलावे फिर गोमूत्र, छाछ, काञ्जी, कुलथीकाकाढा इनमें १–१ दिन सुवर्णगर्भ हीरेको पकावे। फिर नीबूकेरससे एकदिन पीसकर गोलीबनाय नीबूके रसमें लालरङ्गहोनेतक स्वेदनकरे। इसकेबाद निकालकर लोहेके खरलमें इसकीबरावर शुद्धपारा और सैन्धव डालकर थोडेसे नीबूकरसकेसाथ मर्दनकरे। गाढा होनेपर थोड़ाथोड़ा नीबूकारस डालताजाय। जबतक कि पारा चञ्चलताको छोडकर घट्ट होगया तब गरमकाञ्जी डालकर साफकरले और गाढेकपडेमें दवाकर बचेपारेको निकालदे। बचीहुई गोलीको शीशीमें रखले। इसी तरह सुवर्णमाक्षिककाभी सत्त्व निकालले। अथवा भैसके गोबर, मूत्र, दही, दूध और घीकोमिलाकर इसमें सुवर्णमाक्षिकको १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मूषामें रख धमनकरे और सुहागा देताजाय। इसतरहकरनेसे वीरबहुटीके सदृश लालरङ्गका सत्त्व निकलेगा। फौलादका रेता १ भाग और चमकदार तूतिया २ भाग मिलाकर मूषामें रख सुहागेका प्रक्षेपदेकर धमनकरे तो इसका किट्ट होजायगा, इसकिट्टको फिरसे धमनकर घीकुंवारके रसमें बहुतसंभालकर डाले जिसमें कि बाहर उड़ेनहीं। ऐसे ७ वार करनेसे यह भी लालरङ्गका होजायगा परन्तु यह अत्यन्त कठिनरहेगा इसलिये इसको गलाकर बहुतस्वल्प नागमिलादे जिसमें कि यह कोमल होजाय। उत्तमजातिके अभ्रकको काञ्जी और दुग्धमें १–१ दिन स्वेदितकर बारीक चूर्णकर सुहागा, लाख और महिषपञ्चक मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर छोटी छोटी गोलिया बनाकर सुखाकर गाढ़ धमनकरे तो उसका किट्ट होजायगा। उसकिट्टमें फिर पूर्वोक्तचीज़ें मिलाकर धमनकरे। इसप्रकार २–३ वारकरनेसे इसमेंसे सत्त्व निकलेगा। येसबसत्त्व और वज्रगर्भसुवर्ण समभाग लेकर सबसे चतुर्थांश शुद्धपारा डालकर थोड़ाथोड़ा नीबूकारस देदेकर लोहेकी खरलमें लोहेके डण्डेसेघोटे। पारेकी चञ्चलता दूरहोनेपर ४ तह गाढ़ेकपडेमें बाध सैंधनमकके- बीचमें इस पोटलीको रखकर काञ्जीसे ७ दिनतक स्वेदनकरे। पर यह ध्यान रक्खे कि काञ्जी पोटलीमें लगने न पावे केवल वाप्प लगे। काञ्जीका स्पर्शहोनेसे नमक वहजायगा। दैववशात् भूलहोजाय तो दूसरे नमककी पोटलीमें बाधलेवे और काञ्जीकी हण्डीको रोज़ाना बदलतारहे। आठवें दिन वज्रपिटीको निका- लकर उड़दके आटेके गोलेमें बन्दकर १ पहरतिलकेतैलमें पका- कर निकालले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर बाटीमेंसे पोटलीको निका- लकर चौड़ेमुंहकीशीशीमें वस्त्रसे ढ़ुदीकर धीरजसे रखदे और उसमें पिटी डूबनेलायक मोरकापित्त भरकर सुरक्षितरखदे। कान्तपाषाणकीमूषामें शुद्ध बुभुक्षितपारेको डालकर पारेसे षोडशांश पित्तस्थ पिष्टिकाको डालकर पारदसे चतुर्थांश ऊपरसे गन्धक डाल मुहबन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदे। स्वाङ्ग- शीतलहोनेपर निकालकर सैन्धवनमकमें पूर्ववत् पोटलीबनाय ७ रोज़तक वाप्पयन्त्रमें पकावे। फिर कच्छपयन्त्रमें अथवा कान्तपाषाणमूषामें रख षड्गुणगन्धक जारणकरे। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त असाध्यरोगोंको नष्टकरताहै। इसीतरह पित्तस्थ पिष्टिकाके प्रक्षेपसे १६ गुना रस तैयारहोसक्ताहै। धातुवादकी ग्रन्थकारने कुछ सूचना नहीं दीहै परन्तु उस दशामेंभी यह अवश्यकाम- करेगा। पर कितना करेगा यह साधकोंको साक्षात् करके देखना चाहिये ॥ ३६९ ॥

३७० वज्ररसायनम् (प्रथमम्)

एकं कर्षं मृतं वज्रं तावद्भूनागसत्त्वकम् ।
ततश्च द्विगुणं स्वर्णं स्वर्णतुल्यं खसत्त्वकम् ॥ १८०० ॥
तावन्मात्रञ्च कान्ताऽयः सर्वं वारितरं कृतम् ।
अष्टमांशश्च सूतश्च सर्वेभ्यः परिकीर्तितः ॥ १८०१ ॥
शुकपिच्छैः समः सर्वं मर्दयेद्घणकाम्लकैः ।
ततो भूनागसत्त्वं हि गन्धकेन समं क्षिपेत् ॥ १८०२ ॥
विधाय गोलकं रम्यं छायाशुष्कं समाचरेत् ।
पुटितं शतवारांश्च शतं वाराश्च ताप्यकैः ॥ १८०३ ॥

शुनः पित्तैश्च दुग्धैश्च चारणा विंशतिस्ततः ।
गुञ्जाद्टङ्कणसिद्धेन भूनागेन समायुतम् ॥ १८०४ ॥
घर्तयित्वा तु तं गोलं कल्केनाऽनेन लेपयेत् ।
अर्द्धाऽङ्गुलदलेनाऽथ परिशोष्य खरातपे ॥ १८०५ ॥
निक्षिपेद्वालुकायन्त्रे प्रपचेद्दिनपञ्चकम् ।
ततस्त्रिकोणसेहुण्डदुग्धे गन्धकसंयुतैः ॥ १८०६ ॥
मर्दयित्वा तु तं गोलं पुटेद्वाराणि विंशतिः
पटेन गालितं कृत्वा क्षिपेदन्त.करण्डके ॥ १८०७ ॥
गुञ्जामितं भजेदेनं रम्यं वज्ररसायनम् ।
ज्ञाताऽज्ञातेषु सर्वेषु गदेषु विविधेषु च ॥ १८०८ ॥
तत्तद्रोगानुपानेन दातव्यं भिषजा खलु ।
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यो ह्यनेन न शाम्यति ॥
रसायनप्रकारेण सेवितो मण्डलत्रयम् ।
देहसिद्धिं करोत्येव विश्वविस्मयकारिणीम् ॥
बिल्वमेकं विना सर्वं पथ्यमत्र प्रकीर्तितम् ॥ १८१० ॥

र. चू , रसायने ।

भाषा—हीरेकीभस्म, कैंचुओंकासत्त्व १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म, अभ्रकसत्त्व और कान्तलोहभस्म २–२ कर्ष येसब खारिल्र लेकर इकट्ठे खरलकरे । फिर इनसबसे आठवा हिस्सा पारा और शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर विशुद्धचणकक्षारसे एकरोज मर्दनकर गन्धककी बराबर भूनागसत्त्व मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाबनायसुखाकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वोक्तप्रमाणसे गन्धक मिलाय चनेकेखारमें एकरोज मर्दनकर गजपुटकी आचदे । ऐसे १०० आचें दनेकेबाद स्वर्णमाक्षिकसत्त्वमिलाकर पूर्वप्रकारसे १०० आचें दे । फिर कुत्तीके पित्त और दूधसे २०–२० भावनाएं देकर गोला बनाय सुखाकर गुञ्जा, सुहागा और कैंचुए समभागका चूर्णकर चनेकेक्षारमें पीसकर उसगोलेपर आधाअङ्गुलमोटा लेपदेकर कड़ीधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीकरदे । सूखनेपर बालुकायन्त्रमें ५ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बराबरका गन्धकमिलाय तिधारीथूअरकदूधमें एकदिन मर्दनकर गोला-बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । ऐसे २० आचें दनेकेबाद कपड़ेसे छानकर शीशीमेंरखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ ज्ञात अथवा अज्ञात नानातरहकेजटिलरोगोंमें देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहै । ससारमें ऐसा कोईभी रोग नहीं जो इससे नष्ट न हो । रसायनप्रकारसे इसका ३ मण्डलतक सेवनकरनेसे समस्तससारको विस्मयदनेवाली देहसिद्धिको प्राप्तहोताहै । कवलविल्वको छोड़कर दुनियामें समस्त पदार्थ इसमें पथ्यहै ॥ ३७० ॥

३७१ वज्ररसायनम् (द्वितीयम्)

त्रिशद्भागमितं हि वज्रभसितं स्वर्णं कलाभागिकं,
तारं चाष्टगुणं शिवामृतवरं रुद्रांशकं चाभ्रकम् ।
पादांशं खलु ताप्यकं वसुगुणं वैक्रान्तकं षड्गुणं,
भागोऽप्युक्तरसाद्वरोऽयमुदित. षाड्गुण्यसंसिद्धये ॥

र चू., रसायने ।

भाषा—हीराभस्म ३० मासे, सुवर्णभस्म १६ मासे, रजतभस्म ८ मासे, हर्रे और शुद्धवछनाग ११–११ मासे, अभ्रकभस्म ४ मासे, सुवर्णमाक्षिक ८ मासे, वैक्रान्तभस्म ६ मासे लेकर सबको मिलाकर रखछोड़े । इसका चतुर्थांशभी रसायनप्रकारसे खानेसे समस्तरोगोंसे निवृत्तहोकर मनुष्यको दिव्य देहसिद्धि होतीहै ॥ ३७१ ॥

३७२ वज्रवटी

शुद्धसूताग्निमरिचं सूताद्विगुणगन्धकम् ।
काकोदुम्बरिकाक्षीरे दिनं मर्द्यं प्रयत्नत ॥ १८१२ ॥
वराव्योषकषायेण वटीश्चास्य समाचरेत् ।
त्रिमाषप्रवटी ह्येषा पामारोगविनाशिनी ॥ १८१३ ॥

र स , र चि , र सु , र का., र.क ल , कुष्ठरोगाधिकारे ।

टि०—रसकामधेनौ द्वितीय पाठोऽस्मिन्नेवाऽधिकारे वह्निचूडिकेति नाम्ना कृतोऽस्ति तत्र गन्धकत्रिगुण , मरिचस्थाने त्र्यूषणमिति विशेष इत्याऽस्ति पाठस्तु एकएवाऽस्ति । त्रिगुणगन्धकमेपि शुण्ठीपिप्पल्योऽधिकतया दाने न काऽपि क्षति , पाठान्तरस्तु नास्त्येव बहुग्रन्थसम्वादात्, नाम तु वज्रवटयेवोचितम् ।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कठूमरकदूध, त्रिफला और त्रिकटुके काढेसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और त्रिकटुकेक्वाथकेसाथ खानेसे पामारोग नष्टहोताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ वज्रवल्ल्यादिगुग्गुलुः

वज्रवल्ल्यर्जुनौ धात्रीविशालालोहटङ्कणान् ।
रसगन्धकसिन्धूत्थान्समभागेन चूर्णयेत् ॥ १८१४ ॥
चूर्णाद्द्विगुणत्रयं ग्राह्यं गुग्गुलुं घृतपिष्टितम् ।
वज्रवल्ल्यादिको नाम गुग्गुलु. परिनिर्मित. ॥ १८१५ ॥
गहनानन्दनाथेन भग्नरोगविनाशन. ।
नानामर्द्दं निहन्त्याशु बलवर्णाऽग्निवर्धन. ॥ १८१६ ॥
कृमिकुष्ठाऽक्षिरोगाणां हन्ता ग्रन्थिव्यथापह. ।
कटिग्रहरोगशमन आमवातनिषूदन ॥ १८१७ ॥

र र , भग्नाऽधिकारे ।

भाषा—हड्जोड़, अर्जुन, आंवला, महुर अथवा इन्द्रायण, लोहभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध पारा और गन्धक, सैन्धव सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सबचूर्णसे तिगुना शुद्धगूगललेकर घीके योगसे कूटकर दम बनावे और थोडा २ चूर्णडालकर मिलाताजाय । इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतकमात्रा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे भग्न, बलवर्णाग्निनाश, कृमि, कुष्ठ, अक्षिरोग, ग्रन्थिव्यथा, कटि और ग्रहरोग, आमवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

३७४ वज्रशेखररसः (प्रथमः)

विष्णुक्रान्ताघनरसाः सर्पाक्षी शङ्खपुष्पिका।
गोजिह्वा क्षीरिणी नीली ब्रह्मवृक्षो रुदन्तिका॥ १८१८॥
निचुलः काकमाची च रसैरेषां विमर्दितम्।
पक्कं तुषकरीषाग्नौ रसाद्द्विगुणगन्धकम्॥ १८१९॥
पर्पटीरसवत्पक्कं खसत्त्वेनाऽरुणेन च।
युतं गन्धकतुल्येन ताप्येन च रसाङ्घ्रिणा॥ १८२०॥
कृतावापं वरीमुण्डीहस्तिकर्णामृतालिका-।
मूर्वाविदारिकाजातैर्मर्दितं घृतमिश्रितम्॥ १८२१॥
कषाये दशमूलस्य विपक्कं लेहतां गतम्।
रसतुल्यत्रिजाताऽग्निव्योषयष्ट्याह्वसंयुतम्॥ १८२२॥
स्निग्धभाण्डगतं कुष्ठी क्षयी च कृतशोधनः।
मञ्जिष्ठादिकषायस्य कृत्वा मासं निषेवणम्॥
माषप्रमाणं सेवेत रसोऽयं वज्रशेखरः॥ १८२३॥
गुञ्जाचित्रकशङ्खचूर्णरजनीभल्लातका लाङ्गली,
स्नुक्क्षीरोत्तमकन्यका घनवरा धूमोद्गमः सूतकः।
गोमूत्रैडगजौ विडङ्गमरिचे सक्षौद्रक्षाराम्बु च,
पामादद्रुविचर्चिकाकिटिभजित्कण्डूघ्नमुद्वर्तनात्॥

र. र. स., कुष्ठे।

भाषा—विष्णुकान्ता, नागरमोथा, रसौत, अन्धाहूली, शङ्खाहूली, वनगोभी, छोटीदूधी, नील, पलाश, रुदन्ती, जलवेत, मकोय इनसबके रसोंमें शुद्धपारेसे दूनागन्धकडालकर की हुई नीलवर्णकज्जलीको १–१ भावना देकर सुखाकर फिरमेकज्जलीकर तुष अथवा करीषकी अग्निपर घृताक्त लोहेकीकड़छीमें गलाकर पर्पटीतैयारकरले। इसमें गन्धककी बराबर लालअभ्रकसत्त्व और पारेसे चतुर्थांश सोनामाखी मिलाकर शतावर, गोरखमुण्डी, हस्तिकर्णपलाश (टोडाइन हिं०), गिलोय, भंगरा, मूर्वा, विदारीकन्द इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर अन्तमें गोघृतसे मर्दनकरे। फिर इससे १६ गुना दशमूलकाक्वाथ देकर मन्द आंचसे पकावे। लेह तैयारहोनेपर इसकीबराबर तज, पत्रज, इलायची, चित्रक, त्रिकटु और मुलहटी सबसमभागकाचूर्णमिलाकर घृतके भाण्डमें रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा महामञ्जिष्ठादिक्वाथकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे और अधोनिर्दिष्ट उबटनकरनेसे कुष्ठ, क्षय, पामा, दद्रु, विचर्चिका, किटिभकुष्ठ और कण्डू नष्टहोतेहैं। सफेदगुञ्जा, चित्रक, शङ्खभस्म, हल्दी, भिलावें, करिहारी, थूहरकादूध, घीकुवार, नागरमोथा, त्रिफला, गूगुल, शुद्धपारा, गोमूत्र, पवांड़, विडङ्ग, मरिच, मधु, सज्जी, सुहागा, यवक्षार और पानी सब समभाग लेकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े यह उबटनकी सामर्थ्यहै॥ ३७४॥

३७५ वज्रशेखररसः (द्वितीय)

वैक्रान्तं हेमकान्तञ्च विद्रुमं स्फटिकन्तथा।
शुद्धगन्धरसाभ्याञ्च समं सर्वं प्रमर्दयेत्॥ १८२५॥
अस्थिसंहारजरसं बुधो दत्त्वा दिनत्रयम्।
मधुना माषमात्रं वा सेवेताऽग्निबलं प्रति॥ १८२६॥
सद्योव्रणेऽग्निदाहे च भग्ने च विषमज्वरे।
नाशनार्थं प्रयोक्तव्यो रसोऽयं वज्रशेखरः॥ १८२७॥

टो., व्रणाऽधिकारे।

भाषा—वैक्रान्त, सुवर्ण, कान्त, विद्रुम, स्फटिक, इनकी भस्में, शुद्धगन्धक और पारा सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हड़जोड़केरससे ३ दिन मर्दनकर सुखाय मधुसे १–१ माशेकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सद्योव्रण, अग्निदाह, भग्न, विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३७५॥

३७६ वज्रसुन्दरीवटी

आरक्तं मेघनादन्तु तथा पाषाणभेदकम्।
स्त्रीस्तन्यसहितं पिष्ट्वा तेन मूषां प्रलेपयेत्॥ १८२८॥
भागैकं मृतवज्रस्य स्वर्णचूर्णस्य षोडश।
क्षिप्त्वा तस्यां निरुद्ध्याऽथ याममात्रं दृढं धमेत्॥ १८२९॥
उद्धृत्य निक्षिपेत्खल्वे शुद्धसूतञ्च तत्समम्।
मर्दयेच्चार्द्रकद्रावे यावद्भवति गोलकः॥ १८३०॥
चाण्डालीकन्दमादाय स्त्रीस्तन्येन सुपेषयेत्।
अनेन गोलकं लिप्त्वा वज्रमूष्यां निरोधयेत्॥ १८३१॥
पक्त्वा गजपुटे ग्राह्या गुटिका वज्रसुन्दरी।
वर्षैकं धारयेद्वक्त्रे जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम्॥ १८३२॥
ब्रह्मवृक्षस्य त्वक्चूर्णं क्षीरैर्नित्यं पलं पिबेत्।
क्रामणं ह्यनुपानं स्यात्साधकस्याऽतिसिद्धिदम्॥ १८३३
तदुद्भवमले लिप्तं ताम्रन्तु धमनेन हि।
जायते कनकं दिव्यं सत्यं शङ्करभाषितम्॥ १८३४॥

र. ख र. का., रसायने।

भाषा—मरसा और पाषाणभेदको स्त्रीके दूधमें पीसकर मूषामें लेपदेकर हीरेकीभस्म १ भाग, सुवर्णकाचूर्ण १६ भाग डालकर एकपहरतक हठधमनकरावे फिर निकालकर इसकीबराबर शुद्ध और बुभुक्षितपारा डालकर अदरखकेरससे गोला बननेतक घोटकर चाण्डाली (दिव्यौषधि) अथवा सेमलकेकन्दको स्त्रीके दूधमें पीसकर गोलेपर आधाअङ्गुल मोटा लेप देकर वज्रमूषामें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसे एकवर्षतक लगातार मुहमें रखनेसे और पलाशकीछालका १ पलचूर्ण दूधकेसाथ प्रतिदिन लेनेसे रसको व्याप्तिहोकर दिव्यशरीरहोजाताहै और इसके मलमूत्रसे तांबेको लेपदेकर धमनकरनेसे दिव्यसुवर्णहोताहै॥ ३७६॥

३७७ वसन्तहेमरसः

गुडूचीकणगुञ्जाम्लैः शालदन्त्यन्तरस्थयोः।
धमेत्पुटेऽन्धमूषायामेकत्वं वज्रकस्मयोः॥ १८३५॥
निम्बुकाम्बुरसाभ्यासः कल्कः पिष्टीकृतो मिथः।
वृष्टिधुस्तूरतैलाक्तरतुल्यगन्धकसंयुतः॥ १८३६॥

जीवनी देवदाली च हंसपादी पुनर्नवा ।
पुटितं भूधरे सप्तवारानासां रसेन च ॥ १८३७ ॥
पुनस्तेनैव गन्धेन रसकल्कोऽथ कल्कितः ।
शुद्धधातुविषोपेतश्चक्रमूषाविनिर्गत. ॥ १८३८ ॥
पित्ताब्धिफेनसंयुक्त आर्द्रकद्रवभावितः ।
राजीप्रमाणा गुटिका रसोऽयं सर्वरोगहृत् ॥ १८३९ ॥
* (भा), सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध, सुहागा, सुधा और विजोरेप्रभृतिकारस इनसबका कल्कबनाय अन्धमूषामें लेपकर खरगोशके दांतकाचूर्ण बिछाय मुवर्णपत्रमें हीरेकेचूर्णको लपेटकर रखदे और उससे खरगोशके दांतका चूर्ण डालकर मूषाको बन्दकर ३–४ कपडमिट्टीदेवे । सूखनेपर दृढ धमन करानेसे हीरे और सुवर्णका मिलाप होजायगा। इसको निकालकर नीबूके रससे ३–४ रोज मर्दनकर गोलाबनाय क्षीरक और धतूरेकेतैलमें शुद्धगन्धकको मर्दनकर जीवन्ती, बन्दाल, हंसपदी, पुनर्नवा इनकेकल्ककीमूषामें लेपकर पिट्ठीकेबराबर गन्धकको बिछाय पिट्ठीको रख उतनाही गन्धक और ऊपरसेकर मुद्राबन्दकर ६–७ कपडमिट्टी देकर सूखनेपर भूधरपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दनकर गन्धकके बीचमें रख भूधरपुटदे । ऐसे ७ पुट देनेकेबाद इसकीबराबर सप्तधातुओं (सुवर्ण, चांदी, कान्त, तीक्ष्ण, ताम्र, नाग, वङ्ग)की भस्में और शुद्धवत्सनाग मिलाय नीबूकेरससे मर्दनकर टिकड़ी बनाय चक्रमूषामें बन्दकर भूधरपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछपित्त, समुद्रफेन और अदरखके द्रवोंसे १–१ भावना देकर राईके बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर दीर्घायुको करताहै ॥ ३७७ ॥

३७८ वज्रक्षाररसः (क्षारयोग) १

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् ।
पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरिचं पलसम्मितम् ॥ १८४० ॥
कर्षमेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
अर्कदुग्धस्य दातव्या भावना सप्तवासरम् ॥ १८४१ ॥
अन्धमूषागजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ततो लवङ्गमरिचस्फटिकानां पलं पलम् ॥ १८४२ ॥
सम्मर्द्य सुदृढं सर्वं दृढभाण्डे निधापयेत् ।
तस्य गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥ १८४३ ॥
पुनर्भोजनवाञ्छाञ्च जनयेत्प्रहरापरि ।
आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिहन्तनम् ॥ १८४४ ॥
वै चि अजीर्णे ।

भाषा—सज्जी, यवक्षार सुहागा, शुद्धपारा, लौंग, तीनों नमक, पीपल, शुद्धगन्धक, सोंठ और मरिच १–१ पल शुद्ध बछनाग १ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी मीलकज्जलीमें मिलाकर आकके दूधमें ७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध मूषामें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टीदेकर सुखानेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लौंग, मरिच, भुनी फिटकड़ी १–१ पल मिलाकर एकदिन अच्छीतरह मर्दनकर शीशीमें भरलेवे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे भोजनको तत्क्षण जीर्णकर दुबारा भोजनकी इच्छाको पैदाकरताहै । कच्चामास खाकर यदि इसकासेवनकियाहो तो एक पहरके बादही पचादेताहै । श्लेष्मरोगभी इससे नष्टहोताहै ॥

३७९ वज्रक्षाररसः (द्वितीय)

सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् ।
टङ्कणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ १८४५ ॥
अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैः शोषयेदातपे त्र्यहम् ।
अर्कपत्रं लिपेत्तेन रुद्धा भाण्डे पुटे पचेत् ॥ १८४६ ॥
तं क्षारं चूर्णयित्वाऽथ त्र्यूषणं त्रिफलारजः ।
जीरकं रजनी वह्निं नेत्रकस्य समं ततः ॥ १८४७ ॥
क्षारार्द्धं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
वज्रक्षारमिदं चूर्णं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ १८४८ ॥
सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूले शोफे च योजयेत् ।
अग्निमान्द्ये त्वजीर्णे च भक्षेन्निष्कद्वयं तथा ॥ १८४९ ॥
वाताऽधिके जलैः कोष्णैः घृतैः पित्ताऽधिके हितः ।
कफे गोमूत्रसंयुक्त आरनालैस्त्रिदोषयुत् ॥ १८५० ॥

यो र, र चि, र र स, चि क्र, टो, र क, वै नि, यो. चि, रसायन स, वै र, चि सा, वै क, चि र भ, र.सु, र का, यो म, नि.र, वृ यो त, भा.प्र, ना वि, वै द, उदररोगाऽधिकारे । क्वचित्, त्र्यूषणादिचूर्णं क्षारसमं नियोजितम् ।

भाषा—समुद्रनमक, सैन्धव, कांचनमक, यवक्षार, सचल, भुनासुहागा और सज्जी समभाग लेकर आक और थूहरके दूधमें ३–३ दिन मर्दनकर आकके पके पत्तोंमें लपेटकर हण्डीमें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर सुखानेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकुटु, त्रिफला, जीरा, हल्दी, चित्रकजड सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर क्षारमें आधे प्रमाणमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ८–८ माशेकी मात्रा यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त उदररोग, गुल्म, शूल, शोथ, मन्दाग्नि, अजीर्ण प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । वाताधिक्यमें गरमजल, पित्तमें घृत, कफमें मूत्र और त्रिदोषमें कांजीकेसाथ देना उचितहै ॥ ३७९ ॥

३८० वज्राङ्गसुन्दरीवटी

वङ्गसीसकतुल्यांऽशहेमतारसमन्वितैः ।
वज्रायसादिभिर्युक्तः म्रियते पार्दिके रस ॥ १८५१ ॥
वज्राणां द्रावणं यस्ये पारदस्य च बन्धनम् ।
लघुद्रावश्च लोहेषु संयोगार्थं परस्परम् ॥ १८५२ ॥
अस्थिशृङ्खलमध्यस्थं कृत्वा वज्रं निरोधितम् ।
जलभाण्डे विनिक्षिप्य स्वेदयेद्दिनसप्तकम् ॥ १८५३ ॥

वह्निकारससङ्घृष्टं नष्टपिष्टन्तु पारदम्।
स्पृक्काकन्दस्य मध्यस्थं बन्धनार्थं ततः पुटेत्॥१८५४॥
रेतितं लोहचूर्णन्तु टङ्कणेन तु भावितम्।
लघुद्रावि भवेदेवं ताम्रपात्रे न संशयः॥ १८५५॥
सर्वास्तानेकतः कृत्वा मूषामध्ये स्थितिं भवेत्।
गुटिकाजायते रम्या नाम्ना वज्राङ्गसुन्दरी॥ १८५६॥
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता जरामृत्युविनाशिनी।
सङ्ग्रामे विजयी वीरो वज्रदेहो महाबलः॥ १८५७॥
सर्वलोकप्रियो नित्यं नारीणां वल्लभस्तथा।
गुटिकेयं समाख्याता यथोक्ता ब्रह्मयामले॥ १८५८॥

न.ज., यो म, रसेन्द्र मं, र, रसार्णव, र खं, र. का, रसायनाऽधिकारे।

टि०—कुमार्याः स्वरसं प्राश्य गुडेन सह लेहयेत्। पलैकमनुपानं स्याज्जरामृत्युविहन्त्यलम्॥ इत्यधिक पाठो हस्तलिखित रसायनखण्डे दृश्यते। "मर्मौ रसाभ्रकौ रत्नवर्गेण परिभूषितौ। गुटिकावारमन्था तु मुखस्था युद्धवारिणी" इति रसावतारे त्रुटित पाठोऽस्ति तस्य वज्राङ्गसुन्दर्यामेवान्तर्भाव॥

भाषा—हड़जोड़के कल्कमें हीरेको बन्दकर दोलायन्त्र बनाय हड़जोड़का अङ्गस्वरस अथवा क्वाथ बर्तनमें भरके ७ दिनतक स्वेदन करनेसे यह शीघ्र द्रुतहोनेके योग्य होजायगा। शुद्धपारेको हिरणखुरीके रससे ७ दिन मर्दनकर पिट्ठी बनाले। फिर इसको स्पृक्का (दिव्यौषधिकाकंद) अथवा अनन्तमूलकी जड़केकल्कमें रख शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरपुटकी आंचदे। इसप्रकार बारम्बार करनेपर जबगोली कड़ी होजाय तब निकालकर रखले। तमामलोहोंके बारीकचूरेको तांबेकेपात्रमें रख सुहागेके जलसे ७–७ भावनाएं देवे फिर वङ्ग, नाग, ताम्र, अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण, रजत, हीराप्रभृतिरत्न और समस्त लोह इनको इकट्ठाकर हड़जोड़के रससे कईबारलेपकीहुई वज्रमूषामें रखकर धमनकरनेसे गुटिका तैयारहोगी। इसको मुंहमें रखनेसे बुढ़ापे और मृत्युका भय नहींरहता। सङ्ग्राममें वज्रदेह और महाबल होकर विजयी होताहै। समस्तलोक तथा स्त्रियोंका प्रियहोताहै। यह ब्रह्मयामलमें कहीगईहै। एकपल घीकुवारके रसमें गुड़ मिलाकर पीनेसे इसका शरीरमें क्रमणहोताहै॥ ३८०॥

३८१ वज्रिणीगुटिका

कान्तघनसत्त्वकमलं हेम च तारं यथाक्रतद्वन्द्वम्।
समजीर्णं बीजवरं वज्रयुतं वज्रिणी गुटिका॥१८५९॥
एषा मुखकुहरगता कुरुते नरनागतुल्यबलम्।
तद्वपुरपि दुर्भेद्यं मृत्युजरारोगनिर्मुक्तम्॥ १८६०॥

र.ह, रसायने।

भाषा—कान्तलोह, अभ्रकसत्त्व, ताम्र, सुवर्ण और रजत येसब समभाग, और सबसमान सुवर्णादिबीजजारणकरके समभागमें हीरा मिलायाहुआ पारा सबकी बराबर लेकर द्वन्द्वमेलापकप्रकारसे इकट्ठे गलाय गोलीबनाकर मुहमें रखनेसे ९ हाथियोंके बलको देतीहै। मुहमेंरखनेसेशरीर शस्त्रादिकोंसे दुर्भेद्य और मृत्यु जरादिरोगसे रहित होताहै॥ ३८१॥

३८२ वज्रेश्वररसः (वज्ररसः) (प्रथमः)

कर्षं खर्परसत्त्वस्य षण्मापे हेम्नि विद्रुते।
पश्चिन्ष्कसूतं गन्धाश्मन्यष्टनिष्के प्रवेशितम्॥१८६१॥
प्रवालमुक्ताफलयोश्चूर्णं हेमसमांशयोः।
क्रमाद्द्वित्रिचतुर्निष्कं मृतायःसीसभास्करम्॥१८६२॥
चाङ्गेर्यम्लेन यामांस्त्रीन्मर्दितं चूर्णितं पृथक्।
द्वौ निष्कौ नीलिकुष्ठकीव्योमाऽयस्कान्ततालकात्॥
अङ्कोल्लकङ्गुणीबीजतुत्थेभ्यश्चतुरः पृथक्।
अष्टौ च टङ्कणक्षाराद्वराटानाञ्च विंशतिः॥ १८६४॥
महाजम्बीरनीरस्य प्रस्थद्वन्द्वेन पेषयेत्।
एतदष्टशरावस्थं शुद्धं खार्यास्तुपस्य च॥ १८६५॥
करीषभारे च पचेदथ माषद्वयं ततः।
एतावद्गन्धकात्पादं मरिचाद्भावितादपि॥ १८६६॥
मधुनाऽऽलोडितं लिह्यात्ताम्बुलीपत्रलेपितम्।
गतेऽस्य घटिकामात्रे प्रतियामञ्च पथ्यभुक्॥१८६७॥
नोचेदुद्दीपितो वह्निः क्षणाद्धातून्पचत्यतः।
दिनमेकं निषेव्यैनं त्याज्यान्यामण्डलात्त्यजेत् १८६८
ततः परं यथेष्टाशी द्वादशाब्दं सुखी भवेत्।
एकमेकं दिनं भुक्त्वा वर्षेवर्षे महारसम्॥ १८६९॥
वर्षद्वादशपर्यन्तं ज्वरशङ्कां व्यपोहति।
वर्षादौ च त्यजेत्साज्यं क्षयपर्वतभेदनः॥ १८७०॥

र.र स, र सु, र च, र को, र र, र. का, र. पा, राजयक्ष्मणि।

टि०—र र, र. को, र. चा, र पा, एषु ग्रन्थेषु "कर्षं खर्परसत्त्वस्य समांशे हेमविद्रुते। निक्षिप्य चूर्णयेत्तत्पञ्चनिष्कं शुद्धगन्धकम्। अङ्कोल कङ्गुणीबीज तुत्थ ताल चतुष्कम्। मुक्ताप्रवालचूर्णञ्च प्रति निष्काष्टक क्षिपेत्॥ मृतलौहस्य निष्कौ द्वौ टङ्कणस्याऽष्टनिष्ककम्। द्वौ निष्कौ नीलकङ्कुष्ठस्वर्णगैरिकाश्च विंशतिः॥ मिश्रं निष्कत्रयं योज्य सर्वं यन्त्रे विमर्दयेत्। चाङ्गेर्यम्लेन यामैक जम्बीराम्लैर्दिनद्वयम्॥ रुद्ध्वा पुटाष्टकं देयं दिनमेकं तुषाग्निना। जम्बीरोत्थद्रवेणैव पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुटे पचेत्॥ ततो वनोपलैरेव देयं गजपुटं महत्। आदाय चूर्णयेत्सूक्ष्मं चूर्णार्द्धं शुद्धगन्धकम्॥ गन्धार्धं मरिचं चूर्णमेकीकृत्य द्विमापकम्। लेहयेन्मधुना सार्धं नागवल्लीदलोत्थितम्॥ पथ्याशी प्रतियामं स्याद्भुक्ते विषवद्भवेत्। रसो वज्रेश्वरः ख्यातः क्षयपर्वतभेदनः॥" इति पाठोऽस्ति। एतत्कारणन्तु न गम्यते, अस्य मूलपाठन्तु पूर्वनिर्दिष्ट एवास्तीति सुधीभिः विभावनीयम्॥

भाषा—६ मासे सुवर्णको गलाकर १ कर्ष खर्परसत्त्व मिलावे। ५ कर्ष गन्धकको गलाकर १॥ कर्ष पारामिलावे फिर प्रवाल और मोती ६–६ मासे, लोह $\frac{2}{4}$ कर्ष, नाग $\frac{3}{4}$ कर्ष और ताम्र १ कर्ष (इनसबका बारीकचूर्ण) लेकर अमलोनियाके रससे तीन तीन पहर अलग २ मर्दनकरे। फिर इकट्ठेमिलाय नील और कुटकी ८–८ मासे, अभ्रकसत्त्व, कान्तलोह और हरितालकाबारीकचूर्ण, अङ्कोल और मालकांगनीकी मींगी, शुद्धतूतिया येसब १–१ कर्ष, सुहागा २ कर्ष, कौड़ीभस्म ५ कर्ष लेकर पूर्वोक्तयोगमें मिलाय २ प्रस्थ बिजौरेके रससे मर्दनकर

जाय और वटकी ताजीवरोहसे चलाताजाय फिर ३ दिन वन्दालकेस्वरससे मर्दनकर रखछोड़े । गर्मीकेमहीनेमें १ रत्ती पानमें डालकर खावे और प्रतिदिन १-१ रत्ती बढावे । ऐसे १६ रत्तीहोनेपर मात्राको स्थिरकरे । इन्द्रायणकीजड़, बाकुची, वन्दाल, इनकासमभागचूर्णमिलाकर १-१ कर्ष मधुकेसाथ खानेसे शरीरमें इसका अनुक्रमणहोताहै । एकवर्षतक इसप्रयोगकेकरनेसे ३०० वर्षकी आयु होतीहै और वज्रशरीरहोजाताहै ॥ ३८५ ॥

३८६ वडवाग्निमुखीवटी

शुल्व्याऽयोघनभस्म वेल्लहलिनीव्योपाम्बुनिम्बच्छदैः,
संयुक्तैश्च हरिद्रया समलवैः सार्धांशशुभ्राऽमृते ।
भृङ्गाऽम्भोविषतिन्दुकार्द्रकरसैः सम्पिष्य गुञ्जा मिता,
संशुष्का वडवामुखीति गुटिका नाम्नोदिता तारया ॥
क्षिप्रं क्षुत्प्रतिबोधिनी खलु मता सर्वामयध्वंसिनी,
श्लेष्मव्याधिविधूननी कसनहृच्छ्वासापहा शूलनुत् ।
क्षुद्वैषम्यहरा च गुल्मशमनी मूलार्तिमूलकषा,
शोफव्याधिहराऽत्र किं बहुगिरा सर्वामयोत्सादनी ॥

र र स, र क, ना वि, सर्वरोगे। र क. भक्तविपाकवटीति नाम ।

भाषा—तांबा, लोह, अभ्रकभस्म, विडङ्ग, करिहारी, त्रिकुटु, नागरमोथा, नीमकीछाल, हल्दी येसब समभागलेकर सबसेआधी रौप्यमाक्षिकभस्म और शुद्धवछनाग मिलाकर भंगरा, खस, कुचिला और अदरखके रसोंसे १-१ दिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षुधाको जागृतकर समस्त रोगोंको दूरकरतीहै । श्लेष्मव्याधि, कास, हृद्रोग, श्वास, शूल, भूखकीविषमता, गुल्म, बवासीर, शोथ इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ ३८६ ॥

३८७ वडवाग्निरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं ताम्रं तालं समं समम् ।
अर्कक्षीरे दिनं मर्द्यं क्षौद्रे लेह्यं त्रिगुञ्जकम् ॥ १८९२ ॥
वडवाग्निरसो नाम्ना स्थौल्यमाशु नियच्छति ।
पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं सदा पिबेत् ॥ १८९३ ॥

र स, र र स, र र कौ, र म मा, र चि, र को, यो र, र (मा), र क ल, र र, नि र, वै क, र च, ध, र र.दी, र स क, भै सा, व रा, रसायनस, चि सा, टो, र सु, वै र, वै चि, र कौ, चि र भ, र क, र श, भै र, मेदोऽधिकारे ।

टि०—वै र, वै चि चि र भ, र कौ, र क, र श, एषु ग्रन्थेषु वडवानलरस इति नाम स्थापितम् । र स, ध, र सु, र चि, भै र, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने वडवाग्निलेहमिति नाम्ना द्वितीय पाठ स्थापितोऽस्ति तत्र गन्धकस्थाने लोह नियोजितम्, शुद्धसूतस्थाने तद्भस्म गृहीतम् । अस्मिन्नेव रसे तदुभयमपि गृहीत्वा योगे निष्पादिते भवति द्वयोरप्येकस्मिन्स्थाने निवेश । क्वचिद्गन्धकस्थाने बोल गृहीतम् । रसमञ्जरीकल्पिकायां तालस्थाने तार नियोजितमिति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और हरितालभस्म सममाग लेकर नीलवर्णकमलीकर आकके दूधसे एकदिन मर्दन कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथदेकर एकपलमधुमें बराबरकाजल मिलाकर ऊपरसे पीनेसे यह स्थूलताको शीघ्र नष्टकरताहै ॥ ३८७ ॥

३८८ वडवाग्निरसः (द्वितीय)

कान्तं पद्मरसे घृष्टं पुटपक्वं वरारसे ।
मार्कवस्वरसे घृष्टं सप्तकृत्वस्त्वयोमलम् ॥ १८९४ ॥
त्रिफलाद्वादशकं कान्तं निशाग्निष्कमयोमलम् ।
टङ्कणं मरिचं तुल्यं पृथक् कर्षत्रयं भवेत् ॥ १८९५ ॥
चूर्णान्येतानि संयोज्य स्थापयेच्छुद्धभाजने ।
शुद्धदेहो नरस्तस्य पानं यद्भोजनोत्तरम् ॥ १८९६ ॥
अथात्पथ्यं तत स्वल्पं ततस्ताम्बूलभाग्भवेत् ।
उदराग्निर्नरस्याऽस्य वडवाग्निसमो भवेत् ॥
बहुनाऽत्र किमुक्तेन रसायनमयं नृणाम् ॥ १८९७ ॥

र र स, अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—कान्तलोहका बारीक चूरा बनाय कमलकेफूलोंमें घोटकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर त्रिफलाके रसमें घोटकर आंचदे इसतरह बारंवार भस्मकरले । मण्डूरको बहेड़ेके कोयलोंमें तपातपाकर ७ बार गोमूत्रमें बुझाकर शुद्धकरले और भंगरेकेरसमें घोटघोटकर पुटेदेकर भस्मकरले । फिर कान्तलोह भस्म ३ कर्ष, मण्डूरभस्म ७॥ कर्ष, भुनासुहागा, मरिच और तुत्थभस्म ३-३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय रख छोड़े वमन विरेचनादिकसे शरीरको शुद्धकर इसमेंसे १ रत्तीसे लेकर १ माशेतककी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देकर स्वल्पपथ्य दे और ऊपरसे पानकाबीड़ा खिलावे । इससे अग्नि एकदम प्रदीप्तहोजाताहै और हमेशा सेवनकरनेसे यह रसायनकाकाम करताहै ॥ ३८८ ॥

३८९ वडवानलरसः (प्रथम)

अधुना कथयिष्यामि वडवानलसञ्ज्ञकम् ।
रसेन्द्रस्य च संस्पर्शात्सन्निपातोऽतिदारुण ॥१८९८॥
अवश्य विनिवर्तेत का कथा ज्वरमात्रके ।
पूर्वमुत्पातितं सूतं भस्मीकुर्याद्विचक्षण ॥ १८९९ ॥
भस्मीकरणयोगोऽयं कथ्यते सम्प्रदायत ।
विष्णुक्रान्तामुत्तराद्या वारुणीश्च समाहरेत् ॥१९००॥
उत्तरावारुणीदुग्धैः सस्यारिजरसैस्तथा ।
हंसपादीरसैस्तद्वदर्कक्षीरैस्तत परम् ॥ १९०१ ॥
वज्रीक्षीरे ब्रह्ममूलरसैः सम्यक् प्रमर्दयेत् ।
कपिकच्छुशिफानीरै विष्णुक्रान्तारसैस्तथा ॥१९०२॥
गाकण्टमूलनीरैस्तु रसैः पौनर्नवैस्तथा ।
पाठारसैर्देवदालीरसैश्च यवचिञ्चिजैः ॥ १९०३ ॥
शतावरीकञ्चुकीजे सूत यत्नात्प्रमर्दयेत् ।
दिनानि दश सम्मर्द्य दिवानक्तमतन्द्रित ॥ १९०४ ॥

तस्य कल्कस्य गोलं तु यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ।
लेपञ्च सुदृढं दत्त्वा यन्त्रं चुल्ल्यां निवेशयेत् ॥१९०५॥
एकविंशदिनं यावदग्निं सञ्ज्वालयेदधः ।
यन्त्रादुत्तारयेत्सूतं भस्मीभूतं सुपाण्डुरम् ॥ १९०६ ॥
भस्मैतन्मारयेल्लोहं सुवर्णाद्यमसंशयम् ।
लेपेन पुटयोगेन सर्वलोहानि मारयेत् ॥ १९०७ ॥
एतद्भस्म समादद्यात्तोलमेकं महोज्ज्वलम् ।
गन्धं मनःशिलां तालं प्रत्येकं तोलमाहरेत् ॥ १९०८ ॥
खल्वमध्येऽथ तत्सर्वं मर्दयेद्वारुणीरसैः ।
दिनत्रयं निम्बुकीजैस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ १९०९ ॥
चक्रधारान्समादद्यात्सजीवान्विंशतिद्वयान् ।
पूर्वमर्दितकल्कान्तः क्षिप्त्वा श्लक्ष्णं विमर्दयेत्॥१९१०॥
दिनमेकं प्रयत्नेन तस्य गोलञ्च कारयेत् ।
गोस्तनाकारमूषायां षडङ्गुलकमानतः ॥ १९११ ॥
पक्वायां निःक्षिपेद्गोलं मुखं सम्यङ्निरोधयेत् ।
मूषार्द्धं धरणीमध्ये निखनेदूर्द्धमूर्द्धतः ॥ १९१२ ॥
विदध्यात्प्रकटां पश्चादुत्पले वनसम्भवैः ।
चत्वारिंशत्समाख्यातैश्चतुर्भिरधिकैः पुटेत् ॥१९१३॥
स्वाङ्गशीतलमाकृष्य पूजयित्वाऽथ भैरवीम् ।
खल्वे सञ्चूर्ण्य निक्षिप्य करण्डे दन्तनिर्मिते ॥१९१४॥
ततः परीक्षा कर्तव्या रसस्य मतिमज्जनैः ।
पार्थिकां जलपूर्णाञ्च कृत्वा तत्र निवेशयेत् ॥ १९१५ ॥
सिद्धं रसं वल्लमानं पात्राऽऽच्छादयेत चाऽन्यथा ।
चतुर्भिः प्रहरैः सूतः पानीयं शोषयेद् ध्रुवम् ॥१९१६॥
पानीयशोषणत्वेन वडवानल ईरितः ।
ज्वरितस्य ततो देयो गुञ्जामानो रसेश्वरः ॥ १९१७ ॥
प्रदानक्षणमात्रेण देहेऽतिलघिमा भवेत् ।
ज्वरवेगो निवर्तेत शिरोऽर्तिं नश्यति क्षणात् ॥१९१८॥
बुभुक्षा महती सद्यो जायते भोजयेत्ततः ।
दुग्धभक्तं शर्धिकं वा यावत्तृप्तिः प्रजायते ॥ १९१९ ॥
सर्वथा न निवर्तेत बुभुक्षा यदि तत्र वै ।
अन्यद्रसान्तरं तत्र कथ्यमानं प्रयोजयेत् ॥ १९२० ॥
पूर्वशुद्धं रसं नीत्वा गन्धकेन समांशतः ।
प्रमत्तमेषीवसया मर्दयेद्दिवसं ततः ॥ १९२१ ॥
गोस्तनाकारमूषायां क्षिप्त्वाऽथ पुटयेद्रसम् ।
पूर्ववत्स्वाङ्गशीतं तं पात्रेऽन्यस्मिन् विनिःक्षिपेत् १९२२
पूर्वप्रयुक्तसूतस्य जायते चेदुपद्रवः ।
तदुपद्रवनाशार्थं रसमेनं प्रयोजयेत् ॥ १९२३ ॥
गुञ्जामानेन संहन्यादुपद्रवमसंशयम् ।
एतत्सूतप्रयोगेण धनुर्वातो विनश्यति ॥ १९२४ ॥
कण्ठकुब्जकसञ्ज्ञोऽपि दन्तसङ्कीलनं तथा ।
अवश्यं नाशमायाति रसेन्द्रस्य प्रभावतः ॥ १९२५ ॥
धनुर्वाते कण्ठकुब्जे शैत्यं वातं विवर्जयेत् ।
वडवानलसञ्ज्ञोऽयं रसेन्द्रो रोगभेदकः ॥ १९२६ ॥
सर्वेषामेव रोगाणां चक्रवालं निहन्ति वै ।
अनुपानप्रयोगेण सर्वरोगनिवारणः ॥ १९२७ ॥

रसाल , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ऊर्द्ध, तिर्यक् और अधःपातनकियेहुए शुद्धपारेकी भस्मकरे, उसकेलिये विष्णुकान्ता (सफेदकोयल) और चमार दूधी पारेके बराबर लेकर कल्कबनाय पारेमें मिलादे । फिर १–२ पहरमर्दनकर गोवर्ण, चमारदूधीकादूध, भंगियाघास, हयराज, आक और थूहरकादूध, पलाशकीजड़कारस, केवांचकीजड़, काली-कोयल, गोरखकीजड़, पुनर्नवा, पाठा, वन्दाल, त्रिली, शता-वर, क्षीरकञ्चुकी (यहतन्त्रग्रन्थोंमें इसीनामसे आयाकरतीहै यह एक थूहरकी जातिहै इसमें कांटे नहींहोते । पत्ते पानकेसदृश दलदारहोतेहैं डंडी हरी और काली होतीहै बनारस प्रान्तमें इसे *नागदौन बोलतेहैं । नागदौन यह शब्द प्रत्येकप्रान्तमें अलग २* वनस्पतिमें रूढ़है रसौषधियोंमेंभी इसका परिगणन आयाहै) इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा दूधप्रभृतिद्रवसे १०–१० दिन निरन्तर मर्दनकर गोलाबनावे, बीचमें विश्राम न होना-चाहिये दिनरातमर्दनकरे । फिर इसकी रोटीजैसी बनाय सोमा-नलयन्त्रमें रखकर ६–७ कपड़मिट्टीसे मुंहबन्दकर समस्तपर ६–७ कपड़मिट्टी सुखासुखाकरदेवे । फिर इसयन्त्रको चूल्हेपर रख २१ दिनतक नीचे निरन्तर अग्निदेवे, ऊपरकी हंडीपर पानीकापोता रखताजाय जिसमें कि अग्निकी तेज़ीसे पारा उड़ न जाय (आजकल जो सोमानलयन्त्रके लक्षणमिलतेहैं वे रसा-लङ्कारकर्ताकेमतसे विरुद्धहैं क्योंकि " यन्त्र चुल्ल्या निवेशयेत् । एकविंशद्दिनं यावदग्निं संज्वालयेदध " ऐसा वाचनिकमुद्रासे इन्होंने इसबातको सिद्धकियाहै) । २१ दिनकेबाद आगदेना बन्दकरदे और कोयले यथावस्थित रहनेदे, पोतेकोभी हटादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर यन्त्रको युक्तिसे खोले ऊपरकीहण्डीमें एकदम सफेदभस्म लगीहुई मिलेगी । कभी २ नीचेकी हण्डीमेंभी पड़जाया-करतीहै इससबको कागज़वगैरहसे धीरजसे निकालकर रखछोड़े । इसभस्मको मारकद्रव्योंकेस्वरसमें मिलाकर किसीभी धातुकेपत्रपर लेपदेकर अग्निदेनेसे उत्तमभस्महोतीहै और विशेषगुणप्रद-होतीहै । यह पारेकीभस्म, शुद्धगन्धक, मैनसिल और हरिताल १–१ तोला लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर इन्द्रायणकेपञ्चाङ्ग और निम्बुकताकीजड़केरससे ३–३ दिनमर्दनकर ४० नग जीते-हुए सखलोंको लेकर उनकेरसमें एकदिन निरन्तर मर्दनकर गोला-बनाय ६ अङ्गुलकी पकीहुई गोस्तनीमूषामें बन्दकर मुखमुद्रा-कर ३–४ कपड़मिट्टीसमस्तपर लगाय सुखाकर आधीमूषाको-जिमीनमें गाड़दे और ऊपरसे ४४ नग जङ्गलीकण्डोंकीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर भैरवीकी पूजाकर चूर्णकर हाथीदांतकी डब्बीमें रखकर जलभरेपात्रमें डब्बीको डुबाकर रक्खे । इसमेंसे ३ रत्ती रस पानीभरेहुएघड़ेमें डालकर मुंहबन्दकरदे तो ४ पहरकेभीतर घड़ेकापानी सूखजायगा, इसीलिये इसको वडवानल कहतेहैं । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षणभरमें शरीर हलका होजाताहै और ज्वरजनितशिरोवेदनाप्रभृति निवृत्तहोकर

भूखलगतीहै उसवक्त दूधभात अथवा दहीभात तृप्तकरके खिलाना। यदि भूख किसीतरहभी शान्त न हो तो नीचेलिखा-हुआ रस देना।

पूर्वप्रकारसे शुद्धकियाहुआ पारा और गन्धक समभाग लेकर मस्तमेंढकी चर्बीसे एकदिनमर्दनकर गोस्तनाकारमूषामें डालकर अच्छीतरह कपड़मिट्टीकर पूर्ववत् ४४ कण्डोंकी, आचदे स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दूसरेपात्रमें रखछोड़े। अगर पहिले-रससे उपद्रव मालूम हो तो इसमेंसे १-१ रत्ती देनेसे तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहैं। इसके अतिरिक्त धनुर्वात, कण्ठकुब्जक, दन्तबन्ध, येसब नष्ट होजातेहैं। धनुर्वात और कण्ठकुब्जरमें ठंढीचीजें और वायुका वर्जनकरे। इसमेंसे तत्तद्रोगहरानुपानोंके-साथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै॥ ३८९॥

३९० वडवानलरसः (द्वितीयः)

गद्याणा दश ताम्रस्य तेषां पत्राणि कारयेत्।
तानि कण्टकवेध्यानि द्व्यङ्गुलैकाङ्गुलानि च ॥१९२८॥
शुद्धसूतस्य गद्याणान्स्थाल्यन्तर्विन्यसेद्दश।
विंशति निम्बुकानाञ्च खण्डानि शतशः क्षिपेत् १९२९
ततश्च ताम्रपत्राणि लवणं काञ्जिकेन च।
आरनालभृतास्थालीमारोप्य चुल्लिकोपरि ॥१९३०॥
हठाद्वह्निः मर्दीयेत त्रिदिनञ्च दिवानिशम्।
सक्षारे वह्निना दग्धे काञ्जिकं प्रक्षिपेन्मुहुः ॥ १९३१ ॥
जायन्ते तानि पत्राणि श्वेतरूप्यसमानि च।
शुद्धगन्धकगद्याणशतं पिष्ट्वाऽनु चूर्णयेत् ॥ १९३२ ॥
स्थालिकायां क्षिपेच्चूर्णं ततः पत्रं प्रसारयेत्।
पुनश्च गन्धकं दत्त्वा पूर्ववत्पत्रदापनम् ॥ १९३३ ॥
पिण्डीधत्तूरकस्यैवदेयामृद्वीतथोपरि।
पिधायाऽऽस्यं शरावेण दद्यात्कर्पटमृत्तिकाम्॥१९३४॥
चुल्ल्यां स्थालीं निधायाऽग्निं षड्यामं ज्वालयेदधः।
शीतामुत्तारयेत्स्थालीं ताम्रमेतावता मृतम् ॥१९३५॥
विनाधत्तूरकं पिण्डं याममुग्मं पुनः पचेत्।
दत्त्वा हस्तिपुटं खल्वे क्षिपेत्ताम्रं रसान्वितम् ॥१९३६॥
(आस्यान्तप्रमाणाः स्यु र्गजलावककुक्कुटाः)
पिष्ट्वा चूर्णं विधायाऽथ निर्गुण्डीस्वरसेन च।
आर्द्रकण्टकारीरस्य त्रिफलाया जलेन च ॥ १९३७ ॥
शुष्केशुष्के पुनर्देयाः प्रत्येकं सप्त भावनाः।
त्रिकटुस्नुमया देयाश्चैकविंशतिभावनाः ॥ १९३८ ॥
ससेक्षोश्च रसेनैव कनकस्य रसेन च।
निःसहायारसेनाऽपि वत्सनाभविषेण च ॥ १९३९ ॥
सर्वंशुष्कञ्च तच्चूर्णं कूप्यां क्षेप्यं प्रयत्नतः।
रक्षणीयमसौ नाम वडवानलको रसः ॥ १९४० ॥
वल्लैकः शीतनीरेण पञ्चामृतजलेन वा।
प्रत्यहं सततं ग्राह्यः प्रातरुत्थाय रोगिणा ॥ १९४१ ॥
दशार्द्धविंशतिमेहेषु शूलेषु विविधेषु च।
अष्टादशसु कुष्ठेषु दशीतिवातरोगिषु ॥ १९४२ ॥
अर्शःसु सकलेष्वेव गुदरोगे विशेषतः।
मन्दाग्नौ चाऽन्यरोगेषु देयोऽयं रसराजकः ॥१९४३॥
तैलक्षाराऽम्लवर्जञ्च भोज्यं मधुरभोजनम्।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते सेविते वडवानले ॥ १९४४ ॥

रसचि., र. कं. ली., सर्वरोगे।

भाषा—पाचतोले शुद्धतावेके कण्टकवेधीपत्र बनवाय १-१ अथवा २-२ अङ्गुलके टुकड़े करावे। पाचतोले शुद्धपारेको मजबूतहण्डीमें डालकर पकेहुए २० नींबुओंके छोटेछोटे सैकड़ों टुकड़ेकरके डालदे और ऊपरसे उन ताम्रपत्रोंके टुकड़ोंको फैलादे। ऊपरसे ४० तोले सैन्धवको काञ्जीमें पीसकर डालदे। काञ्जीभरीहुई हण्डीको साधारणकाञ्जीसे भरके चूल्हेपर चढ़ादे और तीनदिनरातकी कड़ी अग्निदेकर पकावे। जब काञ्जीसूखकर नींबू जलनेलगें तब और काञ्जी डालदे, ऐसे बारम्बार काञ्जीको देवे अन्तमें कुछगीलाही उतारले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे तावेके पत्रोंको निकालले, इसकारण एकदम चादीकेसदृश होजायगा। फिर ५० तोले शुद्धगन्धक पीसकर थोड़ासा दूसरी-हंडीमें बिछाकर कुछपत्रोंको बिछादे। इसीतरह गन्धक और पत्रोंकी तह जमाकर धतूरेकेपत्रोंकाकल्क हंडीमें मुंहतक भरके शरावसम्पुटकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर हंडीको चूल्हे-पर रख ६ पहरकी तीक्ष्णाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे सम्पुटको खोलकर कल्कको फेंकदे और अवशिष्टपदार्थको ज्योंका त्यों रखकर दोपहरकी चूल्हेपर अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर दूसरे सम्पुटमें धतूरेकेरससे भिगोकर रखकर सम्पुटबनाकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह पीसकर निर्गुण्डी, अदरख, पियाबासा, अमिलतास, त्रिफला इनके स्वरसोंकी ७-७ भावनाएं देकर त्रिकटु की २१, ईख, धतूरा, आकाश-बेल और बछनागके द्रवोंकी ७-७ भावनाएं देकर अच्छीतरह सुखाकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे २-३ रत्तीकी मात्रा ठंढेजल अथवा पञ्चामृतकेसाथ औचिती देखकर प्रातःकाल देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, नानातरहकेशूल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, ८० प्रकारकेवातरोग, समस्तबवासीर, खासकरगुदरोग, मन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरताहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे प्रायः सभीरोगोंको नष्टकरताहै। तैल, क्षार, खटाई, ये इसमें अपथ्यहैं। मधुरभोजन सेवन करानाचाहिये॥ ३९०॥

३९१ वडवानलरसः (तृतीयः)

रसबलिपुलिशानि स्युः पञ्चन्यग्निजारो,
जलनिधिशुभफेनः कान्तलोहोऽभ्रकञ्च।
भुजगरिपु मराहं तालकश्चेति तुल्या-,
नथ रविभवदुग्धे मर्दितं भावयेच्च ॥१९४५॥
गजपुटगतमेतज्ज्वालयेत्काकमाची-,
कनकविषफलाद्राह्यशोधमार्गैः।
तरणिरसभुजयन्तीशैलकर्णीद्विरेफ-,
त्रिवृत्तिसुरमाहायामकानां जलेन १९४६

तिमिमहिषमयूरच्छागपित्ते र्विमिश्रो,
भवति रसवरोऽयं वाडवाग्निः प्रगल्भः ।
पवनजनितरोगान्सन्निपातान्कफोत्था-,
न्क्षयति हि निजवल्लःप्रोक्तरोगाऽनुपानैः॥१९४७॥

रसायनसं., र.र.दी., टो., र.का., वातव्याध्यधिकारे। र. र. दी., टो. एनयो र्वडवाऽग्निरिति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, हीराभस्म, पांचोंनमक, अभ्रक, समुद्रफेन, कान्तलोह, अभ्रक (कालासुरमा), सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में, शुद्ध वच्छनाग और हरिताल येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आदरकेदूधसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखानेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मकोय, धतूरा, कुचिला, ब्राह्मी, पुनर्नवा, भांग, सफेदपुनर्नवा, जैंत, कोयल, भंगरा, निगोत, तुलसी, अडूसा, इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर सुखानेपर मछली, भैंसा, मोर और बकरेके पित्तोंसे १–१ भावना देकर २–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, और कफजनित समस्त व्याधियां नष्टहोतीहैं ॥ ३९१ ॥

३९२ वडवानलरसः (चतुर्थः)

शुल्वं तालकगन्धकौ जलनिधेः फेनोऽग्निगर्भाशयः,
कान्ताऽयोलवणानि हेमपयनं गोनिर्गतं तुत्थकम् ।
भागो द्वादशको रसस्य तदिदं यत्नाम्बुपूर्णं शनैः,
सिद्धोऽयं वडवानलो गजपुटे रोगानशेषाञ्जयेत्॥१९४८॥
आर्द्रकस्य द्रवेणाऽमुं दशवाराणि भावयेत् ।
दिनद्वयं चित्रकस्य द्रावेणैन तु भावयेत् ॥ १९४९ ॥
पादांशममृतं दत्त्वा चित्रद्रावैः क्षणं पचेत् ।
मात्रया योजयेद्याऽनु दशमूलश्टतं पयः ॥ १९५० ॥
वातश्लेष्मप्रधाने च दद्यात्त्र्यूपणचित्रकम् ।
स्वेदञ्च कटुतुम्बिन्या प्रयुञ्जीताऽतियत्नतः ॥
दाहञ्च जङ्घयोः कुर्याच्छीतवातञ्च वर्जयेत् ॥ १९५१ ॥

र. र. स., र. चं., र. चि., र. सं., र. क. यो., र. (मा.), र. मृ., वाताऽधिकारे। र. च., अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—ताम्र और हरितालभस्म, शुद्धगन्धक, समुद्रफेन, अभ्रक, कान्तलोहभस्म, पाचोंनमक, सुनामुहागा, गोरोचन, भुनातूतिया येसब १–१ भाग और पारदभस्म १२ भाग लेकर सबको इकट्ठे मर्दनकर धूमरकेदूधसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरखकेरससे १० दिन और चित्रकंकेरससे २ दिन भावनाएं देकर सुखाकर चतुर्थांश शुद्धवछनाग मिलाकर चित्रकके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय पकेपानोंकेअन्दर लपेटकर एकबालिस्तके भूधरयन्त्रमें रखकर लघुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दशमूलकेक्वाथकेसाथ अथवा दूधकेसाथ देनेसे यह तमाम वातरोगोंको नष्टकरता है। वातकफप्रधानव्याधियोंमें त्रिकटु और चित्रककेसाथदे। गृध्रसी प्रभृति वातरोगोंमें कडवीतूम्बडीकास्वेद और जांघोंमें दाह देवे तथा शीत और वायुसे परहेज़ रक्खे ॥ ३९२ ॥

३९३ वडवानलरसः (पञ्चमः)

वज्रं कान्ताऽभ्रकं शुल्वं रसगन्धकतुत्थकम् ।
नीलाञ्जनाब्धिफेनाऽग्निजरायुलवणैः समैः॥ १९५२ ॥
शनैर्मृत्तं योगपुटं पुटितं वडवानलः ।
हिगुञ्जश्च धनुर्वातं सन्निपातोदरादिकम् ॥ १९५३ ॥

र.चं., सन्निपाते।

भाषा— हीरा, कान्तलोह, अभ्रक और ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक और तुत्थ, सुरमेकीभस्म, समुद्रफेन, अभ्रक, पांचोंनमक, सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सन्निपातघ्न दशमूलप्रभृतिक्वाथोंसे भावनादेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी लगाकर भूधरयन्त्रमें स्वेदितकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे धनुर्वात, सन्निपात और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३९३ ॥

३९४ वडवानलरसः (षष्ठः)

कान्तञ्च सूतं हरितालगन्धं
समुद्रफेनं लवणानि पञ्च ।
नीलाञ्जनं तुत्थकमेव रूप्यं
भस्म प्रवालानि वराटकाश्च ॥ १९५४ ॥
वैकान्तशम्बूकसमुद्रशुक्ति
सर्वाणि चैतानि समानि कुर्यात् ।
सूतं भवेद् द्वादशभागकञ्च
स्नुह्यर्कदुग्धेन विमर्दयेच्च ॥ १९५५ ॥
दिनत्रयं वह्निरसैस्ततश्च
निवेदयेत्ताम्रजसम्पुटे तत् ।
मृदा च संलिप्य सुसम्पुटे-
तद्रसस्ततः स्याद्वडवानलाख्यः ॥ १९५६ ॥
तत्पादभागेन विषं नियोज्य
कृशानुतोयेन पचेत्क्षणं तत् ।
वातप्रधाने च कफप्रधाने
नियोजयेत्त्र्यूपणचित्रयुक्तम् ॥
दोषत्रयोत्थेऽपि च सन्निपाते
वाताऽधिकत्वादि निषूदनाय ॥ १९५७ ॥

भै.र., र.दी., र.सु., र.मृ., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—कान्तभस्म, शुद्ध पारा, हरिताल और गन्धक, समुद्रफेन, पाचोंनमक, सुरमेकीभस्म, शुद्धतुत्थ, रजत, प्रवाल, कौड़ी, वैकान्त, घोंघा, मोतीकीसीप, इनसबकीभस्में १–१

भाग, पारदभस्म १२ भाग लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर थूहर और आकके दूधतथा चित्रकके क्वाथसे ३-३ दिनमर्दनकर गोला-बनाय तांबेकेसम्पुटमेंबन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल-होनेपर चतुर्थांश शुद्धवत्सनागमिलाके रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा त्रिकटु और चित्रकचेचूर्णकेसाथ देनेसे वात अथवा कफप्रधान अथवा त्रिदोषप्रधानसन्निपातोंको यह नष्टकरताहै। इसमें दोषोंके प्रबलांशको विचारकर अनुपानोंका योगकरे॥३९४॥

३९५ वडवानलरसः (सप्तमः)

कान्तं माक्षिकशङ्खनाभिलवणं वैक्रान्तनीलाञ्जनं,
गोलाले रविफेनकर्षमितियुक् शम्बूकसूताऽष्टकम्।
निष्पिष्याऽथ दिनं सुवज्रिजलतो गर्तान्तरे त्रिःपुटान्,
सिद्धोऽयं वडवानलो विजयते गुञ्जाऽस्र सर्वामयान्॥

र. चि., सर्वरोगे।

भाषा—कान्त, सुवर्णमाक्षिक, शङ्खनाभि इनकीभस्में, सैन्धव, वैक्रान्त और सुरमेकीभस्म, शुद्धमैनसिल, हरिताल, आकजीजडकीछाल और अफीम १-१ कर्ष, घोंघा और पारा ८-८ कर्ष लेकर सबको नीलवर्णकमलीकर थूहरकेदूधसे एक-दिनमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़-मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर सेहुण्डकेदूधसे एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आंचदे। ऐसे ३ आंच देनेकेबाद निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै॥ ३९५॥

३९६ वडवानलरसः (अष्टमः)

स्वर्णं रौप्यसमं रसो द्विगुणितो द्वाभ्यां तथा गन्धकः
कान्तं स्वर्णसमं तथा विषमपि द्वाभ्यां समस्तालकः।
तद्वत्सिन्धुलता समुद्रजनिता शुक्तिश्च फेनस्तथा,
क्षीरेणाऽर्कसमुद्भवेन दिवसं सम्मर्दितोऽप्यम्बुना॥
सर्वांशाऽर्कजसम्पुटे सुपुटितो मृत्कर्पटैरावृतो,
गर्तान्तर्वडवानलो रसवरः पिष्टैश्च सम्भावितः।
सिद्धोऽसौ धनुषोऽनिलं क्षपयति स्वीयाऽनुपाने युतो
गुल्मप्लीहभगन्दरग्रहणिकामन्दाग्निनिर्मूलनः॥१९६०॥
पल्लोन्मितः सर्ववातमार्द्रकाम्बु सितायुतः।
जयेद्घस्त्रयं सूतेदास्त्वधोभागगतानपि॥ १९६१॥
गृहन्नारायणेनैव मापतैलेन वा तथा।
मर्दनं वाऽर्कतैलेन धनुर्वातापनुत्तये॥ १९६२॥

र., वातरोगे।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म १-१ भाग, पारदभस्म और शुद्धगन्धक २-२ भाग, कान्तभस्म और शुद्ध वत्सनाग १-१ भाग, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, प्रवाल, मोतीकी सीपभस्म और समुद्रफेन २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आकके दूध और चित्रकक्वाथसे १-१ दिनमर्दनकर गोलाबनाय बराबरकेआकके सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पांचोंपित्तोंसे यथाशक्य भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे धनुर्वातमें वातघ्न अनुपानकेसाथ ३ गोली एकसाथ देनेसे हर्जनहीं अन्यत्र औचित्यी देखकर १ अथवा २ गोलियां समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, प्लीहा, भग-न्दर, ग्रहणी, मन्दाग्नि इत्यादिरोगोंको यह बहुतशीघ्र नष्ट-करताहै साधारणतया समस्तवातविकारोंमें अदरखकेरस और शक्करकेसाथ देना। यह रस अधोभागगत वातविकारोंकोभी नष्टकरताहै। धनुर्वातमें वृहन्नारायण अथवा मापतैल अथवा अर्कतैलसे मालिश करनीचाहिये॥ ३९६॥

३९७ वडवानलरसः (नवमः)

शुद्धसूतस्य कर्षैकं गन्धकं तत्समं मतम्।
पिप्पलीं पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम्॥ १९६३॥
क्षारत्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवेणैव भावयेद्दिनमेकतः॥
वडवानलनामाऽयं मन्दाग्निञ्च विनाशयेत्॥ १९६४॥

र. सं., अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा औरगन्धक, पीपल, पांचोंनमक, मरिच, त्रिफला, तीनोंक्षार, सब समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर निर्गुण्डीकेरसकी एकदिन भावना देकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक योग्यता देखकर देनेसे यह मन्दाग्निको नष्टकरताहै॥ ३९७॥

३९८ वडवानलरसः (दशमः)

शुद्धसूतस्यभागःस्यात्ताम्रचूर्णञ्च तत्समम्।
द्विभागो गन्धकश्चैव त्रिभागञ्च कटुत्रयम्॥ १९६५॥
वह्निमूलस्यैकभागः कुष्ठं भागसमन्वितम्।
ज्वालामुखीरसे मर्द्यं बदरास्थिप्रमाणकम्॥
वडवानलनामाऽयं प्रसूतीवातनाशनः॥ १९६६॥

व. रा., यो. म., वै. चि., रसेन्द्रसं., सूतिकारोगे। रसेन्द्रमङ्गले वडवामुखेतिनाम।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, त्रिकटु ३ भाग, चित्रकजड और कूठ १-१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर ज्वालामुखी ? (अग्निशिखा अथवा कलिहारी) केरसमें एक-दिनमर्दनकर सुखाकर जङ्गलीबेरकीगुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथदेनेसे यह प्रसूतिवातको नष्टकरताहै॥ ३९८॥

३९९ वडवानलरसः (एकादशः)

पारदं गन्धकं ताम्रं यवक्षाराऽर्कमभ्रकम्।
आयमुलाऽहिपत्रेण सम्मर्याऽथ त्रिगुञ्जकम्॥१९६७॥

भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिङ्गुसिन्धुसुवर्चलैः ।
दाडिमञ्च तथा बिल्वं कार्षिकं भृङ्गजद्रवैः ॥ १९६८ ॥
पिष्ट्वा तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम् ।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलञ्च परिणामजम् ॥ १९६९ ॥

र.सं., ध., र.चं., र.सु., रसायनसं., र.क., टो., र.र.दी., र.का., र.र.स., र.क. यो., भै.र., र.को., वै.चि., व रा., नि र., र.र.कौ., गुल्मरोगाऽधिकारे ।

टि०—ध, र. का, र.र स, र.क यो, भै र, र को, वै चि, व रा, नि र, र र कौ, एषु ग्रन्थेषु शिखिवाडवनाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति सोऽप्यस्मादभिन्न एवाऽस्त्यतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक, यवक्षार, ताम्र और अभ्रकभस्म सवसमभाग लेकर चित्रकमूल और पके-पानकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ खाकर भुनाहींग, सैन्धव, सचल, अनारदाना, बेलगिरी समभागकाचूर्ण बनाय १ तोला भंगरेकेरसमें पीसकर तीक्ष्णमद्यकेसाथ पिलानेसे सवप्रकारके गुल्म और परिणामशूलको यह तत्काल नष्टकरताहै ॥ ३९९ ॥

४०० वडवानलरसः (बृहन्) (द्वादशः)

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
अभ्रकं वत्सनाभञ्च दारुजङ्गमजं विषम् ॥ १९७० ॥
जैपालात्साऽर्द्धशतकं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागपित्तै र्विभावयेत् ॥ १९७१ ॥
वटिकां शीततोयेन कुर्याद्गुञ्जाप्रमाणतः ।
वडवानलनामाऽयं नारिकेलजलेन वै ॥
भक्षयेत्सन्निपातार्तो मुक्तस्तस्मात्सुखी भवेत् १९७२

र स., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, अभ्रकभस्म, शुद्धवछनाग, दालचिकना, सर्पविष येसव १–१ तोला, शुद्धजमालगोटा १५० नग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मछली, भैंसा, मोर और बकरेके पित्तोंसे १–१ दिन भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ठंढेपानी अथवा नारियलके जलकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेसन्निपात निवृत्तहोतेहैं । जरूरत पड़नेपर जलयोगकरना ॥ ४०० ॥

४०१ वडवानलरसः (स्वल्पः) १३

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च ।
विषं तत्तुल्यकं दद्यात्सर्वं श्लक्ष्णं सुचूर्णितम् ॥ १९७३ ॥
लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत् ।
रक्तिकाऽर्द्धं समग्रं वा वटीमानं प्रकल्पयेत् ॥ १९७४ ॥
दोषे व्योषसमायुक्तो त्रिदोषशमनो भवेत् ।
भक्षयेत्पवने चोग्रे वडवानलसञ्ज्ञितम् ॥ १९७५ ॥

र स., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म और मरिच १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भाग, लेकर सबका बारीकचूर्णकर करिहारीकन्दकेरससे एक दिन मर्दनकर गोलाबनाय पानमें लपेटकर पुटपाककरे अथवा भूधरयन्त्रमें स्वेदनकर आधी अथवा १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली औचितीदेखकर समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातज व्याधियोंको नष्टकरताहै । साधारणत त्रिकुटेकेसाथ देनेसे सन्निपात नष्टहोताहै । प्रबलवातव्याधियोंमें वातघ्न अनुपानोंकेसाथ देना ४०१

४०२ वडवानलरसः (चतुर्दशः)

सूतं भुजङ्गममृतं लवणं हरिद्रा
व्योषं धनञ्जयजटाऽवनिभूधरित्री ।
अष्टौ दशद्वयनिधित्रयभागसङ्ख्यैः
शोभाञ्जनाऽऽर्द्रककरीरकबीजपूरैः ॥
निम्बूकफणीश्वरलतोरथपलाशतोये र्भाव्यं
विशोष्य विशदं प्रविधाय चूर्णम् ॥ १९७६ ॥

रसायनस., रस.स., र. (मा.), र सं.क., र.का., यो.चि., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और नागभस्म ८–८ भा, शुद्धवछनाग और सैन्धव १०–१० भा, हल्दी और त्रिकुटु, ९–९ भा., चित्रकमूल गन्धक और भुईआवला ३–३ भागलेकर बारीकचूर्णकर सहिजन, अदरख, करीर, बिजोरा, नीबू, पान, पलाशकीजड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा द्रवोंसे १–१ भावना देकर सुखाकर चूर्णबनाय कपड़छानकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, समस्तवातविकार, अरुचि, शूल, वमन इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ वडवानलरसः (पञ्चदशः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं ताम्राऽभ्रटङ्कणम् ।
सामुद्रञ्च यवक्षारं स्वर्जिसैन्धवनागरम् ॥ १९७७ ॥
अपामार्गस्य च क्षारं पालाशं वत्सनाभकम् ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चणकाम्लेन मर्दयेत् ॥ १९७८ ॥
हस्तिकर्ण्या द्रवैश्चाहो ह्यार्द्रयुक्तं पुटेल्लघु ।
माषैकं भक्षयेन्नित्यं रसोऽयं वडवानलः ॥
सर्वान् गुल्मान्निहन्त्याशु ग्रहणीञ्च विशेषतः ॥ १९७९ ॥

यो.र., रसायनस., र क यो., र म मा., (गुल्मे) र.स., व रा., र को., र का., ग्रहण्यधिकारे ।

टि०—र स, व रा, र को, र का, एषु वडवामुखरस इति नाम । अत्र पलाश वत्सनाभकमित्यस्य स्थाने पलाशवरुणस्य च इति, तथा हस्तिकर्ण्या द्रवैश्चाहो इत्यस्यस्थाने हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाथेति पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, भुनासुहागा, समुद्रनमक, यवक्षार, सज्जी, सैन्धव, सोंठ, अपामार्ग और पलाशकाक्षार, शुद्ध बछनाग येसब समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चणकाम्ल, हस्तिकर्णपलाश, अदरख इनके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर पुटपाक अथवा भूधरयन्त्रसे गरमहोनेतक स्वेदनकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा

रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त गुल्म और ग्रहणीरोगको यह नष्टकरताहै ॥ ४०३ ॥

४०४ वडवानलरसः (षोडशः)

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम्।
सम्यक् शुद्धं तथा कान्तं वङ्गं चापि शिलाजतु ॥
तुत्थं रसाञ्जनञ्चैव तालकं शङ्खमेव च।
वराटकञ्चाऽपि तुल्यं जयपालं द्विगुणीकृतम्॥१९८१॥
हपुषां पञ्चलवणं पञ्चकोलकसंयुतम्।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं प्रियङ्गुरजमोदकम् ॥ १९८२ ॥
द्वौ क्षारौ कुष्ठमेला च लवङ्गं जीरकद्वयम्।
शटी दन्ती त्रिवृच्चैव त्रिफला गजपिप्पली ॥१९८३॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य भावयेत्त्रिफलाजलैः।
सप्तधा खलु पाषाणे प्रचण्डातपशोषितम् ॥ १९८४ ॥
हरीतकीरसेनाऽथ पुनः सञ्चूर्ण्य यत्नतः।
पञ्चरक्तिप्रमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १९८५ ॥
एकैकां खादयेत्प्रातः शृङ्गवेररसाऽऽप्लुताम्।
हन्ति कुष्ठं तथा मेद आममारुतमेव च ॥ १९८६ ॥
श्लीपदं गण्डमालाञ्च गलगण्डं भगन्दरम्।
नाडीं दुष्टव्रणञ्चैव अन्त्रवृद्धिञ्च दारुणाम् ॥ १९८७ ॥
अम्लपित्तं रक्तपित्तं पक्तिशूलं हलीमकम्।
वातरक्तं वातकफमुपदंशं सपीनसम् ॥ १९८८ ॥
पञ्च गुल्मांस्तथाऽऽनाहं प्लीहशोथज्वरानपि।
उदराणि तथा कासाग्रसोऽयं वडवानलः ॥ १९८९ ॥

र.र.,व.रा.,कुष्ठे।

भाषा—हिङ्गुलसे निकालाहुआ पारा और गन्धक, ताम्र, कान्तलोह, वङ्ग इनकीभस्में, शिलाजीत, भुनाहुआ तूतिया, रसौत, हरिताल, शङ्ख, कौडी इनकीभस्में १-१ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग, हाऊ, पांचोंनमक, पञ्चकोल, विडङ्ग, पिपलामूल, प्रियङ्गु (गेंहुला), अजमोद, दोनोंक्षार, कुठ, इलायची, लौंग, दोनोंजीरे, कचूर, दन्तीमूल, निशोत, त्रिफला, और गजपीपल १-१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पाषाणकी खरलमें मिलाकर पन्द्रहदिनतक त्रिफला और हरडके काथोंसे कडीधूपमें ७-७ भावनाएं देकर ५-५ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसकेसाथ लेनेसे कुष्ठ, मेद, आमवात, श्लीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, अन्त्रवृद्धि, अम्लपित्त, रक्तपित्त, पक्तिशूल, हलीमक, वातरक्त, वातकफ, उपदंश, पीनस, पांचोंगुल्म, आनाह, प्लीहा, शोथ, ज्वर, उदर, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४०४ ॥

४०५ वडवानलरसः (सप्तदशः)

रसगन्धौ समौ मृतनागतुल्यस्तु टङ्कणः।
त्रिभिस्त्रिकटुकं तुल्यं सैन्धवं टङ्कणांशकम् ॥१९९०॥
मृतांशको भीमसेनः विषं मृततनुपांशकम्।
निम्बुनीरेण सप्ताहं चाङ्गेरीस्वरसेन च ॥ १९९१ ॥
पञ्चकोलकषायेण मर्दयेत्सप्तवासरम्।
जम्बीरनीरेण तथा भृङ्गनिर्गुण्डिजद्रवैः ॥ १९९२ ॥
भल्लातकानां क्वाथेन शृङ्गवेराऽम्बुना तथा।
वडवानलसूतः स्यात्सर्वाऽजीर्णविनाशनः ॥ १९९३ ॥
शृङ्गवेराऽम्बुना माषं विसूच्यां सम्प्रयोजयेत्।
विलम्बिकामजीर्णञ्च षड्विधं नाशयेत्क्षणात् ॥१९९४॥
दिने दिने यः सेवेत भीमाहारः स जायते।
तीव्राग्निर्जायते तस्य षड्रसे न प्रशाम्यति ॥ १९९५ ॥

र.,र.यो.,अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और सुहागा, सौंठ, मिर्च, पीपल, सैंधव और शुद्धकपूर १-१ भाग, शुद्धवत्सनाग ½ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबू, कमोंजी, पञ्चकोल, जंभीरी, भंगरा, निर्गुण्डी, भिलावां; अदरख इनप्रत्येकके द्रवोंमें ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक औचिती देखकर अदरखकेरसकेसाथ देनेसे हैज़ा, विलम्बिका, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको नष्टकर तीव्राग्निको करताहै जोकि षड्रसभोजन-करनेपरभी शान्तनहींहोता ॥ ४०५ ॥

४०६ वडवानलरसः (अष्टादशः)

रसं गन्धं शिलां तालं मर्द्यं निर्गुण्डिकारसैः।
त्रिदिनं निम्बुनीरेण तावदेव विभावितः ॥ १९९६ ॥
सर्वस्माद्द्विगुणा मर्द्याः शम्बूका जीवसंयुताः।
गोस्तनाकारमूषायां भूधरे पुटयेत्ततः ॥ १९९७ ॥
सिद्धो भवति सूतेशो वडवानलसञ्ज्ञितः।
गुञ्जा जयेत्सन्निपातान्विषमाऽविषमानपि ॥
पथ्यं दुग्धौदनं शस्तमतितापे पृथग्विधिः ॥ १९९८ ॥

र.,र.सु.,र.क.यो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनशिल और हरिताल सम-भाग लेकर निर्गुण्डी और नीबूकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर सबसे दुनेप्रमाणमें जीतेहुए घोंघे डालकर मर्दनकरे। फिर गोलाबनाय गोस्तनाकारमूषामें बन्दकर २-४ कपडमिट्टीदेकर सुखानेपर भूधरयन्त्रमें पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्तीभरमात्रासमय अथवा रोगोचिता-नुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात और विषम अथवा नित्यआनेवाले ज्वरोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूधभातदेना। अत्यन्त दाह मालूमहोनेपर उसके शमनकरनेका उपायकरना ॥ ४०६ ॥

४०७ वडवानलरसः (ऊनविंशः)

त्रिसिन्दूरं समं कृत्वा निश्चन्द्रं शुद्धतालकम्।
अमृतं ताम्रचूर्णञ्च रेणुकं पत्रिमूलकम् ॥ १९९९ ॥
समांशेन ततः सूतं गन्धकं मेलयेत्सुधीः।
विषमुष्टिञ्च भागैकं कटञ्चन्यमनेन तु ॥ २००० ॥
वाम्ब्याश्च नन्द्यावर्तस्य विशालिग्रन्थया।
क्षीरत्रयं ततो याज्यं मर्दयित्वा भिषग्वरः ॥ २००१ ॥

गुञ्जार्द्धं भक्षयेत्प्राज्ञः सर्वव्याधि विनाशयेत् ।
वातक्षयाऽश्मरीकुष्ठसन्निपातभगन्दरान् ॥ २००२ ॥
कूर्मासनं लिङ्गभङ्गं कटीशूलं ततः परम् ।
गुदभङ्गमपस्मारं लूतामुन्मादनाशनम् ॥ २००३ ॥
कर्णाऽक्ष्णोश्च शिरःपीडा गलग्रहश्च छिद्रकम् ।
प्लीहानं पङ्गुतां शोथं लोहजालश्च पीनसम् ॥ २००४ ॥
प्रमेहग्रहणीश्लेष्मविषमज्वरनाशनम् ।
अन्त्रवृद्धिं शिरःस्वेदमर्शासिपाण्डुकामलाम् ॥२००५॥
अरुचिं मूत्रकृच्छ्रश्च देयं जीवस्य संशये ।
हरते सर्वरोगांश्च भृङ्गबेररसैः सह ॥ २००६ ॥
वडवानल इति ख्यातो रसानामुत्तमो रसः ।
सर्वलोकहितार्थाय छुक्तोऽसौ पतिकोविदैः ॥२००७॥
र हा , रसायने ।

भाषा—त्रिसिन्दूर (अभ्रक, कान्त और लोहसिन्दूर), हरितालभस्म, शुद्धवछनाग, ताम्रभस्म, रेणुका, चित्रकमूल येसब १–१ भाग, शुद्धपारा और गन्धक सबकी बराबर, शुद्धकुचिला १ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करञ्जकीछालकेरससे ७१ दिन मर्दनकर आक, सेहुण्ड और अगुलियाथूहरके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर आधी आधीरत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातक्षय, अश्मरी, कुष्ठ, सन्निपात, भगन्दर, कछुही, ध्वजभङ्ग, कटिशूल, गुदभ्रंश, अपस्मार, मकड़ी, उन्माद, कान आख और सिरकीपीडा, गल ग्रह, तालुछिद्र, प्लीहा, पंगुता, शोथ, गलरोहिणी, पीनस, प्रमेह, ग्रहणी, श्लेष्मविकार, विषमज्वर, अन्त्रवृद्धि, सिरकापसीना, बवासीर, पाण्डु, कामला, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह नष्टकरताहै और जिससमय कोईभी दवा काम न करतीहो, जीवन सशयमस्तहो, उससमय अदरखकेरसकेसाथ इसका प्रयोगकरना ॥ ४०७ ॥

४०८ वडवानलरसः (विंशः)

तालादेको रसादेक एकः सीसकभस्मनः ।
द्वौ भागौ गन्धकाच्छुद्धान्मरिचात्पोडशांशकः २००८
चूर्णं कृत्वा रक्तिकैका घृतेन सह भक्षिता ।
विसूचीं सर्वशूलानि प्लीहानमुदरन्तथा ॥ २००९ ॥
गुल्मं सद्ग्रहणीरोगं श्वासकासगलाऽनिलान् ।
अग्निमान्द्यादिकान्रोगान् हन्त्यसौ वडवानलः २०१०
वै मृ , र सु , रसायनस , र पा., नि र , अजीर्णाऽधिकारे।
र सु , नि.र., र पा , एतेषु ताल्स्थाने वङ्ग नियोजितम् ।

भाषा—हरिताल, पारद और नागभस्म १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भा , मरिच १६ वां भाग लेकर सबका बारीकचूर्ण कर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथ देनेसे हैजा, सबप्रकारकेशूल, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, सङ्ग्रहणी, श्वास, कास, गलरोग, वातरोग और मन्दाग्नि येसब नष्टहोतेहैं ॥४०८॥

४०९ वडवानलरसः (एकविंशः)

तुल्यः पारददारदाम्बुदकृतो मर्द्योऽर्द्धयामाद्रसः,
गृह्णीयादिति सप्तधा रससमं घृष्टं विषं सङ्क्षिपेत् ।
खल्वे स्याद्वडवानलःसासिकतो यस्तण्डुलोन्मीलितः
सुप्तायामयसन्निपातदलनः पथ्यं सिताऽम्भोदधि ॥
र.श , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ और नागरमोथा १–१ तोला लेकर एकपहर मर्दनकर एकतोला शुद्धबछनागका बहुतबारीकचूर्ण डालकर एकदिनभर घोटे, इसीप्रकार दूसरेदिनभी डाले । ऐसे ७ दिनतक नया बछनाग डालकर १–१ दिन मर्दनकरे । इसमेंसे १–१ चावलभर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सुप्तवात और सन्निपात प्रभृतिको यह नष्टकरताहै । इसमेंपथ्य शकरका शरबत और दहीदेना ॥ ४०९ ॥

४१० वडवानलरसः (द्वाविंशः)

रसांशकं विषश्च स्यात् पट्पङ्गन्धकतालयोः ।
दन्तीवीजस्य पड्भागाः पञ्चभागन्तु टङ्कणम् ॥२०१२॥
चत्वारो धूर्तबीजस्य व्योषभागत्रयं भवेत् ।
एतानि वह्निमूलस्य क्काथेन परिमर्द्दयेत् ॥ २०१३ ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुञ्जाद्वयं द्वयम् ।
वडवानलसञ्ज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०१४ ॥
नारिकेलोदकं देयं पिबेच्च शर्करोदकम् ।
क्षीरान्नं दापयेत्पथ्यं वडवानलनामके ॥ २०१५ ॥
र क , र क.यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग १–१ भाग, शुद्धगन्धक, हरिताल और जमालगोटा ६–६ भाग, भुनासुहागा ५ भा., शुद्धधतूरेके बीज ४ भा , त्रिकटु ३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रकमूल और अदरखके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तप्यास लगनेपर नारियलकाजल और शकरका शरबत देना । ज्यादा भूख लगनेपर दूधभातदेना ॥ ४१० ॥

४११ वडवानलरसः (त्रयोविंशः)

लम्बितवह्निजरायुजरसाऽभि-
षेकाऽभिमूर्च्छितोरसेन्द्रः ।
गोमयस्यघटिकान्तरसंस्थः
स्वल्पवह्निपुटितो मुहुरेवम् ॥ २०१६ ॥
गन्धके द्विगुणितेऽथ सुजीर्णे
जारयेत्तदनु हेम विशुद्धम् ।
पञ्चपित्तकटुतोयमूर्च्छितः सूतः ॥
एकोऽपि हि त्रिदोषोदधि-
शोषो वडवानलः स्यातः ॥ २०१७ ॥
र (मा), त्रिदोष ।

भाषा—मोटा जङ्गलीकण्डा लेकर बीचमें दो अङ्गुलका खड्डा बनाकर गोबरसे लीपकर चिकना बनाले और सूखनेपर नीचेसे आगलगावे। जब कण्डेमें आधेतक आग पहुंचजाय तब खड्डेमें पारेको डालकर ऊपरसे अभ्रकको पानीमें हलकरके पारेपर चोवा देवे अथवा अग्निशिखामें १–२ दिनपारेको घोटकर टिकड़ीबनाकर रक्खे और ऊपरसे चोवादे। ऐसे एकघड़ीतक आंचलगनेकेबाद चोवादेना बन्दकरदे और पारेपर दीवलीरख कपड़मिट्टीसे सन्धिबन्दकरदे। अथवा कण्डेमेंसे निकालकर दो दीवोंमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर बहुतहल्की आंचदे फिर अग्निशिखाकेरसमें मर्दनकर टिकड़ीबनाय पूर्ववत् चोवादे। ऐसे जबतक भस्म न होजाय तबतक करताजाय फिर कण्डेहीपर दूनागन्धक जारणकरे। इसकेबाद द्विगुण सुवर्णके चूर्णमें मिलाकर अग्निशिखाके रससे घोटकर थोड़ी थोड़ी आंचदे। जब सुवर्णकीभस्म होजाय तब इसमें पाचोंपित्तों और कुटकीके स्वरसकी १–१ दिन भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अकेला त्रिदोषरूपीसमुद्रको सुखानेकेलिये वडवानलजैसा कामकरताहै॥ ४११॥

४१२ वडवानलरसः (चतुर्विंशः)

त्रिकटो र्द्वादश भागाः दशाऽष्टौ सैन्धवस्य च।
द्वौच भागौ हरिद्राया एकः केरभकस्य च॥ २०१८॥
वत्सनाभस्य नागस्य सूतस्य त्रितयं तथा।
प्रबलाऽग्निकरः प्रोक्तो रसोऽयं वडवानलः॥ २०१९॥
र. (मा.), अग्निमान्द्ये।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, सैन्धव १८ भा., हल्दी २ भाग, कहरवा, शुद्धबच्छनाग और नागभस्म १–१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर ३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह प्रचण्डाग्निको करताहै और मन्दाग्निजनित समस्तरोगोंको नष्टकरताहै॥ ४१२॥

४१३ वडवानलरसः (पञ्चविंशः)

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो मतः।
त्रिगुणञ्च विषं प्राह्यं कणाभागचतुष्टयम्॥ २०२०॥
लाङ्गली पञ्चधा प्रोक्ता सर्वमेकत्र मर्दितम्।
भावयेन्निम्बुकद्रावै र्दिनमेकञ्च शोषयेत्॥ २०२१॥
मरिचस्य प्रमाणेन वटिकां कारयेद्बुधः।
वायोश्चतुरशीतिश्च हन्ति श्लेष्मशतानि च॥ २०२२॥
कुष्ठरोगांश्च सर्वांश्च प्लीहगुल्मोदराणि च।
गृध्रसीं कटिशूलञ्च शूलमूलान्यनेकशः॥ २०२३॥
मेदोवृद्धेश्च शमनो वह्निर्दीप्तिकरः परः।
अयं नागार्जुनप्रोक्तो रसो वै वडवानलः॥ २०२४॥
मा. वि., नि. र., वातव्याध्यधिकारे।

टि॰—सिन्दूररत्नाकरे शार्ङ्गधरस्य त्रिभागस्त्रिगुणदाग [illegible] भागाग्निनाम्ना सदृश पाठ [illegible], तत्र [illegible] पाठश्चतस्य [illegible]।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., गन्धक २ भा, शुद्धबच्छनाग ३ भा. पीपल ४ भा., कलिहारी ५ भा., लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर नीबूकेरसकी एकदिन भावनादेकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ८४ वातरोग, समस्त श्लेष्म और कुष्ठरोग, प्लीह, गुल्म, उदर, गृध्रसी, कटिशूल, साधारणशूल, सैकड़ोंशूलोंकेकारण, मेद, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ४१३॥

४१४ वडवानलरसः (षड्विंशः)

रसं गन्धञ्च दरदं सोमलं जयपालकम्।
तालञ्च वत्सनाभञ्च समभागं विचूर्णयेत्॥ २०२५॥
कारवल्लीरसेनैव गुटिका मुद्गसन्निभा।
शर्करासहिता देया पथ्यं दुग्धौदनं हितम्॥ २०२६॥
वडवानलनामाऽयं वातरोगान्विनाशयेत्।
कफजान् व्रणविस्फोटानुपदंशभयानपि॥ २०२७॥
र. सि., वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगरिफ, सोमल, जमालगोटा, हरिताल और बच्छनाग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करेलेकेरसमें एकदिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे समस्तवात और कफकेरोग, व्रण, विस्फोट, उपदंश इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें दूधभात पथ्यदेना॥ ४१४॥

४१५ वडवानलवटी (प्रथमा)

पारदस्य त्रयो भागास्तावन्तो गन्धकस्य च।
नागस्य भस्मनस्तद्वच्चत्वारो गगनस्य च॥ २०२८॥
कटुत्रयं त्रिभागं स्यादष्टौ स्युः शङ्खभस्मनः।
द्वौ क्षारौ सैन्धवं हेम विडं सौवर्चलं तथा॥ २०२९॥
खर्परं प्रायमेदी च पृथग्भागं समाहरेत्।
सञ्चूर्ण्य शृङ्गवेरस्य नीरेण परिभावयेत्॥ २०३०॥
मातुलुङ्गस्य नीरेण शमीमूलरसेन च।
ज्वालामुखीरसेनाऽपि चणकक्षारवारिणा॥ २०३१॥
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दातव्या गुरुयुक्तितः।
शृङ्गवेररसेनैव प्राह्या वल्लमिता वटी॥ २०३२॥
अग्निमान्द्यं निहन्त्येषा वडवानलसञ्ज्ञिता।
मन्देऽग्नावरुचौ गुल्मे हार्जीर्णे च जलोदरे॥ २०३३॥
विसूच्यां ग्रहणीरोगे तथा वै राजयक्ष्मणि।
वैश्वानरेण विदिता वह्निदीपनकारणात्॥ २०३४॥
र. का., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और नागभस्म ३–३ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, त्रिकटु ३ भा., शङ्खभस्म ८ भा., सज्जी, सुहागा, सैन्धव, शुद्ध धतूरेकेबीज, [illegible], [illegible], [illegible], पाषाणभेद येसब १–१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे

गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरख, विजोरा, शमीकी जड़कीछाल, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, चनेकाखार, इनप्रत्येकके-द्रवकी ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, गुल्म, अजीर्ण, जलोदर, हैजा, ग्रहणी, राजयक्ष्म, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१५ ॥

४१६ वडवानलवटी (द्वितीया)

तालं ताप्यं कनकमुनदीकान्तगन्धाऽर्कसूतै-,
स्तुल्यांशैस्तैररणमधुरं दीप्यकं सर्वतुल्यम्।
एतैः सर्वैस्त्रिकटु च समं कज्जलीकृत्य सर्वं,
हिङ्ग्वम्भोभि र्मुनिमितदिनै र्भावयेत्सप्तकृत्वः॥२०३५॥
जयन्त्याः काकमाच्याश्च निर्गुण्ड्याश्चार्द्रकस्य च।
स्वरसै र्भावयेत्पिष्ट्वा सकृदेव दिनेदिने ॥
कर्तव्या माषकैस्तुल्याश्छायाशुष्काश्च गोलिकाः२०३६
हन्त्येषा वडवानलाख्यगुटिका संसेवितोष्णाम्बुना,
सर्वं शूलगदं क्रिमींश्च सकलान्वैषम्यवृत्तिं क्षुधः।
मन्दाग्निं ग्रहणीगदं श्वयथुरुक् पाण्डुंश्च गुल्मार्शसी,
वातश्लेष्मगदं तथोदररुजं श्वासञ्च कासं ज्वरम् २०३७

र. र. रा., र. को., चि. क, शूले।

भाषा—शुद्धहरिताल, सोनामाखी, सुवर्णभस्म, शुद्धमैन-सिल, कान्तलोह, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म और शुद्धपारा येसब १-१ भाग, निसोत और पुरानागुड़ ८-८ भाग, नई अजवाइन २४ भाग, त्रिकटु ४८ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी-नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर हींगकेजलसे ७ दिन, जैंत, मकोय, निर्गुण्डी अदरख इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन भावनादेकर १-१ माशेकी गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ अथवा गरमजलकेसाथदेनेसे सबप्रकारके शूल, कृमि, क्षुधाकी विषमता, मन्दाग्नि, ग्रहणी, शोथ, पाण्डु, गुल्म, बवासीर, वातश्लेष्मरोग, उदररोग, श्वास, कास, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१६ ॥

४१७ वमनामृतयोगः

गन्धकः कमलाक्षश्च यष्टीमधु शिलाजतु।
रुद्राक्षो टङ्कणश्चैव सारङ्गस्य च शृङ्गकम् ॥ २०३८ ॥
चन्दनञ्च तवक्षीरी गोरोचनमिदं समम्।
बिल्वमूलकषायेण मर्दयेद्यामसात्रकम् ॥ २०३९ ॥
मात्राञ्चैव प्रकुर्वीत वल्लस्यैव प्रमाणतः।
नानाविधाऽनुपानेन छर्दिं हन्ति त्रिदोषजाम्॥२०४०॥

नि. र, र. सु, र. क यो., छर्द्याम्।

भाषा—शुद्धगन्धक, कमलगट्टा, मुलहठी, शिलाजीत, रुद्राक्ष, भुनासुहागा, शृङ्गभस्म, सफेदचन्दन, वंशलोचन, गोरोचन, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर बेलकीजड़कीछालकेकाढ़ेसे १ पहर-मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह त्रिदोषज वमनको नष्टकरताहै ॥ ४१७ ॥

४१८ वमनेश्वररसः (प्रथमः)

अङ्कोलबीजाद्भागौ द्वौ भागमेकञ्च तुत्थकम्।
सूतगन्धकशुल्वञ्च समभागानि कारयेत् ॥ २०४१ ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायादौ भावयेल्लवणाम्बुना।
देवदालीरसेनाऽथ मदनस्य फलाम्बुना ॥ २०४२ ॥
आटरूषवचानिम्बपटोलमधुयष्टिका-।
कायेन भावयेच्चैतैः सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥ २०४३ ॥
गुञ्जात्रयं प्रदातव्यं तत्ततोयाऽनुपानतः।
वामयेदम्लपित्तानि देहशुद्धिश्च जायते ॥ २०४४ ॥
सर्वाऽजीर्णं कफं पित्तं वमनं कुष्ठनाशनम्।
अतिछेदे च दातव्यं धात्रीफलसितासमम् ॥२०४५॥

र. सि, वमने।

भाषा—अङ्कोलकीमींगी २ भाग, तुत्थभस्म १ भाग, शुद्धपारा, गन्धक और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर नमक, बन्दाल, मैनफल, अडूसा, बच, नीम, परवल और मुलहठी, इनकेक्वाथोंसे १-१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती गरमपानीकेसाथदेनेसे वमन होतीहै और अम्लपित्त, अजीर्ण, कफ, पित्त, वमन, कुष्ट इनको यह नष्टकरताहै। अतियोग होजानेपर आवलोंकाचूर्ण शक्कर-डालकरदेना ॥ ४१८ ॥

४१९ वमनेश्वररसः (द्वितीयः)

देवालीबीजं रसं गन्धं शुल्वं चन्द्रेन्दुभागिकम्।
देवदालीरसै र्भाव्यं सप्तधा समतुल्यकम् ॥ २०४६ ॥
योजयेन्मापमात्रन्तु उष्णाम्भःसंयुतं तथा।
ऊर्द्ध्वजत्रुगदार्तानां स्वस्थानां शुद्धिमिच्छताम् ॥
पित्तान्तवमनं सम्यक् कुर्याच्चूर्णं वमीश्वरः ॥२०४७॥

ना. वि, वमने।

भाषा—बन्दालकेबीज १६ भाग शुद्धपारा और गन्धक १-१ भागलेकर बीजोंको बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी कज्जलीमें मिलाकर बन्दालकेरससे ७ भावनाएंदेकर बराबरका शुद्धतुत्थ मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा गरमपानीकेसाथ देनेसे यथेष्टवमनहोकर शुद्धिहोजातीहै और इससे ऊर्द्ध्वजत्रुगत समस्तरोग नष्टहोजातेहैं ॥ ४१९ ॥

४२० वरुणाद्यं लोहम्

द्विपलं वरुणं धात्र्यास्तदर्द्धं धातुपुष्पिकाम्।
हरीतक्याः पलार्द्धञ्च पृश्निपर्णी तदर्द्धिकाम् ॥२०४८॥
कर्षमानञ्च लोहाभ्रं चूर्णमेकत्र कारयेत्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शाणमानं विधानवित् ॥ २०४९ ॥
मूत्राघातं तथा घोरं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम्।
अश्मरीं विनिहन्त्याशु प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ २०५० ॥
बलपुष्टिकरञ्चैव वृष्यमायुष्यमेव च।
वरुणाद्यमिदं लोहं सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ २०५१ ॥

र. सं., ध., र. चि, र. सु, र. चं, मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—वरुणकीछाल २ पल, आंवले १ पल, धावड़ीके-फूल और हर्रे २–२ कर्ष, पृश्निपर्णी, लोह और अभ्रकभस्म १–१ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे प्रातःकाल ४–४ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ लेनेसे अत्यन्तभयङ्कर-मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, प्रमेह, विषमज्वर, इनसबको नष्टकर बल और आयुको बढ़ाताहै ॥ ४२० ॥

४२१ वल्लभामृतरसः (प्रथमः)

शुद्धं तालं द्विधा गन्धं तालाऽर्द्धं हाटकं शुभम् ।
दिनैकं मर्दितं कृष्णतुलसीरससंयुतम् ॥ २०५२ ॥
तद्गोलाद्धटकान्कुर्यादेकैकान्मरिचोपमान् ।
पूरयेत्काचकूप्यां तु रुद्ध्वा सम्यङ्मृदंशुकैः ॥२०५३॥
शुष्केऽथ वालुकायन्त्रे पुटे मन्दाग्निना पचेत् ।
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समाहरेत् ॥ २०५४ ॥
शतवेधो भवेत्तेन तारं कृष्णं करोति च ।
तत्तारं जायते स्वर्णं समबीजेन मिश्रयेत् ॥ २०५५ ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं प्रयोगो वल्लभाऽमृतम् ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन तत्तद्रोगनिबर्हणम् ॥
पथ्याशनोपभोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ २०५६ ॥
र. क. यो., रसायने ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., सुवर्ण-वेवर्क आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कालीतुलसीकेरससे एकदिन मर्दनकर मरिचबराबर गोलियां बनाकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ४–५ कपड़मिट्टीसे मुंहबन्दकर सुखाय वालुकायन्त्रमें मन्दाग्निसे १२ पहर तक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे एकभाग लेकर १०० भाग चांदीमें गलाकर छोड़नेसे कालाकरदेताहै । उसचांदीमें बराबरका सुवर्ण मिलानेसे सुवर्ण-होताहै । यह उत्तम रसायन है । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वलीपलितादिकसे रहितकर दीर्घा-युको देताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ वल्लभामृतरसः (द्वितीयः)

वज्रवैक्रान्तताम्राऽभ्रं कान्तं तीक्ष्णञ्च हिङ्गुलम् ।
गन्धकं माक्षिकञ्चैव सूतभस्म समं समम् ॥ २०५७ ॥
वाराही वन्ध्यकर्कोटी मर्दितञ्च पृथक्पृथक् ।
गोलकं छायया शुष्कं वालुकायन्त्रगं पचेत् २०५८ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहपन्नगाः ॥ २०५९ ॥
एतेषां पित्ततो भाव्यं पर्यायेण यथाक्रमम् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०६० ॥
दाहपूर्वं ज्वरं हन्ति विषमज्वरनाशनम् ।
क्षयगुल्मश्वासकासान् ग्रहणीमतिसारकम् ॥२०६१॥
द्राक्षेक्ष्वादीनि भक्ष्याणि गुडोदकनिषेवणम् ।
लोकोपकरणार्थाय शङ्करेण सुभाषितम् ॥
वल्लभामृतयोगेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ २०६२ ॥
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—हीरा, वैक्रान्त, ताम्र, अभ्रक, कान्त और फौलाद भस्म, शुद्धशिंगरफ, गन्धक, सोनामाखी और पारदभस्म सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर वाराहीकन्द और बांझखेखसेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय छायाशुष्ककर वालु-कायन्त्रमें बन्दकर एकदिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछली, भैंसा, मोर, बकरा, सूअर और सांपके-पित्तोंसे १–१ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाहपूर्वकज्वर, सन्निपात और विषमज्वर, क्षय, गुल्म, श्वास, कास, ग्रहणी, अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै । अधिकगर्मी लगनेपर द्राक्ष, ईख और गुड़का शरबत पिलाना ॥ ४२२ ॥

४२३ वसन्तकुसुमाकररसः (प्रथमः)

प्रवालरसमौक्तिकाभ्रमिदं चतुर्भागभाक्,
पृथक्पृथगथो मृते रजतहेमनी द्व्यंशके ।
अयोभुजगवङ्गकं त्रिलवकं विमर्द्याऽखिलं,
शुभेऽहनि विभावयेद्भिषगिदं धिया सप्तशः॥२०६३
द्रवैर्वृपनिशेक्षुजैः कमलमालतीपुष्पजैः,
पयः कदलिकन्दजैः मृगजचन्दनाद्युद्भवैः ।
वसन्तकुसुमाकरो रसपतिस्त्रिगुञ्जोऽशितः,
समस्तगदहृद्भवेत्किल निजाऽनुपानैरयम्॥२०६४॥
क्षिणोत्यतु मधूपणैःक्षयगदेषु सर्वेष्वपि,
प्रमेहरुजि त्रिभिः समधुशर्कराभिः सह ।
सितामलयजद्वयैर्महति रक्तपित्तेऽथवा,
सितामधुसमन्विते वृषभपल्लवानां द्रवैः ॥२०६५॥
त्रिजातगजकेशरैरपि च तुष्टिपुष्टिप्रदो,
मनोभवकरः परो घमिषु दाहपुष्पीरसैः ।
अभीरुरसशर्करामधुभिरम्लपित्ताऽऽमये,
परेषु तु यथोचितं ननु गदेष्वमुं सेवयेत् ॥२०६६॥
वृ. यो. त., र. क. यो., र. सं., रसायन प., र. र., नि. र., यो. र., र. बो., र. चं., चि. क., ध., र. का., र. सु., रसायनसं., भै. र., टो., व. रा., र. प., वै. चि., शा. सं., बा., र. शि., र. र. स., रस. सं., र. म. मा., वै. चि., र. पा., रसायने वाजीकरणे च ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थानेऽयमेव पाठोऽर्कमूर्तिनाम्ना लिखितस्तथा "विभाव्य गन्धकेनैव सुवर्णस्य रसेन च । विभाव्यमधु-नीरेण दद्याद्गजपुटे तथा ।" इति विशेषेण निष्पादितस्तत्र सर्वस्य कज्जलीं विधाय कौषेयवस्त्राऽऽवेष्टितां पोट्टलिकां विधाय पोट्टलीपाकवद्गन्धके विभाव्य मधुरकमलरसाभ्यां पृथग्विभाव्य पोट्टलीं कृत्वा गजपुटञ्च दत्त्वा रोगेषु नियोजित इति विशेषः । वाहटस्य द्वितीयपाठे वैक्रान्तं नीलमाऽ-भिकमया प्रक्षिप्तं । क्वचिद्वङ्गादिस्थानेषु प्रमाणे व्यत्यय गोऽप्यनिर्दि-ष्टः । "वैक्रान्तस्य च भागैक द्विभाग हेमभस्म च । अभ्रकस्य च भागौ द्वौ मुक्ताविद्रुमयोस्तथा । वङ्गभस्म त्रिभाग स्यात्स्वरस्य भस्मन-स्तथा । चत्वारोऽस्य च भागाश्च सर्वमेकत्र मर्दितम् ॥ अर्कक्षीराद्भिश्च गोदुग्धेक्षुरसोत्थवारिभिः । वृषद्रवैस्त्रिनीरैः सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥ भावितो रसराजः स्याद्वसन्तकुसुमाकरः । एतोऽस्य मधुना दत्तः क्षय-रोगं क्षयं नयेत् ॥ मुक्ताऽभिसारलेहोऽथ मूत्राघातस्तम्भनम् । गुञ्जा-द्वयं तत्तदुक्तेन नाशयेन्नात्र संशयः ॥ वज्रपुष्टिकरो वृष्यः सर्वरोग निव-

ईण । हन्त्यजीर्णं ज्वरं श्वासं क्षयरोगं कृशाङ्गताम् ॥ नाऽतः परतरं किञ्चिद्रसायनमिहेष्यते ॥" इति पाठो भैषज्यरत्नावल्यां दृश्यते तत्र वैक्रान्तमेवाऽधिकं नियुक्तं लोहनागौ च त्यक्तौ । तथा अम्बरस्थानेऽभ्रकं गृहीतम् यथावस्थितेनाऽप्येतद्गुणसम्भवात्पृथक् पाठकल्पना न युक्तिसहा। वैक्रान्तेऽधिका भक्तिश्चेत्तन्नियोगेऽपि क्षत्यभाव ।

भाषा—प्रवाल,पारा,मोती,इनकीभस्में और अम्बर४–४ भाग, रजत और स्वर्णभस्म २–२ भाग, लोह, नाग और वङ्गभस्म ३–३ भाग लेकर सबको १–२ पहर मर्दनकर अच्छे दिन अडूसा, हल्दी, ईख, कमल, मालतीपुष्प, गोदुग्ध, केले काकन्द, कस्तूरी, सफेदचन्दन इनकेद्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । साधारणतया मधुमरिचसे समस्तक्षय, हल्दी, मधु और शकरसे समस्तप्रमेह, शक्कर और सफेदचन्दन अथवा अडूसके स्वरस, शक्कर और मधुसे रक्तपित्त, चातुर्जातसे नपुंसकत्व, शङ्खपुष्पीके स्वरससे वमन, शतावरीकेस्वरस, शक्कर और मधुसे अम्लपित्तको यह नष्टकरताहै ॥ ४२३ ॥

४२४ वसन्तकुसुमाकररसः (द्वितीयः)

मृतसूताऽभ्रकं स्वर्णं कान्तं तारं समांशकम् ।
प्रवालमुक्तावज्रञ्च भसितं नागवङ्गयोः ॥ २०६७ ॥
तदर्धं मर्दयेत्सम्यक् सेन्दुकस्तूरिकाभयम् ।
जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दिवसत्रयम् ॥ २०६८ ॥
कोकिलाक्षस्य शाल्मल्या आर्द्रेगान्धारिसम्भवैः ।
खर्जूरकदलीद्राक्षाकेतकीमधुयष्टिजैः ॥ २०६९ ॥
मधुक्षीरेक्षुजरसै र्वारियाराहिकन्दजैः ।
रक्तागस्त्यप्रसूनोत्थै र्मर्द्यं स्वेद्यं पयोन्वितैः ॥२०७०॥
सम्मिश्र्य शर्कराद्राक्षामुशलीमाषगोक्षुरैः ।
कपिकच्छूकरैः कोकिलाक्षो धात्री रम्भाफलं मधु २०७१
सूताच्चतुर्गुणं यामं मर्द्यं शाल्मलिजैर्द्रवैः ।
वल्लत्रयं सदा खादेत्साक्षात्कामसमप्रभः ॥ २०७२ ॥
गवां क्षीरं पिबेच्चाऽनु वसन्तपदपूर्वकम् ।
रूपयौवनसम्पन्नां स्वानुकूलां स्त्रियं भजेत् ॥ २०७३ ॥
मुद्गान्नशालिगोधूमद्राक्षादाडिमशर्कराः ।
नवनीतं क्षुण्णरम्भाफलं कर्पूरसंयुतम् ॥ २०७४ ॥
मृगनाभीन्दुकाश्मीरयुक्तचन्दनचर्चितः ।
मालतीमल्लिकाकुन्दकेसरस्रग्विभूषितः ॥ २०७५ ॥
विधिमेवं नरः कृत्वा रमयेत्प्रमदाशतम् ।
एकरात्रमतिक्रम्य द्विरात्रे तत्र वर्धयेत् ॥ २०७६ ॥
त्रिपञ्चषड्गुणञ्चैव दशरात्रे तु षोडश ।
पक्षे तु विंशतिं कुर्यान्मासे चैकं शतं भजेत् २०७७

र. क. यो., वाजीकरणे ।

टि०—रत्नाकरौषधयोगे "मृतगन्धाऽभ्रकं स्वर्णं कान्तं तारं समांशकम् । गोक्षीरेण विमर्द्याऽथ छायायाञ्च विशोषयेत् ॥ काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रके दिनम् । स्वाङ्गशीतलमादाय विशेषेण विनिक्षिपेत् ॥ प्रवालमुक्तामसितं मृतसूतकवङ्गयो । भागेन मर्दयेत्सम्यक् सेन्दुकस्तूरिकान्वितम् ॥ जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दिवसत्रयम् । खर्जूरकदलीद्राक्षा वाराहीकन्दधात्रिजै ॥ मर्दयेत्तु पिबेच्चाऽनु वसन्तपदपूर्वकम् । सहस्रनारी रमते पुरुषो वीर्यवान्भवेत् ।" इति द्वितीय पाठो दृश्यते तस्याऽन्तर्भावोऽनायाससिद्ध , कूप्यन्तपाकाऽनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति, पाठान्तरविभ्रमहासश्च महत्फलम् ।

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, कान्त और रजत २–२ भाग, प्रवाल, मोती, हीरा, नाग और वङ्गभस्म १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर कपूर, कस्तूरी, जावित्री, तालमखाना, सेमलकामुसला, अदरख, फागली (म०) खजूर, केलाकन्द, द्राक्ष, केवड़ा, मुलहठी, मधु, दूध, ईख, सुगन्धवाला, वाराहीकन्द, लालअगस्त्यकेफूल, इनप्रत्येकके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय इनसबकास्वरस और दूध इकट्ठामिलाय दोलायन्त्रसे एकदिन स्वेदनकरे । फिर शक्कर, द्राक्ष, मुसली, उड़द, गोखरू, केवाच, तालमखाना, बहेड़ा, आंवला, केलेकाफल और मधु येसब पारेसे चौगुनेचौगुने डालकर एकपहर सेमलकेमुसलेके स्वरससे मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर गोदुग्ध पीकर रूपयौवनसम्पन्न ऐसी स्वाभिलषित एकस्त्रीकेसाथ सङ्गकरनाचाहिये । दूसरीरात्रिको धीरे २ स्त्रियोंकी सङ्ख्या बढ़ावे । १० दिनमें १६ स्त्रियोंकेसाथ और १५ दिनमें २० स्त्रियोंकेसाथ सम्भोग करसक्ताहै और इसीतरह हमेशाकेसेवनसे प्रसङ्गशक्ति बढ़तीहीजातीहै । यदि ब्रह्मचर्यकेसाथ इसकासेवनकरेतो तमाम असाध्यरोग और क्षय नष्टहोजातेहैं । इसमें मूंग, चावल, गेंहू, द्राक्ष, अनार, शक्कर, मक्खन, केला, कपूर, येसब पथ्यहैं । कस्तूरी, कपूर, केशर और चन्दन इनका लेपकरे । मालती, मोगरा, कुन्द, केशर इनकी माला पहिने ॥ ४२४ ॥

४२५ वसन्तकुसुमाकररसः(तृतीयः)

हेम तारं प्रवालञ्च वज्रं वैदूर्यमौक्तिकम् ।
अभ्रकं मृतलोहञ्च द्विगुणं सूतभस्मकम् ॥ २०७८ ॥
वङ्गं नीलञ्च वैक्रान्तं नागभस्म प्रयोजयेत् ।
एतद्विशुद्धं युञ्जीत भावनेक्षुगणेन च ॥ २०७९ ॥
शतपत्रप्रसूनोत्थै र्मालत्याः कुसुमाम्बुभिः ।
पश्चान्मृगमदे भाव्यं सुसिद्धो रसराड् भवेत् ॥२०८०॥
मधुना सर्पिषा दध्ना गुञ्जामात्रप्रमाणतः ।
क्षयकासाऽरुचिश्वासशोषपाण्ड्वामयांस्तथा ॥२०८१॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीं हन्ति मेहानां विंशतिं तथा ।
ग्रहणीं कामिलाञ्चैव सर्वरोगव्रजन्तथा ॥ २०८२ ॥
शूलाऽऽध्मानौ वह्निनाशं कामदः पुष्टिवर्धनः ।
रेतोवृद्धिकरः पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् ॥
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ॥ २०८३ ॥

वा., वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, प्रवाल, हीरा, लहसुनिया, मोती, अभ्रक और लोह १–१ भाग, पारा, वङ्ग, नीलम, वैक्रान्त और नागभस्म २–२ भाग, लेकर बारीकचूर्णकर इखानमाटिके ईख,

गुलाब और माल्तीकेफूल, कस्तूरी, इनप्रत्येकके द्रवोंसे ३–३ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधु, घी अथवा दहीप्रभृति उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, कास, अरुचि, श्वास, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, २० प्रकारकेप्रमेह, ग्रहणी, कामला, शूल, आध्मान, मन्दाग्नि, कृशता, शुक्रनाश, वन्ध्यत्व इनसबको नष्टकर यह आयुको बढाताहै ॥ ४२५ ॥

४२६ वसन्तकुसुमाकररसः (चतुर्थ)

हेमतारविपवङ्गमौक्तिकं विद्रुमायसमिदं विभावयेत् ।
धारियुग्मकपय शतपत्रकदलीकमलकन्दनिशाभिः ॥
जातिकामृगमदेन्दुवृपैश्च भावयेन्मुनिदिनं प्रतियोगम्।
सिद्धिदश्च रसनायक एप जायते सकलरोगनिहन्ता
प्रमेहविपपाण्डुके ग्रहणिकाऽम्लपित्ते तथा,
क्षये श्वसनशूलके कसनरक्तपित्ते हित. ।
फणामधुविमिश्रितस्तदनु साऽर्द्धगुञ्जामितो,
वसन्तकुसुमाकरो मदगजेन्द्रकण्ठीरव ॥२०८६॥

रसायनस , वै चि , क्षये ।

भापा—सुवर्ण और रजतभस्म, शुद्धवच्छनाग, वङ्ग, मोती, प्रवाल और लोह इनकीभस्में सब समभाग लेकर दोनोंस्तन, गोदुग्ध, गुलाबकेफूल, केला और कमलकेकन्द, हल्दी, जावित्री, कस्तूरी, कपूर, अड्स इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ दिन भावनाए देकर १॥–१॥ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्रमेह, विप, पाण्डु, ग्रहणी, अम्लपित्त, सबप्रकारके क्षय, श्वास, शूल, कास, रक्तपित्त प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । साधारणतया श्वास, कास और शूलमें पीपल तथा मधुकेसाथदेना ॥ ४२६ ॥

४२७ वसन्ततिलकरसः

हेम्नो भस्म च तोलकं घनयुगं लौहात्त्रयं पारदात्,
चत्वारो वलिजं सुवङ्गयुगल चैकीकृत मर्दयेत् ।
मुक्ताविद्रुमयोरसेन समता गोक्षुरवासेक्षुणा,
सर्वं यन्यकदीपकेण सुदृढं तत्तत्पचेत्ससधा ॥२०८७॥
कस्तूरीघनसारमर्दिततनुः पश्चात्सुसिद्धोभवे-,
त्कासश्वाससपित्तवातकफजित्पाण्डुक्षयादीन्हरेत् ।
शूलादिग्रहणीं विपादिहरणो मेहास्तथा विंशति,
हृद्रोगादिहरो ज्वरादिशमनो वृष्या वयोवर्धन.२०८८

र सं , र र , र मु , भै र , ध , रसायनवाजीकरणयो ।

भापा—सुवर्णभस्म १ तो , अभ्रकभस्म २ तो , लोहभस्म ३ तो , पारदभस्म ४ तो , शुद्धगन्धक और वङ्गभस्म २–२ तोले, मोती और प्रवालभस्म ४–४ तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकठेमिलाय गोखरू, अडूसा, ईख इनके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १। सेर करसीकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिरसे मर्दनकर आंचदे । ऐसे ७ बार आंचदेकर कस्तूरी और कपूरके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे कास, श्वास, पित्त, वायु, कफ, पाण्डु, क्षय, शूल, ग्रहणी, विप, २० प्रकारके प्रमेह, हृद्रोग, ज्वर, शोप इनसबको दूरकर पूर्ण पुरुषत्वको देताहै और आयुको बढाताहै ॥४२७॥

४२८ वसन्तमालतीरसः (सुवर्णवसन्तमालती) १

स्वर्णं मुक्तादरदमरिचं भागवृद्ध्या प्रदिष्टं,
खर्परयष्टौ प्रथममखिलं मर्दयेन्मृक्षणेन ।
यावत्स्नेहो व्रजति विलयं निम्बुनीरेण ताव-,
द्गुञ्जाद्वन्द्वं मधुचपलया मालतीप्राग्वसन्त. ॥ २०८९॥
सेवितोऽयं हरेत्तूर्णं जीर्णञ्च विपमज्वरम् ।
व्याधीनन्यांश्च कासादीन् प्रदीप्तं कुरुतेऽनलम् २०९०

भै र , ध , रसायनस , र मु , र कौ , र प , वै चि (ल), वै द , सि भै म., वै वि , रसायनप , र मु , र ध , र चो , र शि , यो र , नि. र , र च , वृ यो. त , र का , र सि , र क ल , र. म मा , र प्र , र पा , ज्वराऽधिकारे। र मु , र सं , र शि , र यो , एपु वसन्तराज इति नाम ।

भापा—सुवर्णभस्म अथवा वर्क १ भाग, मोती २ भा , शिंगरिफ ३ भा , मरिच ४ भा , खपरिया ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर सबसे १५ वा हिस्सा अथवा चतुर्थांश मक्खन देकर ३–४ दिन मर्दनकर कागजीनीबूकारस डालकर चिकनाई रहितहोनेतक मर्दनकर टिकडिया बनाकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे सबप्रकारके जीर्ण तथा विपमज्वर और श्वासकासादिक उपद्रवोंको दूरकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै ॥ ४२८ ॥

४२९ वसन्तमालतीरसः (द्वितीय)

रसकं बलिजं सूतं शुद्धं गन्धं समंसमम् ।
मर्दयेन्नवनीतेन जम्भनीरेण भावयेत् ॥ २०९१ ॥
यावद्द्राव्यञ्च शुष्कञ्च तावत्तं कारयेद्भिपक् ।
वल्लमात्रं ततो दद्यात्पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ २०९२ ॥
धातुक्षयेऽग्निमान्द्ये च विपमे चाऽतिसारिणि ।
दुर्नामप्रदरार्तौ च ग्रहण्यां रक्तपित्तजे ॥ २०९३ ॥

र मु , धातुक्षये।

भापा—शुद्धखपरिया, मरिच, पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर मक्खनडालकर १–२ दिन मर्दनकर जम्भीरीकेरससे चिकनाई जानेतक मर्दनकर फिर इसकी टिकडियें बनाकर रखछोडे।इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे धातुक्षय, मन्दाग्नि, विपमज्वर, अतिसार, बवासीर, प्रदर, ग्रहणी और रक्तपित्त इनको यह दूरकरताहै ॥ ४२९ ॥

४३० वसन्तमालतीरसः (तृतीयः)

एकांशो मरिचाद्युभौ रसकत. सम्मर्दयेन्मर्दणे-,
पश्चान्निम्बुरसेन मर्दनविधि यावद्दृतं गच्छति ।

आर्द्रजे मधुकोत्थे वा जले वल्लोऽस्य दीयते ।
शूलाग्निमान्द्यनाशाय चित्रतिक्ताऽऽर्द्रजे जलैः २१३५
कोष्ठरोधप्रशान्त्यर्थं जयपालाऽऽज्यनागरैः।
समाक्षिकं शङ्खभस्म सजीरं ग्रहणीगदे ॥ २१३६ ॥
आमवातेऽस्याऽनुपाने त्रिफलाक्काथसंयुतम् ।
कोष्णमेरण्डतैलं स्यात्सद्यो वातगदान्हरेत् ॥२१३७॥
देवदाल्यग्निकटुकत्रयक्काथैस्तथाऽर्शसि ।
गुडूचीजीरककणानागरैः ज्वरशान्तये ॥ २१३८ ॥

र.दी.,शूले।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली-कर अपामार्ग और आकके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ी-बनाय लोहेकेपात्रमें रख थोड़ासा सरसोंका तैल ऊपर डाल मन्दाग्निसे पकावे । जब चटनीके सदृशहोकर पेंदेमें लगनेलगे तब ताम्रपात्रमें निकालकर तांबेके डण्डेसे खूबघोटे । एकजीव होजानेपर पारेका सोलहवा हिस्सा शुद्धवछनाग मिलाकर बकरे और भैंसेके पित्तोंसे ७-७ भावनाएं देकर चित्रक, आक और त्रिकटुके द्रवोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरख अथवा मुलहटी अथवा चित्रक, कुटकी, अदरख इनके द्रवकेसाथदेनेसे शूल और अग्निमान्द्य नष्टहोताहै । शुद्धजमालगोटा, घी और सोंठकेसाथ-देनेसे कोष्ठबद्धताको दूरकरताहै । शङ्खभस्म, जीरा और मधुके-साथ देनेसे ग्रहणीरोग, त्रिफलाकेक्काथसे आमवात, कुनकुन एरण्डतैलसे वातरोग; बन्दाल, चित्रक और त्रिकटुकेक्काथसे बवासीर; गिलोय, जीरा, पीपल और सोंठकेसाथदेनेसे समस्त-ज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४४१ ॥

४४२ वह्निभास्कररसः

सुवर्णमभ्रं वैकान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्षसम्मितम् ॥२१३९॥
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्मया रसेन च ।
त्रिसप्तकृत्वः सम्भाव्य कुर्याद्वल्लमिता वटीः ॥२१४०॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।
अन्यांश्च शिरसो रोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥२१४१॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः ।
ख्यातः पृथ्वीतले तस्मादाख्यया वह्निभास्करः २१४२

आ.वि., शिरोरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, वैकान्त और रजत इनकी भस्में ४-४ माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, माक्षिकभस्म, १-१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके रससे २१-२१ भावनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे मस्तिष्कमेंसञ्चितजल और नानातरहके शिरोरोग नष्टहोतेहैं ४४२

४४३ वह्निरसः (प्रथमः)

जातीजातं त्रिकर्षं मरिचमपि
पलं चार्द्धकर्षप्रमाणं,
गन्धं सूतं लवङ्गं विषमिद-
मखिलं तिन्तिडीकस्य तोये ।
पिष्ट्वा माषैकमात्रा वितरति-
दहनं वह्निमान्द्ये च सद्यो,
रोगांश्छूलाऽनिलादीन्दहति-
कृतगुणो वह्निनामा रसोऽयम् ॥ २१४३ ॥

वै.सृ., नि.र., र.सु, रसायनसं., अजीर्णे ।

भाषा—जायफल ३ कर्ष, मरिच ४ कर्ष, शुद्धपारा, गन्धक, लौंग, शुद्धवछनाग आधा आधाकर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय पकी इमलीकेजलसे एकदिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तत्क्षण मन्दा-ग्निको नष्टकर शूल और वातरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४४३ ॥

४४४ वह्निरसः (महान्) (द्वितीयः)

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनी त्रिफला शिला ।
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्यात्त्रिवृज्जैपालचित्रकम् ॥२१४४॥
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्याद्दन्तीत्र्यूषणजीरकम् ।
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ २१४५ ॥
जयन्तीस्नुकूपयोभृङ्गवह्नियातारितैलकैः ।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक्पृथक् ॥ २१४६ ॥
महावह्निरसो नाम्ना निष्कमुष्णजलैः पिबेत् ।
विरेचनं भवेत्तेन तक्रं भुक्तं ससैन्धवम् ॥ २१४७ ॥
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम् ।
सर्वोदरहरः प्रोक्तः श्लेष्मवातहरः परः ॥ २१४८ ॥

र.सं., वै.चि., शा.सं.,र.प्र.सु ,र.चि., र.क.ल., र र.स., यो.म.,र.सु ,र.क., र.र.कौ.,व.रा.,र.र.,र.का., रसायनसं , र.को., उदराऽधिकारे ।

टि०—योगमहार्णवे त्रय पाठा प्रकाशिता , एकोऽग्निमुखचूर्णनाम्ना व्यवहृत , द्वितीयो जलोदरहरः, तृतीय. पाठ उपर्युक्त (वह्निरस) नाम्ना व्यवहृत । व. रा , र. र एतयो र्वह्निवीर्यं इति नाम । रस-कामधेनौ द्वितीयस्थाने उदरारियोग इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., हल्दी, त्रिफला, मैनसिल, निसोत, शुद्ध जमालगोटा और चित्रक ३-३ भाग, दन्तीमूल, त्रिकटु, जीरा ८-८ भाग लेकर सबका वारीकचूर्ण कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जैंत, सेहुण्डकादूध, भंगरा, चित्रक, एरण्डीकातेल इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७-७ भावनाए देकर रखछोड़े । (तैल बहुत थोडाथोड़ा देकर ७ भावनाए पूरीकरे अन्यथा असम्भवहै) इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा गरमजलकेसाथदेनेसे रेचनहोगा । सन्ध्यासमय लवणयुक्तछाछ-भातदेना । ठंडेजलसे परहेज रखना । इसकेसेवनसे समस्तउदर-रोग, कफरोग और वातजन्यरोग नष्टहोतेहैं ॥ ४४४ ॥

४४५ वह्निसिद्धोरसः

लोहं गन्धं टङ्कणं भ्रामयित्वा
सार्धस्तस्मिन्सूतकोऽन्यश्च गन्धः ।

कन्याम्भोभि र्मर्दितः काचकूप्यां
क्षिप्तो वह्नौ सिद्धये वह्निसिद्धः ॥ २१४९ ॥

यो म., र.सि., रसायनसं, रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—लोहेको गलाकर समभाग गन्धक और सुहागा डाले । चक्रखानेपर इससे आधा पारा और गन्धक डालकर उतारले फिर घीकुंवारकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें बन्दकर एकदिनरात वालुकायन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ग्रहणीप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४५ ॥

४४६ वाजीकरणयोगः (प्रथमः)

सत्त्वं गुडूच्या गगनं सुलोह-
मेलासितापिप्पलिचूर्णमिश्रम् ।
लीढ्वाऽवलेहं मधुना विमिश्रं
स्त्रीणां शतं याति यदृच्छया ना ॥ २१५० ॥

र पा., वाजीकरणे ।

भाषा—गिलोयसत्त्व, अभ्रक और लोहभस्म, इलायची, शकर और पीपल समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल देखकर १ माशेसे ३ माशेतक मधुमें मिलाकर सेवनकरे और रातको दूधकेसिवाय कुछ न लेवे तो अभीष्टसमयतक स्त्रीसङ्गकरसकाहै ॥ ४४६ ॥

४४७ वाजीकरणयोगः (द्वितीयः)

रसभस्माऽभ्रकं लोहं धूर्तस्नेहैस्त्रिभावितम् ।
विजयाबीजतैलेन त्रिर्भाव्यं सिन्धुजद्रवैः ॥ २१५१ ॥
वल्लमात्रं सितायुक्तं रात्रौ च क्षीरभोजनम् ।
रामात्रययुतं रम्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥ २१५२ ॥

र.पा., वाजीकरणे ।

भाषा—पारद, अभ्रक और लोहभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर धतूरा, भाग और तुवरकके बीजोंके तैलोंसे ३–३ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा शकरकेसाथ खाकर दूधपीवे और रातको भोजन न करे तो तीन युवतियोंको खुश करसक्ताहै ॥ ४४७ ॥

४४८ वाडवरसः

पटुना पूरयेत्स्थालीं तन्मध्ये पटुमूषिकाम् ।
तन्मध्ये रामठीमूषां तन्मध्ये सूतकं क्षिपेत् ॥ २१५३ ॥
विषं निघृष्य सूतांशं वारिणाऽऽलोड्य सप्तभिः ।
कृते लेपैः सम्पुटिते तेन चैवं ददेच्छनैः ॥ २१५४ ॥
वह्निं प्रज्वालयेद्घोरं हठाद्यामचतुष्टयम् ।
तद्भस्म तिलमात्रन्तु दद्यात्सर्वेषु पाप्मसु ॥ २१५५ ॥
ग्रहण्यां जठरे शूले मन्दाग्नौ पवनामये ।
युक्तमेतन्निहन्त्येव कुर्याद्बहुतरां क्षुधम् ॥
तापे शीतक्रियां कुर्याद्वाडवाख्ये रसोत्तमे ॥ २१५६ ॥

र.चि., र मु., रसायनसं, यो म, र का, र मि, वृ या त, र.(मा) ज्वराऽधिकारे ।

टि०—माणिक्यचन्द्रीयरसावतारेऽप्य ज्वरारिनाम्ना प्रख्यापित परन्तु तत्र वत्सनामलेपनाऽभावात्रुटित पाठोऽस्ति, मतस्तस्याश्राऽन्त र्भावं उचित । पाताऽनन्तर तत्र समत्रयपाल्दन्तीबीजानि नियोज्य क्रमाद्द्विविभागतया नियोज्याऽमृतारसेन सम्पिष्य गुटिका कृता इन्ति, इति ॥ विशेषोऽस्त्येव । अत एव तस्य ज्वरारिनाम्ना पृथक् पाठ कृतोऽस्तीति सुधीभि र्विभावनीयम् ।

भाषा—सेंधेनमकको बारीकपीसकर आधी हंडी भरे और इसमें नमककीमूषाबनाकर रक्खे । उसमूषामें शुद्धहींगकीमूषा बनाकर रक्खे । फिर उसमें बराबरके मीठेवच्छनागकेसाथ घोटाहुआ शुद्धपारा रख हींग और नमक के उसीक्रमसे बन्दकर पानीमें पिसेहुएवच्छनागसे कपड़ेको भिगोकर मूषापर ७ बार लपेटकर गलेतक हंडीको नमकसे भरदे और ऊपरसे ढकनबन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीकरदे । सूखनेपर चूल्हेपर चढ़ाय ४ पहरकी हठाग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ तिलप्रमाण सम्पूर्ण समस्तपापरोगोंमें देनेसे उनको यह नष्टकरताहै । ग्रहणी, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि, वातरोग इनसबको नष्टकर अत्यन्त क्षुधाको बढ़ाताहै । दाहहोनेपर शीतक्रियाकरे ॥

४४९ वातकुलान्तकरसः

मृगनाभिः शिला नागकेसरं कलिवृक्षजम् ।
पारदो गन्धको जातीफलमेला लवङ्गकम् ॥ २१५७ ॥
प्रत्येकं कार्षिकञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्याद्द्विरक्तिकाम् ॥ २१५८ ॥
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः ।
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छारोगे च शस्यते ॥ २१५९ ॥
वातजान्सर्वरोगांश्च हन्याद्चिरसेवनात् ।
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्तते ॥
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥ २१६० ॥

र.स, र चं, ध., र.मु, वाताऽधिकारे ।

भाषा—कस्तूरी, शुद्ध मैनसिल, नागकेसर, बहेड़ा, शुद्धपारा और गन्धक, जायफल, इलायची, लौंग येसब १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जलसे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे महाघोर अपस्मार, मूर्च्छा, वातरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै

४५० वातगजाङ्कुशरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं लोहं ताप्यगन्धकतालकम् ।
पथ्या शृङ्गीविषं व्योषमग्निमन्थश्च टङ्कणम् ॥ २१६१ ॥
तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः ।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ॥ २१६२ ॥
कणाचूर्णयुतञ्चैव जिह्वीकार्थं पिबेदनु ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजाङ्कुशः ॥ २१६३
सप्ताहाद्गृध्रसीं हन्ति दारुणं सन्निपातकम् ।
क्रोष्टुशीर्षकवातञ्चाऽप्यजयाद्युकसम्भवम् ॥ २१६४ ॥

ऊरुस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत् ।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितं परमोत्तमम् ॥ २१६५ ॥
रसोऽम्बुशोषणो ह्यत्र युक्तोऽन्यो योगवाहकः ।
रास्नाऽमृतादेवदारुशुण्ठीवातारिजं शृतम् ॥
सगुग्गुलुं पिबेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥ २१६६ ॥

र स , ध , र सु , र क यो , र क ल , नि र , वै चि , र र स , चि र , र च , रसायनस , टो , र का., र म , यो म , र क , चि क , ना वि , यो त , यो र , र स क , शा स , वृ यो त , र र , र कौ , र (मा), भै सा , व रा , रसेन्द्रम , र , चि र म , र सि , र प्र सु , वाताऽधिकारे ।

टि०—यो र , र स क , शा स , वृ यो त , र र , र कौ , र (मा), भै सा , व रा यो त , रसेन्द्रम , र., चि र भ , र नि , र. प्र सु , र पा एषु तथा च र र स , रसायनम , र च , र सु , नि र , र क ल , वै चि , र का , एतेषा द्वितीयस्थाने स्वच्छन्दभैरवरस इति नाम स्थापितम् । तत्र प्रक्षेप शृङ्गीस्थाने निर्गुण्डी गृहीता । रसप्रकाशसुधाकरे मुण्डीनिर्गुण्ड्यौ निष्कास्य बीजपूरद्रवेण भावना प्रदत्ता, कृष्णासर्पि क्षौद्रैरनुपान नियोजितम् । रसावतारे भावनाया निर्गुण्डीसुरसे गृहीते, प्रक्षेप पथ्यास्थाने शिला नियोजिता । चिकित्सारहस्ये वातारिवटीति नाम । बसवराजीये द्वितीयस्थाने स्वच्छन्दनायकेति नाम । रसराजसुन्दरे अतिसाराऽधिकारे व्योष निष्कास्य भावनाया मुण्डीस्थाने शुण्ठी गृहीत्वा वातारिरस इति नाम स्थापितम् । नि र , र , वै चि , एतेष्वेवस्थाने समीरपन्नगेति नाम स्थापितम् ।

भाषा—पारा, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्मे, शुद्ध गन्धक और हरिताल, हरें, काकडासींगी, शुद्धवछनाग, निकटु, अरणी, भुनासुहागा, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकदिन शुष्क-मर्दनकर गोरखमुण्डी और निर्गुण्डीकरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पीपलकेचूर्णकेसाथ लेकर जिह्वाकाथ मिलानेसे यह साध्य अथवा असाध्य वातरोगको नष्टकरताहै । वातार्दनमें गृध्रसी, दारुणसन्निपात, क्रोष्टुशीर्षक, अववाहुक, ऊरुस्तम्भ, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, पक्षाघात, इनसबको यह नष्टकरताहै । वातरोगमें अम्बुशोषण अथवा अन्यकोई योगवाहकरसदेकर रास्ना, गिलोय, देवदारु, सोंठ और एरण्डकीजडका कदुष्णक्वाथ गूगलकेसाथदेना॥

४५१ वातगजाङ्कुशरसः (बृहन्) (द्वितीय.)

सूताऽभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम् ।
स्वर्णं शुण्ठी बला धान्यं कट्फलं चाभया विषम् २१६७
पथ्या शृङ्गी पिप्पली च मरिचं टङ्कणं तथा ।
तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिजैर्द्रवै ॥२१६८॥
द्विगुञ्जा वटिका खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु बृहद्वातगजाङ्कुश ॥२१६९॥

र स , ध , र सु , र च , र र , व रा , वातरोगाऽधिकारे ।

टि०—र स , ध , र सु एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने र च र र , व रा , एषु स्वतन्त्रतया च "मृताऽभ्रतीक्ष्णताम्रञ्च मृतालकगन्धकम् । भार्गी शुण्ठी बला धान्य कट्फलञ्चाऽभया विषम् ॥ मरिचं चपलाद्रावे निष्कैका भक्षयेद्दिनम् । वातश्लेष्महरो ह्येष महावातगजाङ्कुश ॥" इति पाठो दृश्यते तस्य पूर्वस्मिन्पाठेऽन्तर्भावं सुसाध्य । स्वर्णकान्तयोरभावे तद्धीनोऽपि पाठ प्रकल्पनीय इत्यत्रापदेशान्तरस्याऽनावश्यकत्वम् । यथा लाभ प्रयोजयेदित्येतत्सूत्र सर्वत्रैव योगिनोऽनुसरन्तीत्यन्यदेतत् ॥

भाषा—पारा, अभ्रक, फोलाद, कान्त, ताम्र इनकीभस्में, शुद्धहरिताल और गन्धक, सुवर्णभस्म, सोंठ, बला, धनियाँ, कायफल, हरें, शुद्धवछनाग, इन्द्रायण, काकडासींगी, पीपल, मरिच, भुनासुहागा, ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर गोर-खमुण्डी और निर्गुण्डीकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त वायुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ वातगजाङ्कुशरसः (तृतीय)

अष्टौ भागा रसस्याऽपि विषतिन्दोस्तथैव च ।
गन्धकस्य त्रयो भागाः कटुत्रयफलत्रयम् ॥ २१७० ॥
गुञ्जामात्रा वटी खादेदशीतिवातनाशनम् ।
ऊरुस्तम्भं निहन्त्याशु ख्यातो वातगजाङ्कुश ॥२१७१॥

व रा , वै चि , वाताऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और कुचिला ८–८ भाग, शुद्धगन्धक, त्रिकटु और त्रिफला ३–३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्ध ककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय वातघ्नद्रव्योंके द्रवसे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली वातहरानुपानकेसाथ देनेसे यह ८० वातरोग और ऊरुस्तम्भको नष्टकरताहै ॥ ४५२ ॥

४५३ वातगजेन्द्रसिंहरसः

अभ्रं लौहं रसं गन्धं ताम्रं नागं सटङ्कणम् ।
विषं सिन्धुं लवङ्गञ्च हिङ्गुजातीफलं समम् ॥२१७२॥
तदर्द्धं त्रिसुगन्धञ्च त्रैफलं जीरकन्तथा ।
कन्यारसेन सम्पिष्य वटी कार्या निरक्तिका ॥२१७३॥
सेव्या पयोऽनुपानेन सदा प्रातः सुखान्वितैः ।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् २१७४
विंशतिं श्लैष्मिकान्रोगान्सेवनादेव नाशयेत् ।
अभिघातेन ये क्षीणा. क्षीणाऽर्द्धाऽध्ययवाश्च ये २१७५
व्याधिक्षीणा वय क्षीणा. स्त्रीक्षीणाश्चाऽपि ये नरा. ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा वह्निहीनाश्च मानवा ॥२१७६॥
तेषां वृष्यश्च बल्यश्च वय स्थापनमेव च ।
खञ्जाना पङ्गुकुब्जाना क्षीणाना मांसवर्द्धन ॥२१७७॥
अरोगी सुखमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते ।
रसस्याऽस्य प्रसादेन नास्ति रोगाद्भय क्वचित्२१७८

भै र , आमवाते ।

भाषा—अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और नागभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध वछनाग, सेंधानमक, लौंग, हींग, जायफल येसब समभाग, सबसे आधा त्रिसुगन्ध,

त्रिफला और जीरा लेकर बारीकचूर्णकर एकदिन घीकुंवारकेरससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथलेनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, अभिघातजन्यक्षीणता, आधे अङ्गकी क्षीणता, व्याधिक्षीणता, आयुकाह्रास, स्त्रीक्षीणता, क्षीणेन्द्रियत्व, नष्टशुक्रत्व, मन्दाग्नि, खञ्जता, पङ्गुत्व, कुब्जत्व, अत्यन्तकृशता, इनसबको नष्टकर यह आदमीको हृष्टपुष्टबनाकर आयुको बढाताहै ॥४५३॥

४५४ वातचिन्तामणिरसः

भागत्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्यमभ्रकम् ।
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकात्त्रयसम्मितम् ॥२१७९॥
भस्मसूतं सप्तभागं कन्यारसविमर्दितम् ।
वल्लमात्रा वटी कार्या भिषग्भि रतियत्नतः ॥ २१८० ॥
यथाव्याध्यनुपानेन नाशयेद्रोगसङ्कुलम् ।
वातरोगं पित्तकृतं निहन्ति नाऽत्र चिन्तनम् ॥२१८१॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी कन्दर्पसमविक्रमः ।
दृष्टः सिद्धफलश्चाऽयं वातचिन्तामणिस्त्विह ॥२१८२॥

भै.र., ध , वातरोगे ।

भाषा—सुवर्णभस्म ३ भा , रजत और अभ्रकभस्म २–२ भा., लोहभस्म ५ भा., प्रवाल और मोती ३–३ भा., पारदभस्म ७ भागलेकर बारीकचूर्णकर घीकुंवारकेरससे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तन्द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे वात और पित्तरोगोंको नष्टकर और वृद्धोंको युवावस्थामें लाताहै ॥ ४५४ ॥

४५५ वातदावानलरसः

पुनर्भूवह्निनीरेण रसत्रिगुणगन्धकम् ।
मर्दयेत्त्रिगुणं कान्तपात्रके विनिवेशयेत् ॥ २१८३ ॥
पचेदष्टगुणैः सूर्यपत्रपकरसैः शनैः ।
ततो वह्निजलं दत्त्वा विषञ्च रसपादिकम् ॥ २१८४ ॥
शीतवातपरिशोषणक्षमो जायते सकलवातनाशनः ।
र्यूषणेन सघृतेन सेवितः शृङ्गवेरपयसाऽपि वल्लकः
त्रिभिरार्धं रसं सिद्धं पथ्यं भूरि घृतं हितम् ।
साधितं तिलतैलैश्च मर्दनं वातनाशनम् ॥ २१८६ ॥

र., वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारेकेसाथ तिगुने गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर इटसिट (पं०) और चित्रककी जडकेकाढेसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गोलेसे तिगुनेवज़नके कान्तलोहकेपात्रमें रखकर आककेपकेपत्तोंका अठगुनारस डालकर धीरेधीरे पकावे। रस जलजानेपर सतनाही चित्रकमूलकाक्वाथ सुखावे। फिर रससे चतुर्थांश शुद्धबछनाग मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकुटु और घीकेसाथ अथवा अदरखके रसकेसाथ सेवनकरनेसे शीतवातको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य अधिकघृतवाला अथवा तिलकेतैलमें बनायाहुआ पदार्थदेना और वातनाशकतैलोंकी मालिशकरना ॥ ४५५ ॥

४५६ वातनाशनरसः

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लौहञ्च माक्षिकम् ।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुफेनं समांशिकम् ॥२१८७॥
पञ्चानां लवणानाञ्च भागैकं सुविमर्दयेत् ।
वज्रीक्षीरे दिनैकन्तु रुद्ध्वा तं भूधरे पचेत् ॥ २१८८ ॥
माषैकमार्द्रकद्रावै लिह्याद्वातविनाशनम् ।
पिप्पलीमूलकक्वाथं सकृष्णमनुपाययेत् ॥
सर्वान्वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान् ॥२१८९॥

र.स ,शा.सं , वृ.यो.त., र.चं., रसायनप., ध., चि र भ , रसायनसं., र.ज्ञु , भै सा , र.(मा.), र.प्र.सु. एतेषु वातनाशन । वै.क., नि.र., र.मं., र.का. एषु वातारिः । र र , र.र.स.वडवानलः । ना. वि. वातगजाङ्कुशः ।

टि०—रसप्रकाशसुधाकरे पञ्चलवणस्थाने रसोनो नियोजित इति विशेष ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, ताम्र, लोह, सोनामाखी, हरिताल, सुरमा, तुत्थ इनकीभस्में, समुद्रफेन, पांचोंनमक येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सेहुण्डकेदूधसे १ दिनमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा अदरखकेरसकेसाथलेकर पिपलामूलकाक्वाथ पीपलकाचूर्ण डालकर पीनेसे आक्षेपकादि समस्त वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४५६ ॥

४५७ वातपित्तारिरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिला तालं विषोषणम् ।
कुष्ठं नागबला पथ्या गोक्षुरश्च विदारिकः ॥२१९०॥
एरण्डं मर्दयेत्तुल्यं द्रवैश्चाऽग्निपुनर्नवैः ।
माषमात्रां वटीं खादेद्वातपित्तहरा भवेत् ॥ २१९१ ॥

र र., र चं., व.रा., वै.वि., र.का. वातरोगाऽधिकारे ।

टि०—व.रा , वै वि गुल्मवाताऽधिकारे, नाम च त्रिविक्रमेति । व रा ,वै.वि. एतयोर्विषोषण निष्कास्य गन्धक नियोजितम् । गोक्षुरस्थाने शिरिकुष्ठ नियोजित, मात्रा चैकगुञ्जा प्रमिता निर्धारिता । रसकामधेनौ वातपित्तान्तकवटिकेति नाम्नाऽयमेव पाठो व्यत्यासितस्त्वन्य न रसान्तरता, तामस्थाने अभ्रकयतन्तु प्रमादादेव सम्पादन् । एरण्डमूलत्वचो मूलद्रव्ये निवेशोऽस्ति । रसकामधेनौ तु तृतीयान्तदर्शनेन भावनाद्रव्यत्वेन प्रतिभानतयपि भ्रमरिटपिशाचयन्नमितिवक्तव्यम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धमैनसिल, हरिताल और बछनाग, मरिच, कुठ, गुलसिकरी, हर्रे, गोखरू, विदारीकन्द, एरण्डकीजडकीछाल, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रक और पुनर्नवाके क्वाथोंसे १–१ दिन भावनादेकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अनुसार रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह वातपित्तजरोगोंको नष्टकरताहै

४५८ वातरक्तशोषीरसः

भावयेत्पारदं शुद्धं शरपुङ्खाजलै भिषक् ।
एकविंशतिवारं हि सततं त्रिफलाम्बुना ॥ २१९२ ॥

दिनत्रयं सोमराज्या भल्लातेन दिनत्रयम् ।
शोषयेदातपे खल्वे न्यस्य सर्वं सुचूर्णितम् ॥ २१९३॥
तालार्द्धं शम्भुबीजन्तु तालतुल्यं मृताऽभ्रकम् ।
पचेद्गजपुटे वह्नौ काचकूप्यामथापि वा ॥ २१९४ ॥
त्रिवारञ्च तदुद्धृत्य स्वाङ्गशीतं सुचूर्णयेत् ।
चूर्णेन शरपुङ्खायाः शाणमात्रेण भक्षयेत् ॥ २१९५ ॥
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा त्रिगुञ्जाऽऽधिकं क्वचित् ।
वर्जयेल्लवणं यत्नादेतद्भल्यचिरेण तु ॥ २१९६॥
वातरक्तमसाध्यं हि कुष्ठमष्टादशाभिधम् ।
पामाकण्डूविचर्चीन्तु दद्रुविस्फोटकानि च ॥२१९७॥

र.म.मा., ना.वि., वातरक्ते ।

भाषा—शुद्धहरितालको रसमाणिक्य बनाकर शरपुङ्खेके क्वाथसे २१, त्रिफलाके क्वाथसे ७, बाकुची और भिलावेके क्वाथोंसे ३–३ दिन कड़ीधूपमें रखकर भावनादे। हरितालसे आधा शुद्धपारा और बराबरकी अभ्रकभस्म डालकर गोलाबनाय गजपुटकी आंचदे, अथवा आतशीशीशीमें रखकर निकालकर बालुकायन्त्रकी आंचदे । ऐसे ३ बार आंचदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मात्रा ४ मासे शरपुङ्खेके चूर्णकेसाथदेवे। इसमें लवण बिलकुलबन्दकरेतो असाध्य वातरक्त, १८ प्रकारकेकुष्ठ, पामा, कण्डू, विचर्चिका, दाद, विस्फोटक इनसबको यह बहुतजल्दी नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ वातरक्तान्तकवटी

निष्कद्विमततिः शुद्धा राजमोदा ततो रसात् ।
निष्कत्रयं विडालेन मुशलेनाऽप्यथातप ॥ २१९८ ॥
उदूखले रसो यावत्सर्वं गच्छेत्ततो गुडम् ।
पुराणं त्र्यष तुल्यांशं दत्त्वा सङ्कुट्य गोघृतम् ॥२१९९॥
गुडतुल्यं विनिःक्षिप्य चतुर्दशवटीः कुरु ।
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्ताम्बूलाशी मुहुर्मुहुः ॥ २२०० ॥
गोधूमान्नं भूरि घृतं खादेल्लवणवर्जितम् ।
पिबन कोष्णं जलं गच्छ बहिः सञ्चर वा तथा २२०१
मुखपाके च सञ्जाते दीप्यपोट्टलिका शुभा ।
मुखे धार्या तथा क्षीरिन्यकषायचुलुकान् कुरु २२०२
ज्वाला स्रवेयदि तथा चूषयेन्तु यदिच्छसि ।
स्नानं यास्यसि चेत्कर्तुं कुरु नहि यथासुखम् २२०३
अनेन योगराजेन वातरक्तसमुद्भवाः ।
सन्धिजाश्च नाशं यान्ति पीडाः शीघ्रं सुदुस्तराः ॥
अनुवर्तेन चेत्पीडा पूर्ववेव विधिं भज ॥ २२०४ ॥

रसादर्शे, वातरक्ते ।

भाषा—अजमोदकाचूर्ण १८ मासे, शुद्धपारा १२ मासेलेकर दोनोंको खरलमें डालकर कूटे जब पारा उसमें मिलजाय तब दोनोंकीबराबर पुरानागुड़ तथा गायका घी डालकर कूटे। एकजीवहोनेपर १४ गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे प्रातः एक१ गोलीखाकर ऊपरसे पानखावे। भूखलगनेपर अधिक घी डालेहुए गेहूँके पदार्थ खावे । लवण बिलकुल न खावे । प्यासलगनेपर कदुष्णजलपीवे । इसके प्रयोगमें समय मुखपाकहोनेपर अजवाइनको पानीमें भिगोकर बारीकमलमलकेकपड़ेमें पोटली बनाय मुंहमें रक्खे । यदि इससे शान्त न हो तो वट वगैरह दूधवाले वृक्षोंकी छालके क्वाथसे कुल्ले करे । इच्छा हो तो ईख चूसे । स्नानकरनेकी इच्छा हो तो करे । इससे वातरक्त और सन्धिदर्द शीघ्र नष्टहोतेहैं । एकप्रयोगसे यदि कुछव्याधि अवशिष्ट रहजाय तो दूसरीवारदेवे ॥ ४५९ ॥

४६० वातरक्तान्तकरसः

गन्धकं पारदं लोहं शिलां तालं घनं तथा ।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २२०५ ॥
श्वेताऽपराजिता दार्वी बाकुची चित्रकस्तथा ।
पुनर्नवा देवकाष्ठं त्रिफला व्योषयेल्लके ॥ २२०६ ॥
चूर्णमेषां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
त्रिफलाभृङ्गराजस्य रसेनैव त्रिधात्रिधा ॥ २२०७ ॥
भावयेद्भक्षयेत्पश्चाच्चणमात्रं दिनेदिने ।
ततोऽनुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥२२०८॥
शाणमात्रं घृतैः कुर्यात्सर्ववातविकारनुत् ।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजञ्च यत् ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्याऽसाध्यं निहन्त्यलम् ॥२२०९॥

र.सं., प., र.चं., र.मु., भै.र., र.र., र.क., वै.क., वातरक्ते

टि०—वै. क., वातरक्तारिरस इति नाम । र. र. बाकुचीस्थाने अभिहेन निर्दिष्टम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, लोहभस्म, शुद्धमनसिल और हरिताल, अभ्रकभस्म, शिलाजीत, गूगल सब १–१ भाग लेकर पारेगन्धककी कज्जलीमें मिलाकर सफेदकोयल, दारुहल्दी, बाकुची, चित्रकमूल, पुनर्नवा, देवदारु, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग येसब १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्त दवामें मिलाकर त्रिफला और भंगरेकेरसोंमें ३–३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली नीमकेपत्ते, फूल और छाल समभागके ४ मासे चूर्ण और घीकेसाथ देनेसे सम्पूर्ण वातरक्त और वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ।

४६१ वातरक्तान्तकलोहम् (बृहत्)

अयोभागद्वयं देयं प्रत्येकार्द्धकभागिकम् ।
रसगन्धकमुक्ताऽभ्रप्रवालाश्च काञ्चनम् ॥ २२१० ॥
भागाऽर्द्धञ्च तथा तालं सर्वमेकत्र मिश्रयेत् ।
कुर्याल्लौ भेकपर्ण्याश्च द्रोणपुष्प्याश्च भैरिषा ॥२२११॥
मायपेक्षापयित्मात्रा ज्ञेया रक्तिद्वयान्विता ।
पथ्यापयोऽनुपानञ्च कर्तव्यं हितमिच्छता ॥
बृहद्वातान्तको लोहः सेवितो निखिलं हरेत् ॥२२१२॥
सोपद्रवं दारुणवातरक्तं
गम्भीरमुत्तानमथोपदिष्टम् ।
समेदमन्युपमपातिरक्तं
जातं विकारं विविधं नराणाम् ॥ २२१३ ॥

कापालमौदुम्बरमृष्यजिह्वं
सिध्मं तथा मण्डलपुण्डरीके ।
कुर्याद्विशुद्धिं खलु शोणितस्य
वर्णप्रकर्षञ्च बलाऽग्निवृद्धिम् ॥ २२१४ ॥

आ. वि (परिशिष्टे) वातरक्ते ।

भाषा—लोहभस्म २ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक, मोती, अभ्रक, खपरिया, सुवर्ण इनकीभस्में १–१ भाग, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य आधाभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर खारीजाल(मारवाडी), मण्डूकपर्णी, द्रोणपुष्पी, इनप्रत्येककेरसोंसे ३–३ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली हर्र, दूध अथवा पानीकेसाथ लेनेसे उपद्रवसहित गम्भीर अथवा उत्तान वातरक्त, उपदंश, भयकर प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कापाल, औदुम्बर, ऋष्यजिह्व, सिध्म, मण्डल, पुण्डरीक, इत्यादि समस्त-कुष्ठोंको दूरकर रक्तको शुद्धबनाय वर्ण, बल और अग्निको देताहै ॥

४६२ वातराजवटी (प्रथमा)

सुशुद्धं पारदं गन्धं लोहं माक्षिकभस्मकम् ।
स्वर्णं तारं ताम्रवङ्गं कान्तं तीक्ष्णन्तु तालकम् ॥२२१५॥
दरदं वत्सनाभञ्च चातुर्जातं सचित्रकम् ।
त्रिकटु त्रिफला भार्ङ्गी ग्रन्थिकं गजपिप्पली ॥२२१६॥
कुष्ठं जातीद्वयं दारु पुष्करं चाम्लवेतसम् ।
शटी दारुहरिद्रे द्वे पद्मकं दाडिमं त्रिवृत् ॥ २२१७ ॥
रास्ना दुरालभा छिन्ना दन्ती जैपालकं विषम् ।
कर्षमात्राणि सर्वाणि द्विपलं गिरिजं मतम् ॥ २२१८ ॥
जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा सचव्यकम् ।
कङ्कोलकमुशीरञ्च द्वौ क्षारौ लवणत्रयम् ॥ २२१९ ॥
सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवत्खल्वे शोभने दिने ।
निर्गुण्डीवासभृङ्गाद्रि. काकमाच्यार्द्रकाम्बुना २२२०
तर्कारीसूरणद्रावैस्तथोम्लसरसेन च ।
भावनाः खलु दातव्याः सप्त सप्त क्रमादिह ॥ २२२१ ॥
ततः पर्णरसे मर्द्यो वटिकां वल्लसम्मिताम् ।
छायाशुष्कां तत कृत्वा ज्ञात्वा रोगबलाऽबलम् २२२२
सुदिने शुभनक्षत्रे शिवं दुर्गां विभाकरम् ।
प्रणम्य योजयेत्सम्यग्यथारोगाऽनुपानतः ॥ २२२३ ॥
अशीतिवातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
विंशतिं श्लैष्मिकान्घोरांश्चश्वासं कासं भगन्दरम् २२२४
कुष्ठं चोरः क्षतं शूलं ज्वरं पाण्डुं गलग्रहम् ।
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च गुल्मं सङ्ग्रहणीं तथा ॥ २२२५ ॥
साध्याऽसाध्यान्निहन्त्याशु सत्यं श्रीशिवभाषितम् ।
वातराजवटी ह्येषा वातरोगकुलान्तिका ॥ २२२६ ॥

र सु ,वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, रजत, ताम्र, वङ्ग, कान्त, फोलाद इनकीभस्में, शुद्ध-हरिताल, शिगरिफ और बछनाग, चातुर्जात, चित्रकमूल, त्रिकटु, त्रिफला, भारङ्गी, पिपलामूल, गजपीपल, कुठ, जायफल, जावित्री, देवदारु, पोहकरमूल, अम्लवेत, कचूर, दोनोंप्रकारकी दारुहल्दी (उत्तरमें दो प्रकारकी मिलतीहै एकको तुतरा और दूसरीको किल मोडा कहतेहै),हल्दी, आवाहल्दी, पदमकाठ, अनारदाना, निसोत, रास्ना, जवास, गिलोय, दन्तीमूल, शुद्धजमालगोटा और बछ-नाग १–१ कर्ष, शुद्धशिलाजीत २ पल, जायफल, वंसलोचन, असगन्ध, चव्य, शीतलचीनी, खस, सज्जी और जवाखार, सेंधा, सचल और समुद्रनमक १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, अडूस, भगरा, मकोय, अदरख, तर्कारी ?, सूरण, धतूरा, इनप्रत्येकके यथा सम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाए देकर सुखाकर अखीरमें पानकेरससे १–२ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाय छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली रोग और रोगीका बलाबल देखकर शुभनक्षत्रयुक्त शुभदिनमें शिव, दुर्गा और सूर्यभगवानको प्रणामकर समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० प्रकारके कफरोग, श्वास, कास, भगन्दर, कुष्ठ, उर क्षत, शूल, ज्वर, पाण्डु, गलग्रह, प्रमेह, रक्तपित्त, गुल्म, सङ्ग्रहणी, इत्यादि साध्यासाध्य तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४६२ ॥

४६३ वातराजवटी (द्वितीया)

पारदं गन्धकं शुद्धं चातुर्जातं फट्त्रयम् ।
जीरकं युगलं चन्द्रं पत्रं तालीसकेशरम् ॥ २२२७ ॥
जातीफलं लवङ्गञ्च दीप्यकं धहियालकम् ।
अमृता चन्दनं द्राक्षा मांसी चव्यं शरी वचा॥२२२८॥
जातीकोषं बिडं धान्यं त्रिफला तगरं वृषम् ।
प्रत्येकं कर्षसम्मानं द्विपलञ्च हतायसम् ॥ २२२९ ॥
शुद्धं नवाहिफेनन्तु पलमानं प्रकीर्तितम् ।
सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवन्मर्दयेत्खाखसद्रवैः ॥ २२३० ॥
यामद्वयं तत. कार्या घटिका वल्लसम्मिता ।
दद्याद्बलाबलं वीक्ष्य यथारोगानुपानकम् ॥ २२३१ ॥
ऊरुस्तम्भे वातरोगं ज्वरं दाहमनिद्रताम् ।
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च उर क्षतमरोचकम् ॥ २२३२ ॥
हन्ति सर्वानशेषेण तमः सूर्योदये यथा ।
अस्य प्रभावान्मनुजो रमयेद्रमणीशतम् ॥ २२३३ ॥

र सु ,वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चातुर्जात, त्रिकटु स्याह-सफेदजीरा, शुद्धकपूर, पत्रज, तालीसपत्र नागकेशर, जायफल, लौंग, अजवाइन, चित्रकमूल, त्वागण्डोला, गिलोय, सफेद-चन्दन, दाख, जटामांसी, चव्य, शतावर, वच, जावित्री, विड-नमक, धनिया, त्रिफला, तगर, अडूसा येसब १–१ कर्ष, लोहभस्म २ पल, शुद्ध अफीम १ पल लेकर सबका बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पोस्तकेडोडोंके क्वाथसे २ पहर मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख

छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, वातव्याधि, ज्वर, दाह, निद्रानाश, प्रमेह, रक्तपित्त, उर क्षत और अरुचि इनसबको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको करताहै

४६४ वातराक्षसरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं स्वर्णगन्धं कान्तञ्चाऽभ्रकमौक्तिकम् ।
ताम्रवैक्रान्तकं सम्यङ्मारयित्वा विनिःक्षिपेत् २२३४
पुनर्नवागुडूच्यग्निसुरसाभृङ्गसिन्धुकैः ।
पृथक् पृथक् दिनं भाव्यं दद्याल्लघुपुटं ततः ॥२२३५॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं वल्लमानं प्रयोजयेत् ॥ २२३६ ॥
मधुपिप्पलिमिश्रश्च अनुपानं यथाबलम् ।
सर्ववातानशेषांश्च क्षयान्पाण्डून् हलीमकम् ॥२२३७॥
पक्षाघातं धनुर्वातं कम्पमुन्मादकं तथा ।
निहन्यात्कुरुते दीप्तिं कान्तिपुष्टिबलप्रदः ॥ २२३८ ॥

र. पा , वातरोग ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, कान्त, अभ्रक, मोती, ताम्र और वैक्रान्त इनकीभस्में समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, भंगरा, निर्गुण्डी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन भावनादेकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर सुखानेपर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार, क्षय, पाण्डु, हलीमक, पक्षाघात, धनुर्वात, कम्प, उन्माद और मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर कान्ति, पुष्टि और बलको देताहै ॥ ४६४ ॥

४६५ वातराक्षसरसः (द्वितीयः)

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तञ्चाऽभ्रकमेव च ।
ताम्रं भस्मीकृतं सम्यङ्मर्दयित्वा समांशकम् ॥२२३९॥
पुनर्नवा गुडूच्यग्निः सुरसा त्र्यूषणं तथा ।
एतेषां स्वरसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ २२४० ॥
दत्त्वा लघुपुटं सम्यक् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
वातराक्षसनामाऽय वातरोगे प्रयोजयेत् ॥ २२४१ ॥
तत्तद्रोगाऽनुपानेन द्विगुञ्जामात्रसेवनात् ।
ऊरुस्तम्भं वातरक्तं गात्रभङ्गं तथैव च ॥ २२४२ ॥
आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च ।
पक्षाघातं कम्पवातं सर्वसन्धिगतं तथा ॥ २२४३ ॥
सुप्तिवातश्च शूलश्च ह्युन्मादश्च विनाशयेत् ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन वाताशीतिविनाशनः ॥ २२४४ ॥

यो र , वृ. यो त., नि. र , र च , रसायनप , रसायनस , र सु., र. म. मा , र. क यो , वै चि , र पा , वातरोगे।

टि०—रसपारिजाते "सूतेन मारित तुल्य शातकुम्भ निरुत्थकम्।" इत्यर्द्धश्लोक विशेषेण दृश्यत । तथा च भावनायां त्र्यूषणस्थाने आट रूपकभावना दृश्यते।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, कान्त, अभ्रक और ताम्रभस्म येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकुटु, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखानेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, वातरक्त, गात्रभङ्ग, आमवात, धनुर्वात, आघातवात, पक्षाघात, कम्प, सन्धिवात, सुप्तवात, शूल, उन्मादप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

४६६ वातविध्वंसनरसः (प्रथम)

रसं गन्धकं नागवङ्गौ च लोहं
तथा ताम्रजं व्योम निश्चन्द्रकञ्च ।
कणाटङ्कणे चोषणं नागरं वै
पृथग्भागमेकं विमर्द्यैकयामम् ॥ २२४५ ॥
ततो वत्सनाभं चतुःसार्धभागं
दृढं मर्दयेद्भावना व्योषजा त्रिः ।
वराचित्रकैः मार्कवैः कुष्ठतोयै-
स्तथा कारहाटैः सनिर्गुण्डितोयैः ॥२२४६॥
मनोधात्रिकैरार्द्रकैर्निम्बुनीरै-
स्त्रिभिर्भावयेद्वातविध्वंसनोऽयम् ।
समीरे च शूले महाश्लेष्मरोगे
ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढ्ये ॥२२४७॥
अपस्मारमान्द्ये सशैत्ये सपित्तो-
दरप्लीहकुष्ठाऽर्शसि स्त्रीगदे च ।
निषेवेत गुञ्जाद्वयं चास्य तत्त-
द्रदग्नाऽनुपानैरयं रोगजित्स्यात् ॥ २२४८ ॥

वृ यो. त , यो र , नि र , र क यो , वै क , टो , र चं , र कौ , र सि , व रा , वै चि , र सु , रसायनप., रसायनस , वै वि , र पा , वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाग, वङ्ग, लोह, ताम्र, अभ्रक इनकीभस्में, पीपल, भुनासुहागा, मरिच, सोंठ, येसब १–१ भाग, शुद्धवछनाग ४॥ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिकुटु, त्रिफला, चित्रक, भंगरा, कुठ, अकलकरा, निर्गुण्डी, अमलोनिया, अदरख, नीबू इनसबके रसोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अग्निबल देखकर १ से ३ गोलीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे, भयङ्करवात, शूल, उत्कटश्लेष्मरोग, ग्रहणी, सन्निपात, मूढ़ता, अपस्मार, मन्दाग्नि, शीतपित्त, उदररोग, प्लीहा, कुष्ठ, बवासीर, स्त्रीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६६ ॥

४६७ वातविध्वंसनरसः (द्वितीय.)

रसं गन्धं विषञ्चैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम् ।
एतत्सर्वं समं योज्यं ~~द्विप्पञ्च~~ द्विगुणं भवेत् ॥ २२४९ ॥

जैपालं तालकञ्चैव रसेन सह योजयेत् ।
त्र्यूपणञ्च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २२५० ॥
निर्गुण्डीसूरणद्रावे भार्नोश्च पयसस्तथा ।
तर्कारीभृङ्गराजश्च ततो धत्तूरकस्य च ॥ २२५१ ॥
भावना खलु दातव्या सप्तसप्तकमादितः ।
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्वितम् ॥ २२५२ ॥
जानुजङ्घाकटिस्थूलपादगुल्फौष्ठशीर्षकम् ।
मन्यास्तम्भं हनुस्तम्भं त्रिकस्तम्भञ्च शुष्ककम् २२५३
जिह्वास्तम्भं बाहुभवं त्रिकस्तम्भञ्च पादजम् ।
अधोभागे च ये वाताः सर्वाङ्गे विचरन्ति ये ॥
सर्वान्वाताञ्जयेदाशु दैत्यं नारायणो यथा ॥ २२५४ ॥
नि र., वै. चि , रसायनसं , वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनकी-भस्में १-१ भाग, शुद्धवच्छनाग २ भा , शुद्ध जमालगोटा और हरिताल १-१ भाग, त्रिकटु सबकी बराबर लेकर सबकाबारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, सूरण, आककादूध, तर्कारी १, भंगरा, धतूरा इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रात कालमें ७ अथवा २१ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथलेनेसे जानु, जंघा, कमर, पैर, गुल्फ, ओष्ठ और शिरकेवातरोग, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, त्रिकस्तम्भ, शुष्कता, जिह्वास्तम्भ, अवबाहुक, त्रिकस्तम्भ, पादस्तम्भ, अधोभागगत किंवा सर्वाङ्गगतवायु इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ ४६७ ॥

४६८ वातविध्वंसनोरसः (तृः) ३

पारदष्टङ्कणं गन्धो वत्सनाभोऽश्मभेदकः ।
धराट्स्तालकश्चैव हेमत्र्यूपणजै द्रवैः ॥ २२५५ ॥
मर्दयेद्रक्तिकामानो वातविध्वंसनक्षमः ।
श्वासे कासे सन्निपाते शीताङ्गे शूलसङ्कहे ॥ २२५६ ॥
नि र., वै चि , वै चि , र. सु , रसायनस , वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा, गन्धक और बच्छनाग, पाषाणभेद, कौड़ी और हरितालभस्म, सब समभागलेकर धतूरे और त्रिकटुके यथासम्भवस्वरस अथवाक्वाथोंसे एकएकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग, श्वास, कास, सन्निपात, शीताङ्ग, समस्त शूल, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६८ ॥

४६९ वातविध्वंसनरसः (चतुर्थ)

तालकं कर्पमेकञ्च पञ्चकर्पञ्च वह्निजम् ।
मर्दयेन्मार्कवरसैश्चतुर्विंशतियामकम् ॥ २२५७ ॥
ततः शुष्कं विचूर्ण्याऽथ वसुयामं भिषग्वरः ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा केवलं चार्द्रके रसे ॥ २२५८ ॥

प्राप्तं सिद्धमुखादेतद्देयं सर्वेषु पाप्मसु ।
अशीतिं वातजान्रोगान् कफजान्कुष्ठसुप्तिजान् २२५९
संहरेत्सर्वरोगांश्च अग्निमान्द्यादिकानथ ।
सिद्धमापितमेतस्य गुणान्वक्तुं न शक्यते ॥ २२६० ॥
पण्ढोऽपि कामरूपी स्यान्मासत्रयसुसेवनात् ।
अनुपानञ्च पथ्यञ्च सघृतं मधुरं ददेत् ॥ २२६१ ॥
र. चि , वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ कर्ष, मरिच ५ कर्ष लेकर बारीक-चूर्णकर भंगरेकेरससे २४ पहर मर्दनकर सुखाकर ८ पहर शुष्क-मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतकमात्रा रोग और रोगीकाबलाबल देखकर अदरखके रसकेसाथ देनेसे समस्त-पापरोग, ८० वातरोग, नानाप्रकारकेकफरोग, कुष्ठ, सुप्ति, मन्दाग्नि, पण्ढता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६९ ॥

४७० वातविध्वंसनरसः (लघु) ५

रसं गन्धं विषं कृष्णा हृद्धात्री शुद्धतालकम् ।
त्रिफला वारुणी व्योपं सुरसा शिग्रु पौष्करम् २२६२
समञ्च भावयेद्दन्तीभृङ्गजैः सप्तधा पृथक् ।
वल्लयुग्मं शृङ्गवेररसैश्च लवणान्वितम् ॥ २२६३ ॥
बाहुके सन्निपाते च तथा सर्वाङ्गजेऽनिले ।
अश्मयुक्ते तथा शूले शुण्ठीक्वाथसमन्वितः ॥
वातविध्वंसनो नाम धनुर्वातं नियच्छति ॥ २२६४ ॥
रसायनस., वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बच्छनाग, पीपल, शुद्धमैन-सिल और हरिताल, त्रिफला, इन्द्रायणकीजड़, त्रिकटु, तुलसी, सहिजन, पोहकरमूल, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दन्तीमूल और भंगरेके रसकी ७-७ भावनाएं देकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लवणयुक्त अदरखके रसकेसाथ देनेसे अवबाहुक, सन्निपात, सर्वाङ्गवात, पथरी, शूल इनसबको यह नष्टकरताहै और सोंठके क्वाथकेसाथ देनेसे धनुर्वातको नष्टकरताहै॥

४७१ वातविध्वंसनरसः (पष्ठ)

सूतमभ्रकसत्वञ्च कांस्यं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।
गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरविवर्धितम् ॥ २२६५ ॥
कज्जलीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम् ।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥ २२६६ ॥
निम्बुद्रवेण सम्पीड्य तिलकल्केन लेपयेत् ।
अर्धाङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ २२६७ ॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः ।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलसङ्ग्रहम् ॥ २२६८ ॥
आध्मानकं तथाऽऽनाहं विसूचीं वह्निमान्द्यकम् ।
आमदोषमशेषञ्च गुल्मं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥ २२६९ ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च क्रिमिरोगं विशेषतः ।
हन्यात्सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥२२७०॥

ज्वरे चैवाऽतिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे ।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः ॥
कथितो नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः ॥ २२७१ ॥

र सं., ध., र.सु., र.चं., र.म.मा., र.क., र र. स., वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकसत्त्व, कास्य इनकीभस्में, शुद्ध स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और हरिताल येसव क्रमवृद्धभागसे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर एरण्डीके तैलकेसाथ ७ दिनतक मर्दनकर गोलाबनाय नीबूकेरसमें पिसेहुए तिलोंके कल्कका आधाअङ्गुलमोटा लेपकरदे। सूखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रस १२ पहरकी अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त उदररोग, मलसङ्ग्रह, आध्मान, आनाह, हैज़ा, मन्दाग्नि, आमदोष, गुल्म, छर्दि, दुर्जेयग्रहणी, श्वास, कास, कृमिरोग, सर्वाङ्गशूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार, त्रिदोषजशूल इनसबको यह नष्टकरताहै इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥ ४७१ ॥

४७२ वातविस्फोटहररसः

गन्धाश्मव्योम हिङ्गुश्च पारसीकयवानिका ।
अहिफेनं विषं चार्ककरहाटश्च जीरकम् ॥ २२७२ ॥
गोक्षीरं विंशतिपलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
पाच्यं मन्दाग्निना सम्यक् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् २२७३
तन्मध्ये च क्षिपेद्रौप्यं खल्वे यामचतुष्टयम् ।
जायते दधिवत्तत्तु मन्थयेत्तक्रवच्छनैः ॥ २२७४ ॥
आहरेन्नवनीतञ्च घृतं कुर्यात्प्रयत्नतः ।
गुञ्जामानं घृतं तत्तु नागवल्लीदले क्षिपेत् ॥ २२७५ ॥
शुद्धसूतञ्च माषैकमङ्गुल्या मर्दयेत्ततः ।
पारदो मूर्च्छितस्तेन जायते नाऽत्र संशयः ॥२२७६॥
तत्पत्रवीटिकां कृत्वा खादयेद्बुद्धिमान्नरः ।
वातविस्फोटकान्सर्वान्नासिकावक्त्रनाशनान् २२७७
अङ्गशूलञ्च गुल्मञ्च वह्निमान्द्यञ्च वातजम् ।
किं पुनर्बहुनोक्तेन सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ २२७८ ॥
एतद्रसायनवरं शम्भुना कथितं पुरा ।
सर्वलोकहितार्थाय सोमदेवेन भाषितम् ॥
एतस्मात्परतो नाऽस्ति विस्फोटे वक्त्रगे क्रिया२२७९

रसायनस, विस्फोटकरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, हींग, खुरासानी अजवाइन, अफीम, शुद्धवच्छनाग, आककीजड़कीछाल, अकलकरा, जीरा येसब १–१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर २० पल गायकेदूधमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे। अधौटा होनेपर उतारकर ठढाहोनेपर एक रुपया डालदे और ४ पहरतक खरल करे तो यह दहीकीतरह जमजायगा फिर इसका मन्थनकर घी निकालकर गरमकर छानके रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीके अन्दाज़ घी पके पानपर डालकर एकमाशा शुद्धपारा डाल अङ्गुलीसे घर्षणकरे। मूर्च्छित होजानेपर पानको खिलादे और केवल दूधभात खानेको दे। इसके सेवनसे समस्त वातविस्फोट, नासिका और गलेके घाव, अङ्गशूल, गुल्म, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७२ ॥

४७३ वातव्याधिगजाङ्कुशोरसः

रसेन द्विगुणं गन्धं रसैराकाशवल्लिजैः ।
बृहतीफलजैश्चाऽथ भृङ्गराजैश्च सप्तधा ॥ २२८० ॥
भर्जयित्वाऽतसीतैलैः कुष्माण्डरसे पुनः ।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य कूप्यां द्वादशयामकम् ॥
वह्निं दत्त्वा रसोऽयं स्याद्वातव्याधिगजाङ्कुशः २२८१

र.का., वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना गन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कड़ाहीमें डालकर अमरवेलकारस डालकर मन्दाग्निसे धीरे २ सेके, रस सूखनेपर दूसरा डाले । ऐसे वरानरकारस ७ वार सुखावे। इसकेबाद वनभाटा, भंगरा, अलसीका तैल, कुम्हड़ाण्डद्रव और आकका दूध पूर्वक्रमसे ७–७ बार मर्दनकर सुखावे फिर इसकी कज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टी कीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहबन्दकर १२ पहरकी वालुकाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक व्याधि और रोगीका बल देखकर देनेसे समस्त वातव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७३ ॥

४७४ वातशूलहररसः

पारदेन च विलिप्य दलानि
ताम्रकस्य बलिना द्विगुणेन ।
क्षारकत्रितयमध्यगतानि
वस्त्रखण्डनिबिडानि च पङ्कैः ॥ २२८२ ॥
लेपितानि विधिना पुटितानि
मर्दितानि कनकाऽनलतोयैः ।
आर्द्रकस्य च कटुत्रययुक्तं
षोडशांशकसुशुद्धविषेण ॥ २२८३ ॥
पेषितञ्च खलु वल्लमलं वा
वातशूलरुजि चास्य ददीत ।
वातशूलहर एष रसश्च
सेवनाच्चयति शूलविनाशम् ॥ २२८४ ॥

चि क, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेकी दूने गन्धककेसाथ कज्जलीकर नीबूवगैरहकेरससे मर्दनकर शुद्धतावेके कण्टकवेधीपत्रोंपर चढावे। फिर सज्जी, सुहागा और यवक्षारकाद्रव बनाय कपड़ोंपर लपेट ताम्रपत्रोंपर चढाकर सम्पुट जैसा बनाय ३–४ तह कपड़ा चढादे। ऊपरसे दो अङ्गुलमोटा मिट्टीका लेपदेकर सुखाकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें बन्दकर तीनदिनकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर धतूरा, चित्रक, अदरख इनकेरसोंसे १–१ दिनमर्दनकर बराबरका त्रिकटुकाचूर्ण और षोडशांश शुद्धवच्छनाग

मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातशूल, वातकफजरोग, श्वासकासादिकफरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७४ ॥

४७५ वातहररसः

रसगन्धाऽभ्रशङ्खाऽयो समांशं मर्दयेत्र्यहम् ।
कन्याकनकचाङ्गेरीद्रवे गोलं विशोषयेत् ॥ २२८५ ॥
सप्तवारं मृदाऽऽवेष्ट्य पुटेदारण्यकोत्पलैः ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसो वातहरोऽद्भुतः ॥ २२८६ ॥
द्विवल्लो मधुना योज्यः सर्ववातप्रशान्तये ।
पानार्थं पिप्पलक्षारतोयं पेयञ्च वातहृत् ॥
बलाऽजमोदामधुभिः क्रमो योज्यो रसोत्तमे ॥२२८७॥

र पा ,वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, शङ्ख और लोह भस्म समभाग लेकर घीलकुंआरकेजलीकर पीवुवार, धतूरा, अमलोनिया इनकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३–४ तह मोटेकपड़ेमें लपेट सूतसे वेष्टितकर ७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर जङ्गलीकण्डोंकी लघुपुटमें आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेवे और पीपलकेक्षारकापानी पिलावे । अग्निप्रदीप्त होनेकेबाद बला, अजमोद और मधुकेसाथदे । इसतरहकरनेसे सबप्रकारके वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७५ ॥

४७६ वातान्तकरसः

हेमाऽर्ककान्तलोहाऽभ्रं सूतभस्म च गन्धकम् ।
वैक्रान्तं विद्रुमं चैव तारं तालसमन्वितम् ॥ २२८८ ॥
सुमुहूर्ते खल्वमध्ये चित्रमूलस्य च द्रवैः ।
चतुर्यामञ्च सम्मर्द्य छायाशुष्कञ्च कारयेत् ॥ २२८९ ॥
कुक्कुटीपुटपाकेन स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
इदञ्च चूर्णितं श्लक्ष्णं तदर्धं सूतभस्मकम् ॥ २२९० ॥
सूततुल्यं मृतं ताम्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
चित्रकार्द्रकनीरेण निर्गुण्डीवारुणीद्रवे. ॥ २२९१ ॥
वासाजम्बीरनीरेण सप्त भाव्यं पृथक्पृथक् ।
गुञ्जामात्रप्रयोगेण कणामध्वाज्यसंयुतम् ॥ २२९२ ॥
सुप्तवातं वातशूलं वेदनावातमेव च ।
स्नायुकम्पं गात्रभङ्गं पक्षाघातं हनुग्रहम् ॥ २२९३ ॥
वायुं मूर्च्छाञ्च तिमिरं वातशीतञ्च नाशयेत् ।
वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्ये प्रशस्यते ॥ २२९४ ॥
वातान्तकरसो नाम्ना सर्वरोगनिवारकः ।
लोकानामुपकारार्थमश्विदेवविनिर्मितः ॥ २२९५ ॥

व रा ,वै चि , नष्टेन्द्रिये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, कान्त, लोह, अभ्रक, पारद, वैक्रान्त, प्रवाल, रजत, हरिताल इनकीभस्में और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर अच्छेमुहूर्तमें खरलमें डालकर चित्रकमूलके-काढेसे ४पहर मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधी पारद और ताम्रभस्म मिलाकर चित्रक, अदरख, निर्गुण्डी, इन्द्रायण, अडूसा और जंभीरी इनप्रत्येकके-रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ देनेसे सुप्तवात, वातशूल, आघातवात, स्नायुकम्प, गात्रभङ्ग, पक्षाघात, हनुग्रह, वायु, मूर्च्छा, तिमिर, वातशीत, वन्ध्यात्व, नष्टशुक्रत्व इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

४७७ वातारिपाकः (मधुस्नेही)

तालीसं त्रिकटुत्रिजातकवरा जातीफलं केशरं,
भृङ्गं केद्रयमुशीरजीरकयुतं दीप्यद्वयं ग्रन्थिकम् ।
रास्नावह्निकचोरकं करिकणा द्राक्षा तुगा चन्दनं,
कङ्कोलाऽम्दसुगन्धियष्टिधनिकाः खर्जूरमांसी वरी ॥
वाराही हयगन्धगोक्षुरफलं मोचेक्षुरं मर्कटी-,
बीजं कुङ्कुमजातिपत्रकमदाः कर्षप्रमाणाः पृथक् ।
सम्यक्शोधितगन्धकं दशपलं सर्वस्य तुल्यौ मधु-,
स्नेहौ स्याद्रसदोत्थितं शुभरसं कर्षत्रयं योजयेत् २२९७
एकीकृत्य शुभं सिताऽऽज्यमधुना सेव्यं द्विकर्षोन्मितं,
कर्षं वा यदि वाऽर्द्धकर्षसमितं वह्नेर्बलाऽपेक्षये ।
वाताशीतिनिबर्हणं कफमरुत्पित्तापहं यक्ष्मजिद्,
दुष्टं ग्रन्थिभगन्दरज्वरहरं कान्तिप्रदं पुष्टिदम् ॥२२९८॥
मेहान्विंशतिमौपदंशसकलान्दुष्टव्रणोन्मूलनं,
लूतास्फोटविसर्पकञ्च सकलान् कुष्ठादिरोगाञ्जयेत् ॥

रसायनस ,वातरोगे ।

भाषा—तालीसपत्र, त्रिकटु, त्रिजात, त्रिफला, जायफल, नागकेशर, भंगरा, कालाभंगरा, खस, जीरा, दोनों अजवाइन, पिपलामूल, रास्ना, चित्रकमूल अथवा खुरासानी अजवाइन, चोरक? गजपीपल, द्राक्ष, वंसलोचन, सफेदचन्दन, शीतलचीनी, नागरमोथा, छड़ीला, मुलहठी, धनियां, खजूर, जटामासी, शतावर, वाराहीकन्द, असगन्ध, गोखरू, मोचरस, तालमखाना, केवाचकेबीज, केशर, जावित्री, कस्तूरी, गजमद और मार्जारमद १–१ कर्ष, शुद्धगन्धक १० पल, शुद्धपारा ३ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी भीलंवर्णकज्जलीमें मिलाय सबकी बराबर घी और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधे कर्षसे १ कर्षतक अग्निबल देखकर शक्कर, घी और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे ८० प्रकारके वायुरोग, कफवातजन्यरोग, पित्तप्रकोप, राजयक्ष्म, दुष्टगाठ, भगन्दर, ज्वर, कान्तिका अभाव, कृशता, २० प्रकारके प्रमेह, उपदंश, दुष्टव्रण, मकड़ी, फोड़े, विसर्प और कुष्ठ इनसबको यह दूरकरताहै ॥ ४७७ ॥

४७८ वातामपाकः

वातामममज्ञः प्रस्थञ्च दुग्धे पाच्यञ्चतुर्गुणे ।
पुनः प्रस्थघृते पाच्यः शर्कराढकयावके ॥ २२९९ ॥

क्षेप्यानीमानि मानाणि जातीं जातीफलन्तथा।
त्र्यूषणञ्च लवङ्गञ्च चातुर्जातञ्च त्रैफलम् ॥ २३०० ॥
क्षीरकन्दं वत्सनाभमहिफेनं घनं हिमम्।
मदनी कुङ्कुमं मांसी कक्कोलमाकल्लकम् ॥ २३०१ ॥
अब्धिशोषं गोक्षुरञ्च शताह्वाकपिकच्छुकम्।
अश्वगन्धा च मुशली मृतपारदमभ्रकम् ॥ २३०२ ॥
वङ्गं लोहञ्च दरदं कर्षकर्षं प्रदापयेत्।
पुनर्भृङ्गाघृतं क्षेप्यं कुडवं तद्विचक्षणैः ॥ २३०३ ॥
खादेत्कर्षप्रमाणञ्च घनं दुग्धं पिबेदनु।
धातुपुष्टिकरं बल्यं वर्णाऽऽयुःकान्तिवर्धनम् ॥२३०४॥
वृद्धो युवायते कामी स्त्रीणाञ्चाऽतीव वल्लभः।
वातरोगानशेषांस्तु नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २३०५ ॥
षण्ढोऽपि रमते नारीं गुटिकायाः प्रभावतः।
किंपुनश्चाऽन्यरोगेषु वारणेष्वत्र संशयः ॥ २३०६ ॥
चि. र. म, रसायने वाजीकरणे च।

भाषा—छिलकेरहित बादामकीगिरी १ प्रस्थलेकर चौगुने दूधमें पकावे। मावाहोनेपर सेरभर घी और ४ सेर शक्कर डालकर चाशनीकरे। पाक तैयारहोनेपर जावित्री, जायफल, त्रिकुटु, लवङ्ग, चातुर्जात, त्रिफला, क्षीरकाकोली और विदारी, शुद्ध बछनाग, अफीम और कपूर, सफेदचन्दन, कस्तूरी, केशर, जटामासी, शीतलचीनी, अकलकरा, समुद्रशोष, गोखरू, सौंफ, केवाचकेबीज, असगन्ध, मुशली, पारद, अभ्रक, बङ्ग और लोहभस्म, शुद्धसिंगरिफ ये सब १–१ कर्ष, घीमें सिझीहुई भांग ४ पल लेकर सबकाबारीकचूर्णकर पाकमें मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ कर्ष खाकर ऊपरसे अवौटा दूधपीनेसे धातुओंकी पुष्टिहोकर बल, वर्ण, आयु, कान्ति येसब बढतेहैं। बुड्ढा आदमीभी स्त्रियोंमें जवानकीतरह रमणकरताहै। समस्तवातरोग, षण्ढत्व और मन्दाग्नि इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै॥

४७९ वातारिरसः (प्रथमः)

उपायैः पूर्वमाख्यातै यैन्त्रै डमरुकादिभिः।
येनकेनाऽप्युपायेन भस्मीकुर्याच्च पारदम् ॥ २३०७ ॥
भस्मनो दश गद्याणा दशैव नवसारकात्।
स्फटिका पञ्च गद्याणा वत्सनाभस्य द्वौ मतौ॥२३०८॥
मरिचस्य च गद्याणौ मर्दयेत्खल्वके दृढम्।
विधिना जायतेऽनेन रसो वातारिसञ्ज्ञकः ॥२३०९॥
रक्तिकाऽस्य प्रदातव्या श्लेष्मवातादिरोगिषु।
अष्टादशप्रमेहेषु प्लीहगुल्मोदरेषु च ॥ २३१० ॥
आमवाते च मन्दाग्नौ गुल्मयो वातरक्तयोः।
बाह्याऽभ्यन्तरमूलेषु समस्तेषु ज्वरेषु च ॥ २३११ ॥
शूलेऽप्यजीर्णे शोथे च देयो वातारिसञ्ज्ञकः।
तैलक्षाराऽम्लवर्ज्यैश्च भोज्यं मधुरमिष्यते ॥ २३१२ ॥
दिनाष्टकं घृतं स्तोकं भोजने ग्राह्यमुत्तमम्।
रोगाः सर्वे विलीयन्ते मासेकेन न संशयः ॥ २३१३ ॥
रसचि, वातरोगाऽधिकारे।

भाषा—पारदभस्म और शुद्धनवसादर ५–५ तोले, भुनी फिटकडी २॥ तोले, शुद्ध बछनाग और मरिच १–१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर एकदोदिन मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वात और कफरोग, १८ प्रकारकेप्रमेह, प्लीहा, गुल्म, उदर, आमवात, मन्दाग्नि, वातरक्त, सबप्रकारकेज्वर, शूल, अजीर्ण और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै। इसकेप्रयोगमें तैल, क्षार और अम्लवर्जितहै। मधुरभोजन कराना और ८ दिनतक घी थोडा देना फिर धीरे २ बढाना। इसके एकमहीना सेवनसे समस्त रोग नष्टहोतेहैं॥ ४७९ ॥

४८० वातारिरसः (द्वितीयः)

शिलया निहतं नागं ताप्यभस्माऽर्द्धभागिकम्।
पादं पादं क्षिपेद्भस्म शुल्वस्य विमलस्य च ॥२३१४॥
कालाऽभ्रसत्त्वयोश्चाऽपि स्फटिकस्य पृथक्पृथक्।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेत्त्रिफलवारिणा ॥ २३१५ ॥
त्रिंशद्वनोपलैरेवं त्रिंशद्वारान्विचूर्णयेत्।
व्योषवेल्लकचूर्णञ्च समांशैः सहमेलयेत् ॥ २३१६ ॥
मध्वाज्यसहितं हन्ति प्रलीढं वल्लमात्रया।
अशीतिं वातजान्रोगान् धनुर्वातं विशेषतः ॥२३१७॥
कफरोगानशेषांश्च मूत्ररोगांश्च सर्वशः।
श्वासं कासं क्षयं पाण्डुं श्वयथुं सूतिकाज्वरम् ॥२३१८॥
ग्रहणीमामदोषञ्च वह्निमान्द्यं सुदुर्जयम्।
सर्वानुदकदोषांश्च नाशयेदनुपानतः ॥ २३१९ ॥
र. क., वातरोगाऽधिकारे।

भाषा—मैनसिलकेयोगसेकीहुईनागभस्म ४ भाग, स्वर्णमाक्षिकभस्म २ भा., ताम्र, रजतमाक्षिक, काले तथा सफेद अभ्रककासत्व और स्फटिकभस्म १–१ भागलेकर त्रिफलाकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३० जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। ऐसे ३० आंचें देनेकेबाद त्रिकुटु, विडङ्ग समभागकाचूर्ण पूर्वरसकी बराबर मिलाय रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ लेनेसे ८० प्रकारके वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफ और मूत्रकेसमस्तरोग, श्वास, कास, क्षय, पाण्डु, शोथ, सूतिकाज्वर, ग्रहणी, आमदोष, दुर्जय मन्दाग्नि, समस्त जलदोष इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ४८० ॥

४८१ वातारिरसः (तृतीयः)

गन्धकाद्द्विगुणं तालं तालकाद्द्विगुणा शिला।
शिलया द्विगुणं ताप्यं तस्माच्च द्विगुणो रसः॥२३२०
कल्पयेत्सर्वमेकत्र यावत्स्याद्दिनसप्तकम्।
सर्वस्याऽष्टमभागेन दत्त्वा रक्तामृतं शुभम् ॥ २३२१ ॥
विषतिन्दुकजद्रावैः पिष्ट्वा गोलकमाचरेत्।
विशोष्य वालुकायन्त्रे तद्धर्मे दिवसद्वयम् ॥ २३२२ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य तुल्यहिङ्ग्वष्टकान्वितम्।
भावयेद्बीजपूरस्य सप्तवारं रसेन च ॥ २३२३ ॥

सप्तवारं तथा भाव्यं चित्रमूलस्य वारिणा ।
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं सर्ववातारिसञ्ज्ञकः ॥२३२४॥
घृतेन सहितो लीढो वल्लद्वयमितो नृभि. ।
निहन्ति शीतवातार्तिं गुल्मानष्टविधानपि ॥ २३२५ ॥
चतुर्विधश्च मन्दाग्निं स्थूलानुदरजान् क्रिमीन् ।
आध्मानञ्च तथा हिक्कां मूढवातञ्च विड्ग्रहम् ॥२३२६॥

र क.यो. रसायनत ,र सु ,र.च ,वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ भाग, हरिताल, २ भा., शुद्धमैन सिल ४ भा, शुद्धस्वर्णमाक्षिक ८ भा , शुद्धपारा १६ भाग लेकर सबको ७ दिनतक मर्दनकर सबसे आठवांहिस्सा वत्सनाग देकर कुचिलेके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर दोदिनतक वालुकायन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इसकी बराबर हिंगाष्टकमिलाकर बिजोरा और चित्रकमूलकेरसोंकी ७–७ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगो चितानुपानकेसाथ देनेसे शीतवात, ८ प्रकारके गुल्म, ४ प्रकार की मन्दाग्नि, पेटके मोटे क्रिमि, आध्मान, हिक्का, मूढवात, मलसङ्ग्रह इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४८१ ॥

४८२ वातोन्मूलनरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं धूर्तबीजं त्रिभिः समम् ।
पञ्चकोलकषायेण मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ २३२७ ॥
मूषयोर्भूधरे पाच्यं स्वाङ्गशीतं विचूर्णयेत् ।
मत्स्यपित्ते भावयेच्च मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ २३२८ ॥
पञ्चकोलकषायेण गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
स्त्यानवातं हरेच्छीघ्रं सर्ववातविकारनुत् ॥ २३२९ ॥

व र ,वै.वि , स्त्यानवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वत्सनाग और गन्धक समभाग, शुद्ध धतूरेकेबीज सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पञ्चकोलकेकाथसे मर्दनकर मूषामेंरख भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीके पित्तसे दोदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पञ्चकोलकेकाढेसे देनेसे स्त्यानवातादि समस्तवातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४८२ ॥

४८३ वानरीपाकः

प्रस्थं निस्तुषमर्कटीभवरजो दोग्धेऽर्मणे पाचयेत्,
यावज्जीर्यति मन्दवह्निविधिना सिताऽऽढकं निक्षिपेत् ।
पश्चात्प्रस्थघृते विपाच्य सुधिया शीते त्विमानिक्षिपेत्,
कर्षांशाऽगरुपूगजीरणचतुर्जातं हिमं हंसकम् ॥२३३०॥
जातीपत्रफले श्रुटित्रिकटुकं चन्द्राब्धिशोषं वणिक्,
कङ्कोलं करहाटकेतवविषं गोक्षुरतालीसकम् ।
पादांशं खुरशाणिकञ्च गगनं वङ्गं भुजङ्गं जया,
पालिक्यं त्रिपलं मधुस्थितशुभं भक्षेद्धुतं बृंहणम् ॥

र. को , रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ केवाचकीमगजको एकद्रोणदूधमें मन्द आंचपर चलाताहुआ पकावे । मावाहोनेपर ४ प्रस्थ शक्कर और एकप्रस्थ घी डालकर चाशनीकरे । पाकतैयार होनेपर नीचे उतारकर अगर, सुपारी, जीरा, चातुर्जात, सफेदचन्दन, शुद्ध-शिंगरफ, जाविन्त्री, जायफल, इलायची, त्रिकटु, शुद्धकपूर, समुद्रशोष, गेंहुला, शीतलचीनी, अक्कलकरा, शुद्धधतूरेकेबीज और वत्सनाग, गोखरू, तालीसपत्र येसब १–१ कर्ष; खुरासानी अजवाइन, अभ्रक, वङ्ग और नागभस्म ४–४ माशे, धोईहुई भाग १ पल, मधु ३ पल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४ माशेसे १ कर्षतक खाकर दूधपीनेसे समस्तशुक्रदोष नष्टहोकर पूर्णपुरुषत्वको प्राप्तहोताहै ॥ ४८३ ॥

४८४ वान्तिहृद्रसः

अथ. शङ्खं बली सूतं रसले तुल्यं विमर्दितम् ।
कन्याकनकचाङ्गेरीरसे गोलं विधीयताम् ॥ २३३२ ॥
सप्तमृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पुटितो वान्तिहृद्रसः ।
द्विवल्लः क्रिमिरोगेऽपि साजमोदः सपेल्लकः ॥२३३३॥
वान्तिहारेण मुनिना प्रोक्तोऽयं मधुना युत. ।
पिप्पलक्षारपानीयं पाययेद्वान्तिहृद्रसः ॥ २३३४ ॥

र ल., यो. र , नि र., र सु , रसायनस., र च., र रा मा., ना वि., र का ,वान्तिरोगे । र.का. वान्तिहृद इति नाम ।

भाषा—लोह और शङ्खभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवार, धतूरा और अम्लोनियाकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लघुपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा अजमोद और विडङ्गकेसाथ मिलाकर मधुकेसाथ चटानेसे तमामप्रकारकीवमन शान्तहोतीहै । प्यास लगनेपर पीपलकी राखका पानी पिलावे ॥ ४८४ ॥

४८५ वाराहीलोहम्

वाराहिकाभृङ्गरसं लोहचूर्णं शतावरी ।
साज्यं कर्षं पञ्चशती ॥ २३३५ ॥

आ यु , रसायने ।

भाषा—वाराहीकन्द, भंगरा, पारद और लोहभस्म, शतावर येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ कर्ष घीकेसाथ खावे और पाचनहोनेपर दूधभातका सेवनकरे । ऐसे एकवर्षके प्रयोगसे ५०० वर्षकी आयुको भोगसकाहै ४८५

४८६ वारिनिगडगुटिका

पेशानी विल्वपेशी च जातीपत्रफले तथा ।
विषा मोचरसो मुस्ता शुण्ठी सामुद्रशोषकम् २३३६
कनकस्य च बीजानि करवीरजटा तथा ।
अहिफेनं गन्धरसौ धूर्तद्रावेण मर्दयेत् ॥ २३३७ ॥

द्विगुञ्जा गुटिका दध्ना गुह्यम्बुनिगडाह्वया ।
जयेत्सर्वानतीसारान्नाभिपार्श्वे विलेपतः ॥ २३३८ ॥

र.का , अतीसाराऽधिकारे ।

भाषा—ईशानकोणमें रहनेवाले वेलफीगिरी, जाविची, जायफल, अतीस, मोचरस, नागरमोथा, सोंठ, समुद्रशोष, शुद्ध-धतूरेकेबीज, सफेदकनेरकीजड़कीछाल, शुद्ध अफीम, गन्धक और पारा समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय धतूरेकेरससे एकदिनमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली दहीकेसाथ खिलानेसे और नाभिके बगलमें लेपकरनेसें यह सबप्रकारके अतीसारोंको नष्टकरतीहै ॥ ४८६ ॥

४८७ वारिशोषणरसः

चतुर्विंशतिभागाः स्युर्गन्धाद्वज्रं तदर्द्धकम् ।
षड्भागाद्भवेदर्द्धः पारदः कृष्णमभ्रकम् ॥ २३३९ ॥
चतुर्दशविभागं स्यान्मृतं तद्दीयते पुनः ।
मृतलौहमष्टभागं मृतताम्रं नवाऽत्र तत् ॥ २३४० ॥
मृतहेमद्वयं तत्र मृतरौप्यञ्च सप्तकम् ।
अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं त्रयोदश ॥ २३४१ ॥
भागा ग्राह्या माक्षिकस्य विशुद्धस्याऽत्र षोडश ।
अष्टादशमितं ग्राह्यं नव कासीसकं पुनः ॥ २३४२ ॥
तुत्थकञ्च षडेवाऽत्र नवीनं ग्राह्यमेव च ।
तालकञ्च चतुर्भागं शिलाभागत्रयं मतम् ॥ २३४३ ॥
शैलेयं पञ्चभागं स्यात्सर्वमेकत्र नूतनम् ।
मृतमौक्तिकभागैकं सौभाग्यं भागयुग्मकम् ॥२३४४॥
कुट्टयित्वा विचूर्ण्याथ जम्बीरस्य रसेन वै ।
भावयेत्सप्तधा गाढं गुटिका तस्य कारयेत् ॥२३४५॥
धानकछितये कृत्वा मुद्रयेत्पानकद्वयम् ।
घटमध्ये निवेश्याऽथ दत्त्वा पूर्वञ्च वालुकाम् ॥२३४६
अर्द्धञ्च तां पुनर्दत्त्वा वालुकाम्मुद्रयेन्मुखम् ।
अहोरात्रं दहेदग्नौ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २३४७ ॥
बकुलस्य च बीजेन कण्टकारीद्वयेन च ।
गुडूचीत्रिफलावारा भावयेत्सप्तसप्तकम् ॥ २३४८ ॥
वृद्धदारुरसेनाऽपि तथा देयास्तु भावनाः ।
गिरिकर्ण्या रसेनाऽपि मत्स्यरोहितपित्ततः ॥२३४९॥
एवं सिद्धो भवेत्सम्यग्रसोऽसौ वारिशोषणः ।
देवान्गुरून्समभ्यर्च्य यतिनो ब्राह्मणांस्तथा ॥२३५०॥
रक्तिकाद्वितयं देयं सन्निपाते समुच्छ्रिते ।
मरिचेन समं देयं तेन जागर्ति मानवः ॥ २३५१ ॥
श्लैष्मिके च गदे देयं ग्रहण्यामग्निमान्द्यके ।
प्लीह्नि पाण्डौ प्रयोक्तव्यं त्रिकटुत्रिफलाम्भसा २३५२
शूलरोगे प्रयोक्तव्यमुदावर्ते विशेषतः ।
कुष्ठे सुकुष्ठे देयोऽयं कारोदुम्बरिकाम्भसा ॥ २३५३ ॥

अतिवह्निकरः श्रीदो बलवर्णाग्निवर्धनः ।
धन्वन्तरिकृतः सद्यो रसः परमदुर्लभः ॥
सर्वरोगे प्रयोक्तव्यो निःसन्देहं भिषग्वरैः ॥ २३५४ ॥

र.सं.,र.चि ,आ.वि.,र.सु., रसचि ,र.का.,भै.र , यकृत्प्लीहाधिकारे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २४ भाग, वज्रभस्म १२ भा., पारद-भस्म ६ भा., अभ्रकभस्म १४ भा., लोहभस्म ८ भा , ताम्र-भस्म ९ भा., सुवर्णभस्म २ भा., रौप्यभस्म ७ भा , अत्यन्त शुद्धबडेहीरेकीभस्म १३ भा., शुद्धमाक्षिक १६ भा., नयाकसीस १८ भा., तुत्थ ६ भा., शुद्धहरिताल ४ भा , मैनसिल ३ भा , शिलाजतु ५ भा., मोतीभस्म १ भा., भुनासुहागा २ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर ७ दिन जंभीरीकेरससे निरन्तर मर्दनकर छोटीछोटीगोलियें बनाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें एक दिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मौलश्रीकेबीज, दोनोंभटकटैया, गिलोय, त्रिफला इनकेस्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर विधारा और कोयलकेस्वरस तथा रोहूमछलीकेपित्तसे १–१ भावनादेकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली गुरु, यति और ब्राह्मणोंका सत्कारकर उत्कटसन्निपातमें मरिचकेसाथदेनेसे मनुष्य तन्द्रासे उठबैठताहै । इसीतरह कफरोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, प्लीहा, पाण्डु इनमें त्रिकटुकेकाढेसे देना । शूल, उदावर्त, दुष्टकुष्ठ इनमें कठूमरके-रससेदेना । यह अत्यन्त अग्नि, बल और वर्णको करताहै । सबतरहके असाध्यरोगोंमें इसकानि सन्देहप्रयोगकरना ॥४८७॥

४८८ वारिसागररसः (प्रथमः)

अतः परं प्रवक्ष्यामि रसेश्वरमनुत्तमम् ।
रोगापहां क्रियां वारिसागरं नाम नामतः ॥ २३५५॥
कृष्णाऽभ्रकं समादाय वज्राख्यं बलवत्तरम् ।
एकपत्रं ततः कुर्याद्रसे कार्पासपत्रजे ॥ २३५६ ॥
स्थापयेत्त्रिदिनं यावत्ततो घर्मे निधापयेत् ।
दिनमेकं रसैस्तैश्च व्रीहियुक्तैश्च वल्कलैः ॥ २३५७ ॥
निःक्षिप्य सुदृढं क्षिप्त्वा पोट्टलीं मर्दयेत्करैः ।
तत्सर्वं चूर्णितं कृत्वा प्रयाति च यथा बहिः ॥२३५८॥
चूर्णितं निक्षिपेदभ्रं रसे कार्पासपत्रजे ।
मर्दयित्वा ततश्चूर्णं तद्रसैः सम्पुटे क्षिपेत् ॥ २३५९ ॥
आरण्योत्पलकैः पश्चात्पुटान्येवञ्च विंशतिः ।
वृषाद्रकाहसन्धानि मर्दनञ्च पुनः पुटम् ॥ २३६० ॥
ऊनविंशे पुटे जाते व्योम खल्वे विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेत्कटुतैलेन ततः सम्पुटके क्षिपेत् ॥ २३६१ ॥
निरुद्ध्य सम्पुटं सम्यक् मृदा कर्पटयुक्तया ।
पुटयेदुपविंशानि यामानि च यथाक्रमम् ॥ २३६२ ॥
ततो व्योम समादाय खल्वे सम्मर्द्य यत्नतः ।
कटुतैलेन तद् व्योम दृढे भाण्डे विनिःक्षिपेत २३६३

उपरिष्टात्पुनर्दद्यात्कटुतैलं घनं यथा ।
अङ्गुलद्वयमानेन व्योमोपरि तथा भवेत् ॥ २३६४ ॥
भाण्डवक्त्रं सन्निरुद्ध्य पिधान्या कर्पटैर्मृदा ।
शुष्कमारोपयेच्चुल्यां काष्ठाग्निं ज्वालयेदधः ॥२३६५॥
तावत्प्रज्वालयेदग्निं यावन्निस्तैलतां व्रजेत् ।
निस्तैलं गगनं कृत्वा कज्जलाभं विचन्द्रिकम् ॥२३६६॥
स्थापयेद्गन्धकं पश्चान्नीरे कार्पासपत्रजे ।
ढालयेदेकवारं तु द्रावयित्वा ततो जले ॥ २३६७ ॥
सिन्धुवारभवे सप्त वारान् संढालयेद्बलिम् ।
पूर्वमार्गेण सूतेन्द्रं पातितं स्विन्नजारितम् ॥ २३६८ ॥
फलांशहेमजीर्णाऽर्कगुणगन्धकभोजिनम् ।
रसं गृहीतभागैकं पक्षभागञ्च गन्धकम् ॥ २३६९ ॥
युगभागञ्च गगनं खल्वे सर्वं विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेत्सिन्धुवारोत्थै र्दिनमेकं रसेश्वरम् ॥ २३७० ॥
काकमाचीरसैस्तद्वत्कृष्णधत्तूरवारिभिः ।
जयन्त्यद्रिस्तिलदलानीरै र्दण्डोत्पलारसैः ॥ २३७१ ॥
जातीरसैः कदम्बोत्थै र्भृङ्गराजरसैस्ततः ।
अनलाद्रि महाराष्ट्रीनीरैः पिप्पलिमूलजैः ॥ २३७२ ॥
क्रमेण मर्दयित्वैतैस्तत्कर्तं गोलकं नयेत् ।
गोस्तनाकारमूषायां क्षिप्त्वा सम्यङ्निरोधयेत् २३७३
मूषां विनिःक्षिपेद्यन्त्रे वालुकाख्ये ततः परम् ।
वालुकायन्त्रवदनं पिदध्याच्च शरावतः ॥ २३७४ ॥
सन्निरुद्ध्य समारोप्य चुल्यां संज्वालयेत्ततः ।
याममात्रं मध्ययर्हि स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥ २३७५ ॥
ज्ञात्वा यन्त्रं विनिर्भिद्य सूतमूषां समुद्धरेत् ।
मूषावक्त्रं विनिर्भिद्य गृह्णीयाच्च रसेश्वरम् ॥२३७६॥
पूजयित्वा रसेन्द्रं तं विन्यसेच्च करण्डके ।
सिद्धं रसेश्वरं पश्चाद्रोगिणे सम्प्रयोजयेत् ॥ २३७७ ॥
सन्निपाते महाघोरे चतुर्गुञ्जप्रमाणतः ।
अनलोद्भवचूर्णेन दद्यात्तस्याऽनुपानकम् ॥ २३७८ ॥
पटूनि पञ्च जीरे च त्रयः क्षाराश्च सार्द्रकाः ।
सव्योषाः सोग्रगन्धाश्च यवानीसहिताः समाः २३७९
प्रत्येकमेकतश्चूर्णं कृत्वा वस्त्रेण गालितम् ।
चतुर्मापप्रमाणेन अनुपाने नियोजयेत् ॥ २३८० ॥
सन्निपातं निहन्त्येष रसेन्द्रस्तत्क्षणाद्ध्रुवम् ।
अग्निमान्द्ये प्रयुञ्जीत ज्वरभेदेऽतिसारके ॥ २३८१ ॥
रोगराजे प्रतिश्याये श्लेष्मव्याधौ च पीनसे ।
सद्ग्रहण्यां प्रयुञ्जीत निःशङ्कोऽयं रसेश्वरम् ॥ २३८२ ॥
सर्वान्रोगान्निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशय. ।
गोक्षीरं गोघृतं गव्यं दधि तक्रं विवर्जयेत् ॥ २३८३ ॥
माहिषन्तु प्रयुञ्जीत पयस्तक्रं घृतं दधि ।
रसवीर्यविवृद्धिस्तु माहिषेणैव नाऽन्यथा ॥ २३८४ ॥
पथ्याश्च शालयः प्रोक्ता व्रीहया मुद्गसंयुताः ।
गोधूममाषसहिताः सेवनात्सर्वदा हिताः ॥
इत्यमुक्तक्रियोवारिसागरोऽयं रसेश्वरः ॥ २३८५ ॥

र.क.यो ,र.चि ,र र., रसायनस , र को.,ध , यो.म ,र सु ,र का ,सन्निपाते ।

टि०—र चि ,र र ,रसायनस ,र को ,ध ,यो म ,र सु ,र का एषुग्रन्थेषु रत्नाकरौषधयोगे च द्वितीयस्थाने अभ्रादीना विशेषविधानमदत्त्वा भागविशेषञ्चाऽप्रवल्प्य समभागेन द्रव्याणिनियुज्य रस सम्पादित यथा—

शुद्ध मृत द्विधा गन्ध सूततुल्य मृताऽभ्रकम् ।
निर्गुण्डी काकमाची च धत्तूरार्द्रकचित्रकम् ॥
गिरिकर्णी जयन्ती च तिलपर्णी च भृङ्गराट् ।
दन्तीशिग्रुकदम्बस्य कुसुम नागकेशरम् ॥
जयाकृष्णामहाराष्ट्रीद्रवैरासा यथाक्रमात् ।
याम पृथग्विशोष्याऽथ कटुतैलेन भावयेत् ॥
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा वालुकायन्त्रग पचेत् ।
यामैक तत्समुद्धृत्य चूर्णित कृष्णलत्रयम् ॥
त्र्यूषण पञ्चलवण द्विक्षार जीरकद्वयम् ।
वचाऽऽर्द्राऽग्नियमान्यश्च समभागानि कारयेत् ॥
अनुपाने चतुर्माष सन्निपातहर परम् ।
माहिष दधि पथ्य स्याद्रसवीर्यविवर्धनम् ॥
साध्याऽसाध्येप्रयोक्तव्यो रसोऽयवारिसागर । इति ॥

भाषा—काले वज्राभ्रकको गरमकर कपासकेपत्तोंकेरसमें बुझावे । अभ्रकका चूरा होजानेपर धूपमें ३ दिनतक रखछोडे । फिर छिलकेसहित धान डालकर वस्त्रमें पोटली बनाय एकदिन रखछोडे । फिर धीरे २ इसपोटलीको रसमें मसले । इससे अभ्रकका बारीकचूरा होकर वस्त्रसे बाहर निकल आवेगा पत्थर और कोयले वस्त्रमें रहजायगे । नितरजानेपर पानीको निकालदे और अभ्रकको सुखादे फिर कपासके रससे २–३ दिन मर्दनकर टिकडीबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर जङ्गलीकण्डोंमें वराहपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर पुटदे । ऐसे १९ पुटहोनेपर खरलमें डाल कडुवेतैलसे मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर सूखनेपर वराहपुटकी १९ आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर कडुतैलमें मर्दनकर बडे बर्तनमें डालकर दो अङ्गुल ऊपरतक तैलभरके शरावसम्पुटकर ३–४ कपडमिट्टी समस्तपर देकर सूखनेपर चूल्हेपर रख लकडीकी आच जलावे । तमाम हण्डी अग्निसात् होजानेपर अग्नि बन्दकरे । भाण्डस्थ वस्तुके पाककी यही पहिचानहै कि बिना अन्दरमें पाकहुए हण्डी लाल नहीं होती । स्वाङ्गशीतल होनेपर तैलरहित निश्चन्द कज्जलकेसदृश भस्म निकलेगी । इसके बाद गन्धकको गलाकर कपासके पत्तोंके रसमें बुझावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निर्गुण्डीकेपत्तोंके रसमें ७ बार ढाले । फिर बुभुक्षान्तसंस्कार किये हुए पारेमें १६ वां हिस्सा सुवर्णजारणकर बारहगुना गन्धक जारणकरके रखले । इसपारेमेंसे एकभाग, शुद्धकियाहुआ गन्धक १५ भाग, पूर्वोक्त अभ्रक ४ भाग लेकर निर्गुण्डी, मकोय, कालाधतूरा, जैंत, हुरहुर, मन्नदण्डी, चमेली, कदम्ब, भंगरा, चित्रक, मराठी, पिपलामूल, इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गोस्तनाकारमूषामें रख मुद्-

वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें रख यत्रका मुंहवन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर चूल्हेपर एकपहरकी मध्यम अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसेश्वरकी पूजाकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूलके चूर्णकेसाथ देकर, पाचोंनमक, जीरा, तीनोंक्षार, अदरख, त्रिकटु, वच, अजवाइन इनसबको अलग २ पीस कपड़छानकर एकजगहमिलाय ४ माशेलेकर अनुपानमें देनेसे महाघोर सन्निपात एकक्षणमें नष्टहोताहै । इसीतरह मन्दाग्नि, समस्तज्वर, अतिसार, रोगराज, प्रतिश्याय, श्लेष्मरोग, पीनस, सङ्ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै । गायकादूध, घी, दही और छाछका निषेधकरै और भैंसकी सब चीजेंदे । भैंसके तक्रादिकसे रसके वीर्यकी वृद्धिहोतीहै । सपेद और लालचावल, मूंग, गेंहू, उड़द येसब पथ्यहोतेहैं ॥ ४८८ ॥

४८९ वारिसागररसः (द्वितीयः)

विषा वलिः सिता तालं टङ्कणं व्योषकं समम् ।
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेत्रिदिनं भिषक् ॥ २३८६ ॥
माषमात्रां वटीं कुर्याच्छायाशुष्कां तु कारयेत् ।
मुस्ताबिल्वगुडैर्युक्तं वातज्वरनिवारणम् ॥ २३८७ ॥
जम्बीरशर्करायुक्तं पैत्यज्वरविनाशनम् ।
गुडेन मधुसंयुक्तं कासश्वासज्वरापहम् ॥ २३८८ ॥
आर्द्रकस्य रसैर्युक्तं कुक्षिशूलनिवारणम् ।
कुमारीरससंयुक्तं मेहदाहज्वरापहम् ॥
मूर्वादण्डरसे युक्तं सन्ततज्वरनाशनम् ॥ २३८९ ॥

र. क. यो , ज्वराधिकारे ।

भाषा—अतीस, शुद्ध गन्धक, हरिताल और सुहागा, शक्कर, त्रिकटु येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर जम्भीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली नागरमोथा, वेलगिरी और गुड़केसाथ देनेसे यह वातज्वरको नष्टकरताहै । जंभीरी और शक्करकेसाथ पित्तज्वर, गुड़ और मधुकेसाथ कास, श्वास और साधारणज्वर, अदरखकेसाथ कुक्षिशूल, घीकुवारकेरसकेसाथ प्रमेह और दाहज्वर, मूर्वाकेदण्डके रससे सन्ततज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

४९० वारिसागररसः (तृतीयः)

सूतटङ्कणविषाऽर्कसुगन्धा-
फेनकं मनशिलाऽम्लविमर्द्यम् ।
भूधरे लघुपुटाद्विनिहन्ति
सन्निपातमितिगुञ्जसितायुक् ॥ २३९० ॥
दुग्धान्नं तक्रमिश्रं वा शिशिरश्च जलं हितम् ।
शीतोपचारैरन्यैश्च रसोऽयं वारिसागरः ॥ २३९१ ॥

र. शि , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और बछनाग, ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक, अफीम और मैनसिल समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जंभीरी वगैरहके रससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर भूधरयन्त्रमें लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती शक्करकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । भूखलगनेपर दूध, चावल अथवा छाछ, चावल देना । प्यास लगनेपर ठंढाजलदेना और दाहमें शीतोपचार करना ॥ ४९० ॥

४९१ वारिसागररसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मृताभ्रं टङ्कणं शिलाम् ।
मुशलीं हयमारञ्च प्रत्येकञ्च विमर्दयेत् ॥ २३९२ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं श्लेष्मपित्तविसर्पनुत् ।
दुरालभा पर्पटकं पटोलं कटुकां तथा ।
त्रिफला गुग्गुलुं तुल्यं कषायमनुपाययेत् ॥ २३९३ ॥

व रा., वै. चि , विसर्पे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध सुहागा और मैनसिल, मुशली, सफेदकनेरकी जड़कीछाल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मुशली और कनेरकी जड़के काढ़ेसे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जवास, पित्तपापड़ा, परवल, कुटकी, त्रिफला और गूगल समभागकेक्वाथकेसाथ देनेसे श्लेष्मरोग और पित्तविसर्प नष्टहोताहै ॥ ४९१ ॥

४९२ वालकादिलोहम्

अम्बुश्रेष्ठाकिमिरिपुवरीत्र्यूषणाग्निस्त्रिजातं,
लोहं खण्डं द्वयमपि समं चूर्णमाचैश्च युक्तम् ।
सर्वान्मेहान्मधुघृतयुतं योजयेन्माषमात्रं,
शोथं पाण्डुं हरति सजरं कामलं चामवातम् ॥ २३९४ ॥

र. शि , प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—सुगन्धवाला, गजपीपल, विडङ्ग, शतावर, त्रिकटु, चित्रकमूल, तज, पत्रज, इलायची येसब समभाग, लोहभस्म और शक्कर सबकोबराबर लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधु और घृतकेसाथ देनेसे यह शोथ, पाण्डु, कामला, आमवात इनसबकोनष्टकर बुढापेको दूरकरताहै ॥ ४९२ ॥

४९३ वासाखण्डायसम्

वासारसेनाऽर्मणसम्मितेन
चूर्णं सितातुल्यमयःसमुत्थम् ।
प्रस्थप्रमाणं कुडवोन्मिताज्ये
पक्त्वा कदुष्णे विनिधाय तस्मिन् ॥ २३९५ ॥
त्रिजातकत्र्यूषणमुस्तधान्य-
द्विजीरकेभ्यः परिचूर्णितेभ्यः ।
पलं पलं दर्विकया विलोड्य
शीतं युतं क्षौद्रचतुष्पलेन ॥ २३९६ ॥
लीढं जयेत्तत्प्रबलञ्च कासं
पित्तं सरक्तं क्षयमग्निसादम् ।

करोति पुष्टिं वपुषः प्रवृद्धिं
बलं परां कान्तिमनामयत्वम् ॥ २३९७ ॥

लो.प कासे।

भाषा—एकद्रोण अडूसेकेपत्तोंके रसमें १–१ प्रस्थ शक्कर और लोहभस्म तथा ४ पल घी डालकर हलकी आचसे पकावे। घन तैयारहोनेपर तज, पत्रज, इलायची, त्रिकटु, नागरमोथा, धनिया, दोनोंजीरे १–१ पल लेकर इनका बारीकचूर्ण डालकर कड़छीसे मिलावे। ठढाहोनेपर ४ पल मधु मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे लेनेसे प्रबलकास, रक्तपित्त, क्षय, मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै। शरीरकी पुष्टि, वृद्धि, बल और कान्तिको बढ़ाकर सदैवके लिये आरोग्य देताहै ॥ ४९३ ॥

४९४ विकरालवक्त्रभैरवरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ रविक्षीरैस्तिथिवारान्विभावयेत्।
यामद्वादशकं वह्निं वालुकायन्त्रतो मत. ॥ २३९८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य धर्माक्षीरेण भावयेत्।
दद्यात्पूर्वयदग्निश्च ततश्च तिथिभावना. ॥ २३९९ ॥
भावना. स्युश्च कम्पिल्लबीजतैलेन चानलः।
यामषोडशकः सोयं विकरालास्यभैरवः ॥ २४०० ॥

र.का ,ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर आक और सेहुण्डकेदूधसे १५–१५ दिन मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुहबन्दकर १२–१२ पहरकी वालुकाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कमीलेकेबीजोंके तैलसे १५ दिन मर्दनकर १६ पहरकी अग्निदेवे। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमाना समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तमाम-प्रकारकेज्वर, सन्निपात, वात और कफजन्यव्याधि, श्वासकर उदररोग और कुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४९४ ॥

४९५ विकरालवक्त्रभैरवरसः (नित्योदितः) २

ऋतुभागं सोममलं तालं दिनमितं तथा।
कन्याद्भिः पञ्च दश च भावनाश्छिक्किकाद्रवैः ॥२४०१॥
अश्वत्थत्वचमध्यस्थं पङ्गुयामं दाहयेत्ततः।
अरण्योपलकैः शीतमश्वगन्धाम्बुयोजित. ॥ २४०२ ॥
भावयित्वा रसैस्तत्तु तालं कुष्ठहरं भवेत्।
नित्योदितोरसः सोऽत्र रसं राजीमितं भजेत् ॥२४०३॥

र.का ,ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धसोमल ६ भाग, शुद्धहरिताल ७ भाग लेकर बारीकचूर्णकर घीकुवार और नकछिकनीकेरसोंकी १५–१५ भावनाए देकर टिकड़ीबनाय पीपलकीछालके चूर्णकेबीचमें रख शरावसम्पुटकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर जङ्गलीकण्डोंकी ६ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर असगन्धकेरससे १–२ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ राईके बराबर माना समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामप्रकारके कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४९५ ॥

४९६ विकरालवक्त्रभैरवरसः (तृतीयः)

तालं मुनिमितं सोमरसो वर्णौ हिंङिम्बिका।
सौभाग्यं विशभागश्च निर्विषस्य चतुर्दश ॥ २४०४ ॥
तोरी वारमिता तद्वत्सोमलं तानि निक्षिपेत्।
कालसर्पमुखे घर्मे शोषयित्वा प्रयत्नतः ॥ २४०५ ॥
विषमेकोनविंशांशमाकल्लं द्वादशांशकम्।
मरिचाद् द्विस्त्रिर्लवङ्गात्कणा द्वादशभागिका॥२४०६॥
सप्तांशा रजनी सर्वैश्चूर्णैः षोडशधा पुटेत्।
सप्त त्रिपुटपुष्पस्य कृष्णधूर्तस्य च द्रवैः ॥ २४०७ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या रक्तिका सर्वरोगजित्।
योगिनीभिरयं प्रोक्तो विकरालास्यभैरवः ॥ २४०८ ॥
ऐकाहिके द्व्याहिके च त्र्याहिके विषमज्वरे।
जीर्णज्वरे च तरुण आगन्तौ धातुजे ज्वरे ॥ २४०९ ॥
उद्याऽस्तं शुण्ठी क्षौद्रत्रिकटुत्रिफलायुता।
टङ्कोपणसमायुक्ता सप्तरात्रं वटी स्मृता ॥
धूर्तबीजाऽर्ककरभबीजैः सन्निपातजित् ॥ २४१० ॥

र का ,ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धहरिताल ७ भाग, शुद्ध बछनाग और मैनसिल ४–४ भाग, सुहागा २० भा , निर्विषी १४ भा , फिटकड़ी और सोमल ७–७ भाग लेकर १–२ दिन मर्दनकर काले-सापकेमुंहमें भरके सुखावे फिर सापका जहर १९ वा भाग, अकलकरा १२ वा भाग, मिरच २ भाग, लौंग ३ भा , पीपल १२ भा , हल्दी सबसे ७ वा भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर निपुट धतूरे (७ या ३ आवर्त जिसके फूलमें आतेहों) केरससे १६ पुट देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै। साधारणतया मधु, त्रिकटु और त्रिफला अथवा सुहागा और मरिचकेसाथ अथवा धतूरा, आक और अकलकराकेबीजोंकेसाथ देनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, विषम, जीर्ण, तरुण, आगन्तुक और धातुगत सम्पूर्णज्वर सूर्योदयसे सायतक नष्टहोतेहैं। ७ दिनमें सन्निपात निवृत्तहोताहै ॥ ४९६ ॥

४९७ विक्रमकेसरीरसः

शुल्वमेकं द्विधा तारं मर्दयेद्विधिवद्भिषक्।
पश्चाद्विषं रसं गन्धं मेलयित्वा तु भावयेत् ॥ २४११ ॥
एकविंशतिवारांश्च लिम्पाकवल्कलद्रवैः।
रसः सिद्धः प्रदातव्यो गुञ्जामात्रो ज्वरान्तकृत् ॥
सर्वज्वरहरः ख्यातो रसो विक्रमकेसरी ॥ २४१२ ॥

मै. र , र सु , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—ताम्रभस्म १ भाग, रजतभस्म २ भागलेकर एक-पहरमर्दनकर शुद्धबच्छनाग, पारा और गन्धक १–१ भाग मिला-कर नीलवर्णकज्जलीकर अमिलतासकी छालकेरससे २१ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१

गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ विचित्रवीर्यरसः

रसं गन्धं विषं तुल्यं माक्षिकञ्च मनःशिला ।
बोलतालकशुल्वञ्च मुण्डं दरदमेव च ॥ २४१३ ॥
हैमरौप्यजभस्माऽपि वाराट भस्म तुल्यकम् ।
कटुत्रयं चित्रकञ्च निर्गुण्डीमूलसम्भवम् ॥ २४१४ ॥
नेपालं पिप्पलीमूलं सौभाग्यं करहाटकम् ।
मात्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहिकैस्तथा ॥ २४१५ ॥
अन्येषां विधिधैः पित्तै मर्दयित्वा भिषग्वरः ।
छायाशुष्का वटीः कृत्वा काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥
निरुद्ध्य वालुकायन्त्रे प्रहराऽर्द्धं पचेल्लघु ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य तत्तद्रोगानुपानतः ॥
शीघ्रं प्रशमयेत्तांश्च चित्रप्रत्ययकारकः ॥ २४१७ ॥

र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, सोनामाखी, मैनसिल, मुरमकी, हरिताल, ताम्र और मुण्डभस्म, शुद्धशिंगरिफ, सुवर्ण-रजत और कौडीभस्म, त्रिकटु, चित्रक, निर्गुण्डीमूल, शुद्धजमालगोटा, पिपलामूल, भुनासुहागा, अकलकरा सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मछली, भैंसा, मोर, बकरा, सूअर तथा इन्हींके सदृश अन्यजानवरोंके पित्तोंसे १–१ दिन भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाय छायाशुष्ककर काचकीशीशीमेंभर वालुकायन्त्रमें आधे पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सबप्रकारके ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ४९८ ॥

४९९ विजयचूडरसः

मर्दयेन्निम्बुकद्रावे रसं वङ्गञ्च गन्धकम् ।
मूषायां भूधरे पाकं कुर्याद्वासरपञ्चकम् ॥ २४१८ ॥
तत्र गन्धं मृतं ताम्रं सौवर्चलमथो क्षिपेत् ।
गायत्रीतोयसंश्लिष्टं ताम्रोदरविलेपितम् ॥ २४१९ ॥
न्युब्जभाण्डोदरे रुद्ध्वा वालुकाभिः प्रपूरयेत् ।
रुद्ध्वा यामद्वयं पक्त्वा ग्रहण्यां धातुकज्वरे ॥ २४२० ॥
गुल्मप्लीहोदराऽष्ठीलाऽपस्मारे मूत्रकृच्छ्रके ।
परिणामभवे शूले क्षयादौ सम्प्रयोजयेत् ॥
वल्लं रोगाऽनुपानेन रसस्य भिषजांवरः ॥ २४२१ ॥

र. क., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वङ्गभस्म और शुद्धगन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें रखकर ५ दिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म और सचल पूर्वरसकी बराबर २ डालकर खैरकेक्वाथमें पीसकर बराबरके ताम्रसम्पुटमें भीतर लेपदेकर हंडीमें सम्पुटको उल्टा रख सन्धिबन्दकरदे । फिर वालूभरके हंडीपर ढकन देकर ३–४ कपडमिटीसे बन्दकर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताम्रसम्पुटमेंसे खुरचकर निकालले । इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ग्रहणी, धातुगतज्वर, गुल्म, प्लीहा, उदररोग, अष्ठीला, अपस्मार, मूत्रकृच्छ्र, परिणामशूल, क्षयादिदुष्टव्याधि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४९९ ॥

५०० विजयपर्पटीरसः (प्रथमः)

गन्धकं क्षुदितं कृत्वा भाव्यं भृङ्गरसेन तु ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चात्तच्चूर्णं विचूर्णयेत् २४२२
चूर्णयित्वाऽऽयसे पात्रे कृत्वा वह्निगतं सुधीः ।
द्रुतं भृङ्गरसे क्षिप्तं तत उद्धृत्य शोषयेत् ॥ २४२३ ॥
तच्च गन्धं पलञ्चैकं गन्धाऽर्द्धं शुद्धपारदम् ।
सूताऽर्द्धं भस्म रौप्यञ्च तदर्द्धं स्वर्णभस्मकम् ॥२४२४॥
तदर्द्धं मृतवैक्रान्तं मौक्तिकञ्च विनिःक्षिपेत् ।
एकीकृत्य ततः सर्वं कुर्यात्पर्पटिकां शुभाम् ॥२४२५॥
लोहपात्रे समरसं मर्दितं कज्जलीकृतम् ।
यदराऽङ्गारवह्निस्थे लोहपात्रे द्रवीकृते ॥ २४२६ ॥
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं वा यदि दृश्यते ।
मृदौ न सम्यग्भङ्गः स्यान्मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् २४२७
खरे लघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः सूक्ष्मोऽरुणच्छविः ।
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः २४२८
जराव्याधिशताऽऽकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः ।
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणोऽमृतम् ॥ २४२९
आदौ शङ्करमभ्यर्च्य द्विजातीन्प्रणिपत्य च ।
प्रभाते भक्षयेदेनां प्राग्रक्तिद्वयसम्मिताम् ॥ २४३० ॥
रक्तिकादिक्रमाद्वृद्धिं भक्ष्या नैव दशोपरि ।
आरोग्यदर्शनं यावत्तावद्ध्रासस्ततः परम् ॥ २४३१ ॥
अजीर्णे भोजनं नैव पथ्यकालव्यतिक्रमः ।
घृतसैन्धवधान्याकहिङ्गुजीरकनागरैः ॥ २४३२ ॥
शस्यते व्यञ्जनं सिद्धं पित्ते स्वाद्वम्लमाक्षिकम् ।
कृष्णमत्स्येन मुद्गेन मांसेन जाङ्गलेन च ॥ २४३३ ॥
जाङ्गलेषु शशच्छागौ मत्स्ये रोहितमद्गुरौ ।
पटोलपत्रञ्च तथा कृष्णवार्ताकजालिका ॥ २४३४ ॥
सुस्विन्नपूगैस्ताम्बूले लोभे कर्पूरसंयुतैः ।
क्षुधाकाले व्यतिक्रान्ते यदि वायुः प्रकुप्यति ॥२४३५॥
झिञ्झिनीति शिरःशूले विरेके वमथौ तथा ।
तृष्णायाञ्चाऽधिके पित्ते नारिकेलाम्बु निर्भयम् २४३६
नारिकेलपयः पेयं द्विर्भक्ष्यं क्षीरमेव च ।
स्वप्ने शुक्रच्युतौ चैव चम्पकं कदलीदलम् ॥ २४३७ ॥
वर्ज्यं निम्बादिकं शाकं पाकाम्लं काञ्जिकं सुराम् ।
कदलीफलपत्राऽद्भि त्रपुषाऽलाबु कर्कटी ॥ २४३८ ॥

कूष्माण्डं कारवेल्लञ्च व्यायामं जागरं निशि।
न पश्येन्न स्पृशेद्गच्छेत्स्त्रियं जीवितुमिच्छति॥२४३९॥
यद्यौषधे स्त्रियं गच्छेत्कर्तव्या तु प्रतिक्रिया।
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ॥२४४०॥
आमशूलमतीसारं सामञ्चैव सुदारुणम्।
अतिसारं षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ॥ २४४१ ॥
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहानञ्च जलोदरम्।
पक्तिशूलं चाऽम्लपित्तं प्रमेहान्विषमज्वरान् ॥२४४२॥
वातपित्तकफोत्थांश्च ज्वरान्हन्ति सुदारुणान्।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन्वपुषा निर्मलः सुधी. ॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥ २४४३ ॥

भै र , र सु , र मृ ग्रहणीरोगाऽधिकारे।

टि०—"रोगशान्त्यै प्रयोक्तव्यो गुञ्जाद्विनिप्रमाणतः। वल्लार्थे त्रिफलायुक्ता भक्षयेद्रसपर्पटीम् ॥ पञ्चकोलसमोपेता मधुसारसमन्विता। हन्यात्पर्पटिका क्रीडा सन्निपात सुदारुणम् ॥ पिप्पली मधुसंयुक्ता लिह्यात्पर्पटिकां क्षयी। त्रिवृत् त्र्यूषणसंयुक्ता हन्यादाशु ग्रहणीगदम् ॥ नवकाष्ठगुग्गुलोर्योगात्पाण्डुरोग विनाशयेत्। रुबुबीजेन संयुक्ता वातशूलनिबर्हणी॥ कन्यात्र्यूषणसंयुक्ता हन्ति वातज्वरं हि सा। दशमूलसमायुक्ता श्लेष्मरोगविनाशिनी ॥ सोमराजीयुता हन्ति तीव्रां पामां विचर्चिकाम्। भल्लातकसमायुक्ता हन्ति दद्रूणि हिध्मिकाम् ॥ हन्यात्पर्पटिकाऽर्शांसि गवां मूत्रानुपानतः। शालाऽर्जुनवटाश्चित्र शाल्मलीभृङ्गराजकौ॥ निम्बपञ्चाङ्गमुण्ड्यौ च श्वेतैरण्डौ कुण्डली तथा। निर्गुण्ड्याश्चैव पत्राणि समभागानि कारयेत् ॥ चूर्णयित्वा ततः श्लक्ष्णमनुपाने प्रयोजयेत्। कुष्ठरोगनिवृत्त्यर्थं प्रयुञ्ज्यात्पर्पटीरसम् ॥ एव पर्पटिका युक्ता सर्वरोगांश्च नाशयेत्। पथ्यमत्र प्रयुञ्जीत यथादोषानुसारतः। ज्ञात्वा मतविकारांश्च विरुद्धमपि दापयेत् ॥" इति रसामृते अनुपाने विशेषोऽस्ति।

भाषा—शुद्धगन्धकका बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे ७ अथवा ३ बार भावितकर चूर्णबनाय लोहेकेपात्रमें गलाकर भंगरेकेरसमें घुमावे। यह शुद्धगन्धक १ पल, शुद्धपारा २ कर्ष, रजतभस्म १ कर्ष, सुवर्णभस्म आधाकर्ष, वैक्रान्तभस्म और मोती४–४ मासे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईलोहेकी कड़ाहीमें गलाकर प्रथमरसपर्पटीकीतरह तैयारकरे। फिर पर्पटीका बारीक चूर्णकर लोहेकेपात्रमें बेरकेकोयलोंपर गलाय दो कर्ष पारा मिलाकर उतारकर कज्जलीबनाकर रखछोड़े। पर्पटीकापाक तीन तरहकाहोताहै। मयूरचन्द्रिकाकीतरह जिसमें रङ्ग दिखाईदे और तोड़नेसे अच्छीतरह न टूटे वह मृदुपाकहै। मध्यपाकमें जल्दी टूटजातीहै और चांदीकीतरह चमकतीहै। खरपाकमें रंग लाल तथा रूक्षहोताहै और बहुतजल्दी टूटतीहै। मृदु तथा मध्य पाकका सेवनकरे और खरको जहरकीतरह छोड़देवे। अच्छे तिथि-मुहूर्त देखकर शङ्करका पूजनकर ब्राह्मणोंको सन्तुष्टकर सुबहमें २–२ रत्तीसे आरम्भकरे और प्रतिदिन १ रत्ती बढ़ावे। १० रत्तीहोनेपर वहीमात्रा स्थिर रक्खे ऊपर न बढ़े। जब व्याधिरहितहोजाय तब १–१ रत्तीका ह्रासकर बन्दकरदे। अजीर्णमें भोजन और पथ्यकालका लङ्घन न करे। घी, सेंधा-नमक, धनियां, हींग, जीरा और सोंठ इनसे व्यञ्जन सिद्ध-करे। पित्तकेप्रकोपमें स्वादु, अम्ल, मधु, कालीमछली, मूंग और जाङ्गलमासका सेवनकरे। जाङ्गलोंमें खरगोश और बकरा श्रेष्ठहै, मछलियोंमें रोहू और मद्गुर, शाकोंमें पटोलपत्र; काले-बेंगन, तरोई, पकीहुई सुपारी और कपूर लगाहुआपान खावे। भोजनका अतिकाल होनेसे यदि वायुका प्रकोपहो तो कानोंमें झिन्झिनी, शिर शूल, रेचन, वमन और अधिक प्यासहोगी। इसमें पित्तकोशान्तकरनेकेलिये नारियलकाजल और दूधदे। स्वप्नमें शुक्रस्खलनहोनेपर दूधपिलावे। चम्पा, कदलीदल, निम्बादिशाक, खटाई, काञ्जी, मद्य, केलेकाफल–पत्ता और जड़, खीरे, कद्दू, ककड़ी, कोंहड़ा, करेला, व्यायाम, रात्रिजागरण, इनका निषेधकरे। अगर जीनेकी इच्छा हो तो स्त्रीका स्पर्श तकभी न करे। दैवसंयोगसे यदि औषधप्रयोगमें स्त्रीसङ्गहोजाय तो उसका प्रतीकारकरे। इसप्रयोगसे पुरानी घोरग्रहणी, आम-शूल, अतिसार, ६ प्रकारके बवासीर, उपद्रवयुक्त यक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहा, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त, प्रमेह, विषमज्वर, वात पित्त और कफप्रधानज्वर इनसबको यह नष्ट-करतीहै। जीर्णपुरुष इसकासेवनकरे तो वलीपलितसे निवृत्तहोकर पूरे १०० वर्षकी आयुको भोगताहै। साधारणतः २ रत्तीसे ३ रत्तीतक त्रिफलाकेसाथ सेवनकरलेनेसे कल्पसिद्धिहोतीहै। पञ्चकोल और मधुकेसाथ घोरसन्निपात, पीपल और मधुकेसाथ क्षय, निसोत और त्रिकटुकेसाथग्रहणी, गुग्गुलुकेसाथ पाण्डु, एरण्ड-बीजोंसे वातशूल, घीकुवार और त्रिकटुसे वातज्वर; दशमूलके क्वाथसे श्लेष्मरोग, बाकुचीसे भयंकर पामा और विचर्चिका, भिलावेसे दद्रु और हिक्का, गोमूत्रसे बवासीर नष्टहोताहै। सखुआ अर्जुन, वट, चित्रक, सेंमल, भंगरा, निम्बपञ्चाङ्ग, दोनों गोरख मुण्डी, पियाबासा, गिलोय, निर्गुण्डीकेपत्ते सबसमभागकेचूर्णके-साथ लेनेसे यह कुष्ठोंको नष्टकरतीहै। इसतरह समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥५००॥

५०१ विजयपर्पटी (द्वितीया)

रसं वज्रं हेमतारं मौक्तिकं ताम्रमभ्रकम्।
सर्वतुल्येन गन्धेन कुर्याद्विजयपर्पटीम् ॥ २४४४ ॥
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम्।
आमशूलमतीसारं चिरोत्थमतिदारुणम् ॥ २४४५ ॥
प्रवाहिकां षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम्।
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहगुल्मजलोदरम्॥२४४६॥
पक्तिशूलमम्लपित्तं वातरक्तं वमिं भ्रमम्।
अष्टादशविधं कुष्ठं प्रमेहान्विषमज्वरान् ॥ २४४७ ॥
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम्।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन्वपुषा निर्मलः सुधीः ॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥ २४४८ ॥

प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुञ्जां,
यस्तां स विन्दति कलां कुसुमायुधस्य।
आयुश्च दीर्घमनघं वपुषः स्थिरत्वं,
हानिं वलीपलितयोरतुलं बलञ्च ॥ २४४९ ॥

जराव्याधिसमाकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः।
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणः सुधाम् ॥ २४५० ॥

भै र , वै क , र चं , र सु ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, सुवर्ण, रजत, मोती, ताम्र और अभ्रक इनकीभस्में समभाग और शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकजलीकर घीचुपुतीहुईकड़ाहीमें गलाकर गोबरपर रक्खे हुए केलेकेपत्रपर डालकर दूसरे केलेकेपत्तेसे ढककर गोबरसे दबादे। ठंढाहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीसे १० रत्तीतककीमात्रा बढ़ाकर अथवा २–३ रत्तीकी नियतमात्रा देनेसे पुरानी दु साध्यग्रहणी, आमशूल, पुराना अतिसार, प्रवाहिका, ६ प्रकारके बवासीर, उपद्रवसहित यक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त, वातरक्त, वमन, भ्रम, १८ कुष्ठ, प्रमेह, विषमज्वर, ४ प्रकारका अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि इनसबको यह नष्टकरतीहै॥ ५०१ ॥

५०२ विजयप्रतापरसः

नीलं तुत्थं वत्सनाभं साऽश्मजं हरितालकम्।
रुदन्त्याश्च रसैः पश्चाद्वटकं मुद्गमात्रकम् ॥ २४५१ ॥
विजयप्रतापनामाऽसौ सर्वरोगविनाशकः।
संहरेद्ग्रहणीरोगं ज्वरमैकाहिकं हरेत् ॥ २४५२ ॥

र हा , सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध नीलाथोथा, बछनाग, गन्धक और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रुदन्तीकेरससे ३–४ दिन मर्दनकर मुगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। खासकर सङ्ग्रहणी और एकाहिकज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५०२ ॥

५०३ विजयभैरवरसः (विजयानन्द) १

सतकञ्चुकनिर्मुक्तमूर्द्धशुद्धं रसेन्द्रकम्।
मृत्कटाहान्तरे तत्तु स्थापयेच्च समग्रकम् ॥ २४५३ ॥
सूताद्द्विगुणितं तालं कूष्माण्डद्रवशोधितम्।
दोलायन्त्रेण तैलादौ सप्तधा परिशोधितम् ॥ २४५४ ॥
दत्त्वाऽऽप्लाव्य द्रवैर्झिण्ट्याः किञ्चिदाप्लाव्य युक्तित.।
तयोर्द्विगुणितं भस्म पलाशस्य परिक्षिपेत् ॥ २४५५ ॥
पुनर्झिण्टीद्रवेणैव सर्वमाप्लाव्य यत्नत.।
खाखसार्करसैर्भूयः परिप्लाव्य च पाकवित् ॥२४५६ ॥
पचेद्वह्नितो वैद्य. शालाऽङ्गारेण यत्नत ।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत्॥२४५७॥
अवतार्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम्।
प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्त. शोधितदेहक· ॥ २४५८ ॥
सिताहरीतकीयुक्तं खादेद्रक्तिचतुष्टयम्।
रक्तिकैकक्रमेणैव वर्द्धयेद्दिनसप्तकम् ॥ २४५९ ॥
मधूदकं पिबेच्चाऽनु नारिकेलजलञ्च वा।
जिङ्गिनीसम्भवं क्वाथमथवा क्षौद्रनागरम् ॥ २४६० ॥
अभ्यङ्गं सुरभीतैलैः कुर्यात्ताम्बूलचर्वणम्।
पवनाऽनलसूर्यांशुमत्स्यमांसदधीनि च ॥ २४६१ ॥
शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमान्नरः।
वातरक्तमामिश्रमामञ्चाऽपि सुदारुणम् ॥ २४६२ ॥
सर्वकुष्ठञ्चाऽम्लपित्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम्।
विजयाख्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसृग्दरान्२४६३

र स , र चि , र सु , र च , कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—सप्तकञ्चुकीरहित शुद्धपारा १ भाग, कोंहलेके रस वगैरहसे दोलायन्त्रमें शुद्धकियाहुआहरिताल २ भाग लेकर मिट्टीकी कड़ाहीमें रख कटसरैयाका रस दोनोंके डूबनेलायक डालकर दोनोंसे दूनी पलाशकीराख डाले, ऊपरसे दूसरा कट सरैयाका थोड़ासा रस डाले और चूल्हेपर चढाकर अग्निदेवे। जब कटसरैयाकारस सूखनेलगे तब ताजेपोस्तकारस और आकका दूध थोड़ा थोड़ा डालताजाय और नीचे सखुएकेकोयलोंकी आचदे। ऐसे २४ पहरकी आचदेनेकेबाद रस डालना बन्दकरे जिसमेंकि तमामरस जलकर सफेद राख होजाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे ऊपरके मैलको जुदाकर नीचेसे पारद और हरितालकीभस्मको निकालकर शीशीमें रखछोड़े। अच्छे तिथि, दिन और मुहूर्तमें प्रायश्चित्त और पञ्चकर्मसे देहको शुद्धकर इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा शक्कर और हर्रेकेसाथ देकर मधुका शरबत अथवा नारियलकाजल अथवा जिङ्गिनीकाक्वाथ अथवा सोंठ और मधु अनुपानरूपसेदे। प्रतिदिन १–१ रत्ती सातदिन तक बढावे। चन्दनकेतैलकी मालिशकरावे। पान खानेकोदे। वायु, अग्नि, धूप, मछली, मास, दही, ककारादिशाक इनको छोड़देवे। इसके सेवनसे आमयुक्त वातरक्त और भयकर आम वात, समस्तकुष्ठ, अम्लपित्त, विस्फोटक, मसूरिका, रक्तप्रदर येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५०३ ॥

५०४ विजयभैरवरसः (अमरसुन्दरी २)

सूतकं गन्धकं लोहं विषं चित्रकमभ्रकम्।
विडङ्गं रेणुका मुस्ता द्राविडीपत्रकेशरम् ॥ २४६४ ॥
फलत्रयं त्रिकटुकं शुल्वभस्म तथैव च।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥२४६५॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे।
सूतायां ग्रहणीमान्द्ये शूले पाण्ड्वामये तथा ॥
हस्तपादशिरोरोगेषु गुटिकेयं प्रशस्यते ॥ २४६६ ॥

र.म , भै र , र चं , र सि , र चि , रस स , वै क , यो म., रसायनस , र का , र र , भै सा , र चो , र (मा.), ध , र स , र सु , र क , व रा , र क यो , यो चि , नि र , चि र भ., र.पा , र क ल. कासाऽधिकारे।

टि०—यो चि , नि र , र सु , चि र म , र क ल , रस म एषु ग्रन्थेषु ताम्रस्थाने ब्यादरक नियोज्य वाताऽधिकारे अमरसुन्दरीति नाम्ना स्थापितोऽय पाठ ध , र स , र सु , र क , व रा , रस सं एषु ग्रन्थेषु विजयवटीति नाम स्थापितम् अत्र अभ्रकस्थाने, ग्रन्थिक नियोजितमिति विशेष र सु , नि र ग्नयो द्वितीयस्थाने सूता·

दिग्दीति नाम मदृण्यधिकारश्च । र स , र. मु , र च , एतेषु द्वितीयस्थाने जयदर्दीति नाम अत्र अभ्रकरसजघुन्ताानां स्थाने वल्लव-ग्रन्थिकनैपालबीजानि क्रमेण नियोजितानीति विशेष । र क यो. चन्द्रप्रभेति नाम । योगमहार्णवे सुनायां मदृण्यमान्द्ये इत्यस्य स्थाने सुनायां ग्रहणीमान्द्ये इति पाठान्तरम् । र. स , नि र , र मु , र पा , र र स , र को , टो , र प , व रा , र च , र च यो , वै चि , र. क. ल , ना त्रि , बा. एषु ग्रन्थेषु नीलकण्ठ इति नाम रत्नाकरौषधयोगे द्वितीयस्थाने त्रिमूर्तिरिति नाम, वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने सन्निपातदिग्दीति नाम रसराजसुन्दरे एतस्यैव रसस्य नामान्तरेण पञ्चसु स्थानेषु पाठ । रसचण्डांशौ स्थानद्वये, रससारसंग्रहे स्थानत्रये, धन्वन्तरौ स्थानद्वये, रसेन्द्रसारसंग्रहे स्थानचतुष्ये, रसेन्द्रकल्पद्रुमे स्थानत्रये, निघण्टुरत्नाकरे स्थानचतुष्ये, वसवराजीये स्थानत्रये, रत्नाकरौषधयोगे स्थानत्रये, चिकित्सारत्नाभरणे स्थानद्वये, रसराजलक्ष्म्यां स्थानचतुष्ये, योगचिन्तामणौ स्थानद्वये पठ । र म., भै र , र मि , र चि , वै क , यो म , रसायनस , र का , र र , भै सा , र मा , र र स , एषु ग्रन्थेष्वेकस्मिन्नेव स्थाने विजयभैरवनाम्ना पाठोऽस्ति, सर्वेभ्योऽपि ग्रन्थेभ्योऽधिको रसराजसुन्दरे ह्ययं नानास्थाने पाठकरण ग्रन्थस्य ग्रन्थकारस्य बुद्धिराहित्यमिति सुधीभिः विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग, लोह और अभ्रकभस्म, चित्रकमूल, विडङ्ग, रेणुका (पहाडीरोण), नागरमोथा, इलायची, पत्रज, नागकेशर, त्रिफला, त्रिकटु, ताम्रभस्म, येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर दूनेगुडकी चाशनी अथवा गुड मिलाकर ४ रत्ती अथवा १ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, सूतिकारोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, शूल, पाण्डु और हस्तपादादिरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ विजयभैरवरसः (तृतीयः)

हत्वीर्यं वत्सनाभं वङ्गं नागं मृताऽभ्रकम् ।
मर्दयेद्दिनमेकञ्च कटुत्रितयजे रसे. ॥ २४६७ ॥
द्वियामं वालुकायन्त्रे पाचितं वज्रमूषया ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शुनीपित्तेन भावयेत् ॥ २४६८ ॥
चणमात्रं पिबेच्चाऽनु नारिकेलोदकेन च ।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु ह्यन्तकः सन्निपातकः ॥
इच्छापथ्यं प्रदातव्यं रसो विजयभैरवः ॥ २४६९ ॥
वै चि , बा , रसायनप , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग, वङ्ग, नाग और अभ्रकभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटुकेरससे एकदिन मर्दनकर वज्रमूषामें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टीदेकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर दो पहरकी मन्द आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कुत्तीके पित्तेकी एक भावना देकर चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली नारियलके जलकेसाथ देनेसे अन्तकसन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमें पथ्य इच्छानुसार देना ॥ ५०५ ॥

५०६ विजयभैरवरसः (चतुर्थः)

रसं ताम्रं तीक्ष्णतारं नागवङ्गौ तथैव च ।
साधितं पूर्वयोगेन समं सर्वं विनिक्षिपेत् ॥ २४७० ॥
सत्त्वाऽभ्रं तालकं सत्त्वं शुनटीतुल्यहिङ्गुलम् ।
द्विभागेनकृता ह्येते सर्वमध्ये विनिं क्षिपेत् ॥ २४७१ ॥
लाङ्गलीमेघनादश्च कुमारी काकमाचिका ।
व्याघ्री तथाद्रिः कमठी धूर्तकोऽप्यपचिञ्चिनी ॥ २४७२ ॥
स्नुह्यग्निसुरदाल्यश्च सप्तधा सर्वमौषधैः ।
पचेत्तद्गोलकं कृत्वा वज्रमूषासु भूधरे ॥ २४७३ ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा मेघनादेन भावयेत् ।
भूधरेण तत. पक्वं तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥ २४७४ ॥
अष्टभागं सुतीक्ष्णञ्च पुनः पक्वञ्च भूधरे ।
मेघनादरसं भाव्यं रसेन्द्रः सिद्धतां व्रजेत् ॥ २४७५ ॥
गुञ्जामात्रं रसं खादेदनुपानेन योजितम् ।
समानममृतासत्त्वं मुशली शतपत्रिका ॥ २४७६ ॥
गजकर्ण्यश्वगन्धा च विदारी व्योषराजतम् ।
गुग्गुलुश्च शिलां शुद्धं पूर्वयोगविनिर्मितम् ॥ २४७७ ॥
सिता समांशा सर्वेण मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ।
इच्छया सर्वभोक्तव्यमामवातनिकृन्तनम् ॥ २४७८ ॥
रसवातं महावातं शोथं मन्दाग्निजं हरेत् ।
प्लीहगुल्मौ तथाऽर्शांश्च पाण्डुं कासं महोदरम् ॥ २४७९ ॥
राजयक्ष्माऽतिसारञ्च ग्रहणीञ्च भगन्दरम् ।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव कुष्ठाऽष्टादशकं तथा ॥ २४८० ॥
वलीपलितनिर्मुक्तः सेवितः सज्वरं हरेत् ।
ज्वरं शूलं तथाऽध्मानं सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
नाशयेन्नाऽत्र सन्देहो रसो विजयभैरवः ॥ २४८१ ॥
रससागर , सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तांबा, लोह, चांदी, सीसा और वङ्गभस्म १–१ भाग, अभ्रक और हरितालसत्त्व, शुद्धमैनसिल, तूतिया और हिंगरिफ २–२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर करिहारी, कटिवाली चौलाई, घीकुंवार, मकोय, भटकटैया, कोयल, कुचिला, धतूरा, भुंईआंवला, सेहुण्ड, चित्रक, बन्दाल इनके रसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर २–४ कपडमिट्टी देकर भूधरयन्त्रकी अग्निदे । ऐसे प्रत्येकके रसोंमें मर्दनकर अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कटिवालीचौलाईमें मर्दनकर भूधरपुटकी आंचदे । फिर इसकी बराबर शुद्धपारा और ८ भाग फौलादभस्म मिलाकर कटिवाली चौलाईकेरससे मर्दनकर भूधरपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर चौलाईकेरससे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली बराबरके गिलोयसत्त्वकेसाथ लेकर मुशली, गुलाबके फूल, हस्तिकर्णपलाश, असगन्ध, विदारीकन्द, त्रिकटु, रजतभस्म, शुद्धगूगल और मैनसिल सब समभाग और शक्कर सबकी बराबर मिलाकर ३–१ मासे मधु और

घीकेसाथ अनुपानमें लेवे, पथ्यमें इच्छाभोजनकरे। इसकेसेवनसे आमवात, रसवात, महावात, शोथ, मन्दाग्नि, प्लीहा, गुल्म, ववासीर, पाण्डु, खासी, महोदर, राजयक्ष्म, अतिसार, ग्रहणी, भगन्दर, २० प्रमेह, १८ कुष्ठ, वलीपलित, ज्वर, शूल, आध्मान, १३ सन्निपात और बुढापा इनसबको यह नष्टकरताहै॥

५०७ विजयरसः (प्रथम)

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागञ्च गन्धकं पलम्।
क्षारत्रयं पलं देयं लवङ्गं पलपञ्चकम्॥ २४८२॥
दशमूलीजयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत्।
चित्रकस्य रसेनाऽथ भृङ्गराजरसेन तु॥ २४८३॥
शिग्रुमूलद्रवैश्चाऽपि ततो भाण्डे निरुद्ध्य च।
याममात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः॥
ताम्बूलीपत्रसंयुक्तं खादेन्माषयुगं सदा॥ २४८४॥
र स, अजीर्णे।

भाषा—शुद्धपारा, नागभस्म, शुद्धगन्धक, तीनोंक्षार, १–१ पल, लौंग, दशमूल और भाग ५–५ पल लेकर सबका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दशमूल, भाग, चित्रक, भगरा, सहिंजनकी जड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर भूधरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरखके रससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथदेनेसे अजीर्णजन्य तमामविकारोंको यह नष्टकरताहै॥ ५०७॥

५०८ विजयरसः (द्वितीय)

स्वल्पाग्निमान्द्यशान्त्यर्थं कथ्यते विजयो रसः।
रसस्यैकं पलं क्षिप्त्वा गृह्णीयाद्गन्धकं पलम्॥२४८५॥
क्षारत्रयं पलं देहि लवणं पञ्चकं पलम्।
जयाचूर्णं दशपलं तद्द्रवेण सुमर्दय॥ २४८६॥
चित्रकस्य द्रवेणाऽथ भृङ्गराजरसेन च।
शिग्रुमूलद्रवं दत्त्वा पच भाण्डे निरुद्ध्य च॥ २४८७॥
याममात्रं ततः सिद्धं भावयार्द्रद्रवैर्मुहुः।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं खादेन्माषयुगं सदा॥ २४८८॥
र सि, र मृ अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, तीनोंक्षार, पाचोंनमक १–१ पल, घोईहुईभाग १० पललेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भाग, चित्रकमूल, भगरा, सहिंजनकीजड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर भूधरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरखकेरसकी ७ भावनाए देकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानमें रखकर खानेसे मन्दाग्नि और तज्जन्यविकार नष्टहोतेहैं॥ ५०८॥

५०९ विजयवटी (प्रथमा)

पलत्रयं हरीतक्याश्चित्रकस्य पलत्रयम्।
एलात्वक्पत्रमुस्तानां भागोऽर्धपलिको मतः॥२४८९॥
रेणुकाऽर्द्धपलः प्रोक्तस्तदर्द्धं नागकेशरम्।
व्योषञ्च पिप्पलीमूलं विषञ्च पलमानकम्॥ २४९०॥
लोहचूर्णपलञ्चैकं त्वक्क्षीर्याश्च पलं स्मृतम्।
रसं पलं पलं गन्धं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्॥ २४९१॥
पुरातने गुडे पक्वे तुलाऽर्द्धे तद्विनिक्षिपेत्।
हिमस्पर्शे च मृद्वीयाद्घृतेनाक्तां ततो बुधः॥ २४९२॥
प्रकुर्याद्गुटिकां वैद्यो विजयां बदरास्थिवत्।
शुभेऽहनि प्रयुञ्जीत वटीमेकां यथाबलम्॥ २४९३॥
घृतेन भोजयेत्तावद्यावदस्य बलं भवेत्।
तद्बलोपचयं ज्ञात्वा पुनर्द्वे द्वे प्रयोजयेत्॥ २४९४॥
अथवा गुटिका खाऽद्यौं यथा न परिपीडयेत्।
मासद्वयेन श्लेष्माणं पित्तञ्चैव निर्हरेत्॥ २४९५॥
चतुर्भिर्वायुदोषांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः।
मासैस्तु सप्तभि र्द्वन्द्वजातान्रोगान् व्यपोहति २४९६
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो वर्षेणैकेन जायते।
वर्षद्वयप्रयोगेण वलीपलितवर्जितः॥
जीवेद्वर्षशतं चैव नाऽत्र कार्या विचारणा॥ २४९७॥
वै र, भै सा, र र स, र सि, र च, र क ल, यो चि, र (मा), पाण्डुरोगे।

टि०—"लोहचूर्णपलञ्चैकं त्वक्क्षीर्याश्च पलं स्मृतम्" इत्यर्द्धं पद्य बहुषु स्थानेषु न दृश्यते। र क ल चित्रकस्थाने वन्हीः गृहीता नाम च कामेश्वर इति। भैषज्यसारामृतसंहितायां कणामूलस्थाने पौष्कर नियोजितम्, गन्धक निष्कास्य पारद कर्षमितो गृहीत, नाम च विजयादिगुड इति स्थापितम्।

भाषा—हरेंकीछाल और चित्रक ३–३ पल, इलायची, तज, पत्रज, नागरमोथा, रेणुका २–२ कर्ष, नागकेशर १ कर्ष, त्रिकुटा, पिपलामूल, शुद्धवछनाग, लोहभस्म, वंसलोचन शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ५० पल गुडकी चाशनीकर सबचीजें मिलावे। ठंढाहोनेपर थोड़ा घी डालकर मसले और बेरकी गुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। शुभनक्षत्रमुहूर्तमें जबतक जठराग्नि प्रदीप्त न हो तबतक घीकेसाथ १–१ गोलीदे। बल बढनेपर डेढ १॥ अथवा २–२ गोलियांदे। इसबातकाध्यान रक्खे कि रोगीको पीड़ित न करें। इसकेसेवनसे २ महीनेमें श्लेष्म, ३ महीनेमें पित्त, ४ में वायु, ७ में द्वन्द्वज और एक वर्षमें समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोताहै। दोवर्षके प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोकर १०० वर्षतकजीताहै॥ ५०९॥

५१० विजयवटी (द्वितीया)

रेणुका पिप्पलीमूलं वाकुची विषतिन्दुकम्।
अश्वगन्धा पलाशास्थि व्योषादिनवकं वचा २४९८

विशाला गन्धकं कुष्ठसप्तकं रसभस्म च ।
गुडेन गुटिकां कुर्यात्समेन मधुमिश्रिताम् ॥२४९९॥
तां भक्षयेत्सितासर्पिः क्षीरशाल्यन्नभाग्भवेत् ।
जलौदनं वा भुञ्जानो ब्रह्मचर्यपरायणः ॥ २५०० ॥
खादेत्तापे सिताधान्यसर्पिर्नागबलारजः ।
वटिका विजयाख्येयं सप्त कुष्ठान्नियच्छति ॥२५०१॥

र.र.स , र.र को , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—रेणुका, पिपलामूल, बाकुची, शुद्धकुचिला, असगन्ध, पलाशकेबीज, त्रिकुट, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक, बच, इन्द्रायणकीजड़, शुद्धगन्धक, कूठ, नीलाञ्जन, मैनसिल, हरिताल, फिटकड़ी, कसीस और सोनागेरू, पारद भस्म सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बराबरकेगुड़ और मधुकेसाथ १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ खानेसे सप्तमहाकुष्ठोंसे निवृत्तहोताहै । शक्कर, घी, दूध, चावल अथवा जलौदन खावे और ब्रह्मचर्यसे रहे । दाहमालूमहोनेपर शक्कर, धनिया, घी और नागबलाका चूर्णदेवे ॥ ५१० ॥

५११ विजयवटी (तृतीया)

सूतकाहौ विषं गन्धं त्रिव्येकांशोऽब्दकेशरम् ।
रेणुकं ग्रन्थिकं वेल्लं सर्वेषां द्विगुणं गुडम् ॥ २५०२ ॥
कोलप्रमाणां वटिकां खादयेत्प्रातरेव हि ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ २५०३ ॥
शोफे पाण्ड्वामये कुष्ठे ग्रहण्यर्शोभगन्दरे ।
विजया गुटिका ह्येषा रुद्रप्रोक्ताऽधिका गुणै.॥२५०४॥

र.का , भगन्दराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, बछनाग और गन्धक ३–३ भाग, नागरमोथा, नागकेशर, रेणुका, पिपलामूल, विडङ्ग १–१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दूनागुड़ डालकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, शोथ, पाण्डु, कुष्ठ, ग्रहणी, बवासीर, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ५११ ॥

५१२ विजयसिन्दूररसः

रसं गन्धं नागतालं सप्तधाधूर्तभावितम् ।
शुष्कं कूप्यान्तु वह्निः स्याच्चतुर्विंशतियामकम् ॥२५०५॥
शीतं गृहीत्वा त्रिकटुकर्चूरैरहिफेनतः ।
भृङ्गाररसेन गुटिका गुञ्जा सर्वाऽतिसारजित् ॥
रसो विजयसिन्दूरो ग्रहणीं हन्ति दुर्धराम् ॥ २५०६ ॥

र का , अतिसारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, नाग और हरिताल समभाग लेकर नागको गलाकर पारद मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर कालेधतूरकेरसमे ७ भावनाए देकर सुखनेपर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुहबन्दकर २४ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकुट, कचूर और अफीम समभागमें मिलाकर भागकेरससे १–२ रोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह दुस्तरसङ्ग्रहणीको नष्टकरताहै ॥५१२॥

५१३ विजयादिगुडः

गुडश्चतुर्दशपलः पुराणः पलिका शिवा ।
चित्रकः पलिको व्योषं ग्रन्थिकं नागकेशरम्॥२५०७॥
लोहताम्राऽब्जवीजानि पृथगर्द्धपलानि च ।
त्वग्गन्धविषपत्रालीसतुम्बुरूणि च काहलम् ॥२५०८ ॥
पारदः पुष्करो भार्ङ्गी पृथक्कर्षमितानि च ।
एकीकृता गुडः स स्याद्द्वितीयो विजयादिकः॥२५०९
ऋते पित्तं सर्वरोगान्विनिहन्ति न संशयः ।
निर्वातस्थायिनां क्षीरयुक्तभक्तभुजां नृणाम् ॥
उपदंशानयं हन्ति तार्क्ष्यः सर्पगणानिव ॥ २५१० ॥

भै सा , र. (मा),

भाषा—हर्रे और चित्रक १–१ पल, सौंठ, मिर्च, पीपल, पिपलामूल, नागकेशर, लोह और ताम्रभस्म, कमलगट्टा २–२ कर्ष, तज, शुद्ध गन्धक और बछनाग, तालीसपत्र, तुम्बुल, (चिरफड म०,) हीराकसीस, पारदभस्म अथवा शुद्धपारा, पोहकरमूल, भारङ्गी १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १४ पल गुड़की चाशनी बनाय सबचीजें मिलाय उतारकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ लेकर केवल दूधभातखानेमे और निर्वातस्थानमेंरहनेसे पित्तको छोड़कर उपदंशप्रभृतिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै५१३

५१४ विजयानलमण्डूरम्

विजयानलसिन्धूत्थमनोह्वातुल्यमाक्षिकैः ।
पृथक्कर्षं द्विकर्षांशै ग्रन्थिगन्धकटङ्कणैः ॥ २५११ ॥
वरीपद्मरसैः कान्तात्रिफलैः पुटपाचितम् ।
एभिस्तुल्यं क्रमाद्धर्द्धं शुण्ठीमागधिकोषणम् ॥२५१२॥
गोमूत्राऽग्निशिशाश्वेष्टवर्षाभ्वार्द्रकभृङ्गजैः ।
पृथक्त्रिपुटितं सम्यक् स्वरसैः सूक्ष्मचूर्णितम्॥२५१३॥
मण्डूरमञ्जननिभं तुल्यमेतैः सुचूर्णितैः ।
सर्वमेकत्र संयोज्य प्रभाते युग्ममाषकम् ॥ २५१४ ॥
क्षौद्रेण च घृतेनाऽपि लेह्यं स्यादार्द्रकाम्बुना ।
वातपित्तकफोद्रेकं तज्जान्द्वन्द्वोद्भवान्गदान्॥ २५१५ ॥
सन्निपातोद्भवानग्निमान्द्यजांस्त्वग्गतानपि ।
क्षयक्षयकृतान्व्याधीञ्छूलगुल्ममहोदरान् ॥ २५१६ ॥
पाण्डुशोफप्रमेहांश्च वृत्तीश्च प्रतितूनिकाम् ।
ग्रहण्यर्शोऽतिसारांश्च कुष्ठाऽष्ठीलाऽपचीव्रणान् २५१७
श्वासकासप्रतिश्यायजीर्णज्वरमरोचकान् ।
विजयानलमण्डूरो जयत्येप रसायनः ॥ २५१८ ॥

र क यो , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—भांग, चित्रक, सेंधानमक, शुद्धमैनसिल, तुत्थ और सोनामाखी १–१ कर्ष, पिपलामूल, गन्धक और सुहागा २–२ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर शतावर, कमलकेफूल, प्रियङ्गु, त्रिफला इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव-सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचेदे । फिर सोंठ, पीपल और मरिच क्रमवृद्ध भागसे लेकर रसकी बरावर मिलाय गोमूत्र, चित्रक, हल्दी, गजपीपल, इटसिट, अदरख, भंगरा इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर लघुपुटकी ३–३ आंचदे । स्वाङ्ग-शीतल होनेपर सबकीबराबर अलन्तबारीक मण्डूरभस्ममिलाकर रखछोड़े । प्रातःकाल इसमेंसे २–२ माशे मधु और घीकेसाथ अथवा अदरखके रसकेसाथ देनेसे केवल वात, पित्त और कफजन्यरोग, द्वन्द्वज और सन्निपातजरोगोंको यह नष्टकरताहै । एतसरस मन्दाग्नि, चर्मरोग, राजयक्ष्म, धातुक्षय, शूल, गुल्म, महोदर, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, तूनी, प्रतितूनी, ग्रहणी, अर्श, अतिसार, कुष्ठ, अष्ठीला, अपची, व्रण, श्वास, कास, प्रतिश्याय, जीर्णज्वर और अरुचि इनसबकोदूरकर बुढ़ापेको दूरकरताहै ५१४

५१५ विडङ्गलोहम् (प्रथमम्)

रसं गन्धश्च मरिचं जातीफललवङ्गकम् ।
शुण्ठी टङ्कं कणा तालं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥ २५१९ ॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम् ।
लौहं वैडङ्गकं नाम कोष्ठस्थक्रिमिनाशनम् ॥ २५२० ॥
दुर्नामाऽरुचिसङ्घातं मन्दाग्निञ्च विसूचिकाम् ।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत् ॥२५२१॥

र.स., र.सु , र.चं , ध., क्रिमिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच, जायफल, लवङ्ग, सोंठ, भुनासुहागा, पीपल, हरितालभस्म १–१ भाग, लोहभस्म ९ भाग, विडङ्गकाचूर्ण १८ भाग लेकर सबके बारीकचूर्णको पारेगन्धककी कज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ माशेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कोष्ठक्रिमि, बवासीर, अरुचि, मन्दाग्नि, हैज़ा, शोथ, शूल, ज्वर, हिचकी, श्वास, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५१५॥

५१६ विडङ्गलोहम् (द्वितीयम्)

विडङ्गमुस्तत्रिफलादेवदारुषडूषणैः ।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५२२ ॥
गुटिकां माषमात्राञ्च कृत्वा खादेद्दिनेदिने ।
कामलापाण्डुरोगार्तस्सुखमाप्नुयते चिरात् ॥२५२३॥

र.स , लो प , र सु , र र , ध , र क , र च , च द , यो म , र.का , टो , पाण्डुकामलयो ।

टि०—र का मण्डूरवटकेतिनाम, तत्र लोहमम मण्डूर निक्षिप्तमिति विशेष । चरकीयनवायसचूर्णाद् दवदारुपिप्पलीमूलचव्यानि त्रीणि द्रव्याण्यधिकानि सन्ति गोमूत्रपाकश्चेति विशेष ।

भाषा—विडङ्ग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु, षडूषण (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मरिच) सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गाढ़ाहोनेपर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे पाण्डु और कामला नष्टहोतेहैं ॥ ५१६ ॥

५१७ विडङ्गलोहम् (तृतीयम्)

विडङ्गं त्रिफला व्योषं भस्म लोहन्तु तत्समम् ।
पुरातनगुडेनाऽथ लेहयेद्दिनसप्तकम् ॥
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥२५२४॥

र सं , र.मु., ध., र.चं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, त्रिकुटु समभाग, इनसबकीबराबर लोहभस्मलेकर सबकाबारीकचूर्णकर रखछोड़े । पुरानेगुड़केसाथ १–१ माशेकीमात्रा लेनेसे शोथ, पाण्डु और हलीमक येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५१७ ॥

५१८ विडङ्गादिलोहम् (चतुर्थम्)

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।
जीरकाभ्यां युतो हन्ति प्रमेहानतिदारुणान् ॥
लेहो मूत्रविकारांश्च सर्वानेव विनाशयेत् ॥ २५२५ ॥

र.स., र.सु., र र., भै. र., र. चं , च. द , र. चि., र क. प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ, दोनोंजीरे, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा प्रमेहहरानुपानकेसाथदेनेसे भयङ्कर समस्त प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ विडङ्गादिलोहम् (पञ्चमम्)

विडङ्गं नागरं क्षारः काललोहरजो मधु ।
यवाऽऽमलकचूर्णञ्च प्रयोगः स्थौल्यनाशनः ॥२५२६॥

च.स., अ सं., अ.हृ., टो.यो.म., र का., र.कौ., र.र., र. र.स , ला.वि., च.द , मेदोऽधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, यवक्षार, लोहभस्म, इन्द्रजव और आवले समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अतिस्थूलताको दूरकर मन्दाग्निप्रभृतिरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५१९ ॥

५२० विडङ्गादिलोहम् (षष्ठम्)

विडङ्गत्रिफलाकृष्णालोहचूर्णाऽऽज्यशर्कराः ।
सक्षौद्राः शीलिता घ्नन्ति वार्धक्यं पलितैः सह२५२७

ग.नि , रसायने ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, पीपल, लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा घी, शक्कर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह वलीपलितादिकको दूरकर बुढ़ापेको नष्टकरताहै ॥ ५२० ॥

५२१ विदारणनृसिंहरसः

एकेन्दुवेदाऽष्टविक्षितीशाः
सारं नवं भानुरसाः सुरेशाः ।

मनःशिलाखर्परसंयुतास्ते
जम्भाऽम्भसाऽऽपेष्य तु कूपिकायाम् २५२८
विन्यस्य नालं परिरभ्य चैल-
मृत्स्नाऽऽवृतां तां लवणाऽऽस्ययन्त्रे।
भाण्डे पचेद्यामचतुष्टयं तं
सङ्गृह्य सूतं चणकप्रमाणम् ॥ २५२९ ॥
गौल्येन केनाऽपि धटी प्रदत्ता
निहन्ति सर्वान्विपमज्वरान्सा।
त्रिःसप्तकं गौल्यमतीव पथ्यं
तैलाऽम्लमुख्यं परिवर्जनीयम् ॥ २५३० ॥
अयं रसोऽपस्मृतिमाशु हन्या
न्नस्यं विदध्याद्घृकपालतैलात्।
पित्ते च वान्तिर्भवतीह किञ्चि-
च्छठात्प्रदद्याद्विषमज्वरार्तौ ॥ २५३१ ॥

र.श ,टी.,र बो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—फौलाद और ताम्रभस्म १–१ भाग, पारदभस्म ४ भा , सुवर्णभस्म ८ भा , शुद्धमैनसिल १२ भा., खपरिया १६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १–२ रोज मर्दन कर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुंहबन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर चारपहर अग्निदेकर चनेबराबरमात्रा हल्वा वगैरहकेभीतररख निगलवाकर २१ मास ऊपरसे हल्वा खिलानेसे समस्तविषमज्वर और अपस्मारको यह नष्टकरताहै मनुष्यके कपालकेतैलका नस्यदेना। पित्तप्रकृतियोंको इससे किसीकिसी-को वमन होतीहै। विषमज्वर और अपस्मारमें इसका खासप्रयोगकरना, तैल और खटाईसे परहेजकराना ॥ ५२१ ॥

५२२ विदारणभैरवरसः

हरवीर्यं ताम्रवङ्गमर्कक्षीरेण मर्दितम्।
दोलायन्त्रे पचेद्याममेणपित्तेन भावितम् ॥ २५३२ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं त्रिकटोरनुपानतः।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु भुग्ननेत्रं सुदारुणम् ॥
रसो विदारणख्यातो भैरव. प्राणरक्षकः ॥ २५३३ ॥

भै चि ,धा., भुग्ननेत्रसन्निपाते।

भाषा—पारद, ताम्र और बङ्गभस्म समभागलेकर आकके-दूधसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय आकके दूधमें एकपहर स्वेदन-कर हरिणकेपित्तसे एकभावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकुटके अनुपानसेदेनेसे यह भयङ्कर भुग्ननेत्रसन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ५२२ ॥

५२३ विद्याधरमण्डूरम्

त्रिफलाव्योपजन्तुघ्नं दन्त्यग्निग्रन्थिकाऽमृताः।
कुष्ठं तेजोवती मुस्ता त्रिवृद्भल्लातसूरणौ ॥ २५३४ ॥
शताह्वा नैचुलं बीजं भार्ङ्गी च गजपिप्पली।
शृङ्गी द्विजीरकं धान्यं वृद्धदारुकपत्रके ॥ २५३५ ॥
तुम्बुरूणि भद्रदारु क्षाराश्च लवणानि च।
अजमोदा तालमूली विशाखा भूतिकं वचा ॥२५३६॥
कोषातकी फलं चैतद्रूहत्पत्रकगन्धकौ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं तथा ॥ २५३७॥
गोमूत्रे त्रिफलाक्काथे निषिक्तं श्लक्ष्णचूर्णितम्।
कन्दोत्कटशृङ्गवेरश्रावणीकेशराजकैः ॥ २५३८ ॥
रसैः सवज्रवल्लीजैर्वन्ध्याताालोत्थसस्यजैः।
भावयित्वैव तच्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५३९ ॥
चतुर्गुणेन त्रिफलाक्काथे दर्वीविलेपनात्।
उपयुञ्जीत मतिमान् खादेद्यैव यथाबलम् ॥ २५४० ॥
ये च कुक्षिगता रोगा ग्रहणीमार्दवादयः।
एतद्विद्याधरं नाम मण्डूरं सर्वरोगजित् ॥ २५४१ ॥

र.का , अम्लपित्ताऽधिकारे।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, दन्तीमूल, चित्रक, पिप्पलामूल, गिलोय, कुठ, तेजबलकीछाल, नागरमोथा, निसोत, भिलावा, सूरण, सोंफ, वेतकेबीज, भारङ्गी, गजपीपल, काक-ड़ासींगी, दोनोंजीरे, धनिया, विधारा, पत्रज, तुम्बुल, देवदारु, तीनोंक्षार, पांचोंनमक, अजमोद, तालमूली, पुनर्नवा, खरज-वाइन, वच, कड़वीतरोईकेफल, एरण्डकीजड़, शुद्धगन्धक, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर गोमूत्र और त्रिफलाकेक्वाथमें बुझा-कर भस्मकियाहुआ मण्डूर सबसे द्विगुणमिलाकर जङ्गलीसूरण, अदरख, गोरखमुण्डी, कालाभंगरा, हड़जोड़, बङ्गखेखसा, ताड़फल इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ भावनादेकर अठगुना गोमूत्र और चौगुना त्रिफलाकाक्वाथ डालकर पकावे। जब कड़ाहीमें एकदम लगनेलगे तब उतारकर ठण्ढाकरके १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचि-तानुपानकेसाथ देनेसे ग्रहणी और तमाम उदररोग नष्टहोतेहैं ॥

५२४ विद्याधरलोहम्

स्वच्छं पत्रीकृतं लोहं पलं लिप्तञ्च निर्वपेत्।
लवणे माक्षिकोपेतैस्त्रिफलाक्वाथिकोदके ॥ २५४२ ॥
सुपिष्टं लोहमादाय पूते सञ्चूर्ण्य यत्नतः।
पुटैर्यथाव्याधिहरैर्द्रव्यैः सम्पादितैः पचेत् ॥ २५४३ ॥
पिण्डेन शर्कराक्काथः फलस्त्र्या त्र्युपक्वतः।
करिकर्णपलाशस्य स्वरसैरप्यरुष्करैः ॥ २५४४ ॥
चतुर्गुणे फलरसे लोहार्धं घृतयोजितम्।
पाचयेत्रिगुणस्तावद्यावत्सर्पि विमुञ्चति ॥ २५४५ ॥
षोडशांशं क्षिपेत्तत्र ततः संशोधितं रसम्।
राजिकापिण्डमध्ये तु व्योमपिण्डस्य मध्यगम् २५४६
गतां मले तुषाग्नौ च वस्त्रावृतञ्च काञ्जिकैः।
सिद्धं सप्ताहमेवन्तु ततः सञ्चूर्णयेत्पुनः ॥ २५४७ ॥
चिञ्चाकषायपेयाम्बुशोधनेनार्पितेन तु।
द्विगुणेन गन्धकादिना सुरसस्वरसेन वा पुनः ॥ २५४८॥
पादं विडङ्गमुस्ताग्नि त्रिफलाव्योपजं रजः।
लोहादेर्शाङ्गं शिलाजतुनं निगारयेन ॥ २५४९ ॥

ततो मात्रां प्रयुञ्जीत यथादोषं यथावयः।
आहारपरिहारौ च लोहान्तरसमानकम् ॥ २५५० ॥
कुलत्थञ्च कपोतञ्च करमर्दककाञ्जिके।
करीरं कारवेल्लञ्च षद् ककाराणि वर्जयेत् ॥ २५५१ ॥
विद्याद्विद्याधरमतं लोहं सर्वगदापहम्।
न सोऽस्ति रोगः कुक्षिस्थो यमिदं न निहन्ति च ॥
जलापकारानर्शांसि सर्वोपद्रववन्ति च।
अम्लकं ग्रहणीमेहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥ २५५२ ॥

र. र., अर्शोरोगे।

भाषा—शुद्धकरके बारीकपत्रेकियेहुए एकपल लोहको लवण और मधुकालेपदेकर गरमकरकरके त्रिफलाके १–१ कर्षपानीमें बुझावे जब इसका एकदमचूर्णहोजाय तब लेकर कपड़छानचूर्णकर अर्शोरोगहरदवाओंकेसाथ मर्दनकर पुटदे। एकदम भस्महोनेके-बाद मैनफल, दाक्र, नाडीशाक, शतावर, हस्तिकर्णपलाश, लवण, भिलावां इनप्रत्येकका लोहसे चौगुनाद्रव और आधा घी डालकर मन्दआंचसे पकावे। पानीजलजानेपर १६ वां हिस्सा पारदभस्म मिलाकर घोटकर गोलाबनावे फिर राईकेकल्कके-बीचमेंरक्खे और त्रिकटुकाकल्क ऊपरलपेट ३–४ तह मलमलके कपड़ेमेंबांधकर दोलायन्त्र बनाय काञ्जीमें लटकावे और नीचे गोबर तथा तुषकी आंचदे। इसतरह ७ दिनतक पकावे। काञ्जी-सूखनेपर दूसरी डालताजाय। सातदिनकेबाद स्वाङ्गशीतल-होनेपर धीरजसे गोलेको निकालकर इमली, गजपीपल और गायकेदूधमें गरमकरके कईबारशुद्धकियाहुआगन्धक और मैन-सिलकाचूर्ण द्विगुण तथा विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक, त्रिफला और त्रिकटुसमभागकाचूर्ण चतुर्थांशमिलाकर १–२ दिन घोटकर स्निग्धभाण्डमें रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा रोग और रोगीका बलाबल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे जलदोष, समस्त उपद्रवयुक्तबवासीर, अम्लपित्त, ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, उदररोग प्रभृतिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। पेटका ऐसाकोईभी रोग नहीं जिसे यह न मिटासके। *इसमें आहार और परिहार अन्य-*लोहोंकीतरह समझना। खासकर कुलथी, कबूतर, करौंदा, काञ्जी, करीर, करेला इनका परित्यागकरे ॥ ५२४ ॥

५२५ विद्याधराऽभ्रम् (प्रथमम्)

विडङ्गमुस्तात्रिफलागुडूच्यो
दन्तीत्रिवृद्वह्निकटुत्रिकञ्च।
प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं
पलानि चत्वार्ययसो मलस्य ॥ २५५४ ॥
गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य
यद्वाऽयसस्तानि चटाकिकायाः।
कृष्णाऽभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं
निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सतात् ॥ २५५५ ॥
पादोनकर्षं स्वरसेन खल्वे
शिलातले मन्युकणादलस्य।
सम्मर्द्य पश्चाद्‌तिशुद्धगन्ध-
पाषाणचूर्णेन पिचूम्मितेन ॥ २५५६ ॥
युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्वा
सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात्।
निधापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे
ततः प्रयोज्योऽस्य रसायनस्य ॥२५५७॥
माषाद्यापको वाऽप्यथवा द्वितीयो
गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा।
पिबेदयं योगवरः प्रभूत-
कालप्रणष्टाऽनलदीपकश्च ॥ २५५८ ॥
रोगं निहन्यात्परिणामशूलं
शूलं तथाऽन्नद्रवसञ्ज्ञकञ्च।
यक्ष्माऽम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां
जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम् ॥
न सन्ति ये यान्न निहन्ति रोगा-
न्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥२५५९॥

र. सं., र. चि., रसायनसं., ध., भै. र., नि. र, र. सि., र. र., र. क., र. सु., र. का., शूलाऽधिकारे।

भाषा—*विडङ्ग, नागरमोथा, त्रिफला, गिलोय, दन्तीमूल,* निसोत, चित्रक और त्रिकटु १–१ कर्ष, १०० वर्षसे पुराना और गोमूत्रमें शुद्धकियाहुआ मण्डूर अथवा गरमकरके घनमारते समय चटककर उड़ेहुए लोहके बारीककण ४ पल, कृष्णाऽभ्रक-की निश्चन्द्रभस्म १ पल, अत्यन्तशुद्धपारा १२ मासे, शुद्ध-गन्धक १ कर्ष लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ पहर शुष्कमर्दनकर धतूरे और पीपलकेपत्तोंके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर इसकी बराबरका घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकने बर्तनमें रखछोड़े। ७ या १४ दिन बीतनेपर इसमेंसे १ अथवा २ माशा रोग और रोगीका बला-बल देखकर गायकेदूध अथवा ठंडेजलकेसाथ देवे। इसकेसेवनसे चिरकालसे नष्ट अग्नि, परिणामशूल, साधारणशूल, अन्नद्रवशूल, राजयक्ष्म, अम्लपित्त, बढ़ीहुई ग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, इत्यादिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५२५ ॥

५२६ विद्याधराऽभ्रम् (बृहत्) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं फलत्रयकटुत्रयम्।
विडङ्गं मुस्तकं दन्ती त्रिवृता चित्रकं तथा ॥२५६०॥
आखुपर्णी ग्रन्थिकञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
पलं कृष्णाऽभ्रचूर्णस्य मृताऽयश्च चतुर्गुणम् ॥२५६१॥
घृतेन मधुना पिष्ट्वा वटिकां कोलसम्मिताम्।
एकैकां वटिकां खादेत्प्रातरुत्थाय नित्यशः ॥ २५६२ ॥
अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम्।
सर्वशूलं निहन्त्याशु वातपित्तभवं तथा ॥ २५६३ ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम्।
परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ २५६४ ॥

कार्श्यं वैवर्ण्यमालस्यं तन्द्राऽरुचिविनाशनम् ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
र.सं.,र.चं.,ध.,र सु., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोथा, दन्तीमूल, निशोत, चित्रकमूल, मूषाकर्णी, पिपलामूल, येसब १–१ कर्ष, कृष्णाभ्रकभस्म १ पल, लोहभस्म ४ पल लेकर सबको बारीकचूर्णकर मधु और घृतकेसाथ मिलाकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल गायकेदूध अथवा नारियलकेजलकेसाथलेनेसे समस्त-शूल, परिणामशूल, आमवातोद्भवशूल, कृशता, वैवर्ण्य, आलस्य, तन्द्रा, अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५२६ ॥

५२७ विद्याधरीगुटिका

गन्धम्लेच्छरसाऽमृताऽर्ककटुका व्योषं त्रिवृद्दन्तिका,
हेमाह्वा त्रिफला च टङ्कणमतः सर्वैः समैस्तिन्तिडी ।
सम्यक् पक्वफलैस्त्वगस्थिरहितैस्सम्मर्द्य मापोन्मिता,
पीता केन नवज्वरेषु गुटिका विद्याधरी शस्यते २५६६
र.प ,ज्वराऽधिकार ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, शिंगरिफ, पारा और बछनाग, ताम्रभस्म, कुटकी, त्रिकटु, निसोत, दन्तीमूल, सत्यानाशीकीजड अथवा रेवनचीनी, त्रिफला, भुनासुहागा येसब १–१ भाग, सबकीबराबर पकीइमलीका गूदा लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धक की नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय इमलीकेसाथ अच्छीतरह घोटकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली जलकसाथ देनेसे यह नवज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५२७ ॥

५२८ विद्याधररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं तालकञ्च शिलाजतु ।
खर्परीताम्रचूर्णानि प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ॥ २५६७ ॥
तुलसीद्रवकै यामं यामं निर्गुण्डिकाद्रवैः ।
पिष्ट्वा तत्पिण्डमादाय चणमात्रवटीकृतम् ॥ २५६८॥
एकैकं भक्षयेद्धाऽनु मागधीसितया सह ।
नूतने विषमे चैव ज्वराऽऽघाते प्रयोजयेत् ॥ २५६९ ॥
वमनान्ते विरेके च पथ्यं क्षीरौदनं तथा ।
विद्याधररसो नाम सद्योज्वरनिवारणः ॥ २५७० ॥
र.क यो ,ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत, खपरिया और ताम्रभस्म १–१ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–१ पहर तुलसी और निर्गुण्डीके-रसोंसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और शक्करकेसाथदेनेसे नवीन, विषम प्रभृति समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै । वमन और विरेचन होनेके-बाद दूधभात खानेकोदेना ॥ ५२८ ॥

५२९ विद्याधररसः (द्वितीयः)

शिलातालताप्यानि गन्धोऽथ शुल्वं
मृतं शुद्धसूतञ्च तुल्यांशमेतत् ।
कणावारिणा वज्रिनीरेण मर्द्यं
दिनैकं रसो याति विद्याधराऽऽख्याम् २५७१
तमर्द्धनिष्कमात्रकं विलिह्य सारघेण तु ।
पिबेच्च गोजलं नरः सुतीव्रगुल्मशूलवान् ॥ २५७२ ॥
वै र,वृ यो.त,शा सं,र.क ल.,वै.क.,र.चि.,र.म, र.र,र.च, नि.र.,र.प्र,ध,वै.चि.,रसायनसं,र.कौ,र.चि,भै र,चि र.म,भै सा,व रा,र.क,टो.,र म.मा,र.र.दी,र.को.,र.शं.,र.सु,र.सं,र र.स,र का.,यो.म.,र.र.कौ,ना वि ,गुल्माऽधिकारे ।

टि०—"रक्तगुल्मं दळोरोरे स्त्रीभि पैयीऽनुपानक । निलकार्था दिनो भार्गी दार्व्योयोगऽडे युत ॥" इत्यधिक पाठो भैषज्यसारामृतसंहितायां दृश्यते । कुत्रचित्ताम्रस्थाने स्वर्णं नियोजितम् ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और पारा, ताम्रभस्म सबसमभागलेकर पीपलकेक्वाथ और सेहुण्डकेदूधसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथलेकर गोमूत्र-पीनेसे तीव्रगुल्म और शूल नष्टहोतेहै । यदि एकगोलीसे काम न हो तो दो गोलीदेना ॥ ५२९ ॥

५३० विद्याधररसः (तृतीयः)

रसोगन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीटङ्कणवराः,
त्रिवृद्दन्ती हेम द्युमणिविषमेतत्समामिदम् ।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः,
ततः स्नुक्क्षीरेण प्रचुरमृदितं दन्तिसलिलैः ॥२५७३॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं,
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगुदकीलोद्भवरुजः ।
मरुच्छूलाऽजीर्णं प्रबलमथ सामं क्रिमिगदं,
विबद्धर्द्गाहानं प्रबलमपि विद्याधररसः ॥ २५७४ ॥
र स,र.क ल,र.र दी.,भै र.,वृ यो त.,र सु,प,र.को,र धे,रसायनस,र म.मा,र का,चि र,र.र स, ज्वराऽधिकारे । र.शा.,र क.ल,रसायनस,र म मा,र.का.,यो.त,चि.र,र.र स,र.को. वृ यो त,र सु एतयो-र्द्वितीयस्थाने विनोदविद्याधरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, त्रिकटु, कुटकी, भुनासुहागा, त्रिफला, निसोत, दन्तीमूल, धतूरेकेबीज, आककीजड, शुद्ध बछनाग येसब समभाग, इनसबकीबराबर शुद्ध-जमालगोटा लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय थूहरकेदूध और दन्तीमूलकेक्वाथमें १–१ दिन मर्दन कर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगीकीताकतदेखकर देनेसे साम प्रौढज्वर, पाण्डु, गुल्म, ग्रहणी, बवासीर, वायु, शूल, अजीर्ण, आम सहित क्रिमिरोग, बद्धगुद इन सबको यह नष्टकरताहै ५३०

५३१ विद्याबल्लभरसः

रसो म्लेच्छशिलातालताम्रद्रव्यस्त्र्यंशभागिका ।
पिष्ट्वा तान्सुपर्णीतोयैस्ताम्रपात्रोदरे क्षिपेत् ॥२५७४

न्युब्जशरावे संरुद्ध्य वालुकामध्यगं पचेत्।
स्फुटन्त्यो व्रीहयो यावत्तच्छिरस्थाः शनैःशनैः २५७६
सञ्चूर्ण्य शर्करायुक्तं द्विवल्लं सम्प्रयोजयेत्।
नाशयेद्विषमाख्यञ्च तैलाम्लादि विवर्जयेत्॥ २५७७॥

र. चि., र. सु., भै. र, रसायनसं., र. सं, र. का., यो. म., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., शिंगरिफ २ भा, मैनसिल ३ भा., हरिताल १२ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे एकदिन मर्दनकर इसकी बराबरवज़नके ताम्रपात्रमेंलेपकर कुल्हड़ीमें उल्टारख शरावसम्पुटसे बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर ४–४ अङ्गुल चारोंतरफ वालुकादेकर चूल्हेपर अग्निदेवे। ऊपरसे परीक्षार्थ थोड़े धान डालदे जब धान फूटनेलगें तब आंच बन्दकरके कोयलोंपर रहनेदे। स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर ताम्रसम्पुटकेसाथ बारीकपीसकर रखले। इसमेंसे ६–६ रत्ती शक्करकेसाथ देनेसे यह तमामविषमज्वरोंको नष्टकरताहै। इसमें तैल, खटाई वगैरह अपथ्यहैं॥ ५३१॥

५३२ विद्यावागीशरसः

मृतसूताऽभ्रनागानां स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत्।
महानिम्बस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत्॥ २५७८॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहप्रशान्तये।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयं तथा॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः॥ २५७९॥

र. सं., र. क. ल., र. सु, र. चि., रसायनसं, र. को., र. चं., यो. म., र. का., र. र., व. रा., चि क, प्रमेहे।

टि०—यो. म, र. का. एतयो र्नागस्थाने वङ्ग नियोज्य स्वर्णं निष्कासितम्। रसकामधेन्वौ अस्यैव योगस्य त्रय पाठा विन्यस्ता.। तत्र एकस्य विद्यावागीश्वरेति द्वितीयस्य विद्यानङ्गेश्वरेति तृतीयस्य तारकेश्वरेति त्रीणि नामानि स्थापितानि, एतत्कृतेस्तत्राणां बुद्धिव्याकुलीकरणाऽतिरिक्त नाऽस्ति किञ्चित्फलमिति बोद्धव्यम्। र र, व रा, चि क. एषु ग्रन्थेषु "मृतसूताऽभ्रनागञ्च स्वर्णं तुल्य प्रकल्पयेत्।" इत्यस्य स्थाने "सूत मृताऽभ्रवङ्गाभ्यां तुल्य भाग प्रकल्पयेत्" इति पाठो दृश्यते तत्र भ्रमाद्वा प्रमादाद्वा स पाठ येनकेनाऽपि प्रकलित इति प्रतिभाति, नाम च र र, व रा. एतयो र्मेहारोगेश्वर इति, चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्यान्तु मेहारीति नाम।

भाषा—पारा, अभ्रक और नागभस्म १–१ भाग, सुवर्णभस्म सबकीबराबर लेकर बकायनकेबीजोंका चूर्ण सबकीबराबर-मिलाय १–२ दिन सूखे खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ देनेसे असाध्यलालामेह नष्टहोताहै। इसके-ऊपर ८ माशे हल्दीकाचूर्ण मधुमें मिलाकर खिलावे॥ ५३२॥

५३३ विद्यावागीश्वरीवटी (प्रथमा)

व्योमसत्त्वं मृतं वज्रं स्वर्णतारार्कमुण्डकम्।
तीक्ष्णं कान्तं तालकञ्च सत्त्वं कृत्वा विमिश्रयेत्२५८०
सूक्ष्मं चूर्णं समं सर्वं चूर्णार्द्धं शुद्धपारदम्।
त्रिदिनं चाम्लवर्गेण मर्दितं चान्धितं धमेत्॥२५८१॥
विद्यावागीश्वरी ख्याता गुटिका वत्सरावधि।
यस्य वक्त्रे स्थिता तस्य जरा मृत्यु र्न विद्यते२५८
कर्षं ज्योतिष्मतीतैलं क्रामणार्थं पिबेत्सदा।
वाङ्मति र्जायते धीरो जीवेच्चन्द्राऽर्कतारकम् २५८

र. सं., र. का., रसायने।

भाषा—अभ्रकसत्त्व, हीरा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड फौलाद, कान्त, हरिताल इनकेसत्त्वोंकीभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर इनसबमेआधा शुद्धपारा मिलाकर एकपहर शुष्क मर्दनकर किसीभी खटाईसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध मूषामें बन्दकर धमनकरनेसे इसकी गोली तैयारहोगी। इसको एकवर्षतक मुंहमें रखनेसे जरा और मृत्युको जीतताहै। इसके शरीरमें अनुक्रमणहोनेकेलिये एककर्ष मालकांगनीका तैल प्रति दिनपीवे। इसकेसेवनसे बृहस्पतिकेसदृश बुद्धि होजातीहै॥५३३॥

५३४ विद्यावागीश्वरीवटी (द्वितीया)

शुद्धं सूतं विषञ्चाऽभ्रं विषटङ्कणगन्धकम्।
मृतलोहाऽष्टकञ्चैव कर्षमानञ्च खल्वके॥ २५८४॥
जम्बीरोन्मत्तवासाभिस्त्रिकटुत्रिफलोद्भवैः।
याममात्रन्तु प्रत्येकं मर्दयित्वा तु गोलकम्॥ २५८५॥
काचकूप्यां नियेश्याऽथ सप्तधल्लमृदा वहिः।
लवणैः पूरिते यन्त्रे त्रिदिनं मन्दवह्निना॥ २५८६॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
आर्द्रकस्याऽनुपानेन मञ्जिष्ठाया निकृन्तनम्॥
विद्यावागीश्वरो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः॥२५८७॥

व. रा., प्रमेहे।

भाषा—शुद्धपारा और बछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धसोमल, भुनासुहागा, गन्धक, आठोंलोहोंकीभस्म १–१ कर्षलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरी, धतूरा, अडूसा, त्रिकटु, त्रिफला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ पहर मर्दनकर गोलाबनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख मुंह बन्दकर लवणयन्त्रमें ३ दिनकी मन्दाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर १–१ रत्ती अदरखकेसाथ देनेसे यह मञ्जिष्ठ मेहको नष्टकरताहै॥ ५३४॥

५३५ विरेचनवटी

पारदं गन्धकं विश्वं टङ्कणं विषमुष्टिकम्।
स्वर्जिका मरिचं कृष्णा समभागानि कारयेत् २५८८
विडङ्गञ्चाऽभया दन्ती त्रिवृज्जैपालकन्तथा।
पूर्वचूर्णसमान्येव भृङ्गद्रावेण भावयेत्॥ २५८९॥
गुञ्जाप्रमाणवटिका भक्षिता शीतवारिणा।
विरेचयत्यवश्यं हि क्रिमिरोगाञ्ज्वरानपि॥
विनाशयति वै सम्यक् सत्यं गुरुवचो यथा॥२५९०॥

र. प्र सु, विरेचने।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और कुचिला, सोंठ, सज्जी, मरिच, पीपल येसब १–१ भाग, विडङ्ग, हरें, दन्तीमूल,

निसोत, शुद्धजमालगोटा, येसबमिलकर ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेके-रसमे एकदिनमर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकररखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढेजलकेसाथ देनेसे समस्तशिरोरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५३५ ॥

५३६ विरेचनरसः

पातितात्स्वेदितात्सूतात्पलं गन्धकतः पलम् ।
तित्तिरीफलतो ग्राह्यं पलञ्च त्रिफलात्रयम् ॥२५९१॥
कट्फलकार्पमेकं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
पक्के निम्बुकतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ २५९२ ॥
शम्याकफलसारेण मर्दयेत्प्रहराऽष्टकम् ।
त्रिवृत्काथेन दन्त्याश्च रसेनैव प्रमर्दयेत् ॥ २५९३ ॥
एवं सम्मर्दितात्सूताद्विद्ध्याद्वटिकास्ततः ।
बदरीफलमानेन छायायां शोषयेद्बुधः ॥ २५९४ ॥
वटीं सन्धारयेद्धन्याच्छीतवातविवर्जिताम् ।
दद्यादुदरिणे चैकां कोष्णनीरेण वैद्यराट् ॥ २५९५ ॥
आमान्तिकं रेचयेत्सं स्तम्भनं दुग्धभक्ततः ।
विंशद्वारप्रयोगेण नश्यते च जलोदरम् ॥ २५९६ ॥
अयं विरेचनो नाम रसः श्रेष्ठतमो मतः ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥२५९७॥

रसालं , उदराऽधिकारे।

भाषा—ऊर्द्धादि पातनकर शुद्धकियाहुआपारा और गन्धक, शुद्धजमालगोटा १–१ पल, त्रिफला ३ पल, कट्फल (मुर्दासङ्ग अथवा रेवनचीनी) १ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पकेनीबू, अमिल्तास, निसोत, दन्ती इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिनमर्दनकर जंगली बेरबराबर गोलिया बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमें शीत और वायुका स्पर्श न हो । इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे आमनिकलनेतक रेचनहोकर उदररोग नष्ट होतेहै । अधिकरेचनहोनेपर दूधभात देनेसे बन्दहोंगे । ऐसे २० वार प्रयोगकरनेसे जलोदर नष्टहोताहै ॥ ५३६ ॥

५३७ विश्वतापहरणरसः

पथ्याकणाऽर्कविषतिन्दुकदन्तिबीज-
तिक्तानिवृद्रसबलीन् सदृशान्विमर्द्य ।
धूर्ताम्बुना सकलवासरमेप सूतः
स्याद्विश्वतापहरणोऽभिनवज्वरघ्नः २५९८

वै जी , र ल , र सु , र को , रसायनस , चि सा , नि र , वै.वि , र बो , रस स.,र क ल , यो र , र पा , ज्वराऽधिकारे।

टि०—यो र त्रैलोक्यतापहरणेति नाम। र र ,रसचि ,र स ,र स , र का , र र स , वै , र र दी , र क , यो म , र म मा , र पा एतेषु तथाच रसायनस , र को , र सु , र क ल , एतेषु द्विती यस्थाने त्रैलोक्यडम्बरेति नाम, तत्र भावनायां धूर्ताम्बुस्थाने वज्रीदुग्ध दृश्यते । रसवामधेनौ कणास्थाने वरा दृश्यते तत्रैव ज्वरध्वान्तदिवा कर नाम्ना एको रसो निर्दिष्टोऽस्ति । तत्राऽधिकतया नलिका निशो निता । वज्रीक्षीरेण मर्दयं पश्चाद्धूर्तवारिणा । आर्द्रकस्य रसेनैवेति पदेन वज्रीक्षीराऽऽर्द्रकयो र्भावनाभ्यात्र विशेषोऽस्ति, अतस्त विशेष-मतरसे वर्धयित्वा तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव समुचित ।

भाषा—हर्रे, पीपल, ताम्रभस्म, शुद्धकुचिला और जमालगोटा, कुटकी, निसोत, शुद्ध पारा और गन्धक सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरेकेरससे एकदिनरात मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ४ गोलीतक रोग और रोगीकी शक्तिका विचारकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह नवीनज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ विश्वाधारापर्पटीरसः (सर्वेश्वरपर्पटी)

रसोपरसलोहानि कार्षिकाणि पृथक्पृथक् ।
तेषु लोहानि सर्वाणि पाषाणकठिनानि च ॥ २५९९ ॥
घनसत्वञ्च तत्सर्वं भस्मीकृत्य प्रयोजयेत् ।
रत्नानि वल्लतुल्यानि भस्मीकृत्य च सर्वशः ॥ २६०० ॥
एभिश्चतुर्गुणः सूतो गन्धस्तस्माच्चतुर्गुणः ।
कृत्वा कज्जलिकां साभ्यां क्षिपेल्लोहस्य भाजने ॥ २६०१ ॥
प्रद्राव्य बदराङ्गारे निक्षिपेत्तदनन्तरम् ।
रसोपरसलोहानां रत्नानामपि सर्वशः ॥ २६०२ ॥
चूर्णं भस्म विनिःक्षिप्य काष्ठेनाऽऽलोड्य मेलयेत् ।
ततश्च षोडशांशेन मिश्रयित्वाऽरुणं विषम् ॥२६०३॥
गोमयोपरि निक्षिप्य निक्षिपेत्कदलीदले ।
पर्णाऽन्येन तु रम्भाया समाच्छाद्याऽतियत्नतः २६०४
कराभ्याञ्चिपिटीकृत्य क्षिपेदुपरि गोमयम् ।
ततः शीतं समाकृष्य चूर्णयित्वा च पर्पटीम् ॥ २६०५ ॥
विनिक्षिपेत्करण्डान्तर्युञ्ज्याच्च रसभेषजम् ।
विश्वाधाराऽभिधानेयं पर्पटी परिकीर्तिता ॥ २६०६ ॥
सर्वरोगविनाशाय नन्दिना परिकीर्तिता ।
शक्तियुक्तिसमानेयं मरिचार्द्रसमन्विताः ॥ २६०७ ॥
विद्रध्यां पडूप्रकारायां देया वृद्धिषु सप्तसु ।
क्षयरोगेषु सर्वेषु पाण्डुरोगे विशेषतः ॥ २६०८ ॥
ग्रहणीरोगभेदेषु गुल्मेष्वष्टविधेषु च ।
मूलरोगेषु शोफेषु प्लीहोत्थे यकृदामये ॥ २६०९ ॥
प्रमेहे सोमरोगेषु प्रदरे जठरार्त्तिषु ।
विशेषेणैव मन्दाग्नौ सर्वहिक्कावृतेषु च ॥ २६१० ॥
अनुक्तेष्वपि रोगेषु तत्तदौचित्ययोगतः ।
रसोऽयं किल दातव्यः शिवतुल्यपराक्रमः ॥ २६११ ॥
यद्यद्द्रव्यमसात्म्यं हि जन्मना सह जायते ।
तत्सर्वं सात्म्यमायाति रसस्याऽस्य निषेवणात् २६१२
पीत्वा हालाहलं तोयं पर्वताग्रे पयोघृतम् ।
सलिलं तैलतस्तुल्यं तज्जलं स्यात्सुधासमम् ॥२६१३॥
भुक्तं यदि च पाषाणं जीर्यतेतत्क्षणात्ततः ।
न तस्मिन्नियतं क्वापि विहाराहारकर्मणि ॥ २६१४ ॥

र को , र र स , र र कौ , सर्वरोगाऽधिकारे।

टि०—र.र.स., र.र.को. एनयो सर्वेश्वरपर्पटीति नाम । एकस्यैव योगस्य नानानामभिर्व्यवहारः सहृदयकाराणा बुद्धिजाड्य द्योतयति ।

भाषा—रस (शिंगरिफ, सोनामाखी, रूपामाखी, चपल, तूतिया, कान्तपाषाण, कान्तलोह, वैक्रान्त और नीलम), उपरस (गोदन्ती हरिताल, गन्धक, मैनसिल, तवकी हरिताल, कंकुष्ठ (मुर्दासङ्ग), कसीस और फिटकडी), लोह (सुवर्ण, चांदी, पीतल, तांबा, सीसा, रांगा, लोह और कांसा). अभ्रकसत्त्व, इनसबकीभस्में १–१ कर्ष, सम्पूर्णरत्नों (माणिक, मोती, मूंगा, पन्ना, पुखराज, हीरा, नीलम, गोमेद, लसनियां वगैरह) की भस्में ३–३ रत्ती, इनसबसे चौगुना शुद्ध पारा और पारेसे चौगुना गन्धकलेकर पहिले पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली कर घीपुतीहुईलोहेकीकडाहीमें डालकर बेरकेकोयलोंपर गलाकर रस, उपरस, लोह और रत्नोंकीभस्में क्रमसे मिलाकर लकडीसेचलाकर मिलावे । इसकेबाद समस्तमें १६ वा हिस्सा शुद्ध लाल्यछनाग मिलाकर ताजे गोबरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर ढालकर दूसरे केलेकेपत्तोंसे दबाकर गोबरसे ढकदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती मरिच और अदरखकेसाथदेकर रोग और रोगीकी औचिती समझकर २–२ चावल रोजाना बढावे । इसतरहदिनभरमें ३॥ रत्ती या ४ रत्तीतक बढाकर यहीं मात्रा स्थिर रक्खे इसे आरोग्यलाभहोनेतक कायमरक्खे । अथवा १० दिनकेबाद ह्रासकर वृद्धिकरे परन्तु इसक्रमकी अपेक्षा आरोग्यलाभहोनेतक स्थिरमात्रारक्खे और आरोग्यलाभहोनेकेबाद धीरे २ ह्रासकर योगको बन्दकरे । इसतरहसेवनकरनेसे ६ प्रकारकीविद्रधि, ७ प्रकारकी वृद्धि, सब रक्तक्षयरोग, विशेषकर पाण्डु, ग्रहणीभेद, ८ प्रकारके गुल्म, अर्श, शोफ, प्लीहा, यकृत, प्रमेह, सोमरोग, प्रदर, उदररोग, मन्दाग्नि, हिचकी इत्यादि तमामरोग नष्टहोतेहैं । अनुपान समय अथवा रोगौचिती देखकर नियतकरे । जो जो द्रव्य जन्मसे असात्म्यहो वेसब इसके सेवनसे सात्म्य होजातेहैं । पर्वतोंमें हलाहलभी पीलियाहो तो यह दूध, घीका कामकरताहै । तेलकेमदरोअल पीनेमें आयेतो वहभी अमृतका काम करताहै । मूलकर खायाहुआ पत्थरभी हजमहोजाताहै इसलिये आहारविहारमें कोईभी परहेज नियत नहींहै ॥ ५३८ ॥

५३९ विश्वमूर्तीरसः (प्रथमः)

स्वर्णनागार्कपत्राणां भागाः पञ्च पृथक् पृथक् ।
त्रयाणां द्विगुणः सूतो जम्बीराऽम्लेन मर्दयेत् २६१५
पिष्टिं तां निम्बुके क्षिप्त्वा दोलायन्त्रे दिनद्वयम् ।
पाचयेदारनालान्तस्तस्मादुद्धृत्य चूर्णयेत् ॥ २६१६ ॥
ऊर्ध्वाऽधो गन्धकं दत्त्वा तालकञ्च रसोन्मितम् ।
लोहसम्पुटगं कृत्वा क्षिप्त्वा चैव प्रपूरयेत् ॥ २६१७ ॥
लवणस्य च चूर्णेन त्र्यहं मन्दाग्निना पचेत् ।
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ २६१८ ॥
आर्द्रकस्य रसोपेतं शीघ्रं पथ्यं न दापयेत् ।
विश्वमूर्तीरसो नाम्ना सन्निपातादिरोगजित् ॥२६१९॥
अर्कमूलत्वचः क्वाथं मरिचैर्मिश्रितं पिबेत् ।
दशमूलकषायं वा ह्यनुपानं सुखावहम् ॥ २६२० ॥

र.चि., र.को., यो.म., रसायनसं., र. का., र.क.यो., र.सु., ज्वराऽधिकारे । योगमहार्णवे त्रयाणा द्विगुणस्थाने त्रयाणा त्रिगुण इति पाठ ।

भाषा—सुवर्ण, नाग और ताम्रकेबारीकपत्र ५–५ भाग, पारा ३० भाग लेकर खरलमें डाल जंभीरीकेरससे घोटे । पत्रोंपर सबपारा चढजानेपर गोलाबनाय नीबूके अन्दररख दोलायन्त्रमें काञ्जीसे दो दिनतक स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेके बराबर शुद्धगन्धक और हरितालका चूर्ण लोहेकेसम्पुटमें पत्रोंके नीचे ऊपररख सम्पुटपर ३–४ कपडमिट्टी देकर लवणयन्त्रमें बन्दकर ३ दिनकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ४–४ रत्ती अदरखके रसकेसाथ देनेसे सन्निपातादि समस्तरोग नष्टहोतेहैं । इसकीमात्रादेनेकेबाद तुर्त पथ्य न दे, नहींतो वमनहोकर हैरानी होगी । सन्निपातमें आककी जडकाक्वाथ अथवा दशमूलकाक्वाथ मिर्च डालकरदेना ॥ ५३९ ॥

५४० विश्वमूर्तीरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं ताम्रभस्म मनःशिला ।
चन्दनं त्रिफला वासा कुष्ठजीरकदीप्यकम् ॥ २६२१ ॥
एतानि समभागानि हंसपादीरसेन च ।
तत्तत्सर्वं खल्वमध्ये त्रिदिनं मर्दयेद्भिषक् ॥ २६२२ ॥
ततस्तु गोलकं कृत्वा वज्रमूषान्तरे क्षिपेत् ।
भूधरे यन्त्रके पाच्यं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यमुदर्दं नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २६२३ ॥

व.रा., वै.चि., उदर्दे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और मैनसिल, ताम्रभस्म, सफेदचन्दन, त्रिफला, अडूसा, कुठ, जीरा, अजवाइन, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय हंसराजकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टीदेकर सूखनेपर भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह उदर्दको नष्टकरताहै ॥ ५४० ॥

५४१ विश्वम्भरोरसः (प्रथमः)

भूनिम्बवत्सकुटजार्ककुबेराक्षाऽग्निमूलकम् ।
भूधात्रीत्रिफलाभृङ्गराजकरञ्जांशान् समुद्धृतान् ॥ २६२४ ॥
एतेषां भूपुटेनैव तैलं ग्राह्यं विचक्षणैः ।
सूततुल्यद्वयोर्भस्म हरितालञ्च गन्धकम् ॥ २६२५ ॥
त्रिकटुत्रिफलादिद्रुमाक्षिकञ्च समांशकम् ।
नागवङ्गभवं भस्म विषं हिङ्गुलमेव च ॥ २६२६ ॥
एतानि पटपूतानि तेन तैलेन मेलयेत् ।
नागवल्लीदलेनैव वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ॥ २६२७ ॥

अथाऽऽर्द्रकरसोपेतसैन्धवेन प्रयोजयेत्।
अष्टशूलादिगुल्मानि नाशयेदेकमात्रतः॥ २६२८॥
वातान्दुष्टांश्चपित्तरोगानपस्मारानेकशः।
पीनसादिश्लेष्मरोगान्ग्रन्थिरोगांश्च दारुणान्॥२६२९॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रादिप्रमेहान्विषमज्वरान्।
नाशयेच्च गदान्सर्वानन्यानपि निहन्ति च॥
विश्वम्भररसो नाम्ना सर्वरोगहरः स्मृतः॥ २६३०॥
र.क. यो., र.कौ (ज्ञा),

भाषा—सहिजनकेबीज, सेहुण्ड, अङ्कुस्यिा थूहर और आक इनकादूध, करंज, चित्रकमूल, भुईआवला, बछनाग, सफेद-गुञ्जा, घुड़करञ्जका पञ्चाङ्ग, मूलीकेबीज, सबसमभागलेकर जव-कुटचूर्णकर थूहर और आकके दूधमें मिलाय सुखाकर पातालयन्त्रसे तैलनिकाले फिर पारा और ताम्रभस्म, शुद्धहरिताल और गन्धक, त्रिकुट, त्रिफला, हींग, सोनामाखी, नाग और वङ्ग भस्म, बछनाग, शिंगरफ येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारे, गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पूर्वतैल-की १-२ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती पानमें रखकर देवे अथवा सैन्धव मिलेहुए अदरखकेरसकेसाथ देवे इससे ८ प्रकारकेशूल, गुल्म, दुष्टवातरोग, अपस्मार, पीनस वगैरह कफरोग, दारुणग्रन्थिरोग, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ५४१॥

५४२ विश्वम्भरोरसः

(स्वच्छन्दभैरवः, कासंसहारभैरवः) २

शुद्धं सूतं विषञ्चाऽभ्रं हिङ्गुलं गन्धतालकम्।
तुल्यं तुल्यं खल्वमध्ये क्षिपेन्मर्द्य दिनद्वयम्॥ २६३१॥
हंसपादीकषायेण कुक्कुटीपुटपाचितम्।
चूर्णीकृत्य विभाव्याऽथ पुन. कुक्कुटसञ्ज्ञकम् २६३२
कूर्मवाराहतिमिजैः पित्तै र्भाव्यं दिनत्रयम्।
माषमात्रप्रयोगेण ह्यनुपानविशेषतः॥ २६३३॥
वस्तिवातं सन्निपातं प्रचण्डं नाशयेज्ज्वरम्।
इच्छापथ्यं ततो भुक्त्वा स्विक्षुखण्डानि भक्षयेत् २६३४
नारिकेलोदकं दाहे पिवेच्छर्करयाऽन्वितम्।
विष्णुना कथितः पूर्वं विश्वम्भररसोत्तमः॥ २६३५॥
वै चि, र क यो, व रा, ज्वरे।

टि०—अयमेव पाठो वस्तिवाते वसवराजीयवैद्यचिन्तामण्यो स्वच्छन्दभैरवनाम्ना लिखितस्तत्र गन्धकोऽस्ति, अत्र पाठे स नास्ति विषस्यैव द्विरावृत्तिरासीत्, साऽपि प्रमादादेव सञ्जाता इति कृत्वा गन्धकमत्रैव समावेश्य स निष्कासित इति। अस्यैव पाठस्य वैद्यचिन्तामणौ त्रिगुण इति नाम स्थापयित्वा छात्राणाङ्कृते भ्रमवागुरा रचिता साऽपि दूरादपास्ता। अस्मिन्नेव रसे पित्तभावना निष्कास्य वैद्यचिन्तामणिवसवराजीययोरस्य कासंसहारभैरव इति नाम स्थापित, पित्तघटितोऽयं योगस्तद्विरहितयो गात्सहस्रगुणो गुणेष्वधिकोऽस्त्यत सोऽपि रसोऽत्रैव समाविशति। पित्तानामभावे तु सर्वेऽपिरसास्तत्तत्कार्याणि कुर्वन्त्येव परमल्पतयेति विशेष सर्वत्रैवाऽस्ति इति दिक्।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धशिंग-रिफ, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजके रससे दोदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कछुआ, सुअर और मछलीके पित्तोंसे ३-३ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वस्तिवात, सन्निपात, प्रचण्ड-ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै। भूखलगनेपर यथेष्ट पथ्यदेना। अत्यन्तदाहहोनेपर ईख और नारियलकाजल शकर मिलाकर पिलाना॥ ५४२॥

५४३ विश्वरूपोरसः

त्रिकटुकयवनेष्टं कारवी कृष्णजीरं,
दहनजललवङ्गं पारसीका यवानी।
सकमलकणमूलं येतकीक्षीतकानि,
त्रुटिजरणविडङ्गं सैन्धवं पद्ममुस्तम्॥ २६३६॥
मिसित्रिवृदजमोदा मेथिका त्वक् प्रपथ्या,
कलितरफलधात्री विल्वकालिङ्गमूलीम्।
अतिविषविडयुक्तं हिङ्गुनिर्यासनागं,
यशिरनलदजातीकोषजातीफलानि॥ २६३७॥
दृढदपदि समस्तं प्रक्षिपेत्सर्वतुल्या·,
निह वरविषतिन्दून्साऽभयांस्तक्रसिद्धान्।
अनुहिममदयुक्तो माषमात्रः स सूतः,
प्रशमयति विकारांश्लेष्मवातामजातान् २६३८
प्रबलमलविबन्धानाहमाटोपमुग्रं,
ज्वररुचिविसूचीं शूलमध्नद्रयादीन्।
हरति च सहसाऽयं जाठरान्सर्वरोगान्,
ग्रहणिगरविमुख्यानाहयक्ष्मातिसारान्॥
गिरिशविहिततन्त्रे मन्त्रयुक्त्या नियुक्तो,
निखिलगुणनिवासो विश्वरूपो रसोऽयम्२६३९
र.का , शूलाऽधिकारे।

भाषा—त्रिकुटा, लहसन, कलोंजी, कालीजीरी, चित्रक-मूल, खस, लौंग, खुरासानी अजवायन, कमलफूल, पिपलामूल, बड़ीहर्रें, मुलहठी, छोटीइलायची, जीरा, विडङ्ग, सैन्धव, पद्मज, नागरमोथा, सौंफ, निसोत, अजमोद, मेथी, तज, छोटीहरड़, बहेड़ा, आवला, बेल और कुरैयाकेबीज, अतीस, नवसादर, हींग, नागभस्म, सफेदपुनर्नवा, खस, जावित्री, जायफल येसब समभाग, छाछमें हर्रोंकेसाथ पकायेहुए कुचिले सबके बराबर लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। अथवा अदरखगैरहके रससे घोटकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उशीरासव अथवा कर्पूरासवकेसाथ देनेसे कफ और वात-विकार, प्रवल मलविबन्ध, आनाह, अत्यन्त आटोप, ज्वर, अरुचि, हैज़ा, शूल, अन्नद्रवशूल, समस्त उदररोग, ग्रहणी, गर, राजयक्ष्म, अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै। शूलमें

हड्डिया निकलाहुआ, विपज खरस्पर्श कुष्ठ तथा अन्य १८ प्रकारकेकुष्ठ, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै। जिसजगह दवा काम न करतीहो वहा रक्तमोक्ष कराना ॥५४६॥

५४७ विश्वेश्वररसः (तृतीयः)

रसञ्च रौप्यं त्रिदिनं विमर्द्य
जम्बीरनीरेण ततः समस्तम्।
संयोज्य जम्बीररसेन सम्य-
ग्विमर्दयेत्त्रीणि पुनर्दिनानि ॥ २६८३ ॥
कृत्स्नं कुमारीरसतस्त्रिवारं
द्विवासरान्धेनुजमूत्रकेण।
द्विवासरानाजमये विमृद्य
शुष्कञ्च शुष्कं प्रतिभावनं पुटेत् ॥ २६८४ ॥
धात्रीरसेनैकवारं पुष्करस्य रसैः क्वचित्।
त्रिभिः पुटै र्द्ग्धशुष्कं भस्म तन्मर्दयेद्दिनम् ॥ २६८५ ॥
ततो भवेत्सप्रमाणः सिद्धो विश्वेश्वरो रसः।
त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जोऽयं देयः कन्यारसान्वितः ॥२६८६॥
दुग्धाशनयुतो हन्यात्कासं श्वासं क्षयं तथा।
भोक्तुं वास्तुकदुग्धान्नमग्निमान्द्याऽरुची जयेत् २६८७
त्रिगुञ्जो मरिचाऽर्द्धेन कफोद्रेकविनाशनः।
दशमूलगुडक्षौद्रैस्त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जकः ॥ २६८८ ॥
त्रिदोषजं क्षयं हन्याद्दुग्धभक्तभुजो ध्रुवम्।
शुण्ठीचूर्णसमायुक्तं हितं मांसरसं सदा ॥
अयं सर्वेषु रोगेषु योज्यो विश्वेश्वरो रसः ॥ २६८९ ॥

र.क , र. मृ., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारे और चादीके बारीकवरेकको ३–३ दिन जंभीरीकेरससे अलग अलग मर्दनकर इकट्ठेमिलाय १–२ पहर सुला घोटकर पिट्टिका बनाय जमीरी और घीकुवारकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोमूत्र और अजामूत्रसे २–२ दिन, आमले और पोहकरमूलकेरससे १–१ दिन मर्दनकर आतशीशीशीमें भरकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें रस ४ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिरसे आवले और पोहकरमूलके रससे मर्दनकर पूर्ववत् आचदे। इसप्रकार ३ आचें देकर शीशीमेंसे निकालकर रखछोड़े। यदि चांदीसे पारा अलग होजाय तो उसे बारबार चादीमें मिलाकर घोंटे और अग्निदेवे। कदाचित् ३ बारमें बराबरभस्म न हुईहो तो १–२ आचें और देवे। इनमेंसे २–३ रत्तीकीमात्रा घीकुआरकेरसकेसाथ देनेसे कास, श्वास और क्षयको यह नष्टकरताहै। इसमें बथुएकाशाक और दूधचावल देना। ३ रत्ती मरिचकेचूर्णकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, अरुचि और कफप्रकोपको नष्टकरताहै। दशमूल, गुड और मधुकेसाथ २१ दिनतकदेनेसे यह त्रिदोषजक्षयको नष्टकरताहै। सोंठकाचूर्ण डालकर मांसरस इसमें हितकरहोताहै ॥ ५४७ ॥

५४८ विश्वेश्वररसः (चतुर्थः)

मृतसूतार्कतीक्ष्णञ्च तालं गन्धञ्च कट्फलम्।
मेषशृङ्गी वचा शुण्ठी भार्ङ्गी पथ्या च वालकम् ॥२६९०॥
धान्यकं मर्दयेत्तुल्यं पर्पटोत्थद्रवै र्दिनम्।
मर्द्यं माषं लिहेत्क्षौद्रैः कफपित्तमदात्यये ॥ २६९१ ॥
रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च।
काकमाचीरसञ्चाऽनु सैन्धवेन युतं पिबेत् ॥ २६९२॥

र. सं., चि. र. म., रसायनसं., ज्वराऽधिकारे। चि. र. भ., रसायनसं., वीरेश्वर इतिनाम।

भाषा—पारा, तांबा और लोहभस्म, शुद्धहरिताल और गन्धक, कायफल, मेंढासींगी, वच, सोंठ, भारङ्गी, हर्रे, सुगन्धवाला, धनियां, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पटोलपत्रकेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देकर सैंधानमक मिलायाहुआ मकोयकारस पिलानेसे कफपित्तमदात्यय नष्टहोताहै ५४८

५४९ विश्वेश्वररसः (पञ्चमः)

स्वर्णाऽभ्रलौहवङ्गानां रसगन्धकयोरपि।
वैक्रान्तस्य च सङ्गृह्य भागांस्तोलकसम्मितान् २६९३
कर्पूरसलिलेनाऽथ भावयित्वा यथाविधि।
रक्तिकैकप्रमाणेन विदध्याद्वटिकास्ततः ॥ २६९४ ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम रसः फुफ्फुसजान्गदान्।
हृद्रोगांश्च जयेत्सर्वान् संशयोऽत्र न विद्यते ॥२६९५॥

भै. र., हृद्रोगाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, लोह और वङ्ग इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, वैक्रान्तभस्म येसब १–१ तोला लेकर नीलवर्णकमलीकर कपूरकेजलसे २–३ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे फुफ्फुस और हृदयके तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४९ ॥

५५० विश्वेश्वररसः (षष्ठः)

त्रित्रिकाम्बुदवेलाग्निकुष्ठाऽऽमोदरसाऽमृतैः।
भृङ्गाम्बुफल्किते विश्वेश्वरो नाम रसो मतः ॥२६९६॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यार्शःकामलावमिपाण्डुहृत्।
कुष्ठाऽजीर्णविसूच्यर्तीर्नाशयेत्तत्तदौषधैः ॥ २६९७ ॥

र.(मा.), कासश्वासादौ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला और त्रिजात, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक, कुठ, शुद्ध गन्धक, पारा और बच्छनाग सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे २–३ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, बवासीर, कामला, वमन, पाण्डु, कुठ, अजीर्ण और हैजेको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

५५१ विश्वेश्वररसः (सप्तमः)

रसगन्धककर्पूरत्र्यूषणं टङ्कणं विषम्।
कपर्दिकाभस्म समं मर्दयेदेकतः कारयेन ॥ २६९८ ॥

तुलसीरससंयुक्तं देयं शीतज्वरे ततः ।
दाहज्वरे च विषमे सन्निपाते तथैव च ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम सद्य. प्रत्ययकारकः ॥ २६९९ ॥
र का., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कपूर, सुहागा और बछनाग, त्रिकटु, कौडीकीभस्म सब समभागलेकर तुलसीकेरसमें मर्दन कर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोगीका बलाबलदेखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत, दाह और विषमज्वर, सन्निपात येसब नष्टहोतेहैं ॥५५१॥

५५२ विश्वेश्वरीवटी

वन्ध्यागन्धकणालसूतकविषाक्षारास्थिका लाङ्गली,
सिंहीबीजमधूकयोलनजरव्यालेन्दुपाठेन्द्रकैः।
निर्गुण्डीरसमर्दितैरथ कृता कोलप्रमाणा वटी,
वातव्याधिविरोधिनी विजयते लोकेऽत्र विश्वेश्वरी ॥
रस.सं ,र (मा) वातव्याध्यधिकारे

भाषा—बांझखेखसेकाकन्द, शुद्ध गन्धक, हरिताल, पारा, बछनाग और करिहारीकीजड़, पीपल, अतीस, तीर्नोंक्षार, हड़जोड़, भटकटैयाके बीज, महुआ, हीराबोल, नख, चित्रकमूल, शुद्धकपूर, पाठा, इन्द्रजव सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सभालूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली वातहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवातव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ५५२ ॥

५५३ विश्वोदीपकाऽभ्रम्

अभ्रं निर्मलमारितं पलमितं चूर्णीकृतं यत्नत-,
श्चव्यं चित्रकमिन्द्रसूरकनकं मालूरपत्राऽऽर्द्रकम् ।
मूलं पिप्पलिसम्भवं मधुरिका नीपोऽर्कमूलं पृथक्,
चैषां सत्यपले विमर्दितमिदं कर्षं क्षिपेट्टङ्कणम् २७०१
गुञ्जासम्मितमेतदेव वलितं तत्पारिभद्रद्रवै,-
र्मन्दाग्निं चिरजातगुल्मविचयं शूलाम्लपित्तं ज्वरम् ।
छर्दिं दुष्टमसूरिकामलसकं श्वासञ्च कासं तृषां,
प्लीहानं यकृतं क्षयं स्वरहितं कुष्ठं महारोचकम्॥२७०२॥
दाहं मोहमशेषदोषजनितं कृच्छ्रञ्च दुर्नामक-,
मामं वातविमिश्रितं नयनजं रोगं समुन्मूलयेत् ।
विश्वोद्दीपकनामरोगहरणे प्रोक्तम्पुरा शम्भुना,
सर्वेषां हितकारकं गदवतां सर्वामयध्वंसनम् ॥
पाषाणं यदि भक्षितं तदपि तं कुर्यात्सुजीर्णं पुन-,
र्बल्यं वृष्यतरं रसायनवरं मेधाकरं कान्तिदम् २७०३
भै र , र सु ,अभिमान्ये।

भाषा—निश्चन्द्र अभ्रकभस्म १ पल लेकर चव्य चित्रक, कुटज, सूरण, धतूरा, बेलपत्र, अदरख, पिपलामूल, सोंफ, कदम्ब, आककीजड़ इनप्रत्येकके १–१ पल स्वरसोंसे मर्दनकर १ कर्ष भुनासुहागा डालकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली निम्बपत्रस्वरसकेसाथदेनेसे बहुतदिनका मन्दाग्नि और गुल्म, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, वमन, मसूरिका, अलसक, श्वास, कास, तृषा, प्लीहा, यकृत्, क्षय, स्वरभङ्ग, कुष्ठ, अरुचि, दाह, मोह, समस्तदोषज मूत्रकृच्छ्र, अर्श, आमवात, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकर बल, वृष्यता, मेधा, कान्ति और रसायनको करताहै ॥ ५५३ ॥

५५४ विषतिन्दुगर्भागुटिका

ब्रह्मबीजरसराजगन्धका
द्वादशैककरतुल्यभागिका. ।
आन्यहाम्लजलमर्दितोद्धृता.
सूर्यभागविषतिन्दुमर्दिता: ॥ २७०४ ॥
सक्षौद्रस्निग्धभाण्डस्था मासं धान्योषिताः स्थिताः ।
तद्गुटयोऽस्पर्शरोगघ्ना षण्मासाद्विधिसेविता: २७०५
र (मा) स्पर्शवाते।

भाषा—पलाशबीज १२ भाग, शुद्धपारा १ भाग और गन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ३ दिन बिजौरे प्रभृतिके रससे मर्दनकर १२ भाग शुद्ध कुचिलेका चूर्णमिलाय गोली बननेलायक मधु मिलाकर चिकनेबर्तनमें रखकर एकमहीनेतक धान्यकी राशिमें गाड़दे। इसमेंसे १–१ माशा रोगोचितानुपानकेसाथ ६ महीनेतक देनेसे स्पर्शरोग नष्टहोताहै ॥५५४॥

५५५ विषमज्वरहररसः

शिलालविमलारसं रसकताप्यगन्धाश्मयुक्
त्रिवारमिति भावितं विमलकारवल्लीरसैः ।
विशोष्य निहितं शुभे लघुनि शुल्वपात्रे दृढं,
कपालपिहिते पचेत्तु सिकताख्ययन्त्रस्थितम् ॥२७०६॥
ज्वलदूर्ध्वशालिवहेस्तायैतत्त्रियामं तु,
कूष्माण्डकारवल्लीतोयैर्भाव्यं ततस्त्रिवल्लञ्च ।
गुडमोचखण्डयोगात्क्षीराभ्रेकाशनस्य दाहादीन्,
विषमज्वरान्निहन्यात्सर्वानेव त्र्यहेणैव ॥ २७०७ ॥
रसायन , र स , विषमज्वरे।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, कान्यमाक्षिक, शुद्धपारा, खपरिया, सोनामाखी और गन्धक सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे सुखा सुखाकर ३ भावनाए देकर करेलेकेरसमें कल्कबनाय बराबरके तांबेके सम्पुटमें भीतरकीतर्फ लेपदेकर ढकनेसे बन्दकर ६–७ कपड़मिटी देकर वालुकायन्त्रमें रख आंचदे और ऊपर थोडेसे धान डालदे। जब धानोंकी खील होजाय तब उतारकर कोयलेपर रखदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताम्र जितना भस्म होगया हो उसको साथमें लेकर सफेदकोंहळा और करेलेकेरसोंमें ३–३ दिन मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ३ दिनमें विषम ज्वरोंको यह नष्टकरताहै । अधिकदाहमालूमहोनेपर गुड़काशर्बत, केला, शक्कर और दूधभातका सेवन करावे ॥ ५५५ ॥

५५६ विषमज्वरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

पारदं गन्धकं तुल्यं सूताऽर्द्धं जीर्णताम्रकम्।
ताम्रतुल्यं माक्षिकञ्च लौहं सर्वसमं नयेत्॥ २७०८॥
जयन्त्याःस्वरसेनैव कोकिलाक्षरसेन च।
वासकाऽऽर्द्रपर्णरसैः पञ्चधा च विमर्दयेत्॥२७०९॥
पृथक् कलायमानान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
विषमज्वरान्तनामाऽयं विषमज्वरनाशनः॥ २७१०॥
वह्निदीप्तिकरो हृद्यः प्लीहगुल्मविनाशनः।
चक्षुष्यो बृंहणो वृष्यः श्रेष्ठः सर्वरुजापहः॥ २७११॥
भै.र., र.सु., ध., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, पारेसेआधी ताम्र और सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जैंती, तालमखाना, अडूस, अदरख और पानकेस्वरसोंसे ५–५ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे विषमज्वर, मन्दाग्नि, प्लीहा, हृदयकेरोग, गुल्मप्रभृति सबरोगोंको यह नष्टकरताहै। चक्षुष्य, बृंहण और वृष्य है॥ ५५६॥

५५७ विषमज्वरान्तकलौहम् (बृहत्) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम्।
मृतसूतं हेमतारं लौहमभ्रञ्च ताम्रकम्॥ २७१२॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम्।
सुवर्णमाक्षिकञ्चाऽपि चूर्णयित्वा विभावयेत्॥२७१३॥
निर्गुण्डीनागवल्ली च काकमाची सपर्पटी।
त्रिफलाकारवेल्लञ्च दशमूली पुनर्नवा॥ २७१४॥
गुडूची वृषकश्चाऽपि सभृङ्गः केशराजकः।
एतेषाञ्च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक्॥ २७१५॥
गुञ्जामानां वटीं कुर्याच्छास्त्रवित्कुशलो भिषक्।
पिप्पलीगुडयोगेनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम्॥ २७१६॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा।
सप्तधातुगतञ्चाऽपि नानादोषोद्भवं तथा॥ २७१७॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्याऽसाध्यमथापि वा।
अभिघाताऽभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः॥२७१८॥
र.सं., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, पारा, सुवर्ण, चांदी, लोह, अभ्रक, ताम्र, वङ्ग, मोती, प्रवाल सुवर्णमाक्षिक इन सबकीभस्में और हरितालसत्त्व, येसब समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी, पान, मकोय, पित्तपापड़ा, त्रिफला, करेला, दशमूल, पुनर्नवा, गिलोय, अडूस, भंगरा, कालाभंगरा इनप्रत्येकके स्वरसोंमें १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपल और गुड़केसाथ देनेसे ८ प्रकारकाज्वर, निराम अथवा साम, सप्तधातुगतज्वर, सततादि नानादोषजज्वर, साध्य और असाध्य अभिघातजज्वर, अभिचारोत्थ और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै॥५५७॥

५५८ विषमज्वरान्तकलौहम् (तृतीयम्)

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलीम्।
रसपर्पटिवत्पाच्यं सूताङ्घ्रिहेमभस्मकम्॥ २७१९॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत्।
वङ्गञ्चैव प्रवालञ्च रसाऽर्द्धञ्च विनिःक्षिपेत्॥२७२०॥
मुक्ताशङ्खं शुक्तिभस्म रसपादिकमेव च।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत्॥२७२१॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गुससैन्धवम्॥ २७२२॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा॥२७२३॥
सततं सन्तताख्यञ्च त्र्याहिकं चातुराहिकम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम्॥ २७२४॥
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासञ्च दारुणम्।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः॥ २७२५॥
र.सं., र.सु., भै.र., ध., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—४–४ भाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर रसपर्पटीकी तरह पर्पटी बनाय सुवर्णभस्म १ भाग, लोह, ताम्र, और अभ्रक भस्म ८–८ भा., वङ्ग और प्रवालभस्म २–२ भाग, मोती, शङ्ख और सीपभस्म १–१ भाग लेकर सबको बारीक चूर्णकर मोतीकीसीपमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर पुटपाकसे स्वेदितकर रखछोड़े। इनमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा पीपल, हींग और सेंधेनमककेसाथ देनेसे वात, पित्त और कफजन्य ८ प्रकारकाज्वर, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, सन्तत और सतत, त्र्याहिक, चातुर्थिक, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, कास, भयङ्करश्वास, मूत्रकृच्छ्र, अतिसार, इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ५५८॥

५५९ विषमज्वरारीरसः (शीतारिः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं ताम्रं लोहं मनःशिलाम्।
समभागं विमृद्याऽथ भावयेत्तुलसीजलैः॥२७२६॥
कारवल्लीभृङ्गराजधूर्तनीरै विमर्दितम्।
अजामूत्रेण दातव्या वह्नी विषमशान्तये॥
विषमारीति नामाऽयं विषमोन्मूलनक्षमः॥ २७२७॥
र.का., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और लोहभस्म, शुद्धमैनसिल सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तुलसी, करेला, भंगरा, धतूरा इनके रसोंमें १–१ दिन मर्दनकर १–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बकरीकेमूत्रकेसाथ देनेसे यह समस्त विषमज्वरोंको नष्टकरताहै॥ ५५९॥

५६० विषनाशनोरसः

भागैकं रसनायकस्य विमलं गन्धं रसं तुत्थकं,
गौरालं नवसादरं त्रिकटुकं गुञ्जा सुजातीफलम् ।
सर्वं कज्जलवद्विमृद्य पयसा वज्रार्कयोरर्पयेत्,
सिद्धः स्याद्विषनाशनो गरुडवत्प्रोक्तोऽगदोऽयं बुधैः
भिल्वा निम्बुरसेन गुग्गुलुयुतो देयो बलोने नरे,
हन्याद्दन्तविबन्धनं विषमपि श्वाऽऽखुकीटादिजम् ।
नानामारुतनाशनश्चरदितं तीव्राञ्च पीडाञ्जयेत्,
कौब्ज्याऽपस्मृतिपाण्डुतान्द्रिकहरश्चोन्मादविध्वंसनः
र. यो., विषाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, रसौत, तुत्थ, सोमल, हरिताल, और नवसादर, त्रिकटु, गुञ्जा, जायफल सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय थूहर और आकके दूधोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे दन्तविबन्ध, विषमज्वर, कुत्ता, चूहा और जहरीकीडोंका जहर, नानाप्रकार की वायुपीडा, हड़कायाहुआ कुत्तेकाविष, कुब्जता, पाण्डु, तन्द्रा, उन्माद इनसबको यह नष्टकरताहै । निर्बलमनुष्यकेलिये नीबूको चीरकर उसमें गूगलकेसाथ डालकर चुसाना चाहिये ॥ ५६० ॥

५६१ विषमान्तकरसः

रसम्लेच्छालबुनटीगन्धखर्परमाक्षिकम् ।
पिष्ट्वा जम्भाऽम्भसा द्विमताम्रपात्रोदरे क्षिपेत् ॥२७३०॥
गन्धकेन च संलिम्प्य तत्पचेत्कांस्यपाकवत् ।
भाण्डे लवणपूर्णे तु मध्ये पात्रं निरुद्ध्य च ॥२७३१॥
यामपात्रं ततः शीते तुरथपादं विनि.क्षिपेत् ।
विमृद्य वटिकां कुर्याद्रत्तिकात्रयसम्मिताम् ॥२७३२॥
दद्देन्नौलयेन केनाऽपि पर्णखण्डोपणे युताम् ।
पैकाहिकं द्व्याहिकञ्च तृतीयकचतुर्थकौ ॥ २७३३ ॥
प्रस्कन्दनञ्च शमयेत्क्रूरं मुद्गसितायुतम् ।
पथ्यञ्च वर्जयेन्मासं राजिकां तैलमम्लकम् ॥ २७३४॥
टो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, हरिताल, मैनसिल, गन्धक, खपरिया, और सोनामाखी, सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर इसमे द्विगुणतांबेकेसम्पुटमें लेपकर २-४ कपडमिटी देकर सुखानेपर लवणयन्त्रमें बन्दकर ढकन लगाकर ३-४ कपडमिटीसे मुहको बन्दकरदे । फिर इसे चूल्हेपर चडाय एकपहरकी कडी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इसमे चतुर्थभाग तुत्थभस्म मिलाय जभीरी केरससे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोग और रोगीका बलाबल देखकर गुडमें गोलीकालपेट पानमें रखकर देनेसे एकाहिक द्व्याहिक, तृतीयक और चातुर्थिक इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तशोषमें मुद्गयूष और शक्करकेसाथ देना । एकमहीनेतक राई, तैल और खटाई नहीं देना ॥ ५६१ ॥

५६२ विषमारीरसः (महदादिः)

अशोधितं रसं तालं खर्परञ्च मनःशिलाम् ।
माक्षिकं हिङ्गुलं गन्धं शिखितुल्यं यथाक्रमम् ॥२७३५॥
मर्दयेद्याममेकन्तु भिषक् सम्यग्गुरूक्तितः ।
इन्द्राणिकाभृङ्गराजकारवल्लीजयारसैः ॥ २७३६ ॥
भेदयस्तं विमर्द्देत ततः कुर्यात्सुगोलकम् ।
भाण्डमध्यगतं ताम्रपात्रेणैनं पिधापयेत् ॥ २७३७ ॥
अभयारुष्करखटीकल्कैः सन्धिं लिम्पेद्गुरूक्तितः ।
सिकतापूरितं कृत्वा पात्रं किञ्चित्प्रदर्शयेत् ॥ २७३८ ॥
तत्र त्रिचतुराः सम्यङ्निवेश्याः शालयः शुभाः ।
दीपाग्निना पचेत्तावद्यावल्लाजा भवन्ति ताः ॥२७३९॥
स्वमायशीतलं ग्राह्यमपक्वार्कं न मेलयेत् ।
इन्द्राणिकाकारवल्लीस्वरसेन विमर्द्दयेत् ॥ २७४० ॥
गुञ्जात्रयं कोलकेन तुलसीरसनोऽपि वा ।
निर्गुण्डीमरिचाभ्यां वा रसोनेन गुडेन वा ॥२७४१॥
ज्वरांश्च विषमान्सर्वान्नाशयेच्छीतपूर्वकान् ।
दाहपूर्वाम्श्छीतयुक्तान्नाशयेद्विषमज्वरान् ॥ २७४२ ॥
पथ्यं दद्दीत गोक्षीरैः स्नेहाम्लौ वर्जयेद्ध्रुवम् ।
स्त्रीसङ्गो दूरतस्त्याज्यः शीताम्भः सम्परित्यजेत् ॥
विषमारि महान् प्रोक्तः शम्भुना रससागरे ॥२७४३॥
र.का , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—अशुद्धपारा, हरिताल, खपरिया, मैनसिल, सोनामाखी, शिंगरिफ, गन्धक, तूतिया सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर इन्द्रायण, भगरा, करेला और भांगकेस्वरसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय हण्डीकेबीचमें रख ऊपरसे तांबेकेसम्पुटमेंढक दें, मिलावे और खडियामिटीके कल्कमे सन्धिबन्दकर ऊपर ४ अङ्गुल बालूभर चूल्हेपरचडाय आंचदेवे । ऊपर परीक्षार्थ ६-७ धानडालदे । पहिले दीपाग्निसे शुरूकर क्रमसे बढावे । धानोंकीखील्हो जानेपर आंच बन्दकरदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर जितना तांबेकासम्पुटजलाहो उसे साथ घोटकर इन्द्रायण और करेलेकेस्वरसोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली बेर, तुलसी, निर्गुण्डी, मिर्च, लहसन अथवा गुडकेसाथदेनेसे शीतपूर्वक अथवा दाहपूर्वक समस्तविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें गायकादूध और चावलदे । चिकनाई और अम्लका परित्यागकरे । स्त्रीसङ्ग और ठंडेपानीका सेवन न करे ॥५६२॥

५६३ विषवज्रपातरसः (प्रथम.)

स्फटिकं स्फटिकां क्षारं स्वर्जिकाख्यं नृसारकम् ।
सैन्धवप्रणशावाणी तुल्यं सर्वं विचूर्णयेत् ॥ २७४४ ॥
मस्तुना कर्षमात्रन्तु पाययेद्विषदूषितम् ।
स्थावरं जङ्गमं वद्य गरं दूर्षीविषाद्दयम् ॥ २७४५ ॥

तत्सर्वं शमतां याति सत्यं गुरुवचो यथा।
शिलाऽऽलतिन्दुनेपालवचाहिङ्गूनि लेपयेत् ॥२७४६॥
नृ.क., विषाऽधिकारे।

भाषा—स्फटिकमणिकाचूर्ण, भुनीहुई फिटकड़ी, यवक्षार लोटासज्जी, नोसादरकेफूल, सेन्धव, गोदन्तीहरिताल (धापाण-गुजराती) इनसबको समभागलेकर अलग २ कपड़छानकरके सबको एकजगहमिलाकर रखलेवे। इसमेंसे पूर्णविषवेगाविष्ट प्राणीको १-१ तोला दहीकेपानीकेसाथ अथवा ठंढेपानीकेसाथ पिलावे। यदि विषवेग न हो तो दंशस्थानमें पाछलगाकर दवाको भरदे और मैनसिल, तबकीहरिताल, कुचिला, जमाल-गोटा, वच और हींग, इनको पानीमें पीसकरलेपकरे। इससे सांप, बीछू, कुत्ता, सियार, बाघ, भेडिया या अन्यकोईभी ज़हरी जानवर, तथा अफीम, गांजा, भाग, बछनाग प्रभृतिका-विष, वनावटी अथवा दूषीविष येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

५६४ विषवज्रपातरसः (द्वितीयः)

निशां सटङ्कञ्च सजातिकोषं
तुल्यं समांशं कुरु देवदाल्याः।
रसेन पिष्टो विषवज्रपातो
रसो भवेत्सर्वविषापहन्ता ॥ २७४७ ॥
निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो
नृमूत्रयोगेन च कालदष्टम्।
जटाविषेणाऽऽकुलितं तथाऽन्ये
विषे नरश्चाशु तथाऽऽतुरश्च ॥ २७४८ ॥

र.सं., र.सु., र.ल., वै.वि., र.म.मा., ना.वि., वृ.यो.त., ध., आ.प्र., र.र., र.कौ., र.चं., भै.सा., र.र.दी., र.का., विषाऽधिकारे।

टि०—र.ल., वै.वि., एतयो विषप्रहारीतिनाम। र.म.मा. विषघ्न इति नाम। कुत्रचित् "निशां सटङ्कञ्च सजातिकोष—" मित्यस्य स्थाने रस विष टङ्कणभूषणेति पाठो दृश्यते।

भाषा—हल्दी, सुहागा, जाविन्नी, तूतिया सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बन्दालकेरससे १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा पानीवगैरहकेसाथदेनेसे यह स्थावर और जङ्गम समस्तविषोंको दूरकरताहै। मनुष्यके मूत्रकेसाथ देनेसे कालदष्टकोभी नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ विषसूचिकारसः

रसं विषं सर्पविषं पाषाणं त्रिविधं तथा।
समांशं पेषयेद्यामं कङ्गुणीतैलमर्दितम् ॥ २७४९ ॥
अज्ञाने सङ्कटे चैव सन्निपाते महामये।
दापयेदार्द्रकद्रावैस्तिलमात्रं विचक्षणः ॥ २७५० ॥
सर्वेषु सन्निपातेषु शान्तिमाप्नोति लीलया।
विषसूचिकनामाऽयं वैद्यानां हितकारणम् ॥ २७५१ ॥
नारिकेलोदकं दद्यात्पियेद्वा शर्करोदकम्।
क्षीरान्नञ्च सिता पथ्यं रसराजो महानयम् ॥२७५२॥
र.क.यो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, बछनाग, सर्पविष, सफेद-लाल और पीला सोमल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर एकपहर माल-कांगनीके तैलसे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे तिलमात्र अज्ञात-सङ्कटसन्निपातमें देनेसे प्राणरक्षाहोतीहै। इसकेदेनेसे दाह उत्पन्नहो तो नारियलकाजल अथवा शक्करका शर्वत देना और पथ्यमें दूधभात तथा शक्कर देना ॥ ५६५ ॥

५६६ विषामृतरसः

निर्विषी सूतगन्धौ च प्रत्येकञ्च पलंपलम्।
दन्तीबीजं पलद्वन्द्वं द्विपलं तालकन्तथा ॥ २७५३ ॥
नारिकेलाम्बुना खल्वे मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं दोषज्वरविनाशनम् ॥
नेत्राञ्जनेप्रयोगं विषामृतमिदं स्मृतम् ॥ २७५४ ॥
वै.वि., दोषज्वरे।

भाषा—निर्विषी, शुद्धपारा और गन्धक १-१ पल, शुद्ध-जमालगोटा और हरिताल २-२ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ३ दिन नारियलकेजलसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तथा नेत्रोंमें लगानेसे यह सन्निपात और विषोंको नष्टकरताहै ५६६

५६७ विष्णुपराक्रमरसः

शुद्धौ पारदगन्धौ च टङ्कणञ्च विषं समम्।
त्रिक्षारं सैन्धवं तुल्यं सर्वं धुत्तूरजै द्रवैः ॥ २७५५ ॥
मर्दितं गोलकीकृत्य कुक्कुटीपुटपाचितम्।
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मत्स्यवाराहपित्तके ॥ २७५६ ॥
भावितं माषमात्रञ्च देयं शीतोदकं त्वनु।
सन्निपाते ज्वरे श्वासे दोषे विषमशीतके ॥ २७५७ ॥
अपस्मारे धनुर्वाते कम्पवाते च मूर्च्छने।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु इच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥ २७५८ ॥
मनुष्याणां हितार्थाय सर्वरोगभयापहः।
विष्णुना कथितः पूर्वं रसो विष्णुपराक्रमः ॥२७५९॥
व.रा., वै.वि., धा., सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, बछनाग, तीनोंक्षार, सेंधानमक येसब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमेंबन्दकर २-४ कपड़-मिट्टीदेकर गीलेहीको कुक्कुटपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोने-पर निकालकर मछली और सूअरके पित्तोंसे १-१ भावनादेकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली ठंढे पानीकेसाथ देनेसे सन्निपात, ज्वर, श्वास, विषमज्वर, अपस्मार, धनुर्वात, कम्पवात और मूर्च्छा इनसबको यह नष्टकरताहै। भूखलगनेपर इच्छानुसार पथ्यदेना ॥ ५६७ ॥

५६८ विसर्पनाशनरसः

तीक्ष्णाऽभ्रकान्तं विषनागगन्धं
तालञ्च ताप्यञ्च मृतं रसेन्द्रम्।

कौमारकन्दे क्रमभस्मनीतं
विसर्पनाशं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २७६० ॥

रसेन्द्रसं., चि. क., विसर्पे ।

भाषा—लोह, अभ्रक और कान्तभस्म, शुद्धवच्छनाग, नागभस्म, गन्धक, हरिताल, सोनामाखी और पारदभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारकेरससे मर्दनकर गोली बनाय घीकुंवारकीजडकेअन्दर रखदे और शरावसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपडमिट्टीदेकर सूखनेपर लघुपुटकी आंचदे जिसमें कि जड जलजाय और गन्धक वगैरह न उडनेपावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपरनिकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विसर्पको नष्टकरताहै ॥ ५६८ ॥

५६९ विसर्पशोषणरसः

तालकं शुल्वकं तुत्थं पारदश्चाऽर्द्धभागिकम् ।
मर्दयेल्लाङ्गलीतोयैः करवीरद्रवैस्तथा ॥ २७६१ ॥
शरपुङ्खाद्रवैश्चैव त्रिवारञ्च पृथक्पृथक् ।
ततो गजपुटे पाच्यं त्रिवारं मारितं शुभम् ॥ २७६२ ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं विसर्पेषु प्रयत्नतः ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तं पथ्यागुडमथापि वा ॥ २७६३ ॥
कल्पयेदनुपानं हि विसर्पतरयविस्तुधीः ।
अयं हन्ति मसूरीश्च विसर्पस्नायुकव्यथाम् ॥ २७६४ ॥

र. म. मा., ना. वि., विसर्पे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, तुत्थ और ताम्रभस्म १–१ भाग, शुद्धपारा आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कलिहारी, कनेर, शरपुङ्ख इनप्रत्येकके रसोंसे ३–३ भावनाएं देकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । ऐसे ३ गजपुटदेकर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा पीपल और मधुकेसाथ अथवा हरें और गुडकेसाथ देनेसे सबप्रकारके विसर्प, मसूरिका और स्नायुरोगोंको यह दूरकरताहै

५७० विसर्पारिरसः

सूतं गन्धं लोहचूर्णं दिनैकं
घृष्ट्वा नीरे योषविश्वयाः पचेत ।
मूषामध्ये भूधरे तस्य यत्नं
मध्याज्याभ्यां हस्तपादप्रतापे ॥ २७६५ ॥
दद्याद्वा राजवृक्षस्य नीर-
माध्वीकार्क्त मेफलेनाऽथवापि ।
घर्षेत्तीव्रे दुष्टतापप्रदेशे
ताम्रे मण्डे लेपयित्वा क्षिपेत ॥
स्नुह्यर्कोत्थं दुग्धकं टङ्कणाक्तं
धन्यं सर्पि जायते लक्षणोक्तः ॥ २७६६ ॥

र दी., विसर्पे ।

टि०—गौदरसेनाऽयमापातत समान प्रतिभाति परन्तु भावनामिपाकेन च वैलक्षण्यात्पृथक्तया निर्दिष्टोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण समभागलेकर तिलीकेरससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमेंआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ अथवा अमलतासकेगूदेकेपानीकेसाथ अथवा मध्वासव या त्रिफलाकेक्वाथकेसाथदेनेसे विसर्परोग नष्टहोताहै । जलनकेस्थानमें ताम्र अथवा माडकालेपदेकर सेहुण्ड और आकके दूधमें सुहागा मिलाकर रक्खे, अथवा इनचीजोंसे घीवनाकर लगावे ॥ ५७० ॥

५७१ विसूचिमर्दनरसः

शुद्धसूतस्य भागैकं नागजिह्वा तथैव च ।
त्रिभागो मृतनागश्च गन्धकश्चाऽष्टभागिकः ॥ २७६७ ॥
द्वात्रिंशद्भागसम्मानममृतश्चोपणन्तथा ।
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा दातव्यो गुञ्जमात्रकः ॥ २७६८ ॥
अजीर्णे च विसूच्याञ्च ज्वरे सामे मरीचकैः ।
त्रिदोषे रक्तिकायुग्मं पथ्यं देयं सुशीतलम् ॥ २७६९ ॥

ना. वि., विसूचिकायाम् ।

भाषा—शुद्धपारा और मैनसिल १–१ भाग, नागभस्म ३ भा., शुद्धगन्धक ८ भाग, शुद्धवच्छनाग और मरिच ३२–३२ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–१ रत्ती मरिचकेसाथ देनेसे अजीर्ण, हैजा और सामज्वर नष्टहोतेहैं । त्रिदोषमें २ रत्तीकीमात्रा देवे और शीतोपचारकरे ॥ ५७१ ॥

५७२ वीरचण्डेश्वररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्म विषन्तथा ।
वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्बवह्निगुडूचिकाः ॥ २७७० ॥
दिनं भृङ्गिद्रवे मर्द्यं वाकुच्याश्च कषायकैः ।
भक्षयेल्लोहपात्रस्थं धूमासे जिह्वकप्रणुत् ॥
वीरचण्डेश्वरो नाम्ना षण्मासात्सर्वकुष्ठजित् २७७१

र. सु., र. को., र क. ल, चि. क., र. का., कुष्ठे । र क. ल. वीरचन्द्रेति नाम । क्वचित्त्रिफलास्थाने त्रिवृता गृहीता ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और वच्छनाग, कान्तभस्म, बाकुची, त्रिफला, नीमकीछाल, चित्रककी जड और गिलोय सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा और बाकुचीकेक्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोडे । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक रोग और रोगीका बलाबल देखकर उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह १ महीनेमें ऋष्यजिह्वको और ६ महीनेमें समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ ५७२ ॥

५७३ वीरप्रतापरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं त्रिक्षारञ्च कटुत्रयम् ।
मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं प्रवालं मौक्तिकं समम् ॥ २७७२ ॥
त्रिफलायाः कषायेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
दिनं गजपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ २७७३ ॥

कौमारफन्दे अन्यत्र वीरभद्रेति पाठद्वयम्। रसमा-
विसर्पनाशं तन्त्र जाने केन कारणेन भ्रमवागुरा
रसेन्द्रम, चि. क., विसर्पे। स्वयमपि वागुराग्रस्ता आसन्निति
पाठोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावनीय।

भाषा—लोह, अभ्रक और, सोंफ, दोनोंजीरे, तीनोंक्षार
भस्म, गन्धक, हरिताल, सोन समभागलेकर इनका बारीकचूर्ण
समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अभ्रकभस्म १-१ पल लेकर
बनाय घीकुंवारकीजड़केअन्दर रख अदरखकेरससे १ दिन मर्दन
२-४ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर कर रखछोड़े। इनमेंसे १-१
जड़ जलजाय और गन्धक धनमक्खनकेसाथ अथवा जलकेसाथ
होनेपरनिकालकर रखछोड़े। इ है। यथार्थ भूखलगनेपर दूध,
चितानुपानकेसाथ देनेसे यह दोयार देना ॥ ५७६ ॥

५६९ विसर्पहरः (द्वितीयः)

तालकं शुल्यकं तुत्थं पारदं ऽल्लताप्यं
मर्दयेल्लाङ्गलीतोयैः कर्पार्द्ध नपित्तैः।
शरपुङ्खाद्रवैश्चैव त्रिवारञ्च पुटः
ततो गजपुटे पाच्यं त्रिवारं म ना वीरभद्र. ॥ २७९२ ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं विसर्पेषु प्र
पिप्पलीमधुसंयुक्तं पथ्यागुडक नाग, हरिताल, सोनामाखी,
कल्पयेदनुपानं हि विसर्पतर्त्या र नीलवर्णकज्जलीकर मछ
अयं हन्ति मसूरीश्च विसर्पका २ रत्तीकी गोलिया बनाकर
र.म.मा., ना वि, विसर्पे। शकर और अदरखकेरसकेसाथ
भाषा—शुद्धहरिताल, शु स्तवरोंको नष्टकरताहै ५७७
शुद्धपारा आधाभाग लेकर नीलवर्ण
शरपुङ्ख इनप्रत्येकके रसोंसे ३-३ रसः (तृतीयः)
शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकं स्कण्टकीद्रवैः।
निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे पेष्यं पुन.पुनः ॥ २७९३ ॥
अथवा पीपल और मधुकेसाथ र्वाङ्गे चाऽग्निघातके।
सबप्रकारके विसर्प, मसूरिका तारिणा पेपयेत्समान् ॥
५७० घाड्गतो विनश्यति ॥ २७९४ ॥
सूतं गन्धं लोहरोगे।
घृष्ट्वा नीरै ताम्रकीभस्म समभागलेकर २१ दिनतक
मूषामध्ये भूधर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े।
मध्याज्या समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे
दद्याद्वद्धा र नष्टहोताहै। ऊपरसे रेवनचीनी अथवा
माध्वीक अतीस और चित्रकमूल इनको पानीमें पीस-
घर्पेत्तीये दुकर पकाकर शरीरपर लेपकरे ॥ ५७८ ॥

ताम्रे मण्ड ९ वीरभद्राऽभ्रकम्

स्नुह्यर्कोत्थं दुग्ध कृयुग्ममतिनिर्मलीकृतम्।
धन्यं सर्पि जायते चकस्वरससाधुसिक्तकम्
र.दी., विसर्पे।

टि०—गौरसेनाऽयमापातत समान प्रति रानी।
पाकेन च वैलक्षण्यात्पृथक्तया निहितोऽस्ति।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण
त्तिलीकेरससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्द २७९६ ॥

वह्निमान्द्यमपहृत्य सत्वरं
कारयेत्प्रखरपावकोत्तरम्।
श्वासकासवमिशोथकामला-
प्लीहगुल्मजठराऽरुचिभ्रमान् ॥ २७९७ ॥
रक्तपित्तयकृदम्लपित्तकं
शूलकोपजगदान्विसूचिकाम्।
आमवातबहुवातशोणितं
दाहशीतबलहानिकार्श्यकम् ॥ २७९८ ॥
चिद्विधि ज्वरगरं शिरोगदं
नेत्ररोगमखिलं हलीमकम्।
हन्ति घृप्यतममेतदभ्रकं
वीरभद्रमतिवल्यमुत्तमम् ॥
भक्षितं विविधभक्ष्यमागलं
काष्ठसद्ममपि भस्मतां नयेत् ॥ २७९९ ॥

भै.र, र.सु, अग्निमान्द्ये।

भाषा—हजारपुटोंसे मारेहुए अभ्रकको १० दिनतक चित्रक-
के स्वरससे मर्दनकर सुखाकर अदरखकेरसमे ३-३ रत्तीकी
गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसके
साथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, श्वास, कास,
वमन, शोथ, कामला, प्लीह, गुल्म, उदररोग, अरुचि, भ्रम,
रक्तपित्त, यकृत, अम्लपित्त, शूल, बद्धोदर, हैजा, आमवात,
वातरक्त, दाह, शीत, बलनाश, कृशता, जहरबाद, ज्वर, गर,
शिरोरोग, नेत्ररोग, हलीमक, धातुक्षीणता, इनसबको यह नष्ट-
करताहै। कण्ठतक खाकर एकगोलीलेनेसे तत्क्षण जीर्णकरदेताहै

५८० वीररसः (महदादिः)

निष्कौ द्वौ तुत्थभागस्य रसादेकं सुसंस्कृतात्।
निष्कं विषस्य द्वौ तीक्ष्णात्कर्षांशं गन्धमौक्तिकात् ॥
अग्निपर्णीहरिलताभृङ्गाऽऽर्द्रसुरसारसैः।
मर्दितं लाङ्गलीकल्कप्रलिप्ते सम्पुटे पचेत् ॥ २८०१ ॥
अर्धपादे च पोट्टल्याः काकिण्यौ द्वे विषस्य च।
लिहेन्मरिचचूर्णञ्च मधुना पोट्टलीसमम् ॥ २८०२ ॥
क्षयग्रहण्यतीसारवह्निदौर्बल्यकासिनाम्।
पाण्डुगुल्मवतां श्रेष्ठो महावीरो हितो रसः ॥२८०३॥
अतिस्थूलस्य पूयासृक्कफानुद्वमतः क्षये।
न योजयेत्क्षीररसान्विरुद्धोपक्रमत्वतः ॥ २८०४ ॥

र र स, र सु, र को, राजयक्ष्मणि।

भाषा—तुत्थभस्म ८मासे, शुद्ध पारा और बछनाग ४-४
मा, फोलादभस्म ८ मा., शुद्धगन्धक और मोती १-१ कर्ष लेकर
बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अगिया
घास, पृश्निपर्णी, भगरा, अदरख, तुलसी इनके रसोंसे १-१ दिन
मर्दनकर गोलाबनाय करिहारीके कन्दके कल्कालेपदियेहुए
सम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी
आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अष्टमांश रसमें मृगाङ्क-
पोट्टली और शुद्धबछनाग २-२ रत्ती मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे

१ से २ रत्तीतकमात्रा ८ मिर्चोंकेसाथ मिलाकर मधुमें चटानेसे क्षय, ग्रहणी, अतिसार, मन्दाग्नि, काम, पाण्डु, गुल्म, मेद, भयङ्करक्षय इनसबको यह नष्टकरताहै । इसरसमें दूध और मांसरसका प्रयोग नहीं करना ॥ ५८० ॥

५८१ वीरविक्रमरसः (प्रथमः)

रसं विषं विषञ्चाऽभ्रं विषे टङ्कणगन्धकम् ।
तालकं दरदश्चैव हितुत्थं गजपिप्पली ॥ २८०५ ॥
निर्विषान्ते समं हिङ्गु मधुकं कटुरोहिणी ।
द्रोङ्गिपर्वतपाषाणं भार्गी मणिशिलात्रयम् ॥ २८०६ ॥
त्रिक्षारं पञ्चलवणं द्विशिला च द्विजीरकम् ।
कटुत्रयं दन्तिबीजं इष्वगिन त्रिरजाजिका ॥ २८०७ ॥
द्विकटुकं चविमूलञ्च कुष्टं कर्कटशृङ्गिका ।
कङ्कोलञ्च जटामांसी विषतिन्दुकबीजकम् ॥ २८०८ ॥
तीक्ष्णताम्रभयं भस्म नागं वङ्गञ्च रौप्यकम् ।
मृतमारं मृतं स्वर्णं शुद्धमौक्तिकविद्रुमम् ॥ २८०९ ॥
रत्नं मरकतं नीलं गोमेदं पुष्परागकम् ।
वैदूर्यवज्रभस्मापि समभागं विचूर्णयेत् ॥ २८१० ॥
धत्तूरवासाखदिरकार्पासैरण्डचित्रकैः ।
चिञ्चाऽब्दपाठाहलिनीबृहतीद्वयगोक्षुरैः॥ २८११ ॥
रक्तमुण्डीब्रह्मदण्डीमर्कटीशिग्रुभृङ्गजैः ।
विषमुष्टया काकमाचीवज्रवल्लीपुनर्नवैः ॥ २८१२ ॥
जम्बीरकन्याकुटजकारवेल्लीपटोलजैः ।
जयन्त्या चैव निर्गुण्ड्या तीक्ष्णकाप्लक्षझिण्टिकैः ॥
न्यग्रोधाऽश्वत्थपालाशपिचुमन्दशिरीषकैः ।
चूतपुन्नागपनसै र्वकुलैर्धत्तुरङ्कुलैः ॥ २८१४ ॥
माधवीमल्लिकाटङ्कनागाह्वकुमारिकैः ।
गाङ्गेरुकीधातकीभ्यां सर्पाक्ष्याः काकजङ्घजैः ॥२८१५॥
पाइपपामार्गधात्रीभिर्भूदन्त्यक्षशिवोद्भवैः ।
भावयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जामानिका भिषक् २८१६
स्नुहीक्षीराऽनुपानेन सर्वरोगान्विनाशयेत् ।
नाशयेद्रोगविपिनं तृणपुञ्जमिवाऽनलः ॥ २८१७ ॥
सन्निपातेषु सर्वेषु शीघ्रप्रत्ययकारकः ।
वीरविक्रमनामाऽयं सर्वदेशेषु पूजितः ॥ २८१८ ॥

भा. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग और पीलासोमल, अभ्रकभस्म, सर्पविष, सुहागा, गन्धक, हरिताल, शिंगरिफ, तूतिया, दाने-फिरंग, गजपीपल, निर्विषी, मुलहठी, कुटकी, सफेदसोमल, भारङ्गी, तीननरहकी मेनसिल, तीनोंक्षार, पांचोनमक, गेरू, सोनागेरू, दोनोंजीरे, त्रिकटु, जमालगोटा, शतपुष्प, चित्रककी जड़, तीनोंराई, पिपलामूल, गजपीपल, चव्य, कुट, काकड़ासींगी, शीतलचीनी, जटामांसी, कुचिला, फोलाद, ताम्र, नाग, वङ्ग, रजत, पीतल, सुवर्ण, मोती, प्रवाल, पन्ना, नीलम, गोमेद, पुख-राज, लसनिया, हीरा (इनसबकीभस्म) येसब १–१ भाग और सुर्मा-हींग, १३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धकप्रभृतिकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरा, अडूसा, खैर, कपास, एरण्ड, चित्रक, इमली, नागरमोथा, पाठा, कलिहारी, दोनोंभटकटैया, गोखरू, पलाश, गोरखमुण्डी, ब्रह्मदण्डी, केवांच, सहिजन, भंगरा, कुचिला, मकोय, हड़जोड़, पुनर्नवा, जंभीरी, घीकुंवार, कुरैया, करेला, परवल, जैंती, निर्गुण्डी, राई, पाकर, कटसरैया, वट, पीपल, पलाश, नीम, सिरस, आम, नागचम्पा, कटहर, मौलश्री, अमिलतास, माधवीलता, मोगरा, जर्दालु, गजपीपल, बांझखेखसा, गंगेरन (गुलसिकरी), धावड़ी, सर्पाक्षी, काक-जङ्घा, वरुण, अपामार्ग, आवले, छोटीदन्ती, बहेड़ा और हर्रेके स्वरसोंसे १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली थूहरकेदूधकेसाथ देनेमे तृण-पुञ्जको अग्निकीतरह सन्निपातादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । बहुतही शीघ्र अपने प्रभावको दिखाताहै और सबदेशोंमें बरा-बर अनुकूल पड़ताहै ॥ ५८१ ॥

५८२ वीरविक्रमरसः (द्वितीयः)

पारदं टङ्कणं गन्धं विषतिन्दुकबीजकम् ।
सैन्धवं ग्रन्थिकं हिङ्गु समभागं विचूर्णयेत् ॥२८१९॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं कोलपित्तेन मर्दयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वान्वै सन्निपातकान् ॥
निहन्ति तत्क्षणाच्छीघ्रं रसोऽयं वीरविक्रमः ॥२८२०॥

वै. चि., र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, सुहागा, गन्धक और कुचिला, सेंधा-नमक, पिपलामूल, भुनाहींग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वराहकेपित्तसे १ दिन-मर्दनकर कपड़ेमें पोटली बनाय धतूरेप्रभृति सन्निपातनदर्नोंमें दोला-यन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगीकेअनुमानके-साथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ५८२ ॥

५८३ वीर्यस्तम्भनवटी

पारदस्य त्रयः कर्षाः पञ्च लोहस्य कीर्तिताः ।
मर्दयेद्याममाधन्तु धूर्तबीजसमुत्थितैः ॥ २८२१ ॥
तत्कल्कं विषमध्ये तु घस्रयुग्मं विले क्षिपेत् ।
पञ्चबाणपतेस्तैले गुटिकां पाचयेत्सुधीः ॥ २८२२ ॥
चक्रमध्ये क्षिपेत्ताञ्च स्तम्भनं परमं भवेत् ।
नारीसहस्रं रमयेन्मुखमध्ये निधापयेत् ॥
पञ्चबाणविवृद्धिः स्याद्गुटिका राजपूजिता ॥२८२३॥

मी. वि., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा ३ कर्ष और लोहभस्म ५ कर्ष लेकर एकदिन इनको मर्दनकर धतूरेकेबीजोंकेतेलमें गोलीबनाकर मर्दनकरे । गोलीको बछनागकेकल्कमें रखकर मुंदको बन्दकरके बन्दकर ६–७ सहस्रपाकेमें और उसको भाटेमें गोलबनाय धतूरेके-

तैलमें आगपालनेतक पकानस पारेकीगोला तैयारहोगी । इसको मुहमें रखनेसे दृढ बाजीकरणहोताहै और शुक्रकी वृद्धिहोताहै ।

५८४ वृकोदरवटी

सूतगन्धकतीक्ष्णाऽभ्रं सताप्यं सममागिकं ।
रसाशमपर सर्वं पञ्चकोल जीरकद्वयम् ॥ २८२४ ॥
सौवर्चल ससिन्धूत्थ विडङ्गञ्च हरीतकी ।
अम्लवेतसकं सर्वं बीजपूराम्बुमर्दितम् ॥
गुटिकास्तेन कल्केन कार्या कोलास्थिमात्रका ॥
योगिन्या बहुधातिर्नीति सतत त्रैलोक्यविख्यातया,
निर्दिष्टा हि वृकोदरीति गुटिका साप्यणामुना सेविता।
नि शेपाऽनिलदोपशोपजरज श्लेष्माऽऽमरोगाद्भव
मन्दाग्निं ग्रहणीं चतुर्विधमहाजीर्णञ्च चूर्णं जयेत् २८२५
र र स र च र को र क ॥ वातव्याध्यधिकार । र
सु प्रभावता वर्तीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक फोलाद अभ्रक और सुवर्ण माक्षिकभस्म पञ्चकोल (पीपल पिपलामूल चव्य चित्रक सोंठ मिर्च) दोनोंजीर सचल सेन्धव विडङ्ग हरें अमलवेत सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीबूकाजलमें मिलाय बिजोरेकारसस १–२ दिन मर्दनकर बेरकीगुठलीके बराबर गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंस १–१ गोली गरम पानीकासाथलेनस वातरोग शोष कफरोग आमरोग मन्दाग्नि ४ प्रकारकी ग्रहणी घोर अजीर्ण इनसबरोगोंको यह तत्काल नष्टकरतीहै । ५८४ ॥

५८५ वृद्धदारुकल्पः

वृद्धदारविदृ तीन्द्रवार्जुनगोक्षुरा ।
धाव्यालम्बराजस्णी च वाजिगन्धा शतावरी ॥२८२७॥
कार्पासी पृश्निपर्णी च वहिर्धियाऽपराजिता ।
कञ्चुकी तालमूली च वृहत्पत्रा पलाशिका ॥ २८२८॥
ग्रन्थिक चित्रकश्चैव विश्वदेवा वचाऽमृता ।
पाणपुष्पी च पाठा च निम्बा वरुण एव च ॥ २८२९ ॥
शिग्रु कुटिशभृङ्गी च मुण्डी च कालिनाम्बका ।
अकक्षार शताहा च वचा चव्य फलत्रिकम् ॥ २८३० ॥
यवानी चाजमोदा च द्विजार धान्यतण्डुल ।
विडङ्गमुस्तताम्रास निशे लवणपञ्चकम् ॥ २८३१ ॥
एला पुष्करनागाह त्वक्पत्र हस्तिपिप्पली ।
पञ्च कुष्ठ शटी रेणु जल हिंगु सयालकम् ॥ २८३२ ॥
पापाणभेदा वृक्षाम्ल भद्रात्वग्वितुन्नका ।
पलिका भागता ग्राह्या गुडूची त्रिवदारुके ॥ २८३३॥
स्नुहार्पमदाम्रपार्श्वा ह्रिसरी विडङ्गुणा ।
स्वर्जिका यावशूकाख्या चैया क्षारा पलोन्मिता २८३४
अभ्रकस्य पलान्यष्टौ चत्वारो गन्धकस्य च ।
पलद्वय रस ग्राह्य लोह चाष्टपल तथा ॥ २८३५ ॥
गवाक्षी भृङ्गकदली च शालिञ्च कदारीनकम् ।
मानकन्द वह्निहृश्च दहना हस्तिकर्णक ॥ २८३६ ॥
भल्लातो मुशली गुण्डा त्रिफला वज्रवल्ल्यपि ।
एपा रसे पृथग्लाह पुटयन्मदयत्तथा ॥ २८३७ ॥
ग्रन्थिमा मारिपश्चैव क्षार वृहतिरा तथा ।
उत्कण्ट लोहिता वहि माणा बाणश्च तद्रसे ॥२८३८॥
पुटयेद्भ्रकश्चैवमयश्चैव यथाविधि ।
कालशाकिनिपिष्ट पयसा सयुतेन च ॥ २८३९ ॥
यावत्पिण्डो भवत्तावच्छोषयेन्मृदुवह्निना ।
एकीकृत्य शुभ भाण्डे स्थापयद्रसमुत्तमम् ॥ २८४० ॥
सर्पिषा मकरन्देन भक्षयत्प्रयह तु स ।
पिवेच्चाऽनु पय क्षार चूर्णं मासरसं तथा ॥ २८४१॥
भाजन चाऽग्निसापेक्ष कार्यञ्चैव सह तथा ।
निहितञ्च मितं चाथाद्दौपधे पाकमागते ॥ २८४२ ॥
आहारेण सम कार्यं नित्यमेवाऽल्पवह्निना ।
अग्निवृद्धिकर कायरोगाणाञ्चाऽपहारक ॥ २८४३ ॥
वात पित्त कफे शूल हृद्रोगे श्वासकासयो ।
क्षय च विविधे घोर शोथ चैवाऽङ्गसङ्ग्रहे ॥ २८४४ ॥
आमवाते त्रिके शूले पक्तिशूल च सङ्गे ।
अम्लपित्त सशूले च शोथ सर्वोदर तथा ॥ २८४५ ॥
वन्ध्याये पुत्रप्राप्त्यर्थं पुसश्चैव भिषक्तमै ।
अयमेव हितो नित्यं शुक्रवृद्धिकर पर ॥ २८४६ ॥
व स रसायन ।

भाषा—विधारा निसोत दन्ती कम्भ अजन गोखरू नागबला मलेठीशतावर असगन्ध शतावर कपास पिठवन पृश्निपर्णी, चित्रकमूल कोयल कचुरी (नागदौन) तालमूली महुलान (कण्टी) पलाशदल (ढाकदल) पिपरामूल अथवा वाराहीकन्द लालचित्रक दोनों वच गिलोय कटसरैया पाठा कुटकी वरुण सहिजन मेदासिंगी मुण्डी भंगरा गोरखमुण्डी तालमखाना आकका दूध सोंफ कुम्भिका चव्य त्रिफला, अजवाइन अजमोद दोनोंजीरे धनियाँ चावल विडङ्ग मोथा तालीसपत्र दोनोंहल्दी पांचोंनमक इलायची पोहकरमूल नागकेसर तज पत्रज गजपीपल आमर्द कूठ कपूर रेणुका खस भुनाहींग मुराधवाला पाषाणभेद चोकस नागरमोथा और सुरवारी १–१ पल गिलोय गाठ देवदारु महुवा पलाशकीजडकीछाल थूहर आकपीपल अपामार्ग बनभाटा, मालकाँगनी सज्जी यवक्षारसबकाखार १–१ पल अभ्रकभस्म ८ पल शुद्धगंधक ४ पल शुद्धपारा २ पल लोहभस्म ८ पल लेकर सबको बारीकचूर्णकर पारागंधकी बाकीसबदवाओंमें मिलाय इन्द्रायण भंगरा अपामार्ग सहदेवी कालाभंगरा मानकन्द कलम चित्रक हस्तिकर्णपलाश भिलावा मुशली सोंठ त्रिफला हड़जोड़ सहिजन ममा बड़फल, बनभांग ऊँटकटारा लालचित्रक मानकन्द, दापुड़ इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर इन सबकेपिण्डको बराबर अरलीकी (इमुक्र किरकिल यूनानी) काकल्क और गायकादूध मिलाकर मन्दाग्निमें पकावे । पक तदनन्तरोनाष्ट उतारकर इस सुगन्ध पृथक्सार

रखछोड़े । अथवा ३-३ माशेकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े । प्रकृति और बलका विचारकर १ गोलीसे २ गोलीतक घी और मधुकेसाथ मिलाकर खिलावे । ऊपरसे दूध, खीर, यूष तथा मांसरस औचिती देखकर दे । पाचनहोनेकेबाद हल्का और बलकारक खुराक दे । इसकेसेवनकरनेसे वात, पित्त, कफ, शूल, हृद्रोग, श्वास, कास, नानातरहके धातुक्षय, राजयक्ष्म, शोथ, अङ्गकाजकड़ना, आमवात, त्रिकशूल, पक्तिशूल, सर्वाङ्गशूल, अम्लपित्त और उदररोग प्रभृतिको नष्टकर अग्निको बढाताहै और शरीरको पुष्टकरताहै । यद्यपि ग्रन्थकारने यहापर वैसेही भाण्डमें रखना लिखाहै परन्तु दूधकायोगहोनेसे सड़नेका भयहै इसलिये इसको सुखाकर रखनाचाहिये ।

विशेषसूचना—ग्रन्थकारने इसपाठको इसतरहलिखाहै कि उससे इतिकर्तव्यता मालूम नहींहोती । इसलिये इसमें जो लोह और अभ्रक आयेहै उन्हें साधारणरीतिसे तैयार न करना किन्तु इन्द्रायणसे लेकर हड़जोड़तकके रसोंमें मर्दनकर लोहकीभस्मकरना और गठिवनसे लेकर कटसरैयातकके रसोंसे अभ्रकको तैयारकरना फिर इन्हींके रसोंसे अभ्रक और लोहको २१-२१ भावनाए देकर इसयोगमें मिलाना ॥ ५८५ ॥

५८६ वृद्धदार्वाद्यंलोहम्

वृद्धदारत्रिवृद्दन्तीगजपिप्पलिमाणकैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकं त्वयः ॥
सर्वानेव गदान्हन्ति केसरी करिणो यथा ॥ २८४७ ॥

र.स., र.र., ध., र.चि., यो.म., र.सु., र.चौ., र.का., आमवाते । र.क. आमवातान्तकेति नाम ।

भाषा—विधारा, निसोत, दन्ती, गजपीपल, मानकन्द, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिजात इन समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ४ रत्तीतक रामय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे यह आमवातप्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

५८७ वृद्धिनाशनरसः (वृद्धयाटवीकुठारः)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं हेममाक्षिकम् ।
पथ्यारसेन त्रिदिनं रुबुतैलेन वासरम् ॥ २८४८ ॥
मर्दितं सिद्धिमायाति रसेन्द्रो वृद्धिनाशनः ।
सपथ्यारुबुतैलेन सेविता वल्लमात्रकः ॥ २८४९ ॥
मुष्कवृद्धिजयत्याशु कर्णस्फोटरसेन वा ।
बलातैलेन वा लिह्याच्चणकक्वाथतोऽपि वा ॥ २८५० ॥
प्राणदायवशूकाभ्यां पथ्यारुबुकतैलयुक् ।
वृद्धयाटवीकुठारोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ २८५१ ॥

रसायनसं., र., नि. र., ब. रा., र.च., वृद्धयधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, सुवर्णमाक्षिक २ भाग लेकर नीलकण्ठवलीकर हरेंके स्वरसमें ३ दिन और एरण्डकेतैलमें एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हरें और एरण्डीका तेल, कनफोड़ी (शिवलिङ्गी) कारस, बलातैल, चनेकाक्वाथ, यवक्षारयुक्तहरेंकाक्वाथ, हरें तथा कालानमक और एरण्डतैल इनमेंसे किसीएककेसाथ देनेसे अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८७ ॥

५८८ वृद्धिबाधिकावटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मृतमेतन्नियोजयेत् ।
लोहं वङ्गं तथा ताम्रं कांस्यञ्चाऽथ सुमारितम् २८५२
तालकं तुत्थकञ्चाऽपि तथा शङ्खवराटकम् ।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं विडङ्गं वृद्धदारुकम् ॥ २८५३ ॥
शटीं मागधिकामूलं पाठां सहपुषां वचाम् ।
एलाबीजं देवकाष्ठं तथा लवणपञ्चकम् ॥ २८५४ ॥
एतानि समभागानि चूर्णयेदथ कारयेत् ।
कषायेण हरीतक्या वटिकां माषसम्मिताम् ॥ २८५५ ॥
एकैकां वटिकां यस्तु निगिलेद्वारिणा सह ।
अण्डवृद्धिरसाध्याऽपि तस्य नश्यति सत्वरम् २८५६

भा.प्र., वै.र., वै.द., भै.र., रसायनसं., र.प्र., यो.म., र.क.ल., र.म.मा., चि.क., वृद्धयधिकारे ।

टि०—अयमेव पाठः केनाऽपि धूर्तेन अनङ्गदिपिकेसगीनाम्ना प्रख्यापितः स चिकित्साक्रमकल्पवल्लीकारेण तन्नाम्ना प्रकाशितः, अतः चिकित्साक्रमकल्पवल्लीरचयितुः न दोषः किन्तु स महीन्द्रनामधूर्तस्याऽपराधोऽस्ति । द्वित्रस्थाने कुतः न्यूनाऽधिक्यन्तु न पाठान्तरसाधकं महत्त्वाऽभावात् । स पाठो यथा—

सूतं गन्धकनागवङ्गसहितं रङ्गं सताम्रं मृतं,
तालं तुत्थवराटशङ्खसहितं सन्दध्य सर्वं पुनः ।
सचूर्णं कटुकत्रयं त्रिफलया चव्यं विडङ्गं वचा,
पाठाशटीनलदा च पञ्चलवणं गीर्वाणदारुद्धिरम् ॥
भद्दारु हपुषात्वचञ्च जरठं दारु समं पेषयेत्,
क्वाथेनैव शिवाभवेन गुडिका कर्तव्या वर्तिताम् ।
एकैका वटिका शीतपयसा प्रातर्निगलेत्सदा—
स्तस्याशु सत्वं प्रयाति सहसा रोगाऽण्डवृद्धिः परः ॥
नित्यं पथ्यरतस्य मन्मथहरणी ख्याता वटी नामतः,
श्रीमद्वैद्यमहीन्द्रशास्त्रिरचिता मन्मथिरे केसरी ॥ इति ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, वङ्ग, ताम्र, कांस्य, हरिताल, तूतिया, शङ्ख और कौड़ी इनकीभस्में, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, विडङ्ग, विधारा, कचूर, पिपलामूल, पाठा, झाऊ, बचा, इलायची, देवदारु, पांचोंनमक, येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पीछेगन्धककज्जलीमें मिलाय हरेंकेक्वाथमें १-२ दिनमर्दनकर १-१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जलकेसाथलेनेसे असाध्यभी अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८८ ॥

५८९ वृद्धिमातङ्गकेसरीरसः

मृतं सूतं ताम्रकञ्च मृतं हेम मृताऽभ्रकम् ।
मृतं शुद्धं गोनसञ्च सर्वमेतत्समांशकम् ॥ २८५७ ॥
गुञ्जाप्रमाणं प्रत्येकं पार्थते पलमात्रकम् ।
यामं प्रमर्दयेच्छुद्धं त्रिपथुग्निम्बे ततः ॥ २८५८ ॥

भावनैका प्रदातव्या चित्रकस्य नलस्य च।
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दत्त्वा संशोष्य चातपे ॥२८५९॥
विषं कर्षमितं चाऽथ मरिचं पलमात्रकम्।
दत्त्वा माषकसम्मानं पर्णखण्डेन दापयेत् ॥ २८६० ॥
दोषोत्थमेदोमूत्राऽन्त्रवृद्धिमन्त्रगदं तथा।
गोधिकां विद्रधिं पाण्डुं मूत्रदोषमरोचकम् ॥
जयेज्ज्वरं धातुगतं श्लीपदं नाशयेदसौ ॥ २८६१ ॥

र.म.भा., ना वि., वृद्ध्यधिकारे।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त इनसबकीभस्में २-२ कर्ष, शुद्धगन्धक १ पल लेकर बारीकचूर्णकर शुद्धवृश्चिकेके रससे १ पहर भावना देकर चित्रक और नरकटके स्वरसोंकी ३-३ भावनाएं देकर शुद्धवत्सनाग १ कर्ष और मरिच १ पल मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथदेनेसे वात, पित्त, कफ, मेद अथवा मूत्रजन्यवृद्धि, अन्त्ररोग, घद, अरुचि, पाण्डु, मूत्रदोष, अरुचि, धातुगतज्वर, श्लीपद इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५८९ ॥

५९० वृद्धिहररसः

रसं गन्धं विषं व्योषं तथा लवणपञ्चकम्।
त्रिक्षारं जयपालञ्च मर्दयेद्वह्निवारिणा ॥ २८६२ ॥
रक्तिमात्रां वटीं कृत्वा पाययेत्पयसा सह।
अनेन प्रशमं यान्ति वृद्धिमन्त्रादयो गदाः ॥ २८६३ ॥

आ. वि. वृद्ध्यधिकारे।

टि०—अय रसोऽष्टमनाराचरसेनाऽक्षरशः साम्यमावहति केवल नाराचे जयपालाऽभावोऽस्ति, भावनाऽपि क्षीरेण दत्ताऽस्ति, पाकश्च विशेषतया दत्तोऽस्त्यनन्तरमादरय स्तनन्यताऽस्तीति बोद्धव्यम्।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, बच्छनाग, त्रिकुटु, पांचोंनमक, तीनोंक्षार, शुद्धजमालगोटा येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रकके रससे एकदिनमर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दूधकसाथदेनेसे अण्डवृद्धि तथा अन्त्ररोग निवृत्तहोतेहैं ॥ ५९० ॥

५९१ वृषभध्वजरसः

स्वर्णं रौप्यसुनागवङ्गसमयुग्लोहं द्वितात्रं मृतं,
कान्तं त्रीरसगन्धयोरमलयारेकद्विसङ्ख्याकयोः।
रौद्रे सप्त विभावितं मणिशिला तालद्विभागोऽमलः,
दन्त्याः षट्त्रिकभागकश्च दरदं कर्कोटकीटङ्कणम् ॥
भार्ङ्गीचित्रकसिंहवारुणिनृपा निर्गुण्डिताम्बूलिका,
रम्भा सैडगजोरुबूकजरणा रास्नाम्बुविष्णुप्रियाः।
भाव्यश्चैव पृथक् त्रिभि र्वररसै र्वल्लप्रमाणो रसः,
श्वासं सर्वविधं ज्वरं विषमजं कासञ्च पञ्चात्मकम् ॥
गुल्मं पीनसमार्तवं जठरजं शूलाऽपतानं महा-
मन्दाग्निञ्च वृषध्वजो रसवरो रोगानशेषाञ्जयेत् ॥

र.सा., श्वासकासयोः।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, नाग, वङ्ग १-१ भाग, लोह और ताम्रभस्म २-२ भा., कान्तभस्म ३ भा, शुद्धपारा १ भा., गन्धक २ भा., अगस्त्यकेरसमेंघोटकर ७ वार धूपमें सुखाईहुई मैनसिल और हरिताल २-२ भा, दन्ती ६ भा., शिंगरफ, खेरसारीजड़ और सुनागुहागा ३-३ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भारङ्गी, चित्रक, भटकटैया, इन्द्रायण, अडूसा, निर्गुण्डी, पान, अनन्तमूल, पंवाड़, एरण्ड, जीरा, रास्ना, नागरमोथा, तुलसी इन प्रत्येकके रसोंसे ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे श्वास, सबप्रकारकाज्वर, विषमज्वर, ५ प्रकारका कास, गुल्म, पीनस, आर्तवदोष, जठररोग, शूल, अपतानक (खींचतान), घोरमन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५९१ ॥

५९२ वृष्यगणचूर्णम्

वृष्यगणतुल्यं तत्पुटपक्वं घनं सिताद्विगुणम्।
वृष्यात्परमतिवृष्यं रसायनं चूर्णरत्नमिदम् ॥ २८६६ ॥

रसायनसं., रसायने।

टि०—शतावरी, विदारी, गोक्षुरक, वानरी, इक्षुरक, नागबला, बला, अतिबला इति वृष्यगणेनैतद्ग्राह्यम्। अत्र गन्धमूर्च्छित रसमप्यादिशन्ति ददति दाक्षिणात्या, अनुपेय दुग्धादि।

भाषा—शतावरी, विदारी, गोखरू, केंवाच, तालमखाना, नागबला, बला, कङ्घी और अभ्रकभस्म सबसमभागकर चूर्णकर इन्हींके रसोंसे ६-७ भावनाएं देकर गोलाबनाय एरण्डपत्रादिके पत्तोंमें लपेटकर पुटपाककर सुखाकर दूनीखांड मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक मात्रा बलाबलदेखकर दूधकेसाथ देनेसे यह समस्तधातुविकारोंको नष्टकर फिरसे जवानी देताहै।

५९३ वृष्यराजवटी (प्रथमा)

कृष्णोन्मत्तजयावीजान्युरगश्चाऽहिफेनकम्।
समुद्रशोषजं बीजं रसगन्धकमेव च ॥ २८६७ ॥
समं सञ्चूर्णयेत्सर्वं स्थूले जातिफले क्षिपेत्।
माषपिष्टेन लेप्यं तद्द्वारं सम्यग्दृढं यथा ॥ २८६८ ॥
कृष्णधत्तूरफलगं दुग्धे दोलागतं पचेत्।
उद्धृत्य कृष्णधत्तूरफलादन्यफले क्षिपेत् ॥ २८६९ ॥
त्रि.पक्वमेवं ज्ञात्वाथ पलं श्लक्ष्णं विचूर्णयेत्।
मरिचेन समान्कृत्वा वटकानिषगुत्तमः॥ २८७० ॥
रात्रौ भुक्तवते दद्यान्मधुना सितया सह।
वृष्यराज इति ख्यातो योगो वृष्येषु चोत्तमः २८७१

टो., र. म. भा., र. पा. वाजीकरणे। र. म. भा. वृष्यशीति नाम।

भाषा—कालाधतूरा और भांगेकेबीज, नागभस्म, अफीम, समुद्रशोषकेबीज, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बड़ेजायफलके अन्दर कोरकर रखदे। उसके धतूरेकेरसमें सनाहुआ उड़दका आटा लगाकर धतूरेकेफलमें गोलेकोरख मोदुग्धमें दूध

एकपहर स्वेदनकरे । फिर पहिलेफलमेंसे निकाल दूसरेफलमें रखकर स्वेदितकरे। इसतरह ३ फलोंमें स्वेदनकरनेकेबाद आटेको निकालदे और जायफलको बारीकपीस मिर्चबराबर गोलियां बनाकर रखछोडे। थोड़ाभोजनकरनेकेबाद रात्रिमें इसमेंसे १-१ गोली मधु और शक्करकेसाथदेनेसे यह यथेष्ट स्तम्भनकरताहै५९३

५९४ वेतालरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं हरितालं समाक्षिकम् ।
मर्दयेच्छिलया तावद्यावज्जायेत कज्जली ॥ २८७२ ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ कारयेद्वटिकाः शुभाः ।
गुञ्जामात्राः प्रदातव्याः सन्निपाते सुदारुणे ॥२८७३॥
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं भयङ्करम् ।
ईशेन कथितो ह्येष वेतालाख्यो महारसः ॥ २८७४ ॥
अस्य मात्रा गुञ्जमिता पिप्पली मधुसंयुता ।
योज्या वाते तथा शिग्रुरसेनाऽऽर्द्ररसेन वा ॥२८७५॥
सितया जीरकेणाऽपि देया पित्तज्वरे बुधैः ।
शर्करामधुयष्टीभ्यां भूनिम्बसितयाऽथवा ॥ २८७६ ॥
शीतज्वरेषु योज्या सा पिप्पलीमधुसंयुता ।
अथवा मधुशुण्ठीभ्यामनुपानेन रोगजित् ॥ २८७७ ॥

रसायनसं., र. सं., र. चं., वै. क., र. सु., व. रा., भै. र., ज्वराऽधिकारे ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहे रसायनाऽधिकारः । र. म. माक्षिकस्थाने मरिच नियोजितम् । तथा च-"दन्तपङ्क्ति र्दृढा यस्य लोचने भ्रान्ततारके । नश्यन्ते नेन्द्रियग्रामे वेताल विनियोजयेत् ॥ म्लानेषु क्लिष्टेषु मोहमरणेषु देहिषु । दातुमर्हति वेताल यमदूतनिवारकम् ॥" इति द्वौ श्लोकावधिकतया दृश्येते, आर्द्रकस्य भावनाया अभावः । कुत्रचिदार्द्रकरसेन त्रि.सप्तकृत्वो भावना दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, हरिताल और सुवर्णमाक्षिक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य सन्निपातको यह नष्टकरताहै । सहिजन और अदरखकेरसके साथ वायु; शक्कर और जीरेकेसाथ पित्तजरोग; मुलहठी और शक्कर अथवा चिरायता और शक्करकेसाथ शीतज्वर नष्टहोताहै । अन्यरोगोंमें पीपलमधु अथवा मधु और सोंठकेसाथ देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५९४ ॥

५९५ वेतालरसः (द्वितीयः)

अभ्रकं मृतलोहञ्च शुद्धं सूतं शिलाजतु ।
ताप्यं वाकुचिबीजानि त्रिफला मुशली समम्॥२८७८
सत्र्योषं चूर्णितं लेह्यं मधुना निष्कमात्रकम् ।
मासैकं नाशयेत्सिध्म वेतालोऽयं महारसः ॥२८७९॥

र. र., व. रा., र. का., वै. चि., कुष्ठाऽधिकारे ।

टि०—बनारसैकै बाकुचीस्थाने अङ्कोलबीजानि गृहीतानि । स्वेदेन भैरवे सम्बन्धकृतेन ।

भाषा—अभ्रक और लोहभस्म, शुद्धपारा, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक, वाकुची, त्रिफला, मुसली और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय रखछोडे । इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा मधुकेसाथलेनेसे सिध्मरोग नष्टहोताहै ॥ ५९५ ॥

५९६ वेदनान्तकरसः

शुद्धाहिफेनघनसारमदावहाख्याः
सिन्दूरसूततगरोत्पलशारिवाजाः ।
कर्चूरकेशविजयोत्पलशारिवाजै-
र्द्रावैर्विमृद्य वटिकांकुरु नेत्रगुञ्जाम् ॥२८८०॥
जाङ्गलानां रसैर्दुग्धैर्वृष्यैर्वाजीकरैरयम् ।
केवलेन जलेनाऽपि योजितो वेदनान्तकृत् ॥ २८८१ ॥
विसूचीग्रहणीगुल्मान् गात्राणां स्फुटनव्यथाम् ।
अध्वश्रमाऽतिसारादीन्स्वानुपानैर्विनाशयेत् ॥२८८२॥

नृ. क., विसूचिकादौ ।

भाषा—शुद्धअफीम, कपूर, खुरासानी अजवाइन, बहेड़ा, रससिन्दूर, तगर, कमलगट्टा, सारिवा येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर कचूर, सुगन्धवाला, भांग, कमलपुष्प और सारिवाकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली जाङ्गलपशुपक्षियोंके मांसरस, दूध, वृष्यगण और वाजीकरण द्रव्योंकेसाथ अथवा अभावमें केवल जलकेसाथ देनेसे हैज़ा, ग्रहणी, गुल्म, अङ्गोंका फूटना, मार्गगमनादिजनित थकावट, अतिसार प्रभृति समस्त रोगोंको यह अपने अपने अनुपानोंसे नष्टकरताहै ॥५९६॥

५९७ वेदविद्यागुटी

पारदाऽभ्रककान्तानां नागभस्म समं समम् ।
दिनं भ्राङ्गीरसे मर्द्य यातुकायश्रगं पुनः ॥ २८८३ ॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्चूर्णं जारिताऽभ्रं शिलाजतु ।
ताप्यं मण्डूरवैक्रान्तं कासीसं तुल्यमेव च ॥ २८८४ ॥
सर्वं सर्वसमञ्चूर्णं कल्कयेच्च ततः पुनः ।
मुस्ताचन्दनपुन्नागनारिकेलस्य मूलकम् ॥ २८८५ ॥
कपित्थरजनीदार्वीचूर्णं सर्वसमं भवेत् ।
जम्बीराणां द्रवे मर्द्यं दिनमेकं वटकीकृतम् ॥ २८८६ ॥
वेदविद्यावटी नाम्ना भक्षणाद्विशमेहजित् ।
मधुधात्री रसश्चाऽनु क्षौद्रेणापि गुडूचिका ॥
अङ्कोलस्य तु बीजं रात्रौ दार्वीरसं पिबेत् ॥२८८७॥

भै. र., र. को., र. का., व. रा., रसायनस., यो. म., प्रमेहाऽधिकारे । यो. म. भ्राङ्गीरसस्थाने भृङ्गराजेन मर्दनं विहितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, अभ्रक, कान्त और नागभस्म येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर भाङ्गीरसमें एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय धातुसम्पुटमें बन्दकर एकदिनकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमें अभ्रकभस्म, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक, मण्डूर, वैक्रान्त और कासीस येसब समभागलेकर

वारीकचूर्णकर पूर्वचूर्णमें समभाग मिलावे । फिर नागरमोथा, सफेदचन्दन, नागचम्पा, नारियलकीजड़, कैथ, हल्दी, दारुहल्दी, येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वराशिकेबराबर मिलाय जमीरीकेरससे २ पहर मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और आवलोंकेरस अथवा मधु और गिलोयकेरसकेसाथ देनेसे यह इक्षुप्रमेहको नष्टकरतीहै । अङ्कोलकाबीज १ नग और रसौत १ माशा रात्रिमें दूधकेसाथदेवे ॥ ५९७ ॥

५९८ वेदविद्यारसः

रसभस्म त्रिभागञ्च भागैकं तारभस्मकम् ।
मृतमभ्रञ्च लोहञ्च कासीसञ्च मनःशिला ॥ २८८८ ॥
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
निर्गुण्डीमुशलीवासाजयाजेरम्भिमन्थजैः ॥ २८८९ ॥
अभयाऽऽर्द्रकजै मर्द्यं सप्ताहञ्च पृथक्पृथक् ।
तद्गोलं कूपिकायन्त्रे पड्यामं तु तुषाग्निना ॥२८९०॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं रक्तमेहप्रशान्तये ।
निम्बबीजकषायञ्च योलयुक्तं पिबेदनु ॥
वेदविद्यारसो नाम्ना रक्तमेहकुलान्तकः ॥ २८९१ ॥

व रा, रक्तमेहे ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजत, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध कसीस और मैनसिल येसब १-१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर सभालू, मुशली, अडूसा, भाग, अरणी, हर्रे और अदरखके रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलावनाय आतशीशीशीमें डाल मुद्रनकर ६-७ कपड़मिट्टीदेकर सुखानेपर ६ पहरकी तुषाग्निमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा नीमकेबीजोंकेक्वाढेमें हीरादक्खनका चूर्ण डालकर इसकेसाथदेनेसे रक्तप्रमेह नष्टहोताहै ॥ ५९८ ॥

५९९ वैक्रान्तगर्भरसः

सूतं स्वर्णञ्च वैक्रान्तं मृतं तुल्यञ्च मर्दयेत् ।
चाण्डालीराक्षसीद्रावे द्वियामान्ते च गोलकम् २८९२
शुष्कं रुद्धा पुटे पाच्यं करीषाग्नौ महापुटे ।
माषैकं मधुना लेह्यं मूत्रकृच्छ्रप्रशान्तये ॥ २८९३ ॥
वैक्रान्तगर्भनामाऽयं सर्वकृच्छ्रामयापहः ।
अपामार्गस्य मूलन्तु तन्नेः पिष्ट्वाऽनु पाययेत् ॥२८९४॥

यो.र, र च, र का, वै चि, र क यो, भै र, र र कौ, यो म, र को, व रा, नि र, रसेन्द्रम, मूत्रकृच्छ्रे ।

टि०—र का कृच्छ्रान्तकेति नाम । रसेन्द्रमङ्गले हेमरसनाम्ना अयमेवरसो निहितोऽस्ति । कुण्डगोलद्रवभावनाऽधिकतया दत्ताऽस्ति तस्याऽत्राऽप्यनुष्ठाने न कापि क्षतिः पाठस्तेक स्याऽस्ति । कुण्डगोल शब्देन क्वाथिकं ग्रहीतव्यम् । भै र, र र कौ, यो म, र को, नि र एषु मूत्रकृच्छ्रान्तकेति नाम । वसवराजीये चन्द्रकेति नाम । तुल विन्मृतन्तुल्यमित्यस्य स्थाने गन्ध तुल्यमिति पाठस्तु प्रमादात्मकमिति यथावस्थितानां कार्यकरणाऽऽयत्वात् ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वैक्रान्त इनकीभस्म समभाग लेकर चाण्डाली (अभावमें सेमरकाकन्द) और राक्षसी (अभावमेंगाडर कपास) के फूलोंकेरसोंसे २-२ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कण्डोंके गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उड़दबराबर मात्रा मधुकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र निवृत्तहोताहै । इसपर ३ मासे अपामार्गकीजड़ छाछमें पीसकर पिलाना ॥ ५९९ ॥

६०० वैक्रान्तगुटिका (प्रथमा)

वैक्रान्ताऽभ्रककान्तन्तु सस्यकं तु सुरायसम् ।
विभीतकादिसम्भूतं हेम कान्तसमं भवेत् ॥ २८९५ ॥
समावर्त्य ततः सूते योजयेत्पादयोगतः ।
कुमारीरससंघृष्टा कृतैषा गुटिका शुभा ॥
जरामृत्युहरी ख्याता वक्त्रस्था नाऽत्र संशयः २८९६

रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—वैक्रान्त, अभ्रक, कान्त, तुत्थ और सुवर्ण १-१ तोला, बहेड़ा, आवला, हर्रे इनकीमज्जा १-२ तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर त्रिफलाकी मींगीकेसाथ १-२ दिन धमनकर त्रिफलाकी मज्जाके तेलमें बुझाकर अग्निस्थायी तथा क्षुधुक्षितकियेहुए २० तोले पारेमें गलाकर मिलावे । फिर घीकुवारकेरसमें इसे ६-७ दिन मर्दनकर अभीष्टप्रमाणकी गोलिया बनावे । इनमेंसे १ गोली मुखमें रखनेसे यह बुढ़ापे और मृत्युको दूरकरतीहै ॥ ६०० ॥

६०१ वैक्रान्तगुटिका (द्वितीया)

पुनरन्यत्प्रवक्ष्यामि प्रयोगं भुवि दुर्लभम् ।
चूर्णयित्वा तु वैक्रान्तं दुग्धमध्वाज्यसंयुतम् ॥२८९७॥
ईषट्टङ्कणसंयुक्तमन्धमूषागतं धमेत् ।
तत्सत्त्वं सहसा सूते मर्दयित्वा विचक्षणः ॥ २८९८ ॥
स्वाभीष्टां गुटिकां बद्धा मुखमध्ये च धारयेत् ।
जायते दिव्यदेहस्तु मासमात्रस्य धारणात् ॥२८९९॥
रसबन्धञ्च कुरुते इन्द्रगोपकसन्निभम् ।
सहस्रवेधी च भवेत्सर्वलोहानि वेधयेत् ॥ २९०० ॥

रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—दूध, मधु और घी समभागमें मिलाकर एकपात्रमें रखछोड़े और इसमें वैक्रान्तको गरमकरके यहांतक बुझाव कि उसका चूराहोजाय फिर इसचूरेको थोड़े सुहागेकेसाथ मूषामें रख धमनकरे तो इसमेंसे सत्त्व निकलेगा । इससत्त्वको शुद्ध और बुभुक्षित पारेमें मिलानेसे गोली बधेगी । इसगोलीको मुखमें रखनेसे एकमहीनेमें दिव्य शरीरहोजाताहै । इसगोलीको पारेमें डालनेसे बीरबहोटीके सदृश रंग होजाताहै । इस रञ्जितपारेका एकहजारवां हिस्सा किसीभी धातुमें देनेसे उसमें सूर्यक्रिया अथवा चन्द्रक्रिया होतीहै ॥ ६०१ ॥

६०२ वैक्रान्तपोट्टली

वैक्रान्तरत्नगतं भसितं सुभाव्यं
व्योषाम्बुना त्र्युषणयानि विमर्दनीयम् ।

वैक्रान्तपोट्टलिरसो निखिलां गदालिं
कादम्बिनीमिव समीरण एव हन्ति ॥२९०१॥
वैक्रान्तस्य यदा स्थाने प्रवालश्च सुमाक्षिकम् ।
प्रवालताप्यनामादिः पोट्टली सर्वरोगनुत् ॥ २९०२ ॥

र शं., र. शि , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—वैक्रान्त, हीरा, अभ्रक इनकीभस्में समभागलेकर निम्बु और बड़हरकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर अभीष्ट आकारकी गोलिया बनाय मलमलके टुकड़ेमें बांधकर पिघलाए हुए गन्धकमें डालकर १ या २ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर खुरचकर गन्धकको निकालदे और गोलियोंको रखछोडे । इनमेंसे एकसर्षपसे एक उड़द तककी मात्रा रोगी और रोगका बलाबल देखकर पानीमें घिसकर देनेसे तमाम सन्निपात, पक्षाघात और धनुर्वातादि समस्त वातव्याधिया तथा यक्ष्मरोग बहुतशीघ्र नष्टहोतेहैं । यह अत्यन्त वाजीकरण और वृष्यहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै । वैक्रान्तके स्थानमें प्रवालके योगसे प्रवालपोट्टली और माक्षिकके योगसे माक्षिकपोट्टली नामदेना ॥ ६०२ ॥

६०३ वैक्रान्तबद्धरसः (सुवर्णादिः) १

स्वर्णं वैक्रान्तसत्त्वञ्च द्वन्द्वितं जारयेद्रसे ।
समांशं तु भवेद्यावत्तावत्तेनैव सारयेत् ॥ २९०३ ॥
समेन जायते बद्धो धारयेत्तं मुखे सदा ।
संवत्सरप्रयोगेण जराकालापमृत्युजित् ॥ २९०४ ॥
कुमार्या दलजं द्रावं सितायुक्तं पिबेदनु ।
स्वर्णवैक्रान्तबद्धोऽयं ब्रह्मायुर्यच्छते नृणाम् ॥२९०५॥

र. म , रसेन्द्रम , रसार्णव, रसायनाऽधिकारे ।

टि०—रसार्णवस्थोऽयं मूलपाठ परन्तु तत्र नामाऽनुपानञ्च न दृश्यते । रसेन्द्रमङ्गलेऽपि अनुपान नाऽस्ति नाम च वैक्रान्तगुटिकेति दृश्यते ।

भाषा—सुवर्ण और वैक्रान्तसत्त्व समभागलेकर द्वन्द्वमेलापकयन्त्रमें रखकर गलाकर निकाललें । इसमेंसे चतुर्थांश सारणायन्त्रमें रस पारेमें मिलावे और जारणकरे । जब समभाग वैक्रान्तबीज जारणहोजायगा तब पारेकी कठिनगोली होजायगी । इसको एकवर्षतक निरन्तर मुखमेंरखनेसे बुढापा, मृत्यु, अपमृत्यु येसब नष्टहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ ६०३ ॥

६०४ वैक्रान्तबद्धरसः (द्वितीय)

दशनिष्कं रसश्चैकं गन्धकं क्षोदयेच्छनै. ।
स्तोकंस्तोकं तत्र दत्त्वा खल्वे कृत्वा च पिष्टिकाम् २९०६
उग्रकन्दे विनि.क्षिप्य वैक्रान्तं भस्मतां गतम् ।
अर्द्धनिष्कं तथोर्ध्वाऽधः कन्दमध्ये मुखं दृढम् ॥२९०७॥
मृदाऽऽवेष्ट्य पुटेच्चाऽष्टौ कुक्कुटाख्ये पुनः क्रमात् ।
दाडिमीकुसुमच्छायो रस.स्याद्योगवाहकः ॥ २९०८॥

र शि., यो म , र र , रसायने ।

टि०—अत्र पटुनुम्बाकल्पाकर्षस्थितीरस्यामन्दाना तत्रत्र एकेषु [illegible] दत्त्वा, तत्र [illegible] दृष्टि ।

भाषा—शुद्धपारा २॥ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ माशे लेकर थोड़ा २ गन्धकडालकर मर्दनकरनेसे इसकी गोलीहोजायगी फिर जङ्गलीसूरण, बछनाग, अथवा एकल्ली लहसनके कन्दमें एक माशा वैक्रान्तभस्म बिछाय पारदवटीको रख ऊपरसे एकमाशा दूसरी वैक्रान्तभस्म रख उसीकेमुंहसे मुहबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दूसरेकन्दमें उसीतरह रखकर आंचदे । इसप्रकार ८ आंचें देनेसे अनारकेफूल जैसा रङ्ग होजायगा और यह योगवाहकहोगा अर्थात् जिस अनुपानकेसाथ दियाजायगा उसीकामको करेगा ॥ ६०४ ॥

६०५ वैक्रान्तबद्धसूतः

स्वर्णस्य वसुवर्णस्य तोलैकं रेतितस्य च ।
कर्षञ्च शुद्धवैक्रान्तं रसं षोडशकार्षिकम् ॥ २९०९ ॥
शरावमार्श गन्धस्य खल्वमध्ये विचूर्णयेत् ।
हस्तिकर्ण्याश्च पर्णोत्थं रसं दत्त्वा दिनद्वयम् ॥२९१०॥
कृष्णधत्तूरकार्पासदलोत्थेन रसेन च ।
सुशोधितं रेतितञ्च नागं दत्त्वाऽथ तोलकम् ॥२९११॥
कुमारीस्वरसेनैव मर्दयेच्च दिनद्वयम् ।
सप्त मृच्चेलसंलिप्ते काचकुम्भे क्षिपेद्रसम् ॥ २९१२ ॥
तन्मुखे खटिकां दत्त्वा लेपयेत्तत्तथा मृदा ।
मृत्कर्पटविधानञ्च परिभाषां विलोकयेत् ॥ २९१३ ॥
संस्थाप्य वालुकायन्त्रे पचेद्दिनचतुष्टयम् ।
शनैः शनैः प्रदातव्यो वीतिहोत्रो भिषक्तमैः ॥२९१४॥
स्वाङ्गशीतो रसो ग्राह्यो यथारोगानुपानतः ।
शमयेत्सर्वरोगाणां विनिहन्ता न संशयः ॥ २९१५ ॥
जातीफलं जातिपत्री कुङ्कुमं सलवङ्गकम् ।
कोलार्ककरभश्चैव स्वस्थे स्यादनुपानकम् ॥ २९१६ ॥
अतीव कान्तिजननमतीवोत्साहवर्धनम् ।
अतीव कामवृद्धिञ्च वह्निवृद्धिं करोत्यसौ ॥ २९१७ ॥
शोथं क्षयं राजरोगं प्रमेहं विषमज्वरम् ।
प्रलेपकञ्च जीर्णञ्च तथा मन्दज्वरं जयेत् ॥ २९१८ ॥
वृद्धानां कान्तिजननं पुनर्द श्रीकरं परम् ।
ओजोवृद्धिकरं श्रेष्ठं महावातविनाशनम् ॥ २९१९ ॥
श्लेष्मामयप्रशमनं कर्मजव्याधिनाशनम् ।
वैक्रान्तबद्धसूतोऽयं बृंहणं परमो मत. ॥ २९२० ॥

टो , रसायने ।

भाषा—एकतोला उत्तमसुवर्णलेकर बारीकचूर्णकर शुद्ध वैक्रान्त एककर्ष, शुद्धपारा १६ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर हस्तिकर्णपलाश, कालाधतूरा और कपासके पत्तोंके रसोंसे १–२ दिन मर्दनकर अच्छीतरह शुद्धकियेहुए एक तोले नागका बारीकचूर्ण मिलाकर घीकुवारकेरससे २ दिनमर्दनकर सुखाकर कज्जलीबनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुईआतशीशीशीमें भर खड़ियामिट्टीकी डाटलगाय कपड़मिट्टीसे मुहबन्दकर [illegible]

यन्त्रमें ४ दिनकी बहुतमन्द आचदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रसछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतकमात्रा उत्तम हरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। जायफल, जावित्री, केशर, लौंग, बेरकीमज्जा और अक्लकरा येसब सम भागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा अनुपानकीजगह स्वस्थ आदमीको देनेसे कान्ति, उत्साह, काम और अग्निकीवृद्धिहोतीहै। युक्तिपूर्वक इसकासेवनकरनेसे शोष, क्षय, राजरोग, प्रमेह, विषमज्वर, प्रलेपक, जीर्ण तथा मन्द ज्वर, कान्त्यभाव, वन्ध्यत्व, ओज क्षय, वातविकार, श्लेष्मरोग और कर्मजव्याधियां नष्टहोतीहैं ॥ ६०५ ॥

६०६ वैक्रान्तगुटी

वैक्रान्तसत्त्वतुल्यांशं शुद्धं सूतं विमर्दयेत्।
दिनं दिव्यौषधद्रावैस्तद्गोलं निगडेन वै ॥ २९२१ ॥
लिप्त्वा लवणगर्भायां वज्रमूष्यां निरोधयेत्।
छायायां शोषयेत्सन्धिं त्रिदिनं तुषवह्निना ॥ २९२२ ॥
स्वेदयेद्वा करीषाग्नौ दिवारात्रमथोद्धरेत्।
तद्गोलं निगडेनैव लिप्त्वा तन्निरुध्य च ॥ २९२३ ॥
छायाशुष्कं धमेद्गाढं बन्धमायाति निश्चितम्।
वर्षैकं धारयेद्वक्त्रे जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ॥ २९२४ ॥
वैक्रान्तगुटिका ह्येषा सर्वकामफलप्रदा।
कर्षैकं त्रिफलाचूर्णं मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ २९२५ ॥

र ख, रसायने।

भाषा—वैक्रान्तसत्त्व और अग्निस्थायी बुभुक्षितपारा समभाग लेकर यथालाभ दिव्यौषधियोंके स्वरससे गोली बननेतक मर्दनकरे। फिर तिधारीथूहर और आकका दूध, पलाशकेबीज, गूगल १–१ भाग, सेंधानमक ३ भाग लेकर घनसेकूटे। कूटते कूटते जब इसमेंसे तारबधने लगें तब इसे तैयारसमझे (यहहालत निरन्तर २–३ दिनतक कूटनेसे होतीहै इसकानाम पारदनिगडहै इसकेअन्दर पारेको बन्दकरनेसे उडनहींसक्ता इसीलिये इसका नाम निगड अथवा प्राचीनव्यवहारमें निगल ऐसा प्रसिद्धहै ॥ रसार्णव ॥) इसका गोलीपर और बिलके आकारकी वज्रमूषामें लेपदेकर मूषामें सेंधानमकबिछाकर गोलीको रक्खे और ऊपरसे सेंधेनमकसे ढककर मूषाका ढक्कन लगाय उसीनिगडसे सन्धि बन्दकर शङ्खवगैरहके चूनेका ऊपरसे लेपदेकर छायाशुष्ककर ३ दिन तुषाग्निमें स्वेदितकरे। अथवा कर्षीकी अग्निमें एक अहोरात्र स्वेदनकर निकालकर फिरसे पूर्ववत् मर्दनकर वज्रमूषामें रखकर पूर्ववत् सन्धिबन्दकर सुखाकर धातुद्रावके चिह्न मालूम होनेतक दृढ धमनकरावेतो इससे पारेकी वैक्रान्तकेसाथ गोली बनजायगी। इसगोलीको लगातार एकवर्षतक मुंहमेंरखनेसे बहुत दीर्घायुको भोगताहै। जबसे इसका प्रयोग आरम्भकरे तभीसे सुबहशाम १–१ कर्ष त्रिफलाकाचूर्ण मधुकेसाथ सेवनकरे ॥ ६०६ ॥

६०७ वैक्रान्तरसः (षडानन)

मृतसूताभ्रवैक्रान्तकान्तताम्रं समं समम्।
सर्वतुल्येन गन्धेन मर्द्यं भल्लातकान्वितम् ॥ २९२६ ॥
दिनैकं तद्द्रवैरेव वटी कुर्याद्द्विगुञ्जिकाम्।
भक्षयेद्द्वन्द्वजान्हन्ति द्वन्द्वजांश्च त्रिदोषजान् ॥ २९२७ ॥
प्रत्यग्रमुशलीवह्निभागाः कुष्ठस्य षोडश।
पिप्पलीपिप्पलीमूलं क्षिपेद्भागद्वयं द्वयम् ॥ २९२८ ॥
चतुष्कन्तु विडङ्गानां मरिचं कटुशुण्ठिके।
ब्रह्मदण्डी तथैकैका चूर्णितं द्विगुणं गुडम् ॥ २९२९ ॥
कर्षांशं भक्षयेच्चानु ह्यर्शोरोगप्रशान्तये।
वैक्रान्ताख्यो रसो नाम साध्याऽसाध्यप्रशान्तये ॥

नि र, र को, र सु, व रा, वै चि, यो म, रसायनस., र चि, र क ल, र च, र श, र का, अर्शोऽधिकारे।

टि०—नि र, र को, र सु, यो म, रसायनस, र चि, र क ल, र च, र श, र का एषु ग्रन्थेषु षडानन इतिनाम। तत्रच भल्लातकापि सर्वसमुदाये पतित। अत्रतु सर्वद्विगुण। अत्र भल्लातकै मर्दन विहित षडानने भावनाचर्चैव नास्ति, अतस्तस्यात्रभाव उचित प्रतिभाति।

भाषा—पारा, अभ्रक, वैक्रान्त, कान्त और ताम्र इनकी भस्में समभागलेकर सबकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय मिलावेके तैलसे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज और त्रिदोषजसन्निपातोंको यह नष्टकरताहै। मुशली और चित्रक ८–८ भाग, कुठ १६ भाग, पीपल, पिपलामूल २–२ भाग, विडङ्ग ४ भा, मरिच, कुटकी, सौंठ, ब्रह्मदण्डी १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर सबसेदूना गुडमिलाकर १–१ कर्षके मोदकबनाले। इसमेंसे १–१ मोदक गोलीकेऊपर अनुपानमें देनेसे साध्यासाध्य समस्तबवासीर नष्टहोवेहै ॥ ६०७ ॥

६०८ वैक्रान्तरसायनम् (प्रथमम्)

वज्राभ्रकीयसत्त्वस्य कर्षमेकं समाहरेत्।
निष्कार्द्धं भस्म वैक्रान्तं भस्म पारदजं समम् ॥ २९३१ ॥
स्वर्णं रौप्यं प्रवालश्च माक्षिकं मृद्दारकम्।
तुगार्क्षीयमृतासत्त्वं कर्षमात्रं पृथक्पृथक् ॥ २९३२ ॥
पुराणसर्पिषा क्षौद्रसिताभ्यां सह याजितम्।
धान्यराशौ क्षिपेन्मासं माषमात्रनिषेवणात् ॥ २९३३ ॥
जरा न लभते स्थैर्यं धारोष्णक्षीरपायिनाम्।
रोगसङ्घा क्षयं यान्ति वैद्यौषधविवर्जिता ॥ २९३४ ॥

नृ क, रसायने।

भाषा—वज्राभ्रकसत्त्व १ कर्ष, वैक्रान्त और पारदभस्म २–२ माशा, सुवर्ण, रजत, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में, विधारा, वंशलोचन और गिलोयसत्त्व १–१ कर्षलेकर पुराना घी, मधु और शक्कर अन्दाजसे मिलाकर चीकनेबर्तनमें रख मुहबन्दकर धान्यराशिमें गाड़दे। एकमहीनेबाद निकालकर १–१ माशेकी मात्रा अथवा रोग और रोगीका बलाबल देखकर मात्रा कायमकर धारोष्णदूधकेसाथ देनेसे बुढ़ापा नष्टहोताहै। और जिन रोगोंमें वैद्य तथा औषधियोंने जवाब देदियाहो वे असाध्यरोग नष्टहोजातेहैं ॥ ६०८ ॥

६०९ वैक्रान्तरसायनम् (द्वितीयम्)

रक्तिकाऽष्टकसम्मानं वैक्रान्तमसितं हरेत् ।
षोढा गन्धकसञ्जीर्णं रसं कर्षद्वयं क्षिपेत् ॥ २९३५ ॥
वैक्रान्तपादसम्मानं मृतं हेम विनिःक्षिपेत् ।
विद्रुमं मौक्तिकञ्चैव कर्षमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३६ ॥
शाल्मलीसारिवाद्राक्षावाराहीवानरीभवैः ।
प्रत्येकैः स्वरसैः सप्त भावयित्वाऽर्द्धमाषिकम्॥२९३७॥
नागकेसरतालीसकणाकर्कटशृङ्गिका-
तुगाक्षीर्यमृतासत्त्वसर्पिःक्षौद्रविमिश्रितम् ॥ २९३८ ॥
लिहन्न लिप्यते राजयक्ष्मपङ्कदुरासदम् ।
पुंस्त्वहानिश्वासकासावह्निमान्द्यमरोचकम्॥२९३९॥
ग्रहणीं शोफगुदजाद्युदराणि हलीमकम् ।
निहत्य कुरुते नित्यं पुरुषं दीर्घजीवितम् ॥ २९४० ॥

वृ. फ., रसायने ।

भाषा—वैक्रान्तभस्म ८ रत्ती, षड्गुणगन्धकजारितपारद-भस्म २ कर्ष, सुवर्णभस्म २ रत्ती, प्रवाल और मोतीकीभस्म १–१ कर्ष लेकर सेमलकामुसला, सारिवा, द्राक्ष, वाराहीकन्द और केवांचके स्वरसोंसे ७–७ भावनाए देकर ४–८ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली नागकेशर, तालीसपत्र, पीपल, काकड़ासींगी, वंसलोचन, गिलोयसत्व इनके ३ माशे समभागचूर्णकेसाथ घी और मधुमें मिलाकर सेवनकरनेसे दुःसाध्य राजयक्ष्म, षण्ढत्व, श्वास, कास, मन्दाग्नि, अरुचि, ग्रहणी, शोथ, बवासीर, ८ उदररोग, हलीमक इन सबको दूरकर यह पुरुषको दीर्घजीवी बनाताहै ॥ ६०९ ॥

६१० वैक्रान्तमृतकरसः

पुनरन्यत्प्रवक्ष्यामि वैक्रान्तविधिलक्षणम् ।
वैक्रान्तकरसं प्राप्य कस्य लोके दरिद्रता ॥ २९४१ ॥
ते च सप्तविधाः प्रोक्ताः कर्म तेषामनेकधा ।
श्वेतो रक्तस्तथा पीतो नीलः पारावतप्रभः ॥२९४२॥
मयूरगलकप्रख्यस्तथा मरकतप्रभः ।
तेषां कर्म प्रवक्ष्यामि यादृशं यस्य जायते ॥ २९४३ ॥
श्वेतञ्च चूर्णयेत्सूक्ष्मं व्याघ्रीकन्दोदरे क्षिपेत् ।
स्वेदयेच्च दिवारात्रौ यावच्च त्रिदिनं भवेत् ॥२९४४॥
सुस्वेदितं ततो ज्ञात्वा प्रक्षिपेत्पारदं ततः ।
तत्क्षणाज्जायते भस्म हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४५ ॥
सुनिर्वाणं ततो ज्ञात्वा पलं पलशते क्षिपेत् ।
तारन्तु जायते भस्म विशुद्धस्फटिकाकृति ॥२९४६॥
तत्सूते मेलयेद्भस्म समभागं विचक्षणः ।
चारयेद्रजतं सूते हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४७ ॥
अन्धमूषागतं पाच्यं कारीषे वा तुषाग्नये ।
अहोरात्रं त्रिरात्रं वा भवेदग्निसहो रसः ॥ २९४८ ॥
स्पर्शेन सर्वलोहानि रजतञ्च करिष्यति ।
रक्तेऽप्ययंकृतं कर्म जरादारिद्र्यनाशनम् ॥ २९४९ ॥
स्वेदनं व्याघ्रपद्याश्च कन्दे यामं विधाय च ।
सारयेत्सप्तवारांश्च रसं चैव पलं तथा ॥ २९५० ॥
तच्चैव वल्लमानेन क्षिपेद्धेमपले बुधः ।
प्राप्नोति भस्मतां सर्वं पुनर्हेमशते क्षिपेत् ॥ २९५१ ॥
भस्मतां याति तत्सर्वं शुद्धहेमसमप्रभम् ।
तद्भस्म तु रसेन्द्रेऽथ पुनरर्द्धेन मेलयेत् ॥ २९५२ ॥
भवेदग्निसहो ह्येष ततः सिद्धरसो भवेत् ।
विध्यन्ते सर्वलोहानि कनकं शोभनं भवेत् ॥२९५३॥
दारिद्र्यनाशनं सूतं सर्वलोकानुकम्पनम् ।
पीतन्तु हेमकारि स्यात्स्वेदितो व्याघ्रिकन्दजे॥२९५४॥
भावितो वाजिमूत्रेण पारदीयो महारसः ।
पलं पलशते क्षिप्त्वा पुनर्हेमशते क्षिपेत् ॥
हेमसूतेन तत्सूते कोटिवेधी भवेद्रसः ॥ २९५५ ॥

रसेन्द्रमं, सर्वरोगे ।

भाषा—वैक्रान्त सातप्रकारका होताहै और उनकेकार्यभी अलग २ हैं । श्वेत १ रक्त २ नील ३ पीत ४ पारावतकण्ठाभ ५ मयूरकण्ठाभ ६ और पन्नेकेरङ्गका ७ । इनमेंसे श्वेत वैकान्तको लेकर व्याघ्रीकन्दमें डालकर उसीकेगूदेसे बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर भूधरयन्त्रमें रख ३ दिनतक स्वेदनकरे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर पारेकेसाथ मर्दनकरनेसे तत्क्षण भस्म होजातीहै । फिर घोड़ेकेताजेमूत्रसे एकदिनरात मर्दनकरनेसे निरु स्थता होजातीहै । इसके १ पलको १०० पल चादीको गलाकर डालनेसे विशुद्धस्फटिककेरङ्गकीभस्म होजातीहै । इसभस्मको समभाग पारेमें मिलाकर घोड़ेकेमूत्रसे मर्दनकर अन्धमूषामें बन्दकर एकदिन कण्डोंमें अथवा ३ दिन तुषोंमें अग्निदेनेसे पारद अग्निस्थायी होजाताहै । इसकास्पर्शकरानेसे सबप्रकारके लोहोंकी चादी होजातीहै । इसीतरह यही क्रिया रक्तवैक्रान्तमें करनेसे रक्तता होतीहै और बुढापा तथा दारिद्र्य दूरहोताहै । इसको व्याघ्रीकन्दमें रख एकपहरस्वेदनकर एकपलरसमें सारणकर ३ रत्तीको एकपल गलेहुए सुवर्णमें डालनेसे भस्म होजातीहै । इस भस्मको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे शुद्धसुवर्णके रङ्गकी भस्म होजातीहै । इसभस्ममें आधाभाग पारा मिलानेसे अग्निसह होजाताहै और उसके स्पर्शसे सब लोह सुवर्णसदृशहोजातेहैं । इसीतरह पीले रङ्गके वैकान्तको व्याघ्रीकन्दमें स्वेदितकर सम-भागपारा मिलाकर पूर्ववत् घोड़ेके मूत्रमें मर्दनकरनेसे अग्निस्थायी होजाताहै । इसके १ पलको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे सम-स्तकी भस्म होजातीहै । इसका एकभाग कोटिगुणित पारेमें डालनेसे कोटिवेधी होताहै । इसीतरह सभीरङ्गोंके वैक्रान्तोंको इसीप्रक्रियासे स्वकीयरङ्गके धातुमें मिलानेसे उसीरङ्गको पैदा करतेहैं । रोगोंको नष्टकर बुढापको दूरकरना इनका साधारण कार्यहै । यद्यपि ग्रन्थकारने कदाचित् अर्थवादसे कामलियाहो तो भी यह एकान्त मिथ्या नहीं है इसबातको ध्यानमें रखना उचितहै ॥ ६१० ॥

६११ वैदूर्यरसायनम्

कान्ताकल्केन वैदूर्यं सहगन्धेन मारितम् ।
तद्भस्मनाऽष्टशाणेन तदर्द्धं मृतहेम च ॥ २९५६ ॥
तयोः समं तीक्ष्णरजो मृतं रूप्यञ्च तत्समम् ।
मृतञ्च विमलं सर्वैः समं सर्वं विमर्दितम् ॥ २९५७॥
मिलितं मोचसारेण गोलीकृत्य विशोषयेत् ।
अङ्गुलार्द्धदलेनैव शिलाजेन विमुद्रयेत् ॥ २९५८ ॥
वालुकायन्त्रमध्यस्थं पक्षार्द्धं शनकैः पचेत् ।
स्वतःशीतं समाहृत्य कुमारीमूलसारतः ॥ २९५९ ॥
मर्दयित्वा विशोष्याऽथ पीलुमूलजलैस्तथा ।
तथैव चित्रमूलाद्भिः कन्थारीमूलसारतः ॥ २९६० ॥
चिरबिल्वरसैस्तोयैः विशोष्य च विचूर्ण्य च ।
मृतसञ्जीवनं ह्येतद्वैदूर्यकरसायनम् ॥ २९६१ ॥
आर्द्रकद्रवसंयुक्तं गुञ्जामात्रं रसायनम् ।
दातव्यं चित्रतोयैर्वा सन्निपाते विसञ्ज्ञके ॥ २९६२ ॥
दन्तबन्धे तु सञ्जाते वल्लमात्रमनु रसम् ।
पादयो र्घर्षयेद्यत्नात्ततश्चेष्टामवाप्नुयात् ॥ २९६३ ॥
आतपेऽस्य सलिलं मूर्ध्नि शीतं घटैःक्षिपेत् ।
शतकुम्भमितं स्वादु तीव्रा क्षुज्जायते ततः ॥२९६४॥
यत्किञ्चिद्याचते तस्मिंस्तत्तद्देयममीप्सितम् ।
आयुश्चेदवशिष्टं स्यात्सुखी जीवति मानवः २९६५
त्रिदोषजातरोगेषु दातव्यं तण्डुलोन्मितम् ।
पलार्द्धसितया युक्तमन्यथा हन्ति रोगिणम् ॥२९६६॥
एकदोषोद्भवे रोगे संसर्गजनिते तथा ।
देयमेतद्धि भिषजा वैदूर्यकरसायनम् ॥ २९६७ ॥

र. चू., रसायने ।

भाषा—लसनियासे चतुर्गुणित कोयल और गन्धकका कल्क बनाय बीचमें लसनियांको रख शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखानेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिर इसीतरह कल्कमें बन्दकर आंचदेवे । ऐसे जबतकभस्म न होजाय तबतक करतारहे । यह भस्म २ कर्ष, सुवर्णभस्म १ कर्ष, लोह और रजतभस्म ३–३ कर्ष, रजतमाक्षिक ९ कर्ष मिलाकर केलेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ऊपरसे आधाअङ्गुलमोटा शिलाजीतकालेपकरके शरावसम्पुटमें रख वालुकायन्त्रमें बन्दकर ७॥ दिनकी मन्दआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर घीकुंवार, पीलु, चित्रक, हंस, पुष्करन्ध इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती अदरखकेरस अथवा चित्रककेक्वाथके साथ देनेसे सञ्ज्ञारहित सन्निपात नष्टहोताहै । दन्तबन्धमें ३ रत्ती रसको अदरखकेरसमें मिलाय तलुओंमें मालिशकरनेसे दन्तबन्ध छूटकर बोलनेलगताहै । उसपर १०० घड़े ठण्डापानी मस्तकपर डालना इसकेबाद तीव्रभूख मालूमहो तब जो कुछ मांगे वह खानेको देना । यदि आयु बाकी होगी तो वह निर्विघ्न जीवेगा नहींतो दवा अपना प्रभाव दिखाकर निष्फलहोजायगी । साधारणरोगोंमें एकचावलभर मात्रा २ कर्ष शक्करकेसाथ देना । अन्यथा रोगीको मारडालेगी । एक, दो अथवा संसर्गजदोषोंमें वैदूर्यरसायन देनेसे तत्क्षण लाभहोताहै ॥ ६११ ॥

६१२ वैदूर्यादियोगः

वैदूर्यमुक्तामणिगैरिकाणां
मृच्छङ्खहेमामलकोदकानाम् ।
मधूदकस्येक्षुरसस्य चैव
पानाच्छमं गच्छति रक्तपित्तम् ॥२९६८॥

च सं., रक्तपित्ते ।

भाषा—लसनिया, मोती, माणिक्य इनकीभस्में और सोनागेरू समभाग मिलाकर रोगीका बलाबल देखकर १–१ रत्ती मधुगेरूकेसाथ देकर कालीमिट्टी,शङ्ख,सुवर्ण और आवले इनमें रक्खाहुआ पानी, मधुका शरबत अथवा ईखकारस पिलानेसे रक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ६१२ ॥

६१३ वैद्यनाथरसः

शङ्खस्य वलयं निष्कं चतुर्निष्का वराटिकाः ।
कर्पांशं नीलकण्ठकं तुर्यं गन्धाश्मटङ्कणम् ॥ २९६९ ॥
तारं नागं रसं चाऽर्धं निष्कांशं पूर्ववत्सुदेत् ।
वराटचूर्णमण्डूरकल्पिताळेपने पचेत् ॥ २९७० ॥
अस्याऽर्द्धमाषं मरिचाऽर्द्धमाषं
ताम्बूलवल्लीरसभावितञ्च ।
तत्पत्रलिप्तं मधुनाऽवलिह्या-
द्वार्यं नवीनेन घृतेन वाऽपि ॥ २९७१ ॥
नाडीमार्गे निर्गते चाऽल्पमल्पं
पथ्यं भोज्यं लोकनाथोपदिष्टम् ।
यामे यामे चैव मामण्डलान्ता-
त्सिद्धं सद्यः शोषजिद्वैद्यनाथः ॥ २९७२ ॥

र.र स., र च., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शङ्खनाभि ४ माशे, पीलीकौड़ी, नीलेकाचकी चूड़ी, तूतिया, गन्धक, सुहागा १–१ कर्ष, रजत, नाग और पारदभस्म २–२ माशे लेकर बारीकचूर्णकर चित्रककेक्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कौड़ी और मण्डूरभस्मको चित्रककेक्वाथमें मर्दनकर गोलेपर लेपकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा समभाग मरिचके चूर्णकेसाथ मिलाय पानकेरससे मर्दनकर पानपरलगाकर थोड़ासा मधु डालकर खिलावे अथवा मक्खन या घीकेसाथदेवे । आमाशयमें पहुंचनेकेबाद २–३ ग्रासभोजनदेकर चित्त भुलावे और १–१ पहरमें मूत्रलगनेपर थोड़ा २ भोजनदे । इसप्रकार एकमण्डलतक करनेसे यह राजयक्ष्माको नष्टकरताहै ॥ ६१३ ॥

६१४ वैद्यनाथवटी (प्रथमा)

शाणं गन्धमथो रसस्य च तथा कृत्वा द्वयोःकज्जलीं,
तिक्ताचूर्णमथाक्षमेर सकलं गोंद्रे त्रिधा भावयेत् ।

पश्चात्तत्सुपर्वीग्रुमेन पयसा क्वाथेऽमले त्रैफले,
संशोष्या गुटिका कलायसदृशी कार्या बुधै र्यत्नतः॥
ज्ञात्वा दोषवलं रसेन सुपवीपत्रस्य पर्णस्य वा,
एकद्वित्रिचतुःक्रमेण वटिकां दद्यात्कदुष्णाम्बुना ।
हन्ति शूलनिचयं नवज्वरं पाण्डुतामरुचिशोथसञ्चयम्
रेचने च दधिभक्तभोजनं वैद्यनाथसुकुमाररेचनम् ॥

भै. र., र. सु., ध., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ माशे, कुटकी १ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय करलेकेपत्तोंके रस और त्रिफलाकेक्वाथसे धूपमें २–३ दिन भावना देकर मटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे ४ गोलीतक रोग और और रोगीका बलाबल देखकर करेले अथवा पानकेरस या गरमपानीकेसाथ देनेसे शूल, नवज्वर, पाण्डु, अरुचि, शोथ, इनसबको यह दूरकरतीहै । जुलाबलगनेकेबाद दही, भात देना ॥ ६१४ ॥

६१५ वैद्यनाथवटी (द्वितीया)

पथ्या त्रिकटु सूतञ्च द्विगुणं कानकं तथा ।
मन्युमणिरसैरम्ललोणिकाया रसैः कृता ॥ २९७५ ॥
गुटिकोदरगुल्मादीन्पाण्ड्वामयविनाशिनी ।
कृमिकुष्ठगात्रकण्डूपिडकाश्च निहन्ति च ॥
गुटी सिद्धफला चेयं वैद्यनाथेन भाषिता ॥ २९७६ ॥

र. सं., भै. र., र. सु., ध., र. चि, उदावर्तानाहाऽधिकारे ।

भाषा—हर्रे, त्रिकटु और रससिन्दूर १–१ भाग, शुद्धजमालगोटा २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर मण्डूकपर्णी और अमलोनियाकेरसोंसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे उदर, गुल्म, पाण्डु, कृमि, कुष्ठ, कण्डु, पिडिका प्रभृतिको यह नष्टकरतीहै ॥ ६१५ ॥

६१६ वैद्यनाथवटी (दधिवटी) (तृतीया)

पक्वेष्टिकाहरिद्राभ्यामागारधूमकेन च ।
शोधितं सूतकं ग्राह्यं तोलकद्वयसम्मितम् ॥ २९७७ ॥
भृङ्गराजरसैः शुद्धं गन्धकं सूततुल्यकम् ।
हरितालं विषं तुत्थमेलवालुकताम्रकम् ॥ २९७८ ॥
खर्परं माक्षिकं कान्तं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
सर्वाद्धा कज्जली ग्राह्या भावयेच्च पुनः पुनः ॥२९७९॥
सिन्धुवाररसे चैव ज्योतिष्मत्या रसे तथा ।
रसेऽपराजितायाश्च जयन्त्याः स्वरसे तथा ॥२९८०॥
रक्तचित्रकमूलोत्थे रसे च परिभावयेत् ।
वटिकां सर्षपाकारां योजयेत्कुशलो भिषक् ॥२९८१॥
ततः सप्त वटी दद्यादुष्णेन वारिणा सह
अनुपानञ्च कर्तव्यं कज्जल्याः कणया सह ॥ २९८२ ॥
सन्निपातज्वरे चैव सशोथे ग्रहणीगदे ।
पाण्डुरोगेऽग्निमान्द्ये च विविधे विषमज्वरे ॥२९८३॥
शुक्रमज्जगते दद्यान्न तु कासे कदाचन ।
नित्यं दध्ना च भोक्तव्यं सितया युक्तमेव च ॥२९८४॥
स्नातव्यं ह्यामयान्नित्यं वयोदोषानुसारतः ।
वारिहीनञ्चाऽलवणं दधि पथ्यं सदा भवेत् ॥
वैद्यनाथवटीनाम्ना वैद्यनाथेन निर्मिता ॥ २९८५ ॥

भै. र., ध., शोथाऽधिकारे ।

भाषा—पकीहुईईंट, हल्दी, घरकेधुंए प्रभृतिमे शुद्धकियाहुआ पारा २ तोले, भंगरेकेरसमें कईवार बुझायाहुआ गन्धक २ तोले, शुद्धहरिताल, बछनाग औरतूतिया, गेंहुला, ताम्र, खपरिया, स्वर्णमाक्षिक, कान्तलोह इनकीभस्में १–१ तोला लेकर सबकोपारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय संभालू, मालकांगण, कोयल, जैंती, लालचित्रककीजड़ इनसबके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर सर्षपप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ७–७ गोलिया कज्जली और पीपलकेसाथ मिलाकर गरमजल अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, शोथसहितग्रहणी, पाण्डु, मन्दाग्नि, नानातरहकेविषमज्वर, शुक्र और मज्जगतज्वर, इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसरसको खांसीमें भूलकरभी नहींदेना । दही और शक्करकेसाथ पथ्यदेना । अवस्था और दोषोंका ख्यालकर स्नानकराना । नमक और जल नहीं देना, दही चाहेजितना खावे ॥ ६१६ ॥

६१७ वैश्वानरयोगः

भावितं मातुलुङ्गाम्लैस्ताम्रञ्च मारितं दिनम् ।
आर्द्रकस्वरसेरह्ना विषं तुल्यञ्च चूर्णयेत् ॥ २९८६ ॥
पिप्पलीपिप्पलीमूलद्वये युक्तं विभावयेत् ॥
हिङ्गु करञ्जबीजञ्च शुण्ठीलशुनसैन्धवम् ॥ २९८७ ॥
एरण्डतैलसम्पिष्टं माषैकं भक्षयेत्सदा ।
योगो वैश्वानरो नाम शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥
साध्याऽसाध्यञ्च शूलञ्च हन्ति वैश्वानरो रसः २९८८

र. को., यो. म. शूलाऽधिकारे ।

भाषा—बिजौरेकेरससे की हुई ताम्रभस्म और अदरखकेरससे एकदिन भावनादियाहुआ बछनाग समभागलेकर पीपल और पिपलामूलके क्वाथोंसे एकदिनमर्दनकर भुनाहींग, करंजबीज, सोंठ, एककलीलहसन और सेंधव १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वयोगमें मिलाय एरण्डकेतैलमें मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य त्रिदोषजशूलको यह नष्टकरताहै ॥ ६१७ ॥

६१८ वैश्वानररसः (वृद्धाद्यः) (प्रथमः)

रसं गन्धं मृतं शुल्बं नागं प्रत्येकतोलकम् ।
एकत्र म्रियते घृष्ट्वा पश्चादिमानि निक्षिपेत् ॥२९८९॥
पिप्पलीपिप्पलक्षारं मरिचं चिञ्चिकाभवम् ।
नागरं स्वर्जिकाक्षारं यवक्षारञ्च टङ्कणम् ॥ २९९० ॥

प्रत्येकं मापपट्कं स्याद्गृह्यते सूरणं तथा।
कूष्माण्डकरसं दत्त्वाद्दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ २९९१ ॥
अन्धमूषागतं पक्त्वा यावद्यामचतुष्टयम्।
उत्तार्य शीतलं नीत्वा रसं वल्लचतुष्टयम् ॥ २९९२ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे दद्यादुदरे पारदं परम्।
अतिपुष्टिकरः सम्यग्वृद्धवैश्वानरो रसः ॥ २९९३ ॥

रसचि, र क, अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और नागभस्म १–१ तोला, छोटीपीपल, पीपल और इमलीकाक्षार, मरिच, सोंठ, सज्जी, यवक्षार, भुनासुहागा येसब ६–६ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सूरण और कोंहड़ेकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध मूषामें बन्दकर भूधरयन्त्रमें रख ४ पहर स्वेदनकरे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर १२–१२ रत्ती समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, उदररोग, कृशता, इन-सबको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ वैश्वानररसः (द्वितीय:)

विष्णुक्रान्ता च जयपालं लाङ्गली सुरदालिका।
यवचिञ्चीजसारेण रसाद्द्विगुणगन्धकम् ॥ २९९४ ॥
पक्षं विमर्दितं सर्वं स्वेदयेन्मृदुवह्निना।
गुल्मे गुञ्जात्रयञ्चाऽस्य सोष्णाम्बु घृतसैन्धवम् २९९५
वातजे कफजे लिह्यान्मध्वार्द्रकसमन्वितम्।
ससितामाक्षिकं पैत्ते सोऽयं वैश्वानरो रसः ॥२९९६॥

र र. स, र. को, गुल्मे।

भाषा—कोयल, शुद्ध जमालगोटा और करिहारी, बन्दाल, शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय तितलीकेरससे १५ दिनतक लगातार मर्दनकर एरण्डवगैरहकेपत्तोंमें लपेट एकअङ्गुल-मोटा कीचड़ लगाकर अङ्गारोंमें स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घी और सेंधेनमककेसाथ देकर थोड़ा गरम पानी पिलानेसे वातिकगुल्म नष्टहोताहै। कफजगुल्ममें मधु और अदरखकेसाथ, पैत्तिकमें शक्कर और मधुके साथदेवे ॥ ६१९ ॥

६२० वैश्वानररसः (तृतीयः)

संशुद्धपारदसुगन्धशिलाजतूनां
भागद्वयञ्च मुशलीदशभागयुक्तम्।
खर्जूरकञ्च सुपवी कटुभागमेकं
श्रेष्ठं विषञ्च युगभागसमञ्च चूर्णम् ॥२९९७॥
भृङ्गोदकेन दिनसप्तकमर्दितोऽसौ
मध्वन्विता मरिचमात्रगुटी विधेया।
नानाविधांश्च शमयेत्तु गदान्नराणां
वैश्वानरो हि रसनाम मुमुक्षुतात ॥२९९८॥

र.(मा), अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत २–२ भाग, मुशली १० भाग, छुहारे, मगरैल और मरिच १–१ भाग, शुद्धबच्छनाग २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील वर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे ७ दिनमर्दनकर मरिचबरा-बर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे अग्निको प्रदीप्तकर नानाप्रकारके रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२० ॥

६२१ वैश्वानररसः (चतुर्थः)

दशटङ्कमिता शुण्ठी मरिचं पिप्पली वचा।
सौभाग्यञ्च तथा सूक्ष्मं सर्वमेकत्र चूर्णितम् ॥२९९९॥
सूतकं टङ्कमात्रेण गन्धकं तत्समं विषम्।
एकत्र चूर्णितं श्लक्ष्णं कर्तव्यं चैकभागतः ॥ ३००० ॥
एकभागमितं ग्राह्यं सर्वं पर्णेन चाम्भसा।
कासं श्वासं हरेच्छीघ्रमरुचिं तत्क्षणादपि ॥ ३००१ ॥
गुल्मादिकं महाव्याधिं यकृतं ग्रहणीमपि।
नयवर्णमितं याति प्रभावो भूमिमण्डले ॥ ३००२ ॥
खण्डवातादिकान्सर्वान् समं कृत्वा व्यपोहति।
वैश्वानरमितिख्यातं क्षेत्रञ्च कुरुते ध्रुवम् ॥ ३००३ ॥

र. का, अरोचकाऽधिकारे।

भाषा—सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, भुनासुहागा ये प्रत्येक-२॥ तर्प, शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग ४–४ माशा लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पानके-रससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, अरुचि, गुल्मादिक महाव्याधिया, यकृत्, ग्रहणी, समस्त वातविकार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥६२१॥

६२२ वैश्वानररसः (पञ्चम:)

व्योषं विषं गन्धो वह्नि निर्गुण्डीव्याधिघातकौ।
अजमोदश्च सर्वेषां समान्भागान्समाहरेत् ॥ ३००४ ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कुर्याद्भावयेत्पिचुमन्दजैः।
क्वाथैरेकोनविंशत्या वारान्भृङ्गरसैस्ततः ॥ ३००५ ॥
सप्त वारान्भावयित्वा मधुना गुटिका: किरेत्।
मापैकमात्रिका रात्रौ मधुना सम्प्रयोजयेत् ॥ ३००६ ॥
अयं वैश्वानरो नाम्ना योगो दृष्टप्रभाववान्।
जलोदरादिरोगाणां विनिवारणदक्षिणः ॥ ३००७ ॥

रसाल, उदराऽधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, शुद्धबछनाग, कुठ, चित्रकमूल, निर्गुण्डी, अमिलतासकागूदा, अजमोद सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर नीमकेमद अथवा स्वरससे २१ और भंगरेकेरससे ७ भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रात्रिमें मधुकेसाथ देनेसे यह जलोदरादि समस्त उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६२२ ॥

६२३ वैश्वानरलोहम् (प्रथमम्)

द्विपलं तिन्तिडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।
शम्बूकभस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥
चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।
चूर्णं सम्पिष्य खल्वादौ कारयेदेकतां भिषक्॥३००९॥
शूलस्यागमवेलायां खादेन्माषद्वयं नरः ।
शूलमष्टविधं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥३०१०॥

भै.र.,ध.,र.क., शूलाऽधिकारे।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, घोंघेकीभस्म और सेंधानमक समभागलेकर सबकी बराबर लोहभस्ममिलाय एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोडे। शूलआनेकेसमय २–२ माशे उचितानुपानकेसाथ लेनेसे साध्य अथवा असाध्य समस्तशूलोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

६२४ वैश्वानरलोहम् (द्वितीयम्)

फलत्रिकत्वचो ग्राह्याः सचित्रककटुत्रयम् ।
जातीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥
लवङ्गकलिका ग्राह्या गद्याणद्वयसम्मिता ।
विषं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणविंशतिः ॥३०१२॥
मृतलोहस्य विंशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मधुना गुटिकां कुर्यान्माषमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चपाण्डुक्षयापहम् ।
बालस्थविरवृद्धानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ॥ ३०१४ ॥
योनिशूलेषु सर्वेषु वह्निमान्द्ये च दापयेत् ।
अरुचिञ्च हरत्याशु सूतिकारुक् प्रणश्यति ॥
वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम् ॥ ३०१५ ॥

रसायनसं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात, लवङ्ग १–१ तोला, शुद्धवछनाग ६ माशे, शक्कर और लोहभस्म १०–१० तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय मधुके साथ १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातःकालदेनेसे पांचप्रकारके पाण्डु, क्षय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और सूतिकारोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

६२५ वैश्वानरवटी (प्रथमा)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽर्काऽयः शिलाजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ३०१६ ॥
त्रिकटु चित्रकं धीरां निर्गुण्डी मुशलीरजः ।
अजमोदां विशांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥
निम्बपञ्चाङ्गुलक्वाथैर्भावना चैकविंशतिः ।
भृङ्गराजरसैः सप्त मुण्डिकाभिश्च द्वादश ॥ ३०१८ ॥
त्रिधा नागलताद्रावैर्दत्त्वा क्षौद्रे विलोडयेत् ।
भक्षयेद्बदराऽस्थ्याभां वटिकां तां दिवानिशि॥३०१९॥
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ।
देवदारुवह्निमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत् ॥
भोजनं व्योषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥

र. सं., र. चं., र. र., र. सु., धा., व. रा., र. क. ल., र. चि., चि. र. भ., रसायनसं., र. को., र. र. स., र. शं., र. (मा.), रससारसङ्ग्रह, यो. म., र. क. यो., र. र. कौ., र. मृ., र.का., उदराऽधिकारे ।

टि०—कुत्रचिद्ग्रन्थकर्त्रा रससमानता, भावनायां पञ्चाङ्गुलस्य भावना निष्कासिता तत्तु न सम्यक् ? उदररोगे तस्याऽत्यावश्यकत्वात् । र. मृ., र. का. मतयो वैश्वानररस नाम्ना एको रसोऽस्ति तत्रैयमेव वटी व्यत्यासिताऽन्तस्याप्यत्रैवाऽन्तर्भावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., ताम्र और लोहभस्म, शिलाजीत १–१ भाग, शुद्धवछनाग, त्रिकटु, चित्रकमूल, शतावरी, निर्गुण्डी, मुशली, कमीला और अजमोद १–२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीम और एरण्डकीजडकेक्वाथसे २१–२१, भंगरेकेरससे ७, गोरखमुण्डीकेरससे १२ और पानकेरससे ३ भावनाएं देकर सुखाकर मधुमें बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली देवदारु और चित्रकमूलको दूधके साथ-घिसकर इसकेसाथदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इसकेप्रयोगमें भोजनकेलिये त्रिकटुयुक्तदूध और कुलथीका यूष देनाचाहिये ॥

६२६ वैश्वानरवटी (द्वितीया)

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृथक्पृथक् ।
प्रत्येकं लशुनं हिङ्गुं कुबेराक्षं त्रयस्त्रयः ॥ ३०२१ ॥
एकांशं भस्मसूतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।
भावितं सर्वशूलघ्नं प्लीहि वैश्वानरो भवेत् ॥ ३०२२ ॥

व. रा., शूले ।

भाषा—सैन्धव, सोंठ और नागरमोथा ९–९ भाग, लहसन, भुनीहींग, करञ्ज ३–३ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय एरण्डतैलसे एकदिनमर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ से २ गोलीतक रोगीका बलाबल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ-देनेसे सबप्रकारकेशूल और प्लीहा नष्टहोतीहै ॥ ६२६ ॥

६२७ वैष्णवरसः (ज्वराङ्कुशः)

हिङ्गुलं वत्सनाभञ्च चक्राङ्गी त्रिकटु वचाम् ।
चित्रमूलकषायेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३०२३ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तदुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
गुञ्जामात्रप्रयोगेण शृङ्गवेराऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥
द्वन्द्वज्वरं सन्निपातं पुराणं विषमज्वरम् ।
नाशयेदखिलं घोरं नाम्नाऽयं वैष्णवो रसः ॥३०२५॥

रसायनसं., वै. चि. (ल.), वै. चि., व. रा., र. क. यो , ज्वराऽधिकारे।

टि०—र. क. यो. मुक्ति. पाठोऽस्ति नाम च ज्वराङ्कुश इति स्थापितम्। वै. चि., व. रा. एनयोर्वातकेसरीनाम्ना एकोरसोऽस्ति सोऽप्यग्मिन्नेवाऽन्तर्भवति।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और बच्छनाग, गिलोय, त्रिकटु और बच समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रककीजड़केकाढ़ेसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ६–७ तहकपड़ेमें पोटलीबनाय एकपहर-चित्रकेक्वाथमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज, सन्निपात, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥

६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशहेमयुक्सूतो नृपांशामृतयत्रयुक् ।
द्विपद्याकाशवल्लीजरसेन परिमर्दयेत् ॥ ३०२६ ॥
ततो टङ्कणतालकं दद्याट्टङ्कणालककान्तकम् ।
मर्दं नष्टश्च पिष्टश्च धमेदन्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥
गुटिका जायते दिव्या जराद्दारिद्र्यनाशिनी ।
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्ग्रामे विजयप्रदा॥३०२८॥
वज्रदेहो महावीर्यः सर्वलोकप्रियो भवेत् ।
गुटिकायाः प्रभावेण नारीणां वल्लभो भवेत् ॥३०२९॥

र., रसायने।

भाषा—सुवर्णका बारीकरेता अथवा वर्क और शुद्धपारद समभाग, हीरेकीभस्म १६ वा भागलेकर द्विपदी और आकाश-बेलकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुहागा, हरिताल और कान्त-लोहकोरेता पारेसे दशांश मिलाकर मर्दनकरे। पिष्टीहोनेपर अन्ध-मूषामें बन्दकर धमनकरनेसे गोली तैयारहोजातीहै। इसे मुंहमें रखनेसे बुढ़ापे और दारिद्र्यको यह नष्टकरतीहै। सङ्ग्राममें जीत होतीहै। इसकेधारणसे वज्रसदृशशरीरहोकर समस्तलोक और खासकर स्त्रियोंका प्रीतिपात्र होजाताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ व्याधिगजकेसरीरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं तालं विषं व्यूषणकं समम् ।
त्रिफला टङ्कणक्षारं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ ३०३० ॥
दन्तिबीजञ्च टङ्कैकं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ ३०३१ ॥
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्डीरसकैस्तथा ।
मरिचाभा वटी कार्या दोषमापेक्ष्य दापयेत् ॥३०३२॥
क्षीरेण सह दातव्या चाऽष्टज्वरनिवृत्तये ।
अशीति वातजान्हन्ति निर्गुण्ड्या वास्तुकेन वा ॥
गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥ ३०३४ ॥

नि. र., र. चं., वै. नि., वातरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और बच्छनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आंवला, भुनासुहागा और शुद्धजमालगोटा ८–८ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा, मकोय, और निर्गुण्डीके स्वरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर मरिच बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोतेहैं। निर्गुण्डी अथवा बथुएके स्वरसकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वायुरोग और गुड़से ४० पित्तरोग नष्टहोतेहैं। इसीतरह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

६३० व्याधिगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृताऽभ्रकं मृतं लोहं मृतं सूतं मृतं रविम् ।
मृतं नागं मृतं कास्यं मण्डूरं विमलां शिलाम् ॥३०३५॥
सत्त्वं खर्परजं तालं शङ्खं टङ्कणमाक्षिकम् ।
मृतं कान्तञ्च वैकान्तं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥ ३०३६ ॥
वराटं मणिरागञ्च राजावर्तञ्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥३०३७॥
मर्दयेत्स्नुग्भानुदुग्धैः पुटयेत्त्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभि वांरांस्त्रींश्च पृथक्पृथक् ॥ ३०३८ ॥
मातुलुङ्गवरावेतसाऽम्लभृङ्गाऽऽर्द्रमार्कवैः ।
त्रिवियेले भावयित्वा पाचितं लघुवह्निना ॥ ३०३९ ॥
वातपित्तकफोत्क्लिष्टाञ्ज्वरान्संसर्गजानपि ।
सन्निपातप्रलपनं सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतम् ॥ ३०४० ॥
सेवितोऽभ्रसितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥ ३०४१ ॥
सेवितो हन्ति रोगौघान्व्याधिवारणकेसरी ।
क्षिप्रमेकाद्दशविधं शोथं पाण्डुकृमीञ्जयेत् ॥ ३०४२ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहं मेदोदरं तथा।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्महलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरं बल्यं वृष्यं मेध्यं रसायनम् ॥ ३०४३ ॥

र. क., सर्वरोगे।

भाषा—अभ्रक, लोह, पारा, ताम्र, नाग, कांस्य, मण्डूर, रजतमाक्षिक, मैनसिल, खपरियाकासत्त्व, हरिताल और शङ्ख इनकीभस्में, भुनासुहागा, सुवर्णमाक्षिक, कान्तलोह, वैक्रान्त, प्रवाल, मोती, कौड़ी, माणिक्य, लाजवर्द इनकीभस्में, शुद्ध-गन्धक सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय थूहर और आकके दूधसे ३–३ दिन मर्दनकर बिजोरा, त्रिफला, अमलवेत, दुरदुर, भंगरा, भेगरा इनके रसोंमें ३–३ भावनाएं देकर गोलाबनाय एरण्डवगैरहके पत्तोंमें लपेट पुटपाककरके १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर अथवा पीपलके चूर्ण अथवा मधु और अद रखकेरस अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषोंके पार्थक्य अथवा संसर्गसे होनेवाले जटिलज्वर, सन्निपात, प्रलाप, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गवातरोग, ११ प्रकारके शोथ, पाण्डु, कृमि, ५ प्रकारकाकास, श्वास, प्रमेह, मेद, पथरी, शर्करा, शूल, प्लीहा, गुल्म, हलीमक प्रभृति समस्तव्याधियोंको नष्टकर बल, स्मृति और बुद्धिको बढ़ाताहै ॥ ६३० ॥

६२३ वैश्वानरलोहम् (प्रथमम्)

त्रिपलं तिन्तिडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।
शम्बूकभस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥
चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।
चूर्णं सम्पिष्य खल्वादौ कारयेदेकतां भिषक्॥३००९॥
शूलस्यागमवेलायां खादेन्माषद्वयं नरः ।
शूलमष्टविधं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥३०१०॥

भै. र., ध., र. क., शूलाऽधिकारे।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, घोंघेकीभस्म और सेंधानमक समभागलेकर सबकी बराबर लोहभस्ममिलाय एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। शूलआनेकेसमय २-२ मासे उचितानुपानकेसाथ लेनेसे साध्य अथवा असाध्य समस्तशूलोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

६२४ वैश्वानरलोहम् (द्वितीयम्)

फलत्रिकत्वचो ग्राह्याः सचित्रककटुत्रयम् ।
जातीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥
लवङ्गकलिका ग्राह्या गद्याणद्वयसम्मिता ।
विषं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणविंशतिः ॥३०१२॥
मृतलोहस्य विंशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मधुना गुटिकां कुर्यान्माषमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चपाण्डुक्षयापहम् ।
बालस्थविरवृद्धानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ॥ ३०१४ ॥
योनिशूलेषु सर्वेषु वह्निमान्द्ये च दापयेत् ।
अरुचिञ्च हरत्याशु सूतिकारुक् प्रणश्यति ॥
वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम् ॥ ३०१५ ॥

रसायनसं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात, लवङ्ग १-१ तोला, शुद्धबछनाग ६ मासे, शक्कर और लोहभस्म १०-१० तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय मधुके साथ १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातःकालदेनेसे पांचप्रकारके पाण्डु, क्षय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और सूतिकारोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

६२५ वैश्वानरवटी (प्रथमा)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽर्काऽयः शिलाजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ३०१६ ॥
त्रिकटु चित्रकं वीरां निर्गुण्डी मुशलीरजः ।
अजमोदां विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥
निम्बपञ्चाङ्गुलकार्थैर्भावना चैकविंशतिः ।
भृङ्गराजरसैः सप्त मुण्डिकाभिश्च द्वादश ॥ ३०१८ ॥
त्रिधा नागलताद्रावे दत्त्वा क्षौद्रे विलोडयेत् ।
भक्षयेद्बदराऽस्थ्याभां वटिकां तां दिवानिशि॥३०१९॥
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ।
देवदार्वग्निमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत् ॥
भोजनं व्योषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥

र. सं., र. चं., र. र., र. सु., धा., व. रा., र. क. ल., र. चि., चि. र. भ., रसायनसं., र. को., र. र. स., र. शं., र. (मा.), रससारसङ्ग्रह, यो. म., र. क. यो., र. र. कौ., र. मृ., र.का., उदराऽधिकारे ।

टि०—भुवनिद्रव्यकल्प रसममानता, भावनायां पञ्चाङ्गुलस्य भावना निष्कासिता तत्तु न सम्यक् ? उदररोगे तस्याऽत्यावश्यत्वात् । र. मृ., र. का. एतयो वैश्वानररस नाम्ना एको रसोऽस्ति नत्वेयमेव वटी व्यत्यास्निनाऽनलस्याप्यत्रैवाऽन्तर्भावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., ताम्र और लोहभस्म, शिलाजीत १-१ भाग, शुद्धबछनाग, त्रिकटु, चित्रकमूल, शतावरी, निर्गुण्डी, मुशली, कमीला और अजमोद २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीम और एरण्डकीजड़केक्वाथसे २१-२१, भंगरेकेरससे ७, गोरखमुण्डीकेरससे १२ और पानकेरससे ३ भावनाएं देकर सुखाकर मधुमें बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली देवदारु और चित्रकमूलको दूधके साथ घिसकर इसकेसाथदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इसप्रयोगमें भोजनकेलिये त्रिकटुयुक्तदूध और कुलथीका यूष देनाचाहिये ॥

६२६ वैश्वानरवटी (द्वितीया)

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृथक्पृथक् ।
प्रत्येकं लशुनं हिङ्गुं कुबेराक्षं त्रयस्त्रयः ॥ ३०२१ ॥
एकांशं भस्मसूतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।
भावितं सर्वशूलघ्नं श्रीहि वैश्वानरो भवेत् ॥ ३०२२ ॥

व. रा., शूले ।

भाषा—सैन्धव, सोंठ और नागरमोथा ९-९ भाग, लहसन, भुनीहींग, करञ्ज ३-३ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय एरण्डतेलमें एकदिनमर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोगीका बलाबल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ-देनेसे सबप्रकारकेशूल और प्लीहा नष्टहोतीहै ॥ ६२६ ॥

६२७ वैष्णवरसः (ज्वराङ्कुशः)

हिङ्गुलं वत्सनाभञ्च चक्राह्वौ त्रिकटुं वचाम् ।
चित्रमूलकषायेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३०२३ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तदुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
गुञ्जामात्रप्रयोगेण शृङ्गवेराऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥
द्वन्द्वज्वरं सन्निपातं पुराणं विषमज्वरम् ।
नाशयेदखिलं घोरं नाम्नाऽयं वैष्णवो रसः ॥३०२५॥

रसायनसं., वै. चि. (त.), वै. चि., व. रा., र. क. यो., ज्वराऽधिकारे।

टि०—र क यो मुद्रित पाठोऽस्ति नाम च ज्वराङ्कुश इति स्थापितम्। वै चि., व रा एतयोर्व्याघ्रकेसरीनाम्ना एकोयोगोऽस्ति सोऽप्यस्मिन्नेवाऽन्तर्भवति।

भाषा—शुद्ध शिंगरफ और बछनाग, गिलोय, निकटु और वच सममागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रकबीजक्काथसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ६–७ तहकपड़ेमें पोटलीबनाय एकपहर-चित्रकके क्वाथमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज, सन्निपात, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥

६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशहेमयुक्सूतो नृपांशमृतवज्रयुक् ।
छिपद्याकाशवल्लीजरसेन परिमर्दयेत् ॥ ३०२६ ॥
मतो दिज्ञानतो दद्यात्टङ्कणालककान्तकम् ।
मर्द्य नष्टक्ष पिष्टक्ष धमेदन्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥
गुटिका जायते दिव्या जरादारिद्र्यनाशिनी ।
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्ग्रामे विजयप्रदा॥३०२८॥
वज्रदेहो महावीर्यः सर्वलोकप्रियो भवेत् ।
गुटिकायाः प्रभावेण नारीणां वल्लभो भवेत् ॥३०२९॥

र., रसायने ।

भाषा—सुवर्णका मारीकरेता अथवा वर्क और शुद्धपारद समभाग, हीरेकीभस्म १६ वा भागलेकर द्विपदी ? और आकाश-वेलकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुहागा, हरिताल और कान्त लोहकरेता पारेसे दशांश मिलाकर मर्दनकरे। पिटीहोनेपर अन्ध-मूपामें बन्दकर धमनकरनेसे गोली तयारहोजातीहै । इसे मुंहमें रखनेसे बुढापे और दारिद्र्यको यह नष्टकरतीहै। सङ्ग्राममें जीत होतीहै । इसकेधारणसे वज्रसदृशशरीरहोकर समस्तलोक और खासकर स्त्रियोंका प्रीतिपात्र होजाताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ व्याधिगजकेसरीरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं तालं विषं स्यूषणकं समम् ।
त्रिफला टङ्कणक्षारं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ ३०३० ॥
दन्तिबीजञ्च टङ्कैकं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ ३०३१ ॥
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्डीरसकैस्तथा ।
मरिचाभा वटी कार्या दोषमापेक्ष्य दापयेत् ॥३०३२॥
क्षीरेण सह दातव्या चाऽष्टज्वरनिवृत्तये ।
अशीतिं वातजान्हन्ति निर्गुण्ड्या वास्तुकेन वा ॥
गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशांश्च पैत्तिकान् ।
अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥ ३०३४ ॥

नि.र., र.च , वै नि ,वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्रे, बहेडा, आंवला, भुनासुहागा और शुद्धजमालगोटा ४–४ मासे लेकर सबको बारीकचूर्णकर पारे गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा, मकोय, और निर्गुण्डीके स्वरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर मरिच बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोतेहैं । निर्गुण्डी अथवा बथुएके स्वरसकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वायुरोग और गुड़से ४० पित्तरोग नष्टहोतेहैं । इसीतरह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

६३० व्याधिगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृताऽभ्रकं मृतं लोहं मृतं सूतं मृतं रविम् ।
मृतं नागं मृतं कांस्यं मण्डूरं विमलां शिलाम्॥३०३५॥
सत्त्वं खर्परजं तालं शङ्खं टङ्कणमाक्षिकम् ।
मृतं कान्तञ्च वैकान्तं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥ ३०३६ ॥
वराटं मणिरागञ्च राजावर्तञ्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥३०३७॥
मर्दयेत्स्नुग्भानुदुग्धैः पुटयेत्त्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभि र्वारांस्त्रींश्च पृथक्पृथक् ॥ ३०३८ ॥
मातुलुङ्गवरावेतसाऽम्लस्तूर्याऽऽर्द्रमार्कवैः ।
त्रिस्त्रिर्वेलं भावयित्वा पाचितं लघुवह्निना ॥ ३०३९ ॥
वातपित्तकफोत्क्लिष्टाड्वरान्संसर्गजानपि ।
सन्निपातप्रलपनं सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतम् ॥ ३०४० ॥
सेवितोऽग्निसितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥ ३०४१ ॥
सेवितो हन्ति रोगौघान्व्याधिवारणकेसरी ।
क्षिप्रमेकादशविधं शोषं पाण्डुकृमीञ्जयेत्॥ ३०४२ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहं मेदोदरं तथा।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्महलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरं बल्यं वृष्यं मेध्यं रसायनम् ॥ ३०४३ ॥

र.क., सर्वरोगे ।

भाषा—अभ्रक, लोह, पारा, ताम्र, नाग, कांस्य, मण्डूर, रजतमाक्षिक, मैनशिल, खपरियाकासत्व, हरिताल और शङ्ख इनकीभस्में, भुनासुहागा, सुवर्णमाक्षिक, कान्तलोह, वैक्रान्त, प्रवाल, मोती, कौड़ी, माणिक्य, लाजवर्द इनकीभस्में, शुद्ध-गन्धक सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय थूहर और आकके दूधसे ३–३ दिन मर्दनकर बिजोरा, त्रिफला, अमलबेत, तुरटुर, अदरख, भंगरा इनके रसोंसे ३–३ भावनाएं देकर गोलाबनाय एरण्डवगैरहके पत्तोंमें लपेट पुटपाककरके १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर अथवा पीपलके चूर्ण अथवा मधु और अद-रखकेरस अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषोंके पार्थक्य अथवा संसर्गसे होनेवाले ज्वरोंका, सन्निपात, प्रलाप, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गवातरोग, ११ प्रकारके शोष, पाण्डु, कृमि, ५ प्रकारकाकास, श्वास, प्रमेह, मेद, पथरी, शर्कर, शूल प्लीहा, गुल्म, हलीमक प्रभृति समस्तव्याधियोंको नष्टकर यह बल, वृष्यता और बुद्धिको बढ़ाताहै ॥ ६३० ॥

६३१ व्याधिगजपञ्चाननरसः

वर्षाभूभृतकेशराङ्गलिशिफास्नुग्दुग्धपाठोद्भवैः,
मर्द्यो यामचतुष्टयं रसवरः स्विन्नश्च क्षीरश्च तम्।
मृतं स्वीयचतुर्गुणेन बलिना युक्तं सहामण्डुकी-,
माचीकाञ्चनलाङ्गलीहरिवधूकासन्नविम्बोद्भवैः॥
पिष्ट्वा वासरयुग्ममेव रचितं तद्गोलकं वालुका-,
यन्त्रे भाण्डगतं तदौपधरसं क्षिप्त्वा मुहुः शोषितम्।
पश्चादल्पपुटं ददीत च कलांशं त्र्यूपणं टङ्कणं,
देयो वल्लचतुष्टयः सुसितया त्वग्दोषभूतक्रिमीन्॥
हित्वाऽन्यान्सकलान्गदान्विजयते पथ्यप्रयोगाद्ध्रुवं,
श्रीशाभ्यर्चनपूर्वकं बलिविधिं कृत्वा भिषग्योजयेत्।
पथ्यं भक्तसितासमुद्गलफलं दध्ना च देयं लघु,
क्षीणे मुद्गरसः सिता समुचिता कार्या च शीतक्रिया॥
त्याज्यं पित्तलमाषमग्र सकलं मांसञ्च जीरं सदा,
त्याज्यं स्वच्छयतां विशुद्धवपुषां घस्रत्रयं सेवितः।
कान्तिं काञ्चनसन्निभां किल बलं भीमस्य तं पावकं,
पुष्टिं वीर्यमयं नृणां वितनुते व्याधीभपञ्चाननः ३०४७

र.ल., र.शं., र.का., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—हरसिंह, कालाभंगरा, करिहारीकन्द, थूहरकादूध, पाठा इनकेरसोंमें ४-४ पहर मर्दनकर स्वेदनक्रियाहुआपारा १ भाग और शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मण्डूकपर्णी, मकोय, कचनार, करिहारी, तुलसी, कसोंजी, कुंदरू इनके रसोंसे २-२ दिन मर्दनकर ६-७ कपडमिट्टीदीहुई चौडेमुंहकी आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रस पूर्वोक्तरसोंको देदेकर मन्दाग्निसे पकावे। औषधके बराबर प्रत्येककारस सूखनेपर निकालकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें मन्दकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १६ वां हिस्सा त्रिकटु और भुनासुहागा मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १२-१२ रत्तीकीमात्रा शक्करकेसाथ देनेसे त्वग्दोष और कृमिप्रभृति समस्तव्याधियोंको यह दूरकरताहै। इसकेसेवनकरनेके पूर्व शङ्करका पूजनकर बलि देकर दवाका आरम्भकरावे। भात, शक्कर, मुनक्का और दही खानेकोदेवे। अत्यन्त क्षीण आदमीकेलिये मूंगकायूष और शक्करदेवे तथा शीतक्रियाकरे। पित्तकारकवस्तु, मांस, जीरा इनसबका त्यागकरे। तीनदिनकेबाद व्याधि कमहोनेलगेगी। धीरे २ सुवर्णसदृश कान्ति, विपुल पराक्रम और वीर्यवृद्धिको प्राप्तकराता है॥ ६३१॥

६३२ व्याधिदावानलरसः

मृतं कान्तं त्वलवलिशिलाक्ष्वेडताम्राभ्रताप्यं,
कुष्ठं सिन्धुं हलिनिशुकिनागारि तुल्यं हि भाव्यम्।
वह्निव्योपैः क्रिमिरिपुजयाकुष्ठमुस्तायवानीः
ज्वालाघस्राम्बुधिफलवचामार्गिनाभृङ्गवेरैः॥३०४८॥
मात्रा गुञ्जा निखिलजठरे मेहकुष्ठे ग्रहण्यां,
शोथे शूले सकलगुदजे मान्द्यजीर्णे विशूच्याम्।
पाण्डौ रोगे सकलपवने सन्निपाते ज्वरेऽसौ,
हन्यादेतांस्तम इव रविः व्याधिदावानलोऽयम्॥३०४९
नवज्वरे शुण्ठिजलैः सकृष्णैः
परेषु रोगेष्वनुपानयोगात्।
हितं हिमं चन्दनवारि तत्र
हिताहितं पथ्यविधौ विमृश्यम्॥ ३०५०॥

१. शि., सन्निपाते।

भाषा—पारद और कान्तभस्म, शुद्धहरिताल, गन्धक, मैनसिल और बच्छनाग, ताम्र, अभ्रक और रूपामाखी भस्म, कुठ, सैन्धव, करिहारीकोजड, पाठा, सोनामाखी भस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर चित्रक, त्रिकटु, विडङ्ग, भांग, कुठ, नागरमोथा, अजवाइन, अग्निशिखा, समुद्रफल, बच, प्रियङ्गु और अदरखकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली चन्दनकेपानी अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेमे सबप्रकारके उदररोग, प्रमेह, कुष्ठ, ग्रहणी, शोथ, शूल, बवासीर, मन्दाग्नि, अजीर्ण, हैजा, पाण्डु, समस्तवातविकार, सन्निपात, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। सोंठ और पीपलके कल्कसे नवज्वरोंको नष्टकरताहै॥ ६३२॥

६३३ व्याधिविध्वंसनरसः

समीरपन्नगस्य स्याद्विगुणा जयपालकाः।
अजादुग्धेन ते पक्वाः क्षुण्णो गुञ्जाद्वयं रसः॥३०५१॥
रण्डव्योपार्द्रकैर्दत्तः पृथग्वा घृतसम्प्लुतः।
जाड्यगुल्मोदरप्लीहशूलामविषमज्वरान्॥ ३०५२॥
उष्णेन पयसा स्तम्भो रेकः शीतेन जायते।
क्षौद्रजातीफलं दद्यादतिरेकोपशान्तये॥ ३०५३॥
पथ्यं भक्तं गवां तक्रं सनीरञ्च ज्वरादिषु।
तापशोषे गुडूच्यम्बु व्याधिविध्वंसकारके॥३०५४॥

र.ल., रसायनसं., वै., र. शं., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—समीरपन्नगरस १ भाग, बकरीकेदूधमें उबाले हुए जमालगोटे २ भागलेकर एकपहरमर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा शक्कर, त्रिकटु और अदरखकेसाथ अथवा घीकेसाथदेनेसे जडता, गुल्म, उदर, प्लीहा, शूल, आम और विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै। ठंढापानीपीनेसे रेचनहोगा गरमपीनेसे बन्दहोजायगा। अधिकरेचनहोनेपर मधुमें मिलाकर जायफलदेना, भूखलगनेपर छाछभातदेना। ज्वरहोनेमें पानीकेसाथ और ज्वरजनितशोषमें गिलोयके स्वरसकेसाथ देना॥

६३४ व्याधिशार्दूलगुग्गुलुः (त्रिफलागुग्गुलुः)

त्रिफलायाः पलान्यष्टौ प्रत्येकं बीजवर्जितम्।
गुग्गुलोर्द्विपलञ्चात्र निःक्षिपेत्तं सुकुट्टितम्॥३०५५॥
सर्वं संक्षुद्य यत्नेन साऽर्धाढकजले क्षिपेत्।
एकपात्रो स्थितं चैनं पक्त्वा पादावशेषितम् ३०५६
द्विपलं कटुतैलस्य मिलित्वैकत्र पाचयेत्।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडङ्गामलकानि च॥ ३०५७॥

शुद्धच्यग्निविवृद्दन्ती चव्यसूरणमानकम् ।
अष्टाष्टमापकानेतान् प्रत्येकन्तु सुचूर्णितम् ॥ ३०५८॥
सर्वस्यार्द्धतुलं देयं कालकं विधिशोधितम् ।
रसगन्धककर्षार्द्धं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ॥ ३०५९ ॥
सम्यक् सिद्धं तु विज्ञाय स्निग्धे भाण्डे विनिःक्षिपेत्।
ततो मापद्वयं जग्ध्वा प्रातरुष्णोदकं पिवेत् ॥३०६०॥
प्रथमं कुरुते वह्निं शरीरं स्थिरयौवनम् ।
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलं सुविपुलन्तथा ॥ ३०६१ ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्च दुर्नाम समभगन्दरम् ।
आमवातं शिरोवातमम्लपित्तं निहन्ति च ॥ ३०६२ ॥
कामलां पाण्डुतां श्वासं प्रमेहं गुदनिर्गमम् ।
प्लीहानं श्लीपदं शोथं कासं पञ्चविधं तथा ॥३०६३॥
शमयत्युदराण्यष्टौ शूलान्यष्टौ विशेषतः ।
भग्नास्थिविद्धवातेषु सक्थिग्रहविमोचने ॥ ३०६४ ॥
हन्यादेवं विधान्व्याधीनामयातं विशेषतः ।
ग्रन्थिवातं तथा कुष्ठं विषमज्वरमेव च ॥ ३०६५ ॥
मेदः कफामयं वातं व्याधिवारणदर्पहा ।
व्याधिशार्दूलविख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥३०६६॥

र र, आमवाते ।

भाषा—हरें, बहेड़ा, आंवला ८–८ पल, गूगल १ पल लेकर अच्छीतरहकूटकर ६ प्रस्थपानीमें डालकर एकदिनरात रहनेदे । दूसरेदिन इसको चलाताहुआ पकावे जिसमें कि गूगल पानमेंमिलकर जल न जाय । चौथाभाग अवशिष्टरहनेपर उतारकर छानले ।क्वाथमें सरसोंकातैल २ पल, त्रिकुटु, त्रिफला, नागर मोथा, विडङ्ग, आवले, गिलोय, चित्रकमूल, निसोत, दन्तीमूल, चव्य, सूरण, मानकन्द येसब ८–८ माशे, अच्छीतरहशुद्धकियाहुआ शिलाजीत ८ कर्ष, शुद्धपारा और गन्धक ८–८ माशेकी नीलवर्णकज्जली लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वकाथमें डालकर पकावे । गोली बधनेलायक होजाय तब घीकेवर्तनमें रखले । १५ या २१ दिन बीतनेपर इसमेंसे २–२ माशेकीमात्रा प्रातःकाल गरमपानीकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, कृशता, वार्धक्य, धातु-आयु और बलकाह्रास, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, भगन्दर, आमवात, शिरोवात, अम्लपित्त, कामला, पाण्डु, श्वास, प्रमेह, गुदभ्रंश, प्लीहा, श्लीपद, शोथ, कास, उदररोग, शूल, अस्थिभग, ऊरुस्तम्भ, आमवात, गठिया, कुष्ठ, विषमज्वर, मेद, कफ और वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६३४॥

६३५ व्याधिहरणरसः

सुपक्वं पीनमानीय तिक्ततुम्बीमहत्फलम् ।
उपरिभागे छेत्तव्यं तन्मध्ये नरसारकम् ॥ ३०६७ ॥
सुडवं निक्षिपेत्पश्चाच्छकलं पूर्ववज्न्यसेत् ।
मृत्कर्पटेन संवेष्ट्य छिद्राणि त्रीणि कारयेत् ॥३०६८॥
गर्तमध्ये न्यसेद्भाण्डं तस्योपरि न्यसेत्फलम् ।
घनमृत्तिकयायुक्तं न्यसेत्सप्तदिनावधि ॥ ३०६९ ॥
पश्चादुद्धृत्य भाण्डस्थं गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ।
कुडवं रसकर्पूरं खल्वे सम्मर्द्य बुद्धिमान् ॥ ३०७० ॥
पश्चात्तद्रससंयुक्तं चतुर्दश दिनावधि ।
अर्कस्य क्षीरसंयुक्तं चतुर्दश दिनावधि ॥ ३०७१ ॥
सम्मर्द्य चक्रिकां कुर्याद्भाण्डे संस्थाप्य युक्तितः ।
तिर्यक्पातनयन्त्रेण गृह्णीयादुत्तमं रसम् ॥ ३०७२ ॥
कृत्वैवं सम्प्रदायेन कर्पूराद्रसमुद्धरेत् ।
तद्रसञ्च समं गन्धं रसार्द्धन्तु विमिश्रयेत् ॥ ३०७३ ॥
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा महाकोशातकीद्रवैः ।
रसञ्च भावयित्वा तु पश्चात्कूप्यां विनिक्षिपेत्॥३०७४
वालुकामध्यगं कृत्वा दद्यादग्निं खदिरस्य च ।
द्विपादगन्धकं शेषं चूर्णं कृत्वा विचक्षणः ॥ ३०७५ ॥
कूपिकायामुखे धूमं दृष्ट्वा गन्धं पुनः पुनः ।
दीयते सूर्ययामान्तं तदा सिद्धो भवेद्रसः ॥ ३०७६ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य कूपिकाकण्ठगं रसम् ।
तरुणाऽरुणसंकाशं सिन्दूरं जायते वरम् ॥ ३०७७ ॥
नाम्नाऽयं व्याधिहरणो रसो वैद्यैः सुपूजितः ।
उपदंशे तथा मेहे पाण्डुरोगे भगन्दरे ॥ ३०७८ ॥
मन्दानले क्षये कासे श्वासे कुष्ठे व्रणे तथा ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३०७९ ॥

रसायनसं, रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह पकाहुआ पुष्टतूंबीकाफल लेकर ऊपरकी तर्फसे टुकड़ा काटकर ४ पल नवसादर डालकर ढकनलगाय ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लोहेके कीलेसे ऊपरकी तर्फ तीन छेदकरदे । फिर एक गढ़ेमें पात्ररखकर उसमें तूंबीको रख नाक्से ढककर मिट्टीसे खड्ढेको भरदे । सातदिनबाद तूंबीकेद्रवको निकालले । इसकेबाद ४ पल रसकपूरको इसद्रवसे और आकके दूधसे १४–१४ दिनतक मर्दनकर टिकड़िया बनाय सुखाकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर तिर्यक्पातनयन्त्रसे पारेको अलगकरे । यह पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक तथा साधारणशुद्धपारा आधाआधाभाग मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर कड़वीतोरीकेरससे ३–४ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें रख खैरकी लकड़ीकी अग्निदेवे । कज्जलीमें डालेहुए गन्धकसे आधा गन्धक और पीसकर रखछोड़े । शीशीमेंसे धूआं निकलनेपर थोड़ाथोड़ा गन्धक ऊपरसे देताजाय । ऐसे १२ पहरतक अग्निदेनेसे तमामपारा उड़कर शीशीके मुंहपर लगजायगा । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २ से ३ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे उपदंश, प्रमेह, पाण्डु, भगन्दर, मन्दाग्नि, क्षय, कास, श्वास, कुष्ठ, व्रण प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

६३६ व्योममार्तण्डरसः

तुल्यवारिदिवाकरं समं
ऽयूपणेन सफलत्रिकेण च ।

तुल्यभागमिलितेन सर्पिषा
लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥

लो. प. (स.), अर्शोरोगे।

भाषा—नागरमोथा, ताम्रभस्म, त्रिकटु और त्रिफला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकेबराबर घीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे दोमाशेतक देनेसे यह समस्तबवासीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ व्योमसुन्दरीवटी

कार्पास्याः काकमाच्याश्च कन्यायाश्च दलद्रवैः।
शुद्धं सूतं दिनं मर्द्यं क्षाल्यमम्लैः समुद्धरेत् ॥ ३०८१ ॥
तद्रसान्निष्कचत्वारि निष्कार्द्धं ताम्रचूर्णकम्।
पादोननिष्कमभ्रोत्थं सत्त्वं पादश्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥
हेमतुल्यं मुण्डचूर्णं सर्वमम्लैर्विमर्दयेत्।
दिनान्ते गोलकं कृत्वा जम्बीरस्योदरे क्षिपेत ॥ ३०८३
त्रिदिनं दोलकायन्त्रे पाचयेत्सारनालके।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥ ३०८४ ॥
वर्षमात्राज्जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं नरः।
चित्रमूलस्य चूर्णन्तु सक्षौद्रं कान्तपात्रके ॥
आलोड्य भक्षयेत्कर्षमनु स्यात्क्रामणे हितम् ॥ ३०८५ ॥

रसायनखं, रसायने।

भाषा—कपास, मकोय, घीकुंवार इनकेरसोंमें १–१ दिन पारेकोमर्दनकर काञ्जीप्रभृति खट्टेपदार्थोंसे साफ़करके १ कर्ष लेवे। फिर शुद्धताम्रचूर्ण २ माशे, अभ्रकसत्व ३ मा., सुवर्ण और मुण्ड १–१ माशा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर गोलीबनाय चारतह मलमलके टुकडेमें बांधकर जंभीरीनींबूमें रख दोलायन्त्र बनाय काञ्जीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे। काञ्जी सूखनेपर नई डालताजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर गोलीको निकाललें, यह कड़ी होजायगी। इसको एकवर्षभर मुंहमें रखनेसे बुढ़ापा नष्टहोकर अत्यन्त दीर्घायुहोताहै। एककर्ष चित्रककी जड़का चूर्ण मधुकेसाथ कान्तलोहकेपात्रमें कुछदेर घोटकर भक्षणकरनेसे इसका शरीरमें अनुक्रमणहोताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ व्योषादिलोहम्

व्योषं विल्वं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्नवम्।
मुस्तामयोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥ ३०८६ ॥
वृश्चिकाली च भार्गी च सक्षीरैस्तैः शृतं घृतम्।
सर्वान्प्रशमयत्याशु विकारान्मृत्तिकाकृतान् ॥ ३०८७ ॥

च. सं., अ. ह, वृ. मा., ग. नि., पाण्डुरोगे।

भाषा—त्रिकटु, बेलगिरी, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, लाल और सफेदपुनर्नवा, नागरमोथा, फोलादकाचूरा, पाठा, विडङ्ग, देवदारु, बिछुआ, भारङ्गी सब समभागलेकर बारीकपीसकर कल्क बनावे। फिर कल्कसे चौगुना घी और घीसे चौगुनादूध डालकर पकावे। घीमात्र अवशिष्ट रहनेपर छानकर रखले और ऊपरकी चीज़ोंकाही चूर्ण बनाकर रखलेवे। इसचूर्णमेंसे १ से ३ माशेतकमात्रा एकतोले घीमें मिलाकर लेनेसे मृद्भक्षणजनित समस्तविकार नष्टहोतेहैं। खानेकेलिये जो चूर्ण बनावे उसमें लोहभस्मका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं मृतायसम्।
पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि षट् ॥ ३०८८ ॥
खल्वे शतदलोत्थेन रसेन परिमर्दयेत्।
वारत्रयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥
ततो माषमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत्।
गुडूचीसारिवानिम्बमञ्जिष्ठात्रिफलोद्भवम् ॥ ३०९० ॥
क्वाथं चानु पिबेन्नित्यं व्रणदोषप्रशान्तये।
तान्सर्वान्नाशयेदाशु विद्रधींश्च भगन्दरान् ॥
शोफाध्मानप्रमेहादीञ्जयेच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥ ३०९१ ॥

र. म. मा., ना. वि., व्रणाधिकारे।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण और लोहभस्म १–१ पल, शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाब, कमल और चमेलीके स्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और मधुकेसाथलेकर गिलोय, अनन्तमूल, नीम, मजीठ और त्रिफलाका क्वाथ पीनेसे सबप्रकारकेव्रण, विद्रधि, भगन्दर, शोथ, आध्मान, प्रमेहप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० व्रणगजाङ्कुशरसः

दरदः पार्वतीपुष्पं कुनटी पुरुषो रसः।
शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवोऽतिविषा चर्वी ३०९२
शरपुङ्खा विडङ्गश्च यवानी गजपिप्पली।
मरीचार्कौ च वरुणो धूनकश्च हरीतकी ॥ ३०९३ ॥
मर्दितं कटुतैलेन गुटिकां कारयेद्भिषक्।
नाडीव्रणप्रवाहञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥
चिरव्रणं दद्रुकुष्ठं पूतिकन्तु शिरोगदम्।
पादस्फोटं तथा हस्तं विचर्चीं बहुकीटजाम् ॥ ३०९५

र र., भै. र., ध., र. च., व्रणशोथे। भै. र. नारायणरस इतिनाम। ध. दरदवटीतिनाम। र. चं नारायण इतिनाम भगन्दराऽधिकारश्च।

भाषा—शुद्ध शिंगरफ, फिटकड़ी, कसीस, मैनसिल, गूगल, पारा, सोनागेरू, गन्धक, वैक्रान्त, सेन्धव, अतीस, चव्य, शरपुङ्ख, विडङ्ग, अजवाइन, गजपीपल, मरिच, आककीजड़, वरुणकीछाल, राल, हर्रे येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सरसोंके तैलसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे नाडीव्रण, गण्डमाला, भगन्दर, पुरानाव्रण, दद्रु, कुष्ठ, सड़ाहुआव्रण, शिरोरोग, हाथ और पैरकी फूटन, कीटयुक्तविचर्चिका इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ व्रणजयमल्लः

मल्लं सङ्गृह्य यत्नेन कर्षमात्रं भिषग्वरः ।
शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुग्मोदरबिले क्षिपेत् ॥३०९६॥
मृत्कर्पटेन संवेष्ट्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
अधो वह्निं ददेतोऽप्रमष्टोत्तरशतावधि ॥ ३०९७ ॥
खरमूत्रे निवेश्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥
व्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपोने भगन्दरे ।
महामल्लाभिधः प्रोक्तस्तज्ज्ञैर्व्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥

रसायनस , व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—एककर्ष शुद्धसोमलकी डलीको दो ढकनोंमें बन्दकर कपड़मिट्टी देकर चूल्हेपर रख नीचे कड़ी आंचदे । उसरसे १०८ कर्ष गधेकेमूत्रका चोवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ चावल मात्रा घीकेसाथदेनेसे व्रण, क्षत, महाकुष्ठ, शतपोनक, भगन्दर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

६४२ व्रणमर्दनरसः

दरदोत्थं रसं शुद्धं गन्धकश्च पलंपलम् ।
पलत्रयं शुद्धतालं मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ३१०० ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन रेखितं शुक्तिमात्रकम् ।
निक्षिप्य रजतं शुद्धं काचकूप्यां विनिक्षिपेत्॥३१०१॥
प्रमुद्र्यास्यं भिषक् पश्चात्सिकतायन्त्रके पचेत् ।
मन्दमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेदधः ॥ ३१०२ ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ततस्तु कूपिकान्तस्थं क्वचिन्माणिक्यसन्निभम् ३१०३
पतङ्गीं चातियत्नेन ग्राहयित्वा पृथक्पृथक् ।
नीत्वाऽध.स्थं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादत. परम् ३१०४
सर्षपाभा पतङ्गीनां गुञ्जामात्रं तथा रसम् ।
चूर्णितं पर्णखण्डेन भक्षयेद्वा यथाबलम् ॥ ३१०५ ॥
यावद्गुञ्जापतङ्गी स्याद्रसो माषमितो भवेत् ।
तदूर्ध्वं वर्धनं नैव कारयेद्रोगिणां क्वचित् ॥ ३१०६ ॥
यदाऽग्निरोधान्न भवेत्पतङ्गी
तदा रसः केवल एव नित्यम् ।
सेवेद्व्रणानां प्रशमाय विद्वा-
स्तत. सुखी स्याद्व्रणामयार्तः ॥ ३१०७ ॥

र म मा., ना वि , व्रणशोथे ।

भाषा—शिङ्गरफसे निकालाहुआ शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल शुद्धहरिताल ३ पल, चांदीका बारीकवरेता १ पल लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर डाट लगाकर वालुकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सावधानीकेसाथ शीशीको फोड़कर देखे, कहींपर मणिके सदृश कहीं पतङ्गकेसदृश रस दिखाईदेगा । इनको अलग २ निकालकर शीशीमें रखछोड़े और नीचेकाभाग अलग रक्खे । पतङ्गीरङ्गवालेमेंसे १ सर्षप और माणिक्यसदृश तथा तलस्थकी १–१ रत्ती पानमें रखकर खावे । पतङ्गीकीमात्रा बढ़ाकर १ रत्तीतक और दूसरोंकी १ माशेतक करे । इससे अधिक न बढावे । अग्निके अवरोधसे पतङ्गी नजर न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रसमिले उसीका सेवनकरना चाहिये । इसके सेवनसे समस्त रक्तविकार नष्टहोतेहैं ॥६४२॥

६४३ व्रणवडवानलरसः

समाने द्वे च पाषाणे तदर्द्धं बलिपारदम् ।
कुनटीक्षारमेकैकं सूतपादं सुतालकम् ॥ ३१०८ ॥
सर्वं शुद्धं तु खल्वे च मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
नागवल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नवौ ॥ ३१०९ ॥
प्रत्येकपत्रसारेण मर्दनेन पुन.पुनः ।
पदकान्त्यदरीबीजमात्रांश्चचुक्रांस्तु कारयेत् ॥३११०॥
शुल्वे कारण्डके क्षिप्त्वा सप्तशो वस्त्रमृत्तिकाः ।
सुपक्वं वालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोलं विचूर्णयेत् ।
अनुपानविशेषेण व्रणांश्च विविधाञ्जयेत् ॥
शीतिकां विषमान्हन्ति शीतज्वरहरं परम् ॥३११२॥

र क यो , व्रणे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल १–१ भाग, शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, मैनसिल और सुहागा १–१ भाग, शुद्धहरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर पान, निर्गुण्डी, भगरा और पुनर्नवाके रसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियें बनाय सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके डाटबन्दकर वालुकायन्त्रमेंरख १२ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सबको पीसकर रखछोडे । इसमेंसे १ चावलसे २ चावलतक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारकेव्रण, शीत और विषम ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

६४४ व्रणहररसः

रसं गन्धं विषं वह्निं लोहमभ्रं समंसमम् ।
सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥३११३॥
भावयित्वा वटीः कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता भिषक् ।
रसो व्रणहरो नाम व्रणान्हन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥

र न., व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग, चित्रककीजड़, लोह और अभ्रकभस्म समभागलेकर अर्जुन और कचनारकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियां बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तव्रणोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ व्रणान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निशायुग्मं बला वत्स्या प्रसारिणी ।
मञ्जिष्ठा पार्थयष्ट्यौ च देवदारु पुनर्नवा ॥ ३११५ ॥

तुल्यभागमिलितेन सर्पिषा
लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥

लो. प. (स.), अर्शोरोगे।

भाषा—नागरमोथा, ताम्रभस्म, त्रिकुटु और त्रिफला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकेबराबर घीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे दोमाशेतक देनेसे यह समस्तबवासीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ व्योमसुन्दरीवटी

कार्पास्याः काकमाच्याश्च कन्यायाश्च दलद्रवैः।
शुद्धं सूतं दिनं मर्द्यं क्षाल्यमम्लैः समुद्धरेत् ॥३०८१॥
तद्रसान्निष्कचत्वारि निष्कार्द्धं ताम्रचूर्णकम्।
पादोननिष्कमभ्रोत्थं सत्त्वं पादञ्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥
हेमतुल्यं मुण्डचूर्णं सर्वमम्लैर्विमर्दयेत्।
दिनान्ते गोलकं कृत्वा जम्बीरस्योदरे क्षिपेत् ॥३०८३
त्रिदिनं दोलकायन्त्रे पाचयेत्सारनालके।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥ ३०८४ ॥
यत्प्रमाणाजरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं नरः।
चित्रमूलस्य चूर्णन्तु सक्षौद्रं कान्तपात्रके ॥
आलोड्य भक्षयेत्कर्षमनु स्यात्कामणे हितम्॥३०८५॥

रसायनलं, रसायने।

भाषा—कपास, मकोय, घीकुवार इनकेरसोंमें १–१ दिन पारेकोमर्दनकर काञ्जीप्रभृति खट्टेपदार्थोंसे साफकरके १ कर्ष लेवे। फिर शुद्धताम्रचूर्ण २ माशे, अभ्रकसत्व ३ मा, सुवर्ण और मुण्ड १–१ माशा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर गोलीबनाय चारतह मलमलके टुकडेमें बांधकर जमीरीनीबूमें रख दोलायन्त्र बनाय काञ्जीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे। काञ्जी सूखनेपर नई डालताजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर गोलीको निकालले, यह बडी होजायगी। इसको एकवर्षभर मुंहमें रखनेसे बुढापा नष्टहोकर अत्यन्त दीर्घायुहोताहै। एककर्ष चित्रककी जडका चूर्ण मधुकेसाथ कान्तलोहकेपात्रमें घुलेदर घोटकर भक्षणकरनेसे इसका शरीरमें अनुक्रमणहोताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ व्योषादिलोहम्

व्योषं पिप्पलं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्नवम्।
मुस्ताम्ययोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥ ३०८६ ॥
वृश्चिकाली च भार्गी च सक्षीरैस्तैः शृतं घृतम्।
सर्वान्प्रशमयत्याशु विकारान्मृत्तिकाकृतान् ॥३०८७॥

■ स., अ. ६, १ मा., ग. नि, पाण्डुरोगे।

भाषा—त्रिकुटु, बेलगिरी, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, लाल और सफेदपुनर्नवा, नागरमोथा, फोलादकाचूरा, पाठा, विडङ्ग, देवदारु, बिछुआ, भारङ्गी सब समभागलेकर बारीकपीसकर कल्क बनावे। फिर कल्कसे चौगुना घी और घीसे चौगुनादूध डालकर पकावे। घीमात्र अवशिष्ट रहनेपर छानकर रखले और उसकी चीजोंकाही चूर्ण बनाकर रखलेवे। इसचूर्णमेंसे १ से ३ माशेतकमात्रा एकतोले घीमें मिलाकर लेनेसे मृद्भक्षणजनित समस्तविकार नष्टहोतेहैं। खानेकेलिये जो चूर्ण बनावे उसमें लोहभस्मका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं मृतायसम्।
पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि षट् ॥३०८८॥
खल्वे शतदलोत्थेन रसेन परिमर्दयेत्।
वारत्रयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥
ततो माषमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत्।
गुडूचीसारिवानिम्बमञ्जिष्ठात्रिफलोद्भवम् ॥ ३०९० ॥
क्वाथं चानु पिबेन्नित्यं व्रणदोषप्रशान्तये।
तान्सर्वान्नाशयेदाशु विद्रधींश्च भगन्दरान् ॥
शोफाध्मानप्रमेहादीञ्जयेच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥३०९१॥

र. म. मा., ना. वि., व्रणाधिकारे।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण और लोहभस्म १–१ पल, शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाब, कमल और चमेलीके स्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और मधुकेसाथलेकर गिलोय, अनन्तमूल, नीम, मजीठ और त्रिफलाका क्वाथ पीनेसे सबप्रकारकेव्रण, विद्रधि, भगन्दर, शोथ, आध्मान, प्रमेह प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० व्रणगजाङ्कुशरसः

दरदः पार्वतीपुष्पं कुनटी पुरुषो रसः।
शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवोऽतिविषा चर्या ३०९२
दारपुत्रा विडङ्गञ्च यवानी गजपिप्पली।
मरीचार्को च वरुणो धूनकञ्च हरीतकी ॥ ३०९३ ॥
मर्दितं कटुतैलेन गुटिकां कारयेदिह।
नाडीव्रणप्रवाहञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥
चिरव्रणं दद्रुकुष्ठं पूतिकन्तु शिरोगदम्।
पादस्फोटं तथा हस्तं विचर्चीं बहुकीटजाम् ॥ ३०९५

र र.,मै.र.,ध,र.चं.,व्रणशोथे। मै.र.नारायणरस इतिनाम। ध.दरदवटीतिनाम। र.चं नारायण इतिनाम भगन्दराऽधिकारश्च।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, फिटकडी, कसीस, मैनसिल,गूगल, पारा, सोनागेरू, गन्धक, चैत्रान्त, सैन्धव, अतीस, चव्य, दारुपुत्र, विडङ्ग, अजवाइन, गजपीपल, मरिच, आकडोडी, वरुणकीछाल, राल, हर्रे येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सरसोंके तैलमें १–२ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोंकेविचारपानकेसाथ देनेसे नाडीव्रण, गण्डमाला, भगन्दर, पुराणव्रण, दद्रु,कुष्ठ, सडाहुआव्रण, शिरोरोग, हाथ और पैरोंका फूटना, कीटजन्यविचर्चिका इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ व्रणजयमल्लः

मल्लं सङ्गृह्य यत्नेन कर्षमात्रं भिषग्वरः ।
शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुग्मोदरविले क्षिपेत् ॥३०९६॥
मृत्कर्पटेन संवेष्ट्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
अधो वह्निं ददेतोग्रमष्टोत्तरशतावधि ॥ ३०९७ ॥
खरमूत्रे निषेच्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥
व्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपोने भगन्दरे ।
महामल्लाभिधः प्रोक्तस्तज्ज्ञैः व्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥

रसायनस , व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—एककर्ष शुद्धसोमलकी डलीको दो ढक्कनोंमें बन्द-कर कपड़मिट्टी देकर चूल्हेपर रख नीचे कड़ी आचदे । ऊपरसे १०८ कर्ष गधेकेमूत्रका चोवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर रखछोडे । इसमेंसे १–१ चावल मात्रा घीकेसाथदेनेसे व्रण, क्षत, महाकुष्ठ, शतपोनक, भगन्दर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

६४२ व्रणमर्दनरसः

दरदोत्थं रसं शुद्धं गन्धकञ्च पलंपलम् ।
पलत्रयं शुद्धतालं मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ३१०० ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन रेतितं शुक्तिमात्रकम् ।
निक्षिप्य रजतं शुद्धं काचकूप्यां विनिक्षिपेत्॥३१०१॥
प्रमुद्र्यास्यं भिषक् पश्चात्सिकतायन्त्रके पचेत् ।
मन्दमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेदधः ॥ ३१०२ ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ततस्तु कूपिकान्तस्थं क्वचिन्माणिक्यसन्निभम् ३१०३
पतङ्गी चातियत्नेन ग्राहयित्वा पृथक्पृथक् ।
नीत्वाऽधःस्थं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादतः परम् ३१०४
सर्षपाभा पतङ्गीना गुञ्जामात्रं तथा रसम् ।
चूर्णितं पर्णखण्डेन भक्षयेद्वा यथाबलम् ॥ ३१०५ ॥
यावद्गुञ्जापतङ्गी स्याद्रसो माषमितो भवेत् ।
तदूर्ध्वं वर्धनं नैव कारयेद्रोगिणां प्रति ॥ ३१०६ ॥
यद्याऽग्निरोधाच्च भवेत्पतङ्गी
तदा रसः केवल एव नित्यम् ।
सेवेद्व्रणानां प्रशमाय विद्वा-
स्तत सुखी स्यादसृगामयार्तः ॥ ३१०७ ॥

र म मा , ना वि , व्रणशोथे ।

भाषा—शिङ्गरिफसे निकालाहुआ शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल शुद्धहरिताल ३ पल, चादीका बारीकरेता १ पल लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर डाट लगाकर वालुकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सावधानीकेसाथ शीशीको फोड़कर देखे, कहींपर मणिके सदृश कहीं पतङ्गकेसदृश रङ्ग दिखाईदेगा । इनको अलग २ निकालकर शीशीमें रखछोडे और नीचेकाभाग अलग रक्खे । पतङ्गीरङ्गवालेमेंसे १ सर्षप और माणिक्यसदृश तथा तलस्थकी १–१ रत्ती पानमें रखकर खावे । पतङ्गीकीमात्रा बढाकर १ रत्तीतक और दूसरोंकी १ माशेतक करे । इससे अधिक न बढावे । अग्निके अवरोधसे पतङ्गी नजर न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रसमिले उसीका सेवनकरना चाहिये । इसके सेवनसे समस्त रक्तविकार नष्टहोतेहैं ॥६४२॥

६४३ व्रणवडवानलरसः

समाने द्वे च पाषाणे तदर्द्धं वलिपारदम् ।
कुनटीक्षारमेकैकं सूतपादं सुतालकम् ॥ ३१०८ ॥
सर्वं शुद्धं तु खल्वे च मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
नागवल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नवौ ॥ ३१०९ ॥
प्रत्येकपत्ररसेन मर्दनेन पुनःपुनः ।
वटकान्बदरीबीजमात्रांश्छुष्कांस्तु कारयेत् ॥३११०॥
शुल्वे कारण्डके क्षिप्त्वा सप्तशो वस्त्रमृत्तिकाः ।
सुपक्वं वालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोलं विचूर्णयेत् ।
अनुपानविशेषेण व्रणांश्च विविधाञ्जयेत् ॥
शीतिकां विषमान्हन्ति शीतज्वरहरं परम् ॥३११२॥

र क यो , व्रणे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल १–१ भाग, शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, मैनसिल और सुहागा १–१ भाग, शुद्धहरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर पान, निर्गुण्डी, भंगरा और पुनर्नवाके रसोंसे ३–३ दिन मर्दन कर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियें बनाय सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके डाटबन्दकर वालुकायन्त्रमेंरख १२ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सबको पीसकर रखछोडे । इसमेंसे १ चावलसे २ चावलतक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारकेव्रण, शीत और विषम-ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

६४४ व्रणहररसः

रसं गन्धं विषं वह्निं लोहमभ्रं समंसमम् ।
सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥३११३॥
भावयित्वा वटीः कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता भिषक् ।
रसो व्रणहरो नाम व्रणान्हन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥

र च , व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग, चित्रककीजड़, लोह और अभ्रकभस्म समभागलेकर अर्जुन और कचनारके-रसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियां बनाकर रख-छोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तव्रणोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ व्रणान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निशायुग्मं वला बल्या प्रसारिणी ।
मञ्जिष्ठा पार्थयष्ट्यौ च देवदारु पुनर्नवा ॥ ३११५ ॥

पृथक् पृथक् शुक्तिसमं पलैकं मृतपारदम् ।
अभ्रञ्च द्विगुणं देयं त्रिगुणं तु मृतायसम् ॥ ३११६ ॥
चतुर्गुणं शुद्धशैलं सर्वमेकत्र मिश्रयेत् ।
अस्थिश्रृङ्खलिकातोये सम्यक् शोध्यस्तु गुग्गुलुः ॥
सर्वेषां द्विगुणश्चाऽत्र दत्त्वा सम्मर्दयेत्ततः ।
अक्षप्रमाणा गुटिका सेव्या नित्यं ततः परम् ॥३११८॥
पिबेन्मांसरसञ्चानु दुष्टव्रणनिपीडितः ।
पूयरक्तास्थिवाहीनि व्रणान्याशु प्रयान्ति हि ॥
भग्नविश्लिष्टसन्धीनां साक्षाद्भग्नाश्च ये व्रणाः ३११९

टो., व्रणाधिकारे ।

भाषा—त्रिकुटु, हल्दी, दारुहल्दी, चला, असगन्ध, प्रसारिणी, मजीठ, अर्जुन, मुलहठी, रेवन्दा, पुनर्नवा, पारदभस्म येसब १–१ पल, अभ्रकभस्म २ पल, लोहभस्म ३ पल, शुद्धशिलाजीत ४ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर हड़जोड़केरसमें शुद्धकियाहुआगूगल सबसे दूना मिलाकरकूटे । एकजीवहोनेपर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मांसरस अथवा जीमनीयगणकाथकेसाथ देनेसे पूय, रक्त और हड्डियां जिनमेंसे बहबहकर निकलतीहों ऐसे दुष्टव्रण, भग्न, विश्लिष्टसन्धियां, अस्थिभग्न येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६४५ ॥

६४६ व्रणान्तकरसः (प्रथमः)

अस्था हरिद्रा कर्षैकं म्लेच्छदीप्यस्य कर्षकम् ।
कीटमाराजमोदायाः कर्षमेकं ततो गुडात् ॥३१२०॥
जीर्णात्सार्धं द्विकर्षं स्याद्भल्लातकफलानि च ।
सार्द्धद्विसङ्ख्यया सम्यक् पारदः सार्धमापकः ३१२१
खल्वे सङ्कुट्य प्रथमं भल्लातेशौ ततः परम् ।
चूर्णं चक्षेण सम्पूतं मेलयित्वा गुडेन तु ॥ ३१२२ ॥
कुट्टयित्वा च तत्सम्यग्गुटिकाश्च चतुर्दश ।
यद्वा द्विकालमश्नीयाच्छीततोयानुपानतः ॥ ३१२३ ॥
दन्तस्पर्शं विना ग्राह्यमौषधं पथ्यशीलिना ।
गोधूमाद्यं घृतस्निग्धं सूपं चाढकिसम्भवम् ॥३१२४॥
ओदनं तिक्तलवणं शाकं सामान्यमेव च ।
पथ्यं सप्तदिनं कुर्यादष्टमेऽह्नि तथा वटीम् ॥ ३१२५ ॥
हिङ्गुजीरमरीचादिसंस्कृताञ्च निषेवयेत् ।
उत्तरार्द्धं स्नानवर्ज्यमेवं कार्यं विजानता ॥ ३१२६ ॥
अपि तालुनि सञ्जाते व्रणे चालनिकानिभे ।
यत्रकुत्राऽपि सम्भूते व्रणे ह्येतन्नियोजयेत् ॥ ३१२७॥
व्रणान्तकमिदं प्रोक्तं सर्वदुष्टव्रणापहम् ।
उपदंशसमुद्भूतं गुह्यस्थानसमुद्भवम् ॥ ३१२८ ॥
नाडीव्रणं निहन्त्याशु भगन्दरमथापि वा ।
हस्तपादसमुद्भूता विविधा वातवेदनाः ॥ ३१२९ ॥
ताः सर्वाः प्रशमं यान्ति सत्यमेतन्न संशयः ।
ताम्बूलञ्च सदा सेव्यमश्नीयाद्य घृतं यदु ॥ ३१३० ॥

रसायनस., व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—आंबाहल्दी, खुरासानी अजवाइन, कीड़ामारी (गुजराती), अजमोद १–१ कर्ष, पुरानागुड़ २॥ कर्ष, भिलावे २॥ नग, पारा १॥ माशा लेकर पहिले भिलावोंको कूटकर पाराडालकरकूटे । पारामिलजानेपर गुड़डाले । द्रवहोनेपर सब चीजोंकाबारीकचूर्णमिलाकर कूटे । अच्छीतरह गोलीबधनेलायक-होनेपर इसकी १४ गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम ठंढे पानीकेसाथ दन्तस्पर्शको बचाकर निगल जाय । इसमें गेंहूं, घी, अरहरकीदाल, भात, तिक्त और लवण रस साधारणशाक इनका सेवनकरे । ऐसे ७ दिन बीतनेपर आठवेंदिन हींग, जीरा और मरिच वगैरहकेयुक्त भोजनकरे । इसमें १४ दिनतक स्नान न करे । इसकेसेवनसे चलनीकीतरह सैकड़ोंछेदवाला तालु अथवा गुह्यादिस्थानव्रण, उपदंश, नाडीव्रण, भगन्दर, नानातरहकी वातवेदना येसब नष्टहोतेहैं । इसके सेवनसे मुंह खराबमालूमपड़े तो हमेशा पानका सेवनकरे ६४६

६४७ व्रणान्तकरसः (द्वितीयः)

दरदश्चैकभागन्तु पञ्चभागश्चाऽपि गन्धकम् ।
सूतराजस्य चैकेन तदर्द्धं मृतनागकम् ॥ ३१३१ ॥
हंसपादीरसैर्मर्द्य पुटमेकञ्च चूर्णितम् ।
गुडाज्यमरिचैर्मिश्रं प्रातःकाले च सेवयेत् ॥३१३२॥
व्रणकीटककुष्ठानि मण्डलानि च नाशयेत् ।
व्रणान्तक इति ख्यातो दुष्टव्रणहरः परः ॥ ३१३३ ॥

व.रा., व्रणे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ १ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा., शुद्धपारा १ भा., नागभस्म आधाभागलेकर नीलवर्णकमलीकर हंसराजके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमेंलपेट पुटपाकमें स्वेदितकर निकालले । इसमेंसे ३–३ रत्ती प्रातःकाल गुड़, मरिच और घीकेसाथ सेवनकरनेसे व्रण, कीट, कुष्ठ और चकत्ते नष्टहोतेहैं ॥ ६४७ ॥

६४८ व्रणान्तकरसायनम्

सितमल्लं कर्षमात्रं दरदञ्च द्विकार्षिकम् ।
त्रिकर्षं श्वेतखदिरं श्लक्ष्णं खल्वे विचूर्णयेत् ॥३१३४॥
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेत्तद् दृढं नरः ।
सर्षपप्रमितां मात्रां युञ्जीत भिषगुत्तमः ॥ ३१३५ ॥
घृतानुपानतो दद्यात्तत्क्षणे पथ्यमाचरेत् ।
संयावकं घृताढ्यञ्च पथ्याय योजयेद्बुधः ॥ ३१३६ ॥
व्रणाः शुष्यन्ति रोहन्ति प्रभावेणौषधस्य हि ।
ततः षण्मासपर्यन्तं मुद्गान्नं कारवेल्लकम् ॥
कूष्माण्डञ्च गुडं रम्भाफलं वै वर्जयेन्नरः ॥ ३१३७ ॥

रसायनस., व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सफेदसोमल १ कर्ष, शुद्ध शिंगरिफ २ कर्ष, सफेदकत्था ३ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर १–२ दिन अदरखकेरससे मर्दनकर सर्षपप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १ से ३ गोलीतक मात्रा प्रकृति और बलका विचारकर घीकेसाथदेवे और तत्काल हलवा खिलावे। इसकेप्रभावसे व्रण अच्छेहोजातेहै। ६ महीनेतक मूंग, करेला, कोंहला, गुड़ और केले न खाय ॥ ६४८ ॥

६४९ व्रणापहारीरसः

रसाद्द्विगुणितो गन्धः शिलातालौ च तत्समौ।
पलङ्कषा सर्वसमा मर्दयेत्त्रिफलाद्रवैः ॥ ३१३८ ॥
व्रणापहारी सिद्धः स्यात्सेव्यो माषद्वयोन्मितः।
जेतुं सर्वव्रणान्दुष्टान्नाडीव्रणभगन्दरान् ॥ ३१३९ ॥

र., व्रणे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक, मैनसिल और हरिताल २–२ भाग, गूगल सबकी बराबर लेकर गूगलको घीके योगसे कूटकर सबचीजोंकी कज्जलीको मिलाकर त्रिफलाकेरससे एकदिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त दुष्टव्रण, नाड़ीव्रण और भगन्दर नष्टहोतेहैं ॥ ६४९ ॥

६५० व्रणारीरसः

गन्धेशाहिफणं तुल्यं त्र्यहं जम्बीरमर्दितम्।
कुमार्या नरमूत्रेण चित्रकेण च सिन्धुना ॥ ३१४० ॥
सौवर्चलेन च पृथग्युक्त्या सप्तदिनैः पृथक्।
व्रणरोगेषु सर्वेषु सद्योजातव्रणेषु च ॥ ३१४१ ॥
लूताभगन्दरे गण्डगण्डमालासु योजयेत्।
क्षौद्रेण वा यथायोगैस्त्रिवल्लं पुरसंयुतम् ॥
पथ्यञ्च शालयो मुद्गा गोधूमाः सघृता हिताः॥३१४२

र. सि., र. नि., रसायनस., व्रणाऽधिकारे।

टि०—र. चि., रसायनस. गन्धेशाहिफणं तुल्यमित्यस्य स्थाने गन्धेशौ फणा तुल्यौ इति पाठः। नाम च व्रणरोपणरस इति स्थापितम्।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा और अफीम समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर ३ दिन जंभीरीकेरससे मर्दनकर घीकुंवार, नरमूत्र, चित्रक, सैन्धव और सञ्चलनमक इनप्रत्येकरेसेवोंसे ७–७ दिन मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु, गूगल अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त व्रणरोग, सद्योव्रण, मकड़ीकाविष, भगन्दर, गांठें, गण्डमाला, येसब नष्टहोतेहैं। इसमें सफेदचावल, मूंग, गेंहू, घी येसब खानेको देना और नमकसे परहेज कराना॥

यद्दीयसंसर्गविसर्गसङ्घे,
जगत्त्रयस्याऽऽसमभवाऽभवोऽन्वयः।
हरिप्रपन्नेन कृते प्रमान्विते,
अन्तःस्थवर्गोऽजनि योगसागरे ॥

अथ शकारादिरसाः

१ शकटाक्षकिट्टवटी

शकटाक्षकिट्टवट्यः शनैः शनैः पाण्डुरोगघ्नाः।
तदुपादानपदार्थं कथयामश्चाश्वं तैलम् ॥ १ ॥

सि. भे. म., पाण्डुरोगे।

भाषा—गाड़ीकेपहियेके किट्टकी चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै ॥ १ ॥

२ शक्तिकौमाररसः

दरदरसककृष्णाटङ्कणाऽऽलं शिलांशा
मुनिमितरतिमिपित्ते भावयेद्वल्लमात्रम्।
ज्वरहररस आर्द्रैः शक्तिकौमारनामा
दधियुतहितपथ्यं शाकवृन्ताकजञ्च ॥ २ ॥

र. चि., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, खपरिया, पीपल, भुनासुहागा, शुद्धहरिताल और मैनसिल समभागलेकर बारीकचूर्णकर रोहूमछलीकेपित्तकी ७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। इसमें दही, भात और बेंगनकाशाक पथ्यदेना ॥ २ ॥

३ शक्तिरसः (महा)

मृतसूताऽभ्रकं वज्रं कान्ततारार्कहाटकम्।
तीक्ष्णञ्च तुल्यतुल्यांशं सर्वेषां गन्धकं समम् ॥ ३ ॥
सर्वं पालाशतैलेन मर्दयेद्दिनसप्तकम्।
महाशक्तिरसो नाम क्षौद्रे माषं लिहेत्सदा ॥ ४ ॥
षण्मासेन जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम्।
वत्सराऽऽसप्तकल्पानि जीवत्येव न संशयः ॥ ५ ॥
इच्छावेगी महासिद्धः परशक्तियुतो भवेत्।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां ताम्रं भवति काञ्चनम् ॥ ६ ॥
पालाशबीजजं तैलं क्षौद्रैर्देयं पलाष्टकम्।
क्रमशः हानुपानं स्यात्सम्यक् छन्दया प्रकाशितम् ॥७॥

र. स., रसायनसं., रसायने।

भाषा—पारा, अभ्रक, हीरा, कान्त, रजत, ताम्र, सुवर्ण और फौलाद इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर पलाशकेबीजोंके तैलमें ७ दिनतक मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे शुरूकर धीरेधीरे १ माशेतकमात्रा बढ़ावे। ६ महीनेकेसेवनसे बहुत दीर्घायु होतीहै। एकवर्षकेसेवनसे कल्पजीवी तथा इच्छावेगी महासिद्ध होकर उत्कृष्ट शक्तियुक्तहोताहै। इसके मूत्र और पुरीषसे ताम्रका सुवर्णकियाहोताहै। इसके प्रयोगमें पलाशकेबीजोंकातैल शक्त्यनुसार आरम्भकर ८ पलतककीमात्रा बढ़ावे तो शरीरमें रसका रमणहोताहै ॥ ३ ॥

४ शक्रवल्लभरसः

रसगन्धकलोहाऽभ्ररौप्यहेमानि माक्षिकम्।
शाणमानेन सङ्गृह्य तुगाक्षीरीञ्चकार्षिकीम्॥ ८॥
पलप्रमाणं विजयाबीजञ्चैकत्र मर्दयेत्।
विजयावारिणा पश्चान्मापमानां वटीं चरेत्॥ ९॥
एकैका भक्षणीयैषा पेयञ्चाऽनु पयः पलम्।
श्रीशक्रवल्लभो नाम रसो वाजीकरः परः॥ १०॥
वीर्यस्तम्भकरोऽत्यर्थं प्रमदामदनाशनः।
गतो ह्यप्सरसां शक्रो वाल्लभ्यं यत्प्रसादतः॥ ११॥

आ. वि., भै र., वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, रजत, सुवर्ण और सोनामाखी इनकीभस्में ४-४ मासे, वंशलोचन १ कर्ष, गांजेकेबीज १ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भागके स्वरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ लेनेसे उत्तमवाजीकरण होताहै। वीर्यकीवृद्धिको प्राप्तहोकर स्त्रियोंके मदको नष्टकरताहै॥ ४॥

५ शङ्करलोहम् (प्रथमम्)

प्रणम्य शङ्करं रुद्रं दण्डपाणिं महेश्वरम्।
जीवितारोग्यमन्विच्छन्पर्यपृच्छद्य नारदः॥ १२॥
सुखोपायेन हे नाथ शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना।
दुर्बलानाञ्च भीरूणां चिकित्सां वक्तुमर्हसि॥ १३॥
तच्छिष्यवचनं श्रुत्वा लोकानां हितकाम्यया।
अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं भैषज्यमिदमीरितम्॥ १४॥
मुण्डखर्यादिलोहानां ग्राह्यमन्यतमं शुभम्।
कृत्वा निर्मलमादौ तु कुनट्या माक्षिकेण च॥ १५॥
पत्तूरमूलकल्केन लिम्पेद्रससुतेन च।
ज्वाला च तस्य रोद्धव्या त्रिफलाया रसेन च॥१६॥
ततो विज्ञाय गलितं शङ्कुनोर्द्ध्वं समुत्क्षिपेत्।
चुल्ली निक्षिप्य विधिवज्ज्वालाऽङ्गारेण निर्धमेत्॥१७॥
त्रिफलाया रसे पूते तदाकृष्य तु निर्वपेत्।
न सम्यग्गलितं यच्च तेनैव विधिना पुनः॥ १८॥
ध्मातं निर्वापयेत्तस्मिँल्लोहं तत्त्रिफलारसे।
यल्लोहं न मृतं तत्र पाच्यं भूयोऽपि पूर्ववत्॥ १९॥
मारणान्मृतं यच्च तत्त्यक्तव्यमलोहवत्।
ततः संशोष्य विधिवच्चूर्णयेल्लोहभाजने॥ २०॥
लोहेनैव शिलायां वा दृषदा श्लक्ष्णचूर्णितम्।
कृत्वा लोहमये पात्रे मार्दे वा त्रिसरन्ध्रके॥ २१॥
रसैः पङ्कोपमं कृत्वा पाचयेद्गोमयाऽग्निना।
पुटानि क्रमशो दद्यात्पृथगेषां विधानतः॥ २२॥
त्रिफलाऽऽर्द्रकभृङ्गाणां केशराजस्य बुद्धिमान्।
वन्दमाणकमल्लातपर्णीनां सूरणस्य च॥ २३॥
हस्तिकर्णपलाशस्य कुलिशस्य तथैव च।
पुटेपुटे चूर्णयित्वा लोहात्पोडशिकं पलम्॥ २४॥
तन्मानं त्रिफलायाश्च पलेनाऽधिकमाहरेत्।
अष्टभागाऽवशिष्टे तु रसे तस्याः पचेद्बुधः॥ २५॥
अष्टौ पलानि दत्त्वा च सर्पिषो लोहभाजने।
ताम्रे वा लोहदर्व्यान्तु चालयेद्विधिपूर्वकम्॥ २६॥
ततः पाकविधानज्ञः स्वच्छे शुद्धे च सर्पिषि।
मृदुमध्यादिभेदेन गृह्णीयात्पाकमानवित्॥ २७॥
अभिमन्त्र्य विधानेन कृतकौतुकमङ्गलम्।
ग्रामराज्यसमायुक्तं लिहेदारक्तिकाक्रमात्॥ २८॥
वर्धमानानुपानञ्च गव्यं क्षीरञ्च पाययेत्।
गव्याभावेऽप्यजायाश्च स्निग्धवृष्यादिभोजनम्॥२९॥
सद्यो वह्निकरञ्चैव भस्मकञ्च नियच्छति।
हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरान्॥ ३०॥
गुल्माक्षिपाण्डुरोगांश्च तन्द्रालस्यमरोचकम्।
परिणामभवं शूलं प्रमेहमपबाहुकम्॥ ३१॥
श्वयथुं रक्तस्रावञ्च दुर्नामानं विशेषतः।
बलरुद्बृंहणञ्चैव कान्तिदं स्वरवर्द्धनम्॥ ३२॥
लाघवञ्च मनोह्लादं नैरोग्यं पुष्टिवर्धनम्।
आयुष्यं श्रीकरञ्चैव वयस्तेजस्करन्तथा॥ ३३॥
सश्रीकपुत्रजननं वलीपलितनाशनम्।
दुर्नामारिरयं नाम्ना दृष्टो वारसहस्रशः॥ ३४॥
निर्मूलं दह्यते शीघ्रं यथा तूलञ्च वह्निना।
सौकुमार्याल्पकायत्वे मद्यसेवां समाचरेत्॥ ३५॥
जीर्णमद्यानि युक्तानि भोजनैः सह पाययेत्।
लावतित्तिरगोधाश्च मयूरः शशकादयः॥ ३६॥
चटकः कलविङ्कश्च वर्तको हरितालकः।
श्येनकश्च बृहल्लावो वनविष्किरकादयः॥ ॥ ३७॥
पारावतमृगादीनां मांसं जाङ्गलजं तथा।
मद्गुरो रोहितः श्रेष्ठः शकुलश्च विशेषतः॥ ३८॥
मत्स्यराजा इमे प्रोक्ता हितमत्स्येषु योजयेत्।
प्रशस्तवार्ताकफलं पटोलं बृहतीफलम्॥ ३९॥
प्रलम्बामीरुवेत्राग्रं जातुकं तण्डुलीयकम्।
वास्तुकं कालशाकञ्च कर्णालुकपुनर्नवाम्॥ ४०॥
नारिकेलञ्च खर्जूरं दाडिमं लवलीफलम्।
शृङ्गाटकञ्च पक्वाम्रं द्राक्षातालफलानि च॥ ४१॥
जातीकोषं लवङ्गञ्च पूगं ताम्बूलपत्रकम्।
नाश्रीयाल्लकुचं कोलकर्कन्धुबदराणि च॥ ४२॥
जम्बीरं बीजपूरञ्च करमर्दकतिन्तिडी।
आनूपानि च मांसानि क्रकरं पुण्ड्रकादिकम्॥ ४३॥
हंससारसदात्यूहमद्गुकाकबलाहकाः।
माषकन्दकरीराणि चणकञ्च कलिङ्गकम्॥ ४४॥
कूष्माण्डकञ्च कर्कोटी केबुकञ्च विशेषतः।
कञ्चटं कारवेल्लञ्च कशेरुं कर्कटीं तथा॥ ४५॥

विदलानि च सर्वाणि ककारादींश्च वर्जयेत् ।
लोहराजस्तथा चायं स्वयं रुद्रेण भाषितः ॥ ४६ ॥
जनानामुपकाराय दुर्नामारिरयं भुवम् ।
स्थानाद्वैति मेरुश्च पृथ्वी पर्येति वायुना ॥ ४७ ॥
पतन्ति चन्द्रताराश्च मिथ्या चेदहमब्रुवम् ।
ब्रह्मघ्नाश्च कृतघ्नाश्च क्रूराश्चासत्यवादिनः ॥ ४८ ॥
वर्जनीया विदग्धेन भैषज्यगुरुनिन्दकाः ।
रक्तिद्वादशकादूर्ध्वं वृद्धिरस्य भयप्रदा ॥ ४९ ॥
काले मलप्रवृत्तिर्लाघवमुदरे विशुद्धिरुद्गारे ।
अङ्गेषु नावसादो मनःप्रसादोऽस्य परिपाके ॥ ५० ॥
क्रिमिरिपुचूर्णविलीढं सहितं स्वरसेन चक्रसेनस्य ।
क्षपयतिचिरान्नियतं लोहाजीर्णभवं शूलम् ॥
भवेद्यदाऽतिसारस्तु दुग्धं पीत्वा तु तं जयेत् ॥ ५१ ॥

र.र., र.क., भा.प्र., र.चि., यो.म., र.का., अर्शस्सु ।

भाषा—मुण्डादि ६ लोहोंमेंसे किसीएकके पत्रोंको शुद्धकर मैनसिल, सोनामाखी और पारा समभागलेकर बारीकचूर्णकर कुकरोंधेकीजड़केरसमें कल्कबनाय पत्रोंपर लपेटकर सुखाकर सलुएके कोयलोंपर अथवा अन्यसारिष्ठकोयलोंपर धमनकर। तीव्रज्वाला निकलनेपर पानीमेंजगह त्रिफलाकेक्वाथसे छींटेदेवे। लोहकेगलजानेपर त्रिफलाकेक्वाथमें बुझावे। इसप्रकार ७ अथवा २१ बारगलाकर बुझानेसे लोहेकीभस्म होकर पात्रमें राखकी-तरह जमजायगी। २१ बार बुझानेपर भी जिसकी भस्म न हो उसे फेंकदेना क्योंकि वह लोहनहींहै। फिर उसभस्मको क्वाथ-मेंसे निकालकर सुखाकर लोहे अथवा पत्थरकी खरलमें घोट। बारीकचूर्णहोनेपर कुकरोंधेकेरससे १-२ दिन घोटकर टिकिया बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिफला, अदरख, भंगरा, काला-भंगरा, मानकन्द, भिलावे, चित्रकमूल, जङ्गलीसूरण, हस्तिकर्ण-पलाश, थूहरकादूध इनकेद्रवोंसे १-१ दिन घोटकर स्थालीपाक अथवा सूर्यकिरणपाककरके सुखावे फिर उसीकल्कमें घोटकर टिकियां बनाय साधारण पुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पहिलेकीतरह घोटकर पुटदे। इसतरह प्रत्येकद्रवमें पाक और पुटदेनेकेबाद जितनालोहहो उसमेंसे १६ पललेकर १७ पल त्रिफलाका जवकुटचूर्णकर अष्टगुणितपानीमें क्वाथकरे। एकभाग अवशिष्ट रहनेपर छानकर इसद्रवमें लोहको घोटकर ८ पल घी मिलाकर लोहेके बर्तनमें लोहेकी कड़छीसे चलाताहुआ मन्दाग्नि पर पाककरे। जब पानीका अंश सूखकर घी ऊपर तैरनेलग और कल्ककी गोली बंधनेलगे तब उतारकर रखछोड़े। ठंढा होनेपर अच्छीतरह घोटकर घीके चिकनेबर्तनमें रख मुंहबन्दकर यवरादि अथवा धान्यराशिमें एकसप्ताह रखकर निकालले। रोगीको पञ्चकर्मसे शुद्धकर अग्नि, देव, ब्राह्मण और वैद्यप्रभृतिका पूजनकर शुभमुहूर्तमें स्वस्तिवाचनवगैरह मङ्गलकार्यकर इष्टमन्त्रसे अभिमन्त्रितकर एकरत्तीकीमात्रा भौरेकामधु और घीकेसाथ मिलाकर सेवे और ऊपरसे गोदुग्धपीवे। प्रतिदिन १-१ रत्ती-मात्रा बढाकर १२ रत्तीतक करे। गायकेदूध और घीका भोज-नमें व्यवहारकरे। गायकेअभावमें बकरीका उपयोगकरे। स्निग्ध और रूच्य आहारकरे। नियमपूर्वक इसका सेवनकरनेसे तत्क्षण मन्दाग्नि, भस्मक, वात, पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, नेत्र रोग, पाण्डु, तन्द्रा, आलस्य, अरुचि, शूल, परिणामशूल, प्रमेह, अपबाहुक, शोथ, रक्तस्राव, विशेषतः बवासीर, बल-कान्ति और स्वरक्षय, भारीपन, मनोग्लानि, कृशता, अल्पायु, वलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै। सुकुमारमनुष्यकेलिये भोजनकेसाथ पुरानेमद्य देवे। मांसाहारीको लवा, तित्तिर, गोह, मोर, खरगोश, चकर, कलविङ्क, बटेर, हारिल, बाज, सिकरा, विष्किर, कबूतर, मृग, इन जङ्गलीजानवरोंकामांस, मद्गुर, रोहु और शकुल मछलियां, बेंगन, परवल, दोनों भटकटैया, चिचोंडा, शतावर, बेतका अग्रभाग, सेवारकीतरह फैलनेवाले शाक, चौलाई, बथुआ, मरसा, कर्णांलुक ? सबतरहके पुनर्नवा, नारि-यल, खजूर, अनार, हरफारेवड़ी, सिंघाड़े, पकाआम, द्राक्ष, ताड़गोला, जावित्री, लौंग, सुपारी, पान इनका सेवनकरे। बड़हर, तमामजातिके बेर, अभीरी, बिजोरा, करौंदा, इमली, आनूपमांस, कूकर, पुण्डूक, हंस, सारस, दात्यूह ? पनडुब्बी, कौआ, बलाहक, उड़द, कन्द, करीर, चना, तरबूज, कोंहला, खेखसा, केबुक (घीतेला गुज०) करेला, कमेरू, ककड़ी, सम्पूर्ण दाल, ककारादि समस्तपदार्थ इनसबका त्यागकरे। यह लोह-राज उत्तमप्रयोगहै खासकर बवासीरकी उत्तम औषधिहै। ब्रह्मघ्न, कृतघ्न, क्रूर, मिथ्याभाषी, वैद्य और गुरुनिन्दक इनपर इसकाप्रयोग न करे और बतलावे भी नहीं। इसकेसेवनकरनेमें समयपर मलमूत्रकी प्रवृत्ति, पेटका हलकापन, मुखकी शुद्धता, विशुद्धउद्गार, शरीर और मनकीप्रसन्नता रहनेपर समझनाचाहिये कि लोहका परिपाक ठीक होताहै। लोहका अजीर्णहोनेपर विडङ्गकाचूर्ण अगस्त्यके रसकेसाथ लेनेसे बहुतशीघ्र लाभहोताहै। इसकेसेवनमें अतिसारहोनेपर केवलदुग्धका प्रयोगकरके निवृत्तकरे॥

६ शङ्करलोहम् (द्वितीयम्)

पातितं स्वेदितं शुद्धं सुमुखं पारदं भवेत् ।
सारबीजं चतुर्थांशं पूर्ववज्जारयेत्क्रमात् ॥ ५२ ॥
गन्धकं षोडशगुणं पूर्ववज्जारयेद्भिषक् ।
ततः सूतं कृष्णधूर्त्तरसैः सम्यक् प्रमर्दयेत् ॥ ५३ ॥
दिनानि सप्त पश्चाद्धि येर्णानीरैः प्रमर्दयेत् ।
दिनसप्तकमम्भोभिस्तिलपर्णीभवैस्ततः ॥ ५४ ॥
यन्त्रे सोमानले दत्त्वा कल्कं सर्वं प्रयत्नतः ।
चुल्ल्यामारोप्य तद्यन्त्रं हठाग्निं ज्वालयेदधः ॥ ५५ ॥
त्रिदिनं तु ततः सूतं पूर्ववत्सम्प्रमर्दयेत् ।
एकैकं तु दिनं पश्चाद्यन्त्रे क्षिप्त्वा च पूर्ववत् ॥ ५६ ॥
शालनं त्रिदिनं पश्चान्मर्दनं पूर्ववच्चरेत् ।
एवं कृत्वा रसेन्द्रस्य मर्दनं पाचनं ततः ॥ ५७ ॥
यावद्रसेन्द्रो जायेत निरुत्थो भस्मरूपभाक् ।
सप्तवारप्रयोगेण निरुत्थो जायते ध्रुवम् ॥ ५८ ॥

ततो गुञ्जाद्वयमिता विदध्याद्वटिका भिषक् ,
एकैकां दापयेदासामोपदुष्णेन वारिणा ॥ ७७ ॥
जयेदिदं फुफ्फुसजात्रोगान्हृदयसम्भवान् ।
जीर्णज्वरं तथा घोरं प्रमेहानपि विंशतिम् ॥ ७८ ॥
कासश्वासामवातांश्च ग्रहणीमपि दुस्तराम् ।
वटी श्रीशङ्करप्रोक्ता बलपुष्टिविवर्धिनी ॥ ७९ ॥

भै र , हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, गन्धक ८ भा , लोहभस्म ३ भा , नागभस्म २ भा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मकोय, चित्रक, अदरख, जैंती, अड़ूसा, बेलगिरी और अर्जुनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली कदुष्णपानीके साथदेनेसे फुफ्फुस और हृदयकेरोग, भयकर जीर्णज्वर, २०प्रकारकेप्रमेह, कास, श्वास, आमवात, दुस्तरसङ्ग्रहणी, कृशता, निर्बलता इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ९ ॥

१० शङ्खकल्पः

गन्धेशौ कर्षसम्मानौ कर्षमाना वराटिका ।
शङ्खभस्म भवेत्कर्षषट्कं मागधिका तथा ॥ ८० ॥
यमानी पिप्पलीमूलं प्रत्येकं त्रित्रिकर्षकम् ।
निम्बुधात्रीभवैर्द्रावैर्माषमाना वटीश्चरेत् ॥ ८१ ॥
मरिचाज्यसमालीढा ग्रहणीं चिरजां जयेत् ।
तक्रेण सेविता सा हि पाण्डूदरविनाशिनी ॥ ८२ ॥
गात्रवृद्धिं वितनुते खण्डामलकसेविता ।
करञ्जाऽग्नियमानीभि. शूलगुल्मौ व्यपोहति ॥ ८३ ॥
अग्निमान्द्यमथान्योगान्दुर्जलोत्थान्विशेषत. ।
शङ्खकल्पो महावीर्यो नानारोगकुलान्तक. ॥ ८४ ॥

नू क. ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कौड़ीभस्म १–१ कर्ष, शङ्खभस्म और पीपल ६–६ कर्ष, अजवाइन और पिपलामूल ३–३ कर्ष लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सबका चूर्णमिलाय नीबू और आवलोंकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मरिच अथवा घीकेसाथ लेनेसे बहुतदिनकीसङ्ग्रहणीको यह नष्टकरताहै । तक्रकेसाथलेनेसे पाण्डु और उदररोगका नाशकरताहै । शक्कर और आवलोंकेचूर्णकेसाथ सेवनकरनेसे शरीरको पुष्टकरताहै । करञ्ज, चित्रक और अजवाइनकेसाथलेनेसे शूल, गुल्म, मन्दाग्नि और जलदोषकेविकारोंको नष्टकरताहै ॥ १० ॥

११ शङ्खगर्भपोट्टलीरसः

प्रत्येकं दश गद्याणा· शुद्धगन्धकसूतयो. ।
विंशतिं त्रिदिनं खल्वे पिष्ट्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥८५॥
पश्चादर्कस्य दुग्धेन पेषयेत्कज्जलीं त्र्यहम् ।
तता वज्र्याश्च क्षीरेण पेषयेत्ता दिनत्रयम् ॥ ८६ ॥

आर्द्रकं चित्रकं श्वेतं नि.सहायां समानयेत् ।
पेषयेत्तद्रसेनैव कज्जली तां दिनत्रयम् ॥ ८७ ॥
पीतानाञ्च कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविंशति. ।
विंशतिः शङ्खचूर्णस्य चत्वारिंशच्च मिश्रितम् ॥ ८८॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे पूर्वोक्तैश्च रसैः खलु ।
त्र्यहं चार्कस्य दुग्धेन वज्रीक्षीरेण च त्र्यहम् ॥ ८९ ॥
तन्मध्ये कज्जली क्षिप्त्वा चित्रार्द्रकरसेन च ।
खल्वे पिष्ट्वा च तत्सर्वं वट्यो बदरसम्मिता. ॥ ९० ॥
दग्धाश्मचूर्णसंलिप्तमध्यघट्यन्तरे पुनः ।
प्रक्षिप्य गुटिकास्ताश्च चूर्णलिप्तपिधानकम् ॥ ९१ ॥
दत्त्वा वस्त्रमृदा लिप्त्वा गर्ते हस्तप्रमाणके ।
निधाय सम्पुटं निद्रात्पुटं वन्योत्पले लघु ॥ ९२ ॥
पश्चाच्चित्रकनीरेण स्वाङ्गशीतञ्च पेषयेत् ।
गुटिका. पूर्वरीत्यैव कृत्वा देयं पुनः पुटम् ॥ ९३ ॥
दग्धानां गुटिकानाञ्च चूर्णं कृत्वा [illegible] कुप्पके ।
क्षेप्यं नाम्ना तु निष्पन्नो रसोऽयं शङ्खपोट्टली ॥ ९४ ॥
आमज्वराऽतिसारे च ज्वरे रक्तातिसारजे ।
मलज्वरातिसारे च श्वासे कासे तथैव च ॥ ९५ ॥
श्लेष्मपित्तानिवातेषु मन्दाग्नौ ग्रहणीषु च ।
विंशतौ मेहरोगेषु जीर्णजीर्णबलेषु च ॥ ९६ ॥
द्वात्रिंशन्मरिचैः सार्धं सघृतं वल्लपञ्चकम् ।
सर्वरोगेषु दातव्यं मरीचाज्यं विना ज्वरे ॥ ९७ ॥
शालया दधिदुग्धादि भोजनं मधुरं हितम् ।
कट्वम्लक्षारतैलाढ्यं द्विदलोऽपि विवर्जयेत् ॥ ९८ ॥
विधिनाऽनेन कर्तव्या रसोऽयं शङ्खपोट्टली ।
क्रमेण विनिवर्तन्ते प्रोक्ता रोगा न संशयः ॥ ९९ ॥

र. क ली , र श , रसचि , नि र , भा प्र , क्षये । भा प्र अतीसाराऽधिकारे ।

भाषा—५–५ तोलेशुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर ३ दिनतक शुष्कमर्दनकर आक और थूहरकेदूध, अदरख, सफेदचित्रक और अमरबेलकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकरे । फिर पीलीकौड़ी और शङ्खकाचूर्ण १०–१० तोले लेकर पूर्वोक्तद्रवोंसे तथा आक और सेहुण्डकेदूधसे ३–३ दिन मर्दनकर पूर्वोक्त कज्जलीको मिलाय चित्रक और अदरखकेरसोंसे १–२ दिन मर्दनकर अङ्गलीबरबराबर गोलियें बनाकर पत्थरकेचूनेम पुतीहुई हण्डीमें गोलियोंको डाल चूनापुतेहुए शरावसे ढककर ४–५ कपडमिट्टीदेकर सूखनेपर एकहाथभरके गर्तमें अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चित्रककेस्वरस अथवा क्वाथसे एकदिन मर्दनकर पहिलेकीतरह गोलियाबनाय पुटदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १५ रत्ती वीमात्रा ३२ कालीमिर्चोंकेसाथ घीमिलाकरदेनेसे आमज्वर और अतिसार, रक्तातिसारमें पैदाहुआज्वर, मलज्वराऽतिसार, श्वास, कास, कफ-पित्त और वातरोग, मन्दाग्नि, ग्रहणी, २०

प्रकारकेप्रमेह, बहुतदिनका जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। ज्वरको छोड़कर सबरोगोंमें मरिच और घीकेसाथदेवे। पुराने-सफेदचावल, दही और दुग्धप्रभृति मधुरभोजनकरे। कटु, अम्ल, क्षार और तैलयुक्तपदार्थोंको आंखोंसे भी न देखे ॥ ११ ॥

१२ शङ्खचूडरसः

रसाऽभ्रहेमभस्मानि वैक्रान्तं सर्वतुल्यकम्। सर्वैः पञ्चगुणं शङ्खचूर्णं शुष्कं विमर्दयेत् ॥ १०० ॥ लेहयेन्मधुना माषचतुष्कं सानुपानकम्। हिक्कां पञ्चविधां हन्ति मुमूर्षोरपि तत्क्षणात् ॥ प्राणायामेनाऽपि हिक्कां जयेदाशु विचक्षणः ॥ १०१ ॥

रसायनसं., र.चं., नि.र., र.सु., यो.र., वै.चि., चि.सा., हिक्कारोगे। रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थाने शशिचूडरसेतिनाम श्वासकासाऽधिकारे। चिकित्सासारे हिक्काश्वासारीति नाम।

भाषा—पारा, अभ्रक और सुवर्णभस्म १-१ भाग, वैक्रान्तभस्म ३ भा., शङ्खभस्म ३० भाग लेकर इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ माशे मधुकेसाथलेनेसे मुमूर्षुकीभी ५ प्रकारकी हिचकियोंको यह नष्टकरताहै। जहांपर औषध काम न करताहो वहांपर प्राणायामसे हिचकीका उपचारकरे ॥१२॥

१३ शङ्खचूर्णम्

गन्धकञ्चैकभागन्तु द्विभागं सैन्धवं भवेत्। त्रिभागं टङ्कणं चोक्तं चतुर्भागन्तु तुत्थकम् ॥ १०२ ॥ पञ्चभागं कपर्दञ्च षड्भागं शङ्खमाहरेत्। शिखिबिल्वरसेनैव शृङ्गबेररसेन च ॥ १०३ ॥ वह्निमूलरसेनैव प्रत्येकन्तु पुटत्रयम्। तद्भस्म मारिचं चूर्णं घृतेन सह भक्षयेत् ॥ १०४ ॥ अर्शांसि गुल्मशूलानि मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम्। षड्विधं चातिसारञ्च ग्रहणीञ्च चिरन्तनाम् ॥ १०५ ॥ वातजं पित्तजं चैव श्लेष्मजञ्च विशेषतः। अजीर्णकं पाण्डुरोगं शोफोदरभगन्दरम् ॥ १०६ ॥ पुष्टिकान्तिकरं बल्यमायुष्यञ्च विशेषतः। शङ्खचूर्णमिति ख्यातं शाण्डिल्येन च भाषितम् ॥१०७॥

र.क.यो., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भाग, सैन्धव २ भा., भुनासुहागा ३ भा., तुत्थभस्म ४ भा., कौडीभस्म ५ भा., शङ्खभस्म ६ भागलेकर बारीकचूर्णकर अपामार्ग, बेल, अदरख, चित्रकमूल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर टिकिया बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी ३-३ आंचें देनेके बाद निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतक मरिच और घीकेसाथदेनेसे बवासीर, गुल्म, शूल, दारुणमूत्रकृच्छ्र, ६ प्रकारकाअतिसार, पुरानीसङ्ग्रहणी, वात पित्त और कफजविकार, अजीर्ण, पाण्डुरोग, शोथ, उदररोग, भगन्दर, कृशता, कान्त्यभाव इनसबको यह नष्टकर बल और आयुको देताहै ॥ १३ ॥

१४ शङ्खद्रावरसः (प्रथमः)

अर्कस्नुहीतिलाश्वत्थचिञ्चापामार्गवह्निजम्। गृहीत्वा भस्म तस्मात्तु वस्त्रपूतं जलं हरेत् ॥ १०८ ॥ मृदग्निना पचेत्तत्तु यावल्लवणतां व्रजेत्। तत्तुल्यावेव सङ्ग्राह्यौ द्वौ क्षारौ टङ्कणं तथा ॥ १०९ ॥ सामुद्रञ्चाऽपि गोदन्ता कासीसञ्चाऽपि सोरकम्। द्विगुणं पञ्चलवणं शङ्खद्रावरसे तु तत् ॥ ११० ॥ काचकूप्यां विनिक्षिप्य सप्ताहं चाम्लयोगतः। साधितं सकलं चूर्णं वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ॥ १११ ॥ द्रुतं तेजोजलप्रख्यं स्वच्छं स्रवति तत्तदा। सर्वान्धातून्द्रावयति वराटानपि शङ्खकान् ॥ ११२ ॥ अजीर्णस्याऽथ मन्दाग्नेः का वार्ता द्रावणे पुनः। गुल्मप्लीहोदरं शूलमष्टधाऽपि विनाशयेत् ॥ वैद्यजीवनहेतुश्च शङ्खद्रावरसो ह्ययम् ॥ ११३ ॥

र.यो.त., भै.र., ध., वै.वि., र.का., यो.त. उदररोगे।

टि०—धुत्रचिह्नितस्थाने आरग्वधो दृश्यते, द्वयोरपि योगे क्षत्यभावोऽस्ति।

भाषा—आक, थूहर, तिल, पीपल, इमली, अपामार्ग और चित्रक इनसबकी अलग २ सफेदभस्म बनाकर समभागलेकर १६ गुने पानीमें स्वच्छबर्तनमें भिगोकर रखदे। चारपहरबाद इसको अच्छीतरहसे डण्डे अथवा हाथसे चलाकर रखदे। दूसरे ४ पहर गुजरनेपर पानीको ३-४ बार छानकर साफकरले। बनसके तो ब्लाटिङ्गपेपरसे छानले अथवा कच्चेसूतकी डोरी डालकर दूसरे पात्रमें नितारले फिर स्वच्छपात्रमें डालकर इसका क्षारबनावे। इसक्षारकी बराबर सज्जी, यवक्षार, सुहागा, समुद्रफेन, गोदन्तीहरिताल, कसीस और शोराखार तथा पांचों नमक दोभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर काचके मजबूतपात्रमें भरकर चौगुना शङ्खद्रावनीबूकारस डालकर धूपमें रखदे और प्रतिदिन चलादियाकरे। ७ दिनकेबाद बहुतसंभालकर भबकेसे इसका तेज़ाब निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ७ बूंदसे ३० बूंदतक समय अथवा रोगीकी औचिती देखकर काचकीनलीवगैरहसे इसतरह गलेमें डाले कि जीभ और दांतोंमें न लगे। जितनेभी शङ्खद्रावहैं सभी तीक्ष्णहोतेहैं इसलिये इनमें चौगुना पानी मिलाकर देना उचितहै इससे किसीतरहका भय नहीं रहताहै। कितनेहीलोग इसकेप्रयोगमें जीभ तथा मुंहमें घी लगाकर प्रयोगकियाकरतेहैं पर उसकेकरनेकी कोई ज़ुरूरतनहीं। इसयुक्तिसे गलेमें डालदियाजाय कि दांत जिह्वाप्रभृतिमें स्पर्श न हो। इसकेदेनेसे गुल्म, प्लीह, उदररोग, ८ प्रकारकेशूल, अजीर्ण, मन्दाग्नि, येसब नष्टहोतेहैं। इसमें तमामधातु, कौड़ी और शङ्ख डालदेनेसे द्रुतहोजातेहैं अजीर्णवगैरहकी तो कयाही-बयाहै। यह वैद्योंकी आजीविकाकाहेतुहै पर इसका प्रयोग अनुभवीवैद्यके पाससे करानाचाहिये नहीं तो इसमें खतरा-उपस्थहोनेका सम्भवहै ॥ १४ ॥

१५ शङ्खद्रावरसः (द्वितीयः)

फटकीं पलमेकञ्च पलमेकञ्च सैन्धवम् ।
द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं नवसादरम् ॥ ११४ ॥
चतुःपलं सुराक्षारं कासीसञ्च पलार्द्धकम् ।
डमरूयन्त्रयोगेन चुल्यां वै बदरीन्धनैः ॥ ११५ ॥
साधयेल्लाघवाच्चूर्णं शङ्खद्रावरसः परः ।
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ ११६ ॥

वै.वि.,वै.चि ,गुल्मादौ। वै चि.एकद्विवस्तुषु प्रमाणभेदोऽस्ति सोऽकिञ्चित्करः ।

भाषा—फिटकड़ी और सेंधानमक १–१ पल, यवक्षार और नवसादर २–२ पल, कलमीशोरा ४ पल, कसीस २ कर्ष लेकर सबको कड़ेधूपमें सुखाकर अवकुटचूर्णकर भवकेसे तेज़ाब निकाले । इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह देनेसे यकृत्, प्लीहा, वातगुल्म वग़ैरह समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५ ॥

१६ शङ्खद्रावरसः (तृतीयः).

स्फटिका नवसारश्च सुभ्वेता च सुवर्चिका ।
पृथग्दशपलोन्मानं गन्धकः पिचुसम्मितः ॥ ११७ ॥
चूर्णयित्वा क्षिपेद्भाण्डे मृन्मये मूर्ध्नि लेपिते ।
तन्मुखे मुद्रयेत्सम्यङ् मृद्भाण्डेनाऽपरेण च ॥ ११८ ॥
सरन्ध्रोदरकेणैव चुल्यां तिर्यक् च धारयेत् ।
अधः प्रज्वालयेद्वह्निं हठाद्याद्रसः स्रवेत् ॥ ११९ ॥
शाणैकं सेवयेद्वस्तु दन्तस्पर्शविवर्जितः ।
गुल्मोदरयकृत्प्लीहग्रन्थियक्ष्मादिशूलनुत् ॥ १२० ॥
बलपुष्टिप्रदो ह्येष भुक्तञ्च जारयेत्क्षणात् ।
विलोक्यतां अनेरेतद्रसमाहात्म्यमद्भुतम् ॥
कपर्दकम्बुलोहानि क्षिप्तान्यस्मिन् गलन्ति हि ॥१२१॥

र.प्र ,उदररोगे ।

भाषा—फटकड़ी, नवसादर, सफेदसज्जी १०–१० पल, शुद्धगन्धक १ कर्ष लेकर इनका अवकुटचूर्णकर भवके अथवा डमरूयन्त्रसे तेज़ाब निकाले । इसमें आच कड़ी होनीचाहिये और पसीजेहुए क्षार न चाहियें । चौगुनापानी मिलाकर इसकी ४ माशेकीमात्रा दांतोंको बचाकर पीनेसे गुल्म, उदर, यकृत्, प्लीह, गांठ, राजयक्ष्म, शूल इनसबको यह नष्टकरताहै । खाये हुएको तत्क्षण जीर्णकरदेताहै । इसमें कौड़ी और शङ्ख वग़ैरह डालनेसे गलजातेहैं ॥ १६ ॥

१७ शङ्खद्रावरसः (चतुर्थः)

स्मामुद्रं यवजः सूर्यः पर्पटी नवसादरः ।
फटकी सिन्धुसौवर्चौ प्रत्येकं पलपञ्चकम् ॥ १२२ ॥
कासीसं द्विपलं ग्राह्यं सर्वमेकत्र योजयेत् ।
वारुणीयन्त्रयोगेन चुल्यां वै खादिरेन्धनैः ॥ १२३ ॥
साधयेल्लाघवाच्चूर्णं शङ्खद्रावरसं परम् ।
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ १२४ ॥

वै वि ,गुल्मे ।

भाषा—समुद्रफेन, यवक्षार, शोरा, रेह, नोसादर, फटकड़ी, सेन्धव, सञ्चल ५–५ पल, कसीस २ पल लेकर प्रथम शङ्खद्रावकीतरह भवके अथवा डमरूयन्त्रमें तेज़ाब निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे चौगुनापानीमिलाय दन्तस्पर्शको बचाकर लेनेसे गुल्मादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७ ॥

१८ शङ्खद्रावरसः (पञ्चमः)

प्रत्येकं पञ्चलवणं वाणं तुल्यञ्च कर्परम् ।
स्फटिका कुडवार्द्धञ्च तदर्द्धं नवसादरम् ॥ १२५ ॥
कासीसं टङ्कणं स्वर्जी यवक्षारं तदर्द्धकम् ।
कुडवाप्यञ्च भूसारात्सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ १२६ ॥
घृष्ट्वा तु मर्दितं सम्यक्काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
तन्मुखे कूपिकां दद्यात्स्थापयेन्मालिकोपरि ॥ १२७ ॥
यामार्द्धं ज्वालयेदग्निं रसेन्द्रो भवति ध्रुवम् ।
शङ्खद्रावमिदं ख्यातं शङ्खद्रावमथो रसम् ॥ १२८ ॥
सेवितं कुरुते देहे तुष्टिं पुष्टिं बलं महत् ।
सर्वाञ्छूलविकारांश्च निहन्यात्पञ्चगुल्मकम् ॥ १२९ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्याज्जठराग्निप्रदीपनम् ।
सर्वरोगप्रणाशार्थमश्विनीदेवनिर्मितम् ॥ १३० ॥

वा., शूलेगुल्मे च ।

भाषा—पाचोंनमक ५–५ पल, तुत्थ, खपरिया और फटकड़ी २–२ पल, नवसादर १ पल, कसीस, सुहागा, सज्जी और यवक्षार २–२ कर्ष, शोरा २० पल लेकर सबको कड़ीधूपमें सुखाकर बारीकचूर्णकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर दूसरीशीशीकेसाथ डमरूयन्त्रबनाय चूल्हेपर तिरछीरखकर आवदे । नीचेकी शीशीको पानीमें डुबाए रक्खे । आधेपहरतक अग्निदेनेसे तमाम तेज़ाब तिरछीशीशीमें चला आवेगा । शीशीके अभावमें घड़ेका डमरूयन्त्रबनाकर कामलेवे । इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह सेवन करनेसे तमामशूल, गुल्म, प्रमेह और अजीर्ण नष्टहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । यह शरीरको पुष्टकर बलको बढ़ाताहै ॥ १८ ॥

१९ शङ्खद्रावरसः (षष्ठः)

क्षाराणां विंशतिः प्रोक्ता लवणानाञ्च पञ्चकम् ।
पर्पटी नवसारञ्च क्षारत्रितयटङ्कणम् ॥ १३१ ॥
तुल्यत्रयं शिलां तालं गन्धकं स्वर्जिकाह्वयम् ।
पाषाणजतु कासीसं मृग्वर्गं तथा क्षिपेत् ॥ १३२ ॥
भूक्षारं गृहधूमाख्यं पात्रे संस्थाप्य तत्समम् ।
अम्लवर्गैस्तथा भाव्यं भावयेच्च मुहुर्मुहुः ॥ १३३ ॥
तेजोयन्त्रविधानेन पाककर्मविचक्षणः ।
पातयेन्मूत्रवर्णञ्च तोयाभं शङ्खगालकम् ॥ १३४॥
भस्म पारदसंयुक्तं धातरोगेषु योजयेत् ।
गुल्मानां पञ्चकं हन्ति ह्युदराणां तथाष्टकम् ॥ १३५ ॥
शीतज्वरं पुराणञ्च शोथं सर्वाङ्गमारुतम् ।

प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्राघातानशेषतः ॥
हितश्च गजवाजीनां पशूनां मृगपक्षिणाम् ॥ १३६ ॥

या , सर्वरोगे ।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृति चित्रकप्रभृति २० वृक्षोंकेक्षार, पांचों-नमक, रेह, नवसादर, जव–मूली और चनेकाक्षार, सुहागा, तूतिया, दानेफिरङ्ग, जंगाल, मैनसिल, हरिताल, गन्धक, सज्जी, शिलाजीत, कसीस, आठमूत्रोंकाक्षार, शोरा, गृहधूम येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर बराबरका अम्लद्रव डालकर धूपमें रक्खे। प्रतिदिन चलातारहे, द्रवसूखनेपर दूसरा डालताजाय। एकमहीनेबाद भबके अथवा डमरूयन्त्रसे इसका तेज़ाब निकाले, यह सूत्रवर्णका होगा। इसमेंसे प्रथम शङ्खद्रावकीतरह पारदभस्मकेसाथलेनेसे समस्तवातरोग, पांचों-गुल्म, आठों उदररोग, शीतज्वर, पुरानाशोथ, सर्वाङ्गवातव्याधि २० प्रकारकेप्रमेह, समस्तमूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहै। उचितमात्रामें देनेसे, हाथी, घोड़ा, पशु, मृग और पक्षियोंके तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १९ ॥

२० शङ्खद्रावरसः (सप्तमः)

क्षारा द्वादश सम्प्रोक्ता लवणानाञ्च पञ्चकम् ।
कासीसं टङ्कणं तुत्थं गन्धकं स्वर्जिकाख्यकम् ॥ १३७ ॥
एतानि समभागानि प्रत्येकञ्च पृथक् पृथक् ।
स्फटिकानवसारो द्वौ तत्समं योजयेद्बुधः ॥ १३८ ॥
एकीकृत्य तु तत्सर्वं पात्रे संस्थाप्य यत्नतः ।
अम्लवर्गं मूत्रवर्गं सर्वमेकत्र लोडयेत् ॥ १३९ ॥
सप्ताहं भावयेदेतत्तेजोयन्त्रे विनिःक्षिपेत् ।
दीप्ताग्निना पचेद्यामं पाकसिद्धिविचक्षणः ॥ १४० ॥
शङ्खद्रावो द्रवत्येवं सर्वरोगेषु योजयेत् ।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि लेपमात्रेण सत्वरम् ॥ १४१ ॥
सर्वान्दुष्टव्रणान्घोरान्स्पर्शमात्राद्विनिर्हरेत् ।
अष्टोदराणि गुल्मानि शूलानि विविधानि च ॥ १४२ ॥
माषप्रमाणं सेवेत सप्ताहञ्च नियारयेत ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगनिबर्हणम् ॥
महादेवीप्रसादेन भैरवेण विनिर्मितः ॥ १४३ ॥

या , सर्वरोगेषु ।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृतिक १२ वृक्षोंकेक्षार, पांचोंनमक, कसीस, सुहागा, तुत्थ, गन्धक, सज्जी येसब समभाग, फटकड़ी और नोसादर सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर काचके-वर्तनमें डाल बिजोराबगैरह अम्लवर्ग और मूत्रवर्ग जितना मिलसके उतना डाले। धूपमें रखकर प्रतिदिन चलातारहे, द्रव सूखनेपर दूसरा डालताजाय। सातदिनबाद डमरूयन्त्र अथवा भबकेसे एकपहरकी कड़ी आंचदेकर तेजाब निकाले। इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेनेसे आठप्रकारकेगुल्म और नाना प्रकारकेशूल ७ दिनमें नष्टहोतेहैं। १८ प्रकारकेकुष्ठोंको लेप-करनेसे नष्टकरताहै ॥ २० ॥

२१ शङ्खद्रावरसः (अष्टमः)

पारदं दरदं तालं कासीसं रोमकं विषम् ।
तुत्थद्वयं शिलां तालं स्फटिकां नवसादरम् ॥ १४४ ॥
क्षारद्वादशकं ख्यातं सौभाग्यं पटुपञ्चकम् ।
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा मृन्मये पात्रके क्षिपेत् ॥ १४५ ॥
जम्बीरफलसारेण भावयेत्सप्तवारकम् ।
तेजोयन्त्रविधानेन पातयेत्पाकवित्तमः ॥ १४६ ॥
पीतवर्णं द्रावकं तच्छङ्खशुक्तिवराटकम् ।
क्षिप्रं भवति पानीयं विचित्रगुणकारकम् ॥ १४७ ॥
द्विकालं माषमात्रञ्च सेवयेद्बुद्धिमान्नरः ।
लाजाचूर्णं निष्कयुग्ममनुपाने प्रदापयेत् ॥ १४८ ॥
अष्टावुदरजाग्रोगान्गुल्मानां पञ्चकञ्जयेत् ।
अर्शांसि षट्प्रकाराणि ग्रन्थिशूलादिमारुतान् ॥ १४९ ॥
आध्मानञ्चाऽग्निमान्द्यञ्च सर्वं सन्धिव्रणं हरेत् ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च मेहान्विंशतिसङ्ख्यकान् ॥ १५० ॥
श्वासकासगलग्रन्थीन्विसर्पं गजचर्मकान् ।
कृमिरोगांश्चर्मरोगान्नखकेशसमुद्भवान् ॥ १५१ ॥
अन्नद्वेषमजीर्णञ्च हिक्कासर्वाङ्गशोफजान् ।
तिमिरं दद्रुकण्डू च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ १५२ ॥

या , सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, शिंगरिफ, हरिताल, कसीस, कन्धारदेशका-कालानमक, बछनाग, तूतिया, जङ्गाल, मैनसिल, हरिताल, फटकड़ी, नोसादर, १२ क्षार, सुहागा, पांचोंनमक सबसब भागलेकर बारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर जंभीरीकेरसकी ७ भावनाएं देकर भबके अथवा डमरूयन्त्रसे तेजाब निकाले। यह पीलेरङ्गका द्रव निकलेगा। इसमें शङ्ख, सीप अथवा कौड़ी डालतेही गलजायगी। इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सुबहशाम दोनोंसमय सेवनकरके ऊपरसेखीलोंका चूर्णलेवे। इससे ८ प्रका-रके उदररोग, ५ प्रकारकेगुल्म, ६ प्रकारकेबवासीर, ग्रन्थि, शूल, वातवेदना, आध्मान, मन्दाग्नि, सबप्रकारकी सन्धियोंके व्रण, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, २० प्रकारकेप्रमेह, श्वास, कास, गलेकीगांठ, विसर्प, चर्मदल, क्रिमिरोग, नख और केशोंकेरोग, अन्नद्वेष, अजीर्ण, हिचकी, सर्वाङ्गशोथ, तिमिर, दाद, खाज इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१ ॥

२२ शङ्खद्रावरसः (महान्) (नवमः)

स्नुह्यर्कचिञ्चाऽश्वत्थाश्च ह्यपामार्गेण पञ्चमः ।
पृथग्भस्मजलं नीत्वा ह्युद्धृत्य लवणानि च ॥ १५३ ॥
टङ्कणञ्च यवक्षारं स्वर्जी लवणपञ्चकम् ।
रामठं तालकञ्चैव सौवीरं नवसादरम् ॥ १५४ ॥
सोमलक्षारगोदन्त्यौ ताप्यं गन्धरसौ तथा ।
विषं समुद्रफेनञ्च शोरकं स्फटिका तथा ॥ १५५ ॥
शङ्खचूर्णं मध्यनाभि चूर्णं पाषाणकोद्भवम् ।
मनःशिला च कासीसं समभागञ्च कारयेत् ॥ १५६ ॥

अम्लवेतसजैर्भाव्यं काचकूप्यां क्षिपेत्ततः ।
अम्लद्रवान्बहून्दद्याद्दुष्णस्थाने विधारयेत् ॥ १५७ ॥
वस्त्रानुच्छादितस्तत्र यावत्सप्तदिनावधिम् ।
मन्दश्चाग्निः प्रदातव्यो वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ॥ १५८ ॥
काचकूप्यां जले धार्यं रक्षयेद्यत्नतः सुधीः ।
गुञ्जैकं पर्णपत्रेण लिप्त्वा भक्ष्यं दिनेदिने ॥ १५९ ॥
श्वासं कासं क्षयं जीर्णं ग्रहणीञ्चात्यरोचकम् ।
उदरं प्लीहगुल्मञ्च ह्यर्शांसि नाशयेत्तदा ॥ १६० ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च ह्यस्थिशूलं विनाशयेत् ।
आमवातं महावातं पक्षाघातं धनुस्तथा ॥१६१ ॥
उदरामयघ्नमामघ्नं कृमिकर्मी विनाशयेत् ।
मत्कुणादीन्कृमीन्सर्वान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ १६२ ॥
भुक्त्वा च कण्ठपर्यन्तं गुञ्जैकन्तु रसं लिहेत् ।
तत्क्षणात्कारयेद्भस्म तूलराशिं यथाऽनलः ॥ १६३ ॥
यामार्द्धाद् द्रावयत्येवं शङ्खशुक्तिवराटिकाः ।
महदाश्चर्यकर्ता च तत्क्षणाल्लोककौतुकम् ॥ १६४ ॥
पक्वामिषं क्षिपेन्मध्ये घर्मे धार्यते यदा ।
यमार्द्धेन जलप्रायं भवत्येव न संशयः ॥ १६५ ॥
योगिन्यै भैरवायाऽथ वीरेभ्यश्च बलीन्हरेत् ।
पश्चाद्रसश्च कर्तव्य इत्याज्ञा पारमेश्वरी ॥ १६६ ॥
माषान्नं दधिभक्तञ्च दीपं वेदमुखं सुधीः ।
एवञ्च भैरवे दद्याद्योगिनीभ्योऽथ चामिषम् ॥ १६७ ॥
कार्पासास्थि पीतकृष्णं सिन्दूरं कज्जलं तथा ।
दधिभक्तं धूपदीपं दद्याच्चतुष्पथे निशि ॥
अन्यथा नैव सिद्धं स्यात्तज्जलं लभ्यते क्वचित् ॥१६८॥

(अथमन्त्रः—ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हंस क्षमलवरयूं असिताङ्गादि इहागच्छ इहागच्छ इम दधिभक्तमाषान्नबलि दह दह ममशान्ति रक्षा कुरु कुरु स्वाहा । ॐ क्रौं ग्रीं ँ क्रूं हूँ हूँ छरलवससहया महादि- त्यादि इहागच्छ इहागच्छ इमं मत्स्यमांससिन्दूरकज्जलबलिं गृण्हगृण्ह मम शान्ति रक्षा कुरु [illegible] स्वाहा । ॐ ह्रीं श्रीं क्रों वटुक- हनुकादिवीर इहागच्छ इहागच्छ दधिभक्तबलिं गृण्हगृण्ह मम- शान्ति रक्षा कुरु कुरु स्वाहा इतिबलिदानम् ।)

अन्यथा ह्रियते तेजो रसो भवति निष्फलः ।
तेनेदं बलिदानेन साफल्यं भवति ध्रुवम् ॥ १६९ ॥
शङ्खद्रावो रसो नाम्ना शम्भुदेवेन भाषितः ।
गुह्याद्गुह्यतरं गोप्यं पित्रा पुत्रे न कथ्यते ॥ १७० ॥

(अथौषधभक्षणमन्त्रः—ॐ ह्रीं सौं ह्रीं स स ॐ नमो भगवते वासुदेवाय धन्वन्तरये अमृतहस्ताय सर्वामयनाशाय त्रैलोक्यनाथाय परोपगणनाय हरये अमृताय स्वाहा ।)

रससागर , सर्वरोगे ।

टि०—भै र , बृ यो त , चि क ,रसायनस , एषु ग्रन्थेषु सौवीर स्थाने लवङ्गजातीफले अधिकतया प्रक्षिप्ते, नैतावता विशेषेण पाठान्तर तामाप्तु योग्यताऽस्ति । शङ्खद्रावे लवङ्गजातीफलप्रक्षेपेण त्रिदोषविशेषा न्नुदयात् । रसायनमङ्गले अमृतार्णव इति नाम ।

भाषा—थूहर, आक, इमली, पीपल, अपामार्ग इनकी सफेदराखमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह निकालेहुएक्षार, सुहागा, यवक्षार, सज्जी, पाचोंनमक, हींग, हरिताल, सुरमा, नवसादर, सोमल, गोदन्तीहरिताल, सोनामाखी, गन्धक, पारा, बछनाग, समुद्रफेन, शोरा, फटकड़ी, शङ्ख, शङ्खनाभि, चूनेकापत्थर, मैन- सिल, कसीस येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर शङ्खद्रावनीबूके- रसमें मिलाकर काचकी शीशीमें भरदे और जहा हरवक्त अग्नि- जलतीहो उसके सहारेपर रखदे जिसमें कि द्रवका हरवक्त शोषण होतारहे । एकद्रवसूखनेपर फिर दूसरीजातिका अम्लद्रव डाल- कर सुखावे । ऐसे ७ दिन पूरेहोनेपर भबके अथवा काचके डमरूयन्त्रसे तेजाब निकाले । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेवे, अथवा एकरत्ती पत्रेपानपर लेपदेकर भक्षणकरावे । इससे कास, श्वास, क्षय, अजीर्ण, ग्रहणी, अरुचि, उदररोग, प्लीहा, गुल्म, बवासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, अस्थिशूल, आमवात, महावात व्याधि, पक्षाघात, धनुर्वात, पेटकी तमामव्याधिया, आम, क्रिमि, खटमलहो इनसबको यह नष्टकरताहै । गलेतक गरिष्ठभोजन- करके एकरत्ती इसरसको लेनेसे तूलराशिको अग्निकीतरह भोजन- को पचादेताहै । आधेपहरमें शङ्ख, सीप और कौड़ियोंको गलादेताहै । पकाहुआमास इसमें डालकरधूपमें रखनेसे आधे- पहरमें जलकेसदृश द्रवहोजाताहै । इसके बनानेसे पहिले तथा पीछे योगिनी, भैरव और वीरोंको बलि देनीचाहिये । बलिमें उड़दके बड़ेवगैरह, दही–भात, चारबत्तीका दीपक यह भैरवको बलि देवे । योगिनियोंको मांसबलि दे । बिनौले, पीला और काला सिन्दूर, कज्जल, दही, भात, धूप, दीप, इनकी बलि रातमें चौराहेपर दे अन्यथा सिद्धि नहीं होती । बलिदानमन्त्र ऊपर लिखेप्रमाण समझना ॥ २२ ॥

२३ शङ्खद्रावरसः (लघुः) (दशमः)

सोमलञ्च यवक्षारं स्वर्जिका टङ्कणं स्फटी ।
समञ्च पञ्चलवणं सोरा च नवसादरम् ॥ १७१ ॥
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ।
यामार्द्धं द्रावयत्येवं शङ्खशुक्तिवराटिकाः ॥ १७२ ॥
अर्शांसि नाशयेत्तद्वन्मूत्रकृच्छ्राश्मरीशिलाः ।
उदराऽष्टविधं हन्याद्गुल्मप्लीहोदरामयम् ॥ १७३ ॥
अजीर्णं नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीञ्च विसूचिकाम् ।
भुक्तशेषं न मोक्तव्यं माषमात्रं रसोत्तमः ॥ १७४ ॥
क्षणमात्राद्भवेद्भस्म पुनर्भोजनमिच्छति ।
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्यश्च रसोत्तमः ॥ १७५॥
न रुग्भयञ्च भयं क्वापि सत्यंसत्यं मयोदितम् ।
न देयं यस्यकस्याऽपि सदा गोप्यञ्च कारयेत् ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम्ना वैद्यानामुपकारकः ॥ १७६ ॥

रससागर, उदररोगाऽधिकारे ।

भाषा—सोमल, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, फिटकड़ी, पाचों- नमक, शोरा और नवसादर समभागलेकर सबका बारीकचूर्णकर

डमरूयन्त्र अथवा भवकेसे तेज़ाब निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सेवनकरनेसे बवासीर, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, रेती, ८ उदररोग, गुल्म, प्लीहा, अजीर्ण, ग्रहणी, विसूचिका इनसबको यह नष्टकरताहै। उच्छिष्टरहेहुएको न पीवे। पानी-विना लेनाहोतो पानवगैरहमें एकबूंद डालकर सेवनकरनाचाहिये। भोजनकरनेकेबाद लेनेसे तत्कालमें भूखलगतीहै। नियमपूर्वक इसके सेवनकरनेवालेको किसीभीव्याधिसे भयनहींरहता ॥२३॥

२४ शङ्खद्रावरसः (एकादशः)

अर्कस्नुक्सातलाचिञ्चापलाशकदलीतिलाः।
अपामार्गो मोक्षकश्च कपर्दः शङ्ख एव च ॥ १७७ ॥
एतेषां भूतिजक्षारः पारदः पटुपञ्चकम्।
पञ्च क्षाराः समं सर्वे त्रिभागो गन्धकः स्मृतः॥१७८॥
भूरसा चैव सोरा च कासीसं नवसादरम्।
एतच्चतुष्टयं सर्वैरौषधैस्तुल्यभागिकम् ॥ १७९ ॥
सर्वेषां कज्जलीं कृत्वा निम्बुनीरेण मर्दयेत्।
प्रदद्यान्नलिकायन्त्रे वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ १८० ॥
दत्त्वा द्रवं तु गृह्णीयात्सूचिकाद्रावकारकम्।
एकवल्लं द्विवल्लं वा दद्यान्नलिकया रसम् ॥ १८१ ॥
गुल्मार्शःप्लीहमुख्यानां रोगाणामन्तकं परम्।
शङ्खद्रावरसो ह्येष कृतकर्मा न संशयः ॥ १८२ ॥

रस.सं., र.सि., गुल्माऽधिकारे।

भाषा—आक, थूहर, अङ्गुलियाथूहर, इमली, पलाश, केला, तिल, अपामार्ग, मोखा, कौडी, शङ्ख इनसबकीराखका-क्षार, पारा, पांचोंनमक, पांचोंक्षार सब १-१ भाग, गन्धक ३ भाग, फटकड़ी, शोरा, कसीस और नोसादर येचारों सब दवाओंके बराबर लेकर सबकीकज्जली बनाय नीबूकेरससे मर्दनकर नलिकायन्त्रसे ४ पहरकीअग्निदेकर तेज़ाब निकाले। इसमें सूई डालनेसे गलजातीहै। इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक पानीमें मिलाय काचकीनलीसे मुंहमें डाले। ऐसे दोनोंसमय-लेनेसे गुल्म, बवासीर, प्लीहा वगैरह उदररोग, अजीर्ण और वातव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ शङ्खद्रावरसः (द्वादशः)

योगिनीभैरवाभ्याञ्च बलिमादौ प्रदापयेत्।
पश्चाद्यन्त्रञ्च कर्तव्यमेवाह परमेश्वरी ॥ १८३ ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम शम्भुदेवेन भाषितः।
गुह्याद्गुह्यतमं गुह्यमिदानीं कथ्यते मया ॥ १८४ ॥
शङ्खचूर्णं यवक्षारं स्वर्जिक्षारं सटङ्कणम्।
समञ्च पञ्चलवणं स्फटिका नरसारकः ॥ १८५ ॥
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत्।
यामार्द्धं द्रावयत्येष शङ्खशुक्तिवराटकान् ॥ १८६ ॥
अर्शांसि नाशयेत् षट् च मूत्रकृच्छ्राश्मरीस्तथा।
उदराण्यष्टसङ्ख्यानि गुल्मप्लीहोदराणि च ॥ १८७ ॥
अजीर्णं नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीञ्च विसूचिकाम्।
भुक्तशेषे च भोक्तव्यो माषमात्रो रसोत्तमः ॥ १८८ ॥
क्षणमात्राद्भवेद्भस्म पुनर्भोजनमिच्छति।
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्योऽयं रसोत्तमः ॥ १८९ ॥
न रुजायां भयं क्वाऽपि सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।
न देयं यस्यकस्याऽपि सदा गोप्यञ्च कारयेत् ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम वैद्यानामुपकारकः ॥ १९० ॥

भै.र., ध., र.त., उदराऽधिकारे।

भाषा—योगिनी और भैरवोंको बलिदेकर शङ्ख, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, पांचोंनमक, फटकड़ी, नोसादर, सब समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर नलिकायन्त्रमे तेज़ाब निकाले। इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक पानीमें मिलाकर देनेसे ६ प्रकारकी बवा-सीर, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म, प्लीहा, अजीर्ण, ग्रहणी, हैज़ा इनसबको यह नष्टकरताहै। गलेतकखाकर इसकोलेनेसे पूर्वखायाहुआ पाचनहोकर फिरसे भोजनकी इच्छा होजातीहै। मन्दाग्निवालोंको भोजनकरनेकेबाद इसकासेवन करना चाहिये ॥ २५

२६ शङ्खद्रावरसः (महदादिः) १३

शुद्धं काञ्चनमाक्षिकं मृदुतरं कांस्याभिधं तत्तथा,
सिन्धूत्थं विमलं रसाञ्जनवरं फेनः स्रवन्तीपतेः।
क्षारौ स्वर्जिकसाम्भली सुविमली
भागास्त्वमीषां समाः,
मत्तानां सदृशन्तु टङ्कणमिहाऽ-
स्याद्धौ नृसारः सितः ॥ १९१ ॥
तत्तुल्या स्फटिकारिका भिसदृशः शुक्तो यवस्याग्रजः,
कासीसत्रितयं यवाग्रजसमं सञ्चूर्ण्य सर्वं न्यसेत्।
पात्रे काचमये मृदाम्बरवृते यन्त्रे बकाख्ये भिषक्,
तापेन क्रमवर्द्धिना त्ववहितोऽमीषां रसं पातयेत् ॥
यो द्राग्भस्म वराटिकां प्रकुरुते सोऽयं महाद्रावकः,
को वक्तुं प्रभवेदमुष्य नितरां सम्यग्गुणान्भूतले।
एतद्वल्लचतुष्टयं सह गिलेच्छुण्ठ्या लवङ्गेन वा,
तत्पश्चात्परिवासितं बहुगुणं ताम्बूलकं भक्षयेत् १९२
प्रासङ्ग्यात्कथयामि तांश्छृणु
गुणानस्यैव कांश्चित्परान्,
निःशेषं विनिहन्त्यसौ
चिरभवानष्टोदराणि ध्रुवम्।
गुल्मं पाण्डुहलीमकं सुकठिना
मष्ठीलिकां कामलां,
मन्दाग्निं विषमाग्नितां
बहुविधांश्छोथांश्च शूलानपि ॥ १९४ ॥
सर्वार्शांसि भगन्दरान्कृमिगदान्पश्चैव कासांस्तथा,
हिक्काश्लीपदकोपवृद्धिमरुचिं व्याधिं महादारुणम्।
नव्यं वा चिरजं ज्वरं बहुविधं छर्दिं क्रिमीन्विंशतिं।
पक्ष्माणं चिरजामवातपिडिका वीसर्पविस्फोटकौ ॥

उन्मादं स्वरभेदमर्बुदमपि स्वेदञ्च हस्तपाणिजं,
जिह्वास्तम्भगलग्रहं चिरभवं ग्रीवारुजामुल्वणाम्।
नासाकर्णशिरोऽक्षिवक्त्रजगदान्क्षुद्रामयांश्चापरान्,
हन्यादेव चिरोत्थितान्बहुविधानन्यांश्च रोगानपि१९६
एकः स्यादपरो हि टङ्कणमुखै द्रावैः परैः सप्तकैः,
रन्यस्तु स्फटिकारिटङ्कणयवक्षाराग्रकासीसकैः,
जानीयाद्गुरुतो विभागमनयो र्यन्त्रादिकञ्चाऽपरं,
निर्दिष्टास्त्रय एव भेषजवराः स्वल्पो महान्मध्यमः॥
टङ्कणादिकासीसान्तैः सप्तद्रव्यैर्मध्यमः,
स्फटिकारिकासीसान्तैश्चतुर्द्रव्यैः स्वल्पः,
स्वर्णमाक्षिकादिकासीसमितियान्तै महान्॥ १९७॥

भै र., उदराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सुवर्णमाक्षिक और कास्यमाक्षिक, काचनमक, रौप्यमाक्षिक, रसौत, समुद्रफेन, सज्जी और साभरनमक १–१ भाग, सुहागा ८ भा, सफेद नोसादर तथा फिटकड़ी ४–४ भा, सफेद यवक्षार १६ भाग, शुद्धकसीस, हरिताल और मैनसिल येतीनोंमिलकर १६ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर कपडमिट्टी दियेहुए काचके वर्तनमें रखकर नली अथवा डमरूयन्त्रसे बहुतसावधानीकेसाथ क्रमाग्नि जलाकर तेजाब निकाले। इसमें शङ्ख वगैरह सब गलजातेहैं। इसकी १२ रत्ती सोंठ अथवा लवङ्गकी गोलीमें कवलितकर निगलवादे फिर सुवासित पान खिलावे। इसकेसेवनसे बहुतदिनकेपुराने आठों उदररोग, गुल्म, पाण्डु, हलीमक, कठिनअष्ठीला, कामला, मन्दाग्नि, विषमाग्नि, नाना तरहकेशोथ, शूल, सबप्रकारके बवासीर, भगन्दर, कृमि, पाचप्रकारके कास, हिचकी, फीलपाव, अण्डवृद्धि, अरुचि, नया अथवा पुराना ज्वर, वमन, २० प्रकारके प्रमेह, राजयक्ष्म, पुराना आमवात, पिडका, विसर्प, विस्फोट, उन्माद, स्वरभेद, अर्बुद, हाथपैरोंकापसीना, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, ग्रीवाकीपीडा, नाक, कान, शिर, आख, मुह इनके समस्तरोग और क्षुद्र रोगोंको यह नष्टकरताहै। टङ्कणादि कासीसान्त ७ द्रव्योंसे मध्यम, स्फटिकादि कासीसान्त ४ द्रव्योंसे स्वल्प और स्वर्ण माक्षिकादि कासीसान्तद्रव्योंसे महान्, इसतरह इसके विभाग करनेसे ३ प्रकारकेशङ्खद्राव तैयारहोसकेहैं॥ २६॥

२७ शङ्खद्रावरसः (चतुर्दशः)

शृपश्चित्रमपामार्गं चिञ्चा कूष्माण्डनालिका।
स्नुही तालस्य पुष्पञ्च चर्णाभूर्वेतसं तथा॥ १९८॥
एतेषां क्षारमाहृत्य लिम्पाकस्वरसेन च।
क्षालयित्वा क्षारतोयं वस्त्रपूतञ्च कारयेत्॥ १९९॥
चण्डातपेन संशोष्य ग्राह्यं तद्लवणोचितम्।
एतस्य द्विपलं ग्राह्यं यवक्षारपलद्वयम्॥ २००॥
स्फटिकारिपलञ्चैव नरसारं पलन्तथा।
पलार्द्धं सैन्धवं ग्राह्यं टङ्कणं तोलकद्वयम्॥ २०१॥
कासीसं तोलकञ्चैव मुद्राशङ्खञ्च तोलकम्।
दारमोचं कर्षकञ्च तोलं समुद्रफेनकम्॥ २०२॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य वकयन्त्रेण साधयेत्।
महाद्रावकमेतद्धि योज्यञ्च रसजारणे॥
हन्ति गुल्मादिकान्रोगान्यकृत्प्लीहोदराणि च॥२०३॥

भै र, घ, उदररोगाऽधिकारे।

भाषा—अडूसा, चित्रक, अपामार्ग, इमली, कोंहड़ेकीलता, थूहर, ताड़केफूल, इटसिट, वेत इनसबकीराखको अमिलतासके अन्नस्वरसमें भिगोकर कपडछानकर कड़ीधूपमें रखदे। इसके ऊपर जो क्षारकी पपड़िया बंधजायें उन्हें मलाईकीतरह उतारले। ६–७ दिनमें तमामक्षार पपड़ीहोकर निकल आताहै। यह क्षार और यवक्षार २–२ पल, फटकड़ी और नोसादर १–१ पल, सेंधानमक २ कर्ष, सुहागा २ तोले, कसीस और मुर्दासङ्ग १–१ तोला, दालचिकना १ कर्ष, समुद्रफेन १ तोला लेकर सबका बारीकचूर्णकर मलिका अथवा डमरूयन्त्रसे तेजाब निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती पानबीड़ेमें रखकर देनेसे गुल्म, यकृत् और प्लीहादि समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै॥२७॥

२८ शङ्खनाभिरसः (शङ्खगर्भपोट्टली) १

नाभिं शङ्खभवां गवां शुभपयःपिष्टाञ्च मूषीकृतां,
भागे. षोडशनिष्कर्कञ्च तुलितामादाय तस्यां भिषक्
निष्काऽर्द्धं भवबीजभस्म च तथा गन्धात्त्रयं निष्ककं,
क्षिप्त्वा तां परिवेष्टयेच्छुमतरैर्वस्त्रैस्ततो मृत्तिकाम्॥
लिप्त्वा चोपरि पाचयेद्गजपुटे गुञ्जामितं दापयेत्,
पिप्पल्या मधुनाऽथवा घृतयुते मारिचचूर्णैः क्षये।
जैपालस्य तु चूर्णयुक्तमथवा कोलान्वितैं गोघृतैः,
शूले गुल्मगदे त्रिदोषशमनस्स्याच्छङ्खयेरद्वयैः॥२०५॥

चि. क., र र., र को., नि. र, यो. म, र. श, वै चि, र. पा, र का, राजयक्ष्मणि। यो म शङ्खगर्भेतिनाम, र. र. स, रसायनस, ना. वि एषु ग्रन्थेषु मृगाङ्कपोट्टलीतिनाम॥

भाषा—चारकर्ष शङ्खनाभिको गायकेदूधमें पीसकर मूषा बनावे २ माशे पारदभस्म और १२ माशे गन्धककी कजली को रखकर मूषाकोबन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर शराव-सम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती पीपलमधु अथवा घी और मरिचकेसाथदेनेसे यक्ष्मरोग नष्टहोताहै। शुद्धजमालगोटा अथवा गोघृतयुक्तपक्वकोलकेसाथदेनेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं। अब रखनेसाथ त्रिदोष शान्तहोताहै॥ २८॥

२९ शङ्खनाभिरसः (द्वितीयः)

भस्मीकृता गजपुटे पुटशङ्खनाभि—
वंज्रार्कदुग्धमृदिता स [illegible] वज्रकल्कः।
गन्धार्धसूतसूतटङ्कपिधानगर्भा
ग्राम्भूकिकासु पुटिता त्रिदिनं हि दीता॥
आकर्षशङ्खदलभागयुता च पिष्टा
सङ्घाहजिदुचिकरा मरिचाऽऽज्ययुक्ता २०६

रस स, र (मा.) शङ्खगर्भः, महत्यादौ।

भाषा—थूहर और आकके दूधमें २–३ दिन शङ्खनाभिके चूर्णको घोटकर गजपुटकी आंचदे। अथवा एकभाग पारा और दोभाग शुद्धगन्धककी कज्जलीको घोंघेमें भरके उसीका ढक्कन देकर आक और थूहरके दूधमें पीसेहुए सुहागेसे सन्धिबन्दकर शरावसम्पुटमें रख गजपुटकी आंचदे। तीसरेदिन निकालकर चतुर्थांश शङ्खभस्म मिलाकर रखछोड़े। इनदोनोंमेंसे किसीएक भस्मको एकमाशेकीमात्रा ७–१४ अथवा २१ मरिच और घीकेसाथ युक्तिपूर्वकदेनेसे सद्यः ग्रहणी और अरुचि नष्टहोतीहै २९

३० शङ्खभास्कररसः

दग्धं शङ्खं वराटश्च तुल्यार्कं नवनीतयुक्।
शङ्खार्धं भक्षयेत्सर्वशूलार्तः शङ्खभास्करः॥ २०७॥

र. रा. क., र. को., र. क. ल, टो, रसायनम, र. का., शूलाऽधिकारे।

भाषा—शङ्ख और कौड़ीभस्म १–१ भाग, ताम्रभस्म दोनोंकीबराबर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे एकमाशेसे दोमाशे तक रोग अथवा रोगीका बलाबल देखकर मक्खनकेसाथ प्रयोगकरनेसे त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै॥ ३०॥

३१ शङ्खमुखरसः (शङ्खनाभिरसः)

शङ्खनाभेश्चतुर्भागाः कुवक्त्रस्य तथा द्वयम्।
भागो गन्धस्य शुद्धस्य चैकभागोऽत्र सूतकः॥२०८॥
ग्रहण्यतीसारसराजयक्ष्मज्वराञ्जयेच्छङ्खमुखः स एषः।
रोगोचिताभिः प्रथितक्रियाभि-
र्लोकेश्वरोक्तो विधिरत्र शेषः॥ २०९॥

रस. स., र. (मा.) क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शङ्खनाभिभस्म ४ भाग, वैक्रान्तभस्म २ भा., शुद्धगन्धक और पारा १–१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े। इसमेंसे २–३ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अतिसार, राजयक्ष्म, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। लोकनाथरसमें कहीहुई प्रक्रियाका अनुष्ठानकर उपद्रवोंको शमनकरना॥ ३१॥

३२ शङ्खवटी (प्रथमा)

पलं चिञ्चाक्षारं पलमितमिदं पञ्चलवणं,
द्वयं सम्यक्पिष्टं तदनु लघुनिम्बूफलरसैः।
ततः पिष्टं तस्मिन्पलपरिमितं शङ्खशकलं,
क्षिपेद्वारान्सप्त प्रमृदितमनेनैव विधिना॥ २१०॥
पलप्रमाणं कटुकत्रयञ्च
वचा च हिङ्गुश्च पलार्द्धमानौ।
विषं पलद्वादशभागयुक्तं
तावान्रसो गन्धकतोऽपि तावान्॥ २११॥
बदरास्थिप्रमाणेन वटीमेतस्य कारयेत्।
भक्षयेत्सर्वदा धीमान्सर्वाजीर्णप्रशान्तये॥ २१२॥
सर्वोदरेषु शूलेषु विसूच्यां विविधेषु च।
अग्निमान्द्येषु गुल्मेषु सदा शङ्खवटी हिता॥ २१३॥

भा. प्र, यो. म, र. क. ल, वृ. यो. त, र. र. को, टो., र. व., ना. वि., ध., ति. र., र. सि., चि. र. म, र. बो, र. को, यो. चि, रसायनसं, यो. र, वै. मृ, र. का., भै. र., वै. चि., र. सु, र. च, यो. र., र. (मा.), भै. सा., र. शि., र. दी., रस. स., चि. क, अग्निमान्द्ये।

टि०—रत्नाकरौषधयोगे चिञ्चाक्षारादिरस इति नाम। रस म, यो चि एतयोर्हिङ्ग्वर्धाय शङ्खपादमाने गृहीते इति विशेष। वृहद्योगतरङ्गिण्या हिङ्गुवचयोः स्थाने पलार्द्धमानेन त्वङ्क गृहीत तत्तु न सम्यक् हिङ्गुवचयोरुभयारकरिमन् त्वङ्के कार्याऽकरत्वात्। विषमाने बिल्व दृश्यते तदपि लेखकादिप्रमादविलसित प्रतिभाति। विष पलद्वादशभाग युक्तमित्यत्र द्वादशाना पूर्णो द्वादश इति पूर्णप्रत्ययान्त स चासौ भाग श्चेति कर्मधारयात्पलस्य द्वादशो भाग इति समासो बोध्यस्तेन नियमति रसाना प्रत्येक पट् पणापका भवन्तीति।

भाषा—इमलीकाक्षार और पांचोंनमक १–१ पल लेकर कागज़ीनीबूकेरसमें घोलदे और एकपल शङ्खको गरमकरके ७ बार बुझावे। इसकेबाद त्रिकटु १ पल, बच और भुनीहींग २–२ कर्ष, शुद्ध बच्छनाग, पारा और गन्धक १२–१२ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पूर्वक्षारमें मिलाकर ४–५ दिनतक घोटकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सब प्रकारके अजीर्ण, उदररोग, शूल, हैजा, मन्दाग्नि, गुल्म इन सबको यह नष्टकरतीहै॥ ३२॥

३३ शङ्खवटी (वृहती) (द्वितीया)

दग्धशङ्खस्य चूर्णं स्यात्तथा लवणपञ्चकम्।
तिन्तिडीक्षारकञ्चैव कटुकत्रयमेव च॥ २१४॥
तथैव हिङ्गुकं ग्राह्यं विषं पारदगन्धकौ।
अपामार्गस्य वह्नेश्च क्वाथैर्निम्बुकजैर्द्रवैः॥ २१५॥
भावयेत्सर्वचूर्णं तदम्लवर्गैर्विशेषतः।
यावत्तदम्लतां याति गुटिकाऽमृतकल्पिणी॥ २१६॥
सद्यो वह्निकरी चैव भस्मकं नाशयेत्खलु।
भुक्त्वाऽऽकण्ठं तु तस्यान्ते खादेच्च गुटिकामिमाम्॥
तत्क्षणाज्जारयत्याशु पुनर्भोजनमिच्छति।
हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम्॥ २१८॥
गुल्माख्यं पाण्डुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरोचकम्।
शूलञ्च परिणामोत्थं प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम्॥
वक्त्रस्रावञ्च शोथञ्च दुर्नामानि विशेषतः॥ २१९॥

र. च, र. सं, र. सु, र. क, भै. र, र. का, अग्निमान्द्ये। र सु, भै र. एतयोर्द्वौ पाठौ प्रमादात्त्रिखितौ।

भाषा—शङ्खभस्म, पांचोंनमक, इमलीकाक्षार, त्रिकटु, भुनीहींग, शुद्धबच्छनाग, पारा और गन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अपामार्ग तथा चित्रकके क्वाथ और नीबूके रसमें मर्दनकर देखे, यदि खटाई अच्छीतरह न आईहो तो २–३ नीबुओंकीभावना और देकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खानेसे कण्ठतकभरपेट कियेहुए भोजनको तत्क्षण जारणकर फिरसे भोजनकीइच्छाको उत्पन्नकरतीहै। उचितानुपानकेसाथलेनेसे वात,

पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, पाण्डु, निद्रा, आलस्य, अरुचि, परिणामशूल, प्रमेह, प्लीही, लालास्राव, शोथ, बवासीर येसब नष्टहोतेहैं ॥ ३३ ॥

३४ शङ्खवटी (तृतीया)

सार्द्धं कर्षं रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।
विषं कर्षत्रयं दद्यात्सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥ २२० ॥
दग्धशङ्खश्च तत्तुल्यं पञ्चकर्षाश्च नागरात् ।
स्वर्जिका रामठकणे सिन्धु सौवर्चलं विडम् ॥२२१॥
सामुद्रमौद्भिदश्चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ॥
वह्निमान्द्यकृतान्रोगान्सामदोषं विनाशयेत् ॥ २२२ ॥

र च, र स, र क, अग्निमान्द्ये । र क. द्वौ पाठौ गृहीतौ तत्प्रमादाल्लिखितमिति प्रतिभाति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक डेढ १॥ कर्ष, शुद्धबछनाग ३ कर्ष, मरिच और शङ्खभस्म ६–६ कर्ष, सोंठ, सज्जी, भुनी हींग, पीपल, सेंधव, सचल, विड, सामुद्र और खारीनमक ५–५ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर नींबूकेरसकी ६–७ भावनाए देकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि और आमवात इनसबको नष्टकर यह अग्निको प्रदीप्तकरतीहै ३४

३५ शङ्खवटी (चतुर्थी)

चिञ्चावल्कलभूतिः पञ्चपला लवणं तावत् ।
निम्बुरसेन च कल्कं तप्तं शङ्खं निषेचयेत्तत्र ॥ २२३ ॥
त्रिकटुकरामठसहितं पलांशकं मर्दयेद्दिनं सम्यक् ।
कर्षमितौ रसगन्धौ विषञ्च भृङ्गाम्बुना विमर्द्यैतत् ॥
सम्मिश्रय्य च सर्वं सम्यङ् निम्बाम्बुना पुनर्मर्द्यम् ।
बदरास्थिमिता वटिका मान्द्याऽजीर्णं
विसूचिकां तीव्राम् ॥ २२४ ॥
शूलाऽऽध्मानोदरजान्व्याधीन्सर्वाञ्जयति वातकृतान् ।
शङ्खाभिधानी गदिता कृपीरसानृपांशविषसंयुक्ता ॥

र, र पा, चि सा, यो चि, र बो, रसायनप, अग्निमान्द्ये।

टि०—चिकित्सासारे हिङ्ग्वादिचूर्णमिति नाम । बो चि भावना न दृश्यते । अस्य योगस्य प्रथमयोगेन समानतायामपि न तदन्तर्भवति प्रमाणे महदन्तरत्वात् ।

भाषा—इमलीकाक्षार और पाचोंनमक ५–५ पल लेकर बराबरके नीबूकेरसमें मिलाकर ५ पल शङ्खको गरमकरके बुझावे शङ्खका चूराहोजानेपर त्रिकटु और भुनीहींग १–१ पल देकर एकदिन मर्दनकर शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग १–१ कर्षकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकरे फिर पूर्वयोगमें मिलाय १–२ दिन नीबूकेरसमें घोटकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, हैजा, शूल, आध्मान, उदर और वातरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसमें कितनेहीलोग सोलहवा हिस्सा रससिन्दूर और बछनाग डालतेहैं

३६ शङ्खवटी (पञ्चमी)

चिञ्चाऽश्वत्थस्नुहीक्षारादपामार्गार्कतस्तथा ।
क्षाराणि पञ्च सङ्गृह्य ततो लवणपञ्चकम् ॥ २२७ ॥
सैन्धवादिसमादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।
कर्षं कर्षं विषं गन्धं रसं टङ्कणकन्तथा ॥ २२८ ॥
हिङ्गुपिप्पलिशुण्ठीनां तथा मरिचजीरयोः ।
द्वौद्वौ कर्षौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णत. ॥ २२९ ॥
फलत्रयाच्च कर्षैकं द्विकर्षन्तु लवङ्गतः ।
एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥ २३० ॥
भावयेदम्लयोगेन सप्तधा तु प्रयत्नतः ।
रसः शङ्खवटीनाम्ना सेवितः सर्वरोगजित् ॥ २३१ ॥
गुञ्जामात्रमिदं खादेद्वह्नेर्दीपनपाचनम् ।
अजीर्णं वातसम्भूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा ॥
विसूची शूलमानाहं हन्यादत्र न संशय. ॥ २३२ ॥

टो, र सु, यो र, वृ यो त, र का, वै चि, व रा, यो. त, नि र, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—इमली, पीपल, थूहर, अपामार्ग और आकके क्षार, पाचोंनमक १–२ पल, शुद्धबछनाग, गन्धक, पारा और सुहागा १–१ कर्ष, भुनीहींग, पीपल, सोंठ, मरिच, जीरा और शङ्खभस्म २–२ कर्ष, त्रिफला १ कर्ष, लौंग २ कर्ष, लेकर सबका बारीकचूर्णकर बिजौरे वगैरहके रससे सातभावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ लेनेसे वातज, पित्तश्लेष्मज अजीर्ण, हैजा, शूल और आनाहप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ३६ ॥

३७ शङ्खवटी (षष्ठी)

द्वौ क्षारौ रसगन्धकौ सलवणौ व्योषञ्च तुल्यं विषं,
चिञ्चाभस्म चतुर्गुणं रसवरे लिम्पाकजाते कृतम् ।
वारम्वारमिदं सुपाकचरितं लोहं क्षिपेद्धिङ्गुकं,
भृष्टं शङ्खसमं समुन्नितमिदं गुञ्जाप्रमाणा भवेत् ॥२३३॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलान्तकृत्पाचनी,
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी ।
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयच्छेदिनी,
सर्वव्याधिविनाशिनी कृमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी२३४

र सु, र क, भै र., र कर, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—यवक्षार, सज्जी, शुद्धपारा, गन्धक, सेंधानमक, त्रिकटु और बछनाग १–१ भाग, अमिलतासकेरसमें बनाया हुआ इमलीकाक्षार ३६ भाग, पाचकद्रव्योंमेंकीहुईलोहभस्म और भुनीहींग १–१ भाग, शङ्खभस्म सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर बिजौरेवगैरहकेरससे ६–७ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, अजीर्ण, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि, वातव्याधि, उदररोग, प्यास, क्रिमि, बवासीर, इनसबको नष्टकर अग्निको अत्यन्त प्रदीप्तकरतीहै ॥ ३७ ॥

३८ शङ्खवटी (महती) (सप्तमी)

कणामूलं वह्निदन्त्यौ पारदं गन्धकं कणा ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं मरिचं नागरं विषम् ॥ २३५ ॥
अजमोदाऽमृता हिङ्गु क्षारं तिन्तिडिकाभवम् ।
सञ्चूर्ण्य समभागन्तु द्विगुणं शङ्खभस्मकम् ॥ २३६ ॥
अम्लद्रवेण सम्भाव्य वटी कोलास्थिसम्मिता ।
अम्लदाडिमतोयेन लिम्पाकस्वरसेन च ॥ २३७ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय नाम्ना शङ्खवटी शुभा ।
तक्रमस्तुसुरासीधुकाञ्जिकोष्णोदकेन वा ॥ २३८ ॥
शशैणादिरसेनैव रसेन विविधेन च ।
मन्दाग्निं दीपयत्याशु वडवाग्निसमप्रभम् ॥ २३९ ॥
अर्शांसि ग्रहणीरोगं कुष्ठमेहभगन्दरम् ।
प्लीहानमश्मरीं श्वासं कासं महोदरक्रिमीन् ॥ २४० ॥
हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च विबन्धानुदरे स्थितान् ।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४१ ॥

भै. र., र.सु , वै. क , र. का., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—पीपल, चित्रक और दन्तीकेमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, पीपल, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पांचोंनमक, मरिच, सोंठ, शुद्धवच्छनाग, अजमोद, गिलोय, भुनीहींग, इमलीकाक्षार येसब समभाग और शङ्खभस्म सबसे दूनी लेकर सबका बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबूकेरसकी ६–७ भावनाएं देकर बेरकी गुठलीकेबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खट्टे अनार अथवा अमिलतास केरस, छाछ, दहीकापानी, मद्य, ताड़ी, काञ्जी, गरमजल, खरगोश और हरिण वगैरहका मांसरस इत्यादि अनुपानोंकेसाथ औचित्यदेखकर देनेसे मन्दाग्नि, बवासीर, संग्रहणी, कुष्ठ, प्रमेह, भगन्दर, प्लीहा, पथरी, श्वास, कास, जलोदर, क्रिमि, हृद्रोग, पाण्डु, विबन्ध इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ३८ ॥

३९ शङ्खवटी (अष्टमी)

चिञ्चाक्षारं स्नुहीक्षारमर्कक्षारं पलंपलम् ।
त्रिपलं शङ्खभूतिञ्च रामठञ्च पलार्द्धकम् ॥ २४२ ॥
लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत् ।
व्योषद्वयं पलार्द्धञ्च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २४३ ॥
जम्बीरफलमेर्मर्द्यमनलस्य दिनत्रयम् ।
भृङ्गराजस्य निर्गुण्डीमुण्डयोश्चैव द्रवैः पृथक् ॥२४४॥
आर्द्रकस्वरसेनैव प्रत्येकं मर्दयेद्दिनम् ।
बदरीमज्जसमाकारान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २४५ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चगुल्मान्व्यपोहति ।
सर्वशूलं निहन्त्याशु सर्जीर्णञ्च विसूचिकाम् ॥२४६ ॥
मन्दाग्नि नाशयत्याशं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम् ।
इयं शङ्खवटीनाम ग्रहणीगजकेसरी ॥ २४७ ॥

भै. वि , यो. र , चि. सा., गुल्म ।

भाषा—इमली, थूहर और आक्केक्षार १–१ पल, शङ्खभस्म ३ पल, भुनीहींग २ कर्ष, पांचोंनमक १–१ पल, सज्जी और यवक्षार २–२ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर जंभीरी और चित्रकके रसोंसे ३–३ दिन, तथा भंगरा, संभालू, गोरख-मुण्डी और अदरखकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर बेरकी गुठलीके-बराबर गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रात-काल उचितानुपानकेसाथलेनेसे पांचप्रकारकेगुल्म, समस्तशूल, अजीर्ण, हैज़ा, मन्दाग्निप्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै । तेल और खटाईको छोड़कर सबचीज़े पथ्यहैं ॥ ३९ ॥

४० शङ्खवटी (नवमी)

शङ्खं सप्तदिनानि निम्बुकरसे निर्वाप्य तत्तं पलं,
द्वन्द्वं चिञ्चिणिभूतितः पलमितः सार्धञ्च सौवर्चलात् ।
सिन्धुः स्याच्च पलं समुद्रलवणात्काचाद्विडाच्चैकतो,
गद्याणास्त्रिकटौ नव द्विगुणिताः संयोजयेद्यतः२४८
अष्टौ रामठगन्धयो र्मिलितयो र्गद्याणकाः पारदा,
श्चत्वारोऽत्र विषस्य पञ्च कथिताः कोलास्थिमानाकृता
एषा शङ्खवटी निहन्ति पवनं शूलान्यजीर्णामयं,
मन्दाग्नित्वमरोचकञ्च शमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राण्यपि २४९

र.कौ., टो., वृ यो. त., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शंखखण्डको नीबूकेरसमें दीर्णावधि गरमकरकरके बुझावे और ७ दिनतक इसीतरह पड़ारहनेदे । फिर इमलीका-क्षार १ पल, संचल १॥ पल, सेंधव, सामुद्र, काच और विड-नमक १–१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल ३–३ तोले, भुनीहींग, शुद्ध गन्धक और पारा २–२ तोले, शुद्धवच्छनाग २॥ तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिन नीबूकेरसमें घोटकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे वायुरोग, शूल, अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४० ॥

४१ शङ्खवटी (दशमी)

स्नुह्यर्कचिञ्चाऽपामार्गरम्भातिलपलाशजान् ।
क्षारांश्च भिषगादद्यात्प्रत्येकं कर्षमात्रया ॥ २५० ॥
लवणानि पृथक् पञ्च ग्राह्याणि पलमात्रया ।
स्वर्जिका च यवक्षारं टङ्कणत्रितयं पलम् ॥ २५१ ॥
सर्वमेतत्समादाय सूक्ष्मचूर्णं विधाय च ।
निम्बुफलरसे प्रस्थसम्मिते तत्परिक्षिपेत् ॥ २५२ ॥
तत्र शङ्खस्य शकलं पलं वह्नौ प्रताप्य तु ।
वारान्निर्वापयेत्तावत् सर्वं द्रवति तद्यथा ॥ २५३ ॥
नागरं त्रिपलं ग्राह्यं मरिचञ्च पलद्वयम् ।
पिप्पली पलमाना स्यात्पलार्द्धं भृष्टहिङ्गुकम् ॥२५४॥
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चापि यवानी जीरकं तथा ।
जातीफलं लवङ्गञ्च पृथक्कर्षद्वयोन्मितम् ॥ २५५ ॥

रसो गन्धो विषञ्चाऽपि टङ्कणञ्च मनःशिला।
एतानि कर्षमात्राणि सर्वं सञ्चूर्ण्य मिश्रयेत् ॥२५६॥
शरावार्द्धेन चुक्रेण सर्वान् वटिकाञ्चरेत्।
माषप्रमाणा सा वैद्यै वृहच्छङ्खवटी स्मृता ॥ २५७ ॥
सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी।
विसूच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशिनी ॥ २५८ ॥

भा. प्र., र. सु., नि. र., र. क. ल., र. रा., यो. म., अग्निमान्द्ये।

भाषा—थूहर, आक, इमली, अपामार्ग, केला, तिल, पलाश इनकेक्षार १-१ कर्ष, पांचोंनमक १-१ पल, सज्जी, यवक्षार, भुनासुहागा ३-३ पल लेकर सबकाबारीकचूर्णकर १६ पल नीबूकेरसमें घोलकर रखले और एकपल शङ्खको गरमकरके इसद्रवमें ७ बार बुझावे। फिर सोंठ ३ पल, मरिच २ पल, पीपल १ पल, भुनीहींग, दालचिनी, चित्रक, अजवाइन, जीरा, जायफल, लवङ्ग २-२ कर्ष, शुद्धपारा, गन्धक, बच्छनाग, सुहागा और मैनसिल १-१ पल, चुक ८ पल लेकर पारेगन्धककी कज्जलीसहित सबका बारीकचूर्णकर पूर्वद्रवमें मिलाय १-२ दिन घोटकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे सबप्रकारके अजीर्ण, शूल, हैज़ा और अलसकप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१ ॥

४२ शङ्खवटी (एकादशी)

शुद्धगन्धरसौ तुल्यौ द्वयोस्तुल्यं विषं भवेत्।
रामठं मरिचञ्चैव प्रत्येकं सर्वतुल्यकम् ॥ २५९ ॥
प्रत्येकं पञ्चतुल्यानि कणाविश्वाह्वयानि च।
शङ्खोऽर्थं स्वर्जिका पञ्च सर्वाण्यम्ले विभावयेत् ॥२६०॥
यावदत्यम्लमेतत्स्यात्ततो मात्रां प्रयोजयेत्।
सर्वाजीर्णहरी चेयं नाम्ना शङ्खवटी शुभा ॥ २६१ ॥
शूलार्शोग्रहणीगुल्मोदावर्तकहृद्ग्रहान्।
आनाहाष्ठीलिके हन्ति कान्तिवीर्यविवर्धिनी ॥२६२॥

र. क., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, शुद्धबच्छनाग २ भा., भुनीहींग और मरिच ४-४ भाग, पीपल और सोंठ १२-१२ भा., शङ्खभस्म और सज्जी ५-५ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर नीबूकेरसकी ६-७ भावनाएं देकर बेरकीगुठली-केबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके अजीर्ण, शूल, बवासीर, ग्रहणी, गुल्म, उदावर्त, हृदयकाजकड़ना, आनाह, अष्ठीला प्रभृति समस्तरोगोंको दूरकर कान्ति और अग्निको बढ़ातीहै ४२

४३ शङ्खसुन्दररसः

रसगन्धकयो र्भागं द्वौ भागौ तालताप्ययोः।
लोहखर्परयोस्त्रिस्त्रि र्भागास्ताप्यात्तथा त्वयम् ॥२६३॥
पञ्चांशो गगनं पिष्ट्वा रसैस्त्रिस्त्रि र्विभावयेत्।
जम्भचित्रककन्यानां विजयाधत्तूर्णयोः पृथक् ॥२६४॥
वृश्चिकायाश्च तं गोलं कृत्वा जम्भाम्भसा क्षणम्।
मर्दितेन च शङ्खेन सर्वतुल्येन वेष्टयेत् ॥ २६५ ॥
शिराता मृत्पटे लिप्त्वा पचेल्लवणयन्त्रके।
षड्यामं स्वाङ्गशीतन्तु समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ॥ २६६ ॥
अर्कांशं सैन्धवं सूताद्द्विगुणितं क्षिपेत्।
पुनर्जम्भाम्भसा भाव्यः सिद्धः स्याच्छङ्खसुन्दरः२६७
गुञ्जात्रयमितं शूले ग्रहण्यर्शोऽतिसारकम्।
जीर्णज्वरारुचिप्लीहकासश्वासक्षयादिषु ॥ २६८ ॥
निजानुपानैः क्षौद्रेण पिप्पलीभिः प्रदापयेत्।
जातीफलेन मान्द्यादौ विसूच्यादौ प्रदापयेत् ॥२६९॥
गर्भिण्याः शूलविष्टम्भज्वरेष्वतिसृतौ तथा।
ताम्बूलवल्लीपत्रेण पश्चाच्छागजलेन च ॥ २७० ॥

र. क., शूलादिरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, हरिताल और ताम्रभस्म २-२ भाग, लोह और खर्परभस्म ३-३ भा., सुवर्णमाक्षिक १ भा., अभ्रकभस्म ५ भाग लेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर जंभीरी, चित्रक, घीकुंवार, भांग और धतूरेकेरसोंसे ३-३ भावनाएं देकर बिछुआकेरससे एकदिन मर्दनकर गोला बनावे। फिर जंभीरीकेरससे मर्दनकियेहुए सबकीबराबरशङ्खके शङ्खका लेपदेकर ३० कपरमिट्टीदेकर सुखाकर ६ पहरकी लवणयन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १२ वां हिस्सा सेंधानमक और पारेसेदूना शुद्धबच्छनाग डालकर जंभीरी-केरससे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, ग्रहणी, बवासीर, अतिसार, जीर्णज्वर, अरुचि, तिल्ली, कास, श्वास और क्षयप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै। सामा-न्यतः मधु और पीपलकेसाथदेवे। मन्दाग्नि और हैजेमें जायफलकेसाथ तथा गर्भिणीकेशूल, विष्टम्भ, ज्वर और अति-सारमें पानकेसाथ देकर थोड़ासा बकरीकामूत्र पिलावे ॥ ४३ ॥

४४ शङ्खामृतरसः

शुद्धं शङ्खभवं सुचूर्णममलं शाणाष्टकं सम्भृतं,
तस्यार्द्धं रसभस्म तद्द्वयमिदं चूर्णीकृतं युक्तितः।
माषार्धं मधुना विलोडितमथो यात्माऽमृतापर्पटं,
व्यावर्त्यप्रशमनमुग्रपीतमभ्रपूर्णं सकामं क्षयम् ॥
एतद्धा नितरां ज्वरातिमरणं मूत्रातिसारं वमिं,
दुर्वारां ग्रहणीं निहन्ति सकलं मेदः प्रमेहं दृढान् ॥२७१

यो. म., ज्वरातिसारे।

भाषा—शङ्खभस्म २ कर्ष, पारदभस्म १ कर्ष मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेकर ऊपरसे, गिलोय, पित्तपापड़ा और अडूसेकाक्वाथ बारम्बार पिला-नेसे भ्रम, कास, क्षय, ज्वरातिसार, मूत्रातिसार, वमन, दुस्साध्यग्रहणी, मेदोवृद्धि और प्रमेह इनसबको यह दूर निवारणकरताहै ॥ ४४ ॥

४५ शङ्खेश्वररसः

शङ्खस्य वलयान्निष्कं चतुर्निष्कं वराटकम्।
निष्कार्द्धं नीलतुत्थस्य सर्वतुल्यन्तु गन्धकम् ॥२७२॥
गन्धतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम्।
टङ्कणं रसतुल्यं स्यान्मर्द्यं पाच्यं मृगाङ्कवत् ॥
राजयक्ष्महरः सोऽयं नाम्ना शङ्खेश्वरो रसः ॥२७३॥

र.र.स., ना.वि., र.चं., नि.र., र.को., र.र., र.का., यो.म., वै.चि., र.क.ल., क्षयरोगे।

टि०—योगमहार्णवे केवल दग्धशङ्ख मधुना लीढ्वा रात्रौ भर्जित विजया देया इत्यस्य शङ्खेश्वरनाम स्थापितम्, फलभागे च दुर्वारामपि ग्रहणीं जयेदित्युक्तम्।

भाषा—शङ्खनाभिभस्म ४ मासे, पीलीकौड़ीभस्म १ कर्ष, तूतिया २ मासे, शुद्धगन्धक, नाग और पारदभस्म तथा सुहागा प्रत्येकसबकीबराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर बकरी अथवा गायके दूधमें १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसको प्रथम मृगाङ्ककी तरह देकर उसीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको दूरकरताहै॥

४६ शङ्खोदररसः (प्रथमः)

सूतभस्म बलिर्लौहं विषं त्रिकटुकं समम्।
पिष्ट्वा निम्बुजतोयेन शङ्खे सर्वं चतुर्गुणे ॥ २७४ ॥
क्षिप्त्वा मृद्गुटके लिप्त्वा भाण्डे गजपुटे पचेत्।
शीते प्राग्वद्विषं क्षिप्त्वा वल्लमात्रं प्रयोजयेत्॥२७५॥
जातीफलञ्च विजया मधुनाऽतिसृतौ ददेत्।
ग्रहण्यां चित्रकार्द्राम्बु विजया विश्वभेषजम् ॥ २७६॥
पृथग्देयं समधुना मरिचैश्च घृतान्वितम्।
वह्निमान्द्यक्षये तद्वदुदरात्यनिलामये ॥
पथ्यं दध्ना च तक्रेण क्षीरशाकैश्च संयुतम् ॥ २७७ ॥

नि. र., र. सु., टो., र. पा. अतिसारे।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, लोहभस्म, शुद्ध बछनाग और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर नीबूकेरसमें १–२ दिन मर्दनकर सबसे चौगुने शङ्खमें भरकर बकरीकेदूधमें पीसेहुए सुहागेसे मुंहबन्दकर शरावसम्पुटमें रख ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर षोडशांश शुद्धबछनागमिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती जायफल, भांग और मधुकेसाथ देनेसे यह अतिसारको दूरकरताहै। चित्रक और अदरखकेरस अथवा भांग और सोंठ, अथवा मधु, मरिच और घी इन अनुपानोंकेसाथ औचिती देखकर देनेसे अतिसार, ग्रहणी, मन्दाग्नि, क्षय, उदर और वातरोग येसब नष्टहोतेहैं। दही, छाछ, दूध और शाकोंकेसाथ औचिती देखकर पथ्यदेवे ॥ ४६ ॥

४७ शङ्खोदररसः (द्वितीयः)

जयार्कधूर्तजैः सूतं गन्धं मर्द्य पृथग्दिनम्।
भूत्वा शङ्खोदरं देयं पुटं पोट्टलिकाक्रमात् ॥ २७८ ॥
तथापि योजयेन्मान्द्ये शूले वा ग्रहणीगदे।
विश्वेश्वर इति ख्यातो वाताधिक्यरुजापहः ॥२७९॥
रसगन्धकभागैकं शम्बूकाश्चाष्टभागिकाः।
जयादिमर्दयेद्द्रावैः पुटेत्पूर्वक्रमेण च ॥ २८० ॥
शम्बूकस्य भवेत्स्थाने समुद्रशुक्तिरुत्तमा।
कपर्दशङ्खयुक्तो वा रसोऽयं चतुराननः ॥ २८१ ॥

र.शि., अग्निमान्द्यादौ।

टि०—रसगन्धकाभ्यां शङ्खोऽष्टगुणो योज्य.।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकको भांग, आकदूध और धतूरेकेरसमें १–१ दिन दोनोंको अलग २ मर्दनकर इनसे अठगुनी शङ्खनाभिपर लेपदेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर एकदिनरातकी आंचदे। अथवा अठगुनेघोंघे अथवा मोतीकीसीप या कौड़ीमें भरके आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, शूल, ग्रहणी इनको यह नष्टकरताहै। विशेषकर वातप्रधानरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४७ ॥

४८ शङ्खोदररसः (तृतीयः)

कम्बो र्भस्म चतुष्कर्षं कर्षैकमहिफेनकम्।
जातीफलं टङ्कणञ्च कर्षकर्षं नियोजयेत् ॥ २८२ ॥
चूर्णीकृत्य ततश्चाऽस्य गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत्।
नवनीतेन साकं हि रक्तातीसारहृत्परम् ॥ २८३ ॥
गुदाङ्कुरोद्भवं रक्तमामरक्तं नियच्छति।
कृच्छ्रसाध्यमतीसारं विविधं शूलमुल्बणम् ॥ २८४ ॥
शमयत्यतिवेगेन रसः शङ्खोदराह्वयः।
गुडबिल्वकषायेण शूलं पक्वाशयोत्थितम् ॥
आमं पाचयते सद्यः सर्वातिसृतिकृन्तनः ॥ २८५ ॥

रसायनसं., यो. र., अतिसारे।

भाषा—शङ्खभस्म ४ कर्ष, अफीम, जायफल, भुनासुहागा १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर १–१ रत्तीकीमात्रादेनेसे रक्तातिसार, रक्तार्श, आम, कृच्छ्रसाध्य अतिसार, नानातरहका उत्कटशूल इनसबको यह नष्टकरताहै। गुड़ और बेलकेकाढ़ेसे पक्वाशयकेशूलको नष्टकरताहै और आमको पचाताहै ॥ ४८ ॥

४९ शङ्खोदररसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं गन्धकं च समांशं
चित्रोन्मत्ते मर्दयेद्वासरैकम्।
गोलं कृत्वा शङ्खमध्ये निधाय
भाण्डे स्थाप्यं मुद्रितव्यं प्रयत्नात् ॥ २८६ ॥
तस्याऽधस्तादष्टयामं प्रकुर्या-
दग्निं शीते कर्षमात्रं विषं हि।
घृष्ट्वा घर्मे भावनाश्चाऽत्र तिस्रो
दद्यात्तद्वत्कन्यकाया रसेन ॥ २८७ ॥
वल्लं योज्यं जीरकेणाऽथ भृङ्गया
क्षौद्रे युक्तं भक्षितञ्च ग्रहण्याम्।

श्वासे शूले चानिले श्लेष्मजे वा
कासेऽर्शःसु विड्ग्रहे चातिसारे ॥ २८८ ॥

र. प्र सु , र. म मा., र श , र., र बो., र क. यो , र पा , श्वासाऽधिकारे । र. (भा), रस स. एतयोर्ग्रहणीकपाट इति नाम ग्रहण्यधिकारे ।

टि०—रसावतारे अग्निदानादनन्तर निजयारसेन परिमृद्य मृताष्टमांश विष नियुज्य विजयाधूर्तभूधात्रीकुटजातिविषामुस्ताजीरकार्द्रकस्तूरीहीबेरकाथैस्तिस्रो भावना प्रदत्ता । मुस्ताक्काथेनाऽतिविषाम धुम्या वा दध्ना वा कुरण्डेन वा विनयादधिम्या अतिसारप्रविविधे पुटपाके वा नियोज्य इति विशेषोद्दरयते । रसदीपिकायां रक्षामणिनाम्ना एक पाठोऽस्ति यथा—"सूत सुगन्ध बदरीनयार्कनीरैर्निमर्थ्यकदिन ततश्च । आपूर्य शङ्ख परिवेष्ट्य सम्यक् शुष्कन्तु भाण्डोदरमध्यसस्थम् ॥ पुटेत स पोट्टलिकाभिधान ददीत वातप्रचुरे गदेऽस्मिन् । त्रैलोक्यरक्षामणिरेष सूत शूलाग्निमान्द्येऽपि च योजनीय । मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन विरेचने जीरकयुग्ममिश्रम् ॥ इति" अस्याप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय, भावनास्तु ग्रहीतव्या एव तदनुष्ठाने क्षत्यभाव । प्रकृतपाठे शङ्खप्रमाण नास्ति तत्तु स्वबुद्धया कल्पनीय चतुर्गुण वा स्यादष्टगुण वा षोडशगुण वा नियोजनीयम् ।"सूत गन्ध शुद्धशङ्खेन तुल्य घर्षेयाम वह्निधत्तूरनीरै । शुष्क कृत्वा ताम्रचक्रेण बद्धा चूर्णं कृत्वा भावयेदार्द्रकेण ॥ दत्त्वा सूत चाम्रुत पादभाग लौहपात्रे पाचयेद्वह्निनीरै । यामार्द्धार्द्धं मोहिनीशिग्रुनीरैर्वह्न दद्यादाज्यमारीचयुक्तम् । वीर्यं पुष्टिं दीपन धातुदाने कुर्यात्रास शङ्खपाणीरसेन्द्र ॥" इति च पाठो रसदीपिकायां समागत । एषु त्रिषु विशेषविशेषाऽभावात् एकस्मिन्नेव योगेऽन्तर्भावनीया । विभिन्नपाठ स्थापने त्वावत्रा बुद्धिर्व्यामोहात् ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली-कर चित्रक और धतूरेकेरसोसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय चतुर्गुणित शङ्खमेंभरके ताँबे अथवा लोहेकेपत्र अथवा ठीकरेसे मुहबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर नमक, वालुका अथवा भस्मयन्त्रमें रखकर ८ पहरकी तीक्ष्णअग्निदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर एककर्ष शुद्धवछनाग डालकर घीकुवार केरसकी कड़ीधूपमें तीनभावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जीरा, भगरा अथवा मधुकेसाथ देनेसे ग्रहणी, श्वास, वातशूल, कफशूल, कास, बवासीर, विड्ग्रह अथवा अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥४९॥

५० शङ्खोदररसः (पञ्चमः)

रसगन्धाभ्रकुनटीतालताप्यार्कहिङ्गुलम् ।
अयोहेमरजस्तुल्यं कलांशा शङ्खभस्मन• ॥ २८९ ॥
अयं शङ्खोदरो नाम्ना वल्लमात्रं नियोजयेत् ।
कणाक्षौद्रयुतश्चाऽयं सर्वरोगनिवर्हणं ॥ २९० ॥

र श , सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्धमैन सिल, हरिताल और सोनामाखी, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरफ, लोह और सुवर्णभस्म १–१ भाग, शङ्खभस्म १६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इनमेंसे ३–३ रत्ती पीपल और मधुकसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५० ॥

५१ शङ्खोदररसः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागैकं ताम्रभस्मांशकद्वयम् ।
भागत्रयं गन्धकस्य मृतलोहांशकद्वयम् ॥ २९१ ॥
चतुर्गुणं माक्षिकस्य व्योमभस्मांशपञ्चकम् ।
शिलैकांशं प्रगृह्णीयाद्भागौ द्वौ तालकस्य च ॥२९२॥
विशुद्धखर्परांशांस्त्रीन्सर्वं मर्दय खल्वके ।
निम्बार्द्रकाग्निधत्तूरविजयाकनकद्रवे. ॥ २९३ ॥
पृथग्विभावयेदेतैः शोषयेदातपे खरे ।
सर्वौषधादष्टगुणे शुद्धे शङ्खोदरे क्षिपेत् ॥ २९४ ॥
शङ्खोदरं शङ्खनाभिचूर्णेनान्येन लेपयेत् ।
आरण्योत्पलभस्मानि लोहितेष्टकचूर्णकम् ॥ २९५ ॥
सामुद्रलवणं मृत्स्ना तुल्यमेकत्र कारयेत् ।
दद्याच्च कर्पटैर्लेपांस्त्रीश्च शुष्कान् पृथक्पृथक् ॥२९६॥
शुष्कं विदध्याल्लवणापूर्णभाण्डोदरे क्षिपेत् ।
निरुद्ध्य पुटके सर्वं स्थापयेच्चुल्लिकोपरि ॥ २९७ ॥
यामद्वयं ददेदग्निं ज्वालयेदथ मध्यमम् ।
यामद्वयं ततो मन्दं मन्दं यामद्वयं पुन. ॥ २९८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य लघु नि सारयेन्मृदम् ।
सरसं मर्दयेच्छङ्खं कलाशायिविषमिश्रितम् ॥ २९९ ॥
त्रिर्भावयेत्त्रिकटुना त्रिरर्ककरसेन च ।
शुष्क. सिद्ध्यति सूतोऽयं रसः शङ्खोदराभिध. ३०० ॥
गुञ्जाद्वयमितं दद्यात्पिप्पलीमधुसंयुतम् ।
कासे श्वासे क्षये जीर्णे ज्वरे च मरिचै. सह ॥ ३०१ ॥
सघृतैस्त्वग्निमान्द्ये च विसूच्यामगरेषु च ।
शोफे पाण्डावजामूत्रै यथास्वं पाण्डुरोगिणि ॥
ग्रहण्यर्शःसु यातेषु विजयाचूर्णसंयुतम् ॥ ३०२ ॥

र श , र का , र बो , वा, ग्रहण्यतिसारयो । वाहटेऽस्य पाठो भ्रष्टता नीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, ताम्रभस्म २ भा , शुद्धगन्धक ३ भा., लोहभस्म २ भा , सुवर्णमाक्षिक ४ भा , अभ्रकभस्म ५ भा , शुद्धमैनसिल १ भा , हरितालभस्म अथवा रसमा-णिक्य २ भा , शुद्धखपरिया ३ भाग लेकर सबकीनीलवर्ण कज्जलीकर नीबु, अदरख, चित्रक, धतूरा, भाग, धतूरा इनके स्वरसोंसे कड़ीधूपमें १–१ भावना देकर गोलाबनाय अठगुने शङ्खमेंभरके शङ्खनाभिको बकरी अथवा गायकेदूधमें पीसकर मुहबन्दकर अङ्गलीकण्डोंकीराख, लालईंट, समुद्रनमक, लालमिट्टी सबसमभागको पीस इससे ३ कपड़मिट्टी सुखासुखाकरदे । अच्छीतरह सुखनेपर लवणयन्त्रमें रखकर मुंहनन्दकर चूल्हेपर चढ़ाय दोपहर मध्यमाग्नि देकर दोपहर मन्द आच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मिट्टीको दूरकर १६ वां हिस्सा शुद्धवछ नाग मिलाकर त्रिकटु और धतूरेकेरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ देनेसे काश, श्वास और क्षय तथा

मरिच और घीकेसाथदेनेसे जीर्णज्वर नष्टहोताहै । मन्दाग्नि, हैजा, आम, गर और शोथमें यथोचित देखकर दवे । वकरी बेमूत्रकेसाथदेनेसे पाण्डुरोग, भागकेसाथदेनेसे ग्रहणी और वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५१ ॥

५२ शठ्यादिलोहम्

शटीपुष्करमूलानां चूर्णमामलकस्य च ।
मधुना संयुतं लेह्यं चूर्णं वा काललोहजम् ॥ ३०३ ॥

च स., हिक्काश्वासयो ।

भाषा—कचूर, पोहकरमूल, आवले, फोलादभस्म येसब समभाग लेकर १-१ माशेकीमात्रा मधुकेसाथलेनेसे हिका और श्वास नष्टहोतेहैं ॥ ५२ ॥

५३ शतमूलादिलोहम्

शतमूलीसिताधान्यनागकेसरचन्दनैः ।
त्रिकनयतिलैर्युक्तं लोहं सर्वगदापहम् ॥
तृष्णादाहज्वरच्छर्दिरक्तपित्तहरं परम् ॥ ३०४ ॥

भै र.,र च ,ध ,र सु ,र.सं , वै.क.,रक्तपित्ताऽधिकारे।

भाषा—शतावर, शक्कर, धनिया, नागकेशर, सफेदचन्दन, त्रिफला, त्रिकुटु, त्रिमद, और तिल सबसमभागलेकर सबकी बराबर लोहभस्ममिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्यास, दाह, ज्वर, वमन, रक्तपित्त, येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५३ ॥

५४ शतावरीमण्डूरम् (प्रथमम्)

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरस्य पलाष्टकम् ।
शतावरीरसस्याऽष्टौ दध्नश्च पयसस्तथा ॥ ३०५ ॥
पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिषः ।
विपचेत्सर्वमेकस्थं यावत्पिण्डत्वमाप्नुयात् ॥ ३०६ ॥
सिद्धन्तु भक्षयेन्मध्ये प्रान्ते भुक्तस्य चाग्रतः ।
वातात्मकं पित्तभवं शूलञ्च परिणामजम् ॥ ३०७ ॥
निहन्त्येव हि योगोऽयं मण्डूरस्य न संशयः ।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं यद्वा बहुसुतारसे ॥ ३०८ ॥
अथवा चोभयोरेव लोहकिट्टस्य सप्तधा ।
रसो गन्धः शुभः पाके यति स्याद्यदि मर्दनात् ॥
तदा पाकं विजानीयान्मण्डूरस्य न संशय ॥ ३०९ ॥

शृ या त ,र का ,नि र ,वं चि.,भै र ,यो म ,ग मा , र क यो ,र ,ना वि.,टो., रससागर , ध ,र.र ,च द ,यो र ,ग नि ,शूलाऽधिकारे।

टि०—र क या मण्डूरयोग इति नाम । रसरत्नाकरे भैषज्यरत्नावल्याञ्च द्वितीयस्थाने "चतु शाण रज ग्रथर । त्रिफलागुडकणाजीरधान्यपथ्यादिभिस्तथा" इत्यधिक पाठो दृश्यते । अविमत्सरस्य प्रक्षेपस्य दाने सम्भवात् इयेत्तदेक एव योग कल्पनीय ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, शतावरीका स्वरस, दहीकापानी और दूध ८-८ पल, गायका घी ४ पललेकर इकट्ठे पकावे । घन तैयार होनेपर चिकनेबर्त्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ भोजनसे पूर्व, मध्य अथवा अन्तमें लेनेसे वातज, पित्तज और परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै । इसयोगमें मण्डूरको गायकेदूध अथवा शतावरीरस अथवा क्रमश दोनोंमें बुझाकर शुद्धकरे । कोईकोई नागरमोथा, पीपल, जीरा, धनिया, हर्रे, तज और इलायचीका चूर्ण ४-४ माशे प्रक्षेपमें डालतेहैं ॥ ५४ ॥

५५ शतावरीमण्डूरम् (शर्करामण्डूरम्) २

शतावरीरसप्रस्थे प्रस्थे च सुरभीजले ।
अजायाः पयसः प्रस्थे प्रस्थे धात्रीरसस्य च ॥ ३१० ॥
लोहकिट्टपलान्यष्टौ शर्करापलषोडश ।
दत्त्वा चाष्टपलं सर्पिः पचेन्मृद्वग्निना भिषक् ॥ ३११ ॥
सिद्धशीते घनीभूते चूर्णानीमानि दापयेत् ।
यवानी त्रिफला व्योषं पिप्पली गजपिप्पली ॥ ३१२ ॥
ह्रीबेरकघनानाञ्च श्लक्ष्णान्यक्षसमानि च ।
मधुनस्त्रिपलञ्चाऽत्र सिद्धे शीते प्रदापयेत् ॥ ३१३ ॥
भक्षेदग्निबलापेक्षी भक्तस्यादौ विचक्षणः ।
शूलं सर्वाङ्गजं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः ॥ ३१४ ॥
रक्तपित्ताङ्गदाहञ्च साम्लपित्तं वमिन्तथा ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कुक्षिवस्तिगुदोद्भवम् ॥ ३१५ ॥
कासं श्वासं तथा शोषं ग्रहणीदोषनाशनम् ।
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं राजयक्ष्मज्वरापहम् ॥ ३१६ ॥
विष्टम्भगौरवदौर्बल्यमग्निमान्द्यं तथैव च ।
दुर्नामपाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकम् ॥ ३१७ ॥
सर्वांश्च नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं मण्डूरस्य गवां जले ॥
सप्तवाराष्टवारं वा स्त्वा निर्मलतां व्रजेत् ॥ ३१८ ॥

र.र, भै र, र का, शूले। भै. र, र का एतयो शर्करालोहमितिनाम ।

भाषा—शतावरीकारस, गोमूत्र, बकरीकादूध, आवलेकारस १-१ प्रस्थ, मण्डूरभस्म ८ पल, शक्कर १६ पल, घी ८ पल लेकर मन्दाग्निमें पकावे । घननैयारहोनेपर उतारकर ठंडा करके अजवाइन, त्रिफला, त्रिकुटु, पीपल, गजपीपल, स्याह सफेदजीरा, नागरमोथा येसब १-१ कर्ष, मधु ३ पल मिलाकर चिकनेबर्त्तनमें रखछोडे । सातदिनबीतनेकेबाद इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक भोजनसेपहिले रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषजशूल, पक्तिशूल, रक्तपित्त, अङ्गदाह, अम्लपित्त, वमन, हृदयशूल, पार्श्वशूल, पेट, मूत्राशय और गुदोद्भवशूल, कास, श्वास, धातुशोष, ग्रहणी, यकृत्, प्लीहा, गुल्म, राजयक्ष्म, ज्वर, विष्टम्भ, शरीरकी दुर्बलता, मन्दाग्नि, बवासीर, पाण्डु, कामला और हलीमक इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्य अन्धकारको । गायकेदूध अथवा मूत्रमें ७ या ८ बार बुझानेसे मण्डूर शुद्धहोजाताहै ॥ ५५ ॥

५६ शतावरीमण्डूरम् (शर्करामण्डूरम्)

विधिवच्छुद्धमण्डूरचूर्णं प्रस्थसमन्वितम् ।
द्वौ प्रस्थौ शर्करायाश्च षट् पलानि घृतात्तथा॥३१९॥
वर्याश्च स्वरसार्धन्तु धात्रीरसतुलार्धकम् ।
एकीकृत्य पचेदेतद्यावत्तत्तन्तुली भवेत् ॥ ३२० ॥
त्रिफलायाः पृथक्चूर्णं कुडवं तत्र निक्षिपेत् ।
व्योषं त्रिलवणं कुष्ठं तुम्बुरूणि च दीप्यकम् ॥३२१॥
द्विजीरकं विडङ्गानि चातुर्जातकमेव च ।
एषां चूर्णीकृतानाञ्च भागं पलमितं पृथक् ॥ ३२२ ॥
पलान्यष्टौ शिवाचूर्णात्कुडवञ्च यवाग्रजात् ।
पलं पलं कणामूलं चव्यचित्रकमूलतः ॥ ३२३ ॥
उत्तार्य शीते माक्षीकात्सतत्त्रिपलसम्मितम् ।
खादेदग्निबलापेक्षी भोजनादौ विचक्षणः ॥
शूलं सर्वाङ्गजं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः ॥ ३२४ ॥

र.का., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वकशोधनकियेहुए मण्डूरकाचूर्ण १ प्रस्थ, शक्कर २ प्रस्थ, गोघृत ६ पल, शतावरीका स्वरस १६ पल, पके आवलोकास्वरस ५० पल लेकर सबकी दोतारी चाशनी तैयारहोनेपर उतारकर हरें, बहेड़ा, आवला ४–४ पल, त्रिकटु, तीनोंनमक, कुठ, धनिया, दोनोंतरहके तुम्बुल (चिरफळ म०), अजवाइन, दोनोंजीरे, विडङ्ग, चातुर्जात १–१ पल, हरें ८ पल, यवक्षार ४ पल, पिपलामूल, चव्य और चित्रकमूल १–१ पल लेकर बारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर रक्खे । एकदम ठण्डा होनेपर ३ पल मधु मिलाकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे ६ माशेसे १ तोलेतक मात्रा रोग और अग्निकाबल देखकर भोजनके आदि, मध्य अथवा अन्तमेंदेनेसे त्रिदोषजशूल और खासकर परिणामशूल नष्टहोतेहैं ॥ ५६ ॥

५७ शतावरीमोदकः

शतावर्यौ श्वदंष्ट्रा च बला चातिबला तथा ।
मर्कटीक्षुरयीजं च विदारीकन्दजं रजः ॥ ३२५ ॥
एतानि समभागानि पलिकानि विचूर्णयेत् ।
चूर्णाच्चतुर्गुणं देयं त्रैलोक्यविजयारजः ॥ ३२६ ॥
सर्वमेकीकृतं यावत्तदर्द्धं माहिषं पयः ।
तावन्मात्रेण दातव्यं शतावर्या रसं तथा ॥ ३२७ ॥
विदार्याः स्वरसप्रस्थ सितापलशतं न्यसेत् ।
गोलयित्वा सिता दत्त्वा पात्रे ताम्रमये दृढे ॥ ३२८ ॥
पचेत्पाकविधिज्ञो हि मोदकः परमा हितः ।
त्र्यूषणं त्रिफला शृङ्गी त्रिजातं सैन्धवं शटी ॥३२९॥
धान्यकं वालकं मुस्तं द्विजीरं कुन्दुरं मुरा ।
काकोली क्षीरकाकाली द्राक्षा तुङ्गा मृगाण्डजम् ॥
जातीकोषफलेमासी तालाङ्कुरकशेरुके ।
शतपुष्पा चवी दारु ग्रन्थिकं सलवङ्गकम् ॥ ३३१ ॥
कुष्ठं यवानिका चात्मगुप्ता कट्फलमेथिके ।
खर्जूरानन्तमूले च तालीसं मधुकन्तथा ॥ ३३२ ॥
टङ्कणञ्च विचूर्ण्याथ प्रत्येकं कोलसम्मितम् ।
चूर्णार्द्धं शोधितं गन्धं शुद्धं पादांशपारदम् ॥ ३३३ ॥
कज्जलीकृत्य दत्त्वान्तर्लोडयेत्रिसुगन्धिना ।
यथाशक्त्या मोदकञ्च कर्पूरेणाऽधिवासयेत् ॥३३४॥
तदुद्धृत्य स्निग्धभाण्डे स्थापयेच्च भिषग्वरः ।
शिवं सम्पूज्य सगणं धन्वन्तरिमुनिं तथा ॥ ३३५ ॥
कोलप्रमाणं कर्तव्यं क्षीरञ्चानु पिबेन्नरः ।
प्रात भोजनकाले वा सायङ्कालेऽपि भक्षयेत् ॥३३६॥
प्रमदाशतञ्च भजते न च शुक्रक्षयं भवेत् ।
मातः परतरं किञ्चिद्विद्यते वाजिकर्मसु ॥
शतावरीमोदकञ्च वासुदेवेन निर्मितम् ॥ ३३७ ॥

ध., र र., वाजीकरणाऽधिकारे ।

भाषा—दोनोंतरहकीशतावर, गोखरू, खरेंटी गंगेरन, केवाच और तालमखानेकेबीज, विदारीकन्द १–१ पल लेकर बारीकचूर्णकर सबसे चौगुना भांगकाचूर्ण, इनसबसे आधा भैंसका घी और शतावरकारस, विदारीकास्वरस १ प्रस्थ, शक्कर १०० पल लेकर ताबेकेपात्रमें सबकी चाशनी बनावे । फिर त्रिकटु, त्रिफला, काकड़ासींगी, त्रिजात, सैंधानमक, कचूर, धनिया, सुगन्धवाला, नागरमोथा, दोनोंजीरे, कुंदरू, मुरमक्की, काकोली, क्षीरकाकोली, द्राक्ष, वंसलोचन, कस्तूरी, जावित्री, जायफल, जटामासी, ताड़वाली, कसेरु, सौंफ, चव्य, देवदारु, गठिवन, लौंग, कुठ, अजवाइन, केवाच, कायफल, मेथी, छुहारा, अनन्तमूल, तालीसपत्र, मुलहठी भुनासुहागा येसब ८–८ माशे, शुद्धगन्धक सबसे आधी और शुद्धपारा चौथाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबको उत्तरकी चाशनीमें मिलाकर तज, पत्रज और इलायचीकेचूर्णका यथोचित प्रक्षेप देकर अग्निका बलाबल देखकर मोदक बनाय कपूरसे अधिवासितकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े । फिर गणसहितशिवजी और धन्वन्तरिभगवानका पूजनकर आधेतोलेकीमात्रासेशुरूकरे और धीरे २ बढाता जाय, ऊपरसेदूधपीवे । सुबह, भोजनके समय अथवा सायकाल प्रकृतिकेअनुसार समयका निर्धारणकर मात्राखावे । इसके सेवनसे बहुतसीस्त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरनेपरभी शुक्रक्षय नहीं होता ॥

५८ शतावरीलोहम्

कान्तचूर्णं शतावरीभावितं भृङ्गराजेन
मध्वाज्यं त्रिशती भवेत् ॥ ३३८ ॥

आ पु., रसायने ।

भाषा—कान्तलोहभस्ममें यथाशक्य शतावरीकेरसकी भावनाएं देकर भंगरेकेरस, मधु और घृतकेसाथ ३ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा लेनेसे और पथ्यपालन करनेसे ३०० वर्षतक जीसक्ताहै ॥ ५८ ॥

५९ शम्बूकभस्मयोगः

शम्बूकजं भस्मपीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ।
पक्तिजं विनिहन्त्याशु शूलं विष्णुरिवासुरान् ॥३३९॥

वै चि., वृ मा., च द., यो. र., नि र., यो त शूल

भाषा—३ माशे घोंघेकीभस्मको गरमजलकेसाथ लेनेसे यह पक्तिशूलको इसतरहनष्टकरताहै जैसे विष्णुभगवान् असुरोंका नाशकरतेहैं ॥ ५९ ॥

६० शम्बूकरसः (प्रथमः)

अपिधानञ्च शम्बूकं प्रक्षाल्य सलिलैः शुभैः।
रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं लेपितं तथा ॥ ३४० ॥
षण्मापमानमितया द्विमाषेण च हिङ्गुना।
ततो द्विपञ्चमूलीयसूक्ष्मकाण्डैः सचित्रकैः ॥ ३४१ ॥
पिधाय निखिलां तान्तु पूरयेत्कोद्रवोद्भवैः।
पलालैः परितो मूषां पुटयेद्गोमयाग्निना ॥ ३४२ ॥
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा गुटिका सक्तुमध्यगा।
द्विमाषमानगिलिता शूलं जयति दारुणम् ॥ ३४३ ॥
अतिसारं महाघोरं ग्रहणीञ्जयति ध्रुवम्।
कुर्याच्च वह्निमत्युग्रं शम्बूकाख्यो महारसः ॥ ३४४॥

टो., ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—जीवरहितघोंघोंको गरमपानीसे धोकर ६ माशे शुद्धपारे और गन्धककीकज्जलीको पानीमें पीसकर चारोंतरफ लेपकरदे। सूखनेपर २ माशे हींगकालेपदेकर दशमूल और चित्रकके बारीक टुकड़ोंमें बन्दकर कोदोकीघासमें लपेटकर डोरीसे अच्छीतरह बांधकर गेंदकेसदृश बनादे। फिर २-३ कपड़मिट्टी लगाकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दशमूल और चित्रकेकेक्वाथमें १-२ दिन घोटकर २-२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली सत्तूकेभीतर रखकर निगलनेसे भयङ्करशूल, अतिसार और सङ्ग्रहणी इनको नष्टकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै॥६०॥

६१ शम्बूकरसः (द्वितीयः)

दग्ध्वा शम्बूकसिन्धूत्थं क्षौद्रेण सह लेहयेत्।
निष्केकेण जयत्याशु ग्रहणीञ्चातिदुःसहाम् ॥ ३४५ ॥
पानं व्यवायं व्यायाममीर्ष्याञ्च गुरुभोजनम्।
वेगसंधारणं वर्ज्यं ग्रहणीदोषिणा सदा ॥ ३४६ ॥

टो., र. सं., वृ. यो. त., र. चं., ग्रहणीरोगे।

भाषा—घोंघेकीभस्म और सेंधानमक समभागलेकर ४-४ माशेकी मात्रा मधुकेसाथ लेनेसे दुःसह सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै। मद्यपान, व्यवाय, कसरत, ईर्ष्या, भारीभोजन, वेगसंधारण इनसबका परित्यागकरे ॥ ६१ ॥

६२ शम्बूकादिवटी (प्रथमा)

पलानि त्रीणि शम्बूकाल्लोहचूर्णात्पलद्वयम्।
रसाञ्जनात्पलञ्चैकं लोहकिट्टात्पुनः पलम् ॥ ३४७ ॥
सर्वैः समां शर्कराञ्च मधुना च परिप्लुताम्।
सर्वमेतत्समाहृत्य मोदकान्कारयेद्भिषक् ॥ ३४८ ॥
भक्षयेत्तान् प्रयत्नेन शूले गुल्मे हृदामये।
विशेषतः पक्तिशूले शोफे पाण्डूदरे भ्रमे ॥ ३४९ ॥
दुर्नाम्नि कासे कृच्छ्रे च प्रमेहाश्मरिवृद्धिषु।
अग्निमान्द्ये स्मृतिभ्रंशे पीनसार्द्धावभेदके ॥ ३५० ॥

ग. नि., यो. म., टो., वृ. यो. त., लो. प., ना. वि., शूलाधिकारे।

टि०—यो. म., टो., वृ. यो. त., ना. वि. एषु ग्रन्थेषु शम्बूकादिमोदक इतिनाम। नारायणविलासे आमवाताधिकारः। लो. प. शम्बूकायस इतिनाम।

भाषा—घोंघेकीभस्म ३ पल, लोहभस्म २ पल, रसौत और मण्डूरभस्म १-१ पल लेकर सबकोबराबर शक्कर मिलाय मधुमें मोदक अथवा अवलेह बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, गुल्म, हृद्रोग, पक्तिशूल, सूजन पाण्डु, उदर, भ्रम, बवासीर, कास, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, पथरी, समस्त अण्डवृद्धि, मन्दाग्नि, स्मृतिभ्रंश, पीनस और अर्धावभेदक येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६२ ॥

६३ शम्बूकादिवटी (द्वितीया)

शम्बूकं त्र्यूषणं लोहं पञ्चैव लवणानि च।
समांशैर्गुटिकां कृत्वा कलम्बुकरसेन च ॥ ३५१ ॥
प्रातर्भोजनकाले वा योज्यं नास्त्यत्र संशयः।
हन्ति शूलं हि तत्सर्वं पक्तिजं वाप्यपक्तिजम् ॥३५२॥

रससागर, भै. र., वै. चि., ग. नि., वृ. मा., च. द., नि. र., यो. र., चि. सा., शूलाऽधिकारे।

टि०—कुत्रचिल्लौह न दृश्यते। चिकित्सासारे त्र्यूषणस्थाने ऊषणमिति पाठो दृश्यते तथा च लोहस्याऽभाव।

भाषा—घोंघेकीभस्म, त्रिकुटु, लोह पाचोंनमक सबसमभाग लेकर नाडीशाककेरससे गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली भोजनकेसमय अथवा प्रातःकालदेनेमें पक्तिशूल अथवा साधारणशूलको यह नष्टकरतीहै ॥ ६३ ॥

६४ शम्भूरसः

शुद्धसूतस्य भागैकं कर्षैकञ्च बलेस्तथा।
अभ्रकस्य च कर्षं स्यात्तथैव शङ्खभस्मनः ॥ ३५३ ॥
विषसिन्धुजगत्कोलाः प्रत्येकं शाणसम्मिताः।
एकत्र मर्दयेच्छुष्कं सर्वं कज्जलसन्निभम् ॥ ३५४ ॥
भुजङ्गवल्लीपर्णेन गुञ्जैको वह्निमान्द्यजित्।
अरुचौ वह्निमान्द्ये च प्रयोक्तव्यो रसोत्तमः ॥
अयं शम्भुरिति ख्यातो वह्निसन्दीपनः परः ॥ ३५५ ॥

र. का., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और शङ्खभस्म १-१ कर्ष, शुद्धबच्छनाग, सेंधानमक, सोंठ और बेर ४-४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पानके रससे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानके साथदेनेसे मन्दाग्नि और अरुचिको यह नष्टकरताहै ॥ ६४ ॥

६५ शरभेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं गन्धं वत्सनाभञ्च हिङ्गुलम्।
टङ्कणञ्च समं मर्द्यं चित्रमूलकषायके ॥ ३५६ ॥

संशोष्य वालुकायन्त्रे द्वियामं वज्रमूषके ।
समुद्धृत्य विचूर्ण्याऽथ देयस्त्रिकटुकद्रवैः ॥ ३५७ ॥
वातपित्तकफेश्चोग्रं ज्वरं हरति तत्क्षणात् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु रसोऽयं शरभेश्वरः ॥ ३५८ ॥
वै चि , रसायनस , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, शिगरिफ और सुहागा समभागलेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकवीजड़केक्राथसे एकदिन मर्दनकर वज्रमूषामेंरख ६–७ कपड़मिट्टी देकर २ पहरकी वालुकायन्त्रकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर त्रिकटुकेरसकेसाय एकरत्तीसे दोरत्तीतक देनेसे त्रिदोषजज्वर और सन्निपात तत्क्षणनष्टहोताहै ॥ ६५ ॥

६६ शर्करालोहम् (प्रथमम्)

सितातिक्ताबलायष्टीत्रिफलारजनीयुगैः ।
लोहं लिह्यात्समध्वाज्यं हलीमकनिवृत्तये ॥ ३५९ ॥
यो. म , कामलायाम् ।

भाषा—शकर, कुटकी, बला, मुलहठी, त्रिफला, हल्दी और दारुहल्दी समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोह भस्म मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । अथवा कुटकी वगैरहकेक्वाथसे २–४ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली औषधिती देखकर मधु और घीकेसाथदेनेसे हलीमक नष्टहोताहै ॥ ६६ ॥

६७ शर्करालोहम् (योगद्वयम्) २

निम्बं धात्री शर्करा लोहचूर्णं
क्षौद्रेणाक्तं गन्धकं वाऽभयाश्च ॥ ३६० ॥
र दी , अम्लपित्ते ।

भाषा—नीमकीछाल, आवले, शकर और लोहभस्म समभाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानके साथलेनेसे अम्लपित्त नष्टहोताहै । गन्धक अथवा हर्र मधुकेसाथ लेनेसेभी अम्लपित्त नष्टहोताहै ॥ ६७ ॥

६८ शर्करालोहम् (तृतीयम्)

त्रिफलायास्ततो धात्र्याश्चूर्णं वा काललोहजम् ।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु लेहयेत् ॥ ३६१ ॥
र चि , र र , ध , र स , र मु , शूले ।

भाषा—त्रिफला, आवले और शकर समभागलेकर सबकी बरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसायलेनेसे सबप्रकारके शूल नष्टहोतेहै ॥ ६८ ॥

६९ शलभादिवटी (अर्कादिगुटिका)

रविदलभवेश्मगोधापुरीषकुङ्कुमकुसुम्भहरिताले. ।
समन.शिलैः सकर्कटमासार्करसै. कृता गुटिका ३६२
वृश्चिकदंशस्थाने सकृदपि सल्लेपणं विधायादौ ।
अपरस्याङ्गे क्षिप्ता तद्विषसङ्क्रामणी भवति ॥ ३६३ ॥
रा मा , वृश्चिकविषे ।

भाषा—आकपरकीटिड्डी और छिपकलीकीविष्ठा, केशर, कुसुम्भके फूल, हरिताल, मैनसिल सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर केंकड़ेकेमासरस और आकके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर छोटीछोटी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इस गोलीको पहिले बिच्छूकाटेहुएस्थानमें एकवार छुवाकर उसीसमय दूसरे आदमीके अङ्गमें स्पर्शकरानेसे बिच्छूका जहर चढजाताहै । यह साक्षात्परीक्षाकरनेकेलिये बतायागयाहै । फिरसे इसगोलीको आककेदूधवगैरहकेसाथ घिसकर वृश्चिकादिकीटोंके डकपर लगानेसे समस्तकीटविष नष्टहोतेहै ॥ ६९ ॥

७० शशाङ्करसः

जारयेदिष्टिकायन्त्रे शुद्धसूते द्विधा वलिम् ।
उद्धृत्य तुल्यगन्धेन जम्बीरे मर्दयेद्दिनम् ॥ ३६४ ॥
भृङ्गवाकुचिझिण्टीनामपामार्गाऽपराजिता- ।
सर्पाक्षीणां द्रवे मर्द्यं प्रतिद्रावं दिनं दिनम् ॥ ३६५ ॥
तद्गोलं वन्धयेद्वस्त्रे मृल्लिप्तं स्वेदयेल्लघु ।
द्वियामं वालुकायन्त्रे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
अष्टगुञ्जामितं खादेच्छशाङ्कः श्वेतकुष्ठजित् ॥ ३६६ ॥
र. का , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको इष्टिकायन्त्रमें रख द्विगुण गन्धक जारण करे । फिर द्विगुणगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर जभीरी, भंगरा, वाकुची, नीलकटसरैया, अपामार्ग, कालीकोयल, अन्धाहूली इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ४ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेटकर ३–४ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमेंरख दोपहर मध्यमाग्निसे स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ८–८ रत्ती उचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह श्वेतकुष्ठको नष्टकरताहै ॥ ७० ॥

७१ शशिप्रभरसः

मृद्विन्छिन्नाद्विजैमर्द्य वङ्गेशाय शशिप्रभ ।
तन्माषो मधुयुङ्मेहेऽप्यतिमूत्रे रसोनयुक् ॥ ३६७ ॥
रसायनस , मेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, वङ्ग और लोहभस्म समभागलेकर विधारा और गिलोयकीजडकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकरे रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथदेनेसे प्रमेह और लहसनकेसाथदेनेसे बहुमूत्र नष्टहोताहै ॥ ७१ ॥

७२ शशिशेखररसः (प्रथम)

रसगन्धाभ्रहेमानि मौक्तिकं विद्रुमं तथा ।
कन्याद्भिर्मर्दयेद्धस्रं ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ ३६८ ॥
सर्वान् क्लोमगदान्हन्ति ह्यशीतिं मारुतोद्भवान् ।
पैत्तिकांश्चाखिलांश्चाऽपि श्लैष्मिकानप्ययं ध्रुवम् ३६९
भै. र , क्लोमरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, सुवर्ण, मोती प्रवाल इनकीभस्में सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एक-

दिन घीकुवारकेरससे भावनादेकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ या २ गोली रोगोचितानुपानके-साथ देनेसे समस्त श्लेष्मरोग, अस्सी वातरोग, समस्त पित्त तथा कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

७३ शशिशेखररसः (द्वितीयः)

लोहमभ्रञ्च सिन्दूरं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना।
अस्य रक्तिमितं दद्यादन्त्ररोगनिवृत्तये ॥ ३७० ॥

भै. र, अन्त्ररोगे।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, रससिन्दूर सब समभाग लेकर घीकुंवारकेरससे एकदिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया-बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घीकुंवारकेरसकेसाथदेनेसे यह अन्त्ररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७३ ॥

७४ शाखाकामलायोगत्रयम्

शाखाकामलिकां वदन्ति मुनयश्चेमां यतस्संस्थितां,
शाखास्वेव शिलाजतु प्रतिदिनं पेयं सगोमूत्रकम्।
मण्डूरं मधुना युतञ्च नियतं सेव्यञ्च लोहं परं,
निश्चैकं खलु कुम्भकामलिगदे युक्तं तु योगत्रयम्३७१

चि. क्र, कामलायाम्।

भाषा—रोगीका बलाबलदेखकर शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेतक गोमूत्रकेसाथलेवे। अथवा शुद्धमण्डूर १ माशेसे ३ माशेतक लेकर गोमूत्रका सेवनकरे। अथवा लोहभस्म १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मधुकेसाथलेकर गोमूत्रपीनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥

७५ शाम्भवीरसः

शुद्धपारदगन्धौ द्वौ टङ्कणं नागराऽभया।
एरण्डदन्तिबीजानि गौरीपाषाणकं समम् ॥ ३७२ ॥
मर्द्यं जम्बीरनीरेण खल्वमध्ये दिनत्रयम्।
शरावे दिनमेकञ्च पुटे कुक्कुटके पचेत् ॥ ३७३ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मर्द्यमेरण्डतैलके।
दशांशं मरिचं दत्त्वा मरिचाऽर्द्धं विषं क्षिपेत् ॥३७४॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वज्वरहरं परम्।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषार्थे नारिकेलजम् ॥
पार्वतीनिर्मितः पूर्वं नाम्नाऽयं शाम्भवीरसः ॥३७५॥

वै चि, र.क.यो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुहागा, सोंठ, हर्रे, एरण्ड बीज, शुद्धजमालगोटा और सोमल समभाग लेकर नीलवर्णकज्ज-लीकर जमीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें रख कुक्कुटपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर एरण्डतैलमें एकदिनमर्दनकर दशवा हिस्सा मरिच और मरिचसे आधा शुद्ध बच्छनाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। भूखलगनेपर दही, भात खानेकोदे। अधिकप्यास लगनेपर नारियलकाजलदे ॥ ७५ ॥

७६ शारभेन्द्ररसः

सूतं गन्धकशुल्बभस्म दरदं तालं शिला टङ्कणं,
माक्षीकं त्रिफला विषं त्रिकटुकं नेपालतुत्थं समम्।
निर्गुण्ड्या रसमर्दितं मुनिदिनं गुञ्जाप्रमाणा वटी,
सर्वव्याधिहरं त्रिदोषहरणं सर्वज्वरे सत्वरम् ॥३७६॥

र.क.यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरिफ, हरिताल, मैनसिल, सुहागा और सोनामाखी, त्रिफला, शुद्ध-बच्छनाग, त्रिकुटु, शुद्धजमालगोटा, तुत्थभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ७ दिन निर्गुण्डीकेरससे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्त-द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। त्रिदोषको शीघ्रनाशकर समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै ॥७६॥

७७ शारिवादिलोहम्

शारिवा नीलिनी रास्ना गुडूच्येला च चित्रकः।
मानसूरणशालिन्यत्रिवृद्भल्लातकाऽभयाः ॥ ३७७ ॥
एभि र्युतमयो हन्ति प्रमेहपिडिका दश।
वातरक्तं षडर्शांसि त्वग्दाषान्विसिलानपि ॥ ३७८ ॥

भै र, प्रमेहपिडिकायाम्।

भाषा—अनन्तमूल, नील, रास्ना, गिलोय, इलायची, चित्रकमूल, मानकन्द, सूरण, कालादाना, निसोत, शुद्धभिलावा और हर्रे समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। अथवा अनन्तमूल वगैरहके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर १–१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अनन्तमूलवगैरहकेक्वाथ अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे १० प्रकारकी प्रमेहपिडिका, वात-रक्त, ६ प्रकारकेबवासीर और त्वचाकेरोग नष्टहोतेहैं ॥ ७७ ॥

७८ शिरोरोगहररसः (प्रथम.)

रसं गन्धकमभ्रञ्च लौहं कर्षमितं पृथक्।
स्वर्णं शाणमितञ्चैव दार्व्याख्यञ्च विषं तथा ॥ ३७९॥
भृङ्गराजाम्भसा सम्यङ्मर्दयित्वा विचक्षणः।
रक्तिकार्धमिताः कुर्याद्वटीश्छायांशुशोषिताः ॥ ३८०॥
शिरोरोगहरो नाम रसोऽयं हरनिर्मितः।
हरेत्सर्वान् शिरोरोगान्चिरात्मे यदि सेवितः ॥ ३८१ ॥

आ वि, शिरोरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म और शुद्धदालचिकना ४–४ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर आधीआधीरत्तीकी गोलिया बनाकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली १–१ दिनके-अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशिरोरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७८ ॥

७९ शिरोरोगहररसः (गगनसुन्दररसः) २

गगनं स्याद्रसे चोर्णं तीक्ष्णं शुल्वं सुरायसम् ।
वज्रामयरसे घृष्टं सूर्यावर्तविनाशनम् ॥ ३८२ ॥

रसेन्द्रमं, शिरोरोगे ।

भाषा—समभागमें अभ्रकजारणकियाहुआपारा, लोह, तावा और सुवर्णभस्म समभागलेकर थूहर और कुठके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै॥७९॥

८० शिरोवज्ररसः

पलं सूतात्पलं गन्धात्पलं लोहात्पलं रवेः ।
गुग्गुलोः पलचत्वारि तदर्द्धं त्रिफलारजः ॥ ३८३ ॥
यष्टीमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरं क्रिमिनाशनम् ।
तोलकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥ ३८४ ॥
क्वाथेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभावयेत् ।
घृतयोगेन कर्तव्या माषैकप्रमिता वटी ॥ ३८५ ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाऽथवा ।
वातिकीं पैत्तिकीञ्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ३८६
शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु वज्रं मुक्तमिवासुरम् ।
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषित. ॥ ३८७ ॥

र स, र सु, भै.र, ध, क्षिरोरोगे। भै र, ध., एतयोः रवि स्थाने त्रिवृता नियोजिता नाम च शिर.शूलादिवज्ररस इति स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और ताम्रभस्म १–१ पल, शुद्ध गूगल ४ पल, त्रिफला २ पल, मुलहठी, पीपल, सोंठ, गोखरू, विडङ्ग और दशमूल १–१ तोला लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सबकाचूर्णमिलाकर दशमलकेकाढेमें घोटकर घीकेयोगसे १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली बकरी अथवा गायकेदूध अथवा मधुके साथलेनेसे वात, पित्त, कफ और सन्निपातज शिरोवेदनाको यह नष्टकरताहै ॥ ८० ॥

८१ शिलागन्धकवटी (शिलाजतुवटी) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोत्पलदलद्रवैः ।
यामं मर्द्य पुनर्मर्द्य पूर्वादर्द्धं विनि.क्षिपेत् ॥ ३८८ ॥
कौटजं त्रिफला निम्बं पटोलघननागरैः ।
भावितानि दशाहानि रसे द्वित्रिगुणे तथा ॥ ३८९ ॥
शिलाजतु पलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ।
त्वक्क्षीरीपिप्पलीधात्रीकर्कटाख्यान्पलोन्मितान् ३९०
निदिग्धिकाफलैं मूलैः पलं युञ्ज्यात्त्रिजातकम् ।
मधुनः पलसंयुक्तं कुर्यान्माषसमान्गुडान् ॥ ३९१ ॥
दाडिमाम्बुपय.पक्षिरसतोयसुवासितान् ।
तान्भक्षयित्वाऽत्र पिबेन्निरक्तो भुक्त एव वा ॥ ३९२॥
पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगन्दरान् ।
पूतिविण्मूत्रशुक्रादिदोषमेहमहोदरान् ॥ ३९३ ॥
कासाऽसृग्रक्तपित्तञ्च प्रदरं रक्तसम्भवम् ।
तान्सर्वान् सुतरां हन्ति सर्वदोषहरा शिवा ॥ ३९४ ॥

र.र, भै.र, प्रदराधिकारे ।

भाषा—१–१ पल शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली कर लालकमलके फूलोंकेरससे दोपहर मर्दनकर कुटज, त्रिफला और नीमकीछाल २–२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाकर परवल, नागरमोथा और सोंठके दूने अथवा तिगुने स्वरससे १० दिन भावनादेकर शुद्धशिलाजीत और शक्कर ८–८ पल, वशलोचन, पीपल, आवले, काकड़ासींगी, भटकटैयाका पञ्चाङ्ग और त्रिजात १–१ पलका बारीकचूर्ण और मधु १ पल पूर्वपिण्डमें मिलाय १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अनारकेरस, दूध, पक्षियोंकेमास अथवा जलकेसाथ औचितीदेखकर लेनेसे पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा, तमकश्वास, ववासीर, भगन्दर, विण्मूत्रगन्धवाला शुक्रविकार, प्रमेह, जलोदर, कास, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ८१ ॥

८२ शिलागन्धकवटी (द्वितीया)

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाऽऽप्लुतम् ।
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत्॥ ३९५ ॥
अर्शसश्चाऽनुलोम्यार्थं हताग्निबलवर्द्धनम् ।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्तुष्टादिसहितो नरः ॥ ३९६ ॥

र स, र च, अर्शोरोगे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल और गन्धकको भगरेकेरसकी ७–७ भावनाएं देकर इकट्ठेमिलाय घीके सयोगसे एकदिन मर्दनकरे फिर अन्दाजसे मधु डालकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ववासीर और मन्दाग्निको नष्टकर वायुका अनुलोमन करतीहै ८२

८३ शिलाजतुचूर्णम् (प्रथमम्)

द्विपलं मार्कवं धातुमाक्षिकञ्च पुनर्नवा ।
तुगा स्पृका शालपर्णी वासकञ्च दुरालभा ॥ ३९७ ॥
चूर्णोऽर्द्धेन समं योज्यं त्रिगन्धं मरिचानि च ।
तालीसं मागधी चैव तदर्द्धेन शिलोद्भवम् ॥ ३९८ ॥
शिलाभेदं तदर्द्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् ।
समेन तिलचूर्णन्तु शर्करायाः समायुतम् ॥ ३९९ ॥
भक्षयेत्क्षीरपानं वा शस्यते घृतसंयुतम् ।
तेन क्षयो राजयक्ष्मा कामला च विनश्यति ॥ ४०० ॥
अपस्मारं जयत्याशु बले धीर्येऽधिको भवेत् ।
शाम्यन्ति च महारोगाः शुक्राढ्यो जायते नरः ४०१

हा स, क्षये ।

भाषा—भगरा, सोनामाखी, पुनर्नवा, वशलोचन, अनन्तमूल, शालपर्णी, अडूसा, जवासा येसब २–२ पल, तज, पत्रज, इलायची, मरिच, तालीसपत्र, पीपल इनसबकाचूर्ण ८ पल, शिलाजीत ४ पल, पाषाणभेद २ पल, कालेतिल और

शक्कर सबकीबराबर लेकर सबराबारीकचूर्णकर १-२ दिन इसके मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतकमात्रा घी मिलेहुए दूधकेसाथलेनेसे क्षय, राजयक्ष्म, कामला, अपस्मार, बलवीर्यनाश इनसबको नष्टकर मनुष्यको शुक्रपूर्णबनाताहै ॥८३॥

८४ शिलाजतुचूर्णम् (द्वितीयम्)

शैलजमाक्षिकयष्टिकयुक्तं व्योषविडङ्गफलत्रययुक्तम् ।
सर्वसमं तलपोट्टकबीजं चूर्णमिदं दशमेहमपोहत् ४०२

वै. चि ,प्रमेहे।

भाषा—शुद्धशिलाजीत और सुवर्णमाक्षिक, मुलहठी, त्रिकटु, विडङ्ग और त्रिफला समभाग, इनसबकीबराबर तुलरक बेबीजोंकी मज्जा लेकर सबका बारीकचूर्णकर ३-३ माशा दूधकेसाथलेनेसे यह श्लेष्मप्रधान१० प्रमेहोंको नष्टकरताहै॥८४॥

८५ शिलाजतुयोगः (प्रथमः)

छिन्नोद्भवाक्कथायेण शुद्धं सेव्यं शिलाजतु ।
पञ्चकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशान्तये ॥ ४०३ ॥

र का ,वातरक्ताऽधिकारे।

भाषा—विधिपूर्वक सूर्यतापीशिलाजीत उचितमात्रामें गुडूचीकेक्वाथकेसाथलेनेसे पञ्चकर्मसे विशुद्धरोगीके वातरक्तको यह नष्टकरताहै ॥ ८५ ॥

८६ शिलाजतुयोगः (द्वितीयः)

पीतं निरुद्धमचिराद्विनस्ति मूत्रस्य सङ्घातम् ।
वीरजतरुगणसिद्धं शिलाजतु त्वतिविशुद्धं तत् ४०४

र.का ,मूत्राघाते ।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको वीरतर्वादिगणक्वाथकेसाथ देनेसे बहुतदिनके पुराने मूत्राघातको यह नष्टकरताहै ॥ ८६ ॥

८७ शिलाजतुयोगः (तृतीयः)

त्रि.सप्तवारांश्छैलेयं भाव्यं सालादिजाम्भसा ।
पिबेत्सारोदकेनैव श्लक्ष्णपिष्टं यथाबलम् ॥ ४०५ ॥
जाङ्गलेन रसेनाद्यात्तस्मिञ्जीर्णे तु भोजनम् ।
विजित्य मधुमेहाख्यमातङ्कं रोगसङ्करम् ॥
वपुर्वर्णबलोपेतः शतं जीवत्यनामयः ॥ ४०६ ॥

र का ,मेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको सालसारादिगणक्वाथकी २१ भावनाए देकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेलेकर १ तोलेतक रोगीका अग्निबल देखकर सालसारादिगणक्वाथकेसाथ देवे । सूखलगनेपर जाङ्गलपशुपक्षियोंकेमांसरसकेसाथ भोजनदेवेतो उपद्रवयुक्तमधुमेहको जीतकर बलवर्णयुक्त होकर १०० वर्षतक निरोगी रहकर

[illegible]तुयोगः (चतुर्थ)

[illegible] ॥ ४०७ ॥

भाषा—शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेतक अग्नि देखकर प्रातःकाल दूध और शक्करकेसाथलेनेसे २१ दिनमें समस्तप्रमेहोंसेरहितहोजाताहै ॥ ८८ ॥

८९ शिलाजतुयोगः (पञ्चमः)

फलत्रिकक्वाथविशुद्धमादौ
शुद्धं गुडूच्या दशमूलशुद्धम् ।
स्थिरादिकाकोलियुगादिशुद्धं
शिलाजतु स्यात्क्षयिषु प्रशस्तम् ॥ ४०८ ॥

र का ,क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, गिलोय, दशमूल, स्थिरादि और काकोल्यादिगणोंकेक्वाथोंसे क्रमसे भावनाएंदियाहुआ शुद्धशिलाजीत उचितमात्रामें लेनेसे क्षयरोग नष्टहोताहै ॥ ८९ ॥

९० शिलाजतुयोगः (षष्ठः)

शिलाह्वयं वा त्रिफलारसेन
हन्यात्त्रिदोषं श्वयथुं प्रसह्य ।
अन्नैः पिबेद्वा गुरुभिन्नवर्चाः
सत्र्योषसौवर्चलमाक्षिकैश्च ॥
विड्वातसङ्गे पयसा रसैर्वा
प्रायः समद्यादुरुबूकतैलम् ॥ ४०९ ॥

र का ,शोथाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिफलाकेरसकेसाथ शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्रामें औचिती देखकर लेनेसे यह त्रिदोषज शोथको दूरकरताहै । इसके सेवनसे वजनदार अथवा पतले दस्त होनेलगेंतो त्रिकटु, सचल और सोनामाखीकेसाथ अनदे । मल और वायुका अवरोधहोनेपर दूध अथवा जाङ्गल मांसरसकेसाथ देवे । यदि इससेभी अवरोध शान्त न हो तो बीचबीचमें एरण्डतैलका औचिती देखकर प्रयोगकरे ॥ ९० ॥

९१ शिलाजतुयोगः (सप्तमः)

शिलाजतुं गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
ऊरुस्तम्भे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलजलेन वा ॥ ४१० ॥

वै चि ,ऊरुस्तम्भे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गूगल, पीपल और सोंठ इनसबको समभागमें मिलाकर अथवा अलग २ औचितीदेखकर गोमूत्र अथवा दशमूलकेकाढेकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ नष्टहोताहै ॥९१॥

९२ शिलाजतुयोगः (अष्टमः)

लाजाजतुशिलामांसीमधुकैश्चूर्णितैः समैः ।
मधुयुक्तैः शिशोर्लेहः सर्वज्वरनिवारणः ॥ ४११ ॥

हितो ,ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—धानकीखील, शिलाजीत, मैनसिल, जटामासी, मुलहठी, सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर १-२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मधुकेसाथदेनेसे बच्चोंके सबप्रकारकेज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ९२ ॥

९३ शिलाजत्वादियोगः

**गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलायां शिलाजतु ।
मासं माक्षिकधातुं वा किट्टं वाऽथ हिरण्यजम् ॥ ४१२**

ग नि, अ सं, अ ह, सु स, भा प्र, चि सा, कामलायाम् ।

टि०—भावप्रकाशे चिकित्सासारे च गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलाया शिलाजतु,, इत्यर्द्धश्लोकेन योग प्रकल्पित । सुश्रुते हेमन किट्ट नाऽस्ति ।

भाषा—शिलाजीत, सोनामाखी, सुवर्णकाकिट्ट इसमेंसे किसीएकको गोमूत्रकेसाथ एकमहीनेतक देनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥ ९३ ॥

९४ शिलाजत्वादिलोहम् (प्रथमम्)

**शिलाजतु मधु व्योषं ताप्यं लोहरजस्तथा ।
क्षीरेण लेहितस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥ ४१३ ॥**

र स, भै र, र चि, यो म, ध, र च, र सिं, र सु, र. (मा), र का, यो र, र स. क, रसायनस, म नि, क्षयाऽधिकारे । र (मा) **शिलासाररस** इति नाम । र स. क, रसायनस., एतयो **क्षयारिरस** इति नाम ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, मधु, त्रिकटु, सोनामाखी और लोहभस्म समभागलेकर इकट्ठेमिलाय १–२ पहर मर्दनकर रख छोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतकमात्रा औचितीदेखकर दूधकेसाथदेनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ९४ ॥

९५ शिलाजत्वादिलोहम् (द्वितीयम्)

**शिलाजतुयुतं लोहवल्लन्तु विधिमारितम् ।
पथ्याशी सेवते यस्तु स यक्ष्माणं व्यपोहति ॥ ४१४॥**

वृ यो त, र. सु, यो र, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—१ रत्तीलोहभस्म और ३ माशेसे १ तोलेतक शिलाजीत दोनोंको मिलाकर औचिती देखकर देनेसे और पथ्यका पालनकरनेसे राजयक्ष्मसहित असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

९६ शिलाजत्वादिवटी

**शिलाजत्वभ्रहेमानि लौहगुग्गुलुटङ्कणम् ।
केशराजस्य तोयेन मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ४१५ ॥
वल्लमात्रां वटीं कृत्वा शैवालसलिलेन च ।
प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनिवृत्तये ॥ ४१६ ॥**

भै र, शुक्रमेहे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, अभ्रक, सुवर्ण और लोहभस्म, शुद्धगूगल और सुहागा सब समभागलेकर कालेभांगरेके रससे दोदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शिवालके पानीकेसाथ प्रातःकालमें लेनेसे शुक्रमेह नष्टहोताहै ॥ ९६ ॥

९७ शिलातालरसः (श्वासकासारि.)

**त्रिकण्टकरसे भाव्यं तालमेकं चतुःशिला ।
व्योमायस्तारपिष्टिश्च दत्त्वा तद्गुटिकां चरेत् ॥ ४१७॥
दिनं वासारसैः पिष्ट्वा वालुकायन्त्रपाचिताम् ।
क्रियामान्ते समुद्धृत्य तत्तुल्यञ्च कटुत्रयम् ॥ ४१८ ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु व्योमतुल्यं विमिश्रयेत् ।
शिलातालो रसो नाम माषैकः श्वासकासजित् ॥४१९.
कटुत्रयं पावकदेवदारु-
रास्नाविडङ्गत्रिफलाऽमृतानाम् ।
चूर्णं समांशं सितया समेतं
कासं जयेद्विष्णुरिवाशु दैत्यान् ॥ ४२० ॥**

र को, र सु, वै चि, र यो, र क, रसायनस, र स क, व रा कासाऽधिकारे ।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमे त्रिकण्टकस्थाने द्राक्षा गृहीता अन्यत्सर्वं समानम्, नाम च तालकवटीति स्थापितम् । र स, व श्वासकासारीति नाम स्थापितम् । वसवराजीये त्रिकटुके प्रयोग कृतोऽस्ति ।

भाषा—हरितालभस्म १ भाग, गोमूत्रमें १०० बार बुझाई हुई मैनसिल ४ भा, अभ्रक, लोह और तारपिष्टी (शुद्धचांदीके गोलपत्रेको कोयलोंपर रख गन्धक और हरितालके चूर्णका पत्रेसे अष्टमांश प्रक्षेपदेकर जलावे । इसपत्रेके बीचमें थोड़ागर्त बनाले । जिससमय तारपिष्टी बनानीहो तब पत्रेको कोयलोंपर रख गर्तमें पारा छोड़दे । आंचलगनेसे पारा गाढा होजायगा, इसको मोटेकपड़ेमेंसे छानले जो कड़ाभाग हो उसे रखले और दूसरेको फिर उसीतरह गर्तमें रख गरमकर छाने । इसतरह जितना पारा गाढा करनाहो उतना करले फिर इसपिष्टीको १–२ पहर नीबूके रसमें घोटकर कालिमा दूरकरदे । गोलीको ४ तह मल मलके कपड़ेमें बांधकर कानी अथवा नीबूकेरसमें ४ पहर स्वेदन करनेसे तारपिष्टी तैयारहोगी । अथवा पारेसे चतुर्थांश रजतभस्म मिलाकर १–२ पहर नीबूके रसके साथ घोटनेसे तारपिष्टी तैयार होगी ।) १–१ भाग लेकर गोखरू और अडूसेकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ४ तह कपड़ेमें लपेट १–२ कपड़मिट्टी चढाय सुखाकर दोपहर वालुकायन्त्रमें स्वेदितकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकीबराबर त्रिकटुकाचूर्ण और अभ्रककीबराबर निर्गुण्डीकीजड़काचूर्ण मिलावे । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै । इसके ऊपर त्रिकटु, चित्रकमूल, देवदारु, रास्ना, विडङ्ग, त्रिफला, गिलोय सब समभाग और सबकीबराबर शक्कर मिलाय एकमाशेसे ३ माशेतक अनुपानमें देनेसे अतिशीघ्र श्वास और कास निवृत्तहोताहै । ऊपरकहाहुआयोग तैयार न होनेपर केवल इस अनुपानसेभी काम चलसकाहै ॥ ९७ ॥

९८ शिलादिगुटिका

**कर्षैका च मनःशिला द्विगुणिता प्रोक्तोपकुल्याह्वया,
वर्षैश्चापि गतः पुराणपदवीं शुद्धो गुडोऽपि त्रिभिः ।
तान्सम्मेल्य विधाय सप्त गुटिकाः खादेत्क्रमात्सघृतम्,
मुच्येताशु भगन्दराद्यतुरह. कालाद्भमस्तेऽरा. ॥४२१॥**

रसायनस, भगन्दराधिकारे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल १ कर्ष, मर्गरल २ कर्ष, पुरानागुड ३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर तीनोंको इकट्ठा कूटकर ७ गोलिया बनावे । इनमेंसे १–१ गोली घीमें मिलाकर खानेसे कईवार वमनहोगी । उपद्रव शान्तहोनेपर गेहू और चनेकीरोटी घी तथा शक्करकेसाथखाय । पाचवेंदिनसे वमन बन्दहोजायगी । इन ७ गोलियोंके पूरेहोनेपर भगन्दरसे निवृत्तहोताहै ॥ ९८ ॥

९९ शिलापूतरसः

चूर्णं पाठेन्द्रवारुण्यो र्भाण्डे दत्त्वा मनःशिलाम् ।
तत्पृष्ठे शुद्धसूतन्तु कुनटयंशं प्रदापयेत् ॥ ४२२ ॥
सूतार्द्धं कुनटीचूर्णं तस्योर्द्धं पूर्वमूलिका-।
चूर्णं दत्त्वा पचेच्चुल्ल्यां यामाष्टं मृदुवह्निना ॥ ४२३ ॥
शिलापूतो रसो नाम हन्ति हिक्कां निगुञ्जकः ।
रास्नामृहत्यग्निबलाकाथं दुग्धञ्च पाययेत् ॥
हिकिनं पाययेद्धूमं पत्रैः शिखिनिशोद्भवैः ॥ ४२४ ॥

र रा. स , र च , र को , र का , हिक्कायाम् । र. का शिलाघन्तरसेति नाम, परन्तु तत्र भ्रष्ट पाठोऽस्तीति विद्वद्भिरविस्मरणीयम् ।

भाषा—पाठा और इन्द्रायणकाचूर्ण घड़ेके पेंदेमें बिछाकर इससे चतुर्थांश मैनसिल बिछावे । इसपर मैनसिलकेबराबर शुद्ध पारा रखकर पारेसेआधे मैनसिलके चूर्णसे ढककर पाठा और इन्द्रायणके चूर्णसे ढकदे । फिर पानका डमरूयन्त्रबनाय ६–७ कपडमिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखाय चूल्हेपररख ८ पहरकी मृदु-अग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे डमरूयन्त्रका मुह उघाड़ ऊपरकेपात्रमें लगेहुए जौहरको निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–२ रत्तीकीमात्रा सोंठकेचूर्णकेसाथ मिलाकरदेवे, ऊपरसे रास्ना, बनभाटा, चित्रक, बला इनकाक्वाथ अथवा दूध पिलावे । इसपर चित्रक और हल्दीका धूमपानकरानेसे हिचकी नष्टहोतीहै ९९

१०० शिलावद्धरसः

मृतसूतस्य भागैकं भागैकं शोधितां शिलाम् ।
दिनं जम्बीरजैर्द्रावैर्मर्द्य रुद्ध्वा धमेल्लघु ॥ ४२५ ॥
शिलावद्धो रसो नाम गुञ्जैकः पित्तशूलजित् ।
पलं हिङ्गु शतं पथ्या त्रि. शुण्ठी द्वि. सुवर्चला ।
एतच्चूर्णञ्च कर्षैकमनुस्याच्छूलशान्तये ॥ ४२६ ॥

र.र , टो , यो म , र र कौ , र क ल , रसायनस , शूलाऽधिकारे । योगमहार्णव रसायनसङ्ग्रहे च षड्भागा मन शिला नियोजिता । रसायनसङ्ग्रहे शिरिवद्धरस इति नाम ।

भाषा—पारदभस्म और शुद्धमैनसिल समभागलेकर एकदिन जंभीरीकेरससे मर्दनकर यन्त्रमूषामें बन्दकर बहुत मन्द अग्निमें धमनकरे । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेकर भुनीहींग १ तोला, हर्रे १०० तो , सोंठ ३ तो , सज्जी २ तो इनका बारीकचूर्णकर १ तोला अनुपानकेतौरपर खिलानेसे पित्तशूल शान्तहोताहै ॥ १०० ॥

१०१ शिलायोगः

शिलाव्योषाऽभयाहिङ्गुविडङ्गसैन्धवैः समैः ।
लेहोऽयं समधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते ॥४२७॥

हितो , र.र स , कासादौ ।

टि०—रसरत्नसमुच्चय व्योषस्थाने केवल मरिच गृहीत कुष्ठञ्चाऽधिकतया नियोजितम् । कुष्ठस्याऽत्रैव योग विधायैव एव योगो निष्पादनीय

भाषा—शुद्धमैनसिल, त्रिकुटु, हर्रे, भुनीहींग, विडङ्ग, कुठ और सेंधानमक समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा घृत और मधुकेसाथलेनेसे यह खास, हिचकी और श्वासको नष्टकरताहै ॥ १०१ ॥

१०२ शिलावीररसः

रसभस्मसमं गन्धं शिलाजत्वम्लवेतसम् ।
यामैकं मर्दयेत्सर्वं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥ ४२८ ॥
निष्कैकैकं वर्षमात्रं शिलावीरो महारसः ।
जराकालं निहत्याशु जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥ ४२९ ॥
पलार्द्धं मुशलीचूर्णं भृङ्गराजरसैः पिबेत् ।
धात्रीफलरसैर्वाऽथ कामकं ह्यनुपानकम् ॥ ४३० ॥

र रा , र.क , रसायनस , रसायने ।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमे गन्धकस्थाने माक्षिक गृहीतम् । र को , र म मा , एतयो सर्वरोगघ्न इति नाम, अनुपानञ्च न दृश्यते अतस्तस्यात्रैवाऽन्तर्भाव करणीय , तत्र मात्रा हैमाषिकी निर्धारिता सा त्वकिञ्चित्करी, न हि मात्राया निश्चितनाऽस्ति तस्या देशकालादिसापेक्षत्वात्

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, शिलाजीत और अम्लवेत समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकपहर शुष्कमर्दनकर रख छोडे । इसमेंसे १ माशेसे ४ माशेतक उचितानुपानकेसाथ एकवर्षपर्यन्तलेनेसे बुढापेको जीतकर ३०० वर्षकी आयुको प्राप्त होसकाहै । आधापल मुशलीकाचूर्ण भंगरा अथवा आवलेके रसकेसाथ लेनेसे शरीरमें रसका सङ्क्रमणहोताहै

विशेषसूचना—इसमें ४ माशेकीमात्रा और आधापल मुशलीका जो अनुपानलिखाहै सो ग्रन्थकारने किसीको देकर नहीं देखाहोगा ऐसा प्रतीत होताहै क्योंकि नित्यनाथ कोई सत्युगमें नहीं हुएहैं जो कि इतनीमात्रा उससमय लोग सहन करतेहों । इसीलिये साधारणतया इसकी १ माशेकी मात्रा और ४ माशे मुशलीकाचूर्णदेना उचित प्रतीत होताहै । कोई भीमाहार हो और पूरीमात्राको हजमकरसका हो तो उसे देनेमें हर्ज नहीं । साधारणलोगोंको पहिले पूरीमात्रा देनेमें आमवात होनेका सम्भवहै ॥ १०२ ॥

१०३ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदय) १

मन शिलामार्द्रद्रवे विमर्द्य
देकाधिकं विंशतिरत्त्व आद्यम् ।
संशोष्य संशोष्य तया समेतं
तत्तुल्यगन्धेन मर्पाञ्च कुर्यात् ॥ ४३१ ॥

भृत्वा च कूप्यामथ वालुकाख्ये
यन्त्रे पचेद्वस्रचतुष्टयं तत् ।
काष्ठाऽग्निना शीतमथावतार्य
गले विलग्नं रसमाददीत ॥ ४३२ ॥
चन्द्रोदयश्चैष मनःशिलादिः
कुष्ठादिरोगापनयाय दिष्टः ।
इष्टश्च गुञ्जाद्वयमात्रमात्रो
हेमन्तकाले पुरुषाय यूने ॥ ४३३ ॥

रसायनसार.,कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धमैनसिलको २१ दिनतक अदरखकेरसमें घोटकर सूखनेपर बराबरका शुद्ध पारा और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके प्रथम चन्द्रोदयकीतरह वालुकायन्त्रमें रख ४ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक शीशीमेंसे निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतक कुष्ठहरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तकुष्ठ और शीतपूर्वकज्वरोंको नष्टकरताहै । इसकाप्रयोग शीतकालमें जवानआदमीपर करना उचितहै ॥ १०३ ॥

१०४ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) २

नलीडमर्वाख्यविधौ पुरस्तात्
षड्गुणत्रिगुण्यादिबलि रसेन्द्रे ।
पक्त्वा ततः शुद्धमनःशिलायां
घृष्ट्वा पचेत्तुल्यसुगन्धकायाम् ॥ ४३४ ॥
एतद्विधानेन यथेष्टमुग्रं
कुर्यान्निकुर्यादपि रोगसङ्घम् ।
वनस्पतिस्थावरसादियोगे
मर्षी विभाव्याऽपि स्वर्गतियोग्यैः ॥ ४३५ ॥
शुद्धौ शिलाया अपि कामचारः
सारप्रपञ्चस्य भिषग्वरस्य ।
दिग्दर्शनं तालयिमूर्च्छनेन
सन्दर्शितं मूर्च्छनसिद्धिहेतोः ॥ ४३६ ॥

रसायनसार , सर्वरोगाऽधिकारे ।

भाषा—नलीयुक्त डमरूयन्त्रमें पहिले पारेमें षड्गुणादि-गन्धकजारणकर उसकेबराबर शुद्धमैनसिल और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर ४ दिनकी आगदेकर रससिन्दूर तैयारकरे । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगसङ्घको दूरकरताहै । तत्तद्रोगहर वनस्पतियोंकेरसमें कम सेमें भावनादेकर यदि समस्तकिया हो तो तत्तद्रोगोंको विशेष कर नष्टकरेगा । इसीतरह मैनसिलकीशुद्धि में भी वैद्य अपनी बुद्धिपूर्वक विचारकरसकाहै । बुद्धिमानोंकेलिये केवल दिग्दर्शन पर्याप्तहै ॥ १०४ ॥

१०५ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) ३

हारिद्रमल्लालविषाक्ततैले
जैपालभल्लातकरक्ततैले ।
व्यस्ते समस्तेऽप्युतगालितायां
मनःशिलायां दधिवापितायाम् ॥ ४३७ ॥
उष्णाम्बुसङ्क्षालितशोषितायां
घर्मेऽनिलीन्ने समशुद्धगन्धम् ।
सुवर्णसद्भासितसूतराजं
नीत्वा समं लोहकटाहिकायाम् ॥ ४३८ ॥
मन्दाग्नितप्तं त्रयमेतदेकी-
कृत्य प्रघर्षेण सृजेत भूयः ।
चुल्याः कटाहीमवतार्य पङ्कं
निस्सार्य कुर्यात्पटगालितञ्च ॥ ४३९ ॥
समृत्पटायामनुकूपिकायां
भृत्वा मषी यामचतुष्टयेन ।
सर्वार्थकर्यां सिकताख्ययन्त्रे
पक्त्वा गलस्थं रसमाददीत ॥ ४४० ॥
रक्तस्थदोषानपहाय शीघ्रं
धातूनशेषाननुपर्जीजयेत ।
शिलादिचन्द्रोदयसञ्ज्ञकः स्या-
दुष्णस्वभावो नवनीतसेव्यः ॥ ४४१ ॥

रसायनसार, कुष्ठरोग ।

भाषा—शीलासोमल, हरिताल, बछनाग, जमालगोटा और भिलावोंसे निकालेहुए तैलमें स्वकीय इच्छानुसार मैनसिलको लालकर दहीमें ठंढाकर अत्यन्ततीक्ष्णधूपमें सुखाकर इसकीबराबर शुद्धगन्धक और सुवर्णमारादियाहुआपारा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर लोहेकीकड़ाहीमें रख मन्दाग्निसे पिघलाकर लोहेकीकड़छीसे घोटकर तीनोंको अच्छीतरह मिलाकर खूब-घोटकर फिरसे कज्जलीबनाय कपड़छानकर ६–७ कपड़मिट्टी-दीहुई आतशीशीशीमें भरके सर्वार्थकरीभट्टीपर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी कड़ी आगदे । उसकामुख खुलारखनाचाहिये नहीं तो ४ पहरमें रसतैयार नहीं होगा । पर आंचमन्दकरतेसमय शीशीका मुख बन्दकरदेना नहीं तो शीशी खाली मिलेगी । स्वाङ्गशीतल-होनेपर युक्तिसे शीशीको फोड़कर रसको निकाले । इसमेंसे रोगी और रोगका बलाबल देखकर आधीरत्तीसे एकरत्तीतक उचितमात्रामें देनेसे यह कामधातादि रक्तविकारव्याधियोंको तत्क्षण नष्टकरताहै । अन्य अनुपानोंकेसाथ यदि अनुकूल न पड़े तो मक्खनके साथ देना ॥ १०५ ॥

१०६ शिलासिन्दूरम् (चतुर्थम्)

बीजं हरस्य च तदर्दधमनःशिलाञ्च
धत्तूरमाल्यरसमर्दितमष्टयामम् ।
तत्काचकूपीनिहितं सुमुद्रितं
द्वात्रिंशद्यामपिहितं सिकताख्ययन्त्रे ॥
तत्पारदं भवति कुङ्कुमपुष्पतुल्यं
तद्योगवाहि फलदं च रसायनं च ॥ ४४२ ॥

यो म , रसादने ।

धूपमें सुखावे। ऐसे १०० भावनाए देकर जमालगोटा और धोईहुईमिर्चे प्रत्येक ४०० नग, एरण्डबीजोंकीमज्जा ६० नग मिलाकर जमीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जमीरीके रसमें घिसकर अञ्जनकरनेसे रतौंधी, ग्रहपीडा, सर्पविष, पटलदोष, दुर्जरशीतज्वर, हैज़ा वगैरह अजीर्णदोष येसब नष्ट-होतेहैं। यद्यपि सहकारक द्रवविशेष नहीं बतायाहै परन्तु जमीरी-केरसमें मर्दनकियागयाहै इसलिये खानेमेंभी उसीसेकामलेवे। इसीतरह शार्ङ्गधरमें जयपालमज्जाको नीबूकेरसमें भावना देकर सर्पविषमें अञ्जनलिखाहै। नीबूकारस इसमें अनुकूलहै परन्तु सर्पविषकेलिये यहांपर मनुष्यलालासे कामलियागयाहै॥ ११४॥

११५ शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः (त्रैलोक्यकीर्तिः)

तालेन तुल्या गजमागधी स्या-
त्तदर्द्धभागेन नवं पिचुः स्यात्।
दिनार्धमानं सुदृढं विमर्द्य
शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः॥ ४७३॥
भुजङ्गवल्लीछदनेन दद्या-
त्कोलास्थिमात्रा जयति ज्वरौघम्।
दुग्धौदनं पथ्यमिह प्रशस्तं
वारत्रयं केवलमेव दुग्धम्॥ ४७४॥
दिने द्वितीये गुडजीरकन्तु
दुग्धौदनं दाहनिवृत्तये तु।
त्रैलोक्यकीर्ति विषमाग्निहन्ति
प्रकीर्तिता सा गिरिराजपुत्र्या॥ ४७५॥

र., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, गजपीपल और बिनौलेकीमींगी समभागलेकर ४ पहर शुष्क मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे बेरकीगुठलीकेबराबर मात्रा पानमें रखकरदेनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। इसे दिनमें ३ बार देना। पथ्यमें दूधभात एकबारदेना। बादमें भूखलगनेपर केवलदूध पिलाना। दूसरेदिन गुड़ और जीरेकेसाथ गोली देना। और अधिकदाह मालूमहोनेपर दूधभात देना। इसकेसेवनसे शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व, एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक समस्त-विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै॥ ११५॥

११६ शीतज्वरारिरसः (प्रथमः)

पट्पलं तालकं शुद्धं बीजं भल्लातकोद्भवम्।
सञ्चूर्ण्य भावयेद्गाढं भृङ्गराजस्य वारिणा॥ ४७६॥
शुक्लायाश्चाऽपि कृष्णाया काकमाच्या रसेन च।
अर्कस्नुहुण्डदुग्धेन दातव्या भावनाः क्रमात्॥ ४७७॥
तत्कल्कं रोटिकाकारं स्थाल्यामारोप्य यत्नतः।
संशुष्कञ्च पुनर्धार्यं शरावे शुभलक्षणे॥ ४७८॥
तच्च वस्त्रमृदा लिप्त्वा सन्धिं रुद्ध्वा विशोषयेत्।
ततश्च वालुकायन्त्रे धार्यं तच्च प्रयत्नतः॥ ४७९॥
चुल्ल्यामारोप्य दातव्यो वह्नि र्यामत्रयं क्रमात्।
स्वाङ्गशीतं गृहीत्वा तद्गोलं सञ्चूर्णयेद् दृढम्॥ ४८०॥
तस्मिन् मरिचचूर्णस्य द्विपलं चाथ मेलयेत्।
नागवल्लीदलेनाऽयं माषमात्रश्च भक्षितः॥ ४८१॥
हन्ति शीतज्वरं घोरं ध्रुवं तक्रौदनाशिनः।
रसः शीतज्वरारि र्हि वैद्यवृन्दैः सुभाषितः॥ ४८२॥

रसचि., र शं. शीतज्वरे।

टि०—रसराजशङ्करे शीतभैरवनाम्ना "समानभल्लातकतालकौ-द्ध सञ्शोदितावर्कपयोविभावितौ। तत्पक्किके खर्परयन्त्रमध्यगे धृष्यम्वि ल्ये च पुटेदिनि निधा॥ एकाहिकादौ तुहिनज्वरेऽस्य प्राक्शीतवा लादितेरेच्च वल्लम्। गद्याणकार्धेर्मरिचै समेत शाल्योदन दुग्धमिद हि पथ्यम्॥ तापो यदि स्याद्दवरेऽह्नि तोय घटप्ररोटोत्थमुप पिबच्च। प्रभुञ्ज मान सितया समेन शीतात्पर भैरवनामकेयम्॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति म उपरितनपाठस्यैवाऽपभ्रंशोऽस्तीति विद्वद्भिर्विभावनीयम्। रसचि न्तामणौ सिद्धतालकेश्वरनाम्ना "भल्लातक तालकतुल्यभाग सञ्चण्डिका यन्त्रवरे च दत्तम्। दत्वा शरावञ्च शुभन्धिरोध सुपष्टिकोस्नान्विनिरित्तु मध्ये॥ यदा च सर्वे स्फुटिता भवेयुस्तदा रस स्यात्खलु तालकेश॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति परन्तु शीतज्वरारिणाऽस्य सर्वांशे समान, भाव-नादौ प्रक्षेपे च येय न्यूनता दृश्यते तत्र मद्ग्रहकर्तुरपराध पाठस्त्वेक एवाऽस्ति इति विद्वद्भिरन्तर्निमज्य विचारणीयम्।

भाषा—शुद्ध हरिताल और भिलावे ६-६ पललेकर बारीक-कूटकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर सफेद और कालीमकोय, आक और थूहरकादूध इनप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर कल्ककी रोटी जैसी बनाय हंडीके पेंदेपर रखकर सुखाले। फिर शराव-सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सूखनेपर बालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी मध्यमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर २ पल धोईहुई मरिच मिलाकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा पानमें रखकर खानेसे घोर-शीतज्वरको यह नष्टकरताहै॥ ११६॥

११७ शीतज्वरारिरसः (द्वितीयः)

शम्भुः फेनमहः शिला सरसकं माक्षीकमेकांशकं,
शुल्वं सोमलमक्षिभागमखिलं नि.कारवल्लीरसैः।
आर्द्रीकृत्य कृतः सुकृष्णलमितः शीतज्वरारिः सिता-
मिश्रो हन्ति सुदुग्धभक्तकभुजः तृष्णान्सशीतज्वरान्

र प, र. बो. शीतज्वरे।

भाषा—शङ्ख, अफीम, मैनसिल, खपरिया, सोनामाखी १-१ भाग, ताम्रभस्म और सोमल २-२ भागलेकर बारीक-चूर्णकर करेलेकेरसकी ३ भावनाए देकर १-१ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे दाह अथवा शीतज्वरोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूध-भातदेना॥ ११७॥

११८ शीतज्वालारसः

कर्षमात्रं हतं शुल्वं पञ्चांशा खर्परी शिला।
रसद्विगन्धकं तालं कारवल्लीरसैः पुटेत्॥ ४८४॥

वालुकायन्त्रसंपक्वं गुञ्जामात्रां नियोजयेत् ।
सप्तभि मरिचै र्युक्तं शीतज्वालां निहन्त्ययेत् ॥ ४८५ ॥

र क यो. ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म १ कर्ष, खपरिया और मैनसिल ५–५ कर्ष, शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल २–२ कर्ष लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर करेलेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर ४ पहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती ७ मिर्चोंके साथ देनेसे यह शीतज्वालाको निवृत्तकरताहै ॥ ११८ ॥

११९ शीततापहरणरसः

चूर्णतालमनलेन समानं
वज्रिजेन सलिलेन विभाव्य ।
पाचयेल्लघुपुटेऽस्य च वल्ल
शीततापहरण. ससितस्तु ॥ ४८६ ॥

यो च, शीतज्वरे ।

भाषा—सीपकाचूना और हरिताल १–१ भाग, शुद्ध भिलावा २ भाग लेकर सबका अलग २ चूर्णकर भिलावेकेसाथ मिलाकर थूहरकेदूधसे ३–४ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥११९॥

१२० शीतपित्तभञ्जनरसः

पारदं गन्धकञ्चैव कासीसं ताम्रमेव च ।
शुद्धं मृतञ्च संयोज्य खल्वे गाढं विमर्दयेत् ॥ ४८७ ॥
भृङ्गराजरसैश्चैव शरपुङ्खाद्रवैस्तथा ।
भावयित्वा तु सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ४८८ ॥
वारत्रयं तता नीतं शीतपित्तप्रभञ्जनम् ।
रसं गुञ्जाद्वयं धीमान्गुडेन सह दापयेत् ॥ ४८९ ॥
अनेन चाशु नश्यन्ति शीतपित्तादयो गदाः ।
कुष्ठान्यपि च सर्वाणि वातरक्तं तथैव च ॥ ४९० ॥
जलावगाहं छायाश्च सेवनञ्च प्रजागरम् ।
विदाहि चाशनं त्याज्यं शीतपित्तादिरोगिणा ॥४९१॥

र म मा, ना वि, शीतपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कसीस और ताम्रभस्म सम भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा और सरफोंकाकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोने पर निकालकर भगरा और सरफोंकाके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आंचदे। ऐसे ३ आंचदेकर बारीक पीसकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती गुडकेसाथदेनेसे शीतपित्त, कुष्ठ, वातरक्त येसब नष्टहोतेहैं। इसके सेवनकरनेवालेको शीत जलस्नान, वायु, जागरण, विदाहीअन्न छोडदेने चाहियें ॥१२०॥

१२१ शीतभञ्जनरसः (प्रथम·)

द्वितुल्यं मरिचं सूतं गौरीपाषाणनागरम् ।
कारवल्लीरसे मर्द्यं कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥ ४९२ ॥
मत्स्यपित्तैस्ततो भाव्यं गुञ्जामात्रं प्रयत्नत. ।
शर्करामनुपानेन देयं शीतज्वरं हरेत् ॥
हरप्रकटितः पूर्वं नाम्नाऽयं शीतभञ्जन. ॥ ४९३ ॥

वै चि, वा, शीतज्वरे ।

भाषा—शुद्ध तूतिया, हीराकसीस, मरिच, पारा, सोमल, सोंठ समभागलेकर पारद अदृश्यहोनेतक मर्दनकर करेलेकेरससे एकदिनभावना देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीकेपित्तसे एकदिन मर्दन कर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथदेनेसे यहसमस्त शीतज्वरोंको नष्टकरताहै १२१

१२२ शीतभञ्जनरसः (द्वितीय.)

तुल्यमेकं त्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् ।
कुमारीरससम्पिष्टं कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥
तुलसीरससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ४९४ ॥

र क यो, र पा शीतज्वरे । रसपारिजाते पूर्णचन्द्रोद-येति नाम ।

भाषा—शुद्ध तूतिया १ भाग, हरिताल ३ भा, मैनसिल ४ भागलेकर बारीकपीस घीकुवारकेरसमे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोने-पर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती तुलसीकरसक-साथ देनेसे यह शीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२२ ॥

१२३ शीतभञ्जीरसः (शीतज्वरारिरसः) १

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मन शिला ।
एकनिष्कं द्विनिष्कञ्च चतुर्निष्कं तथैव च ॥ ४९५ ॥
पञ्चनिष्कं रसै. कारवेल्ल्याः सम्यक् प्रकल्पयेत् ।
ताम्रपत्राणि तुल्यानि तेन कल्केन लेपयेत् ॥ ४९६ ॥
शरावसम्पुटे तानि धृत्वा तेषामुपर्यपि ।
दद्यात्तां पिष्टिकां पश्चात्पुटपाकेन पाचयेत् ॥ ४९७ ॥
तत. सञ्चूर्णयेदेवं रसः क्षौद्रेण भक्षित· ।
यनेकमात्रया हन्ति घोरं शीतज्वरं ध्रुवम् ॥ ४९८ ॥

मा प्र, र स, र. च, र क, र सु, भै रा, वै द, चि र, भै र, यो म, र क, रसायनसं., र क ल, र र दी, गो, र का, रस स, र (मा), र क यो, रसायनसार, र र स, र को, यो च, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—भै र, र क स्नयो शीतारिरिति नाम । रसायनसारम" शीतज्वराङ्कुश इति नाम । र क ल ज्वराङ्कुशेति नाम, या म शीतज्वरारीति । र र दी, र का [illegible] विषमज्वरारिरस इति नाम । [illegible] विषमज्वरेभाङ्कुश इति नाम । [illegible]

द्भागाद्दरहितमिति पाठ नियोज्य रसान्तर प्रकल्पितम्। तत्तु न सम्यक प्रतिभाति, केवल क्रमाद्भागविवृद्ध तदित्यस्य स्थाने केनापि कारणेन विभ्रम पतित प्रतिभाति। चिकित्सारहस्य द्वितीयस्थाने शिलारहित एक पाठ प्रकल्पितस्तत्राऽज्ञानताऽतिरिक्त सूक्ष्ममपि फल न पश्याम। र (मा) शुपर्णीनलस्थाने करवीररसेन भावना प्रदत्ता। रत्नाकरौषध योगे गन्धकस्थाने तुत्थ नियोज्य रामबाण इति नाम स्थापितम्, तस्याऽपि पाठस्याऽस्यैवाऽन्तर्भाव कर्तव्य। तुत्थकस्याऽधिकस्याऽत्रैव नियोजनीय तथाकरणे गुणवृद्धिरेव भविष्यति पाठन्यूनता च महत्त्वम्। रसायनसारेऽस्य पाठो ज्वराङ्कुशनाम्ना निहितोऽस्ति तत्र सर्वेषा द्रव्याणा समताऽस्ति, तुत्थोत्थनाम्रचन्द्रिकामध्ये च पाक विहितम्। र र म, र कौ, यो च एषु गन्धको न दृश्यते परन्तु तन्निष्कासन नास्य फलाभावाऽस्ति प्रत्युत गन्धकप्रक्षेपेण गुणवृद्धिरेव भविष्यति अत स्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, हरिताल ४ भा, मैनसिल ५ भाग लेकर नीलवर्णकमलीकर करेलेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर इसकी बराबरके शुद्धतांबेके पत्रोंपर लेपदेकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर खरलकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ यवप्रमाण उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह घोरशीतज्वरको नष्टकरताहै॥ १२३॥

१२४ शीतभञ्जीरसः (द्वितीय)

रसहिङ्गुलतालानि तुल्यं शम्बूकजं रज.।
कन्याद्भिः सप्तधा भाव्यं पक्तव्यञ्च शरावके ॥४९९॥
अहोरात्रं पुन शीतं कुम्भाध. सिकतान्तरे।
दत्त पथ्यन्तु तक्रेण भक्त क्षीरेण वा युत ॥
लवणेन विना सर्वान्नाशयेद्विषमज्वरान् ॥ ५०० ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, हरिताल, तुत्थ और घोंघा सममागलेकर नीलवर्णकमलीकर घीकुवारकेरससे ७ भावनाए देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनरातकी अग्निदेव। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोडे। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तविषमज्वरोंको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य तक्र अथवा दूधभात देना और नमकका परहेज कराना॥ १२४॥

१२५ शीतभञ्जीरसः (तृतीय)

रसगन्धौ शिला ताल माक्षीकं विषतुल्यके।
तुल्यं स्नुक्क्षीरपुटितं सघृतं कूर्मपाचितम् ॥
शीतभञ्जी रसो हन्ति द्विगुञ्जो विषमज्वरान् ॥ ५०१॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, हरिताल, सोनामाखी, वच्छनाग और तुत्थ सममागलेकर नीलवर्णकमलीकर थूहरकेदूधसे १–२ दिन मर्दनकर सुपारीकेसी बनाय आतशीशीशीमेंभर मुद्रबन्दकर वालुकायन्त्रमेंरख ४ पहरकी अग्निदेव। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती घीकेसाथदेनेसे यह समस्तविषमज्वरोंको नष्टकरताहै॥ १२५॥

१२६ शीतभञ्जीरसः (चतुर्थ)

टङ्को तालं सोमलकं हारिद्रं शुक्तिचूर्णकम्।
तुल्यं वल्लीरसपुटैः शीतभञ्जीरस· पर. ॥ ५०२ ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—नागवङ्गभस्म, हरिताल, पीलासोमल, मोतीकीसीप और तृतिया सममागलेकर नीलवर्णकमलीकर करेलेके रससे ६–७ भावनाए देकर मूंगबराबर गोलियां बनाकर रख छोडे। इसमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तविषमज्वरोंको नष्टकरताहै॥ १२६॥

१२७ शीतभञ्जीरसः (पञ्चम)

द्विपञ्च पञ्च पञ्चैव टङ्कालनवसारकम्।
काकमाचीकुमार्यद्भिः मर्दितञ्च दिनं दिनम् ॥५०३॥
सूर्ययामैः शरावेण पक्वोऽयं तु रस. पर.।
शीतभञ्जी द्विगुञ्जस्तु निहन्ति विषमज्वरान् ॥५०४॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सुहागा १० भाग, हरिताल और नोसादर ५–५ भाग लेकर मकोय और घीकुवारकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर वालुकायन्त्रमें १२ पहरकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विषमज्वरोंको नष्टकरताहै॥ १२७॥

१२८ शीतभञ्जीरसः (षष्ठ)

पारदं रसकं तालं तुल्यं टङ्कणगन्धकम्।
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेल्लरसे दिनम् ॥ ५०५ ॥
मर्दयित्वोदरं लिम्पेत्ताम्रपात्रस्य बुद्धिमान्।
अङ्गुलार्द्धप्रमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥ ५०६ ॥
यन्त्रे यावत्स्फुटत्येन व्रीहयस्तस्य पृष्ठत.।
ततस्तच्छीतलं ग्राह्यं ताम्रपात्रोदराद्भिषक् ॥ ५०७ ॥
माषैकं पर्णखण्डेन भक्षयेन्मरिचैः समम्।
शीतभञ्जी रसो नाम त्रिदिनान्नाशयेज्ज्वरम् ॥५०८॥

र स, र सि, र र स, र. क ल, भै र, रसायनस, र को, र सु, र च, यो च, यो म, र सु, र म, र चि, र स क, भा प्र ख रा, र क, नि र, चि र भ, र (मा), दो, र का, र क या, रस स, र र को, शा. स, र प्र सु, र यो, र पा ज्वराऽधिकारे।

टि०—रसमुक्तावल्या टङ्कणस्थाने कुनटी नियोजिता, अस्मादेव रसाचाम्रपात्राद्रलेपनादिक्रिया निष्कास्य शीतहारीति स्वतन्त्रनाम स्थापितम्॥ एतत्पाठस्थाने "तुल्य टङ्कणसूतगन्धकविष सतक्षीर तालक, सर्व सल्वनक विमद्य षण्का तत्कारवल्लीरसैः। गुञ्जैकप्रमिता सुधाकर युता सज्जीरकणाऽथवा, एकद्वित्रिचतुर्थशीतहरण शीताङ्कुश नामत॥" अय पाठ वै त्रि, वै द, नि मा, यो म, र. प्र, यो र, वा, एषु निहितोऽस्ति। र सु, रसायनस, नि र, र का, र वो, र क या एषु तु पाठद्वयमपि निहितमस्ति तत्र शीताङ्कुश विषमभिन्नपाठेऽस्मि ताम्रपात्रलेपनादिक्रिया च नास्ति स्थापनता मद

दन्तर प्रतीयत परन्तु प्रकृतरसे विषयेण विधाय रसनिष्पादने फलाधिक्य पाठन्यूनता च महत्फल भविष्यत्यतस्तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव कृतोऽस्ति इति विद्वद्भिरावलनीयम् । रस स, र क ९, र बो एषु ग्रन्थेषु शीतारिनाम्ना "शुल्व गन्धकटङ्कणौ गन्धात तुत्थ रस खर्पर, ताल तुल्य मिद०" इत्यादिक स्वतन्त्रपाठो निहितोऽस्ति । उपरि निर्दिष्टत्वात् तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव कृतः । किन्तु तस्मिन्हस्ये तुत्थ परित्यक्तम् । क्वचिद्रसत्रस्थाने ताम्र नियोजन्ति तत्तु न सम्यक् ? अग्रे ताम्रपात्रोदरे स्थविधानात् । दग्धताम्रपात्रसहितस्य रस प्रयोगात् स्वतन्त्रताम्रदानस्य नास्त्यत्यावश्यकता । ननु ताम्रपात्रोदरादिति पञ्चम्या ताम्रपात्रस्य पृथगवस्थानात्कथ भस्मीभूतताम्रपात्रग्रहण आस्यत इति चेन्न तथामति ताम्रपात्रोदरे स्थविधानस्यैव वैयर्थ्यात् । प्रथमशीतभञ्जिप्रमाणोऽय योगोऽस्ति तत्र च ताम्रदग्धभागस्यैव ग्रहणमस्ति इति सुधीभिर्ह्यावलनीयम् । अपरिपक्वताम्रपात्रभागस्याऽवशिष्टत्वाद्यथाकथञ्चिदपादानस्य निर्वाह करणीय । रसकप्रक्षेपणस्य तु निरर्थकत्वमिवो प्रतिभाति । र स, र क ग्रन्थयोरनुपाने तुलसीमरिच विहितम् । तथाच "धात्रीकल्केन वा युक्त दाहाख्य विषमज्वरेत् । पथ्य दुग्धौदन दद्यान्मुद्गयूष सशर्करम् । ज्वरे धातुगते दद्यात्पिप्पलीक्षौद्रसयुतम् । अय पञ्चाननो नाम विषमज्वर नाशन ॥" इत्यधिर पाठ कृत नाम च पञ्चाननरस इति स्थापितम् । शा स, र म सु, ग्रन्थो ज्वरारिरस इति नाम । रसकामधेनौ द्वितीयस्थाने ताम्रमाक्षिकविषाद्यधिकतया नियुञ्जैकः रसोऽन्यैव प्रक्रियया निष्पादित परन्तु तत्र कामधेनुमङ्गलपितुरज्ञाननाऽस्ति । ताम्रपात्रोदर लिम्पदिति वाक्येन ताम्रयोगस्याऽनायाससिद्धत्वेन स्वतन्त्रप्रक्षेपस्याऽनौचित्यात् । तस्मात्त्र पाकाऽभावाऽस्तीति प्रतीयते, तन्मूलन्तु पाठोद्धरणपुस्तक शुद्धिपाठाऽस्मादलम् । रसकामधेनावेवैकत्रस्थाने शीतभञ्जीनाम्ना "सूतगन्धार्कतालञ्च माक्षिक टङ्कण विषम् । खर्पर शिखितुत्थञ्च समभागानि मर्दयेत् । कारवल्लीरसेनैव दिनमेक निरन्तरम् । गुञ्जमात्रा वटी दत्ता शीतभञ्जी महारस ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्र समावेशोऽनायाससिद्ध ।

भाषा—शुद्धपारा, खपरिया, हरिताल, तुत्थ, सुहागा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे एकदिन मर्दनकर तांबेकेवर्तनमें दो जव मोटा लेपकर मुहपर ढक्कन रख सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसुखाय बालुकायन्त्रमें रख ऊपर धान डालकर अग्निदे । जब धानोंकी खीलहोजाय तब अग्निबन्दकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर जितना ताम्रपात्र अच्छीतरह जलगया हो उसकेसहित निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उड़दबराबर मात्रा ७ कालीमिर्चोंकेसाथ पानमें रखकर खानेसे वमनहोकर ३ दिनमें शीतज्वर नष्टहोताहै ॥ १२८ ॥

१२९ शीतभञ्जीरसः (शार्ङ्गरीज्वराङ्कुश) ८

हरिद्रा च सुधाक्षारौ सिन्दूरं धूर्तबीजकम् ।
प्रत्येकं कर्षमात्राणि शोधितानि नवानि च ॥ ५०९ ॥
हरितालञ्च भल्लातं पृथक्कर्षचतुष्टयम् ।
सूक्ष्मं चूर्णं विधायाथ भावयेत्ति पृथक्पृथक् ॥५१०
काश्माचीभृङ्गराजसूरणानां रसैः क्रमात् ।
अर्कदुग्धैः स्नुहीक्षीरैस्तद्वद्देयं पुटत्रयम् ॥ ५११ ॥
शुष्कं तद्वण्डिकामध्ये कृत्वा दत्त्वा शरावकम् ।
विधाय सन्धिसंरोधं गुडेन लवणाम्भसा ॥ ५१२ ॥
तस्योपर्यागलान्तञ्च भस्मना पूर्य हण्डिकाम् ।
तस्या मुखं मर्दयित्वा मृद्भिः पट्युतैः ध्रुवम् ॥ ५१३ ॥
पश्चाच्चुल्यां समारोप्य हठाग्निं यामयुग्मकम् ।
स्वाङ्गशीतलमुत्तार्य तोलयेत्सिद्धमौषधम् ॥ ५१४ ॥
तस्य सिद्धस्य षष्ठांशं मरिचं दापयेद्बुधः ।
सूक्ष्मचूर्णं विधायाऽथ मात्रां गुञ्जाद्वयात्मिकाम् ॥५१५
पर्णपत्रेण मतिमान् दापयेच्छीतकज्वरे ।
दाहयुक्ते च विषमे ज्वरान्सर्वान्व्यपोहति ॥ ५१६ ॥

र.सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—हल्दी, सीपकाचूना, सज्जी और यवक्षार, रससिन्दूर, शुद्धधतूरेकेवीज १–१ कर्ष, हरिताल और भिलावे ४–४ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर भिलावेकेसाथ १–२ पहर घोटकर मँकोय, भंगरा, सूरण, आक और थूहरकादूध इनके द्रवोंसे ३–३ भावनाएं देवे । फिर गोलाबनाय सुखाकर हण्डीकबीचमें रख उलटे शरावसे ढककर गुड़ और लवणसे सन्धिबन्दकर कपड़े में छानीहुई सफेदराख गलेतकभर ढकनलगाय ६–७ कपड़मिट्टीसे सन्धिबन्दकर चूल्हेपरचढ़ाय दोपहरकी कड़ीआंचदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर छठाभाग मरिचमिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती पानमें रखकर देनेसे दाहयुक्तज्वर, विषम तथा साधारणज्वर नष्टहोतेहैं ॥

१३० शीतमातङ्गकेशरीरसः

रसविषशिखिगन्धं खर्परञ्चैकनेत्रा-,
ऽनलनिगमशिराक्षै र्योजयेच्च क्रमेण ।
कनकदलरसेन सूक्ष्मपिष्टन्तु गुञ्जा-
परिमितगुटिकेयं शीतमातङ्गसिंहः ॥५१७ ॥

र क , यो म , ना वि , या , वै चि , ज्वराधिकारे ।

टि०—योगमहार्णवे शीतारिरसेति नाम । वाहटो द्वितीयस्थाने गन्धरहितमिम योग शीतगजाङ्कुशनाम्ना प्रख्यापितवान् परन्तु तत्र योगान्तरताया अभाव स्पष्ट एव सुधियां हृदि प्रतिभाति, गन्धकनिष्कासने प्रयोजनाऽभावात् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, बछनाग २ भा , तूतिया ३ भा , गन्धक ४ भा , खपरिया ३ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपान केसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३० ॥

१३१ शीतलपर्पटी

क्षारं प्रकुञ्चे द्रवति प्रणीय
मार्य्यं वलिं ढालय खल्यकुक्षौ ।
सिद्धो रसः शीतलपर्पटीति
कृच्छ्रेऽतिकृच्छ्रे कथितः सजीरः ॥ ५१८ ॥

सि भे म , मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—एकपलशोरेको कड़ाहीमें गलाकर नीचे उतार एक माशा शुद्धगन्धक डालकर चलादे । गलजानेपर खरलमें डालकर घोटे और बारीकचूर्णबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा जीरकसाथदेनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ १३१ ॥

१३२ शीतलानन्दरसः

हेमरौप्यरसव्योम गन्धं कांस्यं शिलाजतु ।
कन्याद्भि मर्दयित्वाऽथ मुद्गमानां वटीश्चरेत् ॥५१९॥
यथादोषानुपानेन प्रयोगादस्य निश्चितम् ।
मसूरिकादयः सर्वे नश्यन्ति त्वरया गदाः ॥ ५२० ॥
देव्या शीतलया प्रोक्त शीतलानन्दनामकः ।
मसूरिकाभिभूतानां रसोऽयं हितकाम्यया ॥ ५२१ ॥

आ वि शीतलायाम् ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, पारा, अभ्रक, कांसा इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक और शिलाजीत समभागलेकर घीकुवारकरससे १-१ दिन मर्दनकर मूगनरावर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह मसूरिकाप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १३२ ॥

१३३ शीताङ्कुशरसः (चातुर्थिकेभाङ्कुश)

रसं गन्धक निर्विषी वत्सनाभं
तुत्थद्वयं गौरिपाषाणतालम् ।
विमर्द्यापि गोलीकृतोऽयं रसेन्द्रो
महापूर्विकाया बलाया रसेन ॥
रसै धूर्तकस्याऽपि शीताङ्कुशोऽयं
सखण्डस्तु चातुर्थिकेभाङ्कुशोऽयम् ॥५२२॥

र प्र , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, निर्विषी, बछनाग, तूतिया, हीराकसीस, सोमल, रसमाणिक्य सबसमभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कड़ी और धतूरेकेरससे १-१ दिन मर्दनकर मूग बराबर गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपान अथवा शक्करकेसाथदेनेसे यह चातुर्थिकज्वरको नष्ट करताहै ॥ १३३ ॥

१३४ शीताररिसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं शुद्ध टङ्कणश्च समंसमम् ।
पारदाद्द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥ ५२३ ॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चात्वग्भस्म शर्कराऽपि च ।
प्रत्येकं सूततुल्य स्याज्जम्बीरे मर्दयेद्दिनम् ॥ ५२४ ॥
द्विगुञ्जस्ततस्तोयेन वातश्लेष्मज्वरापह ।
रस शीतारिनामाऽय शीतज्वरहर पर ॥५२५॥

र स भै र र मु , नि र , रसायनस , सू प्र , र क , र सि , धि र भ , र म र च , र क ल र चि , र का , र र कौ , र क या , वा , भा प्र , रसचि , यो म , ज्वराऽधिकारे।

टि०—भा प्र रसचि , यो म एषु तथा नि र र मु एतयो द्वितीयस्थाने सूर्यगदरस इति नाम । रसेन्द्ररत्नकाप माणिक्यमधिक तया प्रक्षिप्य ज्वराङ्कुशति नाम स्थापितम् । माणिक्यऽधिकश्रीति श्रे विक्षिप्यता शीतारिरस तद् तदाधिक्ये न काप्यनुपपत्ति रसरत्नेक एव । रत्नाकरौषधयोगे शुण्ठ्यकचूर्णश्च अधिकतया निक्षिप्य ज्वरारिरस इति नाम स्थापितम् । धुस्तूरनिच्छुत्र अधिकतया दृश्यत । नि र, द्वितीयस्थान शीतपित्ताऽधिकारे पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा १-१ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग, सेंधव, मरिच, फ़ोइमलीकेछिल्कोंकी भस्म और शक्कर १-१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर १-२ रत्तीकीगोलियाबनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथदेनेसे वातश्लेष्मज्वर और शीतज्वर निवृत्तहोताहै ॥ १३४ ॥

१३५ शीताररिसः (द्वितीयः)

त्र्यूषणेन समं सूतं गन्धकन्तु तयोः समम् ।
मर्दयित्वा तु तत्सर्वं कारवल्या दिनत्रयम् ॥ ५२६ ॥
गुञ्जैकं सितया युक्त वान्तिशीतज्वरापहम् ।
पथ्यं दुग्धोदनं देयमथवा मुद्गसूपकम् ॥
दाहे शीतक्रियां कुर्यादायुर्वेदविशारद ॥ ५२७ ॥

र पा , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—सोंठ, मिर्च, पीपल १-१ भाग, शुद्ध पारा ३ भाग, गन्धक ६ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे ३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्करकेसाथदेनेसे यह वमन और शीतज्वरको नष्टकरताहै । पथ्यमें दूधभात अथवा मूगकायूषदेना । अधिक दाहहोनेपर शीतक्रियाकरना ॥ १३५ ॥

१३६ शीताररिसः (तृतीय)

वत्सनाभोषणश्चैवाऽऽकल्लकं मागधी तथा ।
दरदं समुद्रशोषश्च तुलसीरसमर्दित. ॥ ५२८ ॥
शीतज्वरं निहन्त्याशु शीतारि दुर्लभ. पर. ।
आर्द्रकादिरसैर्देयश्शीतव्याधिविनाशनः ॥ ५२९ ॥

रस स , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धबछनाग, मरिच, अकलकरा, पीपल, शिंगरिफ और समुद्रशोष समभागलेकर बारीकचूर्णकर तुलसीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखवगैरह उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३६ ॥

१३७ शीताररिसः (चतुर्थ)

सूतं गन्धकतालकौ च कुनटीं म्लेच्छ रविं मर्दये-,
त्साम्येनाऽथ विभावयेत्तुषविजै. सप्ताहमेतत्सुधी ।
शुष्कश्चाऽथ विमर्दयेद्रसवरं शीतारिसञ्ज्ञान्वित,
वल्लैकं मरिचैर्हरिप्रियरसे दत्ता हिम नाशयेत् ५३०
शीतज्वरास्तु गच्छन्ति हिमाद्रि रसपीडिता ।
पथ्यं क्षीरौदनं देयं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ५३१ ॥

र श , ज्वर ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ और ताम्रभस्म समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे ७ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच और तुलसीकेरसकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूधभातदेना ॥ १३७ ॥

१३८ शीतारिरसः (पञ्चमः)

तालकं तुत्थकं ताम्रं रसं गन्धं मनःशिलाम् ।
कर्षं कर्षं प्रयोक्तव्यं मर्दयेत्त्रिफलाम्बुभिः ॥ ५३२ ॥
गोलं न्यसेत्सम्पुटके पुटं दद्यात्प्रयत्नतः ।
ततो नीत्वाऽर्कदुग्धेन वज्रीदुग्धेन सप्तधा ॥ ५३३ ॥
काथेन दन्त्याः श्यामाया भावयेत्सप्तधा पुनः ।
माषमात्रं रसं दिव्यं पञ्चाशन्मरिचैर्युतम् ॥ ५३४॥
गुडं गद्याणकञ्चैव तुलसीदलयुग्मकम् ।
भक्षयेत्रिदिनं भक्त्या शीतारिं दुर्लभं परम् ॥ ५३५ ॥
पथ्यं दुग्धोदनं देयं विषमं शीतपूर्वकम् ।
दाहपूर्वं हरत्याशु तृतीयकचतुर्थकौ ॥
द्व्याहिकं सततञ्चैव वैवर्ण्यञ्च नियच्छति ॥ ५३६ ॥

रसायनस., र का , र सु , टो., चि र म., शा.स , र.को , र. प्र सु , ज्वराधिकारे ।

टि०—चि र म , शा स , र को , एषु शीतज्वरारिरिति नाम। रसप्रकाशसुधाकरे तरुणज्वरारिरितिनाम अत्र भावनायां श्यामा न दृश्यते

भाषा—शुद्ध हरिताल, तुत्थ, ताम्रभस्म, पारा, गन्धक और मैनसिल १-१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिफलाके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर ४ पहर वालुकायन्त्रमें पकावे । स्वाङ्ग शीतलहोनेपर निकालकर आक और थूहरकेदूध, दन्तीमूल और निसोतकेक्वाथसे ७-७ भावनाए देकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ५० कालीमिर्च, ६ माशे पुरानेगुड़ और दो तुलसीकेपत्तोंकेसाथदेनेसे यह शीत ज्वर, विषम, दाहपूर्व और चातुर्थिकप्रभृति तमामज्वरोंको दूरकरताहै । इसमें पथ्य दूधभातदेना ॥ १३८ ॥

१३९ शीतारिरसः (षष्ठः)

सितमल्लमनःशिलाऽहिफेन-
रसकाम्भोधिजताप्यतुल्यभागैः ।
सुषवीरसमर्दितैस्त्रिवारं
भज शीतारिमिमं सितार्द्धगुञ्जम् ॥ ५३७ ॥
सेवनाद्धरते तीव्रं ज्वरं शीतं महोल्बणम् ।
मात्रात्रयेण निःशेषं पथ्यं मुद्गौदनं स्मृतम् ॥ ५३८ ॥

वृ यो त , रसायनस , र को , र स , वै वि , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—रसराजशङ्करे सितमल्लो द्विभागो नियोजित भावनाया अभावो दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध सफेदसोमल, मैनसिल, अफीम, खपरिया, शङ्ख, सोनामाखी सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर करलेकेरसकी ३ भावनाएदेकर आधीआधीरत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे यह शीतपूर्व अथवा दाहपूर्वज्वरको ३ मात्राओंमें नष्टकरताहै। पथ्यमें दूधभातदेना॥

१४० शीतारिरसः (सप्तमः)

मदनफलसुबीजं टङ्कणक्षारतुल्यं,
पलमपि हरबीजं सर्वमेकत्र कृत्वा ।
सममिह जयपालं मर्दयेत्त्रिंशघस्रैः,
त्रिवृत्त्रिफलदन्ती नागवल्ल्या विमर्द्य ॥ ५३९ ॥
गुडजलमधुयुक्तं वल्लमेकं प्रदद्या-,
न्मलजलकफपित्तं वातदोषेण मिश्रम् ।
ज्वरमुदरविकारं श्लेष्मपित्तञ्च रक्तं,
तनुगतबहुरोगान्हन्ति शीघ्रं नराणाम् ॥ ५४० ॥

र. र को , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—मैनफल (मींढोल म०), इन्द्रजव, भुनासुहागा और यवक्षार १-१ कर्ष, रससिन्दूर १ पल लेकर सबकावारीकचूर्ण॰ कर सबकीबराबर शुद्ध जमालगोटा मिलाकर निसोत, त्रिफला, दन्तीमूल, पान इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुड़, पानी अथवा मधुकेसाथदेनेसे मलदोष, जलदोष, कफपित्तविकार, वातदोष, ज्वर, उदरविकार, श्लेष्मपित्त, रक्तपित्त इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ १४० ॥

१४१ शीतारिरसः (अष्टमः)

तालकखर्परसूषिकयुग्मं काञ्चनपङ्कजजातरसैश्च ।
मर्दय मर्दय पुनरपि मर्दय शीतभयादिनिवारणगुटिका

नि र , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, खपरिया, सफेद और पीलासोमल समभागलेकर धतूरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर सर्षपप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह शीतप्रधानव्याधियों को नष्ट करताहै ॥ १४१ ॥

१४२ शीतारिरसः (नवमः)

रसगन्धकयुग्मचितीश्रविष-
त्रिकटूनि टङ्कणयुतानि मुहुः ।
शिखिशूकरानिमिषपित्तचरैः
परिमर्द्य भावितमदोऽग्निरसैः ॥ ५४२ ॥
गुटिकीकृतं द्विगुणवल्लमितं
घनसारजीरककणाऽऽर्द्ररसैः ।
अतिशैत्यमोहयुतमप्यचिरा-
ज्जयति ज्वरं तमपि मृत्युकरम् ॥ ५४३ ॥
दशमूलाम्भसा सिद्धो दशाङ्गः प्रथितो गणः ।
सार्द्रकस्वरसः पीतः सादयत्युद्धुरं ज्वरम् ॥ ५४४ ॥

नि०, र. [illegible] , ज्वराऽधिकारे। र सु , सन्निपातान्तक इतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, सोमल, त्रिकटु, भुनासुहागा सबसमभागकी नीलवर्णकज्जलीकर मोर, सूअर, मछली और सांपके पित्त तथा चित्रककेक्वाथसे १-१ दिन मर्दनकर दो मरिचप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे औचिती देखकर १ या २ गोली शुद्धकपूर, जीरा, पीपल और अदरखकेरसकेसाथ देनेसे शीताङ्ग, अत्यन्तशीत और मोहयुक्त

असाध्यसनिपातको यह बहुतशीघ्र नष्टकरताहै । भटकटैया, वनभाटा, दन्तीमूल, पटोल, काकड़ासींगी, भारङ्गी, पोहकरमूल, कुटकी, कचूर, इन्द्रजव सममागलेकर जवकुटकर आधेतोलेसा दशमूलके २० तोलेक्वाथमें फिरसे क्वाथकनाकर ५ तोला बाकीरहनेपर अनुपानकीजगहदेनेसे अत्यन्तबढेहुए सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ १४२ ॥

१४३ शीतारिरसः (दशमः)

सूतं गन्धकमर्कमल्लकयुतं चेतःशिला खर्परं,
तालः साधुसुधेति कारविरसैः सम्मर्दितं सप्तधा ।
मूषापाचितमष्टमांशमिलितं हैयङ्गवीनेन त-,
द्दीप्यत्र्यूषणतुर्यभागघटितं मत्स्याजपित्ताप्लुतम् ॥
प्रत्येकं मुनिभिः सशर्करमिदं दुग्धेन वल्लैककं,
पीतं भक्तपयोभुजो विजयते द्राक् सर्वशीतज्वरम् ५४५

र. प्र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, सोमल, मैनसिल, खपरिया, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, मोतीकीसीप अथवा पत्यरकाचूना येसब समभागलेकर नीलवर्णकलौकर कारवी (भुइकरावी गुज०)के रससे ७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर सुखानेपर लघुपुटकीआचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अष्टमांश मक्खनमिलाकर १–२ पहर मर्दनकर अजवाइन और त्रिकुट समभागकाचूर्णचतुर्थांशमिलाकर मछली और बकरेकेपित्तोंसे ७–७भावनाए देकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और दूधकेसाथदेनेसे यह सबप्रकारकेशीतज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमेंपथ्य दूधभातदेना ॥ १४३ ॥

१४४ शीतार्युद्धूलनम्

शिखिपृष्ठफलसम्भूतभस्मभागाष्टकं शुभम् ।
मरिचस्य तु चत्वारो रसादेको विषस्य च ॥ ५४६ ॥
सूक्ष्मचूर्णीकृतादस्मान्मर्दनं चातियत्नतः ।
असाध्येऽपि हि शीताङ्गे स्वेदनं दीपनं परम् ॥
अन्नपानञ्च यातम्नं शीतारि दुर्लभः परः ॥ ५४७ ॥

रस. स., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—धतूरेके फलोंकीभस्म ८ भाग, मरिच ४ भा., शुद्धपारा और बछनाग १–१ भाग लेकर पारा अदश्य होनेतक मर्दनकर रखछोडे। अत्यन्तशीताङ्गभानेपर बहुतमसलकर इसकामर्दनकरनेसे शीताङ्ग निवृत्तहोजाताहै । यह स्वेदन और दीपनहै इसमें वातन्न अन्नपानदेना ॥ १४४ ॥

१४५ शीतांशुरसः

पुनर्टी शुद्धतालञ्च तद्दिघ्नं व्योपकं भवेत् ।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण गुञ्जायुग्मं तु सेवयेत् ॥ ५४८ ॥
अनुपानं शिवाक्षौद्रमुष्णं वारि तथाऽऽर्द्रकम् ।
शीतज्वरं सन्निपातं कामलां गुल्मपञ्चकम् ॥ ५४९ ॥
सर्वश्वासञ्च कासञ्च नाशयेदुदरं भृशम् ।
सन्निपातं तथा छर्दिमशीतिं वातरोगजाम् ॥ ५५० ॥
शूलमष्टविधं हन्ति नाभौ कुक्षौ च विद्रधिम् ।
आध्मानानाहविष्टम्भं तापं सर्वाङ्गदाहकम् ॥ ५५१ ॥
जङ्गमं स्थावरञ्चैव विषं हिक्कां विनाशयेत् ।
शोथञ्च भ्रममूर्च्छे च तिमिरञ्च व्यपोहति ॥ ५५२ ॥
मर्दितं निम्बतोयेन लेपितं गजचर्मनुत् ।
विसर्पमण्डले चैव दुष्टचर्म व्यपोहति ॥ ५५३ ॥
सेवितं लेपितं कुर्याद्द्रावितं ग्रन्थिमर्बुदम् ।
लेपितं दन्तरोगांश्च जिह्वानेत्ररुजस्तथा ॥ ५५४ ॥
अर्कपत्ररसैः कर्णे पूरणाद्रोगनाशनम् ।
निर्गुण्डीमिश्रितं नस्यमपस्मारं शिरोरुजम् ॥ ५५५
अञ्जनं यवमात्रञ्च नेत्ररोगविनाशनम् ।
माषञ्च सन्निपातानां कामलाज्वरशीतके ॥ ५५६ ॥
धनुर्वातञ्च भूतञ्च शोपरोगे च काकथा
भापितो रेवणेनैव रसः शीतांशुनामकः ॥ ५५७ ॥

व रा, धनुर्वाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और हरिताल १–१ भाग, सोंठ, मिर्च, पीपल २–२ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर नीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली हरें, मधु, गरमजल अथवा अदरख इनमेंसे किसीएककेसाथ औचितीसे देखकरदेनेसे शीतज्वर, सन्निपात, कामला, पांचोंप्रकारकेगुल्म, श्वास, कास, उदररोग, सन्निपातजवमन, ८० वातरोग, ८ प्रकारकेशूल, नाभि और कुक्षिका जहरबाद, आध्मान, आनाह, विष्टम्भ, ज्वर, सर्वाङ्गदाह, स्थावर और जङ्गमविष, हिचकी, शोथ, भ्रम, मूर्च्छा, तिमिर इनसबको यहनष्टकरताहै । नीमकेजलसे लेपकरनेसे छाजन, विसर्प, मण्डलकुष्ठ और चर्मरोग नष्टहोतेहै । खाने और लगानेसे गाठ और अर्बुदको गलादेताहै । लेपकरनेसे दात, जिह्वा तथा नेत्ररोगोंको नष्टकरताहै । आकके पत्तोंके रसकेसाथ मिलाकर डालनेसे कानकेरोगोंको दूरकरताहै । निर्गुण्डीकेरसकेसाथ नस्यदेनेसे अपस्मार और मस्तकपीडाको यह नष्टकरताहै । यवप्रमाणका अञ्जनकरनेसे नेत्ररोग नष्टहोताहै । एकमासेकी मात्रादेनेसे सन्निपात, कामला, शीतज्वर, धनुर्वात, भूतबाधा और शोषरोगको दूरकरताहै ॥ १४५ ॥

१४६ शुक्रमातृकावटी

गोक्षुरबीजं त्रिफला पत्रमेला रसाञ्जनम् ।
धान्याकञ्चविका जीरं तालीसं टङ्कदाडिमौ ॥ ५५८ ॥
प्रत्येकाऽर्द्धपलं दत्त्वा गुग्गुलोः कार्षिकस्तथा ।
रसाऽभ्रलोहगन्धानां प्रत्येकञ्च पलं क्षिपेत् ॥ ५५९ ॥
सर्वमेकीकृतं वैद्या दण्डयन्त्रे विमर्दयेत ।
घृतभाण्डे तु संस्थाप्य मासमेकन्तु खादयेत् ॥ ५६० ॥
दाडिमस्वरसेनैव छागीदुग्धेन धाम्मना ।
चन्द्रनाथेन गदिता वटिका शुक्रमातृका ॥ ५६१ ॥

विशम्मेहाग्निहन्त्याशु वातपित्तादिसम्भवान् ।
द्वन्द्वजान्सन्निपातोत्थान्मूत्रकृच्छ्राश्मरीगदान् ॥
बलवर्णाऽग्निजननी ज्वरदोषनिषूदनी ॥ ५६२ ॥

र र, भै र, प्रमेह।

भाषा—गोखरू, त्रिफला, तमालपत्र, इलायची, रसौत, धनिया, चव्य, जीरा, तालीसपत्र, भुनासुहागा, अनार येसब २-२ कर्ष, शुद्धगूगल १ कर्ष, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म १-१ पललेकर सबकीबारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय गोखरूवगैरहकेकाथसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियांबनाकर घीकेवर्तनमें एकमहीने तक रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनारकेरस, बकरीके दूध अथवा जलकेसाथलेनेसे वातादिजन्य २० प्रकारकेप्रमेह, द्वन्द्वज तथा सन्निपातज मूत्रकृच्छ्र और पथरी इनसबको नष्टकर बल, वर्ण और अग्निको पैदाकर ज्वरको यह नष्टकरतीहै ॥१४६॥

१४७ शुक्रस्तम्भकरीवटी

कर्पूरमहिफेनञ्च कस्तूरी जातिपत्रिका ।
नागवल्लीरसेनैव गुटिका मदनाशिनी ॥ ५६३ ॥
शुक्रस्तम्भकरी नित्यं बलमांसविवर्धिनी ।
नरश्चटकवद्गच्छेच्छतवाराम्न संशय ॥ ५६४ ॥

रस स, वाजीकरणे।

टि०—अत्र कर्पूरशब्देन रसकर्पूरमेव ग्राह्यम्, तयोगेनैव यथोक्त गुणलाभात् ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, अफीम, कस्तूरी और जावित्री समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे मर्दनकर उड़दबरावर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मलाईवगैरह केसाथलेनेसे यह शुक्रकास्तम्भन करतीहै । बल और मासको बढातीहै तथा सम्भोगेच्छाको बारम्बार जाग्रतकरतीहै ॥१४७॥

१४८ शुण्ठीखण्डः

नागरस्य रज. सर्पिः पृथग्दशपलोन्मितम् ।
पञ्चाशत्पलिकं क्षीरं खण्डं क्षीरसमं पचेत् ॥ ५६५ ॥
व्योषं त्रिजातकं धान्यं पद्ग्रन्था जीरकद्वयम् ।
शृङ्गी लवङ्गं लोहञ्च वरा जातीफलं घनम् ॥ ५६६ ॥
प्रत्येकं चूर्णमेतेषां पलार्द्धन्तु विनि क्षिपेत् ।
पलद्वयं चारबीजं प्रक्षिप्य विपचेत्सुधी ॥ ५६७ ॥
खादेदग्निबलापेक्षी शिरोरोगविनाशनम् ।
आमवातप्रशमनं बलपुष्टिविवर्धनम् ॥
कफपित्ताऽनिलहरं सेव्यमानं रसायनम् ॥ ५६८ ॥

यो म, शिरोरोग।

भाषा—१० पल सोंठके चूर्णको १० पल घीमें सेककर ५० पल गायकेदूधमें डालकर ५० पल शक्कर मिलाकर चाशनी करे । चाशनीतैयारहोनेपर त्रिकुटु, त्रिजात, धनिया, पिपलामूल, दोनोंजीरे, काकड़ासींगी, लौंग, लोहभस्म, त्रिफला, जायफल, नागरमोथा यसब २-२ कर्ष चिरोंजी २ पल डालकर अच्छीतरह मिलजानेपर उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल देखकर मात्रा कायमकर देनेसे शिरोरोग, आमवात, बल और पुष्टिकाह्रास, कफ, पित्त और वायुरोग इनसबको नष्टकर यह दीर्घायुको करताहै ॥ १४८ ॥

१४९ शुण्ठीपाकः

प्रस्थार्द्धविश्वाऽष्टगुणश्च दुग्धं
प्रस्थप्रमाणाज्यगुडश्च तद्वत् ।
विपाचयेत्तन्मृदुवह्निना च
पश्चात्तदन्त क्षिप वक्ष्यमाणम् ॥ ५६९ ॥
चातुर्जातं जातिपत्री वासावह्निफलत्रयम् ।
देवपुष्पं गजकणा भार्गी शृङ्गी कटुत्रयम् ॥ ५७० ॥
आकल्लकं लोहचूर्णं वंशलोचनकट्फलम् ।
दारु विश्वाऽश्वगन्धा च चूर्णमेषां छृतं समम् ॥५७१॥
चतुष्कर्षमितं चास्याद्यो भजेद्दिनसप्तकम् ।
तस्य स्वमौलिकर्णाक्षिरोगव्यूहं विनाशयेत् ॥ ५७२॥
सर्ववाताञ्जयत्याशु कफपित्तोद्भवानपि ।
हस्तिना कथितं सम्यक् शुण्ठीपाकेति नामत.५७३

रसायनस, वाताधिकारे।

भाषा—सोंठकाचूर्ण ८ पल, घी और गुड १-१ प्रस्थ, गायकादूध ४ प्रस्थ लेकर इकट्ठेमिलाय मन्दाग्निसे पकावे। पाकहोनेपर चातुर्जात, जावित्री, अडूसा, चित्रकमूल, त्रिफला, लौंग, गजपीपल, भारङ्गी, काकडासींगी, त्रिकुटु, अकलकरा, लोहभस्म, वंसलोचन, कायफल, दारुहल्दी, सोंठ और असगन्ध इनकाचूर्ण १-१ कर्ष डालकर उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबलदेखकर १ कर्षसे १ पलतक मात्रा ७ दिनतकखानेसे मस्तक, कान और आंखकेरोग, सम्पूर्णवातविकार, कफपित्तरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १४९ ॥

१५० शूलकुठाररसः

टङ्कणं पारदं गन्धं त्रिफला व्योषतालकं ।
विषं ताम्रञ्च जयपालं भृङ्गस्वरसमर्दितम् ॥ ५७४ ॥
द्विगुञ्जं नाशयेच्छूलं मरिचेनार्द्रकेण वा ।
सर्वशूलानिहन्त्येषा विष्णुश्चक्रमिवासुरान् ॥ ५७५ ॥

नि र, व रा, वै चि, र क यो, र पा, शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्ध सुहागा, पारा, और गन्धक, त्रिफला, त्रिकुटु, रसमाणिक्य, शुद्धवछनाग, ताम्रभस्म और शुद्धजमालगोटा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियांबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच अथवा अदरखके रसकेसाथदेनेसे यह सब प्रकारके शूलोंकोनष्टकरताहै ॥ १५० ॥

१५१ शूलगजकेसरीरसः (प्रथम.)

शुद्धं ताम्रपलं वह्नौ वह्निवत्तापितं भृशम् ।
एकविंशतिवारांश्च शीतींकुर्याच्च गाजले ॥ ५७६ ॥
पातयेदम्लवर्गेषु तत्र छिकारसे पुन ।
तद्वत्तत्र गुडक्षीरे शीतींकुर्यात्पुनश्च तत् ॥ ५७७ ॥

पुनस्तप्ते च गलिते पातयेत्पादपारदम् ।
दरदोत्थं ततस्तालशिलासोमजसत्त्वतः ॥ ५७८ ॥
गन्धसत्त्वेन च पुनर्लिप्त्वा पत्राणि शोषयेत् ।
शरावसम्पुटे धृत्वा वह्नि यामांस्तु षोडश ॥ ५७९ ॥
त्रिहस्तगर्तमध्यस्थे तुषच्छागविडन्तरे ।
शीतं पुनर्गृहीत्वाऽयं रसः शूलेभकेसरी ॥ ५८० ॥

र. का., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—एकपल शुद्धतांबेकेपत्रोंको अग्निसात्कर २१ बार गोमूत्रमें बुझावे फिर अम्लवर्ग, नकछिकनीकेरस और गुड़युक्त-दूधमें २१–२१ बार बुझावे । फिर इसे गलाकर चतुर्थांश हिङ्गु-लोत्थपारा मिलाय पत्रेबनाकर हरिताल, मैनसिल, सोमल और गन्धक प्रत्येक पारेसे चतुर्थांशलेकर बारीकचूर्णकर नकछिकनी-केरसमें मर्दनकर पत्रोंपर लेपलगाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर ३ हाथगहरे गढ्ढेमें तुष और बकरीकीमींगणीकेबीचमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती अद-रखवगैरह उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट करताहै ॥ १५१ ॥

१५२ शूलगजकेसरीरसः (महदादिः) २

शुद्धताम्रस्य पत्राणि कुर्यात्तनुतराणि च ।
तप्ततप्तानि नरगोजाश्वोष्ट्रखरजेषु च ॥ ५८१ ॥
मूत्रेष्वथद्रवे छिक्कामवे प्रत्येकशः पुनः ।
एकविंशतिवारांश्च शीतीकुर्याद्भृशं नरः ॥ ५८२ ॥
लिम्पेन्नसारसौभाग्यचिक्कास्वरसतो बुधः ।
शुष्काणि पटुमृत्केशमृद्धस्यान्तरशोषणात् ॥ ५८३ ॥
पुनस्तप्तानि च भृशं काञ्जिके प्रक्षिपेदपि ।
त्रिवारमेवं हि कृते जायन्तेऽतिसितानि च ॥ ५८४ ॥
अथ तानि पुनस्तापयित्वा मूत्रे च सौकरे ।
प्रक्षिपेदूनपञ्चाशत्किटिविष्ठाद्रवे पुनः ॥ ५८५ ॥
छिक्कातालद्रवे मिश्रे त्रिर्मूत्रे सौकरे पुनः ।
किटिमांसान्तरे तान्यूनपञ्चाशद्दिनानि च ॥ ५८६ ॥
स्थापयित्वा च गृह्णीयात्पीतवर्णयुतानि च ।
अथ ताले त्रिपलिकं कदलीपुष्पजद्रवैः ॥ ५८७ ॥
दिनत्रयं मर्दयित्वा संशोष्यातिखरातपे ।
दृढस्थलेष्टिकागर्ते चाश्वारिमूलत्वचं क्षिपेत् ॥ ५८८ ॥
तत्रालञ्च पुनस्ताञ्च दत्त्वा भूयः पिधापयेत् ।
काचपात्रेण तल्लिप्त्वा हठमृत्तिकया पुनः ॥ ५८९ ॥
मृत्कर्पटे विलिम्प्याऽथ छायाशुष्कञ्च कारयेत् ।
(वल्मीकभूनागभवा कृष्णा पीता मृदिष्टिका ॥ ५९० ॥
चूर्णं लाक्षा च मण्डूरं गुडं भूर्जपत्रकम् ।
तुल्यञ्च मेषीक्षीरेण सिद्धा छायाविशोषिता ॥ ५९१ ॥
इयं हठा मृत्तिका स्यात्सर्वकूप्यादिलेपने ।)
अथ चुल्ल्यामिष्टिकां तां संस्थाप्याऽग्निं प्रदापयेत् ॥
दीपवत्प्रहरं भूयः सामान्यञ्च हठाख्यकम् ।
एकद्वित्रिकपट्सह्व्ययामानग्निं क्रमादिह ॥ ५९३ ॥
शीतीभूतञ्च गृह्णीयाद्धृतवर्णञ्च सत्त्वकम् ।
अथ यामत्रयं मेषीक्षीरे सम्मर्दयेच्छिलाम् ॥ ५९४ ॥
अर्कक्षीरेण च तथा मोचापुष्पद्रवे तथा ।
कर्षं प्रतिश्वेतचित्रवीजेन सह मर्दयेत् ॥ ५९५ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामषोडशकानलम् ।
शीतीभूतञ्च तत्सत्त्वं वैदूर्याभं प्रजायते ॥ ५९६ ॥
काञ्चनाभं तालजं स्यात्स्फटिकाभञ्च सौम्यजम् ।
(अथ शाङ्खिकसौम्यन्तु गृहीत्वा सार्धमुष्टिकम् ५९७
तद्वद्दरदस्ततश्च मोचापुष्पद्रवे ऽथहम् ।
अर्कक्षीरैस्त्र्यहं श्वेतैरण्डबीजैः पुनस्त्र्यहम् ॥ ५९८ ॥
अध ऊर्द्धं लोहताम्रसम्पुटे तन्निरोधयेत् ।
हठमृत्तिकया वस्त्रमृदा लिप्तञ्च सप्तशः ॥ ५९९ ॥
हण्डिकायां छागविशा पूर्णायां स्थापयेच्च तत् ।
यामद्वादशकं गर्ते वह्निं दत्त्वा तदुद्धरेत् ॥ ६०० ॥
हिमवर्णं सौम्यसत्त्वं जायतेऽतिमनोहरम् ।)
अथ तत्ताम्रपत्राणि दशकर्षमितानि च ॥ ६०१ ॥
तालसौम्यशिलासत्त्वं त्रित्रिकर्षप्रमाणतः ।
पञ्चकर्षं तैलविषं गन्धतैलेन मर्दयेत् ॥ ६०२ ॥
(कर्षसप्तकगन्धन्तु मातुलुङ्गरसैस्तु पट्ट ।
लशुनद्रवतः पट्कं घृष्ट्वा कुर्याच्च वर्तिकाम् ॥ ६०३ ।
प्रज्वालयेच्च घे तैलं तेन तैलेन मर्दयेत् ।)
अथ वङ्गं सार्धपलं पलार्धं रसकं तथा ॥ ६०४ ॥
पलार्द्धं नवसारञ्च द्रावयेल्लोहभाण्डके ।
मुहूर्तमग्निं दत्त्वाऽत्र तत्र हिङ्गुलसूतकम् ॥ ६०५ ॥
क्षिप्त्वा घृष्ट्वा पुनः पूर्वद्रव्येण सह मेलयेत् ।
स्नुहीक्षीरे मोरटायाः क्षीरे मिश्रे विमर्दयेत् ॥ ६०६ ॥
तत्सर्वं मृत्तिकाकूप्यां क्षिप्त्वा तां पूरयेत्पुनः ।
धुत्तूरैरण्डतैलाभ्यां मुद्रां दत्त्वा पचेदथ ॥ ६०७ ॥
यामद्वादशकं भूयः काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
मुद्रां दत्त्वा षोडशभि यामै यन्त्रे च सैकते ॥ ६०८ ॥
पचेत्तं नीलवर्णं स्याद्रसः शूलेभकेसरी ।
तण्डुलप्रमितो दत्तो यथाव्याध्यनुपानतः ॥ ६०९ ॥
सर्वरोगाग्निहन्त्याशु शूलरोगे च का कथा ।
वातव्याधिं क्षयं श्वासं कासं वातास्त्रमामकम् ॥
जित्वा रसायनं वाजीकरमेतत्प्रजायते ॥ ६१० ॥

र. का., शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धताम्रकेबारीकपत्रोंको अग्निसात् कर मनुष्य, गौ, बकरा, घोड़ा, ऊंट और गधेकेमूत्र तथा नकछिकनीकेरसमें २१–२१ बार बुझाकर नवसादर और सुहागेको नकछिकनीके-रसमें पीसकरपत्रोंपर आधाजवमोटा लेपकर गोलाबनाय सुखा-कर नमक, बांबीकीमिट्टी, केश इनको अच्छीतरहकूटकर कपड़ेपर लेपदेकर गोलेपर चढ़ाय अच्छीतरह सुखाकर अग्निमा(कर

काञ्जीमें बुझावे। ऐसे ३ बार करनेसे पत्रेअत्यन्तसफेद होजायगे फिर इनको तपाकर सूअरकेमूत्र और विष्ठाके द्रवमें ४९–४९ वार, और नकछिकनीके स्वरस तथा ताड़ीमें ३–३ बार बुझाकर फिर ३ बार सूअरके मूत्रमें बुझावे। इसकेबाद सुअरकेताज़ेमासमें ४९ दिनतक रखकर निकालले, ये पीलेरङ्गके निकलेंगे। फिर ३ पल हरितालका बारीकचूर्णकर केलेकेफूलोंके रससे ३ दिनमर्दनकर टिकड़ीबनाय अत्यन्त कड़ीधूपमें सुखाकर अच्छीतरह फकीहुई मोटीईंटमें गोलखड्डा खोदकर सफेदकनेरकीजड़कीछालके चूर्णके बीचमें इस टिकड़ीको रख काचकेप्यालेसे मुंहबन्दकर हठमृत्तिकायुक्तकपड़ोंसे सम्पुटकर छायामें सुखावे। (बाबी औरकेंचुओंकी मिट्टी, काली और पीलीमिट्टी, ईंटकाचूरा, लाख, मण्डूर, गुड़, भोजपत्र सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर भेड़केदूधसे सानकर हथौड़ेसे कूटकर मोमकेसदृश बनावे। इसीकानाम हठमृत्तिका है)। फिर ईंटको चूल्हेपर रख बेरकेगैरहकीलकड़ीसे एकपहर दीपाग्नि, दोपहर मध्यमाग्नि और तीनपहर तीव्राग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक यन्त्रको खोलेतो ऊपरके प्यालेमें धीकेरङ्गकासत्व मिलेगा, इसे यत्नपूर्वक रखछोड़े यह हरितालसत्व हुआ। मैनसिलको बारीकपीस भेड़ और आकके दूध तथा केलेकेपुष्पद्रवमें ३–३ पहर मर्दनकर चतुर्थांश श्वेतचित्रकके बीजोंकाचूर्ण मिलाय ४ पहर मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर बालुकायन्त्रमें १६ पहरकी क्रमाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक शीशीमेंसे वैदूर्यकेरङ्गकेसत्वको निकालकर रखछोड़े। फिर सफेदसोमल और शिगरिफका पारा ६–६ पल लेकर १–२ दिन यहांतक मर्दनकरे कि पारा अदृश्यहोजाय, फिर केलेकेपुष्पकेरस और आकके दूधमें ३–३ दिन मर्दनकर समभाग सफेदएरण्डबीजकीमज्जा मिलाकर ३ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय कड़ीधूपमें सुखाकर लोहेकेसम्पुटमेंरख ऊपरसे ताम्रसम्पुटसे बन्दकर हठमृत्तिकासे ७ कपड़मिट्टीदेवे। सुखानेपर एकघड़ेमें बकरीकीमींगणियोंके बीचमें सम्पुटको रख अग्निलगाकर घड़ेको खड्डेमें रखदे। १२ पहरकेबाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अलग रखलेवे यह सफेदवर्णका मल्लसत्व तैयारहुआ॥

पूर्वोक्तताम्रपत्र १० कर्ष, हरिताल, सोमल, और मैनसिल इनकेसत्व ३–३ कर्ष, बछनाग ५ कर्ष लेकर गन्धककेतैलसे एकदिनमर्दनकरे। (गन्धक ७ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर बिजौरे और लहसनके ६–६ कर्ष स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर धोएहुए सफेदकपड़ेपर लेपकर शिथिलबत्तीबनाय सरसोंके तैलमें बत्तीको डुबाकर एकदिन खूंटीपर टांगकर अधिकतैलको टपकाकर निकालदे। फिर इसबत्तीको लोहेकी शलाकापर रख नीचेकेभागमें अग्निलगावे और नीचे कांसेवगैरहकी थाली रखदे। बत्तीजलजायगी और तैल टपकजायगा। यहांपर इसीगन्धकतैलकोलेना।) फिर शुद्धवङ्ग ६ कर्ष, खपरिया और नौसादर २–२ कर्ष लेकर कड़ाहीमें डालकर अग्निदेकर गलावे। गलनेपर शिंगरिफसे निकालाहुआपारा २ कर्ष डालकर कड़ाहीको नीचे उतारकर मर्दनकरे। सबकीकज्जलीतैयारहोनेपर पूर्वपिण्डमें मिलादे। फिर थूहर और मोरटा (थूहरकाभेदहै तन्त्रशास्त्रमें मानवकञ्चुकी) केदूधमें ३–३ दिन मर्दनकर टिकड़िया बनाय सुखाकर मिट्टीके चिकनेकुल्हड़में रख धतूरे और एरण्डकेतैलसे कुल्हड़ीको भरदे और हठमृत्तिकासे ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर थूहर और मोरटाकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके हठमृत्तिकासे मुंहबन्दकर १६ पहरकी बालुकायन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर नीलवर्णकेपदार्थको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ चावल तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे वातव्याधि, क्षय, श्वास, कास, वातरक्त, आमवात प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकर रसायन और वाजीकरणके कामकोकरताहै। शूलरोगकी तो चर्चा ही क्या? तत्क्षणनष्टहोजाताहै॥ १५२॥

१५३ शूलगजकेसरीरसः (तृतीयः)

कारस्करफलं स्विन्नं क्षीरप्रस्थद्वयोन्मिते।
सूक्ष्मं दृषदि सम्पिष्य गृह्णीयाद्विपलोन्मितम्॥ ६११॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं नागरं वचा।
बिल्वं हरीतकीमज्जा द्वयोरपि करञ्जयोः॥ ६१२॥
स्वर्जिकाञ्च यवक्षारं सैन्धवं रुचकं गडः।
तथैव क्षारलवणं गन्धकं कर्षमात्रकम्॥ ६१३॥
हिङ्गु टङ्कणदीप्यानां पलार्धञ्च पृथक्पृथक्।
पृथक् चूर्णीकृतं सर्वं पिष्ट्वाऽऽर्द्रकरसेन च॥ ६१४॥
गुटिकाश्चणकाकाराः कृत्वा संशोष्य चातपे।
यथाग्नेव पलायन्ते शूलप्रभृतयो गदाः॥
राजते त्रिषु लोकेषु स शूलगजकेसरी॥ ६१५॥

वै द, शूलाधिकारे।

भाषा—दोपल कुचिले लेकर दोप्रस्थ गोदुग्धमें स्वेदनकर छीलकर बारीकपीसे। फिर इसमें पीपल, पिपलामूल, मरिच, सोंठ, वच, बेलगिरी, हर्रे, दोनोंकरञ्जोंकीमज्जा, सज्जी, यवक्षार, सैंधव, संचल, रेहकानमक, बिडनमक, शुद्धगन्धक येसब १–१ कर्ष, भुनाहींग, सुहागा, अजवाइन २–२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियां बनाय सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोलीतक औचितीदेखकर देनेसे यह समस्तशूलोंकोदूरकरताहै १५३

१५४ शूलगजकेसरीरसः (चतुर्थः)

अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि सर्वशूलविनाशनम्।
क्षयादिरोगहं शूलगजकेसरिसञ्ज्ञकम्॥ ६१६॥
पूर्वोदितप्रकारेण शुल्वमादौ विशोधयेत्।
ततो धापाः प्रकर्तव्या वक्ष्यमाणौषधीरसैः॥ ६१७॥
वज्रीमातुपयोमूलं पञ्चाङ्गं कनकस्य च।
मुनिपञ्चाङ्गगुञ्जोत्थं लाङ्गलीकन्द एव च॥ ६१८॥

करञ्जस्य च पञ्चाङ्गं मूलानि करवीरकात्।
आटरूपकपञ्चाङ्गं चित्रकस्य च कञ्चुकी ॥ ६१९ ॥
वाजिगन्धेङ्गुदी चैव वज्रीकन्दोऽथ शिग्रुजः।
गुडूची शकखदिरस्त्रिवृता दन्तिका तथा ॥ ६२० ॥
वज्रवल्ली शिखरिका दृढुघ्नो मुशली तथा।
पटवः पञ्च क्षाराश्च उपक्षारास्तथैव च ॥ ६२१ ॥
एतत्सर्वं सुसञ्चूर्ण्य पेषयेन्महिषीभवैः।
पञ्चाङ्गै दुग्धतक्राद्य दधिमूत्रै घृतैस्ततः ॥ ६२२ ॥
स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य वासयेत्सप्त वासरान्।
द्रवीभूते च तत्कल्के शुल्बमावृत्य ढालयेत् ॥ ६२३ ॥
त्रिःसप्तवारान्क्षिप्त्वैवं शुल्बं शुद्धिमवाप्नुयात्।
तेन शुल्बेन कुर्वीत पात्रिके पलमात्रिके ॥ ६२४ ॥
सम्पुटाकारधारिण्यौ तत्र सूतं प्रसाधयेत्।
पातितस्त्रिवसञ्जीर्णभस्मीभूतस्य कर्षकान् ॥ ६२५ ॥
चतुरो दानयेन्द्रस्य कर्षानष्टौ प्रकल्पयेत्।
पूर्वोक्तयुक्तिशुद्धस्य खल्वे द्वौ निक्षिपेत्ततः ॥ ६२६ ॥
शुष्कमर्दनयोगेन मर्दयेत्तौ दिनत्रयम्।
कज्जलीं ताम्रपात्रस्य मध्ये चैकस्य निक्षिपेत् ॥६२७॥
अन्येन ताम्रपात्रेण सम्पुटं रचयेद् दृढम्।
मृद्भाण्डसम्पुटं ग्राह्यमतीव सुदृढं तयोः ॥ ६२८ ॥
एकस्य मध्ये लवणं दत्त्वा तदुपरि क्षिपेत्।
सम्पुटं ताम्रजं पश्चात्तदूर्ध्वं लवणं क्षिपेत् ॥ ६२९ ॥
मार्तिकेन द्वितीयेन पटुपूर्णेन सम्पुटम्।
कृत्वा निरुद्ध्य सुदृढं खटीमृल्लवणैः पटैः ॥ ६३० ॥
भक्तैः हरीतकीकल्कैः पिष्टैरेकत्र लेपयेत्।
पटुपञ्चकमानेन शोषयेदातपे ततः ॥ ६३१ ॥
जानुदघ्नीं महीं खात्वा समिच्छाणैः प्रपूरयेत्।
विन्यसेत्सम्पुटं तेषामुपरिष्टाच्च छाणकान् ॥ ६३२ ॥
पौरुषेण प्रमाणेन ज्वालयेद्वह्निना ततः।
स्वाङ्गशीतं विनिर्धार्य सम्पुटं तं समाहरेत् ॥ ६३३ ॥
भित्त्वा च सम्पुटं मध्यात्गृह्णीयात्ताम्रसम्पुटम्।
त्यक्त्वा यत्नेन लवणं खल्वमध्ये निवेशयेत् ॥ ६३४ ॥
मर्दयित्वाऽथ सुश्लक्ष्णं सिद्धं सूतेश्वरं ततः।
पूजयित्वा भैरवादीन् स्थापयेच्च करण्डके ॥ ६३५ ॥
वल्लमात्रः प्रयोक्तव्यो रसेन्द्रः परिणामजे।
शूले वातभवे गुल्मे फणिवल्लीदलैः सह ॥ ६३६ ॥
अग्निमान्द्ये तथा पाण्डौ रोगराजे हलीमके।
ग्रहण्यां कामलायाञ्च विकारे वाऽथ जाठरे ॥ ६३७ ॥
हरीतक्यनुपानेन दातव्योऽयं रसेश्वरः।
पथ्यमत्र प्रदातव्यं शास्त्रदृष्टेन वर्त्मना ॥ ६३८ ॥
अथवा वटिकां कुर्याद्दीपर्यंश्च रसेश्वरात्।
मरिचं पिप्पली शुण्ठी चाजाजी हिङ्गुरेव च ॥६३९॥
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युः पर्षैः सूतेश्वरस्य च।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा खल्वे सम्यग्विमर्दयेत् ॥६४०॥
भृङ्गराजभवैर्नीरैस्त्रिदिनं सम्प्रकल्पयेत्।
तेन कल्केन चणकप्रमाणा वटिकास्ततः ॥ ६४१ ॥
एकैकां भक्षयेद्बलाद्वटिकां रोगहारिणीम्।
वातरोगेषु सर्वेषु वटी योज्या भिषग्वरैः ॥ ६४२ ॥
अग्निमान्द्यभवे रोगे शूलजे तु विशेषतः।
तत्सम्प्रदायसम्प्रोक्तः शूलाद्यो गजकेसरी ॥ ६४३ ॥

रसल., शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्धतावेकेबारीकपत्रकराय सेहुण्ड और आकका-दूध, धतूरा और अगस्त्यकापञ्चाङ्ग, गुञ्जा, करिहारीकन्द, कर-ञ्जकापञ्चाङ्ग, सफेदकनेरकीजड़, अडूसेकापञ्चाङ्ग, चित्रक, क्षीर-कञ्चुकी, असगन्ध, इंगोरन, ज़हरीसूरण, सहिजन, गिलोय, कुरैया, खैर, निसोत, दन्तीमूल, हड़जोड़, अपामार्ग, चकवड़, मुशली, पार्चोनमक, पार्चोक्षार, उपक्षार इनसबका बारीकचूर्णकर भैंसकेदुग्धादिपञ्चकर्मे पीसकर चिकनेबर्तनमेंरख ७ दिनतक रहनेदे। नमक वगैरह गलजानेपर तावेको गलाकर २१ बार इसमें बुझावे। फिर इसतावेमेंसे ? पलवज़नका सम्पुटबनवाकर ४ पल शुद्धपारे और ८ पलशुद्धगन्धककी तीनदिनकेमर्दनसे कीहुई नीलवर्णकज्जली सम्पुटमें डालकर अच्छीतरहबन्दकरदे। और २–३ दृढमृत्तिकाकेलेपदेकर सुखावे। फिर इसको मज़बूत घड़ेके लवणयन्त्रमें रख शरावसे ढककर खड़िया मिट्टी, लवण, चिथड़े, भात और हरें समभागलेकर एकजगहपीसे और इससे शरावसन्धिको अच्छीतरह बन्दकर पार्चोनमक इसकल्कमें मिलाय समस्तयन्त्रपर लेपदेकर १–२ कपड़मिट्टीचढाय सुखावे फिर घुटनेबराबर खड्डा खोदकर रीरवगैरहकी सारिष्टलकड़ी और जङ्गलीकण्डोंसे गढ्ढेको भरके इसघड़ेको रख एकपुरुषप्रमाण ऊंचे-कण्डे युक्तिविशेषसे चुनकर आगलगावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर सम्पुटको खोलकर लवण और कपड़मिट्टीको अच्छीतरह साफ़-करदे। *जितनाहिस्सा तावेकाभस्म होचुकाहो। उसको पीसकर रखछोड़े।* फिर भैरवप्रभृतिका पूजनकर रसकासंस्कारकरे। इसकी ३–३ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै। पानकेरसकेसाथदेनेसे वातगुल्म, मन्दाग्नि, पाण्डु, रोगराज, हलीमक, ग्रहणी, कामला येसब नष्टहोतेहैं। हरेंकेसाथ देनेसे उदरविकार नष्टहोताहै। इसमें पथ्य रोगोचितदेना। अथवा मरिच, पीपल, सोंठ, जीरा, भुनाहींग और ऊपरकहाहुआरस समभागलेकर भंगरेकेरससे ३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग, मन्दाग्नि और खासकर शूलको यह नष्टकरतीहै ॥ १५४ ॥

१५५ शूलगजकेसरी (शूलद्विपघ्नी) ५

पथ्या टङ्कणविश्वहिङ्गुमरिचं वह्नि विडं गन्धकं,
तुल्यं सैन्धवसंयुतं तु कुचिलं सर्वैः समं सम्मतम्।
शूलाऽऽध्मानविबन्धगुल्मकसनश्लेष्मामवातापहा,
चूर्णाऽल्पाम्ब्युदराऽरुचिज्वरहरी शूलद्विपघ्नी वटी ६४४

वै र., चि. र. भ., वै. चि., नि. र., वृन्दे। नि र, वै चि एतयो पथ्यादिवटीतिनाम।

भाषा—हरें, भुनासुहागा, सोंठ, भुनाहींग, मरिच, चित्रकमूल, विडनमक, शुद्धगन्धक, सैन्धव येसब समभाग और सबकी-बराबर शुद्धकुचिलेकाचूर्ण लेकर सबका बारीकचूर्णकर नीबू अथवा अदरखकेरससे १–२ दिन घोटकर ३–३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, आध्मान, विबन्ध, गुल्म, खासी, श्लेष्म, आमवात, अल्पाग्नि, उदर, अरुचि, ज्वर, और शूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

१५६ शूलगजकेसरीरसः (षष्ठः)

पारदं गन्धकञ्चैव माक्षिकं पिप्पली तथा।
आकल्लकं हिङ्गुयुक्तं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ६४५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव गुटीं चणकसन्निभाम्।
शृङ्गवेररसै युक्तां दापयेद्भिषगुत्तमः ॥ ६४६ ॥
सर्वशूलहरी प्रोक्ता पथ्यं द्विदलवर्जितम्।
त्रिदिनात्सर्वशूलानि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ६४७ ॥

र सि, शूले।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी, पीपल, अकलकरा, भुनीहींग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखके रससे घोटकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे समस्तशूल नष्टहोतेहैं। इसकेप्रयोगमें दाल न देवे ॥

१५७ शूलगजकेसरीरसः (सप्तमः)

रसकं गन्धकं शुद्धं ताप्यं जेपालबीजकम्।
त्रिकटु हरबीजं च पथ्यया सह योजितम् ॥ ६४८ ॥
सर्वमेकीकृतं खल्वे शिम्बीपत्रैश्च भावयेत्।
भावयेत्त्रिवृतातोयैस्तथा दन्तिरसेन च ॥ ६४९ ॥
कौसुम्भैश्च तथा चनार्थं दिनैकं भावयेद्बुधः।
माषमेकं प्रदातव्यमुष्णवारिसमन्वितम् ॥ ६५० ॥
सर्वशूलहरः श्रेष्ठस्तथा दन्तिरसेन च।
हस्तिनश्च यथा सिंहस्तथा शूलेषु केसरी ॥ ६५१ ॥

र को, आमशूले।

भाषा—शुद्ध खपरिया, गन्धक, सोनामाखी और जमालगोटा, त्रिकटु, शुद्धपारा, हरें सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सेमलकेपत्ते, निसोत, दन्तीमूल, कुसुम्भकेफूल इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमपानी अथवा दन्तीमूलकेरसकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५७ ॥

१५८ शूलगजकेसरीरसः (अष्टम)

रसविषगन्धकपर्दक्षारेण सिन्धुपिप्पलीविश्वैः।
अहिवल्ल्यम्बुविघृष्टं शूलेभहरि द्विगुञ्जोयम् ॥ ६५२ ॥

यो र, नि र, वृ यो त, वै चि, यो सं, यो त, र का, र र दी, टो, शूलाऽधिकारे।

टि॰—"क्षार कपर्दाद्विषमैन्धवौ च व्योषञ्च सम्मर्द्य भुजङ्गवल्ल्या। रसेन गुञ्जाप्रमित प्रदिष्ट समीरशूलेभहरि प्रचण्ड ॥" इतिपाठो यो स, यो त, र का, र र दी, टो एषु ग्रन्थेषु तथा च यो र, नि र, वै चि एषु द्वितीयस्थाने दृश्यते, तत्र गन्धकद्वयोरभावोऽस्ति। पूर्वस्मिश्च योगे मरिचाऽभाव कुतोऽस्ति इति व्यत्यास केन कारणेन सञ्जात इति न लक्ष्यते, प्रमाद एव तत्कारणमित्यनुमीयते अनयतयो पाठयोरेकता सम्पाद्यैक एव पाठ सम्पादनीय।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक, कौड़ीभस्म, सेंधानमक, पीपल और सोंठ समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर पानकेरसमें १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५८ ॥

१५९ शूलगजाङ्कुशरसः

निष्कत्रयं शुद्धसूतं द्विनिष्कं शुद्धटङ्कणम्।
गन्धकं पञ्चनिष्कं चाप्येकनिष्कञ्च मुस्तकम् ॥ ६५३ ॥
चतुर्निष्कञ्च नेपालं तत्समं मृतताम्रकम्।
सर्वतुल्यं तिलक्षारं वृक्षाम्लक्षारचित्रकम् ॥ ६५४ ॥
तद्वत्पलाशजं क्षारं पणिष्कं त्र्यूषसैन्धवम्।
यवक्षारं द्विनिष्कञ्च विडसौवर्चकाचकम् ॥ ६५५ ॥
समुद्रलवणञ्चैव पिप्पली च त्रिनिष्ककम्।
चित्रमूलरसे युक्तं दिनैकञ्च विमर्दयेत् ॥ ६५६ ॥
सप्तधा चणकक्षारैरार्द्रकद्रवमर्दितम्।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेदार्द्रकस्य च वारिणा ॥ ६५७ ॥
गुल्माष्ठीलाप्लीहशूलप्रत्यष्ठीलास्तुनीद्वयम्।
उदरं सर्वजां वृद्धिं शोथं पाण्ड्वामयं तथा ॥
सर्वरोगान् हरेच्छीघ्रं रसः शूलगजाङ्कुशः ॥ ६५८ ॥

व रा, शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १२ माशे, भुनासुहागा ८ माशे, शुद्धगन्धक २० मा, नागरमोथा ४ मा, शुद्धजमालगोटा और ताम्रभस्म १–१ कर्ष, तिलका क्षार ४ कर्ष १२ मा, कोकमका क्षार, चित्रकमूल, पलाशक्षार, त्रिकटु, सेंधानमक २४–२४ मा, यवक्षार ८ मा, विडनमक, संचल, काचलवण, समुद्रनमक और पीपल १२–१२ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रकमूलकेक्वाथसे एकदिनमर्दनकर चनेकेक्षार और अदरखकेरससे ७–७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे, गुल्म, अष्ठीला, प्लीह, शूल, प्रत्यष्ठीला, तूनी, प्रतितूनी, उदरवृद्धि, शोथ, पाण्डुप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५९ ॥

१६० शूलघ्नीवटी

शुद्धशुल्वस्य भागैकं द्विभागमहिफेनकम्।
विषमुष्टिं चैन्द्रभागो वह्निजं वसुभागिकम् ॥ ६५९ ॥
आर्द्रद्रवेण यामैकं मर्दयेद्भिषगुत्तमः।
वटी गुञ्जोपमा कार्या सिताद्रोभ्याञ्च योजयेत् ॥ ६६०

पक्तिशूल उदावर्ते शूले च परिणामजे ।
योज्या युक्तानुपानेन तत्तच्छूलहरी भवेत् ॥ ६६१ ॥
सन्धिवाते पार्श्ववाते धनुर्वातेऽपतानके ।
दण्डापतानके चैव ग्रध्नरोगे च शस्यते ॥
ग्रहण्यामामवाते च योज्या चैत्रै यशोऽर्थिभिः ॥६६२॥

रसायनसं. शूलाधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म १ भाग, अफीम २ भा., शुद्धकुचिला ४ भा , मरिच ८ भा. लेकर बारीकचूर्णकर अदरखकेरससे एकपहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और अदरखकेसाथदेनेसे पक्तिशूल, उदावर्त, परिणामशूल, सन्धिवात, पार्श्वशूल, धनुर्वात, अपतान (खेंच), दण्डापतान, ग्रध्नरोग, ग्रहणी, आमवात, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ १६० ॥

१६१ शूलदावानलरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं प्रत्येकं पलमात्रकम् ।
मरिचं पिप्पली शुण्ठी हिङ्गु चैव पलद्वयम् ॥ ६६३ ॥
चिञ्चाक्षारं पञ्चलवणं प्रत्येकञ्च पलाष्टकम् ।
सप्तवारं दग्धशङ्खं जम्बीराम्लेन सेचयेत् ॥ ६६४ ॥
पलाष्टकञ्च संयोज्यं तत्सर्वं निम्बुकद्रवैः ।
दिनं मर्द्यं कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥
शूलदावानलो नाम्ना शूलरोगनिकृन्तनः ॥ ६६५ ॥

वै.र., नि र , टो , चि. र. भ , रसायनस., र. क. ल., र. चं , र. कौ., यो. र., र. का , यो. त , र. क यो., र. (मा.), शूले ।

टि०—माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे शङ्खवटीतिनाम्ना "त्रिभाग पञ्चलवण चिञ्चाक्षार द्विभागिकम् । सर्वेषां द्विगुण निम्बुनीर क्षिप्त्वा विलोडयेत् ॥ तस्मिन् शङ्ख सप्तवार तप्त्वा तप्त्वा क्षिपेद्बुध । तस्य षोडशभागाश्च रामठ पञ्चभागिकम् ॥ एतन्मात्र त्रिकटुक भागैव रसगन्धयो । विष भागैकमानञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ चणमात्रा वटी कार्या दद्यादार्द्रकनै रसै । अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च नाशयेदविकल्पत ।" इत्याद्याकारक पाठो निहितोऽस्ति, तत्रास्यैव पाठस्य व्यत्यासमन्तरा स्वतन्त्रता न प्रतीयते मूलन्त्वयमेवाऽस्तीति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक १–१ पल, मरिच, पीपल, सोंठ और हींग २–२ पल, इमलीकाक्षार और पाचोंनमक ८–८ पल, नीबूकेरसमें ७ वार बुझाएहुए शङ्खकी-भस्म ८ पल लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर नीबूकेरसमें एकदिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १६१ ॥

१६२ शूलदावानलरसः (द्वितीयः)

चिञ्चाक्षारः शुद्धशङ्खचूर्णं लवणपञ्चकम् ।
क्षाराः पञ्चाग्निसम्भूताः पृथगर्द्धपलान्विताः ॥६६६॥
मरिचं मागधी शुण्ठी हिङ्गु च द्विपलं पृथक् ।
पारदं गन्धकं ताम्रं विषञ्चार्द्धपलं पृथक् ॥ ६६७ ॥
सर्वं जम्बीरनीरेण मर्द्यं तद्दिवसत्रयम् ।
कोलप्रमाणां वटिकां पञ्चगव्यघृतान्विताम् ॥ ६६८ ॥
लेहयेच्छूलशान्त्यर्थं घृतान्नं भोजनं तथा ।
लशुनक्वथितं देयं दध्याजं गव्यमेव वा ॥ ६६९ ॥
पथ्यं नित्यं प्रयुञ्जीत सर्वशूलनिबर्हणम् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्चाऽजीर्णशूलञ्च गुल्मजम् ॥ ६७० ॥
आनाहप्लीहमुदरमश्मरीशर्करादिकम् ।
क्षयञ्चैव न सन्देहो नाशयेद्व्याधिहारकः ॥
शूलदावानलो नाम्ना पूज्यपादेन भाषितः ॥ ६७१ ॥

य रा., र. क. यो., शूले ।

भाषा—इमलीकाक्षार, शङ्खभस्म, पांचोंनमक, पाचोंक्षार (सज्जी, सुहागा, यवक्षार, नोसादर और शोरा) २–२कर्ष, मरिच, पीपल, सोंठ और भुनीहींग २–२ पल, शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग, ताम्रभस्म २–२ कर्षलेकर सबको बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जंभीरीके रससे ३ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पञ्चगव्य और घीकेसाथलेनेसे सबप्रकारके-शूल शान्तहोतेहै । भोजनमें घी और रोटी देवे अथवा लशुन डालकर औटाएहुए गाय अथवा बकरीकेदूधका दहीदेवे । इसके सेवनकरने और यथार्थपथ्यपालनेसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, अजीर्णशूल, गुल्मशूल, आनाह, प्लीहा, उदर, पथरी, शक्कर, क्षय इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १६२

१६३ शूलध्वंसीरसः

सूतायोरथिकुटिलं मुस्तात्रिफलाम्बुना सुदृढम् ।
दिवसत्रितयं मर्द्यं शूलध्वंसी भवेत्सूतः ॥ ६७२ ॥
वल्लद्वयमितोऽसौ हरूपणत्रिपटुसंयुक्तः ।
निम्बुक्षारयुतो वा शिग्रुक्वाथेन युक्तो वा ॥ ६७३ ॥
कफशूलं जयत्याशु द्वन्द्वजं वा त्रिदोषजम् ।
सामुद्रसर्पिषा युक्तो मरीचाज्ययुतोऽथवा ॥ ६७४ ॥
पञ्चकोलेन संसिद्धा पेया पथ्या कफामये ।
विदारीदाडिमरसो सव्योपलवणान्वितः ॥ ६७५ ॥
कफशूलं जयत्याशु घृतसैन्धवसंयुतः ।
विश्वाग्निहिङ्गुसिन्धूत्थबिल्वैरण्डे जयत्यपि ॥ ६७६ ॥
द्वन्द्वजे सर्वशूले च विधिः कार्यो विजानता ।
शूलान्तको रसश्चैष योज्यः स्वीयानुपानकैः॥ ६७७ ॥
मण्डूरं गोजले सिद्धं वराक्षौद्रयुतं लिहेत् ।
मुच्यते मनुजः शीघ्रं सर्वशूलाद्दिदोषजात् ॥ ६७८ ॥
हिङ्गु व्योषं सलवणं शङ्खचूर्णं समांशकम् ।
उष्णोदकेन कर्षैकं जयेच्छूलं त्रिदोषजम् ॥ ६७९ ॥
कफशूलहिता कार्या क्रियाप्यामे विशेषतः ।
सर्वमामहरं सेव्यं यदग्निबलवर्द्धनम् ॥ ६८० ॥
बृहत्यौ गोक्षुरैरण्डमुशलीश्चिञ्चखण्डिकाः ।
समाक्षिका जयन्त्याशु शूलं पित्तानिलात्मकम्॥६८१॥
त्रिफलारिष्टतिक्तानां क्वाथं मधुयुतं पिबेत् ।
श्लेष्मपित्तमयं शूलं दाहच्छर्दियुतं दहेत् ॥ ६८२ ॥

वातश्लेष्मभवं शूलं विश्वहिङ्गुसुवर्चलम् ।
शुण्ठ्यम्बुनाऽनुपातव्यं हृत्पार्श्वजठरञ्जयेत् ॥ ६८३ ॥
वाते निरूहं पित्ते च क्षीरपानञ्च रेचनम् ।
कफे प्रच्छर्दनं तिक्तकषायरससेवनम् ॥ ६८४ ॥

र., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, लोह, तावा, शङ्ख इनकीभस्में समभाग लेकर नागरमोथा और त्रिफलाकेकाढ़ेसे ३–३ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली एरण्डमूल, मरिच और तीनोंनमककेसाथ अथवा नीबूसारकेसाथ अथवा सहिजनकेक्वाथ, समुद्रनमक, घी अथवा मरिच और घीकेसाथ देनेसे कफज, द्वन्द्वज और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै। कफरोगमें पञ्चकोलसे बनाईहुई पेया पथ्यहै। विदारी और अनारकेरसमें त्रिकटु और नमक मिलाकरदेनेसे अथवा घी और सैन्धवदेनेसे कफशूल नष्टहोताहै। सोंठ, चित्रक, भुनीहींग, सेंधानमक, बेल, एरण्डकीजड़ इनकेक्वाथकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै अथवा गोमूत्रमें सिद्धकियेहुए मण्डूरको त्रिफला और मधुकेसाथलेनेसे समस्त द्विदोषजशूलोंसे निवृत्तहोताहै। भुनीहींग, त्रिकटु, नमक और शङ्खभस्म समभागलेकर एकवर्षकीमात्रा गरमजलकेसाथलेनेसे त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै। कफशूलकेलिये जो कर्तव्यहै उसका आमशूलमें अनुष्ठानकरनेसे लाभहोताहै। भटकटैया, बनभाटा, गोखरू, एरण्डमूल, मुशली, ईखकीगांठ इनकाक्वाथ मधुमिलाकरलेनेसे पित्त और वातशूलको नष्टकरताहै। त्रिफला, नीमकीछाल और कुटकीकाक्वाथ मधुमिलाकर पीनेसे दाह और वमनयुक्त श्लेष्मपित्तशूलको नष्टकरताहै। सोंठ, भुनीहींग और संचलकेसाथ वातश्लेष्मशूलको दूरकरताहै। हृदय, पार्श्व और जठरशूलको सोंठकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे नष्टकरताहै। वातप्राधान्यमें निरूहवस्ति, पित्तमें क्षीरपान और रेचनकराना। कफमें वमन और तिक्तकषायरसका सेवन कराना ॥ १६३ ॥

१६४ शूलनिर्मूलनरसः

गन्धकं ह्यूषणं श्रृङ्गं मरिचं शङ्खभस्मकम् ।
सैन्धवं रससिन्दूरं जीरकञ्चाऽम्लवेतसम् ॥ ६८५ ॥
कारस्करस्य बीजानि सुशुद्धानि तदर्द्धतः ।
वह्न्याश्चित्रकनिर्गुण्ड्योः शृङ्गवेरस्य वारिणा॥६८६॥
भावयित्वा वटीं कृत्वा वल्लमानां प्रयोजयेत् ।
विश्वचित्रकजं क्वाथं सहिङ्गुमनुपाययेत् ॥ ६८७ ॥
नानाशूलप्रशमनः शूलनिर्मूलनाभिधः ।
अतीसारग्रहणिकाविसूचीगुल्मविद्रधीन् ॥ ६८८ ॥
यकृत्प्लीहार्तिपाण्डुत्वं शोथाश्मानाविधानपि ।
तत्तद्रोगानुपानेन हन्ति रोगान्बहूनयम् ॥ ६८९ ॥

नृ क, शूले ।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिकटु, शृङ्गभस्म, मरिच, शङ्खभस्म, सैन्धव, रससिन्दूर, जीरा और अम्लवेत समभागलेकर सबसे आधा शुद्धकुचिला मिलाय बारीकचूर्णकर चूहरकाढ़ा, चित्रक, निर्गुण्डी और सोंठकेकाढ़ेसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सोंठ और चित्रकके क्वाथमें हींगका प्रक्षेप देकर इसकेसाथदेनेसे नाना-प्रकारकेशूल, अतिसार, ग्रहणी, हैज़ा, गुल्म, ज़हरबाद, यकृत्, प्लीहा, पाण्डु, शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानु-पानकेसाथदेनेसे बहुतसेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १६४ ॥

१६५ शूलराजलोहम्

कर्षैकं कान्तलोहस्य शुद्धमभ्रं पलन्तथा ।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधुसर्पिस्तथैव च ॥ ६९० ॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे लोहदण्डेन मर्दयेत् ।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥ ६९१ ॥
प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शिशिराम्ब्वनुपानतः ॥ ६९२ ॥
सर्वदोषभवं शूलं कुक्षिशूलञ्च यद्भवेत् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥ ६९३ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विसूचिकाम् ।
शूलराजमिदं लौहं हरेण परिनिर्मितम् ॥ ॥ ६९४

र सं., ध., र सु, शूले ।

भाषा—कान्तलोहभस्म १ कर्ष, अभ्रकभस्म, शक्कर, घी और मधु १–१ पल लेकर सबको इकट्ठेमिलाय लोहेके खरलमें लोहके दण्डसे मर्दनकर त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चव्य, चित्रकमूल १–१ तोलालेकर बारीकचूर्णकर पूर्वो-क्तरसमें डालकर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे २ माशे-तक प्रात काल ठण्ढपानीकेसाथ लेनेसे त्रिदोषज कुक्षि, हृदय और पार्श्वशूल, अम्लपित्त, बवासीर, ग्रहणीदोष, प्रमेह और हैजेको यह नष्टकरताहै ॥ १६५ ॥

१६६ शूलवज्रिणीवटी

रसगन्धकलोहानां पलार्द्धेन समन्वितम् ।
त्रिफला रामठं शुल्वं शटी त्रिकटु टङ्कणम् ॥ ६९५ ॥
पत्रं त्वगेला तालीसं जातीफललवङ्गके ।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥ ६९६ ॥
माषिका वटिका कार्या छागीदुग्धेन वा पुनः ।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी ॥ ६९७ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा ।
अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥ ६९८॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपदं सभगन्दरम् ।
वृद्धबलकरी चैव मन्दाग्नेरपि दीपनी ॥ ६९९ ॥

र.सं, र.चं, र.र, ध, र सु, भै र., शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म २–२ कर्ष, त्रिफला, भुनीहींग, ताम्रभस्म, कचूर, त्रिकटु, भुनासुहागा, पत्रज, तज, इलायची, तालीसपत्र, जायफल, लौंग, अजवाइन, जीरा और धनिया १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बकरीके दूधसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ माशेकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ८ प्रकारकेशूल,

प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलग्रह, सबप्रकारकीवृद्धि, श्लीपद, भगन्दर, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ १६६ ॥

१६७ शूलविध्वंसिनीवटी

हिङ्गु जातीफलञ्चोष्णं वचामुण्डीसमन्वितम् ।
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युःसूतः स्यादेकभागकः॥७००॥
भृङ्गराजरसेनैव खल्वमध्ये विमर्दयेत् ।
कल्केन तेन कुर्वीत वटीश्चणकसन्निभाम् ॥ ७०१ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः सर्वरोगविनाशिनीम् ।
वातरोगेऽग्निमान्द्ये च शूलेऽजीर्णे कफामये ॥ ७०२ ॥
अरुचौ वेपथावेवं प्रदेया बद्धकोष्ठके ।
व्यथायामुदरस्यापि प्लीहरोगे गुदामये ॥ ७०३ ॥

रससागर., शूले।

भाषा—भुनीहींग, जायफल, मरिच, वच, गोरखमुण्डी ५–५ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १–१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर चने-प्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रात कालदेनेसे वातरोग, मन्दाग्नि, शूल, अजीर्ण, कफव्याधि, अरुचि, कम्प, बद्धकोष्ठता, उदर-पीडा, प्लीहा और गुदरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ १६७ ॥

१६८ शूलविनाशनरसः

रससौवीरमाक्षीकशिलाजित्ताभ्रभागकः ।
समभागांश्च गन्धेन सिद्धः शूलविनाशनः ॥ ७०४ ॥

र. मृ , शूलाधिकारे ।

भाषा—पारा, सफेदसुरमा, सोनामाखी और ताम्र इनकी-भस्में, शिलाजीत, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशूलोंको दूरकरताहै।

१६९ शूलशत्रुरसः

शुल्वं संशोधयेत्पूर्वं प्रागुक्तेन विधानतः ।
मारयेत्पूर्वविधिना पुटैर्दुग्धादिपञ्चकैः ॥ ७०५ ॥
पूर्वोक्तयुक्त्या सूतेन्द्रं भस्मीभूतं समाहरेत् ।
पलद्वयञ्च चत्वारि मृताभ्रानोः पलानि च ॥ ७०६ ॥
ताम्राद्दष्टगुणञ्चैव क्षारं निर्धूममाहरेत् ।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा मर्दयेद्धिङ्गुवारिणा ॥ ७०७ ॥
कुवेराक्षीरसैश्चैव व्योषनीरैस्ततः परम् ।
लेलीतकेन सम्मर्द्य नीरैरार्द्रकसम्भवैः ॥ ७०८ ॥
जम्बीरबीजपूराद्भि र्नागरङ्गचुकजैः ।
उपक्षारैस्तथा क्षारैं जम्बीराद्यम्लसाऽपि च ॥७०९॥
एषामद्भिः प्रमृद्नीयात्प्रत्येकञ्च दिनेदिनम् ।
ततः संशोषयेद्यत्नाच्छूलहानुं रसेश्वरम् ॥ ७१० ॥
माषमेकं प्रयुञ्जीत रसेन्द्रं शूलशान्तये ।
अनुपानमिदं कुर्यादार्द्रकं व्योषरामठम् ॥ ७११ ॥
रुचकञ्च कुवेराक्षीं सर्वं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
शस्तेन वारिणाऽऽलोड्य पाययेत्तु शूलिनम् ॥७१२॥
सर्वेण शूलजातेन मुच्यते नाऽत्र संशयः ।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ७१३ ॥
शूलशत्रुरितिख्यातः सर्वशूलविनाशनः ।
पथ्ये तु द्विदलं वर्ज्यं नवान्नं सर्वमेव हि ॥ ७१४ ॥

रसाल ,शूलाऽधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकरकेमारेहुए तांबेको दुग्धादि पञ्चा-मृतसे मर्दनकर गजपुटकी आंचदे। फिर विधिपूर्वक माराहुआ-पारा २ पल, पूर्वोक्तताम्रभस्म ४ पल, कायमशोरा अथवा नोसादर ८पललेकर हींग, करञ्ज, त्रिकटु, गन्धककातेल, अदरख, जमीरी, बिजोरा, नारङ्गी, चूका, उपक्षार, क्षार और यथालाभ अम्लवर्ग इसके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोलीदेकर अदरख, त्रिकटु, भुनीहींग, संचल, करंज सब समभागलेकर बारीकचूर्ण-कर इसमेंसे ३ माशेचूर्ण ठंडेपानीमें घोलकर पिलानेसे सब-प्रकारकेशूल नष्टहोतेहैं। इसमें पथ्य सबतरहकीदाल और नये अन्नको छोड़कर देना ॥ १६९ ॥

१७० शूलसिंहरसः

विषं कर्षं वचा कर्षं त्रिकटु त्रिफला च षट् ।
भार्गी मुस्ता विडङ्गानां प्रतिकर्षञ्च चित्रकम् ॥७१५॥
गुडेन सर्वतुल्येन गुटिका चणमात्रिका ।
शूलसिंहः प्रयोगोऽयं कफशूलहरो भवेत् ॥ ७१६ ॥
एरण्डतैलशुण्ठीभ्यां हिङ्गु सौवर्चलान्वितम् ।
उष्णोदकैः पिवेच्चानु रसं वाऽऽनन्दभैरवम् ॥ ७१७ ॥

र.र.,टो.,र.चं ,यो.म ,र.क.ल.,र.को.,ना.वि ,शूले।

भाषा—शुद्ध बछनाग और वच १–१ कर्ष, त्रिकटु और त्रिफला ६–६ कर्ष, भारङ्गी, नागरमोथा, बिडङ्ग और चित्रक-मूल १–१ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागगुडमिलाय चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट-करताहै। एरण्डतैल, सोंठ, भुनीहींग और संचलकाचूर्ण ३ माशे गरमपानीकेसाथ मिलाकर इसकेसाथ आनन्दभैरवदेनेसेभी शूल नष्टहोताहै ॥ १७० ॥

१७१ शूलहरीवटी

हिङ्ग्वजाजी समरिचा वचा शुण्ठीसमन्विता ।
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युस्तथैव सूतकस्य च ॥७१८॥
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेत्खल्वमध्यतः ।
तेन कल्केन कुर्वीत वटीं चणकसम्मिताम् ॥ ७१९ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रात र्वटिकां रोगहारिणीम् ।
वातरोगे प्रयोक्तव्या वह्निमान्द्ये तथैव च ॥ ७२० ॥

र. क., र. मृ., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—हींग, जीरा, मरिच, वच, सोंठ, पारदभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर

चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह वातरोग और मन्दाग्निको नष्टकरतीहै ॥ १७१ ॥

१७२ शूलहररसः (प्रथमः)

सिन्दूरताम्राभ्रविषाणि गन्धः
समानि तत्तुल्यसहस्रवेधी ।
दीप्या कणाः पञ्च पटूनि हिङ्गु
आर्द्राद्विरामर्द्य च शूलहानिः ॥ ७२१ ॥

रसायनसार., शूले ।

भाषा—रससिन्दूर, ताम्र और अभ्रकभस्म, शुद्धवत्सनाभ और गन्धक १–१ भाग, अमलबेत ५भाग, अजवाइन, पीपल, पांचोंनमक और हींग १–१ भाग लेकर अदरखकेरससे १ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह शूलोंको नष्टकरताहै ॥१७२॥

१७३ शूलहररसः (द्वितीय.)

सूततुल्यन्तु जैपालं क्षिप्त्वैकत्र विमर्दयेत् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं सर्वशूलहरं परम् ॥ ७२२ ॥
यमानीन्द्रयवौ पाठा विल्वशुण्ठीरसाञ्जनम् ।
चूर्णं शूलहरं चानु पिबेदुष्णाम्बुना सदा ॥ ७२३ ॥

र. को., र. क. ल, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जमालगोटा समभागलेकर यहा तक मर्दनकरे कि पारा अदृश्यहोजाय अथवा रससिन्दूरडाले । इसकी २–२ रत्तीकी गोली पानीकेसाथलेकर अजवाइन, इन्द्र-जव, पाठा, बेलगिरी, सोंठ और रसौत सममागकाचूर्ण ३ माशे गरमपानीकेसाथ अनुपानमें लेनेसे सर्वप्रकारकेशूल और गुल्म नष्टहोतेहैं ॥ १७३ ॥

१७४ शूलान्तकरसः (प्रथमः)

वक्ष्ये शूलान्तकं नाम्ना सर्वशूलविनाशनम् ।
मन्दाग्निमरुचिं चैव निवारयति सत्वरम् ॥ ७२४ ॥
शुल्वेन पातितं सूतं दशधा स्वेदितं ततः ।
ग्रासोन्मुखं स्वर्णजीर्णं स्वरांशेन ततो बलिम् ॥ ७२५
आदित्यगुणतो जार्यं जीर्णार्के समभागतः ।
अग्नीषोमीययन्त्रेऽथ मारयेत्पूर्वयुक्तितः ॥७२६ ॥
ताम्रं प्रागुक्तमार्गेण सम्यक् शुद्धञ्च मारयेत् ।
पञ्चामृतादिपाकेन क्लेदभेदादिवर्जितम् ॥ ७२७ ॥
भस्मीभूताच्च सूतेन्द्रात्पलमेकं समाहरेत् ।
मृताद्रवेः पलं ग्राह्यं सर्वदोषविवर्जितात् ॥ ७२८ ॥
एकत्र मर्दयेत्तौ द्वौ जम्बीराद्यम्लयोगतः ।
तत्र कल्के प्रक्षिपेच्च कल्कसाम्येन लाङ्गलीम् ॥७२९॥
वन्ध्याकन्दश्च तन्मानं कम्बुकल्कं चतुर्गुणम् ।
निक्षिप्य खल्वे तत्सर्वं जम्बीराद्यम्लयोगतः ॥७३०॥
मर्दयेद्दिवसान्सप्त दिवानक्तमतन्द्रित. ।

मुद्रढे सम्पुटे क्षिप्त्वा कल्कञ्च पुटयेत्ततः ॥ ७३१ ॥
आरण्यच्छाणकै र्भारोन्मानकैः स्वाङ्गशीतलम् ।
आक्षिप्य खल्वे निक्षिप्य सूतं सम्मर्दयेद्बुधः ॥७३२॥
मागधीमरिचैः सार्धं योजयेच्छूलशान्तये ।
कुबेराक्षीं तयो र्मानाद्दत्वा सूतञ्च खादयेत् ॥ ७३३ ॥
अनुपानमिदं दद्याद्व्योषक्वाथं सहिङ्गुकम् ।
कोष्णं निवर्तते शूलं पक्तिजं वातजं तथा ॥ ७३४ ॥
गुञ्जामात्रप्रमाणेन रसं दद्याद्विचक्षणः ।
अनुपानान्तरं वक्ष्ये रसस्य बलवत्तरम् ॥ ७३५॥
दग्ध्वा हरीतकीं क्षारं कुर्यात्तस्यैकभागकम् ।
यवानी भाग एकः स्याद्वाह्लीकाद्भागमाहरेत् ॥७३६॥
माणिमन्थस्य भागः स्याद्व्योषक्वाथे विनिक्षिपेत्
सूतेन्द्रं विनियोज्याऽथ क्वाथमेनं पिबेद्नु ॥ ७३७ ॥
सर्वपामेव शूलानां नाशं कुर्याद्रसेश्वरः ।
ग्रहणीञ्च विसूचीञ्च तथाऽजीर्णमरोचकम् ॥ ७३८ ॥
प्लीहानं गुल्ममरिलं नाशयेदेष सेवितः ।
शालयः कृष्णमुद्गाश्च गवां क्षीरं घृतञ्च गोः ॥७३९॥
पथ्यमत्र प्रयोक्तव्यमनुक्तं वर्तयेद्बुधः ।
अयं शूलान्तको नाम रस. प्रोक्तः क्रमागतः ।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ७४० ॥

रसाल , शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको समभाग शुद्धताम्बेके चूर्णमें मिलाकर नीबूवगैरहकेरससे घोटघोटकर १० बार ऊर्द्ध्वपातनकरे । फिर विषवर्गकेसाथ मर्दनकर काञ्जीमें स्वेदनकर बुभुक्षा उत्पन्नकर षोडशांश स्वर्णबीजदेकर बारहगुनागन्धक जारणकरे । फिर सम-भाग ताम्रभस्म डालकर नीबूवगैरहकेरससे घोटकर डमरूयन्त्रमें अग्निदेकर ऊर्द्ध्वपातितकरे । पारदकेयोगसे भस्मकियेहुए ताम्रको दुग्धादिपञ्चामृतमें घोटघोटकर गजपुटकीआंचदे । जब वान्ति-भ्रान्त्यादिकोंसे रहित होजाय तब इसकीबराबर पारदभस्म-मिलाय जम्भीरीवगैरह अम्लद्रव्योंसे १–२ दिनमर्दनकर इसकल्ककी-बराबर करिहारी और बांझखेखसेकाकन्दमिलाय मर्दनकरे । फिर इससे चतुर्गुणित शङ्खभस्म डालकर लगातार ७ दिनतक मर्दन-कर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर दृढमृत्तिकासे ६–७ कपड़-मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर एकभार जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पीपल और मरिचकेसाथदेकर करंजकेबीजोंकाचूर्ण ३ माशे फकावे ऊपरसे त्रिकटुकेक्वाथमें हींगकाप्रक्षेपदेकर कदुष्णपिलावे । इससे पक्तिशूल और वातशूल नष्टहोताहै । हरेंकीभस्म, अज-वाइन, भुनीहींग, सेंधानमक समभागलेकर चूर्णबनाकर रखछोड़े । पूर्वरसकोदेकर त्रिकटुकेक्वाथमें इसचूर्णका प्रक्षेपदेकर पिलानेसे सबप्रकारकेशूल, ग्रहणी, हैजा, अजीर्ण, अरुचि, प्लीहा, और सबप्रकारकेगुल्म नष्टहोतेहैं । पुरानेचावल, कालेमूंग, गायका-दूध और घी येसब पथ्यहैं ॥ १७४ ॥

१७५ शूलान्तकरसः (द्वितीयः)

भस्मसूतमयश्चापि पलमेकं पृथक्पृथक् ।
ताम्रभस्मपले द्वे तु गन्धकस्य पलत्रयम् ॥ ७४१ ॥
हरितालश्च कर्षांशं विमलाहेममाक्षिकम् ।
पलार्द्धं हलिनीकन्दं नागवङ्गौ पलार्द्धकौ ॥ ७४२ ॥
चतुष्पला त्रिवृच्चैतत्सर्वं सम्यग्विचूर्णयेत् ।
भूधात्रीस्वरसेनैव भावयेत्सप्तधा भिषक् ॥ ७४३ ॥
तथा दन्तीरसे वल्लं दद्यादार्द्रकवारिणा ।
तेन कोष्ठे विशुद्धे च दधिभक्तञ्च भोजयेत् ॥ ७४४ ॥
सर्वशूलान्हरत्येषो रसः शूलान्तको मतः ।
रसः शूलहरः प्रोक्त इति भालुकिभाषितम् ॥ ७४५ ॥

र. को., र. चं , चि. क , र. र. स , शूले ।

टि०—यत्र अयमः स्थाने खस्येति पाठो लभ्यते तत्राऽभ्रभस्म नियोज्यम् ।

भाषा—पारद और लोहभस्म १–१ पल, ताम्रभस्म २ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, रौप्यमाक्षिक और स्वर्णमाक्षिक १–१ कर्ष, शुद्धकरिहारी २ कर्ष, नाग और वङ्गभस्म १–१ कर्ष, निसोत ४ पल लेकर बारीकचूर्णकर भुंईआंवले और दन्तीमूलकेस्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे दस्तहोंगे। पेट साफहोनेपर दहीभात खानेको देवे । इससे तमामशूल नष्टहोतेहैं ॥ १७५ ॥

१७६ शूलान्तकरसः (तृतीयः)

मृणालं चन्दनं यष्टी गुडूची वालकं तथा ।
एतत्सर्वं समञ्चूर्णं चूर्णांशां शर्करां क्षिपेत् ॥ ७४६ ॥
सिन्दूरं वल्लमात्रेण तण्डुलोदकपानतः ।
पित्तशूलविदाहौ च सर्वशूलं प्रशाम्यति ॥ ७४७ ॥

व. रा., शूले ।

भाषा—भसींड, सफेदचन्दन, मुलहठी, गिलोय और सुगन्धवाला १–१ कर्ष, शकर ५ कर्ष, रससिन्दूर ३ रत्ती मिलाकर १–२ पहरघोटकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ मासे चावलकेधोवनकेसाथदेनेसे पित्तशूल और दाह नष्टहोतेहैं ॥ १७६ ॥

१७७ शूलान्तकोरसः (चतुर्थः)

रसहेमाभ्रवङ्गानां भागास्तुल्यांशयोजिताः ।
वराघनाम्बुना मर्द्यः सिद्धः शूलान्तको रसः ॥ ७४८ ॥
शतावरीरसक्षौद्रयुक्तो वा शर्करान्वितः ।
यष्ट्याह्वत्रिफलानिम्बकटुकारग्वधैर्युतः ॥ ७४९ ॥
धात्रीरसक्षौद्रयुतस्सधात्रीचूर्णमाक्षिकः ।
शिवाद्राक्षायुतो वापि पथ्याक्षौद्रयुतोऽथवा ॥ ७५० ॥
पाचनं वमनं शस्तं लङ्घनं कफशूलिनाम् ।
गोधूमयवरूक्षाणि मधूनि च हितानि च ॥ ७५१ ॥
मातुलुङ्गरसो वापि शिग्रुक्वाथोऽथवा हितः ।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्बस्तिशूलनुत् ॥ ७५२ ॥

र , शूलाधिकारे

भाषा—पारा, सुवर्ण, अभ्रक, वङ्ग इनकीभस्में समभाग लेकर त्रिफला और नागरमोथेकेक्वाथसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी-गोलियांबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक शतावरीकेरस और मधु अथवा शकर अथवा मुल्हठी, त्रिफला, नीमकीछाल, कुटकी, अमिलतासकागूदा इनकेकाढेकेसाथ, अथवा आंवलेकेरस और मधुकेसाथ, अथवा आंवलेकेचूर्ण और शहदकेसाथ, अथवा हर्रे और द्राक्षकेसाथ अथवा हर्रे और मधुकेसाथ, अथवा विजोरेकेरस या सहिजनकेक्वाथकेसाथ अथवा यवक्षार और मधुकेसाथदेनेसे पार्श्व, हृदय और वस्तिशूलको यह नष्टकरताहै । कफशूलीको पाचन, वमन और लङ्घनकराना । गेंहूं, जव, रूक्षपदार्थ और मधु पथ्यमें देना ॥ १७७ ॥

१७८ शूलारिरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं समं कृत्वा ताम्रं तुल्यं नियोजयेत् ।
मरिचं नागरं हिङ्गु वचाऽजाज्यग्निमूलकम् ॥ ७५३ ॥
मार्कवस्वरसेनैव दिनं सूक्ष्मं विमर्दयेत् ।
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकाः कारयेद्भिषक् ॥ ७५४ ॥
शूलं गुल्ममुदावर्तं वातरोगं निहन्ति च ।
रसः शूलारिरित्येष वह्निमान्द्यनिषूदनः ॥ ७५५ ॥

व.रा., शूले ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मरिच, सोंठ, भुनीहींग, वच, जीरा, चित्रकमूल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे एकदिनमर्दनकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, गुल्म, उदावर्त, वातरोग, मन्दाग्नि ये सब नष्टहोतेहैं ॥ १७८ ॥

१७९ शूलारिरसः (द्वितीयः)

रसं गन्धकं टङ्कणं श्वेतकाच-
मलं भारशृङ्गं विडङ्गं वराटम् ।
रविं शम्बुकं मेषजातञ्च शृङ्गं
रविस्नुक्पयोभिर्दिनं सम्विमर्द्य ॥ ७५६ ॥
पुटे दग्धमेतद्द्विपर्य्योपयुक्तं
मरीचाज्ययुक्तं प्रयुञ्जीत वल्लम् ।
महाशूलदोषे सपक्तौ च रोगे
इमं मन्दवह्नौ ददीत ग्रहण्याम् ॥
क्षये दुर्निवारे विकारे च पाण्डौ
तथा वातरोगे प्रयुञ्जीत नित्यम् ॥ ७५७ ॥

रसायनसं., र. का , नि. र., वै. चि., र. बो., शूलाऽधिकारे ।
नि.र , वै. चि , शूलहर इतिनाम। र.का. महेश्वररस इतिनाम

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, काचनमक, बारहसींगे और कौडीकीभस्म, विडङ्ग, ताम्र, घोंघा और मेंढेकेसींगकीभस्म सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय थूहर और आकके दूधसे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपडमिटी देकर सुखनेपर गजपुटकी

आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शुद्धबछनाग और त्रिकटु १–१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती मरिच और घीकेसाथमिलाकर देनेसे उद्धतशूल, पक्तिशूल, मन्दाग्नि, असाध्यक्षय, पाण्डु और वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० शूलारिरसः

शुण्ठी सौवर्चलं टङ्कं सैन्धवं प्रतिकार्षिकम् ।
मल्लं माषमितं शिग्रुरसेन परिमर्दयेत् ॥ ७५८ ॥
बदरास्थिप्रमाणेन गुटीं कृत्वा विचक्षणः ।
उष्णतोयाऽनुपानेन शूलञ्च विविधञ्जयेत् ॥ ७५९ ॥
अशीतिं वातजान्रोगान्नाशयेन्नात्र संशयः ।
मत्स्येन्द्रः कृपया पूर्वं गोरक्षाय ददौ किल ॥ ७६० ॥

रसायनसं, रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—सोंठ, सचल, भुनासुहागा, सेंधानमक १–१ कर्ष शुद्धसोमल १ माशा लेकर बारीकचूर्णकर सहिजनकेरससे एकदिन मर्दनकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गरमपानीकेसाथलेनेसे नानाप्रकारकेशूल और ८० वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ १८० ॥

१८१ शूलेभसिंहिनीगुटिका

बलेः शुद्धस्य भागार्द्धं भागार्द्धं पारदस्य च ।
विषस्य भागो विज्ञेयो मरिचस्य त्रयः स्मृताः॥७६१॥
भागैकं पिप्पलीशुण्ठ्योः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
भावयेच्छृङ्गवेरस्य रसेनैव त्रिवासरम् ॥ ७६२ ॥
रुबुपत्ररसेनैव भावनात्रितयं तथा ।
पश्चात्संशोष्य चणकमात्रा कार्या वटी बुधैः ॥ ७६३॥
शीतोदकेन दातव्या सर्वशूलनिवारिणी ।
अञ्जयेच्छीतनीरेण नेत्रस्रावं विनाशयेत् ॥ ७६४ ॥
शूलेभसिंहिनी ख्याता न देया यस्य कस्यचित् ॥
शङ्करेण स्वयं प्रोक्ता गोपालपुरतः पुरा ॥ ७६५ ॥

र. का, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, शुद्धबछनाग १ भाग, मरिच ३ भाग, पीपल और सोंठ १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख और एरण्डकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे सबप्रकारके शूलोंको यह नष्टकरतीहै । ठंढेपानीमेंघिसकर नेत्रोंमें अञ्जनकरनेसे नेत्रस्राव नष्टहोताहै ॥ १८१ ॥

१८२ शृङ्खलावातनाशनरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं चाभ्रकं चाम्लवेतसम् ।
द्विदिनं भावयेत्खल्वे हंसपादीरसैस्तथा ॥ ७६६ ॥
काचकूप्यां निवेश्याऽथ कुक्कुटीपुटपाचितम् ।
भावितं मत्स्यपित्तेन द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ७६७ ॥
अनुपानविशेषेण शृङ्खलावातनाशनम् ।
पथ्यं क्षीरौदनं देयं नारिकेलजलाऽऽप्लुतम् ॥ ७६८ ॥

ध. रा., शृङ्खलावाते ।

टि०—"देहश्च पाण्डुशुष्कश्च निद्रानाशः शिरोव्यथा । वान्ति हिक्का च विस्फोटः शृङ्खलावातलक्षणम् ॥ इति"

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, अभ्रकभस्म, अम्लवेत सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजकेरससे दोदिन मर्दनकर गोलाबनाय ३–४ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके कुक्कुटपुटकीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीकेपित्तसे एकभावनादेकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शृङ्खलावातको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूधभात और नारियलकाजल देना ॥ १८२ ॥

१८३ शृङ्खलारसः

रसं गन्धं कम्बोर्भसितमपि कापर्दभसितं,
मरीचं भूचन्द्राम्बुधिरससहस्रांशुलविकम् ॥ ७६९ ॥
रसाङ्कंशं टङ्कं सकलमपि चूर्णीकृतमिदं,
क्रमाद्यावत्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥ ७७० ॥

र. सि, क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, शङ्खभस्म ४ भा, कौड़ीभस्म ६ भा., मरिच १२ भा., भुनासुहागा $\frac{9}{4}$ भागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथलेनेसे क्षय नष्टहोताहै । इसकीमात्रा धीरेधीरे बढाकर ४ माशेतककीकरना ॥ १८३ ॥

१८४ शृङ्गाराभ्रम् (प्रथमम्)

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं
शाणमानं यदन्य-,
त्कर्पूरं जातिकोषं सजलमिभकणा
तेजपत्रं लवङ्गम् ।
मांसी तालीसचोचे गजकुसुमगदं
धातकी चेति तुल्यं,
पथ्या धात्री बिभीतं त्रिकटुरथपृथक्
त्वर्धशाणं द्विशाणम् ॥ ७७१॥
एला जातीफलाख्यं क्षितितलविधिना
शुद्धगन्धाश्मकोलं,
कोलार्द्धं पारदस्य,प्रतिपदविहितं
पिष्टमेकत्र मिश्रम् ।
पानीयेनैव कार्याः परिणतचणक-
स्विन्नतुल्याश्च वट्यः,
प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च हि किय-
च्छृङ्गवेरं सपर्णम् ॥ ७७२ ॥
पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति
क्षिप्रमेतान्विकारान्,
कोष्ठे दुष्टाग्निजातान् ज्वरमुदररुजो
राजयक्ष्म क्षयञ्च ।

कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं
मेहमेदोविकारां-,
श्छर्दिं शूलाम्लपित्तं तृषमपि महतीं
गुल्मजालं विशालम् ॥ ७७३ ॥
पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभवगदान्
पीनसं प्लीहरोगं,
हन्यादामानिलोत्थान्कफपवनकृता-
न्पित्तरोगानशेषान् ।
बल्यो वृष्यश्च योगस्तरुणतरकरः
सर्वरोगे प्रशस्तः,
पथ्यं मांसैश्च यूषैर्घृतपरिलुलितै
र्गव्यदुग्धैश्च भूयः ॥ ७७४ ॥
भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया
दीयमानं मुदा च-,
च्छृङ्गाराभ्रेण कामी युवतिजनशता-
भोगयोगादतुष्टः ।
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिपयचि-
रस्वेच्छया भोज्यमन्य-
द्दीर्घायुः काममूर्ति र्गतवलिपलितो
मानवोऽस्य प्रसादात् ॥ ७७५ ॥

र. सं., भै. र., र. चि., र. सु., यो. म., रसायनसार, र. चं., कासाधिकारे । तथा च वै. र., र. कौ., र. र., ध., रसायनसं., र. म. मा., वृ. यो. त., र. क., वै. द., रसायनवाजीकरणयोः ।

भाषा—कृष्णाभ्रकभस्म २ पल, शुद्धकपूर, जावित्री, सुगन्धवाला, गजपीपल, तमालपत्र, लौंग, जटामांसी, तालीसपत्र, तज, नागकेशर, कुठ और धावड़ीकेफूल ४–४ माशे, हर्रे, आंवले, बहेड़े, त्रिकटु २–२ माशे, इलायची, जायफल और बन्दुर्भायन्त्रसे शुद्धकियाहुआगन्धक ८–८ माशे, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर ४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन शतावरीवगैरहकेरसमें घोटकर भीगेहुएचनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे प्रातःकाल ४–४ गोली अदरख और पानकेसाथ खाकर थोड़ा पानीपीनेसे मन्दाग्निजनितरोग, ज्वर, उदरपीड़ा, राजयक्ष्म, क्षय, कास, श्वास, शोथ, नेत्रपीड़ा, प्रमेह, मेदोवृद्धि, वमन, शूल, अम्लपित्त, बड़ीदुर्दन्तृषा, असाध्यगुल्म, पाण्डु, रक्तपित्त, विषदोष, पीनस, प्लीहा, आमवात, कफ और वातरक्तरोग, समस्तपित्तरोग इनसबको नष्टकर मनुष्यको जवान बनाताहै । थोड़ेदिनतक शाक और अम्लपदार्थोंका परित्यागकरे । इसकेबाद यथेष्टभोजनकरे । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे वलीपलितादिकोंसे निश्चिन्तहोकर पूर्णयुवावस्थामें आजाताहै ॥ १८४ ॥

१८५ शृङ्गाराभ्रम् (वृहत्) २

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं नागकेसरम् ।
जातीकोषञ्च कर्पूरं लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥ ७७६ ॥
सुवर्णञ्चापि प्रत्येकं कर्षमात्रं प्रकल्पयेत् ।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णन्तु चतुष्कर्षं प्रयोजयेत् ॥ ७७७ ॥
तालीसं घनकुष्ठञ्च मांसी त्वग्धातकी तथा ।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ७७८ ॥
कर्षद्वयं वा चैतेषां पिप्पलीक्वाथमर्दितम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ ७७९ ॥
अग्निमान्द्यादिकान्रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम् ।
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ७८० ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च हन्याद्यक्ष्माणमेव च
नानारोगप्रशमनं बलवर्णाग्निकारकम् ॥ ७८१ ॥
वृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्तितम् ।
एतस्याऽभ्यासमात्रेण निर्व्याधि र्जायते नरः ॥ ७८२॥

र. सं., ध., (कासे) र. सु., र. चं., वाजीकरणे ।

टि०—"जीर्णे सुवर्णं लोह वा वचन परिदीयते । तदायं सर्वरोगाणां सार्वभौमः प्रकीर्तितः" इति केषुचित्पुस्तकेष्वधिकं दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, नागकेशर, जावित्री, शुद्धकपूर, लौंग, तेजपात और सुवर्णभस्म १–१ कर्ष, अभ्रकभस्म ४ कर्ष, तालीसपत्र, नागरमोथा, कुठ, जटामांसी, तज, धायड़ीकेफूल, इलायची, त्रिकटु, त्रिफला, गजपीपल २–२ कर्षलेकर सबका बारीकचूर्णकर पीपलकेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियांबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ या २ गोली तज और मधुकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, कामला, उदररोग, शोथ, आनाह, ज्वर, ग्रहणी, श्वास, कास, राजयक्ष्म, बलनाश, इनसबको नष्टकर आदमीको युवावस्थामें लाताहै १८५

१८६ शैलेन्द्ररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्म विषन्तथा ।
वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्बयष्टिगुडूचिजैः ॥ ७८३ ॥
दिनं भृङ्गीद्रवै मर्द्यं वाकुच्याश्च कषायकैः ।
भक्षयेल्लोहपात्रस्थं कर्षार्द्धं जिह्विकामधुना ॥ ७८४ ॥
गुञ्जाभल्लाततैलाभ्यां वाकुचीचूर्णलेपनम् ।
अनुपानविशेषेण सर्वकुष्ठविनाशनः ॥ ८८५ ॥

व. रा., वै. चि., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्तभस्म, शुद्धवच्छनाग, वाकुची, और त्रिफला समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाय नीमकीछाल, चित्रकमूल, गिलोय, भंगरा, वाकुची इनकेद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ८–८ माशे लोहेकेपात्रमें मधुकेसाथघोटकर खावे, ऊपरसे वाकुचीकाकाढ़ा पीवे तो कुष्ठजितकुष्ठको यह नष्टकरताहै । गुंजा और भिलावेकेतैलसे वाकुचीकेचूर्णका लेपकरे ॥ १८६ ॥

१८७ शोथकालानलरसः

चित्रं कुष्ठजटाजञ्च श्रेयसी सैन्धवं तथा ।
पिप्पली देवपुष्पञ्च सजातीफलटङ्कणम् ॥ ७८६ ॥
लौहमभ्रं तथा गन्धं पारदेनैव मिश्रितम् ।
एतेषां कर्षमात्रेण वटीं गुञ्जामितां शुभाम् ॥ ७८७ ॥

भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षरसेन तु ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ७८८ ॥
कासं श्वासं तथा शोथं प्लीहानं हन्ति दुस्तरम् ।
मेहं मन्दानलं शूलं सङ्ग्रहग्रहणीं तथा ॥ ७८९ ॥
अवश्यं नाशयेच्छोथं कर्दमं भास्करो यथा ।
शोथकालानलो नाम रोगानीकविनाशनः ॥ ७९० ॥

भै र , ध , शोथाधिकारे ।

भाषा—चित्रकमूल, इन्द्रजव, गजपीपल, सेंधानमक, पीपल, लौंग, जायफल, भुनासुहागा, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और पारा समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तालमखानेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली प्रात काल तालमखानेकेस्वरसकेसाथ देनेसे ८ प्रकारकेज्वर, साध्य अथवा असाध्यकास, श्वास, शोथ, प्लीहा, प्रमेह, मन्दाग्नि, शूल, सङ्ग्रहग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १८७ ॥

१८८ शोथहारसः (प्रथम)

मृतं कृष्णायसं ताम्रं पारदश्च समांशकम् ।
पार्यतं त्रिगुणं शुद्धं माक्षिकं ताम्रभागिकम् ॥ ७९१ ॥
वैक्रान्तं ताम्रभागश्च मृतं सर्वं प्रमर्दयेत् ।
ताम्रसमं शङ्खभस्म मृगशृङ्गभवं तथा ॥ ७९२ ॥
सर्वं विमर्द्य खल्वेन सितपौनर्नवैः द्रवैः ।
दिनसप्तमितं पश्चात्क्षौद्रपिप्पलिसंयुतम् ॥ ७९३ ॥
वल्लमात्र लिहेदेतत्सर्वश्वयथुनाशनम् ।
दोषजं रोगजं शोफं तथागन्तुसमुद्भवम् ॥
यकृत्प्लीहं क्षयं पाण्डुं ग्रहणीञ्च जयेद्ध्रुवम् ॥ ७९४ ॥

र म मा , ना. वि , शोथे । ना वि., शोफगजकेसरीरस इति नाम ।

भाषा— लोह और ताम्र भस्म शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग सोनामाखी, वैक्रान्त, शङ्ख, मृगशृङ्ग इनकी भस्में १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सफेदपुनर्नवाकेरससे ७ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथलेनेसे सबप्रकारका-शोथ, यकृत्, प्लीहा, क्षय, पाण्डु, ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

१८९ शोथहारसः (द्वितीय)

सूतगन्धरविभस्म तुल्यकं
सर्वतो द्विगुणभस्म लोहजम् ।
रक्तचूर्णसहितं विमर्दितं
काककुष्ठसहितं दिनमेकम् ॥ ७९५ ॥
वल्लयुग्ममशितो गुडाभया
नागरेण सगुडेन कणाभिः ।
बिल्वपत्रजरसेन वा तथा
शोथहा भवति विश्वकिरात ॥ ७९६ ॥
वासामृताकण्टकारीक्वाथो माक्षिकसंयुतः ।
कुष्ठं शोथं जयत्याशु कासं श्वासं वमिं तथा ॥
सेकस्तथाऽर्कवर्षाभू निम्बक्वाथेन शोथजित् ॥७९७॥

र , र चो , शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभाग, सब सेदूनीलोहभस्म और कमीला लेकर सबकीनीलवर्णकज्जलीकर काकजङ्घा और कुठकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली गुड और हरेंकाचूर्ण अथवा सोंठ और गुड अथवा पीपलकाचूर्ण या बेल पत्रस्वरस अथवा सोंठ और चिरायतेकाक्वाथ अथवा अडूसा, गिलोय और भटकटैयाकेक्वाथमें मधुमिलाकर इसकेसाथदेनेसे कुष्ठ, शोथ, कास, श्वास, वमन येसब निवृत्तहोतेहैं। शोथमें आक, पुनर्नवा और नीमकेक्वाथका स्वेदन कराना ॥ १८९ ॥

१९० शोथाङ्कुशरसः

रसेन्द्रगन्धं मृतलोहताम्रं
नागं तथाऽभ्रं समसङ्ख्यकञ्च ।
निर्गुण्डिकास्फोतकपित्थचिञ्चा-
पुनर्नवाश्रीफलकेशराजम् ॥ ७९८ ॥
एषा रसैर्भावितमेकशश्च
कोलप्रमाणा घटिका विधेया ।
शोथज्वरारोचकपाण्डुरोगं
सर्वाङ्गशोथं विनिवारयेच्च ॥
पित्तान्वितान्वातभवान्कफोत्थां-
श्छोथाङ्कुशो नाम निहन्ति रोगान् ॥७९९॥

भै र , शोथाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, नाग, और अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी, कोयल, कैथ, इमली, पुनर्नवा, नारियल, कालाभंगरा इनप्रत्येकद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियाबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गशोथ, ज्वर, अरुचि पाण्डु इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

१९१ शोथारिरसः (शोफारिरसः)

हिङ्गुलजयपालञ्च मरिचं टङ्कणं कणाम् ।
सममर्द्यं वल्लः सघृतः सर्वशोफहरः परः ॥ ८०० ॥

र च , रसायनम , यो. र , नि र , शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सिंगरफ, जमालगोटा, मरिच, सुहागा और पीपल समभागलेकर बारीकचूर्णकर पुनर्नवा वगैरह शोथप्रद्वा औंकेरसमें मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली घृतकेसाथ देनेसे यह सबप्रकारकेशोथोंको निवृत्तकरताहै ॥ १९१ ॥

१९२ शोथारिलोहम् (प्रथमम्)

त्रिकटु त्रिफला द्राक्षा पौष्करं सजलं शटी।
लौहं वचा लवङ्गञ्च शृङ्गी त्वक् शतपुष्पिका॥ ८०१॥
विभीतकं विडङ्गञ्च धातकीपुष्पमेव च।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्॥ ८०२॥
सर्वद्रव्यसमञ्चाऽत्र सुशुद्धं लौहकिट्टकम्।
कुटजस्य रसेनाऽपि भक्षयेत्परियत्नतः॥ ८०३॥
वेष्टितं जम्बुपत्रेण पङ्केन परिलेपयेत्।
ततो गजपुटे पक्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ८०४॥
प्रातःकाले शुचि र्भूत्वा भक्षयेच्छक्तिमानतः।
निहन्ति सर्वजं शोथं ग्रहणीञ्च विशेषतः॥ ८०५॥
उदरेषु च सर्वेषु शोथेषु च विधानतः।
विविधा व्याधयश्चान्ये सेवनाद्यान्ति साध्यताम् ८०६

भै.र., शोथाऽधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, पोहकरमूल, सुगन्धवाला, कचूर, लोहभस्म, वच, लौंग, काकड़ासींगी, तज, सोंफ, बहेड़ा, विडङ्ग, धावड़ीकेफूल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर बराबरप्रमाणमें शुद्धमण्डूरमिलाकर कुटजके रससे भावनादेकर पिण्डबनाय जामुनकेपत्तोंमें लपेटकर ४ अङ्गुल कीचड़ ऊपरचढ़ाय गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक प्रात.काल पवित्रहोकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे सबप्रकारकेशोथ, विशेषकर ग्रहणीरोग, उदररोग और समस्तव्याधियां नष्टहोतीहैं॥१९२॥

१९३ शोथारिलोहम् (द्वितीयम्)

अयोरजस्त्र्यूषणयावशूकं
चूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन।
शोथं निहन्यात्सहसा नरस्य
यथाशनि र्वृक्षमुदग्रवेगः॥ ८०७॥

भै. र., च. सं., सु. सं., भा. प्र., हितो., र. सं., र.,र. चि., शोथाधिकारे।

टि०—र स., र. सु., र. चि., एषु त्र्यूषणादिलोहमिति नाम। कण्ठश्रीरविविरचितहितोपदेशे अनुपाने त्रिफलारसस्थाने केवलमुष्णाम्बु गृहीतम्, यावशूकाऽभाव, तद्वयस्याऽपि त्यागे कारण नोपलभामहे।

भाषा—लोहभस्म, त्रिकटु और यवक्षार समभागलेकर त्रिफलाके स्वरस अथवा क्वाथकेसाथ उचितमात्रामें लेनेसे समस्त-शोथ नष्टहोतेहैं॥ १९३॥

१९४ शोथोदरारिलोहम्

पुनर्नवाऽमृता वह्नि र्गवाक्षी मानवज्रिके।
सूर्यावर्तार्कमूलञ्च पृथगष्टपलं जले॥ ८०८॥
पादशेषे शृतं द्रोणे सुपूते वस्त्रगालिते।
लौहचूर्णाष्टपलकं पचेदाज्यसमं भिषक्॥ ८०९॥
अर्कस्य द्विपलं क्षीरं स्नुहीक्षीरं चतुष्पलम्।
पलद्वयं कौशिकस्य माक्षिकाश्मजतोः पलम्॥८१०॥
पलार्द्धं पारदं शुद्धं गन्धकस्य पलन्तथा।
जयपालं ताम्रमभ्रं शुद्धमत्र प्रदापयेत्॥ ८११॥
कङ्कुष्ठवह्निकन्दानि शराख्यं घण्टकर्णकम्।
पलाशस्य च वीजानि कञ्चुकी तालमूलिका॥ ८१२॥
त्रिफला च क्रिमिरिपुस्त्रिवृद्दन्तीभवं तथा।
सूर्यावर्तगवाक्ष्यौ च वर्षाभू र्वज्रवल्लिका॥ ८१३॥
एषां लौहसमां मात्रां स्निग्धभाण्डे निधापयेत्।
अतोऽस्य भक्षयेन्मात्रामनुपानञ्च युक्तितः॥ ८१४॥
हन्ति सर्वोदरं शीघ्रं नात्र कार्या विचारणा।
ये च शोथाः सुदुर्वाराश्चिरकालानुबन्धिनः॥ ८१५॥
तान्सर्वान्नाशयत्याशु तमः सूर्योदये यथा।
नातः परतरं किञ्चिच्छोथोदरविनाशनम्॥ ८१६॥
उदराणि पाण्डुरोगं कामलाञ्च हलीमकम्।
अर्शो भगन्दरं कुष्ठं ज्वरं गुल्मञ्च नाशयेत् ८१७॥

यो. म., भै. र., र. क., र. र., र. का., उदराधिकारे।

भाषा—पुनर्नवा, गिलोय, चित्रकमूल, इन्द्रायणकीजड़, मानकन्द, थूहरकादूध, हुरहुर और आककीजड़कीछाल ८–८ पल लेकर अठगुनेपानीमें चतुर्थांशावशेषकाथकर वस्त्रमें छानकर मण्डूर और घी ८–८ पल डालकर पकावे। पकातेसमय आकका-दूध २ पल, थूहरकादूध ४ पल, गूगल २ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म और शिलाजीत १–१ पल, समभाग शुद्धपारेगन्धककीकज्जली २पल, शुद्धजमालगोटा, ताम्र और अभ्रकभस्म १–१ पल, कङ्कुष्ठ, चित्रकमूल, सूरण, शरपुङ्ख, घण्टपाटला, पलाशबीज, क्षीरकञ्चुकीका-दूध, तालमूली, त्रिफला, विडङ्ग, निसोत, दन्तीमूल, हुरहुर, इन्द्रायणकीजड़, पुनर्नवा, हड़जोड़ सबसमभागकाचूर्ण ८ पल डालकर पकावे। घन तैयारहोनेपर निकालकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। ६–७ दिन बीतजानेपर १ माशेसे ३ माशेतककी-मात्रा रोग और रोगीका बलाबलदेखकर रोगोचितानुपानकेसाथ-देनेसे दुस्तर और पुराना शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला, हली-मक, ववासीर, भगन्दर, कुष्ठ, ज्वर, गुल्म इनसबको यह तत्काल नष्टकरताहै। इससे बढ़कर और दूसरी दवा शोथहर नहींहै॥१९४॥

१९५ शोधनरसः

शुद्धसूतपलं ग्राह्यं शुद्धगन्धकतः पलम्।
तिन्तिरीबीजपलकं त्रिफलाऽष्टपला भवेत्॥ ८१८॥
सर्वमेकत्र संयोज्य खल्वे दत्त्वा सुमर्दयेत्।
पञ्चनिम्बुकतोयेन दिनमेकं निरन्तरम्॥ ८१९॥
दन्तीनीरैस्तथा मर्द्यस्त्रिवृताक्वाथतो दिनम्।
ततो बदरमात्रेण वटिका रचयेद्बुधः॥ ८२०॥
छायाशुष्का विधायाऽथ करण्डे विनिवेशयेत्।
पक्वां वटीं ददीताऽसामुदरार्तियुजे भिषक्॥ ८२१॥
उष्णोदकेन दत्त्वाऽथ घर्मे तं स्थापयेत्ततः।
विरेचनं प्रजायेत ततो दद्याच्च पथ्यकम्॥ ८२२॥
दत्ते पथ्ये स्तम्भनं स्याद्विरेकस्य न संशयः।
अनेन सूतराजेन विनश्यति जलोदरम्॥ ८२३॥

शोधनो नाम सूतेन्द्रो जलोदरनिवर्तकः।
त्रिदिनात्त्रिदिनादूर्ध्वं रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ ८२४ ॥
अन्यथा नैव योक्तव्यो बलक्षीणो विनश्यति।
मुद्गयूषः सुपथ्यं स्याद्विलेपीं वा प्रयोजयेत् ॥ ८२५ ॥

रसाल., उदराधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोटा १–१ पल, त्रिफला ८ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पोरेगन्धरवीनील-वर्णकज्वलीमें मिलाय परेनीबू, दन्तीमूल और निसोतकेदर्वोसे १–१ दिन मर्दनकर छोटेबेरबराबर गोलियें बनाकर छाया-शुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथ देकर धूपमें बैठानेसे रेचनहोगा। पेटसाफहोनेपर मुंगकायूष अथवा खिचड़ी देवे। प्रतितीसरेदिन इसीतरहदेनेसे जलोदर निवृत्त होताहै। इसका प्रतिदिन प्रयोग नहींकरना क्योंकि जलोदरी प्राय क्षीणहुआकरताहै और बलक्षीण आदमीका अकस्मात् मृत्यु हुआ करताहै ॥ १९५ ॥

१९६ शोफमुद्गररसः

रसं गन्धं मृतं ताम्रं पथ्या बालकगुग्गुलुः।
सममाज्येन संयुक्तं गुटिकाः कारयेत्ततः ॥ ८२६ ॥
एकैकां सेवयेद्वैद्यः शोफपाण्डुप्रशान्तये।
शीतलञ्च जलं देयं तक्रञ्चाम्लं विवर्जयेत् ॥
शोफमुद्गरनामाऽयं पूज्यपादेन निर्मितः ॥ ८२७ ॥

वै चि., व. रा., शोफे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, हर्रे, तगर गन्ठोला और गूगल समभागलेकर सबका बारीकचूर्णकर पोरे-गन्धककीनीलवर्णकज्वलीमेंमिलाय गायकाघी डालकर यहांतक खरलकरे कि गोलीबननेलायकहोजाय। इसकी १–१ मासेकी गोलियां बनाकर १–१ गोली ठंडेजलकेसाथदेनेसे यह शोथको नष्टकरताहै। इसमें छाछ और खटाईका परहेजकरे ॥ १९६ ॥

१९७ शोफारिरसः

स्वच्छसूतस्य गन्धेन कृत्वा कज्जलिकां शुभाम्।
ततस्तुल्यं सकान्तञ्च राजावर्तञ्च रौप्यकम् ॥ ८२८ ॥
अभ्रकञ्च शिला तालं विषव्योषाऽपराजिताः।
विषतिन्दुकबीजानि प्रत्येकं रससम्मितम् ॥ ८२९ ॥
सर्वमेकत्र संयोज्य चूर्णयित्वा ततः परम्।
भृङ्गराजरसं दत्त्वा मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ८३० ॥
शोधनं कारयित्वा च दातव्या चणकोपमा।
रसः शोफारिनामायं प्रोक्तो मन्थानभैरवैः ॥ ८३१ ॥
स्थौल्यं रोगमरोचकाग्निसदनं शोफञ्च पाण्डुामयं,
प्लीहानं ग्रहणीञ्च मूलकरुजं वातं तथानाहकम्।
हिक्काश्वासकफानिलं क्रिमियकृच्छूलञ्च जीर्णज्वरं,
सर्वान्वातकफामयांश्च हरति क्षिप्रं त्रिदोषामयान्८३२

वै. चि, व रा., शोफे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तांबा, कान्तलोह, लाज-वर्द, चांदी, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धमैनसिल, हरिताल और बछनाग, त्रिकुटु, कोयल और कुचिला समभागलेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर भंगरेकेरसमें दोदिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। वमनादिकसे कोष्ठशुद्धकरके इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे स्थूलता, अरुचि, मन्दाग्नि, शोफ, पाण्डु, प्लीहा, ग्रहणी, बवासीर, वातरोग, आनाह, हिचकी, श्वास, कफवातविकार, कृमि, यकृत्शूल, जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १९७ ॥

१९८ श्रीकण्ठरसः

स्वर्णताराऽर्ककान्तञ्च तीक्ष्णं वा मारितं समम्।
कृष्णाऽभ्रसत्त्वमाक्षीकं प्रत्येकं स्वर्णतुल्यकम् ॥ ८३३ ॥
तत्सर्वञ्चाऽन्धितं धाम्यं तत्खोटं मृतपारदम्।
समं सूतान्मृतं वज्रं पादांशं तत्र योजयेत् ॥ ८३४ ॥
सर्वं जम्बीरजैः द्रावैस्तत्सतल्ये विमर्दयेत्।
दिनैकं तन्निरुद्ध्याऽथ भूधरे पाचयेद्दिनम् ॥ ८३५ ॥
उद्धृत्य गन्धकं तुल्यं दत्त्वा रुद्ध्वा धमेद्दृतम्।
तच्चूर्णं मधुनाऽऽज्येन माषमात्रं लिहेत्सदा ॥ ८३६ ॥
रसः श्रीकण्ठनामाऽयं खेचरत्वं प्रयच्छति।
संवत्सरप्रयोगेण जीवेत्कल्पान्तमेव च ॥ ८३७ ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां सर्वलोहानि काञ्चनम्।
पलैकं गन्धकं क्षीरैः क्षामकं चानुपाययेत् ॥ ८३८ ॥

र. सं., रसायनस., रसायने।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, ताम्र, कान्तलोह, फौलाद, अभ्रक-सत्त्व, सोनामाखी इनकीभस्में समभागलेकर अन्धमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे खोट तैयारहोगा। यह खोट और पारदभस्म समभाग लेकर पोसे चतुर्थांश हीरेकीभस्म मिलाकर जंभीरीके-रससे एकदिनमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधर-यन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाय अन्धमूषामें बन्दकर धमनकरे। ठंढा होनेपर निकालकर रखछोड़े। इनमेंसे उड़दबराबर समयोचितानुपानकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंसे निर्मुक्तहोकर दीर्घजीवी होताहै। उसके मूत्र और पुरीषसे समस्तलोहोंका रङ्ग बदलजाताहै। एकपल शुद्धगन्धक दूधकेसाथअनुपानमें देनेसे रसका शरीरमें कामणहोताहै॥१९८॥

१९९ श्लीपदगजकेसरीरसः

व्योषामृतयमान्यश्च सूतोऽग्निं गन्धकं शिला।
सौभाग्यं जयपालञ्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ ८३९ ॥
भृङ्गगोक्षुरजम्बीरार्द्रकतोयैः विमर्दयेत्।
अस्य रक्तिद्वयं खादेदुष्णतोयाऽनुपानतः ॥
श्लीपदं दुस्तरं हन्ति प्लीहानं हन्ति सेवितः ॥ ८४० ॥

भै र, ध, वै क., श्लीपदाधिकारे।

भाषा—त्रिकुटु, शुद्ध बछनाग, अजवाइन, शुद्धपारा, चित्रकमूल, गन्धक, मैनसिल, सुहागा और जमालगोटा सम

भागलेकर बारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा, गोखरू, जंभीरी और अदरखके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथदेनेमे दुस्तर फीलपाव और प्लीहाको यह नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

२०० श्लीपदध्वंसीरसः

पारदं टङ्कणं तुल्यं तालकं ताम्रमेव च ।
माक्षिकं कान्तलोहञ्च मृतं शुद्धा शिला तथा ॥८४१॥
एतानि मर्दयेत्खल्वे शिग्रुनिर्गुण्डिकाघृतैः ।
द्विसप्ताहं विशोष्याऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ ८४२ ॥
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा काचकूप्यामथाऽपि च ।
सप्तवारं पुटेद्धीमांस्ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ ८४३ ॥
रसोऽयं श्लीपदध्वंसी प्रणीतो नकुलेन हि ।
अस्य गुञ्जाद्वयं खादेत्त्रयं वाऽथ चतुष्टयम् ॥ ८४४ ॥
पञ्चकोलकषायेण हन्त्ययं त्वरितं गदान् ।
श्लीपदं गलगण्डादीन्कुष्ठं विस्फोटकानपि ॥ ८४५ ॥

ना. वि., श्लीपदाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण माक्षिक और कान्तलोहभस्म, शुद्धमैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सहिजन और निर्गुण्डीकेरस तथा गायके घीसे १–१ दिन मर्दनकर १४ दिनतक कडीधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वोक्तद्रवोंसे मर्दनकर शराव अथवा आतशीशीशीमें बन्दकर आचदे। सात आचें देनेकेबाद निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २ से ४ रत्तीतकमात्रा उचितानुपानसेदेकर पञ्चकोलका-क्काथ पिलानेसे श्लीपद, गलगण्ड, कुष्ठ, विस्फोटक येसब नष्टहोतेहैं॥

२०१ श्लीपदारिरसः

कणावचादारुपुनर्नवानां
चूर्णं सचिव्यं समवृद्धदारु ।
सगन्धसूतस्य निहन्ति वल्लः
सकाञ्जिकः श्लीपदरोगमुग्रम् ॥ ८४६ ॥

र. का., श्लीपदाधिकारे ।

भाषा—पीपल, वच, देवदारु, पुनर्नवा, मोंठ, विधारा शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती काञ्जीकेसाथलेनेसे बढेहुए श्लीपदरोगको यह नष्टकरताहै॥२०१॥

२०२ श्लीपदारिलोहम्

हरीतक्या विभीतस्य धात्र्याश्चूर्णं सुचूर्णितम् ।
पट्तोलकप्रमाणेन ग्राह्यमेतद्गुणैषिणा ॥ ८४७ ॥
तोलद्वयं लोहचूर्णं कान्तलोहस्य जारितम् ।
तोलद्वयं ततो देयं विशुद्धञ्च शिलाजतु ॥ ८४८॥
कृत्वैकत्र समस्तांस्तु त्रिफलाक्काथभावना ।
श्लीपदायगदध्वंसी सर्वव्याधिविनाशनः ॥
श्लीपदारिरिति ख्यातो लोहो मुनिभिराद्रित॥८४९॥

भै र., र. र., र. सु., टो., श्लीपदाधिकारे । टोडरानन्दे त्रिफलालोहमितिनाम ।

भाषा—हर्रे, बहेडा, आवला, लोह और कान्तलोहभस्म, शुद्धशिलाजीत २–२ तोलेलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाकेक्काथसे ६–७ भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलियांबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ से २ गोलीतक त्रिफलाकेक्काथकेसाथदेनेसे सबप्रकारके श्लीपद नष्टहोतेहै ॥२०२ ॥

२०३ श्लेष्मकालानलरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणो गन्धः गन्धकाद्द्विगुणं विषम् ।
विषात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम् ॥ ८५० ॥
रसतुल्या प्रदातव्या चाभया सविभीतका ।
धात्री पुष्करमूलञ्च चाजमोदाऽजगन्धिका ॥ ८५१ ॥
विडङ्गं कट्फलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च ।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ८५२ ॥
भावयेत्सप्तधा रौद्रे स्वरसैः सुरसोद्भवैः ।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधिं कालानलो रसः ॥८५३॥

र. स , र. सु , र. चि , कफरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., बछनाग ४ भा , त्रिकटु ८ भा , हर्रे, बहेडा, आवला, पोहकरमूल, अज-मोद, बवई, विडङ्ग, कायफल, चव्य, पाचोंनमक, लौंग, निसोत और दन्तीमूल १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय तुलसीकेरससे कडीधूपमें ७ भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे इनमेंसे १–१ गोली तुलसीवगैरह कफघ्न अनुपानकेसाथदेनेसे यह कफरोगको नष्टकरताहै ॥ २०३ ॥

२०४ श्लेष्मकालानलरसः (महान्) २

हिङ्गुलसम्भवं सूतं शिलागन्धकटङ्कणम् ।
ताम्रं वङ्गं तथाऽभ्रञ्च स्वर्णमाक्षिकतालकम् ॥ ८५४ ॥
धुस्तूरं सैन्धवं कुष्ठं पिप्पली हिङ्गु कट्फलम् ।
दन्तिबीजं सोमराजी वनराजफलं त्रिवृत् ॥ ८५५ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य वटिकां कारयेद्भिषक् ।
कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथाबलम् ॥ ८५६ ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
मत्तसिंहो यथाऽरण्ये मृगाणां कुलनाशनः ॥
तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान् ॥८५७॥

र स , र सु , भै र.,र चि ,कफरोगे।र.सु ,ज्वरे कफरोगे च । भै र. ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शिगरिफसे निकालाहुआपारा, शुद्धमैनसिल, गन्धक और सुहागा, ताम्र, वङ्ग, अभ्रक और स्वर्णमाक्षिकभस्म, रस माणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, धतूरेकेबीज, सेंधा, कुठ, पीपल,

मुनीहींग, कायफल, जमालगोटा, बाकुची, केवाच, निसोत, सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी कज्जलीमें मिलाय थूहरकेदूधसे २–३ दिनमर्दनकर मटरबराबर गोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपातरूपी समस्तरोगोंको यह बहुतशीघ्र नष्टकरताहै ।

२०५ श्लेष्मपित्तान्तकरसः

मृतसूताऽभ्रलोहश्च वह्निगन्धकटङ्कणम् ।
भूनिम्बेन्द्रयवा रास्ना गुडूची पद्मकं शटी ॥ ८५८॥
दिनं पर्पटजे द्रावे मर्दितं वटकीकृतम् ।
सिताक्षौद्रे लिहेन्माषं श्लेष्मपित्तान्तको रसः॥८५९॥
पथ्यां कणां गुडं शुण्ठीं कर्षैकं भक्षयेदनु ।
कफपित्तहरं स्याद्देदाडिमं गुडनागरम् ॥ ८६० ॥

चि र., टो , र. क , श्लेष्मपित्तरोगे ।

भाषा—पारा, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, चित्रकमूल, शुद्धगन्धक और सुहागा, चिरायता, इन्द्रजव, रास्ना, गिलोय, पद्मकाठ और कचूर समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पित्तपापड़ेकेस्वरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ माशेकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शहर और मधुकेसाथखाकर हर्रे, पीपल, गुड और सोंठ समभागमिलाकर १ कर्ष अनुपानमें लेनेसे श्लेष्मपित्त नष्टहोताहै। इसरकहाहुआ अनुपान जिन्हें अनुकूल न हो उनको अनार, गुड़ और सोंठ मिलाकर देना ॥ २०५ ॥

२०६ श्लेष्मवातघ्नरसः

सूतो बलिस्त्रिकटुकं मगधाजटाग्नि
घर्यं विषं लवणकं समभागचूर्णम् ।
सम्मर्द्य भृङ्गपयसा कफरोगसङ्घं
हन्त्यग्निवृद्धिकृदसीतिसमीरणघ्नः ॥ ८६१ ॥

रसायनसं., कफवातरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, त्रिकटु, पिपलामूल, चित्रकमूल, चव्य, शुद्धवछनाग, सेंधानमक सब समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर भंगरेकेरससे एकदिन घोटकर १–१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह कफरोग, मन्दाग्नि और समस्त वातरोगोंको नष्टकरताहै ॥

२०७ श्लेष्मशैलेन्द्ररसः

गन्धकं पारदं चाभ्रं त्र्यूषणं जीरकद्वयम् ।
शटी शृङ्गी यमानी च पुष्करं रामठं तथा ॥ ८६२ ॥
सैन्धवं यावशूकञ्च टङ्कणं गजपिप्पली ।
जार्तीकोषाऽजमोदे च लौहं यासलवङ्गकम् ॥ ८६३॥
धुस्तूरबीजं जैपालं कट्फलं चित्रकन्तथा ।
प्रत्येकं कार्षिकञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ८६४॥
पाषाणे विमले पात्रे घृष्टं पाषाणमुद्गरैः ।
बिल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रकदन्तिकाः॥ ८६५ ॥
शिखरी काञ्जिका वासा निर्गुण्डी गणिकारिका ।
धुस्तूरं कृष्णजीरञ्च पारिभद्रकपिप्पली ॥ ८६६ ॥
कण्टकार्यार्द्रयोश्चैव मूलान्येतानि दापयेत् ।
एषां मूलरसं दत्त्वा घृष्टमातपशोषितम् ॥ ८६७॥
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक् ।
चतस्रश्च वटीः खादेन्नित्यमार्द्रकवारिणा ॥ ८६८ ॥
उष्णतोयानुपानेन वातव्याधिं व्यपोहति ।
विंशतिं श्लेष्मिकांश्चैव शिरोरोगांश्च दारुणान्॥८६९॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैव पञ्चगुल्मनिषूदनम् ।
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्चाप्यामवातविनाशनम् ॥ ८७० ॥
पञ्च पाण्ड्वामयान्हन्ति कृमिस्थौल्यामयापहम् ।
सोदावर्तं ज्वरं कुष्ठं गात्रकण्ड्वामयापहम् ॥ ८७१ ॥
यथा शुष्केन्धने वह्निस्तथा वह्निविवर्धनः ।
श्लेष्मामयिरूपाहेतो रसेन्द्रो मुनिभाषितः ॥
श्लेष्मशैलेन्द्रको नाम रसेन्द्रगुटिका स्मृता ॥८७२ ॥

भै. र , (श्लेष्मज्वरे), र. स., र. चि. (कफे), र सु (ज्वरे कफे च), र. र (ज्वर)। कुत्रचित्सैन्धवस्थाने गैरिक पठितम्।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, अभ्रकभस्म, त्रिकटु, दोनोंजीरे, कचूर, काकडासींगी, अजवाइन, पोहकरमूल, भुनीहींग, सैन्धव, यवक्षार, भुनासुहागा, गजपीपल, जावित्री, अजमोद, लोहभस्म, जवास, लौंग, शुद्धधतूरेकेबीज, जमालगोटा, कायफल और चित्रकमूल १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बेल, आक, चित्रक, दन्ती, अपामार्ग, एरण्डककड़ी, अडूस, निर्गुण्डी, अरणी, धतूरा, कालीजीरी, नीम, पीपल, भटकटैया, अदरख इनसबकी-जड़केरसोंसे धूपमें बैठकर १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी-गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ४–४ गोली अदरखकेरस अथवा गरमजलकेसाथदेनेसे वातविकार, २० प्रकारकेश्लेष्मरोग, भयङ्कर शिरोरोग, २० प्रकारकेप्रमेह, पांचोंगुल्म, उदररोग, अन्त्रवृद्धि, आमवात, पांचप्रकारके पाण्डु, क्रिमि, स्थूलता, उदावर्त, ज्वर, कुष्ठ, खुजली, मन्दाग्निप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ श्लेष्मान्तकरसः

अभ्रकं रससिन्दूरं शङ्खभस्म च मौक्तिकम् ।
एकभागो द्वित्रिभागा ह्यर्धभागश्च मौक्तिकम् ॥८७३॥
कर्पूरं मौक्तिकार्द्धं स्यात्त्रिफला कर्षसम्मिता ।
सर्वं सुखल्वे सम्मर्द्य दिनं सिंहास्यतोयत. ॥ ८७४॥
छायाशुष्का वटी कृत्वा रक्तिकार्द्धप्रमाणतः ।
आर्द्रकस्य रसेनैव मधुना सह लेहयेत् ॥ ८७५ ॥
श्लेष्मोल्वणं वह्निमान्द्यं शूलं सपरिणामजम् ।
श्लेष्मान्तको रसो नाम विनिहन्त्यनुपानत. ॥ ८७६ ॥

र च , कफरोगे ।

भाषा—अभ्रकभस्म १ कर्ष, रससिन्दूर २ कर्ष, शङ्खभस्म ३ कर्ष, मौक्तिकभस्म ८ माशे, कचूर ४ मा., त्रिफला १ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अड्सेकेरससे १–२ दिन मर्दन कर आधीआधीरत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख और मधुकेसाथसेवनकरनेसे कफप्रधान-मन्दाग्नि, शूल, परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै॥२०८॥

२०९ श्वदंष्ट्रादिलोहम्

श्वदंष्ट्रा त्रिफला मुस्ता गुडूची फल्गुपल्लवान्।
दर्भं कुशश्च मञ्जिष्ठां रोहिषस्य च पल्लवान्॥ ८७७॥
बला पुनर्नवा श्यामा शारिवे देवदारु च।
पिप्पली नागरश्चैव विडङ्गमरिचानि च॥ ८७८॥
पाठा काम्पिल्लकं भार्ङ्गी द्वे हरिद्रे निदिग्धिकाम्।
एरण्डमूलं दन्तीश्च चित्रकं कटुरोहिणीम्॥ ८७९॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
द्विगुणं सर्वचूर्णेभ्यो लोहचूर्णं प्रदापयेत्॥ ८८०॥
माषकत्रितयं तस्माच्चतुष्टयमथापि वा।
पिबेदुष्णेन तोयेन मद्येनाऽपि च मद्यपः॥ ८८१॥
मेहशूलोदरप्लीहशोथार्शःपाण्डुरोगनुत्।
गोमूत्रपिष्टैरेतैश्च वटिकास्तद्वदापहाः॥ ८८२॥

र. र., प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—गोखरू, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कठूमर, डाभ, कुश, मजीठ, गन्धतृण इनकेपत्ते, बला, पुनर्नवा, काली निसोत, दोनोंसारिवा, देवदारु, पीपल, सोंठ, विडङ्ग, मरिच, पाठा, कमीला, भारङ्गी, दोनोंहल्दी, भटकटैया, एरण्डकीजड़, दन्तीमूल, चित्रक और कुटकी समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इनमेंसे ३ अथवा ४ उड़दतकमात्रा गरमजल अथवा मद्यके साथलेनेसे प्रमेह, शूल, उदररोग, प्लीहा, शोथ, बवासीर, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसलोहको गोमूत्रमें पीस कर गोलीभी बनासकेहै॥ २०९॥

२१० श्वयथुघातीरसः

रसगन्धकलोहकणात्रिवृता
मरिचामरदारुनिशात्रिफला।
दलितं मृदुगासलिलेन पिबे-
दनुरूपमसुं श्वयथूदरहम्॥ ८८३॥

यो. र., वृ. यो. त., र. कौ., रसायनस., नि. र., शोथाधिकार।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, लोहभस्म, पीपल, निसोत, मरिच, देवदारु, हल्दी त्रिफला सबसमभागलेकर बारीकचूर्ण कर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतकमात्रा बछड़ीके मूत्रकेसाथदेनेसे शोथ और उदररोग नष्टहोतेहैं॥ २१०॥

२११ श्वासकालेश्वररसः

मृतं वङ्गं मृतं लोहं मृतार्कं मृतमभ्रकम्।
शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च माक्षिकं हिङ्गुलं विषम्॥ ८८४॥
जातीफलं लवङ्गञ्च त्वगेलानागकेशरम्।
उन्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम्॥ ८८५॥
एतानि समभागानि मरिचञ्च त्रिभागिकम्।
सर्वमेतत्क्षिपेत्खल्वे लोहदण्डेन मर्दयेत्॥८८६॥
तावत्सम्मर्दयेद्यत्नाद्यावत्सूतो न दृश्यते।
शक्राशनस्य स्वरसे भावयेदेकविंशतिम्॥ ८८७॥
द्विगुञ्जाऽत्युत्तमा मात्रा शृङ्गवेररसे युता।
तदर्द्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते॥ ८८८॥
पञ्चश्वासान्क्षयं कासं यक्ष्माणं विनिहन्ति च।
श्वासकालेश्वरो नाम्ना लोकानामति दुर्लभः॥८८९॥

वै. क., नि. र., व. रा., वै. चि., श्वासे।

भाषा—वङ्ग, लोह, ताम्र, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धपारा, गन्धक, सोनामाखी, सिंगरिफ और बछनाग, जायफल, लौंग, तज, इलायची, नागकेशर, शुद्ध धतूरेकेबीज और जमालगोटा, हल्दी, अवासा येसब १–१ भाग, मरिच ३ भागलेकर बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भांगकेरससे २१ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे ५ प्रकारकेश्वास और कास, क्षय, राजयक्ष्म इनसबको यह दूरकरताहै। बालक और वृद्धोंको आधीमात्रा देनी॥ २११॥

२१२ श्वासकासकरिकेसरीरसः

तारताम्ररसपिष्टिकाशिलागन्धतालसमभागिकं रसे।
आर्द्रकवृषसुरसार्द्रसम्भवे मर्दयं प्रकुरु गोलकं ततः ८९०
मृत्स्नया च परिवेष्टय गोलकं
यामयुग्ममथ भूधरे पचेत्।
गोलकेन कुरु तत्समं तत-
श्चार्द्रकपक्टुकैश्च भावयेत्॥
श्वासकासकरिकेसरी रसो
वल्लमस्य परिपेवयेद्बुधः॥ ८९१॥

र. र. स., र. क. ल., र. च., र. दी., यो. स., र. सु., र. को., यो. च., श्वासकासयोः। *योगसङ्ग्रह नस्यत पक्वान्न पूतिनस्यरोगहरत्वमुक्तम्।*

भाषा—चांदी और तांबेकीभस्म, पारदपिष्टिका, शुद्धमैन सिल, गन्धक और हरिताल सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अड्सा, तुलसी और अदरखके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर अच्छी तरह सुखाय दोपहरको भूधरयन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अड्सा और त्रिकटुकेद्रवोंमें १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकसाथदेनेसे श्वास, कासप्रभृति समस्त कफरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ २१२॥

२१३ श्वासकासचिन्तामणिरसः

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत्।
पारदार्द्धं मौक्तिकञ्च सूताद्द्विगुणगन्धकम्॥ ८९२॥

अभ्रञ्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम् ।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन वै पृथक् ॥ ८९३ ॥
यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ।
भावयेत्सप्तवाराश्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत् ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥ ८९४ ॥

र स , ध , र. सु , र. च , भै र श्वासकासयो । भै. र , श्वासचिन्तामणीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, सोनामाखी और सुवर्णभस्म १–१ भाग, मोतीआधाभाग, शुद्धगन्धक और अभ्रकभस्म २–२ भाग, लोहभस्म ४ भाग लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैया, बकरीकादूध, मुलहठी, पान इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथदेनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ श्वासकासारिरसः

सूतगन्धककणाहरीतकी-
मुण्डिकाश्च वृषकं विभीतकम् ।
चूर्णयेत समभागतस्ततो
वत्सनाभजरसे मनाक् पचेत् ॥
श्वासकास विनिवृत्तये त्विमं
भक्षयेत बदरास्थिमानतः ॥ ८९५ ॥

र दी , श्वासकासयो ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, पीपल, हर्र, गोरखमुण्डी, अडूसा और बहेड़ा समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बछनागकेस्वरस अथवा क्वाथसे मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डपत्रवगैरहमें लपेट पुटपाककरे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर बेरकी गुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१४ ॥

२१५ श्वासकुठाररसः

रसं गन्धं विषञ्चैव टङ्कणञ्च मनःशिला ।
एतानि टङ्कमात्राणि मरिचान्यष्टटङ्ककम् ॥ ८९६ ॥
एकैकं मरिचं दत्त्वा खल्वे सूक्ष्मं विधाय च ।
कटुत्रयं टङ्कपञ्चं दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ ८९७ ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं पर्णखण्डेन निश्चितम् ॥ ८९८ ॥
सन्निपाते च मूर्च्छायामपस्मारे तथा पुनः ।
अतिमोहत्वमापन्ने घ्राणे दद्याद्विचक्षणः ।
रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वकासनिकृन्तनः ॥ ८९९ ॥

र कौ , र क ल , वै चि , भा प्र , यो म , वै. वि , वै र , वृ यो त , रसायनस , नि र , भै र , र का , चि र , यो चि , र म मा , ध , टो , वै द , भै सा , चि क , यो. र , र सु , ना वि श्वासे । भा प्र , ज्वरे ।

टि०—वैद्यदर्पणे अर्द्धगुञ्जापरिमित पण पिष्टीकृत्य खादयित्वोपरि क्रमवृद्ध्या मरिचानि भक्षयेदितिविशेष । कासश्वासपुरातनापस्मार सन्निपातमोहमूर्च्छारक्तगुल्मकृतोद्विग्नभ्रममस्तवशूलयताउन्मादाध्मान शूलातिस्वेदप्रलापेष्वय दृष्टप्रत्यय । र स , र च एतयोरेक र सु , ध एतयोर्द्वितीय श्वासकुठारनाम्ना " टङ्कण पारद गन्ध शिला विष कटुनिकम् । निष्पिष्य वल्का कार्या गुञ्जामानप्रमाणत । उष्णोदक पिबेच्चानु क्षुद्राक्वाथमथापि वा । कास पञ्चविध हन्ति श्वास श्लेष्मसमुद्भवम् ॥ शिरोरोग निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनि यथा ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । भै र , र म , र च , एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्तथा च र सु , ध , एतयोस्तृतीय श्वासकुठारनाम्ना " रस गन्धो विष टङ्क शिलोषणकटुत्रयम् । सर्वं सम्मर्द्य दातव्यो रस श्वासकुठारक ॥ वात श्लेष्मसमुद्भूत श्वास कास क्षयभयेत् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे " रसो गन्धो विषञ्चैव टङ्कण समन शिलम् । एतानि सममागानि मरिच सप्तगुणम् ॥ त्रिभाग त्र्यूषण ज्ञेय खल्वे सर्वं विचूर्णयेत् । रस श्वासकुठारोऽय द्विगुञ्ज श्वासकासनित् ॥ गता सज्ञा यदा पुसा तदा नस्य प्रदापयेत् । क्षपयेच्चाग्निकारन्ध सञ्ज्ञाननमुत्तमम् ॥ प्रतिश्याय क्षतक्षीणमेकादशविध भयम् । हृद्रोग श्वासशूलञ्च स्वरभेद सुदारुणम् ॥ सन्निपात तथा घोर तन्द्रामोहान्वितभयेत् ॥" इति तृतीय पाठ श्वासकुठारनाम्ना निहितोऽस्ति ।

नि र , मा प्र , वै द एषु ग्रन्थेषु द्वितीय , धन्वन्तरौ चतुर्थ , रसकिन्नरे चैक श्वासकुठारनाम्ना "रसो गन्धो विषञ्चाऽपि टङ्कणञ्च मन शिला । एतानि वषमानानि मरिचञ्चाष्टकापकम् ॥ कटुत्रय वषयुग्म पृथगत्र विनि क्षिपेत् । रस श्वासकुठारोऽय सर्वश्वासनिवारण ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । र म मा , ना वि एतयो श्वासकुठारनाम्ना ' शुद्ध सूत विष गन्ध टङ्कणञ्च मन शिला । कणा शुण्ठी समाश्चैते मरिच सप्तभागिकम् ॥ दत्त्वा सञ्चूर्णयेत्तावद्यावत्स्यात्कज्जलसन्निभ । रस श्वास कुठारोऽयमार्द्रकस्य रसै युत ॥ श्वास हन्ति तथा कास द्विगुञ्ज सन्निपातनित् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । र सु , ना वि एतयो श्वासारिरस इति नाम्ना "पारदो वत्सनाभश्च गन्धक टङ्कण कणा । समांश द्विगुणा शुण्ठी मरिच पञ्चभागकम् ॥ सूक्ष्मचूर्णमिद कृत्वा वल्लमात्र प्रदापयेत् । श्वासारिरसनामको क्षेप सद्य श्वासहर पर ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । एतेषां सर्वेषामपि मूल प्रथमश्वासकुठारोऽस्ति, तत्र यथावस्थितवस्तूनां सद्भावकरणात् । तदतिरिक्तपाठेषुच्छात्रव्यामोहकर णाऽतिरिक्तफलाऽभावात्परित्यक्तास्त इति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, बछनाग, सुहागा औरमैनसिल ४–४ मासे, मरिच २ कर्ष लेकर १–१ मरिच डालकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकरे । इसमें १॥ कर्ष त्रिकटुकाचूर्णमिलाकर १–२ पहर मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पानमें रखकर खानेसे सन्निपात, मूर्च्छा, अपस्मार, श्वास, कास येसब नष्टहोते हैं । अत्यन्तबेहोशीमें इसका नस्य देनेसे लाभहोताहै ॥२१५॥

२१६ श्वासगजाङ्कुशरसः (महदादिः)

पलं सूतं पलं गन्धं त्रिकटु त्रिपलं भवेत् ।
वह्निमेकपलञ्चैव दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ ९०० ॥
मूत्रेण च तथा त्रीणि दिनानि परिमर्दयेत् ।
माषप्रमाणवटकं छायाशुष्कन्तु कारयेत् ॥ ९०१ ॥
नित्यमेकन्तु वटकं दिनानि त्रिंशदेव च ।
श्वासकासज्वरहरमग्निमान्द्यारुचिप्रणुत् ॥ ९०२ ॥

र कौ , र र. स , र को , र च , र सु , श्वासाऽधिकारे ।

र र. स, र चं, र. मु, एतेषु श्वासहरवटकेति नाम । रसेन्द्ररत्नकोषे सहचरवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल और वङ्गभस्म १–१ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर गोमूत्रमे ३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकीगोलियांबनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सबप्रकारके श्वास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ श्वासहारीरसः

कनकभुजगगुल्वं सूतराजं सुगन्धं,
मुनिरसपरिघृष्टं वल्लमात्रं दिनान्ते ।
हरति सकलकासं श्वासहिकासमेतं
त्रिभुवनहितकारी जायते श्वासहारी॥९०३॥

र., श्वासे ।

भाषा—सुवर्ण, नाग और ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अगस्त्यकेरससे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेमे यह हिचकी और श्वासकासको नष्टकरताहै ॥ २१७ ॥

२१८ श्वासाङ्कुशरसः

शाणत्रयं पारदञ्च गन्धकं शाणपञ्चकम् ।
त्रिशाणं वत्सनाभञ्च मरिचञ्च त्रिशाणिकम् ॥९०४॥
आकल्लञ्च त्रिशाणं स्यात्पञ्च जातीफलं क्षिपेत् ।
लवङ्गञ्च चतुःशाणं पिप्पली दशशाणिका ॥ ९०५ ॥
टङ्कणं वह्निशाणं स्यात्त्रिशाणं कनकाह्वयम् ।
करीरार्द्रकनिम्बूत्थै मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ ९०६ ॥
वातरोगेषु सर्वेषु कफश्वासे कटीग्रहे ।
नाभिशूलउदावर्ते प्रमेहे वातशोणिते ॥ ९०७ ॥
सर्वसन्धिगते वाते अस्थिगे स्नायुगेऽपि वा ।
रसः श्वासाङ्कुशो नाम श्वासकासनिवारणः ॥९०८॥
वल्लार्द्धं वल्लमात्रं वा दद्यात्कासोपशान्तये ।
अनुभूतो मया सम्यक् प्रयोगः कफकासयोः ॥९०९॥

रसायनसं., श्वासे कासे च ।

भाषा—शुद्धपारा ३ भाग, गन्धक ५ भा, शुद्धवछनाग, मरिच और अकलकरा ३–३ भा, जायफल ५ भा., लौंग ४ भा, पीपल १० भा., भुनासुहागा और शुद्धधतूरेकेबीज ३–३ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय करीर, अदरख और नीबूके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे एक अथवा आधीगोली उचितानुपानकेसाथदेनेमे समस्तवातरोग, कफजनितश्वास, कटिग्रह, नाभिशूल, उदावर्त, प्रमेह, वातरक्त, समस्त सन्धिवात, अस्थिवात और स्नायुवात इनसबको यह निवृत्तकरताहै ॥ २१८ ॥

२१९ श्वासान्तकरसः

सूतः षोडशभागिकोऽर्कसमकस्तस्यार्द्धभागो वलिः,
सिन्धुस्तस्य समः सुसूक्ष्ममृदितः षट्पिप्पलीचूर्णतः।
जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं तप्तं सुपक्कं भवेत्,
कासश्वासकगुल्मशूलजठरं पाण्डुं लिहन्नाशयेत्९१०

र. र. स, र. म. मा., र. चं, र. को, र. मु, व रा., श्वासाधिकारे।

टि०—र मु पारदादिरस इति नाम। व रा पिप्पलीस्थाने टङ्कण नियोज्य सूतराजीय इति नाम स्थापितम्।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म १६–१६ भाग, शुद्ध गन्धक और सेंधानमक ८–८ भा., पीपल ६ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर एरण्डवगैरहकेपत्तोंमें लपेट पुटपाककरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखवगैरहके रसकेसाथ देनेसे कास, श्वास, गुल्म, शूल, उदररोग, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० श्वासारिलोहम् (महत्)

कर्षद्वयं लोहचूर्णं कर्षार्द्धमभ्रमेव च ।
सिताकर्षद्वयञ्चैव मधुकर्षद्वयन्तथा ॥ ९११ ॥
त्रिफला मधुकं द्राक्षा कणाकोलास्थिवंशजा ।
तालीसपत्रवेडङ्गमेलापुष्करकेसरम् ॥ ९१२ ॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि कर्षार्द्धञ्च पृथक्पृथक् ।
लौहे च लोहदण्डेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ९१३ ॥
ततो मात्रां लिहेत्क्षौद्रे बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ।
इदं श्वासारिलोहञ्च महाश्वासं विनाशयेत् ॥ ९१४ ॥
कासं पञ्चविधञ्चैव रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
एकजं द्वन्द्वजं चैव तथैव सन्निपातजम् ॥
निहन्ति नाऽत्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा॥९१५॥

र. मु, भै र, श्वासे ।

भाषा—लोहभस्म २ कर्ष, अभ्रकभस्म ८ माशे, शक्कर और मधु २–२ कर्ष, त्रिफला, मुलहठी, द्राक्ष, पीपल, बेरकीमज्जा, वंसलोचन, तालीसपत्र, विडङ्ग, इलायची, पोहकरमूल और नागकेशर ८–८ माशे लेकर सबकाबारीकचूर्णकर लोहेके खरलमें दोपहर घोटकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथदेनेसे महाश्वास, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर रक्तपित्त येसब नष्टहोतेहै ॥ २२० ॥

२२१ श्वित्रारियोगः (प्रथमः)

गन्धकं त्रिफला भृङ्गं भल्लातकफलानि च ।
कटुतुम्बस्य बीजानि भृङ्गराजद्रवेण च ॥ ९१६ ॥
भावयेच्छोषयेच्चैतत्तद्यात्ससकत्रयम् ।
श्वित्रारिनाम योगोऽयं भिषग्भिःप्रतिपादित॥९१७॥
टङ्कमात्रममुं दद्याच्छर्कराघृतमिश्रितम् ।
भोजयेद्वै प्रयत्नेन रजन्याञ्च विशेषतः ॥ ९१८ ॥

सूरणक्षीरवार्ताकं मत्स्यमांसं विशेषतः ।
वर्जयेदम्लशाकानि श्वित्रनाशविचक्षणः ॥ ९१९ ॥

र का., रसचि , र मृ , कुष्ठाऽधिकारे । रसामृतेऽस्य पाठो व्यत्यस्य निहितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिफला, भंगरा, भिलावे और कड़वी तुमड़ीकेबीज समभागलेकर बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे २१ भावनाए देकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशे शकर और घीकेसाथदेकर दिनभर भूखा रक्खे, रात्रिको उचितभोजन देवे तो इससे श्वेतकुष्ठ नष्टहोताहै । सूरण, दूध, बैंगन, मछली, मांस, खटाई और शाकका परित्यागकरे ॥ २२१ ॥

२२२ श्वित्रारियोगः (द्वितीय)

सूते पले भूधरयन्त्रमध्ये
सञ्जारयेद्गन्धपलं ततोऽस्मिन् ।
सूते च गन्धस्य पलत्रयञ्च
दत्त्वाऽथ निम्बूत्थरसैर्विमृद्य ॥ ९२० ॥
खरांशिकावाकुचिकाग्निभृङ्ग-
कोरण्टनीरैः परिमर्दयेत ।
दिनैकमेकं कटुतुम्बिनीजलै-
र्मर्द्यं तत. काचजकूपिकान्त. ॥ ९२१ ॥
निक्षिप्य भाण्डे सिकतोदरान्त-
र्यामद्वयं स्वेदय तं ततश्च ।
ददीत वल्लद्वयमस्य कृष्णपर्णेन
सार्धं त्वथवा तदर्धम् ॥ ९२२ ॥
पलाशमूलं त्वनु पाययीत
तमेण साधञ्च ददीत पथ्यम् ।
उष्णे क्षिपेत्तैलविमर्दितञ्च
स्फोटा यदि स्यु· सहसा च गात्रे ॥९२३॥

र र स , र. दी , र र. कौ , र का., र मृ. कुष्ठाऽधिकारे ।

टि०—रसामृते श्वेतारिरसनाम्ना "रसस्य पल्के गन्धमिष्टिकायां सुजारयेत् । अन्यत्पलद्वय दत्त्वा निम्बूनीरेण मर्दयेत् ॥ स्वेदयेद्वालुकायन्त्रे स्थाप्यामद्वय बुध । वल्लद्वय चास्य कृष्णपर्णेन दापयेत् ॥ वानोदुम्बरिकामूलं घृष्ट्वा तदनु पाययेत् । सततञ्च ददीतात्र तैलमार्कातप त्यजेत् ॥" इति पाठोनिहितोऽस्ति । अत्र क्रियायां त्रुटिरस्तीति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

भाषा—एकपल शुद्धपारेमें भूधरयन्त्रमें एकपल गन्धक जारणकरे । फिर ३ पल शुद्धगन्धकवेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर कटूमर, बावुची, भिलावां, भंगरा, कटसरैया, कड़वीतूंबी इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर आतशीशीशीमेंभरके बालुकायन्त्रमें चढ़ाय दोपहरकी आंचसे स्वेदनकरे । स्वांगशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक कालेपानमें रखकर खिलावे ऊपरसे पलाशकी जड़का क्वाथ पिलावे और छाछकेसाथ पथ्यदे । इसकेसेवनसे यदि बदनमें फोड़े होजाय और जलनहोनेलगे तो इस औषधको तेलमें मिलाय शरीरपर मालिशकरावे ॥ २२२ ॥

२२३ श्वित्रारिरसः (प्रथमः)

कासीसं रसगन्धानि मर्दयेत्सुरसारसैः ।
सम्पुटे पुटयेद्दत्त्वा चाङ्गेरीमधरोत्तरम् ॥ ९२४ ॥
सर्वमेतच्च सञ्चूर्ण्य तण्डुलान्दश सप्त वा ।
आरभ्य वर्द्धयेद्यावत्पञ्च षष्टिं क्रमेण हि ॥ ९२५ ॥
अनुपानाय मध्वाज्यं दध्याज्यं नवनीतकम् ।
धात्र्यार्द्रकरसेश्चैव तिन्दुकं कदलीफलम् ॥ ९२६ ॥
श्वित्रारिरससञ्ज्ञितो ह्येष श्वित्रकुष्ठनिषूदन. ।
निम्बपत्रनिशाकृष्णावाकुचीवीजकं समम् ॥
चूर्णयित्वा पिबेद्दुग्धे. प्रभाते श्वित्रनाशनम् ॥ ९२७ ॥

र र स , र च , र क , र र कौ , श्वेतकुष्ठे ।

टि०—चिकित्सात्रमकल्पवल्लीकारेणोपरितनपाठमगृहीत्वा "पल रस द्वि कासीसं शुंन पञ्चगुणे सह । मर्दयेद्यामपर्यन्तमर्जुनस्य त्वचो रसै ॥ शरावसम्पुटे रुद्ध्वा पुटेत्त्रोऽपुग्न द्वि । रस कासीसबद्धोऽय मधुना वल्लतुल्यक ॥ शाणवाकुचिकायुक्त सविनो हन्ति निश्चितम् । त्रिभि मांसै विलास हि दद्रूण्यपि विशेषत ॥" इति पाठ कासीसाधिकप्रमाणयुक्तत्वेन कार्यसाधकत्वाद्गृहीत । र र स , र क मत योस्तु द्वयोरपि ग्रहणम् । अत्रेद रहस्यम्–श्वित्रारौ समभागगन्धकस्याग्रमनात्कासीसस्याऽधिकमात्रा नापेक्षिता तत्रैव पारदस्य क्षीयमानत्वात् । कासीसबद्धे तु गन्धकाऽभावादगत्या पारदस्यार्थं कासीसस्याऽधिकमात्रा गृहीताऽस्ति परन्तु पाठद्वयस्थापने गौरवात्फलाधिक्याऽभावाच्छ्वित्रारिरसे पारदनियमनस्य विशेषतो दर्शनादस्मिन्नेव रसे कासीसबद्धस्याऽप्यन्तर्भाव करणीय । अर्जुनस्य भावनाया अत्रापि ग्रहणे न चापि क्षति रसस्त्वेक एव करणीय इति विशेषु विज्ञप्ति ।

भाषा—कसीस, शुद्धपारा, गन्धक समभागलेकरकजलीकर तुलसीकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय अम्लोनिया नीचे ऊपर रख शरावसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आंचदे । स्वांगशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ७ अथवा १० चावलभरसे आरम्भकर ६५ चावलतक क्रमश बढावे । इसमें मधु और घी अथवा दही, घी, मक्खन, आवले और अदरखकारस, तेंदू और केलेकाफल अनुपानमें देवे । निम्बपत्र, हल्दी, पीपल, बावची समभागका चूर्णबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला इसे दूधकेसाथ प्रभातमें देवे ॥

२२४ श्वित्रेभसिंहरसः

शुद्धसूतबलिकज्जलं शुभं
वल्लयुग्ममवलिह्य सर्पिषा ।
वायसी शशिकला बिभीतक-
क्षौद्रमक्षमितमेकयान्वितम् ॥
शीलयेदनु पय· पिबेदिमं
श्वित्रदन्तिहरिरीरितो रसः ॥ ९२८ ॥

वृ यो त , र कौ , टो., श्वेतकुष्ठे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर इसमेंसे ६–६ रत्ती घीकेसाथ सेवनकर काकजंघा, बाकुची, बहेड़ा समभागका चूर्ण एकतर्फ मधु अथवा ईखके रसकेसाथलेकर ऊपरसे दूधपीनेसे श्वित्र नष्टहोताहै ॥ २२४ ॥

२२५ श्वेतकुष्ठहररसः

चारबीजान्ययश्चूर्णं त्रिफला च कटुत्रयम् ।
तवराजोऽशितः सर्पिर्मधुभ्यां श्वेतकुष्ठहृत् ॥ ९२९ ॥

हितो , कुष्ठे ।

भाषा—चिरोंजी, लोहभस्म, त्रिफला, त्रिकटु, वंसलोचन सब समभागलेकर एकजगह मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक मधु और घीमें मिलाकर सेवनकरनेसे श्वेतकुष्ठ नष्टहोताहै ॥ २२५ ॥

२२६ श्वेतकुष्ठारिरसः

निस्तुषीकृत्य वाकुच्या बीजानां पलविंशतिम् ।
गोजलस्थं त्रिसप्ताहं लोहं पथ्या पलद्वयम् ॥ ९३० ॥
गृहीत्वा गोजले शोष्यं सूर्यतापेऽतिनिष्ठुरे ।
काकोदुम्बरिकाद्रोणत्वचां क्वाथे त्रिसप्तकम् ॥ ९३१ ॥
भावयेत्तस्य चूर्णस्य गन्धसूतं समं कृतम् ।
अम्लेन कज्जलीं कृत्वा सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ९३२ ॥
शिग्रुमूलरसेनापि नागवल्लीदलेन च ।
भावनां त्रिदिनं दत्त्वा कर्षार्द्धांशां गुटीं कुरु ॥ ९३३ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः श्वेतकुष्ठोपशान्तये ।
चित्रकाङ्घ्रित्वचश्चूर्णं रात्रौ गोदुग्धके वरम् ॥ ९३४ ॥
क्षिपेद्दधि विलोड्याऽथ ग्राहयेत्तक्रमुत्तमम् ।
तत्तक्रं कुडवं चैकं मध्येऽष्टौ गन्धवल्लकान् ॥ ९३५ ॥
प्रक्षिप्य गुटिकां पश्चात्प्रपिबेट्टिनिसह्यकाम् ।
नवनीतेन चाभ्यङ्गः कार्यः स्थेयमथातपे ॥ ९३६ ॥
सर्वश्वित्रे प्रजायन्ते स्फोटकाश्चाग्निदग्धवत् ।
प्रथमे सप्तके पाको जायतेऽथ द्वितीयके ॥ ९३७ ॥
रोहणञ्च तृतीये हि कुर्वन्ति च न संशयः ।
निम्बुकस्य रसोपेतं कुङ्कुमालेपनं हितम् ॥ ९३८ ॥
सतका गुटिका वापि रसस्यालेपने हिता ।
श्वित्राणां रोहणं रम्यं वर्णढं जायते भृशम् ॥ ९३९ ॥
त्रिवेलं तक्रभक्तञ्च पूर्वे देयञ्च सप्तके ।
मद्गुष्ठा अपि रूक्षाश्च देया जाते द्विसप्तके ॥ ९४० ॥
तृतीये सप्तके देया मद्गुष्ठास्त्रिफलाघृतम् ।
घृतमल्पं प्रदातव्यं श्वित्रकुष्ठी वरो भवेत् ॥ ९४१ ॥
चम्पकाभं वरं देहं कान्तियुक्तञ्च नीरजम् ।
प्राप्नुयाच्छ्रीयुतः सम्यङ्मनुजो भूमिमण्डले ॥
रसराजप्रभावेण सत्यं सत्यञ्च नान्यथा ॥ ९४२ ॥

र स ब , रसायनस , र का श्वेतकुष्ठे ।

भाषा—छाफकियेहुए बाकुचीकेबीज २० पलको गोमूत्रमें २१ दिन भिगोकर सूर्यकीकडीधूपमें सुखाय एकद्रोण कठूमरकी छालकेक्वाथमें २१ दिन भावनादेकर इसकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय कज्जलीकर किसीभी अम्लद्रवसे एकदिन मर्दनकर सहिजनकीजड और पानकेरसोंसे ३–३ दिन भावनाए देकर ८–८ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे । रात्रिको ३ माशे चित्रककीजडकाचूर्ण ४ पल गायकेदूधमें औटावे और दहीडाल कर जमादे । प्रातःकाल दहीकी छाछबनाकर ३ माशे शुद्ध गन्धकडालकर इसकेसाथ १ या २ गोली प्रतिदिन खाकर मक्खनसे मालिशकराके धूपमें बैठे । कुछहीदिनबाद श्वित्रस्थानमें अग्निदग्धकीतरह फोडे उठेंगे । पहिले और दूसरे सप्ताहमें ये पकेंगे और तृतीयसप्ताहमें स्वयं अच्छेहोजायगे । इनकेदाग मिटानेकेलिये नीबूमें केशर घिसकर लगावे अथवा इसीगोलीको छाछमें घिसकर लगावे । इसक्रियासे व्रणोंका चिह्न नहीं रहेगा । पहिले सप्तकमें दिनमें ३ वार छाछभातदे । दूसरेसप्ताहमें स्नेह रहित और तीसरे सप्ताहमें त्रिफलाघृतकेसाथ मोठदेवे ॥२२६॥

२२७ श्वेतकुष्ठारिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं त्रिफलाभृङ्गवाकुचीः ।
भल्लातकं तिलान्कृष्णान्निम्बबीजं समांशकम् ॥ ९४३ ॥
मर्दयेद्भृङ्गजद्रावैः शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ।
इत्थं कुर्यात्त्रिसप्ताहं रसोऽयं सितकुष्ठहा ॥
मध्वाज्ये निष्कमात्रं तं खादेच्छ्वित्रविनाशनम् ॥ ९४४ ॥

रसायनसं , भै र., र. सि , र. का , र चि , वै. क , रसायनस , र क , यो म., (एषु श्वेतारि), र. क ल , र क , र र कौ , र र स , र दी , श्वेतकुष्ठाऽधिकारे ।

टि०—“पलत्रय गन्धकभृङ्गकृष्णातिलोत्थतैल कटुतुम्बिनी च । भल्लाततैल कटुनिम्बबीज सर्वं समान परिभावयेत ॥” इति रसरत्न समुच्चये रसदीपिकायां रसरत्नकौमुद्यां च पाठो दृश्यते तत्र पलत्रयस्थाने पलत्रयेति प्रमादात्पाठ सम्भाति । कटुतुम्बिनी अधिका रसाऽभावश्च प्रमादात्सञ्जात इति प्रतीयते, अतोऽत्र न रसान्तरत्वेनेति बोध्यम् । कटुतुम्बिनीभावनाऽधिक्ये तु नकाऽपि क्षति । तिलविशेषणत्वे पर्यवसन्नस्य कृष्णातिति शब्दस्य स्थाने पिप्पलीपरत्वमपि प्रमादविलसितम् । द्वयो त , र कौ एतयो ग्रन्थयो श्वेतारिनाम्ना “शुद्धसूतसम गन्ध त्रिफला भृङ्गराजकम् । गुञ्जा भल्लातक कृष्णा निम्बबीज सम पृथक् ॥ मर्दयेद्भृङ्गजद्रावे दिनमेक निरन्तरम् । वायसीस्वरसे देया भावनाश्चैव विंशति ॥ वाकुचीबीजनिर्यूहैस्तत्र नित्य प्रकल्पयेत् । तत निष्ठा भवेदेष श्वेतारि नामतो रस ॥ मध्वाज्ये निष्कमात्र त खादेच्छ्वित्रविनाशनम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । रसमञ्जर्यां श्वेतारिनाम्ना “शुद्ध सूत सम गन्ध त्रिफलाभृङ्ग वाकुची । भल्लातश्च शिला कृष्णा निम्बबीज सम समम् ॥ मर्दयेद्भृङ्गजद्रावै शोष्य पेष्य पुन पुन । इत्थ कुर्यात्त्रिसप्ताह रस श्वेतारिको भवेत् ॥ मध्वाज्ये खादयेन्निष्क दन्तशूल विनाशयेत् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयो पाठयोर्मूल प्रथमपाठोऽस्ति तत्र केनाऽपि वारणेन तिलस्थाने शिला सम्भाता, शिलायाश्च कृष्णशब्देन सम्बन्धो न युज्यतेऽतस्तदर्थं पिप्पली स्यादिति मत्वा स्वतन्त्र पाठ समजनि । द्वयो त , र कौ अनयोरपि स एव भ्रम समापतितोऽतोऽधुना पाठत्रय लभ्यते तस्य बुद्धिव्यामोहकत्वादेकत्रैव समावेश समुचित । अथवा पूर्वस्मिन् पाठे गुञ्जाऽभ्रकपिप्पलीशिलानामधिकतया प्रक्षेप दत्त्वा वायसीस्वरसेन वाकुचीबीजनिर्यूहेण च भिन्नतया भावना दत्त्वैव एव रस सम्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिफला, भंगरा, बाकुची, वृन्तरहितभिलावे, कालेतिल, नीमकीगिरी सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे मर्दनकर सुखावे और फिर मर्दन-

करे। ऐसे २१ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ माशे मधु और घीकेसाथखानेसे यह श्वित्रको नष्टकरताहै ॥ २२७ ॥

२२८ षडङ्गरसः

लक्ष्मीं हरिर्हरः काशी त्रिफला कटुरोहिणी।
कामिनी गुग्गुलु दन्ती घोषाऽमृता च वालकम्॥९४५
सर्वमेतत्समाहृत्य वातारितैलमर्दितम्।
पुष्पितं स्फुटितं चक्षुः पटलं वातदूषितम् ॥ ९४६ ॥
मुखपाकं दन्तकृमिं रक्तजं पूतिनासिकाम्।
घ्राणस्तनादिरोगश्च एतिकर्णं प्रशाम्यति ॥ ९४७ ॥

र. र., नेत्ररोगे।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, पारा, कसीस, त्रिफला, कुटकी, दारुहल्दी, गूगल, दन्तीमूल, कड़वीतरोई, गिलोय, सुगन्धवाला सबसमभागलेकर कपड़छानचूर्णकर मैनसिल, हरिताल, पारा और कसीसकी कज्जलीमें मिलाय एरण्डकेतैलमें २-३ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती अथवा उचितमात्राकायमकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देने तथा लगाने और नस्यप्रभृतिमें उपयोगकरनेसे आखोंकाफोला, नेत्राधिमन्थ, जाला, वातदोष, मुखपाक, दांतोंकेकीड़े, रक्तविकार, पीनस, नाक और स्तनकेसमस्तरोग, कानोंकीसड़न येसबरोग मिटजाते हैं२२८

२२९ षडङ्गलोहम्

गगनताप्यशिलाजतुकाञ्चना
दिनकराद्ययसश्च रजः समम्।
त्रिफलया बहुभावितमाज्यव-
न्मधुयुतं विनिहन्त्यखिलामयान् ॥ ९४८ ॥

लो प.(स), सर्वरोगे।

भाषा—अभ्रक, सोनामाखी, शिलाजीत, सुवर्ण, तांबा और लोह इनसबकी भस्में लेकर त्रिफलाकेकाथसे २१ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा मधु और घीके साथखानेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२९ ॥

२३० षडशीतिगुग्गुलुः

सैर्यवासोविषा दारु व्याघ्रीयुक् चविका वृषम्।
कृष्णान्दाम्रा धना भीरु वास्यालं मिशि वल्लरी॥९४९॥
पथ्या शुण्ठी छिन्नरुहा शट्यारग्वधगोक्षुरम्।
विशाखा मोदकी तिक्ता ग्रन्थिर्भार्ङ्गी विदारिका९५०
अलम्बुषा हस्तिकर्णी वस्तगन्धा विषाणिका।
शिवाक्षं मुशली कौन्ती काकोली दीप्ययुग्मकम्९५१
त्रिवृद्दन्ती शिखी शृङ्गी कोकिलाक्षो दुरालभा।
पञ्चमूलं महद्वीरतरुः कुष्ठञ्च जोङ्गकम् ॥ ९५२ ॥
जातीपत्री फलैलञ्च केशरं त्वकिरातकम्।
कुङ्कुमं देवकुसुमं विशाला शशिसैन्धवम् ॥ ९५३ ॥
मन्दारमूलं कृमिजिद्वेमदुग्धा रविप्रिया।
गजपिप्पल्यपामार्गौ धानरी नक्तमालक. ॥ ९५४॥
एतै रास्ना समा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः।
सूतं गन्धं हिङ्गुलञ्च टङ्कणं लोहमभ्रकम् ॥ ९५५ ॥
शुल्वं वङ्गं सूतभस्म नागं ताप्यमयोरजः।
मिलितं पुरपादञ्च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ९५६ ॥
पचेच्चतुर्गुणे काथे पुरं पट्कटुजे पुरा।
तुर्यांशशेषिते काथे पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥ ९५७॥
चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना।
यावद्धनतरं तावद्गुटिकाः कारयेत्ततः ॥ ९५८ ॥
टङ्कप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः।
सप्तधातुगतान्वातान् शिरास्नाय्वस्थिसन्धिगान् ॥
सामाश्चिरामान्संसृष्टांश्चामजान्घ्नन्ति केवलान्।
यक्ष्माणमग्निमान्द्यञ्च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ ९६० ॥
गुल्फजानूरुकट्यूरूदरहृत्कुक्षिकक्षगान्।
अंसमन्याहनुश्रोत्रमूलललाटाक्षिशङ्खगान् ॥ ९६१ ॥
प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रञ्च शूलमाध्मानमश्मरीम्।
किं पुनर्मेदकान्वातान्प्रत्यङ्गस्थाश्रयत्यलम् ॥ ९६२ ॥
गुग्गुलुः षडशीति वै नाम्ना भोजेन कीर्तितः।
क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनः पुनः ॥ ९६३ ॥
स एष राजयोगोऽयं न देयो यस्य कस्यचित्।
योगेनाऽनेन वर्षेण षण्ढोऽपि प्रमदाप्रियः ॥९६४॥
वाजीकरणमन्यच्च परं नास्माद्विशेषतः।
गुणोऽस्य सेवनान्नित्यं यःस्यात्स स्याद्ब्रवीमि किम्॥
वप नो परिहार्यस्तु पानभोजनमैथुनैः ॥ ९६५ ॥

यो र, वै चि, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—कटसरैया, जवासा, अतीस, देवदारु, भटकटैया, वनमाला, चव्य, अडूसा, पीपल, नागरमोथा, बच, धनिया, शतावर, खरेटी, सौंफ, मजीठ, हर्रे, सोंठ, गिलोय, कचूर, अमिलतास, गोखरू, पुनर्नवा, मूर्वा, कुटकी, गठिवन, भारङ्गी, विदारीकन्द, गोरखमुण्डी, डोडाइन, वनतुलसी, मेंढासींगी, रुद्राक्ष, मुशली, रेणुका, काकोली, अजमोद, अजवाइन, निसोत, दन्तीमूल, मोरशिखा, काकड़ासींगी, तालमखाना, धमासा, बेल, सोनापाठा, गंभार, पाढ़ला, अरणी, बीरतरु, कूठ, अगर, जावित्री, जायफल, इलायची, नागकेशर, तज, चिरायता, केशर, लौंग, इन्द्रायण, कपूर, सैन्धव, आककीजड़, विडङ्ग, सत्यानाशीकीजड़, हुरहुर, गजपीपल, अपामार्ग, कवाच, करञ्ज येसब समभाग, इनसबकीबराबर रास्ना और दूनी चबूलकी फलिया तथा इनसबकी बराबर शुद्धगूगललेवे। शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ और सुहागा, कान्तलोह, अभ्रक, ताम्र, वङ्गपारा, नाग, सुवर्णमाक्षिक, फौलाद इनसबकीभस्में मिलकर गूगलसे चतुर्थांश लेवे फिर गूगलके बराबर षट्कटु (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और मरिच) लेकर जवकुटकर अठगुने पानीमें औटावे। अर्धावशेष रहनेपर उतारकर इसमें गूगलको पकावे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर धातुद्रव्योंकी कज्जली और सबचीजोंका बारीकचूर्णडालकर मन्दआंचमेंपकावे।

घन तैयार होनेपर ४–४ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथ सेवनकरनेसे सातों-धातु, शिरा, स्नायु, अस्थि और सन्धिगत साम अथवा निराम वायुरोग, श्लेष्मजव्याधि, राजयक्ष्म, मन्दाग्नि, धातुगतज्वर, गुल्म, जानु, ऊरु, उदर, हृदय, कुक्षि, वक्ष, अंस, मन्या, हनु, कान, भ्रू, ललाट इनसबकेरोग तथा शङ्खक, ऊरुस्तम्भ, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शूल, आध्मान, पथरी और तमामवातविकारोंको यह नष्टकरताहै। एकवर्षतक लगातार इसकासेवनकरनेसे तमामरोगोंसे रहित और षण्ढत्वसे निवृत्तहोकर उत्तमवाजीकरण होताहै। खानपानमें विशेष रुकावट नहींहै ॥ २३० ॥

२३१ षडाननगुटिका

विषोषणं टङ्कणपारदश्च
सगन्धचूर्णश्च समांशयुक्तम्।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुडाक्तं
सम्मर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥ ९६६ ॥
विरेचनी सर्वविकारहन्त्री
लघ्वी हिता दीपनपाचनीयम्।
कुष्ठे हिता तीव्रतरे हि शूले
चामाशये चाश्मभवे विकारे ॥
संशोधनी शीतजलेन सम्यक्
सङ्ग्राहिणी चोष्णजलेन युक्ता ॥ ९६७ ॥

र स, र. चं, र. सु, र. चि, कुष्ठे।

भाषा—शुद्धवछनाग, मरिच, भुनासुहागा, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, शुद्धजमालगोटा सबसे दूनालेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सबकाचूर्णमिलाय बराबरकागुड़ डालकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली ठंढे-जलकेसाथदेनेसे पेटसाफहोताहै। मन्दाग्नि, भयङ्करकुष्ठ, बढ़ाहुआ आमाशयकाशूल, पथरी इनसबको यह नष्टकरतीहै। शीतजलकेसाथलेनेसे रेचनकरतीहै और गरमजललेनेसेही रेचन बन्दहोजाताहै ॥ २३१ ॥

२३२ षडाननरसः

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं दरदं पिप्पली विषम्।
तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे याम छिन्नासमुद्भवैः ॥ ९६८ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा स्यानुपानैः प्रदापयेत्।
ज्वरे मन्दानले चैव वातपित्तज्वरेषु च ॥ ९६९ ॥
ज्वरे वैषम्यतरुणे ज्वरे जीर्णे विशेषत.।
मुद्गान्नं मुद्गयूषं वा तक्रभक्तञ्च केवलम् ॥ ९७० ॥
नारिकेलोदकं देयं दाहे चैव विशेषतः।
षडाननो रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥ ९७१ ॥

भै. र, र सु, विषमज्वरे।

भाषा—पीतल, कासा, ताम्र इनकीभस्में, शुद्धहिंगरिफ और बछनाग, पीपल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकपहर गिलोयकेस्वरसमे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख छोडे। इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे ज्वर, मन्दाग्नि, वात और पित्तज्वर, विषम, विशेषकर जीर्णज्वरोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य मूग अथवा मूगकायूष अथवा छाछभातदेना उचितहै। दाहहोनेपर नारियलकाजलदेवे ॥ २३२ ॥

२३३ षण्मुखलोहम्

दिनकराभ्रककाञ्चनपारदं
सुरभिलोहरजश्च समांशकम्।
मृदुहुताशविलासवशीकृतं
सघृतपुष्परसेन निषेवितम् ॥ ९७२ ॥
हरति हृज्जठरामयकामला
ग्रहणिकामयमामसमीरणम्।
गुदजमेहमथानलमार्दवं
रुधिरपित्तमसृग्दरमुद्धतम् ॥ ९७३ ॥

लो. प. (स.), सर्वरोगे।

भाषा—ताम्र, अभ्रक, सुवर्ण, लोह इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीपोतकर बेरके-कोयलोंपर रक्खीहुईकड़ाहीमें गलाकर पर्पटी बनालेवे। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक घी और मधुकेसाथसेवनकरनेसे हृदय और पेटकेरोग, कामला, ग्रहणी, आमवात, बवासीर, प्रमेह, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २३३ ॥

२३४ षण्मुखरसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं समं शुद्धं सूतांशं मृतताम्रकम्।
सौवर्चलञ्च सूतांशं जम्बीरै दिनसप्तकम् ॥ ९७४ ॥
मर्दयेदातपे तीक्ष्णे रुद्ध्वा लघु पुटेत्त्रयम्।
दत्त्वाऽऽदाय तु तच्चूर्णं समं त्रिकटुकं पचेत् ॥ ९७५ ॥
षण्मुखोऽयं रसो नाम त्रिगुञ्जेनामशूलजित्।
एरण्डतैलषड्भागं लशुनस्य दशाष्टकम् ॥ ९७६ ॥
एकं हिङ्गु त्रिसिन्धूत्थं सर्वमेकत्र कारयेत्।
त्रिनिष्कं भक्षयेच्चानु आमशूलप्रशान्तये ॥ ९७७ ॥

र. र., र को, नि र, चि. क, व. रा, यो म, वै चि, टो, शूले।

टि०—यो म, टो, एतयो सताश त्रिकटुक निक्षिप्तम्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म और सञ्चर समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे ७ दिनतक तीक्ष्णधूपमें मर्दनकर इसचूर्णकेबराबर त्रिकुटु मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्ती यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे आमशूलको यह नष्टकरताहै। इसको देकर एरण्डतैल ६ भाग, लहसनकारस १८ भा, भुनीहींग १ भा, सेंधानमक ३ भाग लेकर इकट्ठेमिलाकर इसमेंसे १२–१२ माशे अनुपानमें देवे ॥ २३४ ॥

२३५ षण्मुखरसः (द्वितीयः)

हराकायोरङ्गाऽभ्रकबलिकलैकद्विजलधि-,
द्विपक्षाविंशद्भिर्मिलितमनलेऽसौ यदि पुनः।

द्वयहं पक्वः कूप्यां भवति सिकतायन्त्रउषित-,
स्तलस्थः षण्ढत्वप्रलयकृदयं षण्मुखरसः ॥ ९७८ ॥

र.कौ , वृ यो.त.,यो., र.पा , वाजीकरणे।

भाषा—पारा १६ भाग, ताम्र १ भा , लोह २ भा , वङ्ग ४ भा , अभ्रक ८ भा इनकीभस्मे और शुद्धगन्धक २२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटीबनाय फिरसे कज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके दोदिन वालुकायन्त्रमें पकावे, इसकी तलस्थभस्महोगी। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह नपुंसकताको नष्टकरताहै ॥ २३५ ॥

२३६ षण्मुखरसः (तृतीयः)

नागवङ्गाऽभ्रकाणाञ्च लोहस्य शुल्वकस्य च ।
सिन्दूराणि च पञ्चानां रससिन्दूरमेव च ॥ ९७९ ॥
एतानि समभागानि समाहृत्य विचक्षणः ।
नित्यं तत्कृष्णकदलीफलयुक्तन्तु लेहयेत् ॥ ९८० ॥
मधुरैश्चान्नपानानि भुञ्जीत च यथेप्सितम् ।
संवत्सरार्द्धमात्रेण जरामरणवर्जितः ॥ ९८१ ॥
दिव्यदेहो भवेन्मर्त्यस्सर्वव्याधिविनाशन. ।
कृष्णगोक्षीरसंयुक्तं क्षयाणाञ्च प्रयोजयेत् ॥ ९८२ ॥
मातुलुङ्गफलाम्लेन सेवयेदर्द्धमण्डलम् ।
श्वासकासादिहृद्रोगपीनसादिप्रशान्तये ॥ ९८३ ॥
अस्य प्रयोगचातुर्यादनुपानविशेषतः ।
सर्वे गदा विनश्यन्ति तूर्णमेव न संशयः ॥
षण्मुखः कथितः सोऽयं रसेन्द्रो देवदुर्लभः ॥९८४॥

र कौ (हा.), र क यो , सर्वरोगे।

भाषा—नाग, वङ्ग, अभ्रक, लोह और ताम्र इनसबका-सिन्दूर और रससिन्दूर समभागलेकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती कालेकेलेकेफलमें रखकर खावे और मधुर अन्नपानका सेवनकरे। ऐसे छःमहीनेप्रयोगसे बुढापे और समस्तव्याधियोंसे रहितहोकर दिव्यदेह होजाताहै। क्षयमें कालीगायकादूध, और श्वास, कास, हृद्रोग, पीनस इनकीनिवृत्तिकेलिये बिजोरेकेरससे आधेमण्डलतक सेवनकरे। इसीप्रकार अनुपानभेदोंसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २३६ ॥

२३७ षोडशकलरसः

रसेन्द्रं सुरभीं शुल्वं शातकुम्भञ्च तारकम् ।
काललोहं रीतिकांस्यं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥९८५॥
नागवङ्गमयस्कान्तं सम्यङ्मारितमभ्रकम् ।
शुद्धाऽमृतं शङ्खचूर्णं समभागानि मेलयेत् ॥ ९८६ ॥
जम्बूजम्बीरपाठाग्निशृङ्गबेररसेन च ।
ततश्चित्रकतालाभ्यां यथाशक्ति विभावयेत् ॥ ९८७॥
कान्तपात्रे विनिक्षिप्य मधुना सितया सह ।
प्राशयेत्कायसिद्ध्यर्थं सर्वरोगहरं परम् ॥ ९८८॥
राजयक्ष्मघ्नगुल्मघ्नं श्वासकासोदरार्तिजित् ।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं मेहविंशतिकृच्छ्रजित् ॥ ९८९ ॥
त्रिदोषहरणं रक्तपित्तहारि ज्वरान्तकृत् ।
कलाषोडशसम्पूर्णः साक्षान्मृत्युञ्जयो मतः ॥ ९९० ॥

र.क यो., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, सुवर्ण, रजत, फोलाद, पीतल, कांसा, विद्रुम, मोती, नाग, वङ्ग, कान्त, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धवत्सनाभ, शङ्खभस्म सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जामुन, जंभीरी, पाठा, लालचित्रक, अदरख, सफेदचित्रक, ताड़फल, इनसबकी यथाशक्य भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा मधु और खांडकेसाथ कान्तलोहकेपात्रमें रखकर खानेसे राजयक्ष्म, गुल्म, श्वास, कास, उदररोग, ग्रहणी, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, त्रिदोष, रक्तपित्त और समस्तज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २३७ ॥

२३८ षोडशकलरसायनम्

रसभस्म च भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।
द्वयो. समं स्वर्णभस्म तारभस्म च भागिकम्॥९९१॥
कान्तं ताम्रञ्च वङ्गञ्च तीक्ष्णकं परमायसम् ।
नागं वैक्रान्तमभ्रञ्च प्रत्येकं भागमेककम् ॥ ९९२ ॥
वज्रवैदूर्यनीलञ्च गोमेदं पुष्परागकम् ।
मरकतं विद्रुमं मुक्तां पद्मरागं वराटकम् ॥ ९९३ ॥
शङ्खभस्म समांशानि खल्वमध्ये विनि.क्षिपेत् ।
भावना गव्यदुग्धेन ह्यजाक्षीरेण भावयेत् ॥ ९९४ ॥
कुङ्कुमाऽगुरुचन्द्रैश्च वालुकापद्मकेसरैः ।
जातीफलेन तत्पत्रैस्त्रिकटुत्रिफलानिशा-॥ ९९५ ॥
जीरकद्वयमञ्जिष्ठाशताह्वाचन्दनद्वयैः ।
चातुर्जातकखर्जूरयष्टीमधुकगोक्षुरैः ॥ ९९६ ॥
प्रियङ्गुकेशरैर्मुस्ताकार्पासीवाजिगन्धजैः ।
त्रिफलाजैः शतपदीवर्षाभूशिग्रुकद्वयैः ॥ ९९७ ॥
दाडिमीपुष्पजैश्चैव लवङ्गनारिकेलजैः ।
एतेषां सूक्ष्मचूर्णानां कषायांश्च प्रकल्पयेत् ॥ ९९८ ॥
इदं मर्दश्च भाव्यञ्च सप्तवारं विशोष्य च ।
चतुर्गुञ्जां वटीं कृत्वा प्रातस्सायञ्च भक्षयेत् ॥ ९९९॥
दम्पतीभ्यांनिषेव्यञ्च रसायनमनुत्तमम् ।
वलीपलितविध्वंसि कामदं सुखदं तथा ॥ १००० ॥
अशीतिवार्षिको वृद्धः पुनरेव युवा भवेत् ।
सर्ववातामयान्हन्ति सर्वक्षयविनाशनम् ॥ १००१ ॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैव गुल्मशूलशिरोगदान् ।
पाण्डुरोगमुदावर्तं कासश्वासाक्षिरोगकान् ॥ १००२॥
अर्शांसि ग्रहणीश्चैवमसृग्दरातिसारकान् ।
पित्तरोगविनिर्णाशि सर्वरोगहरं परम् ॥ १००३ ॥
नष्टवीर्ये षण्ढके च पुरुषे पुष्टिदायकम् ।
स्त्रीणां प्रदरदोषञ्च नष्टपुष्पं विनाशयेत् ॥
वन्ध्या च लभते गर्भं सर्वलक्षणसयुतम् ॥ १००४ ॥
वीर्यवृद्धिकरं चैव सर्वेन्द्रियबलप्रदम् ।
द्विकालभोजनञ्चैव गोक्षीराज्येन युक्तित. ॥ १००५ ॥

वर्जयेल्लवणाम्लौ च पिण्याक तैलकं तथा।
राजकोलादिकं सर्वमुर्वारुकफलं तथा ॥ १००६ ॥
सर्जशाकांश्च लशुनं वर्जयेद्भोजने तथा।
त्रिमासं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्लुतम् ॥१००७॥
कलापोडशपूर्णश्च रसायनमहौषधम।
संवत्सरप्रयोगेण दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥

र. क. यो. रसायने।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, सुवर्ण भस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वङ्ग, फोलाद, परमायस ?, नाग, वैकान्त, अभ्रक, हीरा, लसनिया, नीलम, गोमेद, पुखराज, पन्ना, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौड़ी और शङ्ख इनकीभस्में १–१ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर गाय और बकरीकादूध, केशर, अगर, कपूर, सुगन्धवाला, पद्मकेशर, जायफल, जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजीरे, मजीठ, सौंफ, दोनोंचन्दन, चातुर्जात, खजूर, मुलहठी, गोखरू, प्रियङ्गु, येसर, नागरमोथा, कपासकीमज्जा, असगन्ध, तीनोंबला, शतावर, इटसिट (पंजाबी), दोनोंसहिजन, अनारकेफूल, लौंग, नारियल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमे ७–७ भावनाए देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम यथोचितानुपानकेसाथलेनेसे समस्त वातविकार, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, शूल, शिरोरोग, पाण्डु, उदावर्त, कास, श्वास, अक्षिरोग, बवासीर, ग्रहणी, अतिसार, रक्तप्रदर, पित्तरोग, नपुंसकत्व, शुक्रनाश, उदररोग, नष्टपुष्प, वीर्यनाश, इन्द्रियोंकीदुर्बलता, इनसबको नष्टकर बलीपलितादि दोषोंसे निर्मुक्तहोकर अस्सीवर्षकाभी बुड्ढा फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोताहै। इसमें गायके घी और दूधकेसाथ दोवारभोजनकरे। लवण, खटाई, खली, तैल, बेर, ककरी, सबतरहकेशाक, लहसन इनकापरित्यागकरे। घी और मधु विशेष उपयोगमेंलेवे॥२३८॥

२३९ सङ्कोचगोलरसः (प्रथम)

अमृतविषपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,
त्रिफलखदिरसारं व्याधिघातश्च तुत्थम्।
रसपलघनमेकं गुग्गुलो भागयुक्तं,
जयति विषविसर्पं कुष्ठरादि जवेन ॥१००९॥

रसेन्द्रमं., कुष्ठरोगे।

भाषा—शुद्ध सफेद और काला वछनाग, पटोलपत्र, निम्बपञ्चाङ्ग, त्रिफला, खैरसार, अमिलतास और शुद्धतुत्थ १–१ कर्ष, पारदभस्म १ पल, अभ्रकभस्म और गूगल १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर निम्बपञ्चाङ्गकेस्वरससे १–२ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिक्वाथकेसाथ लेनेसे समस्तविष, विसर्प और कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३९ ॥

२४० सङ्कोचगोलरसः (सङ्कोचरसः) २

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम्।
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्वे नष्टपिष्टं सुगोलकम् ॥ १०१० ॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम्।
विपचेद्गोलकं मध्ये यावज्जीर्यति गन्धकः ॥ १०११ ॥
तावन्मृद्वग्निना यत्नात्समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
गुग्गुलुं निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफलाश्चाऽमृताविषम् १०१२
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥
रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोदितः ॥१०१३॥

र. स., र. सु, र. चि, व. रा., चि. क्र., रससागर, र. का, र. को., वृहे। व रा. कनकसङ्कोच इति नाम।

भाषा—ताम्र और अभ्रकभस्म १–१ कर्ष, शुद्धपारा ८ कर्ष लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकरे। नष्टपिष्टीहोनेपर गोलाबनाय तीनोंकीवरावर शुद्धगन्धकको लोहेके पात्रमें गलाकर इसगोलेको बीचमें रख मन्दाग्निसे पकावे। तमामगन्धकजलजानेपर उतारकर चूर्णकरले। फिर इसमें गूगल, नीमकापञ्चाङ्ग, त्रिफला, गिलोय, बछनाग, परवल, खैरसार, अमिलतास ये प्रत्येक रसकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर गुग्गुलुमें मिलाकर रखछोड़े। इनमेंसे ४ माशे मधुकेसाथ लेनेसे यह उदुम्बरकुष्ठकोनष्टकरताहै ॥२४०॥

२४१ सङ्कोचपिष्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धताम्रपलद्वयम्।
खल्वे सङ्कुत्य यत्नेन कारयेत्पिष्टिकां बुधः ॥ १०१४ ॥
गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतैलेन पाचयेत्।
तन्मध्ये पिष्टिका पाच्या भिषजा यत्नपूर्वकम् ॥१०१५॥
तत उद्धृत्य यत्नेन यथा नोड्डीयते रसः।
ततो योज्यानि वैद्येन भेषज्यानि शुभानि वै ॥१०१६॥
कटुत्रयं वचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विषम्।
समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विषात् १०१७
मधुना मर्दयित्वा तु गुटिकाः कारयेद्भिषक्।
गुञ्जा गुञ्जार्धमात्रा वा एकैकां भक्षयेद्बुधः ॥१०१८॥
ज्ञात्वा बलाबलं सत्त्वं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः।
गुटिका सप्तपर्यन्तं यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥
सङ्कोचपिष्टिका ह्येषा प्रसूतौ वातनाशिनी।
अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुष्ठांश्च व्यपोहति १०२०

रसेन्द्रमं, वातरोगे।

भाषा—आठपल शुद्धपारेमें दोपल शुद्धताम्रकारेता डालकर नष्टपिष्टिका बनाय बारीकमलमलकेकपड़ेमें बांधकर २ पल शुद्धगन्धकको बराबरके कटुतैलमें गलाकर बीचमें गोलीको रख मन्दाग्निसे पकावे। गन्धकके जलजानेपर पोटलीको निकालकर कज्जलीकरे। फिर इसमें त्रिकटु, बच, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल, शुद्धवछनाग १–१ कर्ष, हर्रे ३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाय १–२ दिन घोटकर मधुकेसाथ आधी अथवा १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। रोगी और रोगका बलाबल देखकर इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेकर प्रतिदिन १ गोली बढाकर ७ गोलीतक बढावे। इसकेसेवनसे प्रसूतवात, अन्यसमस्तवातरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहैं ॥२४१

२४२ सङ्कोचरसः (प्रथमः)

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन
तुषोदकेनाऽपि दृढं विमर्द्य।
सगन्धकं ताम्रविपाचितञ्च
भस्मत्वमायाति कृशानुयोगात् ॥ १०२१ ॥
तद्भस्म गन्धाश्मकतुत्थकञ्च
पुनर्विमर्द्यञ्च रसेन तेन।
मूषागतं तच्च तुषैर्विपक्वं
यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥
मद्यं सताम्रं सह टङ्कणेन
सनागरं मागधिकायुतञ्च।
सिद्धो भवेद्वल्लमितो रसेन्द्रो
सङ्कोचनामाऽखिलकुष्ठहारी ॥ १०२३ ॥

र, रसेन्द्रम, कुष्ठे। रसेन्द्रमङ्गले सङ्कोचगाल इतिनाम पाठस्तु सन्दिग्ध।

भाषा—शुद्धपारको लोणीकेरस और तुषोदकसे २-२ दिन मर्दनकर समभाग गन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर जम्भीरीके रसमेंघोटकर गोलाबनाय समभाग तावेकीकटोरीमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीलगाय सुखाकर भस्म अथवा लवणयन्त्रमें रख ८ पहरकी कड़ी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उस-भस्मकीबराबर शुद्धगन्धक और तुत्थ मिलाकर लोणीकेरस और तुषाम्लसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर तुषोंमें गजपुटकीआचदे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर भुनासुहागा, सोंठ और पीपल सम भागकाचूर्ण रसकेबराबर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिक्वाथकेसाथलेनेसे यह समस्त-कुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ सङ्कोचरसः (द्वितीयः)

कन्यारसेन सम्मर्द्यः सूतो द्विगुणगन्धकः।
संस्थाप्य सूक्ष्मये पात्रे ताम्रपात्रेण रोधयेत् ॥१०२४॥
भस्मना पूरयेदूर्द्धं मुखरोधञ्च कारयेत्।
तथामद्वितयं पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥
भृङ्गद्रवेण सम्मर्द्या दिवसत्रितयं धिया।
भृङ्गाग्नित्रिफलाविडङ्गसोमराजीकषायकैः ॥ १०२६ ॥
निवेशयेत्खादिरज क्वाथं राजतरोस्तथा।
बीजं वाकुचिकायाश्च मलयूत्थत्रजस्तथा ॥ १०२७ ॥
आवर्त्य घनतां मास शीतीभूतं समाहरेत्।
अनेन कर्षमात्रेण रसं वल्लयुगं चरेत् ॥ १०२८ ॥
त्रिफलायाः पिबेत्तोयं तृष्णार्ताऽपि जलञ्च तत्।
त्रिरात्रेण भवेच्छिन्ने स्फोटानामपि सम्भवः ॥१०२९॥

र, कुष्ठे।

भाषा—शुद्धपारेको दूनेगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डीमें रख दोनोंकीबराबरके ताम्रपात्रसे ढककर शुद्धचूनावग़ैरहसे सन्धिबन्दकर ६-७ कपड़-मिट्टीदेकर हंडीको राखसे भरके ढक्कनलगाय ६-७ कपड़मिट्टी करदे। सूखनेपर २ पहरकी कड़ी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३ दिन भगरेकेरससे मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। फिर भंगरा, चित्रक, त्रिफला, विडङ्ग, वाकुची, खैर और अमिलतासके क्वाथोंको एकजगह मिलाकर घन बनावे। उसमें वाकुची और कटूमरकीछालकाचूर्ण दशांश मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़ें। इसघनकी गोलीकेसाथ पूर्वरसकी १ गोली देकर त्रिफलाकाकाढा पिलावे। अधिकप्यासलगनेपर थोड़ापानीपीवे। इसके अति-रिक्त भोजनवग़ैरह न करे। इसके ३ दिन सेवनकरनेसे श्वित्र-स्थानमें अग्निदग्धकीतरह छाले उठकर रोगनष्टहोताहै ॥ २४३ ॥

२४४ सङ्कोचशुल्वरसः (सङ्कोचशल्वः)

शुल्वं तालकताण्डवं ध्वनिघ्नं सूतेन्द्रगोलं मृतं,
काश्मीरं सुरदालिराढकटुका कोशातकी सैन्धवम्।
निर्गुण्डीद्रवघृष्टयद्गुटिका क्वाथैररिष्टोद्भवैः,
श्लेष्माणं विनिहन्ति शीर्षजगदान् सङ्कोचशुल्वोरसः

रसेन्द्रम, र., कफाधिकारे।

टि०—ताण्डव यशद ग्राह्य, अग्नौ निक्षिप्ते सति यशदात्तानावर्णा ज्वाला शब्दाश्च प्रादुर्भवन्ति अतो लाक्षणिकमेतन्नाम। धातुसमूहमध्ये उपादानादन्ते मृतमितिविशेषणाच्च तत्स्थाने तृणविशेषस्याऽनन्तुप्रवेशात्। गोलशब्देन मन शिला ग्राह्या "गोला गोदावरीसख्यो कुनटीदुर्गयो स्त्रियाम्" इतिमेदिनी।

भाषा—तावा, हरिताल, जस्त, काशा, अभ्रक, पारा, मैनसिल इनकीभस्में, केशर, बन्दाल, मैनफल, कुटकी, कड़वी-तरोई, सेंधानमक सबसमभागलेकर निर्गुण्डीकरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली नीमकीछालकेकाढेकेसाथ देनेसे कफरोग और मस्तककेरोग नष्टहोतेहैं ॥ २४४ ॥

२४५ सङ्करभैरवरसः

मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं निक्षारं पारदं समम्।
पञ्चकोलकषायेण दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं भाव्यं कुक्कुटपित्तकैः।
द्विमाषमात्रं दातव्यं मधुना कणसंयुतम् ॥
हृद्दाहं हन्ति शैघ्येण रसः सङ्करभैरवः ॥ १०३२ ॥

वै चि, बा, रसायनप, हृद्रोगे।

भाषा—तावा, फोलाद, पारा इनकीभस्में, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, सबसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाढेसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाढेसे १ पहर स्वेदनकर कुक्कुटकेपित्तसे १ भावनादेकर २-२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाथलेनेसे यह हृदयकेदाहको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ २४५ ॥

वर्जयेल्लवणाम्लौ च पिण्याक तैलकं तथा।
राजकोलादिकं सर्वमुर्वारुकफलं तथा ॥ १००६ ॥
सर्जशाकांश्च लशुनं वर्जयेद्भोजने तथा।
त्रिमासं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्लुतम् ॥१००७॥
कलापोडशपूर्णश्च रसायनमहौषधम्।
संवत्सरप्रयोगेण दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥

र.क.यो. रसायने।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा , सुवर्णभस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वङ्ग, फोलाद, परमायस ?, नाग, वैक्रान्त, अभ्रक, हीरा, लसनियां, नीलम, गोमेद, पुखराज, पन्ना, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौड़ी और शङ्ख इनकीभस्में १–१ भाग लेकर सबकावारीकचूर्णकर गाय और बकरीकादूध, केशर, अगर, कपूर, सुगन्धवाला, पचकेशर, जायफल, जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजीरे, मजीठ, सौंफ, दोनोंचन्दन, चातुर्जात, खजूर, मुलहठी, गोखरू, प्रियङ्गु, केसर, नागरमोथा, कपासकीमज्जा, असगन्ध, तीनोंवला, शतावर, इटसिट (पंजाबी), दोनोंसहिजन, अनारकेफूल, लौंग, नारियल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमे ७–७ भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम यथोचितानुपानकेसाथलेनेसे समस्त वातविकार, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, शूल, शिरोरोग, पाण्डु, उदावर्त, कास, श्वास, अक्षिरोग, बवासीर, ग्रहणी, अतिसार, रक्तप्रदर, पित्तरोग, नपुंसकत्व, शुक्रनाश, उदररोग, नष्टपुष्प, वीर्यनाश, इन्द्रियोंकीदुर्बलता, इनसवको नष्टकर वलीपलितादिकोंसे निर्मुक्तहोकर अस्सीवरसकाभी बुड्ढा फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोताहै। इसमें गायके घी और दूधकेसाथ दोवारभोजनकरे। लवण, खटाई, खली, तैल, बेर, ककरी, सबतरहकेशाक, लहसन इनकापरित्यागकरे। घी और मधु विशेष उपयोगमेंलेवे॥२३८॥

२३९ सङ्कोचगोलरसः (प्रथम)

अमृतविषपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,
त्रिफलखदिरसारं व्याधिघातश्च तुल्यम्।
रसपलघनमेकं गुग्गुलो भागयुक्तं,
जयति विषविसर्पं कुष्ठराशिं जवेन॥१००९॥

रसेन्द्रम., कुष्ठरोगे।

भाषा—शुद्ध सफेद और काला बछनाग, पटोलपत्र, निम्बपञ्चाङ्ग, त्रिफला, खैरसार, अमिलतास और शुद्धतुत्थ १–१ कर्ष, पारदभस्म १ पल, अभ्रकभस्म और गूगल १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर निम्बपञ्चाङ्गकेस्वरससे १–२ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिक्वाथकेसाथ लेनेसे समस्तविष, विसर्प और कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३९ ॥

२४० सङ्कोचगोलरसः (सङ्कोचरसः) २

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम्।
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्वे नष्टपिष्टं सुगोलकम् ॥ १०१० ॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम्।
विपचेद्गोलकं मध्ये यावज्जीर्यति गन्धकः ॥ १०११ ॥
तावन्मृद्वग्निना यत्नात्समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
गुग्गुलुं निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफलाश्चाऽमृताविषम् १०१२
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥
रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोदितः ॥१०१३॥

र.स., र.सु. र.चि., व.रा., चि.क., रससागर, र.का., र.कौ., कुष्ठे। व.रा. कनकसङ्कोच इति नाम।

भाषा—ताम्र और अभ्रकभस्म १–१ कर्ष, शुद्धपारा ८ कर्ष लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकरे। नष्टपिष्टीहोनेपर गोलाबनाय तीनोंकीबराबर शुद्धगन्धकको लोहेके पात्रमें गलाकर इसगोलेको बीचमें रख मन्दाग्निसे पकावे। तमामगन्धकजलजानेपर उतारकर चूर्णकरले। फिर इसमें गूगल, नीमकापञ्चाङ्ग, त्रिफला, गिलोय, बछनाग, परवल, खैरसार, अमिलतास ये प्रत्येक रसकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर गुग्गुलमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४ माशे मधुकेसाथ लेनेसे यह उदुम्बरकुष्ठकोनष्टकरताहै ॥२४०॥

२४१ सङ्कोचपिष्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धताम्रपलद्वयम्।
खल्वे सङ्कृष्य यत्नेन कारयेत्पिष्टिकां बुधः ॥१०१४॥
गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतैलेन पाचयेत्।
तन्मध्ये पिष्टिका पाच्या भिषजा यत्नपूर्वकम् ॥१०१५॥
तत उद्धृत्य यत्नेन यथा नोड्डीयते रसः।
ततो योज्यानि वैद्येन भैषज्यानि शुभानि वै ॥१०१६॥
कटुत्रयं वचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विषम्।
समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विषात् १०१७
मधुना मर्दयित्वा तु गुटिकाः कारयेद्भिषक्।
गुञ्जा गुञ्जार्धमात्रा वा पक्षैकं भक्षयेद्बुधः ॥१०१८॥
ज्ञात्वा बलाबलं सत्त्वं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः।
गुटिका सप्तपर्यन्तं यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥
सङ्कोचपिष्टिका ज्ञेया प्रसूतौ वातनाशिनी।
अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुष्ठांश्च व्यपोहति १०२०

रसेन्द्रसं., वातरोगे।

भाषा—आठपल शुद्धपारेमें दोपल शुद्धताम्रकारेता डालकर नष्टपिष्टिका बनाय बारीकमलमलकेकपड़ेमें बांधकर २ पल शुद्ध गन्धकको बराबरके कडुतैलमें गलाकर बीचमें गोलीको रख मन्दाग्निसे पकावे। गन्धकके जलजानेपर पोटलीको निकालकर कज्जलीकरे। फिर इसमें त्रिकटु, वच, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल, शुद्धबछनाग १–१ कर्ष, हर्रे ३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाय १–२ दिन घोटकर मधुकेसाथ आधी अथवा १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। रोगी और रोगका बलाबल देखकर इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेकर प्रतिदिन १ गोली बढाकर ७ गोलीतक बढ़ावे। इसकेसेवनसे प्रसूतवात, अन्यसमस्तवातरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहैं ॥२४१

२४२ सङ्कोचरसः (प्रथमः)

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन
तुपोदकेनाऽपि दृढं विमर्द्य।
सगन्धकं ताम्रविपाचितश्च
भस्मत्वमायाति कृशानुयोगात् ॥ १०२१ ॥
तद्भस्म गन्धाश्मकतुल्यकञ्च
पुनर्विमर्द्यञ्च रसेन तेन।
भूयागतं तच्च तुपैर्विपक्वं
यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥
मर्द्यं सताम्रं सह टङ्कणेन
सनागरं मागधिकायुतञ्च।
सिद्धो भवेद्वल्लमितो रसेन्द्रो
सङ्कोचनामाऽखिलकुष्ठहारी ॥ १०२३ ॥

र, रसेन्द्रम, कुष्ठे। रसेन्द्रमङ्गले सङ्कोचगोल इतिनाम पाठस्तु सन्दिग्ध।

भाषा—शुद्धपारेको लोणीकेरस और तुपोदकसे २–२ दिन मर्दनकर समभाग गन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर जम्मीरीके रसमेंघोटकर गोलाबनाय समभाग तांबेकीकटोरीमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीलगाय सुखाकर भस्म अथवा लवणयन्त्रमें रख ८ पहरकी कड़ी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसभस्मकीबराबर शुद्धगन्धक और तुत्थ मिलाकर लोणीकेरस और तुपाम्लसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर तुपोंमें गजपुटकोआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भुनासुहागा, सोंठ और पीपल सम भागकाचूर्ण रसकेबराबर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिकाथकेसाथलेनेसे यह समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ सङ्कोचरसः (द्वितीयः)

कल्यारसेन सम्मर्द्यः सूतो द्विगुणगन्धकः।
संस्थाप्य मृण्मये पात्रे ताम्रपात्रेण रोधयेत् ॥१०२४॥
भस्मना पूरयेदूर्ध्वं मुखरोधञ्च कारयेत्।
तयामद्वितयं पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥
भृङ्गद्रवेण सम्मर्द्या दिवसत्रितयं धिया।
भृङ्गाग्नित्रिफलावेल्लासोमराजीकषायकैः ॥ १०२६ ॥
निवेशयेत्खादिरज क्वाथं राजतरोस्तथा।
बीजं वाकुचिकायाश्च मलयूत्वग्रजस्तथा ॥ १०२७ ॥
आवर्त्य घनतां प्राप्तं शीतीभूतं समाहरेत्।
अनेन कर्पमात्रेण रसं वल्लयुगं चरेत् ॥ १०२८ ॥
त्रिफलायाः पिबेत्तोयं तृष्णार्तोऽपि जलञ्च तत्।
त्रिरात्रेण भवेच्छ्विन्ने स्फोटानामपि सम्भवः ॥१०२९॥

र, कुष्ठे।

भाषा—शुद्धपारेकी दूनेगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डीमें रख दोनोंकीबराबरके ताम्रपात्रसे ढककर गुड़चूनावगैरहसे सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर हंडीको राखसे भरके ढकनलगाय ६–७ कपड़मिट्टीकरदे। सुखनेपर २ पहरकी कड़ी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३ दिन भंगरेकेरससे मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। फिर भंगरा, चित्रक, त्रिफला, विडङ्ग, वाकुची, खैर और अमिलतासके क्वाथोंको एकजगह मिलाकर घन बनावे। उसमें वाकुची और कटूमरकीछालकाचूर्ण दशांश मिलाकर १–१ तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इसघनकी गोलीकेसाथ पूर्वरसकी १ गोली देकर त्रिफलाकाकाढ़ा पिलावे। अधिकप्यासलगनेपर थोड़ापानीपीवे। इसके अतिरिक्त भोजनवगैरह न करे। इसके ३ दिन सेवनकरनेसे श्वित्रस्थानमें अग्निदग्धकीतरह छाले उठकर रोगनष्टहोताहै ॥ २४३ ॥

२४४ सङ्कोचशुल्वरसः (सङ्कोचलत्वः)

शुल्वं तालकताण्डवं ध्वनिघनं सूतेन्द्रगोलं मृतं,
काश्मीरं सुरदालिराढकटुका कोशातकी सैन्धवम्।
निर्गुण्ड्यद्रवघृष्टवल्लगुटिका काथैररिष्टोद्भवैः,
श्लेष्माणं विनिहन्ति शीर्षजगदान् सङ्कोचशुल्वोरसः

रसेन्द्रमं, र., कफाधिकारे।

टि०—ताण्डव यशद प्राह्य, अग्नौ निक्षिप्ते सति यशदात्नानावर्णा ज्वाला शब्दाश्च प्रादुर्भवन्ति अतो लाक्षणिकमेतन्नाम। धातुमध्ये उपादानादन्ते मृतमिति विशेषणाच्च तत्स्थाने गुणविशेषस्याऽननुप्रवेशात्। गोलशब्देन मन शिला ग्राह्या "गोला गोदावरीमल्यो कुनटीदुर्गयो स्त्रियाम्" इतिमेदिनी।

भाषा—तांबा, हरिताल, जस्त, कांसा, अभ्रक, पारा, मैनसिल इनकीभस्में, केशर, बन्दाल, मैनफल, कुटकी, कड़वीतरोई, सेंधानमक सबसमभागलेकर निर्गुण्डीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नीमकीछालकेकाढ़ेकेसाथ देनेसे कफरोग और मस्तककेरोग नष्टहोतेहैं ॥ २४४ ॥

२४५ सङ्करभैरवरसः

मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं त्रिक्षारं पारदं समम्।
पञ्चकोलकषायेण दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं भाव्यं कुक्कुटपित्तकैः।
द्विमापमात्रं दातव्यं मधुना कणसंयुतम् ॥
हृद्दाहं हन्ति शैघ्र्येण रसः सङ्करभैरवः ॥ १०३२ ॥

वै. चि, धा, रसायनप, हृद्रोगे।

भाषा—तांबा, फोलाद, पारा इनकीभस्में, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, सबसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाढ़ेसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाढ़ेसे १ पहर स्वेदनकर कुक्कुटकेपित्तसे १ भावनादेकर २–२ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथलेनेसे यह हृदयकेदाहको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ २४५ ॥

२४६ सञ्जीवकरणरसः

रसगन्धकनेपालं पिप्पली सैन्धवं तथा।
मरिचं हिङ्गुलं ताम्रं मृताभ्रं सर्वतुल्यकम् ॥ १०३३ ॥
समभागानि तुल्यानि भावयेद्वत्सनाभजैः।
त्रिदिनं कृष्णसर्पस्य मुखे पिष्ट्वा प्रवेशयेत् ॥ १०३४ ॥
वह्निर्नीत्वा च सम्पिष्य तच्चूर्णं रेणुमात्रकम्।
भोजयेत्सर्वरोगेषु सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥ १०३५ ॥
ब्रह्मरन्ध्रप्रयोगेण मृतस्य प्राणदर्शनम्।
सञ्जीवकरणो नाम्ना सौवर्णकरणस्तथा ॥
सन्तानकरणश्चैव त्रैविध्ये तत्प्रतिष्ठितम् ॥ १०३६ ॥

र.क.यो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और जमालगोटा, पीपल, सेंधानमक, मरिच, शिंगरिफ, और ताम्रभस्म सब सममाग, अभ्रकभस्म सबकीबराबर लेकर बछनागकेकाढेसे १–२ दिन मर्दनकर कालेसांपकेमुंहमेंभरदे। ३ दिनबाद निकालकर सुखाकर रखछोडे। इसमेंसे ज्वारकेदानेकीबराबर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै और तत्क्षण परिचय बताताहै। सन्निपातादिजनित मूर्च्छावस्थामें तालुमें पाछदेकर घर्षणकरनेसे चेतनाको प्राप्तहोताहै। इसकेप्रयोगसे वन्ध्या गर्भधारणकरतीहै ॥ २४६ ॥

२४७ सञ्जीवनरसः (प्रथमः)

पलमात्रं रसं शुद्धं वरनागसमन्वितम्।
निक्षिप्य पातनायन्त्रे त्रिंशद्वाराणि पातयेत् ॥१०३७॥
समाहरेद्वलं सम्यक् पातनायन्त्रके शृतम्।
मृते रसे क्षिपेत्तुल्यं भूपालावर्तभस्मकम् ॥ १०३८ ॥
निरुत्थं वपुषस्मापि निक्षिपेदष्टमांशतः।
ततो निम्बदलक्वाथैस्त्रिंशद्वारं हि भावयेत् ॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिपेद्रम्यकरण्डके ॥ १०३९ ॥
सञ्जीवनोऽयं खलु वल्लमानो निशाकुलीचूर्णयुतःसतक्रः
निहन्ति सर्वानपि मेहरोगान्नृणां नितान्तं कुरुते क्षुधाञ्च

र.र स.,र मु ,र.को., प्रमेह।

भाषा—१पलशुद्धनागको गलाकर १ पल शुद्धपारा मिलाय ३० बार ऊर्द्धपातनकरे। इससे पारे और नागकी तत्स्य भस्म होगी। फिर इसकीबराबर लाजवर्द और अष्टमांश निरुत्थ बङ्गभस्म मिलाकर नीमकेपत्तोंकेरससे ३० दिन मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे १–२ रत्तीकीमात्रा हल्दी और अङ्कोलकीछालके ३ मासे चूर्णकेसाथ मिलाकर छाछकेसाथलेनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर अन्यन्त क्षुधाको आग्रतकरताहै ॥ २४७ ॥

२४८ सञ्जीवनरसः (द्वितीयः)

रसगन्धकताम्राभ्रं कान्तभस्म समांशकम्।
मुशलीरससम्पिष्टं काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥१०४१॥
पाचयेद्वालुकायन्त्रे त्रियामान्ते समुद्धरेत्।
सिन्दूरं त्रिफला व्योषं क्षारं लवणपञ्चकम् ॥१०४२॥
हिङ्गु गुग्गुलुवह्नी च कुबेराक्षश्च टङ्कणम्।
दीप्यत्रयञ्च जाती च सूरणं विश्ववत्सकम् ॥ १०४३ ॥
शिग्रुद्वयं तथा पुह्वी व्याघ्रीद्वयपटोलकम्।
राक्षसीवल्लवल्ली च कटभीक्षुरपीलुकम् ॥ १०४४ ॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
गृञ्जनस्य शृङ्गवेरजम्बीररसभावना ॥ १०४५ ॥
निष्कार्द्धं मधुना लेह्यं यामे यामे च भक्षितम्।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु सर्वव्याधिहरः परः ॥
कुर्यात्प्राणपरित्राणं सञ्जीवनरसः स्मृतः ॥ १०४६ ॥

व.रा.,वै.चि., अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और कान्तभस्म सममागलेकर नीलवर्णकमलीकर मुशलीकेरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर २–३ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें रख मुंहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रससिन्दूर, त्रिफला, त्रिकटु, यवक्षार, पांचोंनमक, भुनीहींग, गूगल, चित्रकमूल, करंजकीमज्जा, भुनासुहागा, खुरासानी और देशी अजवाइन, अजमोद, जावित्री, सूरण, सोंठ, इन्द्रजव, दोनोंसहिजनकीछाल, पुनर्नवा, लाल और सफेद भटकटैया, वनमांटा, परवल, सेंमलकामुसला, हड़जोड़, पङ्कज (काश्मीरीनामहै), तालमखाना, पीलुकीछाल, सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर सलगम, अदरख औरजंभीरीकेरसोंसे १–१ भावना देकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे अम्लपित्तादि समस्त अग्निविकारोंको नष्टकर मनुष्यको जीवितदानदेताहै ॥ २४८ ॥

२४९ सञ्जीवनाभ्रम्

धन्वाभ्रं मारितं ग्राह्यं कर्षमानं सुचूर्णितम्।
जीरकं कानकं बीजं कर्षं वासारसेन च ॥ १०४७ ॥
कण्टकारीरसेनैव धात्रीमुस्तारसेन च।
गुडूचीस्वरसेनैव पलांशेन पृथक्पृथक् ॥ १०४८ ॥
मर्दयित्वा वटी कार्या गुञ्जामात्रा नियोजिता।
विषमाख्याञ्ज्वरान्सर्वान् प्लीहानं यकृतं वमिम् ॥१०४९॥
रक्तपित्तं वातरक्तं ग्रहणीं श्वासकासकौ।
अरुचिं शूलहृल्लासावर्शांसि च विनाशयेत् ॥ १०५० ॥

र. मु , ज्वराधिकारे।

भाषा—अभ्रकभस्म, जीरा, शुद्धजमालगोटा १–१ कर्ष लेकर अडूसा, भटकटैया, आंवले, नागरमोथा और गिलोयके १–१ पलस्वरससे क्रमशः मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त सम या विषमज्वर, प्लीहा, यकृत्, वमन, रक्तपित्त, वातरक्त, ग्रहणी, श्वास, काम, अरुचि, शूल, जीमिचलाना, बवासीर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४९ ॥

२५० सञ्जीवनीवटी

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलविभीतकी।
वचा गुडूची भल्लातं सविषं चात्र योजयेत् ॥ १०५१ ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत् ।
गुञ्जाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः १०५२
एकामजीर्णगुल्मेषु द्वे विसूच्यां च दापयेत् ।
तिस्रः स्युः सर्पदष्टेषु चतस्रः सन्निपातके ॥
वटी सञ्जीवनी नाम्ना सञ्जीवयति मानवम् १०५३

शा स, वृ.यो त, नि र, भै सा, रसायनस, वै. र, यो चि, चि र न, यो र, यो म, वै चि, व रा, चि. क, यो त, अजीर्णादौ ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, पीपल, हर्रे, आवले, बहेडे, वच, गिलोय, शुद्धभिलावे और बछनाग समभाग लेकर बारीक चूर्णकरे । भिलावे और ताजीगिलोयको गोमूत्रमें १–३ दिन घोटकर दूसरीचीजें मिलावे और अच्छीतरह घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ अजीर्ण और गुल्ममें देवे । हैजेमें २ गोली, सर्पदंशमें ३ और सन्निपातमें ४ गोलियोंकी मात्रादेनेसे यह मनुष्यको जीवितदान देतीहै ॥ २५० ॥

२५१ सञ्ज्ञाप्रबोधप्रधमनम्

वचा रसोनकटुकं सैन्धवं बृहतीफलम् ।
रुद्राक्षं मधुसारञ्च फलं सामुद्रिकं मतम् ॥१०५४॥
गन्धेशौ समभागानि ह्यर्कक्षीरेण भावयेत् ।
भावयेन्मीनपित्तेन त्रिवारं चूर्णयेत्ततः ॥ १०५५ ॥
धमनं कथितं श्रेष्ठं सन्निपाते सुदारुणे ।
कफोल्वणे तीव्रवाते अपस्मारे हलीमके ॥१०५६॥
शिरोरोगे नेत्ररोगे कर्णरोगे विधानत ।
धमापयेद्घ्राणछिद्राभ्यां सञ्ज्ञाकरणमुत्तमम् १०५७

रसायनस, सन्निपाते ।

टि०—अत्र मधुसारशब्देन मधुयष्टिका ग्राह्या । कश्चित्तु चन्द्र मस्तकं कथयन्ति ।

भाषा—वच, ल्हसन, कुटकी, सेंधानमक, भटकटैयाके फल रुद्राक्ष, मुलहठी अथवा चन्द्रमस्तक, समुद्रफल, पारा और गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय आकके दूध और मछलीकेपित्तसे ३–३ भावनाए देकर सुखाकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । कफोल्वण भयङ्कर सन्निपात, तीव्रज्वर, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग नेत्ररोग और कर्णरोग इनमें इसका नस्यदेनेसे चेतना प्राप्तहोतीहै ॥ २५१ ॥

२५२ सञ्ज्ञाप्रबोधरसः

स्फटिका तुत्थनेपालं मरिचं निम्बबीजकम् ।
पुत्रजीवकमज्जा च निम्बुनीरेऽर्कभाजने ॥ १०५८ ॥
भावना सप्त दातव्या गुटी गुञ्जामिता कृता ।
अञ्जनात्सन्निपाताऽहिविषाऽपस्मारनाशिनी १०५९

रसायनस, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध फिटकडी, तुत्थ और जमालगोटा, मरिच, नीमकेबीज और पतजीवाकी मज्जा सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर तांबेके वर्तनमें डालकर नीबूकेरसकी ७ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मनुष्यलाला अथवा नीबूकेरसमें घिसकर अञ्जनकरनेसे सन्निपात, सर्पविष और अपस्मारको यह नष्टकरताहै ॥ २५२ ॥

२५३ सत्त्वशेखररसः

सूतं रसकसत्त्वेन सारयित्वा समेन च ।
सत्त्वं तालस्य ताप्यस्य सर्वतुल्यबलिं क्षिपेत् १०६०
मर्दयेत्सुषवीनीरे राजकोषातकीजले. ।
देवदालीरसे यामं यामं लवणयन्त्रके ॥ १०६१ ॥
पचेच्छीतं विचूर्ण्याथ भावयेत्तैस्त्रिभि र्जलैः ।
वचचिञ्चाहरिकान्ताकन्यानां सलिलैः पृथक् ॥१०६२॥
द्विवल्ला वटिका चास्य पिप्पली मधुसंयुता ।
प्रयुक्ता हन्ति येगेन शीतदाहादिकं ज्वरम् ॥ १०६३ ॥

टो०, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको समभाग खर्परसत्त्वमें सारणायन्त्रसे मिलाकर समभाग हरिताल और माक्षिकसत्त्वकेसाथ मिलावे । फिर सबकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर करेला, कडवीलौकी और बन्दालकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोला, बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १–१ पहर लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर करेला, कडवीलौकी, बदाल जैती, कोयल और घीकुवारकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथदेनेसे शीत अथवा दाहादियुक्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ २५३ ॥

२५४ सद्योज्वराङ्कुशरसः

रसश्च नागवङ्गौ च समांशान् मेलयेत्तथा ।
अमृतञ्चाऽपि सदृशं मर्दयेदुष्णवारिणा ॥ १०६४ ॥
कटुत्रयेण दातव्यं गुञ्जामात्रं भिषग्वरैः ।
सद्यो ज्वराङ्कुशो नाम सर्वज्वरविनाशकः ॥ १०६५ ॥

वै चि, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, नाग और बङ्गको इकट्ठा गलाय पारेकी बराबर शुद्धबछनागकाचूर्णमिलाय १–२ दिन शुष्कमर्दनकर गरमपानीसे घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ देनेसे यह तत्क्षणआये हुए ज्वरको नष्टकरताहै ॥ २५४ ॥

२५५ सन्निवातहररसः

गोदुग्धे गुटिका कार्या बोलगुग्गुलुहिङ्गुलैः ।
हरेद्वातत्रयं सर्वसन्धिवातञ्च दु सहम् ॥ १०६६ ॥

रसायनस, वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—हीराबोल, गूगल और शिंगरिफ समभागलेकर १–२ दिन गोदुग्धमें मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली त्रिचिन्तानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्धिवातको नष्टकरताहै ॥ २५५ ॥

२५६ सन्धिवातारिरसः (रत्नगर्भपोट्टली)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणी।
लोहताम्रमयोभस्म तालकञ्च मनःशिला ॥ १०६७ ॥
अर्कमूलकषायेण मर्दितं वटकीकृतम्।
काचकूप्यां निवेदयाथ लेपयेद्वस्त्रमृत्तिकाम् ॥१०६८॥
त्रियामं वालुकायन्त्रे पचेन्मृद्वग्निना ततः।
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत सन्धिवातं निहन्त्यलम् ॥१०६९॥

य.रा.,वै.चि.,सन्धिवाते।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ अस्माद्रसाद्गन्धक मन शिलाञ्च निष्कास्य पितामहरस इति नाम स्थापितम्। तथाच "सन्धिवात निहन्त्यल-" मित्यस्य स्थाने अत्युग्र नाशयेज्ज्वरमिति पाठ इत्यनेन सन्धिवात शब्देन सन्धिगसन्निपात विवक्षित स्यादिति प्रतिभाति। रसस्य तदनुपानस्य चात्युग्रवीर्यत्वादुभयस्याऽपि नाशे न कापि विप्रतिपत्ति।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक और शिंगरिफ कुटकी, कान्तलोह, ताम्र और फोलादभस्म, शुद्ध हरिताल और मैनसिल सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आकगीजडकेरससे एकदिनमर्दनकर बेरबराबरगोलियें बनायसुखाकर आतशोशीशीमें भरके मुद्रबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी अग्निदे। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्धिवातको दूरकरताहै ॥ २५६ ॥

२५७ सन्निपातकालानलरसः

षड्गन्तु ताम्रपत्रेण सूतं गन्धकतालकम्।
विषमर्कं सुवर्णञ्च रसकं हेममाक्षिकम् ॥ १०७० ॥
कृशानुतोयसङ्घृष्टं दिनं तद्गोलकं पुनः।
संस्कृत्य मृत्पटेर्गाढं वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १०७१ ॥
त्रिदिनं स्वाङ्गशीतन्तु पित्तैर्भाव्यञ्च पञ्चभिः।
देयेदि सर्वतुल्येन धूपितं हि विषेण च ॥ १०७२ ॥
अर्द्धगुञ्जामितं खादेत्सन्निपातं सुदुस्तरम्।
शीत्यतन्द्राप्रलापोग्रं सान्द्रवातकफोल्वणम् ॥ १०७३ ॥
जयेच्छ्लेष्मकृशतां ज्वराञ्जीर्णाश्रवानपि।
ग्रहण्युदरशोथार्शोऽरुचिदौर्बल्यपीनसान् ॥ १०७४ ॥

र. क , सन्निपाते।

भाषा—अनलरसकी प्रक्रियासे शोधाहुआ पारा, शुद्ध-गन्धक, हरिताल और वछनाग, ताम्र, सुवर्ण, खपरिया और सोनामाखी इनकीभस्में सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकमूलकरससे एकदिनमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी लगाय सुखाकर ३ दिन वालुका-यन्त्रकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाँचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर घड़ेकेभीतरलेपदेकर सबकेबराबर वछनाग कावूर्ण नीचेकेघड़ेमें बिछाय डमरूयन्त्र बनाकर ३–४ कपड़-मिट्टी देकर वछनागवाले घड़ेको चूल्हेपर चढ़ाय इतनी आंचदे कि तमामवछनाग जलकर धूआं ऊपरके रसमें समाविष्ट होजाय स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकाल आधीआधी रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सर्वाङ्गशीत, तन्द्रा और अधिकप्रलापयुक्त वातकफोल्वणसन्निपात, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, ग्रहणी, उदररोग, शोथ, ववासीर, अरुचि, पीनस इनसबको यह नष्टकरताहै २५७

२५८ सन्निपातकृतान्तकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं बृहती कण्टकारिका।
सक्षौद्रैः पेषयेद्यामं शुष्कं तद्भावयेद्द्रवैः ॥ १०७५ ॥
रक्तशालिनिकावासाभृङ्गीश्वेतापराजिता-।
रुदन्तीविजयाब्राह्मीनिर्गुण्डीचित्रकद्रवैः ॥ १०७६ ॥
कपिकच्छुकमूलैश्च मरिचानां कषायकैः।
धत्तूरद्रवकेणैव धूमसारञ्च निक्षिपेत् ॥ १०७७ ॥
रसतुल्यं ततस्तञ्च दिनं पित्तैश्च भावयेत्।
मात्स्यमाहिषमायूरैर्ज्योतिष्मत्याश्च तैलकैः ॥१०७८॥
चणमात्रां वटीं कुर्याद्भक्षयेत्सन्निपातयुक्।
अभावे सति पित्तानां विषमुष्टिन्तु षड्गुणम् ॥१०७९॥
क्षिपेद्रसस्य तत्सिद्धिस्सन्निपातकृतान्तकः।
सेव्यं दध्योदनं पथ्य घृताभ्यङ्गञ्च कारयेत् ॥
धारा शिरसि दातव्या सर्वाङ्गे शीतलै जलैः ॥१०८०॥

र.सु ,सू.प्र ,र का ,र क यो ,सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, भटकटैया, वनभाटा सब समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर मधु, लालगुञ्जा, अडूसा, भंगरा, सफेदकोयल, रुदन्ती, भाग, ब्राह्मी, निर्गुण्डी, चित्रक, केवाच कीजड़, मरिच और धतूरेके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर पारेकीबराबर गृहधूम मिलाकर मछली, भैंसा और मोरकेपित्तोंमें १–१ भावना देकर मालकांगनीके तैलसे घोटकर चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े। पित्तोंके अभावमें पारेसे षड्गुण शुद्धकुचिला डाले। इनमेंसे १–१ गोली सन्निपातमें समयोचितानुपानकेसाथदवे। दाहमालूमहोनेपर घीसे अभ्यङ्गकराय सिरपर ठण्डपानीकी धारा दे तथा स्नानकरावे। अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभातदे ॥ २५८ ॥

२५९ सन्निपातगजव्यालरसः

पूर्ववच्छोधितं सूतं भस्मीभूतं समाहरेत्।
सुवर्णं रजतं ताम्रं तीक्ष्णं त्रपु च नागकम् ॥ १०८१ ॥
माक्षीकमभ्रकञ्चैव समान्भागान् समाहरेत्।
भस्मीकृतांश्च ताँल्लोहान् रसेन सह मर्दयेत् ॥१०८२॥
गन्धकं वत्सनाभञ्च सर्वैः सममुपानयेत्।
एकीकृत्याऽथ सर्वं तन्मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥ १०८३ ॥
त्रिदिनं कृष्णतुलसीनीरैः सम्मर्दयेद्बुधः।
कृष्णधत्तूरकद्रावैः क्वाथैर्मरिचसम्भवैः ॥ १०८४ ॥
पिप्पल्युत्थैश्च शुण्ठीजैर्भावयेद्वत्सनाभजैस्तथा।
भृङ्गार्कारक्तमुनिजैः पिप्पलीशाखजै रसैः ॥ १०८५ ॥
तिलपर्णीरसैस्तद्वत्सप्तपर्णीसलिलैस्तथा।
वह्निनीरैश्च मण्डूकीरसैश्चैवस्य पत्रजैः ॥ १०८६ ॥

भृङ्गीरसैः प्रमर्द्याथ पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।
मयूरमीनवाराहच्छागमाहिषसम्भवैः ॥ १०८७ ॥
धूमपानं ततः कुर्यात्पूर्वोक्तविधियोगतः ।
गुञ्जाप्रमाणवटिकाः कर्तव्यास्त्रिकटोरसैः ॥ १०८८ ॥
त्रिकटुक्वाथयोगेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ।
अनुपाने प्रदातव्यस्त्रिकटो रस एव हि ॥ १०८९ ॥
पाथांसि ढालयेत्तत्र सुशीतानि बहून्यपि ।
ततः पथ्यं प्रदातव्यं मुद्गक्वाथेन संयुतम् ॥ १०९० ॥
उपचारस्तु पूर्वोक्तः कर्तव्यो नात्र संशयः ।
शीतद्रवैः भवेद्वीर्यं पित्तवृद्धरसोत्तमे ॥
सन्निपातगजव्यालो रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ १०९१ ॥

रसालं., सन्निपाते ।

भाषा—ऊर्ध्वपातनादिसंस्कारकर भस्मकियाहुआ पारा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, फोलाद, वङ्ग, नाग, सोनामाखी, अभ्रक इनकीभस्में सब समभागलेकर शुद्धगन्धक और बछनाग सबकी बराबर बराबर मिलाय बारीकचूर्णकर अदरखकेरससे ३ दिन मर्दनकर कालीतुलसी, धतूरा, मरिच, पीपल, सोंठ, भंगरा, लालअगस्त्य, पीपल, हुरहुर, अम्लोनियां, चित्रक, ब्राह्मी, आककेपत्ते, भांग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर मोर, मछली, सुअर, बकरा, भैंसा इनके पित्तोंसे १-१ भावना देवे । फिर मिट्टीकीहंडीमें इसका लेप देकर दूसरीहंडीमें बराबरकेवछनागकाचूर्णबिछाकर डमरूयन्त्र-बनाय चूल्हेपर बछनागवाली हडीको रख इतनीआंचदे कि बछनाग जलकर तमाम धूंआ रसमें समाविष्टहोजाय । स्वाङ्गशीतल-होनेपर त्रिकटुकेक्वाथसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके क्वाथकेक्वाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । अत्यन्तगर्मीलगनेपर ठंडेजलकी-धारादे । भूखलगनेपर मूंगकायूप और भातदे । शीतजलसे पित्त-युक्तरसोंमें तेज़ी आतीहै इसलिये तमाम शीतोपचार करे । इनके सेवनसे सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २५९ ॥

२६० सन्निपातगजाङ्कुशरसः

मृतं सूतं मृतश्चाभ्रं शुद्धतालकमाक्षिके ।
रामठं तुल्यतुल्यं स्यान्मर्दयेत्खल्वके द्रवैः ॥ १०९२ ॥
वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैः ।
धत्तूरलाङ्गलीपाठाभृङ्गीजम्बीरजैर्द्रवैः ॥ १०९३ ॥
त्रिदिनं मर्दयेदेभिश्चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् ।
त्रिक्षारं सैन्धवं व्योषं विषं मधूकसारकम् ॥ १०९४ ॥
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याथ पूर्वोक्तञ्च रसं समम् ।
एकीकृत्य भवेत्सिद्धः सन्निपातगजाङ्कुशः ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु गुञ्जामात्रः प्रयोजितः ॥१०९५॥

र सु., र.र.स , र क यो , र र , नि र., र.को.र.का., सू-प्र., सन्निपाते ।

टि०—रसरत्नाकरे माक्षिकस्थाने ताम्रं नियोजितम् । र सु ,र.क यो एतयो हिंङ्गुस्थाने हिङ्गुलं नियोजितं तत्तु न सम्यक् ? अत्र रामठस्यैवोपलम्भे. । शुद्धपारदस्यागमनाच्च निर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैरित्यत्र रसरत्नाकरे शुण्ठीगन्धालिचित्रकैरिति पाठो दृश्यते तत्र गन्धालिशब्देन फागली (मराठी) भाक्षा यन्महाराष्ट्रदेशे कुर्माख्यजन्तुविषे प्रयुज्यते । यत्र तदभावस्तत्र कुकुरोन्दिति प्रसिद्धमौषध योज्यम् । केचित्तु मगधदेशे गेन्हारीतिनाम्ना प्रसिद्धत्वाद्रक्तमारिष गृह्णन्ति, तत्तु न सम्यक् ? तत्रोत्कटगन्धस्याऽभावात्तत्सत्त्वेनैव गन्धालीति शब्दप्रयोगात्सन्निपातहरणाऽसमर्थत्वाच्च । रत्नाकरौषधयोगे वातज्वरगजाङ्कुशनाम्ना "रसतालकताप्याभ्रलाङ्गलीवहिरामठान् । पथ्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपल्लवान् ॥ पाठाविडङ्गमुस्तैलाबोलधत्तूरतण्डुलान् । भृङ्गीमधूकसारञ्च जम्बीराम्लेन पेषयेत् ॥ कुर्यात्कलकमानेन वटिका सन्नियच्छति । सस्वेददाहाभिन्यास वातज्वरगजाङ्कुश ॥" इत्येक पाठो निहितोऽस्ति । र. र. स , र को , र.क यो. एषु सन्निपातगजाङ्कुशनाम्ना "रसगन्धकताम्राभ्र लाङ्गलीवहि-रामठम् । वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपल्लवा. ॥ पाठा क्षारत्रय स्वेडबोलधत्तूरतण्डुले. । भृङ्गीमधूकसाराभ्यां जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ कुर्याद्धि माषमानेन वटिका सा नियच्छति । सस्वेददाहाऽभिन्यास सन्निपातगजाङ्कुश ॥" इति द्वितीय. पाठो निहितोऽस्ति । अत्रापि "मृत सूत मृत चाभ्र शुद्धतालकमाक्षिक—"मित्याद्युपरिनिर्दिष्टः पाठ एव मूल प्रतीयते बहुग्रन्थसम्वादात् । रत्नाकरौषधयोगकर्त्रा तु जनान्व्यामोहयितु पाठद्वय चात्माद्विधौ प्रकल्पितौ । साम्प्रतिकदशाया महतामपि बुद्धिराकुला भवति यत्कस्तो योग सम्पादनीय इति । अपि तु न तद्धानिरिति न्यायमङ्गीकृत्य योगत्रयनिर्दिष्टानि मूलद्रव्याण्येकीकृत्य सर्वा भिभावनाभिरपि विभाव्य एक एव रस सम्पादनीय इति विशेषु विज्ञप्तिः । स यथा—मृताभ्रताम्रमृतानि गन्धकमाक्षिकतालकलाङ्गलीधत्तूरबीजानि विषशुद्धानि वह्निरामठपथ्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपल्लवपाठाविडङ्गमुस्तैलाबोलभृङ्गीमधूकसारत्रिक्षारसैन्धवव्योषवन्ध्याकर्कोटकन्दधान्यानि द्रव्याण्येकत्र सम्पिष्य वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकधत्तूरलाङ्गलीपाठाभृङ्गमेघनादभृङ्गीमधूकसाराणां यथासम्भव स्वरसे क्वाथे वा एकैका भावना प्रदायान्ते जम्बीराम्लेन त्रिदिन विमर्द्य गुञ्जाप्रमाणवटिकां विधाय यथारोगमनुपानं विभज्य प्रदेय इति सर्वं सम्पन्नं भविष्यति ।

भाषा—पारद और अभ्रकभस्म, शुद्ध हरिताल, सोनामाखी, हींग सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बांझककोड़ा, परवल, निर्गुण्डी, फांगळी (मराठी) अभावमें कुकरौंदा, नीमकीछाल, चित्रककीजड़, धतूरा, कलिहारी, पाढ़ा, भंगरा, भारंगी इनके रसोंसे ३-३ दिनमर्दनकर तीनोंखार, सैन्धव, त्रिकटु, शुद्धबछनाग, महुएकासार, सबसमभागलेकर इनको साथ मिलाकर १-२ दिन घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ २६० ॥

२६१ सन्निपातदावानलरसः (प्रस्त.)

तालकं नागवङ्गे द्वे हरजीरञ्च गन्धकम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं गरलं पारदं शिला ॥ १०९६ ॥
एतानि समभागानि निम्बुनीरेण मर्दयेत् ।
पाचितं वालुकायन्त्रे दिनैकं तीव्रवह्निना ॥ १०९७ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शिखिपित्तैर्विभावयेत् ।
भावितं माषमात्रञ्च दातव्यं दोषनाशनम् ॥ १०९८ ॥
सन्निपातान्निहन्त्याशु दृष्टं प्रत्ययकारकम् ।
दावानलरसः ख्यातो वह्निदेवप्रकाशित. ॥ १०९९ ॥

वै नि, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धहरिताल, नाग और वङ्गभस्म, शुद्ध पारा और सुहागा, तीनोंक्षार, पांचोंनमक, सर्पविष, शुद्ध गन्धक और मैनसिल सब समभागलेकर हरिताल, पारा, गन्धक और मैनसिलकी नीलवर्णकज्जलीकर अन्यसबचीजोंको मिलाकर नीबूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर वालुकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी कड़ीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मोर, बकरा और सांपके पित्तोंसे १–१ भावना देकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह तमामसन्निपातोंको नष्टकरताहै । मूर्च्छाजगनेपर अत्यन्त भूखलगे तो दहीभात खानेको देवे ॥ २६१ ॥

२६२ सन्निपातदावानलरसः (द्वितीयः)

मनःशिलारसौ तुल्यौ मर्दनीयौ गवां जलैः ।
ततस्तु गोलकीकृत्य शोषयित्वा खरातपे ॥ ११०० ॥
गोपायित्वा ताम्रेण सन्धिबन्धं विधाय च ।
वालुकायन्त्रसम्पक्वमहोरात्रात्समुद्धरेत् ॥ ११०१ ॥
अष्टमांशं तत्र योज्यं जातीफलकणाविषम् ।
मत्स्यमाहिषवाराहमयूरच्छागसम्भवैः ॥ ११०२ ॥
पित्तैस्तु सप्तधा भाव्यं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत् ।
सन्निपाते महाघोरे दद्यात्तं प्रच्छनादिभिः ॥
व्रीहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातविनाशनः ॥ ११०३ ॥

र. क. यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और पारा समभागलेकर गोमूत्रमें २–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कड़ीधूपमें सुखाकर तांबेकेसम्पुटमें बन्दकर वज्रमिट्टीसे सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें ८ पहरकी कड़ी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर जितनी तांबेकीभस्महोगईहो उतनी इकठ्ठी मिलाय जायफल, पीपल और शुद्धवछनाग अठमाश मिलाकर मछली, भैंसा, सुअर, मोर और बकरेकेपित्तोंसे ७–७ भावनाएं देकर दशांश भुनासुहागा मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे यवप्रमाणमात्रा सन्निपातमूर्च्छामें तालुमें पाछलगाय रक्तमें थोड़ीदेर मसलनेसे मूर्च्छा निवृत्तहोतीहै ॥ २६२ ॥

२६३ सन्निपातभैरवरसः (प्रथम)

ताम्रं गन्धं रसं श्वेतगुञ्जामरिचपूतनाः ।
समानपित्तजैपालांस्तुल्यानेकत्र मर्दयेत् ॥ ११०४ ॥
युग्मगुञ्जाप्रमाणन्तु नवज्वरहरं परम् ।
ज्वराङ्कुश. सन्निपातभैरवोऽयं प्रकाशितः ॥ ११०५ ॥

र.स , र च , र म , रसायनम ,ना वि ,र का ,र. सु , सन्निपाते । र सु ज्वराङ्कुश इति नाम ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक और पारा, सफेदगुञ्जा, मरिच, वच अथवा जटामांसी, मछलीकापित्त, शुद्धजमालगोटा सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मछलीकेपित्तकी भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपात और नवज्वरको नष्टकरताहै २६३

२६४ सन्निपातभैरवरसः (द्वितीयः)

रसो गन्धस्त्रिस्त्रिकर्षौ कुर्यात्कज्जलिकां द्वयोः ।
ताराभ्रताम्रवङ्गाहिसाराश्चैकैककार्षिकाः ॥ ११०६ ॥
शिग्रुज्वालामुखीशुण्ठीविल्वेभ्यस्तण्डुलीयकात् ।
प्रत्येकस्वरसैः कुर्याद्यामैकैकं विमर्दनम् ॥ ११०७ ॥
कृत्वा गोलं वृतं वस्त्रे लवणापूरिते न्यसेत् ।
काचभाण्डेऽथवा स्थाल्यां काचकूपी निवेशयेत् ११०८
वालुकाभिः प्रपूर्याथ वह्निर्यामद्वयं भवेत् ।
तत उद्धृत्य तं गोलं चूर्णयित्वा विमिश्रयेत् ॥११०९॥
प्रवालचूर्णकर्षेण शाणमात्रविषेण च ।
कृष्णसर्पस्य गरले दिवसं भावयेत्तथा ॥ १११० ॥
तगरं मुशली मांसी हेमाह्वा वेतसः कणा ।
नीलिनी पत्रकं चैला चित्रकश्च कुठेरकः ॥ ११११ ॥
शतपुष्पा देवदाली धत्तूरागस्त्यमुण्डिकाः ।
मधूकजातिमदना रसैरेषां विमर्दयेत् ॥ १११२ ॥
प्रत्येकमेकवेलञ्च ततः संशोष्य धारयेत् ।
बीजपूरार्द्रकद्रावैर्मरिचैः षोडशोन्मितैः ॥ १११३ ॥
रसो द्विगुञ्जाप्रमितः सन्निपाते च दीयते ।
प्रसिद्धोऽयं रसो नाम्ना सन्निपातस्य भैरवः ॥१११४॥

शा स , र प्र , यो.र., नि र , वृ.यो. त , रसायनसं , र.का., त्रि , सन्निपाते ।

टि०—वृहद्योगतरङ्गिण्यां अर्कैरण्डदारुभावने विशेषेणोक्ते विषञ्च मर्कांशप्रमितं दत्तमिति विशेष । त्रिशत्या सन्निपातहर इति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ३–३ कर्ष, चांदी, अभ्रक, ताम्र, वङ्ग, नाग और फोलाद इनकी भस्में १–१ कर्षलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सहिजन, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, सोंठ, वेल, कांटेवालीचौलाई इनप्रत्येकके स्वरसोंमें १–१ पहर मर्दनकर गोला बनाय मलमलके कपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें बन्दकर दोपहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर प्रवालभस्म १ कर्ष, शुद्धवछनाग ४ माशे मिलाकर कालेसांपके जहरसे १ दिन मर्दनकर तगर, मुशली, जटामांसी, दन्यालादी अथवा रेवनचीनी, बेंत, पीपल, नील, पत्रज, इलायची, चित्रक, जंगलीतुलसी, सोंफ, बन्दाल, धतूरा, अगस्त्य. गोरखमुण्डी, महुआ, जावित्री. मैनफल इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा काथोंसे १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली बिजौरे और अदरखकेरस तथा १६ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै ॥ २६४ ॥

२६५ सन्निपातभैरवरसः (तृतीय.)

विषं गन्धं ताम्रभस्म सोमलञ्च समांशकम् ।
पारदं सर्वतुल्यं स्यात्खल्वे तु कज्जलीम् १११५

निर्गुण्डीसुरसाद्रावैः भावयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः ।
तिलमात्रा वटी देया सन्निपातादिरोगजित् ॥१११६॥

र. चं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध वछनाग, गन्धक और सोमल, ताम्रभस्म समभाग, शुद्धपारा सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकजलीकर निर्गुण्डी, तुलसी और अदरखके रसोंकी १–१ भावना देकर तिलप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै २६५

२६६ सन्निपातभैरवरसः (चतुर्थः)

अष्टलोहमसिताभ्रभागकम्
सूतगन्धघनभागमिश्रितम् ।
वह्निनीरमृदितं दिनमेकं
षोडशांशविषमायुभावितम् ॥ १११७ ॥
गौञ्जिकं सुमरिचाग्निनीरयु-
क्तन्निपातहरभैरवो रसः ।
स्याद्रथोद्धत इवारुणस्तमः
शोपितादिसुजये तथा हिमः ॥ १११८ ॥

र. शि., व. रा., र. क. यो., सन्निपाते ।

टि०—व. रा, र क यो एतयोरभिधुमारनाम्नैको रसो निर्दिष्टोऽस्ति तत्रार्कमूलभावना प्रदाय वालुकायां स्वल्पपाक कृतोऽस्ति। विषप्रक्षेपो मायुभावना च नास्त्यत्रस्ति पाठोऽस्ति तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भावो बोध्य, अत्राऽपि पाककरणे क्षत्यभाव ।

भाषा—आठों लोहोंकीभस्में शुद्ध पारा, गन्धक और अभ्रकभस्म १–१ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथमें एकदिन मर्दनकर षोडशांश शुद्धवछनाग मिलाकर पांचोंपित्तोंकी १–१ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली १४ अथवा २१ कालीमिर्चोंकेसाथ देकर चित्रकका क्वाथ पिलानेसे अरुणोदयसे अंधेरेकीतरह सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २६६ ॥

२६७ सन्निपातभैरवरसः (पञ्चमः)

क्ष्वेडं व्योषं तपनदरदं भागवृद्धया प्रदेयं,
कृत्वा क्षोदं विमलमखिलं योजयेद्वल्लमात्रम् ।
आर्द्रात्तोयाज्ज्वरहरणकृत् सन्निपातेषु पथ्यं,
भक्तं दध्ना फलरुतियुतं भैरवाख्यो रसोऽयम् १११९

र. शि., सन्निपाते ।

भाषा—कड़वीतरोई, त्रिकटु, ताम्रभस्म और शुद्धशिंगरिफ क्रमवृद्धभागसे लेकर बारीकचूर्णकर कड़वीतरोईकेरससे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं । अत्यन्तभूख लगनेपर औचिती देखकर दहीभात दना ॥

२६८ सन्निपातभैरवरसः (षष्ठः)

व्योषं वचाऽभयाक्ष्वेडं विडङ्गं सैन्धवं रसम् ।
गन्धकं हरितालञ्च निर्गुण्डीरसमर्दितम् ॥ ११२० ॥
मत्स्यमाहिषवाराहच्छागपित्तैश्च भावयेत् ।
व्रीहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२१ ॥

र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—त्रिकटु, वच, हर्रे, कड़वीतरोई, विडङ्ग, सेंधानमक, शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर निर्गुण्डीकेरससे एकदिन मर्दनकर मछली, भैंसा, सूअर और बकरेके पित्तोंसे १–१ भावना देकर यवप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ २६८ ॥

२६९ सन्निपातभैरवरसः (सप्तमः)

सूतं गन्धं लोहकिट्टं विमर्द्य
सर्वैस्तुल्यं वत्सनाभं नियुञ्ज्यात् ।
आर्द्रं भृङ्गं बीजपूरञ्जयन्ती
निर्गुण्डीका व्यस्ततार्जैर्द्रवैश्च ॥ ११२२ ॥
युक्त्या वटयो भावयित्वा विधेया
गुञ्जाऽर्द्धार्द्धं सन्निपातस्य सूनम् ।
शीतैर्वातं निर्मलस्नानमत्र
पथ्यं दुग्धं शर्कराभिर्युतञ्च ॥ ११२३ ॥

रसायनसं., चि. सा , नि. र., यो. र., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मण्डूरभस्म समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सबकीबराबर शुद्धवछनाग मिलाकर अदरख, भंगरा, बिजोरा, तितली और निर्गुण्डीकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ चावलभर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर पह्लेकी हवाकरे और स्नानकरावे । भूख लगनेपर शक्करमिलाहुवा दूधदेवे ॥

२७० सन्निपातभैरवरसः (अष्टमः)

तालकं गन्धकं सूतं वत्सनाभं त्रिभिः समम् ।
शिलाञ्च टङ्कणञ्चैव सर्वेषां समहिङ्गुलम् ॥ ११२४ ॥
मर्दयेच्चित्रजम्बीररसैराद्रस्य च त्र्यहम् ।
गुटिका माषमात्रा स्यात्सन्निपातस्य भैरवः॥११२५॥
त्रिदोषोत्थमतीसारकफपाण्ड्वामयादिकान् ।
कुक्षिरोगमुदावर्तं सन्निपातं नियच्छति ॥ ११२६ ॥

रसायनसं., वा., र. क. यो., वै. चि., भै. र., र.मु., व. रा., सन्निपाते ।

टि०—भै. र , र मु , व रा , एषु शिलाञ्च टङ्कणञ्चैवेत्यस्य स्थाने दारुमूषाञ्च गरलमितिपाठ विपर्ययस्य योगान्तरे स्थापितः परन्तु तद्द्वयस्याऽधिकतयाऽत्रैव निक्षेप कृत्वा रसनिष्पादने न काऽपि क्षति प्रत्युत विशिष्टभैरवनैव सम्पत्स्यते सा चाऽभीष्टतमैवाऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, गन्धक और पारा १–१ भाग, शुद्ध बछनाग, मैनसिल और सुहागा ३–३ भाग, शुद्धशिंगरिफ १२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर चित्रक और जंभीरीकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-

पानकेसाथ देनेसे सन्निपात, त्रिदोषजअतिसार, कफरोग, पाण्डु, कुक्षिरोग, उदावर्त, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७० ॥

२७१ सन्निपातभैरवरसः (नवमः)

अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि भैरवं सन्निपातिनाम् ।
दरदं शुद्धसूतञ्च काञ्चनं लोहभस्मकम् ॥ ११२७ ॥
ताम्रभस्माऽभ्रकञ्चैव त्रपु सीसं तथैव च ।
मौक्तिकं विद्रुमं ताप्यं कङ्कुष्ठाले मनःशिला ॥ ११२८ ॥
हृद्धात्री चित्रकं व्योषं त्रिफलेन्द्रजरामठम् ।
सूतार्द्धममृतं शुद्धं गन्धकञ्च चतुर्गुणम् ॥ ११२९ ॥
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेदातपे खरे ।
व्योषाग्निशिग्रुसुरसात्रिफलाभृङ्गदन्तिजैः ॥ ११३० ॥
निशेऽश्वगन्धागायत्रीकुष्ठक्वाथैश्च सप्तधा ।
भावयेत्पञ्चपित्तैस्तु त्रिदोषभैरवो रसः ॥ ११३१ ॥
शृङ्गवेराऽग्निनीरेण गुञ्जा सैन्धवसंयुता ।
त्रयोदशसन्निपातान्कासश्वासापतानकान् ॥ ११३२ ॥
शूलाऽपस्मारसम्मोहतन्द्राऽऽध्मानवमिक्रिमीन् ।
वातश्लेष्मोद्भवात्रोगाञ्जयेत्सर्वान्सुदुस्तरान् ॥ ११३३ ॥
जलयोगादि चाहस्य युक्त्या कुर्याच्च पूर्ववत् ।
अहे गरलयोगेन सूच्यग्रेण प्रयोजयेत् ॥ ११३४ ॥

र. सं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और पारा, सुवर्ण, लोह, ताम्र, अभ्रक, वङ्ग, नाग, मोती, प्रवाल, सोनामाखी, मुर्दासंग, हरिताल, मैनसिल, अम्लोनियां, चित्रक, त्रिकुटु, त्रिफला, इन्द्रजव, भुनीहींग १-१ भाग, शुद्धवछनाग आधाभाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकुटु, चित्रक, सहिजन, तुलसी, त्रिफला, भंगरा, दन्तीमूल, हल्दी, असगन्ध, खैर, कुठ, इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७, और पांचोंपित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली सेंधेनमक और अदरखकेरसकेसाथ देनेसे १३ प्रकारकेसन्निपात, कास, श्वास, खींचतान, शूल, अपस्मार, बेहोशी, तन्द्रा, आध्मान, वमन, क्रिमि, वातश्लेष्मजरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसकेदेनेसे मूर्च्छा न जगे तो सर्पके विषमें मिलाकर सूचीकेअग्रभागसे मस्तकपर रक्तमेंयोगकरे और योग्यता देखकर जलकीधारादेवे ॥ २७१ ॥

२७२ सन्निपातभैरवरसः (दशमः)

हिङ्गुलस्य विशुद्धस्य सार्द्धतोलचतुष्टयम् ।
गन्धकस्य विषस्याऽपि प्रत्येकं तोलकद्वयम् ॥ ११३५ ॥
समाषकद्वयञ्चैव कनकात्तोलकत्रयम् ।
माषैकाधिकतोलैकं टङ्कणस्य तथैव च ॥ ११३६ ॥
सम्मर्द्य जम्बीररसे वटीश्छायाविशोषिताः ।
गुञ्जैकपरिमाणास्तु कारयेत्कुशलो भिषक् ॥ ११३७ ॥
एकान्तु भक्षयेत्तस्य गोलयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः ।
घोरे त्रिदोषे दातव्यः सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११३८ ॥

भै. र., र. सु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ ४॥ तोले, शुद्ध गन्धक और वछनाग २-२ तो., सुवर्णभस्म ३ तोले २ माशे, सुहागा १ तो. १ माशा लेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १-२ दिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे घोरसन्निपात नष्टहोताहै ॥ २७२ ॥

२७३ सन्निपातभैरवरसः (एकादशः)

तोलकांश्चतुरः सूतादष्टौ गन्धात्तथैव च ।
खल्वयेदेकतः कृत्वा जायते कज्जली यथा ॥ ११३९ ॥
मर्दयेत्कज्जलीं तां तु मुण्डीद्रावैस्ततः परम् ।
शुण्ठीद्रावैर्द्विधा भाव्य कज्जलीं शोषयेत्ततः ॥ ११४० ॥
चतस्रो भावना देया भृङ्गराजरसैस्तथा ।
तिलच्छदारसे द्रवैस्तद्वद्वास्तुकभावना ॥ ११४१ ॥
कृष्णाशिवाविडङ्गानि मरिचानि तथैव च ।
एतान्यर्धपलानि स्युः प्रत्येकं कल्पयेत्ततः ॥ ११४२ ॥
शुण्ठ्याः पलं तथा ताम्रान्मृतात्तद्वदभ्रकल्पयेत् ।
तोलमेकं विषं ग्राह्यं कर्षैकं कृष्णजीरकात् ॥ ११४३ ॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा मर्दयेत्कज्जलीयुतम् ।
भृङ्गराजस्य तोयेन कृत्स्नं कल्कीभवेद्यथा ॥ ११४४ ॥
स्निग्धभाण्डे गतं कल्कं ततस्तं विपचेद्भिषक् ।
मृदुपाको भवेद्यावत्तावत्पाकं प्रयोजयेत् ॥ ११४५ ॥
कार्या सोष्णस्य कल्कस्य वटी चणकसम्मिता ।
सन्निपाते त्रिदोषे च कुष्ठरोगे विशेषतः ॥ ११४६ ॥
वटिका भिषजा देया चित्रकार्द्रकसैन्धवैः ।
कुष्ठे त्रिभिः फलैर्देया वटिका रोगनाशिनी ॥ ११४७ ॥

र. मृ., सन्निपाते ।

भाषा—४ तोले शुद्ध पारे और ८ तोले गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर गोरखमुण्डी और सोंठकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे २-२ भावनाएं देकर सुखादे फिर भंगरा, हुरहुर और बथुएके स्वरसोंकी ४-४ भावनाएं देकर सुखाकर पीपल, हर्रे, विडङ्ग और मरिच२-२ कर्ष, सोंठ और ताम्रभस्म ४-४ कर्ष, शुद्धवछनाग और कालीजीरी १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे कल्कबनावे और चिकनेबर्तनमें रख बहुत मन्दआंचसे मृदुपाककरे। गोली बंधनेलायक होनेपर उतारकर चनेप्रमाणगोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली चित्रक तथा अदरखके रस और सैन्धव केसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै। कुष्ठमें त्रिफलाकेक्वाथकेसाथदेवे ॥ २७३ ॥

२७४ सन्निपातभैरवरसः (द्वादशः)

रसं विषं गन्धकञ्च हरितालं फलत्रयम् ।
जयपालं त्रिवृत्स्वर्णं ताम्रसीसाभ्रलोहकम् ॥ ११४८ ॥
अर्कक्षीरं लाङ्गली च स्वर्णक्षीरीजमेव च ।
रसैरासां सप्तकृत्वः प्रत्येकञ्च विमर्दयेत् ॥ ११४९ ॥
अर्कः श्वेताऽलम्बुषा च सूर्यावर्तश्च कारवी ।
काकजङ्घा शोणकश्च कुष्ठं व्योषं चिकद्रुतम् ॥ ११५० ॥

सूर्या मुनिश्चन्द्रकान्तो निर्गुण्डी रुद्रजा जटा ।
धुस्तूरदन्तिपिप्पल्यो दशाष्टाङ्गमिदं शुभम् ॥ ११५१ ॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं दत्वा तोयं चतुर्गुणम् ।
शिष्टैकगुणतोयेन भावनाविधिरिष्यते ॥ ११५२ ॥
भावनायां भावनायां शोषणं मुहुरिष्यते ।
ततश्च वटिकां कृत्वा भैरवाय बलिं ददेत् ॥ ११५३ ॥
रसोऽयं श्रीसन्निपातभैरवो ज्वरनाशनः ।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ११५४ ॥
सन्निपातज्वरं हन्ति जीर्णञ्च विषमं तथा ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थिकमपि ध्रुवम् ॥११५५॥
ज्वरञ्च जलदोषोत्थं सर्वदोषसमाकुलम् ।
भैरवस्य प्रसादेन जगदानन्ददायकः ॥ ११५६ ॥

भै. र, र सु, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक और हरिताल, त्रिफला, जमालगोटा, निसोत, सुवर्ण, ताम्र, सीसा, अभ्रक और लोह इनकीभस्में १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर आक्का-दूध, करिहारी, सत्यानाशी अथवा रेवनचीनी इनप्रत्येक-केद्रवोंसे ७–७ भावनाए देवे। फिर आक, बच, गोरखमुण्डी, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, कारवी (मराटी), काकजङ्घा, लाल-पुनर्नवा, कुठ, निकट्ट, काटी, इन्द्रायण, अगस्त्य, कहरवा, निर्गुण्डी, रुद्रजटा, धतूरा, दन्ती, पीपल १–१ भागलेकर जवकुटकर चौगुनेपानीमें क्वाथकर चतुर्थांशशेष रहनेपर छानकर इससे पूर्वरसको मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रख छोडे। फिर भैरवको बलिदेकर इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सर्वोपद्रवयुक्तसन्निपात, जीर्णज्वर, एकाहिकादि विषमज्वर, जलदोषजज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७४ ॥

२७५ सन्निपातभैरवरसः (त्रयोदशः)

टङ्कणं भर्जितं शुद्धं मरिचं रसकं समम् ।
टङ्कणार्द्धं विषं दत्त्वा गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥
प्रातः सायं सन्निपातज्वरं हन्ति न संशय. ॥ ११५७॥

र सि, सन्निपाते ।

भाषा—भुनासुहागा, मरिच, शुद्धखपरिया १–१ भाग, शुद्ध बछनाग आधाभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती सुबहशाम उचितानुपानकेसायदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २७५ ॥

२७६ सन्निपातभैरवरसः (चतुर्दश.)

भस्मीकृतं शुद्धसूतं पूर्वोक्तपरिपाटितः ।
पलमेकं रसः सः स्याच्छुद्धं बलिवसापलम् ॥११५८॥
पलन्तु दरदस्योक्तं शुद्धस्य तु विधानत. ।
खल्वे कृत्वोभयं मर्द्यं शुष्कमर्दनयोगत. ॥ ११५९ ॥
दिनत्रयं प्रमर्द्याथ ततस्त्रिकटुभावना ।
सप्तदत्त्वो मातुलोत्थे भृङ्गीनीरैश्च भावनाः ॥ ११६० ॥
विषस्य भावनाः सप्त दत्त्वा कल्कं समुद्धरेत् ।
संशुद्धं सम्पुटं प्राह्यमूर्द्धभाण्डे विलेपयेत् ॥ ११६१ ॥
व्योषधत्तूरविजयानीरैः कल्कीकृतं ततः ।
अधोभाण्डे विनिक्षिप्य वत्सनाभं विचूर्णितम् ११६२
पलमात्रं ततः कुर्यात्सम्पुटं सन्धिलेपतः ।
चुल्ल्यामुपरि चारोप्य वह्निं प्रज्वालयेच्छनैः ॥११६३॥
प्रहरद्वितयं यावद्यत्नेनुत्तारयेत्ततः ।
निर्भिद्य सम्पुटं पश्चात्तं गृह्णीयाद्रसेश्वरम् ॥ ११६४ ॥
सन्निपाते महाघोरे सर्वचैतन्यवर्जिते ।
ददीत सूतराजं तं मुद्गमानेन बुद्धिमान् ॥ ११६५ ॥
अथवा मधुना कृत्वा वटिकां मुद्गमात्रिकाम् ।
एकां ददीत मधुना सन्निपातेऽतिदारुणे ॥ ११६६ ॥
दाहश्चेदतिभूयिष्ठः सलिलं ढालयेत्ततः ।
बुभुक्षा चेत्प्रजायेत दध्यन्नं भोजयेद्भिषक् ॥ ११६७॥
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ।
प्रोक्तो रसः सन्निपातभैरवोऽतिमहाबलः ॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र देवीशास्त्रानुसारतः ॥ ११६८ ॥

रसाल, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—र स, भै र, र च, र क, र. सु, र. र कौ, एषु विशे-श्वरनाम्ना " दरद गन्धक सूत तुल्यांश मर्दयेद्द्रवे । अश्वत्थभैरव्यद्र पक्षा द्रसे कोल्कमूलजे ॥ निदिग्धिकारसे काकमाचिकाया रसे पुन । द्विगुञ्ज वा त्रिगुञ्ज वा गोक्षीरेण प्रदापयेत्॥ रात्रिज्वर निहन्त्याशु नाम्ना विशेश्वरो रस ॥ „ इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्यनैवान्तर्भाव सुकर । विशेषभावनानामनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति पाठटास्त्र महत्फलम् । र र कौ, र ▮ एतयोर्दरदस्थाने रसक दृश्यते रसरत्नकौमुद्यामनुपाने गोक्षीरस्थाने गोक्षुरो गृहीत । र स, रसायनस, र, दी, र. सु, यो. स, र म मा, एषु ग्रन्थेषु " सूत क्रमेण रसहिङ्गुलगन्धकानां भागा रसेन विजयाकनककच्छदानाम् । व्योषस्य सप्त पृथगेव विभावना स्यु शुष्क पिबेद्भवति सिद्धगणेश्वनामा ॥ उग्र ज्वर महणिकामपि धातुताप साम्र निराममतिसारमथो वमिश्च । श्वासञ्च कासमरुचिं त्वनुपानभेदाद-क्षोऽस्य वा विजयते मगधामधुभ्याम् ॥ " इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति तत्र च रसावतारे दरदगन्धकपारदा समान्भागान्गृहीत्वा सर्वसमां कङ्करोटिर्णी मिश्रय्य मिन्धुवारस्वरसे सप्त भावना दत्त्वा निष्पादित । रसपारिजाते प्रथमचरणस्थाने " सूत खर्परगन्धके शिखिभुजा नेत्रोन्मित भावयेदिति पाठ कृतोऽस्ति तत्र रसशब्देन खर्पर कल्पित, हिङ्गुलस्थाने सूतो नियोजित युक्तश्चैतत्प्रतिभाति । रोगाणामनुपानस्य चाकलनया योगे खर्परेणावश्य भवितव्यमिति । एतत्सर्वमपि रसालङ्कारीययोगे सम्मिश्रय्य सर्वा भावना अपि दत्त्वा एको रस सम्पादनीय ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक और शिंगरिफ १–१ पल लेकर ३ दिन शुष्कमर्दनकर त्रिकटु, बिजोरा, भंगरा और बछ-नागकेद्रवोंसे ७–७ भावनाए देकर एकभाण्डमें लेपकरदे। फिर एकपल बछनागके चूर्णको त्रिकटु, धतूरा और भांगके रसोंसे मर्दनकर कल्कबनाय दूसरेपात्रमें लेपकर दोनों भाण्डोंका डमरू-यन्त्रबनाय ६–७ कपडमिट्टीसे मुंहबन्दकर बछनागवाली हण्डीको चूल्हेपर रख दोपहरकी मन्द अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरकी हण्डीमेंसे रसको निकालकर मधुसे मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ अथवा उप-

योचितानुपानकेसाथ देनेसे अत्यन्त भयङ्कर सन्निपात निवृत्त होताहै । इसकेदेनेसे अत्यन्तदाह मालूमहो तो मस्तेपर जलकी-धारा देवे अत्यन्तभूखमालूमहोनेपर दहीभात खिलावे । यह कईवारका परीक्षितयोगहै ॥ २७६ ॥

२७७ सन्निपातभैरवरसः (पञ्चदशः)

सूतं गन्धमृताभ्रटङ्कणविषं द्वौ जीरकौ दीप्यकं, द्वौ क्षारौ लवणानि पञ्च मरिचं निर्गुण्डिकाजं पलम्॥ संयोज्यापि गुरूपदेशविधिना गुञ्जात्रयं सार्द्रकं, जीवत्येवहि सन्निपातबहलस्वेदामृतोऽपिज्वरी ११६९ ना. वि , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, और बछनाग, अभ्रकभस्म, दोनोंजीरे, अजमोद, दोनोंक्षार, पांचोंनमक, मरिच, निर्गुण्डी १–१ पललेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे शीतप्रस्वेदयुक्तभी सन्निपाती अच्छाहोजाताहै॥

२७८ सन्निपातभैरवरसः (षोडशः)

शुद्धं सूतं विषञ्चाभ्रं गन्धकं नागटङ्कणम् । वटक्षीरे दिनं मर्द्य दोलायन्त्रे दिनं पचेत् ॥ ११७० ॥ मत्स्यमाहिषमायूरपित्तैर्भाव्यं दिनत्रयम् । देयं हि माषमानञ्च कणाक्काथानुपानत. ॥ ११७१ ॥ तत्क्षणेन निहन्त्याशु रक्तष्ठीवमतिभीषणम् । प्रसिद्धः सन्निपाताख्यभैरवो रस उत्तमः ॥ ११७२ ॥

वै. चि , था , रक्तष्ठीविसन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा,गन्धक,बछनाग,अभ्रक और सीसाभस्म, सुहागा सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर वटकेदूधसे एकदिनमर्दनकर अदरखवगैरहमेनिपातहररसोंमें एकदिन दोलायन्त्रसे स्वेदनकर मछली, भैंसा और मोरके पित्तोंसे १–१ दिन मर्दन कर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पीपलके काथकेसाथदेनेसे रक्तष्ठीवीसन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥

२७९ सन्निपातवडवानलरसः

रसादष्टौ विषात्सप्त षट् षड्गन्धकतालयोः । पञ्चभागा दन्तिबीजानां पञ्चभागन्तु टङ्कणम् ॥११७३॥ चत्वारो धूर्तबीजस्य व्योषं भागत्रयं भवेत् । एतानि वह्निमूलस्य क्काथेन परिमर्दयेत् ॥ ११७४ ॥ आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुञ्जाद्वयं हितम् । वडवानलसञ्ज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ ११७५ ॥

र, च , र स , र क , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, बछनाग ७ भा., शुद्धगन्धक, हरिताल और जमालगोटा ६–६ भाग, सुनासुहागा ५ भा , शुद्धधतूरेकेबीज ४ भा , त्रिकटु ३ भा. लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रकमूलके क्काथसे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २७९ ॥

२८० सन्निपातविध्वंसनरसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं तालकं माक्षिकन्तथा । मृतताम्राभ्रकं बोलं विषं धुस्तूरबीजकम् ॥ ११७६ ॥ त्रिक्षारं रविपत्रञ्च हिङ्गु पाठा पटोलकम् । वन्ध्या भृङ्गत्रयं शुण्ठी कन्दं लाङ्गलिकं समम्॥११७७॥ सिन्धुवारद्रवैः सर्वं मर्द्यं जम्बीरजैरपि । दिनैकं वटिका कार्या चणकाभाञ्च भक्षयेत् ॥ ११७८॥ अत्युग्रं सन्निपातञ्च सर्वोपद्रवसंयुतम् । निहन्ति चानुपानेन दशमूलार्कजेन वा ॥ ११७९ ॥ कषायेण न सन्देहः पथ्यं दध्योदनं हितम् । रसो विध्वंसनो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ॥११८० ॥

र र.,र सु ,र क , र.को , र का , र.क यो., सन्निपाते ।

टि०—"प्रनिपादितमार्गेण पात स्वेदञ्च जारणम् ।
हेम्नो बन्धेश्व सूतेन्द्रे कृत्वा पश्चात्समाहरेत् ॥
हरिताल पलञ्चैकमसृन पलमात्रकम् ।
वन्ध्याकन्दपल मोक्त हलिनीकन्दज पलम् ॥
रक्षात्रय पल प्राह्य चित्र शुण्ठी च मागधी ।
पाठाधवल्वाह्लीक पटोलञ्च पलपलम् ॥
सर्वं समान व्योम स्याद्धरिताल मोक्तयुक्तित ।
खल्वे दत्त्वा शुष्कमर्दं दिनमेकं समाचरेत् ॥
पक्वजम्बीरतोयेन पक्वजम्बूद्रवेन वा ।
फलपूररसे वापि मर्दयित्वा दिनाष्टकम् ॥
तेन कल्केन कुर्वीत वटीश्चणकसम्मिता ।
अथवा व्योमन भस्म पलमात्र समाहरेत् ॥
मर्दयेदुक्तरीत्या वै सर्वेनौषधमण्डलम् ।
रचयेद्वटिका प्राग्वच्छायाशुष्काश्च ता विरेत् ॥
पूजयित्वा महादेव भैरव योगिनीयुतम् ।
विप्रान् सम्पूज्य विधिवत्सन्निपातेऽति दारुणे ॥
वटीमेकां प्रयुञ्जीत भिषग् व्याधिविशेषवित् ।
रसेन्द्रसेवामात्रेण सन्निपातादिमुच्यते ॥
स्वेदौत्कट्य तथा दाह सद्यो वारयति स्फुटम् ।
दष्ट्राबन्ध क्षणादेव निवारयति पारद ॥
सर्वेषु वातरोगेषु श्लेष्मजेषु प्रयोजयेत् ।
अग्निमान्द्ये चोदरजे विकारे दीपना रस ॥
ऐकाहिक द्व्याहिक वा ज्वर नाशयते रस ।
पथ्य प्रागुदित कुर्यादुपचारादि पूर्ववत् ॥
सम्प्रोक्तोऽय सन्निपातविध्वंसनरसेश्वर ।
सर्वज्वरहरश्चैव वातश्लेष्मनिबर्हण ॥

अय पाठो रसालङ्कारे निहितोऽस्ति परन्तु तत्र न रसान्तरता, मूल द्रव्याणामेकत्वात्। पारदसंस्कारागान्तु सर्वत्रैवात्यावश्यकता भवति वै यथाशक्य सर्वत्रैवाऽनुष्ठेया , तल्लेखनमात्रेण रसान्तरताकथनऽप्येव स्यात्। धवलपिप्पलीचित्रकाणामाधिक्य प्रतीयते परन्तु तेषामप्यत्रैवाऽधिकतया संयोग विषय एक एव रस सम्पादनीय इति विद्वत्सु विज्ञप्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामाखी, ताम्र और अभ्रकभस्म, मुरमकी, शुद्ध बछनाग और धतूरेकेबीज, सुहागा, सज्जी, यवक्षार, आकके पत्ते, भुनी हींग, पाढ़,

परवल, बाह्मखेरसेकाकन्द, स्याह-सपेद और पीला भंगरा, सोंठ, करिहारी सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सभालू और जंभीरीके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दशमूल अथवा आकफीजड़के क्षायकेसाथ देनेसे समस्तोपद्रवयुक्त घोरसन्निपातको यह नष्टकरताहै। दोष शान्तहोनेपर अत्यन्तभूख लगनेपर दहीभात देना ॥ २८० ॥

२८१ सन्निपातसूर्यरसः (सन्निपातभैरवः)

रसेन गन्धं द्विगुणं गृहीत्वा
तत्पादभागं रवितारहेम।
भस्मीकृतं योजय मर्दयेत्त-
द्दिनत्रयं वह्निरसेन घर्मे ॥ ११८१ ॥
विषञ्च दत्त्वाऽत्र फलाप्रमाण-
मजादिपित्तैः परिभावयेच्च।
वल्लद्वयञ्चास्य ददीत वह्नि-
कट्वत्रयाऽऽर्द्रस्य रसप्रयुक्तम् ॥ ११८२ ॥
तैलेन वाऽभ्यज्य वपुश्च कुर्या-
त्स्नानञ्च तोयेन सुशीतलेन।
यावद्भवेद्‌सहमस्य शीतं
मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥ ११८३ ॥
पथ्ये यदीच्छा परिजायतेऽस्य
मरीचखण्डं दधिभक्तकं वा।
स्वल्पं ददीतार्द्रमरीचभागं
दिनाष्टकं स्नानविधिञ्च कुर्यात् ॥
त्रिदोषजेष्वेव सदा नियोज्यो
ज्वरेषु वै भैरवनामधेयः ॥ ११८४ ॥

॥ सं., र. क., रसायनस , र च , र. चि , वृ. यो. त., र. सु , र दी., यो. म., र का., र सि., र. को., भै. र , र मू., सन्निपाते।

टि०—रसचण्डांशौ द्वितीयस्थाने सन्निपातभैरव इति नाम। रस दीपिकायां प्राणिप्रदा इति नाम। भैषज्यरत्नावल्यां इमरजमुन्दरस्य च द्वितीयस्थाने तारस्थाने ताल नियोज्य रसेश्वर इति नाम स्थापितम्। रसामृते ॥ रसेन्द्रराज नामरस , सन्निपातानलेति।

भाषा—शुद्ध पारा ४ भाग, गन्धक ८ भाग , ताम्र, रजत और सुवर्णभस्म १-१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकेरससे ३ दिन धूपमें बैठकर घोटे। फिर इसमें १६ वा हिस्सा शुद्धवत्सनागमिलाय बकराबगैरह पाचोंपित्तोंसे १-१ भावना देकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली चित्रक, त्रिकटु और अदरखकेरसकेसाथ देनेसे त्रिदोषज सन्निपात नष्टहोतेहैं। तैलसे मालिशकराके मस्तेपर ठढेजलकी धारादेवे जब शीत असह्य होजाय और मलमूत्रका त्यागहोकर शरीरकांपनेलगे तब बन्दकरे। अत्यन्त भूखलगनेपर मरिच डालकर शक्कर अथवा दहीभात खिलावे। मिर्च और अदरख थोड़ादेवे। दोषशान्त होनेपरभी दाह शान्त न हो तो ८ दिनतक शीतजलसे स्नानकरावे॥

२८२ सन्निपातहररसः (प्रथमः)

रसाभ्रम्लेच्छताप्यानां शिलागन्धकयोः समम्।
भृङ्गधूर्तरसैः पिष्ट्वा पञ्चघस्रं दशोपलैः ॥ ११८५ ॥
पुटेदेतद्द्विभागेनार्काहौ लौहाद्यतुर्बलैः।
खल्वे पिष्ट्वा दिनद्वन्द्वं पूर्ववल्लघु सम्पुटेत् ॥ ११८६ ॥
अस्य षोडश भागाः स्युर्नागांशो मर्दयेद्दिनम्।
वल्लमात्रप्रयुक्तोऽयं सन्निपातं नवज्वरम् ॥ ११८७ ॥
जयेदार्द्रकतोयेन द्राक्षाखण्डेन पैत्तिकम्।
क्षयपाण्डुविकासादीन् निजयोगैः सकामलान्॥११८८
शोथं गुडकणायुक्तः सभगन्दरमुद्धतम्।
व्योषक्षौद्रेण चार्शांसि ग्रहणीं गुदजां व्यथाम् ११८९
नागवल्ल्या दलरसैः समं मूत्रे जलोदरम्।
गुल्मप्लीहोदरे वातजठरं त्रिफलोदकैः ॥ ११९० ॥
व्योषेण सर्वकुष्ठानि विसर्पञ्च पयोयुतः।
स्युतैलेन शूलानि गुडूचीसत्त्वसंयुतः ॥ ११९१ ॥
प्रमेहांश्छिन्नतोयेन धनुर्मुखादिकानिलान्।
सन्निपातहरश्चायं रसः सर्वत्र पूजितः ॥ ११९२ ॥

र. क, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, शिंगरिफ, सोनामाखी, मैनसिल और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा और धतूरेके रसोंसे ५-५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १० कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे द्विगुण ताम्र और लोहभस्म तथा चतुर्गुणगन्धक डालकर पूर्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट में बन्दकर १० कण्डोंकी आचदे। फिर इसमें १६ वां हिस्सा नागभस्म मिलाकर १-१ दिन पूर्वरसोंसे मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे सन्निपात और नवज्वर नष्टहोताहै। द्राक्ष और खाडकेसाथ पित्तज्वरको, तथा क्षय, पाण्डु, काश, कामला इनको अपने २ अनुपानोंसे, भगन्दर और शोथको गुड़ और पीपलसे, अर्श, ग्रहणी और गुदव्यथाको त्रिकटु और मधुकेसाथ देनेसे यह नष्टकरताहै। जलोदरको पान अथवा मूत्रोंसे, गुल्म, प्लीहा, पेटकावायु, मन्दाग्नि इनको त्रिफलाकेकाढ़ेसे, समस्तकुष्ठोंको त्रिकटुसे, विसर्पकोदूधसे, शूलोंको एरण्डीकेतैलसे, प्रमेहोंको गिलोयसत्त्वसे और धनुर्वातादि भयङ्करवातरोगोंको वह्निअनके रससे यह नष्टकरताहै ॥ २८२ ॥

२८३ सन्निपातहररसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं टङ्कं सोषणं गजपिप्पली।
व्योषञ्च धुस्तूरजलैः पिष्टं गुञ्जाद्वयं द्रुतम् ॥
सन्निपातं निहन्त्यर्ककषायैर्व्योषचूर्णितैः ॥ ११९३ ॥

र. स, र. क , सन्निपाते। र. क. धुस्तूरजैरित्यस्य स्थाने धुस्तूरदलैरिति पाठः।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुहागा, मरिच, गजपीपल त्रिकटु सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेरससे एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुयुक्त आककीजड़केकाढ़ेकेसाथदेनेसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ सन्निपातहररसः (सन्निपातान्तकः) (तृतीयः)

शुद्धसूतसमोगन्धो दरदं शुद्धखर्परम्।
रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राम्लवेतसौ ॥ ११९४ ॥
जम्बीरोत्थैर्दिनं मर्द्य भूधरे पाचयेल्लघु।
हिङ्गु त्रिकटु कर्पूरं पञ्चैतन्मिलितं समम् ॥ ११९५ ॥
सर्वस्यैतत्समं चूर्णमार्द्रकस्य रसैः सह।
महाराष्ट्र्याश्च निर्गुण्ड्या जयन्त्याः पिप्पलीद्रवैः॥
भृङ्गराजद्रवैः सप्त प्रत्येकं भावनाः पृथक्।
दातव्यश्च चतुर्गुञ्जमार्द्रकस्य द्रवैः सह ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातहरो रसः ॥ ११९७॥

र. क., र. सं., रसायनसं., र. को., र. मु., सु. प्र., सन्निपाते।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमं विहाय सर्वेषु ग्रन्थेषु सन्निपातान्तकरस इति नाम। कुत्रचिद्भावनायां जम्बीरस्थाने भृङ्गो नियोजितः। र. मु., र. को., र. (भा.), नि.र.,र.का.,र.क यो.,यो.म.,रस. स., एषु "रसमरमसम गन्ध ताम्रभस्म तयो. समम्। ताम्रांश खर्पर योज्य खर्पराद्य हिङ्गुलम्॥", इत्याकारेण पाठ विन्यस्य सन्निपातानल इतिनाम स्थापित तत्र हिङ्गुलखर्परयो द्वैगुण्य, भावनायाञ्च जयन्तीपिप्पलीभृङ्गस्थाने करवीरः केवलोनियोजित इति विशेषोऽस्ति परमत्र हिङ्गुलखर्परे द्विगुणे नियुज्य पाठः सम्पादनीयः। वस्तुतस्तु अस्मिन्नेव पाठे रसस्य द्विगुणं देय मृतताम्राम्लवेतसमितिपाठे स्वीकृते भवतिसर्वेषांमन्वय इति।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ और खपरिया १-१ भाग, ताम्रभस्म और अम्लवेत २-२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर भूधरपुटकी आंचदे। स्वांगशीतलहोनेपर निकालकर भुनीहींग, त्रिकटु, शुद्धकपूर सब समभागलेकर पूर्वरसकी बराबर मिलाय अदरख, मराठी, निर्गुण्डी, जैंती, पीपल और भंगरेके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ४-४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै २८४

२८५ सन्निपाताङ्कुशरसः (प्रथमः)

सूतं तुल्यविषं दिनत्रयमितं जम्भाम्भसा मर्दितं,
प्रोत्थाप्यातपगं ततो दिनहतं हेमाम्बुभिः स्वेदितम्।
तं सूतं समहिङ्गुलं समबलिं तुल्यालचेतःशिलाः,
ताम्रन्तुल्यविषं विमर्द्यसुजयानीरेण गाढं दिनम् ११९८
हेमार्द्रालिरसैः सुभाव्य मुनिशः पित्तैः पृथक् पञ्चभिः,
सूतात्तुल्यविषेण धूपितमिदं स्यात्सन्निपाताङ्कुशः।
गुञ्जार्द्धार्द्धमितं सहार्द्रकरसं पीत्वाम्बुयोगं भजेद्दध्यन्नं ससितं समूलफलं सत्तालवृन्तानिलम् ११९९
घश्रयश्चललोचनाञ्चललसत्कन्दर्पदर्पाङ्गना-,
प्रेमालिङ्गनमिन्दुचन्दनभरं मालाः सुपुष्पोज्ज्वलाः।
जीर्णामं विषमं ज्वरं ग्रहणिकां पाण्डुक्षयांश्चाहरे-,
द्गुल्मप्लीहजलोदरानिलशिरःशूलानयं स्वौषधैः १२००

र. शं., र. मु., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग समभागलेकर जंभीरीके रससे मर्दनकर टिकड़ी बनाय डमरूयन्त्रसे पारेको उड़ाकर एकदिन धतूरेकेरससे स्वेदनकर शुद्ध शिंगरिफ, गन्धक, हरिताल, मैनसिल और बछनाग, ताम्रभस्म बराबर २ मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर भांगकेस्वरससे एकदिन मर्दनकरे। फिर धतूरा, अदरख और भंगरेकेरसोंसे ७ दिन मर्दनकर पांचोंपित्तोंकी १-१ भावनादेकर हंडीकेपेंदेमें लेपकर समभागबछनागकाचूर्ण हंडीमें बिछाय दोनोंका डमरूयन्त्रबनाकर यहांतक आंचदेवे कि बछनाग सब जलजाय। स्वांगशीतलहोनेपर निकालकर २-२ चावलभरकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरस अथवा अपने अपने अनुपानोंकेसाथदेकर मस्तेपर ठंडेपानीकीधारादेनेसे जीर्ण, आम तथा विषमज्वर, ग्रहणी, पाण्डु, क्षय, गुल्म, प्लीहा, जलोदर वातव्याधि, शिरःशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८५ ॥

२८६ सन्निपाताङ्कुशरसः (द्वितीयः)

म्लेच्छं ताम्रं विषं पिष्टं भावयेत्पञ्चमायुभिः।
गुञ्जा तस्याम्बुना हन्ति सन्निपातं नवं ज्वरम् ॥
अपि सर्वान्गदान्हन्याद्ग्रहणीगदमुल्बणम् ॥ १२०१ ॥

टो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, ताम्रभस्म और बछनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पांचोंपित्तोंसे १-१ भावनादेकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जल अथवा उचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपात, नवज्वर, ग्रहणीप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २८६ ॥

२८७ सन्निपाताञ्जनम्

निस्त्वग्जेपालजं बीजं दशनिष्कं प्रचूर्णयेत्।
मरिचं पिप्पलीं सूतं प्रतिनिष्कं विमिश्रयेत् ॥१२०२॥
भाव्यं जम्बीरजैर्द्रावैः ससाहं तत्प्रयत्नतः।
सन्निपातं निहन्त्याशु अञ्जने यःशिवः स्मृतः॥१२०३॥

र. र. स., भै. सा., र. प्र. सन्निपाते।

टि०—र. स., रसायनसं., यो. र., एषु रसायनभैरवनाम्ना सर्वोऽप्ययमञ्जनप्रयोगो ऽस्ति यथा—"वचाऽमृताब्योषमयूकमारस्दारु-सिन्धूद्भवद्वयहत्याः। फल समुद्रस्य रसोन कल्कं ध्मात दिनासायुग्मध्यदेशे॥ अपस्मृतिश्चेष्मरुद्धिरोत्क्र प्रलापतन्द्राभ्रममाद्यनिद्रान्। समन्निपातान् श्रुतिकाचमन्न सर्वानस हन्ति हलीमकच। रसायन भैरवनामधेय ज्ञान विचारास्करि विट्ठलेन॥" इत्यस्यापि नाम्ने प्रयोग. कल्पीयः। अयमधिकचमत्कारी प्रयोगोऽस्ति।

भाषा—जमालगोटेकी गिरी २॥ कर्ष, मरिच, पीपल और पारा ४-४ मासे लेकर एकदिन खूबमर्दनकर ७ दिन जंभीरीकेरससे घोटकर रखछोड़े। जंभीरीकेरसकेसाथ इसका अञ्जनकरनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं ॥ २८७ ॥

२८८ सन्निपातान्तकरसः

मृतं कान्ताभ्रवैक्रान्तं ताप्यं तालं समं समम् ।
मृत्कीटश्च रसो मर्द्य अभयानरमूत्रतः ॥ १२०४ ॥
राजवृक्षफलव्योपकूष्माण्डरसमर्दितः ।
अभिन्यासज्वरं हन्ति सक्षौद्रो माषतुल्यकः ॥१२०५॥

रसायनसं., र. को , र. का , सु. प्र , चि. र. भ , सन्निपाते ।

टि०—कुत्रचित् "मृत्कीटश्चरसो मर्द्य" इत्यस्यस्थाने "मूर्च्छितश्च रसो मर्द्य" इतिपाठो दृश्यते ।

भाषा—कान्त, अभ्रक और वैक्रान्तभस्म, शुद्धसोनामाखी, हरिताल, केंचुए और पारा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर नरमूत्र और हर्रे, अमिलतासकागूदा, त्रिकटु, सफेदकोंहळा इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देनेसे अभिन्यासज्वर नष्टहोताहै ॥ २८८ ॥

२८९ सप्तविंशकगुग्गुलुः

क्षारद्वयं त्रिकटुकं त्रिफलाहरिद्रा-
युग्दारुमुस्तलवणत्रयतुम्बुरूणि ।
शुण्ठ्यग्निग्रन्थिकटुतासनचव्यकुष्ठ-
माक्षीकपौष्करविडङ्गविषायुतानि ॥ १२०६ ॥
यावन्त्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि
तावत्प्रमाणमितगुग्गुलुयोजितानि ।
कृत्वा घृतेन गुटिका मनुजैः प्रयोज्या
पीतानुदुग्धजलकाञ्जिकमुद्गयूषा ॥ १२०७ ॥
पाण्ड्वामयं क्षयमपस्मृतिमूर्ध्ववात-
मुन्मादमामपवनं श्वयथुं प्रमेहम् ।
हृत्पृष्ठकोष्ठकटिवङ्क्षणकुक्षिकक्षा-
शूलानि नाशयति कुष्ठकिलासरोगान् ॥१२०८॥

चि. क , ग. नि , कुष्ठे । गदनिग्रहे क्षारद्वयस्याऽभावो दृश्यते ।

भाषा—सज्जी, सुहागा, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दारुहल्दी, नागरमोथा, तीनोंनमक, तुम्बुल, इलायची, चित्रक, पिपलामूल, भिलावा, चव्य, कुठ, सोनामाखी, पोहकरमूल, विडङ्ग, अतीस ये सब समभाग और इन सबकीबरावर गजपीपल लेकर बारीकचूर्णकर सबकीबरावर शुद्धगूगलको घृतके योगसे कूटकर गूगलकाद्रववनाय धीरे २ समस्तचूर्णको मिलादे और ३–३ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली जल, दूध, काञ्जी और मूंगकेयूषप्रभृति रोगोचितानुपानोंकेसाथ देनेसे पाण्डु, क्षय, अपस्मार, ऊर्ध्ववात, उन्माद, आम, वातविकार, शोथ, प्रमेह, हृदय, पीठ, कोष्ठ, कटि, वङ्क्षण, कुक्षि, काख इनकेशूल, [illegible] और श्वित्रको यह नष्टकरताहै ॥ २८९ ॥

२९० सप्ताङ्गलोहम्

कनकताप्यरसाम्बुदगन्धक-
द्युमणिलोहरजः सममात्रकम् ।
त्रिफलया समया मधुसर्पिषा
जयति लीढमशेषमथामयम् ॥ १२०९ ॥

लो. प. सर्वरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, सोनामाखी, पारा, अभ्रक, इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, ताम्र और लोहभस्म सब समभाग, इनसबकी बराबर त्रिफला मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २९० ॥

२९१ सप्ताभ्रकम्

वरावरीवारिदवारिवीरा-
रजःसमस्तेनसमांशमभ्रम् ।
क्षौद्राज्यलीढं युवतीसहस्र-
लीलासहत्वं कुरुते नराणाम् ॥ १२१० ॥

लो. प , वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिफला, शतावर, नागरमोथा, सुगन्धवाला, खस, सब समभागलेकर सबकीबरावर अभ्रकभस्ममिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथ सेवनकरनेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ सम्भोग करनेकीशक्तिको बढाताहै ॥ २९१ ॥

२९२ सप्तामृतरसः (प्रथमः)

मृतसूताभ्रकं तुल्यं मृतलौहं शिलाजतु ।
गुग्गुलुश्च शिलाताप्यं समांशमधुना लिहेत् ॥
मासमात्रप्रयोगेण मुखरोगं विनाशयेत् ॥ १२११ ॥

र र , मुखरोगे ।

भाषा—पारा, अभ्रक और लोहभस्म, शिलाजीत, गूगल, शुद्धमैनसिल तथा सोनामाखी सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकीबरावर मधु मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ४–४ रत्ती खानेसे एकमहीनेमें तमाम मुखरोग निवृत्तहोतेहै ॥ २९२ ॥

२९३ सप्तामृतरसः (द्वितीयः)

रसकनकवज्रतीक्ष्णं शिलाजतुम्लेच्छसंज्ञकं गगनम् ।
सममात्रं कटुकत्रयत्रुटिदलजातीफलं लवङ्गञ्च १२१२
कङ्कोलं त्रिफला तद्युगभागं पूर्वभागतश्चूर्णम् ।
माषयुगं मधुसहितं भक्ष्यं क्षयशोषकासहरम् ॥१२१३॥

यो म., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वज्र, फोलाद इनकीभस्में, शिलाजीत, शिंगरफ और अभ्रकभस्म १–१ भाग लेकर त्रिकटु, इलायची, जायफल, लौंग, शीतलचीनी, त्रिफला सब समभागकाचूर्ण १४ भाग और मधु सबकी बराबर मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ माशे प्रतिदिनसेवनकरनेसे क्षय, शोष और कासको यह निवृत्तकरताहै ॥ २९३ ॥

२९४ सप्तामृतलोहम् (प्रथमम्)

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजः समं लिहन् ।
मधुसर्पिर्युतं सम्यग्गव्यं क्षीरं पिबेदनु ॥ १२१४ ॥

छर्दि सतिमिरां शूलमम्लपित्तं ज्वरं क्लमम् ।
आनाहं मूत्रसङ्गञ्च शोथञ्चैव निहन्ति सः ॥ १२१५ ॥

च द , भै. र., र. सं., र. सि., ध , नि. र., रसायनसं., वृ यो. त., दो., र. मु , र. क , र. चि , र. का., र. र., वै र., शूलेचक्षूरोगेच।

टि०—र. र. सर्वचूर्णसमलोहमिति नाम स्थापितम् । र. मु , र. सं. एतयो द्वितीयस्थाने पद्यमधिकं प्रक्षिप्य घृतमधुनो नाम निष्कास्य तिमिरहरलोहमिति नाम स्थापितम्, अत स एव प्रयोगो ज्ञातव्य. अनुपानमपि तदेव बोध्यम् । भैषज्यरत्नावल्यादौ फलभागेऽतिशयिन प्रलपिनमतस्तत्परित्यक्तमिति सुधीभिर्विभावनीयम् ॥

भाषा—त्रिफला, लोहभस्म, मुलहठी सब समभागमिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ लेकर गायकादूध पीनेसे वमन, तिमिर, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, ग्लानि, आनाह, मूत्राघात और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥२९४॥

२९५ सप्तामृतलोहम् (द्वितीयम्)

त्रिफला लोहचूर्णञ्च पटोली मधुयष्टिका ।
सर्वमेकांशतो रुद्रभागाः स्युस्तवराजतः ॥
सर्पिषा भक्षिते यान्ति तस्मिन्नक्षिरुजोऽखिलाः१२१६

द्वितो०, नेत्ररोगे ।

भाषा—त्रिफला, लोहभस्म, परवल, मुलहठी सब १–१ भाग, वंसलोचन ११ भाग लेकर वारीकचूर्णकर वंसलोचनको ४–५ दिन अलग घुटवाकर अन्यवस्तुओंके वारीकचूर्णमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथ लेनेसे नेत्रोंके समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ २९५ ॥

२९६ सप्तायसम्

सुरभिभास्करलोहरसाभ्रकाः
सजतु हेमसमुत्थरजः समम् ।
वरुणकादिगणत्रिफलाजल-
स्नपितमातपशुष्कमनेकधा ॥ १२१७ ॥
दलितमाज्यमधुप्लुतिमागतं
हरति यक्ष्मगदं सपरिग्रहम् ।
श्वसनशोथहृदामयपाण्डुतां
कसनमेहमय ग्रहणीगदम् ॥ १२१८ ॥

लो. प , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धगन्धक, और पारा, ताम्र, लोह, अभ्रक, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्धशिलाजीत सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वरुणादिगण और त्रिफलाके क्वाथोंसे धूपमें ३–३ अथवा ७–७ भावनाएं देकर वरावरके मधुमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे उपद्रवसहित राजयक्ष्म, श्वास, शोथ, हृद्रोग, पाण्डु, कास, प्रमेह, ग्रहणी इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ २९६ ॥

२९७ समरसुन्दरी गुटिका (समरसुन्दरी)

वज्रहेमाभ्रकं ताप्यं कान्तं सूतं समंसमम् ।
मर्द्यं जम्बीरजैर्द्रावैर्दिनं खल्वे तत. पुनः ॥ १२१९ ॥
ब्रह्मवृक्षस्य बीजानि कार्पासास्थीनि राजिका ।
वन्ध्या च यवचिञ्ची च पिष्ट्वा तन्मध्यगं कुरु ॥१२२०॥
पूर्ववन्मर्दितं गोलं लघुसप्तपुटैः पचेत् ।
ततो गजपुटे दद्यान्मूषां रुद्ध्वा धमेद्धठात् ॥ १२२१ ॥
तद्गोलं धारयेद्वक्त्रे शस्त्रस्तम्भकरं भवेत् ।
हन्ति रोगं जरां मृत्युं गुटिका समरसुन्दरी ॥१२२२॥
शस्त्रस्तम्भकरे गोले कुम्भकर्णं स्मरेद्यदि ।
आयातं सम्मुखं शत्रुं समोहं स निवारयेत् ॥१२२३॥

ॐ अपयति स्वाहा. अनेन मन्त्रेणाष्टोत्तरसहस्रं जपेत्सिद्धि ।

र. चि., रसायने ।

भाषा—हीरा, सुवर्ण, अभ्रक, सोनामाखी, कान्त और पारा समभागलेकर जमीरीकेरससे एक दिन मर्दनकर पलाशकेबीज, कपासकीमज्जा, राई, बांझखेखसेकाकन्द, तितली सब समभाग लेकर १ दिन जंभीरीकेरसमें अच्छीतरहपीसकर गोलाबनाय इसके बीचमें पूर्वरसको रख शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटसे आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिरसे मर्दनकर पूर्ववत् आचदे । ऐसे ७ लघुपुटदेनेकेवाद एक गजपुटको आचदेकर हठ धमनकरावे तो इसकी गोली तैयारहोगी । इसको मुखमें रखनेसे शस्त्रोंका स्तम्भनहोताहै । रोग, बुढापा, मृत्यु इनसबका नाश होताहै । सामनेसे शत्रुको आताहुआ देखकर कुम्भकर्णका स्मरण करनेसे विक्षिप्तहोकर शत्रु निवृत्तहोजाताहै । " ॐ अपयति स्वाहा " इसमन्त्रका अष्टोत्तरसहस्र जपकरनेसे इसकी सिद्धिहोतीहै

२९८ समशर्करलोहम् (प्रथमम्)

लोहाद्द्विगुणं क्षीरं सर्पिर्द्विगुणं समे सितामधुनी ।
पादं विडङ्गसारं तद्वत् त्रुटिवंशजं पचेल्लोहम् १२२४
त्रिकटु वराङ्गं कनकं धात्री यष्ट्यम्बु चार्धभागञ्च ।
उग्रं शोणितपित्तं समूत्रकृच्छ्रं क्षतं क्षयं कासम् ॥
कृच्छ्राश्मरीञ्चनियमाज्जयति वरं खण्डखाद्यसमवीर्यम्

यो. म , अश्मर्यधिकारे ।

भाषा—लोहभस्म ४ तोले, दूध ८ तोले, घृत, शक्कर और मधु २४–२४ तो०, विडङ्गतण्डुल, इलायची और वंसलोचन १–१ तोला लेकर वारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाकर पाककरे । चाशनी तैयारहोनेपर नीचे उतारकर त्रिकटु, तज, सुवर्णभस्म, आवले, मुलहठी और खस २–२ तोले मिलाकर रखछोडे । ७ अथवा १४ दिन वीतजानेपर ३–३ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे अत्यन्तवढाहुआ रक्तपित्त, मूत्र कृच्छ्र, उर क्षत, क्षय, कास, पथरी, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

२९९ समशर्करलोहम् (द्वितीयम्)

लवङ्गं कट्फलं कुष्ठं यमानी त्र्यूषणन्तथा ।
चित्रकं पिप्पलीमूलं वासकं कण्टकारिका ॥ १२२६ ॥
चव्यं कर्कटशृङ्गी च चातुर्जातं हरीतकी ।
शटी कङ्कोलकं मुस्तं लोहमभ्रं यवाग्रजम् ॥ १२२७ ॥
सर्वं प्रतिसमं चूर्णं तावच्छर्करयाऽन्वितम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं स्थापयेत्स्निग्धभाजने ॥ १२२८ ॥

समशर्करकं लोहं चूर्णं वर्णगुणप्रदम् ।
निहन्ति सर्वजं कासं वातश्लेष्मसमुद्भवम् ॥ १२२९ ॥
क्षयकासं रक्तपित्तं श्वासमाशु विनाशयेत् ।
क्षीणस्य पुष्टिजननं बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥ १२३० ॥

वै. क., भै. र., कासे ।

भाषा—लौंग, कायफल, सुंठ, अजवाइन, त्रिकटु, चित्रकमूल, पिपलामूल, अड्सा, भटकटैया, चव्य, काकड़ासींगी, चातुर्जात, हरें, कपूर, शीतलचीनी, नागरमोथा, लोह और अभ्रकभस्म, यवक्षार सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर बराबरकी शक्करकी चाशनीमें मिलाय चिकनेबर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके कास, क्षय, रक्तपित्त, श्वास, बल—वर्णाग्निह्रास, इनसबको नष्टकर आदमीको पुष्टकरताहै ॥ २९९ ॥

३०० समशर्करलोहम् (तृतीयम्)

लोहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम् ।
चूर्णं पादन्तु वैडङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥ १२३१ ॥
ताम्रपात्रे दृढे पक्त्वा स्थापयेद्धृतभाजने ।
मापकादिक्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ १२३२ ॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम् ।
रक्तपित्तं जयेत्तीव्रमम्लपित्तं क्षतं क्षयम् ॥
मद्दष्टकान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥ १२३३ ॥

र. सं., भै र., र च., र. र., ध., र सु., र. क., र. का., रक्तपित्ते ।

भाषा—लोहभस्मसे चौगुना दूध और दूना घी, चतुर्थांश विडङ्गतण्डुल, शक्कर और मधु लोहकेबराबर लेकर तांबेकी कड़ाहीमें मन्दाग्निसे पकावे । चाशनी तैयार होनेपर उतारकर रखले । ६—७ दिन बीतनेपर १—१ माशेसे शुरूकर जहांतक अनुकूलहोसके उतनीमात्रा बढावे । इसपर नारियलकाजलवगैरह जो अनुकूलपड़े वह अनुपानमें देवे । इससे बढाहुआ रक्तपित्त, अम्लपित्त, उर क्षत, क्षय ये सब नष्टहोकर आयुबढतीहै ॥ ३०० ॥

३०१ समीरगजकेसरीरसः

नवाहिफेनं कुचिलं मयानि मरिचानि च ।
समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च ॥ १२३४ ॥
देयानि प्रातरेतानि पुनस्ताम्बूलचर्वणम् ।
कुब्जे च खञ्जवाते च सर्वजे गृध्रसीगदे ॥ १२३५ ॥
अपबाहौ प्रयोक्तव्यः शोपे कम्पेऽपतानके ।
विसूच्यामरुचौ देयोऽपस्मारे च विशेषतः ॥ १२३६ ॥

र. कौ., र चं., वै र., र सु., नि र., रसायनसं., वै. द., र. प्र., वै चि., चि र भ., वातव्याध्यधिकारे ।

टि०—चि र भ., रसचि समीरारिरस इति नाम । रसपारिजाते वातारिरस इति नाम । अत्र नवाहिफेनस्थाने जयाहिफेनमिति पाठो दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध अफीम, कुचिला और मरिच समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे १—२ दिन मर्दनकर १—१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १—१ गोली पानकेसाथ खानेसे कुब्जता, खञ्जता, गृध्रसी, अपबाहुक, शोष, कम्प, खींचतान, विसूचिका, अरुचि, अपस्मार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३०१ ॥

३०२ समीरपन्नगरसः (प्रथमः)

अभ्रगन्धविषव्योपरसटङ्कनसमांशकान् ।
भावयेत्सप्तधा भृङ्गरसेन स्यात्समीरहा ॥ १२३७ ॥
आर्द्रद्रवेण गुञ्जाऽस्य खण्डव्योपयुताऽथवा ।
महावाताञ्जयत्याशु नासाध्मातः प्रबोधकृत् ॥ १२३८ ॥

चि. सा., वै र., र. कौ., र. सं., र. ल., चि. र., र. सु., नि. र., र. च., टो., रसायनसं., वै. चि., रस. स., र. पा., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, बछनाग, पारा और सुहागा, त्रिकटु सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरसमें ७ दिनतक मर्दनकर १—१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १—१ गोली अदरखकेरस अथवा शक्करयुक्त त्रिकटुकेसाथदेनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै । नस्यदेनेसे मूर्च्छाको दूरकरताहै ॥ ३०२ ॥

३०३ समीरपन्नगरसः

पारदं गन्धकं मल्लं हरितालं तथैव च ।
पलचतुष्टयं सर्वं तुलसीरसमर्दितम् ॥ १२३९ ॥
वटीं कृत्वाऽभ्रकेणैव वेष्टयेद्गोलकन्तु तत् ।
शरावयुगले क्षिप्त्वा वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १२४० ॥
दीपिकाप्रमितं वह्निं दत्वा यामचतुष्टयम् ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य नाम्नाऽसौ वातपन्नगः ॥ १२४१ ॥
सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिबन्धे कफामये ।
नागवल्ल्या दलेनैव भक्षयेद्गुञ्जिकाद्वयम् ॥ १२४२ ॥

र. चं., रसायनसं., वातरोगे ।

टि०—अस्यार्कक्षीरेण सप्तदिनानि मर्दनं विधाय शुष्ककज्जलिकां विधाय काचकूप्यां विन्यस्य चतुर्यामं वालुकायां विपाच्य प्रयोगकरणे महत्फलं भवतीति स्वीयानुभवोऽस्तीति विद्वद्भिरवलोकनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोमल और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तुलसीकेरससे १—२ दिन मर्दनकर गोला बनाय सफेद अभ्रकेपत्रोंसे लपेटकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २—३ कपड़मिट्टीदेकर वालुकायन्त्रमें रख मन्दाग्निसे ४ पहरकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २—२ रत्ती पानकेसाथदेनेसे सन्निपात, उन्माद, सन्धिकफविपात और कफरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३०३ ॥

३०४ सम्मोहलोहम्

त्रिकटु त्रिफला वह्निं विडङ्गं लौहमभ्रकम् ।
एतानि समभागानि घृतेन वटिकां कुरु ॥ १२४३ ॥
कामला पाण्डुरोगश्च हृद्रोगं शोथमेव च ।
भगन्दरं कोष्ठकृमीन्मन्दानलमरोचकम् ॥ १२४४ ॥

तान्सर्वान्नाशयेदाशु बलवर्णाग्निवर्धनः ।
सम्मोहलोहनामाऽयं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥१२४५॥

र. सं., र. चं., र. सु., पाण्डौ ।

टि०—अयं पाठश्चतुर्थेनवायसलोहद्वयत्यासेन इति सुधीभिरविस्मरणीयम् ।

भाषा—त्रिकुटु, त्रिफला, चित्रक, विडङ्ग, लोह और अभ्रकभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथलेनेसे कामला, पाण्डु, हृद्रोग, शोथ, भगन्दर, कोष्ठकिमि, मन्दाग्नि, अरुचि, बलवर्णाग्निह्रास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३०४ ॥

३०५ सर्वगदहरीवटिका

भल्लातं सूतगन्धं त्रिफलविषपुरं
तुल्यभागेन मर्द्यं,
राजार्कभृङ्गवह्नित्रिकटुजलकृता
गुञ्जमात्रा वटी स्यात् ।
दुर्जेयाद्यग्निमान्द्ये कृमिकुलदलना
सर्वशूलान्निहन्ति,
पथ्यं दोषानुसारि निखिलगदहरी
मासमेकं प्रयुक्ता ॥ १२४६ ॥

र. शि., सर्वगदे ।

भाषा—शुद्ध भिलावे, पारा, गन्धक, वछनाग और गूगल, त्रिफला सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें सबको मिलाय नीलाकंके लौंग, भंगरा, चित्रक और त्रिकटुकेद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, कृमि, शूल इनसबको एकमहीनेमें नष्टकरतीहै ॥ ३०५ ॥

३०६ सर्वज्वरसूदनरसः

रसगन्धात्रिकटुकत्वगेलाफलकन्तथा ।
टङ्कणं सर्पगरलं पृथग्भागेन मिश्रितम् ॥ १२४७ ॥
वत्सनाभो द्विभागः स्याद्भृङ्गराजरसेन वै ।
विमर्द्य वटिका कार्या मुद्गमाना सदा बुधैः ॥ १२४८॥
अपक्वेऽप्यथवा पक्वे सामे नीरामके ज्वरे ।
जीर्णे च विषमे चैव दातव्या चार्द्रकद्रवैः ॥
दधिभक्तं सिता पथ्यं तापे शीतोदकक्रिया ॥१२४९॥

रसायनसं., ज्वराऽधिकारे ।

टि०—रसायनसंग्रह एव द्वितीयस्थाने मृगराजेन्द्रनाम्ना पाठो लिखित. स मुद्रणदोषस्य परामर्शमकृत्वा लिखित इति प्रतिभाति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकुटा, तज, इलायची, मकलकरा, सुहागा, सर्पविष १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भागलेकर सबको बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिनभंगरेकरसमें मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेसाथ देनेसे पक्व अथवा अपक्व, साम अथवा निराम, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर दही, भात और शक्करदेवे। अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर ठंढेजलका प्रयोगकरे।

३०७ सर्वज्वरहररसः

फलत्रयं त्रिकटुकं जयपालाहिफेनकम् ।
लवणान्यम्बुदश्चैव भार्ङ्गी च पित्तपर्पटम् ॥ १२५० ॥
एतानि सममात्राणि विषश्चैवार्द्धमात्रकम् ।
एषां गुञ्जाप्रमाणेन बन्धनीया गुटी बुधैः ॥ १२५१ ॥
एकाहिके तथा जीर्णे विषमे क्षणदाज्वरे ।
भक्षयेत्पयसा प्रातः सर्वज्वरनिवृत्तये ॥ १२५२ ॥

र. को., ज्वराधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकुटु, शुद्धजमालगोटा और अफीम, पांचोंनमक, नागरमोथा, भारङ्गी और पित्तपापड़ा १–१ कर्ष, शुद्धवछनाग ८ माशे लेकर बारीकचूर्णकर अदरखवगैरहकेरससें एकदिनघोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तुलसीवगैरहके रसकेसाथदेनेसे एकाहिक, जीर्ण, विषम और रात्रिज्वर नष्टहोतेहैं। साधारणज्वरमें प्रातःकाल दूधकेसाथ देना ॥ ३०७ ॥

३०८ सर्वज्वरहरलोहम् (प्रथमम्)

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥ १२५३ ॥
किराततिक्तकं पाठा कटुकी कण्टकारिका ।
शोभाञ्जनस्य बीजानि मधुकं वत्सकं समम् ॥१२५४॥
लोहतुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
सर्वज्वरहरं लौहं सर्वरोगहरस्तथा ॥ १२५५ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरञ्जयेत् ॥१२५६॥
शीतं कम्पं तृषां दाहं घर्मस्रुतिवमिभ्रमान् ।
रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च ॥ १२५७ ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सामवातं सुदारुणम् ।
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छां पाण्डुं हलीमकम् ॥१२५८॥
अजीर्णं ग्रहणीञ्चैव यक्ष्माणं शोथमेव च ।
बल्यं वृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिषूदनम् ॥
सर्वज्वरहरं लोहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥ १२५९ ॥

र.सं., भै.र., र.चं., ध., र.सु., ज्वराऽधिकारे

भाषा—चित्रक, त्रिफला, त्रिकुटु, विडङ्ग, नागरमोथा, गजपीपल, पिपलामूल, खस, देवदारु, चिरायता, पाठा, कुटकी, भटकटैया, सहिजनकेबीज, मुलहटी, इन्द्रजव सब समभागलेकर सबकीबराबर लोहभस्ममिलाकर तुलसीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम और धातुगतज्वर, शीत, कम्प, तृषा, दाह, स्वेदोद्गम, वमन, भ्रम, रक्तपित्त, अतिसार, मन्दाग्नि, कास, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, भयङ्कर आमवात, बवा-

सीर, भयङ्कर उदररोग, मूर्च्छा, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, ग्रहणी, यक्ष्मा, शोथ, कृशता इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै ३०८

३०९ सर्वज्वरहरलोहम् (वृहत्) २

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ १२६० ॥
कान्तलोहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वक्ष्यमाणौषधै र्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥ १२६१ ॥
कारवेल्लरसैर्वापि दशमूलरसेन च ।
पर्पटधान्य कषायेण त्रिफलाक्वाथकेन वा ॥ १२६२ ॥
गुडूच्याः स्वरसेनैव नागवल्लीरसेन च ।
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसैस्तथा॥१२६३॥
पुनर्नवाऽऽर्द्रकाम्भोभि र्भावना परिकीर्तिता ।
रक्तिकाद्विक्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १२६४ ॥
पिप्पलीगुडसंयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वरहरं तथा ॥ १२६५ ॥
वारिदोषोद्भवञ्चैव नानादोषोद्भवन्तथा ।
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा॥१२६६॥
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवन्तथा ।
भूतावेशभयञ्चैव त्रिदोषजनितं तथा ॥ १२६७ ॥
अभिघातज्वरञ्चैव तथाऽभिचारसम्भवम् ।
अभिन्यासं महाघोरं विषमं त्र्याहिकं तथा ॥१२६८॥
शीतपूर्वं दाहपूर्वं त्रिदोषं विषमज्वरम् ।
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ॥ १२६९ ॥
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थिकविपर्ययम् ।
पाण्डुरोगं कामलाञ्च अग्निमान्द्यं महागदम् ॥१२७०॥
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्द्धेन न संशयः ।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेद्विडसंयुतम् ॥ १२७१ ॥
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः ।
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्न बलवान्भवेत् ॥
सर्वज्वरहरं लोहं दुर्लभं परिकीर्तितम् ॥ १२७२ ॥

र. स , भै. र., ध , र. इ , ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, अभ्रक, सोनामाखी, सुवर्ण, रजत इनकीभस्में और रसमाणिक्य १–१ कर्ष, कान्तलोहभस्म १ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेला, दशमूल, पित्तपापड़ा, त्रिफला, गिलोय, पान, मकोय, निर्गुण्डी, पुनर्नवा इनप्रत्येककेरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक बलाबल देखकर पीपल और गुडकेसाथदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, जलदोषोत्थ, कृत्रिम, सततादि विषम, साध्य अथवा असाध्य, क्षयज, धातुस्थ, कामज, शोकज, भूतावेशज, सन्निपातज, अभिघातज, अभिचारज, असाध्य अभिन्यास, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व, प्रलेपक, अर्धनारीश्वर, प्लीहज, चातुर्थिकविपर्यय इत्यादि समस्तज्वर, कास, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि इनसबको ७ दिनमें यह नष्टकरताहै । भूखलगनेपर सफेदचावल, छाछ और सचलनमक देवे । ककारादिगणका वर्जनकरे और जबतक शक्ति न आवे तबतक मैथुन न करे ॥ ३०९ ॥

३१० सर्वज्वरहरलोहम् (वृहत्) ३

द्विपलं जारितं लोहं रसं गन्धं द्विकर्षकम् ।
कर्षकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ॥ १२७३ ॥
श्रेयसी पिप्पलीमूलं हरिद्रे द्वे च चित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १२७४ ॥
गुञ्जाद्वयीं वटीं कृत्वा भक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
सर्वज्वरहरं लोहं सर्वज्वरविनाशनम् ॥ १२७५ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥ १२७६ ॥
मासजं पक्षजञ्चैव तथा संवत्सरोत्थितम् ।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥१२७७॥

भै. र., ध , र. इ , ज्वराधिकारे ।

भाषा—लोहभस्म २ पल, शुद्ध पारा और गन्धक २–२ कर्ष, त्रिफला, त्रिकुटु, विडङ्ग, नागरमोथा, गजपीपल, पिपलामूल, हल्दी, दारुहल्दी और चित्रक १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर अदरखके रससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे पृथक्, द्वन्द्व अथवा सन्निपातज्वर, विषम, भूतोत्थ, मासज, पक्षज, संवत्सरज इत्यादि समस्तज्वर, प्लीहा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१० ॥

३११ सर्वज्वरहरीवटी (लीलावती, जीर्णज्वरारिः)

एकभागो रसो भागद्वयं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
गरलस्य त्रयो भागाश्चतुर्भागा हिमावती ॥ १२७८ ॥
जैपालकः पञ्चभागो निम्बुद्रवविमर्दितः ।
क्रिमिघ्नप्रमिता वट्यः कार्याः सर्वज्वरच्छिदः॥१२७९॥
शृङ्गवेरेण दातव्या वटिकैका दिनेदिने ।
जीर्णज्वरे तथाऽजीर्णे सामे वा विषमे तथा ॥
ज्वरं सर्वं निहन्त्येषां दावो वनमिवाऽनलः ॥ १२८० ॥

भा प्र , वृ यो त , रसायनस , र. क ल , टो , र का , वै. र., र. इ., यो त , चि र. भ , ना वि , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—वृ यो त , यो त , एतयोर्ग्रन्थयो र्लीलावती वटीतिनाम स्थापित रसायनसङ्ग्रहे ॥ नामद्वयमप्यस्ति स्थानभेदात् । ना वि , "चतुर्गुणितमरिचै र्मेलिता क्रमवर्धिता । शूलगुल्मोदरप्लीहक्षयपाण्ड्वादिरोगनुत् ॥" इत्यधिक पाठ कृत्वा शूलाऽधिकारे हेमवतीवटीति नाम स्थापितम् । पञ्चविंशतितमवडवानलेन कियद्दोषस्य साम्यमावहति परन्तु क्वचित्स्थाने हिमावतीप्रयोगात् लाङ्गलीस्थाने च जयपालसङ्ग्रहात् मदद्रत्तेण स्वतन्त्रतयैव पाठो गृहीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा , सर्वविष ३ भा., शुद्धमैनसिल ४ भा , जमालगोटा ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे २–३ दिन मर्दनकर विडङ्गबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसके

साथदेनेसे जीर्ण, अजीर्ण, साम, विषमप्रभृति ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३११ ॥

३१२ सर्वज्वराङ्कुशवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मरिचं नागरं कणा ।
त्वचं जैपालकं कुष्ठं भूनिम्बं मुस्तकं पृथक् ॥१२८१॥
चूर्णयित्वा समांशन्तु कज्जल्या सह मेलयेत् ।
निर्गुण्ड्याः स्वरसे चैवमार्द्रकस्य रसे तथा ॥ १२८२॥
भावनां कारयित्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
एकैकां भक्षयित्वा तु वस्त्रवेष्टश्च कारयेत् ॥ १२८३ ॥
एषा ज्वराङ्कुशवटी सर्वज्वरविनाशिनी ।
पृथग्दोषांश्च विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥१२८४॥
प्राकृतं वैकृतं चापि वातश्लेष्मकृतं तथा ।
अन्तर्गते बहिःस्थश्च निरामं साममेव वा ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥ १२८५ ॥

भै. र , र. सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच, सोंठ पीपल, तज, शुद्धजमालगोटा, कुठ, चिरायता, नागरमोथा येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुंडी और अदरखकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक अदरखकेरसके- साथदेकर वस्त्रओढ़ाकर सुलानेसे पसीनाहोकर साधारण, द्वन्द्वज, विषम, प्राकृत, अथवा वैकृत, अन्तःस्थ, बहि स्थ, निराम अथवा साम ये समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ३१२ ॥

३१३ सर्वज्वरारिरसः

रसं गन्धकं हिङ्गुलं मौक्तिकञ्च
पृथक् टङ्कमानं रविञ्चाददीत ।
विचूर्ण्य क्षिपेत्कूपिकायां क्रियार्क
दरेऽग्नौ पचेज्ज्वरतिमेहौ हरेत्तत ॥ १२८६ ॥

र. (मा), ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिंगरिफ, मोती और ताम्रभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ३–४ कपड़- मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख दोपहरकी तीक्ष्णाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तज्वर और प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ सर्वतोभद्ररसः (प्रथमः)

सूतं कान्तं गगनतपनं ताप्यकं शुद्धतालं,
राजावर्तं सुरभिमधुकं मानसी चेति तुल्यम् ।
व्योषार्तं शिशिकलिकरं भृङ्गतोयेन मर्द्यं,
गोलीभूतं भवति विमलः सर्वभद्राभिधानः ॥१२८७॥
शूलं गुल्मं जठरजरुजो वातजान्सर्वरोगान्,
वह्नेर्मान्द्यं कफरुगगदं पीनसञ्च ज्वरार्तिम् ।
प्लीहं पाण्डुं क्षयकृतरुजः कुष्ठरोगानशेषान्,
मूर्ध्नो रोगान्वदनजरुजं हन्ति रोगांस्तथाऽन्यान्१२८८

र. चं , ध., र. र , रससागर, र. सु , रसायने । रसराजसुन्दरे भ्रष्ट· पाठोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनामाखी, हरिताल, गन्धक और मैनसिल, कान्तपाषाण, अभ्रक, ताम्र, लाजवर्द इनकीभस्में, मुलहठी, त्रिकटु, कुठ, चित्रक, अकलकरा सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, गुल्म, उदररोग, वातरोग, मन्दाग्नि, कफरोग, पीनस, ज्वर, प्लीहा, पाण्डु, क्षय, कुष्ठ, शिर और मुखके रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१४ ॥

३१५ सर्वतोभद्ररसः (द्वितीयः)

गन्धेशाभ्रकताम्रलोहकुनटीतुत्थं समं तालकं,
भोगीम्लेच्छकशीर्षकं समलवं सर्वांशपादं विषम् ।
सम्मर्द्यार्द्रकतोयतोरसमितात्सम्धूपितं तद्द्विपा-,
द्भाव्यं सप्तदिनं पृथग्वरुणशुग्वासाष्टनिर्गुण्डिका- ॥
व्योषार्द्रत्रिफलासभृङ्गविजयाजैपालजैस्तद्रसैः,
पित्तैर्वापि जयेदयं रसवरो दुःसन्निपातादिकान् ।
तन्द्रीमोहविसञ्ज्ञताः किल धनुर्वातं सवातं मिलद्-,
दंष्ट्राबन्धनमस्मृतिं नयनयोः क्षेपाद्विसूचीमपि१२९०

र. क , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, तुत्थ, हरिताल और शिंगरिफ, अभ्रक, ताम्र, लोह और नाग इनकीभस्में, भंगर येसब समभाग, सबसे चतुर्थांश शुद्धवत्सनागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर पारेकेबराबर वछनागकी डमरूयन्त्रमें धूनीदेकर वरुण, अडूसा, आटा, निर्गुंडी, त्रिकटु, अदरख, त्रिफला, भंगरा, भांग, जमालगोटा इनकेद्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर यथासम्भव पित्तोंकीभावनादेकर २–२ चावलभरकी गोलियां बनाकर रख- छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दुष्ट- सन्निपात, तन्द्रा, मोह, मूर्च्छा, धनुर्वात, वातरोग, दन्तबन्ध, अप स्मार, इनसबको यह नष्टकरताहै । आंखोंमें डालनेसे हैजेको दूरकरताहै ॥ ३१५ ॥

३१६ सर्वतोभद्ररसः (तृतीयः)

सिन्दूरमभ्रं रजतञ्च हेम
समेन भागेन मनःशिलाञ्च ।
छिन्नारुतु धांशी निखिलेन तुल्यं
सम्मर्दयेद्गुग्गुलुकं प्रयत्नात् ॥ १२९१ ॥
ततस्तु माषप्रमिता विधाय
वटीं प्रयुञ्जीत यथानुपानम् ।

यं सर्वतोभद्ररसो न हन्ति
न सोऽस्ति रोगः खलु देहिदेहे ॥ १२९२ ॥
भै. र. सर्वरोगे ।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, रजत और सुवर्णभस्म, शुद्धमैनसिल १–१ भाग, वसलोचन २ भाग, गुग्गुलु ■ भागलेकर बारीकचूर्णकर घृतकेयोगसे गूगलका द्रवबनाय चूर्णको मिलाकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥

३१७ सर्वतोभद्ररसः (चतुर्थः)

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम् ।
कर्षकं कर्षकार्द्धञ्च हिङ्गुलोत्थरसन्तथा ॥ १२९३ ॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजःपत्रं लवङ्गकम् ।
जातीकोषफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥ १२९४॥
कुष्ठं तालीसपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम् ।
हरीतकी च मरिचं शृङ्गवेरविभीतकम् ॥ १२९५ ॥
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम् ।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्याद्गिुञ्जिकाम् ॥ १२९६॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयाऽपि वा ।
रोगं ज्ञात्वाऽनुपानञ्च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥१२९७॥
हन्ति मन्दानलान्सर्वानामदोषं विसूचिकाम् ।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवन्तथा ॥ १२९८ ॥
आनाहं मूत्रकृच्छ्रञ्च सद्यग्रहणी वमिम् ।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥ १२९९ ॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम् ।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥ १३०० ॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन कथितः पुरा ।
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥ १३०१ ॥
र. सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—अभ्रकभस्म २ कर्ष, शुद्धगन्धक १ कर्ष, शिंगरिफसेनिकालाहुआपारा ८ माशे, शुद्धकपूर, केसर, जटामासी, पत्रन, लौंग, जाविनी, जायफल, छोटीइलायची, गजपीपल, कूठ, तालीसपत्र, धावड़ीकेफूल, तज, नागरमोथा, हर्रे, मरिच, सोंठ, बहेड़ा, पीपल और आवला ४–४ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख वगैरहकेरससे १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ, पान अथवा मधु और शक्करकेसाथ प्रात कालदेनेसे मन्दाग्नि, आम, हैजा, वात, कफ और पित्तरोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, सङ्ग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तोत्थजीर्णज्वर, धातुस्थविषमज्वर, कास, कामला, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१७ ॥

३१८ सर्वतोभद्रलोहम् (प्रथमम्)

लोहचूर्णं मृतं ताम्रमभ्रकञ्च पलं पलम् ।
शुद्धसूतञ्च कर्षैकं गन्धकार्द्धपलन्तथा ॥ १३०२ ॥
माक्षिकस्य विशुद्धस्य कर्षं शुद्धा शिला परा ।
सार्धं कर्षं विशुद्धञ्च शिलाजतु तथापरम् ॥ १३०३ ॥
गुग्गुलोश्चापि कर्षैकं शाणमानं परस्य च ।
चूर्णं विडङ्गभल्लातवह्निश्वेतार्कमूलजम् ॥ १३०४ ॥
करिकर्णपलाशञ्च तालमूली पुनर्नवा ।
घनाऽमृते नागबला चक्रमर्दकमुण्डिके ॥ १३०५ ॥
भृङ्गकेशशतावर्यौ वृद्धदारं फलत्रिकम् ।
त्रिकटुश्चापि सर्वेषां प्रत्येकञ्च नयेद्द्विपक्षू ॥ १३०६ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य घृतेन मधुना सह ।
स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य ततः कुर्याद्विधानवित् ॥
माषकादिक्रमेणैव लौहं सर्वरसायनम् ।
अम्लपित्तं जयेच्छीघ्रं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ १३०८ ॥
तद्वदर्शांसि सर्वाणि सर्वमेव भगन्दरम् ।
पक्तिशूलञ्च शूलञ्च तथामं कुक्षिसम्भवम् ॥ १३०९ ॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
आमवातं तथा शोथमग्निमान्द्यं सुदुस्तरम् ॥१३१०॥
कामलां वातगुल्मञ्च पिडिकागरगृध्रसीः ।
कासश्वासारुचिहरं वृष्यमेतद्विशेषतः ॥ १३११ ॥
सर्वव्याधिहरं प्रोक्तं यथेष्टाहारसेविनः ।
यक्ष्माणं रक्तपित्तञ्च वातरोगं विनाशयेत् ॥
संज्ञया सर्वतोभद्रलौहो रसवरः स्मृतः ॥ १३१२ ॥
भै. र., अम्लपित्ते ।

भाषा—लोह, ताम्र और अभ्रकभस्म १–१ पल, शुद्धपारा १ कर्ष, गन्धक २ कर्ष, शुद्ध सोनामाखी और मैनसिल १–१ कर्ष, उत्तमशिलाजीत १॥ कर्ष, शुद्धगूगल १ कर्ष, विडङ्ग, भिलावे, चित्रक और सफेदआककीजड़, पलाशबेल, कालीमुशली, पुनर्नवा, नागरमोथा, गिलोय, नागबला, पवाड़, गोरखमुण्डी, स्याहसफेदभंगरा, शतावरी, विधारा, त्रिफला, त्रिकटु ४–४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ■ और घीकेसाथमिलाकर चिकनेबर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक औचिती देखकर उचितानुपानकेसाथ देनेसे सर्वोपद्रवयुक्त अम्लपित्त, अर्श और भगन्दरको यह नष्टकर रसायनका कामकरताहै । तत्तद्विशेष अनुपानोंकेसाथदेकर पथ्यविशेषकासेवनकरनेसे पक्तिशूल, साधारणशूल, आम, कुक्षिशूल, वातरक्त, कुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, आमवात, शोथ, दुस्तरमन्दाग्नि, कामला, वातगुल्म, पिडिका, गर, गृध्रसी, कास, श्वास, अरुचि, यक्ष्मा, रक्तपित्त और वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१८ ॥

३१९ सर्वतोभद्रलोहम् (द्वितीयम्)

गव्येन नवनीतेन स्वर्णमाक्षिकधूश्चिकौ ।
निष्पिष्य लेपयेल्लोहं कान्तपाण्ड्यादिसम्भवम् १३१३
ध्मापयेत्कर्मकाराग्नौ सिक्त्वा सिक्त्वा पुनः पुनः ।
त्रिफलाक्वाथतोयेन ततो निर्वापयेत्सुधीः ॥ १३१४ ॥

पश्चात्सम्पिण्य तल्लौहं दाहयेत्पुटवह्निना ।
अम्लैराकृष्य विधिना जलधौतं प्रयत्नतः ॥ १३१५ ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कृत्वा बहुधूपन्तु कारयेत् ।
पलस्त्रतुष्टयं तस्य मधुकस्यापि तत्समम् ॥ १३१६ ॥
पथ्याधात्रीविभीतक्यो रसश्च त्रिकटुस्तथा ।
वचावह्निविडङ्गानि कृष्णजीरकजीरके ॥ १३१७ ॥
दन्ती पुनर्नवा मूली प्रत्येकं पलसङ्ख्यया ।
एलायाः कर्षकं दद्यात्कार्षिकां कटुरोहिणीम् ॥१३१८॥
पलार्द्धं गन्धकं देयं पलार्द्धं गुग्गुलुत्वचम् ।
चूर्णयित्वा विधानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ १३१९ ॥
घृतमष्टपलं दत्त्वा क्षीरं चतुःशरावकम् ।
चतुर्विंशपलक्वाथे त्रिफलाशेषवारिणा ॥ १३२० ॥
वस्त्रपूतेन विधिवत्पाचयेत्ताम्रभाजने ।
लोहोद्भवदर्व्यिकया पाकं कुर्याद्विपाकवित् ॥ १३२१ ॥
शीतलञ्च ततः कुर्यात्स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।
रक्तिकादिक्रमेणैव घृतेन मधुना सह ॥ १३२२ ॥
सम्मर्द्य लोहदण्डेन लोहपात्रे च भक्षयेत् ।
क्षीराद्यनुपानं दातव्यं पित्तदुष्टायरोगिणे ॥ १३२३ ॥
तथामकोष्ठिने दद्याद्यवक्षारस्य वारिणा ।
मूर्च्छाछर्दितृषारक्तपित्तशूलादिसम्भवे ॥ १३२४ ॥
क्षीरं शर्करया मिश्रमनुपानं प्रयोजयेत् ।
चतुर्धा ग्रहणीरोगे वातपित्तकफोद्भवे ॥ १३२५ ॥
ज्ञात्वा कुक्षौ मनाक् शूलमामगन्धं सलोहितम् ।
कुक्षौ दक्षिणतः शूलं नाभिमण्डलकोपरि ॥ १३२६ ॥
वातपित्तनिदानं हि लक्षयित्वा प्रदीयते ।
नारिकेलञ्च समधु पानञ्च हितमिच्छता ॥ १३२७ ॥
रक्तच्छर्द्यां विगन्धत्वमीपत्पानन्तु पैत्तिके ।
क्षीरं शर्करया युक्तमनुपानन्तु दापयेत् ॥ १३२८ ॥
कटिनिकोद्भवे शूले कुक्षिशूल अरोचके ।
आमवातसमुत्थाने मुखस्रावे च दीयते ॥ १३२९ ॥
ज्वरे सशूले सामे च वायुमार्गं निवर्तयेत् ।
यनकुन समुद्भूते शूले दद्याद्विचक्षणः ॥ १३३० ॥
वै. से., रसायने ।

भाषा—सोनामाखी और पुनर्नवाकेचूर्णको गायकेमक्खनमें मिलाय कान्तादिलोहेके बारीकपत्रपरलेपकर लोहारकेयहां धमनकराके त्रिफलाकेकाढ़ेमें बारीकचूर्णहोनेतक बुझावे। फिर बारीकचूर्णको लेकर त्रिफलाकेक्वाथसे मर्दनकर टिक्की बनाय सुखाकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीतरहमर्दनकर आंचदे। भस्महोनेकेबाद अम्लवर्गमें घोटघोटकर २–४ आंचें देकर पानीसे धोडाले और कज्जलकेसदृश घोटले। यह लोहभस्म और मुलहठी ४–४ पल, हर्रे, आंवले, बहेड़े, शुद्धपारा, त्रिकटु, वच, चित्रकमूल, विडङ्ग, कालीजीरी, जीरा, दन्ती और पुनर्नवाकी जड़ १–१ पल, इलायची और कुटकी १–१ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ माशे, गूगलकेवृक्षकीछाल २ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलरंगकज्जलीमें मिलाय घी ८ पल, दूध २ प्रस्थ, चतुर्थांशावशिष्ट त्रिफलाका क्वाथ २४ पललेकर सबको तांबेकीकड़ाहीमें लोहेकी कड़छीसे चलाताहुआ मन्दाग्निसे पाककरे। घन तैयार होनेपर चिकने बर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर ३ माशेतक बढ़ावे। मात्राको लोहकेपात्रमें घी और मधु डालकर लोहके डण्डेसे थोड़ीदेर मर्दनकर सेवनकरे ऊपरसे दूधपीवे। इससे दुष्टपित्त शान्तहोताहै। आमविकारमें यवक्षारकाजल, मूर्च्छा, वमन, तृषा, रक्तपित्त और शूलमें शक्कर मिलाहुआदूध, ४ प्रकारकी ग्रहणी, वात, पित्त और कफकी उत्कटतामें औचिती देखकर अनुपानका योगकरनेसे ये सब नष्टहोतेहैं। कुक्षिशूल, नाभिशूल, कटिशूल, त्रिकशूल, अरोचक, आमवात, मुखस्राव, शूलसहितज्वर इत्यादिकोंमें औचितीदेखकर अनुपानोंका योग करे। आमगन्धरहित रक्तकी वमनमें नारियलकेजलमें मधु मिलाकरदेवे केवलपैत्तिक विकारमें शक्करमिला दूधदेवे। इसकेप्रयोगमें वायु और आमपर विशेष लक्ष्य देवे ॥ ३१९ ॥

३२० सर्वतोभद्रावटी

हेमरौप्याभ्रलोहानि जतु गन्धकमाक्षिकम् ।
वटीं रक्तिमितां कुर्याद्विमृद्य वरुणाम्भसा ॥ १३३१ ॥
वटीयं सर्वतोभद्रा निखिलान्वृक्कजान्गदान् ।
हरेद्बस्तिभवांश्चापि शूलं वीर्यविवर्धिनी ॥ १३३२ ॥
आ. वि., वृक्कामये ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, शिलाजीत, गन्धक और सोनामाखी समभागलेकर वरुणकेक्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली वरुणके क्वाथकेसाथ देनेसे वृक्क और बस्तिके समस्तरोग और शूलोंको नष्टकर यह वीर्यको बढ़ातीहै ॥ ३२० ॥

३२१ सर्वप्रकाशरसः

पारदगन्धकसैन्धवटङ्कणशीतानि तुल्यभागानि ।
प्रथमं पारदगन्धौ कज्जलयित्वा मेलयेत्सर्वम् ॥१३३३॥
त्रिदिनं सुरदालिरसेन घृष्ट्वैकं दिनं वहुरसेन ।
पश्चात्पुटेन दग्ध्वा दिनमेकं मर्दयेद्गोमूत्रैः ॥ १३३४ ॥
अजकरिणीमहिषीखरमूत्रे क्रमश एव सम्मर्द्य ।
वहुरसकटुकानिम्बैर्वदरामलकीरसैः क्रमान्मर्द्यम् ॥
सिद्धं त्रिदिनं दद्यात्त्रिवल्लमनलार्द्रकमरिचयुतम् ।
घृतमुद्गवास्तुकार्द्रकयुक्तं भुक्तं त्रिदोषशमनाय १३३६
मागध्या मधुना चाश्नन्मासद्वयममुं गदी ।
वास्तुकार्द्रकमुद्गान्नं त्यजेत राजयक्ष्मणि ॥ १३३७ ॥
सिन्धुवाररससैन्धवार्द्रकैरेकविंशतिदिनान्यमुं रसम् ।
मुद्गवास्तुकघृतार्द्रकाशनान्मुच्यते सपदि गण्डमालया
त्रिफलासैन्धवेनाश्नंस्त्रिसप्ताहं त्रिवल्लकम् ।
कूष्माण्डकर्कटीतैलमुक्त्वा स्याद्गुल्मशूलजित् १३३९
मरिचार्द्रकनागवल्लीपत्रै-
स्त्रिदिनं प्रादय हरेज्ज्वरपानशेषान् ।

सशिवार्द्रकण्टकारिकाभिः
कृतया पथ्यमुपाददीत विल्वेन ॥ १३४० ॥
त्र्यहं गुञ्जाजलेनाश्नन् घृतमुद्गाशनो गदी ।
कर्कट्यार्द्रकशाकेन मूत्ररोधाद्विमुच्यते ॥ १३४१ ॥
सैन्धवगुडसुरदारुभिरश्नन्मांसगुडाक्षपथ्याशी ।
चिर्भिटकुरण्टकाभ्यां सैन्धवतक्राज्जयत्यनिलमानम् ॥
इक्षुरसेन च भुक्तं दिनैकविंशाज्जयत्यधिकपित्तम् ।
बृहतीद्वयकर्कटकाऽऽमलकद्राक्षावलायुताधाशी ॥
दशमूलकाथेन त्रिसप्तदिवसं निषेव्य रसमेनम् ।
तुण्डीवार्ताकाभ्यां गुडभक्ताशी भगन्दरञ्जयति १३४४
त्रिफलार्द्रकेण जग्धस्त्रिसप्तदिवसमग्निमान्द्यमपहरति ।
पथ्यञ्च पञ्चकोलकशूल्याशनं तस्य कुरयकयुक्तम् ॥
इक्षुरसार्द्रकसेवी दिनैकविंशाज्जयत्युक्तरुजाम् ।
तक्रं तस्य च भक्तं शाकं भवतीह तण्डुलीशाकम् ॥

र मृ., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, कपूर और सेंधानमक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर बन्दालकेरससे ३ दिन और घीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट में बन्दकर भूधरपुटमें स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गौ, बकरी, हथिनी, भैंस और गधीकेमूत्रोंसे १–१ दिन मर्दनकर घीकुवार, कुटकी, निम्ब, बेर और आवलेकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली चित्रक, अदरख और मरिचकेसाथ अथवा घी, मूंग, बथुआ और अदरखकेसाथदेनेसे त्रिदोष नष्टहोताहै । पीपल और मधुकेसाथ लेनेसे और बथुआ, अदरख तथा मूगका सेवन करनेसे दो महीनेमें राजयक्ष्मसे निवृत्तहोताहै । संभालु, सैन्धव और अदरखकेसाथ लेकर मूग, बथुआ, घी और अदरख भोजन में लेवे तो गण्डमालासे निवृत्तहोताहै । त्रिफला और सेंधे नमककेसाथ ९–९ रत्ती सेवनकर कोंहला, ककड़ी और छाछ कापथ्यरखनेसे २१ दिनमें गुल्म और शूलको जीतताहै । मरिच अदरख और पानकेसाथ ३ दिनतक लेनेसे तथा हर्रे, अदरख, भटकटैया और बेलसे कीहुई पेया पीनेसे समस्तज्वरोंको नष्टकर ताहै । सफेदगुञ्जाकेजलसे ३ दिनलेकर घी और मूग पथ्यमें लेनेसे तथा ककड़ी और अदरखका शाक खानेसे मूत्ररोधसे निवृत्तहोताहै । सेंधेनमक, गुड और बन्दालकेसाथ इसका सेवन कर मास, गुड़केपदार्थ, कचेरे, कटसैरया, सेंधानमक और छाछ पथ्यमें लेवे तो बढाहुआ वायु नष्टहोताहै । ईखके रसकेसाथ लेनेसे २१ दिनमें बढाहुआ पित्त शान्तहोताहै । दोनोंभटकटैया, ककड़ी, आवले, दाख और बला इनके क्वाथसे बनाएहुए अन्नका सेवनकरे । दशमूलकेक्वाथकेसाथ इसकासेवनकरके कुदरू, बेंगन, गुड और भात पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें भगन्दर नष्टहोताहै । त्रिफला और अदरखकेसाथलेकर पञ्चकोल, शूल्यमास और कटसरैया पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें मन्दाग्नि दूरहोताहै । ईख और अदरखके रसकेसाथ इसको लेकर छाछ, भात और चौलाई का शाक खानेसे २१ दिनमें समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोताहै

३२२ सर्वदीपकरणरसः

समभागं रसं नागं संयोज्यैकत्र मर्दयेत् ।
गन्धकेनात्र संयोज्य दद्यात्द्रससमं कणाम् ॥ १३४७ ॥
सर्वमेकत्र गृह्णीयात्त्रिदिनं जृम्भणीरसैः ।
कुमार्याश्च तथा माध्या भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥१३४८
त्रिर्भावयेदजामूत्रैस्त्रिर्गोमूत्रेण भावयेत् ।
सैन्धवेन ग्रन्थिकेन भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४९ ॥
सिद्धं शर्करया युक्तं त्रिसप्ताहं निवल्लकम् ।
त्रिवृच्छाकादयो देया देयं गोधूमभोजनम् ॥ १३५० ॥
मेहव्रणभगन्दरार्बुदान् कौष्ठिकव्रणविपव्रणानपि ।
सर्वदीपकरणो हरत्ययं सूर्यदासकृतिना विनिर्मितः ॥

र क, र. मृ, कुष्ठव्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नागभस्म, पीपल सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरी, घीकुवार, पीपल, बकरी और गायकामूत्र, सेंधानमक, पिपलामूल इनप्रत्येककेरसोंसे ३–३ दिन भावनाएं देकरबराबरकीशक्करमिलाकर ९–९ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े अथवा सुखाकर चूर्णकरले । इसमेंसे ९–९ रत्ती कीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर निसोतप्रभृति रेचक शाक और गेंहूकाभोजनदेनेसे प्रमेहपिडिका, भगन्दर, अर्बुद, विद्रधि, विषव्रण इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२२ ॥

३२३ सर्वमुखरोगारिरसः

लोहाश्मजत्वमृतपारदगन्धकञ्च
क्षारत्रयं त्रिकटुताप्यफलत्रिकञ्च ।
युक्त्या विचूर्णितमिदं मधुनाऽवलेह्यं
सर्वेषु कण्ठगलतालुगदेषु शस्तम् ॥ १३५२ ॥

यो म., मुखरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, बछनाग, पारा और गन्धक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, त्रिकटु, सोनामाखी और त्रिफला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय शिलाजीतकेसाथ १–२ दिन घोटकर रख-छोड़े । इनमेंसे ३–३ रत्ती मधुकेसाथदेनेसे कण्ठ, गला और तालु इनके समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२३ ॥

३२४ सर्वमुखामयहररसः

नृपमाक्षिकतुल्यशिलालवम-
शिलजं महिषाख्यरसेन्द्रमितम् ।
विनिघृष्य रसे रविजे त्रिदिनं
वदनस्थगदे तिमिरे च हितम् ॥ १३५३ ॥

यो म, रसेन्द्रम., र. क ल, मुखरोग ।

टि०—रसकल्पलतायां माक्षिकताले न दृश्येते रविरसभावना च नास्ति ।

भाषा—लाजवर्द, सोनामाखी, तुत्थ, मैनसिल, हरिताल, अभ्रक इनकी भस्में, शिलाजीत, भैंसागूगल, शुद्धपारा समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर गूगलको मिलाय आककेपकेपत्तोंके रससे ३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तमुखरोग नष्टहोतेहैं। अञ्जनकरनेसे तिमिर नष्टहोताहै॥

३२५ सर्वरोगघ्नरसः

मूषा तिन्दुकविस्तारा ह्यायामे षोडशाङ्गुला।
भाण्डपादस्य पादांशं वालुकाभिः प्रपूरयेत्॥१३५४॥
तस्मिन्निवेश्य द्विगुणं गन्धगर्भगतं रसम्।
याममात्रं पचेच्चुल्ल्यां क्षिपेद्गन्धस्य चूर्णकम्॥१३५५॥
धायसीनागिनीमत्समेघनादरसैः पुटेत्।
स रसः सर्वरोगघ्नो वलीपलितजिद्भवेत्॥ १३५६॥

र. को०, रसायने।

भाषा—तेंदूकेफलकेबराबरचौड़ी और १६ अङ्गुल ऊंची मूषाका चतुर्थांश वालूमें दवाय एकतोला शुद्धगन्धकका बारीक चूर्ण मूषामें बिछाय १ तोला शुद्धपारा रख १ तोले गन्धकसे ढकदे। फिर वालूभरेहुएपात्रको चूल्हेपर रख १ पहरकी कड़ी आंचदे, जब गन्धक पिघलकर जलनेलगे तब ऊपरसे थोड़ा थोड़ा गन्धककाचूर्ण डालतारहे जिसमें कि पारा न उड़े। एक पहरबाद यन्त्रको नीचे उतारकर रखछोड़े। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मकोय, पान, धतूरे और कांटेवाली चौलाईकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै॥ ३२५॥

३२६ सर्वरोगहररसः (प्रथमः)

पलत्रयञ्चित्रकञ्च चेतकी च पलत्रया।
पारदं व्योषकञ्चैव पिप्पलीमूलमुस्तकम्॥ १३५७॥
जातीफलं वृद्धदारु ग्राहयेच्च पलं पलम्।
पला शुभा कुष्ठगन्धं दरदं करहाटकम्॥ १३५८॥
ज्योतिष्मती त्वगभ्रञ्च लोहभस्म पलार्द्धकम्।
हालाहलं निष्कमेकं शुद्धं देयं पलाष्टकम्॥ १३५९॥
भृङ्गराजरसेनैव गुटिका कोलसम्मिता।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं वाताशीतिं विनश्यति॥ १३६०॥
कुष्ठाष्टादशकं नश्येत् प्रमेहा विंशतिस्तथा।
अपस्माराः क्षयं यान्ति सर्वनाडीव्रणा अपि॥१३६१॥
एकादशविधं शोषमूर्द्धश्वासप्रसुप्तिकाः।
शोथामवातपाण्डुत्वं कामलार्शो निहन्ति स.॥
सर्वरोगहरं ख्यातं वाताम्लञ्च विवर्जयेत्॥ १३६२॥

र. सु, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—चित्रक और हर्र ३-३ पल, शुद्धपारा, त्रिकुटु, पिपलामूल, नागरमोथा, जायफल और विधारा १-१ पल, इलायची, वसलोचन, कुठ, शुद्ध गन्धक और शिंगरिफ, अकल करा, मालकांगनी, तज, अभ्रक और लोहभस्म २-२ कर्ष, शुद्धवछनाग ८ माशे, गुड ८ पल लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय गुडकेसाथ १-२ पहर घोटकर भंगरेकेरससे १-२ भावनाएं देकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ८० प्रकारकेवायु, १८ कुष्ठ, २० प्रमेह, अपस्मार, समस्त नाडीव्रण, ११ प्रकारकाशोष, ऊर्द्ध्वश्वास, प्रसुप्तवात, शोथ, आमवात, पाण्डु, कामला, अर्श इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें वातल और अम्लपदार्थोंका परित्यागकरे॥ ३२६॥

३२७ सर्वरोगहररसः (द्वितीयः)

हरवीर्यं गन्धताले शिलां टङ्कणमेव च।
दरदं ताम्रभस्माऽथ नागसिन्दूरमेव च॥ १३६३॥
रोहिणीव्योषसंयुक्तं तथा त्रिफलया युतम्।
एतेषामष्टमांशन्तु दन्तीबीजञ्च निक्षिपेत्॥ १३६४॥
अर्द्धांशं दन्तिबीजानां विषं शुद्धं विनिःक्षिपेत्।
निष्कार्द्धं कुङ्कमञ्चैव तदर्द्धं मृगनाभिजम्॥ १३६५॥
निष्कद्वयं देवपुष्पं कर्पूरमर्द्धनिष्ककम्।
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् १३६६
शिग्रुमूलरसैरेनं मर्दयेच्च दिनत्रयम्।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेच्च दिनत्रयम्॥ १३६७॥
केशराजरसेनैव मेघराजरसेन च।
वासारसैश्चन्दनेन मर्दितश्च दिनं पृथक्॥ १३६८॥
वज्रवल्लीरसेनैव ताम्बूलरसमर्दितम्।
गुञ्जामात्रांश्च वटकान्कुर्यादेवं विचक्षणः॥ १३६९॥
ज्वरं सप्तविधं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश।
अष्टाङ्गपाण्डुरोगञ्च श्वासं कासञ्च पीनसम्॥१३७०॥
कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं गुल्मरोगमहोदरम्।
प्रमेहं सोमरोगञ्च पक्षाघातञ्च शैत्यकम्॥
अशीतिवातरोगांश्च सर्वरोगहरः परः॥ १३७१॥

रसायनप, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, सुहागा, शिंगरिफ, ताम्र और नागभस्म, रससिन्दूर, कुटकी, त्रिकुटु, त्रिफला १-१ कर्ष, शुद्ध जमालगोटा २ कर्ष, शुद्धवछनाग १ कर्ष, केशर ८ माशे, कस्तूरी ४ माशे, लौंग ८ मा, शुद्धकपूर २ माशे लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सहिंजनकीजड़कीछाल और भंगरेकेरसोंसे ३-३ दिन और कालाभंगरा,' कांटेवालीचौलाई, अडूसा, चन्दन, हडजोड़, पान इनसबकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ७ प्रकारकाज्वर, १३ सन्निपात, ८ प्रकारका पाण्डु, श्वास, कास, पीनस, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, गुल्म, जलोदर, प्रमेह, सोम, पक्षाघात, शीतता, ८० प्रकारकेवातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३२७॥

३२८ सर्वलोकाश्रयरसः

शुद्धं सूतं पलं गन्धं गन्धार्धं तालताप्यकम् ।
अमृतं रसकञ्चैव तालकार्द्धविभागिकम् ॥ १३७२ ॥
एतेषां कज्जलीं कुर्यात् दद्यं सम्मर्य वासरम् ।
त्रिदिनं मर्दयेत्पश्चाद् दत्त्वा निम्बुजलं खलु ॥ १३७३ ॥
वटीकृत्य विशोष्याऽथ काचकूप्यां निधापयेत् ।
निष्कतुल्यार्कपत्रेण पिधायाऽऽस्यं प्रयत्नतः ॥ १३७४ ॥
सार्धाङ्गुलमितोत्सेधं मृत्स्नया तां विलेप्य च ।
ततो भाण्डतृतीयांशे सिकतापरिपूरिते ॥ १३७५ ॥
निधाय सिकतामूर्ध्नि सिकताभिः प्रपूरयेत् ।
रुद्ध्वाऽऽस्यं तदधो वह्निं ज्वालयेत्सार्धवासरम् १३७६
स्वाङ्गशीतलितं काचपुटादाकृष्य तं रसम् ।
पट्टचूर्णं विधायाथ ताम्रमभ्रं पलद्वयम् ॥ १३७७ ॥
पलार्द्धममृतञ्चैव मरिचञ्च चतुष्पलम् ।
एकीकृत्य क्षिपेत्सर्वं नारिकेलकरण्डके ॥ १३७८ ॥
साज्यो गुञ्जाद्विमानो हरति रसवरः सर्वलोकाश्रयोऽयं वातश्लेष्मोत्थरोगान्गुदजनितगदं शोषपाण्ड्वामयञ्च । यक्ष्माणं वातशूलं ज्वरमपि निखिलं वह्निमान्द्यञ्च गुल्मं तत्तद्रोगघ्नयोगैः सकलगदचयं दीपनं तत्क्षणेन १३७९

र.र.स., र.मु., र.को., अर्शोऽधिकारे। र.को. अर्शोघ्न इतिनाम,

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, हरिताल और सोनामाखीभस्म २–२ कर्ष, शुद्ध बछनाग और खपरिया १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबूकेरससे ३ दिन मर्दनकर छोटीछोटीगोलिया बनाय सुखाकर ३–४ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमेंभर डाट लगाकर १॥ अङ्गुल कपड़मिट्टी चारोंतर्फ लगाय लोहे अथवा मिट्टीकीनादमें रख शीसेरेहिस्सेतक बालूभरके १॥ दिनकी क्रमवृद्धअग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताम्र और अभ्रक १–१ पल, शुद्धबछनाग २ कर्ष, मरिच ४ पल लेकर सबका कपड़छनचूर्णकर नारियलमें भररक्खे । इसमेंसे २–२ रत्ती घीकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मरोग, बवासीर, शोष, पाण्डु, यक्ष्मा, वातशूल, सबप्रकारके ज्वर, मन्दाग्नि, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२८ ॥

३२९ सर्वसन्निपातनाशकरसः

रसं गन्धं विषञ्चैव धत्तूरं मरिचन्तथा ।
शोधितञ्च तथा तालं माक्षिकञ्च समांशकम् ॥ १३८० ॥
दन्तीक्वाथेन सम्भाव्य गुञ्जामात्रा वटी कृता ।
साध्यासाध्यान्निहन्त्याशु सन्निपातांस्त्रयोदश १३८१

वै. क., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, धतूरेकेबीज, मरिच, हरिताल और सोनामाखी समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर दन्तीकेक्वाथसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२९ ॥

३३० सर्वसिद्धिदावटी

पूर्वसिद्धरसे देवि पादांशं हेम योजयेत् ।
मृतं वज्रं पलांशेन व्योमसत्त्वं प्रयोजयेत् ॥ १३८२ ॥
क्षीरकञ्चुकितोयेन सुरदालीरसेन च ।
विधिना मर्दयित्वा तु नष्टपिष्टन्तु कारयेत् ॥ १३८३ ॥
कान्तचूर्णत्रुटिं दत्त्वा मूकमूषागतं धमेत् ।
गुटिका जायते दिव्या वक्त्रस्था सर्वसिद्धिदा १३८४

रसार्णवे., रसायने ।

भाषा—ऊर्द्ध्वपातनादि और बीजजारणादिकियेहुए १ पल पारेमें सुवर्णबीज और वज्रभस्म १–१ कर्ष, अभ्रकसत्त्व १ पल मिलाकर क्षीरकञ्चुकी और बन्दालकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर कान्तलोहकाचूर्ण १ कर्ष डालकर थोड़ीदेर घोटकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर रखधमनकरनेसे इसकी गोली बनतीहै । इसको मुंहमें रखनेसे समस्तसिद्धियें होतीहै ॥ ३३० ॥

३३१ सर्वसिद्धिप्रदरसः

पातिते स्वेदिते सूते जारयेत्तत्र षड्गुणम् ।
बलिं स्वोपक्रमेणैव यन्त्रे भूधरके ततः ॥ १३८५ ॥
जीर्णगन्धरसेशं तं खल्वे दत्त्वा विमर्दयेत् ।
विष्णुक्रान्तारसेनैव छत्रपर्णीसलिलैस्तथा ॥ १३८६ ॥
देवदालीरसैस्तद्वन्मूहकन्यारसैस्तथा ।
काकमाचीकृष्णधूर्त रक्ता च खरमञ्जरी ॥ १३८७ ॥
तिलच्छदा तथा ब्राह्मी शोफघ्नी मेघनिःस्वना ।
चाङ्गेरीनागवल्ली च मुनिपुष्परसोऽग्निकः ॥ १३८८ ॥
मुद्गाली रक्तरुद्धिश्च रामठं हलिनी तथा ।
अग्रसूतरवर्धमूषं तथैवोत्तरवारुणी ॥ १३८९ ॥
इन्द्रवारुणिका चैव हंसपादी कुबेरदृक् ।
प्रस्तरी च शिलाभेदी सस्यारि मत्स्यलोचना १३९०
वज्रवल्ली वज्रकन्दो वज्रदुग्धं तु दुग्धिनी ।
सोमवल्ली सूर्यभक्ता लज्जालुश्च रुदन्तिका ॥ १३९१ ॥
मर्कटी वृश्चिकदला पुरीषं खञ्जरीटजम् ।
पारावतस्य विष्ठा च मूलतानीरमेव च ॥ १३९२ ॥
पलाशमूलकक्वाथः कञ्चुकी खर्जुरूरणम् ।
शतावरी गोक्षुरकं पाठा च यवचिञ्चिका ॥ १३९३ ॥
मृतसञ्जीवनिता सर्पाक्षी काकतुण्डिका ।
ब्राह्मी मण्डूकपर्णी च भानुमूलरसस्तथा ॥ १३९४ ॥
कुक्कुटी नागिनी नागो जयाऽथ फणिमारकः ।
अश्वमाररसो व्याघ्री बृहती विषतिन्दुकः ॥ १३९५ ॥
शरपुङ्खा सहचरी द्रोणपुष्पी च शाल्मली ।
कोविदारो महानीली नीली च गरुडी तथा ॥ १३९६ ॥
गोपी नागबला चन्द्रवल्ली च सितभारती ।
महाराष्ट्री शिखिशिखा योषित्कुसुममेव च ॥ १३९७ ॥

अश्वगन्धा चक्रमर्दः शिग्रुश्च त्रिवृता निशा।
प्रत्यक्पर्णी वाकुची च जयपालश्च फल्गुकः ॥१३९८॥
शाकवल्ली पटोलश्च क्वाथश्च त्रिफलोद्भवः।
बहुपुष्पी निकोचश्च द्रवैरेषां विमर्दयेत् ॥ १३९९ ॥
व्यस्तैः समस्तैः सम्मर्द्द्यौ मासौ च निरन्तरम्।
कल्कीभूतश्च तं सूतं यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ॥ १४०० ॥
मृदुमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेदधः।
उपविंशांश्च दिवसान् स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ १४०१ ॥
यन्त्रे निर्भिद्य गृह्णीयात्तं सूतं भस्मतां गतम्।
एतद्भस्म स्पर्शमात्राद्वङ्गं भस्मी भवेत्क्षणात् ॥१४०२॥
भस्मीभवन्ति लोहानि रससम्पर्कतो ध्रुवम्।
अनेन भस्मना सर्वान् सत्त्वसङ्घांश्च मारयेत् ॥१४०३॥
एतस्य भस्मनो देया भावना ज्वरवारणे।
मत्स्यादिकानां पित्तानां दशानां वत्सनामजा १४०४
हृत्पर्णीकृष्णधत्तूरैस्त्रिजगद्विजयारसैः।
महाराष्ट्री तिलदला मण्डूकी तुलसी तथा ॥ १४०५ ॥
एतैः सम्भाव्य सूतेन्द्रं पित्तैः पश्चाद्विभावयेत्।
वत्सनाभं समं दद्याद्रक्तशृङ्गीं स्वरांशतः ॥ १४०६ ॥
आदित्यभागं हारिद्रमष्टांशं मेषशृङ्गिकम्।
वेदभागं सक्तुकञ्च दद्यात्सूतञ्च भावयेत् ॥ १४०७ ॥
रक्तशृङ्ग्या च सहितो यदि स्यात्पारदेश्वरः।
राजसर्षपमात्रेण सन्निपातं विसञ्ज्ञकम् ॥ १४०८ ॥
निहन्याच्छीततोयानि ढालयेच्छैत्यसम्भवः।
कम्पो भवेच्च सर्वाङ्गे यावत्तावद्विचक्षणः ॥ १४०९ ॥
सर्षपद्वयमात्रेण हार्दिके दापयेद्रसम्।
सर्षपत्रयमात्रेण मेषशृङ्गीयुतं रसम् ॥ १४१० ॥
राजीचतुष्टयं दद्यात्सक्तुकेन च संयुतम्।
तत्सन्तानयुतं दद्याद्गुडामलकेन वा रसम् ॥ १४११ ॥
न न्यूनं नाधिकं देयं शुभेच्छुर्भिषगुत्तमः।
उपचारश्च पूर्वोक्तो यथा लङ्केश्वरे तथा ॥ १४१२ ॥
अनुपानप्रकारं तु रसेन्द्रस्य यथाक्रमम्।
ज्वरादिसर्वरोगेषु शास्त्रयुक्त्या शिवोदितम् ॥१४१३॥
किराततिक्तक्वाथेन ज्वरान्सर्वान्निहन्त्यसौ।
क्षयरोगं निहन्त्येष मुक्ताभस्मसमन्वितः ॥ १४१४ ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन रसं दत्त्वाऽनुपाययेत्।
धारोष्णमर्जुनोदुग्धं तवराजयुतं तथा ॥ १४१५ ॥
कणागुग्गुलुयोगेन पाण्डुरोगं निवारयेत्।
लोहभस्मसमायुक्तस्त्रिफलाचूर्णसंयुतः ॥ १४१६ ॥
सूरणाम्भोऽनुपानेन सर्वार्शो जयति ध्रुवम्।
सूतेन्द्रं वङ्गजं भस्म भागैरष्टभिरन्वितम् ॥ १४१७ ॥
प्रलिह्य मधुना सार्धं मधुधात्रीरसानुपः।
प्रमेहान्वै शुक्रमेहवर्ज्यं सर्वाञ्जयेद्ध्रुवम् ॥ १४१८ ॥
शुक्रमेहे रसं जग्ध्वा हरिद्राया रसं पिबेत्।
वातव्याधिषु युञ्जीत व्योषसिंहीरसैः समम् ॥१४१९॥
अश्मर्यां पूर्वयोगः स्यान्मूत्रकृच्छ्रे च पूर्ववत्।
कुष्ठे सूतं नियुञ्जीत भस्मना ताम्रजेन वै ॥ १४२० ॥
उत्क्लेदभेदम्रमिभि विमुक्तं दोषवर्जितम्।
निरुत्थं खदिरक्वाथवाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ १४२१ ॥
सर्वकुष्ठं निहन्त्येष रसेन्द्रो नात्र संशयः।
अथवा निम्बजं चूर्णं पञ्चाङ्गं भावयेज्जलैः ॥ १४२२ ॥
निम्बक्वाथभवैस्तद्वत्क्वाथैः खदिरसम्भवैः।
सप्त सप्त विभाव्याथ षष्ठांशं लोहभस्मकम् ॥१४२३॥
षड्भिः प्रमुच्यते मासैः सर्वकुष्ठान्न संशयः।
गुल्मे क्षारैः समं देयः शूलेऽथ परिणामजे ॥ १४२४ ॥
ताम्रभस्म समायुक्तः पटुक्षारादिसंयुतः।
दातव्यो रसराड्हन्ति सर्वं शूलमसंशयम् ॥ १४२५ ॥
अथवा सर्वरोगेषु प्रयोगोऽयं निरूप्यते।
शिलाजतुसमायुक्तो गन्धमाक्षिकयोजितः ॥१४२६॥
षड्लोहभस्मभिर्युक्तो घृतेन मधुना युतः।
सर्वान्रोगान्निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ १४२७ ॥
चिराभ्यासबलेनैव वलिञ्च पलितञ्जयेत्।
अजरामरतां याति सर्वदा सेवनान्नरः ॥ १४२८ ॥
पथ्यक्रमस्तु पूर्वोक्तो वर्जयेच्छयनं दिवा।
रात्रौ जागरणं नैव कुर्वीत विषमाशनम् ॥ १४२९ ॥
नोद्धाटयेद्यक्षरक्षःपिशाचग्रहडाकिनीः।
आरनालञ्च मद्यञ्च रसान्तरमुपागतम् ॥ १४३० ॥
ओदनं नैव भुञ्जीत माहिषं दधि वर्जयेत्।
तत्क्षीरं तद्घृतं तज्जं तक्रं यत्नाद्विवर्जयेत् ॥ १४३१ ॥
यावनालञ्च तैलञ्च तैलपक्वं तिलास्तथा।
वर्जयेदतियत्नेन कारवेल्लञ्च चिर्भटम् ॥ १४३२ ॥
कालिङ्गमथ कूष्माण्डं कर्कोटी च कलिङ्गकम्।
इत्यादि सर्वं वर्ज्यं स्याद्रतिहास्यमपि क्रुधः ॥१४३३॥
अतिभोजननिद्रे च घनोष्णमतिशीतलम्।
अतिवातो विवर्ज्यः स्यादातपं सर्वथा त्यजेत् ॥१४३४
प्रवाते च गृहे तिष्ठेद्रोगघातमपेक्षकः।
अयं रसेश्वरः सर्वसिद्धिप्रदसञ्ज्ञकः ॥ १४३५ ॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ १४३६ ।
रसार्ण., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—ऊर्ध्व, अधः और तिर्यक् पातनकरके यथासम्भव काञ्जिकादिकमें स्वेदनकियेहुए पारेमें षड्गुणगन्धकका भूधरयन्त्र प्रभृतिसे जारणकर तप्तखरलमें डालकर विष्णुकान्ता, हंसपर्ण (लताविशेष अथवा अम्लोनियां), वन्दाल, घीकुंवार, मकोय, कालाधतूरा, लाल अपामार्ग, हुरहुर, ब्राह्मी, पुनर्नवा, कटेवाली चौलाई, तिपतिया, पान, अगस्त्य, सफेदचित्रक, मुसली, लालचित्रक, हींग, करिहारी, बछड़ीकामूत्र, समारदूधी, इन्द्रायण, हंसराज, कंजा, पथरी, पाषाणभेद, अगियाघास, मछेछी, हड़जोड़, वज्रकन्द, सेहुण्डकादूध, दूधी, पहाड़ीखीप, सूर्यमुखी,

लज्जालु, रुदन्ती, केवाच, बिछुआघास, खञ्जरीट और कबूतरीकी विष्ठा, केंचुए, पलाशकीजड़कीछाल, कन्चुकी, खजूर जङ्गलीसूरण, शतावर, गोखरू, पाठा, जेंती, गिलोय, प्रियङ्गु, सर्पाक्षी, काकनासा, लालफूलकी ब्राह्मी, मण्डूकपर्णी, आककी जड़कीछाल, कुक्कुटशिखा, नागदौन, चित्रपर्णी, (पृश्निपर्णी) भाग, फणिमार (विट्खदिर), कनेर, दोनोंभटकटैया, कुचिला, सरफोंका, कटसरैया, गूमा, सेंमल, लालफूलका कचनार, दोनोंनील, गरुडबूटी (हिमालयमें इसीनामसे प्रसिद्धहै), अनन्तमूल, नागबला, चादमोगरा, सफेदफूलकी ब्राह्मी, मराठी, मोरशिखा, खीरज, असगन्ध, चकवड, सहिजन, निसोत, हल्दी, घनसर (मराठी), बाकुची, जमालगोटा, कठूमर, मदर, परवल, त्रिफला, बहुपुष्पी, चिलगोजा, इनसबके ययासम्भव स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकरे। अथवा सबको इकट्ठीमिलाय इनकेस्वरससे २ महीनेतक निरन्तर मर्दनकर डमरूयन्त्रमें रखकर मृदु, मध्य और खर इसक्रमसे २१ दिनकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पारेकी भस्मको निकालकर रखले । किसीमारकद्रव्यकेसाथ मिलाकर इसभस्मका हीरे अथवा किसीभी लोहपर लेपकरके आचदेनेसे वह फूलजाताहै। इससे तमामधातु और सर्वोकी कीहुई भस्म कल्पोक्तगुणको देतीहै । इसपारदभस्ममें ज्वरकेलिये मत्स्यादि १० पित्त, बछनाग, हत्पर्णी, कालाधतूरा, भाग, मराठी, हुरहुर, मण्डूकपर्णी और तुलसीकी १-१ भावनादेकर पांचपित्तोंसे फिर भावना देकर समभाग बछनाग और सोल्हवा भाग लालबछनाग, १२ वा भाग हारिद्रक और आठवाभाग मेपशृङ्गिक, चतुर्थांश सक्तुक विष अलग २ मिलाकर रखछोड़े। लालबछनाग मिलाया हो तो सर्षपके बराबर मात्रा सञ्ज्ञारहित सन्निपातमें देकर मत्थेपर ठंडेजलकीधारा कम्पहोनेतक देवे। हारिद्रक मिलायाहोतो दो सर्षपभरमात्रा, मेपशृङ्गिकमिलाया हो तो ३ सर्षप, सक्तुक मिलाया हो तो ४ सर्षप और बछनाग मिलाया हो तो १ रत्तीकी मात्रा देवे। इसमें न्यूनाधिकता न करे। उपद्रवोंकी शान्ति लङ्केश्वरोंकी तरह करनीचाहिये। चिरायतेकेक्वाथसे समस्तज्वरोंको और मोतीकेसाथदेनेसे समस्तक्षयोंको नष्टकरताहै। क्षयमें २ रत्ती रस देकर धारोष्ण गायके दूधमें १ माशा वंसलोचन डालकर पिलावे। पीपल और गूगलकेसाथदेनेसे पाण्डुरोगको नष्टकरताहै। लोहभस्म और त्रिफलाके चूर्णकेसाथदेकर सूरणकास्वरस पिलानेसे समस्तबवासीरोंको यह नष्टकरताहै। १ रत्ती पारदभस्ममें ८ रत्ती वङ्गभस्म मिलाकर मधुकेसाथचाटकर मधु और आंवलेकारस-पीनेसे शुक्रमेहको छोड़कर समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै। मधुकेसाथ रसको देकर हल्दीकास्वरस पिलानेसे शुक्रमेह, तथा निकटु और भटकटैयाकेरसकेसाथदेनेसे वातव्याधियोंको नष्टकरताहै। पथरी और मूत्रकृच्छ्रमें प्रमेहका अनुपानदेना। वान्तिभ्रान्त्यादिवर्जित ताम्रभस्मकेसाथ देकर बाकुचीके चूर्णका प्रक्षेपदिया हुआ खैरकाक्वाथ पिलानेसे समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै। अथवा नीमके मदसे भावना दियेहुए नीमकेपञ्चाङ्गकेचूर्णमें नीम और खैरकेक्वाथोंकी ७-७ भावनाएं देकर छठाहिस्सालोहभस्म मिलाकर रखछोड़े।। इसकेसाथ रसकाप्रयोग करनेसे ६ महीनेमें समस्तकुष्ठोंसे निवृत्तहोजाताहै। गुल्ममें क्षारोंकेसाथ, परिणामशूलमें ताम्रभस्मकेसाथ तथा पाचोंनमक और क्षारोंकेसाथ-देनेसे तमामशूल नष्टहोतेहै। शिलाजीत, गन्धक, सोनामाखी, ६ लोहोंकीभस्मोंकेसाथ मिलाकर घी और मधुकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै अधिकदिनके अभ्याससे वलीपलितादिक निवृत्तहोतेहै। निरन्तरके अभ्याससे अजरामरहोताहै। दिनका सोना, रातका जगना और विषमाशन, यक्ष, राक्षस, पिशाच, ग्रह और डाकिनियोंका निकालना, काञ्जी, बिगड़ाहुआ मद्य और अन्यरसकासेवन, भात, भैंसका दही, दूध, घी और छाछ, ज्वार, मद्यी, तैलकपदार्थ, तिल, करेला, कचरे, करौंदा, कोंहला, ककोड़े, इन्द्रजव, अत्यन्तखैसी, क्रोध, अतिभोजन, निद्रा, अत्यन्त गरम या ठंडा, अत्यन्तवायु, धूप इनसबकायत्नसे परित्यागकरे और खुलीहवामें रहे ॥ ३३१ ॥

३३२ सर्वसुन्दररसः (प्रथमः)

पातयेत्स्वेदयेत्सूतं जारयेद्धेमदानचौ ।
प्रागुक्तमानतः पश्चाच्छिलां सञ्जारयेत्समाम्॥१४३७॥
तालं ताम्रं समांशेन जारयित्वाऽथ पारदम् ।
चतुःपलमितं नीत्वा तालताप्ये मनःशिला ॥१४३८॥
मृतं ताम्रं तथैतानि सूततुल्यानि योजयेत् ।
पञ्चानां लवणानाञ्च पलानि दश योजयेत् ॥१४३९॥
तालमेकं हेमभस्म सूतेन सह मर्दयेत् ।
ततस्तत्सर्वमेकत्र मर्दयेदौषधीद्रवैः ॥ १४४० ॥
जयन्तीसलिलैः पूर्वं रक्तक्षिण्टिकवारिणा ।
सिंहास्यनीरैः सम्मर्द्य चिपतिन्दुकवारिणा ॥१४४१॥
अरणीसलिले नीरैं र्वर्वरीजैश्च मर्दयेत् ।
महाराष्ट्रीजलैः कृष्णधत्तूरजरसैस्ततः ॥ १४४२ ॥
वत्सनाभस्य नीरेण मर्दयित्वा दिनं दिनम् ।
तैरेव पुटयेत्पूर्वक्रमेणैव रसेश्वरम् ॥ १४४३ ॥
खल्वे निःक्षिप्य सञ्चूर्ण्य स्थापयेद्दृतियत्नतः ।
सर्वसुन्दरनामाऽयं रसेन्द्रो गुल्मशूलहा ॥ १४४४ ॥
समर्च्य भैरवं सूतं गुल्मिने सम्प्रयोजयेत् ।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन शुण्ठीघृतसमन्वितम् ॥ १४४५ ॥
द्विदलं वर्जयेत्सर्वं पथ्ये रूक्षाशनं तथा ।
एकमासप्रयोगेण सर्वान्गुल्मान्निवारयेत् ॥ १४४६ ॥
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथ्यते शास्त्रमार्गतः ।
शुण्ठ्याः पलानि पञ्चाशत्पिष्ट्वा वस्त्रेण गालयेत् ।
चूर्णाद्विंशगुणे नीरे चूर्णं तच्च विनिःक्षिपेत् ।
वासयित्वा दिनैकञ्च क्वाथयेन्मन्दवह्निना ॥ १४४८ ॥
चतुर्थांशेऽवशिष्टेऽथ क्वाथं वस्त्रेण गालयेत् ।
गालितक्वाथमध्येऽथ शुण्ठीमानं घृतं क्षिपेत्॥१४४९॥

पचेन्मृद्वग्निना धीमान् यावच्छिष्येत वै घृतम्।
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथितः सम्प्रदायतः॥ १४५० ॥

रसाल, र. मृ, गुल्मे

भाषा—ऊर्ध्वादिपातितकियेहुएपारेमें सुवर्ण, गन्धक, मैनसिल, हरिताल, ताम्र येसब सम्भागमें जारणकर ४ पललेवै। फिर शुद्धहरिताल, सोनामाखी, मैनसिल, ताम्रभस्म येसब ४–४ पल और पाचोंनमक २–२ पल लेवे। इनमेंसे १ कर्ष हरितालको अलगलेकर १ कर्षसुवर्णभस्म मिलाकर पारेका ३–४ दिनतक मर्दनकरे फिर अन्यवस्तुओंकी कज्जलीकर मिलावे। इसकेबाद जेंती, लालकटसरैया, अड़सा, कुचिला, अरणी, बबई, मराठी, कालाधतूरा और बछनाग के यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदेवे। ऐसेप्रत्येकरसके मर्दनकेबाद पुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भैरवका पूजनकर रखछोड़े। इसमेंसे ४ रत्तीकीमात्रा शुण्ठीघृतकेसाथदेनेसे १ महीनेमें गुल्म नष्टहोताहै। इसमें सबप्रकारकी दाल और रूक्षभोजनका परित्यागकरे। ५० पल सोंठका चूर्णकर २० गुने पानीमें डालकर एकदिनरात रखछोड़े। फिर मन्दाग्निसे चतुर्थांशावशेष क्वाथबनाकर छानले। फिर ५० पल गायकाघी डालकर मन्दाग्निसे पकावे। घृतमात्र अवशेषरहनेपर छानकर रखछोड़े। इसीकानाम शुण्ठीघृतहै॥

३३३ सर्वसुन्दररसः (द्वितीयः)

गोमूत्रे त्रिफलाक्वाथे तप्त्वा तप्त्वा विनिक्षिपेत्।
मण्डूरं भस्मसात्कृत्वा चत्वारिंशच रक्तिकाः॥१४५१॥
पञ्चानां लवणानाञ्च वल्लानां शतमाहरेत्।
मर्दयेच्च रसं भस्म हेम्नो गुञ्जाचतुष्टयम्॥ १४५२ ॥
जयन्ती मण्डुकी वासा विषतिन्दु जयाभिधा।
बर्वरी च महाराष्ट्री धत्तूरो वत्सनामकः॥१४५३॥
भावयेत्स्वरसैरेषां पुटे स्वल्पे विनिःक्षिपेत्।
सर्वसुन्दरनामाऽयं गुल्मशूलविनाशनः॥ १४५४ ॥
गुञ्जा चतुष्टयञ्चास्य शुण्ठीघृतसमन्वितम्।
दापयेद्रोगिणं वैद्यो द्विदलञ्च विवर्जयेत्॥ १४५५ ॥

र मृ, गुल्मे।

भाषा—गोमूत्र और त्रिफलाके क्वाथमें गरमकरके बुझाकर भस्मकिया हुआ मण्डूर ४० रत्ती, पाचोंनमक ६०–६० रत्ती, पारा और सुवर्णभस्म ४–४ रत्ती मिलाकर जेंती, गोरखमुण्डी, अड़सा, कुचिला, भांग, बबई, मराठी, धतूरा, बछनाग इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन घोटकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदेकर शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती शुण्ठीघृतकेसाथ देनेसे गुल्म और शूल नष्टहोतेहैं। तमाम दालोंसे परहेजकरे। शुण्ठीघृत पूर्वयोगमें कहागयाहै॥ ३३३ ॥

३३४ सर्वसुन्दररसः (तृतीयः)

सूतगन्धविषमेव कारयेन्नागवृद्धमथ मर्दयेत्ततः।
आर्द्रवह्निजरसेन यत्नतःपाचितो हि लवणाख्ययन्त्रके॥
भक्षितो हि किल वल्लमात्रया
क्षौद्रकेण सह पिप्पलीयुतः।
पूर्णचन्द्रवदयं हि सेवितो
यक्ष्महा भवति वातरोगहा॥ १४५७॥

र. प्र. सु, यक्ष्मणि।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग क्रमवृद्धभागसे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरख और चित्रकके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती पीपल और मधुकेसाथ सेवनकर पूर्णचन्द्रकीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ३३४

३३५ सर्वसुन्दररसः (चतुर्थः)

हेमतारखिपत्रिकां भृशं पूर्ववच्च परिपाचयेत्ततः।
सूतभस्म विषगन्धकान्वितं मर्दयेत्तदनु तद्विभावयेत्॥
चित्रकार्द्रकरसेन तत्क्षणं लोहपात्रकुहरे ततः पचेत्।
सर्वसुन्दररसेश्वरं स्विमं योजयेन्निगदितानुपानतः॥
सर्वरोगविनिवृत्तिदो भवेद्रोगयोगविनियोजितो द्रुतम्

र. दी, र. चं, र. (भा), राजयक्ष्मणि।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रके बारीकपत्रोंकी सूतकजीवनरस (सं. ६४८) के विधानसे अलग २ भस्मकर इनकी बराबर २ पारदभस्म, शुद्ध बछनाग और गन्धक मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर चित्रक और अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर कड़ाहीमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे और लोहेकीकड़छीसे चलातारहे। जल सूखजानेपर निकालकर घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहराऽनुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै ३३५

३३६ सर्वसुन्दररसः (पञ्चमः)

रसं तालं शिलां ताप्यं ताम्रं पञ्च पटूनि च।
द्विशाणिकानि वज्रस्य माषं सञ्चूर्ण्य भावयेत् १४६०
जयन्तीबदरीवासाविषतिन्दुजयाधवैः।
समटङ्कणजे द्रावे महाराष्ट्रीसुवर्णजैः॥ १४६१ ॥
शुष्कं लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
रक्तिकैकां ततः खादेदस्माच्छुण्ठीघृतान्विताम्॥
भुक्तं विवर्जयेत्तावद्गुल्मशूलविनाशनः॥ १४६२ ॥

र सं, शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मैनसिल और सोनामाखी, ताम्रभस्म, पाचोंनमक ८–८ मासे, वज्रभस्म १ माशा लेकर बारीकचूर्णकर जेंती, बेरकीछाल, अड़सा, कुचिला, भांग और धव, समभाग सुहागेका द्रव, मराठी, धतूरा इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४कपड़मिटी देकर सूखनेपर लघुपुटकी आचदे। इसमेंसे १–१ रत्ती शुण्ठीघृतकेसाथखानेसे गुल्म और शूल नष्टहोताहै। रोगसे निर्मुक्तहोनेतक अन्न न खावे केवल दूध और फलोंपर रहे॥

३३७ सर्वसुन्दररसः (पथ्यः)

गद्याणैकं सुकर्पूरं कनकं कङ्गुणीं पुरम् ।
तोलैकैकं समादाय सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४६३ ॥
हेमाह्वा सर्पगरलैरेकैका भावना भवेत् ।
अहिफेनरसस्यापि शृङ्गीविषसमुद्भवैः ॥ १४६४ ॥
वृक्षादन्या भवेदेका शोषयित्वा पुनः पुनः ।
मयूरमत्स्यमहिषपित्तानामत्र भावना ॥ १४६५ ॥
आटरूषरसेनाऽपि मुद्गमाना वटीश्चरेत् ।
सन्निपाते पुरा देया त्रिदोषोत्थे विशेषतः ॥ १४६६ ॥
ज्वरे घोरे क्षये कासे हिक्कारोगे च शस्यते ।
प्लीहायां यकृतीत्येवमुदरेषु च दीयते ॥ १४६७ ॥
गलग्रहे ग्रहण्यां तमतिसारे प्रयोजयेत् ।
अयमर्शःसु देयः स्याद्वातजेषु पुनः पुनः ॥ १४६८ ॥
कफजेषु तथा द्वन्द्वसमुद्भूतेषु दीयते ।
रोगयोग्यानुपानेन दातव्यः सर्वसुन्दरः ॥ १४६९ ॥
नारङ्गं शर्करां द्राक्षां दधिरम्भाफलन्तथा ।
शृतं दुग्धं प्रयुञ्जीत भक्तं नक्तं प्रशस्यते ॥ १४७० ॥
तनौपयौगिकं यच्च प्रयोज्यं तद्भिषग्वरैः ।
शीतलं सलिलं दद्यात्सुवासकुसुमानि च ॥ १४७१ ॥
अतितापो भवेदङ्गे घृताक्तं शीतवारिणा ।
स्नापयेद्रोगिणं पश्चात्ततोऽसौ लभते सुखम् ॥१४७२॥

रससं , र. का., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धकपूर ६ माशे, शुद्धधतूरेकेबीज, मालकांगनी और गूगल १–१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर रेवनचीनी अथवा सत्यानाशी, सर्पविष, अफीम, बछनाग, थूअर इनके द्रवोंसे और मोर, मछली, भैंसा इनके पित्त तथा अडूसेकेरससे १–१ भावना देकर मूंगबराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषोत्थसन्निपात, भयङ्करज्वर, क्षय, कास, हिचकी, प्लीहा, यकृत्, उदररोग, गलग्रह, ग्रहणी, अतिसार, बवासीर, वातज, कफज और द्वन्द्वजरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । नारङ्गी, शकर, द्राक्ष, दही, केले, औटाहुआ दूध इनमेंसे औचित्ती देखकर देवे । अत्यन्त भूखलगनेपर रात्रिमें भोजनदे । अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर घीका अभ्यङ्गकर ठंडेजलकी धारादे । अच्छेवस्त्र और सुगन्धितपुष्पोंकीमाला पहिनावे ॥ ३३७ ॥

३३८ सर्वाङ्गसुन्दररसः (प्रथमः)

वह्न्यश्वत्थभवं चूर्णं त्रयोदशविभागिकम् ।
दशाङ्गो टङ्कभागाश्च शङ्खभस्म तथा भवेत् ॥ १४७३ ॥
त्रयोदश द्वादश च रसः स्यादमृतं त्रयम् ।
चिञ्चापक्वफलत्वक्च गन्धो द्वादशभागिकः॥१४७४॥
शृङ्गवेरद्रवै र्भाव्यमेकविंशतिवारकम् ।
सर्वाङ्गसुन्दरं नाम्ना सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १४७५॥
अनुपानन्तु ताम्बूलं त्रिदोषे सन्निपातके ।
आर्द्रकं त्वनुपानं स्याद्विशिष्यान्यत्प्रदापयेत् ॥१४७६॥

र. क यो., सन्निपाते ।

भाषा—चित्रकमूल और पीपलकीछाल १३–१३ भाग, भुनासुहागा १० मा., शङ्खभस्म २ भा , शुद्धपारा १३ भा , बछनाग १२ भा., पकीइमलीकेछिलके ३ मा., शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे २१ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे त्रिदोषजसन्निपात नष्टहोताहै । अनुपानविशेषसे तमामज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ सर्वाङ्गसुन्दररसः (द्वितीयः)

रसालनागशैलानि तुत्थं गन्धकसोमलम् ।
सहदेवीनिम्बयिम्बीरसैः सप्त च सप्त च ॥ १४७७ ॥
दिनानि सम्मर्द्य दृढं कूप्यां द्वात्रिंशयामकम् ।
वह्निशीतो मेहहरो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १४७८ ॥

र. का , प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मैनसिल, तुत्थ, गन्धक और सोमल, नागभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सहदेवी, नीमकीछाल और कुंदरूकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर सुखाकर फिरसे कज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर ३२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेह और ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ३३९॥

३४० सर्वाङ्गसुन्दररसः (तृतीयः)

गन्धं रसञ्च तुल्यांशौ द्वौ भागौ टङ्कणस्य च ।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम् ॥ १४७९॥
हेमभस्मार्द्धभागञ्च सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
निम्बुद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत्ततः ॥१४८०॥
पश्चाद्गजपुटं दत्त्वा सुशीतञ्च समुद्धरेत् ।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम् ॥ १४८१ ॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे ॥ १४८२ ॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥ १४८३ ॥
अर्शःसु ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ।
निहन्ति वातजान्रोगांश्श्लैष्मिकांश्च विशेषतः॥१४८४॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा ।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥ १४८५ ॥

र स , र च , र.सु , र र., ध , भै र , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १–१ भाग, सुहागा २ मा , मोती, प्रवाल और शङ्खभस्म १–१ मा., सुवर्णभस्म आधाभाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे १–२

दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३–४ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णभस्मकीबराबर लोहभस्म और लोहसे आधा शुद्धशिंगरिफमिलाकर १–२ दिन घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकोमात्रा पीपलमधु, घी., पानकारस, शक्कर और अदरखकारस इनमेंसे औचिनी देखकर किसी एक अनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, घोरवातपित्तज्वर, भयङ्कर सन्निपात, बवासीर, सङ्ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वात और कफजरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥३४०॥

३४१ सर्वाङ्गसुन्दररसः (चतुर्थः)

अभ्रगन्धकरजः पृथगच्छं
तिन्तिरीफलविपाक्ष्युतञ्च ।
सम्विमर्द्य फणिवल्लिदलेषु
स्वास्तृतेष्वधिपडङ्गुलगर्ते ॥ १४८६ ॥
सन्निधाय रसकल्कमधोर्द्धे तद्दलैः खरयत्नपिधानम् ।
सन्निधाय लघुवह्निकरीषे दापयेत्पुटमथाहृतमेतत् ॥
साहिवल्लिदलमुस्त्ययुगेन प्राग्विवान्वितमथातिविमर्द्य ।
रक्तिकामितमथार्द्रकवारा चित्रकोपणवरैः सह दद्यात् ॥
वाताग्निसादगुदजातिसृतित्रिदोष-,
नानासमज्वरहरो दधिभक्तपथ्यः ।
सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो रसोऽय-,
मार्यैः पुरातनभिषग्भिरुदीरितस्तु ॥१४८९॥

यो चं., वाताग्निमान्द्यार्शे सु ।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, जमालगोटा और बछनाग, यहेश १–१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय पत्तेपानोंमें लपेटकर डोरेसे लपेटकर गेंदकेसदृश बनाय ६ अङ्गुलके गर्तमें पानोंक्वेबीचमें रख गर्तकेमुंहपर अच्छीतरह पानोंकीतह बिछाकर जङ्गलीकण्डोंके टुकड़ोंका बहुतहल्का पुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दोनों मोथोंकाचूर्ण १–१ तोलामिलाय पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली चित्रक, मरिच और त्रिफलाकेसाथ देनेसे वातविकार, मन्दाग्नि, बवासीर, अतिसार, त्रिदोष, नानातरहकेज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दहीभात देना ॥ ३४१ ॥

३४२ सर्वाङ्गसुन्दररसः (पञ्चम)

शुद्धसूताभ्रताम्रायो हिङ्गुलं कार्षिकं समम् ।
गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४९० ॥
सप्तपर्णार्कस्नुक्क्षीरवासायातारिवारिणा ।
विषमुष्टिसमं सर्वं पेष्यं तद्गोलकीकृतम् ॥ १४९१ ॥
विपचेद्वालुकायन्त्रे द्वियामान्ते समुद्धरेत् ।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥
सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलनिषूदनः ॥ १४९२ ॥

र. सं , र. सु , भ , र क. वातव्याधौ ।

टि०—शुद्धसूताभ्रताम्राय इत्यादिना सर्वसुन्दरनाम्ना इममेव रस व्यत्यस्य रसेन्द्रकल्पद्रुमे पाठान्तर स्थापित सोऽपि मिलत इति न विस्मरणीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रक, ताम्र और लोहभस्म, शुद्ध शिंगरिफ और गन्धक १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर छतिवन, आक और थुअरकेदूध, अड्सा और एरण्डके स्वरसोंमें १–१ दिन मर्दनकर समभाग शुद्धकुचिलेकाचूर्ण मिलाकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिटी देकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोने पर निकालकर १–१ भाग पीपल और शुद्धबछनागकाचूर्ण मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार और शूलोंको यह नष्टकरताहै॥

३४३ सर्वाङ्गसुन्दररसः (षष्ठः)

शुद्धं सूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।
रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लोहमभ्रं सनागरम् ॥ १४९३ ॥
चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वन्तु तुल्यकम् ।
गन्धकं सर्वतुल्यांशं रसैरेषां विभावयेत् ॥ १४९४ ॥
शुण्ठीजयन्तीविजयामहाराष्ट्रिकधूर्तजैः ।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥१४९५॥
खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां वल्लमात्रं दिनेदिने ।
कफवातामयं हन्ति चानुपानं वदाम्यहम् ॥ १४९६ ॥
व्योषं सौवर्चलं हिङ्गु करञ्जबीजसंयुतम् ।
पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥ १४९७ ॥

र. स., र. च , र. सु , ध , शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, मैनसिल, सोनामाखी, हरिताल, रजत, सुवर्ण, बङ्ग, लोह और अभ्रक इनकीभस्में, सोंठ, पांचोंनमक, सबसमभाग, शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सोंठ, जैंती, भाग, मराठी और धतूरेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली एरण्डमूलऔर सोंठकेसाथ देनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै । त्रिकटु, संचल, भुनीहींग, करञ्जबीज समभागके चूर्णकेसाथ लेकर गरमपानीपीनेसे समस्तशूल नष्टहोतेहैं ॥३४३॥

३४४ सर्वाङ्गसुन्दररसः ७

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।
चूर्णयेत्पञ्चलवणानेतद्द्वाकतुल्यकम् ॥ १४९८ ॥
मृतं स्वर्णञ्च निक्षिप्य सूतादृशमभागिकम् ।
सूततुल्यं वत्सनाभं चूर्णं भाव्यं दिनावधि ॥ १४९९ ॥
विषशुण्ठीजयावासा विजयारक्तशाकिनी ।
बदरीत्वङ्महाराष्ट्रीद्रवैर्धत्तूरजैस्तथा ॥ १५०० ॥
रुद्ध्वा तुषपुटे पक्त्वा समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
सर्वाङ्गसुन्दरं नाम रसं गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १५०१ ॥
भक्षयेद्दत्तशुण्ठीभ्यां शूलगुल्मौ निकृन्तति ।
भावयेद्भक्षयेन्माषं मुद्राल्यार्द्रकजै द्रवैः ॥ १५०२ ॥

अनुपानं लिहेद्विस्यं कफशूलप्रशान्तये ।
अनुपानं शूलहरं योजयेद्रोगशान्तये ॥ १५०३ ॥

र. को., नि. र., र. र., शूले ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धमैनसिल, सोनामाखी और हरिताल, पांचोंनमक येसब समभाग, सुवर्णभस्म पांचो दशमांश और शुद्धबछनाग पारेकीबराबर मिलाय बारीकचूर्णकर बछनाग, सोंठ, ओस्हुल, अडूसा, भांग, मरुआ, बेर, मराठी, धतूरा इनसबकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-४ कपरमिटी देकर सूखनेपर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ४-४ रत्ती घी और सोंठकेसाथ खानेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं । मुसली और अदरखकी भावना देकर १ माशालेनेसे कफशूल नष्टहोताहै । शूलविशेषोंमें औचिती देखकर अनुपान बदलदेना ॥

३४५ सर्वाङ्गसुन्दररसः (अष्टमः)

मृतशिला द्रुते गन्धे चतुःपाणितलोन्मिते ।
लोहमृताभ्रमेकैकं क्षिप्त्वा समपतारयेत् ॥ १५०४ ॥
मागधी मरिचं हिङ्गु दीप्यजीरकचित्रकाः ।
कर्षैकैकं विषं चूर्णं कृत्वा रसे ततः क्षिपेत् ॥ १५०५ ॥
सर्वेषां पञ्चगुणितं मृतं ताम्रं परिक्षिपेत् ।
आर्द्रकैर्मर्दयेच्छाये द्रवैरेरण्डजैश्च वा ॥ १५०६ ॥
दिनैकं शोषयेत्तच भाव्यं शिग्रुद्रवे दिनम् ।
सर्पाक्ष्या चामृताकन्यारविभृङ्गपुनर्नवैः ॥ १५०७ ॥
आर्द्रकस्य द्रवे भाव्यं दिनान्ते सन्निरोधयेत् ।
दिनं वा वालुकायन्त्रे समादाय विचूर्णयेत् ॥ १५०८ ॥
जातीफलञ्च कर्पूरं कङ्कोलं मधुमिश्रितम् ।
रसस्यार्द्धमिदं योज्यं माषमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ १५०९ ॥
अनुपानं पिबेच्चास्य क्वाथं त्रिकटुसम्भवम् ।
सन्निपातहरः सोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १५१० ॥

र. का., र. सु., र. को., सन्निपाते ।

भाषा—४ कर्ष शुद्धगन्धकको बेरकेकोयलोंपर गलाकर लोह, पारा और अभ्रकभस्म १-१ कर्ष डालकर नीचे उतारले । इसमें पीपल, मरिच, भुनीहींग, अजवायन, जीरा, चित्रक और शुद्ध बछनाग १-१ कर्ष, ताम्रभस्म ७० कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर अदरख, एरण्ड, सहिजनकीछाल, सर्पाक्षी, गिलोय, घीकुंवार, आक, भंगरा, पुनर्नवा और अदरखके रसोंमें १-१ भावना देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिटी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा जायफल, शुद्धकपूर, शीतलचीनी समभागके १ माशे चूर्णमें मिलाय मधुके सायदेकर त्रिकटुका क्वाथ पिलानेसे सन्निपातरोग यहनष्टकरताहै ॥

३४६ सर्वाङ्गसुन्दररसः (नवमः)

हेमाभ्रगन्धरसटङ्कणरौप्यताम्रै-
श्चन्द्राग्नियाणरसयुग्मगुणाऽङ्घ्रिमानैः ।
जम्बीरनीररससप्तपुटेन पक्वं
चूर्णीकृतं समगुमौक्तिकवल्लजैश्च ॥
युक्तानुपानसकलामयनाशनोऽयं
सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो रसेशः ॥ १५११ ॥

रसायनसं., र. को., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, अभ्रकभस्म ३ भाग, शुद्धगन्धक ५ भाग, पारा ६ भाग, सुहागा २ भाग, रजत ३ भाग, ताम्रभस्म ४ भाग लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर जंभीरीकेरसमें पूर्ववत् मर्दनकर आंचदेवे । ऐसे ७ आंचें देनेकेबाद निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मोतीकीभस्म और मरिचकाचूर्ण समभाग मिलाकर रोगोचितानुपानकेसाथ लेनेसे राजयक्ष्मादिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ सर्वाङ्गसुन्दररसः (दशमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं शुद्धं तालकमाक्षिकम् ।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ १५१२ ॥
हंसपादीरसेनैव द्वियामं मर्दयेद् दृढम् ।
काचकूप्यां निवेश्याथ वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ १५१३ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ।
चिप्पिकाख्यं निहन्त्याशु सर्वकासं नियच्छति ॥ १५१४ ॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष रोगराजनिकृन्तनः ।
दशाभि मरिचै युक्तं पथ्यां पिष्ट्वाऽम्भसा पिबेत् ॥
नाभिजानाति कासञ्च निद्रासुखकरं परम् ।
मण्डूरसंयुतं लीढं कफश्वासाग्निमान्द्यनुत् ॥ १५१६ ॥

व. रा., वं. चि., चिप्पिकासे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, हरिताल और सोनामाखी समभाग लेकर नीलवर्णकमलीकर हंसराजकेरससे दोपहर मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपरमिटी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २-२ रत्ती उचितानुपानकेसाथलेकर १० मरिच और १ हर्रेको पानीमें पीसकर ऊपरसे पीनेसे शुष्ककासको यह निःशेषकरताहै । मण्डूरकेसाथलेनेसे कफ, वायु और मन्दाग्निको नष्टकरताहै ॥ ३४७ ॥

३४८ सर्वाङ्गसुन्दरीवटी

अष्टभागमितं शुद्धं दन्तीबीजं कणोपणम् ।
पारदं गन्धकं शुद्धं दरदं टङ्कणं विषम् ॥ १५१७ ॥
निर्वाते खदिराङ्गारैश्चूर्णादिकसुमर्दितम् ।
स्वल्पपिष्टं त्रिकटुकं फलत्रितयचित्रकम् ॥ १५१८ ॥
प्रत्येकं भागमेकैकं सूक्ष्मचूर्णं प्रकल्पयेत् ।
वह्निपूतं भृङ्गराजरसैरार्द्रकजैरपि ॥ १५१९ ॥
भावयेत्सप्तशः शुष्कं शुष्कञ्च सावधानतः ।
कोलमज्जसमाः कार्याः कलायाकृतयस्तथा ॥ १५२० ॥

चणकाकृतयो वट्यो देया बलविचारतः।
उष्णतोयानुपानञ्च कर्तव्यं कुडवार्द्धतः॥ १५२१॥
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं देयं हितञ्च यत्।
पीडादिशान्तये नित्यं वटी सेव्या यथोचिता॥१५२२॥
पलमुष्णजलं पेयमामं गच्छति सत्वरम्।
उदराणि विनश्यन्ति सर्वं निर्याति किल्बिषम्॥१५२३॥
प्रथमे सप्तके तक्रभक्तं लघु सुशीतलम्।
द्वितीये दधिभक्तञ्च तृतीये सुखभोजनम्॥ १५२४॥
वह्निदं धातुकृत्सेव्यं पथ्यवर्त्मविजानता।
जयेत्पीडादिकं सर्वं वटी सर्वाङ्गसुन्दरी॥ १५२५॥

र. र. कौ., उदररोगे।

भाषा—शुद्ध जमालगोटा, पारा, गन्धक, शिंगरिफ, सुहागा और बछनाग, पीपल, मरिच येसब ८–८ भागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर निर्वातस्थानमें खैरकेकोयलोंपर तप्तखल्वमें चूनेके पानीसे एकपहर मर्दनकर त्रिकटु, त्रिफला और चित्रकमूलकी छाल १–१ भागका कपड़छनचूर्ण डालकर भंगरा और अदरखकेरसकी सुखासुखाकर ७–७ भावनाएं देवे और बेरकीमज्जा, मटर तथा चनेप्रमाण गोलियेंबनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे बलानलका विचारकर उचितमात्रामें देकर दो पल गरम, पानी पिलानेसे तमाममल खारिजहोनेकेबाद अवस्थाका विचारकर उचितपथ्य देनेसे शरीरका मल विशुद्धहोजाताहै। भयङ्कर उदररोगोंकी निवृत्तिकेलिये एकपल गरमपानीकेसाथ प्रतिदिन १–१ गोली लेनीचाहिये। प्रथमसप्तकमें छाछभात, दूसरेमें दहीभात और तीसरेमें हलकाभोजन देवे। इसकेबाद अग्नि और धातुओंको बढ़ानेवाली चीजोंका सेवनकरनाउचितहै॥ ३४८॥

३४९ सर्वापस्मारहररसः

स्रोतोऽञ्जनञ्च सगरं सूतं सुष्ठियान्वितम्।
एकीकृत्य तु सम्मर्द्य दशांशं सक्तुकं विषम्॥ १५२६॥
देवशालीरसे भाव्यो यावद्यामत्रयं भवेत्।
कृत्वा तु गोलकं शुष्कं पाचयेद्गन्धमध्यतः॥ १५२७॥
ततस्तु घटिकाः कार्या गुञ्जात्रयप्रमाणतः।
भक्षिता क्रमयोगेन सर्वापस्मारनाशिनी॥ १५२८॥

रसेन्द्रमं., अपस्मारे।

भाषा—सुरमेकीभस्म, शुद्धबछनाग, पारा, हरिताल, गन्धक, और मैनसिल १–१ भाग, सक्तुकविष १० वा भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर बन्दालकेरससे ३ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर मलमलकेकपड़ेमें लपेट पोट्टलीबनाय पोटली डूबनेलायक गन्धकको गलाकर उसमें पोट्टलीको रखदे और मन्दमन्द इतनी आंचदे कि धीरे २ गन्धक जलजाय। गन्धकका थोड़ाहिस्सा बाकीरहनेपर नीचे उतारकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरका गन्धक खुरचदे और दवाको निकालकर बन्दालकेरससे एकदिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बन्दालकेरसकेसाथ देवे और धीरेधीरे औचिती देखकर गोलीकीमात्रा बढ़ाकर ३ गोलियों तक देनेसे अपस्मार नष्टहोताहै॥ ३४९॥

३५० सर्वारोग्यवटी

रसं पलमितं तुल्यशुद्धनागेन संयुतम्।
द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे सतैले निक्षिपेत्क्षितौ॥१५२९॥
ततो घृतं विनिक्षिप्य गन्धकं तद्विलोड्य च।
पुनरप्यायसे पात्रे क्षिप्त्वा प्रदाह्य निक्षिपेत्॥१५३०॥
तत्तुल्यं जारयेत्तालं पुनः सञ्चूर्ण्य पूर्ववत्।
तत्तुल्यां जारयेत्सम्यक्कुनटीं परिशोधिताम्॥१५३१॥
तत्तुल्यं चूर्णिते तस्मिन्क्षिपेन्नागं निरुत्थकम्।
तावदेव मृतं ताप्यं सर्वमन्यञ्च तत्समम्॥ १५३२।
तीक्ष्णायः खर्परे व्योम हिङ्गुलञ्च शिलाजतु।
पृथक्कर्षप्रमाणेन पट्कोलं पट्पला मिशी॥ १५३३॥
दीप्यकञ्च चतुर्जातं रेणुकोशीरवेल्लकम्।
तुम्बुरु भार्ङ्गिका रास्ना कङ्कोलं चोरपुष्पकम्॥१५३४॥
कण्टकारी किरातञ्च बीजान्युन्मत्तकस्य च।
पलद्वयञ्च लाङ्गल्याः सर्वेषां द्वादशांशकम्॥१५३५॥
वत्सनाभं सितम्भूरि विनिक्षिप्य ततः परम्।
त्रिफलानां दशाङ्गीणां कषायेण ततः परम्॥१५३६॥
जयन्त्यार्द्रकवासानां मार्कवस्वरसैस्तथा।
भावयित्वा च कर्तव्या वटिकाश्चणकोन्मिताः १५३७
एकैका वटिका सेव्या कुर्यात्तीव्रतरां क्षुधाम्।
विसूचीं सर्वतो हिक्कां सेव्यं स्यादु च शीतलम्१५३८
सामाश्च ग्रहणीं सदाङ्गतुदनं शोफोत्कटं पाण्डुता-,
मार्ति वातकफत्रिदोषजनितां शूलञ्च गुल्मामयम्।
वाताध्मान विलम्बिकाञ्च कसनश्वासार्शसां विद्रधिं,
सर्वारोग्यवटी क्षणाद्विजयते रोगांस्तथान्यानपि॥

र. सु., र. को., र. र. स., र. र. कौ., ग्रहण्यधिकारे। र. र. कौ. व्योम निष्कासितं तत्प्रमादादेव।

भाषा—एकपल शुद्ध नागको कड़ाहीमें गलाकर थोड़ासा तैल डालकर १ पल शुद्ध पारा मिलाकर ज़मीनपर डालदे। ठंढाहोनेपर फिर कड़ाहीमें गलाकर थोड़ा घी और १ पल गन्धक डालकर जलावे। गन्धक जल जानेपर पूर्ववत् ज़मीनपर डालकर ठंढाकरे। फिर गलाकर १ पल हरितालका चूर्ण थोड़ा २ डालकर जलावे इसकेबाद १ पल मैनसिलको जलाकर १–१ पल निरुत्थ नाग और सोनामाखी डालकर उतारले। फिर लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धखपरिया, शिंगरिफ और शिलाजीत १–१ कर्ष, पट्कोल ६ कर्ष, सोंफ ६ पल, अजवाइन, चातुर्जात, रेणुका, खस, विडङ्ग, तुम्बुल, भारङ्गी, रास्ना, शीतलचीनी, खरजवाइन, भटकटैया, चिरायता, शुद्धधतूरेकेबीज १–१ पल, शुद्धकरिहारी २ पल, सबका १२ वाहिस्सा शुद्ध सफेदबछनाग लेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय १–२ पहर मर्दनकर त्रिफला, दशमूल, जैंती, अदरख, अडूसा, भंगरा इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा

कार्योंमें १-१ भावना देकर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे हैजा, हिचकी, सामग्रहणी, अर्शोकादहना बड़ाहुआसय, पाण्डु, त्रिदोषकी पीड़ा, शूल, गुल्म, वातरोग, आध्मान, विलम्बिका, खांसी, श्वास, बवासीर, विद्रधि इनसबको यह नष्टकरतीहै । और अत्यन्तक्षुधाको बढ़ातीहै ॥ ३५० ॥

३५१ सर्वेश्वरचूर्णम्

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं चूर्णं शम्बूकजन्तुजम् ।
यवक्षारं तथा रक्तकठिनी कामरूपिणी ॥ १५४० ॥
शतचूर्णं समधुकं क्षारं दावदलोद्भवम् ।
फलत्रयीस्यरसैः शुद्धं मण्डूरं द्विगुणं ततः ॥ १५४१ ॥
एकीकृत्य प्रयत्नेन चूर्णं सर्वेश्वराह्वयम् ।
प्राङ्मध्यान्तप्रमेणैव भोजनस्य प्रयोजयेत् ॥ १५४२ ॥
माषया चानुपानञ्च दद्यादार्द्रजलं पयः ।
गन्यमर्दश्रुतं कृत्वा शूलादन्तकसन्निभात् ॥ १५४३ ॥
चिरजात्सर्वतो धीमान्दुस्तरान्मुच्यते नरः ।
पक्तिशूलात्सर्वमामद्रवशूलाच्च सर्वशः ॥ १५४४ ॥
मुच्यते मानवो यद्वद्विष्णोराराधने भवात् ।
प्लीहगुल्मोदरादींश्च मन्दाग्निमरोचकम् ॥ १५४५ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासमूरुस्तम्भामवातकान ।
इत्यादेव प्रयोगोऽयमश्विभ्यां निर्मितः पुरा ॥१५४६॥

र. र., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, घोंघेकीभस्म, यवक्षार, शुद्ध लालगुंजा, असगन्ध, इन्द्रजव, मुलहठी और चित्रकके पत्तोंकी राख १-१ भाग, नालीकेरसे शुद्धकर भस्मकियाहुआ मण्डूर सबसे दूना डालकर १-२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे भोजनकेपहिले, मध्य तथा अन्तमें १-१ माशाकीमात्रा अदरखके रस अथवा गायके अधौट दूधकेसाथ लेनेसे बहुतदिनका मृत्युरूपशूल, पक्तिशूल, अन्नद्रवशूल, प्लीह, गुल्म, उदररोग, मन्दाग्नि, अरुचि, ५ प्रकारका कास और श्वास, ऊरुस्तम्भ, आमवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३५१ ॥

३५२ सर्वेश्वररसः (प्रथमः)

चतुर्गद्याणमानानि शुद्धहेमभवानि च ।
पत्राणि कारयेत्सम्यग्विध्यन्ते कण्टके यथा ॥ १५४७ ॥
जलवत्कोमलान्येव स्वच्छान्येकाङ्गुलानि च ।
शुद्धसूतस्य गद्याणा अष्टौ तानि दलानि च ॥१५४८॥
मिश्रं द्वादशगद्याणं खल्वे पिष्ट्वा दिनत्रयम् ।
ग्रन्थिं वस्त्रेण बध्नीयात्क्षिप्त्वा तां हेमपिष्टिकाम् १५४९
मृन्मय्यां मूषिकायान्तु तद्धार्यमनियत्नतः ।
वालुकापूर्णकुहरे यन्त्रे मूषां विनिःक्षिपेत् ॥ १५५० ॥
तच चूल्ल्यां समारोप्य मृद्वग्निं ज्वालयेदधः ।
शुद्धगन्धकगद्याणान्विंशतिं तत्र निक्षिपेत् ॥ १५५१ ॥
गन्धके गलितेऽतीव जाते तैलस्य सन्निभे ।
प्रक्षिपेद्धेमजां पिष्टिं ग्रन्थिबद्धाञ्च यत्नतः ॥ १५५२ ॥
क्षिपेद्गन्धकगद्याणान्मुहुर्दग्धे च गन्धके ।
एवं दिनाष्टकं स्वेद्या पिष्टी यत्नेन हेमजा ॥ १५५३ ॥
स्वाङ्गशीतां क्षिपेत्खल्वे दग्धगन्धकसंयुताम् ।
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मर्दयेच्च ताम् ॥ १५५४ ॥
काञ्चनारतरो मूलत्वचा श्रीखण्डमर्दिताम् ।
वर्णाक्षीरेण चैकाहमर्कदुग्धेन वासरम् ॥ १५५५ ॥
एवश्चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्या वर्तुलगोलकः ।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा चतुर्भिश्छाणकैः पुटः ॥१५५६॥
दशते गन्धको यावत्तावद्देयो मुहुर्मुहुः ।
मृतं श्वेताभ्रजं चूर्णं चूर्णं स्यान्मृतताम्रजम् ॥ १५५७ ॥
चूर्णं पीतकपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम् ।
गद्याणार्द्धं प्रत्येकं क्षिपेत्पिष्टे च हेमजे ॥ १५५८ ॥
खल्वे पिष्ट्वा कृतं पिष्टं वर्णाक्षीरेण वासरम् ।
एकाहमर्कदुग्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ॥ १५५९ ॥
गोलं कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटेच्च ताम् ।
वस्त्रमृत्तिकया लिप्त्वा देयो गर्तान्तरे पुटः ॥१५६०॥
स्वाङ्गशीतं नयेद्गोलं खल्वे सञ्चूर्णयेद्दृढम् ।
कूपिकायां विनिक्षिप्य जातः सर्वेश्वरो रसः॥१५६१॥
साज्यं वल्लमितं ग्राह्यं द्वात्रिंशन्मरिचैः समम् ।
अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयोः वातपित्तयोः ॥ १५६२ ॥
बद्धकोष्ठेषु मन्दाग्नौ देयः शूलादिरोगिषु ।
कामहीने बलक्षीणे श्लेष्मवातादिरोगिषु ॥ १५६३ ॥
मरिचाज्यैरजीर्णेषु ज्वरेपूष्णोदकेन च ।
तैलक्षारादि वर्ज्यं हि भोजनं मधुरं भवेत् ॥ १५६४ ॥
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते मासैकान्तरं ध्रुवम् ।
अर्शांसि नाशमायान्ति साध्यासाध्यानि सत्वरम् ॥
गुदकीला निवर्तन्ते धातुशालगुडान्विता ।
दारुणा गुदपीडा च निवर्तताऽस्य सेवनात् ॥१५६६॥

रसचि , सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धसोनेकेवर्क २ तोले, शुद्धपारा ४ तोलेको खरलमें १-१ वर्क डालकर घोटे । वर्कमिलजानेपर ३ दिनतक घोटकर गोली बनाय वस्त्रमें पोटली बांधकर रखलेवे । फिर वालुकायन्त्रमें गोस्तनाकारमूषाको रख चूल्हेपर चढ़ाय मन्दाग्नि जलावे । मूषा गरमहोनेपर १० तोले शुद्धगन्धकका चूर्ण मूषामें रक्खे जब गलकर तैलकीतरह द्रुतहोजाय तब हेमपिष्टीकी पोटली को उसमें डुबादे । गन्धकके जलजानेपर उतनाही गन्धक और डालदेवे । इसतरह ८ दिनतक गन्धकमें उस पिष्टीका स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मूषामेंसे जलेहुएगन्धककेसाथ पोटलीको निकाल खरलकर भंगरेलारस, चन्दनकेद्रवमें पिसा हुआ कचनारकीजड़कीछालका कल्क, थूमर और आकका दूध इनप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें

बन्दकर २-३ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर ४ जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् द्रवोंमें मर्दनकर आचदे। इसतरह जबतक तमामगन्धक न जलजाय तबतक करतारहे। फिर सफेद अभ्रक, ताम्र, पीलीकौड़ी और शङ्ख इनकी भस्में ३-३ तोले मिलाय थूअर और आकके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती ३२ कालीमिर्च और घीके साथ देनेसे १८ प्रकारकेप्रमेह, वात और पित्तजगुल्म, बद्धकोष्ठता मन्दाग्नि, शूल, पण्डत्व, दुबलता, कफ और वातिकरोग, अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै। गरमजलकेसाथदेनेसे ज्वरोंको नष्ट करताहै। तैल और क्षार छोड़कर मधुरभोजनकरे। एकमहीने केबाद क्रमश रोग नष्टहोजातेहैं। बाहुशालगुडकेसाथदेनेसे साध्य अथवा असाध्य बवासीर और गुदकीपीड़ा निवृत्तहोजातीहै॥

३५३ सर्वेश्वररसः (द्वितीयः)

पूर्वोक्तस्य रसेन्द्रस्य तोलकांश्चतुरः क्षिपेत्।
अभ्रं मनःशिलां तालं गन्धकं कृष्णलोहकम् ॥१५६७॥
शुल्वपत्रं कांस्यभस्म प्रत्येकं सूतमात्रकम्।
सिन्धुजं काचलवणं सौवर्चलविडोद्भवम् ॥ १५६८॥
सामुद्रमिति सूतार्द्धमेतत्प्रत्येकमाहरेत्।
अष्टौ वल्लान् सुवर्णस्य रौप्यं तावद्विधीयते ॥१५६९॥
सूतपिष्टी ततः कार्या स्वर्णरौप्योद्भवा ततः।
पिष्ट्वा प्रलेपयेच्छुल्वपत्राण्यम्लेन बुद्धिमान् ॥१५७०॥
शिष्टानि सर्वद्रव्याणि कल्कीकृत्याऽथ चूर्णयेत्।
दृढं भाण्डं समादाय तन्मध्ये निक्षिपेद्बुधः ॥१५७१॥
द्रव्यचूर्णं तदुपरि शुल्वपत्राणि कानिचित्।
दद्यादुपरि चूर्णन्तु तत्र पत्राणि तद्व्रजः ॥ १५७२॥
एवं क्षिप्त्वा ततो दद्यान्मुक्ताचूर्णन्तु कर्षकम्।
प्रवालचूर्णं कर्षं स्यादुपरिष्टात्पिधाय वै ॥ १५७३॥
उदीच्यवारुणीनीरं दुग्धिनीरसमेव वा।
दत्त्वा सम्पुटयेद्भाण्डं दृढं सन्धिं विलेपयेत् ॥१५७४॥
विशोष्य सम्पुटं दद्यात्पुटं गजसमाह्वयम्।
आरण्यच्छाणकै र्दद्याद्गाम्ये नैव पुटेद्रसम् ॥ १५७५॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य सञ्चूर्ण्य स्थापयेद्रसम्।
रसेश्वरञ्च सम्पूज्य योगिनीगणभैरवान् ॥ १५७६॥
रसेश्वरः प्रदातव्यो ज्वरिताय नवज्वरे।
वल्लमानेनानुपानं दद्यादार्द्रकजं रसम् ॥ १५७७॥
वान्तिश्चेत्सम्प्रजायेत जीवत्येव न संशयः।
न चेद्वान्ति र्भवेत्तर्हि म्रियेतैव ज्वरार्दित. ॥ १५७८॥
पथ्यप्रयोगः प्रागुक्तः कर्तव्यो भिषजा सदा।
अयं सर्वेश्वरो नाम रसो ज्वरनिबर्हणः ॥ १५७९॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ १५८०॥
रसालं, ज्वराधिकारे।

भाषा—ऊर्द्धपातनादिसंस्कारोंसे शुद्धकियाहुआ पारा, मैनसिल, हरिताल और गन्धक, अभ्रक, फौलाद और कांस्यभस्म, घण्टकवेधी तांबेकेपत्र ४-४ तोले, सैन्धव, काचनमक, संचल, नवसादर और समुद्रनमक २-२ तोले, सुवर्ण और चांदीकेवर्क ३-३ माशे लेकर पारेमें वर्कोंको मिलाय तांबेके पत्रोंको डालकर नींबूकेरसमें घोटकर पारेको पत्रोंपर चढादे। बचेहुए द्रव्योंको नींबूके रससे मर्दनकर सुखाकर चूर्णबनावे फिर एकशरावमें थोडासा चूर्ण बिछाकर तांबेकेपत्रोंकी तह जमाय ऊपर चूर्णको छिड़कदे। इसतरह समस्त पत्र और चूर्णकी तह जमाकर १-१ कर्ष मोती और प्रवालकी पिष्टी क्रमश बिछाकर चमारदूधी अथवा साधारणदूधीकेरससे तर करके शरावसम्पुटमें बन्दकर वज्रमिट्टीसे सन्धि बन्दकर २-४ कपड़मिट्टी समस्तपर चढाय सुखाकर जङ्गलीकण्डोंकी गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर योगिनीगण और भैरवोंका पूजनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती अदरखकेरसकेसाथ ज्वरमें देनेसे यदि वमनहोजाय तो वह अवश्य बचेगा अन्यथा सशय है। वान्तिहोनेपर अत्यन्त भूखसे ग्रस्त हो तो मूंगआदिपथ्यवगैरह हल्का भोजन देवे॥ ३५३॥

३५४ सर्वेश्वररसः (तृतीयः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम्।
नाम्ना सर्वेश्वरं दिव्यं सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ १५८१॥
पलैकं तालसत्त्वञ्च नागसत्त्व तथैव च।
व्योमद्रुति पलद्वन्द्वं द्विपलां माक्षिकद्रुतिम् ॥ १५८२॥
सर्वतुल्यं मृतं सूतं गन्धकश्चैव तत्समम्।
द्वादशांशञ्च वज्रञ्च तावन्मानञ्च मौक्तिकम् ॥ १५८३॥
हेमतारञ्च पड्भागं प्रवालं हेमतत्समम्।
कान्तलोहं समं योज्यं विमला मणिसप्तकम् ॥१५८४॥
कान्तपाषाणद्विर्भागं ताम्रमष्टमभागकम्।
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य मर्दयेत्सुरसुन्दरि ॥ १५८५॥
गिरिजाकालिकाशुण्डीक्षीरकञ्चुकियोगतः।
सप्तधान्यौषधै र्दिव्यै र्डमरूयन्त्रगं पचेत् ॥ १५८६॥
अर्द्धार्द्धं लवणं क्षिप्त्वा शरावदृढसम्पुटे।
यामद्वात्रिंशकञ्चैव दातव्यश्च हठानलः ॥ १५८७॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पूजयेद्गणयोगिनीः।
गुञ्जामेकां रसस्याऽस्य त्रिगुञ्जं व्योममाक्षिकम् १५८८
महिषाज्यद्विकर्षेण भक्षयेत्सर्वकुष्ठनुत्।
प्रमेहे वातरोगेषु पाण्डुकासहलीमके ॥ १५८९॥
आमवाते ह्यतीसारे ग्रहण्यर्शोभगन्दरे।
शोफमन्दाग्न्यजीर्णघ्नं रोगराजनिकृन्तनम् ॥ १५९०॥
गुल्मप्लीहमहाशूलमर्शः क्षुद्राश्च नाशयेत्।
वलीपलितनिर्मुक्तः सेवितः स ज्वरं हरेत् ॥ १५९१॥
त्रयोदशान्सन्निपाताञ्ज्वरमष्टविधं हरेत्।
वन्ध्याद्यान्सकलान्रोगान्नाशयेन्नात्र संशयः ॥ १५९२॥
रससागर, कुष्ठे।

भाषा—हरिताल और नागसत्त्व १–१ पल, अभ्रक और माक्षिकद्युति २–२ पल, पारदभस्म और शुद्धगन्धक सबकीबराबर, हीरा और मोतीकीभस्म सबसे १० वां भाग, सुवर्ण, रजत, प्रवाल ६–६ भाग, कान्तलोहभस्म सबकीबराबर, रजतमाक्षिक और माणिक्यभस्म ७–७ भाग,कान्तपाषाण १० भा०, ताम्रभस्म ½ भाग लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर कोयल, कालादाना, छोटी हाथीशुण्डी, क्षीरकञ्चुकी सप्तधान्य इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय इन्हींद्रवोंसे १–१ दिन स्वेदनकर चतुर्थांश नमकडालकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टी देकर सुखानेपर १२ पहरकी गजपुटकी कडीआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर योगिनीगणोंका पूजनकर रखछोडे। इसमेंसे १ रत्ती लेकर ३ रत्ती सुवर्णमाक्षिक और २ कर्ष भैंसका घी मिलाकर प्रतिदिन खानेसे समस्तकुष्ठ, प्रमेह, वातरोग, पाण्डु, कास, हलीमक, आमवात, अतिसार, ग्रहणी, अर्श, भगन्दर, शोथ, मन्दाग्नि, अजीर्ण, राजयक्ष्म, गुल्म, प्लीहा, महाशूल, क्षुद्रहिक्का, १३ प्रकारके सन्निपात और ८ प्रकारके ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। निरन्तरसेवनसे वलीपलितादिकोंको दूरकर पुरुष और स्त्रियोंके वन्ध्यत्वको दूरकरताहै॥ १५४॥

३५५ सर्वेश्वररसः (चतुर्थः)

सहदेवीरसे मर्द्यो द्वन्द्वाष्टकपारदः।
अहिफेनकभृङ्गाभ्यां शिखनेत्ररसेन च॥ १५९३॥
गोभीषियाभ्यां प्रत्येकं त्र्यहं तथा क्षिपेत्पुनः।
कुक्कुटाण्डं पुन नीत्वा सम्यक् मासत्रयं क्षिपेत्॥
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य त्रियामं शोषयेत्पुनः।
दिनैकं डमरूयन्त्रे वह्निं दद्यात्पुनश्च तत्॥ १५९५॥
शीतं गृहीत्वा रसके समे च गलिते पुनः।
पाययित्वा च मूषायां रसं सम्मर्दयेत्पुनः॥ १५९६॥
एकविंशतिवारांश्च गृह्णीयात्पञ्चभागिकम्।
वज्रं नागञ्च सारञ्च माक्षिकं सोमजं मलम्॥ १६९७॥
तालसत्त्वं शिलासत्त्वं प्रत्येकञ्च तदर्धकम्।
ताम्रं सार्धपलं गन्धं गृह्णीयाच्च चतुःपलम्॥ १६९८॥
तत्सर्वं मर्दयेत्त्रिस्त्रिरर्कक्षीरेण वा पुनः।
घृततैलेन च विषं फेनं सार्धपलद्वयम्॥ १६९९॥
मूर्वारसेन सम्मर्द्य रसैरेतैः पुनस्तथा।
रविघृतजयास्नुग्भिः सप्ताहं स्नुतैलतः॥ १६००॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य शुष्कं सम्मुद्रय यत्नतः।
गर्ते छागनिशा पूर्णे पात्रमध्ये च कूपिकाम्॥ १६०१॥
संस्थाप्याग्निं प्रदद्याच्च यामद्वादशकं तथा।
गृह्णीयाच्छीतलं तच्च नीलनीरदसन्निभम्॥ १६०२॥
एवं सर्वेश्वरो नाम्ना रसो भवति दुर्लभः।
दत्तस्तण्डुलमात्रस्तु सर्वरोगहरः परः॥ १६०३॥
क्षयं क्षतं श्वासकासौ प्रमेहान्विंशतिं तथा।
ग्रहणीमतिसारांश्च मूत्रकृच्छ्राणि चाश्मरीः॥
इत्यादिरोगाञ्जित्वा तु भवेद्भूयो रसायनः॥ १६०४॥

र.का., राजयक्ष्मणि।

टि०—अत्रागतधातूनां मारणानि विशिष्य विहितानि सन्ति तान्यत्रोपलिखितरीत्या प्रत्येतव्यानि।

अथ प्रक्षेप्यरसकमारणम्

अथास्मिंस्तु रसे यानि रसकादीनि तानि [illegible]।
मारितानि हि तानि स्यु कथयामि विधिं तथा॥
शिशिपत्रके क्षिप्त्वा रसकं गलिते रसे।
वारमेकोनपञ्चाशत्तनुपत्रीकृत पुन॥
मधुशालाङ्गुन्द्राश्च रसकं सार्धमुष्टिकम्।
पिष्ट्वा तेन च पत्राणि विलिप्य च विशोषयेत्॥
मृत्पात्रे तानि संस्थाप्य मान्यशालाङ्गुन्द्रकम्।
मूलैकेशार्कर्षे लिप्त्वा शोषयित्वा धमेद्दृढम्॥
हरिद्राकारसो वारत्रय कुर्यात्तु विधिम्।
सर्वं भस्मरके पिष्ट्वा भोजयेत्लकर पुन॥
कुक्कुटं चाथ तद्विष्ठां गालयेच्च ततो द्रुतम्।
रसकं तद्भवेद्रत्न नाम्ना सर्वेश्वराग्य्यकं॥

अथ प्रक्षेप्यनागमारणम्

शुद्धनागस्य पत्राणि गलितानि क्षिपेदिह।
शिरीषदन्तिकरसे द्राक्षामूलरसे पुन॥
तत्प्रत्येकोनपञ्चाशद्गलित प्रक्षिपेदिति।
पञ्चपञ्चाशत्प्रमाणं सूक्ष्मपत्रीकृत पुन [illegible]
छागशोणितसिन्दूरनिशाभिस्त्वन्तरान्तरा।
धृत्वा विमुद्र्य मूलकेशार्करैः शोधित भृशम्॥
खरांशौ च धमेद्यामषोडशा नितरां भिषक्।
निरामेव हि कृते नागं सर्वेश्वरे क्षिपेत्॥

अथ प्रक्षेप्यवङ्गमारणम्

शुद्धं वङ्गं [illegible] गलित वारानेकोनविंशतिम्।
क्षिपेच्चणकमे क्षारे रसे मत्स्यकस्य च॥
सिन्दूरमिश्रिते क्षिप्त्वा वाराम्भिरस्तथैव च।
वृश्चिकाया रसे तद्वत्तप्त्वा तप्त्वा पुन क्षिपेत्॥
शुक्तिचूर्णेन सम्मिश्र्य त्रिपत्रपर्णद्रवे।
तद्वत्त्रिक्षिप्य निक्षिप्य वह्निं द्वात्रिंशयामकम्॥
दत्त्वा च रेतित कट्तुम्बिभिन्न पेषित पुन।
कृकलासेन भोजयित्वा मारयेत्कृकलासकम् [illegible]
मृत्कर्पटैर्विलिप्त [illegible] दाहयेत्खदिराग्निना।
यामद्वादशकं गर्ते वङ्ग सर्वेश्वरे क्षिपेत्॥

अथ प्रक्षेप्यलोहमारणम्

अथ शुद्धं तीक्ष्णलोहं तप्त तप्त पुन क्षिपेत्।
हस्त्यामेकोनपञ्चाशन्मूर्वाक्षीरेण लेपितम्॥
तप्त तप्त सोमवल्लीरसैश्चैकोनविंशति।
तालसत्त्वैरण्डतैललिप्त पत्रीकृत पुन॥
मूषामध्ये गन्धकेन टङ्कणेन च तापयेत्।
वज्रद्रावे क्षिपेदग्निवर्णं तच्च पुन पुन॥
त्रिक्षार पञ्चलवण नवसारकमोरकम्।
ताल सोममल तोरीनिम्बुद्रावेण मर्दयेत्॥
निक्षिप्य वारुणीयन्त्राच्छ्रद्रावस्तु पूर्ववत्।
अथ तद्गलित शुष्क मूषाया खदिराग्निना॥
त्रियाम ध्मापित तत्र पादांश पारद क्षिपेत्।

शीतमेकोनपञ्चाशद्व सूरजरसेन च ॥
मर्दयित्वा भवेत्सिद्ध लोह सर्वेश्वराह्वये ।

अथ प्रक्षेप्यमाक्षिकमारणम्

अथ तत्र माक्षिकन्तु काञ्जिके प्रक्षिपेद्बुध ।
लिप्त्वोदुम्बरदुग्धेन हरिद्राया रसे पुन॰ ॥
क्षिप्त्वैकविंशतिरिदि मूषाया प्रक्षिपेत्पुन॰ ।
ऊर्द्ध्वाऽधो विजया दत्वा वह्नि- स्याद्यामसप्तकम् ॥
शीतमौदुम्बरे दुग्धे भाव्य भाव्य पुनस्तथा ।
उदुम्बरीकल्कमरम भस्म पालाशन तथा ।
निक्षिप्य मूषामध्ये तु तन्मध्ये माक्षिक क्षिपेत् ।
ऊर्ध्वं छिद्रारम क्षिप्त्वा तदूर्द्ध्वं भस्म युग्मकम् ॥
क्षिप्त्वा विमुद्रयेचलाद्वह्नि द्वात्रिंशयामकम् ।
एव माक्षिकमिद्धि स्याद्रसे सर्वेश्वराह्वये ॥ इति

भाषा—शिंगरिफसे निकालेहुए पारेको सहदेवी, अफीम, भाग, रुद्राक्ष, वनगोभी और वच्छनागकेद्रवोंमें ३–३ दिन रखकर मुर्गीके ताजे अण्डेमें भरकर ३ महीनेतक रक्खे । खराबहोनेपर अण्डेको बदलताजाय । फिर आकनेदूधमें ३ पहर मर्दनकर सुखाकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी अग्निदेवे । ऊपर भीगाहुआ ४ तह कपड़ा रक्खे । सन्धिको इसतरह बन्दकरे कि पारा उड़ न जाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सम्पुटको उघाड़कर पारेको धीरजसे रगड़कर निकाललें और १०–२० बार कपड़ेमें छान साफकरले । फिर इसकी बराबर खपरियाको गलाकर पारेको उसमें मिलादे और शीतलहोनेपर खरलमें डाल मूर्वाकेरससे २१ दिनतक मर्दन-करे । यहरस ५ पल, वङ्ग, नाग और लोहभस्म, सोनामाखी, सोमल, हरिताल और मैनसिल इनके सत्त्व २॥–२॥ पल, ताम्र-भस्म १॥ पल, शुद्धगन्धक ४ पल लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जली-कर आकनेदूध और धतूरेनेबीजोंके तैलसे ३–३ दिन मर्दन-कर शुद्धबच्छनाग और अफीम ५–५ कर्ष मिलाकर मूर्वा, आक-कादूध, धतूरा, भाग, थूभरकादूध, एरण्डतैल इनप्रत्येकके द्रवों-में ७–७ दिन मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर ईंटवगैरहकी डाटसे शीशीका मुंहबन्दकर ६–७ कपड़-मिट्टी देकर सूखनेपर शीशीको हंडीमें रक्खे । इस हंडीको खड्डेमें धरतीकी मींगणियोंके अन्दर रक्खे यह ध्यानरहे कि हंडीके चारोंतर्फ ४–४ अङ्गुल मींगणी रहें और १२ पहरमें आंच ठंढी होजाय । इससे रसका स्वेदन होगा । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निका-लकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ चावलभर समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, उरःक्षत, श्वास, कास, २० प्रकार केप्रमेह, ग्रहणी, अतिसार, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इत्यादि समस्त-रोगोंको यह नष्टकर वृष्य और रसायनका कामकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ सर्वेश्वररसः (विश्वमूर्तिः)

मृताभ्रं मृतलोहश्च पारदं मृतमेव च ।
समभागं प्रकुर्वीत त्रिभागं विषतिन्दुकम् ॥ १६०५ ॥
हिडिम्ब्याश्च वरं सर्वैः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
मत्स्यपित्तात्तथा देया भावनाः सप्त चातपे ॥१६०६॥
भागैकं मेलयेत्तत्र पुनः पारदभस्मनः ।
पित्तस्य छागजातस्य माहिषस्य च भावना:॥१६०७॥
वराहपित्तस्य तथा प्रदेयाः सप्तसप्त च ।
मयूरस्य क्रमेणैव रसः सर्वेश्वरः स्मृतः ॥
कफोद्रेकं सन्निपातं भूतोन्मादं ग्रहं हरेत् ॥ १६०८ ॥

र.का., ज्वराधिकारे ।

भाषा—अभ्रक, लोह और पारदभस्म १–१ भाग, शुद्ध-कुचिला ३ भा., भीमसेनीकपूर सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर मछलीकेपित्तकी ७ भावनाएं कड़ीधूपमें देकर एकभाग पारद-भस्म मिलाकर बकरा, भैंसा, सूअर और मोरकेपित्तोंकी ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इन-मेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कफप्रधानसन्निपात, भूतोन्माद, ग्रहपीडा इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३५६ ॥

३५७ सर्वेश्वररसः (षष्ठः)

रसगन्धकयोश्चूर्णमेकीकृत्याऽभ्रकन्तथा ।
हेमभिश्च समं कृत्वा मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥ १६०९ ॥
त्र्यूषणाऽनलवङ्गैलाटङ्कणं हेमतुल्यकम् ।
कण्टकार्या रसै भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ १६१० ॥
शिग्रुबीजार्द्रकरसैः सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विभीतकफलत्वचम् ॥ १६११ ॥

र.सं.,र.सु.,ध., कासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और सुवर्णभस्म, त्रिकुटु, चित्रक, वङ्गभस्म, इलायची, सुनासुहागा येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भटकटैयाकेरससे २१, सहिजनकेबीज और अदरखकेरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कास, श्वास, क्षय इनको यह नष्टकरताहै ॥ ३५७ ॥

३५८ सर्वेश्वररसः (सप्तमः)

ताम्रं दशगुणं स्वर्णात्स्वर्णपादं कटुत्रिकम् ।
त्रिफलात्रिकटोस्तुल्या त्रिफलार्द्धमयोरजः ॥१६१२॥
अयसोऽर्द्धं विषञ्चैव सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
सर्वेश्वररसो नाम रक्तगुल्मविनाशनः ॥ १६१३ ॥

र.सं.,र सु.,ध ,र.चि., गुल्माधिकारे ।

भाषा—स्वर्णभस्म १ तोला, ताम्रभस्म १० तोले, त्रिकुटु और त्रिफला ३–३ माशे, लोहभस्म १॥ माशा, शुद्धबच्छनाग ६ रत्ती लेकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे रक्तगुल्मको यह नष्टकरताहै ॥ ३५८ ॥

३५९ सर्वेश्वररसः (अष्टम.)

रसाद् द्विगुणितो गन्धश्चतुर्भागन्तु टङ्कणम् ।
तथाऽष्टभागो जैपालस्त्वहं सम्मर्दयेद् दृढम्॥१६१४॥
वल्लो नवज्वरं हन्ति रसः सर्वेश्वराभिधः ।
वल्लद्वयं हरीतक्या युक्तं वातज्वरं तथा ॥ १६१५ ॥
द्विवल्लो मल्लखण्डेन लीढः क्षौद्रयुतः कफम् ।
गुञ्जा जीर्णज्वरं घोरं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ १६१६ ॥
वल्लस्तु सूतिकारोगं पिप्पलीमधुसंयुतः ।
पञ्चवर्षस्य बालस्य यवमात्रो ज्वरञ्जयेत् ॥ १६१७ ॥
गुञ्जाभिवृद्ध्या विषमान्याद्यचातुर्थिकावधि ।
मल्लखण्डेन संयुक्तो हन्यादोषत्रयन्तथा ॥ १६१८ ॥
यवानीकृमिशत्रुभ्यां वल्लो हन्यात्कृमीनपि ।
एवं सर्वगदान्हन्ति रसो भैरवभाषितः ॥ १६१९ ॥

र सु , नि.र , र , र.र.कौ., र शो , यो स (सुखरत्क), ज्वराऽधिकारे ।

टि०—र र स , र च , चि क , र कौ , र भ मा एषु ग्रन्थेषु निघाविनोदरस इतिनाम्ना "रसेन्द्रबलिस्त्रूणे सनयपालबीजं समे । रस सुमृदितो भवेत्स्फलु विनोदविद्याधर ॥ पयोगुरुयुतो हरेत्सकलरेचनीया मयान् । ज्वरञ्च जठरामयान्गुदगद सशूल नृणाम् ॥ सम्यग्विरेचनाऽभावे मुद्रक्वाथ पिबेद्तु । मेदाधिक्ये पिबेत्तक्र सम्पूर्णता स्वचो रसम् ॥" इतिपाठो निहितोऽस्ति अत्र सर्ववस्तुषु समता दृश्यते । रत्नाकरौषधयोगे च मरिचमधिकतया नियुज्य ज्वराधिकारे विद्याधर इति नाम स्थापितम् । अनयोर्द्वयोरप्युपरितन एवान्तर्भाव करणीय । "सूतस्माद्गुण टङ्कणा समलवा जेपाल्यास्तत्समा, मर्या बासरक शिवारमधुताश्रिता रसे सप्तथा । सक्षौद्रेण सुधारसेन सकलान्बोधामयान्नाशये, दत्तो हिङ्गु यवानिकामधुयुत स्नुकपिप्पलीक्षौद्रयुर ॥ उदरारिरसो ह्येष जठरामय नाशन । सङ्ग्राहि वर्नयेत्सर्व द्रवद्रव्य हित मतम् ॥" इत्युदरारि नाम्ना रसावतारे पाठो दृश्यत तत्र वस्तुभागवैलक्षण्य दृश्यते । तदीय भावनानुष्ठानमत्र कृत्वा तदन्तर्भाव सुकर । क्रमविवृद्धभागवस्तुष्वेतद पेक्षया गुणाधिक्य प्रत्यक्ष फलमिति विद्वद्भि विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा , सुहागा ४ भा , जमालगोटा ८ भागलेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें सबको मिलाय ३ दिन मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा शीतोदितानुपानकेसाथदेनेसे सब नवज्वरको नष्ट करताहै । ६ रत्तीहर्रेकेसाथदेनेसे वातज्वरको, ६ रत्तीकीही मात्रामें मलाई और मधुकेसाथदेनेसे कफको नष्टकरताहै । १रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तउपद्रवोंकेसहित घोरजीर्णज्वरको तथा पीपल और मधुकेसाथ सूतिकारोगको नष्टकरताहै । १–१ गुञ्जा बढाकरलेनेसे एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक और चातुर्थिकज्वरोंको नष्टकरताहै । मलाईकेसाथ त्रिदोषको, अजवाइन और विडङ्गकेसाथ क्रिमियोंको नष्टकरताहै ॥ ३५९ ॥

३६० सर्वेश्वररसः (सर्वेश्वरलोहम्)

शुद्धं सूतं पलं गन्धं द्विगुणन्तु मृताभ्रकम् ।
त्रिपलं मृतताम्रञ्च पलार्द्धं स्वर्णमाक्षिकम् ॥ १६२० ॥
जैपालं चित्रकं मानं सूरणं घण्टकर्णकम् ।
ग्रन्थिकं त्रिफला व्योषं त्रिवृता खरमञ्जरी ॥ १६२१ ॥
दण्डोत्पलं वृश्चिकाली कुलिशं नागदन्तिकाम् ।
सूर्यावर्तञ्च सञ्चूर्ण्य कर्षमानं विमर्दयेत् ॥ १६२२ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव चूर्णयित्वा पुनः क्षिपेत् ।
त्रिपलं लोहचूर्णस्य ततः खादेच्छुभेऽहनि ॥ १६२३ ॥
सम्पूज्य भास्करं विष्णुं गणनाथं द्विजोत्तमम् ।
माषमात्रञ्च मधुना कृत्वा शीतजलं पिबेत् ॥ १६२४ ॥
चूर्णं सर्वेश्वरं नाम सर्वरोगहरं भवेत् ।
कठोरप्लीहनाशाय गुल्मोदरहरन्तथा ॥ १६२५ ॥
कामलां पाण्डुमानाहं यकृत्कृमिरुतामयान् ।
विचर्चीमम्लपित्तञ्च कण्डूं कुष्ठं विनाशयेत् ॥१६२६॥

भै र (यकृत्प्लीहाधि०), र.र , ध (रसायने), र. क. शूले ।

टि०—अत्र पाठे विविधवैचित्र्यदर्शनमस्तेऽपि भैषज्यरत्नावलीस्थ एव पाठो ज्यायान् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, अभ्रकभस्म २ पल, ताम्रभस्म ३ पल, सोनामाखी २ कर्ष, शुद्ध जमालगोटा, चित्रकमूल, मानकन्द, सूरण, मोखा अभावमें हँस, गठिवन, त्रिफला, त्रिकुटु, निसोत, अपामार्ग, मज्जदण्डी, बिछुआ, जहरीसूरण, घनसर (मराठीनाम) और हुरहुर १–१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकरे । फिर ३ पल लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन अदरखकेरससे मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । सूर्य, विष्णु, गणेश और द्विजातिओंका पूजनकर इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथलेकर ठंढाजलपीनेसे कठोरप्लीहा, गुल्म, उदररोग, कामला, पाण्डु, आनाह, यकृत्, क्रिमि, विचर्चिका, अम्लपित्त, खाज, कुष्ठ इनसबको यह दूरकरताहै ॥ ३६० ॥

३६१ सर्वेश्वररसः (दशमः)

ताप्यौ टङ्कणहेमतारररसकं गन्धं यथाभागिकं,
ताम्रं त्रिद्रुमशुक्तिजं शिलरजं द्विघ्नं तथा भागतः ।
वङ्कायोऽहिरसेन्द्रभूतिगगनं वैक्रान्तकान्तं त्रिशः,
तत्सम्मर्द्य विभावयेत्त्रिदिवसं यष्टीत्रिजाताम्बुभिः ॥
मुस्तोशीरयवाक्षूपाऽमृतशटीकन्याविदारीवरी–,
नीरे गोपयसेक्षुरेश्च मुसलीगोलंपचैयामकम् ।
मन्दाग्नौ च भृङ्गाङ्कवत्पुनरसौ भाव्यस्ततो भावने,
द्वे कस्तूरिमृगाङ्कयो मधुकणायुक्तोऽस्य वल्लो जयेत् ॥
मेहार्शो ग्रहणीज्वरोदरमरुद्व्याधिं च्छर्दि कामलां,
पाण्डुं कुष्ठभगन्दरं ज्वरगणं कृच्छ्रञ्च शुक्रक्षयम् १६२८

१ यो.त , र सु , रसायनम , र श , र.प , र.बो , र पा , प्रमेहे ।

टि०—रमपद्धत्या ताप्यौ टङ्कणमित्यस्य स्थाने माक्षिकद्वितयमिति पाठ त्रियगानिषु कांस्यमधिक, भावनावस्तु चित्रकमधिक इति विशेष । रसायनसङ्ग्रहे दी पठो नियोजितो, एवम्स्य पुन पाठ प्रमेहाधिकार, किन्तु सिद्धेश्वर नाम्ना ज्वराधिकारे स्थापित ।

भाषा—सोनामाखी, रूपामाखी, सुहागा, सुवर्ण, रजत, खपरिया इनकीभस्में, शुद्धगन्धक १–१ भाग, ताम्र, प्रवाल,

मोती, शुद्ध इनकीभस्में २–२ भाग, वङ्ग, लोह, नाग, पारा, अभ्रक, वैक्रान्त और कान्तलोह इनकीभस्में ३–३ भाग लेकर सबको बारीक पीस मुलहठी, त्रिजात, नागरमोथा, रास, त्रिफला, अडूसा, गिलोय, कचूर, घीगुआर, विदारी, शतावर, गायकादूध, तालमखाना और मुशलीके यथासम्भवद्रवोंमें ३–३ दिन मर्दन-कर गोलाबनाय ३–४ तह कपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें बन्द कर ३–४ कपडमिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर कस्तूरी और कपूरकी २–२ भावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथदेनेसे प्रमेह, बवासीर, ग्रहणी, ज्वर, उदररोग, वातविकार, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, भगन्दर, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र और शुक्रक्षयको यह नष्टकरताहै ॥ ३६१ ॥

३६२ सर्वेश्वररसः (एकादश·)

पलं सूतं चतुर्गन्धं शुद्धं यामं विमर्दयेत् ।
मृतताम्राभ्रलोहानां दरदस्य पलं पलम् ॥ १६२९ ॥
सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशनिष्ककम् ।
मापैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥ १६३० ॥
जम्बीरोन्मत्तवासाभि.स्नुह्यर्कविषमुष्टिभि ।
मर्द्यं हयारिजै र्द्रावैः प्रत्येकेन दिनं दिनम् ॥ १६३१ ॥
एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्गोलं वस्त्रवेष्टितम् ।
वालुकायन्त्रगं स्वेद्यं त्रिदिनं लघुवह्निना ॥ १६३२ ॥
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं पलैकं योजयेद्विषम् ।
द्विपलं पिप्पलीचूर्णं मिश्रं सर्वेश्वरो रसः ॥ १६३३ ॥
द्विगुञ्जो लिह्यते क्षौद्रैः सुप्तिमण्डलकुष्ठनुत् ।
आजानुस्फुटितं चापि वातरक्तमपोहति ॥ १६३४ ॥
वाकुचीदेवकाष्ठञ्च कर्षमात्रं सुचूर्णयेत् ।
लिहेदेरण्डतैलात्तमनुपानं सुखावहम् ॥ १६३५ ॥

घृ यो त, शा स, र र स, र प्र सु, र कौ, रसायनस, ध रा, यो त, र का, वातरक्ते।

टि०—“सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशनिष्ककम्। मापैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥” इत्येकं पद्यं वसवराजीये रसकामधेन्वौ च न दृश्यते तत्र ग्रन्थकर्त्रा बुद्धिपूर्वकं त्यक्तं वा लेखकप्रमादात्परिभ्रष्टमिति वा न ज्ञायते। रसकामधेन्वौ तु पाठद्वयं न्यस्तं तत्र द्वयोरपि पाठस्त्रुटित। रसरत्नसमुच्चये द्वितीयस्थाने रसेन्द्रकल्पद्रुमे च सर्वेश्वरनाम्ना ‘ पारदं ताम्रगन्धाभ्रं कर्षांशं लोहपारदम्। स्नुह्यर्कक्षीरपाठाग्निजम्बीरोशीरवारिभि ॥ मर्दितं वालुकायन्त्रे स्वेदयेद्दिवसत्रयम्। कर्षं कणाया निष्कञ्च विषस्याग्निन्विनिक्षिपेत् ॥ एष सर्वेश्वर सद्यो गुञ्जामात्र प्रसुप्तजित् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति। नि र, र प, टा, वै चि, र (मा), रसायनम, र. र स, र को, र कौ एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नाम्नैव “रस हिङ्गुललोहानां त्रयं कर्षं पलद्वयम्। ताम्रगन्धकयो सर्वं जम्बीराद्भि विमर्दयेत् ॥ विषमुष्टयवहेमरनुकरवारजले पुन । सप्तधा गोलकं कृत्वा स्वदयेद्दिवसद्वयम् ॥ वालुकायन्त्रमध्यस्थं शीते निष्कं विषस्य च। कर्षं कणानां सूत स्यात्सर्वेशो वातरक्तजित् ॥ गुञ्जामानाऽस्य दातव्या द्वय वा मस्तवारिणा। रक्तप्रकोपणं तीव्रं पित्तं परिवर्जयेत् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति। र म, र चि, र क, र र दी, रसायनम, भै सा, यो म, वै नि, व रा, एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नाम्ना “मृतताम्राभ्रलोहाना हिङ्गुलञ्च पलं पलम्। जम्बीरोन्मत्तभार्गीभि स्नुह्यर्कविषमुष्टिभि ॥ मर्द्यं हयारिनैर्द्रावै प्रत्येकञ्च दिनदिनम्। एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्गोलं वस्त्रवेष्टितम् ॥ वालुकायन्त्रगं स्वेद्यं त्रिदिनं लघुवह्निना। आदाय चूर्णयेत्सर्वं पलैकं योजयेद्विषम् ॥ द्विपलं पिप्पलीचूर्णमिश्रं सर्वेश्वरं रसम्। द्विगुञ्जं लिह्येत्क्षौद्रैः सुप्तिमण्डलकुष्ठनुत् ॥ वाकुचीदेवदारू च कर्षमात्रौ विचूर्णितौ। लिहेदेरण्डतैलेन ह्यनुपानं सुखावहम् ॥ रक्ताधिक्ये शिरामोक्षः पादे वाह्वौ ललाटके। कर्तव्यो दृष्टिरोगेषु कुष्ठिनाञ्च विशेषत ॥ बलिनो बहुदोषस्य वयस्थस्य शरीरिण। एतत्प्रमाणमिच्छन्ति प्रस्थं शोणितमोक्षणे ॥ व्यभ्रे वर्षासु विध्यात्तु ग्रीष्मकाले तु शीतले। हेमन्तकाले मध्याह्ने शस्त्रकालास्त्रय स्मृता ॥” इतिपाठो निहितोऽस्ति। वैद्यचिन्तामणौ “शुद्धसूतञ्चतुर्गन्धं पलं यामं विमर्दयेत्” इत्यधिक पाठ। एते सर्वेऽपि पाठा पूर्वपाठात्परिभ्रष्टा सन्ति, सुवर्णरजतवज्रेष्वेकैकं निष्कास्य नाना पाठा प्रकल्पिता इति विद्वद्भिरावकलनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, गन्धक ४ पल, ताम्र, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्धशिंगरिफ १–१ पल, सुवर्ण और रजत भस्म २॥–२॥ कर्ष, हीराभस्म १ माशा, शुद्धहरिताल २ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जमीरी, धतूरा, अडूसा, थूहर और आककादूध, कुचिला, सफेदकनेर इनप्रत्येकके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३–४ तहवस्त्रमें लपेटकर ३–४ कपडमिट्टी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें ३ दिनकी मन्द आचसे स्वदित करे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर शुद्धवत्स-नाभ १ पल और पीपल २ पलका बारीकचूर्ण मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ देकर बाकुची और देवदारु समभागका १ कर्ष चूर्ण एरण्डतैलके साथ अनुपानमें देनेसे सुप्तवात, मण्डल, असाध्य वातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३६२ ॥

३६३ सर्वेश्वररसः (द्वादशः)

स्वर्णं रौप्यं मौक्तिकञ्च विशुद्धञ्च शिलाजतु ।
लोहमभ्रं तथा ताप्यं मधुयष्टी च पिप्पली ॥ १६३६ ॥
मरिचं विश्वकञ्चेति सर्वमेकत्र कारयेत् ।
विमृद्य प्रहरं यत्नात्कज्जलाकृतिसन्निभम् ॥ १६३७ ॥
भृङ्गद्वयरसे मर्द्यं शकाशनरसे पृथक् ।
प्रमेहं विविधं हन्ति मधुमेहं सुदुर्जयम् ॥ १६३८ ॥
वातपित्तसमुद्भूतं तथा कफसमुद्भवम् ।
सर्वेश्वरो रसो नाम्ना प्रमेहकुलनाशन. ॥ १६३९ ॥

भै र, प्रमेहे।

भाषा—सुवर्ण, रजत, मोती, लोह, अभ्रक, सोनामाखी इनकीभस्में, शुद्धशिलाजीत, मुलहठी, पीपल, मरिच और सोंठ समभागलेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय १ दिन शुष्कमर्दनकर स्याहसफेदभंगरा और गांजके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक उचितानुपानकेसाथदेनेसे वात, पित्त और कफज प्रमेह, तथा दुर्जर मधुमेहको यह नष्टकरताहै ॥ ३६३ ॥

३६४ सर्वेश्वररसः (त्रयोदशः)

रसभस्माऽऽलतुल्याहिवङ्गताम्राभ्रचारिणः ।
कटुत्रयाऽमृताश्मानो गोऽहिवेदगजद्विपाः ॥१६४०॥
समुद्रनृपतिर्थ्यंशाः सप्तद्वितिथिमन्मथाः ।
भावयेद्रसकैः सर्वं लुङ्गाम्लैः सप्तधा पृथक् ॥१६४१॥
सर्वेश्वरो भावितः स्याद्द्विगुञ्जः सर्वरोगहा ।
निजानुपानैरथवा सह खण्डेन यक्ष्मणि ॥ १६४२ ॥
आर्द्राम्भसा पञ्चगुल्मे गुडवातारिचित्रकैः ।
क्षौद्रेण शैत्ये निर्दिष्टो व्योषार्द्रैः सान्निपातिके १६४३
ग्रहण्यामप्यतीसारे हितं पथ्यविधौ पयः ।
स्वस्वपथ्यानि वा वैद्यो दद्यात्सर्वेश्वरे रसे ॥१६४४॥

र. शं , ग्रहण्याम् ।

भाषा—पारद १,भाग, हरिताल ८ भाग , तुत्थ ४ भाग, नाग और वङ्ग ८–८ भाग, ताम्र ४ भाग, अभ्रक १६ भाग, सोनामाखी १५ भाग, और रूपामाखी ७ भाग (इनसबकी-भस्मे), त्रिकटु २ भाग, गिलोय १७ भाग, शुद्धगन्धक ५ भाग लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकीकज्जलीमें मिलाय बिजोरे-केरससे ७ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख-छोडे । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ, खांड अथवा अदरखके रसकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै । अदरखकेरस अथवा गुड, एरण्डकीजड और चित्रकके साथ देनेसे पांचोंगुल्म, मधुसे शैत्य, त्रिकटु और अदरखकेरससे सन्निपात नष्टहोताहै । ग्रहणी और अतिसारमें दूध अथवा उचितानुपानका योग करना ॥

३६५ सर्वेश्वररसः (चतुर्दशः)

हेमताप्यौ शिलैलाद्विचिपसारैकभागकम् ।
पृथक् प्रवालशुक्त्यर्करसकञ्च द्विभागिकम् ॥१६४५॥
सूतभस्माहिवङ्गायो व्योममुक्ताशिलाजतु ।
गैरिकञ्च त्रिभागं स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १६४६ ॥
विदार्यमृतामोचरसीकत्यावराघनैः ।
भावनाश्च पृथक् सप्त दद्यान्मृगमदैस्ततः ॥ १६४७ ॥
कणासिताभ्यां मधुना वल्लोऽस्य क्षयमेहजित् ।
ग्रहणीदोषपाण्डुर्शोवातव्याध्युदराणि च ॥ १६४८ ॥
कासश्वासौ गुल्मतापकुष्ठानि जयति ध्रुवम् ।
स्वीयानुपानैः सर्वांश्च रोगान्हन्ति रसायनम् ॥
वीर्यबुद्धिबलं दत्ते सर्वदोऽयं रसो वरः ॥ १६४९ ॥

र. शं , क्षय ।

भाषा—सुवर्ण, सोनामाखी, मैनसिल इनकीभस्मे इला-यची, दोनों कोयल, शुद्ध बच्छनाग, रजतभस्म १–१ भाग, प्रवाल, मोतीकी सीप, ताम्रभस्म, शुद्धखपरिया २–२ भाग, पारद, नाग, वङ्ग, लोह, अभ्रक और मोती इनकीभस्में, शुद्धशिलाजीत और गेरू ३–३ भागलेकर सबकी नेत्रलग कज्जलीकर विदारीकन्द, चित्रक, गिलोय, शतावर, कचूर, पंवाड, त्रिफला, नागर-मोथा इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमें ७–७ भावनाएं देकर कस्तूरी की १ भावना देवे । इसमेंसे ३–२ रत्ती पीपल, शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे क्षय, प्रमेह, ग्रहणी, पाण्डु, बवासीर, वातरोग, उदररोग, कास, श्वास, गुल्म, ज्वर, कुष्ठ, इनसबको नष्टकर वीर्य और बुद्धिको बढाताहै ॥ ३६५ ॥

३६६ सर्वेश्वररसः (पञ्चदशः)

कनककुलिशतारं रीतिसौवीरताम्रं,
गगनभुजगसूतं खेचरं तालटङ्कम् ।
शिलनृपवलिलोहं राजतञ्चैव वङ्गं,
त्रिलवणमृतमेतत्सर्वमेकत्र तुल्यम् ॥१६५०॥
एतैः समं तैं मृतसूतराजं वज्र्यर्कदुग्धे दिनमेकघृष्टम् ।
कूपीगतं पाचय भूतियन्त्रे दिनं हिमं भावय शृङ्गबेरैः॥
यासा.कुरण्टी नृपकुक्कुटी च
धत्तूरचित्रं गजदन्तमेपी ।
भूनिम्बमुस्ता हलिनी च दन्ती
ताम्बूलपर्णी सह ताम्रमूली ॥ १६५२ ॥
एतत्समुत्थरसे विभाव्यः
सर्वेश्वरो नाम रसेश्वरोऽयम् ।
त्रिगुञ्जमायः खलु सन्निपाते
रोगानशेषान्विविधानुपानैः ॥
महोदरं कुष्ठसपाण्डुगुल्मं
सर्वांश्च रोगान्विनिहन्ति नूनम् ॥ १६५३ ॥

र. धं ,क्षये ।

भाषा—सुवर्ण, हीरा, रजत, पीतल, सफेदसुरमा, ताम्र, अभ्रक, नाग, पारा, कसीस, हरिताल, मैनसिल, लाजवर्द, लोह, रजतमाक्षिक, वङ्ग इनसबकी भस्में, भुनासुहागा, शुद्धगन्धक, तीनोंनमक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर थूहर और आकके दूधसे १–१ दिन मर्दन-कर फिरसे कज्जलीबनाय ६–७ कपडमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके भस्मयन्त्रमें रख एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोने-पर निकालकर अदरख, अडूसा, पीयाबासा, अमिलतास, सेमलकी छाल, धतूरा, चित्रक, धनघर (मराठीनाम), मेढासींगी, चिरायता, नागरमोथा, कलिहारी, दन्तीमूल, पान और ताल-मूलीके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, महोदर, कुष्ठ, पाण्डु, गुल्म इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ सर्वेश्वररसः (षोडशः)

एकैकोऽभ्रिजरायुर्हारकलशोऽब्धि नीलमाक्षिस्ययो-,
स्त्रिःकान्ताहिशिलार्कवङ्गरसकाद्विमाः पृथक् स्वर्णतः
चक्रान्तं तपनीमनार्द्रपि स्तवाः पञ्च प्रवालाद्दलेः,
पट् मृताद्रदाघ सप्त गगनाद्रूप्याच्च सर्वं ततः १६५४
चूर्णीकृत्य विभाव्य मार्करसैः मुण्डीकुमारीगुहा-,
वासाम्भोदधराग्निकण्टमुशलीदुग्धीनिशारीष्टपैः ।

वृश्चीवादरिभेदतः शतदलात्विस्तस्य गोलं पयः-,
पिष्टे दुग्धवराटके नवलवं द्वि मौक्तिके लेपयेत् १६५५
शुष्कं चाथ मृगाङ्कवल्लवणजे यन्त्रे विपाच्यैणजं,
नाभिं सूतलवं निधाय मृदितः सर्वेश्वरः स्याद्रसः।
स्वैस्वैरस्य गदान्निहन्ति सकलान्युञ्जानुपाने द्रुतं,
यक्ष्माणं सपरिग्रहं ग्रहणिकातीसारपाण्ड्वामयान् ॥
कासापस्मृतिगुल्ममेहकृशतापण्ढत्ववन्ध्यामयान्,
बीजार्तिप्रदरोदरं भ्रममदश्वासास्रपित्तामयान्।
अन्यान्वातबलासपित्तरुधिरोद्भूतान्समस्तानपि,
व्याधीन्नाशयति प्रसह्य सहसांशोस्ताद्यथाऽर्कात्तमः ॥

र. दी., क्षये।

भाषा—अभ्रक और हीराभस्म १-१ भाग, नीलम और माणिक्यभस्म ४-४ भाग, कान्तलोह, नाग, मैनसिल, ताम्र, वङ्ग, खपरिया इनकीभस्में ३-३ भाग, सुवर्णभस्म २ भा., वैकान्त और सोनामाखीभस्म ५-५ भा., प्रवालभस्म और शुद्धगन्धक ६-६ भा., शुद्ध पारा, शिंगरफ, अभ्रक और रजत भस्म ७-७ भाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर भंगरा, गोरखमुण्डी, घीकुंवार, शालपर्णी, अडूसा, नागरमोथा, त्रिफला, गोखरू, मुशली, दूधी, विदारीकन्द, सफेदपुनर्नवा विट्खदिर, *गुलाब इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ दिन मर्दन*कर गोलाबनाय जलीहुईकौडी ९ भाग, मोतीभस्म १ भाग दूधमें पीसकर गोलेपर लेपदेकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें एकदिनरातकी आंच देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेकीबराबर कस्तूरीमिलाकर घोटकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे उपद्रवसहित राजयक्ष्म, ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, कास, अपस्मार, गुल्म, प्रमेह, कृशता, नपुंसकत्व, वन्ध्यत्व, बीजदोष, प्रदर, उदररोग, भ्रम, मद, श्वास, रक्तपित्त, वातबलासक, पित्त और रुधिरकेरोग इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे प्रचण्डसूर्यसे तम नष्ट होजाताहै ॥ ३६७ ॥

३६८ सर्वेश्वरलोहम्

गिरिजगन्धकताप्यरसाम्बुद-
शुमणिलोहसुवर्णरजः समम्।
मधुयुतेन विलीढमिदं नृणां
सकलरोगचयं विनिकृन्तति ॥ १६५८ ॥

लो. प., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गन्धक, सुवर्णमाक्षिक, पारा, अभ्रक, ताम्र, लोह, स्वर्णभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्ती मधुकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३६८ ॥

३७० सर्षपाद्यागुटिका

सर्षपाः पृष्ठपर्णी च तगरं पद्मकेसरम्।
हरितालं विडङ्गानि रोध्रद्राक्षाप्रियङ्गवः ॥ १६५९ ॥
चन्दनं वालकं मांसी विशाला समनःशिला।
श्रीवासकं निशा दार्वी पद्मकं ध्याममेव च ॥१६६०॥
सुरसप्रसवाः स्पृक्का रोचना गन्धनाकुली।
अम्लकं कुङ्कुमं दारु स्थौणेयं गिरिकर्णिका ॥१६६१॥
जात्याः पुष्पं प्रवालञ्च पिप्पलीमरिचानि च।
सूक्ष्मैलासिन्धुवारञ्च यष्टयाह्वं रोध्रमेव च ॥ १६६२ ॥
एतान्यङ्गानि पट्त्रिंशत्पुष्येण परिपेपितान्।
गुटिकां कोलमात्राञ्च छायाशुष्कां हि कारयेत् १६६३
नस्यपानाञ्जने चैपा सम्यग्लेपे च योजिता।
पुंसां सर्वविषार्तानां राजद्वारे रणे तथा ॥ १६६४ ॥
वणिजां लाभकामानां विवादे च सदा हिता।
सरीसृपा न तिष्ठन्ति यत्र तिष्ठति वेश्मनि ॥ १६६५ ॥
अनया सम्प्रलिप्तस्य चोरवह्निभयं कुतः।
सर्पदष्टभयञ्चापि जलराशिभयं न च ॥ १६६६ ॥

ग. नि., विषे।

भाषा—पीलीसरसों, पृष्ठपर्णी (रानभाल. मराठीनाम), तगर, पद्मकेशर, हरितालभस्म, विडङ्ग, लोध, द्राक्ष, प्रियङ्ग, सफेदचन्दन, सुगन्धवाला, जटामांसी, इन्द्रायण, शुद्ध मैनसिल और बिरोजा, हल्दी, दारुहल्दी, पद्मकाठ, खस, तुलसीकेबीज, *अनन्तमूल, गोरोचन, गन्धनाकुली (सुगन्धरास्ना)*, कोकम, केशर, देवदारु, छडीला, कोयल, जाविनी, प्रवालभस्म, पीपल, मरिच, छोटीइलायची, निर्गुण्डी, मुलहठी, देशीलोध सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पुष्यनक्षत्रमें इसयोगमेंआईहुई काष्ठौषधियोंके क्वाथसे मर्दनकर ८-८ माशेकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे। इनका नस्य, पान, अञ्जन तथा लेपमें उपयोगकरनेसे तमामविष नष्टहोतेहै। जिसघरमें ये गोलियां रहतीहै वहांपर हिंसक जानवर, सांप, चोर, अग्नि और जलसे भय नहीं होता ॥ ३६९ ॥

३७० सामुद्राद्यं चूर्णम्

सामुद्रं सैन्धवं क्षारो रुचकं रोमकं विडम्।
दन्ती लोहरजः किट्टं त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥ १६६७ ॥
दधिगोमूत्रपयसा मन्दपावकपाचितम्।
तं यथाग्निबलं चूर्णं किञ्चिदुष्णेन वारिणा ॥ १६६८ ॥
जीर्णे जीर्णे तु भुञ्जीत मांसादिस्निग्धभोजनम्।
नाभिशूलमुरःशूलं गुल्मप्लीहभवञ्च यत् ॥ १६६९ ॥
परिणामसमुत्थाने शूले च परमं हितम्।
विद्रध्यष्ठीलजं हन्ति कफवातोद्भवं तथा ॥ १६७० ॥
अन्नद्रवं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि।
शूलानामपि सर्वेषामौषधं नास्त्यतः परम् ॥१६७१॥

यो. र., र., ध., नि. र., म. नि., ना. वि., रसायनस. र. का., यो. म., र. क., टो., भै. र., र. र., वृ. यो. त., वृ. मा., च. द., शूलाधिकारे।

भाषा—समुद्र और सेंधानमक, सज्जी, यवक्षार, संचल, रोमक, विड, दन्तीमूल, लोह और मण्डूरभस्म, निसोत,

सूरणकन्द येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर दही, गोमूत्र और दूध चौगुना चौगुना डालकर मन्दाग्निपर पकावे और सुखाकर रखछोडे। इसमेंसे २–३ माशे अग्निबल देखकर गरमजलके साथदेनेसे नाभिशूल, छातीकाशूल, गुल्म, प्लीहा, परिणामशूल, विद्रधि, अष्ठीला, कफवातोद्भवशूल, अन्नद्रवशूल, अजीर्ण, ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै। शूलोंकेलिये इससे बढकर अन्य औषध नहींहै ॥ ३७० ॥

३७१ सारणसुन्दररसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं सप्तधा भावयेत्क्रमात्।
स्नुह्यर्कदुग्धैः श्रीखण्डद्वयदयामाऽभयारसैः ॥१६७२॥
समं नेपालजं चूर्णं देयमेकत्र मर्दयेत्।
उष्णाम्बुना वल्लयुग्मं देयमष्टगुणे गुडे ॥ १६७३ ॥
मलाः पूर्वं जले पश्चात्ततश्चामः शनैः शनैः।
उदराद्य विनाऽन्त्राणि सर्वं निर्यांति किल्बिषम्१६७४
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं दध्योदनं हितम्।
जयेज्ज्वरादिकान्रोगानसः सारणसुन्दरः ॥ १६७५ ॥

र. सं. क., रसायनसं., र. क., र. यो., उदराधिकारे।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलजंकज्जलीकर थूअर और आकके दूध, दोनोंचन्दन, निसोत और हरीके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर बराबरका शुद्धजमालगोटा मिलाय १–२ दिन मर्दनकर ६ रत्तीकीमात्रा गरमजलकेसाथ अथवा अठगुने गुडकेसाथलेनेसे पेट और अन्तडियोंमेंसे तमाममल निकल जाताहै। अच्छीतरह रेचनहोनेकेबाद भूखलगनेपर दहीभात पथ्य देना। इससे तमामज्वरभीनष्टहोतेहैं ॥ ३७१ ॥

३७२ सारस्वतरसः

रसगन्धौ पचां शङ्खपुष्प्याख्रिभिर्दिनं पुटेत्।
चतुर्विंशतियामांस्तु वह्निं दद्यान्मृदुं भिषक्॥१६७६॥
माषोऽस्य दुग्धभक्तानुपानेन स्वरभङ्गजित्।
अयं सारस्वतो नाम रसो जाड्यापहारकः ॥ १६७७॥

र. का., स्वरभङ्गे।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलजंकज्जलीकर वच और शङ्खाहूलीकेरससे १–१ दिन मर्दनकर ४–५ कपडमिट्टीदीहुई आतशीशीमें डाल मुंहबन्दकर बालुकायन्त्रमें रख २४ पहरकी मन्दाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा दूध और भातकेसाथदेनेसे स्वरभङ्ग और जडताको यह दूरकरताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ सारिवादिवटी

सारिवां मधुकं कुष्ठं चातुर्जातं प्रियङ्गुकम्।
नीलोत्पलं गुडूचीञ्च देवपुष्पं फलत्रिकम् ॥ १६७८॥
अभ्रं सर्वसमञ्चाभ्रसमं लौहं विभावयेत्।
केशराजाम्बुना पार्थक्वाथेन वयआम्भसा ॥१६७९॥
काकमाचीरसेनापि गुडामूलद्रवेण च।
त्रिगुञ्जाप्रमिताः पश्चाद्विदध्याद्वटिका भिषक्॥१६८०॥
धारोष्णेनापि पयसा शतमूलीरसेन वा।
एकैकां योजयेत्प्रातः श्रीखण्डसलिलेन वा ॥१६८१॥
निखिलान् कर्णजान्रोगान् प्रमेहानपि विंशतिम्।
रक्तपित्तं क्षयं श्वासं क्लैव्यं जीर्णज्वरन्तथा ॥१६८२॥
अपस्मारमदार्शांसि हृद्रोगञ्च मदात्ययम्।
सारिवादिवटी हन्यात्सर्वरोगानखिलानपि ॥१६८३॥

भै. र., कर्णरोगे।

भाषा—सारिवा, मुलहठी, कुठ, चातुर्जात, प्रियङ्गु, नीलोफर, गिलोय, लौंग, त्रिफला येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर २ अभ्रक और लोहभस्म मिलाकर कालाभंगरा, सफेदअर्जुन, वच, मकोय, गुडामूल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर १–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली धारोष्णदूध अथवा शतावरीकेरस अथवा चन्दनकेजलकेसाथ प्रातःकाललेनेसे कानके समस्तरोग, २० प्रकारकेप्रमेह, रक्तपित्त, क्षय, श्वास, क्लीवता, जीर्णज्वर, अपस्मार, मद, अर्श, हृद्रोग, मदात्यय इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

३७४ सार्वभौमरसः

हेमवज्राभ्रकाणाञ्च भस्मनां त्रितयं समम्।
भूनागसत्वभस्मापि तत्समं निक्षिपेद्बुधः ॥ १६८४ ॥
कृष्णाचित्रकरसेनैव मर्दयेच्च दिनत्रयम्।
अमृतस्य कषायेण कुमारीस्वरसेन च ॥ १६८५ ॥
त्रिकटुत्रिफलानाञ्च स्वरसं च विभावयेत्।
द्राक्षाफलान्वितं नित्यं गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत्॥१६८६॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो वज्रदेहो भवेन्नरः।
त्रिवत्सरप्रयोगेण जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ १६८७ ॥
सर्वेषामायुधानाञ्च विषाणाञ्च निवारणम्।
सर्वदाऽनुपत्याशु भुवि संकीर्तितो भवेत् ॥
सार्वभौमरसो ह्येष सर्वराजमनोहरः ॥ १६८८ ॥

र. यो. (शा.), र. क. यो., रसायने।

भाषा—सुवर्ण, हीरा और अभ्रकभस्म समभाग, तीनोंके बराबरकेंचुवेकी भस्म, काला चित्रक, गिलोय, घीकुमार, त्रिकटु और त्रिफलाकेस्वरसोंसे १–१ भावना देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। इसीतरह प्रत्येकके स्वरससे मर्दनकर गजपुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती दाखके साथ खानेसे समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोकर वज्रदेह होताहै। इसप्रकार ३ वर्षतक लगातार प्रयोगकरनेसे समस्त आयुध, विष और शत्रुओंसे निर्मुक्तहोताहै ॥ ३७४ ॥

३७५ साल्मपाकः (मुञ्जातक पाकः)

प्रत्येकं साल्मिमं चूर्णं दुग्धद्रोणे विनिःक्षिपेत्।
सितोपलाष्टकं दत्त्वा तन्दुलीं विनियन्त्रयेत् ॥ १६८९ ॥

जातीफलं जातिपत्री लवङ्गं मधुयष्टिका।
शुक्तिमात्रप्रमाणेन पृथग्ग्राह्यं भिषग्वरैः॥ १६९०॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं नागकेशरनागरम्।
श्वदंष्ट्रा मरिचं द्राक्षा वाजिगन्धा शतावरी॥१६९१॥
लोहमभ्रकवङ्गश्च द्वे जीरे धान्यकं घनम्।
पृथक्पृथक् कर्षमात्रमेला चैव त्रिकार्षिका॥ १६९२॥
आक्षोटं मुशलीश्चैव चतुःकर्षप्रमाणतः।
रक्तचन्दनकर्पूरकस्तूरीमांसिकेशरम्॥ १६९३॥
त्वचं कृष्णाऽगरुश्चैव प्रमाण तस्य निर्दिशेत्।
पञ्च द्वे वह्निभूतानि रसमार्गणमार्गणाः॥ १६९४॥
मापसंख्याप्रमाणेन यथाभागं नियोजयेत्।
सम्यक् पाकं ततो ज्ञात्वा देशकालानुसारतः १६९५
सायं प्रातः पलार्द्धन्तु भक्षयेत्क्षीरसंयुतम्।
वाजीकरो बलकरो कान्तिपुष्टिविवर्धनः॥ १६९६॥
प्रमेहं वातरोगञ्च हृद्रोगमपि नाशयेत्।
अस्य संसेवनान्नित्यं गच्छेच्च वनिताशतम्॥
सर्वव्याधिहरः श्रेष्ठो योगः परमदुर्लभः॥ १६९७॥

रसायनसं, वाजीकरणे।

टि०—सालम मुञ्जातको ज्ञेय स संस्कृतनाम्ना मुञ्जमायो भूत्वा यावननाम्ना जागर्ति।

भाषा—एकप्रस्थ सालमकेचूर्णको १६ सेर दूधमें डालकर पकावे। अधौटादूध होनेपर ४ सेर मिश्री डालकर चाशनी तैयारकरे। फिर जावित्री, लौंग, मुलहठी २–२ कर्ष, पीपल, पिपलामूल, नागकेशर, सोंठ, गोखरू, मरिच, द्राक्ष, असगन्ध, शतावर, लोह, अभ्रक और वङ्गभस्म, दोनोंजीरे, धनिया, नाग रमोथा १–१ कर्ष, इलायची ३ कर्ष, अखरोट और मुसली १–१ पल, लालचन्दन ५ माशे, शुद्धकपुर २ माशे, कस्तुरी ३ माशे, जटामासी ५ माशे, केशर ६ माशे, तज ५ माशे, काला अगर ५ माशे इनसबका बारीकचूर्ण मिलाकर उतारकर जमादे। इसमेंसे अग्निबलदेखकर १ तोलेसे ५ तोलेतक खिलाकर दूधपि-लावे यह अत्यन्त वाजीकरहै कान्ति और पुष्टिको बढाताहै। प्रमेह, वातरोग और हृदयकेरोगोंको नष्टकरताहै। प्रतिदिन सेवन करनेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रमणकरसक्ताहै॥ ३७५॥

३७६ सावित्रवटकः

पलङ्कषा पले द्वे च कृष्णायश्च पलद्वयम्।
पथ्याऽमृताक्षधात्रीणां पृथगेकैकशः पलम्॥१६९८॥
पूतीकं चव्यव्योषाग्निकारवीक्रिमिनाशनैः।
चूर्णितैरर्द्धपलिकैस्तिलतैलं पलद्वयम्॥ १६९९॥
त्रिफलाया रसप्रस्थे खण्डं प्रस्थयुगं पचेत्।
दर्वीप्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातकसंयुतः॥ १७००॥
सावित्रवटका ह्येते यथाग्निबलभक्षिताः।
कृमिकोष्ठाग्निदौर्बल्यशोथगुल्मोदरव्रणान्॥ १७०१॥
कामलापाण्डुरोगार्शोभगन्दरगदव्रणान्।
निहन्त्येतद्धि संसिद्धं वयःस्थैर्यबलप्रदम्॥ १७०२॥
वायुमेहप्रशमनाश्चक्षुषः प्रीतिवर्धनाः।
भवन्त्यतिस्निग्धभुजां वातातपनिषेविणाम्॥१७०३॥

नि. र., वै. चि, क्रिमिरोगे।

भाषा—एकप्रस्थत्रिफलाकेकाढेमें २ प्रस्थ शक्कर डालकर चाशनीतैयारकरे फिर शुद्धगुगल और फालादभस्म २–२ पल, हर्रे, गिलोय, बहेडे और आवले १–१ पल, पुइकरञ्ज, चव्य, त्रिकटु, चित्रक, कारवीकेबीज (मराठी नाम) और विडङ्ग २–२ कर्ष, तिलकातेल २ पल, चातुर्जात १–१ कर्ष इनसब चीजोंका बारीकचूर्ण डालकर उतारले। इसमेंसे १–१ तोलेकीमात्रा दूध अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे क्रिमि, मन्दाग्नि, शोथ, गुल्म, उदरकेव्रण, कामला, पाण्डु, अर्श, भगन्दर, व्रण, वायु, प्रमेह, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें अधिकवायु और धूपका निषेधकरना॥ ३७६॥

३७७ सितामण्डूरम्

धमनविधिविशुद्धं गोजले सप्तवारा-,
स्तरणिकिरणशुष्कं श्लक्ष्णमण्डूरचूर्णम्।
विमलतरपलैकं पञ्चसङ्ख्यं सितायाः,
अनवघृतपलानामष्टकं द्व्यष्टदुग्धम्॥ १७०४॥
मृदुदहनशिखाभि र्मन्दमन्दं कटाहे,
विगतसलिलशेषं पाचयेत्पाकविज्ञः।
वितरितगुडपाके किञ्चिदुष्णेऽवतीर्णे,
इपदि दृढममीरणं चूर्णितं देयमाशु॥ १७०५॥
त्रिकटुकमधुकैलायासवैडङ्गसारं,
प्रतनुपटनिघृष्टं गालितं सम्प्रदद्यात्।
त्रिफलगदलवङ्गं कर्षमेकैकशश्च,
तदनुशिशिरकाले द्वे पले माक्षिकस्य॥१७०६॥
शुभतिथिदिवसादौ भोजनादौ निषेव्यं,
प्रथमदिवसमेवं शाणमानं तदूर्द्धम्।
अहरहरनुवृद्ध्या यावदक्षं प्रयोज्यं
हिमकररुचिशीतं गव्यदुग्धश्च पेयम्॥१७०७॥
नियतमयमसाध्यानम्लपित्तोत्थशूलान्,
वमिनियहसदाहानाहमोहप्रमेहान्।
विविधरुधिररोगान् पित्तयुक्तानशेषा-,
नपहरति सितायो दिव्यमण्डूरयोगः॥ १७०८॥

भै.र., अम्लपित्ताऽधिकारे।

भाषा—धमनकराके ७ बार गायकेमूत्रमें बुझायाहुआ मण्डूर १ पल, शक्कर ५ पल, पुरानाघी ८ पल और गायका-दूध १६ पल लेकर सबको कडाहीमें डालकर मन्दाग्निपर पाक-करे। गुडकेसदृश चाशनीहोनेपर उतारकर त्रिकटु, मुलहटी, इलायची, जवासा, विडङ्गतण्डुल, त्रिफला, कुठ, लौंग १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर मिलादे। ठढाहोनेपर २ पल मधु मिला कर रखछोडे। शुभतिथि और अच्छेदिन इसमेंसे भोजनके-आदिमें ४ माशे सेवनकरे फिर धीरे २ बढाकर १ कर्षकी मात्रा

कायमकरे । चन्द्रमाकी चांदनीमें रक्खाहुआ ठंढा दूध पिलावे । इससे असाध्य अम्लपित्त, शूल, वमन, आनाह, मूर्च्छा, प्रमेह, रक्तविकार, वात और पित्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३७७ ॥

३७८ सिद्धकान्तरसः

कान्तलोहस्य चूर्णन्तु कृत्वा सूक्ष्मतमं बुधः ।
गन्धकं पारदं दन्तीबीजान्येकत्र कारयेत् ॥ १७०९ ॥
ततः सम्पेष्य तत्कल्कं मर्दयेत्रिदिनं पुनः ।
पतत्तुल्येन मत्स्यस्य पित्तेन परिभावयेत् ॥ १७१० ॥
सिद्धकान्तरसो ह्येष प्रयोज्योऽभिनवज्वरे ।
शृङ्गबेरानुपानेन वल्लश्च भिषगुत्तमैः ॥
नाशयेच्च ज्वरं सद्यो भास्करस्तिमिरं यथा ॥१७११॥

र. को , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—कान्तलोहभस्म, शुद्ध गन्धक, पारा और जमाल गोटा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबकीबराबर मछलीके पित्तसे ३ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे अन्धकारको सूर्यकीतरह तत्क्षण ज्वरको नष्टकरदेताहै ॥ ३७८ ॥

३७९ सिद्धदरदामृतम्

हंसपाकस्य खण्डानि सूत्रबद्धानि युक्तितः ।
कर्षद्वयप्रमाणानि चन्द्रकर्षमितानि वा १७१२ ॥
लौह्यां भिन्नानि संस्थाप्य घसुभागे विनिक्षिपेत् ।
पलाण्डुस्वरसं स्वच्छं वियद्वल्लीभवन्तथा ॥ १७१३ ॥
दरदाद्द्विगुणं क्षीरं न्यग्रोधस्य विनिक्षिपेत् ।
प्रज्वालयाग्निमधस्तत्र द्रवसंशोषणावधि ॥ १७१४ ॥
उत्तार्य तामधो लौहीं स्वाङ्गशीताञ्च कारयेत् ।
युक्त्या दरदखण्डानि सम्यक् सर्वाणि चाहरेत् १७१५
दरदार्धभागेन चूर्णं देवकुसुमोद्भवम् ।
प्रसार्य तानि खण्डानि भल्लातकफलानि च ॥१७१६॥
षड्गुणानि क्रमेणेह चित्याकारतया किरेत् ।
सन्धींल्लवङ्गचूर्णेन समाच्छाद्य प्रयत्नतः ॥ १७१७ ॥
हव्यवाहं समाज्वाल्य निर्धूममपसारयेत् ।
घृतं ज्योतिष्मतीतैलं माधूकैरण्डजे मधु ॥ १७१८ ॥
रक्ताचतुर्गुणानीह शोषयेत्क्रमशः शनैः ।
स्वाङ्गशीतानि चाकृष्य सूत्रभस्मादिकं त्यजेत् १७१९
रक्तिकाद्वितयश्चास्य वाजीकरणमुत्तमम् ।
ऊरुस्तम्भामवातातिसारपक्षवधादिकान् ॥ १७२० ॥
शीताङ्गं तन्द्रिकप्लीहयकृद्विद्रधिपण्ढताः ।
नाशयेत्पक्षमात्रेण श्रीसिद्धदरदाह्वयः ॥ १७२१ ॥

यू.क.वाजीकरणे।

भाषा—रूमीशिंगरिफके १–१ अथवा २–२ कर्षके टुकडे कच्चेसूतमें लपेटकर साफकडाहीमें रक्खे और शिंगरिफसे अठगुना सफेदप्याज और अमरबेलकारस तथा दुना बटकादूध डालकर मन्दाग्नि देकर समग्रद्रवसुखाकर कडाहीको नीचे उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर शिंगरिफके टुकडोंको निकालकर कडाहीको साफकर शिंगरिफसे आधा लवङ्गकाचूर्ण बिछाकर शिंगरिफके टुकडोंको रख ६ गुने भिलांवे चुनकर दूसरे लवङ्गकेचूर्णसे भिलांवोंको ढकदे और धीरे २ आंचदे । भिलांवे तथा लवङ्ग जलकर निर्धूमहोजाय तब कडाहीको उतारकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर राख हटाकर टुकडोंको निकालले औरकडाहीको साफकर फिर टुकडोंको रख घी, मालकांगनी, महुआ और एरण्डकातैल, मधु, क्रमशः ४–४ गुना डालकर जलावे । अन्तमें कडाहीमें इतनी आंच दे कि निर्धूम होजाय। यह ध्यान रहे कि शिंगरिफ उड न जाय। फिर कडाहीको नीचे उतारकर टुकडोंको साफकर पीसकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, आमवात, अतिसार, पक्षाघात, शीताङ्ग, तन्द्रा, प्लीहा, यकृत्, विद्रधि, नपुंसकत्व इनसबको यह नष्टकर उत्तम वाजीकरणकरताहै ॥ ३७९ ॥

३८० सिद्धनाथरसः

द्वादशभागास्त्रिकटोरेकोनषष्टिरिह मनस्विन्याः ।
खेचरजलेन मृदिता स्वच्छेन विशोषितेन भृशम् १७२२
तृणशिखिशिखोष्णशृङ्गिक-
भागैकयुता रक्तिमिता गुटिका ।
एषा त्रिदोषसागरविशोषिणी
वाडवी गुटिका ॥ १७२३ ॥

र.(मा.), सन्निपाते ।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, शुद्धमैनसिल ५९ भागलेकर बारीकचूर्णकर जलमें धुलीहुई कमीसके नितरेहुए पानीसे १–२ दिन घोटकर चिरायता और जटामासी, मरिच और शुद्धवच्छनागकाचूर्ण १–१ भाग मिलाकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषको नष्टकरतीहै ॥ ३८० ॥

३८१ सिद्धभैरवरसः

पारदं तालकं तुल्यं कुमारीरसमर्दितम् ।
दोलायन्त्रे पचेद्यामं मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥१७२४॥
चणकद्वयमात्रञ्च देयं मधुकणायुतम् ।
जिह्विकासन्निपातघ्नो रसोऽयं सिद्धभैरवः ॥ १७२५॥

वै. चि , वा., जिह्वकसन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीकर २–३ दिन घीकुवारकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय घीकुवारके रसमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर सुखाकर मछलीके पित्तकी एक भावना देकर दोचनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषको नष्टकरताहै ॥ ३८१ ॥

३८२ सिद्धमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
पुनर्नवा त्रिवृद्द्व्योषं विडङ्गं देवदारुकम् ॥ १७२६ ॥

द्विनिशे पुष्करं वह्नि दन्ती चव्यं फलत्रिकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥१७२७॥
विपञ्च प्रतिकर्षं स्याच्चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ।
मण्डूरस्य च पाकान्ते कोलमात्रं वटीकृतम् ॥१७२८॥
पाण्डुशोफोदरानाह शूलार्तिकृमिगुल्मनुत् ।
इत्येवं सिद्धमण्डूरः सर्वरोगविनाशकृत् ॥ १७२९ ॥

नि. र, र र, व. रा, वै. चि, र का., र क यो, ना वि. पाण्डुरोगे ।

टि०—चरकीयपुनर्नवामण्डूरेण बहुलांशेऽस्य सादृश्यमावहदपि विषयुक्तत्वात्स्वतन्त्रतया स्थापित ।

भाषा—८ पल मण्डूरभस्मको अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गाढाहोनेपर पुनर्नवा, निसोत, त्रिकुटु, विडङ्ग, देवदारु, दोनों-हल्दी, पोहकरमूल, चित्रक, दन्ती, चव्य, त्रिफला, इन्द्रजव, कुटकी, पिपलामूल, नागरमोथा, शुद्धवछनाग, इनसबका चूर्ण १-१ कर्ष मिलाकर उतारले। ठंढाहोनेपर झरवेर बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, शोथ, उदररोग, आनाह, शूल, क्रिमि, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८२ ॥

३८३ सिद्धयोगः

हरीतकीगोक्षुरलोहभस्म
समांशकैरिक्षुरको द्विभागः ।
सिताद्विभागं तुहिनोदपीतं
प्रमेहसन्देहमपाकरोति ॥ १७३० ॥

रसायनस, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—हर्रे, गोखरू, लोहभस्म १-१ भाग, तालमखाना और शकर २-२ भागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ माशे दूध अथवा ठंढेपानीकेसाथलेनेसे यह प्रमेहमात्रको दूरकरताहै ॥ ३८३ ॥

३८४ सिद्धरसः

रसं वज्रं स्वर्णकान्तं मुण्डं तन्मारितं समम् ।
माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरकद्रवैः ॥ १७३१ ॥
सप्ताहं मर्दयेत्खल्वे तद्गोलञ्चान्धितं पुटेत् ।
भूधरे दिनमेकन्तु ख्यातः सिद्धरसः परः ॥ १७३२ ॥
माषैकं मधुना लेह्यं वर्षान्मृत्युजरापहम् ।
दिव्यकायो नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः ॥१७३३॥
श्वेतापुनर्नवामूलं क्षीरपिष्टं पलम्पिबेत् ।
भक्षयेत्पलिकार्द्धं वा कामकं परमं रसे ॥ १७३४ ॥

रसायनसं, रसायने ।

भाषा— पारा, हीरा, सुवर्ण, कान्त, मुण्ड, सोनामाखी इनसबकीभस्में और शुद्धगन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा मधुकेसाथ लगातार १ वर्षतकलेनेसे मृत्यु और बुढापेको नष्टकर दिव्यकाय और दीर्घायुको करताहै। एक अथवा आधापल पुनर्नवाकीजड़को दूधमें पीसकर पीनेसे रसका शरीरमें कामणहोताहै ॥ ३८४ ॥

३८५ सिद्धलक्ष्मीश्वररसः

अष्टांशहेमचपले शिखिमूषिकायां
सञ्चार्य षड्गुणबलिं क्रमशोऽधिकञ्च ।
ऊर्द्ध्वं पयोऽग्निमधरे विनिधाय धीराः
सिद्धिं समस्तकरणे स्वकरे कुरुध्वम् ॥१७३५

वृ यो. त, रसायनस, यो म, र. मृ वाजीकरणे ।

टि०- योगमहार्णवे " सशोध्य पिण्डीकृत ... लब्धवीर्यं । श्रीसिद्धलक्ष्मीसुविलासनामा पीयूषपिण्डोदरसम्प्रयुक्त ॥ " इत्यादिना सुधापिण्ड इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—अग्निमें रक्खीहुईमूषामें बुभुक्षित पारेको रख अष्टमाशसुवर्ण और षड्गुणगन्धक अथवा इससेभी अधिक क्रमपूर्वक जारणकरे । सुवर्णजारणकरनेकेबाद पारेका वजनकरके देखे । यदि अधिक वजन हो तो काञ्जीमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकरे । समता आनेपर प्रथमचन्द्रोदयकी क्रियासे चन्द्रोदयबनावे और इससे रसायन अथवा धातुवादकी क्रियायें सिद्धकरे ॥ ३८५ ॥

३८६ सिद्धवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं शृङ्गिकं सैन्धवं समम् ।
सद्योगोवत्सविष्ठाञ्च द्रवैर्ब्राह्मया विमर्दयेत् ॥ १७३६॥
गुटिका बदराकारा भक्षिता रोगनाशिनी ।
किरातादिगणेनेयं सन्निपातं नियच्छति ॥
कण्ठकुब्जं विशेषेण कण्ठामयविनाशिनी ॥ १७३७ ॥

नि र, र मु, र को, कण्ठकुब्जसन्निपाते ।

टि०—" किराततिक्तकाकणाकुटजकण्टकारीशक्रलिङ्गविश्वामया कटुकट्फलाभीरु । विषामलकपुष्करानलकुलीरशृङ्गीवृषे महौषधसहितैः ... कण्ठकुब्ज गण ॥ " इति किरातादि गण ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, बछनाग, सेंधानमक और तत्काल जन्मेहुए बछडेकीविष्ठा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियांबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली किरातादिक्वाथकेसाथदेनेसे सन्निपात, खासकर कण्ठकुब्ज और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरतीहै । चिरायता, कुटकी, पीपल, इन्द्रजव, भटकटैया, कचूर, बहेड़ा, देवदारु, हर्रे, मिर्च, कायफल, नागरमोथा, अतीस, आंवले, पोहकरमूल, चित्रक, काकड़ासींगी, अडूसा येसब समभागलेकर जवकुट बनाकर रक्खे । इसमेंसे १-१ तोलेका चतुर्भागावशिष्ट क्वाथ बनाकर १॥ माशे सोंठका प्रक्षेपदेकर पिलावे यह किरातादिक्वाथहै ॥ ३८६ ॥

३८७ सिद्धसावरयोगः

मृताभ्रं विंशतिपलं मृतलोहस्य पञ्चकम् ।
गन्धकं चेषुपलिकं त्रिभि र्द्विगुणमाक्षिकम् ॥१७३८॥
पथ्या शतपलं योज्यं धात्रीपलशतद्वयम् ।
सर्वमेकत्र तच्चूर्णं जम्बीरे मर्दयेद्दिनम् ॥ १७३९ ॥

भृङ्गीपुनर्नवाद्रावैः पातालगरुडीरसैः।
भल्लातवह्निकोरण्टा हस्तिशुण्डी तु लाङ्गली॥१७४०॥
क्षीरिणी जलकुम्भी च प्रत्येकं प्रत्यहं द्रवैः।
भावयेन्मर्दयेदित्थं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत्॥१७४१॥
स्निग्धभाण्डे स्थितं खादेन्नित्यं निष्कद्वयं द्वयम्।
सिद्धसारययोगोऽयं त्रिदोषार्शांसि नाशयेत्॥१७४२॥

यो. म., र. का., र. को., अर्शोऽधिकारे।

भाषा—अभ्रभस्म २० पल, लोहभस्म और शुद्धगन्धक ५-५ पल, शुद्धसोनामाखी १० पल, हर्रे १०० पल, आंवले २०० पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर जभीरी, भंगरा, पुनर्नवा, पातालगारुडी, भिलांवां, चित्रक, कटसरैया, हाथीशुण्डी, कलिहारी, सितली, जलकुम्भी इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मधु और घी उचितमात्रामें मिलाकर घीके बर्तनमें रखछोडे। इसमेंसे ८-८ माशे प्रतिदिन उचितानुपानसेंसाथ-लेनेसे त्रिदोषजबवासीर नष्टहोताहै॥ १८७॥

३८८ सिद्धसूतरसः

पत्रीकृतं शुद्धसूतं सुवर्णं रौप्यमेकतः।
मुक्ताफलं यवक्षारं तोलैकैकं प्रकल्पयेत्॥ १७४३॥
रक्तोत्पलदलद्रावैर्मर्दयेत्पिष्टिकाकृतिम्।
षड्गुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेद्दिवसद्वयम्॥ १७४४॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये सन्निरुद्धय त्रियामकम्।
सिकताख्ये पचेच्चुल्लीते सिद्धसूतन्तु भक्षयेत्॥१७४५॥
पञ्चरक्तिप्रमाणेन मुसलीशर्करान्वितम्।
शुक्रवृद्धिं करोत्येष ध्वजभङ्गञ्च नाशयेत्॥ १७४६॥
दुर्बलं वपुरत्यर्थं बलयुक्तं करोत्यसौ।
मुद्गगर्भं घृतं क्षीरं शालयः स्निग्धमामिषम्।
पारावतस्य मांसञ्च तित्तिरिश्च सदा हितः॥ १७४७॥

भै र., र. क., ध्वजभङ्गे, र मु. वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण और चांदीकेवर्क, मोती, यवक्षार १-१ तोलालेकर पिट्ठी बनाय लालकमलकेफूलोंकेरससे १-२ दिन मर्दनकर ६ गुना गन्धक डालकर दोदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल्होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ५-५ रत्ती मुसली और शक्करकेसाथ-देनेसे शुक्रहानि, ध्वजभङ्ग, अत्यन्तदुर्बलता, इनसबको यह नष्ट-करताहै। घृतयुक्तमूंग, दूध, सफेदचावल, स्निग्धमांस, कबूतर और तीतरका मांस हितकरहै॥ १८८॥

३८९ सिद्धाभ्रकरसः (लघ्वादिः)

समांशं रसगन्धाभ्रं दरदञ्च विशेषितम्।
लोहखल्वे विनिःक्षिप्य गव्याज्येन समन्वितम् १७४८
मर्दकेनाऽपि लौहेन मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
द्रोणीचुल्ल्यां न्यसेत्खल्वं साङ्गारायां प्रयत्नतः १७४९

इति सिद्धरसेन्द्रोऽयं लघुः सिद्धाभ्रकोमतः।
वल्लतुल्योऽम्भोजीरैः वारिणा सहितःप्रगे॥ १७५०॥
पीतो हरति वेगेन ग्रहणीमतिदुस्तराम्।
अतिसारं महाघोरं सातिसारं ज्वरन्तथा॥ १७५१॥
पाचनो दीपनो हृद्यो गात्रलाघवकारकः।
नागार्जुनेन कथितः सद्यः प्रत्ययकारकः॥ १७५२॥

र. को., र. चं., र मु. ग्रहण्याम्।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और रूमी शिंगरफ, अभ्रकभस्म सब समभागलेकर गायका घी डालकर लोहेके तप्तखल्वमें ३दिनतक मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा २ माशे-जीरेमें मिलाकर जलकेसाथ प्रात कालमेंलेनेसे भयङ्कर संग्रहणी, अतिसार, ज्वरातिसार इनसबको यह नष्टकरताहै॥ १८९॥

३९० सिद्धामृतरसः

सौराष्ट्याश्च त्रयो भागा भागैकं स्वर्णगैरिकम्।
चूर्णं कृत्वा माषमात्रं गोदुग्धस्यानुपानतः॥ १७५३॥
प्रभातकाले संसेव्यमम्लतैलादि वर्जयेत्।
शिरोभ्रमं शिरोरोगमम्लपित्तं विनाशयेत्॥ १७५४॥
सर्वान् पित्तभवान्रोगान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः।
सिद्धामृतरसः ख्यातः पूज्यपादेन निर्मितः॥ १७५५॥

रसायनसं., अम्लपित्ते।

भाषा—भुनीफिटकडी ३ भाग, सोनागेरू १ भागलेकर १-२ पहर घोटकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ माशा प्रात काल गोदुग्धकेसाथ देनेसे शिरोभ्रम, शिरोरोग, अम्लपित्त, पित्तज समस्त उपद्रव इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३९०॥

३९१ सिद्धेश्वररसः (महदादिः) १

शुद्धं सूतं शिलां ताप्यं मृताभ्रं मर्दयेत्समम्।
जातीफलं लवङ्गैले प्रसूनं तद्विभागिकम्॥ १७५६॥
चूर्णयेत्सर्वमेकत्र रसः सिद्धेश्वरो महान्।
द्विगुञ्जं भक्षयेत्क्षौद्रैरनुपानमथोच्यते॥ १७५७॥
पटोलछिन्निशानिम्बतिक्तकोशातकीवचाः।
एष्यां यदि समं क्वाथं वस्त्रपूतं तदाहरेत्॥ १७५८॥
स्वाथपादयुतं चाज्यं पचेदाज्यावशेषकम्।
घृतदाज्यं पलार्द्धन्तु ह्यनुपानञ्च कुष्ठनुत्॥ १७५९॥
लेपं सिद्धरसेनैव सुप्तस्थाने नियोजयेत्।
तत्पृष्ठे लाशुनं पिण्डं बद्धा स्फोटः प्रजायते॥
पुनर्लेपं पुनर्बद्धा विनश्येत्सुप्तिमण्डलम्॥ १७६०॥

र. का., कुष्ठाधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और मैनसिल, सोनामाखी और अभ्रकभस्म १-१ भाग, जायफल, लौंग, इलायची, आककी जड़की छाल २-२ भागलेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय शीशीमें रखछोडे। अथवा आककीजड़की-छालकेक्वाथ अथवा स्वरसमें १-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियांबनाकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्ती मधुकेसाथदेक

पटोलपत्र, हल्दी, दारुहल्दी, नीमकीछाल, कड़वीतरोईकेफल अथवा बीज, वच, हर्रे, मुलहठी सब समभागलेकर जवकुट चूर्ण-कर चौगुनेपानीमें पादावशेषक्वाथकर चतुर्थांश गायकाघी डालकर पकावे। घी बाकीरहनेपर उतारकर छानले। इसमेंसे आधापल ऊपर पिलानेसे सुप्त और मण्डलकुष्ठ नष्टहोतेहैं। सुप्त और मण्डल स्थानमें लहसुनकेरसमें मिलाकर इसरसकालेपकरे और ऊपरसे लहसुनकाल्कबांधे। ऐसे बारम्बारकरनेसे कुष्ठस्थानमें फोड़ाहोकर अच्छा होजायगा ॥ ३९१ ॥

३९२ सिद्धेश्वररसः (द्वितीयः)

नागं वङ्गं भस्मसूतं लोहं ताम्रं समं समम्।
हालाहलं त्रिभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥१७६१॥
आटरूपाग्निनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीपुनर्नवैः।
धत्तूरविजयामुण्डीसमुद्रशोषजैरपि ॥ १७६२ ॥
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहसम्भवैः।
पित्तैः समस्तै र्व्यस्तै र्वा भावयेच्च भिषग्वरः॥१७६३॥
गुञ्जामात्रप्रयोगेण चार्द्रकस्वरसेन तु।
रसः सिद्धेश्वरो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥१७६४॥

र. क. यो., सन्निपाते।

भाषा—नाग, वङ्ग, लोह, ताम्र और पारदभस्म १–१ भाग, शुद्ध बछनाग ३ भागलेकर बारीकचूर्णकर अड़्सा, चित्रक, निर्गुण्डी, मराठी, पुनर्नवा, धतूरा, भांग, गोरखमुण्डी और समुद्रशोषकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर, बकरा और सुअरकेपित्तोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

३९३ सिन्दूरभूषणरसः (प्रथमः)

अभ्रकं रससिन्दूरं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा।
ग्रन्थिकं टङ्कणञ्चैव समभागं विनिक्षिपेत् ॥ १७६५ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव मर्दितं त्रिदिनं भवेत्।
मधुना सेवयेन्नित्यं कुष्ठाष्टादशकामलाः ॥ १७६६ ॥
विंशतिं श्लेष्मरोगांश्च चत्वारिंशच्च पित्तजान्।
अशीतिं वातजान्रोगान्हन्ति शूलशतत्रयम् ॥ १७६७॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्यात्पण्ढोऽपि पुरुषायते।
बालो वाऽपि च वृद्धो वा गर्भिणी वापि सेवयेत्।
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धभाषितः ॥ १७६८ ॥

रसायनस., वै चि (ल), रसायने।

टि०—रसायनसंग्रहस्य द्वितीयस्थाने विद्रुममौक्तिकस्थाने गन्धक ग्रन्थिकौ नियोज्य धत्तूरस्वरसैश्च भावनां दत्त्वा पाठान्तर प्रकल्पितो दृश्यते।

भाषा—अभ्रकभस्म, रससिन्दूर, प्रवाल और मोतीकी-भस्म, गठिवन, भुनासुहागा सब समभागलेकर बिजौरेकेरससे ३ दिनतक मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, कामला, २० प्रकारके कफरोग, ४० पित्तरोग, ८० वातरोग, ३०० शूल, २० प्रमेह, नपुंसकता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

३९४ सिन्दूरभूषणरसः (द्वितीयः)

वैक्रान्तं जातरूपञ्च वज्रविद्रुममौक्तिकम्।
भुजङ्गमभ्रकं कान्तं रससिन्दूरकं क्रमात् ॥ १७६९ ॥
पञ्चचैकैकभागाः स्युश्चतुर्भागास्तथाऽपरे।
जातीपुष्परसै रक्तागस्त्यपुष्पेक्षुवालकैः ॥ १७७० ॥
वरीलामज्जवाराहीहिमशाल्मलिवारिभिः।
प्रत्येकैश्च दिनं मर्द्यं माषमात्रन्तु सेवयेत् ॥ १७७१ ॥
इष्टमुष्णादिकं योज्यं कुष्ठाऽष्टादशकामलाः।
विंशतिं श्लैष्मिकाम्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् १७७२
अशीतिं वातजान्रोगान् हन्ति शूलशतत्रयम्।
प्रमेहार्शो महाव्याधीन्सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ १७७३ ॥
अतिसारभयान्रोगांश्श्लेष्मपाण्डुज्वराञ्जयेत्।
द्वन्द्वोत्थञ्च त्रिदोषोत्थं राजरोगभयङ्करम् ॥ १७७४ ॥
वन्ध्यापि लभते पुत्रं पण्ढोऽपि पुरुषायते।
प्रदरं सर्वग्रन्थींश्च नाशयेद्गलरोगकम् ॥ १७७५ ॥
बालवृद्धादिभिः सेव्यं गर्भिणीभि विशेषतः।
तत्तद्रोगानुपानञ्च हितं पथ्यञ्च दीयते ॥
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धभाषितः ॥ १७७६ ॥

र क यो. सर्वरोगे।

भाषा—वैक्रान्त ५ भाग, सुवर्ण और हीरा १–१ भाग, प्रवाल मोती, नाग, अभ्रक, कान्त इनकीभस्में और रससिन्दूर ४–४ भाग लेकर बारीकचूर्णकर चमेली और लालअगस्त्यके फूल, ईख, सुगन्धवाला, शतावर, खस, वाराहीकन्द, कपूर, सेमलकामुसला इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इन-मेंसे १–१ गोली गरमपानी अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे १८ प्रकारकेकुष्ठ, कामला, २० प्रकारकेकफरोग, ४० पित्तरोग, ८० वातरोग, ३०० शूल, प्रमेह, बवासीर, १३ सन्नि-पात, अतिसार, पाण्डु, ज्वर, द्वन्द्वोत्थ अथवा त्रिदोषज भय-ङ्करराजरोग, बन्ध्यापन, नपुंसकत्व, प्रदर, सबप्रकारकीगाँठें, गलरोग, गर्भिणीकेरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३९४ ॥

३९५ सिन्दूरभूषणरसः (तृतीय)

सुवर्णं रससिन्दूरं कर्पूरञ्चाहिफेनकम्।
कर्षमानं पृथङ्मोचसारैलावंशरोचनाः ॥ १७७७ ॥
कर्षद्वन्द्वं पृथक्सर्वं मुस्ताक्वाथेन भावयेत्।
द्विगुञ्जां वटिकां कृत्वा दापयेत्कुटजाम्भसा ॥१७७८॥
नाशयेदतिसारांश्च विसूचीग्रहणीगदान्।
बलवर्णाग्निजननो नाम्ना सिन्दूरभूषण ॥ १७७९ ॥

नृ क, अतिसारे।

भाषा—सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, शुद्धकपूर और अफीम १–१ कर्ष, मोचरस, इलायची, वंशलोचन २–२ कर्ष लेकर

बारीकचूर्णकर नागरमोथेकेक्काथसे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली कुरैयाकी छालके काढेके साथ देनेसे अतिसार, हैज़ा, ग्रहणी, बल–वर्ण और अग्निकी मन्दता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३९५ ॥

३९६ सिन्दूरभूषणरसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतञ्च सिन्दूरं पलैकैकं विमर्दयेत् ।
वासारसेन यामैकं तेन कुर्याच्च चक्रिकाम् ॥ १७८० ॥
सुपक्कां कारयेन्मूषामुत्तानां द्वादशाङ्गुलाम् ।
तन्मध्ये गन्धकं शुद्धं क्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥ १७८१ ॥
पूर्वोक्तां चक्रिकां तत्र धृत्वा लिप्त्वा पुटेल्लघु ।
जीर्णे गन्धे समुद्धृत्य चक्रिकां तां विचूर्णयेत् ॥१७८२॥
चूर्णाद्दशगुणं योज्यं मृतलोहञ्च मर्दयेत् ।
लशुनेन दशांशेन चणमात्रा वटीः किरेत् ॥ १७८३ ॥
वातपाण्डुहरः सिद्धो रसः सिन्दूरभूषणः ।
पिबेच्चानु ह्यपामार्गस्यैरण्डस्य च मूलिकाम् ॥
तक्रैः पिष्ट्वाऽथ कर्षैकां हन्ति पाण्डुं सकामलम् १७८४

र.र.स , र.च , र.र., र सु , ध. रा , र. का., वै. चि., र. को कामलापाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और रससिन्दूर १–१ पललेकर एकप्रहर अडूसेकेरससे घोटकर चक्रिका बनाय १२ अङ्गुलकी खड़ी मूषामें रख ४ पल गन्धक डालकर लघुपुटकी आंचदे । गन्धक- जीर्ण होनेपर चक्रिकासे दशगुनी लोहभस्म मिलाकर दशांश लहसनका कल्क मिलाय घोटकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली खाकर अपामार्ग अथवा एरण्डकी- जड़ १–१ कर्ष छाछमें पीसकर पीनेसे वातपाण्डु और कामला नष्टहोतीहै ॥ ३९६ ॥

३९७ सिन्दूरयोगः

सिन्दूरं कानकं बीजं विजयेक्षुरबीजकम् ।
जातीफलं जातिपत्री कटुशिग्रुमफेनकम् ॥ १७८५ ॥
समुद्रशोपसंयुक्तं लवङ्गेश्च युतं तथा ।
भावयेद्विजयाक्काथैश्छायाशुष्कां कृतां वटीम् ॥
खादेच्च रक्तिकां नित्यं शुक्रस्तम्भः प्रजायते ॥१७८६॥

ध , वाजीकरणे ।

भाषा—रससिन्दूर, शुद्ध धतूरेकेबीज, भाग, तालमखाना, जायफल, जावित्री, कड़वेसहिजनकीछाल, अफीम, समुद्रशोष, लौंग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर भांगके स्वरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाय छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शुक्रका स्तम्भन करतीहै ॥ ३९७ ॥

३९८ सिन्दूरादिवटी

सिन्दूरं गोस्तनीं क्षौद्रं भक्ष्यते मासपञ्चकम् ।
असृग्दरास्थिप्रदरं नाशमायाति निश्चितम् ॥१७८७॥

ध रा , प्रदरे ।

भाषा—रससिन्दूर २ रत्ती, आबजोश (बड़ीदाख) और मधु ११–२॥ माशे मिलाकर प्रतिदिन खाकर दूधपीनेसे रक्त और अस्थिप्रदर नष्टहोतेहैं ॥ ३९८ ॥

३९९ सिंहनादरसः (प्रथमः)

लोहपात्रे शुद्धगन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
शुद्धं सूतं समं चाल्यं व्याघ्रीद्रावं द्वयोः समम् ॥
निर्गुण्ड्युत्थं करञ्जोत्थं तुल्यं द्रावं विनिक्षिपेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावच्छुष्कं द्रवत्रयम् ॥ १७८९ ॥
विषं पादयुतं चूर्ण्यं सिंहनादोत्तमो रसः ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातज्वरान्तकम् ॥ १७९० ॥
अनुपानैः पिबेत्काथं कण्टकार्याः सपुष्करम् ।
गुडूचीनागरे युक्तमरुचौ श्वासकासयोः ॥ १७९१ ॥

र.को., र.सं , चि र. म , र. र , र. क ल , र क , र का , रसायनसं , सन्निपाते ।

टि०—कुत्रचित् व्याघ्रीस्थाने भार्ङ्गी नियोजिता । र [illegible] ल. वातांस- हरस इति नाम । र का मेघनादरस इति नाम ।

भाषा—लोहेकेपात्रमें शुद्धगन्धक डालकर गलावे । गल- जानेपर बराबरका पारा डालकर चलावे । एकजीवहोनेपर दोनोंकी बराबर भटकटैयाका स्वरस डालकर चलावे । सूखनेपर उतनाही निर्गुण्डी और करञ्जका स्वरस क्रमसे डालकर चलावे । रस- सूखनेपर चतुर्थांश शुद्धबछनाग डालकर उतारले और १–२ दिन मर्दनकर रखलेवे । इसमेंसे १–१ रत्ती मधुवगैरहके साथ चटा- कर भटकटैयाकेक्काथमें पोहकरमूलका प्रक्षेप देकर पिलानेसे सन्नि- पात नष्टहोताहै । गिलोय और सोंठकेक्काथकेसाथ लेनेसे अरुचि, श्वास और कास नष्टहोतेहैं ॥ ३९९ ॥

४०० सिंहनादरसः (भुवनेश्वरः) २

शुद्धं सूतं विषं गन्धं समं मणिशिलारसम् ।
दन्तीबीजं समं खल्वे मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ १७९२ ॥
कारवल्लीरसैः सम्यक् पुटपाके च योजयेत् ।
उद्धृत्य चूर्णयेत्खल्वे द्वियामं चानुपानतः ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं विलोमवातनाशनम् ॥ १७९३ ॥

ध.रा., वै. चि , विलोमवाते ।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने (ज्वराऽधिकारे) गौरीपाषाण भस्म विष मणिशिलारसमित्याकारको विशेषोऽस्ति । नाम च भुवने- श्वर इति स्थापितम् । अत्यन्तोत्कटवीर्यसम्पादनेच्छा चेत्तर्हि मणिशिलारसे गौरीपाषाणाभ्रे निक्षिप्य रस सम्पाद्यतामन्यथा तु यथावस्थित एव- योग श्रेयानिति सुधीभिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, मैनसिल, खपरिया जमालगोटा सब समभागलेकर नीलवांकमलीकर दोदिनकं- करेलेके रससे मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डवगैरहके पत्तोंसे संपुट पुटपाककरे । स्वाङ्गशीतल होनेपर १–१ रत्तीकी गोलियां बना- कर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विलोमवातका नाशकरताहै ॥ ४०० ॥

४०१ सिंहप्रतिपालनम्

सूतं गन्धकवत्सनाभगरलं चैकैकभागान्वितं,
सर्वं हंसपदीद्रवेण मिलितं गुञ्जैकमात्रं भजेत्।
तैलाभ्यङ्गजलोपचारसहितं पथ्यञ्च दध्योदनं,
नानादोषसमुद्भवान्विजयते सिंहप्रतीपालनम् १७९४

र रा., ज्वराधिकारे।

टि०—यद्यपि तृतीयमर्वसुन्दरस्याऽप्यस्मिन्नेव रसेऽन्तर्भावं कर्तुमुचितं तथाऽप्यस्य रसस्य गरल्युक्तत्वाऽतितीक्ष्णवीर्यत्वाद्द्वयोरपि स्वतन्त्रतयैव पाठौ गृहीतौ। अमृतपाले तु ताम्रयुक्ततया स्वतन्त्रता सुतरामेवाऽस्तीति विद्वद्भिराकलनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बच्छनाग और सर्पविष समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजकेरससे १–२ दिन मर्दन कर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेकर तैलाभ्यङ्गकराके मस्तेपर ठंडेजलकी धारा देवे। अत्यन्त भूख लगनेपर दहीभातका भोजन करावे। इससे नानाताहके दोषोंसे जायमान ज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४०१ ॥

४०२ सिंहशार्दूलरसः

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रञ्च त्रपु सीसकम्।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमवृद्ध्या समांशकम् १७९५
व्योमसत्त्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत्।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशिकाम् ॥१७९६॥
प्रद्राव्य लोहभस्मादि सर्वं तत्र विनिक्षिपेत्।
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं सद्रवं हि समाहरेत् ॥१७९७॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तधा परिभावयेत्।
अङ्कोलीबीजसम्भूतकाथलेहेन यत्नतः ॥ १७९८ ॥
रुद्ध्वा तदन्धमूषायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः।
इतिसिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पटगालित. ॥१७९९॥
कान्तपात्रस्थितै रात्रौ जलैस्त्रिपलसंयुतैः।
घल्लद्वयमितः प्रातः पातव्यो मेहरोगिणा ॥ १८०० ॥
मृगचारिमृगेन्द्रेण मेहव्यूहविनाशनः।
निर्दिष्टोऽयं रसश्चैव शार्दूल इति नामत ॥ १८०१ ॥
दीपनः पाचनो रुच्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः।
आमघ्नो रचितस्सर्वरोगघ्नो योगसंयुत. ॥ १८०२ ॥

र. को , प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, रजत, कान्त, ताम्र, वङ्ग, नाग इनकीभस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकीबराबर अभ्रकसत्त्वभस्म मिलाकर मबकी बरावर शुद्धपारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीको घीपुतीहुई कड़ाहीमें बेरकेकोयलोंपर गलाकर समस्तको मिलाकर उतारले और घोटकर कज्जली बनाले। फिर इसको अङ्कोलकीमज्जाकेकाथकेघनसे ७ दिन घोटकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर भूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर रखछोडे। इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा कान्तपात्रमें रातभर रक्खेहुए ३ पल जलकेसाथ प्रात काललेनेसे समस्तप्रमेहोंको यह नष्टकरताहै। यह दीपन और पाचनहै, ग्रहणी, पाण्डु और आमको नष्टकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ सीसरसायनम्

द्रुतद्रावं महाभारं छेदे कृष्णं समुज्ज्वलम्।
पूतिगन्धं बहिः कृष्णं शुद्धं सीसमतोऽन्यथा ॥१८०३॥
अत्युष्णं सीसकं स्निग्धं तिक्तं वातकफापहम्।
प्रमेहतोयदोषघ्नं दीपनं चामवातनुत् ॥ १८०४ ॥
सिन्धुवारजटाक्काथे हरिद्राचूर्णकं क्षिपेत्।
द्रुतनागञ्च निर्गुण्ड्यास्त्रिवारं निक्षिपेद्रसे ॥ १८०५ ॥
नागः शुद्धो भवेदेवं मूर्च्छास्फोटादि नाचरेत्।
तिर्यगाकारचूल्ल्यां तु तिर्यग्वक्त्रं घटं क्षिपेत्॥१८०६॥
तद्वक्त्रञ्च विना सर्वं गोपयेद्यत्नतो मृदा।
प्राग्यन्त्राभिधे तस्मिन्यन्त्रे सीसं विनिक्षिपेत् १८०७
पलविंशतिसम्मानमधस्तीव्रानलं क्षिपेत्।
द्रुते नागे क्षिपेत्सूतं शुद्धं कर्षमितं शुभम् ॥ १९०८ ॥
विमृद्य निक्षिपेत्क्षारमेकैकं हि पलं पलम्।
अर्जुनाख्यस्य वृक्षस्य महाराजतरोरपि ॥ १८०९ ॥
दाडिमस्य मयूरस्य क्षिप्त्वा क्षारं पृथक् पृथक्।
एवं विंशतिरात्राणि पचेत्तीव्रेण वह्निना ॥ १८१० ॥
विघट्टयन् दृढं दोर्भ्यां दर्व्या चाथ प्रयत्नतः।
रक्तं तज्जायते भस्म कपोताभं विवर्जयेत् ॥ १७११ ॥
नागं दोषविनिर्मुक्तं जायते तु रसायनम्।
हलमुत्थापितं सीसं दशवारेण शुद्ध्यति ॥ १८१२ ॥
तन्मृत सीसकं सर्वदोषमुक्तं रसायनम्।
एवं नागोद्भवं भस्म ताप्यभस्मार्द्धभागिकम्॥१८१३॥
पादं पादं क्षिपेद्भस्म शुल्बस्य रजतस्य च।
कान्ताभ्रसत्त्वयोश्चापि स्फटिकस्य पृथक्पृथक्१८१४
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेत्तत्त्रिफलाम्भसा।
त्रिंशद्वनगिरीन्द्रैश्च त्रिंशद्वारं विचूर्ण्य तत् ॥ १८१५ ॥
व्योषवेल्लकचूर्णैश्च समांशैः सह योजयत्।
मध्वाज्यसहितं हन्ति प्रलीढं घल्लमात्रया ॥ १८१६ ॥
अशीतिं वातजान्रोगान्धनुर्वातान्विशेषतः।
कफरोगानशेषांश्च मूत्ररोगांश्च सर्वशः ॥ १८१७ ॥
श्वास कासं क्षय पाण्डुं श्वयथुं शीतकज्वरम्।
ग्रहणीमामदोषञ्च वह्निमान्द्यञ्च दुर्जयम् ॥
सर्वान्गुदजदोषांश्च तत्तद्रोगानुपानतः ॥ १८१८ ॥

र चू., वातव्याधौ।

भाषा—जल्दी पिघलनेवाला, अत्यन्तवज़नदार, काटनेमें उज्ज्वल, दुर्गन्धयुक्त इमतरहका सीसा कार्यक्षम होताहै। सीसा अत्यन्त गरम, स्निग्ध और तिक्तरसयुक्त होताहै। वात, कफ, प्रमेह, जलदोष, मन्दाग्नि और आमवातको नष्टकरताहै। निर्गुण्डीकी जडकेकाथमें हल्दीकाचूर्ण डालकर नागको गलाकर ३ बार बुझानेमे मूर्च्छा और स्फोट नहीं करताहै। टेढेचूल्हेमें टेढा घडारख गोबरसे तमामको ढकदे केवल मुह उघाड़ा रहनेद। इसमें २० पल शुद्धसीसेको डालकर तीक्ष्ण अग्निजलावे। गल जानेपर १ पल शुद्धपारा डालदे और अर्जुन, अमिलतास, अनार,

अपामार्ग इनकाक्षार १–१ पल लेकर थोड़ा थोड़ा डालकर लोहे-कीकड़छीसे घोटे । ऐसे २० दिनरात कड़ी आचदेकर मर्दनकरे । इसतरहकरनेसे लालरङ्गकी भस्म होगी । कपोतवर्ण हो तो उसे न लेवे । इसको मित्रपञ्चकके योगसे उत्थापितकर फिर पूर्ववत् भस्मकरे । ऐसे १० बारकरनेसे यह समस्तदोषोंसे निर्मुक्त सीस रसायन तैयारहोगी । यह भस्म १ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म आधाभाग, ताम्र, रजत, कान्त और अभ्रकसत्त्व, स्फटिकमणि इनकीभस्में प्रत्येक चतुर्थांश डालकर त्रिफलाकेक्वाथसे एकदिन घोटकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३० जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । इसतरह ३० आचें देकर इसमें त्रिकटु और विडङ्गका समभागचूर्ण मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफ रोग, मूत्ररोग, श्वास, कास, क्षय, पाण्डु, शोथ, शीतज्वर, ग्रहणी, आमदोष, दुर्जय मन्दाग्नि, समस्त उदररोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४०३ ॥

४०४ सुखमेदीरसः

रसं गन्धं विषञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
टङ्कणं हिङ्गुलञ्चैव टङ्कं टङ्कं पृथक् पृथक् ॥ १८१९ ॥
मरिचञ्च निटङ्कं स्याज्जैपालं टङ्कषोडश ।
खल्वे चैतानि निक्षिप्य छागपित्तेन मर्दयेत् ॥ १८२० ॥
कार्या स्विन्नचणाकारा घटिका परमोत्तमा ।
विरेकाय प्रदातव्या शीतञ्चानुपिबेज्जलम् ॥
तावद्विरेचयेज्जन्तुं यावदुष्णं न सेवयेत् ॥ १८२१ ॥

र. र. कौ., विरेचने ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बच्छनाग, हरिताल, मैनसिल, सुहागा और शिंगरिफ ४–४ माशे, मरिच १२ माशे, शुद्ध जमालगोटा ४ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय एकदिन बकरेके पित्तसे घोटकर भीगेहुए चने प्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ठंडेजल केसाथ लेनेसे रेचनहोगा, उष्णोपचारकरनेसे बन्दहोजायगा ४०४

४०५ सुखविरेचनरसः (प्रथमः)

शङ्खं दहेत्स्थोलिकया [illegible] घर्मे
स्वगङ्कुरैर्वर्जितदन्तिबीजम् ।
सम्यग्विशुद्धञ्च नवं नियोज्यम्
भागा. शरा. सूतलवौ बलेश्च ॥ १८२२ ॥
विमर्दितः स्यात्सुखरेकनाम्ना
गुञ्जात्रयं साज्यमनुष्णदेयम् ।
न ग्लानिदु खं न च कण्ठदाहो
ज्वरं निहन्याद्विषमं नवं वा ॥ १८२३ ॥
आमानिलं पाण्डुजलोदरार्ति
संसेवितोऽयं जयतीह रेकः ।
तक्रेण भक्तञ्च घृतेन चास्मि-
न्रोगानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२४ ॥

र. श., विरेचने ।

भाषा—कण्डोंमें रखकर कौड़ई शङ्खकी सफेदभस्म और शुद्ध जमालगोटे ५–५ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक २–२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मधुकेयोगसे ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ठंडेघीकेसाथ देनेसे विनाकिसीउपद्रवके रेचनहोताहै । विषम अथवा नवीनज्वर, आमवात, पाण्डु, जलोदर इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तभूख लगनेपर घृतकेसाथभातदेकर छाछपिलावे । अन्यरोगोंमें औचिती देखकर अनुपानवगैरहकी योजनाकरे ॥ ४०५ ॥

४०६ सुखविरेचनरसः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला सूतं सिन्धुटङ्कणगन्धकम् ।
सर्वैः समानं जैपालं राजयोग्यं विरेचनम् ॥ १८२५ ॥
न ग्लानिदुःखं गुदकण्ठदाहो-
ज्वरं निहन्याद्विषजं विकारम् ।
आध्मानिलं पाण्डुजलोदरार्ति
संसेवितोऽयं जयतीह वेगात् ॥
तक्रेण पथ्यञ्च घृतेन चास्मिन्रो-
गानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२६ ॥

र. सु., विरेचने ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्धपारा, सैंधानमक, सुहागा और गन्धक समभाग लेकर सबकीबराबर शुद्धजमालगोटा मिलाय १–२ दिन मर्दनकर अदरखके रसवगैरहमें १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे विषमज्वर, आध्मान, पाण्डु, जलोदर इनसबको यह नष्टकरताहै । गुदा और कण्ठका दाह तथा ग्लानि नहीं होती । अत्यन्तभूखलगनेपर घी और छाछकेसाथ भात देवे ॥ ४०६ ॥

४०७ सुखविरेचनरसः (तृतीयः)

रसः क्षारलोहं गदं गन्धकञ्च
विमर्द्यापि जैपालतैलेन यामम् ।
गुडच्छन्नगुञ्जामिता स्याच्च मात्रा
सदामान्तरेची सुखप्राग्विरेकः ॥ १८२७ ॥

वै. वि., टो., रसायनसं., विरेचने । टोडरानन्दे सुखातिरेक इतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, यवक्षार, लोहभस्म, कुठ, शुद्धगन्धक समभागलेकर बारीकपीस जमालगोटेके तैलसे एकपहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी मात्रा गुड़में लपेटकर देनेसे आमान्त रेचन होताहै ॥

४०८ सुखातिरेकीरसः

गन्धानलव्योषरसान्सभृङ्गा
न्स्वाकल्करान् स्फटिकटङ्कणाढ्यान् ।
सुखर्परफेनयुतान्समांशा-
न्द्विवत्सनाभान्दिनसप्तकं तत् ॥ १८२८ ॥
रसेन भृङ्गस्य विभाव्य शुष्कं
ऋक्ष्णं विचूर्ण्यार्धममुष्य चूर्णम् ।

अपक्कसम्बन्धिनि मृत्युनाम्नि
वलं प्रदद्यान्नवकेऽनवे वा ॥ १८२९ ॥
नेपालकुष्ठस्य जलेन सार्धं
विभाव्य कृत्वा वटिका प्रदेया ।
सुपक्कदोषे गजभाजि पथ्यं
दध्योदनं शर्करया विमिश्रम् ॥ १८३० ॥
तापोद्गमेऽस्मिन्विदधीत शीत-
क्रियाः शुभा भोज्यविलासरम्याः ।
यः पूजयेदीशमिमञ्च वैद्य-
स्तस्यज्वरै र्नाभिभयः कदाचित् ॥ १८३१ ॥

र.ल , विरेचने ।

भाषा—शुद्धगन्धक, चित्रक, त्रिकटु, शुद्धपारा, भंगरा, अकलकरा, फटकरी, सुहागा, शुद्धखपरिया और अफीम १–१ भाग, शुद्धबछनाग २ भागलेकर ७ दिनतक भंगरेके रससे भावनादेकर सुखाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा भंगरेकेरस अथवा जलकेसाथदेनेसे अपरिपक्वदोष, नवीन अथवा पुरानाज्वर नष्टहोताहै । जमालगोटा और कुठके जलसे भावना-देकर गोलीबनावे और ८ दिनबीतजानेपर ज्वरकी परिपक्वा वस्थामें इसकी १ गोली देकर दही और भातखानेको देवे । दैव सयोगसे ज्वर बढजायतो शीतोपचार करे । जो वैद्य ईश्वरभक्ति परायणहोताहै उसका ज्वरोंसे पराजय नहींहोता ॥ ४०८ ॥

४०९ सुगन्धमोदकः

भागद्वयं हरीतक्यास्तथा विभीतकस्य च ।
पलापञ्चत्रिभागानि वानरीबीजकान्यथ ॥ १८३२ ॥
कर्चूरं ग्रन्थिभार्ङ्गी वेदभागाश्च रेणुकाम् ।
वत्सनाभं जटामांसीं सोमराजीञ्च नेत्रकम् ॥१८३३॥
चन्दनं मागधीमूलं गुग्गुलुं पञ्चपञ्चकम् ।
जातीफलं चागुरुञ्च चित्रमूलं श्रयांशकम् ॥ १८३४ ॥
सुगन्धि जीरकं कुष्ठं गुल्मगुल्मञ्च योजयेत् ।
यष्टीमधु द्विभागञ्च तत्समाञ्च वचां शुभाम् ॥ १८३५ ॥
द्विभागं पद्मकिञ्जल्कं समुद्रशोषलोचनम् ।
दारुकं बीजमागैकं वाह्लीकं त्रिगुणं स्मृतम् ॥ १८३६ ॥
रसगन्धकभागैकं किञ्चिच्चन्द्रञ्च भावयेत् ।
एतत्समं भागचूर्णं वस्त्रपूतञ्च कारयेत् ॥ १८३७ ॥
गुडेन मर्दयेद्धीमान्वटकं कोलमात्रकम् ।
एकैकं भक्षयेत्प्राज्ञस्तैलाम्लादीन्विवर्जयेत् ॥ १८३८ ॥
वातक्षयाश्मरीकुष्ठगुल्माजीर्णविसूचिकाः ।
अरुचिं पाण्डुरोगञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ १८३९ ॥
शीतज्वरं सन्निपातं वमनं विषमज्वरम् ।
उन्मादं ग्रहणीरोगं पीनसं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ १८४० ॥
हिक्कां लूतां जृम्भणञ्च व्यथां विस्फोटकादिकम् ।
सर्वरोगांश्च वै हन्ति बलवीर्यकरं परम् ॥ १८४१ ॥
रोगी वाप्यथवाऽरोगी योगिनां कल्पसाधनम् ।
सुगन्धमोदक सोऽयमसह्ययातगुणप्रदः ॥ १८४२ ॥
पूर्वोपार्जितभाग्यो यो लभते परमौषधम् ।
सर्वग्रन्थार्थतत्त्वानि निष्पीड्यानन्दकारकः ॥
कृपया सर्वलोकानां ज्ञानज्योतिरिमं व्यधात् ॥१८४३॥

र.ज्ञ , रसायने ।

भाषा—हर्रे और बहेडा २–२ भाग, इलायची ५ भा , केवाचकेबीज ३ भा , कचूर, गठिवन, भारङ्गी और रेणुका ४–४ भाग, शुद्धबछनाग, जटामासी, बावची, सुगन्धवाला, सफेदचन्दन, पिपलामूल और गूगल ५–५ भा , जायफल, अगर, चित्रकमूल ३–३ भा , कपूरकाचरी, कालाजीरा, कूठ, गुल्म ? (आवला और लालकनेरकीजड), मुलहठी, वच २–२ भा , पद्मकेशर १० भा , समुद्रशोष २ भा , देवदारुकेबीज १ भा , हींग ३ भा , शुद्ध पारा गन्धक और कपूर १–१ भाग लेकर सबका कपडछानचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सबकेबराबर गुडकी चाशनीमें डालकर ८–८ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातक्षय, कुष्ठ, गुल्म, अजीर्ण, हैजा, अरुचि, पाण्डु, गण्डमाला, भगन्दर, शीतज्वर, सन्निपात, वमन, विषमज्वर, उन्माद, ग्रहणी, पीनस, मूत्रकृच्छ्र, हिचकी, मकडीकाविष, जभाई, अङ्गोंका टूटना, विस्फोट, बल और वीर्यका अभाव इनसबको यह नष्टकरताहै । तैल और खटाईका परित्यागकरे ॥ ४०९ ॥

४१० सुदर्शनरसः (प्रथमः)

मूर्च्छितं मर्दयेत्सूतं दध्ना घर्मे दिनावधि ।
तत्तुल्यकं निष्कपदकं तु सिन्दूरं निष्कमात्रकम् १८४४
यवक्षारस्य निष्कैकमम्लपर्णीनिशाद्रवैः ।
दिनानां त्रितयं मर्द्य लेह्यं मध्वाज्यसंयुतम् ॥ १८४५ ॥
रसः सुदर्शनाख्योऽसौ ग्रहणीरोगशान्तिकृत् ।
धातकीकुसुमं शुण्ठीपाठाबिल्वरसाञ्जनैः ॥ १८४६ ॥
मुस्ता चातिविषा तिक्ता कुटजस्य फलत्वचम् ।
तुल्यं क्षौद्रैः पिबेच्चानु कर्षं तण्डुलवारिणा ॥ १८४७ ॥

र को , र का , ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारेको धूपमें बैठकर दहीकेसाथ दिनभर घोटे । सुखनेपर १॥ कर्षपारेमें ४–४ माशे रससिन्दूर और यवक्षार डालकर अम्लोनिया और हल्दीके अङ्गस्वरससे ३–३ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथलेकर धायकेफूल, सोंठ, पाठा, बेलकीगड, रसौत, नागरमोथा, अतीस, कुटकी, कुरैयाकीछाल, इन्द्रजव समभागका १ तोला चूर्ण लेकर चावलके धोवनकेसाथ लेनेसे सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै ॥ ४१० ॥

४११ सुदर्शनरसः (द्वितीय)

त्रिद्वयेकाणि च शिग्रुकदुतिमिजैस्तैलेश्च पित्तैस्त्र्यह-
मामृद्यार्करसामृतं द्विवलियुक्तं वालुकायन्त्रगम् ।

मण्डूकीविषमुष्टिशिग्रुपयसा पक्त्वा त्र्यहं स्वेदये-,
द्गुञ्जारे लघुतरसुदर्शनरसः स्यात्सन्निपातादिषु १८४८

टो०, सन्निपाते।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और बछनाग १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सहिजनकेरससे ३ दिन, मालकांगनीकेतैलसे २ दिन और मछलीकेपित्तसे १ दिन मर्दनकर आतशीशीशीमें भरके ३ दिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मण्डूकपर्णी, कुचिला और सहिजनकेरसोंसे ३-३ दिन स्वेदनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपात नष्टहोताहै ॥ ४११ ॥

४१२ सुदर्शनरसः (तृतीयः)

रसस्य भाग एकः स्याद्गन्धकस्य चतुर्दश।
मर्दयेन्मासमेकन्तु सहदेव्या रसैर्द्वयम् ॥ १८४९ ॥
विषात् त्र्यंशेश्च गोजिह्वारसैः षोडशभावनाः।
तालकांशौ द्विशः कूष्माण्डोत्थैः पञ्चदशापि च १८५०
भागमेकं सोममलं पञ्चाशद्भृङ्गजै रसैः।
टङ्कणस्य त्रयो भागा लिङ्ग्याः षड्रसभावनाः॥१८५१॥
हिडिम्ब्याश्चिर्नीलकण्ठीरसैर्द्वादश भावनाः।
जैपालारससभागाश्च त्रिगुणेनत्रिभावनाः ॥ १८५२ ॥
आकल्लकवचाभार्ङ्गीकणामरिचनागरम्।
जीरके च लवङ्गानि एकैकांशानि सर्वतः॥ १८५३ ॥
धूर्तच्छदरसैर्भाव्यं सप्तविंशतिभावितम्।
छायाशुष्कांश्च गुटिकां गुञ्जामात्रांश्च कारयेत् १८५४
अयं सुदर्शनो नाम रसः सर्वगदापहः।
तत्तद्रोगानुपानेन विशेषाज्ज्वरजित्परः ॥ १८५५ ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग और गन्धक १४ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर १ महीनेतक सहदेवीकेरससे मर्दनकर दोभाग शुद्धबछनागमिलाय बछनागसेतिगुनी अगलीगोभीकेरससे १६ भावनाए देवे। फिर २ भाग शुद्धहरिताल मिलाकर सफेदकोंहलेकेरसकी १५ भावनाएं देकर १ भाग शुद्धसोमलमिलावे और भंगरेकेरसकी ५० भावनाएं देवे। फिर ३ भाग सुहागा मिलाय शिवलिंगीकेरसकी ६ भावनाएं देकर ३ भाग शुद्धमैनसिल मिलाकर नीलकण्ठीकेस्वरसकी १२ भावनाए देवे। इसकेबाद ७ भाग शुद्ध जमालगोटा मिलाकर द्राक्षके रसकी ३ भावनाए देकर अकलकरा, बच, भारङ्गी, पीपल, मरिच, सोंट, जीरा, लवङ्ग १-१ भाग डालकर धतूरेकेपत्तोंकेरसकी २७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

४१३ सुधाकररसः (प्रथमः)

सिन्दूराभ्रकहेमानि मौक्तिकं त्रिफलाम्भसा।
शतपुष्पीरसेनापि मर्दयेत्सप्तसप्तधा ॥ १८५६ ॥
ततो रक्तिमितां कुर्याद्वटीं छायाविशोषिताम्।
एकैकां योजयेत्तान्तु यथादोषानुपानतः ॥ १८५७ ॥
रसः सुधाकरः सोऽयं हन्ति दाहं बलाधिकम्।
प्रमेहानपि वातास्रं बलशुक्रकरः परः ॥ १८५८ ॥

आ. वि, दाहाधिकारे।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, सुवर्ण और मोती इनकीभस्मे समभागलेकर त्रिफला और शतावरके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाह, प्रमेह, वातरक्त, बल और शुक्रकीहानिको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

४१४ सुधाकररसः (द्वितीयः)

तारं ताम्रं रसं तालं स्वर्णं मौक्तिकविद्रुमम्।
अम्लवेतसजम्बीररसैर्मर्दनमाचरेत् ॥ १८५९ ॥
शर्करानवनीताभ्यां लीढं शोषक्षयापहम्।
करोति दिवसांस्त्रीन्सर्वाहारक्षमाऽनलम् ॥१८६०॥
ददाति परमं पुंसां बलं नागबलोपमम्।
परमं वृष्यमायुष्यं नेत्रयञ्च सुखदार्ढ्यदम् ॥
सुधाकर इति ख्यातो रसः परमदुर्लभः ॥ १८६१ ॥

वा, वाजीकरणे।

भाषा—रजत, ताम्र, शुद्ध पारा, हरिताल, सुवर्ण, मोती, प्रवाल इनकीभस्मे समभागलेकर अम्लवेत और जंभीरीकेरससे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और माखनकेसाथदेनेसे ३ दिनमें यह जठराग्निको प्रचण्डकरताहै। धातु, आयु और नेत्रोंकीज्योतिको बढ़ाताहै ॥ ४१४ ॥

४१५ सुधानिधिरसः (प्रथमः)

गन्धं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं
सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन।
लौहे पात्रे गोपयःस्वञ्च कृत्वा
रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै ॥ १८६२ ॥

यो. र, नि. र, भा. वि, र. चि., वै. चि, रचि, र. प्र, र. सं, र. का., प, यो. म., र. सि, र. कौ, र. च, रसायनसं, वै क., र. ध, भै सा, र. क, र गु, र दी., भै. र., चि. सा., रक्तपित्ते।

टि०—भा वि., र. दी, भै सा एषु त्रिफलाम्बुना [illegible] [illegible] पुनरपि [illegible] लोहपात्रे [illegible] [illegible] [illegible] समुद्दिष्टम्। [illegible]।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा, सोनामाखी, लोहभस्म इन समभागलेकर त्रिफलाकेरससे लोहेके पात्रमें [illegible]

बनाय त्रिफलाका क्वाथ मिलाकर दिनभर रखछोडे। रात्रिको दूधमें मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त शान्त होताहै ॥ ४१५ ॥

४१६ सुधानिधिरसः (द्वितीयः)

धान्यकं वालकं मुस्तं विश्वं सिन्धुं समांशकम्।
मण्डूरं द्विगुणं दत्त्वा भावनास्तु चतुर्दश ॥ १८६३ ॥
गोमूत्रं केशराजश्च शोथघ्नो भृङ्गराजकः।
निर्गुण्डी भेकपर्णी च रसैरेषां विभाव्य च ॥ १८६४ ॥
माषद्वयं प्रयुञ्जीत तक्रेण सह बुद्धिमान्।
केशराजरसं चापि भोजनं लवणं विना ॥ १८६५ ॥
तक्रेण भोजयेदन्नं पाने तक्रञ्च दापयेत्।
कामलाज्वरशोथघ्नो वह्निसन्दीपनः परः ॥
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नः सर्वव्याधिविनाशनः ॥ १८६६ ॥

भै.र., शोथे

भाषा—धनियां, सुगन्धवाला, नागरमोथा, सोंठ, सेंधानमक, सब समभागलेकर सबसे दूना मण्डूर मिलाकर गोमूत्र, कालाभंगरा, पुनर्नवा, भंगरा, निर्गुण्डी, मण्डूकपर्णी इनके स्वरस तथा छाछकी २–२ भावनाएं देकर २–२ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली छाछ अथवा कालेभंगरेके रससे देवे। नमकका परित्यागकरे और तक्रकेसाथ अन्न देवे। इसकेसेवनसे कामला, ज्वर, शोथ, मन्दाग्नि, ग्रहणी, पाण्डु ऐसब नष्टहोतेहै ॥ ४१६ ॥

४१७ सुधानिधिरसः (तृतीयः)

गन्धकं पारदं चाभ्रमेलाग्रन्थिककेशरम्।
समभागयुतं खल्वे जीरकेण च मर्दितम् ॥ १८६७ ॥
काचकूप्यां निवेश्याथ द्वियामं तु तुषाग्निना।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥
शर्करामधुसंयुक्तमम्लपित्तविकारनुत् ॥ १८६८ ॥

व रा., वै. चि, अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा, अभ्रकभस्म, इलायची, गठिवन, नागकेशर, सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जीरेकेस्वरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ३–४ कपडमिटीदीहुई आतशीशीमें भर दोपहर तुषाग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती [illegible]कर और मधुकेसाथदेनेसे अम्लपित्त नष्टहोताहै ॥ ४१७ ॥

४१८ सुधानिधिरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्काथेन भावयेत्।
जम्बीरस्य रसेनैव ह्यार्द्रकस्य रसेन च ॥ १८६९ ॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जारसेन च।
पश्चाद्विशोष्य सर्वांस्तांष्टङ्कणञ्चावचारयेत् ॥ १८७० ॥
देवपुष्पं बाणमितं रसपादं मृताऽमृतम्।
माषमात्रश्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ १८७१ ॥
सर्वारोचकशूलार्तिं सामवातं सुदारुणम्।
विसूचीं चाग्निमान्द्यञ्च भक्तद्वेषञ्च दारुणम् ॥
रसोऽयं वारयत्याशु केसरी करिणं यथा ॥ १८७२ ॥

घ, र. च, र. सं., र क, र. सु, भै र., अरोचके। भै र. रसकेसरीति नाम।

भाषा—*समभाग* शुद्धपारे और *गन्धक*की नीलवर्णकज्जली कर दन्ती, जंभीरी, अदरख, बिजोरा, बिजोरेकेबीजोंकीमज्जा-इनके द्रवोंकी १–१ भावनादेकर भुनासुहागा और लौंग ५–५ भाग डालकर पारदसे चतुर्थांश सोमलभस्म मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे उड़दबराबर मात्रा सोंठ अथवा गुडकेसाथ देनेसे अरुचि, शूल, भयङ्कर आमवात, हैज़ा, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

४१९ सुधापिप्पलीयोगः

चपलायाः प्रस्थमेकं स्नुहीक्षीरेण भावयेत्।
एकविंशतिधा पूर्वं तदर्द्धं मलमायसम् ॥ १८७३ ॥
तदर्द्धं दरदं क्षिप्त्वा प्रयमेकत्र भावयेत्।
गोजिह्वाशाल्मलीक्षीरगोक्षुरेक्षुरसैः पृथक् ॥ १८७४ ॥
श्लक्ष्णचूर्णं पुनः कृत्वा मात्रां युञ्ज्याद्यथाबलम्।
क्षीरञ्चानुपिबेत्तस्य मधुकेन समायुतम् ॥ १८७५ ॥
सुधापिप्पलिको योगो जीर्णज्वरमपोहति।
मेदो दोषोदरं शोथक्षयक्षयकरः परः ॥
क्षीणान्धातून्वर्धयति प्रोक्तश्चात्रेयसूरिणा ॥ १८७६ ॥

र. प, जीर्णज्वरे।

भाषा—एकप्रस्थपीपलके चूर्णको थूहरकेदूधमें २१ भावनाए देकर मण्डूरभस्म ८ पल और शुद्धशिंगरिफ ४ पल मिलाकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर वनगोभी, सेमल, दूध, गोखरू, ईख, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर १–१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मुलहठीडालकर पकाएहुए दूधकेसाथलेनेसे जीर्णज्वर, मेद, शोथ, क्षय, धातुक्षीणता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१९ ॥

४२० सुधासाररसः

पृथक्पलिकगन्धाश्मसूतसञ्जातकज्जलीम्।
प्रद्राव्य निक्षिपेद्व्योम पलिकं गतचन्द्रिकम् ॥ १८७७ ॥
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं क्षिपेत्कुरजपत्रके।
पुनः सञ्चूर्ण्य यत्नेन भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १८७८ ॥
बालतिन्दुफलद्रावैः क्षीरैरौदुम्बरैस्तथा।
अरलुत्वग्रसेश्चापि दुग्धिनीस्वरसैस्तथा ॥ १८७९ ॥
पुटपकस्य बालस्य दाडिमस्य रसैः शुभैः।
कृष्णकाम्बोजिकामूलरसैः कुटजवल्कलैः ॥ १८८० ॥
तुल्यांशं विश्वगान्धारीचूर्णं द्विपलिकं क्षिपेत्।
मुस्तावत्सकदीप्याग्नि मोचसारं सर्जीरकम् ॥ १८८१ ॥
वत्सनाभञ्च कर्षांशं प्रत्येकं तत्र निक्षिपेत्।
विचूर्ण्य भावयेद्भूयः शुण्ठीक्काथेन सप्तधा ॥ १८८२ ॥
इत्थं सिद्धो रसः पिष्टः करण्डे विनिवेशितः।
सुधासार इति ख्यातः सुधासारसमद्युतिः ॥ १८८३ ॥

दीपनः पाचनो ग्राही हृद्यो रुचिकरस्तथा ।
दोषत्रयातिसारश्च दुर्जयं भेषजान्तरैः ॥ १८८४ ॥
आमश्चैवामरक्तश्च ज्वरातीसारमेव च ।
सातिसारां विसूचीश्च प्रतिघ्नाति तत्क्षणात्॥१८८५॥
मान्यमानत्वमिनान्तिरिव पुण्यफलोदयम् ।
पिष्टविश्वाङ्कल्केन विधाय खलु चक्रिकाम्॥१८८६॥
निक्षिपेत्स्वेदनीयन्त्रे पक्त्वाऽर्द्धघटिकावधि ।
आकृष्य तज्जलैरेवं सम्प्रमर्द्य हरेद्रसम् ॥ १८८७ ॥
सुधासाररसं तत्र क्षिप्त्वा धान्यकसम्मितम् ।
पूर्वोदितेषु रोगेषु प्रदद्यीत भिषग्वरः ॥ १८८८ ॥
गोतक्रेणाजदध्ना वा पथ्यं देयं हितं मितम् ।
बालरम्भाफलं गुर्वीफलं बिल्वफलं तथा ॥
आम्रपेशी च मधुरं वृन्ताकञ्च प्रशस्यते ॥१८८९ ॥

सर्वातिसारं ग्रहणीञ्च हिक्कां
मन्दाग्निमानाहमरोचकञ्च ।
निहन्ति सद्यो विहितामपाके
त्रिःप्रयोगेण रसोत्तमोऽयम् ॥ १८९० ॥

र र स, र को, र सु, र र कौ, अतिसारे ।

भाषा—१-१ पल शुद्ध गन्धक और पारेकी नीलवर्ण कज्जली कर घीपुतीहुईकड़ाहीमें बेरकेकोयलोंपर गलाकर १ पल निश्चन्द्र अभ्रकभस्म डालकर लकड़ीसे चलाकर एकजीवकरके गोबरपर रक्खेहुए कुरैयाकेपत्तोंपर डालकर पर्पटी बनावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर तेंदकेरोमलफल, गूलरकादूध, सोनापाठा कीछाल, दूधी, अनारका पुटपाक, कालीकम्पोईकीजड़, कुरैयाकी छाल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावनादेकर सोंठ और कुकरोंधेरीजड़काचूर्ण १-१ पल मिलावे। फिर नागरमोथा, इन्द्रजव, अजवाइन, चित्रक, मोचरस, जीरा और शुद्धवच्छनाग १-१ कर्ष मिलाकर सोंठकेकाढेसे ७ भावनाए देकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली सोंठ और नागरमोथेके पुटपाककेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, हृद्रोग, अरुचि, योगान्तरसे दुःसाध्य त्रिदोषातिसार, आमातिसार, ज्वरातिसार, अतिसारयुक्तविसूचिका, ग्रहणी, हिचकी, आनाह, इनसबको यह नष्टकरताहै। बालक और वृद्धोंको घनिये केबराबर मात्रा देना। गायकेतक अथवा दहीकेसाथ पथ्यदेना। कचा केला और बेल, सुपारी, अमचूर, मुलहठी, बेंगन ये सब पथ्यहैं ॥ ४२० ॥

४२१ सुप्तवातारिरसः

पिचुमात्राणि शुद्धानि बीजानि विषतिन्दुतः ।
बलिसूतौ विडङ्गश्च यमानी त्र्यूषणं शटी ॥ १८९१ ॥
पलाशबीजं निर्गुण्डी मञ्जिष्ठा काकमाचिका ।
शङ्खपुष्प्यग्निसुरसे रसैरासां विभावयेत् ॥ १८९२ ॥
वल्लमानां वटीं कृत्वा निम्बकल्केन दापयेत् ।
मञ्जिष्ठादिकषायेण कौन्तीकायेन वा बुधः ॥ १८९३ ॥
निहन्ति सुप्तिवातार्तिं ग्रहणीक्षयकामलाः ।
भूतोन्मादमपस्मारमपतन्त्रकमुद्धतम् ॥ १८९४ ॥

नू क, वातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध कुचिला, गन्धक और पारा, विडङ्ग, अजवाइन, त्रिकुटु कचूर, पलाशकेबीज, निर्गुण्डी, मजीठ, मकोय, येसब १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर शङ्खपुष्पी, चित्रक और तुलसीके स्वरसोंसे १-१ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली निम्बकल्क, मञ्जिष्ठादिक्वाथ अथवा रेणुकाके क्वाथकेसाथ देनेसे सुप्तवात, ग्रहणी, क्षय, कामला, भूतोन्माद, अपस्मार, अपतन्त्रक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ सुरतानन्दरसः

सूतिं कृष्णाभ्रकस्य मृगमदसहितां हिङ्गुलश्चन्द्रकञ्च,
जातीसस्येन्द्रपुष्पं कनकदलयुतं मौक्तिकं तुल्यभागम्।
सम्मर्द्य नागवल्लीदलरससहितं घस्रमेकं भिषग्भि-,
र्मात्रा गुञ्जाद्वयी च घृतमधुसहिता सेवनीया सदैव ॥
स्निग्धान्नं भोजयित्वा घृतमधुसहितं धातुपुष्टिप्रदश्च,
सद्यो यक्ष्मघ्नमेतत्सकलगदहरं कामवृद्धिं करोति ।
मत्तप्रौढाङ्गनानां निधुवनसमये कामगर्वापहारी,
शुक्रारुग्वृद्धिकारी सकलरसवरः सौरतानन्द एष. ॥
वृद्धोऽशीतिकवयति हृदयुवा वीर्यकान्ती विधत्ते,
रात्रौ कामान्धकारी सुरतसुखविधौ
कामिनीनाञ्च तद्वत् ॥ १८९६ ॥

रसायनस, वाजीकरणे ।

भाषा—अभ्रकभस्म, कस्तूरी, शिंगरिफ, कपूर, जाविनी· लौंग, सोनेकेवर्क, मोती सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पान· केरससे १ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख· छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली घृत और मधुकेसाथ लेकर स्निग्ध भोजनकरनेसे धातुक्षीणता, राजयक्ष्म, पण्ढत्व, रक्तदोष इन· सबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२२ ॥

४२३ सुरसुन्दरीवटी (प्रथमा)

अभ्रकं माक्षिकं वज्रं कान्तं हेम समं समम् ।
सर्वाणि समभागानि सूतयुक्तानि कारयेत् ॥ १८९७ ॥
गोलकञ्च ततः कृत्वा पक्वं निचुलवारिणा ।
ततस्तं पुटपाकेन स्तम्भयित्वा प्रयत्नतः ॥ १८९८ ॥
बाह्ये चास्या विलिप्यापि वक्त्रस्था गुटिकोत्तमा ।
स्तम्भयेच्छुक्रसङ्घात विषरोगांश्च नाशयेत् ॥१८९९॥
अब्देनैकेन वक्त्रस्था वय.स्तम्भं करोति च ।
वलीपलितहन्त्रीयं गुटिका सुरसुन्दरी ॥ १९०० ॥

भै र, र.र, घ, र च, वाजीकरणे ।

भाषा—अभ्रक, सोनामाखी, हीरा, कान्तलोह, सुवर्ण इनसबोंकीभस्में और अग्निस्थायी पारा समभागलेकर १ दिन शुष्कमर्दनकर समुद्रफलकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय पानीमें

लपेटकर भूधरपुटकीआंचदे। ऐसे जबतक पारा बंध न जाय तबतक आंचें देतारहे। इसको केवल अथवा किमीचीज़में कवलितकर मुखमें रखनेसे शस्त्रसङ्घात और विषका आक्रमण नहीं होता। एकवर्षतक लगातार मुंहमें रखनेसे अवस्थाको स्तम्भकर वलीपलितको नष्टकरतीहै ॥ ४२३ ॥

४२४ सुरसुन्दरीवटी (द्वितीया)

स्वर्णमेकं कान्तमेकं पञ्चतारं द्विपारदम्।
त्रिभागं व्योमसत्वं स्यात्पड्भागं शुल्वचूर्णकम् १९०१
सर्वमेतत्कृतं सूक्ष्मं तप्तखल्वे दिनत्रयम्।
मर्दयेदम्लवर्गेण दोलायन्त्रे सकाञ्जिके ॥ १९०२ ॥
तद्गोलं त्रिदिनं पक्वं गुटिका सुरसुन्दरी।
जायते धारिता वक्त्रे वर्षान्मृत्युजरापहा ॥
भूताडवदमूलञ्च कर्षं क्षीरैः पिबेदनु ॥ १९०३ ॥

र. खं., र. का, रसायने।

भाषा—स्वर्ण और कान्तलोह १–१ भाग, रजत ५ भाग., शुद्धपारा २ भाग, अभ्रकसत्त्व ३ भाग, शुद्धतांबेकाचूरा ६ भाग लेकर सबको इकट्ठा मिलाय तप्तखल्वमें ३ दिन अम्लवर्गकेसाथ मर्दनकर गोलाबनाय ४ तहकपड़ेमें बांधकर ३ दिन काञ्जीमें स्वेदनकरे। इसको १ वर्षतक मुखमें रखनेसे बुढ़ापे और मृत्युको यह दूरकरतीहै। कालीमुसली और पाषाणभेदकाचूर्ण १–१ कर्ष दूधकेसाथ लेवे ॥ ४२४ ॥

४२५ सुरूपोरसः

रसं गन्धकं त्र्यूपणं नागपुष्पं
वरायुक्तमादौ वराजीवनेन।
सुमर्द्य नगे भावितं भृङ्गनीरै-
र्वटी माषमाना विधेया भिषग्भिः ॥१९०४॥
जयेदग्निमान्द्यं कुरङ्गाश्वतापं
कफं वातमुन्मत्तभावं क्षणेन।
समस्तेन्दुरुग्वृन्दमक्षिप्रवाहं
स उक्तो रसाढ्यो सुरूपेतिनामा ॥ १९०५ ॥

र. का., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, त्रिकुटु, नागकेशर, त्रिफला सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिफला और भगरेकेरससे ८–८ दिन मर्दनकर १–१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, वातऔर कफज्वर, उन्माद, क्षय, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२५ ॥

४२६ सुरेन्द्राभ्रवटी

अभ्रं सहस्रशो दग्धं रसं दरदसम्भवम्।
केशराजाम्भसा शुद्धं गन्धकं हीरकन्तथा ॥ १९०६ ॥
विद्रुमं मौक्तिकं हेम रौप्यं माक्षिकमेव च।
कान्तलोहञ्च सम्मर्द्य विधिना वह्निवारिणा ॥ १९०७॥
वल्लमात्रां वटीं कृत्वा छायायां परिशोषयेत्।
एकैकां योजयेत्प्राज्ञो यथादोषानुपानतः ॥ १९०८ ॥
क्लोमरोगविनाशाय वह्नेः सन्धुक्षणाय च।
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यमियं न विनाशयेत् ॥
यो यः समाश्रयेद्व्याधिः क्लोमितं तमवेक्ष्य च।
क्रियां संसाधयेद्वैद्यो यथादोषं यथाबलम् ॥ १९१० ॥
अनुप्राण्यन्नपानानि क्लोमामयनिर्पीडितः।
सेवेतोग्राणि सर्वाणि यत्नतः परिवर्जयेत् ॥ १९११ ॥

भै. र., क्लोमरोगे।

भाषा—सहस्रपुटीअभ्रक, शुद्धपारा, भंगरेके रसमें शुद्धकियाहुआगन्धक, हीरा, प्रवाल, मोती, सुवर्ण, रजत, सोनामाखी, कान्तलोह इनकीभस्में सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रककेस्वरस अथवा क्वाथसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्लोमरोग और मन्दाग्निको यह नष्टकरतीहै। क्लोमरोगीको सौम्य अन्नका सेवन करावे। तीक्ष्णवस्तुओंसे परहेज़करे॥ ४२६ ॥

४२७ सुलोचनाभ्रम्

पलं सुजीर्णं गगनन्तु चव्यकं
तेजोवती कोलमुशीरदाडिमम्।
धात्र्यम्ललोणी रुचकं पृथग्दिशा-
पलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥ १९१२ ॥
अरोचकं वातकफत्रिदोषजं
पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम्।
कासं स्वराघातमुरोग्रहं रुजं
श्वासं बलासञ्च यकृद्भगन्दरम् ॥ १९१३ ॥
प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं
मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमीन्।
शूलाम्लपित्तक्षयरोगमुद्धतं
सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम् ॥
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं
बलप्रदं वृष्यतमं रसायनम् ॥ १९१४ ॥

र. सं., ध., र. सु., अरोचके।

भाषा—निश्चन्द्रअभ्रकभस्म १ पल, तेजबलकीछाल, बेर, खस, अनार, आंवले, अम्लोनियां और संचल १०–१० पल लेकर बारीक चूर्णकर एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ मासे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे अरुचि, त्रिदोषज–पित्तज और गन्धधूमज कास, स्वरभङ्ग, छातीका अकड़ना, श्वास, कफ, यकृत, भगन्दर, प्लीहा, मन्दाग्नि, शोथ, वातरोग, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तप्रदर, क्रिमि, शूल, अम्लपित्त, क्षय, रक्तपित्त, वमन, दाह, पथरी, बवासीर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२७ ॥

४२८ सुवर्चलाद्यं लोहम्

सुवर्चला व्याघ्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी।
चव्यश्च देवकाष्ठञ्च दीप्यकं लोहमेव च॥
शोथं पाण्डुं तथा कासमुदराणि निहन्ति च॥१९१५॥

र.सं, ध, र मु, र चि, शोथाऽधिकारे।

भाषा—सज्जी, व्याघ्रनख, चित्रक, कुटकी, चव्य, देवदारु, अजवाइन और लोहभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे शोथ, पाण्डु, कास और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै॥

४२९ सुवर्णपत्ररसः

नागं सूतं गन्धकं वत्सनाभं
मर्द्यं धारा कन्यकाया दिनैकम्।
गोलं कृत्वा निक्षिपेद्भाण्डमध्ये
संछाद्यं वै शावकेणापि सम्यक्॥ १९१६॥
मुद्रां दत्त्वा भूतिसामुद्रकेण
यामं चैकं मन्दवह्नौ विपाच्य।
वल्लश्चैकं भक्षितं क्षौद्रयुक्तं
यक्ष्माणं तन्नाशयेद्धि प्रसह्य॥ १९१७॥

र प्र सु, यक्ष्मणि।

टि०—सुवर्णाऽभावेपि सुवर्णपत्रेति नामकरणप्रयोजनं न ज्ञायत इति विद्वद्भिरालोचनीयम्।

भाषा—नागभस्म, शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें रख एकपहरकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती शहदकेसाथलेनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै॥ ४२९॥

४३० सुवर्णपर्पटी (प्रथमा)

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन-
पिण्डितमथो वसुभागभाजि।
गन्धे द्रुते बदरवह्निषु लोहपात्रे दत्त्वा-
विलोड्य लघुलोहशलाकया तत्॥ १९१८॥
मन्दं निरस्य सुरभीमलमण्डलस्थं
रम्भादले तदुपरि प्रणिधाय चान्यत्।
रम्भादलं लघु नियन्त्र्य तदाददीत
शीतं सुवर्णरसपर्पटिकाभिधानम्॥१९१९॥
पित्तोल्वणे तु सितया तुगयाऽथ वाते
श्लेष्मोल्वणे किल तुगामधुपिप्पलीभिः।
क्षीणे विरेकिणि च शोषिणि मन्दवह्नौ
पाण्डौ प्रमेहिणि चिरज्वरिणि ग्रहण्याम्॥
वृद्धे शिशौ सुखिनि राज्ञि तदेवमार्यै
र्भैषज्यमेतदुदितं हितमामयघ्नम्॥ १९२०॥

वै क, र च, रसायनस, नि र., यो र, वृ यो.त, रसायनसार, र सु, क्षयाऽधिकारे।

टि०—निघण्टुरत्नाकरे पिण्डितमथो इत्यत्र पिण्डितमय इति पाठ प्रकल्प्य पारदसमभागमयोऽपि विनियोजितम्। परन्तु बहुषु ग्रन्थेषु अथो इत्येव लभ्यत्वप्रमादादेवेति प्रतिभाति। किञ्च अयोग्रहणे अयसि गन्धके वा भागस्यानवस्था दुर्वारा स्यात्, अनुपानेन सुतसमत्वप्रकल्पन त्वग तेनैतिरिति न सा भद्रा श्रेणीरितिदिक्। रसायनस, वै चि, र च, र. कौ, ये, यो र, वृ यो त, र स, वै क, भै र, र सु, र क, नि र, एषु ग्रन्थेषु चतुर्थोंशसुवर्णदानेनाऽपि एक पाठ प्रकल्पितोऽस्ति। अत्र सुवर्णदाने कामचारो बोध्य। पाठान्तर ■ गौरवातरित्यत्तम्। अत्र पाठे कुत्रचित्पारदाद्द्विगुण गन्धक नियुज्य कासे नियोग कृतोऽस्ति।

भाषा—आठभाग शुद्धपारेमें एकभाग सोनेकेवर्क १–१ करके मिलावे। फिर १–२ पहर घोटकर पिष्टी बननेपर नींबूकारस डालकर मर्दनकरे। रस कालाहोनेपर निकालदे, ऐसे जबतक कालिमा निकलतीरहे तबतककरे। पर इसबातका ध्यान रहे कि नींबूकेरसकेसाथ सुवर्णके वर्कोंका भाग न निकलजाय। निकलाहुआ मालूमपड़ेतो जलाकर शुद्धकरले। पारेको कपड़ेसे अच्छीतरह साफकरले पानीका भाग न रहे। फिर अठगुने शुद्धगन्धक को घीपुतीहुई कड़ाहीमें डालकर बेरके कोयलोंपर गलावे। गलजानेपर पारदपिष्टीको डालकर घोटे। एकजीवहोनेपर ताजेगोबरपर रक्खेहुए ताजेकेलेके पत्तोंपर डालकर दूसरेकेलेके पत्तोंसे दबाकर गोबरसे ढकदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा क्रमवृद्धभागसे पित्ताधिक्यमें शक्कर, वाताधिक्यमें वंसलोचन, कफाधिक्यमें वंसलोचन, मधु और पीपलकेसाथ देवे। इससे क्षीणता, दस्तकी अनियमितता, शोष मन्दाग्नि, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर और ग्रहणी नष्टहोतीहै। वृद्ध, बालक और सुखी आदमीकेलिये १–१ रत्तीमात्रा काफीहै॥

४३१ सुवर्णपर्पटी (द्वितीया)

सुवर्णतारताम्राभ्रसत्त्वलोहामृतैर्युता।
पादांशैस्तत्कृता ख्याता पर्पटी कथिता बुधैः॥१९२१॥
शुद्धगन्धककर्षैकं त्रिगुञ्जा रसपर्पटी।
षण्मासाभ्यन्तरे चैषा वलीपलितनाशिनी॥
संवत्सरं यदा सेव्या ज्वरं हन्ति न संशयः॥ १९२२॥

रससागर, रसायने।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, ताम्र, अभ्रकसत्त्व और लोह इनकीभस्में, शुद्धबछनाग ४–४ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ कर्ष लेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईकड़ाहीमें बेरकेकोयलोंपर गलाकर सुवर्णादि सबचीजें मिलाकर लोहेकी शलाकासे चलावे। एकजीवहोनेपर प्रथम रसपर्पटीकीतरह पर्पटीबनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ६ महीनेके अन्दर वलीपलितको नष्ट करतीहै। एकवर्षतकके सेवनसे बुढापेको दूरकरतीहै॥ ४३१॥

४३२ सुवर्णपर्पटी (तृतीया)

स्वर्णं रौप्यं रविगगनकं लोहसूतं समांशं,
मुक्ताभागं विमलवलिकं पारदायुग्मभागम्।

मर्द्यं कन्दैः कदलिजनितैः शाल्मलीनां रसैश्च,
कन्याद्रावैर्मुनिदिनमथो वल्लयुग्मं निहन्यात् ॥
मेहं तापं मधुचपलया माससंसेवितोऽयं,
स्त्रीणां रोगानपि हरति युता पर्पटी काञ्चनीयम्॥१९२३

र.प.,र.प्र.,र.पा.प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, अभ्रक, लोह, मोती इनसबकी भस्में १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भा., पारा १ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर घीचुपड़ीहुईकड़ाहीमें चेरके कोयलोंपर कज्जलीको गलाय सबचीजोंको मिलाकर गोबरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तोंपर दबाकर पर्पटी तैयारकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर केला और सेंमलकन्द तथा घीगुंवारकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा मधु और पीपलकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे प्रमेह, ज्वर और स्त्रियोंके तमामरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३२ ॥

४३३ सुवर्णपर्पटी (चतुर्थी)

मृतेन सूतराजेन लोहपर्पटिका समा।
त्रिगुणं गन्धकं सूतात्सर्वं दिव्यौषधीद्रवैः ॥ १९२४ ॥
मर्दितं तद्दिनं रुद्ध्वा ध्मातो बद्धो भवेद्रसः।
तस्मिन्रसे मृतं स्वर्णं क्षिप्त्वा चार्द्रकद्रवैः ॥१९२५॥
मर्द्यं यामं विचूर्ण्याथ व्योषजीरकसैन्धवैः।
तुल्यः पूर्वरसस्तुल्यं वल्लमेकन्तु भक्षयेत् ॥ १९२६ ॥
जरामृत्यू निहन्त्यब्दाद्धेमपर्पटिका रसः।
अश्वगन्धासमां यष्टीं धात्रीफलरसैर्दिनम्॥
भावितं लेहयेत्क्षौद्रैः कर्षैकं क्रामणं परम् ॥ १९२७ ॥

रसायनसं., र खं., रसायने। रसायनखण्डे हेमपर्पटक इतिनाम

भाषा—पारदभस्म, लोहपर्पटी और शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर दिव्यौषधियोंके द्रवोंसे यथाशक्य १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूषामें धमनकरनेसे पारदबंधेगा। इसमें एकभाग सुवर्णभस्म मिलाकर अदरखके रससे एकपहर घोटकर त्रिकटु, जीरा और सेंधानमक पूर्वरसकी बराबर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–३ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ लेकर असगन्ध और मुलहटी समभागलेकर आंवलोंकेरससे ६–७ भावनाए देकर इसमेंसे १–१ कर्ष मधुकेसाथ चाटनेसे रसका शरीरमें अनुक्रमणहोगा और इससे वलीपलितादिकका नाशहोकर दीर्घायुहोगा ॥ ४३३ ॥

४३४ सुवर्णबद्धरसः

लाङ्गल्या देवदाल्याश्च रसे मर्दितपारदः।
म्रियते स्वर्णपादेन चारितोऽस्य समांशतः ॥ १९२८ ॥
रसेन मेलितः पश्चाद्विषतालकगन्धकैः।
धत्तूरबीजतैलेन मर्दितस्त्रिदिने सति ॥
गोमये पाचितो मूषामध्यस्थो बध्यते रसः ॥१९२९॥

यो.म., रसायनाऽधिकारे।

भाषा—करिहारी और बन्दालकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर चतुर्थांश अथवा समभाग सोनेके वर्कोंका जारणकर समभाग दूसरे शुद्धपारेमें मिलाकर बछनाग, हरिताल और गन्धक ये प्रत्येक पारेसे चतुर्थांश डालकर धतूरेकेबीजोंकेतैलसे ३ दिन मर्दनकर अन्धमूषामें बन्दकर लघुपुटकी आंच दे तो इसकी गोली बंधजातीहै। इसको मुंहमें रखनेसे वलीपलितादिकका नाशहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ सुवर्णभूपतिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं शुल्वं तयोः समम्।
अभ्रलोहकयोर्भस्म कान्तभस्म सुवर्णजम् ॥ १९३० ॥
रजतञ्च विषं सम्यक् पृथक् सूतसमं भवेत्।
हंसपादीरसैर्मर्द्यं दिनमेकं वटीकृतम् ॥ १९३१ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य मृदा संलेपयेद्बहिः।
शुष्कां तां वालुकायन्त्रे शनैर्मृद्वग्निना पचेत्॥१९३२॥
चतुर्गुञ्जमितं देयं पिप्पल्यार्द्रद्रवेण तु।
क्षयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ १९३३ ॥
आमवातं धनुर्वातं शृङ्खलावातमेव च।
आढ्यवातं पङ्गुवातं कफवाताग्निमान्द्ययुत् ॥ १९३४॥
कटीवातं सर्वशूलं नाशयेन्नात्र संशयः।
गुल्मशूलमुदावर्तं ग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥ १९३५ ॥
प्रमेहमुदरं सर्वामश्मरीं मूत्रविड्ग्रहम्।
भगन्दरं सर्वकुष्ठं विद्रधिं महतीं तथा ॥ १९३६ ॥
श्वासं कासमजीर्णञ्च ज्वरमष्टविधन्तथा।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शिरोरोगञ्च नाशयेत् ॥१९३७॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगान्विनाशयेत्।
यथा सूर्योदये नश्येत्तमः सर्वगतन्तथा ॥
सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥ १९३८ ॥

नि. र., र. सु., र. चं., रसायनसं., ब. रा., वै. चि., यो. र., र. पा., क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, ताम्रभस्म २ भाग, अभ्रक, लोह, कान्तलोह, सुवर्ण, रजत इनकीभस्में और शुद्धबछनाग १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबचीजें मिलाय हंसराजकेरससे एकदिन मर्दनकर फिरसे कज्जली बनाय ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती पीपल और अदरखकेसाथ देनेसे त्रिदोषजक्षय और १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे आमवात, धनुर्वात, शृङ्खलावात, ऊरुस्तम्भ, पङ्गुवात, कम्पवात, मन्दाग्नि, कटिवात, सबप्रकारके शूल, गुल्म, उदावर्त, भयङ्करग्रहणी, प्रमेह, उदररोग, सबप्रकारकी पथरी, मलमूत्रविबन्ध, भगन्दर, सबप्रकारकेकुष्ठ, बड़ाहुआ जहरबाद, श्वास, कास, अजीर्ण, ८प्रकारकाज्वर, कामला, पाण्डु, शिरोरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४३५ ॥

४३६ सुवर्णयोगः (प्रथम)

मन्त्रौषधसमायुक्तं सवत्सरफलप्रदम् ।
बिल्वस्य चूर्णं पुष्ये तु हुत वारान्सहस्रश ॥१९३९॥
श्रीसूक्तेन नर कल्ये ससुवर्णं दिनेदिने ।
सर्पिर्मधुयुतं लिह्यादलक्ष्मीनाशन परम् ॥ १९५० ॥

सु स, रसायने ।

भाषा—बिल्वगिरीकाचूर्ण घृतमें मिलाय पुष्यनक्षत्रमें एकहजार आहुति श्रीसूक्तसे देकर अभिमंत्रितकियेहुए बिल्वचूर्णको रखले। इसमेंसे १–१ तोला १ रत्तीसुवर्णभस्म मिलाकर घी और मधु के साथ एकवर्षभर लेनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै ॥ ४३६ ॥

४३७ सुवर्णयोग (द्वितीय)

सुवर्णं पद्मबीजानि मधुलाजा प्रियङ्गव ।
गव्येन पयसा पीतमलक्ष्मीं प्रतिपधयेत् ॥ १९५१ ॥

सु स नि रसायने ।

भाषा—कमलगट्टा धानकीखील और प्रियङ्गु समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला १ रत्तीसुवर्ण भस्म मिलाकर मधुयुक्तगोदुग्धकेसाथ लेनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै

४३८ सुवर्णयोग. (तृतीय)

नालोत्पलदलक्काथो गव्येन पयसा शृत ।
ससुवर्णतिलं साधमलक्ष्मीनाशन स्मृत ॥१९५२॥

सु सं, रसायने ।

भाषा—१ से ३ रत्तीतकसुवर्णभस्म १ तोले कालेतिलोंके साथ मिलाकर सेवनकर नीलकमलकपत्र डालकर औटाया हुआदूध पीनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै ॥ ४३८ ॥

४३९ सुवर्णयोग (चतुर्थ)

गव्य पय सुवर्णञ्च मधूच्छिष्टञ्च माक्षिकम् ।
पीतं शतसहस्राभिहुत युक्तरथ स्मृतम् ॥ १९५३ ॥

सु सं, रसायन ।

टि०—अत्र मधूच्छिष्ट [illegible]

भाषा—१ रत्ती सुवर्णभस्म अथवा अग्निमंत्रित गायकादूध मोम और मधु मिलाकर एकलक्षमंत्रोंसे अभिमंत्रित कर उचितमात्रामेंलेनेसे दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ४३९ ॥

४४० सुवर्णयोगः (पञ्चम)

वचाघृतसुवर्णञ्च बिल्वचूर्णमिति त्रयम् ।
मेध्यमायुष्यमारोग्यपुष्टिसौभाग्यवर्द्धनम् ॥ १९५४ ॥

सु सं नि रसायने ।

टि०—[illegible]

भाषा—वचा और बेलकाचूर्ण १–१ तोला सुवर्णभस्म १ से ३ रत्तीतक दूधकेसाथलेनेसे मेधा आयु आरोग्य पुष्टि और सौभाग्यकी वृद्धिहोतीहै ॥ ४४० ॥

४४१ सुवर्णयोगः (षष्ठ)

मध्वामलकचूर्णन्तु सुवर्णमिति च त्रयम् ।
प्राश्यारिष्टगृहीतोऽपि मुच्यते प्राणसशयात्॥१९५५॥

सु स आ प्र रसायन ।

भाषा—मधु और आंवलेकाचूर्ण १–१ तोला, सुवर्णभस्म १ रत्ती मिलाकर लेनेसे उपस्थितअरिष्टभी प्राणसशयसे बचताहै ॥

४४२ सुवर्णयोग (सप्तमः)

शतावरीघृत सम्यगुपयुक्त दिनेदिने ।
सक्षौद्र ससुवर्णञ्च नरस्त्र स्थापयेद्वशे ॥ १९५६ ॥

सु स, रसायन ।

भाषा—शतावरीघृत १ तोला, मधु ६ माशे, सुवर्णभस्म १ रत्ती लेकर प्रतिदिन सेवनकरनेसे अलक्ष्मीआदिसे निर्मुक्त होकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै और राजाको वशमें करताहै ॥४४२॥

४४३ सुवर्णयोगः (अष्टम)

गोरोचना माहनिका मधुकं माक्षिकं मधु ।
सुवर्णमिति स्मयोग पेय सौभाग्यमिच्छता॥१९५७॥

सु स रसायन।

भाषा—गोरोचन ३ रत्ती मेंहदी और मुलहठी ३–३ माशे, सुवर्णमाक्षिकभस्म १ माशा, मधु १ तोला, सुवर्णभस्म १ रत्ती मिलाकरसौभाग्यकेवास्तेलेनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै ४४३

४४४ सुवर्णयोग (नवम)

पद्मनीले पत्रकाथे घृतमधुकसंयुते ।
सर्पिरासादितं गव्यं ससुवर्णं सदा पिबेत् ॥१९५८॥
पयश्चानुपिबेत्सिद्धं तेषामेव समुद्भवे ।
अलक्ष्मीघ्नं समायुष्यं राज्याय सुभगाय च ॥१९५९॥
यत्र मार्दारितो मन्त्रो यागश्चैतेषु साधने ।
शब्दिता तत्र सर्वत्र गायत्री त्रिपदा भवत् ॥१९६०॥
पाप्मान नाशयन्त्येता दृष्टाश्चौषधयः श्रियम् ।
कुर्युः नागर्ज चापि मनुष्यममरोपमम् ॥ १९६१ ॥

सु स रसायने ।

भाषा—कमलगट्टा नीलोत्पलकाक्काथ मुलहठीकाकल्क इनसे बनायाहुआ गोघृत यथाशक्ति १ रत्ती सुवर्णभस्मसाथ अथवा पूर्वोक्तवस्तुओंमें सिद्धकियाहुआ दूध पान करनेसे, आयु राज्य और सौभाग्यका प्रसारहोताहै। इनयोगोंमें जहां मन्त्रका दान नहीं वहांपर त्रिपदा गायत्री समझनी चाहिए। इनयोगोंके सेवनकरनेसे पाप नष्टहोतेहैं और मनुष्य अमर देवतातुल्य होताहै ४४४

४४५ सुवर्णयोगः (दशम)

गावरिकामन्त्रितमामलक्या
रसेन स्नार्द्रं कनकस्य चूर्णम् ।
धार्यं नरस्तुल्यमिदं नराणां
दिव्यं समुन्नप्रमपावराति ॥ १९६२ ॥

सं व अरिष्टनाश रसायन च ।

भाषा—गायत्रीसे १००० वार अभिमन्त्रितकियेहुए आवलोंकेरसकेसाथ १ से ३ रत्तीतक सुवर्णभस्म और आवलेका चूर्ण लेनेसे उपस्थित अरिष्ट भी नष्टहोताहै ॥ ४४५ ॥

४४६ सुवर्णयोगः (एकादशः)

ससितया वचयामलकैरथ
त्रिफलयाऽथ घृतत्र्यतिमिश्रया।
कनकजातरजः सततं धृतं
परमिदं हि रसायनमुच्यते ॥ १९५३ ॥

चि.क.,रसायने।

भाषा—शक्कर, वच, आवले अथवा त्रिफलाकेचूर्णकेसाथ १ से ३ रत्तीतक सुवर्णभस्म घीमें मिलाकरलेनेसे दीर्घायु होताहै ॥

४४७ सुवर्णयोगः (द्वादशः)

उन्मादिनामुन्मदमानसाना-
मपस्मृतो भूतहतात्मनां हि।
ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः
सशङ्खपुष्पः ससुवर्णचूर्णः ॥ १९५४ ॥

चि.क.,यो.त.,उन्माद।

टि०—चरके हृदयावरणतेन विषग्रस्तावस्थाया सुवर्णरजस शोणमात्रदानमुक्त यथा "शुद्धे हृदि तत शाणं हेमचूर्णस्य दापयेत्। हेम सर्वविषाण्याशु गराश्च विनियच्छति ॥ न सज्जते हेमपाङ्गे विषं पद्मदलेऽम्बुवत् ॥" इत्यत्र चूर्णशब्देन तदयस्कृति मांसा सा च रसायनपादे विहिताऽस्ति यथानुभवश्च विषघ्नौषधिभिरस्माक दयाद्दिनि सम्प्रदाय। यथावस्थितचूर्णस्य रक्तादौ तत्काल प्रवेशाभावात् तदभावे च हृदयावरणस्य [illegible] साध्यत्वात्, अथवा विषघ्नौषधिभि पुटानि दत्वा निरुत्थ भस्म सम्पाद्य तस्य द्वित्ररत्तिका एव विषघ्नौषधिस्वरसादिभि दत्ता शीघ्र विष निर्णाशयन्ति इति निश्चितम्। चरकीयवाक्यस्यैव चिकित्साकलिकादौ "गरातुरे हेम हित वदन्ति" इत्यादिना भवनार श्लोऽस्ति।

भाषा—ब्राह्मीकारस १ तोला, वच, कुठ, शङ्खपुष्पी ३–३ माशे, सुवर्णभस्म १ से ३ रत्तीतक मिलाकर लेनेसे उन्माद, अपस्मार, भूतबाधा येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४४७ ॥

४४८ सुवर्णयोगचतुष्टयम्

सौवर्णं सुकृतं चूर्णं कुष्ठं मधु घृतं वचा।
मत्स्याक्षकः शङ्खपुष्पी मधुसर्पिः सकाञ्चनम्॥१९५५॥
अर्कपुष्पी मधु घृतं चूर्णितं कनकं वचा।
हेमचूर्णानि कैटर्यः श्वेता दूर्वा घृतं मधु ॥ १९५६ ॥
चत्वारोऽभिहिताः प्राशाः श्लोकार्द्धेषु चतुर्ष्वपि।
कुमाराणां वपुर्मेधाबलबुद्धिविवर्धनाः ॥ १९५७ ॥

सुश्रुत ,बालरोगाऽधिकारे।

टि०—"मधाकामश्च वचया श्रीकाम पद्मकेशरै। शङ्खपुष्प्या वयोऽर्थी तु विदार्या च भजेच्छुक ॥ नवावमकल्कपाण्डौ तथारोगर शान्तये ॥" इति मदनिम्रह आयुर्वेदप्रकाशे च त्रयो योगा अन्ये विहिता सन्ति। इत्थमित्थ सहस्रशोऽपि योगा सम्भवन्ते तत्तदनुवोहनीयमनुपानानामनियतत्वात्।

भाषा—सुवर्णभस्म, कुठ, मधु, घृत और वच (१) मछेछी, शङ्खपुष्पी, सुवर्णभस्म, मधु और घी (२) अर्कपुष्पी, सुवर्ण, वच, मधु और घी (३) सुवर्णभस्म, महारुख, वच, दूबमें पकायाहुआ घी और मधु (४) इन चारों योगोंको औचिती देखकर संयुक्तकर देनेसे छोटेबचोंकी मेधा, बल और बुद्धि बढतीहै ॥ ४४८ ॥

४४९ सुवर्णरसराजरसः

शुद्धं स्वर्णरसं पृथक् पिचुमितं एकत्र सम्मर्दितं।
मुक्ताविद्रुममापयुग्मसहितं मर्द्योऽहिवल्लीरसैः।
गुञ्जाद्वन्द्वमितं सुवर्णरसराट् क्षौद्रेण वा गोघृतै–,
र्जीर्णं यक्ष्मभवं प्रमेहदरणं पाण्ड्वामयं वातजम्॥१९५८॥
नेत्रश्रोत्रगदं हरोचकहरं कायस्य कान्तिप्रदं,
रेतोवृद्धिकरं महाबलकरं दीर्घायुरारोग्यदम्।
पथ्यं शालिघृतं सिता सुकदली गोधूमगोक्षीरकं,
ताम्बूलं विहितं पटोलमरिचं सोष्णाम्बु कोशातकी॥

रसायनसं ,क्षये।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेवर्क १–१ कर्ष लेकर एक जगहमर्दनकर पिष्टीबनावे। फिर मोती और मूंगेकीभस्में १–१ माशा डालकर पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा गोघृतकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, राजयक्ष्म, प्रमेह, प्रदर, वातज पाण्डु, नेत्र और कानकी पीडा, अरुचि, कान्तिका अभाव, शुक्रक्षय इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करताहै। पुरानेसफेदचावल, घी, शकर, केला, गेहूं, गोदुग्ध, परवल, मरिच, गरमजल, तरोई येसब पथ्यहैं ॥ ४४९ ॥

४५० सुवर्णरसायनम्

चतस्रः कृष्णलोहानां पलानि त्रिफला तथा।
उषदा चाजमोदा च पयस्या पिप्पली तथा॥१९६०॥
विदारी मधुयष्टी च तच्चूर्णं पालिकं स्मृतम्।
पलं सुवर्णचूर्णस्य ससाहनोपयोजयेत् ॥ १९६१ ॥
बहुस्त्रःपुरपत्नीनां राज्ञाञ्च गरनाशनम्।
बृहस्पतिमतं चूर्णमलक्ष्मीहरणं विदुः ॥ १९६२ ॥

ग.नि.,कल्पे।

भाषा—चारतरहकेलोहोंकीभस्म १–१ पल, त्रिफला, उर्टिंगन, अजमोद, क्षीरकाकोली, पीपल, विदारी, मुल्हठी सबसमभागकाचूर्ण १ पल, सुवर्णभस्म १ पल मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ कर्षकी मात्रा प्रातःकाल दूधकेसाथलेवे। अच्छीतरह पचजानेपर शामको दूधभात भोजनमें लेवे। धीरे २ इसकी मात्रा बढावे। यह पुराने जमानेकेलिये ७ दिनका प्रयोग लिखाहै पर आजकल १ कर्षसे अधिकमात्रा लेनी मुश्किलहै। हा किसीको अधिक पाचन हो सके तो उतनी बढालेवे। जिनके अन्त पुरमें बहुतसी स्त्रियें हों एसे राजालोगोंको इसका प्रयोगकरना योग्यहै। इसके साधारणसेवनसे समस्त बनावटी जहर नष्टहोतेहैं ॥ ४५० ॥

४५१ सुवर्णराजवङ्गेश्वररसः

रसाद्द्विगुणितं वङ्गं वङ्गाद्द्विगुणगन्धकम् ।
रसार्द्धं हेमभागञ्च तत्समं मौक्तिकन्तथा ॥ १९६३ ॥
रसभागन्तु मरिचं तत्समं कान्तनागयोः ।
कुमारीरससम्पिष्टं खल्वे चूर्णन्तु कारयेत् ॥ १९६४ ॥
सप्त मृद्वसनं कृत्वा काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रगं कृत्वा दिनमेकं हठाग्निना ॥ १९६५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पुनः खल्वे विमर्दयेत् ।
एवं सप्तदिनं कृत्वा वटिकाः कारयेद्बुधः ॥ १९६६ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन योजयेदनुपानतः ।
सर्वरोगेषु दातव्या प्रमेहान्हन्ति विंशतिम् ॥ १९६७ ॥
मूत्राघाते मूत्रकृच्छ्रे प्रदरार्शो वर्मास्तथा ।
रसायनमिदं श्रेष्ठं स्वर्णवङ्गेश्वरो रसः ॥ १९६८ ॥
रसायनसं, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, वङ्गभस्म २ भाग, गन्धक ४ भाग, सुवर्ण और मोतीभस्म आधाआधाभाग, मरिच, कान्त और नागभस्म १–१ भागलेकर नीलवर्णकमलीकर कुमारीके-रससे १–२ दिन मर्दनकर पश्चात्‌टिकियाय ६–७ कपड़मिट्टी दोहुई आतशीशीशीमें भर एकदिन वालुकायन्त्रमें तीक्ष्णाग्निमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर मर्दनकर पाककरे । ऐसे ७ वार करनेसेबाद घोटकर रसछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे सबप्रकारकेप्रमेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, वातकुण्डलिका, प्रदर, बवासीर, वमन इसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ सुवर्णसमर्कं (चूर्णम्)

स्वर्णचूर्णं समरिचं द्वौ क्षारौ त्रिफला वचा ।
यवान्यः कुञ्चिका हिङ्गु तिन्तिडीकाम्लवेतसम् ॥ १९६९ ॥
धान्याजगन्धे श्रायन्ती दाडिमं सुयवार्द्रकम् ।
कटुका कटुजम्बीरं सैन्धवञ्च समान् भिषक् ॥ १९७० ॥
त्रिवृता सप्तला दन्ती कम्पिल्लं नीलिकाऽभया ।
सुवर्णक्षीरी द्विगुणा सर्वाण्येतानि चूर्णयेत् ॥ १९७१ ॥
आजे गव्येऽथवा मूत्रे सप्ताहं परिभाव्य तम् ।
द्विगुणां शर्करां चात्र दापयेत्त्र्यङ्गुलं पिबेत् ॥ १९७२ ॥
गोमूत्रत्रिफलाक्षाररसे मद्यस्सुरास्भुना ।
सुवर्णसमर्कं चूर्णं सर्वरोगार्तिभेषजम् ॥ १९७३ ॥
सर्वोदरे प्लीहशोफगुल्मसद्रोगनाशनम् ।
वाताष्ठीलामयानाह श्वयथुं सर्वगात्रजम् ॥
हलीमकामलापाण्डुप्रमेहज्वरगुल्महृत् ॥ १९७४ ॥
भै सं , ग नि , उदररोगे ।

टि०—अधुनोपलभ्यमानपुस्तके ग्रन्थमिदं [illegible] पाठ उपलभ्यते, [illegible] नाम च सुवर्णसमर्कं चूर्णमिति [illegible] । [illegible] सुवर्णसमर्कमिति [illegible] रोगेषु प्रायशो [illegible] नाम करं भवति ७ [illegible] सुवर्णसिन्दूरमित्यादि [illegible] ।

गदनिग्रहे पञ्चकोलमिति पदेन रिक्तं स्थान पूर्ति दृश्यते परन्तु तत्पूरणेन सुवर्णसमर्कमिति नाम्न काचित्सङ्गतिर्नायाति । कदाचित्स्वर्णपदेन सुवर्णक्षीर्येवाऽभिप्रेता कृत्वा सुवर्णसमर्कमिति नाम्न सङ्गतिरस्तीति चेन्न, तत्र सुवर्णक्षीरीद्विगुण्यमस्त्यात्र सुवर्णसमर्कमिति नाम उचित जायेत । स्वर्णचूर्णमिति पदेन पूर्णे तु सुवर्णमपि मरिचादिभिरेकैकेन तुल्यमानावहश्च योगोऽस्ति तत्सुवर्णसमर्कमिति श्रुत्वा योगनाम्नो यथार्थत्वात् गदनिग्रहवत्पञ्चकोलमदत्त्वा स्वर्णचूर्णमिति पदेना स्माभिस्तुटित स्थान पूरितम् । अन्यच्च—द्वितीयश्लोकस्य मयवार्द्रकमिति वर्तमानपुस्तके उपलभ्यते तत्र सुयवार्द्रकमिति पाठोऽस्माभि- स्थापित , तत्र सुयवा =इन्द्रयवा , आर्द्रका नागर ग्राह्यम् । शोढलेन तु सुयवा-मजमिति पाठ स्थापित परन्तु द्वौ क्षारावित्यनेन यवाग्रजस्याऽऽगतत्वात्स पाठो नादृत । एवं चतुर्थश्लोकस्य चतुर्थचरणे दापयेत्त्र्यङ्गुलं पिबेदिति पाठ उपलभ्यते तत्र त्र्यङ्गुलपदस्यार्थमबुद्ध्वा शोढलेन त्रिदिनं पिबेदिति पाठ स्थापित परन्तु उदररोगाणां त्रिदिनाभ्यन्तरे निवृत्तेरसम्भवात्सन्दर्भमेव पाठकल्पन चिन्त्यम् । त्र्यङ्गुलमिति मात्राप्रमाण निर्दिष्टम् यथा—“तत्र मात्रापूर्वं क्षीरपायाद्रङ्गुलिनिर्देश-प्रवृत्तमित्यनामौषधमात्रा विदध्यात् । अथैकास्थिमित्यनां कल्कमात्रां क्षीरा-न्नादाय कल्कमित्यनामन्नादयेदिति ॥” सुश्रुत शा. १०।२८॥ इत्यत्र अङ्गुलीपर्वप्रमाणेनैव मात्रा निर्दिष्टा तथाऽत्राऽपि रोगिणोऽङ्गुल्याः पर्वत्रयपरिमितां मात्रां पाययेदिति महर्षेरभिप्राय । सा च साधारणतया अर्द्धाञ्जलिमा आयाते इति यथावस्थित पाठ एव साधुरिति मत्वा तथैवाऽस्माभि स्थापित सुवर्णपर्यायः । विद्वांस एव विचारयन्तु, अस्माकं मते तु उदररोगेषु प्रायशो येन केनापि प्रकारेण कृताहृतस्य स्वास्थ्यस्य जन्मनस्य वा दोषस्यावरोधेन धातूनामेव विकृत परिणामतया शरीर-धातुविनाश सत्त्वात्सुवर्णस्य च सर्वप्रकारविषापहत्वादस्मिन् सुवर्णमेव प्रतिनिधि स्वर्णचूर्णमित्येव पाठेन पूरण अपेक्षित प्रतिभाति इत्यलमतिविस्तरेण ॥

भाषा—सुवर्णभस्मकृति अथवा भस्म, मरिच, सुहागा, यव-क्षार, त्रिफला, वच, देशी और खुरासानी अजवाइन, कलौंजी इन, कालीजीरी, भुनीहींग, इमलियाका (मारवाड़ीनाम, इमाक. युनानीनाम), अमलवेत, धनियां, बबई, त्रायमाण, अनार-दाना, इन्द्रजव, सोंठ, कुटकी, कड़ुवीजम्भीरी, सेंधानमक सब १–१ भाग, निसोत, अमलतासका गूदा, दन्तीमूल, कमीला, कालादाना, हर्रे, रेवन्दचीनी अथवा सत्यानाशीकीजड़ येसब २–२ भागलेकर बारीकचूर्णकर बकरी अथवा गायके मूत्रमें भावना देकर दूनीखांड मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे रोगीकी तीन अङ्गुलियोंके अग्रभागपर जितना चूर्ण आसके उतना फङ्काकर गोमूत्र, त्रिफला, क्षार, मांसरस, मद्य अथवा सुरामण्ड, इनमेंसे कोईभी देकर पिलानेसे उदर, प्लीहा, शोथ, गुल्म, हृद्रोग, वाताष्ठीला, अनाह, सर्वाङ्गशोथ, हलीमक, कामला, पाण्डु, प्रमेह, ज्वर, गुल्म, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४५२ ॥

४५३ सुवर्णसिन्दूरम् (प्रथमम्)

पारदं गन्धकं स्वर्णं जम्बीररसमर्दितम् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ॥ १९७५ ॥
दिनार्धं पाचयेदेवं स्वाङ्गशीतलताहृतम् ।
हेमसिन्दूरकं नाम नागनागाग्रसंयुतम् ॥
प्रयोगे सर्वरोगादि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ १९७६ ॥
र. क. दो , सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णका बारीकचूर्ण अथवा वर्क समभागलेकर नीलरणकज्वलीकर जंभीरीकेरससे ३–४ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर नाग ताम्र और अभ्रकभस्म समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै और पूर्ण पुरुषत्वको देताहै ॥ ४५३ ॥

४५४ सुवर्णसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

स्वर्णसिन्दूरमभ्रञ्च मौक्तिकं कर्षसम्मितम्।
हेममाक्षिकवैक्रान्तवज्रायांसि च पित्तलम् ॥ १९७७ ॥
शिलाजतु प्रवालाब्धिफेनगुग्गुलुगन्धकान्।
कोलमानेन सङ्गृह्य भावयेद्वह्निचारिणा ॥ १९७८ ॥
ततो गुञ्जाद्वयोन्मानां विधाय वटिकां भिषक्।
देवदारुकषायेण प्रातः सायञ्च योजयेत् ॥ १९७९ ॥
स्वर्णसिन्दूरसञ्ज्ञोऽयं रसेषु प्रवरो रसः।
स्नायुजान्निखिलान्रोगान्हन्ति नास्त्यत्र संशयः १९८०

भै. र, स्नायुरोगे।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, अभ्रक और मोतीकीभस्में १–१ कर्ष, सुवर्णमाक्षिक, वैक्रान्त, वज्र, लोह, पीतल, प्रवाल इनकी-भस्में, शुद्धशिलाजीत, समुद्रफेन, गूगल और गन्धक ८–८ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकमूलकेस्वरस अथवा क्वाथसे १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम देवदारुकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे यह समस्त स्नायुजरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४५४ ॥

४५५ सुवीर्यरसः

बीजीकृतैरभ्रकसत्त्वहेम-
ताप्यारकान्तैः सह साधितो यः।
पुनस्ततः षड्गुणगन्धजीर्णः
सुवीर्यनामा ह्यधिकप्रभावः ॥ १९८१ ॥

टो., रसायने।

भाषा—बीजबनाएहुए अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, पीतल और कान्तलोह इनका यथाशक्य बुभुक्षितपारेको ग्रास-देकर षड्गुणगन्धकजारणकर सिद्धकियाहुआ पारा देह और लोह दोनोंमें कामकरताहै ॥ ४५५ ॥

४५६ सूचिकाभरणरसः (लघुः) (प्रथमः)

विषं पलमितं सूतः शाणिकश्चूर्णयेद्द्वयम्।
तच्चूर्णं सम्पुटे क्षिप्त्वा काचलिप्तशरावयोः ॥ १९८२ ॥
मुद्रां दत्त्वा च संशोष्य ततश्चूल्यां निवेशयेत्।
वह्निं शनैः शनैः कुर्यात्प्रहरद्वयसङ्ख्यया ॥ १९८३ ॥
तत उद्घाटयेन्मुद्रामुपरिस्थः शरावकात्।
संलग्नो यो भवेत्सूतस्तं गृह्णीयाच्छनैः शनैः ॥ १९८४ ॥
वायुस्पर्शो यथा न स्यात्तथा कूप्यां निवेशयेत्।
यावत्सूच्या मुखे लग्नः कूप्या निर्याति भेषजम् १९८५
तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातिनि।
क्षुरेण प्रच्छिते मूर्ध्नि तत्राङ्गुल्या च घर्षयेत् ॥ १९८६ ॥
रक्तभेषजसम्पर्कान्मूर्च्छितोऽपि हि जीवति।
तथैव सर्पदष्टस्तु मृतावस्थोऽपि जीवति ॥
यदा तापो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥ १९८७ ॥

शा. सं., बृ. यो. त., यो. चि, र. प्र. सु., र. सं. क., र. चि, रसायनसं., र. सु., ध., नि. र., भै. सा., रसायनप., र. क, टो., र. प्र., व. रा., र. को., र. श., यो. म, वै. वि, र. क. ल., चि. र. भ., सन्निपाते।

भाषा—शुद्धवछनागकाचूर्ण १ पल और शुद्धपारा ४ माशे लेकर १–२ दिन मर्दनकरे। पारा अदृश्य होनेपर कपड़छान-कियेहुए काचका पोतादेकरसुखाएहुए दो शरावोंमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखनेपर चूल्हेपर रख दो-पहरकी मन्दाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे शरावको उघाड़कर ऊपरके शरावमें लगेहुए पारेकोधीरजसे उतारकर शीशीमें रखले। हवा न लगे। हवा लगनेसे इसकी ताकत कम होजातीहै। सन्निपातमें मूर्च्छितहोनेपर तालुमें घाव देकर सूईके अग्रभागपर जितना रस आसके उतना रक्तमें मिलाकर अङ्गु-लीसे घर्षणकरे। रक्तमें मिलतेही मूर्च्छा निवृत्त होजातीहै। इसीतरह सर्पदंशमें भी कामलेना। इसके देनेकेबाद अत्यन्त ज्वर बढ़ने पर मधुर पदार्थ खानेको देना और शीतक्रियासे ज्वरको निवृत्तकरना ॥ ४५६ ॥

४५७ सूचिकाभरणरसः (द्वितीयः)

नागं पविं हरिणशृङ्गरसासुरेन्द्रां-
स्तुत्थं शिलाञ्च रसकञ्च समानभागान्।
अर्कारिमेदमुनिकिंशुकतोयघृष्टां-
स्त्रिस्त्रिः पृथक्च पुटयेत विचूर्णयेत्तत् १९८८
भूयो विडङ्गविधिवृक्षजबीजहिङ्गु-
व्याघ्रीससजीरकरजोयुतमेतदेयम्।
सम्मर्दयेच्च पयसा यवचिञ्चिकायाः
शुष्कं सुचूर्णितमिदं विदधीत वैद्यः ॥ १९८९ ॥
पाण्डुामवातकृमिमेहसवातरक्त-
शोफांस्तथा कसनगुल्मकमूत्रकृच्छ्रान्।
योग्यानुपानसहितः क्षतजं क्षयञ्च-
गुञ्जामितो हरति रोगगणांस्तथान्यान् ॥

टो., पाण्डुधिकारे।

भाषा—नाग, हीरा, हरिणकासींग, फिटकड़ी, गन्धक, तुत्थ, मैनसिल, खपरिया सब समभागलेकर नीलरणकज्वलीकर आक, विट्खदिर, अगस्त्य, ढाकके फूल इनके स्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी १–१ आचदेवे। फिर विडङ्ग, पलाशबीज, हींग, वनभाटा, जीरा १–१ भागका बारीक चूर्ण मिलाकर जैंतीके स्वरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े।

इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, आमवात, क्रिमि, प्रमेह, वातरक्त, शोथ, खासी, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र, उर क्षत और क्षयप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ४५७

४५८ सूचिकाभरणरसः (तृतीयः)

रसगन्धकनागञ्च विषं स्थावरजङ्गमम् ।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्ते र्विभावयेत् ॥ १९९१॥
सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्तितः ।
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातनिबर्हणः ॥ १९९२ ॥

र.स., भै.र., ध, र सु, र.क.यो., र.न, सन्निपाते । केषुचित्पुस्तकेषु अभ्रकं विशेषेण नियोजितं दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नागभस्म, यथाशस्य स्थावर और जङ्गमविष समभागलेकर मछली, सूअर, मोर और बकरेकेपित्तोंसे १–१ भावना देकर रखछोडे । इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ सूचिकाभरणरसः (चतुर्थः)

रसवैक्रान्तहेमाभ्रं तीक्ष्णं ताम्रं मृतं समम् ।
षड्भिः समं शुद्धगन्धं सर्वं निर्गुण्डिकारसैः ॥१९९३॥
कषायैश्चित्रकस्यापि मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
सूर्यावर्त्ताऽगस्त्यभृङ्गैस्तिलपर्णीन्द्रवारुणी ॥ १९९४॥
काकमाची महाराष्ट्री कटुणी गिरिकर्णिका ।
धुस्तूरस्तुलसी दन्ती बृहती कण्टकारिका॥१९९५॥
स्नुह्यर्कविजया मुण्डी काकतुण्डी जयाऽमृता ।
एतासां भावयेद्द्रावैश्चतुर्दशदिनावधि ॥ १९९६ ॥
अर्कमूलकषायेण भावयेद्दिनपञ्चकम् ।
दत्त्वा सञ्चूर्णितं पञ्चपित्ते भाव्यं दिनत्रयम् ॥१९९७॥
विषमुष्टिकषायेण भावयेद्दिवसत्रयम् ।
जेपालबीजमज्जोत्थतैलेन दिवसत्रयम् ॥ १९९८ ॥
भावितं शोषितं चूर्णं मधुना सह मिश्रयेत् ।
सूचिकाभरणो नाम रसः स्यात्सन्निपातजित् १९९९
दापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।
ज्वरशूलोदरार्शस्सु प्लीहपाण्डुगदेषु च ॥ २००० ॥
आध्मानशूलमन्दाग्निकासश्वासादिरोगिषु ।
श्लैष्मिकस्थूलदेहेषु चानुपानं पृथक्पृथक् ॥ २००१॥

वृ. यो. त, र सु, र क. यो., बा, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वैक्रान्त, सुवर्ण, अभ्रक, फोलाद, ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर सबकी बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर बारीकचूर्णकर निर्गुण्डी, चित्रक, सूर्यमुखी, अगस्त्य, भंगरा, हुरहुर, इन्द्रायण, मकोय, मराठी, मालकांगनी, कोयल, धतूरा, तुलसी, दन्तीमूल, बनभाटा, भटकटैया, थूहर, आक, भांग गोरखमुण्डी, काकनासिका, अरणी और गिलोयके स्वरसोंसे १४ दिन, आककीजडकाथसे ५ दिन, पांचोंपित्तोंमें ३–३ दिन, कुचिलेकेक्वाथ और जमालगोटेकेतैलमें ३–३ दिन क्रमशः भावनाएं देकर रखछोडे । इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त सन्निपात, ज्वर, शूल, उदररोग, बवासीर, प्लीहा, पाण्डु, आध्मान, शूल, मन्दाग्नि, कास, श्वास, कफ, मेद इनसबको यह नष्टकरताहै ४५९

४६० सूचिकाभरणरसः (पञ्चमः)

येन केनाप्युपायेन भस्मीभूतो रसोत्तमः ।
तच्चूर्णं वस्त्रनिष्पूतं तेनैव मिश्रयेत्सुधीः ॥ २००२ ॥
शुल्वे विषं तथा चाभ्रं खल्वे मर्द्यं मुहुर्मुहुः ।
सेवनाच्च विलीयन्ते सन्निपातास्त्रयोदश ॥ २००३ ॥
सूचिकाभरणो नाम नैव देयो ह्यमूर्च्छिते ।
अस्योपयोगमात्रेण सन्निपाती भयङ्करः ॥
स्वस्थः स्यादचिरेणैव संशयायसरो न हि ॥२००४॥

रसचि., सन्निपाते ।

भाषा—पारेकीभस्म और शुद्धपारा, तांबा और अभ्रकभस्म, शुद्ध बछनाग सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारा अदृश्यहोने तक घोटकर रखछोडे । इसमेंसे आधीआधीरत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ मूर्छितसन्निपातीको देनेसे भयङ्कर सन्निपात निवृत्तहोताहै । अमूर्छितावस्थामें इसे नहीं देना ॥

४६१ सूचिकाभरणरसः (षष्ठः)

अमृतं गरलं दारु सर्वतुल्यश्च हिङ्गुलम् ।
पञ्चपित्तैश्च सम्मर्द्य सर्षपाभां वटीं चरेत् ॥ २००५ ॥
प्रदेया सूचिकाग्रेण सन्निपातकुलान्तकृत् ।
वर्जयेत्तिलतैलञ्च दापयेद्दधिभक्तकम् ॥ २००६ ॥

भै. र., ध., र. सु, र. त, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, सर्पविष, देवदारु १–१ भाग, शुद्धशिंगरफ सबकेबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पांचोंपित्तोंमें १–१ दिन मर्दनकर सर्षपप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै । इसमें तिल और तिलकातैल वर्जितकरना । अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभात खानेको देना ॥ ४६१ ॥

४६२ सूचिकाभरणरसः (सप्तमः)

खण्डीकृत्य विषं क्षुण्णं मार्कदुग्धेऽल्पभाण्डके ।
सकाञ्जिके सगरले दत्त्वा चुल्ल्यां निधापयेत् ॥२००७॥
सप्ताहं तत उद्धृत्य गरलं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ।
सूचिकाभरणो नाम रसो शुभतमो भवेत् ॥ २००८ ॥
सञ्ज्ञानाशे विलेप्यस्य यत्नः काञ्जिकपेषितः ।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यः क्षारास्वतिहिमाद्रये ॥ २००९ ॥

रसायनसं., र सु, र. र. दी., टी, वृ. यो. त, र. का, र. क. यो, र. क. ल, सन्निपाते ।

भाषा—बालेबछनागकेछोटेछोटे टुकडेकर एकबर्तनमें डाले। इसमें दूना आकका दूध, चौगुनीकांजी और बराबरका गरलविष डालकर मुंहबन्दकर जहां प्रतिदिन चूल्हा जलताहो वहां एकबालिश्त गहरा खड्डा खोदकर बर्तनको दबादे । अट्ठेदिन

निकालकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती काञ्जीमें पीसकर ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर लगानेसे सञ्ज्ञानाश और भयकर शीत नष्टहोतेहे ॥ ४६२ ॥

४६३ सूचिकाभरणरसः (अष्टम)

अहिफेनं मृतं ताम्रं हिङ्गुलं टङ्किकं विषम् ।
मत्स्याजगजपित्तेन माहिषेण विभावितम् ॥ २०१० ॥
दातव्यं सूचिकाग्रेण शीततोयं पिबेदनु ।
रसश्चार्द्रकतोयेन ह्यनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ २०११ ॥
शीताङ्गेपि सितापयः सहचरं दत्ते पुनर्जीवति ।
ख्यातो योऽत्र स सूचिकाभरणकः सूच्यग्रमात्रो रसः ।
किंवा द्वादशरन्ध्रचर्मसु भिषक् शस्त्रेण कृत्वा पदं,
दद्याच्चार्द्रकवारिणा द्रुततरं सञ्ज्ञां लभेताशु हि २०१२

र सु , र (मा), ना वि , टो , सन्निपाते ।

भाषा—अफीम, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरिफ, सींगियाविष, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर मछली, बकरा, हाथी और भैंसके पित्तोंसे १–१ भावनादेकर रखछोडे । इसमेंसे सूईक अग्रभागसेलेकर अदरखके रसकेसाथ देकर ऊपरसे ठंडापानी पिलानेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं । शीताङ्गमें शकर, दूध और कटसरैयाकेसाथ देनेसे फिरसे जीवन आताहै । यदि इसतरह सञ्ज्ञाप्राप्त न हो तो ब्रह्मरन्ध्रपर शस्त्रसे काकपदकरके अदरखके रसकेसाथ मिलाकर घिसनेसे तत्काल सञ्ज्ञाको प्राप्तहोताहै ४६३

४६४ सूचिकाभरणरसः (नवमः)

ह्यद्यानी दरदं तुल्यं गरलेन सुमर्दितम् ।
मुद्गप्रमाणवटिका नाभिहृत्तालुदेशके ॥ २०१३॥ ॥
कुशेन चर्म निर्भिद्य विघृष्यार्द्रकवारिणा ।
रसप्रवेशमात्रेण नेत्रमुद्घाटयेत्क्षणात् ॥ २०१४ ॥
सावधानो भवेद्यद्वा न चैतन्यं प्रवर्तते ।
ततस्त्वेकां सुवटिकां दद्यादार्द्रकवारिणा ॥ २०१५ ॥
सर्वथा सुखमाप्नोति भोजयेद्दधिभक्तकम् ।
सूचिकाभरणो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ २०१६ ॥

र सु , र , टो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और शिंगरिफ समभागलेकर सर्प विषसे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली नाभि, हृदय अथवा तालुप्रदेशमें कुशासे चीरकर अदरखकेजलकेसाथ मिलाकर घर्षणकरनेसे सन्निपाती तत्क्षण नेत्रोंको खोलदेगा । उससमय १ गोली अदरखके रसकेसाथ घिसकर पिलादेना इससे एकान्तत अच्छा होजायगा । अत्यन्त भूखलगनेपर दहीभात खानेको देना ॥ ४६४ ॥

४६५ सूचिकाभरणरसः (दशम)

रुचकश्चाभ्रकं गन्धं तालकश्च मन.शिला ।
खर्परी शिखितुत्थश्च नेपालं विषटङ्कणम् ॥ २०१७ ॥
दरदं सैन्धवश्चैव सर्वतुल्यन्तु पारदम् ।
मधूकबीजतैलेन मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०१८ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तन्नीत्वा खल्वमध्यगम् ।
कृष्णसर्पस्य पित्तेन भावयेद्दिवसद्वयम् ॥ २०१९ ॥
ब्रह्मद्वारे क्षुरस्पृष्टे गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
जम्बीरस्य जलं देयं सन्निपातं निहन्ति च ॥ २०२० ॥
हिक्कां मूर्च्छाश्च कम्पश्च बाधिर्यं मूकतां तथा ।
ऊर्ध्वश्वासञ्च कासञ्च धनुर्वातं नियच्छति ॥
सूचिकाभरणो नाम प्राणिनां प्राणदायकः ॥ २०२१ ॥

धा , व रा , सन्निपाते । वसवराजीये सूचिकामुख इति नाम ।

भाषा—कालानमक, अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, हरिताल, मैनसिल, खपरिया, तुत्थ, जमालगोटा, बछनाग, सुहागा, शिंगरिफ, सेंधानमक सब समभाग और सबकी बराबर शुद्ध पारा लेकर बारीकचूर्णकर पारेको अच्छीतरह मिलाय महुएके बीजोंकेतैलसे ३ दिन मर्दनकर उसीतैलसे ३ दिन दोलायन्त्रसे पकावे । फिर दोदिन कालेसर्पके पित्तसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली ब्रह्मरन्ध्रमें चीरा देकर जंभीरीकेरसमें घिसकर मर्दनकरनेसे सन्निपात, हिचकी, मूर्च्छा, कम्प, बहिरापन, गूंगापन, ऊर्द्ध्वश्वास, कास, धनुर्वात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६५ ॥

४६६ सूचिकाभरणरसः (एकादशः)

मृताभ्रहेमवैक्रान्ततीक्ष्णताम्रामृतं समम् ।
पारदो गन्धकस्ताप्यं नागवङ्गौ समंसमम् ॥ २०२२ ॥
सर्वं निर्गुण्डिकाद्रावैर्मर्दितं खल्वके ततः ।
भृङ्गी पुनर्नवा पाठा चित्रक वालकाऽमृते ॥ २०२३ ॥
अर्कधत्तूरतुलसीमुण्डीजम्बीरलाङ्गलम् ।
कुमारी नागवल्ली च द्रवैरेषां विमर्दयेत् ॥ २०२४ ॥
काचकूप्यन्तरे क्षिप्त्वा विलेप्य वस्त्रमृत्तिकाम् ।
दिनैकं वालुकायन्त्रे पचेन्नीत्वा च चूर्णयेत् ॥२०२५॥
मत्स्यस्य च वराहस्य कमठ्या महिषस्य च ।
अजायाश्च मयूरस्य कृष्णसर्पस्य कौकुटैः ॥ २०२६ ॥
मनुष्याश्वभ्रमण्डूकजातैः पित्तैश्च भावयेत् ।
दापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०२७ ॥
प्लीहगुल्मोदराणाञ्च ग्रहण्यार्तातिसारिणाम् ।
धनुर्वातं कम्पवातं हिक्कावाधिर्यमूकताः ॥ २०२८ ॥
कौब्ज्य हिमोर्द्धश्वासांश्च ह्यपस्माराऽतिविभ्रमान् ।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु यथेच्छं पथ्यमाचरेत् ॥ २०२९ ॥
नारिकेलोदकं दाहे दध्यन्न पथ्यमाचरेत् ।
तृषार्ते शीतलजलमिक्षुखण्डानि भक्षयेत् ॥
सूचिकाभरणो नाम सर्वरोगविनाशकृत् ॥ २०३० ॥

र. क यो , सन्निपाते ।

भाषा—अभ्रक, सुवर्ण, वैक्रान्त, फोलाद, ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध बछनाग, पारा, गन्धक, सोनामाखी, नाग और वङ्गभस्म सब समभागलेकर निर्गुण्डी, भंगरा, पुनर्नवा, पाठा, चित्रक, सुगन्धवाला, गिलोय, आक, धतूरा, तुलसी, गोरखमुण्डी,

जंभीरी, करिहारी, घीकुंवार और पानोंके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ४-५ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहबन्दकर सुखनेपर एकदिन वालुकायन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछली, सुअर, कछुवी, भैंसा, बकरी, मोर, कालासांप, मुर्गा, मनुष्य, घोड़ा, कुत्ता, मेंडक, इनके यथालाभ पित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, ग्रहणी, अतिसार, धनुर्वात, कम्पवात, हिचकी, बहिरापन, गूंगापन, कुबड़ापन, टंडावसीना, ऊर्द्ध्वश्वास, अपस्मार, विभ्रम इनसबको यह नष्टकरताहै। अत्यन्त भूखलगनेपर यथेष्ट पथ्यदेवे। अत्यन्त दाह मालूम पड़नेपर दहीभातदेकर नारियलकाजल पिलावे और ईखवगैरह चूंसनेको देवे ॥ ४६६ ॥

४६७ सूचिकाभरणरसः (द्वादशः)

शुल्वं वङ्गं तथा नागं क्रमेण भागवृद्धितः।
समांशममृतं देयमर्कक्षीरेण भावितम् ॥ २०३१ ॥
अन्धयेन्मल्लिकायन्त्रे ध्मापयेदेकरात्रकम्।
स्वाङ्गशीतलतां प्राप्तं धूममूर्ध्वगमाहरेत् ॥ २०३२ ॥
गरलं मुद्गसर्पस्य धूमं सम्मर्द्य खल्वके।
सूचीमुखाग्रेण पुनस्तालुमूले तु दापयेत् ॥ २०३३ ॥
निश्चेतो चेतनाकारः सूचिकाभरणार्पितः।
पार्वतीकान्तनिर्दिष्टः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ २०३४ ॥

र. सु., सन्निपाते।

भाषा—ताम्र, वङ्ग और नागभस्म क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकी बराबर शुद्धवछनागमिलाकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर अन्धमूषामें बन्दकर एकरात धमनकरावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरका धूंआ धीरजसे उतारकर क्रोधितकियेहुए कालेसांपके जहरसे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर तालुस्थानमें पाछदेकर रक्तमें मर्दनकरनेसे सूनहरा निश्चेष्ट आदमी उठकर बैठजाताहै ॥ ४६७ ॥

४६८ सूचिकाभरणरसः (त्रयोदशः)

वज्रवैक्रान्तयो भस्म प्रत्येकं निष्कसम्मितम्।
शुद्धविषं त्रिनिष्कञ्च त्रिनिष्कं चूलिकापटु ॥२०३५॥
पञ्चनिष्कोऽस्तिजारश्च सर्वमेकत्र मेलयेत्।
तावत्कूष्मरसं यावन्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०३६ ॥
शार्ङ्गेष्टादिकवर्गस्य क्षारनीरेण भावयेत्।
त्रयोविंशतिवाराणि विमृष्य च विशोष्य च ॥२०३७॥
ततो विमृद्य दिवसं क्षिपेद्रत्नकरण्डके।
मृतसञ्जीवनाख्योऽयं सूचिकाभरणो रसः ॥ २०३८ ॥
सन्निपातेन तीव्रेण मुमूर्षोर्भृंगनस्य च।
तालुनि प्रच्छयित्वाऽस्य रसमेनं विनिक्षिपेत् ॥२०३९॥
मूर्च्छयाऽतिगुरुसमया तीयाभिभयाऽतिप्रपद्यतः।
ततस्तैलेन तं लिप्त्वा निर्वाते सन्निवेशयेत् ॥२०४०॥
ततोऽर्द्धमहराद्र्द्धं मुक्तभयपुरीषकम्।
लब्धसञ्ज्ञं प्रजापाद्यं शीर्णायन्तं शिरो मुहुः ॥२०४१॥
आयुष्मन्तं विजानीयादन्यथा चान्यथा खलु।
ततः शीताम्बुसम्पूर्णे कटाहे तं निवेशयेत् ॥ २०४२ ॥
तत्र चोत्कथितं तोयमपनीयापरं क्षिपेत्।
याचमानममुं पश्चात्पाययेत्ससितं पयः ॥ २०४३ ॥
दधि वा सितयोपेतं नारिकेलजलं तथा।
रम्भाफलानि दद्याच्च म्रियते सोऽन्यथा खलु ॥२०४४॥
लब्धसञ्ज्ञं प्रभावन्तं याचमानं फलादिकम्।
तस्मादाकृष्य तैलाक्तं तैलं वस्त्रादिभि र्हरेत् ॥२०४५॥
लेपयेद्गन्धकर्पूरैरापादतलमस्तकम्।
इत्यादिशिशिरै र्द्रव्यैः ससरात्रमुपाचरेत् ॥ २०४६ ॥
कर्णाक्षिनासिकावक्त्रे क्षिपेत्पोताश्रयं मुहुः।
अष्टमेऽहनि सम्प्राप्ते दर्दुरीमूलजं रसम् ॥ २०४७ ॥
ससितं पाययेद्वेगमवतारयितुं रसम्।
रसेऽवतारिते पश्चाद्दद्यात्पथ्यं भोजनं दधि ॥ २०४८ ॥
श्वासोच्छ्वासयुतं चान्यै र्मुक्तजीवनलक्षणैः।
कटाहे जलसम्पूर्णे निक्षिपेद्बोधलब्धये ॥ २०४९ ॥
लब्धबोधं समाकृष्य पूर्ववत्समुपाचरेत्।
जीवित्वा यावदायुष्यं म्रियते तदनन्तरम् ॥ २०५० ॥
शार्ङ्गेष्टा च तथा व्याघ्री कर्कटस्तिलपर्णिका।
इन्द्रवारुणिकामुस्ता हरिद्राऽङ्कोलमल्लिका ॥ २०५१ ॥
अपामार्गः कणा स्वर्णं कटुतुम्बी च तिन्तिडी।
शार्ङ्गेष्टादिकवर्गोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०५२ ॥

र. र. स., र. को., सन्निपाते।

भाषा—हीरे और वैक्रान्तकीभस्म ४-४ मासे, शुद्धविष ८ मासे, नवसादर १२ मा., अभ्रक २० मा., पारदभस्म सबकी बराबर लेकर ३ दिनतक कूष्माण्डरससे मर्दनकर शार्ङ्गेष्टादिवर्गकेक्षारकेपानीसे २३ दिन तक मर्दनकर सुखाकर एकदिन सुखाघोटकर हाथीदांतकी डिब्बीमें रखछोड़े। भयङ्करसन्निपातसे ग्रस्त मरणासन्न आदमीके तालुमें पछनेदेकर चतुर्थांशीसूईके अग्रभागको पानीमें डुबाकर उसके ऊपर जितनारस आवे उतना तालुमें मर्दनकर सर्वाङ्गमें तैल चोपकर निर्वातस्थानमें सुलादे। आधेपहरके उपरान्त दस्त और पेशाब होकर सञ्ज्ञाको प्राप्तहोगा और बारम्बार शिरको इधर उधर हिलावेगा उससमय समझना चाहिये कि इसमें जीव बाकीहै। अन्यथा मृत समझना। सुखाञ्जनको ठंडेपानीसे भरीहुई कड़ाहीमें बैठादे। उसपानीके गरम होनेपर निकालकर दूसरा ठंडाभरदे, इसक्रमको बराबर जारी रक्खे। फिर पीनेको मांगे तो शक्कर डाला हुआ दूध अथवा शक्कर मिलाहुआ दही अथवा नारियलकाजल और केलेका फल देवे। इसमें उपेक्षा करनेसे रोगी मरजायगा इसवास्तेइस ध्यान देवे। सञ्ज्ञाप्राप्त होजानेपर जो फलादिक मांगे सो देवे और कड़ाहीमेंसे बाहर निकालकर कपड़ेसे तेलको पोंछकर चन्दन, केसर और कपूरका मनमाना शरीरपर लेप करे। ऐसे ७ दिनतक ठंडेपदार्थोंसे उपचार करे। कान, आंख, नाक और मुंह इनमें ठंडेपानीके छींटे दे। आठवेंदिन दर्दुरीकी (कुमारकी. बे.) जड़काग रस

डालकर पिलावे, इससे रसकाप्रभाव मन्द पड़जायगा। इसके-बाद यथेष्टभोजन और दही दे। रसकाप्रभाव कमहोनेपर यदि श्वासोच्छ्वास अधिक मालूम हों तो जलपूर्ण कड़ाहीमें बैठावे और पूर्वकीतरह उपचारकरे। इसतरह जितना आयु अवशेष-होगा उतनेको भोगकर फिर शरीरत्यागकरेगा। काकजङ्घा, अथवा मकोय, वनभांटा, करीर, हुरहुर, इन्द्रायण, नागरमोथा, हल्दी, अङ्कोलकीजड़, अपामार्ग, पीपल, धतूरा, कड़वीतूमड़ी, पुरानीइमली, यह शार्ङ्गादि गणहै ॥ ४६८ ॥

४६९ सूचिकाभरणरसः (चतुर्दशः)

धातूपधातूपलराजमुक्ता-
रसाभ्रकल्को भृशमर्दितोऽयम्।
उन्मत्ततैलोद्भवगन्धयुक्तया
कर्के क्रमादष्टपुटे विपक्वः ॥ २०५३ ॥
तदनु भूधरयन्त्रविनिर्गतः
सकलपित्तविषोदधिफेनिलः।
तिलसमोऽपि कृतान्तनिकृन्तनो
जयति चार्द्रकवारिविराजितः ॥ २०५४ ॥
स्वर्णं तारं च पुस्ताम्रं सीसकं तीक्ष्णपित्तले।
सप्तैते धातवो मुख्याः कांस्याद्याः कृत्रिमाः परे २०५५
महारसाश्चाल्परसा विज्ञेया उपधातवः।
षोडशैते यथाप्राप्त्या क्षिप्यन्ते रसकर्मणि ॥ २०५६ ॥

र. (मा.), सन्निपाते।

भाषा—सुवर्ण, रजत, वङ्ग, ताम्र, नाग, फोलाद, पीतल, कांसा, फूल, जस्त, शिंगरिफ, सोनामाखी, रूपामाखी, चपल, तूतिया, कान्तपाषाण, कान्तलोह, वैक्रान्त, नीलम, गोदन्ती, गन्धक, मैनसिल, तवकीहरिताल, कङ्कुष्ठ, मुर्दासङ्ग, कसीस, फिटकड़ी, माणिक्य, पन्ना, पुखराज, हीरा, गोमेद, लसनिया, अकीक, मार्जाराक्ष, फीरोज़ा, संगयशब, स्फटिक, जहरमोहरा, मूंगा, लाजवर्द, लालपत्थर इत्यादि रत्न, मोती, पारा, अभ्रक इनसबकीभस्में समभागलेकर धतूरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुम्भपुटकी आंचदे। ऐसे आठ आंचें देनेकेबाद पूर्ववत् मर्दनकर पके पानोंमें लपेटकर भूधरपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर यथालाभ पित्त और विष तथा समुद्रफेन और अभ्रककी १–१ भावना-देकर रखछोड़े। इसमेंसे तिलप्रमाण मात्रा अदरखके रसकेसाथ खाने तथा रक्तमेंसंयोगकरनेसे भयङ्करसन्निपातको यह निवृत्त-करताहै ॥ ४६९ ॥

४७० सूचिकाभरणरसः (पञ्चदशः)

रसं सर्पविषं नाभिं धत्तूररसमर्दितम्।
सूचिकाग्रेण दातव्यं सन्निपातकुलान्तकम् ॥ २०५७॥

वै. चि, सन्निपाते।

भाषा—पारदभस्म, सर्पविष और कस्तूरी समभाग लेकर धतूरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे सूचीके अग्रभागसे लेकर खाने तथा रक्तमें मिश्रणकरनेसे घोरसन्निपात निवृत्तहोताहै ॥ ४७० ॥

४७१ सूचिकाभरणरसः (षोडशः)

चत्वारो रसभागाः स्यु गन्धको द्विगुणस्तथा।
चत्वारो रसकाद्भागास्तदर्धं नागवङ्गयोः ॥ २०५८ ॥
तीक्ष्णस्य हि तथा चैकं द्विगुणं हेमतारयोः।
गुञ्जाचतुष्टयं वज्रं प्रवालश्च चतुर्गुणम् ॥ २०५९ ॥
गोमेदकश्च द्विगुणं मौक्तिकश्च चतुर्गुणम्।
सर्वासामिलितात्पश्चात्षोडशांशाभ्रकाद्युतिः॥२०६०॥
खल्वोदरे च सम्मर्द्य यावत्कज्जलसन्निभम्।
नवसारेण संयुक्तं काचकूप्यां निधापयेत् ॥ २०६१ ॥
अग्निं प्रदीपयेत्तत्र द्वात्रिंशत्प्रहरेषु च।
स्वाङ्गशीतलमुत्तार्य चूर्णयेद्यत्नतः कृतम् ॥ २०६२ ॥
मत्स्यमाहिषमायूरपित्तैश्च शतभावितम्।
आजेनापि शतं दद्याच्छ्वाराहयोरपि ॥ २०६३ ॥
ततोऽग्निगर्भं सर्वेषां समांशं मेलयेद्बुधः।
ततः सिन्दूरवर्णः स्याच्छतवारश्च भावितः ॥ २०६४ ॥
क्रोधिकृष्णाहिसम्भूतैः पित्तैश्च गरलैस्तथा।
सञ्चूर्णितं ततः शुष्कं ताम्रकूप्यां निधापयेत् ॥२०६५॥
शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषवीणापटहवेणुभिः।
देवद्विजयोगिवृन्दकुमारीभैरवान्गुरून् ॥ २०६६ ॥
पूजयेत्प्रतिमान्वैद्यस्तत्र कर्म समाचरेत्।
सन्निपाते महाघोरे कालदष्टे विषोल्बणे ॥ २०६७ ॥
शीताङ्गे दृष्टिनाशे च नाड्याश्च विषमे ग्रहे।
स्मृतिश्रुतिमनोनष्टे हिक्काश्वाससमाकुले ॥ २०६८ ॥
मूर्च्छापस्मेन्द्रियवधे वैकल्ये नष्टचेतसि।
बहुनाऽत्र किमुक्तेन सञ्जीवयति मानवम् ॥ २०६९ ॥
सूच्यग्रेण च दातव्यो नखदन्तान्तरेष्वपि।
कारयित्वा तु जिह्वाग्रे पादाग्रे ब्रह्मरन्ध्रके ॥ २०७० ॥
दीयते शङ्खदेशे सर्वाङ्गे दाहशोणिते।
मोहस्तु विनिवर्तेत रसलक्षणमुत्तमम् ॥ २०७१ ॥
दधिभक्तं सुरां देयं दुग्धहीनन्तु दापयेत्।
द्राक्षाखर्जूरकं दद्यात्सर्वाङ्गे दाहसम्भृते ॥ २०७२ ॥
गाढमोहे समुत्पन्ने सिञ्चेत्क्षीरेण मस्तकम्।
सूचिकाभरणो नाम रसः सर्वज्ञसूचितः ॥ २०७३ ॥

र. चं., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा ४ तोले, गन्धक ८ तोले, खपरिया ४ तोले, नाग और वङ्गभस्म २–२ तोले, फोलादभस्म १ तोला, सुवर्ण और रजतभस्म २–२ तोले, हीराभस्म ४ रत्ती, प्रवाल-भस्म ४ तोले, गोमेदभस्म २ तोले, मोती ४ तोले, अभ्रक-भस्म सबसे सोलहवाभाग लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर १६ वांभाग नवसादर मिलाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशी-में भरकर वालुकायन्त्रमें रख शलाकासे गन्धकजारणकर मुंह

चन्दकर ३२ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर चन्द्रोदयकी तरह शीशीको फोड़कर ऊपरलगाहुआ सिन्दूर और नीचे रहीहुई भस्मे निकालकर इकट्ठीकरले। सिन्दूरकेऊपर कुछ गन्धक या नव सादरकीभस्म रही हो तो उसे फेंकदे । फिर तत्स्यभस्म और सिन्दूरको १–१ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर, बकरा, मनुष्य और सुअरके पित्तोंकी १००–१०० भावनाए देकर सबकी बराबर अम्बरमिलाकर फणीकालसापको मोधयुक्तकर उसका जहर और पित्त निकालकर उसक १–१ भावना देकर तावेकी डिब्बीमें रखलेवे । नानातरहके बार्जोकेसाथ देव ब्राह्मण योगी, कुमारी, भैरव और गुरुलोगोंका पूजनकरे । महाघोरसन्निपात और मय ङ्करसर्पदंशमें शीताङ्ग, हृदिवध, नाडीका विषमगमन, स्मृति श्रुति और सञ्ज्ञाकानाश, हिचकी, श्वास मूर्च्छा, विकलता इत्यादि चिह्नोंक उपस्थितहोनेपर सूचीक अग्रभागसलेकर नख और दातोंके अन्दर अथवा ब्रह्मरन्ध्र, शङ्ख, और हृदयप्रदेशमें कुशाग्र प्रभृतिसे रक्तनिकालकर उसमें शामिलकरनसे समस्तअङ्गमें दाह और रक्तका निर्गमनहोनेलग और मोह निवृत्त होजाय उसवक्त समझना कि यह जीवेगा । अधिकमूत्रलगनेपर दही, भात, द्राक्ष और खजूर खानकोदे। दूध खूलकर भी न दे। दाह होनेपर मस्तपर दूधकीधाराअथवा पोतेदे । इससे मृतप्रायभी अच्छाहोजाताहै ॥ ४७१ ॥

४७२ सूचिकाभरणरसः (सप्तदश)

पारद गन्धकं लोहं ताम्र रौप्यश्च हेमजम् ।
राजावर्तश्च गगन तुत्थक हेममाक्षिकम् ॥ २०७४ ॥
मित्रश्च मौक्तिकश्चैव समभागानि कारयेत् ।
व्योषक्काथेन सम्मर्द्य घटीं कोलप्रमाणत ॥ २०७५ ॥
निक्षिपेत्कृष्णसर्पस्य जठरे वटिका बुध ।
आस्यश्च सुदृढ कृत्वा मृत्स्नाभाण्डे विनिक्षिपेत् २०७६
सप्तधा वर्तयेत्तस्य भाण्ड चुल्ह्यामधिश्रयेत् ।
त्रिदिन तस्य चण्डाग्नौ पक्त्वा शीत समुद्धरेत् २०७७
खल्वे व्योषाम्बुना मर्द्य पाच्य यत्पूर्ववत्क्रिया ।
मात्स्यमाहिषमायूरजाकुलच्छागमेव च ॥ २०७८ ॥
सूचिकाभरणं ह्य हि रस सर्वत्र याजयेत् ।
पूजयेद्रसराजस्य गुरूणा द्विजयोगिनाम् ॥ २०७९ ॥
गणेश भैरवश्चैव पूजयेच्च प्रयत्नत ।
हस्तिदन्तमये भाण्डे निक्षिपेत्सुदृढं बुध ॥ २०८० ॥
सूच्यग्रेण ददीतास्य ब्रह्मरन्ध्रे च बुद्धिमान् ।
ब्रह्मस्थाने च शङ्खे स्रावयेद्रुधिर तदा ॥ २०८१ ॥
मर्दयेद्धै सुतैल तु सूचिकाभरणे रसे ।
पथ्यश्च दधिभक्तन्तु हिमकर्पूरलेपनम् ॥ २०८२ ॥
ईश्वरेण यथा दत्ता धन्वन्तरिरथाऽग्रहीत् ।
धन्वन्तरिं नमस्कृत्य यश प्राप्नोति दुर्लभम् ॥२०८३॥
दत्तश्चेन्तु नरेन्द्रेऽय यशस्वी जायते नर ।
तमेव प्रकट कुर्यात्सूचिकाभरणो रस ॥ २०८४ ॥

अपमृत्युविनाशार्थमायुष्यवर्धनाय च ।
जनाना सुखरूपस्तु कथित शम्भुना स्वयम् २०८५
र श , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, रजत, सुवर्ण, राजवर्त, अभ्रक, तुत्थ, सुवर्णमाक्षिक, लसनिया, मोती इनकीभस्में समभागलेकर सबकी नीलवणकल्लोकर त्रिकटुक क्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर बेरबरावर गोलियें बनाकर तत्क्षण मारहुए कालेसांपके पेटमें डालकर मुहको अच्छीतरह रेशमके डोरेस सींकर मिट्टीकेबतनमें ७ धरे लगाकर रखदे । फिर तमाम हण्डीपर वज्रमिट्टीसे ७ लेपदेकर मुहको अच्छीतरह बन्दकरे। सुखानेपर चूल्हपर चढाय ३ दिनकी कड़ी आचदे । स्वाङ्ग शीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटुकेक्काथमे एकदिन मर्दनकर बेर बराबर गोलियें बनाय दूसरे सर्पके पटमें रख ३ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर गोलियोंको निकाल मछली, भैंसा, मोर, नकुल और बकरेकपित्तोंसे १–१ दिन मर्दनकर गुरू, योगी, गणेश और भैरवकी पूजाकर हाथीदातकी डिब्बीमें रखछोड़े । सन्निपातमें मृतावस्थाहोनेपर ब्रह्मरन्ध्रमें रक्त निकाल सूच्यग्रभागसे लेकर घर्षणकरनेसे सञ्ज्ञाको प्राप्त होगा । इस प्रयोगमें इस बातका ध्यान रक्खेकि चीरा लगानपर जहा रक्त निकले वहापर दवाका प्रयोगकरे। पानीनिकले तो निर्जीव समझकर उसपर मेहनत न करे । अत्यन्तमूत्र और दाह मालूम पड़नेपर दहीभात खानेको देवे । चन्दन और कपूरका लेपकरे ॥ ४७२ ॥

४७३ सूचिकाभरणरसः (अष्टादश)

तीक्ष्णं मुण्डार्कवैक्रान्तनागपारदगन्धकम् ।
ताप्याभ्रालशिलाम्लेच्छविषवैक्रान्तमौक्तिकम् २०८६
सप्रवाल सम सर्वं सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
जयाजयन्तीनिर्गुण्डीभृङ्गिजम्बूत्यचित्रकै ॥ २०८७ ॥
अम्भामृतार्द्रकन्यार्यै काचकूप्या विनिक्षिपेत् ।
सप्तमृत्कर्पट कृत्वा सैकतेऽग्निमधो दिनम् ॥ २०८८ ॥
ज्वालयेद्रसराजं त शीत कूपीस्थमाहरेत् ।
तदर्धमसृत दत्त्वा विषत्रिकटुचित्रकै ॥ २०८९ ॥
विजयाऽऽर्द्रकद्रुकार्द्रैश्च सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
पित्तै र्माहिषमायूरच्छागकाल्क्षपाक्वै ॥ २०९० ॥
गरलेन च सिद्ध स्यात्सूचिकाभरणा रस ।
यवप्रमाणमात्रोऽय यवत्रिकटुराम्बुना ॥ २०९१ ॥
सन्निपातेषु सर्वेषु शैत्यस्वेदप्रणाशक ।
दातव्या मूढतायाश्च दन्तजिह्वागलग्रहे ॥ २०९२ ॥
सूच्याऽङ्गुष्ठनखे भित्त्वा तालुके च विनिक्षिपेत् ।
प्राणे वा कार्वि धारा ताङ्गुष्ठमूलया ॥२०९३॥
दातव्या जलयोगश्च श्रम कार्योऽम्बुयोगिन ।
महादेवादितश्चाऽय रसो रसमहोदधौ ॥ २०९४ ॥
र श , सन्निपात ।

भाषा—फौलाद, मुण्ड, तांबा, अकीक, नाग इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी, अभ्रकभस्म, शुद्धहरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ, बच्छनाग, वैक्रान्त, मोती, प्रवाल इनकीभस्में समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भांग, जैंती, निर्गुण्डी, जामुन, चित्रक, जंभीरी, गिलोय, अदरख और त्रिकटु इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर आतशीशीशीमेंभर मुंहबन्दकर समस्तपर ६–७ कपड़मिट्टीकरदे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें उल्टी रख एकदिनरातकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधा शुद्धबच्छनाग मिलाकर बच्छनाग, त्रिकटु, चित्रक, भांग, अकलकरा और अदरखके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर भैंसा, बकरा, सूअर, मछली इनकेपित्त और सर्पविषसे १–१ भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे एकयवप्रमाण मात्रा जव और त्रिकटुकेक्वाथकेसाथ सन्निपातमें देनेसे ठंढापसीना, प्रलाप, मूढता, दांत, जिह्वा और गलेका जकड़ना येसब निवृत्तहोतेहैं। अत्यन्त बेहोशी होनेपर अंगूठा और तालुमेंसे रक्तनिकालकर उसस्थानपर घर्षणकरनेसे जल्दी होशमें आजाताहै। अत्यन्त दाह मालूम पड़नेपर काञ्जीकी धारा देवे और जलकायोगकरावे ॥ ४७३ ॥

४७४ सूचिकाभरणरसः (ऊनविंशः)

माक्षीकनीलाञ्जनतुल्यकाभ्र-
शिलालहिङ्गुलरसायनानि।
सवज्रमुक्ताफलविद्रुमाणि
खल्वे विनिक्षिप्य विमर्दितानि ॥ २०९५ ॥
हरिप्रियस्नेहरजोयुतेन सगन्धकेनाल्पपुटानि चाष्टौ।
दद्याज्जलस्थे कमठाख्ययन्त्रे यन्त्रे पचेद्भूधरसञ्ज्ञके च
मत्स्यकासवाराहमयूरच्छागपित्तविषफेनसमेतः।
आर्द्रकद्रवनियद्गुडूचीकस्सन्निपातरिपुरेष रसेन्द्रः॥
कर्पूरेणार्द्रकेणाऽथ देयः श्रेयः कृते रसः।
अथवा योग्यमास्थेयं दृष्ट्वाऽवस्थां गरीयसीम् २०९८
रोगियोगीन्द्रदेवद्विजगुरुसुरभीयोगिनीवैद्यकन्या-
अभ्यर्च्याऽमून्खगकुलनकुलद्वीपिवृन्दप्लवङ्गान्।
ध्यायन्भूताधिनाथं शुचिपटपिहितं पट्टमभ्यास्य धीरो,
विप्राशीर्वादपूर्वं रसमयरसं मात्रयोपाददीत॥२०९९॥

र.(मा.), सन्निपाते।

भाषा—सोनामाखी, सुरमा, तुत्थ, अभ्रक, मैनसिल, हरिताल, शिंगरिफ, हीरा, मोती, प्रवाल, इनसबकीभस्में समभागलेकर बारीकचूर्णकर आकरीजड़कीछाल और शुद्धगन्धक अष्टमांश मिलाकर धतूरेकेतेलसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कुम्भपुटकी आंचदे। ऐसे ८ आंचें देनेके बाद कच्छपयन्त्रमें रख षड्गुणगन्धकजारणकर धतूरेकेतेलसे मर्दनकर गोलाबनाय पके पानोंमें लपेटकर भूधरपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछली, भैंसा, सूअर, मोर, बकरा इनकेपित्त तथा अफीम और अदरखके रसोंसे १–१ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली योगी, देव, द्विज, गुरू, गौ, योगिनी, वैद्य और कन्याओंका पूजनकर पक्षी, कुलदेवता, नउल, व्याघ्र, वानर, भूतनाथ इनको प्रणामकर अच्छेवस्त्र पहिनकर ब्राह्मणोंका आशीर्वाद लेताहुआ कपूर और अदरखकेसाथ अथवा अवस्थोचितानुपानकेसाथ १–१ गोली लेवे। अत्यन्तदाहहोनेपर पित्तघटित तमामयोगोंमें जलधाराका प्रयोगकरे क्योंकि इससे पित्तघटित योगोंका वीर्य बढ़कर रोगको नष्टकरतेहैं। जहां कोई दवा काम न करतीहो वहांपर पित्तघटितयोगदेनेसे इसतरहका दाह उत्पन्नहोताहै कि वह जलाभिषेकविना शान्तहोना मुश्किलहोताहै और उसी गर्मीके मारे तमामधातुओंका शोषहोकर मनुष्यका मृत्युभी होजाताहै। तमामतरहकी चिकित्साएं करके जिससमय आदमी निराशहोतेहैं और रक्तप्रसरण बन्दहोताहै उससमयपर वैद्य अन्तिमक्रिया समझकर ऐसेप्रयोगोंका योग करताहै। उससमय तमामधातुएं शुष्कहोजातीहैं और यह एक जलतीआग शरीरमें दाखिलहोतीहै तब जलसेकके अतिरिक्त उसका और इलाजही क्याहै ? । इसीलिये उस ज्वालाको शान्तकरनेकेलिये बाह्याभ्यन्तर शीतक्रिया लाचारीसे करनी पड़तीहै। रिक्तस्रोतहोनेकीवजहसे अत्यन्त विक्रिया न हो इसलिये तैल अथवा घीका अभ्यङ्ग पहिले कियाजाताहै। इस जलाभिषेकका अत्यन्तशीतमें कांपना, मलमूत्रकात्यागहोना, यथास्थितमज्ञाकी प्राप्ति ये भद्र परिणामहैं। यदि ये परिणाम नजर न आवें तो उसे मृतावस्थ समझकर छोड़दे उसपर अन्य किसीभी दवाका प्रयोग न करे ऐसा यह आयुर्वेदका सिद्धान्तहै। इसको समझकर काममें लावे। वैद्यकी थोड़ीसी गल्ती और असावधानीपर रोगीका मरना जीना निर्भरहै इसलिये बहुतसंभालकर कामलेवे॥

४७५ सूचिकाभरणरसः (विंशः)

स्वर्णं तारमुजङ्गवङ्गदरदं फेनायसं शुल्वकं,
तार्क्ष्यं तालयुतं सुमर्दितदृढं सूतेन्द्रमिश्रीकृतम्।
धारस्वारफटुप्रयान्वितमिदं भृङ्गौषधिं चूर्णं,
सम्भाव्यं खरलेन तापितमिदं निम्बूरसे जारितम्॥
छागोत्थेन युतं वराहशिखिजे मात्स्येन पित्तेनयुक्,
पर्केकेन समाहृतेन नियतं पित्तेन सम्भावितम्।
राजीमानसमं निहन्ति सहसा दोषत्रयं दारुणं,
सम्ज्ञानाशगतश्च हास्यनिरतं कालान्तकप्रान्वितम्॥
सर्वोपायमिक्षा विधानविधिना मुक्तस्य वैद्योत्तमैः,
शून्यस्य प्रहितेन्द्रियस्य सहसा भूमौ गतस्याऽधिकम्
शीताङ्गस्य सितापयःसहचरं दत्ते पुनर्जीवितं,
दृष्ट योऽत्र स सूचिकाभरणकं सूच्यग्रमात्रं रसम् ॥

र. (मा.). रसधारपद्धति, सन्निपाते।

भाषा—सुवर्ण, रजत, नाग, बङ्ग, लोह, ताम्र, पारा, इनकीभस्में, शुद्ध शिंगरिफ, अफीम, सुवर्णमाक्षिक और हरिताल समभागलेकर दृढ मर्दनकर त्रिकटु, सौंगिया, धतूरा,

नींबू इनके द्रवोंसे तप्तखल्वमें ७-७ भावनाएं देकर बकरा, सूअर, मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देकर राईप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखप्रभृतिके रससे सुईके अग्रभागमें आवे इतना खिलाने और रक्तमें संयोग करनेसे सञ्ज्ञानाश, महाहास्य और मरणान्तकम्पयुक्त, तथा इन्द्रियोंकीशून्यतासहित सन्निपातको यह दूरकरताहै। जब दम्भादि उपाय और औषधोपचार निष्फल होनेसे असाध्य समझकर वैद्यलोगोंने छोड़दियाहो और मुर्दासमझकर ज़िमीनपरभी उतारलियाहो उससमय इसकेप्रयोगसे पुनर्जीवितलब्धहोताहै। शीताङ्गमें शकरयुक्त दूधकेसाथ देवे और जलसेकादि सब यथोचित उपचार करे ॥ ४७५ ॥

४७६ सूचिकाभरणरसः (एकविंशः)

कृत्वोन्मत्तकतैलधूर्तजरसैः सम्मूर्च्छितं गन्धकं,
दत्त्वा हिङ्गुललोहताम्रकनकं सर्वाधिकञ्चाऽमृतम्।
पित्ते भावय नागराजगरसे देयास्त्रिदोषे ज्वरे,
गुञ्जामात्रमिदं सितामधुयुतं सेव्यञ्च पथ्यं दधि २१०३

र. क, सन्निपाते।

भाषा—कालेधतूरेके तैल और पत्तोंकेरससे गन्धकको पकाकर शुद्धहिंगरिफ, लोह, ताम्र और सुवर्णभस्म बराबरप्रमाणसे मिलाकर सबकीबराबर शुद्धबच्छनाग मिलाय यथालाभ पित्तोंकी भावना देकर अदरख और तुलसीकेरसोंकी ३-३ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभात देना ॥ ४७६ ॥

४७७ सूचीमुखरसः (प्रथमः)

रसेन ताम्रपत्रकं विलिप्य गन्धकेन च,
क्षिपेत्तु सूरणोदरे सुवेष्ट्य गोमयेन तम्।
पचेत तं महापुटे सुशीतलं समुद्धरेत्,
विषाग्निपित्तगन्धकै विमृद्य तं पचेद्दिनम्॥ २१०४ ॥
शरावसम्पुटे रसः सुरक्तरूपमेति सः,
रसस्तु सूचिकामुखो निरूपितोऽस्य तण्डुलम्।
ददीत वातशान्तये कफाग्निमान्द्यनुत्तये,
यथोक्तभक्तभोजनं त्यजेत चाम्लराजिके ॥ २१०५ ॥

र दी, वातव्याधौ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर जङ्गलीसूरणके रसमें घोटकर चतुर्गुणित अष्टरूवेधी ताम्रपत्रोंपर लेपदेकर सुखाकर पुटजङ्गलीसूरणमें रखकर ६-७ कपड़मिट्टीदेकर महापुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बच्छनाग, चित्रक और गन्धक प्रत्येक ताम्रके बराबर मिलाय पाचोंपित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकदिनकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर लालरङ्गकी भस्मको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ चावल तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे वात और कफव्याधि,मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै। इसमें खट्टी चीजें और राई न खावे ॥ ४७७ ॥

४७८ सूचीमुखरसः (द्वितीयः)

सूतं गन्धकतालकं मणिशिलां ताप्यं शुभं तुत्थकं,
जैपालं विषटङ्कणं मधुफलं कृत्वा समांशं दृढम्।
कृत्वा कज्जलिकां विषोल्वणफणैः पित्तैश्च सम्भावये-,
क्षिप्त्वा सीसककूपिके रसवरं सूचीमुखं नामतः॥
ब्रह्मद्वारविकीर्णलोहितलवं गुञ्जैकमानं ददे-,
द्दत्वा सम्पुटवद्धतन्द्रिकधनुर्वाते सशाखाहिमे।
कासं श्वासमरोचकं प्रलपनं कम्पञ्च हिक्कामयम्,
मूकत्वं बधिरत्वमुन्मदमपस्मारं जयेत्तत्क्षणात् २१०७

र. र स, र को, यो. सं., र क यो, र. शि, सन्निपाते। र. शि. सूचिकाभरणेति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, सोनामाखी, तुत्थ, जमालगोटा, और बच्छनाग, भुनासुहागा, महुआ समभाग लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर सबचीजोंको मिलाय जहरीकालेसर्पकेपित्तसे १-२ दिन मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती मस्तकउपर पाछदेकर रक्तमें घर्षणकरनेसे धनुर्वात, शीताङ्ग, कास, श्वास, अरुचि, प्रलाप, कम्प, हिक्का, मूकता, बधिरता, उन्माद, अपस्मार इनसबको यह तत्क्षण नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

४७९ सूचीमुखरसः (तृतीयः)

सौवीरं द्विगुणं निधाय तरणिक्षीरे घटे कोहले,
ब्राह्मयं नागमनुक्षिपेद्बहुतरं क्षुण्णं कृतं मज्जितम्।
तद्यन्त्रं परिरुद्ध्य भूमिनिहितं सन्दह्यमानं समु-,
द्धृत्वाऽऽचूर्ण्य विनिक्षिपेन्मृतरसं तत्पादभागं भिषक्
पिष्टः खल्वतले भवेद्रसवरः सूचीमुखो मस्तके,
सूच्यग्रेण निवेशितोऽद्भुततरं सौवीरयोगाज्जयेत्।
तन्द्राशैत्यसुसन्निपातपवनापस्मारभूतग्रहान्,
दुग्धान्नं ससितं ददीत गदिने शीतोपचारा हिताः॥

र. श, र ल., र का. सन्निपाते।

भाषा—मिट्टीके चिकने बर्तनमें दोतोले सुरमाडालदे और ब्राह्मणजातिके एकनागके (मुक्तारूप्यप्रभा ये च कपिला ये च पन्नगाः। सुगन्धय सुवर्णाभास्ते जात्या ब्राह्मणा स्मृता ॥) छोटे २ टुकड़े करके डालकर आकके दूधसे टुकड़े डूबनेलायक बर्तनको भरके वज्रमिट्टीसे मुंहबन्दकर जिमीनमें गाड़दे और ऊपरसे रातदिन अग्नि जलावे जिसमें कि घड़ेका तमाम पदार्थ जलकर राख होजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमें चतुर्थांश पारदभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर खिलाकर काञ्जीपिलावे और रक्तमें प्रवेशकरे तो तन्द्रा, शीताङ्ग, सन्निपात, वातविकार, अपस्मार, भूतग्रह ये सब नष्टहोतेहैं। होश आनेपर अत्यन्तभूख मालूम हो तो शकरकेसाथ दहीभातदेवे। दाह मालूम पड़नेपर शीतोपचार करे ॥ ४७९ ॥

४८० सूतभस्मयोगः (प्रथमः)

विश्वमैरण्डतैलेन हिङ्गुसौवर्चलान्वितम् ।
मृतसूतकसंयुक्तं भक्षितं सर्वशूलहृत् ॥
पक्तिशूलं तथैवान्नद्रवशूलं विनाशयेत् ॥ २११० ॥

व. रा., शूलाधिकारे ।

भाषा—सौंठ, एरण्डतैल, भुनीहींग, सञ्चल, इनकेसाथ पारेकीभस्म उचितप्रमाणमें देनेसे पक्तिशूल, अन्नद्रवशूलप्रभृति समस्तशूल नष्टहोतेहैं ॥ ४८० ॥

४८१ सूतभस्मयोगः (द्वितीयः)

शङ्खपुष्पीवचाब्राह्मीकुष्ठैलाजरसैः सह ।
सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः ॥
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः ॥ २१११ ॥

र. सं., रसायनसं., र. सु., र. चं., र. म. मा., र. का., ध., र. र. दी. अपस्मारे ।

भाषा—शङ्खाहुली, वच, ब्राह्मी, कुठ, इलायची, मेंढासींगी, इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२ रत्ती पारदभस्म देनेसे सब तरहके अपस्मार नष्टहोतेहैं ॥ ४८१ ॥

४८२ सूतभस्मयोगः (विस्फोटकारिः) (तृतीयः)

गुडूचीनिम्बजैः क्वाथैः खदिरेन्द्रयवाम्बुना ।
कर्पूरत्रिसुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं द्विगुञ्जकम् ॥
विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव ॥ २११२ ॥

र. सु., विस्फोटकरोगे ।

भाषा—गिलोय और नीमका क्वाथ अथवा खैर और इन्द्रजवका क्वाथ इनमें कपूर और त्रिसुगन्धिका योगकर इनकेसाथ २–२ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्तविस्फोटक नष्टहोतेहैं ॥४८२॥

४८३ सूतभस्मयोगः (चतुर्थः)

ससूतमरिचं स्यात्तित्तिडीकगुडोषणम् ।
कारव्यजाजीरुचकं मृद्वीकाक्षौद्रदाडिमम् ॥ २११३ ॥

यो. म., र. सं., र. र. दी., र. सु., अरोचके ।

टि०—रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे शुद्धसूतयोग इति नाम । र. म., र. ■ ग्रन्थयोः " कारव्यजाजी रुचक मृद्वीका क्षौद्रदाडिमम् " इत्यस्य स्थाने " मृद्वीका जीरक कृष्णा मातुलुङ्गाम्लवेतसम् " इति पाठः ।

भाषा—इमली (यूनानी), गुड, मरिच, कारवी, जीरा, सञ्चल, दाख, अनार, मधु, इनकेसाथ १–१ रत्ती पारदभस्मका योग करनेसे अरुचि नष्टहोतीहै ॥ ४८३ ॥

४८४ सूतभस्मयोगः (पञ्चमः)

लवणाम्बुयवागुक्तं ससूतं यः पिबेन्नरः ।
तस्य नश्यन्ति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥ २११४ ॥

यो. म., र. का., र. र. दी., रसायनसं., मूत्राघाते ।

टि०—रसायनसंग्रहे लवणाम्बुमिति पाठो दृश्यते । रसेन्द्रदीपिकायां यवाम्बुमिश्रितमिति पाठः ।

भाषा—सैंधानमक, सुगन्धवाला, त्रिफला और सिरका इनकेसाथ पारदभस्म उचितमात्रामें देनेसे १३ प्रकारके मूत्राघात नष्टहोतेहैं ॥ ४८४ ॥

४८५ सूतभस्मयोगः (श्वयथुनाशनः) (षष्ठः)

मण्डूरतीक्ष्णं सुलभञ्च मारितं
सूतं बलातोयनिघृष्टपक्कम् ।
पुनर्नवाया घननादजेन
स्याद्भस्मसूतं श्वयथूपघाति ॥ २११५ ॥

रसेन्द्रसं., शोथाधिकारे ।

भाषा—मण्डूर, फौलाद, ताम्र और पारदभस्म समभाग लेकर बलाकेस्वरससे मर्दनकर गोलाबनाय गजपुटकी आंचदे । इसमेंसे १–१ रत्ती पुनर्नवा और कांटेवालीचौलाईके रसकेसाथ देनेसे शोथ नष्टहोताहै ॥ ४८५ ॥

४८६ सूतभस्मयोगः (सप्तमः)

कान्तं गन्धकसहितं सूते जीर्णञ्च तत्कृतं भस्म ।
मूषायन्त्रे निहितं साक्षाद्यक्ष्मप्रहृत् स्यात् ॥२११६॥

रसेन्द्रसं., यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध बुभुक्षितपारेमें कान्तबीजका जारणकर षड्गुणगन्धकजारणकरके भस्म बनावे । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥४८६॥

४८७ सूतभस्मयोगः (सुधानिधिरसः) ८

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वाङ्गे पीडनं हठात् ॥
सुधानिधी रसोनाम मदमूर्च्छाविनाशनः ॥ २११७ ॥

र. सं., ध., र. प्र., र. क. ल., र. र. दी., र. सु., र. क., यो. र., नि. र., यो. म., यो. त., र. का., भा. प्र., वै. द., र. चं., रसायनसं., मूर्च्छाधिकारे । र. का., मूर्च्छाहरसूत इति नाम ।

भाषा—पीपल और मधुकेसाथ पारदभस्मका योगकर उचितमात्रामें देकर जलकीधारा, अवगाह और सर्वाङ्गपीडन करनेसे मद और मूर्च्छाका नाशहोताहै ॥ ४८७ ॥

४८८ सूतभस्मयोगः (शीतपित्तहरः) ९

यवानीगुडसम्मिश्रो भस्मसूतो द्विवल्लकः ।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलेन मर्दितः ॥ २११८ ॥

यो. म., र. का., शीतपित्ते ।

भाषा—अजवाइन और गुडकेसाथ २ से ६ रत्तीतक पारदभस्म देकर कडुतैलकी मालिशकरनेसे शीतपित्तनष्टहोताहै॥४८८॥

४८९ सूतभस्मयोगः (दशमः)

मुस्तापर्पटकैरण्डकषाये भस्मसूतकम् ।
गुञ्जामात्रं मूर्च्छितं वा देयं वातज्वरापहम् ॥२११९॥

चि. र. म., वातज्वरे ।

भाषा—नागरमोथा, पित्तपापड़ा और एरण्डकीजड़के क्वाथकेसाथ १ रत्ती पारदभस्म अथवा मूर्च्छितपारा देनेसे वातज्वर नष्टहोताहै ॥ ४८९ ॥

४९० सूतभस्मयोगः (एकादशः)

खदिराष्टकयोगेन भस्मसूतो निहन्ति ताम् ॥२१२०॥

र. का , कोद्रवाख्यमसूरिकायाम्।

भाषा—खैर, त्रिफला, नीमकी छाल, परवल, गिलोय और अडूसेके क्वाथकेसाथ १ से २ रत्तीतक पारदभस्मका योगकरनेसे मसूरिका नष्टहोतीहै ॥ ४९० ॥

४९१ सूतभस्मयोगः (द्वादशः)

चिञ्चापामार्गशिग्रूत्थकुरण्टीस्नुक्पलाशजैः।
स्वर्जिक्षारे भस्मसूतो जम्भाम्भोमर्दितो द्रवैः २१२१
दन्त्युत्थे भक्षयेद्दस्मारस्सर्वाजीर्णविनाशनः।
रसे यत्र क्षारयोगस्तत्र क्षारः परिस्नुतः ॥ २१२२ ॥

र. क , अजीर्णे।

भाषा—इमली, अपामार्ग, सहिजन, कटसैरया, थूअर, पलाश और सज्जीके क्षारोंकेसाथ अथवा जभीरीकेरसकेसाथ अथवा दन्तीमूल स्वरसकेसाथ १–१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त अजीर्ण नष्टहोतेहैं ॥ ४९१ ॥

४९२ सूतभस्मयोगः (त्रयोदशः)

आटरूपनवपल्लवद्रवं पालिकं स्वरसभस्म वल्लकम्।
कर्षसम्मितमधुप्रयोजितं प्राश्य नाशयति रक्तपित्तकम्

र. कौ , रसायनसं, यो.र., नि र , वृ.यो त , रक्तपित्ते।

भाषा—अडूसेकेनवीनपत्तोंके १ पल स्वरसमें १ से ३ रत्ती तक पारदभस्म और एककर्ष मधु मिलाकर प्रयोगकरनेसे रक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ४९२ ॥

४९३ सूतभस्मयोगः (चतुर्दशः)

दशमूलकषायमिश्रितं भववीजस्य च भस्मकं परम्।
दशपिप्पलिचूर्णसंयुतं त्रयजातज्वरनाशकारकम् ॥

चि. क्र , र क ल , र र. दी , क्रिम्यधिकारे।

टि०—दशमूलीजलयुत सूत विकासु योजयेदिति र क ल , र र दी पतयो योग कथितोऽस्ति परन्तु पिप्पलीयुक्तदशमूलकषायस्याऽधिककार्यकरत्वादेक एव योगो बोध्य ।

भाषा—दशमूलकेकाढेमें १० पीपलकाचूर्ण और २ रत्ती पारदभस्म मिलाकर देनेसे त्रिदोषजसन्निपात नष्टहोताहै ॥४९३॥

४९४ सूतभस्मयोगः (पञ्चदशः)

रसभस्म वल्लमात्रं लीढ्वा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम्।
कोष्णाम्बुना समेतं स्थौल्यं मेद.कृतं जयति २१२५

यो. र , वै. क , वै. चि., व रा , रसायनस., मेदोरोगे।

भाषा—१ से ३ रत्तीतक पारदभस्मको मधुकेसाथलेकर कदुष्णपानीमें मधुका शरवत पीनेसे मेदसे जायमान स्थूलता नष्टहोतीहै ॥ ४९४ ॥

४९५ सूतभस्मयोगः (षोडशः)

हिङ्गुशुण्ठीयवक्षारपथ्याकृष्णाविडाग्निभिः।
कुष्ठाग्निमन्थरचकैः पुष्करेन्द्रस्य वाम्बुभिः ॥
हृद्रोगमग्निमन्दत्वं सूतः पीतो विनाशयेत् ॥ २१२६ ॥

गे. सा., हृद्रोगे।

भाषा—हींग, सोंठ, यवक्षार, हर्रे, पीपल विडनमक, चित्रक, कुठ, अरणी, सचल, पोहकरमूल, कुरैयाकीछाल, इनके-काढेकेसाथ १–१ रत्ती सूतभस्मका योगकरनेसे हृद्रोग और मन्दाग्नि नष्टहोतेहैं ॥ ४९५ ॥

४९६ सूतभस्मयोगः (सप्तदशः)

भस्मसूतमजाक्षीरैः कणानिष्कैः पलैः सह।
व्योषगन्धकक्षौद्रै र्वा भक्षयेद्धक्षयेत्क्षयम् ॥ २१२७ ॥

र. र , र को , र क. ल , राजयक्ष्मणि।

भाषा—पीपल ४ माशे, मास, त्रिकुटु, गन्धक और मधु अथवा बकरीकादूध इनमेंसे किसी एककेसाथ १ रत्ती पारदभस्म लेनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ४९६ ॥

४९७ सूतभस्मयोगः (अष्टादशः)

सभस्मसूतटङ्कणं कणामजापयोयुतम्।
फलत्रयैः कटुत्रयैः समाक्षिकैः क्षयक्षयः ॥ २१२८ ॥

चि क्र., क्षये।

भाषा—पीपल और बकरीकादूध, मधुयुक्त त्रिफला अथवा त्रिकुटु, भुनासुहागा इनमेंसे किसीएककेसाथ १ रत्ती पारद भस्मका प्रयोगकरनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ सूतभस्मयोगः (ऊनविंशः)

सक्षौद्रमाम्रजम्बूत्थं पिबेत्क्वाथं रसान्वितम्।
अथ पित्तज्वरे प्रोक्तं रसमत्र प्रयुज्यते ॥ २१२९ ॥

र क ल , र. र दी., तृष्णायाम्।

भाषा—आम और जामुनकीछालके क्वाथमें मधु मिलाकर उसकेसाथ एकरत्ती पारदभस्म देनेसे पित्तज्वर नष्टहोताहै ४९८

४९९ सूतभस्मयोगः (विंशः)

किराताब्दाऽमृताशुण्ठीक्वाथाद्वा पर्पटाब्दयोः।
पिप्पलीधान्यचूर्णाद्वा सूतो हन्त्यखिलामयान् २१३०
पथ्यं निरामे दध्यन्नं सामे मण्डोऽथ यूषकः।
रसवीर्यविवृद्ध्यर्थं मृद्वीका वाथ दाडिमम् ॥२१३१॥

र शि., सर्वरोगे।

भाषा—चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ इनका-क्वाथ अथवा पित्तपापड़ा और नागरमोथेका क्वाथ अथवा पीपल और धनियेकेचूर्णकेसाथ १–१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त-रोग नष्टहोतेहैं। निरामव्याधिमें पथ्य दहीभात देना और साममें मांड अथवा यूप देना। रसका वीर्य बढ़ानेकेलिये द्राक्ष अथवा अनार खानेको देना ॥ ४९९ ॥

५०० सूतराजरसः (प्रथमः)

गन्धाश्मा सूतमुक्ताफलमखिलमिदं
बीजपूराम्बुमर्द्य,

याम गालं विपाच्य लवणमुपगतं
चीरमृद्भ्या प्रवेष्ट्य।
सिद्धः स्यात्सूतराजो निखिलगदहर
क्षौद्रकृष्णासमेतो,
यक्ष्माणं पाण्डुगुदजान् श्वसनकसनहृ-
द्व्याधिवाताग्निहन्ति ॥ २१३२ ॥

र. क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक मोती सब समभागलेकर बिजारेकरससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एक पहर लवणयन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़। इसमेंसे १–१ रत्ती पीपल और मधुकेसाथदनेसे राज यक्ष्म, पाण्डु बवासीर, श्वास, कास हृद्रोग और वातरोग प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५०० ॥

५०१ सूतराजरसः (द्वितीय)

गन्धं सूतं शङ्खवैक्रान्तयुक्तं
कार्पासास्थिकाथतो वासरैकम्।
घृष्ट्वा गोलं हेमजे ताम्रजे वा
तारोत्थे वा सम्पुटे निक्षिपेत ॥ २१३३ ॥
पश्चात्कुर्यात्कान्तपाषाणलेपं
शुष्कं कृत्वा सम्पुटं तं पुनेत।
भाण्डे स्थूले शुद्धसामुद्रपूर्णे
दत्ते पश्चात्सम्पुटं पूरयेत ॥ २१३४ ॥
दत्त्वा गन्धं पादभागं विपक्वं
चित्राद्रैस्तत्स्वेदयेल्लोहपात्रे।
दद्यात्पश्चाद्भावना नागवल्ली-
नीरे पित्तैरूपणाद्रैस्त्रिसप्त ॥
प्रत्येकं स्यात्सूतराजस्ततोऽयं
सिद्धो योज्यः सर्वरोगेषु युक्त्या ॥२१३०॥

र. दी. सर्वरोग।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा शङ्ख और वैक्रान्तभस्म समभागलेकर बिनौलेकेकाथसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुवर्ण ताम्र अथवा रजतकेसम्पुटमें बन्दकर कान्तपाषाणका लेप देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर बडमोटे घर्में समुद्रलवणकेबीचमें रख ८ पहरकी आंच दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चतुर्थांश शुद्धगन्धक और चव्यपाक मिलाकर चित्रक और अदरखक रस अथवा क्वाथोंमें लोहकेपात्रमें १–१ दिन स्वेदनकर पान पित्त त्रिकटु और अदरखकेरसोंमें २१–२१ भावना देकर १ १ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़। इनमेंसे १–१ गोला समयोचितानु पानकेसाथदनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५०१ ॥

५०२ सूतराक्षसरसः

सूतस्य राक्षसमुखं पश्चादपुरस्थापनम्।
अङ्कारत्वग्रसैर्देयाः पञ्चविंशतिसङ्ख्यया ॥ २१३६ ॥
त्रयोदश पुटानि स्युस्त्रिफलारसैः पुटाः।
राजिकारसतो देया पुटा द्वादशसङ्ख्यया ॥ २१३७ ॥
कुमार्येकादश पुटा शङ्खकीटे दश ध्रुवम्।
पारिभद्रत्वचा देया नवार्णे भृङ्गराजतः ॥ २१३८ ॥
उन्मत्तेन तथा सप्त विजयोत्थैश्च षट् तथा।
विभावया तथा पञ्च चत्वारो भानुजा मता ॥२१३९॥
सोमराज्या त्रयो देया त्रिफलाया द्वयन्तथा।
एकमेकं त्रिकटुके लवणेनैकं एव हि ॥ २१४० ॥
भूमिनागैस्तथा पञ्च देया प्रक्षालनं विना।
एवं कृत्वा तथा मर्दो यथा स्याद्रेणुवद्रसः ॥२१४१॥
ततः सूतं समुद्धृत्य रक्षयेत्सुप्रयत्नतः।
रहस्यं परमं वक्ष्ये शृणु शिष्य प्रयत्नतः ॥ २१४२ ॥
रसो राक्षसवक्त्रोऽयं सुवर्णं शुल्वतारकम्।
भक्षयेद्विविधान्धातून्समुद्रं वाडवो यथा ॥ २१४३ ॥
तथाऽपि सूतराजोऽपि तालितोऽयं यथास्थितः।
कातुरं मम चित्तेऽपि ज्ञानज्योतिरिदं पुनः ॥२१४४॥
भक्षिता सूतराजेन धातवः क्व नु यान्ति ते।
एतत्सर्वं समाचक्ष्व तत्त्वज्ञोऽसि यतो यते ॥ २१४५॥

ज्ञानज्योतिरुवाच–

अगस्त्येन यथा पीतं लीलयोदधिजं जलम्।
देहे न दृश्यते किञ्चिन्महावीर्येण धीमता ॥ २१४६ ॥
तथाऽयं रसराजोऽपि महावीर्यो महाबलः।
मुखबन्धं कथं तस्य रसराजस्य सम्भवेत् ॥२१४७॥
रक्तसौवारकं नीत्वा तीक्ष्णखड्गे च घर्षयेत्।
वह्नेरुपरि धातव्य रेखा स्यात्प्रहरार्द्धकं ॥ २१४८ ॥
सुवर्णाकारसदृशा तदा ज्ञेयं पराक्षितम्।
पारदस्य पले देयं सौवारं माषमानकम् ॥ २१४९ ॥
वह्नियोगेन सम्मर्द्य ततो वदनबन्धनम्।
तस्य पारदराजस्य पूर्वोक्तगुटिकाश्चरेत् ॥ २१५० ॥
तेनैव रसराजोऽपि बध्यते युतसङ्ख्यया।
धातवो विविधाकारास्तदुदरे यतोऽभवेत् ॥ २१५१ ॥
पलमानं भवेत्सूतं द्विपलं गन्धकस्य च।
उभयोः कज्जलीं कृत्वा भल्लातकपलाष्टकम् ॥ २१५२ ॥
पलानि कृष्णतैलस्य चतुर्विंशतिसङ्ख्यया।
निम्बत्वग्रसकं प्रस्थद्वितयञ्च तथा स्मृतम् ॥२१५३॥
ग्रीष्मकाले वसन्ते वा घर्मकाले विधीयते।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय छागीदुग्धेन कर्षतः ॥ २१५४ ॥
यामार्द्धं स्थापयेद्धर्मे कुष्ठिनो वैद्यकेसरी।
माषप्ररोटिका दद्यात्कृष्णतैलेन संयुताम् ॥ २१५५ ॥
पथ्यमेतत्प्रदातव्यमम्लक्षारविवर्जितम्।
जायन्ते स्फोटकास्तस्य शरीरे सप्तवासरैः ॥२१५६॥
एकविंशतिरात्रैश्च श्वेतकुष्ठं प्रशाम्यति।
विन्दुमात्रमशेषञ्च सर्वकुष्ठं विनाशयति ॥ २१५७ ॥
हरिद्रानिम्बकाश्मीरकावमार्गीरसस्तथा।
एणुग्रन्थिसमं कृत्वा पाचयेत्तप्तभाजने ॥ २१५८ ॥

इष्टिकाघर्षणं कृत्वा तत्र लेपो विधीयते ।
तेन नश्यति तद्विन्दुस्तत्क्षणादेव निश्चितम् ॥
रसोऽयं कुष्ठकुद्दालः प्रोक्तश्च यतिकोविदैः ॥२१५९॥

र. शा , कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धपारेको लेकर अङ्कोलकीजड़केरससे २५, चित्रकमूलस्वरससे १३, राईकेरससे १२, घीकुवारसे ११, शङ्खकेबीजोंसे १०, नीमकीछालकेरससे ९, अमरवेलरससे ८, कालेधतूरेकेरससे ७, भाग्रमें ६, हल्दीसे ५, आकके दूधसे ४, वाकुचीसे ३, त्रिफलासे २, त्रिकटु और लवणसे १–१, विनाबोए हुए केंचुओंसे ५ भावनाए देकर शुभ्रमर्दनकरे । रेतीकीतरह होजानेपर यह राक्षसमुख पारद तैयारहोगा । इसमें सुवर्ण, तावा, रजत प्रभृति तमामधातु जीर्णहोजातेहैं तोलनेसे इसमें वजन नहीं बढता यह बड़ा आश्चर्यहै । परन्तु जिसतरह अगस्त्यऋषिने हसीमें समुद्रकाजल पीलियाथा और उनके शरीरमें किसीतरहकी विलक्षणता नहीं हुईथी उसीतरह इसपारेमें भी अद्भुतशक्तिहै । पर जब इससे कुछकार्य लेना हो तब इसका मुह बन्दकरना आवश्यकहै । लाल सुरमेको लेकर फोलादकी तलवार पर घर्षणकर अग्निके ऊपर रक्खे, आधेपहरमें उसपर सुवर्ण सदृश रेखा निकलेगी उससमय उसे समझना चाहिये कि यह असलहै अन्यथा खोटा समझना । राक्षसमुख १ पल्पारेमें १ माशा लालसुरमा डालकर तप्तखरलमें मर्दनकरनेसे पारेका मुह बन्दहोजाताहै । १ भाग इसपारेकी गोटी बनाय अमृतभाग पारेमें रखकर आधेपहर अग्निपर रखनेसे समस्तपारा बद्धहोजायगा । उसपारेकी संस्कारविशेषसे नानातरहकी धातुए तैयार होतीहैं । बद्धमुखपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ पलकी नीलवर्ण कज्जलीकर भिलावेकाचूर्ण ८ पल, कालेतिलोंकातैल २४ पल, नीमकीछालकारस २ प्रस्थ लेकर ग्रीष्म अथवा वसन्तकालमें धूपमें बैठकर तप्तखरलमें घर्षणकरे । एकजीवहोनेपर रखछोड़े । इसमेंसे प्रात काल बकरीकेदूधकेसाथ १ कर्ष देकर कुष्ठीको धूपमें बैठावे, उड़दकीरोटी और काले तिलका तैल खानेको देवे खटाई और क्षारसे परहेज करावे । इसके प्रयोगसे ७ दिनमें उसके शरीरमें फोड़े उठेंगे और २१ दिनमें श्वेतकुष्ठ नष्टहोजायगा । इसका १–१ बिन्दुदेनेसे समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहैं । हल्दी, बछनाग, केशर, मकोयकारस, रेणुका, गठिवन सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसको पूर्वतैलमें मिलाकर श्वेतकुष्ठपर ईंटसे घर्षणकर लगानेसे तत्क्षण नष्टहोजाताहै ॥ ५०२ ॥

५०३ सूतवटी

कृत्वा गन्धकपिष्टिकाञ्च गगनं तापीरहोदुम्बरं,
कान्तभ्रामकचूर्णसूतकसमं वैकान्ततालान्वितम् ।
पथ्यात्र्यूषणराजवृक्षममरीकूष्माण्डतोयैः कृता,
सिद्धा सूतवटी निहन्ति सहसा सर्वाभिधातं महत् ॥

यो. म , रसेन्द्रम , व्रणाधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, सोनामाखी, तावा, कान्त, भ्रामक, वैक्रान्त इनकीभस्में, शुद्धहरिताल येसव समभागलेकर पारेगन्धकको तुलसीवगैरहकेरसकेसाथ घोटकर पिष्टीकरले फिर सबचीजें मिलाकर हर्रे, त्रिकटु, अमिलतास, अमरवेल अथवा कद्दू, सफेदकोंहड़ा इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तबाधाओंको नष्टकरतीहै ॥ ५०३ ॥

५०४ सूतवररसः (प्रथम)

सूतं ताम्रमयोऽभ्रकञ्च कनकं नागं तथा वङ्गकं,
तुल्यांशं परिमर्दितं सुरकृतासत्त्वञ्च धात्रीरसैः ।
वारांस्त्रीन्गृहकन्यकास्वरसतो वासाम्बुना सप्तभिः
सिद्धः सूतवरो जयेद्रुततरं रक्तं सपित्तं तथा २१६१
गुञ्जायुग्ममितः सितामधुयुतो वासाम्बुखण्डान्वितो,
वा वासारसशर्करघृतयुतो लाक्षारसेनैव वा ।
चातुर्जातकणाटरूपकशिवाधात्रीसिताक्षौद्रयुक्,
पथ्यैः क्षौद्रसितान्वितैः सुमधुरैः पित्तास्रशान्तिप्रदैः॥

र , रक्तपित्ते ।

भाषा—शुद्धपारा, ताम्र, लोह, अभ्रक, सुवर्ण, नाग और वङ्गभस्म १–१ भाग लेकर सबकीबराबर गिलोयसत्त्व डालकर आवले और घीकुवारके स्वरसोंसे ३–३ भावनाए देवे । फिर अड़ूसेके रसकी ७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, मधु (१) अड़ूसेका रस और शक्कर (२) अड़ूसेका स्वरस, शक्कर, और घी (३) लाखका स्वरस (४) चातुर्जात, पीपल, अड़ूसा, हर्रे, आवले, शक्कर और मधु (५) इन अनुपानोंमेंसे जहा जिसकी औचिती हो वहा उसकेसाथ देनेसे रक्तपित्त शान्तहोताहै । इसमें मधु और शक्करयुक्त मधुरपथ्यदेने उचितहैं ॥ ५०४ ॥

५०५ सूतवररसः (द्वितीयः)

व्याघ्रीजटामुनिजटासुरसाटरूष-
कार्पासिकावृहतिकास्वरसे विपक्वः ।
गन्धोपलो रसयुतो द्रवितो नितान्तं
कुष्माम्बुगोक्षुरगतो मृदितः सुसिद्धः २१६३
कणासिताढ्यः करकाम्बुजाजी-
शिवायुतो वा त्रिसुगन्धयुक्तः ।
सितोपलैलामरिचाज्यजाती-
सुवर्चलाकुष्ठयुतस्तथैव ॥ २१६४ ॥
उशीरधान्योत्पलचन्दनैलाकणायुतस्तन्मधुप्लुतस्तु ।
विनाशयेत्सूतवरो रसेशस्त्वरोचकं भ्रान्तियुतं प्रसह्य॥

र , अरोचके ।

भाषा—भटकटैया और अगस्त्यकीजड़, तुलसी, अड़ूसा, कपास और वनभाटा इनके स्वरसोंमें पकाएहुए गन्धकको गलाकर बराबरका शुद्धपारकायोगकर बिजौरे और गोखरूकेरसोंसे मर्दनकर सुखाकर पीपल और शक्कर (१) ओलोंकापानी, जीरा और हर्रे, (२) त्रिसुगन्ध (३) मिश्री, इलायची, मरिच, घी,

जायफल, सज्जी और कुठ, (४) खस, धनियां, कमलगट्टा, चन्दन, इलायची और पीपल (५) छाछ और मधु (६) इनमेंसे किसी एक अनुपानकेसाथ १–१ रत्ती देनेसे अरुचि और वान्ति नष्टहोतीहै ॥ ५०५ ॥

५०६ सूतशेखररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं मृतं स्वर्णं टङ्कणं वत्सनामकम्।
व्योषमुन्मत्तबीजञ्च गन्धकं ताम्रभस्मकम् ॥ २१६६ ॥
चातुर्जातं शङ्खभस्म बिल्वमज्जा कचोरकम्।
सर्वसमं क्षिपेत्खल्वे मर्द्यं भृङ्गरसे दिनम् ॥ २१६७ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुसर्पिषा।
रसोऽयमम्लपित्तघ्नो वान्तिशूलामयापहः ॥ २१६८ ॥
पञ्च गुल्मान् पञ्चकासान्ग्रहण्यामयनाशनः।
त्रिदोषोत्थातिसारघ्नः श्वासमन्दाग्निनाशनः ॥ २१६९ ॥
उग्रहिक्कामुदावर्तं दाहयाप्यगदापहः।
मण्डलान्नात्र सन्देहः सर्वरोगहरः परः ॥
राजयक्ष्महरः साक्षाद्रसोऽयं सूतशेखरः ॥ २१७० ॥

यो. र., र. चं., वै. क., नि. र., रसायनसं., वे. वि., अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध बछनाग, त्रिकटु, शुद्धधतूरेकेबीज और गन्धक, ताम्रभस्म, चातुर्जात, शङ्खभस्म, बेलगिरी, कचूर सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसायलेनेसे अम्लपित्त, वमन, शूल, पांचोंगुल्म, कास, ग्रहणी, त्रिदोषजातिसार, श्वास, मन्दाग्नि, भयङ्करहिक्का, उदावर्त, दाह, याप्यरोग, राजयक्ष्म इनसबको यह एकमण्डलमें नष्टकरताहै ॥ ५०६ ॥

५०७ सूतशेखररसः (द्वितीयः)

रसं विश्वञ्च कर्षार्द्धं चतुःकर्षञ्च गैरिकम्।
मर्दयेद्दयामं तु ताम्बूलीदलवारिणा ॥ २१७१ ॥
रक्तिकाप्रमितं योज्यं सितया मधुनाऽथवा।
अम्लपित्तं भ्रमं भूयश्च्छर्दिञ्च हरति ध्रुवम् ॥ २१७२ ॥

रसायनसं., अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्धपारा और सोंठ ८–८ मासे, शुद्धसोनागेरु ४ कर्ष लेकर पारा अदृश्यहोनेतक शुष्कमर्दनकर पानकेरससे ४ पहर घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर अथवा मधुकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, भ्रम और मूत्रकृच्छ्रको यह नष्टकरताहै ॥ ५०७ ॥

५०८ सूतशेखररसः (रत्नाद्यः) (तृतीयः)

अभ्रकं रससिन्दूरं सुवर्णं शुल्वमुत्तमम्।
लोहं कम्बुजभूतिञ्च विषं कनकबीजकम् ॥ २१७३ ॥
चातुर्जातं टङ्कणञ्च शुण्ठीं व्योषञ्च केशरम्।
सर्वं समं [illegible] कस्तूर्यास्तुर्यांशं प्रक्षिपेत्सुधीः ॥ २१७४ ॥
आर्द्रद्रवेण सम्मर्द्य मार्कवस्य रसे दिनम्।
सूतशेखरनामाऽयं तरुणारुणसन्निभः ॥ २१७५ ॥
गुञ्जामानेन मध्वक्तो मध्वार्द्रकरसेन वा।
जयेद्वातकफोद्रेकं तथा खण्डार्द्रयोगतः ॥ २१७६ ॥
वातपित्तामयं हन्यात्तथा रास्नाकषायतः।
वातं गुडूचीसत्त्वेन मधुना सर्वमेहनुत् ॥ २१७७ ॥
गोदुग्धखण्डयोगेन पित्तोद्रेकं जयेद्ध्रुवम्।
क्षयं पाण्डुं मेहरुजं जीर्णज्वरमथारुचिम् ॥ २१७८ ॥
प्रदरं हन्ति मान्द्यञ्च सोमरोगं शिरोग्रहम्।
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगहरो भवेत् ॥ २१७९ ॥

र. चं., कफरोगे।

भाषा—अभ्रक, सुवर्ण, तांबा, लोह, शङ्ख इनकीभस्में, रससिन्दूर, शुद्ध बछनाग, धतूरेकेबीज, चातुर्जात, भुनासुहागा सोंठ, त्रिकटु, नागकेशर सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे चतुर्थांश कस्तूरी डालकर अदरख और भंगरेकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा मधु और अदरखके रसकेसाथ देनेसे वात और कफकी अधिकताको यह नष्टकरताहै। खाड और अदरखके रसकेसाथ वातपित्तजव्याधिको नष्टकरताहै। रास्नादिक्वाथकेसाथ वायु, गिलोयसत्त्व और मधुसे प्रमेह, शक्करमिलेहुए गोदुग्धसे पित्ताधिक्य, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर, अरुचि, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, सिरका जकड़ना इनसबको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमाम व्याधियोंको नष्टकरताहै ॥ ५०८ ॥

५०९ सूतादिवटी (प्रथमा)

सूतगन्धाभ्रमगधाऽम्लिकामरिचसैन्धवैः।
गुटिकाऽरोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिकृत् ॥ २१८० ॥

बृ. यो. त., र. चं., र. सु., [illegible] भै., रसायनसं., अरोचके।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, अभ्रकभस्म, पीपल, पुरानी इमली, मरिच और सैन्धव समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय झरबेरबराबर गोलियें बनाकर मुंहमें रखनेसे अरुचिको नष्टकरतीहै और जिह्वा तथा मुखकी शुद्धि करतीहै ॥ ५०९ ॥

५१० सूतादिवटी (चन्द्रप्रभा) २

सूतं मृतं मृतं स्वर्णं मृतं ताम्रं समं समम्।
तुल्यञ्च खादिरं सारं तथा मोचरसं क्षिपेत् ॥ २१८१ ॥
द्रवैः शाल्मलिमूलोत्थैर्मर्दयेत्प्रहरद्वयम्।
चणमात्रां वटीं कृत्वा खादेत्क्षीरकसंयुताम् ॥
त्रिदोषाघमतीसारं सत्वरं नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २१८२ ॥

र. कौ., र. मं., चि. र. म., र. चं., र. को., नि. र., भै. सा., र. सु., र. म. मा., र. (मा.), रसायनसं., वै. चि., टो., र. सा., यो. म., र. क. ल., बृ. यो. त., ना. वि., अतिसारे।

भाषा—पारा, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर सब कीवरावर खैरसार और मोचरस मिलाकर सेंमलकीजड़केरससे दोपहर मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जीरेकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषातिसारको नष्टकरतीहै ॥

५११ सूतादिवटी (तृतीया)

शम्भो. कण्ठविभूषणं रविरय. सर्वैः समांशं रसं,
सम्मर्द्य त्रिफलात्रिजातचपलामूलं घनं रेणुका ।
वेल्लत्र्यूपणचित्रकं समलवं त्वेकत्र सम्मर्दयेत,
कर्तव्या गुटिका गुडद्विगुणिता वल्लोन्मितास्ता हिताः
मान्द्यादौ जठरानिले ग्रहणिकाकासे क्षये पायुजे,
वा चात्यर्थगलग्रहश्वयथुरुग्गुल्मोदरव्याधिषु ।
अष्ठीलार्दितगृध्रसीयुवतिरुक्श्लेष्मामवातार्तिषु,
क्षीणानां विषमे प्रमेहनिचये सूतादिकेयं वटी २१८४

र, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, ताम्र और लोह १–१ भाग, पारदभस्म ३ भागलेकर त्रिफला, त्रिजात, पिपलामूल, नागरमोथा, रेणुका, विडङ्ग, त्रिकटु, चित्रकमूल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय १–२ दिन शुष्कमर्दनकर दूनागुड़मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे मन्दाग्नि, उदरवायु, ग्रहणी, कास, क्षय, बवासीर, गलग्रह, शोथ, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, लकवा, गृध्रसी, स्त्रीरोग, श्लेष्म, आमवात, क्षीणता, विषमरोग, प्रमेह, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

५१२ सूतादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं सूतश्च भल्लातपिप्पलीमूलपिप्पली. ।
आकल्लकं जातिपत्री लवङ्गं वङ्गभस्मकम् ॥ २१८५ ॥
मर्दयेत्समभागेन पुराणगुडमिश्रितम् ।
उपदंशेषु सर्वेषु वटी माषप्रमाणिका ॥ २१८६ ॥

नि र, र च, व रा, वै. चि, रसायनस, उपदंशे । रसायनसङ्ग्रहे उपदंशहरीवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, भिलावे, पिपलामूल, पीपल, अकलकरा, जावित्री, लौंग, वङ्गभस्म सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेके अदश्यहोनेतक घोटकर सबकी वरावर पुराना गुड़ मिलाकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाय लेनेसें समस्त उपदंश निवृत्तहोतेहै ॥ ५१२ ॥

५१३ सूतिकाघ्नरसः

रसगन्धकलौहाभ्रं जातीकोषं सुवर्णकम् ।
समांशं मर्दयेत्खल्वे छागीदुग्धेन पेपयेत् ॥ २१८७ ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिका कुरु यत्नत. ।
ज्वरातीसाररोगघ्नं सूतिकातङ्कनाशन. ॥
सूतिकाघ्नो रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्तित ॥ २१८८ ॥

र स, र चि, र च, र सु, सूतिकारोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक और सुवर्णभस्म जावित्री सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बकरीकेदूधसे पीसकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसायदेनेसे ज्वर, अतिसार, सूतिकारोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१३ ॥

५१४ सूतिकातङ्कनाशनरसः

रसाभ्रगन्धकव्योषं सुवर्णमाक्षिकं विषम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ २१८९ ॥
सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्द्यश्च नाशयेत् ।
अतिसारश्च शमयेदपि वैद्यविवर्जितम् ॥
कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥ २१९० ॥

र स, र. सु, सूतिकारोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी और बछनाग, अभ्रकभस्म और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सूतिकारोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, दुःसाध्य अतिसार, कास और श्वासको यह नष्टकरताहै ॥ ५१४ ॥

५१५ सूतिकातङ्कनाशिनीवटी (सूतिकारिरस)

रसं गन्धं मृताभ्रञ्च मृतताम्रञ्च तुल्यकम् ।
चूर्णितं मर्दयेत्खल्वेऽकेपर्णीरसेन च ॥ २१९१ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या कलायसदृशी तत ।
मात्रया कटुना देया सूतिकातङ्कनाशिनी ॥
ज्वरतृष्णाऽरुचिहरी शोथघ्नी वह्निदीपनी ॥ २१९२ ॥

भै र, र च, ध, र चि, र. र, र सु, व रा, र स, सूतिकारोगे ।

टि०—केषुचित्पुस्तकेषु मृतताम्रञ्च तुल्यकमित्यस्य स्थाने मृत ताम्र तदर्द्धकमिति पाठ । तत्र त्रयाणामर्द्ध मध्यर्द्ध बोध्य तेष्वेव पुस्तकेषु अनुपानस्थाने क्षीरत्रिकटुना युक्तेति पाठो दृश्यते तत्र त्रिकटुना सार्धं क्षीरस्य पाक विधाय दातव्यम् । अन्यत्र तु त्रिकटुना सार्द्धं रस मिश्रय्य मध्वा दिभि प्रयोक्तव्यमिति विशेष । र, रसेन्द्रम एतयो शुल्वेश्वरनाम्ना "रसगन्धकयो कृत्वा पिष्टिकां समभागयो । ताम्राभ्रक तयोस्तुल्ये मर्दयेद्दिवसत्रयम् । खराशिकारसेनैव गोल सङ्कोचयेच्छनै । औदुम्बराख्य जयति कुष्ठ शुल्वेश्वराभिध ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । अत्र खराशिकाभावनैवाऽधिकाऽस्ति, द्वयोरपि भावनयोरेकत्र समावेश कृत्वा एक एव पाठ सम्पादनीय द्विविधभावनानुष्ठाने क्षत्यभावात् । अधिकारभेदस्त्वकिञ्चित्कर एकाधिकारपठितेषु योगेषु विविधकार्यकरण शक्तिमत्वात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और ताम्रभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मीकेरसमें १–२ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुकेसाथ देनेसे सूतिकारोग, ज्वर, तृष्णा, अरुचि, शोथ, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५१५ ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, ताम्रभस्म ६ भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे ७, निर्गुण्डी, इटसिट और पलाशकेस्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली देवें, देवदारु और सोंठ काकाढ़ा (१) मधुयुक्त पलाशकी जडकास्वरस (२) हल्दी और गुड़ (३) विधारा, देवदारु और सोंठ (४) एरण्डतैलमें पक्की हुईहर्रे और गोमूत्र (५) सोंठ, गिलोय और देवदारु (६) कुटकी और एरण्डतैल (७) एरण्डतैलयुक्तधान्याम्ल (८) करञ्ज अथवा पतजीवाकेपत्तोंकास्वरस (९) विधारा और तुषाम्ल (१०) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेसाथ औचिती देखकर प्रयोगकरनेसे श्लीपद और कुष्ठ नष्टहोताहै॥ ५२४॥

५२५ सूतेन्द्ररसः (तृतीयः)

मुक्ताफलं प्रवालञ्च सुवर्णं रौप्यमेव च।
रसगन्धकतः सर्वं तोलैकैकं प्रकल्पयेत्॥ २२२७॥
रक्तोत्पलपत्ररसे मर्दयेत्तद्घनीकृतैः।
मर्दयेत्तत्पुनर्दत्त्वा गन्धं माषचतुष्टयम्॥ २२२८॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये सन्निरुद्ध्य प्रयत्नतः।
वालुकायन्त्रमध्यस्थां कृत्वा काचघटीं ततः॥२२२९॥
पाकस्तत्र तथाकार्यो भवेद्यामत्रयं तथा।
काचपात्रात्समाकर्षेत्सिद्धं सूतं ततः परम्॥ २२३०॥
भक्षयेद्रक्तिकाः पञ्च रोगैराक्रान्तपुद्गलः।
भोजनं सर्वरोगोक्तं यत्नतः कारयेद्भिषक्॥ २२३१॥
दुर्बलं वपुरत्यर्थं बलयुक्तं करोत्यसौ।
शुक्रवृद्धिं करोत्येष ध्वजभङ्गञ्च नाशयेत्॥ २२३२॥
मासेनैकेन सूतेन्द्रो रोगनाशाय कल्पते।
शालयो मुद्गयुक्ताश्च गोधूमा भोजने हिताः॥२२३३॥
घृतं गव्यं तथा क्षीरं स्निग्धं पथ्यं प्रयोजयेत्।
पारावतस्य मांसञ्च तित्तिरे लावकस्य च॥ २२३४॥

र र स, र चिं, र को, वाजीकरणे। र को., मकरध्वजरस इति नाम।

भाषा—मोती, प्रवाल, सुवर्ण, चांदी इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला लेकर नीलवर्णकज्जलीकर लालकमलके फूलोंकेपनसे १ दिन मर्दनकर ४ माशे शुद्धगन्धक मिलाय एकदिनघोटकर सुखाकर कज्जली बनावे। फिर ४–५ कपडमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी कड़ी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर शीशीमेंसे निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ५–५ रत्तीकीमात्रा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कृशता, बल और शुक्रकीहानि, ध्वजभङ्ग इनसबको एक महीनेमें यह नष्टकरताहै। सांठेचावल, मूंग, गेहूं, गायकाघी और दूध इत्यादि स्निग्धभोजनकरे। कबूतर और तीतरकामांस गुणकारकहै॥ ५२५॥

५२६ सूतेश्वररसः (प्रथमः)

सूताऽभ्रायसमृतिगन्धगरलम्लेच्छं सवैकान्तकं,
त्रिस्त्रिर्मार्कवशिग्रुवह्निसरलाऽऽतङ्कार्द्रकाम्भःप्लुतम्।
श्लक्ष्णीकृत्य विलिप्य भाण्डकुहरे प्राङ्मानहालाहला-,
न्निर्यद्धूमविधूपितो रसवरस्तद्भाण्डनिष्कासितः॥
सूतेशः सुरसारसेन रसितो गुञ्जाद्वयीतोलितो,
हन्यादष्टविधाञ्ज्वरांश्च विषमांश्छीतोष्णसाधारणान्॥

र. प., ज्वरे।

भाषा—पारा, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, सर्पविष, ताम्र और वैकान्तभस्म समभागलेकर कज्जलीकर भंगरा, सहिजन, चित्रकमूल, निसोत, कुठ और अदरखके स्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर मिट्टीकेपात्रमें लेपदेकर इसके बराबर वछनागकाचूर्ण दूसरी हंडीमें बिछाय डमरूयन्त्र बनाकर मुखबन्दकर चूल्हेपर रख इतनी आंचदेवे कि वछनाग जलजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर हंडीकेपेंदेमेंसे रसको निकालकर तुलसीकेरससे घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तुलसीकेरसकेसाथदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, विषम, शीतोष्णप्रधान और साधारणज्वर नष्टहोतेहैं॥ ५२६॥

५२७ सूतेश्वररसः (द्वितीयः)

रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं कर्षसम्मिताम्।
स्थूलदर्दुरमांसञ्च वसापित्तञ्च पूर्ववत्॥ २२३६॥
मर्दयेत्पुटयेच्चैव सिद्धः सूतेश्वरो भवेत्।
गुञ्जामात्रं जयेद्दोषं सर्वशैत्यनिवारणः॥
देहे सोपद्रवञ्चैव वातं दन्तनिबन्धनम्॥ २२३७॥

र, वातरोगे।

भाषा—१–१ कर्ष शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर बडेमेंटककेमांस, चर्बी और पित्तसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर सुखनेपर लघुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शीताङ्ग, दन्तविबन्ध इत्यादि उपद्रवयुक्त सन्निपातको यह नष्टकरताहै॥ ५२७॥

५२८ सूर्यकान्तरसः

ताप्यं गन्धं शुद्धसूतं शिलाजत्वम्लवेतसम्।
मृतताम्राभ्रकं तुल्यं मध्वाज्यगुडमिश्रितम्॥ २२३८॥
माषैकं जिह्वकं हन्ति सूर्यकान्तो महारसः।
मुण्डीपञ्चाङ्गचूर्णञ्च चाकुचीतुल्यचूर्णकम्॥
मध्वाज्यसंयुतं कर्षं लेहयेदनुपानकम्॥ २२३९॥

र रा., र मु, चि क., र.का. कुष्ठाधिकारे।

टि०—र मु, चि क., र का एषु सूर्यावर्तरस इति नाम। "रसगन्धकताप्यमाक्षिं शिलाजतु अनुपानेन च। मरि पेष्य तथाऽम्लवेतसं सुधर्माक्षमाद्युमारिके॥ मधून परिपेष्य माषक०" इति पाठ उद्धमुद्रणनाम्ना चिकित्साक्रमकल्पवल्लयामेव निर्दिष्टोऽस्ति।

अस्मित्तप्रकरणस्थाने शिलानिहिताऽस्त्यम्लवेतसस्य च भावनायां नियोगोऽस्ति एतावद्भेदस्याऽकिञ्चित्करत्वात्मत्युत पूर्वपाठादीनवीर्यत्वाच्च पूर्वस्मिन्नेवाऽस्याऽन्तर्भाव. करणीयः शिलाप्रक्षेपस्त्वत्रापि न विरुध्यते।

भाषा—शुद्ध सोनामाखी, गन्धक, पारा और शिलाजीत, अम्लवेत, ताम्र और अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलकण्ठकचलीकर शिलाजीत और अम्लवेतको अच्छीतरहमिलाकर १–२ पहर घोटकर रसछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधु, घी और गुडकेसाथ मिलाकर खानेसे ऋष्यजिह्वादि कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै। गोरखमुण्डीका पञ्चाङ्ग और बाकुची समभागका चूर्ण एककर्ष मधु और घीकेसाथलेनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै ५२८

५२९ सूर्यचन्द्रप्रभावटी

भिकत्रयं हरिद्रे द्वे तिक्ता तिक्तं शटी वचा।
वेल्लचित्रकतालीसभार्ङ्गीपद्मकजीरकम् ॥ २२४० ॥
द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं पटूनि त्रीणि तुम्बुरु।
देवदारु बला चव्यं धान्यकं गजपिप्पली ॥
वत्सकातिविषादन्तीश्यामापुष्करकामृताः ॥२२४१॥
भागोऽमीषां सूक्ष्मचूर्णीकृतानां
भागश्चार्द्धस्तापितीरोद्भवस्य।
तद्वद्द्वाभ्या भागवृद्ध्या परे स्यु-
रभ्रं लौहं शैलजं कौशिकञ्च ॥ २२४२ ॥
सम्मर्द्य गुटिका कार्या सूर्यचन्द्रप्रभाभिधा।
पूर्वाह्णे तां प्रयुञ्जीत माक्षिकेण परिप्लुताम् ॥२२४३॥
अनुपाने प्रयुञ्जीत तक्रं मधु रसोत्तमम्।
क्षीरं धवरतोयं वा शर्करामिश्रितं जलम् ॥ २२४४ ॥
घृतं मूत्रं तथा चाम्लं स्वादु दाडिमजं रसम्।
कासं श्वासं तथा शोपमरुचिं पार्श्ववेदनाम् ॥२२४५॥
अर्शांसि कामलां मेहं पाण्डुरोगं हलीमकम्।
हृद्रोगं मूत्रकृच्छ्रञ्च श्वयथुं ग्रहणीगदम् ॥ २२४६ ॥
यकृत्प्लीहाभिवृद्धिञ्च कृमिं ग्रन्थिं भगन्दरम्।
श्लीपदं गण्डमालाञ्च व्रणान्नाडीव्रणानपि ॥ २२४७ ॥
अतिस्थौल्यातिकार्श्यञ्च विद्रधीन्पिटिकामपि।
नासानेत्राश्रितान्रोगांश्छिरोरोगान्सुदारुणान् २२४८
मुखरोगानशेषांश्च रक्तपित्तं स्वरक्षयम्।
ज्वरञ्च सन्निपातोत्थं विषमञ्चापि पैत्तिकम् ॥२२४९॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव संसृष्टान्सान्निपातिकान्।
निजानृतुभवांश्चैव ये चान्ये मात्रकीर्तिताः ॥
तांस्तान्प्रशमयत्येषा वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥ २२५० ॥
मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्व-
मायुःप्रकर्षं पवनानुलोम्यम्।
स्त्रीषु प्रहर्षं बलमिन्द्रियाणा-
मग्नेश्च कुर्याद्विधिनोपयुक्ता ॥ २२५१ ॥

ग. नि. सर्वरोगे।

टि०—"अेषा व्योषविडङ्गचित्रकनिशादार्वीकरञ्जाऽमृता
देवाह्वातिविषा त्रिवृत् कटुका कुस्तुम्बुरू कारवी।
क्षारौ द्वौ लवणत्रय गजकणा चव्य तथाऽब्धकर,
तालीस कणमूलपुष्करशठी कुष्ठ किरात धनम् ॥
मार्गी पद्मकबीजक सकुटज दन्ती वचातुम्बुरू,
शृङ्गी कर्कटकस्य कर्षकमिता. सर्वा समाना मता.।
लोहस्य द्विपल पुरस्य च पलान्यष्टौ प्रदद्यात्ततो,
वाप्यास्त्वेकपल शिलाजदशक ताप्य तु वाशीसमम् ॥
मत्स्यण्डीपलपञ्चक घृतपले द्वे द्वे च माक्षीकतो,
हेम्नोऽथ त्रिसुगन्धकस्य च पल दत्वा गुटी निर्मिता।
सूर्यार्थे परमेष्ठिना भगवता सूर्यप्रभा नामत,
कासश्वासभगन्दरोदरक्रिमीन्पाण्डुत्वषण्ढक्षयान् ॥
गुल्म विद्रधिपार्श्वशूलतमकानस्रप्लीपदान्कामलाम्,
स्वेद सर्वगत त्रयोदशविध सा सन्निपात हरेत्।
वातोद्भूतमशीतिसन्धिकगद सश्लेष्मपित्तोद्भवम्,
कुष्ठार्शोविषमज्वरानरुचक मूत्रग्रहान्नाशयेत् ॥
सर्वान्रोगगणान्निहन्ति गुटिकामक्षप्रमाणा शुभे,
यूपक्षीररसै प्रयुज्य बलवान्दीर्घवक्षयो जायते ॥"

इति पाठो यो म, वृ यो. त., यो र, नि र, वै. चि एषु ग्रन्थेषु सूर्यप्रभा गुटीति नाम्ना निहितोऽस्ति। अत्र चन्द्रप्रभायामेव त्वगेलारुष्करराण्यधिकतया निक्षिप्य द्रव्यप्रमाणे च व्यत्यय कृत्वा नामान्तर स्थापितम्। वैद्यचिन्तामणौ च व्यत्यस्तः पाठोऽस्ति कुत्रचिन्माने भेदो दृश्यते।

भाषा—सौंठ, मिर्च, पीपल, हर्रे, बहेड़ा, आवला तज, पत्रज, इलायची, हल्दी, दारुहल्दी, कुटकी, चिरायता, कचूर, वच, विडङ्ग, चित्रकमूल, तालीसपत्र, भारङ्गमूल, पद्मकाठ, जीरा, सज्जी, यवक्षार, पिंपलामूल, सैन्धव, संचल, समुद्रनमक, तुम्बुल (चिरफल, मराठीनाम), देवदारु, बला, चव्य, धनियां, गजपीपल, कुरैयाकीछाल, अतीस, दन्तीमूल, निसोत, पोहकरमूल, गिलोय १–१ तोला, सोनामाखीभस्म और वंसलोचन ६–६ माशे, अभ्रकभस्म १ तोला, लोहभस्म २ तोले, शिलाजीत ३ तोले, गूगल ४ तोले लेकर सबकाबारीकचूर्णकर गूगल और शिलाजीतकेसाथ कूटकर अन्दाज़से मधु देकर १–१ माशेकीगोलियें बनाकर रसछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे मीठीछाछ, दूध, बेरकाकाढ़ा, शरबत, घी, गोमूत्र, खट्टा और मीठा अनारकारस इनकेसाथ लेनेसे कास, श्वास, शोष, अरुचि, पसलीकादर्द, बवासीर, कामला, प्रमेह, पाण्डु, हलीमक, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, शोथ, ग्रहणी, यकृत् और प्लीहावृद्धि, क्रिमि, ग्रन्थि, भगन्दर, श्लीपद, गण्डमाला, व्रण, नाडीव्रण, अतिस्थूलता और कृशता, विद्रधि, प्रमेहपिडिका, नासिका, नेत्र, शिर और मुखके भयङ्कररोग, रक्तपित्त, स्वरभङ्ग, ज्वर, सन्निपात, विषमज्वर, पित्तज्वर, द्वन्द्वज और सान्निपातिक २० प्रकारकेश्लेष्मरोग, प्राकृत और वैकृत तमामरोग इनसबको नष्टकर मेधा, स्मृति, कान्ति, आयु, पुरुषत्व, और इन्द्रिय बलको देताहै तथा वायुकाअनुलोमन करताहै ॥ ५२९ ॥

५३० सूर्यपावकरसः

त्रिपापाणं द्वितुल्यञ्च नेपालं तालकं समम्।
मर्द्यं धुत्तूरकद्रावैः कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥ २२५२ ॥

स्याङ्गशीतलमुद्धृत्य कोलपित्तेन भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं शीतज्वरनिवारकम् ॥
सूर्यपावकनामायमीश्वरेण प्रकल्पितः ॥ २२५३ ॥

वै. चि, धा.. ज्वराऽधिकारे ।

टि०—द्वितीयपादुरुनेनाऽयमापातरस्नाम्य त्रिमूदपि न तयान्न-र्भवति महदन्तरत्वात् ।

भाषा—तीनतरहका शुद्धसोमल, तुत्थ और हीराकसीस, जमालगोटा, रसमाणिक्य सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर धतूरे केरससे २–३ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सुअरकेपित्तकी १ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५३० ॥

५३१ सूर्यप्रभागुटिका (प्रथमा)

चित्रकं त्रिफला निम्बं पटोलं मधुयष्टिका ।
वराङ्गं केशरञ्चैव यवानी चाम्लवेतसम् ॥ २२५४ ॥
भूनिम्बकञ्च दार्व्येला मुस्तापर्पटकन्तथा ।
तुत्थकं कटुका भार्ङ्गी चव्यपद्मकदीप्यकाः ॥ २२५५ ॥
पिप्पली मरिचं दन्ती शटी शुण्ठी च पुष्करम् ।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥ २२५६ ॥
पत्रकं कुटजं रास्ना दुरालम्भामृता त्रिवृत् ।
लतारुष्करतालीसं वृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥ २२५७ ॥
धान्यकञ्चाजमोदा च कारवी धातुमाक्षिकम् ।
जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा च दाडिमम् २२५८
कङ्कोलकमुशीरञ्च द्विक्षारं रेणुका तथा ।
प्रत्येकं पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ २२५९ ॥
गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैव गुग्गुलोः ।
प्रस्थमेकं सितायाश्च घृतस्य कुडवन्तथा ॥ २२६० ॥
गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थार्द्धं माक्षिकस्य च ।
सर्वमेकत्र सम्मिश्र्य स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥ २२६१
ऊरुस्तम्भं वातरोगं हन्त्यर्दितञ्च गृध्रसीम् ।
विद्रधीं श्लीपदं गुल्मं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ २२६२ ॥
कासं पञ्चविधं घोरं मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् ।
आनाहमश्मरीं वर्ध्मं ग्रहणीमपबाहुकम् ॥ २२६३ ॥
अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सभगन्दरम् ।
हृद्रोगं शूलमुत्कम्पविषमज्वरनाशनम् ॥ २२६४ ॥
उरःक्षतभये क्षीणे मुखरोगे च दारुणे ।
महौषधवरादस्माद्भाग्यं पाणितलोन्मितम् ॥ २२६५ ॥
विविधान्यानि भुञ्जीत यथेष्टञ्च यथासुखम् ।
गुटिका भास्करी नाम्ना सृष्टा देवेन शम्भुना २२६६
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च वातरक्तं सकामलम् ।
अग्निसन्दीपनं हृद्यं दीर्घायुःपुष्टिदा भवेत ॥ २२६७ ॥
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः ।
कफरोगाश्च ये केचिद्द्वन्द्वजाः सान्निपातिकाः ॥ २२६८
ते सर्वे प्रशमं यान्ति भास्करेण तमो यथा ।
रोगविद्राविणी कार्या गुटिका सूर्यवल्लभा ॥ २२६९ ॥

नि. र., र. सु., वै. चि, वाते ।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, नीमकीछाल, परवल, मुलहठी, तज, नागकेशर, अजवाइन, अम्लवेत, चिरायता, दारुहल्दी, इलायची, नागरमोथा, पितपापड़ा, शुद्धतूतिया, कुटकी, भारङ्गी, चव्य, पद्मकाठ, मयूरशिखा, पीपल, मरिच, दन्तीमूल, कचूर, सोंठ, पोहकरमूल, विडङ्ग, पिपलामूल, जीरा, देवदारु, पत्रज, कुरैयाकीछाल, रास्ना, जवासा, गिलोय, निसोत, मजीठ, भिलांवां, तालीसपत्र, कोकम, तीनोंनमक, धनियां, अजमोद, कारवी (महाराष्ट्रमेंप्रसिद्ध है), सोनामाखी, जायफल, वंसलोचन, असगन्ध, अनारदाना, शीतलचीनी, खस, दोनोंक्षार, रेणुका येसब १–१ पल, शिलाजीत ८ पल, शुद्धगूगल २ पल, मिश्री १ प्रस्थ, घी ४ पल, लोहभस्म और मधु ८–८ पल लेकर काष्ठौषधियोंका बारीकचूर्णकर शिलाजीत और गूगल को अच्छीतरह मिलाय शक्कर, घी और मधु मिलाकर चिकने बर्तनमें रखदे । इसमेंसे १–१ तोला समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ऊरुस्तम्भ, वातरोग, लकवा, गृध्रसी, विद्रधि, श्लीपद, गुल्म, पाण्डु, हलीमक, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर मूत्रकृच्छ्र, गलग्रह, आनाह, पथरी, अण्डवृद्धि, ग्रहणी, अपबाहुक, अरुचि, पसलीकादर्द, उदररोग, भगन्दर, हृद्रोग, शूल, उत्कटकम्प, विषमज्वर, उर क्षत, भयङ्कर मुखरोग, प्रमेह, रक्तपित्त, वातरक्त, कामला, मन्दाग्नि, हृदयकीकमज़ोरी, वातरोग, पित्तरोग, समस्त कफरोग, द्वन्द्वज और सान्निपातिक समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै आयु और पुष्टिको बढ़ातीहै ॥ ५३१ ॥

५३२ सूर्यप्रभागुटिका (द्वितीया)

भार्ङ्गी वह्निजयायुगाभ्रकदलीपाठावचारोचना-,
श्चव्यं पत्रकचित्रकं त्रिकटुकं क्षारद्वयं गन्धकम् ।
त्रायन्ती हरबीजकेशरविषच्छन्दं लवङ्गं कणा,
कुष्ठं शल्यफलं फलत्रययुतं फेनः समुद्रादपि ॥ २२७० ॥
ब्रह्मबीजं ज्योतिबीजं बालबिल्वं विरूढकम् ।
लवणानि तथा पञ्च जात्यादिकुसुमाष्टकम् ॥ २२७१ ॥
वातारितैलेनैतेषां कल्पिता भिषजांवरैः ।
एषा सूर्यप्रभा नाम गुटिकाऽग्निप्रदीपनी ॥ २२७२ ॥

र. र. स., र. को., र. मृ, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—भारङ्गी, सफेदचित्रकमूल, भाग, जैंनी, अभ्रकभस्म, केलाकन्द, पाठा, बच, गोरोचन, चव्य, पत्रज, लालचित्रक, त्रिकटु, दोनों क्षार, शुद्ध गन्धक, त्रायमाण, शुद्धपारा, केशर, स्याहगपेदवच्छनाग, लौंग, पीपल, कूठ, मैनफल, त्रिफला, समुद्रफेन, पलाश और मालकांगनीके बीज, पत्थरपरिगे हुआ भया हुआ बेल, पांचोंनमक, चमेली, मालती, जूही, सोनजूही, चम्पा, मौलश्री, कदम्ब, मोगरा इन आठोंकेफूल, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर चोपचीनीके तैलकी भावनासे

मिलाय एरण्डकेतैलमे घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह मन्दाग्निरो नष्टकरतीहै ॥ ५३२ ॥

५३३ सूर्यप्रभाताम्रेश्वरः (आदित्यप्रभापाकताम्रम्)

सूतं द्विगुणगन्धेन खल्वे कृत्वा प्रयत्नतः ।
सौवर्चलं रसार्द्धेन दत्त्वाऽऽप्लाव्यार्कपत्रकैः ॥२२७३॥
तोये धर्मा शियकर्णोत्थे लिप्त्वा धर्मेषु पत्रकम् ।
जम्बीरनीरे सुचिरं गलितं मर्दयेच्छुभम् ॥ २२७४ ॥
वृद्यार्द्रक्तिद्वयश्चास्य नागवल्लीदले युतम् ।
गुल्माम्लपित्तशूलामप्लीहपाण्डुज्वरापहम् ॥२२७५॥

र. क , र को , अम्लपित्ते ।

टि०—" पल नेपालशुल्वस्य पत्राणि सुतनूनि च ।
कृत्वा कण्टकवेधीनि कारयेत्तदनन्तरम् ॥
कर्षैकञ्च द्विकर्षञ्च क्रमात्सूतकगन्धयो ।
मर्दितव्य शिलाखल्वे रसै दन्तशठस्य वै ॥
कल्कञ्च पङ्कवत्कृत्वा तेन पत्राणि सर्वश ।
लेपयित्वा शिलाखल्वे स्थापयेदातप खरे ॥
यामैकञ्च समुद्धृत्य द्रवीभवति नान्यथा ।
वान्ति विरेचन कृत्वा शुद्धकाय यथाविधि ॥
पूजयित्वा सुरान्विप्रान्वैद्यान्देमाम्बरादिभि ।
त सूत मधुसर्पिर्भ्यां रत्तिकादिक्रमेण च ॥
लीढ्वा तक्र पिबेच्चानु धान्याम्लकमथापि वा ।
जीर्णे साय समश्नीयाच्छाल्यन्न तु पुरातनम् ॥
सेव्यमान निहन्त्येनदम्लपित्त सुदारुणम् ।
कास क्षय तथा शोषमर्शांसि ग्रहणीगदम् ॥
कामला पाण्डुरोगञ्च कुष्ठान्यष्टादशैव च ।
रक्तपित्त सखालित्य शूलश्चैवोदराणि च ॥
वातरोग प्रतिश्याय विद्रधीं विषमज्वरम् ।
सतताभ्यासयोगेन वलीपलितवर्जित ॥
ताम्रवत्कुरुते देह सर्वव्याधिविवर्जितम् ।
सूर्यप्रभानाम ताम्र सेवनाच्चाम्लपित्तजित् ॥
जीवेद्वर्षशत साग्र द्वितीय इव पावक ॥ "

इति पाठो रसेन्द्ररत्नकोशेऽस्ति, अत्र फलभागे विशेषता दृश्यते । र र स , र च , र क छ एषु पुस्तकेषु रसेन्द्ररत्नकोशे च द्वितीय स्थाने " पलोन्मितस्य शुल्वस्य सूक्ष्मपत्राणि कारयेत् । तत्सम गन्धक दत्त्वा खल्वे सर्वं विनिक्षिपेत् ॥ जम्बीररससयुक्त दिन घर्मे निधापयेत् । तत शुल्वे द्रवीभूते रसकर्ष नियोजयेत् ॥ तत्सिद्धमुदरे योज्य शोफे चैव भगन्दरे । नाम्ना हृदयमार्तण्डरस एष प्रकीर्तित ॥ " इति पाठो निहितोऽस्ति, विशेषाऽभावात्सोऽनायासेनैवाऽत्र समाविशति । र र , र च एतयोस्ताम्रयोगनाम्ना " रसगन्धकयो कर्ष प्रत्येक शोधयेद्भिषक । तत कज्जलिका कृत्वा नैपाल ताम्रपत्रकम् ॥ कण्टवेध्य विधातव्य सर्वमे कत्र कारयेत् । पात्रे हि मृत्तिकोद्भूते पर दद्याद्रस शुभम् ॥ पक्वजम्बीर सम्भूत यथाप्लावितमेव तत् । आतपे स्थापयेत्तच्च यावत्पङ्कोपम भवेत् ॥ पाणिना मर्दयित्वा तु वटिका कारयेत्तत । विशोष्य मात्रयेद्रक्तिद्वय तस्मान्महौषधात् ॥ दिनत्रयान्तरेणैव रक्तिं रक्तिं विवर्धयेत् । परिहारवि धिस्तेन धान्यजीरानुपानत ॥ प्रातस्तद्विधातव्य हन्ति पित्ताम्लसम्भवम् । ग्रहण्यामुद्धत शूलमम्लपित्तञ्च दारुणम् ॥ अजीर्ण रक्तपित्तञ्च क्षय कुष्ठ विशेषत ॥ " इति पाठो निहितोऽस्ति परन्तु तत्र निष्पादनप्रक्रियाया त्रुटि प्रतिभाति, अतस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव करणीय । र. का , र चि एतयो स्वयमग्निनाम्ना " विचूर्ण्य गन्धादमपल विशुद्ध रसद्विक पैण सम च खल्वे । रसार्द्धमौवर्चलचूर्णयुक्त तत्खल्वित खल्वशिला सुयत्नात् ॥ खर्जूर्वर्तक कर्णमोरटरसैराप्लाव्य तत्कज्जलीं, नेपालोद्भवताम्रक पलमित तत्कण्टवेधाचितम् । तेनालेप्य च कज्जलेन सुचिर जम्बीरनीर-स्थित, खल्वाश्मार्पितमेतदातपधृत पिण्डीकृत घट्टनै ॥ सम्पिष्याशु शुभ सुपर्णनिहित रत्तीत्रय योजयेत्, तत्कालोचितवक्त्रशुद्धिरचिना चूर्णं विना प्रत्यहम् । हन्त्येतदमनाम्लपित्तनगदान्पाण्डुग्निमान्द्यज्वरान्, रत्ती वर्धितमाप एष नियतो लोहोक्तसर्वो विधि ॥ " इति पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति विशेषविशेषाऽभावात् ।

भाषा—शुद्धपारेकी द्विगुणगन्धकसेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर पारेसे आधासञ्चल मिलाय आक अथवा हस्तिकर्ण पलाश अथवा मूषाकर्णी या इन्द्रायणके पत्तोंकेरससे कल्कबनाय पारेसे चतुर्गुणित कण्टकवेधी तांबेके पत्रोंपर कल्कका लेप देकर पत्थर की खरलमें रख एकदम तीक्ष्णधूपमें रक्खे । अत्यन्तगरम-होनेपर दोपहरबाद पत्रोंकी भस्म होजायगी । पूर्वरस सूखनेपर जंभीरीकारस डालकर कड़ीधूपमें बैठकर घोटे । जब इसकी द्रुति होजाय तब शीशीमें भरकर रखछोडे । शुभतिथि, नक्षत्र, वार-शुभमुहूर्तमें वमन विरेचनादिकसे शुद्धकियेहुए रोगीको दोरत्तीकी मात्रा पानमें डालकर खिलानेसे गुल्म, अम्लपित्त, शूल, आम, प्लीहा, पाण्डु, ज्वर येसब नष्टहोतेहैं । रसेन्द्ररत्नकोशमें १ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा मधु और घीकेसाथदेकर छाछ अथवा धान्याम्ल पिलाना । जीर्णहोनेपर पुरानेचावल सायङ्कालको देनालिखाहै और भयङ्कर अम्लपित्त, कास, क्षय, शोष, बवा सीर, ग्रहणी, कामला, पाण्डु, १८ कुष्ठ, रक्तपित्त खालित्य, शूल, उदररोग, वातरोग, प्रतिश्याय, विद्रधि, विषमज्वर इत्या-दिकोंको नष्टकरताहै तथा हमेशाकेसेवनसे वलीपलितादिकसे निवृत्त करके शरीरको ताम्रकीतरह दृढबनाताहै और १०० वर्षसे ऊपरकी आयुको देताहै । यहफलभागमें लिखाहै ॥५३३॥

५३४ सूर्यप्रभरसः

विष्णुक्रान्ता तण्डुली देवदाली
नीली ब्राह्मी सर्पनेत्री पलाशी ।
आसां द्रावं कुम्भजातप्रभूतं
नीत्वा विद्वान्द्वित्रिवारं यथास्तम् ॥ २२७६ ॥
तस्मिन्सूतं मर्दयेद्वा दिनैकं
गन्धं सूताद्युग्मभागं सहैव ।
एकीभूतं लोहपात्रे क्षणं त-
त्पाच्यं तावद्विद्रुतं यावदेव ॥ २२७७ ॥
शुल्वं पादं चाभ्रकं चापि सूता-
च्चन्द्र दत्त्वा तावदेवावतार्य ।
निष्कं भुक्तं चास्य पूर्वानुपानैः
कुष्ठं हन्यात्सूर्यपूर्व. प्रभोऽयम् ॥ २२७८ ॥

चि क , र.सु , र.को , र का , वै. चि , व. रा., कुष्ठे । वै. चि., व रा एतयो सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम ।

टि०—" विष्णुक्रान्तैकमूलाञ्जननिरसा क्षीरिणी देवदाली, सर्पाक्षी जीवनीया मुनिवरकुसुम मक्षवृक्षस्य सार । गोकर्णी शङ्खपुष्पी धनरवमुरसे नीलिनी भीमसेन, माली वीरा मदन्ती मधुमदनशिवा- वाकुचीचक्रमर्दा ॥ पृथरसैर्यौषधै सर्वैर्यथालाभ भिषग्वर । रसप्रमर्दयेद्गाढ रसैरेषा निरन्तरम् ॥ पश्चात्मन्यक्शिशुष्कन्तु द्विगुण गन्धक क्षिपेत्। प्रद्राव्य चायसे पात्रे विधु तुर्यांशक क्षिपेत् ॥ पर्पटीरमवत्पङ्क खाङ्गशीत- ल्ना गत । मवेत्सूर्यप्रभो नाम पुण्डरीकहर पर ॥ „ इति पाठो रमा- वनारे रसेन्द्रमङ्गले च सूर्यप्रभनाम्ना ताम्रप्रकरहिन स्थापित परन्तु तयोर्गिनाऽत्यधिकशक्तिमत्त्वात्पूर्वरिमेव पाठेऽस्याऽप्यन्तर्भाव उचित । एतन्निर्दिष्टाऽधिकभावनानामप्याधिक्येनाऽनुष्ठाने क्षत्यभाव इति विद्- द्भिर्विभावनीयम्।

भाषा—कोयल, कांटेवालीचौलाई, बन्दाल, नील, भार्ङ्गी, अन्धाहूली, कपूरकाचरी, अगस्त्य इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२ अथवा ३–३ दिन मर्दनकर दूनागन्धकदेकर १–१ दिन पूर्वद्रवोंसे मर्दनकर सुखाकर कज्जलीबनावे। फिर घीपुतीहुई लोहेकी कड़ाहीमें डालकर बेरकेकोयलोंपर पिघलाकर पारेसेचतुर्थांश ताम्र और अभ्रकभस्म तथा शुद्धकपूर मिलाकर नीचे उतारकर घोटे। बारीकचूर्णहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशे कुष्माण्डपानीकेसाथदेनेसे यह समस्त कुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ ५३४ ॥

५३५ सूर्यरसः (प्रथमः)

एकं भागं वत्सनाभञ्च कुर्या-
न्नागद्वन्द्वं टङ्कणं दन्तिर्वीजात्।
श्रीनप्येतद्धिङ्गुलस्याऽपि तुर्यः
सद्यो ज्वरं नाशयत्येष सूर्यः ॥ २२७९ ॥

र. चं., र. प्र. सु., ज्वरे।

भाषा—शुद्ध बछनाग १ भाग, सुनागुहागा २ भा, शुद्ध जमालगोटा ३ भा शुद्ध हिंगरिफ चतुर्थांशमिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ- देनेसे यह नवज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ५३५ ॥

५३६ सूर्यरसः (द्वितीयः)

रसमेकं द्विधा गन्धं त्रिस्ताप्यं पञ्च तालकात्।
सर्वं शुद्धं विचूर्ण्याथ चतुर्भागं मृताभ्रकम् ॥ २२८० ॥
वचा कुष्ठहरिद्राग्नि टङ्कणं सैन्धवं विषम्।
सपाठा लाङ्गली व्योषं प्रत्येकमेकभागकम् ॥ २२८१ ॥
भावितं भृङ्गिसारेण दिनैकं तस्य भक्षयेत्।
माषं सूर्यरसो नाम हिक्का वैस्वर्यकासजित् ॥ २२८२ ॥
पिप्पल्या सह निर्गुण्ड्याः क्वाथं चानुप्रपाययेत्।
अष्टगुञ्जामिता भक्ष्या विख्याता रसपर्पटी ॥ २२८३ ॥
त्रिकण्टमूलं शुण्ठी च अजाक्षीरं समोदकम्।
क्षीरावशिष्टं तं क्वाथं सकणं पाययेन्निशि ॥ २२८४ ॥

नि. र., र. सु., व रा., र को., र का., वै. चि., र क स कासे

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा, सोनामाखी ३ भा, रसमाणिक्य ५ भा., अभ्रकभस्म ४ भा, बच, कुठ, हल्दी, चित्रक, सुनागुहागा, सैन्धव, शुद्धबछनाग, पाठा, करिहारी और त्रिकटु १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण- कज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक पीपल और संभालुके क्वाथकेसाथ देनेसे हिचकी, स्वरभङ्ग और कासको यह दूरकरताहै। इसके अभावमें ८ रत्ती रसपर्पटी देवे और रातको गोखरूकीजड़ और सोंठका प्रक्षेपदेकर बकरीकादूध और पानी समभाग पकाकर दूधमात्र अवशेष रहनेपर पीपल डालकर पिलावे ॥ ५३६ ॥

५३७ सूर्यरसः (तृतीयः)

रसगन्धकताम्राभ्रं कणाशुण्ठ्यूषणं विषा।
सूतमेकं विषश्चैकं सूर्यः कासादिनाशनः ॥ २२८५ ॥

र. र., स., कासे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म ५–५ भाग, पीपल, सोंठ, मरिच, अतीस और शुद्धबछनाग १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकेसाथ १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचिता नुपानकेसाथ देनेसे यह कासको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ सूर्यवटी

पिप्पली पिप्पलीमूलं विषं हिङ्गुलटङ्कणम्।
समभागानि चैतानि चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ २२८६ ॥
जैपालं पादभागञ्च शुद्धं कृत्वा विनिक्षिपेत्।
सर्वचूर्णसमो देयः सूर्यक्षारः सुभर्जितः ॥ २२८७ ॥
पुटपाकीकृतं वज्रीस्वरसेन विमर्दयेत्।
भावनात्रितयं दत्त्वा मुद्गमानां प्रकल्पयेत् ॥ २२८८ ॥
नागवल्लीदलैः सार्धं द्विकालं भक्षयेत्सुधीः।
अजीर्णज्वरकासघ्नं हिक्काश्वासोदरापहम् ॥ २२८९ ॥
गुल्मप्लीहाम्लपित्तघ्नं नलवातविनाशनम्।
शूलाध्मानहरं सद्यो मूत्रकृच्छ्रामयापहम् ॥ २२९० ॥
वातानुलोमनञ्चैव भेदि दीपनपाचनम्।
तत्तद्रोगानुपानेन योजयेद्बुद्धिमान्भिषक् ॥
सूर्याह्वा वटिका ह्येषा निर्मिता ब्रह्मणा पुरा ॥ २२९१ ॥

रसायनसं., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पीपल, पिपलामूल, शुद्ध बछनाग, हिंगरिफ और सुहागा समभाग, शुद्धजमालगोटा सबसे चतुर्थांश, हल्दीवगैरहमें भस्मस्थायी कियाहुआ कलमीशोरा सबकीबराबर लेकर पुट- पाकमें निकालेहुए थूहरकेरससे ३ भावनाएं देकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेरस अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ सुबहशामदेनेसे अजीर्ण, ज्वर, कास, हिक्का, श्वास, उदररोग, गुल्म, प्लीहा, अम्लपित्त, नलवात, शूल, आध्मान, मूत्रकृच्छ्र, वातोदावर्त, मलविबन्ध इनसबको यह नष्टकरताहै और दीपन तथा पाचनहै ॥ ५३८ ॥

५३९ सूर्यवातरसः

तुल्योपणैरसामोदताम्राभ्रैः क्रमशो धृतैः ।
सविषांशैः कृतः कल्कस्त्रिगुञ्जः सूर्यवातनुत् ॥२२९२॥

र. (मा), सूर्यवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, ताम्रभस्म ३ भा, अभ्रकभस्म ४ भा, शुद्धबछनाग ५ भा., मरिच १५ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे २-२ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सूर्यवात(अर्धावभेद व सूर्यावर्त) को नष्टकरताहै ५३९

५४० सूर्यशेखररसः (विषसिन्दूरम्)

रसो द्वादशभागाणो गन्धकस्याऽत्र षोडश ।
हिङ्गुलस्य च चत्वारो पृक्त्वा कूप्यां विनिक्षिपेत् २२९३
द्वात्रिंशदमृतं दद्यात्तस्मिन् मृते विशोधिते ।
मृदा प्रलिप्य तां कूपीं शोषयित्वा खरातपे ॥२२९४॥
धृत्वाऽथ वालुकायन्त्रे वह्निं षट्प्रहरावधिम् ।
दत्त्वोत्तार्य स्वयं शीतं सूतं माणिक्यसन्निभम् २२९५
सन्निपाते च दातव्यस्त्रिदोषोत्थे च सूतकः ।
एषैव गुटिका मात्रा चोत्तमा सन्निपातके ॥ २२९६ ॥
रोगोद्रेकं समीक्ष्याऽथ वयेऽपेक्षा विचक्षणः ।
यदि दाहो भवेदेनं स्नापयेद्वोचितञ्चरेत् ॥
भोजनं चोचितं कुर्यान्मधुरप्रायमेव च ॥ २२९७ ॥

रसचि, र. च., रसायनस, र. का., वाताधिकारे ।

टि०—यद्यपि क्वचिद्विषस्थाने केवल मल्ल दृश्यते तत्र मल्ल निक्षिप्तत्वात् विषसिन्दूरम् किन्तु मल्लसिन्दूर सूर्यशेखरो वा इत्यादि यथेष्ट नाम स्थापनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १२ भाग, गन्धक १६ भा, शुद्धशिंगरिफ ४ भा., शुद्धवछनाग ३२ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी शीशीमेंभर वालुकायन्त्रमें रख ६ पहरकी क्रमवृद्ध अग्नि देकर पकावे। आगबन्दकरतेसमय शीशीकामुहबन्दकरदेवे। स्वाङ्गशीतल्होनेपर माणिक्यके सदृश यह सिन्दूर निकलेगा इसे शीशीमें रखलेवे। इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितअनुपानकेसाथ देनेसे घोरसन्निपातको यह नष्टकरताहै। रोग और रोगीका बलाबल देखकर मात्राको न्यून या अधिक करदेवे। इसकेदेनेमें दाहमालूम हो तो ठंढेजलसे स्नान करावे। अत्यन्त भूखलगनेपर मधुरप्राय भोजन देवे ॥ ५४० ॥

५४१ सूर्यसिद्धरसः

गुडूची भृङ्गराजश्च कुमारी कण्टकारिका ।
त्रिफला काकमाची च कदली वाजिगन्धिका २२९८
वर्गस्यास्य रसैश्चापि वर्षाभूमुशलीद्रवैः ।
प्रत्येकं मर्दयेदेतैः पारदं प्रतिवासरम् ॥ २२९९ ॥
प्रस्थमात्रप्रमाणेन गाढं गाढं निरन्तरम् ।
अनन्तरं सैन्धवेन प्रस्थद्वयमितेन च ॥ २३०० ॥
प्रत्येकं गैरिकं प्रस्थं खटिकां पिष्टपिणीम् ।
कन्यकारससंयुक्तं रसं तत्र विमर्दयेत् ॥ २३०१ ॥
दिनत्रयमतिश्लक्ष्णं नष्टपिष्टश्च खल्वके ।
तापिकायन्त्रमारोप्य मुद्रयेच्च मुखं ततः ॥ २३०२ ॥
त्रयोदशदिनं यावद्वह्निं कुर्यान्निरन्तरम् ।
यत्नादादाय सूतेन्द्रं कर्तव्यं तस्य पूजनम् ॥ २३०३ ॥
गुरूणां महतां पश्चाद्योगिनां क्रोधवर्जितः ।
मद्यमांसमुत्सृज्य मानश्चाहङ्कृतिन्तथा ॥ २३०४ ॥
ब्रह्मचर्यश्च कर्तव्यमम्लं द्रव्यं विवर्जयेत् ।
दानं शक्त्या प्रकर्तव्यं येयतोपणमेव च ॥ २३०५ ॥
अर्द्धगुञ्जं रसं दद्यात्सततं क्रमवर्धितम् ।
रक्तिकानवपर्यन्तं दद्याद्वैद्यो विचक्षणः ॥ २३०६ ॥
भक्तदुग्धञ्च भुञ्जीत मुद्गदुग्धकृतं घृतम् ।
शर्करामिश्रखण्डानि पथ्यार्थं तत्र योजयेत् ॥२३०७॥
एकविंशदिनस्यान्ते नखाश्च निपतन्ति च ।
चत्वारिंशद्दिनेऽतीते तत्केशाः प्रक्षरन्ति च ॥ २३०८ ॥
एवं षष्टिदिने प्राप्ते मला नाशं प्रजन्ति च ।
अशीतिदिवसस्यान्ते तस्य दन्ताः पतन्ति वै २३०९
एवं स्वयं प्राप्यमानं रसायनरसेश्वरम् ।
मासत्रये समायाते नूताः केशा न संशयः ॥ २३१० ॥
दृढा दन्ताश्च जायन्ते नवीनाश्च पुनर्नवाः ।
पुनर्नवपुर्भूत्वा क्षितीशो मीनकेतनः ॥ २३११ ॥
सिद्धमण्डलसिद्धाङ्गो ब्रह्मायुः कालपारगः ।
दृढाङ्गो बलवान्सौम्यो हरिवेगो दृढेन्द्रियः ॥ २३१२ ॥
निरामयो महोत्साहो महाशी च मनोहरः ।
वनितानां शतं गच्छेत्पुत्राणां शतमाप्नुयात् ॥ २३१३ ॥
कालभ्रमरसङ्काशाः केशाः स्युः गुच्छरूपिणः ।
विशालबाहुशोभी स्याद् दृढोरःस्थलशोभनः २३१४
कपाटप्रतिमं प्रौढं हृदयं स्त्रीमनोहरम् ।
अत्युग्रतत्पुरुषर्षिविशालनयनाम्बुजः ॥ २३१५ ॥
निर्गुण्डिकापत्ररसं त्रिकालं चानुपाययेत् ।
औषधस्य क्षणं स्थित्वा काले ताम्बूलचर्वणम् २३१६
कर्पूरकुसुमामोदे निर्मले विनिवेशयेत् ।
अनल्पे सुखदे तल्पे निर्मलास्तरणे युते ॥ २३१७ ॥
गीतसङ्गीतशास्त्रीयं रामायणपरायणः ।
अपथ्यं न च कर्तव्यं पथ्ये स्थेयं सदा बुधैः ॥
अनिष्टां देहिनां शास्त्रे दौर्मनस्यं सुकर्मणि ॥ २३१८ ॥

रसचि, रसायने ।

भाषा—गिलोय, भंगरा, घीकुवार, भटकटैया, त्रिफला, मकोय, कदलीकन्द, असगन्ध, इटसिट, मुशली इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १ प्रस्थ पारेको तप्तखल्वमें जोरसे मर्दनकरे। फिर दो प्रस्थ सैन्धवसे मर्दनकर पारेको स्वच्छबनाकर गेरू और खड़ियामिट्टी १-१ प्रस्थ मिलाय क्रमसे घीकुंवारकेरससे ३-३ दिन मर्दनकरे। नष्टपिष्टी होनेपर बहुतमजबूत मिट्टीकेबर्तनमें बन्दकर

समस्तपर ७-८ वस्त्रकपड़मिट्टी चढ़ाय अच्छीतरह सुखनेपर चूल्हेपर रख १३ दिनकी निरन्तरआंचदे १४ वें दिन अग्निदेना बन्दकरदे औरकोयलोंपर रहनेदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरकेभागमें आयेहुए पारेको निकालकर रखछोड़े। मोघ, मद, मात्सर्य, मान, अहङ्कार इनसबको छोड़कर ब्रह्मचर्यव्रत लेकर गुरु, वृद्ध और योगीका पूजनकर अम्लवर्गका परित्यागकरता हुआ यथाशक्ति दानकरे और वैद्यको सन्तुष्टकर आधीरत्तीसे रसकासेवन प्रारम्भकरे। प्रतिदिन आधीआधीरत्ती बढ़ाकर ९ रत्तीपर मात्रा कायमकरे। भूखलगनेपर दूध, भात, मुद्गयूष, घी, शक्कर और ईखका उचितप्रमाणमें सेवनकरे। २१ वें दिन नख, ४० वें दिन केश गिरने लगेंगे। ६० दिनकेबाद मल नष्टहोंगे। ८० दिनबाद दांत गिरेंगे। ३ महीने पूरे होनेपर केश और मज़बूतदांतोंका प्रादुर्भाव होगा। फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोकर कन्दर्पसदृश होजायगा। अकस्मात् दिव्यविद्याओंकी प्राप्ति होगी और दीर्घायु होगा। इसप्रकार रससेवनकरनेवालेके समस्त अङ्ग मज़बूत, शोभा और बलयुक्त होजातेहैं तथा इन्द्रियोंकीशक्ति बढ़जातीहै। तमामरोगोंसे निर्मुक्तहोताहै। भूख एकदम बढ़जातीहै। बहुतसी स्त्रियोंकी सम्भोगशक्ति बढ़कर दिव्यपुत्रोंको उत्पन्नकरनेकी शक्तिबढ़तीहै। केशभौंरेकेसदृश काले और शुक्लेदारहोजातेहैं। विशालबाहु, उरोरस्क और कपाटसदृश मज़बूत हृदयवाला होजाताहै। शरीरका कद बढ़जाताहै और कमलसदृश विशालनेत्रहोजातेहैं। इसमें तीनोंसमय औषधभक्षणके थोड़ीदेरबाद निर्गुण्डीकारसपिलावे। कपूर और सुगन्धयुक्त पान देवे। विशाल और निर्मलवस्त्रबिछीहुई सुखकारक शय्यापर शयनकरावे। शास्त्रीयगीत और सङ्गीत सुनावे। रामायणकापाठकरे। इसकेसेवनमें अपथ्य भूलकरभी न करे। शास्त्रमें मनुष्योंके अविश्वास और सुकर्ममें उदासीनताको देखकर विश्वासदिलानेकेलिये यह योग कहागयाहै ॥ ५४१ ॥

५४२ सूर्यावर्तरसः (प्रथमः)

तप्तपिष्टद्विगन्धेन लेपयेद्रवियपत्रकम्।
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा शुष्कं चुल्ल्यामधिश्रयेत् ॥२३१९॥
अग्निः शनैः शनैर्देयस्ततो यामचतुष्टयम्।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य वमनेषु प्रयोजयेत् ॥ २३२० ॥
कासे क्षये तथा श्वासे कण्ठरोगे च हृद्ग्रहे।
मन्देऽग्नौ कफसम्भूते घर्मतोष्णाम्बुपानतः ॥ २३२१ ॥

रसायनसं., श्वासे।

टि०—केवलगन्धेन मारितताम्रविनाण्डेनान्तर्भाविनि.।

भाषा—दोभाग शुद्धगन्धकको तक्रमें पीसकर एकभाग बारीक तांबेके पत्रोंपर लेपदेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर चूल्हेपर रख क्रमवृद्ध ४ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेकी मात्रा वमनकारकयोगोंकेसाथ देकर गरम पानीपिलानेसे वमनहोगी उसमे कास, क्षय, श्वास, कण्ठरोग, हृद्ग्रह, कफसेउत्पन्न मन्दाग्नि येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५४२ ॥

५४३ सूर्यावर्तरसः (द्वितीयः)

मृताभ्रं माक्षिकञ्चैव हेमकार्पासबीजकम्।
टङ्कणं मौक्तिकञ्चाथ गुडूचीसत्त्वमेव च ॥ २३२२ ॥
काकविम्ब्युत्थबीजानां चूर्णं गीर्वाणपुष्पकम्।
सर्वैः समं हिङ्गुलञ्च जम्बीररसमर्दितम् ॥ २३२३ ॥
द्राक्षया हिक्किकां हन्ति ग्रहणीगदनाशनः।
सूर्यावर्तरसोनाम देववैद्यविनिर्मितः ॥ २३२४ ॥

वै. चि. (ल), हिकायां ग्रहण्यां च।

भाषा—अभ्रक और सोनामाखीभस्म, शुद्धधतूरे और कपासकेबीज, भुनासुहागा, मुक्तापिष्टी, गिलोयसत्त्व, कौआठोंठीकेबीज, लवङ्ग १-१ भाग, शुद्धसिंगरिफ सबकीबराबर लेकर बारीक चूर्णकर जंभीरीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक तुलसीवगैरह उचितानुपानकेसाथ देनेसे हिचकी, ग्रहणी और सूर्यावर्तको यह नष्टकरताहै ॥ ५४३ ॥

५४४ सूर्योदयरसः

सूतश्मागुणलोहताम्रनलिका माक्षीकतालामृतं,
वेल्लारामठदीप्यकिंशुकफलं कम्पिल्लकं कुष्ठकम्।
तुल्यांशैः परिमर्दितं दिनमथो कन्यावराग्निद्विजा-
भृङ्गाद्भिः सुरपर्णिकारदशाखाद्भिः समङ्गाम्बुभिः॥
सिद्धो वल्लमितो जयेत्कृमिरुजं निम्बाम्बुदीप्यान्वितं,
वेल्लारामठयुक्तथा कृमिहरः क्षौद्रान्वितो वाऽग्नियुक्।
ग्रन्थ्युग्रातिविषाऽऽखुपत्ररसयुग्वाहीकशिग्र्वम्बुयुक्,
शूलाध्मानविबन्धगुल्मजठरान्सूर्योदयोऽसौ रसः॥

र., कृम्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, कङ्कुष्ठ, सोनामाखी, हरिताल इनकीभस्में, शुद्धवत्सनाग, विडङ्ग, हींग, अजवाइन, पलाशपापड़ा, कमीला, कुठ सब समभागका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय घीकुंवार, त्रिफला, चित्रक, ब्रह्मदण्डी, भंगरा, शताव, खैर, भाग, मजीठ इनकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली नीम, सुगन्धवाला और अजवाइन (१) विडङ्ग और भुनीहींग (२) चित्रक और मधुयुक्त विडङ्ग, (३) गठिवन, वच, अतीस और मूषाकर्णीकेपत्तोंकारस (४) हींग और सहिजनकारस (५) इनमेंसे किसी एक अनुपानकेसाथ औचिती देखकर देनेसे क्रिमिरोग, शूल, आध्मान, विबन्ध, गुल्म और उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५४४॥

५४५ सेतुबन्धरसः

रसदरदसुताम्रं फेनगन्धेन तुल्यं,
मुनिदिनमितघृष्टं चिञ्चतोयेन वल्लम्।
ज्वरजनितविदाहे दापयेदार्द्रकेण,
श्रृतजलहिमपानं तक्रपूरेण पथ्यम् ॥ २३२७ ॥

हन्याज्ज्वरातिसारञ्च सर्वरूपं सुदारुणम् ।
बाले वृद्धे च तरुणे सेतुबन्धो महारसः ॥ २३२८ ॥

र. बो., ज्वरातिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, अफीम और गन्धक, ताम्रभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरसमें ७ दिनतकमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे भयङ्करज्वरातिसार और दाहको यह नष्टकरताहै । इसमें गरमकियाहुआजल ठंढाकरकेदेना । छाछ और मूंगके यूषकेसाथ पथ्यदेना ॥ ५४५ ॥

५४६ सेतुबन्धवटी

म्लेच्छोपणाहिफेनं शाल्कं खदिरसंयुक्तम् ।
कर्ष कर्ष चूर्ण कृत्वा विमिश्रयेत्सर्वम् ॥ २३२९ ॥
कर्षं दग्धकपर्दकचूर्णं दत्त्वा विभाव्यञ्च ।
कञ्चटदाडिमजम्बूश्रृङ्गाटपत्रजरसेन प्रत्येकम्॥२३३०॥
पञ्चवारं विभाव्याऽथ कारयेद्वटिकां शुभाम् ।
गुञ्जामात्रामतीसारे सेतुबन्धं प्रयोजयेत् ॥
नानावर्णमसाध्यञ्च शूलं पित्तं निवर्तयेत् ॥ २३३१ ॥

ना. वि., सन्निपातातिसारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, मरिच, अफीम, कमलकन्द, खैरसार और पीलीकौड़ीकीभस्म १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर मरसा अथवा जलपीपल, अनार, जामुन और सिंघाड़ेके पत्तोंकेस्वरससे ५–५ बार भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मरसावगैरहके रसकेसाथ अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे नानातरहका अतिसार, असाध्यशूल और पित्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४६ ॥

५४७ सेवन्तीपाकः

सेवन्तीसुमसाहस्रं घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।
घृते पक्वीकृते तत्र निक्षिपेदौषधं भिषक् ॥ २३३२ ॥
सितोपलाचतुष्कञ्च चातुर्जातं पलं पलम् ।
मृद्वीकां षट्पलाञ्चैव क्षिप्त्वा मधु पलाष्टकम् ॥२३३३॥
धारासत्त्वं त्वक्षीरं श्वेतं जीरं पृथक् पृथक् ।
नागं वङ्गं पलार्द्धञ्च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २३३४ ॥
कर्पूरं वल्लमात्रञ्च दत्त्वा स्थाप्यं सुकुम्भके ।
भक्षयेत्कर्षमात्रन्तु प्रातरेव हि पथ्यभुक् ॥ २३३५ ॥
जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमान्द्ये प्रमेहके ।
दिनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते ॥ २३३६ ॥
प्रदरं रक्तजात्रोगान् कुष्ठार्शांसि च नाशयेत् ।
नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथा सर्वान्मुखेस्थितान् ॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो मण्डलस्य च सेवनात् ॥ २३३७ ॥

नि. र., क्षये ।

भाषा—पीले अथवा लालगुलाबके १००० पुष्पोंको १ प्रस्थ गोघृतमें भूनकर ४ प्रस्थ शक्करकी ३ तारी चाशनी बनाकर चातुर्जात १–१ पल, बीजरहितकालीदाख ६ पल, मधु ८ पल, गिलोयसत्त्व, तीखुर अथवा वंशलोचन, सफेदजीरा, नाग और वङ्गभस्म २–२ कर्ष, शुद्धकपूर ३ रत्ती डालकर चिकनेवर्तन अथवा काचकेपात्रमें रखछोड़े । ७ दिन बीतनेपर इसमेंसे १–१ कर्ष प्रातःकाल सेवनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षय, कास, मन्दाग्नि, प्रमेह, दिन और रात्रिकाज्वर, शिरोरोग, प्रदर, रक्तजरोग, कुष्ठ, अर्श, दुष्टनेत्ररोग, समस्तमुखरोग इनसबको १ मण्डल (४९दिन) में यह नष्टकरताहै ॥ ५४७ ॥

५४८ सोमनाथिताम्रम् (प्रथमम्)

शुल्वं सूतसमं द्वयोरपि समो गन्धस्तदर्धः पुन-,
स्तालश्चार्द्धशिलायुतो विरचयेत्पिष्टं ततः कज्जलीम् ।
लिप्त्वा ताम्रदलानि मार्तिकदृढे पात्रे निधायाऽथ त-,
त्पाच्यं सैकतयन्त्रकेऽर्द्धदिवसं शीतं स्वतो निर्हरेत् ॥
तत्कासश्वसनाग्निमान्द्यगुदजानेकार्तिपाण्ड्वामय-,
प्लीहोरः क्षतिरोधकोष्ठमरुतो रक्तं जयेद्योजितम् ।
वल्लद्वन्द्वमितं कणामधुयुतं क्षारार्द्रवारापि या,
युक्तं सर्वकफामयघ्नमचिरात्सत्सोमनाथाभिधम् ॥

वै. र, नि. र., र. सु, र. चू, चि. र. भ., यो. त., टो., र. क. यो., र. र. स., र. पा., बा., यो. च., शूले, श्वासे कासे च ।

टि०—रसेन्द्रचूडामणौ कज्जलीं ताम्रपत्राणि पर्यायेण विनिक्षिपेदिति विशेष, कज्जल्या ताम्रदललेपने अधरोत्तरनिक्षेपे च फलभागे प्रायश समानतैवास्ति अतस्तत्र स्वेच्छाचारस्यैव प्राधान्यम् ।

भाषा—शुद्धताँबेके बारीकपत्र और शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, हरिताल १ भा और मैनसिल आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जमीरीवगैरहके रससे मर्दनकर ताम्रपत्रोंपर लेपदेकर मिट्टीकेपात्रमें नीचे ऊपर रख दूसरे पात्रसे ढककर कपड़मिट्टीकर वालुकायन्त्रमें दोपहरकी कड़ी आंचसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्ती पीपल और मधु अथवा यवक्षार और अदरखके रसकेसाथदेनेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, अर्श, नानातरहकेपाण्डु, प्लीहा, उर क्षत, मलमूत्रविबन्ध, उदररोग, वातरक्त और कफ रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४८ ॥

५४९ सोमनाथिताम्रम् (द्वितीयम्)

बलिना पलमात्रेण तद्द्व्यरजसा मितैः ।
विषतिन्दुकसाम्येन वत्सनाभपदृक्तमैः ॥ २३४० ॥
कलिकारिशिलाव्योषतालपूगकरञ्जकैः ।
कृत्वा चूर्णं हि जम्बीरद्रवेण विद्रवीकृतम् ॥ २३४१ ॥
तत्सर्वं खल्वके भाण्डे विनिःक्षिप्य ततःपरम् ।
कृतकण्टकवेध्यानि पलताम्रदलान्यथ ॥
लिप्तपादांशसूतानि तस्मिन्कल्के निगूहयेत् ॥२३४२॥
पतत्सिद्धमुखागतं विनिहतं श्रीसोमदेवोदितं,
गुञ्जायुग्ममितं कणाज्यसहितं सत्पथ्यसंसेवितम् ।
गुल्मप्लीहशकृद्विबन्धजठरं शूलाग्निमान्द्यामयं,
वातश्लेष्मसशोथपाण्डुतिचयं ज्वर्यादिकं नाशयेत् ।

पथ्यं रोगोचितं देयं रसाघातं विवर्जयेत्।
एतत्सात्म्यीकृतं येन तस्य मृत्युर्न विद्यते ॥ २३४४ ॥
र. चू., शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्ध गन्धक और कुचिला १–१ पल, बछनाग, सेंधानमक, कलिहारी, मैनसिल, निकुट, हरिताल, सुपारी, और करंज २–२ पल लेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे पीसकर कल्कबनावे। फिर विशेषशुद्धताम्रके कण्टकवेधी पत्र १ पल और शुद्धपारा १ कर्ष खरलमें डालकर घोटे। समस्तपारा पत्रोंपर चढ़ जानेपर पूर्वकल्कके भीतर पत्रोंको तह लगाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपडमिट्टीकर लवणयन्त्रमें ४ दिनकी कड़ी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती पीपल और घीकेसाथ सेवनकरनेसे गुल्म, प्लीहा, मलविवन्ध, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि, वातश्लेष्मरोग, शोष, पाण्डु, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य तत्तद्रोगोचित देवे और रसको मारनेवाली चीजोंका परित्यागकरे। इसको हमेशा सेवनकरनेवालेका दीर्घायु होताहै ॥ ५४९ ॥

५५० सोमनाथरसः (प्रथमः)

कर्षं जारितलौहस्य तदर्द्धं रसगन्धकम्।
एलापत्रं निशायुग्मं जम्बूवीरणगोक्षुरम् ॥ २३४५ ॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्रीदाडिमटङ्कणम्।
चन्दनं गुग्गुलुं लोध्रं शालार्जुनरसाञ्जनम् ॥ २३४६ ॥
छागीदुग्धेन वटिकां कारयेद्दशरक्तिकाम्।
निर्मितो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥ २३४७ ॥
सोमरोगं बहुविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम्।
योनिशूलं मेढ्रशूलं सर्वजं चिरकालजम्।
बहुमूत्रं विशेषेण दुर्जयंहन्त्यसंशयम् ॥ २३४८ ॥
र. स., र सु, र. चं, र. चि, सोमरोगे।

भाषा—लोहभस्म १ कर्ष, शुद्ध पारा और गन्धक, इलायची, पत्रज, हल्दी, दारुहल्दी, जामुन, खस, गोखरू, विडङ्ग, जीरा, पाठा, आमले, अनारदाना, सुहागा, सफेदचन्दन, शुद्धगूगल, लोध, सखुआ, अर्जुनकीछाल और रसौत ८–८ माशे लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बकरीकेदूधसे १–२ दिन घोटकर १०–१० रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दुःसह सोमरोग, प्रदर, योनि और मेढ्शूल, त्रिदोषज और पुरानाशूल, दुर्जयबहुमूत्र, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

५५१ सोमनाथरसः (द्वितीयः)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं पालिधारसमर्दितम्।
रण्डाशोधितगन्धञ्च तेनैव कज्जलीकृतम् ॥ २३४९ ॥
तस्यार्द्धद्विगुणं लौहं कन्यारसविमर्दितम्।
अभ्रकं वङ्गकं रौप्यं खर्परं माक्षिकन्तथा ॥ २३५० ॥
सुवर्णञ्च समं सर्वं प्रत्येकञ्च रसार्द्धकम्।
तत्सर्वं कन्यकाद्रावैर्मर्दयेच्छाययेत्ततः ॥ २३५१ ॥
मेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवटीं ततः।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ २३५२ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम्।
मूत्रातिसारकृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम् ॥ २३५३ ॥
र. सं., र सु, ध, र. चि, भै. र., सोमरोगे।

भाषा—शिंगरफसे निकालेहुएपारेको २–३ दिन निसोतकेरससे मर्दनकर नष्टपिष्टी बनाय ऊर्द्धपातितकरले। गन्धकमें चौगुना बाझखेखसेकेकन्द अभावमें केलेकेकन्दकारस देकर चलाताहुआ पकावे। रससूखजानेपर गन्धकको धोकर साफ़करले। फिर समभाग पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर दोनोंसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन घीकुवारकेरससे मर्दनकरे। इसकेबाद अभ्रक, वङ्ग, रजत, खपरिया, सोनामाखी और सुवर्ण इनकीभस्में पारेसे आधेआधेप्रमाणमें मिलाकर घीकुवार और मण्डूकपर्णीके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथदेनेसे २० प्रकारकेप्रमेह, बहुमूत्र, सोम, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, भयङ्करमूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

५५२ सोमनाथरसः (तृतीयः)

रङ्गच्छदेन तनुना परिवेष्ट्य मुद्रां,
ताम्रस्य सावयवमार्कवकल्कमध्ये।
सम्यक् पुटेदतिपटुः सुरभेः शकृद्भिः,
स्यात्सोमनाथरस एष समीरहर्ता ॥ २३५४ ॥
सि. भे. म, शूले।

भाषा—शुद्धतांबेके पैसेपर बारीक रांगेकेपत्रेकोलपेट भंगरेके पञ्चाङ्गके १६ गुने कल्कमें रख गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर सूखनेपर गायके कण्डोंकी गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पैसा फूलाहुआ मिलेगा उसे पीसकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह पार्श्वशूलवगैरह तमामवायुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५५२ ॥

५५३ सोमनाथरसः (चतुर्थः)

पारदगन्धककुनटीदरशिलेसातुल्यभागपरिमृदिताः।
लोहवरपात्रनिहितास्त्वेता दषदि ततो भाव्याः ॥ २३५५
स्नुग्जातासितधत्तकवायसिकास्फोटिकादलस्वरसैः।
शिग्रुदलैः सोमतिक्तासहितैः क्रमशः स्थिता रौद्रे ॥ २३५६
तं शुष्कं सिद्धरसं गुञ्जावृद्ध्याष्टगुञ्जपरिमाणम्।
ताम्बूलपत्रसहितं पूर्वाह्णे पथ्यं युञ्ज्यात् ॥ २३५७ ॥
श्वित्रोदुम्बरपिटिकासुप्तिपूतित्वहस्तिचर्माणि।
श्रीसोमनाथगदितं रसायनं दुर्लभं हन्यात् ॥ २३५८ ॥
र. प्र, कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल और वाकुची समभाग लेकर वाकुचीका बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लोहेकेखरलमें १–२ पहर मर्दनकर पत्थरकेबर्तनमें रख थूहर, कालाधतूरा, मकोय, चिरपोटन, सहिजन, वाकुची इनकेरसों

तथा कुटकीके स्वरसोंसे तीक्ष्णभूपमें १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पानमें रखकर देवे और प्रतिदिन १–१ रत्ती बढाकर ८ रत्तीपर मात्रा कायमकरे । कुष्ठोक्तपथ्यका सेवनकरनेसे श्वित्र, उदुम्बर, पिडिका, सुनवहरी, सड़न, चर्मदल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५३ ॥

५५४ सोमनाथरसः (पञ्चमः)

शुद्धसूतकपलं पलन्तथा गन्धकञ्च परिमर्दयेद्द्विपकु ।
मर्दकेन च सुलोहजेन तं स्वल्पशेषमवलोक्य कज्जलम्
पादहीनपलमभ्रकं क्षिपेन्मर्दयेदथ च यामसम्मितम् ।
विश्वचूर्णमिह निक्षिपेद्बुधः सिद्धमित्थमहिपत्रवेष्टितम्
रक्तिकाप्रभृतिमापकं यथा दीयते च फलवर्गसंयुतम् ।
व्योषमुस्तखदिरानुपानतः पथ्यमत्र यवशालिजं भवेत्
अम्लमद्यतिलमैथुनानि च
मानवो मलयुतानि नो भजेत् ।
श्वित्रं मुक्त्वा हन्ति कुष्ठानि पुंसां
सर्वोद्भूतान्युग्ररूपाणि मासात् ॥
षण्मासेन प्राप्तपूयानि जित्वा
धत्ते कान्तिं पूर्णचन्द्रोपमानाम् ॥ २३६२ ॥

र. मृ , कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पललेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर ३–३ पर्थे अभ्रकभस्म और सोंठराचूर्ण मिलाय एक-पहर मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती पानमें रखकर खिलावे और क्रमसे मात्राबढाकर १ मासेपर नियतकर । त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा और खैरसारकाकाथ ऊपरसे पिलावे । जव, पुराने-सफेदचावल पथ्यमें देवे । खटाई, मद्य, तिल, मैथुन, मलयुक्त-पदार्थ इनका परित्याग करनेस सफेदकुष्ठोंको छोडकर पूर्णरूप समस्तकुष्ठोंको यह एकमहीनेमें नष्टकरताहै । पूययुक्तकुष्ठोंको ६ महीनेमें मिटाकर पूर्णचन्द्रकीतरह शरीरकीकान्तिको बढाताहै ॥

५५५ सोमपाणिरसः

सूतनिष्कं गन्धनिष्कं मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ।
मापैकं मृततीक्ष्णं स्यान्मृततुल्यञ्च माक्षिकम् ॥२३६३॥
मापैकञ्च सम्मिश्र्य पूर्वसूतेऽथ मर्दयेत् ।
धत्तूरत्रिफलाकन्यावृद्धदार्वार्द्रकद्रवैः ॥ २३६४ ॥
कोशाम्रकस्य मण्डूक्या निर्गुण्ड्या भृङ्गचित्रकैः ।
वय.स्थापिचुवातारिशकाशनद्रवैरपि ॥ २३६५ ॥
प्रतिद्रवं पलैकैकं दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ।
रसांशं त्र्यूषणं क्षिप्त्वा चणमात्रा वटी कृता ॥२३६६॥
सम्मिश्र्य सन्निपातार्ते दापयेज्जीरकद्रवैः ।
कषायं पञ्चमूलानामनुपानं प्रशस्यते ॥ २३६७ ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषार्ते शीतलं जलम् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सोमपाणी रसेश्वरः ॥ २३६८ ॥

रसचि , र सु , सु प्र , नि. र , र को , र का., सन्निपाते ।

टि०—सन्निपातदीपिकायां पाणिपुट इति नाम । र का , र ना , एतयो पाचटरस इति नाम । योगमहार्णवे पाल्टनाम्ना “ सूतनिष्क गन्धनिष्क मर्दयेच्चित्रकद्रवै । मापैक मृततीक्ष्णस्य मृततुल्याऽऽत्माक्षिकम् ॥ मापैकैक विनिक्षिप्य पूर्वसूतेन मर्दयेत् । धत्तूरविजयाद्रावै मुस्ता कुटजनागरै ॥ जातीकोशामृताद्रावै पर्पटैश्चापि बुद्धिमान् । प्रतिद्रव पलैकैक दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ॥ रसांश त्र्यूपण मोचरस क्षिप्त्वा वटीस्तत । कुर्याच्चणकमात्रा वै तास्तिस्रो जीरकार्द्रकै ॥ दापयेत्पञ्चमूलोत्थकषायैर्वाऽनुपानकम् । ज्वरातिसार सकलदोषोत्थग्रहणीगदे ॥ दध्यन्न दापयेत्पथ्य तृषार्ते शीतल जलम् । सन्निपात निहन्त्याशु रसोऽय पाल्टाभिध. ॥ ” इति योगो निहितोऽस्ति । अत्र मूलद्रव्येषु तालक प्रक्षेप च मोचरस विशेषतया निक्षिप्य विशेष कृतोऽस्ति परन्त्वस्य मूल पूर्वरस एवेति सुधीभि र्हृद्याकलनीयम् ।

भाषा—४–४ मासे शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली कर चित्रकेस्वरससे १–२ पहर मर्दनकर फोलाद, तावा और सोनामाखी १–१ मासा मिलाकर धतूरा, त्रिफला, घीकुवार, विधारा, अदरख, जंगलीआम, ब्राह्मी, सभालु, भंगरा, चित्रक, हरें, नीम, एरण्ड और भागके यथासम्भव १–१ पल स्वरस अथवा क्वाथोंसे मर्दनकर सुखाकर छठाभाग त्रिकटुकाचूर्ण मिलाय चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली जीरके स्वरस अथवा क्वाथोसे मिलाकरदेवे और ऊपरसे पञ्चमूलका-क्वाथदेवे तो यह सन्निपातको नष्टकरताहै । अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभातदेवे और प्यासलगनेपर ठंडाजलदेवे ॥ ५५५ ॥

५५६ सोमबाणरसः

हिङ्गुलं मरिचमारिचनागं नागवङ्गमलिनं ज्वलनालम्
पञ्चपित्तगरलं तरलं तत्पुष्पयुक्तमपि मर्दय गाढम् ॥
तत्समानमखिलं घनधारा भावितं घनमदेन मदेन ।
भावितं तदनुपानभेदतस्सन्निपातशतताद्विनाशनम् ॥

टो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, मरिच, शीतलचीनी, नागकेशर, नाग और वङ्गभस्म, भाग, शुद्धगन्धक और हरिताल समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर पाचोंपित्तों और सर्पविषसे १–१ भावना देकर एकभाग कसीसभस्म मिलाय नागरमोथा, कपूर, कस्तूरी और मार्जारमदकी १–१ भावना देकर आधीआधी रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितअनु-पानकेसाथदेनेसे सन्निपात और सन्तादिसमस्तज्वरोंको यह नष्ट-करताहै ॥ ५५६ ॥

५५७ सोमानलरसः (प्रथमः)

गोमूत्रे बाकुचीबीजं त्रिसप्ताहं विभावयेत् ।
त्वग्वर्ज्यं शोषितं चूर्णं तुल्यांशा चामया तथा ॥२३७१॥
ततः खादिरबीजोत्थकषाये मर्दयेत्क्षणम् ।
कर्षार्धं मृतलोहञ्च तुल्यांशं मधुमिश्रितम् ॥
कर्षैकं सर्वकुष्ठार्तः खादेत्सोमानलो ह्ययम् ॥ २३७२ ॥

र. का , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—प्रतिदिन ताजे गोमूत्रमें २१ दिनतक बाकुचीको भिगोवे । इसकी समस्तक्रिया मौनव्रतमेंकरे । इसकी बराबर हरें मिलाय खदिरकेबीजोंकेक्वाथमें मर्दनकर रेवतचीनी और लोह,

भस्म १-१ भाग मिलाकर मधुकेसाथ १-१ तोलेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे सबप्रकारकेकुष्ठ नष्टहोतेहैं ॥ ५५७ ॥

५५८ सोमानलरसः (द्वितीयः)

विशुद्धः पारदो ग्राह्यो हेमगन्धकजारितः।
हेमभस्मबलिभ्याञ्च तुल्याभ्यां सह पर्पटीम् ॥२३७३॥
कृत्वा तत्र मृतं सूतं तुल्यं निक्षिप्य मर्दयेत्।
त्रिफलाव्योषमुस्ताग्निभृङ्गनीरैःपृथक्क्रमात् ॥२३७४॥
ततः सञ्चूर्ण्य मतिमान् रोगदोषानुसारतः।
सर्वेषु वातरोगेषु ग्रहणीगुल्मपाण्डुषु ॥ २३७५ ॥

र. क. यो., बा., वातरोगे।

भाषा—विशुद्ध और बुभुक्षितपारेमें यथाशक्य सुवर्णबीज और गन्धकको जारणकर सुवर्णभस्म और शुद्धगन्धक तीनोंसम भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटीबनाय बराबरकी पारदभस्म मिलाय त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, चित्रक और भंगरेके-स्वरसोंसे क्रमशः १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके-साथदेनेसे समस्तवातरोग, ग्रहणी, गुल्म और पाण्डुको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ सोमेश्वररसः (प्रथमः)

शालार्जुनं लोध्रकञ्च कदम्बागुरुचन्दनम्।
अग्निमन्थो निशायुग्मं धात्रीदाडिमगोक्षुरम् ॥२३७६॥
जम्बूबीरणमूलञ्च भागमेषां पलार्द्धकम्।
रसगन्धकधान्याब्दमेलापत्रं तथाभ्रकम् ॥ २३७७ ॥
लौहं रसाञ्जनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम्।
प्रत्येकं पलिकं भागं पलार्द्धं गुग्गुलोरपि ॥ २३७८ ॥
घृतेन वटिकां कृत्वा खादेत्शोडशरक्तिकाम्।
गहनानन्दनाथेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २३७९ ॥
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहन्त्यलम्।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सन्निपातसमुद्भवम् ॥ २३८० ॥
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं कामलाञ्च हलीमकम्।
भगन्दरोपदंशौ च विविधान्पीडकान्व्रणान् ॥
विस्फोटार्बुदकण्डूश्च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २३८१ ॥

र. सं., र. चि., ध., र. सु., र. र., भै. र., सोमरोगे।

भाषा—सनुआ, अर्जुन, लोध, कदम्ब, अगर, सफेद-चन्दन, अरणी, हल्दी, दारुहल्दी, आंवले, अनारदाना, गोखरू, जामुन, खसकीजड़ २-२ कर्ष, शुद्ध पारा और गन्धक, धनियां, नागरमोथा, इलायची, पत्रज, अभ्रक और लोहभस्म, रसौत, पाठा, विडङ्ग, सुहागा और जीरा १-१ पल, शुद्धगूगल २ कर्ष लेकर सबकाबारीकचूर्णकर पातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय घीमें घोटकर २-२ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे एकज, द्वन्द्वज और सन्निपातज सोमरोग, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगन्दर, उपदंश, पीडादेनेवालेव्रण, विस्फोट, अर्बुद, खाज, प्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

५६० सोमेश्वररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं मृतञ्चाभ्रं गन्धकं मर्दयेत्समम्।
दिनं निर्गुण्डिकाद्रावे रुद्ध्वाहर्भूधरे पचेत् ॥ २३८२ ॥
उद्धृत्य वाकुचीतैले वाकुच्या वा कषायतः।
दिनैकं भावयेद्घर्मे निष्कमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ २३८३ ॥
वाकुचीं काकमाचीञ्च त्रिफलां चूर्णयेत्समाम्।
मध्वाज्यैः कर्षमात्रञ्च स्वनुपानमिदं लिहेत् ॥
कापालं विषमं कुष्ठं हन्ति सोमेश्वरो रसः ॥२३८४॥

र. सु., वै. चि., र. क. ल., चि. क., र. को., ब. रा., र. का., कुष्ठाऽधिकारे।

टि०—चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्यां तात्र विशेषेण दृश्यते तथा च निर्गुण्ड्या द्रावे सप्तदिवसपर्यन्त मर्दनं विहितमिति विशेषः।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर संभालूके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें एकदिनकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वाकुचीकेतैल अथवा क्वाथसे एकदिनमर्दनकर ४-४ मासेकी-गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली वाकुची, मकोय और त्रिफला समभागके १ कर्षचूर्णकेसाथ मधु और घीमें मिलाकर लेनेसे कपाल और विषमकुष्ठको यह नष्टकरताहै ५६०

५६१ सौगतवटी (सौरतवटी)

पारदगन्धकचम्पककेसरसुरसकुसुमकरहाटाः।
अजमोदाम्बुधिशोषौ जातीपत्रञ्च जातिफलम् २३८५
प्रत्येकं भागैकं भागद्वितयञ्च शुद्धमहिफेनम्।
वनबदरसदृशगुटिकाः कार्या मधुनाऽथ भक्षयेदेकाम्
यामेऽतीते ललनासविधे स्थित्वा यथानिकाकर्षम्।
तैलार्द्रं भुञ्जीयादनुपानं चैतदेतस्याः ॥ २३८७ ॥
लिङ्गं कठिनतरं स्याद्वीर्यस्तम्भं भवेद्यामम्।
एषा सौगतगुटिका सत्यं सत्यञ्च शुक्ररोधकरी २३८८

वृ. यो. त., र. श्री., ध, र. सु., यो. त., वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, नागचम्पारेफूलकी केशर, तुलसीकेफूल, अकलकरा, अजमोद, समुद्रशोष, जावित्री, जायफल १-१ भाग, शुद्ध अफीम दो भागलेकर सबका बारीक-चूर्णकर मधुकेसाथ जङ्गलीबेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली खाकर एकपहरबाद स्त्रीकेपासरहकर १ कर्ष अजवायनको तैलमें भिगोकर खावे। इससे ध्वज एकदमकठिन-होगा और १ पहर वीर्यकास्तम्भन होगा ॥ ५६१ ॥

५६२ सौभाग्यवटी

सौभाग्याऽमृतजीरपञ्चलवणव्योषाऽभयाऽक्षामलाः,
निम्बन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान्भावयेत्।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गराजकवृषाऽपामार्गपत्रोद्रस-,
स्तत्प्रत्येकस्वरसेन सिद्धगुटिका हन्ति त्रिदोषोदयम् ॥

येषां शीतमतीव देहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतं
निद्रा घोरतरा समस्तकरणव्यामोहमुग्धं मनः।
शूलश्वासबलासकाससहितं मूर्च्छाऽरुची तृड्ज्वरं,
तेषां वै परिहृत्य मृत्युवदनात्प्रत्यानयेज्जीवनम् २३९०
रक्तिकापञ्चकं देयं तरुणस्य शिशोः पुनः।
रक्तिकाघृतमध्वाद्यैरनुपानैः सुखावहः॥ २३९१॥

र. सं., र. चं, र सु., भै. र., र. क, ■, ज्वराधिकारे। धन्वन्तरौ सौभाग्यचिन्तामणीति नाम। र. म. मा., टो., मा. वि., एषु लीलाविलास इतिनाम।

भाषा—भुनासुहागा, शुद्धबच्छनाग, जीरा, पार्चोनमक, त्रिकटु, हर्रे, बहेडा, आवला, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा समभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दोनोंनिर्गुण्डी, भंगरा, अडूसा और अपामार्गके स्वरसोंमें १–१ दिन मर्दनकर ५–५ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचित मधुघृतप्रभृति अनुपानोंकेसाथ देनेसे पूर्णरूपसन्निपात, शूल, श्वास, कफ, कास, मूर्च्छा, अरुचि, तृषा और ज्वरको यह नष्टकरताहै। गईहुईचेतना पीछे आतीहै। बच्चेको दोरत्तीकी मात्रादेना ५६२

५६३ सौभाग्यशुण्ठीपाकः (प्रथमः)

त्रिकटु त्रिफला भृङ्गजीरकद्वयधान्यकम्।
कुष्ठाजमोदे लौहाभ्रे शृङ्गी कट्फलमुस्तकम्॥२३९२॥
एला जातिफलं मांसी पत्रं तालीसकेशरम्।
गन्धमाता शटी यष्टी लवङ्गं रक्तचन्दनम्॥ २३९३॥
एतानि समभागानि शुण्ठीचूर्णन्तु तत्समम्।
सिता द्विगुणिता तत्र गव्यं क्षीरं चतुर्गुणम्॥२३९४॥
पक्त्वा कर्षप्रमाणन्तु दुग्धेनापि जलेन वा।
अम्लपित्तं निहन्त्येतदरोचकनिषूदनम्॥ २३९५॥
शूलहृद्रोगशमनं कण्ठदाहं नियच्छति।
हृद्दाहश्च शिरःशूलं मन्दाग्नित्वं विनाशयेत्॥ २३९६॥
हृच्छूलं पार्श्वकुक्षिस्थं वस्तिशूलं गुदे रुजम्।
बलपुष्टिकरश्चैव वशीकरणमुत्तमम्॥ २३९७॥
विशेषादम्लपित्तञ्च मूत्रकृच्छ्रं ज्वरं भ्रमम्।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा॥२३९८॥

भै र, ध., अम्लपित्ते।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, भंगरा, दोनोंजीरे, धनियां, कुठ, अजमोद, लोह और अभ्रकभस्म, काकडासींगी, कायफल, नागरमोथा, इलायची, जायफल, जटामासी, पत्रज, तालीसपत्र, केशर, कपूरकाचरी, कपूर, मुलहठी, लौंग, लालचन्दन, येसब समभाग, सोंठ सबकीबराबर, खांड सबसे दूनी, गायकादूध सबसे चौगुना लेकर औषधियोंका बारीकचूर्णकर सबको इकट्ठे मिलाय मन्दआंचसे पकावे। पाकतैयारहोनेपर उतारकर रखले। इसमेंसे १–१ तोला दूध अथवा जलकेसाथ सेवनेसे अम्लपित्त, अरुचि, शूल, हृद्रोग, कण्ठ और हृदयकादाह, शिरकादर्द, मन्दाग्नि, हृदय, पार्श्व, कुक्षि और वस्तिकाशूल, गुदाकीपीडा, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और भ्रमको यह नष्टकरताहै। बल और पुष्टिको देताहै। खासकर अम्लपित्तको नष्टकरताहै॥ ५६३॥

५६४ सौभाग्यशुण्ठीपाकः (बृहत्)

नागरं खण्डशः कृत्वा प्रस्थमात्रं भिषग्वरः।
अजादुग्धाढकद्वन्द्वे विपचेन्मन्दवह्निना॥ २३९९॥
घनीभूते तु पयसि शुण्ठीं तस्मात्समुद्धरेत्।
अतिसूक्ष्माञ्च निष्पिष्य शोषयेद्रातपे दिनम्॥२४००॥
घृतमानीं समावाप्य तद्दुग्धन्तु पुनः पचेत्।
यावत्पिण्डत्वमायाति ततस्तत्र च मिश्रयेत्॥२४०१॥
धातुर्जातं तुगां येलं धान्यकं जीरकद्वयम्।
मिशिमाकल्कं कुष्ठं लवङ्गञ्च शतावरीम्॥ २४०२॥
तालमूली त्रिकटुकं कपिकच्छुश्च पद्मकट्टु।
जातीफलं जातिकोषं शृङ्गाटं वृद्धदारुकम्॥२४०३॥
त्रिवृतं पद्मबीजञ्च त्रिफलाञ्च बलात्रयम्।
जलं सैव्यं वाजिगन्धा चन्दनागरुकारवीः॥ २४०४॥
कङ्कोलमजगन्धाश्च द्राक्षामाक्षोटचारजम्।
अजमोदाञ्च वातामं नारिकेलगतं तथा॥ २४०५॥
कर्पूरमभ्रकं लौहं वङ्गं ताम्रं शिलाजतु।
स्वर्णमाक्षिकमप्येतत्प्रत्येकं कर्षसम्मितम्॥ २४०६॥
चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र पाणिभ्यां मर्दयेद् दृढम्।
ततः खण्डतुलां पक्त्वा तया तद्वटिकां चरेत् २४०७
खण्डनागरकं नाम्ना भैषज्यमिदमुत्तमम्।
यथाबलमिदं खादेत्प्रातर्नक्तञ्च भेषजम्॥ २४०८॥
स्त्रीणामतिहितं नाऽत्र पथ्यापथ्यविचारणा।
क्षये पाण्डौ ज्वरे कासे श्वासे मन्दानले तथा २४०९
सङ्ग्रहण्यां रक्तगुल्मे प्रदरे सोमरोगके।
रक्तपित्ते चाम्लपित्ते सर्वयातामयेषु च॥ २४१०॥
पित्तरोगेषु सर्वेषु वातपित्तगदेषु च।
धातुशोषे प्रमेहे च रजोदोषे स्वरक्षये॥ २४११॥
दुग्धक्षये मूत्ररोगे कामलायां गलग्रहे।
सूतिकापवनव्याधौ सत्यमेतन्न संशयः॥
एषा सौभाग्यदा शुण्ठी स्त्रीणां पुत्रप्रदोत्तमा॥२४१२॥

१ यो. त, रसायनसं, टो, यो. र, यो म., चि. र. म, धा. ब, स्त्रीरोगेषु।

टि०—योगमहार्णवे कर्षसम्मितमित्यस्य स्थाने पल्मम्मितमिति पाठः। पाकावस्थायाञ्च "लोहान चोरा हीनीष मश्गरीं भोचकत्त्वा" इत्यधिकः।

भाषा—एकप्रस्थ सोंठके छोटेछोटे टुकडेकर दो आढक बकरीके दूधमें मन्दआंचसे पकावे। दूध गाढाहोनेपर सोंठकेटुकडोंको निकाल बारीकसहपीसकर कडीधूपमें सुखाकर कपडछानकर ८ पल घीमें मिलाय उसीदूधमें डालकर मावा बनावे। फिर इसमें धायकेफूल, वंशलोचन, विलाइ, धनियां, दोनोंजीरे, सौंफ, अकलकरा, कुठ, लौंग, शतावर, कालीमुसली, त्रिकटु, केवांचकीमग्ज, पद्माख, जायफल, जावित्री, सिंघाडे,

बिदारेकीजड़, निसोत, कमलगट्टा, त्रिफला, बला, नागबला, अतिबला, दोनोंरास्न, असगन्ध, सफेदचन्दन, अगर, कारवी, शीतलचीनी, बरदेकेबीज, कालीदाख, अखरोट, चिरोंजी, अजमोद, बादामकी मींगी, नारियल, शुद्धकपूर, अभ्रक, लोह, वङ्ग, ताम्र, सोनामाखी इनकीभस्में और शिलाजीत १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर मावेमें डालकर हाथसे अच्छीतरह मसलकर मिलादे । फिर एकतुला खांडकी कड़ीचाशनी बनाय सबचीजोंको मिलाकर लड्डूबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अग्निबलदेखकर उचितमात्रा कायमकरे । स्त्रियोंकेलिये यह विशेषहितकारकहै । पथ्यापथ्यका विशेष विचार नहींहै । इसके सेवनसे क्षय, पाण्डु, ज्वर, कास, श्वास, मन्दाग्नि, सङ्ग्रहणी, रक्तगुल्म, प्रदर, सोम, रक्तपित्त, अम्लपित्त, समस्तवातविकार, पित्तरोग, वातपित्तरोग, धातुशोष, प्रमेह, रजोदोष, स्वरभङ्ग, दुःस्वप्न, मूत्ररोग, कामला, गल्ग्रह, सूतिकारोग इनसबको दूरकर उत्तमपुत्रको देताहै॥ ५६४॥

५६५ संशोपणरसः

वृहतीपाटलामूलं वज्रदण्डी च चित्रकम् ।
भूदन्ती श्वेतगान्धारी फञ्जीमञ्जिष्ठिकाऽभयाः॥२४१३॥
काकमाची द्विजिह्वा च गन्धर्वाह्वा त्रिकण्टिका ।
धात्रीद्वयं चित्रकञ्च श्वेतहिङ्गु सुरद्रुमौ ॥ २४१४ ॥
क्षारद्वयं पौष्करञ्च व्योषञ्च तुम्बुरूणि च ।
तदेकोत्तरवृद्ध्या च द्रव्याण्येतानि योजयेत् ॥२४१५॥
कृत्वा चूर्णं तदेकांशं माक्षिकं लोहभस्म च ।
मृतभस्मामृतञ्चूर्णमेकीकृत्याऽखिलन्तथा ॥ २४१६ ॥
माषमात्रप्रमाणञ्च योजयेत्तु दालो भिषक् ।
संशोषणरसो नाम्ना प्रसिद्धः सर्वरोगहा ॥
मेरुमप्यणुमात्रञ्च कुरुते शङ्करोदितः ॥ २४१७ ॥
र कौ. (शा), सर्वरोगे ।

भाषा—बनभाटा और पाटलाकीजड़, थूअरकादूध, चित्रकमूल, दन्तीमूल, सफेदभटकटैया, फाग, मजीठ, हर्रे, मकोय, शताव, एरण्डमूल, पीले और लालफूलकी भटकटैया, आवला, भुईआवला, लालचित्रकमूल, दूधियाहींग, चीड, देवदारु, सज्जी और यवक्षार, पोहकरमूल, त्रिकुटु, तुम्बुरु येसब क्रमवृद्धभागसे लेकर बारीकचूर्णकर सोनामाखी, लोह और पारदभस्म शुद्धबछनाग १-१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अत्यन्तमेदको नष्टकर आदमीको सरल बनाताहै ॥ ५६५ ॥

५६६ स्वाल्पियारिरसः

रौप्यमभ्रं तुल्यकञ्च मर्दयेत्कन्यकाम्भसा ।
मुद्गमात्रां वटीं कृत्वा पाययेत्सह सर्पिषा ॥ २४१८ ॥
स्वाल्पियारी रसो नाम स्वाल्पित्वं स्नायुजं गदम् ।
वातश्लेष्मोद्भवांश्चापि गदानाशु निवारयेत् ॥२४१९॥
भेषजान्यत्र योज्यानि वातव्याधिहराणि च ।
पथ्यमत्र विजानीयाद्द्रव्यं पुष्टिबलप्रदम् ॥ २४२० ॥
आ. वि , स्वाल्पियं ।

भाषा—चांदी, अभ्रक और तुत्थकीभस्में समभागलेकर कुमारीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घीकेसाथ देनेसे स्नायुओंकी स्थानभ्रष्टता नष्टहोतीहै । इसमें खासकर वातहर औषधें और पथ्यमें पुष्टिकारक पदार्थ देवे ॥ ५६६ ॥

५६७ स्तम्भनरसः

हंसपादं पलार्द्धन्तु वृन्ताकेन च पाचितम् ।
वल्लमानप्रदानेन हीनकन्दर्पवृद्धिकृत् ॥ २४२१ ॥
रसायनसं , वीर्यस्तम्भने ।

भाषा—दोकर्ष शिंगरिफकी डलीको मलमलमें लपेट मोटेबेंगनमें रख भरताकरे । ऐसे १०८ बेंगनोंमें भरताकरके निकाल कर रखले । कमसेकम ५० बेंगनोंमें अवश्य रखनाचाहिये । इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह नष्टशुक्रकी वृद्धिको करताहै ॥ ५६७ ॥

५६८ स्तम्भनवटी

सदहिफेनविमर्दितपारदः
कनकबीजरसेन विमर्दितः ।
समसितायिजयो यदि भक्षितो
न रजनी न दिवा न दिवाकरः ॥ २४२२ ॥
रसायनम , यो. त , वृ यो. त , ध , वीर्यस्तम्भने ।

भाषा—शुद्ध अफीम और पारदभस्म समभागलेकर कधे धतूरेके बीजोंकेरससे पारा अदृश्यहोनेतक घोटकर इसकेबराबर शक्कर और भांगमिलाकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सम्भोगसे १ घटापहिले लेकर केवलदूध पीनेसे अत्यन्त स्तम्भनहोताहै ॥ ५६८ ॥

५६९ स्त्रीगदघ्नरसः

पारदं गन्धकं कान्तं हेम लोहं सुमारितम् ।
गगनञ्च समांशेन पुटे गजपुटे पचेत् ॥ २४२३ ॥
दशमूलानुपानेन त्र्यूषणेनाथ वा पुनः ।
दद्यादुग्राह्वयञ्चास्य यथाबलमथापि वा ॥
अयं सर्वविकाराणां स्त्रीजातानां विनाशकः ॥२४२४॥
र म मा , ना. वि , स्त्रीरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्त, लोह, सुवर्ण और अभ्रकभस्म समभागलेकर दशमूलकेक्वाथमें २-३ दिन घोटकर टिकडियेंबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती दशमूल अथवा त्रिकुटुकेक्वाथकेसाथ देनेसे यह समस्तस्त्रीरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५६९ ॥

५७० स्थौल्यगजकेसरीरसः

रसेन्द्रं रजतं ताप्यं गगनं ताम्रलोहकम् ।
स्वर्णञ्च क्रमवृद्धानि मर्दयेत्कुमारिणा ॥ २४२५ ॥
अन्येन चाम्लवर्गेण मर्दयेत्सप्तवासरान् ।
काचकूप्यां निधायाऽथ पचेद्यामाष्टकद्वयम् ॥ २४२६ ॥

स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा गृह्णीयात्तञ्च मर्दयेत् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव द्रोणपुष्पीरसेन च ॥ २४२७ ॥
वृहत्याः पत्रतोयेन बीजतोयेन वा पुनः ।
प्रत्येकं दिनमेकं हि भावनां दापयेत्क्रमात् ॥ २४२८ ॥
पिप्पलीमधुना सार्धं चैतद्गुञ्जाद्वयं भजेत् ।
स्थूलदुर्दिनविनाशने मरु-
त्स्थौल्यपर्वतविनाशनेऽशनिः ।
स्थौल्यदोषरसशोषणक्षमः
स्थौल्यरोगगजकेसरीरसः ॥ २४२९ ॥

र. प्र सु , र. म मा., स्थौल्ये ।

भाषा—पारा, रजत, सोनामाखी, अभ्रक, ताम्र, लोह और सुवर्ण इनकीभस्में क्रमश्वृद्धभागसेलेकर बिजोरे तथा अन्य अम्लवर्गकेरससे ७–७ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदी-हुई आतशीशीशीमें भर मुंहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ८ पहरकी दृढाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरख, गूमा, बनभाटा, बिजोरा इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधु अथवा मेदोहरानुपानकेसाथदेनेसे यह अत्यन्तस्थूलताको नष्टकरताहै ॥ ५७० ॥

५७१ स्थौल्यान्तकरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं लोहजं रजः ।
विडङ्गनागरक्षारनीरेण परिमर्दयेत् ॥ २४३० ॥
कर्षार्द्धं नागरक्षारविडङ्गैः परिपेषितः ।
माषैको मधुना युक्तः स्थौल्यमाशु व्यपोहति ॥२४३१॥
हिङ्गुसौवर्चलाजाजीव्याधिघातयुतस्तथा ।
मस्तुसक्तुयुतो वापि व्योषवेल्लायुतोऽपि वा ॥२४३२॥
रसः स्थौल्यान्तकश्चैव क्षौद्रतोययुतस्तथा ।
पथ्यमुष्णन्तु सक्षौद्रं मण्ड. सोष्णस्तथा हितः २४३३
स्थौल्यापहरणः सूतो वसन्तकुसुमाकरः ।
सोऽपि क्षौद्रयुतः क्षारतोयमद्येन वा हितः ॥२४३४॥

र , स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, दोनोंसे द्विगुण लोहभस्म लेकर नीलवर्णकज्जलीकर विडङ्ग और सोंठकेक्काथ तथा प्रतिसारणीय यवक्षारसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथलेकर आधाकर्ष सोंठ, यवक्षार और विडङ्गकाचूर्ण (१) हींग, सञ्चल, जीरा और अमिलतासकागूदा (२) दहीकातोड़ और सत्तू (३) त्रिकटु और विडङ्गकाचूर्ण (४) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेसाथ सेवनकरनेसे यह बहुतशीघ्र स्थूलताको नष्टकरताहै । इसमें मधुके साथ गरमचीजें और गरममाडकासेवन उचितहै । स्थौल्यके-लिये वसन्तकुसुमाकर रसको मधु और क्षारकेपानी अथवा मद्यकेसाथलेना उचितहै ॥ ५७१ ॥

५७२ स्थौल्यान्तकरसः (द्वितीयः)

वन्ध्याकर्कोटकीकन्दद्रवै मर्द्यं दिनत्रयम् ।
तालकञ्च मृतं ताम्रं द्विगुञ्जं मधुना लिहेत् ॥
पिबेत्क्षारोदकं चानु स्थौल्यरोगं विनाशयेत् ॥२४३५॥

वै. चि , व रा , स्थौल्यरोगे ।

भाषा—हरिताल और ताम्रभस्म समभागको बाझखेखसेके-कन्दके रससे ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथलेकर क्षारोदकपीनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ॥५७२

५७३ स्थौल्यान्तकरसः (तृतीयः)

सूताभ्रमाभ्रविषं लोहं व्योषञ्च यावशूकजम् ।
मर्दयेत्तुरसावह्निकन्यातोये दिनत्रयम् ॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत स्थौल्यादौ स्वानुपानतः ॥२४३६॥

र. सि , स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, अभ्रक और लोहभस्म, त्रिकटु, यवक्षार, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर तुलसी, चित्रकमूल और घीकुवारकेस्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दन-कर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ५७३

५७४ स्थौल्यापकर्षणरसः

सूतयोलमृततालताम्रकं चार्कदुग्धरसकेन मर्दितम् ।
क्षौद्रयुक्तमपि वल्लमात्रकं भक्षितञ्च क्षतिवृंहितञ्जयेत् ॥
तोयमेकपलमत्र मात्रया पानतोऽप्यखिलमेहहारकम् ॥

र. प्र. सु , स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्धपारा, हीराबोल, हरिताल और ताम्रभस्म सम-भागलेकर आककेदूध अथवा पानस्वरससे एकदिन मर्दनकर सुखा-कर मधुमेंमिलाय ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ॥ ५७४ ॥

५७५ स्नाय्वन्तकरसः

कासीसञ्च शिला चैव गन्धकेन समन्वितम् ।
वाकुच्या मर्दितं खल्वे मर्दयेच्छोषितं दिनम् ॥२४३८॥
पचेद्गजपुटे माषं भक्षयेदनुपानतः ।
स्नायुकान्तकरो नाम रसो नकुलसम्मतः ॥ २४३९ ॥

र म मा , ना वि., स्नायुकरोगे ।

भाषा—कासीसभस्म, शुद्धमेनसिल और गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर बाकुचीके क्काथसे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे स्नायुरोग नष्टहोताहै ॥

५७६ स्पर्शवातारिरसः (स्पर्शगजसिंह·)

अष्टौ भागा रसस्य स्यु विषतिन्दो दशैव च ।
गन्धकस्य दश द्वौ च कटुत्रिफलयोस्त्रयः ॥ २४४० ॥

वह्निचित्रकमुस्तानां वचाश्वगन्धयोरपि ।
रेणुकाविषकुष्ठानां पिप्पलीमूलकेशरात् ॥ २४४१ ॥
एकैकस्तु भवेद्भाग इन्द्राण्या मूलतस्तथा ।
चतुर्विंशद्गुडस्याऽथ वटिका चणकाकृतिः ॥
क्रमेणैवाऽनुसेवेत स्पर्शवातापनुत्तये ॥ २४४२ ॥

र.र.स., चि. सा., र. का., वै. चि., व. रा., रसायनसं., र. सू., स्पर्शवाते ।

टि०—नि. र. रसादिवटीति नाम शीतपित्ताधिकारे । व. रा., वै. चि. एतयो वातारिरस इति नाम विधूमवाते । रसकामधेनौ अस्मात्पाठात्किञ्चिद्वैषम्य दृश्यते यथा "निष्काष्टक सूत सूत निष्कद्वादशगन्धकम् । विषमुष्टि गन्धतुल्यः सूतकश्च त्रिनिष्कक" ॥ त्रिकटु त्रिफला मुस्ता वचा पत्रकरेणुकम् । विष कुष्ठ कणामूलमश्वगन्धेन्द्रवारुणी ॥ नागकेशरमेकैक निष्कंकश्च सुचूर्णितम् । सर्वतुल्य गुड मिश्रं चणमात्रश्च भक्षयेत् ॥ अस्पर्शगजसिंहोऽय सुप्तिमण्डलकुष्ठनित् ॥" इत्यत्र लेखकप्रमादजन्यो दोष. प्रतिभाति । स्पर्शगजसिंहनामापि कल्पितमेव प्रतीयते । व. रा., वै. चि., एतयोर्द्वितीयस्थाने वातगजाङ्कुशनाम्ना "अष्टौ भागा रसस्यापि विषनिन्दोलस्यैव च । गन्धकस्य त्रयो भागाः कटुत्रयफलत्रयम् ॥ गुञ्जामात्रां वटीं खादेद्दशीतिवातनाशनम् । ऊरुस्तम्भ निहन्त्याशु स्याद्वै वातगजाङ्कुशः ॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति स उपरितनपाठस्यैवापभ्रंशः प्रतीयते तत्कारणन्तु त्रुटितपाठासादन स्वकृतित्वास्थापन वा स्यादित्यनुमीयते ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, कुचिला १० भा., गन्धक १२ भा., कुटकी और त्रिफला ३–३ भा., भिलावे, चित्रकमूल, नागरमोथा, वच, असगन्ध, रेणुका, बछनाग, कुठ, पिपलामूल नागकेशर और इन्द्रायणकीजड़ १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय २४ भाग गुड मिलाकर चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै ॥ ५७६ ॥

५७७ स्पर्शवातारिरसः (शीतारिरसः)

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवाग्निस्वरसे विभाव्य ।
पक्वार्कपत्रस्य रसेन पश्चाद्विपाचयेदष्टगुणेन यत्नात् ॥
रसार्द्धभागञ्च विषञ्च दत्त्वा विपाचयेद्वह्निजलेक्षणं तत्
शीतारिसञ्ज्ञस्य रसायनस्य वल्लञ्च सार्द्धं मरिचार्द्रकेण
मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पथ्यम् ॥

र.सं., र. क., प., र. चं., र. दी., र. सु., र. र. स., र. क. ल., नि. सा., र. को., र. प्र. सु., वै. चि , रसायनसं., वातव्याध्यधिकारे । रसायनसङ्ग्रहे शीतपित्तारिरस इतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पुनर्नवा और चित्रकमूलकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर पके आकके पत्तोंके अठगुणेस्वरसमें पकाकर रससे आधा शुद्धबछनाग मिलाय चित्रकमूलक्काथरस देकर थोड़ीदेरतक पकावे फिर घोटकर १–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मरिच और अदरखकेसाथ अथवा घृतयुक्त मरिचकेचूर्णकेसाथ देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै । इसमें घृत और मांस अधिक सेवनकराना ॥ ५७७ ॥

५७८ स्पर्शवातारिरसः (स्पर्शारिरसः)

दिनत्रयं स्याद्विषमुष्टिबीजं शुभारनालीयसुयन्त्रमध्ये ।
सुपाचितं भानुपलञ्च तस्य चूर्णं पलैकं परिमूर्च्छितं हि
सूतं द्विगन्धञ्च पलाशबीजं
द्विपट्पलं स्निग्धघटीगतञ्च ।
समुद्रय मासं शुभधान्यराशौ
संस्थाप्य चोद्धृत्य समाक्षिकन्तु ॥२४४६॥
लेह्यं तथा स्पर्शगदारिसञ्ज्ञो
प्रसुप्तवातञ्च हि सुप्तिकुष्ठम् ।
निहन्ति भूनिम्बविषाणिकानां
मूर्वावचानिम्बफलत्रयाणाम् ॥ २४४७ ॥
पटोलपाठाद्विनिशाविशाला-
ब्राह्मीत्रिवृद्दन्तिसुपद्मकानाम् ।
सतिक्तकोपातकिकासमांशं
चूर्णं समध्वाज्यमिहानुपानम् ॥ २४४८ ॥

चि.क. व. रा., र. का., वै. चि., वातव्याध्यधिकारे ।

टि०—रसकामधेनौ विषमुष्ट्याः षट् पलानि नियोजितानि अत्र तु द्वादशेति विशेषः । र. र. स., र. को., र., र. दी., एषु स्पर्शवातारि नाम्ना र. स., र. च., ध., र. सु., र. क , एषु पलाशादिवटीति नाम्ना "पलाशबीजोत्थरसेन सूत गन्धेन युक्त त्रिदिन विमर्द्य । श्लक्ष्णीकृत तद्विषतिन्दुबीज संयोजयेदस्य कलाप्रमाणम् ॥ मासद्वयं निष्कमित प्रयत्नादर्शांसि हन्त्याशु नियोजनीयम् ॥ वातरक्ते तथा घोरमपस्मारंस्याग्निसाम्यम् । वातवल्लीस्वरोगेऽपि तत्र पित्तेन भावयेत् ॥ स्पर्शवातारिराख्यातो वातरोगकुलान्तकः ॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीय । "एकैक मूर्च्छित सूत शुद्धगन्ध पलद्वयम् । चूर्णित मधुनाऽऽलोड्य स्निग्धभाण्डे निरोधितम् ॥ धान्यराशौ स्थित मास समुद्धृत्याथ भक्षयेत् । अस्पर्शारिरसः कुष्ठान् हन्ति सुप्तिप्रसुप्तिकम् ॥" इति रसेन्द्ररत्नकोशीयपाठस्तु त्रुटित एवास्ति अतस्तस्य रसान्तरतायां न भ्रमितव्यम् ॥

भाषा—काञ्जीमें शुद्धकियाहुआ कुचिला १ पल, रससिन्दूर १ पल, गन्धक २ पल, पलाशबीज ८ पल लेकर बारीक चूर्णकर रससिन्दूर और गन्धकको अच्छीतरह मिलाय चिकनेबर्तनमें रख मुंहबन्दकर सुगन्धितधानकीराशिमें रखदे । ७ अथवा १४ दिन बाद निकालकर ४–४ मासे मधुकेसाथलेनेसे प्रसुप्तवात, सुप्तिकारोग, कुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै । चिरायता, मेढासींगी, मूर्वा, वच, नीमकीछाल और त्रिफला अथवा परवल, पाठा, दोनोंहल्दी, इन्द्रायण, ब्राह्मी, निसोत, पदमकाठ इनकाथोंको औंधिनी देकर अनुपानमें देवे अथवा कड़वीतुम्बीकागर्भ समभाग मिलाकर मधु और घीकेसाथदेवे ॥ ५७८ ॥

५७९ स्मृतिसागररसः

रसगन्धकतालानां मनःशिलाताप्यमास्यताम् ।
शुद्धानां मूर्च्छितानाञ्च चूर्णं भाव्यं यथाऽऽहतैः २४४९
एकविंशतिधा पश्चाद्ब्राह्मीधारा तथैव च ।
कटभीबीजतैलेन भावयेद्वैद्यवारकम् ॥ २४५० ॥

स्मृतिसागरनामाऽयं रसोऽपस्मारनाशनः ।
सर्पिषा माषमात्रोऽयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥२४५१

र. कौ., वृ. यो. ,नि. र., रसायनसं., यो. र., र. क यो., अपस्मारे ।

टि०—केषुचित्पुस्तकेषु सशिलाताम्रमरमनामिति पाठो लभ्यते, तत्र ताप्याऽभावोऽस्ति । तत्र तदभावो ज्ञानपूर्वको वा स्याद्भ्रममूलको वा स्यादिति सर्वं दृष्ट्वा तत्प्रक्षेपे च न कापि हानि. प्रतीयते अतस्ताप्ययुक्त एव पाठो ज्यायान् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, सोनामाखी और ताम्रभस्म सब समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर वच और ब्राह्मीकेस्वरसोंसे २१–२१ भावनाए देकर मालकांगनीके तैलकी एकभावना देकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथ देनेसे यह अपस्मारका नाशकरताहै और स्मृतिको जाग्रत करताहै ॥ ५७९ ॥

५८० स्वच्छन्दगोलकरसः

पथ्या व्यूषणवह्निमन्थसुरसाः भृङ्गी विषं टङ्कणं,
गन्धं तालकमाक्षिकायसरजः सूतं द्रवन्तीफलम् ।
निर्गुण्डीस्वरसेन भावितमिदं स्वच्छन्दगोलाभिधं,
गुञ्जायुग्ममितं निहन्ति निखिलं शीतादिपूर्वं ज्वरम् ॥

र. प., ज्वरे ।

टि०—शार्ङ्गधरीयस्वच्छन्दभैरवद्रव्याणि सर्वाण्यस्मिन्सन्ति केवल द्रवन्तीफलस्याधिक्यम् । स्वच्छन्दभैरवे भावनायां मुण्डीनिर्गुण्ड्यावुभे गृहीते अत्र तु निर्गुण्ड्यैव भावना प्रदत्ता इति विशेषोऽस्ति तस्याऽत्रै वाऽन्तर्भावं कर्तुमुचितं. परन्तु प्रथमवातगजाङ्कुशेनाक्षरशः साम्यात्तत्रैवाऽन्तर्भावः कृतोऽस्ति । अयं तु जयपालयुक्ततया स्वतन्त्रतयैव निहित इति सुधीभिराकलनीयम् । वस्तुतस्तु वातगजाङ्कुशस्यैवाऽयमपभ्रंशोऽस्ति ।

भाषा—हरें, त्रिकटु, अरणी, तुलसी, काकडासींगी, शुद्ध बछनाग, भुनासुहागा, शुद्ध गन्धक, हरिताल, सोनामाखी, लोहभस्म, शुद्ध पारा और जमालगोटा समभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डीकेरससे १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत अथवा दाहपूर्वकज्वर नष्टहोताहै ॥ ५८० ॥

५८१ स्वच्छन्दनायकरसः (प्रथमः)

सूतगन्धकलोहानि रौप्यं सम्मर्दयेत्त्रयम् ।
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्ड्यास्तुलस्या गिरिकर्णिजैः २४५३
अग्निमन्थार्द्रजै वह्निविजयाब्धि जयासहा– ।
काकमाचीरसैरासां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥ २४५४ ॥
अन्धमूषागतं पश्चाद्वालुकायन्त्रगं दिनम् ।
आदाय चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ॥ २४५५ ॥
निर्गुण्डीदशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत् ।
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ॥
छागीदुग्धेन मुद्गं वा पथ्यमत्र प्रयोजयेत् ॥ २४५६ ॥

र. चि., र.क ,र.सं., रसायनस ,र का., यो. म., अभिन्यासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और रजतभस्म समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर सूर्यमुखी अथवा हुरहुर, निर्गुण्डी, तुलसी, गोकर्ण, अरणी, अदरख, चित्रकमूल, भाग, हरें, माषपर्णी अथवा मुद्गपर्णी और मकोयकेस्वरस तथा पांचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा अदरख अथवा निर्गुण्डी और दशमूलके क्वाथमें मरिचका प्रक्षेपदेकर इसकेसाथदेनेसे यह अभिन्यासज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य बकरीकेदूध अथवा मूगके यूषकेसाथदेवे ॥ ५८१ ॥

५८२ स्वच्छन्दनायकरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं सूतांशं मृतहेमकम् ।
मृतरौप्यञ्च ताम्रञ्च सर्वं तुल्यं पृथक् पृथक् ॥२४५७॥
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्ड्यास्तुलस्याश्चार्द्रकद्रवैः ।
भृङ्गोन्मत्ताखुकर्णीनामग्निकर्ण्यग्निमन्थयोः ॥ २४५८ ॥
तिलपर्णीचित्रकयोः काकमाच्या रसैः सह ।
मर्दयेत्त्रिदिनं खल्वे शुष्कं पित्तै विभावयेत् ॥२४५९॥
मात्स्यमाहिषवाराहच्छागमायूरजै दिनम् ।
अन्धमूषागतं पाच्यं वालुकायन्त्रगं दिनम् ॥ २४६० ॥
आदाय चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ।
निर्गुण्ड्या दशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत् ॥२४६१॥
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ।
पथ्यं स्यान्मुद्गयूषेण क्षीरे वाऽऽजेविधापयेत् ॥२४६२॥

नि. र., र. सु., र. को., र. का , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा., सुवर्णभस्म ½ भा., रजत और ताम्रभस्म १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सूर्यमुखी, निर्गुण्डी, तुलसी, अदरख, भंगरा, धतूरा, मूषाकर्णी, सफेदचित्रक, गोकर्ण, अरणी, हुरहुर, लालचित्रक, मकोय इनकेस्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, सुअर और मोरकेपित्तोंसे १–१ भावनादेकर अन्धमूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा अदरख, निर्गुण्डी और दशमूलकेस्वरस अथवा क्वाथोंमें मरिचका योगकर औचितीदेखकर किसी एककेसाथ देनेसे यह अभिन्यासको दूरकरताहै । इसमें पथ्य मूंगकेयूष अथवा बकरीके दूधकेसाथ देवे ॥ ५८२ ॥

५८३ स्वच्छन्दनायकरसः (तृतीयः)

मृतं सूतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् ।
तुल्यांशं मर्दयेद्द्रावे विदार्यार्द्रकसम्भवैः ॥ २४६३ ॥
भृङ्गधुत्थैः काकमाच्युत्थै गिरिकर्णीद्रवे दिनम् ।
सम्मर्द्य भाण्डगं रुद्ध्वा पचेन्मन्दाग्निना दिनम् २४६४
व्योषाग्निगन्धकविषैररण्युमयटङ्कणैः ।
समांशैश्चूर्णितै मिश्रैस्तुल्यांशं पूर्वसंयुतम् ॥ २४६५ ॥
त्रिदिनं मर्दयेद्द्रावे मुण्डीनिर्गुण्डिभृङ्गजैः ।
अष्टगुञ्जामितं खादेद्रसः स्वच्छन्दनायकः ॥ २४६६ ॥

सर्ववातहरः ख्यातो ह्यनुपानमिदं पिबेत् ।
लशुनं सैन्धवं तैलं कर्षमात्रं सुखावहम् ॥ २४६७ ॥

र. र., र. का., सन्निपाते। र. का. स्वच्छन्दभैरवेति नाम।

भाषा—शुद्धपारा, फोलाद और कान्तलोह इनकीभस्में, शुद्धहरिताल, सोनामाखी और गन्धक सममागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर विदारी, अदरख, भंगरा, मकोय और गोकर्णके स्वरसोंमें १–१ दिन मर्दनकर हण्डीमें बन्दकर एकदिनकी मन्दाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु, चित्रकमूल, शुद्ध गन्धक, और बछनाग, दोनों अरणी, सुहागा सब सममागकाचूर्ण सममागमिलाकर गोरखमुण्डी, निर्गुण्डी और भंगरेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ८–८ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली लशुन, सेंधानमक और तैल सममागमिलाकर १ कर्षकेसाथ लेनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै ॥ ५८३ ॥

५८४ स्वच्छन्दभैरवरसः (प्रथमः)

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः।
गुञ्जार्द्धं सन्निपातादिनवज्वरहरं परम् ॥ २४६८ ॥
आर्द्राम्बुशर्करासिन्धुयुतः स्वच्छन्दभैरवः।
इक्षुद्राक्षासितैर्वारु दधि पथ्यं रुचौ ददेत् ॥ २४६९ ॥

र. सं., र. चि., र. सु., रसायनसं., र. क., र. का., यो. म., ज्वराधिकारे।

भाषा—ताम्रभस्म और शुद्धबछनागका चूर्णकर धतूरेकेरससे १०० भावनाएं देकर आधीआधीरत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख, शक्कर और सैन्धवकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। अन्नपर रुचिहोनेपर ईख, द्राक्ष, शक्कर, ककड़ी और दही इनकेसाथ पथ्यदेवे॥

५८५ स्वच्छन्दभैरवरसः (द्वितीयः)

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च सैन्धवम् ।
ज्वालामुखीरसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ २४७० ॥
मूषिकायां निरुद्धाथ पुटेद्रात्रौ च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति यत्नं तस्मात्प्रयोजयेत् ॥२४७१॥
ग्रहण्यां सङ्ग्रहण्याञ्च कासे श्वासे विशेषतः।
उग्रासु ज्वरतन्द्रासु स्वल्पनिद्रासु योजयेत् ॥२४७२॥
अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।
तुष्टिं पुष्टिमसौ कुर्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥ २४७३ ॥

र. रा., रसचि., र. सु., ध., र. चं., र. का., कासे।

टि०—रसराजसुन्दरे द्विविधरसाने ज्वालामुखीरसाने निर्गुण्डी विन्यस्य रसान्तरता सम्पादिता सा स्वनातैव विशेषाऽभावात्।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक और सेंधानमक २–२ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर ज्वालामुखी (जलजांभुल मराठी, अथवा अग्निशाखा)के स्वरससे ५ दिन मर्दनकर मूषामें बन्दकर रात्रिमें मध्यमपुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगीकीअनुसारकेसाथदेनेसे ग्रहणी, सङ्ग्रहणी कास, श्वास, भयङ्करतन्द्रा, निद्रानाश इनसबको नष्टकर आदमीको हृष्टपुष्ट बनाताहै और कान्तिको बढाताहै ॥ ५८५ ॥

५८६ स्वच्छन्दभैरवरसः (तृतीयः)

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धमेकत्र कारयेत् ॥ २४७४ ॥
सिन्धुवारो रुद्रजटा नागरामलकं तथा ।
वृश्चिकाली रसैरासां कार्या मुद्गसमा वटी ॥२४७५॥
आर्द्रकस्य रसैः पेया जीरकञ्चानु पाययेत् ।
स्वच्छन्दभैरवाख्योऽयं सन्निपातोग्रयहन्मतः ॥२४७६॥
ग्रहणीसूतिकातङ्कं नाशयेदविकल्पतः ॥

र. सं., ज्वरे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सोनामाखी सममागकी नीलवर्णकज्जलीकर संभालू, रुद्रजटा, सोंठ, आंवले और बिछुआघासके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेसाथ देकर जीरेको पानीमें पीसकर पिलानेसे सन्निपातकी उग्रता, सङ्ग्रहणी और सूतिकारोगको यह नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

५८७ स्वच्छन्दभैरवरसः (चतुर्थः)

रसं गन्धं टङ्कणञ्च विषं चह्नं मृतं समम् ।
त्रिफलायाः कषायेण मर्दितं दिवसत्रयम् ॥ २४७७ ॥
दोलायन्त्रे याममात्रं पाचितं मन्दवह्निना ।
कोलपित्तेन सम्भाव्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥ २४७८ ॥
आर्द्रकस्यानुपानेन हन्यात्कण्ठककुब्जकम् ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृष्णायां शीतलं जलम् ॥
राजोपचारान्कुर्वीत रसः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४७९ ॥

वै. चि., धा., सन्निपाते।

टि०—धाइटे टङ्कण न हश्यते दिवसत्रयस्थाने दिवसद्वयमर्दनं विहितम्।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बछनाग, वङ्गभस्म सबसममागलेकर त्रिफलाकेक्वाथसे ३ दिन मर्दनकर १ पहर त्रिफलाकेक्वाथमें दोलायन्त्रसे मन्दअग्निपर पकाकर सूअरकेपित्तकी १ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह कण्ठकुब्जक सन्निपातको नष्टकरताहै। भूखलगनेपर दहीभात देना। प्यासकी अधिकताहोनेपर शीतलजल पिलाना और शीतोपचारकरना ॥ ५८७ ॥

५८८ स्वच्छन्दभैरवरसः (पञ्चमः)

रसेन द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद् दृढम् ।
लोहाष्टकं मृतसमं प्रत्येकञ्च मृतं क्षिपेत् ॥ २४८० ॥
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी विषमुष्टिः पुनर्नवा ।
नीलिका गिरिकर्ण्यर्करुष्णधत्तूरभृङ्गकम् ॥ २४८१ ॥
वृषभं काकमाची च प्रत्येकैकं समाहितः ।
मर्दयेत्रिदिनं खल्वे ततः पित्ते विभावयेत् ॥ २४८२ ॥

मात्स्यमाहिषमायूरे र्यावत्सिक्तं द्रवैरसम् ।
शताह्वा जीवनी रास्ना वाजिगन्धाहिवल्लरी ॥२४८३॥
कर्चूरो नागरश्चैला सर्पाक्षी सुरसत्वचः ।
जातबालस्य विष्ठा च फणागोक्षुरसंयुतम् ॥२४८४॥
समैरेभिः कृतां मूषां पूर्वोक्तं वेशयेद्रसम् ।
तं निरुद्ध्य ततो भाण्डे मृन्मये रोधयेत्पुनः ॥२४८५॥
स्रावकेण दृढं सन्धौ विलिप्य वस्त्रमृत्तिकाम् ।
अल्पाग्निना दिनं पाच्यं रसमादाय चूर्णयेत् ॥२४८६॥
पूर्वोक्तै र्भावयेत्पित्तै रसः स्वच्छन्दभैरवः ।
आर्द्रकस्य रसै र्देयः सन्निपाते त्रिगुञ्जकः ॥ २४८७ ॥
दशमूलेन निर्गुण्ड्याः क्वाथञ्चानु प्रपाययेत् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु पथ्यं दद्याद्यथोचितम् ॥२४८८॥

र सु , र. को., टो., र. (मा.), र का., ज्वराधिकारे।

टि०—सशुद्धास्तकाद्माषो भागैको द्विगुणो बलि ।
लोहाष्टकस्य कुर्वीत भागानष्टौ यथाक्रमम् ॥
तच्छुष्कं मर्दयेत्पूर्वं दिनमेकं निरन्तरम् ।
जयन्तीपत्रतोयेन मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥
कृष्णाया सुरसायाश्च माड्या नीरैस्तत परम् ।
पुनर्नवारसैस्तद्वद्विषमुष्टिरसैस्तथा ॥
नालिकासलिले र्मर्द्यो गिरिकर्णीरसैस्तथा ।
अर्कक्षीरे दिनं मर्द्यं सर्पावर्तरसैस्तथा ॥
त्रिजगद्विजयानीरै सर्वान्ते सम्भ्रमर्दयेत् ।
मात्स्यमाहिषमायूरपित्तैरपि विभावयेत् ॥
ततस्तद्गोलकं कृत्वा छायायां सम्प्रशोषयेत् ।
तुलसीरससम्पिष्टतुलसीत्वग्विलेपिते ॥
पक्वमूषान्तरे क्षिप्त्वा मुखं सम्यङ्निरोधयेत् ।
घटिकाद्वितयं यावद्दीपमानप्रमाणत ॥
पचेत काष्ठशिखिना स्वाङ्गशीतल्मुद्धरेत् ।
सन्निपातहर सोऽयं रस स्वच्छन्दभैरव ॥
नानारोगान्निहन्त्याशु सुविधानेन योजित ।
आर्द्रकस्य रसेनैन रस सम्यक प्रयोजयेत् ॥
निर्गुण्डीसलिलेनाथ क्वाथाद्वा दशमूलजात् ।
अनुपाने प्रयोक्तव्य क्वाथश्च दशमूलज ॥
वल्ल वाय द्विवल्ल वा शीतप्राधान्यरोगके ।
कुर्वीत स्वेदन सम्यगर्कमूलकषायकै ॥
रक्तप्राधान्यजे रोगे वक्ष्मो रुधिरच्युतौ ।
मरिचेन विमिश्रन्तु शीतै स्यादनुपानकम् ॥
कर्तव्य श्लेष्मजे रोगे नस्य तु लशुनादिभि ।
इम प्राप्य रस रोगी सन्निपाताच्च नश्यति ॥
मुद्गञ्च कुल्क कल्प्य पथ्यार्थे भिषजा सदा ॥"

इति रसालङ्कारीयपाठस्वरवैत्रापभ्रंशोऽस्ति । भावनाविशेषेषु प्रीति श्चेदेव तदनुष्ठान कुलैक एव रस सम्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध पारा और आठोंलोहोंकीभस्में १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मी, जैंती, निर्गुण्डी, कुचिला, पुनर्नवा, कालादाना, गोकर्ण, आककादूध, कालाधतूरा, भंगरा, अड्सा, मकोय इनप्रत्येकके द्रवोंसे ३–३ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर इनकेपित्तोंसे १–१ भावना देवे। फिर सौंफ, जीवन्ती, रास्ना, असगन्ध, पान, कचूर, सोंठ इलायची, अन्धाहूली, तुलसी, तज, तत्कालउत्पन्नहुए बालककी-विष्ठा, पीपल और गोखरू सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर इनकी मूषाबनाय पूर्वोक्तरसको इसमें रखकर हण्डीमें बन्दकर वस्त्रमिट्टीसे मुखमुद्रा देकर १ दिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्वोक्त औषधियोंके स्वरस और पित्तोंसे १–१ भावना देकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती दशमूल अथवा निर्गुण्डीके काढेकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर यथेष्टभोजनदेवे ॥ ५८८ ॥

५८९ स्वच्छन्दभैरवरसः (षष्ठः)

सममागांश्च सङ्गृह्य पारदामृतगन्धकान् ।
जातीफलस्य भागार्द्धं दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् २४८९
सर्वार्द्धं पिप्पलीचूर्णं खल्वयित्वा निधापयेत् ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा नागवल्लीदलैः सह ॥ २४९० ॥
आर्द्रकस्य रसेनापि द्रोणपुष्पीरसेन वा ।
शीतज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ॥ २४९१ ॥
पीनसे च प्रतिश्याये ज्वरेऽजीर्णे तथैव च ।
मन्देऽग्नौ वमने चैव शिरोरोगे च दारुणे ॥ २४९२ ॥
प्रयोज्यो भिषजा सम्यग्रसः स्वच्छन्दभैरवः ।
पथ्यं दध्योदनं दद्याद्वीक्ष्य दोषबलाबलम् ॥ २४९३ ॥

भै र , र. कौ , र. सु , वै. र , ब रा , र. सा , टो ,र का , र क यो., र र कौ , बा., र. पा , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक १–१ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर जायफल आधाभाग मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर सबसे आधा पीपलकाचूर्ण मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ अथवा २ रत्ती पान, अदरख अथवा गूमाकेस्वरसकेसाथ देनेसे शीतज्वर, सन्निपात, विसूचिका, विषमज्वर, पीनस, प्रतिश्याय, ज्वर, अजीर्ण, मन्दाग्नि, वमन, भयङ्कर शिरोरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। दोषोंका बलाबल देखकर दहीभात अथवा अन्यवस्तु पथ्यमें देवे ॥ ५८९ ॥

५९० स्वच्छन्दभैरवरसः (सप्तमः)

तीक्ष्णायस्कान्तगोदन्तमाक्षिकै र्मर्दितो रसः ।
समांशगन्धकः पक्वो हण्डिकायश्रमध्यगः ॥ २४९४ ॥
व्योषाग्निमन्थसुरसाकन्दशृङ्ग्यभयाविषैः ।
समैःसमं त्र्यहं मुण्डीनिर्गुण्डीरसपिण्डितः ॥२४९५॥
सेवित शमयेद्वातान्रसः स्वच्छन्दभैरवः ।
विशेषाद्वातरक्तञ्च द्विवल्लश्चार्द्रके लिहेत् ॥ २४९६ ॥

र र. स , वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—फौलाद, चुम्बक, गोदन्ती, सोनामाखी इनकी-भस्में, शुद्ध पारा और गन्धक सबसमभागकी नीलवर्ण-कज्जलीकर चिकनीहंडीमें रख कोयलोंपर लोहेकीशलाकासे चलाताहुआ एकपहर पाककरे। गन्धकजलजानेपर उतारकर रसको निकालले। फिर इसमें त्रिकुटा, अरणी, तुलसी, सूरण, काकड़ासींगी, हर्रे और बछनाग सब समभागका बारीकचूर्णकर

पूर्वरसकीबराबर मिलाय गोरखमुण्डी और निर्गुण्डीकेस्वरससे ३–३ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे समस्त वातविकार और विशेषकर वातरक्त नष्टहोताहै ॥ ५९० ॥

५९१ स्वच्छन्दभैरवरसः (अष्टमः)

मृतं नागाभ्रकं लोहं हिङ्गुलं रसगन्धकौ।
जेपालं तुल्यकश्चात्र कासीसं दशमांशकम् ॥ २४९७ ॥
भावयेत्पञ्चभिः पित्तैः जलयोगञ्च कारयेत्।
सन्निपातहरः सूत एषः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४९८ ॥

र. शं., सन्निपाते।

भाषा—नाग, अभ्रक और कान्तलोह इनकीभस्में, शुद्धशिंगरफ, पारा, गन्धक और जमालगोटा १–१ भाग, कसीसभस्म दशवांभागलेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें जमालगोटेको मिलाय पांचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै। दाहमालूमहोनेपर जलधाराका प्रयोगकरे ॥ ५९१ ॥

५९२ स्वच्छन्दभैरवरसः (नवमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं नेपालं टङ्कचित्रकम्।
अर्कमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ २४९९ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
कोष्ठवातादिकान्वातान्सर्वानेव विनाशयेत् ॥ २५०० ॥

व, रा., वै. चि., कोष्ठवाते।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, जमालगोटा, सुहागा और चित्रकमूल सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आककी जडकीछालकेकाढेसे १ पहर मर्दनकर आकके काढेमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवातविकारोंको नष्टकरताहै ॥ ५९२ ॥

५९३ स्वच्छन्दभैरवरसः (दशमः)

शुद्धसूतस्य गद्याणान्दश यन्त्रे हि भूधरे।
क्षिप्त्वा गन्धकजं देयं षोडशांशं पुटे पुटे ॥ २५०१ ॥
एवं शतपुटे जार्यः षड्गुणः शुद्धगन्धकः।
अधोवस्त्रपिधानेन मुखमाच्छादयेद् दृढम् ॥२५०२॥
मुखं वस्त्रमृदा लिप्त्वा वारम्वारं पुटेच्छतम्।
एकैकञ्च पुटं देयं वैदैर्वेदैश्च गोमयैः ॥ २५०३ ॥
एवं पुटशतं दत्त्वा निष्कास्यो भूधराद्रसः।'
तिथिवर्णसुवर्णस्य रूप्यस्याप्युत्तमस्य च ॥ २५०४ ॥
ताम्रस्याप्यतिशुद्धस्य शुद्धकान्तायसोऽपि च।
तथा चाभ्रकसत्त्वस्यैकैको गद्याणकः पृथक् ॥ २५०५ ॥
पञ्चानां पञ्च गद्याणानेकत्रावर्तयेत्सुधीः।
खोटमावर्तयित्वा च कुर्याचूर्णं सुसूक्ष्मकम् ॥ २५०६ ॥
पुटोत्तीर्णं रसं क्षिप्त्वा सुपेष्यमतिसूक्ष्मकम्।
तिथिगद्याणकानाञ्च पिष्टिः स्यादतिसुन्दरा ॥२५०७॥
विंशते निम्बुकानाञ्च खण्डकानि विनिःक्षिपेत्।
काञ्जिके लवणोपेते स्थालिकायां शनैर्मुहुः ॥ २५०८॥
दोलायन्त्रेण तां पिष्टिं स्वेदयेच्च दिनत्रयम्।
काञ्जिकेन समं स्पर्शो निषेद्धयः स्वेदने सदा ॥२५०९॥
खल्वे पञ्चदश क्षेप्या गद्याणाः शुद्धगन्धकात्।
पिष्ट्याः पञ्चदश क्षेप्यामिश्रांस्त्रिशच्च पेषयेत् ॥२५१०॥
सर्वस्य कज्जलीं खल्वे वज्रीक्षीरेण वासरम्।
दिनैकञ्चार्कदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम् ॥२५११॥
क्षिप्त्वा सुभूधरे यन्त्रे पिधानञ्च मुखे न्यसेत्।
मुखं वस्त्रमृदा लिप्त्वा अष्टभि र्गोमयैः पुटम् ॥२५१२॥
एकैकं चाष्टभि र्देयं छाणकैः पुटमष्टभिः।
त्रयोदश पुटानि स्यु विंना कर्पटमृत्तिकाम् ॥ २५१३ ॥
द्वारं नोद्घाटनीयञ्च भस्म सञ्चालयन्मुहुः।
चतुर्दशपुटे जातः सिन्दूराभः सुगोलकः ॥ २५१४ ॥
खल्वे कृत्वा च तच्चूर्णमेभिश्च भेषजैः पुटेत्।
त्रिकटो र्वारिणा पूर्वं त्वेकविंशतिभावनाः ॥२५१५॥
सप्ताद्रंकरसेनैव सप्त कण्टकशीलिनः।
फणिनागविषस्यापि गद्याणान्पञ्च निक्षिपेत् ॥२५१६॥
श्रीखण्डेन प्रदातव्या पश्चादेकैव भावना।
तच्चूर्णं कुम्भके क्षेप्यं भवेत्स्वच्छन्दभैरवः ॥ २५१७ ॥
प्रत्यहञ्च समुत्थाय रक्तिमात्रश्च रोगिभिः।
अविच्छिन्नो रसो ग्राह्यो शीतेन पयसा समम् २५१८
सर्वेषु च प्रमेहेषु शूलेषु विविधेषु च।
सक्षयसन्निपातेषु समस्तेष्वपि वायुषु ॥ २५१९ ॥
अतीसारेषु सर्वेषु रक्तातीसारवर्जितः।
रोमहर्षेषु मेदस्सु समस्तेषूदरेषु च ॥ २५२० ॥
वक्रकोष्ठे च मन्दाग्नौ गुल्मे च वातरक्तके।
कासे श्वासे तथा शोफेऽजीर्णके श्लेष्मसम्भवे २५२१
श्वेतवर्जितकुष्ठेषु देयः सततदाहस्वपि।
ज्वरेषु च समस्तेषु पित्तज्वरविवर्जितः ॥ २५२२ ॥
ज्वरेषु रात्रौ दातव्यो न प्रभाते कदाचन।
तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरभोजनम् ॥ २५२३ ॥
मासैकानन्तरं रोगाद्विमुच्येत शनै र्ध्रुवम्।
बलवानुद्यमी शूरो तेजस्वी जायते नरः ॥ २५२४ ॥

र. कं. लौ., ज्वराधिकारे।

भाषा—पांचतोले शुद्धपारेपर सोलहवां हिस्सा गन्धकका चूर्ण छिडककर भूधरयन्त्रकी इतनी आंचदेवे कि गन्धकमात्र जलजाय (जङ्गली छोटे छोटे ४ कण्डोंसे अधिक आंच न दें)। ऐसे १०० पुट देकर षड्गुणगन्धक जारणकरे। फिर विशुद्धसुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्त और अभ्रकसत्त्व ६–६ माशेलेकर एकजगह गलाय पारेको मिलाकर खोट तैयारकरे, पर यह ध्यान रक्खे कि पारा पडनेसे गलीहुई धातुएं उछलकरतीहैं ऐसा न होनेपावे।

इसके बाद नीबूकेरससे मर्दनकर गोलीबनाय ४ तह मलमलके कपड़ेमें रखकर लवणयुक्तकाञ्जीको हंडीमेंभर २० नीबुओंके टुकड़े करके डालदे और ऊपर गोलीको लटकादे। नीचेसे ३ दिनतक इतनी मन्द आंचदे कि पोटलीको केवल वाष्पही लगे उफान न आवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पिट्ठीको खरलमें डाल ७॥ तोले शुद्ध गन्धकके साथ नीलवर्णकज्जली करे। फिर थूअर और आकके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ८ जङ्गलीकण्डोंकी भूधरपुटमें आंचदे परन्तु सम्पुटका मुह न खोले। १४ पुटोंमें यह सिन्दूरवर्णका होजायगा। फिर इसको खरलमें डाल त्रिकुटेकेक्वाथसे २१, अदरख और भटकटैयाकेरससे ७-७ भावनाएं देकर पचीकाले-सर्पकाविष २॥ तोले डालकर सुखावे और चन्दनरेपड़की एक भावना देकर सुखाकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती प्रातःकाल ठंडे जलकेसाथ प्रतिदिनलेवे। इससे समस्तप्रमेह, नानाप्रकारकेशूल, राजयक्ष्म, समस्तसन्निपात, वातरोग, रक्तातिसारकोछोड़कर समस्त अतिसार, रोमहर्ष, मेदोरोग, सबप्रकारके उदररोग, बद्धकोष्ठता, मन्दाग्नि, गुल्म, वातरक्त, कास, श्वास, शोथ, कब्ज अजीर्ण, भ्रमरहितसमस्तकुष्ठ, पित्तवर्जितसमस्तज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। ज्वरोंमें रात्रिमें देना सबेरे नहीं। तैल, क्षार और खटाईको छोड़कर मधुर भोजनकरे। एक महीनेके प्रयोगसे धीरे २ समस्तव्याधियां नष्टहोजातीहै ५९३

५९४ स्वच्छन्दभैरवरसः (एकादशः)

रसगन्धककुष्ठमै भूत्वा सहितेश्च मरिचकैं द्विगुणैः।
तत्समकपर्दचूर्णं स्यातः स्वच्छन्दभैरवो नाम॥२५२५॥
कफवातदोषशमनं कुरुते स्वच्छन्दभोजनेनापि।
प्रतिदिवसमेकमाषप्रमाणतः पुष्टिदो भवति॥२५२६॥

र. (मा.), रससारसङ्ग्रह, कफवाताधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बाकुची, जङ्गलीकण्डोंकीराख १-१ भाग, मरिच और कौड़ीभस्म २-२ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह कफवाताधिक्यको नष्टकरताहै ५९४

५९५ स्वर्जिसारादियोगः

स्वर्जिका यावशूकश्च विजयातिविषा समम्।
दीप्यकं पारदं गन्धं निम्बुनीरेण भावयेत्॥२५२७॥
माषार्द्धं मधुना देयं सितया वा घृतान्वितम्।
अनुदयाद्ग्रहण्यर्तिज्वरार्तासारशान्तये॥
सशूलशोथसहितां ग्रहण्यर्तिं प्रणाशयेत्॥२५२८॥

नि र., ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—सज्जी, यवक्षार, भांग, अतीस, अजवाइन, शुद्धपारा और गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबूकेरसकी १ भावना देकर आधे-आधे माशेकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधु, शक्कर अथवा घीकेसाथ देनेसे ग्रहणी, ज्वरातिसार, शूल और शोथसहित ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ५९५॥

५९६ स्वयमग्निरसः

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं कुर्यात्खल्वेन कज्जलीम्।
तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः॥२५२९॥
द्वियामान्ते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत्।
आच्छाद्यैरण्डपत्रेण यामार्द्धेऽत्युष्णता भवेत्॥२५३०॥
धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात्त्रिदिनान्ते समुद्धरेत्।
सञ्चूर्ण्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत्॥२५३१॥
भावयेत्कन्यकाद्रावैः सप्तधा भृङ्गजैस्तथा।
काकमाचीकुरण्टोत्थद्रवै मुण्ड्याः पुनर्नवैः॥२५३२॥
सहदेव्यमृतानीलीनिर्गुण्डीचित्रजैस्तथा।
सप्तधा तु पृथग्द्रावै भाव्यं शोष्यं तथाऽऽतपे २५३३
सिद्धयोगोऽयमाख्यातः सिद्धानाञ्च मुखागतः।
अनुभूतो मया सत्यं सर्वरोगगणापहः॥२५३४॥
स्वर्णादीन्मारयेद्देवं चूर्णीकृत्य तु लोहवत्।
त्रिफलामधुसंयुक्तं सर्वरोगेषु योजयेत्॥२५३५॥
त्रिकटुत्रिफलैलाभि जातीफललवङ्गकैः।
नवभागोन्मितैरेतैः समः पूर्वरसो भवेत्॥२५३६॥
सञ्चूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रे भक्ष्यं माषप्रमाणकम्।
स्वयमग्निरसो नाम्ना क्षयकासनिकृन्तनः॥२५३७॥

शा. सं., वै. र., वै. क., र. र. स., नि. र., रसचि., भा. प्र., बं. रा., र. प्र., भै. सा., रसायनसं., र. सं., र. को., र. यो., र. का., वै. चि., र. क. ग., र. शि., र. र., र. कौ., क्षयाधिकारे।

टि०—बहुषु पुस्तकेषु "इन्द्रवारुणिकामूल मृतीद्रप्यानिदै मह। भक्षयेत्क्षयकासार्तो माषमात्र प्रशान्तये॥" इत्यधिक पाठो दृश्यते पर तत्र इन्द्रवारुणिकामूलस्य रेचकत्वापत्तेरिति स्याद्विचनस्य तत्रैव बुद्ध्या विमृश्य योजनीयम्। र. प्र., भै सा., ग्रन्थो औनीकल्पकै स्वानुपान विन्यस्य भनस्मिमारित लौह सर्वतुल्य विभिधपेदिति गदयित्वा स्वयमग्निरसस्वरूपं प्रदर्शितम्। र. चि., धी. म., र. (मा.), र. मि., रसायनम., भा. प्र. एषु ग्रन्थेषु—

"शुद्ध सूत द्विधा गन्ध खल्वे घृत्वा तु कज्जलीम्।
तयो सम कान्तलौहमथवे तस्य तीक्ष्णकम्॥
सर्वत्र देवदेवेशि मर्दित कन्यकाद्रवै।
यामद्वय तत पश्चाद्गोल ताम्रसम्पुटे॥
आच्छाद्यैरण्डपत्रैस्तु धान्यराशौ निधापयेत्।
त्रिदिनान्ते समुद्धृत्य सिद्ध वारितर भवेत्॥
कुमारीभृङ्गकंरण्डी काकमाची पुनर्नवा।
नीली मुण्डी च निर्गुण्डी सहदेवी शतावरी॥
अम्लपर्णी गोक्षुरक कन्दुमूल पटोलकम्।
एतेषां स्वरसैः प्रसवाराद्यैश्च पृथक्॥
चूर्णयित्वाऽश्चयेदग्नौ च्यवनवर्ण तु भावयेत्।
सुभूक्ष्मतल्ले च चूर्णं सर्वरोगप्रणाशकम्॥
वरा व्योषत्रिविधैन जातीफललवङ्गकम्।
मधोन्य मधुनाऽऽलोड्य भक्षयेत् सर्वरोगहा॥
धात्री निवृत्त धीरे कृष्णा च तिलेषु।
भक्षयेत्कासश्वासपुरोभक्ष्य निवारयेत्॥

वीर्यवृद्धिकर श्रेष्ठ रामाशतसुखप्रदम्।
तावन्न च्यवत वीर्यं यावदम्ल न सेवते ॥
दीपन कान्तिद पुष्टितुष्टिश्रीस्सेविना सदा।
सुगुप्त कथित सूत सिद्धयोगेश्वराभिध ॥"

इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र भावनानामेतदपेक्षया बहुलत्वम्। रस निष्पादनप्रकारस्तु एक एवाऽस्ति। शा स, नि र, र सु, भै सा, रसायनम, र. धा, एषु ग्रन्थेषु लोहरसायन नाम्ना—

"शुद्ध रसेन्द्र भागैक द्विभाग शुद्धगन्धकम्।
क्षिपत्कज्जलिका कृत्वा तत्र तीक्ष्णभव रज ॥
क्षिप्त्वा कज्जलिकातुल्य प्रहरैक विमर्दयेत्।
तत्र कन्याद्रवै खल्वे त्रिदिन परिमर्दयेत् ॥
तत स्थापने तत्र सोष्णो धूमोद्गमो महान्।
अत्यन्त पिण्डित कृत्वा ताम्रपात्रे निधाय च ॥
मध्ये धान्यकशूकस्य त्रिदिन धारयेद्बुध ।
उद्धृत्य तस्मात्खल्वे च क्षिप्त्वा घर्मे निधापयेत् ॥
रसै कुठारच्छिन्नायास्त्रिवल्ल परिभावयेत्।
सशोष्य घर्मे क्वाथैश्च भावयेत्त्रिस्त्रोस्त्रिधा ॥
वासामृताचित्रकाणा रसै भाव्य क्रमात्त्रिधा।
लोहपात्रे तत क्षिप्त्वा भावयेत्त्रिफलाजलै ॥
निर्गुण्डीदाडिमत्वग्भि विम्बकुरण्टकै ।
पलाशकदलीद्रावै बीजकस्य शृतेन वा ॥
नीलिकालम्बुषाद्रावै बम्बूलफलिकारसै ।
त्रिस्त्रिवेल यथालाभ भावयदेभिरौषधै ॥
भावयत्त्रिस्त्रिवेलञ्च ततो नागवल्लारसै ।
बलावरीगोक्षुराद्भि पातालगरुडीरसै ॥
तत प्रात लिहेत्क्षौद्रघृताभ्या कोलमात्रकम्।
तस्मात् वराक्वाथ पिबेदस्यानुपानकम् ॥
मासमत्र शीलित स्याद्वलीपलितनाशनम्।
मन्दाग्नि श्वासकासौ च पाण्डुता कफमारुतौ ॥
पिप्पलीमधुसयुक्त हन्यादेनत्र सशय ।
वातास्र मूत्रदाघश्च ग्रहणीं तोयगा रुजम् ॥
अण्डवृद्धि जयेदेनच्छिन्नासत्वमधुप्लुतम्।
बलवर्णकर वृष्यमायुष्य परम स्मृतम् ॥
कूष्माण्ड तिलतैलञ्च नराश्च राजिका तथा।
मद्यमम्लरसञ्चैव त्यजेल्लोहस्य सेवक ॥"

इति पाठो निहितोऽस्ति। अत्रापि मूलपाठाद्भावनास्वति विस्तरोऽस्ति। रसनिर्माणशैल्या नाऽस्ति कश्चिद्विशेषता। त्रिष्वपि पाठेषु क्षयरसायनेऽभिहिते स्त, भावनाश्च सर्वा अपि एतद्द्वयाऽधिकारोपयुक्ता एव दृश्यन्ते। कस्याश्चिदपि भावनायां प्रतिकूलत्व न दृश्यते अतस्त्रिविधपाठमनुसृत्य सर्वाभि भावनाभिरेक एव पाठ सङ्ग्रथित इत्यस्माक मन्मति। भावनानां क्रमस्तथानिर्दिष्टक्रमेण करणीय ॥ यथा—कुमारी, काकमाची, पुनर्नवा, सहदेवी, गुडूची, नीली, निर्गुण्डी, चित्रक, चाङ्गेरी, कुटज, वासा, दाडिम, सातलानी, त्र्यूषण, त्रिफला, वटाङ्कुर, पातालगरुडी, पर्णी, मुण्डितिका, भृङ्गराज, शालुक, कदलीमूल, कुरण्टक, भृङ्ग, बला, नागबला, बब्बूलफलिका, शतावरी, बीजकनिर्यास, एलाशाकस्वरसैरेभि प्रत्येक सप्त भावना दातव्या इति ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर उसकेबराबर फौलादका बारीकरेता डालकर घीकुवारके रसमें दोपहर मर्दनकर गोलाबनाय तांबेके पात्रमें रख एरण्डकेताजेपत्तोंसे ढककर कडीधूपमें रखदे। आधे पहरमें यह अत्यन्तगरमहोजायगा फिर इसे उन्हीं पत्तोंसे लपेटकर कचेडोरेसे बांध अनकी राशिमें दबादे। तीनदिनबाद निकालकर खरलकर वस्त्रमें छानलेवे इसकी वारितर भस्महोगी। फिर घीकुंवार, भगरा, मकोय, पीयावासा, गोरखमुण्डी, पुनर्नवा, सहदेवी, गिलोय, कालादाना अथवा नील, निर्गुण्डी और चित्रकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं कडीधूपमें देवे। यह सिद्धयोगहै सिद्धपरम्परासे चला आताहै और कईवारका अनुभूतहै। त्रिफला और मधुकेसाथ उचितमात्रामें देनेसे यह सवरोगोंपर कामकरताहै। इसीप्रक्रियासेसुवर्णादि धातुओंकी भी भस्महोतीहै।

विशेषसूचना—इसे अग्निसम्पर्क जबतक नहीं होता तभी तक यह वारितर रहतीहै अग्निसंयोगहोनेकेबाद पारद गन्धक उड़जाताहै और केवल धातु पानीमें डूबजातीहै ॥ ५९६ ॥

५९७ स्वरप्रसादकरसः

पारदं गन्धकं तुल्यं तालकञ्च मनःशिला।
मर्द्यं तुल्यं पञ्चकोलजलैस्तु दिवसत्रयम् ॥ २५३८ ॥
ततः पुटेद्गजपुटे शरपुङ्खाजलैः पुनः।
सम्मर्द्य पाचयेद्भूयस्ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ २५३९ ॥
स्वरप्रसादको नाम रसोऽयं दृष्टविक्रमः।
पर्णखण्डेन दातव्यो गुञ्जाद्वयमितो बुधैः ॥
गुडार्द्रकेण मद्येन पिप्पलीमधुनाऽथवा ॥ २५४० ॥

र. म. मा, र सु, ना वि, स्वरभेदे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल सम भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पञ्चकोलकेक्वाथसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३ दिन शरपुङ्खकेस्वरसमें मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती पान, गुड, अदरख, मद्यअथवा पीपल और मधु इनमेंसे किसीभी अनुपानके साथ लेनेसे स्वरभङ्ग नष्टहोताहै ॥ ५९७ ॥

५९८ स्वरभेदहररसः (रसराज)

स्वरभेदप्रतीकारो रसराजोऽथ कथ्यते।
रसद्विगुणितो गन्धो द्रावयेल्लोहपात्रके ॥ २५४१ ॥
ढालयेत्कदलीपत्रे साधयेदपि तेन तु।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य मर्दयेत्त्र्यूषणाम्बुना ॥ २५४२ ॥
ततश्च जतुतक्रेण दिवसत्रितयं पृथक्।
सिद्धो भवेदेष सूतः स्वरभेदापहो भवेत् ॥ २५४३ ॥
गुञ्जाचतुष्टयं व्याप्य त्रिसुगन्धगुडेन तु।
बदरीपत्रकल्केन घृतसैन्धवयुक्तया ॥ २५४४ ॥

र, स्वरभङ्गे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईलोहेकी कडाहीमें गलाकर गोबरपर रक्खे हुए केलेके पत्तोंपर पर्पटीबनाय त्रिकटुकेक्वाथ, शिलाजीत और तक्रसे ३–३ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर

रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली त्रिसुगन्ध, गुड अथवा बेरके पत्तोंकेकल्क अथवा घी और सैंधेनमकसाथ देनेसे यह स्वर भङ्गकोनष्टकरताहै॥ ५९८॥

५९९ स्वर्णक्षीरीरसः

हेमाह्वा पञ्चपलिका क्षिप्त्वा तक्रघटे पचेत्।
तत्रे जीर्णे समाहृत्य पुन क्षीरघटे पचेत् ॥ २५४०॥
क्षीरे जीर्णे समुद्धृत्य क्षालयित्वा विशेषत।
तच्चूर्ण पञ्चपलिक मरिचाना पलद्वयम् ॥ २५४६॥
पलैक मूर्च्छितं सूतमेकीकृत्य तु भक्षयेत्।
निष्कैक सुतिक्ष्णुद्धार्त स्वर्णक्षीरीरसा ह्ययम् ॥२५४७॥

रा स, र यो, र प्र सु, भै सा, रसायनस, र र.स, रसायनस, र प्र, र मं, टो, र का, कुठे।

भाषा—५ पल सत्यानाशीकीजड़को एकद्रोण छाछमें डालकर पकावे। छाछजलजानेपर एकद्रोण दूधमें पकावे। दूधगाडा होनेपर निकालकर अच्छीतरह धोकर सावधरक इसकाचूर्ण ५ पल, मरिच २ पल, रससिन्दूर अथवा कज्जली १ पल लेकर १-२ पहर घोटकर रखछोड़े इसमेंसे ४-४ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकसाथ देनेसे यह गुलजहरीको नष्टकरताहै ५९९

६०० स्वर्णादिगुटिका

स्वर्णरौप्यार्कमुक्ताद्य यार्धिकेनवराभृता।
द्राक्षाम्यापनिशाशुल्यप्रयालमधुयष्टिका ॥ २५४८॥
सर्वं शीतनकाम्भोभि पिष्ट तु घटिका हरेत्।
अशोषाक्षयनातङ्कान्वेगतस्तदुपद्रवान् ॥ २५४९॥

रसायनस, र र दी, नत्ररोग।

भाषा—सुवर्ण रजत, ताम्र मोती, शङ्ख, मुंगा, प्रवाल इनकीभस्में, समुद्रफेन त्रिफला, गिलोय, निर्गुड हल्दी, मुलहठी यसव समभाग लेकर बारीकचूर्णकर गुलहठीकाक्वाथसे २-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंस १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेस और स्नानसे नेत्रोंक व्याधि और उपद्रव नष्टहोतहै॥ ६००॥

६०१ स्वायम्भुवगुग्गुलुः

शुद्धशिलेत्का पञ्चपला तावत्रिगिरिजाश्च गुग्गुलं देव च।
पलमिक तार्प्य स्याद्वे लौहाभ्रयणिसायाश्च ॥२५५०॥
त्रिफलायवकरअपलयस्तदिरगुडूचीवचात्रिवृद्दन्ती-
मुस्तायिडङ्गरजनीचतुरङ्गुलपहिंगुदलञ्च ॥ २५५१॥
पलिकैश्चूर्ण घेनमूत्रेण गवां पिवेदर प्रात।
कुष्ठी घृतमधुमिश्रं जयत्यसृग्यातमचिरेण ॥ २५५२॥
भिन्नाणि कुष्ठकाठो विषगरगुल्मादराप्रमेहाश्च।
उन्मादभगन्दरमपस्मृतिसीपदक्रिमिभिश्चामान् ॥
पलितायुतं पन्ति जयति स्वयम्भूयेन प्रात ॥२५५३॥

॥ नि भा प्र वृ३।

टि०—[illegible] [illegible] [illegible]

अनु तयोस्तुल्य पलानि दश गुग्गुल। सर्वाण्येतच्च सम्य गुल्लिकाः कार येद्बुध ॥ शाण कर्षक वा तत्र खदेत्यामत। वनरसुगन्धानि मिश्राणि विविधानि च॥ [illegible] प्रद्युम्नाप्राग्। बस्तिर्गा [illegible] पाण्डुनामुरानि च॥ [illegible] मृता मध्य विशेषत। नानित्रायाथ सर्वाणु हन्यादिदं [illegible]॥ वृध्या वन्ध्यश्च धन्यश्च कया यथाविधत। मायुर्वरस्वन्य पुत्रांमा भ्यदस्तथा॥ गर्भनधानहत्यातत गर्भपुष्टिकर परम्। [illegible] सिल्याना नाम्ना स्वायम्भुवो गुरि॥ „ इति [illegible] प्रकपितास्ति पत्न्तु प्रतियुक्ते गुणाधिक्यातयान्तरवनायां पलाभाबान्न त्याग भवतीय।

भाषा—बाकुची और शिलाजीत ५-५ पल, शुद्धगुग्गल १० पल, सोनामाखी ३ पल, लोहभस्म और गोरखमुण्डी १-१ पल, त्रिफला, करञ्जकपत्ते, खैरसार, गिलोय, वच, निसोत दन्तीमूल नागरमोथा, विडङ्ग, हल्दी, अमिलताशकागुदा चित्रकमूल कुँवारपाठा १-१ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ मासे गोमूत्र अथवा घी और मधुके साथ लेनेसे वातरक्त, भित्र, कुष्ठ, मस्से, पदर गर, गुल्म, उदररोग, प्रमेह, उन्माद भगन्दर, अपस्मार, श्लीपद, क्रिमि, ज्वारा, बलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ६०१॥

६०२ स्वेदशैत्यारिरसः

ताम्रशुण्ठ्यर्कमूलानि त्रिनिष्काणि पृथक्पृथक्।
पवत पञ्चलवणानामर्ल पिष्ट्वा पुट ददत् ॥ २५५४॥
गन्धेदारदभस्मानि पेदनिष्कमितानि च।
देवदालीरसैं पिष्ट्वा त्रिदिन कैकिपित्तक ॥ २५५५॥
स्वेदशैत्यापनुत्त्यर्थं पहमाष प्रयोजयेत्।
दध्ना सम्मर्दयेत्पाने जलत्याग समाचरेत् ॥
पथ्य घृत सिन्धुमुद्गसर्जरसकाम्लनी ॥ २५५६॥

र सु, सन्निपात।

भाषा—ताम्रभस्म, सोंठ और आकर्मा ८-८ मासा, पाचोंनमक १ पल लेकर बारीकचूर्णकर हण्डीमें बन्दकर गजपुट की आंचद। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शुद्धपारा और गन्धकभस्म १-१ करके कज्जलीकर पुराममें मिलाय बन्दालरसमें १ दिन मर्दनकर मोरके पित्ता १ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दहीकेसाथमिलाकर देनेस शीतज्वर निवृत्तहोताहै। [illegible] मात्रमहोनेपर जलपानका त्यागकर। घी, सैंधव, मूंग, मद्गुर, ईख और दुग्ध पथ्यमें देव॥ ६०२॥

६०३ हरगौरीरसः (पयवामाम) १

रसार्द्ध हेमताप्य पद्ममारितमस्तकम्।
मार्ग तुल्य मूर्त कान्तं समभागानि कारयेत् ॥२५५७॥
काकिन्याद्रस्य बीजानि मर्दनामहिषिस्वरम।
तच्चूर्ण समानेन गार्गीरेण च मर्दयेत् ॥ २५५८॥
शाल्मलीरसभागेन माल्यपूर्णकेन च।
यद्युग्मश्च दातव्यं सितास्वर्णक्षीरसंयुतम ॥ २५५९॥

अष्टादशप्रमेहांश्च हन्ति रोगाननेकशः ।
कामान्वर्धयते नृणां स्त्रीणामत्यन्तवल्लभः ॥
कथ्यते हरगौरीशो रसोऽयं पञ्चबाणकृत् ॥ २५६० ॥

रसायनसं., र. पा , प्रमेहाऽधिकारे ।

टि०—रसपारिजाते "एलाकुङ्कुमकर्पूरैश्चन्दनेन च मर्दयेत् ।" इत्यधिक पाठो दृश्यते तथा च गोक्षीरस्थाने गोधुरेण मर्दनं विहितम् ॥

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, रजत, वङ्ग, सुवर्णमाक्षिक, नाग, ताम्र, कान्त इनकीभस्में १–१ भाग, तालमखाने, केवाच और अफीम ३–३ भाग लेकर शुष्कमर्दनकर गायकेदूध, सेमलकामुसला और तालमूलीके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, घी और दूधकेसाथलेनेसे यह उपद्रवसहित १८ प्रकारके प्रमेहोंकोनष्टकर पुरुषत्वको देताहै ॥ ६०३ ॥

६०४ हरगौरीरसः (द्वितीय)

कज्जलीं कारयित्वा तु तुल्ययो र्गन्धसूतयोः ।
बीजपूररसं क्षिप्त्वा मर्दयेत्कज्जलं दिनम् ॥ २५६१ ॥
कज्जल्या गोलकं कृत्वा महाकन्दोदरे क्षिपेत् ।
तस्यैव मज्जया कन्दं मूषावक्त्रं निरोधयेत् ॥ २५६२ ॥
निरोधयेन्मृदा वस्त्रं ततो देयं पुटं तथा ।
यथार्कश्च निदाघे स्यात्पच्यते केवलो रसः ॥२५६३॥
समाकृष्य ततः कन्दाज्ज्ञात्वाऽन्ते स्वाङ्गशीतलम् ।
त्रिसप्त भावना देयास्तिलपर्णीनिजद्रवैः ॥ २५६४ ॥
सम्मर्द्य तज्जलैरेव भावनाभावितं रसम् ।
काकमाचीरसैरेव मर्कटीस्वरसैस्तथा ॥ २५६५ ॥
शुष्कं तच्चूर्णितं कृत्वा योजयेत्त्र्यूषणैः समम् ।
पञ्चभि र्लवणैस्तद्वत्क्षाराणां नितयेन च ॥ २५६६ ॥
वल्लद्वयं प्रयुञ्जीत शृङ्गबेररसैः प्लुतम् ।
हन्यादग्निभवं मान्द्यं वातरोगमशेषतः ॥ २५६७ ॥

र.क.यो, र.मृ , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—समभाग अग्निस्थायी पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर बिजोरेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय जङ्गलीसूरणके बीचमेंरख उसीकेगूदेसे मुहबन्दकर ६–७ कपड़मिटी देकर सुखाकर गजपुटकी आचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाललै इसका गर्मीके महीनेमें दोपहरके सूर्यकेसदृश पाकहोगा । इसमें हुरहुर, मकोय और केवाचके अङ्गस्वरसोंसे २१–२१ भावनाए देकर त्रिकटु, पाचोंनमक और तीनोंक्षार पूर्वरसकी बराबर मिलाकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि और समस्त वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ ६०४ ॥

६०५ हरगौरीसृष्टिरसः

शुद्धं सूतं चतुर्भागं सूताद्धं मृतताम्रकम् ।
गन्धकश्च द्वयोस्तुल्यं मस्तुना मर्दयेद्दिनम् ॥ २५६८ ॥
गोलकं बन्धयेद्वस्त्रे वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
मन्दाग्निना पचेत्तावद्यावत्तप्ताश्च वालुकाः ॥ २५६९ ॥
स्प्रष्टुं न शक्यते तापमधोद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
धात्रीफलरसै र्भाव्यं सप्तधा गोमयेन च ॥ २५७० ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कृत्वा सर्वं क्षीरेण गोलयेत् ।
वल्लद्वयी वटी कुर्याद्धृतमध्ये विपाचयेत् ॥ २५७१ ॥
स्वाङ्गशीताञ्च तां खादेत्प्रत्यहं पाचितां घृतैः ।
महिषीक्षीरचुलुकीमनुपानञ्च सर्वदा ॥ २५७२ ॥
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः ।
दुग्धौदनं घृतं पथ्यं शाकश्चुञ्चुफलं भवेत् ॥ २५७३ ॥

र.र., चि.र भ , र.को., व.रा., यो.म., र.का., प्रमेहे ।

टि०—बहुत्र स्थाने ताम्रस्थाने अभ्रक दृश्यते । र. का सूताद्धं मृतताम्रमितिस्थाने तत्तुल्यञ्च मृताभ्रकमिति पाठ । बहुत्र स्थाने गोमयस्थाने गोक्षुर दृश्यते । योगमहार्णवे शुद्धसूतस्य भागैक चतुर्भाग मृताभ्रकमिति पाठो दृश्यते परन्तु द्वयोस्तुल्यगन्धकममागमनात्पारदस्य चतुर्भागा , ताम्रस्याभ्रकस्य वा पारदार्द्धभागेनैव स्वीकर्तुमुचिता भाति, मात्राधिक्य तयोराधिक्येन सम्भवतीति विद्वद्भिराकलनीयम् । अत्र निष्कद्वयमात्राया अत्यधिकतया तत्स्थाने वल्लद्वयमिति पाठ प्रकल्पितस्तदनुरोधेन त्रिंशद्भागाग्प्रकल्पयेदिति पाठो निष्कामित इति सुधीभिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, ताम्रभस्म २ भा., शुद्धगन्धक ६ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर दहीकेतोड़से एकदिन घोटकर गोलाबनाय ४ तहमलमलके कपड़ेमें लपेट वालुकायन्त्रमें रख बहुतमन्दाग्निसे यहांतक पकावे कि तमामबालू गरमहोजाय और हाथ स्पर्शको सहन न करसके । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर आवले और गोबरकेस्वरसोंकी ७–७ भावनाए देकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रतिदिन घीमें पकाकर खावे ऊपरसे १ चुल्लू भैंसकादूध पीवे । इससे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य दूधभात, घृत और कागलहरीका शाक देना ॥ ६०५ ॥

६०६ हररुद्ररसः (हरनेत्ररसः)

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णञ्च मारितं पृथक् ।
एकद्वित्रिचतुःपञ्च क्रमात्पद् शुद्धसूतकात् ॥ २५७४ ॥
चाङ्गेर्याश्च द्रवे मर्द्य दिनैकं कृतगोलकम् ।
मृगाङ्कवत्पचेत्स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरितम् ॥२५७५॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हररुद्रो रसोत्तमः ।
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तद्वन्मात्रानुपानकम् ॥ २५७६ ॥

नि र., र र , र को., वै. चि , र. का , क्षये । र. का. हररुद्रेति नाम ।

भाषा—फोलाद, तावा, नाग, रजत, सुवर्ण इनकीभस्में और शुद्धपारा क्रमवृद्धभागसे लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर अमलोनियाकेरसमें घोटकर गोलाबनाय ४ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटकर वालुकायन्त्रमें रख एक अहोरात्रकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्ती-

तर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयको नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ हरिवल्लाङ्कुशरसः

घनभस्मसूतभस्मं कान्तलोहार्कभस्म,
त्रिगुणरससमेतं तुल्यगन्धेन युक्तम्।
समतुलटङ्कमेभिष्टङ्कण ताप्यचूर्णं,
हरितालभयवोल गण्डसम्यं मनोज्ञम् ॥२५७७॥
हरति सकलकुष्ठं सन्निपातं सुघोरं,
श्वसनकसनसद्यं सन्धिवातादिसङ्घम्।
त्रिदशशिरस्नानां क्वाथकल्कादियोगैः,
मरिचयवजभार्गीपाचयपूर्णादियोगैः ॥ २५७८॥

र र. स, र को, कुष्ठाधिकारे।

भाषा—अभ्रकभस्म, कान्तलोह, ताम्र इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक ३–३ भाग, सुहागा, सोनामाखी, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, हीराबोल और दारद ९–९ भाग लेकर पोस्तकपसकी नीलकंठकमनीसे मिलाय १–२ दिन घोटकर रखलेहै। इसमेंसे ३–३ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा गौरसार, पाडुचीका क्वाथ और कल्क अथवा मरिच, यव क्षार और भारङ्गीकेसाथ अथवा चूर्णकेसाथ औषधी देकर देनेसे यह उपलक्षण, पोरोमिवात, श्वास, कास, सन्निपात प्रभृतिरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६०७ ॥

६०८ हरिशङ्कररसः (बृहत्) १

रसगन्धकलौहश्च स्वर्णं यहश्च माक्षिकम्।
समभागन्तु सञ्चिन्त्य पश्चिमां कारयेत्क्रियाम् ॥२५७९॥
रसादमामलद्रावे भावितोऽयं रसेश्वरः।
हरिशङ्करनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २५८० ॥

र सं, र रि, र सु, र चं, प्रमेह।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, सुवर्ण, वङ्ग, सोना माखी इनकीभस्में समभागलेकर मैनफलवमस्लेकर इन्हें और सोठेरसमें ७ दिनतक मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखलेवे। इसमेंसे १–१ गोली आंवलेकेरस अथवा त्रिफलाके पानीकेसाथ देनेसे यह २० प्रकारके प्रमेहोंको नष्टकरताहै॥६०८॥

६०९ हरिशङ्कररसः (द्वितीय)

मृतसूताभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिजद्रवैः।
सप्ताहं भावयेत्तत्तु पाचाऽयं हरिशङ्करः ॥ २५८१ ॥
माषमात्रं पटीं खादेत्सर्वमेहप्रशान्तये।
महानिम्बस्य बीजानि पूर्वकसायपयानु ॥ २५८२ ॥

र.सं, र का म, र र स, र को, र कौ, नि र र चं र र, रो र.र.सु, वे चि, वृ यो त, र चं, र का, र चि, रो म, चि र म, रो, वा त रसम्पा। र.क, वे क र र चं, भ.र, र म का, प्रमे।

[illegible]—कुर्वफलासनयो निस्त्रकभक्तन न रसो। र.सं, र. य, रसराज, र चि, र म, र रि, र सु, एषु ग्रन्थेषु प्रमेहरोग (मनु) नाम्ना "मृतार्भ्र बल्मीके सदेकेनरसवर। सिन्धेन रस मूत्र्यां मतोमे प्रवोगेरं॥ गिरिमहामानु मिलामधुपृष्य। तुर्णेन सटेकेनु रोग रस्फाद्य वैद्यात् ॥,, इति पाठे गिरिगति मन रसमहामहानिराशापि एषा हरिशङ्करति इति, कर्पूरस- दैनलाभार्थन हरिशङ्करपार पाठ कुर्वन्ति। वस्तुतस्तु हरिशङ्कर नामविशेषेण कर्पूरभस्वा प्रसादेन एव रस उपमन्तव्य ॥

भाषा—पारा और अभ्रकभस्म समभागलेकर आंवले और इनकेरसकी ७–७ भावनाएं देकर १–१ मासेकी गोलियें बनाकर रखलेवे। इसमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह काल और मीठ्यमेहको नष्टकरताहै ॥ ६०९ ॥

६१० हरिहररसः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम्।
रसं हरिहरं नाम्ना मृत्युदारिद्र्यनाशनम् ॥ २५८३ ॥
पूर्वोक्तं संस्कृतं सूतं नागभस्मञ्च तत्समम्।
द्वयोः समं तालसत्त्वं सत्त्वं माक्षिकजं समम् ॥२५८४॥
ताम्रभस्म महाभागेन लोहभस्म तथैव च।
स्वर्णं सर्वतुल्यञ्च शिला सर्वसमा तथा ॥ २५८५ ॥
काकमाचीद्रवैर्मर्द्यं त्रिदिनं भावयेद् दृढम्।
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा जलयन्त्रस्य मध्यगम् ॥२५८६॥
दद्यादग्नि यावसरनसो स्वाङ्गशीतं समुद्धृतम्।
तस्मान्मं गन्धकं योज्यमस्यां मरलाभरम ॥ २५८७ ॥
मिरी च्यार्मा शूर्पा हंसा वन्दी काली च पेमिका।
एतासां स्वरसे भाव्यं सप्ताध च पृथक् पृथक् २५८८
पूर्वाक्त च सयेन पयेस्मृतं हताग्निना।
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा पूजयेत्सत्ययोगिनीः ॥ २५८९ ॥
सहस्रं येपयेद्दिव्यं अयमृत्युनिवारणं।
वेपयेयद्गुरूर्येन करोति कालनी महान् ॥ २५९० ॥
वाजिमादश्चामे मार्गं त्रिदिनं मत्स्येमुथ।
यदुक्तमपारिणे सायं सागरविशेने च ॥ २५९१ ॥
वलीपलितनिर्मुक्तो वृद्धा भवति यौवने।
क्षेमकेशो भवेत्सम्यक् साक्षात् रुद्रं स [illegible] धुवम् २५९२
आदौ रुद्रः कृतः सिद्धः पश्चात्कृष्णा मया कृत।
गुल्मार्शांसि तथा पार्शं पाण्डुशालभ्रयान्तरान् २५९३
कासपञ्चमर्दं सूर्यं कुष्ठाद्यन्त्रलक्षणम्।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव ज्वरं सर्वं निहन्त्यरं ॥ २५९४ ॥
आध्मानवातसर्वांश्च निपातकपावृतम्।
अन्यानि हन्ति च चित्रे सर्विरागम्विपाकत ॥ २५९५ ॥
अरिष्टान्नं शिवांगानं चित्रे रसायनजन्मनः।
सर्वरोगं विनश्यन्तु देहे लोके च सिद्धयति ॥ २५९६ ॥

रसराज, रसरत्न।

भाषा—[illegible] हुई शुद्ध पारा और नाग भस्म १–१ भाग, हरताल और माक्षिकसत्त्व १–१ भाग, [illegible]

और लोहभस्म ८–८ भा., शुद्ध खपरिया और मैनसिल २२–२२ भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर कांचकी शीशीमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनकी हठाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकेबराबर शुद्धगन्धक और अष्टमांश नवसादर मिलाकर सिंही १, व्याघ्री १, मृगी १, हंसी १, चण्डी १, काली १, वेणिका १, (ये सात औषधियें सङ्केतप्रधान नामोंसे लिखीहैं और योगकर्त्ताने उनका कोई विवरण नहीं दियाहै इसलिये खास अमुकही वस्तुएंहैं यह कहना बहुतदुस्तरहै। परन्तु रसशास्त्रमें जिनसे कामलियाजाताहै उसहिसाबसे सिंही=सफेदभटकटैया, व्याघ्री=सफेदवनभाटा, मृगी=हिरणखुरी, हंसी=हसराज, चण्डी=चण्डालिनीकन्द, काली=हीरवी, वेणिका=आकाशवेल इनका ग्रहणकरना उचितहै।) इनकेस्वरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनकी जलयन्त्रमें हठाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रखछोड़े। यह सहस्रवेधी होताहै और जरामृत्युको दूरकरताहै। धातुवाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों कियाए इससे सिद्धहोतीहैं। शरीरको कल्पोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दशवा हिस्सा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहीं रक्खे। भूखलगनेपर गोदुग्धदेवे। इसके ३ दिन सेवनकरनेसे वलीपलितसे निर्मुक्तहोकर जराजीर्णभी आदमी पुन युवावस्थामें आजाताहै इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये। गुल्म, प्लीहा, बवासीर, पाण्डु, कामला, श्वास, कास, राजयक्ष्म, क्षय, शूल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, २० प्रमेह, समस्तज्वर, आध्मान, शोथ, ग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, पथरी, १३ सन्निपात, अस्थिशूल, शिरोरोग, स्थावर और जङ्गमविष, इनसबको यह नष्टकरताहै। देह और लोह दोनोंमें सदृशकाम करताहै। यहाकाली नामकवनस्पतिकेस्थानमें जो हीरवी लिखीहै वह कागानके पहाड़में होतीहै और जङ्गलीलोग इसीनामसे परिचितहैं। इसकी लता दोफुटतकलम्बी होतीहै पत्ते गुड़मारके सदृशहोतेहैं और नीचे तेलियारंगकाकन्दहोताहै तथा ज़हरीहै। यह पारेको इसतरह कायमकरती है॥ ६१०॥

६११ हरीतकीपाकः

प्रस्थमेकं शिवानाञ्च जलद्रोणे निधापयेत्।
द्विप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७
ग्रन्थिकं चित्रको भार्ङ्गी शङ्खपुष्पी शटी वला।
विश्वापामार्गमेघाश्च पुष्करं गजपिप्पली॥ २५९८॥
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम्।
अष्टांशे नि.श्रृते चैषां पथ्याः पिष्ट्वा पचेत्ततः २५९९
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम्।
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च धात्रिका॥ २६००॥
दीप्याक्षौ जातिपत्री च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम्।
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलार्धकम्॥ २६०१॥
पथ्यापाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा।
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टिवलप्रदः॥ २६०२॥
रसकोपे ग्रहण्याञ्च क्षीणे धातौ च निःसृतौ।
गुदामये श्वासकासे वातरक्ते हितो मतः॥ २६०३॥

वै. वि, जीर्णज्वरादौ।

भाषा—दशमूल २ प्रस्थ, जव १॥ प्रस्थ, गठिवन, चित्रक, भारङ्गी, शङ्खाहूली, कचूर, वला, सोंठ, अपामार्ग, नागरमोथा, पोहकरमूल और गजपीपल १–१ पल लेकर जवकुट चूर्णकर दोद्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पक्कीहुई हर्रे डालकर क्वाथकरे। अष्टमांशावशेष रहनेपर उतारले। इसमेंसे हर्रोंको निकालकर अलग पीसले और काढ़ेको छानकर ३ प्रस्थ गुड़, गोघृत ५ पल डालकर हर्रेकाकल्क मिलाय पकावे। चाशनी तैयार होनेपर जायफल, केशर, चातुर्जात, आंवले, अजवाइन, बहेड़ा, जावित्री, ताम्र और लोहभस्म, त्रिकटु २–२ कर्षका बारीकचूर्णकर चाशनीमें डालकर उतारले। इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलेतक औचिती देखकर उचितानुपानकेसाथदेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, ग्रहणी, धातुक्षीणता, धातुस्राव, गुदरोग, श्वास, कास, वातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ६११॥

६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी यवक्वाथद्वयाढके विंशतिं पचेत्।
स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडषट्पलम् २६०४
दद्यान्मनःशिलाकर्षं कर्षार्धञ्च रसाञ्जनम्।
कुडवार्धञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५

च. सं, कासाधिकारे।

भाषा—आठ आढकपानीमें दोप्रस्थ जवडालकर पकावे। दो आढक बाकीरहनेपर छानकर २० मोटीहर्रोको डालकर पकावे। एकदम पकजानेपर हर्रोंको मसलकर कपड़ेमेंसे छानदे फिर इसमें पुरानागुड़ ६ पल, शुद्ध मैनसिल १ कर्ष, रसौत ८ माशे, पीपल २ पल डालकर अवलेह तैयारकरे। इसमेंसे ३ से ६ माशेतक समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास और कास नष्टहोतेहैं॥ ६१२॥

६१३ हरीतक्यादिवटी

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च।
विभीतकफलत्वक्च शङ्खनाभि मनःशिला॥ २६०६॥
लोध्रं करञ्जबीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम्।
कनकं सावरं शृङ्गी चिञ्चिणीबीजसूतकम्॥ २६०७॥
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकन्तथा।
एतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम्॥ २६०८॥
पिष्ट्वा रक्तार्जुनीमूत्रे वल्लमात्रा कृता वटी।
लूताविस्फोटकञ्चैव जालगर्दभमेव च॥
गलगण्डं व्रणञ्चैव गण्डमालादिनाशिनी॥ २६०९॥
गुर्वम्लपिष्टान्नकिलाटसक्त-
दध्यारनालेक्षुविकारजानि।
भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि
विवर्जयेद्वै गलगण्डरोगी॥ २६१०॥

ना. वि, गलगण्डे।

भाषा—हरें, वच, कुठ, पीपल, मरिच, बहेड़ा, देशीलोध, करञ्जकेबीज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैनसिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकीभस्में, पठानीलोध, काकड़ासींगी, इमलीकेबीजोंकीमज्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और बछनाग सम भागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लालगायकेमूत्रमें १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगो चितानुपानकेसाथदेनेसे मकड़ीकाविष, विस्फोट, जालमर्दम, गलगण्ड, व्रण, गण्डमाला इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै। गण्डमाला वगैरहमें मूत्रमें पीसकर ऊपर लेपभी करना। भारी, अम्ल, पिट्ठीकीवस्तुए, मावा, सिरका, दही, काञ्जी, मिठाई और कफकारक समस्तवस्तुओंका गलगण्डरोगी परित्यागकरे॥

६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत्॥२६११॥
वासाखदिरधत्तूररसेन परिभावयेत्।
प्रत्येकञ्च दिनं यामं वालुकायन्त्रके पचेत्॥२६१२॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य पञ्चपित्तैश्च भावयेत्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानं पिबेत्तु॥२६१३॥
निकट्टु त्रिफला चैव लज्जालुर्गिरिकर्णिका।
अपामार्गश्च सुरसा निर्गुण्डी कर्षमात्रतः॥२६१४॥
क्वाथश्चाष्टावशेषस्तु पीयमानो हलीमकम्।
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित्॥२६१५॥

र रा, पाण्डुरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अड़ूसा, खैर और धतूरेके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकपहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकुट, त्रिफला, लज्जालु, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डी समभागका जवकुट चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषक्वाथकेसाथ लेनेसे हलीमक, कामला, पाण्डु, शोथ ये सब नष्टहोतेहैं॥ ६१४॥

६१५ हाटकाख्यरसः

रसकर्षाश्च चत्वारो यशोदं तावदेव तु।
शोधितं चूर्णितं कृत्वा उभे खल्वतले क्षिपेत्॥२६१६॥
द्वयोः सम्मेलनं कृत्वा मर्दयेद्याममात्रकम्।
रसाद्द्विगुणितं गन्धं रसार्द्धं नरसारकम्॥२६१७॥
सर्वेषां कज्जलीं कृत्वा मर्द्य जम्बीरवारिणा।
दिनैकं मर्दनं कृत्वा सम्यक् शुष्कं समाचरेत्॥२६१८॥
मृत्कर्पटप्रलिप्तायां काचकूप्यां विनिक्षिपेत्।
सिकतायन्त्रके पाच्यं क्रमाद्द्वादशयामकम्॥२६१९॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसञ्चामीकरप्रभम्।
गुञ्जार्द्धं मधुना सार्धं लिहेत्प्रातः समुत्थितः॥२६२०॥
शर्करासंयुतं पेयं द्विकर्षञ्च गवां पयः।
फणिवल्लीदलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये॥२६२१॥
एककालं द्विकालं वा सायं प्रातर्लिहेत्सुधीः।
बलवर्णकरं वृष्यं पुंसां पुंस्त्वविवर्धनम्॥२६२२॥
मेहत्वं षण्ढदोषत्वं नाशयेन्नात्र संशयः।
क्षयं क्षयकृतं व्याधिं दौर्बल्यं नाशयेत्क्षणात्॥२६२३॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिकृत्।
हाटकाख्यो रसो नाम सर्वत्र विजयप्रदः॥२६२४॥

वै. चि, (र), सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४–४ कर्ष लेकर जस्तको गलाय पारेमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्ष शुद्धगन्धक और २ कर्ष नवसादर मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर जमीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उड़ेहुए रसको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती मधुकेसाथ सुवहमें लेकर दोकर्ष शक्करडालाहुआ दूधपीवे और ऊपरसे पान खावे। इसकेसेवनसे बलवर्णाभाव, नपुंसकत्व, प्रमेह, षण्ढदोष, उपद्रवसहितक्षय, दुर्बलता येसब नष्टहोतेहैं॥ ६१५॥

६१६ हाटकेश्वरीगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम्।
जम्बीरदारपुष्पोत्थद्रवैर्मर्द्य दिनावधि॥२६२५॥
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे पचेद्गोक्षीरपूरिते।
दोलायन्त्रे दिवारात्रं गुटिका हाटकेश्वरी॥२६२६॥
आयते धारिता वक्त्रे जरामृत्युविनाशिनी।
वर्षमात्रान्न सन्देहो दीर्घमायुरवाप्नुयात्॥२६२७॥
दिनैकं त्रिफलाचूर्णं क्वाथैः खदिरबीजकैः।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां पलैकं मासकं लिहेत्॥२६२८॥

र क्ष, र सि, र का., जरामृत्युनाशने।

भाषा—सोनेकेवर्क ४ मासे, शुद्धपारा १२ मासे लेकर दोनोंको मिलाकर जमीरी और दारुहल्दीके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोली बनाय ४ तहकपड़ेमें लपेट दोलायन्त्रसे दूधमें एकदिनरात स्वेदनकरनेसे गोली कड़ीहोजायगी। इसको १ वर्षतक मुंहमें रखनेसे दीर्घायुहोतीहै। त्रिफलाकेचूर्णको खैरकेबीजोंकेक्वाथसे १ दिन भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ पल मधु और घीकेसाथ चाटनेसे रसका शरीरमें कामकरदेताहै॥ ६१६॥

६१७ हिक्कान्तकरसः

हेममुक्तार्ककान्तानां भस्म पङ्क्तिमितं धरम्।
बीजपूररसक्षौद्रसौवर्चलरसान्वितम्॥२६२९॥
हन्ति हिक्काशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः।
का कथा पञ्चहिक्कानां हरणे पुनरुच्यते॥२६३०॥

र कौ, यो. र, र च, र मु, रसायनसं, र क ल, हिक्कायाम्।

और लोहभस्म ८-८ भा., शुद्ध खपरिया और मैनसिल २२-२२ भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर काचकी शीशीमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनको हठाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक और अष्टमांश नवसादर मिलाकर सिंही ?, व्याघ्री ?, मृगी ?, हंसी ?, चण्डी ?, काली ?, वेणिका ?, (ये सात औषधियें सङ्केतप्रधान नामोंसे लिखीहैं और योगकर्त्ताने उनका कोई विवरण नहीं दियाहै इसलिये खास अमुक्ही वस्तुएंहै यह कहना बहुतदुस्तरहै । परन्तु रसशास्त्रमें जिनसे कामलियाजाताहै उसहिसाबसे सिंही=सफेदभटकटैया, व्याघ्री=सफेदबनभाटा, मृगी=हिरणखुरी, हंसी=हंसराज, चण्डी=चण्डालिनीकन्द, काली= हीरवी, वेणिका=आकाशवेल इनका ग्रहणकरना उचितहै ।) इनकेस्वरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनको जलयन्त्रमें हठाग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रसछोडे । यह सहस्रवेधी होताहै और जरामृत्युको दूरकरताहै । धातुवाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों क्रियाएं इससे सिद्धहोतीहैं । शरीरको कल्पोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दशवां हिस्सा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहीं रक्खे । भूखलगनेपर गोदुग्धदेवे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे वलीपलितसे निर्मुक्तहोकर जराजीर्णभी आदमी पुन. युवावस्थामें आजाताहै इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये । गुल्म, प्लीहा, बवासीर, पाण्डु, कामला, श्वास, कास, राजयक्ष्म, क्षय, शूल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, २० प्रमेह, समस्तज्वर, आध्मान, शोथ, ग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, पथरी, १३ सन्निपात, अस्थिशूल, शिरोरोग, स्थावर और जङ्गमविष, इनसबको यह नष्टकरताहै । देह और लोह दोनोंमें सदृशकाम करताहै। यहाकाली नामकवनस्पतिकेस्थानमें जो हीरवी लिखीहै वह कागानके पहाड़में होतीहै और जङ्गलीलोग इसीनामसे परिचितहैं । इसकी लता दोफुटतकलम्बी होतीहै पत्ते गुडमारके सदृशहोतेहैं और नीचे तेलियारंगकाकन्दहोताहै तथा जहरीहै । यह पारेको हरतरह कायमकरती है ॥ ६१० ॥

६११ हरीतकीपाकः

प्रस्थमेकं शिवानाञ्च जलद्रोणे निधापयेत् ।
द्विप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७
ग्रन्थिकं चित्रको भार्ङ्गी शङ्खपुष्पी शटी बला ।
विश्वापामार्गमेघाश्च पुष्करं गजपिप्पली ॥ २५९८ ॥
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।
अष्टांशे निःश्रते चैषां पथ्याः पिष्ट्वा पचेत्ततः २५९९
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम् ।
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च धात्रिका ॥ २६०० ॥
दीप्याक्षौ जातिपत्री च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम् ।
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलार्धकम् ॥ २६०१ ॥
पथ्यापाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा ।
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टिबलप्रदः ॥ २६०२ ॥
रसकोपे ग्रहण्याञ्च क्षीणे धातौ च निःसृतौ ।
गुदामये श्वासकासे वातरक्ते हितो मतः ॥ २६०३ ॥

वै. वि , जीर्णज्वरादौ ।

भाषा—दशमूल २ प्रस्थ, जव १॥ प्रस्थ, गठिवन, चित्रक, भारङ्गी, शङ्खाहूली, कचूर, बला, सोंठ, अपामार्ग, नागरमोथा, पोहकरमूल और गजपीपल १-१ पल लेकर जवकुट चूर्णकर दोद्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पकीहुई हरें डालकर क्वाथकरे। अष्टमांशावशेष रहनेपर उतारले । इसमेंसे हरोंको निकालकर अलग पीसले और काढ़ेको छानकर ३ प्रस्थ गुड़, गोघृत ५ पल डालकर हरेंकाकल्क मिलाय पकावे। चाशनी तैयार होनेपर जायफल, केशर, चातुर्जात, आंवले, अजवाइन, बहेड़ा, जाविनी, ताम्र और लोहभस्म, त्रिकटु २-२ कर्षका बारीकचूर्णकर चाशनीमें डालकर उतारले । इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलेतक औचिती देखकर उचितानुपानकेसाथदेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, ग्रहणी, धातुक्षीणता, धातुस्राव, गुदरोग, श्वास, कास, वातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६११ ॥

६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी यवक्वाथद्व्याढके विंशतिं पचेत् ।
स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडषट्पलम्२६०४
दद्यान्मनःशिलाकर्षं कर्षार्द्धञ्च रसाञ्जनम् ।
कुडवार्द्धञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५

च. सं., कासाधिकारे ।

भाषा—आठ आढकपानीमें दोप्रस्थ जवडालकर पकावे । दो आढक बाकीरहनेपर छानकर २० मोटीहरोंको डालकर पकावे । एकदम पकजानेपर हरोंको मसलकर कपड़ेमेंसे छानदे फिर इसमें पुरानागुड़ ६ पल, शुद्ध मैनसिल १ कर्ष, रसौत ८ माशे, पीपल २ पल डालकर अवलेह तैयारकरे । इसमेंसे ३ से ६ माशेतक समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास और कास नष्टहोतेहैं ॥ ६१२ ॥

६१३ हरीतक्यादिवटी

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च ।
विभीतकफलत्वक्च शङ्खनाभिं मनःशिला ॥ २६०६ ॥
लोध्रं करञ्जबीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम् ।
कनकं सावरं शृङ्गी चिञ्चिणीबीजस्तुतकम् ॥ २६०७ ॥
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकन्तथा ।
एतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम् ॥ २६०८ ॥
पिष्ट्वा रक्तार्जुनीमूत्रे वल्लमात्रा कृता वटी ।
लूताविस्फोटकञ्चैव जालगर्दभमेव च ॥
गलगण्डं व्रणञ्चैव गण्डमालादिनाशिनी ॥ २६०९ ॥
गुर्वम्लपिष्टान्नकिलाटशुक्त-
दध्यारनालेक्षुविकारजानि ।
भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि
विवर्जयेद्वै गलगण्डरोगी ॥ २६१० ॥

ना. वि , गलगण्डे ।

भाषा—हर्रे, वच, कुठ, पीपल, मरिच, बहेड़ा, देशीलोध, करञ्जकेबीज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैनसिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकीभस्में, पठानीलोध, काकड़ासींगी, इमलीकेबीजोंकीमज्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और बछनाग समभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय लाल्गायकेमूत्रमें १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मकड़ीकाविष, विस्फोट, जालगर्दभ, गलगण्ड, व्रण, गण्डमाला इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै। गण्डमाला वगैरहमें मूत्रमें पीसकर ऊपर लेपभी करना। भारी, अम्ल, पिट्ठीकीवस्तुए, मावा, सिरका, दही, काञ्जी, मिठाई और कफकारक समस्तवस्तुओंका गलगण्डरोगी परित्यागकरे॥

६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला ।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत्॥२६११॥
वासाखदिरधत्तूररसेन परिभावयेत् ।
प्रत्येकञ्च दिनं यामं वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २६१२ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ।
गुञ्जामानं प्रदातव्यमनुपानं पिबेदनु ॥ २६१३ ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव लज्जालुर्गिरिकर्णिका ।
अपामार्गश्च सुरसा निर्गुण्डी कर्षमानतः ॥ २६१४ ॥
क्वाथश्चाष्टावशेषस्तु पीयमानो हलीमकम् ।
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित्॥ २६१५॥

व. रा , पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अडूसा, खैर और धतूरेके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकपहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटु, त्रिफला, लज्जालु, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डी समभागका जवकुट चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषक्वाथकेसाथ लेनेमें हलीमक, कामला, पाण्डु, शोथ ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ६१४ ॥

६१५ हाटकाख्यरसः

रसकर्षाश्च चत्वारो यदोदं तावदेव [illegible] ।
शोधितं चूर्णितं कृत्वा उमे खल्वतले क्षिपेत् ॥२६१६॥
द्वयोः सम्मेलनं कृत्वा मर्दयेद्याममात्रकम् ।
रसाद्विगुणितं गन्धं रसार्द्धं नरसारकम् ॥ २६१७ ॥
सर्वेषां कज्जलीं कृत्वा मर्द्यं जम्बीरवारिणा ।
दिनैकं मर्दनं कृत्वा सम्यक् शुष्कं समाचरेत् ॥२६१८॥
मृत्कर्पटप्रलिप्तायां काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
सिकतायन्त्रके पाच्यं क्रमाद्द्वादशयामकम् ॥ २६१९ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसञ्चामीकरप्रभम् ।
गुञ्जार्द्धं मधुना सार्धं लिहेत्प्रातः समुत्थितः ॥२६२०॥
शर्करासंयुतं पेयं द्विकर्षञ्च गवां पयः ।
फणिवल्लीदलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये ॥ २६२१ ॥
एककालं द्विकालं वा सायं प्रातर्लिहेत्सुधीः ।
बलवर्णकरं वृष्यं पुंसां पुंस्त्वविवर्धनम् ॥ २६२२ ॥
मेहत्वं षण्ढदोषत्वं नाशयेन्नात्र संशयः ।
क्षयं क्षयकृतं व्याधिं दौर्बल्यं नाशयेत्क्षणात् ॥२६२३॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिकृत् ।
हाटकाख्यो रसो नाम सर्वत्र विजयप्रदः ॥ २६२४ ॥

वै. चि , (ल), सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४–४ कर्ष लेकर जस्तको गलाय पारेमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्ष शुद्धगन्धक और २ कर्ष नवसादर मिलाय नीलवर्णकजलीकर जमीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उड़ेहुए रसको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती मधुकेसाथ सुबहमें लेकर दोकर्ष शक्करडालाहुआ दूधपीवे और ऊपरसे पान खावे। इसकेसेवनसे बलवर्णाभाव, नपुंसकत्व, प्रमेह, षण्ढदोष, उपद्रवसहितक्षय, दुर्बलता येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६१५ ॥

६१६ हाटकेश्वरीगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।
जम्बीरदारपुष्पोत्थद्रवे मर्द्यं दिनावधि ॥ २६२५ ॥
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे पचेद्दोक्षीरपूरिते ।
दोलायन्त्रे दिवारात्रं गुटिका हाटकेश्वरी ॥ २६२६ ॥
आयते धारिता वक्त्रे जरामृत्युविनाशिनी ।
धर्ममाधाश्च सन्देहो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ २६२७ ॥
दिनैकं त्रिफलाचूर्णं क्वाथैः खदिरबीजकैः ।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां पलैकं कामकं लिहेत् ॥ २६२८ ॥

र. सु., र. सि , र. का , जरामृत्युनाशने ।

भाषा—सोनेकेवर्क ४ माशे, शुद्धपारा १२ माशे लेकर दोनोंको मिलाकर जंभीरी और दारपुष्पके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोली बनाय ४ तहकपड़ेमें लपेट दोलायन्त्रसे दूधमें एक दिनरात स्वेदनकरनेसे गोली कड़ीहोजायगी। इसको १ वर्षतक मुंहमें रखनेसे दीर्घायुहोतीहै। त्रिफलाकेचूर्णको खैरकेबीजोंकेक्वाथसे १ दिन भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ पल मधु और घीकेसाथ चाटनेसे रमण शरीरमें कामरहोताहै ॥ ६१६ ॥

६१७ हिक्कान्तकरसः

हेममुक्ताकैकान्तानां भस्म यत्समितं वरम् ।
बीजपूररसक्षौद्रसौवर्चलरसान्वितम् ॥ २६२९ ॥
हन्ति हिक्काशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः ।
का कथा पञ्चहिक्कानां हरणे पुनरुच्यते ॥ २६३० ॥

र. कौ , यो. र. र. च , र. मु , रसादर्श , ६. स, हिक्का

भाषा—सुवर्ण, मोती, ताम्र, कान्तलोह इनकीभस्में समभाग मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती बिजोरेकेरस, मधु और सञ्जलकेसाथ लेनेसे एकहीमात्रासे सबतरहकी हिचकी दूरहोतीहै ॥ ६१७ ॥

६१८ हिक्कानाशनरसः

रसगन्धकधान्याभ्रतालनाप्योपलं क्रमात् ।
भागवृद्धं वचाकुष्ठहरिद्राक्षारचित्रकैः ॥ २६३१ ॥
सपाठालाङ्गलीव्योपसैन्धवाक्षविषैः समम् ।
भावितं भृङ्गनीरेण हिक्कारैस्वर्यकासनुत् ॥ २६३२ ॥

र. र. स., र चं , हिक्कायाम् ।

टि०—उपलशब्देन गोदन्तो ग्राह्य । रसरत्नसमुच्चये पत्री नाम तु प्रमादात्सम्भातम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा , धान्याभ्रकभस्म ३ भा , हरिताल ४ भा , सोनामाखी ५ भा , गोदन्ती ६ भा., वच, कुठ, हल्दी, यवक्षार, चित्रक, पाठा, कलिहारी, त्रिकटु, सैन्धव, बहेडे, शुद्धबछनाग येसब १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे २–३ दिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे हिचकी, स्वरभङ्ग और कास इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ हिङ्गुलादिगुटिका (प्रथमा)

हिङ्गुलं टङ्कणं नागं मरिचं मृतरौप्यकम् ।
पयतोयेन सम्मर्द्य मुद्गमाना कृता वटी ॥ २६३३ ॥
कासे श्वासे कफे शीते शीताङ्गज्वरसङ्गके ।
मन्दाग्नौ गुल्मवाते च प्रशस्ता गुटिकोत्तमा ॥२६३४॥

रसायनस., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, सुहागा, नाग और रजतभस्म, मरिच, सब समभागलेकर पानकेरससे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, कफ, शीत, शीताङ्गज्वर, मन्दाग्नि, गुल्म, वातरोग इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६१९ ॥

६२० हिङ्गुलादिगुटिका (द्वितीया)

हिङ्गुलस्यैकभागश्च द्विभागा जातिपत्रिका ।
त्रिभागा धूर्तबीजाश्च चत्वारः श्वेतमरिचाः ॥२६३५॥
पञ्चभागोऽहिफेन. स्यादङ्गमश्चाजमोदकम् ।
एतत्समाना गान्धारी चोचतोयेन मर्दयेत् ।
चणमात्रप्रमाणेन स्तम्भनं याममात्रकम् ॥ २६३६ ॥

रसायनसं वाजीकरणे ।

टि०—रसायनसंग्रह [illegible] द्विभागस्थाने श्वेतमरिचस्थाने जातिमदं निर्दिश्य निम्बुद्रवेण भावना [illegible] रसप्रयोगा हिङ्गुलादिगुटी नाम्नैव [illegible] । [illegible] निर्दिष्टोऽस्य वा [illegible] पठ [illegible] । [illegible] निम्बुद्रवेण [illegible] ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, जावित्री, धतूरेकेबीज, सफेदमरिच, अफीम और अजमोद क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकी बराबर भुनीहींगमिलाय तजके क्वाथसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली रतिसमयसे १ घण्टे पहिले मलाईवगैरहकेसाथ लेनेसे १ पहरका स्तम्भनहोताहै ॥ ६२० ॥

६२१ हिङ्गुलादिगुटिका (तृतीया)

हिङ्गुलजातीफलजातिपत्रिका-
गोरोचनाभि जयपालकं समम् ।
विभाव्य निम्बूकरसैः कृता गुटी-
रौत्फुलिके बालगद्रे गदन्ति ॥ २६३७ ॥

सि. भे. म., बालरोगे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, जायफल, जावित्री, गोरोचन, सबसमभाग लेकर सबकीबराबर शुद्ध जमालगोटा मिलाय नीबूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह बच्चोंके शोथ और जलोदरको दूरकरतीहै ॥ ६२१ ॥

६२२ हिङ्गुलादिगुटिका (चतुर्थी)

हिङ्गुलं देवपुष्पञ्च नागफेनं सितायुतम् ।
सशूलां सप्रवाहाञ्च ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ॥ २६३८ ॥

रसस , ग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, लौंग, अफीम और शक्कर समभाग मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल और प्रवाहिकायुक्त दुस्तरग्रहणीरोगनष्टहोताहै ॥

६२३ हिङ्गुलादिगुटिका (पञ्चमी)

हिङ्गुलं जातिकोषञ्च नागफेनं सकुङ्कुमम् ।
नागवल्लीदलरसे वटी मुद्गसमा कृता ॥ २६३९ ॥
अतिसारं निहन्त्याशु योगोऽयं सिद्धभाषितः ।
नाशयेद्ग्रहणीरोगं हिङ्गुलादिवटी वरा ॥ २६४० ॥

र सि , ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, जायफल, अफीम और केशर समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह ग्रहणीरोगको नष्टकरतीहै ॥ ६२३ ॥

६२४ हिङ्गुलादियोगः

हिङ्गुलं कर्षमात्रं स्यान्माप मर्जितसुल्यतः ।
सार्धमाषलवङ्गन्तु जम्भनीरेण मर्दयेत् ॥ २६४१ ॥
विशाय शुष्कं तत्पश्चान्नवनीतेन मर्दयेत् ।
ताम्बूलेन सहाश्नीयादौषधं गुञ्जमात्रकम् ॥ २६४२ ॥
पथ्यं साधारणं कार्यं पञ्चसप्तदिनावधि ।
उपदंशं पूतिमेहं तद्वद्ये शूलमण्डले ॥
व्रणं तालुनि सञ्जातं हन्यादेतन्नियञ्जितम् ॥ २६४३ ॥

रसायनसं , उपदंशे ।

भाषा—शुद्धहिंगरिफ १ कर्ष, भुना तूतिया १ माशा, लौंग १॥ माशा, लेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरसमें एकदिन मर्दनकर सुखाकर मस्तानमें घोटकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती पानकेसाथ ५ या ७ दिनतकखानेसे उपदंश, वेदनासहित-सुजाक, शालमें जायमानव्रण इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य साधारणरक्खें ॥ ६२४ ॥

६२५ हिङ्गुलेश्वररसः (प्रथमः)

तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे पिप्पलीं हिङ्गुलं विषम् ।
द्विगुञ्जा मधुना देया वातज्वरनिवृत्तये ॥ २६४४ ॥

र.सा.,चि.र.भ.,र.गु.,भै.र.,रसायनसं.,र.चि.,र.मं.,र.क.,ध.,र.का.,र.चं.,टो.,र.को.,यो.म.,वै.चि.,र.क.ल.,र.त.,र.र.डी.,र.क.यो.,र.पा.,वातज्वरे ।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ निम्नस्थादिचूर्णमिति नाम्ना स्थापितम् । रसपारिजाते अर्धाद्रकभावना अधिकतया दृश्यते, अनुपाने भिन्नाभो-मानुपानं लिखितम् नाम च जीर्णज्वरहर इति स्थापितम्, द्वितीय-स्थाने वातभञ्जनेति नाम स्थापितमिति नामभेदेन द्वौ पाठौ दृश्येते । रसचण्डांशुरसेन्द्रसारसङ्ग्रहयोरपि वातज्वरे हिङ्गुलेश्वरः, ज्वराधिकारे च सूतसञ्जीवनमिति नाम इति कृत्वा पाठद्वयं दृश्यते,रसायनसारसङ्ग्रहेऽपि सूतसञ्जीवनमिति नाम स्थापितम् [illegible] ॥

भाषा—पीपल, शुद्ध हिंगरिफ और बछनाग समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ-देनेसे यह वातज्वरको नष्टकरताहै ॥ ६२५ ॥

६२६ हिङ्गुलेश्वररसः (द्वितीयः)

कर्षैककं समादाय शुद्धहिङ्गुलगन्धयोः ।
माषद्वयं जीर्णताम्रं खल्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २६४५ ॥
शिलायां शिलया याम शाल्मलीरसभावितम् ।
गुञ्जाद्वयां वटीं कुर्यात्प्रयत्नेन भिषग्वरः ॥ २६४६ ॥
खादेन्मधुना खादेदतिसारनिपीडितः ।
ग्रहणीरोगसन्तप्तः सद्रक्तग्रहणीयुतः ॥ २६४७ ॥
मन्दाग्निकासश्वासतुरग्निमान्द्यादिसम्प्लुतः ।
धान्यजीरकजं क्वाथमनुपाने प्रयोजयेत् ॥
हिङ्गुलेश्वरनामाऽयं रसः सर्वगदापहः ॥ २६४८ ॥

र.गु.,ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धहिंगरिफ और गन्धक १–१ कर्ष, ताम्रभस्म २ माशेलेकर सेमलकेरसमें १ पहर मर्दनकर २–२ रत्तीकी-गोलियें बनाकररखछोडें। इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिला-करलेनेसे ग्रहणी, रक्तग्रहणी, अतिसार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै। धनिये और जीरेकाक्वाथ अनुपानमें पिलावें ॥

६२७ हिस्रादियोगः

हिंस्रागोमेदकव्योषकुष्ठशीतशिवा [illegible] ।
एलापूतिकरञ्जकाः [illegible] ॥ २६४९ ॥
सर्वेन दधिमस्तुना पीतं कांजिकेन वा ।
मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं [illegible] ॥ २६५० ॥

ग.नि.,[illegible] ।

भाषा—भुनीहींग, गोमेद, त्रिकटु, कुठ, कौडियाली, गोखरू, इलायची, कुडाकीछाल, बच, गधे और घोडेकीलीद, पाषाणभेद सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे। इस-मेंसे ३–३ माशे छाछ, दहीकेतोड अथवा कांजीकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र, त्रिनि, प्रमेह और अश्मरीको यह नष्टकरताहै ॥

६२८ हितप्रभावटिका

पथ्याचतुर्जातकरेणुकाद्वि-
व्योषाम्बुदामोदरसाग्निनाभैः ।
गुडेन पक्वे गुटिका विशुष्टा
हितप्रभाख्या हतपाण्डुहन्त्री ॥ २६५१ ॥
व्यव्यर्द्धकलाद्याङ्कं करिकव्येकपालिकाः ।
भागाः प्रत्येकशो ज्ञेया भेषजानामिह क्रमात् ॥ २६५२ ॥

र.(मा.),पाण्डुरोगे ।

भाषा—हर्रे १ भाग, चातुर्जात ४ भा., रेणुका ½ भा., चित्रकमूल १ भा., त्रिकटु १ भा., नागरमोथा ½ भा., शुद्ध-गन्धक २ भा., पारा १ भा., चित्रक ३ भा. और शुद्धबछ-नाग १ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी कजलीमें मिलाय सबभागगुडकीचाशनीमें डालकर १–१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ-लेनेसे भयङ्कर पाण्डुरोगको यह नष्टकरताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ हिममूर्च्छनरसः

रसेभमध्यविलोमित्रयपिहितं सतादमार्के स्थितं,
क्षारं तामपत्रमध्यामसितं शुल्वपिला पाचयेत् ।
सिद्धोऽयं हिममूर्च्छनो रस इति प्रस्तुयते पण्डितै-,
र्द्वित्रगुञ्जप्रमाणतः शमयतो चेन्नाम्बुदं ज्वालयेत् ॥

भि.मे.म.,ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको पहले घोटकर तोमलकी डलीको रस आदिकेपुटसे भरके मध्योपर गुडलकर चूल्हेपरराख ८ पहरकी अग्निदेवे। स्वांगशीतहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ चावल उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विषमज्वरादिक ज्वरको नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

६३० हिमांशुरसः

रसस्य कर्षमादाय सतलं निशितस्य बुद्धिमान् ।
रसाङ्गस्यवराजस्य स्वरसेन विमर्दयेत् ॥ २६५४ ॥
समधारं तथा साधु भ्रंगराजेन च ।
निम्बदलं दद्यान्च कर्षं स्यादिस्मारतः ॥ २६५५ ॥
कार्षं रसतुल्यश्च गर्णमेकत्र मर्दयेत् ।
माषद्विजन्तो याति युक्त्या चन्दनवारिणा ॥ २६५६ ॥
हेमन्तमासान्तकाले पानीयं निरोगिताम् ।
प्रातः प्रात्य गेवेन मधु च निरोगतः ॥ २६५७ ॥
मिन्दाग्निश्च विशेषेण मेचनीयः प्रयत्नतः ।
पत्तरि मेहतुल्यं गुल्महरोयहरं परम् ॥ २६५८ ॥

सोमरोगहरं सर्वपिडिकानाशनं मतम् ।
हिमांशुनामतः ख्यातं तृष्णादाहनिवारकम् ॥ २६५९ ॥

र. च., र. र. स., र. को., र. क , र. र. कौ., प्रमेहे । र. को. रसादिगुटीतिनाम ।

भाषा—एककर्ष शुद्धपारेको खरलमें डालकर लालअगस्त्यके फूल और सफेददूबकेरसोंसे ७–७ बार मर्दनकर सुहागा ८ माशे, खैरसार और कपूर १–१ कर्ष मिलाकर चन्दनकेकल्कसे घोटकर चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रतिदिन तीनोंसमय समयोचितानुपानकेसाथ-लेनेसे प्रमेह, मुखशोष, सोमरोग, पिडिका, तृष्णा और दाहको यह नष्टकरताहै ॥ ६३० ॥

६३१ हिरण्यगर्भपोट्टली (बालाग्निकुमारः) १

उत्तमवर्णसुवर्णस्य ग्राह्या गद्याणका दश ।
तेषां सूक्ष्माणि पत्राणि कुर्यादेकाङ्गुलानि च ॥ २६६० ॥
यावन्मानानि पत्राणि तत्तुल्यः शुद्धपारदः ।
मिश्रं विंशतिगद्याणं निम्बुकस्य रसेन च ॥ २६६१ ॥
तप्तखल्वे दृढं मर्द्य यामयुग्माद्विशुष्यति ।
शुष्के शुष्के रसं दद्यादेवमष्टदिनावधि ॥
शुष्के शुष्के रसं दद्यादेव्या पिष्टि दिनाष्टकम् ॥ २६६२ ॥
आरनाले क्षिपेत्स्थाल्यां खण्डे निम्बुकजैः समम् ।
शिग्रुवृक्षस्य पत्रैश्च तत्क्षणाद्दोः समाहृतैः ॥ २६६३ ॥
वर्तितै मूषिकां कुर्यात्तद्गर्भे हेमपिष्टिकाम् ।
क्षिप्त्वा वक्त्रं समाच्छाद्य कृत्वा वर्तुलगोलकम् २६६४
दोलायन्त्रे ततः स्थाल्यां विन्यसेद्दृढत्रयेष्टितम् ।
इत्थमष्टदिनं स्वेद्यं यावन्नश्यति काञ्जिकम् ॥ २६६५ ॥
चणकाख्यबदर्याश्च मृदुपत्राणि वर्तयेत् ।
तत्पिण्डं प्रक्षिपेद्भीमान्पक्वकुल्हटिकान्तरं ॥ २६६६ ॥
विष्णुक्रान्ताजटानाञ्च श्रीखण्डस्य च सारकम् ।
पिण्डस्योपरि मुक्त्वाऽथ श्रीखण्डोपरि पिष्टिकाम् ॥
श्रीखण्डञ्च पुनर्दद्यात्पिण्डं यादरकं पुनः ।
प्रान्ते सूचीमुखच्छिद्रं मृद्दीपं कारयेद्बुधः ॥ २६६८ ॥
अधोवक्त्रञ्च तद्देयं पिधानं कुम्भिकोपरि ।
खर्परे कुम्भिकां क्षिप्त्वा वेष्टितां वस्त्रमृत्स्नया ॥ २६६९ ॥
वारम्वारं पुटं तत्र दद्याच्छगणपञ्चकैः ।
बदर्याः पत्र पिण्डाद्यं न्यूने न्यूने मुहु विधिः ॥ २६७० ॥
एकविंशतिवारांश्च युक्त्या दद्यात्पुटानि च ।
स्वेदस्य विधिनाऽनेन खटिकासन्निभा भवेत् ॥ २६७१ ॥
भूमौ विलेखिता रेखा श्वेता निःसरति स्फुटा ।
क्षिप्त्वा तद्भूधरे यन्त्रे चतुर्भिश्छाणकैः पुटेत् ॥ २६७२ ॥
प्रदद्यात्स्याङ्गशीतेऽत्र युक्त्येत्थं पुटपञ्चकम् ।
पञ्चभिश्छाणकैः पञ्च पञ्च षड्भिश्च छाणकैः ॥ २६७३ ॥
छाणकैः सप्तभिः पञ्च त्वष्टभिः पञ्चगोमयैः ।
एवं पञ्चपुटस्यान्ते छाणकैकं विवर्धयेत् ॥ २६७४ ॥
एकमुद्रधादिकं देयं यावत्पुटशतं भवेत् ।
छाणशतानि च पञ्चाशच्छूनार्नाह चतुर्दश ॥ २६७५ ॥
गणितानि भवन्त्येव दत्ते शतपुटे ध्रुवम् ।
षोडशांशविभागेन पिष्टयधस्तात्पुनः पुनः ॥ २६७६ ॥
षड्गुणो जीर्यते यावद्दातव्यः शुद्धगन्धकः ।
एवं पुटशते दत्ते लाक्षासिन्दूरसन्निभः ॥ २६७७ ॥
जपाकुसुमसङ्काश उद्यदर्कसमप्रभः ।
अतीवारुणतां प्राप्तं कूपिकायां विनिक्षिपेत् ॥ २६७८ ॥
सिद्धो हिरण्यगर्भोऽभूत्तज्ज्ञैः प्रोक्तः पुरा रसः ।
विधिना रक्तिकामेकां ताम्बूलेन च भक्षयेत् ॥ २६७९ ॥
विंशतौ च प्रमेहेषु ज्वरेषु विविधेषु च ।
अतीसारेषु सर्वेषु शूलेऽजीर्णे च दुस्तरे ॥ २६८० ॥
कामलायां पाण्डुरोगे हलीमकगदेष्वपि ।
अशीतिवातरोगेषु जीर्णदेहेषु दीयते ॥ २६८१ ॥
सम्यग्रोगं परिज्ञाय देयो वैद्येन रोगिषु ।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते प्रत्यहं सेविते रसे ॥
देहकान्तिः सुवर्णाभा प्रत्यहं जायतेऽधिका ॥ २६८२ ॥

रसचि., र. कं ली., रसायने ।

टि०—रसमारसङ्ग्रहे माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे च अग्निकुमार नाम्ना "सूत सुवर्ण दहनोदकेन विधाय पिष्टिं तु पयोघ्नेषु । गन्धाश्म तैले विपचेत्त्रिनक्तं ख्यातप्रसिद्धोऽग्निकुमारनामा ॥ दद्यादमु सर्वकुमार काणा व्योषेण गुञ्जा मधुना घृतेन । दन्तातिसारग्रहणीज्वरौघ हत्वा बलास कुरुतेऽग्निवृद्धिम् ॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति तस्याऽत्रैवान्तर्भाव. करणीय., विशेषगुणदर्शनात् । गन्धाश्मदहनोदकपयोघृतगन्धकतैलेषु च प्रथमत स्वर्णपारदयो स्वेदन विधाय रसकङ्कालीयोक्तेन वर्त्मना रसे निष्पादितेऽप्याहृतवीर्यता निश्चिताऽस्ति अतस्तस्याऽन्तर्भाव करणीय एव । दहनोदकपयोघृतगन्धाश्मतैलपाकमन्तरापि गुणहानि नै भविष्यत्येव । रसकङ्कालीयप्रक्रियया पारदेऽतिशयस्युक्तार्थाभानात् ।

भाषा—उत्तमसुवर्णकेवर्क और शुद्धपारा ५–५ तोले लेकर १–२ पहर मर्दनकर तप्तखल्वमें डाल नीबूकेरससे दोपहर मर्दन करे । सूखनेपर फिर रसडाले । इसतरह ८ दिनतक मर्दनकर मजबूत हण्डीमें पकेनीबुओंकेटुकडे और काञ्जीभरके कडवे सहिजनके ताजे पत्तोंको पीसकर दो मूषा बनाय उसमें पिटि-काको रख काञ्जीवाली हण्डीमें दोलायन्त्र बनाय ८ दिनतक स्वेदनकरे । काञ्जीसूखनेपर दूसरी डालताजाय । इसबातका ध्यान रहे कि उफान आकर पोटलीको स्पर्श न करे । आठवें दिन आंच कड़ी करदे और काञ्जीका डालना बन्द करदे जिसमें कि नीबू और काञ्जी जलजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर एक मजबूतहण्डीमें झरबेरके कोमलपत्तोंका लुगदा रखकर कोयलकी जड़ और चन्दनके हीरका लुगदा क्रमसे रखदे । फिर चन्दनके लुगदे पर पिटीको रख चन्दनके हीरके लुगदेसे ढककर झरबेरके-पत्तोंका लुगदा रखदे । ढक्कनमें सुई जानेलायक बारीक छेदकर हण्डीपर उल्टा रख २–२ कपडमिटी देकर एक खपरेमें हण्डीको रखदे और पांचकण्डोंके टुकडोंसे हंडीको ढककर आंच लगादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् पिटीको हंडीमें रखदेवे । परन्तु प्रथमकी अपेक्षा बेरके कल्कप्रभृति वस्तु थोडे थोडे कम करताजाय । इसतरह २१ पुटें देकर पटीजमीनपर इसकी रेखा

खींचे तो खड़ियामिट्टीके सदृश रेखा निकलेगी । इसको भूधरयन्त्रमें रख ४ कण्डोंकी आंचदे । ऐसे ५ पुट देनेके बाद ५–५ कण्डोंके ५ पुट देवे । पांचपुटोंके बाद १–१ कण्डा बढ़ाता जाय । ऐसे २३ कण्डोंतक बढ़ाकर १०० पुट देवे । प्रत्येक पुटमें पिट्ठीके नीचे ऊपर षोडशांश (७॥ माशे) गन्धक देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर आंचदेवे । ऐसे १०० पुटोंमें षड्गुण गन्धक जारण होगा । इसका रंग एकदम लालहोगा इसको पीस कर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पानमें रखकर खानेसे २० प्रकारके प्रमेह, समस्तज्वर, अतिसार, शूल, भय ज्वरमजीर्ण, कामला, पाण्डु, हलीमक, ८० वातरोग, कुवासा इनसबको दूरकर रसायनका काम करतीहै ॥ ६३१ ॥

६३२ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) २

शुद्धं सूतश्चतुर्भागं द्विभागं गन्धकस्य च ।
भागमेकं सुवर्णञ्च त्रिभागं शुल्वभस्म च ॥ २६८३ ॥
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम् ।
गुटिकां कारयेत्तान्तु पश्चाद्यात्सरकर्पटे ॥ २६८४ ॥
घटे किञ्चिद्बलिं दत्त्वा तत्र गोलं निधाय च ।
वर्भीयात्पोट्टली गाढां पश्चात्सूत्रेण वेष्टयेत् ॥ २६८५ ॥
सर्वभागसमं गन्धं दत्त्वा मृन्मयभाजने ।
तन्मध्ये पोट्टलीं न्यस्य मुखे मुद्राञ्च कारयेत् २६८६
विधाय छिद्रं मुद्रास्थं द्रावं दत्त्वा शलाकया ।
पाचयेत्सिकतायन्त्रे रसोऽयं मृदुवह्निना ॥ २६८७ ॥
यामार्द्धेन सुसञ्जातं स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ।
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे ॥
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥ २६८८ ॥

यो १,१ थ , कासाधिकारे ।

टि०—रसायनमहमर्ण साधारणहेमगर्भनाम्ना " पारदस्य द्विकर्षं स्यादिदर्शगन्धकस्तथा । ताम्रभस्मद्विकर्षं स्यात्स्वर्णं कार्षिक स्थिरं ॥ कज्जलीं कज्जलाकारां प्रकुर्वीत प्रयत्नतः । पोट्टलीं बन्धयित्वा तु मध्ये दद्याद्विचक्षणः ॥ पोट्टलीञ्च पुनस्तद्वद्यांश्च दृढम् । गर्ते भूमध्यगान्तु धार्यंपूरणन्तु कारयेत् ॥ तुरं मुद्रां प्रकुर्वीत वह्निं दद्यात्सुचितः । स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य रसं स्याद्धेमगर्भकं ॥" इति पाठे निर्दिष्टोऽपि तस्याऽस्यैवान्तर्भावं मन्ये । यद्यपि तत्र ताम्रे चतुर्थांशत्याधिक्य मस्ति परन्तु तदाधिक्यमभीष्टमेवेदं निश्चेव चतुर्थांशाधिक्यस्याऽधिकतया दानेनापि क्षयमावाऽस्ति पाठान्तरं तु मद्वीरवम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, गन्धक २ भा, सुवर्णभस्म १ भा, ताम्रभस्म ३ भा लेकर सबकी नीलग्वारपाठेके रसमें ७ दिनतक मर्दनकर गोलीबनाय ४ तह कपड़ेमें थोड़ा गन्धक छिड़ककर उसपर गोलीकोरख पोटलीबनाय मिट्टीकेबर्तनमें चूर्णकेबराबर नीचे ऊपर गन्धकदेकर बीचमें पोटलीकोरख शराबकेबीचमें छिद्रकर ढक्कन बन्दकर कपड़मिट्टी करदे और नीचे मन्दाग्नि जलावे । बीचमें छिद्रमें सलाई देताजाय । गन्धक गलजावेतो आंचदेनाबन्द करदे । स्वाङ्गशीतहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–४ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, वात, कफ, ग्रहणीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) ३

शुद्धं सूतं त्रिभागञ्च तत्समं शुल्वभस्म च ।
भागैकं गन्धकं दद्यात्सदर्धं स्वर्णमेव च ॥ २६८९ ॥
कज्जलीं कारयेत्तान्तु खल्वके सप्तवासरम् ।
अथ निर्गुण्डिकाक्वाथे मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ २६९० ॥
अथवा कनकद्रावे गुटिकां कारयेत्ततः ।
किञ्चिद्बलिसमायुक्ते घटे गोलं निधाय च ॥ २६९१ ॥
बध्नीयात्पोट्टलीं गाढामेवञ्च त्रि पुटांश्चरेत् ।
दृढमृन्मयपात्रे तु गन्धं दत्त्वाऽधरोत्तरम् ॥ २६९२ ॥
तन्मध्ये पोट्टलीं न्यस्य निर्वातभवनान्तरे ।
वितस्तिप्रमितं गर्तं तस्मिन्संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥२६९३॥
वर्त्मभूमृत्तिकाभिश्च ज्वालयेद्दिनयामिं च ।
यामेन सिद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥
अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २६९४ ॥

यो.र , रसायनर , नि.र., वै थि , कासे क्षये च ।

टि०—निघण्टुरत्नाकरे शुल्वस्थाने लोह नियोजित तज्ज्ञानपूर्वक वा स्यात्स्थानपूर्वक वा स्यात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म ३–३ भाग, शुद्ध गन्धक १ भा , सोनेकेवर्क आधाभाग लेकर ७ दिनतक खरलमर्दनकर निर्गुण्डी अथवा धतूरेकेरसमें ७ दिन मर्दनकर गोलीबनाय गन्धकछिड़केहुए कपड़ेमें रख डोरेसे बांधदे । इसीतरह दूसरे कपड़ेपर गन्धकबिछाय दूसरी और तीसरी तह देवे । फिर मिट्टीके दृढपात्रमें पोटलीकेनीचेऊपर गन्धकदेकर मुंहबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देवे । खुलेस्थानपर एकबालिश्तभरके गढ़ेमें १ पहर की आंचदे । स्वाङ्गशीतहोनेपर निकालकर करले और गन्धक को हटाकर गोलीको मैलसे निकाललें । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ६३३ ॥

६३४ हिरण्यगर्भपोट्टली (स्वर्णगर्भपोट्टली) ४

स्वर्णस्य भस्मना भागाश्चत्वारः पारदस्य च ।
अष्टौ गन्धस्य ताम्रस्य वह्न्येकैकभागकः ॥ २६९५ ॥
कपर्दीदलयां भस्म भागौ द्वौ द्वौ च टङ्कणात् ।
शुद्धार्कस्य मुक्तानां भागास्स्वर्णसमा मता. ॥२६९६॥
पञ्चकोलभृङ्गेनैव सर्वं चक्रार्जयेत्त्रिधा ।
शिवपञ्चमिका कार्या पोट्टली घर्मशोषिता ॥२६९७॥
यत्नबद्धा वटिम्या सा पाचनीयाऽल्पवह्निना ।
घटिकाद्वितयं दीप्तां पोट्टलीं मन्त्रुदरानाम् ॥२६९८॥
ग्रहण्यां क्षयरोगे चाऽतिसारे ज्वरवाग्मयोः ।
बाले वृद्धेऽतिमन्दाग्नौ द्विगुञ्जां प्रयोजयेत् ॥२६९९॥

रसरत्नाकर , ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण और पारदभस्म ४–४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., ताम्र और वङ्गभस्म १–१ भा., कौड़ी और शङ्ख २–२ भाग, सुहागा १ भाग, मोती ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर पञ्चकोलकेक्वाथसे ३ दिन मर्दनकर शिखराकार गोलीबनाकर गन्धकयुक्त ३ तहकपड़ेमें बांध एकगालिस्तके खड्डेमें दोघडीकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमेंसे २–२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ग्रहणी, क्षय, अतिसार, ज्वर, कास और मन्दाग्निको नष्ट करताहै बचे और बुड्ढोंको हितकरहै ॥ ६३४ ॥

६३५ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) ९

स्वर्णसिन्दूरकं कर्षं स्वर्णभस्म सुमौक्तिकम् ।
तुरीयांशं समं गन्धं त्रयाणामपि मर्दयेत् ॥ २७०० ॥
ताम्रवङ्गभुजङ्गानां भस्मान्यत्र तु पातयेत् ।
सिन्दूरसममानानि मर्दयेदर्कदुग्धतः ॥ २७०१ ॥
शुष्कां कज्जलिकामेतां वराटीष्वेव पूरयेत् ।
मन्दारपयसा पिष्टटङ्कणेन च मुद्रयेत् ॥ २६०२ ॥
शङ्खचूर्णे धृता पक्वाः पुटित्वा गजसञ्ज्ञके ।
पोट्टलीं पूर्ववत्कृत्वा दिष्टरोगेषु योजयेत् ॥ २७०३ ॥

रसायनसार.,

भाषा—पड्गुणगन्धकजारित सुवर्णसिन्दूर १ कर्ष, सुवर्णभस्म और शुद्धमोती ४–४ माशे, शुद्धगन्धक १॥ कर्ष, ताम्र, वङ्ग और नागभस्म १–१ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर आकके दूधसे १–२ दिन मर्दनकर सुखाकर शुद्ध पीलीकौड़ियोंमें भरकर आकके दूधमें पिसेहुए सुहागेसे मुहबन्दकर एक हण्डीमें कचेशङ्खकेचूर्णके बीचमें इन कौड़ियोंको बन्दकर शरावसम्पुटदेकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखाले फिर इसको गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कौड़ियों सहित पीसकर आकके दूधमें मर्दनकर अभीष्ट आकारकी पोट्टली बनाय ४ तहवस्त्रमें लपेट रेशमसे बांधकर हंडीमें गन्धकको बिछाय ऊपरपोट्टलीको रखदे। ऊपरसे इतना पिसाहुआगन्धक रक्खे कि पोट्टली अच्छीतरहसे ढकजाय और गन्धक जलनेपर भी पोट्टली खाली न रहे। हंडीको अग्निपर रख पूर्वरीतसे पकाकर साफकरके रखले। इसमेंसे उचितमात्रा योग्यानुपानकेसाथ देनेसे राजग्रहणी और राजयक्ष्म प्रभृति रोगनष्टहोतेहैं ॥ ६३५ ॥

६३६ हिरण्यगर्भपोट्टली (महाहेमगर्भपोट्टली) ६

शुद्धं सूतं पलैकं स्यात्पादांशं शुद्धहेमकम् ।
शुद्धं गन्धं माषमेकं प्रतिकर्षं प्रयोजयेत् ॥ २७०४ ॥
प्रथमेकत्र कुर्वीत सूक्ष्मं खल्वे विमर्दयेत् ।
सुदृढे यन्त्रयेद्धल्वे स्थाप्यं लोहजसम्पुटे ॥ २७०५ ॥
मर्दितं गन्धकपलं तस्योपरि प्रदापयेत् ।
सम्पुटे मुद्रितं कृत्वा भूधराख्यपुटे पचेत् ॥ २७०६ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य दग्धं गन्धं परित्यजेत् ।
वेष्टयित्वा पुनर्वस्त्रे सूत्रे बद्धा च गोलकम् ॥ २७०७ ॥
तत्तुल्यञ्च पुनर्गन्धं सम्पुटे निक्षिपेद्भिषक् ।
मुद्रितं सम्पुटं कृत्वा पुनर्यन्त्रेण पाचयेत् ॥ २७०८ ॥
हेमगर्भरसो नाम्ना सर्वव्याधिनिवारणः ।
रोगराजादिकं हन्यादितरेषां तु का कथा ॥ २७०९ ॥

यो. र., नि. र., र. चं., वै. चि., रसायनसं. क्षये कासे च।

भाषा—शुद्धपारा १ पल, सोनेकेवर्क १ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकवगैरहकेरससे मर्दनकर पुष्टवस्त्रमें बांधकर गन्धकयुक्तवस्त्रकी ३ तह लगाकर १ पल गन्धकके चूर्णको लोहेकेपात्रमें पोट्टलीके नीचे ऊपर रख शरावसम्पुटकर भूधरपुटमें आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गन्धकको साफकर फिर वस्त्रमें बांध उसकीबराबर गन्धकके चूर्णमें रख पूर्ववत् आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे राजरोगप्रभृति समस्तव्याधियोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ६३६ ॥

६३७ हिरण्यगर्भपोट्टली (सप्तमी)

शुद्धं सूतं त्रिभागञ्च तदर्धांशेन गन्धकम् ।
पादांशं कनकं दद्यात्त्रिभागं शुल्वभस्मकम् ॥ २७१० ॥
मौक्तिकं दशमांशेन प्रवालं तत्समांशकम् ।
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम् ॥ २७११ ॥
पूगमात्रा गुटीः कृत्वा वेष्टयेत् क्षौमवाससा ।
दृढसूत्रेण सम्बध्य छायायां शोषयेत्ततः ॥ २७१२ ॥
सघृते मृण्मये पात्रे गन्धं दद्यादुपर्यधः ।
निधाय छिद्रमुद्राढ्यं द्रावं दृष्ट्वा शलाकया ॥२७१३॥
पाचयेत्सिकतायन्त्रे सुवैद्यो मृदुनाऽग्निना ।
घटीद्वये समायाते स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २७१४ ॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे ।
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥ २७१५ ॥

वै. चि. (ल.), सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धपारा ३ भाग, गन्धक १॥ भा., सुवर्णभस्म अथवा वर्क पारेसे चतुर्थांश, ताम्रभस्म ३ भा., मोती और प्रवाल पारेसे दशमांश लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारके रससे ७ दिनतक मर्दनकर सुपारीकेबराबर गोलियें बनाय रेशमीकपड़ेमें बांधकर छायामें सुखाय घीकेबर्तनमें गन्धकके बीचमें रख वालुकायन्त्रकी अग्निदेवे। गन्धक गलनेपर इच्छानुसार गोलीमें छेदकर और दोघडीकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, वात, कफ और ग्रहणीरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६३७ ॥

६३८ हिरण्यगर्भपोट्टली (अपूर्वहेमगर्भः) ८

शुद्धपारदभागैकं तत्समं स्वर्णजं दलम् ।
उभयं मर्दयेत्तत्र कलांशं शुद्धगन्धकम् ॥ २७१६ ॥
त्रिभागं रससिन्दूरं गन्धांशं नवसादरम् ।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य भानुक्षीरे दिनावधि ॥ २७१७ ॥

पट्टकूले दृढे बद्धा कर्षमानाश्च वर्तिकाः।
पट्टश्च तन्तुना बद्धा स्थाप्या लोहजसम्पुटे ॥२७१८॥
गुटीभ्यो द्विगुणं गन्धचूर्णं दद्यादधोपरि।
सम्पुटं मुद्रितं कृत्वा भूगर्भे स्थापयेद्बुधः ॥ २७१९ ॥
तस्योपरि ददेद्वह्निमुपलैः पञ्चभिस्तथा।
बद्धा पूर्वक्रमेणैव गन्धं मुद्राञ्च दाहनम् ॥ २७२० ॥
एवं पुनः पुनः सप्तपुटिते स्वाङ्गशीतलाः।
ता गुटी ग्राहयेद्वैद्यो निष्कास्योर्द्धस्थकिल्विषम्२७२१
तरुणारुणवल्लासे गुणे च रसवद्भवत्।
सर्वरोगेषु दातव्य एकैकस्मिन्द्विदोषजे ॥ २७२२ ॥
त्रिदोषे चार्द्रनीरेण मधुयुग्दापयेत्सुधीः।
पक्षाघाते धनुर्वाते खञ्जादौ दन्तबन्धने ॥ २७२३ ॥
वातजे कफजे रोगे गुञ्जैका त्रिवृदादिभिः।
अपूर्वहेमगर्भोऽसौ रोगराजादिकाञ्जयेत् ॥ २७२४ ॥
रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्धपारा और सोनेकेवर्क १–१ भाग लेकर पिष्टी-बनाय १६ वांहिस्सा शुद्ध गन्धक तथा नवसादर, और ३ भाग रससिन्दूर मिलाकर नीलवर्ण कज्जलीकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर १–१ कर्षकी गोलियेंबनाकर रेशमीवस्त्रमें बाधकर गन्धक और रेशमीवस्त्रकी ३ तहदेकर गोलियोंसे दूने गन्धकके चूर्णमें रखकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर भूधरपुटमें ५ जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। ऐसे ७ पुटें देनेकेबाद निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती अदरख अथवा मधु अथवा मधु और निसोत प्रभृतिकेसाथ देनेसे द्वन्द्व, समस्त अथवा पृथक् दोषोंसे जायमान पक्षाघात, धनुर्वात, खञ्जादिक, दन्तबन्ध, वातज और कफज-रोगोंको यह नष्टकरतीहै। राजयक्ष्मकी परमौषधिहै ॥ ६३८ ॥

६३९ हिरण्यगर्भपोट्टली (श्वेतहेमगर्भ) ९.

चन्द्रोदयं रसं श्वेतं रसकर्पूरसञ्ज्ञकम्।
नागवङ्गौ मृतौ प्रत्यकर्षं कर्षं प्रदापयेत् ॥ २७२५ ॥
सूक्ष्मं खल्वे विमर्द्याथ दशांशं हेम दापयेत्।
स्वर्णाद्दशांशकं शुद्धं मल्लभस्म प्रदापयेत् ॥ २७२६ ॥
अर्कदुग्धेस्ततःखल्वे मर्दनीयमहर्द्वयम्।
सूर्यातपे खरे शोष्यं पिष्टिं कुर्यान्मृदुं बुधः ॥२७२७॥
पट्टवस्त्रे दृढां बध्वा गुटिकां पट्टतन्तुना।
गुटिकाषड्गुणं गन्धं चूर्णयेल्लोहपात्रके ॥ २७२८ ॥
तत्पात्रं वेशयेच्चुल्ल्यां निर्धूमाग्निं प्रदापयेत्।
गन्धके गुटिकां पक्त्वा लोहदर्व्या च चालयेत् २७२९
यामैकं पाचयेन्मन्दं गुटिकां तत उद्धरेत्।
स्वाङ्गशीतां छुरिकया गुटिस्थं वस्त्रमुद्धरेत् ॥२७३०॥
चन्द्रकान्ति र्भवेत्स्वच्छो हेमगर्भो रसोत्तमः।
श्वासे कासे महावाते ज्वरे सर्वगदेषु च ॥ २७३१ ॥
मधुनाशृङ्गबेराद्भिर्वीक्ष्य रोगबलाबलम्।
दन्तबन्धे तथा शूले गुल्मेऽमुं हेमगर्भकम् ॥ २७३२ ॥
रसायनसं., रसायने।

भाषा—तलस्थचन्द्रोदय, शुद्धरसकपूर, नाग और वङ्गभस्म १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क सबसे दशमांश, स्वर्णसे दशांश मल्लभस्म डालकर आकके दूधसे तप्तखल्वमें दोदिन मर्दनकर गोली बनाय सुखाकर वस्त्रमें रख रेशमके डोरेसे बाधकर पोट्टलीबनाय लोहेके पात्रमें षड्गुणगन्धक के बीचमें रखकर पकावे। पोट्टलीको लोहेकीकड़छी अथवा शलाकासे लोटपोटकर १ पहरतक पकावे फिर कड़ाहीको उतारकर नीचेरखले। स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचिता-नुपानकेसाथदेनेसे श्वास, कास, महावात, समस्तज्वर, बवासीर, दन्तबन्ध, शूल, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भरसायनम्) १०

शुद्धं गन्धं पलार्द्धञ्च सूतं शुद्धं पलाष्टकम्।
श्लक्ष्णां कज्जलिकां कृत्वा मासमेकं प्रयत्नतः ॥२७३३॥
प्रवालं मौक्तिकं चाभ्रं नागं वङ्गं पलार्द्धकम्।
ताम्रञ्च पलमेकञ्च रौप्यभस्म पलार्द्धकम् ॥ २७३४ ॥
शुद्धहेम्नः पलान्यष्टौ मर्दयेत्कृष्णवद् दृढम्।
दृढां पोट्टलिकां बद्धा जारयेत्तदनन्तरम् ॥ २७३५ ॥
द्वियामञ्च ततः पश्चात्तीक्ष्णशलाकेन घर्षयेत्।
श्यामाक्षौद्रयुतश्चैव वातरोगे प्रशस्यते ॥ २७३६ ॥
शृङ्गबेररसेनैव सन्निपातं निहन्ति च।
नानानुपानयोगेन सर्वरोगनिबर्हणः ॥ २७३७ ॥
श्वासे कासे समीरोत्थे शैथिल्ये चामवातके।
अशीतिवातरोगेषु ह्युन्मादेषु विशेषतः ॥
अश्विभ्यां पूर्वमुद्दिष्टं हेमगर्भरसायनम् ॥ २७३८ ॥
रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्धगन्धक २ कर्ष, शुद्धपारा ८ पल लेकर एक-महीनेतक मर्दनकरे। फिर प्रवाल, मोती, अभ्रक, नाग, वङ्ग इनकीभस्में २–२ कर्ष, ताम्रभस्म १ पल, रजतभस्म २ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क ८ पल लेकर १–२ दिन मर्दनकर मल-मल अथवा रेशमीकपडेमें कड़ी पोट्टली बाध शरावसम्पुटमें बन्द-कर दोपहर जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निका-लकर साफकरके रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती निसोत और मधुकेसाथदेनेसे श्वास, कास, वातरोग, शिथिलता, आमवात, विशेषकर उन्माद येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६४० ॥

६४१ हिरण्यगर्भपोट्टली (एकादशी)

शुद्धो रसो बलिरसाकनकच्छदाभ्र
भस्मापि मौक्तिकमयं मिदुरस्य चापि।
कस्तूरिकाम्बरदिनाधिपभस्मताल-
भस्मानि कर्षमितभागसमानि कृत्वा २७३९
सप्ताहमार्द्रकरसेऽथ विमर्द्य सर्वं
पूगीफलेन सदृशीं वटिका विधाय।
कौशेयवाससि पृथक् चतुरङ्गुले ता-
बद्धाऽर्द्धपक्करसरानिहिता विदध्यात् २७४०

पक्वा यदा कृसरिका च निसर्गशीता
कौशेयवाससि पुनर्द्रुतगन्धपक्वाः।
भुञ्जीत कालबलवह्निसमानमानां
मर्त्यो भवेदमरतुल्यवपु र्वली च ॥ २७४१ ॥
अपस्मारेतथोन्मादेसन्निपातेषु योजयेत्।
अनुपानविशेषैस्तु युक्ता हन्त्यामयान्बहून् ॥ २७४२ ॥

नू.क., अपस्मारोन्मादसन्निपातेषु।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनेकेवर्क, मोती, हीरा, ताम्र, हरिताल इनकीभस्में, कस्तूरी और अम्बर १–१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर सुपारीके बराबर गोलियें बनाय सुखाकर ४ तह रेशमकेकपड़ेमें प्रत्येक गोलीको रेशमसे कड़ीबांधकर मूंग और बासमतीचावलोंकी अधपकीखिचड़ीमें गोलियोंको डालकर मुंहबन्दकर पकावे। खिचड़ी पकनेपर चूल्हेकी आग खींचले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर साफ़कीहुई गोलियोंको रेशमकेकपड़ेमें बांध पूर्वकीतरह गन्धकद्रुतिमें दोघण्टे मन्दाग्निपर पकाकर रखछोडे। इसमेंसेकाल, बल और अग्निका बलाबल देखकर १ चावलसे १ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे अपस्मार, उन्माद और घोरसन्निपातको यह नष्टकरतीहै। निरन्तरसेवनकरनेसे बलीपलितको दूरकर दीर्घायुको करतीहै ॥ ६४१ ॥

६४२ हिरण्यगर्भपोट्टली (पीतहेमगर्भः) १२

पीता मनःशिला तालं शुद्धं प्रत्यक् पिचुम्मितम्।
कर्षार्द्धं हेम संयोज्यं तत्पादांशं महाविषम् ॥ २७४३ ॥
मर्दयेद्दस्तुण्डद्रावैः शुष्कं कृत्वा खरातपे।
पूर्ववत्पोट्टलीं बद्धा क्रियां पूर्ववदाचरेत् ॥ २७४४ ॥
हेमगर्भो भवेत्पीतः सर्वरोगनिबर्हणः।
अनुपानैः सदा देयो वाजीकरण उत्तमः ॥ २७४५ ॥

रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्ध पीलीमैनसिल और हरिताल १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क ८ माशे, पीलासोमल २ माशे लेकर बारीक चूर्णकर केशरकेद्रवसे एकदिनमर्दनकर कड़ीधूपमें सुखाकर इच्छानुसार गोलियेंबनाय रेशम अथवा मलमलके कपड़ेमें पोट्टली बनाय लोहेकेपात्रमें षड्गुणगन्धकको पिघलाकर बीचमें पोट्टलीको रख १ पहरकी अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ चावल समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं और उत्तम वाजीकरणहै ॥

६४३ हिरण्यगर्भपोट्टली १३

कर्षैकं रसकर्पूरं दापयेत्खल्वमध्यतः।
पादांशं हाटकं योज्यं माषैकं शुद्धमल्लकम् ॥ २७४६ ॥
मर्दयेद्याममात्रन्तु सूक्ष्मवस्त्रे निधापयेत्।
पोट्टलीञ्च दृढां बद्धा जारयेद्गन्धकद्रवैः ॥
याममेकं ततः पश्चाद्योजयेत्सकले गदे ॥ २७४७ ॥

रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्धरसकपूर १ कर्ष, सोनेकेवर्क ४ माशे, शुद्धसोमल १ माशा लेकर एकपहर मर्दनकर सूक्ष्मवस्त्रमें पोट्टलीबनाय गन्धककेद्रवमें १ पहर पाचनकरे। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ६४३ ॥

६४४ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) १४

रसबलिरविरजतकनकमुक्तातालप्रवाललोहाभ्रम्।
बद्धा पटे विपक्वा बलितैले हेमगर्भपोट्टलिका॥२७४८॥

सि. भै. म., पारदप्रकरणे क्षयादौ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, रजत, सुवर्ण, मोती, हरिताल, प्रवाल, लोह, अभ्रक इनकीभस्में समभागलेकर चित्रकप्रभृतिके रससे १–२ पहर मर्दनकर गोलीबनाय पूर्ववत् ३ तह गन्धककपड़ेमें पोट्टलीबनाय गन्धककेतैलमें एकपहर पकावे। इसमेंसे १–१ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह क्षयादिसमस्तव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४४ ॥

अथ पोट्टलीरहस्यम्

अत्र (पोट्टलीविषये) बहवो जना विवदन्ते यत्कस्य योगस्य पोट्टली करणीया कस्य वा न करणीयेति? तत्र पोट्टलीति प्राकृतनामाऽस्ति तन्निर्माणप्रकारस्य तत्तदौषधभाण्डसङ्ग्रहविषये–औषधग्रंथो भाण्डमप्रताऽल्पसमये गुणाधिक्यादि मूलं प्रतीयते पोट्टलीं बद्धा गन्धकद्रुतौ पाककरणेनोक्तदोषाणामभावादियं पद्धतिः प्रवृत्ताऽस्त्यतो धातुप्रभृतियोगानां मध्ये कस्यापि योगस्य पोट्टलीविवक्षाऽस्ति तत्तन्निर्माणे सर्वेषामपि जनानां कामचारोऽस्ति। पर्वतीया जाङ्गलाश्चाऽधुनाऽप्यौषधानां पिण्डं निर्माय रक्षयन्ति। एतत्प्रकाराः प्रायान्येन शङ्खीप्राहिकन्यायेनाऽत्र तत्तद्ग्रन्थनामनिर्देशपुरःसरं केचन प्रतिपादितास्तत्र तद्धटकानि पारदः, गन्धकः, सुवर्णं, मुक्ता, शङ्खः, वराटी, टङ्कणं, ताम्रं, नाग, वङ्गं, लोहं, अभ्रकं, प्रवालः, रजतं, स्वर्णसिन्दूरं, रससिन्दूरं, नरसारः, मल्लं, हरितालं, मनःशिला, रसकर्पूरः, चन्द्रोदयः, वज्रं, मृगनाभिः, अग्निजारश्चेति पञ्चविंशतिपरिमितान्यागतानि तेषां मध्ये एकशो द्विशस्सर्वशो वा प्रस्ताराः कृताश्चेदानन्त्यं जायेत। तत्र तत्तद्देशप्रान्तादिव्यवहारभेदेन नानाविधा योगा दृश्यन्ते तेषां सामस्त्येन निर्देशः कर्त्तुमशक्यस्तथापि दिङ्मात्रप्रदर्शनार्थं केचियोगाः प्रदर्श्यन्ते। यथा–सुवर्णभस्मनोऽष्टसु कर्षेषु सुविशुद्धसमभागपारदगन्धककज्जल्येककर्षं विमिश्र्यैशवगोलाभिधस्य वब्बूलनिर्यासादीना वा द्रवेण द्विनवल्लान्विमृध शुद्धगन्धकचूर्णं पादकर्षं मिश्रयित्वा सौष्ठवसम्पादनाय द्विनवल्लमितान्सूक्ष्मसुवर्णखण्डान् डुंस्यितान् स्थापयित्वा शिखरारम्भिका वर्टी विधाय वैयौधना माङ्कितां कृत्वा सम्यग्विशोष्य चतुरावृत्तकौशेयवाससि बद्धाऽयस्तन्तुभिर्दोलांनिर्माय चीनपात्रे शुद्धगन्धकं विद्राव्य तत्रैनां लोहशलाकादोलिका स्थापयित्वा मन्दाग्निना पाचयेत् कौशेयस्य दग्धाऽवस्थां विलोक्य मुचुण्डीद्वयेनैनां वर्टी निष्कास्य

वज्रखण्डानि युक्त्या दूरीकृत्य गन्धककालिमानमपहृत्य वटीं भव्यदर्शनां कुर्यात् । एवं सर्वा अपि वटीर्विशोधयेत् । एवं करणे घर्षणादिदोषजन्यौषधाऽपक्षयशङ्कैव नोदेष्यति । आधुनिकास्त्वौषधस्य वर्णविपर्ययभीत्या निर्यासादिद्रवमन्तरैव केवलं दिव्यजलेन पिष्टिकामापाद्य पोट्टलीं निर्वर्तयन्ति । अनया रीत्या पोट्टल्यां काठिन्याऽधिक्यं चित्ताकर्षिणी वर्णसुष्ठुता च सम्पद्यते । प्राचीनपोट्टलीषु तु तुलस्यादिस्वरसभावना प्रायो दृश्यन्ते, एतेन तत्तद्रोगहरद्रव्यैर्यथाशक्यं विमृश्य वटिकाविधानमत्र श्रेष्ठम् । ये तु केचिद्द्रवभावनागुणो गन्धकद्रुतिपाकेन द्रवाहितविशेषस्य भस्मीभावात्पोट्टल्यां नागच्छतीति प्रत्यवतिष्ठन्ते ते त्वज्ञानगह्वरे पतिता एव बोध्याः । एवञ्चेन्नहि तत्तदौषधविशेषैस्सम्पादिततास्रादिभस्मसु विशेषो वक्तुमेकान्ततोऽशक्य एव स्यात्, इष्टापत्तिस्तु यत्नशतैरपि निर्वक्तुमशक्या प्रत्यक्षविरोधात् । गर्भपातकादौषधनिर्मितधातुभस्मना तत्तत्कार्यस्य प्रत्यक्षदृष्टत्वात् । एवं गर्भरक्षकौषधादिष्वपि प्रत्यक्षताऽस्ति । सिद्धसम्प्रदायिकास्तु कृष्णकुष्माण्डस्य श्वेतद्रवं नियोजयन्ति एतेनातिकाठिन्यं भवतिगुणवृद्धिरपि । पोट्टलीषु वर्णभेदस्तु तद्भिन्नभस्मस्ववर्णभेदादुदेति । एकस्या पोट्टल्या नानावर्णोत्पत्तिरपि नानाविधौषधपिष्टिकाखण्डाना मेलनात्सम्पद्यते । यथाऽधस्तान्निर्दिश्यमानचतुरष्टपोट्टलीनां चत्वारि अष्टौ वा खण्डानि विधायैकैकविजातीयखण्डस्यैकत्र स्थापनाच्चतुर्षु खण्डेषु चतस्रोऽष्टसु खण्डेष्वष्टौ विचित्रवर्णा पोट्टल्यस्सम्पद्यन्त, परन्त्विदं सुतिदेशकाना स्वचातुरीद्योतनमात्रम् । पाकसमये विभिन्नशक्तगुणानां साहचर्यदोषात्स्वतन्त्रपोट्टलीनिर्माणप्रकार एव ज्यायान् । सुवर्णशलाकानां नियानमपि न सर्वत्रोपयोगि तच्छुभ्रतमस्त्रादियोगे वैयर्थ्यात् । बलीयसाऽबल जीयते इति न्यायेन यद्यपि सुवर्णं शतुगमीपेऽपकर्तुं प्राऽल तथापि तत्र दर्शकानां चित्ताऽऽह्लादमन्तराऽन्यत्किञ्चिदप्युपकरत्वमाऽस्तीति विद्वत्सु विज्ञप्ति । अल्पप्रमाणगन्धकयोगोऽपि पोट्टलीगतपरमाणूनां सयोजकस्तदीयगुणोत्कर्षविधायकश्चेति बोध्यम् । यत्र कज्जल्युल्लेखस्तत्राऽन्यद्वस्तुमेलनाऽनन्तरं तद्योगकरणीयोऽन्यथाऽभीष्टवर्णविघातकस्तार्थ्यं पर्यवस्यति । यत्र तु कृष्णकुष्माण्डस्य दानमस्ति तत्र तु नेयं विशुद्धपतिष्ठति, अभियोगेन कालिम्नोऽनुदयात् । पारदस्य मेलनमपि गन्धकातिरिक्तद्रव्यैः सह कृत्वाऽन्ते गन्धकमिश्रणमिति हस्तचातुरी ।

अथ लोकप्रसिद्धा काश्चित्पोट्टल्यस्तासां नामानि अधो निर्दिश्यन्ते ताश्च वैद्यवरेण जयशङ्करशर्मणा निर्दिष्टाः । यथा—

हिरण्यगर्भपोट्टली—सुवर्णभस्म १० कर्षा विशुद्धकज्जली १ कर्षा, शुद्धगन्धक १ टङ्कमितम्, सुवर्णतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, एतद्वस्तुचतुष्टयघटिता । अस्या निर्माणमुपरिनिर्दिष्टरीत्या करणीयम्, इयं माञ्जिष्ठवर्णा सम्पत्स्यते । कृष्णाऽऽर्द्रकाऽऽर्द्रकरसादिभिर्यथोचित्यमर्धगुञ्जातो रक्तिमानां मात्रां राजयक्ष्मरक्तशोभजीर्णज्वरोग्र क्षयादिषु दद्यात्पथ्यं रोगोचितं विधारयेत् ॥ १ ॥

तारगर्भपोट्टली—इयं श्वेतवर्णा । रौप्यभस्म १० कर्षपरिमितम्, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, एतद्वस्तुचतुष्टयघटिता कार्या, निर्माणं पूर्ववत् । तुलसीपत्ररसमधुभ्यां रोगोचितेनाऽन्येनाऽनुपानेन वा योगः प्रमेहशुक्रदोषपित्तविकृतिमूत्रव्याधयो निवर्तन्ते । श्वेतरजतभस्मयोगेऽस्यादरनेतद्वर्णो भविष्यति तदभावेऽन्यथात्वमिति रहस्यम् । अर्धरक्तिकामानादेकरक्तिका मात्रा योज्या ॥ २ ॥

ताम्रगर्भपोट्टली—मयूरकण्ठाभताम्रभस्म १० कर्षपरिमितं, पूर्ववद्विशुद्धकज्जली १ कर्षा, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्क, विशुद्धसुवर्णतन्तुखण्डा ६ रक्तिमिता, निर्माणं पूर्ववत् । इयं मयूरकण्ठाभा भवति । श्वेतताम्रभस्मनस्तु शुभ्रवर्णा रसस्य रक्ता । आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां अवस्थाविशेषवशेन तदुचितानुपानेन वा कफजन्यत्रिदोषश्वासकासज्वरशूलवातज्वरशोथा निवर्तन्ते । अर्धगुञ्जात एकगुञ्जामिता मात्रा । पथ्यं रोगोचितं देयम् ॥ ३ ॥

लोहगर्भपोट्टली (प्रथमा)—लोहभस्म १० कर्षं विशुद्धकज्जली १ कर्षा, विशुद्ध गन्धकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिमिता । निर्माणं पूर्ववत् । लोहभस्मवर्णसमवर्णा, एकगुञ्जातस्त्रिगुञ्जापरिमिता मात्रा । आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां तत्तद्रोगविशेषानुपानेन वा योजिता सङ्ग्रहणीपाण्डुकामलारक्तशोभप्रमेहप्रदरान्नाशयति । रोगोचितं पथ्यम् ॥ ४ ॥

लोहगर्भपोट्टली (द्वितीया)—लोहरौप्यसुवर्णवङ्गनागताम्रमण्डूरसुवर्णमाक्षिकखर्परभस्मानि प्रत्येकं द्विकार्षिकाणि, कज्जली २ कर्षा, विशुद्ध गन्धकचूर्णमर्धकर्षं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा १२ रक्तिमिता । निर्माणं पूर्ववत् । इयं कृष्णवर्णा । एकगुञ्जातो द्विगुञ्जापरिमिता मात्रा हरिद्रास्वरसगोमूत्रदुग्धैस्तुलसीरसैस्तत्तद्रोगहरानुपानेन वा योजिता क्षयप्रमेहपाण्डुकामलारक्तशोभप्रदरनेत्ररोगग्रहणीप्रभृतीन्नाशयति ॥ ५ ॥

मल्लगर्भपोट्टली—विशुद्ध मल्लभस्म ४ पलं पारदभस्म २ कर्षं तदभावे शुद्धपारद २ कर्षमितं, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्क सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिमिता । निर्माणं पूर्ववत् । इयं श्वेतवर्णा । अर्धतण्डुलादारभ्य द्वितण्डुलपरिमिता मात्रा दुग्धेन, दधिसरेण, दुग्धसरेण वा तत्तद्रोगहरानुपानेन वा दत्ता ज्वरश्लेष्मवातव्याध्युरःशूलशिरःशूलमन्दाग्निनाडीव्रणश्वासकासाभिन्यासप्रभृतीन् नाशयति । पथ्यं रोगोचितम् ॥ ६ ॥

तालगर्भपोट्टली—हरितालभस्म ४ पल, पारदभस्म २ कर्षं (भस्माऽभावे द्वयमपि सुविशुद्धं ग्राह्यम्), शुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत् । भस्मघटिता चेच्छ्वेता सम्पत्स्यते विशुद्धाभ्यां पीतवर्णा । आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा तण्डुलमानादर्धरक्तिका मात्रा प्रयुक्ता चेत् श्वासकासवातव्याधिरक्तपित्तरोगान्नाशयति । पथ्यं रोगोचितं देयम् ॥ ७ ॥

शिलागर्भपोट्टली—शुद्धा मनःशिला ४ पला, शुद्धपारद २ कर्षं, विशुद्ध गन्धकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुशलाकाखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत् । इयं कुङ्कुमवर्णं सम्पत्स्यते । मात्राऽ-

र्द्धरक्तित एकगुञ्जामिता। अतिविपाकदुरोहिणीमधुभिरवस्थाविशेषानुकूलाऽनुपानैर्वा नियोजिता चेज्ज्वरश्वासकासादीन्नाशयति ॥

विषगर्भपोट्टली—मल्लमन शिलादरदतालकरसकर्पूराणा भस्मानि प्रत्येकमेकैकपलानि, पारदभस्म १ कर्ष, भस्माऽभावे सुविशुद्धानि ग्राह्याणि। सुविशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनु तन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत्। भस्मभि र्घटिता चेच्छ्वेता, अन्यथा तु रक्तपीता भविष्यति। भस्मघटिताचेदर्ध तण्डुलादेकतण्डुलमिता मात्रा। विशुद्धे सम्पादिता चेदेकतण्डुलमानाद्वितण्डुलमिता बिल्वपत्रनिम्बार्द्रकस्वरसैस्तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा नियोजिता चेदुपदशफिरङ्गवातव्याधिक्षीणताश्लेष्मविकार रक्तदोषभगन्दरदद्रुनाडीव्रणादीन्नाशयति ॥ ९ ॥

रसगर्भपोट्टली—दरदभस्म ४ पल, पारदभस्म १ पल (भस्माऽभावे विशुद्धौ ग्राह्यौ), विशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत्। भस्मघटिता चेच्छ्वेता, विशुद्धवस्तुघटिताचेद्रक्तवर्णा। १ रक्तिमानात् ३ रक्तिमाना मात्रा तुलस्यादिस्वरसैर्योजिता पाण्डु निहन्ति। भस्मघटिता चेत्तण्डुलमानादर्धरक्तिमिता मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानैर्योजिता सकलामयान्निहन्ति॥ इत्येका ॥

रसकर्पूरभस्म १० कर्ष, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे सुविशुद्धौ ग्रहीतव्यौ) विशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुशकलानि ६ रक्तिमितानि, निर्माण पूर्ववत्। भस्मघटिताचेदेकतण्डुलमानाद्वितण्डुलमिता मात्रा, विशुद्धद्रव्यघटिता चेदेकरक्तिमिता हरिद्रयोपदंश निहन्ति। भस्मघटिता तु तत्तद्रोगहरानुपानै सर्वरोगान्निहन्ति, पर वाजीकरी वृष्या च, उभयथाऽपि श्वेता। इति द्वितीया।

पारदभस्म १ कर्ष, कज्जली ४ पला, विशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुशकलानि ६ रक्तिमितानि, निर्माण पूर्ववत्। एका रक्तिकामारभ्य त्रिरक्तिमिता मात्रा आर्द्रकस्वरसादिभि सर्व रोगान्निहन्ति ॥ इति तृतीया ॥

दरदभस्म ४ पल, रसकर्पूरभस्म २ पल, पारदभस्म १ कर्ष, सुविशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डानि ६ रक्तिमितानि, निर्माण पूर्ववत्। भस्माऽभावे सुविशुद्ध ग्राह्यम्। भस्मघटिता चेत्तण्डुलैकमानाद्द्वितण्डुल मात्रा। विशुद्धवस्तुघटिता चेद्रक्तिमिता मात्रा दुग्धकनकस्वरसाभ्या वाजीकरी। तत्तद्रोगहरानुपानैस्तु सर्वरोगान्निहन्ति ॥ इति चतुर्थी ॥ १० ॥

त्रिधातुगर्भपोट्टली—निरुत्थ वङ्गनागयशदभस्मानि प्रत्येकमेकपलानि, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क सुवर्णतनुशकलानि ६ रक्तिमितानि, पारदभस्मनोऽभावे विशुद्ध पारद भस्मभि. सह मर्दयित्वाऽदृश्यतामापादयेत्, पश्चान्निर्माण पूर्ववत्। श्वेतवर्णा पोट्टली भविष्यति। अर्धरक्तितो रक्तिद्वयमाना मात्रा हरिद्रातुलसीस्वरसाभ्यां नियोजिता प्रमेहपूतिमेहप्रदर शुक्रदोषान्नाशयति। दुग्धेन सेविता शुक्र वर्धयति। पथ्य रोगोचितम् ॥ ११ ॥

रत्नगर्भपोट्टली—वज्रपारुष्मतवैकान्तमुक्ताप्रवालपारदमाणिक्यपुष्परागगोमेदनीलशङ्खाना भस्मानि प्रत्येकमेककर्षाणि, विशुद्धगन्धकचूर्णमेकटङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा १२ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत्। केचित्तत्र स्फटिककुरुविन्दवैदूर्यराजावर्तानामेकैककर्षमधिकतया प्रक्षिपन्ति तेषामपि भस्मान्येव ग्रहीतव्यानि। तेषा भस्मप्रकारा अगस्त्यसंहितातोऽवगन्तव्या। इदानीन्तनास्तु वज्र विनाऽन्यरत्नानि शतप्रपुष्पार्के विशीर्णान्यपि निर्वापान् दत्त्वा तेनैव साक विमृद्य चक्रिका निर्माय अष्टौ दश वा पुटानि ददति। अन्ये पुनर्निर्वापाऽनन्तर कुमारीद्रवे विमृद्य चक्रिका निर्माय पूर्ववत् पुटानि ददति। आर्द्रामलकस्वरसेऽष्टोत्तरशतनिर्वापान् दत्त्वा तेनैव विमृद्य चक्रिका निर्माय क्रमोत्तर विरुद्धोत्पलसहस्रेषु निःशङ्कपुटेषु दत्तेषूत्तम भस्म सञ्जायते इति सर्वेषामेव रत्नानां परिचित प्रकार। अनेन प्रकारेण क्रियमाणानि भस्मानि हरिद्रावर्णानि सम्पद्यन्ते पारदभस्माऽभावे चन्द्रोदयस्य रससिन्दूरस्य वा योग करणीय। मुक्तानान्तु शतपत्रपुष्पार्क (गुलाबजल. हिन्दी) पिष्टिरेव श्रेयसी। भस्मीकरणे शङ्खस्तु वराक येन केनाऽप्युपायेन करणीयम्। रक्तभस्मवर्णाधीनो वर्ण। अन्तिमप्रकारेण क्रियमाणेषु भस्मसु तु कुङ्कुमवर्णा पोट्टली सम्पत्स्यते सर्षपमानात्तण्डुलमिता मात्रा मृगमदाभिजारकेशरजातीफलैर्युग्मादिभिश्च प्रयोजिता रसायोज पर्यन्तधातुक्षयात् राजरोग मन्यौषधदुर्जयसर्वानपि रोगान् नाशयति। परमरसायनी योग वाहिका चेति। पथ्य रोगोचित दद्यात् ॥ १२ ॥

अभ्रगर्भपोट्टली—निश्चन्द्रकृष्णाभ्रभस्म ४ पल, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे विशुद्ध पारद), विशुद्ध गन्धकचूर्णम र्धकर्ष सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत्, इय रक्तवर्णा सम्पत्स्यते। अर्धगुञ्जामिता मात्रा आर्द्रकमधुभ्या तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा प्रयोजिता श्वासकासक्षयजीर्णज्वरादीन् गर्भिणी रोगांश्च निकृन्तति। पथ्य रोगोचित विधात ॥ १३ ॥

माक्षिकगर्भपोट्टली—सुवर्णमाक्षिकरौप्यमाक्षिकमण्डूरकासीसकांस्यरीतिपारदभस्मानि १–१ पलानि, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका निर्माण पूर्ववत्। भस्मवर्णाधीनो वर्ण। अर्धरक्तिमानादेक रक्तिमिता मात्रा आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा नियोजिता प्रमेह क्षीणतापाण्डुकामलोदररोगान् निहन्ति। पथ्य रोगोचितम् १४

प्रवालगर्भपोट्टली (श्वेतपोट्टली)—प्रवालमुक्ताशुक्तिकपर्दशङ्खभस्मानि प्रत्येक द्विद्विपलानि, गोदन्तभस्म ४ पल, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे विशुद्धो ग्राह्य), विशुद्धगन्धकचूर्ण १ टङ्क सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत्। इयमतिश्वेता। ३ रक्तिमानान्माषकपरिमिता मात्रा चित्रकमूलाऽऽर्द्रकस्वरसादिभिर्नियोजिता पाण्डुदरकासश्वासगुल्मा न्विनाशयति बालरोगांश्च। पथ्य रोगोचितम् ॥ १५ ॥

अन्यस्थपोट्टलिका पूर्व चतुर्दशप्रतिपादितास्तासु पारदगन्धसुवर्णमुक्ताशङ्खवराटीटङ्कणताम्रनागवङ्गलोहाभ्रकप्रवालरजतस्वर्णसिन्दूररससिन्दूरनरसारमल्लहरितालमन शिलारसकर्पूरचन्द्रोदय

वज्रमृगमदाम्बराणि एतानि पञ्चविंशतिर्वस्तूनि समागतानि तेषु मृगमदाम्बरे द्वे धातुपाषाणभिन्ने वस्तुनी मुक्त्वा त्रयोविंशति र्धातुपाषाणा समागता । समनन्तरनिर्दिष्टपञ्चदशपोट्टलीषु अष्ट त्रिंशद्वस्तूनि समागतानि तेषु अष्टादशपूर्वोक्तान्येव सन्ति विंश तिश्च नूतनानि यथा—मण्डूरपरदसुवर्णमाक्षिकदरदगारुडवैक्रान्त माणिक्यपुष्परागगोमेदनीलस्फटिकराजावर्तकुरुविन्दवैडूर्यशुक्ति रौप्यमाक्षिककांस्यरीतिकासीसगोदन्ता इत्येतेषा सर्वेषामप्ये कस्या पोट्टल्यां योगचिकीर्षा चेत्तर्हि भवेदेव, यथा द्वितीयलक्ष्मी नारायणे सर्वेषामपि समावेश कृतोऽस्ति आपातदृष्ट्या त्रिचतुर वस्तूनि तत्र न दृश्यन्ते यथा रसकर्पूर हिङ्गुल, कुरुविन्द, गोदन्ता, परन्तु लक्ष्मीनारायणोक्तपारदसंस्कारे कृते हिङ्गुलरस कर्पूरयोर्दानस्यात्यावश्यकत्वमास्ति कुरुविन्दगोदन्तयोरभावोऽपि न दोषावहो लक्ष्मीनारायणे चन्द्रसूर्यकान्तनीलाञ्जनरसाञ्जनमार्जा राक्षफिरोजाख्य (तुत्यमणि) पड्वस्तूनामधिकतया समागमनात् रसकर्पूरादिद्रव्यचतुष्टयस्याधिनकया दानेनाऽपि क्षत्यभावोस्ति कान्तपाषाणसमागमनान्मण्डूरस्य तुत्थद्वयसमागमनात्ताम्रस्य पूर्ति सम्प्रातास्ति विषादीनामधिकता तु लक्ष्मीनारायणेऽस्त्ये वेति सर्वे पद हस्तिपदे निमग्नमिति न्यायेन सर्वा अपि पोट्टल्यो लक्ष्मीनारायणोदरे सन्निविष्टा जाता सन्ति तत्र रोगा अपि प्राय सव समागता सन्ति परन्तु सर्वेषां द्रव्याणां सम्भरण साधारणजनेन कर्तुमतीव दुश्शकमत्युग्रवीर्यत्वाच्च सर्वे सर्वत्र प्रयोक्तुमपि दुश्शकाऽस्ति अतो यावल्लभ्यद्रव्याणा विषरहिता एका कार्या तस्या सर्वत्रैवोपयोगो निरत्ययत्न लाभप्रदो भवति। विषसहिता द्वितीया तस्या घोरसन्निपातावस्थायां कण्ठावरो धादौ योगो लाभप्रदोऽस्ति अतो विषरहिताया लक्ष्मी नारायणपोट्टलीति विषगर्भपोट्टलीति वा नामकरणमुचितम्। विषरहितायास्तु रसगर्भपोट्टलीति मृदुहिरण्यगर्भपोट्टलीति वा नामकरणमुचित भवति । धातुपाषाणातिरिक्तमृगमदादीना यत्र योग कर्तुमभीष्टस्तत्र एकादशाङ्कपाकपोट्टलीवत्पाक करणीय इति रहस्यम्। हिरण्यगर्भेण लोकाना चित्तमत्यन्त माकृष्ट दृश्यते यथा सामान्यतोऽन्याऽप्यावस्थायामालोक्य साधार णजना अप्युपदिशन्ति यदस्मै हिरण्यगर्भो दातव्यमिति। परन्तु सा विरुद्धगणाऽत्रुना निर्मितहिरण्यगर्भे दृष्ट्वा प्रतीतार्थवादेन रस शास्त्र पूरितमिति वदितु वैद्या अपि साहस कुर्वन्ति तेन रसशास्त्रे बहुकालाद्दृढमूला श्रद्धा स्वगुणाधिना भविष्यत्यतोऽलौकिकरस चिमत्कारमनो मृतप्रायप्रकार साफोपयोगित्वे सविधिरसदेव ओषध लोक प्रचारणीय इति ऋषिवन्तविंशु एऽ विनीता प्रार्थ मेत्यलमतिविस्तरेण ।

६४५ हिरण्यगर्भरसः (प्रथम)

एकांशा रसराजस्य भागौ द्वौ हाटकस्य च ।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागा षड् दीपनि स्वनात्॥
ऽर्धांशं बले पंशास्याद्य टङ्कणा रसपादिक ।
पञ्चनिम्बुकतोयेन सर्वमेकत्र मर्दयेत्॥ २७५० ॥
मूषामध्ये न्यसेत्कल्कं तस्य वक्त्रं निरोधयेत् ।
गर्तेऽरत्निप्रमाणे तु पुटेत्रिंशच्छाणोपले ॥ २७५१ ॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषादपानयेत् ।
तत. खल्वोदरे मर्द्य. सुधाम्लं समुद्धरेत् ॥ २७५२ ॥
एतस्याऽमृतरूपस्य दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषण ॥ २७५३ ॥
मन्दाग्नौ रोगसङ्घे च ग्रहण्यां विषमज्वरे ।
गुदाङ्कुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयो ॥ २७५४ ॥
अतीसारे महाव्याधौ क्षययो पाण्डुके गदे ।
सर्वेषु कुष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहोदरेषु च ॥ २७५५ ॥
वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च ।
दद्यात्सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद्रसायनम् ॥ २७५६ ॥

र स, र मु, र च, भै र, र क, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, सुवर्णभस्म २ भा, मोती ४ भा, शङ्ख ६ भा, शुद्धगन्धक और पीलीकौडी ३-३ भा, सुहागा ½ भाग लेकर सुवर्णको पारमें मिलाय १-२ पहर घोट कर गन्धकके साथ नीलवर्णकज्जलीकर। फिर अन्य सबचीजोंको मिलाकर पकेनीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर वज्रमूषामें गोलेको रख मुहबन्दकर हाथभरके खड्डेमें ३० जङ्गली कण्डोंकी आंचद। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा २९ कालीमिर्चोंकचूर्णकेसाथ घी और मधुमें मिलाकर लेनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, विषमज्वर, अर्श, भयङ्करशूल, पीनस, श्वास, कास, ग्रहण्यतिसार, शोष, पाण्डु, समस्तकुष्ठ, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, द्वन्द्वज अथवा त्रिदोषज समस्तरोग नष्टहोतेहै और आयुकी वृद्धिहोतीहै ॥ ६४५ ॥

६४६ हिरण्यगर्भरसः (द्वितीय)

सूतात्पादप्रमाणेन हेम्न पिष्टिं प्रकल्पयेत् ।
तयो स्याद्द्विगुणा गन्धो मर्दयेत्काञ्चनारिणा ॥२७५७॥
कृत्वा गोल क्षिपेन्मूषासम्पुटे मुद्रयेत्तत ।
पचेद्भूधरयन्त्रेण वासरत्रितयं सुध. ॥ २७५८ ॥
तत उद्धृत्य तत्सर्वं दद्याद्गन्धश्च तत्समम् ।
मर्दयेदार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन च ॥ २७५९ ॥
स्थूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तित ।
एतस्मादौषधातु यादष्टमांशेन टङ्कणम् ॥ २७६० ॥
टङ्कणार्द्धं विषं दत्वा पिष्ट्वा गेहुण्डदुग्धके ।
मुद्रयेत्तेन कल्केन वराटाना मुखानि च ॥ २७६१ ॥
भाण्डे चूर्णं प्रलिप्याऽथ धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् ।
गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पुटेदारण्यकोपले ॥ २७६२ ॥
स्वाङ्गशीत रसं ज्ञात्वा प्रदद्याद्रक्तिकाद्वयम् ।
पथ्य मृगाङ्कवज्ज्ञेय त्रिदिन लवणं त्यजेत् ॥ २७६३ ॥
यदा छर्दि भवेत्तस्य दद्याच्छिन्नाम्बु तदा ।
मधुयुक्त तथा श्लेष्मकोपे दद्याद्गुडार्द्रकम् ॥ २७६४ ॥
शिरक भर्जिता भङ्गा प्रदेया दधिसंयुता ।

जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं कफवातं नियच्छति ॥ २७६५ ॥

शा सं ,रसायनसं.,र.प्र.सु ,टो.,र.(मा.),भै.सा.,नि र., र.दी.,वै. चि.,र.का.,रससारसङ्ग्रह, क्षयाधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, सोनेकेवर्क १ भा., शुद्धगन्धक १० भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर कचनारकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें रख मुंहबन्दकर ३ दिन भूधरपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय अदरख और चित्रककेरसोंसे मर्दनकर बड़े पीलेरङ्गके कौड़ोंमें भरके समस्तऔषधसे अष्टमांशसुहागा और षोडशांश बछनागसे धूभरके दूधसे मर्दनकर कौडोंका मुंहबन्दकर चूनापुतीहुईहण्डीमें रखदे। फिर शरावसे हंडीका मुहबन्दकर ६–७कपड़मिट्टी समस्तपरदेकर मुखावर हाथभरके खड्डेमें जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे लोकनाथकीतरह देकर मृगाङ्ककीतरह पथ्यपालन करे। ३ दिनतक नमक न खावे। इसके देनेपर वमनहो तो गिलोयक्वाथ, श्लेष्मप्रकोपमें गुड और अदरख; रेचनमें सुनीमांग दहीमें मिलाकरदेवे। इसके प्रयोगसे कास, क्षय, श्वास, ग्रहणी, अरुचि, मन्दाग्नि, कफ और वातरोग येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६४६ ॥

६४७ हिरण्यगर्भरसः (तृतीयः)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावन्तः कनकस्य च।
तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गन्धो द्वादशभागिकः २७६६
कुर्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडश।
चतुर्विंशश्च शङ्खस्य भागकं टङ्कणस्य च ॥ २७६७ ॥
एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिम्बूकजे रसैः।
कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासम्पुटके न्यसेत् ॥२७६८॥
मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः।
पुटेदारण्यजातैश्च स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २७६९ ॥
येदरक्तिमितं पिष्ट्वा दद्याद्गव्याज्यसंयुतम्।
एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दीयताम् ॥ २७७० ॥
राजते मृन्मये पात्रे काचजे वाऽवलेहयेत्।
लोकनाथसमं पथ्यमतीसारे प्रयोजयेत् ॥ २७७१ ॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे।

शा.स.,र सु ,र.प्र.सु ,यो.र ,र चं., रसायनस ,र (मा), भै.सा.,चि र. म., नि.र.,र का.,वै चि ,वै वि.,कासाधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेवर्क ४–४ भाग लेकर पिट्ठीबनाय १२ भाग शुद्धगन्धकसाथ नीलवर्णकज्जलीकर मोती १६ भा , शङ्खभस्म २४ भा., सुहागा १ भाग लेकर कज्जलीमें मिलाय पकेनीबूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर हाथभरके खड्डेमें जङ्गली कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा २९ मरिचोंके चूर्णकेसाथ गोघृतमें मिलाकर चादी, मिट्टी अथवा काचके वर्तनमें सेवनकर लोकनाथकीतरह पथ्यपालनेसे कास, श्वास, क्षय, वातकफ, ग्रहणी और अतिसार इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ ६४७ ॥

६४८ हिरण्यगर्भरसः (चतुर्थः)

रसभस्म त्रिभागं स्यादेकभागं सुवर्णजम्।
एकभागं मृतं ताम्रमेकभागश्च गन्धकम् ॥ २७७२ ॥
मर्दयेच्चित्रकद्रावे द्वियामान्ते समुद्धरेत्
पूर्या वराटिकास्तेन टङ्कणैस्ता विलेपयेत् ॥ २७७३ ॥
वराटान्पूरयेद्भाण्डे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
विचूर्णयेत्स्वाङ्गशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम् ॥
मृगाङ्कवद्चतुर्गुञ्जाभक्षणाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ २७७४ ॥

घ., र.सु ,र.चं.,र.को ,र.सं.,राजयक्ष्मणि।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, सुवर्ण और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक १–१ भाग लेकर कज्जलीकर चित्रककेस्वरससे दोपहर मर्दनकर पीलीकौड़ियोंमें भरकर दूधमेंपिसेहुए सुहागेसे कौड़ियोंका मुंह बन्दकर हंडीमेंरख गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कौड़ियोंसहित पीसकर रखछोड़े। इसमेंसे मृगाङ्ककीतरह ४ रत्तीकीमात्रामें देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्ट करताहै ॥ ६४८ ॥

६४९ हिरण्यगर्भरसः (पञ्चमः)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धं कनकं तथा।
तदर्धं ताम्रकञ्चैव मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥ २७७५ ॥
तत्समानेन बलिना सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पचेद्भूधरयन्त्रके ॥ २७७६ ॥
मृदुना वह्निना चैव स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
बलिमेवञ्च संशुद्धं षड्गुणं जारयेत्सुधीः ॥ २७७७ ॥
हेमगर्भरसो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः।
कासश्वासेषु सर्वेषु शूलेषु च हितस्तथा ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगाञ्जयेत्परम् ॥ २७७८ ॥

नि.र.,क्षये।

भाषा—पारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म २ भा., ताम्रभस्म, मोती, प्रवाल और शुद्धगन्धक १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखयाअद्रकके रससे १–२ पहर घोटकर इच्छानुसार पोट्ली बनाय गन्धकयुक्त कपड़ेकी ३ तहमें लपेटकर भूधरपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्ववत् गन्धककी तह देकर पकावे। ऐसे षड्गुणगन्धकजारणहोनेकेबाद साफकर रखलेवे। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, शूलप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४९ ॥

६५० हिरण्यगर्भरसः (षष्ठः)

दरदं कर्षमात्रन्तु मर्दयेत्खल्वमध्यगम्।
सुवर्णं माषमेकञ्च तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥ २७७९ ॥
मर्दयित्वा क्षिपेत्तत्र गन्धकं चार्धमाषकम्।
मर्दयेदर्कजक्षीरे बन्धयेत्पद्ममध्यगम् ॥ २७८० ॥

भूधरे पाचयेद्यन्त्रे कुक्कुटाख्यपुटेन च ।
पुनर्वस्त्रेण संवेष्ट्य तस्योपरि च गन्धकम् ॥ २७८१ ॥
दत्त्वा वस्त्रेण बध्नीयात्पुनर्यन्त्रे च पूर्ववत् ।
हेमगर्भरसोऽयं स्यादरुणारुणसन्निभः ॥ २७८२ ॥
सर्वरोगेषु दातव्य एकोऽथे वा द्विदोषजे ।
त्रिदोषे शृङ्गबेराद्भि र्मधुयुक्तं प्रयोजयेत् ॥ २७८३ ॥

रसायनसं ,यो.र , रसायने ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ १ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क और शुद्धपारा १–१ माशा, गन्धक ४ रत्ती डालकर १ पहर शुष्क मर्दनकर आकके दूधसे १–२ पहर घोटकर रेशमीकपड़ेमें इच्छा नुसार गोलीबनाय भूधरयन्त्रमें कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शाफकपड़ेपर गन्धक बिछाय पोटली बनाकर पूर्ववत् आंचदे। यह लालरङ्गका हिरण्यगर्भ तैयारहोगा। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक अदरखवगैरह समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६५० ॥

६५१ हिरण्यगर्भरसः (सप्तमः)

सुवर्णं रजतं ताम्रं प्रवालं पारदं समम् ।
गन्धकञ्च मनोगुप्तां तालकं कटुरोहिणीम् ॥ २७८४ ॥
एतानि समभागानि छागीदुग्धेन मर्दयेत् ।
दिनं गजपुटे पाच्यं मूषायां प्रक्षिपेद्भिषक् ॥ २७८५ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मर्दितं श्लक्ष्णचूर्णितम् ।
अनुपानविशेषेण देयं रक्तिद्वयं हि तत् ॥ २७८६ ॥
वातपित्तकफद्वन्द्वत्रिदोषजनिते ज्वरे ।
राजोपचारं कुर्वीत स्वेच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥
हिरण्यगर्भनामायं रसः श्रेष्ठः प्रकीर्तितः ॥ २७८७ ॥

रसायनस , वै चि ,र क यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, प्रवाल इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल और हरिताल, कुटकी सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर बकरीकेदूधसे १–२ दिन मर्दनकर [illegible] बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्ग[illegible] होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ [illegible] औषधि देकर मात्रा अनुपानविशेषकेसाथ देनेसे [illegible] अथवा त्रिदोषजनितज्वरको यह नष्टकरताहै । [illegible] मालूमपड़नेपर शीतोपचारकरे । अत्यन्त [illegible] भोजनदेवे ॥ ६५१ ॥

६५२ हिरण्यगर्भरसः ([illegible])

इष्टिकाविषहुताशकुमारी-
व्योषकण्टिशठकर्णिग[illegible] ।
शुद्धिमेति दृढखल्वनिविष्टो
मर्दितः प्रमदशान्ति[illegible] ॥ २७८८ ॥
काकमाचिरससंपतितं
स्तोकगन्धयुतं[illegible] ।
गोमयस्थघटिकान्तरसंस्थः
स्वल्पवह्निपुटितो मुहुरेवम् ॥ २७८९ ॥
गन्धके द्विगुणिते तु सुजीर्णे
जारयेत्तदनु हेम विशुद्धम् ।
वह्निपित्तकटुतैलविमिश्रं
प्राग्विवार्धतुलितं क्रमवृद्ध्या ॥ २७९० ॥
ततः समुद्धृत्य रसं सुगन्ध-
तिकाम्बुघृष्टं शिखिकृष्णभृङ्गैः ।
कायीकृतैः स्विन्नमथाष्टसङ्ख्यैः
पुटै र्भवेद्भस्म रसः सहेमः ॥ २७९१ ॥
स्वर्णपत्रमुपलिप्य कषायो-
न्मिथितेन भसितेन च तेन ॥
भस्मतां नय रसांशकदत्तै-
रल्पवह्निपुटनै र्घनसङ्ख्यैः ॥ २७९२ ॥

र (मा.), रससारसङ्ग्रह, क्षये ।

भाषा—ईंट, बछनाग, चित्रक, घीकुंवार, त्रिकुटा, [illegible], धतूरा, अमिलतास, त्रिफला इनके [illegible] इन [illegible] चूर्णोंसे १–१ दिन पारेको मर्दनकरे । [illegible] काञ्जीप्रभृति अम्लद्रवदेतारहे । [illegible] काञ्जीसे साफकर दूसरीचीजोंका [illegible] । फि त्रिकुटु, गोखरू, धतूरा, [illegible], त्रिफला इनके [illegible] पूर्ववत् मर्दनकर [illegible], [illegible] पोडशांशगन्धक [illegible] कि गन्धक [illegible] न हो । [illegible] जारणकर [illegible] और [illegible] आंचे [illegible] । फि [illegible] [illegible] [illegible]

६५३ हिरण्यगर्भरसः ([illegible])

[illegible]

यामात्सिद्धो रसो नाम्ना सर्वरोगहरः परः।
हिरण्यगर्भो गुञ्जैकः क्षयरोगनिवारणः ॥ २७९८ ॥
श्वासकासौ सङ्ग्रहणीं वातव्याधींश्च सर्वशः।
विशेषान्नाशयत्येव यथारोगानुपानतः ॥ २७९९ ॥

र. का., राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्धतावेकेवारीकपत्रोंको गरमकर नवसादरमिलेहुए निर्गुण्डीके रसमें ७ बार बुझावे। फिर हरिताल और सोमलसत्त्व, पारा और गन्धकका तैल १-१ भाग लेकर गोमूत्र और आकके दूधसे मर्दनकर पत्रोंपर लेपदेकर गोला बनावे। इसकेबाद तीनोंक्षार, पांचोंनमक, खोरा, फिटकड़ी, और बच्छनाग येसब पूर्वपिण्डके बराबर लेकर गोमूत्र और आकके दूधमें पीस गोलेपर लेपदेकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टीदेकर सुखाय गजपुटमें ८ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पारा १६ भाग, हरितालभस्म १२ भाग, और शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर आकके दूधसे १-२ दिन घोटकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २१ पहरकी जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, श्वास, कास, सङ्ग्रहणी, वातव्याधिप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६५३ ॥

६५४ हीरकरसायनम्

वज्रं तार्क्ष्यंञ्च माणिक्यं पुष्परागं शनेर्मणिम्।
वैदूर्यमथ गोमेदं मणिश्चान्द्रं प्रवालकम् ॥ २८०० ॥
भागोत्तरमिदं तस्माद्वैक्रान्तं द्विविभागिकम्।
माक्षिकद्वयजम्भस्म वैक्रान्तसममानकम् ॥ २८०१ ॥
पूर्वस्मात्तुल्यसम्भारात्त्रिगुणामीशकज्जलीम्।
आजेन पयसा वन्ध्याकर्कोटीमूलसम्भवैः ॥ २८०२ ॥
श्रावणीद्वयजैर्हंसपादीकोकनदोद्भवैः।
पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुटेद्धीमान् कौक्कुटाख्ये च कज्जली २८०३
धारम्वारं प्रदातव्या भवेद्वज्ररसायनम्।
गर्भिणीनां प्रसूतानां वन्ध्यानां योनिव्यापदाम् २८०४
गुल्मप्रदरयुक्तानां स्त्रीणामेतद्धितं परम्।
राजयक्ष्मक्षयहरं स्तम्भनं रेतसः परम् ॥ २८०५ ॥

नू. क., रसायने।

भाषा—हीरा, पन्ना, माणिक्य, पुखराज, नीलम, वैदूर्य, गोमेद, चन्द्रकान्तमणि, प्रवाल इनकीभस्म क्रमवृद्धभागसेलेकर वैक्रान्त, सोनामाखी और रूपामाखीभस्म प्रत्येक सबसे १० वांहिस्सा इनसबसे तिगुनी समभागपारागन्धककी कज्जली मिलाय बकरीकादूध, बाझखेखसेकाकन्द, लाल और पीली गोरख मुण्डी, हंसराज, नीलोफर इनकेद्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गर्भिणी, प्रसूता, वन्ध्या, योनिदोषग्रस्त, गुल्म, और प्रदरयुक्त स्त्रियोंकेलिये यह अत्यन्त हितकारकहै। राजयक्ष्म और क्षयको दूरकरताहै। सम्भोगसे १ घण्टापहिले लेनेसे शुक्रका अत्यन्तस्तम्भनहोताहै ॥ ६५४ ॥

६५५ हीरवद्धरसः (प्रथमः)

स्यात्कुलत्थरसवज्रकदुग्धे वज्रमत्र पुटितं जयपालैः।
मेषकन्दकदलीविषकन्दे संस्थितं तदनु किंशुकमूले ॥
मध्ये ततो मुनिपलाशजपिण्डे
पाचनाद्भवति हीरकभस्म।
तत्समं कनकमौक्तिकतारं
तेन पञ्चगुणितं रससारम् ॥ २८०७ ॥
अम्लिकास्वरसमिश्रितमन्तः
सूरणस्य पिहितं पुटितञ्च।
सिद्धलोहघनताम्रसमेतं
मूषयाऽथ विपचेत्पुनरेतत् ॥ २८०८ ॥
इत्थममृतगुणो रसराजो
नामतो भवति हीरकबद्धः।
धीमताऽऽज्यमरिचैरुपयुक्तः
सन्निपातगदनाशनसक्तः ॥ २८०९ ॥
क्षीणजीर्णविषमज्वरपाण्डु-
श्वासशोषकसनानलमान्द्य-।
प्लीहगुल्मजठरादिभिरुग्रं
स्वागतां हृदि रुजं विनिहन्ति ॥ २८१० ॥

टो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—हीरेको कुलथीकेक्वाथ, सेहुण्डकेदूध और जमालगोटेके कल्कमें ७-७ बार बुझाकर मेषकन्द, कदलीकन्द, विषकन्द, पलाशकीजड़, अगस्त्यमूल, पलाशकेफूल इनमें क्रमश रखकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचें देनेसे भस्म होजातीहै। इसभस्मकी बराबर २ सुवर्ण, मोती और रजतभस्म तथा पाचगुनी पारदभस्म मिलाकर इमलीकेद्रवसे १-२ दिन मर्दनकर जङ्गलीसूरणके कन्दमें गोलेको रख उसीकी डाटसे बन्दकर ५-७ कपड़मिटी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लोह, अभ्रक और ताम्र इनकीभस्में पूर्वपिण्डकी बराबर मिलाय इमलीकेद्रवसे मर्दनकर पूर्ववत् सूरणमें रख गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे दो चावलसे १ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा घी और मरिचकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात, क्षीणता, जीर्ण और विषमज्वर, पाण्डु, श्वास, शोष, कास, मन्दाग्नि, प्लीहा, गुल्म, जठरदोष, हृदयकेरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६५५ ॥

६५६ हीरवद्धरसः (द्वितीयः)

टङ्काष्टकरसः शुद्धः क्षारिका टङ्कषोडश।
खरमूत्रेण सप्ताहमेकीकृत्य विमर्दयेत् ॥ २८११ ॥
पिण्डिकायां निरुद्धाथ काञ्जिके स्वेदयेद्दिनम्।
शुद्धं हीरमथो नीत्वा गुञ्जायुग्मं द्विजातिकम् २८१२

सप्तावृत्तमिदं तप्तं क्षिप्यते खरमूत्रके ।
अथ नो म्रियते चैव कदाचिदपि हीरकम् ॥२८१३ ॥
कण्टकारीरसे चैव पञ्चवेलं प्रतापयेत् ।
धृत्वाऽग्नौ लोहमूषायां म्रियते नान्यथा हि तत् २८१४
मृतं नीत्वा तदा तैले वसुमाने विनिक्षिपेत् ।
प्रतप्ते हण्डिकामध्ये रसोऽर्द्धस्तत्र दीयते ॥ २८१५ ॥
नागहेम्नोश्च पत्राणि पण्मापप्रमितानि च ।
पृथक् पृथक् निधाप्यन्ते हीरमूषमुखे ततः ॥२८१६॥
अतिसूक्ष्मा च जायेत पिष्टिः सर्वस्य वस्तुनः ।
पुनरर्धं मृतं सूतं पूर्वमर्धं धृतञ्च यत् ॥ २८१७ ॥
निःस्नेहे हण्डिकामध्ये कृत्वाऽग्निं ज्वालयेत्ततः ।
चुल्लिकोपरि विन्यस्य किञ्चित्तमाञ्च पिष्टिकाम्२८१८
क्षिप्त्वा तामेकतः कृत्वा खोटरूपो रसस्तदा ।
खल्वे निष्पिष्य किञ्चिच्च मृत्तिकायाश्च सम्पुटे २८१९
निवेश्य भूतले किञ्चित्कोकिलैः परिपूर्यते ।
स्वल्पकैस्तैश्च यावत्स्याज्ज्वलदग्निप्रदीपनम् ॥२८२०॥
एवं सिद्धो भवेदेप रसराजश्च साधितः ।
हीरवद्धो रसो नाम यत्नतः प्रतिपादितः ॥ २८२१ ॥
यत्र तत्र न वक्तव्यो योक्तव्यो रोगशान्तये ।
निःसञ्ज्ञः सन्निपाते यस्तस्य तालुनि दीयते २८२२
रक्तिकार्धार्धमात्रश्च सन्निपातं नियच्छति ।
पुनः सञ्ज्ञां समायाति तदाऽऽस्ये तस्य दीयते२८२३
शर्कराशेशकाश्च खण्डमिक्षुप्रियालकान् ।
पथ्यञ्च पायसञ्चैव कदलीफलमुत्तमम् ॥ २८२४ ॥
रसालाञ्च परूषांश्च पानकं पथ्यमीरितम् ।
अतिलौल्यकरं देयं शीतलं सलिलं तृषि ॥ २८२५ ॥
अग्ने र्बलमसौ कुर्याद्ग्रहणीरोगनाशनः ।
कुष्टकुष्ठक्षयादींश्च विकारान्नाशयत्यसौ ॥ २८२६ ॥
हीरवद्धो रसो नाम्ना यत्र यत्र प्रयुज्यते ।
तान्रोगान्नाशयेन्नूनं रोगयोग्यानुपानत. ॥ २८२७ ॥

सन्धि ,र.का ,सन्निपाते ।, र.का ,हीरबद्धित इति नाम, पाठश्च भ्रष्टोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा २कर्ष, क्षारिका (ऊसरभूमिमें निकलेहुए क्षाराङ्कुर) ४ कर्षलेकर गधेकेमूत्रमें ७ दिनतक मर्दनकर गोला बनाय उसकेबीचमें प्रशस्तजातिके २ रत्ती हीरको रखकर ४ तह कपड़ेमें लपेट दोलायन्त्रबनाय खोपुलथीकीकाञ्जीमें एकदिन स्वेदनकर लोहेकी मूषामें इसपिण्डिकाको गरमकरके गधेके मूत्रमें ४९ बार बुझावे । पिण्डिका प्रत्येकवार नवीन बनावे । इसतरह करनेपरभी कदाचित् भस्महोनेमें कुछ कसर रहजाय तो इसीतरह पिण्डिकामें रख पूर्ववत् धमनकरके बुझाकर भटकटैयाके पञ्चाङ्गके स्वरसमें ५ बार बुझावे । इसतरह भस्महुएहीरको हण्डीमें रख अठगुना पीलीसरसोंका तैल डालकर गरमकरे । तैल खौलनेलगे तब हीरेसे आधेप्रमाणमें शुद्धपारा डालकर ६ मासे बहुत बारीक नागकेपत्रोंमें रखकर उतनेही सोनेके बारीकपत्रोंसे ढककर फिर यहांतक अग्नि जलावे कि तैल जलकर नाग और सुवर्ण गलजायं और हण्डी स्नेहरहितहोजाय । इसकेबाद हीरेसे आधी पारदभस्म और उतनाही शुद्धपारा डालकर पिष्टीगलनेतक अग्नि दे । गलेहुए धातुद्रवको ईंटप्रभृतिके खड्डेमें डालकर जमाले, यह खोट तैयार होगा इसे खरलमें थोड़ा पीसकर मिट्टीकी मूषामें डालकर खाखिरकोयलोंके चूरेसे मूषाको भरकर पङ्खेसे यहांतक धमनकरे कि मूषेमेंसे ज्वाला निकलनेलगे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २ चावलसे लेकर ४ चावल तक की मात्रा सन्निपातसे मूर्च्छित रोगीके तालुमें पाछदेकर रक्तमें घर्षणकरे । इससे मूर्च्छा जागृतहोनेपर उतनीही मात्रा उचितानुपानकेसाथ खानेको दे । इससे समस्तसन्निपात निवृत्तहोतेहैं । मूर्च्छा जगनेपर असह्य गर्मी मालूमहोतीहो तो शक्करका शरबत, काली अथवा साधारण ईख, खांड, चिरौंजी, खीर, पकाकेला, आमरस, पेया, फालसे, पना इत्यादिक रुचिकारक पथ्य देवे । अत्यन्त प्यास मालूम पड़नेपर ठंडा जल दे । रोगी और रोगका बलाबल देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, कुष्ठ और क्षयको यह नष्टकरताहै ॥ ६५६ ॥

६५७ हीरवद्धरसः (तृतीय)

द्वौ भागौ मृतहीरस्य गगनस्य त्रय. पुनः ।
भस्मसूतस्य चत्वार. षट् शुद्धगन्धकस्य च॥२८२८॥
मृतलोहस्य द्वौ भागौ चत्वारस्तारकस्य च ।
रावनाया भवन्त्यत्र भावनाः पञ्च खल्वके ॥ २८२९ ॥
तथा सुधचेलायाश्च दातव्या भावनाः क्रमात् ।
अथो दृढायां मूषायां मध्ये दत्त्वा च तं रसम् २८३०
पुनः शरावद्वितये दत्त्वा पश्चाद्विमुद्रयेत् ।
हस्तप्रमाणके कुण्डे पुटो देयः शनै र्लघुः ॥ २८३१ ॥
द्वियामं यावदेवैतच्छीतमादाय तं रसम् ।
विधाय भैरवस्याऽथ पूजनं भेपजस्य च ॥ २८३२ ॥
गुञ्जामात्रममुं दद्याद्धीरवद्धं रसेश्वरम् ।
मरिचैश्च समं प्रातस्ततस्ताम्बूलभक्षणम् ॥ २८३३ ॥
क्रोधमात्सर्यमुत्सार्य व्यायामं धर्मसेवनम् ।
अतिप्रलपनं चिन्तामप्यसूयाञ्च वर्जयेत् ॥ २८३४ ॥
असत्यभापणञ्चैव पथ्यं सेव्यं निरन्तरम् ।
अनेन जायते पुष्टिः स्थैर्यारोग्यञ्च जायते ॥ २८३५ ॥
अनेन सुखमाप्नोति पुत्रं ध्यानेन चोत्तमम् ।
अनेन नश्यते वायुरनेनायुश्च वर्धते ॥ २८३६ ॥
अनेन लभते कान्तिमनेनापि जराञ्जयेत् ।
अनेन पलितं यान्ति स्थालित्यञ्च विशेषतः ॥२८३७॥
अनेन यक्ष्मराज. स्याद्विशेषेण निराश्रयः ।
स्थावरं जङ्गमञ्चापि कृत्रिमञ्चापि यद्विषम् ॥ २८३८॥
अनेन न प्रभवति सेव्यमानस्य च क्वचित् ।
अनेन देवरूप. स्याज्जायते बुद्धिरुत्तमा ॥ २८३९ ॥
क्षयं कासं प्रमेहञ्च रक्तपित्तं सुदारुणम् ।

विद्रध्यष्ठीलिके गुल्मं ग्रहणीमपि दुस्तराम् ॥
अतिसारं महाघोरं सर्वान् व्याधींश्च नाशयेत् ॥२८४०॥

रसचि., रसायने ।

भाषा—हीरेकीभस्म २ मा., अभ्रकभस्म ३ मा., पारदभस्म ४ मा., शुद्धगन्धक ६ मा., लोहभस्म २ मा., रजतभस्म ४ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर गोरोचनकेद्रव और थडीलोणीके स्वरसकी ५-५ भावनाएं देकर टटमूषामें बन्दकर मूषाको दो शरावोंमें रख ३-४ कपड़मिट्टी देकर एकहाथमरके खड्डेमें दो पहरमें शान्तहोनेलायक लघुपुट दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भैरव और दवाका पूजनकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती मरिचके साथ देकर पानखिलावे। क्रोध, मत्सरता, कसरत, धूप, अत्यन्तबोलना, चिन्ता, चुगली, असत्यभाषण इनका परित्यागकर पथ्यका सेवनकरनेसे पुष्टि, दृष्टिका आरोग्य, उत्तमसन्तति और वज्रशरीरको प्राप्तहोता है। सबनरहकेवायु, कान्त्यभाव, बुढ़ापा, पलित, खालित्य, स्थावर, जङ्गम और कृत्रिमविष, क्षय, कास, भयङ्करक्तपित्त, विद्रधि, अष्ठीला, गुल्म, दुस्तरग्रहणी और अतिसार ये सबरोग नष्ट होते हैं ॥ ६५७ ॥

६५८ हुताशनरसः (प्रथमः)

पकद्विकद्वादशभागयुक्तं
योज्यं विषं टङ्कणमूषणञ्च ।
हुताशनो नाम हुताशनस्य
करोति वृद्धिं कफजिज्वराणाम् ॥ २८४१ ॥

र. सं., र. चं., यो. र., वृ. यो. त., नि. र., र. कौ., सि. र. म., वै. चि., वै. र., टो., अजीर्णे ।

टि०—योगरत्नाकरप्रभृतिषु सुत्रचिरिहमानभाग टङ्कण नियोजितमस्ति ।

भाषा—शुद्धवच्छनाग १ भाग, भुनासुहागा २ मा., मरिच १२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर अदरखवगैरहके रससे घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि और कफरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ६५८ ॥

६५९ हुताशनरसः (द्वितीयः)

बलिर्नालिरसामृतं समं त्रिकटुद्रवतो विमर्दयेत् ।
ज्वलनाम्बुयुतं तथार्द्रकद्रवतोऽपि विभावितं त्र्यहम् ॥
भवतीह रसायनं वरं मरिचैः सहितं भगन्दरम् ।
ग्रहणीमपि नाशयेद्ध्रुवं घृतयुक्तमरिचैर्निषेवितम् २८४३
तन्मूत्रकृच्छ्रं मधुपिप्पलीभ्यां
धात्रीरसक्षौद्रयुतं प्रमेहम् ।
आमानिलं क्षौद्रहरीतकीभ्यां
वासामधुभ्यांश्च गुडं निहन्यात् ॥ २८४४ ॥
पश्चाङ्गनिम्बामलकेन कुष्ठं
दूरं कणाक्षौद्रयुतं निहन्यात् ।
घृतोषणाभ्यां गलगण्डरोगं
श्वासाग्निमान्द्यं श्वयथुं हुताशः ॥ २८४५ ॥

र., भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, कालादाना, पारा और बच्छनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिकटु, चित्रक और अदरखकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर आधीआधी रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मरिचकेसाथदेनेसे भगन्दर; घी और मरिचकेसाथ ग्रहणी, गलगण्ड, श्वास, मन्दाग्नि और शोथ; मधु और पीपलकेसाथ मूत्रकृच्छ्र और मकड़ीकाविष; आंवलेकेरस और मधुसे प्रमेह; हर्रे और मधुसे आमवात; अडूसेकेरस और मधुसे वातरक्त; निम्बपञ्चाङ्ग और आंवलेसे कुष्ठ; येसब रोग नष्टहोतेहैं ॥

६६० हुताशनरसः (तृतीयः)

यावद्भस्म भवेत्फणी हुतवहे संदृष्यतेलोहजे,
कम्बो भस्मसमः समौ बलिरसौ दत्त्वाऽङ्घ्रिपादांशकौ॥
उत्तार्याऽथ तयोः समोषणविषाभ्यां सार्द्धमेतद्विमं,
पिष्ट्वा स्याद्ग्रहणीरुगादिषु च तद्योगे हुताशो रसः ॥

टो., ग्रहण्याम् ।

टि०—यद्यप्यस्मिन्योगेऽनिरस्थनागरजसः सम्मेलन विहित परन्तु निरस्थभस्मान्तरा पक्षवधादितादिरोगजनकत्वसम्भवात्कुमारीरसे मर्दयित्वा सप्त गजपुटान् दत्त्वा योगे नियोजनीयमिति विद्वत्सु विनीता प्रार्थना ॥

भाषा—शङ्खभस्म १ भा., समभाग पारद और गन्धककी कज्जली आधाभाग मिलाकर रखले। फिर एकभाग शुद्ध सीसेको लोहेकीकड़ाहीमें गलाकर उपर्युक्त तीनोंचीज़ोंका थोड़ा २ प्रक्षेप देकर नीम या बबूलके डण्डे अथवा लोहेकी कड़छीसे घर्षणकरे। प्रक्षेप समाप्त होनेपर सूखा घर्षणकरे। कहीं आंच देनेपरभी न जमे तब ढकनसे ढककर आगपरही रहनेदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकी बराबर मरिच और शुद्धबच्छनाग मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती यथायोग्यानुपानकेसाथ देनेसे यह सङ्ग्रहणीवगैरहरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

६६१ हृदयेश्वररसः

रसगन्धकलौहाभ्रं विद्रुमं मौक्तिकं तथा ।
कन्याद्रवेण सम्मर्द्य गुञ्जाद्वयमितां वटीम् ॥ २८४७ ॥
कृत्वा संशोषयेद्धीद्रवक्रियांगं विना भिषक् ।
पार्थाम्भसा सर्पिषा च दद्याद्धृद्रोगशान्तये ॥२८४८॥

आ. वि., हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, प्रवाल इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारके रससे एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली घी डालकर अर्जुन के क्वाथकेसाथ देनेसे यह हृद्रोगको नष्टकरता है ॥ ६६१ ॥

कर क्षीरक्षुरी और मन्दालकेरसोंसे तसखल्वमें नष्टपिष्टी बनावे। इसकेबाद ३० वां अथवा १६ वां भाग कान्तचूर्ण मिलाय अन्धमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे गुटिका तैयारहोगी। इसको मुंहमें रखनेसे समस्त सिद्धियां होतीहैं ॥ ६६६ ॥

६६७ हेमयोगः (प्रथमः)

मधु मागधिकां विडङ्गसारं
त्रिफलां हेम घृतं सिताञ्च खादेत्।
जरया नवलीढदेहकान्तिः
समधातुश्च समाः शतञ्च जीवेत् ॥ २८६६ ॥

र. र. स., र. र. कौ., रसायने।

भाषा—पीपल, विडङ्गतण्डुल, त्रिफला और सुवर्णभस्म समभागलेकर सबकी बराबर शकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे रोगीका बलाबल देखकर १ मासेसे २ मासेतक मधु और घीकेसाथ मिलाकर लेनेसे बुढ़ापे और धातुओंकी विषमतासे रहितहोकर पूरे १०० वर्षतकजीताहै ॥ ६६७ ॥

६६८ हेमयोगः (द्वितीयः)

सपद्मबीजामलकामयाख्यं
सर्पिर्मधुभ्यां कनकं लिहन्तः।
दीर्घायुषो मन्दजरोपतापाः
सरीसृपाणाञ्च भवन्त्यगम्याः ॥ २८६७ ॥

र. र. स., र. र. कौ., रसायने।

भाषा—कमलगट्टा, त्रिफला और सुवर्णभस्म समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २ रत्तीसे ६ रत्तीतककी मात्रा मधु और घीकेसाथ लेनेसे दीर्घायु होतीहै। बुढ़ापे और चित्तक्षोभादिकोंका असर कमहोताहै। सर्पप्रभृति घातक जन्तुओंकाभी भय नहीं रहताहै ॥ ६६८ ॥

६६९ हेमयोगः (तृतीयः)

सुवर्णचूर्णात्पलमश्वगन्धा-
रजः समानं हविषा विलीढम्।
तनोति पुष्टिं वपुषः सुकान्ति
बलायुरारोग्यकरं नियोज्यम् ॥ २८६८ ॥

लो. प, रसायने।

भाषा—सुवर्णभस्म १ रत्ती और असगन्धकाचूर्ण ३ मासे घीकेसाथ लेनेसे पुष्टि, कान्ति, बल, आयु और आरोग्यकी वृद्धि होती है ॥ ६६९ ॥

६७० हेमलोहम्

तिरीटमोचोत्पलताम्रपुष्पी-
पाठासमङ्गाम्बुदवत्सकानाम्।
समं रजांसि द्विगुणं समान-
हेमार्कलोहं मधुना प्रयोज्यम् ॥ २८६९ ॥
पीत्वा ततस्तण्डुलधावनाम्भो
जयत्यतीसारमुदीर्णवेगम्।
प्रणष्टवह्निं कुरुते प्रदीप्तं
बलं वपुःकान्तिविवर्धनञ्च ॥ २८७० ॥

लो. प., अतिसारे।

भाषा—पठानीलोध, मोचरस, कमलगट्टा, धावड़ीकीजड़कीछाल अथवा फूल, पाठा, लज्जालु अथवा मजीठ, नागरमोथा, इन्द्रजव १-१ भाग, सुवर्ण, ताम्र और लोहभस्म मिलकर पूर्वचूर्णसे दूनी डालकर एकदिनमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मधुकेसाथ देकर ऊपरसे चावलोंका धोवन पिलानेसे बढ़ाहुआ अतिसार नष्टहोताहै। मन्दाग्निको प्रदीप्त कर बल, शरीर और कान्तिको बढाताहै ॥ ६७० ॥

६७१ हेमसुन्दररसः

मृतसूतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत्।
क्षीराज्यमधुसम्मिश्रं माषैकं कान्तपात्रके ॥ २८७१ ॥
लेहयेन्मासषट्कन्तु जरामृत्युविनाशनम्।
बाकुचीचूर्णकर्षैकं धात्रीफलरसप्लुतम् ॥
अनुपानं लिहेन्नित्यं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ २८७२ ॥

र. चि., र. सं., रसायनसं., र. मं., र. सु., यो. म., आ. प्र., वाजीकरणे।

हिंकुरचितक्षीराज्यमधुसम्मिश्रस्य कारयपात्रे लेहनमुक्तम्। रसराजशिरोमणौ हेमपिष्टिकायोग इतिनाम्ना "पादांशकं हेम रसस्य दत्त्वा गोलं सतुषे क्षिप कान्तपात्रे। मृद्वग्निना तापितदर्शितस्य क्षीरस्य पान मसृणमयम् ॥" इतिपाठो निहितोऽपि सोऽप्यस्यैवाऽपभ्रंशोऽस्ति तत्र न पाठान्तरता।

भाषा—पारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म १ भाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे उड़दबराबरमात्रा कान्तलोहकेपात्रमें मधु और घीकेसाथ लेकर दूधपीनेसे ६ महीनेमें बुढ़ापे और मृत्युका नाशहोताहै ॥ ६७१ ॥

६७२ हेमसुन्दरीगुटिका (प्रथमा)

मृतसूताभ्रकान्तालं कर्षं कर्षं समाहरेत्।
गन्धकञ्च समं सर्वैः सुधातोयेन मर्दयेत् ॥ २८७३ ॥
चन्दनद्वितयेनापि द्रवेणेक्षुभवेन च।
वर्षाभूसहदेव्योश्च रामशीतलिकाम्बुना ॥ २८७४ ॥
गृहकन्यारसेनापि धात्रीफलरसेन च।
दिनं दिनं विमर्द्याथ शोषयेत्तदनन्तरम् ॥ २८७५ ॥
तुण्डीरिकायाः कुण्डल्याः सत्त्वं शुक्लमलप्रभम्।
त्रिफला कटुका मुस्ता कणा सागरकन्तया ॥ २८७६ ॥
एतानि कर्षमानानि पूर्ववद्भावयेत्सनैः।
रसेन सह सम्मेल्य मर्दयित्वा प्रयत्नतः ॥ २८७७ ॥
द्राक्षाजेन कषायेण भावयेदिष्टवस्तुजैः।
तत्तद्रोगहरी प्रोक्ता गुटिका हेमसुन्दरी ॥ २८७८ ॥

रससागर, वाजीकरणे।

भाषा—पारद, अभ्रक, कान्तलोह, हरिताल इनमेंसे १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ कर्ष लेकर नीलथोहरकेदूधके साथ

पानी, लाल और सफेदचन्दन, ईख, इटसिट, सहदेवी, जंगली कपास, घीकुवार, ताजे आवले इनके द्रवोंसे १–१ दिन भाव नादेकर सुखाकर कुदरू और गिलोयकासत्त्व, त्रिफला, कुटकी, नागरमोथा, पीपल, लोध १–१ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वद्रवोंकी भावनाए देकर सबको इकट्ठा मिलाय द्राक्षाके साथ और जिसरोगमें प्रयोगकरनाहो तन्नाशकद्रवोंसे भावनादेकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक औचिती देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४२ ॥

६७३ हेमसुन्दरीगुटिका (द्वितीया)

समुखस्य रसेन्द्रस्य पूर्ववत्काञ्चनं समम् ।
जारयेद्विडयोगेन ततो मर्द्यं दिनत्रयम् ॥ २८७९ ॥
दिव्यौषधैः सगोमूत्रैर्वज्रमूषान्धितं धमेत् ।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां हेमसुन्दरीम् ॥ २८८० ॥
पलार्द्धं गन्धकं चाज्यैर्द्विगुणैर्लेहयेदनु ।
वर्षैकेण जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ २८८१ ॥

र ख, र का, रसायने ।

भाषा—जुमुखान्तसस्कार कियेहुए १ पल पारेमें रसशास्त्रमें कहेहुए चतुःषष्ठ्यशादिमार्गोंसे समभागसुवर्णका विडयोगोंसे जारणकर यथाशक्य दिव्यौषधि और गोमूत्रसे ३–३ दिन मर्दनकर वज्रमूषामें बन्दकर ४ पहर धमनकरनेसे गोली तैयार होगी । इसगोलीको मुहमें रक्खे औरदोकर्ष शुद्धगन्धकको १ पल गोघृतकेसाथ प्रतिदिन सेवनकरनेसे दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥

६७४ हेमसूतकरसः

रसं हेमसमं मर्द्य पिष्टिकार्धेन गन्धकम् ।
क्षिपदीं रजनीं रम्भां मर्दयेट्टङ्कणान्वितम् ॥ २८८२ ॥
नष्टपिष्टञ्च शुष्कञ्च अन्धमूषानिवेशितम् ।
तुषाग्निना लघुपुटं दत्त्वा भस्मत्वमानयेत् ॥ २८८३ ॥
भक्षणादस्य सूतस्य दिव्यदेहमवाप्नुयात् ।
सर्वव्याधि जरां हन्ति वर्षमात्राच्च सूतराट् ॥ २८८४ ॥

रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारा और सोनेकेवर्क एकजगह मिलाकर दशमूली, हुरहुर, जलपीपल वगैरहके रससे १–२ पहर मर्दनकर पिष्टी बनावे, फिर शुद्धगन्धक, हंसराज, हल्दी, केलेकाकन्द और सुहागा येसब मिलकर पिष्टीसे आधे प्रमाणमें मिलाकर केलेकेकन्दके रससे चमकनष्टहोनेतक मर्दनकर टिक्की बनाय अच्छीतरह सुखाकर अन्धमूषामें बन्दकर तुषाग्निका लघु पुटदेनेसे भस्म तैयार होगी । इसमेंसे आधी रत्तीसे १ रत्तीतक मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्त व्याधि नष्टहोतेहैं । एकवर्षके प्रयोगसे बुढापा दूरहोकर दिव्यशरीरको प्राप्तहोताहै ॥

६७५ हेमाङ्गसुन्दररसः (प्रथम)

शुद्धं सूतं समं ग्राह्यं लोहं गन्धं सुवर्णकम् ।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुल्वपात्रे भिषग्वरः ॥ २८८५ ॥
राजिकास्वरसं दत्त्वा कृष्णोन्मत्तस्य वै रसम् ।
दत्त्वा दत्त्वा प्रयत्नेन मर्दयेच्च त्रिभिर्दिनैः ॥ २८८६ ॥
त्रिमिश्च सार्षपं तैलं दत्त्वा कल्कं विमर्दयेत् ।
शोषयेद्भानुभिर्मानोर्ज्वालां दद्याच्छनैः शनैः ॥२८८७॥
वालुकायन्त्रयोगे तु प्रोक्तभेषजमध्यतः ।
तावज्ज्वाला प्रदातव्या वालुकात्युष्णतां भजेत् २८८८
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा कर्षयेत्तु भिषग्वरः ।
ततो गुञ्जाप्रमाणेन माषमाषार्धकं पुनः ॥ २८८९ ॥
ज्ञात्वा रोगं शरीरञ्च योजनीयं बुधैः सदा ।
घृतेन मधुना सार्द्धं मर्दयित्वा तु खल्वके ॥ २८९० ॥
रसं वा भक्षयेत्पश्चादाज्यं गव्यं गवां पयः ।
सामान्येन तु कर्तव्यं चित्रकार्द्रकसैन्धवैः ॥ २८९१ ॥
रोगिणामनुपानीयं रसमाज्येन भोजनम् ।
सुस्निग्धं नातिमधुरं मांसञ्चैव विहायसम् ॥२८९२॥
भक्ष्यं छागादिकं मांसं ख्यातं यस्य तु भक्षणम् ।
एतेनापि विधानेन प्रातः प्रातर्निषेवयेत् ॥
साध्याऽसाध्येषु रोगेषु तथा व्याधिचयेषु च २८९३

र र, ध., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और सुवर्णभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर तावेके पात्रमें तावेके डण्डेसे कालेधतूरेकेपत्तोंकारस थोड़ा थोड़ा दकर ३ दिनतक मर्दनकर । फिर ३ दिन सरसोंके तेलसे मर्दनकर कड़ीधूपमें अच्छीतरह सुखाकर आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख क्रमाग्नि देवे । ऊपरकीबालूकेस्पर्शको जब हाथ सहन न करे तब अग्नि बन्दकरदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे बढाकर आधे अथवा एकमाशेकी मात्रा तक रोग और रोगीका बलाबल देखकर नियतकरे । घी और मधुमें इसको खरलकरके दवाका सेवनकरना चाहिये । इसकेबाद गायके दूधमें गोघृत डालकर यथाशक्ति पीना चाहिये । साधारणरोगोंमें चित्रक, अदरख और सैन्धवकेसाथ देवे । भोजनमें घृतयुक्त मांसरस, स्निग्धपदार्थ, साधारणमधुर पथ्य, चिड़िया और बकरी वगैरहका हल्का मांस खावे । साधारणरोगोंमें केवल प्रातःकाल औषध देवे । विधिपूर्वकइसकेसेवनसे साध्य अथवा असाध्य रोग निवृत्तहोतेहै ॥ ६७५ ॥

६७६ हेमाङ्गसुन्दररसः (द्वितीयः)

पूर्वसिद्धे रसे क्षिप्त्वा रसपादेन काञ्चनम् ।
विमर्द्यापि विधानेन सुपिष्टञ्च विनिक्षिपेत् ॥२८९४॥
कान्तवैक्रान्तके चैवं क्षिप्तं तत्र विधानतः ।
मधुरत्रयसंयुक्तं मासमात्रं दिने दिने ॥ २८९५ ॥
लीढ्वाऽनुपानं पातव्यं मन्दं तप्तं गवां पय. ।
त्रि.सप्तदिवसैः क्षीणो भवेदक्षीणधातुकः ॥
ऊर्ध्वलिङ्ग. सदा तिष्ठेद्द्रावयेद्वनिताशतम् ॥ २८९६ ॥

र. र, ध., वाजीकरणे ।

भाषा—बुभुक्षान्तसंस्कारकियेहुएपारेमें चतुर्थांश सोनेके वर्क डालकर पिष्टीबनावे। फिर उसमें कान्तलोह और वैकान्तकी-भस्म प्रत्येक सुवर्णके बराबर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती मधु, घी और शक्करकेसाथ मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे कदुष्ण गोदुग्धपीवे। इसप्रयोगको २१ दिनतककरनेसे धातु-क्षीणआदमी धातुसे परिपूर्णहोकर पूर्णपुरुषत्वमें आजाताहै॥

६७७ हेमाद्रिरसः

वेदकर्षं रसं त्र्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम्।
पलं नागाभ्रयोः सर्वं सञ्चूर्ण्य सिकताघटे॥ २८९७॥
पक्त्वमूषागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन्द्रवम्।
केतकीकुष्ठनिर्गुण्डीशिग्रुग्रन्थ्यग्निचव्यजम्॥ २८९८॥
वन्ध्याहिंस्रेभकर्ण्युत्थं व्याघ्रीलुङ्गबलोद्भवम्।
अश्वगन्धाभवं वारान्विंशद्द्वित्रीषुसागरान्॥ २८९९॥
पट्कसप्तवसुद्विग्द्विव्रियुगं सुवर्णतः क्रमात्।
कुमार्याः पुटयेत्प्रौढो रसो हेमाद्रिसंज्ञकः॥ २९००॥
मुक्तो माषो निहन्त्याशु सर्वार्शोरोचकग्रहान्।
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽर्बुदाऽपचीः २९०१
गलगण्डप्रमेहादीन्मुष्कलिङ्गाक्षिकर्णजान्।
क्षुद्ररोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानिव॥ २९०२॥

र. वि., रसायनतं., र. का., र. सि., सर्वरोगे।

भाषा—जस्त और पारदभस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, नाग और अभ्रकभस्म १–१ पल लेकर नीलवर्णकज्वली-कर एकघड़ेमें बालूभर बीचमें पक्वमूषामें इसकज्वलीको डालकर केवड़ेका दण्डा, कुठ, निर्गुण्डी, सहिजन, पिपलामूल, चित्रक, चव्य, बांझखेखसेकाकन्द, हंस, हस्तिकर्णपलाश (ढोडाइन हिं., पल्लसवेल म.) भटकटैया, बिजोरा, बला, असगन्ध, घीकुंवार इन प्रत्येकके स्वरसोंसे २०, २, ३, ५, ७, ६, ७, ८, ८, २, ३, ४, १४, १४, १४, इसक्रममें अग्निपर भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलिएं बनाकर रखछोड़े। प्रत्येकभावनामें इतनारस देनाचाहिये कि एकवारका डालाहुआरस एकपहरमें सूखजाय। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके अर्श, अरुचि, गलग्रह, मन्दाग्नि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्बुद, अपची, गलगण्ड, प्रमेह, अण्ड–लिङ्ग–आंख–कान इन-मेंरोग और नानातरहके क्षुद्ररोग इनसबको सर्पकोगरुड़कीतरह यह नष्टकरताहै॥ ६७७॥

६७८ हेमाभ्रकम् (हेमाम्बुदम्)

ऽयूषणाम्बुकरिकेशरत्वचा
तुल्यभागरजसा समीकृतम्।
हेमवारिदरजो मधुप्लुतं
लीढमग्निजडतां तनोहरेत्॥ २९०३॥

लो. प., अग्निमान्द्ये।

भाषा—त्रिकटु, सुगन्धवाला, नागकेशर, तज १–१ भाग, सुवर्ण और अभ्रकभस्म १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन घोटकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ रत्तीतक मधुमें मिला-कर सेवनकरनेसे मन्दाग्निप्रभृति रोगोंको यह नष्टकरताहै ६७८

६७९ हेमाभ्रसिन्दूरम्

अभ्रकं रससिन्दूरं मिश्रितं हेमभस्मना।
समभागं प्रकुर्वीत रसैरार्द्रकजैर्युतम्॥ २९०४॥
क्षयञ्च क्षयपाण्डुञ्च क्षयकासञ्च दारुणम्।
जयेन्मण्डलपर्यन्तं पूर्वक्रमविधानतः॥ २९०५॥

नि. र., र. सु., यो. र., राजयक्ष्मणि।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक और सुवर्णभस्म १–१ भाग लेकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। अथवा अदरखके रससे १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ अथवा अदरखकेरसकेसाथ एकमण्डलतक-देनेसे क्षय, भयङ्करपाण्डु और कासको यह नष्टकरताहै॥ ६७९॥

६८० हेमामृतरसः

भागमेकं पारदस्य बलेर्भागद्वयन्तथा।
हेम्नः पादमितं भागमेकैकं तारवङ्गयोः॥ २९०६॥
अर्जुनस्य कषायेण सम्मर्द्य रक्तिकोन्मिताम्।
वटीं कृत्वा दापयेच्च सिताऽऽज्यमधुसंयुताम् २९०७
शाम्यन्त्यनेन हृद्रोगाः सर्व एव न संशयः।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितोऽयं रसोत्तमः॥ २९०८॥

आ. वि., हृद्रोगे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, सुवर्णभस्म अथवा वर्क चतुर्थभाग, रजत और वङ्गभस्म १–१ भाग देकर नीलवर्णकज्वलीकर अर्जुनकेक्वाथसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, घी और मधुके-साथ देनेसे समस्त हृद्रोग नष्टहोतेहैं॥ ६८०॥

६८१ हेमाम्बुदलोहम् (प्रथमम्)

उशीरलोध्रोत्पलपद्मकेशरा-
न्सचन्दनाम्भोचरसोपबृंहितान्।
प्रियङ्गुनागोत्पलतः समं रजः
परिप्लुतं सूक्ष्मतरेण वाससा॥ २९०९॥
समानहेमाम्बुदलोहचूर्णं
समीकृतं तेन मधुप्रलीढम्।
विलीढमाश्वेव निहन्ति रक्त-
पित्तं गुदातङ्कमसृग्दरप्रभृतम्॥ २९१०॥

लो. प., रक्तपित्ते।

भाषा—खस, लोध, कमलगट्टा, कमलकेशर, सफेदचन्दन, मोचरस, प्रियङ्गु, नागकेशर येसब १–१ भाग लेकर कपड़छान-चूर्णकर सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म १–१ भाग मिलाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३ से ६ रत्तीतक मात्रा मधुमें मिलाकर देनेसे रक्तपित्त, गुदरोग, रक्तप्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ६८१॥

६८२ हेमाभ्रुदलोहम् (द्वितीयम्)

वरानिशाक्षोदसमं समांशकं
हेमाभ्रुदाय प्रभवं रजश्च ।
क्षौद्रेण लीढं विनिहन्ति मेहा-
न्ददाति पुष्टिं वपुषः श्रियञ्च ॥ २९११ ॥

लो. प, प्रमेहे ।

भाषा—त्रिफला और हल्दी समभाग लेकर बारीकचूर्ण कर सबकीबराबर सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म मिलाकर रख छोडे। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मधुकेसाथलेनेसे सबप्रकारके प्रमेह और कृशताको नष्टकर शरीरकी कान्तिको बढाताहै ६८२

६८३ हेमार्कलोहम्

वचाऽब्दपाठाऽतिविषाविडङ्ग-
गदानलग्रन्थिकवारिविश्वम् ।
समं रजस्तद्द्विगुणानि तुल्य-
हेमार्कलोहानि घृतेन लीढ्वा ॥ २९१२ ॥
पीत्वाऽनुकोष्णं जलमेव जह्या-
द्दोषं ग्रहण्या गुदकीलकांश्च ।
प्राप्नोति वह्निं वपुषः प्रकर्ष-
मुद्दामधामोपचयोपपन्नः ॥ २९१३ ॥

लो. प, ग्रहण्याम् ।

भाषा—बच, नागरमोथा, पाठा, अतीस, बिडङ्ग, कुठ, चित्रक, गठिवन, सुगन्धवाला, सोंठ, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सुवर्ण, ताम्र और लोहभस्म चूर्णसे द्विगुणप्रमाणमें मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक घीकेसाथ मिला कर सेवनकर थोडागरमजलपीवे। जलकापीना बन्दकरे। यह ग्रहणी, बवासीर, मन्दाग्नि, इनसबको नष्टकर शरीरको दिव्य तेजयुक्त बनाताहै ॥ ६८३ ॥

६८४ हेमेन्द्ररसः

अतः परं प्रवक्ष्यामि रसायनमनुत्तमम् ।
नानाव्याधिप्रशमनं बलवृद्धिकरं परम् ॥ २९१४ ॥
शुद्धसूतस्यैकभागं हेमभागसमीकृतम् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा दिव्यौषधिविभावितम्॥२९१५॥
चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेव स्थिरायते ।
भृङ्गराजेन सम्भाव्य बध्नीयाद्गुटिकां शुभाम् ॥
हेमेन्द्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहः ॥ २९१६ ॥

रससार, कामलादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णभस्म १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर यथासम्भव दिव्यौषधियोंकी भावना देकर अनलरस स १२५ में कहेहुएके अनुसार चक्रयन्त्रमें यहांतक पकावे कि अग्निस्थायी होजाय। फिर भंगरेकेरसकी २–४ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे नानाप्रकारकेरोगोंको नष्टकर बल और बुद्धिको बढाताहै। अधिकदिन सेवनकरनेसे कामलावगैरह नष्टहोतेहैं ६८४

६८५ हंसपोट्टली (प्रथमा)

वराटिकाभस्मसमं सुभस्म
वङ्गस्य पादांशरजो रसस्य ।
विमर्द्य सर्वं स्वरसेन गाढ
नागार्जुनीशाल्मलिजेन यामम् ॥ २९१७ ॥
संशोष्य पश्चान्मरिचांशयुक्तं
क्षौद्रेण च व्याधिबलप्रमाणम् ।
खादेद्व्रणश्यन्ति हि तस्य मेहा
ग्रहण्यतीसारगदाः सकासाः ॥ २९१८ ॥

यो. म, प्रमेहे ।

भाषा—पीलीकौडी और वङ्गभस्म १–१ भाग, पारदभस्म चतुर्थभाग मिलाकर नागार्जुनी और सेंमलकेस्वरससे १–१ दिन मर्दनकर हिरण्यगर्भपोटलीनिर्दिष्टप्रकारसे इसकी पोटली बनाकर रखछोडे। अथवा इसमें षोडशांश मरिचकाचूर्ण मिलाकर रखले। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक व्याधिबलको देखकर मधुकेसाथदेनेसे सबप्रकारके प्रमेह, ग्रहणी, अतिसार और कास नष्टहोतेहैं ॥

६८६ हंसपोट्टली (द्वितीया)

निष्कैकं मूर्च्छितं सूतं द्विनिष्कं मृततीक्ष्णकम् ।
शिखितुत्थं तीक्ष्णतुल्यं कर्षार्द्धं गन्धमौक्तिकम् २९१९
विषं निष्कञ्च तत्सर्वं भृङ्गाद्रिसुरसाद्रवैः ।
असिपर्णी हरिद्रा च लाङ्गलीकन्दजैर्द्रवैः ॥ २९२० ॥
मरिचैर्मधुना लेह्या माषैका हंसपोट्टली ।
हन्ति सङ्ग्रहणी शीघ्रमतिसारञ्च पाण्डुताम् ॥ २९२१ ॥
श्वासदौर्बल्यगुल्माश्च कासं हिक्कामरोचकम् ।
क्षौद्रेण विजयानिष्कं लेहयेदनुपानकम् ॥ २९२२ ॥

र सु, चि र, र. क, रसायनस, र र दी, ना. वि, ग्रहणीरोगे ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहे औषधप्रमाणं भावनायाश्च यत्किञ्चिद्भेदः प्रदर्शितः अकिञ्चित्करं प्रतिभाति, अतो न पृथक्पाठः समुद्धृतः ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १ टङ्क, फौलाद और तुत्थभस्म, शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी २–२ टङ्क, शुद्धबछ नाग १ टङ्क लेकर ३–४ पहर शुष्कमर्दनकर भंगरा, अदरख, तुलसी, चित्रक अथवा अगियाघास, हल्दी और कलिहारीकन्द इनप्रत्येकके स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु और मरिचकेचूर्णकेसाथलेनेसे सङ्ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, श्वास, कृशता, गुल्म, कास, हिक्का और अरुचिको यह नष्टकरतीहै। यदि पोट्टली बनाई हो तो उसे अन्दाजसे शहदमें घिसकर मरिचकाचूर्ण मिलाकर देना। सङ्ग्रहणी और अतिसारमें १ माशेसे १ टङ्कतक भुनीभांगका चूर्ण मधुमें मिलाकर ऊपरसे सेवनकराना ॥ ६८६ ॥

६८७ हंसभैरवरसः

सुकरीक्षीरपुटिते शुक्तिक्षारेण शोधिते ।
वङ्गे द्रुते रसं क्षिप्त्वा तृतीयांशश्च हिङ्गुलम् ॥२९२३॥
छिक्कारसेन सम्मर्द्य तदर्धार्धानि बुद्धिमान् ।
सौम्यालसिन्दूरशिलाटङ्कणानि च निक्षिपेत् ॥२९२४॥
पलाशवल्कलरसैरर्कक्षीरैश्च सप्तधा ।
पलाशवटचिञ्चानां क्षिप्त्वा क्षारांश्छरावके ॥२९२५॥
सिद्धो हठाग्निनाऽयं तु द्वात्रिंशत्प्रहरं पुनः ।
द्विगुञ्जं दापयेच्छीत समानं हंसभैरवम् ॥ २९२६ ॥
पथ्याऽर्जुनविडङ्गोत्थं क्वाथं चानु मधुप्लुतम् ।
शुक्रमेहादिकान्हन्ति रसोऽयं हंसभैरवः ॥ २९२७ ॥

र. का, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—हिरणखुरी रांगेको पिघलाकर सुअरीकेदूध और मोतीकीसीपकेक्षारजलमें ७–१४ अथवा २१–२१ बार बुझावे। फिर इसको गलाकर समभाग शुद्धपारा और तृतीयांश शिंगरिफ मिलाकर नकछिकनीकारस देताहुआ पलाश अथवा सफेद आकके ताज़े डण्डेसे यहांतक मर्दनकरे कि उसकी भस्म होजाय। फिर शुद्धसोमल, हरिताल, रससिन्दूर, मैनसिल, सुहागा ये प्रत्येक इसभस्मसे चतुर्थांश ममश डालकर मर्दनकरे फिर पलाशकीजड़कीछालके रस और सफेद या साधारण आकके दूधकी ७–७ भावनाएं देकर पलाश, वट और इमलीकेक्षार प्रत्येक चतुर्थांश देकर मर्दनकरे। अन्तमें नकछिकनीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर इसतरहके महागजपुटकी आंचदे जो कि ३२ पहरमें ठंढाहोजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे २ रत्तीकी मात्रा २ रत्ती भीमसेनी कपूरकेसाथ मधुमें मिलाकर देवे। हर्रे, सफेदअर्जुनकीछाल और विडङ्गका क्वाथ मधु मिला कर पिलानेसे शुक्रमेहादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥६८७॥

६८८ हंसमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णयेत्प्रस्थं गवां मूत्राढके क्षिपेत् ।
जीर्णान्ते च रविक्षीरं वासानिर्गुण्डिगोक्षुरम् ॥२९२८॥
भूनिम्बतिन्तिडीकन्यावर्षाभूशिग्रुभृङ्गराट् ।
तर्कारी त्रिफला मुस्ता वाजिगन्धा शतावरी २९२९
यज्ञवल्ली सूक्ष्ममूला वरुणः किंशुकोऽमृता ।
तण्डुलीयं स्थिरा मुण्डी विम्बी चित्रकणावचाः२९३०
शिरीषः पिचुमन्दश्च मत्स्याक्षीक्षुरपुङ्खिकाः ।
पृथग्दशपलं सर्वं पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ २९३१ ॥
प्रातःकालेऽस्य कर्षैकं मधुतक्रयुतं भजेत् ।
शोफपाण्डुक्षयोन्मादश्वासकासककामलाः ॥
अष्टोदराणि गुल्मांश्च नाशयेदरुचिं हठात् ॥ २९३२ ॥

रसायनसं , पाण्डुरोगे ।

भाषा—एकप्रस्थ शुद्धमण्डूरकेचूर्णको एक आढक गोमूत्रमें डालकर औटावे। कुछ ■■ बाकी रहनेपर आकका दूध, अडूसा, निर्गुण्डी, गोखरू, चिरायता, इमली, घीकुवार, इटसिट, सहिजन, भंगरा जैती, त्रिफला, नागरमोथा, असगन्ध, शतावर, विधारीहड़जोड़ ब्राह्मी, वरुणकीछाल, पलाशपुष्प, गिलोय, कांटेवालीचौलाई, शालपर्णी, गोरखमुण्डी, कुंदरू, चित्रक, पीपल, वच, सिरस और नीमकीछाल, मछेछी, तालमखाना और शरपुङ्खका १०–१० पल चूर्ण डालकर मन्द आंचसे पकावे। इसमेंसे १–१ कर्ष मधु अथवा छाछकेसाथ प्रातःकाल सेवनकरनेसे शोथ, पाण्डु, क्षय, उन्माद, श्वास, कास, कामला, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म और अरुचि नष्टहोतेहैं ॥ ६८८ ॥

६८९ क्षयकुठाररसः

रसं गन्धश्च नागश्च लोहकान्तश्च तीक्ष्णकम् ।
अभ्रं मण्डूरवङ्गौ च दरदं तालभस्मकम् ॥ २९३३ ॥
कपर्दीभस्म सौभाग्यं सर्वमेकैकभागिकम् ।
द्विभागं मागधीचूर्णं वल्लमात्रं निषेवयेत् ॥
क्षयं सोपद्रवं हन्यात्कामलापाण्डुरोगनुत् ॥ २९३४ ॥

वै चि. (ल.), क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाग, लोह, कान्त, फोलाद, अभ्रक, मण्डूर, वङ्ग, शिंगरिफ, हरिताल और पीली कौड़ी इनकीभस्में, भुनासुहागा, सब समभागलेकर नीलवर्णकमलीकर सबसे दूना पीपलकाचूर्ण मिलाय ३–४ पहर घोटकर रखछोडे। अथवा अदरखवगैरहकेरससे ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकररखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ देनेसे उपद्रवसहितक्षय, कामला और पाण्डु नष्टहोते हैं।

६९० क्षयकुलान्तकरसः

शुद्धचिकासत्वरसेन्द्रभस्म
कृष्णाभ्रकं माक्षिकलोहवङ्गम् ।
प्रवालमुक्ताफलहेमपत्रं
सर्वं समानं त्रिफलारसेन ॥ २९३५ ॥
सम्मर्दयेत्सप्तदिनानि यत्ना-
द्गुञ्जैकमात्रं मधुना समेतम् ।
भक्षेद्दिकालं सकलामयघ्नं
सर्वक्षये जीर्णतमे ज्वरे च ॥ २९३६ ॥
पाण्ड्वामये पित्तमये च कासे
सरक्तपित्ते तमके प्रमेहे ।
यथाऽनुपानं खलु योजनीयं
षण्ढत्वनाशं प्रकरोति सम्यक् ॥
धार्जीकरं पुष्टिबले ददाति
रसायनं सर्वरुजापहारी ॥ २९३७ ॥

र. चं , क्षये ।

भाषा—गिलोयसत्व, पारा, कृष्णाभ्रक, सुवर्णमाक्षिक, लोह, वङ्ग, प्रवाल इनकीभस्में, मुक्तापिष्टी, सोनेकेवर्क सब समभागलेकर ७ दिनतक त्रिफलाके क्वाथसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु-

केसाथ साय प्रात लेनेसे समस्त श्लेष्मरोग, क्षय, पुरानाज्वर, पाण्डु, पित्तकास, रक्तपित्त, तमकश्वास, प्रमेह, षण्ढता इनसबको यह नष्टकर बल और पुष्टिको बढ़ाकर रसायनका कामकरताहै॥

६९१ क्षयकुन्तनरसः

शिलासुतोत्थकज्जल्या मारितं शुद्धसीसकम्।
शुद्धमाक्षिकतुल्यं तत्कज्जली द्विगुणां नयेत्॥२९३८॥
मर्देन्मन्दारदुग्धेन चक्री शुष्कां धरेत्तले।
यन्त्रस्यार्द्धे भरेच्चूर्णं शङ्खजं वह्निना पचेत्॥ २९३९॥
मन्दमध्यमतीव्रेण दिवसत्रितयं ततः।
चक्रीं पिष्ट्वा घने वस्त्रे चालयेत्क्षयकुन्तनम्॥ २९४०॥
आज्यमाक्षिकयोगेन सिताक्षौद्रेण वा रसम्।
लिह्याद्गुञ्जाद्वयं रोगी सर्वव्यायामवर्जितः॥ २९४१॥

रसायनसार., क्षये।

भाषा—मैनसिल और पारेकी कज्जलीसे कीहुई नागभस्म, शुद्धसोनामाखी १-१ भाग, समभाग पारेगन्धककीकज्जली २ भाग लेकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर चक्रीबनाय सुखाकर हण्डीमें शङ्खकेचूर्णकेबीचमें रख शरावसम्पुट देकर अच्छीतरह सुखाकर मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर यत्नसे चक्रीको निकालकर कपड़छानकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्ती घी और मधु अथवा शक्कर और मधुकेसाथ लेनेसे उपद्रवसहित क्षय नष्टहोताहै। इसमें सभीतरहके व्यायामोंका निषेधहै॥ ६९१॥

६९२ क्षयकेसरीरसः (प्रथम)

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहं तथा रविः।
मृतं नागश्च कांस्यश्च मण्डूरं विमला शिला॥२९४२॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम्।
वैकान्तं कान्तलौहञ्च स्वर्णं विद्रुममौक्तिकम्॥२९४३॥
वराटिका च माणिक्यं राजपट्टश्च गन्धकः।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत्॥ २९४४॥
मर्दयेदग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्त्रिदिनं लघु।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक् पृथक्॥ २९४५॥
मातुलुङ्गवरावह्निस्वम्लवेतसमार्कवैः।
हयमारार्द्रकरसैः पाचितो लघुवह्निना॥ २९४६॥
वातपित्तकफोद्रिक्तान्ज्वरान्नानाविधानपि।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान्॥ २९४७॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्वयाधिहरणौषधः॥ २९४८॥
रोगिभिः सेवितो हन्ति व्याधिवारणकेसरी।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं क्रिमीञ्जयेत्॥२९४९॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम्।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम्॥
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः २९५०

र. सं., र सु, र क, यक्ष्मणि।

भाषा—अभ्रक, पारा, लोह, ताम्र, नाग कांस्य, मण्डूर, रौप्यमाक्षिक, मैनसिल, वङ्ग, खर्पर, हरिताल, शङ्ख, कांस्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, वैक्रान्त, कान्त, सुवर्ण, प्रवाल, कौड़ी, माणिक्य, राजावर्त इनकीभस्में, मुक्तापिष्टी, भुनासुहागा, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर चित्रकके स्वरस और आकके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे। ऐसे ३ आंचें देकर बिजोरा, त्रिफला, चित्रक, अम्लवेत, भंगरा, सफेदकनेर, अदरख, इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथसे १ दिन मर्दनकर लघुपुटकी आंचदे। ऐसे प्रत्येककी भावनाकेबाद पुटदेवे। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक मात्रा शक्कर, पीपल मधु, अदरख इनकेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे वातपित्त और कफ प्रधान नानाप्रकारके ज्वर, सन्निपात, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गगत वायुरोग, उपद्रवसहितक्षय, शोष, पाण्डु, क्रिमि, समस्तश्वास, कास, प्रमेह, मेद, महोदर, अश्मरी, शर्करा, शूल, प्लीहा, गुल्म, हलीमक, कृशता, बल और बुद्धिकाह्रास इनसबको यह नष्टकर रसायनका काम करताहै॥ ६९२॥

६९३ क्षयकेसरीरसः (द्वितीयः)

नेत्रलोचनचन्द्रेन्दुप्रमाणं भागमाहरेत्।
वह्निजं स्फटिका भ्रष्टा गरलं नवसागरः॥ २९५१॥
चूर्णमेषां सितायुक्तं गुञ्जार्द्धं योजयेद्भिषक्।
क्षयकेसरिनामाऽयं रस परमदुर्लभः॥ २९५२॥

वै वि, र च, रसायनस, नि. र, क्षये।

भाषा—मरिच २ भाग, भुनीफिटकड़ी २ भा, शुद्धवछनाग और नवसादरपुष्प १-१ भाग लेकर इकट्ठे घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीरत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथलेनेसे यह कफक्षयको नष्टकरताहै॥ ६९३॥

६९४ क्षयशामकरसः

तुल्यं पारदगन्धकं त्रिकटुकं ताभ्यां रजः फञ्जजं,
तैस्तुल्यञ्च भवेत्कपर्दभसितं स्यात्पारदाट्टङ्कणम्।
पादांशं सकलैः समानमरिचं लिह्यात्कनाम्राज्यकं,
यावच्चिष्कमितं भवेत्प्रतिदिनं मासात्क्षय. शाम्यति॥

र. च, र र स, क्षये। र र स लोकनाथेतिनाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, त्रिकटु २ भा, शङ्ख और कौड़ीभस्म ४-४ भाग, भुनासुहागा $\frac{1}{2}$ भा, मरिच सबकी बराबर लेकर नीलशर्करा जाकीरस रखछोड़े इस मेंसे २ रत्तीसे ४ माशेतक क्रमवृद्धिसे बढ़ाकर घीकेसाथलेनेसे एकमहीनेमें क्षयका नाशहोताहै॥ ६९४॥

६९५ क्षयसंहाररसः

लीढो व्योषवराग्नितो विमलको युक्तो घृतै. सेवितो,
हन्यादुर्जयदद्रुदं श्वयथुकं पाण्डुं प्रमेहाऽरुची।

शूलार्ति ग्रहणीञ्च गुल्ममतुलं यक्ष्मामयं कामलां,
सर्वान्पित्तमरुद्गदान्किमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥२९५४॥

र. स, क्षये।

भाषा—रौप्यमाक्षिकभस्म १ रत्तीसे ३ रत्तीतक त्रिकटु और त्रिफलाके चूर्णकेसाथ घीमें मिलाकर सेवनकरनेसे दुर्जय हृद्रोग, भयङ्करशोथ, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, शूल, ग्रहणी, गुल्म, राजयक्ष्म, कामला, पित्त और वातुरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६९५ ॥

६९६ क्षयान्तकरसः (प्रथमः)

लोहञ्च रससिन्दूरं प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
मौक्तिकं स्वर्णजं भस्म प्रत्येकं शाणसम्मितम् २९५५
अमृतायाः कर्षमात्रं सत्त्वञ्च त्रिफला तथा।
कर्षपादं कुङ्कुमञ्च कस्तूरी माषसम्मिता ॥ २९५६ ॥
आटरूषकषायेण त्रिदिनं भावयेत्पृथक्।
रसः क्षयान्तको नाम गुञ्जामात्रो मधुप्लुतः ॥२९५७॥
सघृतो राजयक्ष्माणं जयेत्पाण्डुं शिरोग्रहम्।
जीर्णज्वरं मेहरुजं प्रदरं वह्निमान्द्यकम् ॥ २९५८ ॥
सोमरोगं धातुदोषं वातश्लेष्मोद्भवं गदम्।
उक्तामयाऽनुपानैश्च सर्वरोगान्क्षयं नयेत् ॥ २९५९ ॥

र. चं, क्षये।

भाषा—लोहभस्म और रससिन्दूर १-१ कर्ष, मुक्तापिष्टी और सुवर्णभस्म १-१ टङ्क, गिलोयसत्व और त्रिफला १-१ कर्ष, केशर ४ मासे, कस्तूरी १ मासा लेकर इनकोमिलाय अडूसेके पत्तोंकेरससे ३ दिन घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रक्खोहै। इनमेंसे १-१ गोली मधु और घीकेसाथ लेनेसे क्षय, राजयक्ष्म, पाण्डु, शिरकाजकड़ना, जीर्णज्वर, प्रमेह, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, धातुदोष, वातश्लेष्मरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६९६ ॥

६९७ क्षयान्तकरसः (द्वितीयः)

मृततुल्यं व्योमसत्वं तयोस्तुल्यञ्च गन्धकम्।
कुमारीस्वरसैर्मर्द्यं यन्त्रे भैषनके पचेत् ॥ २९६० ॥
दिनत्रयान्ते सञ्चारं भक्षयेद्रत्तिमात्रकम्।
क्षये शोफं तथा कासं प्रमेहञ्चापि दुष्करम् ॥
पाण्डुरोगञ्च कार्श्यञ्च जयेच्छीघ्रं न संशयः ॥२९६१॥

टो., क्षये।

भाषा—शुद्धपारा और अभ्रकसत्वभस्म १-१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर सीतागंकज्जलीकर घीगुवारकेरससे एक दिन मर्दनकर गुपारकर पिरसे कज्जलीकर भातशीशीमेंभर बालुकायन्त्रमें दो दिनतो कड़ीआंचसे पकावै। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रक्खोहै। इनमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, शोथ, कास, दुष्करप्रमेह, पाण्डु, कृशता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६९७ ॥

६९८ क्षयारिरसः

भस्मत्वं समुपागतं विधिकृतं हेमामृतेनान्वितं,
पादांशेन कणाऽऽज्यवल्लसहितं गुञ्जोन्मितं सेवितम्।
यक्ष्माणं ज्वररोगपाण्डुगुदजांश्छ्वासञ्च कासामयं,
दुष्टाञ्च ग्रहणीं क्षतक्षयमुखान्रोगाञ्जयेद्देहिनः ॥२९६२॥

र. सं, क्षये।

भाषा—अच्छीतरह विधिपूर्वककीहुई सुवर्णभस्म में चतुर्थांश शुद्ध बच्छनाग मिलाकर रक्खोहै। इसमेंसे १ रत्तीकीमात्रा ३ रत्ती पीपलके चूर्णकेसाथ मिलाकर घीके साथ खानेसे राजयक्ष्म, ज्वर, पाण्डु, अर्श, श्वास, कास, दुष्टग्रहणी, उर क्षत प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६९८ ॥

६९९ क्षारताम्ररसः (प्रथमः)

शङ्खक्षाराऽर्कभूतिश्च वराटं लोहभस्मकम्।
अयोमलं यवक्षारं टङ्कणक्षारमेव च ॥ २९६३ ॥
त्रिकटुं सैन्धवं तुल्यं भृङ्गतोयेन मर्दयेत्।
आटरूषरसैर्मर्द्यमार्द्रकस्वरसेन च ॥ २९६४ ॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा रसोऽयं क्षारताम्रकः।
श्वासे कासे प्रतिश्याये पुराणज्वरपीडिते ॥ २९६५ ॥
मन्देऽग्नौ ग्रहणीदोषे स्वनुपानं यथोचितम्।
सेवयेत्सप्तरात्रेण नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २९६६ ॥
चिरकालानुबन्धे च सेवयेन्मण्डलावधि।
तत्तद्व्याधिहरं पथ्यं नियमेन समाचरेत् ॥ २९६७ ॥

यो. र., र. सु, वै. चि., नि. र., ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शङ्खभस्म, सज्जी, ताम्र, कौड़ी, लोह, मण्डूर इनकीभस्में, यवक्षार, भुनासुहागा, त्रिकटु, सेंधानमक सब समभाग लेकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर भंगरा, अडूसा और अदरखके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रक्खोहै। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, प्रतिश्याय, जीर्णज्वर, मन्दाग्नि और ग्रहणी इनको यह ७ दिनमें नष्टकरताहै। बद्धमूलरोगमें एकमण्डलतक सेवनकराना और तत्तद्रोगोचित पथ्य देना उचितहै ॥ ६९९ ॥

७०० क्षारताम्ररसः (द्वितीयः)

पलमितमृततुल्यं तन्मितं गन्धचूर्णं,
वसुमितपलमानं तिन्तिडीक्षारचूर्णम्।
त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेत-
द्धरति सकलशूलं पीतमुष्णोदकेन ॥ २९६८ ॥

र. र. स, र. सा., वै. चि, र. चं, र. को., नि. र., र. पा., शूले।

भाषा—ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक १-१ पल, इमलीकेक्षारकाचूर्ण ८ पल लेकर तीनोंको इकट्ठामिलाय बारीक पीसकर रक्खोहै। इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतक गरमजलकेसाथ लेनेसे यह समस्त शूलोंको नष्टकरताहै ॥ ७०० ॥

७०१ क्षारवटी

अमृतं मेघभस्माऽथ शङ्खं चिञ्चां सुभास्करम् ।
क्रमाद्द्विगुणितं कृत्वा तत्तुल्यञ्च कटुत्रिकम् ॥२९६९॥
तुलसीभृङ्गराजाद्भि र्मातुलुङ्गार्द्रकद्रवे. ।
भावितं बहुशश्चूर्णं रजो वा गुलिकाऽपि वा ॥२९७०॥
माषमात्रां तु सेवेत गुल्मशूलान्विनाशयेत् ।
मन्दाग्निं ग्रहणीमर्शो गुल्मशूलमरोचकम् ॥
एतत्क्षारवटी नाम कृशदेहेषु युज्यते ॥ २९७१ ॥

र र स, शिवस्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धवछनाग, अभ्रक और शङ्खभस्म, इमली और आकका क्षार क्रमशः द्विगुणभागसे लेकर सबको बराबर त्रिकटु मिलाकर तुलसी, भंगरा, बिजोरा और अदरखकेस्वरसोंसे कई बार भावनाएं देकर १-१ माशेकी गोलियें बनाले अथवा चूर्ण ही रहनेदे । इसमेंसे १-१ माशा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, अर्श, गुल्म, शूल, अरुचि इनसबको यह नष्ट करतीहै । कृशशरीरके लिये बहुत उपकारकहै ॥ ७०१ ॥

७०२ क्षीरमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽर्द्धाढके पचेत् ।
क्षीरप्रस्थञ्च तत्सिद्धं पक्तिशूलहरं नृणाम् ॥ २९७२ ॥

वृ मा, रससागर, यो म, र, यो र, च द, र का, रसायनस, र क. ल, भै र, र को, टो, नि र, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—आठपल शुद्धमण्डूरकेचूर्णको २ प्रस्थ गोमूत्रमें डालकर पकावे । कुछगाढाहोनेपर एकप्रस्थ दूधडालकर पकावे । सिद्धहोनेपर ३-३ माशेकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे पक्तिशूलको यह नष्ट करताहै ॥ ७०२ ॥

७०३ क्षीरसागररसः

मृतरसगगनार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं,
सयलिसममिदं स्याद्याष्टिकावारिपिष्टम् ।
तदनु सलिलजातैर्वासकैर्गोस्तनीभि-,
र्मृदितमथ विदारीवारिणा घस्रमेकम् २९७३
घृतमधुसहितेयं वल्लमात्रा वटीति,
क्षपयति गुदपित्तं पित्तरोगं क्षयञ्च ।
भ्रममदमुखशोषान्दाहतृष्णासमुत्थान्,
मलयजमिह पेयं चानुपानं सचन्द्रम् २९७४

रसायनस, र र दी, र सु, टो, र प्र, र च, र का, पित्तज्वरे । र स, र सु, ध, एषु ग्रन्थेषु गगनादिवटीति नाम वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—पारा, अभ्रक, ताम्र मुण्ड, फोलाद, सोनामाखी इनकीभस्में, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १-२ पहर मुष्क मर्दनकर मुलहठी, कमल, अड्सा, द्राक्ष, विदारी इनके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और घीकेसाथ लेनेसे पित्तरोग, क्षय, भ्रम, मद, मुखशोष, दाह, तृषा, इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तउष्णतामें कपूरमिश्रित चन्दनकल्क पीनेको देना॥७०३॥

७०४ क्षीरोदधिरसः

रसं गन्धकमभ्रञ्च शिलाजत्वयसी शुभे ।
रसार्द्धमानं स्वर्णञ्च गृहकन्याम्बुना भिषक् ॥२९७५॥
मर्दयित्वा वटीं कुर्यात्कलायपरिमाणत. ।
त्रिफलाजलयोगेन प्रातः सायञ्च पाययेत् ॥२९७६॥
गदोद्वेगं महाघोरं रक्तपित्तं क्षतं क्षयम् ।
प्रमेहं वातजान्रोगान्कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २९७७॥
पाण्डुताञ्च ज्वरं जीर्णमर्शांसि निखिलानि च ।
रसः क्षीरोदधिर्नाम निहन्यान्नात्र संशय. ॥ २९७८ ॥

भै र, परिशिष्टे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, शिलाजतु, लोहभस्म १-१ भाग, पारेसे आधी स्वर्णभस्म लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारके रससे एकदिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके हिम अथवा क्वाथकेसाथ सायंप्रातः देनेसे अत्यन्त घबराहट, रक्तपित्त, उर क्षत, क्षय, प्रमेह, वातरोग, कामला, हलीमक, पाण्डु, जीर्णज्वर, समस्त अर्श इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

७०५ क्षुधावतीवटी (प्रथमा)

रसाऽयोगन्धकाऽभ्राणि त्र्यूषणं त्रिफला वचा ।
यमानी शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥ २९७९॥
प्रत्येकं पलमेषान्तु घण्टकर्णपुनर्नवे ।
मानकं ग्रन्थिकं चेन्द्रं केशराजं सुदर्शनी ॥ २९८० ॥
दण्डोत्पला त्रिवृद्दन्ती जामातृरक्तचन्दनम् ।
भृङ्गापामार्गवुलका मण्डूकञ्च पलार्द्धकम् ॥ २९८१॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ गुटिकां सम्प्रकल्पयेत् ।
बदरास्थिसमा चैका भक्षयित्वा पिबेदनु ॥ २९८२ ॥
वारिमेकं जलञ्चैव प्रातरुत्थाय मानवः ।
वटी क्षुधावती नाम सर्वाऽजीर्णविनाशिनी॥२९८३॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं भस्मकञ्च नियच्छति ।
अम्लपित्तञ्च शूलञ्च परिणामकृतञ्च यत् ॥ २९८४ ॥
तत्सर्वं शमयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
मधुरं वर्जयेदत्र विशेषात्क्षीरशर्करे ॥ २९८५॥

भै र, ध, र. र अम्लपित्ते । रसरत्नाकरेऽग्निमान्द्याऽधिकारेऽस्ति ।

टि०—"अभ्रकं रसगन्धौ च यवानी त्र्यूषणं तथा ।
त्रिफला शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥
पुनर्नवा वचा दन्ती त्रिवृता घण्टकर्णकम् ।
दण्डोत्पला सारिवे द्वे चाक्षमात्राणि कारयेत् ॥
मण्डूरं द्विगुणं दत्वा पेषणीयं प्रयत्नत ।
आर्द्रकाद्भि समालोड्य गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥

प्रत्यह भक्षयेदेका भक्तवारि पिबेदनु ।
वटी क्षुधावती नाम्ना चाम्लपित्तविनाशिनी ॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्त तेजोवृद्धिं बलन्तथा ।
प्लीहानं श्वासमानाहमामवात विनाशयेत् ॥
परिणाममव शूल कासं पञ्चविधं तथा । "

इति भैषज्यरत्नावल्यां पाठो दृश्यते सोऽस्यैवाऽपभ्रशः प्रतीयते । लोहस्थाने मण्डूरयोगोऽप्यम्लपित्तेऽयोऽपेक्षया नाऽधिककार्यकारीति विद्वद्भिर्विभावनीयम् । एकादशद्रव्याणा गुणपूर्तिरपि सारिवाद्ययोगेन कर्तुमशक्यैवाऽस्ति, अतः सर्वद्रव्यपूर्णं एकएव योगो निष्पादनीयः । सारिवाद्येऽधिका प्रीतिश्चेदनैव तद्योगकरणेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, त्रिकटु, त्रिफला, वच, अजवाइन, सौंफ, चव्य, स्याहसफेदजीरा १-१ पल, मोखाकीछाल, पुनर्नवा मानकन्द, गठिवन, कुरैयाकीछाल, कालाभंगरा, सुदर्शनकन्द, ब्रह्मदण्डी, निसोत, दन्तीमूल, धतूरेकेबीज, लालचन्दन, भंगरा, अपामार्ग, कडुपरवल, मण्डूकपर्णी २-२ कर्ष लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर अन्यचीजोंके कपड़छानचूर्णमें मिलाय अदरखकेरससे १-२ पहर घोटकर जंगलीबेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली भक्तजलकेसाथ प्रातःकाललेनेसे समस्तअजीर्ण, भस्मक, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल इनसबको सूर्योदयसे तमकीतरह नष्टकरतीहै। इसके प्रयोगमें मधुरभोजन खासकर-दूध व शक्करका परित्यागकरे ॥ ७०५ ॥

७०६ क्षुधावतीवटी (द्वितीया)

गगनाद्विपलं चूर्णं लौहस्य पलमात्रकम् ।
लोहकिट्टं पलार्द्धञ्च सर्वमेकत्र संस्थितम् ॥ २९८६ ॥
मण्डूकपर्णीवशिरतालमूलीरसैः पुनः ।
धराभृङ्गकेशराजकालमारिषजैरथ ॥ २९८७ ॥
त्रिफलाभद्रमुस्ताभिः स्थालीपाकाद्विचूर्णितम् ।
रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः ॥ २९८८ ॥
तन्मसृणे शिलाखल्वे यत्नतः कज्जलीकृतम् ।
वचा चव्यं यमानी च जीरके शतपुष्पिका ॥२९८९॥
व्योषं मुस्तं विडङ्गञ्च ग्रन्थिकं स्वरमञ्जरी ।
त्रिवृता चित्रको दन्ती सूर्यावर्तः सितस्तथा ॥२९९०॥
भृङ्गमानककन्दाख्य रण्डकर्णक एव च ।
दण्डोत्पला केशराजः काला कर्कटकोऽपि च २९९१
एषामर्द्धपलं ग्राह्यं पटघृष्टं सुचूर्णितम् ।
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलार्द्धं पलमेव च ॥ २९९२ ॥
एतत्सर्वं समालोड्य लौहपात्रे तु भावयेत् ।
आतपे दण्डसंघृष्टमार्द्रकस्य रसैस्त्रिधा ॥ २९९३ ॥
तद्रसेन शिलापिष्टं गुटिकाः कारयेद्भिषक् ।
बदरास्थिनिभाः शुष्काः सुगुप्ताश्च निधापयेत्२९९४
तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुटिकात्रयम् ।
अम्लोदकानुपानञ्च हितं मधुरवर्जितम् ॥ २९९५ ॥
दुग्धञ्च नारिकेलञ्च वर्जनीयं विशेषतः ।
भोज्यं यथेष्टमिष्टञ्च धारिमकाम्लकाञ्जिकम् ॥२९९६॥
हन्त्यम्लपित्तं विविधं शूलञ्च परिणामजम् ।
पाण्डुरोगञ्च गुल्मञ्च शोथोदरगुदामयान् ॥ २९९७॥
यक्ष्माणं पञ्च कासांश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ॥
गुटी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥२९९८॥

र. सं., र. सु., च. द., र. का., र. क., टो., वै. द., र. ध., र. चि., भै. र., अम्लपित्ते ।

टि०—अत्राऽऽगनाऽभ्रकादीनां शुद्धिरधोलिखितप्रकारेण कर्तव्या सा यथा—

तत्र अभ्रकशुद्धिः

आशु भक्तोदकैः पिष्टमभ्रक तत्र संस्थितम् ।
कन्दमाणाऽस्थिसंहारखण्डकर्णरसैरथ ॥
तण्डुलीयकशालिञ्चकालमारिषभेन च ।
पृथ्वीरबृहतीभृङ्गलक्ष्मणाकेशराजजै. ॥
पेषणं भावना कुर्यात्पुटञ्चानेकशो भिषक् ।
यावन्निश्चन्द्रक तत्स्याच्छुद्धिरेव विहायस. ॥

अथ लौहशुद्धिः

हैममाक्षिकशालिञ्चे ध्मात निर्वापित जले ।
त्रैफलेऽथ विचूर्ण्यैव लौह कान्तादिक पुन. ॥
एरण्डगजकर्णोत्थैस्त्रिफलावृद्धदारुजैः ।
मानकन्दास्थिसंहारशृङ्गवेरभवै रसैः ॥
दशमूलीमुण्डितिकातालमूलीसमुद्भवैः ।
पुटितं साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो व्रजेत् ॥

अथ मण्डूरशुद्धिः

वशिर श्वेतवाट्याल मधुपर्णी मयूरकम् ।
तण्डुलीयञ्च वर्षाह दत्त्वाऽधश्चोर्ध्वमेव च ॥
पाक्य सुजीर्णमण्डूर गोमूत्रेण दिनत्रयम् ।
यथाऽन्तर्बाष्पदग्ध स्यात्तथा स्थाप्यं दिनत्रयम् ॥
एव विशोधिते लौहकिट्ट ग्राह्य विचूर्णितम् ॥

अथ रसशुद्धिः

जयन्त्या वर्धमानस्य शृङ्गवेररसेन तु ।
वायस्याश्चानुपूर्व्येव मर्दन रसशोधनम् ॥

अथ गन्धकशुद्धिः

गन्धक नवनीताख्य क्षुद्रित लौहभाजने ।
त्रिधा चण्डातपे शुष्क भृङ्गराजरसाऽऽप्लुतम् ॥
ततो वह्नौ द्रवीभूत त्वरित वस्त्रगालितम् ।
यत्नाद्भृङ्गरसे क्षिप्त पुनः शुष्क विशुध्यति ॥ इति ॥

भाषा—अभ्रकभस्म २ पल, लोहभस्म १ पल, मण्डूरभस्म २ कर्ष लेकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर ब्राह्मी, रक्तपुनर्नवा, तालमूली, शतावरी, भंगरा, कालाभंगरा, मरसा, त्रिफला, नागरमोथा इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथ मिलाकर हण्डीमें पकावे और चलातारहे। इसतरह प्रत्येकके स्वरसको सुखाकर अखीरमें यहातक अग्नि दे कि सब स्वरस जलजाय। फिर शुद्ध पारा और गन्धक १-१ कर्षकी नीलवर्णकज्जलीकर वच, चव्य, अजवाइन, स्याह सफेद जीरा, सौंफ, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, गठिवन, अपामार्ग, निसोत, चित्रक, दन्तीमूल, सफेद फूलकी हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, भंगरा, मानकन्द, जङ्गलीसूरण,

महादण्डी, कालाभंगरा, कालावाला, (गु०) काकड़ासींगी इनका बारीकचूर्ण २-२ कर्ष, त्रिफला प्रत्येक आधा आधा अथवा १-१ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय लोहेकेपात्रमें डालकर अदरखके-रससे भिगोकर धूपमें सुखावे। ऐसे ३ भावनाएं देकर जंगली-बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३-३ गोली प्रात.-काल भोजनके आदि अथवा अन्तमें खट्टे पानीकेसाथ सेवनकर-नेसे अम्लपित्त, नानातरहकाशूल, परिणामशूल, पाण्डु, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदामय, राजयक्ष्म, ५ प्रकारकाकास, मन्दाग्नि, अरुचि, प्लीहा, श्वास, आनाह, दुस्तरआमवात इनसबको यह नष्टकरतीहै। इसमें मधुररसको छोड़कर सब पथ्यहै। दूध और नारियलका विशेषतया परित्यागकरे। वारिभक्त और खट्टी-काञ्जीका यथेष्ट सेवनकरे ॥ ७०६ ॥

इसमें जो आये हुए द्रव्यहैं उनकी शुद्धि अधोलिखित प्रका-रसे करनी उचितहै। धान्याभ्रकको भक्तोदक, जङ्गलीसूरण, मानकन्द, हड़जोड़, जहरीसूरण (वामनदड़ियो म.), कटिवाली चौलाई, सरहंची, मरसा, पुनर्नवा, बनमाटा, भगरा, लक्ष्मणा, कालाभंगरा इनके स्वरसोंसे १-१ दिन पीसकर टिकड़ी बनाय गजपुटकी आचदे। ऐसे प्रत्येक औषधिमें ७-७ अथवा ३-३ बार पुट देनेसे शुद्धहोकर भस्म होजातीहै कदाचित् इतने पुट-देनेपरभी निश्चन्द्र न हो तो इन्हींके अधिक पुटदेवे ॥ १ ॥

उत्तम लोहचूर्णको धमनकर स्वर्णमाक्षिक, सरहंची, त्रिफला, एरण्ड, हस्तिकर्णपलाश, त्रिफला, विधारा, मानकन्द, हड़जोड़, अदरख, दशमूल, गोरखमुण्डी और शाल्मलीके द्रवोंमें बुझाकर इन्हींकेद्रवोंमें घोटकर टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकीआचदे। जबतक वारितर न हो तबतक इसकमको चलाता रहे ॥ २ ॥

१०० वर्षसे ऊपर जहांतकहोसके पुराने मण्डूरको धोकर साफ करले। फिर अग्निसात् कर रक्तपुनर्नवा, सफेदफूलकीबला, गिलोय, अपामार्ग, कटिवालीचौलाई, इटसिट इनके स्वरसोंमें क्रमश बुझाकर इन्हींके कल्कोंमें क्रमश बन्दकर १-१ गजपुट-देवे। फिर गोमूत्रसे ३ दिन घोटकर अष्टगुणित अथवा चतु-र्गुणित गोमूत्र डालकर सुखबन्दकर अग्निपर रख अन्तर्धूमविद-ग्धकर ३ दिनतक उसीचूल्हेपर पड़ा रहनेदे। इसीतरह शुद्धकि याहुआ मण्डूर काममें लेना ॥ ३ ॥

जैंती, एरण्ड, अदरख, मकोय, इनके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर डमरूयन्त्रमें ऊर्ध्वपातनकरनेसे रस शुद्धहोजाताहै ॥ ४ ॥

आवलासार गन्धकके छोटे छोटे टुकड़ेकर लोहेके बर्तनमें डालकर भंगरेकारस देकर कड़ीधूपमें रक्खे। ऐसे ३ बारकरके हण्डीमें भगरेका रसभरकर ऊपरसे वस्त्र बाधदे और लोहेकी कड़ाहीमें गन्धकको गलाकर वस्त्रमेंसे छानदे। अथवा उसवस्त्र-पर गन्धकके चूर्णको बिछाकर शरावसम्पुटदेकर हण्डीको जिमी-नमें गाड़दे और ढकन पर थोड़ेसे कण्डोंकी आचदे जिसमें कि गन्धक गलकर भगरेके रसमें पड़जाय। स्वाङ्गशीतलहोने पर भंगरेकेरससे गन्धकको निकालकर पोंछकर सुखाले, इसी गन्ध-कको इस वटीमें डाले ॥ ५ ॥

७०७ क्षुधावतीवटी (तृतीया)

त्रिक्षारं पञ्चलवणं शिग्रुकं वरतालकम् ।
अर्कसेहुण्डदुग्धेन भावयेद्दिवसद्वयम् ॥ २९९९ ॥
विलिप्य चार्कपत्राणि रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चूर्णयेत्कज्जलोपमम् ॥ ३००० ॥
ततो रसं विषं गन्धं त्रिफलां त्र्यूषणं वचाम् ।
वह्निपुष्करदन्त्यौ च बृहत्यौ चविका त्रिवृत् ॥३००१॥
समचूर्णं प्रकर्तव्यं वस्त्रपूतञ्च कारयेत् ।
निर्गुण्डीशिग्रुमूलोत्थरसेन च विभावयेत् ॥ ३००२॥
वटी क्षुधावती नाम्ना भक्षयेद्गुलमात्रिकाम् ।
अनुपानं प्रदातव्यमभयागुडसंयुतम् ॥ ३००३ ॥
सर्वाऽजीर्णप्रशमनी वह्निमान्द्यविनाशिनी ।
सश्वासवातगुल्मार्शःकासहृद्रोगसूदिनी ॥ ३००४ ॥

ना. वि., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, सहिजनकी-छाल, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य १-१ तोलालेकर आक और थूअरकेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर दोतोले शुद्धताबेके कण्ठ-कवेधीपत्रोंपर लेपकर सुखाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी-आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर कज्जलकेसमान चूर्णकर शुद्धपारा, बच्छनाग और गन्धक, त्रिफला, त्रिकुटु, वच, चित्रकमूल, पोह-करमूल, दन्ती, दोनोंभटकटैया, चव्य, निसोत, येसब १-१ तोलालेकर कपड़छानचूर्णकर पूर्वकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी और सहिजनकीजड़कीछालके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली हर्रे और गुड़केसाथदेनेसे समस्तअजीर्ण, मन्दाग्नि, श्वास, वातगुल्म, अर्श, कास, हृद्रोग इनको यह नष्टकरतीहै ॥ ७०७ ॥

७०८ क्षुधावतीवटी (अग्निप्रभावटी)

गन्धं तालं रसं नागं त्रिकटुं त्रिफलां तथा ।
टङ्कणं जयपालञ्च समं शुद्धं विमर्दयेत् ॥ ३००५॥
दिनैकं निम्बुनीरेण वटिका मरिचाकृतिः ।
प्रातः सायं सेवनीया चतुर्दशदिनावधि ॥
कफवातादिरोगघ्नी जठराऽनलदीपनी ॥ ३००६ ॥

र. सि., अजीर्णे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, हरिताल और नागभस्म, त्रिकुटु, त्रिफला, सुनासुहागा, शुद्ध जमालगोटा सब समभाग-लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर काष्ठौषधियोंका कपड़छान चूर्णकर इकट्ठे मिलाय एकदिन नीबूकेरससे मर्दनकर मरिचप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रात. और सायङ्काल उचितानुपानकेसाथ १४ दिनतकलेनेसे कफ और वातव्याधि, उदररोग नष्टहोतेहैं ॥ ७०८ ॥

७०९ क्षुधासागररसः

त्रिकटु त्रिफला चैव तथा लवणपञ्चकम् ।
क्षारत्रयं रसं गन्धं नागमेकं द्विकं विषम् ॥ ३००७ ॥

गुञ्जामात्रां वटीं कुर्याल्लवङ्गैः पञ्चभिः सह ।
क्षुधासागरनामाऽयं रसः सूर्येण निर्मितः ॥३००८॥

भै. र., र. सु., ध., नि. र., वै. र., चि र म., रसायनसं., वै. चि., अग्निमान्द्ये ।

टि०—आयुर्वेदविज्ञाने वृद्धिहरनाम्नैको रसोऽस्ति तत्र विषस्थाने जयपाल नियोज्य चित्रकभावनया निष्पादित एतावान्विशेषोऽस्ति जयपालयुक्तत्वेनाऽनिर्देश्यत्वात्त परस्परमन्तर्भाव. ।

" रस गन्धक टङ्कण व्योषवह्नी, वराटाम्पट्टनपञ्च हिङ्गुलगन्धम् ।
क्षुपासवंचूर्णस्य वेदाशभागा, पुनर्नीरनम्भीर षड्विंशदङ्कि ॥
सुतिन्तिडीक्षारतक्षारयुग्म, दरैर्नागवल्लीद्रवैर्भावनीयम् ।
वटीमुद्गमानप्रमाणा च देया, यथेष्टानुपानाश्च भुक्त क्षिपेति ॥
महाश्वासकासौ हरत्सर्वदाल, क्षुधासागर सागरीयाऽनलाभ ॥ "

इति क्षुधासागरनाम्ना रसामृते पाठ प्रकम्पितोऽस्ति, तत्र विषस्थाने क्षुपेतिपाठ लेखकप्रमादाद्योगपदवस्तुद्विवैचित्र्याद्वा सञात । हिङ्गुल-गन्धमिति च द्विरुक्त केनविचारेण कृतमिति बुद्धयारूढ न भवति सुतस मागमनाद्धिङ्गुलकथनस्य वैयर्थ्यम् । गन्धकस्य तु नामनिर्देशेनैव योगमा रम्भिकपादे एव समागमनात्तद्वैयर्थ्यमपि स्पष्टमेव । प्रमाणाऽधिक्यकृत्या तदस्तीत्यपि वक्तु न युज्यते प्रथमविन्यासे एव द्विगुणयोगस्य कथयितु सुशकत्वात् । तस्मादय योग उपरितनयोगे एवान्तर्भावनीय ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, पाचोंनमक, तीनोंक्षार, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, शुद्ध वच्छनाग २ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारागन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लौंगके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख छोडे । इनमेंसे १–१ गोलीकाचूर्णकर ५ लौंगोंके साथ लेनेसे यह मन्दाग्निको दूरकरताहै ॥ ७०९ ॥

७१० क्षेत्रपालरसः

हिङ्गुलञ्च विषं ताम्रं लौहं तालकटङ्कणम् ।
जीरमाहेयफेनञ्च सममागं विमर्दयेत् ॥ ३००९ ॥
यवार्द्धा घटिका कार्या पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
लवणाऽम्भोविवर्ज्यञ्च दातव्यं भिषजां वरैः ॥३०१०॥
अग्निमान्द्यं गुरुं शोथं ग्रहणीमपि दुस्तराम् ।
ज्वरञ्च विषमं जीर्णं नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ ३०११ ॥

भै र , र. च , शोथे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, वच्छनाग, सुहागा और अफीम, ताम्र, लोह और हरितालभस्म, सफेदजीरा सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवा अथवा मकोयकेरससे १–२ दिन मर्दन कर मूगवरावर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पुनर्नवादिकायप्रभृतिकेसाथ देनेसे शोथ, मन्दाग्नि, दुस्तरसङ्ग्रहणी, विषम और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें दूध और चावलदेवे । नमक और जलका परित्यागकरे ॥७१०॥

७११ क्षेत्रीकरणरसः

प्रागुक्तं पातितं सूतं स्वेदितं सुमुखीकृतम् ।
कलांशं हेमजीर्णञ्च षड्गुणं जीर्णदानवम् ॥ ३०१२ ॥
रसमादाय मृद्गीयात्कृष्णधत्तूरनीरतः ।
आखुपर्णीरसैश्चैव नष्टपिष्टो भवेद्रसः ॥ ३०१३ ॥
त्रिफलोत्थरसैर्मर्द्यः सूतः कृष्णसुवर्णजैः ।
विंशतिश्च दिनान्येव कल्कं सोमानले क्षिपेत् ॥३०१४॥
अध ऊर्द्धं वलिं दद्याद्रसेन्द्राच्च चतुर्गुणम् ।
निरुद्ध्य सुदृढं यन्त्रं चुल्लीमधिनिवेशयेत् ॥ ३०१५ ॥
ज्वालयेत्क्रमशो वह्निमेकविंशद्दिनावधि ।
मृदुमध्योत्तमं प्राज्ञो वैश्वानरमतन्द्रितः ॥ ३०१६ ॥
ज्वालयित्वा स्वाङ्गशीतं यन्त्रमुत्तारयेत्ततः ।
निर्भिद्य यन्त्रं गृह्णीयाद्रसं सिन्दूरसन्निभम् ॥ ३०१७॥
एवं भस्मीकृतात्सूताद्ग्राह्यं पलचतुष्टयम् ।
ताप्यं लोहं विडङ्गञ्च शिलाजतु हरीतकी ॥ ३०१८ ॥
सर्वं सूतसमं ग्राह्यं प्रत्येकं मर्दयेत्ततः ।
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य सर्वमेकात्मतां यथा ॥३०१९॥
व्रजेत्तथाऽथ मधुना घृतेनाऽथ प्रमर्दयेत् ।
एवं तन्मर्दितं सूतं मध्वाज्येन समन्वितम् ॥ ३०२० ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय वल्लं घुण्यमतन्द्रितः ।
शुक्रवृद्धिकरं पुष्टिवर्धनं वह्निदीपनम् ॥ ३०२१ ॥
गद्याणमात्रं स्वीकुर्याद्राजयक्ष्मविनाशनम् ।
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकम् ॥ ३०२२ ॥
ग्रहणीमतिसारञ्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
वत्सरद्वययोगेन वलीपलितहा भवेत् ॥ ३०२३ ॥
सतताऽभ्यासयोगेन जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
क्षेत्रीकरणनामाऽयं रसः परमसुन्दरः ॥ ३०२४ ॥
धारोष्णं सर्वदा पेयं गव्यं शर्करया युतम् ।
न कचिदधि भुञ्जीत तक्रञ्चापि विवर्जयेत् ॥३०२५॥
गोधूमयवशालयश्च मुद्गं मांसरसन्तथा ।
प्रायेण तिक्तमधुरकषायकटुकात्मकान् ॥ ३०२६ ॥
रसान्भुञ्जीत सततं लवणाम्लं विवर्जयेत् ।
ताम्बूलं सततं खादेत्कर्पूरादिसमन्वितम् ॥
इक्षवः पनसं रम्भाफलादीनि निषेधयेत् ॥ ३०२७ ॥

रसाल , रसायने ।

भाषा—नुभुक्षान्तसस्कारकियेहुए पारेमें षोडशांशसुवर्णका-ग्रासदेकर षड्गुणगन्धकजारणकर कालाधतूरा, मूषाकर्णी, त्रिफला और कालेधतूरेकेरसोंसे यथाक्रम ५–५ दिन मर्दनकर टिकिया बनाय सुखाकर पारेसे चतुर्गुणित शुद्धगन्धक नीचेऊपररख डमरू यन्त्रमें बन्दकर समस्तापर सुखासुखाकर वज्रमिट्टीसे ■ कपडमि-ट्टीकरके चूल्हेपररख २१ दिनतक मृदु, मध्य और खराग्नि देकर पाककरे । २२ वेंदिन लकडियोंको निकालले और यन्त्रको कोय-लोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिसे यन्त्रको खोलकर ऊपरकेघडेमें लगीहुई सिन्दूरवर्णभस्मको निकालकर ४ पललेवे । फिर शुद्धसोनामाखी, लोहभस्म, विडङ्ग, शिलाजीत और हर्रे ४–४ पल लेकर वारीकचूर्णकर घी अथवा मधुसे २–३ दिन मर्दनकर कल्कबनाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती घी और मधुकेसाथ मिलाकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ प्रात काललेवे ।

एसे ६ मासे दवाके सेवनकरनेपर वल, वृषता, शुक्र, पुष्टि, अग्नि इनकानाश, राजयक्ष्म, प्रमेह, पाण्डु, कामला, हलीमक, ग्रहणी, अतिसार इनसवको यह नष्टकरताहै। दो वर्षतक लगातार सेवन करनेसे वलीपलित नष्टहोतेहैं। निरन्तर सेवनकरनेसे अत्यन्त दीर्घजीवी होताहै। शक्करमिलाहुआ धारोष्णदूध, गेंहू, जव, चावल, मूग, मांसरस, तिक्त, मधुर, कषाय और कटुरसका-सेवनकरे। लवण, खटाई, विशेषकर दही और तक्रका वर्जनकरे। कर्पूरादि सुगन्धद्रव्ययुक्तपान, ईख, कटहर और केला वगैरह फलोंका सेवनकरे ॥ ७११ ॥

७१२ ज्ञानाख्यागुटिका

चत्वारस्तुत्थसत्त्वस्य तावन्तः स्वर्णमाक्षिकात्।
शुद्धरौप्यस्य चत्वारो वल्लैको हेमचूर्णतः ॥ ३०२८ ॥
शुद्धोऽष्टादशसंस्कारैः पूर्वोक्तो यस्तु पारदः।
तस्य वल्ला नवत्रिंशद्विपञ्चाशच्च मीलिता॥३०२९॥
खल्वे प्रक्षिप्य सर्वं तन्मर्दयेद्दिनसप्तम्।
वरुणस्य च मूलानि श्रीखण्डं सूक्ष्मकारितम् ३०३०
मृद्वग्नौ स्वेदयेदेस्तद्दोलायन्त्रे दिनद्वयम्।
स्वेदयेद्गुटिकां कृत्वा क्रमात्पञ्चामृतेन च ॥ ३०३१ ॥
मध्वाज्यदधिदुग्धञ्च शर्करा चैव पञ्चमी।
अस्मिन्पञ्चामृते स्वेदं यावद्यामाष्टकं भवेत्॥३०३२॥
कान्तलोहमये पात्रे मधुपूर्णे गुटी क्षिपेत्।
तत्पात्रं वालुकापूर्णस्थालिकायाञ्च विन्यसेत् ३०३३
चुल्ल्यां स्थालीं समारोप्य वह्निर्यामाष्टकं भवेत्।
स्वेदनेऽयं विधिः कार्य. प्रत्येकेनाऽमृतेन च॥३०३४॥
नष्टे नष्टे मुहु. क्षेप्यं क्रमात्पञ्चामृतं सदा।
मधुयुक्तं क्रमेणैव पञ्चधा स्वेदयेच्च ताम्॥ ३०३५ ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान्रोगान्नियच्छति।
त्रिकालज्ञानमाप्नोति नरः सततसेवनात् ॥ ३०३६ ॥

रसचि, रसायने।

टि०—यद्यप्यत्राऽष्टधातुभिरेव गुटी निर्मिता परन्त्वेतादृक्प्रक्रियया दिव्यज्ञानप्राप्तेरसम्भवप्रायत्वात्तुत्थमाक्षिकहेमरजताना वादोक्तप्रक्रियया सुधात्वमापाद्य योगो निष्पादनीय इति रहस्यम्। सुधाप्रकारस्तु अगस्त्य सम्प्रदायादिभिरवगन्तव्य इति।

भाषा—तुत्थ और सुवर्णमाक्षिकके सत्त्व, शुद्धचांदी ४-४ वाल, सुवर्णचूर्ण १ वाल (३ रत्ती), अष्टदशसंस्कारकिया-हुआपारा ३९ वाल लेकर ■ दिनतक शुष्कमर्दनकर गोलीबनावे फिर वरुणकीजडकीछाल और सफेदचन्दनका पानीमें कल्कवनाय उसमें गोलीको रखदे। फिर चूल्हेपर मिट्टीकी कढाही रख उसमें दोमहुल वालू विछाकर कान्तलोहके पात्रको रख औषधपिण्डका दोलायन्त्रवनाय मधुमें मन्दाग्निमें ८ पहरतक स्वेदनकरे। मधु सूखने पर दूसरा डाला जाय। इसीतरह घी, दही, दूध और शक्करके शरवतमें स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर विशुद्ध बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगनिवृत्तहोतेहैं। निरन्तरसेवनकरनेसे त्रिकालज्ञान प्राप्तहोताहै ७१२

७१३ ज्ञानोदयरसः

कलावेदाङ्कचन्द्रांशैः सर्वांशसितया युतैः।
शक्राशनरजोजातीफलशुकैः सुसाधितः ॥ ३०३७ ॥
सेवितः सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदनः।
वातश्लेष्मामयध्वंसी ज्वरातीसारनाशन. ॥ ३०३८ ॥
बृंहणैरनुपानैर्हि योजितः कामवृद्धिकृत्।
ज्ञानोदयो भवेदेष साधकानन्दसिद्धिदः ॥ ३०३९ ॥

नि र, वै र, र. कौ, रसायनस, र ल, र श, टो ज्वराऽतिसारे। र सि वाजीकरणे।

टि०—र ल, र श, टो, एषु ग्रन्थेषु "विजयाशक्तियोगिनिट मण्डनशम्भुभि। ज्ञानोदयो भवत्येष साधकानन्दसिद्धिद ॥ कलावेदाङ्कचन्द्राशै क्रमेण ममशर्कर। सेवित सात्म्यतो ग्राही कफवातापनोदन ॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति, अत्र नग्मण्टनमधिकमस्ति भागाश्च चत्वार एव। अतोऽन्तिमभागस्य द्विरुक्ति करणीया पाठस्तु एक एव करणाय पूर्वस्ले गौरवात्मण्डनमलनेन शक्याऽधिक्याच्च। निघण्टुरत्नाकरटीकाया रजम शब्दस्य पर्यङ्काऽर्थकरण तु हास्यास्पदमेवाऽस्ति, रसराजलक्ष्मीरसपाठे रन स्थाने शक्तीति स्पष्टोक्तित्वात्। र सि ज्ञानोदयावटीतिनाम। तत्र पारदस्थाने द्विगुणदरद नियोजितम्, पाठस्त्वेकएव।

भाषा—धोयाहुआ गांजा अथवा भांग १६ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, जायफल ९ भाग, पारदभस्म अथवा चन्द्रोदय १ भाग लेकर वारीकचूर्णकर सबकी बरावर शक्करमिलाकर रख छोड़े। इसमेंसेप्रकृतिकेअनुसार १ माशेसे २ माशेतककी मात्रा उचितानुपानकेसाथ लेनेसे जलदोष, वायु और कफरोग, ज्वरातिसार, इनसवको यह नष्टकरताहै वाजीकर अनुपानोंकेसाथ लेनेसे यह कामवीवृद्धिको करताहै ॥ ७१३ ॥

अन्त. स्थितोऽस्ति वहिरस्ति रसस्वरूप,
सिद्धिप्रदोऽस्तु लयसर्गविसर्गभेदैः।
ऊष्माभिधाममजति सर्वजगन्निवासो,
हंसो हरिः सकलकृद्रसयोगशास्त्रे ॥

इत्यूष्मपर्यन्ता रसाः समाप्ताः



7562

द्राविडादिप्रसिद्धा ये कुम्भजव्यासनिर्मिताः
योगास्सम्यगिह न्यस्ताः सर्वदेशहितेच्छया॥

१ अग्निकुमाररसः

विशुद्धपारदविषगन्धकटङ्कणदरदान्समभागान् किञ्चिदुष्णीकृतपक्वार्कपत्ररसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रीकृत्य मूषायां निक्षिप्य मुखबन्धनं विधाय वालुकायन्त्रे क्रमाग्निना यामचतुष्टयं विपाच्य स्वाङ्गशीतलं गृहीत्वाऽऽर्द्रकरसेनैकगुञ्जाप्रमिते सेविते सति सर्वज्वरनिवृत्तिर्भवति। सङ्ग्रहण्यतिसाराद्योऽपि नश्यन्ति। पथ्यं रोगाऽनुरूपम्। (अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे)

टि०—अयं पाठो रत्नाकरौषधयोगे बसवराजीये च सिद्धाऽग्निकुमार नाम्ना गृहीतोऽस्ति परन्तु दरदराहित्यमस्ति। तत्कारण त्रुटितपाठाऽऽसादन प्रतिभाति। व्यासेऽपि अर्धनारीश्वरवटीतिनाम्ना योऽयं योगोऽस्ति तत्राऽपि दरदराहित्यम्, भावनायाञ्च निर्गुण्डीकारवल्ल्यौ गृहीते, लवणयन्त्रे पाक, नस्ये भक्षणे चेति द्विविध प्रयोगो दर्शित। अत्राऽपि सर्वासां भावनानामनुष्ठानं कृत्वा एक एव योगस्सम्पादितश्चेद्योगलाघव भविष्यति। वालुकालवणयन्त्रयोस्तु कामचार। वालुकालवणमिश्रणेनाऽपि पाकाऽनुष्ठाने क्षत्यभाव प्रत्युत द्वयोस्सयोगादग्निसयोगेन मूषास्थोड्डयनशीलवस्तुना सुतरां दृढमवरोधो भविष्यति, नस्ये भक्षणे चाऽप्यव्याहतवीर्ययोग इति विद्वद्भिरविस्मरणीयम्। विशेषसूचनम्—अनयोर्ग्रन्थयोर्द्राविड्लिपिभाषयोर्विद्यमानताऽस्ति तद्देशीयास्सद्ग्रन्था नामन्यलिप्या भाषाया च प्रकटने महापातक मन्यन्ते इत धारणा दद्यावधि महामहत्त्वयुक्तयोरप्यनयोर्न संस्कृताऽनुवादोऽभूत् तद्देशीयौषधनाम्नामतिवैचित्र्यात्सस्कृते यथार्थप्रतिशब्दप्रहाभावादस्माभिरपि पद्यं न प्रतिबद्धा योगा ईश्वराऽनुग्रहेण द्वितीयाऽऽवृत्तौ श्लोकरूपता यास्यन्तीति विद्वत्सु विनीता प्रार्थना गद्यरूपेष्वेषु यत्रयत्रौषधनामसु सन्देह आसीत्तत्तत्र यथाऽवस्थितान्येव तद्देशीयनामानि निहितानि यथा चेम्पुतहालवादीनि अत्रायुर्वेदोद्धारव्रतैर्विशुद्धान्त करणैर्विद्वद्भिषग्वर्यैस्साहाय्य दातव्य यतस्तत जात स्खलनमपि कृपया सूचनीय तद्द्वितीयावृत्तौ दूरीकरिष्यते।

२ अग्निकुमाररसः (स्वयमादिः)

शुद्धमयश्चूर्णं, अमलसारगन्धकं, टङ्कणं, दरदं, कान्तश्चेति प्रत्येकमर्द्धपलिकं कुमारीरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य चूर्णयित्वा ताम्रसम्पुटे निक्षिप्य गाढातपे धूमरेखोद्गमनपर्यन्तं स्थापनीयम्। पुनर्द्वितीयदिने कुमारीरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कीभूतं चूर्णितञ्च ताम्रसम्पुटितं विधायाऽऽतपे शोषणीयम्। सूक्ष्मतया धूमो निःसरति। पुनस्तृतीयदिनेऽप्येवं कृतश्चेत्प्रचण्डाऽऽतपसंयोगात्पक्वीभूय भस्मीभवति। गुञ्जाद्वयपरिमिते भस्मनि कलाद्वयं (द्वादशरक्तिकं) त्रिकटुकचूर्णं मेलयित्वा मधुना सह सेवितश्चेत् सन्निपातगुल्ममूर्च्छाकामलापाण्डुमेहादयो निवर्तन्ते। पथ्यं रोगानुरूपम्। कारवेल्लकशाकः सुतरां वर्ज्यः। अनुपानभेदात्सर्वेषु रोगेषूपयुज्यते॥ (अगस्त्य०)

टि०—एवंविधेषु योगेष्विदानीन्तनैर्गोल्मेरण्डपत्रैस्संवेष्ट्य त्रिदिन धान्यराशौ स्थाप्यते। आतपनिधानसमयेऽपि वानारिपत्रैराच्छाद्यते इति विशेष सन्नतोऽस्ति यथा स्वयमग्निरसे मर्दनमातपनिधानञ्च एकस्मिन्नेव दिने समाप्यते। अत्र तु महर्षिणा त्रिदिनपर्यन्त मर्दनमातपशोषणञ्च कृतमस्ति भस्म तूभयथाऽपि सम्पत्स्यते, गुणवैलक्षण्यन्तु सन्दिग्धाऽनुष्ठानेन परीक्षणीयम्।

३ अग्निकुमाररसः (स्वयमादिः)

शुद्धपारदः ३ पलः, गन्धकः २ पलः, कान्तसिन्दूरं ४ पलं, मनःशिला २ पला, दरदं २ पलं, अयोभस्म १ पलं गृहीत्वा कज्जलीकृत्य कुमारीरसेन १५ दिनपर्यन्तं मर्दयित्वा त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमितमौषधं सेवितं सदग्निमान्द्यगुल्मोदावर्तपाण्डुज्वरश्वासकासक्षयथुप्रभृतिरोगान्नाशयति। आढकी, मुद्गाः, सूरणं, वृन्ताकं, शिग्रुशिम्बी, भिण्डिका, काकमाचीपत्रं, गोक्षीरं, गोघृतञ्च पथ्यम्। अम्लरसो धूमपानं स्त्रीसंसर्गश्च वर्जनीयः॥ (व्यासप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे)

४ अग्निकुमाररसः (वातादिः)

विशुद्धपारदरसकर्पूरदरदतालकानि समभागानि गन्धकञ्च द्विभागं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूपिकायां निक्षिप्य वालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पक्त्वा स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम्। मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सहैकगुञ्जापरिमितः सर्वज्वरेषूपयोजनीयः॥ (व्यास०)

५ अजीर्णमान्द्यवटी

सर्पदंष्ट्रा १ पलं, विडङ्गपारसीकाकृष्णजीरकरास्ना (राष्ट्रक) पिप्पलीमूलरसकर्पूरदरदगोरोचनकेशराणि प्रत्येकं सपादतोलकानि, मृगमदश्च पादतोलकमाहृत्य ताम्बूलीदलरसेन गर्दभीक्षीरेण चैकैकयामं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणां वटीं स्तन्येन दद्यात्। अनया सर्वे बालरोगा नश्यन्ति। बालस्य मातुः पथ्यक्रमः= उष्णोदकं, पुराणतण्डुलाः, मरीचमिश्रितसैन्धवचूर्णञ्चेति। ताम्बूलं पुंप्रसङ्गश्च वर्ज्यः॥ (अगस्त्य०)

६ अण्डवातलेह्यम्

हिङ्गुपारदमनःशिलापिप्पलीगजपिप्पलीसैन्धवटङ्कणतालककटुरोहिणीकृष्णजीरकाणि प्रत्येकं पादतोलकानि, शुद्धं जयपालबीजञ्चैकपलं गृहीत्वाऽऽदौ जयपालबीजानि एकयामपर्यन्तं सम्यग्विमृद्य पूर्वोक्तौषधचूर्णे मेलयित्वाऽऽर्द्रकरसेन द्वियामपर्यन्तं सम्यङ्मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कुर्यात्। एकां वटीं गुडेन शर्करया वा निगिलेत्। अनेन वातपाण्डुगुल्मश्वयथुज्वरहृच्छूलमेहवातग्रन्थयो नश्यन्ति। महोदरव्याधिग्रस्तानामण्डवातस्य च दिनत्रयाऽभ्यन्तरे एकवारमौषधं देयम्। एवं पञ्चदशाऽऽवृत्या औषधे दत्ते पूर्वोक्तरोगा नश्यन्ति। (अगस्त्य०)

७ अमृतसञ्जीवनरसः

स्तन्यशुद्धशिलाकार्पूररससिन्दूरदरदसत्त्वार-(दालचिकना) विषाण्येतानि सुशुद्धानि समभागान्यार्द्रकनिर्गुण्डीकृष्णतुलसीरसैर्मधुना च प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा रागवल्लीरसादि विहाय प्राचीनतालगुडे द्राक्षाफलमध्ये वा मुद्गप्रमाणमौषधं निधाय प्रत्येकं यामाऽनन्तरं देयम् । मात्राचतुष्टयादधिकमपि न देयम् । महासन्निपातादिदोषेषु निवृत्तेषु सत्सु पुनरेतदौषधं न प्रयोक्तव्यम् । उष्णमुद्गमधम्, गोधूमखण्डयूषश्च पथ्यं । एतच्च नीलमेहग्रन्थ्युपदंशपार्श्वशूलवृद्धणग्रन्थ्यादीन्नाशयति । मेहरोगिणा बालतरणभिण्डिके, औदुम्बरशालाटु, गोधूमखण्ड, सितोपला, शिशुशिम्बा, पटोलद्वय, शरहश्चिका, प्राचीनतण्डुलाश्च पथ्या । एतदौषधेन कस्यचिन्मुखपाको भवेत्तर्हि कृष्णजम्बूत्वक्कषायेण शोधनं कार्यम् ॥ (व्यास०)

८ अभ्रकशुक्ती (कोडासुरीमात्रा)

नागरमरिचाऽऽमलकाकल्कुकटुरोहिणीसैन्धवटङ्कणशुद्धतालकदरदाऽऽरतिकर्पूरपिप्पलीहरीतकीचिभीतककृष्णजीरकचित्रकत्वग्व्याघ्रफलाऽमलसारगन्धकमनःशिलाविषपारदा एरण्डबीजमज्जा चेति प्रत्येकं पादतोलकं शुद्धजयपालबीजमर्धपलं गृहीत्वा रसगन्धकादिभिः कृत्वा कज्जलीं विधाय चान्य शोधिततदव्यचूर्णेन सहैकत्र कृत्वा भृङ्गराजरसेन यामद्वयं, जम्बीररसेन च यामत्रयं सम्यग्विमृद्य मरिचप्रमाणा वटी कुर्यात् । एका वटी सैन्धवयुतमरिचचूर्णेन सह प्रयुक्ता गुल्मरोगं नाशयति । एवं धत्तूरपत्ररसेन शीतज्वरं, नागरक्वाथेन शोणितज्वरं, घृतमिश्रितजातीफलचूर्णेन रक्ताऽतिसारं, बिल्वपत्ररसेन धातुह्रासं, गोघृतेन सद्ग्रहण्यतिसारादयं, निर्गुण्डीपत्ररसेन विदारिमेहं, मधुना राजयक्ष्मादयं, त्रिकटुचूर्णेन श्वासाधिपयक्ष्मकण्ठावरोधं, शिग्रुपत्ररसेन गुल्मशूलादयं, मेथिकायानकरसेन हृद्रुज्व्याधयं, भूम्यामलकचूर्णेनाऽतिदाहं, त्रिकटुचूर्णेन कामं आर्द्रकरसमिश्रितकर्कटत्वग्रसेन चित्तविभ्रमसन्निपातं, नवनीतमिश्रितत्र्यातिमतीराजजातीफलत्वक्चूर्णेनाऽतिमूत्रव्याधिर्नश्यति रक्तकार्पासपुष्परसेन वशीकरणं, ताम्बूलेन च स्त्रीवशीकरणं भवति । एवं तत्तद्रोगानुसारेणाऽनुपानादयं कल्प्या । (अगस्त्य०)

९ अयःसिन्दूरम् (प्रथमम्)

अयश्चूर्णं, अमलसारगन्धकश्चैकैकपलं गृहीत्वा कन्याद्रवेण यामचतुष्टयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा पञ्चाशदुत्पलकैः पुटं देयं । पुनः कन्यारसेन मर्दयित्वा पूर्ववत्पुटं देयं । तत खल्वे निक्षिप्य पातभृङ्गस्वरसेन मर्दयित्वा पञ्चाशदुत्पलकैः पुटं देयं । एतदरुणादयःसिन्दूरं भवति । अर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सेवनीयम् । कामलापाण्डुशोफादयो नश्यन्ति सिराश्च दृढा भवन्ति ॥ (व्यास)

१० अयःसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

शुद्धमयश्चूर्णं ५ पल, पारदगन्धकश्चान्तानि प्रत्येकं पलानि, तालकं १ तोलक हंसपाददरदाऽर्द्धतोलकं, एतानि विचूर्ण्य विम्बीपत्ररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा शतोत्पलकैः पुटं देयं । पुनर्भृङ्गरसेनेभुरक (नीरगुन्दी) स्वरसेन च यामचतुष्टयं सम्मर्द्य पूर्ववत् पुटं देयं । पुनर्भृङ्गरसेनैका गजपुटं देयं । इदमौषधं चित्रकक्वाथेन दिनद्वयं मर्दयित्वा माषप्रमाणां वटीं कृत्वा रामठत्रिकटुककर्पूराणां समभागचूर्णाऽनुपानेन एका वटी दत्ता चेन्महासन्निपातश्वासकासक्षयमेहपाण्डुगुल्मादयो रोगा निवर्तन्ते । पथ्यादिकमत्र यथोचितं । (व्यास०)

११ अयःसिन्दूरम् (तृतीयम्)

शुद्धाऽयश्चूर्णकान्तगन्धकान् २-२ पलान, पारदश्चैकपलं खल्वे निक्षिप्य जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कां चक्रिकां शरावसम्पुटेऽयस्कदयं शतोपलैः पुटं देयं । एवं रीत्या कुमारीरसेन चत्वारं पुटं देयं । एतत् सिन्दूरं भवति । गुञ्जाद्वयपरिमितस्य मधुना सह सयनादस्थिगतज्वरादयो नश्यन्ति । भृङ्गराजमूलचूर्णेन पित्तपाण्डुगुल्मादयं, त्रिकटुकल्केन गर्भशूलाऽऽजीर्णवाताव्याधयं, आर्द्रकचूर्णेन पान्ताऽम्लेऽग्निश्च नश्यति । मण्डलपर्यन्तं सेवनाच्छरीरं वज्रसमं भवति ॥ (अगस्त्य०)

१२ आनन्दभैरवरसः (महदादि) १

गौरीपाषाणदरदमनःशिलातालकटङ्कणविषगन्धकसत्त्वार (दालचिकना) मृतरसकृतादिपाषाणानि विधिना शुद्धानि काचभाण्डे मुखपर्यन्तं चान्यानां मृत्रमापूर्य उपरितनानां मृत्स्नं पूर्णं निक्षिप्य पञ्चमृत्तिका दत्वा हस्तत्रयपरिमिते भूगर्ते भाण्डं निधाय गर्तमापूर्य चत्वारिंशद्दिना युषस्य मुखमुद्रणमुद्घाट्यौषधं गृहीत्वा कुमारीरसेन दिनद्वयपर्यन्तमनारतं मर्दयित्वा चक्रीकृत्य शरावसम्पुटितं कृत्वा मृदा सन्धिनिरोध्य भूपुटं देयं (अन्यं पुटं देयं)। पुनर्भौतदौषधं खल्वे निक्षिप्य शुद्धपारदं मयूरतुत्थभस्म चैकैकपलं शुक्तिभस्म (सफेदीभस्म) सपादभागं मिश्रयित्वा पानपुष्पपत्ररसेन यामद्वयं मर्दयित्वा माषमात्रा वटीश्छायाशुष्का कृत्वा नियतानि-

नेन मिश्रितानामष्टभागावशिष्टकाथेन यामचतुष्टय विमृद्य गुञ्जामिता वटी विधाय स्तन्येन मधुना वा बालेभ्यो दद्या । अनुपानविशेषे सोपद्रवास्सन्निपातादिरोगा नश्यन्ति । एतस्याऽनुपानकाथ=भूनिम्बं, पर्पटक, यासामूलं, कुष्ट, विष्णुक्रान्ता, तिक्तपटोल आकारकरभ , त्रिकटुक, अमृता, चित्रक भार्ङ्गी चेति सर्वाणि प्रत्येकपलिकानि सञ्चूर्ण्याऽष्टौ भागान्विधायैक भाग २४ तोलके जले निक्षिप्याऽष्टभागाऽवशेषितेन काथेन मधुमिश्रितेन सहैका वटी सेवनीया । श्वासकासाद्युपद्रवयुता विषमशीतसन्निपातादयो निवर्तन्ते । आर्द्रकयूषान्न पथ्य तक्रान्न वा विधेयम् । (व्यास०)

१९ कान्तसिन्दूरम् (प्रथमम्)

चुम्बकलोह शर्करीकृत्याऽजारसेन सयोज्य मृत्पात्रे निक्षिप्य सप्तकपटमृत्तिका दत्त्वैकविंशतिदिनपर्यन्त भूगर्ते स्थापनीयम् । एतत्पञ्चपलमित गृहीत्वा गन्धकाऽयश्चूर्णपारदान् पञ्चपञ्च पलिकान् खल्वे निक्षिप्य जम्बीररसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा शुष्का चक्रिका भूक्ष्मृन्मयपात्रेऽवरुद्ध्याऽष्टयामपर्यन्त गाढाग्निना विपचेत् । एतत्तण्डुलमानतो गुञ्जापर्यन्त रोगबलाबल निरीक्ष्यापयोज्यम् । अजाक्षीरेण सेवित हृद्रदयज्वलनसङ्ग्रहणीकामलापाण्डुश्वयथुवातमेहाश्मिमूलीकरोति । रक्तवृद्धिर्भवति शरीरमयस्सदृशञ्च । मुद्ग , सूरण, तुवरी, पटोल, शिग्रुशिम्बी, भिण्डिका, रथिकापत्र, शरद्भिका, औदुम्बरफलानि, गोघृतक्षीरतक्राणि, शुष्कमामलकलेहश्च पथ्यम् । तिन्तिडी, आरकवस्तूनि स्त्रीसम्पर्कश्च सुतरां वर्जनीयम् । (अगस्त्य०)

२० कान्तसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

पूर्वोक्तरीत्या शुद्धकान्त गन्धकञ्च प्रतिपञ्चपल गृहीत्वा जम्बीररसेनैकयाम मर्दयित्वा गजपुट देयम् । पुनः प्रतिपुट पञ्चपल गन्धकं नियोज्य त्रीणि गज पुटानि दत्त्वा कूपिकायां स्थापनीयम् । तदनन्तर वटप्ररोहमूलत्वच गन्धकञ्च प्रति पञ्चपल खल्वे स्तन्येनैकयाम कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण च द्वियाम मर्दयित्वा शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य गजपुटपाको पलाशकुसुमवर्णं भस्म भवति (अत्राऽग्निस्थितौ सन्देह ? धूलम वेष्टयम्) । एतन्मिश्रितं पूर्वोक्तमौषधञ्च खल्वे निक्षिप्याऽर्कक्षीरेण विमृद्य शुष्कचक्रिका शरावयोरवरुद्ध्य गजपुटदानात्स्वर्णवर्णमिश्रित सिन्दूर भवति । एतत्तण्डुलप्रमाण मधुना मण्डलपर्यन्त सेवित सूक्ष्म गदेरोगतगुल्मवातव्याधिमण्डवातगुल्मनलोदरान्त्रवृद्धि प्रचण्डमारुत साध्यासाध्यारयति ॥ (अगस्त्य०)

२१ कालकण्ठमेहनारायणसिन्दूरम्

रसभस्म ८ तोलक, गन्धक तोलकश्चैकैकतोलक, मन शिला रससिन्दूर यशदभस्म चार्द्धार्द्धतोलक, दरद, तन्तुरजत, वङ्गनागताम्रभस्मानि प्रत्येक पाद तोलकानि, तनुतरसुवर्णपत्रमर्द्धतोलक, शुद्ध विषमर्द्धतोलक, एतानि सम्यक् चूर्णितानि खल्वे निधाय पीतपुष्पभृङ्गरसेन कन्यारसेन च प्रतियामचतुष्टय, पलाशपुष्पद्रवेण पारसपिप्पलपुष्परसेन च प्रतियामद्वय मर्दयित्वा शोषयेत् । ततो रक्तकार्पासपुष्पाणि दशतोलके जम्बीररसे निधायाऽऽतपे स्थापनीयानि । जम्बीररसो यदा श्वेतरूपो भवेत्तदा पुष्पाणि निष्कास्य तेनैव (जम्भाम्भसा) यामचतुष्टयमनारत मर्दयित्वा शुष्क चूर्ण काचकूपिकायामवरुद्ध्य वालुकायन्त्रे दीपमध्यतीक्ष्णाग्निभि प्रहराष्टयाम पाकान्नीलस्वर्णमिश्रित रक्तवर्णमौषध सम्पद्यते । एतत्सिन्दूरमर्धगुञ्जापरिमित मधुना सेवित चेद्गुल्म महोदरशूलपाण्डुश्वयथ्वग्निमान्द्यदाहातिसारमूलग्रहण्यादयो वहुमूत्ररोगा निवर्तन्ते । गुडूचीसत्त्वेन सह मण्डलपर्यन्त सेवित सद्यस्थिनाडीमासगतप्रमेहान् गम्भीरारकादान् (सहजव्याधीन्), स्वप्नस्खलन, मुखपाक, सूर्यावर्तादिशिरोरोगान् सर्वान्नेत्ररोगाश्च नाशयति । अनेन रक्तवृद्धिधातुस्तम्भौ जायेते । पथ्य रोगानुरूपम् (व्यास०)

२२ कालाग्निरुद्रभैरवरसः

पारदवैक्रान्तत तुरजतताम्रलोहसुवर्णमुक्तानां भस्मानि कान्तसिन्दूरञ्च सर्वाणि समभागानि खल्वे निक्षिप्याऽऽर्द्रकभृङ्गचित्रकमूलत्वग्रसै प्रत्येक दिन मर्दयित्वा विशोष्य गुञ्जाप्रमाण मधुना सेवनीयम् । एतेनाऽजीर्णाऽग्निमान्द्याऽतिसारमेहज्वरा निवर्तन्ते । ग्रहणीपाण्डुमहावातश्वेतहारिद्रवहुमूत्रमधुमेहादयो नश्यन्ति । शरीर पुष्ट स्वर्णरूपञ्च भवति । पथ्यममो रोगोचित । (व्यास०)

२३ कालिङ्गयादिलवणम्

इन्द्रवारुणफलरस २४ तोलक , अम्ल दधि १० तो , काचलवण, सौवर्चलटङ्कणक्षारा , पारद भस्म, शुद्धपारदग धकौ चैतानि प्रत्येकं सपादतोलकानि, समुद्रलवण १२ तो० श्वेतनारदमर्धतोलक शुद्धजयपालबीजमर्धतोलक गृहीत्वा चूर्णीकृत्य पूर्वोक्तरसे दध्नि च मेलयित्वा मृद्भाण्डे क्षाराऽपवर्त पार्श्व कृत्वा स्थापयेत् । एतद्गुञ्जामित नालगुडेन पुराणगुडेन वा प्रात सायं सप्ताहपर्यन्त सेवनीयम् । एतेन वातकफमासशर्करोपूरितमहोदराणि, मूत्राऽवरोध लिङ्गनालदाह , शल्यक्रियाप्रतिरोधवातान्या नश्यन्ति ।

अण्डवायुपाणिपादशोथाश्च निवर्तन्ते । वातिकान्विवर्ज्यैच्छापथ्यम् ॥ (व्यास०)

२४ कृष्णाभ्रसिन्दूरम्

कृष्णधान्याभ्रकमर्कमूलत्वक्कषायक्षीरसकण्टकमारिषपत्रस्वरसवटजटाकषायक्षीरपीतभृङ्गराजस्वरसैः क्रमेण चतुर्यामं विमृद्य चक्रिकां विधाय सम्यक् शोषयित्वा प्रत्यौषधं गजपुटं दद्यात् । अन्ते प्रत्येकपले सार्धसप्तमापिकामृपरक्षारसुधां संयोज्य स्तन्येनैकयामे मर्दयित्वा शुष्कां चक्रिकां विधाय पक्केष्टिकया मूषां निर्माय तस्यां चक्रिकामवरुध्य गजपुटो देयः । विद्रुमवर्णं निश्चन्द्रिकमभ्रकसिन्दूरं निष्पद्यते । एतच्च सिन्दूरं सर्वरोगहरं भवति । विल्वादिरसायनेन सह पित्तपाण्डुकामलामेहान्नाशयति । खण्डार्द्रकचूर्णेन लेहेन वा पित्तगुल्मपुराणशूलादीन्नाशयति । श्वेतव्याघ्री (तेङ्गवाकुडु) फलचूर्णेन सह श्वासकासाद्युपद्रवसहितक्षयरोगो निर्मूलो भवति । मधुना वातमेहाः, गोघृतेन मधुमेहः, त्रिकटुकेन ज्वरादयश्च नश्यन्ति । अयःसिन्दूरमभ्रकसिन्दूरञ्च भृङ्गराजचूर्णे मेलयित्वा मधुना सहैकविंशतिदिनपर्यन्तं मण्डलपर्यन्तं वा सेवनेन मेहज्वरमेहव्रणादयो नश्यन्ति । (अगस्त्य०)

टि०—विल्वादिरसायननिर्माणक्रमः=विल्वमूल छायाशुष्क कृत्वा चूर्णीकृत्य १० पलपरिमित २८८ तोलके जले निक्षिप्य मृन्याने ४८ तोलकावशेष पाक कृत्वा बीजपूररस २० तोल्क, दाडिमफलरस २० तोल्क, पुराणनालगुड १२ तोल्क, पूर्वोक्तपाके निक्षिप्य लेह्यपाकसमये नागरंद्विपल, पिप्पलीमूल ३ पल, पिप्पली २॥ पला, शटी सपादतोल्का, तालीसपत्र सपादतोल्क, नागकेशर २ पल, मरिचानि ४ पलानि, चित्रकैलाबीजे १–१ पले, त्वक् १ तोल्का, श्वेतजीरक ४ तोल्क गृहीत्वा वस्त्रपूत चूर्णयित्वा लेह्यपाके संयोज्य गोघृत ५ पल, मधु ३ पल मिश्रयित्वा लेह्यपाकेनाऽवतार्य आमलकप्रमाण प्रत्यह सेवनीयम् । एतेन पित्तकामलापाण्डुमेहपैत्यवमनहिक्काश्वासकासतृल्पीनससक्ष्यग्रहण्यश्वेदकालास्रावाऽरोचकोदरज्वलनशरीरभ्रमणादयो रोगा नश्यन्ति । अनेन लेह्येनाऽस्य सिन्दूर कान्तसिन्दूर वा संयोश्योपयुक्ते सति महती धातुपुष्टी रक्तवृद्धिश्च भवति ॥

२५ क्षयकुलान्तकरसः

तालकमौक्तिकसुवर्णरजतवङ्गभस्मानि समभागानि, चन्द्रसारः (भीमसेनकर्पूरम्) विद्रुमभस्म च सर्वचतुर्थांशं खल्वे निक्षिप्य वासापत्ररसेन यामचतुष्टयं, श्वेतव्याघ्रीरसेन च यामद्वयं विमृद्य चक्रिकां विधाय वालुकायन्त्रे दिवसक्लिप्तपूजापुरःसरं यामद्वयपर्यन्तं दीपाग्निना पाकं विधाय स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम् । एतदर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सहाऽर्द्धमण्डलमेकमण्डलं वा सेवितं सन्मेहरक्तश्वासकाससंयुक्तान् सकलोपद्रवयुतान् षण्णवतिसङ्ख्याकक्षयान्नाशयति । मधुमेहबहुमूत्रमेहज्वरकुष्ठादीनपि निहन्ति । शरीरं सुवर्णच्छायं करोति । पथ्यक्रमस्तु यथोचितः । तिन्तिडीरसो धूमपानञ्च दूरतो वर्ज्यम् । (अगस्त्य०)

२६ गण्डौषधम्

कुन्दनपत्राणि (अपरञ्जी), वस्त्ररजततन्तवः, शुद्धमुक्ता, विद्रुमः, यष्टिमधुकं, लवङ्गं, पिप्पली, रुद्राक्षः, कुष्ठं, आकारकरभः, कृष्णसारश्रृङ्गम्, रससिन्दूरम्, वासामूलञ्चैतानि सममभागानि वस्त्रशोधितानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य शोषयित्वा मधुनि मेलयित्वा रजतसम्पुटे स्थापनीयम् । सन्निपातप्रकोपे रजतशलाकया किञ्चिदुद्धृत्य रसनायां मर्दनीयम् । एतेन जिह्वाकण्टकाः परस्त्रीसाङ्गत्यदोषः वमनहिक्काद्युपद्रवयुतास्त्रयोदश सन्निपातसञ्जातविकारास्सर्वेऽपि नश्यन्ति । एतद्गण्डौषधं तालुमूले निधाय सावधानतया रस आस्वादनीयः । (व्यास०)

२७ गन्धकरसायनम् (प्रथमम्)

अमलसारगन्धकचूर्णं चतुर्थांशघृतेन सह द्रवीकृत्य गोक्षीरे निर्वापयेदिति साधारणी शुद्धिः । विशेषतो गोक्षीरेण भावयित्वा भूपुटविधानेन गालयित्वा गोक्षीरे निर्वापयेत् । अस्य विवरणम्—गोक्षीरेण पादभागन्यूनं मृद्भाण्डमापूर्य मुखोपरि सूक्ष्मं वस्त्रं वस्त्रोपरि गन्धचूर्णमास्तीर्य शरावेण पिधाय सन्धिबन्धनं कृत्वा एतत्पात्रं गर्ते भूसमं निधाय सन्धिपर्यन्तं मृदाऽऽलिप्य शरावोपरि२५ उत्पलकैः पुटो देयः । गन्धकं द्रवीभूय वस्त्रच्छिद्रैर्मणिवत् क्षीरे निपतति । परेद्युः प्रातरुद्धृत्योष्णोदकेन क्षीरस्थं गन्धकं प्रक्षाल्य चूर्णीकृत्याऽऽतपे शोषयेत् एषैका भावना । एवमेव गोदधि, इक्षुरसः, तण्डुलीयकरसः, जलकुम्भी (अन्तर्तामराकु), मूकूष्माण्डं, वास्तुकं, भृङ्गराजः, त्रिफला, चातुर्जातकं, चित्रकं, आर्द्रकं, ''' '(छिन्नियाकु), मधु, पञ्चामृतं, कृष्णतुलसी, गोघृतञ्चैतेषां द्रवेषु पूर्वोक्तप्रकारेण मर्दनादिविधिपूर्वकशोधितं गन्धकं ४ पलं, गोक्षीरे शोधितं हेमक्षीरीचूर्णं ४ पलं, वाकुचीचित्रकमूलत्वग्ब्राह्मीकृष्णहिलामूल (नल्लवुप्पिवेरु) तालीसपत्राऽश्वगन्धापारसपिप्पलकण्टकिपलाशमूलत्वक्चम्पकपुष्पाणां प्रत्येकपलं गृहीत्वा सम्यक् चूर्णीकृत्य पलत्रयां सितोपलां निक्षिप्य मधुना यामचतुष्टयं विमृद्य चीनपात्रे स्थापयेत् । पादतोलकमेतल्लेहं प्रातः सायमेकमण्डलमर्द्धमण्डलं वा सेवनीयम् । अनेन मेहग्रन्थयः, क्षुद्रपिडिकाः, कृष्णमेहः, मेहवायवः, मेहशूलाः, उपदंशाः, लिङ्गव्रणाः, योनिग्रन्थयः सूचीमुखीव्यापचेत्यादयो रोगा निवर्तन्ते । (व्यास०)

२८ गन्धकरसायनम् (द्वितीयम्)

पूर्वोक्तप्रकारेण शोधितं गन्धकं ६ पलं, त्रिकटुकचित्रकवाकुचीबीजान्येकैकपलानि चूर्णितानि गन्धेन सह मेलयित्वा समभागां शर्करां मिश्रयेत् । अथवा पञ्चदशपलायाः शर्करायास्तन्तुलीं विधाय सर्वमपि चूर्णं पाके निक्षिप्य द्वे द्वे पले घृतमधुनी मिश्रयित्वा प्रत्यहं कलाद्वयप्रमाणं सेवनीयम् । एतेन सर्वोपदंशकुष्ठव्याधयो मेहग्रन्थयश्च निवर्तन्ते । दुग्धाद्यं पथ्यम् । (व्यास०)

२९ गन्धकामृतलेहम्

शुद्धममलसारगन्धकं ८ पलं, आमलकीचित्रकत्वङ्नागरमरिचाऽश्वगन्धाहरीतकीबिभीतकपिप्पल्यः एकैकतोलिकाः, पद्मबीजं, चीनहेमक्षीरी, मुशलीश्चैकैकपलिकां गृहीत्वा चूर्णीकृत्य २४ तोलके गोक्षीरे १६ पलां सितोपलां संयोज्य मृद्भाण्डे पाकसमये पूर्वोक्तममलसारगन्धकं मेलयित्वा १० पलं मधु निक्षिप्य लेहपाकमधतार्य प्रत्यहमामलकप्रमाणं प्रातःसायमेकविंशतिदिनपर्यन्तं सेवनीयम् । एतेन शारीरव्रणविपादिकाकुष्ठोपदंशकुक्कुटशिरोपदंशयोनिकुट्टिमनीलमेहाद्यो नश्यन्ति धातुवृद्धिश्च भवति । क्षीरान्नं, गोदधि, मुद्गमाषवटकाश्चाऽनुकूलाः । (अगस्त्य०)

३० गोरोचनवटी (प्रथमा)

शुद्धकान्तबिभीतकाऽऽमलकबव्बूलपुष्पगोरोचनकुष्ठचित्रकमूलानि एकैकपलानि; मनःशिला रसकर्पूरश्च प्रतिसपादतोलकं खल्वे निक्षिप्य चूर्णीकृत्य ··· (कलिंजरु) रसेनैकादश दिनानि मुक्तावर्णीरसेन च दिनद्वयं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कुर्यात् । मधुमिश्रितस्तस्त्वेन बालानां सन्निपाताऽग्निमान्द्यदोषाः शीताधिस्यश्च नश्यति । अनुपानभेदाद्याऽन्यरोगेषु यथायथमुपयोज्यम् । (अगस्त्य०)

३१ गोरोचनवटी (द्वितीया)

गोरोचनकेशररसकर्पूररसिन्दूराऽभ्रसिन्दूरहिममारेलाबीजलवङ्गकुष्ठजातीफलाऽऽकारकरभाणि समभागानि विचूर्ण्य षोडशभागाऽवशिष्टेन श्रीचन्दनक्वाथेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वाऽष्टमागावशिष्टेन लवङ्गक्वाथेनैवमेव शतपत्रार्केण (गुलाबजल) च यामद्वयं विमृद्य गुञ्जामाना वटी कार्या । बालकानां स्तन्याऽनुपानेन देयाऽनया कण्ठकुब्जप्रभृतयस्सन्निपाता निवर्तन्ते । अनुपानविशेषैः श्लेष्मज्वरशीतज्वरवातसन्निपातत्रोषधनुर्वातसर्वाङ्गशूलादयो नश्यन्ति । बालानां मातुः पथ्यं देयम् । (व्यास०)

३२ चण्डमार्तण्डरसः

वङ्गलवणं, मल्लगौरीपापाणयोर्भस्म, कान्तसिन्दूरं, गन्धकं, तालकभस्म, मृद्दारशृङ्गं, रसभस्म चैतानि सूक्ष्मचूर्णितानि काचकूपिकायां निक्षिप्य यामचतुष्टयं क्रमाग्निना पक्वौषधं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलपरिमाणं सेवितं सत्सर्वान्रोगाग्नाशयति । स्तन्येन, मधुना, त्रिकटुकक्वाथेन वा सेविते विषदोषाः सन्निपातज्वराश्च निवर्तन्ते । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

३३ चतुर्विधवन्ध्यत्वहरतैलम्

शुभ्रैरण्डबीजतैलं, कपिलागोक्षीरं, नारिकेलजलं, पाण्मासिकाम्लमण्डं प्रत्येकं १२० तोलकं, औदुम्बरसीधु कादम्बरी (क्षुद्रखर्जूरीसीधु) च ८०-८० तोलकं, वनतुलसी (रजगुर), कृष्णतुलसी, जलपिप्पली (घुक्किनाकु) कृष्णकाकमाचीकोकिलाक्षभृङ्गारवेल्लानां पत्राणि, पारसपिप्पलपुष्पाणि (गेङ्गरावि चेट्टु), भूतुलसीपत्रं (अजगन्धा), ब्राह्मी (वलारी),··· ··(चेप्पुतट्टाकु), भूकूष्माण्डपत्रं (नेलगुलमडिआकु), बृहदग्निमन्थपत्रं (गुहृतकाली), कर्पूरवल्ली (पत्रयवानिका, कप्परल्ली) चेतियनस्पतयः । मरिचचीनहेमक्षीरीनागरजातीपत्रकेशरमृगमदद्राक्षखर्जूरैलाबीजजातीफलमायाफलगोरोचनरसकर्पूराणि प्रत्येकं सपादतोलकानीति आपणद्रव्याणि । नागरङ्ग (चीनापण्डु तै० सन्तरा० हिं०) द्राक्षारक्तरम्भादाडिमबीजपूरखर्जूरीणां फलरसाः प्रत्येकं ३० तोलकपरिमिताः । अथ तैलपाकक्रमः—आदौ सर्वान्वनस्पतींश्छायाशुष्कान्विधाय चूर्णीकृत्याऽऽपणद्रव्याणि वस्त्रशोधितानि कृत्वा एरण्डतैलादिकादम्बरीपर्यन्तान्, द्राक्षादिखर्जूरीफलान्तान्द्रवान् महति मृत्पात्रे निक्षिप्य तैलावशेषं पाकं कृत्वा पूर्वोक्तचूर्णानि सर्वाणि मेलयित्वा मन्दाग्निना पाकं विधाय स्वाङ्गशैत्ये गोरोचनं, मृगमदं, रसकर्पूरं, हिङ्गुलश्चैतच्चतुष्टयमपि चूर्णीकृतं तैले निक्षिप्य सम्यगालोड्य मुखबन्धनं विधाय १० दिनपर्यन्तं निर्वातप्रदेशे संरक्षणीयम् । ततः प्रातः सायं प्रत्यहं पादतोलकपरिमितं तैलं दुग्धतोयाभ्यां मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । अयं गर्भधारणयोगोऽनुभवसिद्धः । (अगस्त्य०)

३४ चित्रानन्दभैरवरसः

शुद्धरसविषत्रिकटुत्रिफलाजयपालबीजानि समभागानि जम्बीररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य गुञ्जाप्रमाणां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन त्रयोदशसन्निपातेषु प्रयोजयेत् ।

३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सर्वीरं, मल्लगौरीपाषाणदरद-पारदाभ्रभेदि (कासीस) स्फटिकापालतुत्थीपर-क्षारशिलाक्षारटङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ता-म्रसिन्दूरे, मनःशिला, लवङ्गं, एलाबीजं, त्रिफला, श्रीगन्धचूर्णं (श्वेतचन्दनं), देवदारु, यवानिका, कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुक्रान्ता, खुरासानिका, कटुरो-हिणी, जातीफलं, द्राक्षा, यष्टिमधुकं, नरसारः, चन्द्र-सारः, जातीपत्रं, खर्जूरीफलं, लशुनं, त्रिकटुकं, जय-पालश्चेतेषु शोधितव्यवस्तूनि सम्यक् शोधयित्वा भर्जनीयवस्तूनि स्वर्णच्छायं भर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णी-कृत्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डीविष्णुक्रान्तारसैः प्रत्येकेन सप्त-दिनं मर्दयित्वा कृष्णतुलसीरसेनैकदिनं विमृद्य मुद्ग-प्रमाणा वटीः कृत्वा शृङ्गे निक्षिप्य शिवशक्तिगणपति-पूजां विधाय सुवासिनीब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वाऽन्नदा-नादिना सन्तोष्याऽनन्तरमेतदौषधमुपयोक्तव्यम्। चन्द्रसारतक्कोलशिलातन्त्वा (कलनार) हुलीपुष्प-मुञ्जातकानां समभागचूर्णे समां सितोपलां मिश्रयित्वा पादतोलकपरिमिते चूर्णे चिन्तामणिवटीमेकां संयोज्य मधुना सह दद्यात्। अनेन रक्तक्षयश्वासकासादयो निवर्तन्ते। पुष्करपुष्पक्वाथेनाऽण्डवायवः, अश्वगन्धा-चूर्णेनाऽन्त्रवृद्धिर्नश्यति। किञ्च-भृङ्गरसेन श्वास-कासौ, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संघृष्य नेत्राञ्जने कृते शुक्लपटलादयः षण्णवतिर्नेत्ररोगा नश्यन्ति। सकलसङ्ग्रहणीनां शर्करायुकरम्भापुष्परसेन त्रिफलाकषायेण वा देयः। कामलाश्वयथुरोगयोर्म-रीचचूर्णमिश्रितगोमूत्रेण देयम्। निम्बपत्रविभीतकी-मरिचनागराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह विषमवात-ज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुखसन्निपातिनां देयम्। ज्वर-सञ्जातदाहे शर्करया, चतुष्षष्टिविषाणां जम्बीररसेन सङ्घृष्य क्षतस्थाने लेपनीयम्। वृश्चिकदंशे जलेन क्षतस्थाने लेपनीयम्। नेत्राञ्जनमपि देयम्। अन्त-र्ज्वराणां दध्ना, त्र्याहिकज्वराणां कारवेल्लक्वाथेन, पित्तश्लेष्मज्वराणामार्द्रकरसेन, चतुरशीतिवातानां निर्गुण्डीरसेन, कपालकुष्ठग्रन्थिशूलविषरोगेषु त्रिक-टुकचूर्णेन दातव्यम्। (व्यास०)

३६ ज्वरकुठाररसः

एकपलं गौरीपाषाणं सूक्ष्मवस्त्रे पोट्टलीं बद्ध्वा चतुष्षष्टितोलकशिलासुधाखण्डे दोलायन्त्रेण याम द्वयं स्वेदयित्वा ग्राह्यम्। एवं शोधितं गौरीपाषाणं, गन्धकं, तालकं, तुत्थं (पाल्तुत्तं), कटुरोहिणी, जय-पालबीजानि प्रत्येकमर्धतोलकानि सम्यग्विचूर्ण्य क्षु-द्रकारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य माषप्रमाणां वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात्। शीतप्रधानज्वरा न-श्यन्ति। एतस्याऽनुपानचूर्णम्=तालीसनागरपिप्प-लीमरिचाकारकरभान् समभागान् विचूर्ण्याऽस्मात्पा-दतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयमेवनात् उग्रज्वरास्सन्निपातादयो निवर्तन्ते। दोषप्राबल्ये सति वक्ष्यमाणं वीरभद्राञ्जनमपि नेत्रयोर्योज्यम्। पित्तप्रकृ-तीनां शुष्कतिन्तिडीपत्रोपयोगः कार्यः। (व्यास०)

३७ ज्वरगजाङ्कुशरसः

शुद्धः पारदः, आमलसारगन्धकः, विषं, ताम्र-भस्म, द्विजीरकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवणानि, यव-क्षारः, नरसारः, कान्तसिन्दूरम्, हरीतकी, आम-लकी, विभीतकी, कटुरोहिणी, विडङ्गं, टङ्कणश्चैतानि समभागानि सम्यग्विचूर्ण्य चीनपात्रे निक्षिप्य अम्ल-दाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽप्लाव्य दश-दिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः खल्वे निक्षिप्याऽ-म्लदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं चीनपात्रेऽवरुध्य स्थापनीयम्। गुञ्जाद्वयमार्द्र-करसेन सह सेवितं विषमशीतज्वरदोषाऽग्निमान्द्यस-न्निपातादीन्नाशयति। घृतं, पुराणगुडः, नवनीतं, आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुल्मरोगो नश्यति। वातपदार्थानन्तरं पथ्यम्। तिन्तिडीतक्र-धूमपानादयो वर्ज्याः। (अगस्त्य०)

३८ ज्वरफणिगरुडरसः

शुद्धपारदगन्धकविषाणि एकैकतोलकानि, हिङ्गुलं ४ तो., जयपालबीजानि ८ तो० गृहीत्वैकत्र सञ्चूर्ण्य धत्तूरमूलक्वाथेन यामचतुष्टयं विमृद्य मरिचप्रमाणा वटिकाः कुर्यात्। मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन वातपित्तज्वरः, मरिचचित्रकमूलविष्णुक्रान्ताभूनिम्ब क्वाथेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलविम्बीमूल-सकण्टककर्कटमूलत्रिकटुक्वाथेन विषपाण्डुश्वयथु-ज्वरा नश्यन्ति। स्तन्येन मधुना वा सङ्घृष्य सन्नि-पातज्वरेषु नेत्राञ्जनं देयम्। पथ्यं रोगोचितम्। अल्प-मात्रया बालानामप्युपयोक्तव्यम्। (व्यास०)

टि०—कृष्णभूपालीये गरलमपि दृश्यते। तत्रैव सर्वेषां समभाग तया योग विधाय रसञ्च निष्कास्य धत्तूरस्थाने जम्बीरं नियोज्याऽऽग्नेयास्त्रेति नाम स्थापितम्। तदभिप्राये ग्रन्थकर्तैव प्रष्टव्य।

३९ ज्वराङ्कुशभैरवरसः

विशुद्धपारदः, विषं, गन्धकश्चैकैकपलं, जातीफल-मर्धपलं, पिप्पली १॥ पला, सर्वं चूर्णीकृत्य ताम्बूली-स्वरसेनाऽऽर्द्रकस्वरसेन च प्रति यामद्वयं विमृद्य गुञ्जाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनु-पानेन प्रयोगे वातपित्तश्लेष्मज्वरा नश्यन्ति। यवा-नीकल्केन द्रवेण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसारा

निवर्तन्ते । ज्वरसञ्जाताऽतिसारसङ्ग्रहण्यादीनामनुपानविशेष =अतिविषा, मरिच, नागर, तालीसपत्र, पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलक सङ्क्षुण्ण २४ तोलकजले मृन्मयपात्रे निष्क्वाथ्य चतुर्भागाऽवशिष्टमवतार्य भागद्वय प्रकल्प्यैकभागमेकवटिकया सायमपर प्रातश्च दद्यादेव त्रिचतुराणि दिनानि कृते पूर्वोक्तव्याधयो निवर्तन्ते । अम्लदाडिमीफलरसेन वमनहिक्के नश्यत ।अश्वगन्धा, अनन्तमूल, हेमक्षीरी (परङ्गीचक्का) भृङ्गकूष्माण्ड, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेकपलं चूर्णीकृत्य पादतोलकेन चूर्णेन सहैका मात्रा सेविता चेदस्थिगतसोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीतपदार्था वर्ज्या । (व्यास०)

४० ज्वराङ्कुशरसः (महदादि) १

द्विपल मल्लपाषाण कारवेल्लतण्डुलीयकपत्ररसेन प्रति यामचतुष्टय मर्दयित्वा शरावसम्पुटित विधाय घनतया सप्त मृत्तिका दत्त्वोत्पलकत्रयेण पुट दद्यात् । तत खल्वे निक्षिप्य त्रिकटुकक्वाथेन यामचतुष्टय विमृद्य मुद्गपरिमिता वटी कुर्यात् । मधुमिश्रितश्वेतजीरकचूर्णे पक्का वटीं सयोज्य सेवनात्सर्वे ज्वरास्तत्क्षण निवर्तन्ते । महाज्वरेषु त्रिराष्टृत्ता वटी योजनीया नाऽधिका । तिन्तिडी वर्ज्या । क्षीरान्न गोधूमखण्डयूषश्चाऽनुकूल । अपि चाऽनन्तमूलक्वाथेन वातज्वर , नागरक्वाथेन पित्तज्वर त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन श्लेष्मज्वर , धान्यकक्वाथन तापज्वर , दध्ना सङ्ग्रहण्यतीसारो, भृङ्गराज (गुण्टगलगरा) रसेन ज्वरसञ्जातसर्वाङ्गशूलादयो नश्यन्ति । नेत्राञ्जनमपि कर्तव्यम् । अतिसाराणां गिट्टिगेड्डुलरस (ऊपरे पलाण्डुसदृशकन्दो यस्य पत्राणि तालमूलीसदृशानि भूहन्ति च भवन्ति इति केचिद्वदन्ति अन्ये तु शृङ्गाटकमाहु), अण्डवाते लताकरञ्जपत्ररस , स्त्रीसम्भोगाय कामकस्तूरिका (मरवक) पत्ररस , सर्वसन्निपातेषु धत्तूरपत्ररस , अजीर्णस्योष्णोदकम्, अर्शसा मूलकरस , श्वयथुपाण्डुकामलासु स्रष्टाऽतिविषाक्वाथ , दुष्टसर्पादिदंशनस्य बीजपूररस , वृश्चिकविषस्य गोमयम्, निम्बबीजतैल, मयूरपिच्छभस्म च । एवमनुपान यथोचित देयम् । सर्वविषाणामपि यत्र क्षत तत्र मयूरपिच्छभस्मना सह निम्बबीजतैलमिश्रितेन क्षतस्थान लिम्पेत् । आर्द्रकरसेन नेत्रे अञ्जयित्वा यद्यधस्तातपदयेपातालपर्यन्त दृष्टि प्रसरति । पिशाचग्रस्तानां केवलतिलतैलेन मिश्रयित्वा नेत्राञ्जनं कृतं चेद्भूतप्रेतपिशाचादय पलायन्ते । रक्तमूलाशान्याधेर्नवनीतेन सहाऽऽसन लेपनीयम् । वन्ध्यास्त्रीणां परिपक्ववटबीजचूर्णेन ऋतुकाले एकवार दद्यात् । एवमृतुत्रये । सर्पवृश्चिकोन्मत्तशुनकविषादौ पूर्वोक्ततैलेन सह क्षतस्थाने नियोजनीयम् । इत्येवमेवाऽनुपानभेदेन सर्वव्याधिषु नियोजनीयम् । शिवशक्तिपूजा कार्या ॥ (अगस्त्य०)

४१ ज्वराङ्कुशरसः (द्वितीय) २

शुद्धपारदगन्धकदरदटङ्कणविषतालकजयपालत्रिकटुत्रिफलाश्चैतानि प्रत्येक सपादतोलकानि गृहीत्वा चूर्णीकृत्य भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा मात्रा कुर्यात् । कृष्णतुलसीरसेन वालकज्वराणां दातव्यम् । मरिचकल्केन वातशूला शीतज्वराश्च नश्यन्ति । चित्रकपिप्पलीमूलतिक्तपटोलभूनिम्बविष्णुक्रान्ताऽनन्तमूलयष्टिमधुकाऽऽकारकरभत्रिकटुत्रिफलाऽमृताजम्बीरीफलतालीसपत्रशीरश्रीचन्दनानां क्वाथेन पुराणवातपित्तश्लेष्मद्वन्द्वाऽऽहिका जीर्णज्वरा नश्यन्ति । षाण्मासिकवयस्कमारभ्य त्रिहायणवय पर्यन्त बालानामेकवारमौषध मुद्गप्रमाण देयम् । तरुणादीनां चणकप्रमाणम् । अम्लरसा वर्ज्य शीतलवातपदार्थाश्च । अस्मिन्नौषधे रसगन्धकादयो विधिना शोध्या । प्रसूतस्त्रीणां ज्वरादौ त्र्यहमनन्तरमेवोपयोजनीयम् । पथ्य रोगोचितम् । (व्यास०)

४२ ज्वराङ्कुशरसः (महदादि) ३

शुद्धगन्धकपारदविषमल्लपातपुण्यधत्तूरबीजमरिचानि प्रत्येकतोलकानि विचूर्ण्य कृष्णधत्तूरपत्रस्वरसेन यामचतुष्टय सम्यग्विमृद्य गुञ्जामात्रां वटी कृत्वाऽऽर्द्रकस्वरसेन सेविता चेद्विषमशीतप्रधानज्वरा निवर्तन्ते । श्वेतशर्करामिश्रितपुराणतण्डुलोष्णोदकञ्च पथ्यम् । सप्ताऽम्लपाक्य तरुणनारिकेलसर्वपापाणगर्भितान्यौषधानि वर्ज्यानि । यदाचिन्महावायुकठिनदोषमहासन्निपातकण्ठगतकफवातादिदोषैराक्रान्ताश्चेत्तदा तान्यपि प्रयोज्यानि (व्यास०)

४३ ज्वराङ्कुशरसः (चतुर्थ)४

सम्यक् शुद्धमेकतोलक मल्लपाषाण पञ्चतोलके गर्दभीक्षीरे चीनपात्रे मिश्रयित्वा द्वितोलकहिङ्गुले ग्रासो देय । हिङ्गुला यदा भवति । अथ तण्डुलमात्रो मरिचक्वाथेन सह सेवितस्सर्वज्वरानाशयति । अम्लरसा वर्ज्य । आढकीयूष , भिण्डिका, गोधूमखण्डयूष , शुष्क काकमाचा (कामाता) पत्र शिग्रुशिम्बी, क्षीरान्नञ्च पथ्यम् । अत्रैव सूचनान्वितसिन्मात्राच्छ्रिते सूपात्रेऽर्द्धभाग सिक्तया पूरयित्वा सिक्तामध्ये काचपात्र निधाय तन्मध्ये दरदशर्करां निक्षिप्य योगोक्तप्रकारेण ग्रामे दद्यादित्यनुसन्धेयम् । (व्यास०)

३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सक्षीरं, मल्लगौरीपाषाणदरदपारदाभ्रभेदि (कासीस) स्फटिकापालतुत्थीपरक्षारशिलाक्षारटङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ताम्रसिन्दूरे, मनःशिला, लवङ्गं, एलाबीजं, त्रिफला, श्रीगन्धचूर्णं (श्वेतचन्दनं), देवदारु, यवानिका, कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुक्रान्ता, खुरासानिका, कटुरोहिणी, जातीफलं, द्राक्षा, यष्टिमधुकं, नरसारः, चन्द्रसारः, जातीपत्रं, खर्जूरीफलं, लशुनं, त्रिकटुकं, जयपालश्चैतेषु शोधितव्यवस्तूनि सम्यक् शोधयित्वा भर्जनीयवस्तूनि स्वर्णच्छायं भर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णीकृत्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डीविष्णुक्रान्तारसैः प्रत्येकेन सप्तदिनं मर्दयित्वा कृष्णतुलसीरसेनैकदिनं विमृद्य मुद्गप्रमाणा वटीः कृत्वा शृङ्गे निक्षिप्य दिवशक्तिगणपतिपूजां विधाय सुवासिनीब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वाऽन्नदानादिना सन्तोष्याऽनन्तरमेतदौषधमुपयोक्तव्यम् । चन्द्रसारतक्कोलशिलातल्वा (कलनार) हुलीपुष्पमुञ्जातकानां समभागचूर्णे समां सितोपलां मिश्रयित्वा पादतोलकपरिमिते चूर्णे चिन्तामणिवटीमेकां संयोज्य मधुना सह दद्यात् । अनेन रक्तक्षयश्वासकासादयो निवर्तन्ते । पुष्करपुष्पक्वाथेनाऽण्डवायवः,अश्वगन्धाचूर्णेनाऽन्त्रवृद्धिर्नश्यति । किञ्च-भृङ्गरसेन श्वासकासौ, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संघृष्य नेत्राञ्जने कृते शुक्रपटलाद्यः षण्णवतिर्नेत्ररोगा नश्यन्ति। सकलसङ्ग्रहणीनां शर्करायुक्तरम्भापुष्परसेन त्रिफलाकषायेण वा देयः । कामलाश्वयथुरोगयोर्मरीचचूर्णमिश्रितगोमूत्रेण देयम् । निम्बपत्रविभीतकीमरिचनागराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह विषवातज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुरससन्निपातिनां देयम् ।ज्वरसञ्जातदाहे शर्करया, चतुष्पष्टिविषाणां जम्बीररसेन सङ्घृष्य क्षतस्थाने लेपनीयम् । वृश्चिकदंशे जलेन क्षतस्थाने लेपनीयम् । नेत्राञ्जनमपि देयम् । अन्तर्ज्वराणां दध्ना, ऱ्याहिकज्वराणां कारवेल्लक्वाथेन, पित्तश्लेष्मज्वराणामार्द्रकरसेन, चतुरशीतिवातानां निर्गुण्डीरसेन, कपालकुष्टग्रन्थिशूलविषरोगेषु त्रिकटुकचूर्णेन दातव्यम् । (व्यास०)

३६ ज्वरकुठाररसः

एकपलं गौरीपाषाणं सूक्ष्मवस्त्रे पोट्टलीं बद्ध्वा चतुष्पष्टितोलकशिलासुधाखण्डे दोलायन्त्रेण यामद्वयं स्वेदयित्वा ग्राह्यम् । एवं शोधितं गौरीपाषाणं, गन्धकं, तालकं, तुत्थं (पालतुत्थं), कटुरोहिणीं, जयपालबीजानि प्रत्येकमर्धतोलकानि सम्यग्विचूर्ण्य क्षुद्रकारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य माषप्रमाणां वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात् । शीतप्रधानज्वरा नश्यन्ति । एतस्याऽनुपानचूर्णम्=तालीसनागरपिप्पलीमरिचाकारकरभान् समभागान् विचूर्ण्याऽस्मात्पादतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयसेवनात् उग्रज्वरास्सन्निपातादयो निवर्तन्ते । दोषप्राबल्ये सति वक्ष्यमाणं वीरभद्राञ्जनमपि नेत्रयोर्योज्यम् । पित्तप्रकृतीनां शुष्कतिन्तिडीपत्रोपयोगः कार्यः । (व्यास०)

३७ ज्वरगजाङ्कुशरसः

शुद्धः पारदः, अमलसारगन्धकः, विषं, ताम्रभस्म, द्विजीरकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवणानि, सद्यः क्षारः, नरसारः, कान्तसिन्दूरम्, हरीतकी, आमलकी, विभीतकी, कटुरोहिणी, विडङ्गं, टङ्कणश्चैतानि समभागानि सम्यग्विचूर्ण्य चीनपात्रे निक्षिप्य अम्लदाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽप्लाव्य दशदिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः खल्वे निक्षिप्याऽम्लदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं चीनपात्रेऽवरुद्ध्य स्थापनीयम् । गुञ्जाद्वयमार्द्रकरसेन सह सेवितं विषमशीतज्वरदोषाऽग्निमान्द्यसन्निपातादीन्नाशयति । घृतं, पुराणगुडः, नवनीतं, आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुल्मरोगो नश्यति । वातपदार्थानन्तरं पथ्यम् । तिन्तिडीतक्रधूमपानादयो वर्ज्याः। (अगस्त्य०)

३८ ज्वरफणिगरुडरसः

शुद्धपारदगन्धकविषाणि एकैकतोलकानि, हिङ्गुलं ४ तो., जयपालबीजानि ८ तो० गृहीत्वैकत्र सञ्चूर्ण्य धत्तूरमूलक्वाथेन यामचतुष्टयं विमृद्य मरिचप्रमाणा वटिकाः किरेत् । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन वातपित्तज्वरः,मरिचचित्रकमूलविष्णुक्रान्ताभूनिम्बक्वाथेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलबिम्बीमूलसकण्टककर्कन्धुमूलत्रिकटुकक्वाथेन विषपाण्डुश्वयथुज्वरा नश्यन्ति । स्तन्येन मधुना वा सङ्घृष्य सन्निपातज्वरेषु नेत्राञ्जनं देयम् । पथ्यं रोगोचितम् । अल्पमात्रया बालानामप्युपयोक्तव्यम् । (व्यास०)

टि०—कृष्णभूपालीये गरलमधिकं दृश्यते । तत्रैव सर्वेषां समभागतया योगं विधाय रसञ्च निष्कास्य धत्तूररस्थाने जम्बीरं नियोज्याऽऽश्रेयावेति नाम स्थापितम् । तदभिप्राये ग्रन्थकर्तैव प्रष्टव्यः ।

३९ ज्वराङ्कुशभैरवरसः

विशुद्धपारदः, विषं, गन्धकश्चैकैकपलं, जातीफलमर्धपलं, पिप्पली १॥ पला, सर्वं चूर्णीकृत्य ताम्बूलीस्वरसेनाऽऽर्द्रकस्वरसेन च प्रति यामद्वयं विमृद्य गुञ्जाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन प्रयोगे वातपित्तश्लेष्मज्वरा नश्यन्ति । यवानीकल्केन द्रवेण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसारा

निवर्तन्ते । ज्वरसञ्जाताऽतिसारसङ्ग्रहण्यादीनामनुपानविशेष =अतिविषा, मरिच, नागर, तालीसपत्रं, पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलक सङ्गुण्ण २४ तोल्कजले मृन्मयपात्रे निष्काथ्य चतुर्भागाऽवशिष्टमवतार्य भागद्वय प्रकल्प्यैकभागमेकत्रटिकया सायमपर प्रातश्च दद्यादेव त्रिचतुराणि दिनानि कृते पूर्वोक्तव्याधयो निवर्तन्ते । अम्लदाडिमीफलरसेन वमनहिक्के नश्यत ।अश्वगन्धा, अनन्तमूल, हेमक्षीरी (परङ्गीचक्का) मूकूष्माण्ड, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेकपलं चूर्णीकृत्य पादतोल्केन चूर्णेन सहैका मात्रा सेविता चेद्स्थिगतसोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीतपदार्था वर्ज्या । (व्यास०)

४० ज्वराङ्कुशरसः (महदादि) १

द्विपल मल्लपाषाण कारवेल्लतण्डुलीयकपत्ररसेन प्रति यामचतुष्टय मर्दयित्वा शरावसम्पुटित विधाय घनतया सप्त मृत्तिका दत्त्वोत्पलकत्रयेण पुट दद्यात् । तत खल्वे निक्षिप्य त्रिकटुक्वाथेन यामचतुष्टय विमृद्य मुद्गपरिमिता वटी कुर्यात् । मधुमिश्रितम्रष्टजीरकचूर्णे एका वटीं सयोज्य सेवनात्सर्वे ज्वरास्तत्क्षण निवर्तन्ते । महाज्वरेषु त्रिरावृत्ता वटी योजनीया नाऽधिका । तिन्तिडी वर्ज्या । क्षीरान्न गोधूमखण्डयूषश्चाऽनुकूल । अपि चाऽन तमूलक्वाथेन वातज्वर, नागरक्वाथेन पित्तज्वर त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन श्लेष्मज्वर , धान्यकक्वाथेन तापज्वर, दध्ना सङ्ग्रहण्यतीसारौ, भृङ्गराज (गुण्टगलगरा) रसेन ज्वरसञ्जातसर्वाङ्गशूलादया नश्यन्ति । नेत्राञ्जनमपि कर्तव्यम् । अतिसाराणा गिट्टिगेड्डुरस (ऊर्ध्वे पलाण्डुसदृशकन्दो यस्य पत्राणि तालमूलासदृशानि बृहन्ति च भवन्ति इति केचिद्वदन्ति अन्येतु गृहाद्रकमाहु), अण्डवाते लताकरञ्जपत्ररस , स्त्रीसम्भोगाय कामकस्तूरिका (मरुवक) पत्ररस , सर्वसन्निपातेषु धत्तूरपत्ररस , अजीर्णस्योष्णोदकम्, अर्शसा मूलकरस , श्वयथुपाण्डुकामलासु म्रष्टाऽतिविषाक्वाथ , दुष्टसर्पादिदशनस्य बीजपूररस , वृश्चिकविषस्य गोमयम्, निम्बबीजतैलं, मयूरपिच्छभस्म च । एवमनुपान यथोचित देयम् । सर्वविषाणामपि यत्र क्षतं तत्र मयूरपिच्छभस्मना सह निम्बबीजतैलमिश्रितेन क्षतस्थान लिम्पेत् । आर्द्रकरसेन नेत्रे अञ्जयित्वा यद्यधस्तात्पदयेपातालपर्यन्त दृष्टि प्रसरति । पिशाचग्रस्ताना कदलतिल्तैलेन मिश्रयित्वा नेत्राञ्जनं कृत चेद्भूतप्रेतपिशाचादय पलायन्ते । रक्तमूलार्शोव्याधेर्नवनीतेन सहाऽऽसने लेपनीयम् । वन्ध्यास्त्रीणा परिपक्वपटबीजचूर्णेन ऋतुकाले एकवारं दद्यात् । एवमृतुत्रये । सर्पवृश्चिकान्मत्तशुनकविषादौ पूर्वोक्ततैलेन सह क्षतस्थाने नियोजनीयम् । इत्येवमेवाऽनुपानभेदेन सर्वव्याधिषु नियोजनीयम् । शिवशक्तिपूजा कार्या ॥ (अगस्त्य०)

४१ ज्वराङ्कुशरसः (द्वितीय) २

शुद्धपारदगन्धकदरददङ्कणविषतालकजयपालत्रिकटुत्रिफलाश्चैतानि प्रत्येक सपादतोलकानि गृहीत्वा चूर्णीकृत्य भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा मात्रा कुर्यात् । कृष्णतुलसीरसेन बालकज्वराणा दातव्यम् । मरिचस्वल्केन वातशूला शीतज्वराश्च नश्यन्ति । चित्रकपिप्पलीमूलतिक्तपटोलभूनिम्बविष्णुक्रान्ताऽनन्तमूलयष्टिमधुकाऽऽकारकरभत्रिकटुत्रिफलाऽमृतासज्वरीफलतालीसपत्रोशीरश्वेतचन्दनाना क्वाथेन पुराणवातपित्तश्लेष्मद्वन्द्वाऽऽहिका जीर्णज्वरा नश्यन्ति । षाण्मासिकवयस्कमारभ्य त्रिहायणवय पर्यन्त बालानामेकवारमौषध मुद्गप्रमाण देयम् । तरुणादीना चणकप्रमाणम् । अम्लरसा वर्ज्य शीतलवातपदार्थाश्च । अस्मिन्नौषधे रसगन्धकादयो विधिना शोध्या । प्रसूतस्त्रीणा ज्वरादौ त्र्यहमध्ययनोपयोजनीयम् । पथ्य रोगोचितम् । (व्यास०)

४२ ज्वराङ्कुशरसः (महदादि) ३

शुद्धगन्धकपारदविषमल्लपातपुष्पधत्तूरबीजमरिचानि प्रत्येकतोल्कानि विचूर्ण्य कृष्णधत्तूरपत्रस्वरसेन यामचतुष्टय सम्यग्विमृद्य गुञ्जामात्रां वटी कृत्वाऽऽर्द्रकस्वरसेन सेविता चेद्विषमशीतकप्रधानज्वरा निवर्तन्ते । ब्रह्मक्षारमिश्रितपुराणतण्डुलं उष्णोदकञ्च पथ्यम् । सप्ताऽहमपाभ्य तरुणनारीना सर्वपाषाणगर्भितान्यौषधानि वर्ज्यानि । कदाचिन्महावायुकठिनदोषमहासन्निपातकण्ठगतकफवातादिदोषैराक्रान्ताश्चेत्तदा तेष्वपि प्रयोज्यानि (व्यास०)

४३ ज्वराङ्कुशरसः (चतुर्थ)४

सम्यक् शुद्धमेकतोलक मल्लपाषाण पञ्चतोल्के गर्दभीक्षीरे चीनपात्रे मिश्रयित्वा द्वितोल्कहिङ्गुले ग्रासो देय । हिङ्गुल वद्धो भवति । अथ तण्डुलमात्रा मरिचक्वाथेन सह सेवितस्सर्वाज्वरानाशयति । अम्लरसा वर्ज्य । आढकीयूष , भिण्डिका, गोधूमखण्डयूष , शुष्क काकमाचा (कामाता) फल शिग्रुशिम्बी, क्षीरान्नञ्च पथ्यम् । अत्रयं सूचना=वितस्तिमात्रोच्छ्रिते मृत्पात्रेऽर्द्धभाग सिक्तया पूरयित्वा सिक्तामध्ये काचपात्र निधाय तन्मध्ये ददरङ्गल निक्षिप्य यथोक्तप्रकारेण ग्रासं दद्यादित्युपदेश्यम् । (व्यास०)

४४ तालकमात्रा

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलाविषाणि दरदतालकहेममाक्षिकाभ्रकताम्रभस्मानि समानि विचूर्ण्य चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं, अम्लदाडिमीफलचित्रकमूलत्वग्रसाभ्याञ्च द्विद्वियामं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य कुक्कुटपुटो देयः। एतद्गुञ्जामितं मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवितं सदुन्मादमदमूर्च्छादोषाशयति। पथ्यं यथोचितम्॥ (व्यास०)

४५ तालसिन्दूरम्

पनतालकं, रक्तमनःशिला, गौरीपाषाणं, मल्लं, तुत्थं (मैलतुत्तं), अमलसारगन्धकं, हिङ्गुलः, पारदः, सव्वीरं, रसकर्पूरं, अभ्रदन्तपाषाणश्चैतानि खल्वे जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कीकृत्य कण्टकिपलाशशिग्रुरक्तकार्पासपार्श्वपिप्पलाऽर्ककुन्दनन्दिवर्धन (अनन्त म०) पुष्परसैः प्रत्येकं चतुर्विंशतितोलकैश्चैकत्रसम्मिलितैः स्तोकेन स्तोकेन रसेन मर्दयित्वा सर्वोऽपि रसः शोषणीयः। अन्ते शुष्कां चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितां कृत्वा गजपुटो देयः। स्वाङ्गशीतलं भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा पूर्ववत्पुटो देयः। पुनर्जम्बीररसेन पूर्ववत्पुटदानेनैतदत्यन्तरक्तवर्णं सिन्दूरं भवति। एतन्मुद्गप्रमाणं मधुमिश्रितत्रिकटुकचूर्णेन सह दत्तं चेद्साध्यशूलाः, एकविंशतिमेहास्तद्गन्ध्ययश्च, अष्टादशकुष्टानि, वातपवित्रगण्डमालाराजयक्ष्मगुल्मरोगादयः सङ्क्रामकव्याधिश्चैते सर्वे निर्मला भवन्ति। आढकी, पालवृन्ताकं, शिग्रुशिम्बी, क्षुद्रा, गोक्षीरं, उष्णोदकञ्चेति सर्वं पथ्यम्। अम्लधूमौ वर्ज्यौ। (अगस्त्य०)

४६ त्रिकटुकगुटिका

गन्धकः, तालकं, आकारकरभः, सव्वीरं, विषं, रसकर्पूरं, गौरीपाषाणं, पारदः, जयपालबीजानि, त्रिकटुकं, त्रिफला, पिप्पलीमूलं, रास्ना, भार्ङ्गी, कटुरोहिणी, सैन्धवश्चैतेषु शोधनीयानि शोधयित्वा सर्वाणि सञ्चूर्ण्य भृङ्गजलेन सप्तदिनानि विमृद्य गुञ्जापरिमितां वटीं कृत्वा छायायां विशोष्य सुनिम्बकषायेण सर्वज्वरेषु देयम्। जम्बीररसेन विषोपविषाणि, भृङ्गाद्भिः श्वयथुपाण्डुकामलावातपित्तमेहपिडिकादयः, आमलककाथेन सर्वाङ्गशूलाः, महिषीदध्नाऽतिसाराः, किञ्चिद्गद्ध्दर्जीरकेण गुल्माः, मधुना गर्भवातादयः, अम्लदाडिमीफलरसेन पित्तशूलवमनाऽरोचकभ्रम्याद्यो नश्यन्ति। वातपदार्थवर्ज्यं पथ्यम्। (व्यास०)

४७ त्रिनेत्रसिक्थकम्

शुद्धपारदजयपालबीजनारिकेलकपालभस्मप्राचीनतालगुडानेकैकतोलकान् गृहीत्वा नारिकेलदुग्धेन यामद्वयं विमृद्य सिक्थलर्थं विधाय रजतसम्पुटे स्थापयेत्। एतत्कण्टकितजिह्विकायां किञ्चिन्मात्रं घर्षणीयम्। कण्टकनीलिमादिदोषो निवर्तते। वमनहिक्के, ऊर्ध्वश्वासः, इन्द्रियस्तन्धता, अङ्गशैथिल्यं, चित्तविभ्रमः, सुखसन्निपातज्वरः (स्त्रीसङ्गोत्पन्नः, यत्सकाशादुत्पन्नो ज्वरस्तत्स्त्रीजघनप्रदेशाद्रकमानीयाऽञ्जने कृते तच्छान्तिर्भवतीति दक्षिणदेशप्रसिद्धिः) एते नश्यन्ति। अथ सन्निपाते नस्यम्–क्षुद्रव्याघ्री (उस्तिवेरलु), द्रोणपुष्पीमूलं (तुम्मीवेरलु), पूतिकरञ्जपिण्याकञ्च समभागमञ्जनवद्विमृद्य नारिकेलपुटके संस्थाप्य नस्यं देयम्। सुखसन्निपातो नश्यति। मत्कुणरुधिरमञ्जने देयम्। (व्यास०)

४८ धातुवृद्धिरसायनम्

भूमिकूष्माण्डं (भूचक्रकन्दम्), कृष्णमुशली, मुञ्जातकं (सालिमं), त्वक्, लवङ्गं, पलाबीजानि, कोकिलाक्षः (नीरुगुब्बी), रजतभस्म, जातीफलं, जातिपत्री, ईसबगोलः (ईसबगोलु), सुवर्णभस्म प्रत्येकं पादतोलकानि चूर्णयित्वा समभागां शर्करां संयोज्य लेहपाकं विधाय प्रातः सायञ्च पादतोलकं सेवनीयम्। उपरिष्टाद्दशतोलकं गोक्षीरं पेयम्। वृद्धोऽपि तरुणायते। (अगस्त्य०)

४९ धातुवृद्धिलेहम्

भूकूष्माण्डकन्दं, पुष्करकन्दं, त्रिकटुकं, यष्टिमधुकं, कतकबीजं, अश्वगन्धा, भद्रमुस्ता, तक्कोलं, त्वक्, जीरकं, एलाबीजं, मस्तगी, कासनीबीजं, नागकेशरं, भार्ङ्गी, जातीफलं, जातीपत्रं, अतिविषा, मुञ्जातकं, मुशलीकन्दं, मञ्जिष्ठा, उशीरमूलं, देवदारु, शतपुष्पा, चव्यं, क्षुद्रहरीतकी, कुटजः, तक्कोलम् (सलवमिर्यालु), कुमुदकन्दं, ज्योतिष्मतीबीजं, पद्मबीजं, मदनकामेश्वरपुष्पं, अहिफेनं, महाराष्ट्री (मराठी मोग्गा), कपिकच्छुमूलकलशुनशरहञ्चिकाकृष्णतुलसीबीजानि केशरं, चन्द्रसारः, रोचना चेत्यन्तिमत्रयं प्रत्येकमर्धतोलकं, अवशिष्टानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि गृहीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपलातालीशर्करावातामानि प्रत्येकं १२॥ पलिकानि, आक्षोटं, प्रियाल (सारपप्पु) श्चेति ४-४ पलं ग्राह्यम्। अथ लेह्यपाकविधिः—षण्णवतितोलकं गोक्षीरं शर्कराद्वयस्य चूर्णञ्च भाण्डे निधाय वातामादित्रयं घृतपकमहिफेनञ्च क्षिप्त्वा तन्तुलीं विधाय पूर्वोक्तसर्वद्रव्याणां चूर्णं मेलयित्वा १५ पलं गोघृतं, २४ तोलकं मधु च निक्षिप्य लेहं कृत्वा

ग्राह्यम्। आमलकप्रमाणं रजतभस्मना वङ्गभस्मना वा मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम्। शतस्त्रीरमणको भवति। स्वप्नस्खलनं निर्मूलं जायते। रक्तवृद्धिर्धातुपुष्टिश्च भवति। (व्यास०)

५० नवपाषाणद्रावकम्

मल्लसञ्वीरगौरीदोङ्गिमूषिक (यलिका) तालकोलिपाषाणानि, विडसैन्धवसामुद्रसौवर्चलौपरलवणानि, स्फटिका, टङ्कणं, मनःशिला चैतान्येकैकपलिकानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि (चमारदूधी) स्वरसेन मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वोक्तरसेन कल्कं विधाय यामपञ्चकपर्यन्तमेकजातीयकाष्ठेन पाकं कृत्वा नलिकायन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः अत्र (पाषाणद्रवे) सर्वे धातूपधातवो यद्धा भवन्ति। यद्धमूलव्याधिपूपयोक्तव्यम् ॥ (अगस्त्य०)

टि०—एतन्निर्दिष्टपाषाणपरिचयोऽगस्त्यवैद्यकादेव कर्तव्य । ईश्वराऽनुग्रहश्चेद्भारतीयरसशास्त्रे निवेचयिष्याम ।

५१ नवरत्नमिश्रिताऽयोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहकिट्टं, पित्तलं, नागः, वङ्गं, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिक्यं, मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैदूर्यम्, नीलम्, गोमेदकम्, पुष्परागश्चेति प्रत्येकं पादतोलकं खल्वे चूर्णीकृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका पक्वेष्टिकागर्ते निधाय पञ्चमृद्वस्त्रैर्लिप्त्वा वराहपुटो देयः। एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते। शिवशक्तिपूजां विधाय निष्कासनीयम्। अनुक्ताऽज्ञातव्याधिष्वेतदुपयोजनीयम्। गुञ्जाद्वयपरिमितस्य मधुना सह सेवनाद्गुल्मवायुकुष्ठादयो नश्यन्ति। गोघृतेनाऽस्थिगतज्वराः, नवनीतेन शरीरदाहः, जीरककाथेनोरःपित्तरोगाः, आर्द्रकरसेन वातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लशुनतैलेन सङ्ग्रहणी, मरिचकाथेन श्वासकासयुतो ज्वरः, नागरकाथेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीकाथेन श्वासकासयुतः क्षयरोगः, अजाक्षीरेण हृच्छूलं, ब्राह्मी (वलारी) पत्रदाडिमीपुष्पस्वरसाभ्यां बालानामस्थिगतज्वराः, तालगुडेन घर्मीभूताः शूलाः, कीटनिष्ठीवन (सञ्जीविगुडु) चूर्णेन सर्वे मेहरोगाः, आहुली (तंगेडु) मूलचूर्णेन बहुमूत्ररोगः, गोक्षीरेण पाणिपादशूलानि, शर्करया मेहग्रन्थयः, लशुनतैलमिश्रितत्रिकटुत्रिफलाचूर्णेन मूत्रकृच्छ्रादयः, भृङ्गराजत्रिकटुकचूर्णेन मधुना सह सेवनात्कामलापाण्ड्वादयः, चन्दनकाथेन सह वातपित्तं, जातीफलचूर्णेन स्त्रीणां श्वेतकुसुमरोगाः, चातुर्जातकचूर्णमिश्रितगोघृतेन सहाऽस्थिभेदकमेहव्याधयः, स्तन्येन सह षण्णवतिनेत्ररोगाः, व्याघ्रीवासाभूनिम्बक्षुद्रमुस्तककाथेन चतुष्पष्टिर्ज्वराः, अश्वगन्धार्चानहेमक्षीरीचित्रकजीरकाणां चूर्णेन सह मधुना सेवनात्पङ्गुवातः, शुद्धभल्लातकतैलेन सर्वाणि कुष्ठानि, हैयङ्गवीनेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लशुनेन सहाऽतिसारः, नागराऽऽमलकज्योतिष्मतीबीजचूर्णेन सर्वेऽतिसारा निवर्तन्ते। रोगपरिज्ञानपूर्वकं यथोचितं पथ्यं देयम् ॥ (अगस्त्य०)

५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैदूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः, गोमेदकं, रक्तवर्णरत्नानि, पुष्परागः, पारदः, वङ्गश्चेति सममागं गृहीत्वा पूर्वं वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा नवरत्नैः सह सञ्चूर्ण्य जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन चैकैकयामं मर्दयित्वा शुष्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्धगन्धकं मेलयित्वा काचकूपिकायां निक्षिप्य गन्धकजारणाऽनन्तरं मुखबन्धनं कृत्वाऽष्टयामपर्यन्तं वालुकायन्त्रे पाकं कुर्यात्। स्वाङ्गशीतलं निरीक्ष्य सुब्रह्मण्यगणेशयोरर्चनं कृत्वा कूपिकात औषधं ग्राह्यम्। एतत्तण्डुलपरिमितं मधुना सह सेवनीयम्। अनेन मूत्राऽवरोधाऽश्मरीमूत्रद्वारदुर्गन्धमूत्रकृच्छ्रबहुमूत्रमधुमेहमेहग्रन्थयो लिङ्गद्वारशूलो महाकुष्ठानि अशीतिवातव्याधयो गात्रदौर्बल्यं सर्वाङ्गशूलाश्चैते महाव्याधयो नश्यन्ति। देहं वज्रसदृशं भवति। एतस्मिन्नपथ्यं नास्ति। मांसरसाः, घृतपक्वमांसमिश्रितपदार्थाः, दधिक्षीरघृतवाताममाक्षोटादयो गुरुपदार्थाः सर्वेऽपि सेवनीयाः। (अगस्त्य०)

५३ नवलोहसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्गसीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि चूर्णितानि भृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा वराहपुटो देयः। स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः। एवं पञ्चपुटा देयाः। विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते। अर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सह सेवनीयम्। एतेन कृष्णमेहाऽण्डवातपीनसगुल्मशूलपक्षवातसूतिकावातपाण्डुपार्श्वशूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति। तत्तज्ज्वरकषायैर्मधुना सह सन्निपातादिषु दातव्यम्। काथद्रव्याणि-किरातः, विष्णुक्रान्ता, मरिचं, आरग्वधः, ईश्वरी, पाठा, शिग्रुमूलत्वक् १-१ पलिकानि गृहीत्वा चतुर्थभागाऽवशिष्टं काथं गृहीत्वा त्रितोलककाथेऽर्धगुञ्जापरिमितं सिन्दूरं मधुना सह मेलयित्वा ग्राह्यम्।(अगस्त्य.)

५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतैले, गोमयरसे, गोमूत्रे, कुलत्थकाथे, बालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

४४ तालकमात्रा

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलाविषाणि दरदतालकहेममाक्षिकाभ्रकताम्रभस्मानि समानि विचूर्ण्य चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं, अम्लदाडिमीफलचित्रकमूलत्वग्रसाभ्याञ्च द्विद्विर्यामं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य कुक्कुटपुटो देयः । एतद्गुञ्जामितं मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवितं सद्युन्मादमदमूर्च्छादींन्नाशयति । पथ्यं यथोचितम् ॥ (व्यास०)

४५ तालसिन्दूरम्

पत्रतालकं, रक्तमनःशिला, गौरीपाषाणं, मल्लं, तुत्थं (मैलतुत्तं), अमलसारगन्धकं, हिङ्गुलः, पारदः, सर्व्वीरं, रसकर्पूरं, अभ्रदन्तपाषाणश्चैतानि खल्वे जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कीकृत्य कण्टकिपलाशशिग्रुरक्तकार्पासपार्श्वपिप्पलाऽर्ककुन्दनन्दिवर्धन (अनन्त म०) पुष्परसैः प्रत्येकं चतुर्विंशतितोलकैश्चैकत्रसम्मिलितैः स्तोकेन स्तोकेन रसेन मर्दयित्वा सर्वोऽपि रसः शोषणीयः । अन्ते शुष्कां चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितां कृत्वा गजपुटो देयः। स्वाङ्गशीतलं भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा पूर्ववत्पुटो देयः । पुनर्जम्बीररसेन पूर्ववत्पुटदानेनैतद्त्यन्तरक्तवर्णं सिन्दूरं भवति । एतन्मुद्गप्रमाणं मधुमिश्रितत्रिकटुकचूर्णेन सह दत्तं चेद्साध्यशूलाः,एकविंशतिमेहास्तद्ग्रन्थयश्च, अष्टादशकुष्ठानि, वातपित्तगण्डमालाराजयक्ष्मगुल्मरोगादयः सङ्क्रामकव्याधिश्चैते सर्वे निर्मूला भवन्ति । आढकी, वालवृन्ताकं, शिग्रुशिम्बी, कुशरा, गोक्षीरं, उष्णोदकञ्चेति सर्वं पथ्यम् । अम्लधूमौ वर्ज्यौ । (अगस्त्य०)

४६ त्रिकटुकगुटिका

गन्धकः, तालकं, आकारकरभः, सर्व्वीरं, विषं, रसकर्पूरं, गौरीपाषाणं, पारदः, जयपालबीजानि, त्रिकटुकं, त्रिफला, पिप्पलीमूलं, रास्ना, भार्ङ्गी, कटुरोहिणी, सैन्धवञ्चैतेषु शोधनीयानि शोधयित्वा सर्वाणि सञ्चूर्ण्य भृङ्गजलेन सप्तदिनानि विमृद्य गुञ्जापरिमितां वटीं कृत्वा छायायां विशोष्य भूनिम्बक्वाथेन सर्वज्वरेषु देयम् । जम्बीररसेन विषोपविषाणि, भृङ्गाद्भिः श्वयथुपाण्डुकामलावातपित्तमेहपिडिकादयः, आमलककाथेन सर्वाङ्गशूलाः, महिषीदध्नाऽतिसाराः, किञ्चिद्भ्रष्टजीरकेण गुल्माः, मधुना गर्भवातादयः, अम्लदाडिमीफलरसेन पित्तशूलवमनाऽरोचकभ्रम्यादयो नश्यन्ति । वातपदार्थवर्ज्यं पथ्यम् । (व्यास०)

४७ त्रिनेत्रसिक्थकम्

शुद्धपारदजयपालबीजनारिकेलकपालभस्मप्राचीनतालगुडानेकैकतोलकान् गृहीत्वा नारिकेलदुग्धेन यामद्वयं विमृद्य सिक्थरूपं विधाय रजतसम्पुटे स्थापयेत् । एतत्कण्ठकितजिह्विकायां किञ्चिन्मात्रं घर्षणीयम् । कण्ठकनीलिमादिदोषो निवर्तते । वमनहिक्के, ऊर्द्ध्वश्वासः, इन्द्रियस्तब्धता, अङ्गशैथिल्यं, चित्तविभ्रमः, सुखसन्निपातज्वरः (स्त्रीसङ्गोत्पन्नः, यस्मात्कस्मादुत्पन्नो ज्वरस्तत्स्त्रीजघनप्रदेशाद्रक्तमानीयाऽञ्जने कृते तच्छान्तिर्भवतीति दक्षिणदेशप्रसिद्धिः) एते नश्यन्ति । अथ सन्निपाते नस्यम्-क्षुद्रव्याघ्री (उस्तियेरलु), द्रोणपुष्पीमूलं (तुम्मीवेरलु), पूतिकरञ्जपिण्याकञ्च समभागमञ्जनवद्विमृद्य नारिकेलपुटके संस्थाप्य नस्यं देयम्। सुखसन्निपातो नश्यति। मत्कुणरुधिरमञ्जने देयम् । (व्यास०)

४८ धातुवृद्धिरसायनम्

भूमिकूष्माण्डं (भूचक्रकन्दम्), कृष्णमुशली, मुञ्जातकं (सालिमं), त्वक्, लवङ्गं, एलाबीजानि, कोकिलाक्षः (नीरुगुब्बी), रजतभस्म, जातीफलं, जातिपत्री, ईसबगोलः (ईसबगोलु), सुवर्णभस्म प्रत्येकं पादतोलकानि चूर्णयित्वा समभागां शर्करां संयोज्य लेहपाकं विधाय प्रातः सायञ्च पादतोलकं सेवनीयम् । उपरिष्टाद्दशतोलकं गोक्षीरं पेयम् । वृद्धोऽपि तरुणायते । (अगस्त्य०)

४९ धातुवृद्धिलेह्यम्

भूकूष्माण्डकन्दं, पुष्करकन्दं, त्रिकटुकं, यष्टिमधुकं, कतकबीजं, अश्वगन्धा, भद्रमुस्ता, तक्कोलं, त्वक्, जीरकं, एलाबीजं, मस्तगी, कासनीबीजं, नागकेशरं, भार्ङ्गी, जातीफलं, जातीपत्रं, अतिविषा, मुञ्जातकं, मुशलीकन्दं, मञ्जिष्ठा, उशीरमूलं, देवदारु, शतपुष्पा, चव्यं, क्षुद्रहरीतकी, कुटजः, तक्कोलम् (सलयमिर्यालु), कुमुदकन्दं, ज्योतिष्मतीबीजं, पद्मबीजं, मदनकामेश्वरपुष्पं, अहिफेनं, महाराष्ट्री (मराठी मोग्गा), कपिकच्छुमूलकलशुनशरहञ्चिकाकृष्णतुलसीबीजानि केशरं, चन्द्रसारः, रोचना चेत्यन्तिमत्रयं प्रत्येकमर्धतोलकं, अवशिष्टानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि गृहीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपलातालीशर्कराधातामानि प्रत्येकं १२॥ पलिकानि, आक्षोटं, प्रियाल (सारपप्पु) श्चेति ४-४ पलं ग्राह्यम् । अथ लेह्यपाकविधिः=षण्णवतितोलकं गोक्षीरं शर्कराद्वयस्य चूर्णञ्च भाण्डे निधाय वातामादित्रयं घृतपक्वमहिफेनञ्च क्षिप्त्वा तन्तुलीं विधाय पूर्वोक्तसर्वद्रव्याणां चूर्णं मेलयित्वा १५ पलं गोघृतं, २४ तोलकं मधु च निक्षिप्य लेह्यं कृत्वा

ग्राह्यम्। आमलकप्रमाणं रजतभस्मना वङ्गभस्मना वा मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम्। शतस्त्रीरमणक्षमो भवति। स्वप्नस्खलनं निर्मूलं जायते। रक्तवृद्धिर्धातुपुष्टिश्च भवति। (व्यास०)

५० नवपाषाणद्रावकम्

मल्लसखीरगौरीशेङ्खिमूषिक (यलिका) तालकोल्लिपाषाणानि, विडसैन्धवसामुद्रसौवर्चलौपरलवणानि, स्फटिका, टङ्कणं, मनःशिला चैतान्येकैकपलिकानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि (चमारदूधी) स्वरसेन मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वोक्तरसेन कल्कं विधाय यामपञ्चकपर्यन्तमेकजातीयकाष्ठेन पाकं कृत्वा नलिकायन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः अत्र (पाषाणद्रवे) सर्वे धातूपधातवो बद्धा भवन्ति। बद्धमूलव्याधिषूपयोक्तव्यम् ॥ (अगस्त्य०)

टि०—एतन्निर्दिष्टपाषाणपरिचयोऽगस्त्यवैद्यवाक्यादेव कर्तव्यः। ईश्वरानुग्रहश्चेद्भारतीयरसशास्त्रग्रन्थे विवेचयिष्याम।

५१ नवरत्नमिश्रिताऽयोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहकिट्टं, पित्तलं, नागः, वङ्गं, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिक्यं, मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैदूर्यम्, नीलम्, गोमेदकम्, पुष्परागश्चेति प्रत्येकं पादतोलकं खल्वे चूर्णीकृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां पक्वेष्टिकागर्ते निधाय पञ्चमृद्वस्त्रैर्लिप्त्वा वराहपुटो देयः। एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते। शिवशक्तिपूजां विधाय निष्कासनीयम्। अनुक्ताऽज्ञातव्याधिष्वेतदुपयोजनीयम्। गुञ्जाद्वयपरिमितस्य मधुना सह सेवनाद्गुल्मवायुकुष्ठादयो नश्यन्ति। गोघृतेनाऽस्थिगतज्वराः, नवनीतेन शरीरदाहः, जीरककषायेणोरःपित्तरोगाः, आर्द्रकरसेन वातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लशुनतैलेन सङ्ग्रहणी, मरिचकषायेन श्वासकासयुतो ज्वरः, नागरकषायेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीकषायेन श्वासकासयुतः क्षयरोगः, अजाक्षीरेण हृच्छूलं, ब्राह्मी (वह्नारी) पत्रदाडिमीपुष्पस्वरसाभ्यां बालानामस्थिगतज्वराः, तालगुडेन घनीभूताः शूलाः, कण्टनिर्गुण्डी (सञ्जीविगुडु) चूर्णेन सर्वे मेहरोगाः, आकुली (तंगेडु) मूलचूर्णेन बहुमूत्ररोगः, गोक्षीरेण पाणिपादशूलानि, शर्करया मेहग्रन्थयः, लशुनतैलमिश्रितत्रिकटुत्रिफलाचूर्णेन मूत्रकृच्छ्रादयः, भृङ्गराजत्रिकटुकचूर्णेन मधुना सह सेवनात्कामलापाण्ड्वादयः, चन्दनकषायेन सह वातपित्तं, जातीफलचूर्णेन स्त्रीणां श्वेतकुसुमरोगाः, चातुर्जातकचूर्णमिश्रितगोघृतेन सहाऽस्थिभेदकमेहव्याधयः, स्तन्येन सह वरवर्तिनेत्ररोगाः, व्याघ्रीवासाभूनिम्बक्षुद्रमुस्तककषायेन चतुष्षष्टिर्ज्वराः, अश्वगन्धार्चानिहेमक्षीरीचित्रकजीरकाणां चूर्णेन सह मधुना सेवनात्पङ्गुवातः, शुद्धभल्लातकतैलेन सर्वाणि कुष्ठानि, हैयङ्गवीनेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लशुनेन सहाऽतिसारः, नागरऽऽमलकज्योतिष्मतीबीजचूर्णेन सर्वेऽतिसारा निवर्तन्ते। रोगपरिज्ञानपूर्वकं यथोचितं पथ्यं देयम् ॥ (अगस्त्य०)

५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैदूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः, गोमेदकं, रक्तवर्णरत्नानि, पुष्परागः, पारदः, वङ्गश्चेति समभागं गृहीत्वा पूर्वं वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा नवरत्नैः सह सञ्चूर्ण्य जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन चैकैकयामं मर्दयित्वा शुष्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्धगन्धकं मेलयित्वा काचकूपिकायां निक्षिप्य गन्धकजारणाऽनन्तरं मुखबन्धनं कृत्वाऽष्टयामपर्यन्तं वालुकायन्त्रे पाकं कुर्यात्। स्वाङ्गशीतलं निरीक्ष्य सुब्रह्मण्यगणेशयोरर्चनं कृत्वा कूपिकातः औषधं ग्राह्यम्। एतत्तण्डुलपरिमितं मधुना सह सेवनीयम्। अनेन मूत्राऽवरोधाऽश्मरीमूत्रघातदुर्गन्धमूत्रमूत्रकृच्छ्रबहुमूत्रभ्रमधूमेहमेहग्रन्थयो लिङ्गद्वारशूलो महाकुष्ठानि अशीतिर्वातव्याधयो गात्रदौर्बल्यं सर्वाङ्गशूलाश्चेति महाव्याधयो नश्यन्ति। देहं वज्रसदृशं भवति। एतस्मिन्नपथ्यं नास्ति। मांसरसाः, घृतपक्वमांसमिश्रितपदार्थाः, दधिक्षीरघृतवातामाक्षोटादयो गुरुपदार्थाः सर्वेऽपि सेवनीयाः। (अगस्त्य०)

५३ नवलोहसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्गसीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि चूर्णितानि भृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा वराहपुटो देयः। स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः। एवं पञ्चपुटा देयाः। विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते। अर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सह सेवनीयम्। एतेन कृष्णमेहाऽण्डवातपीनसगुल्मशूलपक्षवातसूतिकावातपाण्डुपार्श्वशूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति। तत्तज्ज्वरकषायैर्मधुना सह सन्निपातादिषु दातव्यम्। क्वाथद्रव्याणि-किरातः, विष्णुक्रान्ता, मरिचं, आकारकरभः, ईश्वरी, पाठा, शिग्रुमूलत्वक् १-१ पलिकानि गृहीत्वा चतुर्थभागाऽवशिष्टं क्वाथं गृहीत्वा त्रितोलककषायेऽर्धगुञ्जापरिमितं सिन्दूरं मधुना सह मेलयित्वा प्राश्यम्।(अगस्त्य.)

५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतैले, गोमयरसे, गोमूत्रे, कुलत्थकषाये, बालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

चतुष्पलं कृष्णनागं मृन्मयपात्रे गालयित्वैकतोलकं पारदं मिश्रयित्वा पञ्चाङ्गाऽऽहुलीचूर्णं (तङ्केडुचेट्ट) यामचतुष्टयपर्यन्तं किञ्चित्किञ्चित्क्षिप्त्वाऽऽहुलीमूलदण्डेन घर्षणीयम्। एतत्सिन्दूरं मधुना, घृतेन, नवनीतेन वा सेवनीयम्। एतेन शुष्कमेहरक्तप्रदरकुसुमादिरोगमूत्रकृच्छ्रबहुमूत्रमूत्राऽवरोधशर्करामेहाऽश्मर्यादिप्रभृतयः सङ्कीर्णरोगा निवर्तन्ते। (व्यास०)

५५ नारिकेलतैलम्

पक्वनारिकेलफलानि द्वादश, हेमक्षीरी ८ पला, हरीतकी चीनमूलिका (रेवन्दचीनी) नागराणि त्रित्रिपलानि, शुद्धं जयपालबीजं द्वितोलकं, शुद्धसूदारशृङ्गाऽऽहुलीपत्र (तङ्केडाकु) रसकर्पूराणि प्रत्येकमेकतोलकानि गृहीत्वा सर्वं सद्भुच १२० तोलकजले निक्षिप्यैकरात्रिपर्युषितं विधाय त्रिरावृत्तफेनोद्गमपर्यन्तं पाकं कृत्वा स्वाङ्गशीते जाते जलोपर्यागतं तैलं सावधानतया गृहीत्वा स्थापनीयम्। नारिकेलजलानुपानेनाम्लमण्डेन वा बिन्दुद्वयं त्रयं वा दातव्यम्। सुखेन विरेचनं भवति। यदि विरेचनाऽऽधिक्यं स्यादतिपिपासमस्मलुतं जलं देयम्। क्षीरान्नमाढकीखण्डयूषान्नञ्च पथ्यम्। एतेनोपदंशासन्धिगतप्रमेहश्वयथुपार्श्वपृष्ठवाता हृच्छूलाऽऽहिकज्वरादयो नश्यन्ति। एतत्तैलमेकस्मिन्मासे सप्तदिनपर्यन्तं पेयम्। एवं रीत्या मासत्रये जाते पूर्वोक्तरोगा नश्यन्ति। अपि च वन्ध्यास्त्रीणां, अश्वानां, वृषभादीनाञ्च दातव्यम्। पशूनां दानप्रकारः-एकतोलकं वराङ्गं जलेन सम्मर्द्य तन्मध्ये १० बिन्दुपर्यन्तं तैलं मेलयित्वा वंशनालमुखात्पाययितव्यम्। सर्वे पशुव्याधयो निवर्तन्ते। (अगस्त्य०)

५६ पञ्चलोहसिन्दूरम्

शुद्धस्वर्णं, रजतं, अयश्चूर्णं, ताम्रं, वङ्गं, पञ्चपाषाणानि (श्वेङ्गि–कार्मुगिल–पगडपुट्ट–शृङ्गि–तिमिरकुलपाषाणानि) सममागानि खल्वे निक्षिप्योपरक्षारं नरसारञ्च ५-५ पलं गृहीत्वैतद्द्वयमपि विचूर्ण्य चीनपात्रे निक्षिप्य रात्रौ जयनीरं गृहीत्वाऽनेन जयनीरेण मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटीकृत्य कुक्कुटपुटं देयम्। एवं रीत्या चत्वारि पुटानि देयानि। अस्याऽनुपानचूर्णम्—लघुपिप्पली, मधुयष्टिः, जीरकं, चित्रकं, मरिचं, यवानी, कृष्णतिलाः, अश्वगन्धा चैतानि प्रत्येकपलानि चूर्णीकृत्य वस्त्रशोधितं विधाय सममागां चीनहेमक्षीरीं मिश्रयित्वा भृङ्गराजकामकस्तूरीपत्ररसौ गोक्षीरं प्रत्येकं २४ तोलकं कटाहे निक्षिप्य पाकसमये पूर्वोक्तं चूर्णं क्षिप्त्वाऽवलोड्य गोघृतं २४ तोलकं, मधु च १२ तोलकं संयोज्य लेह्यपाको ग्राह्यः। अर्धतोलकपरिमिते लेह्ये गुञ्जैकं पञ्चलोहसिन्दूरं मेलयित्वा मण्डलान्तं सेवनीयम्। अनेनाऽष्टादशदीर्घशूलानि, कुष्ठमेहविचर्चिकादयो निर्मूला भवन्ति। जम्बीरशुक्तं, कपित्थफललेह्यं, शारद्विका, गोधूमः, शर्करा, गोघृतं, कोपातकी, चुञ्चु (सपेदाकं), वस्तमांसञ्चैतानि पथ्यानि। (अगस्त्य०)

५७ परङ्ग्यादिलेह्यम् (मह्त्)

गोदुग्धशुद्धा चीनहेमक्षीरी ५ पला, नारिकेलजलेन भस्मीकृतं कल्नारभस्म २ पलं, आरण्यमहिषीक्षीरं १ पलं, एलाबीजं १ पलं, घृतभ्रष्टं जातीफलं ३ पलं, सितोपला १३ पला, शतावरीरसः ५० तोलकः, केशरं १। तोलकं नीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपलायास्तन्तुलीं विधाय गोघृतं ४ पलं विन्यस्य सर्वमपि चूर्णं मेलयित्वा लेह्यपाकेनाऽवतार्य प्रातः सायञ्चेति द्विवारं प्रत्यहमर्धतोलकं सेवनीयम्। अनेन सर्वे मेहविकारा नश्यन्ति, धातुपुष्टिर्भवति रक्तवृद्धिश्च। पथ्यं रोगाऽनुरूपम्। (अगस्त्य०)

टि०—अत्र परङ्गीति शब्दोऽभ्यक्तोऽतएव वैद्यचिन्तामणौ परङ्गपादिरसायने वृद्धदारौ शक्तिं मत्वा, त्रिंशत्पलं वृद्धदारविति काम्यद्रव्ये स्पष्टतया कथितम्, प्रक्षेपद्रव्येषु तु परङ्गपदपन्नेति यथाऽवस्थितमेवोद्धृतम्। आधुनिकास्त्वान्ध्रादिदेशवैद्यास्तत्स्थाने चीनहेमक्षीरीं (रेवनचीनी) नियुञ्जन्ति, परङ्गीस्थाने फरङ्गीचक्केति शब्दं प्रतिष्ठापयन्ति, परङ्गी शब्दस्य च योरण्डेषु रूढिं मन्यन्ते। सर्वमप्येतदज्ञानविलसितम्, न ह्यगस्त्यादिमहर्षिसमये फरङ्ग्यादिशब्दानां सद्भावः किञ्च हेमक्षीर्याश्चीनदेशादारब्धदेशादेवाऽधुनाऽप्यागमनमस्ति। अतएव रेवन्दचीनी किंवा रेवन्दखतायीति द्विविधनाम्नैव तत्प्रसिद्धिः। योऽप्यशोऽपि रेवन्दयोरोपीयेति नाम्ना यद्विद्यु न प्रभवति, फरङ्गीति योरोपीयदेशोद्भवानामेवाऽधुनाऽप्यपठितजना नामकरणं कुर्वन्ति। चीनाभिजनानामारब्धाणाञ्च तत्तद्देशनाम्नैवाऽऽबालवृद्धेषु व्यवहारोऽस्ति, अतः परङ्गीचक्केति नाम्नः प्रादुर्भावोऽज्ञानमूलक एवाऽस्तीति प्रतीयते। पराण्यनिविरुद्धतान्यङ्गानि यस्या इति व्युत्पत्त्या पराङ्गी इति, स्फाराणि अङ्गानि यस्या इति व्युत्पत्तौ स्फाराङ्गीति शब्द उपपद्यते। वृद्धदारुलतायामेतद्द्वयमपि नाम सार्थकतामावहति, तदीयमूलानां शाखानां चातिप्रसरणशीलत्वात्तोऽपभ्रंशो परङ्गी इति फरङ्गी इति वा सिद्धं भवति। अत एव वैद्यचिन्तामणिकारेण वृद्धदारुवाचकत्वेन स्वीकृताऽस्त्यत एव त्रिंशत्पलानि वृद्धदारोरिति स्पष्टमेवोक्तम्। वृद्धदारुशब्दस्य केल्लिकदम्बे रूढिरिति तु केषाञ्चिदज्ञानां कथनं खपुष्पायितं वृद्धदारोश्चैतत्त्वं चरकादौ सुप्रसिद्धम्, केल्लिकदम्बस्य तु सर्वाण्यप्यङ्गान्यतिग्राहकाणि शीतलानि च, रक्तप्रदरातिसाराऽर्शोरक्तपित्तादौ ग्राहकत्वेन सर्वदेशीयजाङ्गलानामपि सम्यग्ज्ञानमस्ति। अतो वृद्धदारो केल्लिकदम्बनामदानं सर्वथाऽनुचितम्। अतोऽगस्त्यीययोगेषु व्यासोक्तयोगेषु च यत्र यत्र चीनहेमक्षीरीति नाम दत्तमस्ति तत्र तत्र प्राय परङ्गीशब्दस्थानेऽर्वाचीनैर्नैः स्थापितमस्तीति ज्ञातव्यम्। तद्योगेन गुणप्राप्तिस्तु काकतालीयन्यायेन समानगुणवनस्पतियोगाद्भवतीति विद्वद्भिर्ज्ञातव्यम्। अहो कीदृशी कालपरिणतिरीदृशाऽऽयुर्वेदप्रचण्डसूर्यस्याऽप्यज्ञानराहुणाग्रास सञ्जातस्तदुद्धाराय सर्वशक्तिमान् परमेश्वर एवाऽभ्यर्थनीय इति, इदमित्थमत्र दक्षिणदेश एवाऽस्तीति तु स्वभ्रान्तेरपि न प्रमिनन्ध किन्तु सर्वदेशसाधारणीय विपदिति निघण्टुयाथातथ्यनाम्नि निबन्धेऽस्माभिर्दिग्दर्शनं कृतमस्ति, तस्मिन्नेव

विशेषतया द्रष्टव्यम् । कदाचिद्धेमवर्णविशिष्टतयोत्कृष्टतार्थे परशब्दस्य लाक्षणिकार्थं मत्वा पराङ्गीशब्दस्य चीनहेमक्षीर्यामेव रूढिरस्तीति चेत्तत्र विशेषप्रमाणाऽपेक्षाऽस्ति । अस्मन्मते तु वैद्यचिन्तामणिकारस्य मत पोषकमेवेन वैद्यचिन्तामणिरचनसमयपर्यन्त पराङ्गीशब्दो मृद्धदारुलतायामेव प्रतिष्ठित आसीदित्यनुमीयते । कालक्रमात्परम्परया लोपाद्धेमक्षीर्यां केनचित्प्रतिष्ठापित इति प्रतिभातीत्यलमतिविस्तरेण ।

५८ पाण्डुकामलादिहरतैलम्

शाखाद्राधकनिम्बूकरसः (नारदब्बकाथरसः) २४ तोलकः, जम्बीररसः १२ तोलकः, सेहुण्डक्षीरम्, शिग्रुपत्रजलपिप्पली (चुकिना) हंसपादीभृङ्गराजानां स्वरसाः, एरण्डतैलम्, कान्तभस्म, अयोभस्म च प्रत्येकं द्विपलं गृहीत्वाऽऽदौ रसान् तैले निक्षिप्य भस्मद्वयमपि जम्बीररसेनाऽऽलोड्य तैले मेलयित्वा पिप्पल्येलाबीजजातीफलमरिचानि प्रत्येकमर्धतोलकपरिमितानि चूर्णितानि निक्षिप्य पाकं कृत्वा स्वाङ्गशीतं कूप्यां निधापयेत् । श्वयथुपाण्ड्वादिव्याधिग्रस्तानां यथोचितानुपानेन दातव्यम् । पथ्यं रोगानुरूपम् । चोष्यतिन्तिडयौ वर्ज्ये । (अगस्त्य०)

५९ पिप्पल्यादिरसायनम्

क्षुद्रपिप्पली २ पला, विडङ्गनागरे १–१ पले, चव्यमरिचपिप्पलीमूलानि प्रत्येकं पादोनपलानि, उशीरैलाबीजमांसीजातीपत्रीलवङ्गहरीतक्यामलकबिभीतकजातीफलत्वचः प्रत्येकं पादोनद्वितोलिकाः, भृङ्गराजमूलचूर्णं २७ तोलकं, कान्ताऽयःसिन्दूरे २–२ पले गृहीत्वा सर्वाणि चूर्णीकृत्य वस्त्रपूतं कृत्वाऽयोभस्म भृङ्गराजरसेनाऽञ्जनवद्विमृद्य चूर्णेन सह मेलयित्वा लोहपात्रे ४८ तोलकं मधु निक्षिप्य १६ पलां शर्करां मेलयित्वा पाकसमये पूर्वोक्तं चूर्णं प्रक्षिप्य लेह्यपकं रसायनं ग्राह्यम् । एतन्मृन्मयपात्रे स्थापनीयम् । आमलकप्रमाणमेकमण्डलमर्धमण्डलपर्यन्तं वा सेवितं ज्वरवाताऽग्निमान्द्यपाण्डुश्वासकासपित्तक्षयरोगादीन्नाशयति । पथ्यं रोगोचितम् ॥ (अगस्त्य०)

टि०—व्यासोक्तपिप्पल्यादिरसायने कान्ताऽयःसिन्दूरयोरभावोऽस्ति, चतुष्पल घृतञ्चाऽधिकतया निक्षिप्तमस्ति । श्वासकासवातादिषु विशेषतया ऽस्योपयोगादत्राऽपि चतुष्पलघृतनियोगेऽधिका शक्तिरेष्यतीति प्रतिभाति ।

६० पुनर्नवादितैलम्

श्वेतपुनर्नवाचित्रकैरण्डशिग्रुपूतीकशालोटकाऽग्निमन्थ (तकाळी) निर्गुण्डिमूलानि, त्रिफला, कृष्णवालकं (कुरुनेरु) चैतानि प्रत्येकमेकशतपलिकानि सङ्क्षुद्य द्रोणचतुष्टयपरिमिते जले निक्षिप्य चतुर्भागावशेषं विपाच्यैकाढकं गोक्षीरं, ८० तोलकं तिलतलञ्च मिश्रयित्वा विपचेत् । पाकसमये पिप्पली, चित्रक, यवानी, यष्टिमधुकं, भृङ्गराजमूलं, सर्पदंष्ट्राबीजानि, अश्वगन्धा, खादिरम्, अतिविषा, नागरं, सैन्धवं, लवङ्गं, एलाबीजं, वङ्गकान्तभस्मनी, शुद्धगन्धकं, मृगमदः, पुष्करमूलं चैतानि समभागानि चूर्णीकृत्य तैलषष्ठांशं मेलयित्वा पक्वं तैलं ग्राह्यम् । अभ्यञ्जननस्याभ्यां वातपित्तपाण्डुश्वयथुनासाव्रणकपालशोथादयो रोगा निवर्तन्ते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (अगस्त्य०)

६१ पुष्पमणिमात्रारसः

शलाकारसकर्पूरं, रससिन्दूरं, शुद्धदरदः, कान्तसिन्दूरश्चैतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि, केशरम् २। तोलकं, गोरोचनं १।। तो०, चन्द्रसारः पञ्चाणकाऽधिकैकतोलकः, तक्कोलं पादोनतोलकं, कुष्ठत्रिकटुकाऽऽकारकरभाः प्रत्यर्धतोलकाः, चित्रकमूलत्वगनन्तमूलश्वेतत्रिवृदिक्षुरकमुशलीयष्टिमधुकशिग्रुमूलत्वच एतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि गृहीत्वा पीतभृङ्गरसेन चतुर्यामं विमृद्य चित्रकमरिचकण्टकिपलाशमूलत्वचां त्रित्रिपलिकानामष्टभागाऽवशेषितेन क्वाथेन यामत्रयं मर्दयित्वाऽरिष्टबीजप्रमाणा वटीश्छायाशुष्काः कृत्वा स्थापयेत् । शर्करया सह मेहज्वरादिष्वेका वटी देया । त्रिकटुकचूर्णेनाऽशीतिवातव्याधिषु निषेव्या । एवमेकमण्डलमर्धमण्डलपर्यन्तं वा सेवनीयम् । (व्यास०)

६२ प्रभाकररसः

रामठपारदयवानीगन्धकटङ्कणतालकविषत्रिकटुराजिकाशिलाकृष्णजीरकदरदहरीतक्य सर्वाणि समभागानि, जयपालबीजानि सर्वसमानि गृहीत्वाऽऽदौ जयपालं विमृद्य सर्वमपि पूर्वोक्तसम्भारं निक्षिप्य यामत्रयमनारतं मर्दयित्वा काचसम्पुटे संस्थापयेत् । अथवाऽऽर्द्रकरसेन गुञ्जामितां वटिकां निर्माय स्थापयेत् । गुञ्जाप्रमाणं नागरक्वाथेन सेवितं सज्वरान्नाशयति । हरीतकीक्वाथेन श्वासकासौ, गोघृतेन रक्तमूलव्याधिः, गोक्षीरेण गुदाङ्कुरा नश्यन्ति । लशुनतैलं, मधु, आर्द्रकरसः, एतदनुपानेन गुञ्जाप्रमाणं सेवितं सञ्जलोदरमहोदरादीन्नाशयति । सर्पदंशादीनां सर्षपप्रमाणं निम्बबीजतैलेनाऽञ्जने दद्यात् । यदि नेत्रयोः शोथः स्यात्कन्याद्रवेण प्रक्षालनीयम् । अपि च दुर्मांसोत्पादकव्रणेषु, राजव्रणेषु, सन्धिग्रन्थिषु, सिराव्रणेषु चैतदौषधं जिह्वाजलेन घृष्ट्वा व्रणोपरि लिम्पेत्सर्वे व्रणा निरङ्कुरा भविष्यन्ति । (व्यास०)

६३ वङ्गकान्तरजतम्

वङ्गसमुद्रलवणं, कान्तं, पारदः, अमलसारगन्धकं, मनःशिला, दरदं, शङ्खभस्म चैतानि खल्वे सम्यग्विचूर्ण्य . . (गाडिदिगडपाकु) रसेन यामत्रयं विमृद्य संशोष्य चूर्णीकृत्य गङ्गाजलकूपिकायां निधायाऽष्ट-

यामं वालुकायां क्रमाग्निना पचेत्। स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेद्विषपाण्डुज्वरवातोदरगुल्मक्षयरोगादीञ्जयति। (व्यास०)

६४ बद्धखण्डार्द्रकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः, सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, वंशरोचना चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि चूर्णीकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं गाढातपे निक्षिप्यैतत् कलामात्रं सेवनीयम्। अनेनाऽजीर्णाऽतिसारवमनहिक्काविसूचिकोदरज्वलनाऽरोचकदाहादयो नश्यन्ति। (व्यास०)

६५ बद्धतालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमलसारगन्धकं १ पलं, रसकर्पूरमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय वालुकायन्त्रविधानेन सार्धैकयामपर्यन्तं पाकं कुर्यात्। स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना त्रिकटुकचूर्णेन वा देयम्। सदोषज्वराः, श्वासकासादिसंयुक्तक्षयाश्च नश्यन्ति। अम्लरसादिकं वर्ज्यम्॥ (व्यास०)

६६ बद्धदरदो रसकर्पूरश्च (प्रथमः)

एकशकलात्मकं शुद्धं दरदं रसकर्पूरञ्च ८-८ पलं शरावे निक्षिप्य श्वेतहिल्ला (तेल्लागुपि) पत्ररसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्यामं ग्रासं दत्त्वा आरनिकर्पूरं ५ पलं, तुरुष्कं (साम्ब्राणी, लोबान) ५ पलं, एतद्द्वयमपि विमृद्य लोहकटाहे निक्षिप्य मन्दाग्निना द्रवीकृत्य पूर्वोक्तं द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक् पाकः कर्तव्यः। खण्डद्वयलग्नं किट्टं दूरीकृत्याऽऽवालवृद्धं यथोचितमुपयोजनीयम्। स्तन्येन, मधुना, पिप्पलीमरिचयोः क्वाथाभ्यां वा सेवनेन गर्भवातकफधातसम्भविनस्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति। अजीर्णशूलसन्निपाताः धनुर्धारा(कम्प)ऽन्त्रपक्षसन्धिशिरोऽर्दितडमरुकसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च सोपद्रवा नश्यन्ति। क्षीरान्नं पथ्यम्। अम्लरसो वर्ज्यः। (व्यास०)

६७ बद्धदरदः (द्वितीयः)

एकपलां मनःशिलां जम्बीररसेन विमृद्यैकपलिकस्य तुत्थशकलस्योपरि कवचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य हसन्तिकोपरि यथोचिताग्नौ विन्यस्य तुत्थधूमनिर्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात्। एतद्धवलं तुत्थभस्म चीनपात्रे पञ्चतोलकसेहुण्डक्षीरेण सह सङ्कल्प्य गाढातपे निदध्यात्। एवं दिनत्रये कृते तुत्थभस्म सिक्थं भवति। तत एकपलिकं हंसपाकदरदं खर्परे विन्यस्य मन्दाग्निना पचन् पूर्वोक्ततुत्थसिक्थेन सावधानतया पड्घटिकापर्यन्तं किञ्चित्किञ्चिद्ग्रासं दद्यात्। क्षुद्रतिन्तिडीकाष्ठैर्दीपवज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीभूय बद्धो भवति। सकलज्वरवायुषु प्रयोज्यम्। स्तनन्धयानां अग्रपरिपकसातला (खरसाणी) काण्डनिर्गुण्डीवरुणमूलत्वग्यवानीकल्ककृष्णतुलसीस्वरसानामन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम्। अनेन बालानां सोपद्रवज्वरशान्तिर्भवति। अजीर्णेन्द्रियमान्द्यज्वरातिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति। रोगबलाबलं विज्ञाय दिनत्रयं चतुष्टयं वोपयोज्यम्। अक्षारलवणं पथ्यं मातुर्देयम्। तरुणादीनामेतद्विगुणम्। पथ्यन्तु यथोचितम्।

६८ बद्धदरदः (तृतीयः)

शुद्धदरदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाकारसकर्पूरं १ पलं, एतत्त्रयमपि विचूर्ण्य काचकूपिकायां निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्वा वालुकायन्त्रे एकं यामं पचेत्। स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना तत्तद्रोगोचितक्वाथेन वा सेवितं सर्वान्वातव्याधीन् सविकाराञ्ज्वरांश्च निकृन्तति। (व्यास०)

६९ बद्धदरदः (चतुर्थः)

पञ्चदशतोलकपरिमितं दरदखण्डं मन्दाग्नौ खर्परे निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया ग्रासं दद्यात्। पुनश्च श्वेतहिल्लाफल (उप्पिपंड्लु) कुमारीजीवन्तिकास्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं बद्धदरदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्रोगोचितानुपानेन मधुना वा सेवितं सदोपसर्गिकव्याधीनामवातरक्तपित्तादींश्च नाशयति। पथ्यं रोगोचितम्। (व्यास०)

७० बद्धमयः

बद्धं समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तप्तरजतं, पारदः गन्धकश्चैतानि प्रत्येकपलानि, शुद्धतालकं मनःशिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽञ्जनवच्चूर्ण्य दिनद्वयं कन्यारसेन विमृद्य त्रिदिनं शोषयित्वा काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधायाऽष्टयामं वालुकायन्त्रे विपाच्य स्वाङ्गशीतां घनीभूतां गुटिकामर्धगुञ्जामितां मधुना सह दद्यात्। अनेन सकलसन्निपाता वातमेहादयश्च नश्यन्ति। (व्यास०)

७१ बद्धमहारसः

शुद्धपारददरदमाणिक्यविद्रुममल्लरजतगन्धकरसकर्पूरमुक्तातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं विधाय समूलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा विशोष्य काचकूप्यां निक्षिप्य मन्दमध्यखराग्निभिर्वालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्वा खल्वे निक्षिप्य मृगमदः, गोरोचना, चन्द्रसारः, एतान्येकैकतोलकान्यौषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा वटी कृत्वाऽनुपानविशेषै सकलरोगेषूपयोजनीया । अज्ञातबद्धमूलरोगा सर्वे नश्यन्ति । (व्यास०)

७२ बालमान्द्यहरतैलम्

क्षुद्रैरण्डबीजतैल ४० तोलक, कामकस्तूरिकापत्ररस (मरुवक) ४ पल , शिग्रुकरञ्जश्वेतपुनर्नवापुरपल्लवब्राह्मीपत्ररस २–२ पल , औदुम्बरत्वक्कोमलवटप्ररोहस्वरस ४०–४० तोलक , एतान्सर्वानपि रसान् तैले निक्षिप्य जातीफल, जातीपत्र, मायाफल, कर्कटशृङ्गी, कुष्ठ, आकारकरभ , शुद्धजयपालश्चैतानि पादतोलकपरिमितानि, लशुन पलाण्डुश्चैकैकपल मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्ध रसकर्पूर, मृगमद, गोरोचन, केसरञ्च प्रतिपादतोलक विपक्वे तैले सयोज्य स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम् । बिन्दुचतुष्टय पञ्चक वा रोगबलानुसारेण बालाना दातव्यम् । तन्मात्रे ब्रह्मतिन्तिडी, लवणमिश्रितोष्णोदकाच्च पथ्यम् । एतेन बालस्य अस्थुग्रहादिदोषा निवृत्ता भवन्ति । महोदरपित्तश्लेष्मज्वरादिनिवृत्तिश्च भवति ।अगस्त्य०

७३ भल्लातकलेहम्

गोमूत्रशुद्धानि भल्लातकानि १० पलानि, चीनहेमक्षीर्यश्वगन्धादारुहरिद्रापिप्पलीपिप्पलामूलचित्रकमूलत्वक्कृष्णजारकहरीतकीकुष्ठानि १–१ पलानि, शुष्कनारिकेलमज्जा २ पला, निस्तुषास्तिला १८ तोलका , शुद्ध रसकर्पूरं सपादद्वितोलक, तालगुडं ५ पल गृहीत्वाऽऽदौ भल्लातकानि नारिकेलेन सहोदूखले लेहानुरूप विधेयम् । बदराफलप्रमाण मण्डलपर्यन्त प्रत्यह द्विकालं सेवनीयम् । अनेन कुष्ठशूलव्रणग्रन्थिगुल्ममेहशूलश्वेतपीतरक्तादिरोगा सर्वे नश्यन्ति । तिन्तिडीरस , धूमपानं वातला मादकपदार्था स्त्रियश्च वर्जनीया । पथ्यं रोगानुकूलम् । (अगस्त्य०)

७४ भल्लातकीवटी (प्रशमनीभल्लातकी)

शुद्धभल्लातकबीजानि १० पलानि, चित्रकमूलत्वक्, चीनहेमक्षीरी, श्वेतहिंस्रा (तेल्लुपुष्पि), अश्वगन्धा, शरपुङ्खमूल, वरुणत्वक्, दारुहरिद्रा, गजपिप्पली, क्षुद्रपिप्पली, हरीतकी, वाकुची, कुष्ठञ्च १–१ पलं, शुष्कनारिकेलखण्ड २ पलं, तालगुड ५ पल , कृष्णतिला ५पला , रसकर्पूरं दरदञ्च प्रतिसपादतोलकं गृहीत्वा भल्लातकाना नारिकेलखण्डेन कृष्णतिलैश्च सह कल्क विधाय शेषद्रव्याणा चूर्णं तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकर्पूरकज्जलीं मिश्रयित्वा लोहमुशलेन सम्यक् सकुट्य सिक्थरूपतामापाद्य कमण्डलपर्यन्तमरिष्याजप्रमाण सेवनीयम् । एतेन कुष्ठानि, वङ्क्षणादिसन्धिग्रन्थय शूलगुल्मसूतिकावातसङ्कीर्णरोगा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपानस्त्रीसंसर्गमादकद्रव्योपसेवनानि दूरतस्त्याज्यानि । पथ्य रोगोचितम् (व्यास०)

७५ भूपतिगुटिका (प्रथमा)

शुद्धगन्धक २ पल, पारददरदरससिन्दूरसञ्चीराणयेकैकपलानि चूर्णीकृत्य काचकूपिकाया निक्षिप्य क्रमाग्निना यामचतुष्टय पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतं ग्राह्यम् । एतद्भूपतिगुटिकात एकपलमात्र खल्वे निक्षिप्य १॥। तोलक गोरोचन केशरञ्च नवाणक मिश्रयित्वा स्तन्येन, ताम्बूलीदलेन कृष्णतुलसीपत्ररसेन च प्रत्येकयामं मर्दयित्वा गुञ्जाप्रमाणा वटीं विधाय मधुना सह सेवनात्सन्निपातादयो रोगा निवर्तन्ते । रोगोचितं पथ्यम् । (अगस्त्य०)

७६ भूपतिगुटिका (द्वितीया)

सुवर्णरजतवङ्गदाऽयोमुक्तामाणिक्यभस्मानि शुद्धगंधकपारदमन शिलातालकमृद्दारशृङ्गविषाणि प्रत्येकतोलकानि प्रातरारभ्य सायं पर्यन्त विचूर्ण्य जम्बीररसेन यामचतुष्टय विमृद्य शुष्का वर्त्तिका शरावसम्पुटिता कृत्वा सप्तमृत्तिका विधाय वित स्तित्रयान्तत पुटो देय । स्वाङ्गशीते तत्समं शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वय विमृद्याऽङ्गुलमाना वटीं कृत्वा छायाशुष्का विधाय स्तन्याऽनुपानेन तण्डुलप्रमाणमौषध सेवितं सत् सापद्रवप्रयादशसन्निपाताञ्नाशयति । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन निर्जीवाऽपि सजीवो भवति । (व्यास०)

७७ मण्डूरवटकः

पादोनाऽष्टप्रस्थे गोमूत्रे त्रिफलादारुहरिद्रे ४–८ पले निक्षिप्य प्राचानलाहविट् ९० तोलक, पञ्चशाधितमयश्चूर्णं ९० तोलक, कान्तचूर्णं ४१ तोलकं एत त्रयमपि गोमूत्रे निक्षिप्य द्रावणपर्यन्त पाक विधाय विडङ्गनागरभृङ्गमूलचित्रकमूलत्वक्पिप्पलयेगजबीजमरिचानां प्रत्येकपलानामष्टभागाऽवशेषं क्वाथं कृत्वा तेन दिनद्वय मर्दयित्वा पादतोलिका वटा कुर्यात् । एतद्वातक्रण सह सेवनीयाऽथवा चतुर्गुणितनवप्तगोमूत्रे मरिचप्रक्षेपं विधाय तेन प्रत्यह २० दिनपर्यन्तं सेवनीय । आढकीरसण्डयूषान्न पथ्यम्।एतेन पाण्डुसर्वाङ्गशोथगुल्मोदरशूलाद्या निवर्तन्ते । अम्लरसा धूमपानादिकञ्च त्याज्यमुष्णोदक पथ्यम् (व्यास०)

७८ महामेहान्तकरसायनम्

शोधितचीनहेमक्षीरी (परङ्गिचक्का)चूर्णं १५ पलं, गोक्षीरशुद्धाश्वगन्धाभूमिकूष्माण्डसारिवाशतावरीमूलचूर्णं ५–१पल, यष्टिमधुकभाङ्गतालीसगजजाती-

यामं वालुकायां क्रमाग्निना पचेत्। स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेद्विषपाण्डुज्वरवातोदरगुल्मक्षयरोगादीञ्जयति। (व्यास०)

६४ वद्धखण्डार्द्रकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः, सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, वंशरोचना चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि चूर्णीकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं गाढातपे निक्षिप्यैतत् कलामात्रं सेवनीयम्। अनेनाऽजीर्णाऽतिसारवमनहिक्काविसूचिकोदरज्वलनाऽरोचकदाहादयो नश्यन्ति। (व्यास०)

६५ वद्धतालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमलसारगन्धकं १ पलं, रसकर्पूरमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय वालुकायन्त्रविधानेन सार्धैकयामपर्यन्तं पाकं कुर्यात्। स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना निकटुकचूर्णेन वा देयम्। सदोपज्वराः, श्वासकासादिसंयुक्तक्षयाश्च नश्यन्ति। अम्लरसादिकं वर्ज्यम्॥ (व्यास०)

६६ वद्धदरदो रसकर्पूरश्च (प्रथमः)

एकशाकलात्मकं शुद्धं दरदं रसकर्पूरञ्च ८–८ पलं शरावे निक्षिप्य श्वेतहिंस्रा (तेलावुप्पि) पत्ररसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्यामं ग्रासं दत्त्वा आरतिकर्पूरं ५ पलं, तुरुष्कं (साम्व्राणी, लोवान) ५पलं, एतद्द्वयमपि विमृद्य लोहकटाहे निक्षिप्य मन्दाग्निना द्रवीकृत्य पूर्वोक्तं द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक् पाकः कर्तव्यः। खण्डद्वयलग्नं किट्टं दूरीकृत्याऽऽवालवृद्धं यथोचितमुपयोजनीयम्। स्तन्येन, मधुना, पिप्पलीमरिचयोः क्वाथाभ्यां वा सेवनेन गर्भवातकफवातसम्बन्धिनस्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति। अजीर्णशूलसन्निपाता, धनुर्धीरा(कम्प)ऽन्त्रपक्षसन्धिशिरोऽर्दितडमरुकसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च सोपद्रवा नश्यन्ति। क्षीरान्नं पथ्यम्। अम्लरसो वर्ज्यः। (व्यास०)

६७ वद्धदरदः (द्वितीय)

एकपलां मनःशिलां जम्बीररसेन विमृद्यैकपलिकस्य तुत्थशकलस्योपरि कवचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य हसन्तिकोपरि यथोचिताग्नौ विन्यस्य तुत्थधूमनिर्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात्। एतद्द्वलं तुत्थभस्म चीनपात्रे पञ्चतोलकस्नेहुण्डक्षीरेण सह सङ्कल्य गाढातपे निदध्यात्। एवं दिनत्रये कृते तुत्थभस्म स्निग्धं भवति। तत एकपलिकं हंसपाकदरदं खर्परे विन्यस्य मन्दाग्निना पचन् पूर्वोक्ततुत्थसिक्थेन सावधानतया षड्घटिकापर्यन्तं किञ्चित्किञ्चिद्ग्रासं दद्यात्। क्षुद्रतिन्तिडीकाष्ठैर्दीपवज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीभूय वद्धो भवति। सकलज्वरवायुषु प्रयोज्यम्। स्तनन्धयानां भ्रष्टपरिपक्वसातला (सरसाणी) काण्डनिर्गुण्डीवरुणमूलत्वग्यवानीकल्कतृणतुलसीस्वरसानामन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम्। अनेन वालानां सोपद्रवज्वरशान्तिर्भवति। अजीर्णेन्द्रियमान्द्यज्वरातिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति। रोगवलावलं विज्ञाय दिनत्रयं चतुष्टयं वोपयोज्यम्। अक्षारलवणं पथ्यं मातुर्देयम्। तरुणादीनामेतद्द्विगुणम्। पथ्यन्तु यथोचितम्।

६८ वद्धदरदः (तृतीयः)

शुद्धदरदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाकारसकर्पूरं १ पलं, एतत्त्रयमपि विचूर्ण्य काचकूपिकायां निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्वा वालुकायन्त्रे एकयामं पचेत्। स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना तत्तद्रोगोचितकाथेन वा सेवितं सर्वान्वातव्याधीन् सविकाराञ्ज्वरांश्च निकृन्तति। (व्यास०)

६९ वद्धदरदः (चतुर्थः)

पञ्चदशतोलकपरिमितं दरदखण्डं मन्दाग्नौ खर्परे निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया ग्रासं दद्यात्। पुनश्च श्वेतहिंस्राफल (उप्पिपंड्लु) कुमारीजीवन्तिकास्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं वद्धदरदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्रोगोचितानुपानेन मधुना वा सेवितं सदौपसर्गिकव्याधीनामवातरक्तपित्तादींश्च नाशयति। पथ्यं रोगोचितम्। (व्यास०)

७० वद्धमयः

वद्धं समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तन्तुरजतं, पारदं, गन्धकश्चैतानि प्रत्येकपलानि, शुद्धतालकं मनःशिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽञ्जनवद्विचूर्ण्य दिनद्वयं कन्यारसेन विमृद्य त्रिदिनं शोषयित्वा काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधायाऽष्टयामं वालुकायन्त्रे विपाच्य स्वाङ्गशीतां घनीभूतां गुटिकामर्धगुञ्जामितां मधुना सह दद्यात्। अनेन सकलसन्निपाता वातमेहादयश्च नश्यन्ति। (व्यास०)

७१ वद्धमहारसः

शुद्धपारददरदमाणिक्यविद्रुममल्लरजतगन्धकरसकर्पूरमुक्तातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं विधाय समूलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा विशोष्य काचकूप्यां निक्षिप्य मन्दमध्यखराग्निभिर्वालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्वा खल्वे निक्षिप्य मृगमदः, गोरोचना, चन्द्रसारः, एतान्येकैकतोलकान्यौषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा वटी कृत्वाऽनुपानविशेषैः सकलरोगेषूपयोजनीया । अज्ञातनद्धमूलरोगा सर्वे नश्यन्ति। (व्यास०)

७२ बाल्यमान्द्यहरतैलम्

शुद्धैरण्डबीजतैल ४० तोलक, कामकस्तूरिकापत्ररस (मरुवक) ■ पल, शिग्रुरक्तश्वेतपुनर्नवापुष्करत्वग्ब्राह्मीपत्ररस २-२ पल, औदुम्बरत्वक्कामरूनटमराहस्वरस ४०-४० तोलक, एतान्सर्वानपि रसान् तैले निक्षिप्य जातीफल, जातीपत्र, मायाफल, कर्कटशृङ्गी, कुष्ठ, आकारकरभ, शुद्धजयपालश्चैतानि पादतोलकपरिमितानि, लशुन पलाण्डुश्चैकैकपल मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्ध रसकर्पूर, मृगमद, गोरोचन, केसरञ्च प्रतिपादतोलक विपक्वे तैले सयोज्य स्वाङ्गशीतल ग्राह्यम् । बिन्दुचतुष्टय पञ्चक वा रोगबलानुसारेण बालाना दातव्यम् । तन्मात्रे मष्टतिन्तिडी, लवणमिश्रिताम्लादिकाञ्च पथ्यम् । एतेन बालस्य अत्युग्रग्रहादिदोषा निवृत्ता भवन्ति । महाज्वरपित्तश्लेष्मज्वरादिनिवृत्तिश्च भवति। अगस्त्य०

७३ भल्लातकलेहम्

गोमूत्रशुद्धानि भल्लातकानि १० पलानि, चीनहेमक्षीर्यश्वगन्धादारुहरिद्रापिप्पलीपिप्पलीमूलचित्रकमूलत्वक्कृष्णजीरकहरीतकीकुष्ठानि १-१ पलानि, शुष्कनारिकेलमज्जा २ पला, निस्तुषास्तिला १८ तोलका, शुद्ध रसकर्पूर ■ पादद्वितोलक, तालगुडं ५ पल गृहीत्वाऽऽदौ भल्लातकानि नारिकेलेन सहाष्टदले लेहानुरूप विधेयम् । बदरीफलप्रमाण मण्डलपर्यन्त प्रत्यह द्विकाले सेवनीयम् । अनेन कुष्ठशल्यव्रणग्रन्थिगुल्ममेहशूलश्वेतपीतरक्तादिरोगा सर्वे नश्यन्ति । तिन्तिडीरस, धूमपानं वातला मांस्यपदार्थां स्त्रियश्च वर्जनीया । पथ्यं रोगानुकूलम् । (अगस्त्य०)

७४ भल्लातकीवटी (भल्लमनीमल्लातकी)

शुद्धभल्लातकबीजानि १० पलानि, चित्रकमूलत्वक्, चीनक्षमक्षीरी, श्वेतहरिद्रा (तेलुपिप्प), अश्वगन्धा, शरपुङ्खमूल, वरुणत्वक् दारुहरिद्रा, गजपिप्पली, क्षुद्रपिप्पली, हरीतकी वाकुचा, कुष्ठश्च १-१ पलं, शुष्कनारिकेलखण्ड २ पलं, तालगुड ५ पल, कृष्णतिला ५पला, रसकर्पूरं वरदश्च प्रतिसपादतोलकं गृहीत्वा भल्लातकाना नारिकेलखण्डानं कृष्णतिलैश्च सह कल्क विधाय दोषद्रव्याणा चूर्णं तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकर्पूरञ्चापि मिश्रयित्वा लोहमुद्गरेण सम्यक् संकुट्य स्निग्धरूपतामापाद्य मण्डलपर्यं तमरिदैःशानप्रमाण सेवनीयम् । एतेन कुष्ठानि, वङ्क्षणादिसन्धिग्रन्थय शूलगुल्मस्रुतिकावातसद्व्रणरोगा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपानस्त्रीसंसर्गमादकद्रव्यापसेवनानि दूरतस्त्याज्यानि । पथ्य रोगोचितम् (व्यास०)

७५ भूपतिगुटिका (प्रथमा)

शुद्धगन्धकं २ पल, पारदहरदरससिन्दूरसव्वीराणयेकैकपलानि चूर्णीकृत्य काचकूपिकाया निक्षिप्य क्रमाग्निना यामचतुष्टय पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम् । एतद्भूपतिगुटिकात एकपलमात्र खल्वे निक्षिप्य १।।। तोलक गोरोचन केशरञ्च नवाणक मिश्रयित्वा स्तन्येन, ताम्बूलीदलेन कृष्णतुलसीपत्ररसेन च प्रत्येकयामं मर्दयित्वा गुञ्जाप्रमाणा वटीं विधाय मधुना सह सेवनात्सन्निपातादयो रोगा निवर्तन्ते । रोगोचितं पथ्यम् । (अगस्त्य०)

७६ भूपतिगुटिका (द्वितीया)

सुवर्णरजतवङ्गनागाऽयोमुक्तामाणिक्यभस्मानि, शुद्धगंधकपारदमन शिलातालकमृद्दारशृङ्गविषाणि प्रत्येकतोलकानि प्रातरारभ्य सायं पर्यंत विचूर्ण्य जम्बीररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां वमित्वा वराटसम्पुटितां कृत्वा ससमृत्तिका विधाय वितस्तिप्रमाणगर्त पुटा देय । स्वाङ्गशीते तत्समं शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वय विमृद्याऽहुल्मानां वटीं कृत्वा छायाशुष्का विधाय स्तन्याऽनुपानेन तण्डुलप्रमाणमौषध सेवितं सत् सापदपस्मारादिसन्निपातान्नाशयति । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन निर्जीवोऽपि सजीवो भवति । (व्यास०)

७७ मण्डूरवटकः

पादांशाऽष्टमदग्धे गोमूत्रे त्रिफलादारुहरिद्रे ४-४ पले निक्षिप्य मार्कवनागहस्तिद्व ९० तोल्क, पञ्चशोधितमण्डूरचूर्णं ९० तोल्क, वातघ्नचूर्णं ४१ तोल्क एतत्त्रयमपि गोमूत्रे निक्षिप्य शोषणपर्यंत पाकं विधाय विडङ्गनागरभृङ्गमूलचित्रकमूलयवक्षपिप्पलीवेगर्भामरिचाना प्रत्येकपलानामष्टमागाऽवशेषं क्वाथं कृत्वा तेन दिनद्वयं मर्दयित्वा पादतोलिका वटी कुर्यात् । एतत्क्वाथेन सह सेवनीयाऽथवा चतुर्गुणितपञ्चमूलगोमूत्र मण्डूरप्रक्षेपं विधाय तेन प्रत्यह २० दिनपर्यन्तं सेवनीय । आर्द्रकखण्डयूषान्नं पथ्यम्। एतेन पाण्डुक्षयाङ्गवातगुल्मोदरप्लीहाद्या निवर्तन्ते । अम्लरसधूमपानादिकञ्च त्याज्यमुष्णोदक पेयम् (व्यास०)

७८ महामेहान्तकरसायनम्

शोधितचान्द्रमर्गारी (परङ्गिवशा) चूर्णं १० पल, गोक्षीरगुडूचीत्वग धात्रीफल भाङ्गीमरिचाक्ष यामुण्ड चूर्णं ०-१ पल, वङ्गभस्मकम्बाहुमिश्रं गन्धक पारदभस्म

पत्रत्वक्कोलाऽऽकारकरभराम्नालवङ्गजातीफलनाग केशरजटामांसीपुष्करकन्दश्रीचन्दननालीकदोशीरमू-लत्रिफलागजपिप्पलीत्रिकटुकचव्यकपित्थमूलानां व-स्त्रशोधितं चूर्णं १–१ पलं, गोक्षीरेण कल्कीकृताः खर्जूरीफलवातामखाखसद्राक्षाप्रियालमज्जानः ५–५ पलाः, चन्द्रसारं, केशरं, रोचना, अय.सिन्दूरं, स्वर्णर-जततनुपत्राणि, कान्तसिन्दूरं, एलाबीजानि सुचूर्णि-तानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा एकस्मिन्पात्रे षष्ट्युत्तरशततोलकं गोक्षीरं, अशीतितोलकञ्च शत-पत्रार्कं निक्षिप्य १२० तोलिकां सितोपलां मिश्रयित्वा विपचेत्। पाकं विधाय सर्वमपि पूर्वोक्तं चूर्णं कल्कञ्च मेलयित्वा ६० तोलकं गोघृतं, ९० तोलकं मधु च निक्षिप्य सुवर्णगोरोचनसिन्दूरादिवस्तूनि सर्वाण्यपि यथोचितं निधाय शिवशक्तिपूजां कृत्वा लेह्यं ग्राह्यम्। प्रत्यहमामलकप्रमाणमेकमण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिमेहधातुज्वरमांसगतज्वराऽङ्गदाहादि-विकारैः सह नश्यन्ति । कपालकुष्ठाऽतिसारनीलमे-हदद्रुपामादयो निर्मूलतां यान्ति। (व्यास०)

टि०—अगस्त्य नटामासी त्रिकटुचन्द्रसारा न दृश्यन्ते मृगमदश्च सपादतोलकोऽधिकतया निक्षिप्त । वासिष्ठे चन्द्रसार कस्तूरिका चेति द्वयमपि निक्षिप्तमन सर्वमपि सङ्कलय्यैक एव पाठ सम्पादनीय ।

७९ महालवणक्षारः (गुप्तगुप्तम्)

ऊपरक्षाररसकर्पूरे प्रति २० पले, मयूरतुत्थना-गाऽमलसारगन्धकरक्तमनःशिलादरदोत्थपारदानां प्रतिचतुष्पलानां नीलवर्णां कज्जलीं कृत्वा जम्बीररसेन चतुर्यामं विमृद्य चीनपात्रे निक्षिप्य रात्रौ नीहारे विन्यस्याऽरुणोदयात्प्रागेवाध.पात्रे प्रसृतजलमन्य-स्यां काचकूपिकायां निधाय मुखमुद्रां कृत्वा स्थाप-येत् । दिवा चीनपात्रं निर्वातस्थाने संरक्ष्य रात्रौ नीहारे संस्थाप्याऽवशिष्टद्रवो ग्राह्यः। एवं पञ्चषाणि दिनानि यावज्जयरसग्रहणपर्यन्तमनुष्ठेयम्। तदन्वेत-स्मिन्द्रवे रसकर्पूरशकलं निमज्योन्मज्य चण्डातपे शोषितं सद्वज्रं भवति । एवं पत्रतालकमप्यातपशो-षितं सद्धवलवर्णं भवति । त्रितोलके हंसपाददरदे खर्परे विन्यस्याऽनेन जयनीरेणाऽष्टयामपर्यन्तं ग्रासे दत्ते बद्धं सत्सिक्थं भवति। एतद्दरदसिक्थकमर्धमु-द्गप्रमाणं मधुना सेवितं सदन्तकाले कण्ठाऽवरुद्ध-श्लेष्मसान्निपातिकशूलपक्षवातकफरोगादिकान्नाशा-यति। अपि चोपरक्षारशिलासुधे प्रत्यशीतितोलके महति भाण्डे निधाय द्रोणचतुष्टयं बालकमूत्रं निक्षिप्य सप्ताहमातपे निधाय निर्मलं जलं प्रगृह्य क्षारं निष्पाद्य पुनरपि बालकमूत्रे निक्षिप्य पूर्ववत्क्षारं गृह्णी-यादेवं पञ्चवारं कृते कुन्देन्दुसदृशं दिव्यं लवणं सम्पद्यते । एतल्लवणं चीनपात्रे निक्षिप्य दिनद्वयं शोषयित्वा खल्वे जम्बीराद्द्रियामद्वयं विमृद्य चक्री-कृत्य छायाशुष्कं विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा अष्टभिर्दशभिर्वोत्पलकैः पुटं दद्यात् । पुनः पूर्वोक्त-जयनीरेण सह यामचतुष्टयं विमृद्य दशदिनपर्यन्तमा-तपे शुष्कमेतद्गुरुसुन्नमित्युच्यते। एतच्च श्रीदेवीसन्नि-धावाघायोपचारैरभ्यर्च्य शाकान्नपायसान्नादिभिः सुवासिनीब्राह्मणादीन्सन्तर्प्य श्रीत्रिपुरागणेशभैरव-महादेवाऽगस्त्यसिद्धगुरूंश्च सम्पूज्य रोगेषूपयोज-नीयम्। एतल्लवणं रसोपरसमारकं भवति। रसपा-षाणलोहादयो बद्धा भवन्ति। अनायासेन भस्मसि-न्दूरलवणादिरूपतामापद्यन्ते पारदश्च घनीभूय बद्धो भवति।

अथ रोगेषूपयोगप्रकारः—शुद्धपारदवत्सनाभग-न्धकसुवर्णपत्राणि प्रत्येकपलानि, पूर्वोक्तमहालवणक्षा-रश्चार्धतोलकं मेलयित्वा जम्भाम्भसा चतुर्यामं विमृद्य सावधानतया शोषणचूर्णादिकं कृत्वा दृढकाचकूप्यां निक्षिप्य वालुकायन्त्रे क्रमाग्निनाऽष्टौ यामान्पचेत्। श्रीयालाम्बां सम्पूज्य दीनाऽनाथसाधून् सन्तोष्य कूपिकां स्फोटयित्वा सिन्दूरवर्णं महालवणं ग्राह्यम्। एतेन सर्वे रोगा निवर्तन्ते । एतत्तण्डुलपरिमा[ण] मधुना सह षण्मासपर्यन्तं सेवितश्चेत्कायसिद्धिर्भव[ति] गोघृतेन सह कुष्ठमूलमेहश्विनमधुमेहबहुमूत्रमूत्रकृ-च्छ्रमेहग्रन्थिसोपद्रवोपदंशभगन्दरपक्षाघातरुद्रयाता-दिमहारोगा निर्मूला भवन्ति । दिव्यशरीरं भवति मृत्युर्निवर्तते। मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम्। यद्वा पूर्वोक्त लवणक्षारः, शुद्धपारदः, रसकर्पूरं, दशदीक्षादीक्षित सौरक्षार', नरसारश्चैतान् प्रत्येकपलिकान् विचूर्ण्य श्वेतार्कक्षीरमिश्रितेन कुष्कुटाण्डश्वेतद्रवेण मेल-यित्वा चीनपात्रे निधाय घनातपे एकदिनपर्यन्तं स्थाप-यित्वा खल्वे यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रिकां कृत्वा विशोष्य शरावसम्पुटितं विधाय सप्त मृत्कर्पटान्कृत्वा पञ्चोत्पलकैः पुटं दद्यात्। एतस्य नितरां तीक्ष्णसुधा (कारसुन्नं) भवति। एवं तीक्ष्णसुधां खल्वे निधाय रसकर्पूररसकर्पूरे प्रतिसार्धतोलके मेलयित्वा तेनैव (श्वेतार्कक्षीरमिश्रितेन कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण) याम-चतुष्टयं विमृद्य चक्रीकृत्य शोषयित्वा शरावसम्पुटितं विधाय षड्भिरुत्पलकैः पुटं दद्यात्। एतद्दिव्यं क्षारं भवति। पुनः पूर्ववन्मर्दनसमये वीरं, पूरं, चन्द्रसारं, सुगन्धमार्जारिकामदं प्रत्येकतोलकं मेलयित्वा कुक्कु-टाण्डश्वेतद्रवेणैव यामचतुष्टयपर्यन्तं मर्दयित्वा शरा-वसम्पुटितं विधाय शिवशक्तिगणेशपूजापुर.सरं दशो-त्पलकैः पुटं दद्यात्। एतद्दिव्यतरो लवणक्षारो भवति सर्वौषधेषु योगवाहि सत्सकलरोगान्नाशयति । (व्यास०)

८० महावीरद्रावकम्

शुद्धं सर्वीरं, सूर्यक्षारश्च १-१ पलः, स्फटिका ४ पला चूर्णीकृत्य नलिकायन्त्रविधानेन द्रवो ग्राह्यः। बिन्दुद्वयं मधुना सह सेवितं सत् कृष्णमेहसन्धिबन्धपार्श्ववातमहोदरादिव्याधीन्नाशयति। श्वेताऽजामांसशाकेन सह बिन्दुष्टकपरिमितं जले निक्षिप्य पीत्वा पुनः पूर्वोक्तमांसशाकाहारः कार्यः। मांसद्वेषिणां त्रिचतुरमाषवटकाननुपाने योजयित्वौषधं ग्राह्यम्। पुनश्च त्रिचतुरान्माषवटकान्भक्षयेत्। अनेन पूर्वोक्तव्याधयो निवर्तन्ते। (अगस्त्य०)

८१ माहेन्द्ररसः

पारदः, गन्धकः, विषं, टङ्कणं, तालकं, ताम्रभस्म, शुद्धजयपालाः, नागरं, पिप्पली, मरिचं, हरीतकी, आमलकी, बिभीतकी चैतानि समभागानि भृङ्गराजरसेन दिनद्वयं विमृद्य मरिचप्रमाणां वटीं मधुना सह सेवेत। प्रबलव्याधिषु विष्णुक्रान्ताकिराततिक्तकतिक्तपटोलचित्रकमूलाऽमृताव्याघ्रीपिप्पलीमूलनागरमरिचमुशलीकपिकच्छुबीजखाखसरूष्णवत्सूलबीजानि धत्तूराऽहिफेने चैतानि सर्वाणि समभागानि चूर्णीकृत्य समभागां सितोपलां मेलयित्वाऽर्धतोलकपरिमिते चूर्णे माहेन्द्ररसवटीं संयोज्य मधुना सह सेवनीयम्। पञ्चतोलकं क्षीरमनुपेयम्। अनेन धातुवृद्धी रक्तपुष्टिश्च भवति। (अगस्त्य०)

८२ मेहकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकतालकटङ्कणशङ्खविद्रुमशुक्तिकास्फटिकाभस्मानि शुद्धं विषञ्च प्रत्येकपलिकं गृहीत्वा कन्याजम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं मर्दयित्वा चक्रिकां निर्माय्याऽऽदिनपर्यन्तं शोषयित्वा वल्मीकमृत्तिकोत्पलभस्मतुषमिश्रितेन निर्मितायां वितस्तिपरिमितसुपरिपक्वमृद्धण्डिकायां कुमारीत्वक्शकलान्यर्धभागपर्यन्तमास्तीर्योपर्येनां चक्रिकां स्थापयित्वा शेषमर्धभागमपि तैरेव शकलैः परिपूर्य शरावसम्पुटं दत्त्वा द्वादशमृत्तिका विधायाऽऽदिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा चुल्ल्यामधिष्ठाप्य तिक्तकोशातकीशुष्कतृणेन क्रमाऽग्निनाऽऽयामपर्यन्तं पाकः कार्यः। स्वाङ्गशीतामुद्घाट्य यत्किञ्चिदपि तस्यामुपलभ्यते तत्सर्वमप्याहृत्य खल्वे निक्षिप्य स्वर्णतनुपत्राण्यर्धतोलकानि, मुक्ताविद्रुमचन्द्रसारमृगमदद्राक्षाऽऽकारकरभतनुरजतानि प्रत्यर्धतोलकानि चूर्णीकृतानि पूर्वोक्तौषधे मेलयित्वा स्तन्येन, कृष्णतुलसीरसेन, मधुरदाडिमीफलरसेन च प्रत्येकेन यामचतुष्टयं विमृद्याऽर्धरक्तिकामिता वटीः कृत्वा तुरुष्कधूमेन शोषयेत्। देवीभैरवीविनायकादिपूजां कृत्वा ब्राह्मणेभ्योऽन्नं दत्त्वैकां वटीं मधुना, स्तन्येन तत्तद्रोगानुपानेन वा दद्यात्। व्याघ्रीचूर्णेन लेहेन वा मेहरक्तक्षयश्वासकासकफवातक्षयादयः सर्वे नश्यन्ति। अश्वगन्धालेहेन अस्थिगतशल्याऽऽगतपुराणज्वरा नश्यन्ति। तत्तद्रोगहरक्वाथेन चतुष्पष्टिज्वरा नश्यन्ति। वासापत्ररसेन ताम्बूलदलरसेन वा सेवितं सत्कामसुद्दीपयति। श्रीचन्दनक्वाथेन रक्तपित्तं, मधुमिश्रितदारुहरिद्राचूर्णेन मेहरोगा अम्लपित्तश्च, शर्करामिश्रितमरिचचूर्णेनाऽजीर्णरोगो निवर्तते। प्रत्यहमपि स्तन्येनैकवर्षपर्यन्तं सेवितश्चेद्दशनागबलो भवति। (व्यास०)

८३ मृगाङ्करसः (महाराजादिः)

स्वर्णरजतताम्रपारदगन्धकतालकदरदमनःशिलारसकभस्मानि समभागान्यादाय पीतभृङ्गरसेन दिनद्वयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य दशोत्पलकैः पुटो देय। तदनु मधुरदाडिमीपुष्परसेन कृष्णतुलसीस्वरसेन च प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कचक्रिकोपरि पादोनतोलकमार्जारिकामदेन (पुनुगुपिल्लीमदेन) कवचं दत्त्वा द्वाभ्यामुत्पलाभ्यां पुटो देयः। पुनः स्तन्येन यामद्वयं विमृद्य छायाशुष्कं विधाय चीनपात्रे स्थापयेत्। एतत्तण्डुलपरिमाणं सेवितं सत्सकलरोगान्नाशयति। अथैतदनुपानचूर्णम्—आरग्वधसारिवामूलत्वक्श्रीचन्दनमुञ्जातकभद्रमुस्तानां चूर्णमेकैकपलं गृहीत्वा वस्त्रपूतं समाचरेत्। अर्धतोलकेऽस्मिंश्चूर्णेऽर्धतण्डुलं रसं मेलयित्वा मधुना सह सेवनीयम्। अनेन कालमेहमेहग्रन्थिमधुमेहबहुमूत्रादिरोगा अष्टादश कुष्ठानि निवर्तन्ते। पूर्वोक्तप्रकारेण पुटत्रयसिद्धमौषधं शतपत्रार्केण यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य विंशदुत्पलकैः पुटं विधाय चित्रकक्वाथेन यामद्वयं विमृद्य पादतोलकं मृगमदं मेलयित्वा स्तन्येन विमृद्य मुद्गप्रमाणा वटीः कृत्वा रजतसम्पुटे स्थापयेत्। अनुपानविशेषैः सकलवातव्याधिषूपयोजनीयोऽयं महाराजमृगाङ्कः। (व्यास०)

८४ रजतभूपतिरसः (प्रथमः)

रजतताम्रमनःशिलाभस्मानि, शुद्धगन्धकः पारदश्च प्रत्येकपलः, कान्तभस्म चैतच्चेति प्रत्यर्धपलं गृहीत्वा चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वाऽऽतपे विशोष्य काचकूपिकायां निक्षिप्य मुखबन्धनं कृत्वा वालुकायन्त्रविधानेन गणेशपूजापुरःसरं दीप्ताग्निना याम चतुष्टयं पाकं कुर्यात्। एतत्पादगुञ्जापरिमितं मधुना सह सेवितं विंशतिमेहान्शीतियातविकारानष्टौ

गुल्मांश्चाऽनुपानभेदान्नाशयति । भूकूष्माण्डमुञ्जातककुमारीमूलवातामसुशलीकपिकच्छुबीजखाखसकृष्णबब्बूलबीजवराङ्गाऽहिफेनानि समभागानि चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितश्चेचिरतरां धातुवृद्धिलिङ्गोत्थापनमनेकस्त्रीरमणशक्तिश्च सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (अगस्त्य०)

८५ रजतभूपतिरसः (द्वितीयः)

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, यशदलवणपारदकान्तभस्मानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमल्लगन्धकतालफहस्फटिकारससिन्दूराणि प्रत्येकं द्वादशकर्षमितानि चूर्णीकृत्याऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य दशोत्पलकैः पुटो देयः । स्याङ्गशीतौषधस्य मर्दनसमये मृगमदकेशरगोरोचनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य माषप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकैका वटी मधुना सह सेविता चेत्सूतिकाच्छवाताऽऽनन्दज्वर (पैशाचिकज्वरः) मेहवातादयो निवर्तन्ते । स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति । (व्यास०)

८६ रसकर्पूरवटी

यामद्वयं वज्रीदुग्धस्य दत्तग्रासं रसकर्पूरं त्रिकटूनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कार्याः । एकैका वटी मधुमिश्रितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहवातान्नाशयति । बालानामप्युपयोजनीया । वातपदार्था वर्ज्याः । (अगस्त्य०)

८७ रसगुटिका (महती)

रसकभस्म ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलायद्वकपरिमितं, मल्लपाषाणं कलाद्वयं, मयूरतुत्थपारदाघर्द्धाऽर्द्धतोलकौ गृहीत्वा खल्वे निक्षिप्य क्षुद्रकारवेल्लफलरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्गप्रमाणां वटीं कृत्वा पुराणतालगुडेन निर्गिलेत् । चातुर्थिकाद्यः पलायन्ते । क्षीराद्यं, गोधूमखण्डयूपश्चानुकूलः । अन्यत् किमपि न दातव्यम् । (अगस्त्य०)

८८ रसभूपतिः (प्रथमः)

शुद्धपारदो दरदभस्म च २-२ पलं, रससिन्दूरतालकमनःशिलाताम्रभस्मानि १-१ पलानि, शुद्धोऽमलसारगन्धकः ४ पलाः, एतत्सर्वमपि चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा पुनश्चूर्णीकृत्य गङ्गोदककाचकूपिकायां निक्षिप्य घनतया सप्त कर्पटमृत्तिका विधाय मृन्मयपात्रे वालुकायन्त्रविधानेन यामत्रयं क्रमाग्निना पाकं कुर्यात् । काचकूपीं स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्तं ग्राह्यम् । एतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमाणेन वा स्तन्येन सेवितं सत्त्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रककाथेन सर्ववातान्, त्रिकटुना हृच्छूलादीन्, अतिविषाक्काथेन सङ्ग्रहण्यतिसारादीन्, कृष्णताम्बूलीदलरसेन श्लेष्मावरोधमूर्द्धश्वासञ्च, त्रिफलाकाथेनोष्णज्वरान्, यवानीकाथेनाऽतिदाहं, स्तन्यमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन कण्टकजिह्विकासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वान्रोगान्नाशयति । तत्तद्व्याध्यनुसारेण पथ्यक्रमो ज्ञेयः । (अगस्त्य०)

टि०—अस्मिन्योगे तुलसीरसेन मर्दनं द्रव्येषु चाऽयोभस्माऽपि मेलनीयमिति व्यासप्रोक्ते वैद्यकशास्त्रे अधिकं दृश्यते तस्याऽनानुष्ठानं कृत्वा एक एव योगो निष्पादनीयः

८९ रसभूपतिः (द्वितीयः)

शुद्धविषपारदगन्धकजयपालबीजानि, त्रिकटुकरामठे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रककाथेन सप्तदिनावधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवेत । अनया श्वासकासयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुत्थं दिनत्रयं मधुनि भावयित्वा कारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मूषां निर्माय तस्मिन् रजनीकृष्णधत्तूरकारवेल्लपत्रस्वरसगृहधूमेष्टिकाचूर्णनरसारविषैर्दिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं चाङ्गेरीपत्र (पुलिचिन्ताकु) कल्केन सह निक्षिप्य समभागवल्मीकमृत्तिकाशणपट्टसूत्रशिलासुधानां श्लक्ष्णपिष्टानां मूषोपरि कवचं दत्त्वा दिनचतुष्टयमातपे विशोष्य १८० तोलकधान्यतुषमध्ये निर्वातस्थाने रात्रौ पुटं दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत् सिन्दूरं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना, नवनीतेन वा सकलामयेषु प्रयोज्यम् । वज्रदेहो भवति । (व्यास०)

९१ रसानन्दभैरवरसः

शुद्धदरदं ४ पलं, टङ्कणं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं, पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्रकरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य माषमितां वटीं छायाशुष्कां विधाय मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसानुपानेन सन्निपातज्वरेषूपयोक्तव्यम् । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९२ राजव्रणतैलम्

पुरुषगलगोडिका (मगतोण्डा. तै०, गिलहरी. हिं०) एका, रसकर्पूरकृष्णखदिरसारग्रन्थिमुस्त-

कानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैलं ४० तोलकं गृहीत्वा द्रव्यचूर्णेन सह तैलं विपाच्य चर्मान्त्रवक्षोऽस्थिवर्ज्यां गलगोडिकां निक्षिप्य पाकः कर्तव्यः। सिद्धे पाके तन्मांसखण्डादिकं बहिर्निष्कासनीयम् । एतत्तैलेन राजव्रणस्याऽऽसनव्रणानाञ्च लेपनं कर्तव्यम् । मुद्गखण्डपरिमाणं शर्करया सह सेवनीयम् । अम्लरसः सुतरां वर्ज्यः । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९३ रुद्रमतापरसः

शुद्धसब्बीरगौरीकामुंगिलमूषिकमल्लपाषाणानि, तालकगन्धकपारदविषाणि च प्रतिसपादतोलकानि गृहीत्वा सेहुण्डक्षीरकृष्णनिर्गुण्डिकारवेल्लरक्तकार्पासनीलीमूलघनशिम्बीपत्रस्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य पञ्चोत्पलकैः पुटं दत्त्वा विद्रुमसुशल्यौ २-२ तोलके, आरग्वधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य भस्मनि संयोज्य १० पलायाः शर्करायास्तन्तुलीं विधाय यथोचितं घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यङ्मिश्रयित्वा लेहपक्वं ग्राह्यम् । एतत्प्रत्यहं द्विवारमरिष्टबीजप्रमाणं सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिर्मेहा, मूत्रकृच्छ्रमेहक्षयशल्यगतमेहाश्च निवर्तन्ते । अत्र लेहे सुवर्णरजतमुक्तानामन्यतमं भस्म मेलयित्वा सेवने कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरसकर्पूररससिन्दूरदरदतालकान्येकैकतोलकानि (मिरपगण्ड्रा) भृङ्गराजेक्षुरक . . (चेकुणित्याकु) पत्ररसैः प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य १२ उत्पलकैः पुटो देयः । एतदौषधं पूर्वोक्तरुद्रमतापरसञ्च प्रतितण्डुलपरिमाणं मधुनि मिश्रयित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्गप्रमाणमौषधद्वयमपि बालानां गर्भवायुव्याधौ स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा देयम् । हरिद्रौपदंशबहुमूत्रादिव्याधिषु केवलनवनीतेन तालगुडमिश्रितेन वा देयम् । शर्करया हृच्छूलपित्तवायवः, नवनीतेन शरीरोष्णाधिक्यं, त्रिकटुकचूर्णेन सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तविभ्रमः, त्रिफलाक्वाथेनाऽर्शोव्याधयः, बिल्वादिलेहेन पित्तपाण्डुत्वादयो रोगा नश्यन्ति। रोगानुसारेण पथ्यक्रमः। (व्यास०)

९४ रौद्ररसः

शुद्धगन्धकटङ्कणविषाणि, नरमूत्रस्वेदितं मूषिकपाषाणञ्च गृहीत्वा जम्बीररसेन पञ्चयामपर्यन्तं विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीश्छायाशुष्का विधाय शीतज्वरसन्निपातवातज्वरादिषु देयाः। (व्यास०)

९५ वङ्गसिन्दूरम्

पूतिकरञ्जतैले गोमये च प्रत्येकादशवारं निर्वापितं ५ पलं वङ्गं मृत्पात्रे गालयित्वा तण्डुलीयकमूलखण्डानि किञ्चित्किञ्चिन्निक्षिप्य कुमारीकन्देन यामचतुष्टयं घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुनः खल्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा कुक्कुटपुटं देयम् । एवं पुटत्रयेण सिन्दूरं भवति । एतत्तण्डुलप्रमाणं मधुना सेवनीयम् । अथैतस्याऽनुपानचूर्णम्= मुञ्जातक (सालममिश्री) शाल्मलीमूलत्वग्यष्टिमधुककोकिलाक्षबीजवराङ्गाऽर्जुनत्वक्खाखसानि प्रत्येकं द्विपलानि, आड्डुलि (तंगेडु) मूलत्वक्पुष्पञ्च प्रति दशपलं छायाशुष्कं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य समभागां शर्करां मिश्रयित्वाऽर्द्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवङ्गसिन्दूरेण सह नवनीतेन दिनत्रयं सेवनात्सुरामेहादमरीशल्यगतमेहतैलमेहमूत्रकृच्छ्रेन्द्रियस्खालित्यमेहदारुणादयोऽर्द्धमण्डलसेवनात्क्षिप्रमूलतां यान्ति । मुद्गमापवटकाः, रम्भापुष्पं, भिण्डिका, गोक्षीरं, घृतमजामांसञ्च पथ्यम्। अन्यदपथ्यम्। (अगस्त्य०)

९६ वातकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकविषटङ्कणतालकजयपालबीजानि, लवङ्गत्रिकटुत्रिफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रकरसाभ्यां प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य मरिचाभां वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन मधुना सह सकलपित्तज्वरेषूपयोजनीयम्। पथ्यं रोगानुरूपम्। (व्यास०)

९७ विषभैरवीरसः

शुद्धविषदरदटङ्कणनागरमरिचपिप्पलीलवङ्गजयपालान् समभागान् जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मरिचप्रमाणमात्राः कृत्वा छायाशुष्का विधाय मधुना मरिचक्वाथेन वा सह सेवितं सद्रेचनं रेचयति। त्रिरावृत्ते दत्ते ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्यं यथोचितम्। (अगस्त्य०)

९८ विषमसङ्ग्रहणीकपाटरसः

शुद्धदरदटङ्कणगन्धकविषमरिचकृष्णधत्तूरबीजानि समभागानि भङ्गाक्वाथेन द्वादशयामं मर्दयित्वा गुञ्जामात्रा वटीः कार्याः।अतिविषचूर्णेन मधुना चैका वटी सेविता चेद्ग्रहण्यतिसारादीन्नाशयति। निम्बकुसुमं, मेथिकाचोष्यं, रम्भाकुसुमं, औदुम्बरफलं, शुष्कतिन्तिडीपत्रञ्चाऽनुकूलम्। (अगस्त्य०)

९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकरामठसैन्धवजयपालवङ्गैलाबीजानि समभागानि ताम्बूलीदलरसेन दिनद्वयं विमृद्य छायाशुष्काङ्गुलप्रमितां वर्तिं विधाय ताम्बूलरसेन जम्बीररसेन वा सन्निपातरोगिणामञ्जनं देयम् । (व्यास०)

गुल्मांश्चाऽनुपानभेदान्नाशयति । भूकूष्माण्डमुशातककुमारीमूलवातामसुशलीकपिकच्छुवीजरास्नारसकृष्णचन्द्रमूलवीजवराङ्गाऽहिफेनानि समभागानि चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितश्चेचिरतरां धातुवृद्धिलिङ्गोत्थापनमनेकस्त्रीरमणशक्तिश्च सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (अगस्त्य०)

८५ रजतभूपतिरसः (द्वितीयः)

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, वङ्गलवणपारदकान्तभस्मानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमल्लगन्धकतालककृष्णनागसिन्दूराणि प्रत्येकं द्वादशकलामितानि चूर्णीकृत्याऽऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य दशोत्पलकैः पुटो देयः । स्वाङ्गशीतौषधस्य मर्दनसमये मृगमदकेशरगोरोचनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य माषप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकैका वटी मधुना सह सेविता चेत्सूतिकाक्षवाताऽऽनन्दज्वर (पैशाचिकज्वरः) मेहवातादयो निवर्तन्ते । स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति । (व्यास०)

८६ रसकर्पूरवटी

यामद्वयं वज्रीदुग्धस्य दत्तग्रासं रसकर्पूरं त्रिकटूनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कार्याः । एकैका वटी मधुमिश्रितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहवातान्नाशयति । बालानामप्युपयोजनीया । वातपदार्था वर्ज्याः । (अगस्त्य०)

८७ रसगुटिका (महती)

रसकभस्म ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलाषट्कपरिमितं, मल्लपाषाणं कलाद्वयं, मयूरतुत्थपारदावर्द्धाऽर्द्धतोलकौ गृहीत्वा खल्वे निक्षिप्य शुद्धकारवेल्लफलरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्गप्रमाणां वटीं कृत्वा पुराणतालगुडेन निगिलेत् । चातुर्थिकादयः पलायन्ते । क्षीरान्नं, गोधूमखण्डयूषश्चानुकूलः । अन्यत् किमपि न दातव्यम् । (अगस्त्य०)

८८ रसभूपतिः (प्रथमः)

शुद्धपारदो दरदभस्म च २-२ पलं, रससिन्दूरतालकमन.शिलाताम्रभस्मानि १-१ पलानि, शुद्धोऽमलसारगन्धकः ४ पल., एतत्सर्वमपि चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा पुनश्चूर्णीकृत्य गर्भादरकाचकूपिकायां निक्षिप्य घनतया सप्त कर्पटमृत्तिका विधाय मृन्मयपात्रे वालुकायन्त्रविधानेन यामत्रयं क्रमाग्निना पाकं कुर्यात् । काचकूपीं स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्तं ग्राह्यम् । एतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमाणेन वा स्तन्येन सेवितं सत्त्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रकक्वाथेन सर्ववातान्, त्रिकटुना हृच्छूलादीन्, अतिविषाक्वाथेन सङ्ग्रहण्यतिसारादीन्, कृष्णताम्बूलीदलरसेन श्लेष्मावरोधमूर्च्छश्वासञ्च, त्रिफलाक्वाथेनोष्णज्वरान्, यवानीक्वाथेनाऽतिदाहं, स्तन्यमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन कण्ठकजिह्विकासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वान्रोगान्नाशयति । तत्तद्व्याध्यनुसारेण पथ्यक्रमो ज्ञेयः । (अगस्त्य०)

टि०—अस्मिन्योगे तुलसीरसेन मर्दनं द्रव्येषु चाऽऽयोभस्माऽपि मेलनीयमिति व्यासप्रोक्ते वैद्यकशास्त्रे अधिकं दृश्यते तस्याऽनानुष्ठानं कृत्वा एक एव योगो निष्पादनीय

८९ रसभूपतिः (द्वितीयः)

शुद्धविषपारदगन्धकजयपालबीजानि, त्रिकटुकरामठे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रकक्वाथेन सप्तदिनावधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवेत । अनया श्वासकासयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुत्थं दिनत्रयं मधुनि भावयित्वा कारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मूषां निर्माय तस्मिन् रजनीकृष्णधत्तूरकारवेल्लपत्रस्वरसगृहधूमेष्टिकाचूर्णनरसारविषैर्दिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं चाङ्गेरीपत्र (पुलिचिन्ताकु) कल्केन सह निक्षिप्य समभागवल्मीकमृत्तिकाशाणपट्टस्त्रशिलासुधानां श्लक्ष्णपिष्टानां मूषोपरि कवचं दत्त्वा दिनचतुष्टयमातपे विशोष्य १८० तोलकधान्यतुषमध्ये निर्वातस्थाने रात्रौ पुटं दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत् सिन्दूरं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना, नवनीतेन वा सकलामयेषु प्रयोज्यम् । वज्रदेहो भवति । (व्यास०)

९१ रसानन्दभैरवरसः

शुद्धदरदं ४ पलं, टङ्कणं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं, पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्रकरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य माषमितां वटीं छायाशुष्कां विधाय मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसानुपानेन सन्निपातज्वरेषूपयोक्तव्यम् । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९२ राजवर्णतैलम्

पुष्करगल्गोष्ठिका (मगतोण्डा. तै०, गिलहरी. हिं०) एका, रसकर्पूरकृष्णखदिरस्मारप्रियगुरत-

कानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैल ४० तोलक गृहीत्वा द्रव्यचूर्णेन सह तैल विपाच्य चर्मान्त्रवक्षोऽस्थिवर्ज्या गलगोडिका निक्षिप्य पाक कर्तव्य । सिद्धे पाके तन्मासखण्डादिक बहिर्निष्कासनीयम् । एतत्तैलेन राजव्रणस्याऽऽसनव्रणानाञ्च लेपन कर्तव्यम् । मुद्गखण्डपरिमाण शर्करया सह सेवनीयम् । अम्लरस सुतरा वर्ज्य । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९३ रुद्रप्रतापरसः

शुद्धखर्परगौरीकार्मुगिलमूषिकमल्लपाषाणानि, तालकगन्धकपारदविषाणि च प्रतिसपादतोलकानि गृहीत्वा सेहुण्डक्षीरकृष्णनिर्गुण्डिकारवेल्लरक्तकार्पासनीलीमूलवनशिग्रुपत्रस्वरसे प्रत्येक यामचतुष्टय मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका शरावयोरवरुद्ध्य पञ्चोत्पलकै पुट दत्त्वा विद्रुममुक्ताशुक्त्यौ २-२ तोलके, आरग्वधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य भस्मनि सयोज्य १० पलाया शर्करायास्तन्तुलीं विधाय यथोचित घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यङ्मिश्रयित्वा लेहपक्व ग्राह्यम् । एतत्प्रत्यहं द्विवारमरिष्टीजप्रमाण सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिर्मेहा, मूत्रकृच्छ्रमेहक्षयशल्यगतमेहाश्च निवर्तन्ते । अत्र लेहे सुवर्णरजतमुक्तानामन्यतम भस्म मेलयित्वा सेवने कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरसकर्पूररससिन्दूरदरदतालकान्येकैकतोलकानि (मिरपगण्डा) भृङ्गराजेक्षुरक (चेकुणिस्याकु) पत्ररसे प्रति यामचतुष्टय विमृद्य शुष्का चक्रिका शरावयोरवरुद्ध्य १२ उत्पलकै पुटो देय । एतदौषध पूर्वोक्त रुद्रप्रतापरसश्च प्रतितण्डुलपरिमाण मधुनि मिश्रयित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्गप्रमाणमौषधद्वयमपि बालाना गर्भवायुव्याधौ स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा देयम् । हृद्रोगैपदंशग्रहणीमूत्रादिव्याधिषु केवलनवनीतेन तालगुडमिश्रितेन वा देयम् । शर्करया हृच्छूलपित्तवायव, नवनीतेन शरीरोष्णाधिक्य, त्रिकटुकचूर्णेन सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तविभ्रम, त्रिफलाक्वाथेनाऽर्शोव्याधय, बिल्वादिलेहेन पित्तपाण्डुत्वादयो रोगा नश्यन्ति। रोगानुसारेण पथ्यक्रम । (व्यास०)

९४ रौद्ररसः

शुद्धगन्धकटङ्कणविषाणि, नरमूत्रस्वेदित मूषिकपाषाणञ्च गृहीत्वा जम्बीररसेन पञ्चयामपर्यन्त विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीश्छायाशुष्का विधाय शीतज्वरसन्निपातवातज्वरादिषु देया । (व्यास०)

९५ वङ्गसिन्दूरम्

पूतिकरञ्जतैले गोमये च प्रत्येकाद्दशवार निर्वापित ५ पल वङ्ग मृत्पात्रे गालयित्वा तण्डुलायस्मूलखण्डानि किञ्चित्किञ्चिद्विनिक्षिप्य कुमारीकन्देन यामचतुष्टय घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुन खल्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा कुक्कुटपुट देयम् । एव पुटत्रयेण सिन्दूर भवति । एतत्तण्डुलप्रमाण मधुना सेवनीयम् । अथैतस्याऽनुपानचूर्णम्= मुञ्जातक (सालमिश्री) शाल्मलीमूलत्वग्यष्टिमधुककोकिलाक्षबीजवराङ्गाऽर्जुनत्वक्त्वास्थसानि प्रत्येकं द्विपलानि, आहुलि (तगेडु) मूलत्वक्पुष्पञ्च प्रति दशपल छायाशुष्कं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य समभागा शर्करा मिश्रयित्वाऽर्द्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवङ्गसिन्दूरेण सह नवनीतेन दिनत्रयं सेवनात्पुरामेहाश्मरीशल्यगतमेहतैलमेहमूत्रकृच्छ्रेन्द्रियस्खालित्यमेहदारुणादयोऽर्द्धमण्डलसेवनान्निर्मूलता यान्ति । मुद्गमापवटका, रम्भापुष्प, भिण्डिका, गोक्षीर, घृतमज्जामासञ्च पथ्यम् । अन्यदपथ्यम् । (अगस्त्य०)

९६ वातकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकविषटङ्कणतालकजयपालबीजानि, लवङ्गत्रिकटुत्रिफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रकरसाभ्या प्रतियामचतुष्टय विमृद्य मरिचाभा वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन मधुना सह सकलपित्तज्वरेषुपयोजनीयम् । पथ्य रोगानुरूपम् । (व्यास०)

९७ विषभैरवीरसः

शुद्धविषदरदटङ्कणनागरमरिचपिप्पलीलवङ्गजयपालान् समभागान् जम्बीररसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा मरिचप्रमाणमात्रा कृत्वा छायाशुष्का विधाय मधुना मरिचक्वाथेन वा सह सेवित सदेकवारं रेचयति । निरावृत्ते दत्ते ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्य यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९८ विषमसङ्ग्रहणीकपाटरसः

शुद्धदरदटङ्कणगन्धकविषमरिचकृष्णधत्तूरबीजानि समभागानि भङ्गाक्वाथेन द्वादशयाम मर्दयित्वा गुञ्जामात्रा वटी कार्या । अतिविषचूर्णेन मधुना चैका वटी सेविता चेद्ग्रहण्यतिसारादीन्नाशयति । निम्बकुसुम, मेथिकाचाप्य, रम्भाकुसुम औदुम्बरफल, शुष्कतिन्तिडीपत्रञ्चाऽनुकूल्य । (अगस्त्य०)

९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकरामठसैन्धवनयपालवङ्गैलाबीजानि समभागानि ताम्बूलीरसेन निमद्य विमृद्य छायाशुष्कामुद्गप्रमितां वर्तिं विधाय ताम्बूलरसेन जम्बीररसेन वा सन्निपातरोगिणामञ्जन देयम् । (व्यास०)

१०० शङ्खद्रावः (महदादिः) १

स्फटिकासूर्यक्षारौ ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चलदरदसैन्धवसामुद्रकाचलवणरसकर्पूरौपरक्षारान् प्रत्येकपलान् चूर्णीकृत्य मृत्पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः। शीतोदकेन १० विन्दुपरिमितं सेवितं सपित्तवातशूलादीन्नाशयति। पञ्चाद्युत्तमग्निसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४० पला, ऊषरक्षारः १ पलः, चूर्णीकृतानेतान् मृन्मयपात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रवं गृहीत्वा पञ्चपलं पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरीमं द्रवं दत्त्वा दिनचतुष्टयं गाढातपे स्थापनीयम्। शुष्के द्रवे पुनर्द्रवो दातव्यः। एवं पञ्चदिनपर्यन्तं कृते शुद्धं पारदभस्म सम्पद्यते। पारदभस्माऽऽपादकेन वस्तुत्रयमिलितद्रावकेण विन्दुदशकं शीतोदकेन सेवितं कुक्षिहृच्छूललिङ्गदाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकृच्छ्रादिरोगान्नाशयति। मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन वमनहिक्काऽम्लोद्गारपित्तवायुहृद्दाहोदरज्वलनादिरोगा नश्यन्ति (अगस्त्य०)

१०१ शङ्खद्रावः (महदादिः) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शङ्खभस्म ५ पलं, काचनीललवणनरसारटङ्कणसद्योऽपामार्गयवपर्पटस्नुहीक्षारान् तुरुष्कश्चेति प्रत्येकपलिकान् गृहीत्वा खल्वे जम्बीररसेन विमृद्य सम्यग्विशोष्य नलिकादियन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः। अनेन द्रवेण गुल्मप्लीहशूलाऽऽध्मानोदावर्तमूत्राऽवरोधमूत्रविकारस्तब्धवाय्वादयो रोगा निवर्तन्ते। आर्द्रकरसेन विन्दुपञ्चकप्रमाणं सेवितं चेदुदरस्थ पित्तदाहादिकं नश्यति। सर्वे श्लेष्मरोगाऽष्टगुल्मजलोदरादयो निवर्तन्ते। सुवर्णपत्रे विन्दुचतुष्टयमौषधं निक्षिप्य बालानां रक्षाबन्धने कृते श्वासरोगः कदापि नोत्पद्यते। पथ्यं रोगानुरूपम्। (व्यास०)

टि०—नलिकायन्त्रविधानम्—कृतकर्पटमृत्तिके सुपुष्टभाण्डे क्षारद्रव्य निधाय तन्मध्यस्थनाच्छिद्र कृत्वैकां द्वे वा वंशादिनिर्मितनालिके निवेश्य अल्पमुद्रया सन्धीनवरुद्ध्याऽथ तन्तुभि सम्यङ्निबन्ध्य पुनरपि पञ्चपञ्चमृत्तिका प्रलिप्यैवमातपे शुष्कतामापाद्य चुल्यामधिष्ठाप्य चण्डाग्निं प्रदद्यात्। नलिकामुख पात्रे मार्तिके वा घटे निवेश्याऽऽर्द्रेणाऽनार्द्रेण वा वस्त्रेण समावेष्ट्य द्राव गृह्णीयात्। नलिकामल्पमध्यस्य अग्रे निवेशनीयम्। तदधस्थतन्मौम्याऽऽभावाच्च निष्पन्नतीयम्। यदा च घटस्थभूतस्थानि अपरवा द्रवा निःसरिष्यन्ति तदा चटचटायमानशब्द श्रूयते तदा क्रिया समाप्तेति विज्ञाय वह्निं निवर्तयेत्। यत्र तु नलिकाया अभावोऽपि तत्र सुपुष्टमृद्भाण्डस्य ढक्कन् विधाय वस्तुसम्भृतपात्र चुल्लिकायामारोप्य ढक्कनस्य उपरि किञ्चिद्वनेऽन्यत्र निवेशनीयम्। उत्ताप च पूर्ववत्। क्षारादिद्रवीणां च पूर्ववत्। गन्धकादिद्रवा सततावधि वा नोऽत्पतनशीला इत्युक्तेन निःसरिष्यन्ति। यत्र तु केवलगन्धस्य गन्धाधिकभागस्य वा द्रव्यस्य निःसारयितुमिच्छा चेत्तर्हि भाण्ड नलिका चेत्येतद्द्वयमपि काचन भवितव्यम्॥

१०२ सकलविषचोष्यम्

शुद्धपारदगन्धकमल्लतुल्यमनःशिलामरिचकन्द (पामतुण्डगेड्डा. तै०, मिरचियाकन्द. हिं०) रामठनिम्बबीजमञ्जान. प्रत्येकं सपादतोलकं, शुद्धं जयपालबीजं १पलं, एतानि चूर्णीकृत्य श्वेतार्कक्षीरेण यामद्वयं, निम्बतैलेन च यामचतुष्टयं विमृद्य शृङ्गसम्पुटे स्थापयेत्। कालसर्पविषाणां मरिचप्रमाणं कवचीकृततालगुडानुपानेन देयम्। निम्बबीजतैलेन सङ्घृष्य नेत्रयोरञ्जनमपि दातव्यम्। एतेन वमनविरेचनादिकं भवति सर्वविषाणि च निवर्तन्ते। सर्पदष्टानामेतदौषधदाने दिनत्रयमम्लवर्ज्यं पथ्यम्। मनुष्यश्वजम्बुकमूषिकवृश्चिकविषेषु क्षतस्थाने औषधं लेपयित्वाऽग्निना सेकः कार्यः। वृश्चिकमहावृश्चिकविषेषु क्षतस्थाने लेपनमात्रमेव विधेयमन्तर्न दातव्यम्। जम्बुकमूषिकमनुष्यदुष्टसर्पादिदंशेऽन्तर्बहिश्चौषधं योजनीयम्।

अपि च—एकपलं मल्लं शरावे निधाय........ (गाडिदिग्गडपाकु. तै०) रसेन श्वेताऽर्कक्षीरेण च प्रति यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा वृश्चिकदंशस्थाने लेपनीयम्। विषदोषप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, विद्रुमाः, केशरम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकारकरभः, शृङ्गम्, जटामांसी, तक्कोलं, विल्वफलोर्द्धकायः, लवङ्गं, रससिन्दूरं, विम्बीमूलं, यष्टिमधुकं, रास्ना पलाशबीजानि, एला, त्वक्, कुष्ठं, नागकेशरं, द्राक्षा चेति समभागानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य शृङ्गसम्पुटे निधाय पूर्वोक्तविषग्रस्तानां जिह्वादोषप्रशान्तये जिह्वायां घर्षणीयम्। पथ्यं यथोचितम्। (व्यास०)

१०३ सञ्जीविगुटिका

शुद्धविषतालकपारदगन्धकटङ्कणत्रिकटुविभीतकीगोरोचनतुरुष्कान् प्रत्येकमर्धतोलकान्, शुद्धजयपालबीजानि च ४ तोलकानि गृहीत्वा पटपूतं विधाय कर्पूरवल्ली (कप्परल्ली. तै०, पत्रयवानिका), रक्तपुनर्नवा (पुरुगल. तै०) घासातोयपिप्पलीभृङ्गराजतुलसीरसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कुर्यात्। भ्रष्टतुलसीपत्ररसेन सद्यैका मात्रा सेविता चेद्बालकानामपतानकवायुं, सन्निपातदोषं, श्वासकासौ, वायुरोगांश्च नाशयति। (व्यास०)

१०४ सन्निपातभैरवरसः

शुद्धपारदगन्धकटङ्कणतालकजयपालत्रिकटुत्रिफलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धदरदं ४ पलं गृहीत्वा खल्वे ताम्बूलदलरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

कृष्णतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारणज्वरेपूपयोजनीयः । स्तन्येन विषमज्वराः, मधुना पैत्यदोषाः, मरिचक्वाथेन वातज्वराः, मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन पित्तवायवो हृदयज्वलनं सर्वशूलानि च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेषु स्तन्येन, मधुना, ताम्बूलदलरसेन वा सङ्घृष्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिग्रुमूलत्वग्रसेन लशुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपातजनितसप्तदोषेषु प्रयोजनीयम् । तत्तद्रोगबलानुसारेण पथ्यक्रमः कार्यः । (व्यास०)

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुशः) १

शुद्धविषपिप्पल्यावेकैकपले दरदञ्च द्विपलं गृहीत्वा जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकबीजप्रमाणा वटीः कुर्यात् । आर्द्रकरसेन दत्ते सन्निपातादयो निवर्तन्ते । त्रीणि चत्वारि वा दिनानि सेवनीयः । पथ्यक्रमो यथोचितः । (अगस्त्य०)

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुशः) २

शुद्धपारदगन्धकतालकहेममाक्षिकविषताराक्षिकताम्रमल्लभस्माऽभ्रकसिन्दूराणि, सद्य:क्षारनरसारकर्कटशृङ्गिरामठाऽतिविषशुद्धपटोलहरीतकीनागरविजयामुशलीनिम्बनिर्यासाः, सर्वाणि समभागानि काकमाचीरसेन दिनद्वयं विमृद्य जम्बीररसेन च पूर्ववन्मर्दयित्वा चणकप्रमाणा वटीः कृत्वा दशमूलक्वाथेन, आर्द्रकरसेन, शिग्रुमूलरसेन, लशुनरसेन, स्तन्येन, मधुना वा मिश्रयित्वैका वटी सेविता चेत्सोपद्रवांस्त्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । शिग्रुमूलत्वग्रसः, अर्कमूलत्वग्रसः, निम्बतैलम्, लशुनरसः, स्तन्यम्, अजगन्धारसः, निर्गुण्डीत्वग्रसः, आर्द्रकरसः, कुक्कुटाण्डतैलम्, मधु चैतानि त्रयोदशसन्निपातानामनुपानानि । (व्यास०)

१०७ सव्यीरवटी

सव्यीररसदरदभस्मानि, कान्तसिन्दूरं, चन्द्रसार., केशरं, गोरोचनं, मृगमदश्च समभागानि स्तन्येन मधुना च प्रत्येकं चतुर्यामं विमृद्य गुञ्जाचतुष्टयं दोषज्वरसन्निपातकण्ठवायुचित्तविभ्रमादिष्वार्द्रकरसाद्यनुपानेन यथायोग्यं देयम् । (व्यास०)

टि०—अत्र सव्यीरमिति वस्तु येनापु समागत इव्यते तस्याऽऽङ्ग्ला पाया कारोजिव सब्लिमट् (Corrosive Sublimate) इति नाम । यूनानीवैद्यक "दारचिकना" इति नाम्ना प्रसिद्धि । एतद्देशीयाऽऽयुर्वेदमहितासु दुष्पाल्यपरिणामन मुकुननेत्यरकेति नाम्ना प्रसिद्धासु त्रिष्वपि प्रसिद्धासु कुत्राऽप्यस्य विवरण नाऽऽसाद्यते किन्तु सौवीरकतया सौवीरकमिति नाममात्रमुपलभ्यते यथा—" इति सौवीरक चाऽऽपि विधाऽथ रसभावितम् । कृष्णमिश्रितं मनिमन्थावचेन्द्रीनेन वा ॥ चूर्णं नयनेन नित्य प्रयोज्य शिवाऽन्यथ । सु उ १७।११-१४" इत्यत्र डल्हणेन सौवीरकं सौवीराञ्जनमित्युक्तम् । " सौवीरमञ्जन नित्य हित मक्ष्णा प्रयोजयेत् । च सू. ५।१३, अ स सू, ३, अ हृ सू. २।४" अत्र सुवीराभव सौवीरमिति वदता चक्रपाणिना येनकेन प्रकारेण स्वरूपं वा विशोधित । इन्दुहरणदत्ताभ्या तु मौनमालम्बितम् । " सौवीरमञ्जन तुत्थ ताप्यो धातुर्मन शिला । चक्षुष्या मधुकं लोहमणय पौष्पमञ्जनम् ॥ च चि २६।२४३" इत्यत्र तु चक्रेणापि निद्रायितम् । " वल्मीकशिखराकार भङ्गे नीलोत्पलद्युति । सौवीराञ्जनमित्याहुरायुर्वेदविदो जना ॥ च द स्वस्थवृत्ते " इत्यत्र नीलाञ्जने एव रूढि कृता । शालग्रामेण तु सौवीराञ्जन स्रोतोऽञ्जनञ्चेति द्वयोरेकार्थवाचकत्व स्वीकृतम् । " सौवीरमञ्जन कृष्ण वाऽप्नील सुवीरजम् । स्रोतोऽञ्जन तु स्रोतोज नदीज यामुन वरम् ॥ सर्वौषधिगुणरूपक शाम्भरणीयनिघण्टौ"। "अञ्जन यामनञ्चापि कपोताञ्जनमित्यपि । स्रोतोऽञ्जनञ्च द्विविध श्वेतकृष्णविभेदत ॥ तथ स्रोतोऽञ्जन कृष्ण सौवीर श्वेतमीरितम् । वल्मीकशिखराकार भिन्नमञ्जनसन्निभम् । घृष्टन्तु गैरिकाकारमेतत् स्रोतोऽञ्जन स्मृतम् । स्रोतोऽञ्जन सम ज्ञेय सौवीर तत्तु पाण्डुरम् ॥ धूम्रवर्णाभमपि वा सौवीराञ्जनमुच्यते । " इति वैद्यचिन्तामणौ प्रदर्शितम् । वसवराजीयेऽञ्जनपञ्चकगुणप्रदर्शने " पुष्पाञ्जन सित शुद्ध हिम सर्वाक्षिरोगजित् । नीलाञ्जन कृष्णवर्ण नेत्रदोषक्षयापहम् ॥ रसाञ्जन तु पीताभ विषनेत्रविकारनुत् । स्रोतोऽञ्जन पाण्डुवर्ण चक्षुष्य सर्वरोगजित् ॥ सौवीर रक्तवर्ण च नेत्रकण्डुविषापहम् ॥ " इति प्रदर्शितम् । तत्र रक्तस्य श्वेतस्य च यथार्थतया वैद्येषु ग्रन्थेषु च परिचयो नोपलभ्यते । एतद्देशीया अतिचाकचिक्यविशिष्टगोदन्तमेव श्वेताञ्जननाम्ना व्यवहरन्ति । अन्ये तु यशदपुष्पमारकमं मन्यन्ते । तैलङ्गद्राविडदेशेष्वस्य कर्पूरशिलाजतुनाम्ना व्यवहारोऽस्ति । वसवराजीये च श्वेताञ्जन लिखित्वा तत्स्वरूपपरिचयो नाकारि । एतन्मद्ग्रन्थकारैः पतितानां मनागपि सिद्धान्तमार्गं यतन्तो गवेषिनाऽपि नाऽऽसाद्यते । अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे यदि सव्यीरनाम्ना पारदकर्पूरनिर्देशने तस्य धातुवादे सर्वतोऽभ्यर्हितकारणत्वात् यदि महर्ष्यगस्त्यप्रणीतमेव तच्छास्त्रं स्यात्तर्हि अतिप्राचीनकालादेव पारदकर्पूरे प्रसिद्धिरपि स्यान्नु भवेदेवेत्यत्र न कस्याऽपि शङ्कोदियात् परन्त्वेतस्य तत्प्रचारस्यैकान्ततया सुस्पष्टेनाऽस्मिन्विषये कोऽपि सिद्धान्त स्थिरीकर्तुमपीव दुःशक । रसप्रकाशसुधाकरेण तु स्वकीयग्रन्थे एकादशाऽध्याये तत्क्रियाप्रदर्शनप्रसङ्गे " श्वेतसौवीरक शुद्ध पाचित विषमुष्टिना । स्वच्छे स्तनरे यत निर्जितं स्थापकरसेन ॥ " इत्यादिश्यऽस्य श्वेतसौवीरकनाम्ना प्रसिद्धि कृताऽस्ति । उक्तसुधानिधौ रसेऽपि क्षीरं सौवीरकमिति पद समागत तत्र लेखकप्रमादेन श्वेतस्थाने क्षीरमिति कथञ्चन समागतमिति बुद्धिर्मन्यते विना भवति । तत्र टीकाकारैस्तु क्षीरशब्दस्यार्थं रसाञ्जनमिति केचित्पूर्वमित्यन्ये इति प्रदर्शितम् । तत्रास्य वस्तुनोऽर्थकारैः नैर्धुर्येनोल्लाखरूपं सव्यीरस्य चाऽभिज्ञत्वादनुचित इव सहसा प्रतिभाति । कर्पूर तन्त्रयानयादिसमभावनाभी रात्यन्त्याद्यनुकृत्याऽपि सन्दर्भस्तु यावत्तत्तत्परीक्षा न क्रियेत तावत् निःशङ्कतया कोऽपि वक्तुं न प्रभवत्येव । सव्यीरमिति शब्द सवर्णीरशब्दादथवा सौवीरशब्दाद्भाषायां गत प्रतीयते । अतएव तद्विषये सर्वेऽपि निघण्टुकारा व्यामोह प्राप्य यत्र तत्र भ्रमन्ति । पाश्चात्यविज्ञानमार्गिणस्तु कल्पान्तु सर्वं स्वत्वार्जितवाऽभिनवा मन्यन्ते परन्तु तत्र सर्वंविदितम् । अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे दर्शितवाऽऽरोग्यप्रद्यानां तत्तत्प्रमेय पदार्थानां सर्वप्रदर्शितो यथाशास्त्र निर्माण कुर्वन्ति । अगस्त्यमतमथ प्रतिपक्षे नाम्नि अशुभं वादशोर्गेन इति कथनन्तु मन्यत्व इव नैवास्ति शुद्धता इति शुभस्य । अत सव्यीरनिर्माणं नित्यं निर्माणनिकरम इव सम्प्रदायस्य प्रचलनस्य । यदु यदि प्राचीनविचारोऽत्र महत्त्वपूर्णं आसीत् परिशोधनस्य सम्बद्धो ॥

१०० शङ्खद्रावः (महदादिः) १

स्फटिकासूर्यक्षारौ ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चलदरदसैन्धवसामुद्रकाचलवणरसकर्पूरौपरक्षारान् प्रत्येकपलान् चूर्णीकृत्य मृत्पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः। शीतोदकेन १० बिन्दुपरिमितं सेवितं सपित्तवातशूलादीन्नाशयति। पञ्चावृत्तमग्निसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४० पला, ऊषरक्षारः १ पलः, चूर्णीकृतानेतान् मृन्मयपात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रवं गृहीत्वा पञ्चपलं पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरीमं द्रवं दत्त्वा दिनचतुष्टयं गाढातपे स्थापनीयम्। शुष्के द्रवे पुनर्द्रवो दातव्यः। एवं पञ्चदिनपर्यन्तं कृते शुद्धं पारदभस्म सम्पद्यते। पारदभस्माऽऽपादकेन वस्तुत्रयमिलितद्रावकेण बिन्दुदशकं शीतोदकेन सेवितं कुक्षिहृच्छूललिङ्गदाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकृच्छ्रादिरोगान्नाशयति। मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन वमनहिक्काऽम्लोद्गारपित्तवायुहृद्दाहोदरज्वलनादिरोगा नश्यन्ति (अगस्त्य०)

१०१ शङ्खद्रावः (महदादिः) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शङ्खभस्म ५ पलं, काचनीललवणनरसारटङ्कणसर्वोऽपामार्गयवपर्पटस्नुहीक्षारान् तुरुष्कश्चेति प्रत्येकपलिकान् गृहीत्वा खल्वे जम्बीररसेन विमृद्य सम्यग्विशोष्य नलिकादियन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः। अनेन द्रवेण गुल्मप्लीहशूलाऽऽध्मानोदावर्तमूत्राऽवरोधमूत्रविकारस्वद्धवाय्वादयो रोगा निवर्तन्ते। आर्द्रकरसेन बिन्दुपञ्चकप्रमाणं सेवितं चेदुदरस्थ पित्तदाहादिकं नश्यति। मद्यैं श्लेष्मरोगाऽष्टगुल्मजलोदरादयो निवर्तन्ते। सुवर्णपत्रे बिन्दुचतुष्टयमौषधं निक्षिप्य बालानां रक्षाबन्धने कृते श्वासरोगः कदापि नोत्पद्यते। पथ्यं रोगानुरूपम्। (व्यास०)

टि०—नलिकायन्त्रविधानम्—दृढतरमृत्तिके सुपुष्टभाण्डे क्षारद्रव्यं निधाय [illegible] द्वे वा तत्रादिनिर्मितनालिके निवेश्य [illegible] सम्यङ्निबध्य पुनरपि [illegible] प्रदद्यात्। नलिकामुखं काचजे [illegible] वा घटे निवेश्याऽऽर्द्रेणाऽऽर्द्रेण वा [illegible] गृह्णीयात्। [illegible] निवेशनीयम्। [illegible] निश्चलनीयम्। यदा च [illegible] तदा [illegible] सम्पद्यते तदा [illegible] वह्निं ज्वालयेत्। यत्र तु नलिकाया [illegible] निवेशनीयम्। [illegible] च पूर्ववदेव। [illegible] च पूर्ववदेव। गन्धकादि [illegible] नि सारि·

घ्यन्ति। यत्र तु केवलगन्धस्य गन्धाधिकभागस्य वा द्रव्यस्य नि सा· रयितुमिच्छा चेत्तर्हि भाण्ड नलिका चेत्येतद्द्वयमपि काचज भवितव्यम्॥

१०२ सकलविषघोष्यम्

शुद्धपारदगन्धकमल्लतुत्थमनःशिलामरिचकन्द (पामतुण्डगेड्डा. तै०, मिरचियाकन्द. हिं०) रामठनिम्बबीजमज्जानः प्रत्येकं सपादतोलकं, शुद्धं जयपालबीजं १पलं, एतानि चूर्णीकृत्य श्वेतार्कक्षीरेण यामद्वयं, निम्बतैलेन च यामचतुष्टयं विमृद्य शङ्खसम्पुटे स्थापयेत्। कालसर्पविषाणां मरिचप्रमाणं कवचीकृततालगुडानुपानेन देयम्। निम्बबीजतैलेन सङ्घृष्य नेत्रयोरञ्जनमपि दातव्यम्। एतेन वमनविरेचनादिकं भवति सर्पविषाणि च निवर्तन्ते। सर्पदष्टानामेतदौषधदाने दिनत्रयमम्लवर्ज्यं पथ्यम्। मनुष्यश्वजम्बुकमूषिकवृश्चिकविषेषु क्षतस्थाने औषधं लेपयित्वाऽग्निना सेकः कार्यः। वृश्चिकमहावृश्चिकविषेषु क्षतस्थाने लेपनमात्रमेव विधेयमन्तर्न दातव्यम्। जम्बुकमूषिकमनुष्यदुष्टसर्पादिदंशेऽन्तर्बहिश्चौषधं योजनीयम्।

अपि च—एकपलं मल्लं शरावे निधाय........ (गाडिदिगडपाकु. तै०) रसेन श्वेताऽर्कक्षीरेण च प्रति यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा वृश्चिकदंशस्थाने लेपनीयम्। विषदोषप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, विद्रुमाः, केशरम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकारकरभः, शङ्खम्, जटामांसी, तक्कोलं, बिल्वफलोर्ध्वकायः, लवङ्गं, रससिन्दूरं, बिम्बीमूलं, यष्टिमधुकं, रास्ना पलाशबीजानि, एला, त्वक्, कुष्टं, नागकेशरं, द्राक्षा चेति समभागानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य शङ्खसम्पुटे निधाय पूर्वोक्तविषग्रस्तानां जिह्वादोषप्रशान्तये जिह्वायां घर्षणीयम्। पथ्यं यथोचितम् (व्यास०)

१०३ सञ्जीविगुटिका

शुद्धविषतालकपारदगन्धकटङ्कणत्रिकटुयिमीतकगोरोचनतुरुष्कान् प्रत्येकमर्धतोलकान्, शुद्धजयपालबीजानि च ४ तोलकानि गृहीत्वा पटपूतं विधाय कर्पूरवल्ली (कप्परल्ली. तै०, पत्थरचिनिका), रक्तपुनर्नवा (पुरुगल्ल. तै०) वासातोयपिप्पलीभृङ्गराजतुलसीरसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कुर्यात्। श्वेततुलसीपत्ररसेन सैका मात्रा सेविता चेद्वालकानामपतानकवायुं, सन्निपातदोषं, श्वासकासौ, वायुरोगांश्च नाशयति। (व्यास०)

१०४ सन्निपातभैरवरसः

शुद्धपारदगन्धकटङ्कणतालकजयपालत्रिकटुत्रिफलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धदरदं ४ पलं गृहीत्वा खल्वे ताम्बूलदलरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

कृष्णतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारणज्वरेपूपयोजनीयः । स्तन्येन विषमज्वराः, मधुना पैत्यदोषाः, मरिचक्वाथेन वातज्वराः, मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन पित्तवायवो हृदयज्वलनं सर्वशूलानि च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेपु स्तन्येन, मधुना, ताम्बूलदलरसेन वा सङ्घृष्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिग्रुमूलत्वग्रसेन लशुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपातजनितसप्तदोषेपु प्रयोजनीयम् । तत्तद्रोगबलानुसारेण पथ्यक्रमः कार्यः । (व्यास०)

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुश.) १

शुद्धविषपिप्पल्यावेकैकपले दरदश्च द्विपलं गृहीत्वा जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकबीजप्रमाणा वटीः कुर्यात् । आर्द्रकरसेन दत्ते सन्निपाताक्षयो निवर्तन्ते । त्रीणि चत्वारि वा दिनानि सेवनीय. । पथ्यक्रमो यथोचितः । (अगस्त्य०)

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुशः) २

शुद्धपारदगन्धकतालकहेममाक्षिकविषताम्रमाक्षिकताम्रमल्लभस्माऽभ्रकसिन्दूराणि, सद्य.क्षाररसारकर्कटशृङ्गिरामठाऽतिविषक्षुद्रपटोलहरीतकीनागरविजयामुशलीनिम्बनिर्यासाः, सर्वाणि समभागानि काकमाचीरसेन दिनद्वयं विमृद्य जम्बीररसेन च पूर्ववन्मर्दयित्वा चणकप्रमाणा वटीः कृत्वा दशमूलक्वाथेन, आर्द्रकरसेन, शिग्रुमूलरसेन, लशुनरसेन, स्तन्येन, मधुना वा मिश्रयित्वैका वटी सेविता चेत्सोपद्रवांस्त्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । शिग्रुमूलत्वग्रसः, अर्कमूलत्वग्रसः, निम्बतैलम्, लशुनरसः, स्तन्यम्, अजगन्धारस., निर्गुण्डीत्वग्रस , आर्द्रकरस., कुक्कुटाण्डतैलम्, मधु चैतानि त्रयोदशसन्निपातानामनुपानानि । (व्यास०)

१०७ सञ्चीरवटी

सञ्चीररसदरदभस्मानि, कान्तसिन्दूरं, चन्द्रसार., केशरं, गोरोचनं, मृगमदश्च समभागानि स्तन्येन मधुना च प्रत्येकं चतुर्यामं विमृद्य गुञ्जाचतुष्टयं दोपज्वरसन्निपातकण्ठवायुचित्तविभ्रमादिष्वार्द्रकरसाद्यनुपानेन यथायोग्यं देयम् । (व्यास०)

टि०—अत्र सञ्चीरमिति बहुषु योगेषु समागत दृश्यते तस्याऽऽङ्ग्लभाषाया कारोसिव सब्लिमट् (Corrosive Sublimate) इति नाम । यूनानीवैद्यके "दालचिकना" इति नाम्ना प्रसिद्धि । एतद्देशीयाऽऽयुर्वेदसंहितासु दुष्कालविपरिणामेन सुश्रुतभेलचरकेति नाम्ना प्रसिद्धासु त्रिष्वपिसंहितासु कुत्राऽप्यस्य विवरण नाऽऽसाद्यते किन्तु सौवीरमथवा सौवीरकमिति नाममात्रमुपलभ्यते यथा—"शीत सौवीरक वाऽपि पिष्ट्वाऽऽय रसभावितम् । कूर्मपित्तेन मतिमान्भावयेद्रौहितेन वा ॥ चूर्णाञ्जनमिद नित्य प्रयोज्य पित्तशान्तये । सु उ १७।१३–१४" इत्यत्र डल्हणेन सौवीरक सौवीराञ्जनमित्युक्तम् । "सौवीरमञ्जन नित्य हित मक्ष्णो प्रयोजयेत् । च सू ५।१३, अ स सू, ३, अ हृ सू, २।५" अत्र सुवीराभव सौवीरमिति वदता चक्रपाणिना येनकेन प्रकारेण स्वपन्था विशोधित । इन्दुरुणदत्ताभ्यां तु मौनमालम्बितम् । "सौवीराञ्जन तुत्थ ताप्यो धातुर्मन शिला । चक्षुष्या मधुक लोहमणय पौष्पाञ्जनम् ॥ च चि २६।२४३" इत्यत्र तु चक्रेणापि निद्रायितम् । "वल्मीकशिखराकार भङ्गे नीलोत्पलद्युति । सौवीराञ्जनमित्याहुरायुर्वेदविदो जना ॥ च द स्वस्थवृत्ते" इत्यत्र नीलाञ्जने एव रूढि कृता । शालग्रामेण तु सौवीराञ्जन स्रोतोऽञ्जनञ्चेति द्वयोरेकार्थवाचकत्व स्वीकृतम् । "सौवीरमञ्जन कृष्ण कालनील सुवीरजम् । स्रोतोञ्जन तु स्रोतोज नदीज यामुन वरम् ॥ सर्वौषधिगुणकल्पक आन्ध्रदेशीयनिघण्टौ"। "अञ्जन वामनञ्चापि कपोताञ्जनमित्यपि । स्रोतोऽञ्जनञ्च द्विविध श्वेतकृष्णविभेदत ॥ तच्च स्रोतोऽञ्जन रूक्ष सौवीर श्वेतमीरितम् । वल्मीकशिखराकार भिन्नमञ्जनसन्निभम् । घृष्टन्तु गैरिकाकारमेतत् स्रोतोऽञ्जन स्मृतम् । स्रोतोञ्जन मम श्रेय सौवीर, तत्तु पाण्डुरम् ॥ धूम्रवर्णाभमपि वा सौवीराञ्जनमुच्यते । " इति वैद्यचिन्तामणौ प्रदर्शितम् । बसवराजीयेऽञ्जनपञ्चकगुणप्रदर्शने "पुष्पाञ्जन सित शुद्ध हिम सर्वाक्षिरोगजित् । नीलाञ्जन कृष्णवर्ण नेत्रदोपक्षयापहम् ॥ रसाञ्जन तु पीताभ विषनेत्रविकारनुत् । स्रोतोऽञ्जन पाण्डुवर्ण चक्षुष्य सर्वरोगजित् ॥ सौवीर रक्तवर्ण च नेत्रकण्डुविषापहम् ॥ " इति प्रदर्शितम् । तत्र रक्तस्य श्वेतस्य च यथार्थतया वैद्येषु ग्रन्थेषु च परिचयो नोपलभ्यते । एतद्देशीया अतिचाकचिक्यविशिष्टगोदन्तमेव श्वेताञ्जननाम्ना व्यवहरन्ति । अन्ये तु यशदपुष्पवाचकता मन्यन्ते । तैलङ्गद्राविडदिदेशेष्वस्य कर्पूरशिलानतुनाम्ना व्यवहारोऽस्ति । बसवराजीये श्वेताञ्जन लिखित्वा तत्स्वरूपपरिचयो नाकारि । एतन्महान्धकारे पतिताना मनागपि सिद्धान्तभा यत्नतो गवेषिताऽपि नाऽऽसाद्यते । अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे यदिद सञ्चीरनाम्ना पारदकृतिर्दृश्यते तस्या धातुवादे सर्वशोऽभ्यर्हितकारणत्वाद्यदि महर्ष्यगस्त्यप्रणीतमेव तच्छास्त्र स्यात्तर्हि अतिप्राचीनकालादेव पारदकृते प्रसिद्धिरपि लोकेषु भवेदेवेत्यत्र न कस्याऽपि शङ्कोदियात् परन्त्वेतद्देशे तत्प्रचारस्यैकान्ततया लुप्तत्वेनाऽस्मिन्विषये कोऽपि सिद्धान्त स्थिरीकर्तुमतीव दुःशक । रसप्रकाशसुधाकरेण तु स्वकीयग्रन्थे एकादशाऽध्याये तारक्रियाप्रदर्शनप्रक्रमे "श्वेतसौवीरक शुद्ध पाचित विषमुद्गिना । स्वच्छे मृत्तवरे बद्ध निक्षिप्य पुष्पद्द्रवेत् ॥ " इत्यादिस्थलेऽस्य श्वेतसौवीरकनाम्ना प्रसिद्धि कृताऽस्ति । उक्तसुश्रुतीयोद्धरणेऽपि शीत सौवीरकमिति पद समागत तत्र लेखकप्रमादेन श्वेतस्थाने शीतमिति कथन्न सञ्जातमिति बुद्धिर्दोलायिता भवति । तत्र टीकाकारैस्तु शीतशब्दस्याऽर्थं रसाञ्जनमिति केचित्कर्पूरमित्यन्ये इति प्रदर्शितम् । तन्नास्य वस्तुनोऽङ्गीकारे नेत्रीययोगत्वात्सञ्चीरस्य चाऽग्निकल्पत्वादनुचित इव सहमह प्रतिभाति । कदाचित्तत्रत्यगोमयादिरसभावनाभी रान्ध्यान्ध्यादावनुकूलोऽपि भवेत्परन्तु यावता तत्परीक्षा न क्रियेत तावता नि शङ्कतया कोऽपि वदितु न प्रभवत्येव । सञ्चीरमिति शब्द सर्वक्षीरशब्दादथवा सौवीरशब्दाद्भाषायां गत प्रतीयते । अतएव तद्विषये सर्वेऽपि निघण्टुकारा व्यामोह प्राप्य यद्वा तद्वा प्रलपन्ति । पाश्चात्यविज्ञानभाविताऽन्त करणास्तु सञ्चीरस्योत्पत्तिमतीवाऽभिनवां मन्यन्ते परन्तु तन्न समीचीनम् । यतोऽगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे द्वात्रिंशत्क्षारोत्पन्नपाषाणानां तावतामेव पाकक्षारविशेषैरुत्पन्नाना सञ्चीरादीनां यथाशास्त्र निरूपण कृतमस्ति । अगस्त्यसमयश्च प्रतीच्यवैज्ञानिकप्रादुर्भावादर्वाचीन इति कथनन्तु मत्तप्रलाप इव सर्वेषां सुहृदां हृदि स्फुरत्येव । अत सञ्चीरादिपाषाणानां निर्माण मतिप्राचीनकालत एव समागतमस्तीत्यवश्य मन्तव्यमेव । चतु षष्टिपाषाणानां विवरण त्वीश्वराऽनुग्रहाद्भारतीयरसायनयाथातथ्ये समेष्यति ।

१०८ सारिवादिवटी

शुद्धपारदगन्धकौ प्रति दशाणकौ, नागोद्भवाण-काधिकैकतोल्कं, तीक्ष्णलोहभस्म ४ तोल्कं, ताम्रभस्म २ तोल्कं, सर्वाण्यपि कुमारीद्रवेण मर्दयित्वा शुद्धताम्रपात्रे निक्षिप्य दिनत्रयपर्यन्तं प्रचण्डाऽऽतपे स्थापयेत्। नितरां शुद्धतरं भस्मोपलभ्यते। एतद्गुञ्जापरिमितं प्रातः सायं मधुना सेवितं सत्सकलज्वर-पाण्डुकामलाश्वयथुगुल्ममेहवाताद्रीन्नाशयति। अस्यानुपानम्—हेमक्षीरी १० पला, अनन्तमूलं ४ पलं, विल्वकृष्णहिंस्रामूला (नल्लउप्पि. तै०)ऽश्वगन्धाश्वेतहिंस्रामूल (तेल्लउप्पि. तै०) पिण्डालुक (पेद्दमङ्गा तै०) मदन (चिन्नमङ्गा) नागराणि प्रति द्विपलानि, चित्रकमूलत्वक् २॥ पला, मरिचपिप्पल्याद्येकैकपले, एलालवङ्गत्वचोऽर्द्धाऽर्द्धपलाः, एतानि सर्वाणि चूर्णीकृत्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे पूर्वोक्तं भस्म गुञ्जाद्वयपरिमितं संयोज्य मधुना सह सेवनात्सन्ततैकाहिकादिज्वरवातफटिश्लूलश्लेष्मप्रधानव्याधयो निवर्तन्ते। (अगस्त्य०)

१०९ सुदर्शनरसः

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलावत्सनाभदरदाऽभ्रकताम्रहेममाक्षिकाणि प्रत्येकं सपादतोल्कानि गृहीत्वा चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीरबीजपूरनिर्गुण्डीभृङ्गराजरसैः प्रत्येकं दिनं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका शरावयोरवरुध्याऽर्द्धगजपुटो देयः। पुनः खल्वे निक्षिप्य चित्रकपञ्चाङ्गक्वाथेन दिनद्वयं मर्दयित्वा माषप्रमाणा वटीः कृत्वा छायायां शोषयेत्। एतस्यानुपानम्—रामठमिकटुकर्पूराणि समभागानि चूर्णीकृत्य पादतोलके चूर्णे मधुना सह पूर्वोक्तवटी सेवनीया। एतेन सन्निपातवातोन्मादपाणिपादस्तम्भश्वासकासरक्तवातकफक्षयपक्षकण्ठडमरुक (धनुर्वात) शिरोधाय्वादयो रोगा नश्यन्ति। क्षीरान्नं पथ्यम्। अन्यत्किमपि न देयम्। (अगस्त्य०)

११० सुवर्णसिन्दूरम्

शुद्धं सुवर्णं मृदुतया चूर्णीकृत्य बीजपूर (मादीफल) रसेन मर्दनसमये किञ्चिन्नरसार टङ्कणञ्च मेलयित्वा सम्यग्विमृद्य शोषयित्वा पुनर्नीलीपत्ररसेन सेहुण्डक्षीरेण च प्रतियामद्वयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका विधाय शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य गणेशमभ्यर्च्य मयूरपुटो देयः। सिन्दूरं सम्पद्यते। एतत्तण्डुलपरिमाणं गोघृतेन सह सेवनीयम्। अनेन पाण्डुमुष्टद्राल कपालशूलपीनसा नश्यन्ति। मधुनोन्मादादय, शर्करया व्रणा, विचर्चिकावमनादय, उष्णोदकेन ज्वरादय, शीतोदकेनाऽतिसारो गुल्मरोगश्च नश्यति। मृगमदेन सह शरीरं सुवर्णच्छायं भवति। एकसंवत्सरसेवनात्पञ्चशतवत्सरं जीवति कायकल्पसिद्धिश्च भवति। क्षीरान्नं माषवटका', कन्दपदार्थाश्चैते पथ्या। अम्लक्षारादिकं वर्ज्यम्। (अगस्त्य०)

१११ सूतसिन्दूरम्

शुद्धपारदः १ पल', रसकर्पूरटङ्कणकस्तूरीहरिद्रा (आवाहल्दी हि०) दारुहरिद्राः प्रत्यर्द्धतोलिका., एतानि सर्वाणि खल्वे निक्षिप्य ताम्बूलकृष्णधत्तूररसाभ्यां प्रतियामत्रयं मर्दयित्वा (मर्दनसमये कलाचतुष्टयमूषरक्षारमपि योजनीयम्) शुष्कां चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा कुक्कुटपुटं देयम्। एतत्सिन्दूरं नवनीतेन सह पादगुञ्जापरिमितं भोक्तव्यम्। अनेन कुक्कुरकास (मन्दारकास. कुक्कुरदग्गु तै०), पित्तवायु., षड्क्षणग्रन्थिः, दोषज्वराश्च निवृत्ता भवेयुः। यथोचितं पथ्यम्। (अगस्त्य०)

११२ स्वर्णभूपतिरसः

पारदतालकगोदन्त (कर्पूरशिलाजतु तै०) ताम्रगन्धकरसकदरदभस्मानि शुद्धं विषञ्च समभाग गृहीत्वा अनन्तमूलचित्रकेक्षुरकमूलरसे प्रत्येकं याम मर्दयित्वा तण्डुलमात्रं मधुना सह सेवित सत् मेहशूलगुल्ममहासन्निपातादिदोषज्वरान्नाशयति औदुम्बरशलाटुसूरणबालवृन्ताकशिग्रुशिम्बीगोक्षीरघृतपुराणतण्डुलाश्च पथ्या. (व्यास०)

११३ हिङ्गुलादिवटी (प्रथमा)

लोहरसकर्पूरभस्मनी, शुद्धपारदगन्धकजयपालविषाणि कटुरोहिणी श्वेतत्रिवृत्त्रिकटुतिक्ततुम्बीबीजश्वेताऽपराजिता (तेलगण्टिना तै०) मूलहरीतक्य', एतानि समभागानि चूर्णीकृतानि खल्वे ताम्बूलीरसेन सप्तदिनपर्यन्त मर्दयित्वे कपल मरिचचूर्णं विमिश्र्योदकेन विमृद्य मरिचप्रमाणां वटीं कुर्यात्। उष्णोदकानुपानेन दिनत्रय सेविता सर्वज्वरान्नाशयति। (व्यास०)

११४ हिङ्गुलादिवटी (द्वितीया)

शुद्धदरदविषपारदगन्धकटङ्कणजयपालबीजानि, सैन्धवत्रिकटुकहरीतकी श्वेतत्रिवृदरिष्टबीजमञ्जिष्ठचित्रकमूलानि प्रति सपादतोल्कानि स्नुहीक्षीरेण मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटी कृत्वोष्णोदकानुपानेन सेविता चेद्वातप्रकोपजनितसन्निपातशूला· सर्वेऽपि नश्यन्ति। पथ्यमुष्णोदक तण्डुलाश्च, अन्यत्किमपि न देयम्। (व्यास०)

११५ हेमरसगुटिका

शुद्धदरदविषवराटिकाभस्म त्रिकटुसैन्धवचित्रकान् सममागान् जम्बीररसेन चतुर्याम विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीश्छायाशुष्का विधाय मरिचक्वाथे मधुनि वा सेविता सकलज्वरदोषाघाशयति। वातशीतलाधिक्ये सति त्रिचतुरैर्लवङ्गैः सह भक्षणीया पथ्यं रोगोचितम्। वातपदार्थास्त्याज्याः। (अगस्त्य०)

इत्यगस्त्यत्वाख्यप्रोक्तरसप्रयोगाः समाप्ताः

परिशिष्टो भागः

अथान्याद्रिप्रसिद्धरसप्रयोगाः

(प्रायो ग्रन्थविशेषपरिचयरहिताः)

१ अष्टादशकलरसः

हिङ्गुलोत्थपारदः, रससिन्दूरं, शुद्धगन्धकं, सच्छीर, गौरीपाषाणं, मल्लः, मृद्दारशृङ्गं, रसकर्पूरं, औषरक्षारः, हंसपाददरदः, अहिफेनः, शुद्धकान्तम्, कर्कटशृङ्गी, हरीतकीपुष्पं, तुरुष्कः, कर्पूरं, तालकश्चैतेषु षोडशद्रव्येषु धातुमिश्रभावपरिज्ञानपूर्वकं तत्तत्समभागं खल्वे निक्षिप्य सर्वाणि चूर्णीकृत्य कुक्कुटाण्डतैलेन दिनत्रयं सम्यग्विमृद्य शृङ्गसम्पुटे संरक्षणीयम्। एतत्सिक्थरूपमौषधमसाध्यसन्निपातशुष्यातश्लेष्मरोगेषु अर्धगुञ्जाप्रमाणमुपयोजनीयम्। पथ्यं रोगानुरूपम्।

कुक्कुटाण्डतैलनिःसारणोपायः—२० अथवा २५ कुक्कुटाण्डानुष्णोदके निक्षिप्य घण्टाद्वयपर्यन्तं मन्दाग्निना विपाच्य उपरितनं त्वचं स्फोटयित्वा तदन्तरवलग्नं श्वेतकञ्चुकं छुरिकया दूरीकृत्य तद्गर्भे विद्यमानपीतगोलकान्येकीकृत्य लोहकटाहे निक्षिप्य मृद्वग्निनाऽर्धयामपर्यन्तं पाके कृते गोलकानि सर्वाण्यपि द्रवीभूय तैलरूपतामापत्स्यन्ते। एतदेवाऽण्डतैलं चीनपात्रे स्थापयित्वा तत्तदुचितसमयेषु सन्निपातादिष्वनुपानतया नियोजनीयमिति प्राचीनवैद्यरहस्यम्। अस्य प्रदानादेति पादे सञ्ज्ञा।

२ कालान्तकसिन्दूरम् (महत्)

ताम्बूलस्वरसशोधितं गन्धकं५तोलकं मूषायामर्द्धं निक्षिप्य तदुपरि तण्डुलाम्बुशोधितपारदं १० तोलकं निधायाऽवशिष्टगन्धकचूर्णेनाऽऽच्छाद्य लोहशलाकया मूषामुखं पिधाय सन्धिबन्धं विनिय ज्वलदङ्गारमध्ये स्थापयेत्। मूषामुखाधानापर्णधूमोद्गमनपूर्वकविजातीयगन्धकज्वालादर्शनपर्यन्तं निरीक्ष्य बहिः संस्थाप्य पिहितमुद्घाट्य निर्वातप्रदेशे स्वाङ्गशीतमवस्थापयेत्। अत्रेयं सूचना—गन्धकप्रक्षेपात्पूर्वमेव पलैकं गन्धकं ताम्बूलस्वरसेन विमृद्य मूषायाः कण्ठपर्यन्तं विलिप्याऽऽतपे शोषणीयम्। तदनन्तरं गन्धकप्रक्षेपादिक्रिया कर्तव्या। एतच्च दीर्घकुक्षिशूलादिरोगेषु कालमेहादिषु च निरङ्कुशः प्रवर्तते। अत्र शर्करामिश्रितं दुग्धान्नं पथ्यम्। एकमण्डलसेवनात्कुष्ठनिवृत्तिर्भवति। औषधञ्च दधिमण्डेन नवनीतेन वा सेवनीयम्। क्षारधूमपाननस्यादिकं त्याज्यम्।

३ गन्धकसिक्थकम्

एकपलामलसारगन्धकचूर्णं लोहकटाहमध्ये निक्षिप्य पात्रस्याऽधस्तादेरण्डतैलेन दीपं प्रज्वाल्य भूम्यामलकीपत्रस्वरसं २४ तोलकं गृहीत्वा गन्धकचूर्णस्योपरि किञ्चित्किञ्चिद्रमार्स दद्यात्। लोहशलाकया मन्दं मन्दं चालनीयम्। स्वरसस्य समाप्तौ सत्यां गन्धकचूर्णं सिक्थं भवति। एतच्चणकप्रमाणं गोघृतेन सह देयम्। अनेन मेहपिडिकादिव्याधयो निवर्तन्ते।

४ चण्डमारुतरसः

शुद्धं रसकर्पूरं ८ भागं, दरदः ४ भा०, सच्छीरं (दालचिकना) गन्धकञ्च २-२ भा०, रससिन्दूरं १६ भागं गृहीत्वा यामद्वयं मर्दयित्वा तण्डुलप्रमाणं सन्निपातेऽनुपानविशेषैर्देयम्।

५ ज्वरकुलान्तकवटी

दशतोलकं मरिचं सङ्क्षुद्य १५० तोलके जले निक्षिप्यैकतोलकं शुद्धसच्छीरं (दालचिकना) त्रिगुणीकृतवस्त्रे पोट्टलीं बद्ध्वा दोलायन्त्रविधिना १५ तोलकजलावशेषपर्यन्तं विपाच्य भाण्डमध्यस्थं सच्छीरं मरिचानि च खल्वे निधाय दोलायन्त्रीयाऽवशिष्टजलेनैव विमृद्य माष (उड़द) प्रमाणा वटीः कुर्यात्। दिनत्रयाऽनन्तरमेषा वटी न प्रयोज्या। मात्रां भक्षयित्वा किञ्चिदुष्णोदकानुपानं देयम्।

६ ज्वरस्तम्भनवटी (दुराईवटी)

शुद्धपारदं १॥ तोलकं, जीरकमस्मार्धतोलकं, शुद्धगौरीं पादतोलिकां खल्वे निधाय मूर्वामूलस्वरसेन दोलायन्त्रविधानेन रसशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्वा मधुना नागरकल्केन वा एका वटी सेविता वेज्वरस्तम्भनं भवति। पथ्यं यथेच्छम्।

७ तरुणार्करसः

स्वर्णं पारदसच्छीरं श्वेतमास्करहिङ्गुलम्।
सिन्दूरञ्च समं ग्राह्यं सर्ववस्तुसमं समम्॥

रक्ततण्डुलयूषेण कुक्कुटाण्डरसेन च।
वल्लीदलेन सम्मिश्र्य पुनः कुक्कुटपूरितम्॥
तरुणार्करसो नाम सन्निपातहरः परः।
अघोरेति च मन्त्रेण संस्थाप्य पृथिवीतले॥
वामदेवाय सङ्गृह्य सद्योजातमिदं पचेत्।
ब्राह्मणं भोजयेत्पश्चादौषधं सम्यगर्चयेत्॥

टि०—स्वर्णपारदगन्धकपूरदरदरससिन्दूरसव्वीरव्योषाणि समभागानि गृहीत्वा रक्ततण्डुलमण्डेन, कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण, नागवल्लीदलस्वरसेन च प्रति यामचतुष्टयं विमृद्य त्रयो भूपुटा देयाः। अथ भूपुटस्य विवरणम्—द्वादशाङ्गुलाऽऽयाम षडङ्गुलिविस्तृत खात विधाय सार्धकाङ्गुल सिकताभिरापूर्य तदुपरि शुष्का पूर्वौषधचक्रिका विन्यस्य चक्रिकोपरि भूसमा सिकतामापूर्य सिकतोपरि पञ्चभिः सप्तभिर्वोत्पलकैः पुटं दद्यात्। एवंकारिमन्पुटे औषध कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण मर्दयेत्। शुष्कचक्रिकोपरि ताम्बूलदलकल्केनाऽर्धाङ्गुल कवच दत्त्वा विशोष्य पुटे निदध्यात्। एव रीत्या पुटत्रय देयम्। तुरीये पुटे रक्ततण्डुलमण्डेन दिनत्रयं विमृद्य सपुट दत्त्वा शङ्खसम्पुटे स्थापयेत्। महासन्निपातव्याधिषु गुञ्जामात्र प्रयोक्तव्यम्। पथ्य यथोचितम्।

८ ताम्रसिन्दूरम्

हंसपाददरदः, पलाण्डुरसे शुद्धो गन्धकः, पारदः, मनःशिला, तुत्थं, तालकश्चैतानि प्रत्येकमर्धतोलकानि खल्वे विन्यस्य रक्तकार्पासपत्रस्वरसेन विमृद्य वर्तुलाकारां शुष्कां चक्रिकां विधाय वितस्ति मात्रोच्छ्रिते मृत्पात्रेऽर्द्धभागपर्यन्तं समुद्रलवणं विन्यस्य लवणस्योपरि चक्रिकां निधाय षट्तोलकशुद्धताम्रनिर्मितसम्पुटेन पिधाय कण्ठावधि भाण्डं लवणेन पूरयित्वा शरावेण भाण्डमुखं सम्यङ्निरुद्ध्य चतुर्यामपर्यन्तं गाढाग्निना पाकं कुर्यात्। उपरितनताम्रसम्पुटं मेघवर्णतया भस्म सञ्जायते। एतत्तण्डुलपरिमाणं घृतेन मधुना नवनीतेन वा सेवितं सद्साध्यश्वासकासविषमसन्निपातकुष्ठादिमहारोगान्निवारयति। यथोचितं पथ्यम्।

९ दरदसिन्धकम्

वितस्तिप्रमाणोच्छ्रितमृत्पात्रतलभागे द्वादशतोलकानि श्वेतार्कपुष्पाण्यास्तीर्य तदुपरि षट्तोलकं समुद्रलवणं, लवणोपरि त्रितोलकं शुद्धदरदखण्डं निधाय तदुपरि पुनर्द्वादशतोलकानि श्वेतार्कपुष्पाण्यास्तीर्य षट्तोलकञ्च लवणं निधाय पात्रमुखं शरावेणाऽवरुद्ध्य दृढसन्धिमुद्रणं कृत्वा शतसङ्ख्याकैरारण्योत्पलकैः पुटं दद्यात्। स्वाङ्गशीते सत्यौषधं पुष्पक्षारादिकिट्टरूपं गृहीत्वा चीनपात्रे निक्षिप्य दशतोलकपरिमितं जम्बीररसमापूर्य तन्मध्ये रक्तजपाकुसुमदलानि १० तोलकानि मेलयित्वा दिनसप्तकं तथैव संस्थाप्याऽष्टमदिने चुल्ल्यामारोप्य सिक्थकं निष्पाद्य काचकूप्यां स्थापयेत्। असाध्यश्वासकासयोरेतत्सिक्थकं तण्डुलप्रमाणं देयम्।

१० नवग्रहरसः

शुद्धं सूतं वत्सनाभं लोहभस्म च टङ्कणम्।
व्योषं गन्धोन्मत्तबीजं सर्वञ्चैव समांशकम्॥
कृष्णभृङ्गरसैर्मर्द्य वटी मुद्गप्रमाणिका।
नवग्रहरसो नाम सर्वरोगहरः परः॥
श्वासे कासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे।
सन्निपातेऽतिसारे च कृष्णसर्पे च वृश्चिके॥
अशीतिवातरोगाणामामातीसारनाशनः।

११ पक्षवातविध्वंसनरसः

हिङ्गुलोत्थपारदोल्लिपाषाणे १-१ तोलके, शुद्धमल्लोऽर्द्धतोलकः, सव्वीरं पादतोलकं, नागरं २ तोलकं, क्षुद्रहरीतक्याकारकरमरञ्जनिकाबीजान्येकैकतोलकानि चूर्णीकृत्य ताम्बूलीदलरसेन दिनत्रयं सम्यग्विमृद्य पञ्चसप्ततिनिम्बुकरसस्य शोषणपर्यन्तं सम्यङ्मर्दयित्वा सर्षपप्रमाणाश्छायाशुष्का वटीः कुर्यात्। प्रातःसायं वटीद्वयं गोघृतानुपानेन परिपेव्य कदुष्णजले तोलैकं मधु मेलयित्वाऽनुपेयम्। आढकीखण्डयूषो गोधूमरोटिका च पथ्या। सप्तदिनपर्यन्तमौषधं निषेव्य विंशतिदिनपर्यन्तं पथ्यं पालनीयम्। मासद्वयात्परं मुद्गान्नं भक्षणीयम्। ततोऽन्यच्छाकक्षाराऽम्लधूमपानादिकं सर्वथ त्याज्यम्। यदि बद्धमूलः पक्षवातः स्याद्द्विसप्ताहमौषधं सेवनीयम्।

१२ पूरवटी (रसकर्पूरवटी)

पञ्चतोलकं रसकर्पूरखण्डं गृहीत्वा तदवगाहनपर्याप्तस्त्रीस्तन्ये निधाय दिनत्रयपर्यन्तमातपे शोषयेत्। प्रत्यहं नवं स्तन्यं पूरणीयम्। चतुर्थदिवसे कर्पूरशकलान्मलं दूरीकृत्य स्वच्छलोहकटाहे २५ तोलकं शुद्धं मधु निक्षिप्य पूरशकलं निधाय दीपाग्निना मधुशोषणपर्यन्तं पचेत्। ततःपरं पूरशकलं खल्वे निक्षिप्य एलावातामभञ्जगोधूमपिष्टानि प्रति सपादतोलकानि मेलयित्वा शुद्धजलेन द्विदिनं विमृद्य मसूरप्रमाणा वटीश्छायाशुष्काः कुर्यात्। प्रातःसायमेकैकां वटीं भक्षयेत्। द्वितीयदिवसादारभ्य त्रिदिनपर्यन्तमेकां वटीं वेलाद्वयं प्रवर्धयेत्। पञ्चमदिवसात्पूर्ववदेकैकवटीह्रासः, एवं सप्तदिवसैः प्रयोगमनुष्ठाय चतुर्दशदिवसपर्यन्तं क्षीराद्यसेवी स्यात्। मासद्वयपर्यन्तं च स्त्रीसङ्गो वर्ज्यः।

१३ पूर्णचन्द्रोदयरसः

रजतसुवर्णताम्रनागवङ्गाऽभ्रककान्ततीक्ष्णविद्रुममुक्तापारदहेममाक्षिकमस्मानि, शुद्धटङ्कणमनःशिलागन्धकाश्चेति सर्वान्समभागान्गृहीत्वा मुद्गपर्णीरक्तकार्पासपुष्पक्षीरविदारीमाषपर्णीजम्बीरतुलस्यग्र-

तान्द्ररसैरेकैकदिनं विमृद्य शुष्का वटिका विधाय काचकूपिकायामवरुद्ध्य दिनत्रयपर्यन्तं त्रिविधाग्निभिर्वालुकायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतमौषधं खल्वे निक्षिप्य मृगमदजातीपत्रकर्पूरैलामरिचनागकेशरत्वक्कक्कोललवङ्गपिप्पलीजातीफलानां समभागानां चूर्णं समानं मेलयित्वा नागवल्लीदलरसेन विमृद्य गुञ्जाप्रमाणा वटिकाः कुर्यात् । ताम्बूलीस्वरसेन सहैकैका सेवनीया । अनेनोन्मादमूर्च्छाक्षयपाण्डुकामलाहलीमककफवातदुर्ग्रहणीस्वराऽऽमयश्वासकासरक्तपित्ताऽऽनाहराजयक्ष्मप्रमेहादयो नश्यन्ति। गवडदर्पदेहपुष्टीरक्तवृद्धिश्च भवति । दुग्धशर्करान्नं पथ्यम् ।

१४ पैत्यान्तकरसायनम्

आर्द्रकं ५ पलं, सैन्धवं २॥ पलं, मरिचानि २ पलानि, सूर्यक्षारं १॥ तोलकं गृहीत्वाऽऽर्द्रकं जलेन प्रक्षाल्याऽवशिष्टानि द्रव्याणि विमृद्याऽऽर्द्रकेण सूर्यक्षारं मेलयित्वा यामत्रयं सम्यग्विमृद्य वदराऽस्थिप्रमाणा वटिकाः कुर्यात् । एकैका वटी सेविता चेत्पित्तवातयमनपाण्डुश्वासकासाऽजीर्णादयो रोगा निवर्तन्ते । गर्भिणीनामपि श्वासकासगलपादशोथादिकं नश्यति । पथ्यं यथोचितम् ।

१५ प्रमेहारिरसः

शुद्धाहिफेनजातीफलमृगमदहिमसारटङ्कणस्फटिकानरसारसूर्यक्षारशुक्तिकाशुद्धश्वेतमल्लानेकैकतोलकान्गृहीत्वा श्वेतार्कक्षीरेण यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रिकां विधाय सम्यक् संशोष्य नूतनपुष्पभाण्डे ४० तोलिकां सुधामास्तीर्य तदुपरि चक्रिकां निधाय ४० तोलिकया सुधयाऽऽच्छाद्य २४० उत्पलकैः पुटं दद्यात् । एतदौषधं गुञ्जाचतुष्टयमामिक्षाऽनुपानेन देयम् । पथ्यं यथोचितम् । अनेनौपसर्गिकप्रमेहा नश्यन्ति ।

१६ विल्वमूलादिवटी (विल्वमुरारिः)

शुद्धपारदगन्धकविल्वमूलत्वक्तालीसपत्रपूतिकरञ्जबीजग्रन्थितगरत्रिफलाऽरिष्टबीजमञ्जिष्ठाहरिद्रादार्वी १-१ तोलिकाः गृहीत्वाऽजामूत्रेण दिनत्रयपर्यन्तं विमृद्य वटीर्विधाय क्षीरतन्येन नेत्रयोरञ्जनं देयम् । अनेन सर्पवृश्चिकादिविषाण्युग्रविसूच्यजीर्णवाय्वादिरोगा निवर्तन्ते अम्लवर्ज्यं पथ्यम् ।

१७ मल्लरसः (महदादि·)

गोक्षीरस्वेदितं मल्लं स्तन्यशुद्धञ्च दरदमेकैकतोलकं पृथक् चूर्णीकृत्य शरावे चूर्णद्वयमपि निक्षिप्य पञ्चसप्ततिजम्बीरफलस्वरसभावं दद्यात् । एतत्क्रियासम्पादने दिनचतुष्टयं भवति । ततः परं शरावस्थमौषधमेकीकृत्य चतुर्गुणितं श्लक्ष्णक्षुद्रपिप्पलीचूर्णं मेलयित्वैकदिनपर्यन्तं विमृद्य काचपात्रे रक्षयेत् । विंशतिवत्सरान्तरितश्वासकासव्याधिषु तण्डुलप्रमाणं गोघृतेन सह देयम् । एकवारभक्षणेनैव प्रबलश्वासोपशान्तिर्भवति । दुग्धान्नं पथ्यम् ।

१८ महाभ्रतापरसः

एकस्मिन्काचपात्रे सद्योगोमयं विन्यस्य हस्तेन घटिकाद्वयं सम्यग्घृष्ट्वा फुस्कसं निःसार्य कृष्णतुलसीकल्केनैकयामपर्यन्तं घृष्ट्वा त्रितोलिकया शर्करया सहैकतोलकं पारदं मेलयित्वैकतापर्यन्तं हस्तेन घर्षणीयम् । यदा पारदोऽदृष्टः सन् शर्करया सहैकी भवति तदा त्रिगुञ्जामात्राः कार्याः । मात्राद्वयं गृहीत्वा सूर्याभिमुखस्त उत्थाय सूर्याय समर्पयित्वा दन्तस्पर्शं विना निगिलेत् । किञ्चिच्छीतोदकमनुपानतया पेयमेवं सायमपि दातव्यम् । एवं सप्ताहपर्यन्तमौषधं सेवनीयम् । दुग्धान्नं पथ्यमितरत्किमपि न भक्षणीयम्, यदि मुखपाकः स्यात्ताम्बूलवल्लीदलेन सह गन्धकतैलं भक्षणीयम् । अनेन गण्डमालाऽपचीराजयक्ष्मभगन्दरगलत्कुष्ठाद्यः सर्वे रोगा निवर्तन्ते । एकसप्तकेन रोगनिःशेषता न स्यात्तर्हि द्वितीयसप्तकेऽपि दातव्यम् ॥

१९ महामूर्छान्तकरसायनम्

कान्तलोहयोर्भस्म २-२ पलं, चन्द्रसारत्रिकटुकत्रिफलाकुष्ठाऽऽकारकरभगजपिप्पलीजीरकद्वयविडङ्गधान्यकैलाद्वयीजलवङ्गजातीफलजातीपत्रजटामांसीतक्कोलत्वङ्नागकेशरचव्यत्रिवृतः प्रत्येकपलिका गृहीत्वा वस्त्रपूतं चूर्णं विधाय नागरं ८० पलं, जम्बीररसः ४० तोलकः, बीजपूररसः ४० तोलकः, वृहज्जम्बीर (संगतराज) रसः ४० तो०, मृगमदः पादतोलकः, गोघृतं ४० तो०, मधु २५ तो०, देशीयशर्करा ८० तोलिका, एतानि सहस्र ३०० तोलकनीलकच्छुरामूलस्याऽष्टमाशाऽवशिष्टक्वाथे शर्करां निक्षिप्यापर्युक्तसान्द्रत्वा तन्तुपाकं विधाय चूर्णं प्रक्षिप्याऽवलोड्य मन्दाग्निं कृत्वा मध्वाज्यादिकं निक्षिप्याऽन्ते कस्तूर्यादिसुगन्धिद्रव्याणि मेलयित्वा लेहपाकेन सिद्धं रसायनं गृहीत्वा स्थापयेत् । दीर्घकालमूर्च्छारोगिभिरेतदामलकप्रमाणं लेह्यं प्रत्यहं प्रातः सायञ्च सेवनीयम् । अनेन चण्डतैलपञ्चविधमूर्च्छापित्तकासाऽम्लपित्तशिराऽपरोधश्वासमूत्राऽवरोधपित्तपिडिकाप्रभृतिरोगा नश्यन्ति । पथ्यं रोगानुकूलम् ।

टि०—अत्र कच्छुराशब्देन कण्डूत्पादक क्षुपो ग्राह्यो न तु शर्करी, आयुर्वेदादौ तथैव व्यवहारात्।

२० मेहगजाङ्कुशरसः (महदादि)

एकतोलकं कङ्कुष्ठं (मृद्दारशृङ्गं) विशोध्य कृष्णतुलसीपत्रजम्बीररसाभ्यां प्रतिघटिकाद्वयं ग्रासं दत्त्वा पूर्वोक्तरसद्वये एकदिनं विभाव्य परेद्युः सम्यक् प्रक्षाल्य शोषयित्वा विचूर्ण्य मरिचहरिद्रे एकैकतोलके संयोज्यैकयाममर्दनेन कङ्कुष्ठं सिन्दूरं भवति। एतद्गुञ्जाद्वयपरिमितं गोघृतेन सह सेवनीयम्। गोधूमरोटिका दुग्धञ्च पथ्यम्। शर्करा, घृतं, तण्डुलान्नं, क्षारत्रयादिकं सुतरां वर्ज्यम्। यत्र मेहरोगाधिक्यवशात्सर्वमपि शरीरं स्फुटितं सद्व्रणस्थानेभ्यः क्रिम्यादयः समुद्भूय पूयादिकं प्रसरति एतादृशमेहरोगस्यैतदौषधम्। दिनत्रयमेव दातव्यम्। चतुर्थदिवसे वृहज्जम्बीररसमिलितहरिद्रासंयुक्तं चिञ्चान्नं भक्षणीयमौषधं न सेवनीयम्। एकसप्तके व्यतीते सति शुद्धगन्धकरससिन्दूरपुराणतण्डुलाः १-१ तोलकाः, रसकर्पूरं २ तोलकं, शुद्धकङ्कुष्ठं पादतोलकं सर्वाण्यपि शुद्धजलेन विमृद्य गुञ्जाप्रमाणा वटिकाः कुर्यात्। सप्ताहपर्यन्तं प्रत्यहं प्रातःकाले एरण्डतैले पक्वां वटीं निमज्य भक्षयेत्। आढकीखण्डयूपान्नं पथ्यम्। अन्यत्किमपि न भक्षणीयम्। लवणः सुतरां वर्जनीयः।

२१ मेघनादरसः

सूर्यक्षारः १६ तोलकः, नरसारः ९ तोलकः, स्फटिका ५ तो०, गोदन्तं (कर्पूरशिलाजतु. तै०) ४ तो०, कलनारभस्म (सङ्कपलीता यू०) २ तो०, प्रवालभस्म ५ तो०, एतानि सर्वाण्यपि विचूर्ण्य मृत्पात्रे निधायैकशततोलकं नारिकेलजलं निक्षिप्य जलाद्यशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्वौषधं ग्राह्यम्। एतदौषधं गुञ्जाचतुष्टयपरिमितं शर्करामिश्रितभद्रमुस्तारसेन, तण्डुलक्षालनोदकेन, नारिकेलजलेन वा देयम्। अनेन लिङ्गदाहोपदंशौपसर्गिकमेहा नश्यन्ति।

२२ मेहपञ्चामृतवटी

शङ्खभस्म ५ तोलकं, गोदन्त (कर्पूरशिलाजतु) कलनारभस्मैलाबीजतक्कोलानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गोक्षीरेण नारिकेलजलेन च प्रतियामद्वयं मर्दयित्वा कतकबीजशोधितजलेन सह कतकचन्दनेन वा एका वटी देया। रक्तपीतशुक्लकृष्णमेहादिनिवृत्तिर्भवति। पथ्यं यथेच्छम्।

२३ मेहाङ्कुशरसः

शुद्धदरदः ५ तोलकः, जातीफलं २॥ तो०, जातीपत्री केशरञ्चैकैकतोलकं, एतानि सर्वाणि विचूर्ण्य शुष्कनारिकेलगोलकान्तर्निक्षिप्य तेनैव गोलकखण्डेन छिद्रं पिधाय पञ्चशेटकगोक्षीरे निक्षिप्य सर्वस्य क्षीरस्याऽवशोषणपर्यन्तं पाकं कुर्यात्। क्षीरसत्त्वेन सह नारिकेलखण्डादिकं मिलित्वा किट्टरूपतयोपलभ्यते। तच्चीलवर्णं किट्टं सम्यग्विमृद्य स्थापयेत्। एतद्गुञ्जाद्वयपरिमितं घृतेन मधुना वा देयम्। एतेन रक्तपीतशुक्लहरिद्रातन्तुमधुमेहादयो निवर्तन्ते। पथ्यं रोगानुकूलम्।

२४ मेहान्तकरसः (महदादि.)

शुद्धपारदगन्धकविषताम्रभस्मत्रिकटुकरेणुकाभद्रमुस्ताजटामांस्येलाबीजलवङ्गचित्रकमूलत्वग्जातीफलजातीपत्रकेशरचन्द्रसारविडङ्गानि समभागानि चूर्णीकृत्य विजयापत्ररसेनाऽष्टभावना दत्त्वा छायाशुष्कं विधाय मधुना लेहाकारं कृत्वा चणकप्रमाणं सेवनीयम्। अनेन विंशतिर्मेहाः, अजीर्णश्वासकासक्षयातिसारश्वयथुबहुमूत्रादयश्च रोगा नश्यन्ति। पथ्यं यथोचितम्।

२५ मृतोद्धारणरसः

शुद्धमल्लमूषिकगौरीदोङ्किहरिदलपापाणानि शुद्धपारदहिङ्गुलमनःशिलागन्धकवत्सनाभटङ्कणानि, ताम्राऽभ्रकलोहभस्मानि, क्षारत्रयलवणपञ्चकातिविषाकुष्ठानि च सर्वाणि समभागानि गृहीत्वा त्रिकटुकचित्रककाथाभ्यां जयपालबीजतैलेन चैकैकदिनं विमृद्य कृष्णसर्पमयूरकूर्ममहिषीछागपित्तानामेकैकतोलकानां क्रमशो भावना दत्त्वा गुञ्जाप्रमाणा वटिकाः कुर्यात्। भीमसेनकर्पूरानुपानेन यद्वा शर्करया सेवितव्यम्। सोपद्रवाणां सन्निपातदोषाणां निवृत्तिर्भवति। श्लेष्मप्रधानवातरोगोऽपि नश्यति। नारिकेलजलपानं, श्रीचन्दनलेपनं, कामिनीसम्भाषणञ्च न कार्यम्।

२६ रसराजपर्पटी

सममागपारदगन्धकयोः कज्जलीं द्रवीकृत्य समभागं ताम्रलोहयोर्भस्म मेलयित्वा कमलाग्निना मृदुपाकं विधायैरण्डपत्रेषु पर्पटिकां कृत्वा जम्बीररसेन पञ्चकोलककाथेन चैकैकदिनं भावयित्वा संशोष्य तण्डुलमण्डेनैकदिनं विमृद्य पूर्वोक्तौषधसमं टङ्कणं सौवर्चलञ्च मेलयित्वौषधार्द्धभागं मरिचचूर्णं संयोज्य चणकाम्लेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृद्य शोषयित्वा वंशनाल्यां स्थापयेत्। एतच्चणकप्रमाणमनुपानविशेषैः सर्वरोगेषु दातव्यम्।

टि०—रसपर्पटीनाऽभिन्नाऽपि भावनावैलक्षण्यात्पृथक्त्वेन प्रदर्शिता।

२७ वसन्तकुसुमाकररसः (प्रथमः)

सुशुद्धं कनकं तारं रसेन्द्रं पञ्चनिष्ककम्।
वङ्गभस्म च सिन्दूरं ताप्यं लोहमयोमलम्॥

प्रत्येकञ्च चतुर्निष्कं कान्तं गरलमेव च ।
ताम्रभस्म त्रिनिष्कं स्यात्प्रवालं मौक्तिकन्तथा ॥
कर्पूरञ्च तथा कुर्यात्कस्तूरीं द्वयनिष्किकाम् ।
सम्मर्द्य वासास्वरसे त्रिदिनञ्च भिषग्वरः ॥
शतावरीगोक्षुरजैर्विदारीवटरोहजैः ।
सारिवासहदेव्युत्थैश्चन्दनाद्भिश्च खादिरैः ॥
कार्पासपुष्पपत्तङ्कजैर्विसमृणालजैः ।
मालतीपुष्पसेव्योत्थैरेभिर्द्रवैः पृथक्पृथक् ॥
भावयेत्सप्तदिवसान् सेवनीयं प्रयत्नतः ।
गुञ्जाष्टकप्रमाणेन सिताऽऽज्यमधुसंयुतम् ॥
नवनीतेन सम्मिश्रं गवां क्षीरश्रियोजयेत् ।
प्रत्यहं रक्तिकामात्रं प्रमाणं वर्धयेत्ततः ॥
गुञ्जाषोडशपर्यन्तं वर्धयेत्सर्वरोगजित् ।
कृष्णं रक्तञ्च पीतञ्च श्वेतञ्चैव प्रमेहकम् ॥
अस्थिस्रावं सोमरोगमरोचकमसृग्दरम् ।
मांसधावनसङ्काशं सर्वातीसारमेव च ॥
प्रमेहान्विंशतिविधान्मूत्रदोषांश्च विंशतिम् ।
अशीतिं गुदजान्रोगान्सर्वशूलहरं परम् ॥
ऊर्ध्वशूलं योनिशूलं पार्श्वशूलं विशेषतः ।
विनाशयेत्किं बहुना वृष्यं धातुविवर्धनम् ॥
आयुष्यं पुष्टिदं मेध्यं कान्तिसौभाग्यवर्धनम् ।
महावसन्तनामाऽयं कुसुमाकर ईरितः ॥
वर्षैकं भक्षयेन्नित्यं हन्ति रोगानशेषतः ॥

२८ वसन्तकुसुमाकररसः (द्वितीयः)

गोरोचनं केशरञ्च समभागं, द्वयोः समं शिलाजतुभस्म (सफेदसुरमा), सर्वसमं निम्बनिर्यासम्, एतत्सर्वमपि खल्वे निधाय गोदध्ना दिनचतुष्टयं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणां वटीं कुर्यात् । श्वेतरक्तप्रदरादिषु प्रमेहेषु च तण्डुलोदकेनोपयोज्यम् ।

२९ वातगजाङ्कुशरसः (महदादिः)

पारदं रक्तमुरगं रौप्यकं कनकन्तथा ।
मण्डूरं नागसिन्दूरं ह्यूषणं भृङ्गमूलिका ॥
गारुत्मतञ्च मुक्ताश्च समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
वातप्रधानरोगेषु टङ्कणं विषसंयुतम् ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव कृष्णनिर्गुण्डिकारसैः ।
नागवल्लीरसेनैव जम्बीररसमर्दितम् ॥
प्रत्येकं त्रिविभूयैवं वह्निरुक्षायेन मर्दयेत् ।
सर्वेषां वातरोगाणां दद्यायुक्तरसेन वै ॥
अपस्मारे धनुर्वाते विद्रधौ रक्तगुल्मके ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रेषु सर्वगात्राङ्गकम्पने ।
प्रसूतवातरोगेषु हनुस्तम्भेषु पार्दके ।
महानयं सर्ववातगजाङ्कुश इतीरितः ॥
पथ्यं यथोचितं ग्राह्यं सर्वरोगेषु योजयेत् ।

३० व्रणान्तकरसः (महदादिः)

यवानिका ४ तोलिका, खुरासानिका ५ तोलिका, शुद्धहरीतकी ४ तोलिका, अम्लतक्रशोधितभल्लातकाः ४ तो०, पारदः १ तो०, रसकर्पूरम् १ तो०, मयूरतुत्थं १ तो०, एतानि चूर्णीकृत्य १२० निम्बुकरसेन मर्दयित्वाऽरिष्टबीजप्रमाणां वटीं कुर्यात् । एका वटी प्रातर्गोघृतानुपानेन निर्गिलनीया । क्षीरशर्करान्नं पथ्यम् । एवं सप्ताहं कार्यम् । चणकमसूरमुद्गमूलकवार्ताकादयः सुतरां वर्जनीयाः ।

३१ सज्जीरमहाद्रावकम्

शुद्धसज्जीरसैन्धवबिडलवणौपरस्वर्यक्षारस्फटिकासमुद्रलवणानि १-१ पलानि विचूर्ण्योर्ध्वनलिकायन्त्रेण द्रावकं ग्राह्यम् । महाद्रावकवद्प्रयोगेषूपयोजनीयम् ।

३२ सज्जीरसिक्थकम्

एकतोलकं सज्जीरं परिपक्वकारवेल्लफले विन्यस्य मृद्वस्त्रैः संवेष्ट्य त्रिभिश्चतुर्भिर्वोपलकैः पुटं दत्वा स्वच्छकटाहे निभिध्य शिग्रुद्वयमूलत्वक्कारवेल्लताम्बूलपत्रतुलसीरक्तकार्पासपत्रस्वरसान् प्रतिपञ्चतोलकान् दत्वा विपचेत् । शुष्के सति पञ्चतोलकं मधु मिश्रयित्वा काचपात्रे सम्भृत्य स्थापनीयम् । एतत्सज्जीरसिक्थकमसाध्यश्वासकाससन्निपातज्याधिषु महावातप्रकोपे च द्वित्रिवारमुपयोज्यम् । एतदौषधसेविनां मधुरं वर्ज्यम् ।

३३ सिक्थद्रावकम् (महाद्रावकम्)

स्वदेशिसिक्थकं २४ तोलकं, सिकता १६ पलिका, शुद्धमल्लपाषाणरसकर्पूरदरदचन्द्रसारतुरुष्कसैन्धवस्फटिकापिप्पलीमूलजीरकक्षुद्रपिप्पलीयवानीराजिकाराक्षाहरीतक्यः प्रत्येकपलिकाः, महिषाक्षगुग्गुलुः २ पलः, एतेषु मल्लरसकर्पूरदरदान् सम्यग्विचूर्ण्य शेषद्रव्यचूर्णे मिश्रयित्वा सिक्थकञ्च संद्रुत्य सर्वमपि सिकतायां मेलयित्वा पुष्पभृद्भाण्डे निधायोर्ध्वनलिकाविधिना निःशेषं द्रावकं ग्राह्यम् । एतद्विन्दुचतुष्टयं शुद्धजलानुपानेन दत्त्वोर्ध्वशरावे पतद्दृतं भस्म तण्डुलपरिमितं मधुना सह पञ्चपदिनानि दातव्यम् । श्वयथुरोगिणां तत्क्षणं मूत्रं निःसरति । असाध्यो महानपि करपादादिशोथो दिनत्रयाऽभ्यन्तरे क्षयं याति । पथ्यं यथोचितम् ॥ (भोजप्रबन्धात्)

३४ सुवर्णसूर्यावर्तरसः

स्वर्णभस्म त्वेकभागं स्वर्णार्धं मृगनाभकम् ।
मृतरौप्यञ्च कान्तञ्च माक्षीकं मौक्तिकन्तथा ॥
हेमकार्पाससूक्ष्मैला गीर्वाणकुसुमं क्षिपेत् ।
नागरं टङ्कणञ्चैव काकविन्त्याश्च बीजकम् ॥

अमृतं सर्वद्विगुणमेतद्द्रव्येषु निक्षिपेत्।
दरदश्चाऽपि सर्वार्द्धं जम्बीररसमर्दितम्॥
आर्द्रकस्वरसेनैव सप्तवारञ्च मर्दयेत्।
लवङ्गस्य कषायेण पञ्चवारञ्च मर्दयेत्॥
खर्जूरस्याऽनुपानेन क्लीवत्वन्तु विनाशयेत्।
द्राक्षाफलानुपानेन उन्मादक्षयकृत्तथा॥
आर्द्रकस्याऽनुपानेन हिक्काहृद्रोगनाशनम्।
गुञ्जामात्रं द्विगुञ्जं वा अनुपानविशेषतः॥
सर्वशूलप्रशमनं चित्तविभ्रमनाशनम्।
अस्थिहृद्गततापञ्च पुराणज्वरनाशनम्॥
महाश्चर्यावर्तरसो नानारोगनिषूदनः॥

३५ सूतिकाभरणरसः

शुद्धपारदगन्धकविषदरदटङ्कणमरिचानि समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रकरसाभ्यां प्रति यामद्वयं विमृद्य जयपालबीजतैलेन यामत्रयं सम्यङ्मर्दयित्वा शृङ्गसम्पुटे स्थापनीयम्। एतदौषधं सूचिकाग्रेण किञ्चिन्मात्रमादाय जिह्वायां घर्षणमात्रेण सोपद्रवाः सन्निपाता शान्ता भवेयुः। वाताः शिथिला भवन्ति। पथ्यं यथोचितम्।

३६ स्वच्छन्नरसः (रसस्वच्छन्नः)

समभागञ्च सङ्ग्राह्यं पारदाऽमृतगन्धकम्।
जातीफलञ्च भागार्द्धं पिप्पलीसमभागिका॥
अहिवल्ल्युत्थनीरेण मर्दयित्वा दिनद्वयम्।
षण्मासं भावयेत्प्राज्ञः पक्वजम्बीरसारतः॥
अञ्जनं सन्निपातादौ तमोमोहान्ध्यनाशनः॥

विसृष्टरसाः

३७ अजमोदादिचूर्णम्

अजमोदाऽभ्रकं रास्ना गुडूची विश्वभेषजम्।
शतपुष्पाऽश्वगन्धा च शतमूली समांशतः॥
सुश्लक्ष्णचूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिषा सह।
हृत्पृष्ठकटिकोष्ठस्थं मारुतं हन्ति वेगतः॥

हितो०, वातरोगे।

भाषा—अजमोद, अभ्रकभस्म, रास्ना, गिलोय, सौंठ, सौंफ, देशी असगन्ध और शतावर सममाग लेकर बारीक चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से २ माशेतक घी अथवा उचितानुपानके साथ लेनेसे हृदय, पीठ, कमर, और कोष्ठस्थवातको यह शीघ्र नष्टकरताहै।

३८ अमरसुन्दरी गुटिका

कान्तचूर्णं पलान्यष्टौ पलान्यष्टौ रसस्य च।
एकीकृत्याऽथ सम्मर्द्य बीजपूराम्लमर्दितम्॥
मर्दयेत्तप्तखल्वेन गोलको भवति क्षणात्।
मृतवज्रस्य भागैकं गोलभागचतुष्टयम्॥
एकीकृत्याऽथ सम्मर्द्य भस्मीभवति सूतकः।
मारयेद्भूधरे यन्त्रे सप्तसङ्ख्यकाः क्रमात्॥
तद्भस्म भागमेकन्तु भागैकं गन्धकस्य च।
अन्धमूषागतं ध्मातं खोटो भवति तत्क्षणात्॥
द्वात्रिंशन्मृतखोटस्य शुद्धहेम्नश्च विंशतिः।
तारं ताम्रं व्योमसत्त्वं कान्तसत्त्वं चतुर्थकम्॥
एकैकं द्वादशांशाः स्युः सर्वमेकत्र कारयेत्।
अन्धमूषागतं ध्मातं खोटो भवति तत्क्षणात्॥
द्वात्रिंशन्मिलतः खोटात् सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत्।
तत्खोटस्यसमंचूर्णन्तु आरोटरससंयुतम्॥
मर्दयेन्मध्यमाम्लेन गोलको भवति क्षणात्।
गोलकस्य पले द्वे च मृतकान्तस्य तत्समम्॥
एकीकृत्याऽथ सम्मर्द्य मेघनादरसेन च।
मुनिपुष्परसेनैव दिनमेकञ्च मर्दयेत्॥
गुटिकाः कारयेद्देवि षष्ट्यधिकशतत्रयम्।
तत्रैकां गुटिकां सर्पिस्त्रिफलामधुसंयुताम्॥
भक्षयेद्वर्षमेकन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः।
सर्वास्ता भक्षयेत्पश्चाद्रुद्रायुः स भवेन्नरः॥
अथैका धारिता वक्त्रे गुटिकाऽमरसुन्दरी।
हठाद्रोगान् समस्तांश्च पलितानि च नाशयेत्॥

रसार्णव, रसायने।

भाषा—कान्तलोहचूर्ण और शुद्धपारा ८–८ पल मिलाकर तप्तखल्वमें डालकर बिजोरेके रससे गोलीबननेतक मर्दनकरे। इसमें चतुर्थांश वज्रभस्म डालकर तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे पारेकी भस्म होजाती है। फिर उसका गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर एकदिन पूर्ववत् तप्तखल्वमें बिजोरेके रसकेसाथ मर्दनकर गोला बनाय पूर्ववत् भूधरपुटकी आंचदे। ऐसे ७ बार पुट देनेकेबाद यह स्थायी भस्म होजाती है। इस भस्मकी बराबर शुद्ध गन्धक मिलाकर अन्धमूषामें धमन करनेसे खोट होजाता है। यह खोट ३२ भाग, शुद्धसुवर्ण २० भा०, रजत, ताम्र, अभ्रक और कान्तसत्त्व ३–३ भाग लेकर सबको इकट्ठा मिलाय अन्धमूषामें धमन करनेसे खोट तैयार होगा। इस खोटकी बराबर शुद्धपारा मिलाकर मध्यमाम्लसे तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे गोला तैयार होगा। इस गोलेमेंसे २ पल, कान्तलोहभस्म २ पल लेकर कटिवाली चौलाई और अगस्त्यपुष्पके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३६० गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घी, मधु और त्रिफलाके चूर्णके साथ एक वर्षतक लेनेसे ब्रह्मायु होता है। इसीतरह समस्त गोलेकी गोलियोंका सेवन करनेसे रुद्रायु होता है। इसमेंसे १–१ गोली मुंहमें रखनेसे समस्तरोग और वलीपलित नष्टहोवेंहैं।

३९ अमीररसः

रसेन्दुर्दरदं दालिचिक्कणं तारतन्तवः।
कर्षं कर्षं समाहृत्य कणिकाः कल्पयेत्तनूः॥
तवके पटुमास्तीर्य तत्र ताः कणिका न्यसेत्।
विधाय पटुना नेमिं पिदध्याच्चीनपात्रतः॥
तदधो ज्वालयेद्वह्निं शनैः प्रहरत्रयम्।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चीनपात्राऽवलग्नकम्॥
अद्यादमीरनामानं ग्रन्थिवातोपदंशवान्।
अहानि सप्त नव वा मर्यादाऽमुष्य भक्षणे॥
सितासखं पयो गव्यं पथ्यं गोधूमफुल्लिका।
भिषजामुपकारार्थं रसोऽयमत्र कीर्तितः॥
गुञ्जैका वा द्विगुञ्जा वा मात्राऽमुष्य यथामयम्।
पिधाय द्राक्षया प्रातर्गिलेद्दन्तैर्न च स्पृशेत्॥
पटोरश्रीणि पलानीह तत्र स्यात्तरणं पलात्।
द्वाभ्यां पलाभ्यां घटयेत्परितो नेमिबन्धनम्॥

सि. भै. म., वातव्याध्यधिकारे।

टि०—अत्र रसकर्पूर एवास्ति भावप्रकाशीयकर्पूररसाण्डेश्वरादत्र विलक्षणगुणोऽपि नास्ति परन्तु मध्येऽपि विशेषतया लभ्यप्रतिपोऽस्ति अस्यस्थाने भावप्रकाशीययोगो विशेषतयालाभप्रदोऽस्ति।

भाषा—एक साफ तवेपर एकपल बारीक सेंधेनमकका चूर्ण बिछाकर रसकपूर, शिंगरिफ और दालचिकना १–१ कर्ष लेकर बारीक टुकडे बनाकर नमकपर रखकर एककर्ष चांदीकी जरीको कैंचीसे बारीककाटकर उसपर बिछाकर चीनीके प्यालेसे ढकदे और २ पल नमकके चूर्णकी चारोंतर्फ दीवाल बनादे, फिर तवेको चूल्हेपर चढाय बेरकी पतली दो लकडियोंकी मन्दआंच देकर ३ पहर पकावे। चार तह भीगाहुआ कपडा प्यालेके पेंदेपर रखतारहे। स्वाङ्गशीतल होनेपर नमककी दीवालको धीरजसे हटाकर प्यालेमें लगेहुए पारदपुष्पोंको निकालकर शीशीमें भरले। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक द्राक्षके अन्दर बन्दकर निगलवादे, दांतोंमें न लगे ऐसे ७, ९ वा १४ दिनतक सेवन करे। शकर मिलाहुआ गायका दूध, गेंहूंकी रोटी और घीके सिवाय कुछभी खानेको न दे। इसके सेवनसे ग्रन्थिवात और उपदंश नष्ट होते है।

४० अर्धनारीश्वररसः

सूतो गन्धकतालके मणिशिला हिङ्गूलताप्ये विषं,
संशुद्धं विषतिन्दुधूमजनितं नागारियुक् लाङ्गली।
सर्वं श्लक्ष्णशिलातले मुनिदिनं सम्भाव्य भृङ्गद्रवैः,
संशोष्याऽथ विधाय चूर्णमखिलं स्यादर्धनारीश्वरः॥
गुञ्जैका खलु चार्द्रयारिसहितां दद्याज्ज्वरे दारुणे,
द्वन्द्वे धाऽखिलसन्निपातजनिते भूतग्रहे च ज्वरे।
तोयं चाऽथ सुतप्तशीतलमथ क्षारोदकं वा पिबेत,
तक्रं पथ्यमथाचरेद्धि लवणं शाकादिभिर्वर्जितम्॥

र. चो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ, सोनामाखी, बछनाग, कुचिला, गृहधूम, बांझखेखसा और करिहारी समभाग लेकर सबको नीलवर्णकरलीकर भंगरेके रससे ७ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती अदरखके साथ देनेसे भयङ्करज्वर, द्वन्द्वज, सान्निपातिक, भूत और महावेशज ज्वर इन सबको यह नष्टकरता है। गरम करके ठंढा कियाहुआजल अथवा क्षारोदक पिलावे। सेंधानमकडाली-हुई छाछ देवे। शाक वगैरहका त्याग करे।

४१ अश्वत्थवल्कलादिलोहम्

अश्वत्थवल्कलञ्चैव त्रिकटुर्लोहकिट्टकम्।
गुडेन सह दातव्यं क्षयरोगविनाशनम्॥

नि. र., क्षयाधिकारे।

भाषा—पीपलकी छाल, त्रिकटु और लोहभस्म समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा गुडके साथ देनेसे क्षय नष्ट होताहै।

४२ आह्वारिरसः

भुद्रैला साभया कृष्णा लोहाभ्रखर्पराणि च।
समभागं प्रकर्तव्यं द्विभागः पारदो मतः॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य द्रोणपुष्पीरसेन च।
वल्लमात्रं प्रदातव्यं पुनर्नवरसैर्युतम्॥
प्लीहानं यकृतं शोथमग्निमान्द्यमरोचकम्।
नासाज्वरं विशेषेण सर्वञ्च विषमज्वरम्॥
आह्वारिरसो ह्येष नाशयेदविकल्पतः॥

भै. र., ज्वराधिकारे। आह्वो नासाज्वरः।

भाषा—छोटी इलायची, हर्रे और पीपल, लोह, अभ्रक और खर्परभस्म १–१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर २ भाग लेकर बारीक चूर्णकर गूमाकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पुनर्नवाके रसके साथ देनेसे प्लीहा, यकृत्, शोथ, मन्दाग्नि, अरुचि, नासाज्वर और विशेषतः समस्त विषमज्वर नष्ट होते हैं।

४३ कनकसुन्दररसः

कनकफलरसाभ्रकताप्यकं,
त्रपु सवीरविषायसगन्धकम्।
वसुकराकयुगद्विकरानल-
त्रितयदिग्भजयुक्कलिकारिकाम्॥
पलमितां विनिधाय विमर्दयेत्
त्रिदिवसं त्रिफलोद्भवकैः रसैः।
मृदुपुटे परिताप्य कृतं रजः
कनकसुन्दर एष महारसः॥
वमनरेचनशुद्धतनोः सदा
ऽऽर्द्रकरसेन रसोनरसेन वा।

निखिलकुष्ठकिलासभगन्दरं
ज्वरविसर्पगरालसकाञ्जयेत्।

ना. वि., कुष्ठे।

भाषा—सुवर्णभस्म ८ कर्ष, रजतभस्म २ कर्ष, शुद्धपारा १२ कर्ष, अभ्रक, सोनामाखी और वङ्गभस्म २–२ कर्ष, शुद्ध सन्चौर (दालचिकना) और बछनाग ३–३ कर्ष, लोहभस्म और शुद्धगन्धक ८–८ कर्ष, करिहारी १ पल लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर त्रिफलाके क्वाथसे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर मृदुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे वमनविरेचनादिकसे शुद्ध किये हुए रोगीको १–१ रत्ती अदरख अथवा लहसुनकेरसकेसाथ देनेसे सब प्रकारके कुष्ठ, श्वित्र, भगन्दर, ज्वर, विसर्प, गर और अलसकको यह नष्टकरताहै।

४४ कर्पूरतिलकरसः

सममागं रसं नागं संयोज्य प्रथमं ततः।
क्षारस्यैकं गन्धकस्य द्वौ भागौ तत्र मेलयेत्॥
तत्सर्वं पञ्चमूत्रेण मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
त्रिभिर्गजपुटैर्दग्धं भावयेदार्द्रकद्रवैः॥
मुशलीकन्दजेनापि ततः सिद्धो भवेद्रसः।
द्विवल्लं मधुना मासं कासश्वासातुरो भजेत्॥
ग्रहण्यां पाण्डुरोगे च तथाऽऽर्द्रकरसान्वितम्।
विष्टम्भशूलगुल्मार्तस्त्रिफलाक्वाथतो भजेत्।
गोदुग्धेन भजेन्मेही सितामरिचयक्ष्मी।
कर्पूरतिलकः सोऽयं कासे श्वासे प्रशस्यते॥

र. मृ., कासश्वासयोः।

भाषा–एकभाग शुद्धनागको गलाकर समभागपारा मिलावे। फिर यवक्षार १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग मिलाकर थोडा २ प्रक्षेप देकर लोहेकी कडछीसे चलावे। भागत्रीभस्म होनेपर नीचे उतार क्रमसे गधी, गाय, भेड, बकरी और भैंसके मूत्रोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर पुटदे। ऐसे ३ पुट देनेके बाद अदरख और मुशलीके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ एकमहीनेतक देनेसे कास, श्वास, ग्रहणी, और पाण्डुरोग, अदरखके रसकेसाथ विष्टम्भ और शूल, त्रिफलाके क्वाथसे गुल्म, गोदुग्धसे प्रमेह,शक्कर और मरिचसे क्षयको यह नष्टकरताहै।

४५ कर्पूरादिवटी

कर्पूरं रसगन्धकञ्च दरदं तीक्ष्णोऽभ्रयं सर्वकं,
कालोऽप्येन्द्रयवोऽजमोदकुलभुक् धातक्यपि श्रुम्लकं।
एला मांसलरालशाल्मलिभवं जातीफलं टङ्कणं,
तिन्ता सिन्धुभवं विषा विषमिदं प्रत्येकनिष्कान्वितम्॥
सर्वेषां सदृशं प्रमाणमखिलं कान्ताभ्रसिन्दूरकं,
सिन्दूरस्य समञ्च फेनमहिजं तत्पादतः सङ्क्षिपेत्।
ह्येमं कोकिलनेत्रबीजसहितं सर्वञ्च चूर्णीकृतं,
धत्तूरस्वरसेन फेनममलं सम्भाव्य यामद्वयम्॥
सार्धं तेन विमृद्य वस्तु सकलं घस्रद्वयं सादरं,
गुञ्जामात्रवटीं निबद्ध्य नियतं मध्वन्वितां योजयेत्।
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु सहसा रक्तातिसारेषु च,
आमं शूलयुतं समस्तजनितं नानातिसाराञ्जयेत्॥

रसायनप० ग्रहण्याम्।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और सिंगरिफ, फौलादभस्म, कमलकन्द, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रकमूल, धायडीकीजडकीछाल, पुरानीइमली, इलायची, जटामांसी, राल, सेमलका मुसला, जायफल, सुनासुहागा, कुटकी, सेंधानमक, शुद्धबछनाग और अतीस ४–४ माशे, कान्तलोह और अभ्रकभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध अफीम ये सब २१–२१ माशे, शुद्धधतूरेकेबीज और तालमखाना ५।–५। माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर अफीमको धतूरेकेस्वरससे दोपहर मर्दनकर सबचूर्णको मिलाय धतूरेकेस्वरसमें दोदिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथदेनेसे सबप्रकारकी ग्रहणी, रक्तातिसार, शूलयुक्तआमातिसार, सान्निपातिक अतिसार इनसबको यह नष्ट करती है।

४६ कामेश्वरमोदकः

सम्यक् शोधितमारितं सुभुजगं वङ्गं तथा तीक्ष्णकं,
सूताभ्रं तरणिं शिवां परिमितं प्रत्येकमादाय वै।
धात्रीसैन्धवकुष्ठकट्फलकणाः शृङ्गी यवानीद्वयं,
यष्टीजीरकयुग्मधान्यकराटीशृङ्गीजयाकेशरम्॥
तालीसं त्रिसुगन्धकं समरिचं जातीफलं मेथिका,
चूर्णीकृत्य समस्तमेतदखिलं दत्त्वाऽर्द्धशाकासनम्।
सर्वैस्तुल्यतमां सितां सुविमलां पश्चाऽऽत्समानाक्षिपेत्,
कर्पूरैरथचूर्णितानपि तथा दत्त्वा तिलाक्षिस्तुपात्॥
सम्यक् शुद्धकलेवरैरहरहो भक्ष्यं सदा कामिभिः,
आधिव्याधिहरं क्षयक्षयकरं कुष्ठापहं बृंहणम्।
स्त्रीणां तोषकरं परं धृतिकरं शुक्राभिवृद्धिप्रदं,
कासश्वासपलासरोगनिचयप्रध्वंसनं देहिनाम्॥

र. क. ल. (ना.), वाजीकरणे।

भाषा—उत्तम नाग, वङ्ग, फौलाद, पारद, अभ्रक और ताम्र भस्म, शुद्धगन्धक, आंवले, सेंधानमक, कुठ, कायफल, पीपल, काकडासींगी, दोनों अजवाइन, मुलहटी, स्याह सफेद जीरा, धनियां, कचूर, मेढासींगी, ओहदुलकेफूल, केशर, तालीसपत्र, तज, पत्रज, इलायची, सफेदमिर्च, जायफल, मेथी ये सब १–१ भाग, इनसबसे आधीभुनीभांग, और सबकेबराबर तथा शुद्धकपूर रक्तिसमानसे लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागचन्दकी चाशनीमें अच्छी

तरह मिलाय १-१ तोलेके मोदक बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ खानेसे शारीरिक और मानसिक रोग क्षय,कुष्ठ, नपुंसकत्व, बुद्धिभ्रंश, शुक्राग्निनाश, कास, श्वास, श्लेष्मरोग, इन सबको यह नष्टकरताहै।

४७ कामेश्वरमोदकः

त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी जाती तालीसपत्रकम्।
कुष्ठसैन्धवधान्याकं नागकेशरकट्फलम्॥
मधुकं मेथिका भार्ङ्गी यवानी चाजमोदकम्।
किञ्चिद्द्वयं जीरयुग्मं कर्पूरञ्च त्रिजातकम्॥
सबीजविजयां भ्रष्टां सर्वतुल्यां प्रदापयेत्।
अभ्रकं पारदं लोहं स्वेच्छया प्रक्षिपेत्ततः॥
मधुना घृतमिश्रेण कर्षमात्रन्तु भोजयेत्।
क्षीरानुपानं निर्दिष्टं भिषजामिष्टकारकम्॥
वह्निवृद्धिकरो वृष्यो बृंहणो बलवर्धनः।
सर्वव्याधिहरो ह्येष सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत्॥
कासश्वासाम्लशूलघ्नो वलीपलितनाशनः।

र. क. ल (ना.) रसायने वाजीकरणे च।

भाषा-त्रिकटु, त्रिफला, काकडासींगी, जाविनी, तालीसपत्र, कुठ, सेंधानमक, धनियां, नागकेशर, कायफल, मुलहठी, मेथी, भारङ्गी, अजवायन, अजमोद, अभ्रभुने दोनों जीरे, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, इन सबकी बराबर सबीज भुनीभांग, तथा अभ्रक, पारद और लोहभस्म औचिती देखकर लेवे। फिर सबका बारीकचूर्णकर मधु और घी मिलाकर १-१ कर्षके मोदक बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ देनेसे मन्दाग्नि, धातुक्षीणता, सङ्ग्रहग्रहणी, कास, श्वास, रक्तपित्त, शूल और वलीपलितको यह नष्ट करता है।

४८ कामेश्वरमोदकः

आकल्लककरः शृङ्गी मस्तकी दरदो रसः।
जातीफलं कट्फलञ्च पिप्पली क्रिमिसूदनम्॥
त्रैलोक्यविजयाबीजं धत्तूरविषतिन्दुकम्।
जातीपत्रं वङ्गभस्म यवानीयुगलं तथा॥
शुद्धदार्वहिफेनञ्च मदनञ्चैव कार्षिकान्।
गृहीत्वा चोत्तमं खण्डं सर्वतुल्यं विमिश्रयेत्॥
मधुना मोदकं कृत्वा खादेन्निष्कचतुष्टयम्।
विनाग्निं मोदकं कुर्यादादौ कृत्वा तु कज्जलीम्॥
रसगन्धकयोर्वैद्यः सम्प्रदायविशारदः।
शुक्रस्तम्भकरो वृष्य एष उक्तो मनीषिभिः॥

र. क. ल. (ना.), रसायनवाजीकरणयोः।

भाषा-अकलकरा, काकडासींगी, मस्तगी, शिंगरिफ और पारदभस्म, जायफल, कायफल, पीपल, विडङ्ग, बीजसहित भांग, शुद्ध धतूरेके बीज, कुचिला, जाविश्री, वङ्गभस्म, दोनों अजवाइन, विधारा, अफीम, मदनमस्त, शुद्ध पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली १-१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर मधुके साथ १-१ कर्षके मोदक बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ लेनेसे धातुवृद्धि और शुक्रस्तम्भन होता है।

४९ क्रिमिमेघमातरिश्वारसः

निम्बं चौरं चाजमोदं विडङ्गं
चक्रे यद्वं सूतराजं विमृद्य।
माध्वीकार्क द्व्यममानन्तु दद्या-
द्धन्याजन्तून्मातरिश्वेव मेघान्॥

र. सू, क्रिमिरोगे।

भाषा-निम्बबीजमज्जा, खुरजवाइन, अजमोद, विडङ्ग, चक्रबद्धपारा (मनलरस १२५ देखो) ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर १-२ पहर इकट्ठे मर्दनकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ लेनेसे समस्त क्रिमि नष्टहोतेहै।

५० खञ्जनिकारिरसः

कुपीलुरजतायांसि सम्भाव्यार्जुनवारिणा।
गुञ्जमानां वटीं कृत्वा शोषयेत्सूर्यरश्मिना॥
पक्षघातं घोरतरं गद्रं खञ्जनिकं तथा।
रसः खञ्जनिकारिख्यो हरेदाशु न संशयः॥

भै. र, खञ्जवाते।

भाषा-शुद्ध कुचिला, रजत और लोहभस्म समभाग लेकर सफेदअर्जुनकीछालके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर गुञ्जवराबर गोलियें बनाकर धूपमें सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य पक्षाघात और खञ्जवात नष्टहोतेहैं।

५१ गन्धकादिलेहम्

गोक्षीरशोधिता चीनहेमक्षीरी १२ तोलिका, गोदुग्धेक्षुतण्डुलीयकाऽऽकाशवल्लीश्वेतकूष्माण्ड-नागार्जुनीवास्तुकतोयपिप्पलीस्वरसशोधितोऽमल-सारगन्धकः १२ तोलकः, वाकुचीचित्रकमूलत्व-ग्ब्राह्मीकुण्डलीमूलतालीसपत्राऽश्वगन्धापारसपि-प्पलकण्टकिफलादामूलचम्पकपुष्पाणि प्रति १ तोल-कानि सञ्चूर्ण्याऽऽदौ गन्धकं खल्वे विमृद्य चीनशर्करां ९ तोलिकां, चीनहेमक्षीरीचूर्ण, पूर्वोक्तवस्तुचूर्णञ्च मेलयित्वा १२ तोलकं मधु निक्षिप्य चीनपात्रे रक्ष-येत्। सायं प्रातः पादतोलकं रोगबलानुसारेणाऽर्द्धम-ण्डलमेकमण्डलं वा सेवयेत्। अनेन मेहमणाः, पामा-कालमेहोपदंशयोनिव्यापत्पाणिपादचन्धशूलानि श्वे-तरक्तहारिद्रमेहाश्च निर्मूला भवन्ति। अम्लधूमपान-स्त्रीसङ्गादिकं वर्ज्यमुष्णोदकञ्च पेयम्। क्षीरान्नं, घृतं, शर्करा, आढकीखण्डयूषश्च पथ्यः। (अगस्त्य०)

५२ गुडूच्यादिचूर्णम्

गुडूच्यतिविषा शुण्ठी भूनिम्बं यवतिक्तकम्।
मुस्तं कणा यवक्षारः कासीसं भ्रमराप्रियः॥

एतेषां समभागेन चूर्णमेव विनिर्दिशेत् ।
यकृत्प्लीहपाण्डुरोगमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
नानादोषोद्भवञ्चैव वारिदोषभवन्तथा ॥
विरुद्धभेषजभवं ज्वरमाशु व्यपोहति ॥

भै. र., प्लीहयकृदधिकारे ।

भाषा—गिलोय, अतीस, सोंठ, चिरायता, तितली, नागरमोथा, पीपल, यवक्षार, कासीसभस्म, स्वर्णचम्पककी छाल सब समभागका चूर्ण बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ मासे तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यकृत्, प्लीह, पाण्डु, मन्दाग्नि, अरुचि, ८ प्रकारका ज्वर, जलदोषज, विरुद्धभेषजजन्यज्वर इन सबको यह नष्टकरताहै ।

५३ चन्दनादिचूर्णम्

चन्दनं शाल्मलीपुष्पं निजातं रजनीद्वयम् ।
अनन्तां सारिवां मुस्तमुशीरं यष्टिकामले ॥
स्वर्णपत्रीं शुभां भार्गीं देवदारु हरीतकीम् ।
सर्वद्विगुणितं लौहञ्चैकत्र परिमर्दयेत् ॥
प्रमेहा विंशतिः श्वासः कासो जीर्णज्वरस्तथा ।
प्राशनादस्य नश्यन्ति दुर्नामानि च कामला ॥

भै र प्रमेहे ।

भाषा—सफेदचन्दन, सेमलकेफूल, तज, पत्रज, इलायची हल्दी, दारुहल्दी, अनन्तमूल, सारिवा, नागरमोथा, खस, मुलहठी, आवले, सनाय, भारङ्गी, देवदारु, हर्रे, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबसे दूनी लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे २–३ रत्ती प्रमेहहरानुपानके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, श्वास, कास, जीर्णज्वर, बवासीर, कामला, ये सब नष्ट होते हैं ॥

५४ चिञ्चादिलेहम् (महदादि)

चिञ्चापत्रं शतपलमायसञ्च तदर्धकम् ।
तदर्धं चित्रमूलं स्यात्तदर्धं किट्टमार्द्रकम् ॥
निर्गुण्डी पाटलो बिल्वो वासा दारु पुनर्नवा ।
वरुणो बृहती चैव कण्टकारी तथैव च ॥
सहदेवी विदारी च गोपवल्ली च वालकम् ।
अपामार्गश्च खदिरो गणकार्यश्वगन्धिके ॥
वाराही शालपर्णी च वासन्ती सुरसा धवः ।
पाषाणभेदिमूलञ्च सौभाग्यं गोक्षुरं तथा ॥
शृङ्गिका काकनासा च शार्ङ्गी सहचरी शमी ।
श्योनाकपीतवृक्षौ च राजार्कं शरपुङ्खिका ॥
भृङ्गं धामलकी दन्ती हपुषा नीलपुष्पिका ।
आरग्वधोऽमृताऽनन्ता कारवल्लीफलन्तथा ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव चव्यग्रन्थिकराजिकाः ।
दीप्यं पिचुमर्दकं जीरकोशीरपत्रकम् ॥

श्रीगन्धो दारु मञ्जिष्ठा वराङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
प्रत्येकं वन्यमूलञ्च पलं शतकमाहरेत् ॥
पलाष्टकं त्वापणस्थं भाण्डगर्भे विनिक्षिपेत् ।
द्वादशाढकतोयञ्च क्वाथमष्टावशेषितम् ॥
पुराणस्य गुडस्याऽपि पलानां शतमिश्रितम् ।
वस्त्रपूतञ्च तत्क्वाथं बीजपूररसन्तथा ॥
भृङ्गराजार्द्रकरसं दुःस्पर्शस्वरसं तथा ।
प्रत्येकं प्रस्थसमानं तच्च मन्दाग्निना पचेत् ॥
व्योषतालीसपत्राणि चातुर्जातविडङ्गकम् ।
गजकृष्णा नलं चैव ग्रन्थिकं वत्सकं तथा ॥
त्वक्क्षीरी धान्यकं जाजी दीप्ययुग्मकरेणुकम् ।
जातीफलञ्च तत्पत्रं लवङ्गं मांसिकं मधु ॥
भार्ङ्गी श्वेतं मरीचञ्च त्रिफला कृष्णजीरकम् ।
रास्नाऽब्दोशीरदार्व्यश्च कुङ्कुमं निवृता शटी ॥
तक्कोलं टङ्कणं शृङ्गी कोष्ठं चाहरेद्द्विपक् ।
मञ्जिष्ठा देवदारुश्च प्रत्येकं द्विपलन्तथा ॥
पटगालिततच्चूर्णं पक्के सम्मिश्रितं भवेत् ।
क्षौद्रं शतपलञ्चैव निक्षिपेल्लोहकान्तकम् ॥
मण्डूरञ्च तथैव स्यात्प्रत्येकं पलयुग्मकम् ।
लेह्यं पक्त्वा स्निग्धभाण्डे धान्यराशौ विनिःक्षिपेत् ॥
धन्वन्तरिगणाधीशादिपालभिषजोऽर्चयेत् ।
द्विकालमक्षमानस्य भक्षणं मासमानकम् ॥
शोफकामलपाण्डूंश्च गुल्मकं श्वासकासकौ ।
द्वादशक्षयरोगांश्च क्रिमिं श्लेष्मज्वरं हरेत् ॥
पुराणशूलमस्युग्रं मलमूत्रविबन्धकम् ।
प्रमेहपिडिकारोगमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥
अक्षिशूलोदरञ्चैव रक्तपैत्यञ्च छर्दिकम् ॥

वै. चि. चतुर्विंशतिपैत्यरोगे ।

भाषा—छायाशुष्क इमलीके पत्ते १०० पल, मण्डूरका बारीक चूर्ण ५० पल, चित्रकमूल २५ पल, अदरखकाकल्क १२॥ पल, संभालु, पाटला, बेल, अडूसा, देवदारु, पुनर्नवा, वरुना, बडी और छोटी भटकटैया, सहदेवी, विदारीकन्द, अनन्तमूल, सुगन्धवाला, अपामार्ग, खैर, अरणी, देशीअसगन्ध, वाराहीकन्द, शालपर्णी, माधवीलता, तुलसी, धव, पाषाणभेद, बीजक, सुहागा, गोखरू, काकडासींगी, काकनासा, काकजङ्घा, पीयाबासा, शमी, सोनापाठा, बीरतरु, नीलार्क, सरपुङ्ख, भंगरा, आंवले, दन्तीमूल, झाऊ, कालादाना, अमलतास, गिलोय, जवासा, करेला, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, गठिवन, राम्ना, अजवाइन, विडङ्ग, मुलहठी, जीरा, खस, पत्रज, सफेद चन्दन, देवदारु, मजीठ, तज, नागरमोथा इनमेंसे जङ्गली चीजें १००–१०० पल, दूकानकी चीजें ८–८ पल, लेकर जवकुट बनाय १२ अढकपानीमें औटावे । अष्टमांशावशेष रहनेपर छानकर मिट्टीकेपात्रमें पकावे । उसमें १०० पल पुराना गुड डालकर बिजौरा, भंगरा, अदरख, जवासा इनका स्वरस

१-१ प्रस्थ डालकर मन्दाग्निसे पकावे । गोली बननेलायक घन तैयार होनेपर उतारले । फिर त्रिकटु, तालीसपत्र, चातुर्जात, विडङ्ग, गजपीपल, नल, पिपलामूल, कुटज, तीखुर, धनिया, जीरा, दोनों अजवाइन, रेणुका, जायफल, जावित्री, लौंग, जटामासी, मुलहठी, भारङ्गी, सफेदमिर्च, त्रिफला, कालीजीरी, रास्ना, नागरमोथा, खस, दारुहल्दी, केशर, निसोत, कचूर, शीतलचीनी, भुनासुहागा, काकड़ासींगी, पृश्निपर्णी, मजीठ और देवदारु २-२ पल लेकर कपड़छान चूर्णकर मिलादे । ठण्डाहोनेपर मधु १०० पल, कान्तलोह और मण्डूरभस्म २-२ पल डालकर चिकनेवर्तनमें रख मुहबन्दकर ३ दिनतक धान्यकीराशिमें गाड़दे। चौथेदिन निकालकर धन्वन्तरि, गणेश, दिग्पाल, और वैद्योंका पूजनकर १-१ कर्ष सुबह शाम एक महीनेतक सेवन करनेसे शोथ, कामला, पाण्डु, कुम्भकामला, श्वास, कास, १२ क्षय, क्रिमि, श्लेष्मज्वर, पुराना भयङ्कर शूल, मलमूत्र विबन्ध, प्रमेहपिडिका, मन्दाग्नि, अरुचि, अक्षिशूल, उदररोग, रक्तपित्त, वमन इन सबको यह नष्टकरताहै ।

५५ चिन्तामणिलेह्यम्

भृङ्गराज (चेग्पुतङ्गाकु तै०) पीतपुष्पभृङ्गराजयिस्वगोक्षुरमूलप्राचीनामलकीकोकिलाक्षपत्राणां स्वरसाः प्रति ३६ तोलकाः, जम्ब्वौदुम्बरत्वङ्नारिकेलपुष्पाणां प्रति ७॥ तोलकानां४८ तोलके जलेऽष्टावशेषं क्वाथं गृहीत्वा पूर्वोक्तरसैः संयोज्य मरिचनीलीमूलबलातिबलाऽरण्यमरीचिकाकपित्थमूलानि प्रति १० तोलकानि १२० तोलके शुद्धजले निधाय२४ तोलकं तालगुडं निक्षिप्य १४४ तोलकं गोदुग्धं मेलयित्वा द्रवशोषणपर्यन्तं विपाच्य जीरकैलालवङ्गत्रिफलायष्टिमधुकमरिचजातीफलजातीपत्रयवानिकाखुरासानिकातालीसनागकेशरपाटला (करकट्ट तै०) कुष्ठाऽऽकारकरभनागराणां ३-३ तोलकानां चूर्णं घनपाके मेलयित्वाऽवतार्य स्वाङ्गशीते २० तोलकं घृतं २४ तोलकं मधु च निक्षिपेत् । अत्र च त्रिलोहसिन्दूरं ६ तोलकं, मण्डूरसिन्दूरं ३ तोलकं मेलयित्वा पादतोलकं प्रत्यहं द्विवारं पादमण्डलमर्धमेकं वा मण्डलं सेवनीयम् । अनेन पाण्डुशोथकामला सर्ववायुग्रहण्यतीसारवान्तयो निर्मूला भवन्ति । (व्यास०)

५६ जातीपत्र्यादिवटी

टङ्कद्वयमिता जातीपत्री जातीफलं समम् ।
सिन्धुशोषश्च तन्मात्रमाकारकरभं समम् ॥
त्वक्माली च तन्मात्रायेलाकङ्कोलकौ समौ ।
वत्सनाभं तत्समानं टङ्कैकमहिफेनकम् ॥
भूतैर्याजन्तु टङ्कैकशौशनागाजमोदकम् ।
ज्योतिष्मती च कर्पूरी द्विटङ्का टङ्कमात्रकम् ॥
कुचैलं शोधितं ग्राह्यं सर्वं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ।
द्विगुणायाः सितायास्तु पाके चूर्णं विमिश्रयेत् ॥
गुटीं कृत्वा प्रयत्नेन चणकद्वयमानिकाम् ।
महापुंस्त्वकरी ह्येषा बलवीर्यविवर्धिनी ॥

र. कु. वाजीकरणे ।

भाषा—जावित्री, जायफल, समुद्रशोष, अकलकरा, तज, तमालपत्र, इलायची, शीतलचीनी, शुद्धवच्छनाग २-२ टङ्क, शुद्ध अफीम और धतूरेके बीज १-१ टङ्क, रससिन्दूर, नागभस्म, अजमोद, मालकांगनी, अनन्तमूल २-२ टङ्क, शुद्धकुचिला १ टङ्क लेकर बारीकचूर्णकर सबसेदूनी खांडकी चाशनीमें मिलाकर दोचने प्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली यथेष्ट अनुपानकेसाथ लेनेसे नपुंसकत्वको दूरकर बल और वीर्यको बढ़ाती है ।

५७ जीवन्त्यादिलेहः

जीवन्तीं मधुकं पाठां त्वक्क्षीरीं त्रिफलां शटीम् ।
मुस्तैले पद्मकं द्राक्षां द्वे बृहत्यौ वितुन्नकम् ॥
सारिवां पौष्करं मूलं कर्कटाख्यं रसाञ्जनम् ।
पुनर्नवां लोहरजस्त्रायमाणां यवानिकाम् ॥
भार्ङ्गीं तामलकीमृद्धिं विडङ्गं धन्वयासकम् ।
क्षारचित्रकचव्याम्लवेतसव्योषदारु च ॥
चूर्णीकृत्य समांशानि लेहयेत्क्षौद्रसर्पिषा ।
चूर्णात्पाणितलं पञ्चकासानेतद्व्यपोहति ॥

च., ग. नि , कासाऽधिकारे ।

भाषा—अर्कपुष्पीकी जड़, मुलहठी, पाठा, तीखुर, त्रिफला, कचूर, नागरमोथा, इलायची, पद्मकाठ, दाख छोटी और बड़ी भटकटैया, सोनापाठा, सारिवा, पोहकरमूल, काकड़ासींगी, रसौत, पुनर्नवा, लोहभस्म, त्रायमाण, अजवाइन, भारङ्गी, भूम्यामलकी, ऋद्धि, विडङ्ग, जवासा, यवक्षार, चित्रकमूल चव्य, अम्लवेत, त्रिकटु, देवदारु, सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशे मधु और घीकेसाथ लेनेसे समस्त कास नष्टहोतेहैं ।

५८ ज्योतिष्मान्रसः

कान्तं सुवर्णमभ्रञ्च रसं षड्गुणजारितम् ।
वैक्रान्तं विद्रुमं रुद्रजटामूलं हयाऽरिपम् ॥
कङ्कुष्ठञ्च समं सर्वं गृहीत्वा यत्नतो भिषक् ।
एकीकृत्य रसेनैङ्गजपत्रभवेन च ॥
भल्लातमूलखदिरमूलक्वाथेन यत्नतः ।
त्रिधा सम्भाव्य विधिवन्मात्रा चणकसम्मिता ॥
ज्योतिष्माद्यामकरसो धातरतं हरेद्द्रुतम् ।
कुष्ठमष्टादशविधं रोगांश्चान्यांस्तदुद्भवान् ॥
तथा गौणोपदंशांश्च विरतिं पारदाङ्गयाम् ।
दुष्टव्रणं गण्डमालां भगन्दरमथापचीम् ॥

नातः परतरं किञ्चिद्भेषजं रक्तशुद्धिकृत् ।
सारिवा तन्द्रिका पथ्या पर्पटं गञ्जिनी तथा ॥
चक्राङ्गी क्वाथ एतेषां ज्योतिष्मद्रससेवनात् ।
वर्धयेदाशु वीर्यञ्च सर्वरोगकुलान्तकृत् ॥
भाषितः श्रीमहेशेन विबुधानां यथाऽमृतम् ॥

भै. र. कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, सुवर्ण, अभ्रक, षड्गुणगन्धकजारित पारा, वैक्रान्त, विद्रुम, रुद्रजटा और सफेद कनेरकी जड, रेवन-चीनी सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पवांडकेपत्तोंके स्वरस तथा भिलांवे और खैरकीजडकेक्वाथसे ३–३ भावनाएं देकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली कुष्ठहरानुपानकेसाथ देनेसे भयङ्कर वातरक्त, उपद्रवसहित १८ प्रकारके कुष्ठ, सुप्तिक, उपदंश, पारदविकार, दुष्टव्रण, गण्डमाला, भगन्दर इन सबको यह नष्टकरता है । रक्तशुद्धिकेलिये इससे बढ़कर दूसरी औषधें कम हैं । सारिवा, भारङ्गी, हरें, पित्तपापडा, भांग, गिलोय, इनके क्वाथके साथ सेवनकरनेसे समस्त रोगोंका नाशहोकर वीर्यकी वृद्धिहोतीहै ।

✓ ५९ ज्वरचिन्तामणिरसः

तुत्थद्वयञ्च दरदं गन्धकं रसतालकम् ।
शङ्खबीजं दन्तिबीजं ताम्रभस्म हलाहलम् ॥
लोहवङ्गभवं भस्म रौप्यभस्म मनःशिलाम् ।
टङ्कणं श्वेतपाषाणं समभागञ्च योजयेत् ॥
आर्द्रकस्वरसैर्मर्द्य वज्रमूषान्तरे क्षिपेत् ।
स्वर्णभस्म च तीक्ष्णस्य प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥
एतैस्सर्वैः समायुक्तमार्द्रकस्वरसैस्तथा ।
गुञ्जाप्रमाणा घटिका सन्निपातज्वरञ्जयेत् ॥

रसायनस०, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध दोनों तूतिये, हिंगलू, गन्धक, पारा, हरिताल, कालादाना, जमालगोटा, ताम्रभस्म, बच्छनाग, लोह, बङ्ग और रजतभस्म, शुद्ध मैनसिल, सुहागा और सोमल समभाग लेकर सबकी कज्जलीकर अदरखकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर भूधरपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण, फोलाद, प्रवाल और मोतीभस्म १–१ भाग मिलाकर अदरखके रससे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, श्वास, कास, विषमज्वर, क्षय इन सबको यह नष्टकरताहै ।

✓ ६० ज्वराङ्कुशरसः

लोहनाथस्य शुद्धस्य पलेऽर्धैकैकभागकः ।
दौरूपमण्डनात्पष्टिर्भागा भल्लातकस्य च ॥
चत्वारो नागजिह्वायास्तथाम्लेच्छमुखस्य च ।
चत्वारो माक्षिकस्यापि स्नुहीक्षीरस्य षोडश ॥
एतन्मृद्वग्निना सर्वं पचेद्भाण्डे च मृन्मये ।
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा समाकर्षेत्ततः परम् ॥
विपक्वं भेषजं सम्यक्ततः खल्वे विमर्दयेत् ।
रसो ज्वराङ्कुशो नाम शीतादिज्वरनाशनः ॥
नागवल्लीदलेनास्य दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
दद्यान्मण्डादिकं पथ्यं ज्वरिताय ज्वरापहम् ॥

र. मृ., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, हरिताल और भिलावां ६०–६० भाग, मैनसिल, तांबेका चूर्ण और सुवर्णमाक्षिक ४–४ भाग लेकर कज्जलीकर १६ भाग थूहरका दूध मिलाकर मिट्टीके बर्तनमें रख मन्दाग्निसे पकावे । दूध सूखनेपर उतारकर खरलमें डाल एकदिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पानके साथ देनेसे शीतादि समस्त विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इसमें मांड वगैरह हल्का पथ्य देवे ।

६१ ताण्डवारिलौहम्

दारुरामठकर्पूरयशदायो यथोत्तरम् ।
प्रगृह्य चतुरावृत्त्या विभाव्य विजयाम्बुना ॥
कुपीलुजकषायेण पार्थस्य स्वरसेन च ।
षड्रक्तिकां वटीं कृत्वा युञ्ज्यात्ताण्डवशान्तये ॥
बृंहणं पानमग्रञ्च स्नानं स्रोतस्वतीजले ।
शयनं स्वेदशून्यं यत्कर्म तदेह शर्मणे ॥
कर्षणाद्यखिलं प्रोक्तमशुभाय पुरातनैः ॥

भै. र. ताण्डवरोगाधिकारे ।

भाषा—देवदारु, भुनीहींग, शुद्धकपूर, जस्त और लोहभस्म ये सब क्रमवृद्धभाग लेकर बारीकचूर्णकर भांगकेस्वरस अथवा क्वाथसे ४ भावनाएं देकर कुचिलेके क्वाथ और अर्जुनके स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ताण्डववातको यह नष्टकरता है । बृंहण अनुपान देवे । बहती हुई नदीमें स्नानकरावे । पूर्ण ब्रह्मचर्य रक्खे । कर्षणक्रिया इसमें वर्जित है ।

✓ ६२ तापाङ्कुशवटिका

सूतसूर्यविषकुष्ठत्रिफलाग्निव्योषमङ्कुशरसो घटिकैका।
हन्ति मुद्गसुतुलिता नवमाहाद्यागतेन पवना-
खिलतापम् ॥

र. को., ज्वराधिकारे ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धबच्छनाग, कुठ, त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर तुलसीवगैरहकेरससे एकदिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली ज्वर आनेसे १ घण्टा पहिले तुलसी वगैरहकेसाथ लेनेसे यह समस्त विषमज्वर और वातवेदनाको नष्टकरतीहै ।

६३ ताम्रयोगः

त्रिफला त्र्यूषणं मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ।
लवङ्गञ्च पृथक् सर्वं सूक्ष्मं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
सर्वेभ्यो द्विगुणं ताम्रं मृतं दत्त्वा प्रमर्दयेत् ।
माषैकं वा द्वयं वापि लेहयेन्मधुना सह ॥
समस्तशूलशान्त्यर्थं समस्तसुखहेतवे ॥

ना. वि., शूले ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल और लवङ्ग समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे द्विगुण ताम्रभस्ममें मिलाय १-२ दिन मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे १ से २ माशेतक मधुकेसाथ देनेसे समस्तशूल दूरहोतेहैं ।

६४ तालकवटी

तालभागो भवेदेको शिला चैव चतुर्गुणा ।
चूर्णयित्वा द्वयं चैतद्भावयेत्त्रिफलोदकैः ॥
कृत्वा तद्गुटिकां श्लक्ष्णां कूपीमध्ये विनिक्षिपेत् ।
निरुद्धय वालुकायन्त्रे यामद्वयमतन्द्रितः ॥
गुञ्जाद्वयं ददीतास्य श्वासकासापनुत्तये ॥

र. सू., श्वासकासयोः ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ भाग, मैनसिल ४ भागलेकर बारीक चूर्णकर त्रिफलाकेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर छायाशुष्ककर आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २-२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै ।

६५ तालकसुन्दरीगुटिका

तण्डुलाम्बुरजनीपुनर्नवा
धावनी कणजलाग्निजैरलम् ।
भूतवृक्षपिचुमन्दसंयुतैः
स्वेदयेदथ पृथक्पृथक् क्रमात् ॥
यामकैकमधिकं विचूर्णितं
शोषयेत्तदनु गन्धकं पुनः ।
भृङ्गसम्भवरसेन भावितं
द्रावितञ्च शुभलोहपात्रगम् ॥
प्रक्षिपेच्च वसुधा घृतान्तरे
शुद्धिमेत्यथ सुतकमभ्यगम् ।
पारदञ्च गृहकन्यकारसै-
र्मर्दितं त्रिफलयाऽग्निना क्रमात् ॥
स्वेदयेत्त्रिकटुहिङ्गुराजिका-
क्षारयुग्मलवणैर्दिनत्रयम् ।
काञ्जिकेन वरदोलिकागतं
शुद्धमित्थममलञ्च सूतकम् ॥
अष्टौ भागाः पूर्वशुद्धाच्च ताला-
द्दद्यो भागाः पूर्वशुद्धाद्रसेन्द्रात् ।
दत्त्वा खल्वे तालकार्धञ्च गन्ध-
मामृमान्तं मर्दयेत्कज्जलाभम् ॥
तालादर्द्धं सोमराज्याश्च चूर्णं
चूर्णं देयं चाभयायाश्च तावत् ।
पलाशुण्ठीकृष्णमुस्ताकराला-
त्वग्मुकानां सोषणानाञ्च भागाः ॥
देयाः सर्वे सूतराजेन तुल्या
देयास्तालात्सद्विषं षोडशांशम् ।
सर्वं सूक्ष्मं पेषितं सिन्धुतोयै-
र्देयाच्छुद्धानाञ्च सिद्धा वटीस्ताः ॥
दिने दिने माषकसम्मितानां
प्रभावतस्तालकसुन्दरीणाम् ।
समभ्यसन्याति नरो विलङ्घ्य
प्रसह्य कुष्ठार्तिसमुद्रमाशु ॥
श्वित्रोदुम्बरशीर्णसुप्तिरकसाऽसृग्वातदद्रुक्रिमी-
नाडीदुष्टभगन्दरग्रहणिकादुर्नामपाण्ड्वामयान् ।
कृच्छ्रोन्मादससन्निपाततमकाऽपस्मारमेदोज्वरान्,
हन्यात्तालकसुन्दरीति गुटिका प्रोक्ता स्वयं शम्भुना ॥
वलिपलितं क्षयरोगं कुष्ठं ग्रहणीमसाध्यगदविपिनम् ।
विदहति विशालानल इव गुटिका तालकसुन्दरीविहिता
अतिलवणतैलकाञ्जिकविषमाशनपानमहीधर्माणि ।
जागरकोपनमैथुनमद्यविरुद्धकानि सर्वाणि ॥
परिहरतु यावदेनां करोति पुरुषो तालकेश्वरीं गुटिकां
तावन्ति चाप्युपरितो दिनानि गच्छन्नदान्मुक्तिम् ॥

र. सू., कुष्ठे ।

भाषा—चावलकाधोवन, हल्दी, पुनर्नवा, शालपर्णी, पीपल, खस, चित्रक, बहेड़ा और नीमके स्वरसोंसे अलग अलग १-१ पहर हरितालको स्वेदनकर सुखाले । फिर गन्धकको लोहेकेपात्रमें गलाकर भंगरेके रस और घृतमें निर्वापवेकर शुद्धकरे । पारेको खट्टीछाछ, घीकुंवार, त्रिफला और चित्रकमें क्रमसे मर्दनकर गोलाबनाय ४ तह कपड़ेमें बांधकर त्रिकटु, हींग, राई, सज्जी, यवक्षार, पांचोंनमकमिलीहुई कांजीमें दोलायन्त्रसे ३ दिन स्वेदनकरके शुद्धकरे । फिर शुद्धहरिताल ८ भाग, शुद्धपारा, गन्धक, बाकुची, हर्रे, इलायची, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, कालीजीरी, तज और मरिच ४-४ भाग, शुद्धवछनाग १६ वा भाग लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय समुद्रके जलसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली कुष्ठहरानुपानकेसाथ देनेसे सबतरहकाकुष्ठ, श्वित्र, उदुम्बर, मांसकागिरना, प्रसुप्ति, रकसा, रक्तवात, दद्रु, क्रिमि, नाडीव्रण, दुष्टभगन्दर, ग्रहणी, अर्श, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, उन्माद, सन्निपात, तमक, अपस्मार, मेद, ज्वर, इनसबको यह नष्टकरती है । इसके सेवनमें अत्यन्तलवण, तैल, काञ्जिक, विषमाशन, पान, भूमिशय्या, धूप, जागरण, कोप, मैथुन, मद्य, अङ्कुरित अन्न इनसब-

का परित्यागकरे। जितने दिन इसगोलीका सेवनकरे उतने दिनतक तथा औषधसेवनसमाप्तिके बादभी उतनेही दिनतक उक्तचीजोंका निषेधकरे।

६६ तीक्ष्णादिवटिका

खर्पराभ्ररसास्तुल्यास्तीक्ष्णञ्च द्विगुणं मतम्।
तीक्ष्णपादसमं स्वर्णं जतुकाथेन सप्तधा॥
भावयित्वा ततः कार्या द्विगुञ्जाप्रमिता वटी।
पलङ्कषाकषायेण रसेनोदुम्बरस्य वा॥
प्रयोज्या वटिका ह्येषा शुभा तीक्ष्णादिनामिका।
रक्तपित्तं क्षयं कासं यक्ष्माणं श्वसनं ज्वरम्॥
निहन्यात्सकलान्रोगान् केसरी करिणं यथा॥

भै. र., रक्तपित्ते।

भाषा—खर्पर, अभ्रक और पारदभस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भा०, सुवर्णभस्म ½ भाग लेकर बारीकचूर्णकर लाखकेकाढ़ेसे ७ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली गोखरूकेक्वाथ अथवा गूलरके फलोंकेरससे देनेसे रक्तपित्त, क्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, और ज्वरको यह नष्टकरतीहै।

६७ त्रिकटुकाद्या वटी

त्रिकटुत्रिफलादुरालभा
द्विनिशादारुवचाः सचित्रकाः।
रसगन्धककर्कटाह्वया
रुचककट्फलहिङ्गुपत्रिकाः॥
इति दर्शितभेषजैर्गुटी
मधुना शाणमिता कृता नृणाम्।
प्रणिहन्ति निषेविता नरैः
पवनात्थकफकोपजान्विकारान्॥

ग. नि., कफरोगे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, जवास, हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, वच, चित्रकमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, काकडासींगी, कालानमक, कायफल, हींग, कालीजीरी? येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मधुमें ४-४ मासेकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली सायं प्रातः लेनेसे वातरक्त और कफरोगको यह नष्टकरतीहै।

✓६८ त्रिनेत्ररसः

टङ्कणं शोधितं गन्धं मृतं शुल्वायसं रसम्।
दिनैकमार्द्रकद्रावैर्मर्द्य लघुपुटे पचेत्॥
त्रिनेत्राख्यो रसो नाम चासाध्यं श्वयथुं जयेत्।
वल्लमात्रं पिबेच्चानु वातारिशिखरीरसम्॥

भै. र., शोथाधिकारे।

भाषा—शुद्धसुहागा, गन्धक और पारा, ताम्र और लोहभस्म, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एकदिन अदरखके रससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २-३ रत्ती एरण्ड और अपामार्गके पत्रस्वरसकेसाथदेनेसे असाध्य शोथ नष्टहोताहै।

६९ त्रिपुरुषो रसः

वज्रं गद्याणमितं फणिवल्लिना स्वेदयेद्दिवसम्।
त्रिदिनं क्षिपेत्तुपाम्भसि मूषां कन्यारसेन सम्पूर्य॥
तत्र निधाय च वज्रं रुद्रमुखीं सप्तभिः पुटैर्विदहेत्।
भस्म भवेदिति वज्रं भसितमतः कथ्यते प्रवालस्य॥
विद्रुमपलं निदध्याद्दिनमेकं देवदालिरसमध्ये।
प्रहरं तद्रसघृष्टं दिनं निदध्याच्च कृष्णधूर्तरसे॥
अथ यावनालं निदधीत दिनत्रयं जलस्यान्ते।
तेन जलेन तदन्नं पिष्ट्वा मूषोदरं प्रलिम्पेत॥
तत्सलिलपूरितायां मूषायां निक्षिपेत्प्रवालञ्च।
रुद्रमुखीं सप्तपुटैर्विदहेद्भवति विद्रुमभस्म॥
चूर्णजले सिन्दूरिणि निधाय
पलमात्रमौक्तिकं दिवसम्।
तस्मिन्नेव विघर्षेद्दिनमेकमथ प्रकल्पयेन्मूषाम्॥
वत्सतरीशकृतोऽस्याः कृत्वाऽन्तर्लेपनं दशाहानि।
तन्मूत्रपूरितायां मूषायां मौक्तिकं क्षेप्यम्॥
रुद्रमुखीं सप्तपुटैर्दहेत्ततो मौक्तिकं भस्म।
शुद्धं रसपलमेकं नारङ्गफलोदरे ततः क्षेप्यम्॥
लवणेन पूरयित्वा नारङ्गं स्थालिकोदरे निहितम्।
तां माहिषेण पयसा सम्पूर्य तापयेन्मन्दम्।
यावद्द्वाऽङ्गुलमानं नारङ्गोपरि स्थितं क्षीरम्।
तावद्भस्म रसस्य स्यादेवं भस्मानि चत्वारि॥
तान्येकत्र विमर्द्य जम्भलरसैर्भस्मानि मूषस्थम्।
ततः कृत्वा लुङ्गसमाः क्षिपेत्त-
दाऽखिलं ताञ्च प्रपूर्याम्भसा॥
जम्बीरस्य निरुद्ध्य तन्मुखमथ त्रिःसप्तधारान्दहेत्
सिद्धस्त्वेवमसौ रसस्त्रिपुरुषो रोगौघविध्वंसनः॥
क्षौद्राक्तो जरणेन शैलजतुना मासैकसंसेवितः।
कृच्छ्रं शर्करया युतोऽपि नितरां पित्तासृजं नाशयेत्।
तैलेन पक्त्वा वटकांस्त्रिपीड्य
तत्तैलमिश्रं दिवसांश्च पञ्च।
दद्यात्तमद्याहृतचेतनोऽपि
जयेद्दशत्रीनपि सन्निपातान्॥
जीमूतकन्यारसमिश्रितश्च
देयो भिषग्भिस्त्रिदिनं रसेन्द्रः।
दुग्धेन कष्टं विधिनोपविष्टं
विष्टम्भशूलं विनिहन्ति सद्यः॥
श्वासं सकासं क्रिमिशूलजातं
क्षीरेण युग्भृङ्गरसो रसेन्द्रः।

तेनानुपानेन तु तैलपक्को
मुक्तः स्मरोन्मादमपाकरोति ॥

र. मृ , सन्निपाते ।

टि०—मूलस्थप्रक्रियया पारदभस्म दुर्वारमन सम्यक्पाके दुग्धे शुष्के ऽस्तां स्थाल्यां मुखे न्यस्य मन्न कर्पटमृत्तिका दत्त्वा चतुर्दिवसे क्रमवृद्धाग्निना पाकः करणीयस्तेन स्मरकर्पूरासादनं भविष्यति ।

भाषा—६ माशे वज्राभ्रकको पानकेरससे एकदिन स्वेदन कर तुषाम्बुमें ३ दिन रख मूषामें डाल घीकुवारकेरससे मूषाको भरके ७ कपडमिट्टी देकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् घोटकर आंचदे । ऐसे ७ आंचोंमें वज्राभ्रककीभस्महोगी । एकपल प्रवालको यन्दालके रसमें एकदिनस्वेदनकर बारीककूटकर एकप्रहरमर्दनकर काले धतूरेके रसमें डालकर थोडीज्वार डालदे । तीनदिनबाद उसी जलमें ज्वारको पीसकर मूषाकेभीतर लेपनकरदे । फिर उसमें प्रवालकी टिकडीको रख उसीपानीको अन्दरभरके ७ कपड मिट्टीदेकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् आंचदे । ऐसे ७ बार आंचें देनेसे भस्महोगी । एकपल मोतियोंको चिन्दूरवर्णचूनेके पानीमें डालकर एकदिन रहनेदे । फिर दूसरेदिन उसीजलमें २४ घण्टा घोटकर खबरकीलीदका रसपुतीहुई वज्रमूषामें रख खबरकेहीमूनसे भरदे । १० दिनबाद कपडमिट्टीकर गजपुटकी आंचदे । ऐसे ७ पुटदेनेसे भस्महोगी । एकपल शुद्धपारेको नारङ्गीकेभीतर रखकर लवणसे आधेतकभरीहुई हण्डीमें रख लवणसे ऊपर तकभरके मेसकादूधभरदे और मन्द आंचसे पकावे । नारंगीपर एकअङ्गुलदव बाकीरहजानेपर उतारकर नारङ्गीमेंसे पारको निकाल दूसरेफलमें भरके पूर्ववत् आंचदे । ऐसे ७ बार पाक करे । सातवींवार तमामदूध जलजानेकेबाद हण्डीपर दूसरीहण्डी रखकर ६–७ कपडमिट्टीकर सूखनेपर ४ दिनकी आंचदे । ऊपरकी हण्डीपर भीगाकपडा रक्खे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे यन्त्रको खोलकर ऊपर लगेहुए रसपुष्पोंको निकाल ले । इसतरह चारोंभस्मोंको एकत्र मिलाय जभीरीकेरससे घोट कर टिकडीबनाय मूषामेंरख बिजौरे अथवा जभीरीकारस भरके कपडमिट्टीकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर आंचदे । ऐसे २१ बार गजपुटदेनेसे यह रस तैयारहोजाताहै । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे मूत्रकृच्छ्र, शर्कर, मूत्रमेह, रक्तपित्त इनसबको यह नष्टकरताहै । तैलमें उडदके बडे बनाकर उन्हें दबाकर तैलनिकाले । उस तैलकेसाथ ५ दिनतक देनेसे चेतनारहितभी सन्निपाती जीवितहोताहै । इसतरह १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै । नागरमोथा और घीकुवारके रसकेसाथ ३ दिनतक देनेसे भयङ्करविष्टम्भ और शूलको नष्टकरताहै । इसीतरह श्वास, कास, पक्षेण, क्रिमि, शूल इन सबको नष्टकरताहै । दूध और भगरेकेरसकेसाथ मिलाकर तैलमें पकाकरदेनेसे स्मरोन्मादको नष्टकरता है ।

७० त्रिलोचनवटी

वारिणा मर्दयेत्तालं सीसकं मरिचं विषम् ।
मुद्गमात्रा वटी कार्या जलेन सितया सह ॥
द्विमुहूर्तान्तरं दद्यात्क्रमेण वटिकात्रयम् ।
त्रिलोचनवटी ह्येषा पर्यायज्वरनाशिनी ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
सर्वाऽज्वराग्निहन्त्याशु प्रयुक्ता ज्वरमार्दवे ॥

भै र , ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और बच्छनाग, नागभस्म, मरिच, येसब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एकदिन जलकेसाथ घोटकर मूंगबराबर गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली जल अथवा शक्करकेसाथ २–२ घण्टेसेदेनेसे पालीकेज्वर, वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक ज्वर नष्टहोतेहैं ।

७१ त्रिविक्रमरसः

शुद्धसूताऽमृतं ताम्रं शिलातालञ्च गन्धकम् ।
कुष्ठं महाबला पथ्या शिखिकण्ठं विदारिका ॥
एरण्डतैले संयोज्य दिनमेकन्तु मर्दयेत् ।
पुनर्नवाद्रवेणाऽनुपानं सम्प्रकल्पयेत् ॥
गुञ्जामात्रां वटीं स्याद्गुल्मवातनिबर्हणम् ॥

वै चि गुल्मे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बच्छनाग, ताम्रभस्म, शुद्ध मैनसिल, हरिताल और गन्धक, कुठ, महाबला (खरैटी), हरें, तुत्थभस्म, विदारी येसब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एकदिन एरण्डतैलसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पुनर्नवाके स्वरसकेसाथ देनेसे गुल्मवात नष्टहोताहै ।

७२ त्रैलोक्यरक्षामणिरस

सूताभ्रगन्धं विषतालरौप्यं ताम्रं प्रवालं दरदञ्च वज्रम्
मयूरतुत्थं कनकेन मिश्रं नेपालचूर्णं मृतलोहभस्म ॥
निर्गुण्डिचैभ्यानरतोयपिष्टं सुवालुकायन्त्रगतं विपक्वम् ।
आर्द्रस्य तोये मरिचैर्विमिश्रं
गुञ्जाप्रमाणं विनिहन्ति दोषम् ॥
मन्दाग्निजीर्णज्वरमारुताना
श्वासञ्च कासं बहुरोगसङ्घम् ।
चिन्तामणिर्नाम महाप्रभाव-
स्त्रैलोक्यरक्षामणिपारदेन्द्रः ॥

रसायनप० ज्वराधिकारे

भाषा–शुद्ध पारा, गन्धक, बच्छनाग और हरिताल, अभ्रक, रजत, ताम्र, प्रवाल, शिंगरिफ, हीरा, मयूरतुत्थ, सुवर्ण, लोह इनकीभस्में और शुद्धजमालगोटा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सम्भालु और चित्रककेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख एकदिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर १–१ रत्ती अदरखके

रस और मरिचकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, समस्तवायु रोग, श्वास, कासप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

७३ दरदादिवटी

दरदं पादपलिकमहिफेनञ्च तत्समम् ।
भृङ्गा पलमिता ग्राह्या माषकद्वयसम्मिता ॥
गन्धकं चोपणं कृष्णा टङ्कणं वत्सनाभकम् ।
धूर्तवीजं कुचैलञ्च दरदस्य समं समम् ॥
सर्वं सम्पेषयेत्सूक्ष्मं नीरेण गुटिका ततः ।
मद्गुप्रमाना कर्तव्या दिवारात्रौ प्रदापयेत् ॥
तदेकैकाजलेनैवाऽम्लादिकं परिवर्जयेत् ।
षण्ढो पौरुषमासाद्य रमण्या सह मोदते ॥

र. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध सिंगरिफ और अफीम १–१ कर्ष, भाग १ पल २ माशे, शुद्धगन्धक, मरिच, पीपल, सुनासुहागा, शुद्ध बच्छनाग, धतूरेकेबीज और कुचिला १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन पानीमें घोटकर मोठप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पानी अथवा उचितानुपानकेसाथलेनेसे पुरुषत्वको प्राप्तहोताहै ।

७४ द्वियोनिरसः

ग्राह्यं शुद्धरसात्पलं पलमथो सद्गन्धकाच्छोधितं,
मण्डूराच्च पलद्वयं पलमपि स्यात्पूतनाचूर्णतः ।
चूर्णीकृत्य त्रिवृत्पलञ्च सकलं खल्वे निधाय स्थितं,
तं सम्भाव्य सुपीतभृङ्गसलिलप्रस्थेन सञ्चूर्णितम् ॥
दातव्यं मधुसर्पिषा प्रतिदिनं तत्पेयमापान्वितं,
क्षौद्राम्भोहिमरागदाडिमजलद्राक्षाम्बुपानादिभिः ।
पीत्वाऽम्लं विनिहन्ति मान्द्यमलसश्वासञ्च वक्षोगदान्
छर्दिं सर्वभवामपि क्षयकृजं जीर्णज्वरार्शांस्यपि ॥

र. सु. राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, मण्डूरभस्म २ पल, हरें और निसोत १–१ पललेकर बारीकचूर्णकर एकप्रस्थ पीलेभंगरेकेरससे भावनादेकर सुखाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा द्राक्ष, चन्दन, केशर, अनार, सुगन्ध बाला इनके क्वाथकेसाथलेनेसे मन्दाग्नि, अलसक, श्वास, छातीकादर्द, वमन, समस्तवातविकार, क्षय, जीर्णज्वर और बवासीर नष्टहोतेहैं ।

७५ नागार्जुनीवटी

तालेशौ टङ्कणं गन्धं कुष्ठं त्रिकटुकं विषम् ।
करहाटञ्च सर्वाणि समभागानि कारयेत् ॥
भावयेद्भृङ्गराजेन सप्त धत्तूरजेन च ।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा रात्रौ दद्यात्सुखेच्छया ॥
अशीतिं वातजान्रोगांश्लैष्मिकानेकविंशतिम् ।
एषा नागार्जुनीनाम सिद्धश्लाघ्यामवातनुत् ॥

र. बो., वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, सुहागा और गन्धक, कुठ, त्रिकटु, शुद्धबच्छनाग, अक्लकरा, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा और धतूरेकेरससे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली रात्रिमें उचितानुपानकेसाथदेनेसे ८० प्रकारके वातरोग और २१ श्लेष्मरोगोंको यह नष्टकरतीहै ।

७६ नीलकण्ठरसः

रसस्य भागाश्चत्वारो हेम्नो भागचतुष्टयम् ।
अभ्रं लौहं तथा मुक्ता वैक्रान्तं युग्मभागिकम् ॥
रौप्यं प्रवालं ताप्यञ्च वङ्गमेकैकभागिकम् ।
त्रिधा कीचन्तिलाक्षाग्निमूलक्काथेन भावयेत् ॥
एरण्डपत्रैः संवेष्ट्य धान्यराशौ निधापयेत् ।
ततो दिनत्रयादूर्ध्वमुद्धृत्य चणकप्रभाः ॥
नीलकण्ठं समभ्यर्च्य शुचिः संयतमानसः ।
प्रयुञ्ज्याद्वटिका धीमान् यथाव्याध्यनुपानतः॥
रसायनवरः श्रीदो वातव्याधिविनाशनः ।
रसः श्रीनीलकण्ठाख्यो नीलकण्ठेन भाषितः ॥
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान्विंशतिं तथा ।
नेत्ररोगं तथा दोषान् रजःशुक्रसमुद्भवान् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं हृन्नासामुखकर्णजान् ।
रोगं बहुविधं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥

मै., र., रसायने ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर और सुवर्णभस्म ४–४ भाग, अभ्रक, लोह, मोती और वैक्रान्तभस्म २–२ भाग, रजत, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक और वङ्गभस्म १–१ भाग लेकर अर्कपुष्पी, लाख और चित्रकमूलकेक्वाथोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेटकर धान्यकीराशिमें ३ दिनतक रखकर चौथेदिन चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोडे । नीलकण्ठ महादेवका पूजनकर १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, २० प्रकारकेप्रमेह, नेत्ररोग, रज और शुक्रदोष, सन्निपात, हृदय, नाक, मुख और कानकेरोग इनसबको नष्टकर रसायनका काम करताहै ।

७७ पानीयवटिका

शुद्धः सूतो गन्धकश्च हरितालं समांशकम् ।
विषाऽयस्कान्तनिम्बानां प्रत्येकञ्च द्विभागिकम् ॥
शेफालीदलजैः क्वाथैर्गुडूचीपर्पटोद्भवैः ।
भावयित्वा ततः कार्या गुञ्जात्रयमिता वटी ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं शीतलं सलिलं ह्यनु ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥
प्लीहानं यकृतं शोथं पाण्डुञ्च सहलीमकम् ।
पानीयवटिका ह्येषा प्रथिता पृथिवीतले ॥

भै. र. ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल १-१ भाग, शुद्धवङनाग, कान्तलोहभस्म, सिम्पमज्ञा २-२ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हारसिंगारकेपत्ते, गिलोय और पित्तपापड़ेके स्वरसोंसे १-१ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली ठंडेजलकेसाथदेनेसे साध्य अथवा असाध्य ८ प्रकारकाज्वर, प्लीहा, यकृत्, शोथ, पाण्डु, हलीमक इन सबको यह नष्टकरतीहै।

७८ पित्तान्तकलोहम्

रसं गन्धकमभ्रञ्च गुडूचीमभयां तथा।
उशीरं यालकं ताम्रसारं सर्वं समं समम्॥
गृहीत्वाऽयः सर्वसमं खल्वे संस्थाप्य मर्दयेत्।
रक्तिकाद्वयमितं खादेद्वटिकामतियत्नतः॥
पटोलपत्रधान्याककार्येणैवानुपानतः।
पाण्डुं पित्तोद्भवाग्रोगानशेषान्यकृतं तथा॥
उपदंशं तथा हन्याद्विकृतिं पारदोद्भवाम्।
लोहं पित्तान्तकं नाम वातरक्तं सुदारुणम्॥
दाहञ्च हस्तपादयोर्हन्ति सूर्यो यथा तमः॥

भै. र., वातरक्ते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, गिलोय, हरें, खस, सुगन्धवाला, लालचन्दन येसब समभाग और लोहभस्म सबकेबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पटोलपत्र और धनियेकेकार्योंसे १-२ पहर मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पटोलपत्र और धनियेके क्वाथकेसाथदेनेसे पाण्डु, समस्त पित्तविकार, उपदंश, पारदविकार, भयङ्करवातरक्त, हस्तपाददाह इनसबको यह नष्टकरताहै।

७९ प्रदरारिरसः

वङ्गाय.फणिफेनञ्च रसः षड्गुणजारितः।
मूलं रक्तोत्पलमयं रक्तचन्दनमेव च॥
समं सर्वमशोकस्य क्वाथैः सम्मर्द्य यत्नतः।
चणकाभा वटी कार्याऽशोकक्वाथं पिबेदनु॥
प्रदरारिरसो हन्ति द्विविधं प्रदरामयम्।
बस्तौ च वेदनां रक्तस्रावं घोरज्वरं तथा॥
मूत्राधिक्यादिकांश्चैव भास्करस्तिमिरं यथा।
अथवा त्वगशोकस्य गुडूचीवासकत्वचः॥
रसाञ्जनं मुस्तकञ्च रक्तचन्दनमेव च।
पपामनु पिबेत्क्वाथं सर्वप्रदरशान्तये॥

भै. र., प्रदराधिकारे।

भाषा—वङ्ग और लोहभस्म, शुद्ध अफीम, षड्गुणगन्धकजारित रससिन्दूर, लालकमलकाकन्द, लालचन्दन सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर लालअशोककीछालकेकाढ़ेसे १-२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली लालअशोककीछालकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे दोनोंप्रकारकाप्रदर, बस्तिशूल, भयङ्कर रक्तस्राव, घोरज्वर, बहुमूत्र इनसबको यह नष्टकरताहै। किसीजगह यह काम न दे तो अशोककीछाल, गिलोय, अडूसेकीजड़कीछाल, रसौत, नागरमोथा, लालचन्दन इनके क्वाथकेसाथ देवे।

८० प्लीहारिवटी

सहासाराऽभ्रकासीसलशुनानि समानि च।
द्रोणपुष्परसेनैव मर्दयेत्प्रहरत्रयम्॥
वल्लद्वयं प्रदातव्यं प्रदोषे सलिलं ह्यनु।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्निमान्द्यं सशोथकम्॥
कासं श्वासं तृषां कम्पं दाहं शीतं वमिं भ्रमिम्।
प्लीहारिवटिका होषा नाशयेन्नात्र संशयः॥

भै. र., प्लीहयकृदधिकारे।

भाषा—एलिया, अभ्रक और कासीसभस्म, एकपोती लहसन येसब समभागलेकर गूमाकेरससे ३ प्रहर मर्दनकर ६-६ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली सायङ्कालकेसमय पानीकेसाथ देनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, मन्दाग्नि, शोफ, कास, श्वास, प्यास, कम्प, दाह, शीत, वमन, और भ्रमको यह नष्टकरतीहै।

८१ भृङ्गराजलेहम्

४८ तोलके भृङ्गराजस्वरसे ८ तोलकं निर्बीजहरीतकीचूर्णं, १२ तोलकञ्च तालगुडं निधाय घनपाके निवृत्ते त्रिकटुकमयोभस्म च प्रतिप्रतितोलकं, घृतमधुनी प्रतिसप्ततोलकं संयोज्य लेहपाकं गृहीत्वा प्रत्यहं द्विवारं पादतोलकप्रमाणं सेवितश्चेद्वातपित्तपाण्डुक्षयतगुल्मकामलादयो रोगा नश्यन्ति। क्षाराम्लौ स्त्रीसङ्गश्च सुतरां त्याज्यः। (अगस्त्य०)

८२ मालतीकुसुमाकररसः

चन्द्रभागः सुवर्णस्य कर्पूरं युग्मभागिकम्॥
वङ्गसीसकलौहानां भागत्रयमुदाहृतम्॥
अभ्रप्रवालमुक्तानां भागाश्चत्वार ईरिताः।
गव्येन पयसा चैव कदलीपुष्पजे रसैः॥
रसेनेक्षुसमुत्पेन तथा पद्मरसेन च।
उदुम्बररसेनैव भावयेत्सप्तधा पृथक्॥
रक्तिद्वयमिता हन्ति मालतीकुसुमाकरः।
रसः सर्वप्रमेहांश्च बहुमूत्रादिकं तथा।
सोमरोगांश्च संहन्ति भास्करस्तिमिरं यथा॥

भै. र., प्रमेहे।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, शुद्धकपूर २ भा., वङ्ग, नाग और लोहभस्म ३-३ भाग, अभ्रक और प्रवालभस्म, मुक्तापिष्टी ४-४ भाग लेकर गायकेदूध, केलेकापुष्प, ईख, कमल और गूलरकेफलोंकेरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके-

साथ देनेसे समस्तप्रमेह, बहुमूत्र और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

८३ माहेश्वरवटी

हेममुक्ताऽभ्रकाक्षीकक्षीरकाकोल्ययांसि च ।
कान्तं महाबलामूलं गृहीत्वा समभागिकम् ॥
शुष्कमूलकगोक्षूरौ तथा श्वेतपुनर्नवा ।
एषां क्वाथेन विधिवद्भावयेत्सप्तधा भिषक् ॥
रक्तिद्वयमिता सेव्या वटी माहेश्वराभिधा ।
ज्ञेयं विशेषतश्चात्र शस्तं दुग्धान्नभोजनम् ॥
पाण्डुं वृक्कामयञ्चैव शोथं सार्वाङ्गिकं तथा ।
जलोदरं तथा मोहं विषमज्वरमेव च ॥
अस्याः प्रयोगान्नश्यन्ति भास्करात्तिमिरं यथा ।
रसायनाधिकारोक्तान्यौषधान्यपि योजयेत् ॥
न चास्ति शमने किञ्चिन्निर्दिष्टमस्य भेषजम् ।
पथ्यैर्वल्यैः सुपाच्यैश्च भिषगेनं प्रपाययेत् ॥

भै, र वृक्कामये ।

भाषा—सुवर्ण, मोती और अभ्रकभस्म, भुनीफटकड़ी, क्षीरकाकोली, लोह और कान्तलोहभस्म, बलाकीजड़, सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर सूखीमूली, गोखरू और सफेदपुनर्नवाके क्वाथोंसे ७–७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकसाथदेकर दूधभात खिलानेसे पाण्डु, गुर्दोकादर्द, सर्वाङ्गशोथ, जलोदर, भ्रम, विषमज्वर इनसवको यह नष्टकरतीहै । इसकेप्रयोगमें रसायनाधिकारोक्त औषधोंकाभी योगकरनाचाहिये ।

८४ मृगाङ्कचूर्णम्

मुक्ताशङ्खप्रवालानि वज्रञ्चैव समांशकम् ।
निम्बकाथेन सम्मर्द्य ततो गजपुटे पचेत् ॥
सर्वतुल्या तुगाक्षीरी दरदं तत्कलांशकम् ।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याऽथ पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥
रक्तिद्वयं प्रदातव्यं कृच्छ्ररोगप्रशान्तये ।
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ॥
स्वरभेदं ज्वरं मेहान् दोषत्रयसमुत्थितान् ।
मृगाङ्कचूर्णमेतद्धि कासरोगकुलान्तकृत् ॥

भै र., यक्ष्मणि ।

भाषा—मुक्तापिष्टी, शङ्ख, प्रवाल और वज्रभस्म समभागलेकर नीमकीछालकेकाढेसे मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सबकीबराबर वंसलोचन और अष्टमांश हिङ्गुलभस्म अथवा शुद्धहिङ्गुलडालकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन घोटकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती पीपल और मधुकेसाथदेनेसे कष्टसाध्यक्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, स्वरभेद, ज्वर, त्रिदोषजप्रमेह, इनसबको यह नष्टकरताहै ।

८५ मृगाङ्कवटिका

पारदो गन्धकः शुद्धो लौहमभ्रञ्च टङ्कणम् ।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं तालीसं पिप्पली तथा ॥
रक्तोत्पलं तथा लाक्षा सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वासाक्काथेन सम्भाव्य वल्लमात्रां वटीं चरेत् ।
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।
वासाक्काथेन पिप्पल्या चोदुम्बररसेन वा ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
वातश्लेष्मोद्भवं वापि पित्तश्लेष्मसमुद्भवम् ॥
सर्वकास निहन्त्याशु ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।
रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां दाहं मेहं भ्रमिं वमिम् ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहक्रिमिकण्डूविनाशिनी ।
मृगाङ्कवटिका ह्येषा बलवर्णाग्निकारिणी ॥

भै. र, यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, भुनासुहागा, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, तालीसपत्र, पीपल, लालकमल और पीपलकीलाख समभागलेकर बारीकचूर्णकर अडूसेकेपञ्चाङ्गक्वाथसे ४–५ भावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली लालकमल, अडूसा, पीपल और गूलरके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, वातश्लैष्मिक, पित्तश्लैष्मिक कास, श्वास, ज्वर, रक्तनिष्ठीवन, तृषा, दाह, प्रमेह, भ्रम, वमन, प्लीहा, गुल्म, उदर, आनाह, क्रिमि, कण्डू, इनसबको दूरकर बलवर्णको करतीहै ।

८६ मृगाङ्कवटी (वृहती)

हेमायस्कान्तसूताभ्रप्रवालमौक्तिकानि च ।
विभीतककषायेण सर्वाणि भावयेत्त्रिधा ॥
एरण्डपत्रमध्यस्थं धान्यराशौ दिनत्रयम् ।
स्थापयित्वा तदुद्धृत्य द्विगुञ्जां वटिकां चरेत् ॥
बिभीतकास्थिशस्यञ्च माषार्धं मधुसंयुतम् ।
अनुपानमिह प्रोक्तं काथोवाऽक्षसमुद्भवः ॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ।
स्वरभेदं ज्वरं मेहं सर्वामयविनाशकृत् ॥

भै र, हिक्काश्वासाऽधिकार ।

भाषा—सुवर्ण, कान्तलोह, पारद, अभ्रक, प्रवाल और मौक्तिकभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर बहेड़ेकेक्वाथसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमेंरख कच्चेसूतसे लपेटकर कमरबराबर धान्यकीराशिमें ३ दिनतक रक्खे । चौथेदिन निकालकर २–२ रत्ताकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली आधेमाशे बहेड़ेकेचूर्ण और मधुके साथ लेकर अडूसेकाकाथ पिलानेसे क्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, स्वर भेद, ज्वर और प्रमेहप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ।

८७ रतिवल्लभमोदकः

शक्राशनस्य बीजानां चूर्णानि पलपञ्च च ।
हविषः कुडवश्चैकं सिताप्रस्थं प्रगृह्य च ॥
शतावरीरसप्रस्थं तथा शक्राशनस्य च ।
गव्यमाजं पयःप्रस्थं ततः प्रस्थद्वयं पचेत् ।
धात्री द्विजीरकं मुस्तं त्वगेलापत्रकेशरम् ।
आत्मगुप्ता चातिबला तालाङ्कुरकशेरुकम् ॥
शृङ्गाटकं त्रिकटुकं धान्यमभ्रञ्च वङ्गकम् ।
पथ्या द्राक्षा च काकोल्यौ खर्जूरं क्षुरकं तथा ॥
कटुका मधुकं कुष्टं लवङ्गं सारसैन्धवम् ।
यमानी चाजमोदा च जीरन्ती गजपिप्पली ॥
प्रत्येकं कर्षमेकन्तु चूर्णितानि शुभानि च ।
कुडवार्धं पारुशेपं मधुन प्रक्षिपेत्ततः ॥
मृगाण्डजं सकर्पूरं यथालाभं विनिक्षिपेत् ।
रतिवल्लभनामाऽयं सेव्यमानो महारसः ॥
परमोजस्करो बल्यो वातव्याधिविनाशनः ।
वातपित्तहरो वृष्यो दृष्टिसन्दीपनः परः ॥
पित्तश्लेष्मास्रपित्तघ्नो विषगुल्मज्वरापहः ।
नाशयेदेपमन्दाग्निं रोगाणां क्षयहेतुकः ॥
न भवेल्लिङ्गशैथिल्यं वृद्धानां पुष्टिवर्धनम् ।
यस्य गेहे सदा वल्लभः पत्न्य. स्युः सुमनोहरा ॥
रसः सेव्यः सदैवाऽयं मोदको रतिवल्लभ ।
ये केचिद्विजया योगा लोहवङ्गाभ्रसंयुताः ॥
युक्ताश्च रसगन्धाभ्यां रसायनवरा मताः ॥

भै र, वाजीकरणे ।

भाषा—गाजेकेबीज ५ पल, घी ४ पल, शकर १ प्रस्थ, शतावर और भागकारस, गाय और बकरीकादूध १-१ प्रस्थ लेकर इकट्ठेकर पकावे । दोप्रस्थ बाकीरहनेपर आंवले, दोनोंजीरे, नागरमोथा, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर, केवाचकी मज्जा, अतिबला, तालाङ्कुर(ताडवाली), कशेरु, सिंघाड़े, त्रिकटु धनिया, अभ्रक और वङ्गभस्म, हरें, द्राक्ष, काकोली, क्षीरकाकोली, छुहारे, तालमखाना, कुटकी, मुलहठी, कुठ, लोंग, सेंधानमक, अजवाइन, अजमोद, अर्कपुष्पीकीजड़ और गजपीपलका १-१ कर्ष चूर्ण डालकर पकावे । चाशनी तैयारहोनेपर दोपल मधु, कस्तूरी और कपूर यथेष्टप्रमाणसे डालकर १-१ तोलेके मोदकबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधकेसाथ सेवनकरनेसे ओज और बलाभाव, वातव्याधि, वातपित्त, नपुंसकत्व, दृष्टिदोष, पित्तश्लेष्म, रक्तपित्त, विष, गुल्म, ज्वर, मन्दाग्नि, क्षय, ध्वज भङ्ग, कृशता इनसबको दूरकरताहै । भागकेयोगोंमें लोह, वङ्ग और अभ्रकभस्म, पारद तथा गन्धक मिलादेनेसे अत्यन्त रसायनका कामकरतेहैं ।

८८ रत्नप्रभावटी

हेमायस्कान्तवैक्रान्तखर्परतायासि विद्रुमम् ।
मुक्ताश्चैकन सम्मर्द्य दार्वीकाथेन सप्तधा ॥
भावयित्वा वटीं कुर्याद्रक्तिकाप्रमितां भिषक् ।
एषा रत्नप्रभा नाम वटी सततकं हरेत् ॥
प्लीहानं वह्निमान्द्यञ्च कामलां यकृदामयम् ।
स्नायुशूलं महाघोरं केशरी करिणं यथा ॥

भै र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, कान्तलोह, वैक्रान्त, खपरिया, लोह, प्रवाल इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी समभागलेकर दारुहल्दीकी-छालकेकाथसे ७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे सततज्वर, प्लीहा, मन्दाग्नि, कामला, यकृत, स्नायुक, भयङ्करशूल इनसबको यह नष्टकरतीहै ।

८९ रसेन्द्रचूर्णम्

पलोन्मितं शुद्धसूतमाददीताथ शाणकम् ।
प्रत्येकं वंशजा मुक्ता निरुत्थं हेमभस्मकम् ॥
द्रावयेदहिफेनस्य शाणं क्षीरे निमज्जितम् ।
वस्त्रपूतेन तेनैव तत्सर्वं मर्दयेद्भृशम् ॥
छायायामातपे वाऽथ शोषयेच्चूर्णयेत्ततः ।
सक्षीरमन्नमश्नीयाच्चाश्नीयाल्लवणाम्भसी ।
शौचमाचमनं कार्यमग्निपूतेन वारिणा ॥
वाससाऽऽच्छादयेद्देहं न स्नायादस्य सेवकः ।
अनानुवर्तयेत्सर्वान्नियमान्नससेविनाम् ॥
चूर्णं रसेन्द्रनामेदं रसे श्रेष्ठं रसायनम् ।
नाशयेद्ग्रहणीं कृत्स्ना रक्तातीसारसूतिके ॥
अग्निमान्द्यादिकं जित्वा दीपयेज्जठरानलम् ।
पुष्टं हृष्टं बलिष्ठञ्च नरं कुर्याद्धितानिशम् ॥

भै र ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर ४ कर्ष नीलकण्ठीवंशलोचन और निरुत्थ सुवर्णभस्म ४-४ मासे लेकर बारीकचूर्णकर दूधमें मिलाकर कपड़ेसे छानेहुए ४ मासे अफीमसे १-२ दिन मर्दनकर छायामें सुखाकर चूर्णबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती दूधकेसाथ सेवनकर दूधभातखिलानेसे समस्तग्रहणी, रक्तातिसार, सूतिका-रोग और मन्दाग्नि नष्टहोकर पुष्टि और बल प्राप्तहोतेहैं । इसके सेवनमें लवण और पानीको बिल्कुल छोड़देवे । शौच और आचमनकेलिये गरमपानीसेकामलेवे । स्नान न करावे । शरीरको खुला न रक्खे । ब्रह्मचर्यादि समस्तनियमोंका यथावत् पालनकरे ।

९० रसेन्द्रवटिका

लोहाभ्रे कोलमाने च तदर्धौ रसगन्धकौ ।
तदर्द्धौ विद्रुमो ग्राह्यः खर्परं विद्रुमैः समम् ॥
कण्टकारीरसेनापि सारस्वतरसेन च ।
वासकस्य कषायेण भावयेच्च त्रिधात्रिधा ॥
रक्तिद्वयप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः ।
सप्तरात्रप्रयोगेण स्वरशुद्धिर्भवेन्नृणाम् ॥
मासमात्रप्रयोगेण किन्नरैः सह गायति ।

मेधाञ्च लभते तीक्ष्णां तुष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥
हन्ति कासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमूत्रकम् ।
रसेन्द्रवटिका ह्येषा धन्वन्तरिविनिर्मिता ॥
भै. र , स्वरभेदे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म ८–८ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ माशे, प्रवाल और खर्परभस्म २–२ माशे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैया, ब्राह्मी और अडूसेके स्वरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ ७ दिनतक देनेसे स्वरभङ्ग दूरहोताहै । एकमहीनेमें मधुरकण्ठ होताहै । इसकानिरन्तरसेवनकरनेसे दिव्यमेधा औरपुष्टि होतीहै । कास, श्वास, प्रमेह और बहुमूत्रका नाशहोताहै ।

९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं वङ्गं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चाभ्रकं तथा ।
प्रवालं तारमुक्ताञ्च जातीकोषं फलन्तथा ॥
एतेषां समभागेन चातुर्जातञ्च मिश्रितम् ।
मर्दयेत्रिफलाक्काथे वटिकां कुरु यत्नतः ॥
रोगांश्च भिषजा ज्ञात्वा अनुपानं यथायथम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
वायुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः ।
विसूचिकां क्षयोन्मादौ शरीरस्तम्भमेव च ॥
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव नानारोगं विशेषतः ॥
भै. र., प्रमेहे ।

भाषा—लोह, वङ्ग, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अभ्रक, प्रवाल, रजत इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी, जावित्री और जायफल समभाग, सबकीबराबर चातुर्जातलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाके क्काथसे १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिकरोग, नानातरहका वातविकार, अपस्मार, विसूचिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ।

९२ बहुमूत्रान्तकरसः

शाल्मलीकदलीमूलचूर्णं पारदभस्म च ।
उदुम्बरबीजचूर्णं लौहो वङ्गश्च विद्रुमम् ॥
मुक्ताहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम् ।
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो भिषक् ॥
रक्तिद्वयमिता कुर्याद्वटिकामतिशोभनाम् ।
बहुमूत्रान्तको नाम रसः परमशोभनः ॥
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति भास्वान्यथा तमः ।
भै. र. बहुमूत्राधिकारे ।

भाषा—सेमलकामुसला, केलेकाकन्द, पारदभस्म, गूलरकेबीज, लोह, वङ्ग, प्रवाल, मोती इनकीभस्में और शुद्धअफीम समभागलेकर बारीकचूर्णकर मालतीपुष्पोंकेस्वरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमभ्रं वैकान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्षसम्मितम् ।
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्म्या रसेन च ।
द्विसप्तकृत्वः सम्भाव्य कुर्याद्वल्लमितां वटीम् ॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।
अन्यांश्च शिरसोरोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैष रसोत्तमः ।
भूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥
नैव शान्तिं गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत् ।
त्रिकूर्चकेन मधुना यत्नतः कुशलो भिषक् ॥
भै र शीर्षाम्बुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त और रजतभस्म ४–४माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १–१ कर्षलेकर नीलवर्णकज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली चित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोंकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रभृति समस्त शिरोरोगनष्टहोतेहैं । रोगकीशान्ति न हो तो त्रिकूर्चकशस्त्रसे जल निकाले ।

९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारदं चाभ्रकं तथा ।
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेदतियत्नतः ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं नागवल्लीरसैर्युतम् ।
वातश्लेष्मज्वरहरो वातश्लेष्मान्तको रसः ॥
वातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात् ।
सर्वाञ्ज्वराञ्चिहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
भै. र , ज्वराधिकारे ।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद और अभ्रकभस्म समभागलेकर अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषजप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ।

९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य खदिरस्याशनस्य च ।
तुलां पृथग्विनिष्क्वाथ्य द्रोणमानेन चाम्बुना ॥
एकीकृत्य कषायांश्च पादशिष्टान् पुनः पचेत् ।
ततः क्षिपेन्मलयजं वालकं रक्तचन्दनम् ॥
गैरिकं देवपुष्पञ्च धातकीं रजनीद्वयम् ।
लोध्रं जातीफलं श्यामां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥

वटप्ररोहा मञ्जिष्ठा विडं मांसी पयोधरम् ।
कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलयुग्मकम् ॥
ततः कलायसदृशीर्विदध्याद्गुटिका भिषक् ।
रोगान् कण्ठौष्ठरसनादन्ततालुसमुद्भवान् ॥
सहकारवटी हन्यादाश्वेव वदने धृता ।
जनयेन्मुखसौरभ्यं सुरुचिं स्थिरदन्तताम् ॥

भै. र., मुखरोगे ।

भाषा—आम, नीम, खैर, असन इनकीछाल १००–१०० पलको कूटकर एकएकद्रोणजलमें पादावशिष्टक्वाथकरके कपड़ेसे छानकर एकजगह मिलावे । फिर इसमें सफेदचन्दन, सुगन्धवाला, लालचन्दन, सोनागेरू, लौंग, धावडीकेफूल, हल्दी, दारुहल्दी, पठानीलोध, जायफल, अनन्तमूल, चातुर्जात, त्रिफला, वटकीजटा, मजीठ, विडनमक, जटामांसी, नागरमोथा, त्रिकटु, लोहभस्म और शुद्धकपूर २–२ पलका चूर्ण डालकर पकावे । घन तैयारहोनेपर मटरबराबरगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१– गोली मुंहमें रखकर चूंसनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें सुगन्धिकोपैदाकरतीहै, रुचिको बढ़ातीहै और दांतोंको स्थिरकरती है ।

९६ सिद्धशाल्मलीकल्पः

भूकूष्माण्डं तालमूली धात्री चैव पुनर्नवा ।
समभागं समाहृत्य भागार्धं गन्धकं तथा ॥
तदर्धं पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत् ।
श्वेतशाल्मलितोयेन सप्तधा भावयेत्ततः ॥
माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भावयेत्पुनः ।
शुष्कं तच्चूर्णयेद्यत्नाल्लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
अनेनाशीतिवर्षोऽपि शतधा रमतेस्त्रिया ।
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदेव इव स्वयम् ॥
जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।
शाणमेकन्तु कर्तव्यं दुग्धमत्रानुपानकम् ॥

भै. र., ध्वजभङ्गे ।

भाषा—भुंईकोंहड़ा, तालमूली, आवले, पुनर्नवा और शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सफेदसेमलकेस्वरससे ७ भावनाएं देकर भैसकेदूधमें घोटकर चूर्णबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशा मधु और घीकेसाथ मिलाकरलेनेसे अत्यन्त वाजीकरणहोताहै ।

९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

एलाद्वयमुशीरञ्च चन्दनं सारिवाद्वयम् ।
मेदाद्वन्द्वं निशाद्वन्द्वं गुडूचीविश्वभेषजम् ॥
फलत्रयं यमानीञ्च रौप्यं सर्वसमं तथा ।
पक्वीकृतं वल्लमानं पाययेद्गव्यसर्पिषा ॥
स्नायुशूलहरं नाम चूर्णमेतद्वरेण्यम् ।
निखिलं स्नायुशूलञ्च सर्वान्वातामयांस्तथा ॥

भै र., स्नायुरोगे ।

भाषा—छोटी और बड़ी इलायची, खस, चन्दन, दोनों सारिवा, मेदा, महामेदा, हल्दी, दारुहल्दी, गिलोय, सोंठ त्रिफला, अजवाइन येसब १–१ भाग, रजतभस्म सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती गायकेघीकेसाथदेनेसे समस्तस्नायुरोग और वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ।

स्वरादिरसोंकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्र (अगस्त्य), व्यासप्रोक्तवैद्यकशास्त्र (व्यास), रसामृत(र मृ), रसकल्पलता (र क.ल (ना)) रत्नकुतूहल (र कु) और रसायनम् इनग्रन्थोंको ग्रन्थसूचीमें दाखिलकरना ।

२—अगस्तिसूतराज (द्वितीय) में र यो.को दाखिलकरना ।

३—अग्निकुमाररस (तृतीय) में चि र.भ कोदाखिलकरना ।

४—अग्निकुमार (पञ्चम) में र यो , र पा को दाखिलकरना और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना ।

"र.सं., भै.र., र.सु , वै. क., र.सि., रसायनसं., र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना "गन्धेशटङ्कणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम् । अष्टभागन्तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥, इति योगो निहितोऽस्ति । यो.र., र.चं. एतयोः "पक्षांशकाः पारदगन्धटङ्काः कपर्दशङ्खाऽमृतगेहधूमाः । व्यंशा इमेऽग्यो मरिचं त्रिभागं सम्मर्दितं जम्भरसेन गाढम् ॥,, इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयोर्द्वयोरपि अस्मिन्प्रन्स्तर्भावः सुकरः । यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कपर्दशङ्खयोरभावोऽस्ति द्वितीये च गृहधूमस्याऽधिक्यमस्ति इत्यापाततोऽन्तर्भावो दुष्करः प्रतिभाति । परन्तु प्रथमयोगनिर्दिष्टरोगेषु कपर्दशङ्खयोरौचित्यात्तदाधिक्ये गुणवृद्धिरेवास्ति । द्वितीययोगे यद्गृहधूमाधिक्यं तत्प्रक्षेपमधिकतयाऽग्निकुमारे योजनेनाऽपि क्षत्यभावोऽस्ति पाठन्यूनता च महत्फलमिति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

५—अग्निकुमार (षष्ठ) के मूलपाठके स्थानमें नीचे लिखे पाठको रखना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

"मृतटङ्कणविषाऽभ्रकपर्दिका
गन्धकेन मिलिता.समभागाः ।
वत्सनाभिविजयाऽतिविषाभि.
र्भावितास्त्वथ च भस्ममिताः ॥
श्रीफलाम्बुजलैश्च विमर्दं ॥
सङ्ग्रहग्रहणिकार्यविनिवृत्त्यै
सिद्धतां समुपैति रसेन्द्रः ।
सातिसारमपि हन्ति दुष्करं
शोफजाड्यगुल्मताऽग्निनाशनम् ॥

मेधाञ्च लभते तीक्ष्णां तुष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥
हन्ति कासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमूत्रकम्।
रसेन्द्रवटिका ह्येषा धन्वन्तरिविनिर्मिता ॥

भै. र., स्वरभेदे।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म ८-८ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ माशे, प्रवाल और खर्परभस्म २-२ माशे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैया, ब्राह्मी और अडूसेके स्वरसोंसे ३-३ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ ७ दिनतक देनेसे स्वरभङ्ग दूरहोताहै। एकमहीनेमें मधुरकण्ठ होताहै। इसकानिरन्तरसेवनकरनेसे दिव्यमेधा औरपुष्टि होतीहै। कास, श्वास, प्रमेह और बहुमूत्रता नाशहोताहै।

९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं वङ्गं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चाभ्रकं तथा।
प्रवालं तारमुक्ताञ्च जातीकोषं फलन्तथा ॥
एतेषां समभागेन चातुर्जातञ्च मिश्रितम्।
मर्दयेत्त्रिफलाक्काथे घटिकां कुरु यत्नतः ॥
रोगांश्च भिषजा ज्ञात्वा अनुपानं यथायथम्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
वायुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः।
विसूचिकां क्षयोन्मादौ शरीरस्तम्भमेव च ॥
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव नानारोगं विशेषतः ॥

भै. र., प्रमेहे।

भाषा—लोह, वङ्ग, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अभ्रक, प्रवाल, रजत इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी, जावित्री और जायफल समभाग, सबकीबराबर चातुर्जातलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाके क्वाथसे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिकरोग, नानातरहका वातविकार, अपस्मार, विसूचिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै।

९२ बहुमूत्रान्तकरसः

शाल्मलीकदलीमूलचूर्णं पारदभस्म च।
उदुम्बरबीजचूर्णं लौहो वङ्गञ्च विद्रुमम् ॥
मुक्ताहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम्।
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो भिषक् ॥
रक्तिद्वयमितां कुर्याद्वटिकामतिशोभनाम्।
बहुमूत्रान्तको नाम रसः परमशोभनः ॥
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति भास्वान्यथा तमः।

भै. र. बहुमूत्राधिकारे।

भाषा—सेमलकामुसला, केलेकाकन्द, पारदभस्म, गूलरकेबीज, लोह, वङ्ग, प्रवाल, मोती इनकीभस्में और शुद्धअफीम समभागलेकर बारीकचूर्णकर मालतीपुष्पोंकेस्वरससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोगको यह नष्टकरताहै।

९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमभ्रं वैकान्तं रजतं शाणमानकम्।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्षसम्मितम्।
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्म्या रसेन च।
द्विसप्तकृत्वः सम्भाव्य कुर्याद्गुञ्जमितां वटीम् ॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च।
अन्यांश्च शिरसोरोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैष रसोत्तमः।
भूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥
नैव शान्ति गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत्।
त्रिकूर्चकेन मधुना यत्नतः कुशलो भिषक् ॥

भै.र. शीर्षाम्बुरोगे।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, वैकान्त और रजतभस्म ४-४माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १-१ कर्षलेकर नीलवर्णकज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोंकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रभृति समस्त शिरोरोगनष्टहोजातेहैं। रोगकीशान्ति न हो तो त्रिकूर्चकशस्त्रसे जल निकाले।

९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारदं चाभ्रकं तथा।
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेदतियत्नतः ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं नागवल्लीरसैर्युतम्।
वातश्लेष्मज्वरहरो वातश्लेष्मान्तको रसः ॥
वातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात्।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

भै. र., ज्वराधिकारे।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद और अभ्रकभस्म समभागलेकर अदरखकेरससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषजप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै।

९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य खदिरस्याशनस्य च।
तुलां पृथग्विनिष्क्वाथ्य द्रोणमानेन चाम्बुना ॥
एकीकृत्य कषायांश्च पादशिष्टान् पुनः पचेत्।
ततः क्षिपेन्मलयजं वालकं रक्तचन्दनम् ॥
गैरिकं देवपुष्पञ्च धातकीं रजनीद्वयम्।
लोध्रं जातीफलं श्यामां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥

पद्मरोध्रा मञ्जिष्ठा विडं मांसी पयोधरम्।
कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलयुग्मकम्॥
ततः कलायसदृशीर्विदध्याद्गुटिका भिषक्।
रोगान् कण्ठौष्ठरसनादन्ततालुसमुद्भवान्॥
सहकारवटी हन्यादाश्वेव वदने धृता।
जनयेन्मुखसौरभ्यं सुरुचिं स्थिरदन्तताम्॥

भै. र., मुखरोगे।

भाषा—आम, नीम, खैर, असन इनकीछाल १००–१०० पलको कूटकर एकएकद्रोणजलमें पादावशिष्टक्वाथकरके कपडेसे छानकर एकजगह मिलावे। फिर इसमें सफेदचन्दन, सुगन्धवाला, लालचन्दन, सोनागेरू, लौंग, धावडीकेफूल, हल्दी, दारुहल्दी, पठानीलोध, जायफल, अनन्तमूल, चातुर्जात, त्रिफला, पटकीजटा, मजीठ, विडनमक, जटामांसी, नागरमोथा, त्रिकटु, लोहभस्म और शुद्धकपूर २–२ पलका चूर्ण डालकर पकावे। घन तैयारहोनेपर मटरबराबरगोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१– गोली मुंहमें रखकर चूंसनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें सुगन्धिकोपैदाकरतीहै, रुचिको बढातीहै और दांतोंको स्थिरकरती है।

९६ सिद्धशाल्मलीकल्पः

भूकूष्माण्डं तालमूली धात्री चैव पुनर्नवा।
समभागं समाहृत्य भागार्धं गन्धकं तथा॥
तदर्धं पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत्।
श्वेतशाल्मलितोयेन सप्तधा भावयेत्ततः॥
माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भावयेत्पुनः।
शुष्कं तच्चूर्णयेत्तल्लिहेद्यन्मधुसर्पिषा॥
अनेनाशीतिवर्षोऽपि शतधा रमतेस्त्रिया।
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदेव इव स्वयम्॥
जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते।
शाणमेकन्तु कर्तव्यं दुग्धमत्रानुपानकम्॥

भै. र., ध्वजभङ्गे।

भाषा—भुईकोंहला, तालमूली, आंवले, पुनर्नवा और शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी कज्जलीकरके इसमें मिलाय सफेदसेमलकेस्वरसकी ७ भावनाएं देकर भैंसकेदूधमें घोटकर चूर्णबनाकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ मिलाकरलेनेसे अत्यन्त वाजीकरणहोताहै।

९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

एलाद्वयमुशीरञ्च चन्दनं सारिवाद्वयम्।
मेदाद्वन्द्वं निशाद्वन्द्वं गुडूचीपिप्पलीरजम्॥
फलत्रयं यमानीञ्च रौप्यं सर्वसमं तथा।
एकीकृतं पलमानं पाययेद्गव्यसर्पिषा॥
स्नायुशूलहरं नाम चूर्णमेतद्वरं स्मृतम्।
निखिलं स्नायुशूलञ्च सर्वान्वातामयांस्तथा॥

भै र., स्नायुरोगे।

भाषा—छोटी और बडी इलायची, खस, चन्दन, दोनोंसारिवा, मेदा, महामेदा, हल्दी, दारुहल्दी, गिलोय, सोंठ त्रिफला, अजवाइन येसब १–१ भाग, रजतभस्म सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्ती गायकेघीकेसाथदेनेसे समस्तस्नायुरोग और वातविकारोंको यह नष्टकरताहै।

स्वरादिरसोंकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्र (आगस्त्य), व्यासप्रोक्तवैद्यकशास्त्र (व्यास), रसामृत(र मृ.), रसकल्पलता (र.क.ल.(ना.)) रत्नकुमुद्वल (र.कु) और रसायनम् इनग्रन्थोंको ग्रन्थसूचीमें दाखिलकरना।

२—अगस्तिसूतराज (द्वितीय) में र यो.को दाखिलकरना।

३—अग्निकुमाररस (तृतीय) में चि.र.भ कोदाखिलकरना।

४—अग्निकुमार (पञ्चम) में र.यो., र.पा.को दाखिलकरना और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना।

"र.सं., भै.र., र.सु., वै. क., र.सि., रसायनसं., र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना "गन्धेशटङ्कणैरेकं विषमत्र त्रिभागिकम्। अष्टभागन्तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम्॥, इति योगो निर्दिष्टोऽस्ति। यो.र., र.चं. एतयोः "एकांशकाः पारदगन्धटङ्काः कपर्दशङ्खाऽमृतगोदभूमाः। त्र्यंशा इमेऽष्टौ मरिचं त्रिभागं सम्मर्दितं जम्भरसेन गाढम्॥,, इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति। अनयोर्द्वयोरपि अग्निमन्त्यर्थायः सुकरः। यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कपर्दशङ्खयोरभावोऽस्ति द्वितीये च गृहधूमस्याऽधिक्यमस्ति इत्यापाततोऽन्तर्भावो दुष्करः प्रतिभाति। परन्तु प्रथमयोगनिर्दिष्टरोगेषु कपर्दशङ्खयोगैस्त्याद्यधिक्ये गुणवृद्धिरेवास्ति। द्वितीययोगे गृहधूमाधिक्ये तन्मदक्षेपमधिकमथाऽग्निकुमारे योजनेनाऽपि हानि-भावोऽस्ति पाठल्यनता च महत्त्वदमिति विद्वद्भिरा-कलनीयम्।

५—अग्निकुमार (षष्ठ) के मूलपाठके स्थानमें नीचे लिखे पाठको रखना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना।

"मृतटङ्कणविषाऽभ्रकपर्दिका
गन्धकेन मिलिताः समभागाः।
पञ्चकाथितिजयाऽतितिशाभिः
धीमताम्बुजलैश्च विमर्द्य॥
सद्बृहद्गणिकाविनिगृह्य
भिषजां समुपैति रसेन्द्रः।
सातिसारमपि हन्ति दुष्करं
दीर्घजाड्यगुल्माऽग्निनाशनम्॥

स्वीयानुपानैरपि योजनीयो
रोगानुरूपैरशनैर्हितः स्यात् ।
प्रयत्नतः सद्ग्रहणीनिवृत्त्यै
मन्दाग्नितायां किल पायुजानाम् ॥

र., र. सं., ग्रहण्यधिकारे ।

टि०—रसावतारे रसेन्द्रम इति नाम । रसेन्द्रसारसङ्ग्रहीयाग्निकुमारे अभ्रक नास्ति तत्स्थाने विषतिन्दुकमप्यस्ति । जम्बीराऽम्लभावना दत्ताऽस्तीति विशेषः । शा., र.क., र.चि., र.म., यो., भै. सा., र. (मा.), रसायनस, र.क.ल., र.मु., यो.म., र.र.म., एषु पुस्तकेषु रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे च द्वितीयस्थाने हंसपोट्टलीति नाम । र.क. यो., ना.वि. एतयो. कपर्दिकारस इति नाम । रसकामधेनौ च गगनसुन्दरेति नाम स्थापितम् । बृ. यो. त., आ.वि., मा.प्र., र.मु., यो.म., र.क.ल., नि र., एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना "नागर कर्षमात्रं स्यात्कर्षमात्रञ्च टङ्कणम् । मरिच मार्षमात्रं स्यात्तावदेव वराटकम् ॥ विष कर्षचतुर्थांशं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । यद्यप्यस्मिन्योगे पारदगन्धयोरत्यन्ताभावोऽस्ति विषस्य च त्रिभागन्यूनतेति कृत्वाऽत्यन्तदुर्घटना प्रतीयते परन्तु योगद्वयस्य सदृशकार्यकरत्वात्तस्मिन्योगे सम्पादितेऽस्य योगस्याऽकिञ्चित्करत्वादेकेनैव योगेन मुग्धनिर्वाहो भविष्यतीति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

६—अग्निकुमाररस (१८) में यो. (प्रतापलङ्केश्वर) और र.पा., र.मृ.को दाखिलकरना ।

७—अग्निकुमार (२५) में यो.चि.को दाखिलकरना ।

८—अग्निकुमार (२९) में र.मृ.को दाखिलकरना ।

९—अग्निकुमार (३०) में रसायनप०को दाखिलकरना ।

१०—अग्निकुमार (३८) में पित्तकुलान्तक नामान्तर देना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना ।

"बसवराजीये विसर्पपित्ताऽधिकारे पित्तकुलान्तकेति नाम्नाऽयमेव पाठो निहितोऽस्ति तत्र द्रियामान्तो पाकः कृतोऽस्ति । आर्द्रकस्थाने जीरकाऽनुपानश्च निर्देशितम् ।

११—अग्निकुमार (३९) को निकालदेना वह सन्निपातभैरव (४) में गयाहै ।

१२—अग्निकुमार (४०) में व रा. और वै.चि.कोग्रन्थोंमें दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना—

" बसवराजीयवैद्यचिन्तामण्योर्विजयभैरवनाम्नाऽयमेवरसो निहितोऽस्ति केवलं तस्मात्ताम्रमपसारितम् । तत्केन कारणेन सञ्जातमिति न ज्ञायते पाठस्त्वेक एवाऽस्ति"

१३—अग्निकुमार(४३)में रसायनस., र.पा.को दाखिलकरना ।

१४—अग्निकुमार (४६)के पाठकेस्थानमें नीचेलिखेहुए पाठको रखना—

"पारदो गन्धकस्ताम्रकं तालकं
वत्सनाभः समं मर्दयेद्भृङ्गजैः ।
याममात्रं रसैस्त्र्यूषणैर्वा त्रिधा
पञ्चकोलेन वा वह्निना च त्रिधा ॥
वह्निकुमाररसः किल एषः
शूलकफग्रहणीरनुपानैः ।
हन्त्यरुचिं श्वसनं कसनं तत्
सततं जाठरपावकमान्द्यम् ॥

रसायनसं., र.क.यो., अग्निमान्द्ये ।

१५—अग्नितुण्डीवटीकीटिप्पणीमें नीचेलिखीटिप्पणीको और ग्रन्थोंमें रसायनपरीक्षाको दाखिलकरना.

"रसकामधेनावग्निमान्द्याऽधिकारे वैश्वानरनाम्नेको रसो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति ।

१६—अग्निप्रदरसमें सुवर्णपत्ररसका अन्तर्भावकरना ।

१७—अग्निमुखचूर्णमें ग.नि को दाखिलकरना ।

१८—अग्निमुखरस (४)को रसराजकी टिप्पणीमें लेजाना ।

१९—अग्निरस(प्रथम)में र.को. (वज्रेश्वर)को दाखिलकरना ।

२०—अग्निरस (४)में व.रा. (श्लेष्मकासविधूनन)को दाखिलकरना ।

२१—अग्निसन्दीपन (५)में र.चि. (भस्मामृत)को दाखिलकरना ।

२२—अग्निसमिभावटी में र.पा.को दाखिलकरना ।

२३—अङ्कोलवटकमें र. सं. को दाखिलकरना ।

२४—अवलेश्वरमें नि.र., र.त. (गन्धककल्पः), र.को., र.म.मा., र.र.कौ., र क.ल. (एषु नरनारायणः), र.र.स. (नारायणरसः), इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२५—अजीर्णकण्टक (२)में र.क्षी. (वातारिः), रसायनप को दाखिलकरना ।

२६—अजीर्णकण्टक(३)कीटिप्पणीमें अधोलिखितको लेना

"रसेन्द्रकल्पद्रुमे हुताशननाम्ना "पारदं गन्धकं टङ्कं विषं शुण्ठीञ्च पिप्पलीम् । समं विषञ्च समभागं मरिचं मर्दयेद्दिनम् ॥ निर्गुण्डिकारसैर्भाव्यं त्रिधा पर्ण्यनुपानतः ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्राऽन्तर्भावः करणीयः । यद्यप्यापातदृष्ट्या द्वयोरन्तरं प्रतीयते एकत्र पारदगन्धकयोरन्यत्र च दरदस्याऽऽगमनात् । परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या दरदेऽप्युभयोः सत्त्वान्नाऽत्यन्तमन्तरम् । मरिचप्रमाणेऽधिकमन्तरं प्रतीयते तदेकान्तिकमभीष्टश्चेदजीर्णकण्टके एव तदाधिक्यकरणेनाऽपि क्षत्यभावः । हुताशने निर्गुण्ड्यम्लपर्ण्योर्भावने दृश्येते परन्त्वन्तेऽम्लपर्ण्या एव भावना दत्ताऽस्ति, अजीर्णकण्टके च निम्बूकरसस्यास्ति परन्तु तत्र तीक्ष्णाम्लस्य सत्त्वान्निर्गुण्डिकाभावनाऽन्तराऽपि कार्यं सेत्स्यति । यदि च हुताशनोक्तभावनयोरप्यधिका प्रीतिश्चेत्पूर्वं तयोरप्यनुष्ठाने क्षत्यभाव इति बोध्यम् ।

२७—अञ्जनभैरव (१)में र.का., र.सु.,टो, रसायनसं (भैरवाञ्जन) र.पा. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२८—अतिसारदल्न (१)कीटिप्पणीमें नीचेलिखी रसपोट्टलीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसं वलिं विषं शुभं वराटकं समांशतः। विमर्दयेद्दिनं भृशं कृशानुमूलिकारसैः॥ क्षिपेच्च भाण्डसम्पुटे मृदा च सन्निरोधयेत्। क्षिपेत्तदूर्द्धभाजने मुहुर्मुहुर्जलं ततः॥ पचेच्च यामयुग्मकं शनैस्तु दीपवह्निना। सुशीतलं समुद्धरेदधःस्थिते तु पोट्टली। भवेत्तदोर्द्धभाजने रसस्य भस्म जायते। मरीचकैर्घृतप्लुतैर्ददीत पोट्टलीरसम्॥ विकारपित्तरोगिणे विधानतः सुवल्लकम्। करोति पुष्टिदीपनं गदव्रजं हरेत्सदा॥ रसेन्द्रभस्म वल्लकं नवेऽनवेऽथवा ज्वरे। नियोजयेच्च पिप्पलीमधुप्लुतं तु पैत्तिके॥ कणार्द्रशुण्ठिसंयुतं ददेत्कफानिलाधिके। ज्वरे ददीत यः कपायके निरूपितोऽस्ति ते। ददीत सन्निपातके कटुत्रयाऽऽर्द्रजीरकैः। र दी., र.सं. ज्वराधिकारे"

२९ अनङ्गवर्धनरसको हटादेना वह कामिनीमदविधूननमें गयाहै।

३०—अनलरसमें र मृ.को दाखिलकरना।

३१—अनीलरसमें र.चं, र.को., र.दी., र.क., र.र.स., र क ल. (एषु पाण्डुशोषणः) र. म. मा. (धनपङ्कशोषणः), र.मृ. (अनलमूर्तिः), रसायनसं, र.ल., र सं. (एषु मार्तण्डभैरवः), र.सि., इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "रसराजशङ्करे चित्रकस्थाने विजया नियोजिता" इसको टिप्पणीमें देना।

३२—अनिलारिरस (१) में र.र., भै.र., वृ यो.त, र.शा., चि क., ध. (एषु जलोदरारिरसः), र.सं., र.दी. (जलारिः), र. क. (जलोदरहरः) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

३३—अनिलारिरस (२) में र.सं. (वातारिः), र., र.मृ., इनग्रन्थोंको दाखिलकरना.

३४—अपस्मारारिरसमें .र., रसायनसं. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"र., रसायनसं. एतयोरपस्मारारिरसस्य समीरपन्नगेति नाम स्थापितम्। तत्र न रसान्तरतेति घोप्यम्। तथा च रम्भातोयस्थाने उन्मत्तरसो गृहीत इति विशेपः। तत्र द्वयोरपि रसाभ्यां मर्दितश्चेदधिकतया गुणवृद्धिर्भविष्यति तस्मादुभाभ्यामेव मर्दनं विधेयमित्यस्माकं सम्मतिः।

३५—अपूर्वरसको षाड्वरसमें लेजाना।

३६—अभिनवकामदेवरसमें र.मृ.को दाखिलकरके मदनोदयकी टिप्पणीमें लेजाना।

३७—अभ्रलोहयोगमें रसायनसं. को ग्रन्थोंमें और अधोलिखितको टिप्पणीमें दाखिलकरना।

"अभ्रस्थाने मृतसूतस्य नियोगो रसायनसङ्ग्रहे प्रमादात्सञ्जात इति विद्वद्भिराकलनीयम्।

३८—अमृतकलानिधिरसमें,सुतराज (प्रथम) और ग्रन्थोंमें र.मृ.को दाखिलकरना।

३९—अमृतभल्लातकमें भै.र.को दाखिलकरना।

४०—अमृतमञ्जरीरसमें अधोलिखितटिप्पणीको दाखिलकरना और आनन्दभैरव (द्वितीय)को हटादेना।

"रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे द्वितीयस्थाने व्योपमधिकतया नियोज्य आनन्दभैरवेति नाम्ना द्वितीयः पाठः स्थापितस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भूतत्वात्पाठान्तरं त्यजनीयम्।"

४१—अमृतमण्डूरकोहटाकर शतावरीमण्डूर (प्रथम) की टिप्पणीमें लेजाना।

४२—अमृतवटी (१)में र क.यो, वै.चि. (हुताशनरस)को दाखिलकरना।

४३—अमृतवटी (२)में यो.र., वृ यो.त., र.कौ., र.क.ल., र.चं, नि र., रसायनसं., वै.र., यो. म., र.सि., (एषु दुर्जलजेतारसः) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

४४—अमृतशर्वरीरसमें र मृ.को दाखिलकरना।

४५—अमृतहरीतकीमें र.र.स. (पाण्डुहरीतकी)को दाखिलकरना।

४६—अमृताङ्करसमें र.पा., (अमृताङ्कवटी)को दाखिलकरना।

४७—अमृतार्णव (२)में आ.व को दाखिलकरना।

४८—अमृतार्णव (३)में र.क.ल, (ना.)को दाखिलकरना।

४९—अमृतार्णव(१)में र.कौ., र.क ल., वृ.यो.त, यो. त, रसायनसं., वै.र., र मु., वै.चि., यो.र. (एषु पारदादिचूर्णम्), चि र.म. (कायकुठारः), र.कि. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

५०—अमृतेश्वर(१)में रसचं. (क्षुधासागर)को दाखिलकरना।

५१—अम्लपित्तान्तकरसमें रसायनसं.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसायनसङ्ग्रहे सूताकौदियोग इति नाम स्थापितम्। तत्राऽभ्रकस्थानेऽर्कं नियोजितम्। तथा च "पटोलकटुकीमुण्डीसिताक्षौद्रैर्लिहेदनु" इत्यनुपानविशेपः

५२—अयस्कृति (२)में ग.सं (त्रिवाताद्ययस्कृति) तथा चि क.को दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें दाखिलकरना त्रिवाताद्ययस्कृतिको मूलपाठोंमेंसे निकालदेना।

"चिकित्साकलिकायां एतन्निर्माणस्य क्रिया गुद्धा स्वतन्त्रतया पाठोनिर्मितः परन्तु तस्या पाठभेदेय, एतदपेक्षया हीनगुणा चास्तीति सुधीभिः रस्यग्विभावनीयम्। तस्याश्च पाठो यथा—

"सतिल्वकविभीतकामलकसमलाशङ्खिनी,
पलाशतरुशिंशपाप्रभृतिभिः पृथक् प्रास्थिकैः।
त्रिवृत्स्थविरदारुकज्वलनमन्थपथ्यायुतै-,
रमीभिरुदकार्मणद्वितयपाचितैरेकशः॥
पुनस्तत्रोत्तीर्णे श्रुतचरणशेषौषधिजले,
पलाशद्रोण्यन्तः स्थितवति विनिर्याप्य बहुशः।
ततस्तप्त्वा सम्यक् तरुणखदिराङ्गारनिकरै-,
रयःपिण्डे तस्मिन्नयसि च विलीने घनतमे॥
अयस्तुला गोमयपावकेन
संसाध्यते सिध्यति चात्र देयम्।
अयस्समं मागधिकादिवर्ग-
चूर्णं घृतं क्षौद्रमतो द्विभागम्॥
इत्यामयैरप्रतिवार्यवीर्या
सैषौषधायस्कृतिरुक्तमात्रा।
प्रयुक्तया प्रत्यहमायुषश्च
बुद्धेर्धियश्चापि भवेद्विवृद्धिः॥
न चानया स्थौल्यमपि प्रमेहः
क्षयश्च कुष्ठानि नृणां न सन्ति।
न पाण्डुता श्लीपदरुक्च स्या-
द्दुर्बोर्ने च स्तम्भरुजः कदाचित्॥" इति

५३—अयोमस्मयोगमें भा.प्र., वै.चि., यो.म. (लोहानुपानम्) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

५४—अयोमोदकमें ग नि., र.क, चि.सा., च.द. (लोहादिमोदक.) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

५५—अयोरज.प्रभृतिचूर्णमें वृ. मा.को दाखिलकरना।

५६—अर्कमूर्तिरस (३)में र.मृ. तथा अर्केश्वर (२) को दाखिलकरना।

५७—अर्धाङ्गवातारिरसको हटादेना वह कम्पवातहारमें गयाहै।

५८—अर्शोऽरिरसमें र. सं.को दाखिलकरना और नीचेलिखेकोटिप्पणीमें देना।

"गुडूचिकाशाल्मलिकारसेन वोलेन पित्तप्रभवे प्रदद्यात्। वातारितैलेन कटुत्रयेण वातोद्भवे चात्र मरीचियुक्तम्॥ श्लेष्मोद्भवे वह्निगुडार्द्रमिश्रं त्रिदोषजे मागधिकाघृतेन। हरीतकीशुण्ठिगुडोऽस्तु भल्लाफलत्रयेणाऽऽज्यमधुप्रयुक्तम्॥" इति रसराजशङ्करे विशेषोऽस्ति। भावनायां वसुस्थाने चित्रकोऽस्ति नाम च रसेन्द्ररस इति स्थापितम्।

५९—अर्शोहर (२)में नि.र., वै.क., र.सु., वै.चि., र.को. (एपु शिवरस) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और शुद्धाभ्रके स्थानमें शुल्वात्र पाठकरना।

६०—अर्श कुठाररस ३,४,५ और वज्रकुठार इनरसोंकेद्रव्य प्रायः समानहैं थोड़ा थोड़ा भेदकरके अल्पपाठकियेहैं इसलिये सबका एकपाठबनादेनाचाहिये।

६१—अर्श कुठार (५)में र.पा.को दाखिलकरना।

६२—अश्वकञ्चुकी(४)में रसायनप, र.र.कौ., यो.त.,र.पा. इनग्रन्थोंको दाखिल करना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना।

"रसं गन्धं तथा व्योषं टङ्कणं मरिचन्तथा। हरितालं विषञ्चैव शाणमात्रं पृथक् पृथक्॥ दन्तीबीजं चतुःशाणं खल्वे चैतानि निक्षिपेत्।" इत्याकारको रसकौमुद्यां पाठोऽस्ति तत्र त्रिफलाऽभावः, दन्तीबीजं चतुःशाणं नियोज्य निम्बुद्रवेण भावना दत्त्वा नाम च नृसिंह इति स्थापितम्। तस्याऽप्यश्वकञ्चुक्यामेवान्तर्भावः। रसपारिजाते द्वितीयस्थाने चित्रकमधिकतया विन्यस्य भानुरेचनमिति नाम स्थापितम्।

६३—अश्वगन्धापाक (२)में रसायनसं.को दाखिलकरना।

६४—अश्वगन्धाऽभ्रक (२)में र (मा.)को दाखिलकरना।

६५—अष्टमूर्ति (१)में र.सि. (सन्निपातभैरव)को दाखिलकरना।

६६—अष्टयामिकवटी में र.क. यो (ज्वरगजकेसरी) को दाखिलकरना।

६७—अहिवधरस में भै.सा., र.म.मा. (नागवध)को दाखिलकरना और नागवधके पाठको तवर्गमेंसे निकालदेना।

६८—आगन्तुज्वरहरकेपाठको हटाकर ज्वरहर (८८)में लेजाना और रसेन्द्रसं.को दाखिलकरना।

६९—आज्ञासिद्धरसायनमें र.मु., र.र.स., र.बो इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

७०—आनन्दभैरवरस (३)में र.पा., र.बो. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसपारिजाते निम्बूकरसेन त्रिदिनं विमृद्यैकः पाठः कृतः, जातीफलकारवेल्लशृङ्गवेररसैर्विभाव्य द्वितीयः पाठः प्रकल्पितः, सकलामयघ्नत्वेन गुणश्च प्रदर्शित इतिविशेषः।

७१—आनन्दभैरवरस (११)में रसायनप. को दाखिलकरना।

७२—आनन्दभैरवीवटी(१)की टिप्पणीमें "भैषज्यरत्नावल्यां रसराजसुन्दरे च सन्निपातसूर्येति नाम स्थापयित्वा टङ्कणं निष्कास्य त्रिदिनपर्यन्तभावनां दत्त्वा निष्पादितः।" इसको दाखिलकरना।

७३—आनन्दभैरवीवटी (२) में र.र., र.क.यो. र.को, र.सु., र चि., र.का, (॥ सन्निपातभैरव) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "मृतताम्रं सटङ्कणम्" के स्थानमें "मृतताम्राऽभ्रटङ्कणम्" ऐसापाठकरना तथा "कुत्रचिदभ्रकराहित्यमस्ति" इसे टिप्पणीमें देना।

७४—आनन्दरस (१) में भा.प्र. (आनन्दसुत) को दाखिलकरना।

७५—आनन्दरस (२) में रसायनप. को दाखिलकरना।

७६—आनन्दोदयरसमें र.सं., र सु., ध., नि र., र चि, (एवुलब्धानन्दः) र.क. (आनन्दभैरव) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और आनन्दभैरव (७) को मूलपाठोंमेंसे हटादेना।

७७—आमलक्यादिलोहमें भै.र. (रक्तपित्तान्तकलोह)को दाखिलकरना।

७८—आमवातगजकेसरी(१)कीटिप्पणीमें "भैषज्यरत्नावल्यामस्मिन्नेवाऽधिकारे विडङ्गादिलोहमिति नाम्ना द्वितीयो योगो लिखितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

७९—आमवातविध्वंसनमें र.दी, र.चं, र चि, चि सा, रसायनसं. [वातविध्वंसन] र.कौ., र रा., यो.म., र.सि, र का, (पवननाशन) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

८०—आमवातारिवटी (२) में र क ल, भा.प्र, वै र, र र.कौ., र.को. र चं, नि र, र.र स, टो, रसायनस, र कौ., र प्र, र र दी, चि र भ, व रा, र. (मा), वै चि, (एवु वातारिरस), वा (वातारिगुग्गुलु) इनग्रन्थोंको दाखिल करना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"वैद्यचिन्तामणौ वसवराजीये च "पुन्नागं बृहतीयुग्मं देवदारुसुवर्णकम्। एतत्पूर्वोषधसमं मर्दयेद्यामयात्रकम्॥" इति पाठोऽधिकोऽस्ति।"

८१—इच्छाभेदी (४) में र कि., यो,चि, र यो, र मृ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "योगचिन्तामणौ मरिचाऽभाव" इसको टिप्पणीमें देना।

८२—इच्छाभेदी (५) में र र कौ को दाखिलकरना।

८३—इन्द्रोक्तरसायनमें रसायनम को दाखिलकरना।

८४—उड्डामररसमें र र स, र र कौ (दीडामर), वै चि, व रा (कुण्डामर) नि र, र र दी, र का., टो, वै चि इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और उड्डामराख्यरसको निकालदेना और उसमें दीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमें देना।

८५—उदकमञ्जरीरस (१) में चि क को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"भूयो भूयो भावयेत्तत्त्रिरात्रं" इत्यस्याग्रे 'भाव्यः सम्यक् कुम्रमुण्डी विशालासेहुण्डाग्निग्राहिनिर्गुण्डिनीरैः" इत्यधिकः पाठो हस्तलिखितप्रतिषु दृश्यते।

८६—उदयकुष्ठघ्नको निकालदेना वह सूर्यकान्तमें गया है।

८७—उदयभास्कर (२) में र बौ को दाखिलकरना।

८८—उदयभास्कर (४) में र पा को दाखिलकरना।

८९—उदयभास्कर (५) में र मृ को दाखिलकरना।

९०—उदयभास्कर (८) में यो चि को दाखिलकरना।

९१—उदयभास्कर (१०) को निकालदेना वह रसवरकी टिप्पणीमें गया है वहापर र मृ को दाखिलकरना।

९२—उदयमार्तण्ड (१) में र बो को दाखिलकरना।

९३—उदयमार्तण्ड (२) को निकालदेना वह सूर्यप्रभातात्रेश्वरकी टिप्पणीमें है।

९४—उदयादित्य (३) को निकालदेना वह रवितांण्डवकी टिप्पणीमें है।

९५—उदरारिरस (१) में अधोलिखितटिप्पणीको ग्रन्थ सहित दाखिलकरना।

"र.सं., ध., भै. र, र सु., र.चि. एषु ग्रन्थेषु पञ्चाननरस इतिनाम। र.म.मा. (गुल्मगजारातीरसः), र र.स. (रक्तोदरकुठारः), र.र.कौ. गुल्मघ्न इतिनाम। रसरत्नाकरे गन्धकमधिकतया निक्षिप्य वज्ररस इति नाम स्थापितम्। रसायनसङ्ग्रहे द्विक्षारमभयाञ्चाऽधिकतया निक्षिप्य पारदादिवटीति नाम प्रदत्तमस्ति।

९६—उदरारि (४)को निकालदेना वह सर्वेश्वर (८) की टिप्पणीमें गया है।

९७—उदरारि (७) में वृ यो त, र कौ (गुल्मारि.), नि र, वै चि, र रा, र र दी (गुल्मगजाराति), टो. (कुक्ष्युदरारि), रसायनस (भैरवरस.) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना

९८—उन्मत्तरसमें र पा को दाखिलकरना।

९९—उपदंशप्रलेप (२)में सुश्रुतको दाखिलकरना और सुश्रुतके पाठको मूलपाठ रखना तथा अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"गुन्द्रा तृणविशेषो दर्भवत्सूक्ष्मशलाकारूपः यत्प्रायो गङ्गायमुनातटे बाहुल्येन लभ्यते। तत्रत्यजना यद्रज्ज्वादिकं निर्माय खट्वाद्याच्छादनं कुर्वन्ति अथवा गृहाद्याच्छादनबन्धनानि कुर्वन्ति तं तृणविशेषं वर्तमानसमये 'वगई' अथवा 'वागेर' इति नाम्ना व्यवहरन्ति। दर्भसजातीयमिदं तृणम्। तद्दग्ध्वा तदीयभस्म प्रयोज्यम्। रसकल्पलतायान्तु गुन्द्रास्थाने गुञ्जेति पाठ उपलभ्यते सः गुन्द्राशब्दस्याऽर्थाऽज्ञानात्तत्स्थाने कृतोऽस्ति अथवा प्राचीनसुश्रुतीयपुस्तकेषु गुञ्जाया एव विद्यमानतामुपलभ्य तथा कृतोऽस्तीति निश्चयेन वक्तुं न शक्नुमः। परन्तु गुञ्जाया विषघ्नत्वाद्रोपणत्वाज्जन्तुघ्नत्वाच्च योग. सम्यगेवाऽस्तीति वक्तुं युज्यत एव।

१००—उपदंशहरयोगमें र.को, ध., भा प्र, भै.र (सप्तशाणीवटी) को दाखिलकरना।

१०१—उपदंशहरीवटीको निकालदेना वह सूतादिवटीमें गई है।

१०२—उमाप्रसादनरसमें र पा. को दाखिलकरना।

१०३—उमामाहेश्वरमें व. रा को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"संशुद्धं पारदश्चाभ्रमित्यस्यस्थाने शुद्धं सूतं विषञ्चाभ्रमिति पाठः करणीयः। वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने तमेव पित्तभावनारहितं पाठं मदनपित्ते उद्धृत्य तस्य रामबाणेति नाम स्थापनात्स रामबाणोऽप्यत्रैवान्तर्भावनीयः केवलं तत्र पित्तैर्भावना न दातव्या, स च मदनजनितपित्तप्रकोपे दातव्य इति विशेषः"

१०४—उमाशम्भुकी टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"र.ल., र.पा., एतयोः क्षीरसमुद्र इति नाम। शक्तिवल्लभविरचितायां रसकौमुद्यां क्षीरार्णव इति नाम स्थापितमस्ति।

१०५—एकसुतेश्वररसमें र.शं.को दाखिलकरना और "रसराजशङ्करे भृङ्गवह्निवालकानां भावनाऽधिकतया दृश्यते" इसको टिप्पणीमें देना.

१०६—एकाङ्गवीररसमें र.पा.को दाखिलकरना।

अथ कवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१०७—कवलीयोगमें अधोलिखितपाठको दाखिलकरना "पारदं गन्धकं तुल्यं लवङ्गैर्मर्दयेद् दृढम्। याममात्रं पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं रसो वान्तीभकेसरी। लवङ्गस्यानुपानेन छर्दिं हन्ति न संशयः॥ र.म.मा., ना.वि. वमनाधिकारे॥"

इसकेसिवाय अग्निसन्दीपनरस (१), उपदंशेभसिंह, कवलीरस; कुम्भकुष्ठ, गन्धर्वास्य, गन्धारसगर्भ, त्रैलोक्यसुन्दर (३) पाषाणभेदी (२-३), पाषाणवज्र (१-२), महाकल्प, श्लीपदध्वंसी (२), श्विनेभसिंहप्रभृति केवलकवलीकेयोगोंको भी कवलीयोग नामसे दाखिलकरना।

१०८—कनकसुन्दर (१) में र. चं. (रोगहर) को दाखिल करना।

१०९—कनकसुन्दर (५) में र.पा., र.कि., वै.जी., अगस्त्य इनग्रन्थोंको दाखिल करना और "अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे पिप्पलीरहितोऽयं पाठो ग्रहणीकपाटनाम्ना निहितोऽस्ति।" इसको टिप्पणीमें देना।

११०—कन्दर्पसुन्दरमें रसायनस, र.क.ल. (ना.) को दाखिलकरना और "नारायणविरचितरसकल्पलतायां सिताभ्रकमित्यस्यस्थाने शिलाऽभ्रकमिति पाठः।" इसको टिप्पणीमें देना।

१११—कपर्दपोट्टलीमें र.मृ. (विश्वेश्वरस), र. (मा.) पोटलीसूतको दाखिलकरना।

११२—कफकुठार (३) को रसवरमें लेजाना।

११३—कमलाकारमें वै चि, व.रा. (विजयभैरव) को दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना.

"अस्यैव पाठस्य वैद्यचिन्तामणिवसवराजीययोः कटुकीस्थाने कण्टकारिभावनां प्रदाय विजयभैरवेति नाम स्थापितम्। अग्निवाते वीरभद्रेति च नाम दत्तमस्ति तत्र कटुकीस्थाने गोकण्टभावना प्रदत्ताऽस्ति।

११४—कर्पूररस (५) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना.

"कस्तूरीहिमकर्णकुङ्कुमसुधा जातीफलं हाटकं, वाब्धेःशोषजहेमबीजविजया यष्टी जयन्ती विषा। प्रत्येकं वल्लमात्रं मधुघृतसितया लेहमानं दिनान्ते, किञ्चिन्मूर्च्छाप्रपन्नो भजति हि पयो भक्षयेच्चेक्षुदण्डम्॥ स्त्रीणां गर्वाधिकत्वं शमयति सकलं वीर्यपातो न जातु, लिङ्गोत्थानं भवति च कठिनं योनिमर्द्दं करोति॥" इति टोडरानन्देऽनुपाने विशेषो दृश्यते। यत्राऽस्योपयोगोऽभीप्स्तत्राऽनुष्ठानं करणीयमतः स्वतन्त्रपाठे भ्रमो न करणीयोऽनुपानानामनियतत्वात्

११५—कर्पूररस (७) में र.बो.को दाखिलकरना।

११६—कर्पूररस (११) में आ.प्र. (सुधानिधिरस) को दाखिल करना।

११७—कर्पूररस (१३) में र.पा.को दाखिलकरना।

११८—कर्पूररस (२७) में यो.म को दाखिलकरना।

११९—कल्पादपरसमें रसचि. को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना और मूलपाठमें "धुस्तूरस्य रसस्यापि भृङ्गराजस्य भावनाः" इसके आगे "बीजपूररसस्यापि तिस्रो देयाश्च भावनाः। आर्द्रकस्यरसे घृष्ट्वा पुटेद्गजपुटेन च॥ स्वाङ्गशीतलतां प्राप्तं पुनस्तस्मथ सम्पुटेत्। नवधाग्निविधायैवं तत्समं सूततीक्ष्णकम्॥ निक्षिप्य मर्दयेत्खल्वे सञ्जातोऽयं महारसः॥" इतना पाठ अधिक दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना.

"रसचिन्तामणौ अस्य रसस्य 'विंशभागमितं ताम्र-मित्यारभ्य 'वान्तिभ्रान्तिर्न विद्यते, इत्यन्तस्य ताम्रयोग इति नाम स्थापितम्। अस्मादग्रस्थभागस्य देवभूतिरस इति नाम स्थापितम्।

१२०—कल्पवृक्षरसमें र यो.को दाखिलकरना।

१२१—कलायवटीमें च द.को दाखिलकरना।

१२२—कान्तरसमें र शं को दाखिलकरना और "रसराजशङ्करे सिन्दूरपार्वत नाम्नाऽथवा कान्तवह्ननाम्नाऽयमेवपाठो निहितोऽस्ति सः कान्तरसान्नातिरिच्यते।" इसको टिप्पणीमें देना।

१२३—कामदरसमें र.प्र सु, र.चं., स्त्री.वि, इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"र.प्र.सु., र.चं., एतयोः "हंसपादकरभञ्च जारणम्" इत्यस्यस्थाने "वलियसाप्यथ चाभ्रमसमकम्" इति पाठं कृत्वा प्रमेहजित्प्रमेहाङ्कुशेति वा नाम स्थापितम्। स्त्रीविलासे वीर्यस्तम्भनरसेति नाम।

१२४—कामदेवरस (४) में यो चि को दाखिलकरना।

१२५—कामदेवरस (५) में र पा को दाखिलकरना।

१२६—कामदेवरस (८) में र पा को दाखिलकरना।

१२७—कामदेवरस(९)में र र.स , र.को ,(मन्मथरस) इन-ग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसरत्नसमुच्चये रसेन्द्ररत्नकोशे च मन्मथरस-इति नाम दत्तम्, तत्र "मर्द्यं श्वेतहयारिरक्तदहनैस्ता-लीरसैः सप्तधा" इत्यस्य स्थाने "रक्तचित्रकवाराही पत्रनिर्यासपेषित—"मिति पाठो भिन्नतया दृश्यते। परन्त्वेतावता विशेषेण तत्पृथक्तया पाठो ग्रहीतुमयो-ग्यः। वाराह्या अपि तत्र भावनादाने न काऽपि क्षतिः। कामदेवो मन्मथश्चेत्युभौ पर्यायवाचकौ, त-द्दिशि लक्ष्यमस्त्या र.को., र.र.स. एतयोः पृथक् पाठो नियेशित इति सुधीभिराकलनीयम्।

१२८—कामदेवेशरसमें वै.नि (मदनकामेश्वर)को दाखिल-करना।

१२९—कामधेनुरस (२) की टिप्पणीमें नीचे लिखे-हुएको लेना।

"भैषज्यरत्नावल्यां अमृतार्णवनाम्नाऽयमेव रसो निहितोऽस्ति तत्र व्योषाऽभावः, भावनायाञ्च त्रिफ-लास्थाने चित्रकं नियोजितमिति विशेषः प्रतीयते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः व्योषयुक्तस्यैव गुणाधिक्यात्। भावनाद्वयस्याऽप्यनुष्ठाने सर्वं समञ्जसमेव स्यात्।

१३०—कामनायकमें र मृ , र र स , र.को इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"र.र.स.,र.को , अनयोर्मदनोन्मत्तनाम्नैको रसो-ऽस्ति तेन साकमस्य बहुधा साम्यमस्ति। अत्रद्वयो-र्मिश्रणं कृत्वा वालुकायन्त्रे पाको विहितस्तत्र तु यथास्थितमेव प्रयुक्तमिति विशेषो दृश्यते। रसामृते मदनकामेश्वरेति नाम।

१३१—कामबाणरसमें रसायनप को दाखिलकरना।

१३२—कामविलासिनीवटीमें रसायनसं. (मदनविलास)को दाखिलकरना।

१३३—कामसुन्दरीगुटीको हेमवद्गुटिकाकी टिप्पणीमें दाखिलकरना और र का (स्वर्णसुन्दरी)को दाखिलकरना।

१३४—कामिनीमदविधूननमें ग्रन्थसहित अधोलिखित टिप्पणीको दाखिलकरना।

"रसचि., र.सु , रससं., र.क ल., वै.जी., र.चो., एषु विलासिनीवल्लभेतिनाम। र.सं.क., रसायनसं. एतयोर्मानिनीमानमर्दनेति नाम। र.पा., र.क ल., एतयोः कामिनीमदविधूननेतिनाम। रसावतारे प्रमे-हमर्दनेतिनाम। चिकित्सारत्नाभरणे धूर्ततैलस्थाने भुजङ्गशृङ्गीराभ्यां भावना प्रदत्ता नाम च प्रमेहा-रीति। द्वितीयस्थाने अनङ्गवर्धकनाम्नाऽयमेव रसो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

१३५—कामेश्वरमोदक (१, ३) में र क. ल. (ना.) को दाखिलकरना।

१३६—कामेश्वररस (२)में र पा को दाखिलकरना।

१३७—कालकण्टक(२)में र स , ध , र.सु (वातकण्टक) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

१३८—कालवज्रकमें नि र, वै चि (नागेश्वररस) इन-ग्रन्थोंको दाखिलकरना।

१३९—कालवज्राशनिरसमें र.पा (विषारि) को दाखिल-करना।

१४०—कार्श्यहरलौहमें र र. (श्वेतादिलौह)को दाखिल-करना।

१४१—कासकर्तरीरसको निकालदेना वह चन्द्रामृत (३) में गयाहै और "यलयराजीये प्रमादादयमेव पाठः कासकर्तरीति नाम्ना द्वितीयस्थाने निहितोऽस्ति" इसको टिप्पणीमें देना।

१४२—कासकेसरीरसको निकालदेना और उसकेग्रन्थोंको नारायणरसमें दाखिलकरना।

१४३—कासाङ्कुश (२)में वै र को दाखिलकरना।

१४४—कासीसबद्धरसको हटादेना वह त्रिनारिकी टिप्प-णीमें गयाहै।

१४५—किन्नरकण्ठरसमें भै.र.को दाखिलकरना।

१४६—किरातादिमण्डूरकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"चि.र., वै. क., र.सु., यो म, वै.चि., एषुग्रन्थेषु लोहामृतनाम्नाऽयमेव योगो निहितोऽस्ति। तत्र मृतलोहस्य पलान्यष्टादशानि चेत्यत्र कर्षस्थाने पलं सञ्जातमस्ति तद्दानादेवाऽस्ति, मध्वाज्याभ्यां लिहे-त्कर्षमिति वदतोव्याघातत्दुपस्थितेः, तस्मादेक एव योगोऽस्ति निघण्टुरत्नाकरे द्वितीयस्थानेऽयमेव पाठो मुनिरश्व्यादिवटीति नाम्ना निहितोऽस्ति परन्तु पाठान्तरता नास्त्येव समानवस्तुघटितत्वात्।

१४७—कीटारिरसमें कृमिहर (१)को ग्रन्थसहित दाखिल करना।

१४८—कुमुदेश्वर (२)को हटाकर मृगाङ्क (१)में दाखिल-करना।

१४९—कुमुदेश्वर (४)में र म. मा , र पा.को दाखिल-करना।

१५०—कुष्ठकुठाररस (१)में रसायनप.को दाखिलकरना।

१५१—कुष्ठहरलेप (१, २) में र.पा को दाखिलकरना।

१५२—कुसुमायुधमें र को. (वीर्यमहोदधि)को दाखिल-करना।

१५३—कूष्माण्डपाक (२)में रसायनस को दाखिलकरना।

१५४—कुमिकुमकुठारमें र यो को दाखिलकरना।

१५५—कृमिघातिनीगुटिकामें र रा, यो स, र मृ, इन ग्रन्थोंको दाखिलकरना और कृमिकुठार (३)का इसमें अन्तर्भावकरना।

१५६—कृष्णमाणिक्यरस (रसेन्द्रमङ्गलोक्त)को प्रथम कृष्णमाणिक्यमेंसे हटाकर द्वितीयमें दाखिलकरना और कुष्ठाऽधिकार देना।

१५७—कूष्माण्डगेहमें ग नि, ना वि को दाखिलकरना।

१५८—कोलादिमण्डूरमें ग नि.को दाखिलकरना।

१५९—क्रव्यादरस (१)में र यो, रसायनप., र.पा.को दाखिलकरना।

१६०—खदिरादिवटी (लोकनाथपोट्टली (प्रथम)की टिप्पणीमेंहै)को मूलपाठोंमें दाखिलकरना और र., भै र., को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना।

१६१—खर्परवटीको हटादेना यह बालरोगान्तकमें गईहै।

१६२—खदिरगुटी (१)में र का, (वीर्यरोधिनी), र.ज्ञा. (खगुटिका)को दाखिलकरना।

१६३—गगनसुन्दर (१)के स्थानमें अधोलिखित पाठको टिप्पणीसहित रखना।

"शुद्धौपारदगन्धौ च टङ्कणं चाभ्रभस्मकम्।
एतानि समभागानि खल्लमध्ये विनिक्षिपेत्॥
भद्रमुस्तकषायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पुटमेकन्तुभूधरम्॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य वल्लमात्रं प्रदापयेत्।
मूर्च्छापित्तविनाशाय सर्वपित्तनिवारणम्॥
भै रा, भै र, र मु पित्तरोगे।

टि०—यद्यपीदं मूर्च्छापैत्तिकगुणानिनाम। भैषज्यरत्नावली रसराजसुन्दरयोर्मतानिसारे टङ्कणस्थानपाठभेदेंगुणिकारममदनेनाऽत्र निष्पादितं। भैषज्यरत्न ज्वरातिसाररोग मयुक धोऽस्येव पठनस्य प्रयुक्तोऽपि पाठनाऽधिकमनुयुक्तात्। दुष्टिकाभावना स्वभावानुपया।

१६४—गगनसुन्दर (२)की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"र च, र.सु, नि र, वै चि, यो.म, एषु पुस्तकेषु मृतराजेतिनाम। छिर्नायचित्रेनेऽपीमान्येव वस्तूनि सन्ति परन्तु भागवृद्धिर्यचिन्त्याय तस्याऽत्रान्तर्भाव इति सुधीभिरयिस्मरणीयम्।

१६५—गन्धकपर्पटीमें यो चि को दाखिलकरना।

१६६—गन्धकरस (१) में आ प्र, र. क स. को दाखिलकरना।

१६७—गन्धकरस (२,६ १५,११,२१) इनमें आ.प्र. को दाखिलकरना

१६८—गन्धकरस (१२) में यो म को दाखिलकरना

१६९—गन्धकद्रुति (१)में आ प्र को दाखिलकरना।

१७०—गन्धकयोग (४) की टिप्पणीमें नीचेलिखे-हुएको लेना।

"भैषज्यरत्नावल्यां रसराजसुन्दरे च द्वितीयस्थाने आमलकानि निष्कास्य शाल्मलीत्वचं निवेद्य हर-शशाङ्करसेति नामान्तरं दत्तम्। परन्त्वत्रैव शाल्म-लीत्वक्चूर्णस्य प्रक्षेपमधिकतया निवेद्य रसनिष्पा-दने न कापि हानिः प्रत्युत गुणवृद्धिरेव भविष्यति योगसङ्कोचश्च महत्फलम्।

१७१—गन्धकरसायन (१)में आ प्र.को दाखिलकरना।

१७२—गन्धकरसायन (७)में भ रा, वै चि को दाखिल-करना और नीचे लिखेहुएको टिप्पणीमें देना।

"यसवराजीयवैद्यचिन्तामण्योर्वेङ्यामलनाम्ना ए-को रसो निहितोऽस्ति तत्र टङ्कणं नागरं कुष्ठञ्च समांशकमधिकतया निक्षिप्तं तदत्र नियुज्यैक एव रसो निष्पादनीयः। अयोमस्माकमनन्तु प्रमाद-विलसितमेव प्रतीयते इति विद्वद्भिराकलनीयम्।"

१७३—गन्धकलोहमें आ प्र, र क ल को दाखिलकरना।

१७४—गन्धकवटी (९)में नि र को दाखिलकरना।

१७५—गन्धामृत (१)में आ प्र को दाखिल करना

१७६—गरनाशनरसमें वै चि (भीमरुद्र)को दाखिलकरना इसमें रसायनाधिकारमें आयाहै।

१७७—गर्भपाल (१)में र.का. (रघुनाथरस) को दाखिल करना।

१७८—गान्धारीवटीमें र.का को दाखिलकरना।

१७९—गुडूच्यादिमोदकमें र पा को दाखिलकरना।

१८०—गुडमण्डूर(१)में ग.नि (त्रिफलालोह) को दाखिल-करना।

१८१—गुडमण्डूर (२)में ग नि. (गुडाद्यागुटी), च स, भ.इ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

१८२—गुल्मकुठार [१] में रसायनप. को दाखिलकरना।

१८३—गुल्महर (१)में र.क, र.मृ. (रसवटी) को दाखिलकरना।

१८४—गोमूत्रमण्डूर (२) को निकालदेना यह मण्डूरयोग (७)में गयाहै।

१८५—गोमूत्रमण्डूर (३)में भै.र, (धात्र्यादिमण्डूर) को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"भैषज्यरत्नावल्यां गोमूत्रमण्डूरमेव धात्र्यादिम-ण्डूरनाम्ना स्पष्टतित्वद्योतनाय प्रख्यापितम्। तत्र सुरभीशब्दस्य निर्गुण्डयर्थं मत्वा सुरभीस्थाने निर्गु-ण्डीपदं न्यस्तम्। पुनर्नवादिमण्डूरवत् गोमूत्रमण्डूरे तु मण्डूरस्य विशेषप्रमाणस्याऽनिर्देशात् योगे प्रथ-मागतस्यैनाऽन्यपूर्णसमं मण्डूरमस्माभिः प्रक्षेपणीय-

मिति टीकायां कथितम् । त्रिफलाकटुत्र्यामि-त्यत्र मूलपाठे कटुशब्देन किङ्ग्रहीतव्यमिति संशय्य त्रिकटुनियोजितः । अस्माभिस्तु कटुशब्देन कटुकी गृहीता शोथरोगे तस्या अधिककार्यकरत्वादिति बोध्यम् ।"

१८६—गोमेदकरसायनकी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना ।

"क्रामणं रसराजस्य वेधकाले प्रदापयेत् । क्रामणं यो न जानाति श्रमस्तस्य निरर्थकः॥रसा०१७।१६॥ अन्नं वा द्रव्यं वा यथानुपानेन धातुषु क्रमते । एवं क्रामणयोगाद्रसराजो विशति लोहेषु ॥ र.ह० १७।२" इत्यादिवाक्यै र्लोहे देहे च क्रामणयोगैर्विना उग्ररसा नैव क्रामन्ति, इति विचार्य "क्रामणं पादपादेन" इत्युक्तमस्ति । तत्राऽपि क्रामणानि कानिकानि द्रव्याणि भवन्तीत्यपेक्षायां "अलम्बुषाऽयस्कान्तस्य तालकस्य च भक्षणात् । देहे क्रामति सूतेन्द्रो नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ रसार्णव प० १८।११४॥ "अहिगेहतो वङ्गनागौ द्वौ क्रामणं परम् ॥ रसा० प० १७।१४" "इन्द्रगोपो विषं कान्तं दरदं रुधिरं तथा । रसकं तिलतैलञ्च क्रामणं क्षेपलेपयोः ॥ रसा० प० १७।७" "शिलया निहतो नागो वङ्गं वा तालकेन शुद्धेन । क्रमशः पीते शुक्ले क्रामणमेतत्समुद्दिष्टम् ॥ तीक्ष्णं दरदेन हतं शुल्वं वा ताप्यमारितं विधिना । क्रामणमेतत्कथितं कान्तमुखं माक्षिकैर्वाऽपि॥ माक्षिकसत्त्वं नागं विहाय न क्रामणं किमप्यस्ति । दलसिद्धे रससिद्धे विधावसौ भवति खलु सफलः ॥ र. हृ० १७।६,७,८" इत्यादिभिरनेकानि द्रव्याणि क्रामणानि रसग्रन्थेषु निर्दिष्टानि तेषु शारीरौचित्याऽत्र नागवङ्गविषदरदताम्रमाक्षिकसत्त्वस्वर्णगैरिकाणि गृहीतानि सन्तीति विद्वद्भिराकलनीयम् ॥"

१८७—ग्रहणीकपाट (५)में रसायनप. को दाखिलकरना ।

१८८—ग्रहणीकपाट (१२)में र.मृ को दाखिलकरना ।

१८९—ग्रहणीकपाट (१९)में र चं , र मु. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"रसेन्द्रसारसंग्रहे द्वितीयस्थाने भैरवरसनाम्ना कर्णरोगाऽधिकारे एकः पाठो निहितोऽस्ति तत्र त्रिकटुस्थाने केवलं मरिचं नियोजितम् । भावनायां जम्बीरस्थाने आर्द्रकं नियुक्तं तत्र न रसान्तरता भावनाद्वयसत्त्वेऽपि क्षत्यभावात् । मागधीशुण्ठ्योर्योगेनापि प्रत्यवायाऽभावात् ।

१९०—ग्रहणीमदवारणसिंहमें र.पा. (ग्रहणीकपाट) को दाखिलकरना ।

१९१—ग्रहणीहररस (३)में र को , र क ल, इनको दाखिल करना और "मुशलीं पेषयेत्तक्रैरथवा तण्डुलोदकैः । कर्षैकं पाययेच्चानु पथ्यं तक्रौदनं हितम् ॥ द्वे निशे च वचा कुष्ठं मुस्तं कटुकरोहिणी । छागमूत्रैः समं पिष्टं रुद्ध्वा गजपुटैः पचेत् ॥ कर्षमात्रं पिबेत्तक्रैरग्निदीपनमुत्तमम् ॥"इतना पाठ अधिक दाखिलकरना । रसकामधेनुकापाठ अधूराहै दूसरेमन्थोंमें शम्बूकाक्ष नामहै ।

चवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१९२—चक्रधररसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिल करना.

"रसदीपिकायां वातोदरहरनाम्ना "ताम्रस्यपत्रेण नियद्धयसूतं गन्धेन तुल्येन विषेणयुक्तम् । विमर्दयेद्वह्निविडङ्गकृष्णाऽजाजीगुडूचीसुरसाद्रवेण॥ क्षारत्रयश्चैलवणानि पञ्च सूतेन तुल्यानि च योजयित्वा । जम्बीरनिम्बोत्थरसेन वाऽपि विमर्दयेद्याममतः क्षिपेत् । लोहस्यपात्रेऽथ कृशानुनीरैः संस्वेदयेत्तं घटिकाद्वयञ्च । गुञ्जाद्वयञ्चास्य ददीतशुण्ठी घृतेन युक्तं त्वथवाऽऽर्द्रकेण ॥ विरेचने तज्जयपालमिश्रमुष्णञ्च साज्यं परिभोजयेत ॥" इति पाठोऽस्ति । रसावतारे च वातोदरारण्यकृशानुमेघ इति नाम्ना "सूतगन्धकविषंविमर्दयेद्वह्निनीरसहितं दिनमेकम् । ताम्रपात्रकुहरं परिलिप्य वालुकान्तरगतन्तु पुटेत ॥ कृष्णाशिवेलाः सुरसागुडूचीशुक्राम्बुभिर्भावय सप्तवारम् । क्षारत्रयं वै लवणानि पञ्च सर्वेण तुल्यं परिमर्दनीयम् ॥ जम्बीरनीरेण दिनं विमर्द्य संस्वेदयेल्लोहमये च पात्रे । वातोदरारण्यकृशानुमेघः शुण्ठीघृताभ्यां मधुना च वल्लः ॥ कम्पिल्लकमधुयुक्तः स्नुक्प्रसमधुनाऽपि वा शिवामधुना । वातोदारिणां हितकृद् द्रवलघु सुस्निग्धभोजिनां सततम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयोश्चक्रधरे एव समावेशः करणीयः । अस्यैव प्रपञ्चभूतावेतौ । यद्यपि द्वित्रभावनासु स्थूलदृष्ट्या विशिष्ट प्रतिभाति परन्तु योगत्रयघटितभावनानामेकत्राऽनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति विशेषगुणोदयश्च भविष्यति । रसावतारीय पाठे कल्कस्य ताम्रपात्रकुहरलेपनेन वालुकासु पुटोऽस्ति इतरयोस्तु ताम्रपात्रे विन्यस्य सूतनिबन्धनमस्ति परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या तावन्मात्रस्यैव ताम्रसंयोगस्य सञ्जातत्वाद्विशेषविशेषाऽभावोऽस्ति । अतस्त्रयाणां मिलित्वा एक एव रसः सम्पादनीय इति विज्ञेषु विज्ञप्तिः । अनेन छात्राणां विशेषोपकारो भविष्यति । चक्रधरे

चक्रस्याधिक्यन्तु गुणवृद्धावेव पर्यवस्यति इति सर्वं समञ्जसम् ।

१९३—चक्रबद्धरस (२)में र का (वातारिरस)को दाखिल-करना

१९४—चक्रेश्वररस (२)के मूलपाठकेस्थानमें रसेन्द्रमङ्गलके अधोलिखित पाठको टिप्पणीसहित लेना ।

"शुल्वे सूतसमं कृत्वा खल्वे दत्त्वा दिनत्रयम् । नागपर्णीवलापार्थमेघनादपुनर्नवैः ॥ अभ्वमूत्रैर्गवां मूत्रैर्मर्दयेच्च ततः पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थितं प्राज्ञो जारयेद्रसमसूतकम् ॥ शुल्यचूर्णे रसे जीर्णे दमयन्ती पुनर्नवा । मेपश्रृङ्गीरसैर्घृष्टं रसःस्याद्व्रणरोपणः ॥ रसेन्द्रमं., व्रणाधिकारे ।

टि०—यो म , र स , र चि , र मि , भै मा , थ , वै चि , नि र , र क ल , र स्रु , र का , र म , र क्षो , र कौ , रसायनम , व रा , र म., वै क , पश्चदुष्टाधिकारे रौद्ररस नाम्ना "शुद्ध सूत सम गन्ध मर्घ यामचतुष्टयम् । नागवल्लीदलद्रावैर्मेघनादपुनर्नवा ॥ गामूत्रपिप्प लीयुतैर्मर्घ रुद्ध्वा पुटेच्छुध । क्लिदक्षौद्रे रसो रौद्रो शुष्मामाभोऽर्बुदं जयेत्॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र प्रमादात्ताम्र न सङ्गृहीतम् । केनाऽपि कारणेनाऽपगत वा तत्र शायने ताम्राऽभावे कुत्राऽपि कार्यकरणाऽक्षम स्यात् रसान्तरता तु नोद्भावयितु शक्या मूलग्रन्थैक्यात् । तस्मात्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव समुचित । र म मा , र र सु,ना वि एतेषु ग्रन्थेषु श्लीपदाधिकारे श्लीपदापहारीरसेतिनाम्ना र कौ , र क ल एतयोश्च श्लीपदेश्वर नाम्ना "शुल्वचूर्णसम सूत नागवल्लीदलाद्रवै । पाठापुनर्नवामेघनादगोमूत्रमयुनम् ॥ त्रिदिन मर्दयेत्खल्वे ततो गजपुटे पचेत् । भक्ष्य क्षौद्रेणसयुक्त गुञ्जैक श्लीपद जयेत् ॥" इत्यय योगोऽस्ति । बहुषु ग्रन्थेषु भावनाया बला न दृश्यते । रसावतारे भस्मसूतक नाम्ना " सूक्ष्मचूर्णन्तु शुल्वस्य सूततुल्य विमर्दयेत् । नागपर्णीवलापथ्या मेघ नादपुनर्नवा ॥ अभ्रमूत्रगवांमूत्रैर्मर्दयित्वा तत पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थित प्राज्ञो जायते भस्मसूतक ॥ गुञ्जाद्वय त्र्य वापि सेव्य मूलकवीजयुक्। विडङ्गसैन्धवाढ्य वा दशमूलेन वा तथा ॥ भस्मसूतकनामाऽय गल्मगण्डापचीस्तथा । ग्रन्थ्यर्बुद गण्डमाला क्षयेदाशु न सशय ॥ गोधूमयव मुद्गाश्च पथ्या शाका पयोलजा । रूक्ष सर्व हितश्च स्याद्गलगण्डार्ति नाशकृत् ॥" इत्यय योगो निहिताऽस्ति साऽस्मिन्नेव समावेशनीय स्वल्पान्तराऽयोग्यत्वात् । योगमहार्णवे व्रणरोपणनाम्ना "शुल्व सूत सम कृत्वा गन्ध मर्घ दिनत्रयम् । नागपर्णीवलापार्थ मेघनादपुनर्नवा ॥ मेषशृङ्गीरसैर्घृष्टो रस स्याद्व्रणरोपण ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । तस्य भावनायामविञ्चित्करो विशेषो दत्तो दृश्यते परन्तु तेन पाठान्तरता भवितुमयोग्या अनिर्गौरवाच्छन्नानां विभ्रमकरत्वाचेन्द्यानां पाठाना सौरम्यमत्रैवान्तर्भाव करणीय । भावनास्वपि श्रद्धा चेद्यत्राऽपि तदनु ष्ठाने क्षत्यभावोऽस्ति ।

१९५—चतुर्मुखरस (१) में आ.प्र , र पा , र क ल (ना) इनग्रन्थोंको टिप्पणीसहित दाखिलकरना ।

टि०—अत्र रससारेऽपि "त्रिकटुत्रुल्सीनागकेशरैश्चापु विमर्दयेत्" इत्यस्य स्थाने "त्रिकटुनिम्बार्द्रकपुष्पकर्कोटूष्यपार्श्वे ।" इतिपाठो दृश्यते तत्र कर्कोटकशब्देन वानरी ग्राह्या । कारमशब्देन काकमाची ग्राह्या । अन्यत्सर्वं समानम् । आ म , र क ल (ना) एतयोर्भावनायां त्रिफला तुलस्याद्यैतन्मात्रा दृश्यते । र म मा., ना वि एतयोर्विद्रध्यधिकारे विद्रधिहररस इति नाम्नाऽयमेव योग पठित परन्तु तत्र "त्रिकटु तुलसीमाक्षीरसैश्चापु विमर्दयेत् " इत्यर्ध एव त्रुटितमस्ति । "त्रिकटु त्रिफलामुस्ता चव्यचित्रकचूर्णितम् । सम मधुयुत लिह्यात्सर्वविद्रधिशान्तये" इत्यनुपाने च विशेषोऽस्ति । परन्त्वेनावता रसान्तरता, अत्रैव तस्याऽन्तर्भाव करणीय । विद्रध्यां दृष्टप्रत्ययेन तन्नामान्तर स्थापितमिति रहस्यम् ।

१९६—चन्द्रकलावटी (१) में र.मृ को दाखिलकरना.

१९७—चन्द्रकान्त (१) में वै चि (सूर्यकान्त)को दाखिल-करना ।

१९८—चन्द्रकान्त (२) में नि.र., व रा , र र. (सूर्यावर्त) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

१९९—चन्द्रप्रभा (४) में र मृ को दाखिलकरना ।

२००—चन्द्रशेखर (२)की टिप्पणीमें भै र (चन्द्रशेखर)को दाखिलकरना ।

२०१—चन्द्रोदय (१) के मूलपाठकेस्थानमें अधोलिखित-पाठको टिप्पणीसहित दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र पा., र क ल. (ना), र चो , रसायनम इनको देना ।

चन्द्रोदयः (मकरध्वजः) सिद्धायः

पलमानं रसं सम्यग्बहुसंस्कारसंस्कृतम् ।
तथा पलद्वयं गन्धं शुद्धं हेम द्विकार्षिकम् ॥
कैलासाऽचलसम्भूते सुदृढे च सुचिक्कणे ।
शोणप्रस्तरजे खल्वे सर्वं संस्थाप्य मिश्रयेत् ॥
मर्दयेत्तल्लतो वैद्यो यामानष्टौ निरन्तरम् ।
रक्तकार्पासपुष्पस्य श्वेताङ्कोठफलस्य च ॥
कुमार्याश्चरसैः सम्यग्भावयित्वा पृथक् पृथक् ।
स्थापयित्वा काचकूपीमध्ये सर्वं प्रयत्नतः ॥
रक्ताङ्कसालसरलखदिरधात्रीफलोद्भवा।
काष्ठेनाऽन्यतमेनैव नीरसेन प्रतापयेत् ॥
मृदुनाऽनलयोगेन प्राग्यामद्वितयं पचेत्।
पुनर्यामद्वयं पाच्यं मध्यतापेन वह्निना ॥
अग्निना प्रखरेणैव ततो यामद्वयं पचेत् ।
भूयो मन्दाग्निना पाच्यमवशिष्टद्वियामकम् ॥
स्वाङ्गशीतमथोद्धृत्य नवचूतदलोपमम् ।
मञ्जुरं लोहितं पिष्टं दाडिम्यकुसुमोपमम् ॥
ततोऽच्चतायगन्धेन द्विगुणेन विमर्दयेत् ।
भावयेत्पूर्वद्रव्यैः पाचयेच्च प्रयत्नतः ॥
एवं वारद्वयं कुर्यात्सम्यगौषधसिद्धये ।
सन्निपातं ज्वरं घोरं मन्दाग्निमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पक्तिशूलकम् ।
कासं श्वासञ्च यक्ष्माणं शूलं कुष्ठमशेषत. ॥
गलोत्थानञ्च वृद्धिञ्च तथातीसारमेव च ।
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजन्तथा ॥
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयमगन्दरम् ।
वायुं बहुविधं हन्ति ध्वजभङ्गं विदोषत. ॥

सेवनादस्य नश्यन्ति सर्वे रोगा न संशयः ।
करोत्यग्निं बलं वीर्यं वलीपलितनाशनः ॥
विधिवत्सेवितो ह्येष मुमूर्षुमपि जीवयेत् ।
स्वेच्छाचारविहारोऽपि न कदाचिद्विपद्यते ॥
मेधायुःकान्तिजननः कामोद्दीपनकृन्महान् ।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी स्त्रीषु चापि वृषायते ॥
सेवनादस्य सम्राजो गच्छन्ति प्रमदाशतम् ।
त्रैलोक्यसुखदं श्रीमदेष एव महौषधम् ॥
मृत्युञ्जयो यथाभ्यासान्मृत्युं जयति देहिनाम् ।
तथाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः ॥
स्वयं त्रैलोक्यनाथेन त्रैलोक्यहितमिच्छता ।
समर्पितोऽयं सिद्धेभ्यः करुणार्द्रेण वै यतः ॥
अतोऽयं भुवने ख्यातः श्रीसिद्धमकरध्वजः ।
भास्वान्यथा तमो हन्ति केसरीकरिणं यथा ॥
तुलासङ्गं यथावह्निस्तथा रोगानसौ हरेत् ॥

आ वि , र त रसायनाधिकारे ।

टि०—वृ यो त , रसायनम , यो म , र मृ , एषुमन्येषु सिद्धलक्ष्मीश्वरनाम्ना "अष्टाशाष्टमचपले शिखिमूषिकाया मजार्य षड्गुणबलि क्रमशोऽधिकञ्च । ऊर्ध्वं पयोऽग्निमधरे विनिधायधीरा सिद्धिं समस्त करणे स्वकरे कुरुध्वम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । योगमहार्णवे च "हरोष्य पिण्डीं कृतजातदोष दानाशगन्धैरुपलब्धवीय । श्रीसिद्धलक्ष्मीसुविलासनामा पीयूषपिण्डोदरसम्प्रयुक्तः ॥" इति पद्येन गन्धकस्य शतगुणितजारणमपि विहितम् । सुधापिण्ड इत्यपि नाम स्थापितम् परन्त्वय चन्द्रोदयादभिन्न एव केवल पारदसंस्कारविशेष सूचित इत्यापातनो विशेष प्रतीयते परन्तु पारदसंस्कारे समागमनाभास्ति रसान्तरताबोधक इति सुधीभिर्विभावनीयम् ॥

२०१ —चन्द्रोदय (७)को हटादेना वह मकरध्वज (२)की टिप्पणीमें गयाहै ।

२०३—वटिकादिमण्डूरमें आ नि. (चपलामण्डूर), वृ मा. (मण्डूरवटिका)को दाखिलकरना ।

२०४—चातुर्थिकनिवारणमें र पा (चातुर्थिकगजाङ्कुश)को दाखिलकरना और तालकेश्वर (११)की टिप्पणीमें लेजाना ।

२०५—चातुर्थिकारिरस (४)में र चो को दाखिलकरना ।

२०६—चातुर्थिकारि (७)में ना वि को दाखिलकरना ।

२०७—चित्रनागान्तकमें र र स , र र.कौ (श्विन्नारि) को दाखिलकरना ।

२०८—चिन्तामणितैलकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र चो कोदेना ।

"टि०—रसकामधेनौ राजवल्लभतैलनाम्ना—

"मूलग धकलोद्वानि दन्तीबीजानि टङ्कणम् ।
वारुण्येरण्डबीजानि राजवृक्षाऽभयात्रिवृत् ॥
पलाशबीजमेकन्तु जैपाल तत्सम भवेत् ।
स्नुहीक्षीरेण सम्पिष्य भावयेत्त्रिदिनञ्च तत् ॥
नारिकेलफले क्षिप्त्वा महागादातपे स्थितम् ।
ततस्तैलन्तु जायेत गृहीत्वा नाभिमण्डले ॥
अणुमात्रप्रलेपेन दशवारान्विरेचयेत् ।
तत शीतोदकेनैव शीघ्र प्रक्षालयेद्बुध ॥
ग ग्रात्र भाजयेदम्लमभ्यङ्गञ्च विवर्जयेत् ।
गुन्धिकाऽऽघ्राणमात्रेण सप्तवारान्विरेचयेत् ॥
एतत्तैलेन पथ्यादिफल युक्तिविभावितम् ।
निष्पीड्य हस्ते विधृत विरेचनकर परम् ॥

इति पाठो निहितोऽस्ति । इद तैल चिन्तामणितैलेन समान वर्तते । तैलोपादानद्रव्येषु वारुण्येरण्डराजवृक्षपलाशबीजान्यधिकानि सन्ति । भावनायाञ्चाऽस्मिन् स्नुहीक्षीर दृश्यते, अत उभयोर्योगयोर्द्रव्याणां भावनानाञ्च मिश्रण कृत्वा तैल निष्पाद्येत चेत्तर्हि गुणाधिक्य भविष्यति । अस्मिन्तैले गुन्धिकाघ्राणमात्रेति पाठो दृश्यते तत्र तैलनिष्कासना दुर्वारितस्य कल्कस्य गुटिकां विधाय तदाऽऽघ्राणेन विरेचनानि भविष्यन्तीति निर्धार्यम् ।"

२०९—चिन्तामणिरस (१०) को इच्छाभेदी (६) में लेजाना ।

२१०—चिन्तामणिरस (१३) में र.पा को दाखिलकरना ।

२११—चिन्तामणिरस (१७) में र मृ को दाखिलकरना ।

२१२—चिन्तामणि (२२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"भैषज्यरत्नावल्या चूलिकावटीति नाम्नोदराऽधिकारे "रसो गन्धो विषं तालं त्रिकटु त्रिफला तथा । टङ्कणं समभागञ्च जयपालञ्चतुर्गुणम् ॥ भृङ्गराजरसेनाऽथ केशराजरसेन वा । मधुना घटिका कार्या गुञ्जाद्वयमिता शुभा ॥ चूलिकाख्या वटी ख्याता शोथोदरविनाशिनी । कामला पाण्डुरोगञ्च आमवातं हलीमकम् ॥ हन्याद्भगन्दरं कुष्ठ प्लीहानं गुल्ममेव च ।" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव सुकरः ।"

२१३—चैतन्योदयरसमें भै र को दाखिलकरना

२१४—चोडसिद्धरसको ज्वरकुलान्तकमें लेजाना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना ।

"रत्नाकरौषधयोगे कज्जलीस्थाने द्विभागो दरदो नियोजित । अत्र स्वैकैकभागो गन्धकपारदौ स्तः इत्यापाततो रसान्तरता प्रतीयते परन्तु गन्धकपारदसंयोगेनैव दरदस्य जायमानत्वादभिन्नताऽनयोरिति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

२१५—छर्दिसंहाररसमें यो र (जीरकादिरस), र च (सूत मत्स्ययोग) को दाखिलकरना ।

२१६—जयावटीमें आ प्र को दाखिलकरना ।

२१७—जातीफलादिवटी (३)में र पा को दाखिलकरना.

२१८—जीर्णज्वरारिरसमें ताम्रयोग (१०) को दाखिल करना ।

२१९—ज्वरकुलान्तकरसकी टिप्पणीमें अधोलिखितकोलेना ।

"रसगन्धौ विशुद्धौ द्वौ टङ्कणञ्च कटुत्रयम् । दन्तिबीजञ्च संयोज्य समाशेन भिषग्वरैः ॥ प्रदेयो

मापमात्रो वै ज्वरशूलार्दितस्य तु। सज्वरं याममात्रेण शूलं हन्ति कफोद्भवम्।" इति नारायणविलासे द्वितीयस्थाने पाठोऽस्ति तस्य पृथक्पाठानर्हत्वम्।"

२२०—ज्वरकेसरी (१)की टिप्पणीमें अधोलिखितको देना।

रत्नाकरौषधयोगे जयपालस्थाने टङ्कणं नियोज्य योगीति नाम्ना रसान्तरतया पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति। टङ्कणेऽधिकश्रद्धा चेदस्मिन्नेव तद्योगस्य सुकरत्वात्पाठान्तरताऽयोग्यत्वम्।"

२२१—ज्वरकेसरी (३)में वा. (शीताङ्कुश) को दाखिलकरना।

२२२—ज्वरगजसिंहमें र.पा.को दाखिलकरना।

२२३—ज्वरगजाङ्कुश (२)को निकालदेना वह सन्निपातगजाङ्कुशमें गयाहै।

२२४—ज्वरध्वान्तदिवाकररसको विषतापहरणमें दाखिल करना।

२२५—ज्वरभैरव (१) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना।

"र.सं., र.चं., एतयोः सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम दत्त्वा रेचनाऽधिकारेऽयमेव पाठः स्थापितः। र.सं., र.चं., भै.र., ध., र क यो., र.सु., नि.र., एषु ग्रन्थेषु ज्वरकेसरीति नाम्ना पाठो निहितोऽस्ति यथा (ज्वरकेसरी १) अत्र टङ्कणाभावोऽस्ति। अत्र टङ्कमित्यस्य स्थाने चैवेति पाठः प्रमादात्सञ्जात इति प्रतिभाति। भृङ्गभावनाऽनुष्ठानन्तु कृतमपि न दोषावहं पाठस्त्वेक एव करणीयः। निघण्टुरत्नाकरेऽजीर्णाऽधिकारे रामबाणनाम्ना "त्रिनिष्कं शुद्धजेपालं विषगन्धेशटङ्कणम्। भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा—" तिपाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः। भृङ्गरसेन प्रथमं भावनां प्रदायाऽन्ते द्रोणपुष्पीस्वरसेन भावनायां गुणवृद्धिरेव भविष्यति।"

२२६—ज्वरशूलहरमें र क.यो. (पर्पटीरस)को दाखिलकरके मूलपाठोंमेंसे हटादेना यह रतिताण्डवकी टिप्पणीमें गयाहै।

२२७—ज्वरहररस (७)में र बो को दाखिलकरना।

२२८—ज्वराङ्कुश (१) का नाम र र.स में चातुर्थिकहर रसहै।

२२९—ज्वराङ्कुश (४)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"र.मु, वै वि, रसायनसं, एषु ग्रन्थेषु शीताङ्कुशनाम्ना "तुल्यकाद्भागमेकञ्च तालकं द्विगुणन्तथा। तालात्त्रिगुणितः शाः सर्वमेकत्र कारयेत्॥ भावितं सूर्ययोगेन तोयेश्च पूर्णजैस्तथा। भावितं सप्तवाराणि गोलकं मूषमध्यतः। पुटेद्गजपुटेनाऽथ सिद्धो भवत्यसौ रसः॥"इत्यादि पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽत्रैव पाठेऽन्तर्भावः सुकरः। तालतुल्यकयोर्भागव्यत्यासस्त्वकिञ्चित्करः पुटदानेन तालाधिकभागस्योड्डीयमानत्वात्। भावनाविशेषस्यात्राऽप्यनुष्ठाने क्षत्यभावात्।

२३०—ज्वराङ्कुश (७) में वै चि, वा. (रामबाणरस)को दाखिलकरना।

२३१—ज्वराङ्कुश (८) को शीतभञ्जी (१) में दाखिलकरना।

२३२—ज्वराङ्कुश (९)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"रसगन्धटङ्कमसितं समांशकं परिमृद्यजातिफलसमभावितम्। सितयोपयुज्य नवरक्तिकोन्मितं मथितान्नमुग्विजयते विसूचिकाम्॥" इति पाठो रसचण्डांशौ रसरत्नसमुच्चये च निहितोऽस्ति। रसरत्नसमुच्चये "विमृद्य गन्धोपलटङ्कणे च सम्भाव्य वारानथ सप्तजात्याः। तोयैः फलानां०" इति विसूचीविध्वंसनाम्ना द्वितीयः पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्राऽनायासेनैव समाविशति॥"

२३३—ज्वराङ्कुश (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"रसेन्द्रकल्पद्रुमे "पारदं गन्धकं टङ्कं विषञ्च मरिचं समम्। चूर्णितं सूततुल्यञ्च बीजं नैकुम्भजं शुभम्॥ पिष्टं निम्बुद्रवैर्भाव्यं रक्तिकार्द्धं कफञ्जयेत्॥" इति हुताशननाम्ना योगो निहितोऽस्ति। योगचन्द्रिकायां ज्वरभेदीति नाम्ना "गन्धटङ्कणविषोषणदन्तीबीजकटुफलमुपेतरसार्धम्। मर्दमार्द्रकजलैरथ माषं तत्सितार्द्ररसयुग्ज्वरभेदी॥" इति पाठो निहितोऽस्ति। एतयोरत्राऽन्तर्भावः सुकरः एतदपेक्षया मूलयोगस्याऽधिककार्यकरत्वात्

२३४—ज्वराङ्कुश (१२) में र.पा., र.किं, र.बो, रसायनप. (ज्वराङ्कुश) अगस्त्य., व्यास. (मृतसञ्जीवनी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२३५—ज्वराङ्कुश (१७)को वैष्णवरसमें दाखिलकरना।

२३६—ज्वराङ्कुश (१८) में रसायनप. (गरुडभैरव) को दाखिलकरना।

२३७—ज्वराङ्कुश (१९)की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसगन्धकनेपालं समं खल्वे विमर्दयेत्। अभयात्वल्कलद्रावे दोलायन्त्रेण पाचयेत्॥ याममात्रं ततो नीत्वा गुञ्जामात्रप्रमाणकम्। सिताकणायुतं खादेद्विषमज्वरनाशनम्॥ सर्वज्वरं क्षणाद्धन्ति नाम्नाऽयं मार्गवीरसः॥" इति वैद्यचिन्तामणौ पाठोऽस्ति त-

स्य मूलमयमेव रसः । कटुकीनिष्कासनस्य प्रयोजनं न प्रतीयते । अश्वत्थवल्कलद्रावे स्वेदनेऽत्राऽप्यनुष्ठिते क्षत्यभावः । स्वेदनाऽनन्तरं भृङ्गरसेन वटिकाकरणे सर्वं सामञ्जस्यं भविष्यति । पृथक्पाठकल्पनन्तु सर्वथाऽन्याय्यमेव ।

२३८—ज्वराङ्कुश (२१)में र क यो.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना—

"द्वियामं मर्दयेद्गौरीपाषाणं कितवद्रवैः । जीरकेण समायुक्तं शीतिकाज्वरनाशनम् ॥" इति रत्नाकरौषधयोगे पाठोऽस्ति । चूर्णद्वयस्वेदनाऽनन्तरं कितवद्रवेण मर्दनं विधाय जीरकानुपानेन प्रयोगेकृते द्वयोरप्येकत्र समावेशः करणीयः । अनेन गुणवृद्धिरपि भविष्यति पाठह्रासश्च महत्फलम् ।

२३९—ज्वराङ्कुश (२२) में र का,को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"रसकामधेनौ शीतभञ्जीनाम्ना "चूर्णालसौम्यतुत्थानि तुल्यतुल्यार्द्धमर्धकम् । कारवल्याः सप्तपुटैः रसः स्याच्छीतभञ्जनः ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । यद्यपि शङ्खशुक्तिचूर्णस्य भेदो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः । द्वयोरपि चूर्णे प्रायशः समानधर्मत्वात् ।"

२४०—ज्वराङ्कुश (२५) को हटादेना वह रामबाण (५)की टिप्पणीमें गयाहै ।

२४१—ज्वरारिरस (२) में भै.र को दाखिलकरना ।

२४२—ज्वरारिरस (१०) की टीकामें "स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर ऊपरलगेहुएपारेको उतारकर उससे द्विगुण जमालगोटा और त्रिगुण शुद्धवच्छनाग डालकर" इसतरहका पाठ करना उचितहै ।

२४३—ज्वरारिरस (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना और नारसिंहरस (प्रथम)को निकालदेना ।

"वसवराजीय नारसिंहरसस्याऽनेनाऽक्षरशः समताऽस्ति केवलं ज्वरारौ कुमारिरसेनभावनास्ति नारसिंहेऽर्कमूलत्वक्कषायस्य भावनाऽस्तीति विशेषो दृश्यते परन्तु स अकिञ्चित्करोऽस्ति. द्वयोरपि भावनयोरेकत्र समावेशेन गुणवृद्धिरेव भविष्यति पाठद्वयभ्रमो निरस्तो भविष्यतीति महत्फलम् ।

२४४—ज्वरारिरस (१२) में वै र. (रामबाण), र.सि. (लीलावतीवटी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

तवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

२४५—ताम्रपर्पटी (२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"र.सु, सु.प्र., र को., र का , व.रा , र.क.यो एषु ग्रन्थेषु ज्वराऽधिकारे विजयपर्पटी नाम्नैको रसोऽस्ति तत्र चतुर्भागविषनियुक्तिः कदलीदलपातनश्चेति विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः, चतुर्भागविषक्षेपेणाऽपि क्षत्यभावात् । मात्रायामपि समानताऽस्ति पाठान्तरनिरसनञ्च महत्फलम् ।"

२४६—ताम्रपर्पटी (३)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

" रसरत्नमणिमालायां विस्फोटघ्नपर्पटीनाम्ना "मृतं ताम्रं मृतं सूतं गन्धकेन च मर्दयेत् । कुर्यात्पर्पटिकां शुभ्रां तां च खादेद्यथाबलम् ॥ त्रिफलाचूर्णसंयुक्तां विस्फोटार्तः सुखीभवेत् ॥" इतिपाठो निहितोऽस्ति स ताम्रपर्पट्या अभिन्न एव । सर्वत्र सूतयोगेषु मृतश्चेन्नियुज्येत तर्हि शतगुणाऽऽधिक्यमिति वारंवारं सूचितमस्माभिः । अनुपाने त्रिफलाचूर्णप्रयोगस्तु योगस्य स्वतन्त्रतामापादयितुमशक्य एव॥

२४७—ताम्रपिष्टिका (२)के मूलपाठके स्थानमें अधोलिखितपाठको लेना ।

"विशुद्धं तुल्यताम्रञ्च रसं गन्धं समांशकम् । शतावरीरसैर्मर्द्यं कटुतैले विपाचितम् । मूत्रकृच्छ्र जयत्येष रसेन्द्रः शर्करान्वितः । कुण्डलीनीरमधुयुक् पिप्पलीक्षौद्रयुक्तया ॥ यासपाषाणभित्पथ्या गोक्षुरात्त्यथैः कृतः । क्वाथः समाक्षिको हन्ति कृच्छ्रदाहरुजान्वितम् ॥ रसावतारे

२४८—ताम्रयोग (२१)को हटादेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें गयाहै ।

२४९ताम्रयोग (९)में र सु. (सूर्यप्रभ)को दाखिलकरना ।

२५०—ताम्रयोग (१०)की टिप्पणीमें "यो म , रसेन्द्रमं. एतयोर्बालरोगाऽधिकारे बालरोगहर इति नाम्ना पठितः" इसको दाखिलकरना ।

२५१ताम्रयोग (१९)को हटादेना वह सूर्यप्रभाताम्रेश्वरमें गयाहै ।

२५२—ताम्ररसायन (१)में च द को दाखिलकरना और टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"रसकामधेनौ रसायनसङ्ग्रहे च "गन्धकेन हतं ताम्रं गुञ्जार्द्धाऽर्द्धं प्रकल्पयेत् । रसोऽयं शुद्धमार्तण्डा गलत्कुष्ठविनाशनः ।" इत्याकारकः कुष्ठे योगोऽस्ति तस्याप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

२५३—ताम्रसुन्दररस (अधोलिखित) को रसवरकी टिप्पणीमें लेजाना—

"नैपालशुद्धपत्राणि सूचीवेध्यानि कारयेत् ।
निम्बारनालपञ्चाद्यैर्याममेकं पचेत्ततः ॥
उष्मारकैः पचेत्तानि सप्तवारान् सकाञ्जिकैः ।
एवं संशुद्धिमायान्ति जलेन क्षालयेत्ततः ॥

शुद्धानां ताम्रपत्राणां गृह्णीयात्पलपञ्चकम् ।
कर्षञ्च रसतो ग्राह्यं पक्वनिम्बुकवारिणि ॥
यावच्छुद्धत्वमायाति तावत्तच्च विमर्दयेत् ।
निम्बूकरससंयुक्तेन गन्धकद्विपलेन च ॥
पत्राणि तानि संलिप्य यन्त्रे सैकतके क्षिपेत् ।
सम्यक्पचेत्ततस्तानि वह्निना दिनपञ्चकम् ॥
स्वाङ्गशीतं विदित्वा च ततः शुल्वं समुद्धरेत् ।
श्लक्ष्णं तच्चूर्णयेत्खल्वे त्यजाक्षारेण सम्पुटेत् ॥
दिनत्रयं तथाऽऽज्येन दध्ना च सितया ततः ।
माक्षिकेण तु तच्छुल्वं शुद्धं स्यात्पुटयोगतः ॥
उत्क्लेदभ्रमदाहादि दोषैः सर्वैर्विवर्जितम् ।
शुल्वमात्रानुपानानि वक्ष्यन्तेऽतः समासतः ॥
वल्लमेकं ददीतास्य शूले वातजसम्भवे ।
सौवर्चलं कुबेराक्षं रामठं चाक्षसम्मितम् ॥
पिबेत्क्रमेण तदनु गव्येनात्यम्लकेन च ।
दद्याद्वल्लद्वयञ्चास्य शूलजे परिणामजे ॥
स्वर्जिकाटङ्कणेनाऽथ पञ्चैव लवणानि च ।
अश्वत्थशुक्तिकाक्षारामार्गापावकरामठम् ॥
एषां चूर्णन्तु शुक्लेन सप्तवाराश्च भावयेत् ।
कर्षमात्रं पिबेत्पश्चात्तच्चूर्णं रक्तभावनम् ॥
वल्लद्वयमितं शुल्वं रोगराजे प्रयोजयेत् ।
छिन्नासत्वस्य वल्लेन सितागव्याणकान्वितः ॥
अजाक्षीरेण तदनु पातव्यो बलवर्धनः ।
शुद्धं ताम्रं वल्लमात्रं हरीतक्याश्च तिन्दुकम् ॥
पिबेत्कोष्णेन तोयेन वातगुल्मादरेषु च ।
वल्लद्वयञ्च शुल्वस्य प्राणदं क्षौद्रसम्मितम् ॥
एकविंशदिनान्येव सेवयेद्ग्रहणीगदे ।
मधुना भक्षयेत्ताम्राद्विगुञ्जाद्रविकात्रयम् ॥
वासारसं पिबेत्पश्चात्कासश्वासापनुत्तये ।
वल्लत्रयञ्च शुल्वस्य त्रिफलामधुमिश्रितम् ॥
प्रातः सम्भक्षयेत्प्राणी ब्रह्मचर्यरतो भवेत् ।
एकादशमासेषु वलीपलितवर्जितः ॥
अष्टादशसु कुष्ठेषु ताम्रवल्लचतुष्टयम् ।
पिबेत्खदिरतोयेन वाहवारजसा समम् ॥
दशविंशपश्चैव शुल्वाद्यं यावच्चित्रकसंयुतम् ।
न युञ्ज्यात्कादिशं पथ्यं दुग्धं तैलञ्च राजिकाम् ॥
सततं भक्षयेत्कन्दं एरण्डं पल्वलञ्च वास्तुकम् ।
नानारोगेष्विति प्रोक्तो रसोऽयं ताम्रसुन्दरः ॥
दोषादिकं समीक्ष्यादौ शुल्वं दद्याच्च मात्रया ।
येषु रोगेषु ये योगा देयास्ते तदनन्तरम् ॥

र मृ, द्रा० । अत्रानिर्दिष्टानुपानानि विशेषतया निहितानि सन्ति परन्त्वनुपानानामनियतत्वात्तदर्थं स्वतन्त्रपाठस्थापनस्याऽयोग्यत्वाद्रसवर एवाऽस्यान्तर्भावः कृतोऽस्ति ।"

२५४—तारसुन्दरीवर्गमें रसायन५ को दाखिलकरना ।

२५५—तारामण्डूर (१) में ग नि, र मृ को दाखिल करना ।

२५६—तालकयोग (१)में र क, र का को दाखिलकरना और टिप्पणीमें "र क, र का एतयार्मिश्रपञ्चकनाम्नाऽयमेव योगो निहितोऽस्ति" इसको देना ।

२५७— तालकेश्वर (२) में र मृ को दाखिलकरना ।

२५८—तालकेश्वर (८)में आ प्र को दाखिलकरना ।

२५९—तालकेश्वर (१०) में र मृ को दाखिलकरना ।

२६०—तालकेश्वर (१५) को तालकेश्वर (२७) में लेजाना

२६१—तालकेश्वर (१७) में र मृ को दाखिलकरना ।

२६२—तालकेश्वर (२३)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"र, र स, र सु, र रको, र रा, र क ल, एषु चातुर्थिकनिवारणनाम्ना "त्रिभागं तालकं विदध्यादेकभागन्तु पारदम् । तदर्धं गन्धकञ्चैव तदर्धान्तु मनःशिला ॥ कारवल्लीदलरसैर्मर्दयेत्प्रहरत्रयम् । पाचिता वालुकायन्त्रे चातुर्थिकनिवारणः ॥ इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयोस्तालकप्रमाणे भावनायाञ्च विशेषता प्रतीयते परन्तु साऽकिञ्चित्करी विशेषता, त्रिभागं तालकं निक्षिप्य कारवल्लीधत्तूराभ्यामुभाभ्यामपि भावनां प्रदाय निष्पादिते रसे सर्वं सामञ्जस्यं भवेदित्येक एव पाठः स्थापनीयः ।"

२६३—तालकेश्वर (२७) में वि र भ, र मृ (धीवारि) को दाखिलकरना ।

२६४—तालकेश्वर (२८) में र मु (शुल्वतालेश्वर), र मं (विषमज्वर) र मृ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमेंलेना ।

"रसरत्नसमुच्चये शूलगजकेसरीति नाम्ना रसत रङ्गिण्याञ्च शूलेभकेसरीति नाम्ना "पलप्रमाणसूतं वह्निना द्विगुणेन च । शुद्धत्रिपलतालेन कृत्वा कज्जलिका ग्रहम् ॥ पलमानेन कर्तव्यं शुद्धताम्रस्य सम्पुटम् । पिधानपात्रसदृशस्तत्पात्रस्य धारतु । कज्जलीं सम्पुटस्यान्तर्निदध्यात्तदनन्तरम् ॥ अधस्ताद् परिदाय सम्पुटस्याऽऽविपेत्तु । आकण्ठं पटुपूरिता निधाय च निरुद्ध्य च॥ विशोष्य गजसञ्ज्ञेन पुटेन पुटयेत्ततः । पटचूर्णं विधायाऽथ क्षिपेद्व्यक्षण्डके पथ्याऽऽर्द्रकरसोपेतो वल्लमानो निषेवितः । रसः निःशेषशूलघ्नः स्याच्छूलगजकेसरी ॥' अयं योगो निहितोऽस्ति । यद्यपि द्रव्यप्रमाणे यत्किञ्चिद्भिदा दृश्यते परन्तु साऽकिञ्चित्करा, ताम्रमात्र स्याऽप्रविष्टत्वात् ।"

२६५—(२९) की टिप्पणीमें अधोलिखितको देना—

"रत्नाकरौपधयोगे रसपारिजाते च शीतभञ्जननाम्ना "तुत्थमेकं त्रयं ताले शिलाचूर्णं चतुर्गुणम्। कुमारीरससम्पिष्टं कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥ तुलसीरससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र वस्तुषु प्रमाणव्यत्यास इति विशेषः। भावनाद्वयस्य तु द्वयोरपि स्थाने दाने क्षत्यभावोऽस्ति।"

२६६—तालकेश्वर (३४) में र.सु (शीतारि) को दाखिल करना।

२६७—तालसिन्दूर (२) के मूलपाठके स्थानमें नीचेलिखे हुए पाठको रखना

"शुद्धं रसं निष्कशतं तदर्द्धं
शुद्धं बलिं कज्जलिकाञ्च कुर्यात्।
सौराष्ट्रिकागन्धकतुर्यभागा
देयाऽत्र तद्वद्धरितालभागम् ॥
सम्मर्द्य गाढं नवसादरञ्च
तालात्तृतीयांशयुतञ्च सर्वम्।
कौमारिकाम्भःपरिमर्दितं वा
तत्काकमाचीस्वरसेन तद्वत् ॥
सार्द्रञ्च तत्काचघटे निधाय
दृढं पचेद्वै सिकताख्ययन्त्रे।
सपञ्च सप्तप्रहरांश्च यावद्
देवं पचेच्चेय इह त्रियामम् ॥
तस्सिद्धसूतं विनिगृह्य युक्त्या
सर्वेषु योगेषु नियोजनीयम् ॥"

इति योगमहार्णवे पाठोऽस्ति। रत्नाकरौपधयोगे रसगलिहरितालटङ्कणनरसारनागभस्मानि समप्रमाणानि गृहीत्वा कज्जलिकां विधाय रयिमूलाऽऽर्द्रकाग्निमूललशुनत्रिफलानागवल्लीरसे प्रत्येकं पञ्चपञ्च भावनाः प्रदाय काचकूप्यां भृत्वा पञ्चपञ्चवासरैश्च पाको विहितः। तस्य रसस्याऽयमेवरसो मूलम्। रत्नाकरौपधयोगकर्ता सर्वत्रैवेत्थमेव मूलपाठेषु कपोलकल्पितां युक्तिं समाहृत्य निष्प्रयोजनां सहयां धर्षयति।'

२६८—तालसिन्दूर (४) में र.श को दाखिलकरना इसमें शीतारि नामहै।

२६९—तालसिन्दूर (७) में र क यो को दाखिलकरना।

२७०—तालसिन्दूर (८)की भापामें हरितालका प्रमाण छूट गयाहै।

२७१—त्रिकत्रादिलेह (२) के स्थानमें नीचेलिखापाठ टिप्पणीसहित रखना—

"व्योषं त्रिवृत्तिक्तकरोहिणी च सायारजस्का त्रिफलारसेन। पीतं कफार्थं शमयेत् शार्कं मूत्रेण गव्येन हरीतकी वा॥"

च स, मे सं, अ हृ, र चि रसायनम, र का, ग नि ना वि शोथाधिकारे।

टि०—श्लेष्महिताया त्रिफलास्थाने त्रिवृता दृश्यते। नारायणविलासे केन कारणेन त्रिवृत्त्रिफलामिति न ज्ञायते। सायोरजस्केति विशेषणन्तु त्रिफल्या निबद्ध साऽपि मूलद्रव्ये निवेशिता। त्रिफल्या विमृष्ट रसे नेति प्रत्यासत्तिन्यायेन त्रिफल्या साक साद्धन त्रिफलारसेन पीतमिति स्वतन्त्रतया निहितम्। प्राचीनग्रंथेषु लिपि प्रायो युक्तया भवति, अतस्तदीयोक्ति समीचीना प्रतिभाति योगरत्नमेवाऽस्ति स्वतन्त्रता भ्रमो न करणीय इति बोध्यम्।

२७२—त्रिगुणाख्यरसमें रसायनस को दाखिलकरना।

२७३—त्रिदोपनीहारविनाशसूर्यकी टिप्पणीमें अधोलिखितपाठको दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र सु दोबार छपगया है सो ठीककरना।

"रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवायाहिरसैर्विमर्द्य
पक्वार्कपत्रोत्थरसे प्रयत्ना-
द्विपाचयेदष्टगुणे च पश्चात् ॥
रसार्धभागेन विषञ्च दत्त्वा
विपाचयेद्वह्निजले क्षयञ्च।
शीतारिसञ्ज्ञाऽस्य रसस्य
वल्लं तदर्द्धमर्धं यदि चार्द्रकेण ॥
मरीचचूर्णेन घृतेन वापि
सेवेत मासं सघृतञ्च पथ्यम् ॥

इति रसामृते पाठो दृश्यते सोऽस्यैव प्रपञ्चः प्रतिभाति। भावनानान्तु ग्रहणमवश्यमेव करणीयम् ॥"

२७४—त्रिदोषशमन में त्रिशक्तिकाञ्जनरसको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"र सं, र र, र चं, र चि, र सु, र को, ध, र का (मृतहेमयोग) र सं क, रसायनसं, र प्र (स्वल्पमृगाङ्करसः) इति नामभ्यां "रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं भजेत्। दोषे युञ्जाऽनुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः॥ इति योगा गन्धकरहितो निहितोऽस्ति परन्तु गन्धकयोगेन विशेषकार्यकरत्वात्तुरुक्षानेन च गन्धकस्योद्दीयमानत्वादेक एव योगो न्याय्यः नानायोगकल्पने छात्रबुद्धिव्याकुलीभावात्।

२७५—त्रिनेत्ररस (३) में आ ॥ को दाखिलकरना।

२७६—त्रिनयन (५) में अश्मरीहर (१) को दाखिल करना और ग्रन्थोंमें र क को दाखिलकरना।

२७७—त्रिपुरभैरवरसकी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको देना।

"रसरत्नदीपिकायां रसस्य द्वौ भागौ स्वर्णस्य चैकस्तया. पिष्ट्यास्ताम्रपत्राणां लेपः, ऊर्ध्वाऽधः गन्धकदानानन्तरं मत्स्याक्षिनीरेण सेचनम्। अनुपाने च मृगश्टङ्गचूर्णस्य योग इति विशेषः।"

२७८—त्रिफलागुग्गुलुके नाममें त्रिगुणगुग्गुलु और व्याधिशार्दूलगुग्गुलुको दबारमें लेजाना।

२७९—त्रिफलामण्डूर (२) में ग नि (मण्डूरयोग), वृ मा, चि मा इन ग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२८०—त्रिफलामण्डूर (३)में कलायवटीको अनुपानमें लियाहै सो अलग कलायवटीमें दाखिलकरना।

२८१—त्रिफलारसायन (३) में वृ मा को दाखिलकरना।

२८२—त्रिफलालोह (२)में सु स, हितो, ग नि, र मा. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "सुश्रुते पाण्ड्वधिकारे गोमूत्रानुपानमस्ति" इसको टिप्पणीमें देना।

२८३—त्रिफलालोह (५) को हटादेना वह श्रीपदारिलोहमें गयाहै।

२८४—त्रिफलालोह (९) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको लेना—

"व्योपं शतावरी त्रीणि फलानि द्वे बले तथा। सर्वामयहरो योग सेव्यो लोहरजोन्वित॥ एतद्यक्ष.क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रुजम्॥" इति योगमहार्णवे मुखरोगाधिकारे सप्तामृतलोहनाम्ना योऽयं पाठः सोऽयमेव। र र, र प्र, भै.र, टो, एपु राजयक्ष्मणि विन्ध्यवासियोगनाम्नैको योगो पठितोऽस्ति सोऽक्षरशोऽत्रान्तर्भवति। फलभागे "एप यक्ष क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रुजम्। राजयक्ष्माणमत्युग्रं बाहुस्तम्भार्दितं तथा॥" इति विशेपोऽस्ति सोऽप्यत्रैव निवेशनीयः।

२८५—त्रिफलालोह (१२)में चि सा, ग नि को दाखिल करना।

२८६—त्रिभुवनकीर्तिमें र पा को दाखिलकरना।

२८७—त्रिमूर्तिरस (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसरत्नाकरेऽयमेवपाठो गौडरसनाम्ना निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः भावनाविशेपे प्रीतिश्चेदत्रैव तदनुष्ठाने क्षत्यभाव.।

२८८—त्रैलोक्यचिन्तामणि (४) में र पा, र को, रसायनप इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२८९—त्रैलोक्यचूडामणिमें र मृ (त्रैलोक्यरक्षामणि) को दाखिलकरना।

२९०—त्रैलोक्यडम्बररस (२) में र मृ को दाखिलकरना।

२९१ त्र्यूषणादिलोहम् (१) में भै र को दाखिलकरना और "भैषज्यरत्नावल्यां त्रिफलास्थाने विजया दृश्यते, अभ्रकस्याऽभाव" इसको टिप्पणीमें देना।

२९२ त्र्यूषणादिलोह (२) में भै र.को दाखिलकरना।

२९३—त्रिपुरगदी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना

"रसामृते त्रिपुरिकागनाम्ना "दरदो जयपालश्च शुद्धौ संयोजितौ समौ। त्रिकटुत्रिफलाम्भोभि. सूर्यरश्मिविभावित॥ यवद्वयमिता दत्तस्तथा त्रिगुडमिश्रित.। हन्ति गुल्मोदरप्लीहशोफपाण्ड्वामयक्रिमीन्॥ कुष्ठाऽऽनाहज्वरश्वासविस्फोटगुदजानपि॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव करणीयः।

२९४—धातुज्वराङ्कुशमें र पा को दाखिलकरना।

२९५—धातुपञ्चामृत (१) में र को को दाखिलकरना।

२९६—धात्रीलोह (१)में ग नि (धात्र्याद्यवलेह), भा प्र, चि सा, र प्र, वृ मा, च द, नि र, इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "वृन्दमाधवे धात्रीस्थाने त्रिफलानियोजिता" इसको टिप्पणीमें देना।

२९७—धात्रीलोह (३)में वृ.मा, ग नि को दाखिलकरना।

२९८—नवज्वराङ्कुशमें र.म, वै.क, र चि, र क, व रा, र क यो (शीतभञ्जी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२९९—नवज्वरारण्यकृशानुमेघको हटादेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें गयाहै।

३००—नवायसलोह (१) में चि सा, यो.चि, चि क, र.मृ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना। और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"नवायसाख्यः क्रियया प्रयुक्त पाण्ड्वामयार्शोग्रहणीविकारान्। नानाविधं स्थावरजङ्गमाख्यं क्षिणोति गुल्मानुदराणि शोथम्।" इति पाठो लोहपद्धतौ हेमनवकमिति नाम्ना निहितोऽस्ति तत्र लोहस्थाने हेम्नो योग इत्येनविशेपः।"

३०१—नवायस(३) में भै र. र स र.च, र.सु, र क, ध (क्षयकेशरी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"भैषज्यरत्नावल्यां "नवभागान्वितं लोहं समं सिन्दूरसन्निभ-" मिति येन केनाऽपि प्रकारेण भ्रष्टं पाठमासाद्य समं सिन्दूरसन्निभमित्यस्य कोऽर्थो भवेदिति सन्दिह्य रससिन्दूरं तदर्धं प्रकल्प्य स्वतन्त्र. पाठ प्रकल्पित. तत्र प्रमाद एव मूलम्। ध, र सं, र चं., र सु, र क, एषु ग्रन्थेषु "नवभागोन्मितैस्तुल्यं लोहपारदसिन्दुर-" मिति पाठं प्रकल्प्य स्वाज्ञानं प्रकटीकृतमिति रसग्रन्थानां शोचनीयता, एवमेव बहुषु स्थानेषु स्वाऽज्ञानेन प्राचीनपाठा भ्रष्टीकृता. सन्ति। पुनरुक्तपाठे नवीनरसप्रकल्पने च पूर्वोक्तग्रन्थेषु क्षयकेसरीति नाम स्थापितम्। यथार्थतया अयसा नवभागयुक्ततया नवायसमित्येव नामस्थापितमतो नवायसतृतीये स्थापनीयम्।

३०२—नागन्द्रस (३)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"रसामृते ' नागचण्डारस.' इति नाम्ना
"नागेनार्द्धं पारदं मेलयित्वा

वह्नौ मन्दे तेन चूर्णेन चार्द्रम्।
दत्त्वा सूक्ष्मं सद्विषं त्र्यंशमस्मा-
च्छ्लक्ष्णीभूतं मारिचं चूर्णकञ्च॥
दद्यात्तस्माद्रक्तिकैकां प्रयत्ना-
द्युक्तां वैद्यो नागपत्रेण पुंसः।
हन्याद्रोगांश्लेष्मवातप्रभूतान्
कुर्याद्वह्नेः पाटवं देहसौख्यम्॥"

इति पाठो निहितोऽस्ति। तत्र मूलद्रव्येषु समानताऽस्ति केवलं भागेषु व्यत्यासः कृतोऽस्ति तस्याप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

३०३—नागार्जुनीवटी (४)को हटादेना वह भ्रमनाशिनी वटीमें गईहै।

३०४—नाराचरस (१)की टिप्पणीमें अधोलिखितको देना।

"रसचण्डांशौ षोडशगुणे गोमूत्रे पक्त्वा वटिकारूपं प्रणीयाऽग्निकुमार नाम स्थापितं तदकिञ्चित्करम्। तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भावः करणीयः। गोमूत्राऽनुपानेन दत्ते तदीयाऽभीष्टसिद्धिरपि सुसाधा भविष्यति पृथक्पाठकल्पने गौरवात्।"

३०५—नाराचरस (२)में र.को., (नाराच) रसायनम्, (ज्वराङ्कुश)को दाखिलकरना।

३०६—नाराचरस (६)में अधोलिखित टिप्पणीको ग्रन्थ सहित दाखिलकरना।

"रसपारिजाते कणाविश्वयोर्द्वौभागौ, जयपालस्य च दशभागा इति विशेषः।"

३०७—नाराचरस (९)में र.पा.को दाखिलकरना।

३०८—नाराचरस (१४)में यो.चि.को दाखिलकरना।

३०९—नीलकण्ठरसमें र.को.को दाखिलकरना।

पवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

३१०—पञ्चाम्रामृतमें र.चं., र.को. (सूतिकारोगनाशन)को दाखिलकरना।

३११—पञ्चवक्त्र (३)को मन्थानभैरव (१)में दाखिल करना।

३१२—पञ्चामृत (९)में चि.सा.को दाखिलकरके नीचे लिखेको टिप्पणीमें देना।

"चिकित्सासारे वातरक्तारिरस इति नाम। निघण्टुरत्नाकरे तु नामद्वयमपि स्थापितम् तत्तु प्रमाद एव।"

३१३—पथ्यादिलोह (१)में ना.वि.को दाखिलकरना।

३१४—पानीयभक्तवटी (१)में वै.क, रसचि को दाखिलकरना और 'त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफलाऽऽयूषणन्तथा" इसके स्थानमें "त्र्यूषणं त्रिफलामुस्तं त्रिवृता चित्रकन्तथा" ऐसा पाठकरना। भै.र., ध., वै क. रसचि. इनमें शूलान्तक नामसे आयाहै।

३१५—पित्तमुद्गरके पाठको रक्तपित्ताङ्कुशमें दाखिलकरना।

३१६—पित्तान्तक (१)में भै.र.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"यदाऽत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते। महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशकः॥" इति पाठो भैषज्यरत्नावल्यां परिशिष्टेऽधिकतया महापित्तान्तकेति नाम्ना दत्तः।

३१७—पित्तान्तक (२)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"र.सं, र.चं. एतयोर्द्वितीयस्थाने ध., र.र.स. एतयोश्च स्वतन्त्रतया रक्तपित्तान्तकनाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति तत्र ताम्रभस्म नाऽस्ति। यष्टीद्राक्षाऽमृताद्रवैश्च भावना प्रदत्ताऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः। "माषमात्रं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणमित्यर्धपद्यस्य तु समावेशोऽत्रैव करणीयः।

३१८—पीयूषसुन्दररसमें र.सु. (अमृतसुन्दरीवटी) को दाखिलकरना।

३१९—पुत्रवर्धमानरसमें र.र.स., र.को. (वर्धमानरस) र.र.कौ. (सन्तानवर्धमान) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

३२०—प्रमेहकेतुको हटादेना वह हरिशङ्कररस (२) में गया है।

३२१—बहुमूत्रान्तक (२)में भै.र.को दाखिलकरना।

३२२—बालरोगान्तककी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना।

"भैषज्यरत्नावल्यामस्मिन्नेवप्रकरणे रामेश्वररस इति नाम्ना द्वितीयो योगो निहितः सोऽप्यस्माद्भिन्न एव।"

३२३—ब्रह्माण्डगुटिकाकीटिप्पणीमें अधोलिखितको देना.

"रसायनसं., र.र.द्री, बृ.यो.त., र.म.भा. एषु पुस्तकेषु हिरण्यगर्भगुटिकेतिनाम्ना "उत्पाट्य मूलं विषजं विदध्याद्गर्भेऽस्यसूतं कनकांशपिष्टम्। संवेष्टयेत्कोलभवेन तत्तु मांसेन पश्चाद्विपचेद्दियामम्॥धत्तूरयौजोद्भवतैलमध्ये सम्यक्कृतं याति सुरसस्थिताऽयम्। सम्भोगकाले दृढतां करोति धीर्यस्य दुग्धं भजतां नराणाम्॥" इति पाठो निहितोऽस्ति अत्र चतुर्थांश सुवर्णदानमात्रस्य विशेषः।"

३२४—भास्कररस (२)की टिप्पणीमें "रसकामधेनौ शूलगजकेसरी नाम्ना टङ्कणरहितोऽयमेव पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्ति।

३२५—महोदयरूत्ययसारमें र. को. (गुर्वोदय) को दाखिलकरना।

३२६—मानसुरणाद्यं लोहमें त्रिकत्रयादिलोह (३) को दाखिलकरना ।

३२७—मिहिरोदयरसमें भै. र. को दाखिलकरना ।

३२८—मृगाङ्करस (१)में कुमुदेश्वर (२) को दाखिल करना।

३२९—मृतसञ्जीवन (१०)को सन्धिवातारिकीटिप्पणीमें लेजाना ।

३३०—मृत्युञ्जय (१९) को टिप्पणीसहित सुवर्णयोग (१०) में दाखिलकरना ।

अन्तःस्थीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

३३१—यक्ष्महर को हटादेना यह राजयक्ष्मक्षयकेसरीमें गयाहै

३३२—रत्नेश्वर (१) में भै र. को दाखिलकरना।

३३३—रसपर्पटी (१) में गन्धकपर्पटीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना ।

३३४—रसपिष्टिकामें रसेन्द्रम (हेमपिष्टिका) को दाखिलकरना ।

३३५—रसवरकीटिप्पणीमें उदयभास्कर (१०), ताम्रपर्पटी ३, ताम्रयोग (७), ताम्रयोग (१३), ताम्रेन्द्ररस, त्रिनेत्र (३), त्रिनेत्र (७), इनरसोंका अन्तर्भाव होगयाहै इनको मूलपाठोंमेंसे हटादेना और अधोलिखितको रसवरकी टिप्पणीमें दाखिलकरना–

"र.चि, यो र.,र.लि., र.चं., ध., वै.चि.,चि सा ,र र., नि र., र.कौ. चि क्र., भै.र., र.सं , र त , रसायनसं. र.क., च.दा , र. (मा.), भै सा र सु , र का, यो म , एषु पुस्तकेषु हृदयार्णव नाम्ना "शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं ताम्रं तयोः समम । मर्दयेत्त्रिफलाक्वाथैः काकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ चणमात्रां वटीं खादेद्रसोऽयं हृदयार्णवः। काकमाचीफलं कर्षं त्रिफलापलसंयुतम्॥ द्वात्रिंशत्तोलकं तोयं क्वाथमष्टावशेषितम्। अनुपानं पिबेच्चात्र हृद्रोगे च कफोत्थिते ॥" इति पाठोनिहितोऽस्ति "

३३६—रससिन्दूर (१) में र. सा. (सर्वाङ्गसुन्दर) को दाखिलकरना और र.चि, र.का., र.मृ., इनग्रन्थोंकोभी दाखिलकरना ।

३३७—रसेश्वररस (४) मे प्रारम्भका "रसोपरसलोहानि धान्याभ्र विशेषत ," यह आधाश्लोक रहगयाहै उसे जोड़ना और र.का. (सर्वेश्वर) को दाखिलकरना ।

३३८—लीलाविलास (२)में चन्द्रकान्त (२)को दाखिलकरना केवल भावनामें अन्तरहै ।

३३९—लोकनाथ (१२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना ।

"चि.क्र , नि.र., वै.चि. र.कौ., एषु पुस्तकेषु हिरण्यगर्भ नाम्ना "निष्कद्वयं पारदभस्मनस्तु प्रगृह्य हेम्नश्च तदर्धभागम् । निष्कद्वयं शोधितगन्धकस्य हुताशनद्रावयुतं समस्तम् ॥ सम्मर्द्य संशोष्य पुनर्द्वियाममन्ते वराटीः खलु तेन पूर्याः । तन्मृन्मये रोध्य सुपुष्पभाण्डे तद्वै गजाख्ये सुपुटे पचेच ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति। तस्याऽत्रैवान्तर्भावः समुचितः तदपेक्षयाऽत्र सुवर्णस्य द्वैगुण्यं दृश्यते परन्त्वेतद्द्वैगुण्यं लोकनाथे नियोजनेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति प्रत्युत गुणवृद्धिरेव भविष्यति ।"

३४०—लोहपञ्चककी टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना–

"गदनिग्रहे त्रिकटुलोहयोगेति नाम्ना " त्रिकटु लोहचूर्णञ्च द्वयमेतत्समांशकम् । पीतमुष्णाम्भसा हन्ति शोफरोगमसंशयम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति विशेषाऽभावादेतस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।"

३४१—वह्निरस (२)में रसराजरस (द्वितीय) और र.मृ. (जलोदरहर)को दाखिलकरना ।

३४२—वातगजाङ्कुश (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने यत्किञ्चिद्भेदं कृत्वा कफवातारिनाम्ना "मृतं सूतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् ।तुर्यांशं मर्दयेत्खल्वे धातारेराद्रकोद्भवैः ॥ भृङ्गजैः काकमाच्युत्थैर्गिरिकन्याद्रवैर्दिनम् । मर्दितं भाण्डगं रुद्ध्वा पचेन्मन्दाग्निना दिनम् ॥ व्याघ्रिगन्धकविषं सूरणाऽभयटङ्कणम् । समांशं चूर्णितं मिश्रं तुल्यांशं पूर्वपाचितम् ॥ त्रिदिनं मर्दयेद्द्रावैर्मुण्डीनिर्गुण्डिभृङ्गजैः । अष्टगुञ्जामितं खादेत्कफवातनिरन्तनम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । तत्र विशेषाऽभावादस्मिन्नेवान्तर्भवति ।

३४३—वातगजाङ्कुश (३)को हटादेना यह स्वर्णवातारिकी टिप्पणीमें गयाहै ।

३४४—वानराक्षस (२)में व्याधा को दाखिलकरना ।

३४५—विरजतापहरणरसमें यो.च (त्रिलोक्यडम्बर) को दाखिलकरना ।

ऊष्मरसोंकी विशेषसूचनाएं

३४६—शतावरीमोदक में भै र.को दाखिलकरना ।

३४७—शृङ्गाराभ्ररसमें वै चि.को दाखिलकरना इसमें त्रिगुणाख्यनामहै ।

३४८—सन्निपातसूर्यमें र स (सन्निपातकालानल) को दाखिलकरना।

३४९—सर्वतोभद्रवटीमें भै र को दाखिलकरना।

३५०—सुवर्णयोग (१०) में र र को, र र स को दाखिलकरना और 'एतयोर्गाय यमिमन्त्रणस्थाने खदिरभावना प्रदाय योगो निष्पादित" इसको टिप्पणीमें देना।

३५१—सूतभस्मयोग (१६) में रसायनस, र का, र क ल (हृद्रोगहर) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

३५२—स्वाल्लियारिमें भै र को दाखिलकरना।

आपाततो विभिन्नरसानामेकीकरणदिग्दर्शनम्

(१)—तृतीयाऽग्निकुमाररसे द्वितीयाग्निकुमाररस्य द्वितीयविजयरसस्य चान्तर्भाव करणीय । द्वयोरपि तदपेक्षया विषशिग्रुमूलयोरभाव । द्वितीयाऽग्निकुमारे द्विक्षारस्थाने त्रिकटुर्नियोजितो भावनायाञ्च शिग्रुर्नास्ति । विजयरसे भावनासमानता दृश्यते । अतस्तृतीयाऽग्निकुमारे त्रिकटोर्नियोग कृत्वा एक एव पाठ सम्पादनीय ।

(२)—४२ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसे ११, १८, २२, २३, २४, ३८, ४३, ४४, ४५ ४६ सङ्ख्याकाग्निकुमार रसाना, अमृतपालरसस्य, प्रथमचण्डेश्वररस्य शूलेभसिंहिनीगुटिकायाश्चान्तर्भाव करणीय । ४२ सङ्ख्याकाग्निकुमारापेक्षया एकादशतमेऽग्निकुमारे मरिचाऽभाव, द्रव्यप्रमाणे ताम्रपारदगन्धकाऽमृताना ८, १२, २० (अनुपातेन २-३-५) भागा भावनाया निम्बुकभृङ्गार्द्रकाऽमृता गृहीता सन्ति पाकस्य चाऽभावोऽस्ति । अष्टादशसङ्ख्याकाग्निकुमारे ताम्राऽभाव, पारदगन्धकयो समभागयो कज्जलीं कृत्वा गन्धकचतुर्थांशं विष नियोज्य पाकानन्तर अर्धाऽर्धभागे विषमरिचे मिश्रयित्वा योगो निष्पादित । द्वाविंशतितमेऽग्निकुमारे पारदगन्धकविषताम्रसमना प्रमाणे समानता मरिचाऽभावश्च दृश्यते, पाकानन्तर रसार्धममृत निक्षिप्य चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुतेनाऽऽर्द्रकरसेन भावना प्रदत्ताऽस्ति । त्रयोविंशेऽग्निकुमारे ताम्राऽभावः पारदगन्धकमरिचाना समानता दृश्यते । पाकात्प्राक् विष पारदाच्चतुर्थांश पाकानन्तरञ्चाष्टमांशं नियोजितम् । चतुर्विंशतितमे त्रिकटुत्रिफलयोराधिक्य, प्रमाणे च सर्वद्रव्याणा समानता, निर्गुण्डयग्निदमनीवह्निव्याघ्रीद्वयपाताल तिन्दुकीन्द्रवारुणीना भावना विशेषतया दृश्यन्ते । अष्टत्रिंशत्तमाके तीक्ष्णमधिकं, मरिचाऽभाव, पाकानन्तरञ्च विषमपि न नियोजितम् । त्रिचत्वारिंशत्तमे पारदगन्धकविषताम्राणा प्रमाणे समानता, पाकानन्तर पारदसम मरिचं चतुर्थांशश्च विष नियोज्य योगो निष्पादित । पञ्चचत्वारिंशत्तमे ताम्रमरिचयोरभाव, तालकमधिकं दृश्यते । प्रमाणे च पारदगन्धकतालाना १-२-३ भागा, पाकानन्तरञ्च षोडशांश विषं नियोजितमस्ति । षट्चत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमारे तालकमधिकम्, मरिचाऽभाव, प्रमाणे सर्वसमता, भावनायाञ्चार्कमधिकतया दृश्यते । अमृतपालरसे मरिचाऽभाव समभागपारदगन्धकविषाणा कज्जलीं ताम्रपात्रेण पिधाय हण्डिकाया पाक कृतोऽस्ति । प्रथमचण्डेश्वररसे रसगन्धकविषताम्राणि समभागानि गृहीत्वाऽऽर्द्रकनिर्गुण्डयो प्रतिससमावना प्रदाय योगो निष्पादित । अत्र कूपिकापाकराहित्य मरिचाभावश्च । शूलेभसिंहिनीगुटिकाया ताम्राऽभाव, एकैकभागयो पिप्पलीनागरयोराधिक्य, प्रमाणञ्च पारद ½, गन्धक ¼, विष १ मरिचानि ३ इति क्रमोऽस्ति । भावनायामपि आर्द्रकैरण्डौ गृहीतौ ।

उपरिनिर्दिष्टेषु पाठेषु कुत्रचित् तीक्ष्णस्य कुत्रचिद्धरितालस्य पिप्पलीनागर त्रिफलाना वा नियोगो मूलद्रव्येषु दृश्यते । भावनायाञ्च निम्बुकभृङ्गार्द्रकाऽमृतानिर्गुण्डयग्निदमनीचित्रकव्याघ्रीद्वयपातालतिन्दुकीन्द्रवारुण्येरण्डार्का चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुक्ताऽऽर्द्रकरसश्चाऽधिकतया दृश्यते । एषा सर्वेषाम नुष्ठान द्विचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमारे कृत्वैक एव योग सम्पादनीय । एतेन क्षत्यभावो पाठेषु महती लघुता च भविष्यति ।

(३) चतुर्दशाऽग्निकुमारस्याऽग्निप्रदरसेऽन्तर्भाव करणीय । अग्निकुमारे पाकानन्तरमेव षडंश विष निक्षिप्तं त्रिकटुस्थाने मरिचानि नियोजितानि हसराजभावनायाश्चाधिक्य दृश्यते । अग्निप्रदरसे हसराजभावनानुष्ठानेनैव क्षत्यभावो भविष्यति।

(४) विंशतिचत्वारिंशत्सङ्ख्याकाग्निकुमारयोर्नवमवडवानलरसस्य चान्तर्भाव क्षुधासागररसे करणीय । यतो विंशतितमेऽग्निकुमारे क्षुधासागराऽपेक्षया विषराहित्य, गन्धकटङ्कणौ द्विद्विभागौ त्रिक्षारस्थाने द्विक्षारग्रहण कृतमस्ति, भावनायाञ्चाऽऽर्द्रकं गृहीतम्। चत्वारिंशत्तमे ताम्राऽधिक्य, त्रिफलापिप्पल्योरभाव, विषस्यैकभागो भावनायाञ्चार्द्रकं गृहीतमस्ति। वडवानले विषाभावो भावनायाञ्च निर्गुण्डीगृहीताऽस्ति । क्षुधासागररसेऽपि ताम्रं

नियोज्याऽऽर्द्रकनिर्गुण्ड्योर्भावनादाने क्षत्यभावोऽस्ति पाठह्रासश्च महत्फलम् ।

(५)—सप्तचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमाररसे ४,५,७,६, २५ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसानां शृङ्खलाख्यरसस्य चान्तर्भावः करणीयः यतश्चतुर्थेऽग्निकुमारे ४७ सङ्ख्याकपाठापेक्षया विषटङ्कणौ सूतसमौ,शङ्खवराटयोश्च द्वौद्वौ भागौ नियोजितौ। पञ्चमेऽग्निकुमारे टङ्कणःसूतसमः, शङ्खवराटकौ द्विद्विभागौ नियोजितौ। षष्ठे शङ्खमरिचयोरभावः, प्रमाणे सर्वेषां द्रव्याणां समानता त्रिकटोराधिक्यञ्च दृश्यते। सप्तमे शङ्खस्थाने स्वर्जिका गृहीता द्रव्यप्रमाणेऽपि पिप्पलिनागरस्वर्जिटङ्कणकपर्दानामेकैको भागो निहितोऽस्ति।पञ्चविंशतितमेऽग्निकुमारे विषटङ्कणयोरभावः, प्रमाणे च पारदः½, गन्धः ½ शङ्खः १, वराटिका २, मरिचानि ३ इत्यन्तरं कृतमस्ति। शृङ्खलाख्यरसे विषाऽभावः, प्रमाणेऽपि शङ्खः ४, कपर्दः ६, मरिचानि १२, टङ्कणं ½ इति क्रमः प्रदर्शितः। उपरि निर्दिष्टेषु पाठेषु त्रिकटुस्वर्जिकयोराधिक्यं भावनासमानता चास्ति। कुत्रचित् नागवल्ल्यार्द्रकवह्निशिग्रुमूलमातुलुङ्गानां भावनानियोगोऽधिकतया कृतोऽस्ति । प्रथमनिर्दिष्टरससङ्केतकलिकोक्तपाठे त्रिकटुस्वर्जिकयोः सर्वासाञ्च भावनानामनुष्ठानं कृत्वैक एव पाठः कल्पनीयः । एतेन पाठलाघवे महदुपकृतं भविष्यति।

(६)—प्रथमकुष्ठगजकेसरिरसे द्वितीयाऽग्निगर्भरसस्य १५,२७,२८,३८,६० सङ्ख्याकतालकेश्वराणाञ्चान्तर्भावः करणीयः। अग्निगर्भरसे रसगन्धकौ समौ तालकञ्च द्विगुणं गृहीत्वा गुञ्जारसेन त्रिदिनं विमृद्य समभागताम्रपात्रे लेपं विधाय वालुकायन्त्रे द्वियामान्तः पाकः कृतोऽस्ति। पञ्चदशे सप्तविंशतितमे च तालकेश्वरे समभागौ पारदतालकौ कारवल्लीरसेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृद्य समभागताम्रसम्पुटे धृत्वा दिनैकं वालुकायन्त्रेण पाकः कृतोऽस्ति। अष्टाविंशतितमे तालकार्धं पारदं चतुर्थांशञ्च गन्धकं गृहीत्वा कज्जलीकृत्य कारवल्लीरसेन विमृद्य ताम्रपात्रे लेपयित्वा शरावेण मुखं पिधाय अङ्गुष्ठद्वयोन्नतं सूत्रैर्बद्ध्वा वालुकायन्त्रे धान्यस्फुटनपर्यन्तं पाकः कृतोऽस्ति। अष्टत्रिंशत्तमे शुद्धतालकं स्थाल्यां निधाय समभागताम्रपात्रेणाच्छाद्य धान्यस्फुटनपर्यन्तं विपाच्य ताम्रपात्रमुद्घाट्य तालकसमं गन्धकं दत्त्वा पूर्वविधानेन विपाच्य समभागं पारदभस्म मेलयित्वा योगो निष्पादितः । षष्टितमे तालकभस्मगन्धकावेकैकभागौ ताम्रभस्म द्विभागं गृहीत्वा वालुकायन्त्रे पाकः कृतोऽस्ति । एते सर्वेऽपि रसकङ्कालीयोककुष्ठगजकेसरीरसेऽन्तर्भावनीयाः । कुष्ठेषु सोरथताम्रभस्मनोऽप्युपयोगो न दोषावहः प्रत्युत गुणप्रकर्षायैव। तत्रैव गुञ्जाकारवल्लीभावनानुष्ठानमधिकतयाऽपि न निषिध्यते॥

(७)—एवमष्टमज्वराङ्कुशे त्रयोविंशतितमतालकेश्वरस्य अष्टत्रिंशत्तम ज्वराङ्कुशस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः।

(८)=एवं ७, ९, ३०, ३२, ३६, ३७, ४२, ४६,४८, ४९, ५०, ५१, ५५, ५८, ६४, ६५, ७७ एतत्सङ्ख्याकतालकेश्वराणां षट्त्रिंशत्तमज्वराङ्कुशस्य चाष्टमतालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः।

(९)=एवं २२, ३४, ४०, ४५, ५९ सङ्ख्याकतालकेश्वराणामेकषष्टितमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः करणीयः।

(१०)=एवं ६, १४, १६, ६२ सङ्ख्याकतालकेश्वराणां ७६ तमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः।

(११)=एवं प्रथमत्रिकट्वादिलोहे गुडूचीलौहस्य, १, २, ३, ४, ५, सङ्ख्याकत्रिकत्रयादिलोहानां, तृतीयत्रिफलालोहस्य, तृतीयनवायसलोहस्य, द्वितीयलक्ष्मणालोहस्य चान्तर्भावः करणीयः॥

(१२)=एवं द्वितीयत्रिकट्वादिलोहे २, ८, १२, सङ्ख्याकत्रिफलालोहानां, प्रथमपञ्चमधात्रीलोहयोः, प्रथमपथ्यादिलोहस्य, प्रथमशर्करालोहस्य, षष्ठमण्डूरयोगस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः।

(१३)=एवं सप्तमत्रिफलालोहेऽमृतार्णवलोहस्य प्रथमपञ्चमत्रिफलालोहयोश्चान्तर्भावः करणीयः।

(१४) एवं प्रथमनवायसलोहे चतुर्थनवायसलोहस्य, लोहपञ्चकस्य, २, ३, ४, ६, सङ्ख्याकविडङ्गलोहानां, शोथारिलोहस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः

(१५)=एवं द्वितीयलोहयोगे द्वितीयतृतीयशर्करालोहयोरन्तर्भावः करणीयः।

(१६)=एवमेव लोहगुटिकायां प्रथमगुडमण्डूरस्य गुडलोहस्य, प्रथमद्वितीयगोमूत्रमण्डूरयोः, चतुःसममण्डूरस्य, जीवितवर्धनस्य, तक्रमण्डूरस्य द्वितीयतृतीयत्रिफलामण्डूरयोः द्वितीयपथ्यादिलोहस्य मधुमण्डूरस्य, प्रथमतृतीयपञ्चमलोहयोगानाञ्चान्तर्भावः कर्तुमुचितः।



नामान्तरसे आयेहुए रसोंकी सूची*

* जुदे जुदे ग्रन्थोंमें एकही रसका जुदे जुदे नामोंसे ग्रन्थकारोंने संग्रहकियाहै उनमेंसे जिसग्रन्थकापाठ अच्छाहै उसको उसीग्रन्थमें आयेहुए नामसे इसग्रन्थमें संग्रहकरके शेषनामोंको ग्रन्थसहित टिप्पणीमें अथवा शीर्षकमें नामान्तरसे दाखिलकियाहै। इसलिये जो जो रस जिसजिसमें दाखिलहैं उनकी यह सूचीहै जैसे 'अगस्तिवटी' यह स्वरसंख्या ८५ अर्थात् अग्निमन्त्रिभावटीमें दाखिलहै इसीतरह अन्यत्रभी समझना।

Index of the Introduction

अथ रसयोगसागरस्योपोद्घातीयविषयानुक्रमणिका

अथ प्रथमभागरसयोगसागरीयशुद्धिपत्रकम्

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
२४ (उपोद्घातीय)	७	प्रजापति (दक्षः) | इन्द्रः	प्रजापतिः (दक्षः) | अश्विनौ | इन्द्रः
५६ (उपो॰)	२८–२९	क्लोमभिर्लावा चन्द्रमसां तर्पणेन क्लोम्नो द्रवाधारत्वं गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितम् । ...	वल्मीकान् क्लोमभिरित्यत्र क्लोम्ना वल्मीकानां तर्पणेन क्लोम्नो गोलत्वमन्तः सावकाशत्वं विलक्षणनाल्याकारत्वं सूचितम् । शतपथादौ नानास्थले चन्द्रसादृश्याद्द्रवाधारत्वं गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितं भवति अतएवाऽस्मिन्मन्त्रे क्लोमभिर्लौभिरिति विलक्षणो विन्यासः कृतोऽस्ति ।
५९ (उपो॰)	९–१०–११	अत्र तिलमिलनेन क्लोमकथितं तत्पिपासास्थानमित्यभिप्राय इति दीपिकायामाढमल्लेन व्याख्यातम्—तच्च मधुकोशदर्शनसंस्कारमूलकं प्रतिभाति । ...	तिलन्तु शोणितकिट्टप्रभवं दक्षिणाश्रितं यकृत्समीपे क्लोमसंज्ञकं भवति तच्च जलवाहिसिरामूलं कथितमतएव तृष्णाच्छादनकं प्रतिपादितम् । तृष्णा पिपासा तस्याश्छादनं करोतीत्यर्थः" इति दीपिकायामाढमल्ल·

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्		शुद्धम्
१५२ (उपो.)	१३	प्राणवहेस्रोतसी शा. ९।१२ Pulmonary arteries	...	प्राणवहे द्वे शा. ९।१२ Two Bronchi
१५२ (उपो.)	२१	सञ्ज्ञावहानि उ. ६१।८ ...	...	सञ्ज्ञावहानि उ. ६१।८ सञ्ज्ञावहमाज्यः उ. ४६।६
१५२ (उपो.)	२३	उदकवहेस्रोतसी शा. ९।१२ Alimentary and Lymphatic Systems	...	उदकवहे द्वे शा. ९।१२ 1 Mouth; Pharynx & Œ sophagus 2 Common Duct formed by Junction of the Bile & Hepotic Ducts and Pancreatic Duct:
७ (र.यो.)	३५	तुचूर्णल्यं	...	चूर्णतुल्यं
७	६३–६४	और १½ सेर शक्कर डालकर	...	½ सेर शक्कर और २ पल घृत डालकर
९	१३	कचूर, कान्तलोह ...	...	कचूर, बेलगिरी, त्रिकटु, धनियां जायफल, लौंग, कपूर, कान्तलोह
१०	४२	र. रा. सु.	...	र. सु.
१०	४४	गन्धक, प्रत्येक		गन्धक, टङ्कण प्रत्येक
१५	१०	छनकरके	...	छानकरके
१५	३०	लेकर मसूर	...	लेकर सबके बरावर चित्रकमूल डालकर मसूर
२५	३४–३५	बछनाग, त्रिक्षार (यवक्षार, सज्जी और सुहागा) और	...	बछनाग, कान्तलोह और
२६	५४	रखना और शीशीके ...	...	रखना अगरसे २–२ अथवा आधाआधाकर्ष शुद्धबछनाग और हरिताल डालकर शीशीके
२९	६५	पैरोंकासोना	...	पैरोंकी सूजन
३३	५४	पीतल, गन्धक	...	पीतल, हरिताल, गन्धक,
४०	८	संचल, हींग, दालचीनी, ... हल्दी, सुवर्ण	...	संचल, विष, दालचीनी, हल्दी, मानकन्द और सुवर्णभस्म
४०	२६	एकदिनसाथकेक्काथसे ..	...	१–१ दिन साथ और खिरनीके द्रवोंसे
४०	४९	गोमूत्र्वा	...	गोमूत्रैर्वा
४४	३६	मयेश	...	महेश
४९	२६	लेना और	...	लेना, इन तीनोंके बरावर त्रिकटु और
५५	२३	काडौभस्म	...	कौडीभस्म
५६	७	लेकर घतूरेके	...	लेकर सबकी बरावर मिरच मिलाकर धतूरेके
६६	२	४२ तोले	...	२४ तोले
६८	१६–१७	उसमें २–२ तोले ..	..	उसमें १–१ तोला
६८	५०	मिलाकर बहुत	..	मिलाकर घी और मधुके साथ बहुत
७१	३३	साथ खाना ... --	...	साथ मधुमें मिलाकर खाना
७४	४९	गूलर	...	बड़

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
८१	५	खुरासानी) गजपीपल	खुरासानी) तगरगण्ठोला, गजपीपल
८९	३६	लोहभस्म ३ भाग और मुसली ४ भाग	गन्धक ३ भा०, लोहभस्म ४ भा० और मुसली ५ भाग
८९	४०	एकएक	सातसात
९०	४३	लोहचूर्ण ३ भाग	लोहचूर्ण २ भाग
९४	५०–५१	सुगन्धवाला, जीरा	सुगन्धवाला, नागरमोथा, पाठा, जीरा,
१०२	८	विवर्जयेरिक	विवर्जयेद्रिक
१०६	१८–१९	रससे और ७ वार सर्पविषसे, ७ वार वन्दालकेरससे और ...	रससे और
१०६	४४–४५	तीक्ष्णलोह ४ भाग, ताम्रभस्म ५ भाग सोनामाखी ६ भाग, और शुद्धजमालगोटा ७ भाग	तीक्ष्णलोह ४ भाग, हिङ्गुल ५ भाग, ताम्रभस्म ६ भाग, सोनामाखी ७ भाग और शुद्धजमालगोटा ८ भाग
१०६	६७	दूधकेरसमें	दूधके १ सेररसमें
१०७	६३	पद्मपुष्पैस्तु	पद्मपुष्पैस्तु
१०८	२७	६ पहर	१२ पहर
११४	६३	मुलहठी	पीपल
१२२	६२	राव १००	राव ८०
१२३	५	प्रत्येक ¼ तोला और शुद्धपारा ...	प्रत्येक ¼ तोला, अभ्रक, वङ्ग, लोह इनकीभस्में १–१ पल और शुद्धपारा
१२३	१०	सूजन, बादी	सूजन, शूल, बादी,
१२४	६८	खपरिया प्रत्येक	खपरिया, वङ्ग प्रत्येक
१२४	६९	अङ्कुरोंकेरससे १ पहर	अङ्कुरों और घीकुंवारकेरससे १–१ पहर
१२५	१५	हरताल, सबको	हरताल, भुनासुहागा सबको
१२५	२९	कोर्प	व्योषं
१२६	१	रोग, ८० वात	रोग, भगन्दर, ८० वात
१२८	४१	डालकर ३ दिन...	डालकर भंगरेकेरससे ३ दिन
१२९	२२	गन्धक, निकटु	गन्धक, शुद्धविष, त्रिकटु
१३२	३६	अनार	खट्टेअनार
१५५	३९	कचूर	खजूर
१७२	१०–११	मिर्च, यवक्षार	मिर्च, पीपल, यवक्षार
१७४	३५	सोंठ	पीपल
१७५	१७–१८	और उसमें ५ पलआक	और उसमें हटसिट, भिलांवां, चित्रक, दन्ती, निसोत, इन्द्रायण, आक, विधारा, क्षीरकंचुकी, कालीमुसली, शतावर, कोयल नील, एरण्डमूल, अमलतास, बला, असन ये प्रत्येक ४ पल लेकर इनका अष्टावशेष क्वाथ और ५ पल आक
१८१	३७	१० तोले	४० तोले
१८६	५२	५ मा.	८ मा.
१८७	३४	१ तो., अथवा	१ तो., गन्धक १ तो., अथवा
१९०	३३	वाला अधिक	वाला दिनको सोना अधिक

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
१९०	४३	माल्कागनी	गेंहुला
१९२	५५–५६	निर्गुण्डी, अदरख	निर्गुण्डी, चित्रक, अदरख
१९४	२४	केबीज) लोहभस्म	केबीज) शतावरी, लोहभस्म
२०५	६९	दोरोज	तीनरोज़
२१०	४५	पारेकीभस्म ३ तोले	पारेकीभस्म १२ तोले
२१८	५१	गन्धक, रसमाणिक्य	गन्धक, ताम्रभस्म, रसमाणिक्य
२१९	४८	(मकोय) इन	(मकोय) कोयल, इन
२२३	१७	जीरा ये सब	जीरा, चित्रक येसब
२३३	३२	निर्गुण्डी, वज्रवल्ली ...	निर्गुण्डी, अड्सा, वज्रवल्ली
२३४	११	काञ्जी, सौंठ	काञ्जी, हुरहुर, सौंठ
२३४	१४	यवक्षार ३ पल	यवक्षार २ पल
२३४	६३	कसौंजी, चित्रक	कसौंजी, धतूरा, हंसराज, चित्रक
२४१	२६–२७	समुद्रशोष ये प्रत्येक २ तोलेलेकर ...	येप्रत्येक २ तोले, समुद्रशोष १ तोलालेकर
२४९	६५	चादीभस्म	चादी और सुवर्णभस्म
२५२	३१	बनाकरगुल्मीको	बनाकर शुक्केसाथ गुल्मीको
२५२	३३–३४	इन्द्रजव येसब	इन्द्रजव,देवदारु ये सब
२५४	३	रजतभस्म	सुवर्णभस्म
२५४	५१	सायचाटनेसे	साय १ वर्षंतकचाटनेसे
२६४	२०–२१	काचभस्म येसब	काचभस्म, नागभस्म ये सब
२६४	३८	जायफल और	जायफल, धतूरेकेबीज और
२६४	५२	श्वेतकनेर और चित्रककेरसोंसे ...	श्वेतकनेर, चित्रक और कालीमुशलीकेरसोंसे
२६५	५५	जायफल	कायफल
२६५	६६	दन्ती	भाग
२७५	४२–४३	समुद्रशोष, जटामांसी	समुद्रशोष, मुशली, जटामांसी
२७६	३१	गजपीपल, सेंधानमक, समुद्रशोष ...	गजपीपल, समुद्रशोष
२७७	५५–५६	सबचूर्णसेदूनी	वङ्ग और लोहसे दूनी
२७७	६५	अष्टम	सप्तम
२७८	३०	दालचीनी, खुरासानी ...	दालचीनी, मूर्वा, खुरासानी
२७८	३१	माल्कागनी, शुद्धकुचिला	माल्कागनी, केशर, शुद्धकुचिला
२७८	३४	१० तोले	१० पल
२७९	३७	कञ्जाकेबीज, येसब	कञ्जाकेबीज, जटामासी, अकलकरा ये सब
२८३	१८	शुद्धबछनाग १ भाग	शुद्धबछनाग ११ भाग
२८४	३५	चित्रक इनप्रत्येकके .	चित्रक, कुटकी इनप्रत्येकके
२८६	२५	कर नीबूकेरसकी सात	कर सहिजनकीजड़कीछाल, अमरबेल और नीबूकेरसकीसातसात
२९८	६०	ताम्रभस्म, शङ्खभस्म ...	ताम्र, अभ्रक और शङ्खभस्म
३०६	४४	कीजड़, दारुहल्दी . .	कीजड़, हल्दी, दारुहल्दी,
३०६	४५–४६	चकवड़केबीज, अगस्त्य	चकवडकेबीज, कटिवालीचौलाईकीजड़, अगस्त्य
३०६	६७	चित्रक, केवाच	चित्रक, गोरखमुण्डी, केवाच
३०९	४३	मधु २० पल	मधु १० पल
३१०	४३–४४	मैनसिल १॥ तो.	मैनसिल ९ माशे

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१३	४७	तोलाकेकाढेमें	तोलासोंठके काढेमें
३१९	१५–१६	नीम, आक और थूअरकादूध इन प्रत्येकसे १-१ रोज़ मर्दनकर ...	और नीमकेद्रवोंसे १–१, तथा आकऔर थूअरकेदूधसे ५–५ भावनाएं देकर
३२१	३१	बीज ये सब	बीज अभ्रकभस्म ये सब
३२६	२	चव्य, अदरख	चव्य, नागकेशर, पीपल, अदरख
३२६	५५	स्वर्णभस्म ३ तोले	शुद्धवछनाग और स्वर्णभस्म ३–३ तोले
३२८	२५	शुण्ठी	मुण्डी
३२८	२६	वस्तु	वसु
३२८	४७	तगर	अगर
३२९	२७–२८–२९	शुद्धगन्धक ३ भा.,सुनासुहागा ४ भा., यवक्षार ५ भा.	ताम्रभस्म ३ भा. शुद्धगन्धक ४ भा. सुनासुहागा ५ भा. यवक्षार ६ भा.
३५६	३२	५ तोले	५ पल
३५६	६०	निसोत ३ भाग	निसोत २ भाग
३८०	१४	पिप्पलीकी १–२	पिप्पली और नीबूके स्वरसकी १–१
३८१	३९	कान्तलोहभस्म	ताम्रभस्म
३८२	२६	सैन्धव	पांचोंनमक
३८२	३१–३२	विडङ्ग १–१ भाग	विडङ्ग और चित्रक १–१ भाग
३९०	६४	मरसाकेपत्ते, दहीकापानी इनप्रत्येकके...	मरसाकेपत्ते इनप्रत्येकके
३९४	१८–१९	निकालकर सेंमर, कुठ, अतीस, केलेकी जड़ इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७–७ पुट	निकालकर इसमें जीरा, सेमलकीछाल और कुठ प्रत्येक सममाग मिलावे फिर इस समस्तकी बराबर अतीसकाचूर्ण मिलाकर केलेकेरसकी ७ भावनाएं
३९४	५०	१–१ गोली दहीके	१–१ गोली बिल्वपत्रस्वरस अथवा दहीके
३९६	११	भांगरेकेरससे	भांगके रससे
३९७	६८	सिंगरिफ, बछनाग	सिंगरिफ, कसीस, बछनाग
४००	२०	मोती २ तोला, शुद्धगन्धक... ...	मोती २ तोले, लोह, अभ्रक और शङ्खभस्म सुनासुहागा १–१ तोला, शुद्धगन्धक
४०९	४३	होनेपर लोहेकी	होनेपर १६ वांभाग शुद्धबछनाग मिलाकर लोहेकी
४२६	५०	पलाश	कदहर
४२८	७	लेकर नागर	लेकर शुद्धकपूरकेजल, नागर
४४३	६७	२६ तोला	२९ तोला
४४४	२९	१–१ तो.	३–३ तो.
४४४	५२	भिलावां, वाकुची	भिलांवां, त्रिफला, वाकुची
४४६	१४	दन्तीमूल ६ भाग	दन्तीमूल और अकलकरा ३–३ भाग
४४९	३२	शुद्धगन्धक १ भाग	शुद्धगन्धक २ भाग
४५५	१५–१६	कौडी, तुत्थ	कौडी, सुरमा, तुत्थ
४७४	२२	दूध, मधु	दूध, घृत, मधु
४८४	५१	१ प्रहर	३ प्रहर
४८९	६६	१–१ भाग	२–२ भाग
४९०	३२	गन्धक २ पल	गन्धक और त्रिफला २–२ पल
४९०	६७	नमक, हींग, नीम	नमक, नीम

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
५५५	४५	अपामार्ग	चित्रक
५५५	६५	भटकटैयाका	तीनोंभटकटैयाओंका
६०५	४०	पारदभस्म	ताम्रभस्म
६०७	३४	गन्धक, ताम्र	गन्धक, पारा, ताम्र
६१४	४४	सेलेनेसे	से मधुकेसाथ लेनेसे
६२३	४	ताम्र और सुवर्णभस्म	ताम्र, सुवर्ण और रजतभस्म
६२३	३४	पारा, वङ्ग	पारा, लोह, वङ्ग
६२४	६१	५ भाग	६ भाग
६२५	६५-६६	पारेसे आधी वैकान्तभस्म मिलाकर ... सहिजनकीजड़ और	पारेसे चतुर्थांश वैक्रान्तभस्म मिलाकर सहिजनकी जड़कीछालके स्वरससे ७, और
६२९	२८	स्वर्णको	ताम्रको
६२९	२९	स्वर्णबीजका	ताम्रबीजका
६३३	२१-२२-२३	वाराहीकन्द ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सहिजनकीजड़कीछाल भंगरा इनके रसोंसे १-१ भावनादेकर	वाराहीकन्द, त्रिफला, सहिजन कीजड़कीछाल ये सब समभाग लेकर बारी कचूर्णकर भंगरेके रससे घोटकर
६३४	५२	पारेकीबराबर	पारेसेदूनी
६३५	४८	१-१ सेर देकर	१-१ सेर और गोमूत्र ८ सेर देकर
६४०	३	शक्करकेसाथ	शक्कर और त्रिफलाकेसाथ
६५९	२७	घीकुंवार, त्रिफला	घीकुंवार, भंगरा, त्रिफला
६६२	५६	पारेकी बराबर	पारेसे चतुर्थांश
६६३	४०	सेंधानमक, खपरिया (अभावमें जस्तभस्म) कसीस	सेंधानमक, कसीस
६६९	१२	निशे...	निशा
६७१	११	माशालेकर	माशा मधुसे लेकर
६८६	५१	सोंठ, मरिच, पारा, गन्धक... ...	सोंठ ३ भाग, मरिच, पारा और गन्धक २-२ भाग
६८७	१०	६-६ रत्ती गरमपानी	६-६ रत्ती क्षारोंकेसाथ अथवा गरमपानी
६९०	८-९-१०-११	भंगरेकेरसकी २-३ भावनाएं देकर ... स्याहसफेद तुलसी, अभ्रकभस्म आंवला प्रत्येक १ तोला मिलाकर सफेद पुनर्नवाके रससे १-२ भावनाएं देकर इमलीकेबीजबराबर गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली छाछ	भंगरा, बिजोरा, हल्दी, अदरख, प्रसारिणी, दोनोंतुलसी, नागरमोथा, आंवले इनके स्वरसोंसे १-१ भावना देकर इमलीके बीजबराबर गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सफेद पुनर्नवाकेरस, छाछ
६९१	३२	भंगरेकेरससे	अदरखके रससे
६९३	१४	भांगरेके	भांगके
६९६	२	पर्णोंसे	पुष्पोंसे

द्विविधसूचीरहस्य

इसग्रन्थमें लगभग सवाचारहज़ार रसप्रयोगोंका सङ्ग्रहहोनेसे **रसयोगसागर** यह अन्वर्थ नामहै। इतने अथाह समुद्रमेंसे अभीष्ट योगको निकालना साधारण बात नहींहै। इसलिये इसकी **रोगानुसारिणी** सूची बनाकर इसके अन्तमें लगाई गईहै।सूचीमें प्रथम रोगोंकेनाम दियेगयेहैं जैसे ज्वरे इत्यादि। रसोंकीसङ्ख्याकेबीचमें स्वरा ,कु,चुद,तु,पु,अन्त स्थाः, ऊष्म (ऊष्माण) ऐसे सङ्केत दियेगयेहैं। यद्यपि ये सङ्केत विद्वानोंसे परिचितरहतेहैं परन्तु सर्वसाधारणकेलिये नीचे स्पष्टता की जातीहै जैसे **स्वराः** इससङ्केतसे अ आ इ.ई.उ ऊ.ऋ ॠ ऌ ॡ. ए.ऐ ओ.औ.अं.अः इन १६ अक्षरोंका बोध होताहै। **कु** से क.ख ग.घ ङ. ५। **चुद्** से च छ.ज झ.ञ.ट ठ.ड.ढ ण. १०। **तु**से त.थ द.ध.न ५। **पु**से प.फ.ब.भ.म ५। **अन्तःस्थाः** से य.र.ल व. ४। **ऊष्माणः** से श.ष स.ह.क्ष.ज्ञ. ६ इनका बोधहोताहै। व्याकरणके अनुसार यद्यपि [illegible] और ज्ञ ऊष्ममें नहीं आतेहैं। संयुक्ताक्षरहोनेकेकारण ज्ञ का चवर्गमें समावेश होना अत्यावश्यक था क्योंकि ज और ञ के संयोगसे यह बनाहुआहै और ये दोनोंही चवर्गमें आजातेहैं परन्तु क और ष के संयोगसे क्ष बनाहुआहै इसमें वितण्डाका सम्भवहै कि इसे कवर्गमें रक्खाजाय या ऊष्ममें? । वर्णमालिकाको प्रधान रखकर ऊष्मके अन्त्यमें रक्खागयाहै। **अगस्त्यसंहिता** और मुण्डमाला प्रभृति तन्त्रोंमें बाह्यान्तर्मातृकान्यासादिकोंमें ऐसाही क्रम रक्खागयाहै। वर्णमालिकामें तो क्ष को मेरुस्थानाऽऽपन्न रक्खाजाताहै यहबात तान्त्रिकसिद्धान्तमें प्रसिद्धहै। इनविचारोंसे क्ष को ऊष्मके अन्त्यमें रक्खागया तब उसके आगे ज्ञ कोभी रखदियाहै इसलिये ऊष्मसे श ष.स ह क्ष ज्ञ इन ६ अक्षरोंका विन्यास कियाहुआहै। केवल नामसेही किसी रसका पाठ देखना हो तो समस्त ग्रन्थमें अकारादिक्रमसे रसोंका विन्यास कियाहुआहै उसे निकालकर देखलेवें। यदि किसी रोगकेलिये कोई रस देखना हो तो सूचीमें दियेहुए ज्वरादिरोगोंके नीचेके अङ्कोंको निकालकर देखलेवें। इसग्रन्थमें सौकर्यार्थ स्वर. कु. चुद [illegible] पु. अन्त स्थ और ऊष्म ऐसे सङ्ख्याके ७ विभाग किये हुएहैं जैसे स्वरमें १ अगदेश्वर, कुमें १ कङ्कालखेचरीवटी, चुदमें १ चक्रधर, तु में १ तक्रमण्डूर, पुमें १ पक्तिशूलहर, अन्तःस्थमें १ यकृत्प्लीहारिलोह, ऊष्ममें १ शकटाक्षविट्‌वटी, इसतरह सातसङ्ख्याओंके सङ्केतोंको समझ लेना। बस इसतरह यह ग्रन्थ समाप्तहोताहै। इसके बाद सूचीमें **अ व्या.** यह सङ्केत आताहै। इसमें अगस्त्य और व्याससम्प्रदायको लक्षितकियाहै यह आठवीं सङ्ख्या है.। इसकेबाद परिशिष्टभाग रक्खागयाहै उसका सङ्केत **परि०** ऐसा रक्खाहै। इसमें दक्षिणदेशप्रसिद्ध कृष्णभूपालीयप्रभृति ग्रन्थोंके योगहैं और सङ्ग्रहकरनेकेसमय कईकारणोंसे छूटेहुए योगोंका सङ्ग्रहहै इसकीभी सङ्ख्या जुदीहै इसतरह ९ विभागोंमें इसकी सूची समाप्तहोतीहै। ऐसी सूची दो हैं एक **रोगानुसारिणी** दूसरी **अधिकारानुसारिणी**। रोगानुसारिणीसूचीमें योगोक्त प्रधान २ सभीरोगोंका सङ्ग्रहहै इसलिये इसका आकार बहुतबड़ा होगयाहै। केवल ज्वरमें २४००के लगभग रस आगयेहैं। इतनेमेंसे साधारण आदमीका काम नहींहै जो कि अपने अभीष्टयोगको निकाललेवे इसलिये अधिकारपरत्वेन दूसरी सूची बनाई गईहै इसमें १योग एकहीरोगमें आयाहै। तोभी ज्वराधिकारमें लगभग ७०० रस आयेहैं इन्हें देखकर यह कल्पना स्वाभाविक होतीहै कि एकरोगमें इतने योगोंकी भरमार क्योंहुई? पर इसका रहस्य ऐसाहै कि आयुर्वेदमें ज्वरको बहुतही प्रधानता दीगईहै इसके पेटमें बहुतसेरोग आजातेहैं इसीलिये "देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो बली। ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा॥" ऐसाकहागयाहै और चरकने तो रोगसामान्यका नाम ज्वर रक्खाहै इसलिये ज्वरके बहुतसेयोग अन्यव्याधियोंमें कामकरतेहैं जैसा कि रोगानुसारिणी सूचीमें दियागयाहै। अन्यरोगोंमें इतनी भरती नहींहै बाज़ २ रोगोंमेंतो एकएकहीयोग आयेहुएहैं जैसे कि मुखसन्निपातप्रभृतिमें। कदाचित् वह योग किसीजगह काम न देवे तो ऐसा न समझना कि इसकेलिये अब दुनियामें कोईयोगही नहींहै ऐसी जगहमें जितने सन्निपातकेयोगहैं वे प्रायः सभी कामदेतेहैं। बहुत जगह तो जिसरोगका विशेषपरिचय नहींहै पर उसमें ज्वरहै तो उसमें साधारण और विशेषज्वरघ्न सभी औषधें काम देतीहैं जैसे कि इनफ्लूएन्ज़ा प्रभृतिमें अथवा प्लेगमें हुआथा। इनरोगोंमें अन्य पैथीवाले रास्ताही खोजते रहगये पर आयुर्वेदोपासक दोषोंकी प्रधानताको देखकर सन्निपातभैरव प्रभृति योगोंको देकर रोगियोंके आशीर्वादपात्रहुएथे इसीलिये चरकने कहाहै कि "विकारनामाऽकुशलो न जिह्रीयात्कदाचन। न हि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थितिः॥" अर्थात् अधर्मकीउत्कटतासे जब कि जनपदोद्ध्वंसकारक सङ्क्रामकव्याधियां निकलपड़तीहै उनका नामविशेष मालूम न होनेसे वैद्य लज्जित न होकर दोषोंकी उत्कटताकी तरफ ध्यान देकर चिकित्सा करै उसमें वैद्यको यश मिलताहै। ऐसी ऐसी सब व्याधियोंके नाम शास्त्रमें नहीं आयाकरतेहैं। **एकविशेषबात** ध्यानमें रखनेलायक यह है कि ज्वरप्रयोग प्रायः ज्वरोंमें और ज्वरजनित उपद्रवोंमें कामदियाकरतेहैं इसलिये ग्रन्थकारोंने ज्वरके लिये बहुतही योगनिर्माणकियेहैं। उन्हें औचितीदेखकर कास,श्वास,मूर्च्छा,तन्द्रा,वातव्याधि प्रभृतिमें नियुक्तकरना उचितहै केवल अधिकारको पकड़कर बैठे रहना उचित नहींहै। इसीतरह रसायनयोगोंको प्रमेह,शोष,राज-

यक्ष्म, जीर्णज्वर और कृशताप्रभृतिमें प्रयुक्तकरना उचितहै । इस-सूत्रसे जिनरोगोंमें अल्पयोग आयेहैं वहांपर घबड़ाना न चाहिये, बुद्धिसे काम लियाजायगा तो सैकड़ोंयोग तैयार होजायगे । जिसतरह सागर (समुद्र) रत्नोंका आकर होनेपरभी सबको रत्नोंकी पोटली नहीं देदेताहै किन्तु वे रत्न गोते लगानेवालोंके ही हाथलगतेहैं इसीतरह यह (रसयोगसागर) ज्ञाताऽज्ञातसमस्तरोगोंको दूरकरनेवाले योगोंका सागरहै तथापि जैसा आयुर्वेदाभ्यासीकेलिये उपयोगीहै वैसा अनभ्यासीकेलिये नहींहै वैसे तो समुद्रका उपयोग लवणकेलिये मनुष्यपशुपक्षि सर्वसाधारणहै पर जिस सौष्ठवसे उसके ज्ञाता काम, लेतेहैं वैसा अज्ञ नहीं । इस ग्रन्थकेरहतेहुए किसीभी योगके बनानेके नामसे कोई किसीको ठग नहींसकाहै इतना उपयोग तो सर्वसाधारणकेलिये अनिवार्यहै । इसलिये श्रीमन्तोंके घरमेंभी इसको स्थानदेना अत्यावश्यकहै । इसकेबाद रोगानुसारिणी और अधिकारानुसारिणी सूची क्रमसे दीहुईहै उन्हें देखो । इनसूचियोंमें स्त्यानवातादि रोगोंके विचित्रनाम आतेहैं वे दक्षिणदेशप्रसिद्धरोगहैं उनके लक्षण माधवनिदानादिग्रन्थोंमें नहींहैं इसलिये वे यहाँ देदियेजातेहैं यथा—

दक्षिणदेशप्रसिद्धा रोगविशेषाः

(वसवराजीयतोऽवगन्तव्याः)

स्त्यानवातलक्षणम्

महावातो भवेद्देहे दिवारात्रौ च शूलनम् ।
सदानिरसनं स्वेदः स्त्यानवातस्य लक्षणम् ॥

शीतवातलक्षणम्

देहेऽतिशीतता मूर्च्छा नेत्रभ्रमणमेव च ।
कण्ठशूलं शिरःशूलं शीतवातस्य लक्षणम् ॥

मधुवातलक्षणम्

ज्वरः पाण्डुश्च हिक्का च नासिकाऽस्रस्रुतिस्तथा ।
देहकण्डूः शिरःकण्डूः कफः स्यान्मधुवातके ॥

गुल्फवातलक्षणम्

शरीरं पाण्डुवर्णञ्च कटिदेशे च तापनम् ।
शिरःशूलं नेत्रशूलं गुल्फशूलं विदाहिका ॥
तन्निद्रा नश्यते रात्रौ गुल्फवातस्य लक्षणम् ॥

शुक्रवातलक्षणम्

इन्द्रियं पुंस्त्ववर्ज्यञ्च विदाहञ्च विकारिताम् ।
अन्तर्वायुः प्रकुर्वीत शुक्रवातस्य लक्षणम् ॥

क्षीणवातलक्षणम्

क्षीणे च वाते शिरसोव्यथा च
नासान्तरे दुःसितमङ्गशूलम् ।
दिवा च रात्रौ च विनष्टनिद्रः
कपालनेत्रे च विवृद्धशूलम् ॥

स्नायुकवातलक्षणम्

देहस्य स्फुटनं पुंसामङ्गवैकल्यपीडनम् ।
देहशोफो नेत्रशूलं स्नायुवातस्य लक्षणम् ॥

शृङ्खलावातलक्षणम्

पाण्डुता शुष्कता देहे निद्रानाशः शिरोव्यथा ।
वान्ति हिक्का च विस्फोटः शृङ्खलावातलक्षणम् ॥

विलोमवातलक्षणम्

तन्द्राधिक्यमतिश्वासः पाण्डुता नेत्रशूलनम् ।
स्वेदो हिक्काऽतिवान्तिश्च विलोमवातलक्षणम् ॥

दधिवातलक्षणम्

अक्षिशूलं कर्णशूलं नासाशूलं शिरोभ्रमः ।
हिक्काऽतिसारकं चैव दधिवातस्य लक्षणम् ॥

मन्दवातलक्षणम्

पाण्डुता च भ्रमो मूर्च्छा स्वेदः कण्ठे परिश्रमः ।
वान्तिरामविकारश्च मन्दवातस्य लक्षणम् ॥

रक्तवातलक्षणम्

रक्तवान्तिश्च हिक्का च मूर्च्छा दाहश्च कम्पनम् ।
देहकान्तिहरः स्वेदो रक्तवातस्य लक्षणम् ॥

सुप्तवातलक्षणम्

भयं बीभत्सता रौद्रं शोषः कर्णान्तरुग्भवेत् ।
मूर्च्छाकम्पभ्रमस्वेदाः सुप्तवाते विनिर्दिशेत् ॥

भोगवातलक्षणम्

विभ्रमश्च विदाहः स्यादम्लोद्गारः प्रकम्पनम् ।
अङ्गवैकल्यकोपी च विस्पष्टं वातकोपनम् ॥
नेत्रशूलं शिरःशूलं भोगवातस्य लक्षणम् ।

किक्किसावातलक्षणम्

कटिप्रदेशशूलञ्च महाशूलाऽवरोधनम् ।
पादे पीडा शिरोघ्राणे किक्किसावातलक्षणम् ॥

क्रोधपित्तलक्षणम्

सदा च तामसाचारो दुर्भाषा तीव्रतागुणाः ।
शिरोभ्रमणदोषश्च क्रोधपित्तं विनिर्दिशेत् ॥

मधुपित्तलक्षणम्

अरुचि र्मधुरोद्रेकः उषःकाले च कोपिता ।
शिरोभ्रमणमाधुर्यं छर्दीरोम्णाञ्च हर्षणम् ॥

चर्मपित्तलक्षणम्

जिह्वाङ्गे चर्मशीर्णत्वं करपादौष्ठकादिके ।
शीघ्रकण्डूवलं हिक्का चर्मपित्तस्य दोषजाः ॥

मूर्च्छापित्तलक्षणम्

अरुचि र्मधुरं वक्त्रं प्रसेको भ्रममूर्च्छनम् ।
छर्दीरोमाञ्चकश्चैव मूर्च्छापित्तस्य लक्षणम् ॥

कुसुमपित्तलक्षणम्

आतापो नासिकारक्तमतितृष्णा प्रपीडनम् ।
कचिच्छोणितवाहश्च कुसुमं शीर्षसम्भवम् ॥

भ्रंशपित्तलक्षणम्

अपभ्रंशो मतिस्तम्भः सदा चिन्तानिरीक्षणम् ।
सम्भाषणमतिक्रोधाद् भ्रंशपित्तस्य लक्षणम् ॥

सुखसन्निपातलक्षणम्

तरुणज्वरमध्ये तु युवतीसङ्गमो यदा ।
तत्क्षणाद्दारुणाद्दोषादङ्गवैकल्यकम्पनम् ॥
वक्षोऽन्तरे च सन्तापः प्रलापस्तापविभ्रमौ ।
पाणिपादतले शीतं दोषस्त्रीसङ्गमे स्मृतः ॥

अथ मानविवरणे सुश्रुतः

"पलकुडवादीनामतो मानं तु व्याख्यास्यामः । तत्र द्वादश धान्यमाषा मध्यमाः सुवर्णमाषकः, ते षोडश सुवर्णं, अथवा मध्यमनिष्पावा एकोनविंशतिर्धरणं, तान्यर्द्धतृतीयानि कर्षः, ततश्चोर्द्धं चतुर्गुणमभिवर्धयन्तः पलकुडवप्रस्थाढकद्रोणा इत्यभिनिष्पद्यन्ते, तुला पलशतं, तानि विंशतिर्भारः । शुष्काणा मिदं मानं, आर्द्रद्रव्याणाञ्च द्विगुणमिति ॥ चि.३१।७"

अथ शार्ङ्गधरोक्तं मागधीयं मानम्

त्रसरेणुर्बुधैः प्रोक्तस्त्रिंशता परमाणुभिः ।
त्रसरेणुस्तु पर्यायनाम्ना वंशी निगद्यते ॥
जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः ।
तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स कथ्यते ॥
जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते ।
षड्वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका ॥
तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः ।
यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥
षड्भिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधान्यकौ ।
माषैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणः स निगद्यते ॥
टङ्कः स एव कथितस्तद्द्वयं कोल उच्यते ।
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रङ्क्षणः स निगद्यते ॥
कोलद्वयञ्च कर्षः स्यात्स प्रोक्तः पाणिमानिका ।
अक्षं पिचुः पाणितलं किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥
विडालपदकं चैव तथा षोडशिका मता ।
करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥
उदुम्बरञ्च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते ।
स्यात्कर्षाभ्यामर्द्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥
शुक्तिभ्याञ्च पलं ज्ञेयं मुष्टिराम्रं चतुर्थिका ।
प्रकुञ्चं षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते ।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवोऽर्द्धशरावकः ॥
अष्टमानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्याञ्च मानिका ।
शरावोऽष्टपलं तज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥
शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थश्चतुष्प्रस्थैस्तथाढकम् ।
भाजनं कंसपात्रञ्च चतुःषष्टिपलं च तत् ॥
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोर्मणौ ।
उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसञ्ज्ञकाः ॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः ।
शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता ॥
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः ।
चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा ॥
पलानां द्विसहस्रञ्च भार एकः प्रकीर्तितः ।
तुला पलशतं ज्ञेया सर्वत्रैवैष निश्चयः ॥
माषटङ्काक्षबिल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम् ।
राशिर्गोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥

अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः।
यवद्वयेन गुञ्जा स्यात्त्रिगुञ्जो वल्ल उच्यते॥
माषो गुञ्जाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्कचित्।
स्याच्चतुर्माषकैः शाणः स निष्कष्टङ्क एव च॥
गद्याणो माषकैः षड्भिः कर्षः स्याद्दशमाषिकः।
चतुष्कर्षैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः॥
चतुष्पलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः॥ इति॥

उपरिनिर्दिष्ट मानोंमें प्रथममान सुश्रुतोक्तहै और द्वितीय तथा तृतीय शार्ङ्गधरोक्तहै। शार्ङ्गधरका प्रथममान मागध है और द्वितीय कलिङ्गदेशीयहै। इनदोनों मानोंमेंसे मागधमान को ही श्रेष्ठबतलायाहै "मानञ्च द्विविध प्राहु कालिङ्ग मागधं तथा। कालिङ्गान्मागध श्रेष्ठमेव मानविदो विदु॥ च. क १२।१०२,, इसलिये सुश्रुतीयमानकेसाथ शार्ङ्गधरोक्त मागध-मानकी तुलना कीजातीहै। सुश्रुतमें १२ उड़दका १ माषा मानाहै तथा शार्ङ्गधरमें ६ रत्तीका १ माशा मानाहै और कर्षको दोनोंमें १६ माशेका लिखाहै। वजनकरनेसे १ रत्तीके बराबर दो उड़द होतेहै। सुश्रुतके हिसाबसे एककर्षमें १९२ उड़दहोतेहैं और शार्ङ्गधरमें ६ रत्तीके माशेके हिसाबसे ९६ रत्तियें होतीहैं।। इन रत्तिओंको द्विगुणकरनेसे १९२ उड़द बनतेहै इससे यह सिद्ध होताहै कि सुश्रुतको भी ९६ रत्तीका कर्ष और ६ रत्तीकाही माशा मान्यहै सो शार्ङ्ग धरके मानके बराबरहै। आजकल व्यवहारमें एकतोलेमेंभी रत्तियें ९६ मानी जातीहैं। कितनेही लोग ३२ बालका तोला मानतेहैं वहापर परिपुष्ट लालरंगका बाल लिया जाताहै वह ३ रत्तीके लभभगहोनेसे वेही तोलेमें ९६ रत्तियें गिनी जाती हैं पर यह प्रमाण ठीक नहींहै। लालरङ्गके बालोंकी विषमताके कारण कितनेही लोग ४० बालोंका तोला मानतेहैं इसीलिये सुश्रुतने मध्यमनिष्पावोंसे वजनको नियत कियाहै वह बराबरहै। वैसेतो हीरेप्रभृतिरत्नोंके तोलमें ६२ रत्तियोंकाही तोला लियाजाताहै पर वह एकदम परिपुष्ट लालरत्ती अथवा साधारण रत्तीफल (यह कालेदानेकी जातिहै इसे पटनेप्रभृतिके जङ्गली लोग रत्तीके नामसेही पुकारतेहैं उसका बीज लम्बा होताहै) एकतोलेमें लगभग ६२ या ६३ चढते है वह तोला ९६ रत्तीके तोलेसे लगभग १ चावल अधिक होताहै। इसलिये सुश्रुतीय जो कर्षहै उसका सब तोलोंकेसाथ सादृश्य आताहै यह देखकर उन ऋषियोंके बुद्धिवैभवपर किस गुणग्राहीके अन्तःकरणमें पूज्यभाव उत्पन्न न होगा? निष्कर्षमें उपरिनिर्दिष्टकर्ष और व्यावहारिकतोला एकबराबर होताहै। यदि आजकलके प्रचलित रुपयोंकेसाथ बराबरी करनी हो तो पञ्चमजार्जका जो किल्विष रहित नया सिक्का है वह उपरिनिर्दिष्ट तोले या कर्षके बराबर वजनमेंहै परन्तु इससे पहिलेके दो सिक्के कुछ कमहैं इसलिये रुपयोंसे तोलनेका कामलिया जाय तो वर्तमान नये सिक्केसे लेना उचितहै पर एकान्तत उसपरभी भरोसा न रखना उसमेंभी एकदूसरेमें टकसालकी गल्तीसे अथवा घिसनेसे अथवा तेजाबमें डालकर चांदी निकाललेनेकी वजहसे कुछ फेर रहताहै इसवास्ते ध्यान रखना। कर्षके १६ माशे मानेगयेहैं और आजकल तोलेके १२ माशे मानेजातेहैं इसजगह आपातत विरोध आताहै परन्तु तोलेमें माषा ८ रत्तीका मानाजाताहै उपरिनिर्दिष्ट कर्षमें ६ रत्तीका मानाहै इसलिये कर्षमें १६ और तोलेमें १२ माशेका आभासमात्रभेद प्रतीत होताहै वास्तविक भेद नहीं।

सुश्रुतमें धरणकामान "अथवा मध्यमनिष्पावा वा एकोनविंशतिर्धरणम्, तान्यर्धतृतीयानि कर्ष" इसतरह दियाहै। इसवाक्यसे कर्षका २॥ वा हिस्सा धरणहोताहै और उसमें १ कर्षका २॥ वा भाग ७७ उड़द अर्थात् ३८॥ रत्ती होतीहैं। सुश्रुतने १९ मध्यम निष्पावोंका (सेमकेबीजोंका) १ धरण कहाहै। इसलिये एकनिष्पाव २ रत्तीके लगभगहोताहै यह प्रमाण अन्यकिसीमानसे नहीं मिलता। यद्यपि शार्ङ्गधरने शाणकापर्याय धरण दियाहै पर वह सुश्रुतसेविरुद्धहै। इसका भेद आगे कलिङ्गमानके कोष्ठकसे मालूमहोगा। यहांपर "पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम्" इस कृष्णात्रेयके वचनकी तरफ शार्ङ्गधरका ध्यान चलागयाहो और कलिङ्गमानमें पलका दशमांश शाण होताहै इसलिये शाणका पर्याय समझकर धरण लिखदियाहो यह सम्भवहै परन्तु कृष्णात्रेयका मान जुदाहै उसमें पलका दशमांश शाण नहीं आताहै इसलिये यह शार्ङ्गधरकी भूलहै। बड्धरणादियोग खास सुश्रुतकेहैं अन्यग्रन्थोंमेंभी सुश्रुतहीसे गयेहैं इसलिये इसका हिसाबकरनेमें शार्ङ्गधरने गल्तीकीहै खबर न पड़नेसे शाणका नाम रखदियाहै। इसीतरह वैद्यकशब्दसिन्धुमें भी "पलदशमांशोऽयं योग पञ्चगुञ्जामाषेण प्रत्यादेश्य" यहांपर सुश्रुतीय माशेको ५ रत्तीका समझाहै यह भी भूलहै। ५ रत्तीकामाषा वैजयन्तीकोष और याज्ञवल्क्यस्मृतिकी मिताक्षराटीकामें दिया हुआहै—"त्रसरेणुभिरष्टाभिर्लिक्षा सैव मरीचिका। रथरेणुश्च रेणुश्च तास्तिस्रो राजसर्षप॥ धुरणश्च यवास्त्रय ते त्रयो गौरसर्षप॥ तेऽष्टौ यव षोडश॥ यवा माषोऽथवा त्रिभि। यवैर्गुञ्जा पञ्च गुञ्जा माष कृष्ये तु सप्त ता॥ रूप्यमाषो द्विगुञ्जो वा धरण षोडशैव ते। शतमान तु दशभिर्धरणै पलमेव च" इत्यादि वैजयन्तीकोष अथवा "जालसूर्यमरीचिस्थ त्रसरेणु रज स्मृतम्। तेऽष्टौ लिक्षा च तास्तिस्रो राजसर्षप उच्यते॥ गौरस्तु ते त्रय षड्भिर्यवो मध्यस्तु ते त्रय। कृष्णल पञ्च ते माषस्ते सुवर्णस्तु षोडश" मिताक्षरा टीका॥ वैजयन्तीकारने २ गुञ्जाका रूप्यमाषा मानकर १६ रूप्यमाषोंका धरण बनायाहै वह ३२ रत्तीका होताहै और "दशभिर्धरणै पलमेव च" इसवाक्यसे पलका १० वांभाग धरणहोताहै। इनदोनों वाक्योंमें परस्पर विरोधसा प्रतीत होताहै परन्तु ५ रत्तीके माशेके हिसाबसे भी पलके

१•वैद्दिसेमें ३२ ही रत्ती आतीहैं इससे विरोध नहीं आता परन्तु सुश्रुतीय धरण इनसबसे जुदाहै । "फलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम्" यह कृष्णात्रेयका वाक्यहै सो सुश्रुतसे बराबर मिलताहै ।

गद्याणकामान शार्ङ्गधर और यत्रतत्र शास्त्रमें आताहै । शास्त्रमें इसकेलिये खास कोई परिभाषा नहींहै । मालूमहोताहै कि शार्ङ्गधरहीसे उठाकर लोगोंने रक्खा होगा । शार्ङ्गधर और कृष्णात्रेय दोनोंने ६ माशेका इसे बतलाया है और माशेका प्रमाणभी दोनोंका बराबरहै इसलिये जहांकहीं गद्याण आवे वहां ४८ रत्तीका लेना उचितहै ।

उड़दसे नीचेका जो मानहै उसे चरक और शार्ङ्गधर प्रभृतिने दियाहै । उसका आरम्भ परमाणुसे कियाहै परन्तु वह किसीका किसीकेसाथ नहीं मिलता । कारणहै कि उसका आरम्भ परमाणुसे किया हुआहै वह आनुमानिकहै उसका तोल करिपर होना असम्भवहै । यद्यपि राजिकावग़ैरहका तोल करि प्रभृतिसे होसकताहै पर बीजरूपहोनेसे उनकाभी यथार्थ तोल नहीं होसकता, कारणकि जब एकफलीमें होनेवाले बीजोंकी भी प्रायः परस्पर सादृश्य नहीं होती तब दूसरे वृक्ष और विभिन्न २ भूमि तथा कालमें उत्पन्नहोनेवाले बीजोंकी सादृश्य क्या होगी ? इसका अन्तर देखनाहो तो बीजोंको तोलकर खातिरी करलें यही कारणहै कि "यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः।" यहांपर कालिङ्गमानमें १२ सर्षपका जव बतलायाहै और मागधमानमें "यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो" ऐसा पूर्वसे विरुद्ध लिखाहै । यह तो मूर्खभी जान सक्ताहै कि यह वाक्य विक्षिप्तके सिवाय कौन लिखेगा ? परन्तु इसमें ऐसा नहींहै यह बीजोंके फेरसे हुआहै । पुष्ट पीलीसरसोंके अन्दाजसे ८ सर्षपकाही १ जव होताहै और छोटी सर्षप १२ चढ़तीहैं बस इतनाही भेद हुआहै । कोई कदाचित् यह कहकर अपना पिण्ड छुड़ावे कि सर्षपादिक पदार्थ काल्पनिकहैं और कल्पनामें सब पृथक् पृथक् कहने परभी विरोध नहीं होसकता । परन्तु यह बात यथार्थ नहींहै क्यों कि जब कल्पना ही करनी थी तो "जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते" इत्यादि वाक्य लिखनेकी कोई ज़ुरूरत नहींथी । इससे यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि सर्षपादिक पदार्थ काल्पनिक नहींहैं किन्तु सहीहैं । उनके समय, क्षेत्र और देशप्रभृतिके भेदोंसे बीजोंमें भेदहोनेसे यह सब पाप घुसबैठाहै इसीविपत्तिको सोचकर सुश्रुतने नीचेके प्रमाणको न लिखकर केवल उड़दसे प्रमाणका आरम्भ कियाहै । एक और भी कारणहै कि सुश्रुतीय औषधोंमें उड़दसे नीचेके प्रमाणकी अपेक्षाभी नहींहै । ॥ रसग्रन्थोंमें हीरेप्रभृतिकी भस्मोंमें राजिकाप्रभृतिके मानकी आवश्यकता रहतीहै तब वहांपर प्रायः करके बीजोंके आकारसे रोगीके बलाबलको देखकर मात्राका निर्धारणकरना यह वैद्यका खास कर्तव्यहै इसीलिये "स्थिति र्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयो बलम् । प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रा प्रकल्पयेत" इत्यादि वाक्य कहेहुएहैं ।

"षड्वंशयस्तु मरीचि स्यात्षण्मरीच्यस्तु सर्षपः । अष्टौ ते सर्षपा रक्तास्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥" चरक ॥ "जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते । षड्वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका ॥ तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः ॥" इत्यादि शार्ङ्गधरीय पाठ आपसमें मिलते नहींहै उसका कारण यहहै कि सूक्ष्मवस्तुओंका विचारहै वह ध्यानमें न आनेसे औपरिष्टिक अनुमानकरके लोगोंने बिगाड़ाहै इसलिये परस्पर विरोध मालूमहोताहै शार्ङ्गधरने कोई अपना स्वतन्त्र मत नहीं प्रदर्शित कियाहै किन्तु प्राचीन संहिताओंके आधारही पर ग्रन्थ लिखाहै । चरकीयपाठको न समझनेसे लोगोंने बिगाड़ाहै इसीलिये यह विरोध आकर खड़ाहुआहै । चरकीयपाठ "जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते । षड्वंशयस्तु मरीचि स्यात्षण्मरीच्यस्तु राजिका ॥ तिसृभी राजिकाभिश्च रक्तसर्षप इष्यते । अष्टौ ते सर्षपा रक्तास्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥" ऐसाहोनाउचितहै । ३ राईका १ रक्तसर्षप और २ रक्तसर्षपका १ गौरसर्षप प्रत्यक्षहै इसमें सन्देहका कोई अवसरनहींहै ।

वर्तमान चरकीयपाठ " षड्वंशयस्तु मरीचि स्यात्षण्मरीच्यस्तु सर्षप । अष्टौ ते सर्षपा रक्तिस्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥ धान्यमाषो भवेदेको धान्यमाषद्वयं यव । अण्डिकास्ते तु चत्वारस्ताश्चतस्रस्तु माषकः ॥ हेमश्च धानकश्चोक्तो भवेच्छाणन्तु ते त्रय ॥" ऐसा मिलताहै । इसमें रत्ति या रक्ति यह पाठ अशुद्धहै इसकी जगह रक्ता ऐसा चाहिये क्योंकि यह सर्षपोंका विशेषणहै और इसकी साक्षी चक्रपाणिदत्तभी देरहे हैं । "धान्यमाषद्वयं यव" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि धान्यमाष और सतुष यवका वज़न एकबराबरहोताहै इसीलिये चक्रपाणिदत्तने पूर्वटीकाकारोंका मत बतलाते हुए "ते तु चत्वार इति–यवचत्वारः, अन्ये तु माषाश्चत्वारश्च अण्डिका इति वदन्ति" ऐसा लिखाहै यहांपर गौर करके देखिये यव और धान्यमाष समप्रमाणहोनेसेही किसीटीकाकारने ४यवकी अण्डिका बतलाई और दूसरोंने ४धान्यमाषकी अण्डिका बताईहै इनदोनोंका अभिप्राय एकहीहै । चक्रपाणि दत्तको अशुद्धपाठका भेद नहीं मालूम हुआ इसीलिये बेचारे मोहजालमें पड़े । इसकाभी कारण यह मालूमहोताहै कि अण्डिकापदार्थ इनको ज्ञात न हुआ यहाकी अण्डिका सुश्रुतीय निष्पावहै जिसे कि हिन्दीमें सेमकाबीज कहतेहैं । उसे समकक्ष ४ यवकेसाथ अथवा ४ उड़दोंकेसाथ तोलकर देखलीजिये बराबरहोताहै । इसलिये "धान्यमाषद्वय यव" के स्थानमें "धान्यमाषसमो यव" ऐसा पाठ होना उचितहै । "अण्डिकास्ते तु" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि ४ यव अथवा उड़दोंकी १ अण्डिका होतीहै एकवचन होनेसे विसर्ग अथवा सकार नहीं रहसकता यह अज्ञान कृत पाठहै । कृष्णात्रेयमें मतान्तरकेनामसे "अण्डिका चापि निर्दिष्टा क्वचिन्माषद्वयेन वै" यह विलक्षण अण्डिका बतलाईहै यहांपर माषशब्दसे धान्यमाष समझना इसलिये यह गुञ्जाका पर्यायहै अण्डाकृति

होनेसे अण्डिका मानलीहै पर यह चरकसुश्रुतीय अण्डिका नहींहै ।

"हेमश्च धानकश्चोक्तो" यह भी पाठ अशुद्धहै । आचार्यने माषशब्दके दो अर्थ बतलाएहैं अर्थात् १ सुवर्णका माष और दूसरा अनाजका माष अर्थात् उड़द । धान्यशब्दसे स्वार्थमें 'कप्' प्रत्ययकरके धान्यक शब्द बनाया हुआहै अर्थात् माष अथवा मापक शब्द जहां आताहै वहां सुवर्णमाष अर्थात् १६ बहद और एक अन्नविशेष यानी १ उड़दका बोधहोताहै इसभेदको बताना आचार्यका अभिप्रायहै । वह अभिप्राय "हेम्नश्च धान्यकस्योक्तो" इसतरहके पाठहोनेसे व्यक्तहोसकाहै ।

कोई दुराग्रहाविष्ट यह कहे कि यहांपर "हेमश्च धानस्य" ऐसाहीपाठहै क्योंकि इसपाठको लिखतेहुए अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारने "मापकस्य पर्यायो हेमो धानश्च" ऐसा लिखाहै इसलिये ये दोनों मापेके पर्यायहैं आप जैसा कहरहेहैं वैसा नहींहै । इसजगहपर सर्वतः प्रथम अकारान्त हेमशब्दका होना सम्भव है या नहीं? यह विचारणीयहै । "हि गतौ" स्वादिसे मनिन् प्रत्यय करनेसे हेमन् शब्द बनताहै इसलिये हेमन् नकारान्त शब्द होताहै न कि अकारान्त, यह प्रथम विपत्ति है । कदाचित् कोई शब्दशास्त्र पर अनास्थाकरके हठतासे अकारान्त मानभी लेवे तो सुवर्ण शब्दको कर्षका पर्याय मानाहै और सुवर्णकापर्याय हेम है । पर्यायशब्दोंका यथेष्ट प्रयोगहोताहै तब हेम शब्दके प्रयोगमें कर्ष लिया जाय या माषा? यह भारी विपत्ति होगी। इसलिये जैसा हमने कहाहै सो ठीकहै यह पाठ बहुतदिनका बिगड़ाहुआहै इसीलिये अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारने पर्यायवाचकता लिखडालीहै । उसको देखकर शार्ङ्गधरनेभी व्यामोहमें पड़कर "माषको हेमधान्यकौ (धानकौ)" ऐसा पाठलिखाहै । यदि चरकको मापाके पर्याय हेम और धान्यक अथवा धानक अभिप्रेतहोते तो कहींपरभी उनका प्रयोग तो कियाहोता यह निर्विवादहै इसलिये चरकीयपाठको सुधारना अत्यावश्यकहै । इसजगहकी भूलसे देखिये कितना विप्लव होगयाहै । परिभाषाप्रदीपप्रभृतिमें अकारान्त हेमशब्द और धान्यक अथवा धानकशब्दको "माषमिते माने" ऐसा लिखदियाहै सही, पर उसका उदाहरण प्राचीनसंहिताओंमें न देखके । किसीने शार्ङ्गधरको बतलाया और किसीने इसी विवादग्रस्त चरकीयकल्पस्थानको निर्दिष्ट किया है परन्तु संहिताओंमें व्यवहारमें लायाहुआ न बतलाया इसलिये इस अन्धपरम्पराको दूरकरना उचितहै ।

इसीतरह शार्ङ्गधरके पाठकोभी सुधारना आवश्यकहै यथा— "षड्वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका । तिसृभी राजिकाभिश्च रक्तसर्षप इष्यते ॥ तद्द्वयेन भवेदन्न मध्यमो गौरसर्षपः । यवोऽष्टसर्षपैस्तैश्च गुञ्जा स्यात्तद्द्वयेन च ॥ षड्भिस्तु रक्तिकाभिश्च मापको हेमधान्यज ।" बस इसतरहका पाठ रखनेसे "गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम्" और "यवद्वयेन गुञ्जा स्यात्" इनदोनों पाठोंका परस्पर विरोध नहीं आताहै । नहींतो एकही पुरुषके परस्पर विरुद्ध दो पाठ होनेसे मत्तप्रलाप कहा जायगा । इसीतरह "भाजनं कंसपात्रञ्च" इसजगह "भाजनं पात्रकं चैव" ऐसा पाठ होनाचाहिये । कारणकि चरकने दो आढक का नाम कंस रक्खाहै "कंसः प्रस्थाष्टकं तथा" प्रस्थाष्टक यह नाम आढकका नहीं होसकताहै वह ४ प्रस्थका होताहै इसलिये ऊपरकहाहुआ पाठ रखना उचितहै । उसके आगे चरकमें "कंसश्चतुर्गुणो द्रोणः" की जगह "कंस द्विगुणितो द्रोण" ऐसापाठकरना । शार्ङ्गधरमें "आढकं कंस आख्यातस्तथा प्रस्थाष्टकं भवेत्" ऐसा पाठ रखनेसे मार्गविशुद्धहोजायगा । "सैहिका आढकोऽस्त्रियाम् । कंसं चाथ" इसतरह सामान्यकांड, गणाध्यायमें वैजयन्तीकोषने इसभ्रमको दूरकरदियाहै । टोडरानन्दमें कृष्णात्रेयके उद्धरणमें "चतुःप्रस्थैर्भवेत्कंसः ■ स्याद्भाजनमाढकम् । पात्रं शूर्पाष्टकं गात्रं पर्यायै क्रमशो विदुः" ऐसा पाठदियाहै पर वह प्रत्यक्ष विरुद्धहै कारणकि आगे चलकर "द्रोणाम्या शूर्पकुम्भौ च" ऐसा स्वयं कृष्णात्रेयने कहाहै इसलिये वहापर "चतुःप्रस्थैर्भवेत्पात्रं ■ स्याद्भाजनमाढकम् । कंसः प्रस्थाष्टकं गात्र०" ऐसा पाठकरनेसे मार्ग विशुद्ध होजायगा । इसीतरह "गोणींशूर्पद्वयं विद्यात्खारीं भारीं तथैव च" इसजगह जिसतरह शूर्पद्वयकी गोणी होतीहै उसीतरह दो गोणीकी १ खारी, २ खारीकी १ भारी, और २ भारीका १ वाह होताहै ऐसा अर्थ तथैवचसे समझना इसी अर्थको स्पष्टकरनेकेलिये "द्वात्रिंशचैव जानीयाद्वाहं शूर्पाणि बुद्धिमान्" ऐसा आचार्यने खुलासा करदियाहै । चरकीय खारीके साथ शार्ङ्गधरकी खारी नहीं मिलती और प्रायः सबकेसाथ समानता आतीहै । वैजयन्ती कोषने मान बहुत दूरतक बतलायाहै वह उसके कोष्ठकमें खारीसे आगे दियाहै ।

ऊपरकहीहुई चरकीयपाठकी अपभ्रष्टतासे बहुतसे लोगोंको यह भ्रमहोगयाहै कि सुश्रुतकेकर्षसे चरकीयकर्ष दूनाहै कारणकि सुश्रुत मध्यम १२ उड़दोंका १ माशा मानतेहैं और ऐसे १६ माशेका १ कर्ष मानतेहैं तब सुश्रुतके हिसाबसे १९२ उड़दोंका कर्ष होताहै । चरकमें २ उड़दोंका १ जव, ४ जवकी १ अण्डिका और ४ अण्डिकाओंका १ माशा अर्थात् १६ जव अथवा ३२ उड़दका १ माशा होताहै । ऐसे ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १ कर्ष होताहै । इस १ कर्षके १९२ जव अथवा ३८४ उड़दहोतेहैं । इसतरह चरकीयकर्ष सुश्रुतीय कर्षसे ठीक द्विगुणहोताहै । इसतरहका भ्रम लोगोंके मनमें ठसगयाहै । इसीकारणसे "कालिङ्गमानञ्च चरकाचार्यसंमतं" इतना टुकड़ा डल्हणने लिखदियाहै सो भूलहै इसका कारण "धान्यमाषद्वयं यव." यह अशुद्धि मानहै इसके अतिरिक्त कोई कारण नहींहै देखिये—सुश्रुतीय १९ अण्डिकाओंका १ धरण और २॥ धरणका १ कर्ष होताहै । २॥ धरणकी ४८ अण्डिका होतीहैं उतनीही चरकीयकर्षकी होतीहैं इनका नाम सुश्रुतने निष्पाव और

चरकने अण्डिका रक्खाहै ये दोनों एकही वस्तुहैं । उड़दके हिसाबसे "तत्र द्वादश धान्यमाषा मध्यमा सुवर्णमाषकः, ते षोडश सुवर्णम्" इसतरह कर्ष बनायाहै। १२ उड़दका १ माशा और १६ माशेका १ कर्ष अर्थात् १९२ उडदका कर्षहै । चरकीयकर्षभी १९२ उड़दकाही होताहै क्योंकि यवका वज़न उड़दके बराबरहोताहै इसको जो चाहे सो धरमके कांटेपर रखकर देखलेवे । इसलिये "धान्यमाषद्वयं यव." की जगह "धान्यमाषसमो यव" ऐसा पाठ सुधारलेनेसे ४ यव अथवा उड़दकी १ अण्डिका, ४ अण्डिका का १ माशा, ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १ कर्षहोताहै अर्थात् १९२ उडद या यवका १ कर्ष हुआ इसमें अन्तरहीक्याआया ? हां चरकीय १२ माशेकाकर्षहै औरसुश्रुतीय १६ माशेकाहै यह आपाततः भेद मालूमहोताहै परन्तु सुश्रुतीयमाषा ३ अण्डिका (१२ उडद) काहै और चरकीय ४ अण्डिका (१६ उडद) काहै इसलिये माषोंमें अवश्य भेदहै चरकीयमाषा बड़ाहै और सुश्रुतीय छोटा । निष्कर्षमें सुश्रुतीय ६ रत्तीका माषा होताहै और चरकीय ८ रत्तीका । इसलिये केवलमाषोंमेंही भेदहै इसकेसिवाय कर्षप्रभृतिमें कोईभेदनहींहै। यदि 'ताश्चतस्रश्च माषक'की जगह 'तास्तिस्रश्चैकमाषक 'करदिया जाय और 'भवेच्छाणस्तु ते त्रय ' की जगह 'शाणःस्यात्तच्चतुष्टयम्' ऐसा कर दियाजाय तो फिर माशोंमेंभी फरक न आवेगा—चरकीयमूलपाठकी अशुद्धिको समझनेकी शक्ति न होनेसे चक्रपाणिदत्तने यहांपर अंडबंड लिखमाराहै वह सर्वथा अनादेयहै। चक्रपाणिदत्तकी तरह अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारनेभी "परिमाणं पुन षड्वंश्यो मरीचि. । ताः षट् सर्षपः, तेऽष्टौ तण्डुलः । तौ धान्यमाषः । तौ यव" ऐसी अविचारसे अशुद्धपाठकीही व्याख्या करदीहै। इसीतरह "तुला पुन. पलशतं, तानि विंशतिर्भार" यह अन्यग्रन्थोंकी चरकनेसाथ खिचड़ी पकाडालीहै कारण कि इसभारका नाम चरकमें नहींहै किन्तु सुश्रुत और कृष्णात्रेयमें है। चरकमें भारको बाह बतलायाहै उससे आधेको भारी बताईहै वहभी इसभारसे अधिकप्रमाणकीहै । इसलिये यह प्रतीतहोताहै कि इनसबने इसका तलस्पर्श न करके एक अन्दाज़से लिखमाराहै । कितनेही अल्पलोग सुश्रुतीय धरणमानको अन्यमत बतलातेहैं और यहांका कर्ष ८० रत्तीकाहै इसतरह व्याख्यान करतेहै सो अज्ञताहै । यहां दो मत नहींहै किन्तु उसीमानको द्वितीयप्रकारसे सिद्धकियाहै इनमें अणुमात्रभी अन्तर नहींहै जैसा ९६ रत्तीका कर्ष पहिलाहै वैसाही यहहै और इसीको षड्धरणादियोगोंमें लियाहै ।

"त्रिरजोभिश्च सिकता ताभिः षोडशभिः क्षुधा ।
द्वयेन सर्षपो रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः ॥
तद्द्वयं धान्यमाषः स्यात्तद्द्वयं रक्तिका मता ।
चतुर्भिरण्डिका ज्ञेया षड्भिर्वल्लः प्रकीर्तितः ॥
पक्वगुञ्जाफलैस्तुल्यैरष्टाभिर्माषकः स्मृतः ।
रक्तिभिः पञ्चभिर्माषः षड्भिर्वासप्तभिस्त्रिभिः ॥
दशभिर्वा भवेदत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः ।
अण्डिका चापि निर्दिष्टा क्वचिन्माषद्वयेन वै ॥
चतुर्भिर्माषकैः शाणस्त्रिभिर्वाऽऽत्रेयसम्मतम् ।
गद्याणो माषकैः षड्भिः शाणाभ्यां द्रङ्क्षणो मतः ॥
कोलश्च घटकश्चैव स भवेत्क्षुद्रसञ्ज्ञकः ।
शाणैश्चतुर्भिः कर्षः स्यादक्षं पाणितलं विदुः ॥
पिचुः सुवर्णकं किञ्चिद्विडालपदकं तथा ।
उदुम्बरो हंसपदं करमध्यश्च तिन्दुकम् ॥
कवलग्रहः पाणिकश्च स प्रोक्तः पाणिमानिका ।
कर्षद्वयेनाष्टमिका शुक्तिः सैव प्रकीर्तिता ॥
शुक्तिभ्यां तु प्रकुञ्चः स्यात्पलं मुष्टिश्चतुर्थिका ।
आम्रं विल्व पलाभ्यां स्यात्प्रसृतिः प्रसृतस्तथा ॥
पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम् ।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवश्च चतुष्पलम् ॥
वेणुवार्क्ष्यायसादीनां भाण्डं यच्चतुरङ्गुलम् ।
विस्तीर्णमथ वृत्तञ्च कुडवं तं विनिर्दिशेत् ॥
कुडवाभ्यां शरावः स्यान्मानिकाऽष्टपलं तथा ।
चतुर्भिः कुडवैः प्रस्थस्तथा सुतमितीरितः ॥
चतुष्प्रस्थैर्भवेत्पात्रं तत् स्याद्भाजनमाढकम् ।
कंसः प्रस्थाष्टकं गात्रं पर्यायैः क्रमशो विदुः ॥
चतुराढकसङ्ख्यातो द्रोणश्च परिकीर्तितः ।
कलशो नल्वणो राशिर्मणश्च परिकीर्तितः ॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुष्षष्टिशरावकः ।
शूर्पाच्च द्विगुणा द्रोणी वहो गोणी च सा स्मृता ॥
तुला पलशतं तासां विंशतिर्भार उच्यते ।

कृष्णात्रेयसंहिता.

उपरिनिर्दिष्ट कृष्णात्रेयसंहिताकाभी यह मान चरकीयमानसे मिलता जुलताहै केवल १–२ स्थानोंपर नाममात्रका अन्तरहै यथा—"त्रिरजोभिश्च सिकता ताभिः षोडशभि क्षुधा। द्वयेन सर्षपो रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदु ॥" अर्थात् ३ रजकी १ सिकता, १६ सिकताकी १ राजिका और २ राजिकाका १ रक्तसर्षप मानाहै इसहिसाबसे १ रक्तसर्षपमें ९६ त्रसरेणु होतेहैं । चरकीयमानमें १ रक्तसर्षपके १०८ त्रसरेणु मानेगयेहैं केवल १२ त्रसरेणुका अन्तर आताहै । यह आनुमानिक प्रमाण होनेसे इतने अन्तरका होना सम्भवहै इसलिये यह विशेष ध्यान देने योग्य नहींहै ।

आगे चलकर "पक्वगुञ्जाफलैस्तुल्यैरष्टाभिर्माषकः स्मृत । रक्तिभिः पञ्चभिर्माषः षड्भिर्वा सप्तभिस्त्रिभिः ॥ दशभिर्वा भवेदत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः ॥" माशेके उत्तम, मध्यम और अधम तीनभेदोंसे १०, ८, ७, ६, ५ और ३ रत्तियोंके ६ तरहके माशे बतायेहै । इनमेंसे १० और ८ रत्तीकामाशा उत्तम, ७ और ६ रत्तीका मध्यम, तथा ५ और ३ रत्तीका अधमकोटिमें रक्खाहै । कृष्णात्रेयने उपर्युक्तप्रमाणमें ८ रत्तीका माषालियाहै इसहिसाबसे कर्षकी १२८ गुञ्जा या रत्ती होतीहै । यह चरकीयकर्षसे प्रमाणमें ३२ रत्ती अधिक हो

जाताहै । यदि ६ गुञ्जाका मध्यममाषा लियाजाय तो दोनों कर्ष एकबराबर होजातेहै । औषधप्रमाणमें ६ गुञ्जाकामाषा-लेना ठीकमालूम पडताहै क्योंकि कृष्णात्रेयसंहिताकी परिभाषा में "वम्यादिरक्तमोक्षेषु माने मूत्रवसादिषु । वमनादिषु योज्यश्च माषकश्चाष्टरक्तिक ॥" अर्थात् वामकस्वाथ, रक्तमोक्ष, मूत्र और वसादिकोंकेमानमें ८ रत्तीकामाषालेना ऐसा विशिष्ट रूपसे कहाहै । साधारणतया ६ रत्तीकामाषा मानलेनेसे सुश्रुत, चरक और कृष्णात्रेयके कर्षमें कोई अन्तर नहीं रहता । वैसेतो "कषायादिनिरुहेषु द्रव्यमानविधावपि । ततोऽष्टादश-भिर्मापैर्माषरुः परिकीर्तित ॥ लोहस्त्यादिविषये दशरक्तिक-माषकः" इत्यादि कार्यपरत्वेन ९ रत्तीकाभी माशा मानाहै उन सबको मान्य करना असम्भवहै । कहीं २ पर १४ रत्तीका माषा भी बताया है पर वह व्यवहार्य नहींहै ।

मागधमानमें कुडवका विशेषमान "वेणुवार्ल्योयसादीना भाण्डं यच्चतुरङ्गुलम् । विस्तीर्णमथ वृत्तञ्च कुडवं तं विनिर्दि-शेत् ॥" इसतरह दियाहै । कुडवसे नीचेका मान यहा नहीं दियागयाहै पर हिसाबलगाकर बनाया जासक्ताहै । इसमें अङ्गुलका मान जानना अत्यावश्यकहै इसकेलिये वास्तुविद्या-प्रभृतिमें मान बतलायाहै । यथा—"परमाणुभिरष्टाभिस्त्रसरेणु-रिति स्मृत । त्रसरेणुश्च रोमाग्र लिक्षा यूका यवस्तथा ॥ क्रमशोऽष्टगुणा प्रोक्ता यवोऽष्टगुणितोऽङ्गुलिः ॥" यहापर क्रमश परमाणु, त्रसरेणु, रोमाग्र, लिक्षा, यूका, यव इनकी आरम्भसे उत्तरोत्तर अष्टगुणित सख्या आतीहै इसहिसाबसे १ यवमें ३२७६८ परमाणु होतेहैं और तुलामानमें १ यवके ५१८४० परमाणु होतेहैं । इन्ही ८ यवोंकी चौडाईका व्यास १अङ्गुलहोताहै। तुलामानमें परमाणुसे आरम्भ तो इसीके सदशहै पर इसमें तद्गत गुरुत्व (वजन) लियागयाहै और अङ्गुलमानमें तद्गत व्यास लिया गयाहै इसलिये दोनोंका विषयभिन होनेसे दोष नहीं आता क्योंकि मान सहस्रधा होताहै इसबातको आगे सूचित करेंगे । अङ्गुलसे आगेका माप यद्यपि यहा अत्यन्त उपयुक्त नहींहै परन्तु किसीको यह अपेक्षा हो कि इसके आगेका माप किसतरहकाहै ? इस आकाङ्क्षाको शान्तकरनेके-लिये तथा भूमिस्थद्रव्यके अहिवल तथा धराचक्रादिद्वारा विज्ञानकेलिये उपयुक्तहोनेसे यहा देदियागयाहै ।

> यवोदरैरङ्गुलमष्टसङ्ख्यै-,
> हस्तोऽङ्गुलैः षड्गुणितैश्चतुर्भिः ।
> हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः,
> क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम् ॥
> स्याद्योजनं क्रोशचतुष्टयेन,
> तथा कराणां दशकेन वंश. ।
> निवर्तनं विंशतिवंशसङ्ख्यैः,
> क्षेत्रं चतुर्भिश्च भुजैर्निबद्धम् ॥
> लीलावती (परिभाषा)

अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

कलिङ्गदेश यद्यपि इससमय अप्रसिद्धसा होगयाहै परन्तु "तथा मत्स्यकलिङ्गाश्च कौशिकांश्च समन्ततः । अन्वीक्ष्य दण्डकारण्यं सपर्वतनदीगुहम् ॥ नदीं गोदावरीं चैव सर्वमेवा-नुपश्यत । तथैवान्ध्राश्च पुण्ड्राश्च चोलान् पाण्ड्यांश्च केरलान् ॥ वाल्मीकि० किष्कि० ४१।११–१२" एतन्निर्दिष्टमार्गसे गोदा-वरीके उत्तरमें मत्स्य, कलिङ्ग और कौशिक ये देशहैं और गोदावरीके दक्षिण आन्ध्र, पुण्ड्र, चोल, पाड्य और केरलको बतलायाहै इससे यह निर्धारित होताहै कि विजयनगरके समीप कलिङ्गदेश होना चाहिये । वहाका कर्ष १० माशेका प्रथम समयमें होगा ऐसा अनुमान होताहै क्योंकि उसकी कुछ छाया नीचे दियेहुए कोष्ठकमें मिलतीहै परन्तु इससमय उसमें फेरफार होकर कईतरहके मान होगयेहैं । आधुनिक कलिङ्गदेशीयतोल इसप्रकारहै जो कि शार्ङ्गधरीय कलिङ्गमानसे मिलताहै ।

कलिङ्गदेशीयमानम्			शार्ङ्ग०
३२ गुञ्जा=१ वरहा	...	...	१ शाण
१० वरहा=१ पल	...	...	१ पल
८ पल=१ सेर	...	...	१ शराव
५ सेर=१ वीसा	...	...	२॥ प्रस्थ
८ वीसा=१ मन	..	...	५ आढक
२० मन=१ भार	...	...	१०० आढक

आन्ध्रदेशीयप्रचलितमानम्

१ भार=२० मन	¼ तोला=७½ चिन्नम्
१ मन=८ वीसा	⅛ तोला=३¾ चिन्नम्
१ वीसा=५ सेर	१ चिन्नम्=२ अड्गिा
१ सेर=८ पल	१ अड्गिा=२ गुञ्जा
१ पल=३तोला (१०वरहा)	१ गुञ्जा=४ चावल (सतुष)
१ तोला=३० चिन्नम्	१ चावल=२ राजिका
½ तोला= १५ चिन्नम्	

इसमानमें पलके वजनतक कलिङ्गदेशीयमानहै पलसे नीचे के वजनमें अन्तर करदियाहै इससमय १ पलके ३ तोले मानकर तोलेको १२० गुञ्जाका बनायाहै इस हिसाबसे १ पलकी ३६० गुजा होतीहैं और कलिङ्गमानके १ पलकी ३२० गुञ्जा होतीहैं इनदोनोंमें ४० गुञ्जाका अन्तर आताहै सो मालुम होताहै कि व्यापारियोंने फरेबीसे इस-भेदको भुलादियाहै कारणकि देनेकेलिये प्राचीनतोल रक्खाहो और लेनेकेलिये बनावटी तोल बनादियाहो यह सम्भवहै । उदाहरणार्थ आजकल इसदेशमेंभी बसराप्रभृतिसे मोती वगैरह लाये जातेहैं वे वहाके तोलेके हिसाबसे आतेहैं वहाका तोला यहाके तोलेसे कुछ अधिकहै सो व्यापारी लोग उसतोलसे लाकर यहा इसतोलसे बेचतेहैं यह फर्क हरीफाईकाहै । इसी-तरह दक्षिणदेशमें भी हुआहै तोलमें सवजगहके व्यापारी प्राय ऐसीही युक्ति कियाकरतेहैं इसकी नियता करनी असम्भव जैसाहै स्वार्थप्रधान दुनियासे हरीफाईका जाना असम्भवहै ।

सौकर्यार्थं सुश्रुतादिमानबोधकं कोष्ठकम्

सुश्रुतीयमानम्	*चरकीयमानम्*	*शार्ङ्गधरीयमानम्*
... ...	... ...	३० परमाणु=१ वंशी, त्रसरेणु
... ...	६ वंशी=१ मरीचि	६ वंशी=१ मरीचि
... ...	६ मरीचि=१ राजिका	६ मरीचि=१ राजिका
... ...	३ राजिका=१ रक्तसर्षप	३ राजिका=१ रक्तसर्षप
... ...	... ...	२ रक्तसर्षप=१ पीतसर्षप
... ...	८ रक्तसर्षप=१ तण्डुल	... ...
... ...	२ तण्डुल=१ धान्यमाष (उड़द), यव	८ पीतसर्षप=१ यव, धान्यमाष (उड़द)
... ...	... ...	२ यव=१ गुञ्जा, रक्तिका
४ धान्यमाष=१ निष्पाव (अण्डिका)	४ धान्यमाष=१ अण्डिका (निष्पाव)	... ...
१२ धान्यमाष=१ माशा	४ अण्डिका=१ माशा	६ गुञ्जा=१ माशा
... ...	३ माशा=१ शाण	४ माशा=१ शाण, धरण, टङ्क
८ माशा=१ कोल	२ शाण=१ कोल, द्रङ्क्षण, बदर	२ शाण=१ कोल, क्षुद्रक, द्रङ्क्षण, वटक.
१९ निष्पाव (अण्डिका)=१ धरण	... ...	... ...
२ कोल=१ कर्ष, सुवर्ण, अक्ष, बदर, पाणितल	२ कोल=१ कर्ष, सुवर्ण, अक्ष, विडाल-पदक, पिचु, पाणितल, तिन्दुक, कवलग्रह	२ कोल=१ कर्ष, पाणिमानिका, अक्ष, पिचु, पाणितल, किञ्चित्पाणि, तिन्दुक, विडालपदक, षोडशिका, करमध्य, हंसपद, सुवर्ण, कवलग्रह, उदुम्बर
२ कर्ष=१ शुक्ति	२ कर्ष=१ शुक्ति, पलार्द्ध, अष्टमिका	२ कर्ष=१ शुक्ति, अर्द्धपल, अष्टमिका
४ कर्ष=१ पल, पाणिशुक्ति	२ शुक्ति=१ पल, मुष्टि, प्रकुञ्च, चतुर्थिका, बिल्व, षोडशिका, आम्र	२ शुक्ति=१ पल, मुष्टि, आम्र, चतुर्थिका, प्रकुञ्च, षोडशी, बिल्व
... ...	२ पल=१ प्रसृत	२ पल=१ प्रसृत, प्रसृति
४ पल (२ प्रसृत)=१ कुडव	४ पल (२ प्रसृत)=१ कुडव, अञ्जलि, अष्टमान	४ पल (२ प्रसृत)=१ कुडव, अञ्जलि, अर्धशराव, अष्टमान
... ...	२ कुडव=१ मानिका	२ कुडव=१ मानिका, शराव
४ कुडव=१ प्रस्थ	४ कुडव (२ शराव)=१ प्रस्थ	४ कुडव (२ शराव)=१ प्रस्थ
२ प्रस्थ=१ अर्धपात्र	२ प्रस्थ=१ अर्द्धपात्र	२ प्रस्थ=१ अर्द्धपात्र
४ प्रस्थ=१ आढक, पात्र	४ प्रस्थ=१ आढक, पात्र,	४ प्रस्थ=१ आढक, पात्र, भाजन
... ...	८ प्रस्थ (२ आढक)=१ कंस	८ प्रस्थ (२ आढक)=१ कंस
४ आढक=१ द्रोण	४ आढक (२ कंस)=१ द्रोण, अर्मण, नल्वण, कलश, घट, उन्मान	४ आढक (२ कंस)=१ द्रोण, कलश, नल्वण, अर्मण, उन्मान, घट, राशि.
... ...	२ द्रोण=१ शूर्प, कुम्भ	२ द्रोण=१ शूर्प, कुम्भ
... ...	२ शूर्प=१ गोणी	२ शूर्प=१ गोणी, द्रोणी, वाह
... ...	२ गोणी=१ खारी	४ गोणी=१ खारी
... ...	२ खारी=१ भारी	... ...
... ...	४ खारी (३२ शूर्प)=१ वाह	... ...
१०० पल=१ तुला	१०० पल=१ तुला	१०० पल=१ तुला
२० तुला=१ भार	... ...	२० तुला=१ भार

२ गोणी=१ वाह

१ वाह=१ खारी (दूसरोंके मतमें कुम्भी)

बहुतोंके मतमें २ वंसकी १ खारी होतीहै इसीको मानी अथवा वाह कहतेहैं । कितनेही ४ खारीका १ वाह बतलातेहैं । खारीके चतुर्थांशको गोणिका कहते हैं। कितनेही २ प्रस्थको वाहकहतेहैं । २० कुम्भको जटी और १० कुम्भको पाद्यमिक अथवा कुम्भकहतेहैं । सुवर्णके ८ और तांबेके ७० पलोंको धारणकहतेहै । दूसरेलोग तांबेके १० पलोंको धारणकहतेहैं । रूप्यके ३॥ पलको शतमान, १०० पलको तुला, १० तुलाका १ कश अथवा पटिक, २ पटिकका १ शाकटभार अथवा हलाड, १०शाकटभारको सम, सम्र, घारभार अथवा शाकट कहतेहैं ।

१० तुला=१ कश
१० कश=१ आचित
१० आचित=१ द्रुपाचित
१० द्रुपाचित=१ होट
१० होट=१ हेलक
१० हेलक=१समक
१० समक=१ सम
१० सम=१ वाहित
१० वाहित=१ भारित

माप, शाण, तल, मुष्टि, अञ्जलि, प्रस्थ, आढक, द्रोण, गोणी, खारी ये क्रमसे चतुर्गुण समझना । हस्तादिकोंके मानको पाय्यकहतेहैं । गुडवादिकोंके मापको द्रुवय, तराजूके तोलको पौतव और हस्तादिकके मापनेकी डोरीको भागसूत्र अथवा रागसूत्र कहतेहैं ।

मानवधर्मशास्त्रमें "जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रज" इत्यादि कुछ तत्सामयिक दण्डके मानका उद्देश कियाहै पर वह औषधोपयोगि नहींहै । उससमयभी व्यवहारोंकी भिन्नताको लेकर कईतरहके मान थे उन्हीं सबकी खिचडी वैद्यसन्तोपकारने पकाईहै इसे मानवधर्मशास्त्रका मान नहीं समझना । मानवधर्मशास्त्रीयमान नीचे दियाहै उसे देखकर खातिरी हो सक्तीहै यथा—

"जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः ।
प्रथमं तत्प्रमाणानां त्रसरेणुं प्रचक्षते ॥
त्रसरेणुभिरष्टाभिर्लिक्षैका परिमाणतः ।
ता राजसर्षपस्तिस्रस्ते त्रयो गौरसर्षपः ॥
सर्षपा षट् यवो मध्यस्त्रियवं त्वेककृष्णलम् ।
पञ्चकृष्णलको मापस्ते सुवर्णस्तु षोडश ॥
पलं सुवर्णाश्चत्वारः पलानि धरणं दश ।
द्वे कृष्णले समधृते विज्ञेयो रौप्यमापकः ॥
ते षोडश स्याद्धरणं पुराणश्चैव राजतः ।
कर्षापणस्तु विज्ञेयस्ताम्रिकः कार्षिकः पणः ॥
धरणानि दश ज्ञेयः शतमानस्तु राजतः ।
चतुःसौवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः ॥
पणानां द्वे शते सार्धे प्रथमः साहसः स्मृतः ।
मध्यमः पञ्च विज्ञेयः सहस्रं त्वेव चोत्तमः ॥

मनु० ८।१३२–१३८

जिसतरह कलिङ्गमानकी दुर्दशा हुईहै उसीतरह हिन्दी गणितकी पुस्तकोंमें मानकी दुर्दशाहै यथा ८ खसखस=१ चावल, ८ चावल=१रत्ती, ८ रत्ती=१ माशा, १२ माशे=१ तोला इसजगह ८ खसखसका जो १ चावल लिखाहै सो खबरनहीं किसमहाशयने अन्दाजसे लिखडालाहै । तोलमें लाल चावल लियाजाताहै इस १ चावलपर लगभग ७५ खसखस चढतेहैं और लिखनेवालेने ८ ही खसखस लिखेहै । इसपर कुछभी विचार न करके पुस्तकोंमें वैसाही भेडियाधसान चलारक्खाहै इसतरफ किसीकी भी दृष्टि नहीं गई । सन् १९२१ में निर्णय सागरप्रेसमें लीलावतीकी सटीक पुस्तक छपीहै उसकी टीकामें भी **'तोलपरिमाणभारतीय'** शीर्षककेनीचे ८ खसखसका १ चावल लिखाहै। वज़नमें तथा आकारमें किसीभीतरह १ चावल के बराबर ८ खसखस नहीं होते । इसकी तर्फ़ देखकर चित्त अत्यन्त खिन्न होताहै इसीतरह सबजगह तोलमें बहुत फेरफार हुआहै उसे सुधारनेकी आवश्यकताहै ।

सुश्रुतीयमान प्राचीनकालसे चला आताहै चरकने भी इसीको बतलायाहै । मनुष्योंकी अग्निके ह्रासकेकारण कलिङ्गमानकी पीछेसे कल्पना हुई प्रतीतहोतीहै । इन्हीं दोनोंमानोंका अनुकरण करके लोगोंने नानातरहके तोल बनाए हुएहैं । माग धीयप्रस्थमें १६ रुपयेभर वज़न बढाकर ८० रुपयेका बङ्गाली सेर बनायाहै इसीमें १६ रुपये और मिलाकर ९६ रुपयेका पक्काहमें सेर बनायाहै इसीतरह कहीं अधिकता कहीं न्यूनता करके सेर बनाए हुएहै परन्तु सबका मूल मागधमानही है।

इसजगह गूढरहस्य यहहै कि मागधकीतरह माषादि विभागयुक्त कोईभी तोल लियाजाय तो उसमें किसीतरहका अन्तर या हर्ज नहीं होताहै परन्तु जिसमानसे कामलिया जाय वहापर उसी मानके वजनोंको काममें लेना चाहिये उसमें साङ्कर्य करनेसे दोष उपस्थित होगा । यदि एकयोगमें ५ वस्तुएं कर्षप्रमाण लिखीहों तो उन पाचोंके तोलनेमें एकही कर्षका उपयोग करना चाहिये जैसे १० रत्तीके माशेसे १६ माशेका कर्ष मानकर दवाए लेवें तो पाचोंको उसीकर्षसे लेना उचितहै और कुडवादिक मापसे कोई चीज़ उसमें आईहो तो उसेभी इसीकर्षके हिसाबसे डालना उचितहै ऐसा करनेसे कोईभी अन्तर न पडेगा इसीकारण अपने अभिमत मानको दिखलाकर मानविशेषकी नियतता दूरकरनेके अभिप्रायसे देखिये सुश्रुत क्या लिखतेहैं यथा–"तत्राऽन्यतमपरिमाणसम्मितानां यथायोगं त्वक्पत्रमूलादीनामातपपरिशोषितानां छेद्यानि खदशश्छेदयित्वा भेद्यान्यणुशो भेदयित्वाऽवकुट्याऽष्टगुणेन

षोडशगुणेन वाऽम्भसाऽभिषिच्य स्थाल्या चतुर्भागावशिष्टं क्वाथयित्वाऽपहरेदित्येष कषायपाककल्प । स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव स्नेहचतुर्थांशो भेषजकल्कस्तदैकध्यं संसृज्य विपचेदित्येष स्नेह पाककल्पः । अथवा तत्रोदकद्रोणे त्वक्पत्रमूलादीना तुलामावाप्य चतुर्भागावशिष्टं निष्क्वाथ्यापहरेदित्येष कषायपाककल्प । स्नेहकुडवे भेषजपलं पिष्टं कल्क चतुर्गुण द्रवमावाप्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्प ॥ सु. चि. ३१।८" यहापर 'अन्यतमपरिमाणसम्मिताना, से यही ज्ञापन करातेहै कि परिमाण कोई व्यवस्थित वस्तु नहींहै । दुनियामें परमाणुसे लेकर हिमाद्रिप्रभृति समस्त पदार्थ स्वेतरपदार्थपरिच्छेदक होतेहैं वे कहींपर ऊंचाई, कहींपर नीचाई, कहींपर घेर, कहींपर विस्तार, कहींपर कृशता, कहींपर स्थौल्य, कहींपर आकार, कहींपर गुण, कहींपर काल, कहींपर गुरुत्वादि विशेष गुण अर्थात् वज़न इत्यादिभेदोंसे कईतरहकी परिच्छेदकताको निष्पन्न करतेहै । इनमेंसे प्रकरणविशेषको देखकर अभीष्ट परिच्छेदकताको निर्धारितकरना यह परिच्छेदकका खास कर्तव्यहै । यहा प्रकरण चिकित्साका है इसमें बहुधा वजन (तोल) की जुरूरत पड़तीहै क्योंकि वज़न (तोल) विना किसीभी चीज़को तैयार नहीं करसकते और न देसक्तेहै । जो रातदिन व्यवहारमें आनेवाला आहारहै उसमेंभी तोलबिना चीज़ोंको तैयार करना चाहे तो नहींकरसक्ते । उदाहरणकेलिये चावलप्रभृतिको लेलेवें जब चावल और जल ठीकवज़नसे डालकर अन्दाज़की अग्नि लगाई जायगी तभी खानेकेयोग्य चावल तैयारहोंगे अन्यथा नहीं । इसीलिये " न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणा जायते क्वचित् ॥" शार्ङ्ग० । "तत्र सर्वाण्येवौषधानि व्याध्यग्निपुरुषबलान्यभिसमीक्ष्य विदध्यात् ॥ सु. सू. ३९।१०" "द्रव्यप्रमाण तु यदुक्तमस्मिन्मध्येषु तत्कोष्ठवयोबलेषु । तन्मूलमालम्ब्य भवेद्विकल्प स्तेषा विकल्प्योऽभ्यधिकोनभाव ॥ च क १२।८३" इत्यादि वाक्य कहेगयेहैं । इन वाक्योंसे यह निष्कर्ष निकलताहै कि प्रथम वस्तुस्थितिको देखकर जैसी जहा योग्यता मालूमपड़े वैसा व्यवहारकरे । योग्यताके ज्ञानमें आतुरकी शरीरसम्पत्ति, देश और कालादिकोंकी तुलना मुख्यकारणहै । रोगनिर्मूलन कार्यमें औषध मुख्यकारण होताहै और प्रमाणप्रभृति समस्त उपकरण होतेहैं इनकी योग्यता देखकर औषधमात्राका निर्धारण करना वैद्यकी बुद्धिपर निर्भरहै वैद्यकी बुद्धि बढानेकेलिये शास्त्रकारोंने एक दिग्दर्शनकरायाहै न कि तावन्मात्र मर्यादामें उसे निबद्धकियाहै ।

पूर्वोक्तसुश्रुतीय उदाहरणोंमें त्वक्, पत्र, मूल, फल, पुष्प प्रभृतिको धूपमें सुखाकर काढेकेयोग्य कूटकर अठगुने अथवा सोलहगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टक्वाथका ग्रहण बतलायाहै और आगे चलकर १ तुलाद्रव्यको एकद्रोण (२५६ पल) जलमें पकाकर चतुर्भागावशिष्ट क्वाथलेनेको लिखाहै तथा बीचमें स्नेहसे चतुगुण [illegible] और द्रवचतुर्थांश कल्क डालकर स्नेहका मृदु, मध्य, खर, यह त्रिविध पाक लिखाहै । इनसे कल्क, स्नेह और क्वाथका प्रमाणतो विस्पष्ट होजाताहै परन्तु स्नेहापेक्षया क्वाथ्य द्रव्यका विस्पष्टीकरण नहींहोताहै कि वह कितना लियाजाय ? इसकेलिये प्रसिद्धयोगोंमें जहा जो प्रमाण लिखाहो उसे लेना और जहा क्वाथ्यका प्रमाण नहीं लिखाहै वहापर "स्नेहभेषजतोयाना प्रमाणं यत्र नेरितम् । तत्रेयं विधिरास्थेयो निर्दिष्टे तत्तदेव तु ॥ अनुक्ते द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिल मतम् । कल्कक्वाथवनिर्देशे गणात्तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ सु. चि. ३१।९–१०" इसतरह निर्धारण कियाहै यद्यपि स्नेहसे द्रवके चातुर्गुण्य विधानसे क्वाथ, क्षीर, मद्य और आसवप्रभृति सभी उपस्थितहोतेहैं तथापि प्रत्यासत्तिन्यायसे ऊपर कषायकल्पका विधान लिखनेसे कषायही सर्वत प्रथम बुद्ध्यारूढ होताहै और वह ८, १६ और ५ गुने जलमें पकानेके भेदसे ३ तरहकाहोताहै उनमेंसे अन्यतम कषाय स्नेहसे चतुर्गुणित होनाचाहिये यह निर्द्धारित होताहै ।

यद्यपि तृतीयकल्पमें इससमय "अथवा तत्रोदकद्रोणे०" ऐसापाठ सुश्रुतमें मिलताहै परन्तु वह उचित नहीं प्रतीतहोताहै। कारण कि तुलानाम १०० पलकाहै । उसे १ द्रोण अर्थात् २५६ पल जलमें उबालकर चतुर्थांशावशेष रखकर कार्यकरना दुस्तरहै । यद्वा तद्वा करके कियाभी जायगा तो वह निकम्मा होगा । कारण कि अल्पपाकसे क्वाथमें सारका निकलना असम्भव है इसलिये यहापर द्विद्रोण ऐसा पाठ अनुमित होताहै ऐसा होनेसे ५१२ पल जल होगा उसका चतुर्थांशावशेष १२८ पल रहजायगा । इसमें चतुर्थांश ३२ पल स्नेह पकसकेगा । इस (तृतीयकल्पमें) स्नेहसे तिगुनेसे कुछ अधिक क्वाथ्य द्रव्य आताहै इसीको लोगोंने चतुर्गुणके नामसे लिखदियाहै देखो इन्दुटीकामें लिखीहुई पद्यरूपपरिभाषा–"चतुर्गुणेन तोयेन क्वाथयेदौषधानि तु । ऋषीणा सुश्रुतादीना सर्वेषा मतमीदृशम् ॥ एतावास्तु विशेषोऽत्र शेषमत्रापि पूर्ववत् । क्वाथ्य तु भेषज स्नेहादन पक्षे चतुर्गुणम् ॥ १६–१७ अ स. कल्प०" यह थोडीसे विचार न करनेसे लिखागयाहै और सुश्रुतीयपाठकी अशुद्धिका पता न लगनेसे "पलव्यपेक्षयाऽप्यस्ति तथा प्रस्थव्यपेक्षया । सुश्रुतस्य तु य पूर्वमुपन्यस्तश्चिरन्तन ॥ पाठ पलव्यपेक्षाया ज्ञापक समुदाहृतम् । इत्येव त्रिविध प्रोक्त कषायग्रहण प्रति ॥ २१–२२" ऐसी किसीने मनगढन्त कल्पनाभी करडालीहै । इनके कथनानुसार यदि माना जायगा तो ४, ८ और १६ की जगह ८, १६ और ३२ गुण जल लेना होगा और वैसा होनेसे ८ और १६ गुणितकहना अशक्य होगा इसलिय पलव्यपेक्षया और प्रस्थव्यपेक्षयाकाजाल अर्धजरतीन्यायसे दूषितहोनेके कारण सर्वथा त्याज्यहै क्योंकि इन्होंसे अपने कहेहुएकाभी पालन न होसका यथा–' चतुर्गुणोदके पक्वे स्नेहाद्द्रव्यं चतुर्गुणम् । अष्टाविंश पलार्ते द्रव्यक्वाथस्य जायते । स्नेहस्यैव विपक्वस्य शुल्कं तथ भवेद्यदि । आर्द्रे चेतु द्रवं सप्तात्र पलसप्तकम् । स्नेहस्यैव भवेत्क्वाथे यत्पुष्पादाष्पलाधिकम् । एवं बहुत्वाद्द्रव्यस्य यच्चतुर्गुणितोदकः ।

सकल्पोभिमतस्तत्र स्नेहः स्याद्दीर्यवत्तरः।" यद्वा तुलामानमेंभी द्विगुणपरिभाषाको लगानेसे नियमभङ्ग हुआ इससे हमने जो पूर्वमें रास्ता बतलायाहै वही श्रेयस्करहै। सुश्रुतकेपाठको सुधारलेनेसे राजमार्ग विशुद्ध होजायगा। पचस्यपरिभाषानिर्माताने अच्छीतरह सुश्रुतीयपाठकी अशुद्धिको न विचारकर छात्रोंकेलिये एक नवीन जाल फैलादियाहै वह सर्वथा हेयहै। सुश्रुतने तृतीयकल्पमें द्रव्यापेक्षया पञ्चगुणसे कुछ अधिक जल दियाहै और स्नेहसे नाममात्र अधिक त्रिगुण द्रव्य दियाहै इससे सुश्रुतीय तृतीयकल्पमें स्नेहसे चतुर्गुणित क्वाथ्यका विधानहै ऐसा कहनाभी भ्रमहै। यहांपर कितनेही लोगोंने तृतीयकल्पको नियमार्थ मानकर "तुलाद्रव्ये जलद्रोणो द्रोणे द्रव्यतुलाम्भसि। ततः पलशते द्रव्ये जलद्रोणोऽपि चेष्यते॥" व्याख्या=यत्र तुलाद्रव्य जले पचेदित्युक्त परं जलप्रमाणं नोक्त तत्र द्रोणमितं जलं ग्राह्यम्। यत्र तु द्रोणमिते जले द्रव्य पचेदित्युक्त परं द्रव्यप्रमाणं नोक्त तत्र द्रव्य तुलाप्रमाणं ग्राह्यमिति" ऐसा मनगढ़न्त श्लोक बनाडालाहै। "भक्षितेऽपि लशुने न शान्तो व्याधि" इसन्यायसे ऐसी कुकल्पना करनेपरभी कुछ अभीष्टसिद्धि नहीं होतीहै क्योंकि शुष्कद्रव्यके चूर्णको १॥ गुने जलमें डालनेसे अपने बराबरके पानीको तो स्वय शोषण करलेगा बाकी ॥ गुना बचेगा वह अग्निपर चढानेसे १-२ उफानके बाद उसीमें लीनहोजायगा तब चतुर्भागावशेषमें क्या बाकी रहजायगा? इसको विचारा होता तो ऐसा न लिखाजाता। कदाचित् कहें कि "लेहे यत्राऽस्ति यो भागो निर्दिष्टो द्रवकल्कयोः। तत्रापि पादिकः कल्को द्रवात्कार्यो विजानता॥ तुलाद्रव्य जले द्रोणे द्रोणे द्रव्ये तुला मता। देयो गुड सिता वापि इति सर्वत्र निश्चितम्॥अवलेह्य लेह्य तस्य मान पलद्वयम्॥ इस गोपुरके वाक्यमें यह कल्पना अक्षरशः मिलतीहै इसे मनगढन्त क्यों कहनीचाहिये? नहीं उक्तोदरणमें लेहविधान बतलायाहै यहांपर क्वाथनिष्पन्नहोनेकेबाद लेह तैयार करनेके लिये गुड अथवा शकर किस प्रमाणसे डालनी चाहिये इसका निर्धारण कियाहै। गुडरूप द्रव्यतुलाको द्रोण परिमित द्रवमें अर्थात् जलप्रभृतिमें पकाकर चाशनीकरनी यदि शर्करासे लेह तैयार करना हो तो एकतुलाक्वाथमें एकद्रोण शर्करा डालकर चासनी करनी यह विस्पष्टतया कहागयाहै इसलिये गोपुरके उदाहरणसे अथवा सुश्रुतके कथनसे (अथवा तत्रोदकद्रोणे स्वकपञ्चमूलादीना तुलामावाप्य चतुर्भागावशिष्ट निःक्वाथ्यापहरेत्) उक्ताभिप्रायको नहीं निकालसकेहै। कोई यह कहनेका साहस न करे कि केवल प्रमाणसे यथालब्ध जलमें पाक क्यों नहीं? इसजगह बड़ाभारी रहस्य यह है कि वैसाहोनाही असम्भवहै तब खाली युक्ति या प्रमाण क्या करसकताहै। परोक्षपदार्थ (स्वर्गादिप्राप्तिप्रभृति) में प्रमाण देकर श्रोताओंको खुशकरसकेहैं परन्तु प्रत्यक्षमें नहीं। कदाचित् कोई यह शङ्का करै कि "कुडवं चूर्णितं द्रव्य प्रक्षिप्त द्विगुणेजले। अहोरात्रं स्थितं तस्माद्भवेत्स्वरस उत्तम॥ कृष्णात्रेय०" इत्यादिस्थानोंमें द्विगुणजल डालकर कषाय ग्रहणकियाहै तब प्रकृतमें तो ७॥ गुना जलहै इसमें हर्जक्या? ठीकहै परन्तु यहांपर क्वाथ नहीं कियागयाहै इसलिये इसमेंसे पानी निकल आवेगा, यह विषम दृष्टान्तहै। देखिये-"क्वाथ्यद्रव्यस्य बाहुल्यादुदकं स्वल्पमेव चेत्। सम्यक् पाकन्न मुञ्चन्ति हीनवीर्यन्तु केवलम्॥ क्वाथ्य॰ द्रव्य घटसमं जलं दशघटं क्षिपेत्। नि क्वाथ्य पादशेषं तु गुडं सार्धघटं न्यसेत्॥ विमृश्य सन्धितं यत्र तदासवमितीरितम्॥ वृद्धसुश्रुत" "आसवारिष्टयोर्यत्र न गुणो लभ्यते यदा। एकद्वित्रिगुणं कृत्वा दापयेद्गुणवृद्धये॥ गोपुरः" "प्रसारण्यादिनिर्दिष्ट शतमेकं पृथक्पृथक्। जलद्रोणेन चैकैक साधयेच्चुक्षुण्णकुट्टितम्॥ सम्यग्वीर्यं न मुञ्चन्ति वारा स्वल्पेन निश्चितम्॥ शौनक॥" "दध्नि क्षीरे च रुधिरे ह्यारनालेऽथ पुष्पजे। रसे तथेक्षुधात्रीणा मधुमस्त्वासवादिके॥ एतानि सर्ववस्तूनि स्नेहयोगे विशेषतः। सम्यग्वीर्यं न मुञ्चन्ति जल देयं चतुर्गुणम्॥ कृष्णात्रेय०॥" "माषकादि पल यावद्द्द्यात्षोडशिकं जलम्। तदूर्ध्वं कुडव यावत्तोयमष्टगुणं भवेत्॥ प्रस्थादे. कुडवादूर्ध्वं सलिलञ्च चतुर्गुणम्। प्रस्थादितः क्षिपेन्नीरं खारीं यावच्चतुर्गुणम्॥ वराहमिहिर॥" चतुर्गुणसे नीचे पानी देकर क्वाथ करनेमें कितने आचार्य निष्फलता बतलारहेहैं तब इन गवेषकोंका निकालाहुआ सिद्धान्त किसतरह मान्य होसकताहै?

कोई यहभी शङ्का न करे कि "द्रवदिरसारतुलामुदकद्रोणे विपाच्य षोडशावशिष्टमवतार्याऽनुगुप्तं निदध्यात्, तमामलकरसमधुसर्पिर्भि संसृज्योपयुञ्जीत। एष एव सर्वक्षसारेषु कल्प॰॥ सु चि. ११।१३" यहांपर १ द्रोणका षोडशांशावशेष कियाहै तब चतुर्थांशावशेषकरनेमें आपको क्या विपत्तिहै? हा ठीकहै यहांपर सारके छोटेछोटे टुकडेकरके कत्थेके निकालनेके प्रकारसे क्वाथकियाहै यहांपर सार तत्कालाहृत आर्द्र लियाजाताहै सो वह पानीको नहीं शोषणकरसकता इसलिये यह होसकताहै कारण कि उसमें जैसे जैसे पानी कम होताजाताहै वैसे वैसे टुकडे निकालदिये जातेहैं शेषमें सबटुकडे निकालदिये जातेहैं। बचेहुए जलको जलाकर षोडशांशावशेषकरके रखलियाजाताहै ॥ शिलाजतुकी तरह घन तैयारहोताहै। कत्थानिकालनेवाले भी ऐसाही करतेहैं इसलिये आमलकस्वरस, मधु और घी ये तरल पदार्थ उसके अनुपान बतायेहैं। पर यहांका स्थान विषमहै यहांपर टुकडे नहीं दियेजाते किन्तु जवकुट चूर्ण दियाजाताहै सो वह डालतेही फूलजायगा और बराबरके पानीको शोषणकरलेगा इससे यथार्थ क्वाथकरनेमें विपत्तिहोगी इसलिये उक्तदृष्टान्त कार्यसाधक नहीं होसकताहै।

सुश्रुतके मूलपाठमेंसे द्विशब्द निकलजानेकी गवाही डल्हणभी देरहेहैं "उदकद्रोणविषये तुलाद्रव्यस्याऽऽवापेनैनज्ञापयति-निःक्वाथ्य द्रव्य जले पञ्चगुणे निःक्वाथयेत्" इस डल्हणकेलेखसे यह स्पष्ट निकलताहै कि मूलस्थपाठ पहिलेका द्विद्रोणे ऐसाहीथा इसलिये पूर्वटीकाओंको देखकर "जले पञ्चगुणे नि क्वाथयेत्" ऐसा लिखाहै अन्यथा यह लिखना

असम्भवया। कदाचित् कोई यह शङ्का करे कि द्रवद्वैगुण्य परिभाषाको उपस्थितकरके इन्होंने पञ्चगुणजल लिखाहै तो यह उचित नहींहै कारण कि उस परिभाषाको कोई आधार नहींहै। कदाचित् कहे कि "शुष्काणामिदं मानम्, आर्द्रद्रवाणाञ्च द्विगुणम्" (सु. चि. ३१।७) यहांपर आचार्यने स्वयंही वचनरूपसे स्वीकृतकीहै? सो ठीकनहीं। यहांपर का पाठ 'आर्द्रद्रव्याणा' ऐसा है। उसमें कारण यह है कि यदि आचार्य द्रवद्वैगुण्यको मानलेवें तो ग्रन्थभरमें जहांकहीं द्रव आवेगा वहां सबजगह इस परिभाषाकी उपस्थिति होनेसे समस्तग्रन्थ शङ्काप्लुतहोनेसे अनास्था दोष आजायगा और जो शङ्कारहितत्वादि आप्तवाक्योंके गुणहैं वे इसग्रन्थसे निकलजानेके कारण ग्रन्थ आप्तवाक्यत्वसे वञ्चित रहजायगा। चरक और सुश्रुतीय कतिपय आसवारिष्टोंकी सूची आगे दीहुईहै उनमें अधिकसे अधिक ३२, और न्यूनसे न्यून ४ गुणित जलदेकर क्वाथ कियेहैं। ३२ गुणसे अधिकजल किसीनेभी नहीं दिया है देखो–"आसवारिष्टपाकेषु द्वात्रिंशद्गुणसम्मितम्। खदिरादेः प्रतिपलं जलमाहुर्भिषक्तमाः॥ वृद्धसुश्रुत" बस इसप्रमाणसे आगे कोईभी नहीं बढाहै इसीबातको दिखलानेकेलिये सूची दीगईहै यदि हम द्रवद्वैगुण्यपरिभाषा मानलेंगेतो स्नेह और आसवारिष्टप्रभृति समस्तस्थान अनास्थाग्रस्त होजायगे। जैसे अभयारिष्ट (सु चि ६।१५) में २१ गुना जल आयाहै वहांपर ४२ गुना देना होगा। इसलिये सुश्रुतीय मूलपाठ आर्द्रद्रव्याणा ऐसाही पूर्वमेंथा यह निश्चित होताहै उसकीजगह लेखकप्रमादसे 'द्रवाणा' ऐसाहुआ प्रतीतहोताहै। इसीको देखकर "शुष्कद्रव्येष्विदं मानमेवमादि प्रकीर्तितम्। द्विगुणं तद्द्रवेष्विष्टं तथा सद्य समुद्धृते" ऐसा चरकके कल्पस्थानमें दृढबलने बनालियाहै कदाचित् कहें कि अनुक्तस्थानोंके लिये परिभाषाकी आवश्यकताहै? नहीं वहांकेलिये ८, १६ और पञ्चगुणित पानीकानिर्देश पर्याप्तहै इसलिये सुश्रुतका 'द्रव्याणा' ऐसाहीपाठहै यह निर्विवादहै। इसीतरह चरककोभी द्रवद्वैगुण्य परिभाषा अभिप्रेत नहींहै। यदि हठात् मानलेंगे तो पिष्टासव (च.चि. १५।१६१) में विपत्तिहोगी। यहांपर चतुर्थांश पानी देकर पिष्टको यवराशिमें रखाहै। यदि द्वैगुण्यपरिभाषाको उपस्थितकरेंगे तो अधिक द्रव होजानेसे इसे पिण्ड पागलभी नहीं कहसकेगा। इसलिये चरककोभी यह परिभाषा अभीष्ट नहींहै। चरकके अभिप्रायको न समझकर दृढबलने लिखदीहै। परन्तु इसका उपयोग वे भी न करसके देखिये–स्नेहव्यापत्सिद्धिमें "दशमूलं बला रास्ना मधूकान्यौ पुनर्नवाम्।०" इसतैलमें ३३ पल दवाको ४ द्रोण पानीमें पकायाहै यह पानी द्रव्यसे ३२ गुनाहै यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा लगाकर द्विगुणमानेंगेतो ६४ गुना होजायगा इसको कोई पागलभी ठीक नहीं बतावेगा क्योंकि क्वाथोंमें ३२ गुने जलसे अधिक कहींपरभी नहीं आयाहै। इसप्रकार क्वाथको १ द्रोण शेषरखकर १ आढक तैल पकायाहै इसमें १० पल जीवनीयगणका कल्क दियाहै। यद्यपि वह तैलसे ६॥ अंश होताहै परन्तु इसमें १ आढक दूध भी डालागयाहै। पकनेपर उसका कल्क (सीठी) १ प्रस्थ निकलेगा। परन्तु उसमेंसे तृतीयांश घृत जुदा होजायगा और १०॥ पलके लगभग रहजायगा सो इसकोभी कल्कमें गिनलियाजाय तो स्नेहसे लगभग २॥ वा हिस्सा कल्क (सीठी) आताहै सो बराबरहै। स्नेहकल्कोंमें यही गुप्त रहस्यहै इसको न समझनेसे स्नेहपाकमें लोगोंको धोखाहोताहै। केवल द्रव्यकल्ककी ही गिनती न करना किन्तु स्नेहपाकोत्तर उसमें सीठी कितनी निकलेगी इसबातपर ध्यान रखकर "स्नेहकुडवे भेषजपलं पिष्टं कल्कं चतुर्गुणं द्रवमावाप्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्प (सु चि. ३१।८) अथवा "कल्काच्चतुर्गुणं वारि स्नेहात्क्वाथं चतुर्गुणम्। क्षीरं स्नेहसमं दद्यात्कल्कश्च स्नेहपादिकः॥ शिवमेखला॥" इस प्रक्रियाका अवलम्बनकरके स्नेहोंको सिद्धकरलेनेमें किसीभी तरहकी विपत्ति उपस्थित नहीं होतीहै और न द्विगुणपरिभाषाका आश्रय लेनापड़ताहै। इस दृढबलोक्त दशमूलादि तैलसे यह निर्धारण होता है कि केवल दृढबलने सुश्रुतीय अशुद्धिको न समझकर द्रवद्वैगुण्य लिखतो दी पर उसका उदाहरण कहींभी न दिखलासके। इसीतरह "शुष्कमेयेष्विदं मानं द्विगुणं तु द्रवार्द्रयोः" ऐसा पाठ अष्टाङ्गसङ्ग्रहमें भी कल्पित किया परन्तु "तत्रमेवान्यौषधान्यणुशो भेदयित्वा छेदयित्वा छेद्यानि प्रक्षाल्योदकेन शुचौ दृढायामधः प्रलिप्ताया ताम्रायोमृन्मयान्यतमाया स्थाल्या समावाप्य बहल्पपानीयप्राहितामौषधानामाकलय्य यावता मृदुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोपयेच। अभामावधिश्रित्य महत्यासने सुखोपविष्टः सर्वतः सततमवलोकयन् दर्व्याऽवघट्टयन् मृदुना परितः समुपगच्छताऽनलेन साधयेत्। अवतार्य च परिस्रुतं यथार्हस्पर्शं प्रयुञ्जीत॥ अ सं. क.८" इसजगह 'बहल्पपानीयप्राहितामौषधानामाकलय्य यावता मृदुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेत्॥" यही अपना सिद्धान्त दिया परन्तु द्रवद्वैगुण्य परिभाषाका पता इनकोभी न लगा और इन्हींका अनुकरणकरके "गुञ्जादिमानमारभ्य यावत्स्यात्कुडवस्थितिः। द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं समं मतम्॥ प्रस्थादिमानमारभ्य द्विगुणं तद्द्रवार्द्रयोः। मानं तथा तुलायाश्च द्विगुणं न क्वचित्स्मृतम्॥ शार्ङ्ग० प्र० १।३३–३४" इनको लिखकर "शुष्कं नवीनं यद्द्रव्यं योज्यं सकलकर्मसु। आर्द्रं च द्विगुणं युञ्ज्यादेव सर्वत्र निश्चय॥ शार्ङ्ग० प्र. १।४६" इसजगहपर जो सुश्रुतीय सिद्धान्तहै उसीको बतलाया किन्तु यहां द्रवका नाम नहींलिया यदि द्रवद्वैगुण्यअभिप्रेत होता तो द्विरार्द्रद्रवक युग्मयान् पाठ किया होता। इससे प्रतीत होताहै कि इन्हेंभी द्रवद्वैगुण्यका कुछ निश्चय नहीं हुआ। इसभ्रमके होनेका मुख्यकारण तो सुश्रुतीय 'द्रव्याणा' कीजगह 'द्रवाणां' होनाहै। दूसरा औरभी कारण प्रतीत होताहै तो यह कि "रक्तिकादिषु मानेषु यावदि कुडवो भवेत्। शुष्कार्द्रद्रव्ययोस्तावत्तुल्यं मानं प्रयोजयेत्॥ शुष्कद्रव्येष्विदं मानं द्विगुणं तु द्रवार्द्रयो.।

यद् द्रव्य कुडवाद्ध्र्वं प्रस्थादिश्रुतनामकम् । द्विगुण न तुलामान मिति मानविदो विदु ॥" यह उद्धरण गोपुररक्षितकेनामसे टोडरानन्दमें दिया हुआहै सो यह गोपुररक्षितका है या नहीं इसका पता साक्षात् संहिताके मिलेबिना लगना मुश्किलहै । परन्तु इतना अनुमान कियाजासकताहै कि गोपुररक्षितप्रभृति सुश्रुतसहाध्यायीहैं उनसबमें सुश्रुतको श्रेष्ठ मानाहै देखो "वत्स सुश्रुत ! ■ खल्वायुर्वेदप्रयोजन व्याध्युपसृष्टाना व्याधिपरिमोक्ष स्वस्थस्य रक्षणञ्च ॥ सु सू १।१३" इत्यादि स्थानोंमें बारम्बार सुश्रुतके प्रति सम्बोधन देकर धन्वन्तरिभगवानका उपदेश आताहै इसलिये इनसबमें सुश्रुतही प्रधान विद्वान् थे इनके प्रतिकूल गोपुररक्षितादि नहीं लिखसके है । सुश्रुतमें रक्तिकादि कुडवान्त और प्रस्थादि तुलान्तकी अवधि नहीं दी है इसलिये यह कहींका प्रक्षिप्त वाक्य मालूम होताहै । यदि यह ठीक सिद्धान्तहोता तो कहींपरभी आसव या स्नेहसाधनप्रकरणमें इसका पालन किया होता, सो देख नेमें नहीं आताहै ।

कदाचित् यह शङ्का करें कि चरकके सुनिषण्णकचाङ्गेरी घृतमें ' चतु प्रस्थे शृत प्रस्थ कषायमवतारयेत् । च चि १४।२३५ के नीचे "त्रिंशत्पलानि प्रस्थोऽत्र विज्ञेयो द्विपलाधिक ॥" यह श्लोकलिखाहुआ देखनेमें आताहै । सोही प्रमाणहै ? नहीं बिनायोगकी समाप्तिके इसका यहा रखना अकाण्डताण्डव जैसा मालूम होताहै । योगोंकी विशेषसूचनाए उनके अन्तमें दीजातीहैं बीचमें नहीं । इससे यह साफ प्रक्षिप्त मालूमहोताहै परन्तु यह आजकलका प्रक्षिप्त नहींहै । इसका रहस्य न समझकर चक्रपाणिदत्तने इसपर "तथा त्रिंशत्पलानि तु प्रस्थो विज्ञेयो द्विपलाधिक इति विशेषम् । परिभाषासिद्धार्थाभिधायकम् । अत एव द्रवबलस्थानेऽपि द्रवद्वैगुण्याभिधान भविष्यति ॥" ऐसी व्याख्याभी करदीहै यहभी हास्यास्पदहै कारण कि यहापर इस अर्थपदकी कोई आवश्यकता नहींहै देखिये 'अथापुष्पी बला दार्वी पृश्निपर्णी निकण्टक । न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थशुङ्गाश्च द्विपलोन्मिता ॥ कषाय एषा०" एक कषाय यहहै । 'कलिङ्गा शाल्मल पुष्प वीरा चन्दनमुत्पलम् । कट्फल चित्रक मुस्त प्रियङ्ग्वतिविषा स्थिरा ॥ पद्मोत्पलाना किंजल्क समङ्गा सनिदिग्धिका । बिल्व मोचरस पाठा भागा कर्षसमान्विता ॥" इस द्वितीयकषायको ४ प्रस्थ जलमें पादावशिष्टक्वाथकरनेसे एकप्रस्थ क्वाथहोगा इसीतरह सुनिषण्णक और चाङ्गेरीका स्वरस १-१ प्रस्थ होगा । यह सब मिलकर ४ प्रस्थ द्रव रहेगा इसमें स्नेहसे चतुर्गुणित ■ होनेसे इसकापाक बराबर होजायगा । इसकेलिये "त्रिंशत्पलानि प्रस्थोऽत्र०" इस प्रक्षिप्तवाक्यकी आवश्यकताही क्याहै ? इसका कुछभी विचार करते तो चक्रपाणिदत्तको इस पद्यकी प्रक्षिप्तता मालूम होजाती । इसयोगमें ' पथ्यास्तु जीवन्ती कटुरोहिणी । पिप्पली पिप्पलीमूल नागर सुरदारु च ॥" इतना यह आवापहै इसकी कषायमें गिनती नहीं करनी चाहिये । इसभेदको न समझकर मालूम होताहै कि लोगोंने इस प्रक्षिप्त पद्यको बीचमें डालदियाहै । अथवा द्रवद्वैगुण्य परिभाषाके भक्तोंने ऐसा काम कियाहो यहभी सम्भवहै । यदि आचार्यको इससे अधिक द्रव अभीष्टहोता तो "चतु प्रस्थे शृत प्रस्थ कषायमवतारयेत्" की जगह 'अष्टप्रस्थे शृत चाश कषायमवतारयेत्' ऐसापाठ करनेमें आचार्यको क्या विपत्ति थी ? यह कोई पद्मवद्धवगैरह छन्द नहींहै जिसकेलिये कि इतनी कूटकल्पना करनी पड़ी । एक और विचित्र रहस्य यह है कि इसके पूर्व कई घृत और तैल आयेहैं उनमें कहींपरभी इस पद्यके देनेकी जगह न मिली और यहा आकर आचार्यको भान हुआ ? । इसलिये यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि यह पद्य पीछेसे लगाया हुआहै । इसके अतिरिक्त अन्य स्थलोंमेंभी जुरूरत नहीं मालूम होतीहै । यदि आचार्योंको १ द्रोणकी जगह द्विद्रोण अभीष्ट होता तो दो का नाम लेनेमें कोई पाप थोड़ाही लगता, प्रत्युत इससे विपरीत देखनेमें आताहै देखो पूर्वोद्दिष्ट द्रवबलहीके उदाहरणमें दशमूलादितैलमें " चतुर्द्रोणेऽम्भस पक्त्वा द्रोणशेषेण तेन च । तैलाढक समक्षीर जीवनीये पलोन्मिते ॥" यहापर ३२ गुना पानी बतलादिया सो क्वाथोंकी परमावधि तक पहुचगये । यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा अभीष्टहोती तो "शुमद्रोणेऽम्भस पक्त्वा" ऐसा पाठ करते । पर वैसा न करनेसे यह भेडियाधसान जैसाही मालूम पड़ताहै ।

इसीतरह त्रिफलात्वक् त्रिकटुक सुरसा मदयन्तिका (सु चि ९।३४) इस महानीलीघृतमें जलापेक्षया क्वाथ्य द्रव्यकी अधिकता होनेसे टीकाकारोंने इसे अत्यर्थ कहाहै । डल्हणनेभी इसबातका परिचय दियाहै । यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा होती तो जलापेक्षया क्वाथ्यद्रव्यकी आधिक्य डल्हण कभी नहीं कहते। इसलिये द्रवद्वैगुण्य परिभाषा सुश्रुतमें नहींहै अर्थात् 'द्रव्याणा' ऐसाही पाठ प्रतीतहोताहै । हा ! इसपरिभाषाका एक रहस्य यह मालूम होताहै कि मानप्रकरणमें एक रक्तिकादि मान और दूसरा कुडवादिमान अथवा शारीमान और तुलामान ऐसे दोतरहके मान देखनेमें आतेहैं इनमें रक्तिकादि और तुला यह मान तराजूसे तोलनेकाहै तुला नाम तराजूहीकाहै । "नौवयोधर्मविषमूलमूलसीतातुलाभ्य (पा० ४।४।९१) तुलया सम्मित तुल्यम्" इत्यादिस्थलोंमें पाणिनिनेभी तराजू का नाम लियाहै और१०० पल का नाम तुला (व्यावहारिक पंसेरी) माना जाताहै ■ द्रोणोऽस्त्रि की तरह लाक्षणिकहै क्योंकि साधारणतया अधिक गल्ला तोलनेकेसमय पसेरीसे काम लियाजाताहै बस इसीलिये १०० पलकाभी नामतुला रखलियागयाहै। अबभी यत्र तत्र देशोंमें तुलामानसे तराजूकातोल और कुडव, प्रस्थ अथवा शारीमानसे माप समझाजाताहै । यह अबभी दोतरहका देशोंमें प्रचलितहै औरमापमें तथा तोलमें वस्तुओंके गुरुत्वमें बहुतसा अन्तर आताहै । उदाहरणार्थ जिसपात्रमें उड़द और अरहरकी धुलीदाल तथा

पीलीसरसों २० तोले आतीहै उसमें चावल, उड़द और तेल २३ तोले, जल २५ तो०, मधु ३० तो०, बालू ३५ तो०, लोहभस्म ४५ तोले और लाजा २। तोले आतीहैं सो देखिये कितना अन्तरहै । प्राचीनसमयमें साधारणव्यवहारमें मापका प्रचार अधिकथा सो कहीं इस मापकोही लेकर तो लोगोंने यह द्रवद्वैगुण्य परिभाषा नहीं मानलीहै । चरक अथवा सुश्रुतमें इसकी चर्चा नहीं कीहै पर कृष्णात्रेयने मानप्रकरणमें "वेणुवार्क्षायसादीनां भाण्डं यच्चतुरङ्गुलम् । विस्तीर्णमथ वृत्तं च तन्मानं कुडवं विदुः" ऐसा कुडवमान बतायाहै । इनकीतरह दूसरोंने भी लिखाहो यह सम्भवहै । उसीको लेकर यह गड़बड़ी हुईहो यहभी होसकताहै कारणकि इसका प्रमाण कुडवहीसे कियाहै उसके नीचेका मान या तो अन्दाज़से लेलियाकरतेथे या कांटेसे तोलतेथे । वह तोल द्रवार्द्र और शुष्कका बराबरही आया करता था इसको "रक्तिकादिषु मानेषु यावन्न कुडवो भवेत् । शुष्कार्द्रद्रव्ययोस्तावत्तुल्यं मानं प्रयोजयेत् ॥" इसवाक्यसे बतायाहै । यहांपर 'तुल्यं मानं, जो दियाहै उसका अर्थही यह होताहै कि कांटेसे तोलकर बराबरकियाहुआ भाग । इसकेबाद "यद्द्रव्यं कुडवादूर्ध्वं प्रस्थादिश्रुतनामकम् । द्विगुणन्न तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥" अर्थात् कुडवसे आगे जो प्रस्थादिकसञ्ज्ञाहै उसे भी जब तराजूमें तोलकर लेना हो तो वहांपर भी सब वस्तुओंका बराबरही मान लेना यह अर्थहै । इसका अभिप्राय यहहै कि तुला (तराजू)से चाहे जिस द्रव्यको तोले उनके तोलमें कोईभी अन्तर नहीं आताहै हां जब इसे कुडवादिमापसे लेंगे तबतो न्यूनाधिक्य होनी अनिवार्यहै यह इसका मुख्य अर्थहै । इसीलिये "रक्तिकादिषु मानेषु यावन्न कुडवो भवेत् । द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं समं मतम् ॥ यद्द्रव्यं कुडवादूर्ध्वं प्रस्थादिश्रुतनामकम् । द्विगुणं न तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥" ऐसा विस्पष्टविन्यास कियागयाहै पर बहुतसे लोग इसके रहस्यको न समझकर "यद् द्रवार्द्ररूपं द्रव्यं श्रुतनामकं प्रस्थादि तद्द्विगुणं मात्रं, तुलामानं न, अर्थात् द्विगुणं न कार्यम्" ऐसा अन्वयकरके कुडवसे ऊपर प्रस्थादि प्रसिद्धनामसे आयाहुआ द्रवार्द्ररूप द्रव्य द्विगुण लेना पर साक्षात् तुलाकेनामसे आयेहुएको द्विगुण न करना ऐसा अर्थकरतेहैं । कितनेही अब यह अर्थ करतेहैं कि जहां प्रसृति, अञ्जलिप्रभृतिके नाम आयेहों वहांपरभी द्विगुण न करना । देखो— "विशेषः कथ्यतेऽन्योऽपि माने शुष्कद्रवाश्रये शुष्कद्रव्याश्रयं मानं निर्दिश्य यदुदाहृतम् ॥ ६२ ॥ द्रवेषु द्विगुणं मानं तयैवोदृतेषु च । द्विगुणं मानमित्येतदारभ्य कुडवादिति ॥६३॥ शुष्काणाञ्च द्रवाणाञ्च समं तु कुडवादधः । तुलायामपि नैवेष्टा द्विगुणा मानकल्पना ॥ ६४ ॥ तुला पलशतं चैव तच्छुष्कद्रवयोर्मतम् । पलं चतुर्गुणं चेदं प्रसिद्धमापकादिदम् ॥ ६५ ॥ सहाचरतुलायास्तु रसे तैलाढकं पचेत् । यदुक्तं शतमेवात्र पलानां परिगृह्यते ॥ ६६ ॥ चतुःसुवर्णमेतच्च पलं नाष्टसुवर्णकम् । द्रवस्य द्विगुणत्वे स्यात्पलमष्टसुवर्णकम् ॥ ६७ ॥ नैवाञ्जलौ न प्रसृते न पले न पलादधः । द्रवाणामौषधानां हि द्विगुणं मानमिष्यते ॥ ६८ ॥ अ. सं. कल्प इन्दुटीका ॥" इसीतरह औरभी कईलोगोंने प्रयासकियाहै पर वह पूर्वोक्तरीतिसे लब्धास्पद नहींहोताहै इसमेंभी शुष्कापेक्षया आर्द्रद्वैगुण्यमें तो सुश्रुतभी सहमतहैं परन्तु द्रवकेलिये झगड़ाहै । झगड़ाही नहीं किन्तु उसकी उपयुक्तताभी नज़र नहीं आतीहै इसलिये इसकी प्रक्षिप्ततामें कुछभी सन्देह नहींहै । इसीतरह कईतरहके फुटकरवाक्य और भी मिलतेहैं वे भी छात्रोंकेलिये जालरूपहैं उनमेंसे जो जो उपपत्तिरहितहैं उन्हें प्रक्षिप्तसमझकर अनादेय समझना । उनमेंसे कतिपयके उद्धरण नीचे दिये जावेहैं । यथा— "आर्द्रद्रव्यं द्रवद्रव्यैः पलैरष्टभिरेव च । शुष्कद्रव्यैः चतुष्केण कुडवः समुदाहृतः ॥ हारीत०" "आर्द्रस्याष्टपला मात्रा कुडवस्य प्रमाणतः । मधुतैलघृतादेश्च शुष्कद्रव्ये चतुःपलैः ॥ पुष्कलावत०" "गुडगुग्गुलुवाह्लीकैः त्रिफलारिष्टनागरैः । कूष्माण्डार्द्रकनिम्बानां कुडवश्चाष्टभिः पलैः ॥ विश्वामित्र०" "लाजापायसनालिकेरसलिलैर्मूत्रैस्तथा काञ्जिकैर्मत्स्यण्डीमधुतक्रमस्तुमदिरादीनां भवेद्द्वैगुणः । वासानिम्बपटोलिकेतकिबलाकूष्माण्डकेन्दीवरीः; वर्षाभूकुटजाश्वमारसहिता व्योषाश्वगन्धाऽमृताः ॥ मांसी नागबला सहाचरपुरं हिंग्वार्द्रकं नित्यशो ग्राह्यास्तत्क्षणमेव न द्विगुणिता ये चेक्षुजातास्तथा ॥ रसदर्पण" "गुडरामठशुण्ठीनां मांसीकूष्माण्डयोरपि । गुडूच्या गुग्गुलोश्चैव प्रस्थः षोडशभिः पलैः ॥ भेल" "लाजापायसनारिकेलसलिलं मूत्रं जलं काञ्जिकं, द्वात्रिंशत्पलकं तदर्धमुदितं प्रस्थं रसायौषधीः । तैलं क्षौद्रघृतञ्च विंशतिपलं क्षीरञ्च त्रिंशत्पलं, तद्वत्पञ्चकपञ्चके गुडपलं चाष्टादशं प्रोच्यते ॥ प्रस्थं तु षोडशपलं द्रव्ये क्वाथे रसे तथा । क्षौद्रे सर्पिषि तैले च प्रस्थं विंशत्पलं भवेत् ॥ इत्यागमेन द्वैगुण्यं निरामस्य द्रवस्य च । द्वात्रिंशता पलैः प्रस्थं प्रोक्तं पायसलाजयोः ॥ मूत्रकाञ्जिकमस्त्वम्बुनारिकेलाम्भसामपि । मूलत्वग्दारुपत्राणां पुष्पस्य च फलस्य च ॥ शिलालवणमृल्लोष्टलोहानां गोमयस्य च । पलैःषोडशभिः प्रस्थो रसस्य त्वौषधस्य च ॥ प्रस्थं पलानां विंशत्या तैले माक्षिकसर्पिषोः । क्षीरे च विंशतिः प्रस्थो दध्नः स्यात्पञ्चविंशतिः । गुडस्य सप्तदशभिरितिभोजमते स्थितिः । गुडस्य दशनिष्कं हि पलमात्रेण पूजितम् ॥ शशिकुङ्कुमकस्तूरीशर्करास्नुकपयांसि च । वमने च निरूहे च तथा शोणितमोक्षणे । सार्धत्रयोदशपलं प्रस्थमाहुर्मनीषिणः ॥ षडङ्गुलं च विस्तीर्णं द्वादशाङ्गुलमायतम् । एतन्मागधिकं प्रस्थं मानभाण्डेषु पूजितम् ॥" इत्यादिस्थलोंमें त्रिसवस्तु का एकने ४ पलका कुडव बतायाहै उसीका दूसरोंने ८ पलका बतायाहै यह कहीं तोल और मापकेभेदसे, तथा कहीं तद्गत 'किटके हिसाबसे है' जैसे कि गुडका १७ पलका प्रस्थ मानाहै यहांपर गुडको छाननेसे यदि वह विशुद्ध न होगातो कमसेकम १ प्रस्थमेंसे १ पल किट निकलजायगा उसको निकालनेकेलिये १७ पलका प्रस्थ

मानलिया। क्षीरका २० पल्का प्रस्थ मानाहै इसमें मापके हिसाबसे ४ पल अधिक आवेगा। इसभेदको दिखानेकेलिये २० पल्का प्रस्थ मानलिया। दहीका २५ पल्का प्रस्थ मानाहै उसमेंभी मापही का भेद मालूम पड़ताहै इत्यादि अवान्तरभदों कोलेकर नानातरहके प्रस्थ और कुडवादिकोंमें भेददेखनेमें आताहै परन्तु यह भेद चरक और सुश्रुतने नहीं मानाहै इसलिये सुश्रुतकी मानपरिभाषामें "द्रवाणा 'को प्रविष्टकरना तन्त्रको व्याकुलकरनाहै

अस्तु ॥ वितण्डाको छोड़कर प्रकृतविषयकी तरफ ध्यानदी जिये। क्वाथमें मृदुता, साधारणता और तीक्ष्णतोत्पादनार्थ सुश्रुतने क्वाथ्यद्रव्यकी त्रिविधयोजना की है यद्यपि मृदुत्वादिगुणोदय द्रव्यबाहुल्यसे अथवा द्रव्यगत व्यवायि विकाशि छेदि मदा वहाऽऽग्नेयत्वादि गुणोंसे हुआकरताहै तथापि यहापर द्रव्यबाहुल्यको लेकरही भेद बतलाना आचार्यको अभीष्टहै। एकपलमें १६ पल जलदेकर ४ पलावशिष्ट क्वाथमें १ पल घृतादिस्नेहका पाककरनेसे मृदुप्रकृतिक स्नेह तैयारहोगा क्योंकि स्नेहसम द्रव्यका सार स्नेहमें आयाहै इसे मृदुप्रकृतियोंमें नियुक्तकरना, दोपल द्रव्यको ८ पल पानीमें पकाकर २ पल अवशिष्टक्वाथमें २ कर्ष स्नेह पकानेसे साधारणप्रकृतिकस्नेह तैयारहोताहै क्योंकि स्नेहसे द्विगुण द्रव्यका इसमें सार आयाहै इसे मध्यम प्रकृतिक व्यक्तियोंको देना। इसीतरह ३ पल ८ माशे द्रव्यको ५ पल जलमें उबालकर १। पलावशिष्ट क्वाथमें १। कर्ष स्नेह पकानेसे तीक्ष्णप्रकृतिकस्नेह तैयार होगा, इसे जवान और साहसिक लोगोंको अथवा कुत्प्रवृत्ति भयङ्कर व्याधियोंमें देना चाहिये यह आचार्यका अभिप्रायहै। तृतीयकल्पमें सुश्रुतमता नुसार स्नेहसे ठीक चतुर्गुण क्वाथ्यद्रव्य नहीं आताहै इस बातपर ध्यानरखना चाहिये। ॥ "क्वाथ्याच्चतुर्गुणं वारि स्नेहात्क्वाथ्य चतुर्गुणम्। क्षीरं स्नेहसमं दद्यात्कल्कश्च स्नेहपादिकः ॥ द्रवेण केवलेनैव स्नेहपाको भवेद्यदि। तत्राम्बुपिष्ट कल्क स्याज्जल चापि चतुर्गुणम् ॥ ऐसा शिवमे खतन्त्रमें मिलताहै सो पद्यपरिभाषाकीतरह सुश्रुतीयतृतीय कल्पका आनुमानिक अर्थमानकर लिखाहो अथवा अपनी कल्पनासे कायमकियाहो, इसका पता ग्रन्थनिर्माणकालज्ञान सापेक्षहै सो होना मुश्किलहै। अन्यलोगोंने द्रव्यगतमृदुता, साधारणता और कठिनताको लेकर जलपरिमाणमें भेद बत लायाहै **यथा**—"मृदौ चतुर्गुणं देयं कठिनेऽष्टगुणं जलम्। कठिनात्कठिने देयं बुधै षोडशिकं जलम् ॥ मृद्वादिक्वाथसङ्घाते मानानुक्तं चिकित्सकः। मध्यस्योमयगामित्वादिच्छन्त्यष्टगुण जलम् ॥ क्वाथ्यद्रव्यपले वारि द्विरष्टगुणमिष्यते। चतुर्भागावशे ष तु पेयं पलचतुष्टयम् ॥ **क्षारपाणि** ॥ इत्यादिवाक्योंमें क्वाथ्यद्रव्यके परिमाणमें कुछ अन्तर नहींहै उसका प्रमाण तीनोंजगह बराबरहै इसलिये यह विषय पृथक्है इसपर ठीक ध्यान रखना चाहिये। 'माषकादिपलं यावद्दद्यात्षोडशिकं जलम्। तदूर्ध्वं कुडवं यावत्तोयमष्टगुणं भवेत् ॥ प्रस्थादे कुडवादूर्ध्वं सलिलश्च चतुर्गुणम्। प्रस्थादितः क्षिपेन्नीरं खारीं यावच्चतुर्गुणम् ॥' **वराहमिहिरने** तोलकी सीमाबाधकर षोडशादिगुणजलकी व्यवस्थाकीहै परन्तु इसमें बीज क्याहै यह निर्धारित नहीं होताहै तैसेही प्रामाणिक आयुर्वेदीयसंहि ताओंकेसाथ संवदितभी नहीं होताहै इसलिये यह उतना मूल्य॰ वान् सिद्धान्त नहीं निर्धारितहोताहै।

रस या गुटिका प्रभृतिमें भावना देनेकेलिये जहापर साक्षात् स्वरस मिलसकताहो वहापर अच्छीतरह आर्द्र होसके ताव न्मात्र स्वरस देनेका प्रमाण समझना "द्रवेण यावता द्रव्यमेकी॰ भूयार्द्रता व्रजेत्। तावत्प्रमाण निर्दिष्ट भिषग्भिर्भावनाविधौ ॥ **कृष्णात्रेय॰** ॥' स्वरसाऽभावमें भाव्यद्रव्यसमक्वाथ्यको अष्टगुणितपानीमें उबालकर भाव्यद्रव्यसम अवशिष्ट रहनेपर भावना देना यह साधारणनियमहै। यदि इससे भाव्यमान द्रव्य अच्छीतरह आप्लुत न होसके तो भाव्यद्रव्यसे द्विगुण क्वाथ्यद्रव्यको १६ गुने पानीमें क्वथितकर भाव्यमानद्रव्यसे द्विगुण अवशिष्ट रखकर उससे भावना देना। देखिये—"भाव्य द्रव्यसमं क्वाथ्य क्वाथोऽष्टांशस्तु तेन हि। आर्द्रं यावद्धि तद्भाव्य सम्राहं भावनाविधौ ॥" कृष्णात्रेय। उपरिनिर्दिष्ट जलप्रमाण साधारणतया स्नेहपाकविषयक अथवा पानविषयक ॥ भाव नाविषयक समझना।

'**स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव**, स्नेहचतुर्थांशो भेषजकल्कस्तदे- कध्य संसृज्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्प ॥ सु चि ३१।८ इसवाक्यमें द्रवचातुर्गुण्यको देखकर यह सन्देह उठना स्वाभा विकहै कि यह चातुर्गुण्य सङ्घातापेक्षया है या प्रत्येकापे- क्षया?। जहा वाचनिक प्रामाण्यनिर्देश किया हो वहाकेलिये तो किसीतरहके विचारको अवकाश ही नहींहै कारणकि विधि वाक्यमें सन्देहका कोई कारण नहीं रहता इसीलिये '**स्नेहमे-** चतोयानां प्रमाणं यत्र नेरितम्। तत्राऽय विधिरादेयो निर्दिष्टे तत्तदेव तु ॥' इससे ऊपरकहाहुआ सिद्धान्त स्पष्ट होजाताहै। परन्तु अनुक्तस्थानमें क्या करनाचाहिये? यह आकाङ्क्षा उठनी स्वाभाविकहै। उसकेलिये '**स्नेहाच्चतुर्गुणो** द्रव' यह साधारणनियम आचार्यने कियाहै। जिसजगह एकद्रव बतलायाहो परन्तु प्रमाण न दिखायाहो वहापर"स्नेहा चतुर्गुणो द्रव" यह परिभाषा उपस्थितहोकर सन्देहको दूरक रेगी। परन्तु जहा क्वाथ क्षार आरनाल, मांसरसादि कईद्रव प्रमाणरहित बतायेहों या डालनेहों तो वहाकेलिये सन्देह उपस्थितहोगा कि यहां चतुर्गुणत्व किसतरह लियाजाय?। इसकलिये '**विनिगमनाविरहादविशेषम्**' अर्थात् जहा विशेष कोई गमक न हो वहापर अविशेषसे काम लिया जाताहै प्रकृतमें जितने द्रव आयेहों वे प्रत्येक स्नेहसे चतुर्गुणित लेनेचा- हियें यह सिद्धान्त स्थिरहोताहै। इसीलिय '**स्नेहाच्चतुर्गुणो** द्रव इति वचनात्सर्वेऽप्युदकक्षारादयो गृह्यन्ते। केचिदेवं पठन्ति यत्रैकद्वित्रिचतुर्गुण्यद्रव्याणि तत्र सर्वाणि चतुर्गुणानि, पञ्चप्र

भृतीनि समानानि इति तथा चोक्तम् 'पञ्चप्रभृति यत्र स्युर्द्रवाणि स्नेहसंविधौ। तत्र स्नेहसमान्याहुरन्यत्र स्याच्चतुर्गुणम्॥ इति" ऐसा व्याख्यान डल्हणने कियाहै। डल्हणका मुख्य सिद्धान्त वहीहै जो हमने बतलायाहै। इसीलिये "चित्रकव्योषसैन्धूत्थ० सु. उ ४२।२५" यहापर "दध्यादीनि मूलकस्वरसान्तानि प्रत्येक घृताच्चतुर्गुणानि' ऐसा डल्हणने व्याख्यान कियाहै। "पञ्चप्रभृति यत्र स्यु०" यह पद्य अग्निवेशसंहिताकाहै इसके चतुर्थपादमें "अर्वाक् तस्माच्चतुर्गुणम्' ऐसा पाठ है जिसजगह चारसे ऊपर द्रवहों वहापर स्नेहके बराबर लेवे और पाचसे नीचे अर्थात् १, २, ३, ४, इन प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुणित लेवे, यह स्वरसत अर्थ निकलता है। इसीको स्पष्टकरनेकेलिये "यत्र द्वित्रिद्रवैर्द्रव्यै कुर्यात्स्नेहाच्चतुर्गुणम्। क्षीर स्नेहसम दद्याच्चतुर्भिश्च चतुर्गुणम्,, इसपद्यको जैयटने लिखाहै। टोडरानन्दमें "पञ्चप्रभृति०,, श्लोकको लिखकर "अस्याऽयमर्थः—यत्रैको द्रवस्तत्रैकेन चातुर्गुण्य, द्वाभ्यामपि चातुर्गुण्य, त्रिभिरपि चातुर्गुण्यमिति,, ऐसा खुलासा करके 'तत्र जैयटः ऐसालिखकर "यत्र द्वित्रिद्रवैर्द्रव्यै –" इसपद्यको उद्धृतकियाहै इससे हमारा कहाहुआ सिद्धान्त स्थिर होताहै। इसरहस्यको न जाननेवाले कितनेही लोगोंने इसका उलटाही अर्थ कियाहै देखिये–"स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति वचन एकद्वित्रिद्रवेषु चतुर्गुणत्वन्यूने स्नेहसाधननिषेधार्थम्, न तु पञ्चप्रभृतिद्रवेषु चतुर्गुणाधिक्ये प्रतिषेधार्थम्, तेन यत्रैकेन द्रवेण पाकस्तत्रैकेनैव चातुर्गुण्य, यत्र द्वाभ्यां द्रवाभ्या स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणाभ्यां ताभ्यां चातुर्गुण्यं, यत्र त्रिभिर्द्रवै स्नेहपाकस्तत्र त्रिभिर्मिलितैश्चातुर्गुण्यम्, यत्र तु चतुर्भिर्द्रवै स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिश्चातुर्गुण्यमिति। यत्र तु पञ्चप्रभृतीनि द्रवाणि तत्र तु सर्वाणि स्नेहसमान्येव मात्रया॥" इसमें क्या अर्थका अनर्थ कियाहै।

जहां सर्पविष या हारिद्रकप्रभृति द्रवके योगसे स्नेह पकानाहो वहापरभी क्या इसनियमको लगासकेंगे? यदि स्वीकारेंगे तो महा अनर्थहोगा इसलिये–"स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति वचनं एकद्वित्रिद्रवेषु चतुर्गुणत्वन्यूने स्नेहसाधननिषेधार्थम्, न तु पञ्चप्रभृतिद्रवेषु चतुर्गुणाधिक्ये प्रतिषेधार्थम्" यह मन कल्पित नियम निर्मूलहै कारणकि एकवाक्यसे परस्परविरुद्ध दो नियमनिकालने न्यायविरुद्धहैं। "चतुर्गुणान्न्यूने द्रवे स्नेहो न साध्य०" ऐसा नियम बनावेंगे तब वाक्य निराकाङ्क्ष होनेसे आकाङ्क्षाका उत्थान कैसे होगा? इसबातको सोचा होता तो ऐसी अंडबंड कल्पना न की होती इसलिये यह वाक्य अनुक्त द्रवप्रमाणस्थलमें दिग्दर्शनार्थहै। यह न तो द्विगुणादिगुणद्रवमें निषेधकरताहै और न पञ्चप्रभृति द्रवोंमें विधिमुद्रया प्रवृत्तहोताहै। साधारणवाक्यहोनेसे जहांकहींभी द्रव आवेगा वहीं इसकी उपस्थिति होगी वे चाहे जितने क्यों न हों। यदि चतुर्गुणमात्रका नियमकरते तो "तैलं दशगुणे सिद्ध मूत्रराजसे शुभे। सु उ ५१।२९" यहापर दशगुने द्रवमें तैलसिद्धकियाहै। यदि चौगुने द्रवका नियमहोता तो आचार्य अपने नियमका अपनेसे कैसे भङ्गकरते? और देखो "सुवहा कालिका भार्गी शुकाख्या नैचुल फलम्। ... ॥ सु उ ५१।२३–२४" "गोपवल्ल्युदके सिद्ध स्यादन्यद्द्विगुणे घृतम्॥ सु उ, ५१।२६" इत्यादि स्नेह द्विगुणद्रवमें सिद्धकियेहैं। इसलिये चतुर्गुणसे कम द्रवमें स्नेहसिद्ध नहीं होताहै यह नियमभी निर्मूल हुआ।

चित्रकादिघृतमें दधि, आरनाल बदर, मूलक इनप्रत्येकद्रव रसोंको डल्हणने चतुर्गुणित बतायाहै इसलिये "यत्र द्वाभ्या द्रवाभ्या स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणाभ्या ताभ्या चातुर्गुण्यम्, यत्र त्रिभिर्द्रवै स्नेहपाकस्तत्र त्रिभिर्मिलितैश्चातुर्गुण्यम्, यत्र तु चतुर्भिर्द्रवै स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिश्चातुर्गुण्यमिति।" यह व्याख्यानभी निर्मूल ठहरताहै। इससे जहा वाचनिक प्रमाण आवे उसको वैसाही लेना और अन्यत्र जितने द्रव हों उन प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुण लेना यही सुश्रुतीयसिद्धान्त मालूमहोताहै। हा कृष्णात्रेयने चारसे ऊपर इसका नियन्त्रण कियाहै पर सुश्रुतके मतमें नहीं है। यहापर सुश्रुतके कईतरहके द्रवप्रमाण देखनेसे यही सिद्धान्त निकलताहै कि लेहादि पदार्थ तैयार करनेकेलिये केवल हमारा दिग्दर्शनहै जहा वैद्य जैसी औचिती समझे वहा वैसा योग करे। इन्हीं सब बातोंको विचारकर मालूम होताहै कि "यद्बल्पपानीयमाहितामौषधानामाकल्प्य यावता मृदुरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोषयेच्च" अर्थात् मृदु, मध्य और कठिनत्वादि भेद समझकर यह निर्धारितकरे कि इन औषधोंमें कितने गुना पानी देनेसे इनका अच्छीतरह सार निकल आवेगा उतना पानी देकर क्वाथकरके उचित शेष रक्खे। ऐसा वाग्भटने निष्कर्ष निकालाहै। इस कषायकल्पके आधुनिक काल्पनिकजालमें न पड़कर आर्षसम्प्रदायसे काम लेना चाहिये।

जहां कल्ककी औषधें निर्दिष्टहैं वहांपर हम जैसा प्रथम कहचुकेहैं उसके अनुसार जितनेभी पदार्थ स्नेहमें आनेवालेहैं उनसबकी सीठीको जोड़कर उससे चतुर्गुणित स्नेहको रखकर कामकरनेसे निर्विघ्न स्नेहसिद्धि होगी। पाकके मृदु, मध्य और खरत्वके लक्षण जैसे सुश्रुतने दियेहैं उसीतरह समझना यथा "अत ऊर्ध्व स्नेहपाकक्रममुपदेक्ष्याम। स तु त्रिविध तद्यथा—मृदुर्मध्यम खर इति तत्र स्नेहौषधिविवेकमात्रे यत्र भेषज स मृदुरिति, मधूच्छिष्टमिव विशदमविलेपि भेषजं यत्र स मध्यम, कृष्णमवसन्नमीषद्विशद चिरण च यत्र भेषजं स खर इति, अत ऊर्ध्वं दग्धस्नेहो भवति, तं पुनः साधु साधयेत्। तत्र पानाभ्यवहार्ययोर्मृदु, नस्याऽभ्यङ्गयोर्मध्यम, बस्तिकर्णपूरणयोस्तु खर इति॥११॥ भवन्धात्र शब्दस्योपशमे प्राप्ते फेनस्योपरमे तथा। गन्धवर्णरसादीनां सम्पत्तौ सिद्धिमादिशेत्॥१२॥घृतस्यैव विशेषस्य जानीयात् कुशलो भिषक्। फेनोऽतिमात्रं तैलस्य शेषं घृतवदादिशेत्॥१३॥ सु चि. ३१

जहां कल्कप्रभृतिका निर्देश न कर केवल गणमात्र निर्दिष्ट कियाहो जैसे कि "सौवर्चलयवक्षारकटुकाव्योषचित्रकैः। वचाऽभयाविडङ्गैश्च साधितं श्वासशान्तये ॥ सु उ ५१॥२५" इत्यादिमें 'अनुक्ते द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिलं मतम्। कल्क क्वाथावनिर्देशे गणात्तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ सु चि ३१॥१०,, इसपरिभाषासे कामलेना।

आजकल "अपिधानमुखे पात्रे जलं दुर्जरतां व्रजेत्। तस्मा दावरणं त्यक्त्वा क्वाथादीनां विनिश्चय ॥" अर्थात् ढकेहुए बर्तनमें जल जल्दी नहीं सूखता इसलिये खुलेमुहके बर्तनमें क्वाथ पकाना चाहिये। कितनेही लोग दुर्जरका अर्थ पाचनमें भारी होताहै ऐसाकरतेहैं। इसी धुनमें लोग लगेहुएहैं परन्तु यह श्लोक कहांकाहै इसका पता नहीं चलताहै। हां आजकल शार्ङ्गधरमें शामिल कर रक्खाहै परन्तु आढमल्लके समयमें शार्ङ्गधरमें यह श्लोक नहींथा ऐसा अनुमान होताहै यदि होता तो इसकी व्याख्या की होती। इस श्लोककी रचना भी अण्डवण्डहै इसका अन्तिमपाद अपने अर्थको प्रकटनहींकरताहै। किसी योग्य पुरुषका बनायाहुआ होता तो 'विनिश्चय, की जगह 'विधि स्मृत' "मतो विधि, 'क्वाथस्य करणे विधि' इत्यादि पाठ होता। आप्तपुरुष प्राय अध्याहारनिरपेक्ष वाक्यका प्रयोग किया करतेहैं इसलिये यह साफ बनावटी नजर आताहै। यदि यह सिद्धान्त प्राचीन होता तो दाल वगैरह ढकनेकाभी रिवाज न होता प्रत्युत विपरीत देखनेमें आताहै। ढके विना पदार्थपरमाणुओंका पृथक्करण जल्दी नहीं होता और पाचनहोनेमें पृथक्करणही मुख्य कारण होताहै इस-लिये द्वितीय जो अर्थहै वह निर्मूलहै। "वृद्धवैद्योपदेशेन पिबेत्क्वाथं सुपाचितम्' यह शार्ङ्गधरने स्वीकृत कियाहै। 'सुपाचितम्' का अर्थही यह है कि अच्छीतरह क्वाथ्यद्रव्य परमाणुओंका जिसमें विश्लेष होगयाहो और उसके गन्ध, वर्ण तथा रस विकृत न हुए हों इसीबातको आढमल्लने दिख लायीहै यथा—"सुपाचितमिति गन्धवर्णरसान्वितम्। तदुक्तम्—द्रव्यस्य गन्धवर्णैश्च तुल्य कार्यकरं विदु। तद्विशुद्धं विशुद्धाय कषायममृतोपमम् ॥" यह उद्धरण दियाहै। इसपर अच्छीतरह ध्यानदेकर विचारना चाहिये इस श्लोकसे बिल्कुल विपरीतार्थक वह पद्यहै। बिना ढकेहुए क्वाथकरनेमें चन्दनादि जो गन्ध द्रव्यहैं और उनका गुण गन्धहीपर अवलम्बितहै वह गन्ध उसमेंसे निकल जायगा तब बाकी सीठी रहकर कामही क्या करेगी। इसबातको आजकलके वैद्य भेडिया धसानमें पड़कर भूलगयेहैं परन्तु अर्कखींचनेवाले अत्तार इसकी तर्फ अच्छीतरह ध्यानदेतेहैं और अर्कनिकालनेकेलिये आज कल नवीनशोधके जमानेमेंभी इसतरहके यन्त्र बनाए जारहेहैं कि जिनमेंसे किसीतरहभी गन्ध या बाष्प न उड़नेपावे। जब द्रव्यस्य गन्धही निकलजायगा तब बाकी रह क्या जायगा? इसको मूर्खभी समझसकताहै। हां कदाचित् जल्दीबनानेके हिसाबसे यह वाक्य बनाया गयाहो तो वह भी मूर्खताहै उसकेलिये उपदेशकी जुरूरत नहीं उसे तो सबलोग जानतेहैं। जब जल्दी होतीहै तब मुंहप्रक्षालनकाभी पता नहीं चलताहै क्या इसकेलिये किसी विधिवाक्यकी जुरूरतहै? अर्कखींच नेकासिद्धान्तभी इसीरहस्यको लेकर प्रचलित हुआहै उसका सिद्धान्तहै कि द्रव्यस्य गुण और गन्ध प्राय सबके सब बाष्पमें शामिल रहतेहै इसलिये सुगन्ध द्रव्योंका अर्क जितना कामकरताहै उतना क्वाथ नहीं करता यह प्रत्यक्ष विषयहै।

आसवोंकेलिये यदि वे खदिरसारकीतरह कठिन द्रव्य हों तो १ पल क्वाथ्यद्रव्यमें ३२ पलपानी देकर अष्टमांशावशेष रहनेपर उसकी बराबर पुरानागुड देवै—"आसवादिषु साध्येषु द्वात्रिंशद्गुणसम्मितम्। खदिरादे प्रतिपलं जलमाहुर्भिषक्तमा ॥ अष्टावशेषितं कृत्वा गुडं क्वाथसमं क्षिपेत् ॥ वृद्धसुश्रुत ॥" जहां द्रव्य अधिक हो और पानी कम कहाहो अथवा अनुमानसे छोड़ना हो तो कम न छोड़ना। वैसाकरनेमें द्रव्यकासार न निकलनेसे यथार्थ गुणोदय नहींहोगा इसलिये १ द्रोणद्रव्यमें १० द्रोणपानीदेकर उबालनेपर ३॥ द्रोण अवशेषक्वाथमें १॥ द्रोण पुराना गुड डालकर अच्छीतरह मर्दनकर सन्धानकरना उचित है।—"क्वाथ्यद्रव्यस्य बाहुल्यादुदकं स्वल्पमेव चेत्। सम्यक् पाकं न मुञ्चन्ति हीनवीर्यन्तु केवलम् ॥ क्वाथ्यद्रव्य घटसमं जलं दशघटं क्षिपेत्। नि क्वाथ्य पादशेषं तु गुडं सार्धघटं न्यसेत् ॥ विमृद्य सन्धितं यच्च तदासवमितीरितम् ॥ वृद्धसुश्रुत ॥" मृदुप्रकृतिकरोगियोंकेलिये द्रव्योंका क्वाथ न बनाकर जहां आसव तैयार करनाहो वहांपर औषध चूर्णके बराबर पुराने गुडको चौगुने पानीमें मिलाकर जवकुटचूर्ण डालकर सन्धानकरे, यह अत्यन्त मृदुप्रकृतिक आसव होताहै इस रहस्यको न समझनेवालोंने क्वाथसिद्धसन्धानको अरिष्ट और क्वाथबिनाको आसवकहतेहैं ऐसा नियम बनारक्खाहै। और इसकेलिये "यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः। अरिष्टं क्वाथसिद्धं स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम् ॥" ऐसा वाक्यभी बनारक्खाहै जैसे कि शार्ङ्गधरने लिखाहै और इसीकी छायारूप "विना क्वाथेन सन्धानमासवं प्रोच्यते किल" ऐसावाक्य बिना नामनिदानका नारायणविलासमें दियाहै। "पक्वौषधाम्बुसिद्धं यन्मद्यं तत्स्यादरिष्टकम्। यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसव ॥" ऐसा भाव-प्रकाशनेभी लिखाहै यद्यपिशार्ङ्गधरने अपने लक्षणपर ध्यान देकर वर्ताबभी वैसाही कियाहै परन्तु यह आर्षसिद्धान्तनहींहै यदि ऐसा होता तो "आसवाऽरिष्टयोर्यत्र न गुणो लभ्यते यदा। एकद्वित्रिश्रितं कृत्वा दापयेद्गुणवृद्धये ॥" जहां आसव और अरिष्टोंमें विनाक्वाथकेसन्धानसे यथार्थगुणोदय न होवे तो एक दो बार अथवा तीनबार औषधोंका प्रक्षेपदेकर क्वाथ बनाकर सन्धान करना, अर्थात् प्रथमपाक ३२ गुने जलमें करके फिर दोबार और करना क्योंकि आसवोंमें अधिकसे अधिक ३२ गुने जलका विधानहै इससेभी अधिक तेज करना हो तो प्रथमपाक ३२ गुणमें, फिर १६ गुणमें और तृतीयअष्टगुणमें

करना. ऐसा गोपुरके कहनेसे पूर्वलक्षण निर्मूल होजाताहै (सूचना प्रतिपाक योग्यतानुसार नयाजल देना) आसवमें "अष्टावशेषितं कृत्वा गुडं क्वाथसमं क्षिपेत्। गुडं क्वाथौषधसमं जलं चापि चतुर्गुणम्॥ आसवारिष्टमद्येषु ह्यावापश्च दशांशकः। क्षौद्रञ्च गुडपादोनं प्रदातव्यं भिषक्तमैः॥" क्वाथ अथवा क्वाथौषधके बराबर गुड देना। यदि गुडकेस्थानमें मधु देना हो तो चतुर्थांश कम देना यह वृद्धसुश्रुतका सिद्धान्तहै। "अरिष्टेषु च सर्वेषु द्रोणे पलशतं गुडम्। चिरस्थायिष्वरिष्टेषु द्विगुणं गुडमावपेत्॥ क्षौद्रं क्षिपेद्गुडस्यार्द्धं प्रक्षेपस्तु दशांशिक॥ ३२ गुणप्रभृति उचितजलमें क्वाथको बनाकर चतुर्थ अथवा अष्टमांशावशेष रहे हुए १ द्रोण द्रवमें १०० पल गुड देना। यदि उसे बहुतदिन रखना हो तो २०० पल देना और गुडकी जगह मधु देना हो तो गुडसे आधा देना। यह गोपुरका सिद्धान्तहै। दशांशप्रक्षेप दोनोंमें बराबरहै। इसतरह जहां गुडमधुप्रभृतिका निर्देश न हो वहां इसपरिभाषासे कामलेना उक्तकेलिये विचारकरनेकी कोई आवश्यकताही नहींहै जहां जैसा लिखाहो वैसा करना। पुन् "अभिषवे" स्वादिसे "ऋदोरप्" (पा. ३।३।५७) प्रत्ययकरनेसे आसवशब्दसिद्धहोता है। सन्धानकरके द्रव्यस्थसारको जुदा करनेकानाम साधारणतया आसवहै। इसकेभेद और योनि "धान्यफलमूलसारपुष्पकाण्डपत्रत्वचो भवन्त्यासवयोनयोऽग्निवेश? सङ्ग्रहेणाऽष्टौ शर्करानवम्यः तास्वेव द्रव्यसंयोगकरणतोऽपरिसङ्ख्येयास्तु यथा पथ्यतमानामासवानां चतुरशीतिं निबोध॥ च. सू. २५।४८" में चरकने बतलायेहैं। इनमें सुरा १, सौवीर २, तुषोदक ३, मैरेय ४, मेदक ५, धान्याम्ल ६, इनभेदोंसे मद्यके अन्नसंयोगसे खास ६ भेद बताएहैं। धान्यासव ६, फलासव १६, मूलासव ११, सारासव २०, पुष्पासव १०, काण्डासव ४, पत्रासव २, त्वगासव ४, शर्करासव १, इसतरह मोटे हिसाबसे ८४ आसव बतलाए हैं। इनके द्रव्यसंयोग, विभाग और संस्कार नानातरहके होनेकेकारण नानातरहके आसव होतेहैं। "एषामासवानामासुतत्वादासवसञ्ज्ञा।" इससे योगरूढसंज्ञा बतलाईहै। इसका अपरपर्याय अभिषवहै। इन दोनों उपसर्गोंके अनेकार्थ होनेसे आसव बहुतप्रकारके होतेहैं यह अर्थ सिद्ध होताहै उनमेंसे एकप्रकार यहहै जिसमें द्रव्यमेंसे समस्तसार निकल आवे, जैसे कि मद्यका खींचना। दूसरा यहहै कि जिसमेंसे अधिकतर सार निकल आवे, जैसे अरिष्ट। तीसरा यहहै जिसमें कि द्रव्य उससे पृथक् न किदेजावें परन्तु सन्धानकरनेसे मद्यगन्ध और यत्किंचित् मादकता उत्पन्न होजावे, जैसे कि मुरब्बे, काञ्जीप्रभृति। इनके अवान्तरभेद हजारों होतेहैं पर उन्हें लोकमें मद्यके नामसे नहीं पुकारतेहैं किन्तु काञ्जी, सोंदा, आचार, मुरब्बा प्रभृति नामोंसे जाने जातेहैं। परन्तु "आसुतत्वादासवः" यह लक्षण सबजगह व्याप्तहोनेसे सन्धानकरनेपर जिनमें व्यक्त अथवा अव्यक्त मदहो उनसबकी आसवमें गिनतीहै इसलिये "कन्दमूलफलाद्यञ्च तद्वद्विद्यात्तदासुतम्॥ च. सू. २७।२८०" यहां इसबातको स्पष्ट करदीहै। मद्यवर्ग, च. सू. २७।१७६–१९३ में सुरा १, मदिरा २, जगल ३, अरिष्ट ४ ये चारभेद बतायेहैं। "न रिष्यत इत्यरिष्टम्" अर्थात् नहीं सडनेवाला पदार्थ, यहांपरभी अर्थापत्तिसे आसवार्थही व्यक्त होताहै। जिसमें मद्यसार उत्पन्नहोताहै वह पदार्थ सडतानहींहै इसीलिये आजकल आल्कोहल या रेक्टीफाइडस्प्रिट यत्किञ्चित्प्रमाणमें डालकर कच्चे (बिनाचासनीके) कार्योंके रखनेकी रिवाज़ चलीहुईहै। मद्यवर्गीय समस्तपदार्थोंमें यह (मद्यसार) थोडेबहुत प्रमाणमें रहताहीहै इसअर्थको व्यक्तकरनेकेलिये अरिष्टसंज्ञा रक्खीहै इसीलिये चतुरशीति आसवप्रदर्शनप्रकरणमें अरिष्टका नाम निशानतक नहीं दियाहै और मद्यवर्गमें जिनका नाम आसव दियाथा उनमेंसे शार्कर १, पक्वरस २, शीतरसिक ३ और गौड ४ इनका अरिष्टशब्दसे निर्देश कियाहै वहांपर मधुशब्दका मधुप्रधानासव ऐसा चक्रपाणिदत्तने अर्थ कियाहै यह उनकी गल्तीहै। मधु स्वयं ही आसवहै इसको अधिकखानेसे नशा होताहै देखो वाल्मीकिरामायण सु० ६१, ६२ सर्ग "मधूनि द्रोणमात्राणि बाहुभिः परिगृह्यते। पिबन्ति कपयः केचित्सङ्घशस्तत्र हृष्टवत्॥ घ्नन्ति स्म सहितास्सर्वे भक्षयन्ति तथा परे। मधूच्छिष्टेन केचिच्च जघ्नुरन्योन्यमुत्कटाः॥ अपरे वृक्षमूलेषु शाखां गृह्य व्यवस्थिताः। अत्यर्थञ्च मदग्लानाः पर्णान्यास्तीर्य शेरते॥ उन्मत्तवेगाः प्लवगा मधुमत्ताश्च हृष्टवत्॥ इसप्रकरणको देखनेसे स्पष्ट विदित होगा कि मधुमें कितनी मादकताहै। यह मधुमक्षिकाओंका बनायाहुआ पुष्पासवहै इसलिये "चियन्धघ्नं कफघ्नञ्च मधु लघ्वल्पमारुतम्।" ऐसा चरकने इसका गुण बतलायाहै। इसके बाद समण्डसुरा, मधूलिका, सौवीरक, तुषोदक और अम्लकाञ्जिकको कहकर मद्यवर्गको समाप्त कियाहै इसलिये आसव और अरिष्ट एकार्थवाचकहैं। इसीकारणसे "दिव्याः प्रसन्ना विविधाः सुराः कृतसुरा अपि। शर्करासवमाध्वीकाः पुष्पासवफलासवाः॥ वा. रा. सुं. १४।२२–२३" में रावणकी पानभूमिमें सुरा और कृतसुरा इनदोनोंसे अन्नयोगजन्यमद्य तथा आसवोंसे अन्नरहित मद्यवर्गको कहकर समस्त मद्यवर्गकी सत्ता सूचितकीहै वहांपर अरिष्टका पृथक् निर्देश नहीं कियाहै।

अब सुश्रुतके मद्यवर्ग (सूत्र० ४५।१७० से २१६ तक) की तर्फ ध्यानदीजिये इसमें मार्द्वीक (अङ्गूरी) १ खार्जूर (खजूरी) २, श्वेता ३, प्रसन्ना ४, मधूलिका ५, आक्षिकी ६, सुरा (प्रसन्ना अर्थात् स्वच्छभाग) को बतलाकर कोहल १, जगल २ और बक्कस ३ इसतरह क्रमशः अधमाविष्टभागके गुणोंको कहकर गौड १, शार्कर २, पक्वरस ३, शीतरसिक ४, आक्षिक ५, जाम्बव ६, सुरासव, ७, मध्वासव ८, मैरेय ९, इक्ष्वासव १०, मधूकासव ११, इन ग्यारहशीधुओंको बतलायाहै। यहांपर पूर्वापरमें सीधुको कहा और बीचमें आसवोंका निर्देश कियाहै।

यहां आसवविशेषका नाम नहीं प्रतीतहोता कारण कि इसके समनन्तर 'निर्दिशेदसतथान्यान् कन्दमूलफलासवान्' ऐसा वाक्य आनेसे यहांपर आसवशब्दसे सीधुही अभिप्रेत मालूमहोताहै कारण कि रससे इनके गुणोंका निर्देश कियाहै। रससे प्राय सीधु (ताडी) या शुक्त (सिरका) ही तैयार किया जाताहै आसवविशेष नहीं। आसवविशेषकानाम इसके आग अरिष्ट रक्खाहै और इसे तीक्ष्ण मानाहै देखिये-"अरिष्टो द्रव्यसयोगसंस्कारादधिको गुणै। बहुदोषहरश्चैव दोषाणां शम नश्च स.॥ दीपन. कफवातघ्न रस पित्तविरोधन। शूलाऽऽ ध्मानोदरप्लीहज्वराऽजीर्णार्शसां हित॥ इति' खजूर वगैरहके रसमें यत्किञ्चित् सस्कारदेकर मद्यरूपमें लायेहुएको सीधुमें १, यन्त्रद्वारा खींचकर तैयार कियेहुएको आसवमें २ (कोहल १ जगल २ और बक्स ३ भी इसीमें शामिलहै) और दशमूलादि द्रव्योंकेक्वाथमें अथवा शुद्धजल या तक्रादि द्रवोंमें औषधचूर्ण तथा गुडादिपदार्थ देकर सन्धानकिये हुएको अरिष्टमें गिनाहै। "न रिष्यतीत्यरिष्टम्" अर्थात् चिरस्था यिद्रव्य, बस इनतीनविभागोंमें प्रधान मद्यवर्गको समास कियाहै। इसकेबाद शुक्त (सिरका) और उसकेभेद, गौडशुक्त, रसशुक्त, मधुशुक्त, आसुत, मुरब्बे और आचार वगैरह, शुण्डाम्बु तथा धान्याम्लको गौणमद्यमें दाखिल कियाहै। इससे "यद्पक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्ध मद्य स आसव। अरिष्ट. क्वाथसिद्ध स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम्' यह वाक्य निर्मूल ठहरताहै देखिये सुश्रुत चि० १०।६ अरिष्टको बिनाक्वाथके बनायाहै और पलाशक्षारके परिस्रुत जलको क्वथितकर यत्कि ञ्चित् गाढाहोनेपर ठढाकरके सन्धानकियाहै इससे उक्तलक्षणकी विपरीतता देखनेमें आतीहै। यहापर यह शङ्का न करें कि वहा साक्षात् क्वाथका विधान नहींहै? पलाशभस्मपरिस्रु तस्य उष्णोदकस्य शीतीभूतस्य भ्रयोभागा०" गरमकर ठंडे कियेहुएके तीनभाग, इससे क्वाथकरना व्यक्तहोताहै अन्यथा यह कहनेकी आवश्यकताही क्या थी? यहांपर अवान्तर यह शङ्का न करें कि अरिष्ट और आसव दो भेद एकही जगह क्यों बतलाए? इसका रहस्य यहहै कि इसतरहकेसन्धानके दो प्रकारहैं एक क्वथितकरके निष्पन्नकरना और दूसरा बिना क्वाथका इसीलिये "प्रास्थिकीं पिप्पलीं पिष्ट्वा गुडं मध्य बिभीतकात्। उदकप्रस्थसयुक्तं यवपले निधापयेत्॥ तस्मात्पल गुडातात्तु सलिलाञ्जलिसयुतम्। पिबेत्पिण्डासवो ह्येष रोगानीक विनाशन॥ च. चि १५।१६१-१६२" इसप्रकारका चरकने पिण्डासव कहाहै सुश्रुतने 'पिप्पल्यादिकृतो गुल्मकफरोगहर स्मृत॥ सु ४५।१९६" इत्यादिकोंकी अरिष्टसंज्ञा दीहै इससे सीधु और प्रसन्नाऽप्रसन्न द्विविधसुराको छोडकर प्रधान मद्यका तृतीयनो प्रकारहै उसे साधारणतासे अरिष्ट और आसवके नामसे निर्देशकरतेहैं। वह चाहे क्वथितकरके किया जाय अथवा क्वाथबिना कियाजाय यह तो वैद्यकी बुद्धिपर आधारहै इसे हम प्रथमही सूचितकरचुकेहैं कि क्वथितकी अपेक्षा बिनाक्वथित मृदुप्रकृतिकहोताहै। अर्थात् "मृदुप्रकृतिक आसवस्तद्भिन्नमरिष्टम्" इसभेदको लेकर भेदकरें तो अवश्य हो सक्ताहै॥ "पदपक्वौषधाम्बुभ्या सिद्ध मद्य॥ आसव। अरिष्ट क्वाथसिद्ध स्यात्०। शार्ङ्ग०, भा॥" 'अरिष्टासव सीधूनां गुणान् कर्माणि चादिशेत। बुद्धया यथास्व सस्कार मवेक्ष्य कुशलो भिषक्॥ सु ४५।१९७" की टीकामें 'द्रव्यप्रधानमरिष्टम्, द्रवप्रधान आसव, उभयप्रधान मद्यम्" इसतरह कियेहुए लक्षण अन्याप्त्यादिदोषत्रययुक्तहोनेसे त्याज्य है। अरिष्टलक्षणमें द्रव्यप्राधान्यदीहै सो औषधमात्रमें यह लक्षणहोनेसे निरर्थकहै दुनियामें कौनसा औषधहै जिसमें कि द्रव्यप्रधान न हो? इसीलिये "नानौषधिभूतं जगति किञ्चित्" यह सिद्धान्त कियाहै इससे (उपरका लक्षण) निरर्थकहुआ। इसीतरह द्रवप्राधान्यमेंभीहै प्रधान और अप्रधान दोनोंतरहके मद्यमें यत्किञ्चित् प्रमाणमें द्रवभी अपेक्षितहै उसके बिना मद्यभेदका बननाही असम्भवहै कदाचित् कहें कि उक्तलक्षणमें एकदम द्रवकी अधिकता अभीष्ट है तो सीधु और सुरामें अतिव्याप्तिहोनेसे यह लक्षणभी निकम्माहै। चरकीय पिण्डासवमें एकदम द्रव कमहै इसीलिये उसका नाम पिण्डासव रक्खाहै इसलिये यहलक्षणभी दूषितहै। इसीतरह 'उभयप्रधान मद्यम्, यहभी अग्राह्यहै। जैसाहमने पूर्वमें कहाहै वही मद्यमार्गहै लोगोंके कियेहुए लक्षण छात्र-बुद्धिको व्यामुग्ध करनेवालेहैं। कुछप्रकरणमें अरिष्ट और आस वका जो पृथक विधानहै वह क्वथिताक्वथित प्रकारको बतानेके लियेहै कुटीकी इच्छाहो तो पलाशासवमें मुरब्बे वगैरह भी तैयार करके देसकतेहैं इसलियेभी आसवप्रकार जुदा बतायाहो यहभी सम्भवहै। इसलिये "सुरामन्याऽऽसवारिष्टालेहांश्चूर्णा न्ययस्कृती। सहस्रशोऽपि कुर्वीत बीजेनाऽनेन बुद्धिमान्॥" इस उपसहारमें अप्रयुक्त मन्थकोभी गिनायाहै। कदाचित् कोई द्रव्यप्रधानका प्रक्षेपप्रधान यह अर्थ करें तो यहभी अभ यारिष्ट दन्त्यरिष्ट, गण्डीरारिष्ट प्रभृतिमें अव्याप्तहोनेसे अग्राह्यहै उपर दियेहुए व्याख्यानको समझनेकेलिये सुश्रुतीय और चरकीय कतिपय आसवारिष्टोंकी सूची नीचे दीजातीहै। यथा

लोध्रासव (च चि ६।४१) में ३२ गुनेजलमें चतु र्थांशावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको प्रमेहादि रोगोंमें प्रयुक्तकियाहै।

मूलासव (च चि १५।१५७)में १४॥ गुन जलमें चतु र्थांशावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको ग्रहणी-प्रभृतिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै

दुरालभासव (च चि १५।१५३) में ११ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको मद ग्यादिरोगोंमें प्रयुक्त कियाहै।

शर्करासव (च चि १४।१५४)में अठगुनेजलमें चतुर्था शावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शमें प्रयुक्त कियाहै।

पलाशक्षारासव (सु. चि. १०१७) में पलाशकी भस्मको ६ गुने पानीमें डालकर नितरेहुए जलको अग्निपर गाढाबनाय-प्रक्षेपरहित सन्धानकरके कुष्ठमें प्रयुक्त कियाहै।

गौडासव (सु. सू. ४४।२८) में ५ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्टक्वाथकरके प्रक्षेपरहितका सन्धानकरके विरेचनादिकमें प्रयुक्तकियाहै।

मधूकासव (च. चि १५।१४७) में चतुर्गुणजलमें तृतीयांशावशिष्ट क्वाथ करके प्रक्षेपरहितसन्धानकियेहुएको ग्रह-ण्यादिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै।

पिण्डासव (च. चि. १५।१६१) में चतुर्थांशजलदेकर पाकरहितही सन्धानकरके ग्रहणीप्रभृतिमें प्रयुक्तकियाहै।

पुनर्नवाद्यरिष्ट (च. चि. १२।३४) में ३३ गुनेजलमें अर्धावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

अभयारिष्ट (च. चि. १४।१३६) में २५ गुनेजलमें चतुर्थांशावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शमें प्रयुक्त कियाहै।

अभयारिष्ट (सु. चि. ६।१५) में २१ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

दन्त्यरिष्ट (सु. चि. १४।१४५) में १६ गुनेजलमें चतुर्थांशावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

फलारिष्ट (च. चि. १४।१४६) में १२॥ गुनेजलमें चतुर्भागावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शप्रभृतिमें प्रयुक्तकियाहै

दन्त्यरिष्ट (सु. चि. ६।१४) में १० गुनेपानीमें चतुर्थांशावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

गण्डीरारिष्ट (च. चि. १२।२९) में ८ गुनेपानीमें त्रिभागावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

बीजकारिष्ट (च. चि. १६।१०६) में ५। गुनेजलमें चतुर्थांशावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको पाण्डुमें प्रयुक्तकियाहै।

मध्वरिष्ट (च. चि. १५।१६४) में पञ्चगुण जलदेकर विनापाककियेही सन्धानकर ग्रहण्यादिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै।

कनकारिष्ट (च.चि. १४।१५९) में चतुर्गुणजलदेकर पादशेष क्वथितकर प्रक्षेपसहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

पूतीकारिष्ट (सु.चि. १०।६) में द्रव्यापेक्षया आधेसे कुछ अधिक जल देकर पाकरहित सन्धानकरके कुष्ठादिकमें प्रयुक्तकियाहै।

अष्टशतारिष्ट (च. चि. १२।३२) में तृतीयांश जलदेकर विनापाक कियेही सन्धानकिये हुएको श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

फलत्रिकारिष्ट (च. चि. १२।३९) में जलरहितकाही सन्धानकरके श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

लोहारिष्ट (सु. सं. १२।१२) में १६ गुनेजलमें चतुर्भागावशेष क्वाथकरके सन्धानकियेहुएको प्रमेहपिडकाप्रभृतिमें नियुक्तकियाहै।

धात्र्यरिष्ट (च. चि. १६।१११) में आंवलोंकेस्वरसमें विनापाककियेही सन्धानकरके पाण्डुरोगमें प्रयुक्तकियाहै।

आसवोंमें प्रायः घृतभाण्ड लियाजाताथा उसमें चन्दन और अगरका, अथवा जटामांसी और मरिचका, तथा कहीं कहींपर केवल अगरका धूपलिखाहै। पीपल, मधु और घृतका लेप सुश्रुतमें बतलायाहै। चरकमें पिप्पली और मधुकालेप (मध्वरिष्टमें), पीपल, चव्य, प्रियङ्गु, मधु और घृतका लेप (शर्करासवमें), तथा इलायची, मृणाल, अगर और चन्दनकालेप (मधूकासवमें) बतलायाहै। मध्वरिष्टमें घृतभाण्डकी जगह कोराघड़ा उपयोगमें लियाहै परन्तु आजकल आसवोंको लकडीके पीपेमें रखनेका प्रचार हुवाहै इसमें प्रथम जो आसव रक्खा जाताहै उसमें जिसतरहकी लकडीहोगी उसका विशेष अंश आवेगा। हां वह कई वारका होजायगा तो इतना अंश नहीं आवेगा इसबातका ध्यान रखनाचाहिये। इसीलिये आचार्योंने घृतभाजन लियाहै क्योंकि इसमें कोईचीज़मिलनेका सम्भवनहीं रहता और स्नेहके कारण बाहरसे सूक्ष्मककीडोंका प्रवेशभी नहीं होताहै। इसीलिये जन्तुघ्नद्रव्योंका धूप और प्रलेप लिखाहुआहै। इनका अनुष्ठान करनाभी उचितहै।

आसवोंमें समय अधिकतर १ महीनेका रक्खाहुआहै कहीं-कहीं शर्करासव प्रभृतिमें मासार्ध भी आताहै पर यह अवधि मद्यसार उत्पन्न करनेकीहै। " घनात्यये तथा ग्रीष्मे सन्धानं षड्दिनैर्भवेत्। हेमन्ते शिशिरे स्थाप्यं भिषजा दिग्दिनावधि॥ प्रावृड्वसन्ते सन्धानं भवेदष्टदिनेन वै॥" इस वृद्धसुश्रुतके वाक्यसे अल्पकालमें सन्धान व्यक्तहोताहै पर यह आसवपरक नहींहै वहांपर तुषाम्बु प्रभृतिका प्रकरणहै अप्रमिश्रितसन्धान बहुत-जल्दी होताहै इसलिये वहां वैसी अवधि बतलाईहै। यद्यपि इस-वाक्यमें प्रावृट् समयमें भी सन्धान कहाहै पर वहभी तुषाम्बु प्रभृतिकेलियेहै। येसब सन्धान चिरकालतक रखनेकेलिये नहीं होतेहैं। थोडे समयकेलिये कियेजातेहैं आसवोंका सन्धान प्रावृट्कालमें कियाहुआ खराबहोजाताहै उसकेलियेसबसे उत्तम वसन्त और ग्रीष्म ऋतुहैं। जहांपर उष्णता कमहोगी वहांपर आसव बिगड़जायगे इसबातका ध्यानरखनाचाहिये।

नस्यमें ८ विन्दु (१) शुक्ति (२) और पाणिशुक्ति(३) इसतरह ३ मात्राएं बताईहैं ये प्रत्येकनासापुटकेलिये सम-झनीचाहियें क्योंकि गयीप्रभृतिने ऐसा स्पष्ट कहाहै यथा- "प्रायोगिके नस्ये प्रत्येकं नासापुटयोरष्टौ बिन्दवः स्नेहनार्थे

वद्द्विगुणाः शुक्तिप्रमाणा इति ।" यहांपर आठके द्विगुणको शुक्तिनाम देनेसे ३२ कानाम पाणिशुक्ति अर्थतः आजाताहै । "प्रायोगिके स्नैहिकश्च द्विविधे नस्यमुच्यते । प्रायोगिके बिन्दवोऽष्टौ स्नैहिके शुक्तिरिष्यते ॥" इसभोजके वाक्यमें प्रायोगिकनस्यमें आठ बिन्दु बताकर स्नेहनमें शुक्ति बतलाईहै इसलिये यहां प्रायोगिकको द्विगुणकरके शुक्ति नाम दियाहो यह अनुमान होताहै । भोजने उसे द्वित्रिचतुर्गुणभी बतलायाहै सो भी इसीक्रमको मानकर होसकताहै क्योंकि १६ को २,३,४से गुणित करनेसे ३२,४८ और ६४ बिन्दुहोतेहैं । ये यथाकथञ्चित् जवान और पुरुषोंके नाकमें डालेजासकतेहैं परन्तु वृद्धहारीतके सहेलको लेकर चले तो भोजका कथन एकान्ततः निरर्थक होताहै देखिये "प्रदेशिन्या नियमे द्वे पर्वणी गलितोऽखिलम् । नस्यादिषु तु विज्ञेयो भिषग्भिर्बिन्दुसञ्ज्ञकः ॥ बिन्दुभिश्चाष्टभिः शाणः प्रोक्तश्चेति भिषक्तमैः । द्वात्रिंशद्बिन्दुभिश्चात्र शुक्तिश्चैव विधीयते ॥ द्वे शुक्ती पाणिशुक्तिश्च नस्यकर्मणि पूजिताः ॥ वृद्धहारीत ॥

तैलादिद्रवनिमग्नतर्जनीद्वय—

पर्वच्युतद्रवद्रव=१ बिन्दु (४रत्ती)

८ बिन्दु=१ शाण (३२रत्ती)

३२ बिन्दु=१ शुक्ति (१२८रत्ती)

२ शुक्ति=१ पाणिशुक्ति (२५६रत्ती)

इसहिसाबसे १२८ रत्तीकी १ शुक्ति होतीहै उसे २,३,४ गुणितकरनेसे २५६,३८४,५१२ रत्तियोंकीमात्राएं होतीहैं । इनका उपयोग मनुष्यपर तो क्या? गोमहिषपरभी होना दुस्तरहै इसलिये वृद्धहारीतके वाक्यमें 'अखिलं'का अर्थ ८ बिन्दुका १ बिन्दु नहीं गिनना किन्तु तर्जनीके २पर्व तैलमें डुबाकर टपकानेसे ८ बिन्दुतो बरावर गिरतेहैं और दो बिन्दु पीछेसे अल्पप्रमाणके गिरतेहैं उन्हें अलग न गिनकर ८ हीं बिन्दु गिनना, यह अखिलका अर्थकरना कारण कि "तस्य प्रमाणमष्टौ बिन्दवः प्रदेशिनीपर्वद्वयनिःसृताः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्तिः, तृतीया पाणिशुक्तिः, इत्येवास्तिस्रो मात्रा यथाबलं प्रयोज्याः ॥ सु.चि. ४०।२८" यहांपर अखिलका नामनिशानतक नहिं है । इसतरहके व्याख्यानकरनेसे हारीतका उद्धरण बरावर लगजाताहै क्योंकि तर्जनीच्युत १ बिन्दु आधीरत्ती या १ उड़द या १ जवके बरावर होताहै । इंग्लिशमेंभी १ मिनिम (बिन्दु) १ ग्रेनके बरावर होताहै । २ ग्रेनकी १ रत्तीहोतीहै इसलिये ८ बिन्दुओंकी ४ रत्ती हुई । इनका बाल, वृद्ध और जवान सबपर उपयोग होसकताहै परन्तु इन ८ बिन्दुओंका १ बिन्दु गिनेंगे जैसा कि शार्ङ्गधर और वाग्भटने कहाहै यथा—"स्नेहे मग्निद्वयं यावन्निमग्ना चोद्धृता ततः । तर्जनीयं स्रवेद्बिन्दुं सा मात्रा बिन्दुसंज्ञिता ॥ एव विधैर्बिन्दुसञ्ज्ञैरष्टभिः शाण उच्यते ॥ शार्ङ्ग० उ. ८।३९ ॥" "मर्शप्रमाणं तु प्रदेशिन्यङ्गुलिपर्वद्वयानिमग्नोद्धृतायावत्पतति स बिन्दुः ॥ अ.सं.सू. २९" इनके हिसाबसे प्रतिबिन्दु ४ रत्तीहोनेसे ८ बिन्दुओंकी ३२ रत्तियें होंगी और ६४ बिन्दु होंगे । इनका प्रतिनासापुटमें एकवार उपयोग होना दुस्तरहै तब १६ और ३२ बिन्दुओंका उपयोग कैसे होसकेगा? यद्यपि "अमी दशाष्टौषड्बिन्दव उत्तममध्यमकनीयस्योमात्राः" ऐसी मनगढन्तमात्रा कायम करके अपने व्याख्यानको सङ्गत करनेका प्रयास वाग्भटने कियाहै परन्तु इसका मूल क्याहै? इसतरहके प्रश्नका उत्तर क्यादिया जायगा इसका कुछभी विचार न किया । इसलिये "न मात्रामात्रमप्यत्र किञ्चिदागमवर्जितम्" इसपर विश्वास रखनेवालोंको सावधान होना उचितहै । देखो यहींपर दशबिन्दुकी मात्रा विदेह सुश्रुत और हारीतप्रभृति किसीभी महर्षिने नहीं बतलाईहै और ६ की मात्रा वैरेचनिककीहै ८ स्नेहनकी, सो इनकाभी साङ्कर्य करके ऋषिसिद्धान्तका कितना विप्लव कियाहै इसको विचारके वाग्भटपर अन्धश्रद्धा न रखनीचाहिये । इन्होंने अपना मनगढन्त सिद्धान्त बनाकर लोगोंके मनमें यह ठसानेकी कोशिश कीहै कि सुश्रुतादि ऋषियोंका इसविषयमें अज्ञानहै इसलिये ये दोनों (शार्ङ्गधर और वाग्भटके) व्याख्यान अश्रद्धेय हैं कारण कि एवंविध व्याख्यान 'अखिलं'की गैरसमझसे लिखेगयेहैं । भोजका जो निबन्धहै वह सुश्रुतीय गूढरहस्योंके उद्घाटनार्थंही है । आचार्यने वैरेचनिकनस्यमें "चत्वारो बिन्दवः षड् वा तथाऽष्टौ वा यथाबलम् । शिरोविरेकस्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशेत् ॥ सु चि. ४०।३६" यहांपर ४,६ और ८ बिन्दुओंकी मात्रा बतलाकर अन्तमें 'यथाबलम्' को सिद्धान्त मानाहै । इससे यह लक्षितकराया कि चिकित्साका प्रत्यक्ष विषयहै इसमें जैसी जहां औचिती हो तदनुकूल कल्पना करनीचाहिये इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहींहै । यही बात विदेहने कहीहै देखो "चतुरश्चतुरो बिन्दूनेवैकस्मिन् समाचरेत् । अभ्यर्धां द्विगुणां वापि त्रिगुणां वा चतुर्गुणाम् ॥" अर्थात् प्रत्येक नासापुटमें विरेचनार्थ ४–४ बिन्दु डाले, और औचिती देखकर ६,८,१२,१६ इत्यादिकका अनुष्ठानकरे अर्थात् चिकित्साशास्त्र औचितीको देखकर प्रवृत्त होताहै । यहां ध्यानदीजिये विदेहने जैसे वैरेचनिकनस्यकी मात्रा ४ बिन्दु एकनासापुटकेलिये नियतकरके डेढ, दो, तीन और चारगुणितका उसमें विकल्प बतलायाहै वैसेही स्नेहनमेंभी यह सिद्धान्त अनायाससे उपस्थित होगा । तब विदेहके सिद्धान्तसे वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ बिन्दुओंको द्विगुणकरनेसे ८ बिन्दु नियत होतीहै इसमें पूर्व विकल्पोंका योगकरनेसे १२,१६,२४,३२ इतने बिन्दुओंकी मात्राएं आतीहै । सुश्रुतने अभ्यर्ध और त्रिगुणको छोडकर उत्तरोत्तरको द्विगुण कियाहै । यथा विदेहनिर्दिष्ट वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ बिन्दुहै स्नेहनार्थ स्वभावतः ८ हुए । इन्हें द्विगुणकरनेपर १६ को मध्यम, तथा इनकोभी द्विगुणकरके ३२ को उत्तम मात्रा मानी । इसरहस्यको देखकरभी सुश्रुतने १६ बिन्दुओंकाही नाम शुक्ति रक्खाहै यह निःसन्देह अनुमान

होताहै । वृद्धहारीतने साधारणस्नेहनमात्राको अर्थात् ८ बिन्दुओंको चतुर्गुणितकरके शुक्ति नामरक्खाहै इतना मतभेद अवश्यहै परन्तु नस्यका विधान ऊर्ध्वजत्रुरोगोंके निर्हरणार्थहै । यह विषय प्रधानतया शालाक्यतन्त्रकाहै इसके प्रधानाचार्य महाराजविदेहहैं । सुश्रुतप्रभृतिनेभी उन्हींकि तन्त्रानुकूल रचना कीहै । इससे यह निर्धारित हुआकि १६ बिन्दुओंकानाम शुक्ति और ३२ को पाणिशुक्तिकहतेहैं । भोजने शालाक्यतन्त्रके मूलकी तरफ ध्यान न देकर केवल सुश्रुतहीको मूलनिर्माता समझकर "प्रायोगिक स्नैहिकश्च०" इत्यादि पद्यकी रचनाकीहै उसमें "तस्य प्रमाणमष्टौ बिन्दवः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्ति ०" इसवाक्यको क्रमश विरेचन और स्नेहनमें लगायाहै देखिये-"प्रायोगिके बिन्दवोऽष्टौ स्नैहिके शुक्तिरिष्यते ।" इति । परन्तु सुश्रुतीयसन्दर्भमें तृतीयमात्रा पाणिशुक्ति रहजातीहै इसकी व्यवस्थाकलिये "दोषोच्छ्राय समासाद्य दद्याद् द्विनिचतुर्गुणम्" इस चतुर्थपदकी रचनाकी। परन्तु सुश्रुतका यह अभिप्राय नहींहै किन्तु उन्होंने ८,१६ और ३२ की मात्रा निकृष्ट मध्यम और उत्तम भेदोंको लेकर तीनों स्नेहनकेलियेही बताईहैं । रेचनकेलिये आगे स्वतन्त्रमात्राका निर्धारणकियाहै देखिये-"चत्वारो बिन्दवः षड्वा तथाऽष्टौ वा यथाबलम् । शिरोविरेकस्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशत्॥ सु चि ४०।३६" इसजगहपर भोजसे इतनीही भूल हुईहै किमूल सुश्रुतहीको मानलिया। इसमें विपत्ति यही आवेगी कि शुक्तिको द्विनिचतुर्गुण करनेसे ६४,९६ और १२८ बिन्दु आतेहैं सो इतना मनुष्यके प्रत्येक नासापुटमें समावेश होना दुर्घटहै। इसलिये विदेहको मूलपुरुष मानकर व्यवस्थाकरनी श्रेयस्करहै* द्रव्यादष्टगुण क्षीरं क्षीरात्तोयं चतुर्गुणम् । क्षीराऽवशेष कर्त्तव्य क्षीरपाके त्वय विधि ॥ यह श्लोक टोडरानन्दमें कृष्णात्रेयके नामसे उद्धृतकियाहै । सुश्रुतीयवाजीकरणाऽधिकारमें "बस्ताण्डसिद्धे पयसि भावितानसकृत्तिलान्," इसश्लोककीटीकामें डल्हणने "परिभाषामाह" इसतरहलिखकर इसीश्लोकको लिखाहै और इसे क्षीरपाकविषयक परिभाषा मानीहै परन्तु सुश्रुत अथवा चरकने इसका निर्देश नहिं कियाहै, करें भी क्या? जैसे चार चीजोंके क्वाथोंका विधानहै वैसेहि क्षीरकाहै, हां केवल क्षीरमें कठिनवस्तुओंका पाककरना हो तो उसमें थोडेबहुतजलकी अपेक्षा अवश्य होतीहै क्यों कि दूध गरम होनेसे स्वयं शीघ्र गाढा होजाताहै और उसमें चिकनाई होनेके कारण क्वाथ्यद्रव्यमेंसे तदीयसारका पृथक्करण प्राय नहिं होताहै इसलिये जैसी जहां योग्यता हो उतना जल देना आवश्यकहै । बस्ताण्डप्रभृतिके पाककेलिये दुग्धसम अथवा दुग्धद्विगुणित जल पर्याप्तहै । कदाचित् जल नदिया जाय तो भी वह सिद्ध होजायगा, इसीलिये सुश्रुतके किसीभी क्षीरपाकमें कोई नियम विशेष निर्द्धारित नहिं कियाहै । प्रत्येक वस्तुपाककेलिये नियम बांधे जाय तो ससारमें यावन्मात्रद्रव्यकेलिये तत्परिमित परिभाषायें बनानी होंगी । खाद्यवस्तुपाकके लिये पाकशास्त्रके नियम जाननेकी खास जुरूरतहै पर वह भी क्वाथनियमसे बहिर्भूत नहिंहै। क्वाथोंके लिये ३२ गुने तक पानीका निर्द्धारणकिया हुआहै उसीके भीतर समस्तपाकशास्त्रकाविषय समाप्त होताहै इसीलिये सुश्रुतादिक महर्षियोंने प्रत्येकपाककेलिये स्वतन्त्रनियमनहिं बांधेहै । उपरिनिर्दिष्टश्लोक यदि यथार्थत कृष्णात्रेयकथित हो तो उसे दिग्दर्शनार्थ समझना किन्तु परिभाषात्वेन नियन्त्रण करना उचित नहिं, इसीतरह क्षीरमष्टगुण द्रव्यात्क्षीरान्नीरं चतुर्गुणम् । क्षीरावशेष तत्पीत शूलमामोद्भव जयेत् ॥ इसशार्ङ्गधरकवाक्यकोभी दिग्दर्शनार्थ समझना । अथ स्वरसादिनिरुक्ति ।

स्वरस=सद्य समुद्धृतात्क्षुण्णात्पटनिष्पीडिताच्च य ।
द्रव्याद्रसो विनिर्याति स रस स्वरसश्च स ॥

निर्यासः=वृक्षात्स्वय विनिर्याति स निर्यासो जतुश्च स ।

क्वाथ=शुष्कद्रव्यमुपादाय स्वरसानामसम्भवे ।
वारिण्यष्टगुणे साध्य ग्राह्य पादाऽवशेषितम् ॥ **चन्द्रनन्दनः**

शीत.=कुडव चूर्णित द्रव्य प्रक्षिप्त द्विगुणे जले ।
अहोरात्र स्थित तस्माद्भवेत्स रस उत्तम ॥
स्वरसस्य गुरुत्वेन शुक्तिमात्र प्रदापयेत् ।
वन्हिसिद्ध रस चैव पलमात्रं प्रदापयेत् ॥ **कृष्णाऽऽत्रेयः**

फाण्टः=अष्टाऽवशेषितेऽत्युष्णजले क्वाथ्यपलं क्षिपेत् ।
विमृद्य पटपूत तज्जल फाण्टमिति स्मृतम् ॥

कल्कः=य पिण्डश्चार्द्रपिष्टाना स कल्क इति कीर्तित ।

चूर्णम्=अत्यन्तशुष्क यद्द्रव्य कुट्टित वस्त्रगालितम् ।
चूर्ण स्यात्क्षुद्रको रेणु रजो मात्राऽस्य तिन्दुकम्। **आत्रेयः**

पुटपाकः=पुटेन पच्यते यस्मात्पुटपाकस्ततो मत ।
सुपिष्ट कुडव द्रव्य वारिणा काञ्जिकेन वा ॥
पुष्पकान्तर्गत बद्ध सान्द्रपङ्केन लेपितम् ।
अङ्गुष्ठमानक पश्चाद्गोमयाग्निप्रदीपितम् ॥
सिन्दूरवर्णत प्राप्त ग्राहयेत्तद्रस शुभम् ।

गुटिका=गुडादिवर्तितश्चूर्णो वर्ति स्याद्गुटिका गुड ।
मोदको वटक पिण्डी तन्मात्रा चूर्णवन्मता ॥ **पराशरः**

रसक्रिया=क्वाथादीना पुन पाकाद्घनभावो **रसक्रिया** ।
मात्रां रसक्रियायाश्च स्थिर्यात्यानिलल बुध ॥ **गोपुरः**

मण्डादि=सिक्थै विरहितो मण्ड पेया सिक्थसमन्विता ।
विलेपी बहुसिक्था स्याद्यवागूर्विरलद्रवा ॥
अन्न पञ्चगुणे सिद्ध विलेपी या चतुर्गुणे ।
चतुर्दशगुणे मण्डो यवागू षड्गुणेऽम्भसि ॥ **वृ० सु०**

पानकादि=कर्षमात्र ततो द्रव्य साधयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि ।
अर्द्धशृत प्रयोक्तव्य पानपेयादिसविधौ ॥ **अग्निवेशः**

यूष.=अष्टमुद्गदलानान्तु पलेकेन विपाचित ।
पूताऽऽनीतविदलस्तनुर्यूष कृताऽकृत ॥ **नलः**
स्याद्धित साधितो यूषस्त्वष्टादशगुणे जले। **वृद्धसुश्रुत**

७७ फार्मसे यहांतक "गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस"में वे प० हरिप्रपन्नजीने छपवाया प्रिंटर नटवरलाल इच्छाराम दसाई, कोट बम्बई न ॥

३०९ शोथज्वरे क्रु ४१७ शुद्ध २३६ सन्निपाते खरा. १६ १७ २१ २५ ३० ३१ ३३ ३५ ३७ ३८ ३९ ४३ ४४ ४६ ४७ ४८ ५० ५१ ५२ ५३ ५५ ५६ ५७ ६५ ८६ ८७ ९१ १०२ १०३ १०५ १०६ १२० १३४

१३६ १५५ १५९ १८२ १८६ २०८ २०९ २१० २१८ २२७ २३४ २७३ २७९ २९१ २९२ २९४ ३०० ३०१ ३०२ ३०३ ३०४ ३२४ ३५९ ३६५ ३६७ ३६८ ३७५ ३९५ ४०२ ४४१ क्रु १५ १७ २१ ४४ ४५ ६१ ६६ १०० १०३ १०८ ११० ११३ ११५ १२० १२१ १७२ २०४ २०८ २११

२१३ २१५ २२४ २२५ २२८ २३१ २३३ २३४ २३५ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४४ २४७ २५१ २८९ ३७६ ३९१ ३९२ ३९५ ३९७ ४५८ ४५९ ४६० ५३९ ५५२ शुद्ध ६ ८ ४९ ६४ ६५ १०९ ११० १११ ११२ ११४ ११६ १२२ १२३ १२५ १२८ १३१ १३२ १३३ १३४ १३७ १३८

१४० १४२ १४३ १४५ १५० १५१ १५४ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६३ १६८ १७० १७१ १७२ २०४ २०६ २१४ २१६ २१७ २२४ २२५ २३३ २३५ २३७ २४४ २४५ २५७ २७० २७१ २७३ २७४ २७५ २८३ २८९ २९० २९१ २९५ ३०४ ३१३ ३१४ ३१६ ३२० शु ६ ७ १५ २०

२१ ६२ ६७ ७३ ७८ ८५ ९१ १११ १२९ १४४ १४५ १४७ १४८ १७१ १८३ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९५ १९९ २०५ २०९ २१० २३७ २३९ २४७ २४९ २६४ २७३ २७५ २८५ २९६ ३११ ३२२ ३३६ ३३८ ३४२ ३५७ ३८३ ३८४ ३८५ ३८६ ३९० ३९५ ४०५ ४०७ ४१३

४१४ ४१६ ४२३ ४४१ ४४२ ४६६

३ १३ १६ १८ १९ २२ २३ २४ ४८ ५५ ७० ८५ ९४ ९५ ९७ ११८ ११९ १४६ २२१ २३० २३५ २३६ २३८ २३९ २४० २४१ २४४ ३०८ ३०९ ३१० ३२० ३२३ ३२४ ३२५ ३२७ ३२९ ३४१ ३७२ ३७४ ३९० ३९५ ३९७ ३९८

३९९ ४०१ ४१८ ४२४ ४३५ ४३९ ४४२ ४४३ ४४८ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२ ४७४ ५२८ ५३० ५३३ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४८ ५५२ ५५३ ५५९ ५६३ ५७२ ५७५ ६२६ ६३९ ६५१ ६५२ ६५३ ६५४ ६५५ ६५८ ६५९ ६६१ ६७१ ६७३ ६७५ ६७६ ६७७ ६७८ ६७९ ६८० ६८१ ६८५ ६८६ ६८८

७०२ ७०४ ७१७ अन्त स्था १९ ५९ ६८ ७० ७३ ९४ ९६ ९८ ११७ १३० १४४ १५० १५५ १५८ १७० १७५ २०० २०१ २०३ २१३ २२२ २२८ २३० २३५ २३६ २३८ २६७ २७५ ३०७ ३१८ २६५ २६६ ३७० ३७१ ३७७ ३८३ ३८९ ३९१ ३९३ ३९४ ४०० ४०१ ४०६ ४०७ ४०९

४१० ४११ ४२१ ४२२ ४५० ४६६ ४६८ ४७० ४८७ ४८८ ४९० ४९४ ४९८ ५०० ५०५ ५०६ ५१४ ५२२ ५२९ ५४२ ५४५ ५५१ ५५७ ५६५ ५६६ ५६७ ५७१ ५७३ ५७६ ५७७ ५८१ ५८२ ५९४ ६०२ ६०४ ६११ ६१६ ६२७ ६३० ६३२ कफ ८ २८ ६५ ७६ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७

१४२ १४४ १४५ २०४ २१५ २३७ २४६ २५० २५१ २५२ २५७ २५८ २५९ २६० २६१ २६२ २६३ २६४ २६५ २६६ २६७ २६८ २६९ २७० २७१ २७२ २७३ २७४ २७५ २७६ २७७ २७८ २७९ २८० २८१ २८२ २८३ २८४ २८५ २८६ २८७ २८८ ३०३ ३०८ ३१० ३११ ३१२ ३१५ ३२१ ३२७ ३२९

३३७ ३३८ ३४० ३४१ ३४५ ३५४ ३५६ ३५९ ३६४ ३६६ ३६८ ३८० ३८१ ३८४ ३८५ ३८६ ३८८ ३९२ ३९४ ३९९ ४०९ ४३६ ४३५ ४५४ ४५५ ४५६ ४५७ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७१ ४७२ ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७८ ४७९ ४९३ ४९९ ५०१

५१७ ५२६ ५२७ ५२९ ५४० ५५५ ५५६ ५६३ ५८१ ५८३ ५८६ ५८७ ५८८ ५८९ ५९१ ५९३ ६०२ ६०३ ६०७ ६१० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६५० ६५१ ६५२ ६५५ ६५६ ६६५ ६७२ ६७४ ६९२ अ.व्या. २ ७ ८ १० १८ २५ ३० ३१ ३२ ३४ ३६ ३७ ३८ ४० ४२ ५१

५३ ६६ ६७ ७० ७५ ७६ ८८ ८९ ९१ ९४ ९९ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०९ ११२ परि० १ ४ ७ ८ १० २५ ३१ ३३ ३५ ३६ ४० ५९ ६५ ६९ ७० ७६ ७७ [illegible] ५५२ ब्रु ४४२ पु २३५

२४० ३९० ३९७ ४३९ ५४८ ६५२ ६५३ ६७१ ६७३ कफ २४६ २६२ २८८ ४५६ ४६० ४६२ ४६३ ४६५ ४६७ ४६८ ४६९ ४७१ ४७२ ४७३ ४७५ ४७८ [illegible] पु ५२२ ६६८ अन्त स्थाः २३० [illegible] क्रु ३५२ पु

अ.व्या. १८७ ४७ ज्वरातिसारे क्रु ९५ १०४ १२२ १४१ १७२ ५१७ ५४० शुद्ध २६१ २७५ २८३ शु १५७ २७४ ३०९ पु ५२ ५५ ७५ ११९ १२५ कफ ११ ४४ ३८९ ४२० ५४५ ५९५

क्रु ६ ११० ३८७ ३८९ ५३५ ५४८ शुद्ध १०३ १०६ शु १९८ पु २०६ ३१७ ५४७ अन्त स्थाः १२९ २१९ २४८ ५०१ कफ ३३ ११० ६२२ ६२६ [illegible]तिसारे

२६	१००	३७८	५५	२१	१९८	२९	४८७	१९०	२८७	४६	३३३	६०७	■	२२२	४२१
५५	१७२	३८३	८१	२५	१९९	३०	५०३	१९१	२८८	४७	३६७	६०८	५	२२७	४२२
६६	१९०	३९२	१४०	२९	२०४	३९	५०५	१९२	३००	५०	३७०	६०९	११	२२९	४२३
११४	२६९	४११	१८४	३०	२०५	५३	५१६	२१०	३०८	५४	३७४	६१०	१८	२३०	४२४
२५१	३१३	४२३	२२०	३२	२०७	५७	५२०	२२५	३११	५६	३७५	६१२	२०	२३३	४२५
३०८	३५८	५०६	२३३	३३	२१३	६२	५२८	३२२	३१७	५७	३८६	६१४	२३	२३४	४२६
३१८	३५९	५१५	२३७	४१	२१४	८९	५२९	३२३	३२४	६१	३९४	६१५	३९	२३५	४२७
३५४	३६३	५४९	२४९	४९	२२२	१०६	५५२	तु	३२८	६४	४०१	६१६	४१	२३६	४२८
४५२	४२३	६०३	२५१	५०	२२४	१०७	५५४		३४०	६५	४२३	६१७	४४	२३७	४३१
५२९	४२६	६२७	२९८	५१	२६७	१०९	उद्र	५	३४३	६६	४२५	६२०	४६	२३९	४३२
५३१	४७७	६४९	२९९	५५	२६९	११०		११	३४४	६७	४२७	६२१	४७	२४०	४३४
५५९	४८१	अन्त स्थः	३००	५७	२७०	१११	४	१५	३४६	६९.	४३९	६२२	४९	२४२	४३५
६१४	जुद्र		३०८	६५	२७१	११७	१४	३०	३६०	७६	४४४	६२३	५०	२४३	४३६
६३१			३१७	६८	२७२	११९	२२	३४	३७५	७८	४५२	६२४	५२	२४४	४३९
६९२	२४		३१८	७६	२७४	१२१	२३	४२	३७६	१०५	४५७	६२५	५५	२५५	४५४
७०४	४२	८	३१९	९२	२७५	१३०	२४	४४	३७९	१४२	४६९	६२६	६०	२५७	४६४
७११	६३	२९	३६७	९६	२७८	१३१	२६	४५	३८१	१४८	४७१	६२७	६८	२५८	४७७
परि०	७३	३०	३७३	९७	२८०	१३३	२७	४७	३८६	१६९	४७४	६२८	७०	२५९	४८०
	१४१	३१	४३५	१२०	२८१	१३४	२८	४८	३८९	१७२	४७८	६२९	७६	२६३	४८८
१३	१४८	३२	४३७	१२४	२८३	१३५	३१	५६	३९१	१७४	४९२	६३०	८३	२६४	४९३
७७	१५७	३३	४९२	१२८	२८५	१४२	३४	६२	३९३	१७५	४९३	६३१	८७	२६८	४९९
	१९३	३४	५०४	१३३	२८८	१४५	३५	७२	३९४	१७७	४९४	६३२	८८	२६९	५००
रक्तपित्तरोगे	२१६	३५	५२९	१३७	२९१	१४९	४०	७३	३९६	१८८	५००	६३३	८९	२७०	५०१
	२८७	३६	५३१	१३८	२९५	१७३	४९	८५	३९७	१८९	५०६	६३४	९३	२७३	५०४
		३८	५३३	१४१	३०६	१७४	५१	८७	३९९	१९६	५१२	६३५	९८	२७४	५०६
	तु	५५	५६४	१५०	३२७	१५०	६५	११०	४०९	१९८	५१३	६३६	१०६	२७७	५११
	४२	९८	६५७	१५१	३४८	१५१	६६	१२१	४११	२०६	५१५	६३७	११०	२७९	५१४
	१२८	१२२	६८१	१५५	३६१	१५२	६७	१२४	४१२	२०७	५१७	६३८	१११	२८१	५२५
स्वराः	१३९	१३०	६९०	१५६	३७५	१९६	७०	१२५	४२५	२१०	५४०	६३९	११२	२८२	५३८
	१५७	१३६	७०४	१५७	३७६	२२२	७२	१५८	४४०	२११	५४१	६४०	११३	२९५	५४३
१३५	१६९	१३७		१५८	४००	२२४	७४	१६५	४४४	२१८	५५७	६४१	११४	३०२	५४५
१५०	२६०	१४३	हि	१५९	४१५	२३८	७५	१६७	४४७	२२५	५५८	६४२	११५	३०७	५४७
१८३	३११	१५८	क्कं	१६३	४३४	२४३	७७	१९२	४४९	२२७	५६०	६४३	११६	३१३	५५३
१८७	३२६	२५८		१६४	४४५	२४७	८०	१९५	४५३	२३५	५६१	६४४	११७	३१५	५५७
१९०	३५५	२८२	६९	१६५	४४७	२५३	८१	२०९	४५४	२४०	५६६	६४५	११८	३१८	५८०
१९४	४०९	२९५	८२	१६७	क्रु.	२५४	८२	२३०	४५५	२४४	५६७	६४६	११९	३३६	५८४
२२२	४५६	३०३	परि०	१७०		२७६	८३	२३३	४५६	२६७	५६८	६४७	१२२	३४३	५८५
२२३	४५८	३१०		१७४	७	२७९	८४	२३९	४५७	२६९	५७३	६४८	१३३	३४८	६०४
२३५		४०४	१३	१७५	८	२८०	८५	२५१	४५८	२८०	५७५	६४९	१३४	३५३	६०८
३१२	तु	४२३	४७	१७७	९	३१२	९९	२५२	४५९	२९३	५७६	६७२	१३६	३५६	६०९
३१५	१४	४२६	५४	१८०	१०	३१३	१००	२५३	४६०	२९४	५७८	६८५	१३७	३६४	६११
३६४	२०	४२९	६६	१८२	१२	३१४	११६	२५७	तु	२९५	५८३	६९०	१५१	३६५	६१३
४०९	४३	४६२	८७	१८३	१४	३५८	११७	२५८	२	३०५	५८४	६९२	१५२	३६८	६२४
४३९	१६३	४६३	राजयक्ष्मणि	१८७	१६	३७३	१२०	२६०	७	३१५	५८५	७१२	१५३	३६९	६३०
	१७३	४९३		१८९	१७	३८४	१२२	२६२	१६	३१७	५८६	हिक्का	१५८	३७०	६३५
क्रु.	१८८	५३५		१९०	१८	४२०	१३१	२६७	१७	३१८	५८९		१६२	३७१	६३९
१४	१९६	५७९		१९१	२०	४२२	१३९	२६९	२८	३१९	५९४		१७०	३७४	कम्प
२३	२१०	६१२		१९३	२१	४२३	१४६	२७०	२९	३२२	५९९		१८६	३७५	
२४	३२९	जम्म	स्वरा	१९४	२२	४३१	१५४	२७२	३३	३२९	६०१	५	१८९	३८२	९
२९	३७०			१९६	२३	४४९	१६६	२७४	३४	३३०	६०२	६	१९८	३८३	१२
३६	३७५	५३	१	१९७	२४	४७७	१७९	२७५	४३	३३३	६०६	७	३१४	४१५	२८

४११ ४१२ ४३६ ४४४ ४४९ ४५६ ४५८ ४६० पु १३ १६ ३४ ३७ ४२ ५२ ५८ ७० ७७ ९० ९३ १०२ १२१ १२६ १४१ १४८ १७३ १७४ १७६ १८८ १९१ १९४ २०६ २२८ २३५ २३६ २३८ २३९ २४१ २४३ २४४ २५५ २६० २९५ ३२१ ३२२ ३२४ ३२५ ३२९ ३३३ ३६०

३६७ ३७४ ३७५ ३९४ ४०० ४०१ ४०३ ४०५ ४१० ४११ ४१२ ४२७ ४३९ ४७४ ५१५ ५१९ ५२९ ५३६ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४२ ५४४ ५५३ ५५७ ५५८ ५६० ५६२ ५७३ ५७५ ५८१ ५९१ ५९४ ५९९ ६०१ ६११ ६१९ ६३५ ६३६ ६३७ ६३९ ६४० ६४४ ६४६ ६५१ ६५३ ६५४ ६५७ ६६९ ६७०

६७२ ६८२ ६८६ ६८७ ७०७ ७१३ अन्तःस्थाः ९ १० १७ १८ २३ २५ ४४ ४७ ५७ ५८ ६७ ६९ ७९ ८६ ८९ ९३ ११७ १२४ १३८ १३९ १४१ १४५ १६४ १७० १७४ २०१ २०४ २०५ २१५ २१९ २२० २२१ २२८ २२९ २३० २३४ २४० २४२ २६५ २६६ २७३

२७७ २७८ २८१ २९२ ३०३ ३०५ ३१८ ३४१ ३५३ ३६६ ३७३ ३७९ ३८९ ३९० ३९२ ३९३ ३९६ ४०१ ४०२ ४०८ ४१३ ४१४ ४२७ ४३८ ४४१ ४४३ ४४४ ४४८ ४४९ ४५० ४५१ ४५२ ४५३ ४५४ ४५६ ४५९ ४६० ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७७

४७८ ४७९ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४९४ ५०० ५०६ ५०९ ५१४ ५३० ५४१ ५४३ ५५२ ५६० ५६७ ५७८ ५८४ ५८५ ५९४ ६०२ ६०४ ६०५ ६०८ ६२१ ६२९ ६३० ६३२ ६३४ ऊष्म ५ ११ १३ १९ २१ २२ २४ ३३ ३५ ३७ ४० ४६ ४७ ५० ५१ ७२ १०८ ११० १४०

१४५ १४८ १४९ १५२ १५४ १६० १६७ १७१ १७८ १७९ १८४ १९७ २०६ २०७ २१८ २२९ २३० २३८ २४१ २५५ २५६ २७१ २८२ २८५ २८९ ३०१ ३०२ ३०३ ३१४ ३१५ ३१७ ३१८ ३२१ ३२६ ३२७ ३२८ ३३१ ३४० ३४१ ३४२ ३४३ ३४७ ३५० ३५२ ३५४ ३६१ ३६५ ३६८ ३७५ ३७६ ३७७

३७९ ३९३ ३९४ ४०३ ४२७ ४३० ४३५ ४५४ ४६५ ४६६ ४७७ ४७८ ४७९ ५०० ५०८ ५११ ५१७ ५२७ ५३१ ५३३ ५४० ५४९ ५५२ ५५८ ५६६ ५७८ ५८३ ५९० ५९२ ५९३ ५९४ ५९६ ६०३ ६०४ ६०७ ६१९ ६३१ ६३२ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४६ ६४७ ६५२ ६५३ ६५४ ६५७ ६९२ ६९५

६९६ ७०४ ७०८ ७१३ अ.व्या. ६ ११ १५ १६ २० २२ ३१ ४२ ५१ ५२ ५५ ५९ ६१ ६६ ६८ ७० ७९ ८० ८३ ८४ ८८ १०३ १०९ परि० ११ २९ ३५ ३७ ५० ५५ ६३ ७१ ७२ ७५ ७६ ८७ ९१ आपतन्त्रके स्वराः

३६ पु ४०१ ४३२ ४७४ ऊष्म ४२१ आक्षेपके पु २९३ क्षीणवाते रक्तवाते अन्तःस्थाः ३७ सुप्त(स्पर्श)वातरोगे स्वराः २९९ ३८२ क्रु २६ ४५४ ४५५ ▮ १०२ ११२ १३५ पु

२४४ ४११ ४३७ अन्तःस्थाः २११ ४०९ ४६५ ४७६ ५५४ ऊष्म ३२६ ३६२ ४२१ ५७६ ५७७ ५७८ विलोमवाते ऊष्म ४०० मन्दवाते क्रु २०९ दृष्टिवाते ब्र २९१ कार्मुकवाते पु ३१ स्यागवाते

अन्तःस्थाः ४८२ शीतवाते पु १४० अन्तःस्थाः ४५५ ४८१ मधुवाते पु १८० गुल्फवाते पु ३२१ शुक्रवाते ▮ ३४० शृङ्खलावाते ऊष्म १८२ ४३५ कफवातके

स्वराः ४३८ ४४४ क्रु २६९ २७४ ४७१ चुद्र ६३ ब्र २६० २८० ४०२ ४५८ पु ९९ १०३ २५६ ३२० ३९४ ४८६ अन्तःस्थाः ९ २२१ ४५० ४६३ ४६५ ऊष्म ९१ २३० ३५१ ३७९ ४३५ ५३१ पाण्डवरोगे परि० ६१

अधिकक्लानजन्यपीडायाम् पु ९९१ आमवातरोगे स्वराः ९० ९६ १३७ १४५ १५५ १५७ १५९ १७२ १७५ १८३ १९३ २०४ २७२ २८० २९२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२२ ३२३ ३६९ ३७२ ३८९ ४१५ ४४५

क्रु ८३ २२४ २६९ २७४ २७६ २९८ ३८४ ४०० ४२० ४२३ ४२४ चुद्र ३७ ३९ ६३ ७४ १२२ १३० १३८ १४६ १४८ १७० १७२ २२५ २२४ ३१५ ब्र ३ ५६ ७८ ८५ ११३ २३५ २४० २४५ २६० ३०३ ३२९ ३९० ४५८ ४६० पु १४ १६ ३७ ४८

६९ ७८ ११३ ११४ ११५ ११६ १२६ १९४ २१५ ३१५ ३३७ ४०३ ४०५ ४२६ ४३२ ४३५ ४७६ ४८० ५१७ ५५६ ६५४ ६७२ अन्तःस्थाः १० ६७ ६९ १३३ १५७ २१७ २१९ २३५ २३६ २४५ २४७ ३७३ ४०४ ४४१ ४६५ ४७९ ४९२ ५०३ ५०६ ५५३ ५७९ ५८५ ५८६

६३४ ऊष्म ९ २२ २६ ३४ १०८ १४८ १५२ १५५ १६६ १८४ २०७ २३३ २८९ ३०८ ३१८ ३१९ ३२६ ३५१ ३५४ ३७९ ४०५ ४१८ ४३५ ४५४ ४५७ ५११ ६४० ६५९ ७०६ अ.व्या. ६९ परि० ७५ वातरक्तरोगे स्वराः १ ५१ ६७ १६२

१७५ १७६ १८३ १९३ २०३ २१३ २८१ ३७६ ३७९ क ८३ १११ १५१ २१२ ३४४ ३५८ ४१२ ४७८ खुद्द १७० १९३ ग १४ ७९ ८० ८१ ८९ ९४ १०४ १०५ ११० ११२ १२१ १२२ १२३ १२४ १२७ १२८ १३३ १३९ १४३ १५० १५९ १६० १६१ १९३ २६० २६४

२८५ ३०३ ३२९ ४५८ घ ६ ६३ ७५ १७३ १९४ १९८ २१५ २७८ ३२० ३३० ३८४ ४१० ४११ ४३० ४३२ ४५२ ४६२ ४६५ ४९४ ६४२ अन्तःस्थाः ८ ९ ४६ ११७ १२७ १२९ २५३ २८३ ३५५ ४०४ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६५ ४७९ ५०१ ५०३ ५४६ .५७९ ऊष्म

७७ ८५ १२० १५२ २१८ २४९ ३१८ ३६२ ४१३ ४५७ ५३१ ५४८ ५९० ५९३ ५९६ ६०१ ६११ ६४९ अ.व्या. ७ १०९ परि० ५८ ६५ ६७ ७८ पित्ताधिक्ये खराः १४८ १६० १८७ २०६ २२३ २६९ ३०२ ३१२ ४०१ ४४५ क ६० १११ १५७

१६५ १७७ १८३ २२४ २७९ ३१३ ३१४ ३५८ ४२२ ५०७ खुद्द १८ ४७ ५० ५२ ७३ ७८ ११७ १८८ २२१ घ ७३ १६७ २१९ २५८ ३११ ३२६ ३२७ ३४६ ३४८ ३४९ ३५१ ४०७ ४४९ ४५६ ४५९ घ ५८ ८० ९६ १४८ १५७ १५९ १६१ १६५ १६६ १६७ १६८

१६९ १७० २१७ २३९ ३०५ ३२२ ३२५ ३६७ ५०६ ५१५ ५२९ ५४९ ५५७ ५६० ५७३ ५९१ ५९४ ५९९ ६१८ ६६९ ६७० ६८६ ६९२ ७०३ अन्त.स्थाः १० २५ ३६ ३९ १३० १६० १७० २०४ २१५ २२९ २३० २५५ २६६ २९५ ३२७ ३७९ ४२७ ४३० ४३६ ४५३ ४५४ ४६२ ४७७

५०० ५०९ ५१४ ५८५ ५५४ ६२९ ऊष्म ५ ११ १३ ७२ १४८ १४९ १८४ २०५ २३८ ३१७ ३१९ ३६७ ३७७ ३९० ३९३ ३९४ ४३० ५०८ ५३१ ५४६ ६५५ ७०३ प्रमापाते क ४५७ ख ३५७ अन्त.स्थाः ५१ धमनाल्यधिके

खुद्द ६२ स्वेदाधिक्ये ख १०६ ४०८ ग ८ ६१३ ६६२ ६८६ क्रोधपित्ते घ ४३३ मधुपित्ते घ १५८ चर्मपित्ते घ १६५ मूर्च्छापित्ते घ १६७ श्लेष्माधिक्ये

खराः ११ १६ २१ ४२ ४९ ५१ ५४ ९४ ९९ ११८ १२० १४१ १४८ १५५ १५७ १६४ १७२ १८४ १८६ १९२ २०८ २२० २६९ २७२ २८० २८७ २९७ ३०० ३०२ ३०७ ३०८ ३१० ३१७ ३२७ ३७० ३७६ ३७८ ४०० ४०१ क १४ १७ १८ २८ ४० ४१ ४२ ४३

४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ १०३ १०६ ११९ १२१ १३० १४८ १६५ १८३ १९६ २१६ २२४ २७९ ३१३ ३१४ ३२८ ३६० ३९७ ४१४ ४२२ ४२५ ४२७ ४५९ ५०७ खुद्द २६ ५० ५२ ७२ ७३ ७४ १२८ १५० १७० १९१ ३०७ ३१८ ३२२

ध २२ ४८ ६२ ६८ ७० ७३ १४९ १५६ १६३ १९३ १९५ २१९ २४० २५८ २६० २९५ ३११ ३४८ ३४९ ३५७ ३९१ ४०४ ४०५ ४१३ ४४९ घ ६ १६ १८ ३४ ४६ ५५ ५८ ७० ७४ ९० १०२ १३७ १४० १४१ १४८ २२९ ३१५ ३२२ ३३० ३३५ ३३७ ३६७

३७४ ३७५ ३८५ ३९४ ४०३ ४२७ ४८६ ४९० ५४४ ५४९ ५५७ ५५८ ५६० ५७३ ५९१ ५९४ ५९९ ६०२ ६०६ ६५१ ६७५ ६८२ ६८३ ६८५ ६८६ ६९२ ७०३ ७१३ ७१४ अन्त.स्थाः १० २५ ५८ ६७ १३३ १५८ १६४ १७० २०१ २०४ २०५ २२० २३० २६६ २८१ २९२ ३०५ ३०९

३७९ ३८६ ४१३ ४१४ ४२७ ४३८ ४४४ ४५३ ४६२ ४६६ ४६९ ४७४ ४७७ ४७९ ४८७ ४८८ ४९१ ४९४ ५०० ५०९ ५१४ ५४१ ५४७ ५८५ ६०२ ६०५ ६३४ ऊष्म ७ ११ १३ ७२ १४८ १४९ १८४ २०३ २०४ २०५ २०६ २०७ २०८ २१२ २३० २४४ २७० २७१ ३०३ ३१४ ३१७ ३२८ ३४०

३४७ ३५२ ३५९ ३९३ ३९४ ४०३ ४२७ ४३० ४५९ ४७७ ५०८ ५११ ५३१ ५४८ ५४९ ५६२ ५९४ ५९६ ६१९ ६३२ ६३८ ६४६ ६४७ ६५१ ६५८ ६९० ६९६ ७०८ ७१३ परि० ६६ ७५ स्त्री खराः ४ ६ १२ १३ १४ १५ १६ २४ २५ २६

२८ २९ ३२ ४० ४५ ४९ ५० ५३ ५४ ५५ ५६ ५९ ६१ ६८ ७० ७१ ७२ ७३ ८२ ८५ ९२ ९३ ९६ ९७ १०० १०१ १०८ १२७ १३९ १४७ १५५ १६० १६४ १६८ १७१ १७३ १७५ १७८ १८५ १९३ २०० २०४ २०८ २११ २६४ २६६ २८८ २९९ ३०७ ३०८ ३११

३१३ ३१४ ३१५ ३२१ ३५६ ३६४ ३६६ ३७१ ३७३ ३७४ ३७५ ३७६ ३७८ ३८३ ३८४ ३८६ ४४६ क १० १४ १७ २५ ५३ ६२ ८९ ९० ९१ १०४ १०९ ११० ११३ ११७ १२९ १४५ १५१ १५२ १९३ २२४ २७४ २७६ ३२३ ३२४ ३३५ ३४२ ३५० ३८४ ३८८ ४२० ४३३ ४३८

४३६ ४४० ४४३ ४७४ ४८४ ४८५ ४८८ ४९० ४९१ ४९२ ४९९ ५०६ ५०७ ५३५ ५३७ ५४० ५४३ ५४७ ५५२ ५५४ ५५५ ५५८ खुद्द ४ ९ २४ २८ ३४ ३६ ३८ ३९ ४७ ४९ ५३ ६३ ६५ ६९ ७२ ८८ १०० ११५ ११८ १२२ १२३ १२५ १२७ १३० १३१ १३४ १३८

१४१ १५१ १५३ १५४ १७० १७२ १८७ १८८ १९० १९३ १९९ २१० २१९ २२० २२१ २७० २८५ २९३ २९५ ३१५ ३१९ ३२२ ३२३ छ १५ १६ २१ २३ २४ २५ २७ २९ ३३ ३४ ३५ ४३ ४४ ४५ ४८ ५० ५१ ५२ ५३ ६० ६८ ७८ ८४ ८५ १११ ११९

१७४ १७८ १८२ १८४ १९६ १९९ २०० २०१ २०६ २२६ २२८ २४८ २४९ २५० २५६ २६० २६२ २६४ २६६ २७८ २७९ २८५ २८८ ३११ ३३५ ३३९ ३४९ ३५० ३५७ ३५८ ३५९ ३७६ ३८९ ३९४ ३९५ ३९७ ४०९ ४१६ ४३५ ४२८ ४३६ ४३८ ४४० ४४९ ४५३ ४५७ ४५८ ४५९ पु ४

१६ २८ २९ ३० ३३ ४१ ४२ ४६ ४८ ५२ ५८ ६७ ७० ७५ ८१ १०९ ११० ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ १२२ १३६ १४० १४२ १४८ १८८ १८९ १९८ १९९ २११ २१२ २१५ २१८ २४२ २४८ २५३ २५५ २८० ३२० ३२३ ३२४ ३२५ ३३० ३३५ ३३७ ३६० ३६१ ३७५

३९७ ४०३ ४०५ ४१२ ४१४ ४२३ ४२४ ४२५ ४२८ ४३० ४३३ ४३५ ४७६ ४८० ४८४ ४८८ ५२० ५३० ५५६ ५५८ ५७३ ५८१ ५९५ ६०८ ६१३ ६२६ ६२७ ६३७ ६४३ ६४७ ६५३ ६५४ ६५७ ६७३ ६८३ ६८३ ६९३ ७०६ ७१४ अन्तःस्थाः ८ ९ १९ २३ २५ ४३ ६३ ६८

६९ ७१ ७७ ७८ ८२ ८७ ८९ ९३ ९८ ९९ १२९ १४५ १६० १६२ १६४ १८५ १९२ २०२ २१६ २१८ २२० २२७ २२८ २३३ २३५ २३६ २४० २४१ २४५ २४६ २४७ २४९ २५० २५१ २५५ २५७ २५८ २६० २६५ २७३ २७४ २८१ २८७ २९० २९१ २९३ २९४ ३०२ ३०६ ३१२ ३१३

३१६ ३१७ ३१८ ३३६ ३५५ ३७९ ३८२ ३८६ ३९० ३९१ ३९५ ३९९ ४०२ ४०७ ४०८ ४१३ ४१६ ४२५ ४२६ ४२७ ४३५ ४४० ४४१ ४४३ ४४५ ४४८ ४६२ ४६५ ४६६ ४६८ ४७० ४७१ ४७२ ४७४ ४७५ ४७६ ४८१ ४८७ ४८९ ५०४ ५०६ ५०७ ५०९ ५१४ ५१५ ५२५ ५२६ ५२९ ५३० ५४१ ५४३

५५३ ५७४ ५७५ ५७९ ५८१ ५८५ ५८६ ५९१ ६१३ ६१४ ६१७ ६२३ ६२६ ६३० ६३२ ६३४ ऊष्म ५ १० १३ १४ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २६ २८ ३० ३२ ३४ ३५ ३६ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४५ ४७ ४८ ४९ ५४ ५५ ५६ ६० ६२ ६३

६८ १०० १४५ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८३ १८४ १८७ १९७ २०८ २०९ २१८ २१९ २३० २३१ २३४ २३८ २४८ २४९ २७१ २८२ २८९

२९४ ३०५ ३१४ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२५ ३२७ ३२८ ३३१ ३३२ ३३३ ३३६ ३४२ ३४३ ३४४ ३५२ ३५४ ३७७ ३८२ ३९३ ३९४ ४११ ४१८ ४२७ ४३५ ४४९ ५०१ ५०६ ५१७ ५२२ ५२३ ५३१ ५३३ ५३८ ५४४ ५४६ ५४८ ५४९ ५५० ५५२ ५६२ ५६३ ५६५ ५७० ५७१ ५७३ ५९५ ५९६ ६१०

६२२ ६३१ ६३९ ६४५ ६४९ ६५१ ६५२ ६६२ ६६५ ६७२ ६७४ ६९२ ६९५ ७०० ७०१ ७०२ ७०५ ७०६ अ.व्या. २१ २३ २४ ३१ ४० ४५ ४६ ५१ ५२ ५३ ५६ ७३ ७४ ७७ ९३ १०० १०१ १०४ ११० ११२ ११४ परि० २ २७ ३४ ४३ ४७ ५१ ६३

जठरपित्ते [illegible] ३१८ ३४९ क्रिमिरोगे [illegible] ३३ [illegible] १६२ परिणामशूले स्वराः ६८ ९७ १३९ १६० १७२ १७८ १७९ ३५५ क १०७ ३४२ ३५० ३५८ ४५१ ४७४ ४८५ शुद्ध २५ ३३ ३७ ८७ ८८ १०२

२८५ घु ४७ ५० ५३ ६० ६१ १७४ १८० १८२ १९६ २०० २०६ २०७ २१४ २१७ २२८ २३५ २६६ २७८ ३४५ ३४८ ३५० पु १ ४१ ८१ ८३ ११० ११५ ११९ २१२ २२४ २२५ ४२३ ४३० ४८७ ६१३ ६१२ ७०३ अन्तःस्थाः ६२ ९३ १०१ १११ १४७

३५५ २७७ २७९ ३०६ ३१३ ३१६ ३१७ ३४९ ३६२ ४०४ ४९९ ५०० ५०१ ५२५ ५२६ ५८५ ऊष्म ५ ३३ ५४ ५५ ५६ ५९ ६२ ६३ १६० १७९ २०६ ३१८ ३५१ ३७० ४८० ५५३ ७०२ ७०५ ७०६ अन्नद्रवशूले घु ४०४ शुद्ध १०२ ध ५० २१८

३५० पु ४२३ अन्तःस्थाः ५३५ ५४३ ऊष्म ३५१ ३७० ४८० अस्थिशूले पु ६९ पार्श्वशूले स्वराः ५७ १६० १७२ क १८३ २७४ ३८४ ४७५ ४८४ ४८५ शुद्ध ३९ १०० २१० ध २४५ ४४० ४५८ पु

१०९ १९८ ६९३ ६७२ ऊष्म ५५ १६० १६२ १६५ ३२७ हृच्छूले स्वराः ४८४ शुद्ध ३९ पु ६७२ अ.व्या. ७ ५३ आमशूले ष ३५१ ४२४ शुद्ध १०६ ध २८८ ३११ ३३९ पु १९२ २१५ अन्तःस्थाः

५०१ ऊष्म २३४ आनाहे स्वराः ६१ ९६ ३८७ क १४९ १९३ ३५८ ४८८ ५५५ शुद्ध ५२ ६३ ७० १२२ १३५ १५० २१० ष २३० ३११ ४२८ ४२९ ४५८ ४५९ ४६० पु ३ ४१ १२७ ३२० ३३५ ५१० ५१४ ६८६ ७०६ अन्तःस्थाः

५०१	६४०	१४०	५८५	४२२	६८७	३३०	७	९०	४३१	२८९	४१२	२५०	३१४	६३५	२३०
५०३	६४१	१५८	५९२	४२६	६९०	६०५	३४	९१	४३९	३२२	४१५	२५८	३१५	६३६	२३३
५०४	६४४	१८६	६०२	४२९	६९१		४९	१००	४५०	३३३	४२५	२५९	३१७	६३७	२३४
५०५	६४६	१८७	६०४	४३०	६९२		१२०	१०६	४५१		४४७	२६०	३३०	६४०	२३६
५०६	६४७	२२०	६०५	४३१	६९६	मधजक्षये	१३५	१०७	४७७	॥	४५४	२६१	३३३	६४१	२३७
५०७	६४८	२२१	६०८	४३२	६९७		१४४	१०९	४७९	११	४५८	२६२	३६०	६४४	२४०
५०८	६४९	२२४	६०९	४३३	७०४		१५०	११०	४९६	१५	४५९	२६३	३६२	६४७	२४१
५०९	६५०	२२९	६११	४४९	७११	खराः	१५२	११७	४९८	६२		२६४	३६७	६४८	२४४
५११	६८१	२३३	६३४	४५०	७१३		१५४	१२२	५०३	७३	पु	२६५	३७५	६४९	२४६
५१२	६८५	२३५		४५३		१९६	१५७	१२३	५०५	९७	३	२६६	३७८	६५०	२४७
५१३	६९०	२३७	ऊष्म	४५४	अ.व्या.		१५८	१२४	५०६	१२४	६	२६७	३८४	६५७	२६६
५१६	७०३	२३९	४	४५५	४७		१५९	१३०	५२०	१२५	७	२६८	३८६	६६०	२७७
५१९		२४७	९	५०१	४९	शुक्रक्षये	१८२	१३१	५२९	१२८	१४,	२६९	३९४	६६७	२८०
५२१	अन्न.स्थाः	२५८	१२	५१०	५७		१८३	१४६		१५७	१६	२७०	४१२	७०५	२८८
५२२		२६४	५७	५११	८१		१८७	१४९	शुद्ध	१८२	१७	२७१	४१४	७१०	२९२
५५७	८	२७०	८३	५१२	८२	पु	१९३	१५१	४	१९३	२८	२७२	४२९		३०२
५५८	१६	२९१	१०२	५१९	८४	६	१९४	१५२	१५	१९५	२९	२७३	४३९	अन्न.स्थाः	३११
५६०	२३	३०७	१४७	५२३	९३		२०२	१५३	२८	२२९	३३	२७४	४५७		३२२
५६१	२५	३१८	१४८	५२५	परि०	पु	२११	१५५	३३	२३०	३४	२७५	४७०		३२३
५६६	४१	३२७	१६४	५२६		८०	२१३	१५८	३५	२३२	३५	२७६	४८६	८	३२४
५६७	४३	३३०	१६५	५३३	२७	१८७	२१४	१७२	३६	२३६	३८	२७७	४८७	९	३२५
५७०	४७	३३४	१९८	५६२	३८	२१५	२६१	१७३	४२	२३९	४५	२७८	४९४	११	३२६
५७१	४८	३३८	२११	५६४	४६	२५८	२६२	१७५	४३	२४५	४६	२७९	५००	१६	३२७
५७६	४९	३४१	२२९	५६७	४७	४१०	२६८	१८३	५०	२५१	४९	२८०	५०३	२२	३२८
५८३	५०	३४२	२३५	५६९	४८	४१२	२८०	१८८	५१	२५२	५१	२८१	५०५	२४	३२९
५८४	५२	३४४	२३६	५९६	५६	४४५	२८८	१९०	५२	२५७	५२	२८२	५०६	२५	३३०
५८५	६०	३४८	२३७	६०२	५८	४५४	२९५	१९२	५३	२५८	५४	२८३	५०७	३०	३३२
५८७	७०	३५३	२३८	६०६	७३	४५७	२९६	१९३	५४	२६४	५६	२८४	५१६	४४	३३४
५९१	७१	३६४	२५०	६०९	८३	५०५	३०३	२२४	७३	२६८	६९	२८५	५१७	५५	३३५
५९४	८१	३६८	२५१	६१०	८७	५१३	३०६	२४५	७४	२७०	८०	२८६	५४९	५९	३३६
५९९	८३	३७१	२५३	६११	८९	५५४	३०८	२६४	७५	२८१	९३	२८७	५७६	६०	३३७
६०१	८६	४२१	२९९	६१५	९६		३१९	२६९	७७	२८५	११८	२८८	५७८	६८	३३८
६०२	८७	४२४	३००	६१७	शुक्रक्षये	अन्न स्थाः	३४८	२७३	७८	२९४	१२१	२८९	५८०	८१	३३९
६०५	८८	४२५	३१६	६३३			३५१	२८२	९९	३०८	१२३	२९०	५८३	८९	३४०
६०६	८९	४२७	३२०	६३६			३५४	२८९	१००	३११	१५२	२९१	५८४	९३	३४२
६०८	१०३	४२९	३२५	६३७		५	३६४	३१२	१०१	३२६	१५३	२९२	५८५	९८	३४३
६०९	१०५	४३२	३४६	६४१	पु	४८	३६५	३१३	११२	३२७	१५४	२९३	५८७	१०६	३४४
६१०	१०६	४३३	३६१	६५४		४९	४१७	३४३	११३	३४३	१५५	२९४	५९४	११२	३४५
६१२	११०	४३६	३६५	६५५	७२	१२१	४४५	३४५	११७	३४४	१८३	२९५	५९९	१२२	३४६
६२३	१११	४५३	३६८	६६१	ओजःक्षये	४१३	४४६	३५६	११९	३४६	१८८	२९६	६०१	१३८	३४७
६२४	११२	४६४	३७४	६६४			४४७	३५८	१२०	३७९	२०४	२९७	६०२	१४१	३५२
६२५	११३	४७६	३७५	६६७		कफ		३५९	१२२	३८८	२०५	२९८	६०५	१४३	३५५
६२७	११४	४७८	३८४	६६८		८१	क	३६०	१२४	३९१	२०६	२९९	६२२	१४९	३५८
६२८	११५	४८३	३८५	६७१	पु	३६७	८	३६१	१२८	३९३	२१०	३००	६२३	१५८	३६६
६२९	११६	४९१	३८८	६७४		५२५	११	३७३	१५४	३९४	२१३	३०२	६२४	१६९	३८३
६३०	११७	५००	३९२	६७५	१७२	६१५	१४	३७९	१५७	३९५	२१५	३०३	६२५	१७६	३९०
६३१	११८	५२६	३९४	६७६	१७५	प्रमेहे	१७	३८०	१६१	३९६	२२२	३०४	६२६	२०२	४०७
६३५	११९	५४५	४०९	६७८	अन्न स्थाः		२५	४१८	१६९	३९७	२२४	३०५	६२७	२११	४२०
६३६	१२३	५५३	४१३	६८०			३३	४२३	१७०	३९८	२२५	३०६	६२९	२१७	४२३
६३८	१३६	५५९	४१४	६८२		खरा.	३८	४२६	१७९	४००	२२७	३०७	६३०	२२८	४२५
६३९	१३८	५६०	४१५	६८४		४	३९	४३०	१८७	४११	२४९	३११	६३३	२२९	४२०

४२७ ४३१ ४३२ ४३३ ४३४ ४३५ ४३६ ४६१ ४६२ ४६३ ४७७ ४७९ ४८० ४८३ ४८९ ४९२ ५०० ५०१ ५०४ ५०६ ५११ ५१४ ५१८ ५२४ ५३२ ५३४ ५३८ ५४१ ५५८ ५८९ ५९७ ५९८ ६३० ६३२ ६३४ ६३५ ६३९

ऊष्म ५ ९ ११ १८ ३३ ३८ ४४ ६२ ७१ ८१ ८४ ८८

९६ १०२ १०९ १४६ १६५ १८४ १८७ २०७ २०९ २१८ २२९ २३० २३३ २३५ २३६ २३७ २३८ २४७ २८२ २८९ २९० २९३ २९६ ३१३ ३२० ३२६ ३२७ ३३१ ३३९ ३४० ३५२ ३५४ ३५५ ३६१ ३६३ ३६५ ३६७ ३६८ ३७३ ३७४ ३७५ ३७६ ३७७ ३८३ ३९३ ३९४ ४१३ ४१४ ४२७ ४२९ ४३०

४३१ ४३२ ४३३ ४३५ ४४९ ४५० ४५१ ४५३ ४५४ ४५७ ५०८ ५११ ५२९ ५३१ ५४७ ५५१ ५५९ ५६४ ५६९ ६०१ ६०३ ६०५ ६०६ ६०८ ६०९ ६१० ६१५ ६२७ ६३० ६३१ ६५९ ६६३ ६७७ ६८२ ६८५ ६९० ६९२ ६९५ ६९६ ६९७ ७०४ ७११

अ व्या. २ ६ ७ ८ १० १५

१९ २१ २२ २४ २७ २८ २९ ४५ ४६ ५१ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ६१ ७० ७३ ७८ ७९ ८० ८२ ८४ ८५ ८६ ९३ ११२

परि० २ १० १३ २० २२ २४ २७ २८ ४४ ५१ ५३ ६९ ७६ ८२ ८४ ८५ ८६ ९० ९१

रक्तमेहे

कु ४९६ पु ३८४ ३८६

अन्त स्थाः ३३६

मधुमेहे

स्वराः

२६४ ३०८ ३५१ कु २६४ पु १८३ २६६ ३६० ४१२ ५०५

अन्त स्था २३९ ३४४ ६३०

ऊष्म ८७ ३६३

अ व्या. २५ ९५

परि० २३ ९२

वसामेहे

तु ७६ १५७ ३४३ ४२५ पु २८० २९२ ३६३ ३६४ ३६५ ५२१ ६९०

अन्त स्था २३ २४ २३९ ३३० ३४४

ऊष्म ४४ ७१ ५५० ५५१ ६६२

पूतिमेहे

स्वरा १५४

अन्त स्था २०८

ऊष्म ६२४

उष्णवाते

पु ६४२

अ व्या. ५१ ५२ ५४ ६९ १००

परि० १५ २१

क प्रमेहपिडिकायाम्

४१८ तु ९४ पु १२१ २८६

अन्त स्था १४१ २३९

ऊष्म ७७ ३२२ ५२९

अ.व्या ४५ ४६ ५१ ५२

परि० ३ १९ २० ५१ ५४

उदररोगे

स्वरा. ६ ७ २५ ३२ ४२ ४५ ५३ ५५ ५८ ६१ ६७ ७० ७४ ८५ ९२ ९६ ११३ १२६ १५० १५५ १६४ १६९ १८२ १८३ १८९ २०२ २०४ २६० २६४ २७२ ३०० ३०१ ३२५ ३३९ ३७० ३७५ ३७६ ३७७ ३८५ ३८६ ३८७ ३८८ ३८९ ३९० ३९१ ३९२ ३९३ ३९४ ३९५ ३९६ ३९७ ४४५ ४४७

कु १४ २३ ८३ ८९ ११० ११७ १२९ १३५ १४५ १४९ १५१ १९० २८९ २९० २९८ ३१३ ३१९ ३२४ ३५८ ३५९ ३६५ ३६९ ३८६ ४२३ ४२७ ४७९ ४८१ ४८८ ५०६

शुद्ध ९ १४ १५ २५ ३२ ३६ ५२ ६३ ७० ७२ ८८ १०३ १०८ ११८ १२२ १२३ १३३ १५१ १५४ १७२ १७३ १८७ १९० २१० २१६ २२३ २२५ २३२ २३३

तु ५ १६ २३ ३४ ४५ ५२ ५५ ५६ ६० ६८ ११८ १४३ १४८ १४९ १५५ १५८ १७१ १७२ १७४ १७७ १८३ २१२ २३८ २४५ २५२ २५६ २६४ २६६ २७३ २७८ २८४ २८८ ३०५ ३११ ३२५ ३७५ ४०२ ४०९ ४२७ ४२८ ४२९ ४३४ ४३६ ४३९ ४४० ४४९ ४५८ ४५९ ४६०

पु २८ ३३ ३५ ४१ ४६ ५३ ६७ ८८ १४८ १७१ १७३ १७९ १८८ २१५ २५५ २९७ ३११ ३१८ ३१९ ३३४ ३३५ ३६७ ३७१ ३७५ ३९७ ४०५ ४१२ ४२३ ४३९ ४७९ ५३३ ५४९ ५५६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४२ ६४४ ६४६ ६७२ ६८२ ६८३ ६८५ ६९५ ७०६ ७११

अन्त स्था १ २ ४ १९ २५ ३९ ४३ ४४ ६९ ८९ ९३ ११७ १२९ १३४ १३५ १४५ १५७ १७० २१७ २३५ २४० २५७ २५८ २६० २६२ २६५ २८० २८१ २८३ २९३ २९४ २९५ ३०० ३०२ ३०५ ३१२ ३१३ ३१७ ३१८ ३३१ ३३३ ३४५ ३४६ ३४९ ३७९ ३९३ ३९५ ४०४ ४०८ ४१३ ४१६ ४४४ ४४८ ४६६ ४७१ ४७९ ४९४ ४९९ ५०६ ५१४ ५२३ ५२४ ५३६ ५३८ ५४३ ५५७ ५७४ ५७९ ५८५ ५९१ ६०९ ६१५ ६१८ ६२३ ६२५ ६३२ ६३४

ऊष्म ७ ८ १३ १४ १६ १७ १८ १९ २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ ३२ ३५ ३७ ४६ ६२ १४० १४५ १४९ १६२ १६६ १६७ १८३ १८४ १९२ १९४ २०७ २०९ २१० २१९ २३३ २३७ २३८ २४८ २५७ ३०८ ३१४ ३२१ ३३७ ३४८ ३५१ ३६१ ३६५ ३६६ ३६७ ३७१ ३७६ ३८२ ४०३ ४०५ ४०६ ४०७ ४०८ ४२८ ४३५ ४५२ ४५९ ४६६ ५११ ५३१ ५३३ ५३८ ५४४ ५४८ ५४९ ५६५ ५७१ ५७३ ५९३ ६०१ ६४५ ६७२ ६७४ ६८७ ६८८ ६९२ ६९३ ६९४ ७०६ ७०८ ७०९

अ व्या ६३ ७७

परि० ८५

वातोदरे

तु २६३ २६५ २७१

अन्त स्थाः १९९

शोथोदरे

पु ७११

अन्त्ररोगे

ऊष्म ७३

यकृत्प्लीहोदरे

स्वरा २९ ३६ ५७ ५८ ६१ ६६ ६७ ९२ ९६ १०० १०१ १५० १८२ २७२ ३२१ ३६५ ३७० ३८७ ३८९ ३९५ ४४६

२२९ ३०३ ५३८ ५८७ ५८८ ५८९ ५९० कम्प २६ ६२ ५३१ अ.व्या. ६ २० ३५ ४० ५२ मसूररोगे अन्त स्थाः ५८९ ५९० कम्प १६० गलगण्डे स्वराः ३२१ क्रु ८ ३९३ ३९४ ४२३ ४६७ चुद्द ३२३ प्रु

३९४ ४५८ प्रु ३२० अन्त स्थाः ४०४ कम्प २०० ६१३ ६५९ ६७७ गण्डमालायाम् स्वराः २६४ २६५ ३२१ ४२२ क्रु ८ १५१ २९८ ३९३ ३९४ ४२३ ४३० प्रु १२४ २३४ ३११ ३९४ ४४५ ४५८ प्रु ६ ३२० ४५२

७१६ अन्त स्थाः २५ १२७ २३० २५४ ४०४ ६४० ६५० कम्प ४०९ ५२९ ६१३ ६७७ अपच्याम् क्रु ८ ३९३ ३९४ चुद्द ६३ १२९ १५४ प्रु ३२० ७१६ अन्त स्थाः १२७ ५१४ कम्प ६७७ अ.व्या. ४५ परि०

१८ ५८ अर्बुदे स्वराः ३२१ क्रु ८ १५१ चुद्द ५२ प्रु १२४ २७५ २८४ ३११ ४४५ ४५८ प्रु ५६१ ७१६ अन्त स्थाः २५ २९५ २३० ३२२ कम्प ५५९ ६७७ परि० १६ ६९ ग्रन्थिरोगे स्वरा ४१५

क्रु ८९ प्रु १३२ ३५८ अन्त स्थाः ८७ ४७७ ५४१ ६५० कम्प २१ ३९४ ४२९ ग्रन्थिवाते प्रु १०२ १०३ अ.व्या. ६ ७ ७३ ७४ ७९ १११ परि० २९ विद्रधिरोगे स्वराः २८८ ३२१ ४४६ क्रु

२ ५६ १५१ २६९ २९८ चुद्द ९ ३१ ६२ ७२ १११ प्रु ३११ ४२५ ४५८ प्रु १८८ १९६ ३३४ ३८४ ६२२ ७१४ अन्त स्थाः २५ ८९ २३० २८३ ५३८ ६३९ ६४० कम्प १६४ ३२२ ३५० ३७० ३७९ ४३५ ५२९ ५३१ ५३३ ६५७ परि० २९

श्लीपदे स्वराः ३२१ ३८७ क्रु १५१ चुद्द ११ प्रु ३११ ४४५ ४५८ प्रु ६ ३२० ४०५ ५४९ ६५५ अन्त स्थाः ६७ २३५ २३६ ३५५ ४०४ ५८९ ६३४ कम्प २६ १६६ १९९ २०० २०१ २०२ ५२४ ५२९ ५३१ ६०१ भगन्दरे

स्वराः ५५ ९६ १५० ३७७ ४४६ क्रु ९५ ८९ १५१ १८३ २४६ ३४६ ३६१ ४२३ ४३० ४७७ ४७९ ४९९ ५५६ शुद्ध ९ ५२ ६३ ७२ १११ १५७ १६२ प्रु ५ ३६ ८१ ९४ ११८ १२१ १२२ १२३ १२४ १८२ १९५ २१९ २२८ ३११ ३७७ ३७९ ३९९ ४४९

४५८ ४४९ प्रु ६ ११० १२१ २१५ २४१ २७८ ३३६ ३७४ ३८४ ४०६ ४०७ ४०८ ४२९ ४७४ ४७६ ४७९ ५४९ ५६१ ५६५ ६४२ ७१४ अन्त स्था २३ २४ २५ ४४ ५४ ६७ ८९ ९३ १२७ १३५ १५७ १६१ १७६ २०९ २२९ २३० २३५ २३६ २५४ २६५ २५२ ३५६

३९६ ४०४ ४६२ ४७७ ५०६ ५११ ६३४ ६३५ ६३९ ६४१ ६४६ ६४९ ६५० कम्प १३ २६ ३८ ८१ ९८ १६६ १९४ २८२ ३०४ ३२१ ३२२ ३४० ३६१ ३७६ ४०९ ४२७ ४३५ ५२९ ५३१ ५५९ ६०१ ६१० ६५९ अ.व्या. ७९ ९२ परि० १८ ४३ ५८ ६५ व्रणरोगे

स्वराः ६१ १८७ २८८ ३४७ ३८९ क्रु ७४ ७९ २६९ ४२३ ४३० ४५८ शुद्ध १५ ६३ १५४ प्रु २६ ७९ ११८ १२१ १२२ १२३ १२८ १२६ १४३ १५० ३११ प्रु १२१ १२७ १२८ १३४ २७८ ३२० ३४४ ३५९ ४१२ ५६५ ५५४ ६४२ ६९९ ७१४ अन्त स्थाः

६३ ६४ ८७ ८९ १०९ २२९ २३० २३५ २३६ २४१ २५४ ३४१ ३७५ ४०४ ४१४ ५१४ ६३५ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६५० कम्प २१ ३२२ ३७६ ५०३ ५२९ ५५१ ६१३ ६२४ अ.व्या. २९ ४५ ६० ६२ ९२ ११० परि० १८ ३०

५८ ६९ नाडीव्रणे स्वराः ४४५ प्रु ७९ ११० ३९९ प्रु ६ ५४४ ५६५ अन्त स्थाः २५ २३५ ४०४ ६४० ६४६ ६४९ कम्प (३२६ ५२९ परि० १२ शिरारोगे प्रु ९४ मसूररोगे स्वरा २६८

३११ प्रु ११८ अन्त स्थाः ३७३ ३७५ ६४५ अश्ममांसे शुद्ध ३१२ प्रु १२ ३०५ प्रु ३३४ अन्त स्थाः २०७ २६५ २८३ ३५६ कांसिकोष्ठे (प्लुरसी) प्रु १२ अन्त स्थाः २६५

उपदंशाधिकरणयोः स्वराः २८३ २८७ ३६३ ४१२ ४१३ ४१४ ४१५ ४१६ ४१७ ४१८ ४१९ ४२० ४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ क्रु ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२

८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९७ ९८ ९९ १५१ ३४६ ३४७ शुद्ध ६३ ७४ १४६ १८१ २९६ प्रु ८१ ८२ ९३ ११० १२१ १३३ १३४ १३८ २९४ २९६ २९८ ३११ ४५० ४५८ प्रु ८६ १२६ १३३ १३९ ३०० ३०१ ३४३ ३४४ ३४५

२२७ ५४९ ७१४ अन्त स्था. ४०७ ऊष्म १४९ २३८ २५१ ३७३ ४४९ ६७७ नासारोगे खराः २६ गु १३३ ३२९ ४५८ पु ५५ २४६ ३६७ ४७४ ५६५ ऊष्म २२८ पीनसे खराः १५५ १७२ १८७ कु २९

४५ ८९ १३४ १८३ २७३ ३६० ३६७ ५१६ चुद्र २४ ७३ १०० ३२२ ३३३ गु २२ १२४ २८८ ४५८ पु ५५ ५९ ७० ७८ २१३ २८० ३३३ ३६० ३७० ३७५ ४३९ ६३८ ६३९ ६७५ अन्त स्था: ६७ ८७ ९८ २१७ २३५ २४५ २८२ ४०४ ४०७ ४८८

५४१ ५९१ ऊष्म ६२ १८४ २२८ २५७ ३१४ ३२७ ४०९ ५८९ ६४५ अ व्या. ५१ ५३ ११० प्रतिश्याये खराः ९६ २८० ४१५ कु ४७ १२८ चुद्र १४६ पु ५३ ७० १८१ २४६ ५६८ ६७५ ६८७ अन्त स्था: २३२ २६४ ४८८

५१४ ऊष्म ५३३ ५८९ ६९९ कु स्त्रीविकारे योनिरोगे खराः १८७ ३९० कु ८ २७६ ४३० ४५६ चुद्र ५२ ७१ पु ६ १३६ २६६ ३११ पु ३८ २०५ २०६ २४८ २५८ ३१५ ३७५ ४१० ४५५ ५५४ अन्त [illegible] ८

९ २६ २७ ४८ २५५ ४३५ ५११ ६२४ ऊष्म ५६४ ६५४ अ व्या. २७ २९ परि० ५१ कर्णरोगे चुद्र १६४ तु २६६ ३११ ३२६ ३२८ ४४९ पु ७४ २०० २३५ २५३ २५४ २५६ २५७ ३१५ ४५३ ४५४ ५०७ ५७५ अन्त स्था: ९

६० ८३ २२४ ४२५ ४३३ ४७६ ५४५ ६०५ ऊष्म ३५४ ३६७ ३५४ अ.व्या. ३३ मुखरोगे पु १५२ १५३ मदरे खराः १३५ १४६ १८७ २२३ कु १४ १५० २७६ ३१३ ४२६ ४७७ ४५६ ४५८ ५०५ ५३७ ५४१ चुद्र ४२ ४३ ४७ ११७

१८८ २८७ तु १३६ २४३ ३११ ३२६ ४२२ पु ६ १४ २१० २४७ २४८ २४९ २५० २५१ २५२ २५३ २५७ ३०५ ३८३ ३८४ ५०६ ५४७ ५४९ ५८० ५८७ ५८८ ५५४ ५५९ ६४६ अन्त स्था: ८ ३८ ७५ ८९ १४३ ३१५ ३१७ २५५ २८२ ३४२ ४२९ ४३० ४३५ ५०३

५३८ ऊष्म ८१ २३३ २३८ २५१ ३६७ ३५४ ३५८ ४२७ ४४९ ४५१ ५०८ ५४७ ५५० ५६४ ६५४ ६७८ ६८१ ६९६ अ.व्या. ५१ ५४ परि० २७ २८ ७९ श्वेतप्रदरे खराः १८७ पु २४८ २५३ सोमरोगे कु १५७ ३७७

४२७ ४७७ चुद्र तु ३२६ पु १६ ३६२ ३८६ ४१२ ५४७ अन्त स्था: ८१ ३४४ ३२७ ३३० ३३५ ४३५ ५३८ ऊष्म ३२७ ३५८ ५०८ ५५० ५५१ ५५५ ५६४ ६३० ६६३ ६९६ परि० २४ २७, २८ ७५ ८२ ९० ९२ छीरोगे कु

१५२ चुद्र ९ पु २१७ २१८ अन्त स्था: ४७ ८३ १०७ २२३ २३५ २३६ ४६६ ऊष्म ५११ ५६९ ६५४ स्तनरोगे ऊष्म १३८ अपञ्चाधारणे अन्त स्था: गर्भिणीरोगे खरा. ३४९

कु ४६० ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ चुद्र ११७ २७२ पु १६१ २६१ ४११ ७१९ अन्त स्था: १०८ २१८ ४३५ ऊष्म ४३ ३५४ ६५४ अ.व्या. ११ ६६ परि० १४ ८९ मूढगर्भे अन्त स्था: ४४ जरायुरोगे

पु २५७ सूतिकारोगे खराः १५१ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ २११ कु १७ ११३ ४६० ५४७ चुद्र ९ ११७ १६४ १७२ १८२ १८८ ब्र ५५ ७० १२४ २६६ ३११ ३२८ ४२५ पु २३८ २४३ ५४७ ६१२ ६४६ ७१९

अन्त स्थाः १७ ६९ १०६ १०७ २१३ २२४ २२८ २४७ ३५८ ४३५ ४३६ ४८० ५०४ ५४५ ६२४ ऊष्म २४१ ३५९ ४३२ ४३१ ४३५ ५१३ ५१४ ५१५ ५१६ ५१७ ५१८ ५१९ ५२० ५२१ ५२२ ५६४ ५६९ ५८६ ६५४ अ.व्या. १६ २३ ४१ ५३ ७४ ८५ परि० २९

८९ बालरोगे खराः २७२ ४३७ कु २७५ ३१७ चुद्र ५७ ३७२ ९ ४०१ पु ५१ १६१ २१८ २७२ ३७१ ३७२ ३७३ ५३३ ५४७ ६३९ अन्त स्थाः १७ ऊष्म १२ ४४८ ६३१ अ.व्या. ५ १७ ५१ ७२ ८६ १०१

मूत्रविकारे पु ६९८ उन्मादे कु २९३ वातरोगे कु २७७ तु १२४ १११ पु ७७ ५८३ अन्त.स्था: ४० ५१ ५९९ ऊष्म ४५४ ५७५ परि० ८८ ९७ त्रिपे खराः

२ ६ १७ १८२ १९९ २६६ २७९ २८४ ३५७ ४०१ ४२३ ४४७ कु १५ १७ ७७ ८३ १३२ २२१ ३५७ ४५६ ४५८ ४५९ चुद्र ६९ ७४ १३२ १३३ ३२२ ग्र ६२ ९७ १४० २२० २३१ २३२ २३८ २९९ ३५८ पु ६ १२ २१६ २६९ ३७० ४२१ ४६५

५२४	४६	९०	३१४	२५८	३९४	४१	१०९	१७८	ध्वजवृद्धौ	१८२	९४	४२४	१४०	२०४	५७७
५२५	६२	९१	३१५	२७०	३९६	४२	१४७	ध्वजभङ्गे		१८३	११०	४२६	१९२	२०५	५७८
५२६	६३	९२	३१६	२९५	४०९	४७	१५२			१८७	१११	४२७	१९५	२०६	५९१
६२२	१०२	१०६	३४३	३१५	४५५	४८	२३०			१९१	११४	४२८	२१३	२०९	५९४
६४६	परि०	११०	३४४	३१७	४६६	४९	२९१			१९३	११७	४२९	२१५	२१३	६०२
६५३		१२३	३४५	३२६	४६७	६०	३०५		पु	१९४	१२३	४३०	२२१	२१५	६२५
६७४	१०	१२४	३४८	३४६	४६९	६५	३८४	पु		१९६	१२४	४३२	२२२	२१६	६३८
७१४	१६	१२५	३५८	३५१	४७०	८६	३८५	२०६	१३१	१९७	१२६	४३३	२२३	२१७	६३९
	४३	१३२	३६७	३५९	४७१	८७	३८८	४०९		१९८	१३६	४३४	२२४	२१८	६४३
अन्तःस्थाः		१५०	३७५	३९४	४७२	८८	३९७	४९६	हस्तकम्पदोषे	१९९	१३९	४४४	२३१	२२५	६६३
		१५२	३७९	४००	४९१	८९	४२२	४९७		२०४	१४१	४४६	२५१	२२६	६६४
	वाजीकरणे	१५४	३९७	४०३	४९२	१०२	४५०	४९८		२०५	१४२	४४७	२५८	२४८	६६५
११		१५९	४०१	४१७	४९३	११०	५६१	५०३		२१३	१४३	४५२	२८८	२५३	६६६
१५०		१६०	४२३	४१८	४९४	१११	५६८	५०५		२१४	१४५	४६९	३१४	२५८	६८१
२३७	स्वराः	१६१	४३१	४२०	४९५	११२	६२०	५०७		२२४	१४७	४७३	३१५	२६०	६८४
२९२		१६२	४७२	४४८	४९६	११३	६४२	५१३	पु	२६७	१८२	५०३	३१७	३०४	६८५
४२६	८८	१६३	५०३	४४९	४९७	११४	६५४	५३२	१३०	२६९	१८३	५०७	३२५	३२९	६९०
४२७	८९	१६४	५०५	४५८	४९८	११५	६७६	५७०	४०९	२७२	१९३	५२८	३२६	३६७	६९३
५४३	१३१	१६६	५३९		४९९	११६	७१३	६३८	४९६	२७८	२०७		३२८	३६९	६९४
५४५	१३२	१६७		पु	५००	११७	अ.व्या.	६३९	४९७	२८०	२१७	शुद्ध	३३५	३८९	६९६
५६०	१३३	१६८	शुद्ध	८	५०१	११८		६४३	रसायने	२८२	२२४	२	३९७	४००	७१३
५६३	१३५	१६९	२	९	५०३	११९	४८	६९०		२८८	२२७	२६	४००	४०२	७१९
५६४	१५६	१७०	१९	१०	५०४	१४०	४९			३०६	२३८	३३	४४९	४१२	
५६६	१५७	१७४	४४	११	५०५	१४९	५७	अन्तःस्थाः		३०८	२७८	७४	४५६	४१३	अन्तःस्थाः
५७९	१५८	१७५	७४	१२	५०६	१९४	८१		स्वराः	३०९	२९८	७५	४५८	४१४	
ऊष्म	१५९	१७६	७५	१३	५०७	१९५	८२			३२८	३१३	७६		४१६	
	१६५	१७९	७६	२५	५०८	१९६	८४	८	१	३५२	३४५	८१	पु	४१७	४१
६९	१७५	१८०	७७	२६	५०९	१९७	९३	८७	४	३५३	३४९	८२	५	४४०	४७
११४	१८०	१८१	८०	२९	५११	२२९	परि०	२३६	१६	३८०	३६४	८३	२९	४४९	४८
१४५	१८१	१८२	८१	३९	५१२	२३२		२३७	४१	३८१	३६६	८४	४०	४५६	४९
१८४	१८७	१८३	८२	४१	५१३	२३९	२७	३४४	८८	४१५	३६७	८५	४१	४६९	५०
२३९	१९९	१८४	८३	१२४	५३१	३११	३८	३४६	८९	४३४	३६८	१५४	४३	४७१	५२
२५०	२६९	१८५	८४	१२८	५३२	३१९	४६	४०७	९०	४४५	३६९	१६४	५६	४९२	५३
२५२	२७०	१८६	८५	१३२	५६१	३३०	४७	४२३	१४२	४४७	३८०	१६६	६५	४९३	५५
३६९	२७१	१८७	१३१	१३८	५६६	३४६	४८	४३३	१४३		३८१	१६७	६७	४९६	७०
४५०	२७२	१८८	१६४	१९५	५६७	३४८	५६	६०९	१४८	क्षु	३८३	१७९	६९	५००	७१
४७१	२८०	१९०	१६६	२०१	५७०	३६६	५८	ऊष्म	१४९	१	३८५	१९४	७१	५०१	८३
६०१	३०६	१९१	१७९	२०२	५७६	३६८	७३		१५०	९	३९८	२८९	७३	५०४	९२
६१०	३०८	१९२	१८३	२०३	५८३	३८०	८३	२३५	१५२	१२	३९९	३९२	७४	५०५	१०५
६१३	४३४	१९३	२८९	२०४	५८४	४२४	८७	२३८	१५५	१४	४०१	शु	७६	५१२	११४
६५७	क्षु	१९४	शु	२०५	५८५	४४६	८९	३५२	१५७	१७	४०२	५	७८	५३१	११७
६६७		१९५		२०६	६१०	४४७	९६	३६७	१५८	२०	४०३	९	८४	५३२	१२६
६६८	३२	१९६	५	२०९	६४६	४७८	विद्रधौ	३७३	१५९	२५	४०४	४८	८७	५४६	१३८
६६९	३४	१९७	९	२१०	६४९	४८३		३७९	१६५	२७	४०५	४९	१११	५५७	२२५
अ.व्या.	३७	१९९	५९	२१२	६५०	५८३		३८८	१६६	३२	४०६	५८	१३२	५६०	२२६
	३८	२००	६५	२१५	६९०	५९३		३९३	१६७	३८	४०८	५९	१३८	५६६	२३७
३२	३९	२०१	६९	२२२	अन्तःस्थाः	६०२		३९४	१७४	३९	४११	६२	१८९	५६७	२४०
३५	७३	२०२	७२	२२३			शुद्ध	४२२	१७५	८५	४१५	६५	१९२	५६८	२५२
३८	७४	२४८	१७०	२२४		ऊष्म	१७५	४२५	१७६	८९	४२१	६८	२०१	५७१	२५७
४०	८२	३१२	१५५	२२५		४	१७६	४६१	१८०	९०	४२२	६९	२०२	५७४	२९१
४२	८९	३१३	२०८	२५८	८	५७	१७७	६१५	१८१	९२	४२३	७२	२०३	५७६	२९३

४०३	२६	२१७	४५५	५२१	८९	३११	५५३	३८५	धव्या	[illegible]	५६७	[illegible]	३३८	६२	[illegible]
४१७	३९	२१८	४५७	५६१	१०२	३४६		३८८			५६८		३३९	१०७	
४२०	१३२	२२२	४९८	५७०	१४०	३४८	[illegible]	३९७	४८				३४०	१५२	
४४३	१७३	२२३	४९९	५७६	१५४	३६९		४१४	४९		[illegible]		३४१	१५३	
	१७४	२२४	५००	६२९	१५५	४२३		४२२	८४	ग		खरा	३४२	ग्र	१६३
पु	१९५	२५८	५०१	६४९	१९६	४२४	४	४२३		२०८		३२९	३४३		५३५
	२०१	४०९	५०३	६५०	१९७	४२५	५७	५२५	परि०	पु		३३०	३४४	४३१	[illegible]
८	२०२	४५५	५०४		२२४	४२७	१४७	५६१			क्षुद्र	३३१	३४५	४३७	
९	२०३	४६६	५०५	[illegible]	२२५	४४६	१८४	६२०	४६	१२९		३३२	३४६	४३८	
१०	२०४	४६९	५०६		२२६	४४७	१८५	६७१	४७	३९६		३३३	क	४३९	४०४
११	२०५	४७२	५०७		२२७	४७८	२३५	६७२	४८	४६७	१७५	३३४			४०५
१२	२०६	४९१	५०८	८	२२९	४८३	२५१	६७५	५६		१७६	३३५	३५१	पु	४०६
१३	२०७	४९२	५०९	४१	२३२	४८५	३७५	६७६	७३	[illegible]	१७७	३३६	३५५	५३४	४०७
२५	२१५	४९४	५१३	६५	२३९	५८३	३७९	७१३	८७		१७८	३३७	क्षुद्र	७११	४०८

अत्यन्तोपयुक्तपदार्थोंका शोधन तथा भस्मप्रकार ।

भस्मोंका प्रकरण बहुत लम्बा चौडाहै इसलिये समस्त इसजगहदेना अशक्यहै । ईश्वरकी दया होगी तो उसे भारतीयरसायनतत्त्व नामक ग्रन्थमें दियाजायगा जिसमेंकि यथाशक्य भारतवर्षमें मिलने वाले धातुउपधातु, रत्नोपरत्न और रत्नोपरत्नोंकी गवेषणा करके उनका शोधन, मारण और अनुपान प्रभृति दिये जायगे । साथ २ यथाशक्य धातुवादका सिद्धविषय भी दिया जायगा । सम्प्रति इसग्रन्थस्थ योगोंके तैयारकरनेमें जिनके विना कार्य नहीं चलसक्ताहै उनका १-१ प्रकार दियाजाताहै । उनमेंसे भी जिन जिनके प्रकार इसग्रन्थमें आचुकेहैं उनकी सूचना दीगईहै और रहेहुओंका शोधन तथा भस्मविधान दिया जाता है ।

रत्नोंकीभस्में—द्वितीयभागके ५८२ पृष्ठमें रत्नगर्भपोट्लीके अन्तर्गत विधानहै ।

सुवर्णभस्म—हिरण्यगर्भपोट्ली (प्रथमा) में देखो ।

ताम्रभस्म—ताम्रयोग (२३) में देखो ।

नागभस्म—नागभस्मयोग (प्रथम) में देखो ।

कान्तलोहभस्म—कान्तलोहरसायनमें देखो ।

लोहभस्म—अगस्त्यप्रोक्त अयश्चिन्दूर (संख्या ९) में देखो ।

माक्षिकभस्म—सर्वेश्वर (चतुर्थ) की टिप्पणीमें देखो ।

अभ्रकभस्म—अभ्ररसायन (सं० १५०) तथा अभ्रसिन्दूर (सं० १५९) में देखो ।

तालभस्म—तालकेश्वर (अष्टम) में द्वितीयप्रकार देखो ।

प्रत्येकधातुके शोधन और मारण ग्रन्थमें अनेकतरहके मिलतेहैं । परन्तु तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जिक और कुलत्थक्वाथ इन प्रत्येकमें ७-७ बार बुझानेसे विशुद्ध होजातेहैं परन्तु गलनेकी सादरसे लोग इनके पत्रे बनाकर बुझादेतेहैं पर जो गुण गलनेसे होताहै वह पत्रोंसे नहीं होताहै । नाग और बङ्ग गलनेमें बहुत आसानहैं पर इन्हें बुझानेके पात्रमें भूलकर नहीं बुझाना, नहीं तो ये उचटकर नुकसानकरतेहैं इसलिये मिट्टीपत्तीकेबर्तनको जिमीनमें गाडकर शोधन द्रव्यको भरके ऊपर छिद्रदक्कनीको रख उसके छिद्रमेंसे इन्हें डालना चाहिये । इसप्रकार उचटनेका डरमात्र नहीं रहता । परन्तु जहां अधिकप्रमाणमें शुद्धि करनीहो वहांपर लोहेका तवादिकपात्रऊपर पत्थरका पट धरदेना और ऊपर बांसकी लम्बी सीढी रखकर दोनोंतरफ दो आदमियोंको दबानेकेलिये खडाकरदेना तब बीचमेंसे छेदद्वारा द्रव्यको डालनेसे गोलेसे

शब्दतो होगा पर किसीतरहका नुकसान नहींहोगा । स्वाङ्गशीतलहोनेपर पाटको दूरकर भीतरका द्रव निकालकर धातुको लेकर फिरसे गलाना और दूसरे नवीन द्रवमें बुझाना । द्रव कमसेकम बुझनेवाली धातुसे चतुर्गुणित होनाचाहिये और प्रतिवार नयाद्रव भरना चाहिये । इसतरह करनेसे सामान्यतया सब धातुओंकी शुद्धि होजातीहै । विशेषकर निर्गुण्डी, भंगरा, आकका दूध, केशरका द्रव इनमें क्रमशः यथासम्भव बुझावे देनेसे धातुओंकी विशुद्धि और विशेष गुणाधान होताहै । नाग और वङ्गको २१–२१ वार अर्कदुग्ध और केशरकेपानीमें बुझावे देनेसे अत्यन्तही गुणोदय होताहै । अर्कक्षीर अधिक न मिले तो एकवारके द्रवमें २–२ बुझावे देनेसेभी हर्ज नहींहै कारण कि साधारणशुद्धिसे विषभाग निकलजाताहै केवल गुणाधानार्थ इनमें बुझाव दिया जाताहै । केशर मंहगी चीजहै इसलिये उत्तमप्रकारतो पानीमें अष्टमांश केशर डालनेकाहै पर कमसेकम द्वादशांश तो अवश्यही पीसकर छोडनी चाहिये ।

रजतभस्म—२० तोले विशुद्ध रजतका बारीकरेता बनाकर जङ्गली करेलेके पत्रांगस्वरसमें ६–७ दिनतक मर्दनकर ४–४ आनेभरकी टिकडियें बनाय कंडेधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गढ्ढेमें २ सेर कण्डोंकी आंचदे । आंच अधिक न होनी चाहिये नहींतो चांदी गलकर बट्टा होजायगी । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दिनभर पूर्वद्रवमें मर्दनकर टिकडीबनाय सुखाकर २॥ सेर कण्डोंकी आंचदे । कदाचित् प्रथमपुटमें आंचका प्रमाण अधिक मालूम पडेतो ४–५ आंचोंतक उतनाही प्रमाण रक्खे । जैसेजैसे आंचको सहन करने लगे वैसेवैसे बढाताजाय । १५–२० आंचोंकेबाद आधेमन जङ्गलीकण्डोंकी आंचदेनेमेंभी हर्ज नहींहै । ३० आंचें देनेकेबाद १ मनकण्डोंकी आंचदे । ४० आंचोंकेबाद पूरे गजपुटकी आंचदे । ऐसे १०० पुटमें उत्तमोत्तम भस्म होतीहै । रजत और सुवर्ण भस्महोनेमें बडे दुर्जरहैं इनकी भस्मोंकी शार्ङ्गधरवगैरहने बहुतथोडे पुटोंकी आंचोंमें सिद्धि लिखीहै परन्तु वह निश्चन्द्र और निरुत्थ नहीं होती इसबातपर ध्यान देना उचितहै ।

वङ्गभस्म—दलदार और मजबूत मिट्टीकी कढाहीलेकर भट्ठीपर इसतरह रक्खे कि उसका पेंदा भट्ठीमें चलाजाय केवल ४–४ अङ्गुल ऊपर रहे । इसमें ८० तोले शुद्धवङ्गको गलाकर पोस्तके डोडोंके चूर्णका (बनतेतकबिना अफीमनिकाले हुए हों तो अच्छाहै) प्रक्षेप देकर बबूलके हरे डण्डेसे घर्षणकरे । जबतक समस्तवङ्गकी भस्म न होजाय तबतक प्रक्षेप देताजाय लगभग ४ पहरमें भस्म होजातीहै (सूचना–इसे कितनेही अन्न भस्म समझकर खानेको देदेतेहैं यह खानेके योग्यनहींहै ऐसेही जिस्त और नागमें समझना ।) इसकेबाद प्रक्षेपदेना बन्दकर २ पहरतक कडी आंचलगावे और चलाताजाय । इसबातका ध्यान रहे कि भस्म उडने न पावे । फिर भस्मको मिट्टीके बडेशरावसे ढककर यथावस्थित छोडदे । २४ घंटेबाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर कुमारीस्वरससे २ दिन मर्दनकर १–१ तोलेकी टिकडियां बनाकर कडीधूपमें सुखावे । फिर ५–५ सेर वजनके दो सूखे कण्डे लेकर एकगर्तमें एक कण्डेको रखकर टाटबिछाकर कुटेहुए निनौलोंकी (कार्पासबीजोंकी) एक अङ्गुल मोटी तह जमाकर टिकडियोंको इसतरह रक्खे कि एकदूसरीसे अलगरहें । फिर टिकडियोंपर एकअङ्गुलमोटी दूसरी तह जमाकर बचीहुई टिकडियोंको रखदे, ऐसे ३ तहतक जमाचकेहैं । फिर इसपर दो अङ्गुलमोटी निनौलोंकी तह देकर दूसरे कण्डेसे ढककर गोबरसे सन्धिबन्दकरदे । कुछ सूखजानेपर १५ सेर कण्डे ऊपर जमाकर आंच लगादे । यह क्रिया निर्वात स्थानमें करनी चाहिये । तीसरेदिन स्वाङ्गशीतल होनेपर सावधानीसे ऊपरकी राखको हटाकर टिकडियोंको निकालले । फिर पूर्ववत् कुमारीस्वरसमें एकदिन मर्दनकर शुष्कटिकडियोंको शरावसम्पुटमें बन्दकर एकमनकण्डोंकी आंचदे । ऐसे ५–६ आंचें देनेकेबाद यदि एकदम सफेद होजाय तो रखले । कदाचित् कुछ कालिमा रहगई हो तो गुल्लेसम्पुटकी एक आंचदेवे । यह अत्यन्त सफेद और निरुत्थ भस्म होतीहै ।

यशदभस्म—जिस्तेका बारीक रेता बनाकर मिट्टीकी कढाहीमें मन्द अग्निपर गरमकर क्रमशः द्विगुन तैलादिक द्रव्योंको डालकर सुखावे । सबकेपीछे इतनी आंचदे कि फिर सब जलजाय । फिर शोरा, हरिताल, गन्धक, मैनसिल, सुहागा, फिटकरी, नरसार ये प्रत्येक अष्टमांशलेकर बारीकचूर्णकर रखले । इसकेबाद जिस्तके नीचे अग्नि जलावे और नीमके ताजे डण्डेसे चलातारहे । जब जिस्त गलकर उडने लगे तब उपर्युक्तचूर्णकी चुटकी देकर डंडेसे चलानाजाय । इसतरह जबतक समग्र जिस्तकी भस्म न होजाय तबतक यहीक्रम जारी रक्खे । भस्म होनेपर चूर्ण देना बन्दकरके १ पहरतक अग्निदेकर घोटे । फिर वङ्गकी तरह ढककर रखदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चीनी अथवा पत्थरके पात्रमें रख जलडालकर चलादे । पानी निथर जानेपर धीरजसे निकालकर दूसरापानी भरदे । ऐसे जबतक भस्ममें क्षारका भाग रहे तबतक इसीतरह करता चले । फिर स्वच्छभस्मको सुखाकर कुमारीस्वरसमें घोटकर टिकडीबनाय सुखाकर पांचसेर बिनौलोंके बीचमें रखकर आंच दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कुमारीकेरसमें टिकिया बनाय गजपुटकी आंचदे । ऐसे ३–४ आंचें देनेसे निश्चय श्वेत भस्म होगी । मधुरादमें किसीको अग्निमान्दि जिस्तकी जुल्लाब हो तो उसमें घोटकर रखले आंच न दे । यदि उसनेवाली मधुओंसे कथन करने की इच्छा हो तो धोना नहीं वैसेही काममें लेलेना ।

पित्तल व कांस्यभस्म—पूर्व रीतिसे विशुद्ध कास्य और पीतलके टुकडेकरके मूपाकर्णी, ब्राह्मी या अडूसेका यथालाभचूर्ण, शुद्ध गन्धक और मैनसिल प्रत्येक अष्टमाश डालकर नींबूकेरसमें घोटकर टुकडोंपर लेपकरे। सूखनेपर ऊपरकहीहुई वनस्पतियोंके चूर्णकी ऊपर नीचे तह देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर इतनी आच दे कि चूर्ण और गन्धक जलजॉय। इसकेबाद निकालकर पूर्ववत् ३-४ आंचेंदे। भस्महोनेपर (नींबूकीनगह काटेवालीचोलाईके रससे कामलेवे) खरलमें घोटकर टिकडिया बनाकर आचदे। क्रमश आचको बढाता जाय। २० पुटकेबाद चूर्णकी तह देना बन्दकरदे और गजपुटकी आच दे। ऐसी २-३ आचोंमें विशुद्धभस्म होगी। रंग न आया हो तो अखीरकापुट उघडीहुई टिकडियोंसे देदे।

कसीसभस्म—कुमारी, भटकटैया और सत्यानाशीके खरसोंमें क्रमश ३-३ दिन घोटकर सुखाकर ३-४ दिनतक बहुतखट्टे दहीमें डालकर रहनेदे। गाढाहोनेपर घोटकर १-१ तोलेकी टिकियां बनाय सुखाकर जलभगरेके चूर्णके बीचमें टिकडियोंको रख गजपुटकी आचदे स्वाङ्गशीलतलहोनेपर निकालकर रखले।

तुत्थभस्म—५-५ तोलेकी तुत्यकी चमकदार डलियें लेकर कच्चे सूतसे लपेटकर मिट्टीकी हण्डीमें ३ सेर अनबुझ पत्थरके चूनेकी डलियोंमें दबाकर इतना पानी डाले कि सारा चूना फूटजाय। फिर घडको फोडकर डलियोंको निकालकर सुखादे। इसकेबाद १-१ डलीको नारियलके बराबर भैंसके ताजे गोबरमें रखकर धूपमें सुखावे। जब अन्दरकी डली हिलानेसे खडखड बजनेलगे तब निकालकर डलीपरसे सूतको खोलकर लोहेके तवेपर रखकर तेलियागेरू १ रतलको पीसकर आधेगेरूसे डलीको शिखराकार ढकदे और चूल्हेपर रख नीचे बेर या शमीकीलकडीकी १ पहर मन्द आचदे। यह ध्यान रहे कि कहींसे हवा निकलती देखे तो दूसरे गेरूसे दबादे। फिर धीरे २ आच बढाकर २ पहर मध्यमाग्नि और १ पहरकी तीव्राग्नि देकर स्वाङ्गशीतल करके निकालले। जहा कहीं (औषधनिर्माणमें) तुत्थका प्रयोग आवे वहा इसभस्मको काममें लेवे।

मल्लभस्म—नरमून ८० तोले, जवकुटमिर्च १५ तोले, काटेवाली चौलाईकी जडका कल्क ५ तोले लेकर सबको मिट्टीकी हडीमें भरके ३ तोले मल्लकी डलीको दोलायन्त्रविधिसे मूत्रशोषणपर्यन्त वाष्प देवे मूत्रका सम्पर्क न होनेपावे। फिर काचकेवर्तनमें डलीको रखकर डूबनेतक आकका दूध भरके धूपमें रक्खे। दूध नया बदलताजाय परन्तु भदपर जमीहुई दूधकी तहको अलग न करे। २२ वें दिन अपामार्गके क्षारको आकके दूधमें पीसकर एकलेपलगाकर सुखादे। ऐसे ७ लेपलगानेकेबाद बारीक कपडेपर आकके दूधमें पिसे हुये अपामार्गके क्षारका लेपदेकर सुखासुखाकर ७ तह चढावे। फिर मिट्टीकी कुल्हडीमें मल्लसे चतुर्गुण अपामार्गके क्षारमें दबाकर ढक्कन लगाय ७ कपडमिट्टीदेकर अच्छीतरह सूखनेपर मिट्टीके घडेमें आधेमन बकरीकी मींगणियोंकी निर्वातस्थानमें आचदे। ७ दिनबाद सावधानीसे मल्लको निकालकर रखछोडे। इसे योग्यचिकित्सककी सलाहसे काममें लेवे उत्कटविषहै।

पारदशुद्धिः—बाजारू पारेमें जिस्त, रागा और शीसा मिले हुए आतेहैं इसलिये जो कुदरती शिंगरिफद्दे (अभावमें बनावटी) उसे मगवाकर नींबू और आककेपत्तोंकेरसमें १-२ दिन घोटकर छोटीछोटी टिकडियें बनाय अच्छीतरहसुखाकर डमरुयन्त्रमें बन्दकर चूल्हेपर चढाय नीचे बेर, बबूल, खैर, धव वगैरह सारिहलकडियोंकी मन्द, मध्य और तीव्र इसक्रमसे ४ पहरकी अग्निदेवे। ऊपरके घडेपर ४ तह मोटे कपडेकी गद्दीको पानीमें तरकरके रखदे और उसे १-१ घण्टेकेबाद ठंडेपानीमें तरकरके निचोडकर रखताजाय। इसका मतलब यह है की अत्यन्तगर्मीपानेसे पारा किसी न किसी रास्तेसे निकल जाताहै। तर रहनेसे न जायगा। ४ पहरकेबाद आचदेना बन्द करदे और साधारणकोयलोंपर यन्त्रको रक्खारहनेदे तथा गद्दीको हटादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर बहुतसभालकर कपडमिट्टीको दूरकर ऊपरके घडेमेंसे बारीक कपडेके सहारेसे घिसकर तमामपारेको निकालले। नीचेके घडेकीराख जब एकदम श्वेतहोजातीहै उससमय पारा नीचेकी हण्डीमें भी चला आताहै तब ऊपरकीहडीकीतरह नीचेकी हडीमेंसेभी पारेको निकालले और राखकोभी देखले उसमें पारा मिला न हो। इसतरह पारेको निकाल खादीके कपडेसे १०८ बार छाननेसे कालिमारहित होजाताहै। यह इसकी कामचलाऊ शुद्धि हुई। विशेष शुद्धिकी इच्छा हो तो लोहेका खरल अथवा मोटेपेंदेकी कढाही और लोहेका मूसल लेकर इसतरहके चूल्हेपर रक्खे कि जिसमें आगेपीछे दोनोंतरफसे ईंधन देसके। फिर इसमें अभीष्टप्रमाण पारेको डालकर उससे १६ वां हिस्सा सेंधानमक और अत्यन्त खट्टी काजी अथवा नींबूकारस देकर घोटतारहे। रससूखनेपर नया देताजाय। ४ पहरकेबाद गरमपानीसे इसयुक्तिसे धोवे कि पारेका अश पानीमें न जाय। निकालेहुए पानीको मिट्टी अथवा चीनीकेवर्तनमें रक्खे कारण कि कदाचित् भूलसे पारा चलागया हो तो उसमेंसे निकालसके। दूसरेदिन १२ वां हिस्सा नोसादर और नींबूकारस देकर ४ पहर उसीतरह घोटकर धोकर साफकरे। तीसरे दिन पोडशांश हल्दीकाचूर्ण और नींबूके रसमें शोधनकरे। इसीतरह चित्रकमूलकीछाल, कडवे सहिजनकी जडकीछाल, चाकसी (तिराजिया), गृहधूम, एकपोती लहसन, त्रिफला, त्रिकटु इनप्रत्येकके षोडशांशचूर्ण और नींबूकेरसमें ४-४ पहर मर्दन और शोधनकरे।

इससेभी विशेष शुद्धिकरनी हो तो मर्दनकेबाद गरमपानीसे न धोकर डमरूयन्त्रमें रख ऊर्ध्व, अधः अथवा तिर्यक्पातन॰ करतारहे। इससे अत्यन्तविशुद्धहोजाताहै। इसकेबाद विषोपविष जितने मिलसकें उनमें मर्दनकरके शोधनकरे यह समस्तकार्योंकेलिये उपयुक्तहोजायगा। जहां कज्जली हो वहां उसकेसाथ शुद्धगन्धककेयोगसे नीलवर्ण कज्जली बनाकर काममें लेवे और चन्द्रोदयप्रभृति समस्तसिन्दूरोंको तैयार करके पारदभस्मके अभावमें डाले। सिन्दूरोंका प्रकार ग्रन्थमें विस्तृतरूपसे दियाहै।

गन्धकशुद्धिः—लालिमायुक्त आवलासार गन्धकलेकर लोहेकीकढाहीमें डालकर अरणी, भंगरा अथवा तुलसीका चौगुना रस देकर साधारण अग्निपर औटावे। कमीकमी चला दियाकरे। थोड़ा रस बाकीरहनेपर उतारकर गरमपानीसे धोकर साफकरले फिर धूपमें सुखाकर बारीकचूर्णकर चतुर्थांश गायके घीकेसाथ गलाकर चौगुने गायके दूधमें छानदे। ठंडाहोनेपर निकालकर गरमपानीसे साफकरके सुखाले। ऐसे तीनबारकरनेसे विशुद्धहोजाताहै।

मनःशिलाशुद्धिः—लोहेकी कड़छीमें मैनसिलको साधारण गरमकरके चौगुने गोमूत्रमें बुझावे। ऐसे १०० बार बुझानेसे एकान्ततः विशुद्ध होजातीहै। गोमूत्र प्रतिबार नयालेना।

वत्सनाभशुद्धिः—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर दोलायन्त्रसे स्वेदितकर छोटे छोटे टुकडेकरके पीलीसरसोंके तैलमें भिगोएहुए ४ तहकपडेमें पोट्टलीबनाय ३ दिन रखकर कडीधूपमें सुखाकर रखले।

विषमुष्टिशुद्धिः—परिपुष्टसफेदकुचिलोंको गोमूत्रमें डालकर रखदे गोमूत्र प्रतिदिन बदलतारहे। २१ वें दिन साफ पानीमें डालदे और पानीको प्रतिदिन बदलतारहे। १० दिनबाद कुचिलोंको छीलकर भीतरका अङ्कुर निकालकर पानीमें ही डालताजाय। फिर अत्यन्तखट्टीकाञ्जीमें ४ पहर स्वेदनकर गरमपानीसे धोकर ४ पहर दूधमें उबाले। यदि इनकी तिक्तता दूर करनी हो तो गोखरू, हरें और शतावरके क्वाथमें ४ पहर उबालकर छोटे २ टुकडे बनाय सुखाकर रखले।

मृद्दारश्टङ्गशुद्धिः—मुर्दारश्ङ्गको ७ बार बकरीके मूत्रमें गरमकरके बुझावे। फिर चतुर्थांशसेंधेनमककेसाथ १ पहर पानीमें घोटकर अठगुने पानीमें मिलाकर रखदे। नितरनेपर पानीको निकालकर दूसरा सेंधानमक डालकर पूर्ववत् घोटकर पानीडालकर रखदे। ऐसे २१ बार करके नमकका तमाम हिस्सा निकालकर सुखाकर रखले।

भल्लातकशुद्धिः—भैंसके गोबरमें चौगुना पानी डालकर भिलावोंकी पोट्टलीको दोलायन्त्रमें लटकावे। पोट्टली गोबरमें डूबीरहे। फिर ४ पहर मन्दआंचसे पकाकर गरमपानीसे धोडाले। इसीतरह ४-४ पहर गोमूत्र, दुग्ध और नारियलके पानीमें पकावे। नारियलकेपानीमें पकानेसे पहिले इनकी टोपी उतारदे। इसतरह शुद्धकियेहुए भिलावोंको काममें लेवे। इसीतरह जयपालकी शुद्धि करे परन्तु नारियलके जलमें न पकावे। अन्तमें इनकी जिह्वाको निकालकर नींबूकेरसमें यहातक घोटे कि चिकनाई निकलजाय।

धतूरा, करिहारी, कनेरशुद्धिः—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर स्वेदनकरले।

शिलाजतुशुद्धिः—पर्वगीय रससंख्या २९ में देखो।

शान्तिं श्रियं सिद्धिमनन्तविश्रुतिं मानं महोत्साहमकुण्ठितोद्यमम्।
आयुस्ततिं रोगसमूहवर्जितां विष्णुर्विदध्याद्रसयोगसागरे॥

इति श्रीरसयोगसागरे परिशिष्टं समाप्तम्

अत्रविषये विशिष्टविदुषामभिप्रायाः ।

अथ बहोः कालात् प्रतीक्षितस्य ग्रन्थरत्नस्य समवलोकनेन सत्यं महान्तं प्रमोदमावहामि । बम्बईनगरवास्तव्यैः प्रशस्तयशोभिर्भिषग्वरेण्यैः सुहृद्वर्यश्रीहरिप्रपन्नशर्मभिः सुव्यवस्थया शताधिकानां रसग्रन्थानां विकीर्णानि प्रयोगजातानि सुसंगृह्य विरचितोऽयं रसयोगसागरो रसजगति कामप्यतिशायिनीं सुषमां धत्ते । विषमस्थलेषु मार्मिकटीकया संवलितमिदं ग्रन्थरत्नं हिन्दीटीकायाः साहित्येन न केवलं विदुषां भिषजामेवोपयोगि किन्तु साधारणचिकित्सकानामपि, अनल्पमुपयोगीति को नाम विद्वान् विवदेत् ।

इत्यपि वक्तुं सुशकं यदद्यावधि सङ्ग्रहग्रन्थानां निर्माणे यः प्रयासः समजनि तत्र मूर्धन्यभूतोऽयं प्रयत्नातिशयः । मन्ये चैकाकिन एवास्य ग्रन्थरत्नस्य सङ्ग्रहणात् पुस्तकनिवहानां निधानं केवलं भारायितमेव स्याद्वैद्यानाम् । वैद्यराजमहोदयैर्मुद्रणादिकार्यं स्वयं सावधानतया विहितमिति शुद्धप्रायस्याऽस्योद्वहनं नितरां प्रकाशयति । ग्रन्थेन सहोपोद्घातभागोऽपि दर्शनीयतमः । ध्यानपूर्वकमध्ययनेन भिषग्वरेण्यानां न केवलमायुःशास्त्रविषयकं, किन्तु शास्त्रान्तरविज्ञानमपि सुतरां भवति विज्ञातमिति किं बहुना स्वयंगुणगौरवस्य विषयेऽनल्पजल्पनेनेति ।

जयपुर, मार्गशीर्ष शुक्ल ११ सं. १९८६ — आयुर्वेदमार्तण्ड लक्ष्मीराम स्वामी, आयुर्वेदाचार्यः । राजकीय आयुर्वेदिक कालेज

श्रीमान् विविधागममर्मपरिशीलनासमश्रमसमासादितोपादेयवैदुष्यप्रकर्षः, शाब्दन्यायानुरूपवाक्यविन्यासपरिज्ञानपरिनिष्ठितान्तःकरण आयुर्वेदवित्तमोऽप्यखिलशास्त्रनिष्णातधिषणः, भारतवर्षप्रहर्षवर्विलसितलेखः पण्डितप्रवरः वैद्यवरश्रीहरिप्रपन्नमहाशयोऽभिनवगवेषणापूर्णं रसयोगसागराभिधं सवस्तुधं प्रबन्धं निर्माय मनोहरं मुद्रापयित्वा चावलोकनार्थं मत्सविधे सदेकं सद्रूपं पुस्तकं प्राहिणोत् एतदर्थं शुभंयुसौहार्दस्नेहसिक्तपरश्शतधन्यवादाः सन्तुतराम् । प्राच्यप्रतीच्यविचारसमयतदुचितपारविवेचनाचातुर्यसमञ्चितवेदविभूतिरूपायुर्वेदप्रामाण्यव्यवस्थापकोपोद्घातप्रकरणदर्शनश्रद्धानुरागवशीकृतान्तरतयाऽन्यत्रापीदृश एवायमिति समधिकोत्पन्नविश्रम्भः स्तोतव्ये मूकता मूकतैवेति प्रतीयमानेषां द्विज्ञाणां समर्थानामीदृशानुकृतौ प्रोत्साहदानार्थमत्र प्रावर्तिषि स्तोकलेखाय इति निर्योदयोदन्वन्तः सन्तः क्षाम्यन्तुतराम् ।

भारतीयचिकित्साशास्त्रमपरिपूर्णं तात्त्विकशरीरविज्ञानरहितम् शस्त्रचिकित्साशून्यं नातिप्राचीनमित्यादि वैदेशिकचिकित्सकगणैर्लोलप्यमानं कुहनाकल्पप्रलपनमेतदुपक्रमार्कदर्शिनाम् विच्छिन्नाभ्रविलायं विलीयते इति केषां हृदयजुषां हृदयानि प्रमोदोदयवशम्वदानि न भवेयुः । अस्मिन् ऋगादिमन्त्रैः शरीरावयवविभागस्थाननामगणनादि निर्दिश्य सन्दिग्धस्थलविशेषे मन्त्रान्तरैः सम्वादाऽभिमतार्थविशेषं साधु व्यवाविष्ठिपद् ग्रन्थकारः । अपाचीकरच रुचिरमत्र व्याख्यातृपुरुषान्तरभ्रमप्रमादाद्युपजृम्भितमर्थान्तरम्, पराक्रम्य पराचीकरचात्र वैदेशिकानां विमतानि मतानि । समतुष्यञ्च कारुण्यपूर्णमानसमहर्षिप्रणीतप्राणत्राणतरणिचिकित्सापरायणानि मनीषिणामन्तःकरणानि ।

वैद्यकस्याऽस्य प्रणेतुरर्थविवेचनाचातुर्यं परिशुद्धशब्दप्रयोगप्रागल्भ्यं विविधशास्त्रपरिशीलनकौशलं, पुरातनपुण्यप्रभावोपनतप्रज्ञाप्रतिभावैभवञ्च पश्यतः कस्य सचेतसश्चेतश्चिराय न चित्रीयते ? न तान्यक्षराण्युपलभे यैरस्य वास्तवं संस्तवं कर्तुं पारयेयमित्युपरम्यते । ईदृशाऽपूर्वग्रन्थप्रणयनप्रकाशनाभ्यां जगतो महीयानुपकारः सम्पद्येत इत्यत्र न कस्यापि विद्याविदाम्विवादः । एवमेव शास्त्रोक्तविधिना रसनिर्माणतदुपयोगप्रकारप्रकाशनमुखैरियन्त ईदृशाश्चोपकारा इति तु अपरिसङ्ख्येयं सद्भावतामपि ।

पाटलिपुत्र (पटना). सं. १९८६ कार्तिक शुक्ल द्वादशी — महामहोपाध्याय हरिहरकृपालु द्विवेदी, रामनिरञ्जनदास मुरारकीयविद्यालय

स्वस्ति श्रीमतां निखिलायुर्वेदरसशास्त्रोदधिपारंगतानां वैद्यवर्याणां हरिप्रपन्नशास्त्रिणां चरणकमलेषु जनस्थाननिवासिनो देवधरोपनामकस्य कृष्णशास्त्रिणः सहस्रशः प्रणतयः विलसन्तुतराम् । श्रीमद्भिः सम्पादितस्य रसयोगसागरग्रन्थराजस्य प्रथमं भागं समधिगम्य समालोच्य च प्रामोदततमां नश्चेतः । अपरिमितप्रायाणां रसयोगानामेतस्मिन् सङ्ग्रहात् सर्वथा सार्थमेवाभिधानं **रसयोगसागर** इति । विविधानां रसयोगानां बहवश्चात्र पाठाः प्रदर्शिताः समुपलभ्यन्ते । यथा ग्रन्थारम्भ एव

अग्निकुमारस्य पञ्चाशत् (५०) पाठास्तथा चात्रि अर्धनारीनटेश्वरस्य सप्तदश (१७) कालाग्निरुद्रस्य दश (१०) चन्द्रोदयस्य सप्त (७) ज्वराङ्कुशस्य नवत्रिंशत् (३९) ताम्रयोगस्य त्रयोविंशतिः (२३) तालकेश्वरस्य ॥ एकोनाशीतिः (७९) इत्यादयोऽनेके विविधाः पाठाः प्रदर्शिता वर्तन्ते । अधुना मुद्रितग्रन्था न तावद्दुरधिगमाः किन्त्वमुद्रितानां दुष्प्राप्याणां प्राचीनलिखितग्रन्थानामेकत्रीकरणं नाम कठिनतमो व्यापारः । सत्यामपि एवमवस्थायां दीर्घोद्योगपरैर्विद्वद्वरैः सम्पाद्य यथाकथञ्चित्पञ्चाशदधिकानमुद्रितानन्यानन्यान् प्राचीनलिखितग्रन्थान् समाकलय्य तत्रस्थं मुद्रितग्रन्थस्थं च विषयजातं, तत्स्थान् पाठभेदांश्च समालोच्य मुद्रापितास्ते सर्वे अकारादिवर्णानुक्रमेणाऽस्मिन् ग्रन्थराजे ।

ग्रहणीरसाद्यनेकस्थानेषु अनेकानां व्याख्यातॄणामर्थनिर्णये प्रमादस्थानानि प्रदर्श्य युक्तार्थविशदीकरणार्थं पण्डितवर्यैर्विरचिता संस्कृतटीकैव केवलमलं खलु तेषां पाण्डित्यप्रदर्शनाय । अपि च कासीसादिरस, त्रिदोषाङ्कुशरसादिस्थलेषु तेषां निसृतं भाष्यं तु सुतरां पाण्डित्यपूर्णं वर्तते । तथा चास्मिन् ग्रन्थराजे पण्डितमहाभागैर्नूतनकल्पा इति निर्दिष्टाः अभ्रकल्पः, अश्वकंचुकी, कन्दर्पजीवनः ताम्रयोगाद्यनेकेऽनुभूतयोगाः सुस्पष्टं प्रख्यापयन्ति महाभागानां चिकित्सानैपुण्यं तेषां च्छन्दोनिबद्धत्वेन रचनाचातुर्यञ्च । गुरुपरम्परयैव केवलमस्मत्सकाशमागतानविज्ञातमूलान् कांश्चिदनुभूतयोगान् ग्रन्थराजेऽस्मिन् समुपलभ्य परं हर्षमुपागताः स्मः ।

रसयोगसागरस्य पूर्वार्द्धभूतेऽस्मिन् ग्रन्थे १७९६ योगाः ७३१४ श्लोकाश्च वर्तन्ते । प्रथमतस्त्वेतदेव सुमहत्कठिनं यच्छतादिकेभ्योऽन्यान्यपुस्तकेभ्य एतेषां रसयोगानामेकत्रीकरणं, तत्तद्ग्रन्थनिर्देशपुरःसरं तेषामकारादिवर्णानुक्रमेण विरचनं च नाम । एतस्मिंस्तु ग्रन्थे एवं विरचितानां योगानां शुद्धाऽशुद्धविचारोऽपि कृतो वर्तते । कार्यमिदं कियन्तं परिश्रममावहति कियतीं च विद्वत्तां प्रकटीकरोतीति अकृतैतादृग्व्यवसायैर्दुःखकं कल्पनापथमप्यानेतुम् । सुविचार्य चास्य ग्रन्थस्योपयोगितां मूल्यमल्पमेवाभाति यदस्य द्वादशरूप्यका इति । ग्रन्थस्याऽस्य उपोद्घात एव केवलमर्हत्येतदधिकं मूल्यमिति मन्यामहे । अतिविस्तृते ग्रन्थस्याऽस्योपोद्घाते "आयुर्वेदस्य प्राक्कालः" त्रिदोषविवरणम्, आर्यशारीरावयवाः, सन्दिग्धशारीरविवरणम्, इत्याद्यनेकानामायुर्वेदीयविषयाणां साङ्गोपाङ्गं विवरणं कृतं वर्तते । विवरणे चास्मिन् पदेपदे वेदेभ्यः प्रमाणान्युपन्यस्तानि, पाश्चात्यानामपि विदुषामभिप्रायाः समुद्धृता वर्तन्ते । हृदयङ्गमेन विचारपरिप्लुतेन चैतेन विवरणेन सत्यामपि क्वचित् क्वचिन्मतभिन्नतायामवश्यमेव सर्वेषामायुर्वेदीयानां मनांसि वेदप्रवणानि शारीरावयवविचारप्रवृत्तान्यपि च क्रियेरन्निति नास्ति नस्तोकोऽपि सन्देहः ।

नासिक सं. १९८६
माघ शुक्ल अष्टमी

तत्रभवतः प्रेमाकाह्वी
देवधरोपनामकः कृष्णशर्मा.
तथा च पं. हरिशास्त्री पराडकर वैद्यः
आकोला (वऱ्हाड)

भवतां रसयोगसागरस्य प्रथमभागं दृष्ट्वाऽत्यन्तमाह्लादितोऽस्मि । यथा वेदोद्धाराय व्यासस्य प्रादुर्भावः समभूत्तथैवाऽऽयुर्वेदोद्धाराय भवदाविर्भाव इति । उपोद्घाते समधिकं वैदुष्यं प्रकटीकृतं गहनस्थलेषु च संस्कृतविवरणमपि कृतम् । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामन्येषां चोपादेयो भविष्यतीत्याशासे । विद्यालये वाचनालये चोपयोगितव्योऽयं ग्रन्थ इति शम् ।

अमदाबाद आषाढ कृष्ण
सप्तमी १९८६ वि०

वैद्य नारायणशङ्करो देवशङ्करात्मजः ।

वैद्य पण्डित श्रीहरिप्रपन्नशर्मभिः सङ्गृहीतो रसयोगसागरः परममहान् रसनिबन्धो विधीयते मया चाशुषः कृपया ग्रन्थकर्तॄणाम् । अग्न्यागदेश्वरादीनां नेत्राशनिपर्यन्तानां १७५५ रसानां दृश्यते सङ्ग्रहः । सङ्ग्रहार्थं सङ्गृहीताना ग्रन्थानां सङ्ख्या अष्टोत्तरं शतम् । तेषु च ५३ ग्रन्था मुद्रिताः ६० ग्रन्थाश्च हस्तलिखिताः । एतावतां ग्रन्थानां सङ्ग्रहे अपेक्षितस्य कालस्य द्रव्यस्य सर्वेषाय तेषां तात्पर्यावगमे तथाभूतायाः प्रतिभाया मानसकल्पनायामेतत्कथनीयं भवति यदलोकसामान्यवैभवेषु महापुरुषेष्वन्यतमोऽयं वैद्यवरः श्रीहरिप्रपन्नपण्डितः पण्डितमार्तण्डः । परममहती भूमिका प्रकाशयन्ती कर्तुर्बहुश्रुतत्वं गुणाय कल्पते पश्यतो देशान्तरवैद्यैः हृता पूर्वजाना कीर्तिं श्रावयन्ती । सन्दिग्धार्थानां शब्दानां तात्पर्यनिश्चयायाऽऽदृतोऽपि यत्नो हस्तात्तुत्याय कथयति कर्तुस्तलस्पर्शि पाण्डित्यम् ।

मुम्बापुरी चैत्र शुक्लाष्टमी
सं. १९८४ वि.

पं. रमापति मिश्रः ।

अस्माभिः प्राचीना नूतना बहवो ग्रन्था पठितास्तेष्वेकनाम्ना प्रसिद्धा भिन्नक्रियात्मका बहुसङ्ख्यावन्तो रसा दृश्यन्ते। ते कठिनगुप्तशब्दक्रियात्वात्कठिना दुर्लभ्याश्च। तेषु मुद्रितानां ग्रन्थानां मूल्यमधिक भारो विशेषश्च। एतत्सर्वं पर्यालोच्य बहूनां विदुषां प्राचीनानां नूतनानां भिषजामग्र प्रार्थना कृता—कोऽपि रसग्रन्थ एतादृश केनाप्याचार्येण कृत प्राप्यते? यस्मिन् सर्वेषां रसानां समावेश स्यात् परन्त्वद्यावधि न कोऽपि ग्रन्थो लब्ध ईदृश। एतेन शुष्कायामाशालतायां श्रीमद्भिर्वैद्यानुशासनकारिभिर्हरिप्रपन्नशास्त्रिभि कृतो रसयोगसागरो लब्ध। अस्मिन् एकनाम्ना बहूनां रसानां नानाक्रियावतां समावेश कृतोऽस्ति। कठिनानां शब्दानां गुप्तानां क्रियाणाञ्च प्रत्यक्षनिदर्शनम्। अथ सर्वैर्वैद्यनामधारिभिरसङ्ग्रहीतव्योऽनेन पार्श्ववर्तिना कस्याऽपि ग्रन्थस्यापेक्षा न भवति।

कलकत्ता पौषशुक्ला }
प्रतिपदा १९८६ वि० }

भगीरथस्वामी

वैद्यप्रकाण्डश्रीयुतहरिप्रपन्नविपश्चिद्भी 'रसयोगसागर' प्रणयनेन न केवल सामान्यजनता किन्तु भिषग्जनताऽपि चिरमनुगृहीता यतोऽत्र प्राचीनरसग्रन्थानां प्रयोगास्तथा सवर्गिता यथा वर्णानुक्रमेण रसा उपस्थाप्यन्ते येन तत्तद्रसमार्गणमतीव सुकरतामापन्नमुपकरिष्यत्यायुर्वेदविदो रसवैद्यान्॥

किञ्च टिप्पणीप्रदानेन रसपाठेषु सन्दिग्धानशान् विद्वद्भिर्महाशयैरेतैः रसायनशास्त्रपारम्परी परिष्कृता, यथा **रतिकामरसे**—आपातत प्रतीयमानमर्थं पुरस्कृत्य प्रवृत्तिरनर्थावहेति सम्प्रदर्श्य रसशोधनार्थं प्रागुपयुज्य प्रमदाप्रथमार्तव परिशुद्धरसयोगानन्तरं पालाशमूलरस गुटिकाबन्धे नियुञ्जाने साङ्केतिकसरणिराविष्कृता परिहृतश्च मालिन्योद्भवम्।

एवं महता परिश्रमेण सम्पादितोऽयं ग्रन्थ सर्वथा रसग्रन्थेषु प्रधानगणनामर्हतीति।

जामनगर श्रावणशुक्ला }
१० सं. १९८६ }

महामहोपाध्याय शास्त्री—**हाथीभाई शर्मा.**

काशीनिवासिवैद्यपण्डितश्रीहरिप्रपन्नशर्मविरचितोऽयं "रसयोगसागरो" ग्रन्थो लोकोपकारको वैद्यानान्तु नितरामुपकारकोऽपूर्वं उत्तमश्चेति सम्मनुते।

मुम्बापुरी श्रावणशुक्लापूर्णिमाया }
सवत् १९८५ }

यदुनन्दन झा.
बृहन्मन्दिरस्थबालकृष्णशुद्धाद्वैतसंस्कृतपाठशालाप्रधानाध्यापक।

रसग्रन्थोऽयम्। अत्रच तेषु तेषु वैद्यकग्रन्थेषु पठिता रसयोगास्सङ्कलितास्सन्ति। एकत्र नानाग्रन्थीयरसयोगपाठा अत्र द्रष्टु शक्यन्त इति ग्रन्थस्यास्य विशेषोऽयम्। हिन्दीभाषानुवादेन साकं तत्तन्मूलग्रन्थीयसंस्कृतभाषामयपाठा अत्र समुद्धृतास्सन्ति। अकारादिक्रमेण रसयोगानामत्र विन्यास कृतो वर्तते। आरम्भे चात्र भूमिकाद्वय संयोजितमस्ति। एकमाङ्गलभाषामयम् १०४ पृष्ठव्यापतम्, अन्यत्संस्कृतभाषामयम् १७८ पृष्ठव्यापतम्। तत्र चायुर्वेदस्येतिहासस्तस्य महत्त्व चाधिकृत्य महान्विचार कृतो वर्तते। मनश्चिक्कणपत्रेषु देवनागराक्षरैर्मुद्रित।

मधुभाषिणी काशी, प्रभवसंवत्सरे वृश्चिकमासे १० दिवस।

निखिलरसशास्त्रीयदुरवगमाशयप्राचीनरसयोगास्सर्वेऽप्यत्र सप्रश्रय पौर्वापर्यसमीक्षापूर्वकं हिन्दीसंस्कृतव्याख्याद्वयेन परिष्कृताश्च पूर्वोत्तरपरिशिष्टाख्यभागद्वयात्मकतया आदिप्रान्ता यथाक्रमं निबद्धाशब्दसङ्ग्रहो विज्ञानाश्च योगा। आदावुपोद्घातोऽयमायुर्वेदनिगमागमसामर्थ्यमाचार्याणां सकलकलापारीणत्वञ्च बोधयति। प्राय आयुर्वेदीयरसशास्त्रीयास्सर्वे रसयोगा प्राचीना नवीना व्याख्यातृस्वप्रोक्ताश्चानेनैव साङ्गोपाङ्गतया सङ्गृहीताश्चरितार्था इव दृश्यन्ते, सलक्षणश्च विवरण श्रुतिस्मृत्यादिसहकृतम्। संस्कृता असंस्कृता आचार्या केवल भाषामात्रविदो भिषजोऽपि पुरुषार्थं साधयेयु। तस्मादयं रसयोगसागरो निखिलभारतीयाऽऽयुर्वेदविद्वज्जनादरणीयो माननीयश्चाचिरादेवाच द्रनार्क दिगन्तविश्रमणमीयादिसभ्यर्थयन्तो मे नमोऽस्त्वनन्तानि हरिप्रपन्नाचार्याणां समुल्लसन्तुतराम्।

मुम्बापुरी, विक्रमवत्सरे }
१९८७ आश्विनशुक्ल २ बुधे }

सुब्रह्मण्यशास्त्री.
कृष्णातीरवास्तव्य, श्रीपुष्पगिरिसंस्थानविद्वान्।

षोडशाऽधिवेशनसम्बन्धिन्यां प्रदर्शन्यां जयपुरे मोहमयीवास्तव्यैः श्रीपण्डितहरिप्रपन्नाचार्यमहाशयैः पुस्तकविभागे प्रेषितो रसयोगसागरस्य प्रथमो भागः परीक्षणसमितेर्निर्णयमनुसृत्य सबहुमानं सप्रमोदं च प्रशस्यते इति प्रमाणयति उत्तमश्रेणि प्रमाणपत्रमिदम् ।

अखिलभारतवर्षीयवैद्यसम्मेलनम्
चैत्र कृ० १४ सं. १९८३

पं. मदनमोहनमालवीयः
षोडशायुर्वेदसम्मेलनसभापतिः

वैद्यमहाशयपण्डितहरिप्रपन्नशर्मभिः सम्पादितो रसयोगसागरनामा विशालग्रन्थो निरीक्षितः । अनेकान् दुष्प्राप्यान् हस्तलिखितान्मुद्रितांश्च ग्रन्थान् महाप्रयासेन समाहृत्य, रसानामेको विस्तीर्णसङ्ग्रहोऽस्मिन् रसयोगसागरे कृतो दृश्यते । अस्याऽध्ययनेन रसशास्त्राऽभ्यासकानां तच्छास्त्राध्ययनं सुखसाध्यं सुगमं च भविष्यति इति मे मतिः । असौ सर्वेषामुपरि विद्वद्वर्याणां महानुपकारः संजातः । यदस्मिन्ग्रन्थे पण्डितवरैः स्वानुभूतानां रसप्रयोगाणामपि सङ्ग्रहः कृतो विद्यते । किमतिविस्तरेण, सर्वैर्गुणज्ञैः मर्मज्ञैश्च एतदुत्कृष्टं पुस्तकं स्वकीयपुस्तकालये सङ्ग्राह्य पण्डितमहाशयानां श्रमसार्थक्यं कार्यमिति मेऽभिलाषः सर्वेभ्यः प्रार्थना च इति शम् ।

कार्तिककृष्णे अमावस्या
सं. १९८७ वि०

प्राणाचार्य वैद्यराजवासुदेवाचार्यजी पेनापुरे
मुम्बापुर्याम्

उच्छ्रुसिताऽऽयुर्वेदस्य श्रेष्ठाङ्गं मृतकल्पं रसतन्त्रमुद्दिधीर्षुराचार्यप्रवरसकलशास्त्रनिष्णातपण्डितहरिप्रपन्नशर्मणश्चिरकालादनवरतकृतश्रमस्य फलस्वरूपो रसयोगसागराभिधो ग्रन्थो मम दृष्टिपथमारूढस्सम्प्रति । साक्षादयं रसप्रयोगाणामाकरोऽस्ति जलधिरिव मुक्तानाम् । अस्मिन् द्योतमाना रसाः स्वकं गुणोत्कर्षं दर्शयन्तोऽहङ्कारेण परस्परं स्पर्धयन्तीव विलसन्ति, अहमपूर्वोऽहमिति । दशोत्तरशतसङ्ख्याकहस्तलिखितमुद्रितग्रन्थस्थरसप्रयोगाणामपूर्वमिमं सङ्ग्रहसमुद्रमवगाहयितुं कस्य प्रबुद्धचेतसश्चेतो न कामयेत । सम्प्रत्युपलभ्यमानरसवादविषयकतन्त्राणां निकरोऽस्य विद्यमानत्वे भाररूपएव लक्ष्यते । अनेनैकेनैव मकररूपेण निखिलरसग्रन्थमत्स्याः स्वकीयोदरे प्रतिष्ठापिताः । भाषाटीकया च बालवैद्यानामप्युपयोगिता प्रदर्शिता । बृहत्तमोपोद्घातोऽप्यस्य ग्रन्थस्य ग्रन्थकर्तुः प्रकाण्डपाण्डित्यं द्योतयति विषयविवरणपाटवं च । सन्दिग्धशारीरविवरणद्वारा स्वैर्वैद्यैरङ्गुलीकृतशारीरतन्त्रस्याऽमृतीकरणं कृतं निरस्तं चाज्ञानरूपं तमः । किं बहुना, अस्य ग्रन्थरत्नस्याऽऽदरो विबुधवैद्यसमाजेन कर्तव्य इत्याशासे ।

तिथिः पञ्चमी कार्तिककृष्णा
संवत् १९८७

पण्डित जयनारायण दीक्षितः
आगराप्रान्तान्तर्गत टेहू ग्रामाभिजनः

युगेऽस्मिन्वैज्ञानिकेऽन्यदेशेभ्यो भारतस्य हीनां दशां जानन्ति जनाः, परन्तु ग्रन्थरत्नस्याऽस्य प्रभाभरेण समुत्सारितं तदज्ञानतमः । अस्य ग्रन्थस्य सङ्ग्रहीतारः श्रीहरिप्रपन्नाः सन्ति, ते किल मार्मिका विद्वांस आयुर्वेदस्य । अस्य तैरतीवोत्तमो वैदुष्यपूर्णश्चोपोद्घातोऽलेखि, तस्मिन्येषु येषु विषयेषु विचारः कृतः सोऽपूर्व एव प्रतिभाति । आयुर्वेदेतिहाससङ्कलनं सङ्ग्रहीतृणामगाधपरिश्रमं व्यनक्ति । सर्वदेशगुरुत्वं भारतस्यैव साधितम् । शस्त्रचिकित्साऽपि वृद्धभारतस्य कृते न नूतनं यस्त्विति गर्भिणीविषयकचिकित्सोल्लेखेन प्रकटीकृतम् । इदमपि भिषग्वरेण साधितं यदेषां रोगाणामर्वाचीनत्वं पाश्चात्या अवगच्छन्ते तेषां रोगाणां निदानचिकित्साप्रभृतयो वैदिककालेऽपि महर्षीणां कराऽऽमलकवज्ज्ञाता आसन्, समकारि च शारीराऽवयवानामपि पूर्णो विचारः । भिषग्वराणां प्रमाणोपन्यासन्दृष्ट्वा चेतश्चकितं भवति । अधुना ग्रन्थविषये वक्तव्यमवशिष्टम्, शतसङ्ख्याऽधिकेभ्यो मुद्रितहस्तलिखितग्रन्थेभ्योऽस्मिन् सङ्ग्रहः कृतः । महाभारत इव यो रसोऽस्मिन्वर्णितस्तस्यैव सत्त्वं जगति विद्यते, योऽत्र नास्ति स खपुष्पमिवाऽवगन्तव्यः । विशेषसूचनोल्लेखेन प्रयोगकर्तॄणां सङ्ग्रहीतृभिः कुत्रचन रसानां स्वाऽनुभूतत्वसूचनया च मूलतः समुत्पादितोऽविश्वासः । किमधिकं वदामो वैद्यवर्याणामिमं श्लोकं स्मारयन्तो विरमामः ।

धीरा भूपा धनाढ्याः सुकृतिसहृदया भारतीयाः परे ये नानाविद्याप्रवीणा विविधगुणगणप्राप्तये यत्नवन्तः ॥
आयुर्वेदे स्वकीये परविषयभवे लब्धबोधाश्च वैद्या विज्ञाप्यन्ते भवन्तः सविनयमिह तद्धार्यतां मानसे स्वे ॥ १ ॥

मुम्बई ता० १ । ११ । १९३०

गोस्वामिकुलकौस्तुभश्री १०८–
श्रीगोकुलनाथ महाराजः

धन्यः स परमकृपालुः परमेश्वरो, यस्य प्रसादान्मयाऽद्य विद्यानयादिगुणैरलङ्कृतस्य समृद्धिमतश्शुद्धहृदयस्य बम्बईनिवासिनः पण्डितप्रवरहरिप्रपन्नशास्त्रिणो विविधशास्त्रीयरसौषधिविपुलसङ्ग्रहपरिपूर्णं रसयोगसागरनामकग्रन्थरत्नस्य खण्डद्वयं दृष्ट्वा नितरां ह्लादितोऽस्मि । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामुपादेयो लोकोपयोगी च भविष्यतीति जाने । उपशास्त्रिवर्योऽनः परमप्युत्तमं ग्रन्थं

निर्मातुं यतिष्यते इत्याशा मे । यद्यायुर्वेदविषये चिकित्साविधिविद्वांसो बहवः साम्प्रतं दृश्यन्ते परन्तु ग्रन्थप्रणयनद्वारा तद्विशिष्टगुणदर्शका विरलाः सन्ति, एवं स्थिते शास्त्रिवरेण तादृशो नितराममीष्टः कार्यभारः शिरसा गृहीत इति परं प्रमुदितोऽस्मि शीघ्रमेवाऽन्यामपि तदीयां यशस्विनीं कृतिं द्रक्ष्याभीत्याशासे ।

इन्दौर ता० ३ । ११ । १९३० } वैद्यरत्यालीरामशर्म्मा द्विवेदी

मोहमयीवासिश्रीमत्पण्डितवरवैद्यराजहरिप्रपन्नशर्म्ममहोदयनिर्मितोऽकारादिसवर्गान्तो **रसयोगसागरो** बलादाकर्षति गुणग्राहिणाममत्सराणां मानसानि । ईदृशैरेव ग्रन्थरत्नैः संस्कृतवाङ्मयं प्राप्तहीनिरभिवृद्धिमाप्स्यति । सोऽयं सर्वैरपि भिषग्भिः संग्राह्यः प्रचारणीयश्चेत्यस्माकमनुरोधो विद्वत्सु इत्यभिप्रैति वेदान्तशास्त्री पञ्चतीर्थो हरिदत्तशास्त्री

२८ । १० । १९३० } प्रधानाध्यापकः
महाविद्यालयज्वालापुरीयः

पुस्तकमस्माभिः सर्वतो निभालितमतीवोपकरिष्यति भिषजामिति प्रत्ययं द्रढयति । एतत्सम्पादयता भवता महूपकृतः कविराजसमाज इति शिवम् ।

शङ्कर शुद्धबोधतीर्थस्वामी २८ । १० । ३०

यह ग्रन्थ वस्तुतः रसयोगरत्नोंका सागर ही है । इसमें ग्रन्थकर्ताने बहुमूल्य अनन्त रत्नोंका समावेश कियाहै जो कि वैद्यविद्याके अनुपम अलङ्कार स्वरूपहैं । इसमें आशुतरफलप्रदायी अतएव पूर्णानुभूत अनेक रसयोग विद्यमानहैं । इनयोगोंका भूरिभूरि प्रयत्न करनेपरभी अन्यत्र प्राप्तहोना कठिन ही नहीं असम्भवहै । अत एव यह ग्रन्थ छोटेसेछोटे और बडेसेबडे वैद्योंके तथा जनसाधारणकेलिये परमोपयोगीहै । इस रत्नाकरके रचयिता दर्शनशास्त्रमें निष्णात और आयुर्वेदके सूर्य रसयोगविज्ञानपारङ्गत भिषक्प्रवर **वैद्यपण्डित हरिप्रपन्नजीहैं** । भारतवर्षमें आप आयुर्वेदके अद्वितीय विद्वान् हैं । आपकी रासायनिक क्रिया और भिन्नभिन्नवनस्पतियोंकी अनुभूति पराकाष्ठाको पहुंचीहै । आपने अपने इस आयुर्वैदिक विज्ञानसे सर्वसाधारणको लाभपहुंचानेकी शुभकामनासे बहुतवर्षोंके अनवरतपरिश्रमसे इसका सम्पादनकरके असाधारण लोकोपकार कियाहै । ऐसे ग्रन्थकी संसारमें इससमय बडी आवश्यकताथी । इसपुस्तककी समालोचनात्मकभूमिकामें ग्रन्थकारने अपना अप्रतिमपाण्डित्य झलकायाहै । यदि इस पुस्तकके थोडेभी प्रयोगोंका अनुष्ठान कियागया तो सहस्रशो आशातीतलाभहोगा । अन्तमें मैं आशाकरताहूं की इसग्रन्थसे जनता पूर्णलाभ उठावे और ग्रन्थकर्त्ता पूर्ण यशस्वी बनें ।

वेदान्ताश्रम. सिद्धपुर. ८।१०।३० } **स्वामि रघुवराचार्य वेदान्ती**
तर्कतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, न्यायव्याकरणाचार्य, मीमांसोपाध्याय
वेदान्तशिरोमणि, दर्शननिधि.

रसयोगसागरका निर्माण और प्रकाशनकरके वैद्य पं. हरिप्रपन्नजीने वैद्यसमाजके ऊपर अतुल उपकार कियाहै । रसशास्त्रमें अब ऐसा योग मुश्किलसे मिलेगा जो इसग्रन्थमें न आयाहो । यह ग्रन्थ पण्डितजीके १० वर्षोंके अहर्निशके अथाह परिश्रमका फलहै । प्रत्येक वैद्यको यह ग्रन्थ अवश्य खरीदकर इससे लाभ उठाना चाहिये । हम परमेश्वरसे प्रार्थना करतेहैं कि परमेश्वर पण्डितजीको चिरायुकरें और पण्डितजी ऐसे अनुपमग्रन्थ तैयार करके लुप्तप्राय आयुर्वेदका उद्धारकरें ।

कालबादेवीरोड. मुम्बई ता. ४।१०।३० } आयुर्वेदमार्तण्ड
वैद्य यादवजीत्रिकमजी आचार्य

वैद्यसम्मेलनपत्रिका.

इस अपूर्व सर्वोपयोगी महद्ग्रन्थका निर्माण पण्डित हरिप्रपन्नशर्मा शास्त्री भिषगाचार्यजी बम्बईनिवासीने कियाहै ।

संस्कृतमें तथा अंग्रेजीमें उपोद्घात लिखाहै, जोकी सभी वैद्य महानुभावों और आयुर्वेदके विद्यार्थियोंके लिए उपादेयहै । इसग्रन्थके अध्ययनसे रसतन्त्र (रसचिकित्सा) का ज्ञान पूर्ण होसकताहै । जिसप्रकार यह ग्रन्थ साधारणतः देखनेमें सर्वोपकारी प्रतीतहोताहै उससे कहीं अधिक इसकी उपादेयता समालोचनात्मकगम्भीरदृष्टिसे देखनेसे ज्ञातहोती है । वास्तवमें आयुर्वेदशास्त्रके विद्वान् ही पण्डितजीके इस अद्वितीय परिश्रमका अनुभव करसकतेहैं ।

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम् । नहि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम् ॥

इससे अच्छा रसविधाका ग्रन्थ आजतक नहीं प्रकाशित हुआ। इसके महत्त्वको देखते हुए इसकी कीमत जो रक्खीहै सो न्यूनहै ।

जो वैद्य इसग्रन्थको पढकर रसचिकित्सा करेंगे उन्हें ज्ञानन्यूनताजन्य प्रत्यवाय नहीं होगा और लोकमें यशके भागी होंगे आयुर्वेदका भविष्य उज्वल होगा। अतः मैं समस्त आयुर्वेदप्रेमियोंसे अनुरोध करताहूं की इसग्रन्थरत्नको विना विलम्बके शीघ्र मंगवाकर लौकिक व पारलौकिक लाभ उठावें ।

यदि सन्ति गुणा ग्रन्थे विकसन्त्येव ते स्वयम् । नहि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते ॥

इस न्यायके अनुसार यह ग्रन्थ गुणहोनेके कारण स्वयं प्रसिद्धि पावेगा ।

कानपुर, सितम्बर १९२८ — **सत्यदेवपाण्डेय** आयुर्वेदाचार्य वेदान्तशास्त्री संयुक्तमन्त्री; नि० भा० आ० वि० पी०

विज्ञान

इस बृहद्ग्रन्थमें रसोंके बनानेकी स्पष्टरूपसे विधि दीगईहै ।

अनेक आर्ष, अनार्ष, प्राच्य और पाश्चात्यग्रन्थोंकी सहायतासे विद्वान् लेखकने इसमें दो विस्तृत भूमिकायें भी दीहैं । ग्रन्थके आरम्भमें अंग्रेजीकी मनोहर और विद्वत्तापूर्ण भूमिकाहै । संस्कृतकी भूमिकामें कई नवीन विषयोंका समावेश कियागयाहै । अंग्रेजीकी भूमिकासे लेखककी अगाध विद्वत्ताका परिचय होसक्ताहै । प्राच्य और पाश्चात्य इतिहासज्ञोंके वचनोंको उद्धृतकरके वैद्यकशास्त्रका सुन्दर इतिहास और अतीतभारतके गौरवका मनोहरचित्र इसमें अङ्कित कियागयाहै । वेदोंके अवतरण प्रस्तुत करके लेखकने यह प्रदर्शित करनेका प्रयत्नकियाहैकी रसायन और वैद्यक विद्याका आदि मूल वेदोंमें विद्यमानहै । हार्नले आदि पाश्चात्यविद्वानोंकी चरक तथा सुश्रुतके निर्माणकालविषयकभ्रान्तिपरभी **श्रीहरिप्रपन्न**जीने विचारपूर्वक प्रकाश डालाहै ।

वैदिक, ब्राह्मण, और सुश्रुतकालमें शरीरावयवोंकी समानान्तरनामोंकी सूची वैदिक साहित्यके अध्ययन करनेवालोंको अवश्य बहुमूल्य सिद्ध होगी । एकसूचीमें शरीरके अवयवोंके चरक तथा सुश्रुतवर्णित नाम तो दियेही गयेहैं उनके साथसाथ अंग्रेजी पदभी रखदिये गयेहैं । इसप्रयासके लिए समस्तपाठकोंको हृदयसे कृतज्ञ होना चाहिए । रसोंके बनानेकी विधि-सङ्ग्रहमें लेखकने बडा परिश्रम कियाहै । भिन्नभिन्न प्राच्यग्रन्थोंके श्लोकोंको उद्धृतकरके उनका भाषानुवाद भी देदिया गयाहै । सारांश यह है की ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगीहै और अपने ढंगका निरालाहै । हिन्दी साहित्य इसप्रकारकी पुस्तकों पर गर्वकरसक्ताहै । हमें पूर्ण आशाहै की उदारजनता इसका समुचित समादर करेगी ।

इलाहाबाद, अगस्त १९२७

आरोग्यदर्पण

रसप्रयोगोंका एक बृहत्सुन्दर संग्रहकियाहै । उपोद्घातके आरम्भमें पण्डितजीने आयुर्वेदके इतिहासपर अच्छाप्रकाश डालाहै, उपोद्घातका प्रधानभाग शारीरविवेचनसे परिपूर्णहै, यह अंश बहुतही खोजके साथ लिखागयाहै । इसग्रन्थमें अनेक उद्धरणों और युक्तियोंद्वारा सिद्ध कियाहै कि वेदोंमें शस्त्रचिकित्सा, रोगविज्ञान, और शरीरका बहुतकुछ वर्णन मिलताहै । वेदोंमें व्यवहृत बहुतसे शब्द दिखलाए गएहैं कि जो शारीरावयववाची हैं परन्तु भाष्यकारोंने उन्हे अन्यअर्थोंमें प्रयुक्तकियेहैं । वेदव्यवहृतशब्दोंकी सुश्रुतमें व्यवहृत तदर्थबोधक शब्दोंसे तुलनाभी की गईहै, अर्थकरनेमें पण्डितजीने पर्याप्तविवेचनाबुद्धिसे कामलियाहै ।

क्लोमादि सन्दिग्धशब्दोंपरभी खूब टीका टिप्पणी कीगईहै । सारांशतः यह उपोद्घात स्वतन्त्ररूपेण भी एक अत्यन्त उपयोगी और विद्वान वैद्योंके देखनेयोग्य ग्रन्थहै ।

धूटीदर्पण

बम्बईके प्रसिद्धवैद्य और प्रकाण्डपण्डित श्रीमान् हरिप्रपन्नशर्माजीने एकवडेमार्केका, और खोजपूर्ण तथा नितान्त विचारणीय उपोद्घात लिखकर, स्वर्णमें सुगन्धोत्पादनकी सन्निवेशित करदी गईहै । हमारी सम्मतीमें तो, इस अपूर्व रसौषध-समूहके सुविस्तृतसङ्ग्रहके विनाभी, यदि केवल, यह बहुगवेषणापवेषित-उपोद्घातमात्रही सद्वैद्योंके सामने उपस्थापित किया-

गया होता, तो, वह अकेलाही समस्त ग्रन्थके मूल्यसे, अधिक न्योछावरका अधिकारी होजाता । इसप्रकारकी गम्भीरगवेषणाओं और पाण्डित्यपूर्ण परिश्रमोंकी सराहना और समादरकाद्वार यदि गुणज्ञोंकी ओरसे बन्द करदियाजाय तो, लोकसङ्ग्रहदृष्टिसे कितनीभारी हानि उपस्थितहोसक्तीहै इसका उत्तरतो बहुश्रुत और बहुवृद्धोपासकविद्वान् लोग सहजमेंही देसकेहैं । इसलिए प्रत्येक विद्वान् वैद्य महानुभावसे हमारी विनीतप्रार्थना है की वे इसग्रन्थको खरीदकर साहसी और बहुशास्त्रनिष्णात वैद्य. पं. हरिप्रपन्नजीकी अवश्य उत्साहवृद्धि करें ।

लाहोर, कार्तिक सं० १९८५

इस एकही पुस्तकके साथ रखनेसे चिकित्सकका परमोपकार हो सकताहै । पाण्डित्यकी दृष्टिसे इसका उपोद्घात अत्यन्त महत्त्वका है ऐसी अनेक गूढविषयकी जटिलबातोंपर पण्डितजीने प्रकाश डालाहै कि जिसके मननसे आयुर्वेदके लुप्तप्राय ग्रन्थियोंके उद्घाटनमें बड़ाभारी सहारा मिल सकताहै । विषय और पाण्डित्यकी दृष्टिसे भी ग्रन्थ परमोपादेय है । आशाही नहीं विश्वास है कि वैद्यबन्धु इस उपादेय ग्रन्थको अपनेपास रखकर अपनी और अपने व्यवसायकी उन्नति करेंगे ।

हिन्दुविश्वविद्यालय बनारस ४।१।३० — कविराज प्रतापसिंह रसायनाचार्य

सङ्ग्रहका प्रकार नयाहै उपयोगी और उपादेयहै ।·····ग्रन्थकर्ता विद्वान हैं शास्त्रमर्मज्ञ हैं एकभिक्षुककी हैसियतसे इतना कहसकता हूं कि—

सागरः सागरस्येव प्रथतां पृथिवीतले । यशो गायन्तु विद्वांसो हरिप्रपन्नशर्मणः ॥

वढ़वान ता. १४।५।२९ — स्वामी सोमतीर्थ

रसयोगसागर अत्यन्त हर्ष व उत्साहका कारण हुआ. सैकड़ों संस्कृत व हिन्दीके ग्रन्थ मंगवाये गये परन्तु **रसयोगसागर**विशेष अपनी भांतिका नया ही अद्भुत ग्रन्थ है, कर्ताकी विद्वत्ता व चतुराई प्रतिपृष्ठसे प्रकट होतीहै.

होशियारपुर (पञ्जाब) १५।१२।२८ — हीरासिंह बी. ए.

माधुरी

"रसयोगसागर" एक सर्वोत्कृष्ट तथा सर्वसुन्दर संग्रहग्रन्थ है । रसयोगोंके सङ्ग्रहके साथ साथ कितनेही स्थलोंपर आयुर्विज्ञानाचार्य, सुयोग्य सङ्ग्रहकर्ता महोदयने रसनिर्माणविधिमें अपनी क्रियाकुशलता, अनुभव, दूरदर्शिता तथा सूक्ष्मबुद्धिसेभी पूरा-पूरा कामलियाहै । एकएक रसके जितने भी भेद तथा उपभेद प्राचीन, अर्वाचीन, प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पाएजातेहैं, वे प्रायः सभी इसग्रन्थमें विद्यमानहैं । संस्कृत श्लोकोंका हिन्दीभाषान्तरभी अन्य प्रकाशित वैद्यकग्रन्थोंकी अपेक्षा शुद्ध तथा सुन्दर हैं । अंग्रेजीमें और संस्कृतभाषामें भूमिका लिखकर अपने प्रकाण्डपाण्डित्य, व्यापक ज्ञान तथा आदर्शगवेषणपरायणताका परिचय दियाहै । हमें मुक्तकंठसे स्वीकार करना पड़ताहै कि इसग्रन्थके दोनोंही उपोद्घात बहुतही सुन्दर, विचारपूर्ण, मननीय, पठनीय तथा आयुर्वेदप्रेमियोंके लिए बड़ेकामकी वस्तुहैं ।

इसग्रन्थमें कितनेही दुरूहस्थलोंपर मूलश्लोकोंका संस्कृतभाषामें भाष्य, अर्थ तथा टिप्पणी लिखकर लेखकमहोदयने सोनेमें सुहागेका काम कियाहै । फलतः कई दृष्टियोंसे यह ग्रन्थ बहुतही उपयोगी तथा अपने ढंगका एकहै । हमें यह लिखते हुए बड़ीही प्रसन्नता होती है की "**रसयोगसागर**" का नाम सार्थकहै । यह ग्रन्थ आयुर्वेद प्रेमियोंकेलिये सर्वथा उपादेयहै । इसग्रन्थने एकबड़ेभारी अभावकी पूर्ति कीहै । अन्तमें हम आयुर्विज्ञानाचार्य, वैद्यवर्य पण्डित हरिप्रपन्नशर्माजी को इसमहत्त्वपूर्ण ग्रन्थरत्नके लेखन व सम्पादनमें किएगए असीम श्रमके लिये अभिनन्दन तथा इसग्रन्थके सम्पादनमें प्राप्तकीहुई सफलताके लिये हार्दिक बधाइयाँ देतेहैं ।

लखनऊ, मार्गशीर्ष सं० १९८४ — गयाप्रसादशास्त्री "श्रीहरि"

सरस्वती ऑक्टोबर १९२८

यह आयुर्वेदशास्त्रसम्बन्धी एक महत्वपूर्ण सङ्ग्रहग्रन्थ है । इसके सङ्ग्रहकार पण्डित हरिप्रपन्नजीने इसकी रचना बडेपरिश्रमके साथ कीहै । इस सङ्ग्रहसे आपकी अध्ययनशीलता ही नहीं प्रकटहोतीहै, किन्तु साहित्यिक सुरुचिभी । आपने इसका सङ्कलन और सङ्गृहीतमूलश्लोकोंका सम्पादन नये ढङ्गसे कियाहै । इससङ्ग्रहकी रचनामें सङ्ग्रहकारने इसका हिन्दीमें भाषान्तरभी कियाहै । इससे इसकी उपयोगिता औरभी बढगईहै । असंस्कृतज्ञभी इसका अच्छीतरह उपयोग करसकेंगे ।

सङ्ग्रहकारने इसकी भूमिकामें अपने पाण्डित्य और अध्ययनशीलता का खासा परिचय दियाहै । इसमें (भूमिकामें) आयुर्वेदकी प्राचीनता वैदिककालसे सिद्धि की गईहै । एवं उसका इतिहास दियागयाहै, साथही शारीरविज्ञानकी सविस्तर विवेचना की गईहै । यह महत्वपूर्णग्रन्थ अनेक ज्ञातव्य बातोंसे पूर्णहै ।

यह सङ्ग्रह अपने ढङ्गका निरालाही नहीं, किन्तु विश्वसनीय एवं उपयोगीभी है । आयुर्वेदके ज्ञाताओं तथा उससे प्रेमरखनेवाले लोगोंको इस उत्कृष्टग्रन्थका सङ्ग्रह अवश्य करना चाहिए ।

विश्वमित्र कलकत्ता, २०-१२-१९२७

उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास और रहस्य और उसके चरकसुश्रुतादि ग्रन्थोंका माहात्म्य अत्यन्त योग्यताके साथ वर्णितहै । एकएकयोगके जितने भी भेद अबतकके प्रकाशित और अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पायेजातेहैं उनसबका इसएकही ग्रन्थरत्नमें सङ्ग्रहहै । **रसयोगसागर** एक अद्वितीय और अनुपम ग्रन्थ बनाहै । इस एक ग्रन्थरत्नकोही अपनेपास रखनेसे वैद्योंकेलिए अन्यरसग्रन्थोंके सङ्ग्रहकी प्रायः कोई आवश्यकता न रहजायगी । संस्कृतश्लोकोंके नीचे सुबोध हिन्दीमें उनके अर्थभी दिये गयेहैं । इतनाही नहीं, जहां कोई गूढार्थहै वहापर सुयोग्य लेखकने स्वानुभव एवं टिप्पणियादेकर सोनेमें सुगन्धि पैदा करदीहै । यह ग्रन्थरत्न रसचिकित्सकोंके बहुतही कामका है । इसके सहारेसे केवल हिन्दीज्ञान-रखनेवाले चिकित्सकभी पूरापूरा लाभ उठासकतेहैं । वैद्यमात्रको इसकी एकप्रति खरीदकर ग्रन्थकर्ताको उत्साहदान करना चाहिए । हम ऐसे अमूल्य सङ्ग्रहकेलिये ग्रन्थकर्ताको हार्दिक धन्यवाद एवं बधाई देतेहैं ।

प्रताप.

रसप्रयोगोंके इसप्रकारके एक सङ्ग्रहकी परमावश्यकता थी । आयुर्वेदमें रसग्रन्थोंका कोईभी ऐसा सङ्ग्रह नहींहै जो अकारादि क्रमसे हो और जिससे यह जानाजासके कि कौनकौनसा पाठ किसकिस ग्रन्थमेंहै और एकहीनामसे भिन्नभिन्न कितने योगप्रचलित हैं ।

वैद्य **हरिप्रपन्नजीने** श्रम और व्ययसाध्य इसकार्यको करके वैद्यसमाजका बडा उपकार कियाहै, भिन्न २ रसोंके भिन्न २ ग्रन्थों और अधिकारोंके अनुसार कई २ पाठोंका सङ्ग्रह इसमेंहै जिन्हें एकत्रित करना कमश्रमसाध्य नहींहै ।

अंग्रेजी तथा संस्कृत अवतरणिका सङ्ग्रहकर्ताने खोज और विद्वत्तापूर्वक लिखीहै । इसके उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास तथा संपूर्ण शारीरज्ञानका वर्णन कियागयाहै । साथही पाश्चात्य शारीरका तुलनात्मक वर्णन है । यदि इसका उपोद्घातभागही पुस्तकाकार प्रकाशित होता तो भी यह भारतीय शिक्षितसमाजकेलिए एक आवश्यकवस्तु होती । पुस्तक सभी दृष्टिओंसे उपयोगी है ।

प्रत्येक वैद्यको अपनेपास इस अत्यन्त उपयोगी, पठनीय, मननीय एवं सङ्ग्रहणीय ग्रंथकी एकप्रति रखनीचाहिए ।

कानपुर, ता. १।४।२८ — भिषग्रत्न **शिवनारायणमिश्र**, वैद्यशास्त्री

भगीरथ बंबई ता. १५।११।१९२७

पुस्तकको देखकर हमारे हृदयमें बडाभारी हर्ष होताहै.

इस ग्रन्थके रसप्रयोगोंका सङ्ग्रह तो प्रायः सभीवैद्योंके कामका है. परन्तु उपोद्घातका विषय विद्वान् वैद्योंके लिये अलभ्यरत्न है ।

संस्कृत उपोद्घातमें आर्यशारीरतत्त्व नामक सन्दर्भ बहुतही महत्वका है । भारी मन्थन करके वेदोंमेंसे जहां जो कुछ मिला उतना शारीरतत्त्व खींच लियाहै । वेदोंमें खासकर अथर्ववेद और शतपथब्राह्मणमें शारीरतत्त्वका उल्लेख विशेष है

इस शारीरतत्त्वको एकत्रित करके सुश्रुतके शारीर और आधुनिक शारीरसे तुलना करनेमें पण्डितजीने खूब परिश्रम कियाहै । सन्दिग्धस्थानोमें सविस्तर प्रमाणदेकर पण्डितजीने अच्छा प्रकाश डालाहै । टिप्पणियोंको देखकरही पाठक जान सकतेहैं कि किन २ सुदृढ प्रमाण और युक्तियोंसे इनके यथार्थ अर्थोंका प्रतिपादन कियाहै ।

रसग्रन्थोंमें एकही नामके अनेक प्रयोग हैं और एकही प्रयोगके अनेक नाम रक्खे हुएहैं, ऐसी प्रयोगोंकी अव्यवस्थामेंसे प्रयोगोंको छांटना कितना कठिन काम है, उसको अनुभवी विद्वानही जानसकतेहैं । इस ग्रन्थमें बहुतसे प्रयोग इतने कूटसङ्केतोंमें लिखेहुए आयेहैं कि जिनको देखकर मगज चक्कर खाताहै उनकाभी सरल अर्थ पण्डितजीने बडी योग्यतासे कियाहै । हम पाठकगणसे पण्डितजीके कियेहुए वास्तविक विस्तृतभाष्यको देखनेका अनुरोध करतेहैं । सम्पूर्ण वैद्य और आयुर्वेदप्रेमी जनतासे हमारी प्रार्थना है कि ऐसे ग्रन्थको एकबार अवश्य देखें और सङ्ग्रह करें,

---

धर्मभूषण अयोध्या, जनवरी १९२८

इसमें रसोंका अपूर्व वर्णन है । प्रायः सभी वैद्यकग्रन्थोंके रसोंका इसमें समावेश कियागया है । इसकी विशाल भूमिका तो भारतीय वैद्यविद्याकी प्रमाणभूतही है । इसमे वैद्यकशास्त्रकी सर्वोत्कृष्टमहत्ता और सर्वतोभावेन उपयोगिता दिखाते हुये कतिपय देशान्तरीय वैद्यों (डाक्टरों) के मतोंकी सप्रमाण समालोचना कीगईहै । ग्रन्थकर्ताके अगाधपाण्डित्यका इस भूमिकासे परिचयहोताहै । ऐसी भूमिकाएँ असाधारणगुणविशिष्ट व्यक्तिही लिख सकेहैं । भूमिका संस्कृतभाषामें है । इसका प्रायः सभी विद्वानोंको अध्ययन करना चाहिए । यह सर्वथा उपादेय है ।

सुधानिधि प्रयाग कार्तिक १९८४

इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत चढीवढी है । एक इस ग्रन्थके पासरहनेसेही फिर अनेक रसग्रन्थोंकी उतनी अधिक आवश्यकता नहीं रहजाती । यही नहीं एक औषधिके पाठके लिये अनेक पुस्तकोंके पन्ने उलटनेकी आवश्यकता नहीं ।

आयुर्वेदविद्याके विलासी और खोजी विद्वानोंके लियेभी इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत ऊंचे दर्जेकी है । भूमिकामें आयुर्वेदके इतिहास और शारीर तथा रोगविज्ञानसबन्धी अनेक विवादों और उलझनोंकी गुत्थियां सुलझानेका प्रयत्न कियागया है । पण्डित हरिप्रपन्नजी इस पुस्तकको छपाकर वैद्यसमाजके धन्यवादभाजन हुये हैं ।

श्रीमान् विद्वद्वर वैद्यराज पण्डित श्रीहरिप्रपन्नशर्माजीने इस अनुपम ग्रन्थरत्नकी रचना करके वैद्यवर्गका बडा उपकार कियाहै—अनेक आकर ग्रन्थोंमें-(जिनमें बहुतसे अभीतक अप्रकाशित और अप्राप्य हैं) जो 'रसयोग' इधर उधर बिखरे पडेथे उन्हें एक जगह अकारादि क्रमसे इकट्ठे करके इसग्रन्थकी बडी गागर (मटका)में मानो सागरको भर दियाहै ।

ग्रन्थके आकार प्रकार और रंगढंगको देखकर संग्रह कर्ताके पाण्डित्य और परिश्रमकी प्रशंसा करनी पडतीहै, ग्रन्थके आरंभमें बहुतविस्तृत १७८ पेजका संस्कृतमें उपोद्घातहै, जो बडी खोज और विद्वत्तासे लिखागयाहै, जिसमें ऐतिहासिक और दार्शनिक रीतिसे वैद्यकविषयका विशद विवेचन किया गयाहै, यह उपोद्घात पढने लायकहै,बडेकामकी चीज है संस्कृत उपोद्घातका सार १०४ पृष्ठोंमें अंग्रेजीमें भी दियाहै, जिसमें अंग्रेजी जाननेवाले वैद्य और जिज्ञासुडॉक्टरलोगभी लाभान्वित होसकेंगे । ग्रन्थके इस पहिले भागमें 'अ'से 'न' तक अनुक्रमके कोई दोहजार योगहैं प्रत्येक योगके मूलश्लोकोंका सरल हिन्दीमें अनुवाद है, साथमें संग्रहकर्ता जहांतहां अपने अनुभवभी लिखतेगयेहैं कि कौन योग किस रोगपर अनुभूत है । पुस्तक सबप्रकारसे उपादेय और सबतरहसे सुन्दर है ।

काव्यकुटीर नायक नगला
च्यादपुर (बिजनौर) कार्तिकसुद ६ । ८७ वि. } पद्मसिंह शर्मा.

केसरी पुणें, ता. २१।२।२८

मुंबईचे प्रसिद्ध वैद्य पण्डित हरिप्रपन्नजी यानीं ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद, शतपथब्राह्मण, उपनिषदें व आयुर्वेदीय ग्रन्थ यांचा चिकित्सक व संशोधक बुद्धीनें अभ्यास करून आयुर्वेदाची उत्पत्ति व अभ्युदय यांचें ऐतिहासिक दृष्ट्या विवरण करणारा इंग्रजी व संस्कृत उपोद्घात या ग्रन्थाचे प्रारंभी जोडला आहे तो विशेष मननीय व विचार करण्यासारखा आहे यांत संशय नाहीं अमूल्य रससङ्ग्रह भारतीय वैद्यांपुढें ठेवला आहे. केवळ छापील ग्रन्थाचा सङ्ग्रह करणें मुद्धां किती कष्टप्रद याची कल्पना सामान्य लोकांसही आहे. पण हस्तलिखित ग्रंथ संपादन करणें व त्यांचा संग्रह करणें हें किती श्रमाचें व किती

Bombay, 18th, July 1928.

It was with great pleasure that I went through your valuable exhaustive book Rasayogasāgara. Your collecting and systematic grouping of the various formulae of Āyurvedic prescriptions will be of great help not only to professional Vaidyas, but also to laymen. I found your introduction especially instructive and I am sure it will be of great help to all those, who wish to study and understand our ancient medical system.

D. D. SATHAYE.
Ophthalmic Surgeon.

Calcutta, 8 9 1930.

The introduction in which you have discussed the progress of medicine and surgery in ancient India will prove highly interesting ......The commentary in Hindi, "Bhasā", will prove highly useful to those who are not well acquainted with Sanskrit.

P. C ROY.
University College of science and Technology.

Bombay, 30 10-1929

Rasayogasāgara (is) the Āyurvedic book of Chemical Pharmacy..... ...This book contains in detail the different Āyurvedic chemical preparations with mercury as their basis This work is full of such preparations collected from different Āyurvedic works . .with true authentic names of the drugs... ....Introduction contains a synopsis in English of the origin of the Āyurveda and its spread in different countries. Going deep into the matter of the origin of Āyurveda, you have established its superiority ... for which you deserve best thanks of the medical public In short you have been able to prove that the origin of Āyurveda dates so far back as that of the Vedas, and that if there is any unrivalled science in this world to heal diseases it is only Āyurveda the oldest and the best ... .different healing sciences came into existence as off shoots of Āyurveda ....you have .... .. proved the thoroughness of the Āyurvedic science by giving equivalent Āyurvedic terms of different arteries, veins, organs, tissues etc .... known to the Āyurvedic practitioners from olden times ...... its introduction shows your deep knowledge of the science The book is really very useful to Vaidyas, Āyurvedic students, Doctors and Hakims.

POPAT PRABHURAM L M & S, PRANACHARYA
Principal, Prabhuram Ayurvedic College.

Nepal, 24-5 1928.

.. .. .. Rasayogasagara Vol I the valuable and welcoming gift ....This book is one of the best and well suggested and defined books, that I have ever met with and Vaidyas might have met with. ....

A. M. VAJRACHARYA.
Librarian, Trichandra Collage, Nepal

Modern Review, March 1928

This is a laudable attempt at the compilation of a Sanskrit-Hindi dictionary of Āyurvedic Rasa medicine. The various medicines are arranged in alphabetic order and original Sanskrit texts, with reference, tika where deemed necessary, and translation in modern Hindi given in each case ,... ...from what we can see it is likely to be a valuable addition to the literature on this subject.........A table of Sanskrit anatomical terms with their English equivalents is given.

K. N. C.

Breslau, 4 1 1930.

Your work will do much in propagating the understanding of Āyurvedic medicine, especially through the table comparing Sanskrit anatomical words with their English equivalents I congratulate you on what you have done already And I am looking forward to further issues of your appreciable publication.

Prof. D CHUNIT.
Director of Staats und Universitats Bibliothek.

Gottingen, 2-5 1930

I have studied the statement of your Introduction with the most vivid interest, being fully convinced, that also here in Germany the high value of the Indian medical systems and the necessity to study them is more and more recognised For the Sanskrit scholar in my opinion the occupation with the Āyurveda is indispensable in consideration of the better understanding of the Veda, especially the Atharvaveda I wish you the best progress of your meritorious task and should be grateful for informing me about the publication of further parts of your work in order to buy them for the University Library of Gottingen

Prof FIK
Director of Gottingen Universitats Bibliothek.

---

27 French Road Chaupaty Sea face
Bombay 23 10 1930.

I have great pleasure in going over the two Books "Rasayogasagara" and "Klomyathatathya" written by Vaidyaraj Hariprapannaji His control over Sanskrit is very good and the former book is like a treasury of Indian Pharma-copœa In these days of Swadeshism, this should supply a foundation for the Industridal Developement of Indian drugs Panditji also seems to be a thinker of pure reason as one could see from his "Klomyathatathya". His theory is very interesting but his arguments are still more interesting and sound I should congratulate Panditji on production of such useful & instructive Volumes

J. DURLABH DHRUV, M. S. F. R. C S. D. L. O.
Surgeon to Sir J. J. Hospital.

Bombay 15 10-1930.

I had occasion to read the reply of Pandit Hariprapanji to Vaidyaraj Kawade Shastri re the actual meaning of the word क्लोम I have come to the conclusion that Panditjee is correcting in weating the क्लोम as Gall blader.

D. D. SATHAYE.
Ophthalmic Surgeon



क्लोमयाथातथ्ये अभिप्रायाः।

पण्डितहरिप्रपन्नजीप्रापितः "क्लोमयाथातथ्यं" नाम प्रबन्धो मया समग्रमवलोकितः। पण्डितमहाशयैः शतपथ
णवाजसनेयसंहिताऽथर्वसंहितादीनामतीवपरिश्रमपूर्वकमभ्यासं कृत्वा तत्रस्थानि यानि यानि श्रुतिवचनानि अत्र उद्धृत
तैः सर्वैरायुर्वेदीयशारीरसंशयास्पदस्थानानां सर्वसंशयच्छेदि विवेचनं सञ्जातमिति मन्ये। आयुर्वेदशास्त्रं तदभ्यास
प्रबन्धलेखकैरुपकृता इति मे मतिः सर्वभिषग्वरैरयं निबन्धः सूक्ष्मतयाऽभ्यस्य शारीरज्ञानवृद्धिरवश्यं कार्या, येन निब
काराणां परिश्रमः सफलो भवेत्। पण्डितमहाशयानां कार्यमभिनन्दनीयम्।

मुम्बापुरी आश्विन कृष्ण
चतुर्दशी सं. १९८७

पेनापुरे उपाह्व वासुदेवशास्त्री.

इह खलु क्लोमयाथातथ्यमित्याख्यग्रन्थसङ्ग्रहे यथायुर्वेदतन्त्रार्णवमुन्मथ्यालभ्यरत्नं प्रविविच्योद्घाटितमेतद्विनिर्ण
श्रीहरिप्रपन्नशास्त्रिमहोदयेन भिषक्चक्रचूडामणिना तद्विदितमेवास्ति वैद्यवर्यैरतोऽस्माभिरपि लोकोत्तरोपकारकश्रमकृतेऽस्
धन्यवादाः समर्प्यन्ते।

हिन्दुविश्वविद्यालय. काशी भाद्रपदशुक्ल
अष्टमी सं १९८७

धर्मदासकविराज
अध्यक्ष आयुर्वेद विद्यालय.

इह खलु 'क्लोमयाथातथ्य'पदाभिधग्रन्थसङ्ग्रहे प्राचेतसाऽभ्यन्तराऽवयवप्रणिगदने यथा प्रवचनशक्तिस्तन्त्राऽन्वेषण-
चातुर्यचमत्कृतिः प्रतिभापरिणतिर्विद्वज्जनमनोऽनुरञ्जननीतिर्लेखनरीतिरापामरावगमनप्रीतिर्निदर्शिता। नैतत्सर्वं केनाऽपि
तिरोहितं वरीवर्ति इति सुविदितमेवास्त्यवलोकितमन्यमनीषिभिरतोऽस्मै सूरिसमर्चितचरणसरोरुहरजसे चिकित्सकाय न धन्य-
वादप्रदानमन्तरा मनोऽवरुध्यत इति दिक्।

अगस्त्यकुण्ड. काशी. भाद्रपद शुक्ल
अष्टमी सं. १९८७

भिषगाचार्य श्रीसत्यनारायणशास्त्री

निर्दिष्टाभिनवनिबन्धाऽभिधानालोचनाव्यवहितोत्तरक्षण एवोद्भूतकुतूहलेन मयाऽयमामूलोपान्तमालोचित एव सकौतु-
कम्। प्रणेत्राऽत्र नैकशः श्रुतिस्मृत्यगदङ्कारप्राच्यनिबन्धालोडनेन विपश्चिन्मनोविनोदावहं प्रमाणजातप्रचुरं प्रास्थापि यत्क्लोम्नो
याथात्म्यं तेन सुगृहीतनामधेयाना वैद्यपण्डित हरिप्रपन्नजी महाशयानां निरुपमवैदुष्येण लेखनपाटवेन च प्रमोदमुदिरस्वान्तः
सन् प्रयुज्य तेभ्यो धन्यवादान् अपूर्वोऽयं निबन्धः सर्वैर्विद्वद्भिर्विशेषतश्च भिषग्वरैरवश्यं सङ्ग्राह्यः सादरं परिचेयश्चेत्यभिप्रैति।

मुम्बापुर आश्विनकृष्ण
एकादशी सं. १९८७

पणशीकरोपाधिधारी वासुदेवशास्त्री.

अयि महाशयाः "श्रीमतां क्लोमयाथातथ्यम्" साद्यन्तं याथातथ्येनाऽवलोक्य प्रफुल्लितं चित्तं मदीयम्। करा-
ग्ललालितेन विप्लवेनाऽऽस्युतं क्लोमतत्त्वं पुनरपि लौकिकरीत्या वैदिकपद्धत्या च सप्रमाणं भवता प्रमाणीकृतमित्यत्र नास्ति
शयाऽवकाशलेशोऽपि। ग्रन्थेऽस्मिन् भाषामयेऽपि भावगाम्भीर्यं श्रमशीलता कार्यपटुता लिपिकुशलता चास्मनश्चेन्द्रियाणां च
दगदकर्येवाऽतो नव्यशारीरतत्त्वजिज्ञासूनामवश्यमिदं सहायकरं सम्पत्स्यत इत्याशासे।

पटना
ता० १९।११।३०

पं. हजारीलालसुकुलः।
रसायनाऽऽयुर्वैदिकपाठशालाऽध्यापकः। आयुर्वेदाचार्यः।

पृष्ठ १ से ५२ तक प्रिन्टर-रामचंद्र येसू शेडगे, निर्णयसागर प्रेस, २६।२८ कोलभाट लेन, मुंबई.